कविराज-श्रीगोविन्ददाससेनविरचिता

भैषज्यरत्नावली

'सिद्धिप्रदा'-हिन्दीव्याख्योपेता

प्रोफेसर सिद्धिनन्दन मिश्र

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन-वाराणसी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा आयुर्विज्ञान ग्रन्थमाला

८०

कविराज-श्रीगोविन्ददाससेनविरचितः

भैषज्यरत्नावली

'सिद्धिप्रदा'-हिन्दीव्याख्यासहिता

(प्रथम भाग)

व्याख्याकार

प्रोफेसर सिद्धिनन्दन मिश्र

जी.ए.एम्.एस्., एच्.पी.ए. [एम्.डी. (आयु.)]

पी-एच्.डी., साहित्याचार्य

भू.पू. प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष : रसशास्त्र एवं भैषज्यकल्पना

राजकीय आयुर्वेद कालेज, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

एवं

भू.पू. निदेशक फार्मेसी

गुलाबकुँअरबा आयु. कालेज, गुजरात आयुर्वेद यूनिवर्सिटी, जामनगर (गुजरात)

सम्प्रति सेवारत

प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष : रसशास्त्र एवं भैषज्यकल्पना

तथा

जनरल मैनेजर : आयुर्वेद फार्मेसी

एस्.डी.एम्. कालेज ऑफ आयुर्वेद

कुथपडी, उडुपि (कर्नाटक)

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

© सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी अंश का किसी भी रूप में पुनर्मुद्रण या किसी भी विधि (जैसे-इलेक्ट्रोनिक, यांत्रिक, फोटो-प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग या कोई अन्य विधि) से प्रयोग या किसी ऐसे यंत्र में भंडारण, जिससे इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता हो, प्रकाशक की पूर्वलिखित अनुमति के बिना नहीं किया जा सकता है।

भैषज्यरत्नावली-सिद्धिनन्दन मिश्र

ISBN : 978-93-80326-80-1 (Set)

प्रकाशक :

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के 37/117 गोपाल मन्दिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129
वाराणसी 221001
दूरभाष : (0542) 2335263
e-mail : csp_naveen@yahoo.co.in
website : www.chaukhamba.co.in

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

संस्करण : 2018
₹ 2000.00 (1-2 भाग)

वितरक :

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2 ग्राउण्ड फ्लोर, गली न. 21-ए
अंसारी रोड़, दरियागंज
नई दिल्ली 110002
दूरभाष : (011) 32996391, टेलीफैक्स : 23286537
e-mail : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

*

अन्य प्राप्तिस्थान :

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड़, जवाहर नगर
पोस्ट बॉक्स न. 2113
दिल्ली 110007

*

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पोस्ट बॉक्स न. 1069
वाराणसी 221001

मुद्रक :
डीलक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

THE
CHAUKHAMBA AYURVIJNAN GRANTHAMALA
80

BHAIṢAJYA RATNĀVALĪ

OF

KAVIRAJ GOVIND DAS SEN

Edited with

'Siddhiprada' Hindi Commentary

By

Prof. Siddhi Nandan Mishra
G.A.M.S., H.P.A., [M.D. (Ayu.)]
Ph.D., Sahityacharya
Ex. Prof. & Head : Rasashastra & Bhaishajya Kalpana
Government Ayurvedic College
Sampurnananda Sanskrit University, Varanasi
&
Ex. Director of Pharmacy
G.K. Ayurvedic College
Gujrat Ayurveda University, Jamnagar
Presently
Prof. & Head : Rasashastra & Bhaishajya Kalpana
&
General Manager : Ayurved Pharmacy
S.D.M. College of Ayurveda
Kuthpady, Udupi (Karnataka)

CHAUKHAMBA SURBHARATI PRAKASHAN
VARANASI

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

Publishers :

CHAUKHAMBA SURBHARATI PRAKASHAN
(Oriental Publishers & Distributors)
K. 37/117, Gopal Mandir Lane
Post Box No. 1129
Varanasi 221001
Tel. : 2335263

Also can be had from :

CHAUKHAMBA PUBLISHING HOUSE
4697/2, Ground Floor
Gali No. 21-A, Ansari Road
Daryaganj, New Delhi 110002
Tel. : 32996391
e-mail : chaukhamba_neeraj@yahoo.com

CHAUKHAMBA SANSKRIT PRATISHTHAN
38 U.A. Bungalow Road, Jawahar Nagar
Post Box No. 2113
Delhi 110007
Tel. : 23856391

CHOWKHAMBA VIDYABHAWAN
Chowk (Behind to Bank of Baroda Building)
Post Box No. 1069
Varanasi 221001
Tel. : 2420404

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

समर्पणम्

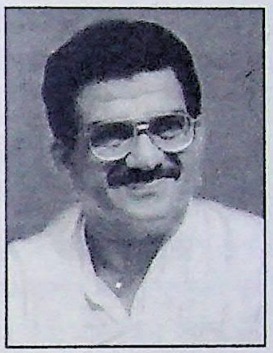

विविधशास्त्रावगाहनदक्षाणां, विद्योतमान्कीर्तिपुञ्जानां, विविधबुधजनमानसमणीनां, परमदानशीलानां, लोकोपकारिणां, धर्माधिकारिपदालङ्कृतानां, पद्मभूषणाद्यनेकोपाधिभिर्विभूषितानां, विपुलमतिमतां, परमश्रद्धेयानां, पूज्यपादानां, 'डॉ. डी.वीरेन्द्रहेग्गडे महोदयानां' कर-कमलयोः औषधियोगगुम्फितां 'भैषज्यरत्नावलीं' मालां सादरं समर्पयति, श्रीमञ्जुनाथेश्वर-कृपाकटाक्षपरितुष्टः ।

(सिद्धिनन्दनमिश्रः)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्राक्कथन

इस वैज्ञानिक युग में मनुष्य की चिकित्सार्थ अनेक चिकित्सा-पद्धतियाँ यथा—आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, होमियोपैथ, एलोपैथ एवं नेचुरोपैथ आदि हमारे देश में हजारों वर्षों से प्रचलित हैं। इन सभी में आयुर्वेद सर्वाधिक प्राचीनतम एवं सहस्राब्दियों से स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा एवं रुग्ण मानव की चिकित्सा सेवा करता आ रहा है। स्वस्थ पुरुष की कल्पना भी आयुर्वेद के अन्तर्गत ही प्रतिपादित की गयी है। आयुर्वेद सिर्फ रुग्ण व्यक्ति की चिकित्सा ही नहीं करता है, अपितु यह पुरुषों को नैष्ठिकी (मोक्ष-प्रदानार्थ साधन) चिकित्सा का उपाय भी बताता है। महर्षि सुश्रुत ने अपनी संहिता में स्वस्थ पुरुष का लक्षण इस प्रकार प्रस्तुत किया है; यथा—

'समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते'॥ (सु.सू. १५।४५)

जिस मनुष्य के वात-पित्त-कफ दोष समावस्था में हों, जिसमें १३ प्रकार की अग्नियाँ समभाव से परिपाकादि गुणों से युक्त हो, शरीर की सप्त (रस-रक्त-मांस-मेद-अस्थि-मज्जा-शुक्र) धातुओं की क्रियाएँ समावस्था में हों तथा शरीर के मल-मूत्र-पुरीष-स्वेदादि अपने सामान्य रूप से विसर्जित होते हों और जिस व्यक्ति की आत्मा, इन्द्रियाँ एवं मन प्रसन्न हों उसे आयुर्वेद स्वस्थ मानता है।

महर्षि सुश्रुत ने अपनी संहिता में अष्टाङ्गायुर्वेद का निरूपण इस प्रकार किया है; यथा—'शल्यं, शालाक्यं, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्यम्, अगदतन्त्रं, रसायनतन्त्रं, वाजीकरणतन्त्रमिति'। (सु.सू. १।६)

महर्षि चरक ने निम्नलिखित शब्दों में आयु एवं आयुर्वेद की परिभाषा प्रतिपादित की है—

'हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानञ्च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते'॥ (च.सू. १:४१)

अर्थात् जिस शास्त्र में हितकर आयु, अहितकर आयु, सुखकर आयु, दुःखकर आयु तथा आयु का हितकर एवं आयु का अहितकर और आयु का मान अर्थात् आयु का प्रमाणादि का ज्ञान प्राप्त हो, उसे आयुर्वेद कहते हैं।

ऐसे शाश्वत आयुर्वेद के लिए अनेक महर्षिओं के आरोग्यप्रद सद्वचनों से आयुर्वेद परिपूर्ण है।

यद्यपि चरकसंहिता में प्रायः सभी धातुओं का चिकित्सार्थ अनेक स्थलों पर प्रयोग हुआ है। जैसे—पुंसवनसंस्कारार्थ दो महीने के अन्दर गर्भवती स्त्री को पुष्य नक्षत्र में पतले स्वर्ण पत्र पर पुरुषाकृति चित्र बनाकर अग्नि में तप्त कर तथा सवत्सा गौ के दूध में निर्वापित कर पिलाने, तथा दाहिने नाक में २ बूँद डालने की परम्परा है, जो आज भी प्रचलित है। स्वर्णप्राशन में सद्योजात बच्चे (जातक) को नाभिनालच्छेदन एवं स्नान के बाद कठिन पत्थर पर शुद्ध स्वर्ण को मधु के साथ घिसकर चटाने की परम्परा थी। उत्तर भारत में प्रबुद्ध वर्गों के घर में यह परम्परा आज भी प्रचलित है। महर्षि चरक कहते हैं कि स्वर्ण सभी विषों (गरविषादि) का नाश करता है। स्वर्ण खाये हुए व्यक्ति पर विष का प्रभाव नहीं होता है। जैसे कमलपत्र पर जल का प्रभाव नहीं होता है। यथा—

'हेमसर्वविषाण्याशु गरांश्च विनियच्छति।
न सज्जते हेमपाङ्गे विषं पद्मदलम्बुवत्'॥ (च.चि. २३:२६९)

चरकसंहिता में दो स्थलों पर पारद का भी प्रयोग हुआ है। कुष्ठरोग चिकित्सा में आभ्यन्तर प्रयोग है तथा सवर्णीकरण चिकित्सा में पारद का बाह्य प्रयोग है। सुश्रुत में पारद का ३-४ स्थलों पर बाह्य प्रयोग है, तथा अष्टाङ्गसंग्रह एवं अष्टाङ्गहृदय में पारद के अनेक बाह्याभ्यन्तर प्रयोग बतलाये गये हैं। क्षेत्रीकरणार्थ पारद का आभ्यन्तर प्रयोग इस प्रकार है; यथा—

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

'शिलाजतुक्षौद्रविडङ्गसर्पिर्लोहाभयापारदताप्यभक्षः ।
आपूर्य्यते दुर्बलदेहधातूंस्त्रिपञ्चरात्रेण यथा शशाङ्कः' ॥ (अष्टाङ्गसंग्रह उ. ५०:२४५)
(अष्टाङ्गहृदय उ. ३९:१६१)

इन दोनों ग्रन्थों में एक ही श्लोक को उद्धृत किया गया है।

तब से आज तक पारदादि खनिजों एवं धातुओं तथा अन्य सभी उप धातुओं एवं हरताल-मनःशिला-शंखिया-नीलाञ्जनादि आदि द्रव्यों का विधि-सम्मत प्रामाणिक औषधि बनाकर निर्विकार रूप से सतत प्रयोग होता आ रहा है।

मध्ययुगीन काल में काष्ठौषधों से सफल चिकित्सा में विलम्ब तथा अत्युपयोगी नहीं होने के कारण केवल रसौषधियों से चिकित्सा की जाने लगी। इसके लिए तीन युक्तियाँ बताई गई हैं—(१) रसौषधों का अल्प मात्रा (१-२ रत्ती) में प्रयोग होता है। (२) रसौषधियों में किसी प्रकार का स्वाद (रुचि-अरुचि) नहीं है। (३) ये शीघ्र आरोग्य प्रदान करती हैं। अतः सामान्य काष्ठौषधियों से रसौषधियाँ अधिक लाभदायक है। यथा—

'अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः ।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्योऽधिको रसः' ॥ (र.र.समु. २८:१)

आज से ५०-६० वर्ष पहले जब भारतवर्ष में शुरु-शुरु एण्टीबायोटिक ड्रग्स का भी रसशास्त्र जैसा ही प्रारम्भ हुआ था। किन्तु ४० वर्षों में ही पेनिसिलिन आदि मुख्य एण्टिबायोटिक औषधि का दुष्प्रभाव (Side effect) होने लगा। अब पेनिसिलीन आदि औषधों का प्रयोग डाक्टर लोग प्रायः नहीं करते हैं। किन्तु, रसौषधियों का हजारों वर्षों के परीक्षण के बाद निर्विवाद रूप से भारत के सम्पूर्ण क्षेत्र में आज भी पूर्ववत् प्रयोग हो रहा है। अतः ऐसी प्रामाणिक औषधों का तथा प्रचलित काष्ठौषधों का सम्मिलित रूप से इस भैषज्यरत्नावली में संकलित किया गया है। हाँ, यदि औषधियाँ गलत तरीके से बनी हैं तो दुष्प्रभाव की सम्भावना है। किन्तु पारद एवं अन्य धातुओं का साइड इफेक्ट नहीं होता है।

इन सभी बातों से विद्वद्वैद्य समाज पूर्णतः अवगत है। किन्तु आज सम्पूर्ण विश्व में चिकित्सा में अग्रगण्य एलोपैथिक साइंस सर्वात्मना अपने प्रभाव से लोगों को अभिभूत किये हुए है। उनके पास सरकारी मान्यताएँ हैं तथा जनता भी उनकी पद्धति से प्रसन्न है। उनके पास अत्याधुनिक संयन्त्रों एवं साधनों से पूर्णतः विकसित रिसर्च सेंटर हैं। उनका विकास साधन-सम्पन्न विकसित देशों के रिसर्च पर आधारित है। एलोपैथी के क्षेत्र में भारत में भी कम ही रिसर्च होते हैं। विदेशी वैज्ञानिकों द्वारा संशोधित रिसर्च ही उनका मुख्य आधार है। अबतक तो एलोपैथी डाक्टरों द्वारा आयुर्वेद का सर्वात्मना विरोध ही होता रहा है। वास्तव में वे आयुर्वेद से भयभीत हैं। विरोध का उनका आधार कुछ इस प्रकार है—

(१) आयुर्वेद वैज्ञानिक-परीक्षण पर खरा नहीं उतरता है।

(२) पारद-स्वर्ण-रजत-ताम्र-नाग-वङ्ग-यशद धातुएँ विषैली हैं अतः उनका शरीर में आभ्यन्तर प्रयोग अनुचित है। ये सभी गुरु धातुएँ (Heavy metal) हैं तथा किडनी में इनका स्टोरेज होता है। ये धातुएँ पूर्णतः भस्म नहीं बनती हैं आदि-आदि।

(३) जो तत्त्व शरीर में है ही नहीं उनका शरीर में उपयोग ही क्यों ? शरीर उनको ग्रहण कैसे करेगा आदि।

(४) उनका संगठन बड़ा है उससे सरकार भी भयभीत रहती है।

जब पहली बार उन्हें ज्ञात हुआ कि रक्त में लौह कण हैं तो लोह का आक्साइड (भस्म) रूप में वे भी उपयोग करने लगे और आयुर्वेदीय लौहभस्म का विरोध करना उन्होंने बन्द कर दिया। अब जब उन्हें यह ज्ञात हुआ है कि पुरुष के शुक्र (Semen) में अल्प मात्रा में स्वर्ण उपलब्ध है तो सम्भवतः गुरुधातु की अनुपयोगिता जैसी उनकी आवाज भी कम हो जायेगी। भविष्य में जब वैज्ञानिकों का कोई दल ऐसा भी कहेगा कि शरीर में पारद भी अत्यल्प मात्रा उपलब्ध है तो उनका 'Heavy metal' का प्रलाप भी बन्द हो जायेगा। अस्तु।

हमारा आयुर्वेद हजारों वर्षों से परीक्षित एवं प्रामाणिक विज्ञान है। इसे महर्षिओं एवं आर्ष पुरुषों ने परीक्षणोपरान्त मानव चिकित्सा विज्ञान के रूप में प्रतिस्थापित किया है जो पूर्णतः वैज्ञानिक है। लाखों वैद्यों द्वारा कोटि-कोटि मानव की सेवा अनन्त काल से होती आ रही है। कभी कोई दुष्प्रभाव (Side effect) नहीं देखा जाता है। हाँ यदि औषधियाँ प्रामाणिक रीति से नहीं बनी हैं तो सब कुछ सम्भव है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आजादी के पूर्व से ही वैद्यों की मांग पर ब्रिटिश सरकार ने सन्तोषार्थ आयुर्वेद डवलपमेण्ट के लिए सर्वप्रथम १९४५ ई. में भोर कमिटी बनायी किन्तु उस कमिटी का कोई प्रभाव नहीं रहा। पुनश्च १९४६ ई. में उसी ब्रिटिश सरकार ने डा. रामनाथ चोपड़ा की अध्यक्षता में एक और आयुर्वेद डवलपमेण्ट की कमिटी बनायी किन्तु उसका भी कोई प्रतिफल नहीं निकला। पुनश्च आजाद भारत में भारत सरकार द्वारा १९४९ ई. में पण्डित कमिटी की स्थापना की गई जिसकी रिर्पोट पर आधारित जामनगर गुजरात में १९५२ ई. में आयुर्वेद रिसर्च संस्थान तथा १९५६ ई. में वहीं पर आयुर्वेद का स्नातकोत्तर सेण्टर स्थापित किया गया। उसके बाद १९५५ ई. में श्री दवे कमिटी की स्थापना हुई। उनकी अनुशंसा के आधार पर—(१) वैद्यों का रजिस्ट्रेशन, (२) प्रवेश योग्यता, (३) इण्डियन मेडिकल कांसिल जैसी आयुर्वेद-यूनानी की अलग-अलग कांसिल की स्थापना की जाय, (४) आयुर्वेदिक फार्माकोपिया एवं आयुर्वेदिक फार्मुलरी बनायी जाय, (५) एकरूप शिक्षा व्यवस्था तथा ५½ वर्ष का कोर्स बनाया जाय, (६) केन्द्र एवं राज्यों में स्वतन्त्र आयुर्वेद निदेशालय बनाया जाय—आदि मुख्य थे।

डॉ. उडुपा कमिटी से भी सरकार को अच्छे प्रस्ताव मिले थे।

(१) आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा का अंग माना जाय। केन्द्रीय तथा राज्य सरकार इसे पूर्ण मान्यता दे।

(२) केन्द्रीय भारतीय चिकित्सा परिषद् की स्थापना हो।

(३) आयुर्वेद का शुद्ध एवं मिश्रित दोनों पाठ्यक्रम चले।

(४) सभी आयुर्वेद विद्यालयों को विश्वविद्यालय से सम्बन्धित किया जाय।

(५) योग्य अध्यापक तैयार करने के लिए वाराणसी, पूना एवं त्रिवेन्द्रम में आयुर्वेद के पोस्ट ग्रैजुएट कालेज की स्थापना की जाय आदि।

श्री मोहनलाल व्यास कमिटी के आधार पर ही शुद्ध आयुर्वेद का वर्तमान पाठ्यक्रम स्वीकार किया गया है। अस्तु।

पण्डित कमिटी के आधार पर जामनगर (गुजरात) में डॉ. पी.एम. मेहता की अध्यक्षता में १९५२ ई. आयुर्वेद रिसर्च सेण्टर की स्थापना हुई। उसमें देश के विद्वान् चिकित्सकों को समादृत किया गया। इनमें वैद्य श्री रामरक्ष पाठक एवं वैद्य श्री गणेशदत्त सारस्वतादि प्रमुख थे, तथा सिद्ध चिकित्सा के डॉ. रमणन भी प्रमुख थे। आयुर्वेद अनुसन्धान में पर्यवेक्षक एवं सहयोगी रूप में पाण्डु रोग पर अनुसन्धान करना निश्चित किया गया तथा औषधि रूप में चरकसंहिता का 'पुनर्नवादि मण्डूर' और शार्ङ्गधरसंहिता का कुमार्यासव का चयन किया गया। माडर्न टीम में प्रख्यात ३-४ डाक्टर थे जिनकी उच्च तकनीकी से युक्त अच्छी लेबोरेटरीज थी। यह कार्य काफी वर्षों तक चलता रहा। माडर्न टीम ने इन दोनों औषधियों की रक्तकणवर्द्धन क्षमता की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। उन्होंने इतना तक कहा था कि माडर्न साइंस के पास रक्तकणवर्धनार्थ ऐसी औषधियाँ नहीं हैं (इसकी विस्तृत जानकारी के लिए देखें—जामनगर की रिसर्च रिपोर्ट)। उसके बाद डॉ. पी.एम. मेहता के सेवा-निवृत्ति के बाद जामनगर की तीनों संस्थाओं (रिसर्च इन्स्टीट्युट, स्नातकोत्तर संस्थान तथा गुलाबकुँवरबा आयुर्वेद कालेज) के एकीकरण के बाद इंस्टीच्यूट ऑफ आयुर्वेदिक स्टडिज एण्ड रिसर्च (J.A.S.R.) बनाया गया और बाद में १९६८ ई. में गुजरात आयुर्वेद विश्वविद्यालय के रूप में परिणत हो गया। J.A.S.R. बनने के बाद से आयुर्वेद का रिसर्च समाप्त हो गया।

आयुर्वेद के ऐसे अनेक रिसर्च केन्द्र भारत सरकार द्वारा स्थापित कराकर मार्डन डाक्टरों की सम्मति से वैज्ञानिक मुहर लगाने की आवश्यकता है, तभी माडर्न युगीन डाक्टर पूर्णतः आयुर्वेद को स्वीकारने की स्थिति में होंगे। इस कार्य के लिए भारत सरकार को उदार मनोवृत्ति बनानी पड़ेगी।

भैषज्यरत्नावली

इन दिनों सम्पूर्ण भारत (उत्तर-दक्षिण-पूरब-पश्चिम) में 'भैषज्यरत्नावली' को आयुर्वेद की मुख्य फार्मुलरी (Farmulary) के रूप में मान्यता है। इतनी प्रामाणिक एवं विस्तृत फार्मुलरी का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में कोई प्रामाणिक संस्करण उपलब्ध नहीं है, जिससे सम्पूर्ण भारत के वैद्य समाज को हमेशा कष्ट का सामना करना पड़ता है, जैसे—पुराने मानों (Measurements) का ज्ञान अप्रचलित होने के कारण कष्ट; औषध-निर्माण की प्रक्रिया का सरल एवं स्पष्टरूप में उल्लेख नहीं होने का आदि। औषधि का गन्ध-वर्ण-स्वाद, उसकी आधुनिक मात्रा, अनुपान एवं प्रमुख रोगों में उपयोग का स्पष्ट रूप से उल्लेख होना ही वैज्ञानिकता है। अतः ऐसा प्रामाणिक संस्करण नहीं होने से वैद्य समाज एक प्रामाणिक संस्करण के लिए प्रतीक्षारत था।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यह ग्रन्थ १८ वीं शताब्दी में कविराज स्व. श्री गोविन्ददास सेन द्वारा संकलित किया गया था, किन्तु उनके जीवन काल में इस ग्रन्थ का प्रकाशन नहीं हो सका था। उनकी मृत्यु के बाद उनके कोई सम्बन्धी या 'दौहित्र' कविराज श्री विनोदलाल सेन द्वारा यह संस्कृत टिप्पणी के साथ प्रकाशित हुआ था, जिसका द्वितीय एवं तृतीय परिवर्धित-संशोधित संस्करण कविराज श्री आशुतोष सेन गुप्त के सम्पादकत्व में हुआ था, जिसमें २६०० योगों का समावेश किया गया था। उक्त संस्करण पुरानी लाइब्रेरिओं में देखा जाता है।

भैषज्यरत्नावली की अनेक व्याख्या समय-समय पर की गई है, जिसमें समय-समय पर उनके योगों में भी परिवर्धन किये गये। लखनऊ से श्री नवलकिशोर प्रेस द्वारा भी १९वीं शताब्दी में इसका परिवर्धित संस्करण निकला, जिसमें ३००० योगों का समावेश हुआ था। २०वीं शताब्दी में कविराज जयदेव विद्यालंकार द्वारा वि.सं. १९८२ में मोतीलाल बनारसीदास द्वारा लाहौर से उसका परिवर्धित संस्करण निकला, जिसमें ३३०० योगों को प्रविष्टी मिली थी। किन्तु १९५१ ई. में कविराज पं. अम्बिकादत्त शास्त्री द्वारा अनुवादित कर चौखम्भा वाराणसी द्वारा प्रकाशित हुआ, जिसमें ४५०० योगों को तथा परिशिष्ट में २०० योगों को समाविष्ट किया गया। आज बाजार में दो ही—१. जयदेव विद्यालंकार और २. पं. अम्बिकादत्त शास्त्री द्वारा अनुदित व्याख्या वाली ही भैषज्यरत्नावली प्राप्त है।

मेरे द्वारा व्याख्यायित प्रस्तुत भैषज्यरत्नावली के लेखन का प्रारम्भ चौखम्बा सुरभारती के श्री नवनीत दास गुप्त के आग्रह के स्वरूप १९९० ई. में कर दिया था। किन्तु ग्रन्थ बड़ा है और मेरी लेखनी भी अनेक ग्रन्थों की व्याख्या में व्यस्त रहने के कारण इसका कार्य धीरे-धीरे हुआ। साथ ही सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से १९९१ में सेवा निवृत्ति के बाद Contract पर आयुर्वेद विश्वविद्यालय जामनगर में फार्मेसी निदेशक रूप में २००० तक कार्य करता रहा। पुनः २००० के उत्तरार्द्ध में S.D.M. College of Ayurveda Udupi में पुनः Contract रूप में प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष तथा General Manager of Pharmary रूप में ज्वाइन कर व्यस्त हो गया, जिससे ग्रन्थ प्रकाशन में विलम्ब हुआ।

मैंने कविराज पं. अम्बिकादत्त शास्त्री द्वारा सम्पादित भैषज्यरत्नावली के पाठों को आधार मान कर इस ग्रन्थ की व्याख्या की है किन्तु उनके परिशिष्ट को स्वीकार नहीं किया है। फिर भी मैंने ६-८ प्रमुख योगों को इसमें समाविष्ट किया है; यथा—आरोग्यवर्धनी, त्रिभुवनकीर्ति, कुमार्यासवादि आदि जिससे विद्वान् वैद्यों को इन योगों को ढूँढने में अन्य ग्रन्थों का सहयोग नहीं लेना पड़े।

प्रकृत भैषज्यरत्नावली की व्याख्या की कुछ विशेषताऐं हैं। यथा—मैंने इनके प्रायः अधिकांश योगों को मूल ग्रन्थों से मिलाकर ढूँढ निकाला है जिससे उसकी प्रमाणिकता प्रतीत होती है। जैसे सितोपलादि चूर्ण मूलतः चरकसंहिता का है, वैसे ही अन्य योगों को भी ढूँढने का भरसक प्रयास किया है; तथापि कुछ ऐसे योग नहीं मिल पाये हैं जिससे उनके मूलस्रोत का ज्ञान नहीं हो पाया है। मेरी इस व्याख्या में औषध निर्माण हेतु सरल हिन्दी भाषा का प्रयोग किया गया है। इस व्याख्या से अब यह पता चल पायेगा कि औषध का वर्ण कैसा है, स्वाद कैसा है, गन्ध कैसा है, आधुनिक मात्रा कितनी देनी है, अनुपान क्या होना चाहिए तथा इस औषधि को किन प्रमुख रोगों में देना चाहिए। इसके अतिरिक्त निर्माण में पुरानी मात्रा कर्ष, पल, प्रस्थ, आढक, द्रोण आदि को सर्वत्र आधुनिक मात्रा (मि.ग्रा., किलो., मि.ली., लीटर आदि) में परिवर्त्तित किया गया है जिससे औषधि निर्माताओं को पुराने मानों से होने वाली परेशानी से बचाया जा सके। फिर भी मेरी व्याख्या से ग्रन्थ की उपयोगिता अधिक सार्थक हुई है।

आभार प्रदर्शन

सर्वप्रथम इस ग्रन्थ की व्याख्या में अनेक दुरूह स्थलों पर निर्णायक मार्गदर्शन के लिए परमपूज्य गुरुदेव आचार्य पं. प्रियव्रत शर्मा जी का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ एवं उनके सुस्वास्थ्य एवं दीर्घजीवन की कामना करता हूँ, जिससे मुझे उनका मार्गदर्शन सतत मिलता रहे।

ततः श्री धर्मस्थल मञ्जुनाथेश्वर एजुकेशनल सोसाइटी के अध्यक्ष एवं धर्माधिकारी परमपूज्य डॉ. डी.वीरेन्द्र हेग्गड़े 'पद्मभूषण' का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ। मेरे प्रति उनका सद्विचार ऐसा ही बना रहे। श्री हेग्गड़े जी जैसे दानवीर, कर्मठ एवं सत्पुरुष अब कहीं-कहीं ही देखने को मिलते हैं। मैं उनके सुखद स्वास्थ्य एवं दीर्घजीवन की कामना करता हूँ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पुनश्च श्री धर्मस्थल मञ्जुनाथेश्वर एजुकेशनल सोसाइटी के सम्माननीय विद्वान् सेक्रेटी प्रोफेसर एस. प्रभाकर जी की मैं हृदय से कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। उन्होंने मुझे सतत प्रोत्साहित किया है। वे मेरी कार्यशैली से सन्तुष्ट हैं। मैं उनके सुखद स्वास्थ्य एवं दीर्घजीवन की कामना करता हूँ जिससे S.D.M. सोसाइटी को उनका मार्गदर्शन लम्बे समय तक मिलता रहे।

धन्यवाद ज्ञापन

सर्वप्रथम सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के मेरे शिष्य डॉ. हरिश्चन्द्र सिंह कुशवाहा को धन्यवाद तथा शुभाशीर्वाद देता हूँ। क्योंकि डॉ. कुशवाहा गुरु-शिष्य परम्परा काल में जब जामनगर (गुजरात) में थे तो उन्होंने 'भैषज्यरत्नावली' के लेखन कार्य में कई महीनों तक मेरी मदद करते रहे हैं। मैं उन्हें एतदर्थ धन्यवाद एवं आशीर्वाद देता हूँ कि आप भी ग्रन्थ-लेखन में कुशलता प्राप्त कर आयुर्वेद की श्रीवृद्धि करें। यद्यपि आपने इस कार्य का प्रारम्भ कर दिया है। डॉ. विशि बंसल तत्कालीन व्याख्याता, S.D.M. College of Ayurveda रसशास्त्र को बहुत आशीर्वाद देता हूँ उन्होंने प्रूफ रीडिंग में मेरी मदद की है। मेरे शिष्य डॉ. एम. गोपीकृष्ण M.D. रसशास्त्र को बहुत धन्यवाद एवं आशीर्वाद देना चाहता हूँ, क्योंकि इन्होंने भैषज्यरत्नावली के लेखन कार्य में हमेशा सहयोग देते रहे हैं।

तदनन्तर फाइनल एम.डी. रसशास्त्र के मेरे प्रिय छात्रों—डॉ. पद्मिनी राव, डॉ. प्रकाश एम. देशपाण्डे तथा डॉ. सुनील जैन को धन्यवाद एवं शुभाशीष देता हूँ। क्योंकि इन तीनों छात्रों ने मेरे लेखन और प्रूफ रीडिंग कार्य में हमेशा मदद की है।

इस बृहदाकार ग्रन्थ का सम्पादन-मुद्रण सावधानीपूर्वक होने के बावजूद मानव-स्वभाव-सुलभवश त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। अतः माननीय वैद्यों, अध्यापकों तथा साथ ही विद्यार्थियों जो इस ग्रन्थ के पाठक हैं, से मेरा निवेदन है कि वे इन त्रुटियों की ओर मेरा ध्यान आकर्षित करेंगे। जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँगा।

रसशास्त्रानुचर
प्रोफेसर सिद्धिनन्दन मिश्र

वसन्त पञ्चमी
दिनाङ्क १३:२:२००५ ई.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकरण-सूची

१. आयुर्वेदावतरणम् १
२. मान-परिभाषाप्रकरणम् १२
३. शोधन-मारण-गुणादिप्रकरणम् २७
४. अभावप्रकरणम् ७०
५. ज्वराधिकारः ७६
६. ज्वरातिसाराधिकारः २२४
७. अतिसाराधिकारः २३५
८. ग्रहणीरोगाधिकारः २५५
९. अर्शोरोगाधिकारः ३०८
१०. अग्निमान्द्यादिरोगाधिकारः ३३६
११. कृमिरोगाधिकारः ३६६
१२. पाण्डुरोगाधिकारः ३७५
१३. रक्तपित्ताधिकारः ३८९
१४. राजयक्ष्माधिकारः ४०४
१५. कासरोगाधिकारः ४३८
१६. हिक्का-श्वासरोगाधिकारः ४५८
१७. स्वरभेदरोगाधिकारः ४७१
१८. अरोचकरोगाधिकारः ४७७
१९. छर्दिरोगाधिकारः ४८३
२०. तृष्णारोगाधिकारः ४८७
२१. मूर्च्छारोगाधिकारः ४९१
२२. मदात्ययरोगाधिकारः ४९४
२३. दाहरोगाधिकारः ४९८
२४. उन्मादरोगाधिकारः ५०१
२५. अपस्माररोगाधिकारः ५१२
२६. वातव्याधिरोगाधिकारः ५१८
२७. वातरक्तरोगाधिकारः ५७३
२८. ऊरुस्तम्भरोगाधिकारः ५९२
२९. आमवाताधिकारः ५९६
३०. शूलरोगाधिकारः ६१५
३१. उदावर्तानाहरोगाधिकारः ६४२
३२. गुल्मरोगाधिकारः ६४९
३३. हृद्रोगाधिकारः ६६६
३४. मूत्रकृच्छ्ररोगाधिकारः ६७५
३५. मूत्राघातरोगाधिकारः ६८३
३६. अश्मरीरोगाधिकारः ६८८
३७. प्रमेहरोगाधिकारः ६९६
३८. प्रमेहपिडकाधिकारः ७२०
३९. मेदोरोगाधिकारः ७२३
४०. उदररोगाधिकारः ७३०
४१. प्लीहयकृद्रोगाधिकारः ७४६
४२. शोथरोगाधिकारः ७६७
४३. वृद्धिरोगाधिकारः ७८९
४४. गलगण्डादिरोगाधिकारः ८००
४५. श्लीपदरोगाधिकारः ८१०
४६. विद्रधिरोगाधिकारः ८१६
४७. व्रणशोथाधिकारः ८१९
४८. सद्योव्रणाधिकारः ८३०
४९. भग्नरोगाधिकारः ८३२
५०. नाडीव्रणाधिकारः ८३६
५१. भगन्दररोगाधिकारः ८४१
५२. उपदंशरोगाधिकारः ८४७
५३. शूकदोषाधिकारः ८५६
५४. कुष्ठरोगाधिकारः ८५९
५५. उदर्दशीतपित्तकोठाधिकार ८९६
५६. अम्लपित्तरोगाधिकारः ९००
५७. विसर्परोगाधिकारः ९१६
५८. विस्फोटरोगाधिकारः ९२१
५९. मसूरिकारोगाधिकारः ९२४
६०. क्षुद्ररोगाधिकारः ९३२
६१. मुखरोगाधिकारः ९५१
६२. कर्णरोगाधिकारः ९६७
६३. नासारोगाधिकारः ९७६
६४. नेत्ररोगाधिकारः ९८२
६५. शिरोरोगाधिकारः १०१३
६६. प्रदररोगाधिकारः १०२९
६७. योनिव्यापद्रोगाधिकारः १०४१
६८. गर्भिणीरोगाधिकारः १०५२
६९. सूतिकारोगाधिकारः १०६३
७०. स्तनरोगाधिकारः १०७५
७१. बालरोगाधिकारः १०७७
७२. विषरोगाधिकारः ११००
७३. रसायनाधिकारः ११०८
७४. वाजीकरणाधिकारः ११२४
७५. वीर्यस्तम्भनाधिकारः ११५८
अकारादिक्रमेण प्रकरणक्रम ११६१
अकारादिक्रमेण विषयानुक्रम ११६२

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

॥ श्रीः ॥

श्रीगोविन्ददाससेनविरचिता

भैषज्यरत्नावली

'सिद्धिप्रदा'-हिन्दीव्याख्योपेता

अथायुर्वेदावतरणम् (१)

ग्रन्थकर्तुर्मङ्गलाचरणम्

भक्त्यानमस्त्रिदशराजकिरीटकोटिरत्नावली किरणराजविराजमानम् ।
श्रीमत्करीन्द्रवदनस्य पदारविन्दद्वन्द्वं सदा जयति सिद्धिकरं क्रियाणाम् ॥

टीकाकर्तुर्मङ्गलाचरणम्

श्रीयज्ञदत्ततनयः सुनयः सुशीलः
श्रीसिद्धिनन्दनमगश्रुतनामधेयम् ।
तेनावलोक्यविविधान् भिषजां सुग्रन्थान्
व्याख्यायते हि भैषज्यरत्नावलीयम् ॥

भक्तिपूर्वक नमस्कार करते समय देवताओं के राजा इन्द्र के मुकुट में जड़े हुए करोड़ों रत्नसमूह से निकली हुई किरणों के द्वारा प्रदीप्त एवं शोभायमान सभी प्रकार के कार्यों की सिद्धि करने वाले गणेशजी के दोनों चरणारविन्द सदा जय युक्त हो।

पार्वती-शिव एवं माता-पिता की वन्दना

वन्देऽम्बिकाचन्द्रचूडौ जननीजनकावुभौ ।
निपत्य चरणौ भक्त्या प्रत्यूहव्यूहशान्तये॥२॥

विघ्नसमूह की शान्ति के लिए जगज्जननी माता पार्वती तथा जगत्पिता भगवान् आशुतोष शङ्करजी और अपने पिता एवं माता के चरणों में भक्तिपूर्वक गिर कर प्रणाम करता हूँ।

विमर्श—इस वन्दना में आचार्यश्री ने अपने माता-पिता (अम्बिका और चन्द्रचूड सेन) को भी भक्तिपूर्वक प्रणाम किया है, ऐसा भाव भी प्रदर्शित होता है। इनके माता-पिता का नाम क्रमशः अम्बिका और चन्द्रचूड था।

भगवान विष्णु की वन्दना

श्रीगोविन्दपदारविन्दयुगलं वन्दारुवृन्दारक-
श्रेणीनम्रशिरःकिरीटवलभिन्नीलोत्पलेन्दिन्दिरम् ।
मत्वा सद्भिषजां मुदे वितनुते गोविन्ददासोऽधुना
नानाग्रन्थमहाब्धिलब्धरुगुणां भैषज्यरत्नावलीम् ॥३॥

भगवान् विष्णु को जब देवतागण झुक कर प्रणाम करते हैं तब की शोभा का वर्णन आचार्यश्री गोविन्ददास ने किया है—

देवताओं द्वारा झुक कर प्रणाम करने पर देवताओं के शिर-स्थित मुकुट (किरीट), वलभी (कलगी) पर भगवान् विष्णु की छाया पड़ने से नीलकमल पर भौंरे के समान शोभा को धारण करते हुए श्रीविष्णु के दोनों चरणकमलों में श्रद्धा और नम्रता के साथ प्रणाम करके, सद्वैद्यों के हर्ष के लिए मैं गोविन्ददास इस समय समुद्ररूपी अनेक चिकित्सा ग्रन्थों का सम्यक्तया अध्ययनोपरान्त भैषज्यरूपी रत्नों वाली 'भैषज्यरत्नावली' नामक ग्रन्थ का निर्माण करता हूँ।

ग्रन्थकार का निवेदन

यदि प्रियतमा न स्याद् बुधानां भिषजामियम् ।
तथापि नव्या नव्यामानुकूल्यं विधास्यति ॥४॥

यह नवीन भैषज्यरत्नावली ग्रन्थ विद्वान् एवं अनुभवी चिकित्सकों को यदि प्रिय (अनुकूल) न भी हो, तो भी नये

१. प्रत्यूहः = विघ्नः, व्यूहः = समूहः, २. वन्दारुः = प्रशंसकः, वृन्दारकः = श्रेष्ठः, ३. इन्दिन्दिरः = भ्रमराः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चिकित्सकों एवं आयुर्वेद के छात्रों तथा जिज्ञासुओं को चिकित्सा-कार्य में बहुत सहायक सिद्ध होगा।

आयुर्वेद का लक्षण

आयुर्हिताहितं व्याधेर्निदानं शमनं तथा।
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते ॥५॥

जिस शास्त्र में आयु के लिए हितकर और अहितकर उपाय कहा गया हो, अथवा जिस शास्त्र में हितकर एवं अहितकर आयु का ज्ञान हो, रोगों का निदान एवं रोगों की चिकित्सा आदि शमनोपाय कहा गया हो, विद्वान् लोग उसे आयुर्वेद कहते हैं।

आयुर्वेद की निरुक्ति

अनेन पुरुषो यस्मादायुर्विदन्ति वेत्ति च।
तस्मान्मुनिवरैरेष आयुर्वेद इति स्मृतः ॥६॥

इस शास्त्र के द्वारा पुरुष (मनुष्य) लोग दीर्घायुष्य प्राप्त करते हैं, स्वयं दीर्घायु लाभ करते हैं तथा दूसरों को आयु का लाभ कराते हैं एवं स्वयं आयु का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इसीलिए विद्वान् मुनियों ने इसे आयुर्वेद कहा है।

विमर्श—शरीर एवं आत्मा का जो संयोग है, उसे जीवन कहते हैं। जितने समय तक संयोग बना रहता है, उतने समय का नाम 'आयु' है। आयुर्वेद के द्वारा आयु के लिए हितकर एवं अहितकर जितने भी द्रव्य, गुण तथा कर्म हैं, उन सभी को जान कर तथा उनके सेवन करने और सेवन न करने अर्थात् आयु के लिए हितकर द्रव्य-गुण-कर्मों वाले द्रव्यों (आहार-विहार) का सेवन और अहितकर द्रव्य-गुण-कर्मों से युक्त द्रव्यों का त्याग करने से मनुष्य आरोग्य लाभकर दीर्घायुष्य प्राप्त करता है, साथ ही उक्त कारणों का ज्ञान होने पर दूसरों की आयु का परिज्ञान एवं रक्षण करने में समर्थ होता है।

'शरीरजीवयोर्योगयो जीवनं तेनावच्छिन्नः काल आयुः, आयुर्वेदद्वारा आयुष्याण्यनामुष्याणि च द्रव्य-गुण-कर्माणि ज्ञात्वा तेषां सेवनत्यागाभ्यामारोग्येणायुर्विदन्ति, तेनैव हेतुना परस्याप्यायुर्वेति च'।

आयुर्वेदोत्पत्ति-क्रम

ब्रह्मा स्मृत्वाऽऽयुषो वेदं प्रजापतिमजिग्रहत्।
स दस्रौ तौ सहस्राक्षं सोऽत्रिजं समुपादिशत् ॥७॥
सोऽग्निवेशं च भेडञ्च जातुकर्णं पराशरम्।
क्षारपाणिञ्च हारीतमायुर्वेदमपाठयत् ॥८॥
ब्रह्मा प्रजापतिर्दस्रौ देवराडत्रिजस्तथा।
स्वनाम्ना संहितां चक्रे पृथक्कल्याण हेतवे ॥९॥
तन्त्रस्य कर्ता प्रथममग्निवेशोऽभवत्पुरा।
ततो भेडादयः सर्वे पृथक् तन्त्राणि तेनिरे ॥१०॥

सर्वप्रथम भगवान् ब्रह्माजी ने आयु के ज्ञान बताने वाले शास्त्र (आयुर्वेद) का स्मरण किया, तब उन्होंने दक्ष नामक प्रजापति को आयुर्वेद का उपदेश दिया। दक्षप्रजापति ने अश्विनीकुमारों को, अश्विनीकुमारों ने इन्द्र को आयुर्वेद का ज्ञानोपदेश दिया। देवराज इन्द्र ने भरद्वाज, आत्रेयादि ऋषियों को आयुर्वेद का उपदेश दिया और महर्षि आत्रेय ने अग्निवेश, भेड, जतूकर्ण, पराशर, क्षारपाणि और हारीत को आयुर्वेद का ज्ञान दिया। भगवान् ब्रह्मा, दक्षप्रजापति, अश्विनीकुमारों, देवराज इन्द्र और आत्रेयादि ने अपने-अपने नामों की आयुर्वेदीय संहिता का निर्माण किया, किन्तु अग्निवेश ने सर्वप्रथम आयुर्वेद तन्त्र का निर्माण किया, उसके बाद भेडादि पाँच ऋषियों ने भी आयुर्वेद की रचना की।

विमर्श—यहाँ पर आयुर्वेदोत्पत्ति क्रम में चरकसंहिता की परम्परा का पालन नहीं किया गया है। चरकसंहिता के आयुर्वेदावतरण में सर्वप्रथम ब्रह्मा ने आयुर्वेद का स्मरण कर दक्ष नामक प्रजापति को उपदेश दिया, दक्ष ने अश्विनीकुमारों को, अश्विनीकुमारों ने देवराज इन्द्र को आयुर्वेद का उपदेश दिया। तब तक आयुर्वेद पृथ्वी पर नहीं आया था और आयुर्वेद की सनातन परम्परा (सन्ततिक्रम) भी अवरुद्ध थी। उसके बाद पृथ्वी के समस्त मानव भयंकर रोगों से पीड़ित होकर अकाल में ही कालकवलित होने लगे थे और ऋषियों की तपस्या, उपवास, अध्ययन, अध्यापन, ब्रह्मचर्य, व्रत, नियमादि आचरण में रोग विघ्नस्वरूप उपस्थित होने लगा तथा भयंकर यातनाओं के बाद प्राणि अकाल में कालकवलित होने लगे। अतः पुण्यकर्मा महर्षियों ने प्राणिमात्र पर दया कर हिमालय के समीप शुभ एवं पवित्र स्थान पर इस भयंकर कष्ट से निवृत्यर्थ विचार-विमर्श हेतु ऋषियों की एक सभा का आयोजन किया। यथाह महर्षिचरकः—

विघ्नभूता यदा रोगाः प्रादुर्भूता शरीरिणाम्।
तपोपवासाध्ययनब्रह्मचर्यव्रतायुषाम् ॥
तदा भूतेष्वनुक्रोशं पुरस्कृत्य महर्षयः।
समेताः पुण्यकर्माणः पार्श्वे हिमवतः शुभे ॥
(च.सू. १।६-७)

जिसमें अनेक पुण्यकर्मा महर्षियों का समागम हुआ जो ब्रह्मज्ञान तथा यम-नियम के समुद्र थे। वे महर्षिगण तपस्या और तेज से प्रदीप्त यज्ञकुण्ड की अग्नि के समान देदीप्यमान थे। यथाह महर्षि अग्निवेशः—

अङ्गिरा जमदग्निश्च वसिष्ठः कश्यपो भृगुः।
आत्रेयो गौतमः सांख्यः पुलस्त्यो नारदोऽसितः ॥
अगस्त्यो वामदेवश्च मार्कण्डेयाश्वलायनौ।
पारीक्षिर्भिक्षुरात्रेयो भरद्वाजः कपिञ्जलः ॥
विश्वमित्राश्वरथ्यौ च भार्गवश्च्यवनोऽभिजित्।
गार्ग्यः शाण्डिल्यकौण्डिन्यौ वार्क्षिर्देवलगालवौ ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सांकृत्यो वैजवापिश्च कुशिको बादरायणः।
बडिशः शरलोमा च काप्यकात्ययनावुभौ॥
काङ्कायनः कैकशेयो धौम्यो मारीचकाश्यपौ।
शकराक्षो हिरण्याक्षो लोकाक्षः पैङ्गिरेव च॥
शौनकः शाकुनेयश्च मैत्रेयो मैमतायनिः।
वैखानसा बालखिल्यास्तथा चान्ये महर्षयः॥
ब्रह्मज्ञानस्य निधयः दमस्य नियमस्य च।
तपसस्तेजसा दीप्ता हूयमाना इवाग्नयः॥
(च.सू. १।८-१४)

अङ्गिरा	भरद्वाज	काप्य
जमदग्नि	कपिञ्जल	कात्यायन
वशिष्ठ	विश्वामित्र	काङ्कायन
कश्यप	अश्वरथ्य	कैकशेय
भृगु	भार्गव च्यवन	धौम्य
आत्रेय	अभिजित्	मारिच
गौतम	गार्ग्य	काश्यप
सांख्य	शाण्डिल्य	शर्कराक्ष
पुलस्त्य	कौण्डिन्य	हिरण्याक्ष
नारद	देवल	लोकाक्ष
असित	गालव	पैङ्गि
अगस्त्य	सांकृत्य	शौनक
वामदेव	वैजवापि	शाकुनेय
मार्कण्डेय	कुशिक	मैत्रेय
अश्वलायन	बादरायण	मैमतायनि
पारीक्षि	बडिश	वैखानस
भिक्षु आत्रेय	शरलोमा	बालखिल्य

वे पुण्यकर्मा महर्षिगणों ने उस संगोष्ठी में सुखपूर्वक बैठकर इस प्रकार कथा-वार्ता करना प्रारम्भ किया। पुरुषार्थचतुष्टय धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति हेतु आरोग्य ही मूल है। रोग इन चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति में बाधक है। रोग उस श्रेयस् (अलौकिक सुख) तथा जीवित (लौकिक सुख = प्रेयस्) को हरने वाले हैं। यह रोग समूह धर्मादि पुरुषार्थचतुष्टय के साधन में विघ्नस्वरूप हैं। इनके निराकरण का कौन-सा उपाय है? ऐसी जिज्ञासा व्यक्त कर समस्त ऋषिगण ध्यानमग्न हो गये और अपने दिव्यचक्षु से उसके कारण को देखने लगे, क्योंकि इनके लिए भूत, वर्तमान एवं भविष्य तीनों करामलकवत् था। तदनन्तर उन्होंने दिव्यदृष्टि से देखा कि हमें देवराज इन्द्र की शरण में जाना चाहिए, क्योंकि देवराज इन्द्र ही रोग-निवारण का विधिवत् उपाय बतायेंगें। यथाह महर्षि अग्निवेशः—

सुखोपविष्टास्ते तत्र पुण्यां चक्रुः कथामिमाम्।
धमार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्॥
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च।
प्रादुर्भूतो मनुष्याणामन्तरायो महानयम्॥
कः स्यात्तेषां शमोपाय इत्युक्त्वा ध्यानमास्थिताः।
अथ ते शरणं शक्रं ददृशुर्ध्यानचक्षुषा॥
स वक्ष्यति शमोपायं यथावदमरप्रभुः।
(च.सू. १।१५-१७)

उस संगोष्ठी में यह भी गम्भीर प्रश्न उठा कि रोगशान्त्यर्थ उपाय जानने के लिए देवराज इन्द्र के भवन (स्वर्ग) में कौन जाय, अर्थात् किसे भेजा जाय ? इस प्रश्न पर महर्षियों की सभा में महर्षि भरद्वाज ने सर्वप्रथम उठकर यह निवेदन किया कि मुझे इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए देवराज इन्द्र की पुरी में भेजा जाय। चूँकि महर्षियों की सभा थी, सभी लोग दिव्यज्ञान से परिपूर्ण थे, कोई भी ऋषि एक-दूसरे से ईष्या, द्वेष, मोह, लोभ, राग, हिंसा आदि से रहित थे, अतः महर्षि भरद्वाज की प्रथम उक्ति का कोई भी ऋषि विरोध नहीं कर सका। फलस्वरूप महर्षि भरद्वाज सर्वसम्मति से एतदर्थ नियुक्त किये गये। महर्षि भरद्वाज अपने दिव्यज्ञान एवं आलौकिक शक्तिओं से परिपूर्ण थे। अतः संगोष्ठी के निर्णयानुसार महर्षि भरद्वाज इन्द्रभवन (स्वर्ग) पहुँचे। वहाँ देवताओं के समूह से परिवृत शचीपति 'बल' नामक राक्षस को मारने वाले इन्द्र को प्रदीप्त अग्नि जैसा देखा। तब ऐश्वर्यवान् एवं बुद्धिमान् महर्षि भरद्वाज ने 'आपकी जय हो' ऐसा आशीर्वचन कह कर देवराज इन्द्र का अभिनन्दन किया और ऋषियों के लोककल्याणकारक संकल्प का बड़ी बुद्धिमानी से निवेदन किया। हे देवेन्द्र ! इस समय संसार के प्राणिमात्र भयङ्कर व्याधियों से पीड़ित हो रहे हैं जिससे मनुष्यों के पुरुषार्थ चतुष्टय एवं अन्य प्राणियों के स्वाभाविक कार्य बाधित हो रहे हैं। अतः आप इन भयङ्कर व्याधियों के विधिवत् शमनोपाय का हमें उपदेश देकर कृतार्थ करने की कृपा करें। तदनन्तर देवराज इन्द्र ने महर्षि भरद्वाज को परम बुद्धिमान् एवं ऐश्वर्यशाली समझ कर परिमित शब्दों में सूत्ररूप में त्रिस्कन्ध (हेतु-लिङ्ग-औषधज्ञान) आयुर्वेद का सारगर्भित प्रवचन किया। साथ ही स्वस्थ एवं आतुर पुरुष से सम्बन्धित आयुर्वेदीय ज्ञान का उपदेश किया। यथाह अग्निवेशः—

कः सहस्राक्षभवनं गच्छेत् प्रष्टुं शचीपतिम्॥
अहमर्थे नियुज्येऽयमत्रेति प्रथमं वयः।
भरद्वाजोऽब्रवीत्तस्मादृषिभिः स नियोजितः॥
स शक्रभवनं गत्वा सुरर्षिगणमध्यगम्।
ददर्श बलहन्तारं दीप्यमानमिवानलम्॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सोऽभिगम्य जयाशीर्भिरभिनन्द्य सुरेश्वरम्।
प्रोवाच भगवान् धीमानृषीणां वाक्यमुत्तमम्॥
व्याधयो हि समुत्पन्नाः सर्वप्राणिभयङ्कराः।
तद् ब्रूहि मे शमोपायं यथावदमरप्रभो॥
तस्मै प्रोवाच भगवनायुर्वेदं शतक्रतुः।
यदैरल्पैर्मतिं बुध्वा विपुलां परमर्षये॥
(च.सू. १।१८-२३)

महामति भरद्वाज ऋषि ने अल्पकाल में त्रिस्कन्ध आयुर्वेद तथा स्वस्थ और आतुर सम्बन्धी सम्पूर्ण आयुर्वेदीय ज्ञान का सम्यक्तया (स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणं, आतुरस्य व्याधिप्रशमनम्) परिज्ञान किया। उस आयुर्वेद का सम्पूर्ण ज्ञान करने से महर्षि भरद्वाज ने सुखमय दीर्घायु को प्राप्त किया। तदनन्तर महर्षि भरद्वाज ने पृथ्वी पर वापस आकर उस उपदिष्ट आयुर्वेदीय ज्ञान को अविकल भाव से (जितना इन्द्र से प्राप्त था उतना ही, न कम और न अधिक) समस्त ऋषियों को उपदेश दिया। यथाह अग्निवेशः—

सोऽनन्तरपारं त्रिस्कन्धमायुर्वेदं महामतिः।
यथावदचिरात् सर्वं बुबुधे तन्मना मुनिः॥
तेनायुरमितं लेभे भरद्वाजः सुखान्वितम्।
ऋषिभ्योऽनधिकं तच्च शशंसानवशेषयन्॥
(च.सू. १।२५-२६)

दीर्घ आयु की इच्छा रखते हुए प्रजा के हितकारक और आयु को बढ़ाने वाले वेद (आयुर्वेद) को ऋषियों ने भी भरद्वाज से ग्रहण किया। यथाह अग्निवेशः—

ऋषयश्च भरद्वाजाज्जगृहुस्तं प्रजाहितम्।
दीर्घमायुश्चिकीर्षन्तो वेदं वर्धनमायुषः॥
(च.सू. १।२७)

उन महर्षियों ने भी अपनी दिव्यदृष्टि से—१. सामान्य, २. विशेष, ३. गुण, ४. द्रव्य, ५. कर्म और ६. समवाय को देखा और इन्हें भलीभाँति जानकर तथा आयुर्वेद-तन्त्रोक्त विधि का आश्रय लेकर उत्कृष्ट सुख एवं अविनाशी जीवन को प्राप्त किया।

तदनन्तर सबके प्रति मित्रता का भाव रखने वाले महर्षि भरद्वाज के शिष्य पुनर्वसु आत्रेय ने सभी प्राणियों पर दया की इच्छा से अपने छः शिष्यों—१. अग्निवेश, २. भेल, ३. जतूकर्ण, ४. पाराशर, ५. हारीत और ६. क्षारपाणि को पुण्यफलदायक आयुर्वेद का उपदेश दिया और अपनी बुद्धि विशेषता के कारण उन अग्निवेशादि शिष्यों ने अपने-अपने नामों की संहिताएँ बनायीं, जिनमें अग्निवेश ने सर्वप्रथम अपनी संहिता का निर्माण किया। इसमें महर्षि आत्रेय (गुरु) के उपदेश में अन्तर नहीं था।

अथ मैत्रीपरः पुण्यमायुर्वेदं पुनर्वसुः।
शिष्येभ्यो दत्तवान् षड्भ्यः सर्वभूतानुकम्पया॥
अग्निवेशश्च भेडश्च जतूकर्णः पराशरः।
हारीतः क्षारपाणिश्च जगृहुस्तन्मुनेर्वचः॥
बुद्धेर्विशेषस्तत्रासीन्नोपदेशान्तरं मुनेः।
तन्त्रस्य कर्ता प्रथममग्निवेशो यतोऽभवत्॥
अथ भेडादयश्चक्रुः स्वं स्वं तन्त्रं कृतानि च।
श्रावयामासुरात्रेयं सर्षिसङ्घं सुमेधसः॥
(च.सू. १।३०-३३)

आयुर्वेदावतरण की चरकीय परम्परा
(चरकसंहिता-सूत्रस्थान १।३०-३२)

आयुर्वेद के प्रथम उपदेष्टा
ब्रह्मा
↓
दक्षप्रजापति
↓
अश्विनीकुमार
↓
देवराज इन्द्र
↓
भरद्वाज
↓
आत्रेय आदि ऋषिगण
अग्निवेश - भेड - जतूकर्ण - पराशर - हारीत - क्षारपाणि

आयुर्वेदावतरण की यह चरकीय परम्परा मानी जाती है।

सौश्रुतीय परम्परा—सौश्रुतीय परम्परा में भी आयुर्वेद के प्रथम उपदेष्टा ब्रह्मा ही हैं। साथ ही देवराज इन्द्र तक की उपर्युक्त परम्परा यथावत् है। महर्षि सुश्रुत ने अपनी संहिता में आयुर्वेदावतरण क्रम में दिवोदास का वह कथन यथावत् उद्धृत किया है। यथाह भगवान् दिवोदासः—

'ब्रह्मा प्रोवाच, ततः प्रजापतिरधिजगे, तस्मादश्विनौ, अश्विभ्यामिन्द्रः इन्द्रादहं, मया त्विह प्रदेयमर्थिभ्यः प्रजाहित हेतोः'।
(सु.सू. १।२८)

सुश्रुतसंहिता में काशिराज दिवोदास के अनेक शिष्य-शृंखला में मात्र सात शिष्यों का उल्लेख मिलता है। यथा—औपधेनव, वैतरण, औरभ्र, पौष्कलावत, करवीर्य, गोपुररक्षित एवं सुश्रुत प्रभृति। यथाह सुश्रुतः—

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

'अथ खलु भगवन्तममरवरऋषिगणपरिवृतमाश्रयमस्थं काशिराजं दिवोदासं धन्वन्तरिमौपधेनवैतरणौरभ्रपौष्कलावतकर-वीर्यगोपुररक्षित-सुश्रुतप्रभृतय ऊचुः'। (सु.सू. १।२)

सुश्रुत की परम्परा में आयुर्वेदावतरण

प्रथम आयुर्वेद उपदेष्टा

पितामह ब्रह्मा

↓

दक्षप्रजापति

↓

अश्विनीकुमारौ

↓

देवराज इन्द्र

↓

काशिराज दिवोदास धन्वन्तरि

औपधेनव वैतरण औरभ्र पौष्कलावत करवीर्य गोपुररक्षित सुश्रुत

भगवान् दिवोदास कहते हैं कि तुम लोगों द्वारा आयुर्वेदोपदेश की याचना के बाद प्रजाहित की कामना से मेरे द्वारा उपदेश किया जा रहा है। प्रथम ब्रह्मा द्वारा उपदिष्ट आयुर्वेद, दक्षप्रजापति, अश्विनीकुमारों एवं देवराज इन्द्र—इन चार पीढ़ियों तक आकर आयुर्वेद का क्रमिक विकास अवरुद्ध हो गया था। क्योंकि अनादि एवं शाश्वत आयुर्वेद अपनी चौथी पीढ़ी पर अवरुद्ध हो गई थी। अतः सन्तान-परम्परा के अवरोध से ब्रह्मादि देवता भी असन्तुष्ट थे। उनकी इच्छा थी कि आयुर्वेद का क्रमिक विकास हो जिससे प्राणिमात्र का कल्याण हो। अतः अवरुद्ध सन्तान-परम्परा के उत्कर्ष हेतु ब्रह्मादि की प्रेरणानुसार ही भरद्वाज या काशिराज दिवोदास ने स्वर्ग में जाकर सूत्ररूप में त्रिस्कन्ध आयुर्वेद का सर्वाङ्गीण ज्ञान प्राप्त कर इस पृथ्वी पर अन्य जिज्ञासु ऋषियों को लोककल्याण की भावना से उपदेश दिया।

महर्षि अग्निवेश ने आयुर्वेद का प्रयोजन इस प्रकार बतलाया है—

'प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकारप्रशमनम्'। (च.सू. ३०।२६)

अपि च—'इह खल्वायुर्वेदप्रयोजनं—व्याध्युपसृष्टानां व्याधि-परिमोक्षः स्वस्थस्य रक्षणञ्च'। (सु.सू. १।२२)

महर्षि अग्निवेश की दृष्टि में आयुर्वेद की परिभाषा बहुत ही स्पष्ट है—

'हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते'॥ (च.सू. १।४१)

हित आयु, अहित आयु, सुख आयु और दुःख आयु तथा उस आयु के लिए जो हितकर अथवा अहितकर हो; आयु का मान (प्रमाण) और उसके लक्षणों का वर्णन जिसमें हो उसे आयुर्वेद कहते हैं।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार आयुर्वेद की परिभाषा इस प्रकार है—

'आयुरस्मिन् विद्यतेऽनेन वा आयुर्विदन्तीत्यायुर्वेदः'। (सु.सू. १।३३)

अर्थात् आयु के हित का विचार जिसमें हो, जिसके उपदेशों से दीर्घायु की प्राप्ति हो, उसे आयुर्वेद कहते हैं।

मिश्रवर्गः

पुरुषार्थचतुष्टय का श्रेय

**धमार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्।
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च ॥११॥**

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये जो पुरुषार्थचतुष्टय है। इनकी प्राप्ति के लिए शरीर का नीरोग होना ही प्रधान (मूल) कारण है। व्याधियाँ उपर्युक्त पुरुषार्थचतुष्टय एवं प्राण का नाशक है। अर्थात् रोग सुखायु, हितायु एवं जीवन को नष्ट करने वाला है। श्रेयसो जीवितस्य चेति—श्रेयो वज्जीवितं हितत्वेन, सुखत्वेन चार्थे।

व्याधियों के प्रकार

**व्याधयो द्विविधाः प्रोक्ताः शारीरा मानसास्तथा।
शारीरा ज्वरकुष्ठाद्या उन्मादाद्या मनोभवाः ॥१२॥**

१. शारीरिक एवं २. मानसिक रूप से व्याधियाँ दो प्रकार की होती हैं। ज्वर, कुष्ठ आदि व्याधियाँ शारीरिक हैं तथा उन्मादादि व्याधियाँ मानसिक हैं।

विमर्श—इस सन्दर्भ में अन्यत्र भी कहा गया है—'शारीर-मानसागन्तुसहजा व्याधयो मताः। शारीराज्ज्वरकुष्ठाद्याः क्रोधाद्या मानसा मताः॥ आगन्तवोऽभिशापोत्थाः सहजा क्षुत्तृषादयः'॥

अर्थात् व्याधियाँ शारीरिक, मानसिक, आगन्तुक एवं सहज भेद से चार प्रकार की होती हैं; यथा—

१. शारीरिक (Somatic) यथा–ज्वर, कुष्ठ, अर्शादि।
२. मानसिक (Psychic) यथा–उन्माद, अपस्मार, क्रोधादि।
३. आगन्तुक (Traumatic) यथा–अभिशापज, सर्पदंष्ट्रादि।
४. सहज (Natural) यथा–भूख, प्यास, जरा आदि।

दोषसाम्य एवं दोषवैषम्य का फल

**दोषाणां साम्यमारोग्यं वैषम्यं व्याधिरुच्यते।
सुखसंज्ञकमारोग्यं विकारो दुःखमेव च ॥१३॥**

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वात, पित्त एवं कफ (तीनों दोष) का सम अवस्था में रहना ही आरोग्य कहलाता है और इन तीनों दोषों की विषमता अर्थात् विषम अवस्था में रहना रोग कहलाता है। आरोग्य का दूसरा पर्याय सुख है और विकार का दूसरा नाम दुःख है।

व्याधि के भेद

साध्योऽसाध्य इति व्याधिर्द्विधातौ तु पुनर्द्विधा।
सुखसाध्यः कृच्छ्रसाध्यो याप्यो यश्चाप्रतिक्रियः ॥१४॥

व्याधियाँ साध्य एवं असाध्य भेद से दो प्रकार की होती हैं। साध्य व्याधियाँ भी सुखसाध्य एवं कृच्छ्रसाध्य भेद से २ प्रकार की होती हैं। याप्य एवं अप्रतिक्रिय भेद से व्याधियों के और प्रभेद होते हैं। याप्य व्याधियाँ वे हैं, जिनकी चिकित्सा होते रहने तक दबी रहती हैं और चिकित्सा (औषधि) छोड़ देने पर पुनः तीव्र हो जाती हैं। अप्रतिक्रिय व्याधियाँ वे हैं जिनका प्रतिकार इलाज या चिकित्सा से सम्भव नहीं, जैसे आजकल कैंसर, एड्स आदि।

पापज और कर्मज भेद से व्याधियाँ

तत्रैकः पापजो व्याधिरपरः कर्मजो मतः।
पापजः प्रशनं याति भैषज्यसेवनादिना ॥१५॥
यथाशास्त्रविनिर्णीतो यथाव्याधिचिकित्सितः।
न शमं याति यो व्याधिः स ज्ञेयः कर्मजो बुधैः ॥१६॥

पुनः व्याधियाँ दो प्रकार की होती हैं—१. पापज, २. कर्मज। पापज व्याधियाँ इसी जन्म में मिथ्या आहार-विहार आदि मिथ्याचरणस्वरूप उत्पन्न होने वाली होती है। इन्हें वात- पित्त-कफसमुद्भव दोषज व्याधियाँ भी कहते हैं तथा दूसरी व्याधियाँ कर्मज कही जाती हैं। इनमें से पापज व्याधियाँ औषधसेवनादि उपचार एवं युक्ति आदि से शान्त हो जाती हैं तथा जो व्याधि निदानादि रोगनिर्णयानुसार व्याधिसात्म्य चिकित्सा करने पर भी शान्त नहीं हो तो उसे कर्मज व्याधि समझना चाहिए।

मृत्यु की दुर्निवारता

न जन्तुः कश्चिदमरः पृथिव्यामेव जायते।
अतो मृत्युरवार्य्य स्यात्किन्तुरोगो निवार्यते ॥१७॥

इस पृथ्वी पर कोई भी प्राणि (व्यक्ति) अमर नहीं है, अतः मृत्यु अनिवार्य है। किन्तु औषधि एवं युक्ति आदि चिकित्सा से रोगों का निवारण किया जा सकता है।

रोग की उपेक्षा का फल

याप्यत्वं याति साध्यस्तु याप्यो गच्छत्यसाध्यताम्।
जीवितं हन्त्यसाध्यस्तु नरस्याप्रतिकारिणः ॥१८॥

जो मनुष्य रोग की उपेक्षा करता है अर्थात् रोग के प्रारम्भ काल से ही उसकी चिकित्सा आदि उपचार (चिकित्सा) नहीं करता है तो वह साध्य रोग कुछ समय में ही याप्य हो जाता है और याप्य रोग असाध्य हो जाता है। यदि असाध्य रोग की उपेक्षा की जाय अर्थात् चिकित्सा न की जाय तो वह रोग उस व्यक्ति (रोगी) को मृत्यु को प्राप्त करा देता है।

उपेक्षा से रोगों का परिवर्तन

याप्याः केचित्प्रकृत्यैव केचिद्याप्या उपेक्षया।
प्रकृत्या व्याधयोऽसाध्याः केचित् केचिदुपेक्षया ॥१९॥

कुछ रोग स्वभाव से ही याप्य या असाध्य होते हैं और कुछ रोग उपेक्षित होने अर्थात् सावधानी से चिकित्सा नहीं कराने से याप्य एवं असाध्य हो जाते हैं।

मृत्यु के भेद

एकोत्तरं मृत्युशतमस्मिन् देहे प्रतिष्ठितम्।
तत्रैकः कालसंयुक्तः शेषास्त्वागन्तवः स्मृताः ॥२०॥

इस शरीर में १०१ प्रकार की मृत्यु स्थित है, उनमें एक ही काल मृत्यु है शेष १०० मृत्यु अकाल या आगन्तुक मृत्यु है।

काल की प्रबलता

ये त्विहागन्तवः प्रोक्तास्ते प्रशाम्यन्ति भेषजैः।
जपहोमप्रदानैश्च कालमृत्युर्न शाम्यति ॥२१॥
पीडितं रोगसर्पाद्यैरपि धन्वन्तरिः स्वयम्।
सुस्थीकर्तुं न शक्नोति कालप्राप्तं हि देहिनम् ॥२२॥

जो आगन्तुक मृत्यु है वह औषध, जप, होम, दानादि से शान्त (रुक सकती है) हो सकती है किन्तु जो कालमृत्यु है वह किसी प्रकार से शान्त नहीं हो सकती है, अर्थात् कालमृत्यु दुर्निवार है। कालमृत्यु के वशीभूत व्यक्ति चाहे ज्वर से पीड़ित हो या सर्पादि दंष्ट से व्यथित हो, उसे स्वयं साक्षात् भगवान् धन्वन्तरि स्वस्थ करने में समर्थ नहीं हो सकते हैं।

आयुष्य कर्माभाव से मृत्यु

आयुष्ये कर्मणि क्षीणे लोकोऽयं दूयते यदा।
नौषधानि न मन्त्राश्च न होमा न पुनर्जपाः।
त्रायन्ते मृत्युनोपेतं जरया चापि मानवम् ॥२३॥
वर्त्याधारस्नेहयोगाद् यथा दीपस्य संस्थितिः।
विक्रियाऽपि च दृष्टैवमकाले प्राणसंक्षयः ॥२४॥

ज्योतिस्तत्त्व में कहा गया है कि आयु को बढ़ाने वाले कर्मों के क्षय होने पर मैं ही सभी प्राणियों को पीड़ित करता हूँ। उस समय न औषधियाँ, न मन्त्र, न होम और न ही जप आदि कोई भी साधन बुढ़ापा और मृत्यु से ग्रसित मनुष्य को बचा नहीं सकते हैं। जैसे दीपक में स्नेह, बत्ती सब साधन रहते हुए भी वायु के

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

झोंके से दीपक अचानक बुझ जाता है वैसे ही आयु के शेष रहने पर भी रोगादि कारणों से भी असमय में मृत्यु हो जाती है।

वैद्य आयु का प्रभु नहीं

व्याधेस्तत्त्वपरिज्ञानं वेदनायाश्च निग्रहः।
एतद्वैद्यस्य वैद्यत्वं न वैद्यः प्रभुरायुषः ॥२५॥

व्याधि के तत्त्व अर्थात् व्याधि का स्वरूप, लक्षण और व्याधि का निदान (कारण) का ठीक-ठीक परिज्ञान तथा रोग की चिकित्सा द्वारा रोग का शमन अर्थात् रोग का नाश करना, यही वैद्य (चिकित्सक) का मुख्य कार्य है। इसके अतिरिक्त वैद्य आयु का ईश्वर नहीं है अर्थात् आयु को बढ़ा नहीं सकता है।

अचिकित्स्य रोगी

यादृच्छिको मुमूर्षूश्च विहीनः करणैश्च यः।
वैरी च वैद्यविद्वेषी श्रद्धाहीनः सशङ्कितः ॥२६॥
भिषजामनियम्यश्च नोपक्रम्यो भिषग्विदा।
एतानुपाचरन् वैद्यो बहून् दोषानवाप्नुयात् ॥२७॥

श्रेष्ठ एवं विद्वान् को चाहिए कि वह इन लक्षणों से युक्त रोगियों की चिकित्सा नहीं करे; यथा—१.स्वेच्छाचारी, २. मरणासन्न, ३. इन्द्रियशक्ति से रहित, ४. अपने शत्रु, ५. वैद्यों से द्वेष करने वाला, ६. श्रद्धाहीन (वैद्य या आयुर्वेद पर जिसकी श्रद्धा नहीं हो), ७. शंकालु (हमेशा वैद्य, औषध एवं परिजनों से सशंकित) तथा ८. वैद्य की आज्ञा न मानने वाले रोगी की चिकित्सा नहीं करे। इनकी चिकित्सा करने पर वैद्य को अनेक प्रकार के लांछन (दोष) सहने पड़ते हैं। रोग शान्त न होने पर यशोहानि, अर्थहानि, वैद्यनिन्दा, अज्ञान, लोलुप आदि अनेक प्रकार के दोष लगते हैं।

चिकित्सा का काल

यावत्कण्ठगताः प्राणा यावन्नास्ति निरिन्द्रियः।
तावच्चिकित्सा कर्तव्या कालस्य कुटिला गतिः॥२८॥

जब तक कण्ठ में प्राण हो, जब तक इन्द्रियों की शक्ति नष्ट न हो, तब तक रोगी की चिकित्सा करनी चाहिए क्योंकि काल की गति बड़ी टेढ़ी है। कभी-कभी मरणासन्न रोगी भी स्वस्थ हो जाता है। इसे समझना बड़ा ही कठिन है।

रोग की अविलम्ब चिकित्सा

जातमात्रश्चिकित्स्यस्तु नोपेक्ष्योऽल्पतया गदः।
वह्निशस्त्रविषैस्तुल्यः स्वल्पोऽपि विकरोत्यसौ ॥२९॥
यथा स्वल्पेन यत्नेन छिद्यते तरुणस्तरुः।
स एवाति प्रवृद्धस्तु छिद्यतेऽति प्रयत्नतः ॥३०॥

रोग उत्पन्न होते ही तुरन्त चिकित्सा करनी चाहिए। रोग को सामान्य कह कर उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। क्योंकि सामान्य रोग भी अग्नि, शस्त्र एवं विष के समान अल्प परिमाण में होने पर भी महान् विकार उत्पन्न करता है। जैसे छोटा पौधा स्वल्प यत्न से काट दिया जाता है, किन्तु बड़ा वृक्ष बहुत परिश्रम से काटा जाता है।

वैद्यातिरिक्त निर्मित औषधि से हानि

मोहाद् द्विजातिवर्णाद्यैः पाचिते खादिते सति।
प्रायश्चित्ती भवेच्छूद्रो जातिहीनो भवेद् द्विजः ॥३१॥

जो शूद्र ब्राह्मणादि द्विजाति द्वारा निर्मित औषधि भ्रमवश खाता है, उसे प्रायश्चित्त करना चाहिए और वे ब्राह्मणादि द्विज भी जाति-च्युत हो जाते हैं। अभिप्राय यह है कि वैद्य के अतिरिक्त बनाई गई औषधि के प्रयोग से लाभ के स्थान पर हानि ही होती है।

ग्रहशान्तिपूर्वक चिकित्सा

ग्रहेषु प्रतिकूलेषु नानुकूलं हि भेषजम्।
ते भेषजानां वीर्याणि हरन्ति बलवन्त्यपि ॥३२॥
प्रतिकृत्य ग्रहानादौ पश्चात् कुर्याच्चिकिसितम् ॥३३॥

जिस रोगी के सूर्यादि ग्रह प्रतिकूल हों, उनमें औषधि प्रयोग लाभप्रद नहीं होता है, क्योंकि वे प्रतिकूल ग्रह औषधियों के अत्यन्त बलवती शक्ति का अपहरण कर लेती हैं। अतः सर्वप्रथम ग्रहशान्ति करा कर उन ग्रहों को अनुकूल करके तब चिकित्सा करनी चाहिए।

चिकित्सा के भेद

आसुरी मानुषी दैवी चिकित्सा त्रिविधा मता।
शस्त्रैः कषायैर्लोहाद्यैः[1] क्रमेणान्त्याः सुपूजिताः ॥३४॥

१. आसुरी, २. मानुषी तथा ३. दैवी; इन भेदों से चिकित्सा तीन प्रकार की है। शस्त्र (चीर-फाड़) द्वारा की जाने वाली चिकित्सा को आसुरी, वनस्पतियों के स्वरस, कल्क, क्वाथ, हिम-फाण्टादि द्वारा की जाने वाली चिकित्सा को मानुषी और देवार्चन-पूजन-जप-होम-दान-प्रवचन-कीर्तन-श्रवण-दक्षिणा आदि द्वारा ग्रहशान्ति कराकर चिकित्सा करना दैवी चिकित्सा कही जाती है। इन तीनों में दैवी चिकित्सा श्रेष्ठ है।

विमर्श—रसशास्त्र में भी चिकित्सा के यही तीन भेद बताये गये हैं। किन्तु दैवी चिकित्सा की परिभाषा में होमाद्यै या लोहाद्यै शब्द या पूजा-पाठ का उल्लेख नहीं किया गया है। वहाँ पर पारद के द्वारा की जाने वाली चिकित्सा को ही दैवी चिकित्सा कहा है। यथाह आचार्य बिन्दुः—

सा दैवी प्रथमा सुसंस्कृतरसैर्या निर्मिता तद्रसै-
श्चूर्णस्नेहकषायलेहरचिता स्यान्मानवी मध्यमा।

१. लोहाद्यै इति पाठभेदः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शस्त्रच्छेदनलास्यलक्षणकृताचाराधमा साऽऽसुरी-
त्यायुर्वेदरहस्यमेतदखिलं तिस्रश्चिकित्सा मताः ॥
(रसपद्धतिः)

अपि च—

उत्तमो रसवैद्यस्तु मध्यमो मूलिकादिभिः।
अधमः शस्त्रदाहाभ्यामित्थं वैद्यस्त्रिधा मताः॥

चिकित्सा का लक्षण (चरक)

याभिः क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातवः समाः ।
सा चिकित्सा विकाराणां कर्म तद्भिषजां मतम् ॥३५॥

जिन क्रियाओं के द्वारा शरीर की धातुएँ वात-पित्त-कफ ('धारणाद्धातु दूषणाद्दोष' के सिद्धान्त से वात-पित्त-कफ धातु भी हैं और दोष भी) समावस्था को प्राप्त हो जायें, वही रोगों या विकारों की चिकित्सा है तथा वैद्यों का कर्म भी है।

चिकित्सा की सफलता (चरक)

क्वचिद्धर्मः क्वचिन्मैत्री क्वचिदर्थः क्वचिद्यशः ।
कर्माभ्यासः क्वचिच्चापि चिकित्सा नास्ति निष्फला ॥३६

चिकित्सा करने पर वैद्य को अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। कहीं पर वैद्य को धर्म की प्राप्ति होती है, कहीं पर मित्रता मिलती है, कहीं पर अर्थ की प्राप्ति होती है, तो कहीं पर यश मिलता है और कहीं पर उपर्युक्त चारों में कुछ भी नहीं मिलने पर कर्माभ्यास (अनुभव) ही प्राप्त होता है। अतः चिकित्सा कभी निष्फल नहीं होती है।

वैद्य निर्मित औषध का महत्त्व

अन्यजातिकृतः पाको ह्यस्पृश्यः सर्वजातिभिः ।
इति विज्ञाय मतिमान् वैद्यं पाके नियोजयेत् ॥३७॥

वैद्य के अतिरिक्त किसी और की बनाई हुई औषधि किसी को नहीं खिलावें। अवैद्य निर्मित औषध सभी जातियों के लिए त्याज्य है। औषध-निर्माण विषय में दूसरे वर्ग के लोगों के अनभिज्ञ होने के कारण विशुद्ध औषधि नहीं बनकर हानिप्रद औषधि बन सकती है। अतः बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि औषधपाक कार्य में विद्वान् एवं सिद्धहस्त वैद्य की ही सहायता ले।

विद्या समाप्ति पर ही वैद्य संज्ञा

विद्या समाप्तौ भिषजां द्वितीया जातिरुच्यते ।
न वैद्यो वैद्यशब्दं हि लभते पूर्वजन्मना ॥३८॥

विद्या की समाप्ति होने पर (आयुर्वेद के अध्ययनोपरान्त) वैद्यों की दूसरी जाति (द्विजाति=द्विजसंज्ञा) होती है; अर्थात् तभी वह वैद्य (चिकित्सक) कहलाता है। पूर्व जाति के आधार पर या वैद्य की सन्तान होने मात्र से कोई वैद्य नहीं कहा जा सकता है।

वैद्य को द्विजत्व की सार्थकता

विद्यासमाप्तावार्षं वा ब्राह्मं वा भिषजं ध्रुवम् ।
सत्त्वमाविशति ज्ञानात्तेन वैद्यो द्विजः स्मृतः ॥३९॥

आयुर्वेदाध्ययन के पश्चात्, आयुर्वेद का सम्यग् ज्ञान होने पर वैद्य में आर्ष अथवा ब्राह्म बुद्धि का प्रवेश होता है। उसी से वैद्य द्विज कहलाता है।

चिकित्साचतुष्पाद (चरक)

भिषग् द्रव्यमुपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम् ।
गुणवत् कारणं ज्ञेयं विकारस्योपशान्तये ॥४०॥

१. वैद्य, २. औषधि, ३. परिचारक और ४. रोगी ये चारों मिलकर चिकित्सा के चार पाद कहे जाते हैं। यदि ये चारों अङ्ग (पाद) निम्नलिखित अपने गुणों से युक्त हों तो इन्हें रोगशान्ति का कारण माना जाता है।

चिकित्सक के गुण (चरक)

श्रुते पर्यवदातत्वं बहुशो दृष्टकर्मता ।
दाक्ष्यं शौचमिति ज्ञेयं वैद्ये गुणचतुष्टयम् ॥४१॥

१. आयुर्वेदादि शास्त्र का सम्यग् ज्ञान, २. अनेक बार चिकित्सकीय कर्मों का अच्छी तरह देखना या गुरु के साथ मिल कर रोगियों की चिकित्सा करना अर्थात् अनुभवी, ३. दक्षता (क्रियानैपुण्य या कार्यकुशलता) और ४. पवित्रता (शरीर, मन और वाणी की पवित्रता)—ये चार गुण वैद्य में होने चाहिए।

विमर्श—उपर्युक्त श्लोक महर्षि अग्निवेश द्वारा उद्धृत है। महर्षि सुश्रुत भी प्रायः ऐसा ही कहते हैं; यथा—

एकं शास्त्रमधीयानो न विद्याच्छास्त्रनिश्चयम् ।
तस्माद्बहुश्रुतःशास्त्रं विजानीयाच्चिकित्सकाः ॥
(सु.सू. ४।७)

तत्त्वाधिगतशास्त्रार्थो दृष्टकर्मा स्वयंकृती।
लघुहस्तः शुचिः शूरः सज्जोपस्करभेषजः॥
प्रत्युत्पन्नमतिर्धीमान् व्यवसायी विशारदः।
सत्यधर्मपरो यश्च स भिषक् पाद उच्यते॥
(सु.सू. ३४।१९-२०)

अपि च—

गुरोरधीताखिलवैद्यविद्यः पीयूषपाणिकुशलः क्रियासु ।
गतस्पृहो धैर्यधरः कृपालु शुद्धोऽधिकारी भिषगीदृशः स्यात् ॥
(वैद्यजीवन)

औषधि के गुण

प्रशस्तदेशसम्भूतं प्रशस्तेऽहनि चोद्धृतम् ।
युक्तमात्रं महावीर्यं गन्धवर्णरसान्वितम् ॥४२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उद्भिज्जमपरिक्षुण्णं शुद्धं धात्वादिकं तथा।
समीक्ष्य काले दत्तं च प्राहुः परममौषधम् ॥४३॥

श्रेष्ठ देशों (हिमालयादि क्षेत्र) में उत्पन्न, शुभ दिन या श्रेष्ठ नक्षत्र में उखाड़ी गई, थोड़ी मात्रा में भी जो अतिवीर्यवती हो, अपने रस-गुण-वीर्य-विपाक-प्रभाव एवं गन्ध और वर्ण से युक्त हो, उद्भिज्ज (द्रव्यों के चार भेद बताये गये हैं यथा—वनस्पति, वानस्पत्य, वीरुध, औषधि) तथा शोधित धातु आदि विचार कर यथासमय प्रयुक्त करने से उत्तम औषधि कही जाती है।

परिचारक के गुण

उपचारज्ञता दाक्ष्यमनुरागश्च भर्तरि।
शौचञ्चेति चतुर्थोऽयं गुणः परिचरे जने ॥४४॥

सुश्रुषा को जानने वाला, कार्यकुशल, स्वामी के प्रति अनुराग रखनेवाला और पवित्रता—ये चार गुण परिचारक के हैं।

रोगी के गुण

स्मृतिनिर्देशकारित्वमभीरुत्वमथापि च।
ज्ञापकत्वञ्च रोगाणामातुरस्य गुणा मताः ॥४५॥

स्मृतिमान् (अपना रोग कैसे प्रारम्भ हुआ इसका स्मरण रखने वाला), निर्देशकारित्व अर्थात् वैद्य की आज्ञा मानने वाला, भय रहित और रोग के लक्षण तथा रोग की पीड़ा एवं अन्य उपद्रव का सही-सही ज्ञान चिकित्सक को कराना—ये चार गुण रोगी के हैं।

वैद्य की प्रधानता

मृद्दण्डचक्रसूत्राद्याः कुम्भकारादृते यथा।
नावहन्ति गुणं वैद्यादृते पादत्रयं तथा ॥४६॥

जैसे मिट्टी, दण्ड, चक्र और सूत्र (धागा) आदि कुल उपादान कारण कुम्भकार के बिना घड़ा आदि का निर्माण नहीं कर सकते, वैसे ही चिकित्सक के बिना पूर्वोक्त पाद त्रय (औषधि, परिचारक और रोगी) के होते हुए भी इनसे चिकित्सा-कार्य या रोग का नाश सम्भव नहीं है। अतः चिकित्सा-कार्य में वैद्य का महत्त्व सर्वाधिक है।

विद्वान् वैद्य की प्रशंसा

यस्तु रोगविशेषज्ञः सर्वभैषज्यकोविदः।
साध्यासाध्यविधानज्ञस्तस्य सिद्धिः करे स्थिता ॥४७॥

जो वैद्य देश, काल एवं ऋतु के अनुसार रोगों की विशेषता का ज्ञान रखता हो, सभी प्रकार की औषधियों के रस, गुण, वीर्य, विपाक और मात्रा आदि का प्रयोग निश्चित रूप से जानता हो, औषधियों के निर्माण में भी दक्षता रखता हो, रोग के साध्यासाध्य, निदान, सम्प्राप्ति, उपशय, अनुपशय और चिकित्सा आदि का सम्यग् ज्ञान रखता हो उस वैद्य के पास सिद्धियाँ हाथ जोड़ कर खड़ी रहती हैं अर्थात् उसके हाथ में सिद्धियाँ उपस्थित रहती हैं।

दृष्टकर्मा और शास्त्रज्ञ वैद्य की प्रशंसा

दृष्टकर्मा च शास्त्रज्ञो वैद्यः स्यात् सिद्धिभागसौ।
एकाङ्गहीनो न श्लाघ्य एकपक्ष इव द्विजः ॥४८॥

जिसने गुरु के पास रहकर औषध, रस, भस्म, घृत, तैल, आसव, अरिष्ट, चूर्ण, वटी आदि निर्माण का प्रत्यक्ष ज्ञान किया हो, साथ ही स्वयं भी निर्माण किया हो तथा सम्पूर्ण आयुर्वेद शास्त्र का सम्यग् अध्ययन किया हो, ऐसा उभयज्ञ वैद्य चिकित्सा-कार्य में सिद्धि प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त एकपक्षीय ज्ञान वाला वैद्य (केवल दृष्टकर्मा या केवल शास्त्रज्ञ) श्रेष्ठ नहीं माना जाता है; ठीक उसी तरह जैसे एक पंख कटा हुआ पक्षी उड़ने आदि कार्य में असमर्थ रहता है, वैसे ही एकपक्षीय ज्ञान वाले वैद्य आदरणीय नहीं होते हैं।

शास्त्रज्ञ-अशास्त्रज्ञ वैद्य

शास्त्रं गुरुमुखोद्गीर्णमादायोपास्य चासकृत्।
यः कर्म कुरुते वैद्यः स वैद्योऽन्ये तु तस्करा ॥४९॥

जिसने गुरु के मुख से उच्चरित शास्त्र को यथावत् स्मरण कर चिकित्साभ्यास किया है, वही वैद्य कहलाता है। इसके विपरीत जो स्वयं शास्त्रों को पढ़कर सद्-असद् अधूरा ज्ञान प्राप्त कर चिकित्सा करता है वह वैद्य रोगी के प्राण और धन का हरण करने वाला तस्कर (चोर) है।

अज्ञ वैद्य की निन्दा

यस्तु रोगमविज्ञाय कर्माण्यारभते भिषक्।
अप्यौषधविधानज्ञस्तस्य सिद्धिर्यदृच्छया ॥५०॥

जो वैद्य रोग का सही निदान न कर (रोग की पहचान न कर) चिकित्सा प्रारम्भ कर देता है चाहे वह सम्पूर्ण औषध प्रयोग को जानता भी हो, तो भी उसके लिए चिकित्सा में सिद्धि प्राप्त करना अनिश्चित-सा है।

शास्त्रज्ञान रहित वैद्य

अविज्ञाय तु शास्त्राणि भेषजं कुरुते भिषक्।
यम एव स विज्ञेयो मर्त्यानां मृत्युरूपधृक् ॥५१॥

जो वैद्य शास्त्र का ज्ञान किये बिना ही रोगियों को औषध देता है वह वैद्य मनुष्य रूप धारी साक्षात् यमराज के समान है।

निन्दनीय वैद्य

कुचैलः कर्कशः स्तब्धः कुग्रामी स्वयमागतः।
पञ्च वैद्या न पूज्यन्ते धन्वन्तरिसमा अपि ॥५२॥

जो वैद्य मैला एवं फटा अथवा दुर्गन्ध युक्त वस्त्र पहनता है; कठोर वचन बोलने वाला, जड़ बुद्धि वाला (अभिमानी, आत्मश्लाघी, अप्रासंगिक बोलना), नीच लोगों की बस्ती में रहने वाला और बिना बुलाये रोगी के घर जानेवाला—इन

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पाँचों दोषों से युक्त वैद्य धन्वन्तरि के समान होने पर भी पूजित नहीं होते।

रोगी परीक्षा बिना चिकित्सा से हानि

नाडीजिह्वाऽऽस्य मूत्राणां परीक्षां यो न विन्दति।
मारयत्याशु जन्तून् हि स वैद्यो न च शोभनः ॥५३॥

जो वैद्य नाड़ी जिह्वा, मुख, मूत्र (पाठभेद के अनुसार—पुरीष, हृदय, फुफ्फुस, उदर आदि कोष्ठ) की सम्यक् परीक्षा नहीं जानता वह वैद्य रोगियों को शीघ्र ही यमलोक पहुँचा देता है। ऐसे वैद्यों से चिकित्सा नहीं करानी चाहिये अर्थात् ऐसे वैद्य निन्दनीय है।

आयुर्वेदीय चिकित्सा का फल

अप्येकं नीरुजं कृत्वा नरं यादृशतादृशम्।
आयुर्वेदप्रसादेन किं न दत्तं भवेद्भुवि ॥५४॥

साध्यासाध्य रोगियों की आयुर्वेदीय चिकित्सा से यदि एक रोगी को भी वैद्य ने निरोग किया तो उस वैद्य ने इस पृथ्वी पर क्या नहीं दान दिया ! अर्थात् जीवनदान से बढ़कर और कोई भी दान श्रेष्ठ नहीं है।

रोगनिर्हरणजन्य पुण्य

कपिलाकोटिदानाद्धि यत्फलं परिकीर्तितम्।
फलं तत्कोटिगुणितमेकातुरचिकित्सया ॥५५॥

करोड़ों कपिला गाय के दान से जो पुण्य प्राप्त होता है उस पुण्य से करोड़ गुना पुण्य एक रोगी को रोगमुक्त करने से वैद्य को प्राप्त होता है।

सब कुछ देनेवाला वैद्य (नन्दिपुराणे)

धमार्थकाममोक्षाणामारोग्यं कारणं यतः।
तस्मादारोग्यदानेन नरो भवति सर्वदः ॥५६॥

पुरुषार्थचतुष्टय (धर्मसाधन, अर्थोपार्जन, कामसेवन एवं मोक्ष-प्राप्त्यर्थ तपश्चर्या) के साधन में आरोग्य ही प्रधान कारण है। इसलिए वैद्य द्वारा मनुष्य को रोगमुक्त कर निरोग प्रदान करने के कारण वैद्य को सब कुछ देनेवाला (सर्वदः=सर्वं ददातीति सर्वदः) कहा गया है। अर्थात् प्राणप्रदाता वैद्य ने क्या नहीं दिया?

रोगमुक्ति से अपारपुण्य

अप्येकं नीरुजीकृत्य व्याधितं भेषजैर्नरः।
प्रयाति ब्रह्मसदनं कुलसप्तकसंयुतम् ॥५७॥

वैद्य यदि एक रोगी व्यक्ति को भी आयुर्वेद की औषधियों से नीरोग करता है, तो इस पवित्र और पुण्य कार्य से वैद्य अपने सात पूर्वजों के साथ ब्रह्मलोक में चला जाता है।

मोक्ष प्राप्ति की सरल विधि

अपि मूलेन केनापि मर्द्दनाद्यैरथापि वा।
सुस्थीकृते लभेन्मर्त्यः पूर्वोक्तं लोकमुत्तमम् ॥५८॥

एक सामान्य व्यक्ति भी किसी जड़ी-बूटियों के बाह्य-आभ्यन्तर प्रयोग के द्वारा किसी रोगी को स्वस्थ करता है तो पूर्वोक्त उत्तमलोक मोक्ष को प्राप्त करता है।

चिकित्सक के प्रति कृतघ्न का फल

चिकित्सितशरीरं यो न निष्क्रीणाति दुर्मतिः।
स यत्करोति सुकृतं तत्सर्वं भिषगश्नुते ॥५९॥

जो दुर्बुद्धि व्यक्ति अपनी चिकित्सा कराकर पारितोषिक रूप में वैद्य को धन आदि उपहार स्वरूप नहीं देता है, वह दुर्मति व्यक्ति स्वस्थ होकर जो भी पुण्यादि सत्कार्य करता है उसका फल चिकित्सक ही भोगता है।

रोग परीक्षा के तीन उपाय

दर्शनस्पर्शनप्रश्नैर्व्याधेर्ज्ञानं त्रिधा मतम्।
दर्शनान्मूत्रजिह्वाऽऽद्यैः स्पर्शनान्नाडिकाऽऽदिभिः
प्रश्नैर्दूतादिवचनादिति त्रेधा समुच्यते ॥६०॥

१. दर्शन, २. स्पर्शन और ३. प्रश्न—इन तीन विधियों से व्याधि का परिज्ञान होता है। मूत्र, पुरीष, जिह्वा, नेत्र, मुख, नख, हाथ, पैर आदि को देखने (दर्शन) से; नाडी, उदर, यकृत्प्लीहा, शोथादि पीडन, त्वक्, व्रणोत्सेध, गुल्मादि को छूने या दबाने (स्पर्शन) से; स्वयं रोगी से या रोगी के दूत से रोग एवं रोगी के सम्बन्ध में भूत-वर्तमान में रोग से सम्बन्धित विविध सम्पर्थ आहार-विहार, आचार-विचार, दिन एवं रात्रिचर्या सम्बन्धी प्रश्नों द्वारा—ये रोगनिदान (परिज्ञान) के तीन प्रकार कहे गये हैं।

वैद्य के लिए चिकित्सा-क्रम

रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम्।
ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥६१॥

वैद्य सर्वप्रथम रोगी के रोग की परीक्षा करे, उसके बाद रोगानुसार औषधि की सम्यक् परीक्षा करे, फिर उसके बाद ज्ञानपूर्वक चिकित्साकर्म प्रारम्भ करना चाहिए।

अपरीक्षित औषध से हानि

यथा विषं यथा शस्त्रं यथाऽग्निरशनिर्यथा।
तथौषधमविज्ञातं विज्ञातममृतं यथा ॥६२॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामायुर्वेदावतरणम्।

१. नाडीजिह्वाऽऽस्य मूत्राणां कोष्ठादीनाञ्च सर्वथा। परीक्षां यो न जानाति स वैद्यो यम एव हि ॥ (इति पाठभेदः)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यदि मूर्ख वैद्य औषधियों की परीक्षाक्रम में औषधों को पहचाने बिना ही अथवा उनके उपादानों (Ingredients) को भी न जानते हुए रोगियों पर प्रयोग करता है तो वह औषधि विष, शस्त्र, अग्नि एवं वज्र के जैसी मृत्युकारक होती है। साथ ही परीक्षित औषधियों का प्रयोग अमृत जैसा फल देता है। अत: विद्वान् एवं अनुभवी वैद्य द्वारा औषधों का प्रयोग सद्य: फलप्रद होता है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य आयुर्वेदावतरणस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दी व्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ मान-परिभाषाप्रकरणम् (२)

मान-परिभाषा

मान

न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित्।
अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यतेऽधुना ॥१॥

मान (तौल) के विना मृदु-मध्य-कठिन द्रव्यों से कोई भी कल्पना (युक्ति) का निर्माण नहीं किया जा सकता है और मान के बिना औषधियों का प्रयोग (मात्रा) भी सम्भव नहीं है। अत: औषधीय प्रयोग (निर्माण और रोगियों पर प्रयोग) में सुगमता के लिए यहाँ पर मान और उसकी परिभाषा कही जाती है।

यव से माष पर्यन्त मान

षट् सर्षपैर्यवस्त्वेको गुञ्जैका यवैस्त्रिभिः।
माषस्तु पञ्चभिः षड्भिस्तथा सप्तभिरष्टभिः ॥२॥
दशभिर्द्वादशभिश्च रक्तिभिः षड्विधो मतः।

६ सर्षप का १ यव, ३ यव का १ गुञ्जा (रत्ती), ५ गुञ्जा, ६ गुञ्जा, ७ गुञ्जा, ८ गुञ्जा, १० गुञ्जा और १२ गुञ्जा की १ माशा होती है, इसमें ६ प्रकार के मतान्तर है।

चरक-सुश्रुतानुसार माशा का मान

चरकस्य तु माषस्तु दशगुञ्जाभिरेव च ॥३॥
चरकस्य तु चार्द्धेन सुश्रुतस्य तु माषकः।

चरक के विचार से १० रत्ती की १ माशा और सुश्रुत की दृष्टि में ५ गुञ्जा की १ माशा होती है।

शाण और कोल का मान

माषैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्धरणः स निगद्यते ॥४॥
टङ्कः स एव कथितस्तद्द्वयं कोल उच्यते।
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रंक्षणः स निगद्यते ॥५॥

४ माशा का १ शाण ($\frac{१}{४}$ तोला) होता है। उस शाण का पर्याय धरण एवं टङ्क है।२ शाण का १ कोल ($\frac{१}{२}$ तोला) होता है। उसे क्षुद्रक, वटक और द्रंक्षण भी कहते हैं।

कर्ष का मान

कोलद्वयं च कर्षः स्यात् स प्रोक्तः पाणिमानिकः।
अक्षं पिचुः पाणितलं किञ्चित् पाणिश्च तिन्दुकम् ॥६॥
विडालपदकञ्चैव तथा षोडशिका मता।
करमध्यो हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥७॥
उदुम्बरञ्च पर्यायैः कर्ष एव निगद्यते।

२ कोल का १ कर्ष (१ तोला) होता है। उसके १२ पर्याय कहे गये हैं; यथा—१. अक्ष, २. पिचु, ३. पाणितल, ४. किञ्चित्पाणि, ५. तिन्दुक, ६. विडालपदक, ७. षोडशिका, ८. करमध्य, ९. हंसपद, १०. सुवर्ण, ११. कवलग्रह, १२. उदुम्बर।

अर्धपल और पल का मान

स्यात्कर्षाभ्यामर्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥८॥
शुक्तिभ्याञ्च पलं ज्ञेयं मुष्टिराम्रं चतुर्थिका।
प्रकुञ्चः षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥९॥

२ कर्षों का १ अर्धपल होता है; शुक्ति और अष्टमिका इसके पर्याय हैं। २ शुक्ति का १ पल होता है; मुष्टि, आम्र, चतुर्थिका, प्रकुञ्च, षोउशी और बिल्व पल इसके पर्याय कहे गये हैं।

प्रसृति से मानिका तक मान

पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात् कुडवोऽर्धशरावकः ॥१०॥
अष्टमानं च स ज्ञेयः कुडवाभ्यां च मानिका।
शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥११॥

२ पल की १ प्रसृति होती है; इसका पर्याय प्रसृत है।

२ प्रसृत की १ अञ्जलि होती है; इसके पर्याय कुडव, अर्धशरावक और अष्टमान हैं।

२ कुडव की १ मानिका होती है; इसके पर्याय शराव, अष्टपल हैं। ऐसा विद्वानों का कथन है।

प्रस्थ से आढक तक मान

शरावाभ्यां भवेत्प्रस्थश्चतुःप्रस्थैस्तथाऽऽढकम्।
भाजनं कंसपात्रे च चतुःषष्टिपलं च तत् ॥१२॥

२ शराव का १ प्रस्थ होता है।

४ प्रस्थ का १ आढक होता है। इसके पर्याय भाजन, कंस, पात्र और चौसठ पल हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

द्रोण-कुम्भ से द्रोणी तक मान

चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणोऽर्मणः।
उन्मानं च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसंज्ञकाः ॥१३॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकः।
शूर्पाभ्यां च भवेद्द्रोणी वाहो गोणी च सा स्मृता ॥१४॥

४ आढक का १ द्रोण होता है; इसके पर्याय कलश, नल्वण, अर्मण, उन्मान, घट और राशि हैं।

२ द्रोण का १ शूर्प होता है। इसके पर्याय कुम्भ और चतुःषष्टिपल हैं।

२ शूर्प की १ द्रोणी होती है। इसके पर्याय वाह और गोणी है।

खारी का मान

द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः।
चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्यधिका च सा ॥१५॥

४ द्रोणी की १ खारी होती है। इसे कुल ४०९६ पल की मात्रा समझें। अर्थात् १ खारी का मान ४०९६ पल होता है।

भार और तुला का मान

पलानां द्विसहस्रं च भार एकः प्रकीर्तितः।
तुला पलशतं ज्ञेयं सर्वत्रैष विनिश्चयः ॥१६॥

२००० पल का १ भार होता है और १०० पल की १ तुला निश्चित की गई है। तौल के सम्बन्ध में सभी जगह ऐसा ही निश्चित किया गया है।

६ सरसों का १ यव
३ यव की १ गुञ्जा

माशा छः प्रकार की होती है।

५ गुञ्जा का १ माशा
६ गुञ्जा का १ माशा
७ गुञ्जा का १ माशा
८ गुञ्जा का १ माशा
१० गुञ्जा का १ माशा
१२ गुञ्जा का १ माशा

चरक की माशा १० गुञ्जा की है।

सुश्रुत की माशा ५ गुञ्जा की है।

किन्तु ८ रत्ती का १ माशा आधुनिक काल में अधिक प्रामाणिक है।

४ माशा का १ शाण; इसके पर्याय धरण एवं टङ्क हैं।

२ शाण का १ कोल है; इसके पर्याय क्षुद्रक, द्रंक्षण, वटक हैं।

२ कोल का १ कर्ष है; इसके पर्याय पाणिमाणिक, अक्ष, पिचु, पाणितल, तिन्दुक, विडालपदक, षोडशिका, करमध्य, हंसपद, सुवर्ण, कवलग्रह उदुम्बर और किञ्चित्पाणि १३ पर्याय हैं।

२ कर्ष का १ अर्धपल होता है; इसके पर्याय शुक्ति और अष्टमिका हैं।

२ शुक्ति का १ पल होता है; इसके पर्याय-मुष्टि, आम्र, चतुर्थिका, प्रकुञ्च, षोड़शी, बिल्व हैं।

२ पल की १ प्रसृति होती है; इसका पर्याय प्रसृत है।

२ प्रसृति का १ अञ्जलि होता है; इसके पर्याय कुडव, अर्धशराव और अष्टमान हैं।

२ कुडव का १ मानिका होता है; इसके पर्याय शराव, अष्टपल हैं।

२ शराव का १ प्रस्थ होता है।

४ प्रस्थ का १ आढक होता है; इसके पर्याय भाजन, कंस, पात्र एवं चतुःषष्टिपल हैं।

४ आढक का १ द्रोण होता है; इसके पर्याय कलश, नल्वण, अर्मण, उन्मान, घट और राशि हैं।

२ द्रोण का १ सूर्प होता है; इसके पर्याय कुम्भ एवं चतुःषष्टि-शरावक हैं।

२ सूर्प का १ द्रोणी होता है; इसके पर्याय वाही एवं गोणी हैं।

४ गोणी का १ खारी होता है। ४०९० पल की खारी होती है।

२००० पल का १ भार होता है।

१०० पल का १ तुला होता है।

मान की परिभाषा

'मान' शब्द की निरुक्ति[1]—जिसके द्वारा तौला या मापा जाय, उसे मान (Weights & measures) कहते हैं।

'मान' के ज्ञान की आवश्यकता[2]—मान के बिना व्याधिग्रस्त एवं स्वस्थ पुरुषों पर द्रव्यों का प्रयोग नहीं किया जा सकता, क्योंकि व्याधिग्रस्त एवं स्वस्थ के विचार से भोजनादि औषध-द्रव्यों की विभिन्न मात्राओं की कल्पना करनी पड़ती है। औषध के विभिन्न कल्पों में द्रव्यों का जो संयोग होता है, वह भी एक नियत मान में होता है। अतः चिकित्सा-कार्य में भेषज एवं पथ्य प्रयोग के लिए मान का ज्ञान अत्यावश्यक है।

(अमरकोशे-दीक्षितः)

१. मीयतेऽनेनेति मानम्।
२. न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित्। अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥ (शार्ङ्ग.सं.प्र. १।१४)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

'मान' के भेद[१]—महर्षि चरक ने मान के दो भेद बताये हैं—१. मगधमान, २. कलिङ्गमान। इन दोनों मानों में मगधमान श्रेष्ठ कहा गया है। इनके अतिरिक्त प्राचीन कोशकारों ने मान के तीन भेद बतलाये हैं[२]—

१. पौतवमान, २. द्रुवयमान, ३. पाय्यमान।

(१) **पौतवमान** (Measures of weight)—केवल ठोस द्रव्यों के लिए, तुला पर ठोस एवं कठिन द्रव्यों को तौलने को पौतवमान (Measures of weight) कहते हैं।

(२) **द्रुवयमान** (Measures of capacity)—केवल द्रव्य पदार्थ मापने के लिए। पात्रविशेष, जिससे द्रव पदार्थ मापा जाय (तौला न जाय) उसे द्रुवयमान कहते हैं।

(३) **पाय्यमान** (Measures of length)—दैकोर्ध्यमान केवल लम्बाई मापने के लिए। पदार्थों की लम्बाई, मोटाई, चौड़ाई, ऊँचाई एवं गहराई मापने को पाय्यमान कहते हैं। अर्थात् दूरी मापने के लिए।

पौतवमान

चरक के मतानुसार पौतवमान

चरक का पौतवमान[३] वंशी या ध्वंशी से प्रारम्भ होता है। खिड़कियों से आती हुई सूर्य किरण में उड़ते धूल के कण दिखाई पड़ते हैं, उन्हें वंशी या ध्वंशी कहा जाता है।

अपि च—

दोष-भेषज-देश-काल-बल-शरीर-सार-आहार-साम्त्य-सत्त्व-प्रकृति-वयसां मानमवहितमनसा यथावज्ज्ञेयं भवति भिषजा, दोषादिमानज्ञानायत्तत्वात् क्रियायाः। न ह्यमानज्ञो दोषादीनां भिषग्व्याधिनिग्रहसमर्थो भवति। (च.वि. १।३)

अन्यच्च—

परिमाणं विना क्वापि नागदाज्जायते फलम्। तस्मात् सर्वे यतन्तेऽत्र परिमाणविधौ सदा॥ (वै.परि.प्रदीप)

अन्यच्च—

मानापेक्षितमाचार्य्या भेषजानां प्रकल्पनम्। मेनिरे यत्ततो मानमुच्यते पारिभाषिकम्॥ (वै.परि.प्रदीप)

१. मानं च द्विविधं प्राहुः कालिङ्गं मागधं तथा। कालिङ्गान्मागधं श्रेष्ठमेवं मानविदो विदुः॥ (च.क. १२।१०५)

२. पौतवं द्रुवयं पाय्यमिति मानार्थकं त्रयम्। मानं तुलाङ्गुलिप्रस्थैः गुञ्जाः पञ्चाद्यमाषकः॥ (अमरकोशः २।९।८५)

अपि च—

पाय्यं हस्तादिभिर्मानं द्रुवयं कुडवादिभिः। पौतवं तुलया तस्य सूत्रं स्याद्भागसूत्रकम्॥ (वैजयन्तीकोशः)

३: षड् ध्वंश्यस्तु मरीचिः स्यात् षण्मरीच्यस्तु सर्षपः। अष्टौ ते सर्षपा रक्तास्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम्॥
धान्यमाषो भवेदेको धान्यमाषद्वयं यवः। अण्डिका ते तु चत्वारस्ताश्चतस्रस्तु माषकः॥
हेमश्च धान्यकश्चोक्तो भवेच्छाणस्तु ते त्रयः। शाणौ द्वौ द्रङ्क्षणं विद्यात् कोलं बदरमेव च॥
विद्याद् द्वौ द्रङ्क्षणौ कर्षं सुवर्णं चाक्षमेव च। विडालपदकं चैव पिचुं पाणितलं तथा॥
तिन्दुकं च विजानीयात् कवलग्रहमेव च। द्वे सुवर्णे पलार्धं स्याच्छुक्तिरष्टमिका तथा॥
द्वे पलार्धे पलं मुष्टिः प्रकुञ्चोऽथ चतुर्थिका। बिल्वं षोडशिका चाम्रं द्वे पले प्रसृतं विदुः॥
अष्टमानं तु विज्ञेयं कुडवौ द्वौ तु मानिका। पलं चतुर्गुणं विद्यादञ्जलिं कुडवं तथा॥
चत्वारः कुडवाः प्रस्थश्चतुःप्रस्थमथाढकम्। पात्रं तदेव विज्ञेयं कंसः प्रस्थाष्टकं तथा॥
कंसश्चतुर्गुणो द्रोणश्चार्मणं नल्वणं च तत्। स एव कलशः ख्यातो घटमुन्मानमेव च॥
द्रोणस्तु द्विगुणः शूर्पो विज्ञेयः कुम्भ एव च। गोणीं शूर्पद्वयं विद्यात् खारीं भारं तथैव च॥
द्वात्रिंशतं विजानीयाद्वाहं शूर्पाणि बुद्धिमान्। तुलां पलशतं विद्यात् परिमाणविशारदः॥
शुष्कद्रव्येष्विदं मानमेवमादि प्रकीर्तितम्। द्विगुणं तद् द्रवेष्विष्टं तथा सद्योद्धृतेषु च॥ (च.क. १२।८७-९८)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६ ध्वंशी	=	१ मरीचि						
६ मरीचि	=	१ लाल सर्षप						
८ सर्षप	=	१ तण्डुल						
२ तण्डुल	=	१ धान्यमाष (उड़द)						
२ धान्यमाष	=	१ यव	=	$\frac{१}{२}$ रत्ती	=	६२ मि.ग्रा.		
४ यव	=	१ अण्डिका	=	२ रत्ती	=	२५० मि.ग्रा.		
४ अण्डिका	=	१ माषक	=	८ रत्ती	=	१ ग्रा.		
३ माषक	=	१ शाण	=	२४ रत्ती	=	३ ग्रा.		
२ शाण	=	१ कोल	=	४८ रत्ती	=	$\frac{१}{२}$ तोला	=	६ ग्रा.
२ कोल	=	१ कर्ष	=	९६ रत्ती	=	१ तोला	=	११ $\frac{१}{२}$ ग्रा.
२ कर्ष	=	१ शुक्ति	=	२ तोले	=	२३ ग्रा.		
२ शुक्ति	=	१ पल	=	४ तोले	=	४६ ग्रा.		
२ पल	=	१ प्रसृति	=	८ तोला	=	९३ ग्रा.		
२ प्रसृति	=	१ कुडव	=	१६ तोले	=	१८७ ग्रा.		
२ कुडव	=	१ मानिका	=	३२ तोला	=	३७५ ग्रा.		
४ कुडव	=	१ प्रस्थ	=	६४ तोले	=	७५० ग्रा.		
४ प्रस्थ	=	१ आढक	=	३ सेर ३ छटाक १ तोला	=	२.९८० कि.ग्रा.		
४ आढक	=	१ द्रोण	=	१२ सेर १२ छटाक ४ तोला	=	११.९५० कि.ग्रा.		
२ द्रोण	=	१ शूर्प	=	२०४८ तोला	=	२५ सेर ९ छटाक ३ तोला	=	२३.८९० कि.ग्रा.
२ शूर्प	=	१ खारी	=	४०९६ तोला	=	१ मन ११ सेर ३ छटाक १ तोला	=	४७.८०० कि.ग्रा.
३२ शूर्प	=	१ वाह	=	१३१०७२ तोला	=	४० मन ३८ सेर ७ छटाक ४ तोला		
					=	१५ क्विण्टल २९ कि. ४३६ ग्रा.		
१०० पल १ तुला	=	४०० तोले	=	५ सेर	=	४.६७० किग्रा.		
१ सेर			=	८० तोला	=	९३० ग्रा.		

सुश्रुत के मतानुसार पौतवमान

मध्यम प्रमाण के १२ धान्यमाष	=	१ सुवर्णमाषक होता है।
१६ सुवर्णमाषक अथवा	=	१ सुवर्ण होता है।
मध्यम प्रमाण के १९ निष्पाव	=	१ धरण होता है।
१$\frac{१}{२}$ धरण	=	१ कर्ष होता है।

इसके बाद उत्तरोत्तर ४ गुना बढाते जाने से पल-कुडव-प्रस्थ-आढक और द्रोण होते हैं।

१०० पल	=	१ तुला होती है।
२० तुला (१०० सेर = २$\frac{१}{२}$ मन)	=	१ भार होता है।

त्रसरेणुर्बुधैः प्रोक्तास्त्रिंशता परमाणुभिः। त्रसरेणुस्तु पर्यायनाम्ना वंशी निगद्यते ॥
जालान्तरगतेः भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः। तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स कथ्यते ॥
जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते। षड् वंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका ॥
तिसृभि राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधैः। यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम् ॥
षड्भिस्तु रक्तिकाभिः स्यान्माषको हेमधान्यकौ। माषश्चतुर्भिः शाणः स्याद्धरणः स निगद्यते ॥
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रंक्षणः स निगद्यते। टङ्कः स एव कथितस्तद्द्वयं कोल उच्यते ॥
कोलद्वयं च कर्षः स्यात् स प्रोक्तः पाणिमानिका। अक्षं पिचुः पामितैलं किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥
विडालपदकं चैव तथा षोडशिका मता। करमध्यो हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥
उदम्बरं च पर्यायैः कर्ष एव निगद्यते। स्यात्कर्षाभ्यामर्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥ (शार्ङ्ग.पू.१/१५-२३)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यह मान केवल शुष्क द्रव्यों के लिए बताया गया है। किन्तु आर्द्र (सद्योद्धृत) द्रव्यों और द्रवों का मान इससे दुगुना बताया गया है। यथा—

'पलकुडवादीनामतो मानं तु व्याख्यास्यामः—तत्र द्वादश धान्यमाषा मध्यमाः सुवर्णमाषकः, ते षोडश सुवर्णम्, अथवा मध्यमनिष्पावा एकोनविंशतिधरणं, तान्यर्धतृतीयानि कर्षः, ततश्चोर्ध्वं चतुर्गुणमभिवर्धयन्तः पलकुडवप्रस्थाढकद्रोणा इत्यभिनिष्पद्यन्ते, तुला पुनः पलशतं, ताः पुनर्विंशतिर्भारः, शुष्काणामिदं मानम्। आर्द्रद्रवाणां च द्विगुणमिति'। (सु.चि. ३१।७)

शार्ङ्गधर मतानुसार पौतवमान

आचार्य शार्ङ्गधर ने मान का प्रारम्भ 'परमाणु' से किया है। चरकोक्त वंशी का $\frac{१}{३०}$ भाग परमाणु कहलाता है।

३० परमाणु	=	१ वंशी				
६ वंशी	=	१ मरीचि				
६ मरीचि	=	१ राजिका				
३ राजिका	=	१ सर्षप				
८ सर्षप	=	१ यव				
४ यव	=	१ गुञ्जा	=	रत्ती	=	१२५ मि.ग्रा.
६ रत्ती	=	१ माषक	=	१ आना	=	७२० मि.ग्रा.
४ माषक	=	१ शाण	=	$\frac{१}{४}$ तोला	=	३ ग्रा.
२ शाण	=	१ कोल	=	$\frac{१}{२}$ तोला	=	६ ग्रा.
२ कोल	=	१ कर्ष	=	१ तोला	=	११ $\frac{१}{२}$ ग्रा.
२ कर्ष	=	१ शुक्ति	=	२ तोले	=	२३ ग्रा.
२ शुक्ति	=	१ पल	=	४ तोले	=	४६ ग्रा.
२ पल	=	१ प्रसृति	=	८ तोले	=	९३ ग्रा.
२ प्रसृति	=	१ कुडव	=	१६ तोले	=	१८७ ग्रा.
२ कुडव	=	१ मानिका = शराव	=	३२ तोला	=	३७५ ग्रा.
२ शराव	=	१ प्रस्थ	=	६४ तोले	=	७५० ग्रा.
४ प्रस्थ	=	१ आढक	=	२५६ तोले	=	३.०० कि.ग्रा.
४ आढक	=	१ द्रोण	=	१०२४ तोले	=	१२.०० कि.ग्रा.
२ द्रोण	=	१ शूर्प	=	२०४८ तोले	=	२४.०० कि.ग्रा.
२ शूर्प	=	१ द्रोणी	=	४०९६ तोले	=	४८.०० कि.ग्रा.
४ द्रोणी	=	१ खारी	=	१६३८४ तोले	=	१९२.०० कि.ग्रा.
२००० पल	=	१ भार	=	८००० तोले	=	९३.३६० कि.ग्रा.
१०० पल	=	१ तुला	=	४०० तोले	=	४.६७० कि.ग्रा.

शुक्तिभ्यां च पलं ज्ञेयं मुष्टिराग्रं चतुर्थिका। प्रकुञ्चः षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते॥
पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते। प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवोऽर्धशरावकः॥
अण्टमानं च स ज्ञेयः कुडवाभ्यां च मानिका। शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः॥
शरावाभ्यां भवेत् प्रस्थश्चतुष्प्रस्थैस्तथाऽऽढकम्। भाजनं कंसपात्रं च चतुःषष्टिपलं च तत्॥
चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणोऽर्मणः। उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसंज्ञकाः॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषण्टिशरावकाः। शूर्पाभ्यां च भवेद् द्रोणी वाही गोणी च सा स्मृता॥
द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः। चतुः सहस्रपलिका षष्णवत्यधिका च सा॥
पलानां द्विसहस्रं च भार एकः प्रकीर्तितः। तुला पल्लशतं ज्ञेया सर्वत्रैवैष निश्चयः॥

(शार्ङ्गधर, पूर्वखण्ड १।१६-३२)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आचार्य शार्ङ्गधर[1] ने इन मानों के सरलतापूर्वक स्मरणार्थ एक चतुर्गुण सूत्र निम्न प्रकार से दिया है। यथा—

४ माष	=	टंक (शाण)	४ प्रस्थ	=	आढक (भाजनपात्र)
४ टंक	=	अक्ष (कर्ष)	४ आढक	=	राशि (द्रोण)
४ अक्ष	=	बिल्व (पल)	४ राशि	=	गोणी
४ बिल्व	=	कुडव (अञ्जलि)	४ गोणी	=	खारी
४ कुडव	=	प्रस्थ			

कुडवपात्र का विधान

मिट्टी, काष्ठ, बाँस, लोहा आदि से निर्मित ४ अँगुल चौड़े ४ अँगुल ऊँचे एवं ४ अँगुल गहरे पात्र को कुडवपात्र कहते हैं। इस पात्र में जितना द्रव्य आता है, उस द्रव्य को १ कुडवमान कहते हैं। यथा—

मृद्वृक्षवेणुलोहादेर्भाण्डं यच्चतुरङ्गुलम्।
विस्तीर्णं च तथोच्चं च तन्मानं कुडवं वदेत् ॥३५॥ (शा.सं.पू. १)

मागध एवं कालिङ्ग मान

आचार्य शार्ङ्गधर ने अपने ग्रन्थ में दो प्रकार के मानों का वर्णन किया है। सम्भव है मगध एवं कलिङ्ग (उत्कल) प्रदेशों में प्रचलित होने के कारण इनके नाम मागध एवं कालिङ्ग पड़े हों। मागध मान का वर्णन ऊपर किया जा चुका है एवं कालिङ्ग मान नीचे दिया जा रहा है।

कालिङ्गमान[2]

१२ गौरसर्षप	=	१ यव		४ माष	=	१ शाण (निष्क-टङ्क)	= ४ ग्रा.
२ यव	=	१ रत्ती (गुञ्जा)	= १२५ मि.ग्रा.	६ माष	=	१ गद्याण	= ६ ग्रा.
३ गुञ्जा (रत्ती)	=	१ बल्ल	= ३७५ मि.ग्रा.	१० माष	=	१ कर्ष	= ११.५०० ग्रा.
८ गुञ्जा	=	१ माष (कहीं-कही	= १ ग्रा.	४ कर्ष	=	१ पल	= ४६ ग्रा.
		७ गुञ्जा = १ माष)		४ पल	=	१ कुडव	= १८७ ग्रा.

इन मानों के अतिरिक्त प्रस्थादि अर्थात् प्रस्थ से आगे के मानों को मागधमान के जैसा ही समझना चाहिए।

मागधमान की श्रेष्ठता[3]

मान दो प्रकार के प्रचलित हैं—कालिङ्ग (उत्कल) प्रान्तीय और मागध (बिहार) प्रान्तीय। कालिङ्गमान की अपेक्षा बिहारप्रान्तीय मागधमान श्रेष्ठ समझा जाता है।

---

१. माषटङ्काक्षबिल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम्। राशिर्गोणी खारिकेति यथोत्तर चतुर्गुणाः ॥ (शार्ङ्गधर, पूर्व. १।३२)

२. यवो द्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः। यवद्वयेन गुञ्जा स्यात् त्रिगुञ्जो वल्ल उच्यते ॥
माषो गुञ्जाभिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्क्वचित्। स्याच्चतुर्माषकैः शाणः स निष्कष्टङ्क एव च ॥
गद्याणो माषकैः षड्भिः कर्षः स्याद्दशमाषकः। चतुष्कर्षैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः ॥
चतुष्पलैश्च कुडवं प्रस्थाद्याः पूर्ववन्मताः ॥ (शार्ङ्गधर, पूर्व. १।३९-४३)

३. कालिङ्गं मागधं चेति द्विविधं मानमुच्यते। कालिङ्गान्मागधं श्रेष्ठं मानं मानविदो विदुः ॥ (शा.सं.पूर्व. १।४३)

४. गुञ्जादिमानमारभ्य यावत्स्यात्कुडवस्थितिः। द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणां तावन्मानं समं मतम् ॥
प्रस्थादिमानमारभ्य द्विगुणं तद् द्रवार्द्रयोः। मानं तथा तुलायाश्च द्विगुणं न क्वचित् स्मृतम् ॥ (शार्ङ्ग.सं.पूर्व. १।३३-३४)

५. जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्ध्वंसी विलोक्यते। षड्ध्वंसीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिश्च राजिका ॥११॥
तिसृभी राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधैः। यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम् ॥१२॥
षड्भिश्च रक्तिकाभिः स्यान्माषको हेमधामकौ। माषैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्धरणं तत्त्रिगद्यते ॥१३॥
टङ्कः स एव कथितस्तद्वयं कोल उच्यते। क्षुद्रो मोरटकश्चैव द्रंक्षणं तत्त्रिगद्यते ॥१४॥
कोलद्वयं च कर्षः स्यात् स प्रोक्तः पाणिमानिकः। अक्षः पिचुः पाणितलं किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥१५॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गुञ्जा से लेकर कुडव मान तक मानवाची जिन समस्त परिभाषाओं का उल्लेख किया गया है, उन्हें किन्हीं योगो के लिए ग्रहण करते समय (द्रव्य चाहे द्रव, आर्द्र या शुष्कावस्था में हों) निर्दिष्ट मानानुसार ही लेना चाहिए। परन्तु 'प्रस्थ' से 'तुला' मान पर्यन्त द्रव्यों को (यदि वे द्रव और आर्द्र अवस्था में हों तो) निर्दिष्ट से द्विगुण मान में लेना चाहिए। यदि द्रव्य शुष्कावस्था में हों तो निर्दिष्ट मानानुसार ही लें। परन्तु यह भी ध्यान रखना चाहिए कि तुला एवं तुला से आगे के मानों के लिए चाहे वे द्रव्य आर्द्र या शुष्कावस्था में अर्थात् किसी भी अवस्था में हों, द्विगुण कदापि न ग्रहण करें।

आचार्य श्रीगोविन्ददास सेन ने अपने वैद्यकपरिभाषाप्रदीप में भी मानों का विस्तृत वर्णन किया है। यथा—

ध्वंसी—खिड़की के छिद्र से कोठरी में आयी सूर्य की किरणों में उड़ती हुयी धूलि के जो कण दिखाई देते हैं, उन्हें ध्वंशी कहते हैं।

६ ध्वंसी	=	१ मरीचि	२ पल	=	१ प्रसृति (८ तोला)
६ मरीचि	=	१ राजिका	२ प्रसृति	=	१ कुडव
३ राजिका	=	१ सर्षप	२ कुडव	=	१ मानिका (शराव)
८ सर्षप	=	१ यव	२ मानिका	=	१ प्रस्थ
४ यव	=	१ गुञ्जा	४ प्रस्थ	=	१ आढक (भाजन-पात्र)
६ गुञ्जा	=	१ माषक	४ आढक	=	१ द्रोण
४ माष	=	१ शाण	२ द्रोण	=	१ शूर्प
२ शाण	=	१ कोल	२ शूर्प	=	१ द्रोणी
२ कोल	=	१ कर्ष (१ तोला)	४ द्रोणी	=	१ खारी (४०९६ पल)
२ कर्ष	=	१ अर्धपल (शुक्तिका)	२००० पल	=	१ भार
२ शुक्ति	=	१ पल (४ तोले)	१०० पल	=	१ तुला

श्री गोविन्ददास सेन के अनुसार कालिङ्गमान[१]

३० परमाणु	=	१ त्रसरेणु (ध्वंसी)	२ सुवर्ण	=	१ पलार्द्ध
६ ध्वंसी	=	१ मरीचि	२ पलार्द्ध	=	१ पल-मुष्टि
६ मरीचि	=	१ सर्षप	२ पल	=	१ प्रसृत
६ सर्षप	=	१ यव	२ प्रसृत	=	१ कुडव
३ यव	=	१ गुञ्जा	२ कुडव	=	१ माणिका
८ गुञ्जा	=	१ माषा	२ माणिका	=	१ प्रस्थ
		(कहीं-कहीं ७ गुञ्जा = १ माषा)	४ प्रस्थ	=	१ आढक
४ माषा	=	१ शाण (निष्क-टङ्क-धरण)	४ आढक	=	१ द्रोण
६ माषा	=	१ गद्याण	२ द्रोण	=	१ शूर्प
१० माषा	=	१ कर्ष (भेद यहीं पर है)	२ शूर्प	=	१ द्रोणी
२ शाण	=	१ कोल (द्रंक्षण-कर्षार्द्ध)	४ द्रोणी	=	१ खारी (४०९६ पल)
२ कर्षार्द्ध	=	१ कर्ष (सुवर्ण-अक्ष-विडालपदक-पिचु-पाणितल-उदुम्बर-तिन्दुक-कवलग्रह)	१०० पल	=	१ तुला
			२० तुला	=	१ भार (२००० पल)

विडालपदकं चैव तथा षोडशिका मता। करमध्यो हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥१६॥
उदुम्बरं च पर्यायैः कर्ष एव निगद्यते। स्यात्कर्षाभ्यामर्द्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥१७॥
शुक्तिभ्यां च पलं ज्ञेयं मुष्टिमात्रं चतुर्थिका। प्रकुञ्चः षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥१८॥ (वै.प.प्र.)
पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते।

१. त्रसरेणुस्तु विज्ञेयस्त्रिंशता परमाणुभिः। त्रसरेणुस्तु पर्यायनाम्ना ध्वंसी निगद्यते ॥३०॥
षड्ध्वंसीभिर्मरीचिः स्यात् षण्मरीच्यस्तु सर्षपः। षट्सर्षपैर्यवस्त्वेको गुञ्जैका च यवैस्त्रिभिः ॥३१॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रसशास्त्रीय मान[1]

६ त्रुटि	=	१ लिक्षा (लीख)	६ यव	=	१ गुञ्जा
६ लिक्षा	=	१ यूक	६ गुञ्जा	=	१ माषक
६ यूक	=	१ रज	१२ माषक	=	१ तोले
६ रज	=	१ सर्षप	८ तोले	=	१ पल
		(पीत सरसो = सिद्धार्थक)	३२ पल	=	१ शुभ (२५६ तो.)
६ सिद्धार्थ	=	१ यव	२००० शुभ	=	१ भार (५,१२,००० तो.)

माषो गुञ्जाभिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्क्वचित्। हेमश्च धामकश्चैव पर्यायस्तस्य कीर्त्तितः ॥३२॥
चतुर्भिर्माषकैः शाणः सनिष्कण्टङ्क एव च। गद्याणो माषकैः षड्भिः कर्षः स्याद्दशमाषकः ॥३३॥
शाणौ द्वौ द्रङ्क्षणं विद्यात् कोलं वटकमेव च। कर्षार्द्धे द्विगुणं कर्षं सुवर्णञ्चाक्षमेव च ॥३४॥

प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात् कुडवोऽर्द्धशरावकः ॥१८॥
अष्टामानं च स ज्ञेयः कुडवाभ्यां च मानिका। शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥२०॥
शरावाभ्यां भवेत् प्रस्थश्चतुःप्रस्थैस्तथाढकम्। भाजनं कंसपात्रे च चतुःषष्टिपलं च तत् ॥२१॥
चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणोऽर्मणः। उन्मानं च घटो राशिर्द्रोणिपर्यायसंज्ञितः ॥२२॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकः। शूर्पाभ्यां च भवेद् द्रोणी वाहो गोणी च सा स्मृता ॥२३॥
द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः। चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्यधिका च सा ॥२४॥
पलानां द्विसहस्रं च भार एकः प्रकीर्तितः। तुला पलशतं ज्ञेयं सर्वत्रैवैष निश्चयः ॥२५॥
माष-टङ्काक्ष-बिल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम्। राशिर्द्रोणी खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥२६॥ (वैद्यकपरिभाषाप्रदीप)

विडालपदकं चैव पिचुः पाणितलस्तथा। उदुम्बरं तिन्दुकञ्च कवलग्रहमेव च ॥३५॥
द्वे सुवर्णे पलार्द्धं स्यात् शुक्तिरष्टमिका तथा। द्वे पलार्द्धे पलं मुष्टिः प्रकुञ्चश्च चतुर्थिका ॥३६॥
बिल्वं षोडशिकाप्रञ्च द्वे पले प्रसृतं विदुः। कुडवः प्रसृताभ्यां स्यादञ्जलिः स निगद्यते ॥३७॥
अष्टमानं शरावार्द्धं तस्य पर्यायमेव च। कुडवाभ्यां माणिका स्याच्छरावोऽष्टपलं तथा ॥३८॥
माणिकाभ्यां भवेत् प्रस्थो ज्ञेयः षोडशभिः पलैः। चतुःप्रस्थैराढकः स्यात् पात्रं कंसञ्च भाजनम्।
अयं भिषग्भिराख्यातश्चतुःषष्टिपलैरिह ॥३९॥
चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कथितः पूर्वसूरिभिः। घटः कलश उन्मानो नल्वणोऽर्मण एव च ॥४०॥
द्रोणपर्यायनामानि कीर्त्तितानि भिषग्वरैः। अयञ्च पलसंख्यातः षट्पञ्चाशच्छतद्वयम् ॥४१॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकः। शूर्पाभ्यां च भवेद् द्रोणी बृहद्द्रोणी च सा स्मृता ॥४२॥
द्रोणी चतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः। चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्यधिका च सा ॥४३॥
तुला पलशतं प्रोक्तं भारः स्याद्विंशतिस्तुला। पलानां द्विसहस्राणि भारः परिमितो बुधः ॥४४॥
माषकः शाणतिन्दूके पलं कुडवप्रस्थकः। राशिर्द्रोणी खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥४५॥ (वै.प.प्र. १)

१. षट् त्रुट्यश्चैकलिक्षा स्यात् षट्लिक्षा यूक एव च। षट् यूकास्तु रजः संज्ञाः कथितास्तव सुव्रते ॥३२॥
षड्रजः सर्षपः साक्षात् सिद्धार्थः स च कीर्त्तितः। षट् सिद्धार्थाश्च देवेशि! यवस्त्वेकः प्रकीर्त्तितः ॥३३॥
षड् यवैरेकगुञ्जा स्यात् षड् गुञ्जाश्चैकमाषकः। माषा द्वादश तोलः स्याद् अष्टौ तोला पलं भवेत् ॥३४॥
द्वात्रिंशत्पलकं देवि! शुभन्तु परिकीर्त्तितम्। शुभस्य तु सहस्रे द्वे भार एकः प्रकीर्त्तितः ॥३५॥ (रसार्णवम् १०)

अपि च—त्रुटिः स्यादणुभिः षड्भिस्तैर्लिक्षा षड्भिरीरिता। ताभिः षड्भिर्भवेद्यूकः षड् यूकास्तद्रजः स्मृतम् ॥१॥
षड्रजः सर्षपः प्रोक्तस्तैः षड्भिर्यव ईरितः। एका गुञ्जा यवैः षड्भिर्निष्पावस्तु द्विगुञ्जकः ॥२॥
स्याद्गुञ्जा त्रितयं बल्लो द्वौ बल्लौ माष उच्यते। द्वौ माषौ धरणं ते द्वे शाणनिष्ककलाः स्मृताः ॥३॥
निष्कद्वयं तु वटकः स च कोल इतीरितः। स्यात्कोलद्वितयं तोलः कर्षो निष्कचतुष्टयम् ॥४॥
उदुम्बरं पाणितलं सुवर्णं कवलग्रहः। अक्षं विडालपदकं शुक्तिः पाणितलद्वयम् ॥५॥
शुक्तिद्वयं पलं केचिदन्ये शुक्तित्रयं विदुः। तदेव कथितं मुष्टिः प्रकुञ्चो बिल्वमित्यपि ॥६॥
पलद्वयं तु प्रसृतं तद्द्वयं कुडवोऽञ्जलिः। कुडवौ मानिका तौ स्यात्प्रस्थौ द्वे मानिके स्मृतः ॥७॥
प्रस्थद्वयं शुभं तौ द्वौ पात्रकं द्वयमाढकम्। तैश्चतुर्भिर्घटोन्माननल्वणार्मणशूर्पकाः ॥८॥
द्रोणस्य शब्दाः पर्यायाः पलानां शतकं तुला। चत्वारिंशत्पलशततुला भारः प्रकीर्त्तितः ॥९॥ (रसरत्नसमुच्चय-११)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रसवाग्भटोक्त मान[२]

६ अणु	=	१ त्रुटी	२ कर्ष	=	१ शुक्ति
६ त्रुटी	=	१ लिक्षा (लीख)	२ शुक्ति	=	१ पल (कुछ लोग ३ शुक्ति का पल मानते हैं)
६ लिक्षा	=	१ यूक (जूँ)			
६ यूक	=	१ रज	२ पल	=	१ प्रसृत
६ रज	=	१ सर्षप	२ प्रसृत	=	१ कुडव (अञ्जलि:)
६ सर्षप	=	१ यव	२ कुडव	=	१ मानिका
६ यव	=	१ गुञ्जा	२ मानिका	=	१ प्रस्थ
२ गुञ्जा	=	१ निष्पाव	२ प्रस्थ	=	१ शुभ
३ गुञ्जा	=	१ बल्ल	२ शुभ	=	१ आढक (पात्र)
२ बल्ल	=	१ माष (६ गुञ्जा)	४ आढक	=	१ द्रोण (कुम्भ-नल्वण-अर्मण)
२ माष	=	१ धरण	१०० पल	=	१ तुला
२ धरण	=	१ शाण (निष्क-कला=२४ रत्ती)	४००० पल	=	१ भार
२ निष्क	=	१ कोल (वटक = ४८ रत्ती)			
२ कोल	=	१ तोला (कर्ष = ९६ रत्ती)			

अर्थात् ४० तुला का १ भार होता है।

विश्लेषण—गुप्तकाल में सम्पूर्ण देश की राजधानी होने के कारण 'मगध' श्रेष्ठ था। सम्भवत: इसीलिये कलिङ्ग (उड़ीसा) के मानों में मगध का मान श्रेष्ठ माना गया है।

चरक, सुश्रुत एवं शार्ङ्गधर के मानों का समन्वय

यद्यपि तीनों आचार्यों के मान-परिभाषा में अन्तर है तथापि ये 'मान' प्राय: समान हैं। जैसे—सुश्रुत एवं शार्ङ्गधर ६ रत्ती का १ माशा मानते हैं और ४ माशा का १ शाण (२४ रत्ती) तथा चरक ८ रत्ती का १ माशा तथा ३ माशा का १ शाण (२४ रत्ती) मानते हैं। तीनों परम्परा में २४ रत्ती का ही १ शाण बताया गया है। इसी प्रकार सुश्रुत एवं शार्ङ्गधर १६ माशा का १ कर्ष (१६ × ६ = ९६ रत्ती) तथा चरक १२ माशा का १ कर्ष (१२ × ८ = ९६ रत्ती) मानते हैं। इस प्रकार तीनों के शाण-कोल-कर्ष एक जैसे ही है।

सुश्रुत में धान्यमाष के पूर्व के मान नहीं मिलते। सम्भवत: कालक्रम से नष्ट हो गये हों या रसशास्त्र के विकास के बाद छोटे मानों की आवश्यकता अधिक हुई हो। यद्यपि चरकसंहिता में भी छोटे मानों का विस्तृत उल्लेख किया गया है, किन्तु सुश्रुतसंहिता में छोटे मानों का अभाव-सा है।

भारत में अंग्रेजों द्वारा नियत पूर्व मान

६ रत्ती	=	१ आना भर	४ छटाक	=	१ पाव
२४ रत्ती	=	४ आना भर	८ छटाक	=	$\frac{१}{२}$ सेर
४८ रत्ती	=	८ आना भर	१६ छटाक	=	१ सेर
९६ रत्ती	=	१ रुपया भर (१ तोला)	४० सेर	=	१ मन
५ तोला	=	१ छटाक	२७ मन	=	१ टन

घन पदार्थ के लिये अंग्रेजी तौल

(Imperial System of Weight)

भारतीय मान में लगभग तौल

१ ग्रेन	=	१ गेहूँ	=	आधी रत्ती के लगभग
४३७ $\frac{१}{२}$	=	१ औंस	=	२ $\frac{१}{४}$ तोले लगभग
१६ औंस	=	१ पौण्ड	=	७ $\frac{१}{२}$ छटाक लगभग

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१४ पौण्ड	=	१ स्टोन	=	६ सेर ९ छटांक लगभग
२ स्टोन	=	१ क्वार्टर	=	१३ सेर ४ छटाक लगभग
४ क्वार्टर	=	१ हण्डरवेट	=	१ मन १४ सेर लगभग
२० हण्डरवेट	=	१ टन	=	२७ मन लगभग

दाशमिक पौतवमान

(घन पदार्थ का मिट्रिक मान/Metric System of Weight)

जो सम्प्रति भारत में प्रचलित है—

१ ग्राम	=	१६ ग्रेन (१ माशा के लगभग)	१ डेकाग्राम	=	१० ग्रा.
१ डेसिग्राम	=	$\frac{१}{१०}$ ग्राम (१ ग्राम का दशमांश)	१ हेक्टोग्राम	=	१०० ग्रा.
१ सेण्टिग्राम	=	$\frac{१}{१००}$ ग्राम (१ ग्राम का शतांश)	१ किलोग्राम	=	१००० ग्रा.
१ मिलिग्राम	=	$\frac{१}{१०००}$ ग्रा. (१ ग्रा. का सहस्रांश)	१ क्विण्टल	=	१०० कि. ग्रा.
			१ मिट्रिक टन्	=	१० क्विण्टल

द्रवयमान

(द्रव पदार्थ का मान/Measures of Capacity-Volumes)

१ बिन्दु—तर्जनी अंगुली के दो पर्वो को किसी द्रव पदार्थ (तैल-जल-दूध-क्वाथ-स्वरस-घृतादि) में डुबाकर ऊँचा उठाने से गिरी हुयी १ बूँद को बिन्दु कहते हैं।[१]

८ बिन्दु[२]	=	१ शाण (द्रव पदार्थ का)
३२ बिन्दु	=	१ शुक्ति (द्रव पदार्थ का)
६४ बिन्दु	=	१ पाणिशुक्ति (द्रव पदार्थ का)

पाणिशुक्ति के आगे का द्रव पदार्थ का मान आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थों में नहीं मिलता है। शार्ङ्गधर-संहिता में 'द्रव पदार्थ मान' कुडव दिया गया है।

द्रव पदार्थ मापने के लिए—मिट्टी-लकड़ी-बाँस-लोहादि धातुओं का ४ अंगुल ऊँचा, ४ अंगुल चौडा एवं ४ अंगुल गहरा गोल पात्र बनाकर द्रव पदार्थ उसी से मापा जाय। उसी को कुडवपात्र कहते हैं।[३]

द्रव पदार्थ का अंग्रेजी मान

(Imperial System of Liquid Weight)

१ ड्राप (बूँद)	=	१ मिनिम	१६ फ्लुइड औंस	=	१ फ्लुइट पौण्ड
६० मिनिम (बूँद)	=	१ फ्लुइड ड्राम	२० फ्लुइड पौण्ड	=	१ फ्लुइड पाइण्ट
८ फ्लुइड ड्राम	=	१ फ्लुइड औंस	८ पाइण्ट	=	१ गैलेन

---

१. प्रदेशिन्यङ्गुलीपर्वद्वयान्मग्नसमुद्धृतात्। यावत्पतत्यसौ बिन्दुः.....॥ (अष्टाङ्गहृदय सू. २०।९)
अपि च—
प्रदेशिन्यां निमग्ने द्वे पर्वणी निर्गतास्ततः। नस्यादिषु च विज्ञेयो भिषग्भिर्बिन्दुसंज्ञितः॥ (टोडरानन्द में हरीत-वचन)

२. तस्य प्रमाणमष्टौ बिन्दवः प्रेदशिनीपर्वद्वयनिःसृताः प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्तिः तृतीया पाणिशुक्तिः। (टीका-अङ्गुष्ठसमीपवर्त्यङ्गुली प्रदेशिनी) (सु.चि. ४०/२८)
अपि च—
बिन्दुभिश्चाष्टभिः शाणः प्रोक्तश्चैव भिषक्तमैः। द्वात्रिंशबिन्दुभिश्चात्र शुक्तिश्चैव निगद्यते॥
द्वे शुक्ती पाणिशुक्तिश्च नस्यकर्मणि पूजिता। (टो. में हरीत-वचन)

३. मृद्वृक्षवेणुलोहादेर्भाण्डं यच्चतुङ्गुलम्। विस्तीर्णं च तथोच्चं च तन्मानं कुडवं वदेत्॥ (शा.प्र. १।३५)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

द्रव पदार्थ का मिट्रिक मान

(Metric System of Liquid Weight)

(जो सम्प्रति भारत में प्रचलित हैं)

सामान्य जल का तापमान १६.७° डिग्री सेण्टिग्रेड है।

१ मिलीलीटर परिस्रुत जल १६.७° (से.ग्रे.)

१ ग्राम परिस्रुत जल का परिमाण (आयतन)

१ डेसीलीटर	=	$\frac{१}{१०}$ लीटर	१ डेकालीटर	=	१० लीटर
१ सेण्टीलीटर	=	$\frac{१}{१००}$ लीटर	१ हेक्टोलीटर	=	१०० लीटर
१ मिलीलीटर	=	$\frac{१}{१०००}$ लीटर	१ किलोलीटर	=	१००० लीटर

पाय्यमान

(दैर्घ्य पदार्थ का मान/Measures of Length)

दैर्घ्य का भारतीय मान

यद्यपि आयुर्वेद में पाय्यमान का स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता, तथापि अंगुल, वितस्ति, अरत्नि, व्याम आदि शब्दों का व्यवहार सर्वत्र मिलता है।

१ अंगुल = ८ यवों[१] को मध्य में सुई पिरोने से जो लम्बाई होती है, वह लगभग $\frac{३}{४}$ इञ्च होती है।

१२ अंगुल = १ वितस्ति[२] (वित्ता) लगभग ९ इञ्च की होती है।

२२ अंगुल = १ अरत्नि[३] लगभग १६ $\frac{१}{२}$ इञ्च की होती है।

२४ अंगुल = १ हस्त (हाथ) १८ इञ्च लगभग (२ वितस्ति)।

४ हस्त = १ व्याम[४] (लगभग ६ फीट) ७२ इञ्च।

लम्बाई मापने का अंग्रेजी मान

(Imperial System of Length Measures)

१ टेन्थ	=	१ इञ्च का $\frac{१}{१०}$ भाग	३ फीट	=	१ यार्ड (गज)
१ इञ्च	=		२२० यार्ड (गज)	=	१ फर्लाङ्ग
१२ इञ्च	=	१ फीट (फुट)	८ फर्लाङ्ग	=	१ मील
					(१७६० यार्ड = ५२८० फीट)

लम्बाई मापने का मिट्रिक मान

(Metric System of Length Measures)

(जो सम्प्रति भारत में प्रचलित है)

१ मीटर	=	३९.३६ इञ्च	१ डेकामीटर	=	१० मीटर
१ डेसीमीटर	=	$\frac{१}{१०}$ एक मीटर का दशमांश भाग	१ हेक्टामीटर	=	१०० मीटर
१ सेण्टीमीटर	=	$\frac{१}{१००}$ एक मीटर का शतांश भाग	१ किलोमीटर	=	१००० मीटर
१ मिलीमीटर	=	$\frac{१}{१०००}$ एक मीटर का सहस्रांश भाग			

---

१. यवोदरैरङ्गुलमष्टसङ्ख्यैः। (लीलावती, परिभाषा-४)

अपिच—

अष्टौ यवमध्या अङ्गुलम्। मध्यमस्य पुरुषस्य मध्यमाया अङ्गुल्या मध्यमप्रकर्षो वाऽङ्गुलम्। (कौटिल्ये)

२. अङ्गुष्ठे सकनिष्ठे स्याद्वितस्तिर्द्वादशाङ्गुलः। प्रकोष्ठे विस्तृतकरे हस्तमुष्टया तु बद्धया॥

३-४. स रत्निः स्यादरत्निस्तु निष्कनिष्ठेन मुष्टिना। व्यामो बाह्वोः सकरयोस्तत्तयोस्तिर्यगन्तरम्॥ (अमरकोष २।६।८६)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रानियम का अपवाद

गुञ्जाऽऽदिमानमारभ्य यावत्स्यात्कुडवस्थितिः।
द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणां तावन्मानं समं मतम् ॥१७॥
प्रस्थादिमानमारभ्य द्विगुणं तद्द्रवार्द्रयोः।
मानं तथा तुलायास्तु द्विगुणं न क्वचित् स्मृतम् ॥१८॥

गुञ्जा से आरम्भ कर कुडव पर्यन्त जितने भी मानवाचक शब्द हैं उनमें शुष्क-आर्द्र द्रव्यों के भेद से कोई अन्तर नहीं होता है, जैसा लिखा गया है वैसा ही मान उचित है। प्रस्थ से आगे खारी-भार तक के मानों में द्रव एवं आर्द्र पदार्थों के ग्रहण के समय उल्लिखित मान से द्विगुण लेना चाहिए। लेकिन "तुलामान" शुष्क द्रव्य, आर्द्र द्रव्य एवं द्रव (तरल) पदार्थों के ग्रहण के समय हमेशा १ तुलामान = ५ सेर ही लेना चाहिए।

विमर्श—श्री गोविन्ददास ने अन्य ग्रन्थों के मान की स्थिति से अलग भी विचार किया है। अर्थात् शुष्क-आर्द्र एवं द्रव पदार्थों के ग्रहण के मान में परिवर्तन किया है। यथा—१ रत्ती से कुडव १६ तोला तक के (तीनों शुष्क-आर्द्र-द्रव पदार्थों) मानों में कहीं भी अन्तर नहीं किया है। किन्तु प्रस्थ ६४ तोला के मान से खारी (५ मन ४ सेर ६४ तोला) पर्यन्त तक मानों में आर्द्र द्रव्य एवं द्रव पदार्थों को ग्रहण करते समय द्विगुण मात्रा में उक्त पदार्थों को लेने का निर्णय किया है। लेकिन तुला (५ सेर) मान में कहीं भी द्विगुण (दुगुना) नहीं किया जाता है। तुला कहने से सर्वत्र ५ सेर ही ग्रहण किया जाता है।

अन्यच्च—

कुडवे मानिकायाञ्च तुलामाने तथैव च।
पलोल्लेखागते माने न द्वैगुण्यमिहेष्यते ॥१९॥

अन्यत्र भी कहा गया है कि कुडव (१६ तोला), मानिका (३२ तोला), तुलामान (५ सेर) और पल (४ तोला) मान के सन्दर्भ में कभी भी द्विगुण नहीं करना चाहिए।

अन्यच्च—

कुडवेऽपि क्वचिद्द्वित्वं यथा दन्ती घृते स्मृतम्।
सर्पिःखण्डजलक्षौद्रजैलक्षारासवादिषु ॥
अष्टौ पलानि कुडवो नारिकेले च शस्यते ॥२०॥

अन्यत्र और भी इस सन्दर्भ में कहा गया है कि उपर्युक्त निर्णय के अतिरिक्त कहीं-कहीं पर इसका अपवाद भी है। यथा "दन्तीघृत" में १ कुडव घृत ग्रहण करने के क्रम में ३२ तोला घृत लेने का विधान है। घृत, चीनी, जल, मधु, तैल, दूध, आसव और नारिकेल आदि में भी १ कुडव कहने पर ३२ तोला समझना चाहिए।

शुष्कार्द्र द्रव्यग्रहण का नियम

शुष्कद्रव्यस्य या मात्रा आर्द्रस्य द्विगुणा हि सा।
शुष्कस्य गुरुतीक्ष्णत्वात् तस्मादर्धं प्रयोजयेत् ॥२१॥

शुष्क द्रव्य के अभाव में यदि आर्द्र द्रव्य का व्यवहार करना हो तो वहाँ पर शुष्क द्रव्य की जो मात्रा कही गई है उससे आर्द्र द्रव्य दुगुनी मात्रा में ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि शुष्क द्रव्य में आर्द्रता नहीं होने से गुरु और तीक्ष्ण होते हैं, किन्तु निम्नलिखित द्रव्यों को छोड़कर। ये निम्नलिखित अपवाद हैं, द्विगुण हैं।

आर्द्र द्रव्य में द्विगुण का अपवाद

वासानिम्बपटोलकेतकीबलाकूष्माण्डकेन्दीवरी
वर्षाभूकुटजाश्वगन्धसहिता ता पूतिगन्धाऽमृता।
मांसं नागबलासहाचरपुरो हिङ्ग्वार्द्रके नित्यशो
ग्राह्यास्तत्क्षणमेव न द्विगुणिता ये चेक्षुजाता घनाः॥

वासा, निम्ब, पटोल, केतकी, बला, कूष्माण्ड, इन्दविर (कमल), पुनर्नवा, कुटज, अश्वगन्ध, गन्धप्रसारणी, गुडूची, मांस, नागबला, सहचर, गुग्गुलु, हिंगु (हींग), आर्द्रक तथा ईख के गुड़, राब आदि ठोस विकार—ये १९ द्रव्य सदा ही तुरन्त की उखाड़ी गई आर्द्र एवं ताजी ही लें, किन्तु इन्हें दुगुनी मात्रा में कदापि न लें। अर्थात् इन द्रव्यों को सदा उल्लिखित मात्रा में ही लेना चाहिए।

विमर्श—अन्य आचार्यों ने भी कुछ द्रव्यों को न्यूनाधिक मात्रा में लेकर इस वर्ग को और भी बढ़ाया है। आचार्य शार्ङ्गधरसंहिताकार ने कहा है कि सूखे और नये द्रव्य ही औषधि-निर्माण के सम्पूर्ण कर्मों में लेना चाहिए। किन्तु जहाँ पर औषधि-निर्माण में सद्योद्धृत आर्द्र द्रव्य लेने का उल्लेख हो वहाँ सूखे द्रव्यों से आर्द्र द्रव्य दुगुनी मात्रा में लेना चाहिए। यथाह शार्ङ्गधरः—

शुष्कं नवीनं यद्द्रव्यं योज्यं सकलकर्मसु।
आर्द्रं च द्विगुणं युञ्ज्यादेष सर्वत्र निश्चयः॥
(शार्ङ्ग.प्र. २।४६)

किन्तु इन आर्द्र द्रव्यों में भी ९ द्रव्य ऐसे गिनाये हैं जिन्हें हमेशा आर्द्र तो लें, किन्तु द्विगुण मात्रा में नहीं लें अर्थात् सममात्रा में ही हमेशा लें। यथाह शार्ङ्गधरः—

गुडूची कुटजो वासा कूष्माण्डं च शतावरी।
अश्वगन्धा सहचरा शतपुष्पा प्रसारणी।
प्रयोक्तव्या सदैवार्द्रा द्विगुणा नैव कारयेत्।
(शा.प्र. २।४५)

अन्य आचार्यों ने भी कुछ द्रव्यों को घटा-बढ़ा कर इस वर्ग को इसी प्रकार पढ़ा है। स्वयं आचार्य गोविन्ददास जी ने अपनी दूसरी पुस्तक 'परिभाषाप्रदीप' में कहा है कि—

वासाकुटजकूष्माण्डशतपुष्पा सहामृता।
प्रसारिण्यश्वगन्धा च नागाख्यातिबला तथा॥
नित्यमार्द्रा प्रयोक्तव्या न तासां द्विगुणो भवेत्॥
(परिभाषाप्रदीप)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

राजनिघण्टुकार आचार्य नरहरि पण्डित ने भी कुछ द्रव्यों को आर्द्र ही लेने का आग्रह किया है तथा सूखी औषधि भी नया ही लेने को कहा है। पुरानी औषधियाँ निर्वीय होने के कारण निष्फल हो जाती हैं। उन्होंने बथुआ के शाक, कुटज, गुडूची, वासा, कूष्माण्ड और शतपत्री (गुलाब) को ताजा ही लेने को कहा है। यथाह—

सर्वाणि चार्द्राणि नवौषधानि सुवीर्यवन्तीह वदन्ति धीराः।
सर्वाणि शुष्काणि तु मध्यमानि शुष्कानि जीर्णानि निष्फलानि॥

वास्तूककुटजगुडूचीवासाकूष्माण्डकादि शतपत्री इत्यादि तु नित्यार्द्रं गुणवच्छुष्कं यदा कदा द्विगुणम्। (राजनि. धरण्या.)

आयुर्वेदीय द्रव्यों का वर्गीकरण

त्रिफला वर्ग

पथ्या बिभीतकं धात्री त्रिफला महती स्मृता।
स्वल्पा काश्मर्यखर्जूरपरूषकफलैर्भवेत्॥२३॥

१. हर्रे : टर्मिनेलिया चेब्युला (Terminalia chebula)
२. बहेरा : टर्मिनेलिया बैलेरिका (Terminalia bellierica)
३. आमला : एम्ब्लिका आफिसिनेलिस (Emblica officinalis)

इन तीनों फलों को समभाग में लेने को बड़ी 'त्रिफला' कहते हैं।

आचार्य सुश्रुत तथा आचार्य भावमिश्र ने भी सममात्रा में इन तीनों फलों को लेने का निर्देश किया है। किन्तु आचार्य शार्ङ्गधर मिश्र ने हर्रे का १ फल, बहेरा के २ फल और आमला के ४ फल लेने को त्रिफला कहा है। यथा—

एका हरीतकी योज्या द्वौ च योज्यौ बिभीतकौ।
चत्वार्यामलकान्येवं त्रिफलैषा प्रकीर्तिता॥
(शार्ङ्ग. म. ६।९)

१. गम्भारफल : मेलिना आर्बोरिया (Gmelina arborea)
२. खजूर फल : फिनिक्स सिल्वेस्ट्रिस (Phoenix sylvestris)
३. फालसा फल : ग्रिविया शिआटिका (Grewia asiatica)

त्रिमद वर्ग

मुस्तं चित्रं विडङ्गञ्च त्रिमदः समुदाहृतः।

१. नागरमोथा : साइपरस रोण्टडस् (Cyperus rotundus)
२. चित्रकमूल : प्लम्बेगो जिलेनिका (Plumbago zeylanica)
३. विडङ्ग : इम्बेलिया रिब्स (Embelia ribes)

उपर्युक्त तीन द्रव्यों को समभाग में ग्रहण करने को त्रिमद कहते हैं।

त्रिकटु वर्ग

पिप्पली मरिचं शुण्ठी त्रयमेतद्विमिश्रितम्॥२४॥
त्रिकटु त्र्यूषणं व्योषं कटुत्रिकमथोच्यते।

निम्नलिखित तीन द्रव्यों को समभाग में लेने को त्रिकटु कहते हैं। त्र्यूषण और कटुत्रिक ये दोनों इसके पर्याय हैं।

१. पिप्पली : पाइपर लौंगम (Piper longum)
२. मरिच : पाइपर नाइग्रम (Piper nigrum)
३. सोंठ : जिञ्जिबर ऑफिसिनेल (Zingiber officinale)

चतुः-पञ्च-षडूषण वर्ग

ग्रन्थिकाऽनलचव्यैस्तु चतुःपञ्चषडूषणम्॥२५॥

त्रिकटु में पिप्पलीमूल मिलाने से चतुरूषण कहा जाता है। चतुरूषण में चित्रकमूल मिलाने से पञ्चोषण कहा जाता है। पञ्चोषण में चव्य मिलाने से षडूषण कहा जाता है।

१. पिप्पलीमूल : रूट ऑफ दी पाइपर लांगम (Root of the Piper longum)
२. चव्य : पाइपर रेट्रोफ्रैक्टम (Piper retrofractum)
३. चित्रकमूल : प्लम्बगो जिलेनिका (Plumbgo zeylamica)

त्र्यूषण वर्ग का भेद

चविका चित्रको नागपिप्पली त्र्यूषणं मतम्॥२६॥

चव्य, चित्रकमूल एवं गजपिप्पली को समभाग ग्रहण करने को त्र्यूषण कहा जाता है।

गजपिप्पली : सिण्डेप्सस आफिसिनेलिस (Scindapsus officinalis)

त्रिजातक एवं चातुर्जातक वर्ग

त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैस्त्रिसुगन्धि त्रिजातकम्।
नागकेशरसंयुक्तं चातुर्जातकमुच्यते॥२७॥

१. दालचीनी : सिनेमोमम् जिलेनिकम् (Cinnamomum zeylamicum)
२. छोटी इलायची : एलिटेरिया कार्डेमोमम् (Elettaria cardamomum)
३. तेजपत्ता : सिनेमोमम् तमालनीज (Cinnamomum tamala)

इन तीनों द्रव्यों को समभाग में ग्रहण करने को त्रिसुगन्धि एवं त्रिजातक कहते हैं। इनमें ४. नागकेशर (मेसुया फेरिया = Mesua ferria Lirn.) समभाग मिलाने से चातुर्जातक कहा जाता है।

सर्वगन्ध वर्ग

जातुर्जातककर्पूरकङ्कोलागुरुसिह्लकम्।
लवङ्गसहितञ्चैव सर्वगन्धं विनिर्दिशेत्॥२८॥

१. दालचीनी, २. छोटी इलायची, ३. तेजपत्ता, ४. नागकेशर, ५. कर्पूर, ६. शीतलचीनी, ७. अगुरु, ८. सिह्लक, ९. लवङ्ग—समभाग में मिलाने पर सर्वगन्ध वर्ग कहा जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शीतल चीनी : पाइपर क्यूबेबा लिन (Pipler cubeba Linn.)
२. अगुरु : एक्विलेरिया एगोलाचा (Aquilaria agallocha)
३. सिहलक : लिक्विडम्बर ओरिएण्टेलिस् (Liquidamber orientalis)

चातुर्भद्रक वर्ग

नागरातिविषा मुस्ता त्रयमेतद्विमिश्रितम्।
गुडूची संयुतं तच्च चातुर्भद्रकमुच्यते ॥२९॥

१. सोंठ, २. अतीस, ३. नागरमोथा और ४. गुडूची। इन चारों द्रव्यों को समभाग में ग्रहण करने को चातुर्भद्रक वर्ग कहते हैं।

१. अतिविषा : एकोनाइटम् टेटरोफाइलम् (Aconitum heterophyllum)
२. नागरमोथा : साइपेरस् रोटण्डस् (Cyperus rotundus)
३. गुडूची : टिनास्पोरा कार्डिफोलिया (Tinospora carlifolia)

पञ्चकोल वर्ग एवं उनकी निरुक्ति

पिप्पलीपिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम्।
पञ्चभिः कोलमात्रं यत् पञ्चकोलं तदुच्यते ॥३०॥

१. पीपर, २. पिपरामूल, ३. चव्य, ४. चित्रकमूल, ५. सोंठ—इन पाँचों द्रव्यों को १-१ कोल ($\frac{1}{2}$ तोला) मात्रा में ग्रहण करने को पञ्चकोल कहते हैं। इसे पञ्चोषण भी कहते हैं।

पञ्चक्षीरिवृक्ष वर्ग

उदुम्बरो वटोऽश्वत्थो वेतसः प्लक्ष एव च।
पञ्चैते क्षीरिणो वृक्षाः संज्ञया समुदाहताः ॥३१॥

१. गूलर, २. वट, ३. पीपल, ४. वेतस, ५. पाँकड—इन वृक्षों से दूध निकलता है, अतः इन पाँचों वृक्षों को क्षीरिवृक्ष कहते हैं।

१. गूलर : फाइकस् ग्लोमेरेटा (Ficus glomerata)
२. वट : फाइकस् बैंगालेंसिस (Ficus bengalensis)
३. पीपल : फाइकस् रिलीजिओसा (Ficus religiosa)
४. पाकड : फाइकस् इन्फेक्टोरिया (Ficus infectoria)
५. वेतस (सन्दिग्ध है ?)

अन्य आचार्यों के मत से क्षीरिवृक्ष—
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थपारीषप्लक्षपादपाः।
पञ्चैते क्षीरिणो वृक्षास्तेषां त्वक्पञ्चवल्कलम्॥
(भावप्रकाश)

चतुरम्ल और पञ्चाम्ल

कोलदाडिमवृक्षाम्लैरम्लवेतससंयुतैः।
चतुरम्लं तु पञ्चाम्लं मातुलुङ्गसमन्वितम् ॥३२॥

१. जंगली बैर, २. खट्टा अनार, ३. इमली और ४. अम्लवेत—इन चार खट्टे द्रव्यों को समभाग में लेने को चतुरम्ल वर्ग की संज्ञा देते हैं। इनमें ५. मातुलुङ्ग नींबू मिलाने से पञ्चाम्ल वर्ग की संज्ञी दी जाती है।

१. जंगली बैर : जिजिफस् जुजुबा (Ziziyphus jujuba)
२. खट्टा अनार : प्युनिका ग्रेनटम् (Punica granatum)
३. इमली : टेमरीण्डस् इण्डिका (Tamirindus indica)
४. अम्लवेत : गार्सिनिया पेड्ङ्कुलेटा (Garcinia pedunculata)
५. मातुलुङ्ग : साइट्रस मेडिका (Citrus medica)

पञ्चगव्य

पञ्चगव्यं दधिक्षीरघृतगोमूत्रगोमयैः ॥३३॥

गाय के दूध, दही, घी, मूत्र और गोबर रस को समभाग में ग्रहण करने को पञ्चगव्य कहते हैं।

पञ्चलवण

सिन्धुसौवर्चलं चैव विडं सामुद्रमौद्भिदम्।
एकद्वित्रिचतुःपञ्चलवणानि क्रमादिह ॥३४॥

१. सैन्धवलवण : सोडी क्लोराइडम् (Sodii chloridum)
२. सौवर्चल लवण : अनएक्वा सोडियम् क्लोराइड (Unaqua sodium chloride)
३. विड लवण
४. सामुद्र लवण : सोडीआई मुरास् (Sodii muras)
५. औद्भिद लवण

पञ्चमूल (बृहत्)

बिल्वश्योनाकगाम्भारीपाटलागणिकारिकाः।
एतन्महत्पञ्चमूलं संज्ञया समुदाहृतम् ॥३५॥

बिल्व, श्योनाक, गम्भारी, पाटला और अग्निमन्थ—इन वृक्षों के मूलत्वक् समभाग में ग्रहण करने को बृहत्पञ्चमूल कहते हैं।

१. बिल्वमूलत्वक् : इगल मार्मेलोस (Aegle marmelos)
२. सोनापाठामूलत्वक् : ओरोक्साइलम् इण्डिकम् (Oroxylum indicum)
३. गम्भारीमूलत्वक् : मेलीना आर्बोरिया (Gmelina arborea)
४. पाढलमूलत्वक् : स्टेरिओस्पर्मम् स्वावियोलेंस (Stereospermum suaveolens)
५. अग्निमन्थ : प्रेम्ना इण्टेग्रिफोलिया (Premna integrifolia)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पञ्चमूल (लघु)

शालपर्णी पृश्निपर्णी बृहतीद्वयगोक्षुरम्।
कनीयपञ्चमूलं स्यादुभयं दलमूलकम् ॥३६॥

शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बृहती, कण्टकारी और गोक्षुर—इन पाँचों क्षुपों के मूलों को समभाग में ग्रहण करने को लघुपञ्चमूल कहते हैं। इन दोनों बृहत् एवं लघु पञ्चमूलों को मिलाने से दशमूल कहा जाता है।

१. शालपर्णी : डेस्मोडियम् गङ्गेण्टिकम् (Desmodium gangeticum)
२. पृश्निपर्णी : यूरिरिआ पिक्टा (Uraria picta)
३. बृहती : सोलोनम् इण्डिकम् (Solonum indicum)
४. कण्टकारिका : सोलोनम् एक्सन्थोकार्पम् (Solonum xanthocarpum)
५. गोक्षुर : ट्रिब्युलस् टेरिस्ट्रिस (Tribulas terrestris)

पञ्चतृणमूल

कुशः कासः शरो दर्भ इक्षुश्चैव तृणोद्भवम्।
पञ्चतृणमिदं ख्यातं तृणजं पञ्चमूलकम् ॥३७॥

कुश, कास, शरपत, दाभ और इक्षु—इन पाँच द्रव्यों के मूल को समभाग में ग्रहण करने को पञ्चतृणमूल कहते हैं।

१. कुशमूल : डेस्मोस्टैशिया वाइपिन्नाटा (Desmostachya bipinnata)
२. कासमूल : सक्केरम् स्पाण्टेनियम् (Saccharum spontaneum)
३. शरमूल : सक्केरम् मुञ्ज (Saccharum munja)
४. दर्भमूल : इम्परेटा सिलिण्ड्रिका (Imperata cylendrica)
५. इक्षुमूल : सक्केरम् आफिसिनेरम् (Saccharum officinarum)

अष्टवर्ग

द्वे मेदे चापि काकोल्यौ जीवकर्षभकौ तथा।
ऋद्धिवृद्धियुतैः सर्वैरष्टवर्ग उदाहृतः ॥३८॥

मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि एवं वृद्धि—इन आठ द्रव्यों के मूल को समभाग में ग्रहण करने को अष्टवर्ग कहते हैं। ये सब सन्दिग्ध हैं, अतः इनके लैटिन नाम भी उपलब्ध नहीं हैं।

जीवनीय गण (मधुर गण)

जीवकर्षभकौ मेदे काकोल्यौ मधुकं तथा।
माषपर्णी मुद्गपर्णी जीवन्ती मधुरो गणः ॥३९॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां मान-परिभाषाप्रकरणम्।

जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुलेठी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी और जीवन्ती—इन दश द्रव्यों के समूह को समभाग में ग्रहण करने को 'मधुर गण' अथवा जीवनीय गण अर्थात् जीवनीय शक्ति देनेवाला कहते हैं।

विमर्श—आचार्यश्री की अन्य रचना "परिभाषाप्रदीप" में १२ द्रव्यों से युक्त एक वर्ग को जीवनीय वर्ग की संज्ञा दी है। यथा—

अष्टवर्गश्च पर्णिन्यौ जीवन्ती मधुकं तथा।
जीवनीयगणः प्रोक्तो जीवनश्च पुनस्ततः ॥

"भैषज्यरत्नावली" के अन्य व्याख्याकारों द्वारा प्रकाशित अन्य संस्करणों में भी यही श्लोक उल्लिखित किया गया है।

१. मुलेठी : ग्लिसिरिजा ग्लेब्रा (Glycyrrhiza glabra)
२. माषपर्णी : टेराम्नस् लेबिएलिस (Teramnus labialis)
३. मुद्गपर्णी : फेसिओलस् ट्राइलोबस् (Phaseolus trilobus)
४. जीवन्ती : लेप्टाडेनिआ रेटिक्युलटा (Leptadenia reticulata)

आचार्य भावमिश्र ने भी १२ द्रव्यों से युक्त जीवनीय गण ही कहा है। किन्तु श्री विनोदलालसेन सम्पादित संस्कृत व्याख्या से युक्त भैषज्यरत्नावली में उपर्युक्त पाठ ही उल्लिखित है, जिसमें अष्टवर्ग की छः औषधियाँ ही संगृहीत हैं।

अपि च—

अष्टवर्गः सयष्टीको जीवन्ती मुद्गपर्णिका।
माषपर्णी गणोऽयं तु जीवनीय इति स्मृतः॥
(भा.प्र.गुडू. ५७)

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य मानपरिभाषाप्रकरणस्य जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ शोधन-मारण-गुणादिप्रकरणम् (३)

पारद

(Mercury)

संकेत : Hg (Hydrargyrum)

खान (स्थान) भेद से पारद के भेद

रसो रसेन्द्रः सूतश्च पारदो मिश्रकस्तथा।
इति पञ्चविधो जातः क्षेत्रभेदेन शम्भुजः ॥१॥

(र.र.स.)

प्राचीनकाल में पारद पाँच खानों से आता था, इसीलिए आचार्यों ने पारद के पाँच प्रकार कहे हैं; यथा—रस, रसेन्द्र, सूत, पारद एवं मिश्रक।

पारद के पर्याय

अमृत, खेचर, पारद, मुकुन्द, सूतेन्द्र, रस, रसेन्द्र, रसेश्वर, रसोत्तम, हरबीज, शम्भुज, शिवबीज, सूत तथा सूतराज।

शुद्ध पारद के स्वरूप

अन्तः सुनीलो बहिरुज्ज्वलो वा
मध्याह्नसूर्यप्रतिमप्रकाशः ।

शस्तो—

(आ.प्र.)

जो अन्दर से नीलवर्ण का एवं बाहर से चमकीला और दोपहर के सूर्य के जैसा प्रकाशवान् अर्थात् उज्ज्वल होता है, वह पारद श्रेष्ठ माना गया है।

श्री चूडामणि मिश्र ने कहा है —

'हीरकद्युतिसङ्काशं प्रमाणाद् हीरकात् क्वचित्।
क्वचित्पर्पटिकाभासं गलद्रूप्यनिभं क्वचित्' ॥

(रसकामधेनुः)

कभी पारद हीरा के जैसा चमकीला होता है, कभी पर्पटिट जैसा (औषधि) होता है और कभी पिघली हुई चाँदी जैसा पारद होता है।

अशुद्ध पारद के स्वरूप—

—ऽथ धूम्रो परिपाण्डुरश्च
चित्रो न योज्यो रसकर्मसिद्धये ॥२॥

जो धूमिल हो, पाण्डुर वर्ण का अथवा चित्र-विचित्र वर्ण वाला हो वह पारद रसकर्म में ग्राह्य नहीं है।

पारद के भौतिक गुण

पारद श्वेतवर्ण का अत्यन्त चमकीला, अतिचञ्चल एवं बहुत भारी और द्रवरूप धातु है। आधुनिक विज्ञानविदों के अनुसार सामान्य ताप पर द्रवित रहने वाला पृथ्वी पर अकेला खनिज धातु है। यह सभी धातुओं में अपवादस्वरूप द्रवित धातु है। वैज्ञानिकों ने इसे तत्त्व (Element) एवं धातु माना है। इसे अंग्रेजी में Quick silver (क्विक सिल्वर) कहते हैं। बुध ग्रह (Merc) जैसा चमकीला है अतः अंग्रेजी में इसे Mercury (मर्करी) भी कहते हैं। पारद का आपेक्षिक घनत्व १३.६ है।

यह पारद ३५७° सें. ताप पर उबलता है और ३६०° सें. ताप पर वाष्पीभूत होकर उड़ जाता है। पारा ३९° सें. ताप पर जम जाता है, इस अवस्था में इसी ताप पर इसके तार एवं पत्र बनाये जा सकते हैं। यों तो ३६०° से. पर पारद का उड़ने का नियम है फिर भी यह प्रचण्ड धूप में भी धीरे-धीरे उड़ता रहता है।

पारद का उपयोग

रसशास्त्र में सर्वत्र पारद की महिमा वर्णित है। आचार्यों ने तो यहाँ तक कह दिया कि पारद जैसा उपयोगी एवं शक्तिशाली द्रव्य इस पृथ्वी पर न अब तक उत्पन्न हुआ है और न भविष्य में भी उत्पन्न होगा। यथा—

'रसात् परतरो नास्ति न भूतो न भविष्यति'।

पारद के अन्य स्वरूप एवं गुण और उपयोगों को देखें—

'मूर्च्छित्वा हरति रुजं बन्धनमनुभूय मुक्तिदो भवति।
अमरीकरोति हि मृतः कोऽन्यः करुणाकरः सूतात्' ॥

(र.हृ.तं.)

और भी—

'शिवयोश्चरमो धातुरभ्रकं पारदस्तथा।
एतयोर्मेलनान्नृणां क्व मृत्युः क्व दरिद्रता' ॥

(रसेन्द्रचूडामणिः)

अपि च—

'दिनमेकं रसेन्द्रस्य यो दधाति हुताशनः।
द्रवन्ति तस्य पापानि कुर्वन्नपि न लिप्यति' ॥

(रसार्णवम्)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पारद के कुछ प्रमुख उपयोग

१. कुछ प्रमुख यन्त्रों; यथा—थर्मामीटर (तापमापी), बैरोमीटर (वायुभारमापी), लैक्टोमीटर, यूरिनोमीटर आदि के निर्माणार्थ।
२. सोना-चाँदी के खनिजों को पाउडर कर (मिक्स कर) एमलगम बनाकर धातु-निष्कर्षणार्थ।
३. मर्करी वाष्प लैम्प एवं विद्युत् उपकरणों में।
४. दर्पण बनाने में।
५. कुछ विस्फोटक पदार्थों के निर्माण में।
६. आयुर्वेदिक एवं कुछ एलोपैथिक दवाओं के निर्माण में।
७. कास्टिक सोडा के निर्माण में।
८. पोटाश बनाने में।
९. चीनी मिल में उपयोगी है।
१०. पानी के जहाजों की तली रंगने में।

पारद के कुछ प्रमुख खनिज

१. सिन्नेबार (Cinnabar = HgS) : हिंगुल, २. मेटा-सिन्नेबार (Meta cinnabar = HgS) : हिंगुल, ३. कैलोमेल (Calomel = Hg_2Cl_2) : रसकर्पूर, तथा ४. लिविंगस्टोनाइट (Livingstonite = $2Sb_2S_3$ HgS) इत्यादि।

पारद के दोष

विषं वह्निर्मलश्चेति दोषा नैसर्गिकास्त्रयः।
रसे मरणसन्तापमूर्च्छानां हेतवः क्रमात् ॥४॥
यौगिकौ नागवङ्गौ द्वौ तौ जाड्याध्मानकुर्वतौ[1]।
औपाधिकाः पुनश्चान्ये कीर्तिताः सप्तकञ्चुकाः ॥५॥
भूमिजा गिरिजा वार्या ते च द्वे नागवङ्गजे।
द्वादशैते रसे दोषाः प्रोक्ता रसविशारदैः ॥६॥

(र.र.स. ११)

विषदोष से मृत्यु, वह्निदोष से सन्ताप (शरीर में ताप की वृद्धि) तथा मलदोष से मूर्च्छा होती है। ये तीन पारद के नैसर्गिक दोषों के प्रभाव हैं। पारद के नाग और वंग ये दोनों यौगिक दोष हैं। इन दोषों से युक्त पारद का सेवन करने से शरीर में जडता एवं आध्मान होता है।

इन दोषों के अतिरिक्त पारद में सप्त कंचुक दोष भी होते हैं, जो औपाधिक दोष हैं। ये दोष भूमि, पर्वत और जल से उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार पारद में ३ नैसर्गिक (विष, वह्नि, मल) दोष, ७ कंचुक दोष तथा २ यौगिक (नाग और वंग) दोष कुल मिलाकर १२ दोष होते हैं।

पारद की सात पर्पटियाँ

पर्पटी पाटिनी भेदी द्रावी मलकरी तथा।
अन्धकारी तथा ध्वांक्षी विज्ञेयाः सप्तकञ्चुकाः ॥३॥

(र.र.स. ११)

पर्पटी, पाटिनी, भेदी, द्रावी, मलकरी, अन्धकारी तथा ध्वांक्षी—ये कंचुकी के सात नाम है।

विमर्श—आचार्य वाग्भट के अनुसार पारद में १२ दोष कहे गये हैं। इसके अतिरिक्त ७ पर्पटिओं को ७ औपाधिक दोष के अन्तर्गत समाविष्ट किया है।

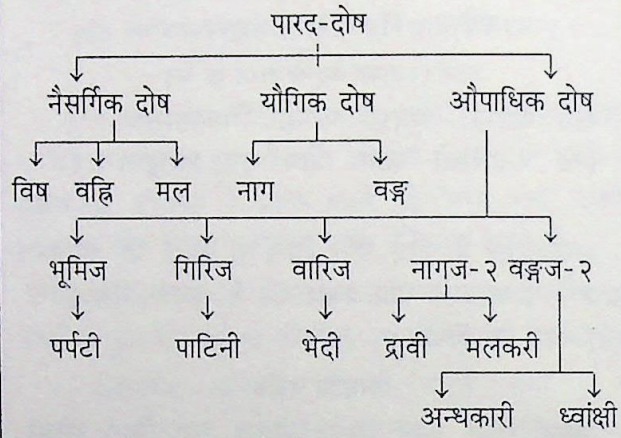

विशेष—पारद भारत में कभी उपलब्ध नहीं होता था। व्यापारी लोग विदेशों से पारद ऊँटों एवं खच्चरों पर लाते थे और अधिक लाभ के लिए उसमें नाग (Lead) और वङ्ग (Tin) मिला देते थे, जिससे पारद अशुद्ध एवं दोषपूर्ण हो जाता था। उसे यौगिक दोष कहते थे।

औपाधिक दोषों का प्रभाव

भूमिजाः कुर्वते कुष्ठं गिरिजा जाड्यमेव।
वारिजा वातसङ्घातं दोषाढ्यं नागवङ्गयोः ॥७॥

(र.र.स.)

भूमिज दोष से कुष्ठ, गिरिज दोष से शरीर में जड़ता तथा वारिज दोष से वातसमूह के अनेकरोग उत्पन्न होते हैं। नाग के दो दोष एवं वङ्ग के दो दोषों से अनेक तरह के दोषों के समूह (विविध रोगों) को उत्पन्न करता है।

पारदीय दोषों को दूरीकरणार्थ

तस्मात्सूतविधानार्थं सहायैर्निपुणैर्युतः।
सर्वोपस्करमादाय रसकर्मसमारभेत् ॥८॥

(र.र.स.)

इसीलिए विद्वान् वैद्य को चाहिए कि पारद के इन सभी १२ दोषों को दूर करने के लिए और शुद्ध पारद की प्राप्ति के लिए अनुभवी एवं क्रियाकुशल सहायकों, सेवकों तथा यन्त्र, मूषा, पुट, कोष्ठी एवं विविधौषधियों से युक्त होकर शुभ दिन एवं शुभ

१. 'कुष्ठदौ' इति पाठभेदः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नक्षत्र में भगवान् शंकर की आराधना करते हुए पारद का शोधन एवं संस्कार प्रारम्भ करे।

अशुद्ध पारद विष है तथा शुद्ध पारद अमृत है

दोषहीनो यदा सूतस्तदा मृत्युज्वरापहः।
शुद्धोऽयममृतः साक्षात् दोषयुक्तो रसो विषम्॥
तस्माद्दोषविशुद्ध्यर्थं रसशुद्धिर्विधीयते॥९॥
(र.सा.सं.)

जब पारद अशुद्धियों (दोषों) से रहित होकर मूर्च्छना को प्राप्त हो जायेगा तब वह पारद मृत्यु एवं ज्वरादि रोगों का नाश करता है। यह शुद्ध पारद साक्षात् अमृत जैसा है और दोषों (उपर्युक्त १२ दोषों) से युक्त पारद विष जैसा है। इसीलिए दोषशुद्धि के लिए पारद का शोधन करना चाहिए।

पारद का शोधन

शोधनं दोषहरणं संस्कारश्च बलवत्तेजसोऽभिवर्धनम्।
(धन्वन्तरिसंहिता)

शोधन से पारद के दोष दूर होते हैं। संस्कार से पारद बलवान् होता है और पारद के तेज की वृद्धि होती है।

शोधन

एकेन लशुनेनापि शुद्धो भवति पारदः।
पिष्टो लवणसंयुक्तो सप्ताहं सप्तखल्वके॥१०॥
(आ.प्र.)

पारद के बराबर निस्तुष लशुन और चौथाई सेन्धा लवण मिलाकर तप्त खरल में १ सप्ताह पर्यन्त मर्दन करने से पारद शुद्ध हो जाता है। सप्ताह के बाद गर्म पानी से पारद को धो लेना चाहिए।

और भी—

'रसेश्वरं समसुधारजसा मर्दयेत् त्र्यहम्।
ततो द्विगुणवस्त्रान्तर्गालितं खल्वके न्यसेत्॥
रसोनं निस्तुषं तुल्यं तदर्धं लवणं हरेत्।
तत्कल्के मर्दयेत् सूतं यावदायाति कृष्णताम्॥
कृष्णं कल्कं परित्यज्य तथा प्रक्षाल्य युक्तितः।
एकमेकेन वारेण रसेन्द्रः शुद्धिमाप्नुयात्'॥
(रसतरं. ५)

हिंगुल से शुद्ध पारद की प्राप्ति

अथवा हिङ्गुलात्सूतं ग्राहयेत् तन्निगद्यते।
जम्बीरनिम्बुनीरेण मर्दितो हिङ्गुलो दिनम्॥११॥
ऊर्ध्वपातनयन्त्रेण ग्राह्यः स्यान्निर्मलो रसः।
कञ्चुकैर्नागवङ्गाद्यैर्निर्मुक्तो रसकर्मणि।
विना कर्माष्टकेनैव सूतोऽयं सर्वकर्मकृत्॥१२॥
(र.सा.सं.)

अथवा हिंगुल से शुद्ध पारद प्राप्त किया जाता है जिसकी विधि निम्न प्रकार से है—पत्थर के साफ खरल में हिङ्गुल को पीसे और निम्बू के रस में १ दिन तक (१०-१२ घण्टे) तक मर्दन करें। सूखने पर खरल से शुद्ध हिंगुल को खरोच कर निकाल लें। पुनः उस हिंगुल को ऊर्ध्वपातन यन्त्र में रखकर सन्धिबन्धन करें और मध्यमाग्नि पर ३ प्रहर तक पाक करें। हिंगुल स्थित पारद शुद्ध होकर ऊपरिपात्र में उड़कर चिपक जाता है और पारद सप्तकञ्चुक एवं नाग-वङ्गादि औपाधिक दोषों से रहित होकर शुद्ध हो जाता है। यह पारद अष्टसंस्कारित पारद जैसा अर्थात् बिना आठ संस्कार के ही सभी कर्मों के लिए उपयोगी हो जाता है।

पारद का शोधन

रसोनस्वरसैः सूतो नागवल्लीदलोत्थितैः।
त्रिफलायास्तथाक्वाथै रसो मर्द्यः प्रयत्नतः॥१३॥
ततस्तेभ्यः पृथक् कृत्वा सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः।
सर्वदोषविनिर्मुक्तः योजयेद् रसकर्मभिः॥१४॥
(र.सा.सं.)

पारद के सभी दोषों को दूर करने के लिए तीन प्रकार से शोधन करें—१. सर्वप्रथम लशुन के स्वरस एवं कल्क में तीन प्रहर तक पारद को मर्दन करें। २. इसके बाद ताम्बूल स्वरस में ३ प्रहर तक पारद को मर्दन करें। ३. और अन्त में त्रिफलाक्वाथ में ३ प्रहर तक पारद को मर्दन करें। फिर पारद को अलग निकाल कर गरम काञ्जी से प्रक्षालन करें। ऐसा करने से पारद के सभी दोष नष्ट हो जाते हैं। ततः उस पारद को रसकर्म में प्रयोग करें।

रसवर्ग या महारसवर्ग

आठ रस या महारस

अभ्रवैक्रान्तमाक्षीकविमलाद्रिजसस्यकम्।
चपलो रसकश्चेति ज्ञात्वाऽष्टौ संग्रहेद्रसान्॥१५॥
(र.र.स.)

१. अभ्रक, २. वैक्रान्त, ३. माक्षिक, ४. विमल, ५. शिलाजतु, ६. सस्यक (तुत्थ), ७. चपल तथा ८. रसक (खर्पर)—इन आठ खनिज द्रव्यों को रस या महारस कहते हैं। इन्हें शुभाशुभ देखकर संग्रह करना चाहिए।

अभ्रक

(Mica)

प्रमुख पर्याय—अनन्तपत्र, अभ्र, अभ्रक, अम्बर, आकाश, ख, गगन, घन, बहुपत्र, वज्र तथा व्योम।

परिचय—अभ्रक खानों से प्राप्त होने वाला द्रव्य है। इसमें

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

किसी प्रकार के परिमार्जन एवं परिशोधन की आवश्यकता नहीं होती। औषधि के अतिरिक्त इसका यों ही उपयोग किया जाता है। रासायनिक दृष्टि से अभ्रक के पाँच भेद हैं—

१. श्वेत—मस्कोवाइट—Muscovite–$H_2KAl_3(SiO_4)_3$
२. श्वेत—पैरागोनाइट—Paragonite–$H_2Na\,Al_3(SiO_4)_3$
३. कृष्ण—बायोटाइट—Biotite $(H,K.)_2(MgFe)_2(Al,Fe)_2(SiO_4)_3$
४. रक्त—फ्लोगोपाइट— Phlogopite $[HK(MgF)]_3 Mg_3Al(SiO_4)_3$
५. पीत—लेपिडोलाइट— Lepidolite $KLi[Al(OHF)_2]Al(SiO_4)_3$

तत्त्वों को दृष्टि में रखते हुए आधुनिक वैज्ञानिकों ने अभ्रक के दो ही भेद किये हैं—१. अल्कली माइका (श्वेताभ्र) तथा २. फैरोमैग्नेशियम माइका (कृष्णाभ्र)।

(१) अल्कली माइका में सोडियम और पोटैसियम आदि क्षार स्वाभाविक रूप में रहते हैं। अत: उस अभ्रक का रंग श्वेत होता है तथा (२) फैरोमैग्निसियम माइका में लोहा और मैग्निसियम ये दो तत्त्व निश्चित रूप में रहते हैं, इसीलिए उस अभ्रक का रंग काला होता है।

अभ्रक देवी पार्वती का शुक्र है

देव्या रजो भवेद् गन्धो धातुः शुक्रं तथाऽभ्रकम् ॥१६॥

(र.र.स.)

गन्धक भगवती पार्वती का रज है और अभ्रक पार्वती का शुक्रधातु है।

अभ्रक के पर्याय में कहा भी है—'अभ्रकं गिरिजाबीजममलं गगनाह्वयम्'। (रसेन्द्रसारसंग्रह:)। यह गिरिजाबीज है।

अभ्रक के भेद

पिनाकं नागमण्डूकं वज्रमित्यभ्रकं मतम्।
श्वेतादिवर्णभेदेन प्रत्येकं तच्चतुर्विधम्॥
श्वेतं रक्तं च पीतं च कृष्णमेव चतुर्विधम् ॥१७॥

(र.र.स.२)

१. पिनाक, २. नाग, ३. मण्डूक तथा वज्र—इस प्रकार यह अभ्रक ४ प्रकार के हैं किन्तु प्रत्येक अभ्रक श्वेत, पीत, रक्त व कृष्ण इन ४ वर्णों में मिलता है, अत: अभ्रक वर्ण भेद से १६ प्रकार का है।

अभ्रक की परीक्षा

पिनाकं पावकोत्तप्तं विमुञ्चति दलोच्चयम्।
नागाभ्रं नागवत् कुर्याद् ध्वनिपावकसंस्थितम् ॥१८॥
उत्प्लुत्योत्प्लुत्य मण्डूकं ध्मातं पतति चाभ्रकम्।
वज्राभ्रं वह्निसन्तप्तं निर्मुक्ताशेषवैकृतम् ॥१९॥

(र.र.स.)

१. **पिनाकाभ्र**—आग पर इस अभ्रक के टुकड़े को रखकर धौकनी से धमन करने पर अपने सुसम्बद्ध पत्रों को अलग-अलग कर देता है और धनुष जैसी आवाज करता है।

२. **नागाभ्र**—इस अभ्रक को यदि आग पर धौकनी से धमन किया जाय तो साँप के जैसा फुत्कार करता है।

३. **मण्डूकाभ्र**—इस अभ्रक को यदि आग पर धौकनी से धौका जाय तो मेढक जैसा उछल-उछल कर आग से नीचे गिरता है।

४. **वज्राभ्रक**—यह अभ्रक आग पर धमन करने से निर्विकार रहता है।

विमर्श—अभ्रक की इस प्रकार परीक्षा का कारण अभ्रक में विषम एवं टेढ़ी-मेढ़ी जलशिराओं की बनावट है। इन शिराओं में जल की उपस्थिति ही कारण है। अभ्रक में ५-६% जल रहता है। आग पर तपाने में जल निकलना चाहता है किन्तु विषम एवं अवरोधी शिराओं के कारण नहीं निकल पाता है। फलत: जल वाष्पीभूत हो जाता है और अभ्रक फट जाता है, उछलता है, साँप के जैसा फुत्कार करता है। किन्तु वज्राभ्रक में जल की शिराएँ सीधी होती हैं, तपाने से जल बिना विकार के सिराओं से निकल जाता है। अत: इसे निर्विकार एवं उत्तम कहा है।

श्रेष्ठ एवं ग्राह्य अभ्रक की परीक्षा

स्निग्धं पृथुदलं वर्णसंयुक्तं भारतोऽधिकम्।
सुखं निर्मोच्य पत्रं च तदभ्रं श्रेष्ठमीरितम् ॥२०॥

(र.र.स.)

सुप्रशस्तं कठोराङ्गं गुरु कज्जलसन्निभम्।
यन्न शब्दायते वह्नौ नैवोच्छूनं भवेदपि॥
सदाकरसमुद्भूतं वज्रेति प्रथितं घनम् ॥२१॥

(र.सा.सं.)

जो अभ्रक चिकना हो, मोटा पत्र वाला हो, कृष्ण वर्ण का हो, अधिक वजन का हो, आसानी से जिस अभ्रक के पत्रों को पृथक् किया जाय उस अभ्रक को श्रेष्ठ कहा जाता है।

जो उत्तम हो, कठिन हो, भारी हो, काजल जैसा काले वर्ण का हो, जो अभ्रक आग पर धौकने से किसी प्रकार का शब्द न करे, आग पर फूले भी नहीं, जो अच्छे खानों से निकाला गया हो उस अभ्रक को वज्राभ्रक कहते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अभ्रक का शोधन

प्रतप्तं सप्तवाराणि निक्षिप्तं काञ्जिकेऽभ्रकम्।
निर्दोषं जायते नूनं प्रक्षिप्तं वाऽपि गोजले॥
त्रिफलाक्वथिते चापि गवां दुग्धे विशेषतः॥२२॥
(र.र.स.)

अभ्रकपत्र को आग पर रख कर धौंकने से, तप्त अभ्रकपत्र को काञ्जी या गोमूत्र या त्रिफलाक्वाथ में ७-७ बार बुझाने से शीघ्र ही अभ्रक निर्दोष हो जाता है। गाय के दूध में ७ बार प्रतप्त अभ्रक को बुझाने से अभ्रक शुद्ध हो जाता है।

अभ्रक का धान्याभ्रकीकरण

पादांशशालिसंयुक्तमभ्रकं कम्बलोदरे।
त्रिरात्रं स्थापयेन्नीरे तत् क्लिन्नं मर्दयेद् दृढम्॥२३॥
कम्बलाद्गलितं श्लक्ष्णं बालुकारहितं च यत्।
तद्धान्याभ्रमिति प्रोक्तमभ्रमारणसिद्धये॥२४॥
(र.सा.सं.)

१ किलो शुद्ध अभ्रकपत्र को किसी धारदार शस्त्र (गडाशी विशेष) से छोटे-छोटे टुकड़े काट लें। एक पुराने कम्बल के १ मीटर के टुकड़े में उस अभ्रक के टुकड़े एवं २५० ग्राम मोटा धान मिला कर पोटली जैसा बाँध कर काञ्जी-पूरित बाल्टी में डाल कर ३ दिनों तक भींगने को छोड़ दें। चौथे दिन उस पोटली को खोलकर ढीला कर पुनः बाँधे और पुराना जूता पहने पैर से खूब मसलें तथा पोटली को पुनः-पुनः काञ्जी वाली बाल्टी में हिला-हिला कर निकालें। इसी प्रकार बार-बार पैर से मसलने के बाद काञ्जी में पोटली डालकर हिलावें। ऐसा करने से धान की नोक से रगड़ खाने के बाद अभ्रक छोटे-छोटे कण रूप में टूटकर कम्बल के छिद्रों से बाहर निकल कर बाल्टीवाली काञ्जी पर तैरता मिलेगा। इसी प्रकार पूरी पोटली का पूरा अभ्रक छोटे-छोटे टुकड़ों में कट कर बाल्टी में तैरता रहेगा और पोटली में अवशिष्ट अपद्रव्य कंकड़-पत्थर एवं धान की भूँसी, चावल आदि शेष मिलेंगे। अब बाल्टी के अन्दर अभ्रक के सूक्ष्म टुकड़ों को किसी कपड़े पर छान लें। इसे ही धान्याभ्रक कहते हैं।

अभ्रक का शोधन एवं धान्याभ्रक की अनुभूत विधि

मिट्टी की १ बड़ी हाँडी में ४ लीटर गोमूत्र भरें तथा उसमें १ किलो कृष्णवज्राभ्रक डालकर शराव से मुख बन्द कर सम्पुट करें और गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर उस हाँडी को निकालें। उसमें रखा अभ्रकपत्र फूल कर बहुत बड़ा एवं भंगुर हो जायेगा। इसे हाथ से मसल कर महीन छननी से छान लें। अवशिष्ट जो अभ्रक बचे उसे इमामदस्ते में हलका कूट कर महीन छननी (१०० नम्बर की जाली) से छान लें। पुनः जल पूर्ण बाल्टी में डाल कर हाथ से अच्छी तरह से मिला ले। इसमें के अपद्रव्यों के चूर्ण मिट्टी आदि पदार्थ बाल्टी के नीचे बैठ जायेंगे और अभ्रक पानी पर तैरता रहेगा। यह भी धान्याभ्रक जैसा है। इससे भस्म बनाया जा सकता है। यह विधि उत्तम है और परिश्रम एवं प्रपञ्च रहित है तथा लाभ उसी प्रकार है। गोमूत्र में पाक होने से इसका समुचित शोधन भी हो गया तथा सूक्ष्म चूर्ण भी।

अभ्रकमारण

धान्याभ्रं कासमर्दस्य रसेन परिमर्दितम्।
पुटितं दशवारेण म्रियते नात्र संशयः॥२५॥
(र.र.स.)

धान्याभ्रक को कासमर्द (कसौंदी) स्वरस में दृढ़ मर्दन कर टिकिया बनाकर सुखा लें तथा शराव सम्पुट कर गजपुट में पाक करें। इस प्रकार १० से ३० बार गजपुट में पाक करने पर निश्चित रूप से अभ्रक का निश्चन्द्र भस्म हो जाता है।

विशेष—बिना जोड़ की लोहे की कड़ाही में मर्दन करने से चमक जल्दी मिटती है और भस्म शीघ्र बनती है। 'मर्दनं गुणवर्धनम्' भी कहा गया है।

अभ्रकमारण की अन्य विधि

गन्धर्वपत्रतोयेन गुडेन सह भावितम्।
ऊर्ध्वाधो वटपत्राणि निश्चन्द्रं त्रिपुटैः खगम्॥२६॥
(र.र.स.)

लोहे की बिना जोड़ की छोटी कड़ाही में अभ्रक चूर्ण से चौथाई गुड़ मिला कर एरण्डपत्रस्वरस के साथ ८-१० घण्टे तक खूब दृढ़ मर्दन करें और वटपत्रों पर टिकिया बना लें। टिकिया सूखने पर मिट्टी के शराव में वटपत्र के साथ रखें। अभ्रक की टिकिया पर पुनः वटपत्र रखें। शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। आचार्य तो तीन पुट में ही इस विधि से भस्म हो जाने को कहते हैं किन्तु मेरे अनुभव में २० पुट में अच्छी निश्चन्द्र भस्म बनती है।

अभ्रकमारण की अनुभूत विधि

१. धान्याभ्रक ५०० ग्राम, २. कलमीसोरा १२५ ग्राम, ३. गुड़ ६५ ग्राम तथा ४. जल आवश्यकतानुसार—इन्हें बिना जोड़ की लोहे की छोटी कड़ाही में रखकर २ दिनों तक खूब दृढ़ मर्दन करें। पुनः चक्रिका बना कर शरावसम्पुट करें और गजपुट में पाक करें। ऐसा ३ बार करने से अभ्रक निश्चन्द्र हो जाता है। इसके बाद अर्कपत्रस्वरस से मर्दन कर टिकिया बनावें तथा सुखा कर पुट दें। ऐसा १० बार करने से अभ्रक की निश्चन्द्र एवं वारितर भस्म बनती है। तीसरे पुट के बाद कलमी सोरा एवं गुड़ नहीं दें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अभ्रक भस्म की परीक्षा

अभ्रकं चेष्टिकाभं स्यात्।.....

अर्थात् अभ्रक भस्म का वर्ण ईंट के चूर्ण जैसा लाल होना चाहिए।

विमर्श—भस्म-परीक्षा—१. लाल ईंटे के रंग जैसा, २. निश्चन्द्र, ३. वारितर, ४. रेखापूर्ण, ५. श्लक्ष्ण, ६. सूक्ष्म, ७. मृदु, ८. निःस्वादु, ९. अवामि, १०. निर्धूम, ११. अपुनर्भव, १२. निरुत्थ, १३. लघु तथा १४. दन्ताग्रे कचकचाभाव—इतने लक्षण होने चाहिए।

निश्चन्द्रकं सुसूक्ष्मं च लोचनाञ्जनसन्निभम्।
तदा तु मृतमित्युक्तमभ्रकं नान्यथा मृतम्॥२७॥
मृतं निश्चन्द्रतां जातमरुणं चामृतोपमम्।
कचकचिति न दन्ताग्रे कुर्वन्ति समानि केतकीरजसा॥
योज्यानि हि प्रयोगे रसोपरसलोहचूर्णानि॥२८॥

(आ.प्र. १)

मृतं तरति यत्तोये लोहं वारितरं हि तत्।
अङ्गुष्ठतर्जनीस्पृष्टं यत्तद्रेखान्तरे विशेत्।
मृतं लोहं तदुद्दिष्टं रेखापूर्णाभिधानतः॥२९॥

(र.र.स. ८)

अभ्रक भस्म चन्द्रिका रहित होना चाहिए, सूक्ष्म हो, नेत्राञ्जन जैसा चिकना हो—इन लक्षणों से युक्त अभ्रक को ही भस्म मानना चाहिए, इसके अतिरिक्त लक्षणों वाला अभ्रक भस्म अच्छा नहीं है। निश्चन्द्र अभ्रक भस्म लाल रंग का होना चाहिए जो अमृत जैसा गुणकारी होता है। दाँतों से अभ्रक भस्म दबाने पर कच-कच नहीं करे अपितु केवड़ापुष्प-पराग जैसा मृदु होना चाहिए। रसोपरस लोहादिकों के भस्म को ही प्रयोग करना चाहिए।

१. **वारितर भस्म**—लोहादि धातुओं के भस्म वारितर होने चाहिए। जलपूर्ण पात्र में लौहादि भस्मों को डालने से तैरता रहता है, अतः इसे वारितर कहते हैं।

२. **रेखापूर्ण भस्म**—अंगूठा और तर्जनी इन दो अँगुलियों के बीच थोड़ी-सी भस्म रख कर अंगुली को रगड़ने पर सभी भस्म चूर्ण अँगुलियों की रेखाओं में घुस जाय, शेष कुछ नहीं बचे तो उसे रेखापूर्ण कहते हैं।

अभ्रक भस्म के गुण

गौरीतेजः परममृतं वातपित्तक्षयघ्नं
प्रज्ञाबोधि प्रशमितरुजं वृष्यमायुष्यमग्र्यम्।
बल्यं स्निग्धं रुचिदमकफं दीपनं शीतवीर्यं
तत्तद्योगैः सकलगदहृद् व्योमसूतेन्द्रबन्धि॥३०॥

(र.र.स. २)

निश्चन्द्र एवं सुमृत अभ्रक भस्म अमृत जैसा गुणकारी है, वातदोष, पित्तदोष नाशक है, क्षयनाशक है, बुद्धिप्रबोधक है, सभी प्रकार के रोगों को शान्त करनेवाला है, वृष्य एवं आयुष्य कर औषधों में श्रेष्ठ है, बल्य है, स्निग्ध है, रुचिकर है, कफ नाशक है, दीपन है, शीतवीर्य वाला है, जिन-जिन औषधि योगों में इसका प्रयोग होता है उन-उन सभी रोगों को नाश करता है। इसके अतिरिक्त अभ्रक भस्म पारद का बन्धन करने वाला है।

अपि च—

'सर्वव्याधिहरं त्रिदोषशमनं वह्नेश्च सन्दीपनं
वीर्यस्तम्भविवृद्धिकृत्परमिदं कृच्छ्रादिरोगापहम्।
भूतोन्मादनिवारणं स्मृतिकरं शोफामयध्वंसकं
सद्यः प्राणविवर्धनं ज्वरहरं सेव्यं सदा चाभ्रकम्'॥

(र.प्र.सुधा. ५)

अपि च—

'रोगान् हन्ति दृढयति वपुर्वीर्यवृद्धिं विधत्ते
तारुण्याढ्यं रमयति शतं योषितां नित्यमेव।
दीर्घायुष्याञ्जनयति सुतान् विक्रमैः सिंहतुल्यान्
मृत्योर्भीतिं हरति सततं सेव्यमानं मृताभ्रम्'॥

(आ.प्र. २)

अपि च—

'निश्चन्द्रं मारितं व्योम रूपं वीर्यं दृढं तनुम्।
कुरुते नाशयेन्मृत्युं जरारोगकदम्बकम्'॥

(र.सा.सं.)

अपि च—

'सर्वरोगहरं व्योम जायते योगवाहकम्।
कामिनीमददर्पघ्नं शस्तं पुंस्त्वोपघातिनाम्॥
वृष्यमायुष्करं शुक्रवृद्धिसन्तानकारकम्'॥

(रसे.चिन्ता.)

अशुद्ध एवं सचन्द्र अभ्रक भस्म के दोष

पीडां विधत्ते विविधां नराणां
कुष्ठं क्षयं पाण्डुगदं च शोथम्।
हृत्पार्श्वपीडां च करोत्यशुद्ध-
मभ्रं हि तद्वद्गुरु वह्निहृत्स्यात्॥३१॥

(आ.प्र. २)

अशुद्ध एवं सचन्द्र अभ्रक भस्म का सेवन करने से अनेक प्रकार के भयंकर रोग होते हैं; जैसे—कुष्ठ, क्षय, पाण्डु, हृच्छूल, पार्श्वपीड़ा आदि। अशुद्ध अभ्रक भस्म गुरु एवं अग्निनाशक है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यथा विषं यथा वज्रं शस्त्राग्नि प्राणहा भवेत्।
भक्षितं चन्द्रिकायुक्तमभ्रकं तादृशं गुणैः॥
(र.प्र.सुधा.)

जैसे विष एवं तेज शस्त्र तथा अग्नि प्राण हरने वाला होता है उसी प्रकार सचन्द्र अभ्रक भस्म खाने से मृत्यु हो जाती है।

अपि च—

'सेवितं चन्द्रिकायुक्तं मेहं मन्दानलं चरेत्'।
(र.र.स.)

वैक्रान्त

(Tourmaline)

प्रमुख पर्याय—कुवज्र, क्षुद्रकुलिश, चूर्णविज्रक, जीर्णवज्रक, विक्रान्त, वैक्रान्त।

विकृन्तयति लोहानि तेन वैक्रान्तकः स्मृतः॥३२॥
(र.र.स.)

लोहों पर वैक्रान्त को घिसने से लोहों को विकृत रेखा आदि से युक्त कर देता है, इसीलिए इसे वैक्रान्त कहते हैं।

वैक्रान्त के भेद

श्वेतो रक्तश्च पीतश्च नीलः पारावतच्छविः।
श्यामलः कृष्णवर्णश्च कर्बुरश्चाष्टधा हि सः॥३३॥
(र.र.स.)

श्वेत, लाल, पीला, नीला, कबूतर के जैसा, श्यामवर्ण, कृष्णवर्ण और कई रंगों से युक्त वैक्रान्त आठ प्रकार का होता है।

ग्राह्य वैक्रान्त-लक्षण

अष्टास्त्रचाष्टफलकः षट्कोणो मसृणो गुरुः।
शुद्धमिश्रितवर्णैश्च युक्तो वैक्रान्त उच्यते॥३४॥
(र.र.स.)

आठ धारवाला, आठ पटलवाला, छः कोणवाला, अतिस्निग्ध, भारी एवं स्वतन्त्र एक वर्णवाला और कई रंगों वाला वैक्रान्त श्रेष्ठ होता है।

वैक्रान्त का शोधन

कुलत्थक्वाथसंस्विन्नो वैक्रान्तः परिशुध्यति॥३५॥
(र.र.स.)

कुलथी के क्वाथ में दोलायन्त्र विधि द्वारा ३ घण्टे तक स्वेदन करने से वैक्रान्त शुद्ध हो जाता है।

वैक्रान्त-शोधन मतान्तर से

हयमूत्रेण संसिञ्चेत् तप्तं तप्तं त्रिसप्तधा॥३६॥
(रसे. चिन्ता.)

वैक्रान्त के टुकड़ों को कलछी में रख कर आग में प्रतप्त करें, खूब गर्म हो जाने पर गोमूत्र में बुझावें। ऐसा २१ बार सिञ्चन करने से वैक्रान्त शुद्ध हो जाता है।

वैक्रान्त का मारण

म्रियतेऽष्टपुटैर्गन्धनिम्बुकद्रवसंयुतैः।
वैक्रान्तेषु च तप्तेषु हयमूत्रं विनिक्षिपेत्॥३७॥
पौनःपुन्येन वा कुर्याद्द्रवं दत्त्वा पुटं त्वनु।
भस्मीभूतं तु वैक्रान्तं वज्रस्थाने नियोजयेत्॥३८॥
(र.र.समु.)

शुद्ध वैक्रान्त १०० ग्राम लेकर इमामदस्ते में चूर्ण करें और महीन छननी से छान लें तथा १०० ग्राम शुद्ध गन्धक मिलाकर मर्दन करें और निम्बूस्वरस की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें, टिकिया बनावे, सूखने पर शरावसम्पुट में रस सन्धिबन्धन कर गजपुट में पाक करें। इस तरह पुनः-पुनः पूरी विधि से आठ बार गजपुट में पाक करने से वैक्रान्त भस्म हो जाता है।

अथवा—

शुद्ध वैक्रान्त को आग में प्रतप्त कर २१ बार घोड़ा के मूत्र में बुझावें, इसके बाद वैक्रान्त का सूक्ष्म चूर्ण करें और खरल में रखकर घोड़े के मूत्र की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन कर टिकिया बनावे तथा सुखाकर शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। ऐसा आठ बार गजपुट में पाक करने से वैक्रान्त भस्म हो जाता है। भस्म लाल होती है।

वैक्रान्त भस्म के गुण

आयुष्प्रदश्च बलवर्णकरोऽतिवृष्यः
प्रज्ञाप्रदः सकलदोषगदापहारी।
दीप्ताग्निकृत्पविसमानगुणस्तरस्वी
वैक्रान्तकः खलु वपुर्बललोहकारी॥३९॥
(र.र.स.)

वैक्रान्त भस्म आयुष्य है, बल्य, वर्ण्य, अतिवृष्य, बुद्धिवर्धक है तथा सम्पूर्ण दोष (त्रिदोष) एवं सभी रोगों को नाश करने वाला है। दीपन, पाचन, मेध्य, रसायन है और हीरा भस्म जैसा गुणवान् है, आशुकारी है तथा देहसिद्धि एवं लोहसिद्धि दायक है और बलप्रद है।

अशुद्ध एवं अपक्व वैक्रान्त भस्म के दोष

अशुद्धौ वज्रवैक्रान्तौ किलासं दाहसन्ततिम्।
पार्श्वपीडां तथा पाण्डुं कुरुतस्तौ विशोधयेत्॥४०॥
(आ. प्र.)

अशुद्ध एवं अपक्व हीरा भस्म एवं वैक्रान्त भस्म खाने से कुष्ठ, दाह एवं सन्ताप, पार्श्वशूल, पाण्डु आदि रोग पैदा करता है। अतः शोधन एवं सम्यक् मृत होने पर प्रयोग करना चाहिए।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

माक्षिक

(Pyrite)

प्रमुख पर्याय—तापीज, तार, रौप्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, ताप्य, धातुमाक्षिक, सुवर्णमाक्षिक तथा हेममाक्षिक।

परिचय—माक्षिक से भारतीयों का ज्ञान अतिप्राचीन है। चरकसंहिता में माक्षिक का अनेक स्थलों पर प्रयोग किया गया है। संहिताओं के बाद रसशास्त्र काल में माक्षिक का अत्यधिक प्रयोग हुआ तथा इसे पारद का प्राण कहा गया है। स्वर्णमाक्षिक ताम्रप्राप्ति का प्रमुख खनिज है। रसशास्त्र काल में इसके कई नये गुणों का उदय हुआ है।

माक्षिक-भेद

माक्षीको द्विरिहादिमः कनकरुग्दुर्वर्णवर्णोऽपरः।
कांस्यश्रीकमुशन्ति केचन परं सर्वेऽपि पूर्वत्विषः॥

(रसपद्धति)

माक्षिक दो प्रकार का होता है—१. स्वर्णमाक्षिक (Copper pyrite or chalco pyrite Cu_2S, Fe_2S_3), २. रौप्यमाक्षिक (Iron pyrite Fe_2S_3) तथा ३. कांस्यमाक्षिक (Iron pyrite Fe_2S_3)

ग्राह्य उत्तम माक्षिक

स्वर्णाभं स्वर्णमाक्षिकं निष्कोणं गुरुतायुतम्।
कालिमां विकरेत्ततु करे घृष्टं न संशयः॥४२॥

(आयुर्वेदप्रकाश ४)

स्वर्णमाक्षिक में सोने जैसी चमक होती है, निष्कोण अर्थात् आकृति रहित होता है, भारी है, हाथ की हथेली पर घिसने से हाथ को काला कर देता है, इसमें सन्देह नहीं है।

और भी—

निष्कोणा गुरवः किरन्ति निभृतं घृष्टा करे कालिमाम्।

(रसपद्धति)

माक्षिक-शोधन

एरण्डतैललुङ्गाम्बुसिद्धं शुध्यति माक्षिकम्।
सिद्धं वा कदलीकन्दतोयेन घटिकाद्वयम्॥
तप्तं क्षिप्तं वराक्वाथे शुद्धिमायाति माक्षिकम्॥४३॥

(र.र.स.)

एरण्डतैल और बिजौरा निम्बूस्वरस समभाग पूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से माक्षिक शुद्ध हो जाता है। **अथवा**—कदलीकन्दस्वरस पूरित दोलायन्त्र में माक्षिक को २ घण्टे तक स्वेदन करने से माक्षिक शुद्ध हो जाता है। **अथवा**—एक कड़ाही में माक्षिक को तप्त कर ७ बार त्रिफला क्वाथ में बुझाने से शुद्ध हो जाता है।

माक्षिक-मारण

मातुलुङ्गाम्बुगन्धाभ्यां पिष्टं मूषोदरे स्थितम्।
पञ्चक्रोडपुटैर्दग्धं म्रियते माक्षिकं खलु॥४४॥

(र.र.स.)

शुद्ध माक्षिक को चूर्ण कर समभाग शुद्ध गन्धक मिलाकर बिजौरा निम्बूस्वरस की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें और टिकिया बनाकर सुखा लें। बाद में शरावसम्पुट कर वाराहपुट में पाक करें। ऐसा ही ५ बार वाराह में पाक करने से निश्चित ही माक्षिक की भस्म हो जाती है। ऐसे इसमें २ पुट बिना गन्धक डाले ही सिर्फ निम्बु की भावना देकर देना चाहिए तो भस्म अच्छी बनती है। भस्म कत्थई रंग की होती है।

माक्षिक भस्म के गुण

मधुरः काञ्चनाभासः साम्लो रजतसन्निभः।
किञ्चित् कषायमधुरः शीतः पाके कटुर्लघु।
तत्सेवनाज्जराव्याधिविषैर्न परिभूयते॥४५॥
माक्षीकधातुःसकलामयघ्नः
प्राणो रसेन्द्रस्य परं हि वृष्यः।
दुर्मेललोहद्वयमेलनश्च
गुणोत्तरः सर्वरसायनाग्र्यः॥
दुःसाध्यरोगानपि सप्तवासरै-
र्नैतेन तुल्योऽस्ति सुधारसोऽपि॥४६॥

(र.र.स.)

सुवर्णमाक्षिक भस्म मधुर है एवं रजतमाक्षिक भस्म अम्ल है। स्वर्णमाक्षिक कुछ कषैला एवं मधुर भी है। शीतवीर्य, पाक में कटु एवं लघु है। स्वर्णमाक्षिक भस्म का सेवन करने से जरा-व्याधि नष्ट हो जाती है अर्थात् जरा-व्याधि नहीं होती है अर्थात् रसायन है। इसके सेवन से विष का प्रभाव शरीर पर नहीं होता है। स्वर्णमाक्षिक भस्म सम्पूर्ण रोगों का नाश करता है, पारद का प्राणस्वरूप है, अत्यन्त वृष्य है, कठिनाई से मिलने वाले दो लोहों को शीघ्र मिलाता है, अत्यन्त गुणप्रद है, सभी रसायनों में श्रेष्ठ है, असाध्य रोगों को भी सात दिनों के प्रयोग से नाश कर देता है और अमृत रस भी इसकी बराबरी नहीं करता है।

अशुद्ध एवं अपक्व माक्षिक भस्म के दोष

मन्दानलत्वं बलहानिमुग्रां
विष्टम्भितां नेत्रगदान् सकुष्ठान्।
मालां विधत्तेऽपि च गण्डपूर्वां
शुद्ध्यादिहीनं खलु माक्षिकं तु॥४७॥

(आ.प्र. १)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अशुद्ध एवं अपक्व माक्षिक का भस्म सेवन करने से मन्दाग्नि होती है, भयंकर बल का नाश होता है, विष्टम्भ, नेत्ररोग, कुष्ठ और गण्डमाला आदि रोग उत्पन्न करता है।

विमल

(Iron Pyrite : $Fe_2 S_3$)

इसका कोई पर्याय नहीं है।

यह भी रौप्यमाक्षिक का एक प्रकार है। तात्त्विक दृष्टि से यह रौप्यमाक्षिक ही है किन्तु बाह्य दृष्टि से पार्थक्य है। विमल चौपहल आठ धार, छः पहलवाला निश्चित आकार का एक खनिज है। यह देखने में श्वेत, पाण्डु एवं कांस्य तीन वर्णों में मिलता है।

विमल के भेद

विमलस्त्रिविधः प्रोक्तो हेमाद्यस्तारपूर्वकः।
तृतीयः कांस्यविमलस्तत्तत्कान्त्या स लक्ष्यते ॥
वर्तुलः कोणसंयुक्तः स्निग्धश्च फलकान्वितः ॥४८॥

(र.र.स.)

यह स्वर्ण जैसा, तार (रजत) जैसा एवं कांस्य जैसा ३ प्रकार की कान्ति जैसा प्रतिभासित होता है। यह चौकोर, कोण वाला, स्निग्ध और पहलदार होता है।

विमल का शोधन

आटरूषजले स्विन्नो विमलो विमलो भवेत् ॥५०॥

(र.र.स.)

वासास्वरसपूरित दोलायन्त्र में विमल को ३ घण्टे तक स्वेदन करने से विमल शुद्ध हो जाता है।

विमल का मारण

गन्धाश्मलकुचाम्लैश्च म्रियते दशभिः पुटैः ॥५०॥

(र.र.स.)

शुद्ध विमल को चूर्ण करके समभाग शु. गन्धक के साथ खरल में मर्दन करें। ततः बड़हर के कच्चे फल के खट्टे स्वरस की भावना देकर टिकिया बनावें, सुखा कर शरावसम्पुट कर वाराहपुट में पाक करें। ऐसा ही १० बार करने से विमल की भस्म हो जाती है। विमल भस्म भी कत्थई रंग की होती है।

विमल भस्म के गुण

मरुत्पित्तहरो वृष्यो विमलोऽतिरसायनः ॥५१॥

(र.र.स.)

विमल भस्म वातपित्तनाशक है, वृष्य है और अत्यन्त रसायन है। यह स्वर्णमाक्षिक से थोड़ा कम गुण वाला द्रव्य है।

शिलाजतु

(Black Bitumen)

प्रमुख पर्याय—अतिथि, अद्रिजतु, अश्मसार, गिरिज, गिरिजतु, जतु, शिलाजतु, शिलाधातु, शैल, शैलेय तथा शैलोद्भव।

परिचय—संहिताकाल से ही शिलाजतु का अत्यन्त उपयोग रोगहरणार्थ होता आ रहा है। चरकसंहिता में ४ प्रकार का शिलाजीत कहा गया है—१.स्वर्णगर्भ पर्वत के स्राव से उत्पन्न शिलाजीत, २. रजतगर्भ पर्वत के स्राव से उत्पन्न शिलाजीत, ३. ताम्रगर्भ पर्वत के स्रावजन्य शिलाजीत तथा ४. लोहगर्भ पर्वत के स्रावजन्य शिलाजीत।

किन्तु सुश्रुतसंहिताकार ने छः प्रकार कहा है—५. नागगर्भ पर्वत के स्रावजन्य शिलाजीत, ६. वङ्गगर्भ पर्वत के स्रावजन्य शिलाजीत।

इनमें लोहपर्वतोत्पन्न शिलाजीत को दोनों ने श्रेष्ठ माना है।

शिलाजीत की उत्पत्ति

हेमाद्याः सूर्यसन्तप्ताः स्रवन्ति गिरिधातवः।
जत्वाभं मृदु मृत्स्नाच्छं यन्मलं तच्छिलाजतु ॥५२॥

(चरक-चि. १।३)

ग्रीष्म ऋतु में प्रचण्ड सूर्य-किरणों से प्रतप्त हेमाद्य धातुओं वाला पर्वत जतु (लाक्षा) की तरह एक प्रकार का स्राव त्यागता है जो स्वच्छ मिट्टी जैसा मल है, उसे ही शिलाजतु कहते हैं।

शिलाजतु की श्रेष्ठता

गोमूत्रगन्धयः सर्वे सर्वकर्मसु यौगिकाः।
रसायनप्रयोगेषु पश्चिमस्तु विशिष्यते ॥५३॥

(चरक)

इन सभी ४ प्रकार के शिलाजतुओं में अन्तिम लोह पर्वत-जन्य स्राव वाला शिलाजतु श्रेष्ठ है और सभी कर्मों (रोगनाशनार्थ एवं रसायनार्थ) में उपयोगी है, रसायनकर्मोपयोगी है। यह गोमूत्रगन्धि है।

किन्तु रसशास्त्र के काल में शिलाजतु का मात्र दो ही भेद रह गया था। वह था—१. गोमूत्रगन्धि : सत्त्वयुक्त तथा २. कर्पूर-गन्धि : सत्त्वरहित। यथा—

'शिलाजतु द्विधा प्रोक्तो गोमूत्राद्यो रसायनः।
कर्पूरपूर्वकश्चान्यस्तत्राद्यो द्विविधः पुनः ॥
ससत्त्वश्चैव निःसत्त्वस्तयोः पूर्वो गुणाधिकः'।

(र.र. समु.)

कर्पूरशब्दोऽत्र मनोहरवाचकः इति श्रीहजारीलालः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यहाँ कर्पूर शब्द मनोहरवाचक है। १. गोमूत्रगन्धि = Black bitumen तथा २. कर्पूरगन्धि = Potassium nitrate।

शुद्ध शिलाजतु परीक्षा

वह्नौ क्षिप्तं भवेद्यत्तल्लिङ्गाकारमधूमकम्।
सलिलेऽप्यविलीनं च तच्छुद्धं हि शिलाजतु ॥५५॥
(र.र.स.)

अपि च—

तृणाग्रेणाम्भसि क्षिप्तमधो गलति तन्तुवत्।
गोमूत्रगन्धि मलिनं शुद्धं ज्ञेयं शिलाजतु ॥५५॥
(रसरत्नमाला)

शिलाजतु की चने बराबर गोली बना कर निर्धूम आग पर रखने से वह गोली फूल कर लिङ्गाकार १ इञ्च की हो जायेगी, आग पर निर्धूम रहेगा, पानी में अविलीन रहेगा—यह तीन परीक्षा शुद्ध शिलाजतु की है। अन्य आचार्यों ने भी कहा है—दियासलाई की तिल्ली पर चने बराबर शिलाजतु चिपका कर पानी से भरे शीशे के गिलास में डालें, तिल्ली पानी पर तैरती रहेगी और उसमें चिपका शिलाजतु केशाकृति या तन्तुवत् पानी में घुल कर गिलास की तली में बैठ जायेगा। गोमूत्रगन्धी होगी और काली होगी, यह शुद्ध शिलाजतु की पहचान है।

शिलाजतु का शोधन

शिलाधातुं च दुग्धेन त्रिफलामार्कवद्रवैः।
लोहपात्रे विनिक्षिप्य शोधयेदतियत्नतः ॥५६॥
(र.र.स.)

बाजार में शिलाजतु पत्थर एवं शिलाजतु शुद्ध दोनों मिलता है। शिलाजतु पत्थर से शिलाजतु निकालने की विधि तथा शुद्ध करने की विधि एक साथ ही हो जाती है।

विधि—१ लोहे की कड़ाही में १ किलो त्रिफला यवकुट रखकर उसमें २० लीटर जल देकर रात्रि पर्यन्त भिगावें। दूसरे दिन क्वाथ कर अर्धावशेष क्वाथ को छानकर कड़ाही साफ करें। तदनन्तर १० ली. त्रिफला क्वाथ और १ किलो शिलाजतु पत्थर का यवकुट चूर्ण कर उसी कड़ाही में रखकर कलछी से खूब मिला लें। मिलाते समय गरम त्रिफला क्वाथ का उपयोग करें। इस कड़ाही को चूल्हे पर चढ़ाकर २ दिनों तक यों ही छोड़ दें। जब क्वाथ बिलकुल निथर जाय तब एक साफ बाल्टी में पतला कपड़ा बाँधकर पानी ढाल दें और अवशिष्ट शिलाजतु पत्थर का अवशिष्ट पदार्थ में १० लीटर और पानी देकर १ घण्टा तक उबाल लें। पुनः पूर्ववत् पानी को निथारने के लिए छोड़ दें। २ दिन बाद पूर्ववत् छान लें। इन दोनों जलों को एक साथ मिलाकर आग पर सुखा लें। मधु जैसा होने पर लोहे की कड़ाही उतार कर द्रव पदार्थ को ट्रे में रख कर धूप में सुखा लें। यह शुद्ध शिलाजतु कहा जाता है। इसमें गोमूत्र की गन्ध होती है तथा उपर्युक्त शिलाजतु की सारी परीक्षाएँ देखी जाती हैं। इस शिलाजतु को **अग्नितापी** शिलाजीत कहते हैं।

प्रकारान्तर से सूर्यतापी एवं अग्नितापी शिलाजीत दो प्रकार के होते हैं।

सूर्यतापी—त्रिफला क्वाथ में घुला हुआ शिलाजीत का अंश रहता है। बड़े-बड़े परात में त्रिफला क्वाथ एवं शिलाजतु-घोल को भरकर प्रचण्ड गर्मी की धूप में आठ दिनों तक रखें। शिलाजतु के घोल पर मलाई जैसी या दूध की साठी जैसी एक परत जमती है जिसे लोहशलाका से उठाकर पृथक् करते रहें। यही सूख कर सूर्यतापी शिलाजतु कहलाती है। यही शिलाजतु सर्वोत्तम है।

शुद्ध शिलाजतु की विश्लेषण-तालिका

	अशुद्ध	शुद्ध
१. आर्द्रता	१२.५४%	२९.०३%
२. वेञ्जोइक अम्ल	६.४२%	८.५९%
३. ह्यूपरिक अम्ल	५.५३%	६.१३%
४. फैटी अम्ल	२.०१%	१.३६%
५. रेजिन और मोम जैसा द्रव्य	३.२८%	२.४८%
६. गोन्द	१५.५९%	१७.३२%
७. अल्ब्यूमिनाइट्स	१९.६१%	१६.१२%
८. वानस्पति द्रव्य एवं बालू आदि	२८.५२%	२.१५%

शुद्ध शिलाजतु के गुण

न सोऽस्ति रोगो भुवि साध्यरूपः
शिलाह्वयं यन्न जयेत् प्रसह्य।
तत्कालयोगैर्विधिभिः प्रयुक्तं
स्वस्थस्य चोर्जां विपुलां ददाति ॥५७॥
(चरक)

न सोऽस्ति रोगो यं चापि निहन्यान्न शिलाजतु।
(सु.चि. १३)

जराव्याधिप्रशमनं देहदार्ढ्यकरं परम्।
मेधास्मृतिकरं बल्यं क्षीराशी तत्प्रयोजयेत् ॥५८॥
(च.चि. १)

रसोपरससूतेन्द्ररत्नलोहेषु ये गुणाः।
वसन्ति ते शिलाधातौ जरामृत्युजिगीषया ॥५९॥
नूनं सज्वरपाण्डुशोफशमनं मेहाग्निमान्द्यापहं
मेदश्छेदकरं च यक्ष्मशमनं मूलामयोन्मूलनम्।

१. शूलामयोन्मूलनमिति पाठभेदः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गुल्मप्लीहविनाशनं जठरहृच्छूलघ्नमामापहं
सर्वत्वग्गदनाशनं किमपरं देहे च लोहे हितम् ॥६०॥

(र.र.स.)

महर्षि अग्निवेश कहते हैं कि पृथ्वी पर कोई ऐसा साध्य रोग नहीं हैं, जिसे विधिवत् प्रयोग, अनुपान, मात्रा, पथ्य आदि के द्वारा शुद्ध शिलाजतु नष्ट न कर दे। साथ ही यदि स्वस्थ व्यक्ति शुद्ध शिलाजतु का प्रयोग करे तो अत्यन्त ओजस्वी और शक्तिशाली बना देता है। महर्षि सुश्रुत का भी यही मत है।

महर्षि अग्निवेश कहते हैं कि शिलाजतु जरा-व्याधि को नाश करता है, शरीर को दृढ़ करता है, मेध्य है, स्मृति-शक्तिवर्धक है एवं बल्य है; यदि इसे दूध के साथ प्रयोग किया जाय।

आचार्य वाग्भट ने कहा है कि रस, उपरस, साधारण रस, पारा, सभी रत्नवर्ग एवं धातुवर्ग में जो गुण हैं वे सब जरा-मृत्यु-रोगनाशक गुण शुद्ध शिलाजतु में हैं। पुनः—शुद्ध शिलाजतु निश्चित रूप से ज्वर, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अग्निमांद्य, मेदोरोग यक्ष्म, अर्श, गुल्म, प्लीह, उदररोग, हृच्छूल, आमदोष और सभी प्रकार के चर्मरोगों को नाश करता है। इसके अतिरिक्त देह और लोहवाद के लिए भी हितकर है।

अशुद्ध शिलाजतु के दोष

अशुद्धदाहमूर्च्छाय भ्रमपित्तास्त्रशोषकृत्।
शिलाजतु विधत्ते हि मान्द्यमग्नेश्च विड्ग्रहम् ॥६१॥

(आ.प्र.)

अशुद्ध शिलाजतु का सेवन करने से दाह, मूर्च्छा, भ्रम, रक्तपित्त, क्षय, अग्निमान्द्य और विबन्ध आदि रोगों को उत्पन्न करता है। शोधनोपरान्त ही इसका प्रयोग करना चाहिए।

विमर्श—शिलाजतु का मारण नहीं करना चाहिए।

सस्यक/तूतिया

(Copper Sulphate : $CuSO_4$ $7H_2O$)

प्रमुख पर्याय—अमृतासङ्ग, मयूरक, शिखिग्रीव, ताम्रगर्भ, मयूरतुत्थक, शिखितुत्थक, तुत्थ, वितुन्नक तथा सस्यक।

परिचय—सस्यक और तुत्थ नाम से शास्त्रों में वर्णित द्रव्य तूतिया है जो स्वाभाविक एवं कृत्रिम भेद से प्राचीन काल से जाना जाता है। संहिताओं में तुत्थ का ही सर्वत्र उल्लेख मिलता है। रसशास्त्र के प्राचीन ग्रन्थ रसार्णवम् में सर्वप्रथम सस्यक का उल्लेख मिलता है। इसी क्रम में रसाचार्य ने कहा कि 'सस्यकं हि स्वभावजं कृत्रिमं तुत्थकं मतम्। एकाभावे परं ग्राह्यं—नात्र कार्या विचारणाः ॥ तुत्थ वामक द्रव्य के रूप में प्रयुक्त होता है।

तुत्थोत्पत्ति एवं ग्राह्य स्वरूप

पीत्वा हालाहलं वान्तं पीतामृतगरुत्मता।
विषेणामृतयुक्तेन गिरौ मरकताह्वये ॥६२॥
तद्वान्तं हि घनीभूतं सञ्जातं सस्यकं खलु।
मयूरकण्ठसच्छायं भाराढ्यमति शस्यते ॥६३॥

(र.र. समु.)

प्राचीन काल में गरुड़ ने विष पीने के बाद अमृत पी लिया था, किन्तु मरकत पर्वत पर तुरन्त वमन हो गया। वही वमन जमने (सूखने) के बाद सस्यक (तुत्थ) हो गया। वह सस्यक मयूर के कण्ठ की छाया जैसा होता है और अत्यन्त भारी होता है। वही सस्यक श्रेष्ठ होता है।

अधुना स्वर्णमाक्षिक की खान में एक प्रकार का खनिज निकलता है जो देखने में मोर की गर्दन जैसा नीला एवं चमकीला होता है, उसे Peacock ore कहते हैं। उसका रासायनिक सूत्र Cu_5FeS_4 है।

तुत्थ का शोधन

सस्यकं शुद्धिमाप्नोति रक्तवर्गेण भावितम्।
स्नेहवर्गेण संसिक्तं सप्तवारमदूषितम् ॥६४॥

(र.र.स.)

रक्तवर्ग की औषधियों[1] के क्वाथ से सात बार भावित करने और स्नेहवर्ग के तैलों में सात बार सिञ्चित करने से सस्यक (तुत्थ) शुद्ध हो जाता है।

तुत्थ-मारण

लकुचद्रावगन्धाश्मटङ्कणेन समन्वितम्।
निरुध्य मूषिकामध्ये म्रियते कौक्कुटैः पुटैः ॥६५॥

(र.र.स.)

शुद्ध तुत्थ में समभाग शुद्ध गन्धक और चौथाई टंकण मिला कर बड़हर के छाल तथा रस में भावना देकर टिकिया बनावे, शरावसम्पुट कर कुक्कुटपुट में पाक करें। ऐसा ८ से १० बार करें। पुनः अमृतीकरण कर (समभाग शुद्ध घी में भर्जित कर ३ बार पुट दें) बाद में प्रयोग करें।

तुत्थ भस्म एवं अशुद्ध तुत्थ के गुण

निःशेषदोषविषहृद्गदशूलमूल-
कुष्ठाम्लपैत्तिकविबन्धहरं परञ्च।
रासायनं वमनरेककरं गरघ्नं
श्वित्रापहं गदितमत्र मयूरतुत्थम् ॥६६॥

(र.र.स.)

१. कुसुम्भं खदिरो लाक्षा मंजिष्ठा रक्तचन्दनम्। अक्षीवं बन्धुजीवश्च तथा कर्पूरगन्धिनी। माक्षिकं चेति विज्ञेयो रक्तवर्गोऽतिरञ्जनः ॥ (र.र.समु.१०)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अशुद्ध तुत्थ वामक है, अत: गरविषघ्न एवं विषघ्न है। लेपन से व्रण, कुष्ठ, श्वित्र, क्रिमिनाशक है और नेत्ररोगनाशक है।

शुद्ध तुत्थ के गुण—फिरङ्ग एवं उपदंश नाशक है, वामक है, नेत्ररोगनाशक है, कुष्ठ एवं त्वक्दोष नाशक है, व्रणनाशक है, विषघ्न है, क्रिमिनाशक है।

तुत्थ भस्म के गुण—लेखन, भेदन, रसायन, बल्य एवं चक्षुष्य है। प्रमेह, मेदोरोग, कृमि, कुष्ठ, शूल, श्वित्र, हृद्रोग, अम्लपित्त, अर्श एवं रक्तरोगनाशक है। तुत्थभस्म मांसंकोचक है और नाड़ियों को बल देता है।

चपल

(Bismuth ore)

यह सन्दिग्ध द्रव्य है और अनुपयोगी भी है।

रसक (खर्पर)

(Zinc Corbonate : $ZnCO_3$)

प्रमुख पर्याय—खर्पर, नेत्ररोगारि, रसक, ताम्ररंजक, यशदकारण तथा रीतिकृत्।

परिचय—यद्यपि संहिताओं में रसक का कोई उल्लेख नहीं है तथापि रसशास्त्र काल में यह एक महत्त्वपूर्ण खनिज में गिना जाने लगा है। यह यशद धातु का खनिज है। इसका सत्त्व वङ्ग के समान होता है।

खर्पर के भेद

रसको द्विविधः प्रोक्तो दर्दुरः कारवेल्लकः।
सदलो दर्दुरः प्रोक्तो निर्दलः कारवेल्लकः ॥६७॥

(र.र.स.)

रसक दो प्रकार का होता है—१. दर्दुर और २. कारवेल्लक। दर्दुरदलयुक्त पत्राकृति परतों से युक्त होता है और कारवेल्लक करैले के फल जैसा उभार युक्त होता है।

प्राचीन रसग्रन्थों में खर्पर के तीन प्रकार बताये गये हैं। 'मृत्तिका गुडपाषाणो भेदतो रसकस्त्रिधा। पीतस्तु मृत्तिकाकारो मृत्तिका रसको वर:। गुडाभो मध्यमो ज्ञेय: पाषाणाभ: कनिष्ठक:' (रसार्णव)। अर्थात् १. मृत्तिका, २. गुड। पाषाणभेद से रसक ३ प्रकार का है—१. दर्दुर = मृत्तिकाभ (Calomine), २. कारवेल्लक (Smith sonite), ३. गुडाभ (Zincite), ४. पाषाणाभ (Zinc Blande)। दर्दुर सत्त्वपातन के लिए और कारवेल्लक औषधार्थ उपयोगी है, यथा—'दर्दुर: सत्त्वपाते स्यादौषधे कारवेल्लक:'। (आयु. प्रकाश)

खर्पर सत्त्व यशद होता है

सत्त्वं कुटिलसङ्काशं मुञ्चत्येव न संशयः।

(रसार्णव)

सत्त्वं वङ्गाकृति ग्राह्यं रसकस्य मनोहरम् ॥६८॥

(र.र.स.)

रसक का सत्त्व वङ्ग के जैसा (कुटिल = वङ्ग पर्याय है) मनोहर निकलता है। एक मूषा (Crucibul) में खर्पर चूर्ण डालकर धमनयन्त्र (Blowwer) में रखकर धमन करें तो वंग के जैसा खर्परसत्त्व (यशद) निकलता है।

खर्पर का शोधन

खर्परः परिसन्तप्तः सप्तवारं निमज्जितः।
बीजपूररसस्यान्तर्निर्मलत्वं समश्नुते ॥६९॥

(र.र.स.)

खर्पर के टुकड़ों को आग में खूब तपाकर निम्बुस्वरस में बुझावें। ऐसा सात बार करने से खर्पर शुद्ध हो जाता है।

खर्पर का मारण

पञ्चाढकबालुकापूर्णे भाण्डे निक्षिप्य यत्नतः।
पच्यते रसगोलाद्यं बालुकायन्त्रमीरितम् ॥७०॥

(रसेन्द्रचूडा.)

सर्वप्रथम शुद्ध खर्पर एवं समभाग शुद्ध पारद को खरल में मर्दन कर निम्बूस्वरस की भावना देकर १ बड़ा-सा गोला बना लें और छाया में सुखा कर बालुकायन्त्र में ९ घण्टे तक पाक करने से लाल रंग की खर्पर भस्म बनती है।

बालुका यन्त्र—एक मिट्टी की बड़ी हाँडी या भाण्ड में १५ किलो बालू भरें और उपर्युक्त औषधिगोलक को कपड़े में बाँधकर उस बालू के अन्दर कर चूल्हे पर ९ घण्टे तक पाक करें। आयुर्वेदप्रकाशकार ने "शोणं भस्म प्रजायते" कहा है। स्वाङ्गशीत होने पर सावधानी से औषधिगोलक को बाहर निकाल लें तथा खरल में मर्दन कर काँचपात्र में सुरक्षित रख लें।

खर्पर भस्म का गुण

रसकः सर्वमेहघ्नः कफपित्तविनाशनः।
नेत्ररोगक्षयघ्नश्च लोहपारदरञ्जनः ॥७१॥

(र.र.स.)

रसक भस्म सभी प्रकार के प्रमेहों को नाश करता है, कफ एवं पित्त नाशक है, नेत्ररोग, क्षयरोग नाशक है तथा धातुओं और पारद को रंगने वाला है।

उपरस वर्ग

गन्धाश्मगैरिकासीसकांक्षीतालशिलाञ्जनम्।
कुङ्कुष्ठं चेत्युपरसाश्चाष्टौ पारदकर्मणि ॥७२॥

(र.र.स.)

आठ उपरस—गन्धक, २. गैरिक, ३. कासीस, ४. फिटकरी,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५. हरताल, ६. मन:शिला, ७. अञ्जन तथा ८. कङ्कुष्ठ—ये आठ द्रव्य उपरस वर्ग में पढ़े जाते हैं तथा ये आठों द्रव्य रसकर्म में उपयोगी हैं।

गन्धक
(Sulphur)

मुख्य पर्याय—गन्धपाषाण, गौरीपुष्प, वलिवसा, पामारि, लेलीतक, शुल्वारि, नवनीत और सौगन्धिक आदि इसके प्रमुख नाम हैं।

गन्धक के खनिज
(Sulphide रूप में)

१. आयरन पाइराइट (Iron pyrite)	($Fe_2 S_3$)
२. कापर पाइराइट (Copper pyrite)	($Cu_2S Fe_2S_3$)
३. गैलेना (Galena)	(Pb.S.)
४. जिंक ब्लेण्ड (Zinc blend)	(Zn S.)
५. आर्पिमेण्ट (Orpiment)	(As_2S_3)
६. रियलगार (Realgar)	(As_2S_2)
७. सिन्नेबार (Cinnabar)	(HgS.)

(Sulphate रूप में)

१. जिप्सम या कैल्सियम सल्फेट (Gipsum or Calcium Sulphate)	($CaSO_4 2H_2O$.)
२. हैविस्पार (Heavyspar)	($Ba SO_4$)
३. सैलेस्टोन (Salestone)	($Sr SO_4$)
४. कीजराइट (Kiesrite)	($MgSO_4 H_2O$)
५. फेरस सल्फेट (Ferrous sulphate)	($FeSO_4 5H_2O$)
६. कापर सल्फेट (Copper sulphate)	(CuSO4 $5H_2O$)
७. ग्लोबर साल्ट (Glouber salt)	(Na20 O_4 $10H_2O$)

गन्धक के भेद

स चापि त्रिविधो देवि! शुकचञ्चुनिभो वरः।
मध्यमः पीतवर्णः स्याच्छुक्लवर्णोऽधमः स्मृतः ॥७३॥
चतुर्धा गन्धको ज्ञेयो वर्णैः श्वेतादिभिः खलु।
श्वेतोऽत्र खटिका प्रोक्तो लेपने लोहमारणे ॥७४॥
तथा चामलसारस्याद्यो भवेत् पीतवर्णवान्।
शुकपिच्छः स एव स्याच्छ्रेष्ठो रसरसायने ॥७५॥
रक्तश्च शुकतुण्डाख्यो धातुवादविधौ वरः।
दुर्लभः कृष्णवर्णश्च स जरामृत्युनाशनः ॥७६॥
(र.र.स.)

गन्धक तीन प्रकार का होता है—१. लाल वर्ण, २. पीत वर्ण तथा ३. श्वेत वर्ण। इसमें क्रमशः श्रेष्ठ, मध्यम, अधम ऐसा गुणों की दृष्टि से होता है। पुनः वर्णभेद से गन्धक ४ प्रकार का कहा गया है। **श्वेत वर्ण** के गन्धक को खड़िया मिट्टी कहते हैं। इसका उपयोग घर-द्वार लीपने-पोतने तथा धातुमारण के लिए होता है। **पीत वर्ण** के गन्धक को आमलासार गन्धक कहते हैं। ये शुक पक्षी के पुच्छ जैसा होता है। यह रस-रसायन में श्रेष्ठ है। **रक्तवर्ण** का गन्धक शुक पक्षी की चोंच जैसा लाल होता है। इसे शुकतुण्डाख्य गन्धक कहते हैं। यह धातुवाद के कार्य में श्रेष्ठ है। **कृष्ण वर्ण** का गन्धक दुर्लभ है, किन्तु वह गन्धक जरा-मृत्यु को नष्ट करने वाला है।

गन्धक-भेद

श्वेतवर्ण	पीतवर्ण	रक्तवर्ण	कृष्णवर्ण
अधम	मध्यम	उत्तम	अत्युत्तम
खटिका	शुकपिच्छनिभ	शुकचञ्चुनिभ	दुर्लभ
लेपनार्थ	रस-रसायनार्थ	धातुवादार्थ	देहवादार्थ

अन्य भेद—आमलासारगन्धक—पिण्ड (नेनुआ) गन्धक।

अशुद्ध गन्धक से हानि

अशुद्धगन्धः कुरुते च कुष्ठं
तापं भ्रमं पित्तरुजं तथैव।
रूपं सुखं वीर्यबलं निहन्ति
तस्माद्विशुद्धो विनियोजनीयः ॥७७॥
(आ.प्र.)

अशुद्ध गन्धक का आभ्यन्तर प्रयोग करने से कुष्ठ, ताप, भ्रम तथा पित्तरोग उत्पन्न करता है। शारीरिक स्वरूप, शरीर का सुख, वीर्य और बल का नाश करता है। इसीलिए गन्धक का आभ्यन्तर प्रयोग हमेशा शोधन के बाद ही करना चाहिए।

गन्धक का शोधन

पयःस्विन्नो घटीमात्रं वारिधौतो हि गन्धकः।
गव्याज्यविद्रुतो वस्त्राद्गालितः शुद्धिमृच्छति ॥७८॥
एवं संशोधितः सोऽयं पाषाणानम्बरे त्यजेत्।
घृते विषं तुषाकारं स्वयं पिण्डत्वमेति च ॥७९॥
इति शुद्धो हि गन्धाश्मा नापथ्यैर्विकृतिं व्रजेत्।
अपथ्यादन्यथा हन्यात्पीतं हालाहलं यथा ॥८०॥
(र.र.स.)

दुग्धपूरित दोलायन्त्र में पोटलीबद्ध गन्धक को १ घण्टा तक स्वेदन करने के बाद जल से धो लें। पुनः एक लोहे की छोटी एवं साफ कड़ाही में गन्धक का चौथाई गोघृत देकर गर्म करें। ततः उपर्युक्त स्वेदित गन्धक चूर्ण को उक्त घृत युक्त कड़ाही में देकर द्रवित करें। गन्धक पिघलने पर संड़सी से कड़ाही पकड़ कर गन्धक से चार गुना ठण्डा दूध भरे पात्र के मुख पर बँधे महीन एवं साफ वस्त्र पर द्रवित गन्धक को डाल दें। ऐसा करने से गन्धक में पड़े कंकड़-पत्थर कपड़ा पर ही रह जाता है और

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विष भूँसी जैसा होकर घृत के माध्यम से बाहर निकल जाता है तथा स्वयं शुद्ध गन्धक टुकड़े-टुकड़े होकर दूध में जमा हो जाता है। जिसे उष्ण जल से धोकर सुखा लें। इस प्रकार का विशुद्ध गन्धक सेवन करने के बाद अपथ्य से भी विकार नहीं उत्पन्न करता है। इसके विपरीत अशुद्ध गन्धक अपथ्य करने से हालाहल विष जैसा हानिकारक है।

शुद्ध गन्धक के गुण

गन्धाश्मातिरसायनः सुमधुरः पाके कटूष्णो मतः
कण्डूकुष्ठविसर्पदद्रुदलनो दीप्तानलः पाचनः।
आमोन्मोचनशोषणो विषहरः सूतेन्द्रवीर्यप्रदः
गौरीपुष्पभवस्तथा कृमिहरः सत्त्वात्मकः सूतजित्॥
शुद्धगन्धो हरेद्रोगान् कुष्ठमृत्युजरादिकान्।
अग्निकारी महानुष्णो वीर्यवृद्धिं करोति च॥८२॥

(र.र.स.)

शुद्ध गन्धक रासायन है, मधुर एवं उष्णपाकी है। कण्डू, कुष्ठ, विसर्प एवं दद्रुनाशक है। अग्निदीपक एवं पाचन है। आम को निकालने तथा सुखाने वाला है, विषघ्न है, पारद को शक्ति-दायक है। शुद्ध गन्धक क्रिमिनाशक है, सत्त्वरूप (तत्त्व = Element) में है और पारद को नियन्त्रित करने वाला है।

शुद्ध गन्धक रोगों को नष्ट करता है, कुष्ठ, मृत्यु एवं वृद्धावस्था का नाश करता है, अग्निवर्धक है, अत्यन्त उष्ण है, शुक्र को बढ़ाने वाला है।

गन्धक की महत्ता

गन्धकात्परतो नास्ति रसेषूपरसेषु च॥८३॥

(रसार्णव)

गन्धक का मारण—गन्धक का मारण नहीं किया जाता है।

गैरिक

(Ochre : Fe_2O_3)

प्रमुख पर्याय—गिरिज, गिरिमृत्तिका, गैरिक, गैरेय, रक्तधातु तथा लोहधातु।

परिचय—भारतीय प्राचीन काल से गैरिक से परिचित हैं। चरकसंहिता में अनेक स्थलों पर चिकित्सार्थ गैरिक का प्रयोग हुआ है। तब से आज तक गैरिक एक महत्त्वपूर्ण औषधि रूप में प्रयोग होता चला आ रहा है। यह सर्वत्र प्राप्त होने वाली औषधि है।

यह Red oxide of iron है।

गैरिक के भेद

द्विविधं गैरिकं प्राहुः स्वर्णसामान्यगैरिकम्।
परैस्तृतीयमप्युक्तं पाषाणाख्यं हि गैरिकम्॥८४॥

(आ.प्र.)

कुछ आचार्य गैरिक के दो भेद तथा कुछ आचार्य तीन भेद मानते हैं—

१. स्वर्णगैरिक (Kedney Iron ore), २. सामान्य गैरिक (Heamotite : Fe_2O_3) तथा ३. पाषाणगैरिक (Fe_2O_3)।

और भी—

'गैरिकं त्रिविधं रक्तहेमकेवलभेदतः। (रसार्णवम्)
'पाषाणगैरिकं चैकं द्वितीयं स्वर्णगैरिकम्'॥ (र.र.स.)

गैरिक के लक्षण

अत्यन्तशोणितं स्निग्धं मसृणं स्वर्णगैरिकम्।
पाषाणगैरिकं प्रोक्तं कठिनं ताम्रवर्णकम्॥८५॥

(र.र.स.)

१. स्वर्णगैरिक अत्यन्त रक्तवर्ण का, स्निग्ध, चिकना और मृदु है। २. पाषाणगैरिक अत्यन्त कठिन, पत्थर जैसा और ताम्रवर्ण का होता है। किन्तु आजकल स्वर्णगैरिक नहीं मिलता है। आज से ५० वर्ष पहले तक यह विदेशों से आता था। सोनार लोग इसे स्वर्ण के आभूषण पर घिसकर चमकाते थे। अतः इसे स्वर्णगैरिक कहते थे। आजकल सामान्य गैरिक से ही औषधियाँ बनायी जाती हैं।

गैरिक का शोधन

गैरिकं तु गवां दुग्धैर्भावितं शुद्धिमृच्छति॥

(र.र.स.)

अपि च—

गैरिकं किञ्चिदाज्येन भृष्टं शुद्धं प्रजायते॥८६॥

(आ.प्र.)

एक पत्थर के साफ खरल में गैरिक चूर्ण कर महीन (१०० नम्बर) छननी से छान लें और गोदुग्ध की ३ भावना देने से गैरिक शुद्ध हो जाता है। अथवा—एक लोहे की छोटी एवं साफ कड़ाही में थोड़ा गाय का घी देकर गैरिक चूर्ण को भून लेने से गैरिक शुद्ध हो जाता है।

गैरिक सत्त्वरूप है अतः इसका मारण एवं सत्त्वपातन नहीं होता है, ऐसा आचार्य नन्दी का विचार है—

'गैरिकं सत्त्वरूपं ही नन्दिना परिकीर्तितम्'।

शुद्ध गैरिक के गुण

स्वादु स्निग्धं हिमं नेत्र्यं कषायं रक्तपित्तनुत्।
हिध्मावमिविषघ्नं च रक्तघ्नं स्वर्णगैरिकम्॥८७॥

(र.र.स.)

अपि च—

अतिकण्डूहरं रूक्षं तथा प्रोक्तमुदर्दनुत्॥

(आ.प्र.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शुद्ध गैरिक स्वाद में मधुर है, स्निग्ध है, शीत है, नेत्र के लिए हितकर है, अनुरसकषाय है, अतः रक्तपित्तनाशक है, हिक्का, वमन और विषनाशक है, रक्तस्रावनाशक है।

यह अत्यन्त कण्डूनाशक है, रूक्ष है, उदर्द-शीतपित्त नाशक है।

कासीस

(Ferrous Sulphate : Fe SO_4 $7H_2O$)

प्रमुख पर्याय—अयोगन्धाश्मसंभूत, खेचर, पांशुकासीस, कासीस, धातुकासीस, पुष्पकासीस, खग तथा पांशुक।

परिचय—संहिताओं में अनेक स्थानों पर कासीस का प्रयोग हुआ है। यह बहुत ही उपयोगी औषधी है। यह खनिज और कृत्रिम दो रूपों में प्राप्त होता है। आजकल लोहा + गन्धक का मल संयोग से बनाया जाता है।

कासीस-भेद

कासीसं त्रिविधं शुक्लं कृष्णं पीतमिति प्रिये! ॥

(रसार्णव)

अपि च—

पीतं कृष्णं सितं रक्तं चतुर्धेति परे जगुः ॥८८॥

(आनन्दकन्द)

कासीस तीन प्रकार का होता है—१. श्वेत, २. कृष्ण, ३. पीत। कुछ आचार्यों ने ४ प्रकार का कहा है; यथा—१. श्वेत, २. कृष्ण, ३. पीत तथा ४ रक्त।

कासीस का शोधन

सकृद् भृङ्गाम्बुना क्लिन्नं कासीसं निर्मलं भवेत् ॥

(र.र.स.)

भृङ्गराजस्वरस की ३ भावना देने से कासीस शुद्ध हो जाता है।

कासीस का मारण

समादायाभ कासीसं पेषयेन्निम्बुकद्रवैः।
चक्रिकाः कारयित्वा च पुटेल्लघुपुटे पुनः ॥९०॥
यावन्निरम्लं तद्भस्म तावदेव पुनः पुनः।

(र.तरं.)

शुद्ध कासीस को निम्बुस्वरस की भावना देकर टिकिया बनावें, सूखने पर शरावसम्पुट कर कुक्कुटपुट में पाक करें। ऐसा भावना और पुट तब तक करते रहें, जब तक कासीस निरम्ल एवं लाल भस्म न हो जाय। ८ से १० पुट में प्रायः भस्म बन जाती है।

निम्बुकोत्थै रसैर्वैद्यः पिष्ट्वा संशोष्य सम्पुटेत्।
सुश्लक्ष्णां जायते भस्म सर्वदोषविवर्जितम् ॥९१॥

वैद्य निम्ब स्वरस के साथ कासीस को पुनः पुनः पीस कर चक्रिका बनावें तथा पुनः पुनः गजपुट में पाक करने से (कासीस का) सुश्लक्ष्ण भस्म होती है जो सभी दोषों से रहित होती है।

शुद्ध कासीस एवं भस्म के गुण

पुष्पादिकासीसमतिप्रशस्तं
सोष्णं कषायाम्लमतीव नेत्र्यम्।
विषानिलश्लेष्मगदव्रणघ्नं
श्वित्रक्षयघ्नं कचरञ्जनञ्च ॥९२॥

(र.र.स.)

पुष्पादि कासीस अत्यन्त श्रेष्ठ है, उष्ण एवं कषायाम्ल रस से युक्त है, नेत्र के लिए श्रेष्ठ है, विषघ्न है, वात-कफरोगनाशक है, व्रणनाशक है, श्वित्रकुष्ठ तथा क्षय रोगनाशक है और केशों को काला करता है।

स्फटिका (फिटकरी)

(Potash Alum : K_2SO_4 Al_2 $(SO)_3$ $24H_2O$)

प्रमुख पर्याय—कांक्षी, तुवरी, फटिका, स्फटिका, शुभ्रा, दृढरंगा, रङ्गदा तथा सौराष्ट्री।

भारत में प्राचीन काल से ही यह कृत्रिम बनायी जाती थी और आज भी कृत्रिम ही बनती है। पहले सौराष्ट्र देश की मिट्टी विशेष को सत्त्वपातित कर फिटकरी बनती थी किन्तु आज यह रासायनिक विधि से तैयार होती है। साधारण फिटकरी Potash alum है। यदि पोटास एलम और अल्यूमिनियम सल्फेट समामात्रा में घोले जायें और विलयम से मणिभ तैयार किये जायें तो अष्टफलकीय मणिभ (Octehedral crystal) मिलेंगे। अन्य फिटकरियों के समान इसमें भी जल के २४ अणु होते हैं।

एल्यूनाइट (Alunite) या स्फटिक पत्थर से भी फिटकरी तैयार की जाती है। एल्यूनाइट (K_2SO_4 $[Al_2SiO_3]$ $4Al$ $[OH_3]$) है। इसे महीन पीसकर गन्धकाम्ल के साथ उबालते हैं। विलयन में आवश्यकतानुसार थोड़ी मात्रा में पोटासियम सल्फेट मिलाते हैं और मणिभीकरण करते हैं। हमारे देश में फिटकरी एलम शेल (Alum shale) से तैयार की जाती है।

फिटकरी के भेद

फटकी फुल्लिका चेति द्विविधा परिकीर्तिता ॥९३॥

(र.र.स.)

१. फटकी और २. फुल्लिका दो प्रकार के भेद हैं।

फिटकरी का शोधन

वह्नौ प्रोफुल्लयेत् किं वा सम्यल्लघुपुटे पचेत्।
कुन्दवज्जायते भस्म सर्वयोगेषु योजयेत् ॥९४॥

(पारदसंहिता)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अपि च—

स्फटिका निर्मला श्वेता श्रेष्ठा स्याच्छोधने क्वचित्।
न दृष्टं शास्त्रतो, लोका वह्नावुत्फुल्लयन्ति हि॥

(आयु.प्र.)

फिटकरी का चूर्ण कर लोहे की छोटी एवं साफ कड़ाही में डाल कर आग में लावा होने पर्यन्त गर्म करें। पहले फिटकरी द्रव हो जायेगी, पुनः जल सूखने पर हलकी, श्वेत वर्ण की हो जायेगी। अथवा फिटकरी चूर्ण को शरावसम्पुट कर लघु (कुक्कुट) पुट में पाक करें तो कुन्दफूल जैसी श्वेत फिटकरी हो जायेगी। चूँकि प्रक्रिया भस्म जैसी है अतः ग्रन्थकार ने भस्म शब्द का प्रयोग किया है।

अपक्व स्फटिका एवं शुद्ध स्फटिका के गुण

कांक्षी कषाया कटुकाम्लकण्ठ्या
केश्या व्रणघ्नी विषनाशिनी च।
श्वित्रापहा नेत्रहिता त्रिदोष-
शान्तिप्रदा पारदजारणी च॥९६॥

(र.र.स.)

फिटकरी कषायाम्ल रसयुक्त द्रव्य है, कण्ठ एवं केश के लिए हितकर है; व्रण, विष एवं श्वित्रकुष्ठ नाशक है। नेत्रों के लिए हितकर है, त्रिदोषशामक है और पारद का जारण करती है। मुखपाक एवं दन्तरोग नाशक है। दन्तदार्ढ्यकृत् है। फिटकरी शुद्ध एवं अशुद्ध दोनों प्रयोग की जाती है। व्रण, कुष्ठ, कण्डू एवं श्वित्र नाशक है, रक्तरोधक है, केश एवं नेत्र दोनों में प्रयुक्त होती है। शुद्ध ज्वर, रक्तपित्त एवं रक्तप्रदर नाशक है।

हरताल

(Orpiment)

Yellow Arsenic ($As_2 S_3$)

प्रमुख पर्याय—ताल, हरताल, आल, नटभूषण, वंगारि, रोमहृत्, मल्लगन्धज, पिञ्जर, चित्रगन्ध, पीतनक, वंशपत्र तथा शैलूषभूषण।

परिचय—हरिताल का ज्ञान भारतीयों को बहुत प्राचीन है। चरकसंहिता काल से इसका प्रयोग औषधि रूप में होता आ रहा है। हरताल खनिज एवं कृत्रिम दोनों रूपों में उपलब्ध है फिर भी अधुना खनिज कम ही मिलता है।

हरताल के भेद

तालकः पटलः पिण्डो द्विधा तत्राद्य उत्तमः॥

(रसार्णवम्)

अपि च—

हरतालं द्विधा प्रोक्तं पत्राद्यं पिण्डसंज्ञकम्॥९७॥

(र.र.स.)

हरताल दो प्रकार का होता है—१. पत्रताल उत्तम, २. पिण्डताल अधम। इनमें से पत्रताल श्रेष्ठ है।

पत्रताल के प्रक्षण

स्वर्णवर्णं गुरु स्निग्धं तनुपत्रं च भासुरम्।
तत्पत्रतालकं प्रोक्तं बहुपत्रं[1] रसायनम्॥९८॥

(र.र.स.)

पत्रताल सुवर्ण के जैसा पीला रंगवाला चमकीला, भारी, स्निग्ध, छोटे-छोटे एवं पतले-पतले पत्रों से युक्त अत्यन्त चमकीला पदार्थ है। इनमें बहुत पत्रों से युक्त हरताल रसायन कर्म में उपयोगी है। इसमें एक-पर-एक अनेकों पतले पत्र चिपके होते हैं।

पिण्डताल के लक्षण

यह अनुपयोगी है, कम गुण वाला है, अकेला स्त्रियों पर प्रयोग करने से स्त्रियों का आर्तव नाश करने वाला है।

अशुद्ध ताल के प्रयोग से हानि

अशुद्धं तालमायुघ्नं कफमारुतमेहकृत्।
तापस्फोटाङ्गसङ्कोचं कुरुते, तेन शोधयेत्॥९९॥

(र.र. समु.)

अशुद्ध ताल मृत्युकारक है, क्योंकि इसमें शंखिया मौजूद है। यह कफ एवं वायुकारक है, प्रमेह, ताप, अङ्ग में फोड़ा, अंग-संकोच आदि विकार उत्पन्न करता है। इसीलिए इसका शोधन करना चाहिए।

पत्रताल का शोधन

स्विन्नं कूष्माण्डतोये वा तिलक्षारजलेऽपि वा।
तोये वा चूर्णसंयुक्ते दोलायन्त्रेण शुध्यति॥१००॥

(र.र.स.)

कूष्माण्डफल स्वरसपूरित दोलायन्त्र में या तिलक्षार के घोल पूरित दोलायन्त्र में या चूना के पानी के घोलपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से हरताल शुद्ध हो जाता है। हरताल को छोटे-छोटे टुकड़े कर गाढ़े मजबूत कपड़े में पोटली में बाँधकर दोलायन्त्र में लटकाना चाहिए। तदनन्तर ३ घण्टे तक स्वेदन करें। पुनः पोटली खोलकर साफ जल से हरताल को धो लेना चाहिए।

हरताल का मारण

मधुतुल्यघनीभूते कषाये ब्रह्ममूलजे।
त्रिवारं तालकं भाव्यं पिष्ट्वा मूत्रेऽथ माहिषे॥१०१॥
उपलैर्दशभिर्देयं पुटं रुध्वाऽथ पेषयेत्।
एवं द्वादशधा पाच्यं शुद्धं योगेषु योजयेत्॥१०२॥

(र.र.स.)

---

१. तनुपत्रमिति पाठभेदः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पलाशमूलत्वक् को यवकुट कर अष्टगुण जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। उस क्वाथ को पका कर मधु जैसा गाढ़ा कर लें। उसी मधु तुल्य क्वाथ से शुद्ध पत्रताल की ३ बार भावना दें और ३ बार भैंस के मूत्र में भावना देकर छोटी- छोटी टिकिया बनावें। सुखाकर शरावसम्पुट में सन्धिबन्धन कर १० कण्डों की अग्नि में लघु पुट दें। ऐसा १२ बार भावना और पुट देने से हरताल की सुन्दर भस्म बनती है।

हरताल भस्म के गुण

श्लेष्मरक्तविषवातभूतनुत् केवलञ्च खलु पुष्पहृत्स्त्रियाः।
स्निग्धमुष्णकटुकञ्च दीपनं कुष्ठहारि हरितालमुच्यते॥
(र.र.स.)

हरताल कफ, रक्त, विष एवं वायुनाशक है। स्त्रियों पर हरताल का अकेला प्रयोग करने से उनके आर्त्तव नष्ट हो जाते हैं। यह स्निग्ध है, उष्ण है, कटु है, दीपन है तथा कुष्ठनाशक है।

और भी—

हरितालं कटु स्निग्धं कषायं च विसर्पनुत्।
तालकं हरते रोगान् कुष्ठमृत्युज्वरादिकान्॥
संशुद्धं कान्तिवीर्यौजं कुरुते मृत्युनाशनम्॥
(र.सा.सं.)

मनःशिला (मैनसिल)

(Realgar : $AS_2 S_2$)

प्रमुख पर्याय—कुनटी, कुलटी, नागमाता, मनोगुप्ता, रोगशिला, शिला, नेपालिका तथा मनोह्वा।

मनःशिला के भेद

मनःशिला त्रिधा प्रोक्ता श्यामाङ्गी कणवीरका।
खण्डाख्या चेति तद्रूपं विविच्य परिकथ्यते॥१०४॥
(र.र.स.)

१. श्यामाङ्गी २. कणवीरका ३. खण्डाख्य—ये तीन भेद मनःशिला के हैं।

श्रेष्ठ मनःशिला

श्यामा रक्ता सगौरा च भाराढ्या श्यामिका मता।
(र.र.स.)

श्यामाङ्गी मनःशिला रक्त एवं श्याम वर्ण के मिश्रित तथा थोड़ी सफेदी से युक्त होती है, भारी होती है।

अशुद्ध मनःशिला से हानि

अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च अशुद्धा कुरुते शिला।
मन्दाग्निं मलबन्धञ्च ॥१०६॥
(र.र.स.)

अशुद्ध मैनसिल अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मन्दाग्नि और कोष्ठ-बद्धता को उत्पन्न करता है।

मनःशिला का शोधन

शृङ्गवेररसैर्वाऽपि विशुद्ध्यति मनःशिला॥१०७॥
(र.र.स.)

एक साफ पत्थर के खरल में मनःशिला को चूर्ण कर आदी के रस की ७ भावना देने से मनःशिला शुद्ध हो जाती है।

मनःशिला का मारण

मनःशिला के मारण हेतु पूर्वाचार्यों का विचार नहीं है। अतः मनःशिला की भस्म नहीं बनायी जाती है। शुद्ध शिला का ही प्रयोग रोगशमनार्थ करते हैं।

शुद्ध मनःशिला के गुण

मनःशिला सर्वरसायनाग्र्या तिक्ता कटूष्णा कफवातहन्त्री।
सत्त्वात्मिका भूत्रविषाग्निमांद्यकण्डूतिकासक्षयहारिणी च।
(र.र.स.)

मनःशिला सभी रसायनों में श्रेष्ठ है; तिक्त, कटु एवं उष्ण है तथा कफ-वातनाशक है।

अपि च—

मनःशिला गुरुर्वर्ण्या सरोष्णा लेखनी कटुः।
तिक्ता स्निग्धा विषश्वासकासभूतकफास्त्रनुत्॥१०९॥
(आ.प्र.)

मनःशिला गुरु, वर्णकारक, रेचक, उष्ण, लेखन, कटु-तिक्त एवं स्निग्ध है; विषबाधा, श्वास, कास, कृमि, कफ तथा रक्त रोगनाशक है।

अञ्जन

(Collyrium)

वेदकाल से ही अञ्जन का प्रयोग भारतीयों के द्वारा होता चला आ रहा है। रसशास्त्र काल में इसके ५ भेद कर अञ्जन विषयक ज्ञान को और बढ़ाया है।

अञ्जन के भेद

सौवीरमञ्जनं प्रोक्तं रसाञ्जनमतः परम्।
स्रोतोऽञ्जनं तदन्यच्च पुष्पाञ्जनकमेव च॥
नीलाञ्जनं च तेषां हि स्वरूपमिह वर्ण्यते॥११०॥
(र.र.स.)

१. सौवीराञ्जन Stibnite : Sb_2S_3
२. रसाञ्जन Extract of Indian Barberis
३. स्रोतोऽञ्जन Antimony sulphide Sb_2S_3
४. पुष्पाञ्जन Zink oxide ZnO
५. नीलाञ्जन Lead sulphide PbS

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ये सभी अपने स्वरूप से ही जाने जाते हैं।

प्रमुख पर्याय—सौवीराञ्जन—कृष्णाञ्जन, सुवीरक तथा सौवीर; रसाञ्जन—अग्निसार, रसाग्रज, दार्वीक्वाथभव, रसोद्भव, रसगर्भ तथा रसोद्भव; स्रोतोञ्जन—कपोताञ्जन, यामुनेय तथा स्रोतोज; पुष्पाञ्जन—कुसुमाञ्जन, पुष्पकेतु, रीतिज तथा रीतिपुष्पकः, नीलाञ्जन—लोहमार्दवकर, वारिसंभव, शक्रभूमिज तथा सुवर्णघ्न।

अञ्जनों का शोधन

अञ्जनानि विशुध्यन्ति भृङ्गराजदलद्रवैः ॥१११॥

(र.र.स.)

भृङ्गराजपत्रस्वरस की पृथक्-पृथक् भावना देने से सभी अञ्जन शुद्ध हो जाते हैं।

अञ्जनों का मारण

शास्त्रकारों ने कहीं पर भी अञ्जन के भस्मीकरण के विधान का उल्लेख नहीं किया है। अतः इसकी शुद्धि के बाद ही प्रयोग करना चाहिए। भस्म करना निरर्थक है।

अञ्जन के गुण

सौवीराञ्जन—शीत है, रक्तपित्त, विष, हिक्का नाशक है एवं व्रणरोपक है। स्रोतोऽञ्जन—शीत, स्निग्ध, कषाय, लेखन है, नेत्र्य है, हिक्का, विष, वमन, कफ-पित्त और रक्तरोग नाशक है। लेकिन अधुना इसका औषध-प्रयोग नहीं है। रसाञ्जन—यह दारुहरिद्रा क्वाथ का घन है। पीतवर्ण का है। विषघ्न है, नेत्र एवं कर्णरोग नाशक है। श्वास, हिक्का, वात-पित्त एवं रक्तरोगनाशक है। शरीर के वर्ण को ठीक रखता है। रसाञ्जन का निर्माण निम्न प्रकार है—

'दार्वीक्वाथमजाक्षीरं पादं पक्त्वा यदा घनम्।
तदा रसाञ्जनं ज्ञेयं तन्नेत्रयोः परमं हितम्'॥

(भा.प्र.)

प्रायः अञ्जन नेत्रों के लिए हितकर है। स्रोतोऽञ्जन का प्रयोग औषधार्थ प्रायः नहीं होता है। इससे प्रायः आतिशबाजी और दियासलाई वगैरह बनाये जाते हैं।

पुष्पाञ्जन—यह यशद पुष्प है। कृत्रिम है, शीत स्निग्ध है, सभी नेत्ररोगों को नष्ट करता है, दुर्धर हिक्का और विषमज्वर नाशक है। फिर भी सन्देह है कि पुष्पाञ्जन क्या है।

नीलाञ्जन—गुरु एवं स्निग्ध है, नेत्र के लिए हितकर है। यह त्रिदोषघ्न है तथा सुवर्ण को नष्ट कर देता है।

कंकुष्ठ

(Extract of Gambose tree)

प्रमुख पर्याय—कंकुष्ठ, काककंकुष्ठ, तालकुष्ठ, कोलबालुक, तीक्ष्णदुग्धिका, विरङ्ग, स्वर्णक्षीरीनिर्यास, हेमवती, रेचक, रंगदायक, शोधन तथा वराङ्ग।

आयुर्वेद में कंकुष्ठ अति प्राचीन द्रव्य माना गया है। सुश्रुत-संहिता में इसका प्रयोग अनेक स्थलों पर आया है।

परिचय—कंकुष्ठ एक वानस्पतिक द्रव्य है। संस्कृत में इसे तमालवृक्ष तथा अंग्रेजी में इसे Gambase tree तथा लैटिन में इसे Garcinia morella कहते हैं। इसके वृक्ष बड़े एवं छायादार होते हैं। इसी वृक्ष के तने को तिरछा छेद कर बाँस की १-१ फूट की तिरछी काटी नली लगाकर बाँध देते हैं। रस से जब बाँस की नली भर जाती है तो उसे हटाकर पृथक् कर लेते हैं। रस सूखने पर बाँस की नली फाड़कर जमा हुआ पीत वर्ण का मसृण कंकुष्ठ निकाल लेते हैं। यह ठोस २-३ इञ्च व्यास का एक बित्ता के टुकड़े के रूप में मिलता है। निकालते समय जो कंकुष्ठ चूर्ण हो जाता है उसे रेणुक कहते हैं।

रसग्रन्थों में कंकुष्ठ विषयक भ्रमात्मक निरर्थक विवाद है। उसे त्याग देना चाहिए।

कंकुष्ठ का शोधन

कङ्कुष्ठं शुद्धिमायाति त्रिधा शुण्ठ्यम्बु भावितम्।

(र.र.स.)

सोंठ के क्वाथ की ३ भावना देने से कंकुष्ठ शुद्ध हो जाता है। काष्ठौषधि होने के कारण इसका मारण नहीं किया जाता है।

शुद्ध कंकुष्ठ के गुण

कङ्कुष्ठं तिक्तकटुकं वीर्योष्णं चातिरेचनम्।
व्रणोदावर्त्तशूलार्तिगुल्मप्लीहगुदार्तिनुत् ॥११३॥

(र.र.स.)

कंकुष्ठ तिक्त एवं कटु रस से युक्त है, उष्णवीर्य है, अत्यन्त रेचन है, व्रण, उदावर्त, शूल, गुल्म, प्लीह एवं गुदगत रोगनाशक है। तांबूल पत्र के साथ यदि इसका प्रयोग कराया जाय तो इतना अधिक विरेचन कराता है कि निर्जलीकरण (Dehydration) होकर प्राण संकट में पड़ जाता है।

साधारण रस-वर्ग

कम्पिल्लश्चापरो गौरीपाषाणो नवसादरः।
कपर्दो वह्निजारश्च गिरिसिन्दूरहिङ्गुलौ॥
मृद्दारशृङ्गमित्यष्टौ साधारणरसाः स्मृताः ॥११४॥

(र.र.स.)

आठ साधारण रस—१. कम्पिल्लक, २. शंखिया (गौरी-पाषाण), ३. नवसादर, ४. कपर्द (कौडी), ५. अग्निजार, ६. गिरिसिन्दूर, ७. हिङ्गुल तथा ८. मृद्दारशृङ्ग (मुर्दाशंख)—ये आठ द्रव्य साधारण रस कहे जाते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कम्पिल्लक

(Mallotus philippinensis)

प्रमुख पर्याय—कम्पिल्लक, रक्तचूर्णक, रेचन, रोचन, कर्कश, रक्ताङ्ग तथा चन्द्र।

भारतीयों को कम्पिल्लक सम्बन्धी ज्ञान अति प्राचीन है। चरकसंहिता एवं सुश्रुतसंहिता में अनेक स्थलों पर कम्पिल्लक का वर्णन है। रसशास्त्र में इसे साधारण रसवर्ग में पढ़ा है, अत: इसकी उपयोगिता स्वत: प्रमाणित होती है।

परिचय—कम्पिल्लक एक वानस्पतिक है। यह सम्पूर्ण भारत में उत्पन्न होता है। इसके वृक्ष २०-३० फुट ऊँचे होते हैं। इसके पत्ते गूलर जैसे होते हैं। यह भाद्र एवं आश्विन माह में पुष्पित होता है तथा जाड़े में फलता है। इसके फल छोटे-छोटे होते हैं तथा वसन्त ऋतु के प्रारम्भ में पक जाते हैं और इसके फलों पर एक दानेदार पदार्थ चिपके रहते हैं जो फल पकने पर स्वयं झड़ जाते हैं। इसे संग्रह कर उपयोग में लेते हैं। यह फलरज लाल वर्ण के ईंटे के चूर्णरूप में होते हैं इसे कम्पिल्लक कहते हैं। यह दरदरा चूर्ण होता है। इसके फल पहले सम्भवत: सौराष्ट्र (गुजरात) में ही मिलते होंगे।

बाजार में बिकने वाले कम्पिल्लक में व्यापारियों द्वारा ईंटे का चूर्ण मिलाकर बेचा जाता है, अत: इसे शुद्ध कर प्रयोग करना चाहिए।

इष्टिकाचूर्णसंकाशश्चन्द्रिकाढ्योऽतिरेचनः ।
सौराष्ट्रदेशे चोत्पन्नः स हि कम्पिल्लकः स्मृतः ॥११५॥

(र.र.स.)

यह ईंटे के चूर्ण के सदृश होता है, तथा अत्यन्त चमकदार होता है, साथ ही अत्यन्त रेचन है। पूर्णकाल में यह सौराष्ट्र (गुजरात) देश में होता था; किन्तु अधुना सर्वत्र होता है। इसे कम्पिल्लक कहते हैं।

कम्पिल्लक का शोधन—एक भरी बाल्टी पानी में कम्पिल्लक १ कि. डाल कर हाथ से खूब मिला देते हैं तथा निथरने के बाद एक कपड़े पर पानी गिरा देते हैं। कम्पिल्लक में मिला हुआ ईंटे का चूर्ण पानी के नीचे बैठ जाता है और कम्पिल्लक हलका होने के कारण बाल्टी के ऊपर तैरता रहता है, जिसे कपड़े पर गिरा कर पृथक् कर सुखा कर चलनी से छान कर शीशी में रख लें और ईंटे का चूर्ण आदि अपद्रव्य पदार्थ फेंक देते हैं।

वानस्पतिक द्रव्य होने से इसका मारण नहीं होता है।

कम्पिल्लक के गुण

पित्तव्रणाध्मानविबन्धहारी
श्लेष्मोदरार्त्तिकृमिगुल्महारी ।
मूलामशोफज्वरशूलहारी
कम्पिल्लको रेच्य गदापहारी ॥११५॥

(र.र. समु.)

यह तीव्र रेचक है, रेचन कराने के कारण पित्तशामक है, व्रणनाशक है, आध्मान, विबन्ध, कफोदर, कृमि, गुल्म, अर्श, आम, शोथ, ज्वर और शूल नाशक है। रेचन करके रोगों को नाश करता है। बाह्य प्रयोग से व्रणनाशक है।

शंखिया

(Arsenious Oxide : As_2O_3)

प्रमुख पर्याय—शंखिया, सोमल, गौरीपाषाण, शंखविष, शंखमूष, मल्लक, दारुमोच, दारुमूष, फेमाश्म, आखूपाषाण, व्यक्तदेह तथा रसबन्धकर।

परिचय—शंखिया अति प्राचीन काल से भारतीय चिकित्सकों द्वारा रोगशमनार्थ प्रयुक्त किया जा रहा है। सुश्रुतसंहिता में फेनाश्म के नाम से स्थावर विष का वर्गीकरण एवं अनेक स्थलों पर इसका प्रयोग हुआ है।

उपस्थिति—शंखिया नैसर्गिक एवं कृत्रिम दोनों रूपों में उपलब्ध होता है। अधिक मात्रा में इसके निर्माण के लिए आर्सेनिकल पायरायट (Arsenical pyrite) नामक खनिज को जारित किया जाता है, जिससे आर्सेनिक आक्सीकृत होकर आर्सेनियस आक्साइड रूप में वाष्पित होकर ठण्डा होने पर जम जाता है और उसे शंखिया नाम से जाना जाता है। स्वतन्त्र रूप से खानों से यह कम प्राप्त होता है।

शंखिया के भेद

गौरीपाषाणकः पीतो विकटो हतचूर्णकः ।
स्फटिकाभश्च शङ्खाभो हरिद्राभस्त्रयः स्मृतः ॥
पूर्वपूर्वो गुणैः श्रेष्ठः— ॥११७॥

(र.र.स.)

१. स्फटिकाभ श्वेतवर्ण का उत्तम, २. शंखाभ पाण्डुवर्ण का मध्यम तथा ३. हरिद्राभ पीतवर्ण का अधम होता है।

२ भेद हैं—

श्वेत (शंखाभ) : कृत्रिम विष (White arsenic poisin)

पीत (दाडिमाभ) : खनिज विष (Yellow arsenic poison)

किन्तु बाजार में शंखिया ४ प्रकार का उपलब्ध होता है; यथा—श्वेत, पीत, रक्त, कृष्ण। ये चारों कृत्रिम हैं किन्तु विषैले हैं।

अपि च—

'गौरीपाषाणकः प्रोक्तो द्विविधः श्वेतपीतकः ।
श्वेतः शङ्खसदृक्पीतो दाडिमाभः प्रकीर्तितः ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

श्वेतः कृत्रिमकः प्रोक्तः पीतः पर्वतसम्भवः।
विषकृत्यकरौ तौ हि रसकर्मणि पूजितौ' ॥
(आ.प्र.२)

शंखिया का शोधन

—कारवेल्लीफले क्षिपेत्।
स्वेदयेद्भण्डिकामध्ये शुद्धो भवति मूषकः ॥११८॥
(र.र. समु.)

४-५ बड़े करैले को सीधा चीर कर उसके पेट से बीजादि पदार्थ निकाल लें और उसमें शंखिया के टुकड़ों को भर दें तथा धागे से बाँध दें। इसके बाद करैला फल का स्वरस ४-५ लीटर निकाल कर एक हाँडी में भरें और शंखिया भरे फलों को पोटली जैसा बाँध कर दोलायन्त्र विधि से स्वेदन करें। ३ घण्टे तक मध्यमाग्नि द्वारा स्वेदन करने के बाद पोटली निकालें तथा ठण्डा होने पर फल से धागे हटाकर शुद्ध शंखिया के टुकड़ों को निकाल लें। इसे साफ जल से धोकर शीशी में सुरक्षित कर लें।

अपि च—

कारवेल्लीरसेनेह दोलायन्त्रे द्वियामकम्।
विपाचितं शङ्खविषं शुद्धिमायात्यनुत्तमम् ॥११९॥
(रसतरं.)

अथवा

गवां दुग्धेऽथवा त्वाजे कारवेल्लीरसेऽथवा।
द्वियामं स्वेदितः शुद्धो गौरीपाषाणको भवेत् ॥१२०॥
(रसामृतम्)

गोदुग्धपूरित दोलायन्त्र में पोटलीबद्ध शंखिया को ६ घण्टे तक स्वेदन करने से शंखिया शुद्ध हो जाता है। दूध आदि द्रव पदार्थों में शंखिया घुलनशील भी है। आधी मात्रा घुल जाती है। इसी तरह गोघृत में शंखिया का शोधन किया जाता है। अथवा— करैलास्वरस, गोदुग्ध, गोघृत इन तीनों में से किसी एक द्रव में ही शंखिया का शोधन करना चाहिए।

शुद्ध शंखिया के गुण

गौरीपाषाणकः शुद्धो मात्रया परिशीलतः।
कफवातामयहरो बल्यो वृष्यो रसायनः ॥१२१॥
श्वासं शीतज्वरं पाण्डुं प्लीहवृद्धिं फिरङ्गकम्।
श्लीपदं सन्धिवातञ्च तथा कुष्ठानि नाशयेत् ॥१२२॥
(रसामृतम्)

शुद्ध शंखिया को मात्रानुसार सेवन करने पर कफ एवं वातज रोग नष्ट हो जाते हैं, बल्य है, वृष्य है, रसायन है, श्वास, विषमज्वर, पाण्डु, प्लीहावृद्धि, फिरङ्ग (Syphilis and Gonorrhea), श्लीपद, सन्धिवात और कुष्ठ रोग नाशक है।

उचित मात्रा— $\frac{१}{१२०}$ रत्ती से $\frac{१}{१०}$ रत्ती तक।

विशेष—शंखिया सेवनकर्ता को अधिक मात्रा में दूध एवं घी का सेवन करना अत्यावश्यक है।

नवसादर

(Ammonium chlorite : NH_2CL)

प्रमुख पर्याय—इष्टिकालवण, चुल्लिकालवण, नवसार, किट्टसार, नरसार तथा नृसार।

परिचय—नरसार का प्रयोग संहिताओं में नहीं मिलता है। किन्तु रसशास्त्र काल में नरसार का प्रयोग देखने को मिलता है। यह क्षार खनिज एवं कृत्रिम दोनों रूप में मिलता है। रसशास्त्र में पीलू-करीर आदि वृक्षों को जलाकर क्षारविधि से क्षार तैयार कर लेते हैं तथा ईंट के भट्ठे से प्राप्त राख को क्षारविधि से क्षार तैयार कर लेते हैं; यथा—

'करीरपीलूकाष्ठेषु पच्यमानेषु चोद्भवः।
क्षारोऽसौ नवसारः स्याच्चुल्लिकालवणाभिधः' ॥
(र.र.स.)

इजिप्त आदि देशों में ऊँट की लीद को जलाकर नवसादर प्राप्त करते थे। कुछ यूरोपीय देशों में नरमूत्र से नरसार प्राप्त करते थे, किन्तु इटली के सिसली ज्वालामुखी क्षेत्र के पार्श्व में नरसार की बड़ी खान है। मध्य एशिया में भी इसकी खानें हैं। पंजाब में ईंट के भट्ठे से नरसार तैयार किया जाता है।

भौतिक स्वरूप—नरसार श्वेतवर्ण का एक क्षारीय पदार्थ है जो कई रूपों में बाजार में उपलब्ध होता है— १. बार साबुन जैसा, २. टेबलेट के रूप में, ३. ऊर्ध्वपतित रूप में। इन पर हलके प्रहार से बालू जैसा बिखर जाता है।

नरसार का शोधन

नवसारन्तु सलिले त्रिगुणे घोलयेद्भिषक्।
वस्त्रपूतं ततः कृत्वा भाजने स्थापयेत्ततः ॥
चुल्लिकायां निधायाथ पचेत्तीव्राग्निना भृशम् ॥
जले शुष्के तलस्थञ्च नृसारं विमलं हरेत् ॥१२३॥
(र.त.)

यद्यपि शोधन की आवश्यकता नहीं है तथापि तीन गुना जल में नरसार को घोल कर कपड़े से छान लें। पुनः उक्त घोल को आग में जला कर घन कर लेते हैं।

नरसार के गुण

रसेन्द्रजारणं लोहद्रावणं जठराग्निकृत्।
गुल्मप्लीहास्यशोषघ्नं भुक्तमांसादिजारणम् ॥
विडाख्यं च त्रिदोषघ्नं चुल्लिकालवणं मतम् ॥१२४॥
(र.र.स.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यह दीपन, पाचन, लघु, सर, तीक्ष्ण, सूक्ष्म एवं जठराग्निदीपक है। खाये हुए मांस को पचाने वाला है। गुल्म, प्लीहा, मुखशोष, आध्मान और कफ नाशक है। पारदजारणा में यह सर्वोत्तम है तथा लोहद्रावणार्थ इसका प्रयोग होता है।

कौड़ी (कपर्द)

(Cowry : Ca CO_3)

प्रमुख पर्याय—कपर्द, कपर्दिका, कपर्दक, कपर्दी, वराट, वराटी, चराचर तथा बालक्रीडनक।

परिचय—वराटिका का ज्ञान भारतीयों को अति प्राचीन है। चरकसंहिता में वराटिका का अनेकश: प्रयोग हुआ है। वराटिका समुद्री प्राणी मोलस्कावर्ग का अवशिष्ट अस्थिभाग है। इसके अन्दर मोलस्का वर्ग का प्राणी पलता है। समुद्री लहरों से ये प्राणी किनारे आ जाते हैं जिसे मछुए एवं अन्य मांसाहारी प्राणी लोग इकट्ठा कर उबालते हैं और मांस खाकर अस्थिभाग संचय कर लेते हैं।

भेद

सार्धनिष्कभरा श्रेष्ठा निष्कभारा च मध्यमा।
पादोननिष्कभारा च कनिष्ठा परिकीर्तिता ॥१२५॥

(र.र.स.)

डेढ़ निष्क वाली उत्तम, एक निष्क वाली मध्यम तथा पौन निष्क वाली अधम होती है।

श्रेष्ठ वराटिका के लक्षण

पीताभा ग्रन्थिका पृष्ठे दीर्घवृन्ता वराटिका।
रसवैद्यैर्विनिर्दिष्टा सा चराचरसंज्ञिका ॥१२६॥

(र.र.स.)

पीली, पीठ पर गाँठवाली, लम्बी तथा गोल वराटिका कौड़ी औषधि कार्य के लिए वैद्यों द्वारा श्रेष्ठ बतायी गयी है।

वराटिका का शोधन

वराटा काञ्जिके स्विन्ना यामाच्छुद्धिमवाप्नुयुः ॥१२७॥

(र.र.स.)

अपि च—

अम्लेन केनचिद्वापि दोलायन्त्रे विपाचिता।
वराटी याममात्रेण विशुध्यति न संशयः ॥१२८॥

(र.त.)

काञ्जी या कोई अम्ल से पूरित दोलायन्त्र में वराटिका को पोटलीबद्ध कर ३ घण्टे तक स्वेदन करने से वराटिका शुद्ध हो जाती है।

वराटिका-मारण—शुद्ध वराटिका को सुखाकर दो शरावों के बीच सम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोल कर खरल में वराटिका को मर्दन करें और कुमारी-स्वरस की भावना देकर टिकिया बनाकर सुखा लें तथा शराव-सम्पुट कर पुन: गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोल कर भस्म निकाल कर अच्छी तरह पीसकर काँचपात्र में सुरक्षित कर लें।

वराटिका भस्म के गुण—यह कटु, उष्ण एवं क्षारीय है, पारदजारणार्थ विड में प्रयुक्त होती है, दीपन, पाचन, वृष्य, नेत्र्य है; अग्निमांद्य, ग्रहणी, शूल, परिणामशूल, अम्लपित्त, क्षय और कर्णस्रावनाशक है। अम्लपित्त एवं गैस्टिक की परमौषधि है।

अम्बर

(Amber)

प्रमुख पर्याय—अग्निगर्भ, अग्निनिर्यास, अग्निजार, वह्नि-जार, सिन्धुप्लव, अर्णवोद्भव, जरायु तथा अग्निज।

परिचय—यह रसशास्त्रकालीन द्रव्य है। सर्वप्रथम रसार्णव में इसका वर्णन मिलता है। समुद्र में उत्पन्न होने वाली अग्नि (Whale = ह्वेल) नाम की मछली का सड़े हुए अन्त्रभाग को सुखाने के बाद उसे अग्निजार कहा जाता है। जब वह मछली एक घास-विशेष को खा लेती है तब उसकी आँतों में अवरोध तथा विबन्ध हो जाता है तथा धीरे-धीरे उसकी आँतों में अवरोधजन्य सड़ान पैदा हो जाती है, जिसके कारण उसका गर्भाशय प्रदेश भी सड़ने लग जाता है और कालान्तर में इस कष्ट से मछली मर जाती है। सड़ने के कारण मछली का आन्त्र एवं गर्भाशय पानी में तैरता रहता है और वर्षों बाद किनारे पर आ लगता है। उस समय वह भयंकर दुर्गन्ध से युक्त रहता है। इसी दुर्गन्ध के कारण मछुआरे उसे पहचान कर अपने साथ ले जाते हैं और घरों की छतों पर वर्षों तक सुखाते हैं। सूखने के बाद धीरे-धीरे उसमें दुर्गन्ध घटती जाती है और धीरे-धीरे सुगन्ध रूप में परिणत हो जाती है। पूर्णरूप से सूख जाने पर अत्यन्त सुगन्धित हो जाती है।

समुद्रेणाग्निनक्रस्य जरायुर्बहिरुज्झितः।
संशुष्को भानुतापेन सोऽग्निजार इति स्मृतः ॥

(र.र.स.)

अग्निजार का शोधन

क्षारीय एवं लवणीय जल में वर्षों तक धुलते रहने के कारण यह शुद्ध हो जाता है। इसको शोधन की आवश्यकता नहीं होती है, अत: इसका शोधन नहीं करना चाहिए।

अग्निजार का मारण

सुगन्धित रूप में ही इसका प्रयोग करना चाहिए। इसकी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भस्म करने से सारे गुण समाप्त हो जायेंगे। अतः भस्म नहीं करना चाहिए।

अग्निजार के गुण

अग्निजारस्त्रिदोषघ्नो धनुर्वातादिवातनुत्।
वर्धनो रसवीर्यस्य दीपनो जारणस्तथा ॥१२९॥
(र.र.स.)

अग्निजार त्रिदोषनाशक है, धनुष्टंकार (Tetanus) वातनाशक है, रसादि सभी धातुओं को बढ़ाने वाला है, दीपन है तथा पारदजारण में सहायक है।

अपि च—

स्यादग्निजारः कटुकोष्णवीर्यः
तुन्दामयघ्नः कफवातहारी।
पित्तप्रदः शोणितसन्निपात-
शूलादिवातामयनाशकश्च ॥१३०॥
(आनन्दकन्द)

अग्निजार कटुरस एवं उष्णवीर्य का द्रव्य है, मेद (तुन्दरोग) नाशक है, कफ एवं वात नाशक है, पित्तवर्धक है, रक्तदोषवर्धक है। शूलादि वातरोगनाशक है।

विशेष—अग्निजार बहुत हलका द्रव्य है। यह कपोतवर्ण का होता है, पानी में घुलता नहीं अपितु तैरता है। आग में डालने पर दुर्गन्ध के साथ जलता है।

हिङ्गुल

(Cinnabar : HgS)

प्रमुख पर्याय—हिङ्गुल, हंसपाद, शुकतुण्ड, लोहघ्न, रसगर्भ, म्लेच्छ, दरद तथा चूर्णपारद।

परिचय—संहिताओं में इसका वर्णन नहीं मिलता है। ईसा पूर्व के ग्रन्थ कौटिल्य-अर्थशास्त्र में स्वर्णमुद्रा को विकृत करने के लिए पारदचूर्ण हिंगुल का प्रयोग हुआ है।

हिंगुल स्वाभाविक एवं कृत्रिम दोनों रूपों में प्राप्त होता है। स्वाभाविक इटली एवं स्पेन आदि देशों से आता है और कृत्रिम भारत में ही बनाया जाता है। यह पारद-गन्धक का यौगिक है।

हिंगुल के भेद

दरदस्त्रिविधः प्रोक्तश्चर्मारः शुकतुण्डकः।
हंसपादस्तृतीयः स्याद् गुणवानुत्तरोत्तरः॥
चर्मारः शुकवर्णः स्यात्सपीतः शुकतुण्डकः।
जपाकुसुमसङ्काशो हंसपादो महोत्तमः ॥१३१॥
(आ.प्र.)

रसशास्त्र में हिङ्गुल के ३ भेद हैं—१. चर्मार (हरिताभरक्त) अधम, २. शुकतुण्ड (सपीतरक्त) मध्यम तथा ३. हंसपाद (जपापुष्पवत् लाल) उत्तम है।

अशुद्ध हिंगुल से हानि

अशुद्धो दरदः कुर्यादान्ध्यं क्षैण्यं क्लमं भ्रमम्।
मोहं मेहं च संशोध्यस्तस्माद् वैद्यस्तु हिङ्गुलः ॥१३२॥
(आ.प्र.)

अशुद्ध हिंगुल के सेवन से व्यक्ति अन्धा हो जाता है, क्षीण (दुर्बल) हो जाता है; क्लम, भ्रम और प्रमेह रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतः वैद्य को चाहिए कि शोधनोपरान्त ही हिंगुल का प्रयोग करें।

हिङ्गुल का शोधन

सप्तकृत्वाऽऽर्द्रकद्रावैर्लकुचस्याम्बुनाऽपि वा।
शोषितो भावयित्वा च निर्दोषो जायते खलु ॥१३३॥
(र.र.स.)

एक पत्थर के साफ खरल में हंसपाद हिंगुल को पीस कर आदी के रस की ७ भावना देने से हिंगुल शुद्ध हो जाता है। अथवा एक पत्थर के साफ खरल में हिंगुल को पीस कर बड़-हरस्वरस की ७ भावना देने से हिंगुल शुद्ध हो जाता है। अथवा निम्बुस्वरस की ७ भावना देने से हिंगुल शुद्ध हो जाता है।

हिंगुल का मारण

हिंगुल का मारण नहीं किया जाता है।

हिंगुलोत्थ पारद

अथवा हिङ्गुलात्सूतं ग्राहयेत् तन्निगद्यते।
जम्बीरनिम्बुनीरेण मर्दितो हिङ्गुलो दिनम् ॥१३४॥
ऊर्ध्वपातनयन्त्रेण ग्राह्यः स्यान्निर्मलो रसः।
कञ्चुकैर्नागवङ्गाद्यैर्निर्मुक्तो रसकर्मणि।
विना कर्माष्टकेनैव सूतोऽयं सर्वकर्मकृत् ॥१३५॥
(र.सा.सं.)

अब हिङ्गुल से पारद प्राप्त करने की विधि का वर्णन कर रहा हूँ। एक साफ पत्थर के खरल में हिंगुल २५० ग्राम लेकर चूर्ण करें। ततः जम्बीरी निम्बुस्वरस की भावना देकर सारे दिन तक मर्दन करें। पुनः उस हिंगुल चूर्ण को खरल से खुरच कर प्राप्त कर लें और ऊर्ध्वपातन यन्त्र में रखकर अच्छी तरह से सन्धिबन्धन कर चूल्हे पर चढ़ाकर मध्यमाग्नि द्वारा पारद का ऊर्ध्वपातन करें। दूसरे दिन स्वाङ्गशीत होने पर सन्धिबन्धन खोल कर ऊर्ध्वपातन यन्त्र के दोनों पात्रों को कपड़े से रगड़ कर पारद प्राप्त करें। पुनः उक्त पारद को ७-८ बार मोटे कपड़े से छान कर काँचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह पारद ७ प्रकार के कञ्चुक तथा यौगिक एवं औपाधिक नाग-वङ्गादि दोषों से रहित हो जाता है। इस पारद को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बिना आठ संस्कार के ही रसकर्म में तथा अन्य सभी कर्म में प्रयोग करना चाहिए।

शुद्ध हिंगुल के गुण

हिङ्गुलः सर्वदोषघ्नो दीपनोऽतिरसायनः।
सर्वरोगहरो वृष्यो जारणायाति[1] शस्यते॥
एतस्मादाहृतः सूतो जीर्णगन्धसमो गुणैः॥१३६॥
(र.र.स.)

हिंगुल सभी दोषों को नाश करता है, दीपन एवं रसायन है, वृष्य है, सभी रोगों को नाश करने वाला है तथा पारदजारणा में सहायक है। शुद्ध हिंगुल से प्राप्त पारद गन्धकजीर्ण पारद जैसा गुणवान् होता है।

अपि च—

तिक्तं कषायं कटु हिङ्गुलं स्या-
न्नेत्रामयघ्नं कफपित्तहारी।
हृल्लासकुष्ठज्वरकामलाश्च
प्लीहामवातौ च गरं निहन्ति॥१३७॥
(आ.प्र.)

शुद्ध हिंगुल तिक्त, कषायरस से युक्त एवं कटुपाकी है। यह नेत्ररोगनाशक है, कफ-पित्तनाशक है, हृल्लास, कुष्ठ, ज्वर एवं कामला रोगनाशक है; प्लीहारोग, आमवात एवं गरविष नाशक है।

मुर्दाशंख
(Litharge : PbO)

लेड ऑक्साइड

प्रमुख पर्याय—मृद्दारशृंग, बोदारशृंग तथा मुर्दाशंख।

परिचय—यह रसशास्त्रकालीन द्रव्य है। मुर्दाशंख खनिज एवं कृत्रिम दोनों रूप में मिलता है। खनिज—सीस धातु की खानों में यह उपलब्ध होता है। यह सीस का प्रमुख खनिज है। कृत्रिम—सीस धातु को लोहे की कड़ाही या मिट्टी की हाँडी में यदि खुली हवा में ८७७° से. ताप पर गर्म करते हैं तो मुर्दाशंख बन जाता है। यदि ३२७° से. पर सीसधातु को पिघलाते हैं तो सीसा पिघलता है और उसके ऊपरी भाग पर मैल जैसा जमता हुआ Lead oxide बनता है। इसे पृथक् कर लेते हैं। इसे मेसीकाट कहते हैं। इसी प्रकार सारा सीसा मेसिकोट बन जाता है। पुनः इस मेसिकोट को ८७७°से. ताप पर पिघलाने पर मुर्दाशंख बन जाता है।

मुर्दाशंख के भेद

बोदारशृङ्गकं प्रोक्तं द्विविधं पीतपाण्डुरम्।
सदलं निर्दलं तस्य जनिर्गुर्जरमण्डले॥
अर्बुदाख्यगिरेः पार्श्वे सीससत्त्वं स्मृतं परम्॥
केश्यं पुरुषरोगघ्नं रञ्जनं रसबन्धकृत्॥१३८॥
(आ.प्र.)

मुर्दाशंख पीत (सदल) एवं पाण्डु (निर्दल) दो प्रकार का होता है। यह गुजरात प्रान्त के आबू पर्वत के समीप मिलता है। (आज आबू पर्वत राजस्थान में है।) मुर्दाशंख रक्त-पीत वर्ण का चमकीला एवं भारी द्रव्य है। यह दल युक्त दिखायी पड़ता है। इसे पीसने पर आसानी से चूर्ण बन जाता है। यह चिकित्सकीय दृष्टि से अनुपयोगी द्रव्य है। यह केवल पारदजारणार्थ उपयोगी है। यह केश के लिए हितकर है, पुरुष रोग (नपुंसकता) नाशक है। यह पारद का रंजन एवं बन्धन करता है।

इसका शोधन-मारण नहीं करते है। इसको जल के साथ मर्दन कर ३-४ बार जल से धो लेते हैं। यही इसका शोधन है।

मुर्दाशंख का उपयोग

विभिन्न उपयोग—१. नाटक के पात्र अपने चेहरे पर इसे लगाते हैं, इससे उनके मुख पर चमक पैदा होती है। २. सिन्दूर बनाने के लिए उपयोगी है। ३. चीनी मिट्टी पर Glaze फेरते हैं। ४. फ्लिट काँच बनाने में उपयोगी है। ५. मेसिकोट और ग्लीसरीन मिलाकर पत्थर और काँच जोड़ते हैं।

सभी साधारण रसों का सामान्य शोधन

साधारणरसाः सर्वे मातुलुङ्गार्द्रकाम्बुना।
त्रिरात्रं भाविताः शुष्का भवेयुर्दोषवर्जिताः॥१३९॥
(र.र.स.)

सभी प्रकार के साधारण रस बिजौरा नीबूस्वरस तथा अदरक के रस से तीन दिनों तक भावना देकर सुखा लेने से दोष रहित अर्थात् शुद्ध हो जाते हैं।

गिरिसिन्दूर—यह सन्दिग्ध द्रव्य है। अतः इसके विषय में अधुना लोगों को कोई विशेष ज्ञान नहीं है। चपल और गिरिसिन्दूर दोनों ही सन्दिग्ध हैं।

रत्नवर्ग

आयुर्वेदीय रसशास्त्र में नौ रत्नों का उल्लेख मिलता है। आचार्यों ने ग्रहानुसार रत्नों का वर्णन किया है।

माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि
तार्क्ष्यञ्च पुष्पं भिदुरं च नीलम्।
गोमेदकञ्चाथ विदूरकञ्च
क्रमेण रत्नानि नवग्रहाणाम्॥१४०॥
(र.र.स.)

१. 'जारणार्थमति शस्यते' इति पाठभेदः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नवरत्न इस प्रकार हैं—

संस्कृत	हिन्दी	अंग्रेजी	ग्रह
१. माणिक्य	माणिक	Ruby	सूर्य
२. मुक्ता	मोती	Pearl	चन्द्र
३. प्रवाल	मूँगा	Coral	मंगल
४. तार्क्ष्य	पन्ना	Emerald	बुध
५. पुष्पराज	पोखराज	Topaz	गुरु
६. भिदुर	हीरा	Diamond	शुक्र
७. नीलम	नीलम	Sapphire	शनि
८. गोमेद	गोमेद	Zircon	राहु
९. वैदूर्य्य	लहसुनियाँ	Cat's Eye	केतु

रत्नों के श्रेष्ठ गुण—रत्नों में पाँच विशेष गुण होने ही चाहिए। इन पाँच गुणों के अभाव में रत्न अपने वर्गस्थान से गिर जाते हैं; यथा—१. दुर्लभता, २. कठोरता, ३. सुन्दरता, ४. टिकाउपन तथा ५. आकर्षक रंग।

सभी रत्नों का शोधन

शुद्ध्यत्यम्लेन माणिक्यं जयन्त्या मौक्तिकं तथा।
विद्रुमं क्षारवर्गेण तार्क्ष्यं गोदुग्धकैस्तथा॥
पुष्परागं च सन्धानैः कुलत्थक्वाथसंयुतैः।
तण्डुलीयजलैर्वज्रं नीलं नीलीरसेन च॥
रोचनाभिश्च गोमेदं वैदूर्यं त्रिफलाजलैः॥१४२॥

(र.र.स.)

रत्नों की गुण-धर्मदर्शक तालिका

क्रम	रत्नों के नाम	अंग्रेजी नाम	आपेक्षिक घन.	काठिन्य	विश्लेषण उपलब्धि	विशेष
१.	माणिक्य	Ruby	४	९	Al_2O_3 अल्यूमिनियम और आक्सिजन का यौगिक है।	क्रौमिक आक्साइड के कारण इसका रंग लाल है।
२.	मुक्ता	Pearl	२.६५ से २.८९ तक	३.५	$CaCO_3$ कैल्सियम कार्बोनेट	
३.	प्रवाल	Coral	२.६० से २.७० तक	३.५	$CaCO_3$ कैल्सियम कार्बोनेट	
४.	मरकत	Emerald	२.७१	७.५०	$Be_3Al_2(SiO_3)_6$ बेरिलियम-एल्यूमिनियम का सिलिकेट है।	क्रौमिक आक्साइड के कारण इसका रंग हरा है।
५.	पोखराज	Topaz	३.६	८	$Al[FOH]_2SiO_4$ अल्यूमिनियम, क्लोरिन सिलिका, हाइड्रोजन और आक्सिजन का यौगिक है।	
६.	हीरा	Diamond	३.६	१०	C (कार्बन)	
७.	नीलम	Sapphire	४	९	Al_2O_3 अल्यूमिनियम आक्सिजन का यौगिक है।	टाइटेनिक आक्साइड के कारण इसका रंग नीला है।
८.	गोमेद	Zircon or cinnamone stone	४.६५ से ४.७१ तक	७.५०	$Zr \cdot SiO_4$ जिर्कोनियम का सिलिकेट है। इसमें अल्पमात्रा में हैफेनियम और यूरेनियम भी है।	
९.	लहसुनियाँ	Cat's Eye	३.५ से ३.८ तक	८.५०	$BeO\ Al_2O_3$ बेरिलियम का अल्यूमिनेट है।	

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. अम्लद्रवपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **माणिक्य** रत्न शुद्ध हो जाता है।

२. जयन्तीपत्रस्वरस पूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **मोती** शुद्ध हो जाता है।

३. क्षारीय द्रवपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **प्रवाल** शुद्ध हो जाता है।

४. गोदुग्धपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **मरकत** (पन्ना) शुद्ध हो जाता है।

५. काञ्जीपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **पोखराज** शुद्ध हो जाता है।

६. कुलत्थ के क्वाथ एवं तण्डुलीय स्वरसपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **हीरा** शुद्ध हो जाता है।

७. नीलीवृक्ष स्वरसपूरित दोलायन्त्र में स्वेदन करने से **नीलम** शुद्ध हो जाता है।

८. गोरोचन के घोलपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **गोमेद** शुद्ध हो जाता है।

९. त्रिफला क्वाथपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से **वैदूर्य्य** शुद्ध हो जाता है।

रत्नों का शोधन—रत्न खनिजप्राय हैं, पार्थिव पदार्थों में अनेक तरह के विष व्याप्त रहते हैं तथा उनके विभिन्न रासायनिक संगठन होने के कारण उनमें कई प्रकार के दोष हो जाते हैं। अशुद्ध रत्नोपरत्न के प्रयोग से लाभ के बजाय हानि ही अधिक होती है। अत: इनका शोधन आवश्यक है। रत्नों की पिष्टि एवं भस्म निर्माणार्थ भी शोधन आवश्यक है, क्योंकि इससे गुणों की वृद्धि होती है। ढण्ढुकनाथ ने कहा भी है—

'मुक्तादिष्वविशुद्धेषु न दोष: स्याच्च वस्तुत:।
तथापि गुणवृद्धि: स्याच्छोधनेन विशेषत:'॥
(रसेन्द्रचिन्तामणि)

और भी—

'रत्नानां शोधनं श्रेष्ठं मारणं न गुणप्रदम्।
भस्मना वीर्यहानि: स्यात् तस्मात्तानि विशोधयेत्'॥

सभी रत्नों का मारण

लकुचद्रावसम्पिष्टैः शिलागन्धकतालकैः।
वज्रं विनान्यरत्नानि म्रियन्तेऽष्टपुटैः खलु॥१४३॥
(र.र.स.)

माणिक्य, पन्ना, पोखराज, नीलम, गोमेद और वैदूर्य्य रत्नों के पृथक्-पृथक् शुद्ध रत्न के सूक्ष्म चूर्ण १ भाग, शुद्ध मन:शिला, शुद्ध गन्धक और शुद्ध हरताल १-१ भाग लेकर एक खरल में एक साथ मर्दन कर बड़हरस्वरस की ३ भावना देकर टिकिया बनावें और सुखा लें तथा शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। ऐसे आठ पुट देने से उपर्युक्त छ: रत्न भस्म हो जाते हैं।

इस विधि से मोती, प्रवाल और हीरे की भस्म नहीं बनानी चाहिए।

माणिक्य

(Ruby : Al_2O_3)

प्रमुख पर्याय—कुरुविन्द, पद्मराग, रविप्रिय, रविरत्न, रत्नराट्, शोणरत्न, शृङ्गारि तथा सौगन्धिक।

परिचय—रत्नों का वर्णन भारतीय प्राचीनतम ग्रन्थों में मिलता है। श्रीमद्भागवत पुराणादि तथा चरकादि संहिताओं में इसका भूरिश: प्रयोग देखने को मिलता है। आचार्य वराहमिहिर के ज्योतिष ग्रन्थ बृहत्संहिता में तो इस रत्न के प्रभाव, उपयोग और सुन्दरता का सम्यग् वर्णन किया गया है।

माणिक्य के भेद

माणिक्यं पद्मरागाख्यं द्वितीयं नीलगन्धि च॥१४४॥
(र.र.स.)

माणिक्य दो प्रकार का है—१. पद्मरागाख्य जो खानों से प्राप्त होता है तथा २. नीलगन्धि जो गङ्गा आदि नदियों से प्राप्त होता है।

श्रेष्ठ माणिक्य के लक्षण (धारणार्थ)

कुशेशयदलच्छायं स्वच्छं स्निग्धं गुरु स्फुटम्।
वृत्तायत्तं समं गात्रं माणिक्यं श्रेष्ठमुच्यते॥१४५॥
(र.र.स.)

पद्मराग माणिक्य कमलपुष्पदल जैसा लाल (गुलाबी) रंग का होता है, स्निग्ध, स्वच्छ, भारी, पानीदार (चमकदार), लम्बगोल, एवं समाकृति का ही श्रेष्ठ माना जाता है।

अपि च—

यो मणिर्दृश्यते दूराज्ज्वलदग्निसमच्छविः।
वश्यं कान्तिप्रदो ज्ञेयः सर्वसम्पत्तिकारकम्॥१४६॥
(र.धा.वि.)

जो मणि दूर से प्रज्वलित अग्नि के समान कान्ति जैसीं दिखायी दे, वशीकरण करने वाली हो एवं धारण करने से कान्तिवान् जैसी प्रतीत हो वह माणिक्य सर्वसम्पत्तिकारक होती है।

धारण के लिए अग्राह्य माणिक्य

रन्ध्रकार्कश्यमालिन्यरौक्ष्यावैशद्यसंयुतम्।
चिपिटं लघु वक्रञ्च माणिक्यं दुष्टमष्टधा॥१४६॥
(र.र.स.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

छिद्रयुक्त, खुरदरा (कर्कश), मैला, रूक्ष, अस्वच्छ, चिपिटा, लघु (हलका), टेढ़ा-मेढ़ा—इन आठ लक्षणों से युक्त माणिक्य अग्राह्य है। इसे नहीं धारण करना चाहिए।

माणिक्य-शोधन

निम्बुस्वरसपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से माणिक्य शुद्ध हो जाता है।

माणिक्य-मारण

लकुचद्रावसम्पिष्टैः शिलागन्धकतालकैः।
वज्रं विनाऽन्यरत्नानि म्रियन्तेऽष्टपुटैः खलु ॥१४८॥
(र.र.स.)

शुद्ध माणिक्य को इमामदस्ते में कूटकर महीन छननी से छान लें। कठिन पत्थर के खरल (सीमाक, हंसराज या तामडा के खरल) में समभाग शुद्ध मनःशिला, शुद्ध गन्धक एवं शुद्ध हरताल और शुद्ध माणिक्य चूर्ण मिलाकर बड़हर के स्वरस के साथ मर्दन कर टिकिया बनाकर सुखावें और शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। ऐसी ही पूरी प्रक्रिया बार-बार ८ बार कर पुट देने से माणिक्य भस्म हो जाता है।

मुक्ता (मोती)

(Pearl)

(Calcium Carbonate : Ca CO_3)

प्रमुख पर्याय—अम्भसार, मुक्ता, मुक्ताफल, मौक्तिक, शशिरत्न तथा शौक्तिकेय।

मुक्ता-परिचय—पूर्वकाल में सर्वप्रथम नग्न मानव जाति के प्राणी रसदार भोजन की तलाश तथा अपनी बुभुक्षाशान्त्यर्थ जब समुद्री सीप को पकड़ कर खोला होगा तो आवरण के अन्दर सुकुमार चाँदी के समान श्वेत एवं इन्द्रधनुषी रङ्ग की गोल एवं चमकदार वस्तु को देखकर जो सूर्यप्रकाश में अपनी चमक से चकाचौंध कर रहा था, किंकर्तव्यविमूढ हो गया होगा, जो आज हजारों वर्षों बाद भी रत्नों की श्रेणी में अपनी अनुपम चमक के कारण विशिष्ट स्थान बनाये हुए है। यद्यपि मुक्ता में टिकाउपन का अभाव-सा है, तथापि उसकी सुन्दरता को कोई नजरअन्दाज नहीं कर सकता है।

भारतीयों को मुक्ता विषयक ज्ञान अति प्राचीन है। विश्व के प्राचीनतम काव्यग्रन्थ 'वाल्मीकि रामायण' में, महाभारत एवं श्रीमद्भागवत पुराणादि अनेकों स्थलों पर मुक्ता का वर्णन है। चरकादि आयुर्वेदीय संहिताओं में मुक्ता का भूरिशः प्रयोग बताया गया है।

प्राप्ति—मोती समुद्र एवं बड़े जलाशयों में सीपों के अन्दर प्राप्त होने वाला चमकीला, गोल, पानीदार पदार्थ है। इन सीपों में 'मोलस्कावर्ग' का प्राणि पलता है। इस प्राणि को उसकाने से एक प्रकार का स्राव निकलता है जो मोती बनाता है।

मुक्ता की योनि—सर्वत्र रसग्रन्थों एवं ज्योतिष के ग्रन्थों के अनुसार आठ स्थानों से मोती प्राप्त किया जाता है। ये मुक्ता की योनि कही जाती हैं।

द्विपभुजगशुक्तिशंङ्खाभ्रवेणुतिमिसूकरप्रसूतानि।
मुक्ताफलानि तेषां बहुसाधु च शुक्तिजं भवति॥
(बृहत्संहिता)

और भी—

शुक्तिः शङ्खो गजः क्रोडः फणी मत्स्यश्च दर्दुरः।
वेणुश्चाष्टौ समाख्याताः सुज्ञैर्मौक्तिकयोनयः॥
(आ.प्र.)

अर्थात्—१. हाथी से २. साँप से, ३. शुक्ति से, ४. शंख से, ५. आकाश (ओले) से, ६. बाँस से, ७. मछली तथा ८. सूअर से—इन आठ प्रकार से मोती की प्राप्ति होती है। इनमें शुक्ति से उत्पन्न मोती सर्वश्रेष्ठ होता है।

ग्राह्य मोती के लक्षण (धारणार्थ)

ह्लादि श्वेतं लघु स्निग्धं रश्मिवन्निर्मलं महत्।
ख्यातं तोयप्रभं वृत्तं मौक्तिकं नवधा शुभम् ॥१४९॥
(र.र.स.)

देखते ही मन को प्रसन्न करने वाला, श्वेत, हलका, स्निग्ध, सूर्यकिरणों जैसी चमक वाला, निर्मल, बड़ा, पानीदार (इन्द्रधनुषी आभा वाला) और गोल इस प्रकार नौ लक्षणों वाला मोती श्रेष्ठ माना जाता है।

और भी—

'नक्षत्राभं वृत्तमत्यन्तमुक्तं स्निग्धं स्थूलं निर्मलं निर्व्रणञ्च।
न्यस्तं धत्ते गौरवं यत्तुलायां तन्निर्मौल्यं मौक्तिकं सौख्यदायि'॥
(आयुर्वेदप्रकाश ५)

अग्राह्य मोती का लक्षण

रूक्षाङ्गं निर्जलं श्यावं ताम्राभं लवणोपमम्।
अर्धशुभ्रं च विकटं ग्रन्थिलं मौक्तिकं त्यजेत् ॥१५०॥
(र.र.स.)

जो मोती रूक्ष हो, बिना पानी का हो, श्याववर्ण का हो, ताम्र जैसा हो, लवण जैसा हो, आधा भाग श्वेत, टेढ़ा-मेढ़ा और गाँठदार मोती को धारण नहीं करना चाहिए।

मोती का शोधन

जयन्तीस्वरसेनेह दोलायन्त्रे विधानतः।
यामैकं सततं स्विन्नं मौक्तिकं शुद्धिमाप्नुयात् ॥१५१॥
(र.त.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जयन्तीस्वरसपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से मोती शुद्ध हो जाता है।

मोती का भस्मीकरण

मुक्ताफलं तु तरुणी परिस्रुतजलान्वितम्।
पिष्टं त्रिवारं पुटितं मृतिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥१५२॥
(र.त.)

शुद्ध मोती को गुलाब जल में पीस कर टिकिया बनावें, सुखाकर सम्पुटित कर कपोत या कुक्कुटपुट में पाक करें। ऐसा ३ बार करने से मोती की भस्म बन जाती है।

मोतीपिष्टि—सीमाक पत्थर के खरल में मोती को २-३ दिनों तक गुलाबजल में पीस कर पिष्टि बना लें।

मोती भस्म एवं पिष्टि के गुण—यह शीतल एवं मधुर है। कान्ति, दृष्टि एवं अग्नि को प्रदीप्त करने वाला है। हृद्य, मेध्य, आयुष्य, बल्य, वृष्य, जीर्णज्वर, प्रमेह, क्षय, श्वास, कास और विष नाशक है। मुख्य गुण हृद्य है।

प्रवाल (मूँगा)

(Coral)

(Calcium Carbonate : Ca CO_3)

प्रमुख पर्याय—अब्धिजन्तु, अम्भोधिपल्लव, प्रवाल, भौम-रत्न, रक्ताङ्कुर, लतामणि तथा विद्रुम।

परिचय—प्रवाल से भारतीय अति प्राचीन काल से परिचित हैं। श्रीमद्भागवतादि पुराणों में इसका अत्यधिक वर्णन है। चरकादि संहिताओं में प्रवाल का विशेष प्रयोग है। प्रवाल का वृक्ष छिछले समुद्रों में एंथाजोआ पालिप्स (Anthazoan polyps) नामक अंगूठी सदृश सछिद्र कीटाणुओं द्वारा बनाया जाता है। किन्तु बाद में इसमें स्वयं जीव-संचार होने लगता है। इटली आदि के समुद्र प्रवाल के वृक्ष से भरे पड़े हैं। हर क्षण अरबों कीड़े एक स्थान पर बैठते हैं और मूँगा के वृक्ष बढ़ते जाते हैं। इन जन्तुओं के अस्थि अवशेष ही प्रवाल है।

प्राप्ति-स्थान—इटली, स्पेन, इरान, आस्ट्रेलिया, फ्रांस, मैक्सिको आदि देशों के समुद्रों में प्राप्त होता है।

ग्राह्य प्रवाल (धारणार्थ)

पक्वबिम्बफलच्छायं वृत्तायतमवक्रकम्।
स्निग्धमव्रणकं स्थूलं प्रवालं सप्तधा शुभम् ॥१५३॥
(र.र.स.)

पके हुए त्रिकोलफल (बिम्बीफल) जैसा लाल, गोल, टेढ़ा-मेढ़ा नहीं, स्निग्ध, छिद्र-कोटर रहित, मोटा गोल लम्बाई लिये हुए प्रवाल श्रेष्ठ है।

अग्राह्य प्रवाल

पाण्डुरं धूसरं रूक्षं सव्रणं कोटरान्वितम्।
निर्भारं शुभ्रवर्णं च प्रवालं नेष्यते शुभम् ॥१५४॥
(र.र.स.)

पाण्डुवर्ण का, धूसर, रूक्ष, छिद्रसहित, खोडर से युक्त, हलका तथा श्वेतवर्ण—इन लक्षणों वाले प्रवाल अच्छे नहीं होते हैं। इन्हें धारण नहीं करना चाहिए।

प्रवाल-शोधन

सर्जिकाक्षारसंयुक्ते सलिले परिपाचितम्।
यामैकेन प्रवालं तु शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥१५५॥
(र.त.)

सर्जिकाक्षार युक्त द्रवपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से प्रवाल शुद्ध हो जाता है।

प्रवाल-भस्मीकरण

विशोधितं विद्रुमं तु श्लक्ष्णचूर्णं तु कारयेत्।
कन्याम्भसाऽथ सम्पेष्य शोषयेत् कृतचक्रिकाम्।
एवं पुटत्रयैर्भस्म जायते शशिसुन्दरम् ॥१५६॥
(र.त.)

शुद्ध प्रवालकाण्ड को शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। दूसरे दिन स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोलकर सम्पुटस्थ जल में प्रवाल को कूट कर सूक्ष्म चूर्ण करें और घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर खरल में मर्दन कर टिकिया बनावें, सुखाकर शराव सम्पुट कर पुनः गजपुट में पाक करें। ऐसा २ बार करने से प्रवाल की सुन्दर सफेद भस्म बनती है।

प्रवालपिष्टि—मुक्तापिष्टि गुलाबजल के साथ बनावें।

प्रवाल भस्म-पिष्टि के गुण

यह क्षारीय स्वादयुक्त भस्म है, शीतल एवं लघु है, पाक में मधुर है, दीपन, पाचन, वृष्य, बल्य, विषघ्न, भूतघ्न एवं शुक्रल है; कफ-वातनाशक है, क्षय, कास तथा रक्तपित्त नाशक है।

मरकत (पन्ना)

(Emerald : Be_3 Al_2 SiO_2)

प्रमुख पर्याय—मरकत, तार्क्ष्य, गारुत्मत, गरुडोद्गीर्ण, बुध-रत्न, रौहिणेय, सौपर्ण तथा हरिन्मणि।

परिचय—भारतीयों को पाँच हजार वर्षों से मरकत का ज्ञान है। महाभारत, श्रीमद्भागवत आदि पुराणों में अनेक स्थलों पर पन्ना (मरकत) का वर्णन आया है। चरकसंहिता में तो विषनाशनार्थ मरकत का प्रयोग अनेक स्थलों पर किया है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्राप्तिस्थान—आजकल दक्षिण अफ्रिका के कोलम्बिया में सर्वोत्तम पन्ना मिलता है। भारत में मध्यप्रदेश का पन्ना जिला तथा उसकी खान एतदर्थ प्रसिद्ध है।

ग्राह्य पन्ना (धारणार्थ)

हरिद्वर्णं गुरु स्निग्धं स्फुरद्रश्मिचयं शुभम्।
मसृणं मासुरं तार्क्ष्यं गात्रं सप्तगुणं मतम् ॥१५७॥
(र.र.स.)

पन्ना हरे रंग का, भारी, चिकना, जिससे रश्मिसमूह चारों ओर फैलता हो, मसृण, चमकीला और बड़ी आकृति का श्रेष्ठ होता है।

अग्राह्य मरकत

कपिलं कर्कशं नीलं पाण्डु कृष्णं मलान्वितम्।
चिपिटं विकटं रूक्षं लघु तार्क्ष्यं न शस्यते ॥१५८॥
(र.र.स.)

कपि वर्ण का रक्ताभ, कर्कश, नीला, पाण्डु, काला, मैल से युक्त, चिपटा, टेढ़ा, रूक्ष और हलका पन्ना नहीं धारण करना चाहिए।

मरकत का शोधन

सुरभीपयसा यामं दोलायन्त्रे विधानतः।
विपाचितं मरकतं विशुध्यति सुनिश्चितम् ॥१५९॥
(र.त.)

गाय के दूधपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से मरकत शुद्ध हो जाता है।

मरकत भस्मीकरण

लकुचद्रावसम्पिष्टैः शिलागन्धकतालकैः।
वज्रं विनाऽन्यरत्नानि म्रियन्तेऽष्टपुटैः खलु ॥१६०॥
(र.र.स.)

शुद्ध मरकत को इमामदस्ते में कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। ततः सीमाक पत्थर के खरल में मरकत चूर्ण के बराबर शुद्ध मनःशिला, शुद्ध गन्धक और शुद्ध हरताल देकर बडहर के रस की भावना देकर टिकिया बनावे तथा सुखा कर शराव सम्पुट कर गजपुट में पाक करें। ऐसा आठ पुट दें तो मरकत की अच्छी भस्म बनती है।

मरकत भस्म के गुण

ज्वरच्छर्दिविषश्वाससन्निपातागिनमान्द्यनुत्।
दुर्नामपाण्डुशोफघ्नं तार्क्ष्यमोजोविवर्धनम् ॥१६१॥
(र.र.स.)

ज्वर, वमन, विष, श्वास, सन्निपातातिक अग्निमांद्य, अर्श, पाण्डु और शोथनाशक है तथा ओजवर्धक है।

पोखराज

(Topaz : $Al(F_2OH)_2SiO_4$

प्रमुख पर्याय—गुरुरत्न, गुरुवल्लभ, पीतरत्न, पीताश्मा, पुष्पराज तथा पुष्पराग।

परिचय—पोखराज से भारतीयों का बहुत प्राचीन ज्ञान है। संहिताओं में पोखराज का वर्णन नहीं है, किन्तु ज्योतिष के प्राचीन ग्रन्थ बृहत्संहिता में आचार्य वराहमिहिर ने अच्छा प्रकाश डाला है। यह गुरुग्रह का रत्न है तथा कनेर के फूल जैसा पीला है। आधुनिक रत्नवैज्ञानिक इसे वैरुञ्जवर्ग का रत्नपाषाण मानते हैं।

प्राप्तिस्थान—श्रीलंका, ब्राजील, कैलिफोर्निया, जापान आदि में अच्छा पोखराज मिलता है।

ग्राह्य पुष्पराग (धारणार्थ)

पुष्परागं गुरु स्निग्धं स्वच्छं स्थूलं समं मृदु।
कर्णिकारप्रसूनाभं मसृणं शुभमष्टधा ॥१६२॥
(र.र.स.)

पुष्पराग भारी, स्निग्ध, स्वच्छ, मोटा, समाकृति, मृदु, कनेर के पुष्प जैसा पीला और चिकना—इन आठ लक्षणों वाला शुभ एवं धारण योग्य है।

अग्राह्य पुष्पराग

निष्प्रभं कर्कशं रूक्षं पीतश्यावं नतोन्नतम्।
कपिशं कपिलं पाण्डु पुष्परागं परित्यजेत् ॥१६३॥
(र.र.स.)

चमकविहीन, कर्कश, रूक्ष, पीला-श्यावमिश्रित वर्ण का, उबड़-खाबड़, कपिलवर्ण का भूरा, पाण्डु वर्ण का प्रवाल नहीं धारण करना चाहिए।

पुष्पराग का शोधन

पुष्परागं च सन्धानैः कुलत्थक्वाथसंयुतैः ॥१६४॥
(र.र.स.)

कुल्थी के क्वाथ और काञ्जी मिश्रित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक पुष्पराग का स्वेदन करने से शुद्ध हो जाता है।

पुष्पराग का मारण

लकुचद्रावसम्पिष्टैः शिलागन्धकतालकैः।
वज्रं विनाऽन्यरत्नानि म्रियन्तेऽष्टपुटैः खलु ॥१६५॥
(र.र.स.)

शुद्ध पुष्पराग को इमामदस्ते में कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और सीमाक खरल में रखकर समभाग शुद्ध मैनसिल, शुद्ध

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गन्धक एवं शुद्ध हरताल मिलाकर बड़हर स्वरस की भावना देकर टिकिया बनावें तथा शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। इसी प्रकार ८ बार मर्दन कर ८ बार गजपुट में पाक करने से पुष्पराग की सुन्दर भस्म बनती है।

पुष्पराग भस्म के गुण

पुष्परागं विषच्छर्दिकफवाताग्निमान्द्यनुत्।
दाहकुष्ठास्त्रशमनं दीपनं पाचनं लघु ॥१६६॥
(र.र.स.)

पुष्पराग की भस्म विष, वमन, कफ एवं वात, अग्निमान्द्य, दाह, कुष्ठ और रक्तदोष नाशक है। दीपन, पाचन तथा लघु है।

हीरा
(Diamond : C)

प्रमुख पर्याय—कुलिश, पवि, भार्गव, भिदुर, भृगुप्रिय, दृढरत्न, वज्र तथा हीरक।

परिचय—हीरा विषयक ज्ञान भारतीयों का अतिप्राचीन है। श्रीमद्भागवतादि पुराणों में अनेक स्थलों पर हीरा का वर्णन उपलब्ध है। समुद्रमन्थन के समय जो कौस्तुभमणि उत्पन्न हुआ सम्भवतः वह हीरा ही रहा होगा। अश्मन्तक मणि आदि को कोहिनूर हीरा ही मानने की परम्परा है। चरकसंहिता में भी हीरा का चिकित्सकीय प्रयोग है।

हीरा एक श्वेतवर्ण का अत्यन्त चमकदार तथा शुक्रग्रह का रत्न है। यह सर्वसुलभ कार्बन तत्त्व का अपरावर्तित रूप है। अथवा कार्बन तत्त्व का मणिभ रूप है जो कोयले की खानों से प्राप्त होता है।

हीरा का भेद

वज्रं च त्रिविधं प्रोक्तं नरो नारी नपुंसकम्।
पूर्वं पूर्वमिह श्रेष्ठं रसवीर्यविपाकतः ॥१६७॥
श्वेतादिवर्णभेदेन प्रत्येकं तच्चतुर्विधम्।
ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रं स्वस्ववर्णफलप्रदम् ॥१६८॥
(र.र.स.)

नर	नारी	नपुंसक
उत्तम	मध्यम	अधम
सबों के लिए	स्त्री-नपुंसकार्थ	नपुंसकों के लिए

जाति	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
वर्ण	श्वेत	रक्त	पीत	कृष्ण
पुरुषों के लिए	पुरुष	पुरुष	पुरुष	पुरुष
स्त्रियों के लिए	स्त्री	स्त्री	स्त्री	स्त्री
नपुंसकों के लिए	नपुंसक	नपुंसक	नपुंसक	नपुंसक
उपयोग	रसायन एवं सर्व-सिद्धि-दायक	जराव्याधि एवं मृत्यु-नाशक	धनदायक एवं देह-दार्ढ्यकृत्	व्याधि-नाशक एवं वयः-स्थापक है।

अतः कुल मिलाकर हीरा के १२ भेद किये गये हैं।

पुरुषग्राह्य हीरा (धारणार्थ)

अष्टास्त्रं चाष्टफलकं षट्कोणमतिभासुरम्।
अम्बुदेन्द्रधनुर्वारितरं पुंवज्रमुच्यते ॥१६९॥
(र.र.स.)

आठ धार वाला, आठ पहल वाला, छः कोण वाला, अत्यन्त चमकीला, इन्द्रधनुषी रंगों से युक्त और वारितर हीरा पुरुष हीरा कहलाता है।

स्त्रीग्राह्य हीरा

तदेव चिपिटाकारं स्त्रीवज्रं वर्तुलायतम् ॥१७०॥
(र.र.स.)

उपर्युक्त पुरुषहीरा के लक्षणों से युक्त तथा चिपिटाकार और गोल हीरा को स्त्री हीरा कहते हैं।

नपुंसक ग्राह्य हीरा

वर्तुलं कुण्ठकोणाग्रं किञ्चिद्गुरु नपुंसकम् ॥१७१॥
(र.र.स.)

नपुंसक हीरा गोल, कोण और धार से रहित होता है।

अशुद्ध हीरा के दोष

अशुद्धं कुरुते वज्रं कुष्ठं पार्श्वव्यथां तथा।
पाण्डुं तापं गुरुत्वं च तस्मात् संशोध्य मारयेत् ॥१७२॥
(आ.प्र.)

अशुद्ध हीरा की भस्म बना कर प्रयोग करने से कुष्ठ, पार्श्वशूल, पाण्डु, ज्वर, शरीर में भारीपन आदि विकार उत्पन्न करता है। अतः इन्हें शोधन कर भस्म करना चाहिए।

हीरा का शोधन

कुलत्थक्वाथके स्विन्नं कोद्रवक्वथितेन वा।
एकयामावधि स्विन्नं वज्रं शुध्यति निश्चितम् ॥१७३॥
(र.र.स.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

हीरा की पालिश करते या तराशते समय जो हीरा का कण गिरता है, उसे ही भस्म बनाने के लिए लेना चाहिए। हीरे के कणों को गाढ़े नये कपड़े में पोटली जैसा बना कर कुर्थीक्वाथ पूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से शुद्ध हो जाता है।

हीरा का मारण

हीरकं विमलं सूतं मृतं तु समभागिकम्।
मनःशिला गन्धकञ्च समं दत्त्वा विमर्दयेत् ॥१७४॥
सम्पुटस्थं तु पुटयेत् वारणाख्ये पुटे भृशम्।
तावत्पुटेत् प्रयत्नेन यावन्नायाति पञ्चताम् ॥१७५॥
द्वितीयादिपुटेष्वत्र सूतं न विनियोजयेत्।
एवं चतुर्दशपुटैर्हीरकं म्रियते ध्रुवम् ॥१७६॥
अनुभूतप्रकारोऽयं सुगमस्तु प्रकाशितः।
एवं मृतं हीरकन्तु वीतशङ्कः प्रयोजयेत् ॥१७७॥

(र.त.)

शुद्ध हीरा चूर्ण, रससिन्दूर, शुद्ध मैनसिल तथा शुद्ध गन्धक। सर्वप्रथम सीमाक आदि कठिन पत्थरों के खरल में चारों द्रव्यों को एक साथ मिलाकर निम्बुस्वरस के साथ खूब मर्दन कर टिकिया बनावें तथा शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। दूसरे पुर से रससिन्दूर नहीं मिलावें। दूसरे पुट से केवल मैनसिल और गन्धक मिलाकर निम्बुस्वरस की भावना देकर गजपुट दें। ऐसा कुल १३ पुट और दें। कुल १४ पुटों के बाद हीरा की सुन्दर भस्म बनती है तथा श्वेत होती है। इसका प्रयोग निःशंक करें।

हीरा भस्म के गुण

आयुष्प्रदं झटिति सद्गुणदं च वृष्यं
दोषत्रयप्रशमनं सकलामयघ्नम्।
सूतेन्द्रबन्धवधसद्गुणकृत्प्रदीप्तं
मृत्युञ्जयं तदमृतोपममेव वज्रम् ॥१७८॥

(र.र.स.)

हीराभस्म आयुष्प्रद है, सद्गुण देने वाला, वृष्य, त्रिदोषघ्न, सम्पूर्ण रोगनाशक, जठराग्निप्रदीपक, पारद का बन्धन एवं पारद को भस्म करने वाला, मृत्युनाशक तथा अमृत जैसा गुणकारी है।

नीलम

(Sapphire : Al_2O_3)

प्रमुख पर्याय—इन्द्रनील, तृणग्राही, नीलम, नीलोपल, महानील, शनिरत्न तथा सुनीलक।

परिचय—संहिताओं में नीलम का प्रयोग नहीं हुआ है, किन्तु ज्योतिष के आचार्य वराहमिहिर द्वारा लिखित बृहत्संहिता में अनेक स्थलों पर नीलम प्रयोग का वर्णन आया है। यह खानों से प्राप्त होने वाला नीले वर्ण का तथा कुरुन्दम वर्ग का रत्नपाषाण है। कुरुन्दम वर्ग में—माणिक्य (लाल), नीलम (नीला) तथा एमरी (काला) ये तीन रत्नपाषाण हैं जो हीरा के बाद सबसे कठिन एवं टिकाऊ रत्न है। यों तो नीलम कई गहरे एवं हलके नीले रंग में प्राप्त होता है, किन्तु रसशास्त्र में इसके २ ही भेद हैं।

श्रेष्ठतम नीलम की पहचान

अस्त्यानचन्द्रिकास्यन्दसुन्दरीक्षीरपूरितम्।
यत्पात्रं रञ्जयत्याशु स जात्यो नील उच्यते ॥१७९॥

(आ.प्र.)

शरत्पूर्णिमा या चैत्रपूर्णिमा की निरभ्र एवं स्वच्छ चाँदनी में एक गौराङ्ग सुन्दरी को श्वेतवस्त्रालंकृत कर दुग्धपूरित चाँदी का कटोरा हाथ में रख कर खड़ा करें। एक अन्य पुरुष हाथ में नीलम रत्न को लेकर चाँदनी के माध्यम से नीलम का प्रकाश स्त्री के दुग्धपात्र एवं स्त्री पर डाले। यदि वह नीलम अपने प्रकाश के माध्यम से दूध एवं स्त्री पर नीलाभ प्रकाश उत्पन्न कर दे तो उसे श्रेष्ठतम नीलम समझना चाहिए।

ग्राह्य नीलम (धारणार्थ)

जलनीलेन्द्रनीलञ्च शक्रनीलं तयोर्वरम्।
श्वैत्यगर्भितनीलाभं लघु तज्जलनीलकम्॥
कार्ष्ण्यगर्भितनीलाभं सभारं शक्रनीलकम् ॥१८०॥

(र.र.स.)

१. जलनीलम श्रेष्ठ तथा २. इन्द्रनीलम श्रेष्ठतम है। जल-नीलम श्वेतगर्भित नीलाभ एवं लघु है। इन्द्रनीलम कृष्णगर्भित नीलाभ एवं गुरु है।

अग्राह्य नीलम

रक्तार्धं विगतच्छायं रूक्षं लघु च कोमलम्।
परिहेयं सौरिरत्नं मतं रत्नपरीक्षकैः ॥१८१॥

(र.त.)

जिस नीलम खण्ड में आधा भाग लाल एवं नीला हो, रूक्ष, हलका, कोमल (अर्थात् हलके प्रहार से टूटने वाला) हो उसे नहीं धारण करना चाहिए।

नीलम का शोधन

नीलं नीलीरसेन च। (र.र.स.)

नीलीस्वरससंयुक्तं दोलायन्त्रे विधानतः।
यामैकं परिपक्वन्तु नीलं शुध्यति निश्चितम् ॥१८२॥

(र.त.)

नीलीस्वरसपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से नीलम शुद्ध हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नीलम का मारण

लकुचद्रावसम्पिष्टैः शिलागन्धकतालकैः।
वज्रं विनाऽन्यरत्नानि म्रियन्तेऽष्टपुटैः खलु ॥१८३॥
(र.र.स.)

शुद्ध नीलम को इमामदस्ते में कूटकर सूक्ष्म चूर्ण बना लें। ततः सीमाक आदि कठिन पत्थरों के खरल में रखें और समभाग शुद्ध मैनसिल, शुद्ध गन्धक तथा शुद्ध हरताल मिलाकर बड़हर स्वरस की भावना देकर टिकिया बनावें तथा सुखाकर शराव-सम्पुट में बन्द कर गजपुट में पाक करें। ऐसा ८ बार गजपुट देने से नीलम की सुन्दर भस्म बनती है।

नीलम भस्म के गुण

श्वासकासहरं वृष्यं त्रिदोषघ्नं सुदीपनम्।
विषमज्वरदुर्नामपापघ्नं नीलमीरितम् ॥१८४॥
(र.र.स.)

नीलम भस्म श्वास, कास, विषमज्वर, अर्श एवं कुष्ठनाशक है। वृष्य, त्रिदोषघन एवं दीपन है।

नीलम धारण से फल

इन्द्रनीलं शुभं वर्ण्यं सर्वपापनिबर्हणम्।
यो दधाति शरीरेऽस्य सौरिमङ्गलदो भवेत्॥
आयुर्यशो बलं लक्ष्मीमारोग्यं च प्रयच्छति ॥१८५॥
(आनन्दकन्दः)

नीलम (इन्द्रनीलमणि) शुभप्रद है, शरीर के वर्ण को बढ़ाने वाला है, सभी तरह के पापों को नष्ट करने वाला है। जो व्यक्ति इस नीलमरत्न को धारण करता (पहनता) है, उसे शनि बाधा मंगलमय हो जाती है। यह आयु, यश, बल, लक्ष्मी और आरोग्य बढ़ाता है।

गोमेद

(Zircon or Cinnamon stone : Zr SiO_4)

प्रमुख पर्याय—गोमेद, गोमेदक, तमोमणि, पिङ्गस्फटिक, राहुरत्न तथा स्वर्भानु।

परिचय—आयुर्वेदीय संहिताओं में गोमेद का वर्णन नहीं मिलता है, किन्तु ज्योतिष के बृहत्संहिता (वराहमिहिर कृत) में गोमेद की उपयोगिता का वर्णन मिलता है। रसशास्त्र में इसके लक्षण, भेद, शोधन, मारण एवं गुण-धर्म का विस्तृत वर्णन मिलता है। यह मधु के जैसा रक्तपीताभ रंग वाला कठिन रत्न-पाषाण है। यह खानों में मिलता है तथा गहरा कत्थई रंग का भी होता है।

प्राप्तिस्थान—लंका, वर्मा, थाइलैण्ड, फ्रांस, रूस और भारत में हजारीबाग में प्राप्त होता है। इसका कोई भेद नहीं है।

मधुवर्ण एवं गहरे कत्थई रंग का मिलता है।

ग्राह्य स्वरूप (धारणार्थ)

गोमेदः समरागत्वाद् गोमेदं रत्नमुच्यते।
सुस्वच्छं गोजलच्छायं स्वच्छं स्निग्धं समं गुरु।
निर्दलं मसृणं दीप्तं गोमेदं शुभमष्टधा ॥१८६॥
(र.र.स.)

गाय के जैसा रंग वाला गोमेद रत्न कहलाता है। स्वच्छ गोमूत्र के जैसा, निर्मल स्निग्ध, गुरु, समगात्रता, दलरहित और चिकना एवं चमकीला गोमेद अच्छा होता है।

त्याज्य गोमेद

विच्छायं लघु रूक्षाङ्गं चिपिटं पटलान्वितम्।
निष्प्रभं पीतकाचाभं गोमेदं न शुभावहम् ॥१८७॥
(र.स.स.)

जो गोमेद विरूप रंग का हो, हलका, रूक्ष, चिपटा, दलयुक्त, चमकहीन और पीला काँच जैसा हो उसे नहीं धारण करना चाहिए।

गोमेद-शोधन

निम्बुकस्वरसेनेह दोलायन्त्रे विधानतः।
परिस्विन्नं तु यामैकं शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥१८८॥
(र.त.)

निम्बुस्वरसपूरित दोलायन्त्र में ३ घण्टे तक स्वेदन करने से गोमेद शुद्ध हो जाता है। 'गोरोचनाभं च गोमेदं' पहले कह चुके हैं कि गोमेद का शोधन गोरोचन के घोलपूरित दोलायन्त्र में करें। किन्तु यह विधि बहुत मंहगी है, अतः निम्बुस्वरस ठीक है।

गोमेद-मारण

लकुचद्रावसम्पिष्टैः शिलागन्धकतालकैः।
वज्रं विनाऽन्यरत्नानि म्रियन्तेऽष्टपुटैः खलु ॥१८९॥
(र.र.स.)

शुद्ध गोमेद को इमामदस्ता में कूट कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और सीमाक आदि कठिन पत्थरों के खरल में गोमेद चूर्ण को रख कर उसमें समभाग शुद्ध मैनसिल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल मिलाकर बड़हर के स्वरस की भावना देकर टिकिया बनावें तथा सुखाकर शरावसम्पुट में सन्धिबन्धन कर गजपुट में पाक करें। ऐसी ८ पुट देने से गोमेद की अच्छी भस्म बन जाती है।

गोमेद के गुण

गोमेदं कफपित्तघ्नं क्षयपाण्डुक्षयं करम्।
दीपनं पाचनं रुच्यं त्वच्यं बुद्धिप्रबोधनम् ॥१९०॥
(र.र.स.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गोमेद भस्म कफ-पित्तनाशक है, दीपन, पाचन, रुचिकर, त्वचा के लिए हितकर और बुद्धिप्रबोधक है; क्षय एवं पाण्डु रोगनाशक है। 'धृतोऽयं पापनाशनः'।

वैदूर्य्य

(Cat's Eye : BeO Al_2O_3)

प्रमुख पर्याय—केतुरत्न, प्रावृष्य, विडालाक्ष, वायज, विदूरज तथा वैदूर्य्य।

परिचय—आयुर्वेदीय संहिताओं में वैदूर्य का प्रयोग चिकित्सार्थ बताया गया है। ५वीं शती के ज्योतिष ग्रन्थ बृहत्संहिता में इसका विशेष वर्णन है तथा तभी से इसे केतु ग्रह का रत्न माना गया है।

रसशास्त्र में इसका कोई भेद नहीं है।

ग्राह्य वैदूर्य्य (धारणार्थ)

वैदूर्य्यं गुरु सुस्निग्धं विडालेक्षणसप्रभम्।
भ्रमच्छुभ्रोत्तरीयाढ्यं वैदूर्य्यं जात्यमुच्यते ॥१९१॥

(र.त.)

वैदूर्य्य भारी है, स्निग्ध है, बिल्ली की आँख जैसी प्रभा से युक्त है, घूमते हुए श्वेत रंग के धागे जैसा चक्राकृति वर्णों से युक्त वैदूर्य्य धारण के योग्य होता है।

अग्राह्य वैदूर्य्य

श्यामं तोयसमच्छायं चिपिटं कर्कशं लघु।
रक्तगर्भोत्तरीयं च वैदूर्य्यं नैव शस्यते ॥१९२॥

(र.र.स.)

श्यामवर्ण का, पानी जैसी प्रभा वाला, चिपिटा, रुखड़ा, हलका, उसके अन्दर लाल वस्त्र दिखाई देने वाला वैदूर्य्य नहीं ग्रहण करना चाहिए।

वैदूर्य्य का शोधन

त्रिफलाक्वथितोपेतं वैदूर्य्यं याममात्रकम्।
दोलायन्त्रे परिस्विन्नं शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥१९३॥

(र.त.)

त्रिफला क्वाथपूरित दोलायन्त्र में वैदूर्य्य को ३ घण्टे तक स्वेदन करने से शुद्ध हो जाता है।

वैदूर्य्य का मारण

लकुचद्रावसम्पिष्टैः शिलागन्धकतालकैः।
वज्रं विनाऽन्यरत्नानि म्रियन्तेऽष्टपुटैः खलु ॥१९४॥

शुद्ध वैदूर्य्य को इमामदस्ते में कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और सीमाक आदि के कठिन पत्थरों के खरल में रखकर समभाग शुद्ध मैनसिल, शुद्ध गन्धक और शुद्ध हरताल मिलावें तथा बड़हर के स्वरस की भावना देकर टिकिया बनावें। तत्पश्चात् शरावसम्पुट करें और गजपुट में पाक करें। ऐसे ८ बार गजपुट में पाक करने से वैदूर्य्य की भस्म बन जाती है। प्रत्येक पुट में गन्धक-तालादि द्रव्य डालें।

वैक्रान्त भस्म के गुण

वैदूर्य्यं रक्तपित्तघ्नं प्रज्ञायुर्बलवर्धनम्।
पित्तप्रधानरोगघ्नं दीपनं मलमोचनम् ॥१९५॥

(र.र.स.)

वैदूर्य्य भस्म रक्तपित्त और पित्त-प्रधान रोगों को नाश करता है। बुद्धि, आयु, बल बढ़ाने वाला है, दीपन एवं मलभेदक है।

उपरत्न

(Minor Gems)

अब से १० वर्ष पूर्व तक रसशास्त्र में ६ उपरत्न थे, किन्तु अब इसकी संख्या बढ़कर भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् के अनुसार १० हो गई है।

उपरत्न

वैक्रान्तं सूर्यकान्तं चन्द्रकान्तो नृपोपलः।
पैरोजकञ्च स्फटिकं क्षुद्ररत्नगणों ह्ययम् ॥१९६॥

उपरत्न छः हैं—१. वैक्रान्त, २. सूर्यकान्त, ३. चन्द्रकान्त, ४. राजावर्त, ५. पिरोजा तथा ६. स्फटिक।

किन्तु भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, नई दिल्ली द्वारा निर्धारित B.A.M.S. पाठ्यक्रमानुसार उपरत्नों की कुल संख्या १९ तक बतायी गई हैं जिसमें कुछ चिकित्सकीय दृष्टि से अनुपयोगी उपरत्न भी कहे गये हैं; यथा—७. व्योमाश्म, ८. बदराश्म, ९. कौशेयाश्म, १०. तृणकान्त, ११. रुधिर, १२. पूत्तिक, १३. सुगन्धिक, १४. पालंकम्, १५. जहरमोहरा, १६. गोदन्ती, १७. दुग्धपाषाण तथा १८ अकीक।

सूर्यकान्त एवं चन्द्रकान्त उपरत्न संदिग्ध एवं दुर्लभ हैं।

१. वैक्रान्त (Tourmaline)	Mg, Mn, Fe, Ca, Na, K, Li, H, F, Al_3, B_2, Si_4, O_2
२. सूर्यकान्त (Sun stone)	$Na_2 OAl_2O_3 6SiO_2 + CaO$, $Al_2 O_3 2SiO_2$
३. चन्द्रकान्त (Moon stone)	$KAl\text{-}Si_3 O_8$
४. राजावर्त (Lapis lazuli or altra marine)	$Na_4 (S_3Al) Al_2 (SiO_4)_3$
५. पिरोजा (Turquaise)	$H_5 [Al (OH_2]_6 Cu (OH) (PO_4)_4$

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६. स्फटिक (Rock crystal) SiO_2
७. व्योमाश्म (Jade) $Na\ Al\ (SiO_3)_2$
८. बदराश्म (Silicate of lime)
९. जहरमोहरा (Serpentine) $H_4\ Mg_3\ Si_2\ O_9$
१०. कौशेयाश्म (Asbestors, Silicate of magnesium)
११. दुग्धपाषाण (Talc (Soft stone) magnesium silicate)
१२. तृणकान्त (Amber) (succinum) $C_4\ H_{64}\ O_4$
१३. गोदन्ती (Gypsum) (calcium sulphate) $Ca\ SO_4\ 2H_2O$
१४. पालंकम् (Onyx) $Ca\ SO_4\ {}_2H_2O$
१५. रुधिरम् (Carnelion)
१६. पूत्तिक (Peridote)
१७. सुगन्धिकम् (Spinel)
१८. अकीक (Agate)
१९. ओपल (Opal)

वैक्रान्त को रसवर्ग में पढ़ने के कारण उपरत्न वर्ग मे नहीं रखा गया है।

इनके शोधन-मारण एवं गुण-धर्म के लिए लेखक की पुस्तक 'आयुर्वेदीय रसशास्त्र' तथा 'रसजलनिधि भाग ३' कृपया देखें।

धातुएँ
(Metals)

रसशास्त्र में धातुएँ कुल मिलाकर १० हैं। जिसे ३ वर्गों में सुविधा के लिए विभक्त किया गया है—

शुद्ध लोह	पूतिलोह	मिश्र लोह
स्वर्ण (Gold) रजत (Silver) ताम्र (Copper) लोह (Iron)	नाग (Lead) वङ्ग (Tin) यशद (Zinc)	पित्तल (Brass) कांस्य (White copper) वर्तलोह (Bronze)

सुवर्ण
(Gold : Aurum : Au)

प्रमुख पर्याय—अग्निवीर्य, जाम्बूनद, रुक्म, हेम, कनक, तपनीय, सुवर्ण, हाटक, कलधौत, भास्वर, स्वर्ण, हिरण्य, काञ्चन, माङ्गल्य तथा लोहवर।

सुवर्ण, रजत एवं ताम्र धातुओं का शोधन

तैले तक्रे गवां मूत्रे आरनाले कुलत्थजे।
क्रमान्निषेचयेत्तप्तं द्रावे द्रावे तु सप्तधा॥
स्वर्णादिलोहपत्राणां शुद्धिरेषा प्रशस्यते॥१९७॥
(र.र.स.)

इन धातुओं का पतला कण्टकवेधी पत्र बनाकर अग्नि में खूब प्रतप्त करें और पाँच कटोरियों में पृथक्-पृथक् तिलतैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी और कुलत्थ क्वाथ रखें और इन द्रवों में ७-७ बार एक-एक द्रव में निषेचन करें। ऐसा करने से सुवर्ण, रजत एवं ताम्रादि धातुएँ शुद्ध हो जाती हैं।

स्वर्ण का मारण

विशुद्धस्वर्णपत्राणि कर्षैकप्रमितानि च।
समादाय समं सूतं दत्त्वा सम्मर्दयेद्दृढम्॥१९८॥
निम्बुद्रवेण सम्पेष्य सम्यक् प्रक्षालयेत्ततः।
हिङ्गुलं गन्धकञ्चाथ शिलाञ्च नवसादरम्॥१९९॥
पृथक् पृथक् कर्षमितं निक्षिप्याम्लेन मर्दयेत्।
संशोष्य चातपे सम्यक् श्लक्ष्णचूर्णञ्च कारयेत्॥२००॥
पुटेत्तावत्प्रयत्नेन यावन्निश्चन्द्रिकं भवेत्।
इत्थं स्वल्पपुटैरेव काञ्चनं याति पञ्चताम्॥२०१॥
(र.त.)

शुद्ध स्वर्णपत्र को कैंची से छोटे-छोटे टुकड़े कर लें, ततः एक कठिन पत्थर के खरल में उन स्वर्णपत्र के टुकड़ों और समभाग शुद्ध पारद मिलाकर २ दिनों तक मर्दन कर पिष्टि बनावें। इसके बाद निम्बुस्वरस के साथ मर्दन कर साफ जल से प्रक्षालन करें। पुनः समभाग शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध मैनसिल एवं नवसादर डालकर एक साथ मर्दन करें और निम्बुस्वरस की भावना देकर छोटी-छोटी टिकिया बनावें। तत्पश्चात् सुखाकर शरावसम्पुट में सन्धिबन्धन कर लघु पुट में पाक करें। ऐसी १० पुट देने से स्वर्ण की रक्तवर्ण की निश्चन्द्र भस्म बनती है।

स्वर्णभस्म के गुण

स्निग्धं मेध्यं विषगदहरं बृंहणं वृष्यमग्र्यं
यक्ष्मोन्मादप्रशमनपरं देहरोगप्रमाथि।
मेधाबुद्धिस्मृतिसुखकरं सर्वदोषामयघ्नं
रुच्यं दीप्तिप्रशमितरुजं स्वादु पाकं सुवर्णम्॥२०२॥
एतद्भस्म सुवर्णजं कटुघृतोपेतं द्विगुञ्जोन्मितं
लीढं हन्ति नृणां क्षयाग्निसदनं श्वासं च कासारुचिम्।
ओजोधातुविवर्धनं बलकरं पाण्ड्वामयध्वंसनं
पथ्यं सर्वविषापहं गरहरं दुष्टग्रहण्यादिनुत्॥२०३॥
आयुर्लक्ष्मीप्रभाधीस्मृतिकरमखिलव्याधिविध्वंसि पुण्यं
भूतावेशप्रशान्तिस्मरभरसुखदं सौख्यवृद्धिप्रकाशि।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गाङ्गेयं चाथ रूप्यं गरहरमजराकारि मेहापहारी
क्षीणानां पुष्टिकारि स्फुटमतिकरणं वीर्यवृद्धिप्रकारि ॥
(र.र.स.)

स्वर्ण भस्म स्निग्ध है, मेध्य, विषबाधाहर, बृंहण एवं वृष्य कार्य में श्रेष्ठ है; यक्ष्मा, उन्माद नाशनार्थ उत्तमोत्तम है, शरीर के रोगों को मंथन कर नष्ट करने वाला, मेध्य, बुद्धि-स्मृति एवं सुखप्रद, त्रिदोषजन्य रोगनाशक है, रुचिकर, कान्तिवर्धक, रोग-नाशक है। यह सुवर्ण भस्म रस एवं पाक में मधुर है।

यह स्वर्ण भस्म २ रत्ती त्रिकटु २ माशा एवं घृत १ तोला के साथ सेवन करने पर राजयक्ष्मा, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरुचि, पाण्डु और असाध्य ग्रहणी रोगनाशक है। इसके अतिरिक्त ओजोधातुवर्धक, बल्य, सर्वविषनाशक एवं गरविषनाशक हैं।

स्वर्ण एवं रजत भस्म खाने से आयु, लक्ष्मी, प्रभा, बुद्धि, स्मृति प्रदाता है, सभी रोगों को नाश करने वाला है, पुण्यप्रद है, भूत-प्रेतों का आवेश का नाश करता है, कामशक्ति को बढ़ाता है, शरीरसुख एवं शरीरपुष्टि देता है। स्वर्णभस्म की तरह रजतभस्म भी गरविष का नाश करता है, शरीर को बुढ़ापा रहित करता है, प्रमेहनाशक है, क्षीण शरीर को पुष्ट करता है, बुद्धि को विकसित करता है और वीर्य को बढ़ाता है।

रजत

(Silver : Argentinum : Ag)

प्रमुख पर्याय—चन्द्रलोह, रजत, शुभ्र, तार, रुप्य, सौध, दुर्वर्णक, रौप्य तथा महाशुभ।

परिचय—वेदकालीन युग से ही लोग स्वर्ण, रजत, ताम्र, लोहादि धातुओं से भलीभाँति परिचित हैं।

शोधन पहले लिख चुके हैं।

रजत-मारण

सूतगन्धकयोस्तारतुल्ययोः कज्जलीं भिषक्।
द्रवीकृत्य कुमार्यद्भिस्तारपत्राणि लेपयेत् ॥२०५॥
शरावसम्पुटे रुध्वा विंशदुत्पलकैः पचेत्।
द्विवारं रजतस्याशु भस्म स्यात् प्रायशः सितम् ॥२०६॥
(आ.प्र.)

शुद्ध रजतपत्र, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, घृतकुमारीस्वरस। कैंची से रजतपत्र के छोटे-छोटे टुकड़े कर सीमाक पत्थर के खरल में रखकर पारद के साथ मर्दन कर पिष्टि बनावें। तदनन्तर उसमें गन्धक सममात्रा में देकर मर्दन कर कज्जली बनावें। पुनः कुमारी स्वरस की भावना देकर टिकिया बनाकर सुखावें तथा शरावसम्पुट कर सन्धिबन्धन करें और २० उपलों की अग्नि में लघु पुट द्वारा पकावें। ऐसा २ बार पुट देने से ही रजत की श्वेत भस्म बनती है। किन्तु मेरा अनुभव यह कहता है कि इस विधि से १० बार पुट देने पर रजत की काली भस्म बनती है।

रजत भस्म के गुण

रौप्यं विपाकमधुरं तुवराम्लसारं
शीतं सरं परमलेखनकं च रुच्यम्।
स्निग्धं च वातकफजिज्जठराग्निदीपि
बल्यं परं स्थिरवयस्करणं च मेध्यम् ॥२०६॥
रौप्यं शीतं कषायाम्लं स्निग्धं वातहरं लघु।
रसायनविधानेन सर्वरोगापहारकम् ॥२०७॥
(र.र.स.)

रौप्य भस्म विपाक में मधुर है, कषायाम्ल रस वाला है, शीत है, सारक है, अत्यन्त लेखन है, रुचिकर है, स्निग्ध है, वात-कफनाशक है, जाठराग्निदीपक है, बल्य है, वयःस्थापक और मेध्य कर्म में श्रेष्ठ है। रसायन-विधि से सेवन करने पर सर्वरोग-नाशक है।

ताम्र

(Copper : Cupram : Cu)

प्रमुख पर्याय—ताम्र, रविप्रिय, शुल्ब, सूर्याङ्ग, नेपालीय, लोहितायस, सूर्यलोह।

परिचय—ताम्र धातु से भारतीय वेदकालीन युग से ही परिचित हैं। ऋग्वेद में अनेक स्थलों पर ताम्र का वर्णन है। श्रीमद्भागवतादि पुराणों में अनेक स्थलों पर तथा चरकसंहिता में ताम्रविषों का एवं ताम्रभस्म का कई स्थानों पर उल्लेख है। भारत में ताम्र बहुतायत से प्राप्त होता है इसके अतिरिक्त अमेरिका, रूस, आस्ट्रेलिया, चीन आदि देशों में भी ताम्र खूब पाया जाता है।

ताम्र-भेद

१. नेपालीय तथा २. म्लेच्छ दो भेद हैं।

ताम्र के आठ विष

न विषं विषमित्याहु ताम्रं तु विषमुच्यते।
एको दोषो विषे ताम्रे त्वष्टौ दोषाः प्रकीर्तिताः ॥२०९॥
भ्रमो मूर्च्छा विदाहश्च स्वेदक्लेदनवान्तयः।
अरुचिश्चित्तसन्ताप एते दोषा विषोपमाः ॥२१०॥
(आ.प्र.)

मात्र विष को ही विष नहीं कहना चाहिए। ताम्र भी विष है। विष में एक ही दोष है कि वह मनुष्य को मार देता है। किन्तु ताम्र में विष जैसे आठ दोष हैं जो कालान्तर में मार देता है, जो इस प्रकार है—भ्रम, मूर्च्छा, दाह, स्वेद, क्लेद, वमन, अरुचि तथा चित्त-सन्ताप।

ताम्र का शोधन पीछे बता चुके हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ताम्र का मारण

जम्बीररससम्पिष्टरसगन्धकलेपितम् ।
शुल्बपत्रं शरावस्थं त्रिपुटैर्याति पञ्चताम् ॥२११॥
(र.र.स.)

१. शुद्ध ताम्रपत्र, २. शुद्ध पारद, ३. शुद्ध गन्धक तथा ४. शुद्ध निम्बुस्वरस।

उपर्युक्त तीनों द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें तथा थोड़ी-सी कज्जली में निम्बुस्वरस की भावना देकर ताम्रपत्र पर लेप करें। सूखने पर शरावसम्पुट कर वाराहपुट में पाक करें। ऐसा ही तीन पुट देने से ताम्र भस्म बन जाती है। किन्तु इस विधि से भी १० पुट देना ही चाहिए, तब अच्छी भस्म बनती है।

ताम्र भस्म का अमृतीकरण

अथवा मारितं ताम्रमम्लेनैकेन मर्दितम् ।
तद्गोलं सूरणस्यान्ते रुध्वा सर्वत्र लेपयेत् ॥२१२॥
शुष्कं गजपुटे पच्यात्सर्वदोषहरं भवेत् ।
वान्ति भ्रान्ति विरेकञ्च न करोति कदाचन ॥२१३॥
(र.र.स.)

उपर्युक्त विधि से मृत ताम्र भस्म को निम्बुस्वरस के साथ मर्दन करें और एक बड़े सूरणकन्द के बीच में गड्ढा खोद कर उसमें ताम्र भस्म भरें। उसके ऊपर से ताम्र के खुदे गड्ढे से निकले सूरण की गुद्दी को सिल पर पीसकर लेप करें तथा इस सूरण पर १ अँगुल चिकनी मिट्टी का लेप कर सुखा लें। इसके बाद उस सूरणपूरित ताम्र को गजपुट में पाक करें। इस प्रकार पाक किया हुआ ताम्र भस्म वान्ति-भ्रान्ति-विरेचनादि दोष से मुक्त हो जाता है।

ताम्र भस्म के गुण

ताम्रं तिक्तकषायकञ्च मधुरं पाकेऽथ वीर्योष्णकं
साम्लं पित्तकफापहं जठररुक् कुष्ठामजन्त्वन्तकृत् ।
ऊर्ध्वाधः परिशोधनं विषयकृत् स्थौल्यापहं क्षुत्करम्
दुर्नामक्षयपाण्डुरोगशमनं नेत्र्यं परं लेखनम् ॥
(र.र.स.)

ताम्र भस्म तिक्त एवं कषाय रस से युक्त है, पाक में मधुर है, उष्ण वीर्य वाला द्रव्य है। पित्त-कफनाशक है, उदररोग, कुष्ठ, आमरोग, कृमि नाशक है, वमन-विरेचन कराकर शरीर-शोधन करने वाला, कामशक्तिवर्धक, स्थौल्यनाशक, बुभुक्षावर्धक है। अर्श, क्षय, पाण्डुरोग नाशक है, नेत्र्य है एवं अत्यन्त लेखन है।

आरोग्यं भास्करादिच्छेत् सोमाद्धातुसमृद्धिताम् ।
रोगप्रशान्तये सेव्यो देवदेवेश्वरः सदा ॥२१५॥
(रसकामधेनुः)

भास्कर अर्थात् ताम्र भस्म का सेवन आरोग्यप्रद है, अर्थात् आरोग्य की कामना ताम्र (सूर्य) से करनी चाहिए। रजत भस्म शरीरस्थ धातुओं की वृद्धि करता है अर्थात् शरीरस्थ धातुओं को बढ़ाने के लिए रजत (चन्द्रमा) भस्म का सेवन करना चाहिए। रोगशान्ति के लिए स्वर्ण (भगवान् विष्णु) भस्म का सेवन करना चाहिए।

लोहा

(Iron : Ferrum : Fe)

प्रमुख पर्याय—अयस, कालायस, लोह, शस्त्रक, आयस, तीक्ष्णक तथा लौह।

परिचय—लोहा से भारतीय बहुत प्राचीन समय से परिचित हैं। प्रारम्भ से ही भारतीय धातुविद्या बहुत ही उन्नत थी। चिकित्सकीय दृष्टि से तो चरक काल से ही लोहा का उपयोग रोगशान्त्यर्थ होता चला आ रहा है, जो आज तक निर्बाध गति रसायनादि कार्य से रोगनाशनादि कार्यों के लिए अत्युपयोगी औषधि है। प्राचीन काल में अयस्कृति आदि विधान से ही लोहा भस्म रूप में प्राप्त किया जाता रहा है। आज का युग तो विश्व में लोहयुग के नाम से प्रसिद्ध है। बिना लोहे के विश्व का कोई भी क्षेत्र अपूर्ण है।

लोहा के भेद

मुण्डं तीक्ष्णं च कान्तं च त्रिप्रकारमयः स्मृतः ।
मृदु कुण्ठं कडारञ्च त्रिविधं मुण्डमुच्यते ॥२१६॥
खरं सारं च हन्नालं तारावट्टञ्च वाजिरम् ।
काललोहाभिधानं च षड्विधं तीक्ष्णमुच्यते ॥२१७॥
भ्रामकं चुम्बकं चैव कर्षकं द्रावकं तथा ।
एवं चतुर्विधं कान्तं रोमकान्तञ्च पञ्चमम् ॥२१८॥
(र.र.स.)

प्राचीन रसग्रन्थों में लोहा के तीन भेद कहे गये हैं—१. मुण्ड लोह (Cast iron), २. तीक्ष्ण लोह (Wrough of maleable iron) तथा ३. कान्तलोह (Steel iron)।

इनके भी कई भेद हैं—१. मुण्ड के मृदु, कुण्ठ तथा कडार ये तीन भेद हैं। २. तीक्ष्ण के खर, सार, हन्नाल, तारावट्ट, वाजीर तथा काललोह ये छः भेद हैं। ३. कान्तलोह के भ्रामक, चुम्बक, कर्षक, द्रावक तथा रोमकान्त ये पाँच भेद हैं।

अशुद्ध लोहभस्म-सेवन से हानि

अशुद्धलोहं न हितं निषेवणा-
दायुर्बलं कान्तिविनाशि निश्चितम् ।
हृदि प्रपीडां तनुते ह्यपाटवं
रुजं करोत्येव विशोध्य मारयेत् ॥२१९॥
(र.र.स.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अशुद्ध लोह भस्म का सेवन करना स्वास्थ्य के लिए हितकर नहीं है। ऐसे भस्म को खाने से आयु, बल, शरीर की कान्ति निश्चित रूप से नष्ट हो जाते हैं; हृद्रोग करता है एवं शरीर की सुन्दरता का नाश करता है और अनेक प्रकार के रोगों को उत्पन्न करता है। अत: हमेशा ही लोहा को शोधन करने के बाद ही मारण करना चाहिए।

लोहा का विशेष शोधन

क्वाथ्यमष्टगुणे तोये त्रिफलां षोडशं पलम्।
तत्क्वाथे पादशेषे तु लोहस्य पलपञ्चकम् ॥२२०॥
कृत्वा पत्राणि तप्तानि सप्तवारं निषेचयेत्।
एवं प्रलीयते दोषो गिरिजो लोहसम्भवः ॥२२१॥

(र.र.स.)

एक प्रस्थ (७५० ग्रा.) त्रिफला यवकुट को ८ गुना जल (६ लीटर जल) में रात्रिपर्यन्त लोहपात्र में भींगने को छोड़ दें तथा सुबह क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और मिट्टी की हाँडी में उक्त त्रिफला क्वाथ को रखें। इसके बाद अब तीक्ष्ण लौह या कान्तलौह के बुरादा ५ पल (२५० ग्राम) को बड़े कड़छुल में रख कर आग में खूब प्रतप्त करें और जब लोह-बुरादा लाल हो जाय तो त्रिफला क्वाथ में बुझा दें। ऐसा ७ बार करने से लोहा शुद्ध हो जाता है।

लोहा-मारण

गोमूत्रैस्त्रिफला क्वाथ्या तत्कषायेण भावयेत्।
त्रिसप्ताहं प्रयत्नेन दिनैकं मर्दयेत् पुनः ॥२२२॥
रुद्ध्वा गजपुटे पच्याद्दिनं क्वाथेन मर्दयेत्।
दिवा मर्द्यं पुटेद्रात्रावेकविंशद्दिनावधि ॥२२३॥
एकविंशत्पुटश्चैव म्रियते त्रिविधं ह्ययः।

(र.र.स.)

त्रिफला यवकुट को चतुर्गुण गोमूत्र में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। उपर्युक्त विधि से शुद्ध लोहबुरादा को इमामदस्ता में कूट कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और गोमूत्र एवं त्रिफला क्वाथ से भावना देकर लोहे की कड़ाही में मर्दन करें। तत्पश्चात् टिकिया बनाकर शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। ऐसे ही २१ बार मर्दन, भावना और पुट देने से लोहे की सुन्दर लाल रंग की भस्म बनती है। किन्तु अच्छी भस्म हेतु ४० से ५० पुट तक पाक करें। ऐसा करने से तीनों प्रकार के (मुण्ड, तीक्ष्ण एवं कान्त) लोह भस्म हो जाते हैं।

शास्त्रकारों ने लोहा भस्म करने की पाकत्रय विधि बतायी है। इस विधि से भस्म बनाने में सुगमता है—१. भानुपाक, २. स्थालीपाक तथा ३. पुटपाक।

१. **भानुपाक-विधि**—सूर्य की तीक्ष्ण धूप में इस लोहा को पकाते हैं इसीलिए भानुपाक कहते हैं।

मिट्टी की एक बड़ी नाँद को मकान के ऊपरी छत पर एकान्त स्थान में पुआल आदि की गद्दी बनाकर ईंटे की रोक लगाकर स्थिर रखते हैं। अब तीक्ष्ण तथा कान्तलोह का खराद एवं शान आदि से गिरे टुकड़ों या शस्त्रादि निर्माण में कटे छोटे- छोटे टुकड़ों को नाँद में रख कर त्रिफला क्वाथ से नाँद को पूरा भर देते हैं और उसी अवस्था में वर्ष-दो-वर्ष तक यों ही छोड़ देते हैं। जब त्रिफला क्वाथ सूख जाय तो पुन: क्वाथ भर देते हैं। दो-तीन वर्ष बाद जब आवश्यकता हो तो उस नाँद से पूरी तरह भंगुर एवं चूर्ण रूप में हुए लोह को निकाल कर सुखा लें तथा इमामदस्ते में कूट कर महीन चलनी से छान लें। यही लोहा का भानुपाक चूर्ण है। इसे भस्म करने में बड़ी आसानी होती है। क्योंकि जंग (Rust) लगने के कारण आयरन आक्साइड रूप में बदल जाता है।

२. **स्थालीपाक**—भानुपाक से प्राप्त लोहचूर्ण को एक मिट्टी की हाँडी में रखकर त्रिफला क्वाथ ४ गुना भरें और तीक्ष्णाग्नि से पाक करें। जब त्रिफला क्वाथ सूख जाय तो हाँडी उतार कर पुटपाक के कार्य को सम्पन्न करें।

३. **पुटपाक**—भानुपाक एवं स्थालीपाक से प्राप्त लोह चूर्ण को त्रिफला क्वाथ की भावना देकर बिना जोड़ वाली लोहे की छोटी कड़ाही में २ दिनों तक घर्षण करें। तत: टिकिया बना कर सुखा लें तथा शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। ऐसा १५-२० पुट देने पर लोहे की उपयोगी भस्म बन जाती है। यह विधि बहुत दिनों में बनती है तथा बिना प्रपञ्च की भस्म बनती है।

लोह भस्म के गुण

कान्तायः कमनीयकान्तिजननं, पाण्ड्वामयोन्मूलनं
यक्ष्मव्याधिनिबर्हणं गरहरं दोषत्रयोन्मूलनम्।
नानाकुष्ठविनाशनं बलकरं वृष्यं वयस्तम्भनं
सर्वव्याधिहरं रसायनवरं भौमामृतं नापरम् ॥
लौहं जन्तुविकारपाण्डुपवनक्षीणत्वपित्तामय-
स्थौल्यार्शो ग्रहणीज्वरार्तिकफजिच्छोफप्रमेहप्रणुत्।
गुल्मप्लीहविषापहं बलकरं कुष्ठाग्निमान्द्यप्रणुत्
सौख्यालम्बि रसायनं मृतिहरं किट्टं च कान्तादिवत् ॥

(र.र.स.)

कान्तलोह भस्म शरीर की कान्ति को बढ़ा कर और भी सुन्दर बना देता है। यह त्रिदोषघ्न, श्रेष्ठ रसायन, वाजीकरण, बल्य, वृष्य, बृंहण, आयुष्य, वय:स्तम्भ तथा विषघ्न है एवं सभी रोगों को नष्ट करने वाला, यक्ष्मा, कुष्ठ, पाण्डु आदि रोगों को नष्ट करने वाला है। इस पृथ्वी में इस लोहभस्म से बढ़कर अमृत दूसरा पदार्थ नहीं है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लोहभस्म कृमि, पाण्डु, वायुक्षीणता एवं पित्तज रोग, स्थौल्य, अर्श, ग्रहणी, ज्वर, कफज रोग, शोथ, प्रमेह, गुल्म, प्लीह, विष रोग, कुष्ठ और अग्निमाद्यादि रोगों का नाश करता है। यह बल्य है, रसायन है एवं मृत्युनाशक है, सुख को बढ़ाने वाला है। यह लोह भस्म भी कान्तलौह भस्म जैसा ही गुणप्रद है।

पूतिलोह वर्ग

नाग

(Lead : Plumbum : Pb)

प्रमुख पर्याय—कुरङ्ग, कुवङ्ग, कृष्णायसि, नाग, भुजङ्ग, भोगेष्ट, सिन्दूरकारक, सीस तथा सीसक।

परिचय—भारतीयों का सीस धातु का ज्ञान वेदकालीन युग से ही है। सभी वेदों में इसका वर्णन मिलता है। यजुर्वेद में यज्ञों से प्राप्त होने वाले द्रव्यों में यशद के अतिरिक्त सभी धातुओं का वर्णन मिलता है। चरकसंहिता में अनेक स्थानों पर इसकी गणना की गई है। रसशास्त्र काल में इसका औषध-प्रयोग अत्यधिक किया गया है।

इसका प्रायः भेद-विशेष नहीं है।

सीस का ग्राह्य स्वरूप

द्रुतद्रावं महाभारं छेदे कृष्णसमुज्ज्वलम्।
पूतिगन्धं बहिः कृष्णं शुद्धं सीसमतोऽन्यथा ॥२२६॥

(र.र.स.)

जल्दी पिघलने वाला, बहुत भारी, काटने पर भीतरी भाग चमकदार, पिघलने पर दुर्गन्ध युक्त एवं बाहरी भाग काला हो तो उसे शुद्ध सीसा समझना चाहिए। इसके अतिरिक्त लक्षणों वाला सीसा त्याज्य है।

सीसा का शोधन

सिन्दुवारजटाकौन्तीहरिद्राचूर्णकं क्षिपेत्।
द्रुते नागेऽथ निर्गुण्ड्यास्त्रिवारं निक्षिपेद्रसे॥
नागः शुद्धो भवेदेवं मूर्च्छास्फोटादि नाचरेत् ॥२२७॥

(र.र.स.)

एक एनामेल बाल्टी में १ लीटर निर्गुण्डीस्वरस तथा ६० ग्रा. निर्गुण्डीमूल चूर्ण, रेणुकाबीज ६० ग्रा. एवं हरिद्रा चूर्ण ६० ग्रा. मिलाकर रखें और उसके ऊपर एक सछिद्र चक्की रखें। इसे पिठरयन्त्र कहते हैं। इसके बाद एक बड़ी कड़छुल में २५० ग्राम नाग पिघलावें। जब नाग पिघल जाय तो उसी चक्की के छिद्र द्वारा द्रवित नाग बाल्टी स्थित सिन्दुवार रस में डालें। ऐसा ही उक्त नाग को तीन बार द्रवित कर निवार्पित करने से शुद्ध हो जाता है। पुनः साफ जल से धो लें।

नाग का मारण

सीसकं शुद्धमादाय कटाहे गालयेद् भिषक्।
विशुष्काश्वत्थवल्कोत्थं समं चूर्णं विनिक्षिपेत् ॥२२८॥
स्वल्पं स्वल्पं मुहुश्चाथ लोहदर्व्या प्रचालयेत्।
सीसभस्म भवेद्यावच्चूर्णं तावत्समापयेत् ॥२२९॥
राशीकृत्य ततो भस्म शरावेण पिधापयेत्।
ज्वलदङ्गारवर्णं स्यात्सीसभस्म यथा चिरम् ॥२३०॥
स्वाङ्गशीतं ततो ज्ञात्वा मृतं सीसं समाहरेत्।
बहुशः क्षालयेत्तोयैः क्षारहीनं यथा भवेत् ॥२३१॥
सीसतुल्यां रोगशिलां विमलां तत्र निक्षिपेत्।
निम्बूकवारिणा वापि काञ्जिकेनाथ पेषयेत् ॥२३२॥
सम्पुटस्थं ततः कृत्वा पुटयेदतियत्नतः।
इत्थं त्रिभिः पुटैरेव सीसकं मृतिमाप्नुयात् ॥२३३॥
द्वितीयादिपुटे वैद्यस्तुल्यामेव शिलां क्षिपेत्।
इत्थं मृतं सीसकन्तु वीतशङ्कः प्रयोजयेत्॥
भस्म सञ्जायते श्लक्ष्णं विशदं कज्जलप्रभम् ॥२३४॥

(र.त.)

उपर्युक्त विधि से शुद्ध सीसा को छोटी कड़ाही में देकर गर्म करें। जब सीसा पिघल जाय तो पीपल वृक्ष की सूखी त्वचा के चूर्ण का प्रक्षेप देकर लोहे की कड़छुल से घर्षण करें। ४ घण्टे में सम्पूर्ण सीसा चूर्ण रूप में परिणत हो जायेगा। उसे महीन छननी से छान लें तथा शेष बचे हुए मोटे सीसे को पूर्ववत् प्रक्षेप एवं घर्षण कर चूर्ण करें। ततः उसे पानी से कई बार धोकर क्षारांश को पृथक् कर लें। जब चूर्ण सूख जाय तो शुद्ध मनःशिला समभाग देकर मर्दन करें और निम्बुस्वरस की भावना देकर टिकिया बनाकर सुखावें तथा शरावसम्पुट कर कुक्कुटपुट में पाक करें। इसी प्रकार शुद्ध मनःशिला समभाग देकर ३ बार पुट दें। क्रमशः अग्नि बढ़ाना चाहिए। तीसरा पुट वाराह पुट में देना चाहिए। इस तरह निर्मित नागभस्म का निःशंक प्रयोग करना चाहिए। भस्म काली बनती है।

नागभस्म के गुण

नागः समीरकफपित्तविकारहन्ता
सर्वप्रमेहवनराजिकृपीटयोनिः।
उष्णः सरो रजतरञ्जनकृद्व्रणार्शो
गुल्मग्रहण्यतिसृतिक्षणदांशुमाली ॥२३५॥
नागस्तु नागशततुल्यबलं ददाति
व्याधिं विनाशयति जीवनमातनोति।
वह्निं प्रदीपयति कामबलं करोति
मृत्युं च नाशयति सन्ततसेवितः सः ॥२३६॥

(आ.प्र.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नाग भस्म वात, पित्त एवं कफ से उत्पन्न हुए रोगों को नाश करने वाला है, सम्पूर्ण प्रमेह रूपी वनसमूह के लिए अग्नितुल्य है। यह उष्ण है, सर है, चाँदी का रञ्जन करने वाला है। यह व्रण, अर्श, गुल्म, ग्रहणी, अतिसार रोगसमूह का उसी प्रकार नाश करने वाला है, जिस प्रकार रात्रि के अन्धकार का सूर्य नाश कर प्राप्त होता है। नाग भस्म का सेवन करने से सौ हाथियों के बराबर बल देता है, रोगों को नष्ट करता है, जीवन प्राप्त होता है, जाठराग्नि-वर्धक है तथा कामशक्तिवर्धक है। इसका हमेशा सेवन करने से मृत्यु को नाश करता है।

किन्तु अन्य आचार्यों के अनुसार रजतभस्म एवं नागभस्म अकेले नहीं सेवन करना चाहिए। मिश्रलोह भस्मों के विषय में भी इसी प्रकार कहा जाता है कि अकेला नहीं सेवन करना चाहिए।

यथोक्तम् आचार्यविन्दुना—
सर्वेषां मतमेतदेव भिषजां यत्तारसीसोद्भवं
पार्थक्येन गुणावहं न भसितं प्रोक्तोपलोहस्य च ॥
(रसपद्धतिः)

वङ्ग
(Tin : Stannum : Sn)

प्रमुख पर्याय—कुटिल, कुरुप्य, त्रपु, त्रपुष, पूतिगन्ध, रङ्ग, रङ्गक, वङ्ग तथा शुक्रलोह।

परिचय—वेदकाल से ही भारतीय वङ्ग धातु से भलीभाँति परिचित हैं। वेदों में अनेक स्थलों पर वङ्ग का वर्णन आया है। संहिताओं में भी अनेक स्थलों पर वङ्ग का प्रयोग आया है। रस-शास्त्र काल से इसका चिकित्सार्थ प्रयोग हुआ है। रसशास्त्र में इसे पूतिलोह के वर्ग में रखा गया है। चूँकि आग पर गर्म करने से दूसरी दुर्गन्ध निकलती है तथा पिघलाने पर शीघ्र चूर्ण भी होने लगता है। अतः इसे पूतिलोह कहते हैं। प्रकृति में यह हमेशा युक्तावस्था (यौगिक रूप) में पाया जाता है। भारत में (बिहार) में यह थोड़ी मात्रा में मिलता है। टिनस्टोन (Tinstone) नामक खनिज से वङ्ग प्राप्त होता है।

वङ्ग-भेद

खुरकं मिश्रकञ्चेति द्विविधं वङ्गमुच्यते।
खुरं तत्र गुणैः श्रेष्ठं मिश्रकं न हितं मतम् ॥२३७॥
(र.र.स.)

१. खुरक (उत्तम) और २. मिश्रक (अधम) ये वङ्ग के २ भेद हैं। खुरक श्रेष्ठ और मिश्रक अनुपयोगी है।

ग्राह्य वङ्ग

धवलं मृदुलं स्निग्धं द्रुतद्रावं सगौरवम्।
निःशब्दं खुरवङ्गं स्यान्मिश्रकं श्यामशुभ्रकम् ॥२४०॥
(र.र.स.)

श्वेत, मृदु, स्निग्ध, भारी और शीघ्र द्रवित होने वाला तथा तपाने पर अधिक शब्द न करने वाला 'खुरक' नामक वंग होता है। इसके विपरीत लक्षणों वाला तथा श्वेत और काले रंग का वंग 'मिश्रक' कहलाता है।

अशुद्ध वङ्गभस्म के दोष

अशुद्धममृतं वङ्गं प्रमेहादिगणप्रदम्।
गुल्महृद्रोगशूलार्शःकासश्वासवमिप्रदम् ॥२४१॥
(आ.प्र.)

अशुद्ध वङ्ग तथा सही ढंग से भस्म नहीं किया गया वङ्ग सेवन करने से प्रमेह, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, गुल्म, हृद्रोग, शूल, अर्श, कास, श्वास एवं वमन आदि रोग उत्पन्न करते हैं।

वङ्ग का शोधन

द्रावयित्वा निशायुक्ते क्षिप्तं निर्गुण्डिकारसे।
विशुध्यति त्रिवारेण खुरवङ्गं न संशयः ॥२४२॥
(र.र.स.)

एक बाल्टी में निर्गुण्डीस्वरस १ लीटर में १०० ग्राम हलका चूर्ण मिलाकर रखें, बाल्टी के ऊपर सछिद्र चक्की रखें। इसे पिठरयन्त्र कहते हैं। एक बड़े कड़छुल में २५० ग्राम वङ्ग को रख कर आग पर पिघलावें तथा पिघलने के बाद चक्की के छिद्र से निर्गुण्डीस्वरस में द्रवित वङ्ग को निर्वापित करें। ऐसा ही तीन बार निर्वापित करने से वङ्ग शुद्ध हो जाता है।

वङ्ग का मारण

शुद्धं वङ्गं क्षिपेद्भाण्ड्यां चुल्लिस्थायां शनैः शनैः।
तदधो ज्वालयेदग्निं द्रुते वङ्गे क्षिपेत् पुनः ॥२४१॥
अपामार्गं चतुर्थांशं चूर्णं सञ्चालयेदिदम्।
स्थूलाग्रया ह्ययोदर्व्या यावत्तद्भस्म जायते ॥२४२॥
चूर्णप्रक्षेपणं कार्यं स्वल्पं स्वल्पं मुहुर्मुहुः।
तावद्भस्म भवेद्रङ्गं तावच्चूर्णं समापयेत् ॥२४३॥
शरावपिहितं पश्चात् स्थापयेत्तत्र तद्भिषक्।
रजः सर्वं ततोऽधस्तात्कुर्यादग्निं तु तीव्रकम् ॥२४४॥
यावदङ्गारवर्णं तद्रजः समुपजायते।
स्वाङ्गशीतं ततो ग्राह्यं मारणाय रजः शुभम् ॥२४५॥
(आ.प्र.)

शुद्ध वङ्ग को हाँडी या लोहे की कड़ाही में रखकर प्रज्वलित चूल्हे पर रख कर द्रवित करें। द्रवित होने पर चतुर्थांश अपामार्ग-पञ्चाङ्ग चूर्ण का चुटकी से प्रक्षेप देते हुए कड़छुल से दृढ़ घर्षण करें। ऐसा ३-४ घण्टे तक प्रक्षेप एवं घर्षण के बाद सम्पूर्ण वङ्ग

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चूर्ण हो जायेगा। इसे १०० नम्बर की महीन छननी से छान लें तथा मोटे वङ्ग के अंश को पुन: घर्षण करें। सम्पूर्ण वङ्ग का सूक्ष्म चूर्ण होने के बाद पुन: उसी कड़ाही में एकत्र कर शराव से ढक दें और २ घण्टे तक दृढ़ाग्नि में पाक करें। जब लाल वर्ण का हो जाय तो स्वाङ्गशीत होने पर भस्म की प्रक्रिया प्रारम्भ करें। इस जारित वङ्ग चूर्ण को कई बार साफ जल से प्रक्षालन कर क्षारांश दूर करें।

जारित वङ्ग चूर्ण को (अर्ध, चतुर्थांश, अष्टमांश या षोडशांश) शुद्ध हरताल के साथ मिलाकर अर्कदुग्ध की भावना देकर टिकिया बनाकर सुखावें और पीपल एवं वृक्ष के शुष्क त्वचाचूर्ण से युक्त शराव पर उक्त टिकिया रखकर उस पर पुन: पीपलचूर्ण रख कर शरावसम्पुट कर कुक्कुटपुट में पाक करें। ऐसा ७ बार करने से वङ्ग भस्म हो जाती है। किन्तु तीन पुट के बाद से हरताल नहीं मिलावें।

'वङ्गं सतालमर्कस्य पिष्ट्वा दुग्धेन तत्पुटेत्।
शुष्काश्वत्थभवैर्वल्कै: सप्तधा भस्मतां व्रजेत्'॥ (आ.प्र.)

वङ्ग भस्म के गुण

**सिंहो यथा हस्तिगणं निहन्ति
तथैव वङ्गोऽखिलमेहवर्गम्।
देहस्य सौख्यं प्रबलेन्द्रियत्वं
नरस्य पुष्टिं विदधाति नूनम्॥२४६॥**
(आयु.प्र.)

**बल्यं दीपनपाचनं रुचिकरं प्रज्ञाकरं शीतलं
सौन्दर्यैकविवर्धनं हितकरं नीरोगताकारकम्।
धातुस्थौल्यकरं क्षयिक्षयकरं सर्वप्रमेहापहं
वङ्गं भक्षयतो नरस्य न भवेत्स्वप्नेऽपि शुक्रक्षय: ॥२४७॥**
(आ.प्र.)

सिंह जिस तरह हाथिओं के समूह को मार डालता है उसी प्रकार वङ्गभस्म सम्पूर्ण प्रमेहवर्ग के रोगों को नष्ट कर देता है। यह शरीर का सुख, इन्द्रियों की प्रबलता और शरीर की पुष्टि को निश्चित रूप से बढ़ाता है। वङ्गभस्म बल्य, दीपन, पाचन, रुचिकर, बुद्धिवर्द्धक, शीतल, शरीर की सुन्दरतावर्धक, हितकर एवं आरोग्यप्रदाता, शुक्र को गाढ़ा करने वाला, क्षयरोग को नाश करने वाला और सभी प्रमेहनाशक है। वङ्गभस्म का सेवन करने वाले व्यक्ति को स्वप्नदोष (स्वप्न में भी शुक्रक्षय) नहीं होता है। इसके अतिरिक्त गर्भस्थापक, शुक्रकीटवर्धक एवं श्वेतप्रदर नाशक है।

यशद

(Zinc : Zin Cum : Zn)

प्रमुख पर्याय—खर्परज, खर्परसत्त्व, ताम्ररञ्जक, नेत्ररोगारि, यशद तथा रीतिहेतु।

परिचय—भारतीयों का यशद विषयक ज्ञान अत्यधिक प्राचीन नहीं है। पित्तल संहिता-ग्रन्थों में भी वर्णित है। पित्तल बनाने में यशद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। ताम्र २ भाग और यशद १ भाग को एक बड़ी मूषा (Crucible) में धमन कर पित्तल बनाया जाता है। १४वीं शती में भारत में मुसलमानों के आने पर अरब देशों से उनके साथ-साथ कुछ धातुएँ भी आई थीं, उन्ही मे यशद भी है। तब से इस धातु का चिकित्सार्थ प्रयोग होने लगा। सर्वप्रथम शार्ङ्गधर के टीकाकार श्री आढ्यमल ने अपनी टीका में यशद को उद्धृत किया है। इसके पूर्व खर्पर सत्त्व से पीतल बनाया जाता था किन्तु उसका नामकरण नहीं हो पाया था। इसका मुख्य खनिज रसक (खर्पर) (Zine carbonate and calamine) है। भारत में यह प्रचुर मात्रा में मिलता है।

ग्राह्य यशद

**छेदे समुज्ज्वलं स्निग्धं मृदुलं निर्मलं तथा।
द्रुतद्रावं महाभारं यशदं ग्राह्यमुच्यते॥२४८॥**
(र.त.)

काटने पर उजला, स्निग्ध, मृदु, निर्मल, शीघ्र पिघलने वाला और बहुत भारी यशद भस्मार्थ लेना चाहिए।

यशद का शोधन

**जात्यं यशदमादाय लोहदर्व्यान्तु विन्यसेत्।
तीव्राग्निना तु विद्राव्य चूर्णवारि प्रपूरिते॥२४९॥
सच्छिद्रेण पिधानेन पिहितास्ये घटे क्षिपेत्।
सप्तवारं प्रयत्नेन यशदं शुद्धिमाप्नुयात्॥२५०॥**
(र.त.)

यशद को बड़े कड़छुल में रखकर आग पर पिघलावें। जब पिघल जाय तो चूर्णोदक (चूना का घोल) पूर्ण पिठर यन्त्र में सात बार बुझाने से यशद शुद्ध हो जाता है।

यशद का मारण

**यशदं विशुद्धमादौ विनिधाय वै कराहे।
अतितीव्रवह्नियोगात् खलु गालयेन्निकामम्॥२५१॥
दृढनिम्बदण्डदर्व्या परिचालयेत्प्रयत्नात्।
सुमृतं ततो विलोक्य त्ववतारयेत्कटाहम्॥२५२॥
विमलं प्रदाय तालं चरणांशिकं रसज्ञ:।
खलु पेषयेत्प्रयत्नात् पुटवित् पुटेत् पुटस्थम्॥२५३॥
रीत्यानया तु यशदं मृतिमेति निर्विशेषाम्।
विविधानुपानयोगाद् वितरेत्तु वीतशङ्क:॥२५४॥**
(र.त.)

एक लोहे की छोटी कड़ाही में ५०० ग्रा. शुद्ध यशद डाल कर तीव्राग्नि पर द्रवित करें। जब द्रवित हो जाय तो निम्ब की ४

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

हाथ लम्बी और ६ इञ्च व्यास वाली मोटी लकड़ी (कड़छुल जैसी लकड़ी) से दृढ़ मर्दन करें। ३-४ घण्टे तक तीव्राग्नि में निम्बदण्ड से घर्षण के बाद यशद चूर्ण हो जायगा। उसे महीन छननी से छानकर अवशिष्ट टुकड़ों को पुनः घिसे। पुनः साफ जल से ४-५ बार प्रक्षालन करें। इसके बाद यशद चूर्ण सुखा लें तथा उसमें चतुर्थांश शुद्ध ताल मिलाकर कुमारीस्वरस या जल की भावना देकर टिकिया बनावे तथा सुखाकर, शरावसम्पुटकर कुक्कुटपुट में पाक करें। इस विधि से यशद की उत्तम भस्म बन जाती है।

यशद भस्म के गुण

यशदं तुवरं तिक्तं शीतलं कफपित्तहृत्।
चक्षुष्यं परमं मेहान् पाण्डुं श्वासं च नाशयेत् ॥२५५॥
(आ.प्र.)

यशद कषैला है, तिक्त है, शीतल एवं कफ-पित्तनाशक है। यह नेत्र के लिए हितकर, प्रमेह के लिए परमौषधि है, पाण्डु और श्वास रोगनाशक है।

नाग, वङ्ग एवं यशद का सामान्य शोधन—नाग, वङ्ग एवं यशद का सामान्य शोधन एक जैसा ही इन दिनों प्रचलित तथा सुगम है।

इन तीन धातुओं को अलग-अलग कड़छुल में रखकर तीव्राग्नि में द्रवित करें और चूर्णोदक पूर्ण पिठर यन्त्र (चूना एवं पानी के घोल) में निर्वापित करें। एक बाल्टी में चूर्णोदक रखकर बाल्टी के ऊपर सछिद्र पत्थर की चक्की रखना ही पिठर यन्त्र है। चक्की के छिद्र के द्वारा द्रवित धातु को निर्वापित करते हैं। ऐसा ७ बार करना चाहिए।

नाग, वङ्ग एवं यशद का जारण—लोहे की छोटी कड़ाही में उपर्युक्त तीन में से कोई भी एक धातु रख कर तीव्राग्नि पर द्रवित करें तथा द्रवित धातु पर पीपल वृक्ष का शुष्क त्वचा चूर्ण या इमली वृक्ष की सूखी त्वचा का चूर्ण या अपामार्ग-पञ्चाङ्ग चूर्ण चौथाई का प्रक्षेप दे-देकर लोहे की कड़छुल से घर्षण करें। ३-४ घण्टे तक करने से उपर्युक्त नाग, वङ्ग एवं यशद धातुएँ चूर्ण हो जाती हैं। इसे महीन छननी १०० नम्बर की जाली से छान लें तथा मोटी अवशिष्ट धातुओं का पुनः जारण करें। ऐसा होने पर कड़ाही में सम्पूर्ण चूर्ण का एकत्र कर मिट्टी के शराव से ढ़क दें और ३ घण्टे तक तीव्राग्नि दें। स्वाङ्गशीत होने पर जारित चूर्ण को साफ पानी से ४-५ बार प्रक्षालन कर क्षार रहित कर आग पर सुखा लें।

मारण—तत्पश्चात् खरल में रखकर घृतकुमारी स्वरस की भावना देकर टिकिया बनाकर सुखावें तथा शरावसम्पुट कर कुक्कुटपुट में पाक करें। ऐसा ५-६ बार करने से नाग, वङ्ग एवं यशद की उत्तम श्वेत भस्म बनती है।

त्रिवङ्ग भस्म—इन नाग, वङ्ग एवं यशद भस्मों को बराबर मात्रा में मिला कर रख लेना त्रिवङ्ग भस्म है। अथवा—समभाग शुद्ध नाग, शुद्ध वङ्ग एवं शुद्ध यशद को पूर्वविधि से कड़ाही में जारण करें। प्रक्षालन के बाद कुक्कुटपुट द्वारा ५ बार पाक करें तथा छठी बार वाराहपुट द्वारा पूर्ववत् कुमारीस्वरस की भावना देकर पाक करने से त्रिवङ्ग भस्म बनती है। यह भस्म पाण्डुवर्ण की होती है।

मिश्रलोह

(Alloy)

कांस्य, पित्तल एवं वर्तलोह की कोई विशेष उपयोगिता नहीं है फिर भी यदि इनका शोधन-मारण करना ही हो तो ताम्र-बाहुल्यात् ताम्र जैसा ही शोधन एवं मारण करना चाहिए। इसका गुण भी ताम्र जैसा ही होता है।

विषवर्ग

(Poison)

विषं तु गरलः क्ष्वेडस्तस्य भेदानुदाहरे।
वत्सनाभः सहारिद्रः सक्तुकश्च प्रदीपनः ॥२५६॥
सौराष्ट्रिकः शृङ्गिकश्च कालकूटस्तथैव च।
हालाहलो ब्रह्मपुत्रो विषभेदा अभी नव ॥२५७॥
(भा.प्र.)

विष के पर्याय एवं भेद—१. विष, २. गरल और ३. क्ष्वेड विष के तीन पर्याय हैं। विष नौ प्रकार के हैं; यथा—१. वत्सनाभ, २. हारिद्र, ३. सक्तुक, ४. प्रदीपन, ५. सौराष्ट्रिक, ६. शृङ्गीविष, ७. कालकूट, ८. हालाहल तथा ९. ब्रह्मपुत्र।

विशेष—इनमें से इन दिनों वत्सनाभ एवं शृङ्गीविष दो ही उपलब्ध एवं उपयोगी हैं, शेष ७ विष संदिग्ध, अनुपयोगी तथा अप्राप्य हैं।

वत्सनाभ एवं शृङ्गी विष का शोधन

गोमूत्रपूर्णपात्रे च दोलायन्त्रे विषं पचेत्।
दशतोलकमानेन चादौ वैद्यो दिवानिशम् ॥२५८॥
(र.सा.सं.)

कृत्वा चणकवत्स्थूलान् विषभागांस्तु भाजने।
तत्र गोमूत्रकं क्षिप्त्वा प्रत्यहं नित्यनूतनम् ॥२५९॥
शोषयेत्त्रिदिनादूर्ध्वं धृत्वा तीव्रातये ततः।
प्रयोगेषु प्रयुञ्जीत भागमानेन तद्विषम् ॥२६०॥
(आ.प्र.)

मिट्टी की छोटी हाँडी में वत्सनाभ को चना के बराबर टुकड़े कर रखें और उसे गोमूत्र में डुबो कर तीव्र धूप में रखें। रोज

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पुराना गोमूत्र को निकाल कर नया गोमूत्र भरे। तीन दिनों तक ऐसा करें। पुनः उस गोमूत्र को निकाल कर नया गोमूत्र भर कर ३ घण्टे तक आग पर पका लें। पुनः साफ जल से धोकर धूप में अच्छी तरह सुखा कर चूर्ण कर लें। औषधियों में इस शुद्ध विष का प्रयोग करें।

उपविष

अर्कसेहुण्डधत्तूरलाङ्गलीकरवीरकाः ।
गुञ्जाऽहिफेनमित्येताः सप्तोपविषजातयः ॥२६१॥
(आ.प्र.)

अर्कदुग्ध, कनेरमूल, सेहुण्डदुग्ध, गुञ्जामूल, धत्तूरबीज, अहिफेन (दुग्ध) तथा लाङ्गलीमूल—ये उपविष की सात संख्या है। इन्हें भी शोधन के बाद प्रयोग करें।

इन सात प्रकार के उपविषों के अतिरिक्त भिलावा, जयपाल भाँग एवं कुपीलु आदि आयुर्वेद के कुछ प्रमुख द्रव्य हैं जो उपविष जैसे हैं। अतः इन्हें भी शोधनोपरान्त ही उपयोग में लाना चाहिए। वास्तव में विषों और उपविषों के अतिरिक्त कुछ ऐसे द्रव्य हैं जिनका सेवनोपरान्त मादक प्रभाव पड़ता है।

रसतरंगिणीकार ने परिष्कृत एवं उपविषवर्ग कहा है—

विषतिन्दुकबीजं च त्वहिफेनञ्च रेचनम्।
धत्तूरबीजं विजया गुञ्जा भल्लातकाह्वयः ॥२६२॥
अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं लाङ्गली करवीरकम्।
समाख्यातो गणोऽयं तु बुधैरुपविषाभिधः ॥२६३॥
(र.त.)

१. कुचिलाबीज, २. अफीम, ३, जयपालबीज, ४. धत्तूरबीज, ५. भाँगपत्र, ६. गुञ्जामूल, ७. भल्लातक फल, ८. अर्कक्षीर, ९. स्नुहीक्षीर, १०. लाङ्गलीमूल तथा ११. कनेरमूल—इन्हें उपविष वर्ग में गिना गया है।

किञ्चितदाज्येन सम्भृष्टो विषमुष्टिर्विशुध्यति ॥२६४॥
(आ.प्र.)

(१) **कुपीलु**—गाय के घी में कुपीलु का छिलका लाल होने पर्यन्त भून लें। ऐसा करने के बाद छिलका हटाकर चूर्ण कर लेना चाहिए।

शृङ्गवेररसैर्भाव्यमहिफेनं त्रिसप्तधा।
शुध्यत्युक्तेषु योगेषु योजयेत्तद्विधानतः ॥२६५॥
(आ.प्र.)

(२) **अफीम**—आर्द्रक (आदी) स्वरस की २१ भावना देने से अफीम शुद्ध हो जाता है।

जैपालं रहितं त्वगङ्कुररसज्ञाभिर्मले माहिषे
निक्षिप्तं त्र्यहमुष्णतोयविमलं खल्वे सवासोऽर्दितम्।
लिप्तं नूतनखर्परेषु विगतस्नेहं रजःसन्निभं
निम्बूकाम्बुविभावितं च बहुशः शुद्धं गुणाढ्यं भवेत् ॥२६६॥
(आ.प्र.)

(३) **जयपालबीज**—जयपालबीज को दरड़ कर छिलका रहित कर लें तथा बीच की पत्ती भी निकाल कर पोटली में ढीला कर बाँध कर भैंस के गोबर के घोल में तीन दिनों तक रखें। चौथे दिन पोटली निकाल कर साफ जल से कई बार धोकर खरल में नीबूस्वरस में पीस कर नयी मिट्टी के शराव में लेप कर धूप में रखें। जब जयपालबीज का स्नेहांश सूख जाय तो खुरच कर शीशी में रख कर औषधार्थ प्रयोग करें। यह जयपाल अत्यन्त शुद्ध एवं गुणवान् हो जाता है।

धूर्त्तबीजं तु गोमूत्रे चतुर्यामोषितं पुनः।
कण्डितं निस्तुषं कृत्वा शुद्धं योगेषु योजयेत् ॥२६७॥
(आ.प्र.)

(४) **धत्तूरबीज**—धत्तूरबीज को गोमूत्र से भरी हाँडी में १२ घण्टे तक रखें, फूलने के बाद २ घण्टे तक उबाल दें। पुनः साफ जल से धोकर सुखा लें और कूटकर भूँसी हटाकर औषधि-कार्य में प्रयोग करें।

मातुलानीं शुष्कपत्रां सलिले तु निमज्जयेत्।
निष्पीड्य शुष्कां गव्याज्ये भर्जयेन्मन्दवह्निना ॥२६८॥
सभृष्टामथ विज्ञाय सत्वरं तु समाहरेत्।
इत्थं विशोधितां भङ्गां सर्वत्र विनियोजयेत् ॥२६९॥
(र.त.)

(५) **भाँगपत्र**—भाँग के पत्तों को पानी से भरे भगौने में डालकर हाथ से खूब निचोड़ कर भाँगपत्र को छान लें तथा मिट्टी- धूल आदि से युक्त जल को फेंक दें। ऐसा ही दुबारा करें। सुखा कर गाय के घी में हलका भून कर चूर्ण कर लें और औषधार्थ प्रयोग करें।

गुञ्जा काञ्जिकसंस्विन्ना प्रहरं शुद्धिमृच्छति ॥२७०॥
(आ.प्र.)

(६) **गुञ्जाबीज**—गुञ्जाबीज को ३ घण्टे तक काञ्जीपूर्ण पात्र में रखकर स्वेदन करने से शुद्ध हो जाती है। पुनः सुखाकर चूर्ण कर प्रयोग करें।

भल्लातकफलानीह नारिकेलाम्बुयोगतः।
स्विन्नानि दोलिकायन्त्रे शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥२७१॥
(र.त.)

(७) **भिलावा**—नारिकेल के जलपूरित दोलायन्त्र में ६ घण्टे तक स्वेदन करने से भिलावा शुद्ध हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पलद्वयं सुधादुग्धं तोलकद्वयसम्मिते।
चिञ्चादलद्रवे वस्त्रपूते घर्मे विशोषयेत् ॥२७२॥
(र.त.)

(८-९) **अर्कक्षीर तथा स्नुहीक्षीर**—८ तोला स्नुहीक्षीर तथा २ तोला इमलीपत्र स्वरस को कपड़े से छान कर दोनों को मिला कर स्टेनलेस स्टील की थाली में रखकर धूप में सुखा लें। सूखने के बाद खुरच कर इसे प्रयोग करें।

लाङ्गली शुद्धिमायाति दिनं गोमूत्रसंस्थिता ॥२७३॥
(आ.प्र.)

(१०) **लाङ्गलीमूल**—एक दिन गोमूत्र से भरे भगौने में लाङ्गली को रखें और दूसरे दिन निकाल कर जल से धोकर सुखाकर रख लें। इससे लाङ्गली शुद्ध हो जाती है।

श्वेतवर्ग

शंख, शुक्ति, शम्बूक, मृगशृङ्ग, टङ्कण तथा गोदन्ती का शोधनोपरान्त प्रयोग किया जाता है।

शंख-शोधन

निम्बुकाम्लसमायुक्तवारा दोलाख्ययन्त्रके।
यामार्धं पाचितं शङ्खः शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥२७४॥
(र.त.)

निम्बूस्वरसपूरित दोलायन्त्र में १$\frac{१}{२}$ घण्टे तक स्वेदन करने से शंख शुद्ध हो जाता है।

शंखभस्म के गुण

शङ्खः सुशीतलः क्षारस्त्वम्लपित्तविनाशनः।
अग्निमान्द्यहरो बल्यो ग्राही ग्रहणिकाहरः ॥२७५॥
परिणामोत्थशूलघ्नस्तारुण्यपिडिकापहः।
विषदोषहरो वर्ण्यो मात्रा गुञ्जाद्वयोन्मिता ॥२७६॥
(र.त.)

शंख शीतल एवं क्षारीय है, अम्लपित्त, अग्निमांद्य, ग्रहणी, परिणामशूल, शूल, तारुण्यपिडिका आदि का नाश करता है। यह बल्य एवं ग्राही है, वर्ण्य एवं विषघ्न है।

शुक्ति-शोधन

अम्लेन केनचिद्वापि दोलायन्त्रेण यत्नतः।
शुक्तिकां पाचयेद्धीमान् शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥२७७॥
(र.त.)

किसी भी अम्ल द्रवपूरित दोलायन्त्र में डेढ़ घण्टे तक स्वेदन करने से शुक्ति शुद्ध हो जाती है।

शुक्ति-मारण

शुक्तिकां खण्डशः कृत्वा सम्पुटस्थां ततः पुटेत्।
हिमकुन्देन्दुसङ्काशां शुक्तेर्भूतिं समाहरेत् ॥२७८॥
(र.त.)

शुद्ध शुक्ति के टुकड़े करके शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। पुनः स्वाङ्गशीत होने पर शुक्ति को सूक्ष्मतया पीसकर महीन छननी से छान कर घृतकुमारी स्वरस की भावना दें। तत्पश्चात् टिकिया बनावें तथा शरावसम्पुट कर गजपुट में पुनः पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर कुन्द पुष्प या चन्द्रमा जैसी श्वेत भस्म संग्रहीत करें।

ऐसे ही शंख, शम्बूक एवं गोदन्ती की भस्म भी करें।

शुक्तिभस्म के गुण

शुक्तिका शूलशमनी हृदामयविनाशिनी।
स्निग्धा रुच्या श्वासहरा दीपनी मधुरा मता ॥२७९॥
इष्टिकावर्णसङ्काशां नाशयेन्मूत्रशर्कराम्।
प्लीहानं नाशयेत्याशु तथा च जठरामयान् ॥२८०॥
(र.त.)

शुक्तिभस्म शूल, हृद्रोग, श्वास, उदररोग, प्लीहा तथा मूत्रशर्करा रोगनाशक है। यह दीपन, पाचन, रुचिकर, स्निग्ध एवं मधुर है।

शम्बूक-शोधन

अम्लेन केनचिद्वापि कामं स्थालीगतं पचेत्।
यामार्द्धेनैव शम्बूकः शुद्धिमायात्यनुत्तमाम्।
शंखवन्मारणं त्वस्य करणीयं भिषग्वरैः ॥२८१॥
(र.त.)

किसी भी अम्ल द्रवपूरित स्थालीयन्त्र में १$\frac{१}{२}$ (डेढ़) घण्टे तक स्वेदन करने से शम्बूक शुद्ध हो जाता है। इसका मारण शंख जैसा करना चाहिए।

शम्बूक भस्म के गुण

क्षुद्रशङ्खस्तु शूलघ्नो नेत्रामयनिषूदनः।
रक्तातिसारशमनो दीपनः पाचनस्तथा ॥२८२॥
(र.त.)

घोंघा भस्म शूल, नेत्ररोग एवं रक्तातिसार नाशक है तथा दीपन एवं पाचन है।

गोदन्ती-शोधन

गोदन्तं निम्बुनीरेण द्रोणपुष्पीरसेन वा।
यामार्द्धेनैव सुस्विन्नं विशुध्यति न संशयः ॥२८३॥
(र.त.)

निम्बूस्वरस या द्रोणपुष्पीस्वरस पूरित स्थालीयन्त्र में डेढ़ घण्टे तक स्वेदन करने से गोदन्ती शुद्ध हो जाती है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गोदन्ती-मारण

शरावसम्पुटान्तस्थं गोदन्तं सुविशोधितम्।
म्रियते पुटितं भस्म जायते शशिसुन्दरम् ॥२८४॥
(र.त.)

शुद्ध गोदन्ती के टुकड़ों को शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करने से गोदन्ती की सुन्दर श्वेत भस्म बनती है। ज्वरघ्न द्रव्यों को क्वाथ की भावना दे-देकर ३-४ पुट देने से ज्वरघ्न गुण में वृद्धि होती है।

गोदन्ती भस्म के गुण

गोदन्तं सुमृतं शीतं पित्तज्वरनिषूदनम्।
जीर्णज्वरहरं बल्यं दीपनं श्वासकासनुत् ॥२८५॥
(र.त.)

गोदन्ती भस्म शीत है, पित्तज्वर एवं जीर्णज्वर नाशक है, बल्य है, दीपन है तथा श्वास-कासनाशक है।

टंकण

(Borax : $Na_2 B_4O_7 10H_2O$)

टंकण के प्रमुख पर्याय—टङ्क, टङ्कण, द्रावक, रङ्गक्षार, लोहशोधन, रंगद, सौभाग्य, क्षारराज तथा लोहद्रावी।

परिचय—प्राचीन संहिताओं (चरक-सुश्रुत) में अनेक स्थानों पर चिकित्सार्थ टंकण का प्रयोग हुआ है। कल्याणकारक एवं गदनिग्रह में टङ्कण के अनेक योग उपलब्ध हैं। क्षारतन्त्र में टंकण का विशेष महत्त्व है। रसशास्त्र में विष के प्रतिविष (Antidote) रूप में टंकण का सर्वत्र प्रयोग मिलता है। यह खनिजों द्वारा साफ कर कृत्रिम रूप में बनाया जाता है। खनिजों मे Boron मुख्य है।

टंकण का शोधन

सुचूर्णितं टङ्कणं तु खलु पञ्चपलोन्मितम्।
समुज्ज्वलोदरे क्षुद्रकटाहे विन्यसेत्ततः ॥२८६॥
चुल्लिकायां निधायाथ पचेद्दर्व्या प्रचालयन्।
सुपुष्पितं नष्टनीरं शुद्धिमायाति टंकणम् ॥२८७॥
(र.त.)

प्रज्वलित अग्नियुक्त चूल्हे पर साफ कड़ाही रख कर उसमें टंकणचूर्ण फैलावें। धीरे-धीरे उसका जल नष्ट होकर फूल जैसा श्वेत, हलका एवं ताजा जैसा हो जायेगा। यही शुद्ध टंकण है जो जल रहित हो जाता है।

शुद्ध टङ्कण के गुण

टङ्कणोऽग्निकरो रूक्षः कफघ्नो वातपित्तकृत्।
टङ्कणो वह्निकृत्स्वर्णरूप्ययोः शोधनः परः ॥
विषदोषहरो हृद्यो वातश्लेष्मविकारनुत् ॥२८८॥
(आ.प्र.)

इति भैषज्यरत्नावल्यां शोधनमारणादिप्रकरणम्।

टंकण अग्निदीपक है, रूक्ष, कफघ्न एवं वातपित्तकारक है। सोना-चाँदी का शोधक एवं द्रावक है, विषघ्न एवं हृद्य है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य शोधनमारणादिप्रकरणस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ अभावप्रकरणम् (४)

प्रतिनिधि द्रव्य-ग्रहण

कदाचिद् द्रव्यमेकं वा योगे यत्र न लभ्यते ।
तत्तद्गुणयुतं द्रव्यं परिवर्त्तेन गृह्यते ॥१॥

कदाचित् किसी औषधि योग में एक द्रव्य नहीं मिलता हो तो उस औषधि योग में उस द्रव्य के अभाव में उसी द्रव्य के समान गुण वाला अन्य द्रव्य लेना चाहिए ।

मधु यत्र न विद्येत तत्र जीर्णो गुडो मतः ।
पुरातनगुडाभावे रौद्रे यामच्चतुष्टयम् ॥२॥
संशोष्य नूतनं ग्राह्यं पुरातनगुडैषिणा ।
क्षीराभावे भवेन्मौद्गो रसो मासूर एव वा ॥३॥
सिताऽभावे च खण्डः स्याच्छाल्यभावे च षष्टिकः ।
असम्भवे च द्राक्षाया गम्भारीफलमिष्यते ॥४॥
नतं तगरमूलं स्यादभावे शिहलीजटा ।
न भवेद्दाडिमो यत्र वृक्षाम्लं तत्र दापयेत् ॥५॥
सौराष्ट्रमृदभावे च ग्राह्या पङ्कस्य पर्पटी ।
लौहाभावे तु मण्डूरं दार्व्यभावे मता निशा ॥६॥
सुवर्णरूप्ययोगस्याभावे लौहं प्रदापयेत् ।
नित्यं युञ्जातकाभावे तालमस्तकमिष्यते ॥७॥
वाराहीणामभावे तु चर्मकारालुकं मतम् ।
सामुद्रं सैन्धवाभावे विडं तु गृह्यते बुधैः ॥८॥
अभावे पृश्निपर्ण्याश्च सिंहपुच्छी विधीयते ।
कुङ्कुमस्याप्यभावेऽपि निशा ग्राह्या भिषग्वरैः ॥९॥
मुक्ताऽभावे शुक्तिचूर्णं व्रजाभावे वराटिका ।
कर्कटशृङ्गिकाऽभावे मायाऽम्बु चेष्यते बुधैः ॥१०॥
धान्यकाभावतो दद्याच्छतपुष्पां भिषग्वरः ।
मूर्वाऽभावे त्वचो ग्राह्या जिङ्गन्या ब्रुवते सदा ॥११॥
कुस्तुम्बुरु न विद्येत यत्र तत्र च धान्यकम् ।
पुष्पाभावे फलञ्चामं विड्भेदे बिल्वतः फलम् ॥१२॥
यष्ट्याह्वाभावतो विद्याच्चव्यं तस्याप्यभावतः ।
मूलं मौशलिकं देयमभावे कुटजस्य च ॥१३॥
रास्नाऽभावे च बन्दाकं जीराभावे च धान्यकम् ।
तुम्बुरूणामभावेऽपि शालिधान्यं प्रकीर्त्तितम् ॥१४॥
भल्लातकासहत्वेऽपि रक्तचन्दनमिष्यते ।
भल्लाताभावतश्चित्रं नलश्चेक्षोरभावतः ॥१५॥
मद्याभावे च शिण्डाकी शुक्ताभावे च काञ्जिकम् ।
चित्रकाभावतो दन्ती क्षारः शिखरिजोऽथवा ॥१६॥
अभावे धन्वयासस्य प्रक्षेप्या तु दुरालभा ।
अहिंस्राया अभावे तु मानकन्दः प्रकीर्तितः ॥१७॥
लक्ष्मणाया अभावे तु नीलकण्ठशिखा मता ।
बकुलाभावतो देयं कह्लारोत्पलपङ्कजम् ॥१८॥
जातीपुष्पं न यत्रास्ति लवङ्गं तत्र दीयते ।
अर्कपर्णादिपयसो ह्यभावे तद्रसो मतः ॥१९॥
पुष्कराभावतः कुष्ठं ततो लाङ्गल्यभावतः ।
स्थौणेयकस्याभावे तु भिषग्भिर्दीयते गदः ॥२०॥
कुङ्कुमाभावतो देयं कुसुम्भकुसुमं नवम् ।
श्रीखण्डचन्दनाभावे कर्पूरं देयमिष्यते ॥२१॥
अभावे त्वेतयोर्वैद्यः प्रक्षिपेद् रक्तचन्दनम् ।
रक्तचन्दनकाभावे नवोशीरं विदुर्बुधाः ॥२२॥
मुस्ता चातिविषाऽभावे शिवाऽभावे शिवा मता ।
अभावे नागपुष्पस्य पद्मकेशरमिष्यते ॥२३॥
मेदाऽभावेऽश्वगन्धा स्याद् महामेदे तु शारिवा ।
जीवकर्षभकाभावे गुडूची वंशलोचना ॥२४॥
ऋद्ध्यभावे बला ग्राह्या वृद्ध्यभावे महाबला ।
काकोलीयुगलाभावे निक्षिपेच्च शतावरीम् ॥२५॥
सुवर्णाभावतः स्वर्णं माक्षिकं प्रक्षिपेद् बुधः ।
श्वेतं तु माक्षिकं ज्ञेयं बुधै रजतवत् स्मृतम् ।
माक्षिकस्याप्यभावे तु प्रदद्यात् स्वर्णगैरिकम् ॥२६॥
मस्त्स्यण्ड्यभावतो दद्युर्भिषजः सितशर्कराम् ।
तालीशपत्रकाभावे स्वर्णताली प्रशस्यते ॥२७॥
भार्ग्यभावे तु तालीशं कण्टकारीजटाऽथवा ।
रुचकाभावतो दद्याल्लवणं पांशुपूर्वकम् ॥२८॥
अभावे मधुयष्ट्यास्तु धातकीं च प्रयोजयेत् ।
अम्लवेतसकाभावे चुक्रं दातव्यमिष्यते ॥२९॥
द्राक्षा यदि न लभ्येत प्रदेयं काश्मरीफलम् ।
तयोरभावे कुसुमं बन्धूकस्य मतं बुधैः ॥३०॥
लवङ्गकुसुमं देयं नखस्याभावतः पुनः ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कस्तूर्यभावे कक्कोलं क्षेपणीयं विदुर्बुधाः॥३१॥
कक्कोलस्याप्यभावे तु जातिपुष्पं प्रदीयते।
सुगन्धिमुस्तकं देयं कर्पूराभावतो बुधैः॥३२॥
कर्पूराभावतो देयं ग्रन्थिपर्णं विशेषतः।
कस्तूरीणामभावे तु ग्राह्या गन्धशटी बुधैः।
अभावे कोकिलाक्षस्य गौक्षुरं बीजमिष्यते॥३३॥
अन्तःसंमार्जने ज्ञेयाऽजमोदा तु यवानिका।
बहिःसंमार्जने सैव विज्ञातव्याऽजमोदिका॥३४॥

१. मधु के अभाव में पुराना गुड़ लेना चाहिए।
२. पुराना गुड़ के अभाव में नया गुड़ को १२ घण्टे तक धूप में रख कर व्यवहार करें।
३. दूध के अभाव में मूँग या मसूर यूष।
४. चीनी के अभाव में मिश्री (Candy)।
५. शालिधान के अभाव में साठी का चावल।
६. द्राक्षा (मुनक्का) के अभाव में गम्भारी फल।
७. तगरमूल (नत) के अभाव में शिहलीमूल।
८. दाडिम के अभाव में वृक्षाम्ल।
९. सौराष्ट्र देश की मिट्टी के अभाव में पङ्क की पपड़ी।
१०. लोहा के अभाव में मण्डूर।
११. दारुहल्दी के अभाव में हल्दी।
१२. सोना-चाँदी के अभाव में लोहा।
१३. मुञ्जातक (मूँज) के अभाव में तालमस्तक।
१४. वाराहीकन्द के अभाव में चर्मकालू।
१५. सामुद्र-सैन्धव लवण के अभाव में विडलवण।
१६. पृश्निपर्णी के अभाव में शालपर्णी।
१७. केशर के अभाव में हल्दी।
१८. मुक्ता (मोती) के अभाव में शुक्तिचूर्ण।
१९. हीरा के अभाव में कौड़ी।
२०. काकड़ासिंगी के अभाव में मायाम्बु का फल।
२१. धनियाँ के अभाव में सौंफ।
२२. मूर्वा के अभाव में मंजीठ की छाल।
२३. नेपाली धनियाँ के अभाव में धनियाँ।
२४. फूल के अभाव में कच्चाफल, अतिसार में कच्चा बेलफल लेना चाहिए।
२५. मुलेठी के अभाव में चव्य।
२६. चव्य के अभाव में मुशली।
२७. कुटजत्वक् के अभाव में मुशली की जड़।
२८. रास्ना के अभाव में किसी भी वृक्ष का बाँदा।
२९. जीरा के अभाव में धनियाँ।
३०. तुम्बुरु के अभाव में शालिधान।
३१. भिलावा असह्य होने पर लालचन्दन।
३२. भिलावा के अभाव में लाल चित्रकमूल।
३३. ईख के अभाव में नरसल (नल)।
३४. मद्य के अभाव में शिण्डाकी।
३५. शुक्त के अभाव में काञ्जी।
३६. चित्रकमूल के अभाव में दन्तीमूल या अपामार्गक्षार।
३७. धन्वयास के अभाव में दुरालभा।
३८. अहिंस्रा के अभाव में मानकन्द।
३९. लक्ष्मणा के अभाव में मयूरशिखा।
४०. मौलसरी के अभाव में लाल या नील कमल।
४१. जावित्री के अभाव में लौंग।
४२. आक के दुग्ध के अभाव में अर्कपत्र का रस।
४३. पुष्करमूल के अभाव में कूठ।
४४. लाङ्गली के अभाव में कूठ।
४५. स्थौणेयक के अभाव में कूठ।
४६. केशर के अभाव में कुसुम्भफूल (बर्रेफूल) नया।
४७. श्वेतचन्दन के अभाव में कपूर।
४८. श्वेतचन्दन एवं कपूर के अभाव में रक्तचन्दन।
४९. रक्तचन्दन के अभाव में नया खस।
५०. अतीस के अभाव में नागरमोथा॥
५१. हर्रे के अभाव में आमला।
५२. नागकेशर के अभाव में कमल पुष्पकेशर।
५३. मेदा के अभाव में अश्वगन्धा।
५४. महामेदा के अभाव में अनन्तमूल।
५५. जीवक के अभाव में गुडूची।
५६. ऋषभक के अभाव में वंशलोचन।
५७. ऋद्धि के अभाव में बलामूल।
५८. वृद्धि के अभाव में महाबला।
५९. काकोली-क्षीरकाकोली के अभाव में शतावरी।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६०. स्वर्ण के अभाव में सुवर्णमाक्षिक।

६१. स्वर्णमाक्षिक के अभाव में स्वर्णगैरिक।

६२. मत्स्यण्डिका (शक्कर) के अभाव में चीनी।

६३. तालीशपत्र के अभाव में स्वर्णताली।

६४. भार्गी के अभाव में तालीशपत्र या कण्टकारीमूल।

६५. काला नमक के अभाव में पांशुलवण।

६६. मुलेठी के अभाव में धातकी पुष्प।

६७. अम्लवेतस के अभाव में चुक्र।

६८. द्राक्षा के अभाव में गम्भारी फल।

६९. गम्भारी फल के अभाव में बन्धूक फूल।

७०. नख के अभाव में लौंग।

७१. कस्तूरी के अभाव में शीतलचीनी एवं सुगन्धकचूर।

७२. शीतलचीनी के अभाव में जावित्री।

७३. कपूर के अभाव में सुगन्धमुस्तक, गठिवन।

७४. तालमखाना के अभाव में गोक्षुरबीज।

७५. अजमोदा (अन्तःसम्माजनार्थ) के अभाव में अजवायन।

७६. बाह्यप्रयोगार्थ अजमोदा लें।

यत्र यद्द्रव्यमप्राप्तं भेषजे परपूर्वतः।
ग्राह्यं तद्गुणसाम्यात्तु न तत्र क्वापि दूषणम् ॥३५॥
रसवीर्यविपाकाद्यैः समं द्रव्यं विचिन्त्य च।
युञ्ज्यात्तद्विधमन्यच्च द्रव्याणां च रसादिकम् ॥३६॥
अभावे रसभूत्याश्च सिन्दूरं रसपूर्वकम्।
कान्ताभावे तीक्ष्णलोहं योजयेद्वैद्यसत्तमः ॥३७॥
वैदूर्यादीनि रत्नानि न लभ्यन्तेऽत्र धीमता।
तत्र मुक्ताऽऽदिभूतिं च योजयेत्तु भिषग्वरः ॥३८॥
अभावात् पौष्करे मूले कुष्ठं सर्वत्र गृह्यते।
चविकागजपिप्पल्यौ पिप्वलीमूलवत् स्मृते ॥३९॥
कुठेरिकायाश्चाभावे तुलसीं तत्र योजयेत्।
पुनर्नवायाश्चाभावे रक्ता सा च प्रकीर्तिता ॥४०॥
रसाञ्जनस्य चाप्राप्तौ दार्वीक्वाथं प्रयोजयेत्।
नीलोत्पलस्याभावे तु कुमुदं तत्र दीयते ॥४१॥
सिद्धार्थकस्याभावे तु सामान्यः सर्षपो मतः।
गोक्षीराभावतश्छागं पयः सर्वत्र दीयते ॥४२॥
गोघृतस्याप्यभावे तु चाजं सर्वत्र दीयते।
अलाभे यच्च तद्द्रव्यं प्रत्याम्नायेन योजयेत् ॥४३॥
योगे यदप्रधानं स्यात्तस्य प्रतिनिधिर्मतः।
यत्तु प्रधानं तस्यापि सदृशं नैव गृह्यते ॥४४॥

जिस योग में जो द्रव्य प्राप्त नहीं होवे तो उस औषधि योग में उसी द्रव्य के समान गुणवाला पूर्ववर्त्ती या परवर्त्ती द्रव्य लेने में कोई हानि नहीं है। अर्थात् जिस प्रकार पुनर्नवादि मण्डूर में यदि दन्ती या चव्य नहीं उपलब्ध हो तो पूर्ववर्त्ती द्रव्य पुनर्नवा या परवर्ती द्रव्य नागरमोथा लेना बुद्धिमानी है। किसी योग में कोई द्रव्य नहीं उपलब्ध हो रहा है तो रस-गुण-वीर्य एवं विपाक को ध्यान में रखकर तत्समान रस-गुण-वीर्य-विपाक वाला द्रव्य देना अधिक अच्छा है।

७७. पारदभस्म के अभाव में रससिन्दूर।

७८. कान्तलौहभस्म के अभाव में तीक्ष्ण लौहभस्म।

७९. वैदूर्यादि रत्नों के भस्म के अभाव में मुक्ताभस्म।

८०. पुष्करमूल के अभाव में कुष्ठ लें।

८१. चव्य एवं गजपीपर के अभाव में पिपरामूल।

८२. कुठेरिका के अभाव में तुलसी।

८३. श्वेतपुनर्नवा के अभाव में रक्तपुनर्नवा।

८४. रसाञ्जन के अभाव में दारुहल्दीक्वाथ।

८५. नीलकमल के अभाव में कुमुद (रात्रि में विकसित होने वाला श्वेत पुष्प)।

८६. सफेद सरसों के अभाव में सामान्य पीला या लाल सरसों।

८७. गोदुग्ध के अभाव में बकरी का दूध।

८८. गोघृत के अभाव में बकरी का घी।

इन अभाव द्रव्यों के नहीं मिलने पर मूल द्रव्य को लेना चाहिए। औषध योगों के अन्दर कहे गये अप्रधान द्रव्यों के अभाव में उस योग का कोई भी द्रव्य लेना चाहिए। प्रधान द्रव्य के अभाव में कोई अन्य द्रव्य नहीं चलेगा। जैसे—च्यवन-प्राशावलेह का मुख्य द्रव्य आमला है। अतः आमला का अभाव नहीं चलेगा, आमला ही लेना चाहिए।

योगों में द्रव्य लेने का नियम

उक्ते चन्दनशब्दे तु गृह्यते रक्तचन्दनम् ॥४५॥
चूर्णस्नेहासवा लेहाः साध्या धवलचन्दनैः।
कषायलेपयोः प्रायो युज्यते रक्तचन्दनम् ॥४६॥
लवणे सैन्धवं विद्याद् मूत्रे गोमूत्रमुच्यते।
शकृद्रसपयःसर्पिःप्रयोगे गव्यमिष्यते ॥४७॥
पात्रोक्तौ चापि मृत्पात्रमुत्पले नीलमुत्पलम्।
सिद्धार्थः सर्षपे ग्राह्यः क्षारोक्तौ यावशूकजम् ॥४८॥

चन्दन शब्द से रक्तचन्दन लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चूर्ण, स्नेह, आसव, लेह को श्वेतचन्दन से सिद्ध करना चाहिए।

क्वाथ, लेप को रक्तचन्दन से सिद्ध करना चाहिए।

लवण कहने पर सैन्धव लवण लें।

मूत्र कहने पर गोमूत्र लें।

शकृद्रस (गोबर रस), दूध, घी कहने पर गाय का गोबररस, दूध, गोघृत लें।

पात्र कहने पर मृत्पात्र लें।

कमल कहने पर नीलकमल लें।

सरसों कहने पर सिद्धार्थ (श्वेत सरसों) लें।

क्षार कहने पर यवक्षार लें।

वनस्पतिओं के अंगग्रहण का नियम

सारः स्यात् खदिरादीनां निम्बादीनां त्वचस्तथा।
फलन्तु दाडिमादीनां पटोलादेश्छदस्तथा ॥४९॥
फलप्रधानवृक्षाणां फलं सर्वत्र गृह्यते ॥५०॥
रक्तचित्रकमूलं तु सर्वत्रैव प्रयोजयेत्।
मांसलत्वात्सुतीक्ष्णत्वादभावादन्यचित्रकम् ॥५१॥

खदिर आदि वृक्षों का सारभाग अर्थात् मध्य भाग की लकड़ी लें।

निम्ब, गूलर, पीपल, वट आदि वृक्षों की छाल लेना चाहिए।

दाडिम आदि का फल लेना चाहिए।

पटोल आदि का पत्र लेना चाहिए।

फल-प्रधान वृक्षों के फल सर्वत्र लेना चाहिए।

रक्तचित्रक मूल ही सर्वत्र लेना चाहिए। क्योंकि वह मोटा, मांसल एवं तीक्ष्ण होता है। अभाव में श्वेत चित्रकमूल लें।

महान्ति यानि मूलानि काष्ठगर्भाणि यानि च।
तेषान्तु वल्कलं ग्राह्यं ह्रस्वमूलानि कृत्स्नशः ॥५२॥

जो वनस्पतियाँ बड़ी हों, जिनके मूल बड़े हों, जिनमें लकड़ी भाग अधिक है उनका मूल एवं त्वचा लें और छोटी क्षुपों वाली वनस्पतियाँ जिनका मूल छोटा हो उन्हें सम्पूर्ण अर्थात् पञ्चाङ्ग ग्रहण करना चाहिए।

तैल-घृत के लिए मांसग्रहण का नियम

स्त्रियश्चतुष्पदे ग्राह्याः पुमांसो विहगे तथा।
जाङ्गलानां वयःस्थानां चर्मरोमनखादिकम् ॥५३॥
हित्वा ग्राह्यं पूतमांसं सास्थिकं खण्डशः कृतम्।
पक्तव्यमाजमांसं च विधिना घृततैलयोः।
हित्वा स्त्रीं पुरुषं चापि क्लीबं तत्रापि दापयेत् ॥५४॥

मांसग्रहण में चार पैर के पशुओं में स्त्री जाति का, पक्षियों में पुरुष जाति का मांस लेना चाहिए। जाङ्गलदेशीय युवा पशुओं का चर्म, रोम, नखादि से रहित केवल मांस लेकर अस्थि सहित छोटे-छोटे टुकड़े कर इस मांस के साथ घृत और तैल पाक करें। इन स्त्री-पुरुष जाति का विचार छोड़ कर नपुंसक बकरे का मांस लेना चाहिए।

मांसग्रहण करने योग्य पशु

बलिनं च वयःस्थं च सुवीर्यं च सुदेहिनम्।
न वृद्धं च न बालं च अवीर्यस्त्रावशोणितम् ॥५५॥

जो पशु बलवान् हो, युवा तथा वीर्यवान् हो, जिनका शरीर सुन्दर एवं सुपुष्ट हो, जो वृद्ध न हो, बालक न हो, वीर्यरहित न हो और जिनका रक्त नहीं निकाला गया हो, ऐसे पशुओं का मांस ग्रहण करना चाहिए।

शृगालबर्हिणोः पाके पुमांसं तत्र दापयेत्।
मयूरी जम्बुकी छागी वीर्यहीना स्वभावतः ॥

सियार और मयूर का मांस जहाँ ग्रहण करना हो वहाँ पुरुष जाति का मांस ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि मयूरी, सियारिन तथा बकरी स्वभाव से ही हीनवीर्य की होती है।

काशीराजमतेनैव छागमेव नपुंसकम्।
अपवादाद् प्रतीक्षाद्वा वृद्धवैद्योपदेशतः ॥
वन्ध्या छागी विपक्तव्या न तु शास्त्रमतं चरेत् ॥

काशीराज के मत से सिर्फ छाग ही नपुंसक (वधिया) लें। उचित समय पर नपुंसक छाग न मिलने पर उस समय शास्त्र वचन त्याग कर वृद्ध एवं वैद्यों के परामर्श के अनुसार वन्ध्या छागी (बकरी जो ब्यायी नहीं हो) का मांस लेना चाहिए।

मूत्र ग्रहण का सिद्धान्त

स्त्रीणां मूत्रं गवां ग्राह्यं न तु पुंसां विधीयते।
पित्तात्मिकाः स्त्रियो यस्मात् सौम्यास्ते पुरुषा मताः ॥५६॥

गोमूत्र से गाय का ही मूत्र लेना चाहिए न कि बैल का मूत्र ग्रहण करें। स्त्रियाँ पित्तात्मिका (पितप्रधान) होती हैं और पुरुष सौम्य होते हैं। गोमूत्र तीक्ष्ण होना चाहिए।

दूध, मूत्र एव पुरीष ग्रहण का समय

क्षीरमूत्रपुरीषाणि जीर्णाहारे तु संहरेत् ॥५७॥

पशुओं के आहार जीर्ण होने के बाद दूध, मूत्र और गोबर ग्रहण करें।

अनुक्त द्रव्यग्रहण-निर्देश

द्रवेऽनुक्ते जलं ग्राह्यं भागेऽनुक्तेऽखिलं समम्।
उक्ते च कालसामान्ये ज्ञेयं तत्र त्वहर्मुखम् ॥५८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जिस औषधिपाक (तैल-घृत-भावना आदि) में द्रव (जलीय) पदार्थ का उल्लेख न हो तो ऐसे सभी स्थानों पर द्रव से जल लेना चाहिए। जहाँ समय का पूरा उल्लेख न हो तो ऐसे स्थान पर काल से प्रातःकाल समझना चाहिए। अहर्मुख = प्रातःकाल।

ऋतु-विशेष में द्रव्यग्रहण-निर्देश

मूलानि शिशिरे ग्रीष्मे पत्रं वर्षावसन्तयोः।
कन्दानि शरदि क्षीरं यथर्तु कुसुमं फलम्॥
हेमन्ते सारमोषध्या गृह्णीयात् कुशलो भिषक् ॥५९॥

शिशिर तथा ग्रीष्म ऋतु में वनस्पतिओं की जड़ (मूल) ग्रहण करें।

वर्षा एवं वसन्त ऋतु में वनस्पतियों के पत्र लें।

शरद् ऋतु में वनस्पतियों के कन्द ग्रहण करें। जिन ऋतुओं में वनस्पतियों में पुष्प, फल एवं दूध प्राप्त हों उन्हें उसी ऋतु में लेना चाहिए। हेमन्त ऋतु में वनस्पतियों के सारभाग (यथा— खदिर-बबूल-असन-साल-गुडूची) का ग्रहण बुद्धिमान् वैद्य को करना चाहिए।

नये द्रव्यौषधि का महत्त्व

द्रव्याण्यभिनवान्येव प्रशस्तानि क्रियाविधौ।
ऋते गुडघृतक्षौद्रधान्यकृष्णाविडङ्गतः ॥६०॥

चूर्ण, क्वाथ, अवलेह, आसवारिष्ट, वटी आदि औषधियों के निर्माण में हमेशा ही नई एवं प्रशस्त क्षेत्र की औषधियाँ लेनी चाहिए। किन्तु गुड़, घृत, मधु, धनियाँ, पिप्पली और वायविडङ्ग हमेशा पुराना ही लेना चाहिए।

भावना-प्रकार

दिवा दिवाऽऽतपे शुष्कं रात्रौ रात्रौ निवासयेत्।
शुष्कं चूर्णीकृतं द्रव्यं सप्ताहं भावनाविधिः ॥६१॥

जिन औषधियों (चूर्णादि वटी) में भावना के समय का निर्देश नहीं हो, वहाँ एक सप्ताह तक भावना देनी चाहिए। जल, क्वाथ, स्वरसादि की भावना देकर धूप में मर्दन कर सुखा लें और रात्रि में उस खरल को ढक कर रख दें, पुनः दूसरे दिन धूप में बैठकर भावना दें। इसी प्रकार एक सप्ताह तक भावना देनी चाहिए।

भावना-विधान

द्रवेण यावता द्रव्यमेकीभूयार्द्रतां व्रजेत्।
द्रवप्रमाणं निर्दिष्टं भिषग्भिर्भावनाविधौ ॥६२॥

जिस चूर्णादि द्रव्य को भावित करना हो उसे खरल में रखकर उतना ही स्वरस, क्वाथ, जलादि द्रव डालना चाहिए जितने द्रव में उक्त चूर्ण गीला एवं लपसी जैसा बन जाय। इतना भावनार्थ द्रव लेने का वैद्यों द्वारा विधान कहा गया है।

भावनार्थ क्वाथ-निर्माणविधि

भाव्यद्रव्यसमं क्वाथ्यं क्वाथ्यादष्टगुणं जलम्।
अष्टांशशेषितः क्वाथो भाव्यानां तेन भावना ॥६३॥

भाव्य द्रव्य (जिसमें भावना देनी है अर्थात् चूर्णादि) के बराबर क्वाथ्य द्रव्य (क्वाथ करने वाला द्रव्य) लेना चाहिए और आठ गुना जल में रात्रिपर्यन्त भिंगाकर क्वाथ करें, अष्टमांशावशेष रहने पर उक्त क्वाथ को छान लेना चाहिए। इसी क्वाथ से भावना देने वाले द्रव्य (चूर्णादि) में भावना देनी चाहिए।

पञ्चकषाय-वर्णन (शार्ङ्ग०)

अथात्र स्वरसः कल्कः क्वाथश्च हिमफाण्टकौ।
ज्ञेयाः कषायाः पञ्चैते लघवः स्युर्यथोत्तरम् ॥६४॥

स्वरस, कल्क, क्वाथ, हिम और फाण्ट—ये पाँच कषाय होते हैं और ये उत्तरोत्तर लघु होते हैं।

स्वरस-निर्माणविधि (शार्ङ्ग०)

अहतात्तत्क्षणाकृष्टाद् द्रव्यात्क्षुण्णात्समुद्भवः।
वस्त्रनिष्पीडितो यः स्याद् रसः स्वरस उच्यते ॥६५॥

कृमि आदि से खाये नहीं गये हों, तुरन्त के उखाड़े गये हों— ऐसे द्रव्यों को मिट्टी आदि झाड़ कर जल से अच्छी तरह से धोकर सिल पर पीस कर वस्त्र से निचोड़ने पर जो रस निकलता है उसे स्वरस कहते हैं।

सूखे द्रव्य का स्वरस निकालना (शार्ङ्ग०)

कुडवं चूर्णितं द्रव्यं क्षिप्तं च द्विगुणे जले।
अहोरात्रं स्थितं तस्माद्भवेद्वा रस उत्तमः ॥६६॥

१ कुडव चूर्णित द्रव्य को दुगुने जल में एक पात्र में रख कर रात-दिन रखें। दूसरे दिन हाथ से मसल कर कपड़े से रस छान लें। यह रस उत्तम होता है।

स्वरस के अभाव में क्वाथ-विधि (शार्ङ्ग०)

आदाय शुष्कं द्रव्यं वा स्वरसानामसम्भवे।
जलेऽष्टगुणिते साध्यं पादशेषञ्च गृह्यते ॥६७॥

स्वरस के अभाव में सूखे द्रव्य को यवकुट कर एक भगौने में रात्रि पर्यन्त रखें। सुबह क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें। यह स्वरस के अभाव में स्वरस हैं।

पुटपाकविधि-स्वरस (शार्ङ्ग०)

पुटपाकस्य मात्रेयं लेपस्याङ्गारवर्णता।
लेपञ्च द्व्यङ्गुलं स्थूलं कुर्यादङ्गुष्ठमात्रकम् ॥६८॥

जिन ताजे पत्रों से स्वरस नहीं निकलता है उन ताजे (नीम के

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पत्ते, बेल के पत्ते, वासा आदि के पत्ते) को कूटकर बट आदि के पत्ते में लपेट कर धागे से बाँध दें और उस पर १ या २ अँगुल चिकनी मिट्टी का लेप कर धूप में सुखा लें। ततः प्रज्वलित आग में डालकर पाक करें। जब मिट्टी लाल हो जाय तो उससे तुरन्त मिट्टी आदि हटाकर वटपत्र में रखे ताजे द्रव्यों के गरम कल्क को कपड़ा पर रख कर रस निचोड़ लें। यही पुटपाक विधि से प्राप्त स्वरस है।

कल्कविधि (शार्ङ्ग०)

द्रव्यमार्द्रं शिलापिष्टं शुष्कं वा सजलं भवेत्।
प्रक्षेपावापकल्कास्ते तन्मात्रा कर्षसंमिता ॥६९॥

गीले (ताजे) द्रव्य को धोकर कूटकर शिला पर पिस लें या सूखे द्रव्य को पहले इमामदस्ते में कूटकर चूर्ण कर लें, ततः जल देकर सिल पर पीस लें और कल्क बना लें। इसे प्रक्षेप, आवाप और कल्क कहते हैं। इसकी मात्रा १२ ग्राम की है।

कल्क में मधु-घृतादि की मात्रा (शार्ङ्ग०)

कल्के मधु घृतं तैलं देयं द्विगुणमात्रया।
सितां गुडसमां दद्याद् द्रवा देयाश्चतुर्गुणाः ॥७०॥

कल्क में मधु, घृत एवं तैल कल्क से दुगुना दें, तथा चीनी गुड़ कल्क के बराबर दें और कोई द्रव मिलाना हो तो कल्क से चौगुना देना चाहिए।

क्वाथ-विधि (शार्ङ्ग०)

पानीयं षोडशगुणं क्षुण्णे द्रव्यपले क्षिपेत्।
मृत्पात्रे क्वाथयेद् ग्राह्यमष्टभागावशेषितम् ॥७१॥

१ से ४ तोले द्रव्य को यवकुट कर एक पात्र में १६ गुना पानी के साथ रात्रिपर्यन्त भिगावे। सुबह मन्दाग्नि पर क्वाथ कर आठवाँ अंश शेष रहने पर छान कर प्रयोग करें।

क्वाथ में चीनी आदि की मात्रा

क्वाथे क्षिपेत् सितामंशैश्चतुर्थाष्टमषोडशैः।
वातपित्तकफातङ्के विपरीतं मधु स्मृतम् ॥७२॥

वात, पित्त एवं कफ की व्याधियों में क्रमशः क्वाथ का चौथाई, आठवाँ तथा १६वाँ भाग चीनी मिलावें तथा मधु यदि मिलाना हो तो इसके विपरीत अर्थात् कफ-पित्त-वात में चौथाई, अष्टमांश एवं षोडशांश दें।

हिमकल्पना (शार्ङ्ग०)

क्षुण्णद्रव्यपलं सम्यक् षड्भिर्नीरपलैः प्लुतम्।
निशोषितं हिमः स स्यात्तथा शीतकषायकः ॥७३॥

कूटे हुए सूखे १ पल (४६ डे.ली.) द्रव्य में ६ गुना जल को एक मिट्टी के पात्र में रात्रिपर्यन्त खुले आसमान में रखें और प्रातः सूर्योदय के पूर्व हाथ से मसलकर छान लें। यही हिमकषाय है, इसे ही शीतकषाय भी कहते हैं।

फाण्टकषायकल्पना (शार्ङ्ग०)

क्षुण्णद्रव्यपले सम्यग् जलमुष्णं विनिक्षिपेत्।
मृत्पात्रे कुडवोन्मानं ततस्तु स्त्रावयेत् पटात् ॥७४॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामभावप्रकरणम्।

४ तोला सूखे द्रव्य को यवकुट करें और एक मिट्टी के पात्र में उबलते चौगुने जल में डालकर तुरन्त उतार कर कुछ देर ढ़क दें। थोड़ी देर बाद कपड़े से छानकर मिश्री या मधु आदि मिलाकर पीने को दें। यथा—पञ्चकोल फाण्ट।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य अभावप्रकरणस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ ज्वराधिकारः (५)

यतः समस्तरोगाणां ज्वरो राजेति विश्रुतः।
अतो ज्वरचिकित्साऽत्र प्रथमं लिख्यते मया ॥१॥

ऐसी प्रसिद्धि है कि ज्वर सभी रोगों का राजा है। अतः मैं रोगों की चिकित्सा का वर्णन करते समय सर्वप्रथम ज्वर की चिकित्सा यहाँ पर लिख रहा हूँ।

विमर्श—महर्षि सुश्रुत ने पहले ही ऐसा कहा है। यथा—

जन्मादौ निधने चैव प्रायो विशति देहिनम्।
अतः सर्वविकाराणामयं राजा प्रकीर्त्तितः ॥
(सु.उ. ३९।१०)

महर्षि अग्निवेश ने भी ज्वर के लिए ऐसा ही कहा है। यथा—

देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो बली।
ज्वरः प्रधानरोगाणामुक्तो भगवता पुरा ॥
(च.चि. ३।४)

अपि च—

ज्वरप्रभावो जन्मादौ निधने च महत्तमः।
(च.चि. ३।२६)

ज्वर के पूर्वरूप में कृत्य

पूर्वरूपे प्रयुञ्जीत ज्वरस्य लघुभोजनम्।
लङ्घनं च यथादोषं विरेकं—

ज्वर के पूर्वरूप की शंका होने पर साधारणतया दोषों का लाघव समझकर लघु भोजन तथा दोषों का गौरव समझकर लंघन एवं विरेचन करायें।

विमर्श—संहिताओं में ज्वर का पूर्वरूप महर्षियों ने इस प्रकार बतलाया है। यथा—

आलस्यं नयनं सास्रे जृम्भणं गौरवं क्लमः।
ज्वलनातपवाय्वम्बुभक्तिद्वेषावनिश्चितौ ॥
अविपाकास्य वैरस्ये हानिश्च बलवर्णयोः।
शीलवैकृतमल्पं च ज्वरलक्षणमग्रजम् ॥
(च.चि. ३।२८-२९)

अपि च—

श्रमोऽरतिर्विवर्णत्वं वैरस्यं नयनप्लवः।
इच्छाद्वेषौ मुहुश्चापि शीतवातातपादिषु॥
जृम्भाङ्गमर्दो गुरुता रोमहर्षोऽरुचिस्तमः।
अप्रहर्षश्च शीतश्च भवत्युत्पस्यति ज्वरे॥
(सु.उ. २९।२५-२६)

ज्वरलक्षणं यथा—

स्वेदावरोधः सन्तापः सर्वाङ्गग्रहणं तथा।
विकारा युगपद्यस्मिन् स ज्वरः परिकीर्त्तितः ॥
(सु.उ.३९)

इस तरह ज्वर की पूर्वावस्था में लघु भोजन, खिचड़ी, रोटी आदि अल्प मात्रा में देना चाहिए। ज्वर की अभिव्यक्ति होने पर उपवास एवं पाचन द्रव्य देना चाहिए।

दोषानुसार ज्वरोपक्रम

— वातिके पुनः ॥२॥
पाययेत् सर्पिरेवाच्छं पैत्तिके तु विरेचनम्।
मृदु प्रच्छर्दनं तद्वत् कफजे तु विधीयते ॥
द्वन्द्वजेषु द्वयं कुर्याद् बुद्ध्वा सर्वन्तु सर्वजे ॥३॥

वातज्वर में घृतपान, पित्तज्वर में विरेचन, कफज्वर में मृदु वमन कराना चाहिए। इसी प्रकार द्वन्द्वज वातपित्तज्वर में घृतपान एवं विरेचन, कफ-पित्तज्वर में वमन तथा विरेचन, वात-कफज्वर में घृतपान तथा वमन और त्रिदोषज्वर में घृतपान, विरेचन एवं वमन दोषों का बलाबल देखकर स्वविवेकानुसार चिकित्सा करें।

नवज्वर में वर्जनीय (चरक)

नवज्वरे दिवास्वप्नस्नानाभ्यङ्गान्नमैथुनम्।
क्रोधप्रवातव्यायामकषायांश्च विवर्जयेत् ॥४॥

नवीन ज्वर में दिन में सोना, स्नान, अभ्यङ्ग (तैलादि मर्दन), भोजन, मैथुन, क्रोध, तेज हवा का सेवन, व्यायाम और कषाय रस युक्त पेय अथवा ज्वरहर क्वाथ (कषाय) का प्रयोग न करें।

नूतन ज्वर से पीड़ित व्यक्तिओं में उपर्युक्त दिवास्वापादि गर्हित कर्म करने से दोष प्रबल हो जाते हैं।

कषायपान में निषेध का कारण

कषायं यः प्रयुञ्जीत नराणां तरुणज्वरे।
स सुप्तं कृष्णसर्पन्तु कराग्रेण परामृशेत् ॥५॥

जो मूर्ख चिकित्सक तरुण ज्वर से पीड़ित ज्वरी में कषाय

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

(कषाय क्वाथ द्रव या कषायादि रसों से युक्त क्वाथ) पिलाता है, वह सोये हुए काले सर्प को मानो हाथ से छूकर जगाता है।

नव ज्वर में कषायपान का निषेध

न कषायं प्रयुञ्जीत नराणां तरुणज्वरे।
कषायेणाकुलीभूता दोषा जेतुं सुदुष्कराः॥६॥

तरुणज्वर से पीड़ित व्यक्ति को कषायपान नहीं कराना चाहिए। क्योंकि कषायपान से व्याकुल (क्रुद्ध) दोषों का बाद में शमन करना कठिन हो जाता है।

कैसे कषाय का वर्जन करना चाहिए ?

चतुर्भागावशिष्टस्तु यः षोडशगुणाम्भसा।
स कषायः कषायः स्यात् स वर्ज्यस्तरुणज्वरे॥७॥

कषाय द्रव्य १ भाग, जल १६ भाग को क्वाथ करने पर चौथाई शेष रहने वाला क्वाथ (कषाय) तरुणज्वर में प्रयोग नहीं करें ।

विमर्श—महर्षि चरक ने कषाय रस से युक्त कषायों को तरुण ज्वर में देने के लिए मना किया है । तरुणज्वर में स्तम्भनकारक कषाय का प्रयोग करने से कषाय रस द्वारा आबद्ध वातादि दोष शरीर में जड़ता कर देते हैं । अर्थात् वे दोष न तो निकल पाते हैं और न ही पच ही पाते हैं । फलतः विषम ज्वर उत्पन्न कर देते हैं । कषाय रस न केवल मलों का अवरोध करता है अपितु दोषों को भी रोक देता है । कल्पनाभेद का विचार कर कषाय का निषेध नहीं किया है अपितु कषाय रस से युक्त या कषाय-प्रधान द्रव्यों के क्वाथ (कषाय) का निषेध किया है। यथोक्तम्—

स्तम्भ्यन्ते न विपच्यन्ते कुर्वन्ति विषमज्वरम्।
दोषा बद्धाः कषायेण स्तम्भित्वात् तरुणे ज्वरे।।
न तु कल्पनमुद्दिश्य कषायः प्रतिषिध्यते।
यः कषायः कषायः स्यात्स वर्ज्यस्तरुणज्वरे।।
(च.चि. ३।१६१-१६२)

हारीत का भी एक वचन तरुणज्वरी को कषाय न देने के सम्बन्ध में मिलता है; यथा—

न कषायं प्रशंसन्ति नराणां तरुणज्वरे।
कषायेणाकुलीभूता दोषा जेतुं सुदुस्तरा।।
(हारीत)

तरुणज्वरी का पथ्य

न द्विरद्यान्न पूर्वाह्णे नाभिष्यन्दि कदाचन।
न नक्तं न गुरुप्रायं भुञ्जीत तरुणज्वरी॥८॥

तरुणज्वरी को दिन में दो बार भोजन नहीं करना चाहिए तथा पूर्वाह्ण में भी भोजन नहीं करना चाहिए। अभिष्यन्दी (दधि, कफ-वर्द्धक, गुरु) पदार्थ कभी नहीं खाना चाहिए। रात्रि में भोजन नही करें, उड़द आदि गुरु पदार्थ नहीं खाना चाहिए।

तरुणज्वर में वर्जित कर्म

परिषेकान् प्रदेहांश्च स्नानसंशोधनानि च।
दिवास्वप्नं व्यवायञ्च व्यायामं शिशिरं जलम्॥
क्रोधप्रवातभोज्यानि वर्जयेत्तरुणज्वरी॥९॥
शोषच्छर्दिमदान् मूर्च्छाभ्रमतृष्णाद्यरोचकान्।
प्राप्नोत्युपद्रवानेतान् परिषेकादिसेवनात्॥१०॥

शिर से स्नान करना, चन्दनादि लेप, स्नान, वमन-विरेचनादि द्वारा संशोधन, दिन में सोना, मैथुन, व्यायाम, शीतल जल का पान, क्रोध, पूर्वा हवा के झोंके का सेवन—इन कर्मों को तरुणज्वराक्रान्त व्यक्ति नहीं करें। उपर्युक्त परिषेकादि क्रियाओं को करने से शोष, वमन, उन्माद, मूर्च्छा, भ्रम, तृष्णा, अरुचि आदि उपद्रव होते हैं।

कुछ ज्वरों को छोड़ लंघन-चिकित्सा (चरक)

ज्वरे लङ्घनमेवादावुपदिष्टमृते ज्वरात्।
क्षयानिलभयक्रोधकामशोकश्रमोद्भवात ॥११॥

धातुक्षय के कारण, वात, भय, क्रोध, काम, शोक और श्रम के कारण उत्पन्न ज्वरों को छोड़कर अन्य सभी प्रकार के ज्वरों में वैद्य को लङ्घन कराना चाहिए।

लङ्घन का कारण (चक्रदत्त)

आमाशयस्थो हत्वाऽग्निं सामो मार्गान् पिधापयन्।
विदधाति ज्वरं दोषस्तस्माल्लङ्घनमाचरेत्॥१२॥

आमरस या आमदोष से मिश्रित आमाशयस्थित प्रकुपित वातादि दोष पाचकाग्नि को नष्ट करके अग्निमान्द्य उत्पन्न कर रसवाहि स्रोतों के मुख को बन्द कर देते हैं और ज्वर उत्पन्न कर देते हैं। अतः सामदोषों का पाचन-लङ्घन करना लाभप्रद होता है।

लङ्घन के गुण (चक्रदत्त)

अनवस्थितदोषाग्नेर्लङ्घनं दोषपाचनम्।
ज्वरघ्नं दीपनं काङ्क्षारुचिलाघवकारकम्॥१३॥

नवज्वर में दोषों एवं अग्निओं की स्थिति अपने स्थान तथा अपने प्रमाण में व्यवस्थित नहीं रहता है। अतः लङ्घन (उपवास) द्वारा दोषों का पाचन होकर अपने स्थानों में, अपने प्रमाण में व्यवस्थित कर देता है। अतः लङ्घन से ज्वर का वेग कम हो जाता है या ज्वर नष्ट हो जाता है, भोजन में रुचि होती है, अग्नि प्रदीप्त हो जाती है तथा शरीर हलका प्रतीत होता है।

लङ्घन की मर्यादा (चरक)

प्राणाविरोधिना चैनं लङ्घनेनोपपादयेत्।
बलाधिष्ठानमारोग्यं यदर्थोऽयं क्रियाक्रमः॥१४॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ज्वराक्रान्त रोगी के बलाबल का विचार करके ही लंघन कराना चाहिए। ऐसा लंघन नहीं कराना चाहिए जिससे रोगी निर्बल हो जाय या रोगी के प्राण संकट में हो जाय। क्योंकि शरीर में बल रहने का नाम ही आरोग्य है। उसी आरोग्य के लिए ही लंघनादि कराया जाता है।

लंघन का निषेध (चक्रदत्त)

तत्तु मारुतक्षुत्तृष्णामुखशोषभ्रमान्विते।
कार्यं न बाले वृद्धे वा न गर्भिण्यां न दुर्बले॥१५॥

निराम वातज्वर, भूख-प्यास से पीड़ित, मुखशोष एवं भ्रम से पीड़ित व्यक्ति, बालक, वृद्ध, गर्भिणी और दुर्बल व्यक्ति को लंघन नहीं कराना चाहिए।

सम्यग् लंघन के लक्षण (चक्रदत्त)

वातमूत्रपुरीषाणां विसर्गे गात्रलाघवे।
हृदयोद्गारकण्ठास्यशुद्धौ तन्द्राक्लमे गते॥१६॥
स्वेदे जाते रुचौ चापि क्षुत्पिपासासहोदये।
कृतं लङ्घनमादेश्यं निर्व्यथे चान्तरात्मनि॥१७॥

अपान वायु, मूत्र, पुरीष का उचित रीति एवं मात्रा में त्याग, शरीर में लघुता, हृदयप्रदेश में गौरव न होना, उद्गार (डकार), कण्ठशुद्धि, मुख का वैरस्य या कफादि दोषों से मुक्ति अर्थात् मुख शुद्ध होना, आलस्य एवं तन्द्रा का अभाव, पसीना निकलना, रुचि, भूख-प्यास का लगना, मन प्रसन्न रहना आदि लक्षणों के उत्पन्न होने पर ऐसा समझना चाहिए कि सम्यग् लंघन हो गया है।

अतिलंघनजन्य उपद्रव (चक्रदत्त)

पर्वभेदोऽङ्गमर्दश्च कासः शोषो मुखस्य च।
क्षुत्प्रणाशोऽरुचिस्तृष्णा दौर्बल्यं श्रोत्रनेत्रयोः॥१८॥
मनसः सम्भ्रमोऽभीक्ष्णमूर्ध्ववातस्तमो हृदि।
देहाग्निर्बलहानिश्च लङ्घनेऽतिकृते भवेत्॥१९॥

अधिक लंघन करने से जोड़ों में दर्द, अङ्गों में पीड़ा, कास, मुखशोष, भूख का नाश, अरुचि, तृष्णा, कान तथा नेत्रों की दुर्बलता अर्थात् कम सुनने लगना तथा दृष्टिमांद्य हो जाती है। मन का भ्रम, पुनः-पुनः उद्गार, हिक्का एवं श्वास जैसे ऊर्ध्ववात की प्रवृत्ति होना, हृदय में अन्धकार, शरीर का नाश (मृत्यु), अग्निमान्द्य एवं बल का नाश होना—ये सब लक्षण उत्पन्न होते हैं।

हीनलंघन के लक्षण

कफोत्क्लेशः सहल्लासः ष्ठीवनं च मुहुर्मुहुः।
कण्ठास्यहृदयाशुद्धिस्तन्द्रा स्याद्धीनलङ्घने॥२०॥

लंघन हीन मात्रा में होने पर कफोत्क्लेश (कफ तथा वमन की उपस्थिति), हल्लास (मिचली), बार-बार थूकना (थुकथुकी), शरीर में भारीपन, कण्ठ, मुख एवं हृदय की अशुद्धि और तन्द्रा आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

ज्वर विशेष में वमन की उपयोगिता (चक्रदत्त)

सद्योभुक्तस्य वा जाते ज्वरे सन्तर्पणोत्थिते।
वमनं वमनार्हस्य शस्तमित्याह वाग्भटः॥२१॥

जिसे तुरन्त भोजन के बाद ज्वर हो गया हो, जिसे अति सन्तर्पणजन्य भोजन (अधिक मधुर, गुरु, स्निग्ध, पिच्छिल पदार्थों के सेवन) से ज्वर हुआ हो ऐसे ज्वर से आक्रान्त वमन योग्य रोगी को वमन कराना प्रशस्त है, ऐसा आचार्य वाग्भट का विचार है।

प्रवृद्ध कफ में समय पर वमन (चक्रदत्त)

कफप्रधानानुत्क्लिष्टान् दोषानामाशयोत्थितान्।
बुद्ध्वा ज्वरकरान् काले वम्यानां वमनैर्हरेत्॥२२॥

कफदोष बढ़कर बार-बार उत्क्लेश की प्रवृत्ति होना, दोष आमाशय स्थित हो, ऐसे उत्क्लेशकारक दोषों को ज्वरकारक समझकर उचित समय पर वमनकारक औषधियों द्वारा वमन कराना चाहिए।

अनुपस्थित लक्षणों के अभाव में वमन से हानि (चक्रदत्त)

अनुपस्थितदोषाणां वमनं तरुणज्वरे।
हृद्रोगं श्वासमानाहं मोहञ्च कुरुते भृशम्॥२३॥

तरुणज्वर में हल्लास आदि कारणों के अभाव में अर्थात् अनुपस्थित दोषों के अभाव में (हल्लास, कफप्रसेक, मिचली, आलस्य, गौरव आदि के अभाव या अनुपस्थित नहीं होने पर) वमन कराने से हृद्रोग, श्वास, आनाह तथा मोह आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं।

दोषानुसार उष्ण-शीत जलपान (चक्रदत्त)

तृष्यते सलिलं चोष्णं दद्याद्वातकफज्वरे।
मद्योत्थे पैत्तिके वाऽथ शीतलं तिक्तकैः शृतम्॥२४॥

वातज ज्वर, कफज ज्वर या वात-कफज ज्वर में बार-बार प्यास लगने पर थोड़ा-थोड़ा उष्णोदक का पान कराना चाहिए और मद्यपान (मदात्यय) जन्य उत्पन्न ज्वर एवं पित्तज ज्वर में तिक्त द्रव्यों (मुस्त-पर्पट-उशीरादि द्रव्यों) के शीत क्वाथ या हिम जल पिलाना चाहिए।

विमर्श—मिट्टी की नयी हाँडी में ४ लीटर जल देकर सामान्य अग्नि पर पकावें, जब चौथाई शेष रहे तब उतार कर स्थिर एवं कुछ ठण्डा होने के लिए छोड़ दें। हाँडी की तली में जल में घुले पदार्थ चूना जैसा जम जाता है उसे छोड़कर ऊपर का सुखोष्ण जलपान कराना ही उष्णोदक पान कहलाता है। आजकल स्टेनलेस स्टील का पात्र लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उपर्युक्त शृत-शीत जल के गुण (चक्रदत्त)

दीपनं पाचनञ्चैव ज्वरघ्नमुभयञ्च तत्।
स्रोतसां शोधनं बल्यं रुचिस्वेदप्रदं शिवम्॥२५॥

उष्ण एवं शृत-शीत दोनों जल दीपन है, पाचन है, ज्वरघ्न है, स्रोतोमुखविशोधक है, बल्य है, रुचिकारक है, स्वेदल है एवं स्वास्थ्यप्रद (कल्याणकारक) है।

षडङ्गपानीय (चक्रदत्त)

मुस्तपर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ।
शृतशीतं जलं देयं पिपासाज्वरशान्तये॥२६॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, उशीर (खस), श्वेतचन्दन, सुगन्धबाला और सोंठ—ये छः द्रव्य मिलाकर १ तोला (प्रत्येक द्रव्य २-२ ग्राम) लें और यवकुट कर ६४ तोला (७५० मि. ली.) जल में डालकर अर्धावशेष क्वाथ कर छान कर शीतल होने पर यही शृत-शीत जल पान कराने से पित्तज्वर से पीड़ित रोगी की पिपासा, दाह ज्वर आदि शान्त हो जाता है।

विमर्श—क्वाथ विधि से पाचित (चतुर्थांशावशेष) जल गुरु हो जाता है। अतः अर्धावशेष जल देना उचित ही कहा है—

यदप्सु शृतशीतासु षडङ्गादि प्रयुज्यते।
कर्षमात्रं ततो दत्त्वा साधयेत्प्रास्थिकेऽम्भसि।।
अर्धशृतं प्रयोक्तव्यं पाने पेयादिसंविधौ।
(परिभाषाप्रदीप)

नवज्वर में मुख्य भेषज का निषेध (चक्रदत्त)

मुख्यभेषजसम्बन्धो निषिद्धस्तरुणे ज्वरे।
तोयपेयादिसंस्कारे निर्दोषं तेन भेषजम्॥२७॥

तरुणज्वर में ज्वर को नष्ट करने वाली प्रमुख औषधियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। किन्तु जल-पेया-यवागू आदि साधनार्थ ज्वर-औषधियों का प्रयोग कर सकते हैं। इससे औषध की निर्दोषता बनी रहती है।

षडङ्गादि जलसाधन-विधान (चक्रदत्त)

यदप्सु शृतशीतासु षडङ्गादि प्रयुज्यते।
कर्षमात्रं ततो द्रव्यं साधयेत् प्रास्थिकेऽम्भसि।
अर्धशृतं प्रयोक्तव्यं पाने पेयाऽऽदिसंविधौ॥२८॥

क्वाथ कर के शीतल होने पर जो षडङ्गादि जल का प्रयोग किया जाता है, उनको सिद्ध करने का नियम यह है कि मिश्रित छहों द्रव्यों के यवकुट १ तोला (१२ ग्राम) और जल ६४ तोले (७५० मि. ली.) लें। इन्हें मिट्टी की नयी हाँडी में रखकर अर्धावशेष क्वाथ कर वस्त्रपूत कर पुनः मिट्टी की हाँडी में रखकर शीतल होने दें, ततः पान, पेया, यवागू आदि प्रयोग में उपयोग करें।

ज्वर में पेया का प्रयोग (चक्रदत्त)

लाजपेयां सुखजरां पिप्पलीनागरैः शृताम्।
पिबेज्ज्वरी ज्वरहरां क्षुद्वानल्पाग्निरादितः॥२९॥
पेयां वा रक्तशालीनां पार्श्ववस्तिशिरोरुजि।
श्वदंष्ट्राकण्टकारीभ्यां सिद्धां ज्वरहरां पिबेत्॥३०॥

उपर्युक्त षडङ्गपानीय जैसा पिप्पली और सोंठ १ तोला, जल ६४ तोला से साधित जल में लाज (धान के खील) की पेया बना कर मन्दाग्नि से युक्त ज्वरी को भूख लगने पर पिलानी चाहिए। इससे ज्वर कम होता है, भूख बढ़ती है और बुभुक्षा की शान्ति होती है। जिनके दोनों वामपार्श्व में वेदना होती हो, शिरःशूल होता हो, ऐसे ज्वरपीड़ित व्यक्ति को गोखरू और कण्टकारी से साधित जल से लाल सालिधान के खील या चावल से सिद्ध पेया बनाकर देनी चाहिए। यह पेया स्वेदल, मूत्रल तथा लघु होती है और ज्वर, पार्श्ववेदना, बस्तिवेदना तथा शिरःशूल नाशक होती है।

पेया आदि का निर्माण-प्रकार (चक्रदत्त)

षडङ्गपरिभाषैव प्रायः पेयाऽऽदिसम्मता॥३१॥

उपर्युक्त षडङ्गपानीय परिभाषानुसार अर्थात् पेयोक्त औषध १ कर्ष, जल ६४ कर्ष क्वाथ के बाद अर्धावशेष होने पर छान लें और उसी जल में शाली चावल या शाली धान की खील से पेयादि सिद्ध करना चाहिए।

यवागू सिद्ध करने में तण्डुल-प्रमाण (चक्रदत्त)

यवागूमुचिताद्भक्ताच्चतुर्भागकृतां वदेत्॥३२॥

जो व्यक्ति प्रतिदिन एक समय में जितने चावलों का भात खाता है उसके ज्वराक्रान्त होने पर उक्त चावल के चौथाई भाग से सिद्ध यवागू पीने को उसे देना चाहिए। अर्थात् यदि कोई व्यक्ति २०० ग्राम चावल एक समय में भोजन करता हो तो उसे ज्वराक्रान्त होने पर ५० ग्राम चावल से साधित पेया पीने के लिए देना चाहिए।

मण्डादि के लक्षण (चक्रदत्त)

सिक्थकै रहितो मण्डः पेया सिक्थसमन्विता।
यवागूर्बहुसिक्था स्याद्विलेपी विरलद्रवा॥३३॥

मण्ड—सिद्ध चावल के केवल ऊपरी द्रवभाग ही पीने के लिए दिया जाय और सिक्थ भाग छोड़ दिया जाय, उसे मण्ड कहते हैं। **पेया** में मण्ड और सिक्थ दोनों मिले होते हैं। **यवागू**—जिस पेय आहार में सिक्थ अधिक हो उसे यवागू कहते हैं। **विलेपी**—जिस पेय आहार में मण्ड कम और सिक्थ अधिक हो अर्थात् विरल द्रव (खिचड़ी जैसी) हो उसे विलेपी कहते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अन्नादि साधन में जल की मात्रा (चक्रदत्त)

अन्नं पञ्चगुणे साध्यं विलेपी च चतुर्गुणे।
मण्डश्चतुर्दशगुणे यवागूः षड्गुणेऽम्भसि ॥३४॥

अन्न—१ भाग चावल और ५ भाग जल मिलाकर किसी पात्र में सिद्ध करने के बाद ओदन (भात) या सिद्ध अन्न कहा जाता है। **विलेपी**—१ भाग चावल और ४ भाग जल में सिद्ध खाद्य को विलेपी कहते हैं। **मण्ड**—१ भाग चावल कण और १४ भाग जल मिला कर सिद्ध तण्डुल के ऊपरी सिक्थ रहित द्रवभाग को मण्ड कहते हैं। **यवागू**—१ भाग चावल कण और ६ भाग जल में सिद्ध तण्डुल को यवागू कहते हैं।

अष्टादशगुणे तोये यूषः शार्ङ्गधरेरितः।

यूष—१ भाग द्विदल और १८ भाग जल से सिद्ध मुद्ग-मसूरादि द्विदल से निर्मित को यूष कहते हैं। ऐसा आचार्य शार्ङ्गधर का विचार है।

दोषानुसार ज्वर में पथ्य (चक्रदत्त)

श्रमोपवासानिलजे हितो नित्यं रसौदनः।
मुद्गयूषौदनश्चापि देयः कफसमन्विते।
स एव सितया युक्तः शीतपित्तज्वरे हितः॥३५॥

अधिक परिश्रम, उपवास और वात से उत्पन्न ज्वर के रोगी को मांसरस के साथ भात खाने के लिए देना हितकर है तथा कफज ज्वर में मुद्गयूष (मूँग की दाल) के साथ भात देना लाभप्रद है एवं पित्तज ज्वर में चीनी मिली हुई ठण्डी मुद्गयूष के साथ भात खाने को देना चाहिए।

विमर्श—महर्षि सुश्रुत ने भी इसी प्रकार श्रमोपवास कृत ज्वर में पथ्य बताया है। यथा—

उपवासश्रमकृते क्षीणे वाताधिके ज्वरे।
दीप्ताग्निं भोजयेत्प्राज्ञो नरं मांसरसौदनम्॥
स एव सितया युक्तः शीतः पित्तज्वरे हितः॥
(सु.उ. ३९।१३६-१३७)

ज्वरपीड़ितों में लाल साठी का प्रयोग (चक्रदत्त)

रक्तशाल्यादयः शस्ताः पुराणाः षष्टिकैः सह।
यवाग्वोदनलाजार्थं ज्वरितानां ज्वरापहाः॥३६॥

पुराना लाल साठी चावल से निर्मित यवागू, ओदन (भात), लाजा (धान के खील) के रूप में ज्वरपीड़ितों के लिए हितकर है।

ज्वरपीड़ितों के लिए मुद्गादि यूष-विधान (चक्रदत्त)

मुद्गान् मसूराँश्चणकान् कुलत्थान् समुकुष्ठकान्।
आहारकाले यूषार्थं ज्वरिताय प्रदापयेत्॥३७॥

मूँग, मसूर, चना, कुलथी और मोठ आदि दालों को १८ गुना जल में पका कर अर्थात् यूष बनाकर भूख लगने पर भोजन करते समय ज्वरपीड़ितों को देना चाहिए।

ज्वरियों के लिए शाक का निर्देश (चक्रदत्त)

पटोलपत्रं वार्ताकुं कुलकं कारवेल्लकम्।
कर्कोटकं पर्पटकं गोजिह्वां बालमूलकम्।
पत्रं गुडूच्याः शाकार्थे ज्वरिताय प्रदापयेत्॥३८॥

परवल के पत्र, बैंगन, पटोलभेद, करैला, खेखसा, पित्तपापड़ा, गोजिह्वा, छोटी मूली, गुडूचीपत्र इनके शाक बनाकर ज्वरपीड़ितों को ज्वरशान्ति के लिए देना चाहिए।

विमर्श—महर्षि सुश्रुत ने भी ज्वरियों के लिए प्रायः इसी प्रकार के शाकों का प्रयोग बताया है—

पटोलपत्रं वार्ताकं [१]कठिल्लं [२]पापचैलिकम्।
कर्कोटकं पर्पटकं गोजिह्वां वालमूलकम्।
पत्रं गुडूच्याः शाकार्थे ज्वरितानां प्रदापयेत्॥
(सु.उ. ३९।१५१-५२)

ज्वर में पथ्य (चक्रदत्त)

ज्वरितो हितमश्नीयाद् यद्यप्यस्यारुचिर्भवेत्।
अन्नकाले ह्यभुञ्जानः क्षीयते म्रियतेऽपि वा॥३९॥

ज्वर से पीड़ित रोगी को चाहिए कि उसे हितकर आहार में रुचि हो या नहीं हो तो भी पथ्याहार अवश्य करे। अन्यथा भोजन के समय नहीं खाने से शरीर क्षीण हो जाता है या मृत्यु भी हो सकती है।

अरुचि होने पर कल्पना-परिवर्तन (चक्रदत्त)

सातत्यात्स्वाद्वभावाच्च पथ्यं द्वेष्यत्वमागतम्।
कल्पनाविधिभिस्तैस्तैः प्रियत्वं गमयेत्पुनः॥४०॥

यदि पथ्यसेवन निरन्तर एक ही कल्पना में करने से ज्वर के रोगियों में पथ्य के प्रति रुचि नहीं हो तो उसी पथ्य को विविध कल्पनाओं में परिवर्तित कर के रुचिकर बनाकर देना चाहिए। जैसे शाली चावल का बराबर भात देते हों तो और भात खाने की यदि रुचि नहीं हो तो उसी चावल से मण्ड, पेया, यवागू, विलेपी, यूष आदि देना चाहिए।

विमर्श—रुचिकर पदार्थ के सेवन से मन प्रसन्न रहता है, बल और रुचि की वृद्धि होती है तथा व्याधि में न्यूनता आती है।

अरुचि हेतु—नागकेशर, सैन्धवलवण, धात्री, द्राक्षा, चीनी समभाग लेकर कूट-पीसकर बिजौरानिम्बू के स्वरस से भावित कर देना चाहिए।

अरुचौ मातुलुङ्गस्य केशरं साज्यसैन्धवम्।
धात्रीद्राक्षासितानां वा कल्कमास्येन धारयेत्॥
(चक्रदत्त, ज्वरे ४१)

१. पुनर्नवापत्र। २. पाठाशाक।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ज्वरमुक्ति के बाद भोजनकाल (चक्रदत्त)

ज्वरितं ज्वरमुक्तं वा दिनान्ते भोजयेल्लघु।
श्लेष्मक्षये विवृद्धोष्मा बलवाननलस्तदा॥४१॥

ज्वर से पीड़ित या ज्वरमुक्त व्यक्ति को सायंकाल (५ बजे सन्ध्या) में लघु (हलका) भोजन करना चाहिए। क्योंकि उस समय कफ क्षीण रहता है और पित्त बढ़ा होता है तथा जाठराग्नि बलवान् रहती है। उस समय भोजन अच्छी तरह पच जाता है और आमरस नहीं बनता है।

अकाल में ज्वरितों का भोजन-निषेध (चक्रदत्त)

गुर्वभिष्यन्द्यकाले च ज्वरी नाद्यात् कथञ्चन।
न हि तस्याहितं भुक्तमायुषे वा सुखाय वा॥४२॥

ज्वरपीड़ित व्यक्ति को चाहिए कि वह गुरु (उड़द), अभिष्यन्दी (दही) पदार्थ और अकाल में (प्रातः या मध्याह्न या रात्रि में) भोजन नहीं करे। क्योंकि गुरु एवं अभिष्यन्दी पदार्थों का और अकाल का भोजन आयु तथा सुख के बाधक होते हैं। अर्थात् ऐसा करने से आयु क्षीण (मृत्यु) होती है तथा रोगोत्पादन होता है।

नवज्वर में दोषपाचन (चक्रदत्त)

लङ्घनं स्वेदनं कालो यवाग्वस्तिक्तको रसः।
पाचनान्यविपक्वानां दोषाणां तरुणे ज्वरे॥४३॥

तरुणज्वर में उपवास, स्वेदन (पसीना लाने वाली औषध), कालमर्यादा (८ दिन का काल), यवागू (मण्ड-पेया आदि), तिक्तरस वाले द्रव्यों से युक्त जल (षडङ्गपानीय), अपक्व दोषों (आमदोषों) के पाचनार्थ ये सब साधन हैं।

ज्वर की तरुणादि तीन अवस्था (चक्रदत्त)

आसप्तरात्रं तरुणं ज्वरमाहुर्मनीषिणः।
मध्यं द्वादशरात्रन्तु, पुराणमत उत्तरम्॥४४॥

आयुर्वेद के मनीषियों ने दिनमान के अनुसार ज्वर की तीन अवस्था मानी है। ज्वर के प्रारम्भ से ७ रात्रि तक तरुणज्वर अवस्था, ज्वर के प्रारम्भ से १२वीं रात्रि तक मध्यज्वर अवस्था और १२वें दिन के पश्चात् ज्वर रहने पर पुराणज्वर अवस्था मानते हैं।

जीर्णज्वर के लक्षण

त्रिसप्ताहे व्यतीते तु ज्वरो यस्तनुतां गतः।
प्लीहाग्निसादं कुरुते स जीर्णज्वर उच्यते॥४५॥

२१ दिन बीत जाने पर जब ज्वर का वेग क्षीण (कम) हो जाय, प्लीहा की वृद्धि और अग्निमान्द्य हो जाय तो ऐसे लक्षणों से युक्त ज्वर को जीर्णज्वर कहते हैं।

नवज्वर के बाद कषायपान का नियम (चक्रदत्त)

ज्वरितं षडहेऽतीते लघ्वन्नप्रतिभोजितम्।
पाचनं शमनीयं वा कषायं पाययेत्तु तम्॥४६॥

ज्वर से पीड़ित व्यक्ति को लंघन करने के छः दिन बाद सातवें दिन लघु अन्न का भोजन करावें तथा आवश्यकतानुसार आठवें दिन अपक्व दोषादि को पाचन या शमन कराने वाला क्वाथ उसको पिलाना चाहिए।

पाचन-शमन औषध-व्यवस्था (चक्रदत्त)

सप्ताहात् परतोऽस्तब्धे सामे स्यात् पाचनं ज्वरे।
निरामे शमनं स्तब्धे सामे नौषधमाचरेत्॥४७॥

सात दिन के बाद मलबन्ध रहित ज्वरी में यदि रस का दोष आमावस्था में हो तो पाचन औषधि देनी चाहिए और निरामावस्था में रोगी हो तो शमन औषधि का प्रयोग करना चाहिए। यदि रस या दोष सामावस्था में हो तो पाचन-शमन आदि कोई भी औषध नहीं देना चाहिए। ऐसा करने से ज्वर पुनः बढ़ जाता है।

आमज्वर का लक्षण (चक्रदत्त)

लालाप्रसेको हृल्लासहृदयाशुद्ध्यरोचकाः।
तन्द्राऽऽलस्याविपाकास्यवैरस्यं गुरुगात्रता।
क्षुन्नाशो बहुमूत्रत्वं स्तब्धता बलवाञ् ज्वरः॥४८॥

मुख से लार का बहना, वमन करने की इच्छा होना (हृल्लास), हृदयप्रदेश में दबाव, भार या बेचैनी, अरुचि, तन्द्रा, आलस्य, भोजन का उचित परिपाक नहीं होना, मुख का स्वाद बिगड़ जाना, शरीर में भारीपन, भूख का नाश, बार-बार मूत्र-प्रवृत्ति, शरीर में स्तब्धता (जकड़ाहट) और ज्वर का वेगवान् (अतितीव्र) होना आमज्वर के लक्षण हैं।

आमज्वर में औषध-निषेध (चक्रदत्त)

आमज्वरस्य लिङ्गानि न दद्यात्तत्र भेषजम्।
भेषजं ह्यामदोषस्य भूयो ज्वलयति ज्वरम्॥४९॥

इस प्रकार उपर्युक्त आमज्वर के लक्षणों से युक्त रोगी में औषध का प्रयोग नहीं करना चाहिए। क्योंकि आमज्वर से युक्त रोगी में औषध (दीपन-पाचन-शमन-शोधन औषधि) ज्वरवेग को पुनः प्रबल कर देता है।

पक्व दोष के लक्षण एवं औषध-प्रयोग (चक्रदत्त)

मृदौ ज्वरे लघौ देहे प्रचलेषु मलेषु च।
पक्वं दोषं विजानीयाज्ज्वरे देयं तदौषधम्॥५०॥

जब ज्वर का वेग मन्द हो जाय, शरीर में हलकापन प्रतीत होने लगे, शरीर के मल स्वेद-मूत्र-पुरीष की प्रवृत्ति नियमित सुचारु रूप में होने लगे तब दोषों का ठीक से पाचन हो गया है, ऐसा जानकर ज्वरशामक औषध का प्रयोग करना चाहिए।

कषायौषध का वर्जित समय (चक्रदत्त)

पीताम्बुर्लङ्घितः क्षीणोऽजीर्णी भुक्तः पिपासितः।
न पिबेदौषधं जन्तुः संशोधनमथेतरत्॥५१॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जो मन्दज्वरी तुरन्त जलपान किया हो, उपवास किया हुआ हो, अत्यन्त क्षीण (दुर्बल) हो, जिसे अजीर्ण हुआ हो, जो तुरन्त भोजन किया हो और जो प्यासा हो—ऐसे मृदु ज्वरपीड़ितों को शमन-शोधन औषधि नहीं देना चाहिए।

खाली पेट में औषधसेवन का गुण (चक्रदत्त)

वीर्याधिकं भवति भेषजमन्नहीनं
हन्यात्तदामयमसंशयमाशु चैव।
तद्बालवृद्धयुवतीमृदुभिश्च पीतं
ग्लानिं परां नयति चाशु बलक्षयञ्च ॥५२॥

खाली पेट अर्थात् भोजन से पूर्व औषधसेवन से औषधि अपना प्रभाव शीघ्र दिखलाती है। खाली पेट में औषधि सेवन करने से निःसन्देह रोग को नष्ट कर देती है। किन्तु वही औषधि बालक, वृद्ध, स्त्री और सुकुमार व्यक्तियों में खाली पेट देने से मन में ग्लानि और निर्बलता को उत्पन्न करती है।

भोजन के समय प्रयुक्त औषध के गुण (चक्रदत्त)

शीघ्रं विपाकमुपयाति बलं न हिंस्या-
दन्नावृतं न च मुहुर्वदनान्निरेति।
प्राग्भुक्तसेवितमथौषधमेतदेव
दद्याच्च वृद्धशिशुभीरुवराङ्गनाभ्यः॥५३॥

वृद्ध, बालक, औषध से भयभीत व्यक्ति, स्त्री और सुकुमार व्यक्तियों को भोजन के साथ ही औषध सेवन कराना चाहिए। क्योंकि भोजन के साथ औषध सेवन करने से औषध शीघ्र ही पच जाती है और रोगी के बल को भी नष्ट नहीं करती है तथा स्वयं (औषधि) अरुचिकर होते हुए भी रुचिकर भोजन के ग्रास (कौर) से आवृत होने के कारण मुख से बाहर नहीं निकलती है अर्थात् वमन होकर नष्ट नहीं होती है।

औषधों का अवस्था-विशेष में गुण (चक्रदत्त)

औषधशेषे भुक्तं पीतं च तथौषधं सशेषेऽन्ने।
न करोति गदोपशमं प्रकोपयत्यन्यरोगांश्च॥५४॥

औषध के पूर्णतया जीर्ण होने से पूर्व ही यदि भोजन कर लिया जाय अथवा भोजन के पूर्ण रूप से जीर्ण होने से पूर्व ही यदि औषध सेवन कर लिया जाय तो उक्त औषध रोग को शमन नहीं करता है अपितु अन्य रोगों को पैदा भी कर देता है।

जीर्ण औषध के लक्षण (चक्रदत्त)

अनुलोमोऽनिलः स्वास्थ्यं क्षुत्तृष्णा सुमनस्कता।
लघुत्वमिन्द्रियोद्गारशुद्धिर्जीर्णौषधाकृति ॥५५॥

औषध का सम्यक् पाक होने पर वायु की गति अनुलोम हो जाती है अर्थात् अपानवायु और मूत्र-पुरीष का सम्यक् निर्हरण होने लगता है, भूख-प्यास ठीक से उदय होता है, मन में प्रसन्नता होती है, शरीर में लघुता, इन्द्रियों द्वारा अपने-अपने इन्द्रियार्थों का सम्यग् ग्रहण करना और उद्गार की शुद्धि (डकार आना) तथा आरोग्य—ये सभी लक्षण जीर्णौषधि के हैं।

अजीर्णौषध के लक्षण (चक्रदत्त)

क्लमो दाहोऽङ्गसदनं भ्रमो मूर्च्छा शिरोरुजा।
अरतिर्बलहानिश्च सावेशेषौषधाकृतिः॥५६॥

क्लम (थकावट) होना, शरीर में दाह होना, शरीर के प्रत्यङ्गों में पीड़ा होना, भ्रम होना, मूर्च्छा होना, शिरःशूल होना, बेचैनी और बल की हानि—ये सब लक्षण औषधों के अजीर्ण होने पर प्रकट होते हैं।

संक्षेपतः ज्वर में क्रिया

ज्वरादौ लङ्घनं सामे ज्वरमध्ये तु पाचनम्।
निरामे शमनं कुर्याज्ज्वरान्ते च विरेचनम्॥५७॥

ज्वर की अपक्वावस्था (आमावस्था) में उपवास कराना चाहिए, ज्वर की मध्यावस्था में अर्थात् सामावस्था में भी पाचन औषधों का प्रयोग करना चाहिए एवं निरामावस्था में ज्वरशामक औषध गुडूची आदि का प्रयोग करना चाहिए और लंघन-पाचन एवं शमन औषधोपरान्त ज्वर से मुक्ति होने पर अर्थात् ज्वर-समाप्ति पर विरेचन औषधि का प्रयोग करना चाहिए। इससे कोष्ठ एवं मल का शोधन हो जाता है और रोगी स्वस्थ हो जाता है।

औषधमात्रा का निरूपण (चक्रदत्त)

मात्राया नास्त्यवस्थानं दोषमग्निं बलं वयः।
व्याधिं द्रव्यञ्च कोष्ठञ्च वीक्ष्य मात्रां प्रयोजयेत्॥५८॥

आयुर्वेद में अन्न एवं औषध की मात्रा का कोई निश्चित नियम नहीं है। दोष (वात-पित्त-कफ), पाचकाग्नि (जाठराग्नि), बल, वय (आयु), रोग, द्रव्य (औषध) और कोष्ठ (आमाशय, हृदय, फुप्फुस, यकृत्, वृक्क एवं मूत्राशय) आदि के बलाबल की परीक्षा करके अन्न एवं औषधि की मात्रा का निर्धारण करना चाहिए।

क्वाथ (शृत) कल्पना

क्वाथ के पर्याय—शृत, क्वाथ, कषाय और निर्यूह चार पर्याय हैं[1]। अर्थात् क्वाथ के तीन अन्य नाम भी हैं।

क्वाथ की परिभाषा—शुष्क अथवा आर्द्र द्रव्य को यवकुट (मोटे यव के बराबर चूर्ण टुकड़े-टुकड़े करना या महीन कुट्टी काटना) करके जल के साथ रात्रि पर्यन्त भिगोकर चतुर्गुण या अष्टगुण एवं षोडशगुण जल में मध्यमाग्नि पर उबालना तथा चतुर्थांशावशेष, अष्टमांशावशेष या षोडशांशावशेष रहने पर

१. शृतः क्वाथः कषायश्च निर्यूहः स निगद्यते। (शार्ङ्ग.म. २।२)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

छानने के बाद जो द्रवकल्प तैयार किया जाता है उसे विद्वान् चिकित्सक लोग क्वाथ (शृत) कल्पना कहते हैं।[२]

क्वाथ में जलप्रमाण—क्वाथ-निर्माणार्थ कब किस द्रव्य के लिए तथा किस रोगी के लिए कितना जल लिया जाय तथा किस मात्रा में अवशेष रखा जाय, इसका एक सिद्धान्त तो आचार्यों ने बनाया ही है, तथापि द्रव्यों की अपेक्षा एवं द्रव्यमात्रा की अपेक्षा इसका निर्धारण अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है। यह कार्य वैद्यों के विवेक पर ही निर्भर करता है। इसके लिए सामान्य सिद्धान्त तो यह होना चाहिए कि क्वाथ के लिए उतना ही जल दिया जाय तथा उतनी ही देर तक पकाया जाय जितने में द्रव्य का सम्पूर्ण सारभाग उस क्वाथ में आ जाय। एतदर्थ सामान्यतः द्रव्यों को तीन भाग में बाँटते हैं, तब जल का भी विभाजन करते हैं। १. मृदु द्रव्य, २. मध्यम द्रव्य, ३. कठिन द्रव्य।

१. [१]मृदु द्रव्य के लिए ४ गुना जल देना चाहिए।

२. मध्यम द्रव्य के लिए ८ गुना जल देना चाहिए।

३. कठिन द्रव्य के लिए १६ गुना जल देना चाहिए।

किन्तु यही नियम सर्वत्र लागू नहीं होता है। द्रव्यों की न्यूनाधिक संख्या होने पर यह सिद्धान्त बदल जाता है।

यदि मृदु द्रव्य भी ४ तोला से कम परिमाण में हो तो वहाँ पर जल १६ गुना लेना चाहिए तथा ५ से लेकर १६ तोला तक द्रव्य हो तो जल ८ गुना लेना चाहिए और १६ तोला से अधिक तथा खारी पर्यन्त द्रव्य हो तो जल ४ गुना लेना चाहिए।[२]

विमर्श—थोड़े द्रव्य में अधिक जल इसलिए लिया जाता है कि औषधि का सारभाग जल में ठीक से आ जाये, कम जल लेने से अर्थात् ४ तोला द्रव्य में १६ तोला (४ गुना) जल देकर क्वाथ करने पर आग में जल शीघ्र ही सूख जाता है और उसका सार भाग उस क्वाथ में नहीं आ पाता है। क्वाथ पिलाते समय दोषों का विचार करके ठण्डा या गरम क्वाथ पिलाना चाहिए।

क्वाथ की मात्रा—क्वाथ पीने की मध्यम मात्रा ४ तोला की है[१]। कुछ आचार्य ८ तोले भी मानते हैं।

क्वाथ का उपयोग—रोगिओं को क्वाथ पिलाने के अतिरिक्त निम्नलिखित कार्यों के लिए भी क्वाथ का उपयोग होता है। यथा—अवगाहन, परिषेचन, आश्च्योतन, व्रणप्रक्षालन, घृत-तैलपाचन, आसवारिष्ट-निर्माण, रसक्रिया, रसौषधियों में भावना, अवलेह-घनसत्त्व आदि अन्य औषधकल्पों के निर्माण में क्वाथ की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

क्वाथ में प्रक्षेप मान—क्वाथ में यदि चीनी मिलानी हो तो उसे दोषानुसार मिलानी चाहिए। वातदोष में क्वाथ से चतुर्थांश, पित्तदोष में अष्टमांश तथा कफदोष में षोडशांश चीनी क्वाथ में मिलानी चाहिए। क्वाथ में यदि मधु मिलाना हो तो वातदोष में षोडशांश, पित्तदोष में अष्टमांश एवं कफदोष में चतुर्थांश मिलावे। क्वाथ में जीरा, गुग्गुलु, क्षार, नमक, शिलाजतु, हींग, त्रिकटु एवं अन्य द्रव्यों का चूर्ण (४ तोला क्वाथ में) षोडशांश मिलाना चाहिए एवं दुग्ध, गुड़, घृत, तैल आदि पदार्थ (चतुर्थांश) १ तोला की मात्रा में मिलाना चाहिए। क्योंकि क्वाथ

---

२. वह्नौ तु क्वथितं द्रव्यं शृतमाहुश्चिकित्सकाः। (च.सू. ४।२५)
अपि च—तत्रान्यतमपरिमाणसम्मितानां यथायोगं त्वक्पत्रफलमूलादीनामातपपरिशोषितानां छेद्यानि खण्डशश्छेदयित्वा, भेद्यान्यणुशो भेदयित्वा, अवकुट्याष्टगुणेन षोडशगुणेन वाऽम्भसाऽभिषिच्य स्थाल्यां चतुर्भागावशिष्टं क्वाथयित्वाऽपहरेदित्येष कषायपाककल्पः। स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रवः, स्नेहचतुर्थांशो भेषजकल्कः, तदैकध्यं संसृज्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्पः। अथवा तत्रोदकद्रोणे त्वक्-पत्र-फल-मूलादीनां तुलामावाप्य चतुर्भागावशिष्टं निष्क्वाथ्या-पहरेदित्येष कषायपाककल्पः। (सु. चि. ३१।८)
अन्यच्च—क्वाथो निर्यूहः। तत्र भेदान्यौषधान्यणुशो भेदयित्वा छेद्यानि छेदयित्वा प्रक्षाल्योदकेन शुचौ रूक्षायामधःप्रलिप्तायां, ताम्रायोमृन्मयान्यतमायां स्थाल्यां समावाप्य बह्वल्पपानीयग्राहितामौषधानामाकलय्य, यावता मुक्तरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेच्छोषयेच्च। अथाग्नावधिश्रित्य महत्यासने सुखोपविष्टः सर्वतः सततमवलोकयन् दर्व्यावघट्टयन् मृदुना परितः समुपगच्छताऽनलेन साधयेत्। अवतार्य च परिस्रुतं यथार्हस्पर्शं प्रयुञ्जीत। (अ.सं.क. ८)

अपि च—
पानीयं षोडशगुणं क्षुण्णे द्रव्यपले क्षिपेत्।
मृत्पात्रे क्वाथयेद् ग्राह्यमष्टमांशावशेषितम्।।
तज्जलं पाययेषतमान् कोष्णं मृद्वग्निसाधितम्।। (शार्ङ्ग.म. २।१)

१. मृदौ चतुर्गुणं देयं मध्यमेऽष्टगुणं तथा।
द्रव्ये तु कठिने देयं बुधैः षोडशिकं जलम्।। (द्रव्यगुणविज्ञान)

२. (क) कर्षादौ तु पलं यावद्दद्यात् षोडशिकं जलम्।
ततस्तु कुडवं यावत् प्रस्थार्द्धं पादशेषितम्।
क्वाथद्रव्यपले कुर्यात् प्रस्थार्द्धं पादशेषितम्।।
(चक्रदत्त ज्वर ६४)

(ख) कर्षादितः पलं यावत् क्षिपेत् षोडशिकं जलम्।
तदूर्ध्वं कुडवं यावत्तोयमष्टगुणं भवेत्।।
तदूर्ध्वं प्रक्षिपेन्नीरं खारीं यावच्चतुर्गुणम्।
(द्रव्यगुणविज्ञान, यादवजी)

१. क्वाथस्तु मध्यमा मात्रा पलमाना प्रकीर्तिता।
(द्रव्यगुणविज्ञान, यादवजी)

अपि च—
आहाररसपाके च सञ्जाते द्विपलोन्मितम्।
वृद्धवैद्यापदेशेन पिबेत्क्वाथं सुपाचितम्।। (शार्ङ्ग.म. २।३)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

की मध्यम मात्रा ४ तोला की है। एरण्डतैल तथा गोमूत्र दोषानुसार अधिक भी मिलाया जा सकता है।[२]

जल एवं अग्नि के सम्पर्क से द्रव्य की घुलने वाली शक्ति क्वाथ में आ जाती है। जिन द्रव्यों में उनके गुण, वीर्य या शक्ति उनके उड़नशील तैलों (Volatile oil) में रहता है उन द्रव्यों की क्वाथकल्पना नहीं करनी चाहिए। क्योंकि उन द्रव्यों का उड़नशील तैल क्वाथ करते समय उड़ जाता है। यथा—सफेद चन्दन, लौंग, इलायची, सौंफ, गुलाब, केवड़ा आदि। ऐसे द्रव्यों के क्वाथ लाभ भी नहीं करते हैं, गुण एवं गन्धहीन हो जाते हैं। ऐसे द्रव्यों की चूर्ण, कल्क, हिम, फाण्ट एवं अर्कादि कल्पना करनी चाहिए।

किन्तु अधिक व्यक्तिओं के लिए यदि क्वाथ बनाना हो या किसी आतुरालय अथवा किसी व्यापारिक संस्था के लिए अधिक मात्रा में क्वाथ बनाना हो तो अधिक क्वाथद्रव्य रहने पर चार गुना जल ही देना चाहिए तथा चौथाई अवशेष क्वाथ ही पीने को देना चाहिए।

क्वाथ मिट्टी के पात्र में बनाना अधिक लाभप्रद होता है, ऐसा आचार्यों का अभिप्राय है।

चूँकि क्वाथ की सामान्य मात्रा ४ तोला (५० मि.ली.) की है अत: मैंने अपनी व्याख्या में सर्वत्र ५० ग्राम यवकुट क्वाथचूर्ण ही क्वाथार्थ लेना कहा है। उसमें १६ गुना (८०० मि.ली.) जल लेना तथा अवशेष ५० मि.ली. लेने को कहा है। अत: विद्वान् पाठकों से निवेदन है कि सर्वत्र क्वाथ में यही नियम स्वीकार करें।

स्नेहादि की सामान्य मात्रा (चक्रदत्त)

उत्तमस्य पलं मात्रा त्रिभिश्चाक्षैश्च मध्यमे।
जघन्यस्य पलार्द्धेन स्नेहक्वाथ्यौषधेषु च ॥५९॥

स्नेह एवं क्वाथ द्रव्यों की उत्तम मात्रा १ पल (४ तोला = ४६ ग्राम) है, मध्यम मात्रा ३ तोला (३५ ग्राम) की है तथा हीनमात्रा २ तोला (२३ ग्राम) की है। किन्तु अधुना क्रमश: २ तोला, डेढ़ तोला एवं १ तोला मात्रा है।

क्वाथ में जल देने की मात्रा (चक्रदत्त)

कर्षादौ तु पलं यावद्दद्यात्षोडशिकं जलम्।
ततस्तु कुडवं यावत् तोयमष्टगुणं भवेत्।
क्वाथ्यद्रव्यपले कुर्यात् प्रस्थार्द्धं पादशेषितम्॥६०॥

यदि क्वाथ द्रव्य १ तोला से ४ तोला (१२ ग्राम से ४६ ग्राम) तक हो तो जल उससे १६ गुना देना चाहिए। ४ तोला से १६ तोला (५८ ग्राम से १८७ ग्राम) तक क्वाथद्रव्य रहने पर जल उससे ८ गुना देना चाहिए। १ पल क्वाथद्रव्य को यवकुट कर ३२ तोला (८ पल) जल के साथ मिट्टी की नयी हाँडी में रात्रिपर्यन्त भिगावें और मध्याग्नि में पकावें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान कर प्रयोग करें।

विमर्श—अन्य संहिताकारों ने क्वाथ के ७ भेद बताये हैं तथा उसके निर्माण की विधि एवं कर्मानुसार उनके नाम का भी भेद बताया है। यथा—

पाचनो दीपनीयश्च शोधन: शमनस्तथा।
सन्तर्पण: क्लेदन: शोषी क्वाथ सप्तविध: स्मृत: ॥
(हारीतसं. तृतीय स्थान १/४७)

अर्थात्—१. पाचन क्वाथ, २. दीपन क्वाथ, ३. शोधन क्वाथ, ४. शमन क्वाथ, ५. सन्तर्पण क्वाथ, ६. क्लेदन क्वाथ तथा ७. शोषण क्वाथ।

पाचनादि क्वाथ के लक्षण—१. अर्धावशेष क्वाथ को पाचन क्वाथ; २. द्वादशांशावशेष क्वाथ को शोधन क्वाथ; ३. चतुर्थांशावशेष क्वाथ को क्लेदन क्वाथ; ४. अष्टमांशावशेष क्वाथ को शमन क्वाथ; ५. दशमांशावशेष क्वाथ को दीपन क्वाथ; ६. केवल उबाले हुए क्वाथ को तर्पण क्वाथ तथा ७. षोडशांशावशेष क्वाथ को विशोषी क्वाथ कहते हैं। यथा—

पाचनोऽर्द्धावशेषी स्याच्छोधनो द्वादशांशक:।
क्लेदनश्चतुरङ्गश्च शमनोऽष्टावशेषित:॥
दीपनीयो दशांशस्तु तर्पणश्च समांशक:।
विशोषी षोडशांशश्च क्वाथभेदा: प्रकीर्तिता:॥
(हारीत सं. तृतीय १।४८-४९)

उपर्युक्त सात प्रकार के क्वाथों के गुण

पाचन: पचते दोषान्दीपनो दीप्यतेऽनलम्।
शोधनो मलशोधी स्याच्छमन: शमते गदान्॥
तर्पणस्तर्पते धातून् क्लेदी हृत्क्लेदकारक:।
विशोषी शोषमाधत्ते तस्मात्क्वाथं परीक्षयेत्॥
क्लेदी विशोषी विज्ञाय वामनं कारयेन्नरम्।
(हारीत सं. तृतीय १।५०-५१)

साधारण ज्वर-चिकित्सा

१. सभी ज्वरों में धान्यपटोल क्वाथ (चक्रदत्त)

दीपनं कफविच्छेदि वातपित्तानुलोमनम्।
ज्वरघ्नं पाचनं भेदि श्रृतं धान्यपटोलयो: ॥६१॥

१. धनियाँबीज १२ ग्राम २. पटोलपत्र १२ ग्राम (१ तोला)—इन्हें थोड़ा कूट कर मिट्टी के पात्र में रखें और १६ गुना

२. क्वाथे क्षिपेत्सितामंशैश्चतुर्थाष्टमषोडशै:।
वातपित्तकफातङ्के फिररीतं मधु स्मृतम्॥४॥
जीरकं गुग्गुलुं क्षारं लवणं च शिलाजतु।
हिङ्गुं त्रिकटुकं चूर्णं क्वाथे शाणोन्मितं क्षिपेत्॥५॥
क्षीरं घृतं गुडं तैलं मूत्रं चान्यद्द्रवं तथा।
कल्कं चूर्णादिकं क्वाथे निक्षिपेत्कर्षसम्मितम्॥ (शार्ङ्ग.म. २।६)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जल १९२ मि.ली. देकर रात्रिपर्यन्त भीगने को छोड़ दें और सुबह मृदु अग्नि पर क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष (४८ मि.ली.) प्रयोग करें। यह क्वाथ दीपन है, कफनाशक है, वात-पित्त का अनुलोमक है, ज्वरघ्न है, आमदोषों और आमरस का पाचक है और संचित मलों का भेदक है।

विमर्श—नियम है कि ४ तोला (५० ग्राम) से कम क्वाथद्रव्य होने पर १६ गुना जल में क्वाथ करें तथा षोडशांशावशेष रहने पर छान लें।

२. गुडूच्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

गुडूची निम्बधन्याकं पद्मकं रक्तचन्दनम्।
एष सर्वज्वरान् हन्ति गुडूच्यादिस्तु दीपनः।
हृल्लासारोचकच्छर्दि-पिपासादाहनाशनः ॥६२॥

१. गुडूचीकाण्ड, २. निम्बत्वक्, ३. धनियाँबीज, ४. पद्मकाष्ठ, ५. लाल चन्दन एवं क्वाथार्थ जल—उपर्युक्त ५ द्रव्यों को प्रत्येक १० ग्राम लें और जल १६ गुना (४८० मि. ली.) लें। सभी द्रव्यों का यवकूट चूर्ण बना कर मिट्टी की नयी हाँडी या स्टील के पात्र में जल के साथ सभी कूटे द्रव्यों को मिलाकर भींगने को छोड़ दें और सुबह मृद्वग्नि पर क्वाथ कर षोडशांशावशेष रहने पर छान कर शीतल होने पर ५० मि.ली. एक बार में ज्वरी को पिलावें।

गुण—यह क्वाथ सभी ज्वरों को नष्ट करता है। यह दीपन है तथा हृल्लास, अरुचि, वमन, प्यास और दाह को नष्ट करता है।

३. पथ्यादि क्वाथ (आरोग्यपञ्चक क्वाथ-भा.प्र.)

पथ्याऽऽरग्वधतिक्तात्रिवृदामलकैः शृतं तोयम्।
पाचनसारकमुक्तं मुनिभिर्जीर्णज्वरे सामे ॥६३॥

१. हरीतकी फलत्वक्, २. आरग्वध फलमज्जा, ३. कुटकी, ४. त्रिवृत्मूल तथा ५. आमलाफल—ये पाँचों द्रव्य समभाग लेकर यवकुट कर रख लें। इसमें से ५० ग्राम लेकर १६ गुने जल में मृद्वग्नि पर क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर छान कर शीतल होने पर ५० मि.ली. पिलाने से साम जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है। ऐसा ऋषियों ने कहा है।

गुण—आचार्यों ने इस क्वाथ को सामजीर्णज्वर में पिलाने को कहा है। यह क्वाथ आम पाचन एवं सारक (मलविरेचक) है।

४. मुस्तपर्पटकादि क्वाथ

पक्त्वा ज्वरे कषायं वा मुस्तपर्पटकं शृतम्।
सनागरं पर्पटकं पिबेद्वा सदुरालभम् ॥६४॥

१. नागरमोथा एवं २. पित्तपापड़ा पंचाङ्ग (अथवा) १. सोंठ (कन्द) एवं २. पित्तपापड़ा पञ्चाङ्ग—यहाँ दो-दो द्रव्यों के दो पृथक् क्वाथ है। इनमें प्रत्येक द्रव्य २ तोला लेकर यवकुट करें और १६ गुना जल के साथ रात्रि पर्यन्त भींगने दें तथा सुबह मृद्वग्नि पर क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर छान कर पीने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—ज्वर में।

५. वृश्चीरादि क्षीरपाक (सु.उ. ३९)

वृश्चीरबिल्ववर्षाभूपयः सोदकमेव च।
पचेत् क्षीरावशेषं तु पेयं सर्वज्वरापहम् ॥६५॥

१. श्वेतपुनर्नवा, २. बिल्वमूलत्वक्, ३. रक्तपुनर्नवा तथा गोदुग्ध एवं जल—उक्त तीनों द्रव्य प्रत्येक आधा तोला (६ ग्राम) लेकर यवकुट करें और इनसे १५ गुना गाय का दूध और दूध से ४ गुना जल मिलाकर मृद्वग्नि पर पाक करें। जब पानी नष्ट हो जाय एवं केवल दूध बचे तो उतार कर छान लें तथा उसे ज्वर- पीड़ित व्यक्ति को पीने को देना चाहिए[1]।

६. नागरादि क्वाथ (शार्ङ्गधर)

नागरं देवकाष्ठं च धन्याकं बृहतीद्वयम्।
दद्यात्पाचनकं पूर्वं ज्वरिताय ज्वरापहम् ॥६६॥

१. सोंठकन्द, २. देवदारुकाष्ठ, ३. धनियाँबीज, ४. कण्टकारी पञ्चाङ्ग तथा ५. बृहती पञ्चाङ्ग और जल (क्वाथार्थ) —उक्त पाँचों द्रव्य प्रत्येक समभाग (१०-१० ग्राम) लेकर यवकुट करें और इनमें से ५० ग्राम औषध मिट्टी की हाँडी में १६ गुना (८०० मि.ली.) जल के साथ रात्रिपर्यन्त भींगने दें। प्रातः मृद्वग्नि पर क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर कपड़े से छान कर ठण्डा होने पर ज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ज्वरनाशनार्थ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली. एक बार में। **उपयोग**–ज्वर में।

७. मुस्तादि क्वाथ

मुस्तपर्पटकोदीच्यच्छत्राख्योशीरचन्दनैः ।
शृतं शीतं जलं दद्यात्तृड्दाहज्वरशान्तये ॥६७॥

१. नागरमोथा, २. पित्तपापड़ा, ३. सुगन्धबाला, ४. धनियाँबीज, ५. खश तथा ६. लालचन्दन काष्ठ—उपर्युक्त ६ द्रव्यों को प्रत्येक समभाग लें। यवकुट करें, इनमें से ५० ग्राम औषध तथा १६ गुना जल में रात्रि पर्यन्त एक हाँडी में भीगने को छोड़ें और प्रातः मृद्वग्नि पर क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर छान लें और शीतल होने पर ४ तोला (५० मि.ली.) की मात्रा में प्यास, दाह से युक्त ज्वर की शान्ति के लिए पिलावें।

मात्रा–५०मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर एवं ज्वर में।

---

१. क्षीरपाक की परिभाषा आचार्यश्री ने इस प्रकार बतायी है—
द्रव्यात् तिथिगुणं क्षीरं क्षीरान्नीरं चतुर्गुणम्।
क्षीरावशेषकर्तव्यः क्षीरपाकस्त्वयं विधिः ॥ (द्रव्यगुणविज्ञान)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

८. किराततिक्तादि क्वाथ (गदनिग्रह)

किराततिक्तकं मुस्तं गुडूची विश्वभेषजम् ।
पाठामुशीरं सोदीच्यं पिबेद्वा ज्वरशान्तये ॥६८॥

१. चिरायता पञ्चाङ्ग, २. नागरमोथा, ३. गुडूची, ४. सोंठ, ५. पाठा, ६. खश तथा ७. सुगन्धबाला—उपर्युक्त सभी द्रव्यों को समभाग लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम लेकर १६ गुना जल के साथ मिट्टी की नयी हाँडी या स्टेनलेस स्टील के भगोने में रात्रि पर्यन्त भीगने दें। प्रातः मृद्वग्नि पर क्वाथ करें और षोडशांशावशेष रहने पर कपड़े से छान लें। इस क्वाथ को शीतल होने पर पीना चाहिए।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–ज्वर में।

९. क्षुद्रादि क्वाथ (शार्ङ्गधर)

क्षुद्राकिराततिक्तं च शुण्ठी छिन्ना च पौष्करम् ।
कषाय एषां शमयेत् पीतश्चाष्टविधं ज्वरम् ॥६९॥

१. कण्टकारीमूल, २. चिरायता, ३. शुण्ठी, ४. गुडूची और ५. पुष्करमूल—इन पाँच द्रव्यों को प्रत्येक समान भाग में लेकर यवकुट कर चतुर्गुण जल में क्वाथ करें और षोडशांशावशेष रहने पर छान कर ज्वरपीड़ित व्यक्तियों को सुबह-शाम पिलावें। इससे आठ प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मधु मिलाकर। **उपयोग**–आठ प्रकार के ज्वरों में।

वातिक ज्वर

१०. बृहत्पञ्चमूल क्वाथ (चक्रदत)

बिल्वादिपञ्चमूलस्य क्वाथः स्याद्वातिके ज्वरे ॥७०॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. अग्निमन्थमूलत्वक्, ३. सोनापाठा-त्वक्, ४. पाढल तथा ५. गम्भारीमूलत्वक्—इन पाँचों द्रव्यों को प्रत्येक समान भाग में लेकर यवकुट कर इसमें से ५० ग्राम द्रव्य को १६ गुना जल में पूर्व रीति से क्वाथ बनाकर छान लें और सुखोष्ण ही पान करें। इसे पीने से वातज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मधु मिलाकर। **उपयोग**–वातिक ज्वर में।

११. पिप्पलीमूलादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पाचनं पिप्पलीमूलगुडूचीविश्वजोऽथवा ॥७१॥

अथवा—१. पिप्पलीमूल, २. गुडूची एवं ३. शुण्ठी समभाग लेकर कूट कर क्वाथ विधि से तैयार क्वाथ पिलाना चाहिए।

१२. किरातादि क्वाथ (चक्रदत्त)

किराताब्दामृतोदीच्यबृहतीद्वयगोक्षुरैः ।
सस्थिराकलसीविश्वैः क्वाथो वातज्वरापहः ॥७२॥

१. चिरायता, २. नागरमोथा, ३. गुडूची, ४. सुगन्धबाला, ५. कण्टकारी, ६. बृहती, ७. गोक्षुर, ८. शालपर्णी, ९. पृश्निपर्णी तथा १०. सोंठ—ये दसों द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण कर रख लें और इनमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर ४०० मि.ली. पानी में रात्रि पर्यन्त भिगावें और मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान कर वातज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. सुबह-शाम पिलावें।

१३. पिप्पल्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पिप्पलीसारिवाद्राक्षाशतपुष्पाहरेणुभिः ।
कृतः कषायः सगुडो हन्याच्छ्वसनजं ज्वरम् ॥७३॥

१. पिप्पली, २. अनन्तमूल, ३. द्राक्षा, ४. सौंफ तथा ५. हरेणुक (रेणुका)—ये पाँचों द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण कर रख लें और उसमें से २५ ग्राम चूर्ण को ४०० मि.ली. जल में रात्रिपर्यन्त भिगावें और सुबह क्वाथ विधि से अष्टमांशावशेष क्वाथ करें। इस क्वाथ में १० ग्राम गुड़ मिलाकर पान करावें। ५० मि.ली. क्वाथ एक बार पिलावें। इस तरह वात- ज्वरहरार्थ सुबह-शाम क्वाथ पिलाना चाहिए।

क्वाथ में प्रक्षेप और अनुपान की मात्रा (चक्रदत्त)

प्रक्षेपः पादिकः क्वाथ्यात् स्नेहे कल्कसमो मतः ।
परिभाषामिमामन्ये प्रक्षेपेऽप्यूचिरे यथा ॥७४॥
कर्षश्चूर्णस्य कल्कस्य गुडिकानां च सर्वशः ।
द्रवशुक्त्या स लेढव्यः पातव्यश्च चतुर्गुणः ।
मात्रा क्षौद्रकृतादीनां स्नेहे क्वाथेषु चूर्णवत् ॥७५॥

प्रक्षेप द्रव्य की मात्रा क्वाथ (काढ़े) में क्वाथद्रव्य (यवकुट चूर्ण) का चौथाई भाग और स्नेह सिद्ध करने के लिए कल्क के बराबर लेना चाहिए। कुछ लोग आगे की परिभाषा को भी प्रक्षेप के लिए मानते हैं। चूर्ण, कल्क और गुडिका की मात्रा १ तोला (१२ ग्राम) है, इन्हें २ तोला (२३ ग्राम) द्रव मिलाकर चाटना चाहिए और ४ तोला (४६ मि.ली.) द्रव मिलाकर पीना चाहिए। घृत और मधु आदि की मात्रा स्नेह और क्वाथ में चूर्ण जैसा ही चतुर्थांश लेना चाहिए। इस सन्दर्भ में शार्ङ्गधर का मत द्रष्टव्य है—

क्वाथे क्षिपेत्सितामंशैश्चतुर्थाष्टमषोडशैः ।
वातपित्तकफातङ्के विपरीतं मधु स्मृतम् ।।
जीरकं गुग्गुलुं क्षारं लवणं च शिलाजतु ।
हिङ्गुं त्रिकटुकं चैव क्वाथे शाणोन्मितं क्षिपेत् ।।
क्षीरं घृतं गुडं तैलं मूत्रं चान्यद्द्रवं तथा ।
कल्कं चूर्णादिकं क्वाथे निःक्षिपेत् कर्षसम्मितम् ।।

(शार्ङ्ग. म. २४६)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१४. गुडूच्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

गुडूचीसारिवाद्राक्षाशतपुष्पापुनर्नवाः ।
सगुडोऽयं कषायः स्याद्वातज्वरविनाशनः ॥७६॥

१. गुडूची, २. अनन्तमूल, ३. द्राक्षा, ४. सौंफ तथा ५. पुनर्नवा—इन पाँचों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण कर रख लें। इनमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर ८०० मि.ली. जल में रात्रि पर्यन्त भिगावें और प्रातः क्वाथ विधि से क्वाथ कर षोडशांशावशेष ५० मि.ली. क्वाथ एक बार में पिलावें। इसी प्रकार सायं-प्रातः दिन में २ बार क्वाथ वातज्वरार्त रोगी को पिलाना चाहिए। इससे वातज्वर शान्त हो जाता है।

१५. द्राक्षादि क्वाथ (चक्रदत्त)

द्राक्षागुडूचीकाश्मर्यत्रायमाणः ससारिवाः ।
निष्क्वाथ्य सगुडं क्वाथं पिबेद्वातज्वरापहम् ॥७७॥

१. द्राक्षा, २. गुडूची, ३. गम्भार, ४. त्रायमाणा तथा ५. अनन्तमूल—ये पाँचों द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण कर रख लें और आवश्यकतानुसार १ मात्रा के लिए ५० ग्राम चूर्ण लें और ८०० मि.ली. जल के साथ रात्रि पर्यन्त भिगोकर प्रातः क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर छान लें और १० ग्राम गुड़ मिलाकर वातज्वरी को पिलावें। इसी तरह सायं-प्रातः दिन में २ बार इस क्वाथ को सोष्ण पिलाना चाहिए। इससे ज्वर शान्त होता है।

१६. रास्नादि क्वाथ (चक्रदत्त)

रास्ना वृक्षादनी दारु सरलं सैलवालुकम् ।
सोष्णं सगुडसर्पिष्कं पिबेद्वातज्वरापहम् ॥७८॥

१. रास्ना, २. वृक्षादनी (वन्दाक), ३. देवदारु, ४. सरल तथा ५. एलबालुक—ये पाँचों द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट कर सुरक्षित रख लें। आवश्यकतानुसार १ मात्रा के लिए ५० ग्राम इस यवकुट क्वाथद्रव्य को लेकर ८०० मि.ली. जल के साथ रात्रि पर्यन्त भिगावें और प्रातः क्वाथ विधि से षोडशांशावशेष क्वाथ (५० मि.ली.) बनाकर छान लें और उसमें १० ग्राम गुड़ मिलाकर सोष्ण क्वाथ वातज्वरी को दिन में दो बार पिलावें। इससे वात-ज्वर शान्त हो जाता है।

१७. बिल्वादि क्वाथ (चक्रदत्त)

बिल्वादिपञ्चमूली च गुडूच्यामलके तथा ।
कुस्तुम्बुरुसमो ह्येष कषाया वातिके ज्वरे ॥७९॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. अग्निमन्थ, ३. सोनापाठा, ४. पाठल, ५. गम्भारमूलत्वक्, ६. गुडूचीकाण्ड, ७. आमलकी-फल और ८. धनियाँ—ये सभी द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। इसके बाद ५० ग्राम चूर्ण लेकर एक पात्र में रखें तथा ८०० मि.ली. पानी देकर रात्रि पर्यन्त भिंगावे और प्रातः मृदु अग्नि पर पाक करें। जब ५० मि.ली. जल शेष रहे तो छान लें। इस क्वाथ को सोष्ण ५० मि.ली. सुबह-शाम पान करावें। इससे वातज्वर शान्त हो जाता है।

१८. विश्वादि क्वाथ (भावप्रकाश)

विश्वामृताग्रन्थिकसिद्धतोयं
मरुज्ज्वरः स्यात् पिबतः कुतोऽयम् ।

१. सोंठ, २. गुडूची तथा ३. पिप्पलीमूल—इन तीनों द्रव्य समभाग में लेकर पूर्व विधि से क्वाथ करें तथा इस क्वाथ को रोष्ण ५०-५० मि.ली. प्रातः-सायं पान कराने से वातज्वर नष्ट हो जाता है।

१९. कुस्तुम्बुर्वादि क्वाथ (भावप्रकाश)

क्वाथोऽथ कुस्तुम्बरुदेवदारु-
क्षुद्रौषधैः पाचनमत्र चारु ॥८०॥

१. धनियाँ, २. देवदारु, ३. कण्टकारी तथा ४. सोंठ—इन चार औषधों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और ५० ग्राम इस चूर्ण को ८०० मि.ली. पानी में रात्रि पर्यन्त भिगावें तथा प्रातः मन्दाग्नि पर क्वाथ कर षोडशांश शेष रहने पर छान कर सुबह-शाम ५०-५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पान करने से वात-ज्वर नष्ट हो जाता है।

२०. गुडूच्यादि स्वरस (चक्रदत्त)

गुडूच्याः स्वरसो ग्राह्यः शतावर्याश्च तत्समः ।
गुडप्रगाढः शमयेत्सद्योऽनिलकृतं ज्वरम् ॥
शृतशीतं कषायं वा गुडूच्याः पेयमेव तु ॥८१॥

गुडूचीस्वरस (६ मि.ली.) तथा शतावरीस्वरस (६ मि.ली.) लेकर आवश्यकतानुसार गुड़ मिलाकर पीने से वातज्वर नष्ट हो जाता है। अथवा केवल गुडूची क्वाथ पीने से भी वातज्वर शान्त हो जाता है।

२१. भूनिम्बादि क्वाथ

भूनिम्बमुस्ताजलकण्टकारी-
द्वयामृतागोक्षुरनागराणाम् ।
सशालपर्णीद्वयपौष्कराणां
क्वाथं पिबेद्वातभवज्वरार्त्तः ॥८२॥

१. चिरायता, २. नागरमोथा, ३. सुगन्धबाला, ४. कण्टकारी, ५. बृहती, ६. गुडूची, ७. गोक्षुर, ८. सोंठ, ९. शालपर्णी, १०. पृश्निपर्णी तथा ११. पुष्करमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर एक पात्र में ८०० मि.ली. जल में रात्रि पर्यन्त भिगावें और सुबह मन्दाग्नि पर क्वाथ करें और ५० मि.ली. जल शेष

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रहने पर छान कर सोष्ण पान करें। ऐसा ही दो बार प्रातः- सायं पान करने से वातज्वर नष्ट हो जाता है।

२२. पञ्चमूल्यादि क्वाथ (वङ्गसेन)

पञ्चमूलीबलारास्नाकुलत्थैः सह पौष्करैः।
क्वाथो हन्याच्छिरःकम्पं पर्वभेदं मरुज्ज्वरम् ॥८३॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. अग्निमन्थत्वक्, ३. गम्भारत्वक्, ४. सोनापाठात्वक्, ५. पाढल, ६. बलामूल, ७. रास्ना, ८. कुलत्थबीज तथा ९. पुष्करमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर भगौने में रखकर ८०० मि.ली. जल में रात्रि पर्यन्त भिगावें और सुबह मन्दाग्नि पर क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर छान कर ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पान करने से शिरःकम्प, सन्धिवेदना और वातज ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

२३. कणादि क्वाथ (बृ.नि.रत्ना.)

कणारसोनामृतवल्लिविश्वा-
निदिग्धिकासिन्दुकभूमिनिम्बैः ।
समुस्तकैराचरितः कषायो
हिताशिनां हन्ति गदानिमांस्तु ॥८४॥
ज्वरं मरुद्दुष्टिसमुद्भवं च
बलासजञ्चानलमन्दतां च ।
कण्ठावरोधं हृदयावरोधं
स्वेदं च हिक्कां च हिमत्वमोहान् ॥८५॥

१. पिप्पली, २. रसोन, ३. गुडूची, ४. सोंठ, ५. कण्टकारी, ६. निर्गुण्डीपत्र, ७. चिरायता तथा ८. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट कर ५० ग्राम चूर्ण एक पात्र में रखें और ८०० मि.ली. जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिगोवें। सुबह मन्दाग्नि पर क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर ५० मि.ली. छान कर सुबह-शाम सोष्ण क्वाथ पान करने से वातज्वर, कफज्वर, अग्निमान्द्य, कण्ठावरोध, हृदयावरोध, स्वेदाधिक्य, हिक्का, शरीर का ठण्डा होना और मोह (मूर्च्छा) आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं।

२४. शतपुष्पादि क्वाथ (सुश्रुत)

शतपुष्पा वचा कुष्ठं देवदारु हरेणुका।
कुस्तुम्बुरूणि नलदं मुस्तं चैवाशु साधयेत्।
क्षौद्रेण सितया चापि युक्तः क्वाथोऽनिलज्वरे ॥८६॥

सौंफ, २. वच, ३. कूठ, ४. देवदारु, ५. रेणुका, ६. धनियाँ, ७. खस तथा ८. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर पूर्वोक्त क्वाथ विधि से साधित सोष्ण क्वाथ में मधु और चीनी मिलाकर पीने से वातज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–चीनी-मधु मिलाकर। **उपयोग**–वातज्वर में।

२५. शालिपर्ण्यादि क्वाथ (शार्ङ्गधर)

शालपर्णी बला द्राक्षा गुडूची सारिवा तथा।
आसां क्वाथं पिबेत् कोष्णं तीव्रवातज्वरच्छिदम् ॥८७॥

१. शालिपर्णी, २. बलामूल, ३. द्राक्षा, ४. गुडूची तथा ५. अनन्तमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से षोडशगुण जल के साथ क्वाथ विधि से क्वाथ करें। षोडशांशावशेष रहने पर छान कर ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ सुबह-शाम पान करने से वातज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातज्वर में।

२६. गुडूच्यादि क्वाथ (हारीत)

गुडूची शतपुष्पा च द्राक्षा रास्ना पुनर्नवा।
त्रायमाणा कषायश्च गुडैर्वातज्वरापहः ॥८८॥

१. गुडूची, २. सौंफ, ३. द्राक्षा, ४. रास्ना, ५. पुनर्नवा तथा ६. त्रायमाण—इस सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान कर सोष्ण ५० मि.ली. क्वाथ में थोड़ा गुड़ मिलाकर प्रातः-सायं पान करने से वातज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातज्वर में।

२७. दशमूलादि क्वाथ (भावप्रकाश)

श्रीफलः सर्वतोभद्रा कामदूती च श्योणकः।
तर्कारी गोक्षुरः क्षुद्रा बृहती कलसी स्थिरा ॥८९॥
रास्ना कणा कणामूलं कुष्ठं शुण्ठी किरातकः।
मुस्ता बलाऽमृता बाला द्राक्षा यासः शताह्विका ॥९०॥
एषां क्वाथो निहन्त्येव प्रभञ्जनकृतं ज्वरम्।
सोपद्रवं च योगोऽयं सर्वयोगवरः स्मृतः ॥९१॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. गम्भारछाल, ३. पाढल, ४. सोनापाठा, ५. अरनी, ६. गोक्षुर, ६. कण्टकारी, ८. बृहती, ९. शालपर्णी, १०. पृश्निपर्णी, ११. रास्ना, १२. पिप्पली, १३. पिपरामूल, १४. कूठ, १५. सोंठ, १६. चिरायता, १७. नागरमोथा, १८. बलामूल, १९. गुडूची, २०. सुगन्धबाला, २१. द्राक्षा, २२. यवासा तथा २३. सोयाबीज—उपर्युक्त सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। तदनन्तर ५० ग्राम यवकुट चूर्ण को १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ बनाकर छान लें और ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ सुबह-शाम पान करने से उपद्रव युक्त वातज्वर नष्ट हो जाता है। अब तक वातज्वर के जितने क्वाथ कहे गये हैं उनमें यह क्वाथ सर्वश्रेष्ठ है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सोपद्रव वातज्वर में।

२८. शतावर्यादि स्वरस

शतावरीगुडूचीभ्यां स्वरसो यन्त्रपीडितः।
गुडप्रगाढः शमयेत् सद्योऽनिलाकृतं ज्वरम ॥९२॥

शतावरी और गुडूची दोनों आर्द्र लेकर सिल पर पीसें और वस्त्र में रखकर रस निचोड़ लें या यन्त्रनिष्पीड़ित कर स्वरस निकाल लें। आर्द्र द्रव्य न मिलने पर इन दोनों द्रव्यों को समभाग में लें और यवकुट कर क्वाथ विधि से क्वाथ बना लें। इसके सेवन से वातज्वर नष्ट हो जाता है।

पित्तज्वर क्वाथ

२९. तिक्तादि क्वाथ (भावप्रकाश)

तिक्तामुस्तायवैः पाठाकट्फलाभ्यां सहोदकम्।
पक्वं सशर्करं पीतं पाचनं पैत्तिके ज्वरे ॥९३॥

१. कटुकी, २. नागरमोथा, ३. इन्द्रयव, ४. पाठा, ५. कायफल तथा ५. सुगन्धबाला—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से मन्दाग्नि पर क्वाथ करें और षोडशांश शेष रहे तब छानकर शीतल होने पर उस क्वाथ में शर्करा (चीनी) मिलाकर ५० मि.ली. सुबह-शाम पान करने से पित्तज्वर नष्ट हो जाता है। इससे दोषों का पाचन होता है।

मात्रा–५० मि.ली. शीतल क्वाथ। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

३०. पर्पटकादि क्वाथ (चक्रदत्त)

एकः पर्पटकः श्रेष्ठः पित्तज्वरविनाशनः।
किं पुनर्यदि युज्येत चन्दनोदीच्यनागरैः ॥९४॥

१. पित्तपापड़ा, २. श्वेतचन्दन, ३. सुगन्धबाला तथा ४. नागरमोथा—इसमें अकेले पित्तपापड़ा को पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ बनाकर पीने से पित्तज्वर नष्ट हो जाता है। यदि पित्तपापड़ा के साथ चन्दन, सुगन्धबाला और नागरमोथा मिलाकर क्वाथ कर पित्तज्वरी को पिलाया जाय तो उसके गुण का क्या कहना है? अर्थात् वह निश्चित ही पित्तज्वर को शान्त करता है।

मात्रा–५० मि.ली. शीतल क्वाथ। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

३१. द्राक्षादि क्वाथ (शार्ङ्गधर)

द्राक्षा हरीतकी मुस्ता कटुका कृतमालकः।
पर्पटश्च कृतः क्वाथ एषां पित्तज्वरापहः ॥९५॥
मुखशोषप्रलापान्तर्दाहमूर्च्छाभ्रमप्रणुत्।
पिपासारक्तपित्तानां शमनो भेदनो मतः ॥९६॥

१. दाख, २. हरीतकी, ३. नागरमोथा, ४. कुटकी, ५. अमलातासफलमज्जा तथा ६. पित्तपापड़ा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और ५० ग्राम यवकुट क्वाथचूर्ण को १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथविधि से क्वाथ कर छान लें तथा शीतल क्वाथ सुबह-शाम पान करें।

मात्रा–शीतल क्वाथ ५० मि.ली. दो बार। **उपयोग**–पित्तज्वरनाशक है। पित्तज्वर में—मुखशोष, प्रलाप, अन्तर्दाह, मूर्च्छा, भ्रम, पिपासा और रक्तपित्तादि उपद्रव को नाश करता है। यह क्वाथ भेदन गुण युक्त है, अतः एक-दो बार मलप्रवृत्ति भी होती है। इससे पित्तदोष का निर्हरण होता है।

३२. ह्रीबेरादि क्वाथ (भावप्रकाश)

ह्रीबेरचन्दनोशीरघनपर्पटसाधितम्।
दद्यात्तं शीतलं वारि तृड्वृद्धिज्वरदाहनुत् ॥९७॥

१. सुगन्धबाला, २. श्वेतचन्दन, ३. खस, ४. नागरमोथा तथा ५. पित्तपापड़ा—उपर्युक्त सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा ५० ग्राम चूर्ण को १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें और शीतल होने पर ५० मि.ली. क्वाथ सुबह-शाम पान करावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में प्यास, वमन एवं दाहजन्य उपद्रव को नष्ट करता है।

३३. पटोलादि क्वाथ (बृ.नि.रत्नाकर)

पटोलयवधन्याकमधुकं मधुसंयुतम्।
हन्ति पित्तज्वरं दाहं तृष्णां चातिप्रमाथिनीम् ॥९८॥

१. पटोलपत्र, २. इन्द्रयव, ३. धनियाँ तथा ४. मुलेठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। इनमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छान कर शीतल होने पर ५० मि.ली. क्वाथ में मधु मिलाकर दो बार पान करें। इससे पित्तज्वरी के प्यास और दाह नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मधु मिलाकर। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

३४. गुडूच्यादि क्वाथ (भा.प्र.)

गुडूची भूमिनिम्बश्च बालं वीरणमूलकम्।
लघु मुस्तं त्रिवृद्धात्री द्राक्षा वासा च पर्पटः ॥९९॥
एषां क्वाथो हरत्येव ज्वरं पित्तभवं द्रुतम्।
सोपद्रवमपि प्रातर्निपीता मधुना सह ॥१००॥

१. गुडूची, २. चिरायता, ३. सुगन्धबाला, ४. खस, ५. मुस्ता, ६. निशोथ, ७. आमला, ८. दाख, ९. वासामूल तथा १० पित्तपापड़ा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा इस यवकुट चूर्ण से ५० ग्राम लेकर १६ गुना जल से पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ कर और छानकर शीतल होने पर मधु मिला कर पिलाने से उपद्रव युक्त पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मधु। **उपयोग**–उपद्रव युक्त पित्तज्वर में।

३५. किरातादि क्वाथ (बृ.नि.रत्ना.)

किरातामृतधन्याकचन्दनोशीरपर्पटैः ।
सपद्मकैः कृतः क्वाथो हन्ति पित्तभवं ज्वरम् ॥१०१॥

१. चिरायता, २. गुडूची, ३. धनियाँ, ४. श्वेतचन्दन, ५. खस, ६. पित्तपापड़ा तथा ७. पद्मकाष्ठ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल से पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ करें। छान कर शीतल होने पर प्रातः-सायं दो बार इस क्वाथ को पित्तज्वरी को पिलावें। इसके प्रयोग से पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर पीड़ित रोगी में।

३६. महाद्राक्षादि क्वाथ (भा.प्र.)

द्राक्षाचन्दनपद्मानि मुस्ता तिक्ताऽमृताऽपि च ।
धात्री बालमुशीरञ्च लोध्रेन्द्रयवपर्पटाः ॥१०२॥
परूषकं प्रियङ्गुश्च यवासो वासकस्तथा ।
मधुकं कुलकञ्चापि किरातो धान्यकं तथा ॥१०३॥
एषां क्वाथो निहन्त्येव ज्वरं पित्तसमुत्थितम् ।
तृष्णां दाहं प्रलापञ्च रक्तपित्तं भ्रमं क्लमम् ॥१०४॥
मूर्च्छां छर्दिं तथा शूलं मुखशोषमरोचकम् ।
कासं श्वासं च हृल्लासं नाशयेन्नात्र संशयः ॥१०५॥

१. द्राक्षा, २. श्वेतचन्दन, ३. पद्मकाठ, ४. नागरमोथा, ५. कुटकी, ६. गुडूची, ७. आमला, ८. सुगन्धबाला, ९. खस, १०. लोध्र, ११. इन्द्रयव, १२. पित्तपापड़ा, १३. फालसा, १४. प्रियंगुफूल, १५. यवासक, १६. वासामूल, १७. मुलेठी, १८. परवलपत्ती, १९. चिरायता तथा २०. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ करें और छान कर ५० मि.ली. क्वाथ सुबह-शाम पीने से उपद्रव युक्त पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–दाह, तृष्णा, प्रलाप, रक्तपित्त, भ्रम, क्लम, मूर्च्छा, वमन, शूल, मुखपाक, अरुचि, कास, श्वास एवं हृल्लास युक्त पित्तज्वर में।

३७. यवपटोल क्वाथ (चक्रदत्त)

पटोलयवनिक्वाथो मधुना मधुरीकृतः ।
तीव्रपित्तज्वरामर्दी पानात्तृड्दाहनाशनः ॥१०६॥

१. पटोलपत्र, २. इन्द्रयव तथा ३. मधु—पटोल और इन्द्रयव को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और उसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छान कर शीतल होने पर उसमें मधु मिलाकर मीठा होने पर सुबह-शाम पान करें। इससे पित्तज्वर नष्ट हो जाता है। इस क्वाथ को पीने से तृष्णा, दाह तथा हस्त-पादादि में जलन आदि उपद्रव नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव युक्त पित्तज्वर में।

३८. धान्यशर्करा (चक्रदत्त)

व्युषितं धन्याकजलं प्रातः पीतं सशर्करं पुंसाम् ।
अन्तर्दाहं शमयत्यचिराद् दूरप्ररूढमपि ॥१०७॥

धनियाँ २० ग्राम को मोटा कूट कर मिट्टी की छोटी हाँडी में रखें और उसमें षड्गुण जल (१२० मि.ली.) मिलाकर रात्रि पर्यन्त खुले आसमान के नीचे रखें और सुबह हाथ से खूब मसल कर कपड़े से छान लें तथा उसमें २० ग्राम चीनी मिलाकर पीने से चिरोत्पन्न हस्त-पाद में जलन से युक्त पित्तविकार नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२० मि.ली.। **उपयोग**–हस्त-पाद में दाहयुक्त पित्त-विकार में।

३९. लोध्रादि क्वाथ (चक्रदत्त)

लोध्रोत्पलामृतापद्मसारिवाणां सशर्करः ।
क्वाथः पित्तज्वरं हन्यादथवा पर्पटोद्भवः ॥१०८॥

१. लोध, २. नीलकमल, ३. गुडूची, ४. श्वेतकमल तथा ५. अनन्तमूल—इस सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ करें तथा छान कर शीतल होने पर इसमें १० ग्राम चीनी मिलाकर पीने से पित्तज्वर नष्ट हो जाता है। अथवा केवल पित्तपापड़ा का क्वाथ चीनी मिला कर पीने से भी पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

४०. तिक्तादि क्वाथ (चक्रदत्त)

सक्षौद्रं पाचनं पैत्ते तिक्ताब्देन्द्रयवैः कृतम् ॥

१. कटुकी, २. सुगन्धबाला तथा ३. इन्द्रयव—इन तीनों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम यवकुट क्वाथ द्रव्य कों १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथविधि से क्वाथ कर छान लें। शीतल होने पर उसमें १५ ग्राम मधु मिला कर पीने से पित्तज्वरपीड़ित रोगी में पित्तदोष का पाचन होता है।

४१. दुरालभादि क्वाथ (चक्रदत्त)

दुरालभापर्पटकप्रियङ्गु
भूनिम्बवासाकटुरोहिणीनाम् ।
जलं पिबेच्छर्करयाऽवगाढं
तृष्णाऽस्रपित्तज्वरदाहयुक्तः ॥१०९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. यवासा, २. पित्तपापड़ा, ३. प्रियंगुफूल, ४. चिरायता, ५. वासा तथा ६. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें और शीतल होने पर उसमें २० ग्राम शर्करा (चीनी) मिलाकर पीने से तृष्णा, रक्तपित्त, ज्वर, दाह से युक्त पित्तज्वर शान्त हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–दाहादि उपद्रवयुक्त पित्तज्वर।

४२. पर्पटादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पर्पटामृतधात्रीणां क्वाथः पित्तज्वरं जयेत् ॥११०॥

१. पित्तपापड़ा, २. गुडूची तथा ३. आमला—इन तीनों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें और छान कर शीतल होने पर ५० मि.ली. क्वाथ पीने से पित्तज्वर शान्त हो जाता है।

४३. विश्वादि क्वाथ (चक्रदत्त)

विश्वाम्बुपर्पटोशीरघनचन्दनसाधितम् ।
दद्यात् सुशीतलं वारि तृट्छर्दिज्वरदाहनुत् ॥१११॥

१. सोंठ, २. सुगन्धबाला, ३. पित्तपापड़ा, ४. खस, ५. नागरमोथा तथा ६. श्वेतचन्दन—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करे तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ करें तथा छान कर शीतल होने पर ५० मि.ली. इस क्वाथ को पीने से तृषा, दाह, वमन से युक्त पित्तज्वर नष्ट हो जाता हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव युक्त पित्तज्वर में।

४४. द्राक्षादि क्वाथ और काश्मर्य क्वाथ (सुश्रुत)

द्राक्षारग्वधयोश्चापि काश्मर्यस्याथवा पुनः ॥११२॥

१. द्राक्षा एवं २. अमलतास की मज्जा—इन्हें समभाग में ५० ग्राम लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ बना कर पित्तज्वरी को ५० मि.ली. पिलाने से पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

अथवा—केवल गम्भारीमूलत्वक् ५० ग्राम लेकर यवकुट कर १६ गुना जल से पूर्वोक्त क्वाथ कर पीने से पित्तज्वर शान्त हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

४५. मृद्वीकादि क्वाथ (चक्रदत्त)

मृद्वीका मधुकं निम्बं कटुकारोहिणी समा ।
अवश्यायस्थितः क्वाथ एष पित्तज्वरापहः ॥११३॥

१. मुनक्का, २. मुलेठी, ३. निम्बत्वक् और ४. कुटकी—इन चारों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। इस क्वाथ को रात्रि पर्यन्त खुले आसमान में रखें और प्रातः ५० मि.ली. क्वाथ पीने से पित्तज्वर शान्त हो जाता है। (अवश्यायः—'अवश्यायस्तु नीहारस्तुषारस्तुहिनं हिमम्' इत्यमरः)

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

४६. श्रीपर्ण्यादि क्वाथ (सुश्रुत)

श्रीपर्णीचन्दनोशीरपरूषकमधूकजः ।
शर्करामधुरो हन्ति कषायः पैत्तिकं ज्वरम् ॥११४॥

१. गम्भारमूलत्वक्, २. लालचन्दन, ३. खस, ४. फालसा तथा ५. महुए का फूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल के साथ पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें और शीतल होने पर इसमें शर्करा मिलावें, पित्तज्वर के रोगी को पिलावें। इसके प्रयोग से कुछ दिन में पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

४७. त्रायमाणादि क्वाथ (चक्रदत्त)

त्रायमाणा च मधुकं पिप्पलीमूलमेव च ।
किराततिक्तकं मुस्तं मधूकं सबिभीतकम् ।
सशर्करं पीतमेतत् पित्तज्वरविनाशनम् ॥११५॥

१. त्रायमाणा, २. मुलेठी, ३. पिप्पलीमूल, ४. चिरायता, ५. नागरमोथा, ६. महुआ के फूल तथा ७. बहेड़ाफलत्वक्—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम यवकुट को १६ गुना जल देकर पूर्वोक्त क्वाथ विधि से क्वाथ कर षोडशांशावशेष रहने पर छान कर शीतल होने पर शर्करा मिलावें और पित्तज्वरपीड़ित रोगी को पीने को दे। इससे पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

४८. फेनकल्पना (सुश्रुत)

अम्लपिष्टः सुशीतैर्वा पलाशतरुजैर्दिहेत् ।
बदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्टकस्य च ॥११६॥

इस श्लोक में ३ योग बताये गये हैं—

(१) पलाश के कोमल पत्तों को सिल पर काञ्जी के साथ पीस कर कल्क बना लें। पुनः इस कल्क को चतुर्गुण काञ्जी में घोल कर मथानी से मथें, फेनोद्गम होने पर फेन सहित इस द्रव को पित्तज्वरार्त रोगी के सम्पूर्ण शरीर में लेप करने से ज्वर एवं दाह शान्त हो जाता है। अथवा (२) बदरीपत्र (बेर के कोमल पत्तों) को सिल पर काञ्जी के साथ पीसकर कल्क बनावें। अतः इस कल्क को चतुर्गुण काञ्जी में घोल कर मथानी से मथें, फेनोद्गम होने पर इस द्रव को पित्तज्वरार्त रोगी के सम्पूर्ण शरीर में लेप

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

करने से ज्वर एवं दाह शान्त हो जाता है। अथवा (३) निम्ब के कोमल पत्तों को सिल पर काञ्जी के साथ पीसकर कल्क बनावें। ततः इस कल्क को चतुर्गुण काञ्जी में घोलकर मथानी से मथें, फेनोद्गम होने पर फेन सहित इस द्रव को पित्तज्वरार्त्त रोगी के सम्पूर्ण शरीर में लेप करने से ज्वर एवं दाह शान्त हो जाता है।

४९. पित्तज्वर में दाह का प्रतिकार

पित्तज्वरेण तप्तस्य क्रियां शीतां समाचरेत्।
उत्तानसुप्तस्य गभीरताम्र-
कांस्यादिपात्रं विनिधाय नाभौ।
तत्राम्बुधारा बहुला पतन्ती
निहन्ति दाहं त्वरितं सुशीता ॥११७॥

शीतल जल तथा ताम्र एवं कांस्य पात्र—पित्तज्वर के रोगी के शरीर से दाह कम करने के लिए शीतल क्रिया करनी चाहिए। जैसे शीतल जल में कपड़ा निचोड़ कर हाथ-पैर-पीठ-मुख आदि का अंगमार्जन (पोंछना)—इस प्रकार दिन में चार-पाँच बार करना चाहिए। ललाट पर शीतल जल से भींगा हुआ कपड़ा रखना चाहिए। पीठ या पेट पर ताम्र या कांस्य पात्र थाली या कटोरा रखकर उसमें शीतल जल भर देना चाहिए। अथवा उस पात्र में शीतल जल की पतली धारा गिराते रहना चाहिए, इससे दाह शान्त हो जाता है।

विमर्श—आजकल आधुनिक चिकित्सा में दाह एवं ताप शान्त्यर्थ निम्नलिखित चार क्रिया करते हैं—

१. इस काम के लिए बाजार में रबर की थैली (Ice bag) मिलती है। इसमें बर्फ के टुकड़े डालकर बन्द कर देते हैं और रोगी के दाह एवं ताप से युक्त शरीर पर (शिर, ललाट, मुख, उदर, तलवा, हथेली, पार्श्व पर) इस बैग को रखते हैं।

२. गीले वस्त्रों के टुकड़ों से शरीर को पोंछना (Cold sponge)।

३. गीले वस्त्र-खण्डों में रोगी को लपेटना (Wet pack)।

४. शीतल जलावगाह (Cold bath), अधिक शीतलता के लिए पानी में बर्फ भी डाला जा सकता है।

१. इस क्रिया के द्वारा ज्वरनाशक औषधियों की तरह हृदय पर पूरा प्रभाव नहीं पड़ता है।

२. चिकित्सक अपनी इच्छानुसार ज्वर का नियंत्रण करता है।

३. इससे रोगी को कोई कष्ट नहीं होता है तथा किसी प्रकार का खतरा भी नहीं है। निर्बल रोगियों में इस विधि का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

४. शीतोपचार से मस्तिष्क के ऊपर शामक प्रभाव पड़ता है जिससे निद्रानाश, प्रलाप, तन्द्रा और अरति आदि लक्षण नहीं होते हैं।

चरक में भी ज्वर-दाहशमनार्थ निम्न उपाय बताये गये हैं—

पौष्करेषु सुशीतेषु पद्मोत्पलदलेषु च।
कदलीनां च पत्रेषु क्षौमेषु विमलेषु च॥
चन्दनोदकशीतेषु शीते धारागृहेऽपि वा।
हिमाम्बुसिक्ते सदने दाहार्तः संविशेत् सुखम्॥
हेमशङ्खप्रवालानां मणीनां मौक्तिकस्य च।
चन्दनोदकशीतानां संस्पर्शानुरसान् स्पृशेत्॥
स्रग्भिर्नीलोत्पलैः पद्मैर्व्यजनैर्विविधैरपि।
शीतवातावहैर्व्यज्येच्चन्दनोदकवर्षिभिः॥
नद्यस्तडागाः पद्मिन्यो ह्रदाश्च विमलोदकाः।
अवगाहे हिता दाहतृष्णाग्लानिज्वरापहाः॥
प्रियाः प्रदक्षिणाचाराः प्रमदाश्चन्दनोक्षिताः।
सान्त्वयेयुः परैः कामैर्मणिमौक्तिकभूषणाः॥
शीतानि चान्नपानानि शीतान्युपवनानि च।
वायवश्चन्द्रपादाश्च शीता दाहज्वरापहाः॥
(च.चि. ३।२६०-६६)

५०. विदार्यादि प्रलेप (सुश्रुत)

विदारी दाडिमं लोध्रं दधित्थं बीजपूरकम्।
एभिः प्रदिह्यान्मूर्धानं तृड्दाहार्तस्य देहिनः ॥११८॥

१. विदारीकन्द, २. अनारदाना, ३. लोध्र, ४. कपित्थफल की गूदी और ५. बिजौरानीबू—उपर्युक्त सभी द्रव्यों को समभाग में कूट कर सील पर पीस लें और पानी में घोलकर पित्तज्वर से पीड़ित रोगी के ललाट, उदर, हस्त-पाद आदि प्रदेशों पर लेप करें। इससे दाह, ताप, तृषा तीनों का शमन होता है।

५१. नागरादि क्वाथ

नागरोशीरमुस्ताश्च चन्दनं कटुरोहिणी।
धान्यकं क्वाथ एषां तु पित्तज्वरविनाशनः ॥११९॥

१. सोंठ, २. खस, ३. नागरमोथा, ४. लालचन्दन, ५. कुटकी और ६. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इनमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ बनावें। क्वाथ छानकर ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पित्तज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

५२. विदार्यादि क्वाथ (गदनिग्रह)

विदारिकालोध्रकपित्थकानां
स्यान्मातुलुङ्गस्य च दाडिमानाम्।
यताऽनुभावेन च मूलपत्रं
तृड्दाहमूर्च्छाश्च ज्वरं निहन्ति ॥१२०॥

१. विदारीकन्द, २. लोध्र, ३. कैंथ, ४. बिजौरानीबू तथा

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५. अनारदाना—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छानकर ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

५३. पर्पटादि क्वाथ (शार्ङ्गधर)

पर्पटो वासकस्तिक्ता कैरातो धन्वयासकः।
प्रियङ्गुश्च कृतः क्वाथ एषां शर्करया युतः।
पिपासादाहपित्तास्रयुतं पित्तज्वरं हरेत्॥१२१॥

१. पित्तपापड़ा, २. अडूसामूल, ३. कटुकी, ४. चिरायता, ५. धवासा तथा ६. प्रियंगुफूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छानकर ठण्डा होने पर उसमें अष्टमांश शर्करा मिलाकर पित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. क्वाथ पिलावे। इस औषधि-प्रयोग से पिपासा, दाह और रक्तपित्त आदि दोष शान्त हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

५४. गुडूच्यादि क्वाथ (बृ.नि. रत्ना.)

गुडूच्यामलकैर्युक्तः केवलो वाऽपि पर्पटः।
पित्तज्वरं हरेत्तूर्णं दाहशोषभ्रमान्वितम्॥१२२॥

१. गुडूची, २. आमलक और ३. पित्तपापड़ा—गुडूची और आमलक समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। शीतल होने पर पित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. पिलावे। (अथवा) केवल पित्तपापड़ा क्वाथ को पिलाने से भी पित्तज्वर के दाह, तृष्णा, भ्रम आदि दोष शीघ्र शान्त हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

५५. भूनिम्बादि क्वाथ (वंगसेन)

भूनिम्बातिविषालोध्रमुस्तकेन्द्रयवामृताः।
बालकं धान्यकं बिल्वं कषायो माक्षिकान्वितः।
विड्भेदश्वासकासांश्च रक्तपित्तज्वरं हरेत्॥१२३॥

१. चिरायता, २. अतीस, ३. लोध्र, ४. नागरमोथा, ५. इन्द्रजौ, ६. गुडूची, ६. सुगन्धबाला, ८. धनियाँ और ९. बिल्वफलमज्जा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छानकर ठण्डा होने पर अष्टामांश मधु मिलाकर अधिक पुरीष प्रवृत्ति, श्वास, कास तथा रक्तपित्त से पीड़ित पित्तज्वर के रोगी को पिलावें। इससे उपर्युक्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

कफज्वर-चिकित्सा

५६. मधुपिप्पली योग (चक्रदत्तः)

क्षौद्रोपकुल्यासंयोगः श्वासकासज्वरापहः।
प्लीहानं हन्ति हिक्काञ्च बालानाञ्चापि शस्यते॥१२४॥

१. मधु एवं २. पिप्पलीचूर्ण—इसे ६ ग्रा. शु. मधु में ३ मासा (३ ग्राम) पिप्पलीचूर्ण मिलाकर कफज्वर से पीड़ित रोगी को चटाने से श्वास, कास, ज्वर, प्लीहावृद्धि, हिक्का आदि कष्ट नष्ट हो जाते हैं। यह योग बालकों के लिए श्रेष्ठ माना जाता है। बालकों को आधी मात्रा दें।

५७. चतुर्भद्रावलेह (गदनिग्रह)

कट्फलं पौष्करं शृङ्गी कृष्णा च मधुना सह।
कासश्वासज्वरहरः श्रेष्ठो लेहः कफान्तकृत्॥१२५॥

१. कायफल, २. पुष्करमूल, ३. काकड़ाशृंगी और ४. पिप्पली—इन प्रत्येक द्रव्यों का पृथक्-पृथक् चूर्ण कर लें और प्रत्येक चूर्ण को १-१ ग्राम लेकर मधु से मिलावें तथा कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति (रोगी) को खिलावें। इससे श्वास, कास एवं ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–४ ग्राम। **उपयोग**–कफज्वर में।

अवलेह-सेवनकाल (चक्रदत्तः)

ऊर्ध्वजत्रुजरोगघ्नी सायं स्यादवलेहिका।
अधोरोगहरी या तु सा पूर्वं भोजनान्मता॥१२६॥

ऊर्ध्वजत्रु अर्थात् नेत्र, कर्ण, नासा, मस्तिष्क, मुख आदि भागों में उत्पन्न रोगों की शान्ति के लिए अवलेह सायंकाल में सेवन करना चाहिए और अधोभाग में कष्ट होने पर अवलेह को भोजनकाल से पूर्व सेवन करना चाहिए।

५८. मातुलुंगादि क्वाथ (चक्रदत्त)

मातुलुङ्गशिफाविश्वाब्राह्मीग्रन्थिकसम्भवम्।
कफज्वरेऽम्बु सक्षारं पाचनं वा कणादिकम्॥१२७॥

१. मातुलुंग नीबू की जड़, २. सोंठ, ३. ब्राह्मी तथा ४. पिपरामूल—इन सभी औषधियों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छानकर शीतल होने पर इसमें षोडशांश यवक्षार मिलाकर कफज ज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। (अथवा) पिप्पल्यादि गणोक्त औषधियों के क्वाथ पिलाने से भी कफज ज्वर में आमदोष का पाचन होता है।

५९. सिन्दूवारपत्र क्वाथ (चक्रदत्त)

सिन्दुवारदलक्वाथं सोषणं कफजे ज्वरे।
जङ्घयोश्च बले क्षीणे कर्णे वा पिहिते पिबेत्॥१२८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

निर्गुंडीपत्र ५० ग्राम को कूटकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें और कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को मरिचचूर्ण ८ ग्रा. मिलाकर क्वाथ पिलावें। इसके प्रयोग से जाँघों में निर्बलता और बाधिर्य दोष भी मिट जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६०. सप्तच्छदादि क्वाथ (सुश्रुत)

सप्तच्छदं गुडूचीञ्च निम्बं स्फूर्जकमेव च।
क्वाथयित्वा पिबेत् क्वाथं सक्षौद्रं कफजे ज्वरे ॥१२९॥

१. सप्तपर्ण, २. गुडूची, ३. नीम की छाल तथा ४. तेंदू की छाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छानकर गरम क्वाथ में अष्टमांश मधु मिलाकर कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६१. वासादि क्वाथ (भावप्रकाश)

वासाक्षुद्राऽमृताक्वाथः क्षौद्रेण ज्वरकासहृत् ॥१३०॥

१. वासा, २. कण्टकारी और ३. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छानकर ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इससे ज्वर एवं कास नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६२. निम्बादि क्वाथ (चक्रदत्त)

निम्बविश्वामृतादारुशटीभूनिम्बपौष्करम्।
पिप्पल्यौ बृहती चेति क्वाथो हन्ति कफज्वरम् ॥१३१॥

१. नीम की छाल, २. सोंठ, ३. गुडूची, ४. देवदारु, ५. कचूर, ६. चिरायता, ७. पुष्करमूल, ८. पिप्पली, ९. गज-पिप्पली तथा १०. बृहती—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथविधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. गरम क्वाथ कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६३. मरिचादि क्वाथ (भावप्रकाश)

मरिचं पिप्पलीमूलं नागरं कारवी कणा।
चित्रकं कट्फलं कुष्ठं ससुगन्धि वचा शिवा ॥१३२॥
कण्टकारीजटां शृङ्गी यमानी पिचुमर्दकः।
एषां क्वाथो हरत्येव ज्वरं सोपद्रवं कफम् ॥१३३॥

१. मरिच, २. पिपरामूल, ३. सोंठ, ४. मँगरैला, ५. पिप्पली, ६. चित्रकमूल, ६. कायफल, ८. कूठ, ९. सुगन्धबाला, १०. वच, ११. हरीतकी, १२. कण्टकारी मूल १३. काकड़ासिंगी, १४. अजवायन और १५. नीम की छाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ छानकर ५० मि.ली. गरम क्वाथ कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इस क्वाथ को पीने से उपद्रवयुक्त कफज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६४. त्रिफलादि क्वाथ

त्रिफला पटोलवासा छिन्नरुहा
तिक्तरोहिणी च षड्ग्रन्था।
मधुना श्लेष्मसमुत्थे दशमूली-
वासकस्य वा क्वाथः ॥१३४॥

त्रिफला, पटोल, वासा, गुडूची, कटुकी और वच—इन्हें समभाग में लें तथा यवकुट कर मिश्रित कर काच पात्र में संगृहीत करें। इसमें से ५० ग्रा. चूर्ण को क्वाथ विधि से क्वाथ करें और छानकर मधु मिलाकर सुखोष्ण पिलाने से कफज ज्वर नष्ट हो जाता है। अथवा—दशमूल यवकुट और वासा यवकुट दोनों समभाग में मिलाकर क्वाथ करें। इसे कफज्वर में पिलाने से सद्यः लाभ होता है।

६५. मुस्तादि क्वाथ (चक्रदत्त)

मुस्तं वत्सकबीजानि त्रिफला कटुरोहिणी।
परूषकाणि च क्वाथः कफज्वरविनाशनः ॥१३५॥

१. नागरमोथा, २. इन्द्रयव, ३. हर्रे, ४. बहेड़ा, ५. आमला, ६. कुटकी तथा ६. फालसा—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। षोडशांशावशेष क्वाथ को छानकर गरम क्वाथ ५० मि.ली. कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६६. कटुत्रिकादि क्वाथ (गदनिग्रह)

कटुत्रिकं नागपुष्पं हरिद्रा कटुरोहिणी।
कौटजं च फलं हन्यात् सेव्यमानं कफज्वरम् ॥१३६॥

१. सोंठ, २. पीपल, ३. मरीच, ४. नागकेसर, ५. हल्दी, ६. कुटकी और ७. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें और क्वाथ छानकर कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. गरम क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६७. पिप्पल्यादि गण क्वाथ (चक्रदत्तः)

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं गजपिप्पली।
नागरं चित्रकं चव्यं रेणुकैलाऽजमोदिका ॥१३७॥
सर्षपो हिङ्गु भार्गी च पाठेन्द्रयवजीरकाः।
महानिम्बवचा मूर्वा विषा तिक्ता विडङ्गकम् ॥१३८॥
पिप्पल्यादिगणो ह्येष कफमारुतनाशनः।
गुल्मशूलज्वरहरो दीपनस्त्वामपाचनः ॥१३९॥

१. पीपर, २. पिपरामूल, ३. मरिच, ४. गजपीपर, ५. सोंठ, ६. चित्रकमूल, ६. चव्य, ८. रेणुका, ९. इलायची, १०. अजमोदा, ११. सरसों, १२. हींग, १३. भारंगी, १४. पाठा, १५. इन्द्रयव, १६. श्वेत जीरा, १७. बकायन की छाल, १८. वच, १९. मूर्वा, २०. अतीस, २१. कुटकी और २२. विडंग—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से १६ गुना जल से क्वाथ करें तथा क्वाथ छानकर कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. गरम क्वाथ पिलावें। इसके प्रयोग से कफवातज्वर, गुल्म तथा शूल नष्ट हो जाते हैं। यह दीपन और आम पाचन है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६८. सारिवादि क्वाथ (सुश्रुत)

सारिवाऽतिविषाकुष्ठैः पुराख्यैः सदुरालभैः।
मुस्तेन च कृतः क्वाथः पीतो हन्यात् कफज्वरम् ॥१३९॥

१. अनन्तमूल, २. अतीस, ३. कूठ, ४. गुग्गुलु, ५. धमासा तथा ६. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ-विधि से क्वाथ करें तथा छान कर ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलाना चाहिए। इससे कफज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

६९. आमलक्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

आमलक्यभया कृष्णा चित्रकश्चेत्ययं गणः।
सर्वज्वरकफातङ्कभेदी दीपनपाचनः ॥१४१॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. पीपर और ४. चित्रकमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलावें। यह क्वाथ सभी प्रकार के कफज्वरों को नाश करता है, साथ ही दीपन तथा पाचन है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

७०. हरिद्रादि क्वाथ (सुश्रुत)

हरिद्रां चित्रकं निम्बमुशीरातिविषे वचाम्।
कुष्ठमिन्द्रयवान् मूर्वां पटोलञ्चापि साधितम्।
पिबेन्मरिचसंयुक्तं सक्षौद्रं कफजे ज्वरे ॥१४२॥

१. हल्दी, २. चित्रकमूल, ३. नीम की छाल, ४. खस, ५. अतीस, ६. वच, ७. कूठ, ८. इन्द्रयव, ९. मूर्वा और १०. पटोलपत्र—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से १६ गुना जल से क्वाथ कर छान लें तथा कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ में मधु और मरिच चूर्ण मिलाकर पिलावें। यह क्वाथ सभी कफज्वर को नाश करता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में। **प्रक्षेप**–मधु एवं मरिच चूर्ण।

७१. अभयादि क्वाथ (बृ.नि.रत्ना.)

अभयाऽऽमलकी कृष्णा षड्ग्रन्था चित्रकस्तथा।
मलभेदी कफातङ्कज्वरनाशनदीपनः ॥१४३॥

१. हरीतकी, २. आमला, ३. पीपर, ४. वच तथा ५. चित्रकमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलावें। यह क्वाथ मलभेदी तथा अग्निप्रदीपक है एवं कफज्वरनाशक है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

७२. व्याघ्र्यादि क्वाथ (भै.रत्ना.)

व्याघ्री सिंही तथा लोध्रं कुष्ठं चैव पटोलकम्।
ज्वरे कफात्मके चैतत् पाचनं स्यात्तदुत्तमम् ॥१४४॥

१. कण्टकारी, २. बृहती, ३. लोध्रत्वक्, ४. कूठ तथा ५. परवलपत्र—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। यह कफज्वर का नाश करता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

७३. पटोलादि क्वाथ (बृ.नि.रत्ना.)

पटोलत्रिफलातिक्ताशटीवासाऽमृताभवः।
क्वाथो मधुयुतः पीतो हन्यात् कफकृतं ज्वरम् ॥१४५॥

१. परवल की पत्ती, २. आमला, ३. बडी हरें, ४. बहेड़ा, ५. कुटकी, ६. कचूर, ७. वासामूल तथा ८. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्रा. चूर्ण लेकर क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ में मधु मिलाकर कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इससे कफज्वर शान्त हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

७४. भूनिम्बादि क्वाथ (शार्ङ्गधर)

भूनिम्बनिम्बपिप्पल्यः शटी शुण्ठी शतावरी।
गुडूची बृहती चेति क्वाथो हन्यात् कफज्वरम् ॥१४६॥

१. चिरायता, २. नीम की छाल, ३. पीपर, ४. कचूर, ५. सोंठ, ६. शतावर, ७. गुडूची और ८. बृहती—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्रा. चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० ग्राम सोष्ण क्वाथ कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इससे कफज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

७५. कुष्ठादि क्वाथ (चक्रदत्त)

कुष्ठमिन्द्रयवं मूर्वां पटोलं चापि साधितम्।
पिबेन्मरिचसंयुक्तं सक्षौद्रं श्लैष्मिके ज्वरे ॥१४७॥

१. कूठ, २. इन्द्रयव, ३. मुर्वा और ४. परवलपत्र—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्रा. चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ में मधु एवं मरिच चूर्ण मिलाकर कफज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में। **प्रक्षेप**–मधु एवं मरिच चूर्ण।

वात-पित्तज्वर

७६. चन्दनादि क्वाथ

चन्दनलोध्रपरूषकयष्टी-
गोपसुताम्बुजकेशरयुक्तम्।
तोयमिदं ससितं विनिहन्ति
मारुतपित्तकृतं ज्वरमाशु ॥१४८॥

१. लालचन्दन, २. लोध्रत्वक्, ३. फालसा, ४. मुलेठी, ५. अनन्तमूल और ६. कमलकेशर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें तथा छान कर ५० मि.ली. शीतल क्वाथ में मिश्री मिलाकर वात-पित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इससे वात-पित्तज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वात-कफज्वर में।

७७. भार्ग्यादि क्वाथ (बृ.नि.)

भार्गीगुडूचीघनदारुसिंही-
शुण्ठीकणापुष्करजः कषायः।
ज्वरं निहन्ति श्वसनं क्षिणोति
क्षुधां करोत्याशु रुचिं तनोति ॥१४९॥

१. भारङ्गी, २. गुडूची, ३. नागरमोथा, ४. देवदारु, ५. वासामूल, ६. सोंठ, ७. पीपर तथा ८. पुष्करमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्रा. चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. शीतल क्वाथ वातपित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इससे ज्वर और श्वास कष्ट नष्ट हो जाते हैं। इस क्वाथ से भूख बढ़ती है तथा अन्न के प्रति रुचि बढ़ती है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वात-पित्तज्वर में।

७८. किरातादि क्वाथ (चक्रदत्त)

किराततिक्तममृतां द्राक्षामामलकं शटीम्।
निष्क्वाथ्य सगुडं क्वाथं वातपित्तज्वरे पिबेत् ॥१५०॥

१. चिरायता, २. कटुकी, ३. गुडूची, ४. दाख, ५. आमला तथा ६. कचूर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. शीतल क्वाथ में गुड़ मिलाकर वातपित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इससे वातपित्तज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज्वर में।

७९. गुडूच्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

गुडूचीनिम्बधन्याकं पद्मकं रक्तचन्दनम्।
एष सर्वज्वरान् हन्ति गुडूच्यादिस्तु दीपनः।
हृल्लासारोचकच्छर्द्दिपिपासादाहनाशनः ॥१५१॥

१. गुडूची, २. नीमछाल, ३. धनियाँ, ४. पद्मकाष्ठ और ५. लालचन्दन—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. शीतल क्वाथ ज्वरपीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इस क्वाथ से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह क्वाथ दीपन है तथा ज्वर के उपद्रवस्वरूप हृल्लास, अरुचि, वमन, प्यास लगना और दाहनाशक हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

८०. नवाङ्ग क्वाथ (चक्रदत्त)

विश्वामृताऽब्दभूनिम्बैः पञ्चमूलीसमन्वितैः।
कृतः कषायो हन्त्याशु वातपित्तोद्भवं ज्वरम् ॥१५२॥

१. सोंठ, २. गुडूची, ३. सुगन्धबाला, ४. चिरायता, ५. शालपर्णी, ६. पृश्निपर्णी, ७. बृहती, ८. कण्टकारी तथा ९. गोखरू—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. शीतल क्वाथ वातपित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज्वर में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

८१. बृहद् गुडूच्यादि क्वाथ (बृ.नि.)

गुडूची चन्दनं पद्मं नागरेन्द्रयवासकम्।
अभयाऽऽरग्वधोदीच्यपाठाधान्याब्दरोहिणी ॥१५३॥
कषायं पाययेदेतत् पिप्पलीचूर्णसंयुतम्।
कासश्वासज्वरान् हन्ति पिपासादाहनाशनः।
विण्मूत्रानिलविष्टम्भे त्रिदोषप्रभवेऽपि च ॥१५४॥

१. गुडूची, २. लाल चन्दन, ३. पद्मकाठ, ४. सोंठ, ५. इन्द्रयव, ६. यवासा, ७. हरीतकी, ८. अमलतासमज्जा, ९. सुगन्धबाला, १०. पाठा, ११. धनियाँ, १२. नागरमोथा और १३. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल से क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. शीतल क्वाथ में पीपर चूर्ण मिलाकर वात-पित्तज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पिलावें। इस क्वाथ को पीने से कास, श्वास, प्यास, दाह तथा पुरीष, मूत्र एवं वात के अवरोधजन्य सन्निपातज्वर के उपद्रव नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

८२. मुस्तकादि क्वाथ (भै.रत्ना.)

मुस्तकपर्पटकोत्पलकिरातकोशीरचन्दनात् कर्षः।
शर्करया च दीयते वातपित्तज्वरे बहु दृष्टफलः ॥१५५॥

१. नागरमोथा, २. पित्तपापड़ा, ३. नीलकमल, ४. चिरायता, ५. खस तथा ६. लालचन्दन—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्रा. चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. शीतल क्वाथ में शर्करा मिलाकर वातपित्तज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें। इससे वातपित्तज्वर नष्ट हो जाता है। यह अनेक बार का अनुभवजन्य है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज्वर में।

८३. घनचन्दनादि क्वाथ (भै.रत्ना.)

घनचन्दनपर्पटकं कटुकं
समृणालपटोलदलं सजलम्।
शृतशीतसितायुतपित्तहरं
ज्वरछर्दितृषारुचिदाहहरम् ॥१५६॥

१. नागरमोथा, २. लालचन्दन, ३. पित्तपापड़ा, ४. कुटकी, ५. खस, ६. परवलपत्र तथा ७. सुगन्धबाला—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा शीतल होने पर ५० मि.ली. क्वाथ में चीनी मिलाकर पित्तज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें। इस क्वाथ से ज्वर, वमन, प्यास, अरुचि एवं दाह आदि कष्ट नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

८४. पञ्चभद्र क्वाथ (चक्रदत्त)

गुडूची पर्पटं मुस्तं किरातं विश्वभेषजम्।
वातपित्तज्वरे देयं पञ्चभद्रमिदं शुभम् ॥१५७॥

१. गुडूची, २. पित्तपापड़ा, ३. नागरमोथा, ४. चिरायता और ५. सोंठ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वातपित्तज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें। पाँच अच्छे ज्वरनाशक द्रव्यों के कारण इसका नाम पञ्चभद्र रखा गया है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज्वर में।

८५. त्रिफलादि क्वाथ (चक्रदत्त)

त्रिफलाशाल्मलीरास्नाराजवृक्षाटरूषकैः।
शृतमम्बु हरत्याशु वातपित्तोद्भवं ज्वरम् ॥१५८॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. सेमर की छाल, ५. रास्ना, ६. अमलतास फलमज्जा तथा ७. वासामूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वातपित्तज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें। इससे वातपित्त ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज्वर में

८६. निदिग्धिकादि क्वाथ (चक्रदत्त)

निदिग्धिकाबलारास्नात्रायमाणाऽमृतायुतैः।
मसूरविदलैः क्वाथो वातपित्तज्वरं हरेत् ॥१५९॥

१. कण्टकारी, २. बला, ३. रास्ना, ४. त्रायमाण, ५. गुडूची और ६. मसूर की दाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वातपित्तज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज्वर में।

८७. किराततिक्तादि क्वाथ (हारीत)

किराततिक्तामलकीशटीनां
द्राक्षोषणानागरकामृतानाम्।
क्वाथः सुशीतो गुडसंयुतः स्यात्,
सपित्तवातज्वरनाशहेतुः ॥१६०॥

१. चिरायता, २. कटुकी, ३. आमलकी, ४. कचूर, ५. दाख, ६. मरिच, ७. सोंठ तथा ८. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा शीतल होने पर ५० मि.ली. शीतल क्वाथ में गुड़ मिलाकर वातपित्तज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें। इससे वातपित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज्वर में।

८८. मधुकादि शीतकषाय (चक्रदत्त)

मधुकं सारिवे द्राक्षां मधूकं चन्दनोत्पलम्।
काश्मरीं पद्मकं लोध्रं त्रिफलां पद्मकेशरम् ॥१६१॥
परूषकं मृणालं च न्यसेदुत्तमवारिणि।
मधुलाजसितायुक्तं तत्पीतमुषितं निशि ॥१६२॥
वातपित्तज्वरं दाहतृष्णामूर्च्छावमिभ्रमान्।
संहरेद्रक्तपित्तञ्च जीमूतानिव मारुतः ॥१६३॥

१. मुलेठी, २. श्वेत अनन्तमूल, ३. कृष्ण अनन्तमूल, ४. दाख, ५. महुआ के फूल, ६. लाल चन्दन, ७. नीलकमल, ८. गम्भार की छाल, ९. पद्मकाठ, १०. लोध्र, ११. आमला, १२. हरीतकी, १३. बहेड़ा, १४. कमलकेशर, १५. फालसा तथा १६. खस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर मिट्टी की नयी हाँडी में १०० मि.ली. शुद्ध साफ मीठा जल के साथ मिलाकर रात्रिपर्यन्त खुले आसमान में रखें तथा सुबह साफ हाथ से अच्छी तरह से मसल कर वस्त्रपूत करें और इसमें मधु, शर्करा एवं धान की खील डाल कर आलोडित करें। इस कषाय को वातपित्तज्वर से पीड़ित रोगी को प्रातः पिलाने से—दाह, प्यास, मूर्च्छा, वमन, भ्रम और रक्तपित्त आदि उपद्रवों से युक्त वातपित्त ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव युक्त वातपित्तज्वर में।

८९. निदिग्धिकादि क्वाथ (चक्रदत्त)

निदिग्धिकानागरकामृतानां
क्वाथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम्।
जीर्णज्वरारोचककासशूल-
श्वासाग्निमान्द्यानिलपित्तजेषु ॥१६४॥

१. कण्टकारी, २. सोंठ एवं ३. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. क्वाथ में पीपरचूर्ण २ ग्रा. मिलाकर पिलाने से जीर्णज्वर, अरुचि, कास, शूल, श्वास, अग्निमान्द्यादि उपद्रव से युक्त वातपित्त ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव युक्त वातपित्तज्वर में।

पित्तश्लेष्मज्वर

९०. पटोलादि क्वाथ (वङ्गसेन)

पटोलयवधन्याकं मुद्गामलकचन्दनम्।
पैत्तिके श्लेष्मपित्तोत्थे ज्वरे तृट्छर्दिदाहनुत् ॥१६५॥

१. पटोलपत्र, २. यव (जौ), ३. धनियाँ, ४. मूँग, ५. आमला और ६. लालचन्दन—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ-विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पित्तज्वर एवं पित्तश्लेष्मज्वर से पीड़ित रोगी की दाह, तृषा एवं वमनादि उपद्रव की शान्ति के लिए ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर एवं श्लेष्मज्वर में।

९१. कण्टकार्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

कण्टकार्यमृताभार्गीनागरेन्द्रयवासकम्।
भूनिम्बं चन्दनं मुस्तं पटोलं कटुरोहिणी ॥१६६॥
कषायं पाययेदेतं पित्तश्लेष्मज्वरापहम्।
दाहतृष्णाऽरुचिच्छर्दिकासहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥१६७॥

१. कण्टकारी, २. गुडूची, ३. भारंगी, ४. सोंठ, ५. इन्द्रयव, ६. वासामूल, ७. चिरायता, ८. लालचन्दन, ९. नागरमोथा, १०. परवलपत्र तथा ११. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा दाह, तृष्णा, अरुचि, वमन, कास, हृच्छूल, पार्श्वशूल आदि उपद्रवों से युक्त पित्तश्लेष्मज्वर की शान्ति के लिए ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव युक्त पित्तश्लेष्मज्वर में।

९२. नागरादि क्वाथ (भावप्रकाश)

नागरोशीरबिल्वाब्दधान्यमोचरसाम्बुभिः।
कृतः क्वाथो भवेद् ग्राही पित्तश्लेष्मज्वरापहः ॥१६८॥

१. सोंठ, २. खस, ३. बिल्वफलमज्जा, ४. सुगन्धबाला, ५. धनियाँ, ६. मोचरस और ७. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा शीतल होने पर ५० मि.ली. क्वाथ को पित्त-श्लेष्मज्वरनाशनार्थ पिलावें। यह क्वाथ ग्राही भी है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तश्लेष्मज्वर में।

९३. पटोलादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पटोलं पिचुमर्दश्च त्रिफला मधुकं बला।
साधितोऽयं कषायः स्यात् पित्तश्लेष्मोद्भवे ज्वरे ॥१६९॥

१. परवलपत्र, २. नीम की छाल, ३. आमलकी, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. मुलेठी तथा ७. बला मूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पित्त-श्लेष्मज्वरशान्त्यर्थ ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली। **उपयोग**–पित्तश्लेष्मज्वरशान्त्यर्थ।

९४. पटोलादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पटोलं चन्दनं मूर्वा तिक्ता पाठाऽमृता गणः।
पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहकण्डूविषापहः ॥१७०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. परवलपत्र, २. लालचन्दन, ३. मूर्वा, ४. कुटकी, ५. पाठा और ६. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वमन, दाह, खुजली एवं विषबाधा आदि उपद्रवों से युक्त पित्तश्लेष्मज्वरनाशनार्थ ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव युक्त पित्तश्लेष्मज्वर में।

९५. पञ्चतिक्त क्वाथ (चक्रदत्त)

क्षुद्रामृताभ्यां सह नागरेण
सपौष्करञ्चैव किराततिक्तम्।
पिबेत्कषायन्त्विह पञ्चतिक्तं
ज्वरं निहन्त्यष्टविधं समग्रम् ॥१७१॥

१. कण्टकारी, २. गुडूची, ३. सोंठ, ४. पुष्करमूल और ५. चिरायता—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा सभी प्रकार के अष्टविध ज्वरनाशनार्थ ५० मि.ली. शीतल क्वाथ रोगी को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सभी प्रकार के अष्टविध ज्वर-नाशनार्थ।

९६. कटुरोहिणी चूर्ण (चक्रदत्त)

सशर्करामलक्षमात्रां कटुकामुष्णवारिणा।
पीत्वा ज्वरं जयेज्जन्तु कफपित्तसमुद्भवम् ॥१७२॥

१. कुटकीचूर्ण १० ग्राम तथा शर्करा १० ग्राम मिलाकर गरम पानी से सेवन करने से पित्त एवं कफ से उत्पन्न ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१०-१० ग्राम दोनों। **उपयोग**–कफ-पित्तज ज्वर में।

९७. चातुर्भद्रक क्वाथ (चक्रदत्त)

किरातं नागरं मुस्तं गुडूचीञ्च कफाधिके।

१. चिरायता, २. सोंठ, ३. नागरमोथा और ४. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा कफाधिक्य ज्वर में ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफज्वर में।

९८. पाठादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पाठोदीच्यमृणालैस्तु सह पित्ताधिके पिबेत् ॥१७३॥

१. पाठा, २. सुगन्धबाला तथा ३. खस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पित्ताधिक्य ज्वर में ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तज्वर में।

९९. वासास्वरस (चक्रदत्त)

सपत्रपुष्पवासाया रसः क्षौद्रसितायुतः।
कफपित्तज्वरं हन्ति सासृक्पित्तं सकामलम् ॥१७४॥

१. वासापत्र एवं २. वासापुष्प अर्थात् पुष्प सहित वासापत्र लेकर साफ जल से अच्छी तरह धो लें और कूट कर सिल पर पीस लें या पुटपाक विधि से रस निकाल कर उसमें अष्टमांश मधु एवं चीनी मिलावें और १ तोला (१२ मि.ली.) पिलाने से कामला एवं रक्तपित्तादि उपद्रव से युक्त कफपित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२ मि.ली. स्वरस। **उपयोग**–उपद्रव युक्त कफपित्तज्वर में।

१००. अमृताष्टक क्वाथ (चक्रदत्त)

अमृतेन्द्रयवारिष्टपटोलं कटुरोहिणी।
नागरं चन्दनं मुस्तं पिप्पलीचूर्णसंयुतम् ॥१७५॥
अमृताष्टक इत्येष पित्तश्लेष्मज्वरापहः।
हृल्लासारोचकच्छर्दिपिपासादाहनाशनः ॥१७६॥

१. गुडूची, २. इन्द्रयव, ३. नीम की छाल, ४. परवलपत्र, ५. कुटकी, ६. सोंठ, ७. लालचन्दन और ८. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा २ से ४ ग्रा. पिप्पली चूर्ण मिलाकर पीने से मिचली, अरुचि, वमन, प्यास एवं दाह आदि उपद्रव से युक्त पित्त-श्लेष्म ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तश्लेष्मज्वर में।

१०१. भार्ग्यादि क्वाथ (सुश्रुत)

भार्गीविचापर्पटकधान्यहिङ्ग्वभयाघनैः।
काश्मर्यनागरैः क्वाथः सक्षौद्रः श्लेष्मपित्तजे ॥१७७॥

१. भारंगी, २. वच, ३. पित्तपापड़ा, ४. धनियाँ, ५. हींग, ६. हरीतकी, ७. नागरमोथा, ८. गम्भारछाल तथा ९. सोंठ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पित्तश्लेष्मज्वर से पीड़ित रोगी में ५० मि.ली. क्वाथ मधु के साथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तकफज्वर में।

१०२. भद्रमुस्तादि क्वाथ

भद्रमुस्ता नागरं वा गुडूच्यामलकाह्वयम्।
पाठामृणालोदीच्योत्थः क्वाथः पित्तज्वरे कफे ॥१७८॥

१. नागरमोथा, २. सोंठ, ३. गुडूची, ४. आमला, ५. पाठा, ६. खस तथा ७. सुगन्धबाला—इन सभी द्रव्यों को समभाग

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण में लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पित्तज्वर एवं कफज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. क्वाथ पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है। कफज्वर में सोष्ण एवं पित्तज्वर में शीत क्वाथ पिलावें। अथवा केवल गुडूची तथा आमला क्वाथ पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफ एवं पित्त ज्वर में।

१०३. द्राक्षादि क्वाथ (हारीत)

द्राक्षाऽमृतावासकरिष्टकानां
भूनिम्बतिक्तेन्द्रयवाः पटोलम्।
मुस्ता सभार्गी क्वथितः कषायः
श्लेष्मज्वरं पित्तयुतं निहन्ति ॥१७९॥

१. दाख, २. गुडूची, ३. वासामूल, ४. नीम की छाल, ५. चिरायता, ६. कुटकी, ७. इन्द्रयव, ८. परवलपत्र, ९. नागरमोथा और १०. भारंगी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पित्तश्लेष्मज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तकफज्वर में।

१०४. गुडूच्यादि क्वाथ (हारीत)

गुडूचिकानिम्बकवासकञ्च
शटी किरातं मगधाबृहत्यौ।
दार्वी पटोलं क्वथितः कषायः
पिबेन्नरः पित्तकफज्वरे च ॥१८०॥

१. गुडूची, २. नीम की छाल, ३. वासामूल, ४. कचूर, ५. चिरायता, ६. पीपर, ७. कण्टकारी, ८. बृहती, ९. दारुहल्दी एवं १०, परवलपत्र—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पित्तकफज्वरपीड़ित रोगी को शमनार्थ ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तकफज्वर में।

वातश्लेष्मज्वर

स्वेद प्रक्रिया (चक्रदत्त)

कफवातज्वरे स्वेदान् कारयेद् रूक्षनिर्मितान्।
स्रोतसां मार्दवं कृत्वा नीत्वा पावकमाशयम्।
हत्वा वातकफस्तम्भं स्वेदो ज्वरमपोहति ॥१८१॥

कफवातज्वर में रूक्ष स्वेद दें। स्वेद सम्पूर्ण स्रोतों को मृदु करता है, जाठराग्नि को स्वस्थान (आमाशय) में लाकर वात-कफजन्य दोष और मल-मूत्र की स्तब्धता दूर कर ज्वर को नाश करता है।

१०५. बालुकास्वेद (चक्रदत्त)

खर्परभृष्टपटस्थितकाञ्जिकसिक्तो हि बालुकास्वेदः।
शमयति वातकफामयमस्तकशूलाङ्गभङ्गादीन् ॥१८२॥
वीक्ष्य स्वेदविधिं कुर्यात् स्वेदनं बालुकादिभिः।
सर्वाङ्गे यदि वा यत्र वेदना सम्प्रजायते ॥१८३॥

खर्पर (मिट्टी की खपड़ी) या मिट्टी की हाँडी या लोहे की कड़ाही को प्रज्वलित चूल्हे पर रख कर गरम करें, उसमें छननी से छनी हुई बालू २ किलो के लगभग डालकर गरम करें। १ किलो गरम बालू मोटे किन्तु मजबूत कपड़े में डालकर पोटली जैसा बनावे तथा उस प्रतप्त पोटली को काञ्जी में भिगोकर वात-कफज्वर से पीड़ित रोगी के अंगमर्द स्थान का स्वेदन करें। इस बालुका-स्वेदन से शिरोवेदना एवं अंग-भंग (टूटने जैसी वेदना वाला अंग) आदि वेदनाएँ शान्त हो जाती हैं। बालू के ठण्डा होने पर पुनः प्रतप्त बालू लेकर स्वेदन करें। इस रूक्ष स्वेदन से मृदु स्थान—नेत्र, वृषण, हृदयादि प्रदेशों—को छोड़कर स्वेदन करना चाहिए।

स्वेदन-कालावधि (चरक)

शीतशूलव्युपरमे स्तम्भगौरवनिग्रहे।
सञ्जातमार्दवे स्वेदे स्वेदनाद्विरतिर्मता ॥१८४॥

शरीर के अन्दर उत्पन्न शीतलता एवं अंगवेदना नष्ट हो जाने पर, शरीर की जकड़न (स्तब्धता) और भारीपन (गुरुता) के नष्ट हो जाने पर, शरीर के सम्पूर्ण स्रोतस् के मृदु हो जाने पर तथा शरीर से पसीना निकलने लगने पर स्वेदन बन्द कर देना चाहिए।

स्वेद-विधान

आमज्वरे वातबलासजे वा
कफोत्थिते मारुतसम्भवे वा।
त्रिदोषजे स्वेदमुदाहरन्ति
स्तम्भप्रमोहाङ्गरुजाप्रसान्त्यै ॥१८५॥

आमज्वर या आमवातज्वर में, वातकफज्वर में या कफज ज्वर में या वातज ज्वर में तथा सन्निपातज ज्वर में स्वेदकर्म करना चाहिए। शरीरस्थ अंग-प्रत्यंगों की स्तब्धता (जकड़न), मूर्च्छा एवं अङ्ग-प्रत्यङ्गों की वेदना की शान्ति के लिए भी स्वेदन कर्म करना चाहिए।

१०६. पिप्पली क्वाथ (चक्रदत्त)

पिप्पलीभिः श्रृतं तोयमनभिष्यन्दि दीपनम्।
वातश्लेष्मविकारघ्नं प्लीहज्वरविनाशनम् ॥१८६॥

पिप्पली से सिद्ध क्वाथ अनभिष्यन्दि[1] और अग्निदीपक है।

---

१. जो अभिष्यन्दी नहीं हो—
पैच्छिल्याद् गौरवाद् द्रव्यं रुद्ध्वा रसवहाः शिराः।
धत्ते यद्गौरवं तत्स्यादभिष्यन्दी यथा दधि ॥ (शार्ङ्गधर)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यह क्वाथ वात-कफजन्य विकारों का नाश करता है तथा प्लीहा-वृद्धिजन्य ज्वर या प्लीहावृद्धियुक्त ज्वर का नाश करता है।

मात्रा–५० मि.ली.।

१०७. मुस्तादि क्वाथ (चक्रदत्त)

मुस्तानागरभूनिम्बं त्रयमेतत्त्रिकार्षिकम्।
कफवातामशमनं पाचनं ज्वरनाशनम् ॥१८७॥

१. नागरमोथा, २. सोंठ और ३. चिरायता—ये तीनों द्रव्य १२-१२ ग्राम (१-१ तोला) लेकर चूर्णकर १६ गुना जल के साथ क्वाथ करें तथा १६वाँ भाग शेष रहने पर छान कर सोष्ण क्वाथ पिलाने से वातकफज्वर में कफदोष, वातदोष, आमदोष का शमन एवं पाचन हो जाता है; साथ ही ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

१०८. पञ्चकोल फाण्ट (चक्रदत्त)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम्।
दीपनीयः शृतो वर्गः कफानिलगदापहः ॥१८८॥

१. पीपर, २. पिपरामूल, ३. चव्य, ४. चित्रकमूल तथा ५. सोंठ। ये पाँचों द्रव्य १-१ कोल (६-६ ग्राम) की मात्रा में लेकर यवकुट कर लें। कुल मिलाकर २½ तोला अर्थात् ३० ग्राम द्रव्य लें और १० तोला (१२० मि.ली.) उबलते जल में इस द्रव्य को डालकर तुरन्त अग्नि से नीचे उतार कर ढ़क दें। १-२ मिनट के बाद छान कर चीनी मिलाकर ५० मि.ली. पीने से कफ एवं वातजन्य ज्वर, अंगमर्द, कास, जुकाम आदि नष्ट हो जाते हैं तथा यह फाण्ट दीपन है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वात-कफज्वर एवं कास में।

विमर्श—यहाँ पर "कोल" शब्द महत्त्वपूर्ण है। कोल बदरी-फल को कहते हैं। यहाँ कोल मान का पर्याय है जो कर्ष का आधा तौल का द्योतक है अर्थात् वर्तमान में यह ६ ग्राम का द्योतक है।

१०९. क्षुद्रादि क्वाथ (चक्रदत्त)

क्षुद्राऽमृतानागरपुष्कराह्वयैः
कृतः कषायः कफमारुतोत्तरे।
सश्वासकासरुचिपार्श्वरुक्करे-
ज्वरे त्रिदोषप्रभवेऽपि शस्यते ॥१८९॥

१. कण्टकारी, २. गुडूची, ३. शुण्ठी तथा ४. पुष्करमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा श्वास, कास, अरुचि एवं पार्श्वशूल आदि उपद्रवों से युक्त वातकफज्वर तथा सन्निपात ज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

११०. निम्बादि क्वाथ (वङ्गसेन)

निम्बामृताविश्वदारुकट्फलं कटुका वचा।
कषायं पाययेदाशु वातश्लेष्मज्वरापहम्।
पूर्वभेदशिरःशूलकासारोचकपीडितम ॥१९०॥

१. नीम की छाल, २. गुडूची, ३. शुण्ठी, ४. देवदारु, ५. कायफल, ६. कुटकी और ७. वच—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा जोड़ों के दर्द, शिरःशूल, कास एवं अरुचि आदि उपद्रवों से युक्त वातश्लेष्मज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातश्लेष्मज्वर में।

१११. रास्नादि क्वाथ

रास्ना द्राक्षा वचा पथ्या यमानी मधुयष्टिका।
मधूरिकेन्द्रबीजश्च तिक्ता विश्वं गुडूचिका ॥१९१॥
द्विमाषमेषां प्रत्येकं ग्राहयेत् कुशलो भिषक्।
पचेदष्टपले तोये ग्राह्यं पादावशेषितम् ॥१९२॥
शीते च मधुनाश्चात्र पलार्धं प्रक्षिपेत् सुधीः।
मुहुर्दण्डान्तरैः पानाज्ज्वरो याति न संशयः ॥१९३॥

१. रास्ना, २. दाख, ३. वच, ४. हरीतकी, ५. अजवायन, ६. मुलेठी, ७. यवानी, ८. इन्द्रयव, ९. कुटकी, १०. शुण्ठी तथा ११. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. शीतल क्वाथ में चौथाई मधु डालकर १-१ घण्टा के बाद ज्वरपीड़ित रोगी को पिलाने से ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सभी तरह के ज्वर में।

११२. आरग्वधादि क्वाथ (चक्रदत्त)

आरग्वधग्रन्थिकमुस्ततिक्ता-
हरीतकीभिः क्वथितः कषायः।
सामे सशूले कफवातयुक्ते
ज्वरे हितो दीपनपाचनश्च ॥१९४॥

१. अमलतासफलमज्जा, २. पिपरामूल, ३. नागरमोथा, ४. कुटकी तथा ५. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा आमदोष एवं शूलादि उपद्रवों से युक्त कफवात युक्त ज्वर से पीड़ित रोगी को पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है। यह आमदोष को पचाता है और अग्निदीपक है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफवातज्वर में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

११३. त्रिफलादि क्वाथ (चरक)

त्रिफला त्रायमाणा च मृद्वीका कटुरोहिणी ।
वातश्लेष्महरस्त्वेष कषायो ह्यानुलोमिकः ॥१९५॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. त्रायमाण, ५. द्राक्षा और ६. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ कफवातज्वर-पीड़ित रोगी को पिलावें। यह क्वाथ कफवातज्वरनाशक एवं वातानुलोमक है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफवातज्वर में।

११४. मुस्तकादि क्वाथ (हारीत)

मुस्ता गुडूची सह नागरेण
वासा जलं पर्पटकं च पथ्या ।
क्षुद्रा च दुःस्पर्शयुतः कषायः
पाने हितो वातकफज्वरेऽस्ति ॥१९६॥

१. नागरमोथा, २. गुडूची, ३. शुण्ठी, ४. वासामूल, ५. सुगन्धबाला, ६. पित्तपापड़ा, ७. हरीतकी, ८. कण्टकारी और ९. यवासा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वातकफज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलावें। इस क्वाथ को पीने से वातकफज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

११५. दशमूली क्वाथ (चक्रदत्त)

दशमूलीरसः पेयः कणायुक्तः कफानिले ।
अविपाकेऽतितन्द्रायां पार्श्वरुक्श्वासकासके ॥११७॥

१. बिल्वत्वक्, २. अग्निमन्थछाल, ३. सोनापाठाछाल, ४. पाढलछाल, ५. गम्भारछाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्नि-पर्णी, ८. कण्टकारी, ९. बृहती तथा १०. गोखरु—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा इसमें पिप्पलीचूर्ण का प्रक्षेप देकर ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ वातकफ- ज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें। इसके पीने से वातकफज्वर में आमदोष, अतितन्द्रा, पार्श्वशूल, श्वास एवं कास जन्य उपद्रव एवं ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

११६. दार्व्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

दारुपर्पटभार्ग्यब्दवचाधान्यककट्फलैः ।
साभयाविश्वपूतीकैः क्वाथो हिङ्गुमधूत्कटः ॥१९८॥
कफवातज्वरे पीतो हिक्काशोषगलग्रहान् ।
श्वासकासप्रसेकांश्च हन्यात्तरुमिवाशनिः ॥१९९॥

१. देवदारु, २. पित्तपापड़ा, ३. भारंगी, ४. नागरमोथा, ५. वच, ६. धनियाँ, ७. कायफल, ८. हरीतकी ९. शुण्ठी और १०. पूतिकरञ्ज—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा हिक्का, शोष, गलग्रह, श्वास, कास एवं हल्लास आदि उपद्रव से युक्त वातकफज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ में शुद्ध हींग एवं मधु मिलाकर पिलावें। इससे वात-कफज्वर उपद्रव रहित होकर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

११६. मुस्तादि क्वाथ (चक्रदत्त)

मुस्तपर्पटदुःस्पर्शगुडूचीविश्वभेषजम् ।
कफवातारुचिच्छर्दिदाहशोषज्वरापहम् ॥२००॥

१. नागरमोथा, २. पित्तपापड़ा, ३. दुरालभा, ४. गुडूची तथा ५. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा कफ-वातजन्य विकार, अरुचि, वमन, दाह, शोष आदि उपद्रव से युक्त वातकफज्वर से पीड़ित रोगी में ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलाने से उपद्रवजनित ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

११८. किरातादि क्वाथ (भावप्रकाश)

किरातविश्वामृतवल्लिसिंही-
कणाकणामूलरसोनसिन्दुकैः ।
कृतः कषायो विनिहन्ति शीघ्रं
ज्वरं मरुत्तः सकफात्समुत्थितम् ॥२०१॥

१. चिरायता, २. शुण्ठी, ३. गुडूची, ४. कण्टकारी ५. पीपर, ६. पिपरामूल, ७. लहसुन और ८. सिन्दुवार—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वातकफज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

११९. पिप्पल्यादि क्वाथ (बृहत्) (भावप्रकाश)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम् ।
वचा सातिविषाऽजाजी पाठावत्सकरेणुकाः ॥२०२॥
किराततिक्तको मूर्वा सर्षपो मरिचानि च ।
कट्फलं पुष्करं भार्गी विडङ्गं कर्कटाह्वयम् ॥२०३॥
अर्कमूलं बृहत्सिंही श्रेयसी सदुरालभा ।
दीप्यकश्चाजमोदा च शुकनासा सहिङ्गुका ॥२०४॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एतानि समभागानि गण एकोऽष्टविंशतिः।
एषां क्वाथो निपीतः स्याद्वातश्लेष्मज्वरापहः ॥२०५॥
हन्ति वातं तथा शीतं प्रस्वेदमतिवेपथुम्।
प्रलापं चातिनिद्रां च रोमहर्षारुची तथा ॥२०६॥
महावातेऽपतन्त्रे च शूले च सर्वगात्रजे।
पिप्पल्यादिमहाक्वाथो ज्वरे सर्वत्र पूज्यते ॥२०७॥

१. पीपर, २. पिपरामूल, ३. चव्य, ४. चित्रकमूल, ५. शुण्ठी, ६. वच, ७. अतीस, ८. कारवी, ९. पाठा, १०, कुटजछाल, ११. रेणुकबीज, १२, चिरायता, १३ मूर्वा, १४. सरसों, १५. मरिच, १६. कायफल, १७. पुष्करमूल, १८. भारंगी, १९. वायविडंग, २०. काकड़ासिंगी, २१. अर्कमूल-त्वक् २२. बृहती, २३. हरीतकी, २४. यवासा, २५. यवानी, २६. अजमोदा, २७. सोनापाठा और २८. हींग—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वात, शीत, पसीना, कम्प, प्रलाप, अतिनिद्रा, रोमाञ्च, अरुचि, प्रवृद्ध वात, अपतन्त्रक एवं सर्वाङ्गशूलादि उपद्रव से युक्त वातकफज्वर के रोगी को ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें। इससे सभी उपद्रव एवं ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह २८ द्रव्यों वाला 'पिप्पल्यादि महाक्वाथ' सभी ज्वरों में लाभप्रद हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातकफज्वर में।

सन्निपातज्वर

चिकित्साक्रम (चक्रदत्त)

लङ्घनं बालुकास्वेदो नस्यं निष्ठीवनन्तथा।
अवलेहोऽञ्जनञ्चैव प्राक्प्रयोज्यं त्रिदोषजे ॥२०८॥

वात-पित्त-कफ ये तीनों (त्रिदोष) दोषों के प्रकोप से उत्पन्न हुए सन्निपातज्वर में प्रथम, लंघन (उपवास), बालुकास्वेद, नस्य, निष्ठीवन (कफ सहित थूकना), अवलेह एवं अञ्जन—इन कर्मों का प्रयोग करना चाहिए।

सन्निपातज्वरे पूर्वं कुर्यादामकफापहम्।
पश्चाच्छ्लेष्मणि संक्षीणे शमयेत्पित्तमारुतौ ॥२०९॥

सन्निपात ज्वर में सर्वप्रथम आमदोष एवं बढ़े हुए कफदोष का शमन तथा नाश करना चाहिए। कफ के क्षीण होने पर पित्त और वात का प्रशमन करना चाहिए।

लंघन-काल (चक्रदत्त)

त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा दशरात्रमथापि वा।
लङ्घनं सन्निपातेषु कुर्यादारोग्यदर्शनात् ॥२१०॥
दोषाणामेव सा शक्तिर्लङ्घने या सहिष्णुता।
न हि दोषक्षये कश्चित् सहते लङ्घनादिकम् ॥२११॥

सन्निपातज्वर में दोषों के बलाबल का विचार कर वाताधिक्य में तीन दिन, पित्ताधिक्य में पाँच दिन और कफाधिक्य में दस दिनों तक लंघन कराना चाहिए। अथवा सामान्य नियम यह है कि जब तक आरोग्य न हो अर्थात् जब तक आमरस तथा दोषों का सम्यक् परिपाक न हो जाय, तब तक लंघन कराना चाहिए। जब तक रोगी लंघन को सहता है तब तक यह समझना चाहिए कि इस रोगी में अभी प्रवृद्ध दोष शेष हैं। प्रवृद्ध दोषों में ही यह शक्ति है जिससे रोगी लंघनादि को सामान्यतया सहता है। दोषों का क्षय हो जाने पर कोई भी रोगी (व्यक्ति) क्षणमात्र के लिए भी लंघन-स्वेद आदि कर्म नहीं सहन कर सकता है। वस्तुतः यही लंघन काल है।

स्वेदन

न स्वेदव्यतिरेकेण सन्निपातः प्रशाम्यति।
तस्मान्मुहुर्मुहुः कार्यं स्वेदनं सन्निपातिनाम् ॥२१२॥

स्वेदन के बिना सन्निपातज्वर शान्त नहीं होता है। अतः सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगियों को शान्त्यर्थ पुनः-पुनः स्वेदन कर्म कराते रहना चाहिए। स्वेदन कर्म से शरीरस्थ विषाक्तता पसीने के साथ बाहर निकल जाती है जिससे शरीर में लघुता आ जाती है; अरति, अनिद्रा, प्रलाप, अंगमर्द, बेचैनी आदि दूर हो जाती है, साथ ही ज्वर भी घटने लगता है एवं क्रम से ज्वर का नाश हो जाता है।

सन्निपातज्वर में अग्नि-उपचार

सन्निपाते जलमयो नराणां विग्रहो भवेत्।
विना वह्न्युपचारेण कस्तं शोषयितुं क्षमः ॥२१३॥

सन्निपातज्वर से पीड़ित मनुष्य का शरीर कफ का प्राबल्य होने से जलमय हो जाता है, इसे दूर करने के लिए अग्नि-उपचार के बिना सुखाने में दूसरा कौन समर्थ हो सकता है? अतः जलीयांश सुखाने के लिए हमेशा वह्न्युपचार (स्वेदन) करते रहना चाहिए।

वह्न्युपचारार्थ अन्य सन्दर्भ

प्रयोगा बहवः सन्ति सविषा निर्विषा अपि।
वह्न्युष्माणं विना प्रायो न वीर्यं दर्शयन्ति ते ॥२१४॥

सन्निपातज्वर को शान्त करने के लिए अनेक सविष एवं निर्विष (विषोपविष-रसोपरसादि योग) उपाय हैं किन्तु अग्नि द्वारा स्वेदन के बिना उनका प्रभाव नहीं देखा जाता है।

सन्निपातज्वर में अग्निदग्ध कर्म

प्रतिक्रियाविधावेवं यस्य संज्ञा न जायते।
पादतले ललाटे वा दहेल्लोहशलाकया ॥२१५॥

उपर्युक्त स्वेदनादि कर्म करने पर भी जिस सन्निपातज्वर में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रोगी की मूर्च्छा दूर नहीं होती हो तो रोगी के पादतल या ललाट प्रदेश में तप्तलोहशलाका से दग्धकर्म करना चाहिए।

लौहित्ये नेत्रयोर्वान्तौ प्रलापे मूर्द्धचालने।
न स्वेदः शुभदो ज्ञेयस्तत्र शीतक्रिया हिता ॥२१६॥

जिस सन्निपातज्वरग्रस्त रोगी की दोनों आँखें लाल हों, वमन होता हो, प्रलाप करता हो एवं सिर इधर-उधर बराबर घुमाता हो तो ऐसी स्थिति में स्वेदन करना श्रेयस्कर नहीं होता है। किन्तु इस अवस्था में शीतोपचार करना रोगी के लिए हितकर होता है।

१२०. मातुलुङ्गादि नस्य (चक्रदत्त)

मातुलुङ्गार्द्रकरसं कोष्णं त्रिलवणान्वितम्।
अन्यद्वा सिद्धिविहितं तीक्ष्णं नस्यं प्रयोजयेत् ॥२१७॥
तेन प्रभिद्यते श्लेष्मा प्रभिन्नश्च प्रसिच्यते।
शिरोहृदयकण्ठास्य-पार्श्वरुक् चोपशाम्यति ॥२१८॥

बिजौरानिम्बु का रस एवं आर्द्रकस्वरस समभाग में लेकर हल्का गरम करें और उसमें सैन्धव, सौवर्चल एवं विड तीनों लवणों को अल्प मात्रा में मिलाकर सन्निपातज्वरग्रस्त रोगी को नस्य देना चाहिए। अथवा चरक-सिद्धिस्थान में निर्दिष्ट तीक्ष्ण नस्यों का प्रयोग करें। ऐसा करने से कफ द्रवित होकर बाहर निकल जाता है, फलतः सिर, हृदय, कण्ठ, मुख एवं पार्श्व की पीड़ा दूर हो जाती है।

१२१. मधूकसारादि नस्य (चक्रदत्त)

मधूकसारसिन्धूत्थवचोषणकणाः समाः।
श्लक्ष्णं पिष्ट्वाऽम्भसा नस्यं कुर्यात् संज्ञाप्रबोधनम् ॥२१९॥

१. महुए के फूल का रस या क्वाथ, २. सैन्धवलवण, ३. वचचूर्ण, ४. मरिचचूर्ण तथा ५. पिप्पलीचूर्ण—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सिल पर खूब महीन चूर्ण कर महुए के क्वाथ में घोलकर मूर्च्छित सन्निपातज्वरग्रस्त रोगी को नस्य देने से मूर्च्छा दूर हो जाती है।

१२२. सैन्धवादि नस्य (चक्रदत्त)

सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्षपं कुष्ठमेव च।
बस्तमूत्रेण सम्पिष्य नस्यं तन्द्राविनाशनम् ॥२२०॥

१. सैन्धवनमक, २. शिग्रुबीज, ३. सरसों तथा ४. कूठ—इन सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण समभाग में लेकर बकरी के मूत्र में घोल कर कोष्ण द्रव से नस्य देने से सन्निपातज्वरपीड़ित व्यक्ति की तन्द्रा नष्ट हो जाती है।

१२३. लशुनादि नस्य

रसोनं मरिचं पिष्टं नस्यं स्याच्छ्लेष्मनाशनम् ॥२२१॥

१. लशुन एवं २. मरिच—दोनों समभाग में लें और पीस कर वस्त्रपूत चूर्ण करें और सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को कफनाशनार्थ इस नस्य का प्रयोग करें। अर्थात् इस नस्य के प्रयोग से कफ द्रवित होकर नाक से बाहर आ जाता है।

१२४. षड्ग्रन्थादि नस्य (हारीत)

षड्ग्रन्थिसैन्धवकणाः समधूकसाराः
पिष्ट्वा समेन मरिचेन जलैः कदुष्णैः।
नस्यं निवारयति शीघ्रमचेतनत्वं
तन्द्राप्रलापसहितं शिरसो गुरुत्वम् ॥२२२॥

१. पिपरामूल, २. सैन्धवलवण, ३. पीपर, ४. महुए के फूलसार तथा ५. मरिच—१ से ४ संख्या तक के सभी द्रव्य समभाग में लें और इन्हें कूटकर वस्त्रपूत चूर्ण कर लें तथा इन चूर्णों के बराबर मरिच का सूक्ष्म चूर्ण मिलावें एवं सुखोष्ण जल में घोल कर नस्य देने से सन्निपातज्वरग्रस्त रोगी की मूर्च्छा, तन्द्रा, प्रलाप एवं सिर का भारीपन आदि उपद्रव शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

१२५. आर्द्रकादि निष्ठीवन (चक्रदत्त)

आर्द्रकस्वरसोपेतं सैन्धवं सकटुत्रयम्।
आकण्ठं धारयेदास्ये निष्ठीवेच्च पुनः पुनः ॥२२३॥
तेनास्य हृदयाच्छ्लेष्मा मन्यापार्श्वशिरोगलात्।
लीनोऽप्याकृष्यते शुष्को लाघवञ्चास्य जायते ॥२२४॥
पर्वभेदो ज्वरो मूर्च्छा निद्राकासगलामयाः।
मुखाक्षिगौरवं जाड्यमुत्क्लेशश्चोपशाम्यति ॥२२५॥
एकद्वित्रिचतुः कुर्याद् दृष्ट्वा दोषबलाबलम्।
एतद्धि परमं प्राहुर्भेषजं सन्निपातिनाम् ॥२२६॥

१. शुण्ठी, २. पीपर, ३. मरिच, ४. सैन्धवलवण और ५. आर्द्रक स्वरस—१-४ तक के सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करके आर्द्रकस्वरस में मिलाकर किञ्चिदुष्ण करके कण्ठ में धारण करें और कुछ देर के बाद उक्त द्रव का निष्ठीवन (थूक दें) करें। ऐसा बार-बार करने से मुख, हृदय (उरःप्रदेश), मन्या (ग्रीवा), पार्श्व (पसलियों), सिर एवं गले में लीन (रुका हुआ या सूखा हुआ) कफ द्रवित होकर मुखमार्ग से थूक के साथ बाहर निकल जाता है और शरीर तथा मुख में लघुता आ जाती है। इस क्रिया से जोड़ों में दर्द, ज्वर, मूर्च्छा, अतिनिद्रा, कास, गलरोग, मुखरोग, नेत्ररोग या इनका भारीपन, शरीर की जड़ता या अंगों की जकड़न एवं उत्क्लेश आदि कष्ट नष्ट हो जाते हैं। दोष (कफ) का बलाबल देखकर एक-दो-तीन-चार बार या पुनः-पुनः यह क्रिया करनी चाहिए। सन्निपातज्वरग्रस्त रोगी में कफ-वात के उपद्रवों में यह चिकित्सा अत्यन्त श्रेष्ठ है।

१२६. अष्टाङ्गावलेहिका (चक्रदत्त)

कट्फलं पौष्करं शृङ्गी व्योषं यासश्च कारवी।
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं चैतन्मधुना सह लेहयेत् ॥२२७॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एषाऽवलेहिका हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च कण्ठरोधं नियच्छति ॥२२८॥
ऊर्ध्वगश्लेष्महरणे चोष्णे स्वेदादिकर्मणि।
विरोध्युष्णे मधु त्यक्त्वा कार्यैषाऽऽर्द्रकजै रसैः ॥२२९॥

१. कायफल, २. पुष्करमूल, ३. काकडासिंगी, ४. यवासा और ५. कारवी (कलौजी-मंगरैला)—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और मधु में मिलाकर अवलेह जैसा तैयार करें। सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को १० ग्राम की मात्रा में खिलाने से भयंकर सन्निपात नष्ट हो जाता है; साथ ही हिक्का, श्वास, कास, कण्ठावरोध आदि उपद्रव भी नष्ट हो जाते हैं। शरीर के ऊर्ध्वाङ्ग (मस्तिष्क, हृदय, फुफ्फुस, कण्ठ, श्वासनलिकादि) में संचित श्लेष्मा को निकालने के लिए उष्ण एवं स्वेदादि कर्म किये जाते हैं। किन्तु मधु उष्णविरोधी है, अतः सन्निपातज्वरशान्त्यर्थ इस अवलेह को मधु के साथ न देकर आर्द्रकस्वरस में मिलाकर अवलेह-सा बनावें और सन्निपातज्वर में देना-चटाना चाहिए।

१२७. अञ्जन

शितिकुक्कुटिकाण्डजजलपानान्नस्यादप्यञ्जनाच्च।
दुःसाधसन्निपातः प्रबलोऽप्याश्वेव शममेति ॥२३०॥

काली मुर्गी के अण्डे को तोड़ने से जो द्रवभाग प्राप्त होता है उसका पान करने से, नस्य लेने से या अञ्जन करने से असाध्य तथा प्रबल सन्निपातज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

१२८. शिरीषाद्यञ्जन (चक्रदत्त)

शिरीषबीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैन्धवैः।
अञ्जनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥२३१॥

१. शिरीषबीज, २. पीपर, ३. मरिच, ४. सैन्धव लवण, ५. लशुन, ६. मैनसिल तथा ७. वच—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर गोमूत्र में खूब पीस कर वर्ति (यवाकृति) बना लें और सुखाकर सुरक्षित कर शीशी में रख लें। इस अञ्जन को सन्निपातज्वरपीड़ित मूर्च्छित रोगी को चैतन्य करने के लिए घिसकर नेत्रों में अञ्जन करें।

१२९. असुरपक्षाविष्ठाऽञ्जन

असुराह्वपतङ्गस्य विट्चूर्णं मधुसंयुतम्।
अञ्जनाद्बोधयेन्मुग्धं तन्द्रितं सन्निपातिनम् ॥२३२॥

असुर नामक पक्षी-विशेष की विष्ठा का सूक्ष्म चूर्ण कर मधु से मिलाकर सन्निपातज्वरग्रस्त रोगी के नेत्रों में अञ्जन करने से तन्द्रित तथा मूर्च्छित व्यक्ति शीघ्र ही होश में आ जाता है।

१३०. दशमूल क्वाथ (भावप्रकाश)

बिल्वस्योणाकगम्भारीपाटलागणिकारिकाः।
दीपनं कफवातघ्नं पञ्चमूलमिदं महत् ॥२३३॥
शालपर्णीपृश्निपर्णीबृहतीद्वयगोक्षुरम्।
वातपित्तापहं वृष्यं कनीयः पञ्चमूलकम्।
उभयं दशमूलं हि सन्निपातज्वरापहम् ॥२३४॥
कासश्वासे च तन्द्रायां पार्श्वशूले च शस्यते।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं कण्ठहृद्ग्रहनाशनम् ॥२३५॥

१. बिल्वत्वक्, २. सोनापाठा छाल ३. गम्भारी छाल, ४. पाढल छाल तथा ५. अरणी छाल—ये बृहत्पञ्चमूल कहलाते हैं। ये दीपन और कफवातघ्न हैं; ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. बृहती, ९. कण्टकारी और १०. गोखरु—ये लघुपञ्चमूल कहलाते हैं। यह लघुपञ्चमूल वात-पित्तविकारनाशक हैं तथा वृष्य हैं। दोनों पञ्चमूल मिलाकर दशमूल कहलाता है। यह दशमूल सन्निपातज्वरनाशक है। इस दशमूल क्वाथ में पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पिलाने से श्वास, कास, तन्द्रा, पार्श्वशूल, कण्ठग्रह और हृद्ग्रह आदि उपद्रव से युक्त सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है।

१३१. द्वादशाङ्ग क्वाथ (भावप्रकाश)

दशमूलीकषायस्तु सपौष्करकणाऽन्वितः।
सन्निपाते ज्वरे देयः श्वासकाससमन्विते ॥२३६॥

१. दशमूल, २. पुष्करमूल एवं ३. पिप्पली—दशमूल क्वाथ में पुष्करमूलचूर्ण और पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पीने से कास-श्वास से युक्त सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है।

१३२. चतुर्दशाङ्ग क्वाथ (चक्रदत्त)

चिरज्वरे वातकफोल्बणे वा
त्रिदोषजे वा दशमूलमिश्रः।
किराततिक्तादिगणप्रयोज्यः
शुद्ध्यर्थिने वा त्रिवृताविमिश्रः ॥२३७॥

१. बिल्वत्वक्, २. गम्भार छाल, ३. सोनापाठा छाल, ४. पाढल छाल, ५. अरणी छाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. बृहती, ९. कण्टकारी, १०. गोखरु, ११. चिरायता, १२. नागरमोथा, १३. गुडूची और १४. शुण्ठी—उपर्युक्त दशमूल एवं किराततिक्तादि गण की ४ औषधियाँ कुल मिलाकर १४ द्रव्यों को समभाग लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा पुराना ज्वर या कफ-वात- दोष से युक्त ज्वर या सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी में ५० मि.ली. पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यदि रोगी को मलबद्ध हो तो शोधानार्थ (विरेचनार्थ) इस क्वाथ में त्रिवृत् चूर्ण २-३ ग्राम मिलाकर पिलाना चाहिए। किराततिक्त गण (चिरायता, नागर-मोथा, गुडूची, सोंठ) हैं।

१३३. वातश्लेष्महरोऽष्टादश क्वाथ (चक्रदत्त)

दशमूली शटी शृङ्गी पौष्करं सदुरालभम्।
भार्गी कुटजबीजञ्च पटोलं कटुरोहिणी ॥२३८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अष्टादशाङ्ग इत्येष सन्निपातज्वरापहः ।
कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिश्वासहिक्कावमीहरः ॥२३९॥

१. बिल्वत्वक्, २. गम्भार छाल, ३. अरणी छाल, ४. पाढल छाल, ५. सोनापाठा छाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. बृहती, ९. कण्टकारी, १०. गोखरू, ११. कचूर, १२. काकडासिंगी, १३. पुष्करमूल, १४. परवलपत्र, १५. यवासा, १६. भारंगी, १७. इन्द्रयव और १८. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी को पिलाने से कास, हृद्ग्रह, पार्श्वशूल, श्वास, हिक्का एवं वमन आदि उपद्रव के साथ ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव सहित सन्निपातज्वर में।

१३४. भूनिम्बाद्यष्टादशाङ्गक्वाथ (चक्रदत्त)

भूनिम्बदारुदशमूलमहौषधाब्द-
तिक्तेन्द्रबीजधनिकेभकणाकषायः ।
तन्द्राप्रलापकसनारुचिदाहमोह-
श्वासादियुक्तमखिलं ज्वरमाशु हन्ति ॥२४०॥

१. चिरायता, २. देवदारु, ३. बिल्वत्वक्, ४. सोनापाठा छाल, ५. अरणी छाल, ६. पाढल छाल, ७. गम्भार छाल, ८. शालपर्णी, ९. पृश्निपर्णी, १०. बृहती, ११. कण्टकारी, १२. गोखरू, १३. शुण्ठी, १४. सुगन्धबाला, १५. कुटकी, १६. इन्द्रयव, १७. धनियाँ तथा १८. गजपिप्पली—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा तन्द्रा, प्रलाप, कास, अरुचि, दाह, मोह एवं श्वासादि उपद्रव से युक्त सन्निपातज्वर तथा सभी प्रकार के ज्वरपीड़ित रोगी को ५० मि.ली. क्वाथ पिलाने से शीघ्र ही ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–उपद्रव युक्त सन्निपातादि ज्वर में।

१३५. मुस्ताद्यष्टादशाङ्ग क्वाथ (चक्रदत्त)

मुस्तापर्पटकोशीरदेवदारुमहौषधम् ।
त्रिफला धन्वयासश्च नीली कम्पिल्लकं त्रिवृत् ॥२४१॥
किराततिक्तकं पाठा बला कटुकरोहिणी ।
मधुकं पिप्पलीमूलं मुस्ताद्यो गण उच्यते ॥२४२॥
अष्टादशाङ्गमुदितमेतद्वा सन्निपातनुत् ।
पित्तोत्तरे सन्निपाते हितं चोक्तं मनीषिभिः ।
मन्यास्तम्भ उरोघात नरःपार्श्वशिरोग्रहे ॥२४३॥

१. नागरमोथा, २. पित्तपापड़ा, ३. खस, ४. देवदारु, ५. शुण्ठी, ६. आमला, ७. हरीतकी, ८. बहेड़ा, ९. जवासा, १०. नीलीवृक्षमूल, ११. कम्पिल्लक, १२. त्रिवृत्, १३. चिरायता, १४. पाठा, १५. बला, १६. कुटकी, १७. मुलेठी और १८. पिपरामूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. क्वाथ मन्यास्तम्भ, उरःक्षत, छाती, पार्श्व एवं शिरःस्तम्भ आदि उपद्रव युक्त पित्तप्रबल सन्निपातज्वर- नाशनार्थ पिलाना चाहिए। इसे विद्वानों ने मुस्तादि गण क्वाथ या मुस्ताद्यष्टादशांग क्वाथ नाम दिया है।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—उपद्रव युक्त सन्निपातज्वर में।

१३६. द्वात्रिंशाङ्ग क्वाथ (बृ.नि.रत्ना.)
(बत्तीसा काढ़ा)

भार्गीभूनिम्बनिम्बाम्बुदकटुकवचाव्योषवासाविशाला-
रास्नाऽनन्तापटोलामरतरुरजनीपाटलातिन्दुकैश्च ।
ब्राह्मीदार्वीगुडूचीमुनितरुसरलाम्भोजकैस्त्रायमाणा-
व्याघ्रीसिंहीकलिङ्गैस्त्रिफलशटियुतैः कल्पितस्तुल्यभागैः॥
क्वाथो द्वात्रिंशनामात्रिभिरधिकदशान् सन्निपातान्निहन्ति
शूलं कासादिहिक्काश्वसनगुदरुजाऽऽध्मानविध्वंसकारी ।
ऊरुस्तम्भान्त्रवृद्धिं गलगदमरुचिं सर्वसन्धिग्रहार्तिं
मातङ्गानेष हन्यान्मगरिपुरिव तद्रोगजातं क्षणेन ॥२४५॥

१. भारंगी, २. चिरायता, ३. नीम छाल, ४. नागरमोथा, ५. कुटकी, ६. वच, ६. शुण्ठी, ८. पीपर, ९. मरिच, १०. वासामूल, ११. इन्द्रायणमूल, १२. रास्ना, १३. अनन्तमूल, १४. परवलपत्र, १५. देवदारु, १६. हल्दी, १७. पाढल छाल, १८. तेन्दु की छाल, १९. ब्राह्मी, २०. दारुहल्दी, २१. गुडूची, २२. अगस्त, २३. चीड़वृक्ष छाल, २४. कमलफूल, २५. त्रायमाण, २६. कण्टकारी, २७. बृहती, २८. इन्द्रयव, २९. आमला, ३०. हरीतकी, ३१. बहेड़ा तथा ३२. कचूर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। इसे द्वात्रिंशाङ्ग क्वाथ (बत्तीसा काढ़ा) कहते हैं। इस क्वाथ को गर्म-गर्म ५० मि.ली. पीने से १३ प्रकार के सन्निपातज्वर निम्नलिखित रोगों के उपद्रव के साथ नष्ट हो जाते हैं। अथवा स्वतन्त्र रूप से निम्नलिखित शूल, कास, श्वास, हिक्का, अर्श, आध्मान, ऊरु-स्तम्भ, अन्त्रवृद्धि (हर्निया), गले के रोग, अरुचि एवं सभी सन्धियों की पीड़ाएँ आदि रोग ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे सिंह मतवाले हाथियों के समूह को नष्ट कर देता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सभी प्रकार के सन्निपातादि ज्वर में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१३७. शट्यादिवर्ग क्वाथ (चक्रदत्त)

शटी पुष्करमूलञ्च व्याघ्री शृङ्गी दुरालभा।
गुडूची नागरं पाठा किरातं कटुरोहिणी ॥२४६॥
एष शट्यादिको वर्गः सन्निपातज्वरापहः।
कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिश्वासे तन्द्र्यां च शस्यते ॥२४७॥

१. कचूर, २. पुष्करमूल, ३. कण्टकारी, ४. काकडासिंगी, ५. जवासा, ६. गुडूची, ७. शुण्ठी, ८. पाठा, ९. चिरायता और १०. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। इस क्वाथ को शट्यादि वर्ग क्वाथ कहते हैं। ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी को पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त कास, श्वास, हृद्ग्रह, पार्श्वशूलजन्य पीड़ा और तन्द्रा आदि रोगों में भी लाभप्रद है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्निपातज्वरादि में।

१३८. बृहत्कट्फलादि क्वाथ (भै.रत्ना.)

कट्फलाब्दवचापाठापुष्कराजाजिपर्पटः ।
शृङ्गी कलिङ्गधान्याकं शटीभृङ्गकणाह्वयम् ॥२४८॥
तिक्ताऽभयाऽम्बु कैरातं भार्गी रामठकं बला।
दशमूली कणामूलं निष्क्वाथ्य क्वाथमुत्तमम् ॥२४९॥
हिङ्ग्वार्द्रकरसोपेतं सन्निपातविनाशनम्।
गलगण्डं गण्डमालां स्वरभेदं गलामयान् ॥२५०॥
कर्णमूलोद्भवं शोथं हन्याद्धनुमुखामयान्।
कफवातज्वरं कासं तथा हन्ति शिरोगदान्।
शिरोगुरुत्वं बाधिर्यं निहन्ति कफवातिकम् ॥२५१॥

१. कायफल, २. नागरमोथा, ३. वच, ४. पाठा, ५. पुष्करमूल, ६. कारवी, ७. पित्तपापड़ा, ८. काकडासिंगी, ९. इन्द्रयव, १०. धनियाँ, ११. कचूर, १२. भृंगराज, १३. पीपर, १४. कुटकी, १५. हरीतकी, १६. सुगन्धबाला, १७. चिरायता, १८. भारंगी, १९. हींग, २०. बलामूल, २१. बिल्वत्वक्, २२. गम्भार छाल, २३. अरणी छाल, २४. सोनापाठा छाल, २५. पाढल छाल, २६. शालपर्णी, २७. पृश्निपर्णी, २८. कण्टकारी, २९. बृहती, ३०. गोखरु तथा ३१. पिपरामूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। इस क्वाथ को सोष्ण ५० मि.ली. लेकर इसमें शुद्ध हींग $\frac{1}{3}$ ग्राम एवं आर्द्रकस्वरस मिलावें और गलगण्ड, गण्डमाला, स्वरभेद, गले का रोग, कर्णमूलशोथ, हनु एवं मुख के रोगादि उपद्रव से युक्त सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी को पिलाना चाहिए। इससे सभी उपद्रव एवं ज्वर नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त कफवातज्वर, कास, शिरोरोग, सिर में भारीपन और बाधिर्य रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्निपातादि रोग में।

वातोल्बण सन्निपातज्वर

१३९. बृहत्पञ्चमूली क्वाथ (चक्रदत्त)

पञ्चमूलीकषायन्तु दद्याद्वातोल्बणे ज्वरे।
भृशोष्णं वा सुखोष्णं वा दृष्ट्वा दोषबलाबलम् ॥२५२॥

१. बिल्वत्वक्, २. गम्भार छाल, ३. अरणी छाल, ४. सोनापाठा छाल तथा ५. पाढल छाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा सन्निपातज्वर से ग्रस्त रोगियों में दोषों के बलाबल का विचार कर गरम या किञ्चिदुष्ण ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

१४०. कट्फलादि क्वाथ (भावप्रकाश)

कट्फलाब्दवचापाठापुष्कराजाजिपर्पटैः ।
देवदार्वभयाशृङ्गीकणाभूनिम्बनागरैः ॥२५३॥
भार्ङ्गीकलिङ्गकटुकाशटीकट्तृणधान्यकैः ।
समांशैः साधितः क्वाथो हिङ्ग्वार्द्रकरसैर्युतः ॥२५४॥
कर्णमूलोद्भवं शोथं हन्ति मन्यागलाश्रयम्।
कफवातज्वरं श्वासं कासं हिक्कां हनुग्रहम् ॥२५५॥
गलगण्डं गण्डमालां स्वरभेदं कफात्मकम्।
शिरोगुरुत्वं बाधिर्यं वृद्धिं च कफमेदसोः ॥२५६॥

१. कायफल, २. नागरमोथा, ३. वच, ४. पाढल छाल, ५. कारवी, ६. पित्तपापड़ा, ७. देवदारु, ८. हरीतकी, ९. काकडासिंगी, १०. पीपर, ११. चिरायता, १२. शुण्ठी, १३. भारंगी, १४. इन्द्रयव, १५. कुटकी, १६. कचूर, १७. रोहिस-घास और १८. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें एवं सन्निपातज्वरग्रस्त रोगियों में तथा कर्ण-मूलशोथ से पीड़ित सन्निपातज्वर के रोगियों में दोषों का विचार कर ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ में परिभाषानुसार शुद्ध हींग और आर्द्रकस्वरस मिलाकर पिलाना चाहिए। साथ ही श्वास, कास, हिक्का, हनुग्रह, गण्डमाला, गलगण्ड, कफाधिक्य, स्वरभेद, सिर में भारीपन, बाधिर्य एवं कफ तथा मेद की वृद्धि में भी इस क्वाथ को पिलाने से हितकर है।

पित्तोल्बण सन्निपातज्वर

१४१. परूषकादि क्वाथ (भावप्रकाश)

परूषकञ्च त्रिफला देवदारु च कट्फलम्।
वन्दनं पद्मकञ्चैव तथा च कटुरोहिणी ॥२५७॥
पृश्निपर्णी शृतं त्वेभिरुषितं शीतलं जलम्।
पित्तोत्तरे नृणामेतत्सन्निपातचिकित्सितम् ॥२५८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. फालसा, २. आमला, ३. हरीतकी, ४. बहेड़ा, ५. देवदारु, ६. कायफल, ७. लालचन्दन, ८. पद्मकाठ, ९, कुटकी और १०. पृश्निपर्णी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें और पित्तोल्बण सन्निपातज्वरपीड़ित रोगियों में ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलाने से लाभ होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तोल्बण सन्निपातज्वर में।

१४२. चन्दनादि क्वाथ (भै.रत्ना.)

चन्दनं पद्मकं चैव तथा च कटुरोहिणी।
पृथक्पर्णी समं सिद्धमुषितं शीतलं जलम्।
पित्तोत्तरे नृणामेतत् सन्निपाते चिकित्सितम् ॥२५९॥

१. लालचन्दन, २. पद्मकाठ, ३. कुटकी एवं ४. पृश्निपर्णी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें और पित्तोल्बण सन्निपात के रोगी में ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तोल्बण सन्निपातज्वर में।

१४३. किरातादि सप्तक क्वाथ (भावप्रकाश)

किराततिक्तकं मुस्तं गुडूचीं विश्वभेषजम्।
पाठोदीच्यं मृणालञ्च शृतं पित्ताधिके पिबेत् ॥२६०॥

१. चिरायता, २. नागरमोथा, ३. गुडूची, ४. शुण्ठी, ५. पाढल, ६. सुगन्धबाला तथा ७. खस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें और पित्तोल्बण सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. शीतल क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तोल्बण सन्निपात में।

कफोल्बण सन्निपातज्वर

१४४. बृहत्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

बृहत्यौ पौष्करं भार्गी शटी शृङ्गी दुरालभा।
वत्सकस्य तु बीजानि पटोलं कटुरोहिणी ॥२६१॥
बृहत्यादिर्गणः प्रोक्तः सन्निपाते कफोत्तरे।
श्वासादिषु च सर्वेषु हितः सोपद्रवेष्वपि ॥२६२॥

१. बृहती, २. कण्टकारी, ३. पुष्करमूल, ४. भारंगी, ५. कचूर, ६. काकड़ासिंगी, ७. यवासा, ८. इन्द्रयव, ९. परवलपत्र और १० कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें और कफोल्बण सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी, जो श्वासादि उपद्रव से युक्त हो, उसे ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलावें। इससे लाभ होता है। इन्हें बृहत्यादि गण भी कहते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कफोल्बण सन्निपातज्वर में।

वातपित्तोल्बण सन्निपातज्वर

१४५. लघुपञ्चमूल क्वाथ (भावप्रकाश)

वातपित्तहरं वृष्यं कनीयः पञ्चमूलकम्।
तत्क्वाथो मधुना हन्ति वातपित्तोल्बणं ज्वरम् ॥२६३॥

१. शालपर्णी, २. पृश्निपर्णी, ३. बृहती, ४. कण्टकारी एवं ५. गोखरु—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा वातपित्तोल्बण सन्निपातज्वरपीड़ित रोगियों में ५० मि.ली. क्वाथ को मधु मिलाकर पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तोल्बण सन्निपातज्वर में।

१४६. चातुर्भद्रक क्वाथ (रसरत्नाकर)

किराततिक्तकं मुस्तं गुडूची विश्वभेषजम्।
चातुर्भद्रकमित्याहुर्वातपित्तोल्बणे ज्वरे ॥२६४॥

१. चिरायता, २. नागरमोथा, ३. गुडूची एवं ४. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें और वातपित्तोल्बण सन्निपातज्वर में ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें। इन्हें चातुर्भद्रक गण भी कहते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तोल्ब सन्निपातज्वर में।

पित्तकफोल्बण सन्निपातज्वर

१४७. पर्पटादि क्वाथ (भावप्रकाश)

पर्पटः कट्फलं कुष्ठमुशीरं चन्दनं जलम्।
नागरं मुस्तकं शृङ्गी पिप्पल्येषां शृतं हितम्।
तृष्णादाहाग्निमान्द्येषु पित्तश्लेष्मोल्बणे ज्वरे ॥२६५॥

१. पित्तपापड़ा, २. कायफल, ३. कूठ, ४. खस, ५. लालचन्दन, ६. सुगन्धबाला, ७. शुण्ठी, ८. नागरमोथा, ९. काकड़ासिंगी और १०. पीपर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ-विधि से क्वाथ कर छान लें और पित्तकफोल्बण सन्निपातज्वर एवं तृष्णा, दाह, अग्निमांद्यादि उपद्रव में ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तकफोल्बण सन्निपात में।

वातकफोल्बण सन्निपात की असाध्यता

चिकित्सा नोदिता वैद्यैर्वातश्लेष्मोल्बणे ज्वरे।
शीघ्रकारितया तस्यासाध्यत्वस्यैव दर्शनात् ॥२६६॥

शीघ्रकारी होने के कारण वातकफोल्बण सन्निपातज्वर का रोगी दोषों की प्रबलता के कारण शीघ्र असाध्य हो जाता है। अतः वातकफोल्बण सन्निपातज्वर की चिकित्सा नहीं कही गयी है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यहाँ पर क्रमानुसार वातकफोल्बण सन्निपातज्वर की चिकित्सा का वर्णन होना चाहिए था किन्तु आचार्य श्री सेन ने दोषों की उग्रता के कारण चिकित्सा नहीं कही है।

वातपित्तकफोल्बण सन्निपातज्वर

१४८. योगराज क्वाथ (भावप्रकाश)

नागरं धान्यकं भार्गी पद्मकं रक्तचन्दनम्।
पटोलः पिचुमर्दश्च त्रिफला मधुकं बला ॥२६७॥
शर्करा कटुकी मुस्तं गजाह्वा व्याधिवातकः।
किराततिक्तममृता दशमूली निदिग्धिका ॥२६८॥
योगराजो निहन्त्येव सन्निपातं त्रिकोल्बण।
सन्निपातसमुत्थानं मृत्युमप्यागतं जयेत् ॥२६९॥

१. शुण्ठी, २. धनियाँ, ३. भारङ्गी, ४. पद्मकाठ, ५. लालचन्दन, ६. परवलपत्र, ७. निम्बत्वक्, ८, आमला, ९. हरीतकी, १०, बहेड़ा, ११, मुलेठी, १२. बलामूल, १३. चीनी, १४. कुटकी, १५. नागरमोथा, १६. गजपीपर, १७. अमलतास, १८. चिरायता, १९. गुडूची, २०, बिल्वत्वक्, २१. गम्भार छाल, २२, अरणी छाल, २३. सोनापाठा छाल, २४. पाढल छाल, २५. शालपर्णी, २६. पृश्निपर्णी, २७. कण्टकारी, २८. बृहती, २९. गोखरु और ३०. कण्टकारी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी को पिलावें। इससे सन्निपात शान्त हो जाता है अर्थात् सन्निपातज्वरजन्य मृत्यु टल जाती है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

घटे एवं बढ़े हुए दोषानुसार सन्निपातज्वर

प्रवृद्धं कर्शयेद्दोषं क्षीणं संवर्द्धयेद्भिषक्।
चिकित्सेयं विधातव्या दोषयोर्वृद्धहीनयोः ॥२७०॥

प्रवृद्ध, मध्य एवं हीन वातादि सन्निपातज्वरों की चिकित्सा में दोषों का ज्ञान रखने वाला वैद्य बढ़े हुए दोषों को घटावें और घटे हुए दोषों को बढ़ाकर चिकित्सा करें।

प्रवृद्धे शमिते दोषे मध्यमः स्वयमेव हि।
शान्तिं याति शमं नीतेऽनुबन्ध्ये त्वनुबन्धवत् ॥२७१॥

बढ़े हुए दोषों का शमन होने पर मध्यम बल वाले दोष स्वयं शान्त हो जाते हैं; जैसे अनुबन्ध्य के शमन होने पर अनुबन्ध स्वयं शान्त हो जाता है।

शीतांगादि त्रयोदश सन्निपात ज्वर

१४९. भास्वन्मूलादि क्वाथ (भावप्रकाश)

भास्वन्मूलं जीरकव्योषभार्गी
व्याघ्रीशुण्ठीपुष्करं गोजलेन।
सिद्धं सद्यः शीतगात्रार्त्तिमोह-
श्वासश्लेष्मोद्रेककासान्निहन्ति ॥२७२॥

१. अर्कमूल, २. जीरा, ३. शुण्ठी, ४. पीपर, ५. मरिच, ६. भारङ्गी, ७. कण्टकारी, ८. शुण्ठी तथा ९. पुष्कर- मूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण १६ गुना गोमूत्र में भिगोकर क्वाथ करें। चतुर्थांश रहने पर छान लें तथा ५० मि.ली. क्वाथ सन्निपातज्वर से पीड़ित तथा शीतांग, मोह, श्वास, कास और कफ की अधिकता आदि उपद्रव से युक्त रोगी को पिलावें।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—उपद्रव युक्त सन्निपातज्वर में।

१५०. शीतांगहर उद्वर्त्तन

कर्कोटिकाकन्दरजःकुलत्थ-
कृष्णावचाकट्फलकृष्णाजीरैः।
किराततिक्तानलकट्फलाम्बु-
पथ्याभिरुद्वर्त्तनमत्र शस्तम् ॥२७३॥

१. कर्कोटकमूल चूर्ण, २. कुलथी, ३. पीपर, ४. वच, ५. कायफल, ६. स्याह जीरा, ७. चिरायता, ८. चित्रकमूल, ९. कायफल, १०. सुगन्धबाला तथा ११. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर कूटें और सूक्ष्म चूर्ण बना लें। इसे काँचपात्र में सुरक्षित रख लें। शीतांग सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को जल में घोलकर उबटन जैसा लगाने से लाभ होता है।

मात्रा–यथावश्यक। **उपयोग**–शीतांग सन्निपातज्वर में।

१५१. तन्द्रिक सन्निपातज्वर में क्वाथ और नस्य

क्षुद्राऽमृतापौष्करनागराणि
श्रृतानि पीतानि शिवायुतानि।
शुण्ठीकणाऽगस्तिरसोषणानि
नस्येन तन्द्राविजयोल्बणानि ॥२७४॥

क्वाथ—१. कण्टकारी, २. गुडूची, ३. पुष्करमूल, ४. शुण्ठी एवं ५. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ पिलाने से तन्द्रिक सन्निपातज्वर में लाभ होता है।

नस्य—१. शुण्ठी, २. पीपर, ३. अगस्तपुष्परस तथा ४. मरिच—इन सभी द्रव्यों का सूक्ष्म कपड़छन चूर्ण करें और अगस्तपुष्पस्वरस की तीन भावना देकर सूखने पर पुनः वस्त्रपूत चूर्ण बनाकर शीशी में सुरक्षित रखें। सन्निपातज्वर के रोगी में तन्द्रा की अवस्था होने पर इस औषधि का नस्य देने से तन्द्रा नष्ट हो जाती है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१५२. ज्वरतन्द्राहर अञ्जन

तुरङ्गलालालवणोत्तमेन्दु-
मनःशिलामागधिकामधूनि ।
नियोजितान्यक्षिणि निश्चितं च
तन्द्राञ्च निद्राञ्च निवारयन्ति ॥२७५॥

१. घोड़े की लार, २. सैन्धव लवण, ३. कपूर, ४. मैनशिल, ५. पीपर और ६. मधु—सैन्धव, मैनसिल एवं पीपर तीनों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और घोड़े के लार की भावना दें। पुनः मधु की भावना देकर औषधि को शीशी में सुरक्षित रख लें। सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी की तन्द्रा, निद्रा आदि उपद्रव में इस औषधि का नस्य देने से तन्द्रा-निद्रा नष्ट हो जाती है।

१५३. तगरादि क्वाथ (भावप्रकाश)

सतगरवरतिक्तारेवताम्भोदतिक्ता
नलदतुरगगन्धाभारतीहारहूराः ।
मलयजदशमूलीशङ्खपुष्पीसुपक्वा-
प्रलपनमहन्युः पानतो नातिदूरात् ॥२७६॥

१. तगर, २. पित्तपापड़ा, ३. अमलतास, ४. नागरमोथा, ५. कुटकी, ६. लामज्जक (खसभेद), ७. अश्वगन्धा, ८. ब्राह्मी, ९. काली द्राक्षा, १०, श्वेत चन्दन, ११, बिल्वत्वक्, १२. गम्भार छाल, १३. अरणी छाल, १४. सोनापाठा छाल, १५. पाढल छाल, १६. शालपर्णी, १७. पृश्निपर्णी, १८. कण्टकारी, १९. बृहती और २०. गोखरु, २१. शंखपुष्पी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। प्रलापक सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को ५० मि.ली. सोष्ण क्वाथ पिलाने से प्रलापक सन्निपातज्वर शीघ्र नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–प्रलापक सन्निपातज्वर में।

१५४. रोहिषादि क्वाथ (भावप्रकाश)

रोहिषधन्वयवासकवासा-
पर्पटगन्धलताकटुकाभिः ।
शर्करया सममेष कषायः
क्षतजष्ठीविन उद्यदुपायः ॥२७७॥

१. रोहिषतृण, २. यवासा, ३. वासामूल, ४. पित्तपापड़ा, ५. प्रियंगुफूल तथा ६. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ में शर्करा मिलाकर शीतल होने पर रक्तष्ठीवी (रक्त थूकने वाला अर्थात् जिसके मुख से रक्तवमन होता हो) सन्निपातज्वर में पिलावें। रक्त वमन करने वाला सन्निपातज्वर को नाश करने के लिए यह अत्यन्त सुन्दर क्वाथ है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–रक्तष्ठीवी सन्निपातज्वर में।

१५५. पद्मकादि क्वाथ (भावप्रकाश)

पद्मकचन्दनपर्पटमुस्तं
जातिकजीवकचन्दनवारि ।
क्लीतकनिम्बयुतं परिपक्वं
वारि भवेदिह शोणितहारि ॥२७८॥

१. पद्मकाठ, २. लालचन्दन, ३. पित्तपापड़ा, ४. नागरमोथा, ५. चमेलीपत्र, ६. जीवक (विदारीकन्द), ७. श्वेत चन्दन, ८. सुगन्धबाला, ९. मुलेठी तथा १०. नीम की छाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. शीतल क्वाथ रक्तष्ठीवी सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी को पिलाने से सद्यः लाभ होता है और रक्तष्ठीवन (रक्तवमन या रक्त थूकना) तुरन्त बन्द हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–रक्तष्ठीवी सन्निपात में।

१५६. भुग्ननेत्र सन्निपात में नस्य (भावप्रकाश)

तुरङ्गगन्धालवणोग्रगन्धा-
मधूकसारोषणमागधीभिः ।
बस्ताम्बुशुण्ठीलशुनान्विताभि-
र्नस्यं कृशं भुग्नदृशं करोति ॥२७९॥

१. अश्वगन्धा, २. सैन्धव लवण, ३. वच, ४. महुए का फूल, ५. मरिच, ६. बड़ी पीपर, ७. शुण्ठी और ८. लशुन—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और बकरे के मूत्र की भावना देकर खूब पीस लें तथा सुखाकर काँच की शीशी में सुरक्षित कर लें। इस चूर्ण को पुनः बकरे के मूत्र में घोलकर भुग्ननेत्र सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को नस्य देने से सद्यः लाभ करता है।

अभिन्यासज्वर-लक्षण (चक्रदत्त)

निद्रोपेतमभिन्यासं क्षीणं विद्याद्धतौजसम् ॥२८०॥

जिस सन्निपातज्वर में निद्रा अधिक आती हो, शरीरस्थ सभी धातुएँ क्रमशः क्षीण हो गई हों तथा ओज भी नष्ट हो गया हो, उसे अभिन्यासज्वर कहते हैं।

सन्निपातज्वर में बृंहणादि कर्म-निषेध

सन्निपाते प्रकम्पन्तं प्रलपन्तं न बृंहयेत् ।
तृष्णादाहाभिभूतेषु न दद्याच्छीतलं जलम् ॥२८१॥

यदि सन्निपातज्वरपीड़ित रोगी के शरीर में कम्प हो रहा हो तथा रोगी प्रलाप कर रहा हो तो उस अवस्था में रोगी को बृंहणार्थ मांसरस, दुग्ध आदि पेय नहीं देना चाहिए। साथ ही यदि रोगी को बहुत प्यास एवं शरीर में दाह (जलन) आदि हो रहे हों तो

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शीतल जल भी नहीं देना चाहिए अर्थात् उस अवस्था में भी उष्ण जल ही देना चाहिए।

१५७. सन्निपातज्वर में स्वेदाधिक्य होने पर चूर्णघर्षण

स्वेदोद्गमे ज्वरे देयश्चूर्णो भृष्टकुलत्थजः ॥२८२॥

जिस ज्वर में पसीना अधिक आ रहा हो तो उस सन्निपातज्वर में भुने हुए कुलथी का चूर्ण शरीर पर छिड़के तथा हलका-हलका घर्षण भी करें। भृष्ट कुलथी का चूर्ण स्वेदशोषक है, अतः पसीना सुखा देता है।

१५८. सन्निपातज्वर में घृत अभ्यङ्ग

वातपित्तोल्बणे चैव घृतं योज्यं पुरातनम्।
अभ्यङ्गाच्छमयत्याशु सन्निपातं सुदारुणम् ॥२८३॥

वात-पित्तप्रबल सन्निपातज्वर में पुराने घृत का प्रयोग करना चाहिए। शरीर में पुराने घृत का अभ्यङ्ग (सिर, हाथ-पैर के तलवे, उरःप्रदेशादि में) करने से भयंकर सन्निपातज्वर भी शान्त हो जाता है।

अभिन्यासज्वर

१५९. कारण्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

कारवीपुष्करैरण्डत्रायन्तीनागरामृता ।
दशमूली शटी शृङ्गी यासभार्गीपुनर्नवाः ॥२८४॥
तुल्या मूत्रेण निःक्वाथ्य पीताः स्त्रोतोविशोधनाः ।
अभिन्यासं ज्वरं घोरमाशु घ्नन्ति समुद्धतम् ॥२८५॥

१. कलौंजी, २. पुष्करमूल, ३. एरण्डमूल, ४. त्रायमाण, ५. गुडूची, ६. बिल्वत्वक्, ७. गम्भार छाल, ८. पाढल, ९. अरणीमूल, १०. सोनापाठा, ११. शालपर्णी, १२. पृश्निपर्णी, १३. बृहती, १४. कण्टकारी, १५. गोखरु, १६. कचूर, १७. काकड़ासिंगी, १८. धमासा, १९. भारंगी और २०. पुनर्नवा—इन सभी द्रव्यों को समान मात्रा में लेकर यवकुट करें। इनमें से ५० ग्राम यवकुट लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छान कर ५० मि.ली. ज्ञानी वैद्य वात-पित्त-कफ तीनों दोषों से युक्त घोर अभिन्यास ज्वर के रोगी को पिलावें। इससे दोषों से आवृत स्रोतसों की भी शुद्धि हो जाती है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–अभिन्यास ज्वर में।

१६०. मातुलुङ्गादि क्वाथ (चक्रदत्त)

मातुलुङ्गाश्मभिद्बिल्वव्याघ्रीपाठोरुवूकजः ।
क्वाथो लवणमूत्राढ्योऽभिन्यासानाहशूलनुत् ॥२८६॥

१. बिजौरा नीबू, २. पाषाणभेद, ३. बिल्वमूलत्वक्, ४. कण्टकारी, ५. पाठा और ६. एरण्डमूलत्वक्—इन सभी द्रव्यों को समान मात्रा में लेकर यवकुट करें। इनमें से ५० ग्राम यवकुट लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छान कर ठण्डा हो जाने पर इसमें गोमूत्र और सैन्धव नमक का प्रक्षेप यथावश्यक डालकर ५० मि.ली. अभिन्यासज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें। यह क्वाथ आनाह और शूल में भी अति लाभकारी है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–अभिन्यासज्वर में।

१६१. शृङ्ग्यादि क्वाथ (भावप्रकाश)

शृङ्गीभार्ग्यभयाऽजाजीकणाभूनिम्बपर्पटैः ।
देवदारुवचाकुष्ठवासकट्फलनागरैः ॥२८७॥
मुस्तधान्याकतिक्तेन्द्रयवपाठाहरेणुभिः ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकैः ॥२८८॥
विशालाऽऽरग्वधारिष्टशटीवाकुचिकाफलैः ।
विडङ्गरजनीदार्वीयवानीद्वयसंयुतैः ॥२८९॥
समांशैर्विहितः क्वाथो हिङ्ग्वार्द्रकरसान्वितः ।
अभिन्यासज्वरं घोरं हन्ति तन्द्राञ्च तत्क्षणात् ॥२९०॥
प्रमेहं कर्णशूलञ्च सन्निपातास्त्रयोदश ।
हिक्का श्वासञ्च कासञ्च तथा सर्वानुपद्रवान् ॥२९१॥

१. काकड़ासिंगी, २. भारङ्गी, ३. हरीतकी, ४. स्याह जीरा, ५. पीपर, ६. चिरायता, ७. पित्तपापड़ा, ८. देवदारु, ९. वच, १०. कूठ, ११. जवासा, १२. कायफल, १३. शुण्ठी, १४. नागरमोथा, १५. धनियाँ, १६. कुटकी, १७. इन्द्रयव, १८. पाढल, १९. रेणुकाबीज, २०. गजपीपर, २१. अपामार्ग, २२. पिपरामूल, २३. चित्रकमूल, २४. इन्द्रायणमूल, २५. अमलतास, २६. नीम छाल, २७. कचूर, २८. बाकुची, २९. वायविडंग, ३०. हल्दी, ३१. दारुहल्दी, ३२. अजवायन तथा ३३. अजमोदा—इन सभी द्रव्यों को समान मात्रा में लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर यथावश्यक हींग और आर्द्रक का रस मिलायें और अभिन्यासज्वर एवं सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें। इससे तन्द्रा, प्रमेह, कान का दर्द, समस्त १३ प्रकार के सन्निपातज्वर में उत्पन्न हिक्का, श्वास, कास आदि अनेक प्रकार के समस्त उपद्रव पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–अभिन्यास एवं सन्निपातज्वर में।

जिह्वकसन्निपातज्वर

१६२. किरातादि कवल

किराततिक्ताकुलकृत्कुलिङ्गी-
कर्चूरकृष्णाकटुतैलयुक्तः ।
अम्लद्रवः संशमयेद्रसज्ञा
दोषान्स्तुतो दाशरथिर्यथाऽत्र ॥२९२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. चिरायता, २. अकरकरा, ३. कुलिंजन, ४. कचूर तथा ५.पीपर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर कूटें और सूक्ष्म चूर्ण बना लें। इसमें से ५० ग्राम सूक्ष्म चूर्ण लेकर स्वल्प सरसों का तेल तथा अम्लद्रव यथा—बिजौरा नीबू का रस डालकर चटनी की भाँति बनाकर मुख में धारण करें। जिस प्रकार से भगवान् श्री रामचन्द्रजी की स्तुति मात्र से सम्पूर्ण कामादि दोष नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार से यह किरातादि कवल भी जिह्वक सन्निपातज्वर के सम्पूर्ण दोषों को नष्ट कर देता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–जिह्वक सन्निपातज्वर में।

१६३. क्षुद्रादि क्वाथ (भावप्रकाश)

क्षुद्रानागरपुष्करामृतलताब्राह्मीवचासुव्रता-
भार्गीवासकयासतोयसुरसाक्वाथो जयेज्जिह्वकम् ।

१. कण्टकारी, २. शुण्ठी, ३. पुष्करमूल, ४. गुडूची, ५. ब्राह्मी, ६. वच, ७. अगस्त की छाल, ८. भारंगी, ९. अडूसा, १०. जवासा, ११. सुगन्धबाला और १२. तुलसी की पत्ती—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण बनावें। इसमें से ५० ग्राम सूक्ष्म चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में जिह्वक सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–जिह्वक सन्निपातज्वर में।

१६२. विश्वादि क्वाथ (भावप्रकाश)

विश्वार्मविभावरीयुगवरावत्सादनीवारिद-
व्याघ्रीनिम्बपटोलपुष्करजटारुग्दारुभिर्वा कृतः ॥२९३॥

१. शुण्ठी, २. पित्तपापड़ा, ३. हल्दी, ४. दारुहल्दी, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. गुडूची, ९. नागरमोथा, १०. कण्टकारी, ११. निम्बत्वक्, १२. परवल का पत्ता, १३. पुष्कर- मूल, १४. कूठ तथा १५. देवदारु—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में जिह्वक सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–जिह्वक सन्निपातज्वर में।

सन्धिक सन्निपातज्वर

१६५. वचादि क्वाथ (भावप्रकाश)

वचाकवचकच्छुरासहचरामृताभङ्गुरा-
सुराह्वघननागरातरुणदारुरास्नापुराः ।
वृषातरुणभीरुभिः सह भवन्ति सन्धिग्रह-
व्यथोरुजडिमक्लमभ्रमणपक्षघातद्रुहः ॥२९४॥

१. वच, २. पित्तपापड़ा, ३. जवासा, ४. सहचर, ५. गुडूची, ६. अतीस, ७. देवदारु, ८. नागरमोथा, ९. शुण्ठी, १०. विधारा, ११. देवदारु, १२. रास्ना, १३. गुग्गुल, १४. बड़ी दन्ती, १५. एरण्डमूल तथा १६. शतावर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छान कर ५० मि.ली. की मात्रा में सन्धिक सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें। इस क्वाथ के पीने से जाँघों की जकड़न, थकावट, भ्रमण तथा पक्षाघात भी दूर हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्धिक सन्निपातज्वर में।

१६६. मुस्तादि क्वाथ (भावप्रकाश)

मुस्तैरण्डप्राणदाबाणदारु-
च्छिन्नारास्नाभीरुकचूरतिक्ताः ।
वासाविश्वापञ्चमूलाश्वगन्धा-
हन्युर्मन्यास्तम्भसन्धिग्रहार्त्तीं ॥२९५॥

१. नागरमोथा, २. एरण्ड, ३. हरीतकी; ४. सहचर (कटसरैया), ५. देवदारु, ६. गुडूची, ७. रास्ना, ८. शतावर, ९. कचूर, १०, कुटकी, ११. वासा, १२. शुण्ठी, १३. शालपर्णी, १४. पृश्निपर्णी, १५. बृहती, १६. कण्टकारी, १७. गोखरु और १८. असगन्ध—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में मन्यास्तम्भ तथा सन्धिकज्वर से पीड़ित रोगी को पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्धिकज्वर में।

अन्तक सन्निपातज्वर में दैवव्यपाश्रय चिकित्सा

इहापहाय व्रतमुष्णवारि
ज्वरादियूषादि गदांपहारि ।
ज्वरच्छिदं जीवितदञ्च नित्यं
मृत्युञ्जयं चेतसि चिन्तयस्व ॥२९६॥

अन्तक सन्निपातज्वर में व्रत, उष्णजल, ज्वरनाशक यूष आदि पदार्थ तथा रोगनाशक औषधियों को छोड़ कर केवल ज्वरनाशक एवं जीवनदाता मृत्युञ्जय महादेव का अन्तःकरण से स्मरण, चिन्तन, ध्यान तथा पूजनादि ही एक मात्र महौषधि है। वस्तुतः इस भयंकर उपद्रव युक्त ज्वर की कोई अन्य औषधि है ही नहीं, मात्र मृत्युञ्जय शिव ही इसके निवारक हैं।

मृत्युञ्जय महादेव की स्तुति

कर्पूरप्रकरावदातवपुषं सयागमुद्राजुषं
शश्वद्भक्तजनेषु भावुकजुषं भालस्फुरच्चक्षुषम् ।
सपूर्णामृतकुम्भसम्भृतकरं शुभ्राक्षमालाधरं
पिङ्गोत्तुङ्गजटाकलापरुचिरं चन्द्रार्द्धमौलिं स्तुहि ॥२९७॥

कर्पूर की ढेर जैसी श्वेत आभा से युक्त शरीर वाले, योगमुद्रा (समाधि) से युक्त, हमेशा भक्तों के हितकारी, ललाट पर चमकते

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नेत्र से युक्त, हाथ में अमृत से पूर्ण घड़ा से युक्त, शुभ वर्ण की रुद्राक्ष माला को धारण करने वाले, पिङ्गल (पाण्डु) वर्ण के ऊँचे जटाजूट से सुशोभित तथा सिर पर अर्धचन्द्र धारण किये हुए भगवान् चन्द्रमौली शिव का ध्यान करना चाहिए। अभिप्राय यह है कि अन्तक (यमराज = या अन्त करने वाला) सन्निपातज्वर की कोई चिकित्सा नहीं है, भगवान् मृत्युञ्जय शिव ही एकमात्र सहारा है।

रुग्दाह सन्निपातज्वर

१६७. षडङ्गपानीय (भावप्रकाश)

उशीरचन्दनोदीच्यद्राक्षाऽऽमलकपर्पटैः ।
शृतं शीतं जलं दद्याद् दाहतृड्ज्वरशान्तये ॥२९८॥

१. खस, २. श्वेतचन्दन, ३. सुगन्धबाला, ४. दाख, ५. आमला तथा ६. पित्तपापड़ा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इन्हें चतुर्गुण जल में पाक करें। आधा जल अवशेष रहने पर छान कर मृत्पात्र में रखें। दाह, पिपासा और ज्वर की शान्ति के लिए इस शीतल क्वाथ को पिलावें।

मात्रा–२० मि.ली. अथवा पिपासानुसार। **उपयोग**–पित्तज्वर एवं पित्त-प्रधान सन्निपातज्वर में।

विमर्श—षडङ्गपानीय[1] का यह योग महर्षि चरक द्वारा पित्त-प्रधान ज्वर में देना सर्वप्रथम बताया गया है। उसमें दाख और आमला के स्थान पर नागरमोथा और शुण्ठी पढ़ा गया है किन्तु यहाँ पर कुछ परिवर्तन है।

१६८. ज्वर में दाहघ्न लेप (भावप्रकाश)

प्रशमयति दाहमचिराद् दधियुक्कर्कन्धुपल्लवैर्लेपः ।
लेपो हिमकरमलयजनिम्बदलैस्तक्रपिष्टैर्वा ॥२९९॥

१. दही एवं २. बेर की पत्ती (अथवा—) १. कर्पूर, २. श्वेत चन्दन, ३. नीम की पत्ती तथा ४. तक्र। इसमें २ लेप हैं। बेर की पत्ती को दही के साथ सिल पर पीसकर लेप करने से ज्वर का दाह शान्त हो जाता है। अथवा कर्पूर, श्वेतचन्दन और नीम की पत्ती को गाय का तक्र मिलाकर सिल पर महीन पिसे तथा ज्वर से पीड़ित रोगी की दाहशान्ति के लिए लेप करें।

१६९. तीव्र ज्वर एवं दाह में अवगाहन (भा.प्र.)

शीताम्भसा तु शतशश्च विलोडितेन
गव्येन चन्दनयुतेन घृतेन दिग्ध्वा ।
दाहज्वरी सकमलोत्पलमाल्यधारी
क्षिप्रं विशेत्सलिलकाष्ठमनल्पकालम् ॥३००॥

गाय के घी को सौ बार शीतल जल से मथ कर धोवें तथा उसमें उतनी ही मात्रा में श्वेतचन्दन का सूक्ष्मचूर्ण मिलाकर तीव्र सन्निपातज्वर एवं दाह से व्यथित रोगी के सर्वाङ्ग शरीर में लेप लगावें तथा कमल एवं कमलिनी पुष्प की शीतल माला पहनावें और शीतल जल से भरे बड़े टब में कुछ देर तक बैठाने से रोगी का ज्वर और दाह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

१७०. ज्वर में अवगुण्ठन (भावप्रकाश)

काञ्जिकार्द्रपटेनावगुण्ठनं दाहनाशनम् ।
अथ गोतक्रसंस्विन्न-शीतलीकृतवाससा ॥३०१॥

काञ्जी से भिगी साफ चादर को ओढ़ाने (अवगुण्ठन) से ज्वर एवं दाह शान्त हो जाता है। अथवा गाय के तक्र में उबाले चादर को शीतल होने पर ज्वर-दाह से पीड़ित रोगी को ओढ़ाने (ढकने) से ज्वर-दाह शान्त हो जाता है।

१७१. सन्तर्पण (भावप्रकाश)

दाहवम्यर्दितं क्षामं निरन्नं तृष्णयाऽन्वितम् ।
शर्करामधुसंयुक्तं पाययेल्लाजतर्पणम् ॥३०२॥

दाह तथा वमन से व्यथित रोगी, जो दुर्बल, निराहार (उपवास) एवं पिपासा से युक्त हो, तो इससे निवृत्ति के लिए धान के लावा (खील) का सत्तू, मिश्री एवं मधु मिलाकर तर्पणार्थ खिलावें।

१७२. दाहनाशक अन्य उपाय (भावप्रकाश)

वाप्यः कमलहासिन्या जलयन्त्रगृहाः शुभाः ।
नायश्चन्दनदिग्धाङ्ग्या दाहदैन्यहरा मताः ॥३०३॥

खिले हुए कमलपुष्पों से युक्त बावली या तालाब से, धारागृह फव्वारा से युक्त स्नानगृह या झरनों में स्नान करने से तथा श्वेत चन्दन का सर्वाङ्ग लेप की हुई सुन्दर युवती का आलिङ्गन करने से दाह एवं दैन्यता अर्थात् दाह की पीड़ा शान्त हो जाती है।

मुक्तावली चन्दनशीतलानां
सुगन्धपुष्पाम्बरभूषितानाम् ।
नितम्बिनीनां सुपयोधराणा-
मालिङ्गनान्याशु हरन्ति दाहम् ॥३०४॥

ऐसी सुन्दर युवती जिसकी जाँघें तथा दोनों स्तन सुपुष्ट एवं प्रशस्त हो, जो मोतियों की माला पहनी हो, श्वेत सुगन्धित चन्दन का सर्वाङ्ग में लेप की हो, सुगन्धित फूलों (गुलाब, चमेली, बेला आदि) की माला पहनी हुई हो और सुन्दर वस्त्रों से विभूषित हो ऐसी शीतल सुन्दरी का आलिङ्गन करने से शीघ्र ही दाह शान्त हो जाता है।

प्रह्लादञ्चास्य विज्ञाय ताः स्त्रीरपनयेत्पुनः ।
हितञ्च भोजयेदन्नं येनाप्नोति सुखं महत् ॥३०५॥

---

१. मुस्तपर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ।
शृतशीतं जलं दद्यात् पिपासाज्वरशान्तये ॥
(च.चि. ३।१४५)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जब दाह युक्त रोगी उपर्युक्त सुन्दरी, सुवेष्टित युवती का आलिङ्गन करेगा तो रोगी के मन में काम का वेग सताने लगता है। ऐसी अवस्था में उस सुन्दर युवती को उससे दूर हटा देना चाहिए और रोगी को सुखकर इच्छित पथ्यादि अन्न का भोजन करावें। इससे रोगी को आराम मिलता है।

१७३. अञ्जन-प्रचेतना वटी (भावप्रकाश)

कणोषणोग्रालवणोत्तमानि
करञ्जबीजं प्रमदामलानि।
पथ्याऽक्षसिद्धार्थकहिङ्गुशुण्ठी-
युतानि बस्ताम्बुविमिश्रितानि ॥३०६॥
पिष्ट्वा गुटीयं नयनं निधेया
प्रचेतनेऽतिप्रथिताऽन्वितार्था।
चित्तभ्रमापस्मृतिभूतदोष-
शिरोऽक्षिरोगभ्रमनाशहेतुः ॥३०७॥

१. पीपर, २. मरिच, ३. वच, ४. सैन्धव लवण, ५. करञ्जबीज, ६. धत्तूरबीज, ७. आमला, ८. हरीतकी, ९. बहेड़ा, १०. सरसों, ११. शुद्ध हींग तथा १२. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर कूटें और वस्त्रपूत सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा बकरे के मूत्र में अच्छी तरह भावना देकर बड़ी-बड़ी गोलियाँ बनाकर सुखा लें। चित्तभ्रम, अपस्मृति (स्मरणशक्ति का अभाव), भूतदोष, सिर एवं नेत्रों की पीड़ा एवं भ्रम नाश करने के लिए इस अञ्जन का नेत्रों में प्रयोग करें।

१७४. मृद्वीकादि क्वाथ (भावप्रकाश)

मृद्वीकाऽमरदारुमत्स्यशकलामुस्तामलक्योऽमृता-
पथ्याऽऽरेवतरामसेनकरजोराजीफलैः संयुताः।

१. दाख, २. देवदारु, ३. कुटकी, ४. नागरमोथा, ५, आमला, ६. गुडूची, ७. हरीतकी, ८. अमलतास, ९. चिरायता, १०. पित्तपापड़ा और ११. परवलपत्र—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ को चित्तभ्रम से पीड़ित सन्निपातज्वर के रोगी को पिलाने से ज्वर एवं चित्तभ्रम नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–चित्तभ्रम सन्निपातज्वर में।

१७५. दर्दुरदलादि क्वाथ (भावप्रकाश)

हन्युश्चित्तरुजोऽथ दर्दुरदलापाठापटोलीपयः-
पथ्यापर्पटराजवृक्षकटुकाशम्बूकपुष्प्यः शृताः ॥३०८॥

१. मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), २. पाठा, ३. परवलपत्र, ४. सुगन्धबाला, ५. हरीतकी, ६. पित्तपापड़ा, ७. अमलतास, ८. कुटकी और ९. शंखपुष्पी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें तथा ५० मि.ली. क्वाथ को चित्तभ्रम सन्निपातज्वर की शान्ति के लिए पिलावें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–चित्तभ्रम सन्निपातज्वर में।

कर्णमूलशोथज सन्निपातज्वर की असाध्यता (चक्रदत्त)

सन्निपातज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः।
शोथः सञ्जायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥३०९॥

सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी में ज्वर-अवधि के अन्त में कर्णमूल (कान की जड़ या आसपास) भयंकर शोथ एवं पीड़ा उत्पन्न हो जाती है। यह एक असाध्य लक्षण है। इस उपद्रवयुक्त सन्निपातज्वर से कोई-कोई रोगी ही बच पाता है। अर्थात् इस असाध्य लक्षण से युक्त सन्निपातज्वरी प्रायः मर ही जाते हैं।

कर्णमूलज सन्निपात की साध्यासाध्यता

ज्वरादितो वा ज्वरमध्यतो वा
ज्वरान्ततो वा श्रुतिमूलशोथः।
क्रमेण साध्यः खलु कृच्छ्रसाध्य-
स्ततस्त्वसाध्यः कथितो भिषग्भिः ॥३१०॥

सन्निपातज्वर के आदि में उत्पन्न हुआ उपद्रव स्वरूपकर्णमूल शोथ साध्य होता है, ज्वर के मध्य में उत्पन्न हुआ उपद्रवस्वरूप कर्णमूलशोथ कृच्छ्रसाध्य होता है तथा ज्वर के अन्त में उत्पन्न हुआ उपद्रव रूपी कर्णमूलशोथ असाध्य होता है—ऐसा वैद्यों द्वारा कहा जाता है।

कर्णमूलशोथ-चिकित्सा (चक्रदत्त)

रक्तावसेचनैः पूर्वं सर्पिष्पानैश्च तं जयेत्।
प्रदेहैः कफवातघ्नैर्वमनैः कवलग्रहैः ॥३११॥

सन्निपातज्वर में कर्णमूलशोथ हो जाने पर सर्वप्रथम जलौका आदि विधि से रक्तमोक्षण करना चाहिए। इसके बाद त्रिफला घृत, पञ्चतिक्तघृत आदि का पान कराकर सन्निपात ज्वर को जीते। शोथनाशक एवं वेदनानाशक तथा कफ-वातनाशक द्रव्यों का प्रलेप-प्रदेह लगावें। साथ ही कवलग्रह और वमन आदि कोई भी विधि से शोथ को नष्ट करे।

कर्णमूलशोथ सन्निपात-चिकित्सा

प्रलेपस्तमस्तं नयत्यल्पमेकः
समुद्रिक्तशोथश्च रक्तावशेषः।
सपाके च शस्त्रक्रिया पूयजित्सा
व्रणत्वं गते चोचिता तच्चिकित्सा ॥३१२॥

कर्णिक सन्निपातज्वर में यदि कर्णमूल में (छोटी गिल्टी) थोड़ा शोथ हो तो कुलत्थादि, गैरिकादि, दशमूल प्रलेप, बीजपूरकादि प्रलेपों में से किसी एक को पीसकर सुखोष्ण लेप

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लगाकर शोथ का नाश किया जा सकता है। यदि शोथ बड़ा (बड़ी गिल्टी) हो तो जलौका (जोंक = Leaches) विधि से रक्तमोक्षण करना चाहिए। यदि शोथ पक गया हो तो शस्त्रक्रिया (चीरा लगाकर = Operation) द्वारा व्रण को चीर कर पूयादि दूषित पदार्थ को निकाल कर व्रणप्रक्षालनोपरान्त व्रणशोधन-रोपण औषधि से व्रण की चिकित्सा करें।

१७६. कुलत्थादि प्रलेप (चक्रदत्त)

कुलत्थकट्फले शुण्ठी कारवी च समांशिकैः ।
सुखोष्णैर्लेपनं दद्यात् कर्णमूले मुहुर्मुहुः ॥३१३॥

१. कुलथी, २. कायफल, ३. शुण्ठी तथा ४. कलौंजी (मंगरैला)—इन चारों द्रव्यों को सूक्ष्म चूर्ण कर के जल से मिला कर मधु जैसा पतला घोल बनावें और उस घोल को आग पर पकाकर थोड़ा गाढ़ा चटनी जैसा घन द्रव हो जाने पर सुखोष्ण लेप कर्णमूलीय शोथप्रदेश पर बार-बार लेप लगावें।

१७७. गैरिकादि प्रलेप (चक्रदत्त)

गैरिकपांशुजाशुण्ठीवचाकट्फलकाञ्जिकैः ।
कर्णशोथहरो लेपः सन्निपातज्वरे नृणाम् ॥३१४॥

१. गैरिक, २. पांशुज (कलमीसोरा/Potassium Nitrate), ३. शुण्ठी, ४. वच तथा ५. कायफल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और काञ्जी में घोलकर आग पर पकाकर घनद्रव लेप तैयार करें। इस लेप को सुखोष्ण (जितना गर्म सह सके उतना ही) कर्णमूलीय शोथप्रदेश पर बार-बार लेप करें।

१७८. दशमूलीय प्रलेप (भावप्रकाश)

सुखोष्णदशमूलेन प्रलेपोऽपि महाफलः ॥३१५॥

१. बिल्वत्वक्, २. सोनापाठा छाल, ३. अरणी छाल, ४. गम्भार छाल, ५. पाढल छाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. बृहती, ९. कण्टकारी और १०. गोखरु—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और जल में घोल कर आग में पकाकर घनद्रव लेप तैयार करें। सुखोष्ण इस लेप को कर्णमूलीय शोथ पर बार-बार लेप करें। ऐसा करने से कर्ण-मूलशोथ में अत्यन्त लाभ होता है।

१७९. बीजपूरादि प्रलेप (चक्रदत्त)

बीजपूरकमूलानि अग्निमन्थं तथैव च ।
सनागरं देवदारु चव्यचित्रकपेषितम् ।
प्रलेपनमिदं श्रेष्ठं गले श्वयथुनाशनम् ॥३१६॥

१. बिजौरा नीबू के मूल-त्वक्, २. अरणी छाल, ३. शुण्ठी, ४. देवदारु, ५. चव्य एवं ६. चित्रकमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म वस्त्रपूत चूर्ण करें और जल या काञ्जी में घोल कर आग में पकाकर घनद्रव लेप तैयार करें। सुखोष्ण (सह्य उष्ण) इस लेप को कर्णमूलशोथ पर बार-बार लेप करने से कर्णमूलशोथ नष्ट हो जाता है।

१८०. भार्ग्यादि क्वाथ (भावप्रकाश)

भार्गीजयापौष्करकण्टकारी-
कटुत्रिकोग्राघनकुण्डलीभिः ।
कुलीरशृङ्गीकटुकारसाभिः
कृतः कषायः किल कर्णिकघ्नः ॥३१७॥

१. भारंगी, २. अरणी छाल, ३. पुष्करमूल, ४. कण्टकारी, ५. शुण्ठी, ६. बडी पीपर, ७. मरिच, ८. वच, ९. नागरमोथा, १०. गुडूची, ११. काकडासिंगी और १२. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। सुखोष्ण ५० मि.ली. इस क्वाथ को कर्णिक सन्निपातज्वर में पिलाने से अत्यधिक लाभ होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कर्णिक सन्निपातज्वर में।

१८१. फलत्रिकादि क्वाथ (भा.प्र.)

फलत्रिकत्र्यूषणमुस्तकट्वी-
कलिङ्गसिंहाननशर्वरीभिः ।
क्वाथः कृतः कृन्तति कण्ठकुब्जं
कण्ठीरवः कुञ्जरमाशु तद्वत् ॥३१८॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. शुण्ठी, ५. बड़ी पीपर, ६. मरिच, ७. नागरमोथा, ८. कुटकी, ९. इन्द्रयव, १०. वासामूल और ११. हल्दी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण इस क्वाथ को कण्ठकुब्जक सन्निपातज्वर में पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है। जिस प्रकार मस्त हाथी को सिंह नाश कर देता है उसी प्रकार यह क्वाथ भी कण्ठकुब्जसन्निपात ज्वर को नाश कर देता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कण्ठकुब्जक सन्निपातज्वर में।

१८२. किरातादि क्वाथ (भावप्रकाश)

किरातकटुकाकणाकुटजकण्टकारीशटी-
कलिङ्गकिलिमाभयाकटुककट्फलाम्भोधरैः ।
विषाऽऽमलकपुष्करानलकुलीरशृङ्गीवृषै-
र्महौषधसखैरयं जयति कण्ठकुब्जं गणः ॥३१९॥

१. चिरायता, २. कुटकी, ३. पीपर, ४. कुटज की छाल, ५. कण्टकारी, ६. कचूर, ७. बहेड़ा, ८. देवदारु, ९. हरीतकी, १०. कुटकी, ११. कायफल, १२. नागरमोथा, १३. अतीस, १४. आमला, १५. पुष्करमूल, १६. चित्रकमूल, १७. काकडासिंगी, १८. वासा और १९. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण इस क्वाथ को पिलाने से कण्ठकुब्ज सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–कण्ठकुब्ज सन्निपातज्वर में।

सन्निपात रोगियों में पथ्य

पञ्चमुष्टिकयूषेण त्रिकण्टककृतेन वा।
आदोषशमनात्पथ्यं त्रिकण्टेनैव साधयेत् ॥३२०॥

पञ्चमुष्टिक यूष या त्रिकण्टक गोक्षुर (अथवा कण्टकारी-यवासा-गोखरु) क्वाथ सिद्ध यवागू आदि सिद्ध करके देना चाहिए। जब तक दोषों का शमन न हो जाय तब तक यह पथ्य देते रहना चाहिए। (पञ्चमुष्टिक यूष का अग्रिम श्लोकों में वर्णन किया गया है।)

१८३. पञ्चमुष्टिक यूष (चक्रदत्त)

यवकोलकुलत्थानां मुद्गमूलकशुण्ठयोः।
एकैकं मुष्टिमाहृत्य पचेदष्टगुणे जले ॥३२१॥
पञ्चमुष्टिक इत्येष वातपित्तकफापहः।
शस्यते गुल्मशूले च श्वासे कासे च शस्यते ॥३२२॥

१. यव (जौ), २. बेर, ३. कुलथी, ४. मूँग तथा ५. कच्ची मूली—इन सभी पाँचों द्रव्यों को १-१ मुष्टि अर्थात् १-१ पल (५०-५० ग्राम) लेकर यवकुट कर आठ गुना जल में पकावें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान कर वात, पित्त एवं कफ ज्वर अर्थात् सन्निपातज्वर की शान्ति के लिए पुनः-पुनः पिलावें। यह यूष गुल्म, शूल, श्वास और कास में लाभप्रद है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सन्निपातज्वर, गुल्म, शूल, श्वास तथा कास में।

आगन्तुज ज्वर की चिकित्सा (भावप्रकाश)

आगन्तुजे ज्वरे नैव नरः कुर्वीत लङ्घनम् ॥३२३॥

आगन्तुक (अभिघात, कामादि) के कारणों से उत्पन्न ज्वरों की चिकित्सा में बुद्धिमान् वैद्य रोगी को उपवास (लंघन) न करावें।

अपि च—

लङ्घनं न हितं कामशोकचिन्ताप्रहारजे। (भा.प्र.)
भयभूतश्रमक्रोधलङ्घनैश्च कृते ज्वरे।
किन्त्वग्नौ दीपिते तत्र दद्यान्मांसरसौदनम् ॥३२४॥

और भी कहा है कि काम, शोक, चिन्ता एवं आघात (प्रहार) (लाठी, ईंट-पत्थर आदि से चोट पहुँचाना), भय, भूत, परिश्रम, क्रोध तथा उपवास से उत्पन्न ज्वरों में उपवास (लंघन) कराना हितकर नहीं होता है। किन्तु रोगी की अग्नि यदि प्रदीप्त हो तो मांसरस के साथ भात खाने के लिए देना चाहिए।

अन्यच्च

अभिघातज्वरे कुर्यात् क्रियामुष्णविवर्जिताम्।
कषायं मधुरं स्निग्धं यथादोषमथापि च ॥३२५॥

अभिघातज ज्वर में उष्णवर्जित उपचार करें तथा दोषानुसार कषायरस, मधुररस एवं स्निग्ध द्रव्यों का प्रयोग करना चाहिए।

अभिघातज ज्वर में (चक्रदत्त)

अभिघातज्वरो नश्येत् पानाभ्यङ्गेन सर्पिषः।
क्षतानां व्रणितानां च क्षतव्रणचिकित्सया ॥३२६॥

लाठी, ईंट, पत्थर, मुष्टि, भाला, तलवार आदि अस्त्र-शस्त्रों के अभिघात (प्रहार) से उत्पन्न ज्वर में ज्वरघ्न द्रव्यों से सिद्ध घृतपान तथा पक्व घृत का अभ्यङ्ग करने से ज्वर नष्ट हो जाता है और क्षत एवं व्रणयुक्त अवस्थाजन्य ज्वर की चिकित्सा क्षत-व्रण की चिकित्सा करने से नष्ट होता है।

अभिचार-शापज ज्वर में (चक्रदत्त)

अभिचाराभिशापोत्थौ ज्वरौ होमादिना जयेत्।
दानस्वस्त्ययनातिथ्यैरुत्पातग्रहपीडजैः ॥३२७॥

अभिचार ज्वर (मन्त्रप्रयोग-कृत्यादि प्रयोगजन्य) तथा देव, गुरु, ब्राह्मण, माता-पिता, सिद्ध, वृद्ध, पतिव्रता स्त्री आदि का तिरस्कार (अपमान) जन्य शाप से उत्पन्न ज्वर की शान्ति के लिए होम, प्रायश्चित्त, मृत्युञ्जय जाप, ईश्वराराधन आदि कर्म करना चाहिए। उत्पात (विद्युत्पात), ग्रहबाधाजन्य ज्वर की शान्ति के लिए दान (अन्न, वस्त्र, स्वर्ण, भूमि, गोदानादि), वेदोक्त स्वस्तिवाचन, अतिथियों (समादरणीय महापुरुषों या अन्य कोई भी आगत अभ्यागतों) का स्वागत-सत्कार आदि कर्म करना चाहिए। अर्थात् इन कार्यों से अभिघातज एवं अभिशापज ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

सर्वगन्धग्रहणजन्य ज्वर में (चक्रदत्त)

ओषधिगन्धविषजौ विषपित्तप्रबाधनैः।
जयेत् कषायैर्मतिमान् सर्वगन्धकृतैर्भिषक् ॥३२८॥

तीव्रौषधियों के सूँघने से उत्पन्न ज्वर तथा विषों के सूँघने एवं देखने और खाने से उत्पन्न ज्वर में विष एवं पित्त को नाश करने वाली औषधियों से तथा सुश्रुतोक्त सर्वगन्ध (एलादि गण) की औषधियों से बने क्वाथों को पिलाकर नष्ट करना चाहिए।

विमर्श—सर्वगन्ध द्रव्य से सुश्रुतोक्त एलादि क्वाथ ही ग्रहण करना चाहिए।

एलादि गण—'एलातगरकुष्ठमांसीध्यामकत्वक्पत्रनागपुष्प-प्रियङ्गुहरेणुकाव्याघ्रनखशुक्तिचण्डास्थौणेयकश्रीवेष्टकचोचचोरक-बालकगुग्गुलुसर्जरसतुरुष्ककुन्दुरुकागुरुस्पृक्कोशीरभद्रदारुकुङ्कु-मानि पुत्रागकेशरञ्चेति'। (सु.सू. ३८।२४)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

'एलादिको वातकफौ निहन्याद् विषमेव च।
वर्णप्रसादनः कण्डूपिडिकाकोठनाशनः'।।
(सु.सू. ३८।२५)

औषधिगन्धज ज्वर के लक्षण—

औषधिगन्धज ज्वर में मूर्च्छा, शिरोवेदना, वमन और छींके आती हैं।

यथा—'औषधिगन्धजे मूर्च्छा शिरोरुग् वमथुः क्षवः'।
(सु.अ. ३९।७७)

क्रोधादिजन्य ज्वर में (चक्रदत्त)

क्रोधजे पित्तजित् काम्या अर्थाः सद्वाक्यमेव च।
आश्वासेनेष्टलाभेन वायोः प्रशमनेन च ॥३२९॥
हर्षणैश्च शमं यान्ति कामशोकभयज्वराः।
कामात् क्रोधज्वरो नाशं क्रोधात् कामसमुद्भवः।
याति ताभ्यामुभाभ्यान्तु भयशोकसमुद्भवः ॥३३०॥

क्रोध से उत्पन्न ज्वर की शान्ति हेतु पित्तनाशक उपाय करना चाहिए। साथ ही सुन्दर एवं सद्वचनों द्वारा समझाना चाहिए तथा जिन कारणों से क्रोध उत्पन्न हुआ हो उसे दूर करने का आश्वासन देना और अनुकूल वस्तुओं को देना चाहिए। इसी प्रकार वातशामक औषधि आदि तथा मन में हर्ष उत्पन्न करने वाली क्रियाओं से कामज्वर, शोकज्वर, भयज्वर नष्ट हो जाते हैं। कामवासना की शान्ति से क्रोधज्वर नष्ट हो जाता है और क्रोध से कामज्वर नष्ट हो जाता है एवं काम एवं क्रोध से भयज तथा शोकज ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

भूताभिषङ्ग ज्वर में (चक्रदत्त)

भूतविद्यासमुद्दिष्टैर्बन्धावेशनताडनैः।
जयेद् भूताभिषङ्गोत्थं मनःसान्त्वैश्च मानसम् ॥३३१॥

भूताभिषङ्ग ज्वर में भूतविद्या में उपदिष्ट तथा भूतविद्या के विशेषज्ञ से **बन्धन** (मन्त्र आदि द्वारा प्रविष्ट हुए भूत को निकाल कर कीलित = मारने अथवा लोहे की कूपी या नलिका में बन्द कर लाक्षा आदि सिल करने को बन्धन कहते हैं), **आवेशन** (मन्त्र के द्वारा भूत के रोगी के मस्तिष्क पर भूत को बुलाने को आवेशन कहते हैं), **ताडन** (रोगी के शरीर में प्रविष्ट भूत को भगाने के लिए मन्त्र पढ़कर सरसों आदि को रोगी के शरीर पर फेंकने की क्रिया को ताडन कहते हैं। ताडन से रोगी को मारना आदि भी कहते हैं) इन क्रियाओं से भूताभिषङ्ग नष्ट हो जाता है। मानसिक ज्वर की शान्ति के लिए सान्त्वना देनी चाहिए तथा ज्ञान, विज्ञान, धैर्य, स्मृति एवं समाधि से भी मानस ज्वर का शमन करना चाहिए।

महर्षि सुश्रुत ने भूताभिषङ्ग ज्वर के लक्षण इस प्रकार से कहे हैं; यथा—'भूताभिषङ्गादुद्वेगहास्यकम्पनरोदनम्'।

भूताभिषङ्ग ज्वर में–उद्वेग, हास्य, कम्पन और रोना प्रमुख लक्षण हैं।

१८४. कामज्वरहर क्वाथ (भावप्रकाश)

बालकं शतपत्राणि गन्धसारमुशीरकम्।
चोचं धानेयकं मांसी क्वाथः कामज्वरापहः ॥३३२॥

१. सुगन्धबाला, २. कमलपुष्प, ३. श्वेतचन्दन, ४. खस, ५. दालचीनी, ६. धनियाँ तथा ७. जटामांसी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। कामज्वर से पीड़ित व्यक्ति को ५० मि.ली. क्वाथ पिलाने से कामज्वरपीड़ा शान्त होती है।

कामज्वर की चिकित्सा (भावप्रकाश)

सन्ध्यायां संस्तरः कार्यः सुगन्धैः कुसुमैर्भृशम्।
क्रीडनीयं स्वकान्तेन सह रात्रौ तथा स्त्रियाः ॥३३३॥

रात्रि में सुगन्धित पुष्पों से सुसज्जित शय्या पर तथा सुगन्धित पुष्पों की माला, लेप, इत्र आदि धारण कर कामज्वर से पीड़ित पुरुष एवं स्त्री अपनी प्रियतमा स्त्री एवं अपने प्रिय पुरुष के साथ रमण (सम्भोग) करने से कामज्वर शान्त हो जाता है।

विमर्श—आचार्य सुश्रुत ने कामज्वर के लक्षण में कहा है कि चित्तविभ्रंश = चित्त में अस्थिरता, तन्द्रा, आलस्य, अरुचि, हृदय में वेदना, मुख तथा शरीर सूख जाना। यथा—

'कामजे चित्तविभ्रंशस्तन्द्राऽऽलस्यमरोचकम्।
हृदये वेदना चास्य गात्रञ्च परिशुष्यति'।।
(सु.उ. ३९।७८)

भूतज्वर की चिकित्सा

सहदेवाया मलं विधिना कण्ठे निबद्धमपहरति।
एकद्वित्रिचतुर्भिर्दिवसैर्भूतज्वरं पुंसाम् ॥३३४॥

विधि-विधान से सहदेवी की जड़ को कण्ठ में बाँधने से भूत-ज्वर एक, दो, तीन या चार दिनों में नष्ट हो जाता है।

विषम ज्वर की चिकित्सा

ज्वराश्च विषमाः सर्वे सन्निपातसमुद्भवाः।
यथोल्बणस्य दोषस्य तेषु कार्यं चिकित्सितम् ॥३३५॥
विषमेष्वपि कर्त्तव्यमूर्ध्वञ्चाधश्च शोधनम्।
स्निग्धोष्णैरन्नपानैश्च शमयेद्विषमज्वरम् ॥३३६॥

सभी विषम ज्वर सन्निपात से उत्पन्न होते हैं। इस विषम ज्वर में जो दोष प्रमुख (अधिक बढ़ा हुआ) हो, सबसे पहले उसी की चिकित्सा करनी चाहिए। विषम ज्वर में भी ऊर्ध्वाधः संशोधन अर्थात् वमन और विरेचन कराना चाहिए तथा स्निग्ध-उष्ण अन्न-पान से विषम ज्वर का शमन करना चाहिए।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विषम ज्वर की चिकित्सा

वातप्रधानं सर्पिर्भिर्बस्तिभिः सानुवासनैः।
विरेचनं न पयसा सर्पिषा संस्कृतेन च।
विषमं च तिक्तशीतैर्ज्वरं पित्तोत्तरं जयेत् ॥३३७॥
वमनं पाचनं रूक्षमन्नपानं च लङ्घनम्।
कषायोष्णञ्च विषमे ज्वरे शस्तं कफोत्तरे ॥३३८॥

वात-प्रधान विषम ज्वर में घृतपान तथा अनुवासन (सस्नेहबस्ति) बस्ति देना चाहिए। पित्त-प्रधान विषमज्वर में दुग्धपान तथा विरेचन औषधिसाधित घृतपान कराना चाहिए; साथ ही तिक्त-शीतवीर्य से युक्त औषधों का प्रयोग करना चाहिए तथा कफ-प्रधान विषम ज्वर में वमन, दीपन-पाचन रूक्ष अन्न-पान, लंघन (उपवास), कषाय रसयुक्त तथा उष्ण औषधों के प्रयोग से चिकित्सा करनी चाहिए।

१८५. महौषधादि क्वाथ

महौषधग्रन्थिकतालपर्णी-
मार्कण्डिकाऽरग्वधबालपथ्याः ।
सक्षारमेषां विषमज्वरे च
हितं श्रृतं पाचनरेचनं च ॥३३९॥

१. शुण्ठी, २. पिपरामूल, ३. मुसली, ४. सनायपत्ती, ५. अमलतास, ६. सुगन्धबाला तथा ७. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ में यवक्षार मिलाकर रोज २ बार पिलावें। इससे विषम ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

१८६. पटोलादि क्वाथ (गदनिग्रह)

पटोलयष्टीमधुतिक्तरोहिणी-
घनाभयाभिर्विषमज्वरघ्नः ।
कृतः कषायस्त्रिफलाऽमृतावृषैः
पृथक् पृथग्वा विषमज्वरापहः ॥३४०॥

१. परवलपत्र, २. मुलेठी, ३. कुटकी, ४. नागरमोथा और ५. हरीतकी (अथवा—) १. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. गुडूची तथा ५. वासामूल—उपर्युक्त दोनों वर्ग के द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। इन दोनों में से कोई ५० मि.ली. क्वाथ पिलाने से विषम ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

१८७. मधुकादि क्वाथ

मधुकं चन्दनं मुस्तं धात्री धान्यमुशीरकम्।
छिन्नोद्भवं पटोलञ्च क्वाथः समधुशर्करः ॥३४१॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति सन्तताद्यं सुदारुणम्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥३४२॥

१. मुलेठी, २. लालचन्दन, ३. नागरमोथा, ४. आमला, ५. धनियाँ, ६. खस, ७. गुडूची और ८. परवलपत्र—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर अष्टमांश छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ में मधु एवं शर्करा मिलाकर पिलाने से सभी आठ प्रकार के ज्वर, वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज, सन्निपातज, आगन्तुज, विषमज्वरादि ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

१८८. मुस्तादि क्वाथ (चक्रदत्त)

मुस्तामलकगुडूचीविश्वौषधकण्टकारिकाक्वाथः।
पीतः सकणाचूर्णः समधुर्विषमज्वरं हन्ति ॥३४३॥

१. नागरमोथा, २. आमला, ३. गुडूची, ४. शुण्ठी और ५. कण्टकारी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ में पिप्पलीचूर्ण एवं मधु मिलाकर पिलाने से विषम ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

१८९. महाबलादि क्वाथ (बृ.नि.रत्नाकर)

महाबलामूलमहौषधाभ्यां
क्वाथो निहन्याद्विषमज्वरञ्च ।
शीतं सकम्पं परिदाहयुक्तं
विनाशयेद् द्वित्रिदिनप्रयुक्तः ॥३४४॥

१. महाबलामूल (सहदेवी) एवं २. शुण्ठी—इन दोनों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ को दिन में २ बार २-३ दिनों तक पिलाने से शीत, कम्प एवं दाह से युक्त विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

१९०. भार्ग्यादि क्वाथ (स्वल्प) (यो.रत्ना.)

भार्ग्यब्दपर्पटकधान्ययवासविश्व-
भूनिम्बकुष्ठकणसिंह्यमृताकषायः ।
जीर्णज्वरं सततसन्ततकान्यघस्रो-
द्भूतं तृतीयकचतुर्थकसंयुतं स्यात् ॥३४५॥

१. भारंगी, २. नागरमोथा, ३. पित्तपापड़ा, ४. धनियाँ, ५. जवासा, ६. शुण्ठी, ७. चिरायता, ८. कूठ, ९. पीपर, १०. कण्टकारी और ११. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ दिन में २ बार ३-४ दिनों तक पिलाने से जीर्णज्वर, सन्ततज्वर, सततज्वर, अन्येद्युज्वर, तृतीयक एवं चतुर्थक विषमज्वरों को नष्ट करता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सभी विषमज्वर एवं जीर्णज्वर में।

१९१. भार्ग्यादि क्वाथ (मध्यम)

भार्ग्यब्दपर्पटकपुष्करशृङ्गवेर-
पथ्याकणाह्वदशमूलकृतः कषायः।
सद्यो निहन्ति विषमज्वरसन्निपात-
जीर्णज्वरश्वयथुशीतकवह्निसादान् ॥३४६॥

१. भारंगी, २. नागरमोथा, ३. पित्तपापड़ा, ४. पुष्करमूल, ५. शुण्ठी, ६. हरीतकी, ७. पीपर, ८. बिल्वमूल छाल, ९. गम्भारमूल छाल, १०. अरणीमूल, ११. सोनापाठामूल, १२. पाढ़लमूल, १३. शालपर्णी, १४. पृश्निपर्णी, १५. बृहती, १६. कण्टकारी तथा १७. गोक्षुर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ को विषमज्वर, सन्निपातज्वर, जीर्णज्वर, शोथ, शीताङ्ग तथा अग्नि-मान्द्य के रोगी को पिलाना चाहिए। इस क्वाथ को दिन में २ बार ३-४ दिनों तक पिलाने से उपर्युक्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषमज्वर-सन्निपात-जीर्णज्वर आदि में।

१९२. भार्ग्यादि क्वाथ (बृहत्)

भार्गी पथ्या कटुः कुष्ठं पर्पटं मुस्तकं कणा।
अमृता दशमूलञ्च नागरं क्वाथयेद्भिषक् ॥३४७॥
हन्ति धातुगतं सर्वं बहिःस्थं शीतसंयुतम्।
सतताद्यं ज्वरं घोरं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥३४८॥
प्लीहानं यकृतं गुल्मं श्वयथुञ्च विनाशयेत्।
एष भार्ग्यादिको नाम सर्वज्वरहरः परः ॥३४९॥

१. भारंगी, २. हरीतकी, ३. कुटकी, ४. कूठ, ५. पित्तपापड़ा, ६. मुस्ता, ७. पीपर, ८. गुडूची, ९. बिल्वमूल-त्वक्, १०. गम्भारमूल, ११. अरणीमूल, १२. सोनापाठामूल, १३. पाढलमूल, १४. शालपर्णी, १५. पृश्निपर्णी, १६. बृहती, १७. कण्टकारी, १८. गोखरु और १९. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. यह क्वाथ धातुगत ज्वर, बाहर से दाहयुक्त एवं भीतर से शीत युक्त ज्वर, सन्ततादि भयंकर ज्वर, अग्निमान्द्य, अरुचि, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, गुल्म और शोथ आदि से युक्त सभी प्रकार के ज्वरों को नाश करता है।

१९३. दास्यादि क्वाथ (बृ.यो.रत्ना.)

दासीदारुकलिङ्गलोहितलताश्यामाकपाठाशटी-
शुण्ठ्योशीरकिरातकुञ्जरकणात्रायन्तिकापद्मकैः।
वज्रीधान्यकनागराब्दसरलैः शिग्रुवम्बुसिंहीशिवा-
व्याघ्रीपर्पटदर्भमूलकटुकानन्ताऽमृतापुष्करैः ॥३५०॥
धातुस्थं विषमं त्रिदोषजनितं चैकाहिकं द्व्याहिकं
कामाच्छोकसमुद्भवञ्च विविधं यच्छर्द्दियुक्तं नृणाम्।
पीतो हन्ति क्षयोद्भवं सततकं चातुर्थकं भूतजं
योगोऽयं मुनिभिः पुरा निगदितो जीर्णज्वरे दुस्तरे ॥३५१॥

१. सहचर, २. देवदारु, ३. इन्द्रयव, ४. मंजीठ, ५. कृष्ण अनन्तमूल, ६. पाठा, ७. कचूर, ८. शुण्ठी, ९. खस, १०. चिरायता, ११. गजपिप्पली, १२. त्रायमाण, १३. पद्मकाष्ठ, १४. अस्थिसन्धानी, १५. धनियाँ, १६. शुण्ठी, १७. नागर-मोथा, १८. सरलकाष्ठ, १९. शिग्रुत्वक्, २०. सुगन्धबाला, २१. कण्टकारी, २२. बृहती, २३. हरीतकी, २४. पित्तपापड़ा, २५. कुश का मूल, २६. कुटकी, २७. अनन्तमूल, २८. गुडूची तथा २९. पुष्करमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ को पिलाने से धातुगत ज्वर, विषमज्वर, सन्निपातज्वर, ऐकाहिक ज्वर, द्व्याहिक ज्वर, कामज्वर, शोकज्वर तथा अनेक प्रकार के वमन युक्त ज्वर, क्षयज ज्वर, सतत ज्वर, चातुर्थिक ज्वर और भूतज्वर नष्ट हो जाता है। मुनियों द्वारा पहले ही कहा जा चुका है कि यह योग असाध्य जीर्णज्वर में अत्यन्त लाभप्रद है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषमज्वर, जीर्णज्वर में।

१९४. दार्व्यादि क्वाथ

दार्वीकलिङ्गमञ्जिष्ठाव्याघ्रीदारुगुडूचिकाः।
भूधात्री पर्पटं श्यामा तगरं करिपिप्पली ॥३५२॥
क्षुद्रा निम्बं घनं व्याधिर्नागरं पद्मकं शटी।
रामाऽऽटरूषः सरलं त्रायमाणाऽस्थिसन्धिकम् ॥३५३॥
भूनिम्बारुष्करं पाठा कुशः कटुकरोहिणी।
मागधी धान्यकं चेति क्वाथं मधुयुतं पिबेत् ॥३५४॥
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
द्वन्द्वजं विषमं घोरं सतताद्यं सुदारुणम् ॥३५५॥
अन्तःस्थञ्च बहिःस्थञ्च धातुस्थञ्च विशेषतः।
सर्वज्वरं निहन्त्याशु तथा च दैर्घरात्रिकम् ॥३५६॥
शीतं कम्पं भृशं दाहं कार्श्यं घर्मस्रुतिं वमिम्।
ग्रहणीमतिसारञ्च कासं श्वासं सकामलम् ॥३५७॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शोषं हन्यात्तथा शोथं मन्दाग्नित्वमरोचकम्।
शूलमष्टविधं हन्ति प्रमेहानपि विंशतिम् ॥३५८॥
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च हलीमकम्।
पृथग् दोषांञ्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान्।
तान् सर्वान्नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥३५९॥

१. दारुहरिद्रा, २. इन्द्रयव, ३. मंजीठ, ४. बृहती, ५. देवदारु, ६. गुडूची, ७. भूमिआमला, ८. पित्तपापड़ा, ९. अनन्तमूल, १०. तगर, ११. गजपीपर, १२. कण्टकारी, १३. नीम छाल, १४. नागरमोथा, १५. कूठ, १६. शुण्ठी, १७. पद्मकाठ, १८. कचूर, १९. घृतकुमारी, २०. वासामूल, २१. सरलकाष्ठ, २२. त्रायमाण, २३. अस्थिसंधानी, २४. चिरायता, २५. शुद्ध भिलावा, २६. पाठा कुशमूल, २७. कुटकी, २८. पीपर और २९. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ में मधु मिलाकर निम्नलिखित रोगों में पिलाने से काफी लाभ होता है। वातज्वर, पित्तज्वर, कफज्वर, सन्निपातज्वर, द्वन्द्वज ज्वर, भयंकर विषमज्वर, दारुण सततादि ज्वर, अन्तर्ज्वर, बहिर्ज्वर, धातुगत ज्वर, सभी प्रकार के ज्वर, दीर्घकालानुबन्धि ज्वर, शीतज्वर, कम्पज्वर तथा दाहयुक्त ज्वर का नाश करता है। कृशता, स्वेदाधिक्य, वमन, ग्रहणी, अतिसार, कास, श्वास, कामला, शोष, शोथ, मन्दाग्नि, अरुचि, ८ प्रकार के शूल, २० प्रकार के प्रमेह, प्लीहावृद्धि, हृदयान्तर्गत मांसवृद्धि, यकृद्वृद्धि और हलीमक आदि रोग वैसे ही नष्ट करता है जैसे कि इन्द्र का वज्र वृक्षसमूहों को नाश कर देता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–समस्त ज्वरादि में।

१९५. पटोलादि क्वाथ

पटोलारिष्टमृद्वीकाश्यामाकत्रिफलावृषम्।
क्वाथ ऐकाहिकं हन्ति शर्करामधुयोजितः ॥३६०॥

१. परवलपत्र, २. नीम की छाल, ३. मुनक्का, ४. साँमा धान, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. वासामूल—इन सभी को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ में मधु एवं शर्करा मिलाकर ऐकाहिक ज्वर से पीड़ित रोगी को दिन में २ बार ३-४ दिनों तक पिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–ऐकाहिक ज्वर में।

१९६. गुडूच्यादि क्वाथ

गुडूचीनिम्बधात्रीणां कषायं वा समाक्षिकम्।
पिबेत्प्रातस्ततस्तत्स्याद्विषमज्वरनाशनम् ॥३६१॥

१. गुडूची, २. नीम की छाल एवं ३. आँवला—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ प्रातः पीने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

१९७. क्वाथपञ्चक–सन्ततादि ज्वरों में (चक्रदत्त)

कलिङ्गकं पटोलस्य पत्रं कटुकरोहिणी।
किञ्चित्क्षौद्रेण संयुक्तं पिबेत् सन्ततके ज्वरे ॥३६२॥
पटोलं शारिवा मुस्तं पाठा कटुकरोहिणी।
क्वाथं कृत्वा पिबेन्नूनं सततज्वरपीडितः ॥३६३॥
निम्बं पटोलं मृद्वीका त्रिफला मुस्तवत्सकौ।
एषां क्वाथो विनिर्णीतोऽन्येद्युष्कज्वरदारणः ॥३६४॥
किराततिक्तममृता चन्दनं विश्वभेषजम्।
एषां क्वाथो हरेत् प्रातः पीतो ज्वरतृतीयकम् ॥३६५॥
गुडूच्यामलकं मुस्तमेषां क्वाथस्तु सेवितः।
चातुर्थकं घोरतरं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥३६६॥

(१) १. इन्द्रयव, २. परवलपत्र एवं ३. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ में थोड़ी मात्रा में मधु मिलाकर प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक पिलाने से सन्ततज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

(२) १. परवलपत्र, २. अनन्तमूल, ३. नागरमोथा, ४. पाठा और ५. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ प्रातः-सायं ४ दिनों तक पिलाने से सततज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

(३) १. नीम की छाल, २. परवलपत्र, ३. मुनक्का, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. आमला, ७. नागरमोथा तथा ८. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण इस क्वाथ को प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक पिलाने से अन्येद्युज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

(४) १. चिरायता, २. गुडूची, ३. लालचन्दन एवं ४. शुण्ठी—इन चारों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ को प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक पिलाने से तृतीयक ज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

(५) १. गुडूची, २. आमला एवं ३. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुखोष्ण क्वाथ प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक पिलाने से भयंकर चातुर्थिक ज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

१९८. महौषधादि क्वाथ (चक्रदत्त)

महौषधामृतामुस्तचन्दनोशीरधान्यकैः ।
क्वाथस्तृतीयकं हन्ति शर्करामधुयोजितः ॥३६७॥

१. शुण्ठी, २. गुडूची, ३. नागरमोथा, ४. रक्तचन्दन, ५. खस तथा ६. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ को प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक शर्करा एवं मधु मिलाकर पिलाने से तृतीयक ज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–तृतीयक ज्वर में।

१९९. उशीरादि क्वाथ (भावप्रकाश)

उशीरं चन्दनं मुस्तं गुडूची धान्यनागरम् ।
अम्भसा क्वथितं पेयं शर्करामधुयोजितम् ।
ज्वरे तृतीयके देयं तृष्णादाहसमन्विते ॥३६८॥

१. खस, २, लालचन्दन, ३. नागरमोथा, ४. गुडूची, ५. धनियाँ और ६. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ में शर्करा एवं मधु मिलाकर प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक पिलाने से तृष्णा एवं दाह से युक्त तृतीयक ज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–तृतीयक ज्वर में

२००. वासादि क्वाथ (चक्रदत्त)

वासाधात्रीस्थिरादारुपथ्यानागरसाधितः ।
सितामधुयुतः क्वाथश्चातुर्थकविनाशनः ॥३६९॥

१. वासामूल, २. आँवला, ३. शालपर्णी, ४. देवदारु, ५. हरीतकी और ६. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ चीनी एवं मधु मिला कर प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक पिलाने से चातुर्थिक ज्वर (विषमज्वर) नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–चातुर्थिक ज्वर में।

२०१. मुस्तादि क्वाथ

मुस्तापाठाशिवाक्वाथो ज्वरं चातुर्थकं हरेत् ।
दुग्धेन त्रिफला पीता हन्ति चातुर्थकं ज्वरम् ॥३७०॥

१. नागरमोथा, २. पाठा एवं ३. हरीतकी—इन तीनों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. सुखोष्ण क्वाथ को प्रातः-सायं ३-४ दिनों तक पिलाने से चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है। (अथवा) गर्म दूध में समभाग त्रिफला क्वाथ या चतुर्थांश त्रिफला चूर्ण मिला कर पूर्ववत् पीने से चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

२०२. पथ्यादि क्वाथ (गदनिग्रह)

पथ्यास्थिरानागरदेवदारु-
धात्रीवृषैरुत्क्वथितः कषायः ।
सितोपलामाक्षिकसम्प्रयुक्त-
श्चातुर्थकं हन्त्यचिरेण पीतः ॥३७१॥

१. हरीतकी, २. शालपर्णी, ३. शुण्ठी, ४. देवदारु, ५. आमला तथा ६. वासामूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण को १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. इस सुखोष्ण क्वाथ में मिश्री और मधु मिलाकर पिलाने से शीघ्र ही चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–चातुर्थिक ज्वर में।

२०३. अजाजी गुड योग (चक्रदत्त)

अजाजी गुडसंयुक्ता विषमज्वरनाशिनी ।
अग्निसादं जयेत् सम्यग् वातरोगांश्च नाशयेत् ॥३७२॥

१. काला जीरा एवं २. गुड़—आग पर भुना काला जीरा चूर्ण ५ ग्राम को ५ ग्राम पुराने अच्छे गुड़ में मिलाकर प्रातः-सायं खाने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है। इससे अग्निमान्द्य एवं वातविकार भी नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१० ग्राम। **उपयोग**–विषमज्वर, अग्निमान्द्य में।

२०४. रसोनकल्क (चक्रदत्त)

रसोनकल्कं तिलतैलमिश्रं[1]
योऽश्नाति नित्यं विषमज्वरार्तः ।
विमुच्यते सोऽप्यचिराज्ज्वरेण
वातामयैश्चापि सुघोररूपैः ॥३७३॥

---

१. कल्क-परिभाषा—
'द्रव्यमार्द्रं शिलापिष्टं शुष्कं वा सजलं भवेत् ।
प्रक्षेपावापकल्कास्ते तन्मानं कर्षसम्मितम् ॥
कल्के मधु घृतं तैलं देयं द्विगुणमात्रया ।
सिता गुडं समं दद्याद् द्रवा देयाश्चतुर्गुणाः' ॥ (शा.म. ५।२)
गीला (ताजा) द्रव्य को सिल पर पीस कर कल्क बना लें या शुष्क द्रव्य को पहले सूक्ष्म चूर्ण कर जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इसकी मात्रा १ तोला (११ ग्राम) है। इसमें यदि मधु, घृत, तैल मिलाना हो तो दुगुनी मात्रा में मिलावें। यदि गुड़, चीनी मिलानी हों तो सम मात्रा में और द्रव पदार्थ मिलाना हो तो चार गुना मिलावें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लशुन ५-१० ग्राम को छीलकर सिल पर पीस लें और इस कल्क से दुगुनी मात्रा में (१० से २० मि.ली.) तिलतैल मिलाकर आग पर थोड़ा गरम कर रोज खाने से शीघ्र ही भयंकर विषमज्वर एवं वातविकार से मुक्त हो जाता है।

२०५. त्रिफला गुड़ (चक्रदत्त)

गुडप्रगाढां त्रिफलां पिबेद्वा विषमार्दितः ॥

विषमज्वर से पीड़ित व्यक्ति त्रिफला क्वाथ में गुड मिलाकर ३-४ दिनों तक पियें। इससे विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

२०६. विषमज्वरघ्न अनेक प्रकार के योग (चक्रदत्त)

प्रातः प्रातः ससर्पिर्वा रसोनमुपयोजयेत्।
पिप्पलीवर्द्धमानं वा पिबेत् क्षीररसाशनः।
षट्पलं वा पिबेत् सर्पिः पथ्यां वा मधुना लिहेत् ॥३७४॥

१. ५-१० ग्राम निस्तुष लशुन को सिल पर पीसे और एक कटोरी में इससे दुगुना घृत मिलाकर आग पर गरम कर लें। ऐसा ही घृत-लशुन रोज प्रातःकाल पीने से कुछ दिन में विषमज्वर नष्ट हो जाता है। (अथवा—)

२. वर्धमान पिप्पली—१ पिप्पली चूर्ण दूध के साथ पकाकर पिये। दूसरे दिन २ पिप्पली, तीसरे दिन ३, चौथे दिन ४, इसी तरह ११ दिनों तक ११ पिप्पली बढ़ाकर दूध में या मांसरस में पकाकर पीना चाहिए। इसी तरह रोज १-१ पिप्पली घटाकर २२ वें दिन १ पिप्पली पर आकर इसे पूरा करें। इससे विषमज्वर नष्ट हो जाता है तथा अत्यधिक बुभुक्षा बढ़ती है एवं आमदोष का पाचन होता है। (अथवा—)

३. इसी प्रकार षट्पल घृत का प्रयोग कुछ दिनों तक करने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है। (अथवा—)

४. हरीतकी चूर्ण में मधु मिलाकर कुछ दिनों तक खिलाने से विषम ज्वर नष्ट हो जाता है।

२०७. दीर्घपत्रादि योग (चक्रदत्त)

दीर्घपत्रकर्कर्णाख्यनेत्रं खदिरसंयुतम्।
ताम्बूलैस्तद्दिने भुक्तं प्रातर्विषमनाशनम् ॥३७५॥

पुनर्नवामूलचूर्ण तथा सहचर को खदिरसार (कथ) के साथ मिलाकर ताम्बूल पत्र में लपेट कर १ ग्राम की मात्रा में सेवन करने से दूसरे दिन प्रातः विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

२०८. दुग्धप्रयोग (चक्रदत्त)

पयस्तैलं घृतं चैव विदारीक्षुरसं मधु।
सम्मूर्च्छ्य पाययेदेतद् विषमज्वरनाशनम् ॥३७६॥

१. गोदुग्ध, २. तिलतैल, ३. गोघृत, ४. विदारीकन्द रस, ५. इक्षु का रस तथा ६. मधु—गाय का दूध ८ भाग, तिल-तैलादि प्रत्येक पाँचों द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम दूध को खूब उबाल लें और उसमें तिलतैल, घृत, विदारीकन्दस्वरस या क्वाथ, गन्ने का रस एवं मधु १-१ भाग मिलाकर तथा मथानी से मथ कर पिलाने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है। यह प्रयोग भी ३-४ दिनों तक पिलावें।

२०९. पिप्पल्यादि क्षीर योग (चक्रदत्त)

पिप्पली शर्करा क्षौद्रं घृतं क्षीरं यथाबलम्।
खजेन मथितं पेयं विषमज्वरनाशनम् ॥३७७॥

१. पीपर, २. चीनी, ३. मधु, ४. घृत प्रत्येक १-१ भाग और ५. उबाला हुआ दूध ८ भाग लेकर बड़े पात्र में रख कर मथानी से मथकर पिलाने से विषमज्वर का नाश हो जाता है।

२१०. वृषदंश एवं वृषशकृत्प्रयोग (चक्रदत्त)

पयसा वृषदंशस्य शकृद्वेगागमे पिबेत्।
वृषस्य दधिमण्डेन सुरया वा ससैन्धवम् ॥३७८॥

गोदुग्ध में थोड़ी मात्रा में बिडाल-विष्ठा मिलाकर पिलाने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है। यह गर्हित प्रयोग है। (अथवा) दधिमण्ड (मस्तु) में बैल का गोबरस्वरस (थोड़ी मात्रा में) तथा मद्य एवं सैन्धवनमक मिलाकर मथानी से मथ कर पिलाने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

२११. विषमज्वरहर विरेचन (चक्रदत्त)

नीलिनीमजगन्धां च त्रिवृतां कटुरोहिणीम्।
पिबेज्ज्वरस्यागमने स्नेहस्वेदोपपादितः ॥३७९॥

१. नीलीस्वरस या क्वाथ २. वनजवायन क्वाथ, ३. त्रिवृत् क्वाथ तथा ४. कुटकी क्वाथ—विषमज्वर से पीड़ित व्यक्ति को पहले स्नेहन-स्वेदन कराने के बाद इन द्रव्यों के मिलित क्वाथ पिलाने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–विषमज्वर में।

विषमज्वर में पथ्य (चक्रदत्त)

सुरां समण्डां पानार्थं भक्ष्यार्थं चरणायुधान्।
तित्तिरांश्च मयूरांश्च प्रयुञ्ज्याद्विषमज्वरे ॥३८०॥

विषमज्वर में पीने के लिए सुरा (मद्य) और माँड (मण्ड) देना चाहिए तथा खाने के लिए मुर्गा, तीतर, मोर का मांस देना चाहिए।

२१२. विषमज्वरघ्न अञ्जन (चक्रदत्त)

सैन्धवं पिप्पलीनां च तण्डुलाः समनःशिलाः।
नेत्राञ्जनं तैलपिष्टं विषमज्वरनाशनम् ॥३८१॥

१. दीर्घपत्रकः = श्वेतपुनर्नवा, २. कर्णाख्यः = श्वेतसहचरेति वैद्यकशब्दसिन्धौ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. सैन्धवनमक, २. पिप्पली के दाने, ३. मैनसिल और ४. तिलतैल—सैन्धव, पिप्पली एवं मैनसिल समभाग में लेकर चूर्णकर वस्त्रपूत करें। पुनः इस मिश्रण को तिलतैल में मिलाकर विषमज्वर से पीड़ित व्यक्तियों की आँखों में अञ्जन करने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

२१३. मूलधारण–ऐकाहिक ज्वर में (चक्रदत्त)

काकजङ्घा बला श्यामा ब्रह्मदण्डी कृताञ्जलिः ।
पृश्निपर्ण्यत्वपामार्गस्तथा भृङ्गरजोऽष्टमम् ॥३८२॥
एषामन्यतमं मूलं पुष्येणोद्धृत्य यत्नतः ।
रक्तसूत्रेण संवेष्ट्य बद्धमैकाहिकं जयेत् ॥३८३॥

१. काकजङ्घा, २. बला, ३. अनन्तमूल, ४. ब्रह्मदण्डी, ५. लज्जालु, ६. पृश्निपर्णी, ७. अपामार्ग तथा ८. भृङ्गराज—इन आठ द्रव्यों में से किसी एक को पुष्य नक्षत्र में विधानतः उखाड़ कर साफ कर लें। पुनः उसे लाल धागा में बाँध कर ऐकाहिक ज्वर से पीड़ित व्यक्ति की दक्षिण भुजा में बाँधे। ऐसा करने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

२१४. उलूकपक्षधारण–ऐकाहिक ज्वर में

उलूकदक्षिणं पक्षं सितसूत्रेण वेष्टयेत् ।
बन्धयेद् वामकर्णे तु हरत्यैकाहिकं ज्वरम् ॥३८४॥

उल्लू पक्षी के दक्षिण भाग का एक पाँख श्वेत धागे में लपेट कर ऐकाहिक ज्वर से पीड़ित व्यक्ति के बायें कान में बाँधने से ऐकाहिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

२१५. केकड़ा की मिट्टी का तिलक

कर्कटस्य बिलोद्भूतमृदा तु तिलकं कृतम् ।
ऐकाहिकं ज्वरं हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥३८५॥

केकड़ा (अष्टपदी जलीय क्षुद्र प्राणी) जिस बिल में रहता है उस बिल की मिट्टी से ऐकाहिक ज्वर से पीड़ित व्यक्ति यदि ललाट पर तिलक करे तो ऐकाहिक ज्वर नष्ट हो जाता है। इस सम्बन्ध में कोई तर्क नहीं करना चाहिए। यह परीक्षित है।

२१६. अपामार्गमूलधारण–तृतीयक ज्वर में (चक्रदत्त)

अपामार्गजटाकट्यां लोहितैः सप्ततन्तुभिः ।
बद्ध्वा वारे रवेस्तूर्णं ज्वरं हन्ति तृतीयकम् ॥३८६॥

तृतीयक ज्वर से पीड़ित व्यक्ति की कमर में अपामार्ग की जड़ में लाल धागा सात बार लपेट कर लाल धागे से रविवार को बाँधने से शीघ्र ही तृतीयक विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

२१७. त्र्याहिक ज्वर में अञ्जन

कर्णस्य मलजालेन वर्त्तिं कृत्वा प्रयत्नतः ।
ज्वालयेत्तिलतैलेन कज्जलं ग्राहयेच्छनैः ।
अञ्जयेन्नेत्रयुगलं त्र्याहिकज्वरशान्तये ॥३८७॥

मनुष्य के कर्णमल की बत्ती जैसा बना लें और उसे तिल तैल पूर्ण दीपक में रखकर जलावें। जलते दीपक के ऊपर तैलाक्त कटोरी औंधा कर स्थिर कर दें। दीपक की लौ से कटोरी के तल में कज्जल पदार्थ इकट्ठा होगा। इसे अंगुली से घिसकर तृतीयक ज्वर से पीड़ित व्यक्ति के दोनों नेत्रों में अंजन लगाना चाहिए। इससे त्र्याहिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

२१८. सर्वज्वर में जयन्तीमूलधारण

मूलं जयन्त्याः शिरसि धृतं सर्वज्वरापहम् ॥

जयन्ती वृक्ष की जड़ को सिर में बाँधने से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते है।

२१९. शेफालीस्वरस-प्रयोग

मधुना सर्वज्वरनुच्छेफालीदलजो रसः ॥३८८॥

शेफाली (शृङ्गारहार) के पत्रस्वरस १ तोला मधु के साथ मिलाकर पीने से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

२२०. चातुर्थिक ज्वर में नस्य (चक्रदत्त)

शिरीषपुष्पस्वरसो रजनीद्वयसंयुतः ।
नस्यं सर्पिःसमायोगाज्ज्वरं चातुर्थकं जयेत् ॥३८९॥
नस्यं चातुर्थकं हन्ति मुनिद्रुमदलाम्बुना ॥३९०॥

१. शिरीषपुष्पस्वरस, २. हरिद्रा चूर्ण, ३. दारुहरिद्रा चूर्ण और ४. गोघृत मिलाकर नस्य देने से चातुर्थक ज्वर नष्ट हो जाता है। (अथवा—) अगस्त्यपत्रस्वरस में हरिद्रा तथा दारुहरिद्रा का चूर्ण एवं गोघृत मिलाकर अच्छी तरह मर्दन कर नस्य देने से चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–४-६ बूँद।

२२१. चातुर्थिक ज्वर में ताल-प्रयोग

शैलूषमण्डनरजः पुरुषानुरूपं
शुक्लाङ्गवत्ससुरभीपयसा निपीतम् ।
आदित्यवारभवपालिदिने नराणां
चातुर्थकं हरति कष्टमपि क्षणेन ॥३९१॥

शुद्ध एवं मृत हरतालपत्र भस्म रोगी की अवस्थानुसार या रोग के बलाबल के अनुसार $\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{2}$ रत्ती (३० मि.ग्रा. से ६० मि.ग्रा.) श्वेत वर्ण के बछड़े वाली श्वेत वर्ण की गाय के दूध के साथ रविवार को आने वाले ज्वर के दिन प्रातःकाल दवा पिला देने पर कष्टप्रद चातुर्थिक ज्वर तुरन्त नष्ट हो जाता है।

२२२. चातुर्थिक ज्वरहर औषध

श्वेतार्ककरवीराणां चाश्विन्यां मूलमुद्धरेत् ।
तण्डुलोदकपानेन चातुर्थज्वरनाशनम् ॥३९२॥

अश्विनी नक्षत्र के दिन अर्क (मदार) या करवीर (कनैर) की

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मूल उखाड़े और तण्डुलोदक में पीसकर पीने से चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

२२३. चातुर्थिक ज्वरहर पेया (चक्रदत्त)

अम्लोटजसहस्रेण दलेन सुकृतां पिबेत्।
पेयां घृतप्लुतां जन्तुश्चातुर्थकहरां त्र्यहम् ॥३९३॥

एक हजार (१०००) गिनकर चाङ्गेरी (तिनपतिया) पत्र लेकर कूट लें और उसे १६ गुना जल में उबालें। जब पानी अम्ल एवं हरा हो जाय तो उसमें थोड़ा चावल के कण देकर सिद्ध कर पेया बनाकर उसमें घी मिलाकर चातुर्थिक ज्वर से पीड़ित रोगी को तीन दिनों तक पिलाने से चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

विमर्श—पेया पतली, थोड़ी सिट्ठी वाली तथा १४ गुना जल में सिद्ध की हुई होती है—

'द्रवाधिका स्वल्पसिक्था चतुर्दश गुणे जले।
सिद्धा पेया बुधैर्ज्ञेया यूषः किञ्चिद् घनः स्मृतः' ॥

(शार्ङ्गधर म. २।१६७)

२२४. रात्रि ज्वर में काकमाचीमूल धारण (चक्रदत्त)

काकमाचीभवं मूलं कर्णे बद्धं निशि ज्वरम्।
निहन्ति नात्र सन्देहो यथा सूर्योदयस्तमः ॥३९४॥

काकमाची (मकोय) की जड़ को धागा के सहारे कान में बाँधने से रात्रि में उत्पन्न होने वाला ज्वर उसी तरह नष्ट हो जाता है जैसे सूर्य के उगने से अन्धकार नष्ट हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

२२५. सर्वज्वरहर भृंगराज-प्रयोग

मूलकं केशराजस्य कृत्वा तत्सप्तखण्डकम्।
आर्द्रकैः सह भुञ्जीत सर्वज्वरविनाशनम् ॥३९५॥

भृंगराज को मूल के साथ उखाड़ कर केवल उसका मूल लें। ऐसे कई मूल लेकर उनके बराबर-बराबर टुकड़े कर लें और उतनी ही मात्रा में आर्द्रक (आदी) के टुकड़े के साथ सुबह-शाम चबाकर खा जाने से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

सर्वज्वरहर-कटुरोहिणी कल्प

पुष्यार्के रोहिणीचूर्णं वारिणा सह सेवितम्।
ज्वरं हरति दुर्वारं भ्रमसम्भ्रमकारणम् ॥३९६॥
पयसा चान्विता सम्यक् पलार्द्धेन विपाचिता।
अष्टावशेषं तत्क्षीरं रात्रौ सर्वज्वरापहम् ॥३९७॥
प्रभातकाले सम्पीता विरेचनकरा स्मृता।
पिष्ट्वाऽश्वत्थत्वचा कट्या लेपाद् दाहज्वरापहा ॥३९८॥
तन्मूलं मधुना पीतं सर्वज्वरहरं नृणाम्।
तच्चूर्णमर्कदुग्धेन भावितं सेवितं यदि ॥३९९॥
ताम्बूलसहितेनैव कृत्वा तद्गुटिकाऽऽत्मना।
तृतीयकं ज्वरं हन्याच्चातुर्थकमथापि वा ॥४००॥

१. रविवार के दिन जब पुष्य नक्षत्र हो तो उस दिन कुटकी का चूर्ण बनाकर ३ ग्राम चूर्ण जल के साथ खाने से भ्रमादि उपद्रवों से युक्त ज्वर नष्ट हो जाता है।

२. २ तोला (२३ ग्राम) कुटकी चूर्ण को आठ गुना दूध तथा दूध से ४ गुना जल मिलाकर पकावें। क्षीरावशेष रहने पर ज्वरार्त व्यक्ति उक्त दूध को रात्रि में पी जाय। दूसरे दिन प्रातः साफ विरेचन होगा। इससे सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जायेंगे।

३. कुटकी चूर्ण और पीपल (अश्वत्थ) की छाल समभाग में लेकर सिल पर पीसे और ज्वरार्त व्यक्ति की कमर पर लेप करने से ज्वर एवं दाह नष्ट हो जाता है।

४. कुटकी चूर्ण ३ से ६ ग्राम तक मधु से लेहन करने पर सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

५. कुटकी चूर्ण को अर्कदुग्ध से भावना देकर गोली बना लें तथा पान के साथ चबाने से तृतीयक एवं चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

२२७. ऐकाहिक ज्वर में तर्पण (चक्रदत्त)

गङ्गाया उत्तरे तीरे अपुत्रस्तापसो मृतः।
तस्मै तिलोदकं दद्यान्मुञ्चत्वैकाहिको ज्वरः ॥४०१॥

प्राचीन काल में गंगा के उत्तरी तट पर पुत्रप्राप्ति के लिए तपस्या करते हुए एक कोई निःसन्तान ऋषि मर गया था, अतः उस तपस्वी के लिए तिल सहित जल की अञ्जली देने से ऐकाहिक ज्वर नष्ट हो जाता है। तर्पण सूर्योदय होने पर कुशा, जौ, अक्षत, तिल एवं पुष्प से करे।

विमर्श—कुछ लोग इसी श्लोक रूपी मन्त्र पढ़ कर उक्त ऋषि के लिए तर्पण करने की राय देते हैं। यह तर्पण उसी दिन करना चाहिए जिस दिन ज्वर आने वाला हो तो इससे ज्वर नष्ट हो जाता है। यह क्रिया तब करनी चाहिए जब औषध का कोई प्रभाव नहीं दिखाई देता है। अतः यह अनुमान लगाना चाहिए कि यक्ष, गन्धर्व, ऋषि, द्विज के कोप (शाप) जन्य ज्वर है। उबाले उड़द एवं भात की बली भी दे।

मन्त्रधारण

अङ्गवङ्गकलिङ्गेषु सौराष्ट्रमगधेषु च।
वाराणस्याञ्च यद्वृत्तं तन्न स्मरसि हे ज्वर ॥
ओं बाणयुद्धे महाघोरे द्वादशार्कसमप्रभे।
जातोऽसौ सुमहावीर्यो मुञ्चत्वैकाहिको ज्वरः।
लिखित्वाऽश्वत्थपत्रे तु बाहौ मन्त्रं प्रधारयेत् ॥

मन्त्र का अभिप्राय इस प्रकार है—अङ्गदेश (बिहार का

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भागलपुर, मुंगेर), वङ्ग देश (बङ्गाल), कलिङ्ग (उड़ीसा), सौराष्ट्र (गुजरात का जामनगर, राजकोट, जूनागढ़, भावनगर आदि क्षेत्र), मगध (पटना, गया आदि क्षेत्र) और वाराणसी का जो इतिहास है, हे ज्वर! उसे स्मरण नहीं करो।

महान् भयंकर तथा १२ सूर्यों के समान प्रदीप्त बाण युद्ध के साथ-साथ बड़ा ही बलवान् ऐकाहिक ज्वर उत्पन्न हो गया था। यह दोनों श्लोकों (मन्त्रों) का अभिप्राय है।

इन मन्त्रों को पीपल के पत्र पर लिख कर 'ऐकाहिक ज्वर' से पीड़ित व्यक्ति के बाहु में बाँधने से ऐकाहिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

मन्त्र-प्रयोग

समुद्रस्योत्तरे तीरे द्विविदो नाम वानरः।
ऐकाहिकं ज्वरं हन्ति लिखितं यस्तु पश्यति ॥४०२॥

"समुद्र के उत्तरी किनारे पर 'द्विविद' नामक एक वानर रहता था"। इस १ पंक्ति वाले मन्त्र को पीपलपत्र पर लाल चन्दन से लिखकर देखने से ऐकाहिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

तृतीयक एवं चातुर्थिक ज्वर में कर्म (चक्रदत्त)

कर्म साधारणं जह्यात्तृतीयकचतुर्थकौ।
आगन्तुरनुबन्धो हि प्रायशो विषमज्वरे ॥४०३॥

साधारण कर्म यथा—दैवव्ययाश्रय जैसे बलि-होमादि एवं युक्तिव्यपाश्रय जैसे औषधादि तृतीयक एवं चातुर्थिक ज्वर को नष्ट कर देता है। विषमज्वर में भूताभिषंगादि का अनुबन्ध भी प्रायः बना रहता है। अतः इसमें दैवव्यपाश्रय एवं युक्तिव्यपाश्रय दोनों प्रकार की चिकित्सा करनी चाहिए।

सभी ज्वरों के नाशनार्थ मन्त्र

ॐ नमो भगवते छिन्धि छिन्धि अमुकस्य शिरः।
प्रज्वलितपरशुपाणये पुरुषाय फट् स्वाहा।
एतन्मन्त्रस्य धारणाज्ज्वरः सर्वो विनश्यति ॥४०४॥

भूर्जपत्र (भोजपत्र) पर उपर्युक्त 'ओऽम् नमो भगवते····फट् स्वाहा' इत्यादि मन्त्र लालचन्दन से लिख कर उक्त भोजपत्र की अक्षत-चन्दन-पुष्प-धूप-दीप-नैवेद्य आदि से पूजा कर दक्षिण भुजा पर बाँधने से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

सभी ज्वरनाशनार्थ मन्त्र

ॐ विद्युदानन ह्रीं फट् स्वाहा।
एतन्मन्त्रं चूर्णलिप्ते ताम्बूलीपत्रे लिखित्वा तत्पत्रं सञ्चर्व्य भक्षयित्वा दिनत्रयाभ्यन्तरे ज्वरस्य शान्तिर्भवति ॥४०५॥

चूने से लिप्त बड़े ताम्बूलपत्र पर 'ओं विद्युदानन फट् स्वाहा' इस मन्त्र को लिखकर उक्त पत्र को चबाकर खाने से ३ दिन के अन्दर ज्वर शान्त हो जाता है।

विषमज्वर में सोमादि पूजन (चक्रदत्त)

सोमं सानुचरं देवं समातृगणमीश्वरम्।
पूजयन् प्रयतः शीघ्रं मुच्यते विषमज्वरात् ॥४०६॥

उमा (पार्वती) के साथ नन्दी, भृङ्गी आदि अनुचर, मातृकागण युक्त (गौरी-जया-विजयादि षोडश मातृका) के साथ भगवान् शिव का भक्तिपूर्वक पूजन करने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है। विषमज्वर भूतानुबन्धी भी होता है, अतः भूतपति भगवान् शिव के गणों के साथ पूजा करने से विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

विषमज्वर में विष्णुपूजन (चक्रदत्त)

विष्णुं सहस्रमूर्धानं चराचरपतिं विभुम्।
स्तुवन्नामसहस्रेण ज्वरान् सर्वान् व्यपोहति ॥४०७॥

सम्पूर्ण जगत् के चराचर पति, सर्वव्यापक, सहस्र सिर वाले परम पुरुष भगवान् विष्णु के हजार नाम (विष्णुसहस्रनाम) से स्तुति करने से सभी ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

ज्वरों में ब्रह्मादि का पूजन

ब्रह्माणमश्विनाविन्द्रं हुतभक्षं हिमाचलम्।
गङ्गां मरुद्गणाँश्चेष्टान् पूजयञ् जयति ज्वरम् ॥४०८॥

प्रजापति ब्रह्मा, दोनों अश्विनीकुमार, इन्द्र, अग्नि, हिमाचल, माँ गङ्गा, मरुद्गण तथा अन्य इष्ट देवताओं की पूजा करने से ज्वर का नाश हो जाता है।

ज्वरनाशनार्थ माता-पिता आदि की पूजा

भक्त्या मातुः पितुश्चैव गुरूणां पूजनेन च।
ब्रह्मचर्येण तपसा पुराणश्रवणेन च ॥४०९॥
जपहोमैश्च दानेन सत्येन नियमेन च।
ज्वराद्विमुच्यते शीघ्रं साधूनां दर्शनेन च ॥४१०॥

भक्तिपूर्वक माता-पिता एवं गुरुओं की पूजा करने से तथा ब्रह्मचर्य के पालन से, तपस्या से, भागवत आदि पुराणों को सुनने से, इष्ट देवताओं एवं देवियों के मन्त्रों का जाप-होम करने से, दान देने से, सत्य से, संयम से और साधुओं (महात्माओं) के दर्शन से शीघ्र ही मनुष्य ज्वर से विमुक्त हो जाता है।

ज्वरघ्न धूप

२२८. अष्टाङ्ग धूप (चक्रदत्त)

पलङ्कषा निम्बपत्रं वचा कुष्ठं हरीतकी।
सयवाः सर्षपाः सर्पिर्धूपनं ज्वरनाशनम् ॥४११॥

१. गुग्गुलु, २. नीम के पत्ते, ३. वच, ४. कूठ, ५. हरीतकी, ६. जौ, ७. सरसों और ८. घी—ये सभी द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट कर मिलाकर घी मिला दें। ज्वर से पीड़ित व्यक्ति के पास निर्वात घर में धुआँ से रहित अग्नि में इस

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

धूप को जलावें। इससे उत्पन्न धुआँ रोगी के सम्पूर्ण शरीर में लगेगा, फलतः ज्वर नष्ट हो जायेगा।

२२९. अपराजित धूप (चक्रदत्त)

पुरध्यामवचासर्जनिम्बार्कागुरुदारुभिः ।
सर्वज्वरहरो धूपः कार्योऽयमपराजितः ॥४१२॥

१. गुग्गुलु, २. गन्धतृण, ३. वच, ४. राल (सर्जरस), ५. नीम के पत्ते, ६. आँक के पत्ते, ७. अगरु तथा ८. देवदारु—इनको समभाग में लेकर यवकुट करें और सभी प्रकार के ज्वर से पीड़ित व्यक्ति के सामने निर्धूम अग्नि पर इस धूप को निर्वात गृह में जलावें। इस धूम से ज्वर नष्ट हो जाता है।

२३०. माहेश्वर धूप

हिङ्गुलं देवकाष्ठञ्च श्रीवेष्टं घृतमेव च ।
गव्याज्यानि तथा ध्यामं निर्माल्यं कटुरोहिणी ॥४१३॥
सर्षपं निम्बपत्राणि पिच्छाहिकञ्चुकं तथा ।
मार्जारविष्ठा गोशृङ्गं मदनस्य फलानि च ॥४१४॥
द्वे बृहत्यौ वचा चैव कार्पासास्थि तुषास्तथा ।
छागगोमायुविट् चैव हस्तिदन्तस्तथैव च ॥४१५॥
एतत्सर्वं समाहृत्य छागमूत्रेण भावयेत् ।
उदूखले तु सङ्कुट्य स्थापयेन्मृन्मये शुभे ॥४१६॥
घ्राणमात्रेण धूपोऽयं दीयते यत्र वेश्मनि ।
न तत्र सर्पास्तिष्ठन्ति न पिशाचा न राक्षसाः ॥४१७॥
एष माहेश्वरो धूपः सर्वज्वरविनाशनः ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकञ्च चतुर्थकम् ।
एवमादीञ्ज्वरान् सर्वान् नाशयेन्नात्र संशयः ॥४१८॥
ॐ 'नमो भगवते रुद्राय उमापतये सम्पन्नाय नन्दिकेश्वराय' । इति मन्त्रेण धूपमभिमन्त्रयेत् ॥

१. हिंगुल (सिंगरफ), २. देवदारु, ३. सरलनिर्यास, ४. घी, ५. गाय की सूखी हड्डी, ६. गन्धतृण, ७. शिवजी को पहनायी माला सूखी, ८. कुटकी, ९. सरसों, १०. नीम के पत्ते, ११. मोर की पाँख, १२. साँप-केचुल, १३. बिल्ली की विष्ठा सूखी, १४. गाय का सींग, १५. मैनफल, १६. बृहती, १७. कण्टकारी, १८. वच, १९. कपास के बीज, २०. धान की भूसी, २१. बकरी की मिगनी, २२. सियार की सूखी विष्ठा और २३. हाथीदाँत का चूरा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें और इसमें दोनों (बिल्ली और सियार के) विटों को पृथक् कूटें और सभी को मिलाकर बकरी के मूत्र की १ भावना देकर सुखा कर किसी हाँडी आदि पात्र में रख लें।

निर्धूम अग्नि में इस धूप को जिस घर में जलाया जाता है, उस घर से इसकी महक से साँप, पिशाच एवं राक्षस आदि भाग जाते हैं, प्रवेश भी नहीं करते हैं। यह 'माहेश्वर धूप' सभी प्रकार के ज्वरों को नाश करता है। विशेषकर ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिकादि विषम ज्वरों को यह धूप नाश करता है। इस धूप को जलाने से पूर्व उपर्युक्त मन्त्र 'ॐ नमो भगवते रुद्राय उमापतये सम्पन्नाय नन्दिकेश्वराय' का उच्चारण करना चाहिए।

२३१. चातुर्थिक ज्वरहर धूप (चक्रदत्त)

कृष्णाम्बरदृढाबद्धगुग्गुलूलूकपुच्छजः ।
धूपश्चातुर्थकं हन्ति तमः सूर्य इवोदितः ॥४१९॥

१. भृङ्गराज आदि कृष्णवर्ग के द्रव्यों से रंगा हुआ काला वस्त्र १×१ फीट लम्बा-चौड़ा लें, २. गुग्गुलु तथा ३. उल्लू पक्षी की पाँख—भृङ्गराज आदि कृष्णवर्ग के द्रव्यों के स्वरस में रंगा गया श्वेत वस्त्र जब काला हो जाय तो उसे सुखा लें और उस वस्त्र में १० ग्राम गुग्गुलु एवं १० ग्राम उल्लू पक्षी की पाँख दोनों मिलाकर बाँधकर निर्धूम अग्नि पर रखें। चातुर्थिक ज्वर से पीड़ित व्यक्ति रस्सी वाली खाट पर बिना किसी बिछावन के लेट जाय और चादर से अपने शरीर को ढ़क लें। खाट के नीचे छोटी हाँडी में निर्धूम आग पर उक्त पोटली रख कर उस धूम से अपने को धूपित करें। ऐसा करने से चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाता है। जैसे सूर्योदय से अन्धकार।

जीर्णज्वर-चिकित्सा

२३२. गुडूची-पञ्चमूली क्वाथ (चक्रदत्त)

पिप्पलीचूर्णसंयुक्तः क्वाथश्छिन्नरुहोद्भवः ।
जीर्णज्वरकफध्वंसी पञ्चमूलीकृतोऽथवा ।
एतत्क्वाथद्वयं प्रातः सायञ्चैव प्रयुज्यते ॥४२०॥

१. गुडूची एवं २. पिप्पली चूर्ण; अथवा १. बिल्वत्वक्, २. गम्भार की छाल, ३. सोनापाठा, ४. अरणी की छाल तथा ५. पाढल की छाल—गुडूची का यवकुट चूर्ण ५० ग्राम लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान कर सुखोष्ण क्वाथ में पिप्पलीचूर्ण १ ग्राम मिलाकर पीने से जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है। (अथवा) बृहत्पञ्चमूल का क्वाथ उक्त प्रमाण में बना कर सुखोष्ण पीने से जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–जीर्णज्वर में।

२३३. गुडूचीस्वरस

पिप्पलीमधुसम्मिश्रं गुडूचीस्वरसं पिबेत् ।
जीर्णज्वरकफप्लीहकासारोचकनाशनम् ॥४२१॥

२५ मि.ली. गुडूचीस्वरस में मधु १० ग्राम तथा पिप्पली चूर्ण ५०० मि.ग्रा. मिलाकर पीने से जीर्णज्वर, कफ, प्लीहावृद्धि, कास और अरुचि नष्ट हो जाती है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२३४. अस्थिकर्कटस्वरस

अस्थिकर्कटपञ्चाङ्गः शुण्ठ्या चिरज्वरप्रणुत् ॥

अस्थिकर्कट पञ्चाङ्ग का क्वाथ बनाकर उसमें शुण्ठीचूर्ण मिलाकर पिलाने से जीर्णज्वर का नाश हो जाता है।

२३५. गुडूच्यादि स्वरस-पुटपाक

गुडूची पर्पटं भेकपर्णी च हिलमोचिका।
पटोलं पुटपाकेन रस एषां मधुप्लुतः।
वातपित्तज्वरं हन्ति चिरोत्थमपि दारुणम् ॥४२२॥

१. गुडूची, २. पित्तपापड़ा, ३. मण्डूकपर्णी, ४. हिलमोचिकाशक (हरकुच) और ५. पटोलपत्र—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर चूर्ण करें और इसमें से ७५ ग्राम चूर्ण को जल के साथ पीस कर कल्क बनावें। उस कल्क पर वटपत्र लपेट कर पुनः उस पर १ अँगुल चिकनी मिट्टी का लेप कर सुखाकर आग में पका लें। जब ऊपर की मिट्टी लाल हो जाय तो निकाल कर मिट्टी हटा लें और गरम कल्क को वस्त्र पर रखें और निचोड़ कर रस निकाल लें। यही पुटपाक स्वरस कहा जाता है। इससे प्राप्त २ तोला स्वरस में $\frac{1}{2}$ मधु मिलाकर पीने से भयंकर चिरकालोत्थ वात-पित्तज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२५ मि.ली.। **उपयोग**–वातपित्तज जीर्णज्वर में।

२३६. मधुकादि क्वाथ

मधुकं गुडूची तिक्ता एला पर्पटकं तथा।
प्रत्येकं शाणमानेन तिक्ताया अर्द्धशाणकम् ॥४२३॥
सार्धतोलकमेवञ्च स्वर्णपत्र्याश्च ग्राहयेत्।
मत्स्यण्डिकायास्तोलञ्च प्रक्षिप्य पाययेद् भिषक् ॥४२४॥
वातपित्तज्वरं घोरं नाशयेन्नात्र संशयः।
रसायनकृते चापि ज्वरो यश्च न हीयते॥
तं ज्वरं नाशयेदेतद् वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥४२५॥

१. मुलेठी, २. गुडूची, ३. कुटकी, ४. छोटी इलायची, ५. पित्तपापड़ा तथा ६. सनायपत्ती—गुडूची, मुलेठी, इलायची, पित्तपापड़ा १-१ शाण (३-३ ग्राम) लें। कुटकी $\frac{1}{2}$ शाण (१५०० मि.ग्रा.) लें तथा सनायपत्ती १८ ग्राम लें। इन्हें चूर-कूट कर १६ गुना जल में क्वाथ कर छान लें और इस क्वाथ में शर्करा १२ ग्राम मिलाकर पिलाने से भयंकर वात-पित्त प्रधान जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है। रस-रसायन के प्रयोग से भी जो ज्वर नष्ट नहीं होता है वह ज्वर इस क्वाथ को पीने से इसी प्रकार नष्ट हो जाता है, जैसे इन्द्र के वज्र से वृक्ष नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२५ मि.ली.। **उपयोग**–जीर्णज्वर में।

२३७. धान्यकादि क्वाथ

धान्यकं मधुकं रास्ना पथ्या द्राक्षा मधूरिका।
गुडूची पर्पटञ्चैव समभागांश्च कारयेत् ॥४२६॥
स्वर्णपत्री सर्वतुल्या ग्राह्या वैद्येन धीमता।
पचेदष्टपले तोये पलशेषेऽवतारयेत् ॥४२७॥
मत्स्यण्डिकायास्तोलञ्च प्रक्षिप्य पाययेत्सुधीः।
वातपित्तज्वरं घोरं नाशयेन्नात्र संशयः ॥४२८॥

१. धनियाँ, २. मुलेठी, ३. रास्ना, ४. हरीतकी, ५. द्राक्षा, ६. सौंफ, ७. गुडूची, ८. पित्तपापड़ा और ९. सनायपत्ती—उपर्युक्त धनियाँ से पित्तपापड़ा तक के सभी द्रव्यों को १-१ भाग लें और सनायपत्ती ८ भाग लेकर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें तथा इस छने हुए क्वाथ में १२ ग्राम शर्करा मिलाकर पिलाने से भयंकर वात-पित्त प्रधान जीर्ण ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–जीर्णज्वर में।

२३८. निदिग्धिकादि क्वाथ (हारीत)

निदिग्धिकानागरकामृतानां
क्वाथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम्।
जीर्णज्वरारोचककासशूल-
श्वासाग्निमान्द्यार्दितपीनसेषु ॥४२९॥
हन्त्यूर्ध्वगामयं प्रायः सायं तेनोपयुज्यते।
एतद्रात्रिज्वरे सायमन्यत्र प्रातरिष्यते।
पित्तानुबन्धे सन्त्यज्य पिप्पलीं प्रक्षिपेन्मधु ॥४३०॥

१-कण्टकारी, २. शुण्ठी एवं ३, गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ में पिप्पली चूर्ण १ ग्राम मिलाकर पिलाने से जीर्णज्वर, अरुचि, कास, शूल, श्वास, अग्निमांद्य, अर्दित और पीनस रोगों में अत्यन्त लाभ होता है। ऊर्ध्वजत्रुगत रोगों में भी यह क्वाथ बहुत लाभ करता है। इस क्वाथ को केवल सायंकाल में पिलाना चाहिए। रात्रि में होने वाले ज्वरों में इस क्वाथ को सायंकाल पिलावें तथा अन्य समय में होने वाले ज्वरों में प्रातः पिलावें। वातकफानुबन्ध ज्वर में पिप्पली चूर्ण और मधु मिलाकर इस क्वाथ को पिलाना चाहिए।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–जीर्णज्वर में।

२३९. गुडूच्यादि क्वाथ (भै.रत्ना.)

गुडूचीमुस्तभूनिम्बं धात्री क्षुद्रा च नागरम्।
बिल्वादिपञ्चमूलञ्च कटुकेन्द्रयवासकम् ॥४३१॥
निशाभवं ज्वरं वातकफपित्तसमुद्भवम्।
चिरोत्थं द्वन्द्वजं हन्ति सकणं मधुसंयुतम् ॥४३२॥

१. गुडूची, २. नागरमोथा, ३. चिरायता, ४. आमला, ५. कण्टकारी, ६. शुण्ठी, ७. बिल्व छाल, ८. गम्भार छाल, ९. सोनापाठा छाल, १०. अरणी छाल, ११. पाढल छाल, १२.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कुटकी, १३. इन्द्रयव, और १४. जवासा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करे और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ में पिप्पली चूर्ण और मधु मिलाकर पिलाने से रात्रि में होने वाला ज्वर, वात-पित्त-कफ एवं सन्निपातज्वर, जीर्णज्वर एवं द्वन्द्वज ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

२४०. द्राक्षाद्यष्टादशाङ्ग क्वाथ

द्राक्षाऽमृता शटी शृङ्गी मुस्तकं रक्तचन्दनम्।
नागरं कटुकं पाठा भूनिम्बं सदुरालभम् ॥४३३॥
उशीरं पद्मकं धान्यं बालकं कण्टकारिका।
पुष्करं पिचुमन्दं चाष्टादशाङ्गमिदं शुभम्॥
जीर्णज्वरारुचिश्वासकासश्वयथुनाशनम् ॥४३४॥

१. मुनक्का, २. गुडूची, ३. कचूर, ४. काकडासिंगी, ५. नागरमोथा, ६. लालचन्दन, ७. शुण्ठी, ८. कुटकी, ९. पाठा, १०. चिरायता, ११. जवासा, १२. खस, १३. पद्मकाष्ठ, १४. धनियाँ, १५. सुगन्धबाला, १६. कण्टकारी, १७. पुष्करमूल तथा १८. नीम छाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से ५० ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ को जीर्णज्वर, अरुचि, श्वास, कास और शोथ के रोगी को पिलावें। इससे उपर्युक्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–जीर्णज्वर में।

२४१. निदिग्धिकादि क्वाथ प्लीहज्वर में

निदिग्धिकागणः पथ्या तथा रोहितको मतः।
क्वाथं कृत्वा क्षिपेत्तत्र यवक्षारं कणायुतम्।
एतस्य पानमात्रेण प्लीहज्वरविनाशनम् ॥४३५॥

निदिग्धिकादि गण (लघु पञ्चमूल—१. शालपर्णी, २. पृश्निपर्णी, ३. कण्टकारी, ४. बृहती तथा ५. गोखरु), ६. हरीतकी एवं ७. रोहितक छाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ-विधि से क्वाथ कर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ में पिप्पली चूर्ण और यवक्षार १-१ ग्राम मिलाकर पिलाने से प्लीहाज्वर का नाश हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–प्लीहज्वर में

चूर्णकल्पना

२४२. सुदर्शन चूर्ण

कालीयकन्तु रजनी देवदारु वचा घनम्।
अभया धन्वयाश्च शृङ्गी क्षुद्रा महौषधम् ॥४३६॥
त्रायन्ती पर्पटं निम्बं ग्रन्थिकं बालकं शटी।
पौष्करं मागधी मूर्वा कुटजं मधुयष्टिका ॥४३७॥
शिग्रूद्भवं सेन्द्रयवं वरी दार्वी कुचन्दनम्।
पद्मकं सरलोशीरं त्वचं सौराष्ट्रिका स्थिरा ॥४३८॥
यमान्यतिविषा बिल्वं मरिचं गन्धपत्रकम्।
धात्री गुडूची कटुकं सचित्रकपटोलकम् ॥४३९॥
कलसी चैव सर्वाणि समभागानि कारयेत्।
सर्वद्रव्यस्य चार्द्धन्तु कैरातं सम्प्रकल्पयेत् ॥४४०॥
एतत् सुदर्शनं नाम ज्वरान् हन्ति न संशयः।
पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान्विषमज्वरान् ॥४४१॥
प्राकृतं वैकृतञ्चापि सौम्यं तीक्ष्णमथापि वा।
अन्तर्गतं बहिःस्थञ्च निरामं सामेव च ॥४४२॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
नानादोषोद्भवञ्चैव वारिदोषभवन्तथा ॥४४३॥
विरुद्धभेषजभवं ज्वरमाशु व्यपोहति।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥४४४॥
यथा सुदर्शनं चक्रं दानवानां निषूदनम्।
तथा ज्वराणां सर्वेषामिदमेव निगद्यते ॥४४५॥

१. पीतकाष्ठचन्दन, २. हल्दी, ३. देवदारु, ४. वच, ५. नागरमोथा, ६. हरीतकी, ७. धमासा, ८. काकडासिंगी, ९. कण्टकारी, १०. शुण्ठी, ११. त्रायमाण, १२. पित्तपापड़ा, १३. नीम की छाल, १४. पिपरामूल, १५. सुगन्धबाला, १६. कचूर, १७. पुष्करमूल, १८. पीपर, १९. मूर्वा, २०. कुटजत्वक्, २१. मुलेठी, २२. शिग्रु, २३. नीलकमलफूल, २४. इन्द्रयव, २५. शतावर, २६. दारुहल्दी, २७. पतङ्गचन्दन, २८. पद्मकाष्ठ, २९. सरल वृक्षकाष्ठ, ३०. खस, ३१. दालचीनी, ३२. शुद्ध फिटकरी, ३३. शालपर्णी, ३४. अजवायन, ३५. अतीस, ३६. बिल्वत्वक्, ३७. मरिच, ३८. तेजपात, ३९. आँवला, ४०. गुडूची, ४१. कुटकी, ४२. चित्रकमूल, ४३. परवलपत्र, ४४. पृश्निपर्णी और ४५. चिरायता—पीतकाष्ठचन्दन से पृश्निपर्णी तक के ४४ द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें और चिरायता ११०० ग्राम लें। इन्हें सुखाकर वस्त्रपूत सूक्ष्म चूर्ण कर शीशा के जार में सुरक्षित रख लें। इसे सुदर्शन चूर्ण कहते हैं। यह सुदर्शन चूर्ण निःसन्देह सभी ज्वरों का नाश करता है। वात-पित्त-कफ-सन्निपातज, द्वन्द्वज, विषम, प्राकृत, विकृत, सौम्यवेगी, तीक्ष्ण-वेगी, अन्तर्वेगी, बहिर्वेगी, निराम-साम, साध्य-आसाध्य, अष्ट-विध अनेक दोषोद्भव, वारिदोषज तथा विरुद्धभेषज जन्य सभी प्रकार के ज्वरों को शीघ्र नाश करता है। प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धिजन्य ज्वरों का नाश करता है तथा गुल्मदोष को भी अवश्य ही नाश करता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। जिस तरह सभी राक्षसों को नाश करने के लिए भगवान् विष्णु का चक्र

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुदर्शन विख्यात है, उसी तरह यह चूर्ण सभी ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–३ से ५ ग्राम तक। **अनुपान**–उष्णजल या मधु से। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

२४३. ज्वरभैरव चूर्ण

नागरं त्रायमाणा च पिचुमर्दो दुरालभा।
पथ्या मुस्तं वचा दारु व्याघ्री शृङ्गी शतावरी ॥४४६॥
पर्पटं पिप्पलीमूलं विशालां पुष्करं शटी।
मूर्वा कृष्णा हरिद्रे द्वे लोध्रं चन्दनमुत्पलम् ॥४४७॥
कुटजस्य फलं वल्कं यष्टीमधुकचित्रकम्।
शोभाञ्जनं बला चातिविषा च कटुरोहिणी ॥४४८॥
मुषली पद्मकाष्ठञ्च यमानी शालपर्णिका।
मरिचं चामृता बिल्वं बालं पङ्कस्य पर्पटी ॥४४९॥
तेजपत्रं त्वचं धात्री पृश्निपर्णी पटोलकम्।
गन्धकं पारदं लौहमभ्रकञ्च मनःशिला ॥४५०॥
एतेषां समभागेन चूर्णमेवं विनिर्दिशेत्।
तदर्द्धं प्रक्षिपेत्तत्र चूर्णं भूमिम्बसम्भवम् ॥४५१॥
मात्रामस्य प्रयुञ्जीत दृष्ट्वा दोषबलाबलम्।
चूर्णं भैरवसंज्ञन्तु ज्वरान् हन्ति न संशयः ॥४५२॥
पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान्।
द्वन्द्वजान् सन्निपातोत्थान् मानसानपि नाशयेत् ॥४५३
प्राकृतं वैकृतञ्चैव सौम्यन्तीक्ष्णामथापि वा।
अन्तर्गतं बहिःस्थं च निरामं साममेव च ॥४५४॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यन्न संशयः।
नानादोषोद्भवञ्चैव वारिदोषभवन्तथा ॥४५५॥
विरुद्धभेषजभवं ज्वरमाशु व्यपोहति।
अग्निमान्द्ययकृत्प्लीहपाण्डुरोगमरोचकम् ॥४५६॥
उदराण्यन्त्रवृद्धिञ्च रक्तपित्तं त्वगामयम्।
श्वयथुञ्च शिरःशूलं वातामयरुजाऽपहम्।
ज्वरभैरवसंज्ञन्तु भैरवेण कृतं शुभम् ॥४५७॥

१. शुण्ठी, २. त्रायमाण, ३. नीम छाल, ४. जवासा, ५. हरीतकी, ६. नागरमोथा, ७. वच, ८. देवदारु, ९. कण्टकारी, १०. काकडासिंगी, ११. शतावरी, १२. पित्तपापड़ा, १३. पिपरामूल, १४. इन्द्रवारुणी, १५. पुष्करमूल, १६. कचूर, १७. मूर्वा, १८. पीपर, १९. हल्दी, २०. दारुहल्दी, २१. लोधत्वक्, २२. लाल-चन्दन, २३. नीलकमल, २४. इन्द्रयव, २५. कुटज छाल, २६. मुलेठी, २७. चित्रकमूल, २८. शिग्रुत्वक्, २९. बलामूल, ३०. अतीस, ३१. कुटकी, ३२. मुशली, ३३. पद्मकाष्ठ, ३४. अजवायन, ३५. शालपर्णी, ३६. मरिच, ३७. गुडूची, ३८. बिल्वत्वक्, ३९. सुगन्धबाला, ४०. शुद्ध फिटकरी, ४१. तेजपत्ता, ४२. दालचीनी, ४३. आमला, ४४. पृश्निपर्णी, ४५. पटोलपत्र, ४६. शुद्धगन्धक, ४७. शुद्ध पारद, ४८. लोहभस्म, ४९. अभ्रकभस्म, ५०. शुद्ध मैनसिल तथा ५१. चिरायता—क्र.सं. १ से ५० तक के सभी द्रव्यों को ५०-५० ग्राम लें तथा चिरायता १२५० ग्राम लें और कूटकर वस्त्रपूत चूर्ण करें। अब पारद एवं गन्धक की कज्जली करें, कज्जली होने पर उसमें शुद्ध मैनसिल, लोह भस्म और अभ्रक भस्म क्रमशः मिलाकर मर्दन करें। तत्पश्चात् उपर्युक्त सभी द्रव्यों के चूर्ण में कज्जली भस्मों को अच्छी तरह मिलाकर शीशे के जार में सुरक्षित कर लें।

१ ग्राम की मात्रा में रोगी एवं रोग के बलाबल का विचार कर देने से सभी प्रकार के ज्वर, पृषग्दोषज, द्वन्द्वज, सन्निपातज, आगन्तुज, सतत-सन्तताद्रि विषमज्वर, मानस ज्वर, प्राकृत-वैकृत-सौम्य-तीक्ष्ण-अन्तर्वेग-बहिर्वेग-साम-निराम-साध्य-असाध्य-ज्वर, अष्टविध ज्वर, नानादोषज ज्वर, जलदोषोत्पन्न ज्वर एवं विरुद्ध औषधियों के सेवनजन्य ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अग्निमान्द्य, यकृत्, प्लीहवृद्धि, पाण्डुरोग, अरुचि, उदररोग, अन्त्रवृद्धि, रक्तपित्त, त्वग्रोग, शोथ, शिरःशूल एवं वातज रोगों की वेदनाओं को शान्त करता है। यह ज्वरभैरव चूर्ण भैरव नाम के किसी आचार्य ने पहले कहा है।

मात्रा–१ ग्राम। **उपयोग**–समस्त ज्वरों में। **अनुपान**–मधु एवं जल से।

२४४. ज्वरनागमयूर चूर्ण

लौहाभ्रटङ्कणं ताम्रं तालकं वङ्गमेव च।
शुद्धसूतं गन्धकञ्च शिग्रुबीजं फलत्रिकम् ॥४५८॥
चन्दनातिविषापाठा वचा च रजनीद्वयम्।
उशीरं चित्रकं देवकाष्ठञ्च सपटोलकम् ॥४५९॥
जीवकर्षभकाजाज्यस्तालीशं वंशलोचना।
कण्टकार्याः फलं मूलं शठी पत्रं कटुत्रयम् ॥४६०॥
गुडूचीरसधन्याकं कटुका क्षेत्रपर्पटी।
मुस्तकं बालकं बिल्वं यष्टीमधु समं समम् ॥४६१॥
भागाच्चतुर्गुणं देयं कृष्णजीरस्य चूर्णकम्।
तत्समं तालपुष्पञ्च चूर्णं दण्डोत्पलाभवम् ॥४६२॥
कैरातं तत्समं देयं तत्समं चपलाभवम्।
एतच्चूर्णं समाख्यातं ज्वरनागमयूरकम् ॥४६३॥
प्रतिमाषमितं खाद्यं युक्त्या वा त्रुटिवर्धनम्।
सन्तताद्रिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यं न संशयः ॥४६४॥
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकोद्भवं ज्वरम्।
भूतावेशज्वरञ्चैवमभिचारसमुद्भवम् ॥४६५॥
दाहशीतज्वरं घोरं चतुर्थादिविपर्ययम्।
जीर्णञ्च विषमं सर्वं प्लीहानमुदरं तथा ॥४६६॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं हन्ति न संशयः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भ्रमं तृष्णां च कासं च शूलानाहौ क्षयन्तथा ॥४६७॥
यकृतं गुल्मशूलञ्च आमवातं निहन्ति च।
त्रिकपृष्ठकटीजानुपार्श्वानां शूलनाशनम्।
अनुपानं शीतजलं न देयमुष्णवारिणा ॥४६८॥

१. लोह भस्म, २. अभ्रक भस्म, ३. शुद्ध टङ्कण, ४. ताम्र भस्म, ५. शुद्ध हरिताल, ६. वङ्ग भस्म, ७. शुद्ध पारद, ८. शुद्ध गन्धक, ९. शिग्रुबीज, १०. हरीतकी, ११. बहेड़ा, १२. आमला, १३. लालचन्दन, १४. अतीस, १५. पाठा, १६. वच, १७. हल्दी, १८. दारुहल्दी, १९. खस, २०. चित्रकमूल, २१. देवदारु, २२. परवलपत्र, २३. जीवक, २४. ऋषभक, २५. श्वेतजीरा, २६. तालीशपत्र, २७. वंशलोचन, २८. कण्टकारीमूल, २९. कण्टकारी बीज, ३०. कचूर, ३१. तेजपत्र, ३२. शुण्ठी, ३३. पीपर, ३४. मरिच, ३५. गुडूचीसत्त्व, ३६. धनियाँ, ३७. कुटकी, ३८. पित्तपापड़ा, ३९. नागरमोथा, ४०. सुगन्धबाला, ४१. बिल्वत्वक्, ४२. मुलेठी, ४३. कृष्ण जीरा, ४४. मुशली, ४५. सहदेवी, ४६. चिरायता और ४७. भाँग—क्रम सं. १ से ४२ तक के प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें और क्रम ४३ से ४७ की संख्या वाले पाँचों द्रव्य प्रत्येक २००-२०० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। तत्पश्चात् क्रम सं. १ से ६ तक के सभी द्रव्यों को कज्जली में मिलाकर मर्दन करें। कज्जली में सबसे पहले हरिताल मिलावें तब भस्मों को। इसके बाद क्रम संख्या ९ से ४७ तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म वस्त्रपूत चूर्ण कर सभी द्रव्यों को मिला लें और शीशे के जार में सुरक्षित रख लें। इसे ज्वरनागमयूर चूर्ण कहते हैं। अर्थात् ज्वररूपी नाग (सर्प) को मयूर जैसे भक्षण कर लेता है, उसी प्रकार इसके प्रयोग से ज्वर नष्ट हो जाता है।

इस चूर्ण को सभी प्रकार के ज्वरों—सन्ततादि विषम ज्वरों के साध्यासाध्य सभी प्रकारों का निःसन्देह नाश करता है। क्षयज्वर, धातुस्थज्वर, कामज्वर, शोकज्वर, भूतावेशज्वर, (आगन्तुज्वर), अभिचारोद्भवज्वर, दाहपूर्वक ज्वर, भयंकर चातुर्थकविपर्यय ज्वर, जीर्णज्वर, सभी प्रकार के विषमज्वर एवं प्लीहज्वर में प्रयोग करने से इन्हें तत्क्षण नाश करता है। इसके अतिरिक्त सभी प्रकार के उदररोग, कामला, पाण्डु, शोथ का भी नाश करता है; इसमें सन्देह नहीं है। भ्रम, तृष्णा, कास, शूल, आनाह, क्षय, यकृत्, गुल्मपीड़ा और आमवात को भी नाश करता है। त्रिकशूल, पृष्ठशूल, कटिशूल, जानुशूल और पार्श्वशूल को नाश करता है।

मात्रा–१ ग्राम से धीरे-धीरे बढ़ाकर ३ ग्राम तक। **अनुपान**–शीतल जल। इसे उष्ण जल से कभी नहीं देना चाहिए। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

ज्वर में रसौषधियाँ

रसचिकित्सा का सिद्धान्त

न दोषाणां न रोगाणां न पुंसाञ्च परीक्षणम्।
न देशस्य न कालस्य कार्यं रसचिकित्सिते ॥४६९॥

रसौषधियों द्वारा रोगी की चिकित्सा करते समय इन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए—(१) वात, पित्त, कफ दोषों के तर-तम भाव, द्वन्द्व, सन्निपातादि का परीक्षण नहीं करना चाहिए। (२) रोगों की साध्यासाध्यता, कृच्छ्रता, पापज, शापज, पूर्वकृत कर्मों, आगन्तुज आदि भावों का भी परीक्षण नहीं करना चाहिए। (३) रोगी पुरुष, स्त्री, बालक, वृद्ध आदि उम्र तथा कृश, स्थूल एवं अशक्य आदि अवस्था का परीक्षण भी नहीं करना चाहिए। देश—आनूप, जाङ्गम, साधारण आदि—भेदों की भी परीक्षा नहीं करनी चाहिए। (४) किस काल में यह रोग हुआ, रोगी आज किस काल में चिकित्सार्थ आया है आदि बातों की परीक्षा भी नहीं करे। अर्थात् इन बातों की जानकारी के बिना ही चिकित्सक रोगानुसार रसौषधियों का सीधे प्रयोग करें। यह श्लोक रसशास्त्र के लिए अत्युक्ति है। वस्तुतः ऐसा नहीं समझें।

रसज्ञान रहित वैद्य का उपहास

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो न जानाति रसं यदा।
सर्वं तस्योपहासाय धर्महीनो यथा बुधः ॥४७०॥

जो वैद्य आयुर्वेद एवं अन्य सभी शास्त्रों के तत्त्व का ज्ञान रखते हुए भी पारद या रसशास्त्रीय ज्ञान से शून्य है तो समाज में उसकी निन्दा (उपहास) होती है। जैसे सभी शास्त्रों का विद्वान् पण्डित धर्माचरण से रहित होने पर निन्दित होता है।

रसशास्त्रीय द्रव्यों का शोधन-मारणोपरान्त प्रयोग

संशोध्य विधिना धातूनुपधातून् विषाण्यपि।
योजयेत् कर्मणि प्राज्ञो दोषः सञ्जायतेऽन्यथा ॥४७१॥

रसौषधियों का निर्माण करते समय सुविज्ञ वैद्य समस्त प्रयुक्त द्रव्यों (रस-उपरस-साधारण रसों), धातु-उपधातुओं एवं विषोप-विषों का भलीभाँति शोधन तथा सम्यक् रीत से भस्म होने के बाद ही रस योगों में मिलावें। अन्यथा अशोधित द्रव्यों एवं सम्यक्तया भस्म नहीं हुए द्रव्यों के प्रयोग से हानि (दोष) होगी, इस बात का हमेशा ध्यान रखना चाहिए।

रसौषधियों के सेवन में अनुपान

अनुपानै रसा योज्या देशकालानुसारिभिः।
दोषघ्नैर्मधुना वाऽपि केवलेन जलेन वा ॥४७२॥

रसौषधियों के सेवन करते समय देश, काल, रोग और दोषों के अनुसार तत्-तद् दोषघ्न एवं रोगघ्न द्रव्यों के स्वरस, चूर्ण

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एवं क्वाथ का अनुपान में प्रयोग करना चाहिए। किन्तु सामान्य अनुपान में मधु एवं जल का प्रयोग करना चाहिए।

२४५. हिङ्गुलेश्वर रस (रसेन्द्रचिन्तामणि)

तुल्यांशं मर्दयेत् खल्ले पिप्पलीं हिङ्गुलं विषम्।
गुञ्जाऽर्द्धं मधुना देयं वातज्वरनिवृत्तये ॥४७३॥

१. पिप्पली चूर्ण, २. शुद्ध हिङ्गुल एवं ३. शुद्ध वत्सनाभ विषचूर्ण—इन तीनों द्रव्यों को समभाग में लेकर एक पत्थर के खरल से मर्दन कर निम्बुरस की भावना देकर ६-८ घण्टे तक मर्दन करें और आधी से १ रत्ती (६० से १२५ मि.ग्रा.) तक की वटी बना कर छाया में सुखा लें। पुनः काच की शीशी में सुरक्षित रख लें। वातज्वर की निवृत्ति के लिए इस हिङ्गुलेश्वर रस की १-१ वटी मधु के साथ मिलाकर ८-८ घण्टे पर देना चाहिए।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु या गरम जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्त। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–वात ज्वर में।

२४६. हिङ्गुलेश्वर बृहत् (ज्वरमुरारि रस) (र.सा.सं.)

हिङ्गुलञ्च विषं व्योषं टङ्कणं नागराह्वयम्।
जयपालसमायुक्तं सद्योज्वरविनाशनम् ॥४७४॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध वत्सनाभ विष, ३. शुण्ठी चूर्ण, ४. पीपर चूर्ण, ५. मरिच चूर्ण, ६. शुद्ध टङ्कण और ७. शुद्ध जयपाल चूर्ण—शुण्ठी २ भाग तथा अन्य सभी द्रव्य १-१ भाग मिलाकर खरल में मर्दन करें और निम्बुस्वरस की भावना देकर ½ रत्ती की मात्रा में वटी बनावें तथा छाया में सुखा कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से या मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्त। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–तरण ज्वर में।

२४७. शीतभञ्जी रस (रसेन्द्रचिन्तामणि)

रसं हिङ्गुलगन्धश्च जयपालं समं समम्।
दन्तीक्वाथेन सम्मर्द्य रसो ज्वरहरः परः ॥४७५॥
आर्द्रकस्वरसेनाथ दापयेद्रक्तिकामितम्।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेद्याममात्रतः ॥४७६॥
शीततोयं पिबेच्चानु इक्षुमुद्गरसो हितः।
शीतभञ्जी रसो नाम्ना सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥४७७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध हिङ्गुल तथा ४. शुद्ध जयपाल—इन चारों द्रव्यों को समभाग में ग्रहण करें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक को मिलाकर मर्दन करें, कज्जली हो जाने पर उसमें हिंगुल मिलावें और मर्दन करें, तत्पश्चात् जयपाल मिलावें और मर्दन करें। तत्पश्चात् दन्तीमूल क्वाथ की भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। अत्यन्त भयंकर नवज्वर में १-१ गोली आदि के रस एवं मधु से देने पर ३ घण्टे के अन्दर ही ज्वर नष्ट हो जाता है। औषधसेवन के बाद शीतल जल, इक्षुरस एवं मुद्गयूष देना लाभप्रद है। यह शीतभञ्जी रस सभी ज्वरों को नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस तथा मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–नवज्वर, शीतज्वर।

२४८. तरुणज्वरारि रस (रसे.सा.सं.)

जैपालगन्धं विषपारदञ्च
तुल्यं कुमारीस्वरसेन मर्द्यम्।
अस्यै द्विगुञ्जा हि सितोदकेन
ख्यातो रसोऽयं तरुणज्वरारिः ॥४७८॥
दातव्य एषोऽहनि पञ्चमे वा
षष्ठेऽथवा सप्तम एव वापि।
जाते विरेके विगतो ज्वरः स्यात्
पटोलमुद्गान्ननिषेवणेन ॥४७९॥

१. शुद्ध जयपाल, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभविष एवं ४. शुद्ध पारद—ये चारों द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। तत्पश्चात् अन्य दोनों द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर १-२ रत्ती (१२५-२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया शुष्क करें तथा काच की बोतल में सुरक्षित रख लें। इसे तरुणज्वरारि रस कहते हैं। तरुणज्वर के रोगी को पाँचवें, छठे एवं सातवें दिन २-२ वटी चीनी के शर्बत के साथ लेने पर विरेचन होकर ज्वर नष्ट हो जाता है। तत्पश्चात् परवल फल, मूँग की दाल एवं पुराना चावल को सम्यक् सिद्ध कर पथ्य रूप में खिला दें। अर्थात् ज्वरमुक्त होने पर परवल, मूँग एवं चावल की पतली खिचड़ी खिलाने से लाभ होता है।

मात्रा–१२५से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–चीनी के शर्बत से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–तरुणज्वर में।

२४९. स्वच्छन्दभैरव रस (प्रथम) (र.चि.म.)

ताम्रभस्म विषं हेम्नः शतधा भावितं रसैः।
गुञ्जाऽर्द्धं सन्निपातादि-नवज्वरहरं परम् ॥४८०॥
आर्द्राम्बुशर्करासिन्धु युतः स्वच्छन्दभैरवः।
इक्षुद्राक्षासितैर्वारुदधि पथ्यं रुजि स्मृतम् ॥४८१॥

१. ताम्र भस्म १ भाग तथा २. शुद्ध वत्सनाभविष १

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भाग—दोनों का एक पत्थर के खरल में खूब मर्दन करें और धत्तूरपञ्चाङ्ग स्वरस की १०० भावना देकर ½ - ½ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस स्वच्छन्द- भैरव रस को आर्द्रक रस, चीनी एवं सैन्धवनमक के साथ सेवन करने से नवज्वर तथा सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। इस रसौषधि के सेवन काल में इक्षुरस, द्राक्षा, चीनी, ककड़ी, दधि पथ्य रूप में लेना चाहिए। (एर्वारु = ककड़ी)

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस, चीनी, सैन्धव से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर एवं नवज्वर में।

२५०. स्वच्छन्दभैरव रस (द्वितीय)

पिप्पलीं जातिकोषं च पारदं गन्धकं विषम्।
वारिणा मर्दयेत् खल्ले रक्तिकाऽर्द्धं प्रयोजयेत् ॥४८२॥
स्वच्छन्दभैरवो नाम भैरवेण विनिर्मितः।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेन्नात्र संशयः ॥४८३॥

१. पिप्पली चूर्ण, २. जावित्री चूर्ण, ३. शुद्ध पारद, ४. शुद्ध गन्धक तथा ५. शुद्ध वत्सनाभ विष—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक का भलीभाँति मर्दन कर कज्जली बना लें। तब शेष तीनों काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण उक्त कज्जली में मिलाकर मर्दन करें और जल की एक भावना देकर ६५ से १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत कर लें। इसे स्वच्छन्द भैरव रस कहते हैं। आचार्य भैरव ने इस योग का निर्माण किया था। यह निःसन्देह महाभयंकर नवीन ज्वर का नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–उष्ण जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्णाभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–भयंकर नवीन ज्वर।

२५१. नवज्वरेभाङ्कुश रस (रसे.सा.सं.)

सगन्धटङ्कं रसतालकञ्च
विमर्दितं भावयमीनपित्तैः।
दिनत्रयं वल्लमितं प्रदद्यात्
वृन्ताकतक्रौदनमेव पथ्यम्।
नवज्वरेभाङ्कुशनामधेयः
क्षणेन घर्मोद्गममातनोति ॥४८४॥

१. शुद्ध गन्धक, २. शुद्ध टङ्कण, ३. शुद्ध पारद एवं ४. शुद्ध हरिताल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। एक खरल में सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को मिलाकर कज्जली करें। तत्पश्चात् हरताल देकर मर्दन करें और पुनः टंकण मिलाकर रोहू मछली के पित्त के साथ तीन दिनों तक मर्दन करें अर्थात् ३ भावना दें। पुनः इसकी ३-३ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह औषध नवज्वर रूपी हाथी को वश में करने के लिए अंकुशवत् है। आर्द्रक के रस एवं मधु के साथ १ रत्ती की मात्रा में प्रयोग करने पर क्षणभर में पसीना देकर ज्वर उतर जाता है। इस औषधि के सेवन काल में भात, तक्र और बैंगन का भुर्ता खाना चाहिए। इन दिनों वल्ल मात्रा अधिक है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–नवज्वर में।

२५२. नवज्वरेभसिंह रस (रसे.चि.म.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं लौहं ताम्रञ्च सीसकम्।
मरिचं पिप्पलीं विश्वं समभागानि कारयेत् ॥४८५॥
अर्द्धभागं विषं दत्त्वा मर्दयेद् वासरद्वयम्।
शृङ्गवेराम्बुपानेन दद्याद् गुञ्जाद्वयं भिषक् ॥४८६॥
नवज्वरे महाघोरे धातुस्थे ग्रहणीगदे।
नवज्वरेभसिंहोऽयं सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥४८७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लोह भस्म, ४. ताम्र भस्म, ५. नाग भस्म, ६. मरिच चूर्ण, ७. पीपर चूर्ण, ८. शुण्ठी चूर्ण और ९. शुद्ध विष चूर्ण—क्रम संख्या १से ८ तक के सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें और शुद्ध विष २५ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर कज्जली के साथ मर्दन करें और आर्द्रकस्वरस की भावना देकर दो दिनों तक मर्दन करें तथा २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। नवज्वरेभसिंह (नवज्वर रूपी हाथी के लिए सिंह के समान) यह रसौषधि भयंकर नवज्वर, धातुगत ज्वर, ग्रहणीरोग तथा सभी ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–नवज्वर, धातुगतज्वर एवं संग्रहणी में।

२५३. नवज्वरहरी वटी (भावप्रकाश)

रसगन्धौ विषं शुण्ठी पिप्पली मरिचानि च।
पथ्या विभीतकं धात्री दन्तीबीजं च शोधितम् ॥४८८॥
चूर्णमेषां समांशानां द्रोणपुष्पीरसैः पुटेत्।
वटीं माषनिभां कुर्याद् भक्षयेत्तरुणज्वरे ॥४८९॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभविष, ४. शुण्ठी चूर्ण, ५. पिप्पली चूर्ण, ६. मरिच चूर्ण, ७. आमला चूर्ण, ८. बहेड़ा चूर्ण, ९. हरीतकी चूर्ण तथा १०. शुद्ध जयपाल—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को कज्जली में मिलाकर मर्दन करें और द्रोणपुष्पी (गूमा) स्वरस की भावना देकर ६५-१२५ मि.ग्रा. = १ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काच के जार में सुरक्षित रख लें। नवज्वर में उड़द के बराबर इस वटी को मधु के साथ खिलाने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु। **गन्ध**–रसायन- गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–नवज्वर में।

२५४. नवज्वरारि रस (भावप्रकाश)

एकभागो रसो भागद्वयं च शुद्धगन्धकम्।
गरलस्य त्रयो भागाश्चतुर्भागा हिमावती ॥४९०॥
जयपालः पञ्चभागो निम्बुद्रवविमर्दितः।
क्रिमिघ्नप्रमिता वट्यः कार्याः सर्वज्वरच्छिदः ॥४९१॥
शृङ्गवेरेण दातव्या वटिकैका दिने दिने।
जीर्णे ज्वरे तथाऽजीर्णे समे वा विषमेऽपि वा ॥
निहन्त्यसौ ज्वरं सर्वं दावो वनमिवानलः ॥४९२॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. शुद्ध वत्सनाभ ३ भाग, ४. स्वर्णक्षीरी (भड़भाड़) मूलचूर्ण ४ भाग और ५. शुद्ध जयपाल ५ भाग—उपर्युक्त द्रव्यों को क्रमशः १-१ भाग बढ़ाते जायें। अर्थात् पारद ५० ग्राम, गन्धक १०० ग्राम, वत्सनाभ १५० ग्राम, स्वर्णक्षीरीमूलचूर्ण २०० ग्राम और जयपाल २५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को उक्त कज्जली में मिलाकर मर्दन करें और निम्बुस्वरस की भावना देकर विडङ्ग बराबर $\frac{1}{2}$ - $\frac{1}{2}$ रत्ती की वटी बनावें तथा छाया में सुखा कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह जीर्णज्वर, विषमज्वर, समज्वर एवं अजीर्ण का नाश करता है। जैसे दावानल जंगल को नाश कर देता है उसी तरह सभी ज्वरों का यह नाश कर देता है।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–किञ्चिदम्ल। **उपयोग**–नवज्वर एवं विषमज्वर में।

२५५. सर्वाङ्गसुन्दर रस (रसे.सारसंग्रह)

शुद्धसूतं च गन्धं च विषं च जयपालकम्।
कटुत्रयं च त्रिफला टङ्कणं च समांशकम् ॥४९३॥
अस्य मात्रा प्रयोक्तव्या गुञ्जात्रयसमा ततः।
सर्वेषु ज्वररोगेषु सामवाते विशेषतः ॥४९४॥
नाशयेच्छ्वासकासं च ह्यग्निसादं विशेषतः।
ब्रह्मणा निर्मितं पूर्वं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥४९५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण, ४. शुद्ध जयपाल, ५. शुण्ठी चूर्ण, ६. पीपर चूर्ण, ७. मरिच चूर्ण, ८. आँवला चूर्ण, ९. हरीतकी चूर्ण, १०. बहेड़ा चूर्ण एवं ११. शुद्ध टङ्कण—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद-गन्धक की कज्जली करें और शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें तथा जल की भावना देकर ३-३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। ततः काचपात्र में औषधि को सुरक्षित रख लें। इसे सर्वाङ्ग-सुन्दर रस कहते हैं। इसके सेवन से सभी प्रकार के ज्वर, श्वास, कास तथा अग्निमान्द्य नष्ट हो जाते हैं। इस सर्वाङ्गसुन्दर रस को ब्रह्माजी ने निर्माण किया था।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

२५६. त्रिपुरभैरव रस (रसेन्द्रचिन्तामणि)

विषटङ्कबलिम्लेच्छदन्तीबीजं क्रमाद्वहु।
दन्त्यन्बुमर्दितं यामं रसस्त्रिपुरभैरवः ॥४९६॥
वल्लं व्योषेण चार्द्रस्य रसेन सितयाऽथवा।
दत्तो नवज्वरं हन्ति मान्द्यामानिलशोथहा ॥४९७॥
हन्ति शूलं सविष्टम्भमर्शांसि कृमिजान् गदान्।
पथ्यं तक्रेण भोक्तव्यं रसेऽस्मिन् रोगहारिणि ॥४९८॥

१. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण, २. शुद्ध टङ्कण, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध हिंगुल और ५. शुद्ध जयपाल चूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य क्रमशः १-१ भाग अधिक लेना चाहिए। अर्थात् वत्सनाभ ५० ग्राम, टंकण १०० ग्राम, शुद्ध गन्धक १५० ग्राम, शुद्ध हिंगुल २०० ग्राम और शुद्ध जयपाल २५० ग्राम लें। सर्वप्रथम हिंगुल और गन्धक एक खरल में रखकर मर्दन करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को उसी खरल में मिलाकर मर्दन करें और दन्तीमूल क्वाथ की भावना देकर ३ रत्ती (किन्तु आधुनिक मात्रा १ रत्ती) (३७५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे त्रिपुरभैरवरस कहते हैं। १ वटी इस औषधि को त्रिकटु चूर्ण, मधु एवं आर्द्रक के रस से अथवा केवल चीनी के शर्बत से लेने पर नवज्वर नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त अग्निमान्द्य, आमवात, शोथ, शूल, विष्टम्भ, अर्श, कृमिरोग भी नष्ट हो जाते हैं। इस औषधि के सेवनकाल में पथ्य रूप में भात और तक्र खाना चाहिए।

मात्रा–१२५ से ३७५ मि.ग्रा. तक। **अनुपान**–त्रिकटुचूर्ण, आर्द्रक रस एवं मधु से या चीनी के शर्बत से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–लाल। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–नवज्वर, मन्दाग्नि एवं शोथ में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२५७. ज्वरधूमकेतु रस (रसे.चि.म.)

भवेत्समं सूतसमुद्रफेन-
हिङ्गूलगन्धं परिमर्द्य यत्नात् ।
नवज्वरे वल्लमितं त्रिघस्र-
मार्द्राम्बुनाऽयं ज्वरधूमकेतुः ॥४९७॥

१. शुद्ध पारद, २. समुद्रफेन, ३. शुद्ध हिंगुल तथा ४. शुद्ध गन्धक—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः हिंगुल देकर मर्दन करें और उसमें समुद्रफेन मिलाकर ३ दिनों तक आर्द्रकस्वरस की भावना देकर मर्दन करें तथा ३-३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखावें तथा काचपात्र में सुरक्षित करें। इसे ज्वरधूमकेतु रस कहा जाता है।

मात्रा–१२५ से ३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–नवज्वर में।

२५८. मृत्युञ्जय रस (रसेन्द्रसारसंग्रह)

विषस्यैकस्तथा भागो मरिचं पिप्पली कणा ।
गन्धकस्य तथा भागो भागः स्याट्टङ्कणस्य वै ॥५००॥
सर्वत्र समभागः स्याद् द्विभागं हिङ्गुलं भवेत् ।
जम्बीरस्य रसेनात्र हिङ्गुलं भावयेद्भिषक् ॥५०१॥
रसश्चेत्समभागः स्याद् हिङ्गुलं नेष्यते तदा ।
गोमूत्रशोधितञ्चात्र विषं सौरविशोषितम् ॥५०२॥
चूर्णयेत् खल्लमध्ये तु मुद्गमात्रां वटीं चरेत् ।
मधुना लेहनं प्रोक्तं सर्वज्वरनिवृत्तये ॥५०३॥
दध्युदकानुपानेन वातज्वरनिबर्हणः ।
आर्द्रकस्य रसैः पानं दारुणे सान्निपातिके ॥५०४॥
जम्बीररसयोगेन अजीर्णज्वरनाशनः ।
अजाजीगुडसंयुक्तो विषमज्वरनाशनः ॥५०५॥
जीर्णज्वरे महाघोरे पुरुषे यौवनान्विते ।
पूर्णमात्रा प्रदातव्या पूर्णं वटिचतुष्टयम् ॥५०६॥
अतिक्षीणेऽतिवृद्धे च शिशौ चाल्पवयस्यपि ।
तुर्यमात्रा प्रदातव्या व्यवस्थासारनिश्चिता ॥५०७॥
नवज्वरे प्रदानेन यामैकान्नाशयेज्ज्वरम् ।
अक्षीणे च कफाभावे दाहे च वातपैत्तिके ॥५०८॥
सितां दद्यात् प्रयत्नेन नारिकेलाम्बु निर्भयम् ।
अयं मृत्युञ्जयो नाम रसः सर्वज्वरापहः ।
अनुपानप्रभेदेन निहन्ति सकलान् गदान् ॥५०९॥

१. शुद्ध वत्सनाभ, २. मरिच चूर्ण, ३. पिप्पली चूर्ण, ४. शुद्ध गन्धक, ५. शुद्ध टङ्कण और ६. शुद्ध हिंगुल—क्रम संख्या एक से पाँच तक के सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम तथा हिंगुल १०० ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम वत्सनाभ को टुकडे कर गोमूत्र में शोधन करना चाहिए। हिंगुल को जम्बीरी नीबू के रस में ३ भावना देकर शोधन करना चाहिए। यदि चिकित्सक पारद लेना चाहे तो हिंगुल के स्थान पर पारद १ भाग ही लें। पहले गन्धक और हिंगुल को एक खरल में मर्दन करे। पुनः सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और जम्बीरी नीबू के रस तथा आर्द्रक के रस की भावना देकर ½ - ½ रत्ती (६० मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी (मूँग के बराबर) बना लें। इन गोलियों को छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे मृत्युञ्जय रस कहते हैं। मधु के साथ इस औषधि को लेने से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। दही के पानी से लेने पर वातज्वर नष्ट हो जाता है। आर्द्रकस्वरस से लेने पर भयंकर सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। जम्बीरी नीबू के रस से लेने पर अजीर्ण ज्वर नष्ट हो जाता है। जीरा और गुड़ के साथ लेने पर विषमज्वर नष्ट हो जाता है। भयंकर जीर्णज्वर से पीड़ित युवा पुरुष में इसकी पूर्ण मात्रा देनी चाहिए। इसकी पूर्ण मात्रा ४ वटी है। अत्यन्त क्षीण रोगी, अत्यन्त वृद्ध व्यक्ति तथा छोटे बालकों को अवस्था का विचार कर ½ रत्ती की मात्रा में इस औषधि को देना चाहिए। नवज्वर में इस मृत्युञ्जय रस को देने से ३ घण्टे में ही ज्वर उतर जाता है। कफ की प्रबलता से रहित वात-पित्तज्वर और दाह में इस औषधि को नारियल के पानी में चीनी मिलाकर देना चाहिए। यह मृत्युञ्जयरस अनुपान-भेद से सभी रोगों का नाश करता है।

मात्रा–०.६० से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्त। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–नवज्वर तथा अनुपानभेद से सर्वज्वर में।

२५९. मृत्युञ्जय रस (रसराजसुन्दर)

सूतं गन्धकटङ्कणं शुभविषं धुस्तूरबीजं कटुं
नीत्वा भागमथोत्तरद्विगुणितं चोन्मत्तमूलाम्बुना ।
कुर्यान्माषवटीं सुखातिसुखदां सर्वाञ् ज्वरान्नाशये-
देष श्रीशिवशासनात्प्रजनितः सूतश्च मृत्युञ्जयः ॥५१०॥
नारिकेलसितायुक्तं वातपित्तज्वरं जयेत् ।
मधुना श्लेष्मपित्तोत्थं ज्वरं सन्नाशयेद् ध्रुवम् ॥
सन्निपातज्वरं घोरं नाशयेदार्द्रनीरतः ॥५११॥

१. शुद्ध पारद २५ ग्राम. २. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, ३. शुद्ध टङ्कण १०० ग्राम. ४. शुद्ध वत्सनाभ विष २०० ग्राम, ५. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण ४०० ग्राम तथा ६. त्रिकटु चूर्ण ८०० ग्राम—इन सभी द्रव्यों को उत्तरोत्तर दुगुनी मात्रा में ग्रहण करें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। तत्पश्चात् अन्य सभी चारों द्रव्यों के चूर्णों को कज्जली के साथ मिलाकर धत्तूरमूलस्वरस की भावना देकर उड़द के बराबर (६० मि.ग्रा. की) वटी बनाकर छाया में सुखावें और

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह मृत्युञ्जय रस सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है। भगवान् शिवजी की कृपा से प्रचलित पारद का यह योग मृत्यु को नाश करता है। नारियल के पानी और चीनी के साथ देने पर वात-पित्त को नाश करता है। मधु के साथ देने पर कफ-पित्तज्वर नष्ट हो जाता है तथा आर्द्रकस्वरस से देने पर घोर सन्निपात ज्वर को नाश करता है।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–नारियल के जल तथा चीनी मिलाकर। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अनुपान-भेद से सर्वज्वरहर है।

२६०. महामृत्युञ्जय रस (रसराजसुन्दर)

विषं सूतकगन्धौ च पित्तं मत्स्यवराहयोः।
आजमायूरपित्ते च महिष्याश्चापि योजयेत् ॥५१२॥
हरितालं च सव्योषं वानरीबीजसंयुतम्।
अपामार्गं चित्रमूलं जयपालञ्च कल्कयेत् ॥५१३॥
एतत्सर्वं समांशेन छागीमूत्रेण मर्दयेत्।
माषेण सदृशी कार्या वटिका सद्विषग्वरैः ॥५१४॥
महाज्वरे महाशीते महाशीतज्वरेऽपि च।
मज्जागते सन्निपाते विषूच्यां विषमज्वरे ॥५१५॥
असाध्ये मानवे युञ्ज्यादेकाहाज्ज्वरनाशिनी।
जलोदरे च शैथिल्ये नासास्त्रावे च पीनसे ॥५१६॥
अजीर्णे मूर्च्छनोत्थाने श्लेष्मोत्थानेऽतिदुर्जये।
कामलाशोथपाड्वादिसर्वरोगापहारकः ॥५१७॥
मृत्युञ्जयो रसो नाम ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः।
भृङ्गराजरसेनायं रसराजः प्रदीयते ॥५१८॥
निर्वाते निर्जनस्थाने बहुवस्त्रसमावृते।
प्रस्वेदः क्षणमात्रेण जायते चिह्नमीदृशम् ॥५१९॥
मूर्च्छितः पतितो भूमौ दह्यमानः पुनः पुनः।
एवं चिह्नं समालोक्य वदेन्नैरुज्यमातुरे ॥५२०॥
पथ्यं यद्याचते रोगी तद्दातव्यं प्रयत्नतः।
दध्योदनं शीतजलं दातव्यं तद्विचक्षणैः ॥५२१॥
महारसः श्रेष्ठ एष शम्भुना प्रेरितो भुवि।
कृपया सर्वभूतानां ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः ॥५२२॥

१. शुद्ध वत्सनाभ विष, २. शुद्ध पारद, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध हरताल, ५. शुण्ठी चूर्ण, ६. पीपर चूर्ण, ७. मरिच चूर्ण ८. कपिकच्छुबीज चूर्ण, ९. शुद्ध जयपालबीज, १०. अपामार्गमूल चूर्ण और ११. चित्रकमूल—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली करें और उक्त कज्जली में वत्सनाभ विषचूर्ण मिलावें। ततः रोहू मछली, सूअर, बकरा, मयूर एवं भैंस के पित्त की १-१ भावना देकर खूब मर्दन करें। पुनः उक्त भावित कज्जली में शुद्ध हरताल मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर शेष सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें एवं बकरी के मूत्र की एक भावना देकर उड़द बराबर ($\frac{1}{3}$ रत्ती = ६० मि.ग्रा.) वटी बनावें और छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस रसौषधि को भयंकर ज्वर में, अत्यन्त ठण्डक के साथ आने वाले ज्वर में, मज्जागत ज्वर में, सन्निपातज्वर में विषमज्वर में विसूचिका में और असाध्य ज्वर में देने से एक ही दिन में ज्वर नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त जलोदर, देह की शिथिलता, नासास्त्राव, पीनस, अजीर्ण, मूर्च्छा और अत्यन्त दुर्जय कफरोग में लाभ होता है। कामला, शोथ एवं पाण्डु आदि सभी रोगों में भी इसका प्रयोग लाभदायक होता है। अर्थात् सभी रोगों को नाश करता है।

अनुपान रूप में भृङ्गराजस्वरस से इस रसौषधि का प्रयोग कर रोगी को निर्वात एवं निर्जन स्थान में कम्बल-चादर आदि वस्त्रों से ढ़क कर रखना चाहिए। ऐसा करने से रोगी को तुरन्त अत्यन्त पसीना आकर ज्वर शान्त हो जाता है तथा रोगी अचेत होकर जमीन पर गिर पड़ता है और उसका शरीर अत्यन्त गरम होकर जलने जैसा लगता है। ऐसे लक्षण होने पर रोगी रोगमुक्त हो गया ऐसा समझना चाहिए। रोगी को होश आने पर यदि रोगी खाने को माँगे तो उसे दही एवं भात तथा शीतल जल पीने को देना चाहिए। इस महान् रस को "ज्योतिप्रकाश" नामक ऋषि ने शिवजी की कृपा से प्रेरित होकर प्रकाशित किया है।

मात्रा–६० मि.ग्रा. से लेकर १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से तथा रोगानुसार। **गन्ध**–बकरी के मूत्र जैसी गन्ध। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में अनुपान-भेद से।

२६१. श्रीराम रस

गन्धक पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम्॥
बीजं नैकुम्भक मर्द्यं दन्तीक्वाथेन यामकम्।
द्विगुञ्जः शूलविष्टम्भानिलमामज्वरं जयेत् ॥५२३॥

१. शुद्ध गन्धक ५० ग्रा., २. शुद्ध पारद ५० ग्रा., ३. मरिचचूर्ण ५० ग्रा. एवं ४. शुद्ध जयपाल १५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। तदन्तर सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और दन्तीमूल क्वाथ की भावना देकर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसे काचपात्र में सुरक्षित रखकर संग्रहीत करें। मूल पाठ में २ रत्ती की मात्रा में वटी बनाने का निर्देश है जो आज के लिए अधिक तीव्र विरेचन कराने वाला सिद्ध होगा। यह रसौषधि शूल, मलावरोधजन्य विष्टम्भ, वात-विकार और आमज्वर को नष्ट करता है। यह प्रबल विरेचक है अतः सबल रोगियों में ही इसका प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–शीतल जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–शूल, विष्टम्भ, आमज्वर।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२६२. नवज्वराङ्कुश रस (भावप्रकाश)

क्रमेण वृद्धान् रसगन्धहिङ्गुलान्
नैकुम्भबीजान्यथ दन्तिवारिणा ।
पिष्ट्वाऽस्य गुञ्जाऽभिनवज्वरापहा
जलेन चाह्वा सितया प्रयोजिता ॥५२४॥

१. शुद्ध पारद ५० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १०० ग्राम, ३. शुद्ध हिंगुल १५० ग्राम तथा ४. शुद्ध जयपाल २०० ग्राम—सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें और उसमें हिंगुल मिलाकर मर्दन करें। पुन: उक्त मिश्रण में जयपाल मिलाकर दन्तीमूल क्वाथ की भावना दें और १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) वटी बनाकर छाया में सुखावें। तत: काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–नि:स्वाद। **उपयोग**–नवज्वर में।

२६३. प्रचण्ड रस (रसचिन्तामणि)

अमृतं पारदं गन्धं मर्दयेत् प्रहरद्वयम् ।
सिन्दुवाररसैः पश्चाद् भावयेदेकविंशतिम् ॥५२५॥
तिलप्रमाणं दातव्यं नवज्वरविनाशनम् ।
उद्वेगे मस्तके तैलं तक्रञ्चापि प्रदापयेत् ।
अनुपानं चार्द्ररसः प्रचण्डेश्वरसंज्ञकः ॥५२६॥

१. शुद्ध वत्सनाभ, २. शुद्ध गन्धक एवं ३. शुद्ध पारद—इन तीनों द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। तत: वत्सनाभ चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और सिन्दुवारस्वरस की २१ भावना देकर औषधि को सुखा लें एवं काचपात्र में रखकर सुरक्षित कर लें। नवज्वर को नाश करने के लिए इस औषधि को तिल प्रमाण की मात्रा में आर्द्रकस्वरस एवं मधु से देना चाहिए। इस रसौषधि के सेवन के पश्चात् यदि उद्वेग (बेचैनी) हो तो माथे पर तिलतैलादि मर्दन करें। ज्वर शान्त होने पर मट्ठा (तक्र) पान कराना चाहिए। अधुना तिल मात्रा कम है ।

मात्रा–३० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरों में।

२६४. वैद्यनाथ वटी (र.रा.सुन्दर)

शाणं गन्धमथो रसस्य च तथा कृत्वा द्वयोः कज्जलीं
तिक्ताचूर्णमथाक्षमेव सकलं रौद्रे त्रिधा भावयेत् ।
पश्चात्तत्सुषवीरसेन न तु वा क्वाथेऽमले त्रैफले
संशोष्या गुडिका कलायसदृशी कार्या बुधैर्यत्नतः ॥५२७॥
ज्ञात्वा दोषबलं रसेन सुषवीपत्रस्य पर्णस्य वा ।
एकद्वित्रिचतुःक्रमेण वटिकां दद्यात् कदुष्णाम्बुना ॥५२८॥
हन्ति शूलनिचयं नवज्वरं
पाण्डुतामरुचिशोथसञ्चयम् ।
रेचने च दधिभक्तभोजनं
वैद्यनाथसुकुमाररेचनम् ॥५२९॥

१. शुद्ध गन्धक ३ ग्राम, २. शुद्ध पारद ३ ग्राम, ३. कुटकी चूर्ण १२ ग्राम—सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें, तत्पश्चात् उसी खरल में कज्जली के साथ कुटकी चूर्ण मिलाकर मर्दन करें। करैलापत्र एवं फल के स्वरस या त्रिफला क्वाथ में तीन दिनों तक मर्दन कर २-२ रत्ती = मटर के बराबर (२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनावें और छाया में सुखा कर काँच की शीशी में सुरक्षित रख लें। यह वैद्यनाथ वटी दोषों के बलाबल को समझ कर प्रथम दिन १ वटी, दूसरे दिन २ वटी, तीसरे दिन ३ वटी एवं चौथे दिन ४ वटी करैले के पत्ते के रस या ताम्बूल स्वरस एवं मधु से खाकर बाद में सुषुम जल पियें। इसके सेवन से सभी प्रकार के शूल, नवज्वर, पाण्डुरोग, अरुचि एवं शोथ नष्ट हो जाते हैं। इस वटी के सेवन के बाद विरेचन कराता है। विरेचन के बाद दही और भात का भोजन कराना चाहिए। सुकुमार प्रकृति वालों को यह रसौषधि मृदु विरेचन कराता है।

मात्रा–२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–करैलापत्रस्वरस या ताम्बूलपत्र स्वरस से एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**– तिक्त। **उपयोग**–शूल, नवज्वर, अरुचि, शोथादि में।

२६५. अग्निकुमार रस (वसवराजीयम्)

मरिचोग्राकुष्ठमुस्तैः सर्वैरेव समं विषम् ।
पिष्ट्वा चार्द्ररसेनैव वाटिका रक्तिकामिता ॥५३०॥
आमज्वरे प्रथमतः शुण्ठ्या च मधुपिष्टया ।
आर्द्रकस्य रसेनापि निर्गुण्ड्याश्च कफज्वरे ॥५३१॥
पीनसे च प्रतिश्याये आर्द्रकस्य च वारिणा ।
अग्निमान्द्ये लवङ्गेन शोथे सदशमूलकः ॥५३२॥
दद्याद्ग्रहण्यां शुण्ठ्या च मुस्तकेनातिसार के ।
सामे च धान्यशुण्ठीभ्यां पक्वे च कुटजं मधु ॥५३३॥
सन्निपातज्वरारम्भे पिप्पल्यार्द्रकवारिणा ।
कण्टकार्या रसैः कासे श्वासे तैलगुडान्वितम् ॥५३४॥
पीत्वा वटीद्वयं रोगी स्वास्थ्यं समुपगच्छति ।
सर्वेषामेव रोगाणामामदोषप्रशान्तये ।
अग्निवृद्धिकरो नाम्ना विख्यातोऽग्निकुमारकः ॥५३५॥

१. मरिच चूर्ण ५० ग्राम, २. वच चूर्ण ५० ग्राम, ३. कूठ चूर्ण ५० ग्राम, ४. नागरमोथा चूर्ण ५० ग्राम और ५. शुद्ध वत्सनाभ विषचूर्ण २०० ग्राम—सभी द्रव्यों को एक साथ खरल में मर्दन करें और आर्द्रक के रस में २-३ दिनों तक मर्दन कर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनावें और छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस वटी को आमज्वर में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शुण्ठी चूर्ण और मधु से खाये, कफज्वर में आर्द्रक एवं निर्गुण्डीस्वरस के साथ, पीनस एवं प्रतिश्याय में आर्द्रक के रस एवं मधु से, अग्निमान्द्य में लवङ्ग चूर्ण के साथ, शोथ में दशमूल के क्वाथ से, ग्रहणी में शुण्ठी चूर्ण एवं मधु से, अतिसार में नागरमोथा क्वाथ से, आमातिसार में धनियाँ और शुण्ठी के क्वाथ से, पक्वातिसार में कुटजत्वक् क्वाथ एवं मधु से, सन्निपातज्वर में पिप्पली चूर्ण एवं आर्द्रक के रस और मधु से, कास में कण्टकारी के रस या क्वाथ से, श्वास में तिलतैल और गुड़ के साथ देने से बहुत लाभ होता है। सभी प्रकार के रोगों में आमदोष की शान्ति के लिए इस रसौषधि को अवश्य सेवन करना चाहिए। यह औषधि अग्नि को बढ़ाता है। इसीलिए इसका नाम अग्निकुमार रस पड़ा हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–शुण्ठी चूर्ण तथा मधु से एवं रोगानुसार। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–धूसर वर्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–आमज्वर, कफज्वर, पीनस एवं प्रतिश्याय में।

२६६. जयावटी (र.सा.सं.)

विषं त्रिकटुकं मुस्तं हरिद्रा निम्बपत्रकम्।
विडङ्गमष्टमं चूर्णं छागमूत्रैः समं समम् ॥५३६॥
चणकाभा वटी कार्या स्याज्जया योगवाहिका।
जयन्तीमूलचूर्णं च सर्वतुल्यं क्षिपेद् बुधः ॥५३७॥

१. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण, २. शुण्ठी चूर्ण, ३. पीपर चूर्ण, ४. मरिच चूर्ण, ५. नागरमोथा चूर्ण, ६. हल्दी चूर्ण, ७. नीम की पत्ती का चूर्ण, ८. विडङ्ग चूर्ण—प्रत्येक १-१ भाग तथा ९. अग्निमन्थ चूर्ण (जया चूर्ण) ८ भाग—इन्हें पत्थर के एक खरल में मिलाकर बकरी के मूत्र के साथ २-३ दिनों तक मर्दन कर २-२ रत्ती (२५० ग्राम) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में संग्रहीत करें। यह जया वटी योगवाही होने के कारण सभी ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–उष्णोदक से। **गन्ध**–बकरी के मूत्र जैसी महक। **वर्ण**–धूसर वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वर में।

२६७. जयन्ती वटी (रसे.सारसंग्रह)

विषं पाठाऽश्वगन्धा च वचा तालीशपत्रकम्।
मरिचं पिप्पली निम्बमजामूत्रेण तुल्यकम्।
वटिका पूर्ववत् कार्या जयन्ती योगवाहिका ॥५३८॥

१. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण, २. पाढल चूर्ण, ३. अश्वगन्धा चूर्ण, ४. वचा चूर्ण, ५. तालीसपत्र चूर्ण, ६. मरिच चूर्ण, ७. पिप्पली चूर्ण, ८. नीम की पत्ती का चूर्ण तथा ९. जयन्ती चूर्ण—क्रम संख्या १ से ८ तक सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण प्रत्येक १०-१० ग्राम तथा जयन्तीमूल का सूक्ष्म चूर्ण ८० ग्राम लेकर एक पत्थर के खरल में रख बकरी के मूत्र की भावना देकर २-२ रत्ती (२५० ग्राम) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काच पात्र में संग्रहीत करें।

विमर्श—इस वटी का नाम "जयन्ती वटी" है किन्तु जयन्ती नामक कोई भी द्रव्य इसमें मूल पाठ में नहीं पढ़ने के कारण इसका नाम संदिग्ध मालूम होता है। ऊपर के जयावटी में भी चौथी पंक्ति रसेन्द्रसारसंग्रह या श्री जयदेव विद्यालंकार की टीका में भी नहीं है। किन्तु श्री अम्बिकादत्त शास्त्री की टीका वाली भैषज्यरत्नावली में जयावटी के पाठ में ४ पंक्ति के दो अनुष्टुप् श्लोक है।

'जयन्तीमूलचूर्णं च सर्वतुल्यं क्षिपेद्बुधः'। यह पंक्ति पं. अम्बिकादत्त जी ने कहाँ से लाया या स्वयं बना कर यहाँ जोड़ दी? कहा नहीं जा सकता है। किन्तु जया वटी या जयन्ती वटी नाम की सार्थकता क्या है समझ में नहीं आता है।

"जया जयन्ती तर्कारी नादेयी वैजयन्तिका" यह अग्निमंथ के पर्याय हैं। रसेन्द्रसारसंग्रह में जया-जयन्ती के योगवाही गुणों की चर्चा १२ श्लोकों में की है। अतः नाम की सार्थकता के लिए दोनों में जया और जयन्ती चूर्ण दोनों योगों में सभी द्रव्यों के बराबर अवश्य देना चाहिए।

जया-जयन्ती वटी की योगवाहिता (र.सा.सं.)

जयन्ती वा जया वाऽथ क्षीरैः पित्तज्वरापहा।
मुद्गामलकयूषेण पथ्यं देयं घृतं विना ॥५३९॥
जयन्ती वा जया वाऽथ सक्षौद्रा मरिचान्विता।
सन्निपातज्वरं हन्ति रसश्चानन्दभैरवः ॥५४०॥
जयन्ती वा जया वाऽथ विषमज्वरनुद् घृतैः।
सर्वज्वरं मधुव्योषैर्गवां मूत्रेण शीतकम् ॥५४१॥
चन्दनस्य कषायेण रक्तपित्तज्वरापहा।
जयन्ती वा जया वाऽथ माक्षिकेण च कासजित् ॥५४२॥
जयन्ती वा जया वाऽथ क्षीरैः पाण्डुविनाशिनी।
जयन्ती वा जया वाऽथ तण्डुलोदकपानतः ॥५४३॥
अश्मरीं हन्ति नो चित्रं मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम्।
जयन्ती वा जया वाऽथ गोमूत्रेण युतां पिबेत् ॥५४४॥
हन्त्याशु काकणं कुष्ठं तल्लेपेन च तद् ध्रुवम्।
द्विनिष्कं केतकीमूलं पिष्ट्वा तोयेन पाययेत् ॥५४५॥
जयन्ती वा जया वाऽथ मेहं हन्ति ह्यसंशयम्।
जयन्ती वा जया वाऽथ मधुना सर्वमेहनुत् ॥५४६॥
लोध्रं मुस्ताऽभया तुल्यं कट्फलं च जलैः सह।
क्वाथयित्वा पिबेच्चानु मधुना सर्वमेहनुत् ॥५४७॥
जयन्ती वा जया वाऽथ गुडैः कोष्णजलैः सह।
त्रिदोषोत्थं हरेद् गुल्मं रसो वाऽऽनन्दभैरवः ॥५४८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जयन्ती वा जया वाऽथ हन्ति शुण्ठ्या भगन्दरम्।
जयन्ती वा जया वाऽथ तक्रेण ग्रहणीप्रणुत् ॥५४९॥
जयन्ती वा जया वाऽथ रसश्चानन्दभैरवः।
रक्तपित्ते त्रिदोषोत्थे शीततोयेन पाययेत् ॥५५०॥
जयन्ती वा जया वाऽथ भृङ्गद्रावैर्निशाऽऽन्ध्यनुत्।
जयन्ती वा जया वाऽथ घृष्टा स्तन्येन चाञ्जनम्।
स्रावणं सर्वदोषोत्थं मांसवृद्धिं च नाशयेत् ॥५५१॥

१. यह जयन्ती या जया वटी दूध के साथ खिलाने से पित्तज्वरनाशक है। इसमें घृत रहित मूँग तथा आँवलामिश्रित यूष पथ्य है। २. यह जया-जयन्ती वटी 'आनन्दभैरव रस' और मरिच चूर्ण को एक साथ मिलाकर देने से सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। ३. जयन्ती या जया वटी घृत के साथ देने पर विषमज्वर का नाश करता है। ४. जयन्ती या जया वटी त्रिकटु चूर्ण और मधु से सभी ज्वरों का नाश करता है। ५. जयन्ती या जया वटी गोमूत्र के साथ शीत ज्वर का नाश करता है। ६. जयन्ती या जया वटी श्वेत चन्दन क्वाथ/हिम के साथ देने पर रक्तपित्त एवं ज्वर नाशक है। ७. यह जया या जयन्ती वटी मधु से देने पर कास नष्ट करता है। ८. यह जयन्ती या जया वटी दूध से देने पर पाण्डुरोग नष्ट करती है। ९. यह जयन्ती या जया वटी तण्डुलोदक से देने पर अश्मरी एवं भयंकर मूत्रकृच्छ्रनाशक है। १०. यह जयन्ती या जया वटी गोमूत्र से खाने या घिसकर लेप करने से काकणक कुष्ठनाशक है। ११. यह जया वटी २ निष्क (६ ग्राम) को केतकीमूल के साथ पीसकर पीने से प्रमेह नष्ट हो जाते हैं। १२. यह जयन्ती या जया वटी मधु से लेने पर सभी प्रमेह नष्ट हो जाते हैं। १३. यह जयन्ती या जया वटी मधु से खाकर लोध्र, नागरमोथा, हरीतकी और कट्फल समभाग में लेकर क्वाथ करें और उसी ५० मि.ली. क्वाथ को बाद में पीये तो प्रमेहनाशक है। १४. यह जयन्ती या जया वटी आनन्दभैरव रस के साथ गुड़ से खाकर सुषुम जलपान करने से त्रिदोषज गुल्म का नाश करता है। १५. यह जयन्ती या जया वटी शुण्ठी से लेने पर भगन्दर का नाश करता है। १६. यह जयन्ती या जया वटी तक्र से लेने पर ग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है। १७. यह जयन्ती या जया वटी आनन्दभैरव रस के साथ शीतल जल से लेने पर त्रिदोषज रक्तपित्तनाशक है। १८. यह जयन्ती या जया वटी को भृङ्गराजस्वरस के साथ लेने पर रतौंधी (नक्तान्ध) दूर होती है। १९. यह जयन्ती या जया वटी को स्त्री के दूध में घिस कर नेत्रों में लगाने से नेत्रस्राव या नेत्रगत मांसवृद्धि रोग नष्ट हो जाते हैं।

ऐसा जयन्ती/जया वटी का अनुपान है।

मात्रा–२५० ग्राम से ५०० ग्राम। **अनुपान**–रोगानुसार। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

२६८. अमृतमञ्जरी रस (रसे.सारसंग्रह)

हिङ्गुलं मरिचं टङ्कं पिप्पली विषमेव च।
जातीकोषं समं सर्वं जम्बीराद्भिर्विमर्दितम् ॥५५२॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वाऽपि प्रदेयं सान्निपातिके।
कासश्वासौ जयत्याशु सर्वज्वरविनाशनः ॥५५३॥

१. शुद्ध हिंगुल, २. मरिच चूर्ण, ३. शुद्ध सोहागा, ४. पिप्पली चूर्ण, ५. शुद्ध वत्सनाभ और ६. जावित्री चूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें और सभी को एक खरल में मिलाकर नीबू के रस के साथ मर्दन कर २-३ रत्ती की वटी बनावें और छाया में सुखाकर शीशी में संग्रह करें। यह सन्निपात ज्वर के साथ-साथ सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है तथा कास-श्वासनाशक भी है। आमवात-प्रकरण में भी इसी प्रकार इसी नाम का योग इस ग्रन्थ में उपलब्ध है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु एवं ताम्बूल-पत्ररस से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

२६९. ज्वरसिंह रस (रस.रा.सु.)

पारदं गन्धकं तालं भल्लातञ्च तथैव च।
वज्रीक्षीरसमायुक्तमेकत्र च विमर्दयेत् ॥५५४॥
मृत्तिकाभाजने स्थाप्यं मुद्रितव्यं विचक्षणैः।
अग्निं प्रज्वालयेत्तत्र प्रहरद्वयसंख्यया ॥५५५॥
शीतलं खल्लयेत्तत्र भावना च प्रदीयते।
भृङ्गराजरसैरत्र गण्डदूर्वाभवै रसैः ॥५५६॥
चित्रकस्य रसेनापि भावना दीयते पुनः।
पश्चात्तच्चूर्णयेद्यत्नात् कूपिकायाञ्च धारयेत् ॥५५७॥
ज्वर उत्पद्यते यस्य चतुर्थे चापरे पुनः।
द्विगुञ्जश्च रसो देयस्तत्क्षणान्नाशयेज्ज्वरम् ॥
ज्वरे शान्ते परं पथ्यं देयं मुद्गौदनं पयः ॥५५८॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध हरताल तथा ४. शुद्ध भल्लातक—सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः हरताल देकर पुनः मर्दन करें और उसमें शुद्ध भल्लातक मिलावें। पुनः मिट्टी की एक छोटी हाँडी में इस औषधि को रख कर शराव से उसका मुख सन्धिबन्धन करें। इसके बाद अग्नि-प्रज्वलित चूल्हे पर चढ़ाकर ६ घण्टे तक पकावें। स्वाङ्गशीत होने पर सन्धिबन्धन खोलकर औषधि निकालें और खरल में मर्दन कर भृंगराजस्वरस, गण्डदूर्वास्वरस तथा चित्रकस्वरस की १-१ भावना दें। औषधि को सुखा कर शीशी में सुरक्षित कर लें। इस औषधि की २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में चातुर्थिक या अन्य ज्वर में प्रयुक्त करने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ज्वर नष्ट होने पर मूँग की दाल और भात तथा दूध पथ्यरूप में देना चाहिए।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु। **गन्ध**–निर्गन्धि। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–निःस्वाद। **उपयोग**–ज्वरहर।

२७०. त्रैलोक्यडुम्बर रस (र.रत्न.समु.)

सूतार्कगन्धचपलाजयपालतिक्ताः
पथ्या त्रिवृच्च विषतिन्दुकजं समांशम्।
संमर्द्य वज्रिपयसा मधुना त्रिगुञ्ज-
स्त्रैलोक्यडुम्बररसोऽभिनवज्वरघ्नः ॥५५९॥

१. शुद्ध पारद, २. ताम्र भस्म, ३. शुद्ध गन्धक, ४. पीपर चूर्ण, ५. शुद्ध जयपाल, ६. कुटकी चूर्ण, ७. हरीतकी चूर्ण, ८. त्रिवृत् चूर्ण और ९. शुद्ध कुचिला—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग (५०-५० ग्राम) लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पार एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः शेष सभी द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर स्नुही के दूध की भावना दें और ३-३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इस त्रैलोक्यडुम्बर रस को मधु के साथ सेवन करने से नवज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–नवज्वर में।

२७१. गदमुरारि रस (रसचिन्तामणि)

रसवलिशिललौहव्योषताम्राणि तुल्या-
न्यथ सदरदनागं भागमेतत्प्रदिष्टम्।
भवति गदमुरारिश्चास्य गुञ्जाद्वयं वै
क्षपयति दिवसेन प्रौढमामज्वराख्यम् ॥५६०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध मैनसिल, ४. लोह भस्म, ५. शुण्ठी चूर्ण, ६. पीपर चूर्ण, ७. मरिच चूर्ण, ८. ताम्र भस्म, ९. शुद्ध हिंगुल और १०. नाग भस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें और उसी खरल में शेष सभी द्रव्यों को क्रमशः मैनसिल, हिंगुल, भस्मों एवं चूर्णों को अच्छी तरह मिलाकर जल की एक भावना दें। मर्दनोपरान्त २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। बाद में काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे गदमुरारि नाम कहा गया है। इसके प्रयोग से प्रौढ़ (भयंकर) आमज्वर एक दिन में ही नष्ट होने लगता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–उष्ण जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–आमज्वर।

२७२. ज्वरहरी वटी

सीसकं रससिन्दूरं हरितालं विषं समम्।
एकत्र मर्दयेत् सर्वं सर्षपाभां वटीं चरेत् ॥५६१॥
ज्वरविच्छेदकाले च सितया सह योजयेत्।
द्वित्रिवटीप्रयोगेण ज्वरशान्तिर्न संशयः ॥५६२॥

१. नाग भस्म, २. रससिन्दूर, ३. शुद्ध हरिताल और ४. शुद्ध वत्सनाभविष—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। एक खरल में पहले रससिन्दूर को पीसें। ततः हरिताल उसमें मिलाकर मर्दन करें। पुनः नाग भस्म एवं विषचूर्ण मिलाकर खूब पीसे। इसके बाद जल की भावना देकर सरसों के बराबर गोली बनावें। छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। जब ज्वर कम होवे अर्थात् ज्वर उतर गया हो तो उसी समय चीनी के साथ २-३ गोली का प्रयोग करने से ज्वर नष्ट हो जाता है, इसमें सन्देह नही है।

विमर्श—किन्तु सरसों की मात्रा कम है। अतः ½ रत्ती की मात्रा में गोली बनानी चाहिए। क्योंकि प्रयोग में २-३ वटी देते हैं।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–चीनी से या चीनी के शरबत से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरों में।

२७३. रत्नगिरि रस (रसकामधेनु)

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रहाटकम्।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यात् सूतार्द्धं मृतलौहकम् ॥५६३॥
लौहार्द्धं मृतवैक्रान्तं मर्दयेद् भृङ्गजद्रवैः।
पर्पटीरसवत्पाच्यं चूर्णितं भावयेत् पृथक् ॥५६४॥
शिग्रुवासकनिर्गुण्डीवचाऽग्निभृङ्गमुण्डिकैः।
क्षुद्राऽमृताजयन्तीभिर्मुनिब्राह्मीसुतिक्तकैः ॥५६५॥
कन्यायाश्च द्रवैर्भाव्यं प्रतिवारैस्त्रिधा त्रिधा।
रुद्ध्वा लघुपुटे पाच्यं बालुकायन्त्रमध्यगम् ॥५६६॥
यन्त्रं निरुद्ध्य यत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
चूर्णं नवज्वरे देयं माषमात्रं रसस्य वै ॥५६७॥
कृष्णाधान्यसमायुक्तं मुहूर्त्तान्नाशयेज्ज्वरम्।
अयं रत्नगिरिर्नाम रसो योगस्य वाहकः ॥५६८॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३, ताम्र भस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. स्वर्ण भस्म, ६. लोह भस्म और ७. वैक्रान्त भस्म—उपर्युक्त पारद से स्वर्ण तक सभी २०-२० ग्राम लें। लोह भस्म १० ग्राम तथा वैक्रान्त भस्म ५ ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद-गन्धक की कज्जली बनावें। ततः सभी भस्मों को अच्छी तरह से मिलावें। पुनः भृङ्गराजस्वरस की भावना देकर सुखा लें। तत्पश्चात् रसपर्पटी जैसी ही विधि से (गोबर के ऊपर कदली पत्र रख कर आग पर पिघलाये उपर्युक्त द्रव्य को रख कर कदलीपत्र में गोबर रखे पोटली से दबाकर) पर्पटी बनावें। तत्पश्चात् १. शिग्रुत्वक् का रस २. वासास्वरस, ३. सिन्दुवारपत्रस्वरस, ४.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वचा क्वाथ ५. चित्रक क्वाथ, ६. भृङ्गराज- स्वरस ७. मुण्डीस्वरस, ८. कण्टकारी स्वरस, ९. गुडूची- स्वरस, १०. जयन्तीमूलत्वक् क्वाथ, ११. अगस्त्यवृक्षत्वक् क्वाथ, १२. ब्राह्मीस्वरस, १३. चिरायता क्वाथ और १४. घृत- कुमारी की ३-३ भावना दें। चाहे १ दिन में तीन-तीन भावना दें या १ दिन में १ भावना देकर ३ दिन में ३ भावना दें । यह वैद्य के विवेक पर है।

इसके बाद भावित उक्त औषधि को शराव-सम्पुट कर बालुका यन्त्र जैसे लघु पुट में पाक करें। स्वाङ्ग शीतल होने पर शराव-सम्पुट खोलकर औषधि को निकालें तथा खरल में मर्दन कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस औषधि को नवज्वर में उड़द के बराबर ½ रत्ती की मात्रा में पीपर चूर्ण और धनियाँ चूर्ण तथा मधु के साथ देने पर क्षणभर में ज्वर नष्ट हो जाता है। यह रत्नगिरिरस योगवाही गुण से युक्त है और अनुपान-भेद से अनेकों रोगों को नष्ट करता है।

मात्रा–६०-१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–पीपर चूर्ण एवं मधु से या रोगानुसार। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–नवज्वर में।

२७४. प्रतापमार्त्तण्ड रस (र.सा.सं.)

विषहिङ्गुलजैपालटङ्गणं क्रमवर्द्धितम् ।
रसः प्रतापमार्त्तण्डः सद्यो ज्वरविनाशनः ॥५६९॥

१. शुद्ध वत्सनाभ विष, २. शुद्ध हिंगुल, ३. शुद्ध जयपाल और ४. शुद्ध सोहागा—ये सभी द्रव्य क्रमशः १०, २०, ३० एवं ४० ग्राम की मात्रा में ग्रहण करें। इन्हें एक पत्थर के खरल में खूब मर्दन करें तथा जल की भावना देकर ½ - ½ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे प्रतापमार्त्तण्ड रस कहते हैं। यह तुरन्त ज्वर को नाश करता है।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वर में।

२७५. चण्डेश्वर रस (रसकामधेनुः)

रसं गन्धं विषं ताम्रं मर्दयेदेकयामकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव मर्दयेत्सप्तवारकम् ॥५७०॥
निर्गुण्ड्याः स्वरसे पश्चान्मर्दयेत्सप्तवारकम् ।
गुञ्जैकार्द्ररसेनैव दत्तो हन्ति ज्वरं क्षणात् ॥५७१॥
वातजं पित्तजं श्लैष्मं द्विदोषजमपि क्षणात् ।
सुशीतलजले स्नानं तृषाऽऽर्ते क्षीरभोजनम् ॥५७२॥
आम्रञ्च पनसञ्चैव चन्दनागुरुलेपनम् ।
एतत्समो रसो नास्ति वैद्यानां हृदयङ्गमः ॥
एष चण्डेश्वरो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥५७३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ तथा ४. ताम्र भस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः सभी द्रव्यों को मिलाकर आर्द्रकस्वरस की ७ भावना और सिन्दुवारपत्रस्वरस की ७ भावना दें और १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटिकाएँ बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। एक रत्ती की मात्रा में इस चण्डेश्वर रस को सभी तरह के ज्वर के रोगियों—वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज एवं सन्निपातज में आर्द्रक के रस एवं मधु से देने पर तुरन्त ज्वर नष्ट हो जाता है। इस औषधि के प्रयोगकाल में रोगी को शीतल जल से स्नान कराना, प्यास लगने पर दुग्धपान, पके आम और कटहल का भोजन तथा शिर पर चन्दन एवं अगरु का लेप कराना चाहिए। इसके जैसी वैद्यों का प्रिय और कोई रसौषधि नहीं है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

२७६. उदकमञ्जरी रस (भावप्रकाश)

सूतो गन्धष्टङ्गणः सोषणः स्या-
देतैस्तुल्या शर्करा मत्स्यपित्तैः ।
भूयो भूयो भावयेच्च त्रिरात्रं
वल्लो देयः शृङ्गबेरस्य वारा ॥५७४॥
सम्यक् तापे वारिभक्तं सतक्रं
वृन्ताकाढ्यं पथ्यमत्र प्रदिष्टम् ।
अह्नायोग्रं हन्ति ग्रामं प्रभावात्
पित्ताधिक्ये मूर्ध्नि वारिप्रयोगः ॥५७५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध सोहागा और ४. मरिच चूर्ण—चारों द्रव्य ५०-५० ग्राम लें और शर्करा २०० ग्राम ग्रहण करें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य द्रव्यों को कज्जली में मिलाकर रोहू (रोहित) मछली के पित्त की ३ रात तक बार-बार भावना देकर सुखा लें और काच के पात्र में संग्रहीत करें। इस औषधि की ३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की मात्रा में आर्द्रक के रस से देने से शीघ्र ही घोर सामज्वर नष्ट हो जाता है। यदि अधिक ताप (गर्मी) मालूम पड़े तो पानी में भिगाया हुआ भात, तक्र और बैगन का भुर्ता (चोखा) पथ्य रूप में खाने को देना चाहिए। पित्ताधिक्य ज्वर में शिर पर शीतल जल में भिगा हुआ साफ कपड़ा रखना चाहिए या सिर पर Ice Bag (बर्फ की थैली) का प्रयोग करें।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकरस एवं मधु से।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गन्ध–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–मधुर, तिक्त। **उपयोग**–पित्ताधिक्य ज्वर में।

२७७. अचिन्त्यशक्ती रस (र.राजसुन्दर)

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं प्रत्येकं माषकद्वयम्।
भृङ्गकेशाख्यनिर्गुण्डीमण्डूकीपत्रसुन्दरः ॥५७६॥
श्वेतापराजितामूलं शालिञ्च कालमारिषम्।
सूर्यावर्तः सितश्चैषां चतुर्माषकसम्मितैः ॥५७७॥
प्रत्येकं स्वरसैः खल्लशिलायामवधानतः।
स्वर्णमाक्षिकमाषञ्च दत्त्वा मरिचमाषकम् ॥५७८॥
नेपालताम्रदण्डेन दृष्ट्वा तत्कज्जलद्युति।
वटी मुद्गोपमा कार्या छायाशुष्का तु रक्षिता ॥५७९॥
प्रथमे वटिकास्तिस्रः कृत्वा नवशरावके।
ततः खसर्पणं सूर्यं पूजयित्वा प्रणम्य च ॥५८०॥
वारिणा गोलयित्वा तु पातुं देयञ्च रोगिणे।
स्वेदोपवासरचिते क्लान्ते चात्यबले तथा ॥५८१॥
द्वितीयेऽह्नि वटीयुग्मं वटीमेकां तृतीयके।
यावत्यो वटिका देयास्तावज्जलशरावकम् ॥५८२॥
तृष्णायाञ्च रसं दद्याज्जाङ्गलानां जलं तृषि।
लुलायदधिसंयुक्तं भक्तं भोज्यं यथेप्सितम् ॥५८३॥
लावपक्षिरसो देयः संस्कृतः सैन्धवादिभिः।
पथ्यमग्निबलं वीक्ष्य वारिभक्तरसं तथा॥
शिरश्चलनशूलादौ तैलं नारायणादि च ॥५८४॥

१. शुद्ध पारद ५० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, ३. सुवर्णमाक्षिक भस्म २५ ग्राम तथा मरिच चूर्ण २५ ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद-गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। कज्जली होने पर उक्त कज्जली में भृङ्गराज-स्वरस, केशराज रस, जटामांसी क्वाथ, सिन्दुवारपत्रस्वरस, मण्डूकपर्णी, सुन्दर (ग्रीष्मसुन्दर = दुपहरिया पुष्प के पञ्चाङ्ग) स्वरस, श्वेत अपरा-जितामूलस्वरस, शालिञ्चशाक, कण्टक चौराई शाक स्वरस तथा श्वेतसूर्यावर्त (हुरहुर) स्वरस—प्रत्येक १००-१०० मि.ली. लेकर भावना दें। सूखने पर स्वर्णमाक्षिक भस्म एवं मरिच चूर्ण उसी खरल में मिलाकर ताम्र की मुसली (मोटे ताम्रदण्ड) से उक्त औषधों का मर्दन करें। कज्जली के जैसा सम्पूर्ण द्रव्य हो जाने पर जल की भावना देकर मूँग के बराबर $\frac{1}{2}$ - $\frac{1}{3}$ रत्ती (६० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। सर्वप्रथम मिट्टी के नये शराव में ३ वटी रख कर ख-सर्पण = आकाश में विचरण करने वाले सूर्यदेव की पूजा कर वटियों को समर्पण करके उक्त तीनों वटियों को जल से पुनः एक साथ मिलाकर गोल कर के रोगी को जल से पिला दें। दूसरे दिन इसी प्रकार दो वटी से सूर्य की पूजा कर दो वटी को पुनः एक कर जल से वटी बनावें और रोगी को जल से पिला दें। तीसरे दिन इसी प्रकार शराव में १ वटी रखकर सूर्य की पूजा कर क्लान्त एवं निर्बल रोगी को उपवास एवं पसीना आने पर औषधि को खिला देनी चाहिए। प्यास लगने पर रोगी जितनी वटिका खाता है, उतनी शराव या गिलास पानी पिलाना चाहिए। मिट्टी के जिस शराव = शकोरे में दवा रखकर सूर्य की पूजा करते हैं उसी शकोरे से पानी पिलाना चाहिए। यदि प्यास लगे तो जाङ्गल पशु-पक्षियों से सुसंस्कृत तथा सैन्धव लवण, घी, मसाला से युक्त मांसरस पिलाना चाहिए। लुलाय = भैंस का दही और भात पथ्य रूप में खिलाना चाहिए। लावक पक्षी का मांसरस घी, मरिच, मसाला, सैन्धव आदि से संस्कृत कर पानी मिलाकर भात के साथ यथेच्छ मात्रा में पथ्य रूप में देना चाहिए। सिर में पीड़ा एवं चक्कर आने पर नारायण आदि तेलों की मालिस करनी चाहिए।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याम वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सर्व-ज्वरहर।

२७८. ज्वरकेशरी रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं विषं व्योषं गन्धं चैव फलत्रयम्।
जयपालं समं कुर्याद् भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ॥५८५॥
गुञ्जामात्रान्तु वटिकां कृत्वा वैद्यः प्रयत्नतः।
प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रशस्यते ॥५८६॥
नारिकेलाम्बुना वाऽपि सर्वज्वरविनाशिनी।
नारिकेलजलं शस्तं त्रिकर्षं पाययेदनु ॥५८७॥
सितया वा समं पीता पित्तज्वरविनाशिनी।
मरिचेन च पीता सा सन्निपातज्वरं जयेत् ॥५८८॥
पिप्पलीजीरकाभ्यान्तु दाहज्वरविनाशिनी।
विषमज्वरं च भूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥५८९॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च श्वयथुञ्च सुदारुणम्।
शूलाजीर्णं तथा गुल्मं पित्तकुष्ठमशेषतः।
ज्वरकेशरी रसोऽसौ तरुणज्वरनाशकृत् ॥५९०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ, ४. शुण्ठी चूर्ण, ५. पीपर चूर्ण, ६. मरिच चूर्ण, ७. आँवला चूर्ण, ८. हरीतकी चूर्ण, ९. बहेड़ा चूर्ण तथा १०. शुद्ध जयपाल—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को पत्थर के एक खरल में रखकर कज्जली बनावें। तदनन्तर सभी द्रव्यों को उसमें मिलाकर भृङ्गराजस्वरस की भावना देकर मर्दन करें और १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की गोली बनाकर छाया में सुखावें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत करें। बालकों के लिए सरसों की मात्रा में वटी बनावें। इस ज्वरकेशरी वटी को नारियल

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

के पानी से लेने पर सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। इसमें नारियल का पानी ३ तोला पीना चाहिए। पित्तज्वर की शान्ति के लिए इस औषधि को नारियल का पानी तथा चीनी मिलाकर देना चाहिए। मरिच चूर्ण और मधु से इसे लेने से सन्निपात ज्वर नष्ट हो जाता है। दाह एवं ज्वर की शान्ति के लिए इसे पिप्पली चूर्ण तथा जीरक चूर्ण एवं मधु से लें। इसके अतिरिक्त यह रसौषधि विषमज्वर, भूतज्वर, प्लीहा, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, दारुण शोथ, अजीर्णजन्य शूल, गुल्म तथा पित्तज कुष्ठ को पूर्ण रूप से नष्ट करती है। यह ज्वरकेशरी तरुण ज्वर को शीघ्र नाश करती है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से या दोषानुसार। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषमज्वर, भूतज्वर, तरुणज्वर में।

२७९. महाज्वरांकुश रस (शार्ङ्ग.सं.)

शुद्धसूतो विषं गन्धः प्रत्येकं शाणसम्मितः।
धूर्त्तबीजं त्रिशाणं स्यात् सर्वेभ्यो द्विगुणा भवेत् ॥५९१॥
हेमाह्वा कारयेदेषां सूक्ष्मचूर्णं प्रयत्नतः।
देयं जम्बीरमज्जाभिश्चूर्णं गुञ्जाद्वयोन्मितम् ॥५९२॥
आर्द्रकस्वरसैर्वाऽपि ज्वरं हन्ति त्रिदोषजम्।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकं च चतुर्थकम् ॥
विषमं च ज्वरं हन्याज्ज्वराङ्कुशरसो महान् ॥५९३॥

१. शुद्ध पारद ३ ग्राम, २. शुद्ध वत्सनाभ विष ३ ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक ३ ग्राम, ४. शुद्ध धत्तूरबीज ९ ग्राम तथा ५. सत्यानाशीमूल चूर्ण १८ ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर नीबूस्वरस तथा आर्द्रक के रस के साथ १-१ भावना दें और २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस वटी को आर्द्रक के रस एवं मधु से देने पर सन्निपात ज्वर नष्ट हो जाता है। यह रसौषधि ऐकाहिक ज्वर, द्व्याहिक ज्वर, त्र्याहिक ज्वर, चातुर्थक विषमज्वरों का नाश करती है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु-अम्ल। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

२८०. मोहान्धसूर्य रस (नस्यार्थ) (र.चि.म.)

गन्धेशौ लशुनाम्भोभिर्मर्दयेद्याममात्रकम् ॥५९४॥
तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत्प्रतिबोधयेत्।
मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्द्राप्रलापकम् ॥५९५॥

१. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम तथा २. पारद ५० ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में समभाग पारद एवं गन्धक को अच्छी तरह मर्दन कर कज्जली बनावें। पुनः २५० ग्राम छिला हुआ लशुन को सिल पर पीसकर कपड़े से निचोड़ कर रस निकालें और उसी रस से उपर्युक्त कज्जली को ३ घण्टे तक मर्दन करें तथा छाया में सुखा कर शीशी में सुरक्षित रख लें। तन्द्रा और प्रलाप से युक्त ज्वररोगी को होश में लाने के लिए १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) उक्त मोहान्धसूर्यरस को लशुनरस में घोलकर नाकों में २-२ बूँद नस्य देने से तन्द्रा-प्रलाप से शान्ति मिलती है। सिर्फ प्रलाप युक्त ज्वर के रोगी को मरिच चूर्ण के साथ मिलाकर नस्य देने से रोगी होश में आ जाता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–नस्य रूप में सूँघना। **गन्ध**–रसोनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–रसोनकटु। **उपयोग**–सन्निपात ज्वर में नस्यार्थ।

२८१. कुलवधूरस नस्य (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं मृतं नागं मृतं ताम्रं मनःशिला।
तुत्थकं तुल्यतुल्यांशं दिनमेकं विमर्द्दयेत् ॥५९६॥
रसैश्चोत्तरवारुण्याश्चणमात्रा वटी कृता।
सन्निपातं निहन्त्याशु नस्यमात्रेण दारुणम्।
एषा कुलवधूर्नाम जलैर्घृष्टा प्रदापिता ॥५९७॥

१. शुद्ध पारद, २. नागभस्म, ३. ताम्रभस्म, ४. शुद्ध मैनसिल और ५. शुद्ध तुत्थ—उपर्युक्त सभी द्रव्य २०-२० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं मैनसिल को मर्दन कर कज्जली करें, ततः तुत्थ मिलावें। इसके बाद दोनों भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः इन्द्रवारुणी के स्वरस में एक दिन तक मर्दन कर चने के बराबर (२५० मि.ग्रा.) वटी बनाकर इसे शीशी में सुरक्षित रख लें। भयंकर सन्निपातज्वर में इस वटी को जल में घोलकर २-२ बूँद नाकों में नस्य देने से प्रलाप-तन्द्रा आदि उपद्रव नष्ट हो जाते हैं। इसे कुलवधूरस कहा जाता है।

मात्रा–६० से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–नस्य-प्रयोग। **गन्ध**–तीव्र गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपात ज्वर में नस्यार्थ प्रयोग।

२८२. नस्यभैरव (नस्य) (र.सा.सं.)

मृतसूतार्कतीक्ष्णाग्निं टङ्कणं खर्परं समम्।
सव्योषमर्कदुग्धेन दिनं सम्मर्दयेद् दृढम् ॥५९८॥
अर्कक्षीरयुतं नस्यं सन्निपातहरं परम् ॥५९९॥

१. रससिन्दूर, २. ताम्रभस्म, ३. तीक्ष्णलोहभस्म, ४. चित्रकमूल चूर्ण, ५. शुद्ध टंकण, ६. खर्परभस्म, ७. शुण्ठी चूर्ण, ८. मरिच चूर्ण तथा ९. पीपर चूर्ण—इन सभी द्रव्यों को १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में रससिन्दूर को खूब मर्दन करें। ततः उसमें दोनों भस्मों को मिलावें। इसके बाद सभी काष्ठौषधों का वस्त्रपूत सूक्ष्म चूर्ण इसमें मिलाकर मर्दन करें और अर्कदुग्ध की भावना देकर औषध को छाया में सुखाकर

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रख लें। इस नस्य-औषध को आक के दूध में घोलकर नस्य देने से सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–नस्य अर्कदुग्ध में घोलकर बिन्दुशः देना। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में नस्यार्थ प्रयोग।

२८३. उन्मत्तरस (नस्यार्थ) (र.सा.सं.)

रसं गन्धं च तुल्यांशं धुस्तूरफलजैर्द्रवैः।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु तुल्यं त्रिकटुकं क्षिपेत्।
उन्मत्ताख्यो रसो नाम नस्ये स्यात् सन्निपातजित् ॥६००॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुण्ठी चूर्ण, ४. पीपर चूर्ण और ५. मरिच चूर्ण—ये सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें और धत्तूरफल के स्वरस में एक दिन तक मर्दन करें। पुनः इसमें त्रिकटु चूर्ण ३० ग्राम मिलाकर औषधि को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सन्निपातज्वर की शान्ति के लिए इस उन्मत्त रस का नस्य देने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–नस्यार्थ। **गन्ध**–रसायन-गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

२८४. अञ्जनभैरव रस (र.चि.म.)

सूततीक्ष्णकणागन्धमेकांशं जयपालकम्।
सर्वैस्त्रिगुणितं जम्भवारिणा च सुपेषितम् ॥६०१॥
नेत्राञ्जनेन हन्त्याशु सर्वोपद्रवमुद्धतम् ॥६०२॥

१. शुद्ध पारद, २. तीक्ष्णलोहभस्म, ३. पीपर चूर्ण, ४. शुद्ध गन्धक और ५. शुद्ध जयपाल—उपर्युक्त पारद से गन्धक पर्यन्त चारों द्रव्य प्रत्येक १०-१० ग्राम लें और १२० ग्रा. शुद्ध जयपाल लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। ततः जम्बीरीनीबू के रस में ३ घण्टे तक मर्दन कर छाया में सुखाकर काचपात्र में रख लें। इस औषध से सन्निपातज्वर पीड़ित रोगी के नेत्रों में अञ्जन करने से सभी उपद्रवों से युक्त सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–६० मि.ग्रा.। **अनुपान**–नेत्राञ्जन-प्रयोग। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में नेत्राञ्जन।

२८५. सौभाग्य वटी (र.सा.सं.)

सौभाग्यामृतजीरपञ्चलवणव्योषाभयाऽक्षामला-
निश्चन्द्राभ्रकशुद्धगन्धकरसानेकीकृतान् भावयेत्।
निर्गुण्डीयुगभृङ्गराजकवृषापामार्गपत्रोल्लसत्
प्रत्येकस्वरसेन सिद्धवटिका हन्ति त्रिदोषोदयम् ॥६०३॥
येषां शीतमतीय दाहमखिलं स्वेदद्रवार्द्रीकृतं
निद्रां घोरतरां समस्तकरणव्यामोहमूढं मनः।
शूलं श्वासबलासकाससहितं मूर्च्छाऽरुचितृड्ज्वरं
तेषां वै परिहृत्य जीवितमसौ गृह्णाति मृत्योर्मुखात् ॥६०४॥

१. शुद्ध सोहागा, २. शुद्ध वत्सनाभविष, ३. जीरा चूर्ण, ४. सैन्धव लवण, ५. सामुद्र लवण, ६. सौवर्चल लवण, ७. विड लवण, ८. औद्भिद लवण, ९. शुण्ठी चूर्ण, १०. पीपर चूर्ण, ११. मरिच चूर्ण, १२. हरीतकी चूर्ण, १३. बहेड़ा चूर्ण, १४. आँवला चूर्ण, १५. अभ्रक भस्म, १६. शुद्ध गन्धक तथा १७. शुद्ध पारद—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्रा. लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण एक साथ खरल में मिलाकर नील एवं श्वेत पुष्प वाले सिन्दुवारपत्र, भृङ्गराज, वासापत्र, अपामार्गपत्र—इन पाँच स्वरसों से पृथक्-पृथक् सात-सात भावना देकर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की गोली बना लें और छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में इस सौभाग्यवटी को सुरक्षित रख लें। यह रसौषधि त्रिदोषज (सन्निपातज्वर) ज्वर को नष्ट करती है। जिस ज्वरी को अत्यन्त शीतपूर्वक तथा दाहपूर्वक ज्वर आता हो एवं पसीना से जिसका शरीर भींग गया हो ऐसे प्रलेपक ज्वर को यह नाश करती है। भयंकर निद्रा, तन्द्रा, समस्त इन्द्रियाँ विकल हों, मन व्यामोह से ग्रस्त हो—ऐसे रोगी में यह औषधि अत्यन्त लाभप्रद है। इसके अतिरिक्त शूल, श्वास, कास, कफोत्क्लेश, मूर्च्छा, तृषा, अरुचि से ग्रस्त ज्वरी को काल के मुख से जीवित छुड़ा कर पुनर्जीवन प्रदान करती है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–लवणीय। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

२८६. वेताल रस (र.सा.सं.)

शुद्धं सूतं विषं गन्धमरिचालं समांशकम्।
मर्दयेच्छिलया तावद् यावज्जायेत कज्जली ॥६०५॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ कारयेद्वटिकाः शुभाः।
गुञ्जामात्रा प्रदातव्या सन्निपाते सुदारुणे ॥६०६॥
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं भयङ्करम्।
ईशेन कथितो ह्येष वेतालाख्यो महारसः ॥६०७॥
गुञ्जामिता चास्य मात्रा पिप्पलीमधुसंयुता।
योज्या वाते तथा शिग्रुरसेनार्द्ररसेन वा ॥६०८॥
सितया जीरकेणापि देया पित्तज्वरे बुधैः।
शर्करामधुयष्टीभ्यां भूनिम्बसितयाऽथवा ॥६०९॥
शीतज्वरेषु योज्या सा पिप्पलीमधुसंयुता।
अथवा मधुशुण्ठीभ्यामनुपानेन रोगजित् ॥६१०॥
दन्तपङ्क्तिर्दृढा यस्य लोचने भ्रान्ततारके।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चलिते चेन्द्रियग्रामे वेतालं विनियोजयेत् ॥६११॥
म्लानेषु लिप्तदेहेषु मोहग्रस्तेषु देहिषु।
दातुर्महति वेतालं यमदूतनिवारकम् ॥६१२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ विष, ४. मरिच चूर्ण तथा ५. शुद्ध हरताल—इन्हें समभाग में लें। एक खरल में शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बना लें। तत्पश्चात् उस कज्जली में शुद्ध हरताल मिलाकर पुनः मर्दन करें। जब हरताल की चन्द्रिका (चमक) नष्ट हो जाय तो उसमें शुद्ध वत्सनाभ विष और मरिच चूर्ण मिलाकर पुनः मर्दन करें। ततः आर्द्रक स्वरस की भावना देकर १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे वेताल रस कहते हैं। इसका निर्माण महादेव जी ने किया है। इस वेताल रस को साध्यासाध्य का विचार कर सभी प्रकार के ज्वरों तथा भयंकर सन्निपातज्वर में एक रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में देने से तुरन्त लाभ मिलता है। अनुपान में पिप्पली चूर्ण १ ग्राम और मधु के साथ देना चाहिए। वातज्वर में शिग्रुत्वक् रस या आर्द्रक स्वरस के साथ देना चाहिए। पित्तज्वर में चीनी और जीरा चूर्ण के साथ देना चाहिए। शर्करा और यष्टिमधु चूर्ण के साथ या चिरायता चूर्ण एवं चीनी के साथ देने से शीतज्वर नष्ट हो जाता है। अथवा पिप्पली चूर्ण एवं मधु या शुण्ठी चूर्ण एवं मधु के साथ देने पर शीतज्वर नष्ट हो जाता है। जिस व्यक्ति की दन्त पंक्ति बहुत कड़ी हो गई हो, नेत्रों के तारे अपने स्थान से च्युत हो गये हों, सभी इन्द्रियाँ स्व-स्व कर्म करने में अशक्त हो गई हों तो उस अवस्था में वेताल रस का प्रयोग करना चाहिए। इन्द्रियों के म्लान होने पर, शरीर स्वेद से भींग जाने पर, आत्मा के मोह ग्रस्त होने पर अर्थात् मृत्यु समीप आ गयी हो तो यमदूतों को भगाने के लिए इस औषधि का एक बार अवश्य प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–दोषानुसार। **गन्ध**–रसायन-गन्धी। **वर्ण**–श्याव वर्ण। **स्वाद**–कटुरसयुक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

२८७. चक्रिका रस

रसं गन्धं विषञ्चैव धुस्तूरं मरिचं तथा।
शोधितञ्च तथा तालं माक्षिकञ्च समांशकम् ॥६१३॥
दन्तीक्वाथेन सम्भाव्यगुञ्जामात्रा तु चक्रिका।
साध्यासाध्यान्निहन्त्याशु सन्निपातांस्त्रयोदश ॥६१४॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध विष, ४. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण, ५. मरिच चूर्ण, ६. शुद्ध हरिताल एवं ७. स्वर्णमाक्षिक भस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर दन्तीमूल क्वाथ की ३ भावना दें और १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बना लें। छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस रसौषधि को साध्या-साध्य सन्निपातज्वर की शान्ति के लिए आर्द्रक के रस और मधु से खिलावें।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

२८८. चक्रीरस

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं तालं तथा पारदं
देवीबीजयुतं सुशोधिततमं जैपालबीजोत्तमम् ॥६१५॥
दन्तीमूलयुतं समागधिफलं सर्वं समांशं नयेत्
तत्सर्वं परिमर्द्य चार्द्रकरसैर्गुञ्जाप्रमाणं रसम्।
दद्याद्घोरतरे त्रयोदशविधे दोषे च चक्र्याह्वयं
तन्द्रादाहसमन्विते च तृषया सम्पीडिते मानवे ॥६१६॥

१. शुद्ध वत्सनाभ विष, २. मरिच चूर्ण, ३. शुद्ध हरिताल, ४. शुद्ध पारद, ५. शुद्ध गन्धक, ६. शुद्ध जयपालबीज, ७. दन्तीमूल चूर्ण और ८. पीपर चूर्ण—इन सभी द्रव्यों को ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के वस्त्रपूत सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और आर्द्रक के रस की भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बनावें और छाया में सुखा कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस चक्रीरस को तन्द्रा, दाह एवं प्यास से युक्त घोर १३ प्रकार के ज्वरों में देने से सद्यः लाभ मिलता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–तुलसीस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव वर्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–तन्द्रायुक्त ज्वर में।

२८९. ब्रह्मरन्ध्र रस

रसाभ्रगन्धकं तालं हिङ्गुलं मरिचं तथा।
टङ्कणं सैन्धवोपेतं सर्वांशममृतं तथा ॥६१७॥
सर्वं पादसमोपेतं महिषीपित्तमर्दितम्।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यं संन्यासज्ञानसङ्गमे ॥६१८॥
सहस्रकलशैः स्थानं लेपनं चन्दनादिभिः।
इक्षुमुद्गरसैर्भोज्यं तक्रभक्तं यथेप्सितम् ॥६१९॥

१. शुद्ध पारद, २. अभ्रक भस्म, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध हरताल, ५. शुद्ध हिंगुल, ६. मरिच चूर्ण, ७. शुद्ध सोहागा, ८. सैन्धव नमक तथा ९. शुद्ध वत्सनाभविष—उपर्युक्त पारद से सैन्धव नमक तक सभी द्रव्य समभाग अर्थात् प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें और शुद्ध वत्सनाभविष ८० ग्राम लें। सर्वप्रथम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर उसी कज्जली में अन्य सभी द्रव्यों को मिलावें। ततः इनके चौथाई ४० ग्राम भैंस के पित्त से भावना देकर इस औषधि को मर्दन करें। छाया में सुखाकर इस रसौषधि को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सन्निपातज्वर से पीड़ित निःसंज्ञ व्यक्ति के संज्ञा और ज्ञान के सङ्गमस्थान (शिर के ब्रह्मरन्ध्र) के बालों को अस्तूरे से छीलकर उक्त स्थान को छुरे से हलका पाछ दें (लाइन खींच दे) और उसी स्थान पर उक्त रसौषधि के चूर्ण लाइन में भर दें और दाह तथा प्यास की शान्ति के लिए हजार घड़ा शीतल जल से स्नान करावें। ललाट, छाती आदि प्रदेशों में शीतल, सुगन्धित श्वेत चन्दनादि का लेप करें। होश में आने तथा भूख लगने पर इक्षुरस, मूँग की यूष तथा तक्र एवं भात का यथेच्छ भोजन करावें।

मात्रा–३० से ६० मि.ग्रा.। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्नि-पातज्वर में ब्रह्मरन्ध्र में लगाना।

२९०. आनन्दभैरव वटी (र.सा.सं.)

विषं त्रिकटुकं गन्धं टङ्कणं मृतशुल्बकम्।
धुस्तूरस्य च बीजानि हिङ्गुलं नवमं स्मृतम् ॥६२०॥
एतानि समभागानि दिनैकं विजयारसैः।
पर्दयेच्चणकाभां तु वटिकाऽऽनन्दभैरवी ॥६२१॥
भक्षयित्वा पिबेच्चानु रविमूलकषायकम्।
सव्योषं हन्ति नो चित्रं सन्निपातं सुदारुणम् ॥६२२॥

१. शुद्ध वत्सनाभ विष, २. शुण्ठी चूर्ण, ३. पीपर चूर्ण, ४. मरिच चूर्ण, ५. शुद्ध गन्धक, ६. शुद्ध सोहागा, ७. ताम्र भस्म, ८. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण और ९. शुद्ध हिङ्गुल—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में शुद्ध हिंगुल एवं गन्धक हो मिलाकर मर्दन करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर भाँग के स्वरस या क्वाथ की भावना देकर एक दिन तक मर्दन करें और चने की बराबर २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः इस रसौषधि को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे आनन्दभैरव वटिका कहते हैं। भयंकर सन्निपातज्वरी में इसकी १ गोली, १ ग्राम त्रिकटु चूर्ण और अर्कमूलस्वरस के साथ लेने पर ज्वर मुक्त हो जाता है इसमें सन्देह नहीं है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–त्रिकटु चूर्ण, अर्कत्वग्रस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्त। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

२९१. त्रैलोक्यसुन्दर रस (र.सा.सं.)

रसगन्धकयोः कर्षौ प्रत्येकं कज्जलीकृतौ।
शक्रं च मुशली चैव धुस्तूरं केशराजकम् ॥६२३॥
देवदाली जयन्ती च तथा मण्डूकपर्णिका।
पृथग्गुणमितैः कर्षै रसैरासां विमर्दयेत् ॥६२४॥
माषमात्रां वटीं कृत्वा स्वानुपानैः प्रयोजिता।
त्रिदोषजं ज्वरं हन्ति तथा पवनकोष्ठकम् ॥६२५॥
दाहे तु नारिकेलस्य जलं देवं प्रयत्नतः।
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम सन्निपातहरो रसः ॥६२६॥

१. शुद्ध पारद एवं २. शुद्ध गन्धक—उपर्युक्त दोनों द्रव्य १०-१० ग्राम लेकर पत्थर के एक खरल में मर्दन कर कज्जली करें। ततः इन्द्रयवक्वाथ, मुशली क्वाथ, धत्तूरपत्रस्वरस, भृङ्गराजस्वरस, देवदालीपत्रस्वरस, जयन्ती (अरणी) पत्रस्वरस और ब्राह्मीस्वरस प्रत्येक ३०-३० मि.ली. रस की ३-३ भावना देकर १ उड़द बराबर ½ रत्ती (६० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। रोगानुसार अनुपान से त्रिदोषज्वर एवं उदररोगों का नाश करता है। इसे देने पर यदि दाह मालूम हो तो नारियल का जल देना चाहिए। यह सन्निपातज्वर को नाश करता है। आधी रत्ती कम मात्रा है अतः 125 मि.ग्रा. तक देना ही चाहिए।

मात्रा–१२५ से २५० ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपात- ज्वर में।

२९२. मृतोत्थापन रस (वसवराजीयम्)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं शिला च विषहिङ्गुलम्।
मृतकान्ताभ्रताम्रयस्तालकं माक्षिकं समम् ॥६२७॥
अम्लवेतसजम्बीरचाङ्गेरीणां रसेन च।
निर्गुण्डीहस्तिशुण्ड्योश्च द्रवैर्मर्द्यं दिनत्रयम् ॥६२८॥
रुद्ध्वा तु भूधरे पाच्यं दिनान्ते तत् समुद्धरेत्।
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥६२९॥
माषमात्रं प्रदातव्यं हिङ्गुव्योषार्द्रकद्रवैः।
सकर्पूरानुपानं स्यान्मृतस्योत्थापने रसे ॥६३०॥
पीडितं सन्निपातेन गतं वाऽपि यमालयम्।
तत्क्षणाज्जीवयत्येष पथ्यं क्षीरैः प्रयोजयेत् ॥६३१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध मैनसिल, ४. शुद्ध वत्सनाभविष, ५. शुद्ध हिङ्गुल, ६. कान्तलोह भस्म, ७. अभ्रक भस्म, ८. ताम्र भस्म, ९. तीक्ष्ण लोह भस्म, १०. शुद्ध हरताल एवं ११. स्वर्णमाक्षिक भस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य २५-२५ ग्राम तथा गन्धक ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। तत्पश्चात् अन्य सभी द्रव्यों को कज्जली के साथ मिलाकर अम्लवेतस क्वाथ, जम्बीरीनीबूस्वरस, चाङ्गेरीस्वरस, सिन्दुवारपत्रस्वरस और हस्ती-शुण्डीस्वरस की ३ दिनों तक भावना दें। सूखने पर औषधि को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शराव-सम्पुट में सन्धिबन्धन कर भूधर पुट में पकावें। ततः चित्रकमूल क्वाथ की भावना देकर ६ घण्टे तक मर्दन करें और ½ - ⅓ रत्ती (६० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में इस मृतोत्थापन रस को सुरक्षित रख लें। शुद्ध हींग, त्रिकटु चूर्ण और आर्द्रकस्वरस तथा कर्पूर के साथ इस रसौषधि का सेवन कराने से मृत्यु के मुख में गया सन्निपातज्वर का रोगी पुनः जीवित उठ बैठता है। ज्वर उतरने पर पथ्य में दूध-भात का प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–शुद्ध हींग, कर्पूर, त्रिकटु चूर्ण, आर्द्रक रस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

२९३. मृतसञ्जीवन रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्ले तत्कज्जलीकृतम्।
अभ्रलौहकयोर्भस्म ताम्रभस्म समं समम् ॥६३२॥
विषं तालं वराटी च शिलाहिङ्गुलचित्रकम्।
हस्तिशुण्डि चातिविषा त्र्यूषणं हेममाक्षिकम् ॥६३३॥
चूर्णं विमर्दयेद् द्रावैरार्द्रकस्य दिनत्रयम्।
निर्गुण्डीविजयाद्रावैस्त्रिदिनं मर्दयेत् पुनः ॥६३४॥
काचकूप्यां निवेश्याथ बालुकायन्त्रके पचेत्।
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥६३५॥
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं शङ्करोदितः।
मृतोऽपि सन्निपातार्त्तो जीवत्येव न संशयः।
नातः परतरः कश्चित् सन्निपातहरो रसः।
अघोरमन्त्रमुच्चार्य पूजां रक्षाञ्च कारयेत् ॥६३६॥

अघोरमन्त्रो यथा—

ओं अघोरेभ्यश्च घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यश्च।
सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमोऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥६३७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रक भस्म, ४. लोह भस्म, ५. ताम्र भस्म, ६. शुद्ध वत्सनाभविष, ७. शुद्ध हरताल, ८. कौडी भस्म, ९. शुद्ध मैनसिल, १०. शुद्ध हिङ्गुल, ११. चित्रकमूल चूर्ण, १२. हस्तीशुण्डी चूर्ण, १३. अतीस चूर्ण, १४. शुण्ठी चूर्ण, १५. पीपर चूर्ण, १६. मरिच चूर्ण और १७. स्वर्णमाक्षिक भस्म—उपर्युक्त द्रव्यों में से गन्धक छोड़कर सभी द्रव्यों को २५-२५ ग्राम लें और गन्धक ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः हरताल एवं मैनसिल मिलाकर पुनः मर्दन करें। इसके बाद अन्य सभी भस्मों तथा द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर आर्द्रक के रस, सिन्दुवारपत्रस्वरस तथा भाँग के क्वाथ से ३-३ दिनों तक पृथक्-पृथक् मर्दन करें और छाया में सुखा लें। इसके बाद उक्त सभी द्रव्यों के सूखने पर काचकूपी में भरकर बालुकायन्त्र में ६ घण्टे तक पकावें। स्वाङ्गशीत होने पर औषधि को निकालकर पुनः आर्द्रकस्वरस के साथ २ घण्टे तक मर्दन करें। सूखने पर इस मृतसञ्जीवन रस को काचपात्र में रख कर सुरक्षित करें। इस रसौषधि के लिए भगवान् शंकर ने कहा है कि इसके प्रयोग से मरणासन्न सन्निपातज्वर का रोगी फिर से स्वस्थ हो जाता है, इसमें संशय नहीं है। इससे बढ़कर सन्निपातज्वरहर अन्य कोई औषधि नहीं है। इस औषध के प्रयोग से पूर्व अघोर मन्त्र से इसकी पूजा करनी चाहिए।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

२९४. सन्निपातभैरव रस

हिङ्गुलस्य विशुद्धस्य सार्द्धतोलचतुष्टयम्।
गन्धकस्य विषस्यापि प्रत्येकं तोलकद्वयम्॥६३८॥
समाषकद्वयञ्चैव कनकात्तोलकत्रयम्।
माषैकाधिकतालैकं टङ्कणस्य तथैव च ॥६३९॥
सम्मर्द्य जम्बीररसैर्वटीश्छायाविशोषिताः।
गुञ्जैकपरिमाणास्तु कारयेत् कुशलो भिषक् ॥६४०॥
एकान्तु भक्षयेत्तस्य गोलयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः।
घोरे त्रिदोषे दातव्यः सन्निपातज्वरापहः ॥६४१॥

१. शुद्ध हिङ्गुल ५२ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २५ ग्राम, ३. शुद्ध वत्सनाभविष २५ ग्राम, ४. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण ३५ ग्राम और ५. शुद्ध सोहागा १२ ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में शुद्ध गन्धक एवं हिंगुल एक साथ पीसें, पुनः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और जम्बीरीस्वरस की भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। बाद में काचपात्र में इसे सुरक्षित रख लें। घोर सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को १-१ गोली आर्द्रक के रस से प्रयोग करने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण। **स्वाद**–अम्ल। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

२९५. सूचिकाभरण रस (र.सा.सं.)

रसगन्धकनागञ्च विषं स्थावरजङ्गमम्।
मात्स्यवाराहमायूरच्छागपित्तैश्च भावयेत् ॥६४२॥
सूचिकाभरणो नाम भैरवेण प्रकीर्तितः।
सूचिकाग्रेण दातव्यः सन्निपातकुलान्तकः ॥६४३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. नाग भस्म, ४. शुद्ध वत्सनाभविष तथा ५. कृष्णसर्पविष—उपर्युक्त सभी द्रव्य सम-भाग अर्थात् १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य द्रव्यों को भी उसी कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद रोहू (रोहित) मछली, सूअर, मोर एवं बकरे के पित्त से ३-३ बार प्रत्येक पित्त से भावना देकर औषधि को छाया में सुखाकर शीशी में सावधानी से सुरक्षित रख लें। भयंकर असाध्य सन्निपातज्वर के रोगी के शिर (ब्रह्मरन्ध्र) के बीच के बाल अस्तुरा से बनाकर उसी अस्तुरा से क्रास (+) के चिह्न से क्षत करें और पानी में सूई भिंगाकर उसी सूई को दवा में डालकर क्रास के क्षत में औषधि भर दें। दाह-प्यास अधिक होने पर रोगी को अलग स्थान पर बैठाकर शताधिक घड़ा शीतल जल से स्नान करावें। पुनः चैतन्य (होश) में आने पर कपड़े बदलकर चादर से ढ़क कर निर्वात स्थान पर रोगी को लेटावें।

विमर्श—जब सन्निपात का रोगी बेहोश हो, नाड़ी क्षीण हो, रुक-रुक कर नाड़ी चलती हो, देह ठण्डा हो, पसीना आता हो, हाथ-पैर शिथिल एवं ठण्डे हों, श्वास क्षीण हो, हृदय की गति निर्बल हो, मृतसञ्जीवनी सुरा, बृहत्कस्तूरीभैरव आदि औषधों का कोई भी प्रभाव नहीं हो अर्थात् अन्तिम दशा है ऐसा समझकर इस सूचिकाभरण रस का प्रयोग करना चाहिए। इस औषध को १ सरसो की मात्रा में मुख द्वारा भी मधु के साथ खिलाया जा सकता है। शीतोपचार इसमें अत्यावश्यक है। अधिक बेचैनी नहीं हो तो नारियल-जलपान तथा शिर पर शीतल जल की पट्टी (Ice bag) से काम चल जाय तो घड़ों शीतल जल से स्नान नहीं भी कराया जा सकता है। यदि रोगी के मुख से रक्त एवं कफ मिश्रित रक्त का वमन हो रहा हो तो यह दवा नहीं दें।

मात्रा–५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–केवल सूई की नोंक से दवा ब्रह्मरन्ध्र में लगना। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–स्वाद नहीं लेना चाहिए। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में केवल बाह्य प्रयोगार्थ।

औषधि-निर्माण में सावधानी—इसमें सर्प का विष पड़ा है। अतः औषधि-निर्माता के हाथ में कहीं भी क्षत (कटा-फटा) एवं व्रण नहीं हो, औषध-निर्माणकर्ता के नखों को काटे रखना चाहिए; साथ ही साबुन या ब्रश से अंगुली के नखों को साफ रखना चाहिए। अंगुलियों को मुख में नहीं लगावें।

२९६. सूचिकाभरण रस

अमृतं गरलं दारु सर्वतुल्यञ्च हिङ्गुलम्।
पञ्चपित्तेन सम्मर्द्य सर्षपाभां वटीं चरेत्॥६४४॥
वटिका सूचिकाऽग्रेण सन्निपातकुलान्तकृत्।
तिलञ्च तिलतैलञ्च भोजनं दधिभक्तकम्॥६४५॥

१. शुद्ध वत्सनाभविष, २. कृष्णसर्प का विष, ३. शुद्ध शंखिया तथा ४. शुद्ध हिंगुल—उपर्युक्त चार द्रव्य १०-१० ग्राम तथा हिंगुल ४० ग्रा. लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में हिंगुल और शंखिया को मर्दन करें। ततः सर्पविष मिलावें, उसके बाद वत्सनाभ चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और पञ्च पित्त[1]–सूअर के पित्त, बकरे के पित्त, भैंस के पित्त, रोहू मछली के पित्त और मयूर के पित्त से १-१ बार भावना देनी चाहिए तथा अच्छी तरह सुखाकर चूर्ण रूप में शीशी में सुरक्षित रख लेना चाहिए। असाध्य एवं भयंकर सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी में पूर्ववत् शिर के ब्रह्मरन्ध्र में अस्तुरे से चीरा लगाकर सूई से उसी क्षत स्थान में औषधि लगावें। यह सन्निपातकुल को नष्ट करता है। ज्वर उतरने पर तिल एवं तिलतैल तथा दही-भात का भोजन कराना चाहिए।

मात्रा–५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–स्वाद नहीं लेना चाहिए भयंकर विष है। **उपयोग**–भयंकर सन्निपात में।

२९७. सूचिकाभरण रस बृहत् (र.सा.सं.)

रसगन्धकनागाभ्रं विषं स्थावरजङ्गमम्।
मात्स्यवाराहमायूरच्छागपित्तैर्विभावितम् ॥६४६॥
सूचिकाभरणो नाम भैरवेण प्रकीर्तितः।
दातव्यः सूचिकाऽग्रेण पयःपेटीरसेन च ॥६४७॥
त्रयोदशसन्निपाते विसूच्यामतिसारके।
त्रिदोषजे तथा कासे दापयेत् कुशलो भिषक् ॥६४८॥
पयःपेटीजलं दद्याद्भोजनं दधिभक्तकम्।
तथा सुभर्जितं मांसं लेपनं तिलचन्दनैः।
रोगिणो यत् प्रियं द्रव्यं तस्मै तच्च प्रदापयेत्॥६४९॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. नाग भस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. शुद्ध वत्सनाभ एवं ६. कृष्णसर्पविष—उपर्युक्त सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें और मछली, सूअर, बकरा तथा मयूर के पित्त से क्रमशः १-१ भावना देकर औषधि को छाया में सुखाकर काच की शीशी में सुरक्षित रूप से रख लें। इसे सूचिकाभरण रस कहते हैं। इसे भैरव नाम के किसी आचार्य ने बनाया है। इसका अन्तः प्रयोग एवं बाह्य प्रयोग दोनों सूई से ही करते हैं। बाह्य प्रयोग शिर के बीच ब्रह्मरन्ध्र पर बाल छिलकर क्रास (+) चीरा लगाकर उसी क्षत भाग में सूई से औषधि को लगाते हैं और अन्तः प्रयोग उसी मात्रा में (सूई पर उठे जितना) नारियल के पानी में घोल कर पिलाना चाहिए। इस रसौषधि के प्रयोग से सभी प्रकार के सन्निपात, विसूचिका, अतिसार तथा कास रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके प्रयोग के समय नारियल का

१. वाराहछागमाहिषमात्स्यमायूरपित्तकम् ।
पञ्चपित्तमिति ख्यातं सर्वेष्वेव हि कर्मसु॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पानी पिलाना चाहिए। ज्वर उतरने पर दही और भात खिलाना चाहिए। रोगी के शरीर में तिलतैल की मालिश तथा चन्दनादि का लेप करना चाहिए। घृत में भूना हुआ पक्व मांस का भोजन कराना चाहिए। इसके अतिरिक्त रोगी को जो भी प्रिय लगे उसे वैसा ही भोजन देना चाहिए।

मात्रा–५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण वर्ण। **स्वाद**–स्वाद नहीं लेना चाहिए। भयंकर विष है। **उपयोग**–भयंकर सन्निपात में।

२९८. पानीय वटिका (बृ.रसराजसुन्दर)

रसमाषकचत्वारि इष्टकागुण्डके त्र्यहम्।
शोधयित्वा ततः शोध्यं तीक्ष्णपर्णां तथाऽऽर्द्रके ॥६५०
स्वर्णधुस्तूरसत्त्वे च वृद्धदारद्रवे तथा।
कन्यकानिजसत्त्वे च रसशोधनमुत्तमम्॥६५१॥
गन्धकं रसतुल्यन्तु प्रक्षाल्य तण्डुलाम्बुना।
कृत्वा तैलसमं दर्व्या निर्वाप्य चित्रकद्रवः ॥६५२॥
द्वाभ्यां कज्जलिकां कृत्वा लौहचूर्णस्य माषकम्।
सुवर्णमाक्षिकमपि तत्र लोहसमं ददेत् ॥६५३॥
कृत्वा कण्टकवेध्यन्तु ताम्रं कज्जललेपितम्।
मुहूर्त्तमध्यतस्ताम्रं द्रुतं चूर्णत्वमाप्नुयात्॥६५४॥
एकीकृत्य तु तत्सर्वं ततः प्रस्तरभाजनः।
मर्दयेत्ताम्रदण्डेन दत्त्वा चैषां निजद्रवम्॥६५५॥
प्रथमे केशराजश्च द्वितीये ग्रीष्मसुन्दरः।
तृतीये भृङ्गराजश्च चतुर्थे भेकपर्णिका ॥६५६॥
पञ्चमे च सिन्दुवारः षष्ठे च रसपूर्त्तिका।
सप्तमे पारिभद्रश्च अष्टमे रक्तचित्रकः ॥६५७॥
शक्राशनञ्च नवमे दशमे काकमाचिका।
एकादशे तथा नीली द्वादशे हस्तिशुण्डिका ॥६५८॥
अमीषामोषधीनान्तु प्रत्येकन्तु पलद्रवम्।
मर्दयेत्तु प्रयत्नेन द्वादशाहेन साधकः ॥६५९॥
ततः पारदमानन्तु दत्त्वा त्रिकटुगुण्डकम्।
वटिकां राजिकातुल्यां छायाशुष्कां समाचरेत्॥६६०॥
ततः शम्बूकजे पात्रे कर्त्तव्या वटिका त्वियम्।
शरावे शङ्खपात्रे वा कृत्वा सलिलगोलितम्॥६६१॥
अत्यन्तदोषदुष्टाय ज्ञानशून्याय रोगिणे।
ऊर्ध्वयोनिं समभ्यर्च्य प्रदद्याद्वटिकाद्वयम्॥६६२॥
ढक्कयेत्तं ततः पश्चात्नरं स्थूलपटादिभिः।
मलमूत्रागमात्सद्यः स साध्यो भवति द्रुतम्॥६६३॥
दध्यन्नन्तु ततो दद्यात् पिबेद् वारि यथेच्छया।
दद्याद्वातहरं तैलमभ्यङ्गाय सदैव हि ॥६६४॥
चिरज्वरे पिबेद्वारि पञ्चमूलीप्रसाधितम्।
ग्रहण्यां रक्तपित्ते च पिबेदतिविषां गदी ॥६६५॥
पिबेत् पर्पटजं वारि घोरे कम्पज्वरे तथा।
तथा ज्वरातिसारे च जीरकस्य जलं पिबेत्॥६६६॥
मन्दाग्नौ कामलायाञ्च संग्रहग्रहणीगदे।
कासे श्वासे सदा कार्या पानीयवटिका त्वियम्॥६६७॥

१. शुद्ध पारद ४ भाग, २. शुद्ध गन्धक ४ भाग, ३. शुद्ध ताम्रपत्र ८ भाग, ४. लोह भस्म १ भाग, ५. स्वर्णमाक्षिक भस्म १ भाग तथा ६. त्रिकटु चूर्ण ४ भाग।

पारद-शोधन—सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद रखकर ईंट के चूर्ण के साथ एक दिन तक मर्दन करें। ततः जल से धोकर छान लें और कमरख, आर्द्रक, पीतपुष्पधत्तूरस्वरस, विधारा क्वाथ एवं घृतकुमारी स्वरस के साथ १-१ दिन मर्दन कर पारद को उष्ण जल से प्रक्षालन कर मोटे कपड़े से छान लें। इस प्रकार पारद को शुद्ध कर लें। ऐसा ही शुद्ध पारद यहाँ लें।

गन्धक-शोधन—आमलाकार गन्धक को यवकुट कर तण्डुलोदक से एक बार प्रक्षालन करें। ततः लोहे की कड़छुल में उक्त गन्धक को रखकर निर्धूम अग्नि पर प्रतप्त करें। जब गन्धक द्रवित हो जाय तो उसे चित्रकमूल क्वाथ में निर्वापित करें। ऐसा तीन बार करके गन्धक को शुद्ध कर लें।

कज्जलीकरण—इस प्रकार शुद्ध पारद-गन्धक की एक साफ पत्थर के खरल में कज्जली बनावें। पुनः इस कज्जली में थोड़ा घी मिलाकर पंक जैसा बनावें। तदन्तर शुद्ध ताम्र का कण्टकवेधी पत्र बना लें। इस कण्टकवेधी पत्र पर पंकवत् कज्जली का दोनों ओर लेप कर दें और इस लेपित ताम्रपत्र को शराव- सम्पुट कर वाराहपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोल कर दग्ध ताम्रपत्र को निकाल कर खरल में रखें और लोह भस्म तथा स्वर्णमाक्षिक भस्म पूर्वोक्त मात्रा में मिलाकर ताम्रदण्ड से मर्दन करें। इसके बाद निम्नलिखित १२ द्रव्यों के स्वरस से प्रत्येक द्रव्य के स्वरस से क्रमशः १-१ दिन तक उक्त औषध का मर्दन करें।

मर्दन-क्रम—पहले दिन १. केशराज स्वरस से, दूसरे दिन २. ग्रीष्मसुन्दरस्वरस (सूक्ष्मपत्रशाकः) से, तीसरे दिन ३. भृङ्गराजस्वरस से, चौथे दिन ४. मण्डूकपर्णीस्वरस से, पाँचवें दिन ५. सिन्दुवारपत्रस्वरस से, छठे दिन ६. ज्योतिष्मतीस्वरस से (क्वाथ), सातवें दिन ७. पारिभद्रत्वक्रस से, आठवें दिन ८. लाल चित्रकमूलस्वरस से, नवें दिन ९. भाँग क्वाथ से, दशवें दिन १०. काकमाचीपत्रस्वरस से, ग्याहरवें दिन ११. नीलीवृक्ष-रस से तथा बारहवें दिन १२. हस्तिशुण्डी स्वरस (हुरहुर) से। इसमें प्रत्येक द्रव्य का स्वरस या क्वाथ ४६-४६ भाग अर्थात् पारद से ४६ गुना एक द्रव होना चाहिए।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पुनः इस मर्दित औषध में ४ भाग त्रिकटु चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। इसके बाद राई के समान छोटी-छोटी वटी बनाकर छाया में सुखा कर काचपात्र में औषधि को सुरक्षित कर लें। यह मात्रा अत्यल्प है, अतः ½ रत्ती मात्रा ठीक है।

विमर्श—राई मात्रा में वटी बनाना बड़ा ही कठिन कार्य है। अतः चूर्ण रूप में ही रहने दें। प्रयोग के समय राई मात्रा में प्रयोग करें। ३० मि.ग्रा. की मात्रा उचित है।

प्रयोग—अत्यन्त घोर एवं असाध्य सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी जब मूर्च्छित एवं निःसंज्ञ हो तो शंख या शुक्ति या शम्बूक (घोंघा) के पात्र में २ राई बराबर उक्त वटी या औषधि को रखकर जल से घोल दें और अग्निदेव (ऊर्ध्वयोनि) की पूजा कर रोगी को पिला दें। इसके बाद रोगी को मोटी चादर या कम्बल आदि से ढक दें। कुछ समय के बाद ही यदि रोगी मल-मूत्र को त्याग दे तो रोग साध्य हो गया—ऐसा समझना चाहिए। संज्ञा आ जाने पर अर्थात् रोगी के होश में आने पर उसे दही और भात खिलावें तथा यथेच्छ मात्रा में पानी पिलावें। वातहर नारायणादि तैल का सर्वाङ्ग शरीर में मालिश करें।

जीर्ण ज्वरी में पञ्चमूलसिद्ध जल पिलावें। ग्रहणी तथा दोनों प्रकार के रक्तपित्त के रोगियों को अतीससिद्ध जल पिलावें। घोर कम्पज्वर में पित्तपापड़ासिद्ध जल पिलावें। ज्वरातिसार में जीरक-सिद्ध जल पिलावें। अग्निमान्द्य, ग्रहणी, कामला, कास एवं श्वास के रोगियों में भी पानीय वटिका का प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा–३० मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

२९९. पानीयवटिका सिद्धफला

(बृ.रसराजसुन्दर)

अनाथनाथो जगदेकनाथः
श्रीलोकनाथः प्रथमः प्रसन्नः।
जगाद पानीयवटीं सुपट्वीं
तामेव वक्ष्यामि गुरुप्रसादात् ॥६६८॥
जयाऽर्कस्वरसश्चैव निर्गुण्डीं वासकं तथा।
वाट्यालकं करञ्जञ्च सूर्यावर्त्तकचित्रकौ ॥६६९॥
ब्राह्मीं वनसर्षपञ्च भृङ्गराजं विनिक्षिपेत्।
दन्ती च त्रिवृता चैव तथाऽरग्वधपत्रकम् ॥६७०॥
सहदेवामरं भण्डी तथा त्रिपुरभण्डिका।
मण्डूकपर्णी पिप्पल्यौ द्रोणपुष्पकवायसी ॥६७१॥
गुञ्जाकिनी केशराजस्तथा योजनमल्लिका।
आसारणेति विख्यातो धुस्तूरकनकस्तथा ॥६७२॥
त्रैलोक्यविजया चैव तथा श्वेतापराजिता।
प्रत्येकं कार्षिकं चैव रसमाकृष्य भाजने ॥६७३॥
एकैकञ्च रसं दत्त्वा मर्दयेल्लोहदण्डतः।
चण्डातपे च संशोष्य क्षीरं तत्र पुनः क्षिपेत् ॥६७४॥
स्नुहीक्षीरं चार्कदुग्धं वटदुग्धं तथैव च।
प्रत्येकं कार्षिकं दत्त्वा मर्दयेच्च पुनः पुनः ॥६७५॥
सुमर्द्दितं च तं ज्ञात्वा यदा पिण्डत्वमागतम्।
द्रव्याण्येतानि सञ्चूर्ण्य वस्त्रपूतानि कारयेत् ॥६७६॥
दग्धहीरं चातिविषां कोचिलं चाभ्रकं तथा।
पारदं शोधितञ्चैव गन्धकं विषमाधुरम् ॥६७७॥
हरितालं विषमञ्चैव माक्षिकञ्च मनःशिलाम्।
प्रत्येकञ्च चतुर्माषं सर्वं चूर्णीकृतञ्च तत् ॥६७८॥
प्रक्षिप्य मर्द्दयेत् सर्वं शोषयित्वा पुनः पुनः।
सुमर्द्दितं च तं दृष्ट्वा चाङ्गेरीस्वरसेन च ॥६७९॥
उत्थाप्य भेषजं दृष्ट्वा यदा पिण्डत्वमागतम्।
तिलप्रमाणा गुडिकाः कारयेन्मतिमान् भिषक् ॥६८०॥
त्रिदोषजनितो वैद्यमुक्तोऽपि बहुसम्मतः।
लङ्घनैर्बालुकास्वेदैः प्रक्रान्तो दीनदर्शनः ॥६८१॥
सम्पूज्य करुणाधारं प्रणम्य च खसर्पणम्।
पलेन वारिणा धृष्ट्वा चतस्रो वटिकाः पिबेत् ॥६८२॥
पीतं तद्भेषजं पश्चाद्वस्त्रेणाच्छादयेन्नरम्।
रसलग्नं वपुर्ज्ञात्वा दद्याद्वारि सुशीतलम् ॥६८३॥
शरावप्रमितं वारि पातव्यञ्च पुनः पुनः।
सन्निपातज्वरश्चैव दाहश्चैव सुदारुणम् ॥६८४॥
कासश्वासञ्च हिक्काञ्च विड्ग्रहं चाश्मरीं जयेत्।
मूत्ररोधविबन्धे तु दातव्यं क्षीरसंयुतम् ॥६८५॥
पञ्चतृणकृतक्वाथं दातव्यञ्च पुनः पुनः।
पानीयवटिका ह्येषा लोकनाथेन निर्मिता ॥६८६॥
लोकानामुपकाराय सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥६८७॥

१. हीरा भस्म, २. अतीस चूर्ण, ३. शुद्ध कुपिलु, ४. अभ्रक भस्म, ५.शुद्ध पारद, ६. शुद्ध गन्धक, ७. शुद्ध शृङ्गी विष, ८. शुद्ध हरताल, ९. सर्पविष, १०. स्वर्णमाक्षिक भस्म तथा ११. शुद्ध मैनसिल—उपर्युक्त प्रत्येक द्रव्य ४-४ भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य हरताल, मैनसिल को मर्दन करें। इसके बाद सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। निम्नलिखित द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ प्रत्येक १६-१६ भाग लें। अर्थात् उपर्युक्त पारद से ४ गुना प्रत्येक स्वरस लें।

स्वरस—१. जयात्वक्, २. अर्कपत्र, ३. सिन्दुवारपत्र, ४. वासापत्र, ५. बलामूल, ६. करञ्जपत्र, ७. सूर्यावर्तपत्र, ८. चित्रकमूल, ९. ब्राह्मीपत्र, १०. जंगली सरसो, ११. भृङ्गराज, १२. दन्तीमूल, १३. त्रिवृत्मूल, १४. अमलतासपत्र १५. सहदेवीमूल, १६. अमरलता, १७. मंजीठ, १८. भाँट

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

(रुद्रजटा), १९. मण्डूकपर्णी, २०. पीपर, २१. गजपीपर, २२. द्रोणपुष्पी (गूमा), २३. काकमाची, २४. गुञ्जालता, २५. केशराज, २६. श्वेतापराजिता, २७. आसारण, २८. धत्तूर पीला, २९. भाँग और ३०. श्वेत अपराजिता[१]।

दूध—१. स्नुहीक्षीर, २. अर्कक्षीर एवं ३. वटदुग्ध।

विधि—एक लोटे के खरल को तीव्र धूप में रखकर १ स्वरस देकर मर्दन करें। जब पूर्व स्वरस सूख जाय तो दूसरा स्वरस उक्त खरल में देकर मर्दन करें। इसी प्रकार तीसों द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ देकर सूखने तक मर्दन करें। सभी स्वरस सूख कर पूर्ण हो जायेंगे। पुनः उसी खरल में उपर्युक्त तीन द्रव्यों के दूध प्रत्येक १६-१६ भाग अर्थात् पारद से ४ गुना लेकर मर्दन कर अब मर्दित स्वरस चूर्ण दूध के साथ मिलकर पिण्ड रूप में हो जायेगा। अब दोनों खरल के द्रव्यों को एक साथ मिलाकर चाङ्गेरीस्वरस की भावना दें। छाया में सुखाकर या गीला रहे तो धूप में सुखाकर तिल प्रमाण की छोटी-छोटी गुटिका बना लें। इतनी छोटी गुटिका सम्भव नहीं हो तो चूर्ण ही रहने दें। शीशी में औषधि को सुरक्षित रख लें। चार वटी एक साथ जब खिलाना है तो ३० मि.ग्रा. की वटी ही बनानी चाहिए।

औषधि-सेवनविधि—ऐसे सन्निपातज्वर के रोगी जो अनेकों विद्वान् वैद्यों द्वारा त्याज्य एवं असाध्य घोषित कर दिया गया हो, लंघन एवं बालुकास्वेदादि उपचार से थका हुआ हो तथा दुःखी दिखाई दे रहा हो, वैसा रोगी जो पूजादि कर्म कर सके, अन्यथा किसी दूसरे परिजन द्वारा ब्राह्मण एवं भगवान् सूर्य की पूजा करके ४ तिल प्रमाण उक्त औषधि को १ तोला शीतल जल में घोल कर पी जाय या पिला दिया जाय। पुनः रोगी को मोटी चादर या कम्बल आदि से ढ़क दें। रसौषधि का ठीक तरह से शरीर में अनुकूल प्रवेश हो जाने पर बार-बार शीतल जल कटोरी से पिलावें। इस तरह के प्रयोग से सन्निपातज्वर, भयंकर दाह, श्वास, कास, हिक्का, मलावरोध और अश्मरी आदि कष्ट नष्ट हो जाते हैं। मूत्रावरोध और विबन्ध होने पर इस रसौषधि को दूध के साथ देना चाहिए तथा पुनः-पुनः पञ्चतृणमूल पिलाना चाहिए। संसार के उपकार के लिए सभी सिद्धियों को देने वाली इस पानीय वटिका' को आचार्य लोकनाथ ने निर्माण किया था।

मात्रा–३० मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विविध उपद्रवयुक्त सन्निपातज्वर में।

योजनमल्लिका = श्वेतापराजितेति ।

१. श्वेतापराजिता तथा च योजनमल्लिका = श्वेतापराजिता वारद्वयं पठितम्, तेन द्विगुणो भाग एव ग्राह्यः ।

३००. चिन्तामणि रस (र.चि.म.)

सूतं गन्धकमभ्रकं सुविमलं सूतार्द्धभागं विषं
तत्त्र्यंशं जयपालमम्लमृदितं तद्गोलकं वेष्टितम् ।
पत्रैर्मञ्जुभुजङ्गवल्लिजनितैर्निक्षिप्य खाते पुटं
दत्त्वा कुक्कुटसंज्ञकं सह दलैः सञ्चूर्ण्य तत्र क्षिपेत् ॥६८८॥
भागार्द्धं जयपालबीजममृतं तत्तुल्यमेकीकृतं
गुञ्जा त्र्यूषणसिन्धुचित्रकयुता सर्वज्वरान्नाशयेत् ।
शूलं संग्रहणीगदं सजठरं दध्यन्नसंसेविनां
तापे सेचनकारिणां गदवतां सूतस्य चिन्तामणेः ॥६८९॥
अयमेव रसो देयो मृतकल्पे गदातुरे ॥६९०॥

१. शुद्ध पारद ५० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, ३. अभ्रक भस्म ५० ग्राम, ४. शुद्ध वत्सनाभविष २५ ग्राम तथा ५. शुद्ध जयपाल ७५ ग्राम—सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनावें। ततः शुद्ध वत्सनाभ २५ ग्राम तथा शुद्ध जयपाल ७५ ग्राम और अभ्रक भस्म मिलावें और २५ ग्राम वत्सनाभ एवं जयपाल पृथक् रख लें। ततः नीबू के स्वरस के साथ मर्दन करें। पुनः उसे गोला बना लें और पान (ताम्बूल) के मुलायम पत्रों से उस औषधिगोलक को लपेट दे तथा उसे शराव में रखकर सम्पुटित करें और गड्ढा खोद कर कुक्कुटपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीतल होने पर सम्पुट खोल कर औषधि को निकालें और जले ताम्बूल पत्र सहित खरल में खूब पीस लें। इसके बाद पुनः आधा भाग अर्थात् २५ ग्राम शुद्ध जयपालबीज और २५ ग्राम शुद्ध वत्सनाभविष चूर्ण उक्त औषधि में मिलाकर खूब पीस कर काचपात्र में संग्रहीत करें। १ रत्ती इस रसौषधि को त्रिकटु चूर्ण १ रत्ती, सैन्धव १ रत्ती, चित्रक चूर्ण १ रत्ती और मधु के साथ देने से सभी प्रकार के ज्वर, शूल, संग्रहणी एवं उदररोग नष्ट हो जाते हैं। ज्वरादि कम होने पर दही-भात खाने के लिए दें। इस औषधि के सेवन के बाद यदि ताप अधिक हो तो सिर पर शीतल जल का सेचन करें या शीत जलार्द्र वस्त्र सिर पर रखें। यह चिन्तामणिरस मृततुल्य रोगी को ही देना चाहिए। मात्रा १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.), अनुपान–त्रिकटु आदि से।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–त्रिकटुचूर्ण, चित्रकचूर्ण और मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

३०१. चिन्तामणि रस (द्वितीय) (र.सा.सं.)

रसविषगन्धकटङ्कणताम्रयवक्षारकं व्योषम् ।
[१]दन्तीफलत्रयञ्च क्षौद्रं दत्त्वा शतं वारान् ॥६९१॥

१. तालकफलत्रयञ्च क्षौद्रं दत्त्वा शतं वारान् । इति 'रसेन्द्रचिन्तामणौ' पाठभेदः । तेनैव कारणेन शुद्धहरतालं दत्त्वा वटिकां क्रियते विद्वद्भिरिति । परञ्च व्याख्यातृणा श्री अम्बिकादत्तेन—'दन्तीफलत्रयञ्च' मूले लिखितमस्ति, किन्तु टीकायां हरतालस्योल्लेखः कृतः । दन्तीफलस्य नोल्लेखः ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

संमर्द्य रक्तिकमिता वटिकाः कार्या भिषग्वरैः प्राज्ञैः ।
शुण्ठीपिष्टेन समं चैका द्वे वाऽथ वा तिस्रः ॥६९२॥
सम्प्राश्य नारिकेलीजलमनुपेयं प्रयुञ्जीत ।
भेदानन्तरमेव प्रक्षालितभक्ततक्रमुपयोज्यम् ॥६९३॥
सैन्धवजीरकसहितं तक्रं पाने प्रयोक्तव्यम् ।
प्रशमयति सन्निपातज्वरं तथा जीर्णकं ज्वरं विषम् ॥६९४॥
प्लीहानञ्चाध्मानं कासं श्वासञ्च वह्निमान्द्यम् ।
चिन्तामणी रसोऽयं किल स्वयं भैरवेण निर्दिष्टः ॥६९५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध वत्सनाभ, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध सोहागा, ५. ताम्र भस्म, ६. यवक्षार, ७. शुण्ठी चूर्ण, ८. पीपर चूर्ण, ९. मरिच चूर्ण, १०. शुद्ध जयपाल, ११. हरीतकी चूर्ण, १२. आँवला चूर्ण, १३. बहेड़ा चूर्ण और १४. मधु—उपर्युक्त सभी द्रव्यों को प्रत्येक समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर मधु की १०० बार भावना करें अर्थात् अच्छी तरह मर्दन करें। जब वटी बनने लायक हो तो १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर धूप में सुखाकर काचपात्र में संग्रह करें। इस वटी को १ या २ या ३ वटी शुण्ठी चूर्ण से खिलाकर नारियल का जल पीने से सभी प्रकार के ज्वर, सन्निपातज्वर, जीर्णज्वर, विषमज्वर, प्लीहावृद्धि, आध्मान, श्वास, कास एवं अग्निमांद्य आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। इस औषधि के सेवन के बाद रेचन होता है जिससे ज्वर आदि शान्त हो जाते हैं। इसके पश्चात् पानी से धोया हुआ भात और तक्र सेवन करना चाहिए। अथवा सैन्धव, जीरा आदि से युक्त तक्र और भात यथेच्छ मात्रा में खिलावें।

मात्रा–१२५ से ३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–सोंठ चूर्ण, मधु एवं नारियल जल से। **गन्ध**–मधुगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

३०२. रसराजेन्द्र (र.सा.सं.)

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयोरजः ।
अभ्रं नागं पलं वङ्गं पलं गन्धकतालकम्॥६९६॥
पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत्।
मर्दयेत् काकमाच्याश्च आर्द्रकस्य रसेन च ॥६९७॥
मात्स्यवाराहमायूरच्छागमाहिषपित्तकैः ।
मर्दयेद्भिन्नभिन्नश्च त्रिकटोरम्बुभिस्तथा ॥६९८॥
आर्द्रकस्वरसैः पश्चाच्छतवारान् मुहुर्मुहुः ।
सिद्धऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिप्रकाशितः ॥६९९॥
गुञ्जामात्रं रसं दद्यात् सुरसारससंयुतम् ।
मेघधाराप्रवाहेण धारितं वारि मस्तके ॥७००॥
अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा ।
भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेकन्तु दापयेत् ॥७०१॥
ईश्वरेण हतः कामः केशवेन च दानवः ।
पावकेन हतं शीतं सन्निपाते रसस्तथा ॥७०२॥

१. शुद्ध पारद, २. ताम्र भस्म, ३. लोह भस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. नाग भस्म, ६. वङ्ग भस्म, ७. शुद्ध गन्धक, ८. शुद्ध हरताल और ९. शुद्ध वत्सनाभविष चूर्ण—सभी द्रव्य समान भाग में प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः शुद्ध हरताल उसमें मिलाकर मर्दन करें। पुनः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और काकमाची स्वरस एवं आर्द्रक स्वरस से मर्दन करें। पुनः पञ्च पित्त—रोहू मछली का पित्त, सूअर का पित्त, मयूर का पित्त, बकरे का पित्त और भैंस का पित्त के साथ १-१ भावना दें और पुनः त्रिकटु क्वाथ की भावना दें। इसके बाद आर्द्रकस्वरस के साथ १०० बार भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। सभी प्रकार के सन्निपातादि ज्वर में इस औषधि को तुलसीपत्रस्वरस एवं मधु से देना चाहिए। औषधि लेने पर यदि शिर में ताप, दाह आदि हो तो मेघ की धारा जैसी जल की धारा शिर पर देनी चाहिए। इतने में भी शान्ति नहीं हो तो चीनी का शर्बत पिलाना चाहिए। भूख लगने पर रोगी को दही एवं भात का प्रयोग करना चाहिए। भगवान् शङ्कर ने जिस तरह कामदेव को जला कर नष्ट कर दिया, भगवान् विष्णु ने राक्षसों का नाश कर दिया एवं अग्नि ने शीत का नाश किया है उसी तरह यह रसौषधि ज्वर को भी नाश कर देती है।

विमर्श—यह मूल पाठ रसेन्द्रसारसंग्रह का है किन्तु आचार्य गोविन्ददास सेन ने इसमें अधिक परिवर्तन किया है । मूलपाठ में आर्द्रक के रस की १ भावना देने को कहा है, जबकि यहाँ पर आर्द्रकरस की १०० भावना कही है। १०० बार आर्द्रक की भावना देने से आर्द्रक के रस में उपलब्ध स्टार्च आदि द्रव्य रसौषधि में अत्यधिक मात्रा में आ जायेगी, फलतः औषधि मूल मात्रा से प्रायः आधी मात्रा में प्राप्त होगी। तब १ रत्ती की मात्रा में औषधि उतनी लाभप्रद नहीं रहेगी। अतः उस समय २ रत्ती की मात्रा में औषधि दें। अन्यथा आर्द्रकरस की १ ही भावना दें।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–तुलसीपत्ररस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

पित्तभावित औषध-सेवन में शीतोपचार

ये रसाः पित्तसंयुक्ताः प्रोक्ताः सर्वत्र शम्भुना ।
जलसेकावगाहाद्यैः बलिनस्ते तु नान्यथा ॥७०३॥

भगवान् शङ्कर ने जिन रसों में पञ्चपित्तों या ३-४ पित्तों की भावना देने का निर्देश दिया है उन रसौषधों के सेवन के बाद

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रोगी को जलपूर्ण पात्र में अवगाहन, माथे पर शीतल जल की धारा, बर्फ की थैली (Ice Bag) या शीतल जल का पान, चन्दनादि शीतल लेपों का धारण आदि उपचार करने चाहिए। शीतोपचार से उक्त रसौषधियाँ अधिक बलवान् हो जाती हैं। अन्यथा दाहादिक होने से विरुद्ध फल देने वाली हो जाती हैं।

पित्तभावित रसौषधिजन्य विदाह में शीतोपचार

रसजनितविदाहे शीततोयाभिषेको
मलयजघनसारालेपनं मन्दवातः।
तरुणदधिसिताऽऽढ्यं नारिकेलीफलाम्भो
मधुरशिशिरपानं शीतमन्यच्च शस्तम् ॥७०४॥

पित्तादि भावित रसौषधियों के सेवनजन्य दाहादि शान्त करने के लिए शीतल जल से पूर्ण बड़े पात्र में बैठाना या सुलाना सुखद होता है। मलयगिरि-चन्दन घिसकर उसमें कर्पूर मिलाकर शरीर में सर्वत्र लेप करना चाहिए—विशेष कर शिर में। ताड़पत्र एवं खस आदि के पंखे से धीरे-धीरे हवा करें। तुरन्त के जमे मीठे दही चीनी से मिलाकर या श्रीखण्ड आदि शीतल मधुर, आइसक्रीम आदि खिलाना चाहिए। नारियल का ताजा पानी पीने को दीजिए। मधुर एवं शीतल पेय तथा अन्य शीतोपचार इसमें श्रेयस्कर है।

३०३. पञ्चवक्त्र रस (रसे.चि.म.)

गन्धेशटङ्कमरिचं विषं धुस्तूरजैर्द्रवैः।
दिनं विमर्दितं शुष्कं पञ्चवक्त्रो भवेद्रसः।
द्विगुञ्जमार्द्रनीरेण त्रिदोषज्वरहृत् परः ॥७०५॥

१. शुद्ध गन्धक, २. शुद्ध पारद, ३. शुद्ध सोहागा, ४. मरिच चूर्ण तथा ५. शुद्ध वत्सनाभविष—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य तीनों द्रव्यों को उसी कज्जली के साथ मिलाकर धत्तूरपत्रस्वरस की भावना दें और २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसके बाद उन्हें शीशिओं में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) आर्द्रक के रस और मधु से देने पर सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३०४. त्रिदोषनीहारविनाशसूर्यरस (रसे.चि.म.)

रसेन गन्धं द्विगुणं कृशानु-
रसैर्विमर्द्याष्टदिनानि घर्मे।
रसाष्टभागं त्वमृतञ्च दद्याद्
विमर्दयेद्वह्निरसेन किञ्चिद् ॥७०६॥
पित्तैस्तु सम्भावित एष देय-
स्त्रिदोषनीहारविनाशसूर्यः ॥७०७॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग एवं ३. शुद्ध वत्सनाभ ८ भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः उक्त कज्जली में चित्रकमूल क्वाथ से ८ दिनों तक धूप में बैठकर भावना दें। पुनः उसमें शुद्ध वत्सनाभ मिलाकर चित्रकस्वरस या क्वाथ की १ भावना दें। इसके पञ्चपित्तों (रोहू मछली, सूअर, मयूर, बकरे एवं भैंस के पित्त) से १-१ भावना देकर औषधि को छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह रसौषधि सन्निपातज्वर रूपी कुहासा (धुन्ध) को नष्ट करने के लिए सूर्य जैसा है। इसे 'त्रिदोषनीहारविनाशसूर्य रस' कहा जाता है। यही श्लोक अपरिवर्तित रूप में 'प्रभाकर रस' नाम से भी इसी प्रकरण में आया है, जिसे मैंने पुनरुक्ति दोष के कारण नहीं पढ़ा है। अतः सुधी पाठक क्षमा करेंगें।

मात्रा–३० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वरों में।

३०५. सन्निपातसूर्य रस (रसराजसुन्दर)

हिङ्गुलं गन्धकं ताम्रं मरिचं पिप्पली विषम्।
शुण्ठी कनकबीजञ्च श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥७०८
विजयापत्रतोयेन त्रिदिनं भावयेत् सुधीः।
द्विगुञ्जं पर्णखण्डेन चार्कक्वाथं पिबेदनु ॥७०९॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान् गदान्घोरान्सुदारुणान्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकञ्च विशेषतः ॥७१०॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्र भस्म, ४. मरिच चूर्ण, ५. पिप्पली चूर्ण, ६. शुद्ध वत्सनाभविष, ७. शुण्ठी चूर्ण और ८. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य समान भाग में ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में हिङ्गुल एवं गन्धक को मर्दन करें, ततः ताम्र भस्म मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलावें और भाँग के क्वाथ से तीन दिनों तक मर्दन करें। इसके बाद २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में संग्रहीत करें। पान के रस के साथ १ वटी खाने से भयंकर सन्निपातज्वर तथा वातज, पित्तज एवं कफज ज्वर में विशेष लाभप्रद है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्रस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३०६. अघोरनृसिंह रस (रसराजसुन्दर)

भागैकं मृतताम्रस्य द्विभागं मृतलोहकम्।
त्रिभागं मृतवङ्गञ्च चतुर्भागं मृताभ्रकम् ॥७११॥
माक्षिकं रसगन्धौ च तथा शुद्धा मनःशिला।
चत्वार्येतानि ताम्रस्य प्रत्येकं तुल्यमेव च ॥७१२॥
गरलं चाभ्रतुल्यं स्यात् त्रिकटुश्चाभ्रतुल्यकः।
एतत् सर्वसमं देयं विषमाख्यं तथैव च ॥७१३॥
एतत् सर्वस्य द्विगुणं द्रव्यस्य कालकूटकम्।
मात्स्यमाहिषमायूरघृष्टिपित्तैर्विभावयेत् ॥७१४॥
चित्रकस्य द्रवेणैव प्रत्येकं याममात्रकम्।
सर्षपाभा वटी कार्या शोषयेदातपे ततः ॥७१५॥
दापयेद्वटिकामेकां पयःपेटीरसेन च।
त्रयोदशसन्निपाते विसूच्यामतिसारके ॥७१६॥
त्रिदोषजे तथा कासे दापयेत् कुशलो भिषक्।
पयःपेटीशतं दद्याद् भोजनं दधिभक्तकम् ॥७१७॥
तथा भर्जितमत्स्यञ्च लेपनं तिलचन्दनैः।
रोगी वाञ्छति यद् द्रव्यं तत्सर्वं परिदापयेत्।
अघोरनृसिंहनामा रसानामुत्तमो रसः ॥७१८॥

१. ताम्र भस्म १ भाग, २. लौह भस्म २ भाग, ३. वङ्ग भस्म ३ भाग, ४. अभ्रक भस्म ४ भाग, ५. स्वर्णमाक्षिक भस्म १ भाग, ६. शुद्ध पारद १ भाग, ७. शुद्ध गन्धक १ भाग, ८. शुद्ध मैनसिल १ भाग, ९. कृष्णसर्प विष ४ भाग, १०. त्रिकटु चूर्ण ४ भाग, ११. शुद्ध कुचिला २२ भाग और १२. अभावे शुद्ध वत्सनाभ विष ८८ भाग—सर्वप्रथम पत्थर के एक बड़े खरल में पारद-गन्धक की कज्जली बनावें। इसके बाद मैनसिल तथा सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें और रोहित (रोहू) मछली, भैंस, मयूर एवं सूअर के पित्तों से १-१ भावना दें। इसके बाद चित्रकमूल क्वाथ की एक भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें और सरसो जितनी बड़ी मात्रा में वटी बनाकर धूप में अच्छी तरह सुखा लें। १३ प्रकार के सन्निपातज्वर, विसूचिका, अतिसार एवं त्रिदोषज कास में १ वटी पयःपेटी = नारियल के जल से देने में सद्यः लाभ होता है। अधिक प्यास एवं दाह की अनुभूति होने पर १ से १०० नारियल का जल इच्छानुसार पिलावें। ज्वरादि के वेग कम होने पर भूख लगने पर दही-भात भोजन दें। मांसाहारी रोगी को घी में भूनी हुई मछली खिलावें। दाह दूर करने के लिए श्वेत मलयागिरि चन्दन एवं तिल का लेप लगावें। रोगी जो भी खाना चाहे उसे देना चाहिए। यह रसौषधि 'अघोरनृसिंह रस' नाम से जानी जाती है। यह सभी रसों में उत्तम रस है।

विमर्श—इस औषधि में विष की व्याख्या शुद्ध कुचिला किया गया है। आज उपलब्ध सभी भैषज्यरत्नावली ग्रन्थ की टीका में यही अर्थ किया गया है। सर्वप्रथम विनोदलाल सेन की १९०७ ई. की प्रकाशित सर्वप्रथम संस्कृत टिप्पणी में उन्होंने ही विष का अर्थ कुपीलु किया था। विनोदलाल सेन आचार्य गोविन्ददास सेन के दौहित्र थे। उन्होंने अपनी परम्परानुसार कुचिला व्याख्या की थी। तभी से यह परम्परा है। कालकूट के अभाव में वत्सनाभ लेना चाहिए।

मात्रा–१० मि.ग्रा.। **अनुपान**–नारियल जल से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–भयंकर सन्निपात ज्वरों में।

३०७. प्रतापतपन रस (रसराजसुन्दर)

गन्धकं हिङ्गुलं तालं सूतकं लौहटङ्गणम्।
खर्परं स्वर्जिकाक्षारं माञ्जिष्ठं हिङ्गुलं समम् ॥७१९॥
रसेन मर्दितं पिण्डं निर्गुण्डीहस्तिशुण्डयोः।
अष्टयामं पचेत् कूप्यां निरुध्य सिकताह्वये ॥७२०॥
ततः सिद्धं समादाय रक्तिकामार्द्रकेन च।
सन्निपातविनाशाय प्रतापतपनो रसः ॥७२१॥
दधिभक्तं तथा दुग्धं छागमांसञ्च भोजयेत्॥७२२॥

१. शुद्ध गन्धक, २. शुद्ध हिङ्गुल, ३. शुद्ध हरताल, ४. शुद्ध पारद, ५. लोह भस्म, ६. शुद्ध सोहागा, ७. यशद भस्म, ८. सज्जिक्षार, ९. मंजीठ तथा १०. शुद्ध हिंगुल—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें, किन्तु दो बार पढ़ा जाने के कारण हिङ्गुल २ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की एक पत्थर के खरल में कज्जली बनावें, बाद में हिङ्गुल एवं हरताल क्रमशः मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और निर्गुण्डी-पत्रस्वरस तथा हस्तीशुण्डी पत्रस्वरस (हुरहुर) की १-१ भावना देकर मर्दन करें। औषधि सूख जाने पर खुरच कर काच की कूपी में भरकर बालुकायन्त्र में २४ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर औषधि को काचकूपी से निकाल कर खरल में मर्दन कर शीशी में सुरक्षित रख लें। १ रत्ती की मात्रा में आर्द्रक के रस के साथ देने पर सन्निपातज्वर का नाश हो जाता है। इसे 'प्रतापतपन रस' कहते हैं। भूख लगने पर इच्छानुसार दही-भात, दूध-भात या बकरे का मांस-भात खिलावें।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–किञ्चित् तिक्त। **उपयोग**–सन्निपात ज्वर में।

३०८. प्राणेश्वर रस (रसे.सा.सं.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं मृताभ्रं विषसंयुतम्।
रसं संमर्दितं तालमूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः ॥७२३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पूरयेत् कूपिकान्ते च मुद्रयित्वा च शोषयेत्।
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा च शोषयेत् ॥७२४॥
पुटेत् कुम्भीप्रमाणेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
गृहीत्वा कूपिकामध्यान्मर्दयेच्च दिनं ततः ॥७२५॥
अजाजी जीरकं हिङ्गु सर्जिका टङ्कणं जगत्।
गुग्गुलुः पञ्चलवणं यवक्षारो यमानिका ॥७२६॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकं रसमानतः।
एषां कषायेण पुनर्भावयेत् सप्तधाऽऽतपे ॥७२७॥
नागवल्लीदलयुतं पञ्चगुञ्जं रसेश्वरम्।
दद्यान्नवज्वरे तीव्रे सोष्णं वारि पिबेदनु ॥७२८॥
प्राणेश्वरो रसो नाम सन्निपातप्रकोपनुत्।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥७२९॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात् कुर्याच्चन्दनलेपनम्।
तापोद्रेकस्य शमनं बलाधिष्ठानकारकम्।
भवेच्च नात्र सन्देहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः ॥७३०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रक भस्म तथा ४. शुद्ध वत्सनाभविष—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। इसके बाद अभ्रक भस्म एवं शुद्ध विष चूर्ण को मिलाकर मर्दन करें। ततः श्वेत मुशलीरस की ३ भावना देकर अच्छी तरह से मर्दन करें। औषधि सूखने पर खुरच कर सात बार कपड़मिट्टी की हुई काचकूपी में रखकर सन्धिबन्धन कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्ग शीत होने पर कूपी से सावधानीपूर्वक औषधि निकाल लें। ततः निम्नलिखित १६ द्रव्यों—१. कारवी, २. जीरा, ३. हींग, ४. सज्जिक्षार, ५. शुद्ध सोहागा, ६. शुद्ध स्फटिक, ७. शुद्ध गुग्गुल, ८. सैन्धव लवण, ९. सौवर्चल नमक, १०. सामुद्र लवण, ११. विड लवण, १२. औद्भिद लवण, १३. यवक्षार, १४. अजवायन, १५. मरिच और १६. पीपर—प्रत्येक पारद को बराबर लें। इन्हें अष्टगुण जल में क्वाथ कर चतुर्थांशावशेष रहने पर छानें और धूप में बैठकर ७ भावना उपर्युक्त औषधि में दें। इसे काचपात्र में संग्रहीत करें।

५ रत्ती (६२५ मि.ग्रा.) औषधि (यह मात्रा अधुना अत्यधिक है, अतः ५ रत्ती ६२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में ताम्बुलपत्रस्वरस के साथ देने पर नवज्वर नष्ट हो जाता है। औषधि लेने के बाद थोड़ा उष्ण जल पीना चाहिए। इसे प्राणेश्वर रस नाम से कहा जाता है। यह सन्निपातज्वर को नाश करता है। शीतज्वर, दाहपूर्वक ज्वर, गुल्म एवं शूल रोगनाशक है। शरीर में ताप होने पर चन्दन आदि का लेप करना चाहिए। ज्वर उतरने तथा भूख लगने पर यथेच्छ भोजन देना चाहिए। यह रसौषधि उच्चताप को कम करता है, बल देता है और शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–लवणीय **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३०९. सन्निपातभैरव रस (रसराजसुन्दर)

पारदं गन्धकं तालं वत्सनाभं त्रिभिः समम् ॥७३१॥
दारुमूषञ्च गरलं सर्वस्य समहिङ्गुलम्।
मुद्गप्रमाणं वटिकां कारयेत् कुशलो भिषक् ॥७३२॥
सन्निपाते वटीमेकामार्द्रद्रावैः प्रदापयेत्।
रसो महाप्रभावोऽयं सन्निपातस्य भैरवः ॥७३३॥

१. शुद्ध पारद १० ग्रा., २. शुद्ध गन्धक १० ग्रा., ३. शुद्ध ताल १० ग्रा., ४. शुद्ध वत्सनाभ ३० ग्रा., ५. शुद्ध शंखिया १० ग्रा., ६. कृष्णसर्पविष १० ग्रा. और ७. शुद्ध हिंगुल ८० ग्रा. लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। तत्पश्चात् उसी खरल में हरिताल देकर पुनः घर्षण करें। इसके बाद हिङ्गुल मिलाकर मर्दन करें, ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलावें। ततः जल से भावना देकर मूँग के बराबर वटी बनावें, किन्तु यह मात्रा अत्यधिक है। अतः सरसों की मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को आर्द्रक के रस से १ वटी देनी चाहिए। यह सन्निपातभैरवरस बहुत ही प्रभावी औषधि है। इसके प्रयोग से ज्वर एवं दाह आदि में वृद्धि हो तो पूर्ववत् शीतोपचार, नारिकेल का जलपान, चन्दन आदि लेप तथा शीतल जल से स्नान करावें।

मात्रा–१० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३१०. सन्निपातभैरव रस (द्वितीय) (रसराजसुन्दर)

रसं विषं गन्धकञ्च हरितालं फलत्रयम्।
जयपालं त्रिवृत्स्वर्णं ताम्रसीसाभ्रलौहकम् ॥७३४॥
अर्कक्षीरं लाङ्गली च स्वर्णमाक्षिकमेव च।
समं कृत्वा रसेनैषां त्रिंशद्वारञ्च मर्दयेत् ॥७३५॥
अर्कः श्वेतोऽलम्बुषा च सूर्यावर्त्तश्च कारवी।
काकजङ्घा शोणकश्च कुष्ठं व्योषं विकङ्कतम् ॥७३६॥
सूर्यमणिश्चन्द्रकान्तो निर्गुण्डी च महाजटा।
धुस्तूरदन्तीपिप्पल्यो दशाष्टाङ्गमिदं शुभम् ॥७३७॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं दत्त्वा तोयं चतुर्गुणम्।
शिष्टैकगुणतोयेन भावनाविधिरिष्यते ॥७३८॥
भावनायां भावनायां शोषणं मुहुरिष्यते।
ततश्च वटिकां कृत्वा भैरवाय बलिं ददेत् ॥७३९॥
रसोऽयं श्रीसन्निपातभैरवो ज्वरनाशनः।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥७४०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सन्निपातज्वरं हन्ति जीर्णञ्च विषमं तथा।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च चातुर्थकमपि ध्रुवम् ॥७४१॥
ज्वरञ्च जलदोषोत्थं सर्वदोषसमाकुलम्।
भैरवस्य प्रसादेन जगदानन्दकन्थडी ॥७४२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध वत्सनाभ, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध ताल, ५. हरीतकी चूर्ण, ६. आमला चूर्ण, ७. बहेड़ा चूर्ण, ८. शुद्ध जयपाल, ९. त्रिवृत् चूर्ण, १०. सुवर्णभस्म, ११. ताम्र-भस्म, १२. नागभस्म, १३. अभ्रकभस्म, १४. लोहभस्म, १५. स्वर्णमाक्षिकभस्म, १६. अर्कदुग्ध तथा १७. कलिहारीमूल चूर्ण —ये प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें अर्थात् प्रत्येक २० ग्राम द्रव्य लें।

विधि—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः ताल मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद सभी भस्मों को मिलावें। पुनः अन्य चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद निम्नलिखित अर्क से पिप्पली मूल पर्यन्त १८ द्रव्यों को प्रत्येक पारद जितनी मात्रा में लें अर्थात् प्रत्येक २० ग्राम लें—

१. अर्कमूलत्वचा, २. लज्जालु, ३. सूर्यावर्त, ४. काला जीरा, ५. काकजंघा, ६. सोनापाठा, ७. कूठ, ८. मरिच, ९. पीपर, १०, शुण्ठी, ११. स्नुवावृक्ष, १२. जपापुष्प, १३. श्वेत कमल, १४. सिन्दुवारपत्र, १५. रुद्रजटा, १६. धत्तूरपत्र, १७. दन्तीमूल और १८. पिप्पली—इन्हें यवकुट करें और चार गुना जल में इन्हें क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ छान लें। इस क्वाथ से उपर्युक्त पारद से कलिहारीमूल तक के औषधों को ३० बार सम्यक्तया भावना दें। १ बार की भावना पूर्णरूपेण सूख जाने पर ही दूसरी भावना दें। भावना पूर्ण हो जाने पर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बना कर छाया में अच्छी तरह सुखा कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस प्रकार औषधि तैयार हो जाने पर रुधिर वर्ण (लाल रंग) के भैरव का ध्यान कर श्रीभैरव की अराधना, पूजा एवं विधिपूर्वक बलि आदि देकर इस रसौषधि का प्रयोग करें। यह सन्निपातभैरव रस निश्चय ही अनेक उपद्रवों से युक्त ज्वर, सन्निपातज्वर, जीर्णज्वर, विषमज्वर, ऐकाहिक, द्व्याहिक एवं चातुर्थिक ज्वर, जलदोषोत्पन्न ज्वर तथा सभी दोषों से व्याप्त ज्वर का नाश कर देता है। श्री कालभैरव की कृपा से 'जगदानन्दकन्थडी' नामक किसी सिद्ध आचार्य ने सर्वप्रथम इसे कहा था।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर, जीर्णज्वर एवं विषमज्वर में।

३११. स्वेदशैत्यारि रस (रसराजसुन्दर)

ताम्रशुण्ठ्यर्कमूलानि द्विनिष्काणि पृथक् पृथक्।
ऐक्यतः पञ्चलवणात् पलं पिष्ट्वा पुटं ददेत् ॥७४३॥
गन्धेशशङ्खभस्मानि चतुर्निष्कमितानि च।
देवदालीरसैः पिष्ट्वा त्रिदिनं केकिपित्ततः ॥७४४॥
स्वेदशैत्यापनुत्त्यर्थं बल्लमात्रं प्रयोजयेत्।
दध्ना सम्मर्दयेत् पात्रे जलयोगं समाचरेत्।
पथ्यं घृतं सिन्धुमुद्गखर्जूरिक्षुकगोस्तनीः ॥७४५॥

१. ताम्रभस्म ६ ग्रा., २. शुण्ठी चूर्ण ६ ग्रा., ३. आकमूलत्वक्चूर्ण ६ ग्रा., ४. सैन्धव लवण ११ ग्रा., ५. सौवर्चल लवण ११ ग्रा., ६. सामुद्र लवण ११ ग्रा., ७. विड लवण ११ ग्रा., ८. औद्भिद लवण ११ ग्रा., ९. शुद्ध गन्धक १२ ग्रा., १०. शुद्ध पारद १२ ग्रा. और ११ शंखभस्म १२ ग्रा.—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें तथा देवदालीस्वरस तथा मयूर के पित्त की ३-३ भावना अच्छी तरह से दें। पुनः ३-३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में अच्छी तरह सुखा लें और काच की शीशी में संग्रहीत करें। सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को १ वटी दही के साथ पात्र में अच्छी तरह मिलाकर प्रयोग करें। दाहादि की अनुभूति होने पर शिर पर शीतल जल का सेचन करें तथा नारियल का जल आदि पिलावें। चन्दन-कर्पूर का शरीर पर लेप करें। ज्वर उतरने पर गन्धक-पादर-शंखभस्म में १२-१२ ग्रा. कर दें। पथ्य में सैन्धव लवण से युक्त मूँग का यूष, खर्जूर, छुहारा, इक्षुरस और मुनक्का देना चाहिए।

मात्रा–१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) पित्तभावित होने के कारण अल्प मात्रा में दें। अन्यथा अत्यन्त दाहोत्पादक हो जायेगी। **अनुपान**–दही के साथ मिलाकर। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–लवणीय। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३१२. सूचिकाभरण रस (शार्ङ्गधर)

विषं पलमितं सूतः शाणिकश्चूर्णयेद् द्वयम्।
तच्चूर्णं सम्पुटे क्षिप्त्वा काचलिप्तशरावयोः ॥७४६॥
मुद्रां दत्त्वा च संशोष्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत्।
वह्निं शनैः शनैः कुर्यात् प्रहरद्वयसंख्यया ॥७४७॥
तत उद्घाटयेन्मुद्रामुपरिस्थः शरावकात्।
संलग्नो यो भवेत्सूतस्तं गृह्णीयाच्छनैः शनैः ॥७४८॥
वायुस्पर्शो यथा न स्यात्तथा कूप्यां निवेशयेत्।
यावत्सूच्या मुखे लग्नं कूप्या निर्याति भेषजम् ॥७४९॥
तावन्मात्रो रसो देयो मूर्च्छिते सन्निपातिनि।
क्षुरेण प्रच्छिते मूर्ध्नि तत्राङ्गुल्या च घर्षयेत् ॥७५०॥
रक्तभेषजसम्पर्कान्मूर्च्छितोऽपि हि जीवति।
तथैव सर्पदष्टस्तु मृतावस्थोऽपि जीवति ॥७५१॥
यदा तापो भवेत्तस्य मधुरं तत्र दीयते ॥७५२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शुद्ध वत्सनाभविष चूर्ण ४६ ग्राम एवं २. शुद्ध पारद ६ ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद तथा थोड़ा विषचूर्ण एक साथ मर्दन करें। थोड़ा-थोड़ा वत्सनाभ चूर्ण उसमें डालते रहें। कुछ देर में पारद चूर्ण होता जायेगा। सम्पूर्ण वत्सनाभ चूर्ण उसमें मिला दें। अब पारद निश्चन्द्र हो जायेगा। सात बार कपड़मिट्टी की हुई आतसी शीशी या हरे रंग की बोतल में औषधि भरकर बालुकायन्त्र में धीरे-धीरे २ प्रहर (६ घण्टे) तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सावधानीपूर्वक कूपी तोड़कर कूपी के ऊपरी भाग से धीरे-धीरे खुरच कर औषधि को तुरन्त चौड़े मुख की शीशी में सुरक्षित रख लें। ध्यान रहे कि ज्यादा देर तक उक्त औषधि को हवा का स्पर्श नहीं होने दें। एक शीशी Stoppard नाम की आती है जिसमें वायु नहीं प्रवेश करती है। निःसंज्ञ सन्निपातज्वर के रोगी के ब्रह्मरन्ध्र (शिर के मध्य भाग) का बाल अस्तुरे से बनाकर वहाँ पर अस्तुरे से क्रास (+) कर दें और उसी क्षत प्रदेश पर उक्त रसौषधि को सूई की नोक से निकाल कर लगा दें और अंगुली से औषधि का मर्दन करें, जिससे रक्त के साथ भलीभाँति औषधि का सम्पर्क हो जाय। रक्त से औषधि का सम्पर्क होते ही मूर्च्छित सन्निपातज्वरी शीघ्र ही होश में आ जाता है। इसी प्रकार की चिकित्सा से सर्पदष्ट रोगी भी बेहोशी त्याग देता है और स्वस्थ हो जाता है। इस औषधि-प्रयोग के बाद यदि शरीर में अधिक गर्मी मालूम पड़े तो पूर्ववर्णित सूचिकाभरण रस में कथित शीत एवं मधुरोपचार करना चाहिए। यहाँ भी मस्तक पर शीतल जलधारा, नारियल का जल-पान, मधुर चीनी का शर्बत, चन्दनादि का लेप करना चाहिए।

मात्रा–१ सरसो जितनी मात्रा। **अनुपान**–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्वेत। **स्वाद**–स्वाद नहीं चखें। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

३१३. वाडव रस (रसेन्द्रचिन्तामणि)

पटुना पूरयेत् स्थाली तन्मध्ये पटुमूषिकाम्।
तन्मध्ये रामठीमूषा तन्मध्ये सूतकं क्षिपेत् ॥७५३॥
विषं निघृष्य सूतांशं वारिणाऽऽलोड्य सप्तभिः।
कृते त्रिभिः सङ्गुणिते तेन चैवं दहेच्छनैः ॥७५४॥
वह्निं प्रज्ज्वालयेच्चोग्रं हठाद् यामचतुष्टयम्।
तद्भस्म तिलमात्रन्तु दद्यात् सर्वेषु पाप्मसु ॥७५५॥
ग्रहण्यां जठरे शूले मन्दाग्नौ पवनामये।
युक्तमेतन्निहन्त्येव कुर्याद्बहुतरां क्षुधाम् ॥७५६॥
तापे शीतक्रियां कुर्याद् वाडवाख्ये रसोत्तमे ॥७५७॥

१. शुद्ध पारद १ भाग (१० भाग) तथा २. शुद्ध वत्सनाभ विष चूर्ण १ भाग (१० ग्राम)—मिट्टी की एक हाँडी में ४ किलो सैन्धवलवण चूर्ण भरें। अब सैन्धवलवण में ही खोद कर एक छोटी मूषा या शराव बनावें। पुनः १५० ग्राम हींग की एक छोटी मूषा बनावें, साथ ही उसका एक ढक्कन भी। हींग की मूषा नमक की मूषा में घुस जाय ऐसा बनाना चाहिए। इसके बाद एक पत्थर के खरल में पारद एवं वत्सनाभविष चूर्ण को एक साथ ३ घण्टे तक मर्दन करें और हींगवाली मूषा में मर्दित पारद एवं वत्सनाभ को रखकर हींग के ढक्कन से मूषा को बन्द कर लवण के मूषे में रखें तथा उसका मुख भी लवण के ढक्कन से बन्द कर उसे लवणपूरित हाँडी (लवण यन्त्र) में ठीक से रख कर १२ घण्टे तक तीव्राग्नि में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर लवण यन्त्र स्थित हींग की मूषा से पारदीय औषधि को निकाल कर शीशी में सुरक्षित कर लें। तिल प्रमाण उक्त रसौषधि को सभी प्रकार के ज्वरों—विशेषकर सन्निपातज्वर, ग्रहणी, उदररोग, शूल, मन्दाग्नि एवं वायु रोगों में देने से अत्यधिक लाभ मिलता है। पाप्मा = ज्वर को कहते हैं। इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है। औषधि-प्रयोग से यदि ताप, प्यास आदि पैत्तिक लक्षण बढ़ते हों तो शीतोपचार करना चाहिए।

मात्रा–१० मि.ग्रा.। **अनुपान**–कैप्सूल में भरकर जल से निगल जाय। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्वेत। **स्वाद**–स्वाद नहीं लेना चाहिए। **उपयोग**–सन्निपात में।

विमर्श—चूँकि यह पारद की निर्गन्ध मूर्च्छन है, अतः सीधे मुख में नहीं लेना चाहिए। अन्यथा मुखपाकादि उपद्रव सम्भव है।

३१४. कालाग्निभैरव रस (रसराजसुन्दर)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मर्दयेद्गोक्षुरद्रवैः।
भावितञ्च विशोष्याथ चूर्णयदतिचिक्कणम् ॥७५८॥
चूर्णतुल्यं मृतं ताम्रं ताम्रादष्टांशकं विषम्।
हिङ्गुलं रसभागञ्च द्वौ भागौ कनकस्य च ॥७५९॥
बाणभागाऽत्र गोदन्ती बाणभागा मनःशिला।
टङ्कणं नेत्रभागञ्च ऋतुभागञ्च खर्परम् ॥७६०॥
ब्रह्मभागञ्च जैपालं नेत्रभागं हलाहलम्।
माक्षिकं चाग्निभागञ्च लौहवङ्गञ्च भागकम् ॥७६१॥
सर्वान् खल्लोदरे क्षिप्त्वा क्षीरेणार्कस्य मर्दयेत्।
दशमूलकषायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥७६२॥
पञ्चमूलकषायेण तथैव च विमर्दयेत्।
चणमात्रां वटीं कृत्वा बलं ज्ञात्वा प्रयोजयेत् ॥७६३॥
सर्वं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
पूर्ववद्दापयेत्पथ्यं जलयोगञ्च कारयेत् ॥७६४॥
पथ्यं शाल्योदनं ज्ञेयं दधिभक्तसमन्वितम्।
कालाग्निभैरवो नाम रसोऽयं सूरिपूजितः ॥७६५॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. ताम्र भस्म ३० ग्राम, ४. शुद्ध वत्सनाभ ३$\frac{1}{3}$ ग्राम, ५. शुद्ध हिङ्गुल १० ग्राम, ६. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण २० ग्राम, ७.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गोदन्तीभस्म ५० ग्राम, ८. शुद्ध मैनसिल ५० ग्राम, ९. शुद्ध सुहागा ३० ग्राम, १०. खर्परभस्म अभाव में यशदभस्म ६० ग्राम, ११. शुद्ध जयपाल १० ग्राम, १२. शुद्ध वत्सनाभविष ३० ग्राम, १३. सुवर्णमाक्षिकभस्म ३० ग्राम, १४. लौहभस्म १० ग्राम और १५. वङ्गभस्म १० ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। ततः गोक्षुर क्वाथ की भावना दें। भावना सूखने पर हिंगुल और शुद्ध मैनसिल मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर अर्कदुग्ध की भावना दें। पुनः दशमूल क्वाथ से ३ घण्टे तक मर्दन करें और पञ्चमूल क्वाथ से पुनः भावना देकर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा कर काचपात्र में संग्रहीत करें। १ वटी की मात्रा में त्रिदोषज तथा सभी प्रकार के भयंकर सन्निपात ज्वर में देने से तुरन्त ज्वर नष्ट होकर रोगी स्वस्थ हो जाता है। तुरन्त दाह-ताप में वृद्धि हो तो पूर्ववत् शीतोपचार करना चाहिए। पथ्य में शालि चावल के भात एवं दही खिलाना चाहिए। कालाग्निभैरव रस नाम की यह दवा देवताओं द्वारा प्रशंसित है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–नारियल-जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३१५. त्रैलोक्यचिन्तामणि रस (रसराजसुन्दर)

रसभस्म त्रयो भागा द्विभागञ्च भुजङ्गमम्।
कालकूटञ्च षड्भागं भागैकं तालकं तथा ॥७६६॥
गोदन्ती गगनं तुत्थं शिलागन्धकटङ्कणम्।
जयपालोन्मत्तदन्त्यः करवीरञ्च लाङ्गली ॥७६७॥
पलाशमूलजैर्नीरैः सप्तधा भावितं दृढम्।
चित्रमूलकषायेण चार्द्रकस्य च वारिणा ॥७६८॥
मात्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहडौण्डुभैः ।
मायुभिर्दशधा मर्द्यं शिलाखल्ले च संक्षयात् ॥७६९॥
धान्यद्वयां वटीं कुर्याच्छुद्धभाण्डे च धारयेत्।
दातव्यं चानुपानेन नारिकेलोदकेन च ॥७७०॥
ताम्बूलञ्च ततो दद्याद् भक्ष्यं शीतोपचारकम्।
तिलतैले सदा स्नानं घृतमत्स्यादिभोजनम् ॥७७१॥
शीताम्लं दधिसंयुक्तं पुराणान्नं च भक्षयेत् ॥७७२॥

१. रससिन्दूर ३ भाग, २. नागभस्म २ भाग, ३. शुद्ध वत्सनाभ विष ६ भाग, ४. शुद्ध हरताल १ भाग, ५. गोदन्ती भस्म १ भाग, ६. अभ्रकभस्म १ भाग, ७. शुद्ध तुत्थ १ भाग, ८. शुद्ध मैनसिल १ भाग, ९. शुद्ध गन्धक १ भाग, १०. शुद्ध सोहागा १ भाग, ११. शुद्ध जयपाल १ भाग, १२. शुद्ध धत्तूरबीज १ भाग, १३. कनेरमूल १ भाग और १४. कलिहारीमूल १ भाग—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रससिन्दूर को पीस लें। पुनः हरताल एवं गन्धक भी उसी के साथ पीस लें। उसके बाद वत्सनाभ, मैनसिल आदि पीसें, ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर एक साथ मर्दन करें। इसके बाद पलाशमूलत्वक् क्वाथ की सात भावना दें, पुनः चित्रकमूल क्वाथ एवं आर्द्रकस्वरस और पञ्चपित्त (रोहू मछली, मयूर, भैंस, बकरा एवं सूअर के पित्त) तथा डुण्डुभ नामक सर्प के पित्त से प्रत्येक आठ द्रवों से १०-१० भावना दें। इसके बाद $\frac{१}{२}$ - $\frac{१}{२}$ रत्ती की वटियाँ बनाकर छाया में सुखा कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इन दिनों यह मात्रा अधिक है। अतः मुद्ग की मात्रा में वटी बनाकर रखें। भयंकर सन्निपातज्वर से पीड़ित व्यक्ति को १ वटी नारियल के जल से दें तथा बाद में दो बीड़ा ताम्बूल खिलाना चाहिए। पूर्ववत् शीतोपचार (शीतज जल से शिर पर धारा, बर्फ की थैली (Ice bag), शिर पर शीतल जल की पट्टी आदि रखें, नारियल-जल में चीनी घोल कर हमेशा पिलावें। पुराना चावल का भात और खट्टा दही, तक्र, घृतमर्जित मांस, मछली आदि का भोजन करावें।

मात्रा–६० मि.ग्रा.। **अनुपान**–नारियल-जल से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–गहरा कत्थई। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३१६. सन्निपातसूर्यरस (रसे.चि.म.)

रसेन गन्धं द्विगुणं गृहीत्वा
तत्पादताम्रं हरितालहेम।
भस्मीकृतं योजय मर्दयेत्तु
दिनत्रयं वह्निरसेन घर्मे ॥७७३॥

विषञ्च दत्त्वाऽत्र कलाप्रमाण-
मजादिपित्तैः परिभावयेच्च।
रक्तिद्वयञ्चास्य ददीत वह्नि-
कटुत्रयेणार्द्ररसप्रयुक्तम् ॥७७४॥
तैलेन चाभ्यक्तवपुश्च कुर्यात्
स्नानं जलेनैव सुशीतलेन।
यावद्भवेद् दुःसहमस्य शीतं
मूत्रं पुरीषञ्च शरीरकम्पः ॥७७५॥
पथ्ये यदिच्छा परिजायतेऽस्य
मरीचखण्डं दधिभक्तकञ्च।
अल्पं ददीतार्द्रकमत्र शाकं
दिनाष्टकं स्नानमिदञ्च पथ्यम् ॥७७६॥

१. शुद्ध पारद ४ भाग, २. शुद्ध गन्धक ८ भाग, ३. ताम्र भस्म १ भाग, ४. शुद्ध हरताल १ भाग, ५. स्वर्णभस्म १ भाग

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तथा ६. शुद्ध वत्सनाभविष चूर्ण पारद का १६ भाग—सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। उसमें हरताल, ताम्र, स्वर्ण भस्म मिलाकर अच्छी तरह मर्दन कर चित्रकस्वरस या क्वाथ से धूप में बैठकर ३ दिनों तक मर्दन करें। अब इसके बाद वत्सनाभ चूर्ण मिलाकर पञ्चपित्तों (रोहू मछली, सूअर, भैंस, बकरा और मयूर के पित्त) से एक-एक भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काच की शीशी में सुरक्षित रख लें।

भयंकर सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को १ वटी की चित्रकमूल चूर्ण, मरिच चूर्ण, पीपर चूर्ण तथा शुण्ठी चूर्ण—ये चारों चूर्ण सम्मिलित रूप से १ ग्राम लें और आर्द्रकरस के साथ दें। रोगी के शरीर में तैलमालिश कर शीतल जल से स्नान तब तक कराना चाहिए जब तक शीत से कँपकँपी न होने लगे, मूत्रोत्सर्ग, पुरीषोत्सर्ग आदि नहीं होने लगें। बाद में इच्छानुसार दही-भात, मिश्री, मरिच चूर्ण पथ्य में खिलावें। थोड़ी मात्रा में हरा शाक भी भोजन में दें। रोज स्नान करावें। ऐसी व्यवस्था ८ दिनों तक करें।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

३१७. वडवानल रस-१ (रसरोजसुन्दर)

कान्तञ्च सूतं हरितालगन्धं
समुद्रफेनं लवणानि पञ्च।
नीलाञ्जनं तुत्थकमेव रौप्य-
भस्म प्रवालानि वराटिकाश्च ॥७७७॥
वैक्रान्तशम्बूकसमुद्रशुक्ति
सर्वाणि चैतानि समानि कुर्यात्।
सूतं भवेद् द्वादशभागकञ्च
स्नुह्यर्कदुग्धेन विमर्दयेच्च ॥७७८॥
दिनत्रयं वह्निरसैस्ततश्च
निवेशयेत्ताम्रजसम्पुटे तत्।
मृदा च संलिप्य सुसम्पुटेत्
तद्रसस्ततः स्याद्वडवानलाख्यः॥७७९॥
तत्पादभागेन विषं नियोज्य
कृशानुतोयेन पचेत् क्षणं तत्।
वातप्रधाने च कफप्रधाने
नियोजयेत् त्र्यूषणचित्रयुक्तम्॥
दोषत्रयोत्थेऽपि च सन्निपाते
वाताधिकत्वादिनिषूदनाय ॥७८०॥

१. कान्तलोह भस्म, २. शुद्ध पारद, ३. शुद्ध हरताल, ४. शुद्ध गन्धक, ५. समुद्रफेन, ६. सैन्धवलवण, ७. सौवर्चल लवण, ८. सामुद्रलवण, ९. विडलवण, १०. औद्भिल्लवण, ११. शुद्ध नीलाञ्जन, १२. शुद्ध तुत्थ, १३. रजतभस्म, १४. प्रवालभस्म, १५. कौडीभस्म, १६. वैक्रान्तभस्म, १७. क्षुद्रशंख (शम्बूक) भस्म, १८. बड़ी सीपभस्म और १९. शुद्ध वत्सनाभ—क्रम संख्या १ से १८ अर्थात् कान्तलोह से सीप पर्यन्त सभी द्रव्य २०-२० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः वत्सनाभ छोड़कर अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और स्नुही एवं अर्क के दूध की १-१ भावना दें तथा चित्रकमूल क्वाथ के साथ ३ दिनों तक भावना देकर औषधि को गोला बनाकर सुखा लें। पुनः ताम्र की दो कटोरी लें। एक कटोरी में उक्त गोला रखकर दूसरी कटोरी से सम्पुट कर कपड़मिट्टी से अच्छी तरह से बन्द करें और कुक्कुटपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोल कर सावधानी से औषधि निकालें और उस औषधि को तौलें। उस औषधि से चौथाई भाग शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण मिलाकर चित्रकमूल स्वरस या क्वाथ में पुटित औषधि एवं वत्सनाभ चूर्ण घोलकर छोटी कड़ाही या स्टील के पात्र में रख कर आग पर पका लें। जब चित्रकमूल क्वाथ पूर्णरूपेण सूख जाय तो उतार कर औषधि को धूप में अच्छी तरह से सुखा कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

१ रत्ती की मात्रा में चित्रकमूल एवं त्रिकटु चूर्ण के साथ सभी दोषों की प्रबलता युक्त सन्निपात ज्वर में देने से सद्यः लाभ होता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–चित्रकमूल चूर्ण त्रिकटु चूर्ण से मधु मिलाकर। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–कृष्णवर्ण। **स्वाद**–लवणीय। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

३१८. वडवानल रस-२ (र.सा.सं.)

सूतकं गन्धकं चैव हरितालं मनःशिला।
अभ्रकं वत्सनाभं च दारु जङ्गमजं विषम् ॥७८१॥
जैपालात्सार्द्धशतकं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत्।
मात्स्यमाहिषमायूरच्छागपित्तैर्विभावयेत् ॥७८२॥
वटिकां शीततोयेन कुर्याद् गुञ्जाप्रमाणतः।
वडवानलनामाऽयं नारिकेलजलेन वै ॥७८३॥
भक्षयेत्सन्निपातार्त्तो मुक्तस्तस्मात्सुखी भवेत् ॥७८४॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध हरताल, ४. शुद्ध मैनसिल, ५. अभ्रक भस्म, ६. शुद्ध वत्सनाभ विष, ७. शुद्ध शंखिया, ८. सर्पविष एवं ९. शुद्ध जयपालबीज १५० नग का शोधित उपर्युक्त शुद्ध पारद के सर्पविष तक के सभी द्रव्य समभाग में १२-१२ ग्राम (१-१ तोला) लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। १५० नग जयपालबीज लेकर शुद्ध कर लें। कज्जली में हरताल एवं

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मैनसिल पहले मिलावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः रोहू मछली, भैंस, मयूर एवं बकरी के पित्त की १-१ भावना दें और १२५ मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया तथा धूप में सुखावें। ततः काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सन्निपातज्वर से पीड़ित ज्वरी को १-१ रत्ती शीतल जल अथवा नारिकेल के जल से दें। इससे ज्वर नष्ट हो जाता है। इसे वडवानल रस कहते हैं। आवश्यकतानुसार शीतोपचार करना चाहिए।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–नारियल-जल। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

३१९. वडवानल रस—३ (रसकल्पद्रुम)

रसांशकं विषं च स्यात् षट्षड् गन्धकतालयोः ।
दन्तीबीजस्य षड्भागाः पञ्चभागन्तु टङ्गणम् ॥७८५॥
चत्वारो धूर्त्तबीजस्य व्योषभागत्रयं भवेत् ।
एतानि वह्निमूलस्य क्वाथेन परिमर्दयेत् ॥७८६॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ देयं गुञ्जाद्वयं द्वयम् ।
वडवानलसंज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥७८७॥
नारिकेलोदकं देयं पिबेच्च शर्करोदकम् ।
क्षीरान्नं दापयेत् पथ्यं वडवाऽनलनामके ॥७८८॥

१. शुद्ध पारद १ भा., २. शुद्ध वत्सनाभ १ भा., ३. शुद्ध हरताल ६ भा., ४. शुद्ध गन्धक ६ भा., ५. शुद्ध जयपालबीज ६ भा., ६. शुद्ध सोहागा ५ भा., ७. शुद्ध धत्तूरबीज ६ भा. तथा ८. त्रिकटु ३ भाग ग्रहण करें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः हरताल मिलाकर मर्दन करें। पुनः अन्य द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर चित्रकमूल क्वाथ एवं आर्द्रकस्वरस की १-१ भावना देकर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनावें तथा छाया में अच्छी तरह सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे वडवानल रस कहते हैं। सन्निपातज्वर से पीड़ित व्यक्ति को १-१ वटी नारियल के जल में चीनी मिलाकर लेना चाहिए। इससे ज्वर नष्ट हो जाता है। इस वडवानल रस के प्रयोग के बाद पथ्य में दूध-भात देना चाहिए। शीतोपचार तथा पुनः-पुनः नारियल का जल एवं चीनी मिलाकर पीने को देना चाहिए।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–नारियलजल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

३२०. स्वच्छन्दनायक रस (र.सा.सं.)

सूतगन्धकलोहानि रौप्यं संमर्दयेत् त्र्यहम् ।
सूर्यावर्त्तस्य निर्गुण्ड्यास्तुलस्या गिरिकर्णिजैः ॥७८९॥
अग्निमन्थार्द्रजैर्वह्निविजयाऽद्भिर्जयासहा ।
काकमाचीरसैरासां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥७९०॥
अन्धमूषागतं पश्चाद्वालुकायन्त्रगं दिनम् ।
आदाय चूर्णितं खादेन्माषैकं चार्द्रकद्रवैः ॥७९१॥
निर्गुण्डीदशमूलानां कषायं सोषणं पिबेत् ।
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ।
छागीदुग्धेन मुद्गैर्वा पथ्यमत्र प्रयोजयेत् ॥७९२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लोहभस्म तथा ४. चाँदीभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य दोनों भस्मों को मिलाकर मर्दन करें और सूर्यमुखी, सिन्दुवारपत्रस्वरस, तुलसीपत्रस्वरस, अपराजितापत्रस्वरस, अरणीमूलस्वरस, आर्द्रकस्वरस, चित्रकमूल क्वाथ, भाँग स्वरस, जयन्तीस्वरस, सहचरस्वरस, काकमाचीस्वरस तथा रोहू मछली के पित्त, भैंस के पित्त, सूअर के पित्त, बकरे के पित्त एवं मयूर के पित्त की १-१ भावना दें। अर्थात् इन १५ द्रव्यों के रसों एवं पित्तों से १-१ भावना दें और इसको १ बड़ा गोला बनाकर सुखा लें एवं शरावसम्पुट कर बालुकायन्त्र में १ दिन तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर निकाल कर जल से भावना देकर $\frac{१}{२}$ - $\frac{१}{२}$ रत्ती (६० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया एवं धूप में सुखाकर शीशी में सुरक्षित रख लें। यह स्वच्छन्दनायक रस सन्निपातज्वर, अभिन्यास ज्वर का नाश करता है। पथ्य में बकरी का दूध एवं मूँग के यूष का प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपात एवं अभिन्यास ज्वर में।

३२१. सिंहनाद रस (र.सा.सं.)

लौहपात्रगते गन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत् ।
शुद्धसूतं समं चाभ्रं भार्गीद्रावं तयोः समम् ॥७९३॥
निर्गुण्ड्युत्थं करञ्जस्य तुल्यं द्रावं विनिक्षिपेत् ।
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावच्छुष्कं द्रवत्रयम् ॥७९४॥
विषं पादयुतः सोऽयं सिंहनादरसोत्तमः ।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यः सन्निपातज्वरान्तकः ॥७९५॥
अनुपानैः पिबेत् क्वाथं कण्टकार्याः सपुष्करम् ।
गुडूचीनागरैर्युक्तमरुचौ श्वासकासयोः ॥७९६॥

१. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, २. शुद्ध पारद २० ग्राम एवं ३. शुद्ध अभ्रकभस्म २० ग्राम—सर्वप्रथम लोहे की बड़ी दर्वी में १० बूँद घी देकर प्रतप्त करें और उसी में २० ग्राम शुद्ध गन्धक चूर्ण डालकर निर्धूम अग्नि पर दर्वी को रख कर चम्मच से गन्धक को चलाते रहें। जब गन्धक द्रवित हो जाय तो उसमें २०

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम पारद डालकर चम्मच से मिलाकर रख दें। कुछ काला चूर्ण होने पर उसमें क्रमशः भारंगीस्वरस, सिन्दुवारपत्रस्वरस, करञ्जपत्रस्वरस प्रत्येक द्रव ४०-४० मि.ली. डाल कर अग्नि पर ही सुखावें। एक द्रव सूखने पर दूसरा द्रव डालें। पुनः शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण सबका चतुर्थांश (१५ ग्रा.) डालकर खरल में मर्दन करें। सूखने पर औषधि को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में कण्टकारी स्वरस या क्वाथ में पुष्करमूल चूर्ण डालकर अनुपान रूप में सेवन करने से सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। इसी मात्रा में गुडूचीस्वरस एवं शुण्ठी चूर्ण से सेवन करने पर अरुचि, कास एवं श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–कण्टकारीस्वरस एवं पुष्करमूल चूर्ण। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३२२. कस्तूरीभैरव रस (स्वल्प) (र.सा.सं.)

हिङ्गुलञ्च विषं टङ्कं जातीकोषफले तथा।
मरिचं पिप्पली चैव कस्तूरी च समांशिका॥
रक्तिद्वयं ततः खादेत् सन्निपाते सुदारुणे॥७९७॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण, ३. शुद्ध सोहागा, ४. जावित्री चूर्ण, ५. जायफल चूर्ण, ६. मरिच चूर्ण, ७.पीपर चूर्ण तथा ८. कस्तूरी—सभी द्रव्य २०-२० ग्राम लें। सर्वप्रथम इन सभी द्रव्यों को खरल में रख कर भलीभाँति मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। भयंकर सन्निपातज्वर से पीड़ित व्यक्ति को २ रत्ती की मात्रा में मधु एवं आर्द्रक के रस से खिलावें। इसके प्रयोग से सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। जल की भावना देकर २-२ रत्ती की वटी भी बना सकते हैं।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–कस्तूरी जैसी सुगन्धी। **वर्ण**–कॉफी वर्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

३२३. कस्तूरीभैरव रस (मध्यम) (र.सा.सं.)

मृतं वङ्गं खर्परं च कस्तूरीस्वर्णतारके।
एतेषां समभागेन कर्षमेकं पृथक् पृथक्॥९७८॥
मृतं कान्तं पलं देयं हेमसारं द्विकार्षिकम्।
रसभस्म लवङ्गं च जातिकाफलमेव च॥७९९॥
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम्।
द्रोणपुष्पीरसैर्वाऽपि नागवल्ल्या रसेन च॥८००॥
द्विश्चन्द्रं त्रिकटुं दत्त्वा यत्नतो वटिकां चरेत्।
वातात्मके सन्निपाते महाश्लेष्मगदेषु च॥८०१॥
त्रिदोषजनिते घोरे सन्निपाते सुदारुणे।
नष्टगर्भे नष्टशुक्रे प्रमेहे विषमज्वरे॥८०२॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे महाशोथे महागदे।
स्त्रीणां शतं गच्छतश्च न च शुक्रक्षयो भवेत्।
एतान् सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥८०३॥

१. वङ्गभस्म १ भाग, २. खर्परभस्म १ भाग, ३. कस्तूरी १ भाग, ४. स्वर्णभस्म १ भाग, ५. चाँदीभस्म १ भाग, ६. कान्तलोहभस्म ४ भाग, ७. धत्तूरघनसार २ भाग, ८. रससिन्दूर २ भाग, ९. लवङ्ग चूर्ण २ भाग, १०. जायफल चूर्ण २ भाग, ११. त्रिकटु चूर्ण २ भाग और १२. कर्पूर २ भाग—सर्वप्रथम पत्थर के १ खरल में रससिन्दूर डालकर पीसें। ततः भस्मों को उसमें मिलाकर मर्दन करें और अन्य सभी द्रव्यों को मिलावें। पुनः द्रोणपुष्पी (गूमा) स्वरस और ताम्बूलपत्रस्वरस की ७-७ भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें।

वातोल्बण सन्निपात, कफज सन्निपात तथा त्रिदोषजन्य भयंकर सन्निपातज्वर में १-१ वटी आर्द्रक के रस से देने पर बहुत लाभ करता है। नष्टगर्भा स्त्री, नष्टशुक्र पुरुष, प्रमेह, विषमज्वर, कास, श्वास, क्षय, गुल्म, शोथ और महारोगों का नाश करता है। इसके सेवन से पुरुष द्वारा १०० स्त्रियों के साथ रमण करने पर भी उसका शुक्रक्षय नहीं होता है। जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट कर देता है उसी प्रकार उपर्युक्त रोगों को यह रसौषधि नष्ट कर देती है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु। **गन्ध**–कस्तूरी जैसी सुगन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपात एवं अन्य सभी ज्वरों में।

३२४. कस्तूरीभैरव रस (बृहद्) (र.सा.सं.)

मृगमदशशिसूर्या धातकी शूकशिम्बी
रजतकनकमुक्ता विद्रुमं लोहपाठाः।
क्रिमिरिपुघनविश्वा वारितालाभ्रधात्री
रविदलरसपिष्टं कस्तुरीभैरवोऽयम्॥८०४॥
कस्तूरीभैरवः ख्यातः सर्वज्वरविनाशनः।
आर्द्रकस्य रसैः पेयो विषमज्वरनाशनः॥८०५॥
द्वन्द्वजान्भौतिकान्वाऽपि ज्वरान्कामादिसम्भवान्।
अभिचारकृतांश्चैव तथा शत्रुकृतान् पुनः॥८०६॥
निहन्याद्धक्षणादेव डाकिन्यादियुतांस्तथा।
(बिल्वचूर्णजीरकाभ्यां मधुना सह पानतः॥८०७॥
आमातिसारं ग्रहणीं ज्वरातीसारमेव च।
अग्निदीप्तिकरः शान्तः कासरोगनिकृन्तनः॥८०८॥
क्षपयेद् भक्षणादेव मेहरोगं हलीमकम्।
जीर्णज्वरं नूतनं वा द्विकालीनञ्च सन्ततम्॥८०९॥
आक्षेपं भौतिकं वाऽपि हन्ति सर्वान् विशेषतः।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकं चतुराहिकम्॥८१०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पञ्चाहिकं षष्ठाहं वा पाक्षिकं मासिकं पुनः।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशु भक्षणादार्द्रकद्रवैः ॥८११॥)

१. कस्तूरी, २. कर्पूर, ३. ताम्रभस्म, ४. धातकी चूर्ण, ५. केवाँचबीज चूर्ण, ६. स्वर्णभस्म, ७. रजतभस्म, ८. मोतीभस्म, ९. प्रवालभस्म, १०. लोहभस्म, ११. पाठा चूर्ण, १२. विडङ्ग चूर्ण, १३. नागरमोथा चूर्ण, १४. शुण्ठी चूर्ण, १५. सुगन्धबाला चूर्ण, १६. शुद्ध हरताल, १७. अभ्रकभस्म और १८. आमला चूर्ण—सभी द्रव्य समभाग में लें। एक खरल में सभी द्रव्यों को रख कर मर्दन करें और अर्कपत्रस्वरस की भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे कस्तूरीभैरव रस कहते हैं। यह रसौषधि सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है।

आर्द्रक के रस के अनुपान से लेने पर विषमज्वरनाशक है। द्वन्द्वज ज्वर, भौतिक ज्वर, कामादि ज्वर, अभिचार ज्वर, शत्रुकृत डाकिनी-भूत-प्रेत आदि बाधाजन्य ज्वरनाशक है। बिल्वफलमज्जा एवं जीरा चूर्ण तथा मधु के साथ देने से आमातीसार, ग्रहणी एवं ज्वरातिसार रोग नष्ट हो जाते हैं। यह अग्निदीपक है। इसके अतिरिक्त यह रसौषधि अनुपान भेद से कास, प्रमेह, हलीमक, जीर्णज्वर, नवज्वर, दिन में दो बार आने वाला ज्वर, सन्तत ज्वर, ऐकाहिक ज्वर, द्व्याहिक ज्वर, त्र्याहिक ज्वर, चातुर्थिक ज्वर, पञ्चाहिक ज्वर, षष्ठाहिक ज्वर, पाक्षिक ज्वर, मासिक ज्वर, आक्षेप ज्वर आदि सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रक, ताम्बूल एवं मधु से। **गन्ध**–कस्तूरी जैसी सुगन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३२५. कस्तूरीभूषण रस

रसाभ्रटङ्कणं शुण्ठी कस्तूरी पिप्पली तथा।
दन्तीमूलं जयाबीजं कर्पूरं मरिचं समम् ॥८१२॥
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेत् सप्तवारकम्।
शृङ्गबेररसैर्युक्तिं योजयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥८१३॥
वातश्लेष्मणि मन्देऽग्नौ पित्तश्लेष्माधिकेऽपि च।
त्रिदोषजनिते घोरे कासे श्वासे क्षये तथा ॥८१४॥
ऊर्ध्वजत्रुगरोगे च सशोथे विषमज्वरे।
एष सर्वामयान् हन्ति शुक्रौजोबलवर्द्धनः ॥८१५॥

१. रससिन्दूर, २. अभ्रक-भस्म, ३. शुद्ध सोहागा, ४. शुण्ठी चूर्ण, ५. कस्तूरी, ६. पीपर चूर्ण, ७. दन्तीमूल चूर्ण, ८. भाँग के बीज, ९. कपूर तथा १०. मरिच चूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में (५०-५० ग्राम) लें। एक पत्थर के खरल में रससिन्दूर एवं अभ्रक भस्म को मर्दन करें। तत्पश्चात् अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को मिलाकर मर्दन करें और आर्द्रक के रस से ७ भावना देकर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखावें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। आर्द्रक के रस से १ वटी देने पर वात-कफज्वर, मन्दाग्नि, पित्तकफ ज्वर, सन्निपात ज्वर, भयंकर कास, श्वास, क्षय, ऊर्ध्वजत्रुगत रोग, शोथ, विषम ज्वर आदि सभी रोगों का नाश करता है। शुक्र एवं ओज को बढ़ाता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रक या ताम्बूल स्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–कस्तूरी जैसी सुगन्ध। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३२६. अर्कमूर्ति रस (रसराजसुन्दर)

लौहाष्टकं मारितमर्कभागं
सूतं द्विभागं द्विगुणञ्च गन्धम्।
विमर्दयेद्वह्निरसेन तापे
दिनत्रयं चात्र विषं कलांशम् ॥
निक्षिप्य पित्तैः परिभावितोऽयं
रसोऽर्कमूर्त्तिर्भवति त्रिदोषे ॥८१६॥

१. लोहभस्म ८ भाग, २. ताम्रभस्म १ भाग, ३. शुद्ध पारद २ भाग, ४. शुद्ध गन्धक ४ भाग तथा ५. शुद्ध वत्सनाभ- विष १ भाग (सभी औषधों के षोडशांश विष)—सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः लोह एवं ताम्र भस्मों के सूक्ष्म चूर्ण मिलावें और चित्रकमूल क्वाथ के साथ तीन दिनों तक धूप में बैठकर भावना एवं मर्दन करें। पुनः सभी औषधों के षोडशांश शुद्ध विषचूर्ण मिलाकर पञ्चपित्त (रोहू मछली, भैंस, सूअर, बकरा एवं मयूर के पित्त) की १-१ भावना दें और १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसके बाद काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसके प्रयोग से भयंकर सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। इसे अर्कमूर्ति रस कहते हैं। प्रयोगोपरान्त शीतोपचार भी आवश्यकतानुसार करना चाहिए।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३२७. त्रिदोषदावानल रस

ताम्रस्य पात्रे तु दिनैकमात्रं
निम्बूरसेनापि च पित्तवर्गैः।
क्षुद्रार्द्रकोत्थेन रसेन सूत-
स्त्रिदोषदावानल एष सिद्धः ॥८१७॥
गुञ्जाद्वयं त्र्यूषणयुक्तमस्य
ददीत चित्रार्द्ररसेन वापि।
नासापुटे चापि नियोजनीया
गुञ्जाऽस्य शुण्ठी मरिचेन युक्ता ॥८१८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उपर्युक्त अर्कमूर्ति रस को ताम्र के एक खरल में रखें और निम्बूस्वरस के साथ १ दिन मर्दन करें। ततः पञ्चपित्त (रोहू मछली, भैंस, सूअर, बकरा और मयूर के पित्त) मिलाकर १ दिन तक मर्दन करें। तदनन्तर कण्टकारी रस तथा आर्द्रक स्वरस की एक-एक भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। त्रिकटु चूर्ण और चित्रक क्वाथ या आर्द्रक स्वरस के साथ १ वटी मिलाकर नासापुट में नस्य देने से सन्निपातज्वरजन्य मूर्च्छा नष्ट हो जाती है।

३२८. त्रिदोषदावानल कालमेघ रस (रसराजसुन्दर)

तालेन वङ्गं शिलया च नागं
रसैः सुवर्णं रवितारपत्रम्।
गन्धेन लौहं दरदेन सर्वं
पुट मृतं योजय तुल्यभागम् ॥८१९॥
तत्तुल्यसूतं द्विगुणञ्च गन्धं
तुत्थञ्च गन्धेन समानभागम्।
निम्बूत्थतोयेन विमर्द्य सर्वं
गोलं प्रकृत्याथ मृदा विलिप्य ॥८२०॥
पुटञ्च दत्त्वाऽथ विमर्दयैनं
गन्धेन तुल्येन कृशानुनीरैः।
विषञ्च दत्त्वा च कलाप्रमाण-
मीषत्कृशानूत्थरसैः पचेत्तु ॥८२१॥
पित्तैस्तथा भावित एष सूत-
स्त्रिदोषदावानलकालमेघः।
वल्लं ददीतास्य च पूर्वयुक्त्या
दाहोत्तरे तं मधु पिप्पलीभिः।
मुद्गञ्च शाल्यन्नमिह प्रशस्तं
पथ्यं भवेत्कोष्णमिदं दिनान्ते ॥८२२॥

१. तालमारित वङ्ग भस्म ५० ग्राम, २. मैनसिलमारित नाग भस्म ५० ग्राम, ३. पारदमारित सुवर्ण भस्म ५० ग्राम, ४. गन्धक द्वारा मारित ताम्र ५० ग्राम, ५. गन्धक द्वारा मारित रजत ५० ग्राम, ६. हिंगुलमारित लोह भस्म ५० ग्राम, ७. शुद्ध पारद ५० ग्राम, ८. शुद्ध गन्धक १०० ग्राम, ९. गन्धक द्वारा मारित तुत्थ १०० ग्राम और १०. शुद्ध वत्सनाभ विष चूर्ण ३५ ग्राम लें—सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः वत्सनाभ छोड़कर सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद निम्बू के रस में भावना देकर बड़ा-सा गोला बनाकर सुखाकर शराव-सम्पुट करें और कुक्कुटपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोल कर औषधि को निकालें और १०० मि.ली. चित्रकमूल क्वाथ की भावना देकर मर्दन करें। ततः शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और कड़ाही में रख कर चित्रकमूल क्वाथ के साथ अग्नि पर पकावें। सूखने पर औषधि को खरल में रख कर पञ्चपित्त (रोहू मछली, भैंस, बकरा, सूअर एवं मयूर के पित्त) से १-१ भावना दें और धूप में अच्छी तरह सुखा कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे 'त्रिदोषदावानल कालमेघ रस' कहते हैं। १ वल्ल (३ = रत्ती ३७५ मि.ग्रा.) की मात्रा में सन्निपातज्वर की भयंकर अवस्था में प्रयोग करने से सद्यः लाभ होता है। किन्तु यह मात्रा अत्यधिक है। अतः आजकल १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। दाह- प्रधान (पित्त-प्रधान) सन्निपातज्वर में इस रसौषधि को मधु एवं पीपर चूर्ण के साथ देने पर ज्वर शान्त हो जाता है। ततः सन्ध्या समय में मूँग की दाल एवं भात गरम-गरम खिलावें। आवश्यकतानुसार शीतोपचार भी करें।

मात्रा–१२५ से ३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्ररस एवं मधु से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३२९. प्रतापलङ्केश रस (रसमुञ्जरी)

अपामार्गस्य मूलानां चूर्णं चित्रकमूलजैः।
वल्कलैर्मर्दयित्वाऽथ रसं वस्त्रेण गालयेत् ॥८२३॥
तेन सूतसमं गन्धमभ्रकं पारदं विषम्।
टङ्कणं तालकञ्चैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥८२४॥
त्रिदिनं मुशलीकन्दैर्मर्दयेद् घर्मरक्षितम्।
मूषाञ्च गोस्तनाकारामापूर्योपरि ढक्कयेत् ॥८२५॥
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा पुटेल्लघु।
रसतुल्यं लौहभस्म मृतवङ्गमहिन्तथा ॥८२६॥
मधूकसारजलदं रेणुकं गुग्गुलुं शिलाम्।
चाम्पेयञ्च समांशं स्याद्भागार्द्धं शोधितं विषम् ॥८२७॥
तत्सर्वं मर्दयेत् खल्ले भावयेद्विषनीरतः।
आतपे सप्तधा तीव्रं मर्दयेद्घटिकाद्वयम् ॥८२८॥
कटुत्रयकषायेण कनकस्य रसेन च।
फलत्रयकषायेण मुनिपुष्परसेन च ॥८२९॥
समुद्रफलनीरेण विजयापत्रवारिणा।
चित्रकस्य कषायेण ज्वालामुख्या रसेन च ॥८३०॥
प्रत्येकं सप्तधा भाव्यं तद्वत्पित्तैश्च पञ्चभिः।
सर्वस्य समभागेन विषेण परिधूपयेत् ॥८३१॥
विमर्द्य म्रक्षयित्वा च रक्षयेत्कूपिकोदरे।
गुञ्जैकं वह्निनीरेण शृङ्गवेररसेन वा ॥८३२॥
दद्याच्च रोगिणे तीव्रमौढ्यविस्मृतिशान्तये।
क्षुरेण तालुमाहत्य घर्षयेदार्द्रनीरतः ॥८३३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नोद्घटन्ते यदा दन्तास्तदा कुर्यादमुं विधिम्।
सेचयेन्मन्त्रविद्वैद्यो वारिकुम्भशतैर्नरम् ॥८३४॥
भोजनेच्छा यदा तस्य जायते रोगिणः परम्।
दध्योदनं सितायुक्तं दद्यात्तक्रं सजीरकम् ॥८३५॥
पाने पानं सिताजातं यदिच्छेदाददीत तत्।
एवं कृतेन शान्तिः स्यात्तापस्य च रुजस्तथा ॥८३६॥
सचन्द्रचन्दनरसालेपनं कुरु शीतलम्।
यूथिकामल्लिकाजातीपुन्नागवकुलावृताम ॥८३७॥
विधाय शय्यां तत्रस्थां लेपनैश्चन्दनैर्मुहुः।
हावभावविलासोक्तैः कटाक्षैश्चञ्चलेक्षणैः ॥८३८॥
पीनोत्तुङ्गकुचापीडैः कामिनीपरिरम्भणैः।
रम्यवीणानिनादोक्तैर्गायनैः श्रवणामृतैः ॥८३९॥
पुण्यश्लोककथाद्यैश्च सन्तापहरणं कुरु।
दद्याद्वातेषु सर्वेषु सिन्धुजैः सह वह्निभिः ॥८४०॥
दद्यात्कणामाक्षिकाभ्यां कामलाह्वयपाण्डुषु।
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
अयं प्रतापलङ्केशः सन्निपातहरः परः ॥८४१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रकभस्म, ४. शुद्ध वत्सनाभ विष, ५. शुद्ध सोहागा, ६. शुद्ध हरताल, ७. लोह भस्म, ८. वङ्गभस्म, ९. नागभस्म, १०. महुआ फूलसार, ११. नागरमोथा चूर्ण, १२. रेणुका चूर्ण, १३. शुद्ध गुग्गुलु, १४. शुद्ध मैनसिल, १५. नागकेशर चूर्ण और १६. शुद्ध वत्सनाभ विष—क्र.सं. १ से १५ तक द्रव्य १-१ भाग, शुद्ध वत्सनाभ ½ भाग लें। १७. शुद्ध वत्सनाभ विष—सभी भावित द्रव्यों के समभाग धूपनार्थ लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक बड़े खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः हरताल मिलावें। ततः अभ्रक, वत्सनाभ एवं सोहागा मिलाकर अपामार्ग स्वरस एवं चित्रकमूल क्वाथ की ७-७ दिनों तक भावना देकर मर्दन करें। पुनः तीन दिनों तक मुशली रस या क्वाथ की भावना देकर मर्दन करें। तदनन्तर एक मूषा में उपर्युक्त मर्दित औषधि को भर कर ढक्कन से मूषा का मुख बन्द कर ७ बार कपड़मिट्टी कर भूधरपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुटित मूषा खोलकर औषधि निकालकर खरल में औषधि मर्दन करें। ततः लोह भस्म से वत्सनाभ विष चूर्ण तक सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर धूप में बैठकर वत्सनाभ क्वाथ, त्रिकटु क्वाथ, धत्तूरपत्रस्वरस, त्रिफला क्वाथ, अगस्तपुष्परस, समुद्रफलस्वरस, भाँग के क्वाथ, चित्रकमूल क्वाथ, ज्वालामुखी रस (कलिहारीमूल क्वाथ) और पञ्चपित्त (रोहू मछली, भैंस, बकरा, सूअर एवं मयूर के पित्त) से पृथक्-पृथक् प्रत्येक से ७-७ भावना दें। पुनः भावित औषधि को तौल लें और उसके बराबर मात्रा में वत्सनाभ लें। वत्सनाभ को यवकुट कर एक छोटी हाँडी में रखें और हाँडी को निर्धूम अग्नियुक्त चूल्हे पर रखें। अब हाँडी के मुख पर लोहे की जाली की महीन चलनी रखें तथा चलनी में उपर्युक्त भावित रसौषधि को फैला कर रखें, उस चूल्हे और औषधि को निर्जन स्थान पर रखें। स्वाङ्गशीत होने पर चलनी से औषधि को निकालकर मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सन्निपातज्वर से पीड़ित मूर्च्छित रोगी की मूर्च्छाशान्ति हेतु रोगी को १ रत्ती रसौषधि चित्रकमूल क्वाथ अथवा आर्द्रक के रस से सेवन कराना चाहिए। इससे यदि मूर्च्छा की शान्ति नहीं हो तो रोगी की तालू में क्षत कर उसी स्थान में औषधि घिस देना चाहिए। ऐसा करने पर भी रोगी की मूर्च्छा यदि नहीं दूर हो तो मन्त्रज्ञाता वैद्यों के परामर्शानुसार शिर पर १०० घड़ा शीतल जल डालना चाहिए। चैतन्य होने पर तथा भूख लगने पर रोगी को दही-भात और चीनी खिलावें तथा तक्र में भूना जीरा चूर्ण मिलाकर पिलावें और अनेक प्रकार के मधुर एवं सुगन्धित शर्बत पिलावें। रोगी की इच्छानुसार भोजनादि दें। इस तरह के उपचार से रोगी की सन्ताप एवं पीड़ा कम हो जाती है। यदि इस रसौषधि से तथा ज्वर से ताप में वृद्धि हो तो चन्दन, कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों का सर्वाङ्गलेप करें। जूथिका, मल्लिका, बेला, चमेली, पुन्नाग, मौलसरी तथा गुलाब आदि पुष्पों की शय्या एवं माला धारण करावें।

हाव-भाव, विलास एवं कटाक्षपात में निपुण तथा सुन्दरी स्त्रियों से बातचीत करना, चन्दनादि का मोटा लेप, पीनस्तनियों के वक्षःस्थल का आलिङ्गन करना, अनुकूल वाद्यवृन्दों वीणा आदि के कुशल कलाकारों द्वारा संगीत का आनन्द लेना, सुन्दरी गायिकाएँ तथा गायकों का गाना सुनना तथा पुराण आदि का श्रवण करने से सन्ताप दूर होता है। वातज रोगों में इस रसौषधि को सैन्धव लवण एवं चित्रकमूल क्वाथ से दें। कामला एवं पाण्डु रोग में पीपर चूर्ण एवं मधु से देना चाहिए। यह रसौषधि अनुपानभेद से सभी रोगों को नाश करता है। यह प्रतापलंकेश्वर रस सन्निपातज्वर की परमौषधि है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–चित्रक क्वाथ या आर्द्रक स्वरस से। **गन्ध**–धूम्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तीक्ष्ण। **उपयोग**–भयंकर सन्निपात में।

नोट—इस योग में वत्सनाभ विष का तीन बार प्रयोग हुआ है।

३३०. कफकेतु रस (रसे.चि.म.)

टङ्कणं मागधी शङ्खं वत्सनाभं समं समम्।
आर्द्रकस्वरसेनाथ दापयेद् भावनात्रयम् ॥८४२॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमार्द्रकस्वरसैर्युतम्।
पीनसे श्वासकासे च शिरोरोगे गलग्रहे।
कफरोगान्निहन्त्याशु कफकेतुरयं रसः ॥८४३॥

१. शुद्ध सोहागा, २. पीपर चूर्ण, ३. शंखभस्म और ४.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शुद्ध वत्सनाभ विष—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। एक पत्थर के खरल में सभी द्रव्यों को मिलाकर आर्द्रक के रस से तीन भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में भलीभाँति सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस रसौषधि को आर्द्रक के रस के साथ १-१ वटी देने पर पीनस, श्वास, कास, शिरोरोग एवं गलग्रह रोग नष्ट हो जाते हैं। यह कफकेतु रस समस्त कफरोगों की अच्छी औषधि है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–पीनस, श्वास, कास एवं गलग्रह में।

३३१. कफकेतु रस बृहत् (र.रा.सु.)

दग्धशङ्खं त्रिकटुकं टङ्गणं समभागिकम्।
विषञ्च पञ्चभिस्तुल्यमार्द्रतोयेन मर्दयेत् ॥८४४॥
वारत्रयं रक्तिकाभां वटीं कुर्याद्विचक्षणः।
प्रातः सायञ्च वटिकाद्वयमार्द्रकवारिणा ॥८४५॥
कफकेतुः कण्ठरोगं शिरोरोगञ्च नाशयेत्।
पीनसं कफसङ्घातं सन्निपातं सुदारुणम् ॥८४६॥

१. शंख भस्म, २. सोंठ चूर्ण, ३. पीपर चूर्ण, ४. मरिच चूर्ण, ५. शुद्ध सोहागा एवं ६. शुद्ध वत्सनाभ विष—शंखभस्म से सोहागा तक पाँचों द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम और वत्सनाभ चूर्ण २५० ग्राम लें। एक पत्थर के खरल में उपरोक्त सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर आर्द्रक के रस से ३ दिनों तक मर्दन कर भावना दें और १-१ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। १-१ वटी सुबह-शाम आर्द्रक के रस से लेने पर कण्ठरोग, शिरोरोग, पीनस, कफ का संचय एवं भयंकर कफ-प्रधान सन्निपातज्वर का नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रक के रस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–कण्ठ-रोग, शिरोरोग, पीनस तथा कफरोग में।

३३२. श्लेष्मकालानल रस (र.रा.सु.)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम्।
तुत्थं मनोह्वा तालञ्च कट्फलं धूर्त्तबीजकम् ॥८४७॥
समाक्षिकं हिङ्गु कुष्ठं त्रिवृद्दन्तीकटुत्रिकम्।
व्याधिघातफलं वङ्गं टङ्गणं समभागिकम् ॥८४८॥
स्नुहीक्षीरेण वटिकां कारयेत् कुशलो भिषक्।
विज्ञाय कोष्ठं कालञ्च योजयेद्रक्तिकां क्रमात् ॥८४९॥
वातश्लेष्मणि मन्देऽग्नौ पित्तश्लेष्माधिकेऽपि च।
जीर्णज्वरे च श्वयथौ सन्निपाते कफोल्बणे ॥८५०॥
बलासप्रबलं त्यक्त्वा धातुं वातात्मकं नयेत्।
सेवनात्सर्वरोगघ्नः श्लेष्मकालानलो रसः ॥८५१॥

१. हिङ्गुलोत्थ पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्र भस्म, ४. शुद्ध तुत्थ, ५. शुद्ध मैनसिल, ६. शुद्ध हरताल, ७. कायफल चूर्ण, ८. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण, ९. स्वर्णमाक्षिक भस्म, १०. शुद्ध हींग, ११. कूठ चूर्ण, १२. निशोथ चूर्ण, १३. दन्तीमूल चूर्ण, १४. शुण्ठी चूर्ण, १५. पीपर चूर्ण, १६. मरिच चूर्ण, १७. आरग्वधफलमज्जा, १८. वङ्ग भस्म और १९. शुद्ध सोहागा—उपर्युक्त सभी द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः हरताल एवं मैनसिल को मर्दन करें। पुनः सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर स्नुहीक्षीर की भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर अच्छी तरह सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में काल एवं कोष्ठ को समझ कर चिकित्सा में निष्णात वैद्य विभिन्न अनुपान से वातश्लेष्म, पित्तश्लेष्म, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, शोथ, कफोल्बण सन्निपातज्वर में देने से शीघ्र ही लाभ करता है। अत्यन्त प्रवृद्ध कफदोष को शीघ्र ही प्रकृतिस्थ धातु रूप में परिणत कर देता है। यह श्लेष्मकालानल रस अनुपान-भेद से सभी रोगों को दूर करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–हिङ्गुगन्धी। **वर्ण**–कृष्णाभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–कफ-ज्वर, कफ-वातज्वर एवं कफोल्बण सन्निपातज्वर में।

३३३. कालानल रस (र.रा.सु.)

रसं गन्धं मृताभ्रञ्च टङ्गणञ्च मनःशिला।
हिङ्गुलं गरलं दारुविषं ताम्रञ्च तत्समम् ॥८५२॥
विडालपदमात्रन्तु सर्वं शुद्धं विचूर्णयेत्।
भावना च प्रदातव्यं लाङ्गलीमूलकं तथा ॥८५३॥
घोषामूलं तथा देयं मूलं लेहितचित्रकम्।
अपुष्पफलभूधात्रीमूलं श्योनाकमूलकम् ॥८५४॥
छागो वराहो बर्ही च महिषो मत्स्य एव च।
एतेषाञ्च ददेत् पित्तमार्द्रकस्य रसेन च ॥८५५॥
प्रत्येकं मर्दितं शुष्कं कणमात्रं प्रमाणतः॥
अशेषान् सन्निपातान् हि क्षणमात्राद्व्यपोहति।
वातश्लेष्मकृतान् रोगान् क्षणेनैव विनाशयेत् ॥८७४॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रक भस्म, ४. शुद्ध मैनसिल, ५. शुद्ध सोहागा, ६. शुद्ध हिङ्गुल, ७. सर्पविष, ८. शुद्ध शंखिया तथा ९. ताम्र भस्म—प्रत्येक द्रव्य १-१ तोला लें अर्थात् १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद-गन्धक की कज्जली बनावें। ततः मैनसिल, हिङ्गुल मिलावें और इसके बाद अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कलिहारीमूल क्वाथ, देवदालीस्वरस, रक्तचित्रकमूल क्वाथ, बिना फूल-फल वाले भूईआमला स्वरस, सोनापाठामूल क्वाथ, बकरे के पित्त, सूअर के पित्त, मोर के पित्त, भैंस के पित्त एवं रोहू मछली के पित्त और आर्द्रक के रस की १-१ भावना दें। इसके बाद सरसों के बराबर की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह कालानल रस क्षणमात्र में सम्पूर्ण सन्निपातज्वर को नाश करता है तथा वातज-कफज सम्पूर्ण सन्निपातों का क्षणभर में नाश करता है।

मात्रा–१० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–अग्राह्य है। **उपयोग**–सन्निपात- ज्वर में।

३३४. ज्वरमातङ्गकेशरी रस (र.रा.सु.)

पारदं गन्धकञ्चैव हरितालं समाक्षिकम्।
कटुत्रयं तथा पथ्या क्षारौ द्वौ सैन्धवं तथा ॥८५७॥
निम्बस्य विषमुष्टेश्च बीजं चित्रकमेव च।
एषां माषमितं भागं प्रतिगृह्य सुसंस्कृतम् ॥८५८॥
द्विमाषं कानकफलं विषं चापि द्विमाषिकम्।
निर्गुण्डीस्वरसेनैव शोधयेत्तत्प्रयत्नतः ॥८५९॥
सार्द्धरक्तिप्रमाणेन वटी कार्या सुशोभना।
सर्वज्वरहरी चैषा भेदिनी दोषनाशिनी ॥८६०॥
आमाजीर्णप्रशमनी कामलापाण्डुरोगहा।
वह्निदीप्तिकरी चैषा जठरामयनाशिनी ॥८६१॥
उष्णोदकानुपानेन दातव्या हितकारिणी।
भाषितो लोकनाथेन ज्वरमातङ्गकेशरी ॥८६२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध हरताल, ४. माक्षिक भस्म, ५. शुण्ठी चूर्ण, ६. पीपर चूर्ण, ७. मरिच चूर्ण, ८. हरीतकी चूर्ण, ९. सर्ज्जिक्षार, १०. यवक्षार, ११. सैन्धव लवण, १२. निम्बबीज चूर्ण, १३. शुद्ध कुपिलु चूर्ण, १४. चित्रकमूल चूर्ण, १५. शुद्ध जयपाल चूर्ण और १६. वत्सनाभविष चूर्ण—उपर्युक्त क्रम संख्या १ से १४ तक के सभी द्रव्य १-१ भाग, धत्तूर तथा वत्सनाभ २-२ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। इसके बाद हरताल देकर मर्दन करें। पुनः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर निर्गुण्डीपत्रस्वरस की भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह ज्वरमातङ्गकेशरी रस सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है, भेदन करके दोषों का शमन करता है, आमाजीर्ण को नाश करता है, कामला और पाण्डु रोग का नाश करता है। यह अग्निदीपक है एवं उदररोगनाशक है। सर्वप्रथम इस रसौषधि को श्री लोकनाथ नामक आचार्य ने कहा था।

३३५. ज्वरमुरारि रस (र.रा.सु.)

शुद्धसूतं शुद्धगन्धं विषञ्च दरदं पृथक्।
कर्षप्रमाणं कर्षार्द्धं लवङ्गं मरिचं पलम् ॥८६३॥
शुद्धं कनकबीजञ्च पलद्वयमितं तथा।
त्रिवृता कर्षमेकन्तु भावयेद्दन्तिकाद्रवैः ॥८६४॥
सप्तधा च ततः कार्या गुटी गुञ्जामिता शुभा।
ज्वरमुरारिनामाऽयं रसो ज्वरकुलान्तकः ॥८६५॥
अत्यन्ताजीर्णपूर्णे च ज्वरे विष्टम्भसंयुते।
सर्वाङ्गग्रहणे गुल्मे चामवातेऽम्लपित्तके ॥८६६॥
कासे श्वासे यक्ष्मरोगेऽप्युदरे सर्वसम्भवे।
गृध्रस्यां सन्धिमज्जस्थे वाते शोथे च दुस्तरे ॥८६७॥
यकृति प्लीहरोगे च वातरोगे चिरोत्थिते।
अष्टादशकुष्ठरोगे सिद्धो गहननिर्मितः ॥८६८॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. वत्सनाभ विष, ४. शुद्ध हिङ्गुल, ५. लवङ्ग चूर्ण, ६. मरिच चूर्ण, ७. शुद्ध जयपाल तथा ८. त्रिवृत् चूर्ण—क्रम संख्या १ से ४ तक के द्रव्य १०-१० ग्राम, लवङ्ग ५ ग्राम, मरिच चूर्ण ४० ग्राम, शुद्ध जयपाल ८० ग्रा. तथा निशोथ १० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें, ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर दन्तीमूल क्वाथ की ७ भावना दें और १$\frac{१}{२}$-१$\frac{१}{२}$ रत्ती (१९० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और शीशी में सुरक्षित रख लें। इसे ज्वरमुरारि रस कहते हैं। यह सम्पूर्ण ज्वरकुल को समाप्त कर देता है। यह रसौषधि अनुपान-भेद से अजीर्ण के कारण प्रकुपित दोषजन्य ज्वर, विष्टम्भजन्य ज्वर, सर्वाङ्ग की जकड़न, गुल्म, आमवात, अम्लपित्त, श्वास, कास, यक्ष्मा, त्रिदोषज उदररोग, गृध्रसी, सन्धिगत वात, मज्जागत वात, असाध्य शोथ, यकृत्-प्लीहवृद्धि, चिरकालिक वातविकार एवं अष्टादश कुष्ठरोगनाशक है। यह औषधि सिद्ध गहननाथ द्वारा निर्मित है।

मात्रा–१९० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

३३६. ज्वरमुरारि रस (र.रा.सु.)

हिङ्गुलञ्च विषं व्योषं टङ्कणं नागराभया।
जयपालसमायुक्तं सद्यो ज्वरनिवारणम् ॥८६९॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध वत्सनाभ, ३. शुण्ठी चूर्ण, ४. पीपर चूर्ण, ५. मरिच चूर्ण, ६. शुद्ध सोहागा, ७. शुण्ठी चूर्ण, ८. हरीतकी चूर्ण तथा ९. शुद्ध जयपाल—क्रम संख्या १ से ८ तक सभी द्रव्य समभाग में लें अर्थात् प्रत्येक १-१ भाग लें और शुद्ध जयपाल ८ भाग लें। पत्थर के एक खरल में सभी द्रव्यों

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

को मिलाकर मर्दन करें तथा आर्द्रक के रस में १ भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह ज्वरमुरारि रस तुरन्त ज्वर को नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–समस्त ज्वरों में।

३३७. ज्वरकेशरी रस (र.रा.सु.)

शुद्धसूतं विषं व्योषं गन्धं त्रिफलमेव च।
जयपालसमं कृत्वा भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ॥८७०॥
गुञ्जामात्रा वटी कार्या बालानां सर्षपाकृतिः।
सितया च समं पीता पित्तज्वरविनाशिनी ॥८७१॥
मरिचेन प्रयुक्ता सा सन्निपातज्वरापहा।
पिप्पलीजीरकाभ्याञ्च दाहज्वरविनाशिनी।
ज्वरकेशरिनामाऽयं रसो ज्वरविनाशनः ॥८७२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध वत्सनाभ विष, ३. शुण्ठी चूर्ण, ४. पीपर चूर्ण, ५. मरिच चूर्ण, ६. शुद्ध गन्धक, ७. आमला चूर्ण, ८. हरीतकी चूर्ण, ९. बहेड़ा चूर्ण एवं १०. शुद्ध जयपाल—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। तत: शेष द्रव्यों को उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें और भृङ्गराजस्वरस की भावना दें तथा युवकों के लिए १-१ रत्ती की वटी बनावें एवं बच्चों के लिए सरसो बराबर वटी बनावें। छाया में सुखाकर शीशी में रख लें।

मात्रा–युवकों के लिए १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) दें, बच्चों के लिए १ सरसो बराबर दें। **अनुपान**–दोषानुसार। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–समस्त ज्वरों में।

अनुपान—पित्तज्वर में चीनी के शर्बत से, सन्निपातज्वर में मरिच चूर्ण से तथा दाहज्वर में पिप्पली चूर्ण एवं जीरक चूर्ण के साथ दें।

३३८. ज्वरभैरव रस (र.रा.सु.)

त्रिकटु त्रिफला टङ्कं विषगन्धकपारदम्।
जयपालञ्च संमर्द्य द्रोणपुष्पीरसैर्दिनम् ॥८७३॥
ताम्बूलेन समं प्रातः खादेद् गुञ्जामितां वटीम्।
मुद्गयूषं शिखरिणी पथ्यं देयं प्रयत्नतः ॥८७४॥
नवज्वरं त्रिदोषोत्थं जीर्णञ्च विषमज्वरम्।
दिनैकेन निहन्त्याशु रसोऽयं ज्वरभैरवः ॥८७५॥

१. शुण्ठी चूर्ण, २. पीपर चूर्ण, ३. मरिच चूर्ण, ४. आमला चूर्ण, ५. हरीतकी चूर्ण, ६. बहेड़ा चूर्ण, ७. शुद्ध सोहागा, ८. शुद्ध वत्सनाभ विष ९. शुद्ध गन्धक, १०. शुद्ध पारद तथा ११. शुद्ध जयपाल—सभी द्रव्य समभाग अर्थात् ५०-५० ग्राम लें। पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें, तत: अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर द्रोणपुष्पी (गूमा) के स्वरस में मर्दन एवं भावना देकर १ दिन तक मर्दन करें और १-१ गुञ्जा (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। नवज्वर, सन्निपातज्वर, जीर्णज्वर, विषमज्वर से पीड़ित ज्वरी को १ वटी ताम्बूलस्वरस के साथ देने से सभी ज्वर एक दिन में तुरन्त नष्ट हो जाते हैं। इसे ज्वरभैरव रस कहते हैं।

पथ्य–मूँग की दाल (यूष) तथा शिखरणी (श्रीखण्ड) देना चाहिए।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र रस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–नवज्वर, जीर्णज्वर, सन्निपातज्वर एवं विषमज्वर में।

३३९. विद्याधर रस (रसकामधेनु)

रसो गन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकाटङ्गणवरा-
त्रिवृद्दन्तीहेमद्युमणिविषमेतत्सममितम् ।
समस्तैस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरज-
स्ततः स्नुक्क्षीरेण प्रगुणमृदितं दन्तिसलिलैः ॥८७६॥
द्विगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति वटिका साममखिलं
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणिगुदकीलोद्भवरुजः।
मरुच्छूलाजीर्णे प्रबलमपि सामं कृमिगदं
विबन्धं प्लीहानं यकृतमपि विद्याधररसः ॥८७७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्र भस्म, ४. शुण्ठी चूर्ण, ५. पीपर चूर्ण, ६. मरिच चूर्ण, ७. कुटकी चूर्ण, ८. शुद्ध सोहागा, ९. आमला चूर्ण, १०. बहेड़ा चूर्ण, ११. हरीतकी चूर्ण, १२. निशोथ चूर्ण, १३. दन्तीमूल चूर्ण, १४. शुद्ध धत्तूरबीज, १५. अर्कमूल चूर्ण, १६. शुद्ध वत्सनाभविष और १७. शुद्ध जयपाल—उपर्युक्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम किन्तु जयपाल ८०० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। इसके बाद अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें तथा स्नुहीक्षीर और दन्तीमूल क्वाथ की १-१ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें। २ रत्ती की मात्रा आज उचित नहीं है। यह आमज्वर, पाण्डु, गुल्म, ग्रहणी, अर्श एवं अर्श-जन्य पीड़ा, वातज शूल, आमाजीर्ण, क्रिमिरोग, विबन्ध, प्लीहा-यकृद्वृद्धि रोगों का नाश करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु या उष्णोदक से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त एवं कटु। **उपयोग**–ज्वर, आमज्वर, यकृत्प्लीहा रोग।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३४०. पञ्चानन रस (रसकामधेनु)

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं दैत्येन्द्ररक्तं रविः
पक्षौ सागरलोचनं शशितथा भागोऽर्कसंख्यान्वितः।
खल्ले तत्परिमर्दितं रविजलैर्गुञ्जैकमात्रं ददेत्
सिंहोऽयं ज्वरदन्तिदर्पदलनः पञ्चाननाख्यो रसः ॥८७८॥
पथ्यञ्च देयं दधिमक्तकञ्च
सिन्धूत्थपथ्यामधुना समेतम्।
गन्धानुलेपो हिमतोयपानं
दुग्धञ्च देयं शुभदाडिमञ्च ॥८७९॥

१. शुद्ध वत्सनाभविष २० ग्राम, २. मरिच चूर्ण ४० ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक ३० ग्राम, ४. शुद्ध हिङ्गुल १० ग्राम तथा ५. ताम्र भस्म १२० ग्राम—एक पत्थर के खरल में सर्वप्रथम हिंगुल और गन्धक को मिलाकर मर्दन करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर अर्कपत्रस्वरस की भावना देकर १ दिन तक मर्दन करें। पुनः १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सन्निपातज्वर रूपी मदान्ध हाथी को नाश करने के लिए यह सिंह जैसी औषधि है। इसे पञ्चानन रस कहते हैं। इस औषधि के बाद पथ्य में दही एवं भात खिलाना चाहिए। इस औषधि को हरीतकी चूर्ण, सैन्धव एवं मधु से सेवन कराना चाहिए। शरीर में सुगन्धित द्रव्यों का लेप करना चाहिए, शीतल जल का पान कराना चाहिए, गोदुग्ध और सुपः दाडिमस्वरस का पान कराना चाहिए।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–हरीतकी चूर्ण, सैन्धव एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–भयंकर सन्निपातज्वर में।

३४१. चन्द्रशेखर रस (र.चि.म.)

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टङ्कणं तथा।
चतुस्तुल्या सिता योज्या मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥८८०॥
त्रिदिनं मर्दयेत्तेन रसोऽयं चन्द्रशेखरः।
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्देयं शीतोदकं ह्यनु ॥८८१॥
तक्रभक्तञ्च वृन्ताकं पथ्यं तत्र प्रदापयेत्।
त्रिदिनाच्छ्लेष्मपित्तोत्थमत्युग्रं नाशयेज्ज्वरम् ॥८८२॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १० ग्राम, ३. मरिच चूर्ण १० ग्राम, ४. शुद्ध सोहागा १० ग्राम तथा ५. चीनी पिसी हुई ४० ग्राम—पत्थर के खरल में सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर रोहित मछली के पित्त की ३ दिनों तक भावना दें। पुनः २-२ रत्ती की वटी बनाकर धूप में अच्छी तरह सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे चन्द्रशेखर रस कहते हैं। इसके प्रयोग से उग्र कफ एवं पित्त ज्वर का तीन दिन में ही नाश हो जाता है। इसे आर्द्रक के रस और मधु अनुपान से देना चाहिए। बाद में शीतोदक पिलावें। ज्वर उतर जाने पर रोगी को पथ्य रूप में तक्र एवं भात तथा बैंगन का भुर्ता खाने के लिए देना चाहिए।

मात्रा–१२५-२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–कफज्वर में आर्द्रक-स्वरस एवं पित्तज्वर में शीतोदक से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–कफ-पित्तज्वर में।

३४२. अर्धनारीश्वर रस (र.रा.सु.नस्य)

रसगन्धामृतञ्चैव समं शुद्धञ्च टङ्कणम्।
मर्दयेत् खल्लमध्ये तु यावत्स्यात्कज्जलप्रभम् ॥८८३॥
नकुलारिमुखे क्षिप्त्वा मृदा संवेष्टयेद्बहिः।
स्थापयेन्मृन्मये पात्रे ऊर्ध्वाधो लवणं क्षिपेत् ॥८८४॥
भाण्डवक्त्रं निरुध्याथ चतुर्यामं दृढाग्निना।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य खल्ले कृत्वा तु कज्जलीम् ॥८८५॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं नस्यकर्मणि योजयेत्।
वामभागे ज्वरं हन्ति तत्क्षणाल्लोककौतुकम् ॥८८६॥
कुर्याद्दक्षिणभागेन चारोग्यं निश्चितं भवेत्।
गोप्याद् गोप्यतमं प्रोक्तं गोपनीयं प्रयत्नतः॥
अर्द्धनारीश्वरो नाम रसोऽयं कथितो भुवि ॥८८७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ तथा ४. शुद्ध सोहागा—उपर्युक्त चारों द्रव्य समभाग में लें। पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को रख कर कज्जली करें, तत्पश्चात् अन्य द्रव्यों को उसमें मिलाकर खूब मर्दन करें। इसके बाद उक्त मर्दित औषधि को तुरन्त के मरे हुए गेहुमन (Cobra snack) साँप के मुख में पतली लकड़ी की सहायता से दबा-दबाकर भरें और गाढ़ी एवं चिकनी मिट्टी का लेप तथा कपड़मिट्टी से मुख बन्द कर सुखा लें। एक हाँडी में औषधिपूरित साँप को गोल घुमाकर बैठावें एवं ऊर्ध्वाधः लवण चूर्ण से ढ़क दें तथा मुख बन्द कर तीव्राग्नि युक्त चूल्हे पर रख कर १२ घण्टे तक पाक करें अर्थात् लवण यन्त्र से पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर कपड़मिट्टी हटाकर सर्पमुखसहित औषधि को खरल में मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे अर्धनारीश्वर रस कहते हैं। १ रत्ती इस रसौषधि के चूर्ण को ज्वरपीड़ित व्यक्ति यदि बायीं नाक में नस्य ले तो उक्त रोगी के दाहिने अङ्ग से ज्वर उतर जाता है। इसी प्रकार यदि दाहिनी नाक में नस्य दिया जाय तो आश्चर्यजनक रीति से वाम अङ्ग का ज्वर भी नष्ट हो जाता है और रोगी विगतज्वर हो जाता है। यह अत्यन्त गोपनीय योग गुप्त ही रखना चाहिए।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–नस्यार्थ केवल। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–क्षारीय। **उपयोग**–तीव्र ज्वर में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३४३. मृतसञ्जीवन रस

हिङ्गुलभागाश्चत्वारो जैपालस्य त्रयो मताः।
द्वौ भागौ टङ्कणस्यापि भागैकममृतस्य च ॥८८८॥
तत्सर्वं मर्दयेच्छ्लक्ष्णं शुष्कं यामं भिषग्वरः।
शृङ्गबेराम्बुना मर्द्यं व्योषचित्रकसैन्धवैः ॥८८९॥
यामद्वयमतस्तापं हरत्येष न संशयः।
घनसारेण सारेण चन्दनेन विलेपनम् ॥८९०॥
विदध्यात् कांस्यपात्रेण विजयेद्रोगिणं भिषक्।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेदिन्दुसंयुतम् ॥८९१॥
सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे।
आमवाते वातगुल्मे शूले प्लीह्नि जलोदरे ॥८९२॥
शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे सन्ततज्वरे।
अग्निमान्द्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसोत्तमः।
मृतसञ्जीवनो नाम विख्यातो रससागरे ॥८९३॥

१. शुद्ध हिङ्गुल ४० ग्राम, २. शुद्ध जयपाल ३० ग्राम, ३. शुद्ध सोहागा २० ग्राम तथा ४. शुद्ध वत्सनाभ १० ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में सभी द्रव्यों को अच्छी तरह मिलाकर आर्द्रक के रस से ३ घण्टे तक मर्दन कर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे मृतसञ्जीवन रस कहते हैं। त्रिदोषज भयंकर असाध्य सन्निपात ज्वर में, विषमज्वर में, आमवात में, वातज गुल्म में, शूल में, प्लीहावृद्धि में, जलोदर में, शीतज्वर में, दाहपूर्वक ज्वर में, सन्ततादि ज्वर एवं अग्निमान्द्य और वातज रोगों में इस औषधि के प्रयोग से अत्यन्त लाभ होता है। त्रिकटु चूर्ण, चित्रक चूर्ण एवं सैन्धव लवण चूर्ण के साथ इस रसौषधि को १ रत्ती की मात्रा में लेना चाहिए। इसके प्रयोग से ६ घण्टे में ही ज्वर एवं ताप नष्ट हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं है। इस औषधि के बाद सारे शरीर में चन्दन और कर्पूर का लेप लगाना चाहिए। काँस्यपात्र में शीतल जल भर कर छाती एवं उदर प्रदेश में रखने से दाह एवं ज्वर शान्त हो जाता है। ज्वर शान्त होने पर पथ्य में तक्र एवं शालि चावल का भात कपूर वासित कर देवें।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–त्रिकटु चूर्ण, चित्रक चूर्ण एवं सैन्धव से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–भयंकर सन्निपात ज्वर, विषम ज्वर एवं आमवात में।

३४४. रसराज रस

भागैकं रसराजस्य भागश्च हेममाक्षिकात्।
भागद्वयं शिलायाश्च गन्धकस्य त्रयो मताः ॥८९४॥
तालकांष्टादशभागाः शुल्बं स्याद्भागपञ्चकम्।
भल्लातकात् त्रयो भागाः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥८९५॥
वज्रीक्षीरप्लुतं कृत्वा दृढे मृन्मयभाजने।
निधाय सुदृढां मुद्रां पचेद्यामचतुष्टयम् ॥८९६॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य खल्लयेत् सुदृढं पुनः।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य पर्णखण्डेन दापयेत् ॥
रसराजः प्रसिद्धोऽयं ज्वरमष्टविधं जयेत् ॥८९७॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. स्वर्णमाक्षिक भस्म १० ग्राम, ३. शुद्ध मैनसिल २० ग्राम, ४. शुद्ध गन्धक ३० ग्राम, ५. शुद्ध हरताल १८० ग्राम, ६. ताम्र भस्म ५० ग्राम और ७. शुद्ध भल्लातक ३० ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष अन्य द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और स्नुहीक्षीर की १ भावना दें। सूखने पर एक हाँडी में रखकर मिट्टी के शराव से हाँडी के मुख को ढ़क कर सन्धिबन्धन करें और चूल्हे पर चढ़ाकर १२ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सन्धिबन्धन खोल कर औषधि को निकालें और खरल में मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह रसराज रस ४ रत्ती की मात्रा में ताम्बूलपत्र में रखकर खिलाने से ८ प्रकार के ज्वर नष्ट कर देता है।

आधुनिक मात्रा—ताम्बूलपत्र से २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) दें।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–क्षारीय। **उपयोग**–सभी ८ प्रकार के ज्वरों में।

३४५. मुद्रोद्घाटक रस (र.रा.सु.)

पारदो गन्धकश्चैव त्रिक्षारं लवणत्रयम्।
गुग्गुलुर्वत्सनाभश्च प्रत्येकन्तु द्विमाषकम् ॥८९८॥
कृष्णोन्मत्तजटानीरैर्भावयेत्सप्तवारकम्।
गोक्षुरेन्द्रकमारीषं करञ्जचित्रतेजिका ॥८९९॥
भूकुरबकलताभिश्च त्रिफलाबृहतीरसैः।
मर्दिता वटिका कार्या [1]कृष्णलाफलसन्निभा ॥९००॥
ततो वटीद्वयं दत्त्वा यत्नैः पाट्यादिभिर्वृतः।
रसः सर्वज्वरं हन्ति क्षणमात्रान्न संशयः ॥९०१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. सर्जिकाक्षार, ४. यवक्षार, ५. शुद्ध सोहागा, ६. सैन्धव लवण, ७. सौवर्चल लवण, ८. विड लवण, ९. शुद्ध गुग्गुलु तथा १०. शुद्ध वत्सनाभ—सभी द्रव्यों को १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष अन्य द्रव्यों को मिलाकर धत्तूरमूलस्वरस एवं क्वाथ की ७ भावना दें। ततः गोखरुबीज, इन्द्रयव, मारीष शाक, करञ्जपत्र, चित्रकमूल, ज्योतिष्मती, सहचर, त्रिफला एवं बृहतीमूल क्वाथ या स्वरस से इन ९ द्रव्यों की १-१ भावना दें। इसके बाद १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सभी प्रकार

१. कृष्णलाफलं = गुञ्जाबीजमिति।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

के ज्वरी को गरम जल से खिलाकर मोटे वस्त्रों से रोगी को ढ़क दें। कुछ देर के बाद रोगी को पसीना आने पर ज्वर उतर जाता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–उष्णोदक से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३४६. शीतारि रस (रसमञ्जरी)

पारदं गन्धकं टङ्कं शुल्बं चूर्णं समं समम्।
पारदाद् द्विगुणं देयं जैपालं तुषवर्जितम् ॥९०२॥
सैन्धवं मरिचं चिञ्चात्वग्भस्म शर्कराऽपि च।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याज्जम्बीरैर्मर्दयेद्दिनम् ॥९०३॥
द्विगुञ्जं तप्ततोयेन वातश्लेष्मज्वरापहः।
रसः शीतारिनामाऽयं शीतज्वरहरः पर ॥९०४॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध सोहागा, ४. ताम्र भस्म, ५. शुद्ध जयपाल ६. सैन्धव लवण, ७. मरिच चूर्ण, ८. इमलीत्वग् भस्म एवं ९. चीनी—शुद्ध जयपाल २० ग्राम तथा शेष सभी ८ द्रव्य प्रत्येक १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष सभी द्रव्यों को उसी खरल में मिलाकर जम्बीरी निम्बूस्वरस की भावना देकर १ दिन तक मर्दन करें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे शीतारि रस कहते हैं। शीतज्वरपीड़ित रोगी को २ वटी उष्णजल से खिलाने पर शीतज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–उष्णोदक से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–शीतज्वर (विषम-ज्वर) में।

३४७. पर्णखण्डेश्वर रस

समांशं मर्दयेत्खल्ले रसं गन्धं शिलां विषम्।
निर्गुण्डीस्वरसैर्भाव्यं त्रिवारं चार्द्रकद्रवैः ॥
गुञ्जैकं भक्षयेत् पर्णैर्ज्वरं हन्ति महाद्भुतम् ॥९०५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध मनःशिला तथा ४. शुद्ध वत्सनाभ—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम (समभाग) लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः मनःशिला और वत्सनाभ विष का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें। पुनः निर्गुण्डीपत्रस्वरस एवं आर्द्रकस्वरस की ३-३ भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनावें और छाया में सुखाकर शीशी में सुरक्षित कर लें। इस वटी को ताम्बूलपत्र के साथ खाने से तुरन्त ही आश्चर्यजनक रीति से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–ताम्बूल के पत्र के साथ चबाकर खाये। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–समस्त ज्वर में।

३४८. शीतभञ्जी रस (रसमञ्जरी)

पारदं रसकं तालं तुत्थं टङ्कणगन्धकम्।
सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवेल्लीरसैर्दिनम् ॥९०६॥
मर्दयेत्तेन कल्केन लिम्पेत् ताम्रदलोदरम्।
अङ्गुल्यर्द्धार्द्धमानेन तं पचेत्सिकताह्वये ॥९०७॥
यन्त्रे यावत्स्फुटन्त्येव व्रीहयस्तस्य पृष्ठतः।
ताम्रपत्रं समुद्धृत्य चूर्णयेन्मरिचैः सह ॥९०८॥
शीतभञ्जी रसो नाम द्विगुञ्जो वातिके ज्वरे।
दातव्यः पर्णखण्डेन मुहूर्त्तान्नाशयेज्ज्वरम् ॥९०९॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध खर्पर, ३. शुद्ध हरताल, ४. शुद्ध तुत्थ, ५. शुद्ध सोहागा, ६. शुद्ध गन्धक, ७. शुद्ध ताम्र के कण्टकवेधी पत्र से निर्मित शराव और ८. सूक्ष्म मरिच चूर्ण—क्रम संख्या १ से ६ तक के प्रत्येक द्रव्य २५-२५ ग्राम लें। शुद्ध ताम्रपत्र के शराव १५० ग्राम और मरिच सुपक्व औषधि के बराबर। सर्वप्रथम कण्टकवेधी शुद्ध ताम्रपत्र से १ शराव (सकोरा) बना लें। ततः एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। इसके बाद हरताल आदि द्रव्यों को उसमें मिलाकर मर्दन करें। पुनः करैले के पत्र-फलों के स्वरस से १ दिन तक मर्दन करें। इसके बाद ताम्र के शरावोदर में उपर्युक्त करैले से भावित द्रव्य के कल्क का $\frac{1}{4}$ अँगुल मोटा लेप कर सुखा लें। उक्त औषधिलिप्त ताम्र शराव को मिट्टी की बड़ी हाँडी में औंधा कर रखें और हाँडी में मोटा बालू भर दें। हाँडी को चूल्हे पर चढ़ाकर मृदु-मध्य-तीक्ष्णाग्नि से पाक करें। हाँडी में बालू के ऊपर थोड़ा धान फैला कर हाँडी का मुख ढ़क दें। तीव्राग्नि तब तक दें जब तक धान का लाज (खील) न हो जाय। स्वाङ्गशीत होने पर बालुकायन्त्र से सावधानी से बालू हटाकर ताम्र की कटोरी या औषधिलिप्त शराव को सावधानीपूर्वक निकाल लें और सिद्ध ताम्रपत्र शराव को औषधि सहित पीस लें। इसके बाद उक्त मर्दित औषधि के बराबर मरिच चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह मर्दित करें। पान के साथ इस रसौषधि को २ रत्ती की मात्रा में खिलाने से तुरन्त ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–ताम्बूल के बीड़ा के साथ चबावें।। **गन्ध**–निर्गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

३४९. ज्वराङ्कुश रस-१ (रसे.चि.म.)

रसस्य द्विगुणं गन्धं गन्धतुल्यन्तु टङ्कणम्।
रसतुल्यं विषं योज्यं मरिचं पञ्चधा विषात् ॥९१०॥
कट्फलं दन्तिबीजञ्च प्रत्येकं मरिचोन्मितम्।
ज्वराङ्कुशो रसो नाम मर्दयेद्याममात्रकम् ॥९११॥
माषैकेण निहन्त्याशु ज्वरं जीर्णं त्रिदोषजम् ॥९१२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शुद्ध पारद १ भा., २. शुद्ध गन्धक २ भा., ३. शुद्ध सोहागा २ भा., ४. शुद्ध वत्सनाभ १ भा., ५. मरिच चूर्ण ५ भा., ६. कायफल ५ भा. तथा ७. शुद्ध जयपाल ५ भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद-गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर कज्जली के साथ ३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः काचपात्र में रख कर सुरक्षित कर लें। इसे ज्वराङ्कुश रस कहते हैं। यह १ माष की मात्रा में ज्वर, जीर्णज्वर एवं सन्निपातज्वर को नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–उष्णोदक से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वर, जीर्णज्वर एवं सन्निपातज्वर में।

३५०. ज्वराङ्कुश रस-२ ( )

ताम्रतो द्विगुणं तालं मर्दयेत्सुषवीद्रवैः।
प्रपुटेद् भूधरे शीते वज्रीक्षीरेण मर्दयेद् ॥९१३॥
प्रपुटेद् भूधरे पश्चाद् गुञ्जार्धप्रमितं भजेत्।
आर्द्रकस्य रसेनैव सर्वज्वरनिकृन्तनः ॥९१४॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकं चतुराहिकम्।
विषमञ्चापि शीताढ्यं ज्वरं हन्ति ज्वराङ्कुशः ॥९१५॥

१. ताम्रभस्म ५० ग्राम एवं २. शुद्ध हरताल १०० ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में दोनों औषधों को मिलाकर मर्दन करें और करैले के फल एवं पत्रस्वरस की भावना देकर टिकिया (चक्रिका) बना कर सुखावें। उसके बाद शरावसम्पुट करें और भूधरयन्त्र में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर पुनः औषधि को निकाल कर स्नुहीक्षीर की भावना देकर पूर्ववत् भूधरपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर औषधि निकाल कर खल्व में मर्दन कर शीशी में सुरक्षित रख लें। इस ज्वराङ्कुश रस को ½ रत्ती की मात्रा में आर्द्रक के रस से देने पर ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक एवं चातुर्थिक ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह शीताधिक ज्वर में अधिक लाभप्रद है।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कषाय, तिक्त। **उपयोग**–शीताधिक ज्वर में।

३५१. सर्वज्वराङ्कुश रस-३ (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं विषं गन्धं धूर्त्तबीजं त्रिभिः समम्।
चतुर्णां द्विगुणं व्योषं चूर्णं गुञ्जाद्वयं हितम् ॥९१६॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम्।
ज्वराङ्कुशो रसो नाम्ना ज्वरान्सर्वान्प्रणाशयेत् ॥९१७॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकञ्च चतुर्थकम्।
विषमञ्च त्रिदोषोत्थं हन्ति सद्यो न संशयः ॥९१८॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. शुद्ध वत्सनाभविष १ भाग, ४. शुद्ध धत्तूरबीज ३ भाग, ५. शुण्ठी चूर्ण ४ भाग, ६. पीपरचूर्ण ४ भाग तथा ७. मरिच चूर्ण ४ भाग—सर्वप्रथम पत्थर के १ खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर उसी कज्जली के साथ ३ घण्टे तक मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह ज्वराङ्कुश रस जम्बीरी निम्बू की मज्जा अथवा आर्द्रक के रस के साथ २ रत्ती की मात्रा में प्रयोग करने से सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है। विशेषकर ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थक, विषम ज्वर एवं त्रिदोषज ज्वर का नाश करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

३५२. ज्वराङ्कुश रस-४ ( )

मरिचं टङ्कणं शङ्खचूर्णं पारदगन्धकम्।
शोधितं ब्रह्मपुत्रञ्च भागमेकं विनिक्षिपेत् ॥९१९॥
गुञ्जाऽर्द्धञ्च प्रदातव्यं नागवल्लीदलैः सह।
ज्वराङ्कुशो रसो ह्येष ज्वरमष्टविधं जयेत् ॥९२०॥

१. मरिच चूर्ण, २. शुद्ध सोहागा, ३. शंख भस्म, ४. शुद्ध पारद, ५. शुद्ध गन्धक और ६. शुद्ध वत्सनाभ विष—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को उक्त कज्जली में मिलाकर तीन घण्टे तक मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह ज्वराङ्कुश रस आधी रत्ती की मात्रा में ताम्बूलपत्र में रखकर सेवन करने पर आठ प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–६०-१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र में रखकर सेवन से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–क्षारीय। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३५३. ज्वराङ्कुश रस-५ ( )

शुद्धसूतं तथा गन्धं कर्षमात्रं नयेद् बुधः।
महौषधं टङ्कणञ्च हरितालं तथा विषम् ॥९२१॥
रसार्द्धं मर्दयेत् खल्ले भृङ्गराजरसेन तु।
त्रिदिनं भावनां दत्त्वा चतुर्थे वटिकां ततः ॥९२२॥
कुर्याच्चणकमात्राञ्च पिप्पलीमधुसंयुतः।
मध्यज्वराङ्कुशो नाम विषमज्वरनाशनः ॥९२३॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. शुण्ठी चूर्ण ½ भाग, ४. शुद्ध सोहागा ½ भाग, ५. शुद्ध हरताल ½ भाग तथा ६. शुद्ध वत्सनाभ ½ भाग—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पारद-गन्धक की कज्जली बनाकर अन्य सभी द्रव्यों को उसी में मिलावें और मर्दन करें। ततः भृङ्गराजस्वरस की ३ दिनों तक भावना दें। चौथे दिन २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे मध्यज्वराङ्कुश रस कहते हैं। मधु और पिप्पली चूर्ण के साथ १ वटी देने से विषम-ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–पिप्पली चूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

३५४. सर्वज्वराङ्कुश वटी

शुद्धसूतं तथा गन्धं मरिचं नागरं कणा।
त्वचं जैपालकं कुष्ठं भूनिम्बं मुस्तकं पृथक् ॥९२४॥
चूर्णयित्वा समांशन्तु कज्जल्या सह मेलयेत्।
निर्गुण्ड्याः स्वरसे चापि आर्द्रकस्वरसे तथा ॥९२५॥
भावनां दापयित्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
वटिकां भक्षयित्वा तु वस्त्रवेष्टञ्च कारयेत् ॥९२६॥
सर्वज्वराङ्कुशवटी सर्वज्वरविनाशिनी।
पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान् ॥९२७॥
प्राकृतं वैकृतं वाऽपि वातश्लेष्मकृतञ्च यत्।
अन्तर्गतं बहिःस्थञ्च निरामं साममेव वा।
ज्वरमष्टविधं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥९२८॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. मरिच चूर्ण, ४. शुण्ठी चूर्ण, ५. पीपर चूर्ण, ६. दालचीनी चूर्ण, ७. शुद्ध जयपाल, ८. कूठ चूर्ण, ९. चिरायता चूर्ण तथा १० नागरमोथा चूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें तथा सिन्दुवारपत्रस्वरस एवं आर्द्रक के रस की १-१ भावना दें और २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह सर्वज्वराङ्कुश वटी सभी ज्वरों को नष्ट करती है। इस वटी को खिलाकर रोगी को मोटे कपड़े से ढ़ककर सुला दें। इस वटी के प्रयोग से वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज, सन्निपातज, विषम ज्वर, प्राकृत ज्वर, वैकृत ज्वर, वातश्लेष्मप्रकोपजन्य ज्वर, अन्तर्वेग ज्वर, बहिर्वेग ज्वर, सामज्वर और निराम ज्वरों को नष्ट करता है। जिस प्रकार इन्द्र का वज्र सभी वृक्षों को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार यह वटी सभी ज्वरों को नष्ट कर देती है।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

३५५. ज्वराङ्कुश रस बृहत् (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकं ताम्रं हिङ्गुलं तालमेव च।
लोहं वङ्गं माक्षिकञ्च खर्परञ्च मनःशिला ॥९२९॥
स्वर्णमभ्रं गैरिकञ्च टङ्कणं रूप्यमेव च।
सर्वाण्येतानि तुल्यानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥९३०॥
जम्बीरतुलसीचित्रविजयातिन्तिडीरसैः।
एभिर्दिनत्रयं रौद्रे निर्जने खल्लगह्वरे ॥९३१॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कान्तु कारयेत्।
महाग्निजननी चैषा सर्वज्वरविनाशिनी ॥९३२॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव चिरकालसमुद्भवम्।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्रिदोषप्रभवं ज्वरम् ॥९३३॥
चातुर्थकं तथाऽत्युग्रं जलदोषसमुद्भवम्।
सर्वाज्ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥९३४॥
नातः परतरं किञ्चिज्ज्वरनाशाय भेषजम्।
बृहज्ज्वराङ्कुशो नाम रसोऽयं मुनिभाषितः ॥९३५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्रभस्म, ४. शुद्ध हिङ्गुल, ५. शुद्ध हरताल, ६. लोहभस्म, ७. वङ्गभस्म, ८. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ९. खर्परभस्म, १०. शुद्ध मैनसिल, ११. स्वर्णभस्म, १२. अभ्रकभस्म, १३. शुद्ध गैरिक, १४. शुद्ध सोहागा तथा १५. रजतभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य १०-१० ग्राम (समभाग) लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक दोनों को मर्दन कर कज्जली करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को उक्त कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें। पुनः जम्बीरी निम्बूस्वरस, तुलसीस्वरस, चित्रकमूलस्वरस, भाँगस्वरस, और इमलीफल के जलीय घोल के साथ तीन दिनों तक तीव्र धूप में बैठकर भावना दें। पुनः २-२ रत्ती मात्रा की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह बृहज्ज्वरांकुश रस नामक वटी सभी प्रकार के ज्वरों को शीघ्र ही नष्ट करती है। इससे बढ़कर ज्वरनाशन की दूसरी कोई औषधि नहीं है—ऐसा ऋषि ने कहा है। यह अग्नि-प्रदीपक है, एकदोषज ज्वर, द्वन्द्वज ज्वर, त्रिदोषज ज्वर, ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थक ज्वर, विषम ज्वर, चिरकालोत्थ ज्वर, अत्युग्र ज्वर, जलदोषोद्भव ज्वर तथा सभी प्रकार के ज्वरों को नाश करती है; जिस प्रकार भगवान् सूर्य अन्धकार को नाश करते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–अमृत। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

३५६. महाज्वराङ्कुश रस ( )

पारदं हिङ्गुलं ताम्रं माक्षिकं तुत्थमेव च।
वङ्गं मृतं च गन्धं च खर्परं च मनःशिला ॥९३६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तालकं घनपाषाणं गैरिकं टङ्गणं तथा।
दन्तीबीजानि सर्वाणि चर्णयित्वा विभावयेत् ॥९३७॥
भावना पूर्ववद् देया वटीं कुर्याच्च पूर्ववत्।
महाज्वराङ्कुशो नाम रसोऽयं परमोत्तमः ॥९३८॥
विषमज्वरनाशाय मुनिभिः परिभाषितः ॥९३९॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध हिङ्गुल, ३. ताम्रभस्म, ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ५. शुद्ध तुतिया, ६. वङ्गभस्म, ७. शुद्ध गन्धक, ८. खर्परभस्म, ९. शुद्ध मैनसिल, १०. शुद्ध हरताल, ११. अभ्रकभस्म, १२. शुद्ध गैरिक, १३. शुद्ध सोहागा तथा १४. शुद्ध जयपाल—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और बृहज्ज्वराङ्कुश रस के जैसा जम्बीरीस्वरस, तुलसीपत्रस्वरस, चित्रकमूलस्वरस, भाँग-स्वरस और इमलीस्वरस की १-१ (३ दिनों तक) भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में रख लें। यह ज्वराङ्कुश रस विषम ज्वरों को नाश करने के लिए परमोत्तम है—ऐसा मुनियों ने कहा है।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–अम्ल। **उपयोग**–आठ प्रकार के ज्वरों में।

३५७. ज्वराङ्कुश रस (भावप्रकाश)

द्विभागतालेन हतं च ताम्रं
रसस्ततोऽर्द्धो वलिमीनमायू।
विषं पृथक् सूतसमानि कृत्वा
त्रिःसप्तरात्रेण दिवाकरांशैः ॥९४०॥
विमर्द्य रिष्टस्वरसेन चूर्णं
गुञ्जैकमात्रं सितया समेतम्।
ज्वराङ्कुशोऽयं रविसुन्दराख्यो
ज्वरान्निहन्त्यष्टविधान् समग्रान् ॥९४१॥

१. ताम्रभस्म २ भाग, २. शुद्ध पारद १ भाग, ३. शुद्ध गन्धक १ भाग, ४. रोहू मछली का पित्त १ भाग और ५. शुद्ध वत्सनाभ १ भाग—कण्टकवेधी ताम्रपत्र पर दुगुनी मात्रा में शुद्ध हरिताल का लेप कर भस्म बनावें। ऐसी ही ताम्रभस्म २ भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलावें। इसके बाद धूप में बैठकर निम्बपत्रस्वरस की २१ भावना देकर औषधि को अच्छी तरह सुखाकर शीशी में सुरक्षित रख लें। इसे ज्वराङ्कुश रस या रविसुन्दर रस कहा जाता है। इस ज्वरांकुश रस को १ रत्ती की मात्रा में चीनी के साथ देने पर आठ प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–चीनी से। **गन्ध**–विस्र-गन्धी। **वर्ण**–श्याम। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–आठ प्रकार के ज्वरों में।

३५८. रत्नगिरि रस ( )

मनःशिलाटङ्गणहिङ्गुलानि
शुद्धानि जातीफलसंयुतानि।
लवङ्गमेतत्सकलं समानं
नीत्वाऽतिसूक्ष्मं च रजो विदध्यात् ॥९४२॥
ततस्तुलस्यार्द्रकसूर्यभक्ता-
रसैः पृथक् साधुतया त्रिवारम्।
विभावयेद्वैद्यवरोऽथरत्न्यु-
न्मिता वटीश्चारु प्रकल्पयेच्च ॥९४३॥
अयं रसो रत्नगिरीत्यभिख्यो-
ऽनुपानभेदेन निहन्ति नूनम्।
वातोद्भवं श्लेष्मभवं च मन्थरा-
भिधं ज्वरं चान्त्रिकनामकं वा ॥९४४॥
विशेषरूपाद्विषमज्वरं तथा
मरुद्बलासोद्भवसर्वरोगान्।
इति प्रकामं सुपरीक्षितं भिषग्-
वरैर्विधेयो न ततोऽत्र संशयः ॥९४५॥

१. शुद्ध मैनसिल, २. शुद्ध सोहागा. ३. शुद्ध हिंगुल, ४. जायफल चूर्ण एवं ५. लौंग चूर्ण—सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम हिंगुल और मैनसिल को एक खरल में मर्दन करें, ततः सभी चूर्णों को उसमें मिलाकर तुलसीस्वरस, आर्द्रकस्वरस एवं ब्रह्मसुवर्चला (हुरहुर) स्वरस की ३-३ भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। यह रत्नगिरि रस अनुपान भेद से वातज्वर, कफज्वर, मन्थरज्वर, आन्त्रिकज्वर एवं अनुपान भेद से विषमज्वर तथा इसी तरह वात-कफज अन्य रोगों में बहुत लाभ करता है। यह योग सुपरीक्षित है, इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु या उष्णोदक से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–विषमज्वर एवं वात, कफ-पित्त ज्वर में।

३५९. ब्राह्मी वटी ( )

पञ्चकर्षात्मकं ब्राह्मीपत्रं कर्षद्वयात्मकम्।
उत्तमं स्वर्णसिन्दूरं गृह्णीयात् कुशलो भिषक् ॥९४६॥
मृतं वङ्गं तथैवाभ्रं विशुद्धं च शिलाजतु।
मरिचं पिप्पली चैव विडङ्गं कर्षमात्रकम् ॥९४७॥
अर्द्धकर्षोन्मिता शुद्धा कस्तूरी यत्नतो बुधैः।
सर्वमेकत्र संयोज्यं भाव्यं चैव त्रिवारकम् ॥९४८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ब्राह्मीरसेन वा शीतकषायेण यथाविधि।
ततो द्विरक्तिप्रमिताः प्रकल्प्या वटिकाः शुभाः ॥९४९॥
तस्याः प्रयोगतो दोषानुसारेणानुपानतः।
ज्वरोत्तरसमुद्भूतं दौर्बल्यं च नवज्वरः ॥९५०॥
प्रलापको मन्थरको ज्वरोऽन्येऽपि च ये ज्वराः।
मस्तिष्कस्य हृदश्चापि दौर्बल्यं सूतिकाज्वरः ॥९५१॥
मरुद्बलासप्राधान्यसन्निपातसमुद्भवाः ।
तेषु सर्वेषु दोषाणां पाचनेन फलं शुभम् ॥९५२॥

१. ब्राह्मी ५० ग्राम, २. स्वर्णसिन्दूर २० ग्राम, ३. वङ्ग भस्म २० ग्राम, ४. अभ्रकभस्म २० ग्राम, ५. शुद्ध शिलाजीत १० ग्राम, ६. मरिचचूर्ण १० ग्राम, ७. पिप्पलीचूर्ण १० ग्राम, ८. विडङ्गचूर्ण १० ग्राम तथा ९. कस्तूरी ५ ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में स्वर्णसिन्दूर (मकरध्वज) को खरल कर उसमें अभ्रक एवं वङ्ग भस्म मिलावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और ब्राह्मीपत्रस्वरस अथवा ब्राह्मी हिम की ३ भावना दें। ततः कस्तूरी मिलाकर २-२ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसे दोषानुसार अनुपान-भेद से अनेक रोगों में प्रयोग करें। ज्वर के बाद की दुर्बलता में एवं नवज्वर, प्रलापज्वर तथा मन्थरज्वर में या अन्य किसी भी प्रकार के ज्वर में , मस्तिष्क एवं हृदय की दुर्बलता में, सूतिकाज्वर में, वातकफ-प्रधान सन्निपातज्वर में दोषों को पाचन कर लाभ देती है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–दोषानुसार अनुपान से। **गन्ध**–कस्तूरीगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सन्निपातज्वर में।

३६०. विषमज्वरघ्नी वटी

शुद्धं शंवलनामकं विषमथो संशोधितं हिङ्गुलं
ग्राह्यं चोषणचूर्णमेव निखिलं तुल्यं भिषग्भूषणैः।
तच्चैकत्र विधाय साधु तुलसीपत्रोद्भवेनामृता
या द्रावेण च पञ्चधाऽपि विधिवद्भाव्यं पृथग्यत्नतः ॥९५३॥
गुञ्जाऽर्द्धप्रमितास्ततः सुवटिकाः सम्पादनीया अपि-
धानानागरवारिवाहजलयुक्शाण्डिल्यसिद्धाम्बुना।
किं वा गव्यपयोऽनुपानसहिता देयाः सदा रुग्युता-
यैकद्वित्रिचतुर्दिनप्रकटिता नानाविधास्तु ज्वराः ॥९५४॥
वैषम्यं समुपाश्रिता अपि लयं सम्प्राप्नुयुः सत्वरं
किं चैषा विषमज्वरघ्न्यभिधया ख्याता वटी दृश्यते।
जीर्णे च श्वसने तथैव कसने लाभप्रदा प्रायशो-
लोकेऽभ्यासवशान्न संशय इहाकल्प्यः कथञ्चिद् बुधैः ॥

१. शुद्ध शंखिया, २. शुद्ध हिङ्गुल एवं ३. मरिच चूर्ण—ये तीनों द्रव्य समभाग में लेकर खरल में एक साथ मर्दन कर तुलसीपत्र एवं गुडूचीकाण्ड स्वरस से पृथक्-पृथक् ५-५ भावना देकर $\frac{1}{4}$ (चौथाई) रत्ती की मात्रा में आज की मात्रा में वटी बनाकर छायाशुष्क कर रख लें। यह विषमज्वरघ्नी वटी ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक आदि विषमज्वरों एवं अनेक प्रकार के अन्य ज्वरों का शीघ्र ही नाश करती है। इसे धान्यपञ्चक क्वाथ (धनिया, शुण्ठी, नागरमोथा, सुगन्धबाला एवं बेल की छाल) से या गोदुग्ध से देने से उपर्युक्त सभी ज्वर नष्ट हो जाते हैं। इसे पुराना कष्टप्रद श्वास में देने से बहुत लाभ होता है।

मात्रा–३० से ६० मि.ग्राम। **अनुपान**–धान्यपञ्चक क्वाथ से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ वर्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–विषमज्वरों में।

३६१. रत्नप्रभा वटी

हेमायस्कान्तवैक्रान्तखर्परायांसि विद्रुमम्।
मुक्ताञ्चैकत्र सम्मर्द्य दार्वीक्वाथेन सप्तधा ॥९५६॥
भावयित्वा वटीं कुर्याद्रक्तिकाप्रतिमां भिषक्।
एषा रत्नप्रभा नाम वटी सततकं हरेत् ॥९५७॥
प्लीहानं वह्निमान्द्यञ्च कामलां यकृदामयम्।
स्नायुशूलं महाघोरं केशरी करिणं यथा ॥९५८॥

१. स्वर्णभस्म, २. कान्तलोहभस्म, ३. वैक्रान्तभस्म, ४. खर्परभस्म, ५. तीक्ष्णलोहभस्म, ६. प्रवालकाण्डभस्म तथा ७. मुक्ताभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य प्रत्येक १०-१० ग्राम लें। इसे पत्थर के खरल में मिलाकर मर्दन करें और दारुहल्दी के क्वाथ की ७ भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह रत्नप्रभा वटी सततक ज्वर, प्लीहवृद्धि, अग्निमांद्य, कामला, यकृद्वृद्धि या यकृद्रोग तथा भयंकर स्नायुशूल का शीघ्र ही नाश करती है; जैसे सिंह हाथी को नष्ट करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन-गन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषमज्वर एवं जीर्णज्वर में।

३६२. शीतभञ्जी रस (रसकामधेनु)

रसहिङ्गुलतालानि तुत्थं शम्बूकजं रजः।
कन्याऽद्भिः सप्तधा भाव्यं पक्तव्यं च शरावके ॥९५९॥
अहोरात्रं पुनः शीतं कुम्भाधःसिकताऽन्तरे।
दत्तः पथ्यं तु तक्रेण भक्तं क्षीरेण वा युतम्।
लवणेन विना सर्वान् नाशयेद्विषमज्वरान् ॥९६०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध हिङ्गुल, ३. शुद्ध हरताल, ४. शुद्ध तूतिया तथा ५. क्षुद्रशंखभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें और पत्थर के खरल में पारद, हरिताल मिलाकर मर्दन करें तथा कज्जली बनावें। ततः अन्य द्रव्यों को कज्जली में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

देकर मर्दन करें। ततः शम्बूक (घोंघा) भस्म मिलाकर घृतकुमारी-स्वरस की ७ भावना देकर बड़ी-सी वटी बनाकर छायाशुष्क करें। पुनः उक्त गोले को शरावसम्पुट कर बालुकायन्त्र में रखकर २४ घण्टे तक निरन्तर अग्नि दें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट निकाल औषधि को खरल कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह शीतभञ्जी रस सभी प्रकार के विषमज्वर में १-१ रत्ती की मात्रा में देने पर ज्वरनाश करती है। इसमें लवण खाने को नहीं दें।

पथ्य—तक्र-भात या दूध-भात देना चाहिए।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्राम। **अनुपान**–चिरायता क्वाथ से या उष्णोदक से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याम। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–विषमज्वर में।

३६३. चूडामणि रस-१ (र.सा.सं.)

मृतं सूतं प्रवालं च स्वर्णं तारं च वङ्गकम्।
शुल्बं मुक्ता तीक्ष्णमभ्रं सर्वमेकत्र योजयेत् ॥९६१॥
पिष्ट्वा जलेन वटिका कार्या वल्लप्रमाणतः।
धातुस्थं सन्निपातोत्थं ज्वरं विषमसम्भवम् ॥९६२॥
कामशोकसमुद्भूतं त्रिदोषजनितं तथा।
कासं श्वासं च विविधं शूलं सर्वाङ्गसम्भवम् ॥९६३॥
शिरोरोगं कर्णशूलं दन्तशूलं गलग्रहम्।
वातपित्तसमुद्भूतं ग्रहणीं सर्वसम्भवाम् ॥९६४॥
आमवातं कटीशूलमग्निमान्द्यं विसूचिकाम्।
अर्शांसि कामलां मेहं मूत्रकृच्छ्रादिकं च यत् ॥९६५॥
तत्सर्वं नाशयत्याशु विष्णुचक्रमिवासुरान्।
चूडामणिरसो ह्येष शिवेन परिकीर्तितः ॥९६६॥

१. रससिन्दूर, २. प्रवालभस्म, ३. स्वर्णभस्म, ४. रजत-भस्म, ५. वङ्गभस्म ६. ताम्रभस्म, ७. मोती भस्म, ८. तीक्ष्ण लोहभस्म तथा ९. अभ्रकभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में १०-१० ग्राम लेकर पत्थर के खरल में मर्दन कर सभी औषधि को मिलावें। ततः जल की भावना देकर ३-३ रत्ती की वटी बना लें और छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। धातुस्थ ज्वर, सन्निपातज्वर, विषमज्वर, कामज्वर, शोकज्वर, कास, श्वास, विविध शूल, शिरोरोग, कर्णशूल, दन्तशूल, गलग्रह, सभी प्रकार के संग्रहणी रोग, आमवात, कटी-वेदना, अग्निमांद्य, विसूचिका, अर्श, कामला, मेह एवं मूत्रकृच्छ्र आदि सभी रोगों का नाश करता हैं; जैसे विष्णु का चक्र सभी असुरों का नाश करता है। इस चूड़ामणि रस को स्वयं भगवान् शिव ने कहा है।

मात्रा–१२५ से ३७५ मि.ग्राम तक। **अनुपान**–दोषानुसार। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कत्थई। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–धातुस्थ ज्वर, सन्निपातज्वर, कामज्वर एवं शोकज्वर में।

३६४. चूडामणि रस-२ (र.सा.सं.)

कस्तूरिका विद्रुमरौप्यलौहं
तालं हिरण्यं रसभस्म दद्यात्।
सुवर्णसिन्दूरलवङ्गमुक्ता
चोचं घनं माक्षिकराजपट्टम् ॥९६७॥
गोक्षूरजातीफलजातिकोषं
मरीचकर्पूरकतुत्थकं च।
प्रगृह्य सर्वं हि समं प्रयत्ना-
दथाश्वगन्धां द्विगुणां हि वैद्यः ॥९६८॥
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं मुनिसंख्यया।
निर्गुण्डीफञ्जिकावासारविमूलत्रिकण्टकैः ॥९६९॥
तद्वीर्यं कथयिष्यामि वातिकं पैत्तिकं ज्वरम्।
कफोद्भवं त्रिदोषोत्थं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥९७०॥
सततं सन्ततं हन्ति तृतीयकचतुर्थकौ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं च विषमं भूतसम्भवम् ॥९७१॥
नाशयेदचिरादेव वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
चूडामणिरसो ह्येष शिवेन परिभाषितः ॥९७२॥

१. कस्तूरी, २. प्रवालकाण्डभस्म, ३. रजतभस्म, ४. रजत-भस्म, ५. लोहभस्म, ६. तालभस्म, ७. सुवर्णभस्म, ८. रससिन्दूर, ९. मकरध्वज, १०. लवङ्ग चूर्ण, ११. मोती भस्म, १२. दालचीनी चूर्ण, १३. अभ्रकभस्म, १४. सुवर्ण-माक्षिकभस्म, १५. कान्तपाषाणभस्म, १६. गोक्षुरबीज चूर्ण, १७. जायफल चूर्ण, १८. जावित्री चूर्ण, १९. मरिच चूर्ण, २०. कर्पूर, २१. तुत्थभस्म तथा २२. अश्वगन्ध चूर्ण—क्रम संख्या १ से २१ तक सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें और अश्वगन्ध २० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रससिन्दूर एवं मकरध्वज को मर्दन कर शेष सभी को उसी खरल में मिलाकर मर्दन करें और निर्गुण्डी, भार्गी, वासापत्रस्वरस, अर्कमूलस्वरस तथा गोक्षुर क्वाथ की ७-७ बार भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें एवं काचपात्र में रख लें। इस चूड़ामणि रस को तत्तद्रोगानुपान से देना चाहिए। यह वातज, पित्तज, कफज, सन्तत, सतत, ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थक ज्वरों, विषमज्वरों, भूतजज्वरों को इस प्रकार नाश करता है जैसे इन्द्र का वज्र वृक्षों का नाश करता है। भगवान् शिव ने इस औषधि को कहा है।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–कस्तूरी गन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–विषमज्वर एवं भूतज्वर में।

३६५. ज्वरचूडामणिरस-३ (र.सा.सं.)

स्वर्णं सुवर्णसिन्दूरं लौहं तारं मृगाण्डजम्।
जातीफलं जातिकोषं लवङ्गं च त्रिकण्टकम् ॥९७३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कर्पूरं गगनं चैव चोचं मुशलतालकम्।
प्रत्येकं कर्षमानन्तु तुरङ्गं च द्विकार्षिकम् ॥९७४॥
विद्रुमं भस्म सूतं च मौक्तिकं माक्षिकं तथा।
राजपट्टं शिखिग्रीवं सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ॥९७५॥
खल्ले तु चूर्णमादाय भावयेत्परिकीर्तितैः।
निर्गुण्डीफञ्जिकावासारविमूलत्रिकण्टकैः ॥९७६॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥९७७॥

१. सुवर्णभस्म, २. मकरध्वज, ३. लोहभस्म, ४. रजत भस्म, ५. कस्तूरी, ६. जायफल चूर्ण, ७. जावित्री चूर्ण, ८. लवङ्ग चूर्ण, ९. गोक्षुर चूर्ण, १०. कर्पूर, ११. अभ्रकभस्म, १२. दालचीनी चूर्ण, १३. श्वेतमुशली चूर्ण, १४. शुद्ध गन्धक, १५. प्रवालकाण्डभस्म, १६. रससिन्दूर, १७. मोतीभस्म, १८. स्वर्णमाक्षिकभस्म, १९. कान्तपाषाणभस्म और २०. तुत्थभस्म से श्वेत मुशली तक के सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें और गन्धक से तुत्थ पर्यन्त सभी द्रव्य २०-२० ग्राम लें।

सर्वप्रथम पत्थर के खरल में मकरध्वज एवं रससिन्दूर को मर्दन कर गन्धक एव अन्य भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। ततः अन्य द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर सिन्दुवार, भार्गी, वासापत्र-स्वरस, अर्कमूलस्वरस एवं गोक्षुर क्वाथ की ७-७ भावना दें। पुनः कस्तूरी मिलाकर थोड़ा जल देकर मर्दन करें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस औषधि के प्रयोग से साध्यासाध्य आठ प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–कस्तूरी गन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३६६. भानुचूडामणि

सुवर्णं रससिन्दूरं प्रवालं वङ्गमेव च।
लौहं ताम्रं पत्रजं च यमानीं विश्वभेषजम् ॥९७८॥
सैन्धवं मरिचं कुष्ठं खदिरं रजनीद्वयम्।
रसाञ्जनं माक्षिकं च समभागं च कारयेत् ॥९७९॥
वारिणा वटिका कार्या रक्तिद्वयप्रमाणतः।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वज्वरकुलान्तिकाम् ॥९८०॥

१. सुवर्णभस्म, २. रससिन्दूर, ३. प्रवालभस्म, ४. वङ्ग-भस्म, ५. लोहभस्म, ६. ताम्रभस्म, ७. तेजपत्ता, ८. अजवायन, ९. शुण्ठी चूर्ण, १०. सैन्धवलवण, ११. मरिच चूर्ण, १२. कूठ चूर्ण, १३. खैर की लकड़ी, १४. हल्दी चूर्ण, १५. दारुहल्दी चूर्ण, १६. रसाञ्जन और १७. स्वर्णमाक्षिकभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। तत्पश्चात् पत्थर के खरल में सर्वप्रथम रससिन्दूर को मर्दन कर अन्य सभी भस्मों तथा द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें। ततः जल की भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसके सेवन से सभी प्रकार के ज्वर-कुल नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–दोषानुसार (आर्द्रकस्वरस)। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कत्थई। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

३६७. चिन्तामणि रस-१ (र.सा.सं.)

रसं गन्धं मृतं ताम्रं मृतमभ्रं फलत्रिकम्।
त्र्यूषणं दन्तिबीजञ्च समं खल्ले विमर्दयेत् ॥९८१॥
द्रोणपुष्पीरसैर्भाव्यं शुष्कं तद् वस्त्रगालितम्।
चिन्तामणिरसो ह्येष त्वजीर्णे शस्यते सदा ॥९८२॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति सर्वशूलहरः परः।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा देयमार्द्रकवारिणा ॥९८३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्रभस्म, ४. अभ्रक-भस्म, ५. आमला चूर्ण, ६. हरीतकी चूर्ण, ७. बहेड़ा चूर्ण, ८. शुण्ठी चूर्ण, ९. पीपर चूर्ण, १०. मरिच चूर्ण तथा ११. शुद्ध जयपाल—सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः सभी भस्मों एवं काष्ठौषधों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर कज्जली के साथ मर्दन करें। पुनः द्रोणपुष्पी (गूमा) के स्वरस की भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे चिन्तामणि रस कहते हैं। यह अजीर्ण में बड़ा ही लाभदायक है। अष्टविध ज्वर, सभी प्रकार के शूल में १ या २ रत्ती की मात्रा आर्द्रक के रस से देना चाहिए।

मात्रा–१२५ मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अष्टविध ज्वर में।

३६८. चिन्तामणि रस-२ (र.सा.सं.)

रसं गन्धं विषं लौहं धूर्त्तबीजं समं समम्।
द्वौ भागौ ताम्रवह्न्योश्च व्योषचूर्णं तु तत्समम् ॥९८४॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम्।
अस्यानुपानेन वटी ज्वरे देया प्रयत्नतः ॥९८५॥
गुञ्जाद्वयां वटीं खादेत् सद्योज्वरविनाशिनीम्।
वातिकं पैत्तिकं चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥९८६॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकं च चातुर्थिकविपर्ययम्।
असाध्यं चापि साध्यं च ज्वरं चैवातिदुस्तरम् ॥९८७॥
अग्निमान्द्येऽप्यजीर्णे च अरोचकनिपीडिते।
ज्वरान् सर्वान्निहन्त्याशु सर्वज्वरकुलान्तकः ॥९८८॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

४. लोहभस्म, ५. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण, ६. ताम्रभस्म, ७. चित्रकमूल चूर्ण, ८. शुण्ठी चूर्ण, ९. पीपर चूर्ण और १०. मरिच चूर्ण—क्रम संख्या १ से ५ तक के द्रव्य प्रत्येक ५० ग्राम लें; ताम्र, चित्रक, सोंठ, पीपर एवं मरिच प्रत्येक १००-१०० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें, ततः भस्मों को मिलावें। इसके बाद में काष्ठौषधियों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें। पुनः जम्बीरी निम्बूस्वरस और आर्द्रक के स्वरस की १-१ भावना दें एवं २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखावें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस चिन्तामणि रस को खाने से तत्क्षण ज्वर नष्ट हो जाते हैं। वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थक, विपर्यय एवं साध्य तथा असाध्य सभी प्रकार के ज्वर-कुल नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अग्निमांद्य, अजीर्ण एवं अरुचि आदि ज्वरोपद्रव भी नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अष्टविध ज्वर एवं विषमज्वर में।

३६९. चिन्तामणि रस-३ (र.सा.सं.)

रसगन्धकलौहानि ताम्रं तारं हिरण्यकम्।
हरितालं खर्परञ्च कांस्यं वङ्गं च विद्रुमम् ॥९८९॥
मुक्तामाक्षिककासीसं टङ्कणं च शिला समम्।
कर्पूरं च समं दत्त्वा भावना सप्तसप्तकम् ॥९९०॥
भार्गी वासा च निर्गुण्डी नागवल्ली जयन्तिका।
कारवेल्लं पटोलं च शुक्राशनपुनर्नवे ॥९९१॥
आर्द्रकं च ततो दद्यात् प्रत्येकं वारसप्तकम्।
वातिकं पैत्तिकं चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥९९२॥
द्वन्द्वजं विषमाख्यं च धातुस्थं च ज्वरं जयेत्।
कासं श्वासं तथा शोथं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥९९३॥
प्लीहानमग्रमांसं च यकृतं च विनाशयेत्।
चिन्तामणिरसो नाम सर्वज्वरविनाशनः ॥९९४॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लोहभस्म, ४. ताम्र-भस्म, ५. रजतभस्म, ६. सुवर्णभस्म, ७. शुद्ध हरताल, ८. खर्परभस्म, ९. कांस्यभस्म, १०. वङ्गभस्म, ११. प्रवाल-भस्म, १२. मोतीपिष्टी, १३. सुवर्णमाक्षिकभस्म, १४. कासीस-भस्म, १५. शुद्ध सोहागा, १६. शुद्ध मैनसिल तथा १७. कर्पूर—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग (प्रत्येक १० ग्रा.) लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें, ततः अन्य शुद्ध हरताल, मैनसिल को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद अन्य सभी भस्मों एवं शुद्ध द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और भार्गीस्वरस, वासापत्रस्वरस, निर्गुण्डीपत्रस्वरस, ताम्बूलपत्रस्वरस, जयन्तीपत्रस्वरस, करैलापत्रस्वरस, पटोलपत्र-स्वरस, भाँगपत्रस्वरस, पुनर्नवामूलस्वरस एवं आर्द्रक के रसों से प्रत्येक स्वरस या क्वाथ से ७-७ भावना देना चाहिए। पुनः २-२ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह चिन्तामणि रस वातज्वर, पित्तज्वर, कफज्वर, सन्निपातज्वर, द्वन्द्वज्वर, विषमज्वर, धातुस्थ सभी ज्वरों को नाश करता है तथा कास, श्वास, शोथ, पाण्डु, हलीमक, प्लीहरोग, यकृद्रोग एवं हृदयमांसवृद्धि (अग्रमांसादि) सभी रोगों का भी नाश करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्राम। **अनुपान**–दोषानुसार। **गन्ध**–कर्पूरगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अष्टविध ज्वर, विषमज्वर एवं धातुगत ज्वर में।

३७०. चिन्तामणि रस-४ (र.सा.सं.)

रसं गन्धं विषं चैव त्रिकटुत्रैफले तथा।
शिलाह्वा रौप्यकं स्वर्णं मौक्तिकं तालकं तथा ॥९९५॥
मृगकस्तूरिकायाश्च ग्राह्यं षाण्माषिकं भिषक्।
भृङ्गराजरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन वै ॥९९६॥
आर्द्रकस्य रसेनैव वटीं कुर्याद् द्विगुञ्जिकाम्।
चिन्तामणिरसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकः ॥९९७॥
सन्निपातज्वरहरः कफरोगं विनाशयेत्।
एकजं द्वन्द्वजं चैव विविधं विषमज्वरम् ॥९९८॥
अग्निमान्द्यं शिरःशूलं विद्रधिं सभगन्दरम्।
एतान्येष निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥९९९॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ, ४. शुण्ठी चूर्ण, ५. पीपर चूर्ण, ६. मरिच चूर्ण, ७. आमला चूर्ण, ८. हरीतकी चूर्ण, ९. बहेड़ा चूर्ण, १०. शुद्ध मैनसिल, ११. रजत भस्म, १२. स्वर्ण भस्म, १३. मोतीपिष्टी, १४. शुद्ध हरताल तथा १५. कस्तूरी—क्रम संख्या १ से १४ तक के सभी द्रव्य १२-१२ ग्राम लें और कस्तूरी ६ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को पत्थर के खरल में मर्दन कर कज्जली बनावें। तत्पश्चात् कस्तूरी छोड़कर अन्य सभी द्रव्यों को कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें। ततः भृङ्गराजस्वरस, तुलसीपत्रस्वरस, आर्द्रकस्वरस के साथ मर्दन करें। सूखने के बाद उसमें कस्तूरी मिलाकर थोड़ा जल के साथ मर्दन करें और २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह चिन्तामणि रस सम्पूर्ण ज्वरों के कुलसहित प्रकार को नष्ट करता है। जिस प्रकार सूर्य अन्धकार का नाश करता है उसी प्रकार यह औषधि सन्निपात ज्वर, कफज्वर तथा कफरोग का नाश करती है। साथ ही एकदोषज, द्विदोषज, अनेक प्रकार के विषमज्वर, अग्निमांद्य, शिरःशूल, विद्रधि, भगन्दर आदि रोगों का नाश करती है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्राम तक। **अनुपान**–दोषानुसार।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गन्ध–कस्तूरी गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों, सन्निपातज्वर एवं विषमज्वर में।

३७१. त्र्याहिकारि रस (र.सा.सं.)

रसकेन समं शङ्खं शिखिग्रीवञ्च पादिकम्।
गोजिह्वया जयन्त्या च तण्डुलीयैश्च भावयेत् ॥१०००॥
प्रत्येकं सप्त सप्ताथ शुष्कं गुञ्जाचतुष्टयम्।
ज्वरघ्नेन घृतेनाद्यात् त्र्याहिकज्वरशान्तये ॥१००१॥

१. खर्परभस्म (अभावे यशदभस्म) १ भा., २. शंखभस्म १ भा. एवं ३. शुद्ध तुत्थ $\frac{1}{4}$ भा. लें। सर्वप्रथम एक खरल में तीनों द्रव्यों को रखकर मर्दन करें और गोजिह्वास्वरस, जयन्तीस्वरस तथा तण्डुलीपत्रस्वरस की ७-७ भावना दें एवं २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। मूल में ४ रत्ती की वटी कहा गया है, यह मात्रा इन दिनों अधिक मात्रा है। अतः २ रत्ती की मात्रा उचित है। ज्वरघ्न सिद्ध घृत के साथ मिलाकर इस रस को देने से त्र्याहिक ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–क्षीरषट्पल घृत से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–क्षारीय। **उपयोग**–विषम ज्वर में।

३७२. चातुर्थकारि रस (र.सा.सं.)

हरितालं शिला तुत्थं शङ्खचूर्णञ्च गन्धकम्।
समांशं मर्दयेत्खल्ले कुमारीरससंयुतम् ॥१००२॥
शरावसम्पुटे कृत्वा दत्त्वा गजपुटं पचेत्।
कुमारिकारसेनैव वल्लमात्रा वटी कृता ॥१००३॥
दत्ता शीतज्वरं हन्ति चातुर्थकं विशेषतः।
मरिचघृतयोगेन तक्रं पीत्वा चरेद्वटीम् ॥१००४॥
एतया वमनं भूत्वा ज्वरस्तस्माद्विनश्यति ॥१००५॥

१. शुद्ध हरताल, २. शुद्ध मैनसिल, ३. शुद्ध तुतिया, ४. शंख भस्म तथा ५. शुद्ध गन्धक—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर चक्रिका बनाकर सुखावें। उसके बाद शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्ग शीत होने पर सम्पुट से औषधि निकालकर पुनः खरल में पूर्ववत् घृतकुमारीस्वरस की १ भावना देकर ३ रत्ती की वटी बना लें। किन्तु आधुनिक मात्रा में १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। तक्र में मरिच चूर्ण एवं घृत मिलाकर इस वटी को सेवन करने से सर्वप्रथम रोगी को वमन होता है, साथ ही दोष निकल जाता है तथा चातुर्थक ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–तक्र, मरिच एवं घृत मिला कर। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कपोताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–चातुर्थक ज्वर में।

३७३. विश्वेश्वर रस ( )

दरदं गन्धकं सूतं तुल्यांशं मर्दयेद् द्रवैः।
अश्वत्थजे त्र्यहं पश्चाद्रसे कोलकमूलजैः ॥१००६॥
निदिग्धिकारसैः काकमाचिकाया रसैः पुनः।
द्विगुञ्जां वा त्रिगुञ्जां वा गोक्षीरेण प्रदापयेत्।
रात्रिज्वरं निहन्त्याशु नाम्ना विश्वेश्वरो रसः ॥१००७॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध गन्धक एवं ३. शुद्ध पारद—उपर्युक्त तीनों द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली एक खरल में करें। ततः हिंगुल मिलाकर मर्दन करें और अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष के मूलत्वक्स्वरस की भावना देकर ३ दिनों तक उसी स्वरस से मर्दन करें। पुनः बदरीमूलत्वक् या दन्तीमूल स्वरस, कण्टकारीस्वरस एवं काकमाची (मकोय) स्वरस की १-१ भावना दें और २ या ३ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह विश्वेश्वर रस २ या ३ रत्ती की मात्रा में सुखोष्ण गाय के दूध से देने से रात्रि में आने वाला ज्वर शान्त हो जाता है।

मात्रा–२५० से ३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–रात्रि ज्वर में।

३७४. त्रिभुवनकीर्ति रस (योगरत्नाकर)

हिङ्गुलं च विषं व्योषं टङ्कणं मागधीशिफाम्।
सञ्चूर्ण्य भावयेत् त्रेधा सुरसार्द्रकहेमभिः ॥१००७॥
रसस्त्रिभुवनकीर्तिर्गुञ्जैकार्द्ररसेन वै।
विनाशयेज्ज्वरान् सर्वान् सन्निपातास्त्रयोदश ॥१००८॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण, ३. शुण्ठी चूर्ण, ४. पीपर चूर्ण, ५. मरिच चूर्ण, ६. शुद्ध सोहागा तथा ७. पिपरामूल—ये सातों द्रव्य समभाग में लें। पत्थर के खरल में इन सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। ततः तुलसीस्वरस, आर्द्रकस्वरस और धत्तूरपत्र के स्वरस की ३-३ भावना दें तथा १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। अनुपान-भेद से यह त्रिभुवनकीर्ति रस सभी ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–तुलसीपत्र के साथ एवं उष्णोदक से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–लाल। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

विमर्श—अधिक फायदा के लिए अन्त में निम्बूस्वरस की भावना देनी चाहिए।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३७५. सञ्जीवनी वटी (शार्ङ्गधर)

विडङ्गं नागरं कृष्णा पथ्यामलबिभीतकम्।
वचा गुडूची भल्लातं सविषं चात्र योजयेत् ॥१००९॥
एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेषयेत्।
गुञ्जाभा गुटिका कार्या दद्यादार्द्रकजै रसैः ॥१०१०॥
एकामजीर्णगुल्मेषु द्वे विषूच्यां प्रदापयेत्।
तिस्रश्च सर्पदष्टे तु चतस्रः सान्निपातके॥
वटी सञ्जीवनी नाम्ना सञ्जीवयति मानवम् ॥१०११॥

१. वायविडङ्ग चूर्ण, २. सोंठ चूर्ण, ३. पीपर चूर्ण, ४. बड़ी हरें चूर्ण, ५. आँवला चूर्ण, ६. बहेड़ा चूर्ण, ७. वच चूर्ण, ८. गुडूची चूर्ण, ९. शुद्ध भिलावा चूर्ण और १०. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण १-१ भाग लेकर पत्थर के खरल में रखें और गोमूत्र में ३ दिनों तक पीस कर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे सञ्जीवनी वटी कहते हैं। अजीर्ण, आम एवं गुल्म रोग में १-१ वटी, विसूचिका में २-२ वटी, सर्पदंष्ट्र में ३-३ वटी लें और सन्निपातज्वर में ४-४ वटी देने से मनुष्य को जीवन प्रदान करता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं उष्णोदक से। **गन्ध**–गोमूत्रगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु-तिक्त। **उपयोग**–ज्वर, अजीर्ण एवं अरुचि में।

३७६. विक्रमकेशरी रस (रसराजसुन्दर)

शुल्वमेकं द्विधा तारं मर्दयेद् विधिवद्भिषक्।
पश्चाद्विषं रसं गन्धं मेलयित्वा तु भावयेत् ॥१०१२॥
एकविंशतिवारांश्च लिम्पाकवल्कलद्रवैः।
रसः सिद्धः प्रदातव्यो गुञ्जामात्रो ज्वरान्तकृत्॥
सर्वज्वरहरः ख्यातो रसो विक्रमकेशरी ॥१०१३॥

१. ताम्र भस्म १ भाग, २. रजत भस्म २ भाग, ३. शुद्ध वत्सनाभ १ भाग, ४. शुद्ध पारद १ भाग तथा ५. शुद्ध गन्धक १ भाग—पत्थर के खरल में सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक मिलाकर मर्दन करें तथा कज्जली बनावें। बाद में अन्य द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें तथा जम्बीरी निम्बूवृक्ष के मूलत्वक्स्वरस के साथ २१ भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह विक्रमकेशरी रस की १ वटी विभिन्नानुपान से देने पर सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–दोषानुसार अनुपान से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु-तिक्त। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

३७७. ज्वरकालकेतु रस (र.राजसुन्दर)

रसं विषं गन्धकताम्रकञ्च
मनःशिलाऽरुष्करतालकञ्च।
विमर्द्य वज्रीपयसा समांशं
गजाह्वयं तत्र पुटं विदध्यात् ॥१०१४॥
द्विगुञ्जमस्यैव मधुप्रयुक्तं
ज्वरं निहन्त्यष्टविधं महोग्रम्।
पुरा भवान्यै कथितो भवेन
नृणां हिताय ज्वरकालकेतुः ॥१०१५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध वत्सनाभ, ३. शुद्ध गन्धक, ४. ताम्रभस्म, ५. शुद्ध मैनसिल, ६. शुद्ध भिलावा तथा ७. शुद्ध हरताल—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर स्नुहीक्षीर की भावना देकर चक्रिका बनाकर सुखावें। उसके बाद शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर औषधि को निकाल कर खरल में खूब पीस लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को २ रत्ती किन्तु आधुनिक मात्रा १२५ मि.ग्रा. मधु के साथ प्रयोग करने से आठ प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। प्राचीनकाल में भगवान् शंकरजी ने मनुष्यों के हित के लिए इस ज्वरकालकेतु रस को पार्वतीजी से कहा था।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–आठ प्रकार के ज्वरों में।

३७८. त्रिपुरारि रस (र.रा.सुन्दर)

हुताशमुखसंशुद्धं रसं ताम्रञ्च गन्धकम्।
लौहमभ्रं विषञ्चैव सर्वं कुर्यात् समांशकम् ॥१०१६॥
रसार्द्धं मृतरौप्यं च शृङ्गबेराम्बुमर्दितम्।
द्विगुञ्जं मधुना देयं सितयाऽऽर्द्ररसेन वा ॥१०१७॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वारिदोषभवं तथा।
प्लीहानमुदरं शोथमतीसारं विनाशयेत्।
रोगानेतान्निहन्त्याशु शङ्करस्त्रिपुरं यथा ॥१०१८॥

१. हिङ्गुलोत्थ पारद, २. ताम्रभस्म, ३. शुद्ध गन्धक, ४. लोहभस्म, ५. अभ्रकभस्म, ६. शुद्ध वत्सनाभ तथा ७. रजत भस्म—क्रम संख्या १ से ६ संख्या तक सभी द्रव्य १-१ भाग और रजतभस्म आधा (½) भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर आर्द्रक के रस की १ भावना दें एवं २ रत्ती (आधुनिक मात्रा १२५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को १ रत्ती की

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा में मधु, चीनी एवं आर्द्रक के रस से देने पर आठ प्रकार के ज्वर, जलदोषोत्पन्न ज्वर, प्लीहारोग, उदररोग, शोथ तथा अतिसार रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं; जैसे भगवान् शंकर ने त्रिपुर नगरी का नाश कर दिया था।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु, चीनी एवं आर्द्रकस्वरस से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–आठ प्रकार के ज्वर, प्लीहारोग एवं उदररोग में।

३७९. मेघनाद रस (र.चि.)

तारं कांस्यं मृतं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यञ्च गन्धकम्।
क्वाथेन मेघनादस्य पिष्ट्वा रुद्ध्वा पुटे पचेत् ॥१०१९॥
षड्भिः पुटैर्भवेत्सिद्धो मेघनादो ज्वरापहः।
भक्षयेत्पर्णखण्डेन विषमज्वरनाशनः ॥१०२०॥
अस्य मात्रा द्विगुञ्जा स्यात्पथ्यं दुग्धौदनं हितम्।
नागरातिविषामुस्तभूनिम्बामृतवत्सकैः ॥१०२१॥
सर्वज्वरातिसारघ्नं क्वाथमस्यानुपाययेत्।
तरुणं वा ज्वरं जीर्णतृष्णां दाहञ्च नाशयेत् ॥१०२२॥

१. रजतभस्म १ भाग, २. कांस्यभस्म १ भाग, ३. ताम्र-भस्म १ भाग तथा ४. शुद्ध गन्धक ३ भाग लें। पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें, ततः पत्थर के खरल में सभी द्रव्यों का मर्दन करें तथा चौराईपत्र शाकस्वरस की १ भावना दें एवं चक्रिका बनाकर सुखावें। ततः शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोल कर औषधि को खरल में पीस लें और पुनः चौराईपत्रस्वरस की भावना देकर पूर्ववत् गजपुट में पाक करें। इसी प्रकार कुल ६ पुट दें। पुनः स्वाङ्गशीत होने पर औषधि को निकाल कर खरल में मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस औषधि को २ रत्ती की मात्रा में पान के बीड़ा के साथ खिलाने से विषम ज्वर नष्ट हो जाता है। पथ्य में दूध-भात खिलाना चाहिए। इसके अतिरिक्त सभी प्रकार के ज्वरों में, तरुणज्वर, जीर्णज्वर अतिसार, तृष्णा एवं दाह को भी यह औषधि नाश करती है। इन रोगों में शुण्ठी, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गुडूची एवं कुटजछाल का समभागीय यवकुट क्वाथ २५ मि.ली. के साथ इस औषधि को लेना चाहिए।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–पान के बीड़ा में। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३८०. शीतारि रस (र.रा.सु.)

तालकं दरदोद्भूतः पारदो गन्धकं शिला।
क्रमाद्भागार्द्धरहितं कारवेल्ल्यम्बुमर्दितम् ॥१०२३॥
इदमस्य प्रमाणेन ताम्रपत्रीं प्रलेपयेत्।
अधोमुखं दृढे भाण्डे तां निरुद्ध्याथ पूरयेत् ॥१०२४॥
चुल्ल्यां बालुकया घस्त्रमेकं प्रज्वालयेद् दृढम्।
शीते सञ्चूर्ण्य गुञ्जाऽस्य नागवल्लीदले स्थिता ॥१०२५॥
भक्षिता मरिचैः सार्द्धं समस्तान् विषमज्वरान्।
दाहशीतादिकं हन्यात् पथ्यं शाल्योदनं पयः ॥१०२६॥

१. शुद्ध हरताल ४० ग्राम, २. हिङ्गुलोत्थ पारद २० ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक १० ग्राम, ४. शुद्ध मैनसिल ५ ग्राम और ५. शुद्ध कण्टकवेधी ताम्र ७५ ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें तथा बाद में हरताल एवं मैनसिल मिलाकर कज्जली को और मर्दन करें। इसके बाद करैला के पत्ते के रस से कज्जली को भावित करें। इसके पूर्व कण्टकवेधी शुद्ध ताम्रपत्र ७५ ग्राम की कटोरी बना लें। करैले के स्वरसभावित कज्जली का लेप उक्त कटोरी के अन्दर करें। इसके बाद कज्जली लिप्त कटोरी को औंधा कर हाँडी की तली में रखें और हाँडी में सूखी बालू भर दें। शराव से हाँडी का मुख ढ़क कर कपड़मिट्टी से सन्धिबन्धन करें। सूखने पर चूल्हे पर उक्त सम्पुटित हाँडी को रखकर १ घण्टे तक तीव्राग्नि से पकावें। स्वाङ्गशीत होने पर सावधानी से बालू हटाकर सुपक्व कटोरी को निकालकर खरल में मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। ताम्बूल पत्र में १ रत्ती उक्त मर्दित औषधि एवं ४ रत्ती मरिच चूर्ण रखकर खाने से दाह-शीत से युक्त विषमज्वर नष्ट हो जाता है। पथ्य में शालिचावल का भात एवं दूध खाना चाहिए।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र एवं मरिच चूर्ण से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कषाय। **उपयोग**–दाह, शीतजन्य शीतज्वर में।

३८१. स्वच्छन्दभैरव रस (र.चि.)

समभागांश्च संगृह्य पारदामृतगन्धकान्।
जातीफलस्य भागार्द्धं दत्त्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥१०२७॥
सर्वार्द्धं पिप्पलीचूर्णं खल्लयित्वा निधापयेत्।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा नागवल्लीदलैः सह ॥१०२८॥
आर्द्रकस्य रसेनापि द्रोणपुष्पीरसेन वा।
शीतज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे ॥१०२९॥
पीनसे च प्रतिश्याये ज्वरे जीर्णे तथैव च।
मन्देऽग्नौ वमने चैव शिरोरोगे च दारुणे ॥१०३०॥
प्रयोज्यो भिषजा सम्यग् रसः स्वच्छन्दभैरवः।
पथ्यं दध्योदनं दद्याद्वीक्ष्य दोषबलाबलम् ॥१०३१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध वत्सनाभ, ३. शुद्ध गन्धक, ४. जायफल तथा ५. पिप्पली चूर्ण—पारद, वत्सनाभ, गन्धक प्रत्येक २०-२० ग्राम तथा जायफल १० ग्राम और पिप्पली चूर्ण ३५ ग्राम लें। पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एक साथ मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः दोनों काष्ठौषधियों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर कज्जली के साथ १ दिन मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे स्वच्छन्दभैरव रस कहते हैं। इसे १ या २ रत्ती की मात्रा में ताम्बूलस्वरस या आर्द्रकस्वरस या गूमा (द्रोणपुष्पी) स्वरस के साथ खिलाने से शीतज्वर, सन्निपातज्वर, विषमज्वर, सामान्य ज्वर, जीर्णज्वर, विसूचिका, पीनस, प्रतिश्याय, मन्दाग्नि, वमन एवं भयंकर शिरोरोग नष्ट हो जाते हैं। दोषों के बलाबल देख कर पथ्य में दही-भात देना चाहिए। आजकल इसकी मात्रा १ रत्ती ही दें।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलस्वरस या आर्द्रकस्वरस या गूमास्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु । **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में, पीनस एवं प्रतिश्याय में।

३८२. ज्वरारि रस

दरदबलिरसानां शुल्बताम्राभ्रकाणां
सुभगविडशिलानां सर्वमेकत्र योज्यम्।
विपिननृपदलोत्थैर्भावितं शोषयेत्तं
दिवसदशसमाप्तौ रक्तिकैकाञ्च कुर्यात् ॥१०३२॥
एकैकां भक्षयेदस्य चार्द्रकस्य रसैर्युताम्।
दत्तमात्रं ज्वरं हन्ति ज्वरारिः स निगद्यते ॥
सर्वशूलविनाशी च कफपित्तविनाशनः ॥१०३३॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध पारद, ४. ताम्रभस्म, ५. नागभस्म, ६. अभ्रकभस्म, ७. शुद्ध सोहागा, ८. विडलवण तथा ९. शुद्ध मैनसिल—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को कज्जली के साथ मिलाकर अमलतासपत्रस्वरस की १० भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। आर्द्रक के रस के साथ इस औषधि को १-१ वटी खाने मात्र से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं, इसीलिए इसे ज्वरारि रस कहते हैं। इसके अतिरिक्त यह रस सभी प्रकार के शूलों तथा कफ-पित्तजन्य दोषों (रोगों) का भी नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३८३. ज्वराशनि रस (र.सा.सं.)

रसं गन्धं सैन्धवञ्च विषं ताम्रं समं भवेत्।
सर्वचूर्णसमं लोहं तत्समं चूर्णमभ्रकम् ॥१०३४॥
लौहे च लौहदण्डेन निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च।
मर्दयेद्यत्नतः पश्चान्मरिचं सूततुल्यकम् ॥१०३५॥
पर्णेन सह दातव्यो रसो रक्तिकसम्मितः।
कासं श्वासं महाघोरं विषमाख्यं ज्वरं वमिम् ॥१०३६॥
धातुस्थं प्रबलं दाहं ज्वरदोषं चिरोद्भवम्।
यकृद्गुल्मोदरं प्लीहश्वयथुञ्च विनाशयेत् ॥१०३७॥

१. शुद्ध पारद १ भा., २. शुद्ध गन्धक १भा., ३. सैन्धवलवण १ भा., ४. शुद्ध वत्सनाभविष १भा., ५. ताम्र-भस्म १ भा., ६. लोहभस्म ५ भा. तथा ७. मरिच चूर्ण १ भा. लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। तत्पश्चात् मरिच छोड़कर अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण कज्जली के साथ मिलाकर सिन्दुवारपत्रस्वरस की भावना दें और बाद में मरिच चूर्ण मिलाकर मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। कास, श्वास, भयंकर विषमज्वर, धातुगत ज्वर, जीर्णज्वर, भयंकर दाह, वमन, यकृत्-प्लीहाजन्य दोष, गुल्म एवं शोथ रोगों में १ रत्ती इस ज्वराग्नि रस को ताम्बूलपत्र में रखकर चबाने से उपर्युक्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषम ज्वर, जीर्णज्वर एवं धातुगत ज्वर में।

३८४. ज्वरान्तक रस

भास्करो गन्धकः शर्वो देवीविहगतीक्ष्णकम्।
शोणितं गगनञ्चैवं पुष्पकञ्च महेश्वरम् ॥१०३८॥
भूनिम्बादिगणैर्भाव्यं मधुना गुटिका दृढा।
चातुर्थकं तृतीयञ्च ज्वरं सन्ततकं तथा।
आमज्वरं भूतकृतं सर्वज्वरमपोहति ॥१०३९॥

१. ताम्रभस्म[1], २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध पारद, ४. शुद्ध फिटकरी, ५. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ६. तीक्ष्णलोहभस्म, ७. शुद्ध हिङ्गुल, ८. अभ्रकभस्म, ९. यशदपुष्प तथा १०. स्वर्णभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य प्रत्येक समभाग में लें। पत्थर के खरल में सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः उसी कज्जली के साथ अन्य भस्मों आदि को मिलाकर मर्दन करें। पुनः भूनिम्बादि[2] गण क्वाथ की ३ भावना दें तथा १ से २ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित

१. भास्कर = सूर्य, शर्व = शिव, देवी = सौराष्ट्रमृत्तिका, विहङ्ग = सुवर्ण-माक्षिक, शोणित = हिङ्गुल, पुष्पक = पुष्पाञ्जन, महेश्वर = स्वर्ण। इन द्रव्यों का अर्थ इसी प्रकार है किन्तु सौराष्ट्रमृत्तिका के स्थान पर फिटकरी और पुष्पाञ्जन के स्थान पर यशद पुष्प लेना चाहिए, क्योंकि उपर्युक्त अप्राप्य है।

२. भूनिम्बादि क्वाथ—१. चिरायता, २. देवदारु, ३. बेल छाल, ४. गम्भार छाल, ५. अरणि छाल, ६. सोनापाठा मूल, ७. पाढल मूल, ८. शालपर्णी, ९. पृश्निपर्णी, १०. गोखरु, ११. बृहती, १२.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रख लें। इसे मधु के साथ १ वटी मिलाकर चटाने से तृतीयकज्वर, चातुर्थकज्वर, सन्ततज्वर, आमज्वर, भूतज्वर एवं सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–कृष्ण। **वर्ण**–श्याव वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषमज्वर, आमज्वर तथा भूतज्वर में।

३८५. वातपित्तान्तक रस

मृतसूताभ्रमुस्तार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।
गन्धकं मर्दयेत् तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृतारसैः ॥१०४०॥
धात्रीशतावरीद्रावैर्द्रवैः क्षीरविदारिजैः ।
दिनं दिनं विभाव्याथ सिताक्षौद्रयुता वटी ॥१०४१॥
माषमात्रा निहन्त्याशु वातपित्तज्वरं क्षयम् ।
दाहं तृष्णां भ्रमं शोषं वातपित्तान्तको रसः ॥
सिताक्षीरं पिबेच्चानु यष्टिक्वाथसितायुतम् ॥१०४२॥

१. रससिन्दूर, २. अभ्रकभस्म, ३. नागरमोथा, ४. ताम्र भस्म, ५. लोहभस्म, ६. सुवर्णमाक्षिकभस्म, ७. शुद्ध हरताल तथा ८. शुद्ध गन्धक—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग (प्रत्येक ५०-५० ग्राम) लें। एक खरल में रससिन्दूर को मर्दन कर उसमें गन्धकादि सभी द्रव्यों को मिलाकर १ दिन मर्दन करें। ततः मुलेठी क्वाथ, द्राक्षास्वरस, गुडूचीस्वरस, आमलास्वरस, शतावरी क्वाथ, क्षीरविदारीकन्द क्वाथ की १-१ भावना दें। पुनः चीनी एवं मधु मिलाकर १-१ माषा (आधुनिक मात्रा १ रत्ती) वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। १ से २ रत्ती की मात्रा में सेवन करने से वातपित्तज्वर, क्षय, दाह, तृष्णा, भ्रम एवं शोष रोगों का नाश करता है। औषधिसेवनोत्तर चीनी मिला दूध या मुलेठी क्वाथ में चीनी मिलाकर पीना चाहिए।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—चीनी मिला दूध या चीनी युक्त मुलेठी क्वाथ। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्त। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातपित्तज्वर, क्षय, भ्रम, तृष्ण एवं दाह में।

३८६. जयमङ्गल रस

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकं टङ्कणं तथा ।
ताम्रं वङ्गं माक्षिकञ्च सैन्धवं मरिचं तथा ॥१०४३॥
समं सर्वं समाहृत्य द्विगुणं स्वर्णभस्मकम्।
तदर्द्धं कान्तलौहञ्च रौप्यभस्मापि तत्समम्॥१०४४॥
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ भावयेत्कनकद्रवैः ।
शेफालीदलजैश्चापि दशमूलरसेन च ॥१०४५॥
किराततिक्तकक्वाथैस्त्रिवारं साधयेत्सुधीः ।
भावयित्वा ततः कार्या गुञ्जाद्वयमिता वटी ॥१०४६॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं जीरकं मधुसंयुतम् ।
जीर्णज्वरं महाघोरं चिरकालसमुद्भवम् ॥१०४७॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ।
पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान् ॥१०४८॥
मेदोगतं मांसगतमस्थिमज्जगतं तथा ।
अन्तर्गतं महाघोरं बहिःस्थञ्च विशेषतः ॥१०४९॥
नानादोषोद्भवञ्चैव ज्वरं शुक्रगतं तथा ।
निखिलं ज्वरनामानं हन्ति श्रीशिवनिर्मितः ॥१०५०॥
जयमङ्गलनामाऽयं रसः श्रीशिवनिर्मितः ।
बलपुष्टिकरश्चैव सर्वरोगनिबर्हणः ॥१०५१॥

१. हिङ्गुलोत्थ पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध सोहागा, ४. ताम्रभस्म, ५. वङ्गभस्म, ६. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ७. सैन्धवनमक, ८. मरिचचूर्ण, ९. सुवर्णभस्म, १०. कान्तलौहभस्म और ११. रजतभस्म—उपर्युक्त द्रव्यों में से स्वर्णभस्म छोड़कर सभी १० द्रव्य १०-१० ग्राम लें तथा स्वर्णभस्म २० ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। इसके बाद शेष अन्य भस्मों को कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें और धत्तूरपत्रस्वरस, निर्गुण्डीपत्रस्वरस, दशमूल क्वाथ एवं चिरायता क्वाथ की ३-३ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस जयमङ्गल रस को जीरक चूर्ण एवं मधु के साथ खिलाने से भयंकर जीर्णज्वर जो बहुत दिनों से उत्पन्न है, साध्यासाध्य सभी आठों प्रकार के ज्वर, पृथक् दोष एवं सन्निपात दोष से युक्त विषमज्वर नष्ट हो जाते हैं। मेदोगत ज्वर, मांसगत ज्वर, अस्थिगत ज्वर, मज्जागत ज्वर, भयंकर अन्तर्वेग ज्वर, बहिर्वेगज्वर, अनेक प्रकार के दोषों से उत्पन्न ज्वर, शुक्रगतज्वर, भगवान् शिव के द्वारा निर्मित यह जयमङ्गल रस सम्पूर्ण ज्वरों का नाश करता है। यह रसौषधि बल देता है तथा सभी धातुओं की पुष्टि करता है और सभी रोगों को नष्ट करती है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–आठों प्रकार के ज्वर एवं धातुगत ज्वरों में।

३८७. ज्वरकुञ्जरपारीन्द्र रस

मूर्च्छितं रसकर्षैकं तदर्धं जारिताभ्रकम् ।
तारं ताप्यञ्च रसजं रसकं ताम्रकं तथा ॥१०५२॥
मौक्तिकं विद्रुमं लौहं गिरिजं गैरिकं शिला ।
गन्धकं हेमसारञ्च पलार्द्धञ्च पृथक् पृथक् ॥१०५३॥

कण्टकारी, १३. शुण्ठी, १४. नागरमोथा, १५. कुटकी, १६. इन्द्रजौ, १७. धनियाँ और १८. गजपीपर—इन अठारह द्रव्यों को समभाग में लेकर क्वाथ करें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

क्षीरावी सुरवल्ली च शोथघ्नी गणिकारिका ।
झाटामला ज्योत्स्निका च सतिक्ता च सुदर्शना ॥१०५४॥
अग्निजिह्वा पूतितैला सूर्पपर्णी प्रसारिणी ।
प्रत्येकं स्वरसं दत्त्वा मर्दयेत्त्रिदिनावधि ॥१०५५॥
भक्षयेत् पर्णखण्डेन चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
महाग्निकारको रोगसङ्घरघ्नः प्रयोगराट् ॥१०५६॥
सन्ततं सततान्येद्युस्तृतीयकचतुर्थकान् ।
ज्वरान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥१०५७॥
श्वासं कासं प्रमेहञ्च सशोथां पांण्डुकामलाम् ।
ग्रहणीं क्षयरोगञ्च सर्वोपद्रवसंयुतम् ।
ज्वरकुञ्जरपारीन्द्रः प्रथितः पृथिवीतले ॥१०५८॥

१. रससिन्दूर १२ ग्राम, २. अभ्रकभस्म ६ ग्राम, ३. रजत-भस्म २३ ग्राम, ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म २३ ग्राम, ५. रसौत २३ ग्राम, ६. खर्परभस्म २३ ग्राम, ७. ताम्रभस्म २३ ग्राम, ८. मोतीपिष्टी २३ ग्राम, ९. प्रवालभस्म २३ ग्राम, १०. लोहाभस्म २३ ग्राम, ११. शुद्ध शिलाजीत २३ ग्राम, १२. शुद्ध गैरिक २३ ग्राम, १३. शुद्ध मैनसिल २३ ग्राम, १४. शुद्ध गन्धक २३ ग्राम तथा १५. स्वर्णभस्म २३ ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रससिन्दूर को पीसकर गन्धक के साथ मर्दन करें। ततः सभी भस्मों को मिलावें। पुनः शिलाजीत आदि शुद्ध द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः १. दुग्धिकास्वरस २. तुलसीपत्रस्वरस, ३. पुनर्नवास्वरस, ४. अरणीमूल क्वाथ, ५. भूम्यामलकीस्वरस, ६. पटोलपत्रस्वरस, ७. कुटकी क्वाथ, ८. सोमवल्ली स्वरस, ९. कलिहारी स्वरस, १०. ज्योतिष्मती क्वाथ, ११. मुद्गपर्णी क्वाथ एवं १२. प्रसारणीस्वरस—प्रत्येक स्वरस के साथ ३-३ दिनों तक मर्दन करें अर्थात् १२ द्रव्यों के स्वरस से ३६ दिनों तक मर्दन करें। इसके बाद ४-४ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। ४ रत्ती की मात्रा में ताम्बूल के साथ खाने से (यह अधिक मात्रा है अतः २ रत्ती दें) पाचकाग्नि को अत्यन्त प्रदीप्त करता है, सम्पूर्ण रोगों का नाश करता है। सन्तत ज्वर, सतत ज्वर, अन्येद्युष्क ज्वर, तृतीयक ज्वर, चतुर्थक ज्वर के अतिरिक्त सम्पूर्ण ज्वरों का नाश करता है; जैसे भगवान् सूर्य अन्धकार का नाश करते हैं। साथ ही उपद्रवों से युक्त कास, श्वास, प्रमेह, शोथ, पाण्डु, कामला, ग्रहणी एवं क्षयादि रोग भी नष्ट हो जाते हैं। भूमण्डल में यह रस ज्वरकुञ्जरपारीन्द्र नाम से विख्यात है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूल के पत्र में रखकर खाना। **गन्ध**–गोमूत्रगन्धी (शिलाजतुगन्धी)। **वर्ण**–श्याव वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों तथा अन्य सभी रोगों में।

३८८. विद्यावल्लभ रस (रसे.चि.म.)

रसो म्लेच्छशिलातालाश्चन्द्रद्व्यग्न्यर्कभागिकाः ।
पिष्ट्वा तान् सुषवीतोयैस्ताम्रपत्रोदरे क्षिपेत् ॥१०५९॥
न्यस्तं शरावे संरुध्य बालुकायन्त्रगं पचेत् ।
स्फुटन्ति व्रीहयो यावत्तच्छिरःस्थाश्च शनैः शनैः ॥१०६०॥
सञ्चूर्ण्य शर्करायुक्तं द्विवल्लं भक्षयेत्ततः ।
विषमाख्याञ्ज्वरान् हन्ति तैलाम्लादि विवर्जयेत् ॥१०६१॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध हिङ्गुल २ भाग, ३. शुद्ध मैनसिल ३ भाग, ४. शुद्ध हरताल १२ भाग और ५. कण्टक-वेधी ताम्रपत्र १८ भाग—पत्थर के एक खरल में पारद एवं हरताल एक साथ मर्दन कर कज्जली बनावें। उसके बाद मैनसिल एवं हिङ्गुल मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद ताम्रपत्र का "तैले तक्रे गवां मूत्रे ह्यारनाले कुलत्थजे" इस विधि से शोधन कर लें। इसके बाद उस कण्टकवेधी शुद्ध ताम्रपत्र की कटोरी बना लें। फिर उपर्युक्त मर्दित कज्जली में करैला के पत्ते के रस की भावना दें और उक्त भावित कल्कवत् कज्जली को ताम्रकटोरी के उदर में लेप करें। सूखने पर एक बड़ी हाँडी में लेपित कटोरी औंधा कर (उलटकर) रखें। कटोरी की पीठ पर मिट्टी का शराव रख कर सन्धिबन्धन करें और बाद में हाँडी में सूखी बालू भर दें। अब इस बालुकायन्त्र को चूल्हे पर चढ़ाकर तीव्राग्नि से पाक करें। बालुका-यन्त्र के ऊपर १ मुट्ठी धान फैला दें। तीव्राग्नि तब तक देते रहे जब तक बालू के ऊपर फैलाया गया धान फूट कर लावा (लाज) न हो जाय। इसके बाद अधिक अग्नि नहीं दे। स्वाङ्गशीत होने पर सावधानी से बालू हटाकर औषधि निकाल लें। कटोरी सहित औषधि को खरल में मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। औषधि के बराबर चीनी पीसकर मिलावें और २ वल्ल (६ रत्ती) की मात्रा (अधुना १ से ३ रत्ती) में विषम ज्वर से पीड़ित व्यक्ति को खिलाने से व्यक्ति ज्वर से मुक्त हो जाता है। इस औषधि के सेवनकाल में तैल, अम्ल, कषाय, कटु आदि पदार्थ नहीं खाना चाहिए।

मात्रा–१२५ से ३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–सभी प्रकार के विषम ज्वरों में।

३८९. शीतारिरस

कूष्माण्डक्षारचूर्णोदकतिलजपृथक्पाचितं शुद्धतालं
तुल्यं सूतेन पिष्ट्वा त्रिदिवसमसकृत् कारवेल्लद्रवेण ।
क्षिप्त्वा तत्खर्परान्तर्दिनपतिपिहितं रन्ध्रमप्यन्धयेत्तं
नीरन्ध्रं चूर्णपथ्यागुडलवणखटीमृद्भिरप्यन्तरालम् ॥
तद्बालुकापूर्णघटे निदध्याच्छनैः पचेत् तावदुपर्यमुष्य
व्रीहिर्विवर्णत्वमुपैति यावत्ततस्तु शीतं विदधीत चूर्णम् ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सिद्धं तच्च समाददीत तुलसीतोयेन वल्लोन्मितं
पश्चात् क्षौद्रकणासिताऽऽज्यपयसा कृत्वाऽनुपानं गदी ।
भुञ्जीताथ पयोऽन्नमुद्गससितं साज्यञ्च हन्यान्नृणां
तापं कालवशेन सञ्चितमयं शीतारिनामा रसः ॥१०६३॥

१. पत्रताल १ भाग, २. शुद्ध पारद १ भाग एवं ३. कण्टकवेधी शुद्ध ताम्रपत्र २ भाग—सर्वप्रथम कूष्माण्डस्वरस, चूर्णोदक तथा तिलक्षार के घोल में दोलायन्त्र विधि से क्रमशः पृथक्-पृथक् हरतालपत्र का स्वेदन कर शुद्ध कर लें। ततः ताल को जल से धो लें, पुनः एक खरल में शुद्ध हरताल एवं शुद्ध पारद को मर्दन कर कज्जली बना लें। पुनः करैलापत्र के स्वरस से उक्त कज्जली में भावना दें। इसके बाद कण्टकवेधी ताम्रपत्र पर भावित कज्जली का लेप करें। एक बड़ी मिट्टी की हाँडी में उक्त लिप्त पत्र को रख कर ऊपर से मिट्टी के शराव से ढ़क दें और हरीतकी चूर्ण, गुड़, लवण, खड़िया मिट्टी तथा काली चिकनी मिट्टी समभाग मिलाकर जल में पीसें और सन्धिबन्धन करें। इसके बाद हाँडी के खाली भाग में सूखी बालू भर दें और बालू के ऊपर १ मुट्ठी धान फैलावें तथा चूल्हे पर चढ़ाकर तीव्राग्नि से पाक करें। तब तक पाक करें जब तक धान का लावा (लाज) न बन जाय। इसके बाद स्वाङ्गशीत होने पर सावधानीपूर्वक हाँडी से बालू हटाकर सन्धिबन्धन खोलें और भस्मीभूत लिप्त ताम्रपत्र निकाल कर खरल में मर्दन करें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। ३ रत्ती इस औषधि को तुलसीपत्र स्वरस के साथ लेना चाहिए। अधुना यह मात्रा अत्यधिक है, अतः १ से २ रत्ती की मात्रा में दें। इस औषधि के सेवन के बाद मधु, पीपर, चीनी, घी एवं दूध में से किसी एक का अनुपान करना चाहिए। भूख लगने पर दूध, भात, मूँग की दाल घृत मिलाकर खिलाना चाहिए। यह शीतारि रस शीत एवं दाहपूर्वक ज्वर का नाश करता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–तुलसीपत्रस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३९०. ज्वरशूलहर रस

रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं भाण्डमध्यगाम् ।
तत्राधोवदनां ताम्रपात्रीं संरुध्य शोधयेत् ॥१०६४॥
पादाङ्गुष्ठप्रमाणेन चुल्ल्यां ज्वालेन तां दहेत् ।
यामद्वयं ततस्तत्स्थं रसपात्रं समाहरेत् ॥१०६५॥
चूर्णयेद्रक्तियुगलं तृतीयं वा विचक्षणः ।
ताम्बूलीदलयोगेन दद्यात्सर्वज्वरेष्वमुम् ॥१०६६॥
जीरसैन्धवसंलिप्तवक्त्राय ज्वरिणे हितम् ।
स्वेदोद्गमो भवत्येव देवि सर्वेषु पाप्मसु ॥१०६७॥
चातुर्थकादीन् विषमान् नवमागामिनं ज्वरम् ।
साधारणं सन्निपातं जयत्येष न संशयः ॥१०६८॥

१. शुद्ध पारद २० ग्रा., २. शुद्ध गन्धक २० ग्रा. एवं ३. ताम्रपत्र २० ग्रा.—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बना लें। ताम्रपत्र की छोटी कटोरी बनी-बनाई लें और उसका तैले-तके आदि में शोधन करके प्रयोग में लें। उक्त कज्जली को निम्बूस्वरस से भावित कर उस कटोरी के अन्दर पूरी कज्जली का लेप करें। सूखने पर एक हाँड़ी में उक्त कज्जलीलिप्त कटोरी औंधा कर (अधोमुखी कर) रखें। उसके ऊपर से एक मिट्टी के शराव से सम्पुट कर मिट्टी से सन्धिबन्धन करें। इसके बाद इस हाँडी में सूखी बालू भरे और प्रज्वलित चूल्हा पर चढ़ाकर तीव्राग्नि से पाक करें। पूर्ववत् बालू के ऊपर धान फैला दें। जब धान लावा (लाज = खील) रूप में हो जाय तो स्वाङ्गशीत होने को छोड़ दें। स्वाङ्गशीत होने के बाद बालू हटाकर सावधानी से शरावसम्पुट खोलकर जीर्ण कटोरी सहित औषधि को निकाल लें। खरल में जीर्ण ताम्र कटोरी सहित औषधि को अच्छी तरह पीसकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। चातुर्थकज्वर, विषमज्वर, नवज्वर, आगन्तुज ज्वर, साधारण ज्वर एवं सन्निपातज्वर से पीड़ित रोगी को २-२ रत्ती की मात्रा में ताम्बूलपत्र के साथ खिलाने से ज्वर नष्ट हो जाते हैं। बाद में जीरक चूर्ण, सैन्धव चूर्ण १-१ ग्राम तथा मधु १२ ग्राम मिलाकर खिलाना चाहिए। इस औषधि के सेवन के बाद सभी ज्वरियों में पसीना देकर ज्वर उतर जाता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों एवं विषमज्वरों में।

३९१. षडाननरस

आरं कांस्यं मृतं ताम्रं दरदं पिप्पलीं विषम् ।
तुल्यांशं मर्दयेत् खल्ले यामञ्च गुडुचीरसैः ॥१०६९॥
गुञ्जामात्रो रसो देयो गुञ्जामात्रं लिहेत्सदा ।
ज्वरे मन्दानले चैव वातपित्तज्वरेषु च ॥१०७०॥
ज्वरे वैषम्यतरुणे ज्वरे जीर्णे विशेषतः ।
मुद्गान्नं मुद्गयूषं वा तक्रभक्तञ्च केवलम् ॥१०७१॥
नारिकेलोदकं देयं मुद्गं पथ्यं विशेषतः ।
षडाननो रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥१०७२॥

१. पित्तलभस्म, २. कांस्यभस्म, ३. ताम्रभस्म, ४. शुद्ध हिङ्गुल, ५. पिप्पलीचूर्ण तथा ६. शुद्ध वत्सनाभ—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में उपर्युक्त सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर मर्दन करें और गुडूचीस्वरस की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन कर १-१ रत्ती की वटी बनाकर

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। वातज्वर एवं पित्तज्वर में, मन्दाग्नि होने पर, विषमज्वर, नूतनज्वर एवं जीर्णज्वर में मधु के साथ इस औषधि को १ रत्ती की मात्रा में देने पर ज्वर नष्ट हो जाते हैं। पथ्य में भात एवं मूँग की दाल एवं मूँग का यूष तथा भात एवं तक्र देना चाहिए। प्यास अधिक होने पर नारियल का पानी देना चाहिए। नारियल का जल एवं मूँग इस औषधि के साथ विशेष पथ्य है। यह षडानन रस सभी प्रकार के ज्वरकुल का नाश करने वाला है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कॉफी वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–वातज्वर एवं विषमज्वर में।

३९२. कल्पतरुरस

रसं गन्धं विषं ताम्रं समभागं विचूर्णयेत्।
भावयेत्पञ्चभिः पित्तैः क्रमशः पञ्चवासरम् ॥१०७३॥
निर्गुण्डीस्वरसेनैव मर्दयेत्सप्तवासरान्।
आर्द्रकस्य रसेनैव भावयेच्च त्रिधा पुनः ॥१०७४॥
सर्षपाभा वटी कार्या छायया परिशोषिता।
ततः सप्तवटी योज्या यावन्न त्रिगुणा भवेत् ॥१०७५॥
वयोऽग्निदोषकं बुद्ध्वा प्रयोज्या भिषजां वरैः।
अनुपानं चोष्णजलं कज्जलीपिप्पलीयुतम् ॥१०७६॥
पानावशेषे प्रस्वाप्य वस्त्रैराच्छादयेन्नरम्।
घर्माभ्यागमनं यावत् ततो रोगात् प्रमुच्यते ॥१०७७॥
रोगिणं स्नापयित्वा तु भोजयेत्ससितं दधि।
एष कल्पतरुर्नाम रसः परमदुर्लभः ॥१०७८॥
असाध्यं चिरकालोत्थं जीर्णञ्च विषमज्वरम्।
हन्ति ज्वरातिसारौ च ग्रहणीं पाण्डुकामलाम् ॥१०७९॥
न देयः श्वासकासे च शूलयुक्ते नरे तथा।
गोपनीयः प्रयत्नेन न देयो यस्य कस्यचित् ॥१०८०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ तथा ४. ताम्रभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ खरल में मर्दन कर कज्जली करें। पुनः अन्य सभी द्रव्यों को कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर पञ्चपित्त (रोहूमछली का पित्त, मयूर का पित्त, भैंस का पित्त, सूअर का पित्त एवं बकरे का पित्त) की क्रमशः ५ भावना दें। ततः निर्गुण्डीपत्रस्वरस की ७ भावना दें और आर्द्रक के रस की ३ भावना देना चाहिए। इसके बाद सरसों बराबर की वटियाँ बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। अवस्था (उम्र), अग्नि एवं दोषों का परिज्ञान कर १ वटी से ७ वटी अथवा २१ वटी तक रोगी को देना चाहिए। यह मात्रा अधुना अत्यधिक है, अतः १ वटी से ६ वटी दिन में ३ बार अर्थात् २-२ वटी देना चाहिए। रोगी को औषधि खिलाकर कम्बल या मोटी चादर से ढ़क देना चाहिए। इस औषधि को १ रत्ती कज्जली, २ रत्ती पिप्पलीचूर्ण एवं उष्ण जलानुपान से देना चाहिए। पसीना आने पर रोगी ज्वरमुक्त हो जाता है। दूसरे दिन गरम पानी से स्नान कराकर रोगी को दही, चीनी एवं भात खिलाना चाहिए। यह कल्पतरु नामक औषधि अत्यन्त दुर्लभ है। इसके सेवन से असाध्य ज्वर, जीर्णज्वर, विषमज्वर, ज्वर, अतिसार, ग्रहणी, पाण्डु तथा कामला रोग नष्ट हो जाते हैं। इस औषधि को श्वास, कास एवं शूल के रोगियों को नहीं देना चाहिए। यह रस गोपनीय है, नास्तिक एवं वेदादि निन्दक रोगियों तथा जिस किसी को नहीं देना चाहिए।

मात्रा–३० से ६० मि.ग्रा.। **अनुपान**–कज्जली, पिप्पलीचूर्ण एवं उष्णोदक से। **गन्ध**–विस्रगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

३९३. तालाङ्करस

तालकस्य च भागौ द्वौ भागं तुत्थस्य शुक्तिका।
चूर्णकानां चतुर्भागं मर्दयेत् कन्यकाद्रवैः ॥१०८१॥
यामैकेन ततः पश्चाद् रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति वातिकं पैत्तिकं तथा॥
शीतज्वरं विशेषेण तृतीयकचतुर्थकौ ॥१०८२॥

१. शुद्ध पत्रताल २ भाग, २. तुत्थभस्म १ भाग एवं ३. शुक्तिभस्म ४ भाग लें। सर्वप्रथम खरल में तीनों द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें। ततः चक्रिका बनाकर सुखा लें, शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोल कर औषधि को मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। २ रत्ती की मात्रा में उष्णोदक से प्रयोग करने पर वातज्वर, पित्तज्वर एवं शीतज्वर में, विशेषकर तृतीयक एवं चातुर्थिक ज्वर में अधिक उपयोगी है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–उष्णोदक से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्वेताभ। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–वातज्वर, पित्तज्वर, शीतज्वर, तृतीयक एवं चातुर्थिक ज्वर में।

३९४. चन्द्रकलारस (र.र.समु.)

प्रत्येकं तोलमादाय सूतं ताम्रं तथाऽभ्रकम्।
द्विगुणं गन्धकं चैव कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥१०८३॥
मुस्तादाडिमतोयेन केतकीमूलवारिणा।
सहदेव्याः कुमार्याश्च पर्पटोशीरमागधि ॥१०८४॥
श्रीखण्डं सारिवा चैषां समानं चूर्णकं क्षिपेत्।
द्राक्षाफलकषायेण सप्तधा परिभावयेत् ॥१०८५॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

छायाशुष्कं विधायाथ वटी कार्या चणोपमा।
महाचन्द्रकलानाम्ना रसेन्द्रोऽयं निरूपितः ॥१०८६॥
अम्लपित्तप्रशमनः प्रदरध्वंसकारकः।
अन्तर्बाह्यमहादाहविध्वंसनघनाघनः ॥१०८७॥
ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते।
रसमूर्च्छारक्तपित्तपित्तज्वरदवानलः ॥१०८८॥
मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि प्रमेहानपि दुस्तरान्।
हरत्येष रसो नूनं देहे चन्द्रकलाप्रदः ॥१०८९॥

१. शुद्ध पारद, २. ताम्रभस्म, ३. अभ्रकभस्म, ४. शुद्ध गन्धक, ५. पित्तपापड़ाचूर्ण, ६. खसचूर्ण, ७. पीपरचूर्ण, ८. श्वेतचन्दनचूर्ण और ९. अनन्तमूलचूर्ण—उपर्युक्त गन्धक छोड़कर सभी द्रव्य १-१ भाग लें तथा गन्धक २ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। इसके बाद उसमें ताम्र एवं अभ्रकभस्म मिलाकर क्रमशः नागरमोथा क्वाथ, अनार के रस, केवड़ाफूल का मूलत्वक्स्वरस, सहदेवी स्वरस एवं घृतकुमारीस्वरस की १-१ भावना दें। इसके बाद पित्तपापड़ा आदि काष्ठौषधियों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर अंगूरस्वरस या मुनक्का क्वाथ की ७ भावना दें और २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे महाचन्द्रकला रस नाम से जाना जाता है। ग्रीष्म एवं शरत् काल में यह औषधि विशेष उपयोगी है। यह वटी अग्निबल के अनुसार १ से २ वटी देने से अम्लपित्त, प्रदर, अन्तर्दाह, बहिर्दाह, रसजन्य मूर्च्छा, रक्तपित्त, पित्तज्वर, मूत्रकृच्छ्र एवं भयंकर प्रमेहों का नाश करता है। शरीर की शोभा को चन्द्रमा की कला जैसा दिनानुदिन बढ़ाता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–अंगूर के रस से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–दाह, पित्तज्वर एवं रक्तपित्त में।

३९५. पर्पटीरस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मर्द्यं भृङ्गरसेन च।
मृतं ताम्रं लौहभस्म पादांशेन तयोः क्षिपेत् ॥१०९०॥
लौहपात्रे च विपचेच्चालयेल्लौहचाटुना।
तत्क्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयोपरि संस्थिते ॥१०९१॥
तत्क्षिपेत् चूर्णयेत् खल्ले निर्गुण्ड्या भावयेद्दिनम्।
जयन्तीत्रिफलाकन्यावासाभार्गीकटुत्रिकैः ॥१०९२॥
भङ्गाग्निमूलमुण्डीभिर्भावयेद्दिनसप्तकम्।
अङ्गारैः स्वेदयेत्किञ्चित् पर्पटाख्यो महारसः ॥१०९३॥
चतुर्गुञ्जामितो भक्ष्य सम्यक् श्लेष्मज्वरं जयेत्।
पथ्याशुण्ठ्यमृताक्वाथमनुपाने प्रयोजयेत् ॥१०९४॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. ताम्रभस्म $\frac{1}{4}$ भाग तथा ४. लोहभस्म $\frac{1}{4}$ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक खरल में रखकर मर्दन करें। कज्जली होने पर उस कज्जली में ताम्र एवं लौहभस्म मिलावें और मर्दन करें। इसके बाद लोहे के दर्वी में ४-६ बूँद घृत देकर चारों ओर दर्वी में घृत लिप्त कर दें। उस दर्वी को निर्धूम सामान्य अग्नि पर तप्त करें। पुनः उसमें १० से २० ग्राम उपर्युक्त कज्जली देकर छोटी चम्मच से चलावें। जब कज्जली पिघलकर वटी जैसी हो जाय तो पहले से तैयार गोबर के १ बित्ता व्यास तथा ४ अंगुल ऊँचे पिण्ड पर घृतलिप्त कदलीपत्र के छोटे-छोटे टुकड़े कर आड़े-सीधे रखें और उसी सेकें हुए कदलीपत्र पर २५० ग्राम गोबर रखकर पोटली बना लें। इसके बाद दर्वी में द्रवित एवं वटीबद्ध कज्जली को उसी गोमय पिण्ड के ऊपर कदलीपत्र पर पलट दें और गोबर की पोटली से दबा दें। इस तरह कुछ देर (१ मिनट के बाद) बाद पोटली हटाकर पपड़ी जैसी काली, पतली, चौड़ी पर्पटी का संग्रह कर लें। इसी प्रकार सम्पूर्ण कज्जली से पर्पटी बना लें। इसके बाद उक्त पर्पटी को खरल में रखकर चूर्ण करें और सिन्दुवारपत्रस्वरस की भावना देकर दिन भर मर्दन करें। पुनः जयन्तीस्वरस, त्रिफलाक्वाथ, घृतकुमारीस्वरस, वासापत्र-स्वरस, भार्गीपत्रस्वरस, त्रिकटुक्वाथ, भृङ्गराजस्वरस, चित्रकमूल-क्वाथ एवं मुण्डीस्वरस एवं क्वाथ के साथ १-१ दिन मर्दन कर आग पर अच्छी तरह सुखा कर चूर्ण कर लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

इसकी ४ रत्ती (आधुनिक मात्रा १ से २ रत्ती) देने से कफज्वर शान्त हो जाता है। अनुपान में हरीतकी, शुण्ठी एवं गुडूची के मिलित क्वाथ का प्रयोग करें।

मात्रा–१५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–हरीतकी, गुडूची एवं सोंठ के मिलित क्वाथ से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–कफज्वर में।

३९६. त्रैलोक्यचिन्तामणिरस (र.सा.सं.)

भागद्वयं स्वर्णभस्म द्विभागं तारमभ्रकम्।
लौहात्पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकं वह्निभागिकम् ॥१०९५॥
भस्मसूतं सप्तभागं सर्वं मर्द्यन्तु कन्यया।
छायाशुष्का वटी कार्या छागीदुग्धानुपानतः ॥१०९६॥
क्षयं हन्ति तथा कासं गुल्मं चापि प्रमेहनुत्।
जीर्णज्वरहरश्चायमुन्मादस्य निकृन्तनः ॥
सर्वरोगहरश्चापि वारिदोषनिवारणः ॥१०९७॥

१. स्वर्णभस्म २ भाग, २. रजतभस्म २ भाग, ३. अभ्रक भस्म २ भाग, ४. लोहभस्म ५ भाग, ५. प्रवालभस्म ३ भाग, ६. मोतीपिष्टी ३ भाग तथा ७. रससिन्दूर ७ भाग लें। पत्थर के खरल में सर्वप्रथम रससिन्दूर को मर्दन कर अन्य सभी भस्मों को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मिलाकर घृतकुमारीस्वरस के साथ मर्दन करें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। बकरी के दूध के अनुपान से १-१ वटी खाने से क्षय, कास, गुल्म, प्रमेह, जीर्णज्वर, उन्माद एवं वारिदोषजन्य ज्वर तथा सभी रोगों का नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–बकरी के दूध से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–जीर्णज्वर, क्षय तथा कास में।

३९७. महाराजवटी (र.सा.सं.)

रसगन्धकमभ्रञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
वृद्धदारकवङ्गञ्च लौहं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥१०९८॥
स्वर्णं ताम्रं च कर्पूरं प्रत्येकं कर्षपादिकम्।
शक्राशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥१०९९॥
कोकिलाक्षं विदारी च मुशली शूकशिम्बिकम्।
जातीफलं तथा कोषं बला नागबला तथा ॥११००॥
माषद्वयमितं भागं तालमूल्या रसेन च।
पिष्ट्वा च वटिका कार्या चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥११०१॥
मधुना भक्षयेत्प्रातर्विषमज्वरशान्तये।
धातुस्थांश्च ज्वरान् सर्वान् हन्यादेव न संशयः ॥११०२॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
ज्वरं नानाविधं हन्ति कासं श्वासं क्षयन्तथा ॥११०३॥
बलपुष्टिकरं नित्यं कामिनीं रमयेत्सदा।
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ॥११०४॥
ऊर्ध्वगं श्लेष्मजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं रक्तपित्तकम्।
महाराजवटी ख्याता राजयोग्या च सर्वदा ॥११०५॥

१. शुद्ध पारद ८० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ८० ग्राम, ३. अभ्रकभस्म ८० ग्राम, ४. विधाराचूर्ण ४० ग्राम, ५. वङ्गभस्म ४० ग्राम, ६. लोहभस्म ४० ग्राम, ७. स्वर्णभस्म २० ग्राम, ८. ताम्रभस्म २० ग्राम, ९. कर्पूर २० ग्राम, १०. भाँगचूर्ण १० ग्राम, ११. शतावरीचूर्ण १० ग्राम, १२. श्वेतसर्जरसचूर्ण १० ग्राम, १३. लवङ्गचूर्ण १० ग्राम, १४. तालमखानाचूर्ण १० ग्राम, १५. विदारीकन्दचूर्ण १० ग्राम, १६. श्वेतमुशली चूर्ण १० ग्राम, १७. कपिकच्छुबीजचूर्ण १० ग्राम, १८. जायफल चूर्ण १० ग्राम, १९. जावित्रीचूर्ण १० ग्राम, २०. बलामूल चूर्ण १० ग्राम और २१. नागबलाचूर्ण १० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक खरल में रखकर मर्दन करें। कज्जली होने पर अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और तालमूली (सफेद मुशली) स्वरस या क्वाथ से मर्दन कर ४-४ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। विषमज्वर की शान्ति के लिए प्रातःकाल मधु के साथ खायें। इसके सेवन से धातुगत ज्वर एवं सभी प्रकार के ज्वर निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं। यह वटी वातज्वर, पित्तज्वर, कफज्वर, सन्निपातज्वर एवं नाना प्रकार के ज्वर; कास, श्वास, क्षय, कामला, पाण्डुरोग, प्रमेह, रक्तपित्त आदि सभी रोगों का नाश करती है। यह वटी देह एवं बल को पुष्ट करती है, वीर्य को बढ़ाती है। नित्य कामिनी स्त्रियों के सेवन के पश्चात् भी शुक्र का क्षय एवं बल का ह्रास नही होता है। ऊर्ध्वग कफज्वर एवं भयंकर सन्निपातज्वर नाशक है।

मात्रा–२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्रस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–कर्पूरगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–जीर्णज्वर, धातुगत ज्वर एवं विषमज्वर में।

३९८. सर्वतोभद्ररस (र.सा.सं.)

विशुद्धं गगनं ग्राह्यं द्विकर्षं शुद्धगन्धकम्।
कर्षैकं कर्षकार्द्धं च हिङ्गुलोत्थरसं तथा ॥११०६॥
कर्पूरं केशरं मांसी तेजपत्रं लवङ्गकम्।
जातीकोषफलं चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥११०७॥
कुष्ठं तालीसपत्रं च धातकी चोचमुस्तकम्।
हरीतकी च मरिचं शृङ्गवेरबिभीतकम् ॥११०८॥
पिप्पल्यामलकं चैव शाणभागं विचूर्णितम्।
सर्वमेकीकृतं पिष्ट्वा वटीं कुर्याद् द्विगुञ्जिकाम् ॥११०९॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन मधुना सितयाऽपि वा।
रोगं ज्ञात्वाऽनुपानं च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥१११०॥
हन्ति मन्दानलान् सर्वानामदोषं विसूचिकाम्।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभवं तथा ॥११११॥
आनाहं मूत्रकृच्छ्रं च सङ्ग्रहग्रहणीं वमिम्।
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥१११२॥
चिरज्वरं पित्तभवं धातुस्थं विषमज्वरम्।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥१११३॥
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन कथितः पुरा।
सर्वतोभद्रनामाऽयं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥१११४॥

१. अभ्रकभस्म ४० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. हिङ्गुलोत्थपारद १० ग्राम, ४. कर्पूर ५ ग्राम, ५. केशर चूर्ण ५ ग्राम, ६. जटामांसी चूर्ण ५ ग्राम, ७. तेजपत्र चूर्ण ५ ग्राम, ८. लवङ्ग चूर्ण ५ ग्राम, ९. जावित्री चूर्ण ५ ग्राम, १०. जायफल चूर्ण ५ ग्राम, ११. छोटी इलायची चूर्ण ५ ग्राम, १२. गजपिप्पली चूर्ण ५ ग्राम, १३. कूठ चूर्ण ५ ग्राम, १४. तालीसपत्र चूर्ण ५ ग्राम, १५. धातकीपुष्प चूर्ण ५ ग्राम, १६. दालचीनी चूर्ण ५ ग्राम, १७. नागरमोथा चूर्ण ५ ग्राम, १८. हरीतकी चूर्ण ५ ग्राम, १९. मरिच चूर्ण ५ ग्राम, २०. शुण्ठी चूर्ण ५ ग्राम, २१. बहेड़ा चूर्ण ५ ग्राम, २२. पीपर चूर्ण ५ ग्राम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तथा २३. आमला चूर्ण ५ ग्राम—पत्थर के खरल में सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। इसके बाद उसी खरल में कज्जली के साथ उपर्युक्त सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर आर्द्रक के रस की भावना देकर २ दिनों तक मर्दन करें। ततः २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। १ वटी पान के साथ अथवा मधु एवं चीनी के साथ खाने से या तत्तद्रोगनाशक अनुपानों के साथ खाने से मन्दाग्नि, आमदोष, विसूचिका, कफ-पित्तज रोग, वात-कफज रोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, संग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, पित्तोत्थजीर्णज्वर, धातुस्थविषमज्वर, पाँच प्रकार के कास, कामला, पाण्डु आदि रोगों का नाश करता है। सम्पूर्ण विश्व के कल्याणार्थ भगवान् शिव ने बहुत पहले ही इस योग को बनाया था। यह योग साक्षात् महेश्वर जैसा है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र में चीनी एवं मधु मिलाकर चबाना। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरों में, जीर्णज्वर, विषमज्वर, आमदोष तथा मन्दाग्नि में।

३९९. ज्वरारि अभ्र (र.सा.सं.)

अभ्रं ताम्रं रसं गन्धं विषञ्चेति समं समम्।
द्विगुणं धूर्त्तबीजञ्च व्योषं पञ्चगुणं मतम् ॥१११५॥
जलेन वटिकां कुर्याद् यथादोषानुपानतः।
अभ्रं ज्वरारिनामेदं सर्वज्वरविनाशनम् ॥१११६॥
वातिकान्पैत्तिकांश्चैव श्लैष्मिकान्सान्निपातिकान्।
विषमाख्यान् द्वन्द्वजांश्च धातुस्थान् विषमज्वरान् ॥१११७॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममग्रमांसं सशोथकम्।
हिक्कां श्वासं च कासं च मन्दालनमरोचकम्॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥१११८॥

१. अभ्रक भस्म ५० ग्राम, २. शुद्ध हरताल ५० ग्राम, ३. शुद्ध पारद ५० ग्राम, ४. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, ५. शुद्ध वत्सनाभ ५० ग्राम, ६. शुद्ध धत्तूरबीज चूर्ण १०० ग्राम, ७. सोंठ चूर्ण ८५ ग्राम, ८. पीपर चूर्ण ८५ ग्राम तथा ९. मरिच चूर्ण ८५ ग्राम—अर्थात् क्रम सं. १ से ५ तक १-१ भाग, धत्तूरबीज २ भाग एवं त्रिकटु ५ भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली तैयार करें। इसके बाद अन्य सभी द्रव्यों को कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें और जल की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन कर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह ज्वरारि अभ्र नामक रसौषधि वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, विषम, द्वन्द्वज, धातुज एवं विषमज्वरादि समस्त ज्वरों का नाश करती है। प्लीहारोग, यकृद्रोग, गुल्म, अग्रमांस, शोथ, हिक्का, श्वास, कास, मन्दाग्नि एवं अरुचि को निःसन्देह नाश करती है; जैसे इन्द्र का वज्र वृक्षों का नाश करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

४००. जीवनानन्दाभ्र (रसराजसुन्दर)

वज्राभं मारितं कृत्वा कर्षयुग्मं विचूर्णितम्।
जीरं कनकबीजञ्च कर्षं वासारसेन च ॥१११९॥
कण्टकारीरसेनैव धात्रीमुस्तरसेन च।
गुडूच्याः स्वरसेनैव पलांशेन पृथक् पृथक् ॥११२०॥
मर्दयित्वा वटी कार्या गुञ्जामात्रा प्रयोजिता।
विषमाख्याञ्ज्वरान् सर्वान् प्लीहानं यकृतं वमिम् ॥११२१॥
रक्तपित्तं वातरक्तं ग्रहणीं श्वासकासकौ।
अरुचिं शूलहृल्लासावर्शांसि च विनाशयेत् ॥११२२॥
जीवनानन्दनामेदमभ्रं वृष्यं बलप्रदम्।
रसायनवरं श्रेष्ठमग्निसन्दीपनं परम् ॥११२३॥

१. कृष्णवज्राभ्रकभस्म ५० ग्राम, २. जीराचूर्ण २५ ग्राम तथा ३. धत्तूरबीजचूर्ण २५ ग्राम—एक पत्थर के खरल में उपर्युक्त तीनों द्रव्यों को एक साथ मिलाकर मर्दन करें। वासा-पत्रस्वरस, कण्टकारीस्वरस, आमलकीस्वरस, नागरमोथाक्वाथ एवं गुडूचीस्वरस से पृथक्-पृथक् १-१ भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह रसौषधि सभी प्रकार के विषमज्वर, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, वमन, रक्तपित्त, वातरक्त संग्रहणी, श्वास, कास, अरुचि, शूल, हृल्लास एवं अर्श रोगों का नाश करती है। यह वृष्य है, उत्तम रसायन है, अग्निदीपक कार्यों में श्रेष्ठ है और बलदायक है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषमज्वर एवं जीर्णज्वर में, रसायनार्थ।

४०१. चन्दनादिलौह (र.सा.सं.)

रक्तचन्दनह्रीबेरपाठोशीरकणशिवा-
नागरोत्पलधात्रीभिस्त्रिमदेन समन्वितः।
लौहो निहन्ति विविधान् समस्तान् विषमज्वरान् ॥११२४॥

१. लालचन्दनचूर्ण, २. सुगन्धबालाचूर्ण, ३. खसचूर्ण, ४. पीपरचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण, ६. पाठामूलचूर्ण, ७. शुण्ठी चूर्ण, ८. कमलपुष्पचूर्ण, ९. आमलाचूर्ण, १०. वायविडङ्गचूर्ण, ११. नागरमोथाचूर्ण, १२. चित्रकमूलचूर्ण और १३. लोहभस्म—क्रम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

संख्या १ से १२ तक सभी द्रव्य १-१ भाग और लोहाभस्म १२ भाग लें। उपर्युक्त सभी द्रव्यों का पृथक्-पृथक् चूर्ण कर लें और खरल में रख कर लोहभस्म मिलावें तथा मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह चन्दनादिलोह सभी विषम ज्वरों को नष्ट करता है। मात्रा २ से ४ रत्ती तक दें।

मात्रा–२५० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक। **अनुपान**–आर्द्रक स्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के विषम ज्वरों में।

४०२. विषमज्वरान्तकलौह-१

कैरातो वरतिक्तश्च सुरभूरुह एव च।
पृश्निपर्णी शिला व्योषं त्रायमाणा गुडूचिका ॥११२५॥
पिचुमर्दः पटोलं च तेजनीमूलमेव च।
खर्परो गगनं चापि तुल्यभागानि कारयेत् ॥११२६॥
सर्वैस्तुल्यं तीक्ष्णलौहभस्म तत्रापि योजयेत्।
जलेन सह सम्मर्द्य सर्वं चैकत्र यत्नतः ॥११२७॥
गुञ्जाचतुष्टयमिता विदध्याद्वटिका भिषक्।
विषमज्वरान्तकस्यास्य लौहस्य ननु सेवनात् ॥११२८॥
किराततिक्तकक्वाथानुपानेन समं सदा।
प्लीहाग्निमन्दताकार्श्ययकृच्छोथयुता ज्वराः।
नानाविधा विनश्यन्ति यथा सूर्योदयात्तमः ॥११२९॥

१. चिरायताचूर्ण, २. पित्तपापड़ाचूर्ण, ३. देवदारुचूर्ण, ४. पृश्निपर्णीचूर्ण, ५. शुद्ध मैनसिल, ६. शुण्ठी चूर्ण, ७. पीपर चूर्ण, ८. मरिचचूर्ण, ९. त्रायमाणचूर्ण, १०. गुडूचीचूर्ण, ११. निम्बत्वक्चूर्ण, १२. पटोलपत्र, १३. मूर्वाचूर्ण, १४. खर्परभस्म, १५. अभ्रकभस्म तथा १६. लोहभस्म—क्रम संख्या १ से १५ तक उपर्युक्त सभी द्रव्य १-१ भाग और लोहभस्म १५ भाग लें। एक पत्थर के खरल में उपर्युक्त सभी द्रव्य मिलाकर जल की भावना दें और ३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः ४-४ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

१ से २ वटी (५००मि.ग्रा. से १ ग्रा.) की मात्रा में चिरायता के क्वाथ से लेने पर निश्चय ही विषमज्वर नष्ट हो जाता है। प्लीहरोग, अग्निमांद्य, कृशता, यकृद्रोग, शोथादि उपद्रवों से युक्त अनेक प्रकार के ज्वरों का नाश करता है। जैसे सूर्योदय से अन्धकार नष्ट होता है।

मात्रा–५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक। **अनुपान**–चिरायता क्वाथ से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी विषमज्वरों में, जीर्णज्वर एवं प्लीहावृद्धि में।

४०३. विषमज्वरान्तकलौह-२ (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकं तुल्यं सूतार्द्धं जीर्णताम्रकम्।
ताम्रतुल्यं माक्षिकञ्च लौहं सर्वसमं नयेत् ॥११३०॥
जयन्त्याः स्वरसेनैव कोकिलाक्षरसेन च।
वासकार्द्रपर्णरसैः पञ्चधा च विमर्दयेत् ॥११३१॥
पृथक् कलायमानां तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
विषमज्वरान्तकोऽयं विषमज्वरनाशनः ॥११३२॥
वह्निदीप्तिकरो हृद्यः प्लीहगुल्मविनाशनः।
चक्षुष्यो बृंहणो वृष्यः श्रेष्ठः सर्वरुजापहः ॥११३३॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. ताम्रभस्म $\frac{1}{2}$ भाग, ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म $\frac{1}{2}$ भाग एवं ५. लोहभस्म ३ भाग—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दनकर कज्जली बनावें। ततः उसी कज्जली में अन्य दोनों भस्मों को मिलाकर जयन्तीपत्रस्वरस, तालमखाना का क्वाथ, वासापत्रस्वरस की ५-५ भावना देकर (५-५ दिन मर्दन कर) २-२ रत्ती की वटी बनावें और छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह विषमज्वरान्तकलौह विषमज्वर को नाश करता है। साथ ही इसके उपद्रवस्वरूप प्लीह, गुल्म का नाश करता है। यह अग्निदीपक है, हृद्य है, नेत्र के लिए श्रेयस्कर है, बृंहण एवं वृष्यों में श्रेष्ठ है; साथ ही सभी रोगों को नाश करने में समर्थ है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–चिरायता क्वाथ से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषमज्वरों में, हृद्य एवं रसायन है।

४०४. विषमज्वरान्तक लौह-३ (र.सा.सं.)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम्।
मृतसूतं हेम तारं लौहमभ्रं च ताम्रकम् ॥११३४॥
तालसत्त्वं वङ्गभस्म मौक्तिकं सप्रवालकम्।
सुवर्णमाक्षिकं चापि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥११३५॥
निर्गुण्डी नागवल्ली च काकमाची सपर्पटी।
त्रिफला कारवेल्लं च दशमूली पुनर्नवा ॥११३६॥
गुडूची वृषकश्चापि सभृङ्गः केशराजकः।
एतेषां च रसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥११३७॥
गुञ्जामानां वटीं कुर्याच्छास्त्रवित्कुशलो भिषक्।
पिप्पलीगुडकेनैव लिहेच्च वटिकां शुभाम् ॥११३८॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति निरामं साममेव वा।
सप्तधातुगतं चापि नानादोषोद्भवं तथा ॥११३९॥
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
अभिघाताभिचारोत्थं ज्वरं जीर्णं विशेषतः ॥११४०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. रससिन्दूर, ४. सुवर्णभस्म, ५. रजतभस्म, ६. लोहभस्म, ७. अभ्रकभस्म, ८. ताम्रभस्म, ९. तालसत्त्व, १०. वङ्गभस्म, ११. मोतीपिष्टी, १२. प्रवालभस्म तथा १३. स्वर्णमाक्षिकभस्म—उपर्युक्त सभी द्रव्य

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक साथ पत्थर के खरल में मिलाकर मर्दन करें और कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी भस्मों को मिलाकर निर्गुण्डीपत्रस्वरस, ताम्बूलपत्रस्वरस, काचमाची (मकोय) पत्रस्वरस , पित्तपापड़ाक्वाथ, त्रिफलाक्वाथ, करैलापत्रस्वरस, दशमूलक्वाथ, पुनर्नवापञ्चाङ्गस्वरस, गुडूची-काण्डस्वरस, वासापत्रस्वरस, भृङ्गराजपञ्चाङ्गस्वरस और पीतपुष्पभृङ्गराजस्वरस की ३-३ भावना देकर (१२ द्रव्यों के स्वरसों की भावना देकर) १-१ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। पिप्पलीचूर्ण और गुड़ मिलाकर १-१ वटी को २ बार खाने से आठ प्रकार के साम-निराम ज्वर नष्ट हो जाते हैं या धातुगतज्वर और अनेक दोषोद्भवज्वर, सन्ततादिविषमज्वर, साध्यासाध्यज्वर, अभिघात-जज्वर, अभिचारजज्वर विशेषरूप से जीर्णज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–पीपर चूर्ण एवं गुड़ से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषम ज्वर, जीर्णज्वर, अभिघातज ज्वर तथा अभिचारज ज्वर में।

४०५. विषमज्वरान्तकलौह (पुटपक्व)-४ (र.सा.सं.)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलीम्।
पर्पटीरसवत्पाच्यं सूताङ्घ्रिहेमभस्मकम् ॥११४१॥
लौहं ताम्रमभ्रकञ्च रसस्य द्विगुणं तथा।
वङ्गकं गैरिकञ्चैव प्रवालञ्च रसार्द्धकम् ॥११४२॥
मुक्ताशङ्खं शक्तिभस्म प्रदेयं रसपादिकम्।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥११४३॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय द्विगुञ्जाफलमानतः।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गु ससैन्धवम् ॥११४४॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापि वा ॥११४५॥
सन्ततं सतताख्यञ्च विषमज्वरनाशनम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥११४६॥
ग्रहणीमामदोषञ्च कासं श्वासं च तत्र च।
मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥११४७॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं बलवर्णप्रसादनम्।
विषमज्वरान्तकोऽयं धन्वन्तरिप्रकाशितः ॥११४८॥

१. हिङ्गुलोत्थपारद २० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. स्वर्णभस्म ५ ग्राम, ४. लोहभस्म ४० ग्राम, ५. ताम्रभस्म ४० ग्राम, ६. अभ्रकभस्म ४० ग्राम, ७. वङ्गभस्म १० ग्राम, ८. शुद्ध गैरिक १० ग्राम, ९. प्रवालभस्म १० ग्राम, १०. मोतीभस्म ५ ग्राम, ११. शंखभस्म ५ ग्राम, १२. शुक्तिभस्म ५ ग्राम तथा १३. मुक्ताशुक्ति ६-८ की संख्या में लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली को घृताक्त दर्वी में पिघलाकर गोबर के ऊपर रखे कई कदलीपत्र के टुकड़े पर रखें और कदलीपत्र को गोबर की पोटली से दबाकर रसपर्पटी बना लें। पुनः खरल में उस पर्पटी को पीस कर अन्य सभी द्रव्यों को मिलावें और चिरायता क्वाथ की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः मुक्ताशुक्ति या सामान्य शुक्ति में उक्त भावित औषधि को भरकर दूसरी शुक्ति से सम्पुट कर सन्धिबन्धन करें। इसके बाद उन सम्पुटित शुक्तियों को शराव में सम्पुट कर कपड़मिट्टी कर कुक्कुटपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोलें और शुक्ति सम्पुट की मिट्टी को हटाकर शुक्ति सहित औषधि को खरल में पीस लें और शीशी में सुरक्षित कर लें। २ रत्ती की मात्रा में पीपर चूर्ण ४ रत्ती, घृत-भर्जित हींग २ रत्ती, सैन्धव नमक २ रत्ती के साथ लेने से वातादि आठ प्रकार के ज्वर, प्लीह-यकृद्वृद्धि, गुल्म, साध्यासाध्य सन्ततादि विषमज्वर, कामला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अरुचि, संग्रहणी, आमदोष, श्वास, कास, मूत्रकृच्छ्र एवं अतिसारादि का अवश्य ही नाश कर देता है तथा पाचकाग्नि को प्रदीप्त करता है; साथ ही शरीर के बल-वर्ण को बढ़ाता है। इस विषमज्वरान्तक लौह को भगवान् धन्वन्तरि ने निर्मित किया है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–पीपर चूर्ण, सैन्धव चूर्ण एवं हींग से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कपोत वर्ण। **स्वाद**–क्षारीय। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वर, आमदोष तथा पाण्डु में।

४०६. सर्वज्वरहरलौह-१ (र.सा.सं.)

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकन्तथा।
श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च ॥११४९॥
किराततिक्तकं वालं कटुकी कण्टकारिका।
शोभाञ्जनस्य बीजञ्च मधुकं वत्सकं समम् ॥११५०॥
लौहतुल्यं गृहीत्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
सर्वज्वरहरो लौहः सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥११५१॥
वातिकं पैत्तिकं श्लैष्मं द्वन्द्वजं सान्निपातिकम्।
जीर्णज्वरञ्च विषमं रोगसङ्करमेव च॥
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥११५२॥

१. चित्रकचूर्ण, २. हरीतकीचूर्ण, ३. आमलाचूर्ण, ४. बहेड़ाचूर्ण, ५. शुण्ठीचूर्ण, ६. पीपरचूर्ण, ७. मरिचचूर्ण, ८. वायविडङ्गचूर्ण, ९. नागरमोथाचूर्ण, १०. पिपरामूलचूर्ण, ११. खशचूर्ण, १२. देवदारुचूर्ण, १३. चिरायताचूर्ण, १४. सुगन्धबालाचूर्ण, १५. कुटकीचूर्ण, १६. कण्टकारी, १७. शिग्रुबीजचूर्ण, १८. मुलेठीचूर्ण, १९. इन्द्रयवचूर्ण, २०. गजपीपरचूर्ण और २१. लौहभस्म—उपर्युक्त क्रमे संख्या १ से २० तक के सभी द्रव्य १-१ भाग अर्थात् प्रत्येक १०-१० ग्राम लें और लौहभस्म २०० ग्राम (सभी चूर्णों के बराबर) लें। इन्हें एक बड़े खरल में एक साथ मिलाकर जल की भावना द और ३ घण्टे तक मर्दन कर ४-४ रत्ती की वटी बनावें तथा

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सर्वज्वरहरलौह नामक यह औषधि सभी ज्वरों के कुल के साथ नाश करती है। वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज, सन्निपातज ज्वरों, जीर्णज्वर, विषमज्वर, कई रोगसंकरों, प्लीह-यकृत् के रोगों एवं अग्रमांस (हृदय में मांसवृद्धि) रोग को नाश करती है।

मात्रा–५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम। **अनुपान**–चिरायता क्वाथ से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कत्थईवर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी ज्वरों में लाभप्रद।

४०७. सर्वज्वरहरलौह-२

द्विपलं जारितं लौहं रसं गन्धं द्वितोलकम्।
तोलकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ॥११५३॥
श्रेयसी पिप्पलीमूलं हरिद्रे द्वे च चित्रकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥११५४॥
गुञ्जाद्वयां वटीं कृत्वा भक्षयेदार्द्रकद्रवैः।
सर्वज्वरहरो लौहः सर्वज्वरविनाशनः ॥११५५॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
विषमज्वरभूतोत्थज्वरं प्लीहानमेव च ॥११५६॥
मासजं पक्षजञ्चैव यथा संवत्सरोत्थितम्।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥११५७॥

१. लोहभस्म ८० ग्राम, २. शुद्ध पारद २० ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ४. हरीतकीचूर्ण १० ग्राम, ५. आमलाचूर्ण १० ग्राम, ६. बहेड़ाचूर्ण १० ग्राम, ७. शुण्ठीचूर्ण १० ग्राम, ८. पीपरचूर्ण १० ग्राम, ९. मरिचचूर्ण १० ग्राम, १०. वायविडङ्गचूर्ण १० ग्राम, ११. नागरमोथाचूर्ण १० ग्राम, १२. गजपीपरचूर्ण १० ग्राम, १३. पिपरामूलचूर्ण १० ग्राम, १४. हल्दीचूर्ण १० ग्राम, १५. दारुहल्दी चूर्ण १० ग्राम तथा १६. चित्रकमूल चूर्ण १० ग्राम लें। एक पत्थर के खरल में सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली बना लें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर कज्जली के साथ मर्दन करें और आर्द्रक स्वरस की १ भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। १ से २ वटी आर्द्रक के रस के साथ लेने पर यह सर्वज्वरहरलौह सभी प्रकार के ज्वरों का नाश करता है। वातज, पित्तज, कफज एवं सन्निपातज ज्वर, विषमज्वर, भूताभिषङ्गज्वर, प्लीहावृद्धिजन्य ज्वर, मासिक एवं पाक्षिक ज्वर और वार्षिक ज्वरों का नाश करता है; जिस प्रकार सूर्य अन्धकार को नाश करता है।

मात्रा–२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

४०८. सर्वज्वरहरलौह-३ (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकं शुद्धं ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम्।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥११५८॥
मृतकान्तं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम्।
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥११५९॥
कारवेल्लरसेनापि दशमूलरसेन च।
पर्पटस्य कषायेण क्वाथेन त्रैफलेन च ॥११६०॥
गुडूच्याः स्वरसेनापि नागवल्लीरसेन च।
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च ॥११६१॥
पुनर्नवार्द्रकाम्भोभिर्भावनां परिकल्प्य च।
रक्तिकादिक्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥११६२॥
पिप्पलीगुडसंयुक्ता वटिका वीर्यवर्द्धिनी।
ज्वरमष्टविधं हन्ति चिरकालसमुद्भवम् ॥११६३॥
विविधं वारिदोषोत्थं नानादोषोद्भवं तथा।
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि च ॥११६४॥
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवं तथा।
भूतावेशज्वरञ्चैव ऋक्षदोषभवं तथा ॥११६५॥
अभिघातज्वरञ्चैवमभिचारसमुद्भवम् ।
अभिन्यासं महाघोरं विषमञ्च त्रिदोषजम् ॥११६६॥
शीतपूर्वं दाहपूर्वं विषमं शीतलं ज्वरम्।
प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ॥११६७॥
प्लीहज्वरं तथा कासं चातुर्थकविपर्ययम्।
पाण्डुरोगगणान् सर्वानग्निमान्द्यं महागदम् ॥११६८॥
एतान् सर्वान्निहन्त्याशु पक्षार्द्धेनात्र संशयः।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेत्पक्षिमांसकम् ॥११६९॥
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं विशेषतः।
मैथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्न बलवान् भवेत्।
सर्वज्वरहरं श्रेष्ठमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥११७०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्रभस्म, ४. अभ्रकभस्म ५. माक्षिकभस्म, ६. स्वर्णभस्म, ७. रजतभस्म, ८. हरतालभस्म और ९. कान्तलोहभस्म—क्रम संख्या १ से ८ संख्या तक सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें और कान्तलोहभस्म ४० ग्राम लें। पत्थर के खरल में सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी भस्मों को उसमें मिलाकर निम्नलिखित १० द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ से प्रत्येक से ७-७ दिन तक मर्दन कर १-१ रत्ती की वटी बना लें—करैलापत्रस्वरस, दशमूलक्वाथ, पित्तपापड़ाक्वाथ, त्रिफलाक्वाथ, गुडूचीस्वरस, ताम्बूलपत्रस्वरस, काकमाचीस्वरस, सिन्दुवारपत्रस्वरस, पुनर्नवापञ्चाङ्गस्वरस तथा आर्द्रक का रस। उसके बाद छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

गुण—यह वीर्यवर्धक है, अष्टविध ज्वर, जीर्णज्वर, अनेक-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वारिदोषजज्वर, अनेकदोषजज्वर, साध्यासाध्य-सन्ततादि विषमज्वर, क्षयजन्यज्वर, धातुगतज्वर, कामज्वर, शोकज्वर, भूताभिषङ्गज्वर, नक्षत्रदोषज ज्वर, अभिघातजज्वर, अभिचारज-ज्वर, अत्यन्त भयंकर अभिन्यासज्वर, विषमज्वर, सन्निपातज्वर, शीतज्वर, दाहज्वर, प्रलेपकज्वर, अर्धाङ्गगतज्वर, प्लीहज्वर एवं चातुर्थिक विपर्यय ज्वर तथा कास, सभी प्रकार के पाण्डु और अग्निमांद्य रोग १ सप्ताह (पक्षार्ध) तक इस रसौषधि का सेवन करने के बाद नष्ट हो जाते हैं।

पथ्य—इस औषधि के सेवनकाल में शालिचावल के भात एवं तक्र भोजन दें, पक्षी के मांस खाने को दें। ककाराष्टक[1] का सेवन न करें एवं पूर्ण बल प्राप्त होने के पूर्व मैथुन नहीं करें। यह सर्वज्वरहरलौह अनुपान भेद से सभी रोगों को नाश करता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा. तक। **अनुपान**–पीपरचूर्ण एवं गुड़ के साथ। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

४०९. ज्वरान्तकलौह (र.सा.सं.)

रसं गन्धं तोलकं च जातीकोषफले तथा।
हेमभस्म तु पादैकं तोलार्धं रूप्यलोहकम् ॥११७१॥
शिलाजत्वभ्रकं चैव भृङ्गराजं च मुस्तकम्।
केशराजमपामार्गं लवङ्गं च फलत्रिकम् ॥११७२॥
वराङ्गवल्कलं चैव पिप्पलीमूलमेव च।
सैन्धवं च विडं चैव गुडूचीचूर्णमेव च ॥११७३॥
कण्टकारीं रसोनं च धान्यकं जीरकद्वयम्।
चन्दनं देवकाष्ठं च दार्वीन्द्रयवमेव च ॥११७४॥
किराततिक्तकं बालं तोलकं च समाहरेत्।
द्वितोलं मरिचं देयं भावयेदार्द्रकद्रवैः ॥११७५॥
माषार्द्धं भक्षयेत् प्रातर्मधुना मधुरीकृतम्।
ज्वरं नानाविधं हन्ति शुक्रस्थं चिरकालजम् ॥११७६॥
साध्यासाध्यविचारोऽत्र नैव कार्यो भिषग्वरैः।
अन्तर्धातुगतं चैव नाशयेन्नात्र संशयः ॥११७७॥
भूतोत्थं श्रमजं चापि सन्निपातज्वरं तथा।
असाध्यं च ज्वरं हन्ति यथा सूर्योदयस्तमः ॥११७८॥
गरुडं च समालोक्य यथा सर्पः पलायते।
तथैवास्य प्रसादेन ज्वरः सोपद्रवो ध्रुवम् ॥११७९॥
बलदं पुष्टिदं चैव कामलापाण्डुरोगनुत्।
सदा तु रमते नारीं न वीर्यं क्षयतां व्रजेत् ॥११८०॥
प्रमेहं विविधं चैव विविधां ग्रहणीं तथा।
अनुपानविशेषेण सर्वव्याधिं विनाशयेत् ॥११८१॥

१. कूष्माण्डं कर्कटीं चैव कालिङ्गं कारवेल्लकम्।
कुसुम्भं कर्टोटञ्च कदलीं काकमाचिकाम् ॥
ककाराष्टकमेतद्धि वर्जयेद्रसभक्षकः। (रसा.वि. १८।१२०)

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १० ग्राम, ३. जावित्रीचूर्ण १० ग्राम, ४. जायफलचूर्ण १० ग्राम, ५. स्वर्ण-भस्म २½ ग्राम, ६. रजतभस्म ५ ग्राम, ७. लौहभस्म ५ ग्राम, ८. शुद्ध शिलाजीत १० ग्राम, ९. अभ्रकभस्म १० ग्राम, १०. भृङ्गराजचूर्ण १० ग्राम, ११. नागरमोथाचूर्ण १० ग्राम, १२. पीतपुष्पभृङ्गराज चूर्ण १० ग्राम, १३. अपामार्गचूर्ण १० ग्राम १४. लवङ्गचूर्ण १० ग्राम, १५. हरीतकीचूर्ण १० ग्राम, १६. आमलाचूर्ण १० ग्राम, १७. बहेड़ाचूर्ण १० ग्राम, १८. दालचीनीचूर्ण १० ग्राम, १९. पिपरामूलचूर्ण १० ग्राम, २०. सैन्धवलवण १० ग्राम, २१. विडलवणचूर्ण १० ग्राम, २२. गुडूचीचूर्ण १० ग्राम, २३. कण्टकारीमूलचूर्ण १० ग्राम, २४. लशुन निस्तुष १० ग्राम, २५. धनियाँचूर्ण १० ग्राम, २६. जीराचूर्ण १० ग्राम, २७. श्याहजीराचूर्ण १० ग्राम, २८. रक्तचन्दनचूर्ण १० ग्राम, २९. देवदारुचूर्ण १० ग्राम, ३०. दारुहरिद्राचूर्ण १० ग्राम, ३१. इन्द्रयवचूर्ण १० ग्राम, ३२. चिरायताचूर्ण १० ग्राम, ३३. सुगन्धबालाचूर्ण १० ग्राम तथा ३४. मरिचचूर्ण २० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली करें। तत्पश्चात् कज्जली के साथ अन्य भस्मों तथा सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और आर्द्रकस्वरस की ७ भावना देकर मर्दन करें। ततः १-१ माशा की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित करें। यह रसौषधि अनेक प्रकार के ज्वरों को नाश करती है; शुक्रधातुगतज्वर, जीर्णज्वर, अन्तर्धातुगतज्वर, भूताभिषङ्गज्वर, श्रमज्वर, सन्निपातज्वर एवं असाध्य ज्वरों को नाश करती है। जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है, गरुड़ को देख कर जैसे सर्प भाग जाते हैं उसी प्रकार उपद्रव सहित साध्यासाध्य ज्वर भी इस रसौषधि के प्रभाव से निश्चित ही नष्ट हो जाते हैं। यह रसौषधि बलकारक है, पुष्टिकारक है, कामला और पाण्डु रोगनाशक है। इस औषधि के प्रभाव से पुरुष हमेशा स्त्रियों के साथ सम्भोग करता है, उसके शुक्र का क्षय नहीं होता है। यह रसौषधि सभी प्रमेहों तथा सभी संग्रहणी रोगों का नाश करती है। इस औषधि के प्रयोग करते समय रोगों के साध्यासाध्यत्व पर वैद्यों को विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

मात्रा–५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन-गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में।

४१०. ज्वरविद्रावणरस

उपकुल्याऽतिविषा कट्वी निम्बपत्रं सुचूर्णितम्।
रससिन्दूरयुक्तोऽयं ज्वरविद्रावणो रसः ॥११८२॥

१. पीपरचूर्ण, २. अतीसचूर्ण, ३. निम्बपत्रचूर्ण तथा ४. रससिन्दूर—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। एक पत्थर के

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

खरल में रससिन्दूर को पीसें, ततः अन्य तीनों द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे ज्वरविद्रावण रस कहते हैं।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी ज्वरों में।

४११. वसन्तमालतीरस (रसपद्धति)

स्वर्णं मुक्ता दरदमरिचं भागवृद्ध्या प्रदिष्टं
खर्पराष्टौ प्रथममखिलं मर्दयेद् मृक्षणेन।
यावत्स्नेहो व्रजति विलयं निम्बुनीरेण तावद्
गुञ्जाद्वन्द्वं मधुचपलया मालतीप्राग्वसन्तः ॥११८३॥
सेवितोऽयं हरेत्तूर्णं जीर्णञ्च विषमज्वरम्॥
व्याधीनन्यांश्च कासादीन् प्रदीप्तं कुरुतेऽनलम् ॥११८४॥

१. स्वर्ण भस्म १ भाग, २. मोतीपिष्टी २ भाग, ३. शुद्ध हिङ्गुल ३ भाग, ४. मरिच चूर्ण ४ भाग तथा ५. खर्पर भस्म ८ भाग (अभाव में यशद भस्म दें)—पत्थर के एक खरल में उपर्युक्त सभी द्रव्यों को मिलाकर मक्खन के साथ १ भावना देकर मर्दन करें। पुनः निम्बूस्वरस के साथ तब तक मर्दन करें जब तक उक्तौषधि का स्नेहांश नष्ट न हो जाय। पुनः २-२ रत्ती की वटी बनावें, छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। जीर्णज्वर, विषमज्वर, कास, श्वास एवं अन्य बीमारियाँ—जैसे राजयक्ष्मा, क्षयादि का यह रसौषधि नाश करती है तथा अग्नि को प्रदीप्त करती है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु एवं पिप्पली चूर्ण से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कट्वल। **उपयोग**–विषमज्वर, जीर्णज्वर, यक्ष्मा।

४१२. अपूर्वमालिनीवसन्त (योगरत्ना.)

वैक्रान्तमभ्रं रविताप्यरौप्यं
वङ्गप्रवालं रसभस्मलौहम्।
सुटङ्कणं कम्बुकभस्मसर्वं
समांशकं सेव्यवरीहरिद्राः ॥११८५॥
द्रवैर्विभाव्यं मुनिसंख्यया च
मृगाङ्कजाशीतकरेण पश्चात्।
वल्लप्रमाणो मधुपिप्पलीभि-
र्जीर्णज्वरे धातुगते नियोज्यः ॥११८६॥
गुडूचिकासत्त्वसितायुतश्च
सर्वप्रमेहेषु नियोजनीयः ॥११८७॥
कृच्छ्राश्मरीं निहन्त्याशु मातुलुङ्गाङ्घ्रिजैर्द्रवैः।
रसो वसन्तनामाऽयमपूर्वो मालिनीपरः ॥११८८॥

१. वैक्रान्तभस्म, २. अभ्रकभस्म, ३. ताम्रभस्म, ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ५. रजतभस्म, ६. वङ्गभस्म, ७. प्रवाल भस्म, ८. रससिन्दूर, ९. लौहभस्म, १०. शुद्ध सोहागा, ११. शंखभस्म, १२. कस्तूरी और १३. कर्पूर—पत्थर के खरल में सर्वप्रथम रससिन्दूर को पीस लें, ततः अन्य सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें और शतावरी तथा हल्दी के स्वरस या क्वाथ की ७-७ भावना देकर सबसे अन्त में कस्तूरी को जल में मिलाकर भावना दें। ३-३ रत्ती की वटी बनावें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। जीर्णज्वर, धातुस्थज्वर में पीपरचूर्ण ४ रत्ती एवं मधु से दें। सभी प्रकार के प्रमेहों में गुडूचीसत्त्व एवं चीनी के साथ प्रयोग करें। मूत्रकृच्छ्र एवं मूत्राश्मरी में मातुलुङ्गनिम्बूवृक्ष के मूलत्वग्स्वरस से दें। यह अपूर्वमालिनीवसन्त के नाम से जाना जाता है।

मात्रा–२५० से ३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–गुडूची। **गन्ध**–कस्तूरी गन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण तथा किञ्चिद् रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–जीर्णज्वर, धातुगतज्वर एवं क्षय में।

४१३. श्लेष्मशैलेन्द्र रस (रसेन्द्रचिन्तामणि)

गन्धकं पारदं चाभ्रं त्र्यूषणं जीरकद्वयम्।
शटी शृङ्गी यमानी च पुष्करं रामठं तथा ॥११८९॥
सैन्धवं यावशूकञ्च टङ्कणं गजपिप्पली।
जातीकोषाजमोदे च लौहं यासलवङ्गकम् ॥११९०॥
धुस्तूरबीजं जैपालं कट्फलं चित्रकं तथा।
प्रत्येकं कार्षिकं चैषां श्लक्ष्णचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥११९१॥
पाषाणे विमले पात्रे घृष्टं पाषाणमुद्गरैः।
बिल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रकदन्तिकाः ॥११९२॥
शिखरो फञ्जिका वासा निर्गुण्डी गणिकारिका।
धुस्तूरं कृष्णजीरञ्च पारिभद्रं च पिप्पली ॥११९३॥
कण्टकार्यार्द्रयोश्चैव मूलान्येतानि दापयेत्।
एषां मूलरसं दत्त्वा घृष्टमातपशोषितम् ॥११९४॥
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक्।
चतुःसंख्यां वटीं खादेन्नित्यमार्द्रकवारिणा ॥११९५॥
उष्णतोयानुपानेन वातव्याधिं व्यपोहति।
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव शिरोरोगांश्च दारुणान् ॥११९६॥
प्रमेहान्विंशतिं चैव पञ्चगुल्मनिषूदनः।
उदराण्यन्त्रवृद्धिञ्चाप्यामवातविनाशनः ॥११९७॥
पञ्च पाण्ड्वामयान् हन्ति क्रिमिस्थौल्यामयापहः।
सोदावर्त्तं ज्वरं कुष्ठं गात्रकण्ड्वामयापहः ॥११९८॥
यथा शुष्केन्धने वह्निस्तथा वह्निविवर्धनः।
श्लेष्मामयि कृपाहेतो रसेन्द्रो मुनिभाषितः॥
श्लैष्मशैलेन्द्रनाम्ना च रसेन्द्रगुटिका स्मृता ॥११९९॥

१. शुद्ध गन्धक, २. शुद्ध पारद, ३. अभ्रकभस्म, ४. शुण्ठी चूर्ण, ५. पीपरचूर्ण, ६. मरिचचूर्ण, ७. जीराचूर्ण,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

८. स्याहजीराचूर्ण, ९. कचूरचूर्ण, १०. काकडासिंगीचूर्ण, ११. अजवायनचूर्ण, १२. पुष्करमूलचूर्ण, १३. हींगचूर्ण, १४. सैन्धवलवण, १५. यवक्षारचूर्ण, १६. शुद्ध सोहागा, १७. गजपीपरचूर्ण, १८. जावित्रीचूर्ण, १९. अजमोदाचूर्ण, २०. लौहभस्म, २१. यवासाचूर्ण, २२. लवङ्गचूर्ण, २३. शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण, २४. शुद्ध जयपाल, २५. कायफलचूर्ण तथा २६. चित्रकमूलचूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और बिल्वमूलत्वक् क्वाथ, अर्कमूलत्वक्-स्वरस, चित्रकमूलक्वाथ, दन्तीमूलक्वाथ, अपामार्गक्वाथ, भार्गीस्वरस, वासापत्रस्वरस, सिन्दुवारपत्रस्वरस, अरणीमूल क्वाथ, धत्तूरपत्रस्वरस, कृष्णजीराक्वाथ, फरहदपत्रस्वरस (पारिभद्र), पीपरक्वाथ, कण्टकारी क्वाथ और आर्द्रकस्वरस—इन द्रव्यों की १-१ भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर धूप में अच्छी तरह सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

२० प्रकार के कफज रोग, भयंकर शिरोरोग, २० प्रकार के प्रमेहरोग, ५ प्रकार के गुल्मरोग, उदररोग, अन्त्रवृद्धिरोग, आमवात, ५ प्रकार के पाण्डुरोग, कृमिरोग, स्थौल्यरोग, उदावर्त्तरोग, सभी प्रकार के ज्वररोग, कुष्ठ तथा सम्पूर्ण शरीर की कण्डू आदि रोग इस रसौषधि के प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं। जिस प्रकार सूखी लकड़ी की सहायता से आग बढ़ती है, उसी प्रकार इस रसौषधि के सेवन से पाचकाग्नि बढ़ती है। कफ के रोगिओं पर कृपा करके मुनियों ने इसे श्लेष्मशैलेन्द्र रसवटी कहा है।

मात्रा–१२५-२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आर्द्रकस्वरस। **गन्ध**–कर्पूर गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–कफज्वर, कफज रोग एवं प्रमेहों में।

४१४. लक्ष्मीविलासरस (नारदीयः) (रसेन्द्रचिन्तामणि)

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ।
तदर्धं चन्द्रसंज्ञस्य जातीकोषफले तथा ॥१२००॥
वृद्धदारकबीजं च बीजं धुस्तूरकस्य च।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूलमेव च ॥१२०१॥
नारायणी तथा नागबला चातिबला तथा।
बीजं गोक्षुरकस्यापि नैचुलं बीजमेव च ॥१२०२॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्ररसैः पुनः।
निष्पिष्य वटिका कार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥१२०३॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान् घोरांश्चैव चतुर्विधान्।
वातोत्थान् पैत्तिकांश्चैव नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥१२०४॥
कुष्ठमष्टादशविधं प्रमेहान् विंशतिं तथा।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥१२०५॥
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसाश्रितं च यत्।
मेदोगतं धातुगतं चिरजं कुलसम्भवम् ॥१२०६॥
गलशोथमन्त्रवृद्धिमतीसारं सुदारुणम्।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥१२०७॥
उदरं कर्णनासाऽक्षिमुखवैकृतमेव च।
कासपीनसयक्ष्मार्शःस्थौल्यदुर्गन्धनाशनः ॥१२०८॥
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीणां गदनिषूदनम्।
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥१२०९॥
अनुपानमिह प्रोक्तं माषपिष्टं पयो दधि।
वारिभक्तसुरासीधुसेवनात् कामरूपधृक् ॥१२१०॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्धी न च शुक्रस्य संक्षयः।
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्वताम् ॥१२११॥
नित्यं स्त्रीणां शतं गच्छेन्मत्तवारणविक्रमः।
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकं परः ॥१२१२॥
प्रोक्तः प्रयोगराजोऽयं नारदेन महात्मना।
रसो लक्ष्मीविलासस्तु वासुदेवो जगत्पतिः।
अभ्यासादस्य भगवांल्लक्षनारीषु वल्लभः ॥१२१३॥

विशेष—रसगन्धककर्पूरजातीकोषफलानां पञ्चानां प्रत्येकं पलार्द्धं वृद्धदारकबीजादीनां नवद्रव्याणां प्रत्येकं कर्ष इति भट्टादि-व्यवहारः। राढीयास्तु रसगन्धकयोर्मिलित्वा कर्षो, वृद्धदारक-बीजादिनवद्रव्याणां मिलित्वा कर्षश्चेत्याहुः ॥१२२३-१२३६॥

१. अभ्रकभस्म ४० ग्राम, २. शुद्ध पारद २० ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ४. कर्पूर २० ग्राम, ५. जावित्रीचूर्ण २० ग्राम, ६. जायफलचूर्ण २० ग्राम, ७. विधाराबीजचूर्ण १० ग्राम, ८. धत्तूरबीजचूर्ण १० ग्राम, ९. भाँगपत्रचूर्ण १० ग्राम, १०. विदारीकन्दचूर्ण १० ग्राम, ११. शतावरीचूर्ण १० ग्राम, १२. नागबलाचूर्ण १० ग्राम, १३. अतिबलाचूर्ण १० ग्राम, १४. गोक्षुरबीजचूर्ण १० ग्राम और १५. हिज्जलबीजचूर्ण १० ग्राम—सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर कज्जली के साथ मर्दन करें। पुनः ताम्बूलपत्र के स्वरस की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें और ३-३ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस लक्ष्मीविलास रस के सेवन से सन्निपातजन्य ४ प्रकार के भयंकर रोग नष्ट हो जाते हैं; वातज, पित्तज, कफज आदि का कोई नियम नहीं है। इसके सेवन से १८ प्रकार के कुष्ठ, २० प्रकार के प्रमेह, नाड़ीव्रण, भयंकर व्रण, गुद के रोग, भगन्दर, कफ-वातोत्थ और रक्त-मांसाश्रित, मेदोगत, शुक्रगत तथा वंशानुगत (Hereditary), श्लीपद, गलगत शोथ, अन्त्रवृद्धि, भयंकर अतिसार, सभी तरह के आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उदररोग, कर्णविकृति, नासाविकृति, नेत्रविकृति, मुखविकृति, कास, पीनस, यक्ष्मा, अर्श, स्थूलता, शरीर की दुर्गन्ध, सभी प्रकार के शूल, शिर:शूल और स्त्रियों के सभी रोगों का नाश हो जाता है। इसके सेवन से मनुष्य साक्षात् कामदेव- स्वरूप हो जाता है। वृद्ध भी संभोग में युवाओं से मुकाबला करने लगता है। इसके सेवन से शुक्र का क्षय सामान्यत: नहीं होता है, शिश्नेन्द्रिय शिथिल नहीं होती है, केश नहीं पकते हैं, मतवाला हाथी जैसा सौ स्त्रियों के साथ पराक्रमपूर्वक सम्भोग करता है। दो लाख योजन तक स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इससे बढ़कर पुष्टिकर कोई अन्य औषधि नहीं है (इसमें अतिशयोक्ति अधिक है)। इस प्रयोगराज "लक्ष्मीविलासरस" को महर्षि नारद ने भगवान् श्रीकृष्ण को बताया था, जिसके प्रयोग से भगवान् श्रीकृष्ण लाखों स्त्रियों के पति हुए थे। अत्यधिक अतिशयोक्ति है ।

मात्रा–३७५ से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–रोगानुसार। **गन्ध**–कर्पूरगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वरों में, कुष्ठ एवं प्रमेहों में।

४१५ मकरध्वज

पलमेकं सुवर्णस्य रसेन्द्रस्य पलाष्टकम् ।
रसस्य द्विगुणं गन्धं कज्जलीकृत्य यत्नतः ॥१२१४॥
कुमारिकारसैर्भाव्यं काचपात्रे निधापयेत् ।
बालुयन्त्रे च संस्थाप्य क्रमशस्त्रिदिनं पचेत् ॥१२१५॥
साङ्गशीतं समादाय पुष्पारुणरजःसमम् ।
यवमात्रं प्रदातव्यमहिवल्लीदलैः सह ॥१२१६॥
रसस्य षड्गुणैर्गन्धैः पूर्ववत् कज्जलीकृते ।
भाविते पाचिते सम्यक् षड्गुणो वलिजारितः ॥१२१७॥
विधिवत् सेवितो ह्येष मुमुर्षुमपि जीवयेत् ।
एतदभ्यासतश्चैव जरामरणनाशनम् ॥१२१८॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान् गुणान् ।
ज्वरं त्रिदोषजं घोरं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥१२१९॥
अन्यांश्च विविधान् रोगान्नाशयेन्नात्र संशयः ।
करोत्यग्निं बलं पुंसां वलीपलितनाशनः ॥१२२०॥
मेधायुःकान्तिजननः कामोद्दीपनकृन्महान् ।
भास्वज्ज्योतिर्यथा भाति काचे नीलादिके शुभे ।
तथानुपानभेदेन क्रियावान् मकरध्वजः ॥१२२१॥

१. शुद्ध स्वर्ण कण्टकवेधीपत्र १ भाग, २. शुद्ध पारद ८ भाग एवं ३. शुद्ध गन्धक १६ भाग। सर्वप्रथम सोना को मशीन से कण्टकवेधी पत्र बनाकर अग्नि में प्रतप्त करें और 'तैले तक्रे गवां मूत्रे आरनाले कुलत्थजे' इन पाँच द्रव्यों में पृथक्-पृथक् सात-सात बार बुझावें। इसके बाद पत्र को साफ कर कैंची से चावल के बराबर टुकड़े करें। तत: कठिन पत्थर तामड़ा या सीमाक पत्थर के खरल में स्वर्ण और पारद समभाग रखकर मर्दन करें। ४-६ घण्टे के मर्दन के बाद मक्खन जैसा amalgam बन जायेगा। धीरे-धीरे और सम्पूर्ण पारद उसमें मिलाकर मर्दन करें। अँगुली पर घिसने से जब उस पिष्टि में स्वर्ण के टुकड़े अलग न प्रतीत हो तो पूर्णरूप से पिष्टि हो गई ऐसा समझें। करीब ८-१० घण्टे तक मर्दन अवश्य करना चाहिए। तत: इस पिष्टि में शुद्ध गन्धक चूर्ण मिलाकर २ दिनों तक ६-८ घण्टे तक रोज मर्दन कर कज्जली बनावें। उक्त कज्जली में पुन: घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर १ दिन तक मर्दन करें। उसे धूप में अच्छी तरह सुखा लें। पुन: सात बार कपड़मिट्टी की हुई काचकूपी या हरे रंग की २०-२२ औंस की बोतल में उक्त कज्जली को भरकर कार्क लगा दें और लोहे के बालुकायन्त्र में इस औषधिपूरित बोतल को रख कर बालू से भर दें। बोतल की तली में २-३ अँगुल बालू रखें और बोतल के मुख से २ अँगुल बालू नीचे रखें। इसके बाद अग्नि-पारद-स्वर्ण-गन्धक की (शिव-पार्वती जैसी) विधिवत् पूजा करें। पवित्रता के साथ शिव नामजाप-कीर्तनपूर्वक उस बालुकायन्त्र को चूल्हे पर चढ़ाकर मृद्वग्नि से पाक करें। धीरे-धीरे अग्नि प्रज्वलित कर वृद्धि करें। ८-१६ घण्टे तक मृदु-मध्याग्नि से पाक करने के बाद बोतल का कार्क हटा दें। अग्नि की ज्वाला बढ़ाते रहें। तीक्ष्णाग्नि से ८-१० घण्टे तक पाक करने के बाद पतली किन्तु लम्बी (१ सूत मोटी १ मीटर लम्बी लोहे की छड़) शलाका में लकड़ी की मुठिया लगाकर पहले से तैयार रखें। समय-समय पर उस शलाका को आग में प्रतप्त (लाल) कर बोतल के मुख में डालते रहें। इससे बोतल का मुख गन्धक जमने से बन्द नहीं होगा, साथ ही बोतल की तली में आग पकड़ेगी। आग पकड़ना जरूरी है अन्यथा औषधिपाक होने में विलम्ब होगा। बार-बार शलाका भी नहीं डालनी चाहिए। अन्यथा औषधि का क्षय होगा। आग पकड़ने के बाद बोतल से ३-४ फीट तक ऊँची अग्नि की ज्वाला निकलती है और धीरे-धीरे वह ज्वाला शान्त हो जाती है। ऊँची ज्वाला देखकर घबराना नहीं चाहिए। ज्वाला छोटी हो या ऊँची उसे बोतल से निकलना आवश्यक है और यह औषधिपाक के पूर्व स्पष्ट लक्षण है। इसमें सावधानी यही रखनी चाहिए कि बोतल के मुख में गन्धक का जमाव न होने दें। बराबर लाल तप्त शलाका से मुख साफ करते रहें। अन्यथा बोतल का मुख बन्द होने पर Sulphur di oxide gas के कारण बोतल फूट सकती है।

पूर्णपाक के लक्षण—बोतल की तली लाल दिखाई देगी। उगते हुए सूर्य के जैसी बोतल की तली दिखाई देगी। यह अँधेरा करके देखने से ज्ञात होगा। रात्रि में लाइट बन्द कर तथा दिन में छाता आदि से अँधेरा करके देखें। ठण्डी शलाका प्रवेश करने पर निर्धूम होना। बोतल के मुख को ताम्र के प्लेट से २ मिनट तक ढ़कने पर उसमें पारद के कण चिपकेंगे। तीन दिनों तक लगातार

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अग्नि देते रहें। ऐसा होने पर पहले से बनाया हुआ मिट्टी का कार्क उस बोतल में लगाकर कपड़मिट्टी से उसका मुख बन्द करें। बोतल के मुख से चारों ओर की बालू गर्दन तक हटा दें, जिससे बोतल की गर्दन ठण्डी हो और उसके अन्दर मकरध्वज का जमाव ठीक से हो। ऐसा कर स्वाङ्गशीत होने के लिए छोड़ दें।

औषधि-निष्कासन—दूसरे दिन स्वाङ्गशीत होने पर बालुकायन्त्र को चूल्हे से हटाकर बालू हटाकर पृथक् करें और कूपी को सावधानी से पृथक् करें। चाकू से खरोच कर कपड़मिट्टी हटा दें। जहाँ पर गर्दन में मकरध्वज चिपका हुआ है, ठीक उसके नीचे मिट्टी के तेल में पतली सुतली भिंगाकर ३-४ बार लपेट दें और सुतली में अग्नि प्रज्वलित कर दें। आग बुझने पर भींगे वस्त्र से उस स्थान को पकड़ लें। गर्मी के बाद शीत स्पर्श से बोतल सीधी लाइन में कट जायेगी तथा दो भाग में विभक्त हो जायेगी। तली भाग में सोना का चूर्ण मिलेगा और गर्दन भाग में जमा हुआ ताम्र वर्ण का मकरध्वज खण्ड मिलेगा जो पीसने पर अत्यन्त लाल जपाकुसुमवत् होता है । इसे काचपात्र में सुरक्षित रख लें। स्वर्णचूर्ण से स्वर्णभस्म का निर्माण करें तथा रोगशान्त्यर्थ एवं बलप्राप्त्यर्थ $\frac{१}{२}$ से १ रत्ती मकरध्वज का प्रयोग करें।

गुण—इस मकरध्वज के अभ्यास से जरा-मृत्यु का नाश होता है। अनुपान-विशेष के साथ प्रयोग करने पर अनेक गुण देने वाला है। सन्निपातज्वर, मन्दाग्नि, अरुचि आदि अन्य अनेक प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं। यह अग्नि और बल को बढ़ाता है, वली-पलितनाशक है; मेधा, आयु, कान्ति वर्धक है तथा अत्यन्त कामोद्दीपक है। षड्गुणवलिजारित मकरध्वज इससे भी अधिक गुणवान् होता है। चमकता हुआ प्रकाश जैसे नील-रक्त हरितादि काँच (Glass) पर पड़ने से और भी प्रकाशवान होता है, उसी तरह यह मकरध्वज अनुपान भेद से और भी गुणवान् होता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु, ताम्बूलपत्र स्वरस से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–पीसने पर लाल वर्ण। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–जरा-मृत्युनाशक, रसायन तथा वाजीकरण।

४१६. गन्धककज्जलिका

कण्टकारी सिन्दुवारस्तथा पूतिकरञ्जकम्।
एतेषां रसमादाय कृत्वा खर्परखण्डके ॥१२२२॥
प्रक्षेप्यं गन्धकं तत्र ज्वालं मृद्वग्निना दहेत्।
गन्धकं स्नेहतापन्ने तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥१२२३॥
मिश्रीकृत्य ततो द्वाभ्यां द्रुतं तमवतारयेत्।
आमर्दयेत्तथा तत्र यथा स्यात् कज्जलप्रभम् ॥१२२४॥
ततस्तु रक्तिकामस्य माषकं जीरकस्य च।
माषैकं लवणस्यापि पर्णे कृत्वा निधापयेत् ॥१२२५॥
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे जलमुष्णं पिबेदनु।
छर्द्यां शर्करया दद्यात् सामे दद्यात्तथा गुडम् ॥१२२६॥
क्षये छागभवं क्षीरं प्रदद्यादनुपानकम्।
रक्तातिसारे कुटजमूलवल्कलजं रसम् ॥१२२७॥
रक्तवान्तौ तथा दद्यादुदुम्बरभवं जलम्।
सर्वव्याधिहरश्चायं गन्धकः कज्जलीकृतः ॥
आयुर्बुद्धिकरश्चैव मृतञ्चापि प्रबोधयेत् ॥१२२८॥

१. कण्टकारीस्वरस, २. निर्गुण्डीपत्रस्वरस, ३. पूतिकरञ्ज-पत्रस्वरस, ४. शुद्ध पारद और ५. शुद्ध गन्धक—पारद एवं गन्धक समभाग में लें। सर्वप्रथम मिट्टी की हाँडी या घटखर्पर में उपर्युक्त तीनों स्वरस डालकर चूल्हा पर गरम करें। गरम होने पर उसमें गन्धक चूर्ण डालें। गन्धक जब पिघल जाय तो हाँडी या घटखर्पर चूल्हे से उतार कर उसमें शुद्ध पारद डालकर जल्दी-जल्दी दर्वी से रगड़ कर चूर्ण बना लें। तदनन्तर खरल में पलट कर २ दिनों तक मर्दन करें और कज्जली बना लें। पुनः काचपात्र में रख लें। इसे सभी प्रकार के ज्वरों में, भयंकर सन्निपातज्वर में भृष्टजीरक चूर्ण सैन्धव से युक्त ताम्बूलपत्र के साथ दें, बाद में उष्ण जल पिलावें। वमन में चीनी से, आमदोष में गुड़ के साथ, क्षय में बकरी के दूध से, रक्तातिसार में कुटजत्वक् क्वाथ से, रक्त की उलटी होने पर गूलर की छाल के क्वाथ से यह कज्जली अनुपान भेद से सभी रोगों को दूर करती है। आयु एवं बुद्धि को बढ़ाने वाली है और सन्निपातादि रोग से मूर्च्छित (मृत्युसम) व्यक्ति को चैतन्य प्रदान करती है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–सैन्धव लवण एवं उष्णोदक से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सन्निपातज्वर तथा अन्य ज्वरों में।

४१७. आहकारि रस[१] (नासाज्वर में)

सूक्ष्मैला तथा पथ्या कणाऽयो व्योम खर्परः।
समांशं तु ग्रहीतव्यं पारदस्तु द्विभागिकः ॥१२२९॥
द्रोणपुष्पीरसेनैतत् सर्वमेकत्र मर्दयेत्।
रक्तिद्वयमिता मात्रा स्याच्छोथघ्नीरसान्विता ॥१२३०॥
प्लीहायकृच्छोथवह्निमन्दताऽरोचकानि च।
विषमज्वरो विशेषेण दारुणो नासिकाज्वरः ॥१२३१॥
आहिकारिरसस्यास्य प्रयोगेण यथाविधि।
विलयं त्वरया यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१२३२॥

१. छोटी इलायची चूर्ण, २. हरीतकी चूर्ण, ३. पिप्पली चूर्ण, ४. लौह भस्म, ५. अभ्रक भस्म, ६. खर्पर भस्म तथा ७. रससिन्दूर—इलायची से खर्पर भस्म तक के सभी ६ द्रव्य २०-

१. आहकज्वरलक्षणम्—
'तनुना रक्तशोथेन युक्तो नासापुटान्तरे।
गात्रशूलं ज्वरकरः श्लेष्मणा ह्याहकज्वरः' ॥ (वैद्यकनिघण्टु)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२० ग्राम लें तथा रससिन्दूर ४० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में रससिन्दूर को पीसें और उसी खरल में उपर्युक्त छः द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मर्दन करें तथा द्रोणपुष्पी (गूमा) स्वरस में १ दिन तक मर्दन करें। २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। पुनर्नवामूल स्वरस एवं मधु के साथ प्रातः-सायं देने से प्लीहा एवं यकृद् वृद्धि, शोथ, अग्निमांद्य, अरोचक तथा विषमज्वर नष्ट हो जाते हैं। विशेषकर भयंकर नासाज्वर रोग इसके प्रयोग से नष्ट हो जाता है। आहकारि रस के प्रयोग से उपर्युक्त सभी रोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–नासाज्वर में।

४१८. आहकारि नस्य (सारकौमुदी)

दूर्वापथ्यादाडिमपुष्करजातै रसैर्नूनम्।
स्वादुफलामलकीजस्वरसोपेतैरिदं नस्यम् ॥१२३३॥
प्रातःकाले त्रिदिनं सेवितमाहकरुजं हन्याद्।
इति बहुवारं भिषजां वन्द्यैरनुभूय सम्प्रोक्तम् ॥१२३४॥

१. दूर्वा, २. हरीतकी चूर्ण, ३. अनारदाना, ४. पुष्करमूल, ५. द्राक्षा (अंगूर) तथा ६. आमला (प्रत्येक समभाग)—इन सभी ६ द्रव्यों को जल के साथ सिल पर पीस कर कपड़े से रस निचोड़ लें। इसी रस को दोनों नाक में ३-३ बूँद नस्य रूप में डालें। इस तरह ३ दिनों तक प्रातःकाल रोज नस्य देने से आहक ज्वर नष्ट हो जाता है।

सन्धानकल्पना
(Fermentative Preparations)

भारतवर्ष में अनादिकाल से सुरा-मद्य-आसव-अरिष्ट-सोमरस आदि मादक पेय पदार्थों का निर्माण होता आ रहा है। वेदों में सर्वत्र— सुरा-मद्य-सोमरस का उल्लेख मिलता है। उसका विकसित स्वरूप अपने आयुर्वेद की संहिताओं—चरक-सुश्रुत में विशेष रूप से पाया जाता है। पहले (वेदकाल में) इस पर देवताओं का एकाधिकार था, किन्तु बाद में यह विद्या चिकित्सकों के पास ही सुरक्षित हो गई। चिकित्सक वर्ग हमेशा से यह चाहता आ रहा है कि जिन औषध-कल्पों का वह निर्माण करे, वह बहुत दिनों तक टिकाऊ हो, उनका उपयोग वह बहुत वर्षों तक निर्बाध गति से करता रहे। उनके रस-गुण-वीर्य-विपाक-प्रभाव में कमी न हो, अपितु वृद्धि होती रहे। चिकित्सकों की इस चिरकालिक इच्छा की पूर्ति उनके निरन्तर अनुसन्धान के फलस्वरूप आसवारिष्टादि सन्धानकल्पनाएँ एवं धातुओं (रसौषधियों) की भस्मों का विकास हुआ।

'पुराणाः स्याद् गुणैर्युक्ता आसवो धातवो मताः।
द्रवेषु चिरकालस्थं द्रव्यं यत्सन्धितं भवेत्।
आसवारिष्टभेदैस्तु प्रोच्यते भेषजोचितम्' ॥
(शा.सं.म. १०।१)

आसवारिष्ट-निर्माणार्थ निम्नलिखित कुछ सूत्रों को सावधानी से विचार करना चाहिए—

(१) **काष्ठौषधियाँ**—जिन काष्ठौषधियों का क्वाथ-घोल-प्रक्षेपादि रूप में प्रयोग करना हो, वे सड़ी-गली-पुरानी-घुणादि कीटविद्ध न हों, तथा रस-गुण-वीर्य-विपाक में हीन न हों। अर्थात् औषधियाँ नयी हों, ताजी या तुरन्त की संग्रहकर सुखाई हुई हों, रस, गुण-वीर्य-विपाकादि से परिपूर्ण हों, वैसी ही औषधियाँ एतदर्थ लेना चाहिए।

(२) **क्वाथ-निर्माण**—काष्ठौषधियों का क्वाथ केवल इसी दृष्टि से बनाया जाता है कि क्वाथ में प्रयुक्त समस्त द्रव्यों का सार भाग आ जाय। यदि उक्त क्वाथ में द्रव्यों का सार भाग नहीं आयेगा तो निश्चित ही उक्त आसव-अरिष्ट का वर्ण एवं गुण ठीक से नहीं आयेगा। क्वाथ-निर्माण में अग्नि का महत्त्व बहुत बड़ा है। क्वाथ में हमेशा मध्यमाग्नि देना चाहिए न कि तीक्ष्णाग्नि। इसी तरह अर्धावशेष क्वाथ और चतुर्थांशावशेष क्वाथ में बहुत ही अन्तर है। अर्धावशेष क्वाथ में सार भाग पूर्णरूपेण नहीं आ पाता है। क्वाथ-निर्माण में औषधों का यवकुट चूर्ण होना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है। अधिकांश स्थलों पर देखा जाता है कि क्वाथ द्रव्य के १०-१२ अँगुल के टुकड़े कर लेते हैं या कुट्टी काट लेते हैं और अपना कर्तव्य पूरा हो गया, ऐसा समझ लेते हैं। ऐसी स्थिति में जब द्रव्य के टुकड़े फटे भी न हों तो उससे औषधि गुणयुक्त कैसे बन पायेगी। अस्तु औषधियों के यवकुट (यव के बराबर टुकड़े) चूर्ण होना ही चाहिए।

(३) **क्वाथ में जल की मात्रा एवं उनकी पवित्रता**—क्वाथ निर्माण करते समय साधारणतया वही जल आप प्रयोग में लावें, जिसे आप पीने के काम में लाते हैं। खारा-नमकीन-दुर्गन्धयुक्त एवं कृमियुक्त जल का प्रयोग न करें। कोई भी आसव-अरिष्ट-निर्माण में जल की मात्रा माप-तौल कर उतनी ही मात्रा दें जितनी मात्रा शास्त्र में निर्दिष्ट है। कुछ लोग क्वाथजल को चतुर्थांशावशेष के बदले अर्धावशेष क्वाथ बना लेते हैं या आसव में द्रव-द्वैगुण्य की मनगढ़न्त परिभाषा बना लेते हैं। परिणामतः उनका आसव-अरिष्ट खट्टा-पतला-शुक्त रूप एवं वर्ण और गुणादि से रहित (अपेय) तैयार हो जाता है।

(४) **सन्धान पात्र**—प्राचीन ग्रन्थों में पात्र के नाम पर मृत्तिकापात्र ही ग्रहण करने का नियम है। 'पात्रेऽनुक्ते तु मृत्पात्रम्' की परिभाषा बतलायी गई है। परन्तु इसमें भी कई कठिनाइयाँ हैं—

१. थोड़ी मात्रा में आसवारिष्ट बनाने हेतु इसका प्रयोग ठीक है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२. एक बार आसवारिष्ट बनाने के बाद उस मिट्टी के पात्र का पुनः उपयोग करना उचित नहीं है। यद्यपि शास्त्र में उस पात्र को ठीक से साफ कर धूपित एवं घृतादि लिप्त करने का विधान है, परन्तु सन्दिग्ध है।

३. ये मृत्पात्र दुबारा उपयोग या पहली बार के उपयोग में ही फूट सकते हैं।

४. मृत्पात्र में सुषीर (छोटे-छोटे छिद्र) होते हैं, अतः औषधि इससे बाहर निकलता है या उनसे गैस बनकर नष्ट हो जाता है।

आज बड़ी-बड़ी फार्मेसियाँ सागवान की लकड़ी से निर्मित ड्रम का उपयोग एतदर्थ करती हैं। कुछ स्थानों पर सिमेण्ट-निर्मित कोष्ठी में भी आसवारिष्ट निर्माण होते देखा गया है। अधुना स्टेनलेस स्टील के बड़े-बड़े ड्रमों में सुरक्षित आसवारिष्ट तैयार करना सबसे अच्छा एवं निरापद है।

लकड़ी के ड्रमों में भी कई कठिनाइयाँ हैं—

१. नये लकड़ी के ड्रमों की सर्वत्र अनुपलब्धता।

२. एक आसव या अरिष्ट बनाने के बाद उसकी ठीक से सफाई कर उसमें कुछ दिनों तक पानी भर कर छोड़ना।

३. कोई एक आसव-अरिष्ट बनाने के बाद पुनः उसमें दूसरे प्रकार के कोई आसव-अरिष्ट बनाने में परेशानी। जैसे—नये काष्ठ के ड्रम में पहले द्राक्षारिष्ट बनाया, उसके बाद अमृतारिष्ट बनाया गया। अमृतारिष्ट बनाने के बाद पुनः उसमें द्राक्षारिष्ट, अशोकारिष्ट आदि अरिष्टों का सन्धान करने पर उक्त दोनों अरिष्ट खराब हो जायेंगे। अमृतारिष्ट की तिक्तता उनमें आ जायेगी। साथ ही पहली बार का आसवारिष्ट यदि किसी कारण से शुक्त (खट्टा) बन गया तो पुनर्निर्माण भी खट्टा ही बन सकता है।

यदि १ काष्ठ ड्रम में एक ही प्रकार के आसव-अरिष्ट बराबर बनावें तो प्रायः ठीक रहता है। फिर भी उनकी सफाई एवं सुखाना आदि कार्य कष्टप्रद होते हैं।

अतः आसवारिष्ट-निर्माण के लिए निरापद पात्र 'स्टेनलेस स्टील' के हैं।

(५) **क्वाथ या द्रव में गुड़ादि का मिश्रण**—जब हम क्वाथ या जलादि को सन्धानपात्र में रख लेते हैं, तब सर्वप्रथम उसमें गुड़ादि (गुड़-शर्करा-मधु) मिला देते हैं। एतदर्थ दोनों की सम्यक् तौल होनी चाहिए। शास्त्रानुसार क्वाथ एवं जल का सम्यक् तौल एवं गुड़ादि का भी सही तौल होना चाहिए। गुड़ादि को अच्छी तरह से द्रव में मिला लेना चाहिए।

१. कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि आसवारिष्ट छानने के बाद पात्रतल में गुड़ का अधिकांश भाग शेष रह जाता है। इससे आसवारिष्ट में माधूर्य का अभाव पाया जाता है।

२. कभी-कभी किसी आसवारिष्ट में द्रव की कमी एवं गुड़ादि की अधिकता से गुड़ादि मिश्रण में बड़ी कठिनाई हो जाती है। उदाहरणार्थ–शा.सं. के अनुसार।

द्राक्षारिष्ट—इसमें द्राक्षा २½ किलो, क्वाथार्थ जल २५½ लीटर एवं अवशेष क्वाथ ६½ लीटर द्रव में गुड़ १० किलो लेना है। यहाँ पर ६½ लीटर द्रव में १० किलो गुड़ घोलने के बाद घोल बड़ा ही गाढ़ा बनता है और इसमें सन्धान बहुत दिनों के बाद भी होता रहता है। परन्तु ऐसा द्राक्षारिष्ट बहुत ही स्वादिष्ट एवं गुणवान् होता है। इसमें अलकोहल (Alcohol) की मात्रा भी अत्यधिक हो जाती है।

अधिकतर निर्माता इसमें द्रव द्वैगुण्य-त्रैगुण्य की परिभाषा लगाते हैं और द्राक्षारिष्ट खराब कर देते हैं।

(६) **स्थान एवं भूमि**—प्राचीनाचार्य आसवारिष्ट के पात्र को जमीन में गड्ढा खोदकर गाड़ने का अथवा अन्नादि ढेर के बीच में (पात्र को) रखने का निर्देश देते हैं। इसका उद्देश्य मात्र ताप-शीत का नियन्त्रण करना है। किन्तु इसमें सबसे बड़ी बाधा है मिट्टी के पात्र। जमीन के अन्दर गड्ढा में आसवारिष्ट सन्धान करने के बाद जब पात्र बाहर निकालते हैं तो कभी-कभी यह देखा जाता है कि पात्र रिक्त है, दबाव के कारण मिट्टी का पात्र फट जाता है, फलतः द्रवांश 'चू' कर निकल जाता है और पता नहीं चल पाता है। अतः यह प्रक्रिया उचित नहीं है।

अतः सिमेण्ट-निर्मित कमरे के फर्श पर बोरा आदि गद्दीदार पदार्थ रख कर ही उस मिट्टी के भाण्ड एवं घड़ा आदि रखें, किन्तु कमरा निर्वात होना आवश्यक है।

यद्यपि आज के वैज्ञानिक निर्वात रूम की अपेक्षा हवादार रूम में आसवारिष्ट बनाने को कहते हैं। तथापि उनके आसवारिष्ट खराब देखें जाते हैं।

आसवारिष्ट सन्धान करने के बाद छानकर बोतलों में भरकर कार्क एवं लेबल लगा दें और उस पर आसव-अरिष्ट का नाम, तिथि, ग्रन्थ अधिकार एवं बैच नं. आदि अवश्य लिखना चाहिए।

(७) **काल-ऋतु या वातावरण**—आसवारिष्ट-निर्माण में काल-ऋतु एवं वातावरण का बहुत ज्यादा महत्त्व है। शीत एवं वर्षा ऋतु में आसवारिष्ट का शीघ्र निर्माण नहीं होता है। वर्षा ऋतु में सन्धानार्थ औषधियाँ अधिकतर सड़ जाती हैं। एतदर्थ वसन्त ऋतु एवं शरद् ऋतु श्रेष्ठ माना जाता है। सामान्यतया ३०° से ३५° सेण्टिग्रेट ताप वाले क्षेत्र में सन्धान-प्रक्रिया बड़ी सुगमता से शीघ्र होती है। इन क्षेत्रों में ३-४ दिनों में Fermentation की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है और १५ से २० दिनों में पूरा घोल आसवारिष्ट में परिणत हो जाता है। वातानुकूलित यन्त्रों (Airconditions) के द्वारा सर्वत्र सभी ऋतुओं में कृत्रिम ताप-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नियन्त्रण द्वारा आसवारिष्ट बनाया जा सकता है। तथापि दार्जिलिंग-मसूरी-श्रीनगर-नैनीताल आदि क्षेत्रों में आसवारिष्ट बनाने में असुविधा होती है। सामान्यतया बिना यान्त्रिक नियन्त्रण के वहाँ पर आसवारिष्ट नहीं बनाया जा सकता है।

आचार्यों ने आसवारिष्ट-निर्माण ३० दिनों में करने को बताया है। ग्रीष्म ऋतु में यह प्रक्रिया ८-१० दिनों में पूरी हो जाती है और वसन्त ऋतु में १५ से २० दिनों तक यह सन्धान क्रिया पूर्ण हो जाती है। शीत ऋतु में किण्वन क्रिया बड़ी देर से प्रारम्भ होती है। कभी-कभी किण्वन क्रिया के अभाव में घोल सड़कर नष्ट हो जाता है। ऐसी स्थिति में कृत्रिम उपायों द्वारा किण्व (Yeast) आदि डालने के बाद Fermentation प्रारम्भ तो किया जाता है, किन्तु आसवारिष्ट का स्वाद तिक्त या घोर अम्ल (शुक्त) रूप में हो जाता है।

किण्वीकरण की क्रिया प्रारम्भ होने पर ६-७ दिनों के बाद सन्धानपात्र में कुछ हल्का शब्द बुदबुद या सुन्-सुन् आदि होने प्रारम्भ हो जाते हैं। Fermentation की क्रिया पूरी होने पर शब्द निकलना बन्द हो जाते हैं। किण्वीकरण के प्रारम्भ में पात्र में 'कार्बनडाईआक्साइड गैस' का निर्माण प्रारम्भ हो जाता है, किन्तु जब किण्वीकरण प्रक्रिया पूरी हो जाती है तब पात्र स्थित कार्बनडाईआक्साइड गैस नष्ट हो जाते हैं और ऑक्सिजन गैस उसमें बन जाता है। तभी आसवारिष्ट को तैयार समझा जाता है। तैयार आसवारिष्टों की दो परीक्षा विधि है—

१. पात्र में किसी प्रकार का शब्द का न होना। इसे सुनने के लिए पात्र के बाहरी भाग पर कान लगा कर सुनना चाहिए।

२. सन्धानपात्र के मध्य में जलती दियासलाई की तीली ले जाने पर दियासलाई की तीली जलती रहती है। यह आक्सीजन गैस की उपस्थिति की पहचान है। यदि जलती तीली पात्र के मध्य में बुझ जाती है तो समझा जाता है कि अभी सन्धान कार्य चालू है और बुझना कार्बनडाइआक्साइड गैस की उपस्थिति की पहचान है।

(८) **आसवारिष्टों को छानकर बोतलों में भरना और कुछ सुगन्धित द्रव्यों का प्रक्षेपण**—सामान्यतया उपर्युक्त दोनों परीक्षाएँ पूर्ण होने अर्थात्—

१. सन्धानपात्र में शब्द का अभाव।

२. दियासलाई की तीली का जलते रहने पर आसवारिष्ट को खूब अच्छी तरह से पुनः घोल दें तथा दो दिन छोड़ दें। पुनः ३-४ दिनों बाद पात्र के अन्दर यवकुट पदार्थों को हाथ से निचोड़कर बाहर निकाल लें तथा महीन साफ वस्त्र से द्रव पदार्थ को छान लें तथा जिस पात्र में सन्धान हुआ था, उसी सन्धानपात्र को धोकर साफ कर लें और सुखाकर उसी पात्र में छाना हुआ आसवारिष्ट को पुनः ६-८ दिनों तक रख दें। ऐसा करने से आसवारिष्ट के तलछट पदार्थ (गाद = Sediment) पात्रतल में बैठ जाता है। बाद में उसे रबर ट्यूब पम्प से निकालकर अलग पात्र में रखें। अब इस आसवारिष्ट में यदि कोई सुगन्धित द्रव्य—केशर-कस्तूरी-कर्पूर आदि मिलाना हो तो उस आसवारिष्ट के साथ खरल में मर्दन कर मिला दें तथा बाद में बोतलों में रखकर कार्क अच्छी तरह लगा दें। बोतलों में २ इञ्च स्थान गैस के लिए खाली रखना चाहिए। बोतलों पर आसवारिष्ट के नाम, आधारग्रन्थ, तिथि, बैच नं. एवं अधिकार आदि स्पष्ट अक्षरों में लिखना चाहिए।

सामान्यतौर पर आसवारिष्टों का प्रयोग १ वर्ष बाद ही करना चाहिए।

(९) **आसवारिष्टों में गाद** (Sediments) **और सुरा** (Alcohol) **प्रतिशत-मापन**—

१. आसवारिष्टों के निर्माण करते समय क्वाथ को खूब महीन कपड़े से दो बार छानना चाहिए।

२. गुड़ादि पदार्थ डालकर घोल तैयार करने पर सुगन्धित एवं कटुरस युक्त दीपन-पाचन औषध प्रक्षेपों को यवकुट करना ही उचित है। उन प्रक्षेप-द्रव्यों (त्रिकटु-चातुर्जातक-त्रिमदादि द्रव्यों) को दरदरा मोटा यवकुट (यव जितने बड़े टुकड़े) करना चाहिए। धातकी पुष्प को धूप में अच्छी तरह से सुखाकर उसमें डालना चाहिए, उसे कूटना नहीं चाहिए। ऐसी सावधानी बरतने पर आसवारिष्टों में गाद कम बैठता है। प्रक्षेप चूर्ण महीन होने पर गाद अधिक जमता है।

सुरा-मापन—आजकल आसवारिष्टों में सुरा की मात्रा कितनी है, इसको मापने के लिए एक यन्त्र आता है, उसका नाम सुरामापक यन्त्र (Alcohol meter) है। यह यन्त्र १ फीट के लगभग लम्बा होता है, इस पर ० से १०० तक अंक लिखे रहते हैं। इस यन्त्र को सुरा (आसवारिष्ट) में डुबाते हैं और अंकित क्षेत्रों का अध्ययन कर Reading लेते हैं। सामान्यतया आसवारिष्ट में Alcohol की मात्रा ५ से १०% तक होती है। विशुद्ध शास्त्रीय विधि से गाढ़े घोल में यदि द्राक्षारिष्ट बनाया जाय तो Alcohol की मात्रा १५% तक उसमें पायी जाती है। सही सुरा का ज्ञान करने की और भी अनेक विधियाँ हैं तथापि सामान्यतया इस यन्त्र से ज्ञान हो जाता है।

विमर्श—आसवारिष्ट छानने एवं बोतल में भरने के क्रम में दुबारा जो गाद (Sediments) जमा होता है, उसे फेंके नहीं; अपितु उसे सुखाकर वटी बनाकर शीशी में रखकर सुरक्षित कर लें। पुनः जब वही आसवारिष्ट बनाना हो तो उक्त वटी को Yeast

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रूप में प्रयोग करें। इससे सन्धान-प्रक्रिया में बड़ी सुगमता होती है।

धातुभस्मों का मिश्रण—कुछ आसवारिष्टों में लोहभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म और स्वर्णभस्मों को डालने का विधान है। यथा—लोहासव, कुमार्यासव, सारस्वतारिष्ट आदि। इनमें वारितर भस्मों का प्रयोग करना अधिक उचित है। अल्कोहल में २०-२५ दिनों तक पड़े रहने के बाद स्वर्णपत्रों, भस्मों पर रासायनिक क्रिया होती है। किन्तु आसवारिष्टीय अल्कोहल में इस क्रिया में ३-४ मास लग जाते हैं। जिन आसवों में त्रिफला जैसे कषायाम्ल पदार्थ पड़ते हों, लोहभस्म उन्हीं में डालने का विधान है। यथा—लोहासव, कुमार्यासव।

सन्धान-विधि

मिट्टी, लकड़ी अथवा स्टेनलेस स्टील या कलई की हुई किसी अन्य धातुओं के भाण्डाकृति पात्र में क्वाथ, जल, स्वरसादि द्रव पदार्थ डालकर उसमें गुड़, शर्करा या मधु अच्छी तरह मिला दें, अथवा उसमें गुड़ादि पदार्थ डाले बिना ही उक्त भाण्ड में कुछ काष्ठौषधियों को यवकुट कर प्रक्षिप्त करें और मुख बन्द कर निर्वात गृह में १५ से २० दिनों तक रख दिया जाता है। इसे ही विद्वान् लोग सन्धानकल्पना कहते हैं। इतने दिनों के मध्य में पात्रस्थित द्रव में किण्वीकरण (Fermentation) की क्रिया से वह द्रव मद्य (alcohol) या शुक्त (acid) रूप में परिणत हो जाता है। आसव-अरिष्ट-सीधु-मद्य-सुरा-वारुणी आदि मद्य की श्रेणी में है तथा काञ्जी-तुषोदक-आरनाल सौवीर-चुक्र-धान्याम्ल आदि कल्पनाएँ शुक्तवर्ग की हैं[१]। जो मादक द्रव्य तैयार किए जाते है, उन्हें 'मद्य' कहते हैं[२]।

अरिष्ट—सूखी काष्ठौषधियों के क्वाथ अथवा कुछ आर्द्र द्रव्यों के स्वरस (अंगूर-स्वरसादि) में गुड़, चीनी या मधु मिलाकर मिट्टी के नये भाण्ड (घड़ा) में रखें एवं किण्व मिलाकर उसमें सुगन्धित एवं दीपन-पाचनगुण युक्त काष्ठौषधों के यवकुट चूर्ण मिलावें और शरावसम्पुट कर निर्वात स्थान (घर) में १५ से ३० दिनों तक स्थिर छोड़ दें। इसके बाद उसमें मद्य (Alcohol) उत्पन्न होने पर परीक्षा कर वस्त्र से छान लें एवं पुनः उसी भाण्ड को साफ कर सुखा लें और उसी भाण्ड में उस औषधि द्रव को रखकर छोड़ दें। १ माह बाद जब उसकी गाद (तलहट = Sediments) तली में बैठ जाय तो उसे निथारकर अलग कर ले और बोतलों में रख लें। इसे ही विद्वान् लोग 'अरिष्ट' कहते हैं[३]। संस्कारवश इसमें गुणाधान अधिक होता है[४]। जो नष्ट नहीं हो उसे अरिष्ट कहते हैं[५]। इसके अतिरिक्त मद्य होने के कारण दीपन, पाचन एवं उत्साहवर्धक कर्म भी इसमें आ जाते हैं।

आसव तथा अरिष्ट में भेद

आसव—एक मिट्टी के नये घड़े में अपक्व जल (हिम-स्वरस-जल) को रखकर गुड़-शर्करा-मधु एवं अन्य सुगन्धित काष्ठौषधियों के यवकुट चूर्ण मिलाकर यथोचित मात्रा में धातकीपुष्पादि एवं किण्वादि मिलाकर घड़े का मुख ढ़ककर १५-२५ दिनों तक समशीतोष्ण गृह में स्थिर से रख देते हैं। पुनः सन्धानोपरान्त छानकर जो मद्यमिश्रित तरल पदार्थ प्राप्त किया जाय, उसे 'आसव' कहते हैं।[६]

अरिष्ट—काष्ठौषधियों (पत्र,फूल-फल-त्वक्-काण्ड-मूलादि) को यवकुट चूर्णोपरान्त क्वाथ करें। (पकाकर) उक्त क्वाथ को छान लें और मिट्टी के नये घड़े में रखकर पूर्ववत् निर्दिष्ट मात्रा में गुड़-मधु-शर्करा मिलाकर पुनः उसमें कुछ सुगन्धित एवं कटुरस-युक्त काष्ठौषधों (त्रिकटु-चातुर्जातक-त्रिमद-धातकीपुष्पादि) के यवकुटचूर्ण को मिलाकर घड़े का मुख बन्दकर समशीतोष्ण स्थान पर १५ से २५ दिनों तक स्थिर से रखें। सन्धानोपरान्त कपड़ा से छानकर अन्य पात्र में रखें। इस मद्ययुक्त द्रव को 'अरिष्ट' कहते हैं।[७]

आसवारिष्टों की परीक्षा इस प्रकार करें—धातकीपुष्प को यवकुट कदापि नहीं करें, केवल उसे धूप में सुखा लें। यह नियम सभी आसवारिष्टों के लिए है।

१. सर्वप्रथम घड़े के बाह्य भाग पर कान लगाकर सुनें। सुन्-सुन् या बुदबुद शब्द होगा तो समझें कि सन्धान हो रहा है।

---

१. केवलं द्रवद्रव्यं वा भेषजात्रादिसंयुतम्।
चिरकालस्थितं वैद्यैः सन्धानं परिकीर्तितम्॥
तस्य भेदद्वयं प्रोक्तं मद्यं शुक्तं तथैव च। (द्र.गु.वि. यादवजी)
अपि च—
द्रवेषु चिरकालस्थं द्रव्यं यत्सन्धितं भवेत्।
आसवारिष्टभेदैस्तु प्रोच्यते भेषजोचितम्॥ (शा.सं.म. १०।१)

२. पेयं यन्मादकं लौकैस्तन्मद्यमभिधीयते॥ (योगमहोदधि)

३. क्वाथादौ भेषजद्रव्यं शर्करां मधु वा गुडम्।
सम्यगासवनिष्पत्त्यै किञ्चित् किण्वं तथैव च॥
सन्धाय स्थापयेज्जातरसं वस्त्रपरिस्रुतम्।
मांसीमरिचलोहैस्तु प्रलिप्ते धूपितेऽथवा॥
शुचौ भाण्डे मुखं रुध्वा स्थापितं भेषजोचितम्।
आसवारिष्टसंज्ञं तं कल्पमाहुश्चिकित्सकाः॥ (द्र.गु.वि., यादवजी)

४. अरिष्टो द्रव्यसंयोगसंस्कारादधिको गुणैः। (सुश्रुत सू. ४५।१९४)

५. न रिष्यते इति अरिष्टः। (द्र.गु.वि., यादवजी)

६. यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः॥ (शार्ङ्ग. सं.म. १०।२)

७. अरिष्टः क्वाथसिद्धः स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम्। (शार्ङ्ग सं. म. १०।२)
एषामासवानामासुतत्वादासवसंज्ञा॥ (च.सू. २५।४९)
आसुतत्वात् = सन्धानरूपत्वात्। (इति चक्रपाणिः)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२. घड़ा का मुखखोल कर उसके अन्दर तक जलती दियासलाई की तिल्ली ले जाय, यदि तिल्ली जलती रहे तो औषधि तैयार हो गई और बुझ जाने पर अभी तैयार नहीं है, ऐसा समझें।

३. गन्ध-वर्ण-मद्य एवं रसोत्पत्ति सम्यक्तया हो जाने पर औषध तैयार समझें।

अरिष्ट के लिए कुछ प्रमुख द्रव्य इस प्रकार है—

अशोक	अमृता	अश्वगन्ध	द्राक्षा
कुटज	विडङ्ग	खदिर	बब्बूल
दशमूल	रोहितक	जीरक	अभया
अर्जुन	दन्तीमूल	बला	ब्राह्मी
वासा	पर्पटादि	दन्ती	मुस्ता

आसव हेतु कुछ प्रमुख द्रव्य इस प्रकार हैं—

अरविन्द	अहिफेन	उशीर	कुमारी
कर्पूर	चन्दन	द्राक्षा	धत्तूर
पतङ्ग	पिप्पली	पुनर्नवा	कस्तूरी
लोध्र	लोह	सारिवा	मधु

महर्षि अग्निवेश ने ८४ आसवों की गणना की है।[१]

धान्यासव–	६	फलासव–	२६	मूलासव–	११
सारासव–	२०	पुष्पासव–	१०	काण्डासव–	४
पत्रासव–	२	त्वगासव–	४	शर्करासव–	१
	२८		४०		१६
				कुल	८४

आसव के गुण—मन व शरीर, अग्नि के बल को बढ़ाने वाला एवं अनिद्रा, शोक तथा अरुचि को नष्ट करने वाला और मन को प्रसन्न करने वाले ८४ आसवों का वर्णन किया गया हैं।[२]

आसवारिष्टों में जल, गुड़ एवं प्रक्षेपादि का मान

आचार्यों ने आसवारिष्ट के वर्णन-क्रम में कहा है कि जिन आसवारिष्टों में जल, गुड़ादि (गुड़-शर्करा-मधु) एवं प्रक्षेपों का स्पष्ट मान का निर्देश नहीं किया है, वहाँ निम्नलिखित परिभाषानुसार १ द्रोण जल (१३ लीटर) में गुड़ १ तुला (५ किलो) एवं गुड़ के आधा मधु २.५० किलो और प्रक्षेप द्रव्यों (सुगन्धित एवं कटुरसयुक्त) के यवकुट चूर्ण गुड़ का दशमांश आधा सेर अर्थात् ५०० ग्राम डालना चाहिए।[३]

अरिष्ट के गुण—अनेक द्रव्यों के संयोग से तथा संस्कार होने के कारण अरिष्ट आसवापेक्षया अधिक गुण वाला होता है तथा अनेक रोगों और अनेक दोषों को नाश करता है। अग्निदीपक, कफ-वातनाशक, पित्तरोधक, मृदु विरेचक, शूल, आध्मान, उदररोग, प्लीहवृद्धि, ज्वर, अजीर्ण और अर्श रोगों में हितकारी है।[४]

अरिष्ट शोष, अर्श, ग्रहणी, पाण्डु एवं ज्वर रोगों में हितकर है। भोजन में रुचि बढ़ाता है, कफज व्याधियों का नाश करता है, दीपन-पाचन है।[५]

अपक्वरस सीधु—ईख (इक्षु) के रस आदि मधुर रसों को आग पर पकाये बिना ही सन्धान करके जो मद्य तैयार किया जाय, उसे 'अपक्वरस सीधु' कहते हैं और उन्हीं मधुर रस वाले द्रव्यों को अग्नि पर पकाकर सन्धानोपरान्त जो मद्य तैयार किया जाय, उसे पक्वरस सीधु' कहते हैं।[६]

सीधु के गुण—पक्वरस सीधु रुचिकर, दीपन, हृद्य, शोष, शोथ, अर्श रोगों में हितकर है; मेद-कफविकारनाशक और शरीर के वर्ण को बढ़ाने वाला है।

अपक्वरस सीधु आहार को पचाने वाला, विबन्धनाशक, स्वर एवं वर्ण को शुद्ध करने वाला, लेखन तथा शोथ, उदररोग और अर्शनाशक है।[७]

---

१. तास्वेव द्रव्यसंयोगकरणतोऽपरिसंख्येयासु यथा पथ्यतमानामासवानां चतुरशीतिं निबोध। तद्यथा—सुरासौवीरतुषोदकमैरेयमेदकधान्याम्लाः षड् धान्यासवा भवन्ति, मृद्वीकाखर्जूरकाश्मर्यधन्वनराजादनतृणशून्य-परूषकाभयामलकमृगलिण्डिकाजाम्बवकपित्थकुबलबदरकर्कन्धुपीलुप्रिया-लपनसन्यग्रोधाश्वत्थप्लक्षकपीतनोदुम्बराजमोदशृङ्गाटकशङ्खिनीफलासवाः षड्विंशतिर्भवन्ति·····। (च.सू. २५।४९)

२. मनःशरीराग्निबलप्रदानामस्वप्नशोकारुचिनाशनानाम्।
संहर्षणानां प्रवरासवानामशीतिरुक्ता चतुरुत्तरैषा॥
(च.सू. २५।५०)

३. अनुक्तमानारिष्टेषु द्रवद्रोणे तुलां गुडम्।
क्षौद्रं क्षिपेद् गुडादर्धं प्रक्षेपं दशमांशिकम्॥ (शा.सं.म. १०।३)

४. अरिष्टो द्रव्यसंयोगसंस्कारादधिको गुणैः।
बहुदोषहरश्चैव दोषाणां शमनश्च सः॥१९४॥
दीपनः कफवातघ्नः रसः पित्ताविरोधनः।
शूलाध्मानोदरप्लीहज्वराजीर्णार्शसां हितः॥ (सु.सू. ४५।१९५)

५. शोषार्शोग्रहणीदोषपाण्डुरोगारुचिज्वरान्।
हन्त्यरिष्टः कफकृतान् रोगान् दीपनपाचनः॥ (च.सू. २७।१८२)
अपि च—
अरिष्टं लघुपाकेन सर्वतश्च गुणाधिकम्।
अरिष्टस्य गुणा ज्ञेया बीजद्रव्यगुणैः समाः॥ (भा.प्र. सन्धानवर्ग)

६. ज्ञेयः शीतरसः सीधुरपक्वमधुरद्रवैः।
सिद्धः पक्वरसः सीधुः सम्पक्वमधुरद्रवैः॥ (शा.सं.म. १०।४)

७. जरणीयो विबन्धघ्नः स्वरवर्णविशोधनः।
लेखनः शीतरसिको हितः शोफोदरार्शसाम्॥ (च.सू. २७।१८५)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. **सुरा**—यव-गेहूँ-चावल आदि अन्न को जल में पकाने के बाद सन्धानोपरान्त प्राप्त सन्धानित द्रव को स्रवण यन्त्र में रख कर चूल्हे पर चढ़ावें और मध्यमाग्नि पर पकाकर सुरा का स्रवण (Distilation) करें। इसे ही 'सुरा' कहते हैं।[१]

सुरा के गुण—कास-अर्श-ग्रहणीदोष-मूत्राघातनाशक है, वातनाशक है। दुग्ध एवं रक्तक्षय में हितकर है, शरीर पुष्टिकर एवं दीपन गुणों से युक्त रहता है। आचार्य सुश्रुत ने यव-गेहूँ-शाली चावल से निर्मित सुरा का पृथक्-पृथक् गुण बताया है।[२]

२. **प्रसन्ना**—सुरा के ऊपर के मण्ड (Puer Alcohol) भाग को 'प्रसन्ना' कहा जाता है।

३. **कादम्बरी**—यह प्रसन्ना की अपेक्षा कुछ गाढ़ा होता है।[३]

४. **जगल**—सुरापात्र में कादम्बरी से भी कुछ गाढ़ा नीचे के भाग को 'जगल' कहते हैं। इसमें अल्प मद्य रहता है।

५. **मेदक**—सुरापात्र में जगल से नीचे का भाग और कुछ गाढ़ा भाग को 'मेदक' कहा जाता है। इसमें मद्य की मात्रा अत्यल्प रहती है।[४]

६. **वक्कस या सुराबीज**—सुरापात्र के अवशिष्ट भाग, जिसमें थोड़ा भी मद्यांश नहीं रहता है, उसे आचार्यों ने 'वक्कस' या 'सुराबीज' अथवा 'किण्व' कहा है। इसे सुराकल्क भी कहते हैं।[५]

प्रसन्ना के गुण—यह मद्य, वमन, अरुचि, हृच्छूल, कुक्षिशूल, कफ, वात, अर्श, विबन्ध एवं आनाह नाशक है।[६]

जगल के गुण—यह मद्य ग्राही, उष्ण, पाचन एवं रूक्ष है। तृषा, कफ, शोथ, प्रवाहिका, आटोप, अर्श, वात एवं क्षयरोग नाशक तथा हृद्य है।[७]

वक्कस के गुण—वक्कस (सुराकल्क) निःसार हो जाने से विष्टम्भी है, वातप्रकोपक है, अग्निदीपक है, मूत्र-पुरीष को उत्पन्न एवं सरण कराने वाला है, विशद है, गुरु है तथा अल्पमदकृत् है।[८]

मैरेयक—एक काच के बड़े जार में १ भाग आसव और १ भाग सुरा दोनों को मिलाकर रखें। इन दोनों को मिलाने से इसमें पुनः सन्धान के पश्चात् जो द्रव प्राप्त होगा, उसे 'मैरेयक' कहते है।[९] इसे 'सुरासव' भी कहते हैं। 'मैरेयो नाम सुरासवयोः' इति डल्हणः (सु.सू. ६।१९०)।

मैरेयक के गुण—मैरेयक मद्य तीक्ष्ण, कषाय एवं मद कारक है। यह अर्श, कफ, गुल्म, कृमि, मेदवृद्धि और वात-नाशक है। मैरेयक मधुर एवं गुरु है।[१०] यह तीव्रमद है, स्वादु एवं तीक्ष्ण है।

वारुणी—पुनर्नवा एवं शालि चावल से जो मद्य बनाया जाय उसे वारुणी कहते हैं। ताड़ एवं खर्जूर वृक्ष से प्राप्त रस को आजकल नीरा नाम से जाना जाता है। सद्योहृत् रस को नीरा कहते हैं। इसमें मद्य नहीं होता है, यह मधुर है। इस रस को पृथक्-पृथक् मिट्टी के घड़े में दो-तीन दिनों तक रखने मात्र से उसमें स्वतः किण्वीकरण (Fermentation) उत्पन्न हो जाता है, जिसे 'वारुणी' कहा जाता है। आजकल प्रचलित भाषा में इसे 'ताड़ी' कहते हैं।[११]

वारुणी के गुण—वारुणी भी सुरा के जैसी ही गुण वाली होती है, साथ ही यह लघु है; पीनस, आध्मान एवं शूलनाशिनी है।[१२]

अपि च—
तद्वत् पक्वरसः सीधुर्बलवर्णकरः सरः।
शोफघ्नो दीपनो हृद्यो रुच्यः श्लेष्मार्शसां हितः॥
(सु.सू. ४५।१८४)

कर्षनः शीतरसिकः श्वयथूदरनाशनः।
वर्णकृज्जरणः स्वर्यो विबन्धघ्नोऽर्शसां हितः॥ (सु.सू. ४५।१८५)

१. परिपक्वान्नसन्धानसमुत्पन्नां सुरां जगुः। (शार्ङ्ग.सं.म. १०।५)

२. कासार्शोग्रहणीदोषमूत्राघातानिलापहा।
स्तन्यरक्तक्षयहिता सुरा बृंहणदीपनी॥ (सु.सू. ४५।१७५)

३. सुरामण्डः प्रसन्ना स्यात्ततः कादम्बरी घनः॥५॥

४. तदधो जगलो ज्ञेयो मेदको जगलाद्घनः।

५. वक्कसो हत्सारः स्यात्सुराबीजं च किण्वकम्॥ (शा.सं.म. १०।६)

६. छर्द्यरोचकहृत्कुक्षितोदशूलप्रमर्दनी।
प्रसन्ना कफवातार्शो विबन्धानाहनाशिनी॥ (सु.सू. ४५।१७७)

७. ग्राह्युष्णो जगलः पक्ता रूक्षस्तृट्कफशोफकृत्।
हृद्यः प्रवाहिकाऽऽटोपदुर्नामानिलशोषहृत्॥ (सु.सू. ४५।१८०)

८. वक्कसो हृत्सारत्वाद्विष्टम्भी वातकोपनः।
दीपनः सृष्टविण्मूत्रो विशदोऽल्पमदो गुरुः॥ (सु.सू. ४५।१८१)
अपि च—
शूलप्रवाहिकाटोपतृष्णाशोफार्शसां हितः॥११५॥
जगलः पाचनो ग्राही रूक्षस्तद्वच्च मेदकः।
वक्कसो हृत्सारत्वाद्विष्टम्भी दोषकोपनः॥ (अ.सं.सू. ६।११६)

९. आसवस्य सुरायाश्च द्वयोरेकत्र भाजने।
सन्धानं तद्विजानीयान्मैरेयमुभयाश्रयम्॥ (च.सू. २७।१८२)
(चक्रपाणिदत्त)

१०. तीक्ष्णः कषायो मदकृद्दुर्नामकफगुल्महृत्।
कृमिमेदोऽनिलहरो मैरेयो मधुरो गुरुः॥ (सु.सू. ४५।१८९)
अपि च—
सुरासवस्तीव्रमदो वातघ्नो वदनप्रियः।
छेदी मध्वासवस्तीक्ष्णो मैरेयो मधुरं गुरुः॥ (च.सू. २७।१८७)

११. यत्तालखर्जूररसैः सन्धिता सा हि वारुणी। (शार्ङ्गसं.म. १०।७)
अपि च—
पुनर्नवाशालिपिष्टिविहिता वारुणी स्मृता॥ (भा.प्र. सन्धा.)
संहितैस्तालखर्जूररसैर्या साऽपि वारुणी।

१२. सुरावद्वारुणी लघ्वी पीनसाध्मानशूलनुत्। (भा.प्र. सन्धानवर्गः)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कोहल—यव एवं गेहूँ के सत्तू से निर्मित 'कोहल' नामक मद्य को 'कौहलिका' भी कहते हैं।[१] इसे ही 'मधूलक' भी कहते हैं। (मधूलकः = गोधूमभेदः, तत्कृतं मद्यं मधूलकमिति चक्रपाणिदत्तः।) (च.सू. २७।१८२)

कोहल के गुण—यह त्रिदोषकृत् एवं भेदन गुणयुक्त है, अवृष्य है, मुखप्रिय है।[२]

मद्य के भेद एवं पर्याय—मद्य, सीधु, मैरेय, इरा, मदिरा, सुरा, कादम्बरी, वारुणी, हाला, बलवल्लभा, अरिष्ट, आसव, प्रसन्ना, जगल, कोहल, मेदक एवं सुरासव—ये सभी पर्याय मद्य के हैं।[३]

मद्य की निरुक्ति—पीने वाला ऐसा द्रव पदार्थ, जिसके पीने से नशा (मादकता) उत्पन्न हो उसे मद्य कहते हैं।[४] अन्य और भी आचार्यों ने मद्य की परिभाषा इस प्रकार कही है—जिस द्रव्य के सेवन करने से बुद्धि लुप्त हो जाय और शरीर एवं मन पर मादकता छा जाय तथा तमोगुण का प्राबल्य दिखाई दे, उसे 'मद्य' कहते है। यथा—मद्य एवं सुरा आदि।

मद्य के गुण—सभी प्रकार के मद्य उष्ण है, पित्तवर्धक एवं वातनाशक है, मलभेदक है, शीघ्र पचने वाला है, रूक्ष एवं अत्यन्त कफघ्न है, अम्लरस युक्त है, दीपन है, रुचिकर है, पाचन है, आशुकारी है, तीक्ष्ण है, सूक्ष्म है, विशद है, व्यवायि है और विकाशि गुण से युक्त है।[५]

सेवन योग्य मद्य—बहुत दिनों का रखा हुआ, रस-गन्ध-वर्ण से युक्त, दीपन, कफ-वातनाशक, रुचिकर, मन को प्रसन्न करने वाला, सुगन्ध से युक्त मद्य को सेवन करना चाहिए।[६]

विधिपूर्वक सेवित मद्य के गुण—आनन्ददायक, तृप्तिकर, भय, शोक, श्रम नाशक है। प्रगल्भता, वीर्य, प्रतिभा, तुष्टि, शरीर को पुष्ट करता है एवं बलप्रद है। सात्त्विक मनुष्य द्वारा विधिपूर्वक सेवित मद्य अमृततुल्य है।[७]

मद्य के दोष—गाढ़ा हो, विदाह उत्पन्न करता हो, दुर्गन्धयुक्त हो, विकृत रस एवं स्वाद वाला, कृमियों से युक्त (कीड़े पड़े हों), गुरु हो, अहृद्य (अप्रिय) हो, नया हो, तीक्ष्ण हो, गर्म हो, खराब पात्र में रखा हुआ हो, अल्पौषधियों से निर्मित हो, सन्धानपात्र से निकालकर दूसरे पात्र में रात्रिपर्यन्त रखा हो (अथवा वासी), जल युक्त हो (अत्यन्त पतला), पिच्छिल (दधिस्पर्शवत्) और पात्र में कुछ Lubricant हुआ मद्य (तलछटयुक्त) ऐसा मद्य त्याग देना चाहिए अर्थात् इसे नहीं पीना चाहिए। ये क्रमशः कफ, पित्त एवं वात दोषों को बढ़ाता है।[८]

मद्य शरीर में कैसे कार्य करता है—रस और वीर्य के कारण अनेक प्रकार के मद्य अपने सूक्ष्म, उष्ण, तीक्ष्ण और विकाशि गुणों के कारण जाठराग्नि से मिलकर हृदय में शीघ्र ही पहुँच जाता है और धमनियों को आश्रित कर शरीर के ऊर्ध्व भाग (मस्तिष्क की ओर) में पहुँचकर इन्द्रिय और मन को विक्षुभित कर मनुष्य को मदयुक्त कर देता है।[९]

अपि च—
तद् गुणा वारुणी हृद्या लघुस्तीक्ष्णा निहन्ति च।
शूलकासवमिश्वासविबन्धाध्मानपीनसान्॥ (अ.हृ.सू. ५।६८)

१. यवसक्तकृतः कोहलः। 'कौहलिका' इति लोके।
(डल्हणः सु.सू. ४५।१८०)
(मधूलकः = गोधूमभेदः तत्कृतं मद्यं मधूलकम् अन्ये तु मेदकमाहुः इति चक्रपाणिना उक्तम्।)

२. त्रिदोषो भेद्यवृष्यश्च कोहलो वदनप्रियः। (सु.सू. ४५।१८०)
अपि च—
सुरा समण्डा रूक्षोष्णा यवानां वातपित्तला।
गुर्वी जीर्यति विष्टभ्य श्लेष्मला तु मधूलिका॥ (च.सू. २७।१९०)

३. मद्यन्तु सीधुमैरेयमिरा च मदिरा सुरा।
कादम्बरी वारुणी च हालाऽपि बलवल्लभा॥ (भा.प्र. सन्धानवर्गः)

४. पेय यन्मादकं लोकैस्तन्मद्यमभिधीयते।
यथाऽरिष्टं सुरा सीधुरासवाद्यमनेकधा॥ (भा.प्र. सन्धानवर्ग)
अपि च—
बुद्धिं लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारि तदुच्यते।
तमोगुणप्रधानञ्च यथा मद्यं सुरादिकम्॥ (शार्ङ्ग.सं.प्र. ४।२२)

५. मद्यं सर्वं भवेदुष्णं पित्तकृद्वातनाशनम्।
भेदनं शीघ्रपाकं च रूक्षं कफहरं परम्॥
अम्लं च दीपनं रुच्यं पाचनं चाशुकारि च।
तीक्ष्णं सूक्ष्मं च विशदं व्यवायि च विकाशि च॥ (भा.प्र. सन्धानवर्ग)

अपि च—
हिक्काश्वासप्रतिश्यायकासवर्चोग्रहारुचौ।
वम्यानाहविबन्धेषु वातघ्नी मदिरा हिता॥ (च.सू. २७।१८०)
अपि च—
सर्वं पित्तकरं मद्यमम्लं रोचनदीपनम्।
भेदनं कफवातघ्नं हृद्यं बस्तिविशोधनम्॥१७०॥
पाके लघु विदाह्युष्णं तीक्ष्णमिन्द्रियबोधनम्।
विकाशि सृष्टविण्मूत्रं शृणु तस्य विशेषणम्॥ (सु.सू. ४५।१७१)

६. चिरस्थितं जातरसं दीपनं कफवातजित्।
रुच्यं प्रसन्नं सुरभि मद्यं सेव्यं मदावहम्॥ (सु.सू. ४५।२०३)

७. हर्षणं प्रीणनं मद्यं भयशोकश्रमापहम्।
प्रागल्भ्यवीर्यप्रतिभातुष्टिपुष्टिबलप्रदम्॥१९४॥
सात्त्विकैर्विधिवद्युक्त्या पीतं स्यादमृतं यथा। (च.सू. २७।१९५)

८. सान्द्रं विदाहि दुर्गन्धं विरसं कृमिलं गुरु॥१९८॥
अहृद्यं तरुणं तीक्ष्णमुष्णं दुर्भाजनस्थितम्।
अल्पौषधं पर्युषितमत्यच्छं पिच्छिलं च यत्॥१९९॥
तद्वर्ज्यं सर्वथा मद्यं किञ्चिच्छेषं च तद्भवेत्। (सु.सू. ४५)

९. तस्यानेकप्रकारस्य मद्यस्य रसवीर्यतः॥२०४॥
सौक्ष्म्यादौष्ण्याच्च तैक्ष्ण्याच्च विकासित्वाच्च वह्निना।
समेत्य हृदयं प्राप्यं धमनीरूर्ध्वमागतम्॥
विक्षोभ्येन्द्रियचेतांसि वीर्यं मदयतेऽचिरात्॥ (सु.सू. ४५।२०५)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मद्य की तीन अवस्था शरीर में दिखाई है—

१. हर्षणावस्था (Stage of excitement)

२. प्रलापावस्था (Stage of delirium)

३. निःसंज्ञावस्था (Stage of marcosis)

मद्यपान करने से तमोगुण की विशेष उत्पत्ति होती है। तमोगुणप्रधान युक्त मद्यपी अपवित्र कार्य करता है, सोता है, मात्सर्य (दूसरे की उन्नति को नहीं सहना), लोभ, असत्यभाषण और अगम्या स्त्रियों से सम्भोग की इच्छा करना आदि दुर्गुण उत्पन्न हो जाते हैं।[1]

मद्यपान करने से चित्त भ्रमित हो जाता है, भ्रान्त चित्त से मनुष्य पापाचरण करता है और पाप करके मनुष्य दुर्गति को प्राप्त करता है। अतः मद्यपान कभी भी नहीं करना चाहिए।[2]

मद्यपान से तीव्र साहसोत्पत्ति होती है। ये साहस पाँच प्रकार के होते हैं—१. मनुष्यमारण, २. चोरी, ३. परदाराभिगमन, ४. कठोरता और ५. झूठ बोलना।[3]

४१९. लोहासव (शार्ङ्ग.म.१०/३४-३८)

लौहचूर्णं त्रिकटुकं त्रिफलञ्च यमानिका।
विडङ्गं मुस्तकं चित्रं चतुःसंख्यपलं पृथक् ॥१२३५॥
चूर्णीकृत्य ततः क्षौद्रं चतुःषष्टिपलं क्षिपेत्।
दद्याद् गुडतुलां तत्र जलद्रोणद्वयं तथा ॥१२३६॥
धातकीकुसुमानान्तु प्रक्षिपेत् पलविंशतिम्।
घृतभाण्डे विनिक्षिप्य निदिध्यान्मासमात्रकम् ॥१२३७॥
लौहासवममुं मर्त्यः पिबेद्वह्निकरं परम्।
पाण्डुश्वयथुगुल्मानि जठराण्यर्शसां रुजम् ॥१२३८॥
कुष्ठं प्लीहामयं कण्डूं कासं श्वासं भगन्दरम्।
अरोचकञ्च ग्रहणीं हृद्रोगञ्च विनाशयेत् ॥१२३८॥

१. लौहभस्म, २. शुण्ठी, ३. पीपर, ४. मरिच, ५. हरीतकी, ६. आमला, ७. बहेड़ा, ८. अजवायन, ९. वायविडङ्ग, १०. नागरमोथा, ११. चित्रकमूल, १२. मधु, १३. गुड़, १४. जल और १५. धातकीपुष्प—एक मिट्टी के बड़े भाण्ड या घड़े को पुवाल अथवा भूँसी आदि गद्देदार पदार्थ पर निर्वात घर में रखें तथा उसमें २ द्रोण (२५ लीटर) साफ एवं मीठा जल भरकर गुड़ ४.७०० ग्राम उस जल में घोल दें। ततः ३ कि.ग्रा. मधु भी उक्त गुड़ घुले घोल में मिला दें। पुनः शुण्ठी से चित्रकमूल तक के १० द्रव्यों का अलग-अलग यवकुटचूर्ण और लौहभस्म प्रत्येक १८५ ग्राम उसी घोल में मिला दें। इसके बाद धातकीपुष्प ९२० ग्रा. धूप में अच्छी तरह सुखाकर बिना कूटे ही उक्त घड़े में मिला दें और घड़े का मुख शराव से ढ़क कर सन्धिबन्धन करें। उस घड़े पर निर्माण-तिथि अवश्य लिख दें। १५ दिन से १ माह के अन्दर जब उक्त घड़े के अन्दर मद्योत्पत्ति हो जाय तथा गन्ध, वर्ण एवं रसोत्पत्ति होने पर परीक्षोपरान्त घड़े का मुख खोलकर एक बार पुनः घड़े की तली में जमें हुए गुड़ादि को हाथ से मिला दें और औषधों के मोटे टुकड़े आदि अपद्रव्य निकालकर वस्त्र से छान लें तथा भाण्ड को जल से धोकर साफ कर लें। भाण्ड को अच्छी तरह सुखाकर छना हुआ द्रव (लोहासव) पुनः उसी घड़े में रखकर पूर्ववत् मुख बन्द कर १०-१५ दिनों तक छोड़ दें। ऐसा करने से आसवारिष्ट का गाद (Sediment) वाला भाग घड़े या भाण्ड की तली में बैठ जाता है, जिसे १५ दिनों बाद सावधानीपूर्वक निथार लें। पुनः बोतलों में भरकर कार्क, लेबल आदि लगाकर सावधानी से रख दें। इसे १ वर्ष के बाद प्रयोग करें।

परीक्षा—घड़ा खोलने से पूर्व उस घर में घुसते ही मद्य की महक लगेगी। घड़ा का मुख खोलकर दियासलाई की तिल्ली जलाकर घड़े के अन्दर ले जाय, यदि तिल्ली जलती रहेगी तो सन्धान पूर्ण है और बुझ जाने पर सन्धान अपूर्ण है ऐसा समझें। इसके बाद मद्य की महक, आसवारिष्ट का वर्ण, आसवारिष्ट का रसादि भी पूर्ण हो जायेगा। इनकी (भाव) उपस्थिति होने पर तैयार समझें। अभाव में तैयार नहीं है—ऐसा समझें। आसवारिष्ट के घड़े पर बाहर से ही कान लगाने पर सन्-सन् जैसी आवाज भी सुनी जा सकती है।

गुण-धर्म—यह लोहासव अग्निवर्धक है, पाण्डु, शोथ, गुल्म, उदररोग, अर्श, ज्वर, जीर्णज्वर, प्लीहारोग, कास, श्वास, भगन्दर, अरुचि, संग्रहणी और हृदय रोगों का नाश करता है।

समय—भोजनोत्तर—दोपहर या रात्रि में जल के साथ लें, खाली पेट नहीं लें।

विमर्श—इस पाठ में आचार्य शार्ङ्गधर मिश्र ने गुड़ की मात्रा १ तुला (४.७०० ग्राम) ही डालने का निर्देश दिया है। किन्तु गुड़ की कमी होने पर आसवारिष्ट खट्टे तथा पतले हो जाते हैं अतः मीठा आसव तैयार करने के लिए गुड़ २ तुला (९.४०० ग्राम) तो डालना ही चाहिए। अतः आपसे विनम्र आग्रह है कि इस पाठ में गुड़ २ तुला डालें।

मात्रा–१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**–जल मिलाकर। **गन्ध**–तीव्र मद्यगन्धी। **वर्ण**–कत्थई। **स्वाद**–तीक्ष्ण मद्ययुक्त। **उपयोग**–अग्निवर्धक, पाण्डु, कामला जीर्णज्वर, यकृत्प्लीहा में।

---

१. अशौचनिद्रामात्सर्यागम्यागमनलोलताः।
असत्यभाषणञ्चापि कुर्याद्धि तामसे मदः॥ (सु.सू. ४५।२०९)

२. चित्ते भ्रान्तिर्जायते मद्यपानाद्
भ्रान्ते चित्ते पापचर्चामुपैति।
पापं कृत्वा दुर्गतिं यान्ति मूढाः
तस्मान्मद्यं नैव पेयं न पेयम्॥ (जिनधर्मविवेक)

३. मनुष्यमारणं स्तेयं परदाराभिमर्षणम्।
पारुष्यमनृतञ्चैव साहसं पञ्चधा स्मृतम्॥ (डल्हण)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

४२०. अमृतारिष्ट

अमृतायाः पलशतं दशमूलीशतं तथा।
चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा कुर्यात्पादाविशेषितम् ॥१२३९॥
शीते तस्मिन् रसे पूते गुडस्य त्रितुलाः क्षिपेत्।
अजाजीषोडशपलं पर्पटस्य पलद्वयम् ॥१२४०॥
सप्तपर्णं त्रिकटुकं मुस्तकं नागकेशरम्।
कटुकातिविषे चेन्द्रयवञ्च पलसम्मितम् ॥१२४१॥
एकीकृत्य क्षिपेद्भाण्डे निदध्यान्मासमात्रकम्।
अमृतारिष्ट इत्येष प्रोक्तो ज्वरकुलान्तकृत् ॥१२४२॥

१. गुडूचीकाण्ड ४.७०० कि.ग्रा., २. दशमूलयवकुट ४.७०० कि., ३. जल ५० लीटर, ४. गुड़ १४.१०० कि.ग्रा., ५. जीरा ७५० ग्राम, ६. पित्तपापड़ा ९० ग्राम, ७. सप्तपर्ण ४६ ग्राम, ८. शुण्ठी ४६ ग्राम, ९. पीपर ४६ ग्राम, १०. मरिच ४६ ग्राम, ११. नागरमोथा ४६ ग्राम, १२. नागकेशर ४६ ग्राम, १३. कुटकी ४६ ग्राम, १४. अतीस ४६ ग्राम, १५. इन्द्रयव ४६ ग्राम तथा १६. धातकीपुष्प ५०० ग्राम—सर्वप्रथम गुडूचीकाण्ड के छोटे-छोटे टुकड़े काटकर उसे कूट लें तथा दशमूल को भी यवकुट करें। इन दोनों को कलईदार ताँबे के बड़े पात्र में रखकर ५० लीटर जल के साथ रात्रि पर्यन्त भीगने दें। सुबह मध्याग्नि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान कर मिट्टी के बड़े घड़े या भाण्ड में उस क्वाथ को रखें। ततः १५ किलो पुराना गुड़ अच्छी तरह घोल दें। ततः धातकीपुष्प छोड़ शेष द्रव्यों के पृथक्-पृथक् यवकुट कर उक्त गुड़ घोल में मिलावें और बाद में धूप में अच्छी तरह सुखाया हुआ धावा के फूल मिलाकर शराव से सन्धिबन्धन करें। पूर्ववत् (लोहासव जैसा) भाण्ड की तली में पुआल-भूँसी आदि गद्देदार वस्तु रखें। भाण्ड पर खड़िया से अमृतारिष्ट नाम तथा तिथि लिख दें। पूर्ववत् अमृतारिष्ट सुपक्व (सन्धानपूर्ण) होने की परीक्षा कर उसे छान लें और पूर्ववत् उसी क्रम से बोतलों में भरकर लेबल, गन्थ-अधिकार एवं बैच नं. लिखकर कार्क लगाकर बोतल को सुरक्षित रख लें तथा १ वर्ष बाद इसका प्रयोग करें।

मात्रा–१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**–बराबर जल मिलाकर। **गन्ध**–तीव्र मद्यगन्धी। **वर्ण**–कत्थई (कॉफीवर्ण)। **स्वाद**–तिक्त मद्यगन्धी। **उपयोग**–जीर्णज्वर, विषमज्वर एवं यकृत्प्लीह रोग में।

विमर्श—१२.५०० लि. जल में गुड़ दो तुला डालना अधिक युक्तिसंगत है।

४२१. मृतसञ्जीवनी सुरा

गुडं द्रोणमितं ग्राह्यं वर्षादूर्ध्वं पुरातनम्।
बावरीत्वचमादाय दापयेत् पलविंशतिम् ॥१२४३॥
दाडिमं वृषमोचञ्च वराक्रान्तारुणा तथा।
अश्वगन्धा देवदारुबिल्वश्योनाकपाटलाः ॥१२४४॥
शालपर्णी पृश्निपर्णी बृहतीद्वयगोक्षुरम्।
बदरीन्द्रवारुणी चित्रं स्वयंगुप्ता पुनर्नवा ॥१२४५॥
एषां दशपलान् भागान् कुट्टयित्वा उदूखले।
सुगम्भीरे च मृद्भाण्डे तोयमष्टगुणं क्षिपेत् ॥१२४६॥
गुडसङ्घोलनं कृत्वा एतैः सम्पूरयेद् बुधः।
मुखे शरावकं दत्त्वा रक्षयेद्दिनविंशतिम् ॥१२४७॥
षोडशाद्दिवसादूर्ध्वं द्रव्याणीमानि दापयेत्।
पूगप्रस्थद्वयं चात्र कुट्टयित्वा विनिक्षिपेत् ॥१२४८॥
धुस्तूरं देवपुष्पञ्च पद्मकोशीरचन्दनम्।
शतपुष्पा यमानी च मरिचं जीरकद्वयम् ॥१२४९॥
शटी मांसी त्वगेला च सजातीफलमुस्तकम्।
ग्रन्थिपर्णी तथा शुण्ठी मेथी मेषी च चन्दनम् ॥१२५०॥
एषां द्विपलिकान् भागान् कुट्टयित्वा विनिक्षिपेत्।
मृन्मये मोचिकायन्त्रे मयूराख्येऽपि यन्त्रके ॥१२५१॥
यथाविधिप्रकारेण चालनं दापयेद् बुधः।
बुद्धिमान् सौजलं कृत्वा उद्धरेद्विधिवत्सुराम् ॥१२५२॥
एतन्मद्यं पिबेन्नित्यं यथाधातुवयःक्रमम्।
देहदार्ढ्यकरं पुष्टिबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥१२५३॥
सन्निपाते ज्वरे घोरे विसूच्याञ्च मुहुर्मुहुः।
शीते देहे प्रयोज्येयं मृतसञ्जीवनी सुरा ॥१२५४॥

१. एक वर्ष से अधिक पुराना गुड़ १३ किलो, २. बबूल की छाल १ किलो., ३. अनारफलत्वक् ५०० ग्राम, ४. वासापञ्चाङ्ग ५०० ग्राम, ५. सेमल की छाल ५०० ग्राम, ६. लज्जालु ५०० ग्राम, ७. अतीस ५०० ग्राम, ८. असगन्ध ५०० ग्राम, ९. देवदारु ५०० ग्राम, १०. बिल्वत्वक् ५०० ग्राम, ११. सोनापाठा छाल ५०० ग्राम, १२. पाढलछाल ५०० ग्राम, १३. शालपर्णी ५०० ग्राम, १४. पृश्निपर्णी ५०० ग्राम, १५. बृहती ५०० ग्राम, १६. कण्टकारी ५०० ग्राम, १७. गोखरु ५०० ग्राम, १८. बदरीत्वक् ५०० ग्राम, १९. इन्द्रायणमूल ५०० ग्राम, २०. चित्रकमूल ५०० ग्राम, २१. केवाँचबीज ५०० ग्राम, २२. पुनर्नवामूल ५०० ग्राम तथा २३. जल ८४ लीटर—उपर्युक्त गुड़ छोड़ कर २१ द्रव्यों को पृथक्- पृथक् कूट कर यवकुट करें। तदनन्तर मिट्टी के बड़े १ या २ भाण्ड में जल रखकर उसमें गुड़ घोल दें। दो भाण्ड में रखना अधिक उचित है। अधिक दबाव से मिट्टी का भाण्ड फूटने का भय रहता है। अतः दोनों भाण्ड में ४२-४२ लीटर जल देकर ६.५००-६.५०० किलो गुड़ घोलें तथा प्रत्येक घड़े में उपर्युक्त सभी २१ द्रव्य २५०-२५० ग्राम तथा बबूल की छाल ५००-५०० ग्राम का यवकुट चूर्ण मिलाकर शराव से मुख ढ़क

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कर सन्धिबन्धन करें और बीस दिन तक निर्वात गृह में स्थापित करें। भाण्ड की तली में पुआल अथवा भूँसी आदि मुलायम वस्तु अवश्य रखें। १६वें दिन भाण्ड का मुख खोलकर अच्छी तरह से चलाकर उसमें पुनः निम्नलिखित औषधों के यवकुट चूर्ण मिलाकर शराव से मुख बन्द कर सन्धिबन्धन करें—

१. सुपारीफल १.५०० ग्राम, २. धत्तूरमूल १०० ग्राम, ३. लौंग १०० ग्राम, ४. पद्मकाष्ठ १०० ग्राम, ५. खस १०० ग्राम, ६. लालचन्दन १०० ग्राम, ७. सौंफ १०० ग्राम, ८. अजवायन १०० ग्राम, ९. मरिच १०० ग्राम, १०. जीरा १०० ग्राम, ११. स्याहजीरा १०० ग्राम, १२. कचूर १०० ग्राम, १३. जटामांसी १०० ग्राम, १४. दालचीनी १०० ग्राम, १५. छोटी इलायची १०० ग्राम, १६. जायफल १०० ग्राम, १७. नागरमोथा १०० ग्राम, १८. गठिवन १०० ग्राम, १९. शुण्ठी १०० ग्राम, २०. मेथी १०० ग्राम, २१. मेढासिंगी १०० ग्राम और २२. श्वेतचन्दन १०० ग्राम।

इन २२ द्रव्यों को पृथक्-पृथक् यवकुट कर उपर्युक्त दोनों भाण्डों में आधा-आधा डालकर अच्छी तरह हाथ से मिला दें। पुनः इस सम्पूर्ण सन्धानित पदार्थ को स्रवण यन्त्र (मोचिका या मयूर यन्त्र) में रखकर सुरा (अर्क) निकालें अर्थात् डिस्टिलेशन (Distillation) कर बोतलों में तत्काल बन्द करें। अथवा जिस भाण्ड में सन्धान किया है उसी भाण्ड में पुरानी पद्धति से (भाण्ड के मुख पर सछिद्र हाँडी रखकर दोनों का सन्धिबन्धन कर हाँडी की तली में बड़ा कटोरा रखें और उसके मुख पर एक बड़ी हाँड़ी सीधे मुख कर रखें। हाँडी में शीतल जल भरें। दोनों हाँडी (१ का मुख २ की तली) का सन्धिबन्धन करें। यह सुरा शरीर को दृढ़ करती है, शरीर को पुष्ट करती है, बल, वर्ण तथा अग्नि को बढ़ाती है। घोर सन्निपातज्वर में, विसूचिका में एवं सर्वाङ्गशीत में बार-बार पिलायी जाती है। शारीरिक धातुओं एवं उम्र को देखकर इस मद्य को नित्य पिलाया जाता है।

मात्रा–१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**–जल मिलाकर। **गन्ध**–तीव्र मद्यगन्धी। **वर्ण**–जलीय वर्ण। **स्वाद**–तीक्ष्ण। **उपयोग**–बल्य, हृद्य, पाचकाग्निवर्धक, सन्निपातज्वरहर।

विमर्श—इन प्रक्षेप या क्वाथ द्रव्यों को पृथक्-पृथक् यवकुट करने की बात जो कही गई है उसमें यह हेतु है कि कोई द्रव्य मृदु है, कोई कठिन। सभी द्रव्यों को साथ मिलाकर कूटने से कोई यवकुट होगा तो कोई चूर्ण हो जायेगा। ज्यादा चूर्णित द्रव्य मिलाने से आसवारिष्ट में अधिक गाद बैठेगी। अतः पृथक् कूटना श्रेष्ठ है।

४२२. मृगमदासव ( )

मृतसञ्जीवनी ग्राह्या पञ्चाशत्पलसम्मिता।
तदर्द्धं मधु संग्राह्यं तोयं मधुसमं तथा ॥१२५५॥
कस्तूरीकुडवं तत्र मरिचं देवपुष्पकम्।
जातीफलं पिप्पलीत्वग्भागान् द्विपलिकान् क्षिपेत् ॥१२५६॥
मृद्भाण्डे च विनिक्षिप्य निरुध्य तन्मुखं दृढम्।
भाण्डे संस्थाप्य रुद्ध्वा च निदध्यान्मासमात्रकम् ॥१२५७॥
विसूचिकायां हिक्कायां त्रिदोषप्रभवे ज्वरे।
वीक्ष्य कोष्ठं बलञ्चैव भिषङ्मात्रां प्रयोजयेत् ॥१२५८॥

१. मृतसञ्जीवनी सुरा २½ लीटर, २. मधु १.२५० कि.ग्रा., ३. कस्तूरी १८५ ग्राम, ४. मरिच चूर्ण १०० ग्राम, ५. लौंग चूर्ण १०० ग्राम, ६. जायफल १०० ग्राम, ७. पीपर चूर्ण १०० ग्राम और ८. दालचीनी १०० ग्राम—ग्रन्थकार ने इसका निर्माण मिट्टी के पात्र में करने का निर्देश दिया है, किन्तु मेरी सम्मति से इसे काचपात्र के बड़े पात्र या शीशे के जार (Zar) में निर्माण करना चाहिए। शीशे की बड़ी जार में शुद्ध अल्कोहल मृतसंजीवनी सुरा रखकर उसमें कस्तूरी अच्छी प्रकार घोल दें। ततः मरिचादि पाँचों द्रव्यों का यवकुट चूर्ण घोलकर मुख अच्छी तरह बन्दकर उस पर कपड़मिट्टी करें और १ माह तक आलमारी में बन्द कर छोड़ दें। बाद में छानकर बोतलों में बन्द कर सुरक्षित रख लें।

इसका विसूचिका, हिक्का, सन्निपातज्वर में कोष्ठ, बल आदि को देखकर वैद्य अपनी इच्छानुसार मात्रा में प्रयोग करे।

मात्रा–४ से १६ बूँद तक। **अनुपान**–जल के साथ। **गन्ध**–तीक्ष्ण मद्यगन्धी, कस्तूरी गन्धी। **वर्ण**–जलीय वर्ण किञ्चित् मैला द्रव। **स्वाद**–तीक्ष्ण मद्य स्वाद। **उपयोग**–अतिसार, सन्निपातज्वर तथा विसूचिका में।

स्नेह-प्रकरण

ज्वर में घृतपान (चक्रदत्त)

ज्वराः कषायैर्वमनैर्लङ्घनैर्लघुभोजनैः।
रूक्षस्य ये न शाम्यन्ति सर्पिस्तेषां भिषग्जितम् ॥१२५९॥

जिन रूक्ष व्यक्तिओं का ज्वर कषायपान, वमन, उपवास एवं लघु भोजन से शान्त नहीं होता है, उन्हें घृतपान कराना चाहिए। या उपर्युक्त कषायपानादि कार्य से शरीर रूक्ष होने के कारण ज्वर नहीं शान्त होता उन्हें घृतपान कराना चाहिए।

घृतपान का निषेध (चरक)

निर्दशाहमपि ज्ञात्वा कफोत्तरमलङ्घितम्।
न सर्पिः पाययेत् प्राज्ञः शमनैस्तमुपाचरेत् ॥१२६०॥

महर्षि चरक ने कहा है कि ज्वर के रोगी को दस दिन बीत जाने के बाद भी यदि कफ की प्रधानता हो अर्थात् कफ मन्द नहीं हुआ हो और लंघन से लाभ प्राप्त न हुए हों तो ऐसी स्थिति में बुद्धिमान् चिकित्सक उसे घृतपान नहीं करावे।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सामावस्था में मांसरस का प्रयोग (चरक)

यावल्लघुत्वमशनं दद्यान्मांसरसेन तु।
बलं ह्यलं निग्रहाय दोषाणां बलकृच्च तत् ॥१२६१॥

जब तक शरीर में लघुता न आ जाय तथा दोषों का पूर्णतया परिपाक न हो जाय, तब तक ज्वरी को मांसरस के द्वारा ही बलादि की रक्षा करनी चाहिए। मांसरस प्रवृद्ध वातादि दोषों को शान्त करता है और बलकारक भी है।

ज्वर में उपयुक्त मांस

मासार्थमेणलावादीन् युक्त्या दद्याद्विचक्षणः।
कुक्कुटांश्च मयूरांश्च तित्तिरिक्रौञ्चवर्त्तकान् ॥१२६२॥
गुरूष्णत्वान्न शंसन्ति ज्वरे केचिच्चिकित्सकाः।
लङ्घनेनानिलबलं ज्वरे यद्यधिकं भवेत् ॥
भिषङ्मात्राविकल्पज्ञो दद्यात्तानपि कालवित् ॥१२६३॥

ज्वर में आहारार्थ पथ्यरूप में हरिण तथा लावपक्षी के मांस-रस की युक्तिपूर्वक व्यवस्था करनी चाहिए। बुद्धिमान् चिकित्सक मुर्गा, मोर, तित्तिर, क्रौञ्च और बटेर आदि पक्षियों के मांस गुरु एवं उष्णवीर्य होने के कारण ज्वरितों को नहीं देते हैं। यदि लंघन से वातदोष प्रबल हो जाय तो ऐसे ज्वरितों में वैद्य मात्रा, कल्पना तथा काल का विवेचन कर इनका भी प्रयोग कर सकता है।

सामान्यतया स्नेहसाधन-विधि

आदौ सम्मूर्च्छयेत् स्नेहं क्वाथं सञ्चारयेत्ततः।
दुग्धं कल्कं क्रमाद्दद्याद् गन्धद्रव्यं ततः परम् ॥१२६४॥
एवं रीत्या मन्दमन्दानलेनैव पचेद्भिषक्।
निर्मलं निर्जलं दृष्ट्वा स्नेहसिद्धिं तु लक्षयेत् ॥१२६५॥

घृत एवं तैल पाक करने के क्रम में सर्वप्रथम घृत एवं तैल का मूर्च्छन करना चाहिए। ततः जिस रोग में उक्त स्नेह का प्रयोग करना हो तो उन-उन रोगशामक औषधि द्रव्यों का क्वाथ तैयार करें, साथ ही उन द्रव्यों तथा गन्ध द्रव्यों को पीसकर कल्क तैयार करें। साथ में ईप्सित फलप्राप्त्यर्थ गोदूध, बकरी दूध या भैंस दूध का प्रयोग भी करना चाहिए। इसके बाद कुछ सद्योद्धृत द्रव्यों के स्वरसादि भी संग्रह कर उपयोग में लिया जा सकता है। इस प्रकार सब साधन की व्यवस्था कर मन्दाग्नि से युक्त चूल्हे पर लोहकटाह में पाकविधान-विज्ञ वैद्य स्नेह का क्रमशः पाक करे। सर्वप्रथम मूर्च्छित तैल को गर्म कर क्वाथ देकर पाक करें, ततः दुग्ध, स्वरसादि का निक्षेपण करें। दुग्धादि के साथ कल्क एवं गन्ध द्रव्य मिलाकर पाक करें। अन्त में दूध का सम्यक् पाकार्थ स्नेह के बराबर जल देकर पाक करना चाहिए। जब तैल में जलीयांश न रहे, निर्मल हो जाय तो परीक्षोपरान्त स्नेह सिद्ध समझकर चूल्हे से नीचे उतार कर गरम-गरम ही स्नेह को वस्त्रपूत कर लेना चाहिए।

घृतमूर्च्छन विधि

पथ्याधात्रीबिभीतैर्जलधररजनीमातुलुङ्गद्रवैश्च
सर्वैरेतैः सुपिष्टैः पलकपरिमितैर्मन्दमन्दानलेन।
आज्यप्रस्थं विफेनं परिचपलगतं मूर्च्छयेद्वैद्यराज-
स्तस्मादामोपदोषं हरति च सहसा वार्यवत्सौख्यदायि ॥

१. गोघृत ७५० ग्राम, २. आमला ५० ग्राम, ३. हरीतकी ५० ग्राम, ४. बहेड़ा ५० ग्राम, ५. नागरमोथा ५० ग्राम, ६. हल्दी ५० ग्राम तथा ७. बिजौरा नीम्बूरस ५० मि.ली.—सर्वप्रथम मन्दाग्नि युक्त चूल्हे पर बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में घृत रखकर गरम करें। जब घृत फेन रहित हो जाय तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तरङ्गरहित होने दें अर्थात् कुछ ठण्डा होने दें। ततः उपर्युक्त पाँच द्रव्यों का यवकुट कर थोड़ा जल से आर्द्रकर उक्त गरम घी में डाल दें और चलाते रहें। पुनः निम्बुस्वरस दें। अथवा उपर्युक्त पाँचों द्रव्यों के यवकुट को निम्बुस्वरस से ही आर्द्रकर घृत में डालें। पुनः घृत के बराबर साफ एवं मीठा जल मिलाकर उक्त घृत को पुनः अग्नि पर पकावें तथा जलीयांश नष्ट होने पर छान कर काचपात्र में रख लें। यह मूर्च्छित घृत आमदोष को त्याग देता है तथा वीर्यवान् एवं लाभदायक हो जाता है।

तिलतैलमूर्च्छन-विधि

तैलं कृत्वा कटाहे दृढतरविमले मन्दमन्दानलैस्तत्
तैलं निष्फेनभावं गतमिह च यदा शैत्यभावं समेत्य।
मञ्जिष्ठारात्रिलोध्रैर्जलधरनलिकैः सामलैः साक्षपथ्यैः
सूचीपुष्पाङ्घ्रिनीरैरुपहितकथितैर्गन्धयोगं जहाति ॥
तैलस्येन्दुकलांशिकैकविकसा भागोऽपि मूर्च्छाविधौ
ये चान्ये त्रिफलापयोदरजनीह्रीबेरलोध्रान्विताः।
सूचीपुष्पवटावरोहनलिकास्तस्याश्च पादांशिका
दुर्गन्धं विनिहन्ति तैलमरुणं सौरभ्यमाकुर्वते ॥१२६८॥

१. तिलतैल ४ लीटर, २. मंजीठ २५० ग्राम, ३. हल्दी ६० ग्राम, ४. लोध ६० ग्राम, ५. नागरमोथा ६० ग्राम, ६. नालुका ६० ग्राम, ७. आँवला ६० ग्राम, ८. बहेड़ा ६० ग्राम, ९. हरीतकी ६० ग्राम, १०. केवड़ामूलत्वक् ६० ग्राम, ११. वटाङ्कुर ६० ग्राम और १२. जल १६ लीटर—सर्वप्रथम लोहे की बडी कड़ाही में तिलतैल रखकर मन्दाग्नि युक्त चूल्हे पर चढ़ाकर तैल को गरम करें। जब तैल फेन रहित हो जाय तब उक्त कड़ाही को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को थोड़ा ठण्डा होने दें। उसके बाद मंजीठ को यवकुट कर उसमें १०-१५ मि.ग्रा. जल मिलाकर किञ्चिदार्द्र कर उक्त तैल में डालें और दर्वी से चलावें। पुनः हल्दी से वटाङ्कुर पर्यन्त सभी द्रव्यों को यवकुट कर कुछ जल के छींटे से आर्द्रकर उक्त तैल में धीरे-धीरे डालकर चलावें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जब फेन शान्त हो जाय तो तैल के बराबर जल देकर अग्नि पर पुनः पाक करें। जल नष्ट होने पर छान लें। ऐसा करने से तैल का आमदोष दूर हो जाता है; तैल लाल, सुन्दर वर्ण, सुगन्ध से युक्त हो जाता है। इसके बाद इस मूर्च्छित तैल से नारायणादि तैल का निर्माण करें।

विमर्श—जिस प्रकार मूर्च्छित रोगी के मुख से फेनोद्गम होता है उसी तरह से इस घृत-तैलादि से भी गरम करने पर फेनोद्गम होता है, जो दोषों के निर्गम का प्रतीक है।

कटुतैल (सरसो तैल) मूर्च्छन-विधि

वयःस्थारजनीमुस्तबिल्वदाडिमकेशरैः ।
कृष्णाजीरकह्रीबेरनलिकैः सबिभीतकैः ।
एतैः समांशैः प्रस्थे च कर्षमात्रं प्रयोजयेत् ॥१२६९॥
अरुणाद् द्विपलं तत्र तोयञ्चाढकसम्मितम् ।
कटुतैलं पचेत्तेन चामदोषहरं परम् ॥१२७०॥

१. सरसोतैल ७५० मि.ली., २. हरीतकी १२ ग्राम, ३. हल्दी १२ ग्राम, ४. नागरमोथा १२ ग्राम, ५. बिल्वमूलत्वक् १२ ग्राम, ६. दाड़िम १२ ग्रा. ७. नागकेशर १२ ग्राम, ८. कृष्णजीरा १२ ग्राम, ९. सुगन्धबाला १२ ग्राम, १०. नालुका १२ ग्राम, ११. बहेड़ा १२ ग्राम, १२. मंजीठ १०० ग्राम तथा १३. जल ३ लीटर—सर्वप्रथम लोहे की कड़ाही में कटुतैल गर्म करें। जब पूर्ववत् तैल निष्फेन हो जाय और उसकी तीव्र गन्ध आँखों में लगने लगे तो तैल को नीचे उतारकर कुछ देर ठण्ड़ा होने दें। ततः मंजीठ को यवकुट एवं जलार्द्र कर थोड़ा-थोड़ा तैल में डालें, इससे तैल में फेनोद्गम होगा, इसे चलाते रहें। ततः अन्य सभी हरीतकी-बहेड़ा आदि द्रव्यों को भी यवकुट तथा जलार्द्र कर थोड़ा-थोड़ा डालकर चलावें। तदनन्तर तैल से ४ गुना जल मिलाकर आग पर पुनः पकावें। जब किञ्चिन्मात्रा भी जल शेष न रहे तो कड़ाही उतारकर छान लें तथा उसी से सैन्धवादि तैलादि का निर्माण करें। इस तरह से कटुतैल का मूर्च्छन करने से तैल का आमदोष नष्ट हो जाता है और गन्धवर्ण की सुन्दर उत्पत्ति हो जाती है।

एरण्ड तैलमूर्च्छन-विधि

विकसा मुस्तकं धान्यं त्रिफला वैजयन्तिका ।
ह्रीबेरवनखर्जूरवटशुङ्गा निशायुगम् ॥१२७१॥
नलिका भेषजं देयं केतकी च समं समम् ।
प्रस्थे देयं शाणमितं मूर्च्छने दधिकाञ्जिकम् ॥१२७२॥

१. एरण्डतैल ०७५० मि.ली., २. मंजीठ ३ ग्राम, ३. नागरमोथा ३ ग्राम, ४. धनियाँ ३ ग्राम, ५. आमला ३ ग्राम, ६. हरीतकी ३ ग्राम, ७. बहेड़ा ३ ग्राम, ८. अरणीमूल ३ ग्राम, ९. सुगन्धबाला ३ ग्राम, १०. जंगली खजूर ३ ग्राम, ११. वटाङ्कुर ३ ग्राम, १२. हल्दी ३ ग्राम, १३. दारुहल्दी ३ ग्राम, १४. नालुका ३ ग्राम, १५. शुण्ठी ३ ग्राम, १६. केवड़ामूल ३ ग्राम, १७. दही ३ ग्राम और १८. काञ्जी ३ मि.ली.—सर्वप्रथम लोहे की कड़ाही में एरण्डतैल रखकर मन्दाग्नि से गरम करें। जब तैल में फेनोद्गम होकर शान्त हो जाय तो कड़ाही को चूल्हे से नीचे उतारकर कुछ देर ठण्डा होने के बाद मंजीठ से केवड़ामूल तक के सभी द्रव्यों को यवकुट करें और उसमें दही एवं काञ्जी मिलाकर थोड़ा जलार्द्र कर गरम एरण्डतैल में धीरे-धीरे डालकर चलाते रहें तथा पुनः ४ गुना साफ मीठा जल मिलाकर अग्नि पर फिर से पकावें। जल निःशेष रहने पर उतारकर छान लें।

स्नेह-साधन में क्वाथादि की मात्रा

क्वाथ्याच्चतुर्गुणं वारि पादस्थं स्याच्चतुर्गुणम् ।
स्नेहात्स्नेहसमं क्षीरं कल्कस्तु स्नेहपादिकः ॥
चतुर्गुणं त्वष्टगुणं द्रवद्वैगुण्यतो भवेत् ॥१२७३॥

क्वाथ—जिन द्रव्यों से क्वाथ कर स्नेह साधन किये जायें, उसे हम क्वाथ द्रव्य कहते हैं। उन द्रव्यों को यवकुट कर मिट्टी के पात्र में चौगुना जल देकर रात्रिपर्यन्त भीगने दें, तदुपरान्त मध्यमाग्नि पर पकाकर चौथाई शेष रहे तो छान लें और उसी क्वाथ से स्नेह साधन करें। अर्थात् यदि घृत एवं तैल क्रमशः १ किलो एवं १ लीटर हो तो द्रव्यों के क्वाथ (द्रव) ४ लीटर लें। द्रवद्वैगुण्य आयुर्वेद में प्रचलित हो गया है। तदनुसार द्रव्य से ८ गुना जल लेकर चौथाई शेष करें, इसे द्रव्यद्वैगुण्य कहते हैं। किन्तु क्वाथ द्रव्य स्नेह से ४ गुना अधिक लेना चाहिए।

दूध—स्नेह के बराबर ही दूध लेने का विधान है।

कल्क—स्नेह का चतुर्थांश कल्क द्रव्यों को लेना चाहिए।

यदि द्रव्य सूखे हैं तो उन्हें कूटकर छननी से छान लें, तत्पश्चात् जल की सहायता से सिल पर पीसकर कल्क (लुगदी) बना लें। इसे क्वाथ के साथ ही स्नेह में डालकर पाक करें। यदि द्रव्य ताजा सद्योद्धृत है तो इन्हें धोकर साफ करें और सिल पर महीन पीसकर कल्क बना लें।

विमर्श—ये सारे नियम वहीं लागू होंगे जहाँ पर स्नेह, क्वाथ, कल्क, दुग्धादि के मान नहीं कहे गये हों। जहाँ मान कहे गये हैं, वहाँ पर यह परिभाषा नहीं लागू होगी। आयुर्वेद में क्वाथ्य से ४ गुना, ८ गुना और १६ गुना जल ग्रहण करने के तीनों प्रमाण मिलते हैं और तीनों ग्राह्य भी हैं। मृदु द्रव्य के लिए ४ गुना, मध्य द्रव्य के लिए ८ गुना और कठिन द्रव्य के लिए १६ गुना जल ग्रहण करना चाहिए। जैसा कि कहा गया है—

'मृदौ चतुर्गुणं देयं कठिनेऽष्टगुणं जलम् ।
कठिनात्कठिनं यच्च तत्र षोडशिकं जलम्' ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जहाँ पर मृदु, मध्य एवं कठिन तीनों तरह के द्रव्य मिले हों वहाँ पर आठ गुना जल देकर क्वाथ करना श्रेष्ठ है—

'मृद्वादौ द्रव्यसङ्घाते मानानुक्तौ चिकित्सकाः।
मध्यमस्थोभयभागित्वादिच्छन्त्यष्टगुणं जलम्' ॥

क्वाथ में जल का प्रमाण (शार्ङ्ग.)

चतुर्गुणं मृदुद्रव्ये कठिनेऽष्टगुणं जलम्।
तथा च मध्यमे द्रव्ये दद्यादष्टगुणं पयः।
अत्यन्तकठिने द्रव्ये नीरं षोडशकं मतम् ॥१२७४॥

मृदु द्रव्य में द्रव्य से चतुर्गुण जल देना चाहिए। कठिन द्रव्य में अष्टगुण जल तथा सामान्य द्रव्य में द्रव्य से अष्टगुण जल देना चाहिए और कठिनतम द्रव्य में षोडश गुण (१६ गुना) जल देकर क्वाथ सिद्ध करना चाहिए।

क्वाथ-निर्माण के अन्य मत (चक्रदत्त)

कर्षादितः पलं यावत् क्षिपेत् षोडशकं जलम्।
तदूर्ध्वं कुडवं यावद् भवेदष्टगुणं पयः।
प्रस्थादितः क्षिपेन्नीरं खारीं यावच्चतुर्गुणम् ॥१२७५॥

१ कर्ष (१२ ग्राम) से १ पल (५० ग्राम) तक के द्रव्य का यदि क्वाथ करना हो तो १६ गुना जल देना चाहिए तथा इस मात्रा से अधिक १ कुडव (१८५ ग्राम) तक द्रव्य का क्वाथ करते समय ८ गुना जल देना चाहिए और १ प्रस्थ (७५० ग्राम) से खारी की मात्रा तक क्वाथ करते समय जल ४ गुना देना चाहिए।

विमर्श—उपर्युक्त श्लोक बड़ा ही महत्त्व का है। भले ही इसे मतान्तर माना गया है। उदाहरणार्थ १२ ग्राम द्रव्य का क्वाथ करते समय ४ गुना जल (५० मि.ली.) में पकाया जाय तो क्षण मात्र में उक्त जल सूख जायेगा और द्रव्य का सार क्वाथ में नहीं आ पायेगा। अतः सम्यक् पाकार्थ १६ गुना जल लेना ही उचित होगा। इसी तरह ८ गुना जल की भी बात समझें।

दुग्धादि से स्नेहसिद्धि में कल्क-जलादि की मात्रा
(शार्ङ्ग.म.९/७)

दुग्धे दध्नि रसे तक्रे कल्को देयोऽष्टमांशकः।
कल्कस्य सम्यक्पाकार्थं तोयमत्र चतुर्गुणम् ॥१२७६॥

यदि दूध, दही, मांसरस, तक्रादि में से किसी १ से स्नेह साधन करना हो तो वहाँ पर कल्क स्नेह का अष्टमांश लेना चाहिए, साथ ही कल्क का सम्यक् पाकार्थ स्नेह से ४ गुना जल देकर पाक करें।

विमर्श—जिस स्नेहपाक क्रम में जल, स्नेह एवं औषधादि का प्रमाण नहीं लिखा है वहाँ कल्क से ४ गुना स्नेह और स्नेह से ४ गुना जल देकर स्नेहपाक करना चाहिए। यह सामान्य नियम है। साथ ही जहाँ पर क्वाथ, स्वरस, दुग्धादि का कोई उल्लेख न हो वहाँ पर केवल ४ गुना जल देकर ही स्नेहपाक करना चाहिए। जैसा कि चक्रपाणि ने कहा है—

जलस्नेहौषधानाञ्च प्रमाणं यत्र नेरितम्।
तत्र स्यादौषधात्स्नेहः स्नेहात्तोयं चतुर्गुणम् ॥१२७७॥
(चक्रदत्त)

जिस स्नेहपाक में जल, स्नेह एवं औषधियों (कल्क) का प्रमाण (तौल) नहीं लिखा गया हो, ऐसे स्नेहपाक में कल्क से ४ गुना स्नेह और स्नेह से ४ गुना जल डालकर स्नेहपाक करना चाहिए तथा जिस स्नेहपाक में कोई द्रव का उल्लेख नहीं हो वहाँ पर स्नेह से ४ गुना जल देकर निश्चित रूप से पाक करना चाहिए।

स्वरसक्षीरमाङ्गल्यैः पाको यत्रेरितः क्वचित्।
जलं चतुर्गुणं तत्र वीर्याधानार्थमावपेत् ॥१२७८॥
न मुञ्चति रसं द्रव्यं क्षीरादिभिरुपस्कृतम्।
सम्यक् पाको न जायेत तस्मात्तोयं चतुर्गुणम् ॥१२७९॥

जिस स्नेहपाक में स्वरस, दूध एवं दही से ही केवल पाक बताया गया हो, साथ ही वहाँ पर जल देने का कोई उल्लेख न हो वहाँ पर कल्कादि औषधि-वीर्यादि सही रूप में उक्त स्नेह में आने के लिए स्नेह से चौगुना जल देना अत्यावश्यक है। क्षीरादि से आवृत होने के कारण कल्क द्रव्य अपना रस-गुण-वीर्यादि सम्यग्रूप में नहीं त्यागता है और जल के बिना स्नेह का सम्यक् पाक भी नहीं होता है। अतः स्नेहपाक में सर्वत्र स्नेह का चतुर्गुण जल देकर स्नेहपाक करना चाहिए। जैसा कि कहा भी है—

यत्राधिकरणे नोक्तिर्गणे स्यात् स्नेहसंविधौ।
तत्रैव कल्कनिर्यूहाविष्येते स्नेहवेदिना।
एतद्वाक्यबलेनैव कल्कसाध्यपरं घृतम् ॥१२८०॥

जहाँ पर औषधों के नाम का उल्लेख न कर केवल स्नेहपाक का उल्लेख हो, वहाँ पर उस गण की कही हुई औषधियों के कल्क तथा क्वाथ से स्नेह सिद्ध करना चाहिए और जिस स्नेहपाक में औषधियाँ कही गई हों वहाँ केवल उन औषधियों के कल्क से स्नेह सिद्ध करना चाहिए। इसी नियम के अनुसार पिप्पल्यादि घृत में सिर्फ कल्क देकर ही घृतपाक करते हैं। वहाँ पिप्पली आदि का क्वाथ नहीं देते हैं और सम्यक्पाक के लिए चौगुना जल देकर घृत सिद्ध करते हैं।

स्नेहसाधन में द्रव का विचार (चक्रदत्त)

पञ्चप्रभृति यत्र स्युर्द्रवाणि स्नेहसंविधौ।
तत्र स्नेहसमान्याहुरर्वाक् च स्याच्चतुर्गुणम् ॥१२८१॥

जिस स्नेहपाक में पाँच या पाँच से अधिक द्रव पदार्थ—स्वरस, क्वाथ, दूध, तक्र, काञ्जी, गोमूत्र आदि—लेने का उल्लेख हो वहाँ पर प्रत्येक द्रव स्नेह के बराबर लेना चाहिए।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विमर्श—किन्तु "अर्वाक् च स्याच्चतुर्गुणम्" का अर्थ विवादास्पद है अतः ४ द्रव तक प्रत्येक द्रव स्नेह से चौगुना लेना चाहिए और स्नेहपाक करना चाहिए। जैसा कि आचार्य शार्ङ्गधर ने भी कहा है—

'द्रवाणि यत्र स्नेहेषु पञ्चादीनि भवन्ति हि।
तत्र स्नेहसमान्याहुर्यथापूर्वं चतुर्गुणम्'॥
(शार्ङ्गधर. म. ९।८)

केवल द्रव्य से स्नेहपाक की परिभाषा (शार्ङ्गधर)

द्रव्येण केवलेनैव स्नेहपाको भवेद् यदि।
तत्राम्बुपिष्टः कल्कः स्याज्जलं चात्र चतुर्गुणम्॥१२८२॥

जिस स्नेहपाक में केवल द्रव्य के नाम का उल्लेख है, क्वाथ-कल्क का कोई उल्लेख नहीं है, जहाँ कोई द्रव न हो वहाँ पर उस द्रव्य को कूट-पीसकर केवल कल्क बनाकर स्नेह में डालें और सम्यक्पाक के लिए ४ गुना जल देकर स्नेहपाक करना चाहिए।

केवल क्वाथ से स्नेहसाधन की परिभाषा (शार्ङ्गधर)

क्वाथेन केवलेनैव पाको यत्रेरितः क्वचित्।
क्वाथ्यद्रव्यस्य कल्कोऽपि तत्र स्नेहे प्रयुज्यते॥१२८३॥

जहाँ पर मात्र क्वाथ देकर ही स्नेहपाक बताया गया हो वहाँ पर भी स्नेह का चतुर्थांश उक्त क्वाथ्य द्रव्य का कल्क बनाकर उस स्नेह में (डालकर) पाक करना चाहिए।

कल्कहीन स्नेहसाधन (शार्ङ्गधर)

कल्कहीनस्तु यः स्नेहः स साध्यः केवले द्रवे॥११८४॥

जहाँ पर कल्क से रहित स्नेहपाक का उल्लेख हो वहाँ पर कल्क के बिना सिर्फ क्वाथ देकर ही स्नेहपाक करना चाहिए।

पुष्पकल्क से स्नेहपाक-विधि (शार्ङ्गधर)

पुष्पकल्कस्तु यः स्नेहस्तत्र तोयं चतुर्गुणम्।
स्नेहे स्नेहाष्टमांशश्च पुष्पकल्कः प्रयुज्यते॥१२८५॥

पुष्पकल्कों से जिस स्नेह का पाक अभीष्ट हो वहाँ पर स्नेह का अष्टमांश पुष्पकल्क लेना चाहिए और स्नेह का चौगुना जल देकर स्नेहपाक कर लेना चाहिए।

स्नेहपाक में गन्धद्रव्यों का प्रयोग

समङ्गानखकङ्कोलनलिकाजातिकोषकम्।
त्वक्कुन्दुरुककर्पूरतुरुष्कश्रीनिवासकम्॥
स्पृक्काकुङ्कुमकस्तूरी दद्यादत्रावतारिते॥१२८६॥

१. मंजीठ, २. नखी, ३. शीतलचीनी, ४. नालुकात्वक्, ५. जावित्री, ६. दालचीनी, ७. कुन्दुरुक (विरौजा), ८. कर्पूर, ९. तुरुष्क (शिलारस), १०. श्वेतचन्दन, ११. स्पृक्का, १२. केशर और १३. कस्तूरी—इन सब द्रव्यों को स्नेह से १६वाँ भाग स्नेहपाक होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर थोड़ा गरम रहने पर देना चाहिए। आधुनिक समय में तैलादि पाक के बाद बोतल में तैलादि को भरते समय सुगन्धित (सेण्ट आदि) द्रव्य मिलाते हैं।

स्नेहपाक में समय की मर्यादा (चक्रदत्त)

घृततैलगुडादींस्तु नैकाहादवतारयेत्।
व्युषितास्तु प्रकुर्वन्ति विशेषेण गुणान् यतः॥१३८७॥

घृत, तैल एवं गुड़ आदि का पाक एक ही दिन में नहीं करना चाहिए। एक दिन स्नेहों को क्वाथ से पकाकर रात्रिपर्यन्त यों ही छोड़ दें। दूसरे दिन कल्क घृतादिक में देकर पाक करें (स्नेह से ४ गुना जल देकर पकावें)। ऐसा करने से स्नेहादि में विशेष गुणाधान होते हैं।

विमर्श—अन्य आचार्यों ने भी कहा है—

क्षीरे द्विरात्रं स्वरसे त्रिरात्रं तक्रारनालादिषु पञ्चरात्रम्।
स्नेहं पचेद्वैद्यवरः प्रयत्नादित्याहुरेके भिषजः प्रवीणाः॥
द्वादशाहन्तु मूलानां वल्लीनां क्रममेव च।
एकाहं व्रीहिमांसानां पाकं कुर्याद्विचक्षणः॥

कुछ आचार्यों का मत है कि (१) दूध से स्नेहपाक दो रात्रि तक करें। (२) स्वरस से स्नेहपाक करना हो तो ३ रात्रि तक पकावें। (३) तक्र, काञ्जी, दही आदि से स्नेहपाक करना हो तो पाँच रात तक धीरे-धीरे पाक करे। कुछ का विचार है कि धान और मांसरस से स्नेहपाक करना हो तो १ ही दिन में पाककर लेना चाहिए। इसी क्रम में द्रव्यों के मूल एवं लताओं के कल्क-क्वाथ से पाक करना हो तो १२ दिनों तक स्नेहपाक करें।

स्नेह की परिभाषा (चरक)

जलस्नेहौषधानां तु प्रमाणं यत्र नेरितम्।
तत्र स्यादौषधात् स्नेहः स्नेहस्तोयं चतुर्गुणम्॥१२८८॥

जिस स्नेहपाक में जल, क्वाथ, स्वरसादि द्रवों और कल्कों का कोई मान-निर्देश न हो, वहाँ पर स्नेह से ४ गुना स्वरस, क्वाथ, दूध तथा जल आदि द्रव लेना चाहिए। इसी प्रकार तैलादि स्नेह का चतुर्थांश कल्क लेना चाहिए। महर्षि सुश्रुतादि का भी यही विचार है। यथा—

'स्नेहभेषजतोयानां प्रमाणं यत्र नेरितम्।
तत्रायं विधिरास्थेयो निर्दिष्टे तद्वदेव तु॥
अनुक्ते द्रवकार्ये तु सर्वत्र सलिलं मतम्।
कल्कक्वाथावनिर्देशे गणात्तस्मात् प्रयोजयेत्'॥
(सु.चि. ३१।१०)

और भी—

'स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रवः, स्नेहचतुर्थांशो भेषजकल्कः। तदैकध्यं संसृज्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्कः'॥ (सु.चि. ३१।८)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

और भी—

'स्नेहकुडवे भेषजपलं पिष्टं कल्कं चतुर्गुणं द्रवमावाप्य विपचेदित्येष पाककल्पः' । (सु.चि. ३१।८)

अन्यच्च—

'स्नेहपाके त्वमानोक्तौ चतुर्गुणविवर्धितम् ।
कल्कस्नेहद्रवं योज्यमधीते शौनकः पुनः ।।२०।।
स्नेहे सिध्यति शुद्धाम्बुनिष्क्वाथस्वरसैः क्रमात् ।
कल्कस्य योजयेदंशं चतुर्थं षष्ठमष्टमम्' ।।

(अ.सं.क. ८।२१)

स्नेहपाक-परीक्षा (चक्रदत्त)

स्नेहकल्को यदाऽङ्गुल्या वर्तितो वर्तिवद्भवेत् ।
वह्नौ क्षिप्ते च नो शब्दस्तदा सिद्धिं विनिर्दिशेत् ।।१२८९।।
शब्दे व्युपरमे जाते फेनस्योपरमे तथा ।
गन्धवर्णरसादीनां सम्पत्तौ सिद्धिमादिशेत् ।।१२९०।।
घृतस्यैवं विपक्वस्य जानीयात्कुशलो भिषक् ।
फेनोऽतिमात्रं तैलस्य शेषं घृतवदादिशेत् ।।१२९१।।

स्नेहपाक सम्पन्न हो गया या नहीं, इसे निम्न लक्षणों से पाक हो गया है—ऐसा समझें। कड़ाही में परिपक्व स्नेह के तलभाग से कल्क निकाल कर देखें।

१. जब दो-तीन अँगुलियों (मध्यम, तर्जनी और अँगुष्ठ) से तलस्थ कल्क निकालकर बत्ती बनाने पर बत्ती बन जाय।

२. उक्त कल्क को आग पर डालने से चट्-चट् शब्द नहीं होना चाहिए। तैल घृत सहित भी डाला जा सकता है। शब्द जल की विद्यमानता का द्योतक है।

३. घृतपाक में फेन की शान्ति एवं तैलपाक में फेन का उत्पन्न होना पाक लक्षण है। सामान्यतः फेन की शान्ति ही स्नेहपाक की परीक्षा है।

४. स्नेह में सम्यक् गन्ध (स्नेह में डाले गये औषधों की गन्ध) वर्ण, मँजीठ, हरिद्रा आदि के वर्ण या सामूहिक द्रव्यों के वर्ण की उत्पत्ति होना तथा रसादि की उत्पत्ति होना सुपाक के लक्षण हैं। महर्षि सुश्रुत ने भी इसी प्रकार की परीक्षा का वर्णन सर्वप्रथम ही किया है जिसमें फेन की शान्ति एवं उत्पत्ति क्रमशः घृत एवं तैल के लिए स्पष्टतः किया है। यथा—

'शब्दस्योपरमे प्राप्ते फेनस्योपशमे तथा ।
गन्धवर्णरसादीनां सम्पत्तौ सिद्धिमादिशेत् ।।१२।।
घृतस्यैवं विपक्वस्य जानीयात् कुशलो भिषक् ।
फेनोऽतिमात्रं तैलस्य शेषं घृतवदादिशेत्' ।।

(सु.चि. ३१।१३)

स्नेहपाक के भेद एवं लक्षण

स्नेहपाकस्त्रिधा प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा ।
ईषत् सरसकल्कस्तु स्नेहपाको मृदुर्भवेत् ।।१२९२।।
मध्यपाकस्य सिद्धिश्च कल्के नीरसकोमले ।
ईषत्कठिनकल्कश्च स्नेहपाको भवेत्खरः ।
तदूर्ध्वं दग्धपाकः स्याद्दाहकृन्निष्प्रयोजनः ।।१२९३।।

स्नेहपाक ३ प्रकार का होता है—१. मृदुपाक, २. मध्यपाक तथा ३. खरपाक।

मृदुपाक—स्नेह सिद्ध होने पर जब कल्क में थोड़ा-सा द्रवांश रहे तो उसे मृदुपाक कहते हैं।

मध्यपाक—स्नेह सिद्ध होने पर जब कल्क में निरसता हो जाय अर्थात् अल्पमात्रा में भी द्रवांश नहीं रहे तो उसे मध्यपाक कहते हैं।

खरपाक—जब कल्क थोड़ा कठिन हो जाय अर्थात् जब कल्क की बत्ती बनाने पर चूर्ण जैसा बिखर जाय तो उसे खरपाक कहते हैं। इससे भी अधिक देर तक स्नेहपाक किया जाय तो उसे दग्धपाक कहते हैं। यह स्नेह दाहकारक तथा निष्प्रयोजन (निष्फल) हो जाता है।

विमर्श—महर्षि चरक ने भी स्नेहपाक तीन ही तरह का बताया है। जब स्नेहपाक में कल्क मधु से थोड़ा गाढ़ा निर्यास जैसा हो जाय तो मृदुपाक समझें। जब कल्क हलवा जैसा गाढ़ा हो जाय और दर्वी में न लगे तो मध्यपाक समझना चाहिए। जब कल्क की बत्ती बनाने पर टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाय तो खरपाक समझना चाहिए। जैसा कि महर्षि चरक ने कहा है—

'स्नेहपाकस्त्रिधा ज्ञेयो मृदुर्मध्यः खरस्तथा ।
तुल्ये कल्केन निर्यासे भेषजानां मृदुः स्मृतः ।।
संयाव इव निर्यासे मध्यो दर्वीं विमुञ्चति ।
शीर्यमाणे तु निर्यासे वर्तमाने खरस्तथा' ।।

(च.क. १२।१०२-३)

आमपाकी स्नेहों के गुण (शार्ङ्गधर)

आमपाकश्च निर्वीर्यो वह्निमान्द्यकरो गुरुः ।।१२९४।।

आमपाक अर्थात् कच्चा या अपूर्ण पाक वाला स्नेह गुरु एवं अग्निमांद्यकारक होता है। उक्त स्नेह में औषधों के गुण नहीं आते हैं। अतः उसे पीने से अग्निमांद्यकृत् एवं गुरु होता है। अतः आमपाक वाला स्नेह त्याज्य है।

मृद्वादि स्नेहपाक का उपयोग (चरक)

नस्यार्थं स्यान्मृदुः पाको मध्यमः सर्वकर्मसु ।
अभ्यङ्गार्थं खरः प्रोक्तो युञ्ज्यादेवं यथोचितम् ।।१२९५।।

मृदुपाक से युक्त स्नेह नस्य के लिए उपयोगी है। मध्यपाक से युक्त स्नेह पीने तथा बस्ति के लिए एवं अन्य सभी कर्मों के लिए उपयोगी है। यही श्रेष्ठ पाक है। खरपाक से युक्त स्नेह मात्र अभ्यङ्ग के लिए उपयोगी है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विमर्श—महर्षि चरक ने पहले ही स्पष्ट रूप से तीनों स्नेहपाकों का उपयोग कहा है। यथा—

'खरोऽभ्यङ्गे स्मृतः पाको मृदुर्नस्तः क्रियासु च ।
मध्यपाकं तु पानार्थे बस्तौ च विनियोजयेत्' ।।
(च.क. १२।१०४)

जलादि से स्नेहसाधन में कल्क की मात्रा (शार्ङ्ग.)

अम्बुक्वाथरसैर्यत्र पृथक् स्नेहस्य साधनम् ।
कल्कस्यांशं तत्र दद्याच्चतुर्थं षष्ठमष्टमम् ॥१२९६॥

जल, क्वाथ या स्वरस में से किसी एक से जब स्नेहपाक करना हो तो क्रमशः कल्क चतुर्थांश, षष्ठांश एवं अष्टमांश लेना चाहिए। अर्थात् जितना जल दिया उसका चौथाई कल्क दें, जितना क्वाथ दिया उसका छठा अंश कल्क दें एवं जितना स्वरस दिया है उसका आठवाँ भाग कल्क देना चाहिए। क्योंकि ये (जल, क्वाथ, स्वरस) उत्तरोत्तर गुरु होते हैं। स्वरस एवं क्वाथ का अंश भी सूखकर कल्क की मात्रा बढ़ाता ही है। अतः उक्त मात्रा में ही कल्क देना उचित है।

४२३. पिप्पल्यादिघृत (चरक)

पिप्पल्यश्चन्दनं मुस्तमुशीरं कटुरोहिणी ।
कलिङ्गकास्तामलकी शारिवाऽतिविषा स्थिरा ॥१२९७॥
द्राक्षामलकनिम्बानि त्रायमाणा निदिग्धिका ।
सिद्धमेतद् घृतं सद्यो ज्वरं जीर्णमपोहति ॥१२९८॥
क्षयं श्वासं च हिक्कां च शिरःशूलमरोचकम् ।
अङ्गाभितापमग्निञ्च विषमं सन्नियच्छति ॥
पिप्पल्याद्यमिदं क्वापि तन्त्रे क्षीरेण पच्यते ॥१२९९॥

१. पीपर, २. श्वेतचन्दन, ३. नागरमोथा, ४. खस, ५. कुटकी, ६. इन्द्रयव, ७. भूमिआमला, ८. अनन्तमूल, ९. अतीस, १०. शालपर्णी, ११. द्राक्षा, १२. आमला, १३. निम्बपत्र, १४. त्रायमाणमूल, १५. कण्टकारी और १६. गोघृत—क्रम सं. १ (पीपर) से लेकर १५ (कण्टकारी) तक के सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें और गाय का घी ६०० ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम स्टेनलेश स्टील के पात्र में ६०० ग्राम घी का मूर्च्छन करें। तदनन्तर उपर्युक्त पीपर से कण्टकारी तक सभी १५ द्रव्यों को कूटकर सूक्ष्म चूर्ण करें। पुनः जल के साथ सिल पर कल्क जैसा पीसें और उपर्युक्त मूर्च्छित घृत में डालकर दर्वी से मिला दें तथा उक्त घृत में २.४०० मि. लीटर जल मिलाकर मृदु अग्नि पर धीरे-धीरे पाक करें। घृत सिद्ध की परीक्षोपरान्त घृत को चूल्हे से नीचे उतारकर गरम-गरम ही छान लें और किसी काच के जार में सुरक्षित रख लें।

यह सिद्ध पिप्पल्यादि घृत तुरन्त जीर्णज्वर का नाश करता है। इसके अतिरिक्त क्षय, श्वास, हिक्का, शिरःशूल, अरुचि, अङ्गों में सन्ताप और विषमाग्नि का नाश करता है। किसी-किसी ग्रन्थ में इस पिप्पल्यादि घृत में गोदूध देकर पकाने का उल्लेख मिलता है।

मात्रा–६ से १२ ग्राम। **अनुपान**–सुखोष्ण गोदूध या उष्णोदक से। **गन्ध**–घृतगन्धी। **वर्ण**–किञ्चित्पीताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–जीर्णज्वर, हिक्का, श्वास एवं विषमाग्नि में।

४२४. क्षीरषट्पलघृत (चरक)

पञ्चकोलैः ससिन्धूत्थैः पलिकैः पयसा समम् ।
सर्पिःप्रस्थं शृतं प्लीहविषमज्वरगुल्मनुत् ॥१३००॥
अत्र द्रवान्तरानुक्तेः क्षीरमेव चतुर्गुणम् ।
द्रवान्तरेण योगे हि क्षीरं स्नेहसमं भवेत् ॥१३०१॥

१. पीपर, २. पिपरामूल, ३. चव्यमूल, ४. चित्रकमूल, ५. शुण्ठी, ६. सैन्धवलवण, ७. गाय का घी तथा ८. गाय का दूध—सर्वप्रथम पीपर से सैन्धव तक छः द्रव्य प्रत्येक ४६-४६ ग्राम और गाय का घी ७५० ग्राम तथा दूध ८०० डे.ली. लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में गाय के घृत का मूर्च्छन करें। ततः उपर्युक्त ६ द्रव्यों को कूट-पीस कर छान लें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें और मूर्च्छित घृत में मिलाकर ७५० मि.ली. दूध मिलावें तथा चूल्हे पर चढ़ाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब घी एवं दूध उबलने लगे तो उसमें ३ ली. जल (घी से ४ गुना जल) देकर मध्यमाग्नि पर पकावें। आसन्नपाक समझकर परीक्षोपरान्त घी को चूल्हे से नीचे उतार कर गरम सिद्ध घृत को छान लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। छः पल कल्क इस घृत में पाक करते हैं इसीलिए इसका नाम क्षीरषट्पलघृत रखा गया है। इस घृतपाक में जल द्रव का मान निर्देश नहीं है, दूध घृत के बराबर लेने का निर्देश है । किन्तु सम्यक् पाकार्थ स्नेह से चार गुना जल लेते हैं और दूध घृत के बराबर ही लेना चाहिए।

इस घृत के सेवन से विषमज्वर, प्लीहज्वर या प्लीहावृद्धि एवं गुल्मरोग नष्ट हो जाते हैं।

विमर्श—चक्रदत्तकार श्रीचकपाणि दत्त ने इसी घृत को एक बार पुनः अर्शरोग में पढ़ा है किन्तु जल एवं दूध की मात्रा का स्पष्ट उल्लेख है। यथा—

उत्पलषट्कघृत (शिवदाससेन)—

'सक्षारैः पञ्चकोलैस्तु पलिकैस्त्रिगुणोदके ।
समक्षीरं घृतप्रस्थं ज्वरार्शःप्लीहकासनुत्' ।।
(चक्रदत्तः–अर्शे)

यहाँ पर लवण के स्थान पर क्षार ग्रहण करने का स्पष्ट निर्देश है। फलश्रुति में भी ज्वर, अर्श, प्लीह और कास नाशक कहा है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यहाँ पर घृत से तीन गुना जल तथा घृत के बराबर दूध का भी स्पष्ट उल्लेख है।

मात्रा–६ से १२ ग्राम। **अनुपान**–गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**–घृतगन्धी। **वर्ण**–किञ्चित्पीताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–विषमज्वर, प्लीहज्वर एवं गुल्म में।

४२५. दशमूलषट्पल घृत (चक्रदत्त)

दशमूलीरसे सर्पिः सक्षीरे पञ्चकोलकैः।
सक्षारैर्हन्ति तत्सिद्धं ज्वरकासाग्निमन्दताः।
वातपित्तकफव्याधीन् प्लीहानञ्चापि पाण्डुताम् ॥१३०२॥

१. दशमूल ४ कि.ग्रा., २. पीपर ५० ग्राम, ३. पिपरामूल ५० ग्राम, ४. चव्यमूल ५० ग्राम, ५. चित्रकमूल ५० ग्राम, ६. शुण्ठी ५० ग्राम, ७. यवक्षार ५० ग्राम, ८. गोघृत १ कि.ग्रा., ९. गोदूध १ लीटर तथा १०. जल ४ मि.ली.—सर्वप्रथम उपर्युक्त मात्रा में औषध-घृत-दुग्धादि का संग्रह करें। दशमूल के सभी द्रव्य समभाग में प्रत्येक ४००-४०० ग्राम लेकर यवकुट करें और चार गुना जल में कोई बड़े स्टील के पात्र में रात्रिपर्यन्त भिंगावें। प्रातः मन्दाग्नि पर क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष होने पर छान लें। घृत को पूर्ववत् मूर्च्छन कर लें। इसके बाद मूर्च्छित घृत में क्वाथ मिलाकर गरम करें। ततः पञ्चकोल को कूट-पीसकर महीन चूर्ण कर लें और उसमें यवक्षार मिलाकर सिल पर जल से पीसें तथा कल्क बना लें। इसके बाद उपर्युक्त गरम घृत में कल्क को अच्छी तरह मिलाकर पाक करें। जब घृत एवं क्वाथ खूब उबलने लगे तो उसमें दूध मिलाकर पकाते रहें। जब दूध सहित घृत भी खूब उबलने लगे तो घी से ४ गुना जल ४.८०० मि. लीटर मिलाकर पकावें। आसन्नपाक समझकर परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर गरम-गरम घृत को कपड़ा से छान लें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

यह घृत ज्वर, कास, अग्निमांद्य, वातज, पित्तज एवं कफज व्याधियों तथा प्लीहाजन्य दोष और पाण्डुरोग का नाश करता है।

मात्रा–६ से १२ ग्राम। **अनुपान**–गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**–घृतगन्धी। **वर्ण**–किञ्चित्पीताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषमज्वर, प्लीहा-यकृज्जन्य ज्वर एवं अग्निमांद्य में।

४२६. वासादि घृत (चक्रदत्त)

वासां गुडूचीं त्रिफलां त्रायमाणां यवासकम्।
पक्त्वा तेन कषायेण पयसा द्विगुणेन च ॥१३०३॥
पिप्पलीमूलमृद्वीकाचन्दनोत्पलनागरैः।
कल्कीकृतैश्च विपचेद् घृतं जीर्णज्वरापहम् ॥१३०४॥

१. वासा, २. गुडूची, ३. त्रिफला, ४. त्रायमाणमूल, ५. जवासा, ६. गोघृत, ७. पिपरामूल, ८. दाख (मुनक्का), ९. लालचन्दन, १०. नीलकमल, ११. शुण्ठी, १२. गाय का दूध २ ली. एवं १३. जल ४ ली.—गोघृत १ किलो। वासा से यवासा पर्यन्त द्रव्य प्रत्येक ८००-८०० ग्राम लेकर यवकुट करें और मिट्टी के बड़े पात्र में ४ गुना जल में भिगाकर मन्दाग्नि पर पाक करें, चतुर्थांशावशेष रहने पर क्वाथ को छान लें। इसके बाद पिपरामूल से शुण्ठी तक के पाँच द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम लेकर महीन चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में पूर्व विधि से घृत का मूर्च्छन करें और उसमें वासादि क्वाथ तथा उपर्युक्त कल्क मिलाकर शनैः-शनैः पाक करें। जब खूब उबलने लगे तो घृत से दुगुना दूध मिलाकर पकावें। पुनः उसमें ४ लीटर जल मिलाकर पकावें। आसन्नपाक समझकर पाकपरीक्षोपरान्त घृतपात्र चूल्हे से उतारकर कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से घृत को छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा–६ से १२ ग्राम। **अनुपान**–गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**–घृतगन्धी। **वर्ण**–किञ्चित्पीताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–जीर्णज्वर में।

४२७. गुडूच्यादि पञ्चद्रव्य घृत (चक्रदत्त)

गुडूच्याः क्वाथकल्काभ्यां त्रिफलाया वृषस्य च।
मृद्वीकाया बलायाश्च सिद्धाः स्नेहा ज्वरच्छिदः ॥१३०५॥

१. गुडूची १.०५० कि.ग्रा., २. त्रिफला १.०५० कि.ग्रा., ३. वासामूल १.०५० कि.ग्रा., ४. द्राक्षा १.०५० कि.ग्रा., ५. बलामूल १.०५० कि.ग्रा., गोघृत १ किलो—सर्वप्रथम उपर्युक्त मात्रा में द्रव्यों को ग्रहणकर कूटें। इसमें से ५०-५० ग्राम प्रत्येक द्रव्य का सूक्ष्म चूर्ण करें और १-१ कि. का यवकुट करें। उपर्युक्त मिलित यवकुट द्रव्य १ कि.ग्रा. को ८ ली. जल में बड़े स्टीलपात्र में रात्रिपर्यन्त भींगने दें और प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर क्वाथ छान कर संग्रहीत करें। पुनः ३५-३५ उपर्युक्त द्रव्यों के चूर्ण को जल से मिलाकर सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद १ कि. घृत को पूर्ववत् मूर्च्छन करें। ततः मूर्च्छित घृत में उपर्युक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। सम्यक्पाक के लिए ४ लीटर जल देकर पाक करें। आसन्नपाक समझकर परीक्षोपरान्त सुपक्व घृत को चूल्हे से नीचे उतार लें तथा गरम-गरम ही कपड़े से छान लें। काचपात्र में ठण्डा होने पर सुरक्षित रख लें।

मात्रा–५ से १० ग्राम। **अनुपान**–गरम दूध एवं गरम जल से। **गन्ध**–घृतगन्धी। **वर्ण**–किञ्चिद्धरिताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरघ्न है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तैलाभ्यङ्गादि विधि (चक्रदत्त)

अभ्यङ्गांश्च प्रदेहांश्च सस्नेहान् सावगाहनान्।
विभज्य शीतोष्णकृतान् दद्याज्जीर्णज्वरे भिषक् ॥१३०६॥
तैराशु प्रशमं याति बहिर्मार्गगतो ज्वरः।
लभन्ते सुखमङ्गानि बलं वर्णश्च जायते ॥१३०७॥

विद्वान् वैद्य को विचारपूर्वक चाहिए कि शीतपूर्वक ज्वर में उष्ण एवं उष्णपूर्वक ज्वर में शीतल तैलादि का मर्दन, प्रलेप, स्नेहपान और स्नेहों से अवगाहन का प्रयोग करें। इन तैलोपचारों से शीघ्र ही ज्वर शरीर के बहिर्मार्गो से नष्ट हो जाता है और ज्वरपीड़ित व्यक्ति के अङ्गों में सुख उत्पन्न होता है तथा शरीर में बल एवं वर्ण की वृद्धि होती है।

४२८. अङ्गारक तैल (चक्रदत्त)

मूर्वा लाक्षा हरिद्रे द्वे मञ्जिष्ठा सेन्द्रवारुणी।
बृहती सैन्धवं कुष्ठं रास्ना मांसी शतावरी ॥१३०८॥
आरनालाढकेनैव तैलप्रस्थं विपाचयेत्।
तैलमङ्गारकं नाम सर्वज्वरविनाशनम् ॥१३०९॥

१. तिलतैल १ लीटर, २. काञ्जी ४ लीटर, ३. मूर्वा २० ग्राम, ४. लाक्षा २० ग्राम, ५. हल्दी २० ग्राम, ६. दारुहल्दी २० ग्राम, ७. मंजीठ २० ग्राम, ८. इन्द्रवारुणी २० ग्राम, ९. बृहती २० ग्राम, १०. सैन्धवलवण २० ग्राम, ११. कूठ २० ग्राम, १२. रास्ना २० ग्राम, १३. जटामांसी २० ग्राम, १४. शतावर २० ग्राम तथा १५. जल ४ लीटर—उपर्युक्त मात्रा में सभी द्रव्यों को ग्रहण करें। एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में तिलतैल का मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् मूर्वा से शतावर पर्यन्त सभी १२ द्रव्यों का महीन चूर्ण कर काञ्जी के साथ सिल पर पीसकर कल्क बनावें। मूर्च्छित तैल को आग पर चढ़ाकर गर्म करें। उक्त तैलपात्र में काञ्जी और कल्क मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। जब आधी काञ्जी सूख जाय तो सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल मिलाकर और पकावें। आसन्नपाक होने पर तैलपाक की परीक्षोपरान्त सिद्ध समझकर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा हो जाय तब कपड़े से तैल को छान लें तथा तैल को काचजार में सुरक्षित रख लें। इसे अङ्गारक तैल कहते हैं। इसके अभ्यङ्ग (मालिश) से सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। जीर्णज्वर या विषमज्वर पुराना में जब वातिक वेदना, शूल, अङ्गमर्दादि होने पर मालिश करें।

मात्रा–केवल बाह्य प्रयोगार्थ–मर्दनार्थ। **अनुपान**–मर्दनार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ द्रव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–जीर्णज्वर, विषमज्वर एवं अङ्गमर्द में।

४२९. अङ्गारक तैल बृहद् (चक्रदत्त)

शुष्कमूलादिकस्याङ्गैरङ्गैरङ्गारकस्य च ॥१३१०॥
पक्वं तैलं ज्वरहरं शोथपाण्ड्वामयापहम्।
बृहदङ्गारकं तैलं जलमत्र चतुर्गुणम् ॥१३११॥

विशेष—शुष्कमूलादिगणं यथा—'शुष्कमूलकवर्षाभूदारु-रास्नामहौषधैः'। (चक्रदत्त शोथे)

१. तिलतैल १ लीटर, २. काञ्जी ४ लीटर, ३. जल ४ लीटर, ४. सूखी मूली, ५. पुनर्नवा, ६. देवदारु, ७. रास्ना, ८. शुण्ठी, ९. मूर्वा, १०. लाख, ११. हल्दी, १२. दारुहल्दी, १३. मंजीठ, १४. इन्द्रवारुणी, १५. बृहती, १६. सैन्धव-नमक, १७. कूठ, १८. रास्ना, १९. जटामांसी और २०. शतावर—अर्थात् शुष्कमूलादिक के द्रव्य तथा पूर्व के अङ्गारक तैल के द्रव्य दोनों लें। सूखी मूली से शतावर पर्यन्त १७ द्रव्य प्रत्येक १५-१५ ग्राम ग्रहण करें। इन्हें कूट-पीसकर महीन चूर्ण करें और काञ्जी के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें।

नोट—यहाँ पर रास्ना २ बार पढ़ा गया है। १. शुष्कमूलादिक[1] गण में और २. प्रथम अङ्गारक तैल में, अतः रास्ना ३० ग्राम लें। अब तिलतैल को स्टेनलेस स्टील के पात्र में मूर्च्छन करें। ततः उसी तैल के साथ काञ्जी और कल्क मिलाकर पुनः पाक करें। काञ्जी जब आधी सूख जाय तो सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल मिलाकर और पकावें। आसन्नपाक होने पर तैलपाक की परीक्षोपरान्त तैल सिद्ध समझकर चूल्हे से तैलपात्र को नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर तैल को कपड़े से छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे बृहद् अङ्गारक तैल कहते हैं।

यह तैल जीर्णज्वर के वातजन्य लक्षणों (शूल, अंगमर्द, रूक्षता आदि) की उपस्थिति में अभ्यङ्ग करें। इसके अतिरिक्त शोथ एवं पाण्डु रोग में भी अभ्यङ्गार्थ प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा–बाह्य प्रयोगार्थ (अभ्यङ्गार्थ)। **अनुपान**–अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–जीर्ण-ज्वर, विषमज्वर, शूल एवं रूक्षता में।

४३०. लाक्षादि तैल (चक्रदत्त)

लाक्षाहरिद्रामञ्जिष्ठाकल्कैस्तैलं विपाचितम्।
षड्गुणेनारनालेन दाहशीतज्वरापहम् ॥१३१२॥

१. तिलतैल १ ली., २. काञ्जी ६ ली., ३. जल ४ लीटर, ४. लाख ८५ ग्राम, ५. हल्दी ८५ ग्राम तथा ६. मंजीठ ८५ ग्राम—इन सूखे द्रव्यों को कूट-पीसकर महीन चूर्ण करें और सिल पर काञ्जी के साथ पीसकर कल्क बना लें। तिलतैल को स्टेनलेस स्टील के पात्र में रखकर उपर्युक्त रीति से मूर्च्छन करें। ततः उस मूर्च्छित तैल में ६ ली. काञ्जी और कल्क मिला लें तथा आग पर पकावें। आधी काञ्जी सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल मिलाकर पुनः पकावें। आसन्नपाक होने पर सिद्ध तैल

१. 'शुष्कमूलकवर्षाभूदारुरास्नामहौषधैः'। (चक्रदत्त-शोथे)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

की परीक्षा कर चूल्हे से तैल को नीचे उतार लें और कुछ देर के बाद थोड़ा गरम रहने पर कपड़े से तैल को छानकर काचपात्र में संग्रह करें। यह लाक्षादि तैल शीत एवं दाह पूर्वक ज्वर में अभ्यङ्ग करने से बहुत लाभ एवं शान्ति दायक है।

मात्रा–अभ्यङ्गार्थ (केवल बाह्य प्रयोग)। **अनुपान**–अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–लाल। **स्वाद**–अम्ल। **उपयोग**–जीर्णज्वर, विषमज्वर एवं दाह में।

४३१. लाक्षादि तैल बृहत् (शार्ङ्ग. से किञ्चित् परिवर्तित)

लाक्षारसाढके प्रस्थं तैलस्य विपचेद् भिषक्।
मस्त्वाढकसमायुक्तं पिष्ट्वा चात्र समावपेत् ॥१३१३॥
शतपुष्पां हरिद्राञ्च मूर्वां कुष्ठं हरेणुकम्।
कटुकां मधुकं रास्नामश्वगन्धां च दारु च ॥१३१४॥
मुस्तकञ्चन्दनञ्चैव पृथगक्षसमानकैः।
द्रव्यैरेतैस्तु तत्सिद्धमभ्यङ्गान्मारुतापहम् ॥१३१५॥
विषमाख्यान् ज्वरान् सर्वानाश्वेव प्रशमं नयेत्।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं कण्डूदौर्गन्ध्यगौरवम् ॥१३१६॥
त्रिकपृष्ठकटीशूलं गात्राणां कुट्टनं तथा।
पापालक्ष्मीप्रशमनं सर्वग्रहविनाशनम्।
अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं तैलं लाक्षादिकं महत ॥१३१७॥

१. तिलतैल ७५० मि.ली., २. लाक्षारस ३ ली., ३. दही का पानी ३ ली., ४. सौंफ १२ ग्रा., ५. हल्दी १२ ग्रा., ६. मूर्वा १२ ग्रा., ७. कूठ १२ ग्रा., ८.रेणुका १२ ग्रा., ९. कुटकी १२ ग्रा., १०. मुलेठी १२ ग्रा., ११. रास्ना १२ ग्रा., १२.असगन्ध १२ ग्रा., १३. देवदारु १२ ग्रा., १४. नागरमोथा १२ ग्रा. तथा १५. लालचन्दन १२ ग्राम—सर्वप्रथम स्टेनलेस के बड़े पात्र में तिलतैल का मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् लाक्षारस (६ गुना जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिगोने के बाद सुबह मसलकर २१ बार छानना अथवा लाक्षा से ६ गुना जल के साथ उबालकर अष्टमांश शेष रहने पर २१ बार छानना ही लाक्षारस है) तेल के बराबर डालकर मन्दाग्नि से पकावें। ततः सौंफ से लालचन्दन तक के सभी १२ द्रव्य प्रत्येक १-१ तोला (१२-१२ ग्रा.) लेकर कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें और पुनः मस्तु (दही के पानी) के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। वह कल्क भी तैल में मिलाकर पकावें। ततः ३ लीटर मस्तु (दही का पानी) मिलाकर पाक करें। सम्यक् पाकार्थ तैल से ४ गुना ३ लीटर जल देकर पाक करें। आसन्नपाक समझकर सिद्ध तैल को परीक्षोपरान्त चूल्हे से नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छान लें तथा शीशे की जार में सुरक्षित रख लें। इस तैल का अभ्यङ्ग (मालिस) करने से वायुविकार नष्ट हो जाते हैं। विषमज्वर, सन्तत-सततादि ज्वरों में शीत, कम्प, रूक्षता, पीड़ा एवं पेशी-स्नायुसंकोच में बहुत ही लाभ करता है और ज्वर स्वयमेव नष्ट हो जाता है। कास, श्वास, प्रतिश्याय, कण्डू, शरीर दौर्गन्ध्य, शरीर में गुरुता, त्रिक-पृष्ठ, कटिशूल, शरीर में टूटन तथा पापज रोग (ज्वर, यक्ष्मा एवं रक्तदुष्टि) एवं अलक्ष्मी (शरीर का क्लेश, जिसमें शरीर की शोभा नष्ट हो जाती है) जन्य विकार नष्ट हो जाते हैं। इस महालाक्षादि तैल को सर्वप्रथम अश्विनीकुमारों ने बनाया था।

लाक्षारस-निर्माण विधि

लाक्षायाः षड्गुणं तोयं चैकविंशतिवारकम्।
परिस्राव्य जलं ग्राह्यं किं वा क्वाथ्यं यथोदितम् ॥१३१८॥

१ भाग लाक्षा को कूट लें तथा ६ गुना जल में मिट्टी के पात्र में रात्रिपर्यन्त भीगने दें। प्रातः इसे हाथ से खूब मसलकर साफ नये वस्त्र से २१ बार छानकर प्रयोग करें। अथवा लाक्षा को कूटकर छः गुना जल देकर मिट्टी के पात्र में रात्रिपर्यन्त भीगने दें। प्रातः मध्यमाग्नि पर पकावें और अष्टमांशावशेष रहने पर छानकर प्रयोग करें। यही दो प्रकार से लाक्षारस बनाया जाता है। कुछ आचार्य षड्गुण जल देकर पकाते हैं तथा चतुर्थांशावशेष रहने पर छानकर उपयोग करते हैं। जैसा कि आचार्य यादवजी त्रिकम जी ने कहा है—

'षड्गुणेनाम्भसा लाक्षां दोलायन्त्रे विपाचयेत्।
त्रिसप्तधा परिस्राव्या लाक्षारसमिमं विदुः'॥
(द्रव्यगुणविज्ञान)

४३२. षट्कट्वर तैल (चक्रदत्त)

सुवर्चिकानागरकुष्ठमूर्वा-
लाक्षानिशालोहितयष्टिकाभिः।
तैलं ज्वरं षड्गुणतक्रसिद्ध-
मभ्यञ्जनाच्छीतविदाहनुत्स्यात् ॥१३१९॥
दध्नः ससारकस्यात्र तक्रं कट्वरमिष्यते ॥१३२०॥

१. तिलतैल १ लीटर, २. मक्खन सहित तक्र १.५०० ली., ३. जल ४ ली., ४. सज्जिक्षार ३० ग्राम, ५. शुण्ठी ३० ग्रा., ६. कूठ ३० ग्रा., ७. मूर्वा ३० ग्रा., ८. लाख ३० ग्रा., ९. हल्दी ३० ग्रा., १०. मंजीठ ३० ग्रा. और ११. मुलेठी ३० ग्रा.—सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में पूर्व विधि से तिल-तैल का मूर्च्छन करें। ततः क्रम संख्या ४ से ११ तक के सभी आठों द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर जल या तक्र के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब पुनः मूर्च्छित तैल को पात्र में गरमकर उसमें तक्र तथा कल्क घोलें और मध्यमाग्नि से पाक करें। जब उबलना प्रारम्भ हो जाय तो उस तैलपात्र में ४ लीटर जल मिलाकर पकावें। आसन्नपाक समझकर सिद्ध तैल की परीक्षा कर पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। कुछ ठण्डा होने पर कपड़े

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

से छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यहाँ पर मक्खन के सहित दही का तक्र बनावें तथा तक्र में भी मक्खन रहना चाहिए, मक्खन पृथक् नहीं करें। शीत एवं दाह पूर्वक ज्वर में प्रतिदिन मालिश करने से जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **अनुपान**–अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–शीत-दाहादि ज्वर तथा जीर्णज्वर में।

विमर्श—कट्वर की परिभाषा—दही में चौथाई जल देकर मथना कट्वर है, वही तक्र भी है—

'दध्नः ससारकस्यात्र तक्रं कट्वरमिष्यते ।
तक्रं ह्युदश्विन्मथितं पादाम्ब्वर्धाम्बु निर्जलम्'।।
(वैद्यकपरिभाषाप्रदीप)

४३३. बृहत् कट्वर तैल

शुक्तारनालैर्दधिमस्तुतक्रैः बृहत्
फलाम्बुभागेन समं हि तैलम् ।
कृष्णादिकल्कैर्मृदुवह्निसिद्ध-
मभ्यञ्जनं वातकफज्वराणाम् ॥१३२१॥
ऐकाहिकद्वित्रिचतुर्थकानां
मासार्द्धमासद्वयमासिकानाम् ।
निवारणं तद्विषमज्वराणां
तैलन्तु षट्कट्वरकं महत् स्यात् ॥१३२२॥

१. तिलतैल १ ली., २. काञ्जी १ ली., ३. दही का पानी १ ली., ४. तक्र १ ली., ५. निम्बु का रस १ ली. तथा ६. कृष्णादिगण के ३० द्रव्यों के कल्क—कृष्णादिगण निम्नलिखित है। इन सभी द्रव्यों को प्रत्येक ८-८ ग्रा. की मात्रा में लेकर सिल पर पीस कर कल्क बना लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में पूर्व विधि के अनुसार मूर्च्छन करें। ततः उसी तैल को पुनः गरम कर कल्क, काञ्जी, मस्तु, तक्र एवं निम्बुस्वरस देकर पाक करें। जब जलीयांश आधा सूख जाय तो ४ ली. साफ मीठा जल मिलाकर पाक करें। आसन्नपाक समझ कर परीक्षा के बाद तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छानकर काचपात्र में तैल को सुरक्षित रख लें। इसे बृहत् कट्वरतैल कहते हैं।

इस तैल को वात-कफजन्य ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक एवं चातुर्थिक ज्वर में प्रतिदिन अभ्यङ्ग (मालिश) करने से १५ दिन से, १ माह से तथा २ माह से पीड़ित विषमज्वर नष्ट हो जाता है।

४३४. कृष्णादि गण

कृष्णाचित्रकषड्ग्रन्था वासकं विकसा घनम् ।
ग्रन्थिकैले चातिविषा रेणुकञ्च कटुत्रयम् ॥१३२३॥
यमानी गोस्तनी व्याघ्री भूनिम्बं बिल्वचन्दनम् ।
भार्गी श्यामा शिवा धात्री स्थिरा मूर्वा सजीरका ॥१३२४॥
सर्षपं हिङ्गु कटुकी विडङ्गं च समांशकम् ।
एष कृष्णादिको नाम गणो ज्वरविनाशनः ॥१३२५॥

१. पीपर, २. चित्रकमूल, ३. वच, ४. वासामूल, ५. मंजीठ, ६. नागरमोथा, ७. पिपरामूल, ८. छोटी इलायची, ९. अतीस, १०. रेणुकाबीज, ११. शुण्ठी, १२. पीपर, १३. मरिच, १४. अजवायन, १५. द्राक्षा, १६. कण्टकारी, १७. चिरायता, १८. बेल छाल, १९. लाल चन्दन, २०. भारङ्गी, २१. काली निशोथ, २२. हरीतकी, २३. आमला, २४. शालपर्णी, २५. मूर्वा, २६. जीरा, २७. सरसो, २८. हींग, २९. कुटकी तथा ३०. वायविडङ्ग—इन सभी द्रव्यों को बराबर भाग में लेकर यवकुट कर रख लें। इसे कृष्णादिगण कहते हैं।

मात्रा–अभ्यङ्गार्थ। **अनुपान**–सर्वाङ्ग शरीर में अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषम-ज्वर एवं जीर्णज्वर में।

४३५. बृहत् पिप्पल्यादि तैल

पिप्पली मुस्तकं धान्यं सैन्धवं त्रिफला वचा ।
यमानी चाजमोदा च चन्दनं पुष्कराह्वयम् ॥१३२६॥
शटी द्राक्षा गवाक्षी च शालपर्णी त्रिकण्टकम् ।
भूनिम्बारिष्टपत्राणि महानिम्बं निदिग्धिका ॥१३२७॥
गुडूची पृश्निपर्णी च बृहती दन्तिचित्रकौ ।
दार्वी हरिद्रा वृक्षाम्लं पर्पटं गजपिप्पली ॥१३२८॥
एतेषां कार्षिकैः कल्कैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।
दधिकाञ्जिकतक्रैश्च मातुलुङ्गरसैस्तथा ॥१३२९॥
स्नेहमात्रासमैरेभिः शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
सिद्धमेतत् प्रयोक्तव्यं जीर्णज्वरमपोहति ॥१३३०॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव दोषत्रयसमुद्भवम् ।
सन्ततं सततान्येद्युस्तृतीयकचतुर्थकान् ॥१३३१॥
मासजं पक्षजञ्चैव चिरकालानुबन्धिनम् ।
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु पिप्पल्याद्यमिदं शुभम् ॥१३३२॥

१. तिलतैल ७५० मि.ली., २. दही का पानी ७५० मि.ली., ३. काञ्जी ७५० मि.ली., ४. तक्र ७५० मि.ली., ५.मातुलङ्गनिम्बुरस ७५० मि.ली., ६. पिप्पली, ७. नागरमोथा, ८. धनियाँ, ९. सैन्धवलवण, १०. आमला, ११. हरीतकी, १२. बहेड़ा, १३. वच, १४. अजवायन, १५. अजमोदा, १६. लालचन्दन, १७. पुष्करमूल, १८. कचूर, १९. मुनक्का, २० इन्द्रवारुणी, २१. शालपर्णी, २२. गोखरु, २३. चिरायता, २४. निम्बपत्र, २५. महानिम्ब, २६. कण्टकारी, २७. गुडूची, २८. पृश्निपर्णी, २९. बृहती, ३०. दन्तीमूल,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३१. चित्रकमूल, ३२. दारुहल्दी, ३३. हल्दी, ३४. इमली-फल, ३५. पित्तपापड़ा तथा ३६. गजपीपर—सर्वप्रथम क्रम संख्या ६ (पीपर) से ३६ (गजपीपर) तक के सभी ३१ द्रव्य प्रत्येक १-१ तोला (१२-१२ ग्रा.) लें और कूटकर महीन चूर्ण करें तथा इस चूर्ण को दही के पानी के साथ सिल पर पीस कर कल्क बना लें। इसके बाद स्टेनलेस स्टील के पात्र में तिलतैल १ प्रस्थ (७५० डे.ली.) लेकर पूर्व विधि से मूर्च्छन करें। पानी सूखने पर उसमें दही का पानी और कल्क मिलाकर मध्यमाग्नि से पाक करें। द्रवांश सूखने के पहले क्रमशः १-१ द्रव (काञ्जी, तक्र, निम्बुस्वरस) डालकर पकाते रहें। पुनः सम्यक् पाकार्थ तैल से ४ गुना (३ ली.) साफ मीठा जल देकर पकावें। आसन्नपाक होने पर परीक्षा करके पात्र को चूल्हा से नीचे उतार कर कुछ ठण्डा होने दें। पुनः कपड़ा से छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

यह बृहत् पिप्पल्यादितैल का मालिश करने से जीर्णज्वर नष्ट होता है। इसके अतिरिक्त एकदोषज, द्विदोषज, त्रिदोषज ज्वर, सन्तत, सतत, अन्येद्यु, तृतीयक, चातुर्थिक, पक्षानुबन्ध, मासानुबन्ध ज्वर और चिरकालानुबन्धी समस्त ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–केवल अभ्यङ्गार्थ। **अनुपान**–केवल अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों में अभ्यङ्गार्थ।

४३६. किरातादि तैल

मूर्वा लाक्षा हरिद्रे द्वे मञ्जिष्ठा सेन्द्रवारुणी।
ह्रीबेरं पुष्करं रास्ना कपिवल्ली कटुत्रयम् ॥१३३३॥
पाठा चेन्द्रयवश्चैव लवणत्रयसंयुतः।
वासकार्कश्यामादारुमहाकालफलं तथा ॥१३३४॥
दधिमस्त्वारनालेन कैरातेन च सम्पचेत्।
प्रस्थं प्रस्थं समादाय तैलप्रस्थे विपाचयेत् ॥१३३५॥
किराताद्यमिदं तैलं सन्ततं सततं तथा।
धातुस्थमस्थिमज्जस्थं ज्वरं सर्वं व्यपोहति ॥१३३६॥
कामलां ग्रहणीं घोरमतीसारं[1] हलीमकम्।
प्लीहपाण्डुश्वयथुं च नाशयेन्नात्र संशयः।
नास्ति तैलं वरं चास्माज्ज्वरदर्पकुलान्तकम् ॥१३३७॥

१. तिलतैल ७५० मि.ली., २. दही का पानी ७५० मि.ली., ३. काञ्जी ७५० मि.ली., ४. चिरायता क्वाथ ७५० मि.ली., ५. मूर्वा, ६. लाक्षा, ७. हल्दी, ८. दारुहल्दी, ९. मंजीष्ठा, १०. इन्द्रवारुणी, ११. सुगन्धबाला, १२. पुष्करमूल, १३. रास्ना, १४. गजपीपर, १५. शुण्ठी, १६.पीपर, १७. मरिच, १८ .पाठा, १९. इन्द्रयव, २०. सैन्धव, २१ सौवर्चल, २२. विडलवण, २३. वासामूल, २४. अर्कमूल, २५. निशोथ, २६. देवदारु और २७. इन्द्रायण लाल—मूर्वा से इन्द्रायण लाल तक के सभी २३ द्रव्य प्रत्येक ९-९ ग्राम लेकर कूटें एवं महीन चूर्ण कर लें। ततः चिरायता क्वाथ के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद स्टेनलेस स्टील के पात्र में ७५० मि.ली. तिलतैल का मूर्च्छन करें। पुनः उसके जल सूखने पर उसमें ७५० मि.ली. दही का पानी (मस्तु) और कल्क को मूर्च्छित तैल में घोलकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। मस्तु का द्रवांश सूखने पर ७५० मि.ली. काञ्जी देकर पाक करें। ततः ७५० ग्राम चिरायता को यवकुट कर ४ गुना जल से क्वाथ कर $\frac{1}{4}$ शेष रहने पर छान कर इसी क्वाथ से तैलपाक करें। क्वाथ सूखते ही सम्यक् पाकार्थ ३ ली. जल देकर पाक करें। आसन्नपाक समझकर सिद्ध तैल की परीक्षा कर पात्र को चूल्हे से नीचे उतार कर कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे किरातादि तैल कहते हैं।

ज्वर की शैत्यता एवं रूक्षता तथा अङ्गमर्द की स्थिति में इस तैल को मालिश करने से सन्तत-सततज्वर, शुक्रगत, अस्थिगत एवं मज्जागतज्वर, जीर्णज्वर और सभी प्रकार के विषमज्वरादि तथा सामान्य सभी प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार शैत्य, रौक्ष्य, अंगमर्दादि स्थिति होने पर कामला, ग्रहणी, भयंकर अतिसार, हलीमक, प्लीहावृद्धि, पाण्डु और शोथ रोग का नाश करता है। ज्वर-समूह को नाश करने के लिए इस तैल से श्रेष्ठ और कोई दूसरा तैल नहीं है।

मात्रा–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **उपयोग**–केवल अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–अम्ल। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वरों (विषमज्वर, जीर्णज्वर, धातुगत ज्वरों) में।

४३७. बृहत् किरातादि तैल

कैरातस्य तुलामानं जलद्रोणे विपाचयेत्।
कटुतैलस्य पात्रार्द्धं तेनैव साधयेद्भिषक् ॥१३३८॥
मूर्वालाक्षाद्वयक्वाथं काञ्जिकं दधिमस्तु च।
एतानि तैलतुल्यानि कल्कानेतांश्च सम्पचेत् ॥१३३९॥
भूनिम्बं श्रेयसी रास्ना कुष्ठं लाक्षेन्द्रवारुणी।
मञ्जिष्ठा च हरिद्रे द्वे मूर्वा मधुकमुस्तकम् ॥१३४०॥
वर्षाभूः सैन्धवं मांसी बृहती च तथा बिडम्।
ह्रीबेरं शतमूली च चन्दनं कटुरोहिणी ॥१३४१॥
हयगन्धा शताह्वा च रेणुका सुरदारु च।
उशीरं पद्मकं धान्यं पिप्पली च वचा शटी ॥१३४२॥
फलत्रिकं यमान्यौ द्वे शृङ्गी गोक्षुर एव च।
पर्ण्यौ द्वे तरुणीमूलं विडङ्गं जीरकद्वयम् ॥१३४३॥
महानिम्बश्च हवुषा यवक्षारो महौषधम्।
एषां कर्षद्वयं क्षिप्त्वा साधयेन्मृदुवह्निना ॥१३४४॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यथाहिवर्गं विनिहन्ति तार्क्ष्यो
यथा च भास्वांस्तिमिरस्य सङ्घम्।
तथैव सर्वं ज्वरवर्गमेत-
दभ्यङ्गमात्रेण निहन्ति तैलम् ॥१३४५॥
सन्ततं सततादींश्च सशोथान् विषमज्वरान्।
प्लीहाश्रितान् सशोथान् वा प्रमेहं ज्वरमेव च ॥१३४६॥
अग्निं च कुरुते दीप्तं बलवर्णकरं परम्।
पाण्ड्वादीन् हन्ति रोगांश्च किराताद्यमिदं बृहत् ॥१३४७॥

१. सरसो तैल १.५०० ली., २. चिरायता क्वाथ, ३. मूर्वा क्वाथ, ४. लाक्षारस, ५. काञ्जी, ६. दही का पानी (मस्तु) प्रत्येक १.५०० मि.ली., ७. चिरायता, ८. गजपीपर, ९. रास्ना, १०. कूठ, ११. लाक्षा, १२. इन्द्रवारुणी, १३. मंजीठ, १४. हल्दी, १५.दारुहल्दी, १६. मूर्वा, १७. मुलेठी, १८. नागरमोथा, १९. पुनर्नवा, २०. सैन्धवलवण, २१. जटामांसी, २२. बृहती, २३. विडलवण, २४. सुगन्धबाला, २५. शतावर, २६. लालचन्दन, २७. कुटकी, २८. असगन्ध, २९. सौंफ, ३०. रेणुका, ३१. देवदारु, ३२. खस, ३३. पद्मकाठ, ३४. धनियाँ, ३५.पीपर, ३६. वच, ३७. कचूर, ३८. आमला, ३९. हरीतकी, ४०. बहेड़ा, ४१. अजवायन, ४२. अजमोदा, ४३. काकडासिंगी, ४४. गोखरु ४५. शालपर्णी, ४६. पृश्निपर्णी, ४७. दन्तीमूल, ४८. वायविडङ्ग, ४९. जीरा, ५०. श्याहजीरा, ५१. बकायनत्वक्, ५२. हाउबेर, ५३. यवक्षार तथा ५४. शुण्ठी—प्रत्येक द्रव्य २३ ग्राम लें। १ तुला (५ किलो) चिरायता को यवकुट कर १३ लीटर जल के साथ किसी बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में रात्रिपर्यन्त तक भिगावें और प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर (३ ली.) छान लें। इसके बाद १ किलो लाक्षा लेकर कूटें और ६ गुना जल के साथ क्वाथ करें। $\frac{1}{4}$ शेष रहने पर १.५०० लाक्षारस तैयार करें। पुनः क्रमसंख्या ७ (चिरायता) से क्रम संख्या ५४ (शुण्ठी) तक के सभी ४८ द्रव्यों को प्रत्येक द्रव्य २३ ग्राम (कुल १.१०४ ग्राम) तैल का चतुर्थांश लेकर महीन चूर्ण करें और चिरायता के क्वाथ से सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद स्टेनलेस स्टील के पात्र में पूर्व विधि से सरसो तैल का मूर्च्छन करें। ततः चिरायता का क्वाथ ३.२५० डे.ली. और कल्क मिलाकर मूर्च्छित तैल में मिलाकर मध्यमाग्नि से पाक करें। पुनः मूर्वा क्वाथ, लाक्षारस, काञ्जी और मस्तु क्रमशः दे-देकर पाक करें। अन्त में सम्यक् पाकार्थ १.५००ली. जल देकर पाक करें। आसन्न पाक समझकर परीक्षा करें, तब तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। तैल को कुछ ठण्डा होने पर कपड़ा से तैल को छान लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। जैसे गरुड़ पक्षी सर्पकुल को नष्ट कर देता है तथा सूर्य अन्धकार-समूह को नष्ट कर देता है वैसे ही यह तैल अभ्यङ्ग मात्र से सभी ज्वरों का नाश कर देता है। अभ्यङ्ग करने मात्र से यह तैल सन्तत-सततादि शोथ विषमज्वरों को नाश करता है; प्लीहाज्वर, प्लीहाशोथ, प्रमेह पाण्डु आदि रोगों का नाश करता है; शरीर के बल, वर्ण और अग्नि को बढ़ाता है।

मात्रा–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **अनुपान**–केवल अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–सरसो तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषमज्वर, जीर्णज्वर, ज्वर, यकृत्प्लीहावृद्धि, पाण्डु, शोथ।

४३८. ज्वरभैरवतैल

गुडूची वासको निम्बो मूर्वामूलं सचन्दनम्।
किरातो यवतिक्ता च सिन्दुवारदलानि च ॥१३४८॥
एषां पलशतं ग्राह्यं जलद्रोणे विपाचयेत्।
क्वाथैः पादावशिष्टैश्च तैलप्रस्थद्वयं पचेत् ॥१३४९॥
गुडूच्यतिविषा दारु हरिद्रे द्वे सुपर्णिका।
पिप्पली पिप्पलीमूलं शिग्रुबीजं स्थिरा जतु ॥१३५०॥
पटोलं धान्यकं कुष्ठं किरातो हेमपुष्पका।
मूर्वामूलमश्वगन्धा सरलं कण्टकारिका ॥१३५१॥
एतैः सार्द्धपलोन्मानैः कल्कैस्तैलं विपाचयेत्।
पाकार्थं दीयते तत्र पयः प्रस्थचतुष्टयम् ॥१३५२॥
सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यं जीर्णज्वरमपोहति।
विषमाख्याञ्ज्वरान् सर्वान् प्लीहानं यकृतन्तथा ॥१३५३
कामलां पाण्डुरोगं च शोथं हन्ति न संशयः।
ज्वरभैरवनामेदं तैलं शिवकृतं महत् ॥१३५४॥

तिलतैल २ प्रस्थ (१.५०० ली.), क्वाथार्थ जल १२ ली., अवशेष क्वाथ ३ ली.।

क्वाथ द्रव्य—१. गुडूची, २. वासामूल, ३. निम्बत्वक्, ४. मूर्वामूल, ५. लालचन्दन, ६. चिरायता, ७. कालमेघ तथा ८. सिन्दुवारपत्र—ये ८ द्रव्य प्रत्येक ५७५ ग्राम लें। कुल ४.६०० ग्रा. लें।

कल्क द्रव्य—१. गुडूची, २. अतीस, ३. देवदारु, ४. हल्दी, ५. दारुहल्दी, ६. स्वर्णजयन्ती, ७. पीपर, ८. पिपरा-मूल, ९. शिग्रुबीज, १०. शालपर्णी, ११. लाक्षा, १२. परवलपत्र, १३. धनियाँ, १४. कूठ, १५. चिरायता, १६. नागकेशर, १७. मूर्वामूल, १८. असगन्ध, १९. सरलकाष्ठ तथा २०. कण्टकारी—ये सभी २० द्रव्य प्रत्येक ७०-७० ग्राम लेकर कूट-पीस कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें, ततः सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। सर्वप्रथम क्वाथ द्रव्य को यवकुट कर १३ लीटर जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर उतार कर छान लें। ततः एक स्टील के पात्र में तिलतैल को पूर्वोक्त तैलमूर्च्छन विधि से मूर्च्छन कर लें। इसके बाद उस मूर्च्छित तैल

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

में क्वाथ एवं कल्क मिलाकर पुनः पाक करें, जब क्वाथ सूखने लगे तो सम्यक् पाकार्थ ६ लीटर साफ मीठा जल मिलाकर पकावें। आसन्नपाक समझकर सिद्ध तैल की परीक्षा करें और तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारें तथा कुछ ठण्डा होने पर कपड़ा से तैल को छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस ज्वरहर तैल का मालिश करने से जीर्णज्वर, विषमज्वर, यकृत्प्लीहावृद्धिजन्य ज्वर, कामला, पाण्डुरोग और शोथ नष्ट हो जाते हैं। इस ज्वरभैरव तैल को भगवान् शंकरजी ने कहा है।

मात्रा–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **अनुपान**–केवल अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–विषम-ज्वर, जीर्णज्वर, यकृत्प्लीहावृद्धि, पाण्डु एवं शोथ में।

४३९. चन्दनबलालाक्षादि तैल (योगरत्नाकर)

चन्दनं च बलामूलं लाक्षा लामज्जकं तथा।
पृथक्-पृथक् प्रस्थमात्रं द्रोणे च सलिले पचेत् ॥१३५५॥
चतुर्भागावशेषेऽस्मिंस्तैलं प्रस्थद्वयं क्षिपेत्।
चन्दनोशीरमधुकशताह्वाः कटुरोहिणी ॥१३५६॥
देवदारु निशा कुष्ठमञ्जिष्ठाऽगुरु बालकम्।
अश्वगन्धा बला दार्वी मूर्वा मुस्ता समूलकाः ॥१३५७॥
एलात्वङ्नागकुसुमं रास्ना लाक्षा सुगन्धिका।
चम्पकं पीतसारं च सारिवा रोचकद्वयम् ॥१३५८॥
कल्कैरेतैः समायुक्तं क्षीराढकसमन्वितम्।
तैलमभ्यञ्जने श्रेष्ठं सप्तधातुविवर्द्धनम् ॥१३५९॥
कासश्वासक्षयहरं सर्वच्छर्दिनिवारणम्।
असृग्दरं रक्तपित्तं हन्ति पित्तकफामयम् ॥१३६०॥
कान्तिकृद्दाहशमनं कण्डूविस्फोटनाशनम्।
शिरोरोगं नेत्रदाहमङ्गदाहं च नाशयेत् ॥१३६१॥
वातामयहतानां च क्षीणानां क्षीणरेतसाम्।
बालमध्यमवृद्धानां शस्यते शोफकामले।
पाण्डुरोगे विशेषेण सर्वज्वरविनाशनम् ॥१३६२॥

तिलतैल २ प्रस्थ (१.५०० लीटर)।

क्वाथ—१. लालचन्दन, २. बलामूल, ३. लाक्षा एवं ४. खस भेद—ये चारों प्रत्येक द्रव्य १.५०० ग्रा. लें। इन्हें पृथक्-पृथक् १२-१२ लीटर जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष (३.२५० ली.) रहने पर छान लें।

कल्क—१. लालचन्दन, २. खस, ३. मुलेठी, ४. सौंफ, ५. कुटकी, ६. देवदारु, ७. हल्दी, ८. कूठ, ९. मंजीट, १०. अगरु, ११. सुगन्धबाला, १२. असगन्ध, १३. बलामूल, १४. दारुहल्दी, १५. मूर्वामूल, १६. नागरमोथा, १७. मूली, १८. छोटी इलायची, १९. दालचीनी, २०. नागकेशर, २१. रास्ना, २२. लाक्षा, २३. कृष्णसिन्दुवार, २४. चम्पा के फूल, २५. अंकोलमूल, २६. अनन्तमूल, २७. विड लवण तथा २८. सैन्धव लवण—ये २८ द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें और कूट-पीस कर महीन चूर्ण कर लें, पुनः जल के साथ उसे पीसकर कल्क बना लें। स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में पूर्वोक्त विधि से तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः उस मूर्च्छित तैल में चन्दन क्वाथ और कल्क मिलाकर पुनः पाक करें। क्वाथ सूखने पर पुनः-पुनः बलामूलक्वाथ, लाक्षास्वरस एवं खसभेदक्वाथ दे-देकर पाक करें। इसके बाद ३ लीटर दूध देकर पाक करें। पुनः सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर साफ एवं मीठा जल देकर पाक करें। आसन्नपाक समझकर सिद्ध तैल की परीक्षा कर लें तब तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से तैल को छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

इस "चन्दनबलालाक्षादि तैल" की मालिश करने से सभी सातों धातुओं की वृद्धि होती है। कास, श्वास, क्षय एवं वमन, रक्तप्रदर, रक्तपित्त, कफज तथा पित्तज रोग, कण्डू, विस्फोट, शिरोरोग, नेत्रदाह और अङ्गदाह रोग नष्ट हो जाते हैं। वातरोग से पीड़ित क्षीण, कृश तथा अल्प शुक्र वाले रोगियों में यह तैल अत्यन्त लाभदायक है। यह शोथ, कामला तथा पाण्डुरोग नाशक है। विशेषकर यह तैल जीर्णज्वर एवं सभी ज्वरों का नाश करता है।

मात्रा–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **अनुपान**–केवल अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–इसके अभ्यङ्ग से सभी धातुओं की वृद्धि।

४४०. दूर्वादि तैल (सारकौमुदी)

दूर्वा भव्यफलं माषः कुलत्थो वंशपत्रकम्।
जलस्थलभवौ कर्णमोरटौ खरमञ्जरी ॥१३६३॥
दण्डोत्पलायाः मूलञ्च निष्काथ्याष्टगुणेऽम्भसि।
तत्पादशेषितं तैलं तुल्यं कृत्वा विपाचयेत्॥
तत्तैलं प्रतिमर्षेण आहकाख्यं गदं जयेत् ॥१३६४॥

१. दूब, २. लिसोड़ाबीज, ३. उड़दबीज, ४. कुलत्थबीज, ५. बाँस के पत्ते, ६. कर्ण, ७. मोरट, ८. अपामार्ग तथा ९. दण्डोत्पलमूल—प्रत्येक द्रव्य १२० ग्राम एवं तिलतैल ७५० मि.ली.—सर्वप्रथम उपर्युक्त ९ द्रव्यों को २ भाग लेकर (क्वाथ-कल्क) करें। क्वाथार्थ ९५-९५ ग्राम तथा कल्कार्थ २५-२५ ग्राम लेकर पहले तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः क्वाथ द्रव्यों का यवकुट कर अष्टगुण जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और कल्क द्रव्यों को सिल पर पीसकर कल्क बनावें। क्वाथ और कल्क दोनों को उक्त तैल में मिलाकर पाक करें। क्वाथ सूखने पर कल्क का पाकार्थ तैल से ४ गुना जल देकर पुनः पाक करें। जलीयांश सूखने पर स्नेहपाकविद् वैद्य

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार कर कपड़े से छान लें, शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस तैल का अभ्यङ्ग करने से आहकज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **अनुपान**–केवल अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**–तैलगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–आहक ज्वर में।

४४१. पिप्पलीपाक (योगरत्नाकर)

पिप्पलीप्रस्थमादाय क्षीरं चैव चतुर्गुणम्।
अर्द्धाढकं घृतं गव्यं शुद्धं खण्डाढकं तथा ॥१३६५॥
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावत्पाकमुपागतम्।
शीतीभूते क्षिपेत्तस्मिंश्चातुर्जातं पलत्रयम् ॥१३६६॥
योजयेन्मात्रया युक्तं दोषधात्वग्निसाम्यतः।
बल्यो वृष्यस्तथा हृद्यो धातुपुष्टिकरः परः ॥१३६७॥
जीर्णज्वरहरश्चैव स्त्रियं चैव तु बृंहयेत्।
छर्दिस्तृष्णाऽरुचिश्वासशोषहिक्काः सकामलाः ॥१३६८॥
हृद्रोगं पाण्डुगुल्मं च प्रदरञ्च त्रिदोषजम्।
शोणितानिलकार्श्ये च रक्तपित्तं नियच्छति ॥
सतताभ्यासयोगेन वलीपलितवर्जितः ॥१३६९॥

१. पीपर १ प्रस्थ (७५० ग्राम), २. गोदुग्ध १ आढक (३ लीटर), ३. गोघृत १.५०० ग्राम, ४. चीनी १ आढक (३ किलो) तथा निम्नलिखित चारों द्रव्य प्रत्येक ३५-३५ ग्राम लें—५. तेजपत्ता, ६. दालचीनी, ७. छोटी इलायची तथा ८. नागकेशर—सर्वप्रथम पीपर का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। अब स्टेनलेस स्टील के पात्र में गोदुग्ध, पीपर चूर्ण और घृत मिलाकर पाक करें। ततः उसमें ३ किलो चीनी मिलाकर पकावें। जब दूध गाढ़ा खोवा जैसा हो जाय तो पात्र को उतारकर कुछ ठण्डा होने दें। तेजपत्ता, दालचीनी, छोटी इलायची और नागकेशर प्रत्येक ३५-३५ ग्राम लें और सूक्ष्म चूर्ण कर उक्त पाक में प्रक्षेपण करें और खूब मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। लड्डू या बर्फी जैसा भी बनाकर रखा जा सकता है। इस पिप्पलीपाक को दोष, धातु, अग्नि एवं सात्म्य का विचारकर उचित मात्रा में प्रयोग करने से बल्य, वृष्य, हृद्य है एवं धातुओं की पुष्टि करता है। यह पाक जीर्णज्वर, वमन, तृष्णा, अरुचि, श्वास, शोष, हिक्का, कामला, हृद्रोग, पाण्डु, गुल्म, त्रिदोषज प्रदर, वातरक्त, कृशता और रक्तपित्त नाशक है। यह पाक स्त्रियों का बृंहण करता है। इसका हमेशा प्रयोग करने से वली-पलितनाशक है।

मात्रा–५ से १० ग्राम। **अनुपान**–गरम गोदूध से। **गन्ध**–सुगन्ध (पाकगन्धी) इलायची आदि की। **वर्ण**–मटमैला या हल्का काफी रंग का। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–जीर्णज्वर, प्रदर, अरुचि, श्वासादि में।

जीर्णज्वर में चिकित्साक्रम (चक्रदत्त)

ज्वरे पेयाः कषायाश्च सर्पिः क्षीरं विरेचनम्।
षडहे षडहे देयं काले वीक्ष्यामयस्य च ॥१३७०॥

जीर्णज्वर में रोगी को औषधि सिद्ध पेया, कषाय तथा औषधिसिद्ध घृत एवं दुग्ध (क्षीरपाक) का पान प्रतिदिन कराना चाहिए और रोगी के बलाबल तथा रोग की तीव्रता आदि देखकर हर छठे दिन विरेचन देना चाहिए।

ज्वर में संशोधन (चरक)

ज्वरिभ्यो बहुदोषेभ्य ऊर्ध्वं चाधश्च बुद्धिमान्।
दद्यात् संशोधनं काले कल्पे यदुपदेक्ष्यते ॥१३७१॥

प्रवृद्ध दोष वाले ज्वरपीड़ितों को बुद्धिमान् वैद्य (चरक-कल्पस्थान में उपदिष्ट क्रम से) शरीर के ऊर्ध्व भाग स्थित दोष का वमन के द्वारा तथा अधःभाग स्थित दोष का विरेचन द्वारा शरीर का संशोधन करना चाहिए। अथवा चरकोक्त आगे कहे गये द्रव्यों एवं विधियों द्वारा वमन-विरेचन कराना चाहिए।

विमर्श—रोगी निर्बल एवं अल्प दोष से युक्त हो तो वमन-विरेचन नहीं कराना चाहिए। "ज्वरक्षीणस्य न हितं वमनं न विरेचनम्"।

ज्वर में वमन (चरक)

मदनं पिप्पलीभिर्वा कलिङ्गैर्मधुकेन वा।
युक्तमुष्णाम्बुना पेयं वमनं ज्वरशान्तये ॥१३७२॥
क्षौद्राम्बुना रसेनेक्षोरयवा लवणाम्बुना।
ज्वरे प्रच्छर्दनं शस्तं मद्यैर्वा तर्पणेन वा ॥१३७३॥

मदनफलबीजचूर्ण ५ से १० ग्राम पिप्पलीचूर्ण ३६५ मि.ग्रा. के साथ; अथवा मदनफलबीजचूर्ण ५ से १० ग्राम इन्द्रयवचूर्ण ३७५ मि.ग्रा. के साथ; अथवा मदनफलबीजचूर्ण ५ से १० ग्राम मुलेठीचूर्ण ३७५ मि.ग्रा. के साथ गरम पानी से पीना चाहिए। ऐसा करने से वमन होता है जिससे ज्वर शान्त हो जाता है। अर्थात् ज्वर की शान्ति के लिए उपर्युक्त वामक योगों का उष्णोदक से सेवन करना चाहिए। अथवा उपर्युक्त मदनफल एवं पिप्पलीचूर्ण के योगों का अनुपान मधु का शर्बत या इक्षुरस (गन्ने का रस) या लवण और उष्णजल का मिश्रण या मद्य या सत्तू के घोल का प्रयोग करना चाहिए। इसके सेवन से ज्वरित को वमन होता है जिससे कफादि दोष निकल जाते हैं और ज्वर भी शान्त हो जाता है।

ज्वर में विरेचन (चरक)

आरग्वधं वा पयसा मृद्वीकानां रसेन वा।
त्रिवृतां त्रायमाणां वा पयसा ज्वरितः पिबेत् ॥१३७४॥

अमलतासफल की गूदी १० से २५ ग्राम गरम दूध में पका

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लें तथा मसलकर कपड़े से छान लें और ज्वरार्त व्यक्तियों को विरेचनार्थ पिलावें। अथवा अमलतास की फलमज्जा १० से २५ ग्राम मुनक्का क्वाथ में पकावें और मसलकर छान लें तथा ज्वरार्त व्यक्ति को विरेचनार्थ पिलावें। अथवा निशोथ चूर्ण ५ से १० ग्राम उष्ण दूध से पिलावें या त्रायमाण चूर्ण ५ से १० ग्राम दूध के साथ पिलाने से विरेचन होकर ज्वर शान्त हो जाता है।

क्षीण या कृश ज्वरियों में क्रियाक्रम (चरक)

ज्वरक्षीणस्य न हितं वमनं न विरेचनम्।
कामन्तु पयसा तस्य निरूहैर्वा हरेन्मलान् ॥१३७५॥
प्रयोजयेज्ज्वरहरान् निरूहान् सानुवासनान्।
पक्वाशयगते दोषे वक्ष्यन्ते ये च सिद्धिषु ॥१३७६॥

ज्वर से क्षीण हुए रोगियों को वमन तथा विरेचन कराने वाले द्रव्यों का प्रयोग हितकर नहीं होता है। ऐसे ज्वरक्षीण रोगियों के मलों (दोषों) का निर्हरण दुग्धपान एवं निरूहण बस्ति द्वारा करना चाहिए। जब दोष पक्वाशय में स्थित हो तो ज्वरहर द्रव्यों के द्वारा अनुवासन तथा निरूहण बस्ति या चरक-सिद्धिस्थान में कथित योगों द्वारा बस्ति देकर क्षीण ज्वरियों के दोषों का निर्हरण करना चाहिए।

जीर्णज्वर में शिरोविरेचन (चरक)

गौरवे शिरसः शूले विबद्धेष्विन्द्रियेषु च।
जीर्णज्वरे रुचिकरं दद्याच्छीर्षविरेचनम् ॥१३७७॥

जीर्णज्वर के रोगियों में शिर में भारीपन, शिर:शूल तथा इन्द्रियों के स्वविषय ग्रहण करने में असमर्थ होने पर इच्छानुसार रुचिकर शिरोविरेचन का प्रयोग करना चाहिए।

४४२. ज्वर में शिर:शूल होने पर लेप

रक्तकरवीरपुष्पं धात्रीफलं सधान्याम्लं च।
कल्कः सुखोष्णलेपो ज्वरेषु शिरसो रुजं जयति ॥१३७८॥

१. रक्तकनेर के फूल १० ग्रा., २. आमला चूर्ण १० ग्राम एवं ३. काञ्जी यथावश्यक—लालकनेरफूल और आमलाचूर्ण या ताजा आमला दोनों को सिल पर काञ्जी के साथ पिस लें। चटनी जैसा होने पर कटोरी में मृदु अग्नि पर गरम करें और शिर:शूल प्रदेश में सुखोष्ण लेप करें। ऐसा करने से शिर:शूल नष्ट हो जाता है।

मात्रा–३ से ६ ग्राम। **अनुपान**–लेप। **गन्ध**–अम्लगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कषायाम्ल। **उपयोग**–शिर:शूल में।

जीर्णज्वर में दुग्धपान (चक्रदत्त)

जीर्णज्वरे कफे क्षीणे क्षीरं स्यादमृतोपमम्।
तदेव तरुणे पीतं विषवद्धन्ति मानवम् ॥१३७९॥

जीर्णज्वर में क्षीण हुए कफ की पूर्ति हेतु और बल की वृद्धि के लिए दुग्धपान अमृत की तरह हितकर होता है। वही दूध तरुणज्वर के रोगी को पिलाने से जहर की तरह मनुष्य को मार डालता है।

जीर्णज्वर में दुग्धपान (चरक)

चतुर्गुणेनाम्भसा च शृतं ज्वरहरं पयः।
धारोष्णं वा पयःशीतं पीतं सद्यो ज्वरं जयेत् ॥१३८०॥
जीर्णज्वराणां सर्वेषां पयः प्रशमनं परम्।
पेयं तदुष्णं शीतं वा यथास्वमौषधैः शृतम् ॥१३८१॥

गाय के दूध में चतुर्गुण जल मिलाकर स्टील के पात्र में पकावें। केवल दूध शेष रहने अर्थात् जल नष्ट हो जाने पर सुखोष्ण दूध पिलाने से जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है। अथवा धारोष्ण दूध पिलाने से अथवा उबाल कर ठण्डा हुआ दूध पिलाने से तुरन्त जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है। सभी प्रकार के जीर्णज्वर की शान्ति के लिए गाय का दूध श्रेष्ठौषधि है। उस दूध को गरमकर पिलावे या गरम के बाद ठण्डा होने पर पिलावें अथवा औषधियों के साथ क्षीरपाक कर पिलाने से जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है।

४४३. पञ्चमूली पय (चरक)

कासाच्छ्वासाच्छिरःशूलात्पार्श्वशूलाच्चिरज्वरात्।
मुच्यते ज्वरितः पीत्वा पञ्चमूलीशृतं पयः ॥१३८२॥

१. शालपर्णी, २. पृश्निपर्णी, ३. बृहती, ४. कण्टकारी, ५. गोक्षुर, ६. गाय का दूध तथा ७. जल—प्रत्येक द्रव्य समभाग में मिलाकर यवकुट करें तथा २५ ग्राम लें एवं गाय का दूध २०० मि.ली. तथा जल ८०० मि.ली. (चौगुना) लें। इन सभी को बड़े पात्र में रखकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जल सूख जाने पर दूध उतारकर छान लें और मिश्री आदि मिलाकर इस पञ्चमूली का क्षीरपान कराने से जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा–२०० मि.ली.। **अनुपान**–मिश्री या चीनी मिलाकर पिलावें। **गन्ध**–दुग्धगन्धी। **वर्ण**–श्वेत। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–जीर्णज्वर में।

क्षीरपाक-विधि (चक्रदत्त)

द्रव्यादष्टगुणं क्षीरं क्षीरात्तोयं चतुर्गुणम्।
क्षीरावशेषः कर्तव्यः क्षीरपाके त्वयं विधिः ॥१३८३॥

द्रव्य (औषध) से दूध आठ गुना लें और दूध से चार गुना जल लें। अर्थात् द्रव्य अर्जुनत्वक् यवकुट १० ग्राम, दूध ८० मि.ली. तथा जल ३२० मि.ली. लें। तीनों को १ पात्र में रखकर मध्यमाग्नि में पाक करें। जब जल सूख जाय और केवल दूध ही शेष रहे तो उतारकर छान लें तथा उसमें मिश्री मिलाकर रोगी को पिलाना चाहिए। यही क्षीरपाक की विधि है। इसमें कोई भी द्रव्य ले सकते हैं। यहाँ ज्वरहर द्रव्य या जीर्णज्वरहर द्रव्य पिप्पली आदि लेना उचित है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

४४४. त्रिकण्टकादि क्षीर (चरक)

त्रिकण्टकबलाव्याघ्रीगुडनागरसाधितम् ।
वर्चोमूत्रविबन्धघ्नं शोथज्वरहरं परम् ॥१३८४॥

१. गोखरु, २. बलामूल, ३. कण्टकारी, ४. गुड़, ५. शुण्ठी, ६. गाय का दूध तथा ७. जल—गोखरु में शुण्ठी तक के सभी पाँचों द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट करें। ऐसा यवकुट २५ ग्राम लें। दूध २०० मि.ली. और जल ८०० मि.ली. लेकर एक पात्र में रखकर मध्यमाग्नि में पकावें। जल सूखकर क्षीरावशेष रहने पर छान लें और मिश्री मिलाकर पिलावें। इस क्षीरपाक को पीने से पुरीष एवं मूत्र विबन्ध, शोथ एवं ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–२०० मि.ली.। **अनुपान**–मिश्री मिलाकर। **गन्ध**–दुग्धगन्धी। **वर्ण**–दुग्धवत्। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–मूत्रकृच्छ्र-मूत्रविबन्धशोथ एवं ज्वर में।

४४५. वृश्चीरादि क्षीर (चक्रदत्त)

वृश्चीरबिल्ववर्षाभूपयश्चोदकमेव च ।
पचेत् क्षीरावशिष्टन्तु तद्धि सर्वज्वरापहम् ॥१३८५॥
शीतं कोष्णं ज्वरे क्षीरं यथास्वमौषधैः शृतम् ।
एरण्डमूलसिद्धं वा ज्वरे सपरिकर्त्तिके ॥१३८६॥

१. श्वेत पुनर्नवा, २. बिल्वमूलत्वक्, ३. लाल पुनर्नवा, ४. दूध एवं ५. जल—तीनों द्रव्यों के मिश्रित यवकुट २५ ग्राम, दूध २०० मि.ली., जल ८०० मि.ली., तीनों को एक स्टील के पात्र में रखकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। क्षीरावशेष रहने पर छान लें और मिश्री मिलाकर जीर्णज्वरपीड़ित व्यक्ति को पिलावें। जिन दोषों की अधिकता हो उन दोषों को दूर करने वाली औषधियों से क्षीरपाक कर दोषानुसार शीत एवं उष्ण क्षीरपाक पिलाना चाहिए। आन्त्र परिवर्तन से युक्त ज्वर में एरण्डमूल से सिद्ध क्षीरपाक पिलाना चाहिए।

मात्रा–२०० मि.ली.। **अनुपान**–मिश्री मिलाकर। **गन्ध**–दुग्धगन्धी। **वर्ण**–दुग्धवत् श्वेत। **स्वाद**–मधुर। **उपयोग**–सर्वज्वरनाशक है।

ज्वर में बलि

ज्वरामयगृहीतस्य मुष्टिभिर्नवभिः कृतम् ।
तण्डुलैरोदनं तेन कुर्यात्पुत्तलकं शुभम् ॥१३८७॥
तं हरिद्राऽवलिप्ताङ्गं चतुःपीतध्वजान्वितम् ।
हरिद्रारसपूर्णाभिः पुटिकाभिश्चतसृभिः ॥१३८८॥
मण्डितं गन्धपुष्पाद्यैरवकीर्य विवर्जयेत् ।
एवं दिनत्रयं कुर्याज्ज्वररोगोपशान्तये ॥१३८९॥

विशेष—ओदनेन पुत्तलिकां निर्माय वीरणचाचिकायां संस्थाप्य हरिद्राभिरवलिप्य चतुःपीतपताकाभिरलङ्कृत्य गन्ध-पुष्पाद्यैरवकीर्य हरिद्रारसपूर्णाश्चतस्रः पुटिकाश्चतुष्कोणे संस्थाप्य विष्णुर्नमोऽद्येत्यादिना संकल्प्य ज्वरं ध्यात्वा समाबाह्य नवक-पर्दकाक्रीडगन्धपुष्पधूपदीपादिभिः सम्पूज्य सन्ध्यासमये ज्वरितं निर्मञ्छ्य मन्त्रमिमं पठित्वा दिनत्रयं बलिं दद्यात् । मन्त्रो यथा—ॐ नमो भगवते गरुडासनाय त्र्यम्बकाय स्वस्त्यस्तु वस्तुतः स्वाहा ओं कं टं पं शं वैनतेयाय नमः । ओं ह्री क्षः क्षेत्रपालाय नमः । ओं ठ ठ भो भो ज्वर शृणु शृणु हल हल गर्ज गर्ज एकाहिकं द्व्याहिकं त्र्याहिकं चातुर्थिकं साप्ताहिकम् अर्द्धमासिकं नैमेषिकं मौहूर्तिकं फट् फट् हूं फट् फट् हल हल मुञ्च मुञ्च भूम्यां गच्छ स्वाहा । इति पठित्वा एकवृक्षे श्मशाने चतुष्पथे वा विसर्जयेत् । एतत् कर्म वास्तुदेशस्य पवित्रे दक्षिणे प्रदेशे विदध्यात् ।

ज्वरपीड़ित व्यक्ति की मुट्ठी से नौ मुट्ठी चावल लें और मिट्टी की नयी हाँडी में विधिवत् पकाकर भात बना लें। भात से मण्ड नहीं निकालें। ठण्डा होने पर उस भात को हाथ से मसलकर पुरुषाकृति छोटी प्रतिमा बना लें और १ फुट चौकोर खस की छोटी चटाई के मध्य में उस प्रतिमा को बैठा दें। प्रतिमा के चारों ओर पीले कपड़े की पताका (झण्डी) १ वित्ता बाँस की पतली शलाका में लगाकर चटाई के चारों कोने में गाड़ दें। पुनः पलाशपत्र के ४ दोने में कच्ची हल्दी का रस भरकर चारों कोने में रख कर "विष्णुर्नमोऽद्य" इत्यादि मन्त्र से संकल्प द्वारा ज्वर का ध्यान करें। ततः गन्ध, पुष्प, धूप, दीपादि द्वारा पूजाकर सन्ध्याकाल में रोगी को "ॐ नमो भगवते गरुडासनाय त्र्यम्बकाय स्वस्त्यस्तु वस्तुतः स्वाहा" इत्यादि मन्त्र से अभिमन्त्रित कर चटाई के साथ इस ओदनपुत्तलिका को उठाकर किसी वृक्ष के नीचे या श्मशान या चौराहे पर रख देना चाहिए। ऐसा तीन दिन तक रोज करना चाहिए। यह कर्म पवित्र घर के दक्षिण भाग में करना चाहिए।

नक्षत्रानुसार उत्पन्न व्याधि की मर्यादा

कृत्तिकायां यदा व्याधिरुत्पन्नो भवति स्वयम् ।
नवरात्रं भवेत्पीडा त्रिरात्रं रोहिणीषु च ॥१३९०॥
मृगशीर्षे सप्तरात्रमार्द्रायां मुच्यतेऽसुभिः ।
पुनर्वसौ तथा पुष्ये सप्तरात्रेण मोचनम् ॥१३९१॥
नवरात्रं तथाश्लेषे श्मशानान्तं मघासु च ।
द्वौ मासौ पूर्वफाल्गुन्यामुत्तरासु त्रिपञ्चकम् ॥१३९२॥
हस्ते च सप्तमे मोक्षश्चित्रायामर्द्धमासकम् ।
मासद्वयं तथा स्वात्यां विशाखे दिनविंशतिः ॥१३९३॥
मैत्रे चैव दशाहानि ज्येष्ठायामर्द्धमासकम् ।
मूलेन जायते मोक्षः पूर्वाषाढे त्रिपञ्चकम् ॥१३९४॥
उत्तरे दिनविंशत्या द्वौ मासौ श्रवणे तथा ।
धनिष्ठायामर्द्धमासो वारुणे च दशाहकम् ॥१३९५॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पूर्वभाद्रपदे देवि ! ऊनविंशतिवासरम् ।
त्रिपक्षञ्चाहिबध्ने च रेवत्यां दशरात्रिकम् ॥१३९६॥
अहोरात्रं तथाऽश्विन्यां भरण्यान्तु गतायुषः ।
एवं क्रमेण जानीयान्नक्षत्रेषु यथोचितम् ॥१३९७॥

१. कृत्तिका नक्षत्र में जब रोग उत्पन्न हो जाय तो नौ रात्रि तक रहता है।

२. रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न रोग ३ रात्रि तक रहता है।

३. मृगशिरा नक्षत्र में उत्पन्न रोग ७ रात्रि तक रहता है।

४. आर्द्रा नक्षत्र में उत्पन्न रोग प्राणहर होता है।

५. पुनर्वसु नक्षत्र में उत्पन्न रोग ७ रात्रि तक रहता है।

६. पुष्य नक्षत्र में उत्पन्न रोग ७ रात्रि तक रहता है।

७. आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न रोग ९ रात्रि तक रहता है।

८. मघा नक्षत्र में उत्पन्न रोग मृत्युकारक होता है।

९. पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न रोग २ माह के बाद नष्ट होता है।

१०. उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न रोग १५ दिन बाद नष्ट होता है।

११. हस्त नक्षत्र में उत्पन्न रोग ७ दिन बाद नष्ट होता है।

१२. चित्रा नक्षत्र में उत्पन्न रोग १५ दिन तक रहता है।

१३. स्वाती नक्षत्र में उत्पन्न रोग २ महीना तक रहता है।

१४. विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न रोग २० दिन तक रहता है।

१५. अनुराधा नक्षत्र में उत्पन्न रोग १० दिन तक रहता है।

१६. ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न रोग १५ दिन तक रहता है।

१७. मूल नक्षत्र में उत्पन्न रोग नष्ट नहीं होता है।

१८. पूर्वाषाढा नक्षत्र में उत्पन्न रोग १५ दिन तक रहता है।

१९. उत्तराषाढा नक्षत्र में उत्पन्न रोग २० दिन तक रहता है।

२०. श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न रोग २० माह तक रहता है।

२१. धनिष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न रोग १५ दिन तक रहता है।

२२. शतभिषा नक्षत्र में उत्पन्न रोग १० दिन तक रहता है।

२३. पूर्वभाद्रपद नक्षत्र में उत्पन्न रोग १९ दिन तक रहता है।

२४. उत्तरभाद्रपद नक्षत्र में उत्पन्न रोग १½ माह तक रहता है।

२५. रेवती नक्षत्र में उत्पन्न रोग १० दिन तक रहता है।

२६. अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न रोग २४ घण्टे तक ही रहता है।

२७. भरणी नक्षत्र में उत्पन्न रोग प्राणान्तकृत है।

इसी क्रम से नक्षत्रानुसार उत्पन्न रोगों की मर्यादा एवं मोक्ष तिथि समझें।

ज्वरमुक्ति के लक्षण (सुश्रुत)

स्वेदो लघुत्वं शिरसः कण्डूः पाको मुखस्य च ।
क्षवथुश्चान्नलिप्सा च ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥१३९८॥

शरीर से बार-बार पसीना निकलना, शरीर का हल्कापन लगना, शिर में खुजली होना, मुखपाक होना, बार-बार छींक आना और भोजन करने की इच्छा होना—ये ज्वर नष्ट होने के लक्षण हैं।

आचार्य ने भी कहा है—

देहो लघुर्व्यपगतक्लममोहतापः
पाको मुखे करणसौष्ठवमव्यथत्वम् ।
स्वेदः क्षवः प्रकृतिगामिमनोऽन्नलिप्सा
कण्डूश्च मूर्ध्नि विगतज्वरलक्षणानि ॥१३९९॥

शरीर का हलका होना, क्लम, मोह एवं ताप का नाश होना, मुखपाक होना, (ओठ के किनारों पर फुंसियाँ होना), सभी ज्ञानेन्द्रियाँ एवं कर्मेन्द्रियों का प्रकृतिस्थ होना अर्थात् ज्ञानेन्द्रियों का अपने प्राकृतिक कर्मों को निर्बाध गति से करना, सर्वाङ्ग स्वेद, बार-बार छींक आना, मन का प्राकृतिक होना, अन्न में रुचि तथा शिर में खुजली होना—ये सब विगत ज्वर (ज्वर नष्ट) होने के लक्षण हैं।

ज्वरमुक्तावस्था में वर्जनीय कर्म (चरक)

व्यायामं च व्यवायं च स्नानं चंक्रमणानि च ।
ज्वरमुक्तो न सेवेत यावन्नो बलवान् भवेत् ॥१४००॥

ज्वरमुक्त व्यक्ति व्यायाम, मैथुन, स्नान, घूमना आदि कर्म तब तक न करे जब तक वह पूर्ण रूप से बलवान् (पूर्ववत् बल प्राप्त) न हो जाय।

नवज्वर में अपथ्य

स्नानं विरेकं सुरतं कषायं
व्यायाममभ्यञ्जनमह्नि निद्राम् ।
दुग्धं घृतं वैदलमामिषं च
तक्रं सुरास्वादु गुरु द्रवं च ।
अन्नं प्रवातं भ्रमणं रुषां च
त्यजेत्प्रयत्नात्तरुणज्वरार्त्तः ॥१४०१॥

तरुण ज्वर से पीड़ित व्यक्ति स्नान, विरेचन, मैथुन, औषधों के रस-क्वाथ-कल्क-हिम-फाण्टादि कषाय, व्यायाम, तैलमालिश, दिन में सोना, दूध पीना, घृतसेवन, दाल, मांस, तक्र, मदिरा, मधुर-गुरु द्रव एवं अन्नादि पदार्थों का भोजन, ठण्डी हवा और घूमना तथा क्रोध नहीं करना चाहिए। अर्थात् इन कर्मों को छोड़ देना चाहिए।

मध्यज्वर में पथ्य

पुरातनाः षष्टिकशालयश्च
वार्त्ताकुशोभाञ्जनकारवेल्लम् ।
वेत्राग्रमाषाढफलं पटोलं
कर्कोटकं मूलकपूतिके च ॥१४०२॥
मुद्गैर्मसूरैश्चणकैः कुलत्थै-
र्मकुष्ठकैर्वा विहितश्च यूषः ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पाठाऽमृतावास्तुकतण्डुलीय
जीवन्तिशाकानि च काकमाची ॥१४०३॥
द्राक्षाकपित्थानि च दाडिमानि
वैकङ्कतान्येव पचेलिमानि।
लघूनि सात्म्यानि च भेषजानि
पथ्यानि मध्यज्वरिणाममूनि ॥१४०४॥

१. पुराना साठी चावल, २. बैगन, ३. सहिजन, ४. करैला, ५. वेंतसलता का अग्रभाग, ६. आषाढ़ माह का फल, ७. परवल, ८. कर्कोटक, ९. मूँग, १० मसूर, ११. चना, १२. कुलथी, १३. मोठ, १४. पाठा, १५ गुडूची, १६. बथुआ का शाक, १७. मेघनाद शाक, १८. जीवन्ती शाक, १९. मकोय- पत्र, २०. द्राक्षा (मुनक्का), २१. कपित्थफल, २२. अनारफल, २३. कण्टाई और २४. अन्य हितकर औषध—ये सब मध्य ज्वर के रोगियों के लिए हितकर हैं।

पुराना ज्वर में पथ्य

विरेचनं छर्दनमञ्जनं च
नस्यं च धूमोऽप्यनुवासनं च।
शिराव्यधः संशमनं प्रदेहो-
ऽभ्यङ्गोऽवगाहः शिशिरोपचारः ॥१४०५॥
एणः कुलिङ्गो हरिणो मयूरो
लावः शशस्तैत्तिरिकुक्कुटौ च।
क्रौञ्चः कुरङ्गः पृषतश्चकोरः
कपिञ्जलो वर्त्तककालपुच्छौ ॥१४०६॥
गवामजायाश्च पयो घृतं च
हरीतकी पर्वतनिर्झराम्भः।
एरण्डतैलं सितचन्दनं च
द्रव्याणि सर्वाणि पुरेरितानि ॥
ज्योत्स्नाप्रियालिङ्गनमप्ययं स्याद्
गणः पुराणज्वरिणां हिताय ॥१४०७॥

विरेचन, वमन कराना, अञ्जन लगाना, नस्य लेना, धूमपान, अनुवासन, सिराव्यध, संशमन औषध, प्रदेह, तैलमालिश, स्नान, शीतल पदार्थों का सेवन, मांसों में हरिण, गौरैया पक्षी, सामान्य हरिण, मोर, लाव (बगेरी), खरगोश, तीतर, मुर्गा, क्रौञ्च, कुरङ्ग तथा पृषत् (दोनों हरिण के प्रकार हैं), चकोर, कपिञ्जल, बत्तक और कालपुच्छ के मांस; गाय एवं बकरी का दूध तथा घी, हरीतकी, पहाड़ी झरनों का पानी, एरण्डतैल, श्वेत चन्दन, चन्द्रमा की चाँदनी तथा प्रिया स्त्री का आलिङ्गन—ये सभी वस्तुएँ पुराने ज्वर वाले रोगियों के लिए हितकर हैं।

ज्वर में अपथ्य

अधिवासनकर्माणि रक्तस्रग्वस्त्रधारणम्।
वमिवेगं दन्तकाष्ठमसात्म्यमतिभोजनम् ॥१४०८॥
विरुद्धान्यन्नपानानि विदाहीनि गुरूणि च।
दुष्टाम्बु क्षारमम्लानि पत्रशाकं विरूढकम् ॥१४०९॥
नलदाम्बु च ताम्बूलं कालिङ्गं लकुचं फलम्।
ओडीमत्स्यं च पिण्याकं छत्रकं पिष्टवैकृतम् ॥
अभिष्यन्दीनि चैतानि ज्वरितः परिवर्जयेत् ॥१४१०॥

अधिवासन कर्म अर्थात् सुगन्धित तेलों (इत्र, सेण्ट), सुगन्धित फूलों की माला, लाल फूलों की माला, लाल वस्त्र धारण, वमन के वेगों को रोकना या अनपेक्षित वमन करना, दातौन से मुख धोना, असात्म्य (प्रतिकूल) भोजन, प्रकृतिविरुद्ध, दोषविरुद्ध, संयोगविरुद्ध, रस-गुण-वीर्यविरुद्ध भोजन एवं पान करना, विदाही अन्न, गुरु अन्न, दूषित जल, क्षार, अम्ल, पत्रशाक, अंकुरित अन्न, खस से सुगन्धित जल, ताम्बूल भक्षण, तरबूजफल, बड़हरफल, ओडी जाति की मछली।

तिलकुट या तिलपिष्ट भोजन, छत्रक, उड़द की पिट्ठी भरा कचौरी-बड़ा आदि पदार्थ और अभिष्यन्दी पदार्थ (दही) आदि भोज्य सामग्री ज्वरपीड़ितों को नहीं सेवन करना चाहिए।

आरोग्य-स्नानविधि

धनिष्ठा श्रवणा स्वाती ज्येष्ठा शतभिषा तथा।
रविमन्दभौमवाराश्चन्द्रोऽथ शुभवर्जितः ॥१४११॥
केन्द्रस्थाश्चाशुभाः शस्ता व्यतीपातादिवासराः।
तिथिर्न शस्ता प्रतिपत्तृतीया नवमी तथा ॥१४१२॥
स्नानाय रोगमुक्तानां दशमी च त्रयोदशी।
बुधेन्दुगुरुशुक्राणां वाराः स्नाने न शोभनाः।
रोगान्मुक्तस्य नाश्लेषा रोहिणी भद्रदायिनी ॥१४१३॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां ज्वराधिकारः।

धनिष्ठा, श्रवण, स्वाती, ज्येष्ठा और शतभिषा हो और रविवार, शनिवार एवं मंगलवार हो, विशेषकर चन्द्रादि शुभवार नहीं हो तो रोगी को स्नान कराना चाहिए। रोगी की जन्मकुण्डली में—प्रथम, चतुर्थ, सप्तम एवं दशम घर में शुभ ग्रह (चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ग्रह) हों और व्यतिपादादि योग हों तथा प्रतिपद, तृतीया एवं नवमी तिथि न हों तो उस दिन रोगी को स्नान कराना चाहिए। रोगमुक्ति के लिए दशमी और त्रयोदशी तिथि श्रेष्ठ है। साथ ही बुध, चन्द्र, गुरु एवं शुक्रवार को स्नान नहीं कराना चाहिए। रोहिणी और आश्लेषा नक्षत्र स्नान के लिए कल्याणकारक नहीं है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य ज्वराधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ ज्वरातिसाराधिकारः (६)

ज्वरातिसार का लक्षण

पित्तज्वरे पित्तभवोऽतिसार-
स्तथाऽतिसारे यदि वा ज्वरः स्यात् ।
दोषस्य दूष्यस्य समानभावा-
ज्ज्वरातिसारः कथितो भिषग्भिः ॥१॥

पित्तज्वर से पीड़ित रोगी में यदि पित्तज अतिसार हो जाय या अतिसार पीड़ित रोगी में यदि ज्वर हो तो दोष एवं दूष्य समान होने के कारण वैद्य लोग इसे ज्वरातिसार रोग कहते हैं।

ज्वरातिसार में मिलित चिकित्सा-निषेध

ज्वरातिसारयोरुक्तं भेषजं यत् पृथक् पृथक् ।
न तन्मिलितयोः कार्यमन्योऽन्यं वर्द्धयेद्यतः ॥२॥
प्रायो ज्वरहरं भेदि स्तम्भनं त्वतिसारनुत् ।
अतोऽन्योन्यविरुद्धत्वाद् वर्द्धनं तत्परस्परम् ॥३॥

ज्वर एवं अतिसार की जो अलग-अलग चिकित्सा कही गयी है उन्हीं दोनों की चिकित्साओं के मिश्रित योगों का ज्वरातिसार में प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि मिलित चिकित्सा के योगों का प्रयोग करने से परस्पर एक-दूसरे की वृद्धि कर देते हैं। प्राय: ज्वरशामक औषधियाँ सारक होने से अतिसार को बढ़ा देती हैं। तथा अतिसारशामक औषधियाँ स्तम्भक होने से वृद्ध दोषों का स्तम्भन करके ज्वर को बढ़ा देती हैं। इसलिए इन दोनों की चिकित्सा में बताये गये विशिष्ट योगों का ही प्रयोग करना चाहिए।

ज्वरातिसार में चिकित्साक्रम

ज्वरातिसारिणामादौ कुर्याल्लङ्घनपाचने ।
प्रायस्तावामसम्बन्धं विना न भवतो यतः ॥४॥

ज्वरातिसार के रोगियों को पहले लंघन तथा पाचन कराना चाहिए, क्योंकि ज्वरातिसार में ये दोनों ज्वर एवं अतिसार रोग आमदोष की वृद्धि के बिना नहीं होते। आमदोष अग्नि को मन्द करके ज्वरातिसार उत्पन्न करता है। मन्द हुई अग्नि लङ्घन से प्रदीप्त होती है। इस प्रकार लङ्घन और पाचन ये दोनों क्रियाएँ आमदोषों को शान्त करती हैं।

ज्वरातिसार में पेया

ज्वरातिसारे पेयादिक्रमः स्याल्लङ्घिते हितः ।
ज्वरातिसारी पेयां वा पिबेत्साम्लां शृतां नरः ।
पृश्निपर्णीबिलाबिल्वनागरोत्पलधान्यकैः ॥५॥

लङ्घन कराने के बाद ज्वरातिसार में पेया आदि क्रम लाभदायक होता है। इसलिए पृश्निपर्णी, बला, बेल के फल का गूदा, शुण्ठी, कमलपुष्प और धनियाँ प्रत्येक १० ग्राम समान मात्रा में लेकर ७५० मि.ली. पानी में अर्धावशेष रहने तक उबालें तथा छान लें। इस पानी में धान का लावा या साठी का चावल डालकर पतली पेया बनाकर रखें तथा उसमें थोड़ा अनार के बीज का रस मिलाकर पिलायें।

१. ह्रीबेरादि क्वाथ (चक्रदत्त)

ह्रीबेरातिविषामुस्तबिल्वनागरधान्यकैः ॥६॥
पिबेत्पिच्छाविबन्धघ्नं शूलदोषामपाचनम् ।
सरक्तं हन्त्यतीसारं सज्वरं वाऽथ विज्वरम् ॥७॥

१. सुगन्धबाला, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. बिल्वफल-मज्जा, ५. शुण्ठी तथा ६. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल देकर क्वाथ विधि से क्वाथ कर चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ को आमयुक्त अतिसार, विबन्ध, शूल, रक्तातिसार, ज्वरातिसार एवं अतिसार से पीड़ित रोगी को पिलायें।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रखकर। **गन्ध**–सुगन्धित द्रव। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरातिसार, विबन्ध तथा रक्तातिसार में।

२. पाठादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पाठाऽमृतापर्पटमुस्तविश्वा-
किराततिक्तेन्द्रयवान् विपाच्य ।
पिबन् हरिष्यत्यचिरेण सर्वाञ्-
ज्वरातिसारानपि दुर्निवारान् ॥८॥

१. पाठा, २. गुडूची, ३. पित्तपापड़ा, ४. नागरमोथा, ५. शुण्ठी, ६. चिरायता तथा ६. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट कर लें तथा इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल देकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें तथा छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ को आमातिसार, ज्वरातिसार तथा ज्वर में पीने को दें।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रखकर। **गन्ध**–सुगन्धित। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार-आमातिसार में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३. नागरादि क्वाथ (चक्रदत्त)

नागरातिविषामुस्तामृताभूनिम्बवत्सकैः ।
सर्वज्वरहरः क्वाथः सर्वातीसारनाशनः ॥९॥

१. शुण्ठी, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. गुडूची, ५. चिरायता तथा ६. कुटज की छाल—इन सभी द्रव्यों को समान भाग में लेकर यवकुट करें। इसमें सें २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुने जल में क्वाथ विधि से क्वाथ बनायें तथा छानकर ५० मि.ली. पिलायें। इससे ज्वर तथा अतिसार शान्त होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रख कर। **गन्ध**–सुगन्धित। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वर-ज्वरातिसार-अतिसार में।

४. उशीरादि क्वाथ (चक्रदत्त)

उशीरं बालकं मुस्तं धन्याकं विश्वभेषजम् ।
समङ्गा धातकी लोध्रं बिल्वं दीपनपाचनम् ॥१०॥
हन्त्यरोचकपिच्छामविबन्धं सातिवेदनम् ।
सशोणितमतीसारं सज्वरं वाऽथ विज्वरम् ॥११॥

१. खस, २. सुगन्धबाला, ३. नागरमोथा, ४. धनिया, ५. शुण्ठी, ६. मञ्जिष्ठा, ७. धातकीपुष्प, ८. लोध्र और ९. बिल्वफलमज्जा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें, इसमें से २५ ग्राम चूर्ण तथा १६ गुना जल को लेकर क्वाथनिर्माण विधि से क्वाथ करें तथा उसे छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ पीने को दें। यह अग्नि को दीप्त करता है, आमदोषों का पाचन करता है एवं अरुचि, आमातिसार, विबन्ध, शूल, रक्तातिसार, सज्वरातिसार एवं निर्ज्वरातिसार को नाश करता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रख कर। **गन्ध**–सुगन्धित। **वर्ण**–रक्त। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–आमातिसार, ज्वरातिसार एवं रक्तातिसार में।

५. शुण्ठीदशमूल क्वाथ (चक्रदत्त)

दशमूलीकषायेण विश्वमक्षसमं पिबेत् ।
ज्वरे चैवातिसारे च सशोथे ग्रहणीगदे ॥१२॥

दशमूल (१. बिल्व, २. अग्निमन्थ, ३. श्योनाक, ४. पाटला, ५. गम्भारी, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. गोखरु, ९. कण्टकारी तथा १०. बृहती) क्वाथ मे १ माशा शुण्ठी चूर्ण मिलाकर पीने से ज्वर, ज्वरातिसार एवं ग्रहणी रोग में लाभ होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रखकर। **गन्ध**–सुगन्धित। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार, अरुचि, छर्दि, तृष्णा तथा दाह में।

६. गुडूच्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

गुडूच्यतिविषाधान्यशुण्ठीबिल्वाब्दबालकैः ।
पाठाभूनिम्बकुटजचन्दनोशीरपद्मकैः ॥१३॥
कषायः शीतलः पेयो ज्वरातीसारशान्तये ।
हृल्लासारोचकच्छर्दिपिपासादाहशान्तिकृत् ॥१४॥

१. गुडूची, २. अतीस, ३. धनियाँ, ४. शुण्ठी, ५. बिल्वफलमज्जा, ६. नागरमोथा, ७. नेत्रबाला, ८. पाठा, ९. चिरायता, १०.कुटज की छाल, ११. रक्तचन्दन, १२. खस तथा १३, पद्मकाष्ठ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथ निर्माण विधि से १६ गुना जल के साथ क्वाथ करें और छानकर ५० मि.ली. रोगी को पीने को दें। इसके सेवन से ज्वरातिसार, जी मिचलाना, अरुचि, छर्दि, तृष्णा तथा हाथ-पैरों की जलन शान्त होती है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रख कर। **गन्ध**–सुगन्धित। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के ज्वर, ज्वरातिसार, छर्दि एवं कास-श्वास में।

७. लघुपञ्चमूल्यादि क्वाथ

पञ्चमूलीबलाबिल्वगुडूचीमुस्तनागरैः ।
पाठाभूनिम्बह्रीबेरकुटजत्वक्फलैः शृतम् ॥१५॥
हन्ति सर्वानतीसाराञ्ज्वरं दोषं वमिं तथा ।
सशूलोपद्रवं कासं श्वासं हन्यात्सुदारुणम् ॥१६॥

१. लघुपञ्चमूल (शालपर्णी, पृश्निपर्णी, गोक्षुर, बृहती, कण्टकारी), २. बलामूल, ३. बिल्वफलमज्जा, ४. गुडूची, ५. नागरमोथा, ६. शुण्ठी, ७. पाठा, ८. चिरायता, ९. सुगन्धबाला, १०. कुटजत्वक् और ११. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें तथा २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथ-निर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर रोगी को पिलायें। इस क्वाथ को पीने से सभी प्रकार के अतिसार, ज्वर, छर्दि, शूलयुक्त अतिसार, श्लैष्मिक कास तथा श्वास रोग शान्त होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री डालकर पियें। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–किञ्चित् पाण्डुवर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वर-अतिसार, छर्दि, कास एवं श्वास रोग में।

पञ्चमूली तु सामान्या योज्या पैत्ते कनीयसी ।
महती पञ्चमूली तु वातश्लेष्मातुरे हिता ॥१७॥

पित्तज अतिसार में योगों में वर्णित पञ्चमूली शब्द से लघुपञ्च मूल लाभदायक होने से उसी को लिया जाता है तथा वात-कफ-जन्य अतिसार में योगों में वर्णित पञ्चमूली शब्द से बृहत्पञ्चमूल लाभदायक होने से उसी को लिया जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

८. बृहत्पञ्चमूल्यादि क्वाथ

पञ्चमूलीशृङ्गबेरशृङ्गाटं कञ्चटं घनम्।
जम्बूदाडिमपत्रञ्च बला बालं गुडूचिका ॥१८॥
पाठा बिल्वं समङ्गा च कुटजत्वक् फलं तथा।
धान्यकं धातकी क्वाथं विषाजीरकसंयुतम् ॥१९॥
पिबेज्ज्वरातिसारे च सरक्ते वाऽप्यरक्तके।
अपि योगशतैस्त्यक्ते चासाध्ये सर्वरूपके ॥२०॥

१. बेल की छाल, २. अग्निमंथ, ३. श्योनाक, ४. पाटला, ५. गम्भारी, ६. शुण्ठी, ७. सिंघाड़ा, ८. कांचड़ा, ९. नागरमोथा, १०. जामुन के पत्ते, ११. अनार के पत्ते, १२. बलामूल, १३. नेत्रबाला, १४. गुडूची, १५. पाठा, १६. बेल की फलमज्जा, १७. मञ्जिष्ठा, १८. कुटज छाल, १९. इन्द्रयव, २०. धनिया तथा २१. धातकीपुष्प—इन सभी द्रव्यों में से प्रत्येक को समभाग में लेकर यवकुट करें। यवकुट चूर्ण को २५ ग्राम लेकर १६ गुना जल में क्वाथनिर्माण विधि से क्वाथ करें तथा चौथाई शेष रहने पर छान लें। उस छने क्वाथ में १ ग्रा. अतीस चूर्ण तथा १ ग्रा. भुना हुआ जीरे का चूर्ण मिलाकर पिलायें। इसके सेवन से ज्वरातिसार, रक्तातिसार तथा सामान्य अतिसार में लाभ होता है। अनेक योगों के सेवन करने पर भी नष्ट नहीं होने वाले अतिसार तथा असाध्य एवं सभी उपद्रवों से युक्त अतिसार में यह क्वाथ अत्यन्त लाभ देता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–चीनी या मिश्री के साथ। **गन्ध**–सुगन्ध। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–असाध्य एवं उपद्रव युक्त अतिसार, ज्वरातिसार एवं रक्तातिसार में।

९. धान्यशुण्ठी क्वाथ

धन्याकं विश्वसंयुक्तमामघ्नं वह्निदीपनम्।
वातश्लेष्मज्वरहरं शूलातीसारनाशनम् ॥२१॥

१. धनियाँ एवं २. शुण्ठी—इन दोनों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा उसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल देकर क्वाथनिर्माण विधि से क्वाथ का निर्माण करें और चौथाई शेष रहे तो छान लें। ५० मि.ली. की मात्रा में दिन में २ बार सेवन करें। इसके सेवन से आमदोष शान्त होता है तथा अग्नि दीप्त होती है। वात-श्लेष्मिक ज्वर एवं शूल युक्त अतिसार में लाभदायक है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**– मिश्री मुख में रखकर। **गन्ध**–धनियाँ की सुगन्ध। **वर्ण**–पाण्डुवर्ण द्रव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरातिसार में।

१०. कलिङ्गादि क्वाथ

कलिङ्गातिविषाशुण्ठीकिराताम्बुयवासकम्।
ज्वरातीसारसन्तापं नाशयेदविकल्पतः ॥२२॥

१. इन्द्रयव, २. अतीस, ३. शुण्ठी, ४. चिरायता, ५. नेत्रबाला तथा ६. यवासा—इन द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथ निर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ का निर्माण करें और चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में रोगी को पीने को दें। इसके सेवन से ज्वरातिसार निश्चय ही ठीक हो जाता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–पीकर मिश्री खाये। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–हल्का पाण्डुवर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार में।

११. घनजलादि क्वाथ

घनजलपाठाऽतिविषा-पथ्योत्पलधान्यरोहिणीविश्वैः।
सेन्द्रयवैः कृतमम्भः सातीसारं ज्वरं जयति ॥२३॥

१. मोथा, २. नेत्रबाला, ३. पाढल, ४. अतीस, ५. हरीतकी, ६. नीलकमल, ७. धनियाँ, ८. कुटकी, ९. शुण्ठी और १०. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण कर लें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में रोगी को पीने को दें। इसके सेवन से ज्वरातिसार नष्ट होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रखकर। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–किञ्चिद्रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार में।

१२. धान्यनागरादि क्वाथ

धान्यनागरबिल्वाब्दबालकैः साधितं जलम्।
आमशूलहरं ग्राह्यं दीपनं पाचनं परम् ॥२४॥

१. धनियाँ, २. शुण्ठी, ३. बिल्वफलमज्जा, ४. मोथा तथा ५. नेत्रबाला—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा उसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान कर ५० मि.ली. की मात्रा में पिलायें। इसके पीने से आमदोष एवं शूल नष्ट होता है। यह क्वाथ ग्राही, पाचक तथा अग्नि को प्रदीप्त करने वाला है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मुख में मिश्री रखकर। **गन्ध**–औषधि स्वाद। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–आमातिसार एवं आमदोष में।

१३. बिल्वादि क्वाथ

बिल्वबालकभूनिम्बागुडूचीमुस्तवत्सकैः।
कषायः पाचनः शोथसर्वातीसारनाशनः ॥२५॥

१. बाल बिल्वफलमज्जा, २. नेत्रबाला, ३. चिरायता, ४.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गुडूची, ५. मोथा और ६. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर रोगी को पीने को दें। इससे शोथ एवं सभी प्रकार के अतिसार—मुख्यतः ज्वरातिसार शान्त होते हैं। यह पाचक है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मिश्री के टुकड़े। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार एवं आमातिसार में।

१४. कुटजादि क्वाथ

कुटजो नागरं मुस्तममृताऽतिविषा तथा।
एभिः कृतं पिबेत् क्वाथं ज्वरातीसारनाशनम् ॥२६॥

१. कुटज की छाल, २. शुण्ठी, ३. नागरमोथा, ४. गुडूची और ५. अतीस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा रोगी को पिलायें। इसके सेवन से ज्वरातिसार शान्त होता हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–पीने के बाद मुँह में मिश्री के टुकड़े रखें। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–आमातिसार एवं ज्वरातिसार में।

१५. किरातिक्तादि क्वाथ

किराताब्दामृताविश्वचन्दनोदीच्यवत्सकैः ।
शोथातीसारशमनं विशेषाज्ज्वरनाशनम् ॥२७॥

१. चिरायता, २. नागरमोथा, ३. गुडूची, ४. शुण्ठी, ५. रक्तचन्दन, ६. नेत्रबाला तथा ७. कुटजत्वक्—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा उसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ-निर्माण विधि से १६ गुना जल से क्वाथ करें और चौथाई भाग शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में रोगी को पिलायें। इसके पीने से शोथ, अतिसार एवं ज्वर शान्त होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–क्वाथ पीने के बाद कुल्ला कर मिश्री का टुकड़ा रखें। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–आमातिसार एवं ज्वरातिसार में।

१६. विडङ्गादि क्वाथ

विडङ्गातिविषामुस्तपाठादारुकलिङ्गकम् ।
मरिचेन समायुक्तं शोथातीसारनाशनम् ॥२८॥

१. वायविडङ्ग, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. पाठा, ५. देवदारु, ६. इन्द्रयव तथा ७. मरिच—मरिच को छोड़कर सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ का निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छान कर ५० मि.ली. क्वाथ में काली मरिच का चूर्ण २ ग्रा. मिलाकर पीने को दें। यह क्वाथ शोथ और अतिसार को शान्त करता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–। **गन्ध**–औषधिगन्धी। **वर्ण**–मटमैला वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार, आमातिसार एवं शोथ में।

१७. शुण्ठ्यादि क्वाथ

शुण्ठीबालकमुस्तकबिल्वं पाठा विषा च धान्यानि ।
पानं त्वरुचिच्छर्दिज्वरातिसारं विनाशयति ॥२९॥

१. शुण्ठी, २. नेत्रबाला, ३. मोथा, ४. बालबिल्व-फलमज्जा, ५. पाठा, ६. अतीस तथा ७. धनिया—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा उसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा रोगी को सेवन करायें। इसको पीने से अरुचि, छर्दि एवं अतिसार शान्त होते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–क्वाथ पीकर जल से कुल्ला कर मुख में मिश्री का टुकड़ा रखें। **गन्ध**–औषधि गन्धी। **वर्ण**–मटमैला वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार-आमातिसार में।

१८. वत्सकादि क्वाथ

वत्सकश्च सुरदारुरोहिणी
धान्यबिल्वमगधात्रिकण्टकम् ।
निम्बबीजगजपिप्पलीवृकी
क्वाथको ज्वररुजाऽतिसारहृत् ॥३०॥

१. कुटजत्वक्, २. देवदारु, ३. कुटकी, ४. धनिया, ५. बालबिल्वफलमज्जा, ६. पीपल, ७. गोखरु, ८. नीम के बीज, ९. गजपिप्पली और १०. पाठा—इन द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ का निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर रोगी को ५० मि.ली. की मात्रा में पिलायें। इस क्वाथ को पीने से ज्वरातिसार शान्त होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–क्वाथ पीकर जल से कुल्ला कर मिश्री का टुकड़ा मुख में रखें। **गन्ध**–औषधिगन्धी। **वर्ण**–मटमैला वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार में।

१९. भूनिम्बादि क्वाथ

भूनिम्बबिल्वसलिलामृतामुस्तकवत्सकैः ।
कषायः पाचनः शोथज्वरातीसारनाशनः ॥३१॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. चिरायता, २. बाल बिल्वफलमज्जा, ३. नेत्रबाला, ४. गुडूची, ५. मोथा तथा ६. कुटजत्वक्—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल से क्वाथ का निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में रोगी को पिलायें। यह क्वाथ शोथ एवं ज्वरातिसार नाशक है। पाचन है ।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–क्वाथ पीकर जल से कुल्ला कर मुख में मिश्री का टुकड़ा रखें। **गन्ध**–औषधगन्धी। **वर्ण**–मटमैला वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार एवं शोथ में।

२०. बिल्वपञ्चक क्वाथ

शालपर्णी पृश्निपर्णी बला बिल्वं सदाडिमम् ।
बिल्वपञ्चकमित्येतत् क्वाथं कृत्वा प्रदापयेत् ।
अतीसारे ज्वरे छर्द्यां शस्यते बिल्वपञ्चकम् ॥३२॥

१. शालपर्णी, २. पृश्निपर्णी, ३. बलामूल, ४. बाल बिल्वफलमज्जा और ५. दाडिमत्वक्—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण कर लें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथ निर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर रोगी को ५० मि.ली. की मात्रा में पिलायें। यह क्वाथ ज्वर, अतिसार एवं वमन को शान्त करता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–क्वाथ पीकर जल से कुल्ला करें तथा मुख में मिश्री का टुकड़ा रखें। **गन्ध**–औषधगन्धी। **वर्ण**–मटमैला वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–अतिसार, ज्वरातिसार एवं वमन में।

२१. ज्वरातिसार में दो सिद्धयोग क्वाथ

वत्सकस्य फलं दारु रोहिणी गजपिप्पली ।
श्वदंष्ट्रा पिप्पली धान्यं बिल्वं पाठा यमानिका ॥३३॥
द्वावप्येतौ सिद्धयोगौ श्लोकार्धेनाभिभाषितौ ।
ज्वरातीसारशमनौ विशेषाद् दाहनाशनौ ॥३४॥

१. इन्द्रयव, २. देवदारु, ३. कुटकी, ४. गजपिप्पली तथा १. गोखरु, २. पिप्पली, ३. धनियाँ, ४. बाल बिल्वफलमज्जा, ५. पाठा और ६. अजवायन—इन दोनों क्वाथ द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। उसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल देकर क्वाथ निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर रोगी को ५० मि.ली. की मात्रा में सेवन करायें। इन दोनों क्वाथों के सेवन से ज्वरातिसार एवं हस्तपादादि दाह निश्चित रूप से शान्त होते हैं।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–क्वाथ पीकर जल से कुल्ला करें तथा मुख में मिश्री रखें। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–मटमैला। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार तथा हाथ-पैर के दाह में।

२२. कणाऽऽदि क्वाथ

कणाकरिकणालाजक्वाथो मधुसितायुतः ।
पीतो ज्वरातिसारस्य तृष्णामाशु विनाशयेत् ॥३५॥

१. पिप्पली, २. गजपिप्पली तथा ३. धान लाजा;

प्रक्षेप द्रव्य—१. मधु एवं २. चीनी—इन सभी द्रव्यों को लेकर यवकुट चूर्ण करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथनिर्माण विधि से १६ गुना जल से क्वाथ का निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मधु तथा चीनी का प्रक्षेप डालकर ५० मि.ली. की मात्रा में रोगी को पिलायें। इस क्वाथ के सेवन से ज्वरातिसार एवं पिपासा शीघ्र शान्त होती है।

मात्रा–५० मि.ली.। **अनुपान**–मधु मिलाकर। **गन्ध**–औषधि गन्धी। **वर्ण**–मटमैला। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वातिसार एवं पिपासा में

२३. उत्पलादि चूर्ण

उत्पलं दाडिमत्वक् च पद्मकेशरमेव च ।
पिबेत् तण्डुलतोयेन ज्वरातीसारशान्तये ॥३६॥

१. कमल, २. अनार का छिलका तथा ३. कमलकेशर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें और साफकर सूक्ष्म चूर्ण बना लें। तण्डुलोदक के साथ रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से ज्वरातिसार शान्त होता है।

मात्रा–३ ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–औषधि गन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कषाय। **उपयोग**–ज्वरातिसार में।

२४. व्योषादि चूर्ण

व्योषं वत्सकबीजञ्च निम्बभूनिम्बमार्कवम् ।
चित्रकं रोहिणीं पाठां दार्वीमतिविषां समाम् ॥३७॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं तत्तुल्या वत्सकत्वचः ।
सर्वमेकत्र संयोज्य पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥३८॥
सक्षौद्रं वा लिहेदेतत् पाचनं ग्राहि भेषजम् ।
तृष्णाऽरुचिप्रशमनं ज्वरातीसारनाशनम् ॥३९॥
प्रमेहं ग्रहणीदोषं गुल्मं प्लीहानमेव च ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्वयथुञ्च विनाशयेत् ॥४०॥

१. शुण्ठी, २. मरिच, ३. पिप्पली, ४. इन्द्रयव, ५. नीम की छाल, ६. चिरायता, ७. भृङ्गराज, ८. चित्रकमूल, ९. कुटकी, १०. पाठा, ११. दारुहल्दी तथा १२. अतीस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में (प्रत्येक १० ग्राम) लेकर कूटकर बारीक चूर्ण बना लें। इस चूर्ण के बराबर कुटज छाल का चूर्ण लेकर मिलायें। १ से ३ ग्राम चूर्ण ३० मि.ली. तण्डुलोदक तथा

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१० ग्राम शहद मिलाकर रोगी को पिलायें। इस चूर्ण के सेवन से तृष्णा, अरुचि, ज्वरातिसार, प्रमेह, ग्रहणीरोग, गुल्म, कामला, प्लीहावृद्धि, पाण्डु और शोथ नष्ट होता है। यह चूर्ण पाचन तथा ग्राही है।

मात्रा–१ से ३ ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–औषधि गन्धी। **वर्ण**–धूसर वर्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–आमातिसार, अरुचि, प्रमेह तथा संग्रहणी में।

२५. कलिङ्गादि गुटिका

कलिङ्गनिम्बबिल्वाम्रकपित्थं सरसाञ्जनम्।
लाक्षां हरिद्रे ह्रीबेरं कट्फलं शुकनासिकाम् ॥४१॥
लोध्रं मोचरसं शङ्खं धातकीं वटशुङ्गकम्।
पिष्ट्वा तण्डुलतोयेन वटकानक्षसम्मितान् ॥४२॥
छायाशुष्कान् पिबेत्क्षिप्रं ज्वरातीसारशान्तये।
रक्तप्रसाधना ह्येते शूलातीसारनाशनाः ॥४३॥

१. इन्द्रयव, २. नील की छाल, ३. बिल्वफलमज्जा, ४. आम के फलमज्जा, ५. कैंथ के फलमज्जा, ६. रसाञ्जन, ७. लाक्षा, ८. हल्दी, ९. दारुहल्दी, १०. नेत्रबाला, ११. कायफल, १२. श्योनाक, १३. लोध्र, १४. मोचरस, १५. शङ्खभस्म, १६. धातकीपुष्प तथा १७. वटशुङ्ग—इन सब द्रव्यों को समभाग में लेकर महीन चूर्ण करें तथा तण्डुलोदक की भावना देकर एक दिन मर्दन करें। १ माशा (१ ग्राम) की वटी बनाकर छाया में सुखायें तथा जल के साथ रोगी को खिलायें। इससे ज्वरातिसार जल्दी ही शान्त होता है। यह रक्तस्राव एवं शूलयुक्त अतिसार में भी लाभदायक है।

मात्रा–२ से ४ ग्राम। **अनुपान**–जल में घोलकर पिलाना। **गन्ध**–औषधि गन्ध। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार, रक्तातिसार तथा शूल युक्त प्रवाहिका में।

२६. कुटजावलेह (बृहत्)

कुटजत्वक् पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत्।
तेन पादावशेषेण शर्करापलविंशतिम् ॥४४॥
दत्त्वा पक्त्वा लेहपाके चूर्णानीमानि निक्षिपेत्।
पाठा समङ्गा बिल्वञ्च धातकी मुस्तकं तथा ॥४५॥
दाडिमातिविषा लोध्रं शाल्मलीवेष्टसर्जकम्।
रसाञ्जनं धान्यकञ्च उशीरं बालकं तथा ॥४६॥
प्रत्येकमेषां कर्षांशं निक्षिपेत्पाकविद्धिषक्।
शीते च मधुनस्तत्र कुडवार्द्धं विनिक्षिपेत् ॥४७॥
सर्वरूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम्।
रक्तस्रुतिं ज्वरं शोथं वमिमर्शोगदं तृषाम् ॥४८॥
अम्लपित्तं तथा शूलमग्निमान्द्यं नियच्छति।
अतीसारे ग्रहण्यं च प्रायो दृष्टफलस्त्वयम् ॥४९॥

१. कुटज की छाल ४.६७० ग्रा., २. पाठा, ३. मञ्जिष्ठा, ४. बिल्वफलमज्जा, ५. धातकीपुष्प, ६. नागरमोथा, ७. अनार का छिलका, ८. अतीस, ९. लोध्र, १०. मोचरस, ११. श्रीवेष्टक, १२. सर्जरस, १३. रसाञ्जन, १४. धनियाँ, १५. खस, १६. नेत्रबाला और १७. मधु ९३ ग्रा. तथा शेष सभी द्रव्य १२-१२ ग्रा. लें—सर्वप्रथम कुटज की छाल लेकर १ द्रोण (१२ ली.) जल में डालकर क्वाथ करें, चतुर्थांश शेष रहने पर उतारें। क्वाथ को छानकर उसमें २० पल (९३५ ग्राम) चीनी मिलायें, पाक कर २ तार की चाशनी बना लें। चाशनी तैयार हो जाने पर आग पर से उतार लें। २-१६ तक के सभी द्रव्यों के चूर्ण १-१ कर्ष (१२ ग्राम) उसमें मिलायें। अच्छी प्रकार मिल जाने पर ठंडा होने पर २ पल (९३ ग्राम) शहद उसमें मिलायें। भली प्रकार मिल जाने पर मिट्टी के बर्तन में भर कर रखें। ६ ग्राम से १२ ग्राम की मात्रा में शीतल जल से रोगी को सायं-प्रातः सेवन करायें। इस अवलेह के सेवन से सभी प्रकार के अतिसार, ग्रहणी, विभिन्न प्रकार के रक्तस्राव, ज्वर, शोथ, छर्दि, अर्श, तृष्णा, अम्लपित्त, शूल एवं अग्निमांद्य आदि रोग शान्त होते हैं। यह अवलेह ग्रहणी एवं अतिसार में अत्यधिक लाभदायक है।

मात्रा–१२ ग्रा.। **अनुपान**–शीतल जल से। **गन्ध**–सुगन्ध। **वर्ण**–कृष्णाभ। **स्वाद**–तिक्त-मधुर। **उपयोग**–अतिसार, ग्रहणी, रक्तातिसार, प्रवाहिका-अग्निमांद्य-छर्दि में।

२७. कुटजावलेह

कुटजत्वक् पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत्।
तेन पादावशेषेण शर्कराप्रस्थकं पचेत् ॥५०॥
ततो लेहे घनीभूते चूर्णानीमानि दापयेत्।
लवङ्गं जीरकं मुस्तं धातकी बिल्वबालकम् ॥५१॥
एला पाठा त्वचं शृङ्गी जातीफलमधूरिका।
शक्रकातिविषाक्षारं काकोली च रसाञ्जनम् ॥५२॥
शाल्मलिं वेष्टकं यष्टी समङ्गा रक्तचन्दनम्।
वटशुङ्गं खादिरञ्च तथा जम्ब्वाम्रपल्लवम् ॥५३॥
एषामक्षसमं चूर्णं प्रक्षिपेत्पाकविद्धिषक्।
सिद्धेऽवतारिते शीते मधुनः कुडवं न्यसेत् ॥५४॥
खादयेत्कर्षमात्रस्तु चानुपानविधिं शृणु।
अनुपानं प्रदातव्यं दधिमस्तु त्वजापयः ॥५५॥
चम्पककदलीमूलस्वरसं कर्षमानतः।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ॥५६॥
रोगं रक्तातिसारञ्च चिरकालसमुद्भवम्।
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ॥५७॥
शोथातिसारसहितं ज्वरमाशु व्यपोहति ॥५८॥

१. कुटज की छाल ४.६७० ग्रा., २. जल १२ ली., ३.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चीनी ७५० ग्रा., ४. लौंग, ५. जीरा, ६. नागरमोथा, ७. धातकीपुष्प, ८. बालबिल्वफलमज्जा, ९. नेत्रबाला, १०. एला, ११. पाठा, १२. दालचीनी, १३. काकड़ाशृंगी, १४. जायफल, १५. सौंफ, १६. इन्द्रयव, १७. अतीस, १८. यवक्षार, १९. काकोली, २०. रसाञ्जन, २१. मोचरस, २२. श्रीवेष्टक, २३. मुलेठी, २४. मंजिष्ठा, २५. रक्तचन्दन, २६. वटशुङ्ग, २७. खदिरसार (कत्था), २८. जामुन के शुष्क पत्ते, २९. आम के शुष्क पत्ते—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्रा. लें और ३०. मधु १८७ ग्रा. लें। ४.६७० कि.ग्रा. कुटज की छाल लेकर १ द्रोण (१२ ली.) जल में पकाकर क्वाथ करें। चतुर्थांश शेष रहने पर उतारें। छानकर उसमें १ प्रस्थ (७५० ग्राम) चीनी मिलायें तथा आग पर पकाकर २ तार की चाशनी बनायें। क्रम संख्या ४ से २९ तक के सभी द्रव्यों को समभाग अर्थात् प्रत्येक द्रव्य एक-एक कर्ष की मात्रा में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस औषधि चूर्ण को तैयार की गयी चाशनी में मिलायें, भलीभाँति मिश्रित होने पर अग्नि पर से उतार लें। ठण्डा होने पर उसमें ९३ ग्राम मधु मिलाकर रख दें। इस अवलेह को $\frac{1}{2}$ से १ तोला (६ से १२ ग्राम) की मात्रा में रोगी को खिलायें। अनुपान के रूप में दही का पानी या बकरी का दूध अपने स्वादानुसार दें। प्रतिदिन प्रातः-सायं काल चम्पामूल स्वरस या केले के खम्भे का स्वरस १ कर्ष (१२ ग्राम) की मात्रा में रोगी को पिलाने से संग्रहणी रोग शान्त होता है। यह अवलेह चिरकालिक रक्तातिसार, विभिन्न वर्ण वाले एवं पीड़ायुक्त पक्वातिसार, आमातिसार, शोथ एवं ज्वरातिसार को शान्त करता है।

मात्रा–६ से १२ ग्राम। **अनुपान**–दही का पानी (मस्तु) या बकरी का दूध। **गन्ध**–सुगन्ध। **वर्ण**–कृष्णाभ। **स्वाद**–मधुर-तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार, अतिसार, रक्तातिसार, ग्रहणी, प्रवाहिका तथा शोथ में।

रस-प्रयोग

२८. सिद्धप्राणेश्वर रस (र.सा.सं.)

गन्धेशाभ्रं पृथग्वेदभागमन्यच्च भागिकम्।
स्वर्जिटङ्कयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च ॥५९॥
वराव्योषेन्द्रबीजानि द्विजीराग्नियमानिकाः।
सहिङ्गु बीजसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥६०॥
सिद्धः प्राणेश्वरः सूतः प्राणिनां प्राणदायकः।
माषैकं भक्षयेदस्य नागवल्लीदलैर्युतम् ॥६१॥
उष्णोदकानुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम्।
ज्वरातिसारेऽतिसृतौ केवले वा ज्वरेऽपि च ॥६२॥
घोरे त्रिदोषजे रोगे ग्रहण्यामसृगामये।
वातरोगे च शूले च शूले च परिणामजे ॥६३॥

१. शुद्ध गन्धक ४ भाग, २. शुद्ध पारद, ३. अभ्रकभस्म ४ भाग, ४. सर्जिकाक्षार ४ भाग, ५. शुद्ध टंकण, ६. यवक्षार, ७. सैन्धवनमक, ८. सौवर्चललवण, ९. विड्लवण, १०. औद्भिल्लवण, ११. सामुद्रलवण, १२. हरीतकी, १३. बहेड़ा, १४. आमला, १५. शुण्ठी, १६. मरिच, १७. पिप्पली, १८. इन्द्रयव, १९. सफेद जीरा, २०. स्याहजीरा, २१. चित्रकमूल, २२. अजवायन, २३. घृतभृष्ट हींग, २४. विडंग तथा २५. सौंफ—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। विधि—शुद्ध गन्धक तथा शुद्ध पारद को समभाग में लेकर खरल में मर्दन करें तथा कज्जली बनायें। क्रम संख्या ३ से २५ तक के सभी द्रव्यों को समान भाग लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें तथा कज्जली में मिलाकर जल के साथ खरल करें। ६० मि.ग्रा. की वटी बनायें तथा वटी को छाया में सुखाकर शीशी में रखें। इस सिद्धप्राणेश्वर रस की १ वटी ताम्बूलपत्र में रख कर रोगी को खिलायें तथा अनुपानार्थ ३ पल (१४० मि.ली.) मन्दोष्ण जल का सेवन करायें। यह रस ज्वरातिसार, बहुत अधिक बढ़ा हुआ अतिसार, त्रिदोषज ज्वर, ग्रहणी, रक्तविकार, वात-विकार, शूल एवं परिणामशूल को शान्त करता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–ताम्बूलपत्र में रखकर चखायें, पुनः गरम पानी लें। **गन्ध**–हिङ्गुगन्धी। **वर्ण**–कृष्णाभ। **स्वाद**–लवणीय। **उपयोग**–ज्वर, अतिसार, ग्रहणी, प्रवाहिका तथा रक्तातिसार में।

२९. प्राणेश्वर रस (र.सा.सं.)

रसगन्धकमभ्रञ्च टङ्कणं शतपुष्पकम्।
यमानी जीरकाख्यञ्च प्रत्येकं कर्षयुग्मकम् ॥६४॥
कर्षमेकं यवक्षारं हिङ्गु पटुकपञ्चकम्।
विडङ्गेन्द्रयवे सर्जरसकं चाग्निसंज्ञितम् ॥
घृष्ट्वा च वटिका कार्या नाम्ना प्राणेश्वरो रसः ॥६५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रकभस्म, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. सौंफ, ६. अजवायन, ७. जीरा, ८. यवक्षार, ९. घृतभर्जित हिङ्गु, १०. पाँचों लवण (सैन्धव, विड्, सौवर्चल, औद्भिद, सामुद्र लवण), ११. वायविडङ्ग, १२. इन्द्रयव, १३. सर्जरस और १४. चित्रकमूल—१ से ७ तक सभी द्रव्यों में प्रत्येक को २-२ कर्ष (२३-२३ ग्राम) तथा ८ से १४ तक के सभी द्रव्यों में प्रत्येक को १-१ कर्ष (१२-१२ ग्राम) लें। सर्वप्रथम पारद और गन्धक की कज्जली बनायें तथा सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करके उसमें मिला दें। २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। यह प्राणेश्वर रस ज्वर एवं अतिसार को शान्त करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु। **गन्ध**–हिंगुगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–लवणीय। **उपयोग**–ज्वरातिसार एवं रक्तातिसार में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३०. कनकसुन्दर रस-१

हिङ्गुलं मरिचं गन्धं पिप्पली टङ्गणं विषम्।
कनकस्य च बीजानि समांशं विजयाद्रवैः ॥६६॥
मर्दयेद्याममात्रन्तु चणमात्रा वटी कृता।
भक्षणाद् ग्रहणीं हन्ति रसः कनकसुन्दरः ॥६७॥
अग्निमान्द्यं ज्वरं तीव्रमतिसारञ्च नाशयेत्।
पथ्यं दध्योदनं दद्याद् यद्वा तक्रौदनं चरेत् ॥६८॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. मरिच, ३. शुद्ध गन्धक, ४. पिप्पली, ५. शुद्ध सोहागा, ६. शुद्ध वत्सनाभ, ७. धतूरे का बीज तथा ८. भाँग स्वरस—सभी द्रव्यों को समभाग में लें तथा हिङ्गुल एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर लें। अन्य द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा हिंगुल में मिलाकर भाँगस्वरस के साथ मर्दन करें। अच्छी प्रकार मर्दन हो जाने पर २५० मि.ग्रा. की वटी बना लें तथा छाया में सुखायें। इस कनकसुन्दर रस के सेवन से ग्रहणी, अग्निमांद्य, ज्वर तथा तीव्र ज्वरातिसार शान्त होता है। पथ्य में दही-भात एवं तक्र-भात देना चाहिए।

पथ्य—तक्र-भात या दही-भात।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**—ज्वरातिसार, ग्रहण तथा अग्निमान्द्य में।

३१. कनकसुन्दर रस-२ (र.रा.सु.)

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टङ्गणं तथा।
स्वर्णबीजं समं मर्द्यं भार्गीद्रावैर्दिनार्द्धकम् ॥६९॥
सूततुल्यं मृतञ्चाभ्रं रसः कनकसुन्दरः।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति पित्तातीसारमुग्रकम् ॥७०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. मरिच, ४. शुद्ध सोहागा, ५. धतूरे के बीज का चूर्ण तथा ६. अभ्रकभस्म, भार्ङ्गीस्वरस या क्वाथ—सभी द्रव्यों को समभाग में लें। पारद तथा गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनायें। बाकी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर कज्जली में मिला दें। भार्ङ्गीस्वरस या क्वाथ के साथ ६ घण्टा तक खरल में मर्दन करें। उसके पश्चात् पारद के बराबर अभ्रकभस्म मिलाकर मर्दन करें। भलीभाँति मर्दन हो जाने के पश्चात् २५० मि.ग्रा. की वटी बना लें तथा छाया में सुखायें। इस रस की १-१ वटी प्रतिदिन रोगी को सेवन करायें। इससे भयंकर पित्तातिसार शान्त होता है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–रक्तातिसार-ज्वरातिसार एवं आमशूल में।

३२. गगनसुन्दर रस

टङ्कणं दरदं गन्धमभ्रकञ्च समं समम्।
दुग्धिकाया रसेनैव भावयेच्च दिनत्रयम् ॥७१॥
द्विगुञ्जं मधुना देयं श्वेतसर्जस्य वल्लकम्।
विविधं नाशयेद्रक्तं ज्वरातीसारमुल्बणम् ॥७२॥
पथ्यं तक्रं पयश्छागमामशूलं विनाशयेत्।
अग्निवृद्धिकरो ह्येष रसो गगनसुन्दरः ॥७३॥

१. शुद्ध सोहागा, २. शुद्ध हिङ्गुल, ३. शुद्ध गन्धक एवं ४. अभ्रकभस्म—सभी चारों द्रव्यों को समभाग में लेकर खरल में मर्दन करें तथा दुग्धिकास्वरस की भावना देकर तीन दिन तक मर्दन करके २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। यह रस शहद तथा ३७५ मि.ग्रा. श्वेत सर्जरस के चूर्ण के साथ सेवन करायें। यह गगनसुन्दर रस विभिन्न प्रकार के रक्तस्राव तथा भयंकर ज्वरातिसार को शान्त करता है। पाचकाग्नि को दीप्त करता है तथा आमदोष के कारण उत्पन्न शूल को शान्त करता है। पथ्य रूप में मट्ठा एवं बकरी के दूध का सेवन करें।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु एवं सर्जरसचूर्ण से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–निःस्वादु। **उपयोग**–रक्तस्राव, रक्तातिसार, ज्वरातिसार, आमदोष एवं मन्दाग्नि में। **पथ्य**–तक्र एवं बकरी का दूध।

३३. कनकप्रभा वटी (र.सा.सं.)

सुवर्णबीजं मरिचं मराल-
पादं कणा टङ्गणकं विषञ्च।
गन्धं जयाऽद्भिर्दिवसं विमर्द्य
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां विदध्यात् ॥७४॥
घोरातिसारं ग्रहणीज्वराग्नि-
मान्द्यं निहन्यात्कनकप्रभेयम्।
दध्योदनं पथ्यमनुष्णवारि-
मांसं भजेत्तित्तिरिलावकानाम् ॥७५॥

१. शुद्ध धतूराबीज, २. मरिच, ३. हंसपदी, ४. पिप्पली, ५. शुद्ध सोहागा, ६. शुद्ध वत्सनाभ तथा ७. गन्धक—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें तथा भाँग के स्वरस के साथ १ दिन तक खरल में मर्दन करें। मर्दन करने के पश्चात् १२५ मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस कनकप्रभा वटी को सेवन करने से अतिसार, ग्रहणी, ज्वर, अग्निमांद्य आदि रोग शान्त होते हैं। पथ्यस्वरूप दही-भात, शीतल जल तथा मांसाहारियों के लिए तीतर और लावक का मांस या मांसरस सेवन करायें।

पथ्य—दही-भात, शीतल जल, तीतर या लावक का मांस।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–धूसर। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरातिसार, ग्रहणी, प्रवाहिका एवं अग्निमांद्य में।

३४. मृतसञ्जीवनी वटी (र.सा.सं.)

मागधी वत्सनाभञ्च तयोस्तुल्यञ्च हिङ्गुलम्।
मृतसञ्जीवनी ख्याता जम्बीररसमर्दिता ॥७६॥
मूलकस्य च बीजानां वटिका तुल्यरूपिणी।
पानीया शीततोयेन ज्वरातीसारनाशिनी ॥
विसूच्यां सन्निपाते च ज्वरे चैवातिदुस्तरे ॥७७॥

१. पिप्पली चूर्ण, २. शुद्ध वत्सनाभ चूर्ण एवं ३. शुद्ध हिङ्गुल—पिप्पली एवं वत्सनाभ को समभाग में लें तथा इन दोनों के बराबर शुद्ध हिङ्गुल लेकर सबका सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा जम्बीरीनीबूस्वरस के साथ खरल में मर्दन करें। मूली के बीजों के बराबर ६० मि.ग्रा. की वटी बना लें और छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। रोगी को १ वटी शीतल जल के साथ सेवन करायें। इस मृतसञ्जीवनी वटी के सेवन से ज्वरातिसार शान्त होता है। यह विसूची तथा दुस्तर नामक सन्निपातज ज्वर में भी अत्यन्त लाभदायक है।

मात्रा–६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–शीतल जल से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्त। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरातिसार एवं सन्निपातज्वर में।

३५. मृतसञ्जीवन रस (र.सा.सं.)

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विषं क्षिपेत्।
सर्वतुल्यं मृतञ्चाभ्रं मर्द्यं धुस्तूरजैर्द्रवैः ॥७८॥
सर्पाक्ष्याश्च द्रवैर्यामं कषायेणाथ भावयेत्।
धातक्यतिविषा मुस्तं शुण्ठीजीरकबालकम् ॥७९॥
यमानी धान्यकं बिल्वं पाठापथ्याकणान्वितम्।
कुटजस्य त्वचं बीजं कपित्थं बालदाडिमम् ॥८०॥
प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात् कुट्टितं क्वाथयेज्जलैः।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पादावशेषितम् ॥८१॥
अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वोक्तं मर्दितं रसम्।
रुद्ध्वा तद्वालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥८२॥
मृतसञ्जीवनो नाम द्विगुञ्जाप्रमितो रसः।
दातव्यस्त्वनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥८३॥
षट्प्रकारमतीसारं साध्यासाध्यं जयेद् ध्रुवम्।
नागरातिविषा मुस्तं देवदारु कणा वचा ॥८४॥
यमानी बालकं धान्यं कुटजत्वग् हरीतकी।
धातकीन्द्रयवा बिल्वं पाठा मोचरसं समम् ॥
चूर्णितं मधुना लेह्यमनुपानं सुखावहम् ॥८५॥

१. शुद्ध पारद ४ भाग, २. शुद्ध गन्धक ४ भाग, ३. शुद्ध वत्सनाभ १ भाग, ४. अभ्रकभस्म ९भाग, ५. धतूरामूल या पत्रस्वरस, ६. सर्पाक्षीरस।

क्वाथ द्रव्य—१. धातकीपुष्प, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. शुण्ठी, ५. जीरा, ६. नेत्रबाला, ७. अजवायन, ८. धनियाँ, ९. बिल्वफलमज्जा, १०. पाठा, ११. हरीतकी, १२. पिप्पली, १३. कुटजत्वक्, १४. इन्द्रयव, १५. कपित्थफल और १६. कच्चा दाड़िमफल। प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

अनुपान—१. शुण्ठी, २. अतीस, ३. मुस्ता, ४. देवदारु, ५. पिप्पली, ६. वचा, ७. अजवायन, ८. नेत्रबाला, ९. धनिया, १०. कुटजत्वक्, ११. हरीतकी, १२. धातकीपुष्प, १३. इन्द्रयव, १४. बिल्वफलमज्जा, १५. पाठा, १६. मोचरस तथा १७. मधु—पारद एवं गन्धक को समभाग में लें तथा पारद का चतुर्थांश शुद्ध वत्सनाभ और इन सबके बराबर अभ्रकभस्म लेकर पीसकर एक साथ मिलायें। धतूरे की जड़ या पत्र स्वरस के साथ १ प्रहर तक खरल में मर्दन करें। तत्पश्चात् सर्पाक्षी स्वरस से, ततः धातकीपुष्पादि क्वाथ के साथ भावित करके १ प्रहर तक खरल करें। ७ से २२ तक वर्णित क्वाथ द्रव्यों को प्रत्येक को १-१ कर्ष (१२-१२ ग्राम) लेकर यवकुट करें तथा चार गुना जल डालकर क्वाथ करें। चतुर्थांश शेष रहने पर उतार लें, शीत होने पर छान लें। इस क्वाथ से उपर्युक्त भावित द्रव्यों को पुनः भावित करें, तीन दिन तक मर्दन करने के पश्चात् शराव सम्पुट कर बालुकायन्त्र में मन्दाग्नि पर पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर यन्त्र में से निकालें तथा पीस कर शीशी में रख लें। इस मृतसञ्जीवन रस को २५० मि.ग्रा. लेकर १-१६ तक के वर्णित द्रव्यों के समभाग मिलित चूर्ण में से १ ग्राम तथा शहद ६ ग्राम अनुपान से सेवन करें। यह मृतसञ्जीवन रस बताये गये विधान के अनुसार सेवन करने पर साध्य तथा असाध्य ६ प्रकार के अतिसार को नाश करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–अतिसार एवं संग्रहणी में।

३६. आनन्दभैरव रस (र.सा.सं.)

हिङ्गुलञ्च विषं व्योषं टङ्कणं गन्धकं समम्।
जम्बीररससंयुक्तं मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥८६॥
कासश्वासातिसारेषु ग्रहण्यां सान्निपातिके।
अपस्मारेऽनिले मेहेऽप्यजीर्णे वह्निमान्द्यके।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यो रस आनन्दभैरवः ॥८७॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध वत्सनाभ, ३. शुण्ठी, ४. मरिच, ५. पिप्पली, ६. शुद्ध टङ्कण और ७. शुद्ध गन्धक—सभी द्रव्यों को समभाग में लें। पारद तथा गन्धक की कज्जली बनायें तथा

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उसमें शेष द्रव्यों के चूर्ण करके मिला दें। जम्बीरी नीबूस्वरस के साथ २ प्रहर तक खरल में मर्दन करें तथा १२५ मि.ग्रा. की वटी बना लें और छाया में सुखायें। विविध अनुपानों के साथ सेवन कराने पर कास, श्वास, अतिसार, ग्रहणी, सान्निपातिक ज्वर, वातिक अपस्मार, प्रमेह, अजीर्ण, अग्निमांद्य आदि व्याधियों में अत्यन्त लाभ होता है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु या विविधानुपान से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरातिसार, अतिसार, ग्रहणी, अजीर्ण एवं अग्निमांद्य।

३७. अमृतार्णव रस (र.सा.सं.)

हिङ्गुलोत्थो रसो लौहं गन्धकं टङ्कणं शटी।
धान्यकं बालकं मुस्तं पाठा जीरं घुणप्रिया ॥८८॥
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं छागीक्षीरेण पेषितम्।
माषैका वटिका कार्या रसोऽयममृतर्णवः ॥८९॥
वटिकां भक्षयेत्प्रातर्गहनानन्दभाषितम्।
धान्यजीरकचूर्णेन विजयाशालबीजतः ॥९०॥
मधुना छागदुग्धेन मण्डेन शीतवारिणा।
कदलीमोचकरसैः कण्टकारीद्रवेन वा ॥९१॥
अतीसारं जयेदुग्रमेकजं द्वन्द्वजं तथा।
दोषत्रयसमुद्भूतमुपसर्गसमन्वितम् ॥९२॥
शूलघ्नो वह्निजननो ग्रहण्यर्शोविकारनुत्।
अम्लपित्तप्रशमनः कासघ्नो गुल्मनाशनः ॥९३॥

१. शुद्ध हिङ्गुलोत्थ पारद, २. लौहभस्म, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. कचूरचूर्ण, ६. धनियाचूर्ण, ७. नेत्रबाला चूर्ण, ८. नागरमोथाचूर्ण, ९. पाठाचूर्ण, १०. श्वेतजीरकचूर्ण तथा ११. अतीसचूर्ण—सभी द्रव्यों को समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद और गन्धक की कज्जली बनायें। इस कज्जली में शेष द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण करके मिलायें तथा बकरी के दूध के साथ दिन भर खरल में मर्दन करें। ६० मि.ग्रा. की वटी बना लें। आचार्य गहनानन्द द्वारा बताये इस अमृतार्णवरस की उपर्युक्त मात्रा धनिया और जीरे का चूर्ण, शुद्ध भाँग, शालबीज चूर्ण, मधु, अजादुग्ध, मण्ड, शीतल जल, केले के तने का स्वरस, मोचरस तथा कण्टकारी क्वाथ—इनमें से किसी एक या दो या व्याधि अनुसार अनुपान के साथ सेवन करायें। इसके सेवन से भयङ्कर अतिसार, एकदोषज, द्विदोषज, सन्निपातज एवं अन्य औपसर्गिक रोगों के उपद्रवस्वरूप उत्पन्न अतिसार शान्त होता है। यह अमृतार्णव रस शूल को शान्त करता है, पाचकाग्नि की वृद्धि करता है और ग्रहणीदोष, अर्श, अम्लपित्त, कास एवं गुल्म नाशक है।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु एवं धनियाँ चूर्ण, शुद्ध भांग चूर्ण से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–ज्वरातिसार, अतिसार, ग्रहणी एवं अर्श में।

३८. अभ्रवटिका (र.सा.सं.)

अथ शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च।
प्रत्येकं कर्षमानं तु ग्राह्यं रसगुणैषिणा ॥९४॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा व्योषचूर्णं प्रदापयेत्।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च ॥९५॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याथ जयन्त्याः स्वरसं तथा।
मण्डूकपर्ण्याः स्वरसं तथा शक्राशनस्य च ॥९६॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम्।
दापयेत्तत्र तुल्यं च विधिज्ञः कुशलो भिषक् ॥९७॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णं मरिचसम्भवम्।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम् ॥९८॥
शुभे शिलामये पात्रे घर्षणीयं प्रयत्नतः।
शुद्धमातपसंयोगाद्वटिकां कारयेद्भिषक् ॥९९॥
कलायपरिमाणां तु खादेत्तां तु प्रयत्नतः।
दृष्ट्वा वयश्चाग्निबलं यथाव्याध्यनुपानतः ॥१००॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवां रुजम्।
परं वाजीकरः श्रेष्ठो बलवर्णाग्निवर्द्धकः ॥१०१॥
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट्।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यतेऽभ्ररसायनात् ॥१०२॥
चातुर्थिके ज्वरे श्रेष्ठः सूतिकातङ्कनाशनः।
भोजने शयने पाने नास्त्यत्र नियमं क्वचित्।
दधि चावश्यकं भक्ष्यं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥१०३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रकभस्म, ४. त्रिकटु, ५. पीतपुष्प भृङ्गराज, ६. श्वेत भृङ्गराज, ७. निर्गुण्डी, ८. चित्रक, ९. ग्रीष्मसुन्दर (सूक्ष्म पत्रशाक, विशेषतः बंगाल में गीमाशाक नाम से प्रचलित)—इन सभी द्रव्यों के स्वरस, १०. जयन्ती, ११. ब्राह्मी, १२. भाँग, १३. सफेद अपराजिता, १४. ताम्बूलपत्र, १५. मरिचचूर्ण तथा १६. शुद्ध सोहागा।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक एवं अभ्रकभस्म को १-१ भाग लेकर कज्जली निर्माण करें। शेष सभी द्रव्यों को १-१ भाग तथा मरिचचूर्ण १ भाग पारद के बराबर एवं टङ्कण ½ भाग लेकर खरल में मर्दन कर २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। रोगी की अवस्था, अग्नि एवं बलाबल के अनुसार उचित अनुपान से सेवन कराने से कास, श्वास, क्षय तथा वात-कफज रोगों को शान्त करती है। यह वाजीकरण है। बल, वर्ण एवं अग्निवर्द्धक है। ज्वर एवं अतिसार में इसका प्रयोग सिद्ध एवं योगराज है। इस अभ्रक रसायन से

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक बलकारक और रोगनाशक कुछ नहीं है। यह सूतिका ज्वर एवं चातुर्थिक ज्वर को शान्त करता है। इसको सेवन करने वाले को भोजन, शयन और पानी में कोई परहेज नहीं करना पड़ता; केवल दही का सेवन अवश्य करना चाहिए—ऐसा मुनि नागार्जुन का कथन है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु एवं रोगानुसार अनुपान से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–ज्वरातिसार, अतिसार, सूतिकाज्वर तथा विषमज्वर में।

३९. कारुण्यसागर रस (र.सा.सं.)

भस्मसूताद् द्विधा गन्धं तथा द्वित्वं मृताभ्रकम्।
दिनं सार्षपतैलेन पिष्ट्वा यामं विपाचयेत् ॥१०४॥
रसैर्मार्कवमूलोत्थैः पिष्ट्वा यामं विपाचयेत्।
त्रिक्षारपञ्चलवणविषव्योषाग्निजीरकैः ॥१०५॥
सविडङ्गैस्तुल्यभागैरयं कारुण्यसागरः।
माषमात्रं ददीतास्य भिषक् सर्वातिसारके ॥१०६॥
सज्वरे विज्वरे वाऽपि सशूले शोणितोद्भवे।
निरामे शोथयुक्ते वा ग्रहण्यां सान्निपातिके।
अनुपानं विनाऽप्येष कार्यसिद्धिं करिष्यति ॥१०७॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां ज्वरातिसाराधिकारः।

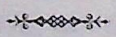

१. रससिन्दूर १२ ग्रा., २. शुद्ध गन्धक २३ ग्रा., ३. अभ्रकभस्म २३ ग्रा., ४. सरसों का तेल, ५. भृङ्गराजमूल या पञ्चाङ्ग, ६. सर्जिकाक्षार, ७. टङ्कण, ८. यवक्षार, ९. सैन्धव, १०. सौवर्चल, ११. विड्, १२. औद्भिद, १३. सामुद्र लवण, १४. शुद्ध वत्सनाभ, १५. शुण्ठी, १६. मरिच, १७. पिप्पली, १८. चित्रकमूल, १९. जीरा और २० वायविडङ्ग—प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें, सूक्ष्म चूर्ण करें तथा सरसों के तेल की एक भावना दें। शराव-सम्पुट करके १ प्रहर तक बालुकायन्त्र में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर औषधिपिण्ड को सम्पुट से बाहर करें तथा खरल करें, भृङ्गराजस्वरस की भावना देकर खरल करके वटी बना लें। पुनः शराव-सम्पुट कर १ प्रहर तक बालुकायन्त्र में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर पुनः औषध को सम्पुट से निकालकर सूक्ष्म चूर्ण किया हुआ सर्जिक्षार से विडङ्गचूर्ण तक १-१ तोला मिलाकर जल के साथ १ प्रहर तक खरल करें। खरल करने के पश्चात् ६० मि.ग्रा. की वटियाँ बनावें तथा छाया में सुखायें और काचपात्र में संग्रह करें। १-१ वटी प्रातः-सायं प्रतिदिन सेवन करने से सभी प्रकार के अतिसार, ज्वरातिसार, निर्ज्वरातिसार, शूलयुक्त अतिसार, रक्तातिसार, निरामातिसार, शोथ युक्त अतिसार, ग्रहणीदोष एवं सन्निपातज अतिसार नष्ट होते हैं। यह कारुण्यसागर रस बिना अनुपान के भी सभी रोगों में लाभ करता है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–कत्थई। **स्वाद**–लवणीय। **उपयोग**–अतिसार एवं संग्रहणी में।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य ज्वरातिसाराधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

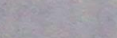

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथातिसाराधिकारः (७)

अतिसार-चिकित्सा (चक्रदत्त)

आमपक्वक्रमं हित्वा नातिसारे क्रिया यतः ।
अतः सर्वातिसारेषु ज्ञेयं पक्वामलक्षणम् ॥१॥

अतिसार की चिकित्सा करने हेतु आम और पक्व दोष का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, अतएव चिकित्सा प्रारम्भ करने के पूर्व आमातिसार और पक्वातिसार के सभी लक्षणों को जानना अति आवश्यक है।

विमर्श—आमातिसार का आरम्भक आमदोष या आममल ही होता है एवं पक्वातिसार का आरम्भक पक्वदोष या पक्वमल होता है।

आम और पक्व अतिसार के लक्षण (चक्रदत्त)

मज्जत्यामं गुरुत्वाद्विट् पक्वा तूत्प्लवते जले ।
विनातिद्रवसङ्घातशैत्यश्लेष्मप्रदूषणात् ॥२॥

जब आमातिसार होगा तब आमदोष से युक्त मल जल में डालकर परीक्षण करने पर वह भारी होने के कारण डूब जाता है, पक्वातिसार में मल पक्व दोष के कारण हल्का होने से जल में तैरता रहता है। लेकिन जब आमदोष युक्त मल होगा तब उसमें जल की अधिकता होगी और वह जल पर तैरता रहेगा, पक्वातिसार में मल द्रव पदार्थ, शैत्य और कफ की अधिकता से दूषित एवं घन रूप में हो जाने से वह जल में डूब जाता है।

अपक्व एवं पक्व मल का दूसरा लक्षण (चक्रदत्त)

शकृद्दुर्गन्धि साटोपविष्टम्भार्त्तिप्रसेकिनः ।
विपरीतं निरामन्तु कफात्पक्वञ्च मज्जति ॥३॥

अतिसार की आमावस्था में मल अति दुर्गन्धयुक्त होता है, पेट में गुड़गुड़ाहट होती है, पेट फूल जाता है, पेट में सुई चुभोने के समान पीड़ा होती है, मल-त्याग नहीं होता एवं हल्लास के साथ मुख से लार और कफ निकलता है। इसे आमातिसार जानना चाहिए। परन्तु पक्वावस्था में मल आमावस्था से विपरीत (अर्थात् दुर्गन्ध का न होना, पेट में गुड़गुड़ाहट शब्द न होना, सुई चुभोने के समान पीड़ा का अभाव, मल-त्याग करना और न ही हल्लास तथा मुख से लार एवं कफ ही निकलता है) लक्षणों से युक्त होता है तब पक्वातिसार जानना चाहिए। यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि मल में कफ की अधिकता होने से जल में डालने पर डूब जाता है। तब भी पक्वातिसार ही जानना चाहिए।

आमातिसार-चिकित्साविधि (चक्रदत्त)

न तु सङ्ग्रहणं दद्यात् पूर्वमामातिसारिणे ।
दोषा ह्यादौ रुद्ध्यमाना जनयन्त्यामयान् बहून् ॥४॥
शोथपाण्ड्वामयप्लीहकुष्ठगुल्मोदरज्वरान् ।
दण्डकालसकाध्मानग्रहण्यर्शोगदांस्तथा ॥५॥

आमातिसार के प्रारम्भ होने पर मल रोकने की दवा कभी नहीं देनी चाहिए। क्योंकि संग्राहक औषधों का प्रयोग करने से शरीर में स्थित दोष बाहर नहीं निकल पाते और अवरुद्ध होने पर दोष पहले से बढ़कर अनेक प्रकार के रोगों; यथा—शोथ, पाण्डु, प्लीहावृद्धि, कुष्ठ, गुल्म, उदररोग, ज्वर, दण्डक ज्वर, अलसक, आध्मान, ग्रहणीविकार एवं अर्श आदि को जन्म देते हैं।

निषेध विषय (चक्रदत्त)

क्षीणधातुबलार्त्तस्य बहुदोषोऽतिनिःसृतः ।
आमोऽपि स्तम्भनीयः स्यात् पाचनान्मरणं भवेत् ॥६॥

जिसकी रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र धातु और शारीरिक बल क्षीण हो गये हों उसे आमातिसार रोग होने पर दोष के अधिक प्रकुपित होने पर एवं मल के बार-बार अधिक होने पर मल को रोकने की दवा का प्रयोग अवश्य ही करना चाहिए, क्योंकि लंघन आदि क्रम के अनुसार या दोषादिक या आम के पचने की प्रतीक्षा करने से अत्यधिक मल-त्याग होने पर रोगी की दशा गम्भीर होकर मृत्यु तक हो सकती है। अतः ऐसे रोगियों को संग्राहक एवं पाचन औषध अवश्य ही देना चाहिए।

सांग्राहिक औषध-प्रयोगकाल

पाकोऽसकृदतीसारो ग्रहणीमार्दवाद्यदा ।
प्रवर्तते तदा कार्यः क्षिप्रं साङ्ग्राहिको विधिः ॥७॥

लंघन आर पाचन औषधियों के प्रयोग से पित्त के उद्रिक्त हो जाने से ग्रहणी मृदु हो जाने पर जब आमदोष रहित पक्व मल लगातार बार-बार होने लगे तब तुरन्त ही संग्राहक एवं स्तम्भक औषधों का प्रयोग करने से रोगी ठीक हो जाता है।

आमातिसार-चिकित्साक्रम (चक्रदत्त)

आमे विलङ्घनं शस्तमादौ पाचनमेव वा ।
कार्यञ्चानशनस्यान्ते प्रद्रवं लघुभोजनम् ॥८॥

विशेष—प्रद्रवं प्रकृष्टद्रवं, तच्च लघु, एतेन मण्डपेया यवाग्वादिकं सूचितं। 'वर्जयेद् द्विदलं शूली कुष्ठी मांसं क्षयी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्रियम्। द्रवमम्लमतीसारी सर्वञ्च तरुणज्वरी'॥ इत्यत्र द्रव-निषेधोऽविहितदुग्धादिद्रवनिषेधार्थः इति न निरोध।

आमातिसार में सर्वप्रथम लंघन कराना चाहिए, फिर पाचन औषधियों का प्रयोग करना चाहिए और लाजा, मण्ड, पेया जैसे लघु भोजन रोगी को देना चाहिए।

विमर्श—लाजा, मण्ड, पेया आदि शास्त्रविहित द्रव का ही प्रयोग करना चाहिए। इनके अतिरिक्त अन्य द्रव पदार्थों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

लंघन का उत्तमत्व-निर्देश (चक्रदत्त)

लङ्घनमेकं त्यक्त्वा नान्यत्किमपीह भेषजं बलिनः।
समुदीर्णं दोषचयं शमयति तत्पाचयत्यपि च ॥९॥

आमातिसार से पीड़ित शक्तिशाली रोगी में लंघन कराना ही सर्वश्रेष्ठ औषध है अर्थात् लंघन से अधिक कोई भी औषध आमातिसार में प्रभावी नहीं है, क्योंकि लंघन बढ़े हुए सभी दोषों को शान्त करता है और आम दोषों का पाचन भी कर देता है।

अतिसार में जल का प्रयोग (चक्रदत्त)

ह्रीबेरशृङ्गबेराभ्यां मुस्तपर्पटकेन वा।
मुस्तोदीच्यशृतं तोयं देयं वाऽपि पिपासवे ॥१०॥

१. सुगन्धबाला या सोंठ १२-१२ ग्राम; २. नागरमोथा या पित्तपापड़ा १२-१२ ग्राम तथा ३. नागरमोथा या सुगन्धबाला १२-१२ ग्राम—उपर्युक्त तीन योगों में से किसी एक योग के द्रव्यों को समभाग में लेकर षडंग-परिभाषा विधि के अनुसार सिद्ध किया हुआ (१९० मि.ली. जल में उबालें, अर्धावशेष रहने पर छान लें) शृतशीत जल पिलाना चाहिए। इससे अतिसार के रोगी के प्यास की शान्ति होती है।

अतिसार में पथ्य (चक्रदत्त)

युक्तेऽन्नकाले क्षुत्क्षामं लघून्यन्नानि भोजयेत् ॥११॥
औषधसिद्धा पेया लाजानां शक्तवोऽतिसारहिताः।
वस्त्रप्रस्रुतमण्डः पेया च मसूरयूषश्च ॥१२॥

अतिसार से पीड़ित मनुष्य में जब लंघन-पाचन आदि के सम्यक् प्रयोग से आमदोष पचकर अग्निबल प्रदीप्त हो जाय और भोजन करने की तीव्र इच्छा उत्पन्न हो जाय तो ऐसे समय में बुभुक्षित व्यक्ति को हल्के-हल्के अन्नादिक सिद्ध करके देवें। यथा—शालपर्ण्यादिक अथवा धान्यपञ्चकादि औषधियों से सिद्ध पेया, धान के सत्तू, वस्त्र से छाना हुआ मण्ड, पेया और मसूर के दाल का यूष–ये सभी अतिसार में लाभकारी हैं।

विमर्श—यवागू, विलेपी, खड, यूष, मांसरस और भात का क्रमशः धीरे-धीरे प्रयोग करना चरक में बताया गया है।[1]

अतिसार में पथ्य (चक्रदत्त)

गुर्वी पिण्डी खराऽत्यर्थं लघ्वी सैव विपर्ययात्।
सक्तूनामाशु जीर्येत मृदुत्वादवलेहिका ॥१३॥

धान के लावा का सत्तू कम जल में मिलाया जाय तो वह पिण्ड रूप होने के कारण गुरुपाकी होता है, परन्तु यदि अधिक जल में मिलाकर चाटने योग्य बनाकर सेवन किया जाय तो वह लघुपाकी होता है। अतः अधिक जल मिलाकर ही पथ्य रूप में अतिसार रोगी को सेवन करायें।

अतिसार में पथ्य (चक्रदत्त)

धान्योदीच्यशृतं तोयं तृष्णादाहातिसारनुत्।
आभ्यामेव सपाठाभ्यां सिद्धमाहारमाचरेत् ॥१४॥

१. धनियाँ और सुगन्धबाला या २. धनियाँ, सुगन्धबाला एवं पाढल—उपर्युक्त दोनों योग में से किसी एक योग को सम मात्रा में लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें और अतिसार से पीड़ित रोगी को प्यास और दाह की अवस्था में इसी क्वाथ में सिद्ध पेया के साथ भोजन कराना हितकारी है।

संदिग्ध दोषों में विरेचन (चक्रदत्त)

स्तोकं स्तोकं विबद्धं वा सशूलं योऽतिसार्यते।
अभयापिप्पलीकल्कैः सुखोष्णैस्तं विपाचयेत् ॥१५॥

१. हरीतकी एवं २. पिप्पली—जब अतिसार से पीड़ित रोगी थोड़ा-थोड़ा तथा बँधा हुआ और दर्द के साथ बार-बार मल त्याग कर रहा हो तब उपर्युक्त द्रव्यों को सममात्रा में लेकर कल्क बनायें और मन्दोष्ण जल में घोलकर रोगी को पाचनार्थ पिलावें।

विमर्श—इस योग को देने से रोगी के शरीर में संचित समस्त दोष जागृत होकर बाहर निकल जाते हैं और रोगी को आराम हो जाता है।

१. नागरादि क्वाथ (चक्रदत्त)

नागरातिविषामुस्तैरथवा धान्यनागरैः।
तृष्णाशूलातिसारघ्नं पाचनं दीपनं लघु ॥१६॥

१. शुण्ठी, अतीस तथा नागरमोथा या २. धनियाँ एवं शुण्ठी—उपर्युक्त में से किसी एक योग को सममात्रा में लेकर यवकुट करें और २५ ग्राम चूर्ण को १६ गुना जल (४०० मि.ली.) में क्वाथकर चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. क्वाथ पिलावें। शृतशीत जल तृष्णा एवं शूलयुक्त अतिसार से पीड़ित रोगी को पिलावें। यह जल आमदोषों का पाचन, पाचकाग्नि का प्रदीपक एवं लघु होता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–अतिसार में।

१. 'यवागूभिर्विलेपीभिः खडैर्यूषै रसौदनैः। दीपनं ग्राहि संयुक्तैः क्रमशः स्यादतः परम्' ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२. पाठादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पाठावत्सकबीजानि हरीतक्यो महौषधम्।
एतदामसमुद्भूतमतीसारं सवेदनम्।
कफात्मकं सपित्तं च वर्चो बध्नात्यसंशयम् ॥१७॥

१. पाढ़ल, २. इन्द्रजौ, ३. हरीतकी तथा ४. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल मे क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें तथा ५० मि.ली. क्वाथ छानकर वेदनायुक्त आमातिसार व कफपित्तसंयुक्त आमातिसार के रोगी को पिलावें। निश्चित ही रोगी पूर्णरूपेण रोगमुक्त होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। सर्वत्र ५० ग्रा. से कम बनाये जाने वाले क्वाथ में १६ गुना जल में क्वाथ करें।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–आमातिसार में।

३. आमातिसार में क्षीरपाक (चक्रदत्त)

पयस्युत्क्वाथ्य मुस्ता वा विंशतिं भद्रकाह्वयाः।
क्षीरावशिष्टं तत् पीतं हन्यादामं सवेदनम् ॥१८॥

नागरमोथा २० ग्राम तथा बकरी का दूध १६० मि.ली.—नागरमोथा को यवकुट कर आठ गुना बकरी का दूध तथा चार गुना जल मिलाकर पाक करें। जब दूध मात्र शेष रह जाय तब उतारकर छान लें। यह दूध आमातिसार पीड़ित रोगी को पिलाने से आम व तज्जन्य वेदना शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

मात्रा–१५० मि.ली.। **उपयोग**–आमातिसार में।

४. धान्यपञ्चक क्वाथ (चक्रदत्त)

धान्यकं नागरं मुस्तं बालकं बिल्वमेव च।
आमशूलविबन्धघ्नं पाचनं वह्निदीपनम् ॥१९॥

१. धनियाँ, २. शुण्ठी, ३. नागरमोथा, ४. सुगन्धबाला तथा ५. बिल्वफलमज्जा—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें और इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ बनाकर छान लें और ५० मि.ग्रा. की मात्रा में पिलावें। यह शूलयुक्त आमातिसार व विबन्ध को दूर करता है तथा आमदोषों को पचाता है और पाचकाग्नि को प्रदीप्त करता है।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–आमातिसार में।

५. धान्यचतुष्क क्वाथ (चक्रदत्त)

इदं धान्यचतुष्कं स्यात् पैत्ते शुण्ठीं विना पुनः।

१. धनियाँ, २. नागरमोथा, ३. सुगन्धबाला तथा ४. बाल-बिल्वफलमज्जा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर क्वाथ विधि से क्वाथकर छानकर ५० मि.ग्रा. की मात्रा में पिलावें। यह क्वाथ पित्तातिसार में विशेष लाभकारी है। पित्तातिसार में शुण्ठी का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

मात्रा–५० मि.ली.। **उपयोग**–पित्तातिसार में।

६. बृहच्छालपर्ण्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

शालपर्णी पृश्निपर्णी बृहती कण्टकारिका ॥२०॥
बला श्वदंष्ट्रा बिल्वानि पाठा नागरधान्यकम्।
एतदाहारसंयोगे हितं सर्वातिसारिणाम् ॥२१॥

१. शालपर्णी, २. पृश्निपर्णी, ३. बृहती, ४. कण्टकारी, ५. बलामूल, ६. गोक्षुर, ७. बिल्वफलमज्जा, ८. पाठा, ९. शुण्ठी और १०. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। २५ ग्राम यवकुट को लेकर ४०० मि.ली. जल के साथ षडङ्ग परिभाषा के अनुसार क्वाथ विधि से क्वाथ बनायें और अर्धावशेष रहने पर छानकर इस क्वाथ से सिद्ध यवागू, पेया, मण्ड, विलेपी आदि आहार का सेवन अतिसार के रोगी को कराने से लाभ होता है।

७. धान्यपञ्चकादि क्वाथ (चक्रदत्त)

धान्यपञ्चकसंसिद्धो धान्यविश्वकृतोऽथवा।
आहारो भिषजा योज्यो वातश्लेष्मातिसारिणाम् ॥२२॥

१. धनियाँ, २. सोंठ, ३. नागरमोथा, ४. नेत्रबाला और ५. बेल की छाल; या १. धनियाँ एवं २. शुण्ठी—उपर्युक्त योगों में से किन्हीं एक योग के द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। २५ ग्राम यवकुट को लेकर षडङ्ग परिभाषा के अनुसार क्वाथ-विधि से क्वाथ करें। इस क्वाथ से सिद्ध किया हुआ आहार वात और कफ के प्रकोप से उत्पन्न अतिसार के रोगी को पिलावें।

८. स्वल्पशालपर्ण्यादि षडङ्गपानीय (चक्रदत्त)

शालपर्णीबिलाबिल्वैः पृथक्पर्ण्या च साधिता।
दाडिमाम्ला हिता पेया पित्तश्लेष्मातिसारिणाम् ॥२३॥

१. शालपर्णी, २. बला, ३. बिल्वफलमज्जा तथा ४. पृश्निपर्णी—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। २५ ग्राम चूर्ण को लेकर षडङ्ग परिभाषा विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर पेया सिद्ध करें एवं उसमें अनारबीज का रस मिलाकर खट्टा कर लें तथा पित्तातिसार एवं श्लेष्मातिसार के रोगी को पिलावें।

९. वातपित्ते पञ्चमूल्या (चक्रदत्त)

वातपित्ते पञ्चमूल्या कफे वा पञ्चकोलकैः ॥२४॥

वातपित्तातिसार में लघुपञ्चमूल के द्रव्यों के क्वाथ से एवं कफातिसार में पञ्चकोलोक्त (पीपर, पिपरामूल, चव्य, चित्रकमूल, सोंठ) द्रव्यों के क्वाथ से सिद्ध किया आहार रोगियों के लिए लाभकारी है।

१०. शालपर्ण्यादि क्वाथ

शालपर्णीबलाबिल्वधान्यशुण्ठीशृतं पयः।
आध्मानशूलसहितां वातजां ग्रहणीं जयेत् ॥२५॥

१. शालपर्णी, २. बलामूल, ३. बाल बिल्वफलमज्जा, ४.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

धनियाँ तथा ५. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में पाक करें। चौथाई मात्रा शेष रहने पर उतारकर छान लें। ५० मि.ली. इस जल के सेवन से वातिक ग्रहणी और उससे उत्पन्न उदराध्मान एवं शूल की भाँति वेदना शान्त होती है।

११. वत्सकादि क्वाथ (चक्रदत्त)

सवत्सकः सातिविषः सबिल्वः
सोदीच्यमुस्तश्च कृतः कषायः।
सामे सशूले सहशोणिते च
चिरप्रवृत्तेऽपि हितोऽतिसारे ॥२६॥

१. इन्द्रयव, २. अतीस, ३. बिल्वफलमज्जा, ४. सुगन्धबाला और ५. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। छानकर ५० मि.ग्रा. क्वाथ आमातिसार, शूल से युक्त अतिसार, रक्तातिसार एवं चिरकालीन अतिसार के रोगी को पिलावें।

विमर्श—चक्रदत्त टीका तत्त्वचन्द्रिका के अनुसार आमदोष युक्त और पित्तप्रधान अतिसार में कुटज की छाल एवं सज्वर एवं सरक्त अतिसार में इन्द्रयव का प्रयोग करना चाहिए, जो लाभकारी है—

अन्यत्रापि—

'कुटजः कफवातासृक्त्वग्दोषार्शोऽतिसारजित्।
तद्बीजं रक्तपित्तातिसारज्वरहरं हिमम्॥

१२. पथ्यादि क्वाथ (भावप्रकाश)

पथ्यादारुवचामुस्तैर्नागरातिविषाऽन्वितैः।
आमातीसारनाशाय क्वाथमेभिः पिबेन्नरः ॥२७॥

१. हरीतकी, २. देवदारु, ३. वच, ४. नागरमोथा, ५. शुण्ठी तथा ६. अतीस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में क्वाथविधि से क्वाथ करें। ५० मि.ली. की मात्रा आमातिसार के रोगी को पिलावें।

१३. यमान्यादि क्वाथ

यमानीनागरोशीरधनिकातिविषाघनैः।
बालबिल्वद्विपर्णीभिर्दीपनं पाचनं भवेत् ॥२८॥

१. अजवायन, २. शुण्ठी, ३. खस, ४. धनियाँ, ५. अतीस, ६. नागरमोथा, ७. बालबिल्वफलमज्जा, ८. शालपर्णी और ९. पृश्निपर्णी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें और आमातिसार के रोगी को ५० मि.ली. पिलावें। इस क्वाथ को पीने से आम का परिपाक और अग्नि का दीपन होता है।

१४. कञ्चटादि क्वाथ (चक्रदत्त)

कञ्चटदाडिमजम्बूशृङ्गाटकपत्रह्रीबेरम्।
जलधरनागरसहितं गङ्गामपि वेगिनीं रुन्ध्यात् ॥२९॥

१. जलपीपर, २. अनार के फल का छिलका, ३. जामुन की छाल, ४. सिंघाड़ा, ५. तेजपत्ता, ६. सुगन्धबाला, ७. नागरमोथा तथा ८. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में इस क्वाथ को गङ्गा के समान वेग वाले तीव्र अतिसार के रोगी को पिलावें। इससे तीव्र अतिसार का वेग रुक जाता है।

१५. कलिङ्गादि क्वाथ

कलिङ्गातिविषाहिङ्गु पथ्या सौवर्चलं वचा।
शूलस्तब्धविबन्धघ्नः पेयो दीपनपाचनः ॥३०॥

१. इन्द्रयव, २. अतीस, ३. शुद्ध हींग, ४. हरीतकी, ५. सौवर्चल एवं ६. वच—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। छानकर ५० मि.ली. क्वाथ को अतिसार से पीड़ित रोगी को पिलावें। इस क्वाथ के पीने से शूल से समान वेदना, मल की स्तब्धता तथा विबद्धता दूर होती है एवम् अग्नि की वृद्धि तथा आमदोष का परिपाक भी होता है।

१६. कुटजादि कषाय (चक्रदत्त)

कुटजं दाडिमं मुस्तं धातकीबिल्वबालकम्।
लोध्रचन्दनपाठाश्च कषायं मधुना पिबेत् ॥३१॥
सामे शूले च रक्ते च पिच्छास्रावे च शस्यते।
कुटजादिरिति ख्यातः सर्वातीसारनाशनः ॥३२॥

१. कुटजत्वक्, २. अनार के फल का छिलका, ३. मोथा, ४. धातकीफूल, ५. बिल्वफलमज्जा, ६. नेत्रबाला, ७. लोध्र, ८. लालचन्दन और ९. पाठा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर यथावश्यक मधु मिलाकर पिलावें। ५० मि.ली. इस कषाय के पीने से आमातिसार, सशूलातिसार, रक्तातिसार एवं पिच्छिल पदार्थयुक्त अतिसार से रोगी मुक्त हो जाता है। यह कुटजादि कषाय प्रायः सभी प्रकार के अतिसार को नष्ट कर देता है।

विमर्श—

'फलेषु परिपक्वं यद् गुणवत्तदुदाहृतम्।
बिल्वादन्यत्र विज्ञेयमामं तद्धि गुणाधिकम्'॥

के अनुसार बेल के कच्चे फल का सूखा गुदा लेना चाहिए।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१७. त्र्यूषणादि चूर्ण (चक्रदत्त)

त्र्यूषणातिविषाहिङ्गुवचासौवर्चलाभयाः ।
पीत्वोष्णेनाम्भसा हन्यादामातीसारमुद्धतम् ॥३३॥

१. शुण्ठी, २. मरिच, ३. पीपर, ४. अतीस, ५. शुद्ध हींग, ६. वच, ७. सौवर्चललवण तथा ८. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। सर्वप्रथम हींग को घृत में भून लें। शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें एवं मिलाकर १ से ३ ग्राम की मात्रा में गरम जल के साथ सेवन कराने से भयङ्कर आमातिसार भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

१८. पिप्पलीमूलादि चूर्ण (चक्रदत्त)

अथवा पिप्पलीमूलं पिप्पलीद्वयचित्रकान् ।

१. पिपरामूल, २. पीपर, ३. गजपीपर एवं ४. चित्रकमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें एवं १ से ३ ग्राम की मात्रा में आमातिसार से पीड़ित रोगी को उष्ण जल के साथ सेवन करावें।

१९. सौवर्चलादि चूर्ण

सौवर्चलवचाव्योषहिङ्गुप्रतिविषाऽभयाः ।
पिबेच्छ्लेष्मातिसारार्त्तश्चूर्णिताश्चोष्णवारिणा ॥३४॥

१. सौवर्चल नमक, २. वच, ३. शुण्ठी, ४. पीपर, ५. मरिच, ६. शुद्ध हींग, ७. अतीस और ८. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। हींग को घृत में भूने, फिर समस्त द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर मिला लें। इस सूक्ष्म चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में कफातिसार से पीड़ित रोगी को गरम जल से सेवन कराने से लाभ होता है।

२०. शुण्ठ्यादि चूर्ण

शुण्ठीप्रतिविषाहिङ्गुमुस्ताकुटजचित्रकैः ।
चूर्णमुष्णाम्बुना पीतमामातीसारनाशनम् ॥३५॥

१. शुण्ठी, २. अतीस, ३. हींग, ४. नागरमोथा, ५. कुटजत्वक् तथा ६. चित्रकमूल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। सर्वप्रथम हींग को घी में भून लें, फिर सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर मिला लें। इस चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में उष्ण जल के साथ सेवन करने से आमातिसार नष्ट हो जाता है।

वातातिसार-चिकित्सा

२१. पञ्चमूल्यादि तक्र (चक्रदत्त)

पञ्चमूलीबला विश्वधान्यकोत्पलबिल्वजाः ।
वातातीसारिणे देयास्तक्रेणान्यतमेन वा ॥३६॥

१. बिल्वमूलत्वक् ५ ग्राम, २. अग्निमन्थ ५ ग्राम, ३. सोनापाठा ५ ग्राम, ४. पाटला ५ ग्राम, ५. गम्भार ५ ग्राम, ६. बलामूल ५ ग्राम, ७. सोंठ ५ ग्राम, ८. धनिया ५ ग्राम, ९. नीलकमल पुष्प ५ ग्राम, १०. बेलसोंठ ५ ग्राम (सभी समभाग) लें तथा ११. गोतक्र १ लीटर—उपर्युक्त १ से १० द्रव्यों का पृथक्-पृथक् यवकुट करें, तक्र में मिलावें और १ ली. जल मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। जब जल सूख जाय तो छानकर शीतल होने पर थोड़ा-थोड़ा अतिसार के रोगी को पिलावें।

२२. पूतिकादि क्वाथ

पूतिका मागधी शुण्ठी बला धान्यं हरीतकी ।
पक्त्वाऽम्बुना पिबेत् सायं वातातीसारशान्तये ॥३७॥

१. करञ्ज, २. पीपर, ३. शुण्ठी, ४.बलामूल, ५. धनियाँ और ६. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। ५० मि.ली. की मात्रा में इस क्वाथ को प्रातः-सायं सेवन करने से वातातिसार नष्ट हो जाता है।

२३. पथ्यादि क्वाथ

पथ्या दारु वचा शुण्ठी मुस्ता चातिविषाऽमृता ।
क्वाथ एष हरेत्पीतो वातातीसारमुल्बणम् ॥३८॥

१. हरीतकी, २. देवदारु, ३. वच, ४. शुण्ठी, ५. नागरमोथा, ६. अतीस और ७. गुडूची—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। ५० मि.ग्रा. की मात्रा में यह क्वाथ पीने से उल्बण वातातिसार को नष्ट कर देता है।

२४. वचादि क्वाथ

वचा चातिविषा मुस्तं बीजानि कुटजस्य च ।
श्रेष्ठः कषाय एतेषां वातातीसारशान्तये ॥३९॥

१. वच, २. अतीस, ३. नागरमोथा तथा ४. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर ५० मि.ग्रा. की मात्रा में वातातिसार से पीड़ित रोगी को पिलावें।

पित्तातिसार-चिकित्सा

२५. मधुकादि चूर्ण (चक्रदत्त)

मधुकं कट्फलं लोध्रं दाडिमस्य फलत्वचम् ।
पित्तातिसारे मध्वाक्तं पाययेत्तण्डुलाम्बुना ॥४०॥

१. मुलेठी, २. कायफल, ३. लोध एवं ४. अनार का फलत्वक्—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में मधु मिलाकर तण्डुलोदक के साथ पित्तातिसार के रोगी को सेवन करायें। इस चूर्ण को काचपात्र में संग्रहीत करें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२६. बिल्वादि क्वाथ (भावप्रकाश)

बिल्वशक्रयवाम्भोदबालकातिविषाकृतः ।
कषायो हन्त्यतीसारं सामं पित्तसमुद्भवम् ॥४१॥

१. बालबिल्वफलमज्जा, २. इन्द्रयव, ३. नागरमोथा, ४. सुगन्धबाला तथा ५. अतीस—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में प्रयोग करने से आमपित्तातिसार में लाभ होता है।

२७. कट्फलादि क्वाथ

कट्फलातिविषाम्भोदवत्सकं नागरान्वितम् ।
शृतं पित्तातिसारघ्नं दातव्यं मधुसंयुतम् ॥४२॥

१. कायफल, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. कुटजत्वक् और ५. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में मधु मिलाकर पीने से पित्तातिसार नष्ट हो जाता है।

२८. किराततिक्तादि क्वाथ (चक्रदत्त)

किराततिक्तकं मुस्तं वत्सकं सरसाञ्जनम् ।
पित्तातिसाररोगघ्नं सक्षौद्रं वेदनापहम् ॥४३॥

१. चिरायता, २. नागरमोथा, ३. कुटजत्वक् तथा ४. रसाञ्जन—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा शहद मिलाकर पीने से वेदनायुक्त पित्तातिसार नष्ट हो जाता है।

२९. अतिविषादि चूर्ण

सक्षौद्रातिविषां पिष्ट्वा वत्सकस्य फलं त्वचम् ।
तण्डुलोदकसंयुक्तं पेयं पित्तातिसारनुत् ॥४४॥

१. अतीस, २. कुटज छाल एवं ३. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में मधु मिलाकर तण्डुलोदक के साथ सेवन करने से पित्तातिसार नष्ट हो जाता है।

श्लेष्मातिसार-चिकित्सा

३०. पथ्यादि क्वाथ

पथ्याऽग्निकटुकापाठावचामुस्तकवत्सकैः ।
सनागरैर्जयेत् क्वाथः कल्को वा श्लैष्मिकीं स्रुतिम् ॥४५॥

१. हरीतकी, २. चित्रकमूल, ३. कुटकी, ४. पाढल, ५. वच, ६. नागरमोथा, ७. कुटजत्वक् और ८. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें अथवा कल्क बनावें। इसका सेवन करने से कफातिसार नष्ट हो जाता है।

३१. चव्यादि क्वाथ (भावप्रकाश)

चव्यं सातिविषं मुस्तं बालबिल्वं सनागरम् ।
वत्सकत्वक्फलं पथ्या छर्दिश्लेष्मातिसारनुत् ॥४६॥

१. चव्य, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. बिल्वफलमज्जा, ५. शुण्ठी, ६. कुटज छाल, ७. इन्द्रयव तथा ८. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और ५० मि.ली. की मात्रा में क्वाथ का सेवन करने से कफातिसार एवं उसमें उत्पन्न वमन भी दूर होता है।

३२. पाठादि चूर्ण

पाठा वचा त्रिकटुकं कुष्ठं च कटुरोहिणी ।
उष्णाम्बुना विनिघ्नन्ति श्लेष्मातीसारमुल्बणम् ॥४७॥

१. पाढल, २. वच, ३. शुण्ठी, ४.पीपर, ५. मरिच, ६. कूठ तथा ७. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। १ से ३ ग्राम की मात्रा में इस चूर्ण को गरम जल के साथ सेवन करने से कफातिसार नष्ट होता है।

३३. हिङ्ग्वादि चूर्ण (भावप्रकाश)

हिङ्गु सौवर्चलं व्योषमभयाऽतिविषा वचा ।
पीतमुष्णाम्बुना चूर्णं श्लेष्मातीसारनाशनम् ॥४८॥

१. शुद्ध हींग, २. सौवर्चल नमक, ३. शुण्ठी, ४. पीपर, ५. मरिच, ६. हरीतकी, ७. अतीस और ८. वच—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। प्रथम हींग को घृत में भुन लें। फिर समस्त द्रव्यों को एक साथ सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में गरम जल के साथ सेवन करने से कफातिसार नष्ट हो जाता है।

३४. पथ्यादि चूर्ण

पथ्या पाठा वचा कुष्ठं चित्रकं कटुरोहिणी ।
चूर्णमुष्णाम्बुना पीतं श्लेष्मातीसारनाशनम् ॥४९॥

१. हरीतकी, २. पाढल, ३. वच, ४. कूठ, ५. चित्रकमूल तथा ६. कुटकी—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर सूक्ष्म चूर्ण बनावें। इस चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में गरम जल के साथ सेवन करने से कफातिसार नष्ट होता है।

३५. द्वन्द्वजातीसार-चिकित्सा

द्विदोषलक्षणैर्विद्यादतीसारं द्विदोषजम् ।
एषां चिकित्सा प्रोक्तैव विशिष्टा च निगद्यते ॥५०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जिस अतिसार में दो दोषों के लक्षण दिखायी पड़े उसको द्विदोषज अतिसार कहते हैं। सामान्यतः अलग-अलग दोषों से उत्पन्न अतिसाररोग की चिकित्सा का वर्णन कर दिया गया है। अब द्विदोषज अतिसार की चिकित्सा का वर्णन किया जायेगा।

वातपित्तातिसार-चिकित्सा

३६. कलिङ्गादि कल्क (चक्रदत्त)

कलिङ्गकवचामुस्तं दारु सातिविषं समम्।
कल्कं तण्डुलतोयेन पिबेत् पित्तानिलामयी ॥५१॥

१. इन्द्रयव, २. वच, ३. नागरमोथा, ४. देवदारु तथा ५. अतीस—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर चूर्ण करें। इसमें से ६ ग्राम चूर्ण को लेकर कल्क बनायें। कल्क को तण्डुलोदक (चावल के धोवन) के साथ प्रयोग करें। इसको सेवन करने से वातपित्तातिसार नष्ट होता है।

पित्तश्लेष्मातिसार-चिकित्सा

३७. मुस्तादि क्वाथ

मुस्ता सातिविषा मूर्वा वचा च कुटजः समः।
एषां कषायः सक्षौद्रः पित्तश्लेष्मातिसारनुत् ॥५२॥

१. नागरमोथा, २. अतीस, ३. मूर्वा, ४. वच एवं ५. कुटज की छाल—इन सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में मधु के साथ सेवन करने से पित्तकफातिसार नष्ट होता है।

३८. समङ्गादि क्वाथ

समङ्गा धातकी बिल्वमाम्रास्थ्यम्भोजकेशरम् ॥५३॥

१. मंजीठ, २. धावाफूल, ३. बाल बिल्वफलमज्जा, ४. कच्चे आम फल की गुठली और ५. कमलकेशर—इन्हें समभाग में लेकर यवकुट करें और इसमें से २५ ग्राम चूर्ण का क्वाथविधि से क्वाथकर अवशेष ५० मि.ली. क्वाथ पीने से कफातिसार का नाश हो जाता है।

३९. बिल्वादि कल्क

बिल्वं मोचरसं लोध्रं कुटजस्य फलं त्वचम्॥
पिबेत्तण्डुलतोयेन कषायं कल्कमेव वा।
श्लेष्मपित्तातिसारघ्नो रक्तं वाऽथ नियच्छति ॥५४॥

१. बाल बिल्वफलमज्जा, २. मोचरस, ३. लोध्रत्वक्, ४. इन्द्रजौ तथा ५. कुटज की छाल—इन्हें समभाग में लेकर सूक्ष्म वस्त्रपूत चूर्ण कर लें। पुनः ६ ग्राम चूर्ण को पानी से सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को तण्डुलोदक के साथ पिलाने से कफातिसार का नाश हो जाता है।

मात्रा–क्वाथ की ५० मि.ली., कल्क की ६ से १२ ग्राम।

वातश्लेष्मातिसार-चिकित्सा

४०. कुटजादि क्वाथ (चक्रदत्त)

कुटजातिविषा मुस्तं हरिद्रापर्णिनीद्वयम्।
सक्षौद्रशर्करं शस्तं पित्तश्लेष्मातिसारिणाम् ॥५५॥

१. कुटजत्वक्, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. हल्दी, ५. दारुहल्दी, ६. शालपर्णी एवं ६. पृश्निपर्णी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में शहद एवं शर्करा के साथ पीवें। इसका सेवन पित्त और कफ से उत्पन्न अतिसार वाले रोगियों में विशेष लाभकारी है।

४१. चित्रकादि क्वाथ (भावप्रकाश)

चित्रकातिविषामुस्तं बला बिल्वं सनागरम्।
वत्सकत्वक्फलं पथ्या वातश्लेष्मातिसारनुत् ॥५६॥

१. चित्रकमूल, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. बलामूल, ५. बाल बिल्वफलमज्जा, ६. शुण्ठी, ७. कुटज छाल, ८. इन्द्रयव तथा ९. हरीतकी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा वातकफातिसार से पीड़ित रोगी को पिलावें।

त्रिदोषजातिसार-चिकित्सा

वराहस्नेहमांसाम्बुसदृशं सर्वरूपिणम्।
कृच्छ्रसाध्यमतीसारं विद्याद्दोषत्रयोद्भवम् ॥५७॥

त्रिदोषज अतिसार में वातादि तीनों प्रकार के अतिसार का लक्षण मिलता है। परन्तु जब अतिसार से पीड़ित व्यक्ति का मल सूअर की चर्बी के समान या मांस के धोवन के समान आने लगे—इस प्रकार का त्रिदोषज अतिसार अत्यन्त कष्टसाध्य होता है।

४२. समङ्गादि कषाय (चक्रदत्त)

समङ्गाऽतिविषा मुस्ता विश्वह्रीबेरधातकी।
कुटजत्वक्फलं बिल्वं क्वाथः सर्वातिसारनुत् ॥५८॥

१. मंजीठ, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. शुण्ठी, ५. सुगन्धबाला, ६. धातकी फूल, ७. कुटज की छाल, ८. इन्द्रयव तथा ९. बेलसोंठ (बालबिल्वफलमज्जा)—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में पीने से सभी प्रकार के अतिसार नष्ट हो जाते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

४३. पञ्चमूलीबलादि शृतशीत क्वाथ (हारीत सं.)

पञ्चमूलीबलाबिल्वगुडूचीमुस्तनागरैः ।
पाठाभूनिम्बबर्हिष्ठकुटजत्वक्फलैः शृतम् ॥५९॥
सर्वजं हन्त्यतीसारं ज्वरं चापि तथा वमिम् ।
सशूलोपद्रवं श्वासं कासं चापि सुदुस्तरम् ॥६०॥

१. पञ्चमूल बृहत्, २. बलामूल, ३. बाल बिल्वफलमज्जा, ४. गुडूची, ५. नागरमोथा, ६. शुण्ठी, ७. पाढल, ८. चिरायता, ९. सुगन्धबाला, १०. कुटज की छाल तथा ११. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. शीतल क्वाथ का सेवन करने से त्रिदोषज अतिसार नष्ट हो जाता है और ज्वर, वमन, शूल आदि उपद्रव तथा श्वास-कासादि भी नष्ट हो जाते हैं।

विमर्श—इस योग में पञ्चमूल का प्रयोग करने के लिए जब रोगी में पित्ताधिक्य हो तो लघुपञ्चमूल लें एवं वात-कफाधिक्य में बृहत्पञ्चमूल लें। (बिल्वाग्निमन्थश्योनाकपाटलागनिकारिका)

(चक्रदत्त)

अवेदनं सुसम्पक्वं दीप्ताग्नेः सुचिरोत्थितम् ।
नानावर्णमतीसारं पुटपाकैरुपाचरेत् ॥६१॥

वेदनारहित एवं परिपक्व दोष वाले तथा प्रदीप्त अग्नि वाले, चिरकाल से उत्पन्न अनेक वर्णों से युक्त अर्थात् त्रिदोषज अतिसार को पुटपाक विधि से निकाली गयी औषधियों के स्वरस का प्रयोग करने से अतिसार नष्ट होता है।

४४. कुटजपुटपाक (चक्रदत्त)

स्निग्धं घनं कुटजवल्कमजन्तुजग्ध-
मादाय तत्क्षणमतीव च कुट्टयित्वा ।
जम्बूपलाशपुटतण्डुलतोयसिक्तं
बद्धं कुशेन च बहिर्घनपङ्कलिप्तम् ॥६२॥
सुस्विन्नमेतदवपीड्य रसं गृहीत्वा
क्षौद्रेण युक्तमतिसारवते प्रदद्यात् ।
कृष्णात्रिपुत्रमतपूजित एष योगः
सर्वातिसारहरणेष्वयमेव राजा ॥६३॥

कुटज की छाल आर्द्र ही लेकर तण्डुलोदक के साथ कल्क जैसा पीस लें। इस कल्क को जामुन अथवा पलाश के पत्तों के बने पुट में बन्द करें, फिर उसके ऊपर कुश या धागा अच्छी प्रकार लपेटकर बाँध देवें और चिकनी मिट्टी का दो अँगुल मोटा लेप भली प्रकार करके मिट्टी के लगे लेप को सूख जाने दें, तदुपरान्त प्रदीप्त अग्नि पर रखें। जब लगाया हुआ लेप अंगारे के समान लाल वर्ण का हो जाय तो उसे पका जानकर अग्नि से निकाल लें। गरम-गरम सावधानीपूर्वक लगाये गये लेप, पत्ते आदि को हटाकर कल्क को कपड़े पर रख दबाकर रस निकालें। इस स्वरस में शहद मिलाकर अतिसार से पीड़ित रोगी को पिलावें। कृष्णात्रेय के मतानुसार यह योग सभी प्रकार के अतिसारों को नष्ट करने में श्रेष्ठ है।

पुटपाक की मात्रा तथा पाकपरीक्षा (चक्रदत्त)

स्वरसस्य गुरुत्वेन पुटपाके पलं पिबेत् ।
पुटपाकस्य पाकोऽयं बहिरारुणवर्णता ॥६४॥

पुटपाक विधि से निकाला हुआ औषधियों का स्वरस गुरु होता है। अत: इसकी मात्रा एक पल (४ तोला) पर्याप्त है। पुटपाक पर किया हुआ मिट्टी का लेप जब अंगारे के समान रक्तवर्ण का हो जाय तब पुटपाक सिद्ध हुआ जानना चाहिए। ऐसा जानकर ही पुटपाक को अग्नि से निकालकर सावधानीपूर्वक लेप आदि को हटाकर औषधि का स्वरस निकालें।

४५. श्योनाक पुटपाक (चक्रदत्त)

त्वक्पिण्डं दीर्घवृन्तस्य काश्मरीपत्रवेष्टितम् ।
मृदाऽवलिप्तं सुकृतमङ्गारेष्ववकूलयेत् ॥६५॥
स्विन्नमुद्धृत्य निष्पीड्य रसमादाय यत्नतः ।
शीतीकृतं मधुयुतं पाययेदुदरामये ॥६६॥

सोनापाठा की छाल २५० ग्राम ताजा ही लेकर चावल के धोवन (तण्डुलोदक) से पीसकर कल्क जैसा पीस लें। इस कल्क को गम्भारी के पत्ते में रखकर धागा से बाँधे, उस पर चिकनी मिट्टी से दो अँगुल मोटा लेप करें, लेप के सूख जाने पर निर्धूम प्रज्वलित अग्नि में रखकर पाक करें। जब लेप अग्नि जैसा लाल वर्ण का हो जाय तब अग्नि से बाहर निकालें। गरम-गरम सावधानीपूर्वक लेप आदि को हटाकर कल्क को कपड़े पर रख दबाकर स्वरस निकालें। इस स्वरस को १ पल की मात्रा में मधु मिलाकर उदर-विकार से पीड़ित रोगी को पिलावें।

विमर्श—१. औषध कल्क या पिण्ड को योग में दिये गये पत्ते में ही वेष्टित करना चाहिए। परन्तु यदि योग में पत्तों का उल्लेख न हो तो ऐसी दशा में वट, जामुन, आम, पलाश, गम्भारी इनमें से जो उपलब्ध हो उसी के पत्ते में औषधपिण्ड को वेष्टित करें।

२. यह योग सुश्रुत के अनुसार इस प्रकार है—

'त्वक्पिण्डं दीर्घवृन्तस्य पद्मकेशरसंयुतम् ।
काश्मरीपद्मपत्रैश्चावेष्ट्य सूत्रेण तं दृढम्' ।।

अर्थात् श्योनाक की छाल और कमलपुष्प का केसर इन दोनों

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

को सममात्रा में लेकर कल्क बनावें, पुनः काश्मरी और कमलपत्र से वेष्टित कर पुटपाक विधि से पुटपाक करें।

४६. दाडिम पुटपाक

दाडिमस्य फलं पिष्ट्वा पचेत्पुटविधानतः।
तद्रसं मधुसम्मिश्रं पिबेत्सर्वातिसारजित् ॥६७॥

अनारदाना को जल के साथ पीसकर कल्क बना लें और पुटपाक विधि से पुटपाक करें। स्वरस निकालकर १ पल की मात्रा में शहद के साथ सेवन करने से सभी प्रकार के अतिसार का नाश हो जाता है।

४७. कुटजलेह (चक्रदत्त)

शतं कुटजमूलस्य क्षुण्णं तोयार्मणे पचेत्।
क्वाथे पादावशेषेऽस्मिन् लेहं पूते पुनः पचेत् ॥६८॥
सौवर्चलयवक्षारबिडसैन्धवपिप्पलीः ।
धातकीन्द्रयवाजाजीचूर्णं दत्त्वा पलद्वयम् ॥६९॥
लिह्याद्बदरमात्रन्तु शीतं क्षौद्रेण संयुतम्।
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम्॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयेच्चैव प्रवाहिकाम् ॥७०॥

१. कुटज की छाल ४.६७० कि.ग्रा., जल १२ ली.।

प्रक्षेप द्रव्य—१. कालानमक, २. यवक्षार, ३. विडनमक, ४. सैन्धवनमक, ५. पीपर, ६. धावा के फूल, ७. इन्द्रयव और ८. श्वेत जीरा—प्रत्येक ९० ग्राम।

विधि–सर्वप्रथम कुटज की छाल को यवकुट करें और १२ ली. जल लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ बनायें। छानकर पुनः क्वाथ को अग्नि पर रखें। यह क्वाथ जब पकाते-पकाते अवलेह सदृश गाढ़ा हो जाय तब उसमें ठण्डा होने पर प्रक्षेप द्रव्यों का किया हुआ सूक्ष्म चूर्ण मिलावें। शीतल होने पर काचपात्र में सुरक्षित रखें। इस लेह को बेर के बराबर ६ से १२ ग्राम (आधे से एक तोला) की मात्रा में मधु के साथ रोगी को सेवन करायें। यह अवलेह पक्वातिसार, अपक्वातिसार एवं अनेक प्रकार के नील-पीत-हरित वर्ण की पुरीष से युक्त अतिसार, पीड़ायुक्त अतिसार एवं अन्य औषधियों से असाध्य ग्रहणीरोग तथा प्रवाहिका को भी नष्ट करता है।

४८. कुटजाष्टक अवलेह (चक्रदत्त)

तुलामथार्द्रां गिरिमल्लिकायाः
संक्षुद्य पक्त्वा रसमाददीत।
तस्मिन् सुपूते पलसम्मितानि,
श्लक्ष्णानि पिष्ट्वा सह शाल्मलेन ॥७१॥
पाठां समङ्गातिविषां समुस्तां,
बिल्वञ्च पुष्पाणि च धातकीनाम्।
प्रक्षिप्य भूयो विपचेत्तु तावद्
दर्वीप्रलेपः स्वरसन्तु यावत् ॥७२॥
पीतस्त्वसौ कालविदा जनेन,
मण्डेन वाऽजापयसाऽथवाऽपि।
निहन्ति सर्वन्त्वतिसारमुग्रं
कृष्णं सितं लोहितपीतकं वा ॥७३॥
दोषं ग्रहण्या विविधञ्च रक्तं
पित्तं तथाऽर्शांसि सशोणितानि।
असृग्दरञ्चैवमसाध्यरूपं
निहन्त्यवश्यं कुटजाष्टकोऽयम् ॥७४॥
तुलाद्रव्ये जलद्रोणे द्रोणे द्रव्यतुला मता ॥७५॥

१. कुटज का आर्द्रत्वक् ४.६७० कि. ग्रा.।

प्रक्षेप द्रव्य–१. मोचरसचूर्ण, २. पाठाचूर्ण, ३. मंजीठचूर्ण, ४. अतीसचूर्ण, ५. नागरमोथाचूर्ण, ६. बिल्वफलमज्जाचूर्ण तथा धातकीपुष्पचूर्ण (प्रत्येक ५० ग्राम) लें।

विधि—सर्वप्रथम कुटज की छाल को यवकुट करें। इस यवकुट को १२ ली. जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चतुर्थांश शेष रहने पर छानकर स्टेनलेस स्टील पात्र में रखकर चूल्हे पर गरम करें। पुनः उसमें मोचरस से धातकीपुष्प तक के समस्त द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलायें और तब तक पाक करें जब तक कि कलछी में चिपकने न लगें। उतार कर शीतल होने पर शीशे के बर्तन में सुरक्षित रख दें। इस कुटजाष्टक अवलेह को १२ से ५० ग्राम की मात्रा में शीतल जल, चावल का माँड, बकरी के दूध के साथ सेवन करें। इसके सेवन से सभी प्रकार के भंयकर तथा काला, श्वेत, लोहित एवं पीत वर्ण के मल वाले अतिसार नष्ट हो जाते हैं। साथ ही अनेक प्रकार के ग्रहणी-विकार, रक्तपित्त, शुष्क एवं रक्तार्श और असाध्य रक्तप्रदर आदि विकार ठीक हो जाते हैं।

जीर्णातिसार में छागीदुग्धपानविधि (चक्रदत्त)

जीर्णेऽमृतोपमं क्षीरमतिसारे विशेषतः।
छागं तद्भेषजैः सिद्धं पेयं वा वारिसाधितम् ॥७६॥

अतिसार की चिरकालीनावस्था में दुग्ध का प्रयोग अमृततुल्य लाभकारी होता है। परन्तु यदि बकरी के दूध के साथ औषधियों को क्षीरपाक विधि से सिद्ध कर प्रयोग करें अथवा बकरी के दूध को तीन गुना जल के साथ उबालें। दूध मात्र शेष रहने पर रोगी को पिलाना अत्यधिक लाभदायक है।

विमर्श—जीर्णातिसार से पक्वातिसार और उसके बाद की अवस्था का ज्ञान करना चाहिए। आमातिसार में दुग्ध का प्रयोग नहीं करना चाहिए। बकरी का दूध कषाय, मधुर, ग्राही एवं पाक में लघु होने के कारण अतिसार में प्रयोग श्रेष्ठ है। अधिक मल

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एवं शरीर के जलीयांश के नष्ट हो जाने पर मनुष्य क्षीणकाय हो जाता है, ऐसी अवस्था में दुग्ध के प्रयोग से कृशता का विनाश एवं जीवनशक्ति की वृद्धि होती है। अत: दुग्ध का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

शोथातीसार-चिकित्सा

४९. शोथघ्न्यादि क्वाथ

शोथघ्नीन्द्रयवाः पाठाश्रीफलातिविषाघनाः ।
क्वथिताः सोषणाः पीताः शोथातिसारनाशनाः ॥७७॥

१. पुनर्नवा, २. इन्द्रयव, ३. पाढल, ४. कच्चे बेलफल की गूदी, ५. अतीस और ६. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें एवं क्रम १ से ६ तक के द्रव्यों को यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट चूर्ण को लेकर क्वाथविधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर मरिच के सूक्ष्म चूर्ण २ ग्राम का प्रक्षेप डालकर ५० मि.ली. पीने से शोथयुक्त अतिसार नष्ट हो जाता है।

५०. विडङ्गादि क्वाथ (चक्रदत्त)

विडङ्गातिविषामुस्तं दारु पाठा कलिङ्गकम् ।
मरिचेन समायुक्तं शोथातीसारनाशनम् ॥७८॥

१. वायविडंग, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. देवदारु, ५. पाढल तथा ६. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें एवं क्रम १ से ६ तक के द्रव्यों का यवकुट करें। १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर मरिच के सूक्ष्म चूर्ण २ ग्राम का प्रक्षेप डालकर ५० मि.ली. पीने से शोथातिसार नष्ट होता है।

भयशोकजातीसार-चिकित्सा

भयशोकसमुद्भूतौ ज्ञेयौ वातातिसारवत् ।
तयोर्वातहरी कार्या हर्षणाश्वासनैः क्रिया ॥७९॥

भय एवं शोक से उत्पन्न अतिसार में वातातिसार की भाँति चिकित्सा करनी चाहिए। अत: इन दोनों अतिसार में वातनाशक क्रिया, हर्षोत्पादन तथा आश्वासन प्रदान करना चाहिए। ऐसा करने से रोगी भय एवं शोक से उत्पन्न अतिसार से मुक्त हो जाता है।

५१. पृश्निपर्ण्यादि क्वाथ

पृश्निपर्णीबिलाबिल्वधान्यकोत्पलनागरैः ।
विडङ्गातिविषामुस्तादारुपाठाकलिङ्गकैः ।
मरिचेन समायुक्तः शोकातीसारनाशनः ॥८०॥

१. पृश्निपर्णी, २. बलामूल, ३. कच्चे बेल की गिरी, ४. धनियाँ, ५. नीलकमल, ६. शुण्ठी, ७. वायविडंग, ८. अतीस, ९. नागरमोथा, १०. देवदारु, ११. पाढल और १२. इन्द्रयव—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ छानकर पीपर के सूक्ष्म चूर्ण का प्रक्षेप देकर पीने से शोकजातिसार नष्ट होता है।

रक्तातीसार-चिकित्सा

५२. गुडबिल्व-प्रयोग (चक्रदत्त)

गुडेन खादितं बिल्वं रक्तातीसारनाशनम् ।
आमशूलविबन्धध्नं कुक्षिरोगविनाशकम् ॥८१॥

पके हुए बेलफल के गुदे के साथ गुड़ मिलाकर १ तोला की मात्रा में खाने से रक्तस्राव युक्त अतिसार, आमदोष के कारण उत्पन्न शूल, विबन्ध एवं उदर के समस्त विकार नष्ट हो जाते हैं।

रक्तातिसारनाशक प्रयोग

५३. शल्लक्यादि त्वक् चूर्ण

शल्लकीबदरीजम्बूप्रियालाम्रार्जुनत्वचः ।
पीताः क्षीरेण मध्वाढ्याः पृथक् शोणितनाशनः ॥८२॥

१. शल्लकी (शाल) छाल, २, बेर की छाल, ३. जामुन की छाल, ४. चिरौंजी वृक्ष की छाल, ५. आम की छाल तथा ६. अर्जुन की छाल—इनमें से किसी एक द्रव्य को लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को ६ माशा की मात्रा में मधु मिलाकर सेवन करें, तत्पश्चात् दूध पीयें। अथवा किसी एक द्रव्य को लेकर यवकुट करें। २५ ग्राम यवकुट को लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा मधु मिलाकर दुग्ध के साथ सेवन करें। इसके लगातार सेवन करने से रक्तातिसार नष्ट हो जाता है।

५४. चन्दनचूर्ण-प्रयोग

पीत्वा सशर्करं क्षौद्रं चन्दनं तण्डुलाम्बुना ।
दाहं तृष्णां प्रमेहञ्च सद्यो रक्तं नियच्छति ॥८३॥

१. लाल चन्दन चूर्ण ३ ग्राम, २. चीनी चूर्ण ३ ग्राम एवं ३. मधु ३ ग्राम—तीनों मिलाकर रोगी को चाटने को दें तथा ऊपर से ५० मि.ली. तण्डुलोदक पिलावें। इस तरह रोज दो बार पिलाने से दाह, तृष्णा, प्रमेह और रक्तातिसार रोग नष्ट हो जाते हैं।

५५. कुटजदाडिम क्वाथ (चक्रदत्त)

कषायो मधुना पीतस्त्वचो दाडिमवत्सकात् ।
सद्यो जयेदतीसारं सरक्तं दुर्निवारकम् ॥८४॥

१. अनार का छिलका अथवा वृक्ष की छाल एवं २. कुटज की छाल—इन द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में शहद मिलाकर पीने से रक्तस्राव युक्त तथा असाध्य एवं दुर्निवार्य अतिसार शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५६. जामुन-आम-आमलापत्ररस-प्रयोग (चक्रदत्त)

जम्ब्वाम्रामलकानान्तु पल्लवानथ कुट्टयेत्।
संगृह्य स्वरसं तेषामजाक्षीरेण योजयेत्॥
तत्पिबेन्मधुना युक्तं रक्तातीसारनाशनम्॥८५॥

जामुन, आम एवं आमला के कोमल पत्तों को लेकर अलग-अलग कूटकर रस निकालें। इस स्वरस को मिलाकर २ तोला की मात्रा में मधु एवं बकरी के दूध के साथ सेवन करने से रक्तातिसार नष्ट हो जाता है।

५७. बिल्वादि क्षीर-प्रयोग (चक्रदत्त)

बिल्वं छागपयःसिद्धं सितामोचरसान्वितम्।
कलिङ्गचूर्णसंयुक्तं रक्तातीसारनाशनम्॥८६॥

कच्चे बेलफल का गूदा १५ ग्राम की मात्रा में लेकर क्षीरपाक विधि से क्षीरपाक करें। दूध मात्र शेष रह जाने पर छानकर आवश्यकतानुसार चीनी, मोचरस एवं इन्द्रयव के सूक्ष्म चूर्ण ३-३ ग्राम में मिलाकर पीने से रक्तातिसार नष्ट हो जाता है।

५८. तण्डुलीय-शतावरी योग (चक्रदत्त)

ज्येष्ठाम्बुना तण्डुलीयं पीतञ्च ससितामधु॥८७॥
पीत्वा शतावरीकल्कं पयसा क्षीरभुग्जयेत्।
रक्तातिसारं पीत्वा वा तया सिद्धं घृतं नरः॥८८॥

(१) तण्डुलीयक शाक २५ ग्राम, तण्डुलोदक ५० मि.ली. तथा चीनी १० ग्राम—सिल पर तण्डुलीयकशाक को महीन पीस लें और तण्डुलोदक के साथ मिलाकर कपड़ा से छान लें तथा चीनी एवं मधु मिलाकर रोगी को पिलावें। इसके पीने से रक्तातिसार नष्ट हो जाता है। अथवा—

(२) शतावरी चूर्ण १२ ग्राम, मधु १० ग्राम तथा गोदूध २०० मि.ली.—शतावरी को दूध के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें और मधु मिलाकर चाट जायें तथा बाद में शीतल दूध का पान करावें। इससे रक्तातिसार रोग नष्ट हो जाता है। अथवा—

(३) शतावरी के कल्क, क्वाथ एवं दूध से घृत सिद्ध करें और ६ से १२ ग्राम की मात्रा में इस घृत को गरम दूध के साथ सेवन करने से रक्तातिसार नष्ट होता है।

जब रक्तातिसार से पीड़ित रोगी को उपर्युक्त तीनों योगों में से किसी एक योग का सेवन करायें तब पथ्य में हल्का भोजन दूध के साथ अवश्य ही देना चाहिए।

५९. कुटजादि लेह (चक्रदत्त)

कुटजत्वक्कृतः क्वाथो घनीभूतः सुशीतलः।
लेहितोऽतिविषायुक्तः सर्वातीसारनुद्भवेत्॥८९॥

कुटज की छाल १ किलो लेकर यवकुट करें और क्वाथ विधि से ४ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर इस क्वाथ को लेह जैसा घन करें। ठण्डा होने पर १०० ग्राम अतीस का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। ५ ग्राम इस लेह का सेवन करने से सभी प्रकार के अतिसार रोग से पीड़ित व्यक्ति स्वस्थ हो जाता है। विशेषकर यह योग रक्तातिसार को नष्ट कर देता है।

६०. कुटजरसक्रिया (चक्रदत्त)

कुटजस्य पलं ग्राह्यमष्टभागजले श्रृतम्।
तत्रैव विपचेद् भूयो दाडिमोदकसंयुतम्॥९०॥
यावच्चैव लसीकाभं श्रृतं तदुपकल्पयेत्।
तस्यार्द्धकर्षं तक्रेण पिबेद्रक्तातिसारवान्॥९१॥
अवश्यमरणीयोऽपि मृत्योर्याति न गोचरम्॥
कुटजक्वाथतुल्योऽत्र दाडिमस्य रसो मतः॥९२॥

१. कुटज की छाल तथा २. अनारबीज का रस अथवा छाल—सर्वप्रथम कुटज की छाल को लेकर यवकुट करें, फिर आठ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करने के बाद छान लें; उसमें क्वाथ की मात्रा के बराबर अनारबीज का रस मिलाकर अर्धघन (मधु-सदृश) गाढ़ा करके काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस तैयार कुटजरस को आधा तोला की मात्रा में तक्र के साथ रक्तातिसार से पीड़ित व्यक्ति को सेवन करायें। इसका सेवन करने से मृत्युशय्या पर पड़ा रक्तातिसार से पीड़ित व्यक्ति भी स्वस्थ हो जाता है। इस योग के साथ कुटज क्वाथ की मात्रा में अनार का रस भी देना चाहिए।

६१. कृष्णतिलकल्क प्रयोग (चक्रदत्त)

कल्कस्तिलानां कृष्णानां शर्कराभागसंयुतः।
आजेन पयसा पीतः सद्यो रक्तं नियच्छति॥९३॥

स्वच्छ एवं ताजे काले तिल को लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण में चौथाई मात्रा में शर्करा चूर्ण मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस चूर्ण को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में बकरी के दूध के साथ सेवन करने से रक्तातिसार शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

विमर्श—चरक, वाग्भटादि के टीकाकारों ने एक भाग तिल चूर्ण के साथ चार गुना शर्करा चूर्ण मिलाने को कहा है जो सर्वथा अनुचित है, क्योंकि अतिसार से पीड़ित व्यक्ति के लिए अधिक शर्करा हितकारी नहीं है। क्योंकि—

'कृष्णतिलान् शर्करापादिकान् छागीपयसा शर्करा पादिका चतुर्थांशभागयुक्ता येषु ते तानिति'।

६२. बिल्वादि चूर्ण (चक्रदत्त)

बिल्वाब्दधातकीपाठाशुण्ठीमोचरसाः समाः।
पीता रुन्धन्त्यतीसारं गुडतक्रेण दुर्जयम्॥९४॥

१. बिल्वफलमज्जा, २. नागरमोथा, ३. धातकी फूल, ४.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पाठा, ५. शुण्ठी और ६. मोचरस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और काचपात्र में सुरक्षित रखें। इस चूर्ण को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में दुगुना गुड़ मिलाकर तक्र के साथ सेवन करने से जो अतिसार अनेक प्रकार की औषधों के प्रयोग से नष्ट न हो सका हो वह भी नष्ट हो जाता है।

६३. कुटजक्षीर

निःक्वाथ्य मूलममलं गिरिमल्लिकायाः
सम्यक् पलद्वितयमम्बुचतुःशरावे।
तत्पादशेषसलिलं खलु शेषणीयं
क्षीरे पलद्वयमिते कुशलैरजायाः ॥९५॥
प्रक्षिप्य माषकानष्टौ मधुनस्तत्र शीतले।
रक्तातिसारी तं पीत्वा नैरुज्यमधिगच्छति ॥९६॥

स्वच्छ कुटजत्वक् को यवकुट करें। इसमें से १२ ग्राम यवकुट लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें, तदुपरान्त क्वाथ के बराबर मात्रा में बकरी के दूध में पाक करें। दुग्ध मात्र शेष रहने पर चूल्हे से उतार लें और शीतल होने पर ६ ग्राम की मात्रा में मधु के साथ पिलाने से रक्तातिसार नष्ट हो जाता है।

६४. वटारोह कल्क (चक्रदत्त)

वटारोहं तु सम्पिष्य श्लक्ष्णं तण्डुलवारिणा।
तत् पिबेत् तक्रसंयुक्तमतीसाररुजाऽपहम् ॥९७॥

वटप्ररोह २०० ग्राम को तण्डुलोदक के साथ सिल पर पीसकर २०० मि.ली. तक्र के साथ मिलावें। वस्त्रपूत कर सेवन करने से अतिसार रोग नष्ट हो जाता है।

६५. अंकोठमूल कल्क (चक्रदत्त)

तण्डुलजलपिष्टाऽङ्कोठमूलकर्षार्द्धपानमपहरति।
सर्वातिसारग्रहणीरोगसमूहं महाघोरम् ॥९८॥

समस्त प्रकार के अतिसार में अंकोल की जड़ को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में तण्डुलोदक २०० मि.ली. के साथ पीसकर पीने से लाभ होता है एवं प्रबल ग्रहणीरोग भी इसके सेवन से ठीक हो जाता है।

६६. विशल्यकरणी-कुक्कुरद्क्वाथौ

विशल्यकरणीक्वाथश्चाथवा कुक्कुरद्रुजः।
वारयेच्छोणितस्त्रावं रक्तातीसारमुल्बणम् ॥९९॥

निर्विषी (विशल्यकरणी) के ३-४ पत्तों को लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ बनायें। इस क्वाथ को अथवा कुकुरौधा स्वरस ५० मि.ली. में १० ग्राम चीनी मिलाकर प्रबल रक्तातिसार के रोगी को सेवन करायें।

६७. नागकेशर चूर्ण

नवनीतं मधुयुक्तं लिहेद्वा सितया सह।
नागकेशरसंयुक्तं रक्तसंग्रहणं परम्।
मधुपादं सिताद्धांशं नवनीतं चतुर्गुणम् ॥१००॥

१. मक्खन, २. शहद तथा ३. नागकेशर ३ से ६ ग्राम—सर्वप्रथम नागकेशर को लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। ६ ग्राम नागकेशर चूर्ण को चार गुना मक्खन एवं चौथाई मधु और आधा भाग मिश्री मिलाकर प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करने से रक्तातिसार नष्ट हो जाता है।

६८. रसाञ्जनादि चूर्ण (चक्रदत्त)

रसाञ्जनं सातिविषं कुटजस्य फलं त्वचम्॥
धातकी शृङ्गवेरञ्च पिबेत्तण्डुलवारिणा।
क्षौद्रयुक्तं प्रणुदति रक्तातीसारमुल्बणम् ॥१०१॥

१. रसाञ्जन, २. अतीस, ३. इन्द्रयव, ४. कुटज की छाल, ५. धातकीपुष्प तथा ६. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को ३ ग्राम से ६ ग्राम तक की मात्रा में चावल के धोवन (तण्डुलोदक) एवं मधु के साथ सेवन करने पर भयंकर रक्तातिसार भी नष्ट हो जाता है।

६९. नारायण चूर्ण

गुडूचीं वृद्धदारञ्च कुटजस्य फलं तथा।
बिल्वञ्चातिविषाञ्चैव भृङ्गराजञ्च नागरम् ॥१०२॥
शक्राशनस्य चूर्णञ्च सर्वमेकत्र मेलयेत्।
चूर्णमेतत्समं ग्राह्यं कुटजस्य त्वचोऽपि च ॥१०३॥
गुडेन मधुना वाऽपि लेहयेद्भिषजां वरः।
शोथं रक्तमतीसारं चिरजं दुर्जयं तथा ॥१०४॥
ज्वरं तृष्णाञ्च कासञ्च पाण्डुरोगं हलीमकम्।
मन्दानलं प्रमेहञ्च गुदजञ्च विनाशयेत्।
एतन्नारायणं चूर्णं श्रीनारायणभाषितम् ॥१०५॥

१. गुडूची, २. विधारा, ३. इन्द्रयव, ४. बिल्वफलमज्जा, ५. अतीस, ६. भृंगराज, ७. शुण्ठी, ८. शुद्ध भाँग तथा ९. कुटज छाल—सर्वप्रथम १ से ८ तक के समस्त द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। उसमें कुटज की छाल का सूक्ष्म चूर्ण सभी चूर्णों के बराबर मात्रा में मिलावें। इस चूर्ण को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे २ से ४ ग्राम की मात्रा में गुड़ या शहद के साथ मिलाकर सेवन करने से शोथ, असाध्य रक्तातिसार, ज्वर, तृष्णा, कास, पाण्डुरोग, हलीमक, मन्दाग्नि, प्रमेह एवं भगन्दरादि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। यह चूर्ण आचार्य नारायण के द्वारा बनाया गया है, अतः इसे नारायण चूर्ण कहा गया है।

गुददाह में सेक (चक्रदत्त)

गुददाहे प्रपाके वा पटोलमधुकाम्बुना।
सेकादिकं प्रशंसन्ति छागेन पयसाऽथवा ॥१०६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक अतिसार की अवस्था में गुदा में दाह अथवा गुदापाक हो जाता है। तब परवल और मुलेठी के अर्द्धशृत क्वाथ से गुदा का सेचन करना चाहिए अथवा मन्दोष्ण बकरी के दूध से गुदा का सेचन एवं प्रक्षालन करना चाहिए।

७०. गुददाहादि में अन्य प्रयोग (चक्रदत्त)

स्वेदो वा मूषिकामांसैर्गोवसाप्रक्षणं तथा।
गुदभ्रंशे प्रकर्त्तव्या चिकित्सा तत् प्रकीर्तिता ॥१०७॥

अथवा उपर्युक्त स्थानिक चिकित्सा के अतिरिक्त गुदभ्रंशाधिकार में कहे गये अनेक योगों; जैसे १. मूषिका के मांस को गरम करके गुदा पर रखकर स्वेदन करना चाहिए, २. गाय की चरबी को गुदा पर लेप कर धीरे-धीरे मर्दन करना चाहिए। चाङ्गेरी घृत या चव्यादि घृत पिलाना चाहिए। गुदभ्रंश हो जाने पर स्नेहन एवं स्वेदन कर्म करने के पश्चात् गुदा को भीतर प्रविष्ट करें। तत्पश्चात् कमलपत्र से ढ़ककर गोफणबन्धन अथवा लंगोट कसकर बाँध देना चाहिए।

७१. कनकमूलादि वर्ति

पिष्ट्वा कनकमूलञ्च शक्रजं फणिफेनकम्।
बल्लमाना कृता वर्तिर्मधूत्थघृतयोगतः ॥१०८॥
हन्याद् मुदयता क्षिप्रं दाहपाकावसंशयम्।
फलवर्त्तिरियं कृत्स्नगुदरोगनिषूदनी ॥१०९॥

१. धतूरे की जड़, २. इन्द्रयव और ३. शुद्ध अफीम—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण में मोम तथा घृत समभाग में मिलावें एवं तीन-तीन रत्ती की बत्ती बनावें। इस बत्ती को गुददाह अथवा पाक में गुदा में धारण करने से अवश्य ही लाभ होता है। इस फलवर्ति से सभी प्रकार के गुदरोग नष्ट हो जाते हैं।

७२. बिल्वाम्रास्थि क्वाथ (चक्रदत्त)

बिल्वचूतास्थिनिर्यूहः पीतः सक्षौद्रशर्करः।
निहन्याच्छर्द्यतीसारं वैश्वानर इवाहुतिम् ॥११०॥

१. बिल्वफलमज्जा तथा २. आम की गुठली—दोनों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में शहद एवं शर्करा मिलाकर पीने से जिस प्रकार से अग्नि में डाली गयी आहुति जल जाती है उसी प्रकार से वमन एवं अतिसार भी नष्ट हो जाते हैं।

७३. पटोलादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पटोलयवधन्याकक्वाथः पेयः सुशीतलः।
शर्करामधुसंयुक्तश्छर्द्यतीसारनाशनः ॥१११॥

१. परवल की पत्ती, २. इन्द्रयव एवं ३. धनियाँ—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण को लेकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। क्वाथ को छानकर ५० मि.ली. की मात्रा में शहद एवं शर्करा मिलाकर पीने से वमन एवं अतिसार नष्ट हो जाता है।

७४. प्रियङ्ग्वादि चूर्ण (चक्रदत्त)

प्रियङ्ग्वञ्जनमुस्ताद्यं पाययेत्तु यथाबलम्।
तृष्णाच्छर्द्यतिसारघ्नं सक्षौद्रं तण्डुलाम्बुना ॥११२॥

१. प्रियंगु का फूल, २. रसाञ्जन तथा ३. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को २ से ४ ग्राम की मात्रा में शहद एवं तण्डुलोदक के साथ सेवन करने से अतिसार में तृष्णा एवं वमन नष्ट होता है।

७५. जम्ब्वादि क्वाथरसचूर्णस्य

जम्ब्वाम्रपल्लवोशीरवटशुङ्गावरोहकम्।
रसः क्वाथोऽथवा चूर्णं क्षौद्रेण सह योजितम् ॥११३॥
छर्दिं ज्वरमतीसारं मूर्च्छां तृष्णां च दुर्जयाम्।
नाशयत्यचिराद्धन्ति स्रुतिं वाऽनेकहेतुकाम् ॥११४॥

जामुन एवं आम का पत्र, खश, वटाङ्कुर तथा वटप्ररोह—सभी को समभाग में लेकर स्वरस निकालें अथवा क्वाथ विधि से क्वाथ करें अथवा सूक्ष्म चूर्ण कर लें। किसी भी प्रकार से मधु के साथ सेवन करने से वमन, ज्वर, अतिसार, मूर्च्छा एवं प्यास नष्ट हो जाते हैं।

७६. अतिसार में नाभिप्रलेप

कृत्वाऽऽलवालं सुदृढं पिष्टैरामलकैर्भिषक्।
आर्द्रकस्वरसेनाथ पूरयेन्नाभिमण्डलम्।
नदीवेगसमं घोरमतीसारं निवारयेत् ॥११५॥

आमला को सूक्ष्म पीसकर कल्क बनायें। रोगी को चित्त लिटाकर उसकी नाभि के चारों ओर कल्क से क्यारी (आलवाल) जैसा बनाकर उसके अन्दर अदरक का रस भर दें। इसी अवस्था में रोगी को एक प्रहर तक लिटाये रखें। यह योग नदी के वेग के समान भयंकर अतिसार के वेग को भी रोक देता है।

७७. जातीफलप्रलेप

तथा जातीफलं पिष्ट्वा नाभौ दद्यात्प्रलेपनम्।
दुर्निवारमतीसारं वारयत्यनिवारितम् ॥११६॥

जायफल को जल के साथ घिसकर नाभिमण्डल में तथा उसके चारों ओर लेप करने से भयंकर अतिसार, जो अनेक औषधों के प्रयोग से ठीक नहीं हुआ वह भी नष्ट हो जाता है।

७८. आम्रवल्कलकल्प लेप

आम्रस्य वल्कलं पिष्टं काञ्जिकेन प्रयत्नतः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नाभिं संलेपयेत्तेन कल्केन मतिमान् भिषग् ॥
नदीवेगोपमं घोरमतीसारं निवारयेत् ॥११७॥

आम्रवृक्षत्वक् लें और काञ्जी के साथ सूक्ष्म पीस लें एवं कल्क जैसा बनाकर नाभि के ऊपर तथा चारों ओर लेप करें। यह लेप वेगवती नदी के समान भयंकर अतिसार को नष्ट कर देता है।

प्रवाहिका-चिकित्सा

७९. बालबिल्वादि लेह (चक्रदत्त)

बालं बिल्वं गुडं तैलं पिप्पलीविश्वभेषजम् ।
लिह्याद्वाते प्रतिहते सशूलः सप्रवाहिकः ॥११८॥

१. बालबिल्वफलमज्जा, २. पुराना गुड़, ३. तिलतैल, ४. पीपर एवं ५. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर तिलतैल मिला लें। इसे ३ से ६ ग्राम की मात्रा में मधु मिलाकर सेवन कराने से दर्द के साथ बार-बार दस्त आने पर तथा अपानवायु के न खुलने पर लाभ होता है।

८०. पिप्पलीमरिचकल्क योग (चक्रदत्त)

पयसा पिप्पलीकल्कः पीतो वा मरिचोद्भवः ।
त्र्यहात्प्रवाहिकां हन्ति चिरकालानुबन्धिनीम् ॥११९॥

पीपर अथवा मरिच—२० ग्राम की मात्रा में लेकर कल्क बनायें तथा आठ गुना दूध तथा दूध का चार गुना जल मिलाकर पाक करें। दूध मात्र शेष रहने पर उतारकर छान लें। इसमें आवश्यकतानुसार मिश्री मिलाकर तीन दिन तक पिलावें। इसके पीने से चिरकालीन प्रवाहिका भी नष्ट हो जाती है।

८१. बालबिल्वादि खड (चक्रदत्त)

कल्कः स्याद्बालबिल्वानां तिलकल्कश्च तत्समः ।
दध्नः सरोऽम्लः स्नेहाढ्यः खडो हन्यात्प्रवाहिकाम् ॥१२०॥

१. बालबिल्वफलमज्जा तथा २. काला तिल—इन दोनों द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को ६ ग्राम की मात्रा में स्नेहयुक्त दही के साथ मिलाकर सेवन करने से प्रवाहिका नष्ट हो जाता है।

विमर्श—बालबिल्वफलमज्जा, काला तिल एवं दही को मिला देने को खड कहा गया है।

८२. बिल्वमज्जादि योग (चक्रदत्त)

बिल्वपेशीं गुडं लोध्रं तैलं लिह्यात्प्रवाहणे ।
लीढ्वा प्रवाहिकां हन्ति क्षिप्रं सुखमवाप्नुयात् ॥१२१॥

१. बिल्वफलमज्जा, २. पुराना गुड़, ३. लोध, ४. तिलतैल तथा ५. मरिच—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर मिश्रित चूर्ण कर लें। इस चूर्ण को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में प्रतिदिन जल के साथ सेवन करने से प्रवाहिका रोग समाप्त हो जाता है।

प्रवाहिका में भोजन-विधि (चक्रदत्त)

दध्ना ससारेण समाक्षिकेण
भुञ्जीत निश्चारकपीडितस्तु ।
सुतप्तकुप्यक्वथितेन वाऽपि
क्षीरेण शीतेन मधुप्लुतेन ॥१२२॥

प्रवाहिका रोग से पीड़ित रोगी को मलाईयुक्त दही में शहद मिलाकर भोजन के साथ देना चाहिए। अथवा स्वर्ण-रजत पत्र को अग्नि में प्रतप्त कर बकरी के दूध में सात बार बुझाकर इस दूध के साथ भोजन करायें।

विमर्श—स्वर्ण या रजत के पात्र में दूध को उबालकर सेवन किया जा सकता है।

२. निश्चारक शब्द प्रवाहिका के लिए प्रयुक्त किया है। इसे सामान्य बोलचाल की भाषा में पेचिस (Dysentry) भी कहा जाता है।

८३. धातक्यादि कल्क

धातकीबदरीपत्रकपित्थरसमाक्षिकम् ।
सरोध्रमेकतो दध्ना पिबेन्निर्वाहिकाऽर्दितः ॥१२३॥

१. धावाफूल, २. बेर का पत्ता, ३. कपित्थ के कच्चे फल का रस और ४. लोध्र—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर धातकी पुष्प एवं बदरीपत्र का सूक्ष्म चूर्ण बनावें। इस चूर्ण में कपित्थस्वरस एवं मधु मिलाकर ३ से ६ ग्राम की मात्रा में और दही के साथ मिलाकर पीने से प्रवाहिका रोग नष्ट होता है।

८४. जातीफलादि चूर्ण

जातीफलं त्रिदशपुष्पसमन्वितश्च
जीरञ्च टङ्कणयुतं मुनिभिः प्रणीतम् ।
एतानि माक्षिकसितासहितानि लीढ्वा
आमातिसारमखिलं गुरुमाशु हन्ति ॥१२४॥

१. जायफल, २. लौंग, ३. जीरा तथा ४. शुद्ध सोहागा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में मधु और मिश्री के साथ सेवन करने से अनेक प्रकार के भयंकर आमातिसार नष्ट हो जाते हैं।

८५. मुष्टि योग

गुञ्जामितमहिफेनं छागीदुग्धेन भुञ्जानः ।
अतिसरणं बहुवेगं दुर्वारं धारयत्याशु ॥१२५॥

शुद्ध अफीम एक रत्ती की मात्रा में लेकर बकरी के दूध के साथ सेवन करने से जो अतिसार अनेक प्रकार की औषधियों से नष्ट न हुआ हो वह प्रबल वेग वाला अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक अहिफेनप्रयोग-निषिद्ध

अहिफेनातियोगेन नातिसारो निवर्त्तते।
किन्त्वस्य बहुभिर्योगैर्योगोऽल्पोऽमृतमेव सः ॥१२६॥

अधिक मात्रा में अफीम का प्रयोग करने से अतिसार रोग से पीड़ित व्यक्ति रोगमुक्त नहीं होता, क्योंकि अफीम के संकोचक प्रभाव के कारण कुछ समय के कारण दस्त आना रुक जाता है, परन्तु जैसे ही संकोचक प्रभाव नष्ट होता है वैसे ही दस्त आना पुनः प्रारम्भ हो जाता है। अतएव अफीम को अल्प मात्रा में अनेक योगों के साथ मिलाकर देना चाहिए, क्योंकि अल्प मात्रा में प्रयोग अमृत की भाँति अतिसार को नष्ट करता है।

८६. अहिफेन वटी

अहिफेनं सखर्जूरं घृष्ट्वा गुञ्जैकमात्रकम्।
रक्तस्रावमतीसारमतिवृद्धं विनाशयेत् ॥१२७॥

१. शुद्ध अफीम एवं २. खर्जूर के निर्बीज फल—इन दोनों द्रव्यों को समभाग में लेकर खरल में पीसकर १-१ रत्ती मात्रा की वटी बनाकर सुरक्षित रख लें। इस वटी को १ से २ रत्ती की मात्रा में शीतल जल के साथ सेवन करने से अत्यन्त बढ़ा हुआ रक्तस्रावयुक्त अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

८७. जातीफलादि वटी

जातीफलं च खर्जूरमहिफेनं तथैव च।
समभागानि सर्वाणि नागवल्लीरसेन च ॥१२८॥
वल्लमात्रा वटी कार्या देया तक्रानुपानतः।
अतीसारं जयेद्घोरं वैश्वानर इवाहुतिम् ॥१२९॥

१. जायफल, २. छोहाड़ा (खर्जूर) तथा ३. शुद्ध अफीम—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर पीस लें और यथावश्यक ताम्बूलपत्र रस मिलाकर मर्दन करें और ३७५ मि.ग्रा. मात्रा की वटियाँ बनाकर सुखा लें। इसे एक वटी की मात्रा में तक्र के साथ सेवन करने से भयंकर अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

रस-प्रकरण

८८. पूर्णचन्द्रोदय रस (र.सां.सं.)

शुद्धञ्च तालकं लौहं गगनञ्च पलं पलम्।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥१३०॥
जातीकोषमुरापत्रं शटीतालीशकेशरम्।
व्योषं चोचकणामूलं लवङ्गं पिचुसम्मितम् ॥१३१॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥१३२॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलञ्च परिणामजम्।
रसायनवरश्चायं वाजीकरण उत्तमः ॥१३३॥

१. शुद्ध हरताल ४६ ग्राम, २. लौहभस्म ४६ ग्राम, ३. अभ्रकभस्म ४६ ग्राम, ४. कपूर ६ ग्राम, ५. शुद्ध पारद ६ ग्राम, ६. शुद्ध गन्धक ६ ग्राम, ७. जायफलचूर्ण १२ ग्राम, ८. जटामांसीचूर्ण १२ ग्राम, ९. कचूरचूर्ण १२ ग्राम, १०. तालीशपत्रचूर्ण १२ ग्राम, ११. नागकेशर चूर्ण १२ ग्राम, १२. शुण्ठीचूर्ण १२ ग्राम, १३.पीपरचूर्ण १२ ग्राम, १४. मरिचचूर्ण १२ ग्राम, १५. दालचीनीचूर्ण १२ ग्राम, १६. पिपरामूलचूर्ण १२ ग्राम और १७. लवङ्गचूर्ण १२ ग्राम ग्रहण करें। सर्वप्रथम १ खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनायें तथा अन्य समस्त द्रव्यो का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर जल के साथ मर्दन करें एवं १२५ मि.ग्रा. की वटी बनाकर सुखा लें एवं काचपात्र में सुरक्षित रखें। इस वटी को १ से २ वटी प्रतिदिन मधु से प्रातःकाल गुरु, देवता आदि पूज्य पुरुषों की वन्दना कर सेवन करना चाहिए। इसका सेवन करने से विविध प्रकार के अतिसार, ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल आदि नष्ट हो जाते हैं। यह योग सभी रसायनों में श्रेष्ठ एवं सर्वोत्तम वाजीकरण भी है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अतिसार, संग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल में।

८९. गगनसुन्दर रस (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकञ्चाभ्रं लौहञ्चापि वराटकम्।
रौप्यं चातिविषं कर्षं समभागं प्रकल्पयेत् ॥१३४॥
धान्यशुण्ठीकृतक्वाथैर्भावयेच्च पृथक् पृथक्।
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक् ॥१३५॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः।
दग्धबिल्वं गुडेनैव कुर्यात्तदनुपानकम् ॥१३६॥
अजादुग्धेन वा पेयं जम्बूत्वक्साधितं रसम्।
अतीसारे ज्वरे घोरे ग्रहण्यामरुचौ तथा ॥१३७॥
सामे सशूले रक्ते च पिच्छास्रावे भ्रमे तथा।
शोथे रक्तातिसारे च संग्रहग्रहणीषु च ॥१३८॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रकभस्म, ४. लौह भस्म, ५. वराटभस्म, ६. रजतभस्म और ७. अतिविषा चूर्ण—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली करें। कज्जली हो जाने पर अन्य समस्त द्रव्यों को मिला दें। इस चूर्ण में धनियाँ और सोंठ के क्वाथ से अलग-अलग दो-दो बार भावना देकर १ रत्ती प्रमाण की वटी बना लें और सुखाकर काचपात्र में संग्रहित करें। इस रस को १ से २ रत्ती की मात्रा में प्रतिदिन प्रातःकाल गुरु, देवता आदि पूज्य पुरुषों की वन्दना कर आग में भुने बालबिल्वफलमज्जाचूर्ण ६ ग्राम एवं गुड़ के साथ सेवन करना चाहिए अथवा जामुन की छाल के

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

क्वाथ को बकरी के दुग्ध में मिलाकर अनुपान रूप में सेवन करें। इस रस का सेवन करने से अतिसार, भयंकर ज्वर, ग्रहणी-विकार, अरुचि, आमशूल एवं रक्तस्रावयुक्त अतिसार, पिच्छास्राव, भ्रम एवं शोथयुक्त अतिसार तथा संग्रहणी आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–आग में पकाये हुए कच्चे बेल की गुद्दी और गुड़ से या जामुनत्वक् के क्वाथ से सिद्ध बकरी के दूध से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अतिसार, संग्रहणी, अरुचि, आमशूल, रक्तातिसार में।

९०. लोकनाथ रस (र.सा.सं.)

भस्म सूतस्य भागैकं चत्वारः शुद्धगन्धकात्।
क्षिप्त्वा वराटिकागर्भे टङ्कणेन निरुध्य च ॥१३९॥
भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥१४०॥
नागरातिविषामुस्तं देवदारुवचाऽन्वितम्।
कषायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशनः ॥१४१॥

१. रससिन्दूर १ भाग, २. शुद्ध गन्धक ४ भाग तथा ३. बड़ी कौड़ी आवश्यकतानुसार।

अनुपानार्थ क्वाथ—१. शुण्ठी, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. देवदारु तथा ५. वच—सर्वप्रथम एक साफ खरल में रससिन्दूर को पीसें। ततः उसमें गन्धक चूर्ण मिलाकर मर्दन करें। इस मिश्रण को कौड़ियों में भरे। पुनः टंकण को बकरी के दूध में पीसकर कौड़ी के मुख पर लेप करें। इन कौड़ियों को एक छोटी हाँडी में भरें। मुख को शराव-सम्पुट कर बन्द करें और वाराहपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सन्धि बन्धन खोलकर सावधानी से जली कौड़ियों को निकालें। टंकण को पृथक् करे तथा कौड़ियों सहित औषधि को खरल में पीसकर काचपात्र में संग्रहीत करे। इस लोकनाथ रस को ५०० मि.ली. की मात्रा में मधु के साथ सेवन करें। तत्पश्चात् शुण्ठी से वच तक के द्रव्यों के समभाग २५ ग्राम यवकुट को १६ गुना जल में क्वाथ विधि से बनायें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ पीसकर पिलावें। इस प्रकार सेवन करने से सभी प्रकार के अतिसार नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–मधु एवं शुण्ठ्यादि क्वाथ से। **गन्ध**–निर्गन्ध। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–क्षारीय। **उपयोग**–अतिसार एवं संग्रहणी में।

९१. चिन्तामणि रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं गन्धकं प्रतिकार्षिकम्।
चूर्णयेद्विषकर्षार्द्धं विषार्द्धं तिन्तिडीफलम् ॥१४२॥
मर्दयेत् खल्लमध्ये तु चाम्लेन गोलकीकृतम्।
गर्त्तं षडङ्गुलं कुर्यात् सर्वतो वर्तुलं शुभम् ॥१४३॥
नागवल्ल्याः क्षिपेत्पत्रमादौ पत्रे च गोलकम्।
आच्छाद्य तच्च पत्रेण रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥१४४॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सपत्रञ्च विशेषतः।
कर्षार्द्धं मरिचं दत्त्वा कर्षार्द्धं तिन्तिडीफलम् ॥१४५॥
गुञ्जामितां वटीं कुर्याच्चिन्तामणिरसो महान्।
अतिसारे त्रिदोषोत्थे संग्रहग्रहणीगदे।
अनुपानं विधातव्यं यथादोषानुसारतः ॥१४६॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. ताम्रभस्म १ भाग, ३. शुद्ध गन्धक १ भाग, ४. शुद्ध वत्सनाभ विष $\frac{1}{2}$ भाग, ५. इमलीफल $\frac{1}{4}$ भाग, ६. मरिच चूर्ण $\frac{1}{3}$ भाग तथा ७. इमलीफल गूदी $\frac{1}{3}$ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनायें। फिर कज्जली में ताम्रभस्म, शुद्ध वत्सनाभ एवं इमलीफल को कज्जली में मिलायें एवं जम्बीरी नीबू के रस के साथ एक प्रहर तक खरल करें और गोला बना लें। जमीन पर ६ अंगुल का एक गोल गड्ढा खोदें। उसमें प्रथम अनेकों ताम्बूल के पत्ते बिछाकर उस पर गोले को रखें, फिर ताम्बूल के पत्ते से भली प्रकार ढ़ककर शराव से ढ़के एवं गजपुट प्रमाण की अग्नि उस पर जला दें। सर्वांग शीत होने पर जले हुए पान के पत्ते सहित औषधि को निकालकर खरल करें। उसमें इमलीफल तथा मरिच चूर्ण को मिलाकर जल के साथ एक प्रहर तक (३ घण्टे) खरल करें एवं १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर सुखा लें तथा काचपात्र में बन्द कर संग्रहीत करें। यह चिन्तामणि रस १ से २ रत्ती की मात्रा में त्रिदोषजन्य अतिसार एवं ग्रहणी-विकार से ग्रस्त रोगी में वात-पित्तादिक दोषों की प्रबलता का विचार करते हुए उचित अनुपान के साथ दें।

मात्रा–१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–भुना जीरा चूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–अम्ल। **उपयोग**–अतिसार-संग्रहणी में।

९२. भुवनेश्वर वटी

सैन्धवं त्रिफलाञ्चैव यमानीं बिल्वपेशिकाम्।
गृहधूमं गृहीत्वा च प्रत्येकं समभागिकम् ॥१४७॥
जलेन मर्दयित्वा तु माषमात्रां वटीं चरेत्।
खादेत्तोयानुपानेन सर्वातीसारशान्तये ॥१४८॥

१ सैन्धवनमक, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. आमला, ५. अजवायन, ६. बिल्वफलमज्जा तथा ७. गृहधूम—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें एवं जल के साथ मर्दन कर १ ग्राम की वटी बना छायाशुष्क कर रखें। १-२ वटी की मात्रा में शीतल जल के साथ सेवन करने से सभी प्रकार का अतिसार नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नोट—मेरी गुरु-परम्परा में गृहधूम के अभाव में लकड़ी के कोयले का चूर्ण डालने की परम्परा है। आजकल गृहधूम का अभाव है। साथ ही गृहधूम से विशुद्ध कार्बन लेने का ही अभिप्राय था। कोयला चूर्ण जलशोषक भी है।

मात्रा–१ ग्रा.। **अनुपान**–शीतल जल से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–कृष्ण। **स्वाद**–लवणीय। **उपयोग**–अतिसार में।

९३. जातीफल रस (र.सा.सं.)

पारदाभ्रकसिन्दूरं गन्धं जातीफलं समम्।
कुटजस्य फलञ्चैव धूर्त्तबीजानि टङ्कणम् ॥१४९॥
व्योषं मुस्ताभया चैव चूतबीजं तथैव च।
बिल्वकं सर्जबीजञ्च दाडिमीवल्कजीरके ॥१५०॥
एतानि समभागानि निक्षिपेत् खल्लमध्यतः।
विजयास्वरसेनैव मर्दयेच्छ्लक्ष्णचूर्णितम् ॥१५१॥
गुञ्जाफलप्रमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
एकां कुटजमूलत्वक्कषायेण प्रयोजयेत् ॥१५२॥
आमातिसारं हरति कुरुते वह्निदीपनम्।
मधुना बिल्वशुण्ठेन रक्तग्रहणिकां जयेत् ॥१५३॥
शुण्ठीधान्यकयोगेन चातिसारं निहन्त्यसौ।
जातीफलरसो ह्येष ग्रहणीगदहारकः ॥१५४॥

१. शुद्ध पारद, २. अभ्रकभस्म, ३. रससिन्दूर, ४. शुद्ध गन्धक, ५. जायफल, ६. इन्द्रयव, ७. शुद्ध धतूरबीज, ८. शुद्ध टंकण, ९. शुण्ठी, १०. मरिच, ११. पीपर, १२. नागरमोथा, १३. हरीतकी, १४. कच्चे आमफल की गिरी, १५. बाल-बिल्वफलमज्जा, १६. सरल वृक्षबीज, १७. अनार के फल का छिलका तथा १८. जीरा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली करें एवं शेष सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर कज्जली में मिलायें। इसमें भाँगस्वरस की भावना देकर १ रत्ती मात्रा की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करे। इसे १ वटी की मात्रा में कुटजत्वक् क्वाथ के साथ सेवन करने से आमातिसार नष्ट होता है एवं पाचकाग्नि प्रदीप्त होती है। मधु, बिल्वफलमज्जा तथा शुण्ठी चूर्ण के साथ सेवन करने से रक्तस्राव युक्त ग्रहणी रोग नष्ट होता है। शुण्ठी एवं धनियाँ चूर्ण के साथ सेवन करने से अतिसार रोग नष्ट होता है। यह जातीफल रस विशेषकर ग्रहणी रोग में लाभकारी है।

मात्रा–२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**–कुटज क्वाथ एवं मधु तथा रोगानुसार विविधानुपान से। **गन्ध**–रसायन गन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अतिसार, रक्तातिसार एवं संग्रहणी में।

९४. अभयनृसिंह रस

दरदञ्च विषं व्योषं जीरकं टङ्कणं समम्।
गन्धकञ्चाभ्रकञ्चैव भागैकं शुद्धसूतकम् ॥१५५॥
आफूकं सर्वतुल्यं स्यान्मर्दयेन्निम्बुकद्रवैः।
एकैकं भक्षयेच्चानु जीरकं मधुना सह ॥१५६॥
त्रिदोषोत्थमतीसारं सज्वरं वाऽथ विज्वरम्।
सर्वरूपमतीसारं सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ॥
रसोऽभयनृसिंहोऽयमतीसारे सुपूजितः ॥१५७॥

१. शुद्ध हिंगुल, २. शुद्ध वत्सनाभ, ३. शुण्ठी, ४. मरिच, ५. पीपर, ६. सफेद जीरा, ७. शुद्ध टंकण, ८. शुद्ध गन्धक, ९. अभ्रकभस्म, १०. शुद्ध पारद और ११. शुद्ध अफीम—क्रम १ से १० तक के द्रव्य १-१ भाग लें तथा सभी के मिलित ११ भाग बराबर शुद्ध अफीम को लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली करें, फिर इसमें शेष सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को मिलाकर नीबूरस की भावना दें और १-१ रत्ती मात्रा की वटी बना सुखाकर सुरक्षित रख लें। इसे १ वटी की मात्रा में जीरा चूर्ण एवं मधु के साथ सेवन करने से त्रिदोषज अतिसार, ज्वर अथवा निर्ज्वर अतिसार आदि समस्त प्रकार के अतिसार एवं संग्रहणी रोग नष्ट होते हैं। यह अभयनृसिंह रस विशेषकर अतिसार में अत्यधिक उपयोगी है।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–भृष्ट जीरकचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**–अफीमगन्धी। **वर्ण**–श्याव। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–अतिसार।

९५. आनन्दभैरव रस

दरदं मरिचं टङ्कममृतं मागधी समम्।
श्लक्ष्णपिष्टन्तु गुञ्जैकं रसमानन्दभैरवम् ॥१५८॥
लेहयेन्मधुना चानु कुटजस्य फलत्वचोः।
चूर्णितं कर्षमात्रन्तु त्रिदोषोत्थातिसारजित् ॥१५९॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं दध्याजं तक्रमेव वा।
पिपासायां जलं देयं विजया च हिता निशि ॥१६०॥

१. शुद्ध हिंगुल, २. मरिचचूर्ण, ३. शुद्ध टंकण, ४. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण तथा ५. पीपरचूर्ण—सभी द्रव्यों को सममात्रा में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें तथा जल की भावना देकर १२५ मि.ग्रा. की मात्रा की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे १ रत्ती की मात्रा में मधु के साथ चाटकर कुटजत्वक् एवं इन्द्रयव का समभाग में मिला चूर्ण एक ग्राम की मात्रा में जल से लें। इस प्रकार सेवन करने से त्रिदोषज अतिसार नष्ट होता है। इस रस का सेवन करने वाले को दही-भात अथवा बकरी के दूध से निर्मित दही के तक्र के साथ भात का पथ्य देना चाहिए। अधिक प्यास लगने की अवस्था में थोड़ा-थोड़ा जल पिलायें। यदि रात्रि के समय दर्द के कारण अच्छी प्रकार से नींद न आती हो तो शुद्ध भाँग का चूर्ण शहद के साथ दें।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–कुटजत्वक् चूर्ण, इन्द्रयव चूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**–रसायनगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–कटु। **उपयोग**–अतिसार-संग्रहणी में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

९६. कर्पूर रस

हिङ्गुलमहिफेनञ्च मुस्तकेन्द्रयवं तथा।
जातीफलञ्च कर्पूरं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ॥१६१॥
जलेन वटिका कार्या द्विगुञ्जापरिमाणतः।
ज्वरातिसारिणे चैव तथाऽतीसाररोगिणे।
ग्रहणीषट्प्रकारे च रक्तातीसार उल्बणे ॥१६२॥

१. शुद्ध हिंगुल, २. शुद्ध अफीम, ३. नागरमोथा, ४. इन्द्रयव, ५. जायफल और ६. कपूर—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें एवं जल के साथ खरल कर २-२ रत्ती की वटी बना लें और सुखाकर सुरक्षित रख लें। इसे १ से २ वटी की मात्रा में सेवन करने से ज्वरातिसार, अतिसार, उल्बण रक्तातिसार एवं छहों प्रकार के ग्रहणी-विकार नष्ट हो जाते हैं।

९७. अतिसारवारण रस (र.सा.सं.)

दरदं कृतकर्पूरं मुस्तेन्द्रयवसंयुतम्।
सर्वातीसारशमनं खाखसक्षीरभावितम् ॥१६३॥

१. शुद्ध हिंगुल, २. शुद्ध कपूर, ३. नागरमोथा, ४. इन्द्रयव तथा ५. शुद्ध अफीम—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। अफीम को जल के साथ घोलकर उसी से १ भावना देकर मर्दन करें तथा १२५ मि.ग्रा. की वटी बनाकर सुखा लें एवं काचपात्र में संग्रहीत करें। १-१ वटी ठण्डे जल के साथ सेवन करने से सभी प्रकार के अतिसार नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–कर्पूर गन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–सभी प्रकार के अतिसार में।

९८. कणादि लौह (रसेन्द्रचिन्तामणि)

कणानागरपाठाभिस्त्रिवर्गत्रितयेन च।
बिल्वचन्दनह्रीबेरैः सर्वातीसारजिद् भवेत् ॥१६४॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तामपि हन्ति प्रवाहिकाम्।
नानेन सदृशं लौहं विद्यते ग्रहणीहरम् ॥१६५॥

१. पीपरचूर्ण १०० ग्राम, २. शुण्ठीचूर्ण १०० ग्राम, ३. पाठाचूर्ण १०० ग्राम, ४. आमलाचूर्ण १०० ग्राम, ५. हरीतकीचूर्ण १०० ग्राम, ६. बहेड़ाचूर्ण १०० ग्राम, ७. वायविडङ्गचूर्ण १०० ग्राम, ८. नागरमोथाचूर्ण १०० ग्राम, ९. चित्रकमूलचूर्ण १०० ग्राम, १०. बिल्वफलमज्जाचूर्ण १०० ग्राम, ११. श्वेतचन्दनचूर्ण १०० ग्राम, १२. नेत्रबालाचूर्ण १०० ग्राम तथा १३. लौहभस्म १.२०० ग्राम लें। इन्हें एक खरल में एक साथ अच्छी तरह से मिलाकर जल की भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें और २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १ से २ वटी की मात्रा में जल के साथ सेवन करने से सभी प्रकार का अतिसार, प्रवाहिका और संग्रहणी रोग नष्ट हो जाते हैं। इससे अच्छा और कोई भी ग्रहणीनाशक लौह नहीं है। त्रिकद्वितय—त्रिफला और त्रिमद है। पाठान्तर में त्रिकत्रितय पाठ है। जिससे त्रिफला, त्रिकटु और त्रिमद का ग्रहण करते हैं।

मात्रा–२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–औषधि गन्धी। **वर्ण**–कत्थई वर्ण—लौहभस्मवत्। **स्वाद**–कटु-कषाय। **उपयोग**–अतिसार, प्रवाहिका एवं संग्रहणी रोग में।

९९. षडङ्ग घृत (चक्रदत्त)

वत्सकस्य च बीजानि दार्व्याश्च त्वच उत्तमाः।
पिप्पली शृङ्गबेरञ्च लाक्षा कटुकरोहिणी ॥१६६॥
षड्भिरेतैर्घृतं सिद्धं पेयामण्डावचारितम्।
अतीसारं जयेच्छीघ्रं त्रिदोषमपि दारुणम् ॥१६७॥

१. इन्द्रयव, २. दारुहरिद्रा की छाल, ३. पीपर, ४. शुण्ठी, ५. लाक्षा और ६. कुटकी—प्रत्येक द्रव्य ४० ग्राम लें। इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और सिल पर पीसकर कल्क करें। चूर्ण से चार गुना घृत १ किलो तथा घृत का चार गुना जल ४ ली. के साथ यथाविधि घृत सिद्ध करें। इस घृत को प्रतिदिन ६ से १२ ग्राम की मात्रा में पेया अथवा मण्ड के साथ सेवन करने से गम्भीर त्रिदोषज अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

मात्रा–६ से १२ ग्रा.। **अनुपान**–गरम पेया-मण्ड या गरम जल से। **गन्ध**–घृतगन्धी। **वर्ण**–किञ्चित्पीताभ। **स्वाद**–तिक्त। **उपयोग**–भयंकर त्रिदोषज अतिसार में।

१००. बब्बूलाद्यरिष्ट (शार्ङ्ग.सं.)

तुलाद्वयन्तु बब्बूल्याश्चतुर्द्रोणे जले पचेत्।
द्रोणशेषे रसे शीते गुडस्य त्रितुलाः क्षिपेत् ॥१६८॥
धातकीं षोडशपलां कृष्णाञ्च द्विपलांशिकाम्।
जातीफलानि कक्कोलं त्वगेलापत्रकेशरम् ॥१६९॥
लवङ्गं मरिचञ्चैव पलिकान्युपकल्पयेत्।
मासं भाण्डे स्थितस्त्वेष बब्बूलारिष्टको जयेत्।
क्षयं कुष्ठमतीसारं प्रमेहश्वासकासकान् ॥१७०॥

१. बब्बूल छाल ९.३४० कि.ग्रा., २. क्वाथार्थ जल ५० ली., ३. अवशेष क्वाथ १२ $\frac{1}{2}$ ली., ४. गुड़ १४ किलो, ५. धावाफूल ७५० ग्राम, ६. पीपर का यवकुट ९३ ग्राम; ७. जायफल, ८. शीतलचीनी, ९. दालचीनी, १०. छोटी इलायची, ११. तेजपात, १२. नागकेशर, १३. लौंग और १४. मरिच—प्रत्येक द्रव्य ४६ ग्राम लें। सर्वप्रथम बबूलत्वक् को यवकुट कर क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें और मिट्टी के बड़े-बड़े २ घड़ों में रख कर गुड़ घोल दें। घड़े की तली में भूसी या पुआल रखें और निर्वात घर में स्थिर करें। ततः धूप में सुखाया हुआ धातकीपुष्प आधा-आधा दोनों घड़े में तथा अन्य द्रव्यों को पृथक्-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पृथक् यवकुट कर आधा-आधा भाग मिलाकर घड़े का मुख बन्द करें। २१ दिन बाद, संधान हो गया समझकर परीक्षोपरान्त औषधि को छानकर पुनः गाद जमने हेतु उसी पात्र को साफ कर रख दें। १५ दिन बाद घड़ा को टेढ़ा कर स्वच्छ अरिष्ट को कपड़े से छानकर बोतल में भर लें। इसे बब्बूलाद्यरिष्ट कहते है। १२ मि.ली. की मात्रा में जल के साथ मिलाकर पिलाने से क्षय, कुष्ठ, अतिसार, प्रमेह, श्वास एवं कास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा–१२ मि.ली.। **अनुपान**–बराबर जल मिलाकर। **गन्ध**–मद्यगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ द्रव। **स्वाद**–तीक्ष्ण मद्यमय मधुर। **उपयोग**–अतिसार, क्षय, कुष्ठ, प्रमेह एवं श्वास में।

१०१. कुटजारिष्ट (शार्ङ्गधरसंहिता)

तुलां कुटजमूलस्य मृद्वीकाऽर्द्धतुलां तथा।
मधूकपुष्पकाश्मर्योर्भागान् दशपलोन्मितान् ॥१७१॥
चतुर्द्रोणेऽम्भसः पक्त्वा द्रोणञ्चैवावशेषितम्।
धातक्या विंशतिपलं गुडस्य च तुलां क्षिपेत् ॥१७२॥
मासमात्रं स्थितो भाण्डे कुटजारिष्टसंज्ञितः।
ज्वरान् प्रशमयेत् सर्वान् कुर्यात्तीक्ष्णं धनञ्जयम् ॥
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति रक्तातीसारमुल्बणम् ॥१७३॥

१. कुटजत्वक् ४.६७० कि.ग्रा., २. द्राक्षा २.३३५ ग्राम, ३. महुआ के फूल ४७० ग्राम, ४. गम्भार छाल ४७० ग्राम, ५. क्वाथार्थ जल ५० ली. ६. अवशेष क्वाथ १२½ ली., ७. धावाफूल ९४० ग्राम तथा ८. गुड़ ४.६७० कि.ग्रा. लें—सर्वप्रथम कुटजत्वक् और गम्भार को यवकुट करें। ५० ली. जल देकर उसी में द्राक्षा और महुआ का क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ छानकर गरम क्वाथ में गुड़ मिलाकर नये घड़े में रखें। घड़े की तली में पुआल या भूसी रखें और उस घड़े में धावाफूल मिलाकर घड़ा का मुख बन्द करें। २१ दिनों के बाद तैयार हो गया ऐसा समझकर परीक्षोपरान्त तैयार अरिष्ट को छान लें। पुनः उसी घड़े को साफ कर निथरने के लिए छना हुआ अरिष्ट रख दें। १५ दिन के बाद निथरे अरिष्ट को पुनः छानकर बोतलों में भरकर सुरक्षित कर लें। यह कुटजारिष्ट भोजनोपरान्त १२ से २५ मि.ली. की मात्रा में बराबर जल मिलाकर सेवन करने से सभी प्रकार के ज्वर को नष्ट करता है। अग्नि तीक्ष्ण होती है। असाध्य ग्रहणी रोग एवं भयंकर रक्तातिसार भी नष्ट हो जाता है।

मात्रा–१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**–बराबर जल मिलाकर। **गन्ध**–मद्यगन्धी। **वर्ण**–रक्ताभ द्रव। **स्वाद**–तीक्ष्ण-मधुर। **उपयोग**–ज्वरातिसार, अतिसार, ग्रहणी एवं अग्निमांद्य में।

१०२. अहिफेनासव

तुलां मधूकमद्यस्य शुभे भाण्डे निधापयेत्।
फणिफेनस्य कुडवं मुस्तकं पलसम्मितम् ॥१७४॥
जातीफलञ्चेन्द्रयवं तथैलां तत्र दापयेत्।
मासमात्रं स्थितो भाण्डे यत्नतः परिरक्षयेत् ॥
हन्त्यतीसारमत्युग्रं विसूचीमपि दारुणम् ॥१७५॥

१. महुए के फूल का मद्य ४.६७० मि. ली. २. शुद्ध अफीम १८७ ग्राम, ३. मुस्तक ४६ ग्राम, ४. जायफल ४६ ग्राम, ५. इन्द्रयव ४६ ग्राम और ६. छोटी इलायची ४६ ग्राम—सर्वप्रथम मद्य को काच के या चीनी मिट्टी के जार में रखें। ततः उसमें अन्य द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण अच्छी प्रकार मिलाकर ढक्कन से बन्द कर दें। एक माह बाद उसे खोलें तथा छानकर स्वच्छ बोतलों में भरकर रख लें। इसका प्रयोग तीव्र अतिसार एवं दारुण विसूचिका में १० से २० बूँद तक जल के साथ करना चाहिए।

मात्रा–१०-२० बूँद। **अनुपान**–जल से। **गन्ध**–मद्यगन्धी। **वर्ण**–किञ्चित् मटमैला। **स्वाद**–तीक्ष्ण। **उपयोग**–अतिसार एवं भयंकर विसूचिका में।

ग्रहणीरोग में प्रयुक्त सभी रसौषधों का अतिसार में प्रयोग

ग्रहण्यां ये रसा वाच्यास्तेऽतिसारे नियोजिताः।
हन्युः सर्वमतीसारं शिवस्याज्ञाविशेषतः ॥१७६॥

ग्रहणी रोग में जो रसौषधियाँ कही गई हैं उनका प्रयोग अतिसार रोग में करने से अवश्य ही अतिसार नष्ट होता है—ऐसा भगवान् शंकरजी की विशेष आज्ञा है।

अतिसार में अपथ्य

स्नानाभ्यङ्गावगाहांश्च गुरुस्निग्धातिभोजनम्।
व्यायाममग्निसन्तापमतीसारी विवर्जयेत् ॥१७७॥

अतिसार से पीड़ित व्यक्ति को स्नान, अभ्यङ्ग (जल में डुबकी लगाना), गुरु पदार्थ एवं अति स्निग्ध तथा अत्यधिक भोजन, व्यायाम, अग्निसेवन तथा धूप में भ्रमण करना छोड़ देना चाहिए।

अतिसार में पथ्य

वमनं लङ्घनं निद्रा पुराणाः शालिषष्टिकाः।
विलेपी लाजमण्डश्च मसूरतुवरीरसः ॥१७८॥
शशैणलावहरिणकपिञ्जलभवा रसाः।
सर्वे क्षुद्रझषाः शृङ्गी खल्लीशो मधुरालिका ॥१७९॥
तैलं छागघृतक्षीरे दधि तक्रं गवामपि।
दधिजं वा पयोजं वा नवनीतं गवाजयोः ॥१८०॥
नवं रम्भापुष्पफलं क्षौद्रं जम्बुफलानि च।
भव्यं महार्द्रकं विश्वं शालूकं च विकङ्कतम् ॥१८१॥
कपित्थं बकुलं बिल्वं तिन्दुकं दाडिमद्वयम्।
तालकं कञ्चटदलं चाङ्गेरी विजयाऽरुणा ॥१८२॥
जातीफलं च ह्रीबेरं जीरकं गिरिमल्लिका।
कुस्तुम्बुरु महानिम्बः कषायः सकलो रसः ॥१८३॥
अन्नपानानि सर्वाणि दीपनानि लघूनि च।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नाभेर्द्व्यङ्गुलतोऽधस्ताच्छस्त्रेणार्द्धशशाङ्कवत् ॥
दाहो वंशास्थिमूले च पथ्यवर्गोऽतिसारिणाम् ॥१८४॥

वमन, उपवास, निद्रा, पुराना शालि चावल एवं साठी चावल, विलेपी, धान के लावा की माँड़, मसूर एवं अरहर की दाल का यूष, खरगोश, काला हिरन, लावा पक्षी, हिरन, गौरवर्ण का तीतर—इन सबका मांसरस; सभी प्रकार की छोटी मछली, सींगी मछली, खालिस मछली, मधुरालिका (छोटी मछली का एक भेद), औषधिसिद्ध तैल, बकरी का घी एवं दूध, गाय एवं बकरी का घी, दूध, तक्र मथकर निकाला गया मक्खन, केला का कच्चा फल एवं नवीन पुष्प, मधु, जामुन का फल, लिसोढ़ा का फल, आर्द्रक, शुण्ठी, कमलकन्द, कण्टाई, कैंथ, बकुल, बिल्वफलमज्जा, तेंदू (खट्टा-मीठा दोनों प्रकार), अनारफल, तालफल, कञ्चट की पत्ती (चौराई भेद), चांगेरी, भाँग, मंजीठ, जायफल, सुगन्धबाला, हाऊबेर, जीरा, कुटज की छाल, धनियाँ, महानिम्ब, कषाय रस, सभी प्रकार के अग्निसंदीपक एवं हल्का भोजन तथा पीने के द्रव्य—ये सभी द्रव्य विधि एवं मात्रानुसार देना चाहिए। अतिसारपीड़ित रोगी की नाभि से दो अँगुल नीचे एवं पृष्ठवंश की हड्डी की जड़ में अर्द्धचन्द्राकार जला देना चाहिए। ये सभी अतिसार रोग में पथ्य है।

अतिसार में अपथ्य

स्वेदोऽञ्जनं रुधिरमोक्षणमम्बुपानं
स्नानं व्यवायमपि जागरधूमनस्यम्।
अभ्यञ्जनं सकलवेगविधारणं च
रूक्षाण्यसात्म्यमशनं च विरुद्धमन्नम् ॥१८५॥

गोधूममाषयववास्तुककाकमाची-
निष्पावकन्दमधुशिग्रुरसालपूरम् ।
कूष्माण्डतुम्बिबदरं गुरु चान्नपानं
ताम्बूलमिक्षुगुडमद्यमुपोदिका च ॥१८६॥
द्राक्षाऽम्लेवेतसफलं लशुनं च धात्री
दुष्टाम्बु मस्तु गृहवारि च नारिकेलम्।
संस्नेहनं मृगमदोऽखिलपत्रशाकं
क्षारः सराणि सकलानि पुनर्नवा च।
एर्वारुकं लवणमम्लमपि प्रकोपो
वर्गोऽतिसारगदपीडितमानवेषु ॥१८७॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामतिसाराधिकारः।

स्वेदन कर्म, अंजन लगाना, रक्तमोक्षण, अधिक जल पीना, स्नान, स्त्रीप्रसंग, रात्रिजागरण, धूम्रपान, नस्य, घृत अथवा तैल मर्दन, मल-मूत्रादि वेगों को रोकना, रूक्ष, असात्म्य भोजन, विपरीत गुण वाले अन्न का सेवन, गेहूँ, उड़द, यव, बथुआ, मकोय, राजमाष, कन्दशाक, सहिजन, आम, सुपारी, कूष्माण्डफल, लौकी, बेर, गुरु अन्न एवं पीने योग्य पदार्थ, ताम्बूल, ईक्षु, गुड़, मद्य, पोई का साग, दाख, अम्लवेत, लशुन, आमला, दूषित जल, दही का पानी, नारियल का पानी, स्नेहकाङ्क्षी, कस्तूरी, सभी प्रकार के पत्र शाक, क्षार तथा वे सभी प्रकार के पदार्थ जिनसे दस्त होता हो, पुनर्नवा, ककड़ी, अति नमक, अति खट्टा, क्रोध करना—ये सभी अतिसार पीड़ित रोगी के लिए अपथ्य हैं।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य अतिसाराधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ ग्रहणीरोगाधिकारः (८)

ग्रहणीरोग में क्रिया-क्रम (चक्रदत्त)

ग्रहणीमाश्रितं दोषमजीर्णवदुपाचरेत् ।
अतिसारोक्तविधिना तस्यामञ्च विपाचयेत् ॥१॥

ग्रहणी को आश्रित करके उत्पन्न दोषों की अजीर्ण के समान लङ्घन, दीपन, पाचन आदि औषधियों के द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए एवं अतिसार की चिकित्सा में प्रयुक्त योगों द्वारा एकत्र आमदोष का पाचन करना चाहिए।

शरीरानुगते सामे रसे लङ्घनपाचनम् ।
विशुद्धामाशयायास्मै पञ्चकोलादिभिर्युतम् ।
दद्यात्पेयाऽऽदिलघ्वन्नं पुनर्योगांश्च दीपनान् ॥२॥

यदि आमरस सम्पूर्ण शरीर में फैला हो तो लङ्घन तथा पाचन कराना चाहिए। लङ्घनादि के द्वारा कोष्ठ शुद्ध हो जाने पर पञ्चकोल (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, शुण्ठी) के क्वाथ से सिद्ध पेयादि लघु अन्न एवं जाठराग्निदीपक योगों का प्रयोग करना चाहिए।

ग्रहणी में तक्र-व्यवस्था (चक्रदत्त)

ग्रहणीदोषिणां तक्रं दीपनं ग्राहि लाघवात् ।
पथ्यं मधुरपाकित्वान्न च पित्तप्रकोपणम् ॥३॥
कषायोष्णविकासित्वाद्रौक्ष्याच्चैव कफे हितम् ।
वाते स्वाद्वम्लसान्द्रत्वात् सद्यस्कमविदाहि तत् ॥४॥

ग्रहणी दोष वाले व्यक्तियों के लिए मीठा तक्र (मट्ठा) हल्का होने से जाठराग्नि को दीप्त करता है तथा ग्राही होने से पथ्य है। मधुर विपाक वाला होने से पित्त का प्रकोप नहीं करता है। साथ ही रस में कषाय, वीर्य में उष्ण तथा विकासी है। विकासी होने से दोषों से आवृत स्रोतों को शुद्ध करता है। रूक्ष गुण की प्रधानता के कारण प्रकुपित कफ को शान्त करता है। इसी प्रकार मधुर, अम्ल और सान्द्र होने से प्रकुपित वात को शान्त करता है तथा ताजा तक्र विदाही भी नहीं होता है।

१. कपित्थादि पेया (चक्रदत्त)

कपित्थबिल्वचाङ्गेरीतक्रदाडिमसाधिता ।
पाचनी ग्राहिणी पेया सवाते पाञ्चमूलिकी ॥५॥

१. कपित्थ फल की मज्जा, २. बिल्वफलमज्जा, ३. चाङ्गेरी, ४. अनारदाना और ५. शालि चावल (प्रत्येक द्रव्य ४६ ग्रा.) तथा तक्र ३२५ मि.ली. लें। कैंत से लेकर अनारदाना तक के ४ द्रव्यों का पृथक्-पृथक् यवकुट कर ६ गुना जल (१.३८० मि.ली.) में क्वाथ करें और चौथाई ३४५ मि.ली. शेष रहने पर छान लें। इस क्वाथ को ३२५ मि.ली. तक्र में मिला लें। अब स्टेनलेस स्टील के पात्र में तक्र और क्वाथ का मिश्रण ६५० मि.ली. द्रव में शाली चावल ४६ ग्रा. मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। चावल जब अच्छी तरह सिद्ध हो जाय तो उतार लें। यथा—

'द्रवाधिका स्वल्पसिक्था चतुर्दशगुणे जले ।
सिद्धा पेया बुधैर्ज्ञेया यूषः किञ्चिद् घनः स्मृतः' ॥
(शार्ङ्गधर सं. २।१६७)

यह पेया आमदोष को पचाने वाली, मल को गाढ़ा करने वाली, ग्रहण शक्ति उत्पन्न करने वाली एवं कफवातजन्य ग्रहणी दोष को शान्त करती है। वातज ग्रहणी में लघुपञ्चमूल (शालपर्णी, पृश्निपर्णी, गोखरु, बृहती एवं कण्टकारी) से बनी पेया लाभदायक होती है।

मात्रा—रोगी के बलाबल के अनुसार। **उपयोग**—कफवातज ग्रहणी में लाभप्रद है।

२. शुण्ठ्यादि क्वाथ (चक्रदत्त)

शुण्ठीं समुस्तातिविषां गुडूचीं
पिबेज्जलेन क्वथितां समांशाम् ।
मन्दानलत्वे सततामताया-
मामानुबन्धे ग्रहणी गदे च ॥६॥

१. शुण्ठी, २. नागरमोथा, ३. अतीस तथा ४. गुडूची—सभी द्रव्यों को समभाग लेकर यवकुट कर लें। तत्पश्चात् २५ ग्राम यवकुट चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ का निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर प्रयोग करें। यह क्वाथ मन्दाग्नि, आमकोष्ठ और आमदोष के द्वारा उत्पन्न ग्रहणी रोग में सेवन कराना चाहिए।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—मन्दाग्नि, आमदोष एवं ग्रहणी में।

३. धान्यकादि क्वाथ (चक्रदत्त)

धान्यकातिविषोदीच्ययमानीमुस्तनागरम् ।
बलाद्विपर्णीबिल्वञ्च दद्याद्दीपनपाचनम् ॥७॥

१. धनियाँ, २. अतीस, ३. सुगन्धबाला, ४. अजवायन, ५. नागरमोथा, ६. शुण्ठी, ७. बला, ८. शालपर्णी, ९.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पृश्निपर्णी और १०. बालबिल्वफलमज्जा—सभी द्रव्यों को समभाग लेकर यवकुट चूर्ण करें। २५ ग्रा. इस चूर्ण को लेकर १६ गुने जल में क्वाथ-निर्माण विधि से क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ के सेवन से अग्नि दीप्त होती है एवं आमदोषों का पाचन होता है।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं आमदोष में।

४. शालपर्ण्यादि क्वाथ (शार्ङ्गधर)

शालपर्णीबिलाबिल्वधान्यशुण्ठीकृतः शृतः।
आध्मानशूलसंयुक्तां वातजां ग्रहणीं जयेत् ॥८॥

१. शालपर्णी, २. बलामूल, ३. बिल्वफलमज्जा, ४. धनियाँ तथा ५. शुण्ठी—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा २५ ग्रा. इस चूर्ण को लेकर १६ गुने जल में क्वाथ-निर्माण विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ के सेवन से आध्मान, शूल एवं वातिक ग्रहणी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—आध्मान एवं शूलयुक्त वातिक ग्रहणी में।

५. पुनर्नवादि क्वाथ

पुनर्नवावेल्लजबाणपुङ्ख-
विश्वाग्निपथ्याचिरबिल्वबिल्वैः।
कृतः कषायः शमयेदशेषान्
दुर्नामगुल्मग्रहणीविकारान् ॥९॥

१. पुनर्नवा, २. मरिच, ३. शरपुङ्खामूल, ४. शुण्ठी, ५. चित्रकमूल, ६. हरीतकी, ७. करञ्जत्वक् तथा ८. बिल्व-फलमज्जा—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा २५ ग्रा. इस चूर्ण को लेकर १६ गुने जल में क्वाथ-निर्माण विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ के सेवन से सभी प्रकार के अर्श, गुल्म और ग्रहणी विकार शान्त हो जाते हैं।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—अर्श, गुल्म एवं ग्रहणी विकारों में।

६. यमानिकादि क्वाथ (योगरत्नाकर)

यमानीनागरोशीरधनिकातिविषाघनैः।
बलाबिल्वद्विपर्णीभिर्दीपनं पाचनं स्मृतम् ॥१०॥

१. अजवायन, २. शुण्ठी, ३. खस, ४. धनियाँ, ५. अतीस, ६. नागरमोथा, ७. बलामूल, ८. बिल्वफलमज्जा, ९. शालपर्णी और १०. पृश्निपर्णी—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें तथा २५ ग्रा. इस चूर्ण को १६ गुना जल में क्वाथ निर्माण विधि द्वारा क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ को प्रतिदिन सेवन करने से अग्निदीपन और आमदोषों का पाचन करता है।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं आमदोष में।

७. नागरादि क्वाथ (चक्रदत्त)

नागरातिविषामुस्ताक्वाथः स्यादामपाचनः।
चूर्णं हिङ्ग्वष्टकं वाऽपि वातिकेऽष्टपलं घृतम् ॥११॥

१. शुण्ठी, २. अतीस एवं ३. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। २५ ग्रा. इस चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ-निर्माण विधि द्वारा क्वाथ का निर्माण करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ के सेवन से आमदोष का पाचन होता है। वातिक ग्रहणी में हिंग्वष्टकचूर्ण या अष्टपलघृत अधिक लाभदायक है।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—आमदोष एवं ग्रहणी विकार में।

८. चातुर्भद्र क्वाथ

गुडूच्यतिविषाशुण्ठीमुस्तैः क्वाथः कृतो जयेत्।
आमानुषक्तां ग्रहणीं ग्राही दीपनपाचनः ॥१२॥

१. गुडूची, २. अतीस, ३. सोंठ तथा ४. नागरमोथा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट चूर्ण करें। २५ ग्रा. इस चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ-निर्माण विधि द्वारा क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. इस क्वाथ का सेवन करने से आमदोष युक्त ग्रहणी-विकार रोग नष्ट हो जाता है। यह क्वाथ ग्राही, अग्निदीपक एवं आमदोष का पाचन करने वाला है।

मात्रा—५० मि.ली.। **उपयोग**—ग्रहणी, अग्निमान्द्य एवं आमदोष में।

९. तिक्तादि क्वाथ

पथ्यारसाञ्जनमहौषधधातकीभि-
स्तिक्तेन्द्रबीजघनकौटजभङ्गराभिः।
पित्तोद्भवं बहुविधं ग्रहणीगदं च
क्वाथो हरेत् सगुदशूलमतिप्रवृद्धम् ॥१३॥

१. हरीतकी, २. रसाञ्जन, ३. शुण्ठी, ४. धातकीपुष्प, ५. कुटकी, ६. इन्द्रयव, ७. नागरमोथा, ८. कुटज की छाल और ९. अतीस—इन सभी द्रव्यों को समभाग लेकर यवकुट चूर्ण करें। २५ ग्रा. इस चूर्ण को लेकर १६ गुना जल में क्वाथ-निर्माण विधि से क्वाथ बनावें। चौथाई शेष रहने पर छानकर ५० मि.ली. इस क्वाथ को पिलावें। इसके सेवन से पित्तज ग्रहणी, गुदशूल एवं ग्रहणीविकार नष्ट हो जाते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१०. रसाञ्जनादि चूर्ण (योगरत्नाकर)

रसाञ्जनं प्रतिविषं कुटजस्य फलत्वचौ।
धातकीं शृङ्गवेरं च पाययेत्तण्डुलाम्बुना ॥१४॥
माक्षिकेण युतं हन्यात् पित्तातीसारमुल्बणम्।
मन्दं सन्दीपयेदग्निं शूलं चाशु निवर्त्तयेत् ॥१५॥
पैत्तिकं ग्रहणीरोगं पित्तजार्शांसि सन्ततम्।
रक्तपित्तमपि प्रायो नाशयेन्नात्र संशयः ॥१६॥

१. रसाञ्जन, २. अतीस, ३. इन्द्रयव, ४. कुटजत्वक्, ५. धातकीपुष्प तथा ६. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर बारीक पीसकर छानकर चूर्ण बना लें। २-४ माशा (२-४ ग्राम) चूर्ण १ तोला (१० मि.ली.) शहद एवं ४ तोला (४६ मि.ली.) तण्डुलोदक के साथ नित्य सेवन करने से मन्दाग्नि तीव्र होती है तथा शीघ्र ही शूल को शान्त करती है। यह पित्तजन्य ग्रहणीविकार, पित्तार्श एवं रक्तपित्त में अत्यन्त लाभदायक है।

मात्रा—२-४ ग्राम। **अनुपान**—तण्डुलोदक के साथ। **उपयोग**—मन्दाग्नि, पित्तार्श, रक्तपित्त आदि में।

११. रास्नादि चूर्ण (योगरत्नाकर)

रास्ना पथ्या शटी व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च।
ग्रन्थिकं मातुलुङ्गस्य रसमेकत्र चूर्णयेत् ॥१७॥
पिबेदुष्णेन तोयेन श्लैष्मिके ग्रहणीगदे ॥१८॥

१. रास्ना, २. हरीतकी, ३. कचूर, ४. शुण्ठी, ५. मरिच, ६. पिप्पली, ७. सर्जिकाक्षार, ८. यवक्षार, ९. सौवर्चललवण, १०. सैन्धवलवण, ११. विड्लवण, १२. औद्भिल्लवण, १३. सामुद्रनमक, १५. पिपरामूल तथा १६. बिजौरानींबू का रस—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें तथा बिजौरानींबू के स्वरस की भावना देकर खरल में मर्दन करके सुखा दें। २-५ ग्राम की मात्रा में उष्णोदक से रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से श्लैष्मिक ग्रहणीविकार शान्त होता है।

मात्रा—५० मि.ली.। **अनुपान**—उष्णोदक। **उपयोग**—श्लैष्मिक ग्रहणी में।

१२. शट्यादि चूर्ण (योगरत्नाकर)

शटीव्योषाभयाः क्षारौ ग्रन्थिकं बीजपूरकम्।
लवणाम्लाम्बुना पेयं श्लैष्मिके ग्रहणीगदे ॥१९॥

१. कचूर, २. शुण्ठी, ३. मरिच, ४. पीपर, ५. हरीतकी, ६. सर्जिकाक्षार, ७. यवक्षार, ८. पिप्पलीमूल तथा ९. बिजौरानींबूस्वरस—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्मचूर्ण कर छान लें तथा बिजौरानींबू के स्वरस के साथ एक दिन खरल में मर्दन करें एवं मर्दन करते-करते जब सूख जाये तो उसको काचपात्र में संग्रहीत करे। इस चूर्ण की २-५ ग्राम की मात्रा में नमक एवं खट्टी काञ्जी के साथ कफजन्य ग्रहणी के रोगी को सेवन करायें।

मात्रा—२-५ ग्रा.। **अनुपान**—लवण एवं खट्टी काञ्जी। **उपयोग**—कफज ग्रहणी में।

१३. हिमांश्वादि चूर्ण

हिमांशु रास्ना लवणानि पथ्या-
क्षारद्वयं सर्जियवोत्थितं यत्।
कटुत्रिकं चापि समं समान
तद्बीजपूरोत्थरसेन भाव्यम् ॥२०॥
ततो विचूर्णीकृतमुष्णवारिणा
पिबेच्च वह्नेर्बहुधाऽभिवृद्ध्यै।
बलस्य वर्णस्य समृद्धिसिद्ध्यै
मरुत्कफोत्थग्रहणीविनाशकृद् ॥२१॥

१. कपूर, २. रास्ना, ३. सैन्धवलवण, ४. विड्लवण, ५. सामुद्रलवण, ६. रेह का लवण, ७. सोंचर लवण, ८. हर्रे बड़ी, ९. सर्जिकाक्षार, १०. यवक्षार, ११. सोंठ, १२. मरिच, १३. पीपर बड़ी और १४. बिजौरानींबू स्वरस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर कपड़छन करें तथा बिजौरानींबू के स्वरस की भावना देकर मर्दन करें। मर्दन करते-करते जब सूख जाये तो शीशी में भर लें। २-५ ग्राम की मात्रा में उष्णोदक से प्रतिदिन रोगी को दें। इसके सेवन से शारीरिक बल, वर्ण एवं जाठराग्नि की वृद्धि होती है एवं कफज तथा वातज ग्रहणी शान्त होती है।

मात्रा—२-५ ग्रा.। **अनुपान**—उष्णोदक। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, बल-वर्णनाश, कफज एवं वातज ग्रहणी रोग में।

ग्रहणी में मल शुष्क होने पर चिकित्सा

नितान्तदुष्टेर्मरुतो मलं यदा-
ऽऽतुरो विमुञ्चेत्कठिनं च रूक्षम्।
ससैन्धवं सर्पिरिहौषधं तदा
प्रयोजयेत्तस्य शुभाय वैद्यः।
विष्टम्भरोगे सति चोष्णवारिणा
विडं यमानीमपि शीलयेद्गदी ॥२२॥

जो ग्रहणी का रोगी वातप्रकोप के कारण कठिनता से सूखा, रूक्ष और कड़ा मल त्याग करता है उसके कष्ट की शान्ति के लिए ८० मि.ली. उष्ण जल में २० ग्राम देशी घी तथा सैन्धव नमक मिलाकर पिलाना चाहिए। इससे प्रकुपित वायु शान्त होती है तथा कोष्ठ की क्रूरता कम होती है और स्निग्धता आती है जिससे मलत्याग बिना परिश्रम के हो जाता है। मल के रुक जाने पर ६ ग्राम विड्नमक तथा ६ ग्राम अजवायन चूर्ण सुखोष्ण जल से रोगी को सेवन करायें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१४. श्रीफलशलाटुकल्क (चक्रदत्त)

श्रीफलशलाटुकल्को नागरचूर्णेन मिश्रितः सगुडः ।
ग्रहणीगदमत्युग्रं तक्रभुजा शीलितो जयति ॥२३॥

बालबिल्वफलमज्जा ३ ग्राम, शुण्ठी चूर्ण ३ ग्राम तथा गुड़ १० ग्राम लें। बालबिल्वफलमज्जा को सिल पर जल के साथ बारीक पीस लें। कल्क जैसा बन जाने पर सोंठ का कल्क एवं पुराना गुड़ मिलाकर रोगी को खिलायें तथा तक्र के साथ हल्का भोजन करायें। इससे ग्रहणी रोग की शान्ति होती है।

१५. पञ्चपल्लव (चक्रदत्त)

जम्बूदाडिमशृङ्गाटपाठाकञ्चटपल्लवैः ।
पक्वं पर्युषितं बालबिल्वं सगुडनागरम् ॥२४॥
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥२५॥

१. जामुन, २. अनार, ३. सिंघाड़ा, ४. पाठा, ५. कञ्चटपत्र (शाक-विशेष), ६. बिल्वफलमज्जा, ७. गुड़ तथा ८. शुण्ठी—१ से ५ तक के द्रव्यों के पत्ते लेकर साफ करें तथा बिल्वफलमज्जा, गुड़ एवं शुण्ठी सभी द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट करें तथा क्वाथ-निर्माण विधि से १६ गुने जल में क्वाथ करें। इसके ५०० मि.ली. सेवन से सभी प्रकार के अतिसार एवं असाध्य ग्रहणी रोग शान्त होते हैं।

मात्रा—५० मि.ली. रोगी के बलाबल के अनुसार। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी आदि में।

१६. चित्रकादि गुटिका (चरकसं.)

चित्रकं पिप्पलीमूलं द्वौ क्षारौ लवणानि च ।
व्योषं हिङ्ग्वजमोदाञ्च चव्यञ्चैकत्र चूर्णयेत् ॥२६॥
गुटिका मातुलुङ्गस्य दाडिमस्य रसेन वा ।
कृता विपाचयत्यामं दीपयत्याशु चानिलम् ॥२७॥

१. चित्रकमूल, २. पिपरामूल, ३. सर्जिकाक्षार, ४. यवक्षार, ५. सैन्धव नमक, ६. सौवर्चलनमक, ७. विड्लवण, ८. औद्भिद् लवण, ९. सामुद्रनमक, १०. शुण्ठी, ११. मरिच, १२. पीपर, १३. शुद्ध हींग, १४. अजमोदा, १५. चव्य तथा १६. बिजौरानींबू का रस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर साफ कर महीन पीसकर चूर्ण कर लें। उस चूर्ण में बिजौरानींबू के रस या अनारदाना के रस की भावना दें और खरल में १ दिन तक मर्दन करें। ५०० मि.ग्रा. की वटियाँ बनाकर छाया में सुखायें। १ वटी सुखोष्ण पानी से खाने पर आमदोष का पाचन होता है एवं पाचकाग्नि दीप्त होती है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **उपयोग**—ग्रहणी, आमदोष एवं अग्निमान्द्य में। **अनुपान**—उष्णोदक से।

पञ्चलवण (चक्रदत्त)

सौवर्चलं सैन्धवञ्च विडमौद्भिदमेव च ।
सामुदेण समं पञ्चलवणान्यत्र योजयेत् ॥२८॥

बताये गये सभी योगों में तथा अन्य सब जगहों पर वर्णित पञ्चलवण शब्द से—१. काला नमक, २. सैन्धवलवण, ३. विड्-लवण, ४. औद्भिद्लवण तथा ५. समुद्रलवण समझना चाहिए।

१७. नागराद्य चूर्ण (चक्रदत्त)

नागरातिविषामुस्तं धातकी च रसाञ्जनम् ।
वत्सकत्वक् फलं पाठा बिल्वं कटुकरोहिणी ॥२९॥
पिबेत्समांशं तच्चूर्णं सक्षौद्रं तण्डुलाम्बुना ।
पैत्तिके ग्रहणीदोषे रक्तं यश्चोपवेश्यते ॥३०॥
अर्शांस्यथ गुदे शूलं जयेच्चैव प्रवाहिकाम् ।
नागराद्यमिदं चूर्णं कृष्णात्रेयेण पूजितम् ॥३१॥

१. शुण्ठीचूर्ण, २. अतीसचूर्ण, ३. नागरमोथाचूर्ण, ४. धावाफूलचूर्ण, ५. रसाञ्जनचूर्ण, ६. कुटजत्वक्चूर्ण, ६. इन्द्र-यवचूर्ण, ८. पाठाचूर्ण, ९. बिल्वफलमज्जा चूर्ण तथा १०. कुटकी चूर्ण—सभी द्रव्यों के चूर्णों को समभाग लेकर पुनः कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। २ ग्राम चूर्ण मधु और तण्डुलोदक के साथ रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से पैत्तिक ग्रहणी, अर्श, गुदशूल एवं प्रवाहिका रोग शान्त होते हैं। इस नागराद्यचूर्ण को पुनर्वसु आत्रेय ने बनाया था।

मात्रा—२ ग्रा.। **अनुपान**—शहद तथा तण्डुलोदक से। **उपयोग**—ग्रहणी, अर्श, गुदशूल एवं प्रवाहिका में।

तण्डुलोदक-निर्माणविधि (चक्रदत्त)

शीतकषायमानेन तण्डुलोदककल्पना ।
केऽप्यष्टगुणतोयेन प्राहुस्तण्डुलभावनाम् ॥३२॥

शीतकषाय विधि के समान अर्थात् द्रव्य से ६ गुना गर्म पानी लेकर तण्डुलोदक को बनाना चाहिए। कुछ आचार्यों के मतानुसार १ भाग चावल को ८ भाग पानी में रात को भिगाकर रख दें। प्रातःकाल हाथ से चावल को मसलकर छान लें। अन्य ग्रन्थों में भी तण्डुलोदक बनाने की विधि का वर्णन किया गया है जो निम्न है—

'कण्डितं तण्डुलपलं जले त्वष्टगुणे क्षिपेत् ।
धौतं कृत्वा जलं तच्च तण्डुलोदकमुच्यते' ।।
(आयुर्वेदीय परिभाषा)

अपि च—
'क्षुण्णमुष्णाम्भसि व्युष्टं शीतमाहुश्चिकित्सकाः' ।

अपि च—
'षड्भिः पलैश्चतुर्भिर्वा सलिलाच्छीतफाण्टयोः' ।
(चक्रदत्त शिवदाससेन)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अन्यच्च—

'द्रव्यादापोत्थितात्तोये प्रतप्ते निशि संस्थितात् ।
कषायो योऽभिनिर्याति स शीतः समुदाहृतः' ।।
(चरक-सूत्र. ४)

१८. पाठाद्य चूर्ण (चक्रदत्त)

पाठाबिल्वानलव्योषजम्बूदाडिमधातकी-
कटुकाऽतिविषामुस्तादार्वीभूनिम्बवत्सकैः ॥३३॥
सर्वैरेभिः समं चूर्णं कौटजं तण्डुलाम्बुना ।
सक्षौद्रेण पिबेच्छर्दिज्वरातीसारशूलवान् ।
हृद्रोगग्रहणीदोषारोचकानलसादजित् ॥३४॥

१. पाठा, २. बिल्वफलमज्जा, ३. चित्रकमूल, ४. शुण्ठी, ५. मरिच, ६. पीपर, ७. जामुन की गुठली, ८. दाड़िमफल, ९. धातकीपुष्प, १०. कुटकी, ११. अतीस, १२. नागरमोथा, १३. दारुहरिद्रा, १४. चिरायता, १५. इन्द्रयव और १६. कुटजत्वक्—क्र.सं. १ से १५ तक सभी द्रव्यों को १-१ भाग लेकर कूटकर कपड़े से छान लें। इस चूर्ण के बराबर कुटज की छाल का चूर्ण १५ भाग मिला लें। पुनः छननी से छानकर काचपात्र में संग्रह करें। २-४ ग्राम की मात्रा तण्डुलोदक और शहद के साथ रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से ज्वर, वमन, अतिसार, ज्वरातिसार और शूल नष्ट हो जाता है। इन व्याधियों के अतिरिक्त यह चूर्ण हृद्रोग, ग्रहणीरोग, अरुचि तथा मन्दाग्नि का भी नाश करता है।

मात्रा—२-४ ग्रा.। **उपयोग**—मन्दाग्नि, ज्वर, वमन, अतिसार, ज्वरातिसार, ग्रहणी तथा अरुचि में। **अनुपान**—मधु एवं तण्डुलोदक से।

१९. भूनिम्बादि चूर्ण (चक्रदत्त)

भूनिम्बकटुकाव्योषमुस्तकेन्द्रयवान् समान् ।
द्वौ चित्रकाद् वत्सकत्वग्भागान् षोडश चूर्णयेत् ॥३५॥
गुडशीताम्बुभिः पीतं ग्रहणीदोषगुल्मनुत् ।
कामलाज्वरपाण्डुत्वमेहारुच्यतिसारनुत् ॥३६॥
गुडयोगाद् गुडाम्बु स्याद् गुडवर्णरसान्वितम् ॥३७॥

१. चिरायता १० ग्राम, २. कुटकी १० ग्राम, ३. शुण्ठी १० ग्राम, ४. मरिच १० ग्राम, ५. पीपर १० ग्राम, ६. नागरमोथा १० ग्राम, ७. इन्द्रयव १० ग्राम, ८. चित्रकमूल २० ग्राम और ९. कुटजत्वक् १८० ग्राम लें। सभी द्रव्यों को मात्रानुसार लेकर एक साथ पीसकर चूर्णकर कपड़छन कर लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। २-५ ग्राम की मात्रा में लेकर १० ग्राम पुराने गुड़ के साथ खिलायें। साथ में शीतल जल का अनुपान के रूप में प्रयोग करें। इस चूर्ण के सेवन से ग्रहणी रोग, गुल्म, कामला, ज्वर, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, अतिसार आदि रोग शान्त होते हैं। गुड़ को पानी में घोलने पर पानी का रंग लाल गुड़ के समान एवं मीठा हो जाता है इसलिए इसको गुडाम्बु कहते हैं।

मात्रा—१-५ ग्राम। **अनुपान**—गुड़ाम्बु। **उपयोग**–ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, कामला, ज्वर, अरुचि, प्रमेह आदि में।

२०. दाडिमाष्टक चूर्ण (चक्रदत्त)

कर्षोन्मिता तुगाक्षीरी चातुर्जातं द्विकापिकम् ।
यमानीधान्यकाजाजीग्रन्थिव्योषं पलांशकम् ॥३८॥
पलानि दाडिमादष्टौ सितायाश्चैकतः कृतम् ।
गुणैः कपित्थाष्टकवच्चूर्णमेतन्न संशयः ॥३९॥

१. वंशलोचन १० ग्राम, २. दालचीनी २० ग्राम, ३. छोटी इलायची २० ग्राम, ४. तेजपात २० ग्राम, ५. नागकेशर २० ग्राम, ६. अजवायन ४० ग्राम, ७. धनियाँ ४० ग्राम, ८. जीरा सफेद ४० ग्राम, ९. पिप्पलीमूल ४० ग्राम, १०. शुण्ठी ४० ग्राम, ११. मरिच ४० ग्राम, १२. पिप्पली ४० ग्राम, १३. अनारदाना ३२० ग्राम और १४. मिश्री ४० ग्राम लें। सभी द्रव्यों को लिखी मात्रा के अनुसार लेकर पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें तथा कपड़े से छानकर रख लें। यह चूर्ण कपित्थाष्टक चूर्ण की तरह अत्यन्त लाभदायक है। इसमें सन्देह नहीं है ।

मात्रा—२-४ ग्राम। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी, गुल्म, कास, श्वास, अरुचि आदि में।

२१. कपित्थाष्टक चूर्ण (चक्रदत्त)

यमानीपिप्पलीमूलचातुर्जातकनागरैः ।
मरिचाग्निजलाजाजीधान्यसौवर्चलैः समैः ॥४०॥
वृक्षाम्लधातकीकृष्णाबिल्वदाडिमतिन्दुकैः ।
त्रिगुणैः षड्गुणसितैः कपित्थाष्टगुणैः कृतः ॥४१॥
चूर्णोऽतिसारग्रहणीक्षयगुल्मगलामयान् ।
कासं श्वासारुची हिक्कां कपित्थाष्टमिदं जयेत् ॥४२॥

१. अजवायन, २. पिप्पलीमूल, ३. दालचीनी, ४. छोटी इलायची, ५. तेजपत्ता, ६. नागकेशर, ७. शुण्ठी, ८. मरिच, ९. चित्रकमूल, १०. सुगन्धबाला, ११. जीरा, १२. धनियाँ और १३. कालानमक—प्रत्येक १०-१० ग्राम; १४. वृक्षाम्ल, १५. धातकीपुष्प, १६. पिप्पली, १७. बिल्वफलमज्जा, १८. अनारदाना, १९. तेन्दुकफल—प्रत्येक ३०-३० ग्राम; २०. मिश्री ६० ग्राम तथा २१. कैंथ (कपित्थ) का फल ८० ग्राम—लिखित मात्रा के अनुसार लेकर सभी द्रव्यों को पीसकर कपड़े से छान लें। इस कपित्थाष्टक चूर्ण को २-४ ग्राम की मात्रा में तक्र के साथ रोगी को प्रतिदिन सेवन करायें। इसके सेवन करने से

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अतिसार, ग्रहणी, क्षय, गुल्म, ग्रीवा के रोग, श्वास, कास, अरुचि, हिक्का आदि रोग शान्त होते हैं।

मात्रा—२-४ ग्राम। **अनुपान**—तक्र। **उपयोग**—अतिसार, श्वास, कास, हिक्का, गले के रोग, अरुचि, ग्रहणी आदि में।

२२. गङ्गाधर चूर्ण (स्वल्प)

मुस्तसैन्धवशुण्ठीभिर्धातकीलोध्रवत्सकैः ।
बिल्वमोचरसाभ्याञ्च पाठेन्द्रयवबालकैः ॥४३॥
आम्रबीजमतिविषा लज्जा चेति सुचूर्णितम् ।
क्षौद्रतण्डुलतोयाभ्यां जयेत्पीत्वा प्रवाहिकाम् ॥४४॥
सर्वातीसारशमनं सर्वशूलनिषूदनम् ।
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्ति सूतिकाऽऽतङ्कमेव च ॥
एतद्गङ्गाधरं चूर्णं सरिद्वेगावरोधनम् ॥४५॥

१. नागरमोथा, २. सैन्धव नमक, ३. शुण्ठी, ४. धातकीपुष्प, ५. लोध्र, ६. कुटजत्वक्, ७. बालबिल्व-फलमज्जा, ८. मोचरस, ९. पाठा, १०. इन्द्रयव, ११. सुगन्धबाला, १२. आम की गुठली, १३. अतीस और १४. लज्जालुबीज—सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। २-४ ग्राम की मात्रा में इस चूर्ण को शहद और तण्डुलोदक के साथ रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से सभी प्रकार के अतिसार, सभी प्रकार के शूल, संग्रहणी, सूतिका रोग आदि शान्त होते हैं। यह गङ्गाधर चूर्ण नदी के वेग की तरह प्रवृद्ध अतिसार को शान्त करता है।

मात्रा—२-४ ग्राम। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी, शूल, सूतिकारोग, संग्रहणी आदि में। **अनुपान**—शहद एवं तण्डुलोदक।

२३. गङ्गाधरचूर्ण (बृहद्)

बिल्वं मोचरसं पाठा धातकी धान्यमेव च ।
ह्रीबेरं नागरं मुस्तं तथैवातिविषा समम् ॥४६॥
अहिफेनं लोध्रकञ्च दाडिमं कुटजं तथा ।
पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विचूर्णयेत् ॥४७॥
तक्रेण खादयेत्प्रातश्चूर्णं गङ्गाधरं महत् ।
ज्वरमष्टविधं हन्यादतीसारं सुदुस्तरम् ॥४८॥
ग्रहणीं विविधाञ्चैव कोष्ठव्याधिहरं परम् ॥४९॥

१. बालबिल्वफलमज्जा, २. मोचरस, ३. पाठा, ४. धातकीपुष्प, ५. धनियाँ, ६. सुगन्धबाला, ७. शुण्ठी, ८. नागरमोथा, ९. अतीस, १०. शुद्ध अफीम, ११. लोध्रत्वक्, १२. अनारदाना, १३. कुटजत्वक्, १४. शुद्ध पारद तथा १५. शुद्ध गंधक (समभाग) लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक को समभाग में लेकर भलीभाँति खरल में मर्दन कर कज्जली करें। तत्पश्चात् अन्य सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा कज्जली में मिलायें। अफीम को पानी में घोलकर उस पानी से एक दिन तक खरल में भावना देकर मर्दन करें। जब सूख जाय तो पुनः चलनी से छानकर काचपात्र में संग्रह करें। २५० से ५०० मि.ग्राम की मात्रा में तक्र के साथ रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से ८ प्रकार के ज्वर, असाध्य एवं भयंकर अतिसार, अनेक प्रकार की संग्रहणी आदि रोग शान्त होते हैं। यह बृहद् गङ्गाधर चूर्ण सभी प्रकार के उदररोगों को शान्त करता है।

मात्रा—१-२ ग्राम। **अनुपान**—मट्ठा। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी, ज्वर आदि में।

२४. गङ्गाधर चूर्ण (मध्यम)

बिल्वं शृङ्गाटकदलं दाडिमं दलमेव च ।
समुस्तातिविषा चैव श्वेतसर्जञ्च धातकी ॥५०॥
मरिचं पिप्पली शुण्ठी दार्वी भूनिम्बनिम्बकम् ।
जम्बू रसाञ्जनञ्चैव कुटजस्य फलं तथा ॥५१॥
पाठा समङ्गा ह्रीबेरं शाल्मलीवेष्टमेव च ।
शक्राशनं भृङ्गराजचूर्णं देयं समं समम् ॥५२॥
कुटजस्य त्वचश्चूर्णं सर्वचूर्णसमं मतम् ।
मध्यगङ्गाधरं नाम चूर्णं लोके महागुणम् ॥५३॥
नानावर्णमतीसारं चिरजं बहुरूपिणम् ।
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति तृष्णां कासञ्च दुर्जयम् ॥५४॥
ज्वरञ्च विविधं हन्ति शोथञ्चैव सुदारुणम् ।
अरुचिं पाण्डुरोगञ्च हन्यादेव न संशयः ॥
छागीदुग्धेन मण्डेन मधुना वाऽथ लेहयेत् ॥५५॥

१. बालबिल्वफलमज्जा, २. सिंघाड़े के पत्ते, ३. अनारफल का छिलका, ४. नागरमोथा, ५. अतीस, ६. सर्जरस, ७. धातकीपुष्प, ८. मरिच, ९. पिप्पली, १०. शुण्ठी, ११. दारु-हल्दी, १२. चिरायता, १३. नीम की छाल, १४. जामुन की छाल, १५. रसाञ्जन, १६. इन्द्रयव, १७. पाठा, १८. मञ्जिष्ठा, १९. सुगन्धबाला, २०. मोचरस, २१. शुद्ध भाँग और २२. भृङ्गराज—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें और २३. कुटजत्वक् १.१०० ग्राम लें—इन सभी द्रव्यों का एक साथ सूक्ष्म चूर्ण करें और काचपात्र में संग्रहीत करें। यह मध्यमगङ्गाधर चूर्ण अनुपान भेद से अनेक गुणों को उत्पन्न करके चिरकाल से उत्पन्न विभिन्न रंगों से युक्त; यथा—हरित, पीत, लाल, नीला मल के अतिसरण, अनेक चिकित्साविधियों से असाध्य ग्रहणी दोष, तृष्णा, दुःसाध्य कास, विभिन्न प्रकार के ज्वर, भयङ्कर शोथ, अरुचि एवं पाण्डु रोग को नष्ट करता है। इस मध्यमगङ्गाधर चूर्ण को बकरी के दूध, चावल के माँड और शहद के अनुपान से सेवन करायें।

मात्रा—२-४ ग्राम। **अनुपान**—शहद, बकरी का दूध,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मण्ड। **उपयोग**—ज्वर, अतिसार, शोथ, अरुचि, पाण्डु, ग्रहणी आदि।

२५. गङ्गाधरचूर्ण (वृद्ध) (चक्रदत्त)

मुस्तारलुकशुण्ठीभिर्धातकीलोध्रबालकैः ।
बिल्वमोचरसाभ्यां च पाठेन्द्रयववत्सकैः ॥५६॥
आम्रबीजसमङ्गाऽतिविषायुक्तैश्च चूर्णितैः ।
मधु तण्डुलपानीयं पीतं हन्ति प्रवाहिकाम् ॥५७॥
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं हन्ति वेगतः ।
वृद्धं गङ्गाधरं चूर्णं रुन्ध्याद्गीर्वाणवाहिनीम् ॥५८॥

१. नागरमोथा, २. सोनापाठा, ३. शुण्ठी, ४. धातकीपुष्प, ५. लोध्र, ६. सुगन्धबाला, ७. बिल्वफलमज्जा, ८. मोचरस, ९. पाठा, १०. इन्द्रयव, ११. कुटजत्वक्, १२. आम की गुठली, १३. मञ्जिष्ठा और १४. अतीस—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। १-२ ग्राम चूर्ण की मात्रा शहद में मिलाकर तण्डुलोदक के साथ प्रतिदिन ३ बार रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से प्रवाहिका, सभी प्रकार के अतिसार एवं ग्रहणी रोग शीघ्र ही शान्त होते हैं। यह वृद्धगङ्गाधर चूर्ण गङ्गा के समान भयङ्कर अतिसार के वेग को शान्त करता है।

मात्रा—१-२ ग्राम। **अनुपान**—शहद एवं तण्डुलोदक से। **उपयोग**—प्रवाहिका, अतिसार, ग्रहणी आदि में।

२६. लवङ्गादि चूर्ण (स्वल्प) (रसरत्नाकर)

लवङ्गातिविषामुस्तं बिल्वं पाठा च शाल्मली ।
जीरकं धातकीपुष्पं लोध्रेन्द्रयवबालकम् ॥५९॥
धान्यं सर्जरसं शृङ्गी पिप्पली विश्वभेषजम् ।
समङ्गा यावशूकञ्च सैन्धवं सरसाञ्जनम् ॥६०॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
शमयेदग्निमान्द्यञ्च सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ॥६१॥
नानावर्णमतीसारं सशोथां पाण्डुकामलाम् ।
इदमष्ठीलिकां हन्ति कासं श्वासं ज्वरं वमिम् ॥६२॥
हृल्लासमम्लपित्तञ्च सशूलं सान्निपातिकम् ।
सर्वरोगं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥६३॥

१. लवङ्ग, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. बालबिल्व-फलमज्जा, ५. पाठा, ६. मोचरस, ७. श्वेत जीरा, ८. धातकीपुष्प, ९. लोध्र, १०. इन्द्रयव, ११. सुगन्धबाला, १२. धनियाँ, १३. सर्जरस, १४. काकड़ाशृङ्गी, १५. पिप्पली, १६. शुण्ठी, १७. मञ्जिष्ठा, १८. यवक्षार, १९. सैन्धवनमक तथा २०. रसाञ्जन—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इस चूर्ण को १-३ ग्राम की मात्रा में गरम जल से रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से अग्निमान्द्य, संग्रहणी, अनेक वर्णों; यथा—नीला, पीला, हरा, लाल, कृष्ण आदि से युक्त पुरीष वाला अतिसार, शोथ, पाण्डुरोग, कामला, अष्ठीला, श्वास, कास, ज्वर, छर्दि, हृल्लास, अम्लपित्त और सन्निपातज शूल आदि नष्ट हो जाते हैं। यह चूर्ण अनुपान भेद से अनेक रोगों को नाश करता है जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है।

मात्रा—१-३ ग्राम। **अनुपान**—विविध अनुपान भेद से। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी, कामला, श्वास, कास, शोथ आदि में।

२७. लवङ्गादिचूर्ण (बृहत्) (रसरत्नाकर)

लवङ्गातिविषा मुस्तं पिप्पलीमरिचानि च ।
सैन्धवं हवुषा धान्यं कट्फलं पुष्करं तथा ॥६४॥
जातीकोषफलाजाजीसौवर्चलरसाञ्जनम् ।
धातकी मोचकं पाठा पत्रं तालीशकेशरम् ॥६५॥
चित्रकञ्च विडञ्चैव तुम्बुरुबिल्वमेव च ।
त्वगेला पिप्पलीमूलमजमोदा यमानिका ॥६६॥
समङ्गा वत्सकं शुण्ठी दाडिमं यावशूकजम् ।
निम्बं सर्जरसं क्षारं सामुद्रं टङ्कणं तथा ॥६७॥
ह्रीबेरं कुटजञ्चैव जम्ब्वाम्रं कटुरोहिणी ।
अभ्रकं पुटितं लौहं शुद्धगन्धकपारदम् ॥६८॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
मधुना वा लिहेच्चूर्णं पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥६९॥
सर्वदोषहरञ्चैव ग्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ।
वातिकीं पैत्तिकीञ्चैव श्लैष्मिकीं सान्निपातिकीम् ॥७०॥
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ।
कृष्णारुणञ्च पीतञ्च मांसधावनसन्निभम् ॥७१॥
ज्वरारोचकमन्दाग्निं कासं श्वासं वमिं तथा ।
अम्लपित्तं तथा हिक्कां प्रमेहञ्च हलीमकम् ॥७२॥
पाण्डुरोगञ्च विष्टम्भमर्शांसि विविधानि च ।
प्लीहगुल्मोदरानाहशोथातीसारपीनसान् ॥७३॥
आमवातं तथाऽजीर्णं सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ।
उदरं प्रदरञ्चैव लवङ्गाद्यमिदं शुभम् ॥७४॥

१. लवङ्ग, २. अतीस, ३. नागरमोथा, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. सैन्धवनमक, ७. हाऊबेर, ८. धनियाँ, ९. कायफल, १०. पुष्करमूल, ११. जावित्री, १२. जायफल, १३. श्वेत जीरा, १४. कालानमक, १५. रसाञ्जन, १६. धातकीपुष्प, १७. मोचरस, १८. पाठा, १९. तेजपात, २०. तालीशपत्र, २१. नागकेशर, २२. चित्रकमूल, २३. विड्नमक, २४. नेपाली धनियाँ, २५. बिल्वफलमज्जा, २६. दालचीनी, २७. छोटी इलायची, २८. पिप्पलीमूल, २९. अजमोदा, ३०. अजवायन, ३१. मंजीठ, ३२. कुटजत्वक्, ३३. शुण्ठी, ३४. अनारदाना, ३५. यवक्षार, ३६. नीम की छाल, ३७. सर्ज-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रसचूर्ण, ३८. सर्जिकाक्षार, ३९. सामुद्रनमक, ४०. शुद्ध टंकण, ४१. सुगन्धबाला, ४२. इन्द्रयव, ४३. जामुन की गुठली, ४४. आम की गुठली, ४५. कुटकी, ४६. अभ्रकभस्म, ४७. लौहभस्म, ४८. शुद्ध गंधक और ४९. शुद्ध पारद—सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली का निर्माण करें। बाकी सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें तथा कज्जली में मिलाकर १ घण्टे तक मर्दन कर काचपात्र में संग्रहीत करें। १ से ३ ग्राम चूर्ण की मात्रा मधु एवं तण्डुलोदक के साथ रोगी को खिलायें। इस चूर्ण को खाने से सभी प्रकार के रोग, असाध्य ग्रहणी-विकार एवं वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक तथा सान्निपातिक ग्रहणी-विकार, पक्वातिसार, आमातिसार तथा काला, लाल, पीला और मांस के धोवन के समान रंग वाले तथा पीड़ायुक्त मल अतिसार को नष्ट करता है। इन रोगों के अतिरिक्त अनुपान भेद से ज्वर, अरुचि, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन, अम्लपित्त, हिक्का, प्रमेह, हलीमक, पाण्डुरोग, कोष्ठबद्धता, विभिन्न प्रकार के अर्श, प्लीहावृद्धि, गुल्म, उदररोग, आनाह, शोथ, अतिसार, पीनस, आमवात, अजीर्ण, संग्रहणी एवं प्रदर रोगों को नष्ट करता है। यह बृहत् 'लवङ्गादिचूर्ण' बहुत शुभ है।

मात्रा—१-३ ग्राम। **अनुपान**—मधु एवं तण्डुलोदक से। **उपयोग**—ज्वर, अतिसार, ग्रहणी, मन्दाग्नि, प्रदर, प्रमेह, उदररोग आदि में।

२८. लवङ्गादि चूर्ण (महत्)

लवङ्गं जीरकं कौन्ती सैन्धवं त्रिसुगन्धिकम्।
अजमोदा यमानी च मुस्तकं सकटुत्रयम् ॥७५॥
त्रिफला, शतपुष्पा च पाठा भूनिम्बगोक्षुरम्।
जातीकोषफले दार्वी नलदं चन्दनं मुरा ॥७६॥
शटी मधुरिका मेथी टङ्कणं कृष्णजीरकम्।
क्षारद्वयं बालकञ्च बिल्वं पौष्करकं तथा ॥७७॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं विडङ्गं सधनीयकम्।
रसाभ्रगन्धकं लौहं समं सर्वं विचूर्णितम् ॥७८॥
उष्णोदकानुपानेन मन्दाग्नेर्दीपनं परम्।
शीततोयानुपानैर्वा बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥७९॥
आमातिसारं ग्रहणीं चिरकालोत्थितामपि।
शूलं विष्टम्भमानाहं विसूचीं शोथकामले ॥८०॥
हलीमकं पाण्डुरोगं हन्ति कासं विशेषतः।
लवङ्गाद्यं महच्चूर्णं शर्करासहितं पिबेत् ॥८१॥
आध्मानं शमयेच्छीघ्रं लवङ्गस्यानुपानतः।
अश्विभ्यां निर्मितं ह्येतल्लोकानुग्रहहेतवे ॥८२॥

१. लवङ्ग, २. सफेद जीरा, ३. हरेणुका, ४. सैन्धवनमक, ५. दालचीनी, ६. छोटी इलायची, ७. तेजपत्ता, ८. अजमोदा, ९. अजवायन, १०. नागरमोथा, ११. शुण्ठी, १२. मरिच, १३. पिप्पली, १४. हरीतकी, १५. बहेड़ा, १६. आमला, १७. सौंफ, १८. पाठा, १९. चिरायता, २०. गोखरु, २१. जावित्री, २२. जायफल, २३. दारुहल्दी, २४. जटामांसी, २५. खस, २६. सफेद चन्दन, २७. मुरामांसी, २८. कचूर, २९. सोया, ३०. मेथी, ३१. शुद्ध टंकण, ३२. स्याहजीरा, ३३. सर्जिकाक्षार, ३५. यवक्षार, ३६. सुगन्धबाला, ३७. बिल्वफलमज्जा, ३८. पुष्करमूल, ३९. चित्रकमूल, ४०. पिप्पलीमूल, ४१. वायविडङ्ग, ४२. धनियाँ, ४३. शुद्ध पारद, ४४. अभ्रकभस्म, ४५. शुद्ध गंधक तथा ४६. लौहभस्म—सभी द्रव्यों को समभाग में लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को समभाग में लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली का निर्माण करें। शेष सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर छान लें तथा उस कज्जली में भलीभाँति मिला दें और काचपात्र में संग्रह करें। इस चूर्ण की १-३ ग्राम की मात्रा गरम पानी से रोगी को सेवन करायें। इससे अग्नि प्रदीप्त होती है या ठण्डे पानी के साथ दोषानुसार रोगी को सेवन करायें। यह चूर्ण आमातिसार, चिरकाल से उत्पन्न ग्रहणी रोग, शूल, कोष्ठबद्धता, आनाह, विसूचिका, शोथ, कामला, हलीमक, पाण्डुरोग एवं कास रोग को नष्ट करता है। आमातिसार में इस चूर्ण का प्रयोग शक्कर मिलाकर तथा आध्मान एवं कास में लौंग के पानी या लौंग चूर्ण और शहद मिला कर दें। लोक की भलाई के लिए अश्विनीकुमारों ने सर्वप्रथम इस लवङ्गादि चूर्ण को बनाया था।

मात्रा—१-३ ग्राम। **अनुपान**—गरम पानी, ठण्डा पानी, लौंग का पानी एवं शहद से। **उपयोग**—मन्दाग्नि, ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, कामला, कास आदि में।

२९. स्वल्पनायिका चूर्ण (लाई चूर्ण) (रसेन्द्रचि.म.)

त्रिशाणं पञ्चलवणं प्रत्येकं त्र्यूषणं पिचुः।
गन्धकान्माषकानष्टौ चत्वारो माषका रसात् ॥८३॥
इन्द्राशनात्पलं शाणत्रितयाधिकमिष्यते।
खादेन्मिश्रीकृताच्छाणमनुपेयञ्च काञ्जिकम् ॥८४॥
माषकादिक्रमेणैवमनुयोज्यं रसायनम्।
अत्यन्ताग्निकरञ्चैतद्भोजनं सार्वकामिकम् ॥८५॥
प्रसिद्धा योगिनी नारी तया प्रोक्तं रसायनम्।
ग्रहणीनाशनं ह्येतदग्निसन्दीपनं परम् ॥८६॥

१. सैन्धवलवण ९ ग्राम, २. सौवर्चललवण ९ ग्राम, ३. विड्लवण ९ ग्राम, ४. समुद्रलवण ९ ग्राम, ५. औद्भिल्लवण ९ ग्राम, ६. शुण्ठी १२ ग्राम, ७. पीपर १२ ग्राम, ८. मरिच १२ ग्राम, ९. शुद्ध गन्धक ८ ग्राम, १०. शुद्ध पारद ४ ग्राम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तथा ११. शुद्ध भाँगपत्र ४६ ग्राम—सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। कज्जली बन जाने पर अन्य द्रव्यों का भी मात्रानुसार ही सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा उस कज्जली में भलीभाँति मिश्रित कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ ग्राम की मात्रा में शहद के साथ खिलायें तथा अनुपान रूप में काञ्जी का प्रयोग करें। इस चूर्ण का सेवन १ ग्राम से क्रमशः बढ़ाकर ३ ग्राम तक सेवन करने वाला रसायन है तथा मन्दाग्नि को प्रदीप्त करने वाला है। इस चूर्ण के सेवन काल में इच्छानुसार भोज्य पदार्थों का सेवन किया जा सकता है, विशेष कोई नियम नहीं है। प्रसिद्ध योगिनी नारी ने प्राचीनकाल में इस रसायन चूर्ण का प्रकाशन किया था। यह चूर्ण ग्रहणी विकारों को नष्ट करता है एवं जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है। १ पिचु = तोलकं (१ तोले की मात्रा को कहते हैं)।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—शहद एवं काञ्जी से। **उपयोग**—ग्रहणी-विकार, मन्दाग्नि में तथा रसायन कृत है।

३०. मध्यमनायिका चूर्ण (रसेन्द्रचिन्तामणि)

कर्षं गन्धकमर्द्धपारदयुतं कुर्याच्छुभां कज्जलीं
द्व्यक्षांशं त्रिकटोश्च पञ्चलवणात्सार्द्धञ्च कर्षं पृथक्।
सार्द्धाक्षं द्विपलं विचूर्ण्य सकलं शक्राशनान्मिश्रितात्
खादेच्छाणमतोऽनुकाञ्जिकपलं मन्दाग्निसन्दीपनम् ॥८७॥
स्वेच्छाभोजनतो रसायनमिदं घूर्णादिकोपद्रवे।
पेयञ्चात्र तु काञ्जिकं वदति सा नारी महायोगिनी ॥८८॥
हन्याद्वातञ्च पित्तं कफविकृतिमतीसारमद्धा समस्तं
कासं श्वासञ्च शूलं ज्वरमुदररुजो राजयक्ष्माणमुग्रम्।
प्लीहानञ्चामवातं षडपि च गुदजान् कुष्ठरोगं समग्रं
वातास्रं कण्ठरोगानिदमिह कथितं दीपनं जाठराग्नेः ॥८९॥

१. शुद्ध गंधक १२ ग्राम, २. शुद्ध पारद ६ ग्राम, ३. शुण्ठी चूर्ण ८ ग्राम, ४. पीपर चूर्ण ८ ग्राम, ५. मरिचचूर्ण ८ ग्राम, ६. सैन्धव १८ ग्राम, ७. सौवर्चललवण १८ ग्राम, ८. सामुद्रलवण २३ ग्राम, ९. विड्लवण १८ ग्राम, १०. औद्भिल्लवण १८ ग्राम और ११. शुद्ध भाँग चूर्ण ३० ग्राम लें। सर्वप्रथम शुद्ध गंधक एवं शुद्ध पारद को खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। तत्पश्चात् अन्य द्रव्यों को मात्रानुसार लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इस चूर्ण को निर्मित कज्जली में डालकर अच्छी तरह से मिला दें और इसे काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को १-३ ग्राम की मात्रा में ५० मि.ली. काञ्जी के साथ रोगी को सेवन करायें। इस चूर्ण के सेवन से अग्नि प्रदीप्त होती है। इस चूर्ण के सेवन करते समय रोगी को इच्छानुसार भोजन दें। यह रसायन है। इस चूर्ण के सेवन काल में काञ्जी पीना अत्यन्त हितकर है—ऐसा महायोगिनी का कहना है। अनुपान भेद से सेवन करने पर यह चूर्ण वातातिसार, पित्तातिसार, श्लेष्मातिसार एवं सभी प्रकार के वातिक, पैत्तिक तथा श्लैष्मिक रोग एवं विभिन्न प्रकार के अतिसार, श्वास, कास, शूल, ज्वर, उदररोग, भयङ्कर राजयक्ष्मा, प्लीहावृद्धि, आमवात, छः प्रकार के अर्श, सभी प्रकार के कुष्ठ, वातरक्त एवं गले के सभी रोगों को नाश करता है। यह जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है।

मात्रा—१-३ ग्राम। **अनुपान**—काञ्जी एवं दोषानुसार विभिन्न अनुपान से। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी, ज्वरातिसार, उदर रोग, अर्श, राजयक्ष्मा, प्लीहावृद्धि, आमवात, वातरक्त, कुष्ठ आदि में।

३१. बृहन्नायिका चूर्ण (रसेन्द्रचिन्तामणि)

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं रजनीद्वयम्।
भल्लातकं यमानी च हिङ्गु लवणपञ्चकम् ॥९०॥
गृहधूमो वचा कुष्ठं घनमभ्रञ्च गन्धकम्।
क्षारत्रयञ्चाजमोदा पारदो गजपिप्पली ॥९१॥
अमीषां चूर्णकं यावत्तावच्छक्राशनस्य च।
अभ्यर्च्य नायिकां प्रातर्योगिनीं कामरूपिणीम् ॥९२॥
विडालपदमात्रं तु भक्षयेदस्य गुण्डकम्।
मन्दाग्निकासदुर्नामप्लीहपाण्डुचिरज्वरान् ॥९३॥
प्रमेहशोथविष्टम्भसंग्रहग्रहणीं जयेत्।
सर्वातीसारहरणः सर्वशूलनिषूदनः ॥९४॥
आमवातगदोच्छेदी सूतिकाऽऽतङ्कनाशनः।
न च ते व्याधयः सन्ति वातपित्तकफोद्भवाः ॥९५॥
यान्न हन्याददः सिद्धं गुण्डकं नायिकाकृतम्।
वार्यन्नमाषमभ्यङ्गस्नानं पिशितभोजनम् ॥९६॥
काञ्जिकाम्लं सदा पथ्यं दग्धमीनस्तथा दधि।
काष्ठमप्युदरे तस्य भक्षणाद्याति जीर्णताम् ॥९७॥

१. चित्रकमूल, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. आमला, ५. शुण्ठी, ६. मरिच, ७. पिप्पली, ८. वायविडङ्ग, ९. हल्दी, १०. दारुहल्दी, ११. शुद्ध भिलावा, १२. अजवायन, १३. शुद्ध हींग, १४. सैन्धवनमक, १५. सामुद्रनमक, १६. विड्नमक, १७. सौवर्चलनमक, १८. औद्भिद्लवण, १९. गृहधूम, २०. वचा, २१. कूठ, २२. नागरमोथा, २३. अभ्रकभस्म, २४. शुद्ध गंधक, २५. सर्जिकाक्षार, २६. यवक्षार, २७. शुद्ध टंकण, २८. अजमोदा, २९. शुद्ध पारद तथा ३०. गजपिप्पली—प्रत्येक द्रव्य १२ ग्राम एवं शुद्ध भाँग ३६० ग्राम लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। कज्जली बन जाने के पश्चात् सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इन सभी द्रव्यों के बराबर शुद्ध भाँग चूर्ण लेकर इन सबको अच्छी तरह से कज्जली में मिला दें और काचपात्र में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

संग्रहीत करें। प्रातःकाल नित्य क्रिया-कर्म से निवृत्त होकर इच्छानुसार रूप धारण करने वाली योगिनी नायिका की अभ्यर्चना करके १-३ ग्राम इस चूर्ण को शहद के साथ सेवन करें। इस चूर्ण के सेवन से मन्दाग्नि, कास, अर्श, प्लीहावृद्धि, पाण्डुरोग, जीर्ण ज्वर, प्रमेह, शोथ, विष्टम्भ, संग्रहणीरोग, सभी प्रकार के अतिसार, सभी प्रकार के शूल, आमवात एवं समस्त सूतिका रोग शान्त होते हैं। वात-पित्त-कफ से उत्पन्न कोई भी ऐसी व्याधि नहीं है जो इस नायिकाकृत सिद्ध चूर्ण से नष्ट न हो। इस चूर्ण का सेवन करते समय पथ्य में ठण्डा जल, जलयुक्त भात, उड़द की दाल, अभ्यङ्ग, स्नान, मांस, मांसरस के साथ भात, काञ्जी, मसाला आदि से सिद्ध मछली और दही ग्रहण करें। इस चूर्ण के सेवन से पेट में खाया हुआ काष्ठ भी पच जाता है।

मात्रा—१-३ ग्राम। **अनुपान**—मधु, काञ्जी एवं जल के साथ। **उपयोग**—जीर्णज्वर, प्लीहावृद्धि, ग्रहणीदोष, अतिसार, अर्श, शूल, आमवात, संग्रहणी आदि में।

३२. ग्रहणीशार्दूल चूर्ण

रसगन्धकलौहाभ्रं हिङ्गु लवणपञ्चकम्।
हरिद्रे कुष्ठकञ्चैव वचामुस्तविडङ्गकम् ॥९८॥
त्रिकटु त्रिफला चित्रमजमोदा यमानिका।
गजोपकुल्या क्षाराणि तथैव गृहधूमकम् ॥९९॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं विजयाचूर्णकं समम्।
माषद्वयमिदं चूर्णं शालितण्डुलवारिणा ॥१००॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय ग्रहणीगदनाशनम्।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं वडवानलसन्निभम् ॥१०१॥
सर्वातीसारशमनं तृष्णाज्वरविनाशनम्।
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ॥१०२॥
आमातिसारमखिलं विशेषाच्छ्वयथुं जयेत्।
असाध्यां ग्रहणीं हन्ति पाण्डुप्लीहचिरज्वरान् ॥
ग्रहणीशार्दूलचूर्णं सर्वरोगकुलान्तकम् ॥१०३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गंधक, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रकभस्म, ५. शुद्ध हींग, ६. सैन्धवनमक, ७. सामुद्रनमक, ८. विड्नमक, ९. कालालवण, १०. औद्भिद्नमक, ११. हल्दी, १२. दारुहल्दी, १३. कूठ, १४. वचा, १५. नागरमोथा, १६. वायविडङ्ग, १७. शुण्ठी, १८. मरिच, १९. पिप्पली, २०. हरीतकी, २१. बहेड़ा, २२. आमला, २३. चित्रकमूल, २४. अजमोदा, २५. अजवायन, २६. गजपिप्पली, २७. यवक्षार, २८. सर्जिकाक्षार, २९. शुद्ध टंकण तथा ३०. गृहधूम—प्रत्येक द्रव्य १२ ग्राम और ३१. शुद्ध भाँग ३६० ग्राम लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। ततः अन्य सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर उस कज्जली में मिला दें तथा इसे काचपात्र में संग्रहीत करें। २ ग्राम चूर्ण को प्रातःकाल शाली तण्डुलोदक के साथ रोगी को सेवन करायें। इसके सेवन से ग्रहणी रोग नष्ट होता है एवं वडवानल के समान अग्नि प्रदीप्त होती है। इसके अलावा सभी प्रकार के अतिसार, पिपासा, ज्वर, विशेषतः पित्तजज्वर, पक्वातिसार, आमातिसार, विभिन्न वर्ण एवं वेदनायुक्त अतिसार तथा सभी प्रकार के शोथ, असाध्य ग्रहणी, पाण्डु, प्लीहावृद्धि, जीर्णज्वर आदि को शान्त करता है। यह ग्रहणीशार्दूल चूर्ण अनुपान भेद से सभी रोगों को शान्त करता है।

मात्रा—२ ग्राम। **अनुपान**—शाली तण्डुलोदक एवं अन्य दोषानुसार अनुपान। **उपयोग**—सभी प्रकार के अतिसार, शोथ, ग्रहणी, जीर्णज्वर, प्लीहावृद्धि, पिपासा, ज्वर आदि में।

३३. जातीफलादि चूर्ण

जातीफलं विडङ्गानि चित्रकं तगरं तथा।
तालीशं चन्दनं शुण्ठी लवङ्गञ्चोपकुञ्चिका ॥१०४॥
कर्पूरञ्चाभया धात्री मरिचं पिप्पली तुगा।
एषामक्षसमा भागाश्चातुर्जातकसंयुताः ॥१०५॥
पलानि सप्त भङ्गायाः सिता सर्वसमा तथा।
चूर्णमेतत्क्षयेत्कासं श्वासं च ग्रहणीगदम् ॥१०६॥
अरोचकं प्रतिश्यायं यथा चानलमन्दताम्।
एतान् रोगान्निहन्त्येव वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥१०७॥

१. जायफल, २. वायविडङ्ग, ३. चित्रकमूल, ४. तगर, ५. तालीशपत्र, ६. सफेद चन्दन, ७. सोंठ, ८. लवङ्ग, ९. जीरा, १०. कपूर, ११. हरीतकी, १२. आमला, १३. मरिच, १४. पिप्पली, १५. वंशलोचन, १६. दालचीनी, १७. छोटी इलायची, १८. तेजपत्ता और १९. नागकेशर--प्रत्येक १२ ग्राम; २०. शुद्ध भाँग ३३० ग्राम और २१. चीनी ५६० ग्राम—इन्हें सूक्ष्म चूर्ण कर लें। तत्पश्चात् उस चूर्ण में ७ पल भाँग का चूर्ण एवं ५६० ग्राम चीनी पीसकर मिला दें। इस चूर्ण को काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को १-२ ग्राम की मात्रा में रोगी को सेवन करायें। यह चूर्ण विभिन्न अनुपानों के साथ सेवन करने पर क्षय, कास, श्वास, प्रतिश्याय, ग्रहणीविकार, अरुचि तथा अग्निमान्द्य—इन सब रोगों को उसी प्रकार नष्ट करता है जैसे इन्द्र का वज्र वृक्षों को नष्ट करता है।

मात्रा—१-२ ग्राम। **अनुपान**—दोषानुसार विविध। **उपयोग**—क्षय, श्वास, कास, ग्रहणी, अग्निमान्द्य, प्रतिश्याय, अरुचि आदि में।

३४. जीरकादि चूर्ण

जीरकं टङ्गणं मुस्तं पाठा बिल्वं सधान्यकम्।
बालकं शतपुष्पा च दाडिमं कुटजं तथा ॥१०८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

समङ्गा धातकीपुष्पं व्योषञ्चैव त्रिजातकम्।
मोचरसः कलिङ्गश्च व्योम गन्धकपारदौ ॥१०९॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावज्जातीफलानि च।
एतद् ग्राशितमात्रेण ग्रहणीं दुस्तरां जयेत् ॥११०॥
अतीसारं निहन्त्याशु सामं नानाविधं तथा।
कामलां पाण्डुरोगञ्च मन्दाग्निञ्च विशेषतः ॥१११॥
जीरकाद्यमिदं चूर्णमगस्त्येन प्रकाशितम् ॥११२॥

१. सफेद जीरा, २. शुद्ध टङ्कण, ३. नागरमोथा, ४. पाठा, ५. बिल्वफलमज्जा, ६. धनियाँ, ७. सुगन्धबाला, ८. सौंफ, ९. अनारदाना, १०. कुटजछाल, ११. मञ्जिष्ठा, १२. धातकीपुष्प, १३. शुण्ठी, १४. मरिच, १५. पिप्पली, १६. दालचीनी, १७. छोटी इलायची, १८. तेजपत्ता, १९. मोचरस, २०. इन्द्रयव, २१. अभ्रकभस्म, २२. शुद्ध गंधक, २३. शुद्ध पारद—प्रत्येक १०-१० ग्राम लें तथा २४. जायफल २३० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गंधक समभाग में लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। सभी द्रव्यों के मिलित सूक्ष्म चूर्ण करें। इन सभी द्रव्यों के चूर्ण को निर्मित कज्जली में भलीभाँति मिला दें। १ से ३ ग्राम की मात्रा में यह चूर्ण दोषानुसार अनुपानों के साथ रोगी को सेवन करायें। इसका सेवन करने से कृच्छ्रसाध्य ग्रहणीदोष, आमातिसार, अनेक रंग के मलों से युक्त अतिसार, कामला, पाण्डु, अग्निमान्द्य आदि दोष शान्त होते हैं। इस जीरकाद्य चूर्ण को अगस्त्य मुनि ने सर्वप्रथम कहा है।

मात्रा—१-३ ग्राम। **अनुपान**—दोषानुसार। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, आमातिसार, पाण्डु, कामला आदि में।

३५. मार्कण्डेय चूर्ण

शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च हिङ्गुलं टङ्कणं तथा।
व्योषं जातीफलञ्चैव लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥११३॥
एलाबीजं चित्रकञ्च मुस्तकं गजपिप्पली।
नागरं सजलञ्चाभ्रं धातक्यतिविषा तथा ॥११४॥
शिग्रुजं शाल्मलञ्चैवमहिफेनं पलांशकम्।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥११५॥
खादेदस्मात्प्रतिदिनं माषकं सितया सह।
संग्रहग्रहणीं हन्ति मन्दाग्निञ्च विनाशयेत् ॥११६॥
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलपुष्टिं करोत्यपि।
मार्कण्डेयमिदं चूर्णं महादेवेन निर्मितम् ॥११७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गंधक, ३. शुद्ध हिङ्गुल, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. शुण्ठी, ६. मरिच, ७. पिप्पली, ८. जायफल, ९. लौंग, १०. तेजपत्ता, ११. छोटी इलायची, १२. चित्रकमूल, १३. नागरमोथा, १४. गजपिप्पली, १५. शुण्ठी, १६. सुगन्धबाला, १७. अभ्रकभस्म, १८. धातकीपुष्प, १९. अतीस, २०. सहिजनबीज, २१. मोचरस और २२. शुद्ध अफीम—सभी द्रव्य समभाग अर्थात् १-१ पल (४६-४६ ग्राम) लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली का निर्माण करें तथा हिङ्गुल कज्जली में मिला दें। अन्य द्रव्यों को मात्रानुसार लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें एवं सभी को एक साथ कज्जली में मिला दें। इस चूर्ण को १ ग्राम की मात्रा में चीनी के साथ प्रतिदिन सेवन करें। इससे संग्रहणी एवं मन्दाग्नि शान्त होती है। इसके सेवन से धातुवृद्धि, आयुवृद्धि एवं बल की वृद्धि होती है। महादेवजी ने सर्वप्रथम इस मार्कण्डेय चूर्ण को कहा है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—चीनी। **उपयोग**—संग्रहणी, अग्निमान्द्य, धातुक्षय, बलक्षय आदि में।

३६. तालीशादि गुटिका-चूर्ण

तालीसचव्ये मरिचं पलार्द्धांशानि नागरात्।
अर्ध्यर्द्धं पिप्पलीमूलात्पिप्पल्याश्च पलं पलम् ॥११८॥
कर्षन्तु नागपुष्पस्य त्रुटी कर्षार्द्धमेव च।
त्वक्पत्रोशीरकर्षस्तु चूर्णात्त्रिगुणितो गुडः ॥११९॥
ततोऽक्षमात्रा गुटिका मद्ययूषपयोरसैः।
पीताऽम्भसा भक्षिता वा सर्वान् हन्याद् गुदोद्भवान् ॥१२०॥
शूलं पानात्ययं छर्दिं प्रमेहं विषमज्वरान्।
गुल्मं पाण्डुरुजं शोफं हृद्रोगं ग्रहणीगदान् ॥१२१॥
कासहिक्काऽरुचिश्वासकृम्यतीसारकामलाः।
मन्दाग्नितां मूत्रकृच्छ्रं हन्याच्छोकं च सा भृशम् ॥१२२॥
एतदेव भवेच्चूर्णं सिताचूर्णं चतुर्गुणम्।
सपित्तेषु विकारेषु विशेषेणामृतोपमम् ॥१२३॥
सा चैव गुटिका पथ्या फलत्रयविशेषिता।
शोफार्शोग्रहणीरोगपाण्डुशूलापहारिणी ॥१२४॥

१. तालीशपत्र २३ ग्राम, २. चव्य २३ ग्राम, ३. मरिच २३ ग्राम, ४. शुण्ठी ७० ग्राम, ५. पीपर ४६ ग्राम, ६. पिपरामूल ४६ ग्राम, ७. नागकेशर १२ ग्राम, ८. छोटी इलायची ६ ग्राम, ९. दालचीनी १२ ग्राम, १०. तेजपात १२ ग्राम, ११. खस १२ ग्राम तथा १२. गुड़ ८५५ ग्राम—उपर्युक्त ११ द्रव्यों को यथोक्त मात्रा में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। उसमें पुराना गुड़ की कड़ी चासनी कर १२-१२ ग्राम की मात्रा में गुटिका बनाकर अच्छी तरह सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। आधुनिक मात्रा तक ३ ग्राम की वटी बनावें। प्रतिदिन १ से २ वटी मद्य, यूष, दूध या जल के साथ सेवन करने से अर्श, शूल, पानात्यय, वमन, प्रमेह, विषमज्वर, गुल्म, पाण्डु, शोथ, हृद्रोग, ग्रहणी, कास, हिक्का, अरुचि, श्वास, कृमि, अतिसार, कामला, मन्दाग्नि, मूत्रकृच्छ्र तथा शोकरोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। इस योग में गुड़ के स्थान पर चार गुना चीनी को पीसकर मिलाने से इसका नाम 'तालीशादि चूर्ण' हो जाता है। इसका उपयोग पित्त विकार रोग में करते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—३ ग्राम। **अनुपान**—मद्य, यूष, दूध एवं जल से। **गन्ध**—इलायची जैसी। **वर्ण**—गुड़ाभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, अर्श, अरुचि एवं मन्दाग्नि में।

३७. वार्त्ताकुगुटिका (चक्रदत्त)

चतुष्पलं स्नुहीकाण्डात् त्रिपलं लवणत्रयात्।
वार्त्ताकुकुडवश्चार्कादष्टौ द्वे चित्रकात्पले ॥१२५॥
दग्ध्वा रसेन वार्त्ताकीगुटिका भोजनोत्तराः।
भक्तं भुक्तं पचन्त्याशु कासश्वासार्शसां हिताः।
विसूचिकाप्रतिश्यायहृद्रोगघ्नाश्च ता मताः ॥१२६॥

१. स्नुहीकाण्ड १८७ ग्राम, २. सैन्धवलवण ४६ ग्राम, ३. सौवर्चललवण ४६ ग्राम, ४. विड्लवण ४६ ग्राम, ५. बैगनपञ्चाङ्ग १८७ ग्राम, ६. अर्कमूलत्वक् ३७५ ग्राम एवं ७. चित्रकमूल ९३ ग्राम—सभी द्रव्यों को लिखित मात्रा के अनुसार लेकर मिट्टी की हाँडी में भर कर मुख बन्द कर कुक्कुट पुट में भस्म बना लें। स्वांगशीत होने पर भस्म को मर्दन कर कपड़छन कर तथा बैंगन के ताजे फल को आग में पकाकर उसके स्वरस से भावना देकर मर्दन करें तथा ५०० मि.ग्रा. की वटी बना लें। भोजन करने के बाद इस वटी को गरम पानी के साथ सेवन करायें। इसके सेवन से खाया हुआ भात आदि अच्छी तरह पच जाता है। कास, श्वास और अर्श के रोगी में यह लाभदायक है। विसूचिका, प्रतिश्याय, हृदयरोग इसके सेवन से नष्ट होते हैं।

३८. मुण्ड्यादि गुटिका

मुण्डी शतावरी मुस्ता वानरी दुग्धिकाऽमृता।
यष्टिकं सैन्धवं तुल्यं सूक्ष्मचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥१२७॥
चूर्णस्य द्विगुणा योज्या विजया मृदुभर्जिता।
घृतस्निग्धे पचेद्भाण्डे दुग्धं दशगुणं गवाम् ॥१२८॥
यावत्पिण्डत्वमापन्ना तावन्मृद्वग्निना पचेत्।
तुल्यं तु तस्मिन् सक्षौद्रं सम्मिश्र्य गुटिकाः शुभाः ॥
कर्षोन्मिता विदध्याच्च तास्ततो ग्रहणीगदे।
पित्तवाते श्लेष्मपित्ते सम्यक् पित्ते च योजयेत् ॥१३०॥

१. मुण्डीचूर्ण, २. शतावरीचूर्ण, ३. नागरमोथाचूर्ण, ४. केवाँचबीजचूर्ण, ५. दुग्धिकाघासचूर्ण, ६. गुडूचीचूर्ण, ७. मुलेठीचूर्ण, ८. सैन्धवलवणचूर्ण—प्रत्येक १०-१० ग्राम; ९. घृतभर्जित भाँगचूर्ण १६० ग्राम, १०. गोदूध ३.२०० ली. तथा ११. मधु १ कि.ग्रा.—उपर्युक्त द्रव्यों के चूर्ण को १० गुना गोदूध (३.२०० ली.) में एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में मन्दाग्नि से पाक करें। जब दूध सूख कर कठिन हो जाय तो उसमें समभाग शहद मिला दें और १२ ग्रा. का मोदक बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। १२ ग्राम की मात्रा में इस औषधि को सेवन करें। इसके सेवन से पित्तवात, कफवात तथा पित्त के प्रकोप से उत्पन्न ग्रहणी दोष नष्ट होता है।

मात्रा—१२ ग्राम। **अनुपान**—जल से। **उपयोग**—विविध ग्रहणी-विकार में।

३९. कञ्चटावलेह

प्रस्थे पचेत्कञ्चटतालमूल्योः
सिताऽर्द्धप्रस्थं शृतपादशेषे।
ततोऽक्षमात्राणि समानि दद्या-
च्चूर्णानि धीरो विधिवत्तदेषाम् ॥१३१॥
समङ्गा धातकी पाठा बिल्वं मुस्ताऽथ पिप्पली।
शक्रकातिविषाक्षारसौवर्चलरसाञ्जनम् ॥१३२॥
शाल्मलीवेष्टकञ्चैव सर्वं सिद्धे निधापयेत्।
शीते च मधुनश्चात्र कुडवार्द्धं विनिक्षिपेत् ॥१३३॥
अस्य मात्रां प्रयुञ्जीत यथाकालं प्रमाणतः।
सर्वातिसारं शमयेत् संग्रहग्रहणीं तथा ॥१३४॥
अम्लपित्तकृतं दोषमुदरं सर्वरूपिणम्।
विकारान् कोष्ठजान् हन्ति हन्याच्छूलमरोचकम् ॥१३५॥

विधि—१. जलपिप्पली ३७५ ग्राम, २. श्वेतमुसली ३७५ ग्राम, ३. चीनी ३७५ ग्राम, ४. मञ्जिष्ठा, ५. धातकीपुष्प, ६. पाठा, ७. बिल्वफलमज्जा, ८. नागरमोथा, ९. पिप्पली, १०. इन्द्रयव, ११. अतीस, १२. यवक्षार, १३. कालानमक, १४. रसाञ्जन और १५. मोचरस—सभी द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम जलपिप्पली एवं तालमूली को मिश्रित १ प्रस्थ लेकर ८ प्रस्थ (६ लीटर) जल के साथ क्वाथ करें। चतुर्थांश शेष रहने पर $\frac{१}{२}$ प्रस्थ (३७५ ग्राम) चीनी डालकर दो तार की चाशनी बनाकर आसन्न पाकावस्था में अन्य द्रव्यों के समभाग में लिये चूर्ण को मिला दें। शीतल होने पर $\frac{१}{२}$ कुडव (९३ ग्राम) शहद मिला दें। तत्पश्चात् काचपात्र में भरकर रख दें। इस कञ्चटावलेह को (५-१२ ग्राम) की मात्रा में शीतल जल के साथ सेवन करें। इसका सेवन करने से सभी प्रकार के अतिसार, संग्रहणी, अम्लपित्त, उदररोग, कोष्ठविकार, शूल, अरुचि आदि नष्ट हो जाते हैं।

४०. दशमूल गुड़

दशमूलीपलशतं जलद्रोणे विपाचयेत्।
तेन पादावशेषेण पचेद् गुडतुलां भिषक् ॥१३६॥
आर्द्रकस्वरसप्रस्थं दत्त्वा मृद्वग्निना ततः।
लेहीभूते प्रदातव्यं चूर्णमेषां पलं पलम् ॥१३७॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम्।
हिङ्गु भल्लातकञ्चैव विडङ्गमजमोदकम् ॥१३८॥
द्वौ क्षारौ चित्रकं चव्यं पञ्चैव लवणानि च।
दत्त्वा सुमथितं कृत्वा स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥१३९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कोलत्रयं ततः खादेत् प्रातः प्रातर्विचक्षणः।
हन्ति मन्दानलं शोथमामजां ग्रहणीमपि ॥१४०॥
आमं सर्वभवं शूलं प्लीहानमुदरं तथा।
मन्दानलभवं रोगं विष्टम्भं गुदजानि च।
ज्वरं चिरन्तनं हन्ति तमिस्रां भानुमानिव ॥१४१॥

१. बेलछाल, २. अग्निमन्थछाल, ३. श्योनाकछाल, ४. पाटला, ५. गम्भारीछाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. बृहती, ९. कण्टकारी, १०. गोखरु—प्रत्येक ४७० ग्राम; ११. गुड़ ४.६७० कि.ग्रा., १२. आर्द्रक स्वरस १ प्रस्थ (७५० मि.ली.), १३. पिप्पली, १४. पिप्पलीमूल, १५. मरिच, १६. शुण्ठी, १७. शुद्ध हींग, १८. शुद्ध भिलावा, १९. वायविडङ्ग, २०. अजमोदा, २१. सर्जिकाक्षार, २२. यवक्षार, २३. चित्रकमूल, २४. चव्य, २५. सैन्धवनमक, २६. सामुद्रनमक, २७. सौवर्चलनमक, २८. विड्लवण तथा २९. औद्भिद लवण—सभी द्रव्य समभाग (१-१ पल = ४६-४६ ग्राम) में लें। दशमूल के सभी द्रव्यों को यवकुट करें और १ द्रोण (१२$\frac{1}{2}$ ली.) जल में क्वाथ करें। चतुर्थांश शेष रहने पर उसे छानकर स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में १ तुला गुड़ मिला दें तथा १ प्रस्थ (७५० मि.ग्रा.) आर्द्रक का स्वरस डालकर मन्द अग्नि पर लेह होने तक पाक करें तथा शेष अन्य द्रव्यों को प्रत्येक ४६-४६ ग्राम लेकर चूर्ण करें एवं निर्मित लेह में मिला दें। चम्मच से अच्छी तरह चलावें। तत्पश्चात् काचपात्र में भर कर रख दें। इस अवलेह को ३ कोल = ९ ग्राम की मात्रा में ठण्डे पानी के साथ प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करना चाहिए। इस अवलेह के सेवन से अग्निमान्द्य, शोथ, आमदोष से उत्पन्न ग्रहणीदोष, आमज शूल और सभी प्रकार के शूल, प्लीहावृद्धि, उदररोग, मन्दाग्नि द्वारा उत्पन्न कब्जियत, सभी प्रकार के अर्श एवं पुराण ज्वर उसी प्रकार नष्ट होते हैं जिस प्रकार सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है।

मात्रा—९ ग्राम। **उपयोग**—ग्रहणीरोग, मन्दाग्नि, शूल, उदर एवं प्लीह रोग में। **अनुपान**—जल से।

४१. कल्याणगुड़

प्रस्थत्रयेणामलकीरसस्य
शुद्धस्य दत्त्वाऽर्धतुलां गुडस्य।
चूर्णीकृतैर्ग्रन्थिकजीरचव्य-
व्योषेभकृष्णाहवुषाऽजमोदैः ॥१४२॥
विडङ्गसिन्धुत्रिफलायमानी-
पाठाऽग्निधान्यैश्च पलप्रमाणैः।
दत्त्वा त्रिवृच्चूर्णपलानि चाष्टा-
वष्टौ च तैलस्य पचेद्यथावत् ॥१४३॥
तं भक्षयेदक्षफलप्रमाणं
यथेष्टचेष्टं त्रिसुगन्धियुक्तम्।
अनेन सर्वे ग्रहणीविकाराः
सश्वासकासस्वरभेदशोथाः ॥१४४॥
शाम्यन्ति चायञ्चिरमन्तराग्ने-
र्हतस्य पुंस्त्वस्य च वृद्धिहेतुः।
स्त्रीणाञ्च वन्ध्यामयनाशनोऽयं
कल्याणको नाम गुडः प्रदिष्टः ॥१४५॥
त्रिवृतां भर्जयन्त्यत्र मनाक् तैले चिकित्सकाः।
तत्रोक्तमानसाधर्म्यात् त्रिसुगन्धिपलं पथक् ॥१४६॥

१. आमले का स्वरस या क्वाथ ३ प्रस्थ (२.२५० ली.), २. पुराना गुड़ २.३५० ग्राम, ३. पिप्पलीमूल, ४. जीरा, ५. चव्य, ६. शुण्ठी, ७. मरिच, ८. पिप्पली, ९. गजपिप्पली, १०. हपुषा, ११. अजमोदा, १२. वायविडङ्ग, १३. सैन्धवनमक, १४. हरीतकी, १५. बहेड़ा, १६. आमला, १७. अजवायन, १८. पाठा, १९. चित्रकमूल, २०. धनियाँ—प्रत्येक ४६-४६ ग्राम; २१. त्रिवृत् ३७५ ग्राम, २२. तिलतैल ३७५ मि.ली., २३. दालचीनी, २४. छोटी इलायची तथा २५. तेजपत्ता—सभी ४६ ग्राम लें। सर्वप्रथम आमले का स्वरस या क्वाथ उपर्युक्त मात्रा में पुराना गुड़ घोल दें तथा अग्नि पर पाक करें। जब यह लेह के समान हो जाय अर्थात् आसन्न पाकावस्था होने पर पिप्पलीमूलादि सभी द्रव्यों तथा निशोथ चूर्ण का पिसा हुआ सूक्ष्म चूर्ण एवं तिलतैल उसमें मिला दें। यथाविधि गुड़ पाक करके ठण्डा होने पर दालचीनी आदि द्रव्यों को भी उसमें मिलायें। अच्छी प्रकार से मिल जाने पर उसे काचपात्र में रख लें। इस कल्याण गुड़ का १-१ कोल की ५ ग्राम मात्रा में लगातार सेवन करने से सभी प्रकार के ग्रहणी रोग, श्वास, कास, स्वरभेद एवं शोथ रोग नष्ट हो जाते हैं। विनष्ट हुई पाचकाग्नि एवं पुरुषत्व की वृद्धि होती है। यह कल्याण गुड़ स्त्रियों के बन्ध्या रोग का भी शमन करता है।

मात्रा—५-५ ग्राम। **उपयोग**—श्वास, कास, ग्रहणी, स्वरभेद, शोथ, अग्निमान्द्य, बन्ध्यत्व आदि में।

४२. कूष्माण्डगुड़

कूष्माण्डकानां रूढानां सुस्विन्नं निष्कुलत्वचाम्।
सर्पिःप्रस्थे पलशतं ताम्रपात्रे शनैः पचेत् ॥१४७॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकं हस्तिपिप्पली।
धान्यकानि विडङ्गानि यमानि मरिचानि च ॥१४८॥
त्रिफला चाजमोदा च कलिङ्गाजाजिसैन्धवम्।
एकैकस्य पलं चैव त्रिवृदष्टपलं भवेत् ॥१४९॥
तैलस्य च पलान्यष्टौ गुडपञ्चाशदेव तु।
प्रस्थैस्त्रिभिः समेतन्तु रसे ह्यामलकस्य च ॥१५०॥
यदा दर्वीप्रलेपः स्यात्तदैनमवतारयेत्।
यथाशक्ति गुडान्कुर्यात् कर्षकर्षार्द्धमानकान् ॥१५१॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अनेन विधिना चैव प्रयुक्तस्तु जयेदिमान्।
प्रसह्य ग्रहणीरोगान् कुष्ठान्यर्शोभगन्दरान् ॥१५२॥
ज्वरमानाहृद्रोगगुल्मोदरविसूचिकाः ।
कामलां पाण्डुरोगांश्च प्रमेहांश्चैव विंशतिम् ॥१५३॥
वातशोणितवीसर्पान् दद्रुचर्महलीमकान्।
कफपित्तानिलान् सर्वान् प्ररूढांश्च व्यपोहति ॥१५४॥
व्याधिक्षीणा वयःक्षीणाः स्त्रीषु क्षीणाश्च ये नराः।
तेषां वृष्यश्च बल्यश्च वयःस्थापन एव च ॥१५५॥
गुडकूष्माण्डको नाम वन्ध्यानां गर्भदः परः ॥१५६॥

१. कूष्माण्ड (श्वेत कोहड़ा) १०० पल (४६७० ग्राम), २. गोघृत ६४ तोला (७५० ग्राम), ३. तिलतैल ३२ तोला (३७५ ग्राम), ४. आमलास्वरस ३ प्रस्थ (२२५० मि.ली.), ५. गुड़ ५० पल (२३३५ ग्राम), ६. पिप्पली, ७. पिप्पलीमूल, ८. चित्रकमूल, ९. गजपिप्पली, १०. धनियाँ, ११. वायविडङ्ग, १२. अजवायन, १३. मरिच, १४. हरीतकी, १५. बहेड़ा, १६. आमला, १७. अजमोदा, १८. इन्द्रयव, १९. जीरा, २०. सैन्धवनमक—प्रत्येक द्रव्य १-१ पल (४६-४६ ग्राम) तथा २१. त्रिवृत् ८ पल (३७५ ग्राम)—सर्वप्रथम अच्छी प्रकार से पके हुए सफेद कोहड़े को लेकर छील लें, काटकर बीज को अलग कर दें। ऐसे छिले निर्बीज पेठा ४.६७० कि.ग्रा. लें। ततः कद्दूकस पर घिसकर मृत्पात्र में थोड़ा पानी डाल कर उबालें। उबल जाने पर आग पर से उतार लें। ठण्डा होने पर टुकड़ों को हाथ से दबाकर पानी निचोड़ लें एवं धूप में कुछ सुखा लें। ततः स्टेनलेस स्टील के पात्र में घी और तिलतैल को डालकर आग पर भूने। भूनते-भूनते जब टुकड़े लाल रंग के हो जायें एवं उसमें से सुगन्ध आने लगे तब आमले के स्वरस में गुड़ घोलकर छननी से छान लें। ततः भर्जित कूष्माण्ड मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब गुड़ की चासनी हो जाय तब पिप्पली से लेकर निशोथपर्यन्त सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर उसी गुड़-पाक में मिला दें। जब कलछी के अग्रभाग में अवलेह चिपकने लगे तब आँच पर से उतार लें। ठण्डा होने पर ६-१२ ग्राम की वटी बना लें। यदि वटी न बन पाये तो ऐसे ही अवलेह को काचपात्र में भरकर रख दें। इस प्रकार बतायी गयी विधि द्वारा बनाये गये कूष्माण्डकल्याणगुड़ का प्रतिदिन ठण्डे पानी के साथ सेवन करे। इसके सेवन से असाध्य ग्रहणी-विकार, कुष्ठ, अर्श, भगन्दर, ज्वर, आनाह, हृदय के रोग, गुल्म, उदररोग, विसूचिका, कामला, पाण्डु, प्रमेह, वातरक्त, विसर्प, दद्रु, चर्मरोग, हलीमक एवं वात, पित्त तथा कफ से उत्पन्न दोष शान्त होते हैं। जो व्यक्ति अनेक प्रकार के जीर्ण रोगों से दुर्बल हो गया हो, वृद्धावस्था के कारण बल क्षीण हो गया हो या जो मनुष्य स्त्री-प्रसङ्ग करने से क्षीण हो गया हो उनके लिए यह कूष्माण्ड गुड़ वृष्य, बलकारक, वयःस्थापक है; बन्ध्या स्त्रियों के रजोदोष, गर्भाशय दोष एवं प्रदरादि दोषों को नष्ट करके गर्भ स्थापित करता है।

४३. श्रीकामेश्वर मोदक

सम्यङ्गारितमभ्रकं कटफलं कुष्ठाश्वगन्धाऽमृता
मेथी मोचरसो विदारिमुषलीगोक्षूरकञ्चेक्षुरः।
रम्भाकन्दशतावरी त्वजमुदा मांसी तिला धान्यकं
हैमी नागबला कचूरमदनं जातीफलं सैन्धवम् ॥१५७॥
भार्गी कर्कटशृङ्गकं त्रिकटुकं जीरद्वयं चित्रकं
चातुर्जातपुनर्नवागजकणाद्राक्षाशटीबालकम् ।
शाल्मल्यङ्घ्रिफलत्रिकं कपिभवं बीजं समं चूर्णये-
च्चूर्णांशाविजयासिताद्विगुणिता मध्वाज्ययोः पिण्डितम् ॥
कर्षांशा गुटिकाऽर्द्धकर्षमथवा सेव्या सदा कामिभिः
सेव्यं क्षीरसितं सुवीर्यकरणं स्तम्भेऽप्ययं कामिनाम्।
वामावश्यकरः सुखातिसुखदो बह्वङ्गनाद्रावणः
क्षीणे पुष्टिकरः क्षतक्षयहरो हन्याच्च सर्वामयान् ॥१५९॥
कासश्वासमहातिसारशमनः कामाग्निसन्दीपनो
दुर्णामग्रहणीप्रमेहनिवहश्लेष्मातिरेकप्रणुत् ।
नित्यानन्दकरो विशेषकवितावाचां विलासोद्भवं
धत्ते सर्वगुणं महास्थिरमतिर्बालो नितान्तोत्सवः ॥१६०॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं कामेश्वरो वत्सरात्
सर्वेषां हितकारिणा निगदितः श्रीनित्यनाथेन सः।
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गमे
सिंहोऽयं समदृष्टिप्रत्ययकरो भूपैः सदा सेव्यताम् ॥१६१॥

१. अभ्रकभस्म, २. कायफल, ३. कूठ, ४. अश्वगन्धा, ५. गुडूची, ६. मेथी, ७. मोचरस, ८. विदारीकन्द, ९. मुसलीकन्द, १०. गोखरु, ११. तालमखाना, १२. केले का मूल, १३. शतावरी, १४. अजमोदा, १५. जटामांसी, १६. कालातिल, १७. धनियाँ, १८. दुग्धिकामूल, १९. नागबलामूल, २०. कचूर, २१. मदनफल, २२. जायफल, २३. सैन्धवनमक, २४. भार्ङ्गी, २५. काकड़ासिंगी, २६. शुण्ठी, २७. मरिच, २८. पिप्पली, २९. सफेद जीरा, ३०. स्याहजीरा, ३१. चित्रकमूल, ३२. दालचीनी, ३३. छोटी इलायची, ३४. तेजपत्ता, ३५. नागकेशर, ३६. पुनर्नवामूल, ३७. गजपीपर, ३८. द्राक्षा, ३९. कचूर, ४०. सुगन्धबाला, ४१. सेमरमुशली, ४२. हरीतकी, ४३. बहेड़ा, ४४. आमला, ४५. केवाँचबीज, ४६. शुद्ध भाँग २२५, ४७. चीनी १३५० ग्राम, ४८. मधु ३०० ग्राम तथा ४९. घृत ३०० ग्राम—अभ्रकभस्म से भाँग तक के सभी ४५ द्रव्यों को १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम सभी द्रव्यों का चूर्ण करें। तत्पश्चात् चीनी, शहद, घी आदि को एक साथ मिलायें। अच्छी तरह से मिल जाने पर ५-५ या १०-१०

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम का मोदक बनाकर काचपात्र में रख दें। इस कामेश्वर मोदक की १-१ मोदक प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करें तथा अनुपान-स्वरूप चीनी मिश्रित दुग्ध का पान करें। यह मोदक कामी पुरुषों की कामशक्ति एवं वीर्य की वृद्धि करता है तथा स्तम्भन शक्ति की वृद्धि करने वाला होने से स्त्रियों को वश में करता है। इस मोदक को सेवन करने वाला व्यक्ति अनेक स्त्रियों के साथ सम्भोग कर द्रवित करता है। यह क्षीणावस्था में धातुओं की वृद्धि करके शरीर को पुष्ट करता है, क्षत अर्थात् उरःक्षतादि, क्षय (धातुक्षय) एवं सभी रोगों का नाश करता है। अनुपान-भेद से यह मोदक कास, श्वास, भयङ्कर अतिसार, अर्श, ग्रहणी, बीसों प्रमेह एवं कफ की वृद्धि को नष्ट करता है तथा कामाग्नि को दीप्त करता है। हमेशा इन्द्रियों को स्वच्छ आनन्द देने वाला है। इसके सेवन से एक विशेष प्रकार की शृङ्गारिक कविता पढ़ने की बुद्धि उत्पन्न होती है एवं बालक स्थिर बुद्धि तथा अत्यन्त उत्साही होता है। एक साल तक लगातार सेवन करने से यह कामेश्वर मोदक अकालमृत्यु एवं पलित रोग का विनाश करता है। सभी प्राणियों के हित की इच्छा करने वाले श्रीनित्यनाथ नामक आचार्य ने इसको सबसे पहले बताया था। यह मोदक वृद्धों को प्रौढ़ा स्त्रियों के साथ सम्भोग करने की शक्ति प्रदान करता है। यह औषधियों में श्रेष्ठ है इसलिए राजाओं के लिए सदा सेवन करने लायक है।

४४. मदनमोदक

त्रैलोक्यविजयापत्रं सबीजं घृतभर्जितम्।
समे शिलातले पश्चाच्चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥१६२॥
त्रिकटु त्रिफलाशृङ्गीकुष्ठधान्यकसैन्धवम्।
शटी तालीशपत्रञ्च कट्फलं नागकेशरम् ॥१६३॥
अजमोदा यमानी च यष्टीमधुकमेव च।
मेथी जीरकयुग्मञ्च गृहीत्वा श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥१६४॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावच्छक्राशनं तथा।
तावदेव सिता देया यावदायाति बन्धनम् ॥१६५॥
घृतेन मधुना मिश्रं मोदकं परिकल्पयेत्।
त्रिसुगन्धिसमायुक्तं कर्पूरेणाधिवासयेत् ॥१६६॥
स्थापयेद् घृतभाण्डे च श्रीमन्मदनमोदकम्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय वातश्लेष्मविनाशनम् ॥१६७॥
कासघ्नं सर्वशूलघ्नमामवातविनाशनम्।
सर्वरोगहरो ह्येष संग्रहग्रहणीहरः ॥१६८॥
एतस्य सतताभ्यासाद् वृद्धोऽपि तरुणायते।
ब्रह्मणः प्रमुखाच्छ्रुत्वा वासुदेवो जगत्पतौ ॥१६९॥
एष कामविवृद्ध्यर्थं नारदैः प्रतिपादितः।
तेन लक्षं वरस्त्रीणां रेमे स यदुनन्दनः ॥१७०॥

१. बीज सहित भाँग की पत्ती २५० ग्राम, २. शुण्ठी, ३. मरिच, ४. पिप्पली, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. आमला, ८. काकड़ासिंगी, ९. कूठ, १०. धनियाँ, ११. सैन्धवनमक, १२. कचूर, १३. तालीसपत्र, १४. कायफल—१० ग्राम; १५. नागकेशर १० ग्राम, १६. अजमोदा १० ग्राम, १७. अजवायन १० ग्राम, १८. मुलेठी १० ग्राम, १९. मेथी १० ग्राम, २०. सफेद जीरा १० ग्राम, २१. स्याहजीरा १० ग्राम, २२. चीनी ५०० ग्राम, २३. दालचीनी १० ग्राम, २४. छोटी इलायची १० ग्राम और २५. तेजपत्ता १० ग्रा.—सर्वप्रथम बीज सहित भाँग के पत्तों को घी में भून कर पीस कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। अन्य सभी द्रव्यों के चूर्ण को समभाग में अर्थात् (१०-१० ग्राम) लें तथा सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इस चूर्ण की दुगुनी मात्रा में चीनी लेकर ४-५ तार की चाशनी बनायें तथा चूर्ण को इसमें डाल कर अच्छी प्रकार से मिला लें। जब सब सामग्री अच्छी प्रकार से मिल जायें तब उसमें दालचीनी, तेजपत्ता, छोटी इलायची एवं कपूर को समभाग अर्थात् १०-१० ग्राम चूर्ण करके उसमें मिला दें। इसके पश्चात् उचित मात्रा में घी तथा शहद मिलायें और ६ ग्राम की मात्रा के मोदक बनाकर काचपात्र में रख दें। प्रतिदिन प्रातः १-१ मोदक का सेवन गरम दूध के साथ करें। इसका सेवन करने से वातज एवं श्लेष्मज विकार, कास, सभी प्रकार के शूल, आमवात, संग्रहणी एवं सभी रोगों का नाश हो जाता है। इस मोदक के प्रतिदिन सेवन से वृद्ध मनुष्य भी युवाओं के समान बलवान् हो जाता है। श्री नारदमुनि ने सबसे पहले ब्रह्माजी के द्वारा इस मोदक के बारे में सुनकर कामशक्ति की वृद्धि के लिए भगवान् कृष्ण को बताया था। इस मोदक का सेवन करने से भगवान् कृष्ण ने एक लाख सुन्दर स्त्रियों के साथ सम्भोग किया।

मात्रा—१ मोदक। **अनुपान**—चीनी मिले गरम दूध से। **उपयोग**—ग्रहणी, कास, शूल, आमवात एवं वाजीकरण में।

४५. मेथीमोदक

त्रिकटुत्रिफलामुस्तजीरकद्वयधान्यकम्।
कट्फलं पौष्करं शृङ्गी यमानी सैन्धवं विडम् ॥१७१॥
तालीशकेशरं पत्रं त्वगेला च फलं तथा।
जातीकोषं लवङ्गञ्च मुराकर्पूरचन्दनम् ॥१७२॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावदेव तु मेथिका।
सञ्चूर्ण्य मोदकः कार्यः पुरातनगुडेन च ॥१७३॥
घृतेन मधुना किञ्चित् खादेदग्निबलं प्रति।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं सामे मेदे महौषधम् ॥१७४॥
बलवर्णकरो ह्येष संग्रहग्रहणीहरः।
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति मूत्राघातं तथाऽश्मरीम् ॥१७५॥
पाण्डुरोगे तथा कासं यक्ष्माणं हन्ति कामलाम्।
स्तनौ च पतितौ गाढौ स्यातां तालफलोपमौ ॥१७६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

दृष्टिप्रसादनश्चैव नारीणाञ्चैव पुत्रदः ।
भाषितं कामदेवेन मेथीमोदकसंज्ञकः ॥१७७॥

१. शुण्ठी, २. मरिच, ३. पिप्पली, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. आमला, ७. नागरमोथा, ८. श्वेत जीरा, ९. स्याह जीरा, १०. धनियाँ, ११. कायफल, १२. पुष्करमूल, १३. काकड़ासिंगी, १४. अजवायन, १५. सैन्धवनमक, १६. विड् नमक, १७. तालीसपत्र, १८. नागकेशर, १९. तेजपत्र, २०. दालचीनी, २१. छोटी इलायची, २२. जायफल, २३. जावित्री, २४. मुरामांसी, २५. कर्पूर, २६. सफेद चन्दन (सभी द्रव्य १०-१० ग्राम); २७. मेथी २७० ग्राम, २८. पुराना गुड़ १.०८० ग्राम, २९. शहद १२५ ग्राम तथा ३०. घी १२५ ग्राम—सभी द्रव्यों को समभाग अर्थात् १०-१० ग्राम की मात्रा में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इन सभी द्रव्यों के चूर्ण के बराबर पीसी हुई मेथी का चूर्ण लें। इन सभी द्रव्यों के चूर्ण के दुगुना पुराना गुड़ लें तथा गुड़ का एक अष्टमांश शहद एवं आवश्यकतानुसार घी लें। सर्वप्रथम मेथीचूर्ण को घी में भून लें, तत्पश्चात् गुड़ की चासनी (पाक) बनायें। कड़ी चासनी होने पर उतार कर १० ग्राम का मोदक बनाकर काचपात्र में भरकर रख दें। मनुष्य के अग्निबल के अनुसार १-१ मोदक १० ग्राम की मात्रा में सेवन करायें। मोदक को खाकर ऊपर से अनुपान रूप में उष्ण दूध पिलावें। यह मोदक जठराग्नि को प्रदीप्त करता है। मेदवृद्धि के द्वारा उत्पन्न स्थूलता के विनाश के लिए यह महौषध है। आमदोष को नष्ट करता है। इन सबके अतिरिक्त शारीरिक बल एवं वर्ण वर्द्धक है। संग्रहणी, बीसों प्रकार के प्रमेह, मूत्राघात, अश्मरी, पाण्डुरोग, कास, राजयक्ष्मा और कामला रोग को नाश करता है। इस मोदक के सेवन से स्त्रियों के स्तन की शिथिलता दूर होती है एवं वह ताड़ के फल के समान दृढ़ तथा उन्नत हो जाते हैं। यह मोदक दृष्टि को निर्मल करता है तथा स्त्रियों के रज एवं पुरुषों के वीर्य को शुद्ध करके सन्तान प्रदान करता है। इस मेथीमोदक को कामदेव ने कहा है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध। **गन्ध**—सुगन्धित पाकगन्धी। **वर्ण**—गुडवत्। **स्वाद**—मधुर, तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी।

४६. बृहन्मेथीमोदक

त्रिफला धान्यकं मुस्तं शुण्ठी मरिचपिप्पली ।
कट्फलं सैन्धवं शृङ्गी जीरकद्वयपुष्करम् ॥१७८॥
यमानी केशरं पत्रं तालीशं विडमेव च ।
जातीफलं त्वगेला च जावित्रीन्दुलवङ्गकम् ॥१७९॥
शतपुष्पा मुरामांसी यष्टीमधुकपद्मकम् ।
चव्यं मधुरिका दारु सर्वमेतत्समं भवेत् ॥१८०॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रा तु मेथिका ।
सितया मोदकं कार्यं घृतमाध्वीकसंयुतम् ॥१८१॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय यथादोषानुपानतः ।
हन्ति मन्दानलान् सर्वानामदोषं विशेषतः ॥१८२॥
महाग्निजननं वृष्यमामवातनिषूदनम् ।
ग्रहण्यर्शोविकारघ्नं प्लीहपाण्डुगदापहम् ॥१८३॥
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति कासं श्वासञ्च दारुणम् ।
छर्द्यतीसारशमनं सर्वारुचिविनाशनम् ॥
मेथीमोदकनामेदं पतञ्जलिमुनेर्मतम् ॥१८४॥

१. हरीतकी, २. बहेड़ा, ३. आमला, ४. धनियाँ, ५. नागरमोथा, ६. शुण्ठी, ७. मरिच, ८. पिप्पली, ९. कायफल, १०. सैन्धवनमक, ११. काकड़ासिंगी, १२. सफेद जीरा, १३. स्याहजीरा, १४. पुष्करमूल, १५. अजवायन, १६. नागकेशर, १७. तेजपत्ता, १८. तालीशपत्र, १९. विड्नमक, २०. जायफल, २१. दालचीनी, २२. छोटी इलायची, २३. जावित्री, २४. कर्पूर, २५. लवङ्ग, २६. सौंफ, २७. मुरामांसी, २८. मुलेठी, २९. पद्मकाष्ठ, ३०. चव्य, ३१. सोआ और ३२. देवदारु—सभी द्रव्य समभाग में १०-१० ग्राम लें तथा ३३. मेथी ३२० ग्राम, ३४. चीनी १.२८० कि. ग्राम, ३५. शहद १७५ ग्राम एवं ३६. घी १७५ ग्राम लें। उपर्युक्त मात्रा में सभी द्रव्यों को लेकर पीसें और कपड़े से छानकर महीन चूर्ण कर लें। इन सब औषधि द्रव्यों के बराबर मेथी का चूर्ण लें। सर्वप्रथम कड़ाही में घी देकर मेथीचूर्ण को भून लें। ततः चीनी की कड़ी चासनी करें। मोदक की चासनी (पाक) होने पर पाकपात्र को नीचे उतारकर त्रिफला से मेथी के सूक्ष्म चूर्णों को अच्छी तरह मिलावें और थोड़ा शीतल होने पर १० ग्राम का मोदक बना लें और काचपात्र में रख लें। प्रतिदिन प्रातःकाल नित्यकर्म से निवृत्त होने के पश्चात् दोषानुसार शामक अनुपानों के साथ इस मोदक का सेवन करें। इसके सेवन से सभी प्रकार की मन्दाग्नि विशेषतः आमदोष शान्त होते हैं। यह जाठराग्नि को अत्यन्त प्रदीप्त करता है, वाजीकर है एवं आमवात, ग्रहणीदोष, अर्श, प्लीहावृद्धि, पाण्डुरोग, बीसों प्रकार के प्रमेह, असाध्य कास, श्वास, छर्दि, अतिसार तथा सभी प्रकार की अरुचि को नष्ट करता है। इस बृहन्मेथीमोदक को भगवान् पतञ्जलि ने बताया था।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गरम जल या गरम बकरी का दूध। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—गुड़ के वर्ण का। **स्वाद**—मधुर-तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार आदि में।

४७. मुस्तकादि मोदक

धान्यकं त्रिफला भृङ्गं त्रुटिः पत्रं लवङ्गकम् ।
केशरं शैलजं शुण्ठीपिप्पलीमरिचानि च ॥१८५॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जीरकं कृष्णजीरञ्च यमानी कट्फलं जलम्।
धातकीपुष्पकं व्याधिर्जातीकोषफलं त्वचम् ॥१८६॥
मधूरिका चाजमोदा हवुषं नागपर्ण्यपि।
उग्रगन्धा शटी मांसी कुटजस्य फलं शुभा ॥१८७॥
एतानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् कुशलो भिषक्।
सर्वचूर्णसमं देयं जलदस्यापि चूर्णकम् ॥१८८॥
सिता च द्विगुणा देया मोदकं परिकल्पयेत्।
मन्दाग्निं शमयेदेतत्सरक्तां ग्रहणीं तथा ॥१८९॥
अतीसारं ज्वरं घोरं पाण्डुरोगं हलीमकम्।
क्रिमिरोगं रक्तपित्तमर्शोरोगं सुदुर्जयम् ॥१९०॥
लोकानां गदशान्त्यर्थं भैरवेण प्रकाशितम् ॥१९१॥

१. धनियाँचूर्ण, २. हरीतकीचूर्ण, ३. बहेडाचूर्ण, ४. आमलाचूर्ण, ५. भृङ्गराजचूर्ण, ६. छोटीइलायचीचूर्ण, ७. तेजपातचूर्ण, ८. लौंगचूर्ण, ९. नागकेशरचूर्ण, १०. छडीलाचूर्ण, ११. शुण्ठीचूर्ण, १२. पीपरचूर्ण, १३. मरिचचूर्ण, १४. श्वेतजीराचूर्ण, १५. कृष्णजीराचूर्ण, १६. अजवायनचूर्ण, १७. कूठचूर्ण, १८. जावित्रीचूर्ण, १९. जायफलचूर्ण, २०. दालचीनीचूर्ण, २१. सोयाचूर्ण, २२. अजमोदाचूर्ण, २३. हाउबेरचूर्ण, २४. ताम्बूलपत्रचूर्ण, २५. वचचूर्ण, २६. कचूरचूर्ण, २७. जटामांसीचूर्ण, २८. इन्द्रयवचूर्ण तथा २९. वंशलोचनचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें और ३०. नागरमोथा चूर्ण ३५० ग्राम एवं ३१. चीनी १४०० ग्राम लें। उपर्युक्त मात्रा में सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण लेकर छननी से पुनः छान लें। अब स्टेनलेस स्टील के पात्र में चीनी की कड़ी चासनी करें। ३-४ तार की चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और प्रक्षेपरूप में उपर्युक्त सभी द्रव्यों (धनियाँ से मोथा) के सूक्ष्म चूर्ण को मिलाकर अच्छी तरह से मिलाकर १०-१० ग्राम का मोदक बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करे। यह मोदक जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है। रक्तस्रावयुक्त संग्रहणी, अतिसार, दारुण ज्वर, पाण्डुरोग, हलीमक, कृमिजन्य रोग, रक्तपित्त एवं विभिन्न चिकित्सकों द्वारा असाध्य अर्श को शान्त करता है। आचार्य भैरव ने इस संसार के रोगों की शान्ति के लिए इस मुस्तकादि-मोदक को प्रकाशित किया।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—बकरी या गाय का दूध या गरम जल। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—खदिराभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, अरुचि एवं रक्तातिसार में।

४८. कामेश्वरो मोदक

धात्रीसैन्धवकुष्ठकट्फलकणाशुण्ठीयमानीद्वयं
यष्टीजीरकयुग्मधान्यकशटीशृङ्गीवचाकेशरम्।
तालीशं त्रिसुगन्धिकं समरिचं पथ्याऽक्षमेभिः समं
चूर्णीकृत्य मनाक् स्वबीजसहितं भृष्ट्वा तु शक्राशनम् ॥
सर्वेषां द्विगुणां सितां सुविमलां यत्नाद्भिषङ् निक्षिपेत्
क्षौद्रैश्चापि घृतैः प्रशस्तदिवसे कुर्याच्छुभान् मोदकान्।
कर्पूरैरवचूर्णितानपि हि तान् दत्त्वा तिलान् भर्जितान्
गोप्योऽयं क्षितिमण्डले मितधियां पाखण्डिनामग्रतः ॥
आधिव्याधिहरः क्षतक्षयहरः कुष्ठापहो बृंहणः
स्त्रीणां तोषकरो मुखद्युतिकरः शुक्राग्निवृद्धिप्रदः।
कासश्वासबलासरोगनिचयप्रध्वंसनः प्राणिनां
प्रोक्तो ब्रह्मसुतेन सर्वसुखदः कामेश्वरो मोदकः ॥१९४॥
ग्रहगणपरिहीनः सर्वशास्त्रप्रवीणः
कलितविमलकीर्त्तिः प्राप्तकन्दर्पमूर्त्तिः।
विगतसकलभीतिर्गीतिवाद्याङ्गनीति-
र्भवति भुवि स देवो येन भुक्तः प्रयत्नात् ॥१९५॥
रहसि युवतिखेलासम्पुटाकर्षहर्षाद्
गमयति युवतीनां केलिकौतूहलेन।
यदि कथमपि भुक्तो भोजनादावसान्ते
सुरतरभसमुच्चैर्नष्टकामं प्रकामम् ॥१९६॥
यस्मान्नव्यबृहस्पतिस्तनुधिया यस्मात्सदा वीर्यवान्
तस्मादुन्मददाक्षिणात्ययुवतीसम्भोगकौतूहली।
यस्मात्काव्यकुतूहलं सुकविता सञ्जायते लीलया
श्रीमद्भिः प्रतिवासरं क्षितितले संसेव्यतां मोदकः ॥१९७॥

१. आमला, २. सैन्धवनमक, ३. कूठ, ४. कायफल, ५. पिप्पली, ६. शुण्ठी, ७. अजवायन, ८. अजमोदा, ९. मुलेठी, १०. सफेद जीरा, ११. स्याहजीरा, १२. धनियाँ, १३. कचूर, १४. काकड़ासिंगी, १५. वचा, १६. नागकेशर, १७. तालीशपत्र, १८. दालचीनी, १९. छोटी इलायची, २०. तेजपत्ता, २१. मरिच, २२. हरीतकी, २३. बहेड़ा, २४. कर्पूर १२ ग्राम, २५. भुना हुआ तिल १२ ग्राम, २६. बीजरहित भाँगपत्र ३०० ग्राम, २५. शर्करा १.१०० ग्राम, २७. शहद १०० ग्राम, २८. गोघृत १०० ग्राम लें—आमला आदि सभी द्रव्यों को समभाग में अर्थात् १२-१२ ग्राम लें तथा कूट-पीस कर कपड़े से छान लें और महीन चूर्ण तैयार करें। तत्पश्चात् बीज सहित भाँग को लेकर घी में भून लें एवं चूर्ण तैयार करें। इस भाँग चूर्ण की मात्रा सभी द्रव्यों के बराबर अर्थात् ३७५ ग्राम होनी चाहिए। इन सबकी दुगुनी पिसी हुई चीनी १.१०० ग्राम लेना चाहिए।

विधि—एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में चीनी और जल देकर पाक (चासनी) करें। चार तार की चासनी हो जाय तो उतार कर आमला से भाँग के चूर्णों तक अच्छी तरह से मिलाकर १०-१० ग्राम मात्रा का मोदक बना लें। मोदक पर तिल डालकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'मदनानन्द मोदक' कहते हैं। इसे गोपनीय रखना चाहिए। पाखण्डियों को नहीं बताना चाहिए। इस

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मोदक का प्रतिदिन प्रातःकाल दुग्ध के साथ सेवन करने से मानसिक एवं शारीरिक व्याधियाँ शान्त होती हैं। उरःक्षत एवं क्षय को दूर करने वाला है। यह मोदक कुष्ठनाशक एवं बृंहण करने वाला है। इस मोदक को सेवन करने वाला व्यक्ति स्त्रियों के साथ सम्भोग करके उसकी इच्छा को पूर्ण करता है तथा उसको संतुष्ट करता है। यह मुख की चमक, वीर्य एवं जाठराग्नि की वृद्धि करता है एवं श्वास, कास तथा मनुष्यों में उत्पन्न कफज व्याधियों को विनष्ट करता है। ब्रह्माजी के पुत्र नारदजी ने प्राणियों के सुख की कामना से इस कामेश्वर मोदक को बनाया था। जो व्यक्ति इस कामेश्वर मोदक का प्रतिदिन नियमपूर्वक सेवन करता है वह नवग्रहों के प्रकोप से रहित, सभी शास्त्रों में निपुण, निर्मल बुद्धि एवं यशस्वी होता है। सौन्दर्य में कामदेव के समान, सभी प्रकार के रोगों से रहित, गायन एवं वादन में कुशल एवं देवताओं के समान हो जाता है। सम्भोग शक्ति से रहित मनुष्य यदि इस कामेश्वर मोदक का सेवन भोजन के पहले या अन्त में करे तो इससे उसके वीर्य की वृद्धि तथा स्तम्भन शक्ति में भी वृद्धि होती है तथा वह क्रीड़ाकौतुकपूर्वक अनेक युवतियों के साथ सम्भोग करके उनको तृप्त करता है। इस मोदक को सेवन करने से अल्प बुद्धि वाला व्यक्ति बृहस्पति के समान एवं शरीर से बलवान् तथा जिसके कारण मनुष्य मदोन्मत्त और केलिकलाचतुर दाक्षिणात्य स्त्रियों के साथ सहवास करने में अकारण ही सक्षम हो जाता है तथा जिसके कारण लीलापूर्वक अनेक काव्यों की रचना करने में एवं सुन्दर-शृंगारिक कविताओं की रचना करने में एवं श्रवण करने में व्यक्ति प्रवीण हो जाता है। इस कामेश्वर मोदक को पृथ्वीमण्डल में श्रीमान् तथा राजा-महाराजा सदैव सेवन करें।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—दूध एवं दोषानुसार अनुपान। **गन्ध**—सुगन्धित पाकगन्धी। **वर्ण**—धूसर वर्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वाजीकरणार्थ, ग्रहणी, अतिसार एवं क्षय में।

४९. मुस्तकाद्य मोदक

त्रिकटु त्रिफला चित्रं लवङ्गं जीरकद्वयम्।
यमान्यौ द्वे मधुरिका नागवल्लीदलं तथा ॥१९८॥
शतपुष्पा वरी धान्यं चातुर्जातं तथा तुगा।
मेथी जातीफलं ग्राह्यं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥१९९॥
मुस्तकं षट्पलं देयं सिता च द्विगुणा मता।
ग्रहणीं हन्त्यतीसारं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥२००॥
अजीर्णमामदोषञ्च विसूचीमपि दारुणम्।
पुष्टिं देहस्य जनयेद्बलवर्णाग्निवृद्धिकृत्।
वलीपलितदौर्बल्यं क्षपयेत् कृशतामपि ॥२०१॥

१. शुण्ठी, २. मरिच, ३. पिप्पली, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. आमला, ७. चित्रकमूल, ८. लवंग, ९. सफेद जीरा, १०. स्याहजीरा, ११. अजमोदा, १२. अजवायन, १३. सोआबीज, १४. ताम्बूलपत्र, १५. सौंफ, १६. शतावरी, १७. धनियाँ, १८. दालचीनी, १९. छोटी इलायची, २०. तेजपत्ता, २१. नागकेशर, २२. वंशलोचन, २३. मेथी और २४. जायफल—प्रत्येक द्रव्य १२ ग्राम लें; २५. नागरमोथा २८८ ग्राम, २६. चीनी १.१५० ग्राम, २७. शहद १२० ग्राम तथा २८. घी १२० ग्राम लें। शुण्ठी से जायफल तक के सभी द्रव्यों को समभाग १२-१२ ग्राम लेकर पीसें और सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इन सभी द्रव्यों के बराबर अर्थात् २८८ ग्राम (२४ तोला) नागरमोथा का चूर्ण लें। सभी द्रव्यों की मिश्रित मात्रा के बराबर अर्थात् पीसी हुई चीनी मिलायें तथा उसमें आवश्यकतानुसार शहद एवं घी मिलायें। जब सभी द्रव्य अच्छी प्रकार से मिल जायें तो १० ग्राम का मोदक बना लें एवं काचपात्र में रख दें। इस मुस्तकाद्य मोदक के सेवन से संग्रहणी, अतिसार, मन्दाग्नि, अरुचि, अजीर्ण, आमदोष, दुःसाध्य विसूचिका, पलित, दुर्बलता तथा कृशता को विनष्ट करता है। यह मोदक शारीरिक पुष्टि, बल, कान्ति एवं जाठराग्नि का वर्द्धन करता है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—दोषानुसार। **गन्ध**—सुगन्धित पाकगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ (कत्थईवर्ण)। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—संग्रहणी, अतिसार, दौर्बल्य, अग्निमांद्य नाशक है एवं बल्य है।

५०. जीरकादि मोदक

श्लक्ष्णचूर्णीकृतं जीरं पलाष्टकमितं शुभम्।
तदर्द्धं विजयाबीजं भर्जितं वस्त्रपूतकम् ॥२०२॥
अयश्चूर्णं तथा वङ्गमभ्रकं कर्षमानतः।
मधूरिका च तालीशं जातीकोषफले तथा ॥२०३॥
धान्यकं त्रिफला चैव चातुर्जातलवङ्गकम्।
शैलेयं चन्दने द्वे च मांसी द्राक्षा शटी तथा ॥२०४॥
टङ्गणं कुन्दुरुर्यष्टी तुगा कक्कोलबालकम्।
गाङ्गेरुस्त्रिकटुश्चैव धातकीबिल्वमर्जुनम् ॥२०५॥
शतपुष्पा देवदारु कर्पूरं सप्रियङ्गुकम्।
जीरकं शाल्मलञ्चैव कटुका पद्मनालुके ॥२०६॥
एषां कर्षसमं चूर्णं गृह्णीयात्कुशलो भिषक्।
शर्करामधुनाऽऽज्येन मोदकञ्च विनिर्मितम् ॥२०७॥
खादेत्कर्षसमं तस्य प्रत्यहं प्रातरुत्थितः।
शीततोयानुपानेन सर्वग्रहणिकां जयेत् ॥२०८॥
आमदोषावृते पित्ते वह्निमान्द्ये तथैव च।
रक्तातिसारेऽतीसारे प्रयोज्यं विषमज्वरे ॥२०९॥
सशब्दं घोरगम्भीरं हन्ति सद्यो न संशयः।
अम्लपित्तकृतं दोषमुदरं सर्वरूपिणम् ॥२१०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वातिसारशमनं संग्रहग्रहणीं जयेत्।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव दोषत्रयकृतं तथा ॥२११॥
विकारं कोष्ठजञ्चैव हन्ति शूलमरोचकम्।
भाषितं वृष्णिनाथेन जन्तूनां हितकारणम् ॥२१२॥

१. भृष्ट जीरा चूर्ण ३२ तोला (३७५ ग्राम), २. घृतभृष्ट भाँगचूर्ण १६ तोला (१८७ ग्राम), ३. लौहभस्म, ४. वङ्गभस्म, ५. अभ्रकभस्म, ६. सोआ, ७. तालीसपत्र, ८. जावित्री, ९. जायफल, १०. धनियाँ, ११. हरीतकी, १२. बहेड़ा, १३. आमला, १४. दालचीनी, १५. छोटी इलायची, १६. तेजपत्ता, १७. नागकेशर, १८. लवङ्ग, १९. छरीला, २०. श्वेतचन्दन, २१. लालचन्दन, २२. जटामांसी, २३. द्राक्षा, २४. कचूर, २५. शुद्ध टंकण, २६. कुन्दरू, २७. मुलेठी, २८. वंशलोचन, २९. शीतलचीनी, ३०. सुगन्धबाला, ३१. नागबलामूल, ३२. शुण्ठी, ३३. मरिच, ३४. पिप्पली, ३५. धातकीपुष्प, ३६. बिल्वफलमज्जा, ३७. अर्जुन की छाल, ३८. सौंफ, ३९. देवदारु, ४०. कपूर, ४१. प्रियङ्गु, ४२. जीरा, ४३. सेमरमुशली, ४४. कुटकी, ४५. पद्मकाष्ठ, ४६. नालुका। लौहादि भस्मों से लेकर नालुका पर्यन्त सभी द्रव्यों को १२-१२ ग्राम लें तथा सूक्ष्म चूर्ण करें। ४७. चीनी १०८० ग्राम, ४८. शहद १४० ग्राम, ४९. घी अष्टमांश। सबसे पहले जीरे को पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। भाँग को घी में भून कर पीसकर चूर्ण कर लें।

विधि—एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में चीनी एवं थोड़ा जल डालकर पाक (चासनी) करें। ४-तार की चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर जीराचूर्ण से नालुकाचूर्ण (सभी द्रव्यों) तक सभी द्रव्यों को उस चीनीपाक में अच्छी तरह से मिलाकर १०-१० ग्राम वजन का मोदक बना कर काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रतिदिन प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होने के पश्चात् इसका सेवन करें, अनुपान रूप में शीतल जल का सेवन करें। यह मोदक सभी प्रकार के संग्रहणी रोगों से मुक्ति दिलाता है। आमदोष से आवृत पित्त, अग्निमान्द्य, रक्तातिसार, अतिसार एवं विषमज्वर में यह मोदक अत्यन्त लाभदायक है। इस मोदक के सेवन से आटोप आदि गम्भीर शब्द से युक्त एवं अम्लपित्त के द्वारा उत्पन्न सभी प्रकार के उदररोग, अतिसार, संग्रहणी, वातिक, पैत्तिक, कफज अर्थात् एकदोषज, वातपित्तज, पित्तकफज, वातकफज आदि द्विदोषज तथा त्रिदोषज कोष्ठदोष, शूल एवं अरुचि आदि रोग शान्त होते हैं। वृष्णिनाथ (भगवान् श्रीकृष्ण) ने मनुष्यों के हित के लिए इस मोदक का वर्णन किया है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—दुग्धानुपान या जल से। **गन्ध**—सुगन्धित तथा जीरक गन्धी। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—संग्रहणी, अतिसार, अग्निमान्द्य एवं आमातिसार में।

५१. जीरकादिमोदक (बृहत्)

जीरकं कृष्णजीरञ्च कुष्ठं शुण्ठी च पिप्पली।
मरिचं त्रिफला त्वक् च पत्रमेला च केशरम् ॥२१३॥
शुभा लवङ्गं शैलेयं चन्दनं श्वेतचन्दनम्।
काकोली क्षीरकाकोली जातीकोषफले तथा ॥२१४॥
यष्टी मधुरिका मांसीमुस्तं सौवर्चलं शटी।
धन्याकं देवडञ्च मुरा द्राक्षा नखी तथा ॥२१५॥
शतपुष्पा पद्मकञ्च मेथी च सुरदारु च।
सजलं नालुका चैव सैन्धवं गजपिप्पली ॥२१६॥
कर्पूरं वनिता चैव कन्दुखोटी समांशिकम्।
लोहमभ्रकवङ्गानां द्विभागं तत्र दापयेत् ॥२१७॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
सर्वचूर्णसमं देयं भृष्टजीरस्य चूर्णकम् ॥२१८॥
सिता द्विगुणिता देया मोदकं परिकल्पयेत्।
घृतेन मधुना मिश्रं मोदकञ्च भिषग्वरः ॥२१९॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय यथादोषं यथाबलम्।
गव्यं सशर्करं क्षीरं चानुपानं प्रयोजयेत् ॥२२०॥
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्।
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥२२१॥
नानावर्णमतीसारं विशेषादामसम्भवम्।
शूलमष्टविधं हन्ति चार्शोरोगं चिरोद्भवम् ॥२२२॥
जीर्णज्वरञ्च सततं विषमज्वरमेव च।
स्त्रीणाञ्चैवानपत्यानां दुर्बलानाञ्च देहिनाम् ॥२२३॥
पुष्पकृत् पुत्रकृच्चैव बलवर्णकरं परम्।
सूतिकारोगमत्युग्रं नाशयेन्नात्र संशयः ॥२२४॥
प्रदरं नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः।
दाहं सर्वाङ्गिकञ्चैव वातपित्तोत्थितञ्च यत्।
अयं सर्वगदोच्छेदी जीरकाद्यो हि मोदकः ॥२२५॥

१. सफेदजीरा, २. स्याहजीरा, ३. कूठ, ४. शुण्ठी, ५. पिप्पली, ६. मरिच, ६. हरीतकी, ८. बहेड़ा, ९. आमला, १०. दालचीनी, ११. तेजपत्ता, १२. छोटी इलायची, १३. नागकेशर, १४. वंशलोचन, १५. लवङ्ग, १६. छरीला, १७. रक्तचन्दन, १८. श्वेतचन्दन, १९. काकोली, २०. क्षीरकाकोली, २१. जावित्री, २२. जायफल, २३. मुलेठी, २४. सोआ, २५. जटामांसी, २६. नागरमोथा, २७. काला नमक, २८. कचूर, २९. धनियाँ, ३०. देवदाली, ३१. मुरामांसी, ३२. द्राक्षा, ३३. नखी, ३४. सौंफ, ३५. पद्मकाठ, ३६. मेथी, ३७. देवदारु, ३८. सुगन्धबाला, ३९. बालुका, ४०. सैन्धवनमक, ४१. गजपिप्पली, ४२. कर्पूर, ४३. प्रियंगु और ४४. कुन्दखोटी—सभी द्रव्यों को १२-१२ ग्राम लें; ४५. लौहभस्म २३ ग्राम, ४६. अभ्रकभस्म २३ ग्राम, ४७. वङ्गभस्म २३

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम, ४८. जीरा भुना हुआ ६०० ग्राम, ४९. चीनी २.४०० ग्राम, ५०. मधु १५० ग्राम, ५१. घृत १५० ग्राम लें। जीरा से कुन्दखोटी तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें। एक बड़े साफ स्टेनलेस स्टील के पात्र में चीनी और थोड़ा जल मिलाकर पाक (चासनी) करें। जब ४ तार की चासनी हो जाय तो चूल्हे से पात्र को नीचे उतारकर सभी चूर्णों को तथा मधु एवं गोघृत अच्छी तरह से मिलाकर १२-१२ ग्राम की मात्रा में मोदक बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रतिदिन प्रात:काल नित्यकर्म से निवृत्त होने के पश्चात् दोषों तथा अग्निबल के अनुसार $\frac{१}{२}$ तोले से १ तोले तक की मात्रा में इस मोदक को खाकर अनुपान रूप में उष्ण गाय का दूध चीनी मिलाकर सेवन करें। यह बृहज्जीरकादि मोदक ८० प्रकार के वातरोग, ४० प्रकार के पित्तज रोग, अनेक वर्णों; यथा—नीला-पीला, लाल, हरा, कृष्ण से युक्त मल के अतिसरण, विशेषत: आमदोष से उत्पन्न अतिसार, संग्रहणी, ८ प्रकार के शूल, पुराना अर्श, पुराने सतत एवं विषमज्वर को शान्त करता है। सन्तानहीन तथा दुर्बल शरीर वाली नारियों के नष्ट हुए मासिकधर्म को प्रवृत्त करके सन्तान प्रदान करता है और उनके शारीरिक बल और वर्ण को बढ़ाता है। यह दु:साध्य सूतिकारोग, प्रदर और वात तथा पित्त के प्रकोप से उत्पन्न सर्वाङ्गदाह को उसी प्रकार नष्ट करता है जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है। यह जीरकादि मोदक अनुपान भेद से सभी प्रकार के रोगों का शमन करता है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—शीतल जल एवं गोदुग्ध। **गन्ध**—सुगन्धित एवं जीरकगन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—संग्रहणी, अतिसार एवं अग्निमांद्य में।

५२. अग्निकुमार मोदक

उशीरं बालकं मुस्तं त्वक् पत्रं नागकेशरम्।
जीरद्वयञ्च शृङ्गी च कट्फलं पुष्करं शटी ॥२२६॥
त्रिकटु बिल्वकं धान्यं जातीफललवङ्गकम्।
कर्पूरं कान्तलोहञ्च शैलजं वंशलोचना ॥२२७॥
एलाबीजं जटामांसी रास्ना तगरपादुकम्।
समङ्गाऽतिबला चाभ्रं मुरा वङ्गं तथैव च ॥२२८॥
अस्य चूर्णसमा मेथी चूर्णार्द्धं विजयारजः।
शर्करामधुसंयुक्तं मोदकं परिकल्पयेत् ॥२२९॥
एककर्षप्रमाणन्तु भक्षयेत्प्रातरुत्थितः।
शीततोयानुपानेन आजेन पयसाऽथवा ॥२३०॥
ग्रहणीं दुस्तरां हन्ति श्वासं कासमतीव च।
आमवातमग्निमान्द्यं जीर्णञ्च विषमज्वरम् ॥२३१॥
विबन्धानाहशूलञ्च यकृत्प्लीहोदराणि च।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि ग्रहणीदोषनाशनः ॥२३२॥
उदावर्त्तगुल्मरोगोदरामयविनाशनः ॥२३३॥

१. खस, २. सुगन्धबाला, ३. नागरमोथा, ४. दालचीनी, ५. तेजपत्ता, ६. नागकेशर, ७. सफेद जीरा, ८. स्याहजीरा, ९. काकड़ासिंगी, १०. कायफल, ११. पुष्करमूल, १२. कचूर, १३. शुण्ठी, १४. मरिच, १५. पिप्पली, १६. बिल्वफल-मज्जा, १७. धनियाँ, १८. जायफल, १९. लवङ्ग, २०. कपूर, २१. कान्तलौहभस्म, २२. छरीला, २३. वंशलोचन, २४. छोटी इलायची, २५. जटामांसी, २६. रास्ना, २७. तगर, २८. मञ्जिष्ठा, २९. अतिबलामूल, ३०. अभ्रकभस्म, ३१. मुरामांसी और ३२. वङ्गभस्म—खस से वङ्गभस्म तक के सभी ३२ द्रव्यों को पृथक्-पृथक् १२ ग्राम लें; ३३. मेथीचूर्ण ३८५ ग्राम, ३४. घृतभृष्ट भाँगचूर्ण—१९३ ग्राम, ३५. पिसी हुई चीनी १.१२५ ग्राम, ३६. मधु १४२ ग्राम और ३७. घृत १४२ ग्राम लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें। एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में चीनी और थोड़ा जल मिलाकर चूल्हे पर पाक (चासनी) करें। जब ४ तार की चासनी हो जाय तो पाक को चूल्हे से नीचे उतार कर सभी द्रव्यों के मिश्रित चूर्णों को अच्छी तरह मिला लें। तत: घृत में मधु मिलाकर १०-१० ग्राम की मात्रा में मोदक बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रात:काल नित्यक्रिया से निवृत्त होने के पश्चात् १ मोदक को खायें तथा अनुपानस्वरूप ठण्डा पानी या बकरी का धारोष्ण दूध या गोदुग्ध का सेवन करें। यह मोदक अनेक रोगों; यथा—असाध्य ग्रहणी, श्वास, कास, आमवात, अग्निमान्द्य, पुराणज्वर, विषमज्वर, कब्जियत, आनाह, शूल, यकृद्वृद्धि, प्लीहावृद्धि, समस्त उदररोग, अठारह प्रकार के कुष्ठ, उदावर्त्त, गुल्म आदि का विनाश करता है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—जल एवं बकरी के दूध से। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—धूसरवर्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—संग्रहणी एवं उदर रोग में।

रसौषधियाँ

५३. हंसपोट्टली रस (शार्ङ्गधर सं.)

दग्धान् कपर्दकान् पिष्ट्वा त्र्यूषणं टङ्कणं विषम्।
गन्धकं शुद्धसूतञ्च तुल्यं जम्बीरजैर्द्रवैः ॥२३४॥
मर्दयेद् भक्षयेन्माषं मरिचार्द्रं लिहेदनु।
निहन्ति ग्रहणीरोगं पथ्यं तक्रौदनं हितम् ॥२३५॥

१. वराटिकाभस्म, २. शुण्ठी, ३. मरिच, ४. पिप्पली, ५. शुद्ध टंकण, ६. शुद्ध वत्सनाभ, ७. शुद्ध गंधक, ८. शुद्ध पारद तथा ९. जम्बीरीनींबू स्वरस—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद तथा शुद्ध गंधक को समभाग में लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली बना लें। जब कज्जली बन जाये तब बाकी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण उसमें मिलाकर जम्बीरी नींबू के स्वरस की भावना दें। जब सभी द्रव्य अच्छी तरह से एक में मिल जायें

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तो $\frac{1}{2}$ रत्ती अर्थात् ६० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इस रस की १ वटी सेवन करें तथा अनुपान रूप में मरिच चूर्ण ५०० मि.ग्रा., आर्द्रक का रस शहद के साथ मिलाकर लेहन करें। इस रस का सेवन करने से ग्रहणी रोग नष्ट होता है। पथ्यरूप में तक्र एवं भात खाना लाभदायक है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं आर्द्रक स्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—संग्रहणी एवं अतिसार में।

५४. ग्रहणीकपर्दपोट्टली रस (र.सा.सं.)

कपर्दतुल्यं रसकन्तु गन्धकं
लौहं मृतं टङ्गणकञ्च तुल्यकम्।
जयारसेनैकदिनं विमर्द्य
चूर्णेन संवेष्ट्य पुटेच्च भाण्डे॥
ददीत तत्पोट्टलिकाभिधानां
वातप्रधानां ग्रहणीनिवृत्त्यै॥२३६॥

१. वराटिकाभस्म, २. शुद्ध पारद, ३. शुद्ध गंधक, ४. लौह भस्म, ५. शुद्ध टंकण तथा ६. भाँगपत्रस्वरस की भावना—सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। जब भली प्रकार से कज्जली बन जाये तब बाकी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण कज्जली के साथ मिलाकर भाँगपत्रस्वरस की अच्छी प्रकार से भावना दें। इसके पश्चात् खरल किये गये द्रव्य का एक बड़ा-सा गोला बनाकर छायाशुष्क करें। शरावसम्पुट कर चूना तथा गुड़ की पिष्टी से सन्धि बन्द करके बालुकायंत्र में रखकर एक प्रहर तक पाक करें। जब स्वाङ्गशीत हो जाय तो इस सिद्ध रस को निकालकर मर्दन कर शीशी में रख लें। इस रस का सेवन १ रत्ती से २ रत्ती की मात्रा में रोगी को करायें। इसके सेवन से वातज संग्रहणी नष्ट होती है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु और आर्द्रक रस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार एवं अग्निमान्द्य में।

५५. अग्निकुमार रस (र.सा.सं.)

रसं गन्धं विषं व्योषं टङ्गणं लौहभस्मकम्।
अजमोदाहिफेनञ्च सर्वतुल्यं मृताभ्रकम्॥२३७॥
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेद्याममात्रकम्।
मरिचाभां वटीं खादेदजीर्णं ग्रहणीं तथा॥२३८॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो गुह्यमेतच्चिकित्सितम्।
आमदोषं हरेच्छीघ्रं रसश्चाग्निकुमारकः॥२३९॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभविष, ४. शुण्ठीचूर्ण, ५. मरिच चूर्ण, ६. पीपर चूर्ण, ७. शुद्ध सुहागा, ८. लौहभस्म, ९. अजमोदाचूर्ण, १०. शुद्ध अफीम, ११. अभ्रक भस्म १०० ग्राम तथा १२. चित्रक क्वाथ—पारद से अफीम पर्यन्त सभी १० द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक साफ बड़े खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और चित्रकक्वाथ से ३ घण्टे तक मर्दन करें। १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। १ वटी रोगी को सेवन करायें तथा अनुपान रूप में शीतोदक दें। इस अग्निकुमार रस के सेवन से अजीर्ण, ग्रहणी दोष, आमदोष आदि रोग नष्ट होते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—शीतल जल से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी, अतिसार एवं अग्निमान्द्य में।

५६. ग्रहणीकपाटरस-१ (स्वल्प)

दरदं गन्धपाषाणं तुगाक्षीर्यहिफेनकम्।
तथा वराटिकाभस्म सर्वं क्षीरेण मर्दयेत्॥२४०॥
रक्तिकायुग्ममानेन छायाशुष्कां वटीं चरेत्।
ग्रहणीं विविधां हन्ति रक्तातीसारमुल्बणम्॥२४१॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध गंधक, ३. वंशलोचन, ४. शुद्ध अफीम, ५. कौड़ीभस्म तथा ६. अजादुग्ध—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक की खरल में घोंट कर कज्जली बना लें। अफीम को अजादुग्ध में घोलकर भावना दें और एक प्रहर तक खरल करें। २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १-१ वटी शीतल जल के साथ रोगी को प्रतिदिन सेवन करायें। इस रस को सेवन करने से विभिन्न प्रकार की संग्रहणी एवं भयङ्कर रक्तातिसार रोग शान्त हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—अहिफेनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी एवं रक्तातिसार में।

५७. ग्रहणीकपाटरस-२ (र.सा.सं.)

रसगन्धकयोश्चापि जातीफललवङ्गयोः।
प्रत्येकं शाणमानञ्च श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम्॥२४२॥
सूर्यावर्त्तरसेनैव बिल्वपत्ररसेन च।
शृङ्गाटकस्य पत्राणां रसैः प्रत्येकशः पलैः॥२४३॥
चण्डातपेन संशोष्य वटिकां कारयेद्भिषक्।
बिल्वपत्ररसेनैव दापयेद्रक्तिकाद्वयम्॥२४४॥
दध्ना च भोजनीयञ्च ग्रहणीरोगनाशनः।
पाण्डुरोगमतीसारं शोथं हन्ति तथा ज्वरम्॥
ग्रहणीकपाटनामा रसः परमदुर्लभः॥२४५॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शुद्ध पारद ५० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, ३. जायफल ५० ग्राम और ४. लवङ्ग ५० ग्राम लें। **भावना**—सूर्यमुखीपत्ररस, बिल्वपत्ररस तथा सिंघाड़ापत्ररस—सर्वप्रथम एक साफ खरल में पारद एवं गन्धक मिलाकर मर्दन करें। अच्छी कज्जली बन जाने पर उसमें अन्य दोनों द्रव्यों के चूर्ण मिलावें और क्रमशः तीनों द्रव्यों के स्वरस के साथ ३-३ घण्टे तक मर्दन करें। २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर तीक्ष्ण धूप में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'ग्रहणीकपाटरस' को बिल्वपत्रस्वरस के साथ १ वटी सेवन करें। इस रस का सेवन करने के बाद रोगी को भूख लगने पर दही और भात का पथ्य रूप में सेवन करायें। इससे संग्रहणी, पाण्डुरोग, अतिसार, शोथ एवं ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह ग्रहणीकपाट रस अत्यन्त दुर्लभ है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं बिल्वपत्रस्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी एवं अरुचि में।

५८. ग्रहणीकपाटरस-३ (रसचण्डांशु)

श्वेतसर्जस्य शुद्धस्य गन्धकस्य रसस्य च।
शुभेऽह्नि पृथगादाय चूर्णं माषचतुष्टयम् ॥२४६॥
एकीकृत्य शिलाखल्ले दद्यात्तेषां तदा रसम्।
सूर्यावर्त्तस्य बिल्वस्य शृङ्गाटस्य च पत्रजम् ॥२४७॥
प्रत्येकं पलमेकैकं दापयेद् ग्रहणीगदे।
दापयित्वा ततो यत्नाद् दधिभक्तं समाचरेत् ॥२४८॥
असंवृतगुदद्वारं कपाटमिव ढक्कयेत्।
अतश्च ग्रहणीरोगे कपाटोऽयं रसः स्मृतः ॥२४९॥

१. श्वेतसर्जरस ५० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम तथा ३. शुद्ध पारद ५० ग्राम लें। **भावना**—सूर्यमुखी रस, बिल्वपत्र रस एवं सिंघाड़ापत्र रस। शुभ दिन एवं मुहूर्त में एक खरल में पारद एवं गन्धक को मिलाकर कज्जली बनावें। कज्जली में राल को चूर्ण करके मिला दें तथा स्वरस डालकर धूप में खरल करें। जब घोंटते-घोंटते सूख जाय तब उसके बाद क्रमशः बेलपत्र स्वरस एवं सिंघाड़ापत्र स्वरस के साथ अलग-अलग खरल करें। जब अच्छी प्रकार से खरल हो जाय तब २-२ रत्ती अर्थात् २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। २५० मि.ग्रा. तक की मात्रा में इस रस को बेलपत्र स्वरस एवं शहद के साथ ग्रहणीरोग में सेवन करायें। भूख लगने पर रोगी को दही और भात खाने के लिए दें। रोग के कारण खुले हुए गुदद्वार को यह रसौषधि कपाट के समान बन्द कर देता है। इसीलिए इसे ग्रहणी रोग में प्रयोग करते हैं तथा इसी कारण से इसको ग्रहणीकपाटरस कहते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायन-गन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी, आमदोष एवं अग्निमांद्य में।

५९. ग्रहणीकपाटरस-४ (र.सा.सं.)

गिरिजाभवबीजकज्जलीपरिमर्द्यार्द्ररसेन शोषिता।
कुटजस्य तु भस्मना पुनर्द्विगुणेनाथ विमर्द्य मिश्रिता ॥२५०॥
मर्दयित्वा प्रदातव्यमस्य गुञ्जाचतुष्टयम्।
अजाक्षीरेण दातव्यं क्वाथेन कुटजस्य वा ॥२५१॥
यूषो देयो मसूरस्य वारिभक्तञ्च शीतलम्।
दध्ना सह पुनर्देयं ग्रासादौ रक्तिकाद्वयम् ॥२५२॥
वर्द्धयेद्दशपर्यन्तं ह्रासयेत् क्रमशस्तथा।
निहन्ति ग्रहणीं सर्वां विशेषात् कुक्षिमार्दवम् ॥२५३॥

१. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, २. शुद्ध पारद ५० ग्राम एवं ३. कुटजत्वग् मसी २०० ग्राम—सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बना लें। ततः इस कज्जली को आर्द्रकस्वरस के साथ एक प्रहर तक मर्दन करें। पुनः उसमें इसकी दुगुनी मात्रा में अर्थात् कुटज की छाल की अन्तःपुटदग्ध भस्म मिलाकर सबको एक प्रहर तक मर्दन कर काचपात्र में भर दें। इसे ग्रहणीकपाट रस कहते हैं। ४ रत्ती अर्थात् ५०० मि.ली. की मात्रा में इस रसौषधि को लेकर बकरी के दूध या १ पल (५० मि.ली.) कुटजत्वक् क्वाथ के साथ सेवन करें। भूख लगने पर मसूर की दाल का यूष, दही, भात तथा पीने के लिए ठण्डा जल दें।

सेवन-विधि—इस रस को पहले दिन २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में दही और भात के साथ प्रथम ग्रास में मिलाकर खायें तथा प्रतिदिन २-२ रत्ती बढ़ाकर १० रत्ती तक ले जायें। १० रत्ती तक हो जाने पर दूसरे दिन से क्रमशः २-२ रत्ती घटाते जायें। इस प्रकार सेवन करने से यह ग्रहणीकपाट रस सभी प्रकार की संग्रहणी में लाभदायक है तथा कोष्ठ को मृदु कर देता है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, संग्रहणी, अतिसार एवं अरुचि में।

६०. ग्रहणीकपाटरस-५ (र.सा.सं.)

टङ्कणक्षारगन्धाश्मरसं जातीफलं तथा।
बिल्वं खदिरसारञ्च जीरकं श्वेतधूनकम् ॥२५४॥
कपित्थहस्तबीजञ्च तथैव बकपुष्पकम्।
एषां शाणं समादाय श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥२५५॥
बिल्वपत्रककार्पासफलं शालिञ्चदुग्धिका।
शालिञ्चमूलं कुटजत्वचः कञ्चटपत्रकम् ॥२५६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वेषां स्वरसेनैव वटिकां कारयेद् भिषक्।
रक्तिकैकप्रमाणेन भक्षयेद्दिवसत्रयम् ॥२५७॥
दधिमस्तु ततः पेयं पलमात्रप्रमाणतः।
अपि योगशताक्रान्तां ग्रहणीमुद्धतां जयेत् ॥२५८॥
आमशूलं ज्वरं कासं श्वासं शोथं प्रवाहिकाम्।
रक्तस्रावकरं द्रव्यं कार्यं नैवात्र युक्तितः ॥२५९॥
कृष्णवार्त्ताकुमत्स्यञ्च दधितक्रञ्च शस्यते।
मत्वा वायोः कृतिं तत्र तैलं वारि प्रदापयेत् ॥२६०॥

१. शुद्ध टङ्कण, २. शुद्ध गंधक, ३. शुद्ध पारद, ४. जायफलचूर्ण, ५. बिल्वफलमज्जाचूर्ण, ६. खदिरसार (कत्था) चूर्ण, ७. श्वेतजीराचूर्ण, ८. श्वेतसर्जरसचूर्ण, ९. कपित्थ (कैंत) फलचूर्ण, १०. केवाँचबीजचूर्ण तथा ११. अगस्तपुष्पचूर्ण (समभाग) लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मिलाकर मर्दन करें। अच्छी कज्जली बनने पर शेष सभी द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। ततः—

भावना—१. बिल्वपत्ररस, २. कपासफलरस, ३. शालिञ्चशाकरस, ४. दुग्धिकारस, ५. शालिञ्चमूलरस, ६. कुटजत्वक् क्वाथ तथा ७. जलपिप्पली रस—इन सात द्रव्यों के स्वरस से क्रमशः भावना देकर मर्दन करें। जब मर्दन करते-करते सूख जाये तो १-१ रत्ती अर्थात् १२५ मि.ग्रा. मात्रा में वटी बना कर छाया में सुखायें और काचपात्र में रख लें। इस रस की १-१ वटी मस्तु के साथ तीन दिन तक खिलायें। यह ग्रहणीकपाट रस सैकड़ों योगों से दुःचिकित्स्य भयङ्कर ग्रहणी रोग एवं आमदोष के कारण उत्पन्न हुए शूल, ज्वर, कास, श्वास, शोथ तथा प्रवाहिका आदि रोगों को नाश करता है। इस रस को सेवन करते समय रक्तस्राव कराने वाले उष्ण द्रव्यों का सेवन न करें। पथ्य में विशेषतः बैगन का साग, मछली, दही, तक्र आदि उत्तम हैं। यदि वातज दोष अधिक हों तो तैलों से मालिश एवं उष्ण जल पीने को देना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं मस्तुजल से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु एवं क्षारीय। **उपयोग**—संग्रहणी एवं अग्निमान्द्य में।

६१. ग्रहणीवज्रकपाटरस-१ (र.सा.सं.)

सूतं गन्धं यवक्षारं जयन्त्युग्राभ्रटङ्कणम्।
जयन्तीभृङ्गजम्बीरद्रवैः पिष्ट्वा दिनत्रयम् ॥२६१॥
यामार्द्धं गोलकं स्वेद्यं मन्देन पावकेन च।
शीते जयारससमैः शाल्मलीविजयाद्रवैः ॥२६२॥
भावयेत्सप्तधा वज्रकपाटः स्याद्रसोत्तमः।
माषद्वयं त्रयं वाऽस्य मधुना ग्रहणीं जयेत् ॥२६३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गंधक, ३. यवक्षार, ४. जयन्तीपत्र, ५. वचा, ६. अभ्रकभस्म और ७. शुद्ध टङ्कण।

भावना—१. जयन्तीपत्र स्वरस, २. भृङ्गराजपत्र स्वरस, ३. जम्बीरीनींबू का रस, ३. जयन्तीपत्र रस, ४. सेमलमूल क्वाथ तथा ५. भाँग स्वरस—पारद से टंकण तक सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक की कज्जली बनायें। जब कज्जली बन जाये तब यवक्षार से शुद्ध टंकण तक के शेष द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को उस कज्जली में मिला दें तथा जयन्तीपत्र स्वरस, भृंगराजपत्र स्वरस एवं जम्बीरी नींबू का रस लेकर प्रत्येक द्रव से अलग-अलग भावना देकर खरल करें। जब भलीभाँति खरल हो जाये तो उस द्रव्य का गोला बनाकर सुखा लें, ततः बालुकायन्त्र में आधी प्रहर तक धीमी आँच में स्वेदन करें। आधे प्रहर के पश्चात् स्वाङ्गशीत होने पर गोले को निकालकर खरल में महीन पीस लें तथा जयन्ती, सेमलमूल एवं भाँग इनके स्वरस से अलग-अलग सात-सात बार भावना देकर खरल करें। यह सभी रसों में श्रेष्ठ ग्रहणीवज्रकपाट रस है। इस रस को १२५-२५० मि.ग्रा. की मात्रा में लेकर शहद के साथ प्रतिदिन खाने से संग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी एवं अग्निमान्द्य में।

६२. ग्रहणीवज्रकपाट रस-२ (शार्ङ्ग.सं.)

तारमौक्तिकहेमानि सारश्चैकैकभागिकम्।
द्विभागो गन्धकः सूतस्त्रिभागो मर्दयेदिमान् ॥२६४॥
कपित्थस्वरसैर्गाढं मृगशृङ्गे ततः क्षिपेत्।
पुटेद्रजपुटेनैव तत उद्धृत्य मर्दयेत् ॥२६५॥
बलारसैः सप्तधैवमपामार्गरसैस्त्रिधा।
लोध्रप्रतिविषामुस्तधातकीन्द्रयवामृताः ॥२६६॥
प्रत्येकमेतत्स्वरसैर्भावना स्यात् त्रिधा त्रिधा।
माषगात्रो रसो देयो मधुना मरिचैस्तथा ॥२६७॥
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं सर्वजामपि।
कपाटो ग्रहणीरोगे रसोऽयं वह्निदीपनः ॥२६८॥

१. रजतभस्म १० ग्राम, २. मोतीपिष्टी १० ग्राम, ३. स्वर्ण भस्म १० ग्राम, ४. लौहभस्म १० ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक २० ग्राम तथा ६. शुद्ध पारद ३० ग्राम। एक खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर अच्छी कज्जली बना लें। ततः अन्य भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद कैंत (कपित्थ) के स्वरस की भावना दें और ६ इञ्च मृगशृङ्ग के टुकड़े में लम्बाई से छेद करें तथा उपर्युक्त भावित औषधि को उसी मृगशृङ्ग में भरें और शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गीतल होने पर सम्पुट खोलकर मृगशृङ्ग के साथ सभी द्रव्यों को खरल में मर्दन करें। ततः—बलास्वरस की ७ भावना तथा अपामार्ग स्वरस की ३

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भावना और लोध्र क्वाथ, अतीस क्वाथ, नागरमोथा क्वाथ, धातकीपुष्प, इन्द्रयव क्वाथ एवं गुडूचीस्वरस की ३-३ भावना दें। सूखने पर मर्दन करें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'ग्रहणीकपाट रस' को ६०-१२५ मि.ग्रा. की मात्रा में मरिचचूर्ण एवं मधु के साथ मिलाकर चाटने से सभी प्रकार के अतिसार एवं संग्रहणी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५। **अनुपान**—। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी एवं अग्निमान्द्य तथा जाठराग्निप्रदीपक में।

६३. सङ्ग्रहग्रहणीकपाट रस-३ (र.सा.सं.)

मुक्ता सुवर्णं रसगन्धटङ्क-
मभ्रं कपर्दोऽमृततुल्यभागः ।
सर्वैः समं शङ्खकचूर्णमिष्टं
खल्ले च भाव्योऽतिविषाद्रवेण ॥२६९॥
गोलञ्च कृत्वा मृदुकर्पटस्थं
सम्पाच्य भाण्डे दिवसार्द्धकञ्च ।
सर्वाङ्गशीतो रस एष भाव्यो
धुस्तूरवह्न्योर्मुषलीद्रवैश्च ॥२७०॥
लौहस्य पात्रे परिभावितश्च
सिद्धो भवेत्सङ्ग्रहणीकपाटः ।
वातोत्तरायां मरिचाज्ययुक्तः
पितोत्तरायां मधुपिप्पलीभिः ॥२७१॥
कफोत्तरायां विजयारसेन
कटुत्रयेणाज्ययुतो ग्रहण्याम् ।
क्षयज्वरे चार्शसि षट्प्रकारे
मान्द्यातिसारारुचिपीनसेषु ॥२७२॥
मेहे च कृच्छ्रे गतधातुवर्द्धने
गुञ्जाद्वयं चापि महामयघ्नम् ॥२७३॥

१. मोतीभस्म, २. स्वर्णभस्म, ३. शुद्ध पारद, ४. शुद्ध गंधक, ५. शुद्ध टङ्कण, ६. अभ्रकभस्म, ७. वराटिकाभस्म, ८. शुद्ध वत्सनाभ—सभी द्रव्य १-१ भाग तथा ९. शंखभस्म ८ भाग लें।

भावना—१. अतीस क्वाथ, २. धत्तूरमूल स्वरस, ३. चित्रकमूल स्वरस एवं ४. मुसली स्वरस।

विधि— सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को खरल में मर्दन कर कज्जली बना लें। जब कज्जली निर्माण हो जाये तब उसमें शेष भस्मों को मिलाकर पीस लें। तत्पश्चात् अतीस के क्वाथ की एक भावना देकर बड़ा गोला बना लें तथा सुखा लें। इसके बाद उस गोले को महीन कपड़े में लपेट दें या केवल गोले को शरावसम्पुट कर कपड़मिट्टी द्वारा संधिबंधन कर बालुकायंत्र में डाल कर दो प्रहर तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट को निकालकर संधिबंधन हटा दें तथा पक्व औषध को लोहे की खरल में पीसकर धत्तूरे के पत्र रस, चित्रकमूल क्वाथ एवं मुसली स्वरस या क्वाथ से सात-सात बार अलग-अलग भावना देकर खरल करें और २५० मि.ग्रा. की वटिकाएँ बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में रख लें। वातज प्रधान ग्रहणी में इस रस को २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) मरिच चूर्ण १ ग्राम तथा घी मिलाकर रोगी को सेवन करायें। पित्तदोष प्रधान ग्रहणी में २ रत्ती पिप्पली चूर्ण एवं शहद के साथ सेवन करायें और कफप्रधान ग्रहणीदोष में भाँग के स्वरस एवं त्रिकटु चूर्ण १ ग्रा. तथा घी के साथ रोगी को खिलायें। ग्रहणी-विकारों के अलावा अनुपान भेद से २५० मि.ग्रा. के इस रस को क्षयजन्य ज्वर, छः प्रकार के अर्श, अग्निमान्द्य, अतिसार, अरुचि, पीनस, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र में तथा विनष्ट हुई रस-रक्तादि धातुओं की वृद्धि करने के लिए प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं आर्द्रक स्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, संग्रहणी एवं मूत्रकृच्छ्र में।

६४. ग्रहणीगजेन्द्र वटिका

रसगन्धकलोहानि शङ्खटङ्कणरामठम् ।
शटीतालीशमुस्तानि धान्यजीरकसैन्धवम् ॥२७४॥
धातक्यतिविषा शुण्ठी गृहधूमो हरीतकी ।
भल्लातकं तेजपत्रं जातीफललवङ्गके ॥२७५॥
त्वगेला बालकं बिल्वं मेथी शक्राशनस्य च ।
रसैः संमर्द्य वटिका रसवैद्येन कारिता ॥२७६॥
गहनानन्दनाथेन भाषितेयं रसायने ।
ग्रहणीगजेन्द्रसंज्ञेयं श्रीमता लोकरक्षणे ॥२७७॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति ज्वरातीसारनाशिनी ।
शूलगुल्माम्लपित्तांश्च कामलाञ्च हलीमकम् ॥२७८॥
बलवर्णाग्निजननी सेविता च चिरायुषे ।
कण्डूं कुष्ठं विसर्पञ्च गुदभ्रंशं कृमिं जयेत् ॥२७९॥
माषद्वयां वटीं खादेच्छागीदुग्धानुपानतः ।
वायोऽग्निबलमावीक्ष्य युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥२८०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गंधक, ३. लौहभस्म, ४. शङ्खभस्म, ५. शुद्ध टङ्कण, ६. शुद्ध हींग, ७. कचूर, ८. तालीशपत्र, ९. नागरमोथा, १०. धनियाँ, ११. श्वेतजीरा, १२. सैन्धवनमक, १३. धातकीपुष्प, १४. अतीस, १५. सोंठ, १६. गृहधूम, १७. हरीतकी, १८. शुद्ध भिलावा, १९. तेजपत्र, २०. जायफल, २१. लवङ्ग, २२. दालचीनी, २३. छोटी इलायची, २४. सुगन्धबाला, २५. बिल्वफलमज्जा, २६. मेथी और २७.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शुद्ध भाँग—सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गंधक को खरल में मर्दन कर कज्जली निर्माण करें। जब कज्जली बन जाये तो उसमें शेष द्रव्यों के चूर्ण को सूक्ष्म पीसकर मिला दें तथा भाँग स्वरस की भावना देकर एक प्रहर तक खरल में मर्दन करें। जब सभी द्रव्य भली प्रकार से मिल जायें तो १-१ रत्ती अर्थात् ३७५ मि.ग्रा. की वटी बना लें। इन वटिकाओं को छाया में सुखा कर शीशी में सुरक्षित रख लें। श्रीमान् गहनानन्दनाथ नाम से विख्यात रसाचार्य ने इस लोक की रक्षा करने के लिए ग्रहणीगजेन्द्र नामक इस वटिका को बताया। इस वटिका के सेवन से विभिन्न प्रकार के ग्रहणी के रोग, ज्वर, अतिसार, ज्वरातिसार, शूल, गुल्म, अम्लपित्त, कामला, हलीमक, कण्डू, कुष्ठ, विसर्प, गुदभ्रंश एवं कृमिजन्य रोग नष्ट हो जाते हैं। शारीरिक बल, कान्ति एवं जाठराग्नि की वृद्धि होती है। रोगी की अवस्था तथा अग्निबल को ध्यान में रखकर २ माशा अर्थात् २ ग्राम की मात्रा में इस वटी को बकरी के दूध के साथ सेवन करायें। भूख लगने पर रोगी को तक्र-भात एवं दही-भात खिलायें।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—बकरी के दूध से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अतिसार-संग्रहणी, अग्निमान्द्य, आमदोष एवं अम्लपित्त में।

६५. ग्रहणीशार्दूल रस

रसगन्धकयोश्चापि कर्षमेकं सुशोधितम्।
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा हाटकं षोडशांशतः ॥२८१॥
लवङ्गं निम्बपत्रञ्च जातीकोषफले तथा।
एतेषां कर्षचूर्णेन सूक्ष्मैलां सह मेलयेत् ॥२८२॥
मुक्तागृहे तु संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत्।
गुञ्जापञ्चप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥२८३॥
सूतिकां ग्रहणीरोगं हरत्येष सुनिश्चितम्।
अर्शघ्नो दीपनश्चैव बलपुष्टिप्रसाधनः ॥२८४॥
कासश्वासातिसारघ्नो बलवीर्यकरः परः।
संग्रहग्रहणीरोगं चामशूलञ्च नाशयेत्॥
संसारलोकरक्षार्थं पुरा रुद्रेण भाषितः ॥२८५॥

१. शुद्ध पारद ६ ग्राम, २. शुद्ध गंधक ६ ग्राम, ३. स्वर्णभस्म ७५० मि.ग्रा., ४. लवङ्ग १२ ग्राम, ५. नीम की पत्ती १२ ग्राम, ६. जावित्री १२ ग्राम, ७. जायफल १२ ग्राम तथा ८. छोटी इलायची १२ ग्राम। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। जब कज्जली बन जाये तो दोनों का १६वाँ भाग स्वर्णभस्म (६ रत्ती = ७५० मि.ग्रा.) तथा बाकी सभी द्रव्यों को सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा कज्जली में मिला दें। तत्पश्चात् मुक्ताशुक्ति के सम्पुट में रखकर उसी से संपुटित कर पुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोलकर औषधि को निकालें और खरल में मर्दन कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस रस को ५ रत्ती अर्थात् ६२५ मि.ग्रा. की मात्रा में प्रतिदिन सेवन करें। इस रस के सेवन से सूतिका रोग, अर्श, अग्निमान्द्य, कास, श्वास, अतिसार, दुःसाध्य संग्रहणी तथा आमशूल रोग नष्ट होते हैं। यह रस पाचकाग्नि को प्रदीप्त करता है, शरीर के बल एवं वीर्य की वृद्धि करता है संसार के मनुष्यों की रक्षा के लिए प्राचीनकाल में भगवान् शंकरजी ने इस रस को बताया था।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—सूतिकाज्वर, ग्रहणी, अग्निमान्द्य एवं आमज शूल में।

६६. ग्रहणीशार्दूल वटिका

जातीफलं देवपुष्पमजाजीकृष्टटङ्कणम्।
विडं त्वगेला धुस्तूरं फणिफेनं समं समम् ॥२८६॥
प्रसारणीरसेनैव संमर्द्य वटिका कृता।
यथादोषानुपानेन सेविता ग्रहणीं हरेत् ॥२८७॥
नानावर्णमतीसारं दारुणाञ्च प्रवाहिकाम्।
इयं ग्रहणीशार्दूलवटिका ग्राहिणी परम् ॥२८८॥

१. जायफल, २. लवङ्ग, ३. श्वेतजीरा, ४. कूठ, ५. शुद्ध टङ्कण, ६. विड्लवण, ७. दालचीनी, ८. छोटी इलायची, ९. शुद्ध धतूरे के बीज, १०. शुद्ध अफीम—सर्वप्रथम सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। गंधप्रसारिणी के पत्तों के रस में शुद्ध अफीम मिलाकर उसी रस की भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बना लें तथा इन्हें धूप में सुखायें। दोषानुसार शामक अनुपानों के साथ इस वटी को सेवन करने से विभिन्न वर्ण वाले मल, अतिसार एवं भयङ्कर प्रवाहिका नष्ट होती है। यह ग्रहणीशार्दूल वटिका अत्यन्त ग्राहिणी है और संग्रहणी-नाशक है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—भुना जीरा एवं तक्र से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—कटु-लवणीय। **उपयोग**—संग्रहणी एवं अग्निमान्द्य में।

६७. वज्रकपाट रस (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकञ्चैव अहिफेनं समोचकम्।
त्रिकटु त्रिफलां चैव सममेकत्र कारयेत् ॥२८९॥
खल्लयेत्तु शिलाखण्डे क्रमशो वक्ष्यमाणकैः।
भृङ्गाभृङ्गद्रवैश्चैतत् भावयेच्च पुनः पुनः ॥२९०॥
रक्तित्रयं ततश्चास्य मधुना सह भक्षयेत्।
असाध्यां ग्रहणीं हन्ति रसो वज्रकपाटकः ॥२९१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गंधक, ३. शुद्ध अफीम, ४. मोचरस, ५. शुण्ठी, ६. मरिच, ७. पीपर, ८. हरीतकी, ९. आमला तथा १०. बहेड़ा—ये सभी द्रव्य १-१ भाग लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गंधक को खरल में मर्दन कर कज्जली का निर्माण करें। जब कज्जली बन जाय तो उसमें बाकी बचे द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिला दें। तत्पश्चात् भाँग स्वरस तथा भृङ्गराज स्वरस से सात-सात बार भावना दें तथा अच्छी प्रकार घोंटें। ३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १-१ वटी मधु के साथ सेवन करने से असाध्य संग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायन-गन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—ग्रहणी एवं अग्निमान्द्य में।

६८. महागन्धक

रसगन्धकयोः कर्षं ग्राह्यमेकं सुशोधितम्।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥२९२॥
जात्याः फलं तथा कोषं लवङ्गारिष्टपत्रके।
एतेषां कर्षमात्रेण तोयेन सह मर्दयेत् ॥२९३॥
मुक्तागृहे पुनः स्थाप्यं पुटपाकेन साधयेत्।
घनपङ्के बहिर्लिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत् ॥२९४॥
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः।
एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महौषधम् ॥२९५॥
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव बलवर्णप्रसादनम्।
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम् ॥२९६॥
सूतिकाञ्च जयेदेतदपि वैद्यविवर्जिताम्।
कासश्वासातिसारघ्नं वाजीकरणमुत्तमम् ॥२९७॥
बालरोगं निहन्त्याशु सर्वोपद्रवसंयुतम्।
पिशाचा दानवा दैत्या बालानां ये विघातकाः ॥२९८॥
यत्रौषधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां त्यजन्ति ते।
बालानां गदयुक्तानां स्त्रीणाञ्चापि विशेषतः ॥२९९॥
महागन्धकमेतद्धि सर्वव्याधिनिषूदनम्।
विना पाकेन सर्वाङ्गसुन्दरोऽयं प्रकीर्त्तितः ॥३००॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. जायफल, ४. जावित्री, ५. लौंग तथा ६. नीम का सूखा पत्र (समभाग) लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। तत्पश्चात् एक लोहे की दर्वी में २-४ बूँद घी डालकर आग पर गरम करें। पुनः २० ग्राम कज्जली उसमें डालकर पाक करें और चम्मच से बराबर चलाते रहें। जब सम्पूर्ण कज्जली पिघलकर वटी जैसी गोल बन जाय तब दर्वी को आग से नीचे उतार लें। ठण्डा होने पर कज्जली को खरल में पीसें। तत्पश्चात् जायफलादि ४ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर उस कज्जली चूर्ण में मिला दें। अच्छी तरह मर्दन के बाद सभी मर्दित द्रव्यों को बड़ी शुक्ति में भरकर शुक्ति से सम्पुट कर चिकनी मिट्टी से सन्धिबन्धन करें। ऐसी ४-५ सम्पुटित सीप को एक बड़े शराव में सम्पुटित कर कुक्कुटपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोलकर सीप से सम्पुटित मिट्टी आदि को हटाकर खरल में सीप सहित पीस लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

उपयोग—यह बालरोगों की महौषधि है। बालकों के भूत, पिशाच, दानव, दैत्यादि ग्रहरूपी बाधानाशक है; सभी उपद्रवों से युक्त बालरोगनाशक है, ज्वरघ्न है; ग्रहणी, अतिसार, प्रवाहिका, सूतिकारोग, श्वास-कासादि रोगनाशक है; रसायन एवं वाजीकरण है। विशेषकर यह औषध स्त्रियों के सभी रोग का नाश करती है। यह महागन्धक योग सभी प्रकार के रोगों को नाश करता है। यदि बिना पाक किये कज्जली से इस योग को बनाया जाय तो इसे सर्वाङ्गसुन्दररस कहते हैं। यह बल-वर्ण प्रसादक एवं अग्निदीपक है।

मात्रा—अवस्थानुसार १२५ से ७५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी-अतिसार, बालरोग एवं स्त्रीरोग में।

६९. श्रीवैद्यनाथवटिका

रसस्य शाणं संगृह्य काञ्जिकेन तु शोधयेत्।
चित्रकस्य रसेनापि त्रिफलायाश्च बुद्धिमान् ॥३०१॥
रसार्द्धं गन्धकं शुद्धं भृङ्गराजरसेन वा।
द्वाभ्यां सम्मूर्च्छनं कृत्वा स्वरसैः शाणसम्मितैः॥३०२॥
खल्लयेत्तु शिलाखल्ले क्रमशो वक्ष्यमाणकैः।
निर्गुण्डीमण्डुकीश्वेताकुचेलाग्रीष्मसुन्दरैः ॥३०३॥
भृङ्गाह्वकेशराजैश्च जयेन्द्राशनकोत्कटैः।
सर्षपाभां वटीं कृत्वा दद्यात्तां ग्रहणीगदे ॥३०४॥
सामवातेऽग्निमान्द्ये च ज्वरे प्लीहोदरेषु च।
वातश्लेष्मविकारेषु तथा श्लेष्मगदेषु च ॥३०५॥
दधिमस्तु विनिक्षिप्य मर्दयित्वा यथाबलम्।
दातव्या गुडिकाः सप्त रोगिणे ग्रहणीगदे ॥३०६॥
अम्बुतक्रादिसेवान्तु कुर्वीत स्वेच्छया बहु।
श्रीमता वैद्यनाथेन लोकानुग्रहकारिणा ॥
स्वप्नान्ते ब्राह्मणायेयं भाषिता लिखिताऽपि च ॥३०७॥

शुद्ध पारद १ भाग एवं शुद्ध गन्धक आधा भाग।

१. काञ्जी, २. चित्रकमूलक्वाथ, ३. त्रिफलाक्वाथ, ४. भृङ्गराजस्वरस, ५. सिन्दुवारस्वरस, ६. मण्डूकपर्णीस्वरस, ७. श्वेतअपराजिता, ८. धत्तूरपञ्चाङ्गस्वरस, ९. ग्रीष्मसुन्दरशाक स्वरस, १०. भृङ्गराजस्वरस, ११. केशराजस्वरस, १२. भाँग का स्वरस तथा १३. उत्कट = सरकण्डामूल क्वाथ—एक खरल में शुद्ध पारद को रखकर काञ्जी, चित्रकमूल क्वाथ एवं त्रिफला क्वाथ के साथ ३-३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः पारद को किसी पात्र में पृथक् कर लें और उस खरल को साफ कर

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पारद से आधा शुद्ध गन्धक डालकर भृङ्गराज स्वरस में ३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः पारद एवं गन्धक को एक खरल में रखकर ८-१० घण्टे तक लगातार मर्दन कर अच्छी तरह से कज्जली बना लें। पुनः सिन्दुवार स्वरस से सरकण्डास्वरस तक सभी १० रसों के साथ ३-३ घंटे तक मर्दन कर सरसों (१०-१० मि.ग्रा.) बराबर की वटियाँ बनाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

उपयोग—संग्रहणी, आमवात, अग्निमान्द्य, ज्वर, प्लीहोदर, उदररोग, वातश्लेष्मज व्याधियों तथा श्लेष्मज व्याधियों में प्रयोग करने से ये व्याधियाँ शान्त होती हैं। ग्रहणी रोग में इस रसौषधि की ७ वटियाँ दही के पानी (मस्तु) में घोलकर रोगी को पिलायें। इस रस के सेवन काल में जल तथा मट्ठा आदि का सेवन इच्छानुसार अधिक मात्रा में करना चाहिए। पथ्यरूप में दही-भात एवं मट्ठा-भात का सेवन प्रशस्त है। संसार के भलाई की कामना करने वाले श्रीमान् वैद्यनाथ नाम के महर्षि ने ब्राह्मण को स्वप्न रूप में लिखकर इस वटी को दिया था।

मात्रा—३० मि.ग्रा. से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं संग्रहणी में।

७०. आमपर्पटिका (खसर्पणवटिका)

पक्वेष्टकाहरिद्राभ्यामागारधूमकेन च।
शोधितं पारदश्चैव कर्षार्द्धं तुलया धृतम् ॥३०८॥
भृङ्गराजरसैः शुद्धं गन्धकं रससम्मितम्।
द्वाभ्यां कज्जलिकां कृत्वा भावयेत्तत्तु भैषजैः ॥३०९॥
सिन्दुवारदलरसे मण्डूकपर्णिकारसे।
केशराजरसे चापि ग्रीष्मसुन्दरजे रसे ॥३१०॥
रसेऽपराजितायाश्च सोमराजीरजे तथा।
रक्तचित्रकपत्रोत्थे रसे च परिभावितम् ॥३११॥
रसमानसमानेन छायायां शोषयेद्भिषक्।
सर्षपाभाश्च गुडिकाः कारयेत् कुशलो भिषक् ॥३१२॥
ततः सप्तवटीर्दद्याद् दधिमस्तुसमप्लुताः।
नित्यं दध्ना च भोक्तव्यं कोष्ठदुष्टिनिवृत्तये ॥३१३॥
ग्रहणीमतिसारञ्च ज्वरदोषञ्च नाशयेत्।
अग्निदार्ढ्यकरी श्रेष्ठा ह्यामपर्पटिकाह्वया ॥३१४॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. पकी हुई ईंट, ४. हल्दी, ५. गृहधूम, ६. भृङ्गराजस्वरस, ७. निर्गुण्डीस्वरस, ८. मण्डूकपर्णीचूर्ण, ९. केशराजस्वरस, १०. ग्रीष्म-सुन्दरस्वरस, ११. अपराजितास्वरस, १२. बाकुचीक्वाथ तथा १३. लाल चित्रकपत्रस्वरस—सर्वप्रथम शुद्ध पारद को लेकर पकी हुई ईंटों का समभाग चूर्ण, हल्दी का चूर्ण एवं गृहधूम के साथ क्रमशः अलग एक दिन तक खरल करें। तत्पश्चात् उष्ण काञ्जी से प्रक्षालन करें। इससे पारद शुद्ध हो जाता है। तत्पश्चात् समभाग शुद्ध गन्धक को लेकर भृङ्गराज स्वरस के साथ खरल में घोंट लें, इससे विशेष शुद्धि होती है। जब पारद एवं गन्धक दोनों शुद्ध हो जायें तब उसको खरल में मर्दनकर कज्जली बना लें। कज्जली बन जाने पर निर्गुण्डी से लाल चित्रक तक के सात द्रव्यों के स्वरस पारद जितना लेकर क्रमशः अलग-अलग खरल करें। जब अच्छी प्रकार से खरल हो जाये तब सरसों जैसी १० मि.ग्रा. के प्रमाण की वटिका बना लें। इन वटिकाओं को छायाशुष्क कर काचपात्र में संग्रह करें। इसकी १ वटी को दही के पानी (मस्तु) में घोलकर रोगी को एक बार पिलायें। पथ्य रूप में दही-भात का सेवन करायें। इस वटी के सेवन से कोष्ठ की दुष्टि, संग्रहणी, अतिसार एवं ज्वर शान्त होते हैं। जाठराग्नि तीव्र होती है एवं आमदोष का पाचन करती है। इसका नाम आमपर्पटिका है।

मात्रा—७० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मस्तुजल से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी एवं मन्दाग्नि में।

विशेष—आचार्यश्री ने इस औषधि का नाम "आमपर्पटिका वटी" कहा है, किन्तु **खसर्पणवटी** नाम इसका कैसे हो गया समझ में नहीं आता है, अस्तु। इसका नाम मैंने पाठानुसार ही रखा है। पुनश्च इसकी वटी सरसो जितनी बड़ी होनी चाहिए। आचार्य श्री ने ७ वटी एक साथ देने को कहा है अतः १ रत्ती की मात्रा उचित है।

७१. रसाभ्रवटी

शुद्धसूतस्य कर्षैकं कर्षैकं गन्धकस्य च।
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा तुल्यं व्योम प्रदापयेत् ॥३१५॥
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च।
ग्रीष्मसुन्दरमण्डूकीजयन्तीन्द्राशनस्य च ॥३१६॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम्।
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णं च मरिचोद्भवम् ॥३१७॥
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम्।
संमर्द्य वटिकां कुर्यात् कलायसदृशीं बुधः ॥३१८॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवां रुजम्।
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट् ॥३१९॥
चातुर्थके ज्वरे श्रेष्ठो ग्रहण्यातङ्कनाशनः।
दधि चावश्यकं देयं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥३२०॥

१. शुद्ध पारद १२ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १२ ग्राम, ३. अभ्रकभस्म १२ ग्राम, ४. मरिच चूर्ण १२ ग्राम तथा ५. शुद्ध सोहागा ६ ग्राम लें; ६.केशराजस्वरस ७. भृङ्गराजस्वरस, ८. निर्गुण्डीपत्रस्वरस, ९. चित्रकमूलक्वाथ, १०. ग्रीष्मसुन्दर-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

स्वरस, ११. मण्डूकपर्णीस्वरस, १२. जयन्तीस्वरस, १३. भाँगस्वरस, १४. श्वेत अपराजिता स्वरस तथा १५. पान के पत्ते—सभी का स्वरस १२-१२ मि.ली. लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं गंधक को समभाग लेकर खरल कर कज्जली निर्माण करें। जब कज्जली निर्मित हो जाये तब उसमें अभ्रकभस्म मिला दें। तत्पश्चात् केशराजादि स्वरसों के स्वरस के साथ अलग-अलग मर्दन करें। जब भलीभाँति खरल हो जाय तब उसमें पारद जितना मरिच चूर्ण एवं पारद से आधा (६ ग्राम) शुद्ध सोहागा मिलाकर दिन भर खरल करने के बाद मटर के प्रमाण (२-२ रत्ती = २५० मि.ग्रा.) की वटी बनायें। रोगी के बलाबल के अनुसार एक-एक वटी रोगानुसार अनुपानों के साथ सेवन करायें। इसके सेवन से कास, क्षय, श्वास तथा वातकफज व्याधियाँ शान्त होती हैं। इस वटी का प्रयोग ज्वर एवं अतिसार में प्रशस्त है। इस अभ्रक रसायन के अतिरिक्त अन्य कोई औषधि श्रेष्ठ नहीं है। यह अभ्रक रसायन चातुर्थिक ज्वर एवं संग्रहणी रोग को नष्ट करने के लिए अत्यन्त उत्तम है। मुनि नागार्जुन का मत है कि इस रसायन के सेवन काल में दही का सेवन अवश्य करना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, ज्वर, क्षय एवं कास में।

७२. महाभ्रवटी

अभ्रकं पुटितं ताम्रं लौहं गन्धकपारदम्।
कुनटीटङ्गणक्षारं त्रिफला च पलं पलम् ॥३२१॥
गरलस्य तथा माषचतुष्कञ्चैव चूर्णयेत्।
दृढपाषाणपात्रे च भूयोभूयः सुन्नूर्णितम् ॥३२२॥
तत्सर्वं भावयेदेषां रसैः प्रत्येकशः पलैः।
देवराजाशनाख्यस्य केशराजाख्यकस्य च ॥३२३॥
सोमराजस्य भृङ्गाख्यराजस्य श्रीफलस्य च।
पारिभद्राग्निमन्थस्य वृद्धदारस्य तुम्बुरोः ॥३२४॥
मण्डूकपर्णीनिर्गुण्डीपूतिकोन्मत्तकस्य च।
श्वेतापराजितायाश्च जयन्त्याश्चार्द्रकस्य च ॥३२५॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याटरूषकस्य रसेन तु।
रसैस्ताम्बूलवल्ल्याश्च पत्रोत्थैर्भावयेत् पृथक् ॥३२६॥
द्रवे किञ्चित् स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत्।
ततश्चैव वटीं कुर्यान्मात्रां दद्याद् यथोचिताम् ॥३२७॥
ज्वरे चैवातिसारे च कासे श्वासे क्षये तथा।
सन्निपातज्वरे चैव विविधे विषमज्वरे ॥३२८॥
क्षयरोगेषु सर्वेषु क्षीणशुक्रे च यक्ष्मणि।
ग्रहण्याञ्चिरभूतायां सूतिकायां विशेषतः ॥३२९॥
शोथे शूले तथाऽसाध्ये स्थविरे चामवातिके।
मन्दानलेऽबले चैव सकले श्लेष्मजे गदे ॥३३०॥
पीनसेऽपीनसे चैव पक्वेऽपक्वे विशेषतः।
वातश्लेष्मणि वाते वा विविधे चेन्द्रियस्थिते ॥३३१॥
वातवृद्धे वृते पित्ते बलासेनावृतेऽपि च।
अष्टसूदररोगेषु कण्ठरोगे प्रशस्यते ॥३३२॥
अजीर्णे कर्णरोगे च कृशे स्थूले च यक्ष्मणि।
अयं सर्वगदेष्वेव रसो वै परिकीर्तितः।
महाभ्रवटिका सेयं परा श्रेष्ठा रसायने ॥३३३॥

१. अभ्रकभस्म ४६ ग्राम, २. ताम्रभस्म ४६ ग्राम, ३. लौहभस्म ४६ ग्राम, ४. शुद्ध गन्धक ४६ ग्राम, ५. शुद्ध पारद ४६ ग्राम, ६. शुद्ध मनःशिला ४६ ग्राम, ७. शुद्ध सोहागा ४६ ग्राम, ८. आमलाचूर्ण ४६ ग्राम, ९. हरड़चूर्ण ४६ ग्राम, १०. बहेड़ाचूर्ण ४६ ग्राम, ११. सर्पविष ४ ग्राम तथा १२. मरिच चूर्ण ४६ ग्राम।

भावना—१. भाँगस्वरस, २. केशराजस्वरस, ३. बाकुची स्वरस, ४. भृङ्गराजस्वरस (पीत), ५. बिल्वपत्रस्वरस, ६. महानिम्बपत्रस्वरस, ७. अग्निमन्थक्वाथ, ८. विधाराक्वाथ, ९. धनियाक्वाथ, १०. मण्डूकपर्णीस्वरस, ११. निर्गुण्डी स्वरस, १२. करञ्जपत्रस्वरस, १३. धत्तूरपत्रस्वरस, १४. श्वेत अपराजितारस, १५. जयन्तीपत्रस्वरस, १६. आर्द्रकस्वरस, १७. ग्रीष्मसुन्दरस्वरस, १८. वासापत्रस्वरस तथा १९. ताम्बूलपत्रस्वरस।

विधि—सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक खरल में डालकर मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उसी कज्जली के साथ मरिच छोड़कर अन्य सभी ९ द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर उपर्युक्त स्वरसों या क्वाथों को पृथक्-पृथक् ५६-५६ मि.ली. की मात्रा में लेकर भावना दें। (सभी १९ द्रव्यों में से यथोपलब्ध द्रव्यों के स्वरस से भावना दें।) जब उपर्युक्त पारदादि औषधि कुछ गीली रहे तब उसमें मरिचचूर्ण मिलाकर १२५ मि.ली. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें।

यथानुपान या दोषानुसार अनुपान के साथ इस महाभ्रवटी का प्रयोग करने से—ज्वर, अतिसार, कास, श्वास, क्षय, सन्निपात ज्वर, विषमज्वर, सभी प्रकार के राजयक्ष्मा, शुक्रक्षीण, पुराना संग्रहणी, सूतिकारोग, असाध्य शोथ, असाध्य शूल, वृद्धावस्था, आमवात, मन्दाग्नि, सभी कफजरोग, पीनस, अवपीनस (नासारोग), पक्व एवं अपक्व प्रतिश्याय, कफ-वातजन्य रोग, वातरोग, नेत्र-कर्ण-नासा (इन्द्रियों) में उत्पन्न वात-कफजन्य रोग, वातव्याधि, पित्तावृत वातरोग, कफावृत वातरोग, आठ प्रकार के उदररोग, कण्ठरोग, अजीर्ण, कर्णरोग, दुर्बल एवं स्थूल पुरुष और राजयक्ष्मा आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। यह 'महाभ्रवटिका' रसायन कार्य के लिए बहुत उपयोगी है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, सूतिकाज्वर एवं कफज रोग में।

७३. पीयूषवल्ली रस (रसेन्द्रसारसंग्रह)

सूतकं गन्धकञ्चाभ्रं तारं लौहं सटङ्गणम्।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक् पृथक् ॥३३४॥
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठा जीरकधान्यकम्।
समङ्गाऽतिविषा लोध्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम् ॥३३५॥
जातीफलं विश्वनिम्बं कनकं दाडिमच्छदम्।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम् ॥३३६॥
भावयेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः।
चणकाभा वटी कार्या छागीदुग्धेन पेषिता ॥३३७॥
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धबिल्वं समं गुडम्।
अतिसारं ज्वरं तीव्रं रक्तातीसारमुल्बणम् ॥३३८॥
ग्रहणीं चिरजां हन्ति शोथं दुर्नामकं तथा।
आमशूलविबन्धघ्नः संग्रहग्रहणीहरः ॥३३९॥
पिच्छामदोषं विविधं पिपासादाहरोगकम्।
हृल्लासारोचकच्छर्दिगुदभ्रंशं सुदारुणम् ॥३४०॥
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम्।
कृष्णारुणञ्च पीतञ्च मांसधावनसन्निभम् ॥३४१॥
प्लीहगुल्मोदरानाहसूतिकारोगसङ्करम्।
असृग्दरं निहन्त्येव वन्ध्यानां गर्भदः परम् ॥३४२॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहानपि विंशतिम्।
एतान् सर्वान् निहन्त्याशु मासार्द्धेनात्र संशयः ॥३४३॥
पीयूषवल्लीवटिका अश्विभ्यां निर्मिता पुरा।
कश्यपाय ददेऽश्विभ्यां ततः प्राप प्रजापतिः ॥३४४॥
धन्वन्तरिस्ततः प्राप देवतानां पतिस्ततः।
परम्पराप्राप्त एष रसस्त्रैलोक्यदुर्लभः ॥३४५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रकभस्म, ४. रजतभस्म, ५. लौहभस्म, ६. शुद्ध सोहागा, ७. रसाञ्जन, ८. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ९. लवङ्गचूर्ण, १०. श्वेतचन्दनचूर्ण, ११. नागरमोथाचूर्ण, १२. पाठाचूर्ण, १३. जीराचूर्ण, १४. धनियाँ चूर्ण, १५. मंजीठचूर्ण, १६. अतीसचूर्ण, १७. लोध्रचूर्ण, १८. कुटजचूर्ण, १९. इन्द्रयवचूर्ण, २०. दालचीनीचूर्ण, २१. जायफलचूर्ण, २२. शुण्ठीचूर्ण, २३. निम्बत्वक्चूर्ण, २४. शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण, २५. अनार के पत्ते का चूर्ण, २६. लज्जालुचूर्ण, २७. धातकीपुष्पचूर्ण तथा २८. कूठचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

भावना द्रव्य—केशराजस्वरस एवं बकरी का दूध।

विधि—सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को खरल में मर्दनकर कज्जली बनायें। जब कज्जली बन जाये तब उसमें शेष द्रव्यों के चूर्ण मिला दें एवं भृङ्गराज स्वरस की १ भावना देकर मर्दन करें। इसके पश्चात् एक भावना बकरी के दूध के साथ एक दिन तक ठीक प्रकार से खरल हो जाय तब चने के प्रमाण २५० मि.ग्रा. की वटियाँ बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'पीयूषवल्लीरस' को अग्निपक्व बिल्वफल-मज्जा और गुड़ के साथ मिलाकर सेवन करने तथा दोषानुसार अनुपान के साथ सेवन करने से—अतिसार, तीव्रज्वर, भयंकर रक्तातिसार, पुराना संग्रहणी, शोथ, अर्श, आमशूल, विबन्ध, संग्रह-ग्रहणी, पिच्छा, आमदोष युक्त अतिसार, पिपासारोग, दाहरोग, हृल्लास, अरुचि, वमन, भयंकर गुदभ्रंश, पक्वातिसार, अपक्वातिसार, अनेक वर्ण का वेदनायुक्त अतिसार तथा अनेक वर्ण कृष्ण-रक्त-पीत वर्ण का या मांस के धोवन वर्ण का वेदनायुक्त अतिसार-समूह, प्लीहावृद्धि, गुल्म, उदररोग, आनाह, सूतिका- रोग-समूह, रक्तप्रदर, कामला, पाण्डुरोग एवं बीसों प्रकार के प्रमेह को शान्त करता है। इस रस का नियमपूर्वक सेवन करने पर उपर्युक्त रोगों को आधे मास में ही निःसन्देह नष्ट कर देता है। इस रस के सेवन से बन्ध्या स्त्रियों के योनिदोष, रजोदोष एवं गर्भाशय दोष नष्ट होकर पुत्र की प्राप्ति होती है। पूर्वकाल में अश्विनीकुमारों ने सर्वप्रथम इस पीयूषवल्ली नामक रसौषधि को बनाया था। फिर अश्विनीकुमारों ने ऋषि कश्यप को प्रदान किया और कश्यप से प्रजापति ने प्राप्त किया। प्रजापति से भगवान् धन्वन्तरि तथा भगवान् धन्वन्तरि से देवताओं के स्वामी इन्द्र ने प्राप्त किया। इस परम्परा से प्राप्त तथा तीनों लोकों में भी दुर्लभ यह रसौषधि उत्तम है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार एवं पक्वातिसार में।

७४. पानीयभक्तवटी (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कृष्णाभ्रलौहमलशुद्धविडङ्गचूर्णं
प्रत्येकमेकपलिकं विधिवद्विधाय।
चव्यं कटुत्रयफलत्रयकेशराज-
दन्तीपयोदचपलाऽनलखण्डकर्णा ॥३४६॥
माणौलकन्दबृहतीत्रिवृताः ससूर्या-
वर्त्ताः पुनर्नविकया सहितास्त्वमीषाम्।
मूलं प्रति प्रति विशोधितमक्षमेकं
चूर्णं तदर्द्धरसगन्धकमेकसंस्थम् ॥३४७॥
कृत्वाऽऽर्द्रकीयरससंवलितं च भूयः
सम्पिष्य तस्य वटिका विधिवद्विधेया।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां
दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥३४८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शूलं च पाकजनितं सतताग्निमान्द्यं
सद्यः करोत्युपचितं चिरनष्टवह्नेः।
कुष्ठं निहन्ति पलितं च वलीं प्रवृद्धां
श्वासं च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥३४९॥
वार्यन्नमांसदधिकाञ्जिकतक्रमत्स्य-
वृक्षाम्लतैलपरिपक्वभुजो यथेष्टम्।
शृङ्गाटबिल्वगुडकञ्चटनारिकेल-
दुग्धानि सर्वविदलानि विवर्जयेत्तु ॥३५०॥

१. कृष्णाभ्रकभस्म, २. शुद्ध मण्डूरचूर्ण, ३. विडङ्ग चूर्ण—प्रत्येक ४६ ग्राम लें। ४. चव्यचूर्ण, ५. सोंठ, ६. मरिच, ७. पिप्पली, ८. हरीतकी, ९. बहेड़ा, १०. आमला, ११. केशराजचूर्ण, १२. दन्तीमूल, १३. नागरमोथा, १४. पिप्पली, १५. चित्रकमूल, १६. खारकोनबूटी, १७. मानकन्द, १८. सूरणकन्द, १९. बृहती, २०. निशोथ, २१. सूरजमुखीबीज तथा २२. पुनर्नवामूल—प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें। पारद एवं गन्धक की कज्जली ६ ग्राम लें। अभ्रक भस्म, मण्डूर भस्म एवं विडङ्ग चूर्ण १-१ पल (४६-४६ ग्राम) लें तथा चव्य से पुनर्नवा तक के सभी १९ द्रव्य १-१ तोला (१२-१२ ग्राम) लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उक्त कज्जली में उपर्युक्त सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाकर मिलायें और आर्द्रक के रस की ३ भावना देकर ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित करें। यह वटी अम्लपित्त, अरुचि, असाध्य ग्रहणी, अर्श, कामला, भगन्दर, शोथ, गुल्म, परिणामशूल, अग्निमांद्य, कुष्ठ, वलियाँ पड़ना, पलित रोग, श्वास, कास, पाण्डुरोग आदि का विनाश करती है। इसमें पानी वाला भात, मांस, दही, काञ्जी, तक्र, मछली, इमली, तेल में पकाये गये पदार्थ आदि प्रशस्त भोजन हैं। सिंघाड़ा, बेल, गुड़, चौलाई शाक, नारियल, सभी प्रकार के दुग्ध तथा सभी प्रकार की दालों का त्याग करना चाहिए।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—अरुचि, ग्रहणी, अतिसार, अर्श, अग्निमांद्य एवं पाण्डु में।

७५. नृपतिवल्लभरस (र.सा.सं.)

जातीफललवङ्गाब्दत्वगेलाटङ्गरामठम्।
जीरकं तेजपत्रं च यमानीविश्वसैन्धवम् ॥३५१॥
लौहमभ्रं रसो गन्धं ताम्रं प्रत्येकशः पलम्।
मरिचं द्विपलं दत्त्वा छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥३५२॥
धात्रीरसेन वा पेष्यं वटिकां कुरु यत्नतः।
श्रीमद्गहननाथेन विचिन्त्य परिनिर्मितः ॥३५३॥
सूर्यवत्तेजसा चायं रसो नृपतिवल्लभः।
अष्टादश वटीः खादेत्पवित्रः सूर्यदर्शकः ॥३५४॥
हन्ति मन्दानलं सर्वमामदोषं विसूचिकाम्।
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलायकृत्पाण्डुत्वकामलाः ॥३५५॥
हृच्छूलं पृष्ठशूलं च पार्श्वशूलं तथैव च।
कटिशूलं कुक्षिशूलमागाहमष्टशूलकम् ॥३५६॥
कासश्वासामवातांश्च श्लीपदं शोथमर्बुदम्।
गलगण्डं गण्डमालामम्लपित्तं च गृध्रसीम् ॥३५७॥
कृमिकुष्ठानि दद्रूणि वातरक्तं भगन्दरम्।
उपदंशमतीसारं ग्रहण्यर्शःप्रमेहकम् ॥३५८॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातं सुदारुणम्।
ज्वरं जीर्णं तथा तन्द्रामालस्यं च भ्रमं क्लमम् ॥३५९॥
दाहं च विद्रधिं हिक्कां जडगद्गदमूकताः।
मौढ्यं च स्वरभेदं च ब्रध्नवृद्धिं विसर्पकान् ॥३६०॥
ऊरुस्तम्भं रक्तपित्तं गुदभ्रंशारुची तृषाम्।
कर्णनासामुखोत्थांश्च दन्तरोगांश्च पीनसान् ॥३६१॥
शोथं च शीतपित्तं च स्थावरादिविषाणि च।
वातपित्तकफोत्थांश्च द्वन्द्वजान् सान्निपातिकान् ॥३६२॥
सर्वानेव गदान् हन्ति चण्डांशुरिव पापहा।
बलवर्णकरो हृद्य आयुष्यो वीर्यवर्द्धनः ॥३६३॥
परं वाजीकरः श्रेष्ठो बुद्धिदो मन्त्रसिद्धिदः।
अरोगी दीर्घजीवी स्याद्रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥३६४॥
रसस्यास्य प्रसादेन बुद्धिमाञ्जायते नरः ॥३६५॥

१. जायफल, २. लवङ्ग, ३. नागरमोथा, ४. दालचीनी, ५. छोटी इलायची, ६. शुद्ध टंकण, ७. शुद्ध हींग, ८. सफेद जीरा, ९.तेजपत्र, १०. अजवायन, ११. शुण्ठी, १२. सैन्धवनमक, १३. लौहभस्म, १४. अभ्रकभस्म, १५. शुद्ध पारद, १६. शुद्ध गन्धक और १७. ताम्रभस्म—जायफल से ताम्रभस्म तक के सभी द्रव्य १-१ भाग एवं मरिचचूर्ण २ भाग लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। जब कज्जली बन जाय तब उसमें शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिला दें। तत्पश्चात् बकरी के दूध से या आमलकी क्वाथ की भावना देकर एक प्रहर तक खरल करें। इसके बाद ३-३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की वटियाँ बना लें एवं छाया में सुखा लें। आचार्य श्री गहननाथ ने सभी शास्त्रों का विचार करके सूर्य के समान तेजवान् इस नृपतिवल्लभ रस को बनाया है। प्रातःकाल दैनिक क्रिया से निवृत्त होकर पवित्र होकर सूर्य भगवान् की अर्चना करके इस रस की एक-एक वटी १८ दिन तक सेवन करें। एक वटी प्रातःकाल प्रतिदिन सेवन करें। इस रस का यथादोषहर अनुपानों के साथ सेवन करते रहने से अग्निमान्द्य, सभी प्रकार के आमदोष, विसूचिका, प्लीहावृद्धि, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, यकृत्-वृद्धि,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पाण्डुरोग, कामला, हृदयशूल, पृष्ठशूल, पार्श्वशूल, कटिशूल, कुक्षिशूल, आनाह, आठ प्रकार के शूल, कास, श्वास, आमवात, श्लीपद, शोथ, अर्बुद, गलगण्ड, गण्डमाला, अम्लपित्त, गृध्रसी, कृमिजन्य रोग, १८ प्रकार के कुष्ठ, दद्रु, वातरक्त, भगन्दर, उपदंश, अतिसार, संग्रहणी, अर्श, प्रमेह, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, कष्टप्रद मूत्राघात, जीर्णज्वर, तन्द्रा, आलस्य, भ्रमरोग, क्लान्ति, दाह, विद्रधि, हिक्का, वातव्याधिजन्य (जड़ता), गद्गदता, मूकता, मूढ़ता, स्वरभेद, ब्रध्न (बाधि= ग्रन्थिशोथ), वृद्धि, विसर्प, ऊरुस्तम्भ, रक्तपित्त, गुदभ्रंश, अरुचि, तृष्णा, कर्णरोग, नासारोग, मुखरोग, दन्तरोग, पीनसरोग, शोथ, शीतपित्त, स्थावरादि विष, वात-पित्त-कफ सम्बन्धी रोग, द्वन्द्वज एवं सान्निपातिक आदि सम्पूर्ण रोग उसी प्रकार नष्ट होते हैं जिस प्रकार सूर्य सभी पापों को नष्ट करता है। यह बल एवं वर्णकारक, हृदय के लिए लाभप्रद, आयुवर्द्धक, वीर्यवर्द्धक, अत्यन्त वाजीकर, श्रेष्ठ बुद्धि देने वाला तथा मन्त्र की सिद्धि करने वाला है। इस रस को सेवन करने वाला स्वस्थ व्यक्ति और रोगी स्वस्थ हो जाता है। दीर्घजीवी होता है। इसके प्रभाव से बुद्धि की वृद्धि होती है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रक स्वरस एवं मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—आमदोष, अग्निमान्द्य, ग्रहणी, अतिसार, अर्श एवं प्रमेह में।

७६. बृहन्नृपवल्लभ रस (र.सा.सं.)

रसगन्धकलौहाभ्रं नागं चित्रं त्रिवृत् समम्।
टङ्कं जातीफलं हिङ्गु त्वगेलाऽब्दलवङ्गकम् ॥३६६॥
तेजपत्रमजाजी च यमानी विश्वसैन्धवम्।
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं मरिचस्तारयोस्तथा ॥३६७॥
निरुत्थकं मृतं हेम तथा द्वादशरक्तिकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव धात्रयाः स्वरसेन च ॥३६८॥
भावयित्वा प्रदातव्यो माषद्वयप्रमाणतः।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय पथ्यं खादेद्यथोचितम् ॥३६९॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च दुर्नामग्रहणीं जयेत्।
आमाजीर्णप्रशमनः सर्वरोगनिषूदनः।
नाशयेदौदरान् रोगान् विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥३७०॥

विशेष—ग्रन्थान्तरेऽस्य राजवल्लभ इति संज्ञा।

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रकभस्म, ५. नागभस्म, ६. चित्रकमूल, ७. निशोथ, ८. शुद्ध टङ्कण, ९. जायफल, १०. शुद्ध हींग, ११. दालचीनी, १२. छोटी इलायची, १३. नागरमोथा, १४. लवङ्ग, १५. तेजपत्र, १६. श्वेत जीरा, १७. अजवायन, १८. शुण्ठी, १९. सैन्धवनमक, २०. मरिच, २१. रजतभस्म (सभी १२-१२ ग्राम), २२. स्वर्णभस्म १.५०० मि.ग्रा., २३. आर्द्रकस्वरस तथा २४. आमलास्वरस लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को खरल में मर्दनकर कज्जली बनायें। जब कज्जली का निर्माण हो जाये तब उसमें शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिला दें। पुनः आर्द्रक स्वरस से तथा आमला स्वरस या क्वाथ से अलग-अलग भावना देकर सभी द्रव्यों को मर्दनकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) प्रमाण की वटियाँ बनायें तथा छाया में सुखायें एवं काचपात्र में संग्रहीत करें। यथादोषहर अनुपान के साथ वैद्य इस वटी का सेवन रोगी को करायें। यह वटी प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करने से अग्निमान्द्य, अजीर्ण, अर्श, संग्रहणी, आमाजीर्ण, उदररोग एवं सभी प्रकार के रोगों को उसी प्रकार नष्ट करती है जिस प्रकार विष्णु भगवान् का सुदर्शन चक्र राक्षसों को नष्ट करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रक स्वरस एवं मधु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार एवं आमाजीर्ण में।

७७. महाराजनृपतिवल्लभरस (र.सा.सं.)

कर्षत्रयं मृतं कान्तं मृताभ्रं मृतताम्रकम्।
मृतं तारं माक्षिकञ्च कर्षं कर्षं प्रदापयेत् ॥३७१॥
मृतं स्वर्णं मृतं तारं टङ्कणं भृङ्गमेव च।
वशिरं दन्तीमूलञ्च मरिचं तेजपत्रकम् ॥३७२॥
यमानी बालकं मुस्तं शुण्ठकञ्च सधान्यकम्।
सिन्धूद्भवं सकर्पूरं विडङ्गं चित्रकं विषम् ॥३७३॥
पारदं गन्धकञ्चैव तोलमानं प्रदापयेत्।
तोलद्वयं त्रिवृच्चूर्णं लवङ्गं तच्चतुर्गुणम् ॥३७४॥
जातीकोषफलञ्चैव वराङ्गकन्तु तत्समम्।
सर्वेषामर्द्धभागन्तु विडकं तत्र मिश्रयेत् ॥३७५॥
सर्वमेकीकृतं यद्यत् त्रुटिचूर्णञ्च तत्समम्।
भावना च प्रदातव्या छागीदुग्धेन सप्तधा ॥३७६॥
मातुलुङ्गरसैः पश्चाद् भावयेत्सप्तवारकम्।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा भक्षयेत्पञ्चरक्तिकाम् ॥३७७॥
मन्दानलं सङ्ग्रहणीं प्रवृद्धा-
मामानुबद्धां क्रिमिपाण्डुरोगम्।
छर्द्यम्लपित्तं हृदयामयञ्च
गुल्मोदरानाहभगन्दरञ्च ॥३७८॥
अर्शांसि वै पित्तकृतानशेषान्
सामं सशूलाष्टकमेव हन्ति।
साजीर्णविष्टम्भविसर्पदाहं
विलम्बिकाञ्चाप्यलसं प्रमेहम् ॥३७९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कुष्ठान्यशेषाणि च कासशोषं
हन्यात्सशोथं ज्वरमूत्रकृच्छ्रम्।
मतान्तरे सर्वतोभद्रनामा
महेश्वरेणैव विभाषितोऽयम् ॥३८०॥

१. कान्तलौहभस्म ३० ग्राम, २. अभ्रकभस्म, ३. ताम्र भस्म, ४. मोतीभस्म, ५. सुवर्णमाक्षिकभस्म, ६. स्वर्णभस्म, ७. रजतभस्म, ८. शुद्ध सुहागा, ९. भृङ्गराजचूर्ण, १०. गजपिप्पलीचूर्ण, ११. दन्तीमूलचूर्ण, १२. मरिचचूर्ण, १३. तेजपातचूर्ण, १४. अजवायनचूर्ण, १५. सुगन्धबाला, १६. नागरमोथाचूर्ण, १७. शुण्ठीचूर्ण, १८. धनियाँचूर्ण, १९. सैन्धवचूर्ण, २०. कर्पूर, २१. वायविडङ्गचूर्ण, २२. चित्रकमूलचूर्ण, २३. अतिविषचूर्ण, २४. शुद्ध पारद, २५. शुद्ध गन्धक—प्रत्येक १० ग्राम; २६. त्रिवृच्चूर्ण २० ग्राम, २७. लवङ्गचूर्ण ८० ग्राम, २८. जावित्रीचूर्ण ८० ग्राम, २९. जायफलचूर्ण ८० ग्राम, ३०. दालचीनी चूर्ण ८० ग्राम, ३१. विड्लवणचूर्ण ३१५ ग्राम तथा ३१. छोटी इलायचीचूर्ण ९४५ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में अन्य भस्में तथा काष्ठौषधियों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें और बकरी के दुग्ध से ७ भावना देकर खरल करें। इसके पश्चात् बिजौरानीबू के स्वरस के साथ ७ बार भावना देकर मर्दन करें। ततः ५-५ रत्ती (६२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटियाँ बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रह करें। इस महाराजनृपतिवल्लभ रस का प्रतिदिन यथादोषहर अनुपानों के साथ सेवन करने से अग्निमान्द्य, बढ़ी हुई संग्रहणी या आमदोषज संग्रहणी, कृमिरोग, पाण्डुरोग, वमन, अम्लपित्त, हृदयरोग, गुल्म, उदररोग, आनाह, भगन्दर, अर्श, सभी प्रकार की पित्तज व्याधियाँ, आमदोषज शूल, अष्टविध शूल, अजीर्ण, विष्टम्भ, विसर्प, हस्तपादादि के दाह, विलम्बिका, अलसक, प्रमेह, १८ प्रकार के कुष्ठ, कास, शोष, शोथ, ज्वर एवं मूत्रकृच्छ्र आदि व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। मतान्तर से इसका नाम 'सर्वतोभद्र' है जो श्रीमहेश्वरजी ने कहा है।

मात्रा—६२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—यथादोषहर अनुपान से। **गन्ध**—एलागन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—संग्रहणी, अतिसार, अग्निमान्द्य एवं अम्लपित्त में।

७८. महाराजनृपवल्लभ रस (र.सा.सं.)

माक्षिकं लौहमभ्रञ्च वङ्गं रजतहाटकम्।
ग्रन्थिर्यमानिका चोचं ताम्रं नागरटङ्कणम् ॥३८१॥
सैन्धवं बालकं मुस्तं धन्याकं गन्धकं रसम्।
शृङ्गी कर्पूरकञ्चैव प्रत्येकं माषकोन्मितम् ॥३८२॥
माषद्वयं रामठं स्यान्मरिचानां चतुष्टयम्।
जातीकोषं लवङ्गञ्च पत्रं च तोलकोन्मितम् ॥३८३॥
नाभिशङ्खं विडङ्गञ्च शाणं माषद्वयं विषम्।
कर्षषट्कं सत्रिमाषं सूक्ष्मैलानां ततः क्षिपेत् ॥३८४॥
विडं कर्षद्वयं सर्वं छागीक्षीरेण पेषयेत्।
चतुर्गुञ्जामितं खादेत् सानाहग्रहणीं जयेत् ॥३८५॥
शम्भुना निर्मितो ह्येष पूर्ववद् गुणकारकः।
नाम्ना महाराजपूर्वो नृपवल्लभ उच्यते ॥३८६॥

१. स्वर्णमाक्षिकभस्म, २. लौहभस्म, ३. अभ्रकभस्म, ४. वङ्गभस्म, ५. रजतभस्म, ६. स्वर्णभस्म, ७. पिप्पलीमूलचूर्ण, ८. अजवायनचूर्ण, ९. दालचीनीचूर्ण, १०. ताम्रभस्म, ११. शुण्ठीचूर्ण, १२. शुद्ध सुहागा, १३. सैन्धवलवणचूर्ण, १४. सुगन्धबालाचूर्ण, १५. नागरमोथाचूर्ण, १६. धनियाँचूर्ण, १७. शुद्ध गन्धक, १८. शुद्ध पारद, १९. काकड़ासिंगीचूर्ण, २०. कर्पूर—प्रत्येक १ भाग, २१. शुद्ध हींग २ भाग, २२. मरिच चूर्ण ४ भाग, २३. जायफलचूर्ण १२ भाग, २४. लवङ्गचूर्ण १२ भाग, २५. तेजपातचूर्ण १२ भाग, २६. शंखनाभिभस्म ३ भाग, २७. विडङ्गचूर्ण ३ भाग, २८. शुद्ध वत्सनाभविष २ भाग, २९. छोटीइलायची ७५ भाग और ३०. विड्लवण २४ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बना लें। ततः अन्य भस्मों तथा सभी चूर्णों को कज्जली में मिलाकर बकरी के दूध की भावना देकर ५०० मि.ग्रा. (४-४ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'महाराजनृपवल्लभ रस' को आर्द्रकस्वरस एवं मधु के साथ सेवन करने से आनाहयुक्त संग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है। यह महाराजनृपवल्लभ रस महादेवजी द्वारा बनाया गया था एवं राजवल्लभ रस की तरह गुणकारी है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**—एलागन्धी कभी-कभी दुग्धगन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—आनाहयुक्त, संग्रहणी एवं मन्दाग्नि में।

७९. ग्रहणीकपाटरस (जातीफलादि वटी) (र.सा.सं.)

जातीफलं टङ्कणमभ्रकञ्च
धुस्तूरबीजं समभागचूर्णम्।
भागद्वयं स्यादहिफेनकस्य
गन्धालिकापत्ररसेन मर्द्यम् ॥३८७॥
चणप्रमाणा वटिका विधेया
मधुप्रयुक्तां ग्रहणीगदेषु।
रोगेषु दद्यादनुपानभेदै-
र्युक्त्या विदध्यादतिसारवत्सु ॥३८८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सामेषु रक्तेषु सशूलकेषु
पक्वेष्वपक्वेषु गुदामयेषु ।
पथ्यं सदध्योदनमत्र देयं
रसोत्तमोऽयं ग्रहणीकपाटः ॥३८९॥

१. जायफल चूर्ण, २. शुद्ध सुहागा, ३. अभ्रकभस्म, ४. शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण—१-१ भाग तथा ५. शुद्ध अफीम २ भाग लें। **भावना**—गन्धप्रसारणी रस।

विधि—एक पत्थर के खरल में उपर्युक्त सभी द्रव्यों को लेकर मर्दन करें तथा गन्धप्रसारण स्वरस की भावना दें और २५० ग्राम की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इस रस की एक वटी प्रतिदिन शहद के साथ सेवन करें। अनुपान भेद से सेवन करने पर यह रस ग्रहणी, अतिसार, आमातिसार, रक्तातिसार, शूलयुक्त अतिसार, पक्व तथा अपक्व अतिसार, गुदा के अन्य समस्त रोग, अर्श, भगन्दरादि का नाश होता है। पथ्यरूप में दही और भात का प्रयोग करें। यह ग्रहणीकपाट रसों में उत्तम है ।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, आमातिसार एवं रक्तातिसार में।

८०. जातीफलादिवटी (बृहती) (र.सा.सं.)

अभ्रस्य सूतस्य च गन्धकस्य
प्रत्येकशो माषचतुष्टयन्तु ।
विधाय शुद्धोपलपात्रमध्ये
सुकज्जलीं वैद्यवरः प्रयत्नात् ॥३९०॥
जातीफलं शाल्मलिवेष्टमुस्तं
सटङ्गणं सातिविषं सजीरम् ।
प्रत्येकमेषां मरिचस्य शाण-
प्रमाणमेकं विषमाषकञ्च ॥३९१॥
विचूर्ण्य सर्वाण्यवलोड्य पश्चा-
द्विभावयेत् पत्रभवैरमीषाम् ।
रसै रसोन्मानमितै रसाल-
वंशौ च भद्रोत्कटकञ्चटौ च ॥३९२॥
इन्द्राणिकेन्द्राशनकं सजम्बु
जयन्तिकादाडिमकेशराजौ ।
अविद्धकर्णापि च भृङ्गराजो
विभाव्यसम्यग्वटिका विधेया ॥३९३॥
कोलास्थिमाना च बहुप्रकारं
सामं निहन्त्यत्र यथानुपानम् ।
कुर्याद्विशेषादनलावलम्बं
कासञ्च पञ्चात्मकमम्लपित्तम् ॥३९४॥
इयं निहन्ति ग्रहणीं प्रवृद्धां
मर्त्यस्य जीर्णग्रहणीमसाध्याम् ।
चिरोद्भवां संग्रहकोष्ठदुष्टिं
शोथं समग्रं गुदजानसाध्यान् ॥३९५॥
आमानुबद्धन्त्वतिसारमुग्रं
जयेद्भृशं योगशतैरसाध्यम् ।
विवर्जनीयास्त्विह भृष्टमत्स्या
मत्स्यस्तथा पाण्डुरवर्ण एव ॥३९६॥
रम्भाफलं मूलमथो दलञ्च
बुधैर्विधेयं न कदाचिदत्र ॥३९७॥
जातीफलाद्या वटिका विधेया
यशोऽर्थिनो वैद्यवरस्य हृद्या ।
अनेकसम्भावितमर्त्यलोका
नानाविधव्याधिपयोधिनौका ॥३९८॥

१. अभ्रकभस्म ४ ग्राम, २. शुद्ध पारद ४ ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक ४ ग्राम, ४. जायफलचूर्ण ४ ग्राम, ५. मोचरसचूर्ण ४ ग्राम, ६. नागरमोथाचूर्ण ४ ग्राम, ७. शुद्ध सुहागा ४ ग्राम, ८. अतीसचूर्ण ४ ग्राम, ९. जीरा चूर्ण ४ ग्राम, १०. मरिच चूर्ण ४ ग्राम तथा ११. शुद्ध वत्सनाभ १ ग्राम लें।

भावना द्रव्य—१. आम्रपत्रस्वरस, २. बाँसपत्रस्वरस, ३. मुस्तास्वरस, ४. गजपिप्पली क्वाथ, ५. निर्गुण्डीपत्रस्वरस, ६. भाँगपत्रस्वरस, ७. जामनपत्रस्वरस, ८. हल्दीस्वरस, ९. दाडिमपत्रस्वरस, १०. केशराजस्वरस, ११. पाठास्वरस, १२. भृङ्गराजस्वरस—प्रत्येक स्वरस ४-४ मि.ली. लें।

सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली करें। ततः उसी कज्जली के साथ अन्य सभी द्रव्यों के चूर्णों को मिलावें और निम्नलिखित आम्रपत्रस्वरस से भृङ्गराजपत्रस्वरस तक के सभी १२ द्रव्यों के स्वरसों (प्रत्येक की ४-४ मि.ली.) की १-१ भावना देकर (३-३ रत्ती) ३७५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। दोषानुसार अनुपानों के साथ सेवन करावें। इससे अनेकों प्रकार के आमज दोष युक्त अतिसार नष्ट होते हैं। जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है एवं वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, क्षतज और क्षयज इन पाँचों प्रकार के कास, अम्लपित्त, प्रवृद्ध तथा पुराना एवं असाध्य संग्रहणी, चिरकालिक कोष्ठदुष्टि, सभी प्रकार के शोथ, असाध्य गुदरोग, आमदोषज अनेक औषधि योगों से असाध्य एवं भयङ्कर अतिसार आदि रोग शान्त होते हैं। पथ्यरूप में दही एवं भात का सेवन करायें। आग पर घी आदि में भूनी मछली, पाण्डुर वर्ण की मछली, केले का कच्चा एवं पक्व फल तथा पत्ते सभी का त्याग

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

करना चाहिए। यश की इच्छा करने वाले श्रेष्ठ वैद्य को चाहिए कि हृदय के लाभकर एवं अनेक मनुष्यों का कल्याण करने वाली, विविध प्रकार वाली व्याधिरूपी समुद्र को पार करने के लिए नाव के समान उपयोगी इस बृहत् जातिफलादि वटिका का निर्माण करें।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—रोगानुसार। **गन्ध**—रसायन-गन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमदोष, असाध्य संग्रहणी, अतिसार तथा गुदरोग में।

८१. वडवामुख रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रटङ्कणम्।
सामुद्रञ्च यवक्षारं स्वर्जिसैन्धवनागरम् ॥३९९॥
अपामार्गस्य च क्षारं पलाशवरुणस्य च।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यादम्लयोगेन मर्दयेत् ॥४००॥
हस्तिशुण्डीद्रवैश्चाग्नौ मर्दयित्वा पुटेल्लघु।
माषमात्रः प्रदातव्यो रसोऽयं वडवामुखः।
ग्रहणीं विविधां हन्ति सङ्ग्रहग्रहणीं ज्वरम् ॥४०१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्रभस्म, ४. अभ्रकभस्म, ५. शुद्ध टङ्कण, ६. सामुद्रनमक, ७. यवक्षार, ८. सर्जिकाक्षार, ९. सैन्धवनमक, १०. शुण्ठी, ११. अपामार्गक्षार, १२. पलाशक्षार तथा वरुणक्षार—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गंधक को खरल में डालकर मर्दन करें। जब कज्जली निर्माण हो जाय तब उसमें शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिला दें। सभी द्रव्यों को एकत्र मिला लेने के पश्चात् अम्लयोग अर्थात् निम्बूस्वरस की भावना देकर मर्दन करें। इसके पश्चात् हस्तिशुण्डी स्वरस या क्वाथ के साथ भावना देकर गोला बना लें। गोले को शरावसम्पुट में बन्दकर लघुपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सिद्ध औषधि को शराव में से निकालकर पीस लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। आधुनिक मात्रा ६०-१२५ मि.ग्रा. निम्बूरस के साथ रोगी को सेवन करायें। इस वडवामुख रस को मधु से देने पर अनेक प्रकार की संग्रहणी एवं ज्वर शान्त होते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायन-गन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—अम्ल एवं लवण। **उपयोग**—संग्रहणी एवं ज्वर में।

८२. रसपर्पटी

श्रीविन्ध्यवासिपादान् नत्वा धन्वन्तरिञ्च सुरभिषजम्।
रसगन्धकपर्पटिकापरिपाटीपाटवं वक्ष्ये ॥४०२॥
मग्नं रसे जयन्त्याः पश्चादेरण्डसम्भूते।
आर्द्रकरसे च सूतं पत्ररसे काकमाच्याश्च ॥४०३॥
मग्नमुदितानुपूर्व्या मर्दनशुष्कं करेण गृह्णीयात्।
प्रस्तरभाजनमध्ये शुद्धिरियं पारदस्योक्ता ॥४०४॥
शुकपुच्छसमच्छायो नवनीतसमद्युतिः।
मसृणः कठिनः स्निग्धः श्रेष्ठो गन्धक इष्यते ॥४०५॥
कृत्वा भद्रं गन्धकमतिकुशलः क्षुद्रतण्डुलाकारम्।
तद्भृङ्गराजरसैरनन्तरं भावयेत्पात्रे ॥४०६॥
तदनु च शुष्कं कुर्याद् धूलिसमानञ्च सप्तधा रौद्रे।
तदनु च शुष्कं चूर्णं कृत्वा विन्यस्य लौहिकामध्ये ॥४०७॥
निर्धूमवदरकाष्ठाङ्गारे न्यस्तं विलाप्य तैलसमम्।
पात्रस्थितभृङ्गराजरसमध्ये ढालयेन्निपुणः ॥४०८॥
तस्मिन् प्रविष्टमात्रं कठिनत्वं याति गन्धकचूर्णम्।
पुनरपि रौद्रे शुष्कं केतकरजसा समानतां नीतम् ॥४०९॥
शुद्धे सूते शोधितगन्धकचूर्णेन तुल्यता कार्या।
तावन्मर्दनमनयोर्यावन्न कणोऽपि दृश्यते सूते ॥४१०॥
पश्चात् कज्जलसदृशं चूर्णं लौहीस्थितं यत्नेन।
निर्धूमवदरकाष्ठाङ्गारे न्यस्तं विलाप्य तैलसमम् ॥४११॥
सद्यो गोमयनिहिते कदलदले ढालयेन्मृदुनि।
लौहस्थितमवशिष्टं कठिनं तन्न गृहीतव्यम्।
पश्चात्पर्पटरूपा पर्पटिका कीर्त्यते लोकैः ॥४१२॥
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं यत्र तु दृश्यते।
तत्र सिद्धं विजानीयाद्वैद्यो नैवात्र संशयः ॥४१३॥
समुचितपात्रे भरणादवनीया पर्पटी मनुजैः।
जीरक गुञ्जे हिङ्गोरर्द्धं खादेच्च वातले जठरे ॥४१४॥
जीरकहिङ्गो रसेन त्वनुपानं सलिलधारया कार्यम्।
रसगन्धकपर्पटिका भक्षणमात्रे तु नाम्भसः पानम्॥
प्रथमं गुञ्जायुगलं प्रतिदिनमेकैकवृद्धितो भक्ष्यम्।
दशगुञ्जापरिमाणान्नाधिकमदनीयमेकविंशतिदिनानि॥
वातातपकोपमनश्चिन्तनमाहारसमयवैषम्यम्।
व्यायामश्चायासः स्नानं व्याख्यानमहितमत्यन्तम् ॥४१७॥
पाके स्तोकं सर्पिर्जीरकधान्यकवेशवारैश्च।
सिन्धूद्भवेन रन्धनमोदनधान्यानि शालयो भक्ष्याः॥
कृष्णं वातिङ्गनफलमविद्धकर्णा च वास्तूकम्।
अक्षतमुद्गैः सहितं फलदलसहितं पटोलञ्च ॥४१९॥
क्रमुकफलशृङ्गवेरौ भक्ष्यौ शाकेषु काकमाची च।
लावकवर्त्तकतित्तिरिमयूरमांसञ्च हितकरं भवति ॥४२०॥
मद्गुरो रोहितमीनावदनीयौ कृष्णमत्स्याश्च।
नीरक्षीरं व्यञ्जनमदनीयं पक्वकदलिञ्च ॥४२१॥
रम्भाफलदलवल्कलमूलानां वर्जनं कार्यम्।
तिक्तं निम्बादिकमपि नाद्यं नोष्णं तथाऽन्नञ्च ॥४२२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आनूपमांसजलचरपतत्रिपललञ्च सर्वथा त्याज्यम्।
स्त्रीणां सम्भाषणमपि गडकश्च कृष्णमत्स्येषु ॥४२३॥
नाम्लं न दधि शाकं पर्पट्या भक्षणे भक्ष्यम्।
गुडखण्डशर्करादिक इक्षुविकारो न भक्ष्य इक्षुश्च ॥४२४॥
न दलं न फलं न लताऽप्यदनीया कारवेल्लस्य।
स्तोकं घृतमिह भक्ष्यं पथ्ये साकाङ्क्षमुत्थानम् ॥४२५॥
क्षुत्पीडायां भोजनमवश्यकार्यं महानिशायाञ्च।
समजलमिश्रं पक्वं क्षीरं यद्वाऽधिकजलपाकञ्च ॥४२६॥
कथमपि भोजनसमयातिक्रमजाते ज्वरे विरेके च।
वमनं च नारिकेलसलिलं दुग्धञ्च पातव्यम् ॥४२७॥
स्वप्ने जाते रमिते विरेकतः क्षीरमेव पातव्यम्।
न हि जायते बुभुक्षा लक्ष्या प्रतीयते न यदि वा ॥४२८॥
अशक्तिझिनिझिनिकस्तकशूलाद्यैर्नूनमवर्धाया।
किं बहु वाच्यं रोगी यदा यदा भवति साकाङ्क्षः ॥४२९॥
पाययितव्यं दुग्धं तदा तदा निर्भयीभूय।
विहिताकरणे चास्यामविहितकरणे च रोगखिन्नानाम् ॥
व्यापत्तयोऽपि बहुधा दृष्टाः प्रामाणिकैर्बहुशः।
तस्मादवधातव्यं भवितव्यं भाजने निपुणैः ॥४३१॥
एवमियं क्रियमाणा भवति श्रेयस्करी नियतम्।
अर्शोरोगं ग्रहणीं सामां शूलातिसारौ च ॥४३२॥
कामलपाण्डुव्याधिं प्लीहानञ्चातिदारुणं हन्ति ॥४३३॥
गुल्मजलोदरभस्मकरोगं हन्त्यामवातांश्च।
अष्टादशैव कुष्ठान्यशेषशोथादिरोगांश्च ॥४३४॥
इयमम्लपित्तशमनी त्रिदोषदमनी क्षुधाऽतिकमनीया।
अग्निं निमग्नमुदरे ज्वालाजटिलं करोत्याशु ॥४३५॥
रसगन्धकपर्पटिका त्वपवार्य व्याधिसङ्घातम्।
वलीपलितशून्यं पुरुषं दीर्घायुषं कुरुते ॥४३६॥
व्याधिप्रभावहरणादपमृत्युत्रासनाशकरणाच्च।
मर्त्यानाममृतवटी रसगन्धकपर्पटी जयति ॥४३७॥
शम्भुं प्रणम्य भक्त्या पूजां कृत्वा च विष्णुचरणाब्जे।
रसगन्धकपर्पटिका भक्ष्या तेनातिसिद्धिदा भवति ॥४३८॥
नृणां सरुजां ध्रुवमियमारोग्यं सततशीलिता कुरुते।
श्रीवत्साङ्कविनिर्मितसम्यग्रसपर्पटी श्रेष्ठा ॥४३९॥
उक्तमेव हि कर्त्तव्यं नानुरागतया तथा।
सौषधक्रिययैवात्र कर्तव्या चोत्तरक्रिया ॥४४०॥
प्रत्यवायविनाशार्थं क्षेत्रपालबलिं न्यसेत्।
कृतमङ्गलकः प्रातर्योगिनीनामतः परम् ॥४४१॥

'ॐ क्षं क्षें क्षेत्रपालाय नमः' इति क्षेत्रपालस्य सामान्यबलिदानमन्त्रः। ॐ ह्रीं ह्रें दिव्याभ्यो योगिनीभ्यो मातृभ्यः क्षेत्राभ्यो भूतेभ्यः शालिकीभ्यो नमो नमो ह्रीं इति सामान्ययोगिनीनां बलिमन्त्रः॥ ॐ गन्धकमहाकालाय स्वाहा ॐ ब्रह्मकोषिणि रक्ष रक्ष स्वाहा इति विशेष-बलिमन्त्रः।

अथ पारदस्य नैसर्गिकदोषत्रयशोधनञ्चावश्यकं-कार्यम्। यदुक्तम्—
'मलशिखिविषनामानो रसस्य नैसर्गिका दोषाः।
मूर्च्छां मलेन कुरुते शिखिना दाहं विषेण हिक्काञ्च ॥
गृहकन्या हरति मलं त्रिफला वह्निं चित्रकञ्च विषम्।
तस्मादेभिर्वारान् सम्मूर्च्छयेत् सप्त सप्तैव' ॥ इति ॥४४३॥

गृहकन्या–घृतकुमारी, तस्या दलरसेन खल्लनम्। त्रिफलायाश्चूर्णेन खल्लनम्। चित्रकस्य पत्ररसेन च मूर्च्छनम्। तदेवं नैसर्गिकदोषापहारानन्तरं जयन्त्यादि-द्रव्यचतुष्टयरसेन मूर्च्छनमधिगन्तव्यम् ॥

श्री विन्ध्याचल पर्वत के मध्य मन्दिर में उपस्थित विन्ध्याचल देवी के चरणकमलों को एवं भगवान् धन्वन्तरि तथा देवताओं के वैद्य अश्विनीकुमारों को प्रणाम करके रस और गंधक से निर्मित पर्पटी को बनाने की विशेष विधि का वर्णन करता हूँ।

घटक—पारद ४६ ग्राम एवं गन्धक आमलासार ४६ ग्राम।

पारद-शोधन विधि—एक खरल में पारद को डालकर त्रिफला क्वाथ, घृतकुमारी स्वरस तथा चित्रक क्वाथ में १-१ दिन तक मर्दन करने से मलदोष, त्रिफलाक्वाथ से वह्निदोष, चित्रकक्वाथ से विषदोष नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त जयन्तीपत्रस्वरस, एरण्डपत्रस्वरस, आर्द्रकस्वरस और काकमाचीस्वरस से ७-७ भावना देकर पारद को शुद्ध करें।

'गृहकन्या हरति मलं त्रिफलाग्निं, चित्रकश्च विषम्।
तस्मादेभिर्मिश्रैर्वारान् सम्मूर्च्छयेत् सप्त' ॥
(र.ह.तन्त्र २।६)

प्रक्षेपण के लिए उत्तम गन्धक का लक्षण इस प्रकार है—जो तोते के पूँछ के समान वर्ण वाला, मक्खन के समान चिकना तथा कठिन और स्निग्ध हो ऐसे गन्धक को इस पर्पटी रसायन में ग्रहण करना चाहिए।

गन्धक-शोधन विधि—ऊपर बताये लक्षणों से युक्त गन्धक को ४६ ग्राम लेकर चावल के आकार के छोटे-छोटे टुकड़े करें तथा भृङ्गराज स्वरस की भावना देकर तेज धूप में सुखा लें। इस प्रकार ७ बार भावना दें तथा भली प्रकार सूख जाये तब उसका शुष्क चूर्ण बना लें। इस चूर्ण को लोहे की बड़ी दर्वी में डालें और उस दर्वी को बेर की लकड़ी की निर्धूम अग्नि पर रखकर गन्धक को पिघलायें। जब गन्धक पिघल-कर द्रवरूप हो जाये तब उसे एक पात्र में रखा हुआ भृङ्गराज के स्वरस में डाल दें। द्रव में डालते ही गन्धक चूर्ण कठोर हो

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जाता है। इस गन्धक को भृङ्गराज स्वरस से निकालकर तेज धूप में सुखायें और केवड़े के पुष्प की धूलि (चूर्ण) के समान चूर्ण कर लें।

विधि—शुद्ध पारद तथा शुद्ध गन्धक को समभाग लेकर खरल में मर्दन करें। तब तक मर्दन करते रहें जब तक कि पारद अदृश्य और निश्चन्द्र न हो जाय। ततः बेर-लकड़ी की निर्धूम मृद्वग्नि पर लौहदर्वी को गरम करें। पुनः दर्वी में २-३ बूँद घृत डालें, उसके बाद १० ग्राम उपर्युक्त कज्जली डालकर छोटे चम्मच से मिलावें। कुछ देर में कज्जली द्रवित हो जायगी और गोल पिण्ड जैसी हो जायगी। अब गाय के गोबर से ४ अंगुल मोटी और १२ अंगुल गोल व्यास की जमीन पर पिण्डी बना लें। उस पिण्डी पर आग में सेंके गये कई कदलीपत्र के टुकड़ों को आड़े-सीधे रखें। इसी प्रकार ५०० गोबर के उपलों को कदलीपत्र में लपेटकर पोटली बना लें। ततः दर्वी में गोलीभूत द्रवित कज्जली को रखकर गोबर की पोटली से १ मिनट तक दबाये रखें। इस प्रकार पर्पट के रूप में बनी यह औषधि रसपर्पटिका कही जाती है।

सिद्ध पर्पटी परीक्षा-प्रकार—पर्पटी के ऊपर मोर के पङ्ख के समान चन्द्राकार रचना चमकती हुयी दिखायी दे तब उसको भली-भाँति सिद्ध हुई समझना चाहिए। अर्थात् ठीक प्रकार से सिद्ध पर्पटी में निश्चित रूप से मयूरपिच्छ चन्द्रिका के समान चमक होगी। इस प्रकार की चन्द्रिका न होने पर दुबारा द्रवित करके विधिपूर्वक डालें तथा सिद्ध पर्पटी को काचपात्र में एकत्र कर लें।

पर्पटी सेवन विधि—इस पर्पटी को वैद्य शुभ दिन एवं नक्षत्र में खरल में मर्दनकर बतायी गयी विधि के अनुसार मनुष्य को २५० मि.ग्रा. सेवन करायें। वातज रोगों से युक्त उदररोग में भुने हुए श्वेत जीरे का चूर्ण १२५ मि.ग्रा. तथा शुद्ध हींग का चूर्ण ६० मि.ग्रा. ($\frac{1}{2}$ रत्ती) लेकर पर्पटी के बारीक चूर्ण के साथ मिलाकर खिलायें। जीरे तथा हींग का चूर्ण खाने पर शीतल जल अनुपान स्वरूप ग्रहण करें। लेकिन पारद-गन्धक की पर्पटी को सेवन करने के बाद तुरन्त ही जल का सेवन नहीं करना चाहिए। अर्थात् सर्वप्रथम पर्पटी जीरे और हींग का चूर्ण खाना चाहिए। तत्पश्चात् जल का सेवन करे।

रसपर्पटी की मात्रा—प्रथम दिन २५० मि.ग्रा. पर्पटी को छोटी खरल में पीसकर खायें। दूसरे दिन से १२५ मि.ग्रा. की मात्रा रोज बढ़ाकर १० रत्ती अर्थात् १ ग्राम २५० मि.ग्रा. तक बढ़ायें। उसके बाद १-१ रत्ती की मात्रा घटाकर केवल २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) तक करें। इस प्रकार २१ दिन तक सेवन करें। इसे १ कला कहा जाता है।

पथ्यापथ्य व्यवस्था—पर्पटी के सेवन काल में वायु के वेग तथा धूप में बैठना, घूमना या सोना, क्रोध करना, मन से किसी भी विषय का चिन्तन करना, आहार काल में वैषम्य, व्यायाम, किसी प्रकार का परिश्रम, स्नान तथा भाषण करना—ये सब अत्यन्त अहितकर हैं। अतः इनका परित्याग करना चाहिये। औषध का परिपाक हो जाने के बाद तथा भूख लगने पर घृत, जीरा, धनियाँ, हल्दी और सैन्धवनमक इनसे सुसंस्कृत गेहूँ के मोटे-मोटे पिसे सूजी की नमकीन, लप्सी, भात, विशेषतः शालि चावल का भात, इनमें जिसकी जैसी रुचि हो खायें। शाकों में उक्त मसालों से संस्कृत गहरे बैगनी वर्ण के बैंगन का शाक, बथुए का शाक, खड़े मूँग की दाल, परवल के फल एवं पत्तों का शाक, भोजन के बाद मुखशुद्धि के लिए सुपारी तथा भोजन के पूर्व मुखशुद्धि के लिए अदरक के टुकड़े खाने चाहिए। सभी शाकों में मकोय का शाक सर्वश्रेष्ठ है। मांसों में लावक, बत्तख, तित्तिर एवं मयूर का मांस लाभदायक होता है। मछलियों में मुद्गुर, रोहू और काली मछलियाँ श्रेष्ठ हैं। पीने के लिए महीन कपड़े से छना पानी, दूध तथा आधा मिलाकर जल एवं आधा दूध उबाला हुआ पीना चाहिए। फलों में पके हुए केले श्रेष्ठ हैं।

अपथ्य—केले का कच्चा फल, पत्ते, छाल एवं मूल का त्याग करना चाहिए और तिक्त वस्तुएँ यथा—नीम के मुलायम पत्तों का शाक, नीम का पका फल (निम्बोली) का चूर्ण एवं अन्य उष्ण प्रकृति वाले अन्न आदि का सेवन नहीं करना चाहिए। आनूप देश के पक्षियों का, जलचर प्राणियों का मांस सर्वदा वर्जनीय है। स्त्रियों के साथ सम्भाषण नहीं करना चाहिए।

यद्यपि ऊपर काली मछलियों को पथ्य के लिए बताया गया है लेकिन उनमें गडक नामक मछली का सेवन वर्जित किया गया है। पर्पटी के सेवन काल में खटाई का सेवन नहीं करना चाहिए, दही एवं दही से संस्कृत शाक भी वर्जित है। इनके अलावा खाँड, शर्करा आदि ईख के विकार तथा इक्षु वर्जित है। करेले के पत्ते, फल और लता इनमें से किसी का भी शाक सेवन नहीं करना चाहिए। पथ्य पदार्थों के साथ थोड़ा-सा घृत मिलाकर सेवन करना चाहिए। भूख लगने पर यदि उदर में पीड़ा होती हो तो आधी रात को भी भोजन अवश्य करना चाहिए।

भोजन में क्षीरपान विधि—आधा दूध और आधा पानी मिलाकर क्षीरपाक बनाकर पीना चाहिए या अधिक जल मिलाकर सिद्ध किया हुआ दूध पीना चाहिए।

भोजन का समय बीत जाने पर तथा ज्वरावस्था, विरेचनावस्था और वमनावस्था हो जाने पर अर्थात् पर्पटी के सेवन काल में ज्वर, विरेचन तथा वमन होने पर कच्चे नारियल के फल का पानी और दूध पिलायें। यदि कभी स्वप्न में किसी को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वीर्यस्राव हो जाय तो उसे दूध पिलाना चाहिए। यदि भूख की अनुभूति रोगी को नहीं होती हो एवं अशक्ति का अनुभव होने पर, हाथ-पैरों में झुनझुनाहट होने पर तथा सिर में पीड़ा होने पर एवं भूख का अनुभव होने पर तुरन्त दुग्ध का सेवन करना चाहिए। ज्यादा क्या कहा जाय, जब-जब रोगी को भोजन की अनुभूति हो तब-तब अवश्य ही निडर होकर दुग्ध का सेवन करायें।

इस प्रकार उपर्युक्त अवस्थाओं में बताये गये पथ्य के न सेवन करने पर और वर्जित के सेवन करने पर अनेक प्रकार के उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए आहार एवं विहार सर्वदा सावधानी से पथ्यापथ्य का विचार करके पथ्य को ग्रहण करना एवं अपथ्य को त्याग करना चाहिए। इस प्रकार विधिपूर्वक सेवन करने से यह रसपर्पटी ग्रहणी आदि रोग में अत्यधिक लाभदायक है।

यथादोषहर अनुपानों के साथ खाने पर यह रसपर्पटी अर्श, आमदोषज संग्रहणी, शूल, अतिसार, कामला, पाण्डुरोग, दारुण प्लीहावृद्धि, गुल्म, जलोदर, भस्मकरोग, आमवात, १८ प्रकार के कुष्ठ, सभी प्रकार के शोथ आदि रोगों को नष्ट करती है। यह पर्पटी अम्लपित्त तथा त्रिदोष प्रकोप को शान्त करने वाली, भूख को बढ़ाने वाली तथा नष्ट हुई जाठराग्नि को प्रदीप्त करने वाली होती है। यह पारद-गन्धक पर्पटी सभी प्रकार की व्याधियों को नष्ट करके मनुष्य को पलितादि रोग से मुक्त करके दीर्घायु करती है। व्याधियों के प्रभाव को शान्त करने एवं अकाल मृत्यु के भय को नाश करने के कारण यह पारद-गंधक पर्पटी मनुष्यों के लिए अमृततुल्य है। श्रद्धा और भक्तिपूर्वक भगवान् शंकर को प्रणाम करके तथा विष्णु भगवान् के चरण-कमलों की वन्दना कर इस रस-गन्धक पर्पटी का सेवन करने से वह अधिक फल देने वाली होती है। इस पर्पटी का लगातार सेवन करते रहने से व्याधिग्रसित मनुष्य निश्चय ही व्याधिरहित हो जाते हैं। यह श्रेष्ठ रसपर्पटी पहले श्रीवत्स (भगवान् विष्णु) के द्वारा बनायी गयी। इस पर्पटी को सेवन करते समय ऊपर बताये गये पथ्यों को ही ग्रहण करें। मोहवश अपथ्य का सेवन कभी न करें। जितने दिन पर्पटी का सेवन किया जाय बाद में उतने ही दिन पथ्य रूप आहार-विहार का सेवन करें। रसपर्पटी के सेवन काल में विविध प्रकार की बाधाएँ उत्पन्न होती हैं, उनकी शान्ति के लिए क्षेत्रपालदेव को बलि देना चाहिए तथा क्षेत्रपाल को बलिदान देने के बाद योगिनियों को भी बलिदान देना चाहिए। यह बलिकर्म शौच-स्नानादि दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होकर देवता की पूजा आदि माङ्गलिक कार्य करके करना चाहिए।

क्षेत्रपाल एवं योगियों के लिए पहले एक-एक सामान्य बलि मूलोक्त तत्तत् मन्त्रों से दें, फिर एक-एक विशेष मूलोक्त तत्तत् मन्त्रों से दें। बलि देने का स्थान चौराहा, श्मशान या पीपल के पेड़ के नीचे की जगह उत्तम है।

भात, तिल, उड़द, कुंकुम, लालसूत्र आदि सामान लेकर नये छोटे-छोटे मिट्टी के पात्र आदि में डालकर मूलोक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए बलि देनी चाहिए। बलि देकर वापस लौटते समय पीछे मुड़कर नहीं देखना चाहिए।

मल, वह्नि और विष नामक पारद के तीन नैसर्गिक दोष होते हैं। मलदोषयुक्त पारद को सेवन करने से मूर्च्छा, वह्निदोषयुक्त पारद-सेवन से सर्वाङ्ग दाह तथा विषदोषयुक्त पारद-सेवन से हिक्कारोग (मृत्यु) हो जाता है। इसलिए तीनों दोषों का विनाश करना अत्यन्त आवश्यक है। घृतकुमारी मलदोष को, त्रिफला वह्निदोष को तथा चित्रक विषदोष को शान्त करता है। इसलिए इन तीनों के साथ अलग-अलग सात-सात बार पारद को मर्दन कर मूर्च्छित करें और बाद में इस पर्पटी के प्रारम्भ में प्रतिपादित विधि के अनुसार शोधन करना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. से १२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—भुना जीरा, शुद्ध हींग एवं मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी (पहले घृत गन्धी)। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—ग्रहणी, अग्निमान्द्य एवं अरुचि में। **आहार**—दुग्धाहार।

८३. लौहपर्पटी

समौ गन्धरसौ कृत्वा कज्जलीकृत्य यत्नतः।
शुद्धलौहस्य चूर्णन्तु रसतुल्यं प्रदापयेत् ॥४४४॥
एकीकृत्य ततो यत्नाल्लौहपात्रे प्रमर्दितम्।
घृतप्रलिप्तदर्व्यान्तु स्वेदयेन्मृदुनाऽग्निना ॥४४५॥
द्रवीभूतं समाहृत्य ढालयेत् कदलीदले।
चूर्णीकृत्य सुखार्थाय पथ्यभुग्भिः प्रसेव्यते ॥४४६॥
शीतोदकानुपानं वा क्वाथो वा धान्यजीरयोः।
लौहेन पर्पटी ह्येषा भक्ष्या लोकस्य सिद्धिदा ॥४४७॥
रक्तिकैकां समारभ्य वर्द्धयेद्रक्तिकां क्रमात्।
सप्ताहं वा द्वयं वाऽपि यावदारोग्यदर्शनम् ॥४४८॥
सूतिकाञ्च ज्वरांश्चैव ग्रहणीमतिदुस्तराम्।
आमशूलातिसारांश्च पाण्डुरोगं सकामलम् ॥४४९॥
प्लीहानमग्निमान्द्यञ्च भस्मकञ्च तथैव च।
आमवातमुदावर्त्तं कुष्ठान्यष्टादशैव तु ॥४५०॥
एवमादींस्तथा रोगान् गराणि विविधानि च।
हन्त्यनेन प्रयोगेण वपुष्मान् निर्मलः सुखी ॥४५१॥
जीवेद्वर्षशतं पूर्णं वलीपलितवर्जितः।
भोजनं रक्तशालीनां त्यक्त्वा शाकं विदाहि च ॥४५२॥
आतपं वातकोपञ्च चिन्तनं मैथुनं तथा।
प्रातरुत्थाय संसेव्या विधिनाऽऽयुःप्रवर्द्धिनी ॥४५३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १० ग्राम तथा ३. लौहभस्म १० ग्राम—सभी द्रव्य समभाग में लें। शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को लेकर खरल में मर्दनकर कज्जली बनायें। जब निश्चन्द्र और श्लक्ष्ण कज्जली तैयार हो जाय तब उसमें १० ग्राम लौहभस्म मिला दें तथा एक प्रहर तक खरल में मर्दन करें। तत्पश्चात् घृतलिप्त कलछी (दर्वी) में डालकर मृदु एवं निर्धूम बेर की आग पर पिघलाकर द्रुत कर लें। गीले गोबर का एक चौकोर चबूतरा बनवायें तथा उस पर मुलायम केले का पत्ता आड़े-तिरछे बिछाकर रखें तथा एक गोबर के पिण्ड को केले का पत्ता लपेटकर पोटली बनावें। द्रुत हुयी कज्जली को गोबर स्थित केले के पत्ते पर ढालकर गोबर के पिण्ड से धीरे-धीरे दबायें। स्वाङ्गशीत होने पर पर्पटी को खरल में चूर्ण करके शीशी में रख दें। इस पर्पटी को शीतल जल या धनिया और जीरा के ५० मि.ली. क्वाथ के साथ सेवन करें। अथवा (लौहासव २५ मि.ली. और जल २५ मि.ली. अनुपान के साथ इस पर्पटी का सेवन करें।) इस पर्पटी को १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा से प्रारम्भ करके प्रतिदिन १-१ रत्ती बढ़ावें; इस प्रकार एक सप्ताह या दो सप्ताह तक सेवन करें। यह पर्पटी यथादोषहर अनुपानों के साथ सेवन करने से सूतिकारोग, ज्वर, असाध्य संग्रहणी, आमदोषज शूल, अतिसार, पाण्डु, कामला, प्लीहावृद्धि, अग्निमान्द्य, भस्मक रोग, आमवात, उदावर्त, १८ प्रकार के कुष्ठ, स्थावर एवं जाङ्गम विष के दोष आदि सभी विनष्ट हो जाते हैं। इस पर्पटी को सेवन करने से दर्शनीय एवं मनुष्य स्वच्छ देह धारण करके सुखपूर्वक तथा वली-पलित आदि रोगों से मुक्त होकर १०० वर्ष की आयु पूर्ण करता है। उष्ण शाकादि, धूप एवं वात का सेवन तथा क्रोध का त्याग करना चाहिए; रक्तशालि चावल के भात का सेवन लाभदायक है। इस लौहपर्पटी का सेवन विधिपूर्वक प्रातःकाल शौचादि नित्यक्रिया से निवृत्त होकर करना चाहिए।

मात्रा—१२५ से १८७५ मि.ग्रा. तक। **अनुपान**—मधु और धनियाँ एवं जीरा के शीत या क्वाथ से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण या कत्थई वर्ण का। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—ग्रहणी, पाण्डु, आमदोष, मन्दाग्नि एवं कामला में।

८४. स्वर्णपर्पटी

रसोत्तमं पलं शुद्धं हेमतोलकसंयुतम्।
शिलायां मर्दयेत्तावद्यावदेकत्वमागतम् ॥४५४॥
गन्धकस्य पलञ्चैकमयःपात्रे ततो दृढे।
मर्दयेद् दृढपाणिभ्यां यावत्कज्जलतां व्रजेत् ॥४५५॥
ततः पाकविधानज्ञः पर्पटीं कारयेत् सुधीः।
रक्तिकादिक्रमेणैव योजयेदनुपानतः ॥४५६॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति यक्ष्माणञ्च विशेषतः।
शूलमष्टविधं हन्ति वृष्या सर्वरुजाऽपहा ॥४५७॥

१. शुद्ध पारद ४० ग्राम, २. स्वर्णभस्म १० ग्राम तथा शुद्ध गन्धक ४० ग्राम लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक को लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली करें। तत्पश्चात् स्वर्णभस्म को मिलाकर उस कज्जली को घृतलिप्त दर्वी (कलछी) में डालकर बेर की निर्धूम मृद्वग्नि पर द्रवित करें। जब द्रवित हो जाय तब उसको एक वित्ता व्यास के गोबरपिण्ड पर आड़े-तिरछे फैलाये हुए कई केले के पत्ते पर ढालकर कदलीपत्र से वेष्टित गोबरपिण्ड से दबाकर पर्पटी बना दें। इस पर्पटी को पीसकर रख लें। प्रथम दिन १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा से प्रारम्भ करके प्रतिदिन १-१ रत्ती बढ़ायें। इस प्रकार ७ दिन तक यथादोषहर अनुपानों के साथ सेवन करें। यह पर्पटी विभिन्न प्रकार की संग्रहणी, राजयक्ष्मा तथा ८ प्रकार के शूल को शान्त करती है तथा सभी प्रकार की वेदनाओं को दूर करती है एवं वृष्य है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु-जीरक चूर्ण या दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—ग्रहणी, राजयक्ष्मा, शूल, अतिसार एवं दौर्बल्य में।

८५. पञ्चामृतपर्पटी

अष्टौ गन्धकतोलका रसदलं लौहं तदर्द्धं शुभं
लोहार्द्धञ्च वराभ्रकं सुविमलं ताम्रं तदभ्रार्द्धकम्।
पात्रे लौहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतञ्चैकतो
दर्व्या वादरवह्निनाऽतिमृदुना पाकं विदित्वा दले ॥४५८॥
रम्भाया लघु ढालयेत् पटुरियं पञ्चामृता पर्पटी
ख्याता क्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्वयं वृद्धितः।
लौहे मर्दनयोगतः सुविमलं भक्ष्यक्रिया लौहवत्
गुञ्जाष्टावथवा त्रिकं त्रिगुणितं सप्ताहमेवं भजेत् ॥४५९॥
नानावर्णग्रहण्यामरुचिसमुदये दुष्टदुर्नामकादौ
छर्द्यां दीर्घातिसारे ज्वरभरकलिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि।
वृष्याणां वृष्यराज्ञी वलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री
तुन्दं दीप्तं स्थिराग्निं पुनरपि नवकं रोगिदेहं करोति ॥

विशेष—रसदलं गन्धकार्द्धमित्यर्थः। दीर्घातिसारे चिरोत्पन्नातिसारे।

१. शुद्ध गन्धक ८० ग्राम, २. शुद्ध पारद ४० ग्राम, ३. लौहभस्म २० ग्राम, ४. अभ्रकभस्म १० ग्राम और ५. ताम्रभस्म ५ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को उपर्युक्त मात्रा में लेकर पत्थर के खरल में मर्दन करें। जब कज्जली बन जाय तब शेष तीनों भस्में भी उसमें मिलाकर एक प्रहर तक खरल करें। जब अच्छी प्रकार से खरल हो जाये तब उस कज्जली में से १० ग्राम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

के लगभग लेकर घृतलिप्त लोहे की दर्वी (कलछी) में डालकर बेर की निर्धूम मन्दाग्नि पर पिघलायें। जब कज्जली पिघल जाये तब गोबर के १ वित्ता व्यास की वेदी पर घृतलिप्त कोमल केले के पत्ते पर ढालकर केले के पत्र लिपटे हुए गोबर की पोटली से तुरन्त दबाकर पर्पटी का निर्माण करें। इसको पञ्चामृत पर्पटी कहते हैं। इस पर्पटी को लोहे के खरल में महीन पीस लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। २-२ रत्ती की वृद्धि करके ८ रत्ती तक शहद एवं घृत के साथ सेवन करायें या वृद्धि एवं ह्रास के क्रम से २१ दिन तक सेवन करायें। यह पर्पटी विविध प्रकार की संग्रहणी, अरुचि, दुष्ट अर्श, छर्दि, पुराण अतिसार, ज्वर, रक्तपित्त एवं क्षय रोगों का नाश करती है। यह पर्पटी वृष्य योगों में उत्तम है; वली, पलित आदि रोगशामक है, नेत्ररोगों में हितकर एवं स्थूलता को कम करने वाली है; मन्द हुई जाठराग्नि को प्रदीप्त करती है एवं रोगी व्यक्ति के शरीर से रोग का नाश करके शरीर को नया बना देती है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. से २ ग्राम तक। **अनुपान**—मधु या दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—ग्रहणी, मन्दाग्नि, अर्श, वमन, जीर्णातिसार, रक्तपित्त एवं क्षय में।

८६. विजयपर्पटी

गन्धकं क्षुद्रितं कृत्वा भाव्यं भृङ्गरसेन तु।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पश्चाच्छुष्कं विचूर्णयेत् ॥४६१॥
चूर्णयित्वाऽऽयसे पात्रे कृत्वा वह्निगतं सुधीः।
द्रुतं भृङ्गरसे क्षिप्तं तत उद्धृत्य शोषयेत् ॥४६२॥
तञ्च गन्धं पलञ्चैकं गन्धार्द्धं शुद्धपारदम्।
सूतार्द्धं भस्मरौप्यञ्च तदर्द्धं स्वर्णभस्मकम् ॥४६३॥
तदर्द्धं मृतवैक्रान्तं मौक्तिकञ्च विनिक्षिपेत्।
एकीकृत्य ततः सर्वं कुर्यात् पर्पटिकां शुभाम् ॥४६४॥
लौहपात्रे समरसं मर्दितं कज्जलीकृतम्।
बदराङ्गारवह्निस्थे लौहपात्रे द्रवीकृते ॥४६५॥
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं वा यदि दृश्यते।
आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥४६६॥
मृदौ न सम्यग् भङ्गः स्यान्मध्यभङ्गश्च रूप्यवत्।
खरे लघु भवेद्भङ्गो रूक्षसूक्ष्मोऽरुणच्छविः ॥४६७॥
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः।
जराव्याधिशताकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरिः ॥४६८॥
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणोऽमृतम्।
आदौ शङ्करमभ्यर्च्य द्विजातीन् प्रणिपत्य च ॥४६९॥
प्रभाते भक्षयेदेनां प्राग्रक्तिद्वयसम्मिताम्।
रक्तिकादिक्रमाद् वृद्धिर्भक्ष्या नैव दशोपरि ॥४७०॥
आरोग्यदर्शनं यावत्तावद्ह्रासस्ततः परम्।
अजीर्णे भोजनं नैव पथ्यकालव्यतिक्रमे ॥४७१॥
घृतसैन्धवधन्याकहिङ्गुजीरकनागरैः।
शस्यते व्यञ्जनं सिद्धं पित्ते स्वाद्वम्लमाक्षिकम् ॥४७२॥
कृष्णमत्स्येन दुग्धेन मांसेन जाङ्गलेन च।
जाङ्गलेषु शशच्छागौ मत्स्यौ रोहितमद्गुरौ ॥४७३॥
पटोलफलपत्रञ्च कृष्णवार्त्ताकुजालिका।
सुस्विन्नपूगैस्ताम्बूलैर्लाभे कर्पूरसंयुतैः ॥४७४॥
क्षुधाकाले व्यतिक्रान्ते यदि वायुः प्रकुप्यति।
झिन्झिनीति शिरःशूले विरेके वमथौ तथा ॥४७५॥
तृष्णायाञ्चाधिके पित्ते नारिकेलाम्बु निर्भयम्।
नारिकेलपयः पेयं द्विर्भक्ष्यं क्षीरमेव च ॥४७६॥
स्वप्ने शुक्रच्युतौ चैव चम्पकं कदलीफलम्।
वर्ज्यं निम्बादिकं शाकं शाकाम्लं काञ्जिकं सुराम् ॥४७७॥
कदलीफलपत्राङ्घ्रिपुषालाबुकर्कटी।
कूष्माण्डं कारवेलञ्च व्यायामो जागरं निशि ॥४७८॥
न पश्येन्न स्पृशेद्गच्छेत् स्त्रियं जीवितुमिच्छति।
यद्यौषधे स्त्रियं गच्छेत् कर्त्तव्या तु प्रतिक्रिया ॥४७९॥
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम्।
आमशूलमतीसारं सामञ्चैव सुदारुणम् ॥४८०॥
अतीसारं षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम्।
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहानञ्च जलोदरम् ॥४८१॥
पक्तिशूलं चाम्लपित्तं वातरक्तं वमिं कृमिम्।
अष्टादशविधं कुष्ठं प्रमेहान् विषमज्वरान् ॥४८२॥
वातपित्तकफोत्थांश्च ज्वरान् हन्ति सुदारुणान्।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन् वपुषा निर्मलः सुधीः॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान् वलीपलितवर्जितः ॥४८३॥
प्रातः करोति सततं नियतं द्विगुञ्जां
यस्तां स विन्दति तुलां कुसुमायुधस्य।
आयुश्च दीर्घमनघं वपुषः स्थिरत्वं
हानिं वलीपलितयोरतुलं बलञ्च ॥४८४॥

१. आमलासारगन्ध ८० ग्राम, २. शुद्ध पारद ४० ग्राम, ३. रजतभस्म २० ग्राम, ४. सुवर्णभस्म १० ग्राम, ५. वैक्रान्तभस्म ५ ग्राम तथा ६. मुक्तापिष्टी ५ ग्राम—सर्वप्रथम आमलासार गन्धक को लेकर उसके छोटे-छोटे टुकड़े करें तथा भृङ्गराज स्वरस की ७ भावना या ३ भावना देकर सुखा लें तथा चूर्ण कर लें। इस चूर्ण हुए गन्धक को लोहे की कड़ाही में डालकर पिघलायें तथा पिघल जाने पर भृङ्गराज स्वरस में डाल दें। इसके बाद गन्धक को भृङ्गराज स्वरस से निकालकर सुखा लें और चूर्ण कर लें। इस प्रकार से प्राप्त शुद्ध गन्धक एवं शुद्ध पारद को लेकर खरल में मर्दनकर कज्जली बनायें। जब कज्जली बन जाये

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तब उसमें रजत आदि शेष भस्मों को मात्रानुसार मिला दें तथा अच्छी प्रकार से खरल में मर्दन करें। तत्पश्चात् घृतलिप्त कलछी में डालकर बेर की निर्धूम मृद्वग्नि पर द्रवित करें। द्रवित हो जाने पर गोबर के १ वित्ता व्यास के चबूतरे पर फैलाये हुए केले के पत्ते पर ढालकर तुरन्त ही केले का पत्र लिपटे हुए गोबर की पोटली से दबाकर पर्पटी बना लें। यदि पर्पटी पर मयूरपुच्छ के समान आकार की चन्द्रिका चमकती हुई एवं रंग-बिरंगी रचना दिखायी पड़े तो पर्पटी को उत्तम बनी हुई मानना चाहिए। उसे पीसकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

पर्पटी-पाकभेद—पाकभेद के अनुसार पर्पटी के ३ प्रकार हैं—१. मृदुपाक, २. मध्यपाक, ३. खरपाक।

प्रथम परीक्षा-विधि—मृदुपाक एवं मध्यपाक में पारद में बारीक कण चमकते हुए दिखायी पड़ते हैं लेकिन खरपाक होने पर पारद के कण दिखायी नहीं पड़ते। यह त्रिविध पाक की परीक्षा है।

द्वितीय परीक्षा-विधि—मृदुपाक होने पर पर्पटी ठीक से टूटती नहीं है, मध्यपाक होने पर चाँदी के टुकड़ों के समान पर्पटी शीघ्र भङ्ग हो जाती है एवं खरपाक होने पर थोड़ा-सा दबाते ही पर्पटी का शीघ्र भङ्ग हो जाता है और पर्पटी स्पर्श में रूक्ष, सूक्ष्म और वर्ण में अरुण वर्ण की होती है। मृदु एवं मध्यपाक वाली पर्पटी ग्रहण करने योग्य होती है लेकिन खरपाक वाली पर्पटी को विष के समान त्याग देना चाहिए। प्राचीनकाल में भगवान् विष्णु ने मनुष्यों को असमय में वृद्धावस्था से पीड़ित एवं अनेक व्याधियों से आक्रान्त होते हुए देखकर इस पर्पटी को बनाया था।

सेवन-विधि—प्रातःकाल शौच-स्नानादि दैनिक क्रिया से निवृत्त होकर सर्वप्रथम भगवान् शिव की उपासना करके ब्राह्मणों को प्रणाम करें। तत्पश्चात् प्रथम दिन २ रत्ती (१२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में पर्पटी को पीसकर मधु एवं यथादोषहर अनुपानों के साथ सेवन करें। दूसरे दिन से एक-एक रत्ती बढ़ायें। जब १० रत्ती तक हो जाये तब पुनः १-१ रत्ती की मात्रा घटाते जाय। इस प्रकार जब तक रोगी निरोग न हो जाय तब तक वृद्धि-ह्रास के क्रम से इस पर्पटी का सेवन कराते रहें। किन्तु १० रत्ती से अधिक मात्रा में पर्पटी सेवन नहीं करावें। इस पर्पटी के सेवन काल में पथ्य काल के व्यतिक्रम के कारण यदि अजीर्ण हो जाये तो उस दिन भोजन का त्याग कर देना चाहिए। भूख लगने पर घृत, सैन्धवनमक, धनियाँ, हींग, जीरा और शुण्ठी का चूर्ण अथवा अदरक के टुकड़े आदि से संस्कृत की हुई शाक, मांस, मांसरस और मछली—इनका थोड़ी मात्रा में रुचि के अनुसार खाने में प्रयोग करना चाहिए। यदि पित्त प्रकुपित हो जाय तो मधुर पदार्थों, अम्ल पदार्थों एवं मधु का प्रयोग करना चाहिए। काली मछली, दूध एवं जाङ्गल पशु-पक्षियों का मांस यथा—खरगोश और बकरे का मांस उत्तम है। मछलियों में रोहू एवं मुदगुर मछलियाँ श्रेष्ठ हैं। शाकों में परवल के फल एवं पत्तों का शाक, गहरे रंग के बैंगन का शाक एवं तरोई पथ्य हैं। भोजन करने के बाद मुखशुद्धि के लिए पान के पत्ते में उबली हुई सुपारी के टुकड़े एवं कपूर डालकर सेवन करें। भोजन का काल व्यतीत हो जाने पर भोजन का व्यतिक्रम होने से यदि वायु प्रकुपित हो जाये और हाथ-पैरों में झनझनाहट हो, वमन करने की इच्छा हो एवं पित्त की अधिकता होने से बार-बार प्यास लगती हो तब नारियल का पानी पिलाना चाहिए। पर्पटी सेवन काल में यदि दिवास्वप्न में वीर्य का स्राव हो जाय तब नारियल का पानी और २ बार दूध पीने को देना चाहिए। चम्पा के पुष्पों की माला धारण करायें एवं पके हुए केले का फल खिलायें तो अति उत्तम है।

अपथ्य—निम्ब के पत्र आदि तिक्त रस के शाक, अम्लशाक, काञ्जी, सुरा, केले का कच्चा फल, पत्ते, जड़ और खीरा, कद्दू, ककड़ी, कूष्माण्ड, करेला आदि शाक अग्राह्य हैं, व्यायाम एवं रात्रिजागरण का परित्याग कर दें। इस पर्पटी के सेवनकाल में यदि जीने की इच्छा हो तो स्त्री को देखना, उसको स्पर्श करना एवं उसके साथ सम्भोग करना त्याग देना चाहिए। यदि पर्पटी सेवन करने वाला व्यक्ति भूल से या प्रदीप्त हुई कामेच्छा के वशीभूत होकर स्त्री के साथ सम्भोग करता है तो उससे उत्पन्न हुए उपद्रवों की चिकित्सा करनी चाहिए। इस पर्पटी को यथारोगहर अनुपान के साथ सेवन करने से अनेक वर्षों से पुरानी तथा विविध औषधियों से अचिकित्स्य संग्रहणी, आमज शूल, भयङ्कर एवं आमज अतिसार, साधारण अतिसार, ६ प्रकार के अर्श, उपद्रवयुक्त राजयक्ष्मा, शोथ, कामला, पाण्डु, प्लीहावृद्धि, जलोदर, परिणामशूल, अम्लपित्त, वातरक्त, छर्दि, कृमिरोग, १८ प्रकार के कुष्ठ, २० प्रकार के प्रमेह, विषमज्वर, वातज्वर, पित्तजज्वर, श्लैष्मिकज्वर एवं त्रिदोषजज्वर विनष्ट होते हैं। वृद्ध व्यक्ति भी यदि विधिपूर्वक इस पर्पटी का सेवन करता है तो वह भी शरीर से स्वच्छ, बुद्धि से प्रखर तथा वली-पलित आदि रोग से मुक्त होकर १०० वर्ष तक कामदेव जैसा जीवित रहता है। जो व्यक्ति प्रातःकाल शौचादि नित्य क्रिया कर्म से निवृत्त होकर २ रत्ती की मात्रा में इस पर्पटी को मक्खन, मलाई, मधु आदि के साथ खाता है तो वह कामदेव के समान वर्णयुक्त होकर बलवीर्यादि को प्राप्त करता है और दीर्घ आयु एवं शरीर की स्थिरता को प्राप्त करता है तथा वली-पलित व्याधि से रहित होकर बल से युक्त हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. से १२५० मि.ग्रा. तक। **अनुपान**—मधु एवं दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण पपड़ी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जैसी। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—संग्रहणी, मन्दाग्नि, आमज शूल, भयंकर आमातिसार, पाण्डु, यक्ष्मा तथा शूल में।

८७. विजयपर्पटी

रसं वज्रं हेम तारं मौक्तिकं ताम्रमभ्रकम्।
सर्वतुल्येन गन्धेन कुर्याद्विजयपर्पटीम् ॥४८५॥
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम्।
आमशूलमतीसारं चिरोत्थमतिदारुणम् ॥४८६॥
प्रवाहिकां षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम्।
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहगुल्मजलोदरम् ॥४८७॥
पक्तिशूलमम्लपित्तं वातरक्तं वमिं भ्रमिम्।
अष्टादशविधान् कुष्ठान् प्रमेहान् विषमज्वरान् ॥४८८॥
चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम्।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन् वपुषा निर्मलः सुधीः ॥४८९॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान् वलीपलितवर्जितः ॥४९०॥
प्रातः करोति सततं नियतं द्विगुञ्जां
यस्तां स विन्दति तुलां कुसुमायुधस्य।
आयुश्च दीर्घमनघं वपुषः स्थिरत्वं
हानिं वलीपलितयोरतुलं बलञ्च ॥४९१॥
जराव्याधिसमाकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः।
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणः सुधाम् ॥४९२॥

शुद्ध पारद, २. हीरक, ३. स्वर्णभस्म, ४. रजतभस्म, ५. मुक्ताभस्म, ६. ताम्रभस्म, ७. अभ्रकभस्म और ८. शुद्ध गन्धक—पारद से अभ्रकभस्म तक सभी द्रव्य १-१ भाग तथा गन्धक ७ भाग लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को खरल में लेकर मर्दन करें तथा कज्जली बनायें। जब कज्जली का निर्माण हो जाय तब उसमें शेष द्रव्यों को भी मिला दें तथा एक प्रहर तक खरल में मर्दन करें। तत्पश्चात् घृतलिप्त दर्वी (कलछी) में डालकर कज्जली निर्धूम मन्दाग्नि पर द्रवित करें। जब भलीभाँति द्रवित हो जाय तब गोबर के बने १ वित्ता व्यास एवं ४ अंगुल ऊँचे चबूतरे पर जिस पर केले के कई पत्ते बिछे हों पलट दें एवं कदलीपत्र से वेष्टित गोबर की पोटली से दबाकर पर्पटी बना लें। जब पर्पटी शीतल हो जाय तब उसको खरल में पीसकर काचपात्र में एकत्र कर रख लें। यह पर्पटी यथादोषशामक अनुपानों के साथ सेवन करने पर विविध औषधियों से असाध्य संग्रहणी, आमदोष के सञ्चित होने से उत्पन्न शूल, जीर्ण एवं अधिक भयानक अतिसार, प्रवाहिका, ६ प्रकार के अर्श, उपद्रवयुक्त राजयक्ष्मा, कामला, पाण्डु, प्लीहावृद्धि, गुल्म, जलोदर, परिणामशूल, अम्लपित्त, वातरक्त, छर्दि, भ्रम, १८ प्रकार के कुष्ठ, २० प्रकार के प्रमेह, विषमज्वर, चार प्रकार के अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि आदि व्याधियों का शमन करती है। वृद्ध व्यक्ति भी यदि इस पर्पटी को विधिपूर्वक प्रतिदिन सेवन करता है तो वह भी शरीर से निर्मल, बुद्धि से प्रखर एवं वली-पलित आदि रोग से मुक्त होकर १०० वर्ष तक की आयु का भोग करता है। जो व्यक्ति नियम से लगातार प्रातःकाल २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में इस पर्पटी को खाता है वह कामदेव के समान सुन्दर शरीर वाला, दीर्घायु, शरीर की दृढ़ता, वली-पलित आदि व्याधि की शान्ति एवं उत्तम बल को प्राप्त करता है। प्राचीन काल में भगवान् शिव ने अकाल में वृद्धावस्था एवं अनेक व्याधियों से पीड़ित मनुष्यों को देखकर उनके मङ्गल के लिए इस पर्पटी को बनाया।

मात्रा—२५० से १२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, प्रवाहिका, मन्दाग्नि, पाण्डु, उदररोग एवं कुष्ठ में।

८८. हिरण्यगर्भपोट्टली रस

एकांशो रसराजस्य ग्राह्यौ द्वौ हाटकस्य च।
मुक्ताफलस्य चत्वारो भागाः षड् दीर्घनिःस्वनात् ॥
त्र्यंशं वलेर्वराट्याश्च टङ्कणो रसपादिकः।
पक्वनिम्बूकतोयेन सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥४९४॥
मूषामध्ये न्यसेत्कल्कं तस्य वक्त्रं निरोधयेत्।
गर्त्तेऽरत्निप्रमाणेन पुटेत्त्रिंशद्वनोपलैः ॥४९५॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा रसं मूषोदरान्नयेत्।
ततः खल्वोदरे मर्द्यं सुधारूपं समुद्धरेत् ॥४९६॥
एतस्यामृतरूपस्य दद्याद् गुञ्जाचतुष्टयम्।
घृतमाध्वीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशदूषणैः ॥४९७॥
मन्दाग्नौ रोगसङ्घे च ग्रहण्यां विषमज्वरे।
गुदाङ्कुरे महाशूले पीनसे श्वासकासयोः ॥४९८॥
अतिसारे ग्रहण्याञ्च श्वयथौ पाण्डुके गदे।
सर्वेषु कोष्ठरोगेषु यकृत्प्लीहादिकेषु च ॥४९९॥
वातपित्तकफोत्थेषु द्वन्द्वजेषु त्रिजेषु च।
दद्यात् सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतद्रसायनम् ॥५००॥

१. शुद्ध पारद १२ ग्राम, २. स्वर्णभस्म २४ ग्राम, ३. मुक्ता-भस्म ४८ ग्राम, ४. शंखभस्म ७० ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक ३६ ग्राम, ६. कौड़ीभस्म ३६ ग्राम तथा ७. शुद्ध सोहागा ३ ग्राम लें। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को खरल में रखकर मर्दन कर कज्जली बनायें। जब कज्जली का निर्माण हो जाय तब शेष सभी द्रव्यों को उसमें मिलाकर मर्दन करें। ततः निम्बू के रस की भावना देकर एक प्रहर तक मर्दन करें और गोला बना लें। पुनः उस गोले को मूषा में रखकर उसके मुख को गुड़, चूना एवं खड़िया से बन्द करके एक हाथ लम्बे-चौड़े गहरे गड्ढे में ३०

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जङ्गली उपलों के बीच में रखकर अग्नि प्रज्वलित कर दें। स्वाङ्गशीत होने पर मूषा में से इस सिद्ध रसौषधियों को निकाल लें और खरल में पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रह कर लें। यह रस अमृत के समान है। अमृत तुल्य इस रस को ४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की मात्रा में दें किन्तु वर्तमान मात्रा २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) लेकर $\frac{१}{२}$ तोला (५ ग्राम) घृत तथा १ तोला (१० ग्राम) शहद और २९ काली मिर्च के चूर्ण के साथ सेवन करायें। यह हिरण्यगर्भपोट्टली रस अग्निमान्द्य, विभिन्न रोगों के संमिश्रणयुक्त संग्रहणी, विषमज्वर, अर्श, महाशूल, पीनस, श्वास, कास, अतिसार, ग्रहणीदोष, शोथ, पाण्डु, सभी प्रकार के उदररोग, यकृत्-प्लीहा की वृद्धि एवं वातज, पित्तज, श्लेष्मज, वातपित्तज, वातकफज, कफपित्तज और त्रिदोषज व्याधियों में अत्यन्त लाभदायक है और अन्य सभी रसायनों में सर्वश्रेष्ठ रसायन है।

मात्रा—२५० से १२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु-घृत एवं मरिच चूर्ण से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—ग्रहणी, आमतिसार, मन्दाग्नि, शोथ एवं यकृत्-प्लीहा वृद्धि में।

८९. रसेन्द्र चूर्ण

पलोन्मितं रससिन्दूरमाददीताथ शाणकम्।
प्रत्येकं वंशजा मुक्ता निरुत्थहेमभस्मनाम् ॥५०१॥
द्रावयेदहिफेनस्य शाणं क्षीरे निमज्जितम्।
वस्त्रपूतेन तेनेव तत्सर्वं मर्दयेद् भृशम् ॥५०२॥
छायायामातपे वाऽथ शोषयेच्चूर्णयेत्ततः।
चतुर्गुञ्जामितं चूर्णं क्षीरेण सह सेवयेत् ॥५०३॥
सक्षीरमन्नमश्नीयान्नाश्नीयाल्लवणाम्भसी ।
यावज्जीर्येत् तावदाद्यं पक्वमाज्येन मोदकम् ॥५०४॥
शौचमाचमनं कार्यमग्निपूतेन वारिणा।
वाससाऽच्छादयेद्देहं न स्नायादस्य सेवकः ॥५०५॥
अत्रानुवर्त्तयेत्सर्वान् नियमान् रससेविनाम्।
चूर्णं रसेन्द्रनामेदं रसे श्रेष्ठं रसायनम् ॥५०६॥
नाशयेद् ग्रहणीं कृत्स्नां रक्तातीसारसूतिके।
अग्निमान्द्यादिकं जित्वा दीपयेज्जठरानलम् ॥५०७॥
पुष्टं हृष्टं बलिष्ठञ्च नरं कुर्याद्धिताशनम् ॥५०८॥

१. रससिन्दूर ४६ ग्राम, २. वंशलोचन ३ ग्राम, ३. मुक्ताभस्म ३ ग्राम, ४. स्वर्णभस्म ३ ग्राम, ५. शुद्ध अफीम ३ ग्राम तथा ६. दुग्ध ८० मि.ली. लें। सभी द्रव्यों को मात्रानुसार खरल में एकत्र मर्दन करें। इसके पश्चात् शुद्ध अफीम को दूध में घोलें तथा बारीक कपड़े से छान लें। इस दुग्ध-मिश्रित अफीम से खरल में रखे हुए द्रव्यों को भावना देकर मर्दन करें और सूखने पर शीशी में सुरक्षित रख लें। इसको ४ रत्ती की मात्रा में दूध के अनुपान से सेवन करें। पथ्य के रूप में भूख लगने पर दूध-भात खाये। लवणयुक्त शाकादि एवं शीतल जल का सेवन नहीं करना चाहिए। औषध के पच जाने पर घृत में या भूने हुए गेहूँ के आटे को खाँड, दाख (मुनक्का), सुगन्धित द्रव्य आदि डालकर बनाये गये मोदक का सेवन करें। शौचादि नित्यक्रिया गरम जल से करना चाहिए। औषध सेवन के पश्चात् रोगी को वस्त्र ओढ़ाकर सुला देना चाहिए। इस औषध के सेवन काल में स्नान नहीं करना चाहिए एवं पारदादि सेवन के साथ जो पथ्यापथ्यादि नियम बताये गये हैं उनका पालन करना चाहिए। रसेन्द्रचूर्ण नाम से प्रसिद्ध यह औषध सभी प्रकार की रसायन औषधियों में अत्यन्त श्रेष्ठ है। यह रसेन्द्रचूर्ण सभी प्रकार की संग्रहणी, रक्तातिसार, सूतिकारोग एवं अग्निमान्द्य को शान्त करता है। पाचकाग्नि को प्रदीप्त करता है। पथ्य भोजन करने वाले को हृष्ट-पुष्ट एवं उत्तम बल से युक्त करता है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—अफीमगन्धी। **वर्ण**—कत्थई। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, आमातिसार, प्रवाहिका, रक्तातिसार तथा अग्निमान्द्य में।

९०. पूर्णकलावटिका (र.सा.सं.)

रसं गन्धं घनं लौहं धातकीपुष्पबिल्वकम्।
विषं कुटजबीजञ्च पाठाजीरकधान्यकम् ॥५०९॥
रसाञ्जनं टङ्कणञ्च शिलाजतु फलं तथा।
अभ्रकञ्च तथा ग्राह्यं प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥५१०॥
भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकञ्चटदाडिमम्।
शृङ्गाटं केशरं जम्बु दधिमस्तु जयन्तिका ॥५११॥
केशराजं भृङ्गराजं प्रत्येकं तोलकद्वयम्।
द्विमाषा वटिका कार्या तक्रेण परिसेविता ॥५१२॥
इयं पूर्णकला नाम ग्रहणीगदनाशिनी।
शूलघ्नी दाहशमनी वह्निदा ज्वरनाशिनी ॥
भ्रमच्छर्दिच्छेदकरी संग्रहग्रहणीं जयेत् ॥५१३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. नागरमोथाचूर्ण, ४. लौहभस्म, ५. धातकीफूल, ६. बिल्वफलमज्जा, ७. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण, ८. इन्द्रयवचूर्ण, ९. पाठाचूर्ण, १०. जीराचूर्ण, ११. धनियाँचूर्ण, १२. रसांजन, १३. शुद्ध सुहागा, १४. शुद्ध शिलाजतु, १५. अभ्रकभस्म, १६. जायफलचूर्ण—प्रत्येक ३५ ग्राम; १७. मण्डूकपर्णीचूर्ण, १८. लघुपञ्चमूलचूर्ण, १९. बलामूलचूर्ण, २०. गजपीपरचूर्ण, २१. अनारदानाचूर्ण, २२. सिंघाड़ाचूर्ण, २३. नागकेशरचूर्ण, २४. जामुनबीजचूर्ण, २५. मस्तु, २६. जयन्तीचूर्ण, २७. केशराजचूर्ण तथा २८. भृङ्गराज-चूर्ण—प्रत्येक २३ ग्राम लें। एक पत्थर के बड़े खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उसमें भस्मों एवं काष्ठौषधों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर मस्तु एवं जल के साथ मर्दन करें और २ माशा (२ ग्राम) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस पूर्णकला नामक वटी के सेवन के बाद तक्र का सेवन करें। इसके सेवन से ग्रहणीविकार, शूल, हस्त-पादादि का दाह, ज्वर, भ्रम, छर्दि, संग्रहणी आदि व्याधियों का नाश होता है। यह जाठराग्नि को दीप्त करती है। आधुनिक मात्रा ४ रत्ती दें।

मात्रा—२ ग्राम। **अनुपान**—तक्र। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, अग्निमान्द्य एवं दाह में।

९१. शम्बूकादि वटी (योगरत्नाकर)

दग्धशम्बूकसिन्धूत्थं तुल्यं क्षौद्रेण मर्दयेत्।
माषैकेण निहन्त्याशु वातसंग्रहणीगदम् ॥५१४॥

शम्बूकभस्म (क्षुद्रशंखभस्म) एवं सैन्धवलवण समभाग लेकर सूक्ष्म पीस लें तथा शीशी में रख लें या शहद के साथ खरल में घोटकर एक-एक माशे की वटियाँ बना लें। इन वटियों को सुखाकर शीशी में रखें। इस शम्बूकादि वटी के सेवन से वातिक संग्रहणी शान्त होती है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—लवणीय। **उपयोग**—वातज संग्रहणी में।

९२. अगस्त्यसूतराज रस (योगरत्नाकर)

रसवलिसमभागं तुल्यहिङ्गूलयुक्तं
द्विगुणकनकबीजं नागफेनेन तुल्यम्।
सकलविहितचूर्णं भावयेद् भृङ्गनीरै-
र्ग्रहणिजलधिशोषे सूतराजो ह्यगस्त्यः ॥५१५॥
त्रिकटुकमधुयुक्तः सर्ववान्तिं च शूलं
कफपवनविकारान् वह्निमान्द्यं च निद्राम्।
घृतमरिचयुतोऽयं रक्तिमात्रः प्रवाहीं
हरति षडतिसाराञ्जीरजातीफलाभ्याम् ॥५१६॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १० ग्राम, ३. शुद्ध हिङ्गुल २० ग्राम, ४. शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण ४० ग्राम, ५. शुद्ध अफीम ४० ग्राम तथा ६. भृङ्गराजस्वरस की भावना। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को समभाग में लेकर खरल में मर्दन कर कज्जली बनायें। जब कज्जली बन जाय तब उसमें शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिला दें तथा भृङ्गराजस्वरस की भावना देकर मर्दन करें। पुनः १-१ रत्ती की वटिका बना लें तथा छाया में सुखाकर शीशी में रख लें। यह अगस्त्यसूतराज रस ग्रहणी रूपी समुद्र के विनाश के लिए श्रेष्ठ है। इस रस को १ रत्ती की मात्रा में सेवन करना चाहिए। शुण्ठी, मरिच, पिप्पली चूर्ण ३ माशा लेकर मधु के साथ इस औषधि को खाने से छर्दि, शूल, कफज एवं वातज विकार, मन्दाग्नि आदि सभी रोग शान्त होते हैं। यदि इस रस का सेवन एक रत्ती कालीमिर्च का चूर्ण और घी के साथ करें तो प्रवाहिका रोग शान्त होता है। जीरा एवं जायफल के ३ ग्राम चूर्ण के साथ खाने से ६ प्रकार के अतिसार शान्त होते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. तक। **अनुपान**—मरिच चूर्ण एवं घी से या दोषानुसार। **गन्ध**—अफीमगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी-प्रवाहिका-अतिसार में।

९३. अग्निसूनु रस (योगरत्नाकर)

भागो दग्धकपर्दकस्य च तथा शङ्खस्य भागद्वयं
भागो गन्धकसूतयोर्मिलितयोः पिष्ट्वा मरीचादपि।
भागस्य त्रितयं नियोज्य सकलं निम्बूरसैर्मर्दितं
नाम्ना वह्निसुतो रसोऽयमचिरान्मान्द्यं जयेद्दारुणम् ॥
घृतेन खण्डैः सह भक्षितोऽसौ
क्षीणान् नरान् हस्तिसमान् करोति।
समागधीचूर्णघृतेन लीढ्वा
मुक्तो भवेत् संग्रहणीविकारात् ॥५१८॥
शोषज्वरारोचकशूलगुल्मान्
पाण्डूदरार्शोग्रहणीविकारान्।
तक्रानुपानो जयति प्रमेहान्
युक्त्या प्रयुक्तोऽग्निसुतो रसेन्द्रः ॥५१९॥

१. कौड़ीभस्म १० ग्राम, २. शंखभस्म २० ग्राम, ३. पारद एवं गन्धक की कज्जली १० ग्राम, ४. मरिचचूर्ण ३० ग्राम तथा ५. निम्बू स्वरस (भावनार्थ) लें। सभी भस्मों को मात्रानुसार खरल में लेकर निम्बूस्वरस की भावना देकर ३ प्रहर तक खरल में मर्दन करें। जब अच्छी तरह से मर्दन हो जाय तब ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की वटी बना लें तथा सुखाकर शीशी में सुरक्षित कर लें। वह्निसुत (अग्निसूनु) नाम से जानी जाने वाली यह रसौषधि भयङ्कर अग्निमान्द्य को शीघ्र ही शान्त करती है। यदि इस रस का सेवन प्रतिदिन १० ग्राम गोघृत एवं १० ग्राम शक्कर के साथ किया जाय तो दुर्बल व्यक्तियों को हाथी के समान बलवान् एवं मोटा बना देता है एवं ५०० मि.ग्रा. पिप्पलीचूर्ण और ५ ग्राम गोघृत के साथ सेवन करने से यह रस मनुष्य को ग्रहणी रोग से मुक्ति दिलाता है। यथादोषहर अनुपानों के साथ सेवन करने पर यह रस शोष, ज्वर, अरुचि, शूल, गुल्म, पाण्डु, उदररोग, अर्श, ग्रहणीदोष एवं प्रमेह का विनाश करता है। ग्रहणी, अर्श आदि व्याधियों में तक्र का अनुपान उत्तम है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—तक्र के साथ (गोघृत एवं चीनी से)। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, ग्रहणी, अतिसार, उदररोग एवं अर्श में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

९४. दुग्धवटी-१ ()

गृहीत्वा दरदात्कर्षं तदर्धं देवपुष्पकम्।
फणिफेनं विषं जातीफलं धुस्तूरबीजकम् ॥५२०॥
सम्मर्द्य विजयाद्रावैर्मुद्गमात्रां वटीं चरेत्।
अनुपानं प्रदातव्यं शोथे क्षीरं भिषग्वरः ॥५२१॥
ग्रहण्यां विजयाक्वाथः पथ्यं दुग्धान्नमेव हि।
जलं च लवणं चापि वर्जनीयं विशेषतः ॥५२२॥
प्रबलायामुदन्यायां सलिलं नारिकेलजम्।
पातव्यं गुटिका चैषा शोथं हन्ति न संशयः ॥५२३॥
ग्रहणीमतिसारं च ज्वरं जीर्णं निहन्ति च ॥५२४॥

१. शुद्ध हिंगुल १० ग्राम, २. लौंग ५ ग्राम, ३. अफीम ५ ग्राम, ४. शुद्ध वत्सनाभविषमचूर्ण ५ ग्राम, ५. जायफलचूर्ण ५ ग्राम, ६. शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण ५ ग्राम तथा ७. भाँग २० ग्राम लें। सभी द्रव्यों को पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें एवं खरल में डालकर भाँगस्वरस की भावना देकर मर्दन करें। इसके पश्चात् मूँग (६० मि.ग्रा.) के बराबर की वटी बना लें। रोगी की अवस्था के बलाबल के अनुसार १-२ वटी दूध के साथ सेवन कराने से शोथरोग तथा भाँग के क्वाथ के साथ सेवन कराने से संग्रहणी-रोग नष्ट होता है। पथ्यरूप में दूध के साथ अन्न का सेवन करायें। लवण एवं जल का सेवन सर्वथा वर्जित है। यदि जल के बिना रोगी न रह सके तो नारियल के पानी का सेवन करायें। इसके सेवन से दारुणशोथ, ग्रहणी, अतिसार, जीर्णज्वर आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—दूध से शोथ में, भाँग स्वरस से संग्रहणी में। **गन्ध**—अफीमगन्धी। **वर्ण**—कत्थई। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी, शोथ एवं अतिसार में।

९५. दुग्धवटी-२ ()

अमृतं सूर्यगुञ्जं स्यादहिफेनं तथैव च।
षड्रक्तिकमयश्चापि षष्टिरक्तिकमभ्रकम् ॥५२५॥
दुग्धैर्गुञ्जाद्वयमिता वटी कार्या भिषग्विदा।
दुग्धानुपानं दुग्धञ्च भोजनं सर्वथा हितम् ॥५२६॥
शोथं नानाविधं हन्ति ग्रहणीं विषमज्वरम्।
मन्दाग्निं पाण्डुरोगं च नाम्ना दुग्धवटी परा।
वर्जयेल्लवणं वारि व्याधिनिःशेषितावधि ॥५२७॥

१. शुद्ध वत्सनाभविषचूर्ण १२ भाग, २. शुद्ध अफीम १२ भाग, ३. लौहभस्म ६ भाग तथा ४. अभ्रकभस्म ६० भाग लें। सर्वप्रथम १ खरल में चारों द्रव्यों को एक साथ मिलावें और गोदुग्ध के साथ ३-४ घण्टे तक मर्दन करें। २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस दुग्धवटी को दुग्धानुपान से सेवन करावें। पथ्य में दूध-भात खिलायें। इस दुग्धवटी का सेवन करने पर शोथ, विविध प्रकार की संग्रहणी, विषमज्वर, मन्दाग्नि एवं पाण्डुरोग नष्ट हो जाते हैं। यह दुग्धवटी नामक श्रेष्ठ औषधि के सेवन काल में लवण एवं जल सर्वथा त्याज्य है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—दुग्धानुपान से। **गन्ध**—अफीमगन्धी। **वर्ण**—कत्थई। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी, अतिसार, मन्दाग्नि एवं शोथ में।

९६. पञ्चामृतमण्डूर (रसचण्डांशु)

लौहं ताम्रं गन्धमभ्रं पारदञ्च समांशकम्।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा ॥५२८॥
किरातं देवकाष्ठञ्च हरिद्राद्वयपुष्करम्।
यमानी जीरकं युग्मं शटी धान्यं च चव्यकम् ॥५२९॥
प्रत्येकं लौहभागञ्च श्लक्ष्णचूर्णान्तु कारयेत्।
सर्वचूर्णस्य चार्द्धांशं सुशुद्धं लौहकिट्टकम् ॥५३०॥
गोमूत्रे पाचयेद्वैद्यो लौहकिट्टाच्चतुर्गुणे।
पौनर्नवाष्टगुणितं क्वाथं तत्र प्रदापयेत् ॥५३१॥
सिद्धेऽवतारिते चूर्णं मधुनः पलमात्रकम्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाख्यानुपानतः ॥५३२॥
ग्रहणीं चिरजां हन्ति सशोथां पाण्डुकामलाम्।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति ॥५३३॥
प्लीहगुल्मौ यकृच्चैवमुदरञ्च विशेषतः।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं कान्तिपुष्टिविवर्द्धनम् ॥५३४॥

१. लौहभस्म, २. ताम्रभस्म, ३. शुद्ध गन्धक, ४. अभ्रकभस्म, ५. शुद्ध पारद, ६. शुण्ठीचूर्ण, ७. मरिचचूर्ण, ८. पीपरचूर्ण, ९. आमलाचूर्ण, १०. हरीतकीचूर्ण, ११. बहेड़ा-चूर्ण, १२. नागरमोथाचूर्ण, १३. वायविडङ्गचूर्ण, १४. चित्रक चूर्ण, १५. चिरायताचूर्ण, १६. देवदारुचूर्ण, १७. हल्दीचूर्ण, १८. दारुहल्दीचूर्ण, १९. पुष्करमूलचूर्ण, २०. अजवायनचूर्ण, २१. जीराचूर्ण, २२. स्याहजीराचूर्ण, २३. कचूरचूर्ण, २४. धनियाँचूर्ण और २५. चव्यचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें; २६. शुद्ध मण्डूरचूर्ण २५० ग्राम (सभी चूर्ण को मिलाकर उसके आधा भाग), २७. गोमूत्र १ लीटर, २८. पुनर्नवा क्वाथ २ लीटर (आठ गुना) तथा २९. मधु ५० ग्राम। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर एक कड़ाही में गोमूत्र के साथ ८ ली. पुनर्नवा क्वाथ में पकावें। बीच-बीच में दर्वी से चलावें। द्रव सूखने पर उतारें। स्वाङ्गशीत होने पर ४० ग्राम शहद मिलाकर काचपात्र में रख दें। प्रातःकाल २ से ४ रत्ती (५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम) तक की मात्रा में सेवन करें तथा तालमखाना का क्वाथ अनुपानरूप में ग्रहण करें। इस पञ्चामृत मण्डूर का सेवन यथाव्याधिहर अनुपानों के साथ प्रतिदिन सेवन

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

करने पर शोथयुक्त जीर्ण संग्रहणी, पाण्डु, कामला, जीर्णज्वर, प्लीहा, गुल्म, यकृत्-वृद्धि, उदररोग, कास, श्वास और प्रतिश्याय रोगों का नाश करता है; पाचकाग्नि प्रदीप्त होती है तथा शरीर की पुष्टि होती है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक। **अनुपान**—दोषानुसार। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तीक्ष्ण। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार, शोथ, पाण्डु एवं उदररोग में।

९७. खटिकादिपेया

पलप्रमाणा खटिका सिताऽर्द्ध-
पलोन्मिता तत्समभागयुक्तः।
बब्बूलनिर्यासक एककर्षो-
न्मिता पृथग् दारुसिता शताह्वा ॥५३५॥
संगृह्य सर्वं च विचूर्ण्य किञ्चित्
पलाष्टकोन्मानयुते तु नीरे।
मृत्पात्रसंस्थेऽधिनिशं तदेव
संस्थापनीयं भिषजा प्रयत्नाद् ॥५३६॥
प्रातश्च संस्राव्य पिबेत्तदीय-
मच्छांशमद्धोपरि वर्त्तमानम्।
प्रवाहिकायां ग्रहणीगदे च
तथाऽस्रपित्ते तदतीव शस्तम् ॥५३७॥
तथाऽम्लपित्ते तु लवङ्गधान्य-
युतं प्रयोज्यं तदपायवेदिना।
रक्तातिसारेऽपि च बिल्वपेशी-
चूर्णान्वितं तूर्णफलप्रदञ्च ॥५३८॥
एतत्तु वैद्यैर्बहुशोऽनुभूतं
भूतं च मत्वैष मयाऽतिपूतम्।
लोकोपकृत्यै कृतिनात्र नाम
न्यधायि पेया खटिकाऽऽदिनाम्नी ॥५३९॥

१. सफेद खड़िया ४० ग्राम, २. चीनी २० ग्राम, ३. बब्बूल निर्यास २० ग्राम, ४. जल ३२० मि.ली., ५. दालचीनी १० ग्राम तथा ६. सौंफ १० ग्राम लें। सभी द्रव्यों को मोटा-मोटा पीस लें अर्थात् यवकुट कर लें। इस यवकुट को ३७५ मि.ली. जल में डालकर मिट्टी के बर्तन में रातभर के लिए रख दें। प्रातःकाल इस पात्र के ऊपरी जल को बारीक कपड़े से छानकर रोगी को पिलायें। इस खटिकादि पेया का सेवन प्रवाहिका, संग्रहणी रोग एवं रक्तपित्त में उत्तम है। यदि इस खटिकादि पेया को लवङ्ग तथा धनियाँ के चूर्ण के साथ पिलाया जाय तो अम्लपित्त शामक है। बिल्वफलमज्जा के ५ ग्राम चूर्ण के साथ सेवन करने पर रक्तातिसार में अत्यन्त उपयोगी है। यह खटिकादि पेया उपरोक्त रोगों में प्रत्यक्ष फलदायक है, इसलिए इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिए। इसका वैद्यों ने अनेक बार अनुभव किया है। अतः लोक के हित के लिए इसका वर्णन किया गया है।

९८. अजाज्यादिचूर्ण

पलद्वन्द्वमजाज्यास्तु पलैकं यावशूकजम्।
अम्बुदं द्विपलं ज्ञेयं फणिफेनपलं तथा ॥५४०॥
अर्कमूलभवं चूर्णं चतुष्पलमितं स्मृतम्।
अजाज्यादिकमेतद्धि हन्त्युग्रं ग्रहणीगदम् ॥५४१॥
सरक्तमथ नीरक्तमतिसारं सुदारुणम्।
ज्वरातिसारं शमयेद्विसूचीं घोररूपिणीम् ॥५४२॥

१. श्वेतजीराचूर्ण ८० ग्राम, २. यवक्षार ४० ग्राम, ३. नागरमोथा ८० ग्राम या सुगन्धबाला ८० ग्राम, ४. शुद्ध अफीम ४० ग्राम और ५. अर्कमूलचूर्ण १८५ ग्राम ले। सभी द्रव्यों का सूक्ष्मचूर्ण कर एक साथ मिलाकर काचपात्र में रख लें। यह अजाज्यादिचूर्ण भयंकर संग्रहणीदोष, रक्तस्रावयुक्त अथवा रक्तस्राव रहित अतिसार, ज्वरातिसार एवं दुःसाध्य विसूचिका रोग नाशक है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—अफीम गन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—संग्रहणी, रक्तातिसार एवं विसूचिका में।

९९. चुक्रसन्धान (स्वल्प) (चक्रदत्त)

यन्मस्त्वादिशुचौ भाण्डे सगुडक्षौद्रकाञ्जिकम्।
धान्यराशौ त्रिरात्रस्थं शुक्तं चुक्रं तदुच्यते ॥
द्विगुणं गुडमध्वारनालमस्तु क्रमाद्विदुः ॥५४३॥

१. मिट्टी का भाण्ड नया, २. पुराना गुड़ १ भाग, ३. शहद २ भाग, ४. काञ्जी ४ भाग तथा ५. मस्तु ८ भाग लें। सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर मिट्टी के पात्र में भरकर शराव से मुख को बन्द करके धान के ढेर में तीन रात-दिन पर्यन्त रख दें। इस प्रकार जो अम्लद्रव का निर्माण होता है उसे चुक्र नाम से जाना जाता है। गुड़, मधु, आरनाल एवं मस्तु ये द्रव्य यथोत्तर द्विगुण मात्रा में लेने चाहिए। सन्धान के बाद इस चुक्र को कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे ६ से १० मि.ली. जल मिलाकर सेवन करने से अग्निमान्द्य, ग्रहणी, अतिसार, वात-कफज नष्ट हो जाता है।

१००. चुक्रसन्धान (बृहत्) (चक्रदत्त)

प्रस्थं तण्डुलतोयतस्तुषजलात् प्रस्थत्रयं चाम्लतः
प्रस्थार्द्धं दधितोऽम्लमूलकपलान्यष्टौ गुडान्मानिके।
मान्यौ शोधितशृङ्गवेरशकलाद् द्वे सिन्ध्वजाज्योः पले
द्वे कृष्णोषणयोर्निशापलयुगं निक्षिप्य भाण्डे दृढे ॥५४४॥
स्निग्धे धान्ययवादिराशिनिहितं घस्त्रत्रयं स्थापयेद्
ग्रीष्मे तोयधरात्यये च चतुरो वर्षासु पुष्पागमे ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

षट् शीतेऽष्टदिनान्यतः परमिदं विश्राव्य सञ्चूर्णये-
च्चातुर्जातपलेन संहतमिदं शुक्तञ्च चुक्रञ्च तत् ॥५४५॥
हन्याद्वातकफामदोषजनितान्नानाविधानामयान्
दुर्नामानि च शूलगुल्मजठरान् हत्वाऽनलं दीपयेत् ॥५४६।

१. चावल का (मण्ड) माँड़ ७५० मि.ली., २. खट्टी काञ्जी २.२५० मि.ली., ३. दही ३७५ ग्राम, ४. मूलीखण्ड ३७५ ग्राम, ५. पुराना गुड़ ३७५ ग्राम, ६. छिली हुई आर्द्रक ७५० ग्राम, ७. सैन्धवलवण ९३ ग्राम, ८. जीराचूर्ण ९३ ग्राम, ९. पीपरचूर्ण ९३ ग्राम, १०. मरिचचूर्ण ९३ ग्राम, ११. हल्दीचूर्ण ९३ ग्राम और १२. चातुर्जातकचूर्ण ४६ ग्राम लें।

विधि—एक मिट्टी के नये एवं मजबूत घड़े में उपर्युक्त सभी मण्ड-काञ्जी-दही- गुड़, पिसा हुआ आर्द्रक तथा मूलीखण्ड को मिलाकर हाथ से अच्छी तरह से मिला दें। ततः अन्य जीरा आदि द्रव्यों को यवकुट चूर्ण कर उसी में मिला दें और मुख बन्द कर गर्मी एवं शरद् ऋतु में ३ दिन, वर्षा ऋतु में ४ दिन, वसन्त ऋतु में ६ दिन तथा शीतकाल में ८ दिन तक धान के बीच में ढककर रखना चाहिए। इसके पश्चात् पात्र को बाहर निकाल लें और मुख खोलकर औषधि को कपड़े से छान लें। फिर उसमें दालचीनी, तेजपत्ता, छोटी इलायची, नागकेशर इन चारों में से प्रत्येक का बारीक पिसा हुआ चूर्ण १२-१२ ग्राम मिला दें। इस प्रकार से सिद्ध किया हुआ यह बृहच्चुक्र कहलाता है। १० से २० मि.ली. की मात्रा में भोजन के पश्चात् इस शुक्त को पीने से वातज, कफज, आमज दोष उत्पन्न विविध प्रकार के रोग शान्त होते हैं और अर्श, शूल, गुल्म आदि को शान्त करके जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है।

मात्रा—१० से २० मि.ली. तक। **अनुपान**—जल में मिलाकर। **गन्ध**—अम्लीय गन्ध युक्त। **वर्ण**—श्वेताभ द्रव। **स्वाद**—तीक्ष्णाम्ल। **उपयोग**—मन्दाग्नि तथा आमदोषोत्पन्न विविध रोगों में, ग्रहणी, अर्श, गुल्म एवं शूल में।

१०१. आयामकाञ्जी

वाट्यस्य दद्याद्यवशक्तुकानां
पृथक्पृथक् चाढकसम्मितन्तु।
मध्यप्रमाणानि च मूलकानि
दद्याच्चतुःषष्टिसुकल्पितानि ॥५४७॥
द्रोणेऽम्भसः प्लाव्य घटे सुधौते
दद्यादिदं भेषजजातयुक्तम्।
क्षारद्वयं तुम्बुरुबस्तगन्धा
धनीयकं स्याद्विडसैन्धवञ्च ॥५४८॥
सौवर्चलं हिङ्गु शिवाटिकाञ्च
चव्यञ्च दधाद्द्विपलप्रमाणम्।
इमानि चान्यानि पलोन्मितानि
विजर्जरीकृत्य घटे क्षिपेच्च ॥५४९॥
कृष्णामजाजीमुपकुञ्चिकाञ्च
तथासुरीं कारवीचित्रकञ्च।
पक्षस्थितोऽयं बलवर्णदेह-
वयस्करोऽतीव बलप्रदश्च ॥५५०॥
काञ्जीवयामीति यतः प्रवृत्त-
स्तत्काञ्जिकेति प्रवदन्ति चैनम्।
आयामकालाज्जरयेच्चभुक्त
मायामकेति प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥५५१॥
दकोदरं प्लीहरुजां च गुल्मं
हृद्रोगमानाहमरोचकञ्च।
मन्दाग्नितां कोष्टगतं च शूल-
मर्शोविकारान् सभगन्दरांश्च ॥
वातामयानाशु निहन्ति सर्वान्।
संसेव्यमानो विधिवन्नराणाम् ॥५५२॥

१. तुषरहित यव ३ कि.ग्रा. (१ आढक), २. यव का सत्तू ३ कि.ग्रा., ३. मूली (मध्य प्रमाण) ३ कि.ग्रा. छोटे-छोटे टुकड़े करें तथा जल १३ ली. लें। ४. यवक्षार, ५ सज्जिक्षार, ६. धनियाँ, ७. अजवायन, ८. विड्लवण, ९. सैन्धवलवण, १०. सौवर्चल (काला) नमक, ११. हिंगु, १२. हिंगुपत्री, १३. चव्य—प्रत्येक द्रव्य १०० ग्राम लें। पीपर, जीरा, कारवी (कलौंजी), राई, कृष्णजीरक एवं चित्रकमूल—प्रत्येक द्रव्य ५० ग्राम लें। मिट्टी के एक नये घड़े में पहले जल तथा यव को कूटकर मिला दें। उसी में सत्तू एवं कटी हुई मूली भी मिला दें। ततः यवक्षार से चित्रकमूल तक के सभी द्रव्यों को यवकुट करके उक्त घड़े में डालकर हाथ से अच्छी तरह मिला दें। घड़ा का मुख एक मिट्टी के शराव से बन्दकर कपड़मिट्टी कर दें। निर्वात स्थान में इस घड़े को १५ दिनों तक रख छोड़ें। पुनः १६वें दिन घड़े का मुख खोलकर कपड़े से उक्त सान्द्र द्रव को अच्छी तरह से छानकर काचपात्र रखें।

प्रयोग—इस औषधि द्रव का सेवन करने से शरीर के बल, वर्ण एवं आयु को बढ़ाता है। इसे विद्वान् लोग आयाम काञ्जिक कहते हैं। आयाम १ प्रहर को कहते हैं। अर्थात् १ प्रहर में रोग को पचा देता है। इसे १ से २ तोले (१० से २० मिली.) की मात्रा में पीने से जलोदर, प्लीहावृद्धि, गुल्म, हृद्रोग, आनाह, अरुचि, मन्दाग्नि, कोष्ठगत रोग, शूल, अर्श, भगन्दर तथा सभी प्रकार के वातज रोगों को नष्ट कर देता है।

मात्रा—१० से २० मिली.। **गन्ध**—अम्लगन्धी। **वर्ण**—मलिन द्रव। **स्वाद**—अम्ल।

१०२. अष्टपलघृत (चक्रदत्त)

त्र्यूषणत्रिफलाकल्के बिल्वमात्रे गुडात्पले।
सर्पिषोऽष्टपलं पक्त्वा मात्रां मन्दानलः पिबेत् ॥५५३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शुण्ठी, २. मरिच, ३. पिप्पली, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. आमला—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम; ७. गुड़ ४६ ग्राम तथा ८. घृत ३७५ ग्राम लें। सोंठ-मरिचादि सभी द्रव्यों को समभाग में मिलित ७० ग्राम लें। सिल पर पीसकर कल्क तैयार करें। इस कल्क में ३७५ ग्राम मूर्च्छित घी तथा १½ लीटर पानी मिलाकर यथाविधि पाक करें तथा घृत तैयार होने पर छानकर काचपात्र में रख लें। रोगी के बल और अग्नि का विचार करके घृत की ५ से १० ग्राम की मात्रा का सेवन करायें। यह घृत ग्रहणी रोग एवं मन्दाग्नि का शमन करता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं संग्रहणी में।

१०३. बिल्वगर्भघृत (चक्रदत्त)

मसूरस्य कषायेण बिल्वगर्भं पचेद् घृतम्।
हन्ति कुक्ष्यामयान् सर्वान् ग्रहणीपाण्डुकामलाः॥
केवलं व्रीहिप्राण्यङ्गक्वाथो व्युष्टस्तु दोषलः॥५५४॥

१. मसूरक्वाथ ४ ली., २. बिल्वफलमज्जा २५० ग्राम तथा ३. मूर्च्छित घृत १ किलो लें। बेलसोंठ का कल्क करें। ततः घृतपाक विधि से घृतपाक करें। घृत डालने पर कपड़े से छानकर काँचपात्र में संग्रहीत करें। ५ से १० ग्राम की मात्रा में गुनगुने दूध या जल में मिलाकर पीने से उदर के समस्त रोग, ग्रहणी, पाण्डु, कामला आदि रोग शान्त होते हैं। धान्य तथा मांसादि से सिद्ध किये क्वाथ से एक ही दिन में स्नेहपाक कर लेना चाहिए। अन्यथा बासी होने पर यह दोषकारक एवं दुर्गन्धयुक्त हो जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—ग्रहणी, उदररोग एवं पाण्डु में।

१०४. शुण्ठीघृत (चक्रदत्त)

विश्वौषधस्य गर्भेण दशमूलजले शृतम्।
घृतं निहन्याच्छ्वयथुं ग्रहणीसामतामयम्॥५५५॥

१. शुण्ठी का कल्क २५० ग्राम, २. मूर्च्छित घृत १ कि.ग्रा. एवं ३. दशमूलक्वाथ ४ लीटर (बिल्व, अग्निमन्थ, श्योनाक, पाटला, गम्भारी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बृहती, कण्टकारी तथा गोक्षुर लें। सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर स्नेहपाक विधि द्वारा घृत सिद्ध करें। इस सिद्ध घृत का सेवन करने से शोथ एवं आमजग्रहणी शान्त होती है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम पानी से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, संग्रहणी, आमातिसार एवं शोथ में।

१०५. नागरघृत (चक्रदत्त)

घृतं नागरकल्केन सिद्धं वातानुलोमनम्।
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम्॥५५६॥

१. मूर्च्छित घृत १ कि.ग्रा., २. शुण्ठीकल्क २५० ग्राम एवं ३. जल ४ ली. लें। मन्दाग्नि युक्त चूल्हे पर स्टीलपात्र में सभी द्रव्यों को साथ लेकर स्नेहपाक विधि से घृत का पाक करें। जब घृत का पाक हो जाय तब इस घृत को छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। ततः ५ से १० ग्राम की मात्रा में गरम दूध या पानी में मिलाकर प्रतिदिन सेवन करायें। इससे वायु का अनुलोमन होता है एवं ग्रहणीरोग, पाण्डु, प्लीहावृद्धि, कास एवं ज्वर शान्त होते हैं।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—मन्दाग्नि, संग्रहणी, उदररोग तथा पाण्डुरोग में।

१०६. चित्रकघृत (चक्रदत्त)

चित्रकक्वाथकल्काभ्यां ग्रहणीघ्नं शृतं हविः।
गुल्मशोथोदरप्लीहशूलार्शोघ्नं प्रदीपनम्॥५५७॥

१. चित्रकक्वाथ ४ लीटर, २. चित्रककल्क २५० ग्राम एवं ३. मूर्च्छित घृत १ कि.ग्रा. लें। एक स्टेनलेस स्टील पात्र में सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर स्नेहपाक विधि से घृत सिद्ध करें। जब घृत सिद्ध हो जाय तब इसे कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रह करें। इस घृत को ५ ग्राम से १० ग्राम की मात्रा में गरम दूध या जल के अनुपान के साथ रोगी को प्रतिदिन सेवन करायें। यह घृत विधिपूर्वक सेवन करने से ग्रहणी, गुल्म, शोथ, उदररोग, प्लीहावृद्धि, शूल एवं अर्श आदि का नाश करता है तथा जाठराग्नि को दीप्त करता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—मन्दाग्नि, संग्रहणी, उदररोग एवं गुल्म में।

१०७. बिल्वादिघृत (चक्रदत्त)

बिल्वाग्निचव्यार्द्रकशृङ्गवेर-
क्वाथेन कल्केन च सिद्धमाज्यम्।
सच्छागदुग्धं ग्रहणीगदोत्थ-
शोथाग्निमान्द्यारुचिनुद् वरिष्ठम्॥५५८॥

मूर्च्छित गोघृत १ किलो लें। १. बिल्वफलमज्जा, २. चित्रकमूल, ३. चव्य तथा ४. आर्द्रक, ५. शुण्ठी—प्रत्येक द्रव्य ८५० ग्राम लें। इसमें से ४ कि. का क्वाथ बनानें तथा २५० ग्राम का कल्क रहेगा। क्वाथ्य द्रव्यों को लेकर यवकुट कर लें। फिर इस यवकुट चूर्ण को चार गुने जल के साथ क्वाथ करें। जब चौथाई शेष रह जाय तब उसको आग पर से उतारकर छान

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लें। इसके बाद बिल्वादि द्रव्यों में से प्रत्येक को ५०-५० ग्राम लेकर जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इस प्रकार यह कल्क २५० ग्राम, मूर्च्छित घृत एवं निर्मित क्वाथ ४ लीटर और बकरी का १ लीटर दूध लेकर सबको कड़ाही में डालकर घृत सिद्ध करें। पक्व समझकर घृत को कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रह करें। यह घृत ग्रहणीरोग, शोथ, मन्दाग्नि एवं अरुचि को नष्ट करता है। इसे ५ से १० ग्राम की मात्रा में गरम दूध या गरम जल से सेवन करें।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम पानी से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—मन्दाग्नि, संग्रहणी, अरुचि एवं शोथ में।

१०८. चाङ्गेरीघृत (चक्रदत्त)

नागरं पिप्पलीमूलं चित्रको हस्तिपिप्पली।
श्वदंष्ट्रा पिप्पली धान्यं बिल्वं पाठा यमानिका ॥५५९॥
चाङ्गेरीस्वरसे सर्पिः कल्कैरेतैर्विपाचयेत्।
चतुर्गुणेन दध्ना च तद्घृतं कफवातनुत् ॥५६०॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं मूत्रकृच्छ्रं प्रवाहिकाम्।
गुदभ्रंशार्तिमानाहं घृतमेतद्व्यपोहति ॥५६१॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पलीमूल, ३. चित्रक, ४. गजपिप्पली, ५. गोखरू, ६. पिप्पली, ७. धनियाँ, ८. बिल्वफलमज्जा, ९. पाठा, १०. अजवायन, ११. घृत १ कि.ग्रा. और १२. चाङ्गेरी-स्वरस, दही ४ कि.ग्रा.—शुण्ठी से अजवायन तक के सभी १० द्रव्यों को प्रत्येक २५-२५ ग्राम लें। चाङ्गेरी स्वरस ४ ली. तथा जल ४ ली. लें। सर्वप्रथम १ कि.ग्रा. गोघृत को मूर्च्छित करें और सोंठ से अजवायन तक के द्रव्यों को पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित घृत को चूल्हे पर स्टील पात्र में कल्क-स्वरस के साथ मन्दाग्नि से पाक करें। स्वरस सूखने पर ४ कि. ग्रा. दही मिलाकर घृत को पकावें तथा बाद में ४ ली. जल देकर पुनः पाक करें। जलीयांश सूखने पर परीक्षोपरान्त स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़ा से घी को तुरन्त छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस घृत को ५ से १० ग्राम की मात्रा में गरम जल से रोगी को रोग के बलाबल के अनुसार सेवन करायें। इस घृत का सेवन करने से ग्रहणीदोष, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका, गुदभ्रंश एवं आनाह रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरल जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु एवं अम्ल। **उपयोग**—संग्रहणी एवं अग्निमान्द्य में।

१०९. मरिचादिघृत (चक्रदत्त)

मरिचं पिप्पलीमूलं नागरं पिप्पली तथा।
भल्लातकं यमानी च विडङ्गं हस्तिपिप्पली ॥५६२॥
हिङ्गु सौवर्चलञ्चैव विडसैन्धवमेव च।
सामुद्रं सयवक्षारं चित्रको वचया सह ॥५६३॥
एतैरर्द्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
दशमूलीरसे सिद्धं पयसा द्विगुणेन च ॥५६४॥
मन्दाग्नीनां हितं श्रेष्ठं ग्रहणीदोषनाशनम्।
विष्टम्भमामदौर्बल्यं प्लीहानञ्चापकर्षति ॥५६५॥
कासं श्वासं क्षयञ्चापि दुर्नाम सभगन्दरम्।
कफजान् हन्ति रोगांश्च वातजान् कृमिसम्भवान्।
तान्सर्वान्नाशयत्याशु शुष्कं दावानलो यथा ॥५६६॥

१. कृष्णमरिच, २. पिप्पलीमूल, ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. शुद्ध भिलावा, ६. अजवायन, ७. वायविडङ्ग, ८. गजपिप्पली, ९. शुद्ध हींग, १०. सौवर्चललवण, ११. विड-लवण, १२. सैन्धवलवण, १३. सामुद्रलवण, १४. यवक्षार, १५. चित्रकमूल, १६. वचा—प्रत्येक २३ ग्राम; १७. मूर्च्छित घृत ७५० ग्राम, १८. दशमूलक्वाथ ३ लीटर तथा १९. गोदुग्ध १½ ली.। मरिच से वच तक के सभी द्रव्यों को कूट-पीस कर कल्क बनावें। ततः स्टेनलेस स्टील के पात्र में मूर्च्छित घृत में कल्क-क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। क्वाथ सूखने पर उसमें दूध डाल कर पकावें। दूध सूखने पर कल्क का सम्यक्[1] पाकार्थ ३ ली. जल देकर पाक करें। सिद्ध घृत समझकर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। ५ से १० ग्राम की मात्रा में इस घृत के सेवन से ग्रहणीदोष, विष्टम्भ, आमदोष, दुर्बलता, प्लीहावृद्धि, कास, श्वास, क्षय, अर्श, भगन्दर, कफज तथा वातज प्रकोप से उत्पन्न व्याधियाँ, कृमिज विकार आदि का नाश हो जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—लवणीय। **उपयोग**—मन्दाग्नि, आमातिसार, संग्रहणी, प्लीहावृद्धि तथा कृमिजन्य रोगों में।

११०. महाषट्पलघृत (चक्रदत्त)

सौवर्चलं पञ्चकोलं सैन्धवं हवुषां विडम्।
अजमोदां यवक्षारं हिङ्गुजीरकमौद्भिदम् ॥५६७॥
कृष्णाजाजी सभूतीकं कल्कीकृत्य पलार्द्धकम्।
आर्द्रकस्वरसं चुक्रं क्षीरमस्त्वारनालकम् ॥५६८॥

---

१. स्वरसक्षीरमाङ्गल्यैः पाको यत्रेरितः क्वचित्।
जलं चतुर्गुणं तत्र वीर्याधानार्थमावपेत्॥
न मुञ्चति रसं द्रव्यं क्षीरादिभिरुपस्कृतम्।
सम्यक् पाको न जायेत तस्मात्तोयं चतुर्गुणम्॥ (परि.प्रदीप)
यन्मस्त्वादि शुचा भाण्डे सगुडक्षौद्रकाञ्जिकम्।
यथर्तुधान्यराशिस्थं शुक्तं चुक्रं तदुच्यते॥ (परि. प्रदीप)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

दशमूलकषायेण घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
भक्तेन सह पातव्यं निर्भक्तं वा विचक्षणैः ॥५६९॥
कृमिप्लीहोदराजीर्णज्वरकुष्ठप्रवाहिका ।
वातरोगान् कफव्याधीन् हन्याच्छूलमरोचकम् ॥५७०॥
पाण्डुरोगं क्षयं कासं दौर्बल्यं ग्रहणीगदम्।
महाषट्पलकं नाम्ना वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥५७१॥

१. सौवर्चलनमक, २. पीपर, ३. पिपरामूल, ४. चव्य, ५. चित्रकमूल, ६. सोंठ, ७. सैन्धवनमक, ८. हाउबेर, ९. विडलवण, १०. अजमोदा, ११. यवक्षार, १२. शुद्ध हींग, १३. जीरक, १४. औद्भिल्लवण, १५. स्याहजीरा और १६. अजवायन—प्रत्येक २३-२३ ग्राम, १७.आर्द्रकस्वरस, १८. चुक्र, १९. गोदुग्ध, २०. मस्तु, २१. आरनाल, २२. दशमूल क्वाथ तथा २३. मूर्च्छित गोघृत—प्रत्येक ७५० मि.ली. लें। सौवर्चललवण से अजवायन तक के सभी द्रव्य २३-२३ ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। पुनः सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ततः स्टेनलेस स्टील के पात्र में मूर्च्छित घृत डालकर कल्क एवं दशमूल द्रव क्वाथ डाले और मन्दाग्नि पर पाक करें। क्वाथ सूखने पर आर्द्रक स्वरस, चुक्र, काञ्जी एवं दूध क्रमशः डालकर पाक करें। अन्त में ७५० मि.ली. जल डालकर पाक करें। पाक पूर्ण होने पर स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़ा से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'महाषट्पलघृत' को ५ से १० ग्राम की मात्रा में भात के साथ सेवन करें या उष्ण दुग्ध या जल में डालकर पिलायें। इस महाषट्पलघृत के सेवन से कृमिविकार, प्लीहावृद्धि, उदररोग, अजीर्ण, ज्वर, कुष्ठ, प्रवाहिका, वातप्रकोप से उत्पन्न व्याधियाँ, कफज प्रकोप से उत्पन्न व्याधियाँ, शूल, अरुचि, पाण्डु, क्षय, कास, दुर्बलता, ग्रहणी-विकार आदि का नाश होता है। जिस प्रकार इन्द्रदेव का वज्र वृक्षों का विनाश करता है उसी प्रकार यह महाषट्पल घृत नाम से प्रसिद्ध घृत सभी व्याधियों का विनाश करता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—भात से या गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी या हिंगुगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—लवणीय कटु। **उपयोग**—संग्रहणी, मन्दाग्नि, कृमि, अरुचि एवं पाण्डु में।

१११. बिल्वतैल

तुलाऽर्द्धं शुष्कबिल्वस्य तुलाऽर्द्धं दशमूलतः।
जलद्रोणे विपक्तव्यं चतुर्भागवशेषितम् ॥५७२॥
आर्द्रकस्य रसप्रस्थमारनालं तथैव च।
तैलप्रस्थं समादाय क्षीरप्रस्थं तथैव च ॥५७३॥
धातकीबिल्वकुष्ठञ्च शटी रास्ना पुनर्नवा।
त्रिकटु पिप्पलीमूलं चित्रकं गजपिप्पली ॥५७४॥
देवदारु वचा कुष्ठं मोचकं कटुरोहिणी।
तेजपत्राजमोदे च जीवनीयगणस्तथा ॥५७५॥
एषामर्द्धपलान् भागान् पाचयेन्मृदुनाऽग्निना।
एतद्धि बिल्वतैलाख्यं मन्दाग्नीनां प्रशस्यते ॥५७६॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति अतीसारमरोचकम्।
संग्रहग्रहणीं हन्ति अर्शसामपि नाशकम् ॥५७७॥
श्लीपदं विविधं हन्ति अन्त्रवृद्धिञ्च नाशयेत्।
कफवातोद्भवं शोथं ज्वरमाशु व्यपोहति ॥५७८॥
कासं श्वासञ्च गुल्मञ्च पाण्डुरोगविनाशनम्।
मक्कल्लशूलशमनं सूतिकाऽऽतङ्कनाशनम् ॥५७९॥
मूढगर्भे च दातव्यं मूढवातानुलोमनम्।
शिरोरोगहरञ्चैव स्त्रीणां गदनिषूदनम् ॥५८०॥
रजोदुष्टाश्च या नार्यो रेतोदुष्टाश्च ये नराः।
तेऽपि तारुण्यशुक्राढ्या भविष्यन्ति महाबलाः ॥५८१॥
वन्ध्याऽपि लभते पुत्रं शूरं पण्डितमेव च।
बिल्वतैलमिति ख्यातमात्रेयेण विनिर्मितम् ॥५८२॥

क्वाथ—१. बिल्वफलमज्जा २५०० ग्राम, २. दशमूल-यवकुट क्वाथ २५०० मिली., ३. आर्द्रकस्वरस ७५० मि.ली., ४. काञ्जी ७५० मि.ली., ५. तिलतैल ७५० मि.ली. तथा ६. गोदूध ७५० मि.ली.।

कल्क—१. धातकीपुष्प, २. बिल्वफलमज्जा, ३. कूठ, ४. कचूर, ५. रास्ना, ६. पुनर्नवामूल, ७. त्रिकटु, ८. पिपरामूल, ९. चित्रकमूल, १०. गजपीपर, ११. देवदारु, १२. वच, १३. कूठ, १४. मोचरस, १५. कटुकी, १६. तेजपात, १७. अजमोदा तथा १८. जीवनीय गण के प्रत्येक द्रव्य (जीवक-ऋषभक-काकोली-क्षीरकाकोली-मेदा-महामेदा-ऋद्धि-वृद्धि-यष्टिमधु-जीवन्ती-मुद्गपर्णी-माषपर्णी) २३-२३ ग्राम लेना चाहिए।

विधि—सर्वप्रथम एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः धातकीपुष्प से जीवनीयगण के द्रव्यों सहित सभी का चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें और मूर्च्छित तैल में मिलावें। बेलगुद्दी और दशमूल के सभी द्रव्यों को यवकुट कर १३ ली. जल में क्वाथ करें। ३ ली. शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित तैल में मिलाकर पाक करें। क्वाथ सूखने पर आर्द्रकस्वरस और काञ्जी मिलाकर पाक करें। द्रवांश सूखने पर गोदूध मिलाकर पाक करें। दूध सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ७५० मि.ली. जल मिलाकर पाक करें। जलांयांश सूखने पर स्नेहपाक की परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और तुरन्त कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस बिल्वतैल को ५ से १० ग्राम की मात्रा में गरम दूध या

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गरम जल में डालकर सेवन करने से मन्दाग्निजन्य रोगों में तथा मन्दाग्नि रोग को नाश करता है। यथाव्याधिहर अनुपानों के साथ सेवन करने पर विभिन्न प्रकार के ग्रहणीदोष, अतिसार, अरुचि, संग्रहणी, अर्श एवं अनेक प्रकार के श्लीपद, आन्त्रवृद्धि, कफज एवं वातज शोथ, ज्वर, कास, श्वास, गुल्म, पाण्डु, मक्कलशूल एवं विविध सूतिकारोग नष्ट होते हैं। यदि इस तैल को उष्ण जल के साथ मूढ़गर्भ की दशा में दिया जाय तो मूढ़वात का अनुलोमन होता है। शिरोगत व्याधियों एवं स्त्रियों के विविध रोगों का नाश करता है। जिन स्त्रियों का रज दूषित हो और जिन पुरुषों का वीर्य दोषपूर्ण हो उन स्त्री-पुरुषों के लिए प्रतिदिन दूध या गरम पानी के साथ इस तैल को प्रयोग करने के लिए दें। इस तैल के प्रभाव से वे स्त्री-पुरुष युवावस्था से युक्त तथा अत्यन्त बलशाली हो जाते हैं। इस तैल का प्रयोग करने से वन्ध्या स्त्री भी शूरवीर एवं पण्डित अर्थात् ज्ञानी पुत्र पैदा करती है। भगवान् आत्रेय द्वारा यह तैल बिल्वतैल नाम से प्रसिद्ध है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल या दोषानुसार। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त-कटु। **उपयोग**—मन्दाग्नि, संग्रहणी, स्त्रियों एवं पुरुषों के दूषित रज एवं वीर्यविकार नाशक है; पुत्रप्रद है, मूढगर्भ एवं शोथ नाशक है।

११२. ग्रहणीमिहिरतैल (रसरत्नाकर)

धन्याकं धातकी लोध्रं समङ्गाऽतिविषा शिवा।
उशीरं वारिवाहञ्च जलं मोचं रसाञ्जनम् ॥५८३॥
बिल्वं नीलोत्पलं पत्रं केशरं पद्मकेशरम्।
गुडूचीन्द्रयवश्यामाः पद्मकं कटुरोहिणी ॥५८४॥
तगरं नलदं भृङ्गं केशराजः पुनर्नवा।
आम्रजम्बूकदम्बानां त्वचः कुटजवल्कलम् ॥५८५॥
यमानी जीरकञ्चैषां कार्षिकाणि प्रकल्पयेत्।
तैलप्रस्थं पचेत्सम्यक् तक्रेणान्यतमेन वा ॥५८६॥
कुटजत्वक्कषायेण धान्यकक्वथितेन वा।
बुद्ध्वा दोषगतिं तत्तु तथाऽन्यौषधवारिणा ॥५८७॥
एतद्रसायनं तैलं वलीपलितनाशनम्।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥५८८॥
ज्वरं तृष्णां तथा कासं हिक्कां श्वासं वमिं भ्रमिम्।
सोपद्रवं कोष्ठरुजं नाशयेत्सत्यमेव हि ॥५८९॥
अर्शांसि कामलां मेहं श्वयथुं शूलमुल्बणम्।
एतद्धि बृंहणं वृष्यं सर्वरोगनिबर्हणम् ॥५९०॥
वशीकरणमेतद्धि पुष्ययोगे विपाचयेत्।
सायं स्त्रीषु प्रकर्तव्यं प्रत्यूषे राजसंसदि ॥५९१॥
विवाहादिषु मङ्गल्यं विवादे विजयप्रदम्।
गर्भस्य चलितस्यापि स्थापनं परमं शुभम् ॥५९२॥
गर्भारम्भे प्रकर्त्तव्यमेतद्गर्भविवर्द्धनम्।
ग्रहणीमिहिरं नाम तैलं भुवनमङ्गलम् ॥५९३॥

कल्क—१. धनियाँ, २. धातकीपुष्प, ३. लोध्र, ४. मञ्जिष्ठा, ५. अतीस, ६. हरीतकी, ७. खस, ८. नागरमोथा, ९. सुगन्धबाला, १०. मोचरस, ११. रसाञ्जन, १२. बिल्व-फलमज्जा, १३. नीलकमल, १४. तेजपत्ता, १५. नागकेशर, १६. पद्मकेशर, १७. गुडूची, १८. इन्द्रयव, १९. सारिवा, २०. पद्मकाष्ठ, २१. कुटकी, २२. तगर, २३. जटामांसी, २४. भृङ्गराज, २५. केशराज, २६. पुनर्नवामूल, २७. आम की छाल, २८. जामुन की छाल, २९. कदम्बत्वक्, ३०. कुटजत्वक्, ३१. अजवायन, ३२. श्वेत जीरा—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें, ३३. तिलतैल ७५० मि.ली., ३४. तक्र ३ ली., ३५. कुटजक्वाथ ३ ली. और ३६. धनियाँ क्वाथ ३ ली.।

विधि—सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। इस मूर्च्छित तैल में धनियाँ से जीरा तक के सभी द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और डालें तथा कुटज क्वाथ डालकर मन्दाग्नि से पाक करें। ततः तक्र पकावें। तक्र सूखने पर धनियाँ क्वाथ डालकर पाक करें। तदनन्तर ३ ली. जल देकर पुनः पाक करें। स्नेह सिद्ध होने पर परीक्षोपरान्त पात्र उतारकर तैल छान लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस ग्रहणीमिहिरतैल को वातज, पित्तज, श्लेष्मज आदि दोषगतियों का विचार करके यथादोषनाशक औषधियों के स्वरस में ५-१० मि.ली. डालकर प्रतिदिन रोगी व्यक्ति को सेवन करायें (पिलावें)। यह तैल रसायन गुणप्रद है। इस तैल के सेवन से वली-पलित, सभी प्रकार के अतिसार, सभी प्रकार के ग्रहणीरोग, ज्वर, तृष्णा, कास, हिक्का, श्वास, वमन, भ्रम एवं अनेक उपद्रवों से युक्त कोष्ठ के विकार, अर्श, कामला, प्रमेह, शोथ, दारुण शूल तथा अन्य सभी रोगों को भी नाश करता है। यह तैल वृष्यशक्तिवर्द्धक और शत्रुजन एवं प्रियजन को वश में करने वाला है। यदि इस तैल को रविवार को पुष्य नक्षत्र में पकाया जाय तो अत्यन्त उत्तम है। रात्रि में माथे पर लगाकर स्त्रियों के पास जाने पर, प्रातःकाल मस्तिष्क पर लगाकर राजदरबार में जाने पर, विवाह आदि मंगल कार्य एवं विवाद में इस तैल को लगाकर जाने पर सर्वत्र विजय होती है। इस तैल का सेवन गर्भस्राव एवं गर्भपात में भी लाभदायक है अर्थात् इसके प्रयोग से गर्भ रुक जाते हैं। गर्भावस्था में दूध के साथ ४-६ बूँद यदि इस तैल का प्रयोग स्त्री को कराया जाय तो गर्भ की वृद्धि अच्छी प्रकार से होती है। यह ग्रहणीमिहिर नामक तैल संसार के मङ्गल के लिए है।

मात्रा—५ से १० मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—तैलगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अतिसार, ग्रहणी, शोथ एवं प्रमेह में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

११३. बृहत् ग्रहणीमिहिरतैल

तैलं प्रस्थमितं ग्राह्यं तक्रं दद्याच्चतुर्गुणम्।
कुटजं धान्यकञ्चैव ग्राह्यं पलशतं पृथक् ॥५९४॥
तयोः क्वाथं पचेद् द्रोणे ह्यम्बुपादावशेषितम्।
एकीकृत्य पचेद्वैद्यः कल्कं कर्षमितं पृथक् ॥५९५॥
धान्यकं धातकी लोध्रं समङ्गाऽतिविषा शिवा।
लवङ्गं बालकञ्चैव शृङ्गाटकरसाञ्जने ॥५९६॥
नागपुष्पं पद्मकञ्च गुडूचीन्द्रयवं तथा।
प्रियङ्गु कटुकी पद्मकेशरं तगरं तथा ॥५९७॥
शरमूलं भृङ्गराजः केशराजः पुनर्नवा।
आम्रजम्बूकदम्बानां वल्कलानि च दापयेत् ॥५९८॥
ग्रहणीं हन्ति तच्छीघ्रं वलीपलितनाशनम्।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥५९९॥
ज्वरं तृष्णां तथा श्वासं कासं हिक्कां वमिं भ्रमिम्।
सोपद्रवं कोष्ठरुजं नाशयेत् सद्य एव हि ॥६००॥
वशीकरणमेतद्धि पुष्ययोगेन कारयेत्।
ग्रहणीमिहिरं तैलं बृहद् भुवनमङ्गलम् ॥६०१॥

१. तिलतैल ७५० मि.ली., २. गोतक्र ३ ली., ३. कुटजत्वक् ४.६७० कि.ग्रा., ४. धनियाँ ४.६७० कि.ग्रा. तथा ५. जल २६ ली. लें।

कल्क—१. धनियाँ, २. धातकीपुष्प, ३. लोध्रत्वक्, ४. मंजीठ, ५. अतीस, ६. हरीतकी, ७. लौंग, ८. सुगन्धबाला, ९. सिंघाड़ा, १०. रसाञ्जन, ११. नागकेशर, १२. पद्मकाष्ठ, १३. गुडूची, १४. इन्द्रयव, १५. प्रियङ्गु, १६. कुटकी, १७. कमलकेशर, १८. तगर, १९. शरमूल, २०. भृङ्गराज, २१. केशराज, २२. पुनर्नवामूल, २३. आम्रत्वक्, २४. जामुनत्वक् और ५. कदम्बत्वक्—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लेना चाहिए।

विधि—सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में तिलतैल का मूर्च्छन करें। धनियाँ से कदम्बत्वक् के सभी २५ द्रव्यों का चूर्ण कर सिल पर पीसें और कल्क बना लें। तदनन्तर मूर्च्छित तैल में कल्क और तक्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। पुनः कुटजत्वक् और धनियाँ को यवकुट कर २६ ली. जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छानकर तैल में डालें और पाक करें। परीक्षोपरान्त तैल सिद्ध होने पर चूल्हे से उतारकर कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रह करें। इस बृहद् ग्रहणीमिहिर तैल को ५ से १० मि.ली. की मात्रा में गरम दूध एवं गरम जल के साथ सेवन करने (पीने) से संग्रहणी एवं सभी प्रकार के अतिसार शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। नस्य एवं मर्दन से वली-पलित रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके सेवन से ग्रहणी, ज्वर, तृष्णा, श्वास, कास, हिक्का, वमन, भ्रम, उपद्रव से युक्त उदररोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। रविवार के दिन यदि पुष्यनक्षत्र हो और उसी दिन (पुष्ययोग) इस तैल को बनाया जाय तो इसके मर्दन से वशीकरण प्रभाव दिखाता है। इस तैल का निर्माण जगत्-कल्याण के लिए किया गया है।

मात्रा—पानार्थ ५ से १० ग्राम, नस्यार्थ ३ से ६ बूँद। **अनुपान**—अभ्यङ्गार्थ आवश्यकतानुसार गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—तैलगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ग्रहणी, अतिसार एवं वली पलित नाशक एवं वशीकरणार्थ।

११४. दाडिमादि तैल

दाडिमत्वग् जलं धान्यं वत्सकस्य त्वचस्तथा।
प्रत्येकमाढकं ग्राह्यं जलद्रोणे पचेत्पृथक् ॥६०२॥
चतुर्भागावशिष्टन्तु तक्रमाढकसम्मितम्।
पचेत्तैलाढके धीमान् गर्भं दत्त्वा भिषग्वरः ॥६०३॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं चव्यजीरकसैन्धवम्।
चातुर्जातं मधुरिका मांसी च देवपुष्पकम् ॥६०४॥
जातीकोषफले धान्यं यमान्यौ बालकं तथा।
कञ्चटातिविषे भेको शृङ्गाटं बृहतीद्वयम् ॥६०५॥
आम्रजम्बूत्वचः पर्ण्यौ समङ्गेन्द्रयवं वरी।
धातकीबिल्वमोचञ्च मुषली वत्सकं बला ॥६०६॥
श्वदंष्ट्रा लोध्रपाठाञ्च काष्ठं खादिरमेव च।
अमृता शाल्मलीत्वक् च सर्वमर्द्धपलोन्मितम् ॥६०७॥
पिष्ट्वा तण्डुलतोयेन साधयेन्मृदुनाऽग्निना।
ग्रहणीं हन्ति दुर्वारा प्रमेहानपि विंशतिम्।
अर्शांसि षड्विधान्येव नाशयेन्नात्र संशयः ॥६०८॥

क्वाथार्थ—१. दाडिमफलत्वक्, २. सुगन्धबाला, ३. धनियाँ तथा ४. कुटजत्वक्—प्रत्येक द्रव्य ३-३ किलो. लें। क्वाथार्थ जल—प्रत्येक द्रव्य के लिए १ द्रोण जल (१३ ली.) से पृथक् क्वाथ करें एवं तक्र ३ ली. लें।

कल्क—१. मरिच, २. पिप्पली, ३. शुण्ठी ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. आमला, ७. नागरमोथा, ८. चव्य, ९. श्वेतजीरा, १०. सैन्धवनमक, ११. दालचीनी, १२. छोटी इलायची, १३. तेजपात, १४. नागकेशर, १५. सोआ, १६. जटामांसी, १७. लवङ्ग, १८. जावित्री, १९. जायफल, २०. धनियाँ, २१. अजवायन, २२. अजमोदा, २३. सुगन्धबाला, २४. जलपिप्पली, २५. अतीस, २६. मण्डूकपर्णी, २७. सिंघाड़ा, २८. बृहती, २९. कण्टकारी, ३०. आम की छाल, ३१. जामुन की छाल, ३२. शालपर्णी, ३३. पृश्निपर्णी, ३४. मंजीठ, ३५. इन्द्रयव, ३६. शतावर, ३७. धातकीपुष्प, ३८. बिल्वफलमज्जा, ३९. मोचरस, ४०. मुसली, ४१. कुटजत्वक्, ४२. बलामूल, ४३. गोखरु, ४४. लोध्र, ४५. पाठा, ४६. पद्मकाष्ठ, ४७. खदिरकाष्ठ, ४८. गुडूची और ४९. सेमलत्वक्—प्रत्येक द्रव्य २३ ग्राम लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विधि—दाडिम से कुटजत्वक् तक सभी द्रव्यों को यवकुट कर पृथक्-पृथक् १२-१२ लीटर जल में पृथक्-पृथक् क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें। पुनः मरिच से सेमलत्वक् तक के सभी द्रव्यों को २३-२३ ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर तण्डुलोदक के साथ पीसकर कल्क बनावें। स्टेनलेस स्टील के पात्र में तिलतैल का मूर्च्छन करें। मूर्च्छित तैल में कल्क और दाडिमत्वक् क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। एक क्वाथ सूखने पर क्रमशः दूसरा क्वाथ देकर पाक करें। इसी प्रकार चारों क्वाथ सूखने पर स्नेहपाकविद् वैद्य परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस दाडिमादितैल को ५ से १० मि.ली. की मात्रा में गरम दूध या गरम जल के साथ सेवन करने से असाध्य संग्रहणी, २० प्रकार के प्रमेह तथा छः प्रकार के अर्श निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५ से १० मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—असाध्य ग्रहणी, २० प्रमेह एवं ६ अर्श में।

११५. तक्रारिष्ट (चरक)

यमान्यामलकं पथ्या मरिचं त्रिपलांशिकम्।
लवणानि पलांशानि पञ्च चैकत्र चूर्णयेत् ॥६०९॥
तक्रकंसासुतं जातं तक्रारिष्टं पिबेन्नरः।
दीपनं शोथगुल्मार्शःकृमिमेहोदरापहम् ॥६१०॥

१. अजवायन १४० ग्राम, २. आमला १४० ग्राम, ३. हरीतकी १४० ग्राम, ४. मरिच १४० ग्राम, ५. सैन्धवलवण १० ग्राम, ६. सामुद्रलवण १० ग्राम, ७. सौवर्चललवण १० ग्राम, ८. विड्लवण १० ग्राम तथा ९. औद्भिल्लवण १० ग्राम लें एवं १०. खट्टा तक्र ३० ली. लें। सभी द्रव्यों को पीसकर चूर्ण कर लें। फिर इस चूर्ण एवं तक्र को मिट्टी के घड़े में डालकर हाथ से अच्छी तरह से मिला लें। पुनः मिट्टी के शराव से मुख बन्द कर कपड़मिट्टी करें। फिर इस पात्र को ऋतु के अनुसार यथा—ग्रीष्म ऋतु एवं शरद् ऋतु में ३ दिन, वर्षा ऋतु में ४ दिन, वसन्त ऋतु में ६ दिन एवं शीत ऋतु में ८ दिन तक धान की राशि में रख दें। सिद्ध होने के बाद बाहर निकालें तथा छान लें। भोजनोपरान्त १०-२० मि.ली. की मात्रा में इस तक्रारिष्ट को समभाग जल के साथ सेवन करें। प्रतिदिन इसका सेवन करने से मन्द हुई जाठराग्नि प्रदीप्त होती है। यह शोथ, गुल्म, अर्श, कृमिरोग, प्रमेह एवं उदर व्याधियों को शान्त करता है।

मात्रा—१० से २० मि.ली.। **अनुपान**—ताजा जल मिलाकर। **वर्ण**—श्वेत द्रव। **गन्ध**—खट्टा चुक्र जैसा। **स्वाद**—अम्लीय तीक्ष्ण। **उपयोग**—मन्दाग्नि, शोथ, गुल्म, अर्श, कृमि, प्रमेह, उदररोग एवं संग्रहणी में।

११६. पिप्पल्याद्यासव (शार्ङ्गधर)

पिप्पली मरिचं चव्यं हरिद्रा चित्रको घनः।
विडङ्गं क्रमुको लोध्रः पाठा धात्र्येलवालुकम् ॥६११॥
उशीरं चन्दनं कुष्ठं लवङ्गं तगरं तथा।
मांसी त्वगेला पत्रञ्च प्रियङ्गु नागकेशरम् ॥६१२॥
एषामर्द्धपलान् भागान् सूक्ष्मचूर्णीकृताञ्छुभान्।
जलद्रोणद्वये क्षिप्त्वा दद्याद् गुडतुलात्रयम् ॥६१३॥
पलानि दश धातक्या द्राक्षा षष्टिपला भवेत्।
एतान्येकत्र संयोज्य मृदौ भाण्डे विनिक्षिपेत् ॥६१४॥
ज्ञात्वा रसगतं सर्वं पाययेदग्न्यपेक्षया।
क्षयं गुल्मोदरं कार्श्यं ग्रहणीं पाण्डुतान्तथा ॥६१५॥
अर्शांसि नाशयेच्छीघ्रं पिप्पल्या आसवस्त्वयम् ॥६१६॥

१. पीपर, २. मरिच, ३. चव्य, ४. हल्दी, ५. चित्रकमूल, ६. नागरमोथा, ७. वायविडङ्ग, ८. सुपारी, ९. लोध्रत्वक्, १०. पाठा, ११. आमला, १२. मुसब्बर, १३. खस, १४. श्वेतचन्दन, १५. मीठा कूठ, १६. लौंग, १७. तगर, १८. जटामांसी, १९. दालचीनी, २०. छोटी इलायची, २१. तेजपात, २२. प्रियङ्गु और २३. नागकेशर—प्रत्येक द्रव्य २३ ग्राम लें; २४. गुड़ १५ कि., २५. जल २६ ली., २६. धातकीपुष्प ५०० ग्राम तथा २७. मुनक्का २८०० ग्राम लें।

विधि—दो नये मिट्टी के घड़े लें और उनमें १३-१३ ली. जल और ७$\frac{१}{२}$ ली. गुड़ तथा पीपर से नागकेशर तक के सभी द्रव्यों का यवकुट आधा-आधा मिलावें। उसी प्रकार धातकीपुष्प भी आधा-आधा एवं कूटकर मुनक्का आधा-आधा डालें। हाथ से ठीक से मिला लें और मिट्टी के ढक्कन से ढककर कपड़मिट्टी करें और निर्वात स्थान (घर) में रखें। घड़े की तली में पुआल आदि के गद्दे रखें। २१ दिनों के बाद परीक्षोपरान्त (मद्य तैयार हो गया हो तो) घड़े का मुख खोलकर हाथ से अच्छी तरह मिला कर कपड़े से छान लें। इस पिप्पल्यासव को घड़ा को साफ कर पुनः उसी में रखें। १५-२० दिनों पर पुनः कज्जली आसव को निथारकर छान लें। इसे काचपात्र में संग्रहीत करें। काँच के बोतलों में लेबल लगा दें। लेबल में औषधि के नाम, अधिकार, ग्रन्थ के नाम, तिथि और बैच नम्बर अवश्य लिखें। आसव एवं अरिष्टों को १ वर्ष के बाद ही प्रयोग करें। इस पिप्पल्याद्यासव का सेवन रोग एवं रोगी के बलाबल के अनुसार १०-२० मि.ली. की मात्रा में समान भाग जल के साथ भोजनोपरान्त सेवन कराना चाहिए। यह पिप्पल्याद्यासव क्षय, गुल्म, उदररोग, दौर्बल्य, ग्रहणीदोष, पाण्डु, अर्शरोग का शीघ्र ही विनाश करता है।

मात्रा—१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—जल मिलाकर। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ द्रव। **स्वाद**—तीक्ष्ण मधुर। **उपयोग**—ग्रहणी, अर्श, मन्दाग्नि एवं उदररोग में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्रहणीरोग में अपथ्य

रक्तस्रुतिं जागरमम्बुपानं
स्नानं स्त्रियं वेगविनिग्रहं च।
नस्याञ्जनस्वेदनधूमपानं
श्रमं विरुद्धाशनमातपं च ॥६१७॥
गोधूमनिष्पावकलायमाष
यवार्द्रकच्छत्रकराजमाषान्।
उपोदिकावास्तुककाकमाची-
कूष्माण्डतुम्बीमधुशिग्रुकन्दान् ॥६१८॥
ताम्बूलमिक्षुर्बदरं रसाल-
मेर्वारुकं पूगफलं रसोनम्।
धान्याम्लसौवीरतुषोदकानि
दुग्धं गुडं मस्तु च नारिकेलम् ॥६१९॥
पुनर्नवाबार्हतवैणवानि
सर्वाणि शाकानि च पत्रवन्ति।
दुष्टाम्बुगोवारिकुरङ्गनाभि-
क्षारं समस्तानि सराणि चापि ॥६२०॥
द्राक्षामथाम्लं लवणं सरं च
गुर्वन्नपानं सकलं च पूपम्।
वैद्यश्चिकित्सन्ग्रहणीविकारं
विवर्जयेत्सन्ततमप्रमत्तः ॥६२१॥

रक्तस्राव, रात में जागना, अत्यधिक जल का सेवन, स्नान, स्त्रीसम्भोग, मल-मूत्र के वेगों को धारण करना, नस्यकर्म, अञ्जन, स्वेदन, धूम्रपान, परिश्रम करना, विरुद्ध भोजन, धूप या आग में तापना, गेहूँ, सफेद सेम, मटर, उड़द, यव, अदरक, तालमखाना, राजमा, पोई का साग, बथुआ, मकोय, कूष्माण्ड, लौकी, सहिजन, आलू आदि कन्द; पान, ईख, बेर, आम, ककड़ी, खीरा, सुपारी, लहसुन, काञ्जी, सौवीर, तुषोदक (भूसी सहित यव की काञ्जी), दूध, गुड़, दही का पानी, कच्चा नारियल का पानी, पुनर्नवा, बृहती के फल, बाँस के अङ्कुर, सभी प्रकार के हरे पत्तेदार साग, दूषित जल, गोमूत्र, कस्तूरी, सभी प्रकार के क्षार, सभी प्रकार के विरेचन द्रव्य, मुनक्का, पिसी आम की खटाई आदि, नमक, सारक द्रव्य, गुरु विपाक वाले द्रव्य, अन्नपान, सभी प्रकार के पुआ-पूड़ी आदि द्रव्यों का सेवन नहीं करना चाहिए। ये सभी द्रव्य ग्रहणी रोगी के लिए अहितकर हैं।

ग्रहणी रोग में पथ्य

निद्राच्छर्दनलङ्घनं चिरभवा ये शालयः षष्टिका
मण्डो लाजकृतो मसूरतुवरीमुद्गप्रसूता रसाः।
निःशेषोद्धृतसारमेव दधि यत्सक्षीरजातं गवां
छाग्या वा नवनीतमेव दधिजं तद्वत्पयःसम्भवम् ॥६२२॥
छागान्याज्यपयोदधीनि तिलजं तैलं सुरा माक्षिकं
शालूकं बकुलं च दाडिमयुगं नव्यानि भव्यानि च।
रम्भायाः कुसुमं फलं च तरुणं बिल्वं च शृङ्गाटकं
चाङ्गेरी विजया कपित्थकुटजाजाजीकसेरूणि च ॥६२३॥
तक्रं काञ्चटसौनिषण्णदलकं जातीफलं जाम्बवं
धन्याकानि च तिन्दुकानि च महानिम्बोऽरुणा पेलवम्।
क्रव्याल्लावशशैणतित्तिरिरसाः क्षुद्रा झषाः सर्वशः
खुड्डीशो मधुरालिका च खलिशः सर्वः कषायो रसः ॥
नाभेर्द्व्यङ्गुलकादधोऽर्धशशिवद्वंशास्थिमूले तथा
दाहः प्रज्वलितायसा च कथितं पथ्यं ग्रहण्यातुरे ॥६२५॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां ग्रहणीरोगाधिकारः।

दिवाशयन, वमन, उपवास करना, पुराने शालि और शाली चावल, लाजमण्ड, मसूर, अरहर एवं मूँग की दाल का पानी, गाय के दूध का दही जिसमें मक्खन निकाल दिया गया हो, अजादुग्ध, दही, तिलतैल, मदिरा, मधु, कमलकन्द, मौलसरी, दाडिम, नया लसोड़े का फल, केले का फूल, बिल्वफलमज्जा, सिंघाड़ा, चाङ्गेरी, भाँग, कपित्थ, कुटजत्वक्, जीरा, कसेरू, तक्रजल, चौलाई की पत्ती, चाङ्गेरी, जायफल, जामुन, धनियाँ, तिन्दुक-फल, महानिम्ब, मञ्जिष्ठा, क्रव्याद = कच्चा मांस, मांसाहारी पशु-पक्षियों का मांस, खरगोश, हरिण, तीतर आदि का मांसरस, सभी प्रकार की छोटी एवं बड़ी मछलियाँ, खुड्डीश मछली, मधुरालिका (मछली का एक विशेष प्रकार), खलिश मछली, सभी प्रकार के कषाय रस प्रधान द्रव्य; नाभि के २ अङ्गुल नीचे एवं दो अङ्गुल ऊपर और रीढ़ की हड्डी की जड़ में जलते हुए लोहे की शलाका से अर्धचन्द्राकार दाग देना चाहिए—ये सभी वस्तुएँ ग्रहणी रोगी के लिए पथ्य हैं तथा इनका सेवन करना हितकर है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य ग्रहणीरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथार्शोरोगाधिकारः (९)

अर्शरोग-चिकित्सा में चार उपाय

दुर्नाम्नां साधनोपायश्चतुर्धा परिकीर्तितः।
भेषजक्षारशस्त्राग्निसाध्यत्वादाद्य उच्यते ॥१॥

अर्शरोग को नाश करने के लिए आचार्यों ने चार प्रकार की चिकित्सा बतायी है—१.औषध, २. क्षार, ३. शस्त्र (शल्यकर्म) तथा ४. अग्निकर्म।

१. **औषधि**—साध्य अर्श की चूर्ण, क्वाथ, वटी, अरिष्ट, आसव, भस्म, तैल, घृत आदि औषधियों से चिकित्सा की जाती है।

२. **क्षारकर्म**— क्षारसूत्र के द्वारा अथवा क्षारीय घोल का लेप अर्श पर लगाने से अर्श कटकर एवं सूखकर गिर जाता है। क्षार-सूत्र के लिए बटे हुए धागे को स्नुहीक्षीर में एक सप्ताह तक भिगोते हैं, तत्पश्चात् उसे हरिद्राघोल में भिगोकर सुखा लेते हैं। आचार्य चक्रपाणि ने कहा भी है—

'भावितं रजनीचूर्णैः स्नुहीक्षीरे पुनः पुनः।
बन्धनात् सुदृढं सूत्रं छिनत्त्यर्शो भगन्दरम्'।।

(चक्रदत्तः, अर्शे १४,)

३. **शस्त्रकर्म**—शस्त्रक्रिया में निष्णात शल्यचिकित्सकों द्वारा इसका आपरेशन किया जाता है। इसका आपरेशन इसलिए सफल नहीं माना जाता है क्योंकि अर्श के अंकुर पुनः प्ररोहित हो जाते हैं और रोगी पूर्ववत् वेदनायुक्त हो जाता है, तथापि इस विधि से अधिकांश रोगी इन दिनों चिकित्सा करवाते हैं।

४. **अग्निकर्म**—अग्नि में प्रतप्त शलाकाओं द्वारा अर्श के अंकुर को जलाने की प्राचीन परम्परा थी। इन दिनों आधुनिक विधि से भी विद्युत्चालित यन्त्रों द्वारा इन अंकुरों को जलाया जाता है।

इसी विधि से साध्यासाध्य अर्श की चिकित्सा की जाती है।

विमर्श—अर्श की व्युत्पत्ति—'अरिवत् प्राणान् शृणाति हिनस्तीत्यर्शः', दुर्नामः-'दुःखप्रदं नाम यस्येति दुर्नामः'।

आचार्य चरक ने बताया है कि अर्श, अतिसार और ग्रहणी ये तीनों रोग प्रायः एक-दूसरे के कारणस्वरूप होते हैं। इन रोगों में जब अग्निबल क्षीण हो जाता है तो रोग बढ़ जाता है और अग्निबल की वृद्धि होने पर रोग घट जाता है, अतः इन तीनों रोगों में अग्नि की विशेष रूप से रक्षा करनी चाहिए। यथा—

'त्रयो विकाराः प्रायेण ये परस्परहेतवः।
अर्शांसि चातिसारश्च ग्रहणीदोष एव च।।
येषामग्निबले हीने वृद्धिर्वृद्धे परिक्षयः।
तस्मादग्निबलं रक्ष्यमेषु त्रिषु विशेषतः'।।

(च.चि. १४।२४५)

हमारे ऋषियों ने अर्श को महारोग में गिना है।

यथा—

वातव्याधिः प्रमेहश्च कुष्ठमर्शो भगन्दरम्।
अश्मरी मूढगर्भश्च तथैवोदरमष्टमम्।
अष्टावेते प्रकृत्यैव दुश्चिकित्स्या महागदाः।

(सु.सू.३३।४।५)

वातव्याध्यश्मरी कुष्ठमेहोदरभगन्दराः।
अर्शांसि ग्रहणीत्यष्टौ महारोगाः सुदुस्तराः।।

(अ.हृ.नि.८।३०)

अपि च—

पाश्चात्य मत से अर्श का विवेचन—

यह मलाशय की सिराओं (Veins) का विकार कहलाता है अर्थात् गुदा की चारों ओर की सिराएँ जो श्लेष्मल कला के भीतर रहती है, उसे बढ़ जाने के कारण अर्शरोग कहा जाता है।

मलाशय (Rectum) की सिराएँ गुदनलिका की दीवारों में लम्बाई की ओर फैली रहती है। उनमें कपाट नहीं होने से विबन्ध पीड़ित व्यक्ति मलत्याग करते समय अधिक कुन्थन करता है। कुन्थन के दबाव से सिराओं में आया हुआ रक्त लौटकर नहीं जाता है। इस तरह प्रतिदिन कुन्थनयुक्त रक्तप्रवाह उन सिराओं में सञ्चित होता रहता है और रक्त संचित सिराएँ फूल जाती हैं। वह रक्तपूर्ण सिराएँ फूलकर अंकुर जैसी भीतर या बाहर स्थित हो जाती हैं, जिसे हम अर्श के नाम से जानते हैं।

स्थानिक दृष्टि से अर्श दो प्रकार के होते हैं—१. आभ्यन्तर अर्श (Internal piles) तथा २. बाह्य अर्श (External piles)।

आभ्यन्तर अर्श—ये प्रायः गुदनलिका के भीतर रहते हैं और श्लैष्मिक कला से ढके रहते हैं। इनके मध्य में एक सिरा और चारों ओर सौत्रिक तन्तु रहते हैं। धीरे-धीरे ये सौत्रिक तन्तु बढ़ते रहते हैं जिससे अर्श में काठिन्य हो जाता है, इसमें भी प्रकुपितावस्था में मलोत्सर्ग के समय कुन्थन होने पर अर्शांकुर

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बाहर आ जाते हैं, जिससे रोगी को चलने-फिरने, बैठने में कष्ट होता है तथा कभी-कभी रक्तस्रुति भी होती है।

बाह्य अर्श—ये गुदा के चारों ओर फैले बाहर निकले रहते हैं किन्तु सामान्यावस्था में जब इनमें रक्त नहीं भरा रहता है तो यह सुखा हुआ या नहीं दिखाई देने वाला होता है किन्तु जब इसमें प्रकुपित रक्त भर जाता है तो यह फैलकर गुच्छा या अंगूर के गुच्छे या कदम के फूल जैसा रक्त और पूय से पूरित दिखाई देता है। धीरे-धीरे अर्श कठोर ग्रन्थि के रूप में बाहर निकल आता है। सिराएँ जब तक कुपित रक्त से पूरित नहीं होतीं तबतक उस अर्श में मात्र भारीपन और खुजली ही हुआ करती है। किन्तु दूषित रक्त से पूरित होने पर अर्श बढ़कर बहुत कष्टदायक हो जाता है जिससे रोगी को मलत्याग, उठने-बैठने, चलने-फिरने में बहुत तकलीफ होती है। इस अर्श से रक्तस्राव प्रायः कम होता है।

अर्श की चिकित्सा

यद्वायोरानुलोम्याय यदग्निबलवृद्धये।
अनुपानौषधद्रव्यं तत्सेव्यं नित्यमर्शसैः ॥२॥

जो औषधि (क्वाथ, स्वरस, दुग्ध, आसव, अरिष्ट, तक्र, चूर्ण आदि) एवं भोज्य पदार्थ (मण्ड, पेया, विलेपी, कृशरा, भात आदि) अपान वायु को अनुलोमन करने में समर्थ हो, पाचकाग्नि के बल की वृद्धि करता हो, अर्शरोग में उन्हीं अनुपान, औषध, भोज्यादि द्रव्यों का प्रतिदिन सेवन कराना चाहिए।

शुष्क-आर्द्र अर्श की चिकित्सा

शुष्कार्शसां प्रलेपादिक्रिया तीक्ष्णा विधीयते।
स्राविणां रक्तमालोक्य क्रिया कार्याऽस्रपैत्तिकी ॥३॥

वात और कफ की प्रबलता के कारण उत्पन्न शुष्क अर्श[१] में प्रलेपादि तीक्ष्ण क्रिया का प्रयोग बताया गया है। आदि शब्द से शुष्क अर्श के शोथ और शूलयुक्त मस्से पर तेल लगाकर स्वेदन करना चाहिए। पुनः क्षारादि द्रव्यों का लेप करना चाहिए। जिन मस्सों से रक्त आता हो उस रोगी में रक्त और पित्तदोष निर्हरणार्थ रक्तपित्त की विधि से चिकित्सा करनी चाहिए। बलवान् रोगी के रक्त का संग्रहण या स्तम्भन चिकित्सा नहीं करनी चाहिए। प्रदुष्ट रक्त के निकलने पर ही रक्तस्तम्भक चिकित्सा करनी चाहिए।

कठिनार्श की चिकित्सा

शस्त्रैर्वाऽथ जलौकाभिः प्रोच्छूनकठिनार्शसः।
शोणितं सञ्चितं दृष्ट्वा हरेत्प्राज्ञः पुनः पुनः ॥४॥

अर्श के कठिन अंकुरों में अशुद्ध रक्त को देखकर शस्त्र के द्वारा तथा जलौका के द्वारा रक्तनिर्हरण बार-बार करना चाहिए।

कफार्श-चिकित्सा

गुदाङ्कुरस्यैकदेशे कफार्शसि जलौकया।
रक्तमोक्षं विधायार्करसलेपः प्रशस्यते।
दाहोऽथवा विधातव्यस्तत्रायुर्वेदवेदिभिः ॥५॥

कफज अर्श में मांसाङ्कुर के एक पार्श्व से जोंक (जलौका) द्वारा रक्तमोक्षण कराकर अर्कपत्र रस का लेप करना चाहिए अथवा अग्नि द्वारा प्रतप्त शलाका से दग्धकर्म करना चाहिए।

१. अर्शनाशक लेप

स्नुक्क्षीरं रजनीयुक्तं लेपाद् दुर्नामनाशनम्।
कोषातकीरजोघर्षान्निपतन्ति गुदोद्भवाः ॥६॥

स्नुहीक्षीर में हल्दी का चूर्ण मिलाकर अर्श के अंकुरों पर लेप लगाने से अर्श नष्ट हो जाता है। अथवा—कड़वी तोरई के जड़ का चूर्ण मस्से पर घिसने से अर्श के मस्से सुखकर गिर जाते हैं।

२. अर्कक्षीरादि लेप

अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं तिक्ततुम्ब्याश्च पल्लवाः।
करञ्जो बस्तमूत्रञ्च लेपनं श्रेष्ठमर्शसाम् ॥७॥

१. अर्क का दूध, २. थूहर का दूध, ३. कड़वी (गोलकद्दू) तुम्बी के पत्ते और ४. करञ्ज की छाल—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर चूर्ण करें और बकरी के मूत्र में पीसकर अर्श पर लेप करें।

३. घोषाफलवर्ति (अर्शोघ्नीवर्ति)

अर्शोघ्नी गुदगा वर्त्तिर्गुडघोषाफलोद्भवा।

एक तोला गुड़ को थोड़ा जल देकर एक कटोरी में रखकर आग पर उबाले, जब उबलने लगे तो कड़वी तोरई के पत्ते या जड़ का चूर्ण $\frac{१}{२}$ तोला उसमें डालकर गुटिका जैसी तीन-चार तार की चासनी कर लें। पुनः कटोरी को आग से उतारकर ठण्डा होने पर १ इञ्च की यवाकृति वर्ति बना लें। इस वर्ति को गुद में डालने से अर्श में लाभ होता है।

४. ज्योत्स्निकामूल लेप

ज्योत्स्निकामूलकल्केन लेपो रक्तार्शसां हितः ॥८॥

ज्योत्स्निका (कड़वी तोरई–कड़वी नेनुआं) की जड़ को साफ कर सिल पर पीस लें और रक्तार्श पर लेप करें। ऐसा करने से रक्तार्श शान्त हो जाता है।

५. हरिद्रादि लेप

हरिद्राजालिनीचूर्णं कटुतैलसमन्वितम्।
एष लेपो वरः प्रोक्तो ह्यर्शसामन्तकारकः ॥९॥

१. वातश्लेष्मोल्बणान्याहुः शुष्काण्यर्शांसि तद्विदः। (च.चि.१४)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

हरिद्रा का चूर्ण तथा कंड़वी तोरई के पत्ते का चूर्ण समभाग में लेकर सरसो के तेल के साथ मर्दन कर गुदाङ्कुर पर लेप करें। इस लेप से अर्श शान्त हो जाता है।

६. पिप्पल्यादि लेप

पिप्पली सैन्धवं कुष्ठं शिरीषस्य फलन्तथा।
सुधादुग्धार्कदुग्धैर्वा लेपोऽयं गुदजं हरेत् ॥१०॥

१. पीपर, २. सैन्धवनमक, ३. कूठ, ४. शिरीषबीज तथा ५. थूहर का दूध या अर्क का दूध—उक्त चारों द्रव्यों का चूर्ण कर स्नुहीक्षीर या अर्क में मर्दन करें। जब मलहम के सदृश हो जाय तो गुदार्श पर इस लेप को लगावें। एक सप्ताह तक इसके प्रयोग से अर्श सूखकर नष्ट हो जाते हैं।

७. शूरणादिलेप

शूरणं रजनी वह्निष्टङ्कणं गुडमिश्रितम्।
पिष्ट्वाऽऽरनालकैर्लेपो हन्त्यर्शांसि महान्त्यपि ॥११॥

१. सूरणकन्द, २. हरिद्रा, ३. चित्रकमूल, ४. शुद्ध टंकण तथा ५. गुड़—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। काष्ठौषधियों का सूक्ष्म चूर्ण कर गुड़ के साथ मर्दन करें। मलहम सदृश हो जाने पर शीशी में रख लें। इस लेप को गुदाङ्कुर पर लगाने से कुछ ही दिनों में मस्से सूखकर गिर जाते हैं।

८. शिरीषबीजादि तीन लेप

शिरीषबीजकुष्ठार्कक्षीरपिप्पलिसैन्धवैः ।
लाङ्गलीमूलगोमूत्रस्वर्जिकादन्तिचित्रकैः ॥१२॥
चरणायुधविड्गुञ्जानिशाकृष्णाभिरुत्तमम् ।
लेपत्रयमिदं योज्यं शीघ्रमर्शोविनाशकृत् ॥१३॥

१. शिरीषबीज, कूठ, अर्कदुग्ध, पीपर एवं सैन्धव—इन सभी पाँच द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर गोमूत्र के साथ पीसें और १-१ ग्राम की वटी बना लें तथा सुखाकर शीशी में सुरक्षित रख लें। अर्श के रोगी के मस्से पर इसका लेप करें।

२. कलिहारी का मूल, सज्जीक्षार, दन्तीमूल तथा चित्रक-मूल—इन चारों द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और गोमूत्र के साथ पीसकर वटी बना लें और पूर्ववत् प्रयोग करें।

३. मुर्गे का विट, गुञ्जा, हल्दी तथा पीपर—इन चारों द्रव्यों को समभाग लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और गोमूत्र के साथ पीसकर वटी बना लें तथा पूर्ववत् प्रयोग करें।

९. कटुतुम्बीबीजादि वर्ति

तुम्बीबीजं सोद्भिदन्तु काञ्जीपिष्टं गुडीत्रयम्।
अर्शोहरं गुदस्थं स्याद्दधि माहिषमश्नतः ॥१४॥

कटुतुम्बीबीज और औद्भिल्लवण (रेह)—दोनों समभाग में लें। तुम्बीबीज का सूक्ष्म चूर्ण करें और उसमें रेह मिलाकर काञ्जी के साथ खूब पीसें। पुनः इस कल्क से तीन गुडिका (वर्ति) बनाकर सुखा लें। तीन दिनों तक एक-एक वर्ति गुदा में धारण करें। पथ्य में—भैंस का दही और भात खाने को दें।

१०. लिङ्गार्शोघ्नलेप

महाबोधिप्रदेशस्य पथ्या कोशातकीरजः।
सफेनं लेपतो हन्ति लिङ्गवर्त्तिमसंशयम् ॥१५॥

१. मगधप्रदेश में उत्पन्न हरीतकी (हर्रे), २. कड़वी तरोई और ३. समुद्रफेन—इन तीनों को समभाग में लेकर चूर्ण करें और काञ्जी के साथ पीसकर लिङ्गार्श पर लेप करें। कुछ दिन लेप करने से लिङ्गार्श[१] नष्ट हो जाता है।

११. अपामार्गादिलेप

अपामार्गोद्भवान्मूलात् क्षारः सहरितालकः।
लिङ्गार्शो लेपतो हन्ति चिरजातमसंशयम् ॥१६॥

अपामार्गमूल एवं हरताल—इन दोनों द्रव्यों को समभाग में लेकर काञ्जी के साथ पीस लें और लिङ्गार्श पर लेप करें। कुछ ही दिनों के बाद लिङ्गार्श निश्चित रूप से नष्ट हो जाता है।

१२. कृष्णतिलकल्कप्रयोग

असितानां तिलानां च पलं शीतजलेन च।
खादतोऽर्शांसि शाम्यन्ति दृढा दन्ता भवन्ति च ॥१७॥

कालातिल—४६ ग्राम (१ पल) कालातिल को सिल पर पीसकर कल्क बना लें और शीतल जल में घोलकर रक्तार्श से पीड़ित रोगी को एक बार पिलावें। इससे रक्तार्श शान्त हो जाते हैं और दाँत भी मजबूत हो जाते हैं।

१३. कफज अर्श की चिकित्सा

कफजे शृङ्गवेरस्य क्वाथो नित्योपयोगिकः ॥१८॥

कफज अर्श में नित्य चार तोला शुण्ठी का क्वाथ पिलाने से लाभ करता है।

विभिन्न पुरीष अर्श की चिकित्सा

वातातिसारवद्भिन्नवर्च्चांस्यर्शांस्युपाचरेत् ।
उदावर्त्तविधानेन गाढविट्कानि चासकृत् ॥१९॥

अर्श के रोगी में द्रव पुरीष प्रवृत्ति हो तो वातातिसार के सदृश चिकित्सा करनी चाहिए तथा विबन्धयुक्त अर्श के रोगी में उदावर्त जैसी चिकित्सा करनी चाहिए।

१४. विड्विबन्ध में तक्र-प्रयोग

विड्विबन्धे हितं तक्रं यमानीविडसंयुतम्।
वातश्लेष्मार्शसां तक्रात् परं नास्तीह भेषजम् ॥२०॥

---

१. मेढ्रादिष्वपि वक्ष्यन्ते यथास्वं नाभिजानि च।
गण्डूपदस्य रूपाणि पिच्छिलानि मृदूनि च॥ (मा.नि.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तत्प्रयोज्यं यथादोषं सस्नेहं रूक्षमेव वा।
न विरोहन्ति गुदजाः पुनस्तक्रसमाहताः ॥२१॥

विड्विबन्ध होने पर अर्शरोगी को तक्र के साथ यवानीचूर्ण और विड्लवण मिलाकर पिलाना हितकर होता है। वातज एवं कफज अर्श में तक्र से बढ़कर कोई दूसरी औषधि नहीं है। वातज अर्श में मक्खनयुक्त तक्र देना चाहिए तथा कफज अर्श में मक्खन रहित तक्र का प्रयोग लाभकर होता है। तक्र-प्रयोग से नष्ट हुए अर्श पुनः उत्पन्न नहीं होते हैं।

१५. चित्रकमूलयुक्त तक्र-प्रयोग

त्वचं चित्रकमूलस्य पिष्ट्वा कुम्भं प्रलेपयेत्।
तक्रं वा दधि वा तत्र जातमर्शोहरं पिबेत् ॥२२॥

एक छोटे नये घड़े में चित्रकमूलत्वचा को जल से पीसकर लेप कर दें, तत्पश्चात् उबला हुआ गाय का दूध धीरे से उस घड़े में रखे। ठण्डा होने पर जमने के लिए थोड़ा-सा दही डाल दें। दूसरे दिन उस जमे हुए दही को मथकर तक्र बनावें और अर्शयुक्त रोगी को पिलावें। कुछ दिनों तक इसके प्रयोग से अर्श-रोग नष्ट हो जाता है।

विमर्श—मथते समय तक्र में चौथाई जल देना चाहिए तथा उसका मक्खन नहीं निकालें।

१६. गुड़ाभया-प्रयोग

पित्तश्लेष्मप्रशमनी कच्छूकण्डूरुजाऽपहा।
गुदजान्नाशयत्याशु योजिता सगुडाऽभया ॥२३॥

गुड़ १० ग्राम, अभयाचूर्ण ५ ग्राम—दोनों को मिलाकर प्रातः-सायं शीतल जल के साथ सेवन करें। इसके प्रयोग से कच्छू, कण्डू और वातवेदनाओं से युक्त पित्त-कफज अर्श नष्ट हो जाता है।

१७. सगुडकणाभया-प्रयोग

सगुडां पिप्पलीयुक्तामभयां घृतभर्जिताम्।
त्रिवृद्दन्तीयुतां वाऽपि भक्षयेदानुलोमिकीम् ॥२४॥
विड्वातकफपित्तानामानुलोम्येन निर्मले।
गुदेऽर्शांसि प्रशाम्यन्ति पावकश्चाभिवर्द्धते ॥२५।

(१) गुड़ ५ ग्रा., पिप्पलीचूर्ण ५ ग्रा., घृतभृष्ट हरीतकीचूर्ण ५ ग्रा. मिलावें और वटी बनाकर सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। अथवा—(२) त्रिवृत्चूर्ण ५ ग्रा., दन्तीमूलचूर्ण ५ ग्रा., गुड़ ५ ग्रा. मिलाकर वटी बनाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसके सायं-प्रातः सेवन करने से वायु का अनुलोमन होता है; विट्, वात, पित्त, कफ अनुलोमित हो जाते हैं, गुदा का मल साफ हो जाता है (दोष रहित हो जाता है), अर्श रोग नष्ट होता है और अग्नि की वृद्धि होती है।

१८. तिलारुष्कर-प्रयोग

तिलारुष्करसंयोगं भक्षयेदग्निवर्द्धनम्।
कुष्ठरोगहरं श्रेष्ठमर्शसां नाशनं परम् ॥२६॥

कालातिल चूर्ण ३ ग्राम तथा शुद्ध भिलावा २५० मि.ग्रा.—इन दोनों को मिलाकर सुबह-शाम दूध या तक्र से लेने पर सभी प्रकार के कुष्ठ और अर्श नष्ट हो जाते हैं। यह परम औषधि है।

१९. गुड़हरीतकी एवं पञ्चकोलतक्र प्रयोग

गोमूत्राध्युषितां दद्यात् सगुडां वा हरीतकम्।
पञ्चकोलयुतं वाऽपि तक्रमस्मै प्रदापयेत् ॥२७॥

(१) गोमूत्र भावित हरीतकीत्वक्चूर्ण १० ग्रा. एवं गुड़ ५ ग्रा.; अथवा—(२) पंचकोलचूर्ण ५ ग्रा. तथा तक्र २००-२५० मि.ली. मिलाकर सायं-प्रातः पीने से अर्शरोग नष्ट हो जाता है।

२०. तिलभल्लातकादि योग

तिलभल्लातके पथ्या गुडश्चेति समांशिकम्।
दुर्नामकासश्वासघ्नं प्लीहपाण्डुज्वरापहम् ॥२८॥

१. कालातिल २. शुद्ध भल्लातक, ३. हरीतकी तथा ४. गुड़ (हरीतकी चूर्ण और तिल का चूर्ण कर लें)—ये सभी द्रव्य समभाग में लेकर मिला लें तथा प्रातः-सायं तक्र के साथ सेवन करें। इसके सेवन से अर्श, श्वास, कास, प्लीहा, पाण्डु और ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

२१. पुटपक्वचूर्ण-प्रयोग

मृल्लिप्तं शौरणं कन्दं पक्त्वाऽग्नौ पुटपाकवत्।
अद्यात् सतैललवणं दुर्नामविनिवृत्तये ॥२९॥

१. सूरणकन्द, २. तिलतैल और ३. सैन्धवनमक। २०० ग्राम सूरणकन्द के ऊपर चारों ओर चिकनी मिट्टी का एक अंगुल मोटा लेप लगावें। सूखने पर कण्डों की अग्नि में पाक करें। जब मिट्टी का रंग लाल वर्ण हो जाय तो आग से सूरण को निकाल लें और मिट्टी आदि अपद्रव्य को साफकर मसलकर भुर्ता बना लें और स्वाद के हिसाब से सैन्धवनमकचूर्ण तथा तिलतैल मिलाकर अर्श से पीड़ित रोगी को खिलावें। स्वाद के लिए इसमें नीबू का रस मिलाया जा सकता है। इसका सेवन करने से अर्श नष्ट हो जाता है।

२२. वार्ताकुफल-प्रयोग

स्विन्नं वार्ताकुफलं घोषायाः क्षारजेन सलिलेन।
तद् घृतभृष्टं युक्तं गुडेनातृप्तितो योऽत्ति ॥३०॥
पिबति च नूनं तक्रं तस्याश्वेवातिवृद्धगुदजानि।
यान्ति विनाशं पुंसां सहजान्यपि सप्तरात्रेण ॥३१॥

१. कड़वी तोरई का क्षार, २. बैगनी रंग का बैगन तथा ३. घी-गुड़—एक मिट्टी के बर्तन में कड़वी तरोई क्षारीय जल भरकर

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उसमें आधा किलो मुलायम बैगन डालकर स्वेदन करें। सिद्ध हो जाने पर उसे निकालकर छिलका एवं डण्ठल निकालकर फेंक दें। एक कड़ाही में छिला हुआ सिद्ध बैगन और गुड़ मिलाकर भूनें, पुनः उसमें गुड़ मिलाकर हलवा जैसा बना लें। तदनन्तर अर्शरोग से पीड़ित व्यक्ति इस हलवे को आकण्ठ खाकर गोतक्र का पान करे। सात दिनों तक इसका प्रयोग करने के बाद अर्श निश्चय ही नष्ट हो जाता है।

२३. चन्दनादिक्वाथ

चन्दनकिराततिक्तकधन्वयवासाः सनागराः क्वथिताः ।
रक्तार्शसां प्रशमना दार्वीत्वगुशीरनिम्बाश्च ॥३२॥

१. लालचन्दन, २. चिरायता, ३. नीम की छाल, ४. शुण्ठी, ५. दारुहल्दी, ६. दालचीनी, ७. खस तथा ८. दुरालभा—सभी द्रव्य समभाग में लें। इन्हें यवकुट कर २० ग्राम लें और ३२० डे.ली. जल में रात्रिपर्यन्त भिंगोकर सुबह क्वाथ करें, चतुर्थांश रहने पर छान लें। प्रातः-सायं अर्श से पीड़ित व्यक्ति को यह क्वाथ पिलावें। दस दिन तक इसके प्रयोग से रक्तार्श नष्ट हो जाता है।

मात्रा—८० मि.ली.।

२४. पथ्यादिक्वाथ

पथ्योषणविडङ्गाग्नियमानीविश्वभेषजम् ।
कषायः शूलदुर्नामविबन्धाध्मानसूदनः ॥३३॥

१. हरीतकी, २. मरिच, ३. वायविडङ्ग, ४. चित्रकमूल, ५.अजवायन तथा ६. शुण्ठी—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट करें। २० ग्राम इस यवकुट चूर्ण को एक मिट्टी की हाँड़ी में रखें और १६ गुना पानी में रात्रिपर्यन्त भिगोवें। प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर उतारकर छान लें और अर्श, शूल, विबन्ध एवं आध्मान रोगी को प्रातः-सायं पिलावें। एक सप्ताह तक इस क्वाथ को पिलाने के बाद रोगी को लाभ होता है।

२५. चिरबिल्वादिक्वाथ

चिरबिल्वपुनर्नववह्न्यभया-
कणनागरसैन्धवसाधितकम् ।
गुदकीलभगन्दरगुल्महरं
जठराग्निविवर्द्धनमाशु नृणाम् ॥३४॥

१. करञ्ज, २. पुनर्नवा, ३. चित्रकमूल, ४. हरीतकी, ५. पीपर, ६. सोंठ और ७. सैन्धवनमक—सभी द्रव्य समभाग में लें। इन्हें यवकुट कर २० ग्राम लें और १६ गुना जल में पूर्ववत् क्वाथ करें। प्रातः-सायं इस क्वाथ को सेवन करने से अर्श, भगन्दर एवं गुल्म नष्ट हो जाते हैं और जाठराग्नि प्रदीप्त होती है।

२६. अर्शोघ्न क्षारसूत्र

भावितं रजनीचूर्णैः स्नुहीक्षीरे पुनः पुनः ।
बन्धनात् सुदृढं सूत्रं छिनत्त्यर्शो न संशयः ॥३५॥

१. हरिद्राचूर्ण २. थूहर का दूध एवं सूत्र—एक स्टील के बर्तन में स्नुहीक्षीर ५० मि.ली. एवं हरिद्राचूर्ण ५ ग्राम तथा वटा हुआ मजबूत धागा दस मीटर—इन तीनों को चौबीस घण्टे तक एक साथ रखकर छोड़ दें। एक सप्ताह तक इस तरह से थूहर के दूध एवं हरिद्राचूर्ण के घोल में उस धागे को पड़ा रहने दें किन्तु उसमें थूहर का दूध थोड़ा-थोड़ा प्रतिदिन डालते जायें। इसके बाद आँठवें दिन उस धागे को छाया में सुखाकर सुरक्षित किसी काचपात्र में रख लें। इसे ही क्षारसूत्र कहते हैं। इसके बाद अर्शरोगी के मशे को चिमटे आदि से खींचकर उक्त क्षारसूत्र से कसकर बाँध दे। निश्चित ही इस विधि से मस्से कट जाते हैं।

२७. लवणोत्तमादि चूर्ण

लवणोत्तमवह्निकलिङ्गयवान्
चिरबिल्वमहापिचुमर्दयुतान् ।
पिब सप्तदिनं मथितालुलितान्
यदि मर्दितुमिच्छसि पायुगदान् ॥३६॥

१. सैन्धवनमक, २. चित्रकमूल, ३. इन्द्रयव, ४. करञ्जत्वक् तथा ५. महानिम्ब (बकायन)—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें और कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। अर्श से पीड़ित रोगी को ३ से ५ ग्राम तक तक्र के साथ इस चूर्ण को देने से सात दिन में रोग से मुक्ति मिल जाती है।

२८. समशर्करचूर्ण

शुण्ठीकणामरिचनागदलत्वगेलं
चूर्णीकृतं क्रमविवर्द्धितमूर्ध्वमन्त्यात् ।
खादेदिदं समसितं गुदजाग्निमान्द्य-
कासारुचिश्वसनकण्ठहृदामयेषु ॥३७॥

१. शुण्ठी, २. पीपर, ३. मरिच, ४. नागकेशर, ५. तेजपत्र, ६. दालचीनी, ७. छोटी इलायची तथा ८. शर्करा। शुण्ठी एक भाग, पीपर दो भाग, मरिच तीन भाग, नागकेशर चार भाग, तेजपता पाँच भाग, दालचीनी छः भाग, छोटी इलायची सात भाग तथा शर्करा अट्ठाईस भाग—इन सभी द्रव्यों को एक साथ सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

उपयोग—अर्श, अग्निमान्द्य, कास, अरुचि, श्वास, कण्ठ-रोग और हृदयरोग में दोषानुसार अनुपान के साथ पाँच से दस ग्राम तक इस औषधि का सेवन करावें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२९. व्योषादिचूर्ण

व्योषाग्न्यरुष्करविडङ्गतिलाभयानां
चूर्णं गुडेन सहितं तु सदोपयोज्यम्।
दुर्नामकुष्ठगरशोथशकृद्विबन्धा-
नग्नेर्जयत्यबलतां कृमिपाण्डुतां च ॥३८॥

१. शुण्ठी, २. पीपर, ३. मरिच, ४. चित्रकमूल, ५. शुद्ध भिलावा, ६. विडङ्ग, ७. कालातिल और ८. हरीतकी—ये सभी द्रव्य समभाग में लें। उपर्युक्त सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। तीन से पाँच ग्राम तक इस चूर्ण को बराबर गुड़ के साथ मिलाकर खाने से अर्श, कुष्ठ, गरदोष (गरविष दोष), शोथ, कोष्ठबद्धता, अग्निमान्द्य, कृमिरोग और पाण्डुरोग नष्ट हो जाते हैं।

३०. चिरबिल्वादिचूर्ण

चिरबिल्वाग्निसिन्धूत्थनागरेन्द्रयवारलुम्।
तक्रेण पिबतोऽर्शांसि निपतन्त्यसृजा सह ॥३९॥

१. करञ्ज की छाल, २. चित्रकमूल, ३. सैन्धवनमक, ४. शुण्ठी, ५. इन्द्रयव तथा ६. सोनापाठात्वक्—ये सभी द्रव्य समभाग में लें। इन सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—३ से ५ ग्राम तक इस चूर्ण को तक्र के साथ पिलाने से रक्तार्श नष्ट हो जाता हैं।

३१. विजय चूर्ण

त्रिकत्रयवचाहिङ्गुपाठाक्षारनिशाद्वयम्।
चव्यतिक्ताकलिङ्गाग्निशताह्वालवणानि च ॥४०॥
ग्रन्थिबिल्वाजमोदाश्च गणोऽष्टाविंशतिर्मतः।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ४१॥
ततो द्विमाषप्रमितं पिबेदुष्णेन वारिणा।
एरण्डतैलयुक्तन्तु सदा लिह्यात्ततो नरः ॥४२॥
कासं हन्यात्तथा शोथमर्शांसि च भगन्दरम्।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च वातगुल्मं तथोदरम् ॥४३॥
हिक्काश्वासप्रमेहांश्च कामलां पाण्डुरोगताम्।
आमान्वयमुदावर्त्तमन्त्रवृद्धिं गुदक्रिमीन् ॥ ४४॥
अन्ये च ग्रहणीदोषा ये मया परिकीर्त्तिताः।
महाज्वरोपसृष्टानां भूतोपहतचेतसाम् ॥ ४५॥
अप्रजानान्तु नारीणां प्रजावर्द्धनमेव च।
विजयो नाम चूर्णोऽयं कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥४६॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. शुण्ठी, ५. पीपर, ६. मरिच, ७. दालचीनी, ८. तेजपत्ता, ९. छोटी इलायची, १०, चव, ११. शुद्ध हींग, १२. पाठा, १३. यवक्षार, १४. हल्दी, १५. दारुहल्दी, १६. चव्य, १७. कुटकी, १८. इन्द्रयव, १९. चित्रकमूल, २०. सौंफ, २१. सैन्धवनमक, २२. सामुद्रनमक, २३. सौवर्चललवण, २४. विड्लवण, २५. औद्भिल्लवण, २६. पीपरामूल, २७. बिल्वफलमज्जा तथा २८. अजमोदा—ये सभी द्रव्य समभाग में लें। इन्हें कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—२ से ४ ग्राम इस चूर्ण को उष्णोदक या एरण्ड तैल मिलाकर चाटने से सभी प्रकार के कास, शोथ, अर्श, भगन्दर, हृदयशूल, पार्श्वशूल, वातजगुल्म, उदररोग, हिक्का, श्वास, प्रमेह, कामला, पाण्डुरोग, आमदोष से युक्त उदावर्त्त, आन्त्रवृद्धि, कृमि और ग्रहणीरोग नष्ट हो जाते हैं। यह चूर्ण सन्निपात ज्वर से आक्रान्त तथा भूतादिकों के उपद्रवों से ग्रसित मनुष्यों के लिए हितकर है। बन्ध्यास्त्रियों के रजोदोष को दूर कर गर्भधारण में सहायक होता है। इस विजयचूर्ण को पुनर्वसु कृष्णात्रेय भगवान् ने कहा है।

विमर्श—त्रिकत्रय में त्रिजातक के स्थान पर त्रिमद (नागरमोथा, चित्रक, वायविडङ्ग) का उपयोग कुछ विद्वान् करते हैं। साथ ही यहाँ पर चित्रकमूल है अतः अग्नि शब्द से यहाँ शुद्ध भल्लातक लेना चाहिए।

३२. धतुरादिचूर्ण

धत्तूरस्य फलं पक्वं पिप्पलीनागराभयाः।
बालकं गुडसंयुक्तं भक्ष्यं गुञ्जाऽष्टकं निशि।
सितामध्वाज्यकर्षैकं पिबेत् पित्तार्शसां जये ॥४७॥

१. शुद्ध धत्तूरबीज, २. पीपर, ३. शुण्ठी, ४. हरीतकी, ५. सुगन्धबाला और ६. गुड़—गुड़ छोड़कर सभी द्रव्य समभाग में लें। सभी द्रव्यों का एक साथ सूक्ष्म चूर्ण कर लें और चूर्ण के बराबर गुड़ मिलाकर अच्छी तरह मर्दन कर लें। अथवा गुड़पाक कर चासनी कर वटिका बना लें। अर्श से पीड़ित रोगी को ८ रत्ती (एक ग्राम) चूर्ण, चीनी, मधु और घी १०-१० ग्राम मिलाकर खिलावें। इससे अर्शरोग नष्ट हो जाता है।

३३. कंकोलादिचूर्ण

कंक्कोलमेलातगरं नागरं नागकेशरम्।
जातीफलं च कर्पूरमुशीरं कृष्णजीरकम् ॥४८॥
लवङ्गं त्वक्पयः कृष्णागुरु नीलोत्पलं कणा।
चन्दनं च तुगाक्षीरी मांसी सर्वं समं समम् ॥ ४९॥
सञ्चूर्ण्य योजयेत्तत्र सितां चूर्णार्द्धभागिकीम्।
कंक्कोलाद्यमिदं चूर्णं तूर्णं वातार्शसां कृते ॥५०॥
पूर्णं शान्तिप्रदं चाधिचूर्णं संवर्णितं शुभम्।
त्रिदोषनाशनं रुच्यं तर्पणं वृष्यमुत्तमम् ॥५१॥
बलाधानं च विदधद्धृत्कटिजातमामयम्।
पीनसं कसनं हिक्कां यक्ष्माऽरुचिबलक्षयम् ॥ ५२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्रमेहं तमकश्वासं ग्रहणीमतिसारकम् ।
गुल्मादिकं निहन्त्येवमित्थमेवोपयोजितम् ॥५३॥

१. शीतल चीनी, २. छोटी इलायची, ३. तगर, ४. शुण्ठी, ५. नागकेशर, ६. जायफल, ७. कर्पूर, ८. खस, ९. कृष्ण जीरा, १०. लौंग, ११. दालचीनी, १२. सुगन्धबाला, १३. काला अगर, १४. नीलकमल, १५. पीपर, १६. श्वेतचन्दन, १७. वंशलोचन, १८. जटामांसी तथा १९. चीनी—एक से अठारह तक के सभी द्रव्य समभाग में लें और चीनी ९ भाग लें। शीतलचीनी से जटामांसी तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें और चीनी को भी पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इन सभी को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे कंकोलादि चूर्ण कहते हैं। इस चूर्ण को ३ से ६ ग्राम तक की मात्रा में प्रयोग करने से वातज अर्श शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। यह अर्श के लिए बहुत ही सुन्दर औषधि है। त्रिदोषनाशक तथा रुचिकर एवं तृप्तिकर है, उत्तम वृष्य है और बलप्रद है। कमर के नीचे की बीमारियों में यह चूर्ण लाभदायक है। इसके अतिरिक्त पीनस, कास, हिक्का, यक्ष्मा, अरुचि, निर्बलता, प्रमेह, तमकश्वास, संग्रहणी, अतिसार और गुल्म आदि रोग भी इसके प्रयोग से नष्ट होते हैं तथा निर्मल व्यक्ति भी बल को प्राप्त करता है।

मात्रा—३ से ६ ग्राम। **अनुपान**— रोगानुसार।

३४. वेल्लजादिचूर्ण

वेल्लजं सिन्धुजं कृष्णा जरणो विश्वभेषजम् ।
हरीतक्यामयव्रह्यदर्भाचित्रकरामठम् ॥५४॥
षड्ग्रन्था क्रिमिघ्नश्च सामान्येतानि यत्नतः ।
आदाय चूर्णयेद्वैद्यस्तत्र च द्विगुणं गुडम् ॥५५॥
संमिश्र्य भक्षयेन्माषद्वितयं त्वस्य नित्यशः ।
उष्णेन वारिणा वातजार्शसस्तेन निश्चितम् ॥५६॥
गुदाङ्कुरा वातजाता विलयं यान्ति तस्य हि ।
वेल्लजाद्यमिदं चूर्णमनुभूतं भिषग्वरैः ॥५७॥

१. मरिच, २. सैन्धवनमक, ३. पीपर, ४. सफेद जीरा, ५. शुण्ठी, ६. हरीतकी, ७. कूठ, ८. अजवायन, ९. चित्रकमूल, १०. शुद्ध हींग, ११. वच, १२. वायविडंग तथा १३. गुड़—मरिच से वायविडङ्ग तक सभी द्रव्य २०-२० ग्राम और गुड़ २४० ग्राम लें। गुड़ छोड़कर सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर सूखे गुड़ के साथ मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित कर रख लें। अथवा गुड़ की चासनी कर मोदक बना लें। २ ग्राम की मात्रा में उष्णोदक के साथ इस चूर्ण को खाने से निश्चित रूप से वातार्श एवं गुदांकुर नष्ट हो जाते हैं। यह वैद्यों द्वारा अनुभूत योग है।

मात्रा—२ ग्राम। **अनुपान**—उष्णोदक के साथ।

३५. सूरणपिण्डी (चक्रदत्त)

चूर्णीकृताः षोडश सूरणस्य
भागास्ततोऽर्द्धेन च चित्रकस्य ।
महौषधाद् द्वौ मरिचस्य चैक-
गुडेन दुर्नामजयाय पिण्डी ॥५८॥

१. सूरणचूर्ण १६ भाग, २. चित्रकमूलचूर्ण ८ भाग, ३. शुण्ठीचूर्ण २ भाग, ४. मरिचचूर्ण १ भाग तथा गुड़ ५४ भाग—इन सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। एक बड़े भगोने में गुड़ और थोड़ा जल देकर पाक करें। जब तीन-चार तार की चासनी हो जाय तो गुड़ उतारकर उपर्युक्त सभी चूर्णों को प्रक्षिप्त कर अच्छी तरह से मिला दें और ६ ग्राम की मात्रा में पिण्डी सदृश वटिका बनाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसे अर्शरोग से पीड़ित रोगी को खिलाने से अर्श नष्ट हो जाता है तथा रुचि बढ़ती है।

वर्ण—गुड़ सदृश। **स्वाद**—मधुर।

३६. भल्लातकादिमोदक

भल्लातकं तिलं पथ्या चूर्णं गुडसमन्वितम् ।
मोदकं भक्षयेन्माषत्रयं पित्तार्शसां जये ॥५९॥

१. शुद्ध भल्लातक, २. कालातिल, ३. शण्ठीचूर्ण और ४. गुड़—उपर्युक्त तीनों द्रव्य एक-एक भाग तथा गुड़ ६ भाग लें। सर्वप्रथम तीनों द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। स्टील के पात्र में गुड़ और जल देकर पाक करें, जब ३-४ तार की चासनी हो जाय तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तीनों चूर्णों का प्रक्षेप कर अच्छी तरह से मिलावें। ३-३ ग्राम का मोदक बनाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

मात्रा— ३ ग्राम। **अनुपान**—शीतल जल या तक्र के साथ। **वर्ण**—गुड़ सदृश। **स्वाद**—मधुर।

३७. नागरादिमोदक

सनागरारुष्करवृद्धदारकं
गुडेन यो मोदकमत्युदारकम् ।
अशेषदुर्नामकरोगदारकं
करोति वृद्धं सहसैव दारकम् ॥६०॥
चूर्णे चूर्णसमो देयो मोदके द्विगुणो गुडः ॥६१॥

१. शुण्ठीचूर्ण १ भाग, २. शुद्ध भिलावा १ भाग, ३. विधाराचूर्ण १ भाग तथा ४. गुड़ ६ भाग—उपर्युक्त तीनों द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें और एक स्टील के पात्र में गुड़ और थोड़ा जल डालकर पाक करें। ३-४ तार की चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से उतारकर द्रव्यों के चूर्ण को प्रक्षिप्त कर अच्छी तरह मिला लें और ३-३ ग्राम की मात्रा में मोदक बनाकर काचपात्र में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुरक्षित कर लें। एक-एक मोदक प्रातः-सायं शीतलजल से सेवन करने से सम्पूर्ण अर्श को नष्ट करता हैं और वृद्ध पुरुषों को मैथुन समर्थ बनाता है।

मात्रा—१-१ मोदक। **अनुपान**—शीतल जल एवं तक्र से। **वर्ण**—गुड़ सदृश। **स्वाद**—मधुर।

३८. अगस्तिमोदक (चक्रदत्त)

हरीतकीनां त्रिपलं त्रीण्याम्राणि कटुत्रिकम् ।
त्वक् पत्रकं चार्द्धपलं गुडस्याष्टपलं मतम् ॥६२॥
अगस्तिमोदकानेतान् कल्पितान् परिभक्षयेत् ।
शोफार्शोग्रहणीदोषकासोदावर्त्तनाशनान् ॥६३॥

१. हरीतकी १४० ग्राम, २. शुण्ठी ४६ ग्राम, ३. मरिच ४६ ग्राम, ४. पीपर ४६ ग्राम, ५. दालचीनी २३ ग्राम, ६. तेजपत्ता २३ ग्राम और ७. गुड़ ३७५ ग्राम लें। गुड़ छोड़कर सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। स्टील के पात्र में गुड़ एवं थोड़ा जल मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। २ या ३ तार की चासनी होने पर चूल्हे से नीचे उतारकर इन चूर्णों का अच्छी तरह प्रक्षेप मिलाकर ६-६ ग्राम का मोदक बना लें। इसे अगस्तिमोदक कहते हैं।

रोगानुसार १ से २ मोदक खाने से शोथ, अर्श, संग्रहणी, कास एवं उदावर्त्त रोग नष्ट हो जाता हैं।

मात्रा—१ से २ मोदक। **अनुपान**—उष्णोदक या तक्र से। **वर्ण**—गुड़ सदृश। **स्वाद**—मधुर। **रस**—कषाय, कटु।

३९. स्वल्पसूरणमोदक (चक्रदत्त)

मरिचमहौषधचित्रकशूरणभागा यथोत्तरं द्विगुणाः ।
सर्वसमो गुडभागः सेव्योऽयं मोदकः सिद्धफलः ॥६४॥
ज्वलनं ज्वलयति जाठरमुन्मूलयति गुल्मशूलगदान् ।
निःशेषयति श्लीपदमवश्यमर्शांसि नाशयत्याशु ॥६५॥

१. मरिच १ भाग, २. शुण्ठी २ भाग, ३. चित्रकमूल ४ भाग, ४. सूरण ८ भाग तथा ५. गुड़ १५ भाग लें। सूरण को पीसें और सुखाकर चूर्ण कर लें। अन्य सभी द्रव्यों का भी सूक्ष्म चूर्ण कर लें। एक स्टील पात्र में गुड़ और थोड़ा जल लेकर गुड़ का पाक करें। ५-६ तार की चासनी होने पर चूल्हे से उतारकर सभी द्रव्यों का प्रक्षेप देकर तथा अच्छी तरह से मिला लें और ६ ग्राम की मात्रा में मोदक बना लें। १ से २ मोदक प्रतिदिन उष्णोदक से खाने पर जाठराग्नि की वृद्धि होती हैं; उदररोग, गुल्म, शूल, श्लीपद और अर्शरोग निश्चित ही नष्ट हो जाते हैं। विशेषकर सभी प्रकार के अर्शों को यह निश्चित रूप से नष्ट करता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—उष्णोदक। **औषध का वर्ण**—गुड़ सदृश। **स्वाद**—मधुर एवं कटु।

४०. बृहच्छूरणमोदक (चक्रदत्त)

शूरणषोडशभागा वह्नेरष्टौ महौषधस्यातः ।
अर्द्धेन भागयुक्तिर्मरिचस्य ततोऽपि चार्द्धेन ॥६६॥
त्रिफला कणा समूला तालीशारुष्करकृमिघ्नानाम्
भागा महौषधसमा दहनांशा तालमूली च ॥६७॥
भागः शूरणतुल्यो दातव्यो वृद्धदारकस्यापि ।
भृङ्गैले मरिचांशे सर्वाण्येकत्र सञ्चूर्ण्य ॥६८॥
द्विगुणेन गुडेन युतः सेव्योऽयं मोदकः प्रकामघनैः ।
गुरुवृष्यभोज्यरहितेष्वितरेषूपद्रवं कुर्यात् ॥६९॥
भस्मकमनेन जनितं पूर्वमगस्त्यस्य योगराजेन ।
भीमस्य मारुतेरपि येन हि तौ महाशनौ जातौ ॥७०॥
अग्निबलवृद्धिहेतुर्न केवलं शूरणो महावीर्यः ।
प्रभवति – शस्त्रक्षाराग्निभिर्विनाऽप्यर्शसामेषः ॥७१॥
श्वयथुश्लीपदगरजिद् ग्रहणीं हिक्कां सदाऽनिलजाम् ।
नाशयति वलीपलितं मेधां कुरुते वृषत्वं च ॥७२॥
हिक्कां श्वासं कासं सराजयक्ष्मप्रमेहांश्च ।
प्लीहानञ्चाप्युग्रं हन्तीति रसायनं पुंसाम् ॥७३॥

१. सूरणकन्दचूर्ण १६ भाग, २. चित्रकमूलचूर्ण ८ भाग, ३. शुण्ठीचूर्ण ४ भाग, ४. मरिचचूर्ण २ भाग, ५. त्रिफलाचूर्ण ४ भाग, ६.पीपर ४ भाग, ७. पिपरामूल ४ भाग, ८. तालीशपत्र ४ भाग, ९. शुद्ध भिलावा ४ भाग, १०. वायविडङ्ग ४ भाग, ११. सफेद मुशली ८ भाग, १२. विधारा १६ भाग, १३ दालचीनी २ भाग, १४. छोटी इलायची २ भाग तथा १५. गुड़ १६४ भाग लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। स्टील के पात्र में गुड़ और थोड़ा जल डालकर पाक करें। ३-४ तार की चासनी होने पर उतारकर रख लें तथा इन सभी सूक्ष्म चूर्णों का प्रक्षेप करके अच्छी तरह से मिला कर ६-६ ग्राम की वटी बनाकर सुरक्षित रूप से काचपात्र में रख लें। यह औषध धनवानों के सेवन करने योग्य है। क्योंकि इसके सेवन में गुरु, वृष्य और स्निग्ध भोजन आवश्यक है अन्यथा उपद्रवकारक है। पूर्व काल में महर्षि अगस्त्य, हनुमान्, भीमादि इसके सेवन से भस्मक रोग से युक्त हो गये थे अर्थात् उन्हें अत्यन्त बुभुक्षा हो गयी थी। यह सिर्फ बुभुक्षोत्पादक ही नहीं है अपितु शस्त्र, क्षार एवं अग्नि कर्म के बिना ही अर्श-रोग को समूल नष्ट कर देता है। यह सूरणमोदक शोथ, श्लीपद, दूषीविष, संग्रहणी, हिक्का, वली-पलितरोग, श्वास, कास, राजयक्ष्मा, प्रमेह और प्लीहोदर को नष्ट करता है। यह रसायन एवं वृष्य है।

मात्रा—६ ग्राम। **अनुपान**—शीतल जल, उष्ण जल एवं तक्रादि से। **वर्ण**—गुड़ सदृश। **स्वाद**— मधुर। **रस**—कटु।

४१. काङ्कायनमोदक (चक्रदत्त)

पथ्या पञ्चपलान्येकमजाज्या मरिचस्य च ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागराः ॥७४॥
पलाभिवृद्ध्या क्रमशो यवक्षारपलद्वयम्।
भल्लातकपलान्यष्टौ कन्दस्तु द्विगुणो मतः ॥७५॥
द्विगुणेन गुडेनैषां वटकाञ् शाणसम्मितान्।
कृत्वैनं भक्षयेत् प्रातस्तक्रमम्भोऽनु वा पिबेत् ॥७६॥
मन्दाग्निं दीपयत्येव ग्रहणीपाण्डुरोगनुत्।
काङ्कायनेन शिष्येभ्यः शस्त्रक्षाराग्निभिर्विना।
भिषग्जितमिति प्रोक्तं श्रेष्ठमर्शोविकारिणाम् ॥७७॥

१. हरीतकी ५ भाग, २. श्वेतजीरा १ भाग, ३. मरिच १ भाग, ४. पीपर १ भाग, ५. पिपरामूल २ भाग, ६. चव्यमूल ३ भाग, ७. चित्रकमूल ४ भाग, ८. शुण्ठी ५ भाग, ९. यवक्षार २ भाग, १०. शुद्ध भिलावा ८ भाग ११. सूरणकन्द ६४ भाग तथा १२. गुड़ १२८ भाग लें। सर्वप्रथम हरीतकी से शुद्ध भल्लातक एवं सूरणकन्द का निर्दिष्ट मात्रा में चूर्ण कर लें। तदनन्तर स्टेनलेन स्टील में गुड़ की चासनी करें। ४-५ तार (लड्डू) की चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर उपर्युक्त औषधों के चूर्ण का प्रक्षेप देकर अच्छी तरह से मिला लें और ३ ग्राम की गुटिका बनाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसे आचार्य कांकायन ने अपने शिष्यों को अर्श की शस्त्र, क्षार, अग्नि के बिना चिकित्सा हेतु कहा था। इससे ग्रहणी, अग्निमान्द्य, पाण्डु आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—३ ग्रा., **अनुपान**—तक्र या जल। **मात्र**— ३ ग्राम। **स्वाद**—मीठा एवं चरपरा। **वर्ण**—गुड़ जैसा।

४२. मणिभद्रमोदक (चक्रदत्त)

विडङ्गसारामलकाभयानां
पलं पलं स्यात् त्रिवृतात्रयञ्च।
गुडस्य षड् द्वादशभागयुक्ता
विमर्द्य सम्यग् गुडिका विधेया ॥७८॥
निवारणे यक्षवरेण सृष्टः
स माणिभद्रः किल शाक्यभिक्षवे।
अयं हि कासक्षयकुष्ठनाशनो
भगन्दरप्लीहजलोदरार्शसाम्।
यथेष्टचेष्टान्नविहारसेवी
अनेन वृद्धस्तरुणो भवेच्च ॥७९॥

१. वायविडङ्ग १ भाग, २. आमला १ भाग, ३, हरीतकी १ भाग, ४. त्रिवृत् ३ भाग तथा ५. गुड़ ६ भाग लें। उपर्युक्त तीनों द्रव्य निर्दिष्ट मात्रा में चूर्ण कर लें और एक स्टेनलेस स्टील पात्र में गुड़ एवं थोड़ा जल देकर आग पर चासनी करें। जब ३-४ तार की चासनी बन जाय तो स्टीलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर उपर्युक्त प्रक्षेप आदि द्रव्य डालकर अच्छी तरह से मिला लें। बाद में १०-१० ग्राम की गुटिका बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे मणिभद्र नामक यक्ष ने 'शाक्य भिक्षु' के लिए अर्शरोग नाशनार्थ निर्मित किया था। इसके प्रयोग से कास, क्षय, कुष्ठ, भगन्दर, प्लीह, जलोदर एवं अर्शरोग नष्ट हो जाते हैं। यथोचित आहार-विहारादि से युक्त इस औषध को सेवन करने से वृद्ध युवा हो जाता है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—तक्र एवं जल से। **उपयोग**—अर्श, मन्दाग्नि, भगन्दर आदि रोग में। **स्वाद**—मीठा। **वर्ण**—गुड़ जैसा।

४३. प्राणदा गुटिका (चक्रदत्त)

त्रिपलं शृङ्गवेरस्य चतुर्थं मरिचस्य च।
पिप्पल्याः कुडवार्द्धञ्च चव्यस्य पलमेव च ॥८०॥
तालीशपत्रस्य पलं पलार्द्धं केशरस्य च।
द्वे पले पिप्पलीमूलादर्द्धकर्षञ्च पत्रकात् ॥८१॥
सूक्ष्मैलाकर्षमेकञ्च कर्षं च त्वग्मृणालयोः।
गुडात्पलानि त्रिंशच्च चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥८२॥
अक्षप्रमाणा गुडिका प्राणदेति प्रकीर्त्तिता।
पूर्वं भक्ष्या च पश्चाच्च भोजनस्य यथाबलम् ॥८३॥
मद्यं मांसरसं यूषं क्षीरं तोयं पिबेदनु।
हन्यादर्शांसि सर्वाणि सहजान्यस्त्रजान्यपि ॥८४॥
वातपित्तकफोत्थानि सन्निपातोद्भवानि च।
पानात्यये मूत्रकृच्छ्रे वातरोगे गलग्रहे ॥८५॥
विषमज्वरे च मन्देऽग्नौ पाण्डुरोगे तथैव च।
कृमिहृद्रोगिणाञ्चैव गुल्मशूलार्त्तिशालिनाम् ॥८६॥
श्वासकासपरीतानामेषा स्यादमृतोपमा।
शुण्ठ्याः स्थानेऽभया देया विड्ग्रहे पित्तपायुजे ॥८७॥
प्राणदेयं सिता देया चूर्णमानाच्चतुर्गुणा।
अम्लपित्ताग्निमान्द्यादौ प्रयोज्या गुदजातुरे ॥८८॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं व्याधौ श्लेष्मभवे पलम्।
पलद्वयन्त्वनिलजे पित्तजे तु पलत्रयम् ॥८९॥
पक्त्वैनं गुडिका कार्या गुडेन सितयाऽथवा।
परं हि वह्निसंसर्गाल्लघिमानं भजन्ति ताः ॥९०॥

१. शुण्ठी ३ भाग, २. मरिच ४ भाग, ३. पीपर २ भाग, ४. चव्य १ भाग, ५. तालीशपत्र १ भाग, ६. नागकेशर $\frac{१}{२}$ भाग, ७. पिपरामूल २ भाग, ८. तेजपत्ता $\frac{१}{८}$ भाग, ९. छोटी इलायची $\frac{१}{४}$ भाग, १०. दालचीनी $\frac{१}{४}$ भाग, ११. खस $\frac{१}{४}$ भाग, १२. गुड़ ३० भाग लें। उपर्युक्त सभी ११ द्रव्य निर्दिष्ट मात्रा में लेकर कूटें और सूक्ष्म चूर्ण करें। ततः एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में गुड़ और थोड़ा जल देकर चूल्हे पर चासनी करें। ३-४ तार की (लड्डू बनाने) चासनी हो जाने पर चूल्हे से पात्र को नीचे उतार कर सभी चूर्ण का प्रक्षेपण कर अच्छी तरह मिला लें और १०-१० ग्राम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

की गुटिका बनाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस प्राणदागुटिका को यथादोष एवं अग्नि-बलानुसार मद्य, मांसरस, यूष, दूध एवं जल अनुपान रूप में सेवन करें। इससे सभी प्रकार के अर्श, सहजार्श एवं रक्तार्श, वात-पित्त-कफ, एवं सन्निपातज अर्श नष्ट हो जाते हैं। पानात्यय, मूत्रकृच्छ्र, वातरोग, गलग्रह, विषमज्वर, मन्दाग्नि, पाण्डु, कृमि, हृदयरोग, गुल्म, शूल, श्वास और कास से युक्त रोगियों के लिए यह अमृत जैसा है। पित्तज अर्श एवं विबन्धता में शुण्ठी के स्थान पर हरीतकी देना चाहिए। गुड़ के स्थान पर सम्पूर्ण चूर्ण से चौगुनी शर्करा (चीनी) मिलाकर चासनी कर गुटिका बनाकर पित्तज अर्श, अम्लपित्त एवं अग्निमान्द्य के रोगी में प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा—कफरोग में १ पल, वातरोग में २ पल एवं पित्तरोग में ३ पल अनुपान देना चाहिए। **सामान्य मात्रा**—१० ग्राम। **अनुपान**—मद्य, मांसरस, यूष, दूध एवं जल से। **स्वाद**—मीठा। **वर्ण**—गुड़ जैसा।

४४. नागार्जुनयोग (चक्रदत्त)

त्रिफला पञ्चलवणं कुष्ठं कटुकरोहिणी।
देवदारु विडङ्गानि पिचुमर्दफलानि च ॥९१॥
बला चातिबला चैव हरिद्रे द्वे सुवर्चला।
एतत्सम्भृतसम्भारं करञ्जत्वग्रसेन च ॥९२॥
पिष्ट्वा च गुडिका कृत्वा बदरास्थिसमां बुधः।
एकैकां तां समुद्धृत्य रोगे रोगे पृथक् पृथक् ॥९३॥
उष्णेन वारिणा पीता शान्तमग्निं प्रदीपयेत्।
अर्शांसि हन्ति तक्रेण गुल्ममम्लेन निर्हरेत् ॥९४॥
जन्तुदष्टं तु तोयेन त्वग्दोषं खदिराम्बुना।
मूत्रकृच्छ्रन्तु तोयेन हृद्रोगं तैलसंयुता ॥९५॥
इन्द्रस्वरससंयुक्ता सर्वज्वरविनाशिनी।
मातुलुङ्गरसेनाथ सद्यः शूलहरी स्मृता ॥९६॥
कपित्थबिन्दुकानान्तु रसेन सह मिश्रिता।
विषाणि हन्ति सर्वाणि पानाशनप्रयोगतः ॥९७॥
गोशकृद्रससंयुक्ता हन्यात् कुष्ठानि सर्वशः।
श्यामाकषायसहिता जलोदरविनाशिनी ॥९८॥
भक्तच्छन्दं जनयति भुक्तस्योपरि भक्षिता।
अक्षिरोगेषु सर्वेषु मधुनाऽऽघृष्य चाञ्जयेत् ॥९९॥
लेहमात्रेण नारीणां सद्यः प्रदरनाशिनी।
व्यवहारे तथा द्यूते संग्रामे मृगयाऽऽदिषु।
समालभ्य नरो ह्येनां क्षिप्रं विजयमाप्नुयात् ॥१००॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. सैन्धवनमक, ५. सामुद्रनमक, ६. कालानमक, ७. विड्लवण, ८. औद्भिल्लवण, ९. कूठ १०. कुटकी, ११ देवदारु, १२. विडङ्ग, १३. नीम का बीज, १४. बलामूल, १५. अतिबलामूल, १६. हल्दी, १७. दारुहल्दी, १८. हुरहुर (सौवर्चला) तथा १९. करञ्जत्वग् रस की भावना—ये सभी १८ द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें कूट-पीस कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और करञ्जत्वग् रस की भावना देकर सिल पर अच्छी तरह पीसें तथा १-१ ग्राम की गुटिका बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसे विभिन्न अनुपान से विभिन्न रोगों में प्रयोग करें। उष्णोदक से इस वटिका को लेने से मन्दाग्नि प्रदीप्त होती है।

प्रयोग—अर्शरोग में तक्र से, गुल्म में निम्बुस्वरस से, विषैले प्राणी के काटने में जल से, त्वग्रोग में खदिरक्वाथ से, मूत्रकृच्छ्र में जल से, हृदयरोग में तिलतैल से, सर्वज्वर में वर्षाम्बु से, शूल में मातुलुङ्गस्वरस से, विषबाधा में कपित्थ एवं तिन्दुकस्वरस से, सभी प्रकार के कुष्ठ में गोबर रस से, जलोदर में अनन्तमूलक्वाथ से लेना चाहिए। भोजनोपरान्त इसके सेवन से शीघ्र ही भूख पैदा करता है। सभी प्रकार के नेत्र रोगों में इस गुटिका को मधु के साथ घिसकर अञ्जन करने से नेत्रबाधा दूर होती है। इसके सेवन से स्त्रियों के सभी प्रकार के प्रदर नष्ट हो जाते हैं। जूआ, मुकद्दमा एवं शिकार पर जाने से पूर्व इसके सेवन (धारण) से विजय-प्राप्ति होती है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—उष्णोदक, वर्षाम्बु, निम्बुस्वरस, मधु, तिलतैल, गोबररस, खदिर क्वाथ, अनन्तमूल क्वाथ। **स्वाद**—कटु। **वर्ण**—खारकी रंग का।

४५. कुटजावलेह (चक्रदत्त)

कुटजत्वक् पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत्।
अष्टभागावशिष्टन्तु कषायमवतारयेत् ॥१०१॥
वस्त्रपूतं पुनः क्वाथं पचेल्लेहत्वमागतम्।
भल्लातकं विडङ्गानि त्रिकटुत्रिफले तथा ॥१०२॥
रसाञ्जनं चित्रकञ्च कुटजस्य फलानि च।
वचामतिविषां बिल्वं प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥१०३॥
गुडात्पलानि त्रिंशच्च चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत्।
मधुनः कुडवं दद्याद् घृतस्य कुडवं तथा ॥१०४॥
एष लेहः शमयति चार्शो रक्तसमुद्भवम्।
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
ये च दुर्नामजा रोगास्तान् सर्वान्नाशयत्यपि।
अम्लपित्तमतीसारं पाण्डुरोगमरोचकम् ॥१०६॥
ग्रहणीमार्दवं कार्श्यं श्वयथुं कामलामपि।
अनुपानं घृतं दद्यान्मधु तक्रं जलं पयः ॥१०७॥
रोमानीकविनाशाय कौटजो लेह उत्तमः ॥१०८॥

कुटजत्वक् ५ किलो तथा जल १३ लीटर। १. शुद्ध भिलावा, २. विडङ्ग, ३. शुण्ठी, ४. पीपर, ५. मरिच, ६. आमला, ७.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

हरीतकी, ८. बहेड़ा, ९. रसाञ्जन, १०. चित्रकमूल, ११. इन्द्रयव, १२. वच, १३ अतीस, १४. बिल्वफलमज्जा, १५. गुड़, १६. मधु और १७. घी—शुद्ध भल्लातक से बिल्वफलमज्जा तक के सभी १४ द्रव्य ४६-४६ ग्राम लें, गुड़ ३० पल = १४०० ग्राम तथा घी एवं मधु प्रत्येक १८७ ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम कुटजत्वक् को यवकुट कर एक बड़े स्टीलपात्र में रात्रिपर्यन्त जल में भिगावें। किन्तु यहाँ जल की मात्रा कम बतलायी गयी है, सम्यक् क्वाथ के लिए ४ गुना (२० लीटर) जल देना ही चाहिए। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें और एक साफ स्टेनलेस स्टील पात्र में उक्त क्वाथ को रखकर गुड़ मिलाकर पुनः अच्छी तरह से छान लें और मध्यमाग्नि पर पाक करें। आसन्न पाक (२ तार की चासनी) हो जाने पर पात्र नीचे उतार लें। कुछ ठण्डा होने पर शुद्ध भिलावा से बिल्वफलमज्जा पर्यन्त सभी १४ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण प्रक्षेप रूप में उसमें मिला दें। इसके बाद गोघृत मिला दें तथा शीतल होने पर मधु मिलाकर छोटे-छोटे काचपात्रों में (५०० ग्राम के लगभग) भरकर ढक्कन लगाकर सुरक्षित कर लें।

उपयोग—रक्तार्श, वातज, पित्तज, कफज एवं सन्निपातज आदि जितने प्रकार के अर्श हैं, उन्हें यह अवलेह नाश करता है। इसके अतिरिक्त अम्लपित्त, अतिसार, पाण्डु, अरुचि, संग्रहणी, दुर्बलता, शोथ और कामला रोग भी इसके प्रयोग से नष्ट होते हैं। रोगसमूह को नष्ट करने के लिए कटुजावलेह उत्तम औषधि है।

अनुपान—इस अवलेह का सेवन करने के बाद अनुपान रूप में घृत, मधु, तक्र, जल एवं दूध रोगानुसार लेना चाहिए। **स्वाद**—मीठा। **अनुरस**—कटु। **वर्ण**— गुड़ जैसा (राब जैसा)। **मात्रा**—५ से १० ग्राम।

४६. कुटजरसक्रिया (चक्रदत्त)

कुटजत्वचो विपाच्यं शतपलमार्द्रं महेन्द्रसलिलेन।
यावत्स्यादरसं तद् द्रव्यं स रसस्ततो ग्राह्यः ॥१०९॥
मोचरसः ससमङ्गः फलिनी च वलांशिभिस्त्रिभिस्तैश्च।
वत्सकबीजं तुल्यं चूर्णीकृतमत्र दातव्यम् ॥११०॥
पूतोत्क्वथितः सान्द्रः सरसो दर्वीप्रलेपनो ग्राह्यः।
मात्राकालोपहितारसक्रियैषा जयत्यसृक्स्रावम् ॥१११॥
छगलीपयसा युक्ता पेता मण्डेन वा यथाग्निबलम्।
जीर्णौषधश्च शालीन् पयसा छागेन भुञ्जीत ॥११२॥
रक्तार्शास्यतिसारं शूलं सासृग्रुजो निहन्त्याशु।
बलवच्च रक्तपित्तं रसक्रियैषा ह्युभयभागम् ॥११३॥

१. कुटजत्वक् ५ किलो., २. वर्षा का जल २० लीटर, ३. मोचरस ४६ ग्राम, ४. मंजीठ ४६ ग्राम, ५. प्रियंगुफूल ४६ ग्राम तथा ६. इन्द्रयव १४० ग्राम लें—इन सभी द्रव्यों को यवकुट कर रात्रिपर्यन्त एक बड़े पात्र में रखकर जल में भींगने दें। सुबह मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें, अष्टामांशावशेष रहने पर कपड़े से छानकर पात्र को साफ कर धो लें। पुनः उस क्वाथ को उसी पात्र में रख कर पाक करें। मधु के जैसा गाढ़ा होने पर तथा जब कलछी में चिपकने लगे तो उतारकर काचपात्र में संग्रहीत कर सुरक्षित कर लें।

उपयोग— रोगी की अवस्था, समय, रोग की उग्रता, रोगी के बल आदि को ध्यान में रखकर इस रसक्रिया का प्रयोग करें। इसके प्रयोग से रक्तार्श, रक्तातिसार, शूल, असाध्य एवं बलवान् तथा उभयग रक्तपित्त नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२ से ५ ग्राम तक। **अनुपान**—बकरी के दूध से। **पथ्य**—औषध के जीर्ण हो जाने पर तथा भूख लगने पर बकरी के दूध से साठी चावल का भात खिलाना चाहिए। **वर्ण**—कृष्णाभ एवं अर्धघन रूप। **स्वाद**—तिक्त रस।

४७. दशमूलगुड़

दशमूलाग्निदन्तीनां प्रत्येकं पलपञ्चकम्।
जलद्रोणेन संक्वाथ्य पादशेषे समुद्धरेत् ॥११४॥
गुडं पलशतञ्चैव सिद्धे शीते विमिश्रयेत्।
त्रिवृताया रजःप्रस्थं तदर्द्धं पिप्पलीरजः ॥११५॥
घृतभाण्डे स्थितं खादेत् कर्षमात्रं दिने दिने।
दशमूलगुडः ख्यातः शमयेदर्श आमयम्।
अजीर्णं पाण्डुरोगञ्च सर्वरोगहरं परम् ॥११६॥

१. दशमूल (सम्मिलित) २५० ग्राम, २. चित्रकमूल २५० ग्राम, ३. दन्तीमूल २५० ग्राम, ४. जल १३ लीटर, ५. गुड़ ५ कि., ६. त्रिवृत् चूर्ण ७५० ग्रा. तथा ७. पिप्पलीचूर्ण ३७५ ग्रा.।

उपर्युक्त तीनों द्रव्यों (दशमूल, चित्रक, दन्तीमूल) को यवकुट कर एक बड़े पात्र में रखें और १३ ली. जल देकर रात्रिपर्यन्त भींगने दें। सुबह मध्यमाग्नि युक्त चूल्हे पर चढ़ाकर पाक करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें और पात्र को साफ कर उसी पात्र में क्वाथ तथा ५ कि. गुड़ मिलाकर पुनः पाक करें। गुड़ घुल जाने पर पुनः उसे कपड़े से छानकर पात्र धो लें और उसी पात्र में उसे रखकर पुनः पाक करें। २ से ३ तार की चासनी होने पर पाक की परीक्षा कर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर थोड़ा ठण्डा होने पर त्रिवृत् चूर्ण तथा पिप्पली चूर्ण का प्रक्षेप देकर अच्छी तरह से मिलाकर काचपात्र में संगृहीत करें।

मात्रा—६ से १२ ग्राम तक। **अनुपान**—गोदुग्ध एवं जल से। **उपयोग**—अर्श, अजीर्ण, पाण्डु एवं अनुपान भेद से सर्व रोगनाशक है। **स्वाद**—मीठा एवं अनुरस कटु रस युक्त है। **वर्ण**—राब (गुड़) जैसा कृष्णाभ है।

४८. बाहुशालगुड़ (चक्रदत्त)

त्रिवृत्तेजोवती दन्ती श्वदंष्ट्रा चित्रकं शटी।
गवाक्षी मुस्तविश्वाह्वविडङ्गानि हरीतकी ॥११७॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पलोन्मितानि चैतानि पलान्यष्टावरुष्करात्।
षट्पलं वृद्धदारस्य शूरणस्य च षोडश ॥११८॥
जलद्रोणद्वये क्वाथ्यं चतुर्भागावशेषितम्।
पूतन्तु तं रसं भूयः क्वाथेभ्यस्त्रिगुणो गुडः ॥११९॥
लेहं पचेत्तु तं तावद्यावद्दर्वीप्रलेपनम्।
अवतार्य ततः पश्चाच्चूर्णानीमानि दापयेत् ॥१२०॥
त्रिवृत्तेजोवतीकन्दचित्रकान् द्विपलांशिकान्।
एलात्वङ्मरिचञ्चापि गजाह्वां चापि षट्पलाम् ॥१२१॥
द्वात्रिंशत्पलमेवात्र चूर्णं दत्त्वा निधापयेत्।
ततो मात्रां प्रयुञ्जीत जीर्णे क्षीररसाशनः ॥१२२॥
पञ्चगुल्मान् प्रमेहांश्च पाण्डुरोगं हलीमकम्।
जयेदर्शांसि सर्वाणि तथा सर्वोदराणि च ॥१२३॥
दीपयेद् ग्रहणीं मन्दां यक्ष्माणमपकर्षति।
पीनसे च प्रतिश्याये चाढ्यवाते तथैव च ॥१२४॥
अयं सर्वगदेष्वेव कल्याणो लेह उत्तमः।
दुर्नामारिरयञ्चाशु दृष्टो वारसहस्रशः ॥१२५॥
भवन्त्येनं प्रयुञ्जानाः शतवर्षं निरामयाः।
आयुषो दैर्घ्यजननो वलीपलितनाशनः ॥१२६॥
रसायनवरश्चैव मेधाजनन उत्तमः।
गुडः श्रीबाहुशालोऽयं दुर्नामारिः प्रकीर्त्तितः ॥१२७॥

१. त्रिवृत्मूल, २. चव्य, ३. दन्तीमूल, ४. गोक्षुर, ५. चित्रकमूल, ६. कचूर, ७. इन्द्रायण, ८. नागरमोथा, ९. शुण्ठी, १०. विडङ्ग और ११. हरीतकी— प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम; १२. शुद्ध भिलावा ४०० ग्राम, १३. विधारा ३०० ग्राम, १४. सूरण ८०० ग्राम; क्वाथार्थ जल २६ लीटर—चतुर्थांशावशेष क्वाथ ६ ली. ५० डे.ली.; १५. गुड़ १९ कि. ५० ग्राम., १६. त्रिवृत्मूल चूर्ण ९३ ग्राम, १७. सूरणकन्द चूर्ण ९३ ग्राम, १८. चव्य चूर्ण ९३ ग्राम, १९. चित्रकमूल चूर्ण ९३ ग्राम, २०. छोटी इलायची चूर्ण २८० ग्राम, २१. दालचीनी चूर्ण २८० ग्राम, २२. मरिच चूर्ण २८० ग्राम तथा २३. गजपीपर चूर्ण २८० ग्राम लें। इस प्रकार सभी प्रक्षेप द्रव्यों के चूर्ण ३२ पल (१५००ग्राम)। उपर्युक्त त्रिवृत् से हरीतकी पर्यन्त सभी ११ द्रव्यों का यवकुट चूर्ण कर एक बड़े स्टील के पात्र में रखकर २६ लीटर जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिगोवें। प्रातः चूल्हे पर चढ़ाकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। अब क्वाथ से ३ गुना गुड़ मिलाकर पाक करें। क्वाथ में गुड़ घुल जाने पर पुनः उसे कपड़े से छान लें और पात्र को भी साफ कर पुनः उसी में पाक करें। २ से ३ तार की चासनी की पाक-परीक्षा कर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर ठण्डा होने पर त्रिवृत् चूर्ण से गजपीपर चूर्ण तक के सभी ८ द्रव्यों का चूर्ण प्रक्षेप रूप में मिलाकर कलछी से अच्छी तरह से मिला लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध के साथ।

उपयोग—अर्शरोग में—इसे दुर्नामारि गुड़ भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त ५ प्रकार के गुल्म, प्रमेह, पाण्डु, हलीमक, सभी प्रकार के अर्श, उदररोग, संग्रहणी, मन्दाग्नि, यक्ष्मा, पीनस, प्रतिश्याय और वातरक्त नाशक है। हजारों बार के प्रयोग के बाद इसे अर्शरोगशत्रु दुर्नामारि समझा गया है। इसके प्रयोग के बाद मनुष्य निरोग रहते हुए शतायु जीवित रहता है। यह दीर्घायुजनक है, वली-पलित नाशक है, रसायनों में श्रेष्ठ है तथा उत्तम मेध्य है। इस बाहुशाल गुड़ को दुर्नामारि गुड़ भी कहते हैं।

वर्ण—गुड़ाभ कृष्णाभ वर्ण का। **स्वाद**—मधुर। **अनुरस**—कटु।

गुडपाकपरीक्षा (चक्रदत्त)

सुखमर्दः खरस्पर्शो गन्धवर्णरसान्वितः।
पीडितो भजते मुद्रां गुडः पाकमुपागतः ॥१२८॥

अच्छी तरह पाक-सम्पन्न गुड़ आसानी से सुखपूर्वक दबाया जा सकता है स्पर्श करने में अँगुलियों में मृदुता मालूम पड़ती है, गुड़पाक में सुगन्धी आने लगती है एवं उपयुक्त रस तथा रस की उत्पत्ति होती है। सम्पन्न गुड़पाक को हाथों की अँगुलियों से दबाने पर अंगुली की रेखा दिखाई पड़ती है। इन लक्षणों से युक्त होने पर सम्यग् गुड़पाक समझना चाहिए।

४९. भल्लातकगुड-१ (चक्रदत्त)

भल्लातकसहस्रे द्वे जलद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषे रसे तस्मिन् पचेद् गुडतुलां भिषक् ॥१२९॥
भल्लातकसहस्रार्द्धं छित्त्वा तत्र प्रदापयेत्।
सिद्धेऽस्मिंस्त्रिफलाव्योषयमानीमुस्तसैन्धवम् ॥१३०॥
कर्षांशसंमितं दद्यात् त्वगेलापत्रकेशरम्।
खादेदग्निबलापेक्षी प्रातरुत्थाय मानवः ॥१३१॥
कुष्ठार्शःकामलामेहग्रहणीगुल्मपाण्डुताः।
हन्यात्प्लीहोदरं कासक्रिमिरोगभगन्दरान् ॥१३२॥
गुडभल्लातको ह्येष श्रेष्ठश्चार्शोविकारिणाम् ॥१३३॥

१. २००० नग भिलावा, २. गुड़ ५ किलो, ३. शुद्ध भिलावा ५०० नग, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६, बहेड़ा, ७. शुण्ठी, ८. पीपर, ९. मरिच, १०, अजवायन, ११. नागरमोथा, १२. सैन्धवलवण, १३. दालचीनी, १४. छोटी इलायची, १५. तेजपत्ता तथा १६. नागकेशर—प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें।

२००० भिलावा को शुद्ध कर १ द्रोण १३ लोटर जल के साथ एक बड़े पात्र में पाक करें। चौथाई शेष रहने पर उसमें साफ गुड़ ५ किलो मिला दें और ५०० नग शुद्ध भिलावा का चूर्ण उसमें मिला दें। गुड़ का आसन्न पाक (३-४ तार की

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चासनी) परीक्षा कर पात्र चूल्हे से नीचे उतार लें और उसमें उपर्युक्त त्रिफला से नागकेशर तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह चलाकर काचपात्र या १-१ किलो के प्लास्टिक के डब्बे में सुरक्षित रख लें। इसमें भिलावा है, अतः दूर रहकर ही पाक करें तथा इसकी भाप एवं धुँआ से बचें।

मात्रा—अग्नि एवं बल को ध्यान में रखकर २-५ ग्राम की मात्रा लें।

उपयोग—कुष्ठ, अर्श, कामला, प्रमेह, संग्रहणी, गुल्म, पाण्डु, प्लीहोदर, कास, कृमि एवं भगन्दर को नाश करता है। तथापि यह 'भल्लातक गुड़' अर्शरोगियों के लिए श्रेष्ठ औषधि है।

अनुपान—दूध एवं जल से। **स्वाद**—मीठा। **वर्ण**—कृष्णाभ (अवलेह या मोदक)।

५०. भल्लातकगुड़-२ (चक्रदत्त)

दशमूलामृता भार्गी श्वदंष्ट्रा चित्रकं शटी।
भल्लातकसहस्रं च पलांशं क्वाथयेद् बुधः ॥१३४॥
पादशेषे जलद्रोणे रसे तस्मिन् विपाचयेत्।
दत्त्वा गुडतुलामेकां लेहीभूतं समुद्धरेत् ॥१३५॥
माक्षिकं पिप्पलीं तैलमौरुबूकञ्च दापयेत्।
अर्शः कासमुदावर्त्तं पाण्डुतां शोथमेव च ॥१३६॥
कुडवं कुडवं चात्र त्वगेलामरिचं तथा।
नाशयेद्वह्निसादं च गुडभल्लातकः स्मृतः ॥१३७॥

१००० शुद्ध भिलावा। १. दशमूल ४६० ग्राम, २. गुडूची ४६ ग्राम, ३. गोखरू ४६ ग्राम, ४. चित्रकमूल ४६ ग्राम, ५. कचूर ४६ ग्राम, ६. गुड़ ५ किलो, ७. मधु १९० ग्राम, ८.पीपर १९० ग्राम, ९. एरण्ड तैल १९० ग्राम, १०. दालचीनी १९० ग्राम, ११. छोटी इलायची १९० ग्राम और १२. मरिच १९० ग्राम लें। दशमूल से कचूर तक के सभी द्रव्यों का यवकुट कर एक बड़े पात्र में रखें और उसमें शुद्ध १००० भिलावा एवं १३ लीटर जल मिलाकर पाक करें। निर्जन स्थान में या आदमियों से दूर पाक करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर उसमें पाँच किलो गुड़ और एरण्ड तैल मिलाकर पात्र में पाक कर तीन तार की चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर पीपर, दालचीनी, इलायची एवं मरिच चूर्ण का प्रक्षेप देकर अच्छी तरह से मिला दें। ठण्डा होने पर मधु मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—दूध एवं जल से। **उपयोग**—अर्श, कास, उदावर्त, पाण्डु, शोथ एवं अग्निमान्द्य को यह भल्लातक गुड़ नष्ट कर देता है। **स्वाद**—मीठा। **वर्ण**—कृष्णाभ (अवलेह)।

५१. वार्ताकुगुटिका (चक्रदत्त-ग्रहणी)

चतुष्पलं सुधाकाण्डात् त्रिपलं लवणत्रयात्।
वार्त्ताकुकुडवञ्चार्कादष्टौ द्वे चित्रकात्पले ॥१३८॥
दग्ध्वा रसेन वार्त्ताकोर्गुडिका भोजनोत्तराः।
भुक्ता भुक्तं पचन्त्याशु कासश्वासार्शसां हिताः ॥१३९॥
विसूचिकाप्रतिश्यायहृद्रोगशमनाश्च ताः ॥१४०॥

१. थूहरकाण्ड १८५ ग्राम, २. सैन्धवलवण ४६ ग्राम, ३. कालानमक ४६ ग्राम, ४. विड्नमक ४६ ग्राम, ५. बैंगन १८५ ग्राम, ६. अर्कमूल ३७५ ग्राम और ७. चित्रकमूल ९३ ग्राम लें। उपर्युक्त सभी द्रव्यों के छोटे-छोटे टुकड़े करें तथा एक हाँड़ी में रखकर सम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोलकर जले हुए द्रव्यों को महीन छननी से छानकर खरल में रखें और बैंगन के रस की भावना देकर १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। **मात्रा**—१-१ वटी भोजन के बाद लें। इसके सेवन से भोजन का शीघ्र ही परिपाक होता है। **उपयोग**—कास, श्वास, अर्श, विसूचिका, प्रतिश्याय एवं हृद्रोगनाशक है। **स्वाद**—क्षारीय (राख जैसा)। **वर्ण**—राख के वर्ण का।

रक्तार्श में रक्तस्राव की उपेक्षा (चक्रदत्त)

रक्तार्शसामुपेक्षेत रक्तमादौ स्रवद्भिषक्।
दुष्टास्रे निगृहीते तु शूलानाहावसृग्गदाः ॥१४१॥

रक्तार्श में रक्त परिस्रुति होने पर पहले रक्तरोधक चिकित्सा नहीं करनी चाहिए। क्योंकि दूषित रक्त के रुक जाने से शूल, आनाह तथा अन्य रक्त के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

५२. रक्तार्श में शक्रक्वाथादि प्रयोग (चक्रदत्त)

शक्रक्वाथः सविश्वो वा किं वा बिल्वशलाटवः।
योज्या रक्तार्शसैस्तद्वज्ज्योत्स्निकामूललेपनम् ॥१४२॥

इन्द्रयव[1] का क्वाथ शुण्ठी के चूर्ण के साथ पीने से अथवा बिल्वफलमज्जा के चूर्ण का जल के साथ सेवन करने से रक्तार्श नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार कड़वी तोरई के मूल को पीसकर रक्तार्श पर लेपन करने से रक्तार्श नष्ट हो जाता है।

५३. रक्तार्श में नवनीतादि प्रयोग (चक्रदत्त)

नवनीततिलाभ्यासात् केशरनवनीतशर्कराऽभ्यासात्।
दधिसरमथिताभ्यासाद् गुदजाः शाम्यन्ति रक्तवहाः ॥

१. काला तिल चूर्ण ५ से १० ग्राम और मक्खन १० से २० ग्राम दोनों मिलाकर सुबह-शाम खाने से रक्तार्श नष्ट हो जाता है। २. नागकेशर या कमलकेशर ५ ग्राम, मक्खन १०

१. इन्द्रयव रक्तरोधक है तथा कुटजत्वक् का भी प्रयोग उचित है। वह भी रक्तस्तम्भक है। अतः दोनों में से कोई एक लिया जा सकता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम तथा चीनी १० ग्राम प्रतिदिन सायं-प्रातः सेवन करने से रक्तार्श नष्ट हो जाता है। ३. अथवा प्रतिदिन 'दधिसर' (मलाई युक्त मथित दही) पीने से रक्तार्श ठीक हो जाता है।

५४ समङ्गादिचूर्ण (चक्रदत्त)

समङ्गोत्पलमोचाह्वतिरीटतिलचन्दनैः ।
छागक्षीरं प्रयोक्तव्यं गुदजे शोणितापहम् ॥१४४॥

१. मंजीठ, २. नीलकमल, ३. मोचरस, ४. लोध्रत्वक्, ५. कालातिल, श्वेत चन्दन—इन्हें समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर शीशी में संग्रहीत करें। इस चूर्ण का ५ ग्राम की मात्रा में सायं-प्रातः बकरी के दूध से सेवन करने पर रक्तार्श नष्ट हो जाता है।

वर्ण—रक्ताभ वर्ण। **स्वाद**—कषाय रस।

५५. नलिनीपत्रादियोग (रक्तार्श में)

कोमलं नलिनीपत्रं पिष्ट्वा खादेत्सशर्करम् ।
प्रातराजं पयः पीत्वा रक्तस्रावाद्विमुच्यते ॥१४५॥

कमलिनी के कोमल ताजे पत्र को सिल पर महीन पीस लें और बकरी का दूध तथा चीनी मिलाकर प्रतिदिन पीने से रक्तार्श नष्ट हो जाता है।

५६. कृष्णतिल-प्रयोग (रक्तार्श में)

सशर्करं कृष्णतिलस्य कल्कं
बस्तीपयोभिः पिबति प्रभाते ।
सद्यो हरत्येव गुदोत्थरक्तं
योगोऽयमुक्तो गिरिशप्रयुक्तः ॥१४६॥

कालातिल को सिल पर पीसकर बकरी के दूध में और चीनी के साथ मिलाकर उसे प्रतिदिन पीने से रक्तार्श एवं उसके मस्से सूख कर नष्ट हो जाते हैं। यह योग स्वयं भगवान् शंकरजी ने कहा है।

५७. कुटजत्वक्-प्रयोग (रक्तार्श में)

कौटजं वल्कमादाय पिष्ट्वा तक्रेण बुद्धिमान् ।
पीत्वा रक्तार्शसो रक्तस्रुतिमाशु नियच्छति ॥१४७॥

कुटजत्वक् एवं तक्र लें। कुटज की छाल २० ग्राम चूर्ण कर तक्र के साथ सिल पर पीसकर कल्क बनावें।

उपयोग—रक्तार्श रोगी में रक्तस्रुतिनाशनार्थ इसका प्रयोग करना चाहिए। इसके प्रयोग से शीघ्र ही रक्तस्राव बन्द हो जाता है। **मात्रा**—१० ग्राम। **अनुपान**—तक्र से पिलाया जाय। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—मधुर-कषाय।

५८. अपामार्गकल्क (रक्तार्श में)

तण्डुलसलिलोपेतं कल्कमपामार्गजं पिबतः ।
क्षीरमनुवाप्य भीरोर्गुदजाः शाम्यन्ति रक्तवहाः ॥१४८॥

चावल, अपामार्गमूल तथा बकरी का दूध लें। अपामार्ग की हरी (ताजा) जड़ लेकर जल से अच्छी तरह साफ कर सिल पर कूटें और तण्डुलोदक देकर पीसकर कल्क जैसा बना लें। पुनः उसमें थोड़ा और तण्डुलोदक मिलाकर कपड़े से छान लें। पुनः उसमें भीरुः (बकरी) का दूध मिलाकर रक्तार्श के रोगी को पिलावें। ऐसा दिन में २ बार पिलाने से रक्तस्राव युक्त अर्श का रक्तस्राव तुरन्त बन्द हो जाता है और गुदाङ्कुर सूख जाते हैं।

मात्रा—१० ग्राम कल्क २०० मि.ली. तण्डुलोदक एवं ५०० मि.ली. बकरी का दूध मिलाकर पीना है। **अनुपान**—तण्डुलोदक एवं बकरी का दूध। **उपयोग**—रक्तार्श में रक्तस्राव रोकने हेतु। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—मधुर।

५९. दाडिमादि प्रयोग

दाडिमस्य रसः पेयः शर्करामधुरीकृतः ।
नागकेशरसंमिश्रं ससितं पद्मकेशरम् ॥१४९॥
मधुना नवनीतेन नवेन सह सन्ततम् ।
रक्तर्शसां विनाशाय संलेह्यं हितकाङ्क्षिणा ॥१५०॥

सुपक्व अनार खट्टा, चीनी तथा पद्मकेशर लें। खट्टा अनार फल रस में मधुर होने लायक चीनी मिलाकर मीठा कर दिन में २ बार पीने से एक सप्ताह के बाद रक्तार्श का रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

नागकेशर २ ग्राम, पद्मकेशर २ ग्राम तथा चीनी ४ ग्राम—इन्हें चूर्ण कर मधु से ३ बार दिन में लेने से रक्तार्श से रक्तस्राव बन्द हो जाता है। १ सप्ताह के प्रयोग से ही लाभ होता है।

६०. कण्टकिफलादिक्षार प्रयोग

कण्टकिफलान्तर्मुषलक्षारो गोरोचनाजलम् ।
लपमात्रेण विस्राव्य रसान् हन्ति गुदाङ्कुरान् ॥१५१॥

कटहरफल (पनस) के भीतर की मुसली को जलाकर क्षारविधि से निर्मित क्षार १ भाग और गोरोचन १ भाग दोनों को जल के साथ पीसकर कल्क जैसा बनाकर गुदा के भीतर लेप करने से मस्से से रस-रक्तादि स्रवित होकर गुदाङ्कुर सूख जाते हैं और अर्श रोग नष्ट हो जाता है।

६१. नरकेशादिधूप (चरकसंहिता)

नृकेशाः सर्पनिर्मोको वृषदंशस्य चर्म च ।
अर्कमूलं शमीपत्रमर्शोभ्यो धूपनं हितम् ॥१५२॥

१. मनुष्य के केश, २. साँप के केचुल ३. बिल्ली का चर्म (वृषदंशः = बिडालः), ४. अर्कमूलत्वक् तथा ५. शमीपत्र—ये पाँचों द्रव्य समभाग लेकर मिट्टी की हाँडी में निर्धूम अग्नि पर उक्त धूपन द्रव्य डालकर गुदा के नीचे रखकर अर्श में धूपन करें। ऐसा करने से १ सप्ताह में ही अर्श सूख जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६२. सिन्दुकादिधूप

सिन्दुकः सिंहिका वाजिगन्धा चापि कणा फलम्।
समं सञ्चूर्ण्य साज्यं तद् धूपनं गुदजान्तकृद् ॥१५३॥

१. सिन्दुवारपत्र, २. कण्टकारी, ३. अश्वगन्धा, ४. पिप्पली तथा ५. गाय का घृत—ये चारों द्रव्य समभाग में लेकर (पत्ते सूखे लेना चाहिए) अर्श में धूपन देने से अर्श सूख जाते हैं।

६३. रालधूप योग (यो.रत्ना.)

रालचूर्णस्य तैलेन सार्षपेण युतस्य च।
धूपदानेन युक्त्याऽर्शो रक्तस्रावो निवर्त्तते ॥१५४॥
हिमांशुधूपनं श्रेष्ठं गुदे रक्तार्शसां कृते ॥१५५॥

रालचूर्ण को समभाग सरसों तैल के साथ मर्दन कर निर्धूम अग्नि पर डालें और उस धूम से अर्श को धूपित करें तो अर्श से रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

६४. गोधूमपिष्टादिधूप

गोधूमपिष्टं पलमेव हिङ्गु-
शाणार्द्धमारुष्करमब्धिसंख्यम्।
स्याद्धूपतः पायुजशूलनाशः
स्यात् सन्निपातो गुदसम्भवानाम् ॥१५६॥

गेहूँ का आटा ४६ ग्राम, हींग १ ग्राम ५ डे.ग्रा. तथा भिलावा ४ भाग—इन्हें सम्मलित रूप में निर्धूम अग्नि पर रखकर अर्श में धूपन देने से गुदज शूल एवं अर्श नष्ट हो जाते हैं।

६६. भल्लातकावलेह (बृहत्) (योगरत्नाकर)

सुपक्वभल्लातफलानि सम्यग्
द्विधा विधायाढकसम्मितानि।
विपाच्य तोयेन चतुर्गुणेन
चतुर्थशेषे व्यपनीय तानि ॥१५७॥
पुनः पचेत्क्षीरचतुर्गुणेन
घृतांशयुक्तेन घनं यथा स्यात्।
सितोपला षोडशभिः पलैश्च
विमर्द्य संस्थाप्य दिनानि सप्त ॥१५८॥
ततः प्रयोज्याग्निबलेन मात्रां
जयेद्विकारानखिलान् गुदोत्थान्।
कचाः सुनीला घनकुञ्चिताग्राः
स्युस्ताक्ष्र्यदृष्टिश्च शशाङ्ककान्तिः ॥१५९॥
जवो हयानां बलमुत्तमं च
स्वरो मयूरस्य हुताशदीप्तिः।
स्त्रीवल्लभत्वं विविधप्रभावो
नीरोगता द्वित्रिशतायुरेव ॥१६०॥
न चान्नपाने परिहार्यमस्ति
न चातपे नाध्वनि मैथुने च।
प्रयोगकाले सकलामयानां
राजाधिराजश्च रसायनानाम् ॥१६१॥

१. शुद्ध भल्लातकफल २९८० ग्राम, २. जल १२ लीटर, ३. घी ७५० ग्राम, ४. मिश्री ७५० ग्राम तथा ५. गाय का दूध १२ लीटर लें। सर्वप्रथम शुद्ध भल्लातक को दो टुकड़े कर चौगुने जल में क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें और उसमें चौगुना दूध मिलाकर पकावें। जब दूध सूख जाय तो उसमें घृत मिलाकर पाक करें। जब गाढ़ा हो जाय तो पिसी हुई मिश्री मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें ७ दिनों के बाद इस अवलेह को अर्श से पीड़ित व्यक्ति को खिलावें।

लाभ एवं फलश्रुति—सभी प्रकार के अर्श इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं, केश काले हो जाते हैं, बाल सघन एवं कुञ्चित (घुँघराले) हो जाते हैं, गरुड़ जैसी तेज दृष्टि हो जाती है, शरीर चन्द्रमा जैसा कान्तिमान् हो जाता है, घोड़े जैसा वेगवान्, उत्तम बल की प्राप्ति, मोर के जैसी तेज आवाज, जाठराग्नि की प्रदीप्ति, मैथुन-शक्ति की वृद्धि के कारण स्त्रीवल्लभता अर्थात् अत्यन्त वाजीकर है, निरोगता और २-३ सौ वर्ष की दीर्घायु की प्राप्ति होती है। इसके सेवन काल में अन्न-पान, आहार-विहार, धूप-वर्षा, मार्गगमन और मैथुन आदि का कोई बन्धन नहीं हैं। सभी रोगों को दूर करने के लिए रसायनों के राजा रूप में यह अवलेह श्रेष्ठ है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गोदूध में मिश्री मिलाकर। **वर्ण**—कत्थई रंग का घृत युक्त। **स्वाद**—मधुर।

६६. तक्रारिष्ट (चरक)

हपुषा सुषवी धान्यमजाजी कारवी शटी।
पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रको गजपिप्पली ॥१६२॥
यवानी चाजमोदा च तच्चूर्णं तक्रसंयुतम्।
मन्दाम्लकटुकं विद्वान् स्थापयेद् घृतभाजने ॥१६३॥
व्यक्ताम्लकटुकं जातं तक्रारिष्टं कटुप्रियम्।
पाययेन्मात्रया काले स्वन्नस्य तृषितं त्रिषु ॥१६४॥
दीपनो रोचनो बल्यः कफवातानुलोमनः।
गुदश्वयथुकण्ड्वार्त्तिनाशनो बलवर्द्धनः ॥१६५॥

१. हाऊबेर, २. स्याहजीरा, ३. धनियाँ, ४. जीरा, ५. कारवी (मगरैला), ६. कचूर, ७. पीपर, ८. पिपरामूल, ९. चित्रकमूल, १०. गजपीपर ११. अजवायन तथा १२. अजमोदा—इन प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण १०-१० ग्राम लें और गाय का तक्र $\frac{१}{२}$ लीटर लें। मिट्टी के घृतपात्र में $\frac{१}{२}$ लीटर तक्र रखकर चतुर्थांश औषधों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर ३-४ दिनों तक रख दें। जब तक्र थोड़ा कटु हो जाय तो अर्श से पीड़ित रोगी को पिलाना चाहिए। कटु होने पर पीने में यह प्रिय (रुचिकर) है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—१-२ तोला = १२ से २५ मि.ली.। **समय**—३ बार भोजनोत्तर। **फलश्रुति**—दीपन, रोचन, बल्य, कफवातानुलोमन, गुदा का शोथ, गुदकण्डू एवं गुदपीड़ा नाशक है। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—अम्ल एवं कटु।

६७. दन्त्यरिष्ट (चरक)

दन्तीचित्रकमूलानामुभयोः पञ्चमूलयोः।
भागान् पलांशानापोथ्य जलद्रोणे विपाचयेत् ॥१६६॥
त्रिपलं त्रिफलायाश्च दलानां तत्र दापयेत्।
रसे चतुर्थशेषे तु पूतशीते प्रदापयेत् ॥१६७॥
तुलां गुडस्य तत्तिष्ठन्मासार्धं घृतभाजने।
तन्मात्रया पिबेन्नित्यमर्शोभ्यः प्रविमुच्यते ॥१६८॥
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं वातवर्चोऽनुलोमनम्।
दीपनं चारुचिघ्नञ्च दन्त्यरिष्टमिमं विदुः।
पात्रेऽरिष्टादिसन्धानं धातकीलोध्रलेपिते ॥१६९॥

क्वाथ—१. दन्तीमूल ५० ग्राम, २. चित्रकमूल ५० ग्राम, ३. दशमूल ५०० ग्राम, ४. आमला ५० ग्राम, ५. हरीतकी ५० ग्राम ६. बहेड़ा ५० ग्राम तथा जल १३ लीटर लें। **प्रक्षेप**—गुड़ ५ किलो एवं धातकीपुष्प ५०० ग्राम लें। धातकी पुष्प छोड़कर सभी द्रव्यों को यवकुट कर स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और नये मिट्टी के घड़े में रखकर गुड़ अच्छी तरह मिलावें, धूप में सुखाया हुआ धातकीपुष्प मिलाकर घड़ा का मुख बन्द करें और निर्वात स्थान में रख दें। एक महीना बाद या कुछ पहले जब सन्धान पूर्ण हो जाय तो परीक्षा कर घड़े का मुख खोलें तथा कपड़े से छान लें। पुनः उस घड़े को पोंछकर कपड़े से सुखा लें और छाना हुआ अरिष्ट उसमें रखकर १० दिनों तक स्थिर होने के लिए छोड़ दें। १० दिनों के बाद **'दन्त्यरिष्ट'** को निथारकर बोतलों में भर कार्क, लेबल लगाकर नाम-तिथि, अधिकार एवं ग्रन्थ-प्रमाण लिखकर सुरक्षित स्थान में रख दें। १ वर्ष के बाद प्रयोग करें।

मात्रा—(१ से २ तोला) १२ से २५ मि.ली. तक। **अनुपान**—जल मिलाकर। **समय**—भोजनोत्तर २ बार या मुहुर्मुहुः। **उपयोग**—ग्रहणी, पाण्डु, वायु एवं मल का अनुलोमन करता है। दीपन और अरुचिनाशक है। **वर्ण**—रक्ताभ कृष्ण द्रव है। **स्वाद**—मधुर-तीक्ष्ण। **गन्ध**—मद्यगन्धी है।

६९. द्राक्षासव (गदनिग्रह)

द्राक्षापलशतं दत्त्वा चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत्।
द्रोणशेषे रसे तस्मिन् पूते शीते प्रदापयेत् ॥१७०॥
शर्करायास्तुलां दत्त्वा तत्तुल्यं मधुनस्तथा।
पलानि सप्त धातक्याः स्थापयेदाज्यभाजने ॥१७१॥
जातीलवङ्गकंक्कोललवलीफलचन्दनैः।
कृष्णात्रिगन्धसंयुक्तैर्भागैरर्द्धपलांशकैः ॥१७२॥
त्रिसप्ताहाद्भवेत् पेयं तस्य मात्रा यथाबलम्।
नाम्ना द्राक्षासवो ह्येष नाशयेद् गुदकीलकान् ॥१७३॥
शोथारोचकहृत्पाण्डुरक्तपित्तभगन्दरान्।
गुल्मोदरक्रिमिग्रन्थिक्षतशोषज्वरान्तकृत्।
वातपित्तप्रशमनः शस्तश्च बलवर्णकृत् ॥१७४॥

क्वाथ—द्राक्षा ५ किलो एवं जल ५० लीटर लें। **प्रक्षेप**—१. शर्करा (चीनी) ५ किलो, २. मधु ५ किलो, ३. धातकीपुष्प ३५० ग्राम, ४. जायफल, ५. लौंग, ६. शीतलचीनी, ७. हरफरौरीफल (लवलीफल), ८. श्वेतचन्दन, ९. पीपर, १०. दालचीनी, ११. छोटी इलायची, १२. तेजपात—प्रत्येक द्रव्य २५-२५ ग्राम लें तथा १३. धातकीपुष्प ५०० ग्राम लें। सर्वप्रथम स्टील के बड़े पात्र में द्राक्षा (मुनक्का) और जल मिलाकर क्वाथ विधि से क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर द्राक्षा को मसलकर छान लें। अब इस क्वाथ को मिट्टी के बड़े घड़े में भरें। इसके बाद घड़े में शर्करा और मधु घोल दें। पुनः प्रक्षेप द्रव्यों का मोटा यवकुट कर मिला दें। तदनन्तर धूप में सुखाया हुआ धातकीपुष्प मिला दें। घड़ा का मुख शराव से बन्द कर कपड़मिट्टी कर दें और निर्वात घर में स्थिर से रख दें। २१ दिनों के बाद पूर्ण सन्धान हो जाने के बाद परीक्षा कर द्राक्षासव को छानें, घड़ा धो लें एवं साफ कर लें और अच्छी तरह से पानी सूखने के बाद उस आसव को स्वच्छ होने के लिए उसी घड़े में रख दें। ८ से १० दिनों तक रखने के बाद ऊपर का स्वच्छ द्रव डाल लें तथा बोतल में भरकर लेबल, कार्क, अधिकार एवं ग्रन्थाधार आदि लिखकर संग्रहीत करें।

मात्रा—१ से २ तोला (१२ से २५ मि.ली.)। **अनुपान**—बराबर जल मिलाकर। **समय**—भोजनोत्तर २ बार। **वर्ण**—रक्ताभ द्रव। **स्वाद**—मधुर एवं तीक्ष्ण। **गन्ध**—मद्ययुक्त।

उपयोग—अर्श, शोथ, अरुचि, हृद्रोग, पाण्डु, रक्तपित्त, भगन्दर, गुल्म, उदर, कृमि, ग्रन्थि, उरःक्षत, राजयक्ष्मा और ज्वर-नाशक है। वात-पित्त नाशक है तथा बल एवं वर्ण के लिए श्रेष्ठ है।

६९. अभयारिष्ट

अभयायास्तुलामेकां मृद्वीकाऽर्द्धतुलां तथा।
दिक्पलानि विडङ्गस्य मधूककुसुमस्य च ॥१७५॥
चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा द्रोणमेकं च शेषयेत्।
शीतीभूते रसे तस्मिन् पूते गुडतुलां क्षिपेत् ॥१७६॥
श्वदंष्ट्रां त्रिवृतां धान्यं धातकीमिन्द्रवारुणीम्।
चव्यं मधुरिकां शुण्ठीं दन्तीं मोचरसं तथा ॥१७७॥
पलयुग्ममितं सर्वं पात्रे महति मृन्मये।
क्षिप्त्वा संरुध्य तत्पात्रं मासमात्रं निधापयेत् ॥१७८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ततो जातरसं ज्ञात्वा परिस्राव्य रसं नयेत्।
बलं कोष्ठञ्च वह्निञ्च वीक्ष्य मात्रां प्रयोजयेत् ॥१७९॥
अर्शांसि नाशयेच्छीघ्रं तथाऽष्टावुदराणि च।
वर्चोमूत्रविबन्धघ्नो वह्निसन्दीपनं परम् ॥१८०॥

क्वाथ—१. हरीतकीफलत्वक् ५ किलो, २ मुनक्का (द्राक्षा) २५०० ग्राम, ३. वायविडङ्ग ५०० ग्राम, ४. महुआ का फूल ५०० ग्राम तथा जल ५२ लीटर। **प्रक्षेप**—गुड़ ५ किलो, २. गोखरु १०० ग्राम, ३. त्रिवृत् १०० ग्राम, ४. धनियाँ बीज १०० ग्राम, ५. धातकीपुष्प १०० ग्राम, ६. इन्द्रवारुणी १०० ग्राम, ७. चव्यमूल १०० ग्राम, ८. सौंफ १०० ग्राम, ९. शुण्ठी १०० ग्राम, १०. दन्तीमूल १०० ग्राम और ११. मोचरस १०० ग्राम लें। उपर्युक्त चारों क्वाथ-द्रव्य हरीतकी आदि यवकुट कर स्टेनलेस स्टील के पात्र में रखकर ५२ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छानकर मिट्टी के एक नये घड़े में भरें और उसमें गुड़ तथा धातकीपुष्प और गोखरु आदि ९ द्रव्यों का यवकुटचूर्ण उसी घड़े में डालकर हाथ से अच्छी तरह से मिला दें। घड़ा का मुख शराव से ढ़ककर कपड़मिट्टी करें और निर्वात घर में मुद्रित घड़े को स्थिर से रख दें। घड़े की तली में भूसी या पुआल का गद्दा जैसा बनाकर रखें। ऐसा करने से घड़ा फूटने का भय नहीं रहता है। २१ दिनों के बाद सन्धान की परीक्षा कर घड़ा का मुख खोलकर हाथ से द्रव को पुनः मिला लें और कपड़ा से छान लें। पुनः घड़ा साफकर पानी सुखा लें और उसी घड़े में स्थिर होने के लिए छने हुए अभयारिष्ट को भर दें। ८-१० दिनों के बाद घड़ा टेढ़ा कर स्वच्छ द्रव निथार अलग पात्र में रख लें। इसके बाद बोतलों में भरकर कार्क एवं लेबल लगाकर अभयारिष्ट को सुरक्षित कर लें। इसे १ वर्ष बाद प्रयोग में लावें।

मात्रा—१ से २ तोला (१२ से २५ मि.ली.) बल, काल, रोग, अग्नि, कोष्ठ आदि समझकर प्रयोग करें। **अनुपान**—बराबर जल मिलाकर। **उपयोग**—सभी प्रकार के अर्श, सभी प्रकार के उदररोग, मूत्र-पुरीष-विबन्धनाशक तथा अग्निदीपक हैं। **वर्ण**—रक्ताभ कृष्ण द्रव। **स्वाद**—मधुर तीक्ष्ण एवं कषाय स्वाद वाला। **गन्ध**—मद्यगन्धी।

७१. द्राक्षासव (यो.चि.)

द्राक्षायाश्च पलशतं सितायास्तच्चतुर्गुणम्।
कर्कन्धुमूलं तस्यार्द्धं मूलार्द्धं पुष्पधातकी।
क्रमुकं च लवङ्गं च जातीपुष्पफलानि च।
चातुर्जातं त्रिकटुकं मस्तकी करहाटकम् ॥१८१॥
आकारकरभं कुष्ठं पलानि दश चाहरेत्।
एभ्यश्चतुर्गुणं तोयं भाण्डे चैव विनिक्षिपेत्।
स्थापयेद् भूमिमध्ये तु चतुर्दशदिनानि च।
ततो जातरसं शुद्धं क्षिपेत्कच्छपयन्त्रके ॥१८२॥
मुद्रयित्वा च तस्याधो वह्निं प्रज्वालयेत्सुधीः।
तस्यान्तश्च्यवितं सीधुं गृह्णीयात्सर्वमेव तत्।
पुनरेव च तत्सीधुं क्षिपेत्कच्छपयन्त्रके।
धाराधो निक्षिपेत्तस्य मृगनाभिं सकुङ्कुमम् ॥१८३॥
एतत्सिद्धं क्षिपेद्धीमान् काचभाण्डे निधापयेत्।
त्रिदिनेषु व्यतीतेषु तत्पेयं पलसंख्यया।
मध्याह्ने द्विपलं ग्राह्यं सन्ध्याकाले चतुष्पलम्।
गरिष्ठं स्निग्धमाहारं भक्षयेदस्य सेवकः ॥१८४॥
वीर्याभिवृद्धिः प्रभवेन्नराणां
रामासु वश्यो भवतीह लोके।
स एव धन्या मनुजा नरेन्द्रा
द्राक्षासवं ये किल सेवयन्ति ॥१८५॥

क्वाथ—१. मुनक्का (द्राक्षा) ५ किलो, २. चीनी २० किलो तथा ३. बेर की मूलत्वक् १० किलो तथा ४. धातकीपुष्प ५ किलो लें। ५. सुपारी, ६. लौंग, ७. जावित्री, ८. जायफल, ९. दालचीनी, १०. छोटी इलायची, ११. तेजपत्ता, १२. नागकेशर, १३. शुण्ठी, १४. पीपर, १५. मरिच, १६. रुमीमस्तगी, १७. कमलकन्द, १८. अकरकरा, १९. कूठ। प्रत्येक द्रव्य ५० ग्राम लें। **प्रक्षेप**—२०. कस्तूरी १० ग्राम, २१. केशर १० ग्राम तथा जल १९० लीटर लें। सर्वप्रथम मिट्टी के एक बड़े भाण्ड में १७ लीटर जल भरें। उसी भाण्ड में २० किलो चीनी घोल दें, ततः द्राक्षा २५००-२५०० ग्राम बदरीमूल (बेरमूल-त्वक्) त्वक् ताजा कूटकर मिलावें। पुनः धातकीपुष्प को धूप में सुखाकर बिना कूटे ही मिलावें। ततः सुपारी से कूठ पर्यन्त सभी १५ द्रव्यों को यवकुट कर बराबर भाग में चारों भाण्ड में मिलावें। पुनः सब भाण्ड को हाथ से अच्छी तरह मिलाकर मिट्टी के बड़े शराव से ढ़ककर कपड़मिट्टी से मुख अच्छी तरह बन्द कर निर्वात स्थान में १५ दिनों तक छोड़ दें। जब अच्छी तरह सन्धान हो जाय तो परीक्षा कर भाण्ड स्थित सन्धानित द्रव को स्रवणयन्त्र में रखकर उसका मद्य निकाल लें। इसी प्रकार सम्पूर्ण सन्धानित द्रव से मद्य निकालकर पुनः साफ स्रवणयन्त्र में इस मद्य को भरकर दुबारा स्रवित करें। स्रवण करते समय नली के पास पोटली बाँधकर केशर-कस्तूरी को रखें। अर्थात् इसी पोटली पर बूँद-बूँद मद्य स्रवित होगा। जिससे मद्य का रङ्ग पीला केशरिया होगा तथा केशर-कस्तूरी की अच्छी खुशबू भी इस मद्य में आ जायेगी, साथ ही केशर-कस्तूरी के अच्छे गुण भी आ जायेंगे। इसके बाद इस स्रवित मद्य को बोतलों में रखकर कार्क, लेबल आदि ठीक से लगा दें तथा सुरक्षित कर रख लें। तीन दिनों के बाद इसे पीने के लिए उपयोग करें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—१ पल (५० मि.ली.)। प्रातः १ पल, मध्याह्न २ पल, सायं ४ पल पीना चाहिए। **गुण**—वीर्य की वृद्धि होती है, प्रमदाएँ वश में हो जाती हैं अर्थात् मैथुन शक्ति बढ़ जाती है। वे मनुष्य धन्य हैं जो हमेशा इस द्राक्षासव का सेवन करते हैं।

विमर्श—मूल पाठ में कच्छपयन्त्र से अर्क (मद्य) निकालने की बात कही गयी है, जो उचित नहीं है। अतः मैंने कच्छप के स्थान पर स्रवणयन्त्र कर पाठ संशोधन कर दिया है। यह द्राक्षासव से भिन्न है। इसे 'मृतसंजीवनी सुरा' जैसा मद्य समझना चाहिए।

वर्ण—मद्य रूप में पीत द्रव है। **स्वाद**—तीक्ष्ण मद्य स्वाद वाला।

७१. उत्पलषट्पलघृत (चक्रदत्त)

सक्षारैः पञ्चकोलैश्च पलिकैस्त्रिगुणोदके।
समक्षीरं घृतप्रस्थं ज्वरार्शःप्लीहकासनुत् ॥१८६॥

१. गाय का घी ७५० ग्राम, २. यवक्षार ५० ग्राम, ३. पीपर ५० ग्राम, ४. पिपरामूल ५० ग्राम, ५. चव्य ५० ग्राम, ६. चित्रकमूल ५० ग्राम, ७. शुण्ठी ५० ग्राम, ८. गाय का दूध ७५० मि.ली. और जल ३ लीटर लें। मूर्च्छित गाय का घी लेकर स्टेनलेस स्टील के पात्र में गर्म करें। पुनः यवक्षार से शुण्ठी पर्यन्त के सभी छः द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर सिल पर पीसकर कल्क बना लें, कल्क को गरम घृत में मिलाकर पाक करें। ततः दूध मिलाकर पकावें, पुनः घी से ३ गुना जल मिलाकर पाक करें। आसन्न पाक होने पर पाक की परीक्षा कर चूल्हे से स्टीलपात्र को नीचे उतारकर घी को छान लें। ठण्डा होने पर काचपात्र में घी सुरक्षित कर लें।

मात्रा—१ तोला (१२ मि.ली.)। **उपयोग**–ज्वर, अर्श, प्लीहा एवं कास नाशक है। **वर्ण**—घी का वर्ण। **स्वाद**—कटु एवं क्षारीय।

विमर्श—यहाँ 'उत्पलषट्पल घृत' कहने का कोई शाब्द-बोध नहीं होता है। मात्र छः पल कल्क के साथ पाक करने के कारण इसे 'षट्पलघृत' ही कहना चाहिए था, किन्तु उत्पल भी नाम में लगा हुआ है। वैद्यकशब्दसिन्धुकार ने उत्पलषट्पलक की परिभाषा इस प्रकार कही है—

'उत्पलं धान्यकं शुण्ठी पृश्निपर्णीबलायुतम्।
बालबिल्वं गवां तक्रेणात्युष्णेन पेषयेत् ॥
तेन लाजकृतं मण्डं देयमानीय शीतलम्।
ज्वरातिसारशमनं हुताशनबलप्रदम्' ॥ (हारीत)

७२. व्योषाद्यघृत (चक्रदत्त)

व्योषगर्भं पलाशस्य त्रिगुणे भस्मवारिणि।
साधितं पिबतः सर्पिः पतन्त्यर्शांस्यसंशयम् ॥१८७॥

मूर्च्छित गाय का घृत १ किलो, पलाशभस्म मिश्रित जल ४ लीटर तथा त्रिकटु चूर्ण २५० ग्राम लें। स्टेनलेस स्टील के एक पात्र में मूर्च्छित घृत को गर्म करें। पलाश की लकड़ी को जलाकर भस्म बनाकर छननी से छानकर, ५०० ग्राम भस्म को ४ लीटर पानी में घोलकर वस्त्रपूत करें और यही जल घृतपाक में प्रयुक्त करें। इसके बाद त्रिकटु चूर्ण को जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बनाकर उक्त घृत में मिलावें। मन्दाग्नि पर घृतपाक करें। आसन्न पाक समझकर परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से उतारकर छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें।

मात्रा—१ तोला (१२ मि.ली.) दो बार। **उपयोग**—निश्चित रूप से अर्शनाशक है।

७३. चव्याद्यघृत (चरक)

चव्यं त्रिकटुकं पाठां क्षारं कुस्तुम्बुरूणि च।
यमानीं पिप्पलीमूलमुभे च बिडसैन्धवे ॥१८८॥
चित्रकं बिल्वमभयां पिष्ट्वा सर्पिर्विपाचयेत्।
शकृद्वातानुलोम्यार्थं जाते दध्नि चतुर्गुणे ॥१८९॥
प्रवाहिकां गुदभ्रंशं मूत्रकृच्छ्रं परिस्रवम्।
गुदवङ्क्षणशूलञ्च घृतमेतद् व्यपोहति ॥१९०॥

१. गाय का मूर्च्छित घृत १ किलो, २. गाय का दही ४ किलो, ३. चव्यमूल, ४. शुण्ठी, ५. पीपर, ६. मरिच, ७. पाठा, ८. यवक्षार, ९. धनियाँ, १०. अजवायन, ११. पिपरामूल, १२. विड्लवण, १३, सैन्धवलवण, १४. चित्रकमूल, १५. बिल्वफलमज्जा, १६. हरीतकी तथा सम्यक् पाकार्थ जल ८ लीटर लें। एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में घृत को मन्दाग्नि पर गर्म करें, ततः दही को मथकर उक्त घृत में मिलावें। पुनः चव्यमूल से हरीतकी तक के सभी १४ द्रव्य प्रत्येक १५- १५ ग्राम लेकर कूटकर चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को भी घी में मिलाकर पाक करें। थोड़ी देर बाद सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल मिलाकर पाक करें। आसन्न पाक समझकर परीक्षा करें, ततः पात्र को चूल्हे से नीचे उतार कर घृत को कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें।

मात्रा—१२ मि.ली. प्रातः-सायं दो बार। **उपयोग**—विड एवं वात का अनुलोमक है; प्रवाहिका, गुदभ्रंश, मूत्रकृच्छ्र, अतिसार, गुदशूल, वंक्षणशूल को यह घृत नाश करता है। **वर्ण**—घृत वर्ण पीताभ,। **स्वाद**—कटु एवं क्षारीय लवण।

७४. कुटजाद्यघृत

कुटजफलवल्ककेशरनीलोत्पललोध्रधातकीकल्कैः।
सिद्धं घृतं विधेयं शूले रक्तार्शसां भिषजा ॥१९१॥

१. कुटजत्वक् (इन्द्रयव), २. नागकेशर, ३. नीलकमल,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

४. लोध्रत्वक् तथा ५. धातकीपुष्प—प्रत्येक द्रव्य ४०-४० ग्राम लें। गोघृत १ किलो। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः कुटजत्वगादि द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित घृत को गरमकर उसमें कल्क तथा ४ लीटर जल मिलाकर पकावें। जलीयांश सूखने पर स्नेहपाक की परीक्षा कर चूल्हे से पात्र को नीचे उतारकर तुरन्त कपड़ा से छान लें तथा शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस घृत को अर्श रोग तथा उसके शूल में प्रयोग करने से अर्श रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध या जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कषायतिक्त। **उपयोग**—अर्शो रोग।

७५. सिंह्यमृत घृत (चक्रदत्त)

पचेद्वारि चतुर्द्रोणे कण्टकार्यमृताशतम्।
तत्राग्नित्रिफलाव्योषपूतीकत्वक्कलिङ्गकैः ॥१९२॥
सकाश्मर्यविडङ्गैस्तु सिद्धं दुर्नाममेहनुत्।
घृतं सिंह्यमृतं नाम बोधिसत्त्वेन भाषितम् ॥१९३॥

गाय का मूर्च्छित घी ३ किलो।

क्वाथ—१. कण्टकारी ५ किलो, २. गुडूची ५ किलो और जल ५२ लीटर लें। **कल्क**—१. चित्रकमूल, २. शुण्ठी, ३. पीपर, ४. मरिच, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. पूतिकरञ्जत्वक्, ९. इन्द्रयव, १०. गम्भारीत्वक् तथा ११. वायविडङ्ग—प्रत्येक ७० ग्राम लें। कण्टकारी और गुडूची को यवकुट कर ५२ लीटर जल में क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें। अब एक बड़े पात्र में मूर्च्छित घृत को गरमकर उक्त क्वाथ उस घृत में मिला दें। ततः चित्रकमूल से विडङ्ग पर्यन्त ११ द्रव्यों को प्रत्येक ७०-७० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें तथा सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। यह कल्क भी उक्त घृत में मिलाकर पाक करें। आसन्नपाक समझकर परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर घृत को कपड़े से छान लें और ठण्डा होने पर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस घृत को भगवान् बुद्ध ने अर्श पीड़ित रोगियों के लिए कहा था।

मात्रा—१ तोला (१२ मि.ली.)। **उपयोग**—अर्श एवं प्रमेह नाशनार्थ। **वर्ण**—घृतवर्ण पीताभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **गन्ध**—घृतगन्धी।

७६. सुनिषण्णकचाङ्गेरी घृत (चरक)

अवाक्पुष्पी बला दार्वी पृश्निपर्णी त्रिकण्टकम्।
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थशुङ्गाश्च द्विपलोन्मिताः ॥१९४॥
कषाय एष पेष्यास्तु जीवन्ती कटुरोहिणी।
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं देवदारु च ॥१९५॥
कलिङ्गं शाल्मलीपुष्पं वीरा चन्दनमञ्जनम्।
कट्फलं चित्रकं मुस्तं प्रियङ्ग्वतिविषे स्थिरा ॥१९६॥
पद्मोत्पलानां किञ्जल्कः समङ्गा सनिदिग्धिका।
बिल्वं मोचरसं पाठा भागाः स्युः कार्षिकाः पृथक् ॥
चतुःप्रस्थशृतं प्रस्थं कषायमवतारयेत्।
त्रिंशत्पलानि तु प्रस्थो विज्ञेयो द्विपलाधिकः ॥१९८॥
सुनिषण्णकचाङ्गेर्योः प्रस्थौ द्वौ स्वरसस्य च।
सर्वैरितैर्यथोद्दिष्टैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥१९९॥
एतदर्शःस्वतीसारे त्रिदोषे रुधिरस्रुतौ।
प्रवाहणे गुदभ्रंशे पिच्छासु विविधासु च ॥२००॥
उत्थाने चातिबहुशः शोथशूलगुदामये।
मूत्रग्रहे मूत्रघाते मन्दाग्नावरुचावपि ॥२०१॥
प्रयोज्यं विधिवत्सर्पिर्बलवर्णाग्निवर्द्धनम्।
विविधेष्वन्नपानेषु केवलं वा निरत्ययम् ॥२०२॥

क्वाथ—१. सौंफ, २. बलामूल, ३, दारुहल्दी, ४. पृश्निपर्णी, ५. वटशुङ्ग, ६. गूलरपत्राग्र भाग, ७. पीपलपत्राग्र भाग तथा, ८. गोखरु—प्रत्येक द्रव्य ९०-९० ग्राम लें। **कल्क**—जीवन्ती, २. कुटकी, ३. पीपर, ४. पिपरामूल, ५. मरिच, ६. देवदारु, ७. इन्द्रयव, ८. सेमरफूल, ९. क्षीर-काकोली, १०. श्वेतचन्दन, ११. रसाञ्जन, १२. कायफल, १३. चित्रकमूल, १४. नागरमोथा, १५. प्रियङ्गुफूल, १६. अतीस, १७. शालपर्णी, १८. कमलकेशर, १९. मंजीठ, २०. कण्टकारी, २१ बिल्वफलमज्जा, २२. मोचरस तथा २३. पाठा—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सुनिषण्णक (चौपतिया) स्वरस १.५०० लीटर (२ प्रस्थ), चाङ्गेरी (तीनपतिया) स्वरस १.५०० लीटर (२ प्रस्थ), गाय का घी २ प्रस्थ (१.५०० लीटर) लें। सर्वप्रथम गोघृत को मूर्च्छित कर लें। तत्पश्चात् सौंफ से पीपल के शुङ्ग तक के आठों द्रव्यों (७२० ग्राम) को यवकुट कर ६ लीटर जल (द्रव द्वैगुण्य परिभाषा) के साथ क्वाथ करें। १.५०० लीटर क्वाथ शेष रहने पर छान लें। पुनः जीवन्ती से पाठा पर्यन्त सभी २३ द्रव्यों को (प्रत्येक १२-१२ ग्राम) लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें या सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब स्टेनलेस स्टील के पात्र में मूर्च्छित घी को रखकर चूल्हे पर गरम करें। जब घृत गर्म हो जाय तब क्वाथ और कल्क उसमें मिलाकर मध्यमाग्नि से पाक करें। जब क्वाथ सूखने लगे तब उसमें सुनिषण्णक स्वरस और चाङ्गेरी स्वरस १$\frac{१}{२}$-१$\frac{१}{२}$ लीटर उसी घृत में देकर पकावें। जब घृत में जलीय अंश समाप्त हो जाय तब परीक्षा कर घृत को चूल्हे से उतारकर कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छान लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रस्थद्वैगुण्य का यहीं पर उपयोग करें, अन्यत्र नहीं।

मात्रा—१ तोला (१२ मि.ली.)। **उपयोग**—अर्श,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अतीसार, त्रिदोषज रक्तस्राव, प्रवाहिका, गुदभ्रंश, पिच्छा (पिच्छिल लसदार मल) युक्त मल निकलने पर, अनेक प्रकार (वर्णभेद) के दस्त आने में, गुदशोथ, गुदशूल, मूत्रावरोध, मूढवात (अपानवायु का अवरोध), मन्दाग्नि और अरुचि आदि बीमारियों में इस घृत का प्रयोग बल, वर्ण और अग्नि की वृद्धि के लिए करना चाहिए। अनेक प्रकार के अन्नपान के साथ अथवा कोई एक पदार्थ के साथ इस घृत का प्रयोग करना चाहिए। **वर्ण**—पीत-हरित वर्ण का होता है। **स्वाद**—तिक्तकषाय युक्त।

७७. कासीसाद्यतैल (गदनिग्रह)

कासीसदन्तिसिन्धूत्थकरवीरानलैः पचेत्।
तैलमर्कपयोमिश्रमभ्यङ्गात् पायुकीलजित् ॥२०३॥

१. कासीस, २. दन्तीमूल, ३. सैन्धव, ४. कनेरमूल तथा ५. चित्रकमूल—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। तिलतैल १ लीटर लें। तिलतैल का मूर्च्छन करें। कासीसादि पाँचों द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बनावें। तैल को स्टेनलेस स्टील के पात्र में रखकर चूल्हे पर गरम करें। बाद में उस तैल में कल्क एवं सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर पानी मिलाकर पकावें। जब तैल कल्क निःस्नेह हो जाय तो परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से उतारकर छान लें। ठण्डा होने पर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

लेप—थोड़ा अर्कदुग्ध इस तैल के साथ मिलाकर अर्श पर लेप करने से अर्श नष्ट हो जाता हैं। **वर्ण**—वर्ण हरिताभ वर्ण।

७८. बृहत् कासीसाद्य तैल (गदनिग्रह)

कासीसं सैन्धवं कृष्णा शुण्ठी कुष्ठञ्च लाङ्गली।
शिलाभिदश्वमारश्च दन्तीजन्तुघ्नचित्रकम् ॥२०४॥
तालकं कुनटी स्वर्णक्षीरी चैतैः पचेद्भिषक्।
तैलं स्नुह्यर्कपयसा गवां मूत्रं चतुर्गुणम् ॥२०५॥
एतदभ्यङ्गतोऽर्शांसि क्षारेणेव पतन्ति हि।
क्षारकर्मकरं ह्येतन्न च सन्दूषयेद्बलिम् ॥२०६॥

१. कासीस, २. सैन्धवलवण, ३. पीपर, ४. शुण्ठी, ५. कूठ, ६. कलिहारी, ७. पाषाणभेद, ८. कनेरमूल, ९. दन्तीमूल, १०. विडङ्ग, ११. चित्रकमूल, १२. हरताल, १३. मैनसिल, १४. स्वर्णक्षीरी (भड़भाड़), १५. थूहर का दूध, १६. अर्कदुग्ध, १७. गोमूत्र तथा १८. तिलतैल—कासीस से अर्कदुग्ध तक के सभी द्रव्य १५-१५ ग्राम लें और तिलतैल १ लीटर तथा गोमूत्र ४ लीटर एवं सम्यक् पाकार्थ जल ४ लीटर लें। कासीस से स्वर्णक्षीरीमूल तक के सभी १४ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और उसी में अर्कदुग्ध एवं थूहर का दूध मिलाकर पीसें तथा कल्क बना लें। इसमें थोड़ा जल भी मिला सकते हैं। तिल के तैल का मूर्च्छन करें तथा उसे आग पर गरम करें। उसी तैल में कल्क एवं गोमूत्र मिलाकर मृदु अग्नि पर पकावें। गोमूत्र होने से तैल में अधिक उफान आता है। अतः मन्दाग्नि पर थोड़ा-थोड़ा गोमूत्र देकर पकाकर पुनः जल देकर पाक करें। जलीयांश सूख जाने पर परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से उतार लें। छानकर ठण्डा होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें।

लेपन—क्षार होने के कारण अर्श को सुखाकर गिरा देता है, किन्तु क्षार होने के कारण गुदवली को दूषित नहीं करता है। **उपयोग**—अर्श में। **वर्ण**—रक्ताभ।

विमर्श—यह योग मूलतः गदनिग्रह का है। गदनिग्रह में पाषाणभेद नहीं है। गदनिग्रह में—बकायन और कोषातकीबीज अधिक है। गदनिग्रह का पाठ जिसे खरनादसंहिता से लिया है, इस प्रकार है—

'कासीसं लाङ्गली कुष्ठं शुण्ठी कणा च सैन्धवम्।
मनःशिलाऽश्वमारश्च विडङ्गं चित्रको द्रुमः॥
दन्ती कोषातकीबीजं हेमाभा हरितालकम्।
कल्कैः कर्षमितैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
स्नुह्यर्कपयसो दद्यात् पृथग्द्विपलसम्मिते।
चतुर्गुणं गवां मूत्रं दत्त्वा सम्यक् प्रसाधयेत्॥
कथितं खरनादेन तैलमर्शोविनाशनम् ।
क्षारवत् पातयेदर्शांस्यभ्यङ्गतो भृशम् ।
वलीर्न दूषयत्येतत्क्षारकर्मकरं परम्' ॥

(गदनिग्रह)

७९. पिप्पल्याद्य तैल (चक्रदत्त)

पिप्पली मधुकं बिल्वं शताह्वां मदनं वचाम्।
कुष्ठं शुण्ठीं पुष्कराख्यं चित्रकं देवदारु च ॥२०७॥
पिष्ट्वा तैलं विपक्तव्यं द्विगुणक्षीरसंयुतम्।
अर्शसां मूढवातानां तच्छ्रेष्ठमनुवासनम् ॥२०८॥
गुदनिःसरणं शूलं मूत्रकृच्छ्रं प्रवाहिकाम्।
कट्यूरुपृष्ठदौर्बल्यमानाहं वङ्क्षणे रुजम् ॥२०९॥
पिच्छास्रावं गुदे शोथं वातवर्चोविनिग्रहम्।
उत्थानं बहुशो यच्च जयेच्चैवानुवासनात् ॥२१०॥

१. पीपर, २. मुलेठी, ३. बिल्वफलमज्जा, ४. सोयाबीज, ५. मदनफल, ६. वच, ७. कूठ, ८. शुण्ठी, ९. पुष्करमूल, १०. चित्रकमूल, ११. देवदारु, १२. गाय का दूध तथा १३. तिल तैल—पीपर से देवदारु तक की सभी ११ औषधियाँ प्रत्येक २३-२३ ग्राम (२-२ तोला) लें। तिलतैल १ लीटर तथा गाय का दूध ४ लीटर लें। सभी काष्ठौषधियों का सूक्ष्म चूर्ण करें और दूध के साथ सिल पर पीसकर कल्क बनावें, तिलतैल १ लीटर का मूर्च्छन करें तथा उसी में कल्क और ४ लीटर गाय का दूध मिलाकर पाक करें। जलीयांश सूखने पर परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से उतारकर छान लें। ठण्डा होने पर काचपात्र

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

में तैल को संग्रहीत करें।

उपयोग—अर्श एवं अपानवायु के अवरोध में अनुवासन बस्ति दें। गुदभ्रंश, गुदशूल, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका, कटिशूल, ऊरु की दुर्बलता, आनाह, वंक्षणपीड़ा, पिच्छास्राव (स्राव निकलना), गुदशोथ, वायु एवं पुरीष का अवरोध और बार-बार मल का वेग आना आदि रोगों में इस तैल का अनुवासन देने से बहुत लाभ होता है।

मात्रा—४ से ८ तोला (५०-१०० मि.ली.)। **वर्ण**—रक्ताभ।

अनुवासनार्ह

उदावर्त्तपरीता ये ये चात्यर्थं विरूक्षिताः।
विलोमवाताः शूलार्त्तास्तेष्विष्टमनुवासनम् ॥२११॥

जो व्यक्ति उदावर्तरोग एवं वातप्रकोप से पीड़ित है, जिनके मल शुष्क एवं रूक्ष हो गये हों, जो विलोम (प्रतिलोम) वातजन्य शूल से पीड़ित हों उन्हें अनुवासन वस्ति देना हितकर है।

८०. माणाद्य लौह (र.सा.सं.)

माणशूरणभल्लातत्रिवृद्दन्तीसमन्वितम् ।
त्रिकत्रयसमायुक्तमयो दुर्नामनाशनम् ॥२१२॥

१. मानकन्द चूर्ण, २. सूरणकन्द चूर्ण, ३. शुद्ध भल्लातक, ४. त्रिवृत् चूर्ण, ५. दन्तीमूल चूर्ण, ६. आमला चूर्ण, ६. हरीतकीचूर्ण, ८. बहेड़ाचूर्ण, ९. शुण्ठीचूर्ण, १०. पीपरचूर्ण, ११. मरिचचूर्ण १२. विडङ्गचूर्ण, १३. नागरमोथाचूर्ण, १४. चित्रकचूर्ण तथा १५. लोहभस्म—उपर्युक्त मानकन्द से चित्रक चूर्ण तक के सभी १४ द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम तथा लौह भस्म ७०० ग्राम अर्थात् सभी चूर्णों के बराबर लें। उपर्युक्त सभी १४ द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को एक साथ मिलाकर पुनः १०० नम्बर की जाली वाली चलनी से छान लें। ततः सभी चूर्णों के बराबर लौहभस्म डालकर खरल में अच्छी तरह मिलाकर रख लें। चाहें तो जल की भावना देकर ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) के बराबर वटियाँ बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. (४ रत्ती)। **अनुपान**—जल से। **उपयोग**—अर्श रोग में। **वर्ण**—कत्थई लोहभस्म के वर्ण जैसा। **स्वाद**—कटु-कषाय प्रधान।

८१. अग्निमुखलौह (चक्रदत्त)

त्रिवृच्चित्रकनिर्गुण्डीस्नुहीमुण्डिरिकाऽज्झटाः[1]।
प्रत्येकशोऽष्टपलिका जलद्रोणे विपाचयेत् ॥२१३॥
पलत्रयं विडङ्गाच्च व्योषं कर्षत्रयं पृथक्।
त्रिफलायाः पञ्च पलं शिलाजतु पलं न्यसेत् ॥२१४॥
दिव्यौषधिहतस्यापि[2] वैकङ्कतहतस्य वा।
पलद्वादशकं देयं रुक्मलौहस्य[3] चूर्णितम् ॥२१५॥
पलैश्चतुर्विंशत्याज्यान्मधुशर्करयोर्युतम् ।
घनीभूते सुशीते च दापयेदवतारिते ॥२१६॥
एतदग्निमुखं नाम दुर्नामान्तकरं परम्।
मन्दमग्निं करोत्याशु कालाग्निसमतेजसम् ॥२१७॥
पर्वता अपि जीर्यन्ति प्राशनादस्य देहिनाम्।
गुडवृष्यान्नपानानि पयो मांसरसो हितः ॥२१८॥
दुर्नामपाण्डुश्वयथुकुष्ठप्लीहोदरापहम् ।
अकालपलितं हन्यादामवातं गुदामयम् ॥२१९॥
न स रोगोऽस्ति यञ्चापि न निहन्ति क्षणादिदम्।
करीरकाञ्जिकादीनि ककारादीनि वर्जयेत् ॥२२०॥
स्रवत्यतोऽन्यथा लौहं देहात् किट्टञ्च दुर्जरम् ॥२२१॥

१. त्रिवृत् ३७५ ग्राम, २. चित्रकमूल ३७५ ग्राम, ३. सिन्दुवारपत्र ३७५ ग्राम, ४. स्नुही ३७५, ५. मुण्डी ३७५ ग्राम, ६. भूमिआमला ३७५ ग्राम, ७. वायविडङ्ग १४० ग्राम, ८. शुण्ठी ३५ ग्राम, ९. पीपर ४६ ग्राम, १ मरिच ४६ ग्राम, ११. आमला ७५ ग्राम, १२. हरीतकी ७५ ग्राम, १३. बहेड़ा ७५ ग्राम, १४. शुद्ध शिलाजतु ४६ ग्राम, १५. तीक्ष्ण लौहभस्म ५५० ग्राम, १६. गोघृत ११०० ग्राम, १७. मधु ५५० ग्राम, तथा १८. शक्कर (चीनी) ५५० ग्राम लें। सर्वप्रथम कलईदार ताँबे के बड़े पात्र में त्रिवृत् से भूँई आमला तक के छः द्रव्यों का प्रत्येक ८-८ पल उपर्युक्त मात्रा में यवकुट चूर्णरख कर १३ लीटर जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिगोकर प्रातः मन्दाग्नि पर क्वाथ करें तथा अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें। पुनः स्टेनलेस स्टील के एक साफ पात्र में घी लेकर गरम करें। ततः मनःशिला या वैकंकत (स्रुवाकाष्ठ) द्वारा मारित तीक्ष्ण लौह भस्म ४८ तोला उपर्युक्त मात्रा में मिलावें। इसके बाद चीनी और त्रिवृतादि का क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब चासनी २-३ तार की हो जाय तो उसमें विडङ्गचूर्ण, त्रिकटु चूर्ण, त्रिफलाचूर्ण एवं शुद्ध शिलाजतु मिलाकर कलछी से खूब मर्दन करें। जब ठण्डा हो जाय तो उसमें मधु हाथ से अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख दें।

गुण की फलश्रुति—यह अग्निमुखलौह सेवन करने से अर्श रोग को नष्ट करता है अर्थात् यह लौह अर्श की परमौषधि है। इसके सेवन से मन्दाग्नि युक्त रोगी की अग्नि कालाग्नि (प्रलय-कालीन अग्नि) के समान प्रदीप्त कर देता है। इस लौह का

१. अज्झटा = भूमिआमला (मुण्डतिकाज्जटा इति पाठभेदः)

२. दिव्यौषधि = स्वर्णमाक्षिकं मनःशिला वा, शालिकोककनी वा। अन्यत्र तु मनःशिलाहतस्येति पाठान्तरदर्शनात् मनःशिलेति युक्तम्।

३. रुक्मलोहं = कान्तव्यतिरिक्तं लोहम्।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्राशन करने से मनुष्य के शरीर में पत्थर भी पच जाते हैं। इस औषधि के सेवन करने पर गरिष्ठ एवं पौष्टिक भोजन—यथा गुड़, वृष्य भोजन, अन्नपान, दूध, मांसरस—अधिक हितकर है। अर्श के अतिरिक्त पाण्डु, शोथ, कुष्ठ, प्लीहोदर, उदररोग, असमय में बालों का पकना, आमवात और भगन्दरादि गुदज रोग नष्ट हो जाते हैं। इस पृथ्वी पर कोई ऐसा रोग नहीं है जिसे यह 'अग्निमुख लौह' नामक औषधि नष्ट नहीं करती हो।

अपथ्य—करीर, काञ्जी आदि ककाराष्टक[1] का सेवन नहीं करना चाहिए। अन्यथा लौहभस्म या लौहकिट्ट भस्म दुर्जर होने के कारण शरीर के छिद्रों सें बाहर निकल जाते हैं और लाभ नहीं होता है। अतः औषधि सेवन काल में पथ्य का पालन अवश्य करना चाहिए।

मात्रा—१ से २ ग्राम तक। **अनुपान**— गरम गाय के दूध से। **उपयोग**—अर्श एवं भगन्दर में विशेष रूप सें। **वर्ण**—रक्ताभ (अवलेह रूप में)। **स्वाद**—मधुर एवं कटु मिश्रित।

८२. चन्दप्रभावटी (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्रिमिरिपुदहनव्योषत्रिफलाऽमरदारुचव्यभूनिम्बम्।
मागधिमूलं मुस्तं सशटीवचाधातुमाक्षिकञ्चैव।
लवणक्षारनिशायुगकुस्तुम्बुरुगजकणाऽतिविषाः ॥२२२॥
कर्षांशकान्येव समानि कुर्यात्
पलाष्टकं चाश्मजतोर्विदध्यात्।
निष्पत्रशुद्धस्य पुरस्य धीमान्
पलद्वयं लोहरजस्तथैव ॥२२३॥
सिताचतुष्कं पलमत्र वांश्या
निकुम्भकुम्भत्रिसुगन्धियुक्तम्।
चन्द्रप्रभेयं गुडिका प्रयोज्या
अर्शांसि निर्णाशयते षडेव ॥२२४॥
भगन्दरं पाण्डुककामलाञ्च
विनष्टवह्नेः कुरुते च दीप्तिम्।
हन्त्यामयान् पित्तकफानिलोत्थान्
नाडीगतं मर्मगते व्रणे च ॥२२५॥
ग्रन्थ्यर्बुदे विद्रधिराजयक्ष्म-
मेहे भगाख्ये प्रदरे च योज्या।
शुक्रक्षये चाश्मरिमूत्रकृच्छ्रे
मूत्रप्रवाहेऽप्युदरामये च ॥२२६॥
तक्रानुपानं त्वथ मस्तुपानं
आजो रसो जाङ्गलजो रसो वा।
पयोऽथवा शीतजलानुपानं
बलेन नागस्तुरगो जवेन ॥२२७॥
दृष्ट्या सुपर्णः श्रवणे वराहः
कान्त्या रतीशो धिषणश्च बुद्ध्या।
न पानभोज्ये परिहार्यमस्ति
न शीतवातातपमैथुनेषु ॥२२८॥
शम्भुं समभ्यर्च्य कृतप्रणामं
प्राप्ता गुडी चन्द्रमसः प्रसादात् ॥२२९॥
शुक्रदोषान् निहन्त्येव प्रमेहानपि विंशतिम्।
वलीपलितनिर्मुक्तो वृद्धोऽपि तरुणायते ॥२३०॥
वृद्धवैद्योपदेशेन पलार्द्धं रसगन्धकम्।
केवलं मूर्च्छितं वाऽपि पलं वा दापयेद्रसम् ॥२३१॥
अभ्रकञ्च क्षिपेत् कश्चित् पलमानं भिषग्वरः॥
सम्मर्द्य मधुसर्पिर्भ्यामादौ रक्तिचतुष्टयम् ॥२३२॥
भक्ष्यं वृद्ध्या यथायुक्ति यावन्माषचतुष्टयम्।
त्रिवृद्दन्तीत्रिजातानां कर्षमानं पृथक् पृथक् ॥२३३॥

१. वायविडङ्ग, २. चित्रकमूल, ३. शुण्ठी, ४. पीपर, ५. मरिच, ६. आमला, ७. हरीतकी, ८, बहेड़ा, ९. देवदारु, १० चव्य, ११. चिरायता, १२. पिपरामूल, १३. नागरमोथा, १४. कचूर, १५. वच, १६. स्वर्णमाक्षिक भस्म, १७. सैन्धव लवण, १८. यवक्षार, १९. हल्दी, २०, दारुहल्दी, २१. धनिया, २२. गजपीपर तथा २३. अतीस—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें; २४. शुद्ध शिलाजीत ३२० ग्राम, २५. शुद्ध गुग्गुलु ८० ग्राम, २६. लौहभस्म ८० ग्राम, २७. चीनी १६० ग्राम, २८. वंशलोचन ४० ग्राम, २९. दन्तीमूल ४० ग्राम, ३०. त्रिवृत्मूल ४० ग्राम, ३१. दालचीनी ४० ग्राम, ३२. छोटी इलायची ४० ग्राम तथा ३३. तेजपत्ता ४० ग्राम लें। विडङ्ग से अतीस तक एवं वंशलोचन से तेजपत्र तक की सभी काष्ठौषधियों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। पुनः एक छोटे पात्र में थोड़ा गरम जल रखें और उसमें शुद्ध गुग्गुलु एवं शुद्ध शिलाजतु डालकर पिघलावें और चम्मच से चलाते रहें। जब गूगल एवं शिलाजतु पिघल जाय तो चूल्हे से पात्र को नीचे उतारकर थोड़ा ठण्डा होने पर उपर्युक्त सभी चूर्णों को मिलाकर हाथ से अच्छी तरह मसलकर मिलावें। ततः अन्य भस्में एवं चीनी पीसकर उक्त मिश्रण में मिलाकर थोड़ा-थोड़ा गरम पानी मिलाकर सिल पर पीसें। ततः २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। सूखने से पहले ही थाली में वटी को खूब घुमाकर गोल कर लें। अथवा पालिशिंग मशीन में वटी को घुमाकर गोल करें। इसे चन्द्रप्रभावटी कहते हैं।

फलश्रुति—यह छः प्रकार के अर्श, भगन्दर, पाण्डु, कामला नाशक है, अग्निवर्द्धक है, पित्त-कफ एवं वातजन्य रोग नाशक है। नाडीव्रण, मर्मगत व्रण, ग्रन्थि, अर्बुद, विद्रधि, यक्ष्मा,

१. 'कूष्माण्डं कर्कटीं चैव कलिङ्गं कारवेल्लकम्।
कुसुम्भकं च कर्कोटं कदलीं काकमाचिका॥
ककाराष्टकमेतद्धि वर्जयेद्गरभक्षकः'। (रसार्णवम् १८/१२०)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्रमेह, योनिरोग एवं प्रदर में इसका प्रयोग किया जाता है तथा यह शुक्रक्षय, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, बहुमूत्र एवं उदर रोग नाशक है। तक्रानुपान, मस्तु अनुपान, जाङ्गम पशु-पक्षी का मांसरस, दूध, शीतल जलानुपान से लेना चाहिए। इसके सेवन से हाथी जैसा बल, घोड़े जैसा वेग, गरुड़ जैसी दृष्टि, सूअर के समान श्रवण, कामदेव जैसी सुन्दरता, बृहस्पति जैसी बुद्धि हो जाती है। इस चन्द्रप्रभावटी का सेवन करते समय खान-पान में कोई परहेज नहीं है। शीतल वायु, धूप, मैथुन आदि में कोई प्रतिबन्ध नहीं है। चन्द्रमा ने भगवान् शंकर का पूजन एवं प्रणामादि के बाद इस गुटिका को प्रसन्न होकर बताया था। यह चन्द्रप्रभा गुटिका सभी प्रकार के शुक्रदोष और बीस प्रकार के भयंकर प्रमेहों को नाश करता है। इसके सेवन के बाद मनुष्य वलीपलित रोगों से मुक्त होकर युवा हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—जल, दूध, मधु, मक्खन से; तक्रानुपान से। **स्वाद**—तिक्तरस। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **उपयोग**—अर्श, प्रमेह, मधुमेह, भगन्दर, पाण्डु, कामला, प्रदर, मूत्रविकार, शुक्रविकार आदि रोगनाशक है।

रसप्रयोगाः

८३. रसगुटिका (चक्रदत्तः)

रसस्तु पादिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाभ्रकाः।
गङ्गापालङ्ककरसे खल्लयित्वा पुनः पुनः।
रक्तिमात्रा गुदार्शोघ्नी वह्नेरत्यर्थदीपना ॥२३४॥

१. रससिन्दूर १ तोला, २. विडङ्ग चूर्ण ३ तोला, ३. मरिच चूर्ण ३ तोला तथा ४. अभ्रकभस्म ३ तोला लें। सर्वप्रथम एक खरल में रससिन्दूर का मर्दन कर शेष तीनों द्रव्यों को उसी खरल में मिलाकर जलपालक स्वरस की ७ भावना देकर १-१ रत्ती की गुटिका बनाकर छाया में सुखाकर सुरक्षित रख लें।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती)। **अनुपान**—जल या मधु से। **स्वाद**—कटु। **वर्ण**—रक्ताभ। **उपयोग**—अर्शनाशक, वह्नि-दीपक-पाचक है।

८४. तीक्ष्णमुख रस (रसे.सा.स.)

मृतसूतार्कहेमाभ्रतीक्ष्णं मुण्डञ्च गन्धकम्।
मण्डूरञ्च समं ताप्यं मर्द्यं कन्याद्रवैर्दिनम् ॥२३५॥
अन्धमूषागतं सर्वं पयः पाच्यं दृढाग्निना।
चूर्णितं सितया माशं खादेत्तच्चार्शसां हितम् ॥२३६॥
रसस्तीक्ष्णमुखो नाम चासाध्यमपि साधयेत् ॥२३७॥

१. रससिन्दूर, २. ताम्रभस्म, ३. स्वर्णभस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. तीक्ष्णलोह, ६. लोहभस्म, ७. शुद्ध गन्धक, ८. मण्डूरभस्म तथा ९. स्वर्णमाक्षिक भस्म—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लेकर पत्थर के खरल में सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और घृतकुमारी स्वरस की भावना देकर १ दिन मर्दन करें तथा गोला बनाकर सुखा लें; शराव-सम्पुट कर सन्धि बन्धन करें और दृढ़ाग्नि में पकावें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोलकर औषधि का मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित करें। इसका १ रत्ती की मात्रा में चीनी के साथ अर्श के रोगी को सेवन करावें। इसे 'तीक्ष्णमुख रस' कहते हैं। इसके सेवन से असाध्य अर्श भी १ मास के सेवनोपरान्त नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.)। **अनुपान**—चीनी के साथ। **स्वाद**—निःस्वादु। **वर्ण**—रक्ताभ। **उपयोग**—अर्शरोग, असाध्य अर्श।

८५. अर्शकुठार रस (रसेन्द्रसारसं.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मृतलौहञ्च ताम्रकम्।
प्रत्येकं द्विपलं दन्ती त्र्यूषणं शूरणं तथा ॥२३८॥
शुभाटङ्कयवक्षारसैन्धवं पलपञ्चकम्।
पलाष्टकं स्नुहीक्षीरं द्वात्रिंशच्च गवां जलैः ॥२३९॥
आपिण्डितं पचेदग्नौ खादेन्माषद्वयं ततः।
रसश्चार्शः कुठारोऽयं सर्वरोगकुलान्तकः ॥२४०॥

१. शुद्ध पारद ४० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ८० ग्राम, ३. लोहभस्म ८० ग्राम, ४. ताम्रभस्म ८० ग्राम, ५. दन्तीमूल चूर्ण २०० ग्राम, ६. त्रिकटु चूर्ण २०० ग्राम, ७. सूरण चूर्ण २०० ग्राम, ८. वंशलोचन २०० ग्राम, ९. शुद्ध टंकण २०० ग्राम, १०. यवक्षार २०० ग्राम, ११. सैन्धवनमक २०० ग्राम, १२. स्नुहीक्षीर ३२० ग्राम तथा १३. गोमूत्र १.२८० लीटर लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर कज्जली बनावें, ततः अन्य भस्मों एवं चूर्णों को मिलाकर स्नुहीक्षीर तथा गोमूत्र मिलाकर लप्सी जैसा बना लें और कड़ाही में रखकर मन्दाग्नि से पाक करें। औषधि को सूखने पर चूर्ण कर छननी से छान लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को २ माशा (२ ग्राम) की मात्रा में सेवन करने से अर्श रोग एवं सभी रोगों को नष्ट करता है। अर्श के मस्सों को काटने में यह कुठार (कुल्हाड़ी) का काम करता है। अतः इसे अर्शकुठार रस कहते हैं।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—मधु एवं तक्रानुपान से। **स्वाद**—कटु एवं लवणीय। **वर्ण**—कृष्ण। **उपयोगिता**—अर्शरोग एवं समस्त व्याधिनाशक है। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धि।

८६. अर्शकुठार रस (द्वितीय) (योगरत्नाकर)

भागः शुद्धरसस्य भागयुगलं गन्धस्य लोहाभ्रयोः
षड्बिल्वाग्निहलोषणाभयरजोदन्ती च भागैः पृथक्।
पञ्च स्युः स्फुटटङ्कणस्य च यवक्षारस्य सिन्धूद्भवाद
भागाः पञ्च गवां जलं सुविमलं द्वात्रिंशदेतत् पचेत्॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

स्नुग्दुग्धं च गवां जलावधि शनैः पिण्डीकृतं तद्भवेद्
माषैकं गुदकीलकद्रुमजटाच्छेदे कुठारो रसः ॥२४१॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. लोहभस्म २० ग्राम, ४. अभ्रक भस्म २० ग्राम, ५. बालबिल्वमज्जा ६० ग्राम, ६. चित्रकमूल चूर्ण ६० ग्राम, ७. कलिहारी मूल ६० ग्राम, ८. मरिच चूर्ण ६० ग्राम, ९. हरीतकी चूर्ण ६० ग्राम, १०. दन्तीमूल ६० ग्राम, ११. शुद्ध टङ्कण ५० ग्राम, १२. यवक्षार ५० ग्राम, १३. सैन्धवलवण ५० ग्राम, १४. स्नुहीक्षीर ३२० मि.ली. तथा १५. गोमूत्र ३२० मि. ली. लें। एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक डालकर मर्दन कर कज्जली करें। ततः अन्य भस्मों एवं काष्ठौषधियों के चूर्णों को मिलाकर स्नुहीक्षीर एवं गोमूत्र मिलाकर लप्सी जैसा बना लें और कड़ाही में रखकर अग्नि में पकावें। जब द्रव्य सूख जाय तो कड़ाही से औषधि निकालकर धूप में सुखा लें। पुनः कूटकर छननी से छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह औषधि अर्श रूपी वृक्ष को काटने के लिए कुठार जैसी है, अतः इसे 'अर्शकुठार रस' कहते हैं।

मात्रा—१ माशा। **अनुपान**—मधु एवं तक्र से। **स्वाद**—कटुक्षारीय। **वर्ण**—कृष्णाभ (धूसर)। **गन्ध**—गोमूत्रीय। **उपयोग**—अर्शरोग नाशक है।

८७. चक्राख्य रस (रसेन्द्रसारसंग्रह)

मृतसूताभ्रवैक्रान्तं ताम्रं कांस्यं समं समम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन दिनं भल्लातकैर्द्रवैः ॥२४२॥
मर्दयेद्यत्नतः पश्चाद् वटीं कुर्याद् द्विगुञ्जिकाम् ।
भक्षणाद् गुदजान् हन्ति द्वन्द्वजान् सर्वजानपि ॥२४३॥

१. रससिन्दूर १० ग्राम, २. अभ्रकभस्म १० ग्राम, ३. वैक्रान्त भस्म १० ग्राम, ४. ताम्र भस्म १० ग्राम, ५. कांस्य भस्म १० ग्राम, ६. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम और ७. भल्लातक बीज लें। एक खरल में सर्वप्रथम रससिन्दूर पीसें, ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर भल्लातक क्वाथ के साथ १ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—घी एवं तक्र से। **स्वाद**—स्वादहीन। **वर्ण**—लालवर्ण। **गन्ध**—निर्गन्ध। **उपयोगिता**—एकदोषज अर्श, द्विदोषज अर्श, त्रिदोषज अर्श में लाभप्रद हैं।

८८. चञ्चत्कुठार रस (रसेन्द्रसारसं.)

रसगन्धकलौहानां प्रत्येकं भागयुग्मकम् ।
त्रिकटुदन्तीकुष्ठैकं षड्भागं लाङ्गलस्य च ॥२४४॥
क्षारसैन्धवटङ्काणां प्रत्येकं भागपञ्चकम् ।
गोमूत्रस्य च द्वात्रिंशत्स्नुहीक्षीरं तथैव च ॥२४५॥
यावच्च पिण्डितं सर्वं तावन्मृद्वग्निना पचेत् ।
रक्तिद्वयं ततः खादेद् दिवास्वप्नादि वर्जयेत् ॥२४६॥
रसश्चञ्चत्कुठारोऽयमर्शसां कुलनाशनः ॥२४७॥

१. शुद्ध पारद २० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. लोहभस्म २० ग्राम, ४. त्रिकटुचूर्ण १० ग्राम, ५. दन्तीमूल चूर्ण १० ग्राम, ६. कूठ चूर्ण १० ग्राम, ७. यवक्षार ५० ग्राम, ८. सैन्धवलवण ५० ग्राम, ९. शुद्ध टङ्कण ५० ग्राम, १०. गोमूत्र ३२० मि. ली. तथा, ११. स्नुहीक्षीर ३२० मि.ली. लें। एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर स्नुहीक्षीर और गोमूत्र मिलाकर एक लोहे की कड़ाही में मन्दाग्नि पर पकावें। जब द्रव सूखकर पिण्ड रूप में हो जाय तो बड़े-बड़े ट्रे में फैलाकर धूप में अच्छी तरह से सुखा लें और कूटकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे चञ्चत्कुजर रूप कहते हैं।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मधु एवं तक्र से।

८९. चक्रेश्वर रस (रसेन्द्रसारसंग्रह)

चतुर्भागं शुद्धसूतं पञ्च टङ्कणमभ्रकम् ।
त्रिदिनं भावयेद् घर्मे द्रवैः श्वेतपुनर्नवैः ॥२४८॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं वातदुर्नामशान्तये ।
सिद्धश्चक्रेश्वरो नाम रसश्चार्शःकुलान्तकः ॥२४९॥

१. रससिन्दूर ४० ग्राम, २. शुद्ध टंकण ५० ग्राम और ३. अभ्रक भस्म ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रस-सिन्दूर को मर्दन कर शेष द्रव्यों को मिलाकर खूब मर्दन कर (तीन दिनों तक मर्दन करें) श्वेत पुनर्नवास्वरस की ३ भावना दें। पुनः २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह सिद्धचक्रेश्वर रस अर्शकुल को नष्ट करने वाली महौषधि है। विशेषकर वातज अर्श की महौषधि है।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मधु एवं तक्रानुपान से। **स्वाद**—क्षारीय स्वाद से युक्त। **वर्ण**—रक्ताभ वर्ण। **गन्ध**—निर्गन्ध। **उपयोगिता**—सम्पूर्ण अर्शकुल की औषधि है किन्तु वातज अर्श की महौषधि है।

९०. शिलागन्धकवटिका (रसेन्द्रसारसंग्रह)

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग् भृङ्गरसाप्लुतम् ।
सप्ताहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत् ॥२५०॥
अर्शसश्चानुलोम्यार्थं हताग्निबलवर्द्धनम् ।
रक्तिकाद्वितयं खादेत् कुष्ठादिरहितो नरः ॥२५१॥

१. शुद्ध मैनसिल ५० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, ३. भृङ्गराजस्वरस १०० मि.ली., ८. मधु ५० ग्राम तथा ५. घी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५० ग्राम लें। एक पत्थर के खरल में मैनसिल एवं गन्धक को एक साथ मिलाकर मर्दन करें और भृङ्गराजस्वरस से आप्लुत कर १ सप्ताह तक भावना दें। तत्पश्चात् मधु एवं घृत के साथ पृथक्-पृथक् भावना देकर सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.), **अनुपान**—घी, मधु एवं तक्रानुपान से। **स्वाद**—मधुराक्त। **वर्ण**—धूसर वर्ण। **गन्ध**—घृतगन्धी। **उपयोगिता**—सभी प्रकार के अर्श नष्ट हो जाते हैं।

९१. जातीफलादि वटी (रसेन्द्रसारसंग्रह)

जातीफलं लवङ्गञ्च पिप्पली सैन्धवं तथा।
शुण्ठी धुस्तूरबीजञ्च दरदं टङ्गणं तथा ॥२५२॥
समं सर्वं विचूर्ण्याथ जम्भाम्भसा विमर्दयेत्।
जातीफलादिवटीयमर्शोऽग्निमान्द्यनाशिनी ॥२५३॥

१. जायफलचूर्ण, २. लवङ्गचूर्ण, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. सैन्धवलवण, ५. शुण्ठीचूर्ण, ६. शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण, ६. हिङ्गुल और ७. शुद्ध टङ्कण लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर समभाग लेकर एक खरल में रखकर जम्बीरी निम्बू के स्वरस में ३ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह 'जातीफलादि वटी' सभी प्रकार के अर्श और अग्निमान्द्य नाशक है।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) **अनुपान**— जल। **स्वाद**—कटु। **वर्ण**—रक्ताभ। **गन्ध**—जायफल जैसा सुगन्धित। **उपयोग**—अर्श एवं अग्निमान्द्य नाशक है।

९२. पञ्चानन वटी (रसेन्द्रसारसंग्रह)

मृतसूताभ्रलौहानि मृतार्कगन्धकैः सह।
सर्वाणि समभागानि भल्लातं सर्वतुल्यकम् ॥२५४॥
वन्यशूरणमाणोत्थैर्द्रवैः पलमितैः पृथक्।
मर्दयेद्दिनमेकञ्च माषमात्रं पिबेद् घृतैः ॥२५५॥
भक्षणाद्धन्ति सर्वाणि चार्शांसि च न संशयः।
असाध्येष्वपि कर्त्तव्या चिकित्सा शङ्करोदिता।
कुष्ठरोगं निहन्त्याशु मृत्युरोगविनाशिनी ॥२५६॥

१. रससिन्दूर १० ग्राम, २. अभ्रकभस्म १० ग्राम, ३. लोहभस्म १० ग्राम, ४. ताम्रभस्म १० ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक १० ग्राम तथा ६. शुद्ध भल्लातक ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रससिन्दूर को पीसें, ततः अन्य सभी द्रव्यों को उसमें मिलाकर जंगली सूरणकन्दस्वरस तथा माणकन्दस्वरस की १-१ भावना देकर $\frac{१}{२}$ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इस 'पञ्चानन रस' की १-१ वटी बनाकर घृत के साथ सेवन करने से असाध्य एवं सभी प्रकार के अर्शरोग नष्ट हो जाते हैं—ऐसा भगवान् शंकर ने कहा है। इस वटी के सेवन से कुष्ठ जैसे भयानक, असाध्य एवं मृत्युकारक रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—$\frac{१}{२}$ रत्ती (६०-१२५ मि.ग्रा.)। **अनुपान**—घृत से। **स्वाद**—स्वादरहित। **वर्ण**—रक्ताभ। **गन्ध**—निर्गन्ध। **उपयोगिता**—अर्श, असाध्य अर्श, कुष्ठ एवं मृत्युरोग नाशक है।

९३. नित्योदित रस (रसेन्द्रसारसंग्रह)

शुद्धसूताभ्रलौहार्कविषं गन्धं समं समम्।
सर्वतुल्यांशभल्लातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥२५७॥
द्रवैः शूरणमाणोत्थैर्भाव्यं खल्ले दिनत्रयम्।
माषमात्रं लिहेदाज्यै रसैश्चार्शांसि नाशयेत् ॥२५८॥
रसो नित्योदितो नाम गुदोद्भवकुलान्तकः ॥२५९॥

१. रससिन्दूर १० ग्राम, २. अभ्रकभस्म १० ग्राम, ३. लोहभस्म १० ग्राम, ४. ताम्रभस्म १० ग्राम, ५. शुद्ध विषचूर्ण १० ग्राम, ६. शुद्ध गन्धक १० ग्राम, ७. शुद्ध भिलावा ६० ग्राम, ८. सूरणकन्दस्वरस तथा ९. मानकन्दस्वरस लें। पत्थर के खरल में सर्वप्रथम रससिन्दूर को पीसें, ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और मानकन्दस्वरस तथा सूरणकन्दस्वरस की ३-३ भावना देकर $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—$\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती (६०-१२५ मि.ग्रा.)। **अनुपान**—घृत से। **स्वाद**—निःस्वादु। **वर्ण**—रक्ताभ। **गन्ध**—निर्गन्ध। **उपयोगिता**—यह रस सम्पूर्ण गुदज रोगों को नाश करता है।

९४. अष्टाङ्गरस (रसेन्द्रसारसंग्रह)

गन्धं रसेन्द्रं मृतलौहकिट्टं
फलत्रयं त्र्यूषणवह्निभृङ्गम्।
कृत्वा समं शाल्मलिकागुडूची-
रसेन यामत्रितयं विमर्द्य ॥२६०॥
निष्कप्रमाणं गदितानुपानैः
सर्वाणि चार्शांसि हरेद्रसस्य।
लोकोपकृत्यै करुणामयेन
रसोऽयमुक्तस्त्रिपुरान्तकेन ॥२६१॥

१. शुद्ध गन्धक, २. शुद्ध पारद, ३. मण्डूर भस्म, ४. त्रिफलाचूर्ण, ५. त्रिकटुचूर्ण, ६. चित्रकमूल तथा ७. भृङ्गराज चूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर मर्दन करें और सेमरवृक्षत्वक्स्वरस और गुडूचीस्वरस की ३-३ भावना देकर १-१ निष्क (२४ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। वर्तमान समय में यह मात्रा अधिक है। अतः १-१ ग्राम की मात्रा में वटी बना लें।

मात्रा—१ ग्राम (१ माशा)। **अनुपान**— मधु के साथ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

स्वाद—कटु-कषाय। **वर्ण**—कृष्ण। **गन्ध**—निर्गन्ध। **उपयोगिता**—अर्शरोग।

९५. क्षारसाधनम् (चक्रदत्त)

प्रशस्तेऽहनि नक्षत्रे कृतमङ्गलपूर्वकम्।
कालमुष्ककमाहृत्य दग्ध्वा भस्म समाहरेत् ॥२६२॥
आढकं त्वेकमादाय जलद्रोणे पचेद्भिषक्।
चतुर्भागावशिष्टेन वस्त्रपूतेन वारिणा ॥२६३॥
शङ्खचूर्णस्य कुडवं प्रक्षिप्य विपचेत्पुनः।
शनैः शनैस्तु मृद्वग्नौ यावत्सान्द्रतनुर्भवेत् ॥२६४॥
स्वर्जिकायावशूकाभ्यां शुण्ठी मरिचपिप्पली।
वचा चातिविषा चैव हिङ्गुचित्रकयोस्तथा ॥२६५॥
एषां चूर्णानि निक्षिप्य पृथक्त्वेनाष्टमाषकम्।
दर्व्या सङ्घट्टितं चापि स्थापयेदायसे घटे।
एष वह्निसमः क्षारः कीर्त्तितः काश्यपादिभिः ॥२६६॥

१. काला मोथा, २. शंखभस्म १६ तोला, ३. सज्जीक्षार १ तोला, ४. यवक्षार १ तोला, ५. शुण्ठीचूर्ण १ तोला, ६. मरिचचूर्ण १ तोला, ७. बड़ी पीपर १ तोला, ८. वचचूर्ण १ तोला, ९. अतीसचूर्ण १ तोला, १०. शुद्ध हींग १ तोला तथा ११. चित्रकमूलचूर्ण १ तोला लें। सर्वप्रथम शुभ दिन एवं शुभ नक्षत्र में मङ्गलाचारपूर्वक स्वस्त्ययन आदि पाठ, शिव की पूजा आदि करके सूखा काला मोथा १० किलो जलाकर राख प्राप्त करें। ऐसी जली राख ३ किलो लेकर १३ लीटर जल में घोलें और कपड़े से ४-५ बार छानकर मन्दाग्नि से पाक करें। पाक करते समय १ कुडव (१८७ ग्राम) शंख भस्म मिलाकर चलाते रहें। जब गाढ़ा होने लगे तब सज्जिक्षार से चित्रकमूल तक की सभी ९ औषधियों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर दर्वी से अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। अग्नि के समान तीक्ष्ण इस क्षार को काश्यपादि ऋषियों ने कहा है।

९६. प्रतिसारणीय क्षार-निर्माण (चक्रदत्त)

तोये कालकमुष्ककस्य विपचेद्भस्माढकं षड्गुणे
पात्रे लोहमये दृढे विपुलधीर्दर्व्या शनैर्घट्टयन्।
दग्ध्वाऽग्नौ बहुशङ्खनाभिशकलान् पूतावशेषे क्षिपेद्
यद्येरण्डजनालमेष दहति क्षारो वरो वाक्शतात् ॥२६७॥
प्रायस्त्रिभागशिष्टेऽस्मिन्नच्छपैच्छिल्यरक्तता ।
सञ्जायते तदास्राव्य क्षाराम्भो ग्राह्यमिष्यते ॥२६८॥
तुर्येणाष्टमकेन षोडशभवेनांशेन संव्यूहिमो
मध्यः श्रेष्ठ इति क्रमेण विहितः क्षारोदकाच्छङ्खकः।
नातिसान्द्रो नातितनुः क्षारपाक उदाहृतः।
दुर्नामकादौ निर्दिष्टः क्षारोऽयं प्रतिसारणः ॥२६९॥
पानीयो यस्तु गुल्मादौ तं वारानेकविंशतिम् ।
स्रावयेत् षड्गुणे तोये केचिदाहुश्चतुर्गुणे ॥२७०॥

१. कृष्णमोखा (घण्टापाटलिका/कृष्णपुष्यघण्टा/Bignonia indica), २. शंखनाभिभस्म और ३. एरण्डनाल शुष्क (एरण्डपत्रदण्ड शुष्क)। २० किलो कृष्णमोखा को निर्वात स्थान में लोहे की बड़ी कड़ाही में जलाकर भस्म कर लें। पुनः इस भस्म को छननी से छानकर ३ किलो मात्रा में ग्रहण करें और साफ लोहे की कड़ाही में उसे रखकर १८ लीटर (छः गुना) जल में घोल मध्यमाग्नि में पाक करें एवं कलछुल से चलाते रहें। आधा जल शेष रहने पर साफ नये वस्त्र को चार बार मोड़कर (चौतह कर) उस जल को छान लें। ऐसा ही २-३ बार छान लें। पुनः कड़ाही साफ कर उसी में उक्त जल भर कर मन्दाग्नि में पाक करें। इसी बीच ७४५ ग्राम (१ प्रस्थ) दग्ध शंखनाभि (टुकड़े = पीसे बिना) डालकर चलावें। १०० गिनती तक अर्थात् २-३ मिनट तक चलाने के बाद परीक्षार्थ शुष्कएरण्डनाल डालकर एक-दो बार चलावें। यदि एरण्ड का शुष्क नाल जल जाय तो पाक पूर्ण हो गया—ऐसा समझना चाहिए। उक्त क्षारद्रव तृतीयांश शेष रहने पर पात्र को नीचे उतार लेना चाहिए। इस समय क्षार-द्रव में १. अच्छ, २. पिच्छिल तथा ३. रक्तवर्ण उत्पन्न हो जाता है। इसी समय क्षारद्रव को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस प्रकार उक्त क्षारद्रव में शंखनाभि भस्म की मात्रानुसार क्षारद्रव तीन प्रकार का होता है—१. मृदु, २. मध्य, ३. श्रेष्ठ।

१. चतुर्थांश शंखनाभि भस्म डालने से क्षारद्रव मृदु होता है।
२. अष्टमांश शंखनाभि भस्म डालने से क्षारद्रव मध्य होता है।
३. षोडशांश शंखनाभि भस्म डालने से क्षारद्रव श्रेष्ठ होता है।

शरीर में लगाने (प्रतिसारण कर्म) के लिए क्षारद्रव को न अति गाढ़ा, न अति पतला पकाना चाहिए। अर्श आदि रोगों के अंकुरों पर लगाने के लिए इसे बताया गया है। गुल्म आदि रोगों में पानीय क्षार (पीने योग्य क्षारद्रव) के रूप में (पीने के लिए) उपयोग हेतु उक्त क्षारद्रव में ६ गुना जल में घोलकर २१ बार छानकर प्रयोग करें। कुछ आचार्य ४ गुना जल भी मिलाने के लिए आदेश देते हैं।

९७. क्षारसूत्र (चक्रदत्त)

भावितं रजनीचूर्णैः स्नुहीक्षीरे पुनः पुनः।
बन्धनात् सुदृढं सूत्रं भिनत्त्यर्शो भगन्दरम् ॥२७१॥

वटा हुआ धागा, थूहर का दूध तथा हल्दी चूर्ण लें। स्नुहीक्षीर (थूहर के दूध) में हल्दी चूर्ण डालकर काँच के टेस्ट ट्यूब (Test tube) में रखें और उसी में वटा हुआ सूत्र (धागा) डालकर २-३ दिनों तक छोड़ दें। सूखने पर पुनः थूहर के दूध में हरिद्रा चूर्ण डालकर (टेस्ट-ट्यूब में रख कर) सुखावें। ऐसे ७ बार थूहर के दूध में सुखाने के बाद सूत्र तैयार हो जाता है। इसे क्षारसूत्र

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कहते हैं। इस सूत्र से दृढ़तापूर्वक बाँधने पर अर्श रोग के मस्से एवं भगन्दर रोग नष्ट हो जाते हैं।

क्षारसूत्र-प्रयोगविधि (चक्रदत्त)

प्राग्दक्षिणं ततो वामं पृष्ठजञ्चाग्रजं क्रमात्।
पञ्चतिक्तेन संस्नेह्य दहेत् क्षारेण वह्निना ॥२७२॥
वातजं श्लेष्मजञ्चार्शः क्षारेणास्त्रजपित्तजे।
महान्ति तनुमूलानि च्छित्वैव बलिनो दहेत्।
चर्मकीलं तथा च्छित्त्वा दहेदन्यतरेण वा ॥२७३॥

यदि अर्श के मस्से कई हों तो पहले दाहिने, पुनः बायें हिस्से का ततः पृष्ठ भाग के मस्सों को दग्ध करें। तदनन्तर अग्रभाग (अण्डकोश) के समीप के मस्सों को दग्ध करें। दग्ध से पूर्व पञ्चतिक्त घृत से सम्यक् स्निग्ध करना चाहिए। फिर क्षार एवं अग्नि से वातज, कफज अर्श को दग्ध करना चाहिए। पित्तज एवं रक्तार्श को केवल क्षार से दग्ध करना चाहिए। बलवान् रोगी के पतली जड़ों वाले बड़े मस्सों को पहले शस्त्र से काटने के बाद दग्ध करना चाहिए। चर्मकील या शरीर की त्वचा के मस्सों को काटकर क्षार या अग्नि से दग्ध करना चाहिए।

सम्यक्क्षारदग्ध के लक्षण (चक्रदत्त)

पक्वजम्बूपमो वर्णः क्षारदग्धः प्रशस्यते ॥२७४॥

क्षार से जलाने पर यदि पके जामुन के फल के समान रंग हो तो उत्तम दग्ध समझना चाहिए।

प्रतिसारणीय क्षार का प्रयोग (चक्रदत्त)

गोजीशेफालिकापत्रैरर्शः संलिख्य लेपयेत्।
क्षारेण वाक्शतं तिष्ठेद् यन्त्रद्वारं पिधाय च ॥२७५॥
तञ्चापनीय वीक्षेत पक्वजम्बूफलोपमम्।
यदि च स्यात् ततो भद्रं नो चेल्लिम्पेत् तथा पुनः।
तत् तुषाम्बुप्लुतं साज्यं यष्टीकल्केन लेपयेत् ॥२७६॥

अर्श के मस्सों को गोजिह्वा, शेफालिका (हरसिंगार) के पत्तों से खुरचकर यन्त्र लगाकर शलाका से क्षार का अर्श पर लेप करना चाहिए और १०० गिनने के बाद यन्त्र निकाल लें। यदि पके जामुन फल के जैसा वर्ण हो तो उत्तम दग्ध समझें, अन्यथा पुनः उसी प्रकार क्षारलेप करना चाहिए। अच्छी तरह दग्ध हो जाने पर व्रण को तुषाम्बु (काञ्जी का एक प्रकार) से प्रक्षालन कर मुलेठी चूर्ण में घी मिलाकर लेप करना चाहिए।

श्रेष्ठ अग्निदग्ध के लक्षण (चक्रदत्त)

न निम्नं तालवर्णाभं वह्निदग्धं स्थितासृजम् ॥२७७॥

भलीभाँति अग्निदग्ध होने पर दग्धस्थान अधिक गहरा नहीं होता है और उसका वर्ण श्वेताभ रक्त-मिश्रित वर्ण का होता है। रक्तप्रवाह बन्द हो जाता है।

वह्निदग्ध में प्रतिकार (चक्रदत्त)

निर्वाप्य मधुसर्पिर्भ्यां वह्निसञ्जातवेदनाम्।
सम्यग्दग्धे तुगाक्षीरी प्लक्षचन्दनगैरिकैः ॥२७८॥
सामृतैः सर्पिषा युक्तैरालेपं कारयेद्भिषक्।
मुहूर्त्तमुपवेश्योऽसौ तोयपूर्णेऽथ भाजने ॥२७९॥

अग्नि से जलने की पीड़ा शान्त करने के लिए मधु एवं घी मिलाकर लेप करना चाहिए। सम्यग् दग्ध होने पर वंशलोचन, प्लक्ष (पाँकड) की छाल, श्वेत चन्दन, गैरिक, गुडूची और गोघृत समभाग में लेकर सभी द्रव्यों को पीसकर दग्धस्थान में लेप करना चाहिए। इसके बाद शीतल जल से भरे पात्र (कठौत) में कुछ समय बैठकर दाह-पीड़ा शान्त करें।

उपद्रव-चिकित्सा (चक्रदत्त)

क्षारमुष्णाम्बुना पाय्यं विबन्धे मूत्रवर्चसोः।
दाहे बस्त्यादिजे लेपः शतधौतेन सर्पिषा ॥२८०॥
नवान्नं माषतक्रादि सेव्यं पाकाय जानता।
पिबेद् व्रणविशुद्ध्यर्थं बराक्वाथं सगुग्गुलुम् ॥२८१॥

मल-मूत्र कम या बन्द हो जाने पर गरम पानी में क्षार मिलाकर पीना चाहिए। पेडू या बस्ति प्रदेश में दाह हो तो 'शतधौत' घृत का लेप करना चाहिए। यदि व्रण पक रहा हो तो नया अन्न उड़द तथा तक्रादि का सेवन करना चाहिए। व्रण शोधनार्थ त्रिफला क्वाथ के साथ शुद्ध गुग्गुलु या 'त्रिफला गुग्गुलु' का प्रयोग करना चाहिए।

अर्शरोग में चिकित्साक्रम एवं पथ्य

विरेचनं लेपनमस्त्रमोक्षः
क्षाराग्निशस्त्राचरितञ्च कर्म।
पुरातना लोहितशालयश्च
सषष्टिकाश्चापि यवाः कुलत्थाः ॥२८२॥

अर्श के रोगी में विरेचन कर्म, मस्सों पर क्षाराग्नि का प्रयोग, लेप, रक्तमोक्षण तथा क्षारकर्म-अग्निकर्म एवं शस्त्रकर्म का प्रयोग हितकर है।

अर्श में पथ्य

अन्न में—'पुरातना लोहितशालयश्च सषष्टिकाश्चापि यवाः कुलत्थाः'। पुराना लाल शालिचावल, साठी के चावल, यव, कुलथी प्रशस्त हैं।

पटोलपत्तूररसोनवह्नि-
पुनर्नवाशूरणवास्तुकानि।
जीवन्तिका दन्तशठा सुरा च
शुण्ठी वयस्था नवनीतकञ्च ॥२८३॥

शाकों में—पटोल, शालिञ्चशाक, रसोन, चित्रकमूल,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पुनर्नवा, सूरणकन्द, बथुआ, जीवन्तीशाक, जम्बीरीनिम्बु, सुगन्धित सुरा, शुण्ठी, हरीतकी और मक्खन हितकर है।

भल्लतातकं सर्षपजञ्च तैलं
गोमूत्रसौवीरतुषोदकानि ।
कक्कोलधात्रीरुचकं कपित्थ-
मौष्ट्राणि मूत्राज्यपयांसि चापि ॥२८४॥
वातापहं यच्च यदग्निकारि
तदन्नपानं हितमर्शसेभ्यः ॥२८५॥

अन्य पदार्थों में—शुद्ध भिलावा, सरसो का तेल, गोमूत्र, सौवीर, तुषाम्बु, शीतल चीनी, आमला, कालानमक, कपित्थ-फल, ऊँट का मूत्र, दूध एवं घृत—ये पदार्थ अर्शरोग के लिए हितकर हैं। जो अन्नपानादि द्रव्य वातनाशक और अग्निप्रदीपक हैं वे सब अर्शरोग के लिए हितकर हैं।

गोधाऽखुलोपाकगवोष्ट्रकूर्म-
श्वावित्कुलिङ्गाजखरौ तु कीशाः ।
तरक्षुचाषाश्वशृगालकाका
येऽन्येऽपि मांसात्प्रसहाश्च तेऽपि ॥२८६॥

मांसों में—गोह, चूहा, लोमड़ी, गाय, कछुआ, श्वावित् (शल्लकी), कुलिङ्गा (गौरैया), बकरा, घोड़ा, गदहा, बिलार, वानर, लकड़बग्घा, नीलकण्ठ, घोड़ा, सियार, कौआ का मांस तथा और जो भी प्रसह पक्षी हैं उनका मांस हितकर है।

अर्शरोग में सामान्य पथ्य

कुलित्था यवगोधूमाः शालयो रक्तका हिताः ।
पुनर्नवा सूरणञ्च तक्रं धात्री कपित्थकम् ॥२८७॥
नवनीतन्तु वास्तूकं पटोलं मरिचं तथा ।
मृगमांसमजादुग्धं वृन्ताकं काञ्जिकं तथा ।
अर्शोरोगे तु पथ्यानि मुनिभिः कथितानि तु ॥२८८॥

अर्शरोग में कुलथी, यव, गोधूम, लाल शालिचावल हितकर है। शाकों में—पुनर्नवा, सूरण, तक्र, आमला, कैथ, मक्खन, बथुआ का शाक, परवल, मरिच, मृगमांस, बकरी का दूध, बैगन, काञ्जी आदि भोज्य पदार्थ को अर्शरोग के लिए मुनियों ने हितकर कहा है।

अर्शरोग में अपथ्य

आनूपमामिषं मत्स्यं पिण्याकं दधि पिष्टकम् ।
माषान् करीरं निष्पावं बिल्वं तुम्बीमुपोदिकाम् ॥२८९॥
पक्वाम्रं शालुकं सर्वं विष्टम्भीनि गुरूणि च ।
आतपं जलपानानि वमनं बस्तिकर्म च ॥२९०॥
प्राच्यवन्त्यपरान्तोत्थनदीनां सलिलानि च ।
विरुद्धानि च सर्वाणि मारुतं पूर्वदिग्भवम् ॥२९१॥
वेगावरोधं स्त्रीपृष्ठयानमुत्कटुकासनम् ।
यथास्वं दोषलञ्चान्नमर्शसः परिवर्जयेत् ॥२९२॥

आनूप देश के पशु-पक्षियों के मांस, मछली, तिल की खली, दही, पिसा हुआ गुरु अन्न, उड़द की दाल, करीर, मटर, बिल्वफल, कद्दू, पोई का शाक, पका हुआ आम, कमलकन्द या कमलदण्ड, सभी विष्टम्भी एवं गुरु पदार्थ, धूप में चलना, अग्नि सेवन न करना, अधिक जलपान करना, वमन एवं बस्तिकर्म, पूर्व दिशा से तथा अन्वन्ती आदि देश से बहने वाली नदियों का जल पान करना, सभी अर्शविरुद्ध द्रव्य, वातवर्धक द्रव्य एवं पूर्वा हवा का सेवन नहीं करना चाहिए। अधारणीय वेगों को रोकना, स्त्री सेवन, घोड़ा-ऊँट आदि की पीठ पर बैठकर यात्रा करना, उत्कटुकासन (विषमासन) एवं विपरीत (कठिन रीति से) बैठना तथा अन्य वातादि दोषवर्धक आहार-विहार अर्श के रोगी को नहीं करना चाहिए।

अर्श में विशेष विधि का उपदेश

यत्पथ्यं यदपथ्यं च रक्तपित्तिकृते मतम् ।
तत्तदेव हि बोद्धव्यं रक्तार्शोरोगिणामपि ॥२९३॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामर्शोरोगाधिकारः ।

रक्तपित्तचिकित्साधिकार में जो पथ्यापथ्य का उल्लेख किया गया है, रक्तार्थ के रोगी को भी वैसा ही पथ्यापथ्य का सेवन करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य अर्शोरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथाग्निमान्द्यादिरोगाधिकारः (१०)

जाठराग्नि की सुरक्षा का निर्देश

सारमेतच्चिकित्सायाः परमग्नेश्च पालनम्।
तस्माद्यत्नेन कर्त्तव्यं वह्नेस्तु प्रतिपालनम् ॥१॥

सभी रोगों की चिकित्सा करते समय जाठराग्नि की मुख्य रूप से रक्षा करनी चाहिए। अतः चिकित्सक का पहला कर्त्तव्य है कि जाठराग्नि की समावस्था बनाये रखने का प्रयत्न करें। क्योंकि आचार्यजी ने पहले ही कहा है कि—'रोगाः सर्वेऽपि मन्देऽग्नौ सुतरामुदराणि च'।

जाठराग्नि-रक्षा का महत्त्व

अस्तु दोषशतं क्रुद्धं सन्तु व्याधिशतानि च।
कायाग्निमेव मतिमान् रक्षन् रक्षति जीवितम् ॥२॥

अनेकों (सैकड़ों) दोषों के कुपित होने पर तथा सैकड़ों रोगों के उत्पन्न होने पर भी कायाग्नि की रक्षा करते हुए जीवन की रक्षा हो जाती है। अर्थात् पाचकाग्नि यदि बिगड़ी हुई नहीं हो तो सहसा प्रकुपित दोष एवं रोग जीवन को नष्ट नहीं कर सकते हैं।

अग्नि के भेद (भा.प्र.)

मन्दस्तीक्ष्णोऽथ विषमः समश्चेति चतुर्विधः।
कफपित्तानिलाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनलः ॥३॥

वात, पित्त एवं कफ की अधिकता से तथा उनकी समता से जाठराग्नि चार प्रकार की होती है; यथा—१. कफाधिक्य से मन्दाग्नि, २. पित्ताधिक्य से तीक्ष्णाग्नि, ३, वाताधिक्य से विषमाग्नि तथा ४. त्रिदोषों की समता से सम जाठराग्नि होती है।

मन्दाग्नि के लक्षण

स्वल्पाऽपि नैव मन्दाग्नेर्मात्रा भुक्ता विपच्यते।
छर्दिः सादः प्रसेकः स्याच्छिरोजठरगौरवम् ॥४॥

जिसकी जाठराग्नि मन्द होती है उस मनुष्य के भोजन की मात्रा यदि थोड़ी भी हो तो खाया हुआ भोजन देर से या नहीं भी पचता है। साथ ही वमन, ग्लानि, लालाप्रसेक, सिर तथा उदर में गुरुता रहती है।

तीक्ष्णाग्नि के लक्षण

मात्राऽतिमात्राऽप्यशिता तीक्ष्णाग्नेः पच्यते सुखम्।
अत एव हि केनापि मतस्तीक्ष्णाग्निरुत्तमः ॥५॥

तीक्ष्णाग्नि वाला पुरुष मात्रा से अधिक भोजन भी करे तो उसका भोजन सुखपूर्वक शीघ्र पच जाता है। अतः किसी-किसी के मत से तीक्ष्णाग्नि उत्तम मानी जाती है।

विषमाग्नि के लक्षण

अशिता खलु मात्राऽपि विषमाग्नेस्तु देहिनः।
कदाचित् पच्यते सम्यक् कदाचिन्न विपच्यते ॥६॥
तस्याध्मानमुदावर्त्तं शूलं जठरगौरवम्।
प्रवाहणमतीसारस्तथा स्यादन्त्रकूजनम् ॥७॥

जिस व्यक्ति की अग्नि विषम होती है उसके भोजन की परिमात्रा भी कभी अच्छी तरह से पचती है और कभी नहीं भी पचती है। साथ ही आध्मान, उदावर्त, शूल, उदर में गुरुता, अपानवायु का बाहर निकलते समय मल (विष्ठा) भी बाहर आ जाता है, अतिसार, आँतों की आवाज (गुड़गुड़ाहट) आदि लक्षण होते हैं।

समाग्नि के लक्षण

समा समाग्नेरशिता मात्रा सम्यग् विपच्यते।
एषां मध्ये तु सर्वेषां समाग्निः श्रेष्ठ उच्यते ॥८॥

जिस व्यक्ति की जाठराग्नि सम होती है, उस व्यक्ति की सम भोजन मात्रा समय से पच जाती है। पूर्वोक्त मन्दाग्नि आदि तीनों की अपेक्षा समाग्नि श्रेष्ठ मानी जाती है।

जाठराग्नियों के रक्षण में सामान्य क्रम

समस्य रक्षणं कार्यं विषमे वातनिग्रहः।
तीक्ष्णे पित्तप्रतीकारो मन्दे श्लेष्मविशोषणम् ॥९॥

साम्यावस्था में स्थित प्रकृतिस्थ पाचकाग्नि की उचित आहार-विहारादि करके रक्षा करनी चाहिए। इसमें विषमाग्नि में वायुदोष का निग्रह करें, तीक्ष्णाग्नि में पित्तदोष का संशमन करें तथा मन्दाग्नि में प्रवृद्ध एवं प्रकुपित कफ का शोधन और शोषण करना चाहिए।

१. अग्निदीपक हरीतक्यादि योग (भा.प्र.)

हरीतकी तथा शुण्ठी भक्ष्यमाणा गुडेन च।
सैन्धवेन युता वा स्यात्सातत्येनाग्निदीपनी ॥१०॥
गुडेन शुण्ठीमथ चोपकुल्यां
पथ्यां तृतीयामथ दाडिमं वा।
आमेष्वजीर्णेषु गुदामयेषु
वर्चोविबन्धेषु च नित्यमद्यात् ॥११॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. हरीतकी तथा शुण्ठी को गुड़ या सैन्धव लवण के साथ सतत सेवन करने से निरन्तर अग्नि बढ़ती है। आमाजीर्ण, अर्श और मल की विबन्धता में—२. शुण्ठी, पीपर, हरीतकी या अनारदाने के चूर्ण गुड़ में मिलाकर सतत सेवन करना चाहिए।

२. क्षुधावर्धकयोग (च.द.)

समयवशूकजनागरचूर्णं लीढं घृतेन गोसर्गे[1]।
कुरुते क्षुधां सुखाम्भः पीतं विश्वौषधं वैकम्[2] ॥१२॥

यवक्षार और शुण्ठी चूर्ण समभाग घी से मिलाकर प्रातःकाल चाटने तथा बाद में सुखोष्ण जल पीने से क्षुधा बढ़ती है अथवा केवल शुण्ठी चूर्ण घी के साथ अकेला चाटने से अग्नि बढ़ती है।

गोसर्गे = प्रातःकाल, वैकम् = वा या अकेला।

३. अग्निसमीकरणयोग (च.द.)

अन्नमण्डं पिबेदुष्णं हिङ्गुसौवर्चलान्वितम्।
विषमोऽपि समस्तेन मन्दो दीप्येत पावकः ॥१३॥

चावल के माँड में हींग और सौवर्चललवण मिलाकर पिलाने से विषमाग्नि सम तथा मन्दाग्नि प्रदीप्त हो जाती है।

४. अग्निसन्दीपनयोग (च.द.)

भोजनाग्रे सदा पथ्यं जिह्वाकण्ठविशोधनम्।
अग्निसन्दीपनं हृद्यं लवणार्द्रकभक्षणम् ॥१४॥

भोजन के पहले आर्द्रक (आदी) के टुकड़े ५ ग्राम और सैन्धवलवण ५०० मि.ग्रा. खाने से अग्नि प्रदीप्त होती है। जिह्वा और कण्ठ का शोधन होता है तथा हृदय के लिए हितकर है।

५. तीक्ष्णाग्नि-चिकित्सा (च.द.)

नारीक्षीरेण संयुक्तां पिबेदौदुम्बरीं त्वचम्।
आभ्यां वा पायसं सिद्धं पिबेदत्यग्निशान्तये ॥१५॥
यत्किञ्चिद् गुरु मेध्यं च श्लेष्मकारि च भेषजम्।
सर्वं तदत्यग्निहितं भुक्त्वा प्रस्वपनं दिवा ॥१६॥
मुहुर्मुहुरजीर्णेऽपि भोज्यमस्योपकल्पयेत्।
निरिन्धनोऽन्तरं लब्ध्वा यथैनं न निपातयेत् ॥१७॥

अत्यन्त प्रवृद्ध अग्नि की शान्ति के लिए—१. स्त्री का दूध २०० मि.ली. तथा २. उदुम्बरत्वक् चूर्ण २० ग्राम। उदुम्बरत्वक् चूर्ण खाकर स्त्री का दूध पान करने से भस्मक रोग शान्त हो जाता है। अथवा उदुम्बरत्वक्चूर्ण २५ ग्राम तथा स्त्री का दूध २५० मि.ली. दोनों मिलाकर पायस (खीर) बनाकर खिलाने से अतिप्रवृद्ध अग्नि शान्त हो जाती है। जितने भी गुरु एवं मेध्य और कफवर्द्धक द्रव्य हैं, वे सभी अत्यग्नि के लिए हितकारी हैं। भैंस के दूध में खीर बनाकर भोजन कर दिन में ४-५ घण्टे तक सोने से कफ की वृद्धि होकर प्रवृद्ध अग्नि कम हो जाती है। आहार का परिपाक न होने पर (पुनः-पुनः अजीर्ण होने पर) भी तीक्ष्णाग्नि युक्त व्यक्ति को पुनः-पुनः आहार देना चाहिए। ऐसा नही करने पर भोजन रहित उदर की अग्नि अवसर पाकर रस-रक्तादि धातुओं का शोषण करती है और कालान्तर में रोगी को मार देती है।

अजीर्ण-चिकित्सा (भा.प्र.)

तत्रामे वमनं कार्यं विदग्धे लङ्घनं हितम्।
विष्टब्धे स्वेदनं शस्तं रसशेषे शयीत च ॥१८॥

आमाजीर्ण में वमन तथा विदग्धाजीर्ण में लंघन हितकर है। विष्टब्धाजीर्ण में स्वेदन कर्म तथा रसशेषाजीर्ण में रोगी को शयन करना हितकर है।

६. वमनकारक योग (चक्रदत्त)

वचालवणतोयेन वान्तिरामे प्रशस्यते।
कणासिन्धुवचाकल्कं पीत्वा वा शिशिराम्भसा ॥१९॥

आमाजीर्ण में उष्णोदक में १० ग्राम वचाचूर्ण तथा १० ग्राम सैन्धवलवण मिलावें और पिलाकर वमन कराना चाहिए। अथवा पिप्पलीचूर्ण, सैन्धवचूर्ण तथा वचाचूर्ण प्रत्येक १०-१० ग्राम को शीतल जल में मिलाकर वमन कराना चाहिए।

७. आमाजीर्णहरक्वाथ (भा.प्र.)

धान्यनागरसिद्धं च तोयं दद्याद्विचक्षणः।
आमाजीर्णप्रशमनं शूलघ्नं बस्तिशोधनम् ॥२०॥

धनियाँ और शुण्ठी १२-१२ ग्राम लेकर यवकुट करें और १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर आमाजीर्ण के रोगी को पिलावें तो आमाजीर्ण के रोगी के शूल आदि कष्ट दूर हो जाते हैं और बस्ति का विशोधन होता है।

८. अजीर्ण-चिकित्सा (भा.प्र.)

भवेद्यदा प्रातरजीर्णशङ्का-
तदाऽभयां नागरसैन्धवाभ्याम्।
विचूर्णितां शीतजलेन भुक्त्वा
भुञ्ज्यादशङ्कं मितमन्नकाले ॥२१॥

प्रातःकाल जागने पर अजीर्ण की शंका हो तो हरीतकीचूर्ण, शुण्ठीचूर्ण तथा सैन्धव प्रत्येक समभाग मिलाकर ६ ग्राम शीतल जल से लें। भोजन का समय होने पर निःशंक होकर परिमित मात्रा में भोजन लेना चाहिए।

९. चित्रकादि वटी (चरक)

चित्रकं पिप्पलीमूलं द्वौ क्षारौ लवणानि च।
व्योषं हिङ्ग्वजमोदं च चव्यं चैकत्र चूर्णयेत् ॥२२॥
सौवर्चलं सैन्धवं च विडमौद्भिदमेव च।
सामुद्रेण समं पञ्च लवणान्यत्र योजयेत् ॥२३॥

१. गोसर्गे—गोः = सूर्यकिरणस्य, सर्गे = मोक्षे प्रातरित्यर्थः।
२. वैकम् = वैकमिति वा शब्दः पूर्वयोगापेक्ष्या इवार्थे वाशब्दः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गुडिका मातुलुङ्गस्य दाडिमस्य रसेन वा।
कृत्वा विपाचयत्यामं दीपयत्याशु चानलम् ॥२४॥
(दृष्टफलोऽयम्)

१. चित्रकमूलचूर्ण, २. पिप्पलीमूलचूर्ण, ३. यवक्षार, ४. सर्जक्षार, ५. सैन्धवलवण, ६. सौवर्चललवण, ७. विड्लवण, ८. सामुद्रलवण, ९. औद्भिल्लवण, १०. शुण्ठीचूर्ण, ११. पिप्पलीचूर्ण, १२. मरिचचूर्ण, १३. शुद्ध हींग, १४. अजमोदाचूर्ण तथा १५. चव्यचूर्ण—उपर्युक्त सभी द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण बनाकर बिजौरानिम्बु के स्वरस अथवा अनारस्वरस के साथ सिल पर पीसकर ५०० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बना छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसके सेवन से आम का पाचन होता है और अग्नि प्रदीप्त होती है।

मात्रा—२ से ४ वटी तक। **अनुपान**—गरम जल से। **गन्ध**—हिंगुगन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—अम्ल-लवणीय। **उपयोग**—अजीर्ण, ग्रहणी, अग्निमान्द्य एवं विसूचिका में।

विदग्धाजीर्ण की चिकित्सा (भा.प्र.)

अन्नं विदग्धं हि नरस्य शीघ्रं
शीताम्बुना वै परिपाकमेति।
तत्तस्य शैत्येन निहन्ति पित्त-
माक्लेदिभावाच्च नयत्यधस्तात् ॥२५॥

शीतल जल थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बार-बार पिलाने से रोगी का विदग्ध अन्न शीघ्र पच जाता है। क्योंकि जल शीतल होने के कारण पित्त को शान्त कर देता है तथा जल से अन्न क्लिन्न होकर नीचे की ओर (आमाशय से क्षुद्रान्त्र की ओर) चला जाता है। ततः मलरूप में बृहदन्त्र में चला जाता है जहाँ से गुदामार्ग से विष्ठारूप में बाहर उत्सर्जित होता है।

विदग्धाजीर्णहर कल्क (च.द.)

विदह्यते यस्य च भुक्तमात्रं
दह्येत हृत्कोष्ठगलं च यस्य।
द्राक्षासितामाक्षिकसम्प्रयुक्तां
लीढ्वाऽभयां वै स सुखं लभेत ॥२६॥

भोजन करने के तुरन्त बाद ही जिसका भुक्त पदार्थ विदग्ध होकर हृदय, कोष्ठ एवं गले में दाह पैदा कर दे, तो उस व्यक्ति को हरीतकीचूर्ण, द्राक्षा एवं मिश्री समभाग में लेकर एक साथ पीसकर और मधु मिलाकर सेवन करने से शीघ्र लाभ मिलता है, तथा मनुष्य सुखी हो जाता है।

१०. अजीर्णहर योग (च.द.)

हरीतकीधान्यतुषोदसिद्धा
सपिप्पली सैन्धवसम्प्रयुक्ता।
सोद्गारधूमं भृशमप्यजीर्णं
विजित्य सद्यो जनयेत्क्षुधां च ॥२७॥

१. हरीतकी १० ग्राम, २. पिप्पली १ ग्राम, ३. सैन्धव २ ग्राम तथा ४. काञ्जी १ लीटर लें। १ ली. काञ्जी को एक पात्र में रखें, उसमें हरीतकी साबुत डालकर मन्दाग्नि पर २-३ घण्टे तक पाक करें। काञ्जी सूखने पर हरीतकी को सिल पर पीस लें, उसमें पिप्पलीचूर्ण और सैन्धवचूर्ण मिलाकर लेहन करने से धूमोद्गार-युक्त अजीर्ण शीघ्र ही नष्ट हो जाता है और व्यक्ति को भूख लगने लगती है।

११. विष्टब्ध एवं रसशेषाजीर्ण में पथ्य (च.द.)

विष्टब्धे स्वेदनं पथ्यं पेयञ्च लवणोदकम्।
रसशेषे दिवास्वप्नो लङ्घनं वातवर्जनम् ॥२८॥

विष्टब्धाजीर्ण में उदरप्रदेश में स्वेदन (Foementation) करना चाहिए। लवण एवं जल (१ ग्लास जल में दो चम्मच लवण मिलाकर) थोड़ा-थोड़ा पुनः-पुनः पिलाना हितकर है। रसशेषाजीर्ण में दिन में सोना, लंघन और वायु के झोंके का सेवन न करना हितावह है।

दिन में किन्हें सोना चाहिए (च.द.)

व्यायामप्रमदाध्ववाहनरतक्लान्तानतीसारिणः।
शूलश्वासवतस्तृषापरिगतान् हिक्कामरुत्पीडितान्।
क्षीणान् क्षीणकफाञ्छिशून्मदहतान् वृद्धान् रसाजीर्णिनो
रात्रौ जागरितान्नरान्निरशनान् कामं दिवा स्वापयेत् ॥२९॥

व्यायाम, अधिक स्त्रीसम्भोग, अधिक पैदल चलना, हाथी, घोड़ा, ऊँट आदि की अधिक सवारी करने से थके हुए व्यक्ति, अतिसार, शूल, श्वास, तृषा (प्यास), हिक्का, वातविकार से पीड़ित, रस-रक्तादि से क्षीण व्यक्ति, क्षीण कफ वाले व्यक्ति, बालक, मदात्यय पीड़ित (अधिक मद्यपान किये) व्यक्ति, वृद्ध व्यक्ति, रसाजीर्ण से पीड़ित व्यक्ति, रात्रि में जगे हुए व्यक्ति और उपवास किये हुए व्यक्ति को दिन में सुलाना चाहिए। दिन में सोने से कफ की वृद्धि होती है तथा शरीर पुष्ट होता है। यथाह चरकाचार्यः—'स्वप्नप्रसङ्गाच्च नरो वराह इव पुष्यति'।

१२. सभी अजीर्णहर योग (च.द.)

आलिप्य जठरं प्राज्ञो हिङ्गुत्र्यूषणसैन्धवैः।
दिवास्वप्नं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णविनाशनम् ॥३०॥

१. हींग, २. शुण्ठीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण, ४. पिप्पलीचूर्ण और ५. सैन्धवलवण—इन्हें जल के साथ पीसकर जठर पर लेप लगाकर दिन में सुला देना चाहिए। ऐसा करने से सभी प्रकार के अजीर्ण नष्ट हो जाते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१३. पथ्यादि चूर्ण (च.द.)

पथ्यापिप्पल्युपेतं च चूर्णं सौवर्चलं पिबेत्।
मस्तुनाच्छोदकेनाथ बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥३१॥
चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दानलमरोचकम्।
आध्मानं वातगुल्मञ्च शूलञ्चाशु नियच्छति ॥३२॥

१. हरीतकीचूर्ण १०० ग्राम, २. पिप्पलीचूर्ण १०० ग्राम और ३. सौवर्चललवण १०० ग्राम—इन तीनों द्रव्यों को सम भाग की मात्रा में लेकर अच्छी तरह मिलाकर पुनः चलनी से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे आवश्यकता तथा दोषानुसार १ से ३ ग्राम की मात्रा में दही के पानी (मस्तु) या उष्णोदक के अनुपान से दिन में २-३ बार सेवन करें। इसके सेवन से चार प्रकार के अजीर्ण, अग्निमान्द्य, अरुचि, आध्मान, वातज गुल्म तथा शूलरोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

अधिक खाने से हुए अजीर्ण का प्रतिकार (भा.प्र.)

अलं पनसपाकाय फलं कदलसम्भवम्।
कदलस्य तु पाकाय बुधैरपि घृतं हितम्।
घृतस्य परिपाकाय जम्बीरस्य रसो हितः ॥३३॥
नारिकेलफलतालबीजयोः
पाचकं सपदि तण्डुलं विदुः।
क्षीरमेव सहकारपाचनं
चारमज्जनि हरीतकी हि सा ॥३४॥
मधूकमालूरनृपादनानां
परूषखर्जूरकपित्थकानाम्।
पाकाय पेयं पिचुमर्दबीजं
घृतेऽपि तक्रेऽपि तदेव पथ्यम् ॥३५॥
खर्जूरशृङ्गाटकयोः प्रशस्तं
विश्वौषधं कुत्र च भद्रमुस्तम्।
यज्ञाङ्गबोधिद्रुफलेषु शस्तं
प्लक्षे तथा पर्युषिताम्बुपीतम् ॥३६॥
तण्डुलेषु च पयः पयस्वथो
दीप्यकं तु चिपिटे कणायुतम्।
षष्टिका दधिजलेन जीयते
कर्कटी च सुमनेषु जीर्यति ॥३७॥
गोधूममाषहरिमन्थसतीनमुद्ग-
पाको भवेज्झटिति मातुलपुत्रकेण।
खर्जूरिकाबिसकसेरुसितासु शस्तः
शृङ्गाटके मधुफलेष्वपि भद्रमुस्तम् ॥३८॥
कङ्गुश्यामाकनीवाराः कुलत्थाश्चाविलम्बितम्।
दध्ना जलेन जीर्यन्ति वैदलः काञ्जिकेन तु ॥३९॥
पिष्टान्नं शीतलं वारि कृशरां सैन्धवं पचेत्।
माषेण्डरीं निम्बुफलं पायसं मुद्गयूषकः ॥४०॥
वटो वेशवाराल्लवङ्गेन फेनः
शमं पर्पटः शिग्रुबीजेन याति।
कणामूलतो लड्डुकापूपसट्टा-
दिपाको भवेच्छष्कुलीमण्डयोश्च ॥४१॥

(१) पके हुए कटहल खाने से यदि अजीर्ण हुआ हो तो पका हुआ केला खाना चाहिए। (२) पका केला खाने से यदि अजीर्ण हुआ हो तो घृत पीना चाहिए। (३) अधिक घृतपान से यदि अजीर्ण हुआ हो तो जम्बीरी निम्बू का रस सेवन करना चाहिए। (४) नारियल का फल तथा ताड़फल के अन्दर का बीज खाने से यदि अजीर्ण हुआ हो तो उसे नष्ट करने हेतु भात खाना चाहिए। (५) पके हुए आम खाने पर अजीर्ण हो तो उसे पचाने के लिए गरम गोदुग्ध पिलाना चाहिए। (६) चिरौंजी फल खाने से अजीर्ण होने पर हरीतकी का चूर्ण ३ ग्राम सेवन कराना चाहिए। (७) महुआ, बिल्व, खिरनी, फालसा, खजूर एवं कपित्थ का फल खाने से यदि अजीर्ण हुआ हो तो नीम का बीज खाना चाहिए। (८) घी और तक्र पान से यदि अजीर्ण हो तो नीम का बीज खाना चाहिए। (९) खजूर और शृङ्गाटक खाने से अजीर्ण होने पर शुण्ठीचूर्ण या नागरमोथाचूर्ण सेवन करना चाहिए। (११) उदुम्बर, पीपल एवं पाकड (प्लक्ष) के फलों के खाने से हुए अजीर्ण में वासी तथा शीतल जल पिलाना चाहिए। (११) भात पचाने के लिए जल पिलावें, अधिक जल पीने से हुए अजीर्ण में अजवायनचूर्ण खिलावें तथा चिवड़ा (चूड़ा = चपूटक) पचाने के लिए अजवायन तथा पिप्पलीचूर्ण खिलाना चाहिए। (१२) साठी चावल का भात खाने से हुए अजीर्ण-शान्त्यर्थ दही का जल (मस्तु) पिलाना चाहिए तथा ककड़ी खाने से हुए अजीर्ण में गेहूँ खिलाना उचित है। (१३) गेहूँ, उड़द, चना, मटर एवं मूँग से उत्पन्न अजीर्ण को पचाने के लिए शुद्ध धत्तूरबीज अल्पमात्रा में खिलाना चाहिए। मातुलपुत्र = शुद्ध धत्तूरफलबीज। (१४) जंगली खजूर, कमलनाल (मृणाल), कशेरुकन्द, शर्करा, सिंघाड़ा, मधु एवं नारियल खाने से उत्पन्न हुए अजीर्ण में नागरमोथाचूर्ण खाना चाहिए। (१५) कंगुनी, सामा, नीवार (क्षुद्र धान्यविशेष), कुलथी इन्हें खाने से उत्पन्न हुए अजीर्ण की शान्ति के लिए दही का पानी (मस्तु) पिलाना चाहिए। दाल खाने से अजीर्ण होने पर काँजी पिलावें। (१६) रोटी, पूड़ी आदि पिष्टान्न खाने से हुए अजीर्ण को शीतल जल पीकर शान्त करें तथा खिचड़ी जन्य अजीर्ण में सैन्धवलवण खिलाकर पचाना चाहिए। (१७) उड़द की पिट्ठी खाने से हुए अजीर्ण को निम्बू के रस पिलाकर पचावें। उड़दपिष्टि का अजीर्ण होने पर निम्बूफल चूसना चाहिए। खीर (पायस) खाने से हुए अजीर्ण की शान्ति के लिए मूँग का यूष पिलाना चाहिए। (१८) बड़ा (उड़द या चना का) एवं वेशवार के अजीर्ण में लवङ्ग खिलाना चाहिए तथा फेनी और

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पापड़जन्य अजीर्ण की शान्ति के लिए सहिजन (शिग्रु) बीज खिलाना चाहिए। (१९) लड्डू, मालपूआ, पूड़ी, सट्टा (एक पेयद्रव=पन्ना विशेष) आदि विभिन्न पाक खाने से यदि अजीर्ण हो जाय तो शान्त्यर्थ पिप्पलीमूलचूर्ण ३ ग्राम तक खिलाना चाहिए तथा लड्डू एवं माण्डजन्य अजीर्ण में पिपरामूलचूर्ण सेवन करायें।

विसूचिका रोग में चिकित्सा क्रम

विसूचिकायां वमितं विरिक्तं
सुलङ्घितं वा मनुजं विदित्वा।
पेयादिभिर्दीपनपाचनैश्च
सम्यक् क्षुधार्त्तं समुपक्रमेत ॥४२॥

विसूचिका रोग में वमन-विरेचन हो जाने पर सम्यक्तया लंघन करावें तथा लंघन के लक्षण उत्पन्न होने पर भूख से पीड़ित रोगी को दीपन एवं पाचन औषधियों के क्वाथ से साधित पेया-विलेपी आदि हलका भोजन देना चाहिए।

१४. विसूचिकाहर योग (भा.प्र.)

जलपीतमपामार्गमूलं हन्याद्विसूचिकाम्।
सतैलं कारवेल्यम्बु नाशयेद्धि विसूचिकाम् ॥४३॥

अपामार्गमूल को धो-साफ कर जल के साथ सिल पर पीसें और जल मिलाकर कपड़े से छानकर विसूचिका रोगी को पिलावें तथा करैला के पत्ती के रस में आठवाँ भाग तिलतैल मिलाकर पिलाने से विसूचिका नष्ट हो जाती है।

१५. विसूचिका-चिकित्सा (भा.प्र.)

बालमूलस्य तु क्वाथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः।
विसूचीनाशनः श्रेष्ठो जाठराग्निविवर्धनः ॥४४॥

छोटी (मुलायम) मूली के क्वाथ में पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पिलाने से विसूचिका नष्ट हो जाती है तथा जाठराग्नि को प्रदीप्त करती है।

१६. विसूचिकाहर क्वाथद्वय (भा.प्र.)

बिल्वनागरनिक्वाथो हन्याच्छर्दिं विसूचिकाम्।
बिल्वनागरकैटर्य्यक्वाथस्तदधिको गुणः ॥४५॥

(१) बिल्वफलमज्जा तथा शुण्ठी दोनों समभाग में लेकर यवकुट कर चतुर्गुण जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर पिलावें। (२) बिल्वफलमज्जा, शुण्ठी एवं कट्फलत्वक् समभाग लेकर यवकुट कर चतुर्गुण जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें। इसे पिलाने से विसूचिका दूर होती है।

१७. खल्लीशूलहरतैल (भा.प्र.)

कुष्ठसैन्धवयोः कल्कं चुक्रं तैलेन साधितम्।
विसूच्यां मर्दनं कोष्णं खल्लीशूलनिवारणम् ॥४६॥

१. तिलतैल १ ली., २. चुक्र (काञ्जी) ४ ली., ३. कूठ १२५ ग्राम तथा ४. सैन्धवलवण १२५ ग्राम लें। एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में तैल तथा कूठचूर्ण एवं सैन्धव चूर्ण का कल्क और चुक्र (काञ्जी) देकर मन्दाग्नि पर तैलपाक करें। ततः चुक्र सूखने पर पुनः उक्त तैल में ४ ली. जल देकर पाक करें। जलीयांश सूखने पर चूल्हे से तैलपात्र को नीचे उतारकर गरम-गरम तैल को कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। विसूचिका के रोगी को जब Dehydration होता है तो उस समय उसके हाथ-पैर में ऐंठन एवं वेदना होती है, उसे ही 'खल्लीशूल' कहते हैं। वह 'खल्लीशूल' वेदना नष्ट हो जाती है।

१८. व्योषादिगुटिकाऽञ्जन (च.द.)

व्योषं करञ्जस्य फलं हरिद्रां
मूलं समावाप्य च मातुलुङ्ग्याः।
छायाविशुष्का गुडिकाः कृतास्ता
हन्युर्विसूचीं नयनाञ्जनेन ॥४७॥

१. शुण्ठीचूर्ण, २. पिप्पलीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण, ४. करञ्ज-फलमज्जाचूर्ण, ५. हल्दीचूर्ण तथा ६. बिजौरानिम्बूमूलत्वक् चूर्ण—प्रत्येक १-१ भाग लें। इन औषधि चूर्णों को एक साथ मिलाकर पुनः महीन चलनी से छानकर जल के साथ मर्दन कर ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनावें तथा छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे जल के साथ स्वच्छ पत्थर पर घिसकर नेत्रों में अञ्जन करने से विसूचिका के रोगी की मूर्च्छा, शिरःशूल आदि कष्ट नष्ट हो जाते हैं।

१९. अञ्जनगुडिका (च.द.)

गुडपुष्पशिखरीतण्डुलगिरिकर्णिकाहरिद्राभिः।
अञ्जनगुडिका विलयति विसूचिकां त्रिकटुसंयुक्ता ॥

१. महुआ का फूल, २. अपामार्गतण्डुलचूर्ण, ३. अपराजिता श्वेतमूलचूर्ण, ४. हल्दीचूर्ण, ५. शुण्ठीचूर्ण, ६. पिप्पलीचूर्ण तथा ७. मरिचचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। अपामार्गबीजतण्डुल से मरिच तक के द्रव्यों के चूर्णों को एक साथ मिलाकर पुनः चलनी से छान लें। ततः महुआ के फूलों को सिल पर महीन पीसकर कल्क बना लें। छने हुए चूर्णों को महुआ के कल्क के साथ मिलाकर जल के साथ पीसें। ५०० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। जल के साथ साफ पत्थर पर घिसकर नेत्रों में अञ्जन लगाने से विसूचिका नष्ट हो जाती है।

२०. त्वक्पत्राद्युद्वर्तनतैल (च.द.)

त्वक्पत्ररास्नाऽगुरुशिग्रुकुष्ठै-
रम्लप्रपिष्टैः सवचाशताह्वैः।
उद्वर्त्तनं खल्लिविसूचिकाघ्नं
तैलं विपक्वञ्च तदर्थकारि ॥४९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. त्वक्, २. तेजपत्ता, ३. रास्ना, ४. अगुरुकाष्ठ, ५. शिग्रुत्वक्, ६. कूठमूल, ७. वचा और ८. सौंफबीज—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें चूर्ण करें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को थोड़ा-थोड़ा काञ्जी के साथ सिल पर पीसकर शरीर में उद्वर्तन (उबटन) जैसा लेपकर मर्दन करने से विसूचिका में खल्लीजन्य (Dehydration) = हाथ-पैर में ऐंठन आदि कष्ट नष्ट हो जाते हैं। इन उपर्युक्त द्रव्यों के कल्क से तिलतैल सिद्ध कर लेप या मर्दन करने से भी खल्लीजन्य (Dehydration) वेदना नष्ट हो जाती है।

तिलतैल १ ली., कल्कद्रव्य चूर्ण २५० ग्राम तथा काञ्जी ४ ली.—इसी क्रम से तैल सिद्ध करें। काञ्जी सूखने पर पुनः ४ ली. जल देकर पाक करें। जलीयांश सूखने पर तैल को छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें।

[1]अलसक-चिकित्सासूत्र (च.द.)

वमनं त्वलसे पूर्वं लवणेनोष्णवारिणा।
स्वेदो वर्त्तिर्लङ्घनञ्च क्रमश्चातोऽग्निवर्द्धनः ॥५०॥

अलसक रोग में उष्णोदक में नमक डालकर पिलावें, इससे वमन होगा। वमन के बाद स्वेदन कर गुदा को स्नेहाक्त कर फलवर्ति गुदा में प्रवेश करावें, पुनः लंघन करावें। अतः स्वेदन, वर्ति एवं लंघन करने के बाद दीपन-पाचन औषधियाँ देनी चाहिए।

२१. आनद्धोदरे प्रलेपः (च.द.)

सरुक् चानद्धमुदरमम्लपिष्टैः प्रलेपयेत्।
दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वाहिङ्गुसैन्धवैः ॥५१॥

पेट में पीड़ा, उदर में वायु भर जाने पर—१. देवदारुचूर्ण, २. वच चूर्ण, ३. कूठचूर्ण, ४. सौंफचूर्ण, ५. हींगचूर्ण और ६. सैन्धवचूर्ण—समभाग में लें। इन सभी द्रव्यों को काञ्जी के साथ सिल पर पीसकर उदर पर लेप करने से उदरशूल एवं आध्मान नष्ट हो जाते हैं।

२२. उदरशूलहरयोग (च.द.)

तक्रेण युक्तं यवचूर्णमुष्णं
सक्षारमर्त्तिं जठरे निहन्यात्।
स्वेदो घटैर्वा बहुबाष्पपूर्णै-
रुष्णैस्तथाऽन्यैरपि पाणितापैः ॥५२॥

जौ का आटा एवं यवक्षार (समभाग) लेकर तक्र के साथ सिल पर पीसकर गरम करें। उष्णतायुक्त इस प्रलेप को पेट पर लेप करने से उदरशूल शान्त हो जाता है। अथवा जलपूर्ण घट को चूल्हे पर गरम करें। रबर-नली से वाष्प को उदरशूलस्थान पर देकर सेंक करने, वस्त्र को आग पर गरम कर उदर को सेंकने, घटखर्पर गरम कर उदरप्रदेश को सेंकने या हाथ को अग्नि में तप्त कर उदर को सेंकने से उदरशूल नष्ट हो जाता है।

आमदोष युक्त शूलरोगी के लिए दिशा-निर्देश (च.द.)

तीव्रार्त्तिरपि नाजीर्णी पिबेच्छूलघ्नमौषधम्।
दोषच्छन्नोऽनलो नालं पक्तुं दोषौषधाशनम् ॥५३॥

तीव्र उदरशूल होने पर भी अजीर्ण के रोगी को शूलनाशक औषधियों का सेवन नहीं करना चाहिए, क्योंकि आमदोष से आच्छादित पाचकाग्नि—आमदोष, औषध एवं आहार इनमें से किसी को भी नहीं पचा पाती है।

२३. सैन्धवादिचूर्ण-२ (च.द.)

सिन्धूत्थपथ्यमगधोद्भववह्निचूर्ण-
मुष्णाम्बुना पिबति यः खलु नष्टवह्निः ॥५४॥
तस्यामिषेण सघृतेन वरं नवान्नं
भस्मीभवत्यशितमात्रमिह क्षणेन ॥५५॥

१. सैन्धवलवण, २. हरीतकीचूर्ण, ३. पिप्पलीचूर्ण तथा ४. चित्रकमूलचूर्ण—प्रत्येक समभाग लें। इन्हें एक साथ मिलाकर पुनः चलनी से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे सैन्धवादि चूर्ण कहते हैं। भोजन के बाद ३ ग्राम की मात्रा में गरम पानी से मन्दाग्नि से युक्त व्यक्ति यदि प्रतिदिन दो बार सेवन करता है तो कुछ ही दिनों में मांस, मांसरस, घृताधिक्य भोजन तथा नवान्न भोजन करने वाले व्यक्ति का भोजन शीघ्र ही पच जाता है।

२४. सैन्धवाद्यचूर्ण (च.द.)

सैन्धवं चित्रकं पथ्या लवङ्गं मरिचं कणा।
टङ्गणं नागरं चव्यं यमानी मधुरी वचा ॥५६॥
द्रव्याणि द्वादशैतानि समभागानि चूर्णयेत्।
भावयेन्निम्बुकद्रावैस्त्रिसप्ताहं प्रयत्नतः ॥५७॥
ततो माषद्वयं चूर्णं वारिणोष्णेन पाययेत्।
ससैन्धवेन तक्रेण मस्तुना काञ्जिकेन वा।
सैन्धवाद्यमिदं चूर्णं सद्यो वह्निं प्रदीपयेत् ॥५८॥

१. सैन्धवलवणचूर्ण, २. चित्रकमूल, ३. हरीतकीचूर्ण, ४. लवङ्गचूर्ण, ५. मरिचचूर्ण, ६. पिप्पलीचूर्ण, ६. शुद्ध टङ्कण, ८. शुण्ठीचूर्ण, ९. चव्यचूर्ण, १०. अजवायनचूर्ण, ११. सौंफ चूर्ण और १२. वचाचूर्ण—ये सभी १२ द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें एक साथ मिलाकर पुनः महीन चलनी से छानकर खरल में निम्बुस्वरस की २१ बार भावना देकर अच्छी तरह सुखा लें। पुनः चलनी से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। तदनन्तर २ से ३ ग्राम की मात्रा में इस चूर्ण को सैन्धवयुक्त तक्र या सैन्धव युक्त

---

१. अधो याति न चाप्यूर्ध्वमाहारो यो न पच्यते।
कोष्ठस्थितोऽलसीभूतस्ततोऽसावलसः स्मृतः॥
(भा.प्र.उत्त. ३० जठराग्निमान्द्य)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मस्तु से या काञ्जी अनुपान से प्रातः-सायं लेने से अग्नि को प्रदीप्त करता है। इसे 'सैन्धवाद्यचूर्ण' कहते हैं।

२५. हिंग्वष्टकचूर्ण (च.द.)

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे
समधरणधृतानामष्टमो हिङ्गुभागः।
प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषः चूर्णमेत-
ज्जनयति जठराग्निं वातरोगांश्च हन्ति ॥५९॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. अजमोदा, ५. सैन्धवलवण, ६. जीरा श्वेत, ७. जीरा स्याह और ८. शुद्ध हींग—इन्हें एक साथ चूर्ण कर महीन चलनी से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'हिंग्वष्टकचूर्ण' कहते हैं। इसे ३ से ५ ग्राम की मात्रा में १ कौर भात और ५ ग्राम घी मिलाकर भोजन करते समय पहले कौर में सेवन करें। इसे कुछ दिनों तक सेवन करने से जाठराग्नि की वृद्धि होती है तथा वायुविकार नष्ट हो जाता है।

मात्रा—३ से ५ ग्राम। **अनुपान**—भात और घी से १ कौर (पहला कौर)। **गन्ध**—हिंगुगन्धी। **वर्ण**—खाकी वर्ण का। **स्वाद**—कटु-लवण। **उपयोग**—जाठराग्नि वर्धक तथा वायु-विकार में।

२६. वडवामुखचूर्ण (भा.प्र.)

पथ्यानागरकृष्णाकरञ्जबिल्वाग्निभिः सितातुल्यैः।
वडवामुखं विजयते गुरुतरमपि भोजनं चूर्णम् ॥६०॥

१. हरीतकी, २. शुण्ठी, ३. पिप्पली, ४. करञ्जत्वक्, ५. बिल्वत्वक् तथा ६. चित्रकमूल—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। शर्करा (चीनी पिसी हुई) ६ भाग ग्रहण करें। इन छः द्रव्यों को एक साथ मिलाकर सूक्ष्म चूर्ण करें। बाद में पिसी हुई शर्करा मिलाकर पुनः चलनी से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे ३ ग्राम की मात्रा में गरम पानी से सेवन करने पर गरिष्ठ पदार्थ का भोजन भी शीघ्र जीर्ण हो जाता है।

२७. अग्निमुखचूर्ण (लघु) (च.द.)

हिङ्गुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत्।
पिप्पली त्रिगुणा प्रोक्ता शृङ्गवेरं चतुर्गुणम् ॥६१॥
यमानिका पञ्चगुणा षड्गुणा च हरीतकी।
चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठमष्टगुणं भवेत् ॥६२॥
एतद्वातहरं चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया।
पिबेद्दध्ना मस्तुना वा सुरया कोष्णवारिणा ॥६३॥
गोदावर्त्तमजीर्णञ्च प्लीहानमुदरं तथा।
अङ्गानि यस्य शीर्यन्ते विषं वा येन भक्षितम् ॥६४॥
अर्शोहरं दीपनञ्च शूलघ्नं गुल्मनाशनम्।
कासं श्वासं निहन्त्याशु तथैव क्षयनाशनम् ॥६५॥
चूर्णमग्निमुखं नाम न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥६६॥

१. शुद्ध हींग १ भाग, २. वचाचूर्ण २ भाग, ३. पिप्पली-चूर्ण ३ भाग, ४. शुण्ठीचूर्ण ४ भाग, ५. अजवायनचूर्ण ५ भाग, ६. हरीतकीचूर्ण ६ भाग, ७. चित्रकमूलचूर्ण ७ भाग तथा ८. कूठचूर्ण ८ भाग लें। इन सभी चूर्णों को एक साथ अच्छी तरह मिलाकर पुनः चलनी से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे ३ ग्राम की मात्रा में प्रसन्ना (एक प्रकार का मद्य) से, दही का पानी (मस्तु) से, सुरा से या उष्णोदक से लेने पर वायुविकारनाशक, उदावर्त्त, अजीर्ण, प्लीहारोग तथा उदररोगों को नष्ट करता है। जिस व्यक्ति के अंग क्षीण हो रहे हों, जिसने विष को खाया हो; अर्श, शूल, गुल्म, श्वास, कास और क्षय रोगों का नाश करता है। यह अग्निदीपक है। यह अग्निमुखचूर्ण कहीं पर निष्फल नहीं होता है।

२८. अग्निमुख चूर्ण (बृहत्) (च.द.)

द्वौ क्षारौ चित्रकं पाठा करञ्जं लवणानि च।
सूक्ष्मैला पत्रकं भार्गी कृमिघ्नं हिङ्गु पुष्करम् ॥६७॥
शटी दार्वी त्रिवृन्मुस्तं वचा चेन्द्रयवास्तथा।
धात्रीजीरकवृक्षाम्लं श्रेयसी चोपकुञ्चिका ॥६८॥
अम्लवेतसमम्लीका यमानी सुरदारु च।
अभयाऽतिविषा श्यामा हबुषाऽऽरग्वधं समम् ॥६९॥
तिलमुष्ककशिग्रूणां कोकिलाक्षपलाशयोः।
क्षाराणि लौहकिट्टञ्च तप्तगोमूत्रसेचितम् ॥७०॥
समभागानि सर्वाणि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
मातुलुङ्गरसेनैव भावयेच्च दिनत्रयम् ॥७१॥
दिनत्रयन्तु शुक्तेन आर्द्रकस्य रसेन च।
अत्यग्निकारकं चूर्णं प्रदीप्ताग्निसमप्रभम् ॥७२॥
उपयुक्तं विधानेन नाशयत्यचिराद् गदान्।
अजीर्णकमथो गुल्मान् प्लीहानं गुदजानि च ॥७३॥
उदराण्यन्त्रवृद्धिञ्च अष्ठीलां वातशोणितम्।
प्रणुदत्युल्बणान् रोगान्नष्टमग्निं प्रदीपयेत् ॥७४॥
समस्तव्यञ्जनोपेतं भक्तं कृत्वा सुभाजने।
दापयेदस्य चूर्णस्य विडालपदमात्रकम्।
गोदोहमात्रात्तत्सर्वं द्रवीभवति सोष्मकम् ॥७५॥

१. यवक्षार, २. सज्जिक्षारचूर्ण, ३. चित्रकमूल, ४. पाठा चूर्ण, ५. करञ्जवृक्षत्वक्, ६. सैन्धवलवण, ७. सामुद्रलवण, ८. सौवर्चललवण, ९. विड्लवण, १०. औद्भिल्लवण, ११. छोटी इलायची, १२. तेजपत्ता, १३ भारंगीमूलत्वक्, १४. वायविडङ्ग, १५. हींग, १६. पुष्करमूल, १७. कचूर, १८. दारुहल्दी, १९. निशोथ, २०. नागरमोथा, २१. वचा, २२. इन्द्रयव, २३. आमला, २४. जीरा श्वेत, २५. वृक्षाम्ल (कोकम), २६. गजपिप्पली, २७. कलौंजी (मँगरैला), २८. अम्लवेतस, २९. इमलीफल, ३०. अजवायन, ३१. देवदारु,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३२. हरीतकी, ३३. अतीस, ३४. त्रिवृत् श्यामा, ३५. हाऊबेर, ३६. अमलतासफलमज्जा, ३७. तिलक्षार, ३८. नागरमोथा-क्षार, ३९. शिग्रुक्षार, ४०. कोकिलाक्षक्षार, ४१. पलाशक्षार तथा ४२. शुद्ध मण्डूरचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम मण्डूर को अग्नि में प्रतप्त कर पुनः-पुनः ७ बार गोमूत्र में सेचन कर मण्डूर शुद्ध करें तथा कूटकर सूक्ष्म चूर्ण करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों का सूक्ष्मचूर्ण करें। सभी चूर्णों, क्षारों, लवणों और मण्डूरचूर्ण को एक साथ मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर बिजौरा निम्बुस्वरस की ३ भावना देकर ३ दिनों तक मर्दन करें। पुनः तीन दिनों तक ईक्षुरस या जामुन के सिरके (शुक्त) के साथ मर्दन करें तथा अन्त में आर्द्रक (आदी) के रस के साथ तीन दिनों तक मर्दन करें। सूखने पर पुनः चूर्ण कर महीन चलनी से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'अग्निमुख चूर्ण' कहते हैं। अत्यन्त अग्नि को प्रदीप्त करने वाला यह चूर्ण प्रदीप्त अग्नि की तरह अन्नादि भुक्त पदार्थ को शीघ्र ही जीर्ण कर देता है। इस चूर्ण की प्रतिदिन १ तोला की मात्रा है; किन्तु आजकल इसे ३-६ ग्राम की मात्रा में दो बार सेवन करने से जाठराग्नि को अत्यन्त प्रदीप्त करता है। रोगानुसार अनुपान से इसके सेवन से अजीर्ण, गुल्म, प्लीहावृद्धि, अर्श, उदररोग, अन्त्रवृद्धि, अष्ठीला, वातरक्त और अति भयंकर अन्य रोगों को नष्ट करता है। सेवन की विधि—एक पात्र में भात और अनेक शाक-सब्जी एक साथ मिलाकर दूसरे पात्र से ढ़क दें तथा १० ग्राम इस चूर्ण को मिलाकर रखें। गाय दुहने में जितना समय लगता है उतनी ही देर में ढ़का हुआ सारा भोज्य पदार्थ द्रवीभूत हो जाता है।

२९. अग्निमुखलवणचूर्ण

चित्रकं त्रिफला दन्ती त्रिवृता पुष्करं समम्।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रन्तु सैन्धवम् ॥७६॥
भावयित्वा स्नुहीक्षीरैस्तत्काण्डे निक्षिपेत्ततः।
मृदुपङ्केनानुलिप्तं प्रक्षिपेज्जातवेदसि ॥७७॥
सुदग्धन्तु समुद्धृत्य सञ्चूर्ण्योष्णाम्बुना पिबेत्।
एतदग्निमुखं नाम लवणं वह्निकृत्परम्।
यकृत्प्लीहोदरानाहगुल्मार्शःपार्श्वशूलनुत् ॥७८॥

१. चित्रकमूलचूर्ण, २. आमलाचूर्ण, ३. हरीतकीचूर्ण, ४. बहेड़ाचूर्ण, ५. दन्तीमूलचूर्ण, ६. त्रिवृत्चूर्ण और ७. पुष्करमूल-चूर्ण (१-१ भाग) लें; ९. सैन्धवलवणचूर्ण ७ भाग लें। इन सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर स्नुहीक्षीर की १ भावना दें तथा भावित सम्पूर्ण द्रव्य को स्नुहीकाण्ड में भरें, काण्ड के ऊपर १ अंगुल मोटा मिट्टी का लेप कर सुखाकर अग्नि में पकावें। अच्छी तरह से जल जाने पर औषधिपूरित स्नुहीकाण्ड को निकालें और मिट्टी हटाकर दग्ध काण्ड के साथ सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रहीत करें। १-२ ग्राम की मात्रा में उष्णोदक से सेवन करने पर अत्यग्निवर्धक है तथा यकृद्वृद्धि, प्लीहावृद्धि, उदररोग, आनाह, गुल्म, अर्श और पार्श्वशूल रोग नष्ट हो जाता है। इसे 'अग्निमुखलवणचूर्ण' कहते हैं।

३०. लवणभास्करचूर्ण (च.द.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं धान्यकं कृष्णजीरकम्।
सैन्धवञ्च विडञ्चैव पत्रं तालीशकेशरम् ॥७९॥
एषां द्विपलिकान् भागान् पञ्च सौवर्चलस्य च।
मरिचाजाजिशुण्ठीनामेकैकस्य पलं पलम् ॥८०॥
त्वगेले चार्द्धभागे च सामुद्रात् कुडवद्वयम्।
दाडिमात् कुडवञ्चैव द्वे पले चाम्लवेतसात् ॥८१॥
एतच्चूर्णीकृतं श्लक्ष्णं गन्धाढ्यममृतोपमम्।
लवणं भास्करं नाम भास्करेण विनिर्मितम् ॥८२॥
जगतस्तु हितार्थाय वातश्लेष्मामयापहम्।
वातगुल्मं निहन्त्याशु वातशूलानि यानि च ॥८३॥
तक्रमस्तुसुरासीधुशुक्तकाञ्जिकयोजितम्।
जाङ्गलानाञ्च मांसेन रसेन विविधेन च ॥८४॥
मन्दाग्नेरश्नतो नित्यं भवेदाश्वेव पावकः।
अर्शांसि ग्रहणीदोषं कुष्ठामयभगन्दरान् ॥८५॥
हृद्रोगमामदोषञ्च विबन्धानुदरे स्थितान्।
प्लीहानमश्मरीं चैव श्वासकासोदरकृमीन् ॥८६॥
विशेषतः शर्करादीन् रोगान्नानाविधांस्तथा।
पाण्डुरोगांश्च विविधान्नाशयत्यशनिर्यथा ॥८७॥

१. पिप्पली १०० ग्राम, २. पिप्पलीमूल १०० ग्राम, ३. धनियाँ १०० ग्राम, ४. स्याह जीरा १०० ग्राम, ५. सैन्धव लवण १०० ग्राम, ६. विड्लवण १०० ग्राम, ७. तेजपात १०० ग्राम, ८. तालीशपत्र १०० ग्राम, ९. नागकेशर १०० ग्राम, १०. सौवर्चललवण २५० ग्राम, ११. मरिच ५० ग्राम, १२. जीरा श्वेत ५० ग्राम, १३. शुण्ठी ५० ग्राम, १४. त्वक् २५ ग्राम, १५. बड़ी इलायची २५ ग्राम, १६. अनारदाना २०० ग्राम, १७. सामुद्रलवण ४०० ग्राम और १८. अम्लवेतस १०० ग्राम लें। इन्हें एक साथ चूर्ण करें और महीन चलनी से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह चूर्ण सुगन्धित और अमृत जैसा गुणकारी है। इसे 'लवणभास्करचूर्ण' कहते हैं। इसे आचार्य भास्कर ने निर्माण किया है। संसार की हितकामना से तथा वात-कफदोषज रोग हरणार्थ इसे बनाया गया है। वातज गुल्म, वातज शूल, अर्श, ग्रहणीदोष, कुष्ठरोग, भगन्दर, हृद्रोग, आमदोष, विबन्धादि उदररोग, प्लीहावृद्धि, अश्मरी, श्वास, कास, उदररोग, कृमिरोग, मूत्रशर्करा और पाण्डुरोग उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे इन्द्र के वज्र से वृक्ष नष्ट हो जाते हैं। इसे ३ से ५ ग्राम की मात्रा में तक्र, दही का पानी (मस्तु), सुरा, सीधु, सिरका

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

(शुक्त) और कांजी के साथ या उष्णोदक से लेना चाहिए। अथवा नित्य मांसरस के अनुपान से सेवन करने से पाचकाग्नि की वृद्धि होती है।

३१. वडवानलचूर्ण (शा.सं.)

सैन्धवं पिप्पलीमूलं पिप्पलीचव्यचित्रकम्।
शुण्ठी हरीतकी चेति क्रमवृद्धानि चूर्णयेत् ॥८८॥
वडवानलनामैतच्चूर्णं स्यादग्निदीपनम् ॥८९॥

१. सैन्धवलवण १ भाग, २. पिप्पलीमूल २ भाग, ३. पिप्पली ३ भाग, ४. चव्य ४ भाग, ५. चित्रकमूल ५ भाग, ६. शुण्ठी ६ भाग, ७. हरीतकी ७ भाग लें। इन सातों द्रव्यों को चूर्ण कर महीन चलनी से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'वडवानलचूर्ण' कहते हैं। इसे ३ ग्राम की मात्रा में निम्बुस्वरस, सिरका तथा उष्णोदक आदि से लेने पर विशेष रूप से अग्निदीपक है।

रसौषधिप्रयोग

३२. रामबाण रस (र.सा.सं.)

पारदामृतलवङ्गगन्धकं
भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम्।
जातिकाफलमथार्द्धभागिकं
तिन्तिडीफलरसेन मर्दितम् ॥९०॥
माषमात्रमनुपानयोगतः
सद्य एव जठराग्निदीपनः।
सङ्ग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकं
सामवातखरदूषणं जयेत् ॥९१॥
वह्निमान्द्यदशवक्त्रनाशनो
रामबाण इति विश्रुतो रसः ॥९२॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण १ भाग, ३. लवङ्गचूर्ण १ भाग, ४. शुद्ध गन्धक १ भाग, ५. मरिचचूर्ण २ भाग तथा ६. जायफल $\frac{1}{2}$ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी चूर्णों को इसी के साथ अच्छी तरह से मिलाकर इमली पक्व फल के द्रव की भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। सूखने के बाद काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे रामबाण रस कहते हैं। समुचित या रोगानुसार अनुपान से जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है। इसके नियमित सेवन से कुम्भकर्ण जैसा संग्रहणी, खर-दूषण जैसा आमवात और रावण जैसे अग्निमान्द्य के लिए 'रामबाण' प्रभाव विख्यात है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—रोगानुसार उष्णोदक आर्द्रक स्वरस एवं निम्बुस्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **स्वाद**—कट्वम्ल। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **उपयोग**—संग्रहणी, आमवात, मन्दाग्नि आदि में।

३३. अग्नितुण्डीवटी (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं विषं गन्धमजमोदां फलत्रयम्।
स्वर्ज्जिक्षारं यवक्षारं वह्निसैन्धवजीरकम् ॥९३॥
सौवर्चलं विडङ्गानि सामुद्रं टङ्कणं समम्।
विषमुष्टिं सर्वतुल्यं जम्बीराम्लेन मर्दयेत्।
मरिचाभां वटीं खादेदग्निमान्द्यप्रशान्तये ॥९४॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध वत्सनाभविष, ३. शुद्ध गन्धक, ४. अजमोदाचूर्ण, ५. आमलाचूर्ण, ६. हरीतकीचूर्ण, ७. बहेड़ाचूर्ण, ८. सज्जिक्षार, ९. यवक्षार, १०. चित्रकमूलचूर्ण, ११. सैन्धवलवणचूर्ण, १२. श्वेत जीरा, १३. सौवर्चललवण चूर्ण, १४. विडङ्गचूर्ण, १५. सामुद्रलवणचूर्ण और १६. शुद्ध टंकण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग और शुद्ध कुपीलु १६ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः इस कज्जली में अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण तथा शुद्ध कुपीलु चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और बिजौरा निम्बुस्वरस के साथ मर्दन कर मरिच समान १२५-१२५ मि.ग्रा की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। १-१ गोली सुबह-शाम निम्बुस्वरस या गरम जल के साथ सेवन करने से जाठराग्नि की वृद्धि होती है और मन्दाग्नि रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—उष्णोदक या निम्बुस्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अग्निमान्द्य में।

३४. अमृतकल्पवटी (र.सा.सं.)

शुद्धौ पारदगन्धौ च समानौ कज्जलीकृतौ।
तयोरर्द्धं विषं शुद्धं तत्समं टङ्कणं भवेत् ॥९५॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं त्रिदिनं यत्नतः पुनः।
मुद्गप्रमाणा वटिका कर्त्तव्या भिषजां वरैः ॥९६॥
वटीद्वयं हरेच्छूलमग्निमान्द्यं सुदारुणम्।
अजीर्णं जरयत्याशु धातुपुष्टिं करोति च ॥९७॥
नानाव्याधिहरा चेयं वटी गुरुवचो यथा।
अनुपानविशेषेण सम्यग् गुणकरी भवेत् ॥९८॥

१. शुद्ध पारद १०० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १०० ग्राम, ३. शुद्ध वत्सनाभविष ५० ग्राम तथा ४. शुद्ध टङ्कण ५० ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में वत्सनाभचूर्ण और टङ्कण मिलाकर भृङ्गराजस्वरस के साथ ३ दिनों तक मर्दन करें तथा १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'अमृतकल्पवटी' कहते हैं। १ से २ वटी उष्णोदक से लेने पर भयंकर अग्निमान्द्य एवं अजीर्ण रोग को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नष्ट करती है, भोजन को शीघ्र पचा देती है, शरीर की धातुओं को पुष्ट करती है। पाचन सम्बन्धी अनेक व्याधियों को नष्ट करती है। यह वटी गुरुवचन जैसा प्रत्यक्ष फल देती है। रोगानुसार अनुपान के साथ सेवन करने से अच्छे गुणों को देती है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—उष्णोदक या रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—मन्दाग्नि एवं अजीर्ण में।

३५. अमृतवटी (र.सा.सं.)

अमृतवराटकमरिचैर्द्विपञ्चनवभागिकैः क्रमशः।
वटिका मुद्गसमाना कफपित्ताग्निमान्द्यहारिणी ॥९९॥

१. शुद्ध वत्सनाभविष २ भाग, २. वराटिकाभस्म ५ भाग तथा ३. मरिचचूर्ण ९ भाग लें। इन्हें एक खरल में मर्दन करें और जल की भावना देकर १-१ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसे १-१ वटी प्रातः-सायं उष्णोदक के साथ सेवन करने से कफ-पित्त दोष तथा मन्दाग्नि रोग नष्ट हो जाते हैं। या कफ-पित्तदोषोत्पन्न मन्दाग्नि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि में।

३६. क्षुधासागर रस (वैद्यरहस्यम्)

त्रिकटु त्रिफला चैव तथा लवणपञ्चकम्।
क्षारत्रयं रसं गन्धं भागैकं पूर्ववद्विषम् ॥१००॥
गुञ्जामात्रां वटीं कुर्याल्लवङ्गैः पञ्चभिः सह।
क्षुधासागरनामाऽयं रसः सूर्येण निर्मितः ॥१०१॥

१. शुण्ठीचूर्ण १ भाग, २. पिप्पलीचूर्ण १ भाग, ३. मरिचचूर्ण १ भाग, ४. आमलाचूर्ण १ भाग, ५. हरीतकीचूर्ण १ भाग, ६. बहेड़ाचूर्ण १ भाग, ७. सैन्धवलवण १ भाग, ८. विड्लवण १ भाग, ९. सौवर्चललवण १ भाग, १०. सामुद्रलवण १ भाग, ११. औद्भिद लवण, १२. सज्जिक्षार १ भाग, १३. यवक्षार १ भाग, १४. शुद्ध टङ्कण १ भाग, १५. शुद्ध पारद १ भाग, १६. शुद्ध गन्धक १ भाग और १७. शुद्ध वत्सनाभविषचूर्ण ५ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को अच्छी तरह से मर्दन कर कज्जली बनावें। पुनः उसमें अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें और जल की भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे क्षुधासागर रस कहते हैं। इसका निर्माण भगवान् सूर्यदेव ने किया है। इसे ५ लवङ्ग के साथ सेवन करने पर अग्निमान्द्य नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्ण। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणीय। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि एवं अजीर्ण में।

३७. लवङ्गादि वटी-१ (र.सा.सं.)

लवङ्गशुण्ठीमरिचानि भृष्ट-
सौभाग्यचूर्णानि समानि कृत्वा।
भाव्यान्यपामार्गहुताशवारा
प्रभूतमांसादिकजारणाय ॥१०२॥

१. लवङ्गचूर्ण, २. शुण्ठीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण तथा ४. शुद्ध टङ्कण (समभाग) लें। इन चारों चूर्णों को खरल में एक साथ मिलाकर अपामार्गस्वरस और चित्रकमूलक्वाथ से पृथक्-पृथक् १-१ दिन तक मर्दन करें। ततः ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसी १-१ वटी को उष्णोदक से कुछ दिनों तक सेवन करने से अग्नि अत्यधिक प्रदीप्त हो जाती है जिससे मांसादिक गरिष्ठ पदार्थों का भोजन भी शीघ्र पच जाता है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर वर्ण। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि एवं अजीर्ण में।

३८. लवङ्गादिवटी-२ (र.सा.सं.)

लवङ्गजातीफलधान्यकुष्ठ
जीरद्वयं त्र्यूषणत्रैफलञ्च।
एलात्वचं टङ्कवराटमुस्तं
वचाऽजमोदा बिडसैन्धवञ्च ॥१०३॥
तदर्धकं पारदगन्धकाभ्रं
लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्ण्य सर्वम्।
तन्नागवल्लीदलतोयपिष्टं
वल्लप्रमाणां वटिकाञ्च कृत्वा ॥१०४॥
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णतोयै-
रियं निहन्याद् ग्रहणीविकारम्।
आमानुबन्धं सरुजं प्रवाहं
ज्वरं तथा श्लेष्मभवं सशूलम् ॥१०५॥
कुष्ठाम्लपित्तं प्रबलं समीरं
मन्दानलं कोष्ठगतं च वातम्।
वसुप्रणीतेयमतीव शीघ्रं
बृहल्लवङ्गादिवटी निहन्ति ॥१०६॥

१. लवङ्गचूर्ण १ भाग, २. जायफल १ भाग, ३. धनियाँ चूर्ण १ भाग, ४. कुठचूर्ण १ भाग, ५. जीराचूर्ण १ भाग, ६. स्याहजीराचूर्ण १ भाग, ७. शुण्ठीचूर्ण १ भाग, ८. पिप्पलीचूर्ण १ भाग, ९. मरिचचूर्ण १ भाग, १०. आमलाचूर्ण १ भाग, ११. हरीतकीचूर्ण १ भाग, १२. बहेड़ाचूर्ण १ भाग, १३. छोटी-इलायचीचूर्ण १ भाग, १४. त्वक्चूर्ण १ भाग, १५. शुद्ध टङ्कण १ भाग, १६. वराटिकाभस्म १ भाग, १७. नागरमोथाचूर्ण १

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भाग, १८. वचाचूर्ण १ भाग, १९. अजमोदाचूर्ण १ भाग, २०. विड्लवण १ भाग, २१. सैन्धव १ भाग, २२. शुद्ध पारद $\frac{१}{२}$ भाग, २३. शुद्ध गन्धक $\frac{१}{२}$ भाग, २४. अभ्रक $\frac{१}{२}$ भाग तथा २५. लौहभस्म १ भाग ग्रहण करें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। उस कज्जली में पहले भस्मों को मिलावें। ततः अन्य चूर्णों को मिलाकर ताम्बूलपत्रस्वरस की भावना देकर ३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १-१ वटी उष्णोदक से सेवन करने से ग्रहणीविकार, आमाजीर्ण, सशूल प्रवाहिका, प्रवाहिका ज्वर, कफज शूल, कुष्ठ, अम्लपित्त, प्रबल वायु, मन्दाग्नि, कोष्ठगत वायुविकार को कुछ दिनों के सेवन से नष्ट करती है। इस लवङ्गादि वटी को वसु नामक आचार्य ने निर्मित किया है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—श्याम वर्ण। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य तथा आमाजीर्ण में।

३९. अजीर्णकण्टक रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं विषं गन्धं समं सर्वं विचूर्णयेत्।
मरिचं सर्वतुल्यं स्यात् कण्टकार्य्याः फलद्रवैः ॥१०७॥
मर्दयेद्भावयेत् सर्वमेकविंशतिवारकम्।
गुञ्जामात्रां वटीं खादेत् सर्वाजीर्णप्रशान्तये।
अजीर्णकण्टकः सोऽयं रसो हन्ति विसूचिकाम् ॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध वत्सनाभ १ भाग, ३. शुद्ध गन्धक १ भाग तथा ४. मरिचचूर्ण ३ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में वत्सनाभ एवं मरिचचूर्ण का मर्दन कर कण्टकारी फलरस की २१ भावना देकर मर्दन करें तथा १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रातः-सायं १-१ वटी उष्णोदक के साथ कुछ दिनों तक सेवन करने से सभी प्रकार के अजीर्ण रोग शान्त हो जाते हैं। इसे अजीर्णकण्टक वटी कहते हैं। इसके सेवन से विसूचिका रोग भी नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्ण। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि एवं अजीर्ण में।

४०. महोदधिवटी-१ (र.सा.सं.)

एकैकं विषसूतौ च जातीटङ्गं द्विकं द्विकम्।
कृष्णात्रयं विश्वषट्कं तथा दग्धं कपर्दकम् ॥१०९॥
देवपुष्पं बाणमितं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः।
महोदधिवटी नाम्ना नष्टमग्निं प्रदीपयेत् ॥११०॥

१. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण १ भाग, २. रससिन्दूर १ भाग, ३. जायफल २ भाग, ४. शुद्ध टङ्कण २ भाग, ५. पिप्पलीचूर्ण ३ भाग, ६. शुण्ठी ६ भाग, ७. कौडीभस्म ६ भाग तथा ८. लवङ्ग चूर्ण ५ भाग लें। एक खरल में पहले रससिन्दूर को पीसें, ततः अन्य चूर्णों को मिलाकर जल की भावना देकर १ दिन मर्दन करें। इसकी ३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे महोदधिरस कहा जाता है। प्रातः-सायं १-१ वटी उष्णोदक से सेवन करने से मन्दाग्नि नष्ट होकर अग्नि प्रदीप्त हो जाती है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—किञ्चिद्रक्ताभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि रोग में।

४१. महोदधिवटी-२ (र.सा.सं.)

लवङ्गं चित्रकं शुण्ठी जयपालं समं समम्।
टङ्कणं च प्रदातव्यं वृद्धदारञ्च कार्षिकम् ॥१११॥
चतुर्दशभावनाश्च दन्तीद्रावैः प्रदापयेत्।
लिम्पाकेन त्रिधा देया वृद्धदारेण पञ्चधा ॥११२॥
रसं गन्धं च गरलं मेलयित्वा विभावयेत्।
आर्द्रकस्य रसेनैव चित्रकस्य रसेन वा ॥११३॥
मुद्गप्रमाणां वटिकां कृत्वा खादेद्दिने दिने।
क्षुत्प्रबोधकरी चेयं जीर्णज्वरविनाशिनी ॥११४॥

१. लवङ्गचूर्ण, २. चित्रकमूलचूर्ण, ३. शुण्ठीचूर्ण, ४. शुद्ध जयपाल, ५. शुद्ध टङ्कण, ६. विधारामूलचूर्ण, ७. शुद्ध पारद, ८. शुद्ध गन्धक और ९. शुद्ध वत्सनाभविषचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को खरल में मर्दन कर अच्छी कज्जली बनाकर पृथक् कर लें। ततः लवङ्गचूर्ण से विधाराचूर्ण तक ६ द्रव्यों को एक साथ खरल में मर्दन कर दन्तीमूलक्वाथ की १४ भावना, निम्बूस्वरस की ३ भावना व विधारामूलक्वाथ की ५ भावना दें। ततः इस भावित औषधि में उपर्युक्त कज्जली और शुद्ध वत्सनाभ मिलाकर आर्द्रकस्वरस तथा चित्रकमूलक्वाथ की १-१ भावना देकर $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र संग्रहीत करें। प्रातः-सायं १-१ वटी आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन करने से प्रतिदिन उत्तरोत्तर भूख बढ़ती है और जीर्ण ज्वर नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्ण। **अनुपान**—आर्द्रकरस। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—जीर्ण ज्वर एवं मन्दाग्नि में।

४२. अग्निकुमार रस-१ (र.सा.सं.)

रसेन्द्रगन्धौ सह टङ्कणेन
समं विषं योज्यमिह त्रिभागम्।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कपर्दशङ्खाविह नेत्रभागौ
मरिचमत्राष्टगुणं प्रदेयम् ॥११५॥
सुपक्वजम्बीररसेन घृष्टः
सिद्धो भवेदग्निकुमार एषः।
विसूचिकाऽजीर्णसमीरणार्त्ते
दद्याच्च गुञ्जां ग्रहणीगदेऽपि ॥११६॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. शुद्ध टङ्कण १ भाग, ४. शुद्ध वत्सनाभ ३ भाग, ५. कौड़ी भस्म ३ भाग, ६. शंख भस्म ३ भाग तथा ७. मरिचचूर्ण ८ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः अन्य द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर जम्बीरी निम्बुस्वरस की एक भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे अग्निकुमार रस कहते हैं। आर्द्रकस्वरस के साथ प्रातः-सायं १-१ वटी सेवन करने से कुछ दिनों में अग्निमान्द्य, विसूचिका, अजीर्ण, वायुविकार और ग्रहणी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ से २ वटी। **वर्ण**—कृष्ण। **अनुपान**—आर्द्रक स्वरस। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण, अग्निमान्द्य, संग्रहणी एवं विसूचिका में।

४३. अग्निकुमार रस-२ (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च टङ्कणम्।
फलत्रयं यवक्षारं व्योषं पञ्चपटूनि च ॥११७॥
द्वादशैतानि सर्वाणि रसतुल्यानि योजयेत्।
संमर्द्य सप्तधा सर्वं भावयेदार्द्रकद्रवैः ॥११८॥
संशोष्य चूर्णयित्वा तु भक्षयेदार्द्रकाम्बुना।
माशामात्रं वयो वीक्ष्य नानाऽजीर्णप्रशान्तये ॥११९॥
रसश्चाग्निकुमारोऽयं महेशेन प्रकाशितः।
महाग्निकारकश्चैव तेजसा कालभास्करः ॥१२०॥
अग्निमान्द्यभवान् रोगाञ् शोथं पाण्ड्वामयं जयेत्।
दुर्नामग्रहणीसामरोगान् हन्ति न संशयः ॥१२१॥
यथेष्टाहारचेष्टस्य नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥१२२॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. शुद्ध टङ्कण २ भाग, ४. आमलाचूर्ण १ भाग, ५. हरीतकीचूर्ण १ भाग, ६. बहेड़ाचूर्ण १ भाग, ७. यवक्षार १ भाग, ८. शुण्ठी-चूर्ण १ भाग, ९. पिप्पलीचूर्ण १ भाग, १०. मरिचचूर्ण १ भाग, ११. सैन्धवचूर्ण १ भाग, १२. सौवर्चललवण १ भाग, १३. सामुद्रलवण १ भाग, १४. विड्लवण १ भाग तथा १५. औद्भिल्लवण १ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उसी खरल में टङ्कण तथा अन्य १२ द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें और आर्द्रकस्वरस की भावना देकर १ माशा के बराबर १-१ ग्राम (८-८ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। १-१ वटी प्रातः-सायं आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन करने से कुछ दिनों में अत्यन्त अग्निप्रदीपक है। भगवान् शंकर द्वारा निर्मित यह अग्निकुमार रस प्रलयकालीन सूर्य जैसा अग्निदीप्तिकर है। इसके सेवन से अग्निमान्द्य जन्य शोथ, पाण्डु, अर्श, ग्रहणी, आमजन्य रोग निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं। इस औषधि के सेवनकाल में कोई पथ्य-परहेज का नियम नहीं है।

मात्रा—१ ग्राम। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—आर्द्रक स्वरस। **स्वाद**—लवणीय। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि जन्य रोगों में।

४४. हुताशन रस-१ (र.सा.सं.)

गन्धेशटङ्कणैकैकं विषमत्र त्रिभागिकम्।
अष्टभागन्तु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम् ॥१२३॥
तद्वटीं मुद्गमानेन कृत्वाऽऽर्द्रेण प्रयोजयेत्।
शूलारोचकगुल्मेषु विसूच्यामग्निमान्द्यके।
अजीर्णे सन्निपातादौ शैत्ये जाड्ये शिरोगदे ॥१२४॥

१. शुद्ध गन्धक १ भाग, २. शुद्ध पारद १ भाग, ३. शुद्ध टङ्कण १ भाग, ४. शुद्ध वत्सनाभविष ३ भाग और ५. मरिच चूर्ण ८ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में शेष तीनों द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें तथा जम्बीरीनिम्बुस्वरस के साथ एक दिन तक दृढ़ मर्दन करें। ६५ मि.ग्रा. ($\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रतिदिन प्रातः-सायं १-१ वटी आर्द्रकस्वरस से लें। कुछ दिनों तक इस औषधि के सेवन करने से शूल, अरुचि, गुल्म, विसूचिका, अग्निमान्द्य और अजीर्ण, सन्निपात ज्वर, शैत्य, जड़ता और शिरोरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णवर्ण। **अनुपान**—आर्द्रक स्वरस से। **स्वाद**--कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं विसूचिका में।

४५. हुताशन रस-२ (र.सा.सं.)

एकद्विकद्वादशभागयुक्तं
योज्यं विषं टङ्कणमूषणं च।
हुताशनो नाम हुताशनस्य
करोति वृद्धिं कफजिन्नराणाम् ॥१२५॥

१. शुद्ध वत्सनाभ विष १ भाग, २. शुद्ध टङ्कण २ भाग तथा ३. मरिचचूर्ण १२ भाग लें। इन्हें एक खरल में एक साथ मिलाकर मर्दन कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे हुताशन रस

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कहते हैं। इसे २५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती) की मात्रा में आर्द्रक-स्वरस के साथ प्रयोग करें। कुछ दिनों तक इसके प्रयोग से अग्नि अत्यन्त प्रदीप्त हो जाती है और कफ तथा कफविकार नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—मरिचगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्यनाशक है।

४६. जातीफलादिवटी (र.सा.सं.)

जातीफलं लवङ्गं च पिप्पली सिन्धुकामृतम्।
शुण्ठी धुस्तूरबीजं च दरदं टङ्कणं तथा ॥१२६॥
समं सर्वं समाहृत्य जम्भाम्भसा विमर्दयेत्।
वल्लमाना वटी कार्या वह्निमान्द्यप्रशान्तये ॥१२७॥

१. जायफलचूर्ण, २. लवङ्गचूर्ण, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. सैन्धवलवण, ५. शुद्ध वत्सनाभविष, ६. शुण्ठी, ७. शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण, ८. शुद्ध हिङ्गुल और ९. शुद्ध टङ्कण (सभी द्रव्य १-१ भाग) लें। इन्हें एक खरल में एक साथ मिलाकर मर्दन करें और जम्बीरीनिम्बुस्वरस के साथ एक दिन तक मर्दन कर ३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे प्रातः-सायं १-१ वटी आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन कराना चाहिए। इसके सेवन करने से अग्नि प्रदीप्त होती है और अग्निमान्द्य रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर। **अनुपान**—आर्द्रक-स्वरस। **स्वाद**—कटु-लवण। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्यनाशक।

४७. भास्कररस

विषं सूतं फलं गन्धं त्र्यूषणं टङ्गजीरकम्।
एकैकं द्विगुणं लौहं शङ्खमभ्रं वराटकम् ॥१२८॥
सर्वतुल्यं लवङ्गं च जम्बीरैर्भावयेद्भिषक्।
सप्तवासरपर्य्यन्तं ततः स्याद्भास्करो रसः ॥१२९॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटीं कुर्याद्विचक्षणः।
ताम्बूलदलयोगेन वटीं सञ्चर्व्य भक्षयेत् ॥१३०॥
शूलरोगेषु सर्वेषु विसूच्यामग्निमान्द्यके।
सद्यो वह्निकरो ह्येष चन्द्रनाथेन भाषितः ॥१३१॥

१. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण १० ग्राम, २. शुद्ध पारद १० ग्राम, ३. जायफलचूर्ण १० ग्राम, ४. शुद्ध गन्धक १० ग्राम, ५. शुण्ठीचूर्ण १० ग्राम, ६. पिप्पलीचूर्ण १० ग्राम, ७. मरिचचूर्ण १० ग्राम, ८. श्वेतजीराचूर्ण १० ग्राम, ९. लौहभस्म २० ग्राम, १०. शंखभस्म २० ग्राम, ११. अभ्रकभस्म २० ग्राम, १२. कौड़ीभस्म २० ग्राम तथा १३. लवङ्गचूर्ण १६० ग्राम लें! एक खरल में पारद एवं गन्धक मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में क्रमशः अभ्रक-लौह-शंख- वराटिका भस्मों को एक-एक कर मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर अन्य सभी चूर्णों को मिलावें और जम्बीरीनिम्बुस्वरस की ७ भावना देकर ७ दिनों तक मर्दन करें। ततः २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे भास्कर रस कहते हैं। ताम्बूलपत्र के बीच में १ वटी रखकर चबा जाना चाहिए। कुछ दिनों तक इस तरह औषधि सेवन करने से सभी तरह के शूलरोग, विसूचिका, अग्निमान्द्य रोग नष्ट हो जाते हैं। इससे अग्नि प्रदीप्त होती है। इसे आचार्य चन्द्रनाथ ने कहा है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कपोत वर्ण। **अनुपान**—२-३ ताम्बूल पत्र से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—लवङ्ग जैसी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं शूल में।

४८. अग्निसन्दीपनरस

षड्षणं पञ्चपटु त्रिक्षारं जीरकद्वयम्।
ब्रह्मदर्भोग्रगन्धा च मधुरी हिङ्गु चित्रकम् ॥१३२॥
जातीफलं तथा कुष्ठं जातीकोषं त्रिजातकम्।
चिञ्चाशिखरिकक्षीरममृतं रसगन्धकौ ॥१३३॥
लौहमभ्रञ्च वङ्गञ्च लवङ्गञ्च हरीतकी।
समभागानि सर्वाणि भागौ द्वावम्लवेतसात् ॥१३४॥
शङ्खस्य भागाश्चत्वारः सर्वमेकत्र भावयेत्।
क्वाथेन पञ्चकोलस्य चित्रापामार्गयोस्तथा ॥१३५॥
अम्ललोणीरसेनैव प्रत्येकं भावयेत्त्रिधा।
त्रिःसप्तकृत्वो लिम्पाकरसैः पश्चाद्विभावयेत् ॥१३६॥
बदराभा वटी कार्या भोक्तव्या सन्ध्ययोर्द्वयोः।
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषानुसारतः ॥१३७॥
अग्निसन्दीपनो नाम रसोऽयं भुवि दुर्लभः।
दीपयत्याशु मन्दाग्निमजीर्णञ्च विनाशयेत् ॥१३८॥
अम्लपित्तं तथा शूलं गुल्ममाशु व्यपोहति ॥१३९॥

१. पिप्पलीचूर्ण, २. पिप्पलीमूलचूर्ण, ३. चव्यचूर्ण, ४. चित्रकमूल, ५. शुण्ठीचूर्ण, ६. मरिचचूर्ण, ७. सैन्धवचूर्ण, ८. सौवर्चललवणचूर्ण, ९. सामुद्रलवण, १०. विड्लवण, ११. औद्भिल्लवण, १२. यवक्षारचूर्ण, १३. सज्जिक्षारचूर्ण, १४. शुद्ध टङ्कण, १५. श्वेतजीराचूर्ण, १६. स्याहजीराचूर्ण, १७. अजवायनचूर्ण, १८. वचा चूर्ण, १९. सौंफचूर्ण, २०. घृतभर्जित हींग, २१. चित्रकमूलचूर्ण, २२. जायफलचूर्ण, २३. कुठचूर्ण, २४. जातीपत्रीचूर्ण, २५. छोटी इलायचीचूर्ण, २६. त्वक्चूर्ण, २७. तेजपत्रचूर्ण, २८. इमलीत्वक्क्षार, २९. अपामार्गक्षार, ३०. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण, ३१. शुद्ध पारद, ३२. शुद्ध गन्धक-चूर्ण, ३३. लौहभस्म, ३४. अभ्रकभस्म, ३५. वङ्गभस्म, ३६. लवङ्गचूर्ण तथा ३७. हरीतकीचूर्ण—इन सभी ३७ द्रव्यों को १-१ भाग लें; ३८. अम्लवेतस २ भाग तथा

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३९. शंखभस्म ४ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में अभ्रक, लौह एवं वङ्गभस्म डालकर मर्दन करें। इसके बाद उसमें अन्य सभी काष्ठौषधों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें और पञ्चकोलक्वाथ की भावना दे-देकर तीन दिनों तक मर्दन करें। पुनः चित्रकमूल- क्वाथ, अपामार्गक्वाथ, खट्टी लोणीशाक-स्वरस की ३-३ भावना दें और तत्पश्चात् निम्बुस्वरस की २१ भावना देकर १-१ ग्राम की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रातः-सायं १-१ वटी दोषानुसार अनुपान या उष्णोदक से लें। इस जगत्प्रसिद्ध दुर्लभ रस को अग्निसन्दीपन रस कहते हैं। कुछ दिनों तक इसका सेवन करने से अग्नि शीघ्र ही प्रदीप्त हो जाती है; मन्दाग्नि, अजीर्ण, अम्लपित्त, शूल तथा गुल्म रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ ग्राम। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—लवणाम्लीय। **अनुपान**—दोष एवं रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि, शूल एवं अजीर्ण में।

४९. त्रिफलालौह (र.सा.सं.)

त्रिफलामुस्तवेल्लैश्च सितया कणया समम्।
खरमञ्जरीबीजैश्च लौहं भस्मकनाशनम् ॥१४०॥

१. आमलाचूर्ण, २. हरीतकीचूर्ण, ३. बहेड़ाचूर्ण, ४. नागरमोथाचूर्ण, ५. वायविडङ्गचूर्ण, ६. शर्करा, ७. पिप्पली-चूर्ण, ८. अपामार्गबीजचूर्ण—ये सभी द्रव्य १-१ भाग तथा ९. लौह भस्म ८ भाग लें। इन सभी चूर्णों और लौहभस्म को एक साथ मिलाकर महीन चलनी से पुनः छान लें। मोटे चूर्णों को पुनः कूटकर छान लें। जल की भावना देकर ५०० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे आवश्यकतानुसार १ से २ वटी की मात्रा में प्रतिदिन २ बार सेवन करने से भस्मक रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम। **वर्ण**—कत्थई। **अनुपान**—जल से या दोषानुसार। **स्वाद**—कषाय। **गन्ध**—निर्गन्ध। **उपयोग**—भस्मक रोग में।

५०. राजवल्लभरस (र.सा.सं.)

रसनिष्कं गन्धनिष्कं निष्कमात्रं प्रदीपनम्।
मानमर्द्धं प्रदातव्यं चुल्लिकालवणं भिषक् ॥१४१॥
मर्दयित्वा प्रदातव्यमथास्य माषमात्रकम्।
अजीर्णे चाग्निमान्द्ये च दातव्यो राजवल्लभः ॥१४२॥

१. शुद्ध पारद ३ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ३ ग्राम, ३. शुद्ध वत्सनाभ ३ ग्राम तथा ४. नौसादर १५०० मि.ग्रा. लें। (इसे २०० ग्राम से भी प्रारम्भ किया जा सकता है। तीनों—पारद, गन्धक, वत्सनाभ प्रत्येक २०० ग्राम तथा नौसादर १०० ग्राम लेना चाहिए।) इन चारों द्रव्यों को उपर्युक्त मात्रा में लेकर खरल में मर्दन करें और जल की भावना देकर ६० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १-१ वटी जल के साथ लेने से अजीर्ण और अग्निमान्द्य रोग नष्ट हो जाते हैं। इसे राजवल्लभ रस कहते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **अनुपान**—जल से। **स्वाद**—क्षारीय। **गन्ध**—निर्गन्ध। **उपयोग**—मन्दाग्नि एवं अजीर्ण में।

५१. विजयरस (र.सा.सं.)

रसस्यैकं पलं दत्त्वा नागं च गन्धकं पलम्।
क्षारत्रयं पलं देयं लवङ्गं पलपञ्चकम् ॥१४३॥
दशमूलीजयाचूर्णं तद्द्रवेण तु भावयेत्।
चित्रकस्य रसेनाथ भृङ्गराजरसेन तु ॥१४४॥
शिग्रुमूलद्रवैश्चापि ततो भाण्डे निरुद्ध्य च।
याममात्रं पचेदग्नौ मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥१४५॥
ताम्बूलीपत्रसंयुक्तं खादेन्निष्कमितं सदा ॥१४६॥

१. शुद्ध पारद ४६ ग्राम, २. शुद्ध वत्सनाभ ४६ ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक ४६ ग्राम, ४. यवक्षार ४६ ग्राम, ५. सज्जीक्षार ४६ ग्राम, ६. शुद्ध टङ्कण ४६ ग्राम और ७. लवङ्गचूर्ण २३० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद दशमूलक्वाथ, भाँग के स्वरस, चित्रकमूलक्वाथ, भृङ्गराजस्वरस तथा सहिजनत्वक्-स्वरस से ३-३ भावना दें। पुनः इस भावित औषधि का एक बड़ा-सा गोला बनाकर सुखा लें। शराव-सम्पुट कर बालुका यन्त्र में रखें और ३ घण्टे तीव्राग्नि से पाक करें। स्वाङ्गशीतल होने पर शराव-सम्पुट से औषधिगोलक को निकालकर खरल में पुनः मर्दन करें और आर्द्रकस्वरस की भावना देकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। ताम्बूल के २-३ पत्रों के बीच १ निष्क (२४ रती) रखकर चबाना चाहिए। इसके सेवन से अग्निमान्द्य रोग नष्ट हो जाता है। नाग शब्द से यहाँ पर वत्सनाभविष लेना चाहिए।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—२-३ ताम्बूलपत्र से। **स्वाद**—क्षारीय एवं तिक्त। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य में।

५२. स्वयमग्निरस

मरिचाब्दवचाकुष्ठं समांशं विषमेव च।
आर्द्रकस्य रसे पिष्ट्वा मुद्गमात्रञ्च कारयेत्।
स्वयमग्निरसो नाम सर्वाजीर्णप्रशान्तये ॥१४७॥

१. मरिचचूर्ण, २. नागरमोथाचूर्ण, ३. वचचूर्ण, ४. कूठ-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चूर्ण तथा ५. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण—प्रत्येक १-१ भाग लें। इन्हें एक खरल में मिलाकर मर्दन करें और आर्द्रकस्वरस की भावना देकर एक दिन तक मर्दन करें। इसे मूँग के बराबर ६० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे स्वयमग्निरस कहते हैं। १-१ वटी की मात्रा में जल से लेने पर सभी प्रकार के अजीर्ण नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर। **अनुपान**—जल से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण में।

५३. टङ्कणादि वटी

रसटङ्कणनागरगन्धमथो
गरलं मरिचं समभागयुतम्।
लकुचस्वरसैर्मरिचप्रतिमा
गुडिका जनयत्यचिरादनलम् ॥१४८॥

१. शुद्ध टङ्कण, २. शुण्ठीचूर्ण, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध पारद, ५. शुद्ध वत्सनाभविष और ६. मरिचचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः लकुच(बड़हर)त्वक्स्वरस की एक भावना देकर मरिच प्रमाण अर्थात् १२५ मि.ग्रा. (१-१ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस गुटिका के सेवन से शीघ्र ही अग्नि प्रदीप्त होती है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—जल से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि में।

५४. राक्षस रस (र.सा.सं.)

ताम्रं पारदगन्धकं त्रिकटुकं तीक्ष्णञ्च सौवर्चलं
खल्ले मर्द्य दिनं निधाय सिकताकुम्भे च यामं ततः।
स्विन्नं तेष्वपि रक्तशाकिनिभवं क्षारं समं भावये-
देकीकृत्य च मातुलुङ्गकजलैर्नाम्ना रसो राक्षसः ॥१५०॥

१. ताम्रभस्म, २. शुद्ध पारद, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुण्ठीचूर्ण, ५. पिप्पलीचूर्ण, ६. मरिचचूर्ण, ७. तीक्ष्णलौहभस्म, ८. सौवर्चललवण तथा ९. रक्तपुनर्नवाक्षार—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनावें। ततः पुनर्नवाक्षार को छोड़कर शेष द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर एक दिन तक मर्दन करें। पुनः इसे १ मूषा में रखकर सम्पुटित कर कपड़मिट्टी से सन्धिबन्धन करें और बालुका यन्त्र में ३ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीतल होने पर औषधि निकाल कर खरल में मर्दन करें। ततः उस औषधि में रक्तपुनर्नवाक्षार १ भाग मिलाकर जम्बीरीनिम्बुस्वरस की भावना दें, सूखने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे राक्षस रस कहते हैं। इसे २५० मि.ग्रा. की मात्रा में जल के साथ सेवन करें। इसके सेवन करने से अग्निमान्द्य और अजीर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कपोत वर्ण। **अनुपान**—जल से। **स्वाद**—कट्वम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण एवं अग्निमान्द्य में।

५५. पञ्चामृतवटी (र.सा.सं.)

अभ्रकं पारदं ताम्रं गन्धकं मरिचानि च।
समभागमिदं चूर्णं चाङ्गेरीरसमर्दितम् ॥१५१॥
मर्दिते हि रसे भूयो जयन्तीसिन्धुवारयोः।
भावनाऽपि च दातव्या गुञ्जापरिमिता वटी ॥१५२॥
तप्तोदकानुपानेन चतस्त्रस्तिस्त्र एव वा।
वह्निमान्द्ये प्रदातव्या वट्यः पञ्चामृतास्तथा ॥१५३॥

१. अभ्रकभस्म, २. शुद्ध पारद, ३. ताम्रभस्म, ४. शुद्ध गन्धक तथा ५. मरिचचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः अभ्रकभस्म एवं अन्य द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें और चाङ्गेरीस्वरस की एक भावना दें। तदनन्तर जयन्तीपत्र स्वरस एवं सिन्दुवारपत्रस्वरस की ७-७ भावना देकर १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखावें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे पञ्चामृत वटी कहते हैं। २-२ वटी प्रातः- सायं उष्णोदक से लेने पर अग्निमान्द्य नष्ट हो जाता है।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा.। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **अनुपान**—उष्णोदक। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य में।

५६. ज्वालानल रस (र.सा.सं.)

क्षारद्वयं सूतगन्धौ पञ्चकोलमिदं समम्।
सर्वतुल्या जया देया तदर्धं शिग्रुवल्कलम् ॥१५४॥
एतत्सर्वं जयाशिग्रुवह्निमार्कवजै रसैः।
भावयेत्त्रिदिनं घर्मे ततो लघुपुटे पचेत् ॥१५५॥
भावयेत्सप्तधा चार्द्रद्रावैर्ज्वालानलो भवेत्।
पाचनो दीपनो हृद्यश्चोदरामयनाशनः ॥१५६॥

१. यवक्षार, २. सर्जिक्षार, ३. शुद्ध पारद, ४. शुद्ध गन्धक, ५. पिप्पलीचूर्ण, ६. पिप्पलीमूलचूर्ण, ७. चव्यचूर्ण, ८. चित्रकमूलचूर्ण, ९. शुण्ठीचूर्ण (प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग), १०. भाँगचूर्ण ९ भाग तथा ११. शिग्रुत्वक्चूर्ण ४$\frac{1}{2}$ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः शेष द्रव्यों के चूर्णों को उक्त कज्जली में मिलाकर भाँगस्वरस, शिग्रुत्वक्स्वरस, चित्रकमूलक्वाथ, भृङ्गराजस्वरस की क्रमशः ३-३ भावना देकर एक बड़ा-सा गोला बना लें। सुखाकर शरावसम्पुट कर लघुपुट (भूधरपुट) में पाक करें। स्वाङ्गशीतल होने पर सम्पुट से औषधि निकाल लें और आर्द्रकस्वरस की ७ भावना देकर २५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती) की वटी बना लें एवं छाया में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे ज्वालानल रस कहते हैं। यह अत्यन्त दीपन एवं पाचन है, हृद्य है तथा उदररोग नाशक है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं उदररोग में।

५७. भक्तविपाकवटी (र.सा.सं.)

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मलःशिला।
त्रिवृद्दन्तीवारिवाहं चित्रकञ्च महौषधम् ॥१५७॥
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी कृष्णजीरकम्।
रामठं कटुका पाठा सैन्धवं साजमोदकम् ॥१५८॥
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत्।
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च ॥१५९॥
सूर्यावर्त्तरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन च।
आतपे भायवेद्वैद्यः खल्लपात्रे च निर्मले।
पेषयित्वा वटीं खादेत् गुञ्जाफलसमप्रभाम् ॥१६०॥
भक्तोत्तरीये बहुभोजनान्ते
मुहुर्मुहुर्वाञ्छति भोजनानि।
आमानुबन्धे च चिराग्निमान्द्ये
विड्विग्रहे पित्तकफानुबन्धे ॥१६१॥
शोथोदरे चार्शसि चाप्यजीर्णे
शूले त्रिदोषप्रभवे ज्वरे च।
शस्ता वटी भक्तविपाकसंज्ञा
सुखं विपाच्याशु नरस्य कोष्ठम् ॥१६२॥

१. स्वर्णमाक्षिकभस्म, २. शुद्ध पारद, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध हरताल, ५. शुद्ध मनःशिला, ६. निशोथचूर्ण, ७. दन्तीमूलचूर्ण, ८. नागरमोथाचूर्ण, ९. चित्रकमूलचूर्ण, १०. शुण्ठीचूर्ण, ११. पिप्पलीचूर्ण, १२. मरिचचूर्ण, १३. हरीतकीचूर्ण, १४. अजवायनचूर्ण, १५. स्याहजीराचूर्ण, १६. हींग, १७. कटुकीचूर्ण, १८. पाठाचूर्ण, १९. सैन्धवचूर्ण, २०. अजमोदाचूर्ण, २१. जायफलचूर्ण तथा २२. यवक्षारचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में हरताल एवं मनःशिला मिलाकर १ घण्टे तक मर्दन करें। तदनन्तर माक्षिकभस्म एवं अन्य काष्ठौषधि चूर्णों को उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें। पुनः आर्द्रकस्वरस, निर्गुण्डीस्वरस, सूर्यावर्तस्वरस और तुलसीपत्रस्वरस से क्रमशः धूप में बैठकर ७-७ भावना दें। १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। भोजन के बाद तथा अत्यधिक भोजन के बाद इस वटी के सेवन से कुछ ही देर में भूख बढ़ जाती है एवं बारंबार भोजन की इच्छा होती है। अर्थात् यह वटी जाठराग्नि को प्रदीप्त करती है। आमदोष के अनुबन्ध में अर्थात् आमावस्था में; पुराने अग्निमान्द्य में, विबन्ध में, कफ एवं पित्त के अनुबन्ध में; शोथ, उदररोग, अर्श, अजीर्ण, शूलरोग तथा सन्निपात ज्वर में इस 'भक्तविपाक' वटी का उपयोग करना चाहिए। इसके प्रयोग से भोजन शीघ्र पचकर व्यक्ति के कोष्ठ को हलका (या रिक्त) कर देता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—श्याववर्ण। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—तिक्त। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण, मन्दाग्नि एवं उदररोग में।

५८. भक्तविपाकवटी-२ (र.सा.सं.)

अभ्रं पारदगन्धकौ सदरदौ ताम्रं च तालं शिला
वङ्गं च त्रिफला विषं च कुनटी भागास्त्रयो दन्तिनः।
शृङ्गी व्योषयमानिचित्रजलदं द्वे जीरके टङ्कणं
एलापत्रलवङ्गहिङ्गुकटुकीजातीफलं सैन्धवम् ॥१६३॥
एतान्यार्द्रकचित्रदन्तिसुरसावासारसैर्बिल्वजैः
पत्रोत्थैरपि सप्तधा सुविमले खल्ले विभाव्यान्यतः।
खादेद्वल्लमितं तथा च सकलव्याधौ प्रयोज्या बुधै-
र्विड्बन्धे कफजे त्रिदोषजनिते ह्यामानुबन्धेऽपि च ॥
मन्देऽग्नौ विषमज्वरे च सकले शूले त्रिदोषोद्भवे
हन्यात्तानपि भक्तपाकवटिका भूयश्च सामं जयेत् ॥१६५॥

१. अभ्रकभस्म १ भाग, २. शुद्ध पारद १ भाग, ३. शुद्ध गन्धक १ भाग, ४. शुद्ध हिङ्गुल १ भाग, ५. ताम्रभस्म १ भाग, ६. शुद्ध हरताल १ भाग, ७. शुद्ध मनःशिला २ भाग, ८. वङ्ग भस्म १ भाग, ९. आमलाचूर्ण १ भाग, १०. हरीतकीचूर्ण १ भाग, ११. बहेड़ाचूर्ण १ भाग, १२. शुद्ध वत्सनाभ १ भाग, १३. दन्तीमूलचूर्ण ३ भाग, १४. काकड़ासिंगीचूर्ण १ भाग, १५. शुण्ठीचूर्ण १ भाग, १६. पिप्पलीचूर्ण १ भाग, १७. मरिचचूर्ण १ भाग, १८. अजवायनचूर्ण १ भाग, १९. चित्रकमूलचूर्ण १ भाग, २०. नागरमोथा १ भाग, २१. श्वेतजीराचूर्ण १ भाग, २२. स्याहजीरा १ भाग, २३. शुद्ध टङ्कण १ भाग, २४. छोटी इलायचीचूर्ण १ भाग, २५. तेजपत्रचूर्ण १ भाग, २६. लवङ्गचूर्ण १ भाग, २७. हींग (घृतभृष्ट) १ भाग, २८. कटुकीचूर्ण १ भाग, २९. जायफल १ भाग तथा ३०. सैन्धव लवणचूर्ण १ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में पहले हरताल मिलाकर २-३ घण्टे तक मर्दन करें, पुनः क्रमशः अभ्रकभस्म, शुद्ध हिंगुल, ताम्रभस्म, मनःशिला एवं काष्ठौषधों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर क्रमशः आर्द्रकस्वरस, चित्रकमूलक्वाथ, दन्तीमूलक्वाथ, तुलसीपत्रस्वरस, वासापत्रस्वरस और बिल्वपत्रस्वरस—प्रत्येक द्रव्य की ७-७ भावना दें। पुनः ३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती की) की मात्रा में वटी बनाकर,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १ वल्ल की मात्रा (३७५ मि.ग्रा.) में उष्णोदक या दोषानुसार अनुपान से लेने पर विबन्ध, कफ तथा त्रिदोषजन्य एवं आमानुबन्ध मन्दाग्नि, सभी प्रकार के विषमज्वर और त्रिदोषजन्य शूलरोग नष्ट हो जाते हैं। यह 'भक्तविपाक वटी' विशेष कर आमदोष को नष्ट करती है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर। **अनुपान**—उष्णोदक या दोषानुसार। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—आमदोष, अग्निमान्द्य तथा सभी प्रकार के शूलरोग में।

५९. पाशुपत रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मकम्।
त्रिभिः समं विषं देयं चित्रकक्वाथभावितम् ॥१६६॥
धूर्त्तबीजस्य भस्मापि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम्।
कटुत्रयं त्रिभागं स्याद् लवङ्गैला च तत्समम् ॥१६७॥
जातीफलं तथा कोषमर्द्धभागं नियोजयेत्।
तथार्द्धं पञ्चलवणं स्नुह्यर्कैरण्डतिन्तिडी ॥१६८॥
अपामार्गाश्वत्थजञ्च क्षारं दद्याद् विचक्षणः।
हरीतकीं यवक्षारं स्वर्जिकां हिङ्गु जीरकम् ॥१६९॥
टङ्गणञ्च सूततुल्यं चाम्लयोगेन मर्दयेत्।
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः ॥१७०॥
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः।
दीपनो पाचनो हृद्यः सद्यो हन्ति विसूचिकाम् ॥१७१॥
तालमूलीरसेनैव उदरामयनाशनः।
मोचरसेनातिसारं ग्रहणीं तक्रसैन्धवैः ॥१७२॥
सौवर्चलकणाशुण्ठीयुतः शूलं विनाशयेत्।
अर्शो निहन्ति तक्रेण पिप्पल्या राजयक्ष्मकम् ॥१७३॥
वातरोगं निहन्त्याशु शुण्ठीसौवर्चलान्वितः।
शर्कराधान्ययोगेन पित्तरोगं निहन्त्ययम् ॥१७४॥
पिप्पलीक्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगञ्च तत्क्षणात्।
अतः परतरो नास्ति धन्वन्तरिमतो रसः ॥१७५॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. तीक्ष्ण लौहभस्म ३ भाग, ४. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण ६ भाग, ५. धत्तूर-बीजभस्म ३२ भाग, ६. शुण्ठीचूर्ण ३ भाग, ७. पिप्पलीचूर्ण ३ भाग, ८. मरिचचूर्ण ३ भाग, ९. लवङ्गचूर्ण ३ भाग, १०. छोटी इलायचीचूर्ण ३ भाग, ११. जायफलचूर्ण $\frac{१}{२}$ भाग, १२. जातीपत्रीचूर्ण $\frac{१}{२}$ भाग, १३. सैन्धवचूर्ण $\frac{१}{२}$ भाग, १४. सामुद्र-लवण $\frac{१}{२}$ भाग, १५. सौवर्चललवण $\frac{१}{२}$ भाग, १६. विड्लवण-चूर्ण $\frac{१}{२}$ भाग, १७. औद्भिल्लवण $\frac{१}{२}$ भाग, १८. स्नुहीक्षारचूर्ण $\frac{१}{२}$ भाग, १९. अर्कक्षारचूर्ण $\frac{१}{२}$ भाग, २०. एरण्डक्षारचूर्ण $\frac{१}{३}$ भाग, २१. इमलीवृक्षत्वक्क्षार $\frac{१}{२}$ भाग, २२. अपामार्गक्षार $\frac{१}{२}$ भाग, २३. पीपलवृक्षत्वक्क्षार $\frac{१}{२}$ भाग, २४. हरीतकीचूर्ण १ भाग, २५. यवक्षार १ भाग, २६. सर्जक्षार १ भाग, २७. घृतभृष्ट हींग १ भाग, २८. श्वेतजीराचूर्ण १ भाग और २९. शुद्ध टङ्कण १ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में तीक्ष्ण-लौहभस्म और शुद्ध वत्सनाभविषचूर्ण मिलाकर चित्रकमूलक्वाथ की भावना देकर एक दिन तक मर्दन करें। सूखने पर धत्तूरबीज-भस्म से शुद्ध टङ्कण तक के सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर निम्बुस्वरस की ३ या ७ भावना दें और १२५ मि.ग्रा. (१-१ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर, छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'पाशुपत रस' कहते हैं जो तुरन्त ही लाभदायक है। यह दीपन, पाचन, हृद्य है तथा शीघ्र ही विसूचिकानाशक है। तालमूली (श्वेत मुसली) के रस या क्वाथ से सेवन करने पर यह उदररोग नष्ट करता है। मोचरस क्वाथ से सेवन करने पर अतिसाररोग नाशक है। सैन्धवलवण युक्त तक्र के साथ सेवन करने पर ग्रहणीरोग नाशक है। सौवर्चल, पिप्पली एवं शुण्ठी क्वाथ से सेवन करने पर उदरशूल नष्ट हो जाता है। तक्र के साथ सेवन से अर्शरोग नष्ट हो जाता है। पिप्पलीचूर्ण के साथ सेवन करने पर राजयक्ष्मा रोग नष्ट हो जाता है। शुण्ठीचूर्ण और सौवर्चललवण (कालानमक) चूर्ण के साथ सेवन करने पर वातरोग नष्ट हो जाता है। धनियाँचूर्ण या क्वाथ में शक्कर मिलाकर इसका सेवन करने से पित्तरोग नष्ट हो जाता है। पिप्पली चूर्ण और मधु के साथ इस रस का सेवन करने से कफरोग नष्ट हो जाता है। भगवान् श्री धन्वन्तरि के विचार से इस 'पाशुपत रस' से बढ़कर दूसरी कोई औषधि इन रोगों के लिए नहीं है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—श्याववर्ण। **अनुपान**—रोगानुसार। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, ग्रहणी, अतिसार, शूल एवं अर्श रोग में।

६०. अजीर्णबलकालानल रस

द्विपलं शुद्धसूतञ्च गन्धकञ्च समं मतम्।
लौहं ताम्रं हरितालं विषं तुत्थं सवङ्गकम् ॥१७६॥
पलप्रमाणञ्च पृथग् लवङ्गं टङ्गणं तथा।
दन्तीमूलं त्रिवृच्चूर्णमेकैकं पलसम्मितम् ॥१७७॥
अजमोदा यमानी च द्विक्षारलवणानि च।
पृथगर्द्धपलं ग्राह्यमेकीकृत्य च भावयेत् ॥१७८॥
आर्द्रकस्य रसेनैकविंशतिः पञ्चकोलजैः।
दशधा भावयेत्तोयैर्गुडूचीनां रसैर्दश ॥१७९॥
सर्वार्द्धं मरिचं दत्त्वा काचकूप्याञ्च धारयेत्।
चणमात्रं वटीं कृत्वा छायायां परिशोषयेत् ॥१८०॥
रसोऽजीर्णबलकालानल एष प्रकीर्त्तितः।
अनेककालनष्टाग्नेर्दीपनः परमः स्मृतः ॥१८१॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आमवातकुलध्वंसी प्लीहपाण्डुगदापहः ।
प्रमेहानाहविष्टम्भसूतिकाग्रहणीहरः ॥१८२॥
श्वासकासप्रतिश्याययक्ष्मक्षयविनाशनः ।
अम्लपित्तञ्च शूलञ्च भगन्दरगुदोद्भवौ ॥१८३॥
अष्टोदराणि प्लीहानं यकृतं हन्ति दारुणम् ।
आकण्ठं भोजयित्वा तु खादयेच्च रसोत्तमम् ॥१८४॥
अर्द्धयामेन तत्सर्वं भस्मीभवति निश्चितम् ।
चतुर्विधरसोपेतं महाभोजनमिच्छतः ॥१८५॥
भोजस्य नृपतेः काङ्क्षा भोजनात्कृपया कृतः ।
गहनानन्दनाथेन सर्वलोकहितैषिणा ॥१८६॥

१. शुद्ध पारद ९३ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ९३ ग्राम, ३. लौहभस्म ४६ ग्राम, ४. ताम्रभस्म ४६ ग्राम, ५. शुद्ध हरताल ४६ ग्राम, ६. शुद्ध वत्सनाभ ४६ ग्राम, ७. तुत्थभस्म ४६ ग्राम, ८. वङ्गभस्म ४६ ग्राम, ९. लवङ्गचूर्ण ४६ ग्राम, १०. शुद्ध टङ्कण ४६ ग्राम, ११. दन्तीमूलचूर्ण ४६ ग्राम, १२. निशोथचूर्ण ४६ ग्राम, १३. अजमोदचूर्ण २३ ग्राम, १४. अजवायन २३ ग्राम, १५. यवक्षारचूर्ण २३ ग्राम, १६. सर्जक्षार २३ ग्राम, १७. सैन्धव २३ ग्राम, १८. सौवर्चल २३ ग्राम, १९. सामुद्रलवण २३ ग्राम, २०. विड्लवण २३ ग्राम, २१. औद्भिल्लवण २३ ग्राम तथा २२. मरिचचूर्ण ४२६ ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः लौहभस्म से पाँचों लवणों तक की सभी औषधों के चूर्णों को उक्त कज्जली में मिलाकर आर्द्रकस्वरस की २१ भावना तथा पञ्चकोलफाण्ट की १० एवं गुडूचीस्वरस की १० भावना दें। तदनन्तर उसमें मरिचचूर्ण (सभी द्रव्यों से आधा भाग) मिलाकर अच्छी तरह मर्दन कर २५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखावें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस औषधि को 'अजीर्णबलकालानल रस' कहते हैं। इस औषधि का निर्माण महान् रसशास्त्री 'आचार्य श्री गहनानन्दनाथ' जी ने राजा भोज की भोजनप्रियता को देखकर उन पर कृपाकर तथा लोककल्याणार्थ निर्माण किया था। इस औषधि के सेवन से बहुत दिनों से नष्ट हुई जाठराग्नि पुनः प्रदीप्त हो जाती है। आमवात को यह समूल नष्ट करती है। प्लीहावृद्धि, पाण्डुरोग, प्रमेह, आनाह, विष्टम्भ, सूतिका, ग्रहणी, कास, श्वास, प्रतिश्याय, यक्ष्मा, क्षय, अम्लपित्त, शूल, भगन्दर, अर्श, आठ प्रकार के उदररोग और यकृत्प्लीह रोग इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं। आकण्ठ भोजन के बाद इस रसौषधि का सेवन करने के १$\frac{१}{२}$ घण्टे के बाद निश्चितरूप से भोजन (भस्मीभूत) जीर्ण हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर। **अनुपान**—रोगानुसार। **स्वाद**—कटु-लवणीय। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि, अजीर्ण एवं उदररोग में।

६१. शंखवटी-१ (र.सा.सं.)

चिञ्चाक्षारपलं पटुव्रजपलं निम्बूरसे कल्कितं
तस्मिञ् शङ्खपलं प्रतप्तमसकृत् संस्थाप्य शीर्णावधि ।
हिङ्गुव्योषपलं रसामृतबलीन् निक्षिप्य निष्कांशिकान्
बद्ध्वा शङ्खवटी क्षयग्रहणिकारुक्पक्तिशूलादिषु ॥१८७॥

१. चिञ्चाक्षार ४६ ग्राम, २. पञ्चलवण ४६ ग्राम, ३. शंखभस्म ४६ ग्राम, ४. हींग ४६ ग्राम, ५. त्रिकटुचूर्ण ४६ ग्राम, ६. शुद्ध पारद ३ ग्राम, ७. शुद्ध वत्सनाभ ३ ग्राम और ८. शुद्ध गन्धक ३ ग्राम लें। पारद एवं गन्धक को एक खरल में मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर निम्बुरस की भावना देकर २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें। ततः काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे शंखवटी कहते हैं। अग्निमान्द्य, ग्रहणी, पंक्तिशूल एवं क्षयरोगों में इसका प्रयोग लाभप्रद है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—अम्ल-लवणीय। **गन्ध**—हिङ्गुगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, ग्रहणी तथा उदरशूल में।

६२. शंखवटी-२ (र.सा.सं.)

सार्द्धकर्षं रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च ।
विषं कर्षत्रयं दद्यात् सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥१८८॥
दग्धशङ्खं च तत्तुल्यं पञ्चकर्षाणि नागरात् ।
स्वर्जिकारामठकणासिन्धुसौवर्चलं विडम् ॥१८९॥
सामुद्रमौद्भिदं चैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी ।
वह्निमान्द्यकृतान् रोगान् सामदोषं विनाशयेत् ॥१९०॥

१. शुद्ध पारद १८ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १८ ग्राम, ३. शुद्ध वत्सनाभविष ३६ ग्राम, ४. मरिचचूर्ण ७० ग्राम, ५. शंख भस्म ७० ग्राम, ६. शुण्ठीचूर्ण ५८ ग्राम, ७. सर्जक्षारचूर्ण ५८ ग्राम, ८. शुद्ध हींग ५८ ग्राम, ९. पिप्पलीचूर्ण ५८ ग्राम, १०. सैन्धवलवण ५८ ग्राम, ११. सौवर्चललवण ५८ ग्राम, १२. सामुद्रलवण ५८ ग्राम, १३. विड्लवणचूर्ण ५८ ग्राम और १४. औद्भिल्लवण ५८ ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के चूर्णों को कज्जली में मिलाकर निम्बुस्वरस की भावना दें और २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'शंखवटी' कहते हैं। इसे १-१ वटी उष्णोदक के साथ लेने से ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल एवं अग्निमान्द्य रोग नष्ट हो जाते हैं। यह प्रबल अग्निदीपक तथा आमदोषनाशक है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, शूल एवं ग्रहणी में।

६३. शंखवटी-३ (र.सा.सं.)

द्वौ क्षारौ रसगन्धकौ सलवणौ व्योषञ्च तुल्यं विषं
चिञ्चाशङ्खचतुर्गुणं रसवरे लिम्पाकजाते कृतम्।
वारं वारमिदं सुपाकरचितं लौहं क्षिपेद्धिङ्गुकं
भृष्टं वङ्गसमं सुमर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणा भवेत् ॥१९१॥
ख्याता शङ्खवटी महाग्निजननी शूलान्तकृत् पाचनी
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी।
वातव्याधिमहोदरादिशमनी तृष्णामयोच्छेदनी
सर्वव्याधिविनाशिनी क्रिमिहरी दुष्टामयध्वंसिनी ॥१९२॥

१. यवक्षारचूर्ण १ भाग, २. सर्जक्षार १ भाग, ३. सैन्धव लवण १ भाग, ४. सौवर्चललवण १ भाग, ५. शुण्ठीचूर्ण १ भाग, ६. पिप्पलीचूर्ण १ भाग, ७. मरिचचूर्ण १ भाग, ८. शुद्ध वत्सनाभ १ भाग, ९. इमलीवृक्षत्वक्क्षार ४ भाग, १०. शंख भस्म ४ भाग, ११. लौहभस्म १ भाग, १२. घृतभृष्ट हींग १ भाग तथा १३. वङ्गभस्म १ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। तत: उस कज्जली में अन्य द्रव्यों के चूर्णों एवं भस्मों को मिलाकर निम्बुस्वरस की भावना देकर १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'शंखवटी' कहते हैं। यह अत्यन्त अग्निप्रदीप्तकर है, शूलनाशक है, पाचनी है; कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि, वातव्याधि, भयंकर उदररोग, तृष्णा, सभी प्रकार के रोगों को, कृमिरोग तथा अन्य दुष्ट रोगों को अनुपान भेद से नष्ट करती है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—श्याव। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—हिंगुगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, शूल तथा उदररोग को नाश करती है।

६४. शंखवटी-४ (र.सा.सं.)

दग्धशङ्खस्य चूर्णं हि तथा लवणपञ्चकम्।
चिञ्चिकाक्षारकञ्चैव कटुकत्रयमेव च ॥१९३॥
तथैव हिङ्गुकं ग्राह्यं विषगन्धकपारदम्।
अपामार्गस्य वह्नेश्च क्वाथैर्लिम्पाकजै रसैः ॥१९४॥
भावयेत् सर्वचूर्णं तदम्लवर्गे विशेषतः।
यावत्तदम्लतां याति गुडिकाऽमृतरूपिणी ॥१९५॥
सद्योवह्निकरी चैव भस्मकं च नियच्छति।
भुक्त्वाऽऽकण्ठन्तु तस्यान्ते खादेच्च गुडिकामिमाम् ॥
तत्क्षणाज्जारयत्याशु सर्वाजीर्णविनाशिनी।
ज्वरं गुल्मं पाण्डुरोगं कुष्ठं शूलं प्रमेहकम् ॥१९७॥
वातरक्तं महाशोथं वातपित्तकफानपि।
दुर्नामारिरयञ्चाशु दृष्टो वारसहस्रशः ॥१९८॥
निर्मूलं दह्यते शीघ्रं तूलकं वह्निना यथा।
लोहवङ्गयुता सेयं महाशङ्खवटी स्मृता ॥१९९॥
प्रभाते कोष्णतोयानुपानमेव प्रशस्यते।
जम्बीरबीजपूरञ्च मातुलुङ्गकचुक्रकम् ॥२००॥
चाङ्गेरी तिन्तिडी चैव बदरी करमर्दकम्।
अष्टावम्लस्य वर्गोऽयं कथितो मुनिसत्तमैः ॥२०१॥

१. शंखभस्म, २. सैन्धवलवण, ३. सौवर्चललवण, ४. सामुद्रलवण, ५. विड्लवण, ६. औद्भिल्लवण, ७. इमलीवृक्षत्वक्क्षार, ८. शुण्ठीचूर्ण, ९. पिप्पलीचूर्ण, १०. मरिचचूर्ण, ११. घृतभृष्ट हींग, १२. शुद्ध वत्सनाभविष, १३. शुद्ध गन्धक तथा १४. शुद्ध पारद—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। तत: उस कज्जली में उपर्युक्त सभी द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर अपामार्गस्वरस की ३, चित्रकमूलक्वाथ की ३ तथा निम्बुस्वरस की ३ भावना दें। तदनन्तर अन्य [1]अम्लवर्ग के द्रव्यों के स्वरस एवं क्वाथ की अनेक भावना दें। अम्लवर्ग के द्रव्यों में अम्लवेत, जम्बीरी निम्बु, बिजौरा निम्बु, चाङ्गेरी, निम्बु, इमली, बेर, अनार, चणकाम्ल, नारङ्ग, रसपत्रिका, आम्रातक, करौंदा, आम आदि द्रव्य प्रमुख हैं। इन सभी द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ की १-१ भावना देनी चाहिए। भावना देने पर भावित द्रव्य कल्क खूब खट्टा हो जाना चाहिए। पुन: ३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। यह अमृत रूपी 'महाशंख वटी' तुरन्त अग्नि को प्रदीप्त करती है। आकण्ठ भोजन के बाद इस वटी को उष्णोदक के साथ सेवन करने से सम्पूर्ण भुक्त पदार्थ तत्क्षण जीर्ण हो जाता है। यह वटी सभी प्रकार के अजीर्ण का नाश करती है। इसके अतिरिक्त ज्वर, गुल्म, पाण्डुरोग, कुष्ठ, शूल, प्रमेह, वातरक्त, भयंकर शोथ; वातज, पित्तज एवं कफज रोगों का नाश करती है। हजारों बार का अनुभव है कि यह वटी अर्श का परमशत्रु है। इस वटिका में यदि पारद के बराबर लौह भस्म और वङ्ग भस्म १-१ भाग मिलायी जाय तो इसे 'महाशंखवटी' कही जायेगी। प्रभात काल में उष्णोदक के साथ १-१ वटी सेवन करना श्रेयस्कर होगा।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—हिंगुगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, ग्रहणी शूल एवं अर्श में।

---

१. अम्लवेतसजम्बीरनिम्बुकं बीजपूरकम्।
चाङ्गेरी चणकाम्लं च अम्लीकं कोलदाडिमम्॥७६॥
अम्बष्ठा तिन्तिडीकं च नारङ्गं रसपत्रिका।
करवन्दं तथा चान्यदम्लवर्गः प्रकीर्तितः॥ (रसरत्नसमु. १०।७७)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६५. महाशंख वटी-१ (रसे.चिन्तामणि)

पटुपञ्चकहिङ्गुशङ्खचिञ्चा-
भसितव्योषवलीश्वरामृतानि ।
शिखिशैखरिकाम्लवर्गनिम्बू-
भृशभाव्यानि यथाऽम्लतां व्रजन्ति ॥२०२॥
महाशङ्खवटी ख्याता भोजनान्ते प्रकीर्त्तिता ।
दीपनी तरसा हन्ति महार्शोग्रहणीमुखान् ॥२०३॥

१. सैन्धवलवण, २. सौवर्चललवण, ३. सामुद्रलवण, ४. विड्लवण, ५. औद्भिल्लवण, ६. घृतभर्जित हींग, ७. शंखभस्म, ८. इमलीत्वक्क्षार, ९. शुण्ठीचूर्ण, १०. पिप्पली-चूर्ण और ११. शुद्ध वत्सनाभ विष—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनाकर उसमें उपर्युक्त अन्य सभी द्रव्यों के चूर्णों को मिलावें और चित्रकमूल क्वाथ तथा अपामार्गमूलक्वाथ की भावना दें। ततः निम्बुस्वरस की तथा अम्लवर्ग के यथोपलब्ध द्रव्यों, स्वरसों एवं क्वाथों की अनेक भावना देकर ३-३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'महाशंख वटी' कहते हैं। भोजन के अन्त में प्रतिदिन इस वटी को उष्णोदक के साथ सेवन करने से मन्दाग्नि नष्ट हो जाती है, अग्नि प्रदीप्त होती है; यह असाध्य अर्श एवं ग्रहणी रोग का नाश करती है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—लवणाम्ल। **अनुपान**—उष्णोदक से। **उपयोग**—मन्दाग्नि, अर्श एवं ग्रहणी में।

६६. महाशंख वटी-२ (रसकामधेनु)

कणामूलं वह्निदन्तीपारदं गन्धकं कणा ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं मरिचं नागरं विषम् ॥२०४॥
अजमोदामृता हिङ्गु क्षारं तिन्तिडिकाभवम् ।
सञ्चूर्ण्य समभागन्तु द्विगुणं शङ्खभस्मकम् ॥२०५॥
अम्लद्रवेण सम्भाव्य वटी गुञ्जाद्वयोन्मिता ।
अम्लदाडिमतोयेन लिम्पाकस्वरसेन च ॥२०६॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय नाम्ना शङ्खवटी शुभा ।
तक्रमस्तुसुरासीधुकाञ्जिकोष्णोदकेन वा ॥२०७॥
शशैणादिरसेनैव रसेन विविधेन च ।
मन्दाग्निं दीपयत्याशु वाडवाग्निसमप्रभम् ॥२०८॥
अर्शांसि ग्रहणीरोगं कुष्ठमेहभगन्दरम् ।
प्लीहानमश्मरीं श्वासकासमेहोदरक्रिमीन् ॥२०९॥
हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च विबन्धानुदरे स्थितान् ।
तान् सर्वान्नाशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥२१०॥

१. पिप्पलीमूलचूर्ण, २. चित्रकमूलचूर्ण, ३. दन्तीमूलचूर्ण, ४. शुद्ध पारद, ५. शुद्ध गन्धक, ६. पिप्पलीचूर्ण, ७. सर्जक्षार, ८. यवक्षार, ९. शुद्ध टङ्कणक्षार, १०. सैन्धवलवण, ११. सौवर्चललवण, १२. सामुद्रलवण, १३. विड्लवण, १४. औद्भिल्लवण, १५. मरिचचूर्ण, १६. शुण्ठीचूर्ण, १७. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण, १८. अजमोदाचूर्ण, १९. गुडूचीचूर्ण, २०. शुद्ध हींग, २१. इमलीवृक्षत्वक्क्षार—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग तथा २२. शंखभस्म २ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः इस कज्जली में पिप्पलीमूलचूर्ण से शंखभस्म तक के सभी द्रव्यों को मिलाकर निम्बुस्वरस की भावना दें और २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'शंखवटी' कहते हैं। इसे खट्टे अनारस्वरस या निम्बुस्वरस के साथ १-१ वटी प्रातः सेवन करना चाहिए। इस औषधि के सेवन के पश्चात् तक्र या मस्तु या सुरा, सीधु या काञ्जी या उष्णोदक या खरगोश अथवा मृग आदि पशुओं के मांसरस का अनुपान करना चाहिए। इसका सेवन करने से मन्दाग्नि शीघ्र प्रदीप्त होती है जो अतितीव्र होकर वडवाग्नि सदृश प्रखर हो जाती है। इसके सेवन से अर्श, ग्रहणी, कुष्ठ, प्रमेह, भगन्दर, प्लीहावृद्धि, अश्मरी, श्वास, कास, उदररोग, कृमिरोग, हृद्रोग, पाण्डु रोग और विबन्ध नष्ट हो जाते हैं। जैसे सूर्योदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है उसी प्रकार इस औषधि के सेवन से उपर्युक्त सभी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—खट्टा अनार रस, निम्बुस्वरस एवं उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—हिंगुगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि, संग्रहणी, अर्श एवं विबन्ध में।

६७. वज्रक्षार ( )

स्वर्जिः सौवर्चलं ग्राह्यं प्रत्येकं शाणमानतः ।
यवक्षारस्य शुद्धस्य पलार्द्धं परिकल्पयेत् ॥२११॥
स्थापयित्वाऽऽयसे पात्रे स्वेदयेन्मृदुनाऽग्निना ।
द्रुतं तञ्चालयेत्प्राज्ञः प्रास्तरे भाजने शुभे ॥२१२॥
दद्याद्रक्तिद्वयं वारिवारिदस्वरसादिभिः ।
अग्निमान्द्यमजीर्णं च शूलानाहोदरामयान् ॥२१३॥
अम्लपित्तं तथाऽऽध्मानं विष्टम्भं गुल्ममेव च ।
वज्रक्षारो निहन्त्याशु शक्रवज्रो यथा तरुम् ॥२१४॥

१. सर्जक्षार १ भाग, २. सौवर्चललवण १ भाग तथा ३. यवक्षार ८ भाग लें। इन तीनों द्रव्यों को चूर्ण कर एक लौहपात्र (कड़ाही) में रखकर मन्दाग्नि पर गरम करें। जब यह पिघल जाय तो साफ चिकने चौड़े पत्थर पर डाल दें। शीतल होने पर चूर्ण-कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वर्षाजल या नागरमोथास्वरस के साथ सेवन करने से—अग्निमान्द्य, अजीर्ण, शूल, आनाह, उदररोग, अम्लपित्त,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आध्मान, विष्टम्भ एवं गुल्म रोग नष्ट हो जाते हैं। इसे 'वज्रक्षार' कहते हैं। जैसे इन्द्र का वज्र वृक्षों को नष्ट कर देता है उसी प्रकार यह औषध उपर्युक्त रोगों को शीघ्र नष्ट कर देता है।

६८. क्रव्याद रस ( )

पलं रसस्य द्विपलं बलेः स्या-
च्छुल्वायसी चार्द्धपलप्रमाणे।
विचूर्ण्य सर्वं द्रुतमग्नियोगा-
देरण्डपत्रेऽत्र निवेशनीयम् ॥२१५॥
कृत्वाऽथ तां पर्पटिकां विदध्या-
ल्लौहस्य पात्रे त्वथ पूतमस्मिन्।
जम्बीरजं पक्वरसं पलानां
शतं नियोज्याग्निमथाल्पमात्रम् ॥२१६॥
जीर्णे रसे भावितमेतदेतैः
सुपञ्चकोलोद्भववारिपूरैः ।
सवेतसाम्लैः शतमत्र देयं
समं रजष्टङ्गणजं सुभृष्टम् ॥२१७॥
बिडं तदर्द्धं मरिचं समञ्च
तत्सप्तधाऽऽर्द्रं चणकाम्बुवारि ।
क्रव्यादनामा भवति प्रसिद्धो
रसस्तु मन्थानकभैरवोक्तः ॥२१८॥
माषद्वयं सैन्धवतक्रपीत-
मेतत्सुधन्यं खलु भोजनान्ते।
गुरूणि मांसानि पयांसि पिष्टं
घृतानि सेव्यानि फलानि चैव।
मात्राऽतिरिक्तान्यपि सेवितानि
यामद्वयाज्जारयति प्रसिद्धः ॥२१९॥
कार्श्यस्थौल्यनिबर्हणो गरहरः सामातिनिर्णाशनो
गुल्मप्लीहजलोदरादिशमनः शूलार्त्तिमूलापहः।
वातश्लेष्मनिबर्हणो ग्रहणिकाऽतीसारविध्वंसनो
वातग्रन्थिमहोदरापहरणः क्रव्यादनामा रसः ॥२२०॥

१. शुद्ध पारद ४६ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ९३ ग्राम, ३. ताम्रभस्म २३ ग्राम, ४. लौहभस्म २३ ग्राम, ५. शुद्ध टङ्कण १८६ ग्राम, ६. विड्लवण ९३ ग्राम और ७. मरिचचूर्ण १८६ ग्राम लें। **भावना**—१. जम्बीरीनिम्बुरस १ तुला (४६७० मि.ली.), २. अम्लवेतसक्वाथ (२३३५ मि.ली.), ३. पञ्चकोल फाण्ट (२३३५ मि.ली.) और ४. चणकाम्बु। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में ताम्र और लौह भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर गोबर के पिण्ड पर एरण्डपत्र रखें। दूसरे एरण्डपत्र पर २५०.ग्राम गोबर रखकर पोटली बनावें। अब एक बड़ी दर्वी में उपर्युक्त ताम्र-लौह भस्म मिश्रित कज्जली, ५० ग्राम घृतलिप्त दर्वी में रखकर मृद्वग्नि पर रखें। छोटी चम्मच से बराबर चलाते रहें। जब कज्जली द्रवित हो जाय तो गोबरपिण्ड के ऊपर रखे एरण्डपत्र पर पलट दें और गोबर की पोटली से दबाकर पर्पटी बना लें। इस प्रकार सभी कज्जली की पर्पटी बना लें। शीतल होने पर पर्पटी का चूर्ण करें। ततः साफ लोहे की छोटी कड़ाही में उक्त पर्पटी चूर्ण को रखें तथा उसमें जम्बीरीनिम्बुस्वरस डालकर मन्दाग्नि पर पाक करें। अब पञ्चकोलफाण्ट २३३५ मि.ली. तथा अम्लवेतसक्वाथ २३३५ मि.ली. उस कड़ाही में डालकर पुनः मन्दाग्नि से पाक करें। क्वाथ सूखने पर शुद्ध टंकण, विड्लवण एवं मरिचचूर्ण उपर्युक्त मात्रा में मिलावें और चणकाम्लद्रव की ७ भावना देकर १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इस प्रसिद्ध 'क्रव्यादरस वटी' नामक योग को रसशास्त्र के प्रमुख सिद्ध योगी श्री 'मन्थान भैरव' ने निर्माण किया है। इस योग का सैन्धवलवण युक्त तक्र के साथ सेवन करना चाहिए। यह क्रव्याद रस जाठराग्नि को अत्यन्त प्रदीप्त करता है। अतः इस औषधि के सेवन काल में गुरुपाकी द्रव्यों; यथा—मांसरस, दूध की रबड़ी, मलाई, पूड़ी, पूआ तथा उड़द की पिट्ठी से बनी वस्तु, घृत में तली वस्तु एवं घृतादि द्रव्यों का सेवन कराना चाहिए। मात्राधिक्य भोजन करने पर इस औषधि के सेवन से २ प्रहर में भोजन पच जाता है। इस 'क्रव्याद रस' के सेवन से—कार्श्य, स्थौल्य, गरदोष, आमदोष, गुल्म, प्लीहावृद्धि, जलोदरादि, शूल, अर्श, वात एवं कफ विकार, ग्रहणी, अतिसार, वातजग्रन्थि रोग तथा भयंकर उदररोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—सैन्धवयुक्त तक्र से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, ग्रहणी, शूल तथा उदररोगों में।

६९. विश्वोद्दीपकाभ्र रस ( )

अभ्रं निर्म्मलमारितं पलमितं चूर्णीकृतं यत्नत-
श्चव्यं चित्रकमिन्द्रसूरकनकं मालूरपत्रार्द्रकम्।
मूलं पिप्पलिसम्भवं मधुरिका नीपोऽर्कमूलं पृथक्
चैषां सत्त्वपलैर्विमर्दितमिदं कर्षं क्षिपेट्टङ्कणम् ॥२२१॥
गुञ्जासम्मितमेतदेव वलितं तत्पारिभद्रद्रवै-
र्मन्दाग्निं चिरजातगुल्मनिचयं शूलाम्लपित्तं ज्वरम्।
छर्दिं दुष्टमसूरिकामलसकं श्वासञ्च कासं तृषां
प्लीहानं यकृतं क्षयं स्वरहतिं कुष्ठं महारोचकम् ॥२२२॥
दाहं मोहमशेषदोषजनितं कृच्छ्रं सुदुर्नामक-
ञ्चामं वातविमिश्रितं नयनजं रोगं समुन्मूलयेत्।
विश्वोद्दीपकनाम रोगहरणे प्रोक्तं पुरा शम्भुना
सर्वेषां हितकारकं गदवतां सर्वामयध्वंसनम् ॥२२३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पाषाणं यदि भक्षितं तदपि तं कुर्य्यात् सुजीर्णं पुन-
र्बल्यं वृष्यतरं रसायनवरं मेधाकरकान्तिदम् ॥२२४॥

१. अभ्रकभस्म ५० ग्राम तथा २. शुद्ध टङ्कण १२ ग्राम लें। **भावनार्थ द्रव**—१. चव्यक्वाथ ५० मि.ली., २. चित्रकमूल क्वाथ ५० मि.ली., ३. निर्गुण्डीपत्रस्वरस ५० मि.ली., ४. धत्तूरपत्रस्वरस ५० मि.ली., ५. बिल्वपत्रस्वरस ५० मि.ली., ६. आर्द्रकस्वरस ५० मि.ली., ७. पिपरामूलक्वाथ ५० मि.ली., ८. सौंफक्वाथ ५० मि.ली., ९. कदम्बमूलत्वग्रस ५० मि.ली. तथा १०. अर्कमूलस्वरस ५० मि.ली. लें। खरल में अभ्रकभस्म रखें तथा क्रमशः उपर्युक्त दसों द्रव्यों के स्वरस से पृथक्-पृथक् १-१ भावना अर्थात् कुल १० भावना दें। पुनः उक्त भावित खरल में शुद्ध टंकण मिलाकर १२५ मि.ग्रा. (१-१ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। पारिभद्र (फरहद) त्वक्स्वरस के साथ १-१ वटी सेवन करने से—मन्दाग्नि, पुराना गुल्म, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, वमन, असाध्य मसूरिका, अलसक, श्वास, कास, तृष्णा, प्लीहा विकार, यकृद्विकार, क्षय, स्वरभङ्ग, कुष्ठ, महाअरुचि, दाह, मूर्च्छा, सान्निपातिक मूत्रकृच्छ्र, अर्श, आमवात और नेत्ररोग नष्ट हो जाते हैं। इस 'विश्वोद्दीपकाभ्र रस' को प्राचीन काल में सभी रोगियों की हितकामना से भगवान् शंकर ने निर्माण किया था। यह सभी रोगों को नष्ट करता है, पत्थर जैसा कठिन दुष्पाच्य भोजन किया जाय तो भी इस औषधि के प्रयोग से सरलतया पच जाता है। यह बल्य, वृष्यतर, रसायन, मेध्य एवं कान्तिप्रदादि गुणों से युक्त है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—धूसर। **अनुपान**—पारिभद्र (फरहद) स्वरस से। **स्वाद**—तिक्त। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, अलसक, उदररोग, ग्रहणी तथा अर्श में।

७०. वीरभद्राभ्रकरस

अभ्रकं पुटसहस्रमारितं
कर्षयुग्ममतिनिर्मलीकृतम् ।
वासराणि नवतिं विमर्दितं
चित्रकस्वरससाधुसिक्तकम् ॥२२५॥
शृङ्गबेररसमर्दिता वटी
कारिता सकलरोगनाशिनी ।
भक्षिता भुजगवल्लिपत्रकैः
शृङ्गबेरशकलेन वा पुनः ॥२२६॥
वह्निमान्द्यमभिनाश्य सत्वरं
कारयेत्प्रखरपावकोत्करम् ।
श्वासकासवमिशोथकामला-
प्लीहगुल्मजठरारुचिभ्रमान् ॥२२७॥
रक्तपित्तयकृदम्लपित्तकं
शूलकोष्ठजगदान् विसूचिकाम् ।
आमवातबहुवातशोणितं
दाहशीतबलह्रासकार्श्यकम् ॥२२८॥
विद्रधिज्वरगरं शिरोगदं
नेत्ररोगमखिलं हलीमकम् ।
हन्ति वृष्यतममेतदभ्रकं
वीरभद्रमतिबल्यमुत्तमम् ।
भक्षितं विविधभक्ष्यमागलं
काष्ठसङ्घमपि भस्मतां नयेत् ॥२२९॥

सहस्रपुटी अभ्रकभस्म २३ ग्राम लें। **भावनार्थ द्रव्य**—चित्रकमूलक्वाथ आवश्यकतानुसार तथा आर्द्रकस्वरस ५० मि.ली. लें। एक खरल में सहस्रपुटी अभ्रकभस्म लेकर चित्रकमूलक्वाथ से ९० (नब्बे) दिनों तक लगातार (प्रतिदिन ८ घण्टे तक) मर्दन करें। ततः १ दिन आर्द्रकस्वरस की भावना देकर १२५ मि.ग्रा. (१-१ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें (यदि छाया में नहीं सूखे तो धूप में सुखा लें) और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे २-३ ताम्बूलपत्र में १ वटी लपेट कर चबाने से या आर्द्रक के खण्ड में डालकर चबाने से अग्निमान्द्य को नाश कर प्रखर जाठराग्नि उत्पन्न करता है तथा सम्पूर्ण रोगों का नाश करता है। इसके अतिरिक्त—श्वास, कास, वमन, शोथ कामला, प्लीहारोग, गुल्म, उदररोग, अरुचि, भ्रम, रक्तपित्त, यकृद्विकार, अम्लपित्त, शूल, कोष्ठगत रोग, विसूचिका, आमवात, वातरक्त, दाह, शीत, निर्बलता, कृशता, विद्रधि, ज्वर, गरविष, शिरोरोग, सम्पूर्ण नेत्ररोग और हलीमक रोग भी इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं। यह 'वीरभद्राभ्रक रस' वृष्यतम है, अत्यन्त उत्तम बलकारक है। आकण्ठ विविध प्रकार का खाया हुआ भोजन, यहाँ तक कि काष्ठ को भी पचा देता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **वर्ण**—गहरा कत्थई। **अनुपान**—ताम्बूलपत्र से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि, उदर एवं यकृत्प्लीह विकार में।

७१. विसूचीविध्वंस रस

टङ्कणं माक्षिकं शुण्ठीं पारदं गन्धकं विषम् ।
गरलं समभागेन सर्वेषां हिङ्गुलं समम् ॥२३०॥
मर्दयेज्जम्बीरद्रवैर्वटी कार्या प्रयत्नतः ।
श्वेतसर्षपतुल्या च मृतसञ्जीवनी तथा ॥२३१॥
विसूचीं नाशयत्याशु दध्यन्नं पथ्यमाचरेत् ।
त्रिदोषोत्थमतीसारं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥२३२॥

१. शुद्ध टङ्कण, २. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ३. शुण्ठीचूर्ण, ४. शुद्ध पारद, ५. शुद्ध गन्धक, ६. शुद्ध वत्सनाभविष, ७. सर्प विष (प्रत्येक १-१ भाग) तथा ८. शुद्ध हिङ्गुल ७ भाग (सभी के

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बराबर) लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उसमें हिंगुल तथा गरल (सर्पविष) मिलावें। उसके बाद शेष सभी द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर जम्बीरीनिम्बुस्वरस की भावना देकर १ दिन तक मर्दन करें। इसके बाद पीत सरसों के बराबर छोटी-छोटी वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। यह मृतप्राय व्यक्ति को अच्छी तरह से पुनः जीवित करता है। अतः इसे सञ्जीवनी कहते हैं। १ वटी सेवन करावें तथा पथ्य में दही-भात खाने को देना चाहिए। सभी उपद्रव से युक्त त्रिदोषजन्य अतिसार इसके सेवन से शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१ सरसों जितनी मात्रा। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—तक्र से। **स्वाद**—कट्वम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—विसूचिका एवं त्रिदोषज अतिसार में।

विमर्श—इसकी वटी बनाते समय विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि वटी बनाने वाले व्यक्ति के हाथों में किसी प्रकार का व्रण या कटा हुआ व्रण नहीं होना चाहिए क्योंकि इसमें सर्पविष मिला है, जो रक्तसंचार के माध्यम से विषाक्त एवं मृत्यु तक करा देता है। अतः सावधानी रखें।

७२. वडवानल रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतस्य कर्षैकं तत्समं गन्धकं मतम्।
पिप्पली पञ्चलवणं मरिचञ्च फलत्रयम् ॥२३३॥
क्षारत्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवेणैव भावयेद्दिनमेकतः।
वडवानलनामायं मन्दाग्निञ्च विनाशयेत् ॥२३४॥

१. शुद्ध पारद १२ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १२ ग्राम, ३. पिप्पलीचूर्ण १२ ग्राम, ४. सैन्धवलवण १२ ग्राम, ५. सौवर्चल-लवण १२ ग्राम, ६. सामुद्रलवण १२ ग्राम, ७. विड्लवण १२ ग्राम, ८. औद्भिल्लवण १२ ग्राम, ९. मरिचचूर्ण १२ ग्राम, १०. आमलाचूर्ण १२ ग्राम, ११. हरीतकीचूर्ण १२ ग्राम, १२. बहेड़ाचूर्ण १२ ग्राम, १३. यवक्षारचूर्ण १२ ग्राम, १४. सर्ज-क्षारचूर्ण १२ ग्राम तथा १५. टङ्कणक्षार १२ ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी द्रव्यों के चूर्णों को उस कज्जली में मिलाकर निर्गुण्डीस्वरस की भावना देकर एक दिन तक मर्दन करें। ततः २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'वडवानल रस' कहते हैं। १ से २ वटी उष्णोदक से सेवन करने पर मन्दाग्नि नष्ट हो जाती है।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा. तक। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणीय। **गन्ध**—रसायन-गन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्निनाशक है।

७३. अजीर्णारि रस (रसकामधेनु)

शुद्धं सूतं गन्धकं च पलमानं पृथक् पृथक्।
हरीतकी च द्विपला नागरं त्रिपलं स्मृतम् ॥२३५॥
कृष्णा च मरिचं तद्वत् सिन्धूत्थं त्रिपलं पृथक्।
चतुष्पला च विजया मर्दयेन्निम्बुकद्रवैः ॥२३६॥
भावनं सप्तधा कार्यं घर्ममध्ये पुनः पुनः।
अजीर्णारिरयं प्रोक्तः सद्यो दीपनपाचनः ॥२३७॥
भक्षयेद् द्विगुणं भक्ष्यं पाचयेद्रेचयेदपि ॥२३८॥

१. शुद्ध पारद ४६ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ४६ ग्राम, ३. हरीतकीचूर्ण ९३ ग्राम, ४. शुण्ठीचूर्ण १४० ग्राम, ५. पिप्पली चूर्ण १४० ग्राम, ६. मरिच चूर्ण १४० ग्राम, ७. सैन्धवलवण १४० ग्राम और ८. भाँगचूर्ण १८७ ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में अन्य सभी चूर्णों को मिलाकर निम्बुस्वरस की ७ भावना धूप में बैठकर दें। पुनः २५० मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'अजीर्णारि रस' कहते हैं। उष्णोदक से १-१ वटी सेवन करना चाहिए। इसके सेवन से मन्दाग्नि नष्ट हो जाती है। यह औषधि दीपन-पाचन है। यह भोजन को शीघ्र पचाती है। इसके सेवन के बाद व्यक्ति पूर्वापेक्षा दुगुना भोजन करने लगता है। पचाकर मल त्याग भी साफ होता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—कट्वम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि में।

७४. आदित्य रस (रसकामधेनु/यो.र.)

दरदञ्च विषं गन्धं त्रिकटु त्रिफला समम्।
जातीफलं लवङ्गञ्च लवणानि च पञ्च वै ॥२३९॥
सर्वमेतत्कृतं चूर्णमम्लयोगेन सप्तधा।
भावयित्वा वटी कार्या गुञ्जाऽर्द्धप्रमिता बुधैः ॥२४०॥
रस आदित्यसंज्ञोऽयमजीर्णक्षयकारकः।
भुक्तमात्रं पाचयति जठरानलदीपनः ॥२४१॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुण्ठीचूर्ण, ५. पिप्पलीचूर्ण, ६. मरिचचूर्ण, ७. आमला-चूर्ण, ८. हरीतकीचूर्ण, ९. बहेड़ाचूर्ण, १०. जायफलचूर्ण, ११. लवङ्गचूर्ण, १२. सैन्धवचूर्ण, १३. सौवर्चललवण, १४. सामुद्रलवण, १५. विड्लवण तथा १६. औद्भिल्लवण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। एक खरल में हिंगुल एवं गन्धक को एक साथ मर्दन करें। ततः शेष द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर निम्बुस्वरस की ७ भावना दें और १२५ मि.ग्रा. (१-१ रत्ती की मात्रा) में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'आदित्य रस' कहते हैं। यह रसौषधि अजीर्ण को नष्ट

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

करती है, खाये हुए भुक्त द्रव्य को शीघ्र पचाती है तथा जठराग्नि को प्रदीप्त करती है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **वर्ण**—रक्ताभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण एवं मन्दाग्नि में।

७५. गन्धक वटी (र.यो.सा.)

रसार्द्धं गन्धकं शुद्धं शुण्ठीचूर्णं च तत्समम्।
लवङ्गं मरिचं चापि प्रत्येकं तु पलं भवेत् ॥२४२॥
सैन्धवं त्रिपलं ग्राह्यं त्रिपलं च सुवर्चलम्।
चणकाम्लं पलद्वन्द्वं क्षारं मूलकजं तथा ॥२४३॥
मर्दयेन्निम्बुकद्रावैर्यामान् सप्त खरांशुभिः।
बदरप्रमाणमात्रा सर्वाजीर्णप्रणाशिनी।
चणकस्याम्लकाभावे चुक्रं देयं मनीषिभिः ॥२४४॥

१. शुद्ध पारद ४६ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २३ ग्राम, ३. शुण्ठीचूर्ण ४६ ग्राम, ४. लवङ्गचूर्ण ४६ ग्राम, ५. मरिचचूर्ण ४६ ग्राम, ६. सैन्धवलवण १४० ग्राम, ७. सौवर्चललवण १४० ग्राम, ८. चणकाम्ल ९३ ग्राम और ९. मूलीक्षार ९३ ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में अन्य सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर तीव्र धूप में बैठकर निम्बुस्वरस की ७ भावना देकर ७ दिनो तक मर्दन करें। ८वें दिन छोटी बेर के बराबर ५०० मि.ग्रा. (४-४ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसके प्रयोग से सभी प्रकार के अजीर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं। चणकाम्ल के अभाव में चुक्र (सिरका) का उपयोग करना चाहिए।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **वर्ण**—कृष्णाभ। **अनुपान**—उष्णोदक से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण एवं मन्दाग्नि में।

७६. लवङ्गाद्य मोदक

लवङ्गं पिप्पली शुण्ठी मरिचं जीरकद्वयम्।
केशरं तगरञ्चैव एला जातीफलं तुगा ॥२४५॥
कट्फलं तेजपत्रञ्च पद्मबीजं सचन्दनम्।
कङ्कोलमगुरुश्चैव उशीरमभ्रकं तथा ॥२४६॥
कर्पूरं जातिकोषञ्च मुस्तं भांसी यवस्तथा।
धान्यकं शतपुष्पा च लवङ्गं सर्वतुल्यकम् ॥२४७॥
सर्वचूर्णद्विगुणितां शर्करां विनियोजयेत्।
सवरोगं निहन्त्याशु अम्लपित्तं सुदारुणम् ॥२४८॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च कामलापाण्डुरोगनुत्।
बलपुष्टिकरञ्चैव विशेषात् शुक्रवर्द्धनम् ॥२४९॥
ग्रहणीं सर्वरूपाञ्च अतीसारं सुदुर्जयम्।
अश्विभ्यां निर्मितं हन्ति लवङ्गाद्यमिदं शुभम् ॥२५०॥

१. लवङ्गचूर्ण, २. पिप्पलीचूर्ण, ३. शुण्ठीचूर्ण, ४. मरिचचूर्ण, ५. जीराचूर्ण, ६. स्याहजीराचूर्ण, ७. नागकेशरचूर्ण, ८. तगरचूर्ण, ९. छोटी इलायची, १०. जायफलचूर्ण, ११. वंशलोचनचूर्ण, १२. कायफलचूर्ण, १३. तेजपत्रचूर्ण, १४. कमलबीज, १५. रक्तचन्दनचूर्ण, १६. शीतलचीनीचूर्ण, १७. अगुरुकाष्ठचूर्ण, १८. उशीरचूर्ण, १९. कृष्णवज्राभ्रकभस्म, २०. कर्पूरचूर्ण, २१. जावित्रीचूर्ण, २२. नागरमोथाचूर्ण, २३. जटामांसीचूर्ण, २४. इन्द्रयवचूर्ण, २५. धनियाँचूर्ण, २६. सौंफचूर्ण (प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें) तथा २७. शर्करा २६०० ग्राम लेना चाहिए। उपर्युक्त सभी चूर्णों को एक साथ मिलाकर पुनः चलनी से छान लें। स्टेनलेस स्टील के पात्र में शर्करा में थोड़ा जल देकर चासनी करें। जब ४ तार की (लड्डू की चासनी) चासनी हो जाय तो उतार लें, कुछ शीतल होने पर उपर्युक्त छाने हुए चूर्णों का प्रक्षेप डालकर अच्छी तरह से मिला लें और जमने पर १२-१२ ग्राम का मोदक बनाकर शीत स्थान में कठिन होने पर्यन्त रखें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत करें। देवताओं के वैद्य परमाराध्य श्री अश्विनीकुमारों ने इसका निर्माण किया था। इसके सेवन से—अग्निमान्द्य, अजीर्ण, कामला, पाण्डु, सभी प्रकार के संग्रहणी, दुर्जय अतिसार नष्ट हो जाते हैं। यह बल्य, वृष्य है और शुक्रवर्धक है। इसे 'लवङ्गाद्य मोदक' कहते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम तक। **वर्ण**—धूसर वर्ण मोदक। **अनुपान**—उष्णोदक या दूध से। **स्वाद**—मधुर एवं किञ्चित् कटु। **गन्ध**—सुगन्ध युक्त पाक (पाकगन्धी), कर्पूरगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य, अजीर्ण, अतिसार एवं ग्रहणी में।

७७. सुकुमार मोदक

पिप्पली पिप्पलीमूलं नागरं मरिचं शिवा।
धात्री चित्रकमभ्रञ्च गुडूची कटुरोहिणी ॥२५१॥
प्रत्येकमेषां कर्षांशं चूर्णं दन्त्यास्त्रिकार्षिकम्।
द्विपलं त्रिवृताचूर्णं शर्करायाः पलत्रयम् ॥२५२॥
मधुना मोदकं कार्यं सुकुमारकसंज्ञकम्।
वाताजीर्णप्रशमनं विष्टम्भे परमौषधम् ॥२५३॥
उदावर्त्तानाहहरं सर्वाजीर्णविनाशनम् ॥२५४॥

१. पिप्पलीचूर्ण, २. पिप्पलीमूलचूर्ण, ३. शुण्ठीचूर्ण, ४. मरिचचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण, ६. आमलाचूर्ण, ७. चित्रकमूलचूर्ण, ८. अभ्रकभस्म, ९. गुडूचीचूर्ण, १०. कटुकीचूर्ण (प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम), ११. दन्तीमूलचूर्ण ३५ ग्राम, १२. निशोथचूर्ण ९३ ग्राम, १३. शर्करा १४० ग्राम तथा १४. मधु २५० ग्राम लें। उपर्युक्त सभी चूर्णों को एक साथ मिलाकर महीन चलनी से पुनः छान लें। शर्करा को सिल पर पीस लें। पिसी हुई शर्करा भी उक्त चूर्ण में मिला दें तथा मधु मिलाकर १०-१० ग्राम का मोदक बनाकर शीत स्थान में जमने के लिए छोड़ दें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३-४ दिनों के सूख जाने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'सुकुमार मोदक' कहते हैं।

७८. त्रिवृतादि मोदक

त्रिवृद्दन्ती कणामूलं कणा वह्निः पलं पलम् ।
सर्वतुल्याऽमृता शुण्ठी गुडेन सह मोदकम् ।
कर्षैकं भक्षयेन्नित्यं दीप्ताग्निं कुरुते क्षणात् ॥२५५॥

१. निशोथचूर्ण, २. दन्तीमूलचूर्ण, ३. पिप्पलीमूलचूर्ण, ४. पिप्पलीचूर्ण, ५. चित्रकमूलचूर्ण (प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम), ६. गुडूचीचूर्ण २५० ग्राम, ७. शुण्ठीचूर्ण २५० ग्राम और ८. गुड़ १५०० ग्राम लें। उपर्युक्त चूर्णों को मिलाकर महीन छननी से पुनः छान लें। स्टेनलेस स्टील के पात्र में गुड़ में थोड़ा जल देकर आग पर पकावें। ४ तार की चासनी होने पर गुड़पाक को उतार लें। थोड़ा शीतल होने पर प्रक्षेप मिलावें, शीतल होने या जमने पर १०-१० ग्राम का मोदक बनाकर छायादार एवं शीतल स्थान पर ३-४ दिन छोड़ दें। मोदक सूखने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'त्रिवृतादि मोदक' कहते हैं। १-१ मोदक रोज जल के साथ सेवन करने से अग्नि प्रदीप्त होती है।

मात्रा—१० ग्राम। **वर्ण**—धूसरवर्ण। **अनुपान**—शीतल जल से। **स्वाद**—मधुर। **गन्ध**—पाकगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य में।

७९. हरीतकीपूरण-प्रयोग

हरीतक्याः शतं ग्राह्यं तक्रैः स्विन्नञ्च कारयेत् ।
यत्नाद् बीजं समुद्धृत्य चूर्णानीमानि पूरयेत् ॥२५६॥
षडूषणं पञ्चपटु यमानीद्वयमेव च ।
त्रिक्षारं हिङ्गु दिव्यञ्च कर्षद्वयमितं पृथक् ॥२५७॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं चुक्राम्लेनापि भावयेत् ।
लिम्पाकस्वरसेनापि भावयेच्च दिनत्रयम् ॥२५८॥
भक्षयेदभयामेकां सर्वाजीर्णविनाशिनीम् ।
चतुर्विधमजीर्णञ्च वह्निमान्द्यं विसूचिकाम् ।
गुल्मं शूलादिरोगांश्च नाशयेदविकल्पतः ॥२५९॥

१. बड़ी हरीतकी १०० नग, २. तक्र ५ लीटर, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. पिप्पलीमूलचूर्ण, ५. चव्यचूर्ण, ६. चित्रकमूलचूर्ण, ७. शुण्ठीचूर्ण, ८. मरिचचूर्ण, ९. सैन्धवलवण, १०. सौवर्चललवण, ११. सामुद्रलवण, १२. विड्लवणचूर्ण, १३. औद्भिल्लवण, १४. अजवायन, १५. अजमोदाचूर्ण, १६. यवक्षारचूर्ण, १७. सर्जक्षार, १८. टंकणक्षार, १९. घृतभृष्ट हींग और २०. लवङ्गचूर्ण (प्रत्येक द्रव्य २३ ग्राम) लें। हरीतकी को कपड़े में बाँधकर तक्रपूरित दोलायन्त्र में या यों ही तक्रपूरित हाँडी में मन्दाग्नि पर ६ घण्टे तक स्वेदन करें। शीतल होने पर हरीतकी को बाहर निकालकर सावधानी से हरीतकी के बीज को निकाल लें जिसमें हरीतकी टूटे-फूटे नहीं। ततः पिप्पलीचूर्ण से लवङ्गचूर्ण तक के सभी द्रव्यों को मिलाकर पुनः महीन चलनी से छान लें तथा चुक्र (सिरका) से इन चूर्णों को ३ भावना दें। सूखने पर इसमें निम्बुस्वरस से पुनः तीन भावना दें। सूखने पर तक्र स्विन्न हरीतकी में इन चूर्णों को सावधानी से भरकर धागे से बाँधकर धूप में सुखाना चाहिए। हरीतकी सूखने पर काचपात्र में इस पूरित हरीतकी को संग्रहीत करें। १ से २ हरीतकी प्रतिदिन खाना चाहिए। इसके सेवन से सभी चार प्रकार के अजीर्ण, अग्निमान्द्य, विसूचिका, गुल्म और शूलरोग निःसन्देह रूप से नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ हरीतकी। **वर्ण**—हरीतकी उबली हुई। **अनुपान**—तक्रानुसार। **स्वाद**—अम्ल-कषाय। **गन्ध**—हिंगु गन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण एवं अग्निमान्द्य में।

८०. अमृताहरीतकी (योगरत्ना.)

तक्रे समुत्स्वेद्य शिवाशतानि
तद्बीजमुद्धृत्य च कौशलेन ।
षडूषणं पञ्च पटूनि हिङ्गु
क्षारावजाजीमजमोदकं च ॥२६०॥
षडूषणादेस्त्रिवृदर्द्धभागा
गणस्य देयाऽम्बरगालितस्य ।
विभाव्य चुक्रेण रजांस्यमीषां
क्षिपेच्छिवाबीजनिवासगर्भे ॥२६१॥
समूह्य घर्मे च विशोष्य तासां
हरीतकीमन्यतमां निषेवेत् ।
अजीर्णमन्दानलजाठरामयान्
सगुल्मशूलग्रहणीगुदाङ्कुरान् ॥२६२॥
विबन्धमानाहरुजं जयत्यसौ
तथाऽऽमवातांस्त्वमृता हरीतकी ॥२६३॥

१. बड़ी हरीतकी १०० नग, २. तक्र ५ लीटर, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. पिप्पलीमूलचूर्ण, ५. चव्यचूर्ण, ६. चित्रकमूलचूर्ण, ७. शुण्ठीचूर्ण, ८. मरिचचूर्ण, ९. सैन्धवलवण, १०. सौवर्चलचूर्ण, ११. सामुद्रलवण, १२. विड्लवणचूर्ण, १३. औद्भिल्लवण, १४. घृतभर्जित हींग, १५. यवक्षारचूर्ण, १६. टङ्कणक्षार, १७. जीराचूर्ण, १८. अजमोदाचूर्ण (प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग) तथा १९. निशोथ ८ भाग लें। ये सभी २४ भाग द्रव्य चूर्णों को मिलाकर चलनी से पुनः छान लें और चुक्र (सिरका) की ३ भावना दें। सूखने पर इस चूर्ण को तक्र स्विन्न निर्बीज हरीतकी के अन्दर भरकर धागे से हरीतकी को बाँधकर धूप में सुखा लें। सूखने के बाद इसे काचपात्र में संग्रहीत करें। इस पूरित हरीतकी को प्रतिदिन १ से २ नग खाने तथा अनुपान रूप में तक्र पीने से—अजीर्ण, मन्दाग्नि, उदररोग, गुल्म, शूल, ग्रहणीविकार, अर्श, विबन्ध, आनाह और आमवात रोग नष्ट हो

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जाते हैं और अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। इसे 'अमृता हरीतकी' कहते हैं।

मात्रा—१ से २ नग। **वर्ण**—हरीतकीवत्। **अनुपान**—तक्र से। **स्वाद**—लवणाम्ल-कषाय। **गन्ध**—तक्रगन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण एवं अग्निमान्द्य में।

८१. शार्दूलकाञ्जिकम् ( )

पिप्पलीं शृङ्गवेरञ्च देवदारु सचित्रकम्।
चविकां बिल्वपेशीञ्च अजमोदां हरीतकीम् ॥२६४॥
महौषधं यमानीञ्च धान्यकं मरिचं तथा।
जीरकञ्चाप्यथो हिङ्गुकाञ्जिकं साधयेद्भिषक् ॥२६५॥
एष शार्दूलको नाम काञ्जिकोऽग्निबलप्रदः।
सिद्धार्थतैलसम्भृष्टो दशरोगान् व्यपोहति ॥२६६॥
कासं श्वासमतीसारं पाण्डुरोगं सकामलम्।
आमं च गुल्मरोगञ्च वातशूलं सवेदनम् ॥२६७॥
अर्शांसि श्वयथुञ्चैव भुक्तं पीतं च सात्म्यतः।
क्षीरपाकविधानेन काञ्जिकस्यापि साधनम् ॥२६८॥

१. पिप्पली, २. आर्द्रक, ३. देवदारु, ४. चित्रकमूल, ५. चव्य, ६. बिल्वफलमज्जा, ७. अजमोदा, ८. हरीतकी, ९. शुण्ठी, १०. अजवायन, ११. धनियाँ, १२. मरिच, १३. जीराश्वेत और १४. हींग—प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें। जल १५०० मि.ली. लें। मिट्टी का नया घड़ा १, सरसों तैल १०० मि.ली.। पिप्पली से हींग तक १४ द्रव्यों को यवकुटक्वाथ जैसा टुकड़ा बनावें। मिट्टी के घड़े में पानी भरकर रात्रिपर्यन्त छोड़ दें। सुबह पानी फेंक दें। अब उस भीगे हुए घड़े में १५०० मि.ली. जल डालें तथा उपर्युक्त पिप्पली से हींग पर्यन्त सभी द्रव्यों के यवकुट डालकर हाथ से अच्छी तरह से मिला लें। घड़े का मुख बन्दकर १०-१२ दिनों तक निर्वात स्थान में रखें। १०-१२ दिनों के बाद घड़े का मुख खोलकर छान लें। ततः सरसों के तेल को बड़ी दर्वी में गरम करें तथा उसमें हींग-जीरा देकर उक्त काँजी को छौंक दें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे शार्दूल काञ्जी कहते हैं। इसे प्रतिदिन भोजनोपरान्त १ तोला सेवन करने से कास, श्वास, अतिसार, पाण्डुरोग, कामला, आमदोष, गुल्म, वातज शूल, अर्श और शोथ ये दस रोग नष्ट हो जाते हैं। क्षीरपाक विधि के अनुसार आठ गुना जल देकर इस काञ्जी का निर्माण करना चाहिए।

विमर्श—क्षीरपाक में दूध में आठ गुना जल और द्रव्य देकर आग पर पकाते हैं और क्षीरावशेष रहने पर छानकर प्रयोग करते हैं। किन्तु यहाँ तो अग्निसम्पर्क ही नहीं है, अतः क्षीरपाक विधि की उपमा देना अर्थहीन जैसा प्रतीत होता है।

मात्रा—१२ मि.ली.। **अनुपान**—बाद में जल पीना। **गन्ध**—अम्ल एवं मद्यगन्धी। **स्वाद**—अम्ल। **वर्ण**—द्रव, जलवत्। **उपयोग**—श्वास, कास, पाण्डु, कामला, आमदोष, अर्श, अतिसार, गुल्म आदि दश रोगों में।

८२. मुस्तकारिष्ट ( )

मुस्तकस्य तुलाद्वन्द्वं चतुर्द्रोणेऽम्बुनः पचेत्।
पादशेषे रसे तस्मिन् क्षिपेद् गुडतुलात्रयम् ॥२६९॥
धातकीं षोडशपलां यमानीं विश्वभेषजम्।
मरिचं देवपुष्पञ्च मेथीं वह्निञ्च जीरकम् ॥२७०॥
पलयुग्ममितं क्षिप्त्वा रुद्धभाण्डे निधापयेत्।
संस्थाप्य मासमात्रन्तु ततः संस्त्रावयेद्भिषक् ॥२७१॥
अजीर्णमग्निमान्द्यञ्च विसूचीमपि दारुणाम्।
ग्रहणीं विविधां हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥२७२॥

१. नागरमोथा ९३४० ग्राम, २. जल ५२ ली., ३. गुड़ १४ कि., ४. धातकीपुष्प, ७५० ग्राम, ५. अजवायन ९३ ग्राम, ६. शुण्ठी ९३ ग्राम, ७. मरिच ९३ ग्राम, ८. लवङ्ग ९३ ग्राम, ९. मेथी ९३ ग्राम, १०. चित्रकमूल ९३ ग्राम तथा ११. जीरा ९३ ग्राम लें। नागरमोथा को यवकुटचूर्ण कर उपर्युक्त जल में पकावें। जब चौथाई शेष रहे तो उसे छान लें। अर्थात् १३ लीटर जल शेष रहना चाहिए। ततः उस क्वाथ में १४ कि.ग्रा. गुड़ घोलें। धातकीपुष्प को धूप में सुखा लें। इसे साबुत रहने दें। अब अजवायन से जीरा तक के सभी सातों द्रव्यों को पृथक्-पृथक् यवकुट कर लें और गुड़ घुले हुए नागरमोथा क्वाथ जो नये मिट्टी के बड़े घड़े में रखा है उसमें मिला दें। हाथ से अच्छी तरह मिला लें। गुड़ यदि नहीं घुला हो तो सावधानीपूर्वक उसे हाथ से घोल लें। अब गुड़, प्रक्षेप, यवकुटचूर्ण और धातकीपुष्प मिलाकर अच्छी तरह से घड़े के मुख पर शराव ढ़ककर कपड़मिट्टी करें और निर्वात स्थान पर रखकर ३ सप्ताह तक छोड़ दें। लगभग २२-२३ दिन बाद तैयार अरिष्ट को कपड़े से छान लें। घड़े को धो-साफ कर सुखा लें। पुनः उसी घड़े में अरिष्ट को रखें तथा घड़े का मुख बन्दकर छोड़ दें। १० दिनों में उसकी गाद नीचे बैठ जायेगी। पुनः घड़े को टेढ़ा कर स्वच्छ द्रव को पृथक् कर लें। बोतलों को भरकर उस पर लेबल (औषधि नाम, ग्रन्थ, अधिकार एवं तिथि) तथा कार्क लगाकर सुरक्षित कर लें। इसे प्रायः १ वर्ष बाद ही सेवन कराना चाहिए। इसे १० से २५ मि.ली. तक बराबर जल मिलाकर भोजनोपरान्त दिन-रात में दो बार पिलाना चाहिए। इसके सेवन से अजीर्ण, अग्निमान्द्य, भयंकर विसूचिका, अनेक प्रकार के संग्रहणी आदि रोग निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं। इसमें सोचने जैसी कोई बात नहीं है।

मात्रा—१० से २५ मि.ली.। **वर्ण**—रक्ताभ द्रव।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अनुपान—जल मिलाकर। **स्वाद**—मधुर-तीक्ष्ण। **गन्ध**—मद्य-गन्धी। **उपयोग**—अजीर्ण, अग्निमान्द्य, विसूचिका एवं ग्रहणी में।

८३. चित्रक गुड़ (चक्रदत्त)

नासारोगे विधातव्या या चित्रकहरीतकी।
विना धात्रीरसं सोऽस्मिन् प्रोक्तश्चित्रगुडोऽग्निदः ॥२७३॥

इसी ग्रन्थ के नासारोग प्रकरण में 'चित्रक हरीतकी' के नाम से जो योग कहा गया है, उस योग से आमलकीस्वरस हटा दिया जाय अर्थात् उसमें आमलकीस्वरस नहीं डाला जाय तो यहाँ पर वही योग चित्रक गुड़ के नाम से कहा गया है।

८४. क्षारगुड (च.द.)

द्वे पञ्चमूले त्रिफलामर्कमूलं शतावरीम्।
दन्तीं चित्रकमास्फोतां रास्नां पाठां सुधां शटीम् ॥२७४॥
पृथग्दशपलान् भागान्दग्ध्वा भस्म समावपेत्।
त्रिः सप्तकृत्वस्तद्भस्म जलद्रोणे च गालयेद् ॥२७५॥
तद्रसं साधयेदग्नौ चतुर्भागावशेषितम्।
ततो गुडतुलां दत्त्वा साधयेन्मृदुनाऽग्निना ॥२७६॥
सिद्धं गुडं तु विज्ञाय चूर्णानीमानि दापयेत्।
वृश्चिकालीं द्विकाकोल्यौ यवक्षारं समावपेत् ॥२७७॥
एते पञ्चपला भागाः पृथक् पञ्च पलानि च।
हरीतकीं त्रिकटुकं स्वर्जिकां चित्रकं वचाम् ॥२७८॥
हिङ्ग्वम्लवेतसाभ्यां च द्वे पले तत्र दापयेत्।
अक्षप्रमाणां गुडिकां कृत्वा खादेद् यथाबलम् ॥२७६॥
अजीर्णं जरयत्येष जीर्णे सन्दीपयत्यपि।
भुक्तं भुक्तं च जीर्येत पाण्डुत्वमपकर्षति ॥२८०॥
प्लीहार्शःश्वयथुं चैव श्लेष्मकासमरोचकम्।
मन्दाग्निविषमाग्नीनां कफे कण्ठोरसि स्थिते ॥२८१॥
कुष्ठानि च प्रमेहांश्च गुल्मं चाशु व्यपोहति।
ख्यातः क्षारगुडो ह्येष रोगेषूक्तेषु योजयेत् ॥२८२॥

१. बिल्वमूल, २. गम्भारीमूल, ३. अग्निमन्थमूल, ४. सोनापाठामूल, ५. पाढलमूल, ६. शालपर्णीमूल, ७. पृश्निपर्णीमूल, ८. कण्टकारीमूल, ९. बृहतीमूल, १०. गोक्षुरमूल, ११. आमला, १२. हरीतकी, १३. बहेड़ा, १४. अर्कमूल, १५. शतावरीमूल, १६. दन्तीमूल, १७. चित्रकमूल, १८. अपराजिता, १९. रास्ना, २०. पाठा, २१. स्नुहीकाण्ड, २२. कचर (ये प्रत्येक द्रव्य ४७० ग्राम = १० पल), २३. गुड़ ४६७० ग्राम, २४. वृश्चिकाली, २५. काकोली, २६. क्षीरकाकोली, २७. यवक्षार (प्रत्येक द्रव्य २३५ ग्राम), २८. हरीतकीचूर्ण, २९. शुण्ठीचूर्ण, ३०. पिप्पलीचूर्ण, ३१. मरिचचूर्ण, ३२. सर्जिक्षार, ३३. चित्रकमूलचूर्ण, ३४. वचाचूर्ण, ३५. घृतभृष्ट हींग और ३६. अम्लवेतसचूर्ण (ये प्रत्येक द्रव्य ९३ ग्राम) लें। बिल्वमूल से कचूर तक सभी द्रव्यों को लोहे के पात्र में निर्वात स्थान में जला लें। स्वाङ्गशीत होने पर भस्म को इकट्ठा कर १३ लीटर जल भरे बड़े पात्र में घोल दें, अब महीन किन्तु साफ कपड़े से २१ बार छान लें। १ दिन-रात उक्त क्षारजल घोल को स्थिर रहने के लिए छोड़ दें। दूसरे दिन पात्र टेढ़ा कर निथरे हुए जल को दूसरे पात्र में रखकर आग पर जल को चौथाई सुखा लें। इसके बाद वृश्चिकाली से अम्लवेतस तक के सभी १३ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। ततः स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में गुड़ एवं क्षार जल का गाढ़ा घोल मिलाकर आग पर पाक करें। जब ४ तार की चासनी हो जाय तो गुड़पाक पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। थोड़ी देर बाद वृश्चिकाली से अम्लवेतस तक के सूक्ष्म चूर्ण को प्रक्षेप रूप में छिड़ककर कलछुल से अच्छी तरह मिला लें। शीतल होने पर १०-१० ग्राम का मोदक (लड्डू) बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। अग्निबलानुसार १ या आधा मोदक खाकर जल पियें। इसके सेवन से अजीर्ण जीर्ण होकर भोजन शीघ्र पच जाता है, मन्दाग्नि नष्ट हो जाती है; व्यक्ति जो खाता है वह शीघ्र पच जाता है। पाण्डुरोग, प्लीहादोष, अर्श, शोथ, कफ-कास, अरुचि, मन्दाग्नि, विषमाग्नि, कण्ठ और छाती में जमा कफ, कुष्ठ, प्रमेह और गुल्म शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। इसे 'क्षारगुड़' कहते हैं। उपर्युक्त रोगों में इसका प्रयोग करें।

मात्रा—५ से १० ग्राम तक। **वर्ण**—गुड़वर्ण। **अनुपान**—जल से। **स्वाद**—मधुर। **गन्ध**—मोदक एवं अवलेह (पाक-गन्धी)। **उपयोग**—मन्दाग्नि, अजीर्ण एवं अरुचि में।

८५. मस्तुषट्पल घृत (च.द.)

पलिकैः पञ्चकोलैस्तु घृतं मस्तु चतुर्गुणम्।
सक्षारैः सिद्धमल्पाग्निं कफगुल्मं विनाशयेत् ॥२८३॥

१. गोघृत १ किलो, २. मस्तु ४ लीटर, ३. पिप्पली ४६ ग्राम, ४. पिप्पलीमूल ४६ ग्राम, ५. चव्य ४६ ग्राम, ६. चित्रक ४६ ग्राम, ७. शुण्ठी ४६ ग्राम तथा ८. यवक्षार ४६ ग्राम लें। सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छन विधि से मूर्च्छित करें। पिप्पली से यवक्षार तक के ६ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बनावें। अब मूर्च्छित घृत में कल्क और मस्तु मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। जब मस्तु सूख जाय तो कल्क के सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल घृतपात्र में डालकर पुनः पाक करें। जलीयांश के सूख जाने पर घृतपाक की परीक्षा करें। जल रहित घृत को चूल्हे से नीचे उतारकर गरम-गरम कपड़े से छान लें। इसके बाद कल्क में थोड़ा घृत शेष है, अतः कल्क में ३-४ लीटर जल डालकर पुनः पकावें। उबल जाने के बाद स्नेह

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें, कुछ शीतल होने पर घृतपात्र के जल के ऊपर में बचा हुआ घृत तैरता हुआ मिलेगा, उसे कपड़े के माध्यम से दूसरे पात्र में निचोड़ लें। सब स्नेह निचोड़ लेने के बाद उसे आग पर पुनः पकाकर जल रहित कर छान लें। इसके बाद वस्त्रपूत सम्पूर्ण घृत को काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'मस्तुषट्पलघृत' कहते हैं। इसे गरम पानी या गरम दूध में १०-१२ ग्राम मिलाकर प्रतिदिन पिलाना चाहिए। यह घृत मन्दाग्नि और कफज गुल्म को नाश करता है।

मात्रा—१० ग्राम। **वर्ण**—घृत जैसा ही वर्ण। **अनुपान**—उष्णोदक या उष्ण दूध से। **स्वाद**—कटु। **गन्ध**—घृतगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि एवं कफज गुल्म में।

८६. अग्निघृत-१ (च.द.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रको हस्तिपिप्पली।
हिङ्गु चव्याजमोदे च पञ्चैव लवणानि च ॥२८४॥
द्वौ क्षारौ हवुषा चैव दद्यादर्द्धपलोन्मितान्।
दधिकाञ्जिकशुक्तानि स्नेहमात्रासमानि च ॥२८५॥
आर्द्रकस्वरसप्रस्थं घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
एतदग्निघृतं नाम मन्दाग्नीनां प्रशस्यते ॥२८६॥
अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं तथा गुल्मोदरापहम्।
ग्रन्थ्यर्बुदापचीकासकफमेदोऽनिलानपि ॥२८७॥
नाशयेद् ग्रहणीदोषं श्वयथुं सभगन्दरम्।
ये च बस्तिगता रोगा ये च कुक्षिसमाश्रिताः।
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः ॥२८८॥

कल्क—१. पिप्पली, २. पिप्पलीमूल, ३. चित्रकमूल, ४. गज-पिप्पली, ५. हींग, ६. चव्य, ७. अजमोदा, ८. सैन्धवलवण, ९. सौवर्चललवण, १०. सामुद्रलवण, ११. विड्लवण, १२. औद्भिल्लवण, १३. यवक्षार, १४. सर्जक्षार तथा १५. हाऊबेर—प्रत्येक २३-२३ ग्राम लें; **द्रव**—१६. दधि, १७. काञ्जी, १८. शुक्त (सिरका), १९. आर्द्रकस्वरस और २०. गोघृत—ये पाँचों द्रव ७५०-७५० मि.ली. लें। सबसे पहले घृत का मूर्च्छन करें। ततः पिप्पली से हाऊबेर तक के सभी द्रव्यों को चूर्ण करें। इसे जल के साथ सिल पर पीस कर कल्क बनावें। अब इस कल्क को मूर्च्छित घृत में मिलावें और काञ्जी डालकर मन्दाग्नि से पाक करें। काञ्जी सूखने पर दही को मथ कर उक्त घृत में मिलाकर पाक करें। ततः शुक्त देकर पाक करें। शुक्त सूखने पर आर्द्रकस्वरस देकर पुनः पाक करें। आर्द्रक स्वरस सूखने पर ३ लीटर जल देकर घृत का पाक करें और परीक्षा कर लें। कल्क की वर्तिपरीक्षा तथा घृत में जल की उपस्थिति की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। थोड़ा ठण्डा होने पर वस्त्र से घृत को छान लें। कल्क में बचे हुए घृत को भी जल के साथ उबाल कर पूर्ववत् कपड़े से निचोड़ कर घृत प्राप्त कर लें। घृत शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'अग्निघृत' कहते हैं। इस घृत को १० ग्राम की मात्रा में गरम जल या गरम दूध के साथ मिलाकर पिलावें। इसके सेवन से—मन्दाग्नि, अर्श, गुल्म, उदररोग, ग्रन्थि, अर्बुद, अपची, कास, कफदोष, मेद, वातविकार, ग्रहणीदोष, शोथ, भगन्दर, बस्तिगत रोग और कुक्षिगत रोग इस प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे सूर्योदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१० ग्राम। **वर्ण**—घृत जैसा। **अनुपान**—गरम जल या गरम दूध से। **स्वाद**—लवणाम्ल। **गन्ध**—घृतगन्धी। **उपयोग**—मन्दाग्नि एवं अर्श में।

८७. अग्निघृत-२ (च.द.)

भल्लातकसहस्रार्द्धं जलद्रोणे विपाचयेत्।
अष्टभागावशेषं तु कषायमवतारयेत् ॥२८९॥
घृतप्रस्थं समादाय कल्कानीमानि दापयेत्।
त्र्यूषणं पिप्पलीमूलं चित्रको हस्तिपिप्पली ॥२९०॥
हिङ्गु चव्याजमोदे च पञ्चैव लवणानि च।
द्वौ क्षारौ हवुषा चैव दद्यादर्द्धपलोन्मितान् ॥२९१॥
दधिकाञ्जिकशुक्तानि स्नेहमात्रासमानि च।
आर्द्रकस्वरसं चैव शोभाञ्जनरसं तथा ॥२९२॥
तत्सर्वमेकतः कृत्वा शनैर्मन्दाग्निना पचेत्।
एतदग्निघृतं नाम मन्दाग्नीनां प्रशस्यते ॥२९३॥
अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं मूढवातानुलोमनम्।
कफवातोद्भवे गुल्मे श्लीपदे च दकोदरे ॥२९४॥
शोथं पाण्ड्वामयं कासं ग्रहणीं श्वासमेव च।
एतान् विनाशयत्याशु तमः सूर्य इवोदितः ॥२९५॥

सुपक्व भल्लातक ५०० नग, जल १३ ली.। **कल्क**—१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. पिप्पलीमूल, ५. चित्रकमूल, ६. गजपिप्पली, ७. हींग, ८. चव्य, ९. अजमोदा, १०. सैन्धवलवण, ११. सौवर्चललवण, १२. सामुद्रलवण, १३. विड्लवण, १४. औद्भिल्लवण, १५. यवक्षार, १६. सर्जिक्षार और १७. हाऊबेर—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें। **द्रव**—१७. दही, १८. काञ्जी, १९. शुक्त (सिरका), २०. आर्द्रकस्वरस, २१. सहिजनत्वक्स्वरस (प्रत्येक ७५० मि.ली.) तथा २२. गोघृत ७५० ग्राम लें। पहले शुण्ठी से हाऊबेर तक के सभी १७ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें। ततः गोघृत का मूर्च्छन करें। उपर्युक्त चूर्णद्रव्यों को जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। अब भल्लातक को १३ ली. जल में सावधानी से क्वाथ करें। अष्टमांश शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित घृत में मिलावें तथा मन्दाग्नि में पाक करें। भल्लातक क्वाथ करते तथा घृत में पकाते

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

समय उसके वाष्प से सावधानी रखें। इसका वाष्प हानिकारक है। दही को मथानी से मथकर मूर्च्छित घृत में मिलावें और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। दही का जलीयांश सूखने पर उस घृत में क्रमशः काञ्जी, शुक्त (सिरका), आर्द्रकस्वरस तथा सहिजनत्वक्स्वरस देकर पकावें। जब सभी द्रव पदार्थों का घृत में पाक हो जाय तो ३ लीटर जल देकर घृत स्थित कल्क का पुनः सम्यक् पाक करें। जब जल भी सूख जाय तो घृतपाक की परीक्षा कर चूल्हे से घृतपात्र उतार लें तथा थोड़ा शीतल होने पर कपड़े से घृत को छान लें। कल्क में थोड़ा घृत शेष रहता है, अतः पूर्वविधि से जल देकर कल्क उबाल लें तथा कपड़े से छानकर घृत प्राप्त करें। घृत शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। ५ से १० ग्राम की मात्रा गरम दूध या गरम जल के साथ सेवन करें। यह घृत मन्दाग्नि वालों के लिए अत्यन्त हितकर है, अर्शनाशक है। मूढवात का अनुलोमन करता है; कफज एवं वातज गुल्म, श्लीपद, जलोदर, शोथ, पाण्डु, कास, ग्रहणी और श्वासरोग का नाश करता है। जैसे सूर्योदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **वर्ण**—घृतवर्ण। **अनुपान**—उष्ण गोदुग्ध या उष्णोदक से। **स्वाद**—अम्ल। **गन्ध**—घृतगन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य एवं अर्शोहर।

८८. कर्पूरासव

तुलां प्रसन्नां परिगृह्य शुद्धां
पलाष्टकं चोडुपतेः क्षिपेच्च।
एला च सूक्ष्माघनशृङ्गवेर-
यमानिका वेल्लजमत्र सर्वम् ॥२९६॥
पलप्रमाणं पिहिते च भाण्डे
मासं निदध्याद् भिषगत्र यत्नात्।
विसूचिकायाः परमौषधं यद्
निहन्ति चान्यान् विविधान् विकारान् ॥२९७॥

१. विशुद्ध मद्य ४६७० मि.ली., २. कर्पूर बोर्नियो ३७५ ग्राम, ३. छोटी इलायचीबीजचूर्ण, ४. नागरमोथाचूर्ण, ५. शुण्ठीचूर्ण, ६. अजवायनचूर्ण तथा ७. मरिचचूर्ण—ये पाँचों द्रव्य प्रत्येक ४६ ग्राम लें। एक काच के जार में मद्य रखें, उसमें भीमसेनी कर्पूर घोल दें। ततः इलायचीबीजचूर्ण से मरिचचूर्ण को पुनः महीन १०० नम्बर की चलनी से छानकर उसमें मिला दें। यत्नपूर्वक इस जार का सावधानी से मुख बन्दकर एक महीने तक निर्वात गृह में एक जगह स्थिर रख दें। १ महीने बाद इसे कपड़े से छानकर साफ बोतल में भरकर अच्छी तरह कार्क से बन्द करें। यह 'कर्पूरासव' विसूचिका रोग की परमौषधि है। अन्य उदरविकार तथा अन्य कफविकार को भी शान्त करता है। इसे १० से २० बूँद तक की मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा—१० से २० बूँद तक। **वर्ण**—श्वेतमद्य जैसा। **अनुपान**—जल से। **स्वाद**—तीक्ष्ण मद्य का। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **उपयोग**—विसूचिका एवं अतिसार में।

८९. गुड़ाष्टक (भा.प्र.)

व्योषं दन्ती त्रिवृच्चित्रं कृष्णामूलं विचूर्णितम्।
तच्चूर्णं गुडसम्मिश्रं भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥२९८॥
एतद् गुडाष्टकं नाम बलवर्णाग्निवर्द्धनम्।
शोथोदावर्त्तशूलघ्नं प्लीहपाण्ड्वामयापहम् ॥२९९॥

१. शुण्ठीचूर्ण, २. पिप्पलीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण, ४. दन्तीमूलचूर्ण, ५. निशोथचूर्ण, ६. चित्रकमूलचूर्ण, ७. पिप्पलीमूलचूर्ण (प्रत्येक १०-१० ग्राम लें) और ८. पुराना गुड़ ७० ग्राम लें। इन चूर्णों को आपस में मिलावें और पुनः चलनी से छान लें। ततः गुड़ मिलाकर १०-१० ग्राम की मात्रा में प्रातः जल से सेवन करें। इसे गुड़ाष्टक कहते हैं। यह बल, वर्ण और अग्नि को बढ़ाता है; शोथ, उदावर्त, शूल, प्लीहारोग और पाण्डुरोग नाशक है।

मात्रा—१० ग्राम। **वर्ण**—गुड़वर्ण। **अनुपान**—जल से। **स्वाद**—मधुर। **गन्ध**—गुड़गन्धी। **उपयोग**—अग्निमान्द्य है, बल-वर्णवर्धक है।

९०. घनादिवटी

पलद्वयं घनं क्षुण्णं पिप्पलीशशिहिङ्गुतः।
पलं पलं गृहीत्वा तु सम्यगेकत्र मिश्रयेत् ॥३००॥
कर्पूरसलिलैः कुर्याद्वटिका वल्लसम्मिताः।
अतीसारमजीर्णञ्च विसूचीमुग्ररूपिणीम् ॥३०१॥
अरोचकं वह्निमान्द्यं ग्रहणीमपि दारुणाम्।
कासं पञ्चविधञ्चैव नाशयेदविकल्पतः ॥३०२॥

१. नागरमोथाचूर्ण ९३ ग्राम, २. पिप्पलीचूर्ण ४६ ग्राम, ३. कर्पूर ४६ ग्राम तथा ४. घृतभृष्ट हींग ४६ ग्राम लें। उपर्युक्त चारों द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को एक खरल में मर्दन करें तथा कर्पूर के घोल से मर्दन करें। ३ घण्टे तक मर्दन करने के बाद ३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसकी १-१ वटी दिन में २ बार जल से सेवन करने पर अतिसार, अजीर्ण, भयंकर विसूचिका, अरुचि, अग्निमान्द्य, दारुण संग्रहणी और पाँच प्रकार के कास निश्चित रूप से नष्ट हो जाते हैं।

अग्निमान्द्य रोग में पथ्य

श्लैष्मिके वमनं पूर्वं पैत्तिके मृदुरेचनम्।
वातिके स्वेदनञ्चाथ यथावस्थं हितञ्च यत् ॥३०३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नानाप्रकारो व्यायामो दीपनानि लघूनि च।
बहुकालसमुत्पन्नाः सूक्ष्मा लोहितशालयः ॥३०४॥
विलेपो लाजमण्डश्च मण्डो मुद्गरसः सुरा।
एणो बर्ही शशो लावः क्षुद्रमत्स्याश्च सर्वशः ॥३०५॥
शालिञ्चशाकं वेत्राग्रं वास्तुकं बालमूलकम्।
लशुनं वृद्धकूष्माण्डं नवीनकदलीफलम् ॥३०६॥
शोभाञ्जनं पटोलञ्च वार्ताकुं नलदम्बु च।
कर्कोटकं कारवेल्लं बार्हतञ्च महार्द्रकम् ॥३०७॥
प्रसारिणी मेषशृङ्गी चाङ्गेरी सुनिषण्णकम्।
धात्रीफलं नागरङ्गं दाडिमं निम्बुकं तथा ॥३०८॥
अम्लवेतसजम्बीरमातुलुङ्गानि माक्षिकम्।
नवनीतं घृतं तक्रं सौवीरकतुषोदके ॥३०९॥
धान्याम्लं कटुतैलञ्च रामठं लवणार्द्रकम्।
यमानी मरिचं मेथी धान्यकं जीरकं दधि ॥३१०॥
ताम्बूलं तप्तसलिलं कटुतिक्तौ रसावपि।
मन्दानलेऽप्यजीर्णेऽपि पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥३११॥

कफज अग्निमान्द्य में वमन, पित्तज में मृदुविरेचन, वातज में स्वेदन कर्म करना चाहिए। अनेक प्रकार के हल्के व्यायाम करना चाहिए तथा दीपन और लघु भोजन करना चाहिए। पुराने तथा पतले लाल शालिचावल से निर्मित विलेपी, लाजमण्ड, मण्ड, मूँग का यूष, सुरा, हरिण, मोर, खरगोश, लावक पक्षी, छोटी मछलियाँ, शालिञ्चशाक, नेत्राग्रशाक, बथुआ, बालमूली, लशुन, सुपक्व कूष्माण्डफल, कच्चा केलाफल, सहिजनफली, पटोल, बैंगन, नलदम्बु = कोमल निम्बपत्रशाक, कर्कोटक = खेखसाफल, करैला, बृहतीफलशाक, महार्द्रक, गन्धप्रसारणी-शाक, मेषशृङ्गी, चाङ्गेरी, सुनिषण्णकशाक, आमला, नारङ्गी, मीठा अनार, खट्टा अनार, निम्बु, अम्लवेतस, जम्बीरी निम्बु, मातुलुङ्ग निम्बु, मधु, मक्खन, घृत, तक्र, सौवीरक (काञ्जी भेद), तुषोदक (काञ्जी भेद), धान्याम्ल (काञ्जी भेद), कटुतैल, हींग, लवण, आर्द्रक, अजवायन, मरिच, मेथी, धनियाँ, जीरा, दही, ताम्बूल, गरम जल, कटु और तिक्तरसयुक्त द्रव्य—ये सभी द्रव्य अग्निमान्द्य और अजीर्ण रोग में हितकर हैं।

अग्निमान्द्य रोग में अपथ्य

विरेचनानि विण्मूत्रवायुवेगविधारणम्।
अध्यशनं समशनं जागरं विषमाशनम् ॥३१२॥
रक्तस्रुतिं शमीधान्यं मत्स्यं मांसमुपोदिकाम्।
जलपानं पिष्टकञ्च जाम्बवं सर्वमालुकम् ॥३१३॥
कूर्च्चिकां मोरटं क्षीरं किलाटञ्च प्रपानकम्।
तालास्थिशस्यं तद्वालं स्नेहनं दुष्टवारि च ॥३१४॥
विरुद्धासात्म्यपानान्नं विष्टम्भीनि गुरूणि च।
अग्निमान्द्येऽप्यजीर्णे च सर्वाणि परिवर्जयेत् ॥३१५॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामग्निमान्द्यादिरोगाधिकारः।

तीव्र विरेचन देना, पुरीष, मूत्र एवं वायु के वेगों को रोकना, अध्यशन (अत्यधिक भोजन करना), समशन, पथ्यापथ्य विचारहीन भोजन, रात्रिजागरण, विषमाशन (अत्यधिक, अत्यल्प, अकाल भोजन करना विषमाशन है), रक्तस्राव, शमीधान्य, मछली का मांस, उपोदिका = पोई, उड़द की पिट्ठी से बनाया भोजन, जामुन, आलू तथा अन्य सभी प्रकार के कन्द, अधिक जल पीना, कूर्चिका = दुग्ध-विकार, मोरट = तुरन्त ब्याई गाय का दूध जो फटकर गाढ़ा हो जाता है, किलाट = दुग्धविकार (फटौंध), प्रपानक = पना (इमली तथा जल नमक, चीनी, जीरा आदि मिलाया हुआ खट्टा-मीठा द्रव पदार्थ), ताड़ के वृक्ष के मस्तक के अन्दर का भाग, तालवृक्ष का कच्चा फलमज्जा (कोआ), स्नेहन कर्म, दूषित जल पीना, विरुद्ध भोजन, असात्म्यकर अन्न-जल का सेवन, विष्टम्भकारक भोजन और गुरु भोजन—ये सभी अग्निमान्द्य और अजीर्ण के रोगी के लिए अपथ्यकारक हैं। अतः इन्हें त्याग देना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य अग्निमान्द्यादिरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ क्रिमिरोगाधिकारः (११)

१. पारसीकयमानिकाचूर्ण (चक्रदत्त)

पारसदेशयमानी पीता पर्युषितवारिणा प्रातः ।
गुडपूर्वा क्रिमिजातं कोष्ठगतं पातयत्याशु ॥१॥

कृमि कोष्ठ वाले रोगी को प्रातः ५ ग्राम गुड़ खिलावें, बाद में १ ग्राम पारसीकयमानीचूर्ण खिलाकर ताम्रपात्र में रात्रिपर्यन्त रखा हुआ स्वच्छ जल पिलावें। ऐसा करने से यमानी के प्रभाव से कोष्ठगत समस्त कृमियाँ मल के साथ बाहर गिर जाती हैं।

विमर्श—पहले उदर में गुड़ पहुँचते ही आन्त्रस्थ कृमियाँ अन्त्रभित्तियों से निकलकर गुड़ खाने लगती हैं किन्तु कृमिघ्न पारसीकयमानीचूर्ण वहाँ आते ही उसकी महक से मूर्च्छित हो जाती हैं और विरेचन देने से मल के साथ बाहर आ जाती हैं। कृमि विनाश हेतु यमानी अच्छी औषधि है।

२. कृमिहरयोग (चक्रदत्त)

पारिभद्रकपत्रोत्थं रसं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
केबुकस्य रसं वाऽपि पत्तूरस्याथवा पुनः ॥२॥
लिह्यात् क्षौद्रेण वैडङ्गं चूर्णं क्रिमिहरं परम् ॥३॥

प्रथम योग—पारिभद्र (फरहद) पत्रस्वरस १० मि.ली. एवं मधु १० ग्राम मिलाकर दो बार प्रतिदिन पीने से उदर-कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

द्वितीय योग—केबुक पत्रस्वरस १० मि.ली. एवं मधु १० ग्राम मिलाकर दो बार प्रतिदिन पीने से उदरस्थ कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

तृतीय योग—पत्तूर (जलपिप्पली) पत्रस्वरस १० मि.ली. एवं मधु १० ग्राम मिलाकर प्रतिदिन पीने से उदरस्थ कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

चतुर्थ योग—विडङ्ग चूर्ण ५ ग्राम मधु से प्रतिदिन खिलाने से कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

३. मुस्तादिक्वाथ (चक्रदत्त)

मुस्ताखुपर्णीफलशिग्रुदारु-
क्वाथः सकृष्णाक्रिमिशत्रुकल्कः ।
मार्गद्वयेनापि चिरप्रवृत्तान्
क्रिमीन्निहन्ति क्रिमिजांश्च रोगान् ॥४॥

१. नागरमोथा, २. मूषापर्णी, ३. त्रिफला, ४. सहिजनत्वक् ५. देवदारु, ६. पिप्पली तथा ७. वायविडङ्ग लें। ये सभी द्रव्य समभाग लेकर यवकुट करें। उसमें से २५ ग्राम यवकुट क्वाथ द्रव्य लेकर २०० मि.ली. जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिगावें, प्रातः क्वाथ करें। २५ मि.ली. शेष रहने पर छानें और उसमें पिप्पली-चूर्ण १ ग्राम तथा वायविडङ्गचूर्ण ३ ग्राम मिलाकर पिलावें। ऐसा प्रातः-सायं २ बार पिलाना चाहिए। ऐसा करने से दोनों मार्ग से वमन-विरेचन कराकर कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं। साथ ही कृमिजन्य व्याधियाँ भी नष्ट हो जाती हैं।

४. पलाशबीज-प्रयोग (चक्रदत्त)

पलाशबीजस्वरसं पिबेद्वा क्षौद्रसंयुक्तम् ।
पिबेत्तद्बीजकल्कं वा तक्रेण क्रिमिनाशनम् ॥५॥

पलाशबीज क्वाथ या कल्क निष्पीड़ित स्वरस १० मि.ली. और मधु १० ग्राम मिलाकर पिलाने से कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं। अथवा १० ग्राम पलाशबीज कल्क को गोतक्र में मिलाकर प्रतिदिन पीने से कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

५. खर्जूरपत्रक्वाथ

क्वाथं खर्जूरपत्राणां सक्षौद्रमुषितं निशि ।
पीत्वा निवारयत्याशु क्रिमिसङ्घमशेषतः ॥६॥

खजूर के पत्तों को यवकुट कर अष्टगुण जल से क्वाथ कर रात्रिपर्यन्त ढककर छोड़ दें। पुनः उस क्वाथ को छानें और उसमें मधु मिलाकर प्रतिदिन पीने से सभी प्रकार की कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

६. क्रमुकादियोगद्वय

अपक्वं क्रमुकं पिष्टं पीतं जम्बीरजै रसैः ।
निहन्ति विड्भवं कीटं रसः खर्जूरजम्भयोः ॥७॥

१. कच्ची सुपारी को सिल पर पीसें और उसमें समभाग जम्बीरीस्वरस मिलाकर प्रतिदिन पान करने से कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

२. खर्जूरपत्रस्वरस या पत्र क्वाथ १० मि.ली. और जम्बीरी निम्बुस्वरस १० मि.ली. मिलाकर प्रतिदिन पान करने से उदरस्थ (मलज) समस्त कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

७. कृमिहरयोगद्वय

पिबेत्तुम्बीबीजचूर्णं तक्रेण क्रिमिनाशनम् ।
नारिकेलजलं पीतं सक्षौद्रं क्रिमिनाशनम् ॥८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. कटुतुम्बी (तितलौकी) बीजचूर्ण १० ग्राम और तक्र २५० मि.ली. में घोल कर प्रतिदिन पीने से कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

२. नारियल के जल में मधु मिलाकर प्रतिदिन पीने से सभी प्रकार की कृमियाँ नष्ट हो जाती है।

८. विडङ्गादि यवागू (चक्रदत्त)

विडङ्गपिप्पलीमूलशिग्रुभिर्मरिचेन च।
तक्रसिद्धा यवागूः स्यात् क्रिमिघ्नी ससुवर्चिका।

१. वायविडङ्ग, २. पिप्पलीमूल, ३. सहिजनबीज, ४. मरिच और ५. सर्जक्षार—प्रत्येक ५-५ ग्राम लें। तक्रसिद्ध यवागू (दलिया) २५० ग्राम में मिलाकर प्रतिदिन खाने से कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

९. बिम्बीघृत (चक्रदत्त)

पीतं बिम्बीघृतं हन्ति पक्वामाशयगान् क्रिमीन् ॥९॥

तिक्त बिम्बीफल स्वरस एवं कल्क से साधित गोघृत का पान करने से उदरस्थ कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

१०. यमानी चूर्ण

यमानीं लवणोपेतां भक्षयेत् कल्य उत्थितः।
अजीर्णमामवातघ्नं क्रिमिजांश्च जयेद् गदान् ॥१०॥

अजवायनचूर्ण ५ ग्राम व सैन्धवलवण २ ग्राम मिलाकर कल्य = प्रातःकाल उठकर जल के साथ खाने से अजीर्ण, आमवात और कृमिजन्य व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं।

११. कम्पिल्लक चूर्ण (भावप्रकाश)

कम्पिल्लचूर्णं माषार्द्धं गुडेन सह भक्षितम्।
सम्पातयेत् क्रिमीन् सर्वानुदरस्थान्न संशयः ॥११॥

शुद्ध कम्पिल्लक (कबीला) चूर्ण ५ ग्राम और गुड़ १० ग्राम दोनों को मिलाकर जल से प्रतिदिन सेवन करने पर उदरस्थ सभी प्रकार की कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं, इसमें संशय नहीं है।

१२. पलाशबीजादि चूर्ण ( )

पलाशबीजेन्द्रविडङ्गनिम्ब-
भूनिम्बचूर्णं सगुडं लिहेद्यः।
दिनत्रयेण क्रिमयः पतन्ति
पलाशबीजेन यमानिका वा ॥१२॥

१. पलाशबीज, २. इन्द्रयव, ३. विडङ्ग, ४. निम्बबीज-मज्जा, ५. चिरायता तथा ६. गुड़ लें। गुड़ छोड़कर सभी पाँचों द्रव्य समभाग में लें और कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। ५ ग्राम की मात्रा में इस चूर्ण को लेकर १० ग्राम गुड़ के साथ खाकर ऊपर से २ घूँट जल पी लें। ऐसा करने से ३ दिन के अन्दर उदरस्थ सभी कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

अथवा—

पलाशबीजचूर्ण एवं अजवायनचूर्ण सम भाग में लें। ऐसा ५ ग्राम चूर्ण १० ग्राम गुड़ के साथ सेवन करने से उदरस्थ सभी कृमियाँ गिर जाती हैं।

१३. नाडीचफललेप

पेषयेदारनालेन नाडीचस्य फलानि च।
यूकालिक्षाप्रशान्त्यर्थं दद्याल्लेपन्तु मस्तके ॥१३॥

नाड़ीच = (नाड़ीशाक) शाक के बीजों को काञ्जी के साथ पीस कर जूँ एवं लिक्षा को नष्ट करने के लिए शिरस्थ बालों की जड़ों में लेप करें। ऐसा २-३ बार लेप करने से जूँ एवं लीक नष्ट हो जाते हैं।

१४. जूँ नाशनार्थ लेपद्वय (योगरत्नाकर)

रसेन्द्रेण समायुक्तो रसो धुस्तूरपत्रजः।
ताम्बूलपत्रजो वाऽपि लेपाद्यूकाविनाशनः ॥१४॥

१. धत्तूरपत्रस्वरस एवं पारद समभाग में मर्दन कर सिर में लगाने पर जूँ नष्ट हो जाते हैं।

२. अथवा पारद को समभाग पान के रस में मर्दन कर सिर में लेप करने से जूँ नष्ट हो जाते हैं।

१५. पारसीयादि चूर्ण

पारासीययमानिकाघनकणाशृङ्गीविडङ्गारुणा
चूर्णं श्लक्ष्णतरं विलीढमपि तत् क्षौद्रेण संयोजितम्।
कासं नाशयति ज्वरञ्च जयति प्रौढातिसारं जये-
च्छर्दिं मर्दयति क्रिमिन्तु नियतं कोष्ठस्थमुन्मूलयेत् ॥

१. पारसीकयमानी, २. नागरमोथा, ३. पिप्पली, ४. काकड़ासिंगी, ५. वायविडङ्ग तथा ६. अतीस लें। उपर्युक्त ६ द्रव्यों को समभाग में लें और कूट-पीस कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। ५ ग्राम इस चूर्ण को मधु के साथ प्रातः-सायं प्रतिदिन लेने से कास, ज्वर, उग्रातिसार, वमन एवं उदरस्थ कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

१६. पिष्टक पूपिका प्रयोग (चक्रदत्त)

आखुकर्णीदलैः पिष्टैः पिष्टकेन च पूपिकाम्।
जग्ध्वा सौवीरकं चानु पिबेत् क्रिमिहरं परम् ॥१६॥

मूषाकर्णीपत्रचूर्ण ३ भाग तथा यव का आटा १ भाग दोनों को मिलाकर यथेष्ट गुड़ और जल के साथ घोलकर पूआ (पूपलिका) बनाकर खाने के बाद ऊपर से काञ्जी पीने से उदरस्थ कृमियाँ गिर जाती हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१७. सुरसादि[1] क्वाथ (सुश्रुत)

सुरसाऽऽदिगणं वाऽपि सर्वथैवोपयोजयेत्।

१. कृष्ण तुलसी, २. श्वेत तुलसी, ३. मरुआदाना, ४. अर्जक (बर्बरी), ५. भूस्तृण (रोहिष घास), ६. द्रोणपुष्पी, ७. राजिका, ८. कृष्ण अर्जक, ९. कसौंदी, १०. क्षवक (नकछिकनी), ११. खरपुष्पा, १२. विडङ्ग, १३. कायफल, १४. कपित्थपत्र, १५. निर्गुण्डी, १६. मुण्डी, १७. मूषाकर्णी, १८. भारङ्गी, १९. काकजंघा, २०. काकमाची और २१. विषमुष्टि—ये २१ द्रव्य समभाग प्रत्येक द्रव्य लेकर यवकुट करें और २५ ग्राम यवकुट चूर्ण को २०० मि.ली. जल में रात्रि पर्यन्त भिगाकर प्रातः मन्दाग्नि पर क्वाथ करें। २५ मि.ली. शेष रहने पर उतारकर छान लें।

मात्रा—२५ मि.ली.। **उपयोग**—कृमिरोग, प्रतिश्याय, कास, श्वास, अरुचि, व्रणशोधन आदि में लाभप्रद।

१८. विडङ्गादि चूर्ण (चक्रदत्त)

विडङ्गसैन्धवक्षारकम्पिल्लकहरीतकीः।
पिबेत्तक्रेण सम्पिष्य सर्वक्रिमिनिवृत्तये ॥१७॥

१. वायविडङ्ग, २. सैन्धवलवण, ३. यवक्षार, ४. कम्पिल्लक तथा ५. हरीतकीफलदल—प्रत्येक द्रव्य १००-१०० ग्राम लें। इन्हें इमामदस्ते में कूटकर चूर्ण कर लें और शीशी में सुरक्षित करें।

मात्रा—१० ग्राम चूर्ण। **अनुपान**—तक्र में पीस कर पीना है। **उपयोग**—कृमिहर। **स्वाद**—लवण-क्षारीय। **वर्ण**—रक्ताभ चूर्ण। **गन्ध**—निर्गन्ध।

अथ रसप्रयोगाः

क्रिमिरोग में रसौषधियाँ

१९. क्रिमिकालानलरस (र.सा.सं.)

विडङ्गं द्विपलञ्चैव विषचूर्णं तदर्धकम्।
लौहचूर्णं तदर्धं च तदर्धं शुद्धपारदम् ॥१८॥
रसतुल्यं शुद्धगन्धं छागीदुग्धेन पेषयेत्।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा खादेद् गुञ्जैकसम्मिताम् ॥
धान्यजीरानुपानेन नाम्ना कालानलो रसः।
उदरस्थं क्रिमिं हन्याद् ग्रहण्यर्शःसमन्वितम् ॥२०॥
अग्निदः शोथशमनो गुल्मप्लीरोदराञ् जयेत्।
गहनानन्दनाथेन भाषितो विश्वसन्मुदे ॥२१॥

१. विडङ्गचूर्ण १०० ग्राम, २. शुद्ध वत्सनाभ ५०० ग्राम, ३. लोहभस्म २५ ग्राम, ४. शुद्ध पारद १२ ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक १२ ग्राम और ६. बकरी का दूध यथावश्यक लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः विडङ्गचूर्ण, वत्सनाभचूर्ण तथा लोहभस्म उपर्युक्त मात्रा में लेकर, कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें और बकरी के दूध की भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। श्री गहनानन्दनाथ ने इसे कहा है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१-१ रत्ती)। **अनुपान**—धनियाचूर्ण और भूँजा जीराचूर्ण २-२ रत्ती और मधु से। **उपयोग**—कृमिरोग में। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **स्वाद**—कटु।

२०. क्रिमिधूलिजलप्लवरस (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकं शुद्धं वङ्गं शङ्खं समं समम्।
चतुर्णां योजयेत्तुल्यं पथ्याचूर्णं भिषग्वरः ॥२२॥
दण्डयन्त्रेण निर्मथ्य पटोलस्वरसं पिबेत्।
कार्पासबीजसदृशीं वटिकां कुरु यत्नतः ॥२३॥
अद्याद्वटीत्रयं प्रातः शीततोयं पिबेदनु।
केवलं पैत्तिके योज्यः कदाचिद्वातपैत्तिके ॥२४॥
श्रीमद्गहननाथोक्तः क्रिमिधूलिजलप्लवः ॥२५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. वङ्ग भस्म, ४. शंख भस्म और ५. हरीतकीचूर्ण—पारद से शंख तक चारों द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम तथा हरीतकीचूर्ण २०० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष द्रव्यों को उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें और पटोलपत्रस्वरस की भावना देकर २५० मि.ग्रा. (१-१ रत्ती) की वटी बना लें और छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसे २ रत्ती की मात्रा में प्रातःकाल शीतल जल से लेना चाहिए। इसे केवल पित्तजन्य कृमिरोग में तथा कभी-कभी वात-पित्तजन्य कृमिरोग में सेवन करना चाहिए। श्रीगहननाथ ने इसे लोककल्याणार्थ कहा है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—शीतल जल से। **उपयोग**—कृमिरोग (पित्तज कृमि, वातपित्तज कृमिरोग) में। **वर्ण**—श्याम। **स्वाद**—कषाय।

२१. कृमिकाष्ठानलरस (र.सा.सं.)

विशुद्धं पारदं गन्धं रङ्गं तालं वराटकम्।
मनःशिला कृष्णकाचं सोमराजी विडङ्गकम् ॥२६॥
दन्तीबीजं च जैपालं शिलाटङ्कणचित्रकम्।
कर्षमात्रं तु प्रत्येकं वज्रीक्षीरेण मर्दयेत् ॥२७॥
कलायसदृशीं कृत्वा वटिकां भक्षयेत्ततः।
क्रिमिकाष्ठानलो नाम रसोऽयं परिनिर्मितः।
श्लैष्मिके श्लेष्मपित्ते च श्लेष्मवाते च शस्यते ॥२८॥

---

१. सुरसाश्वेतसुरसाफणिज्झकार्जकभूस्तृणसुगन्धकसुमुखकालमालकासमर्दक्षवकखरपुष्पाविडङ्गकट्फलसुरसीनिर्गुण्डीकुलाहलोन्दुरुकर्णिकाफञ्जीप्राचीबलकाकमाच्यो विषमुष्टिकश्चेति। (सु.सू. ३८।१८)
सुरसादिगणो ह्येषः कफहृत् कृमिसूदनः।
प्रतिश्यायारुचिश्वासकासघ्नो व्रणशोधनः॥ (सु.सू. ३८।१९)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध हरताल, ४. वङ्ग भस्म, ५. वराटिका भस्म, ६. शुद्ध मनःशिला, ७. कृष्णकाच, ८. बाकुचीबीजचूर्ण, ९. विडङ्गचूर्ण, १०. शुद्ध जयपाल, ११. शुद्ध शिलाजीत, १२. शुद्ध टङ्कण तथा १३. चित्रकमूल चूर्ण—जयपाल छोड़कर प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें और शुद्ध जयपाल ४० ग्राम लें। क्योंकि आचार्यश्री ने दन्तीबीज और जयपाल दो बार कहा है। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक डालकर कज्जली बनावें तथा द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें और स्नुहीक्षीर की भावना देकर १-१ रत्ती (१२५ मि.ली.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। ततः काचपात्र में सुरक्षित करें।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती)। **अनुपान**—शीतल जल से। **उपयोग**—कफज, कफपित्तज तथा कफवातज कृमिरोग में। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु।

२२. क्रिमिविनाशनरस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं समं गन्धमभ्रं लौहं मनःशिला।
धातकी त्रिफला लोध्रं विडङ्गं रजनीद्वयम् ॥२९॥
भावयेत्सप्तधा सर्वं शृङ्गवेरभवै रसैः।
गुञ्जार्धां च वटीं कृत्वा त्रिफलारससंयुताम् ॥३०॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय क्रिमिरोगोपशान्तये।
वातिकं पैत्तिकं हन्ति श्लैष्मिकञ्च त्रिदोषजम् ॥३१॥
क्रिमिविनाशनो नाम क्रिमिरोगकुलान्तकः ॥३२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रक भस्म, ४. लोह भस्म, ५. शुद्ध मनःशिला, ६. धातकीपुष्पचूर्ण, ७. त्रिफला-चूर्ण, ८. लोध्रत्वक्, ९. विडङ्गचूर्ण, १०. हल्दीचूर्ण तथा ११. दारुहल्दीचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उसी खरल में शेष सभी द्रव्यों के चूर्ण मिलाकर मर्दन करें और आर्द्रक के रस में ७ भावना देकर $\frac{१}{२}$–$\frac{१}{२}$ रत्ती (६० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसके बाद काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती)। **अनुपान**—त्रिफला क्वाथ से। **उपयोग**—वातज, पित्तज, कफज एवं त्रिदोषज कृमिरोग में। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **स्वाद**—कटु।

२३. क्रिमिरोगारिरस (र.सा.सं.)

सूतं गन्धं मृतं लौहं मरिचं विषमेव च।
धातकी त्रिफला शुण्ठी मुस्तकं सरसाञ्जनम् ॥३३॥
त्रिकटु मुस्तकं पाठा बालकं बिल्वमेव च।
भावयेत् सर्वमेकत्र स्वरसैर्भृङ्गजैस्ततः ॥३४॥
वटी गुञ्जाप्रमाणेन भक्षणीया विशेषतः।
क्रिमिरोगविनाशाय रसोऽयं क्रिमिनाशनः ॥३५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लोहभस्म, ४. मरिच चूर्ण, ५. शुद्ध वत्सनाभ, ६. धातकीपुष्पचूर्ण, ७. त्रिफलाचूर्ण, ८. शुण्ठीचूर्ण, ९. नागरमोथाचूर्ण, १०. रसाञ्जनचूर्ण, ११. त्रिकटुचूर्ण, १२. नागरमोथा, १३. पाठाचूर्ण, १४. सुगन्ध-बाला और १५. बिल्वफलमज्जा—इन सभी द्रव्यों को समभाग में लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर उसी के साथ शेष सभी द्रव्यों के चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। ततः आर्द्रकरस की तीन बार भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती)। **अनुपान**—शीतल जल से। **उपयोग**—कृमिरोग विनाश के लिए। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु।

२४. कीटारिरस[1]

शुद्धसूतं शक्रयवं चाजमोदा मनःशिला।
पलाशबीजं गन्धञ्च देवदाल्या द्रवैर्दिनम् ॥३६॥
सम्मर्द्य भक्षयेन्नित्यं शालपर्णीरसैः सह।
सितायुक्तं पिबेच्चानु क्रिमिपातो भवत्यलम् ॥३७॥

१. शुद्ध पारद, २. इन्द्रयवचूर्ण, ३. अजमोदाचूर्ण, ४. शुद्ध मनःशिला, ५. पलाशबीजचूर्ण और ६. शुद्ध गन्धक—पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः शेष अन्य द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः देवदालीस्वरस की भावना देकर एक दिन मर्दन कर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इससे निश्चित रूप से कृमियाँ गिर जाती है।

मात्रा—१-१ रत्ती १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मुद्गपर्णी स्वरस या क्वाथ से। **उपयोग**—कृमि रोगनाशनार्थ। **वर्ण**—कृष्णवर्ण। **स्वाद**—कटु।

२५. कीटमर्दरस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं शुद्धगन्धमजमोदा विडङ्गकम्।
विषमुष्टिर्ब्रह्मदण्डी यथाक्रमगुणोत्तरम् ॥३८॥
चूर्णयेन्मधुना मिश्रं गुञ्जैकं क्रिमिजिद्भवेत्।
कीटमर्दो रसो नाम्ना मुस्ताक्वाथं पिबेदनु ॥३९॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. अजमोदाचूर्ण ३० ग्राम, ४. विडङ्गचूर्ण ४० ग्राम, ५. शुद्ध कुपीलु ५० ग्राम तथा ६. भार्गीचूर्ण ६०ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को रखकर मर्दन करें और कज्जली होने पर शेष ४ द्रव्यों को डालकर मर्दन करें। पुनः काचपात्र में रखकर सुरक्षित करें।

१. कीटारि रस और कृमिहर रस दोनों का पाठ एक जैसा है। मात्र अनुपान में मुद्गपर्णी के स्थान पर शालपर्णी क्वाथ पीना है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—मधु के साथ खाकर बाद में नागरमोथा क्वाथ पियें। **उपयोग**—कृमि नाशनार्थ। **वर्ण**—कृष्णवर्ण। **स्वाद**—तिक्त।

२६. क्रिमिघातिनीगुटिका (र.चि.मणि)

रसगन्धाजमोदानां क्रिमिघ्नब्रह्मबीजयोः।
एकद्वित्रिचतुष्पञ्च तिन्दोर्बीजस्य षट् क्रमात् ॥४०॥
सञ्चूर्ण्य मधुना सर्वं गुटिकां क्रिमिघातिनीम्।
खादन् पिपासुस्तोयञ्च मुस्तानां क्रिमिशान्तये।
आखुपर्णीकषायं वा प्रपिबेच्छर्कराऽन्वितम् ॥४१॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. अजमोदा ३० ग्राम, ४. विडङ्गचूर्ण ४० ग्राम, ५. पलाशबीज ५० ग्राम तथा ६. शुद्ध कुपीलुचूर्ण ६० ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः शेष द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें और मधु के साथ मर्दन कर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। कृमिनाशनार्थ इसका प्रयोग करें।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—जल से (प्यास लगने पर मुस्ता क्वाथ या मूषाकर्णी क्वाथ में चीनी मिलाकर पीना चाहिए)। **उपयोग**—कृमिरोग। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **स्वाद**—तिक्त-मधुर।

२७. क्रिमिमुद्गररस (र.सा.सं.)

क्रमेण वृद्धं रसगन्धकाज-
मोदाविडङ्गं विषमुष्टिका च।
पलाशबीजञ्च विचूर्णमस्य
गुञ्जाप्रमाणं मधुनाऽवलीढम् ॥४२॥
पिबेत् कषायं घनजं तदूर्ध्वं
रसोऽयमुक्तः क्रिमिमुद्गराख्यः।
क्रिमीन्निहन्ति क्रिमिजांश्च रोगान्
सन्दीपयत्यग्निमयं त्रिरात्रात् ॥४३॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. अजमोदाचूर्ण ३० ग्राम, ४. विडङ्गचूर्ण ४० ग्राम, ५. शुद्ध कुपीलुचूर्ण ५० ग्राम तथा ६. पलाशचूर्ण ६० ग्राम लें। एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उसी के साथ सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.)। **अनुपान**—नागरमोथा क्वाथ बाद में पियें। **उपयोग**—कृमिरोग-नाशनार्थ। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **स्वाद**—तिक्त रस।

२८. क्रिमिघातिनीवटी (र.सा.सं.)

शशिलेखा निशा कृष्णा काम्पिल्लो गिरिमृत्तिका।
त्रिवृन्मूलं शिवाबीजं पलाशस्य समं समम् ॥४४॥
सम्मर्द्य वारिणा कार्या चतुर्गुञ्जामिता वटी।
हृल्लासं सदनं शोथं शूलक्षवथुपीनसान् ॥४५॥
भक्तद्वेषं ज्वरं कार्श्यं वमनं विड्विबद्धताम्।
क्रिमींश्च विंशतिविधान् नाशयेत् क्रिमिघातिनी ॥४६॥

१. बाकुचीचूर्ण, २. हल्दीचूर्ण, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. शुद्ध कम्पिल्लक, ५. शुद्ध गैरिक, ६. निशोथचूर्ण, ७. हरीतकीचूर्ण और ८. पलाशबीजचूर्ण लें। सर्वप्रथम सभी द्रव्यों को समभाग लेकर कूटकर चूर्ण बना लें और पानी के साथ सिल पर पीसकर ४-४ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—जल के साथ। **उपयोग**—मिचली, शोथ, शूल, छिक्का, पीनस, भक्तद्वेष, ज्वर, कृशता, वमन, विबन्ध और बीसों प्रकार की कृमियों को नष्ट करता है। **वर्ण**—रक्त वर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त रस।

२९. क्रिमिघ्नरस (र.सा.सं.)

क्रिमिघ्नं किंशुकारिष्टबीजं सुरसभस्मकम्।
वल्लद्वयं चाखुपर्णीरसैः क्रिमिविनाशनः ॥४७॥

१. विडङ्गचूर्ण, २. पलाशबीजचूर्ण, ३. निम्बबीज और ४. रससिन्दूर—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम रससिन्दूर को खरल में पीसकर अन्य द्रव्यों को मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—६ रत्ती (७५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मूषाकर्णी स्वरस या क्वाथ से। **उपयोग**—कृमिरोग। **वर्ण**—रक्ताभ वर्ण। **स्वाद**—तिक्त रस।

३०. विडङ्गलौह (र.सा.सं.)

रसं गन्धञ्च मरिचं जातीफललवङ्गकम्।
शुण्ठी तालं कणा वङ्गं प्रत्येकं भागसम्मितम् ॥४८॥
सर्वचूर्णसमं लौहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम्।
लौहं विडङ्गकं नाम कोष्ठस्थक्रिमिनाशनम् ॥४९॥
दुर्नामान्यरुचिञ्चैव मन्दाग्निञ्च विसूचिकाम्।
शोथं शूलं ज्वरं हिक्कां श्वासं कासं विनाशयेत् ॥५०॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. मरिच चूर्ण १ भाग, ४. जायफल १ भाग, ५. लौंगचूर्ण १ भाग, ६. पिप्पलीचूर्ण १ भाग, ७. शुद्ध हरताल १ भाग, ८. शुण्ठीचूर्ण १ भाग, ९. वङ्गभस्म १ भाग, १०. लौह भस्म ९ भाग तथा ११. विडङ्गचूर्ण १८ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कज्जली बनाकर शेष द्रव्यों के चूर्ण उसमें मिलाकर अच्छी तरह २ दिनों तक मर्दन करें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—४ से ६ रत्ती (५०० मि.ग्रा. से ७५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—गुड़ के साथ खाकर शीतल जल पियें। **उपयोग**—कोष्ठस्थ कृमिनाशक, अर्श, अरुचि, मन्दाग्नि, विसूचिका, शोथ, शूल, ज्वर, हिक्का, श्वास एवं कास नाशक है। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु रस।

३१. हरिद्राखण्ड

स्वरसं पारिभद्रस्य प्रस्थमानीय यत्नतः।
तदर्द्धाञ्च सितां दत्त्वा घृतं कुडवसम्मितम् ॥५१॥
प्रस्थार्द्धं रजनीचूर्णं दत्त्वा पाकं समाचरेत्।
यदा दर्वीप्रलेपः स्यात्तदैषां चूर्णमाक्षिपेत् ॥ ५२॥
चित्रकं त्रिफला मुस्तं विडङ्गं कृष्णजीरकम्।
यमानीद्वयसिन्धूत्थं निर्गुण्डीफलमेव च ॥५३॥
पाठा विडङ्गकञ्चैव शारिवाद्वयवासकौ।
पलाशबीजं व्योषञ्च त्रिवृद्दन्ती सरेणुका ॥५४॥
अरिष्टं सोमराजी च प्रत्येकन्तु द्विकार्षिकम्।
ततः शाणमितं खादेत्तोयञ्चानु पिबेन्नरः ॥५५॥
क्रिमींश्च विंशतिविधान् नाशयेन्नात्र संशयः।
दुष्टव्रणञ्च कुष्ठञ्च नाडीव्रणभगन्दरौ ॥५६॥
शीतपित्तं विद्रधिञ्च दद्रुं चर्मदलं तथा।
अजीर्णं कामलां चैव श्वयथुञ्च विनाशयेत् ॥५७॥
बलपुष्टिकरो ह्येष वलीपलितनाशनः।
पारिभद्रावलेहोऽयं सर्वव्याधिनिषूदनः।
व्रणिनां हितकामो हि प्राह नागर्जुनो मुनिः ॥५८॥

१. पारिभद्रस्वरस ७५० मि.ली., २. शर्करा ३७५ ग्राम, ३. घी १८५ ग्राम, ४. हरिद्राचूर्ण ३७५ ग्राम; ५ चित्रकमूल-चूर्ण, ६. त्रिफलाचूर्ण, ७. नागरमोथाचूर्ण, ८. विडङ्गचूर्ण, ९. कालाजीराचूर्ण, १०. अजवायनचूर्ण, ११. अजमोदाचूर्ण, १२. सैन्धवलवण, १३. निर्गुण्डीबीजचूर्ण, १४. पाठाचूर्ण, १५. विडङ्गचूर्ण, १६. कृष्ण अनन्तमूल चूर्ण, १७. श्वेतअनन्तमूल चूर्ण, १८. वासाचूर्ण, १९. पलाशबीजचूर्ण, २०. त्रिकटुचूर्ण, २१. त्रिवृत्चूर्ण, २२. दन्तीमूलचूर्ण, २३. रेणुकाचूर्ण, २४. निम्बफलचूर्ण और २५. बाकुचीचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में पारिभद्रस्वरस, शर्करा, घी और हरिद्राचूर्ण मिलाकर चूल्हे पर पाक करें। पाक आसन्न होने पर पाक-परीक्षा कर (कड़ी चासनी—मोदक की चासनी) चूल्हे से पात्र को उतारकर शेष चित्रकमूल से बाकुची तक के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह से चलाकर (चूर्णरूप में) काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे पारिभद्रावलेह कहते हैं। बीसों प्रकार की कृमियों को यह औषधि नाश करती है। शीतपित्त (कोठ), दुष्टव्रण, कुष्ठ, नाडीव्रण, भगन्दर, विद्रधि, दद्रु, चर्मदल, अजीर्ण, कामला, शोथ नाशक है; वली-पलित नाशक है और बल तथा पुष्टिकारक है। इसे नागार्जुन मुनि ने कहा है।

मात्रा—३ ग्राम। **अनुपान**—शीतल जल से। **वर्ण**—पीतवर्ण का चूर्ण। **स्वाद**—मधुर। **गन्ध**—सुगन्धी, रुचिकर। **उपयोग**—कृमि, कुष्ठ, व्रण।

३२. पारिभद्रावलेह

पलाशबीजं द्विपलं क्रिमिशत्रुस्ततः पृथक्।
इन्द्रबीजं लवङ्गं च त्वगेला गजपिप्पली ॥५९॥
पत्रं शुण्ठी च मरिचं टङ्गं चित्रकमुस्तके।
तुगाक्षीरी पिप्पली च विडसैन्धवचूर्णकम् ॥६०॥
रेणुकाऽऽमलकी पथ्या बिभीतकमथो जलम्।
शैलजं च तथा लौहमभ्रं वङ्गं सुचूर्णितम् ॥६१॥
प्रत्येकमेषां संग्राह्यं तोलकद्वयसम्मितम्।
मन्दारपत्रस्वरसं प्रस्थमात्रं भिषग्वरः ॥६२॥
शरावमात्रं गोमूत्रं सर्वमेकत्र पाचयेत्।
शीते च माक्षिकं तत्र देयं द्विपलसम्मितम् ॥६३॥
ततोऽक्षमात्रां तु पिबेन्भानवस्तेन तस्य हि।
क्रिमयश्चाशु नश्यन्ति शूलं वमनमेव च ॥६४॥
मन्दाग्निश्वासकासाश्चारोचकं दुष्टिरस्त्रजा।
सेवनादस्य नितरां बलं वर्णश्च जायते ॥६५॥

१. पलाशबीज १०० ग्राम, २. विडङ्ग १०० ग्राम, ३. इन्द्रयव, ४. लवङ्ग, ५. त्वक्, ६. छोटीइलायची, ७. गजपिप्पली, ८. तेजपत्ता, ९. शुण्ठी, १०. मरिच, ११. शुद्ध टङ्कण, १२. चित्रकमूल, १३. नागरमोथा, १४. वंशलोचन, १५. पिप्पली, १६. विड्लवण, १७. सैन्धवलवण, १८. रेणुका, १९. आमलकी, २०. पथ्या, २१. बहेड़ा, २२. सुगन्धबाला, २३. भूरिछरैला, २४. लोहभस्म, २५. अभ्रक-भस्म और २६. वङ्गभस्म—प्रत्येक २०-२० ग्राम; २७. अर्कपत्रस्वरस ७५० मि.ली., २८. गोमूत्र ३७५ मि.ली. तथा २९. मधु ९५ ग्राम लें। पलाशबीज से छरैला तक के सभी २३ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। अर्कपत्रस्वरस और गोमूत्र दोनों को एक स्टील के पात्र में रखकर सभी द्रव्यों के चूर्ण को मिलाकर अग्नि पर पाक करें। जब सूख जाय तो चूल्हे से उतारकर मधु अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में रख लें।

मात्रा—५-१० ग्राम। **अनुपान**—जल से। **उपयोग**—सभी प्रकार की कृमियाँ तथा शूल, वमन, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरोचक एवं रक्तविकार नष्ट हो जाते हैं। इसके सेवन से बल-वर्ण की वृद्धि होती है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३३. त्रिफलाद्य घृत (चक्रदत्त)

त्रिफला त्रिवृता दन्ती वचा कम्पिल्लकं तथा ।
सिद्धमेभिर्गवां मूत्रे सर्पिः क्रिमिविनाशनम् ॥६६॥
सर्वान् क्रिमीन् प्रणुदति वज्रं मुक्तमिवासुरान् ॥६७॥

१. त्रिफलाचूर्ण, २. त्रिवृत्चूर्ण, ३. दन्तीमूलचूर्ण, ४. वचाचूर्ण तथा ५. कम्पिल्लक—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम; ६. गोघृत १ किलो और ७. गोमूत्र ४ लीटर लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में घृत को मूर्च्छित कर लें तथा त्रिफला आदि के २५० ग्राम चूर्ण को सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित घृत में कल्क मिलाकर गोमूत्र के साथ पाक करें। आसन्नपाक के समय १ लीटर जल के साथ पाक करें। पाक की परीक्षा कर घृत उतार लें और छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—उष्ण दुग्ध या उष्ण जल के साथ। **उपयोग**—कृमिरोग में। **वर्ण**—पीतवर्ण का। **स्वाद**—कषाय-तिक्त। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धि।

३४. विडङ्गघृत = त्रिफलाघृत (चक्रदत्त)

त्रिफलायास्त्रयः प्रस्था विडङ्गप्रस्थ एव च ।
दीपनं दशमूलञ्च लाभतः समुपाचरेत् ॥६८॥
पादशेषे जलद्रोणे श्रृते सर्पिर्विपाचयेत् ।
प्रस्थोन्मितं सिन्धुयुतं तत्परं क्रिमिनाशनम् ॥६९॥
विडङ्गघृतमेतद्धि लेह्यं शर्करया सह ।
सर्वान् क्रिमीन् प्रणुदति वज्रं मुक्तमिवासुरान् ॥७०॥

१. त्रिफला यवकुट ३ प्रस्थ (२२५० ग्राम), २. विडङ्ग यवकुट १ प्रस्थ (७५० ग्राम), ३. गाय का घी १ प्रस्थ (७५० ग्राम), ४. पञ्चकोल यवकुट १ प्रस्थ (७५० ग्राम), ५. दशमूल यवकुट १ प्रस्थ (७५० ग्राम), ६. सैन्धवलवण ९५ ग्राम तथा ७. विडङ्गचूर्ण ९५ ग्राम लें। सर्वप्रथम बड़ी कड़ाही में त्रिफला-यवकुट, विडङ्ग-यवकुट, पञ्चकोल-यवकुट तथा दशमूल-यवकुट कुल मिलाकर ६ प्रस्थ = ४५०० ग्राम द्रव्य लेकर २६ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। जब ६$\frac{१}{२}$ लीटर जल शेष रहे तो उतारकर छान लें। विडङ्ग और सैन्धवलवण को सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ततः स्टेनलेस स्टील के पात्र में मूर्च्छित गोघृत १ कि. लेकर मध्यमाग्नि पर पिघलावें। इसके बाद उक्त पात्र में उपर्युक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर पाक करें। पाक की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर छान लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—५-१० ग्राम। **अनुपान**—शर्करा मिलाकर। **उपयोग**—कृमिनाशक। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कषाय-तिक्त रस युक्त।

विमर्श—दीपनं = पञ्चकोल सम्मिलित। दशमूल सम्मिलित यवकुट लें।

३५. विडङ्ग तैल (चक्रदत्त)

सविडङ्गगन्धकशिलासिद्धं सुरभीजलेन कटुतैलम् ।
आजन्म नयति नाशं लिक्षासहिताश्च यूकाश्च ॥७१॥

१. विडङ्ग ७५ ग्राम, २. गन्धक ७५ ग्राम, ३. मनःशिला ७५ ग्राम, ४. कटुतैल १ लीटर, ५. गोमूत्र ४ लीटर तथा जल ४ लीटर लें। विडङ्ग-गन्धक-मनःशिला तीनों को कूटकर गोमूत्र के साथ पीसकर कल्क बना लें। अब एक पात्र में मूर्च्छित कटु तैल रखकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब तैल खूब गरम हो जाय तो उसमें ४ लीटर गोमूत्र एवं उपर्युक्त कल्क मिलाकर पाक करें। हमेशा चलाते रहें, क्योंकि गोमूत्र के कारण इस तैल में शीघ्र उफान आता है। गोमूत्र सूख जाने पर सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर भी पाक करना चाहिए। पाक-परीक्षा कर तैल उतार-कर छान लें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

उपयोग—केवल बाह्य प्रयोग, यूका-लिक्षानाशनार्थ। **वर्ण**—पीतवर्ण तैल।

३६. विडङ्गादि तैल

तुलामानं विडङ्गस्य सोमवल्ल्याः पलं शतम् ।
जलद्रोणे विपक्तव्यं चतुर्भागावशेषितम् ॥७२॥
एतत्क्वाथे पचेत्तैलं द्वात्रिंशत्पलमानकम् ।
विडङ्गो वारुणी वह्निर्लाङ्गली च प्रसारिणी ॥७३॥
दासी कुरण्टकश्चैव कट्फलस्त्र्यूषणं वरा ।
रास्ना चैरण्डमूलञ्च प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ॥७४॥
कल्कार्थं दीयते तत्र शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
कोठकण्डूज्वरानाहहृल्लासारुचिपीनसान् ॥७५॥
ग्रहणीपाण्डुतामूर्च्छाः कृमींश्चान्तर्बहिश्चरान् ।
विडङ्गद्यमिदं तैलं नाशयेन्नात्र संशयः ॥७६॥

१. विडङ्ग ५ कि., २. बाकुचीबीज ५ कि. तथा ३. तिल-तैल १$\frac{१}{२}$ लीटर लें। **कल्क**—१. विडङ्गबीज, २. इन्द्रायण-मूल, ३. चित्रकमूल, ४. कलिहारीमूल, ५. गन्धप्रसारणी, ६. सैरेयक, ७. पीतपुष्प सैरेयक, ८. कायफल, ९. त्रिकटु, १०. त्रिफला, ११. रास्ना तथा १२. एरण्डमूल—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें। सर्वप्रथम विडङ्ग और बाकुचीबीज को यवकुट कर २६ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। जब ६$\frac{१}{२}$ लीटर क्वाथ शेष बचे तो क्वाथ छान लें। ततः विडङ्ग से एरण्डमूल तक के सभी १२ द्रव्यों को कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें और इसे सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद मूर्च्छित तिलतैल १$\frac{१}{२}$ लीटर को एक बड़े पात्र में रखकर मन्दाग्नि पर तप्त करें। जब तैल गरम हो जाय तो उस पात्र में क्वाथ-कल्क मिलाकर पाक करें। पाक-परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर छान लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लेप—केवल बाह्य प्रयोग। **उपयोग**—शीतपित्त-कोठ-कण्डू-ज्वर-आनाह-हृल्लास-अरुचि-पीनस-ग्रहणी-पाण्डु-मूर्च्छा और अन्तर्बाह्य कृमिनाशक है।

३६. धुस्तूर तैल

धुस्तूरपत्रकल्केन तद्रसेन च साधितम्।
तैलमभ्यङ्गमात्रेण यूकां नाशयति ध्रुवम् ॥७७॥

१. तिलतैल १ लीटर, २. धत्तूरपत्रस्वरस ४ लीटर तथा ३. धत्तूरकल्क २५० ग्राम लें। सर्वप्रथम धत्तूरपत्रस्वरस ४ लीटर निकालें और २५० ग्राम धत्तूरपत्र को पीसकर कल्क बना लें। अब स्टील के पात्र में १ लीटर मूर्च्छित तिलतैल रखकर मन्दाग्नि पर गरम करें। गरम होने पर उसी पात्र में धत्तूरपत्रस्वरस और धत्तूर कल्क मिलाकर पाक करें। पाकासन्न होने पर सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर पाक करें। पाक-परीक्षा कर तैल को चूल्हे से उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसके बाह्य प्रयोग से जूँ-लीख आदि बाह्य कृमियाँ नष्ट हो जाती हैं।

विडङ्गारिष्ट (शार्ङ्ग.सं.)

विडङ्गं ग्रन्थिकं रास्ना कुटजत्वक्फलानि च।
पाठैलवालुकं धात्री भागान् पञ्चपलान् पृथक् ॥७८॥
अष्टद्रोणेऽम्भसः पक्त्वा कुर्याद् द्रोणावशेषितम्।
पूते शीते क्षिपेत्तत्र क्षौद्रं पलशतत्रयम् ॥७९॥
धातकीं विंशतिपलां त्रिजातं द्विपलं तथा।
प्रियङ्गुकाञ्चनाराणां सलोध्राणां पलं पलम् ॥८०॥
व्योषस्य च पलान्यष्टौ चूर्णीकृत्य प्रदापयेत्।
घृतभाण्डे विनिक्षिप्य मासमेकं निधापयेत् ॥८१॥
ततः पिबेद्यथार्हं तु जयेद् विद्रधिमुत्थितम्।
ऊरुस्तम्भादश्मरीमेहान्प्रत्यष्ठीलाभगन्दरान् ॥८२॥
गण्डमालां हनुस्तम्भं विडङ्गारिष्टसंज्ञकम्।

१. वायविडङ्ग, २. पिप्पलीमूल, ३. रास्ना, ४. कुटजत्वक्, ५. इन्द्रयव, ६. पाठा, ७. एलवालुक, ८. आमलाफल—प्रत्येक २५० ग्राम। क्वाथार्थ जल ८ द्रोण = ९६ ली., अवशेष क्वाथ १ द्रोण = १२ ली. लें। **प्रक्षेप**—१. मधु ३०० पल (१४.१०० कि.ग्रा.), २. धातकीपुष्प (सुखाकर) ९५० ग्राम, ३. त्रिजात (तेजपत्र, दालचीनी, छोटी इलायची) २ पल (९३ ग्राम), ४. प्रियङ्गुफूल, ५. काञ्चनारत्वक् एवं ६. लोध्रत्वक्—प्रत्येक १-१ पल (४६ ग्राम), ७. त्रिकटु यवकुट (शुण्ठी-पीपर-मरिच) मिलित ८ पल (३७५ ग्राम) लें। एक स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में ९६ ली. मीठा जल देकर विडङ्गादि ८ द्रव्यों को यवकुट कर मिलाकर मध्यमाग्नि पर पकावें। जब १२ लीटर क्वाथ शेष बचे तो कपड़ा से छान लें। एक मिट्टी के बड़े एवं नये घड़े में रात्रिपर्यन्त जल भरकर रखें। प्रातः जल गिराकर उक्त क्वाथ को उसी घड़े में रखें और शीतल होने पर उस क्वाथ में मधु डालकर हाथ से मिला लें। ततः धूप में सुखाया हुआ धातकीपुष्प (बिना कूटा) उसी घड़े में डालें। तदनन्तर त्रिजात, प्रियङ्गुफूल, काञ्चनारत्वक्, लोध्रत्वक् एवं त्रिकटु का पृथक्-पृथक् यवकुट कर उसी घड़े में डालकर हाथ से अच्छी तरह मिला लें। शराव से घड़े का मुख बन्दकर कपड़मिट्टी से मुख बन्द कर दें। घड़े की तली में पुआल, भूसी या कोई गद्देदार वस्तु रख दें, जिससे घड़ा फूटे नहीं। उस घड़े पर विडङ्गारिष्ट नाम तथा तिथि लिख दें। १५ से ३० दिन लिखकर निर्वात घर में रख दें। २५ दिनों के बाद परीक्षोपरान्त माचिस की तिल्ली जलाकर परीक्षा के बाद अरिष्ट को छान लें। उस घड़े को धोकर कपड़े से पोंछकर छाना हुआ विडङ्गारिष्ट को पुनः उसी घड़े में रखकर छोड़ दें। १५ दिनों बाद घड़े को टेढ़ा कर स्वच्छ विडङ्गारिष्ट को पृथक् कर लें और उसके नीचे जमा हुआ गाद को फेंक दें। अब इस विडङ्गारिष्ट को बोतलों में भरकर लेबल, कार्क लगाकर स्थिर से कहीं रख दें। १ वर्ष के बाद इसका उपयोग करें। इस विडङ्गारिष्ट के सेवन से कृमि, विद्रधि, ऊरुस्तम्भ, अश्मरी, प्रमेह, प्रत्यष्ठीला, भगन्दर, गण्डमाला और हनुस्तम्भरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—बराबर जल मिलाकर। **समय**—भोजनोत्तर दोपहर एवं रात्रि में। **वर्ण**—रक्ताभ द्रव। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **उपयोग**—कृमि-विद्रधि, भगन्दर, प्रमेहादि में।

३८. लाक्षादि वटी धूप (र.सा.सं.)

लाक्षाभल्लातश्रीवासश्वेतापराजिताशिफाः ।
अर्जुनस्य फलं पुष्पं विडङ्गं सर्जगुग्गुलू ॥८३॥
एभिः कीटाश्च शाम्यन्ते तिष्ठन्तोऽपि गृहे सदा।
भुजङ्गा मूषिका दंशा घुणा लूताश्च मत्कुणाः।
दूरादेव पलायन्ते क्लिन्नकीटाश्च ये स्मृताः ॥८४॥

१. लाक्षा, २. भल्लातक, ३. विरोजा, ४. श्वेतापराजिता-मूल, ५. अर्जुन का फूल, ६. अर्जुन का फल, ७. विडङ्ग, ८. राल तथा ९. गुग्गुलु—सभी समभाग में लें। सभी द्रव्यों को कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और जल के साथ पीसकर १-१ ग्राम की वटी बना लें।

उपयोग—कमरा बन्दकर इस जहरीले धूप को जलाना चाहिए। धूप शान्त हो जाने पर घर में प्रवेश करना चाहिए। इस धूप से सभी कीड़े नष्ट हो जाते हैं; साँप, चूहे, मच्छर, मकड़ी, खटमल, लूता भाग जाते हैं। इस धूप से नमी से उत्पन्न होने वाले कीड़े भी नष्ट हो जाते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कृमिरोग में पथ्य

आस्थापनं कायशिरोविरेचनं
धूमः कफघ्नानि शरीरमार्जनाः ।
चिरन्तना वैणवरक्तशालयः
पटोलवेत्राग्ररसोनवास्तुकम् ॥८५॥
हुताशमन्दारदलानि सर्षपा
नवीनमोचं बृहतीफलानि ।
तिक्तानि नाडीचदलानि मौषिकं
मांसं विडङ्गं पिचुमर्दपल्लवम् ॥८६॥
पथ्या च तैलं तिलसर्षपोद्भवं
सौवीरशुक्तञ्च तुषोदकं मधु ।
पचेलिमं तालमरुष्करं गवां
मूत्रञ्च ताम्बूलसुरामृगाण्डजम् ॥८७॥
औष्ट्राणि मूत्राज्यवयांसि रामठं
क्षाराजमोदा खदिरञ्च वत्सकम् ।
जम्बीरनीरं सुषवी यवानिका
साराः सुराह्वागुरुशिंशपोद्भवाः ॥८८॥
तिक्तः कषायः कटुको रसोऽप्ययं
वर्गो नराणां कृमिरोगिणां सुखः ॥८९॥

कृमिरोगपीड़ित मनुष्यों के लिए आस्थापन बस्ति, विरेचन कर्म, शिरोविरेचन, धूमपान, कफघ्न रूक्ष एवं उष्ण पदार्थों का सेवन, शरीरमार्जन अभ्यङ्गादि, पुराने बाँस के यव, लाल शालिचावल, परवल शाक, वेत के अग्रभाग का शाक, लसुन और बथुवा के शाक—ये सब पथ्य हैं। चित्रकपत्रशाक, मन्दारपत्रशाक, सर्षपपत्रशाक, नये कदली के कोमल पत्तों का शाक, बृहतीफलशाक, तिक्त द्रव्यों के पत्तों के शाक, नाड़ीच-शाक, चूहे का मांस, विडङ्ग, निम्बपत्रशाक हितकर हैं।

हरीतकी, तिलतैल, सर्षपतैल, सौवीर, शुक्त, तुषोदक, मधु, पके हुए ताड़फल, शुद्ध भिलावा, गोमूत्र, ताम्बूल, सुरा और कस्तूरी हितकर हैं।

ऊँट के मूत्र, घृत एवं दूध; हींग, यवक्षार, अजमोदा, खदिरसार, इन्द्रयव, जम्बीरीस्वरस, करैला का शाक, अजवायन, शीशम की लकड़ी, देवदारु एवं अगरु—ये सब हितकर हैं।

तिक्तरस, कटुरस, कफ एवं कृमिनाशक भोजन ये कृमि के लिए हितकर हैं।

भोजन-व्यवस्था

प्रत्यहं कटुकं तिक्तं भोजनं कफनाशनम् ।
कृमीणां नाशनं रुच्यमग्निसन्दीपनं परम् ॥

कृमिरोगियों को प्रतिदिन कटु-तिक्तरसयुक्त एवं कफनाशक द्रव्यों का तथा रुचिकर और अग्निवर्द्धक भोजन कराना चाहिए।

कृमिरोग में अपथ्य

क्षीराणि मांसानि घृतानि चैव
दधीनि शाकानि च पत्रवन्ति ।
समासतोऽम्लं मधुरान् रसांश्च
कृमीञ्जिघांसुः परिवर्जयेत्तु ॥९०॥
छर्दिञ्च तद्वेगविधारणञ्च
विरुद्धपानाशनमह्नि निद्राम् ॥९१॥
द्रवञ्च पिष्टान्नमजीर्णताञ्च
घृतानि माषान् दधिपत्रशाकम् ॥९२॥
मांसं पयोऽम्लं मधुरं रसञ्च
कृमिञ्जिघांसुः परिवर्जयेच्च ॥९३॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां कृमिरोगाधिकारः ।

कृमिरोग से पीड़ित व्यक्ति दूध, मांस, घी, दही, पत्रशाक, अम्लरसयुक्त पदार्थ, मधुररसयुक्त पदार्थ कृमि को नष्ट करने की इच्छा से त्याग दें।

कृमिरोग में औषध खिलाकर वमन कराना तथा स्वयं वमन होने पर रोकना नहीं चाहिए। प्रकृति-विरुद्ध अन्नपान का त्याग (यथा—मछली और दूध का भोजन), दिन में शयन, द्रव और पिसे हुए पदार्थों का अधिक सेवन नहीं करें। अजीर्ण की स्थिति नहीं रहने दें अर्थात् अजीर्ण का उपचार करें। घी, उड़द, दधि, पत्रशाक, मांस, ऊँट के अतिरिक्त अन्य दूध का पान, अम्ल तथा मधुर रसयुक्त पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य कृमिरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ पाण्डुरोगाधिकारः (१२)

साध्यन्तु पाण्ड्वामयिनं समीक्ष्य
स्निग्धं घृतेनोर्ध्वमधश्च शुद्धम् ।
सम्पादयेत् क्षौद्रघृतप्रगाढै-
र्हरीतकीचूर्णमयैः प्रयोगैः ॥१॥

साध्य पाण्डुरोग में अच्छी तरह से रोगी के दोषों के बलाबल का विचारकर एवं घृतपान द्वारा स्नेहन कराकर वामक द्रव्यों से ऊर्ध्व व विरेचन द्रव्यों से अधःकाय का संशोधन करना चाहिए। ततः हरीतकीचूर्ण, लोहभस्म, घी एवं मधु के साथ प्रयोग करना चाहिए।

विमर्श—आचार्य सुश्रुत ने पाण्डुरोग में स्वेदन का निषेध किया है। अतः यहाँ पर भी स्नेहनोपरान्त ही वामक एवं वैरेचनिक द्रव्यों का सीधा प्रयोग बताया गया है। चरक का कल्याण घृत एवं महातिक्त घृत का प्रयोग करना अधिक उचित है।

१. पाण्डुरोग में घृत-प्रयोग

पिबेद् घृतं वा रजनीविपक्वं
यत्रैफलं [1]तैन्दुकमेव वाऽपि ।
विरेचनद्रव्यघृतं पिबेद्वा
योगांश्च वैरेचनिकान् घृतेन ॥२॥

पाण्डुरोग में हल्दी कल्क से सिद्ध घृत अथवा त्रिफला कल्क-क्वाथ से सिद्ध घृत, तेन्दु के कल्क से सिद्ध घृत अथवा कोई अन्य वैरेचनिक द्रव्यों से सिद्ध घृत का प्रयोग कर विरेचन कराना चाहिए।

विमर्श—गयदास ने हल्दी के क्वाथ और कल्क से साधित घृत का प्रयोग बताया है। अथवा अपनी बुद्धि से अन्य वैरेचनिक द्रव्यों के क्वाथ कल्क से साधित घृत का प्रयोग कर विरेचन करा सकते हैं।

२. हेतुविपरीत चिकित्सा

विधिः स्निग्धस्तु वातोत्थे तिक्तशीतस्तु पैत्तिके ।
श्लैष्मिके कटुरूक्षोष्णः कार्यो मिश्रस्तु मिश्रके ॥३॥

वातज पाण्डुरोग में विविधौषधों से सिद्ध घृत का प्रयोग कर स्नेहन करें, पित्तज पाण्डु में तिक्त तथा शीत औषधों से साधित क्वाथ घृतादि का प्रयोग करें और कफज पाण्डुरोग में कटु एवं रूक्ष औषधों का प्रयोग करना चाहिए। त्रिदोषज पाण्डुरोग में त्रिदोष को नष्ट करने वाली मिश्रौषधि का प्रयोग करना चाहिए।

१. तैल्वकमेव वाऽपि ।

३. गुडहरीतकी-प्रयोग

पाण्डुरोगे सदा सेव्या सगुडा च हरीतकी ॥४॥

हरीतकी १ भाग तथा गुड़ १ भाग—दोनों को अच्छी तरह मिलाकर १-१ तोले का मोदक बनाकर काचपात्र में रख लें और पाण्डुरोगी को प्रतिदिन १ से २ मोदक २-२ बार खिलायें।

४. त्रिफलाक्वाथ (वातज पाण्डु में)

त्रिफलाक्वथितं तोयं सघृतं च सशर्करम् ।
वातपाण्ड्वामयी पीत्वा स्वास्थ्यमाशु व्रजेद् ध्रुवम् ॥

१. आमला-हरीतकी-बहेड़ा का क्वाथ २५ मि.ली., २. गाय का घृत २५ ग्राम तथा ३. शक्कर १० ग्राम मिलाकर पीने से निश्चित रूप से पाण्डुरोगी रोगमुक्त हो जाता है।

५. पित्तज-कफज पाण्डुहर योग (चक्रदत्त)

द्विशर्करं त्रिवृच्चूर्णं पलार्द्धं पैत्तिके पिबेत् ।
कफपाण्डौ च गोमूत्रक्लिन्नयुक्तां हरीतकीम् ॥६॥
नागरं लौहचूर्णं वा कृष्णां पथ्यां तथाऽश्मजम् ।
गुग्गुलं वाऽथ मूत्रेण कफपाण्ड्वामयी पिबेत् ॥७॥

(१) पैत्तिक पाण्डु में त्रिवृत्चूर्ण ८ ग्राम एवं शर्करा १६ ग्राम मिलाकर सेवन करने से रोगमुक्त हो जाता है। (२) कफज पाण्डु में गोमूत्र-भावित हरीतकीचूर्ण १० से २० ग्राम तक सेवन करने से बढ़ा हुआ कफ क्षीण हो जाता है। (३) अथवा कफज पाण्डु में प्रवृद्ध कफ को क्षीण करने के लिए शुण्ठीचूर्ण ५ ग्राम एवं लौहभस्म १ ग्राम सेवन करना चाहिए। (४) अथवा कफज पाण्डु में पिप्पलीचूर्ण १ ग्राम हरीतकीचूर्ण ५ ग्राम तथा शुद्ध शिलाजीत ५ ग्राम मिलाकर गोमूत्र से सेवन करने से कफ क्षीण होकर पाण्डु नष्ट हो जाता है। (५) अथवा कफज पाण्डु में शुद्ध गुग्गुलु ४ ग्राम गोमूत्र से सेवन करने पर कफज पाण्डु नष्ट हो जाता है।

६. लोहभस्म-प्रयोग (चक्रदत्त)

सप्तरात्रं गवां मूत्रे भावितं वाऽप्ययोरजः ।
पाण्डुरोगप्रशान्त्यर्थं पयसाऽथ पिबेन्नरः ॥८॥

लोहभस्म को पत्थर के खरल में सात दिनों तक गोमूत्र से भावना देकर अच्छी तरह से धूप में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस भावित भस्म को २ से ४ रत्ती की मात्रा में दुग्धानुपान से सेवन करें। इससे पाण्डुरोग नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

७. अयस्तिलादि मोदक (चक्रदत्त)

अयस्तिलत्र्यूषणकोलभागैः
सर्वैः समं माक्षिकधातुचूर्णम् ।
तैर्मोदकः क्षौद्रयुतोऽनुतक्रः
पाण्ड्वामये दूरगतेऽपि शस्तः ॥९॥

१. लोहभस्म ५ ग्राम, २. तिल ५ ग्राम, ३. शुण्ठी ५ ग्राम, ४. पिप्पली ५ ग्राम, ५. मरिच ५ ग्राम, ६. स्वर्णमाक्षिक भस्म २० ग्राम और मधु ४० ग्राम लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा उसमें दोनों भस्मों को मिलाकर मधु की भावना देकर मोदक बनाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें और तक्रानुपान से १-१ मोदक का सेवन करें।

मात्रा—१ से २ ग्राम। **वर्ण**—कत्थई वर्ण का। **स्वाद**—मधुर-कटु। **उपयोग**—पाण्डु।

८. लोहपात्रशृत दुग्धपान-विधि (चक्रदत्त)

लौहपात्रे शृतं क्षीरं सप्ताहं पथ्यभोजनम् ।
पिबेत्पाण्ड्वामयी शोषी ग्रहणीदोषपीडितः ॥१०॥

लोहपात्र (तीक्ष्ण लोहपात्र) को अच्छी तरह से साफ करें और उसमें १ लीटर गाय का दूध तथा १ लीटर पानी मिलाकर जल नष्ट होने पर्यन्त उबालकर पकावें। ततः पाण्डुरोगी को उसी दूध को दो-तीन बार पिलावें। इसी प्रकार १ सप्ताह पर्यन्त उसके दूध का पान करावें और पथ्यपूर्वक भोजन करें। इसका सेवन करने से पाण्डु, राजयक्ष्मा एवं ग्रहणीदोष पीड़ित रोगी रोगमुक्त हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ली.। **उपयोग**—पाण्डु, राजयक्ष्मा, ग्रहणी रोग में। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—मधुर। **गन्ध**—दुग्धगन्धी।

९. अयोमल-प्रयोग (चक्रदत्त)

अयोमलन्तु सन्तप्तं भूयो गोमूत्रशोधितम् ।
मधुसर्पिर्युतं चूर्णं सह भक्तेन योजयेत् ।
दीपनं चाग्निजननं शोथपाण्ड्वामयापहम् ॥११॥

मण्डूर को अग्नि में खूब प्रतप्त कर २१ बार पुनः-पुनः गोमूत्र में सेचन करें और पुनः इसे इमामदस्ते में कूटकर सूक्ष्म वस्त्र से छान लें। इस शुद्ध मण्डूर चूर्ण की मात्रा १ से २ ग्राम तक मधु एवं घृत के साथ मिलाकर भात के साथ सेवन करें। यह शुद्ध मण्डूर चूर्ण दीपन, अग्निवर्धक, शोथ और पाण्डु रोग नाशक है।

विमर्श—आचार्यश्री ने इस मण्डूर में पुनः पुट देने का कोई निर्देश नहीं दिया है और जामनगर के रिसर्च रिपोर्ट में यह उल्लेख भी किया गया है कि जितनी जल्दी और अधिक मात्रा में शुद्ध मण्डूरचूर्ण रक्तकण को बढ़ाता है उतनी मात्रा में मण्डूर भस्म लाभकारी नहीं है।

तत्त्वचन्द्रिकाकार ने कहा है कि "ईदृशस्य मण्डूरचूर्णस्य माषकद्वयं त्रिधा विभज्यातो दर्शनात् भोजनादिमध्यान्तेषु मधुसर्पिर्भ्यां लेह्यम्। पश्चादभ्यासक्रमेण माषकं वर्धयेत्"।

कामला-चिकित्साविधि (वङ्गसेन)

रेचनं कामलार्त्तस्य स्निग्धस्यादौ प्रयोजयेत् ।
ततः प्रशमनी कार्या क्रिया वैद्येन जानता ॥१२॥

कामला से पीड़ित रोगी को प्रथमतः पञ्चगव्य घृत, महातिक्त घृत, कल्याणघृत आदि से स्निग्ध कर तीव्र विरेचन द्वारा विरेचन करावें। विरेचन के पश्चात् शमनौषधि द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए।

१०. कामलानाशक त्रिफलादिस्वरस (चक्रदत्त)

त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निम्बस्य वा रसः ।
प्रातर्माक्षिकसंयुक्तः शीलितः कामलापहः ॥१३॥

त्रिफलाक्वाथ या गुडूचीस्वरस या दारुहरिद्राक्वाथ या निम्बत्वक्क्वाथ १-१ तोला (१०-१० मि.ली.) मधु मिलाकर सुबह-शाम पिलाने से कामला रोग नष्ट हो जाता है।

११. द्रोणपुष्पीरस का अञ्जन (चक्रदत्त)

अञ्जनं कामलार्त्तस्य द्रोणपुष्पीरसः स्मृतः ॥१४॥

कामला रोग से पीड़ित रोगी के नेत्रों में द्रोणपुष्पीस्वरस बूँद-बूँद डालने से रोगमुक्त हो जाता है।

१२. निशाद्यञ्जन (चक्रदत्त)

निशागैरिकधात्रीणां चूर्णं वा सम्प्रकल्पयेत् ॥१५॥

हरिद्राचूर्ण, शुद्ध गैरिक और आमलाचूर्ण तीनों चूर्ण समभाग में मिलाकर शीशी में रख लें। ततः मधु में मिलाकर रात्रि में अञ्जन करने से कामला-पाण्डु रोग नष्ट हो जाता है।

१३. कामलाहर नस्य-द्वय (चक्रदत्त)

नस्यं कर्कोटमूलं वा घ्रेयं वा जालिनीफलम् ॥१६॥

कर्कोटक लतामूल (खेखसामूल) स्वरस अथवा जालिनी (कडवी तोरई) फलचूर्ण का नस्य देने से कामला रोग शान्त हो जाता है।

१४. त्रिभण्ड्यादि योगत्रय (सुश्रुत)

सशर्करा कामलिनां त्रिभण्डी
हिता गवाक्षी सगुडा च शुण्ठी ॥१७॥

त्रिवृत्चूर्ण ३ ग्राम शर्करा के साथ लेने से अथवा गवाक्षी (इन्द्रायण की जड़) का चूर्ण या शुण्ठीचूर्ण ३-३ ग्राम गुड़ के साथ खाने से कामला रोग में हितकर है।

१५. कुम्भकामला में मण्डूर-प्रयोग (चक्रदत्त)

दग्ध्वाऽक्षकाष्ठैर्मलमायसन्तु
गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान् ।
विचूर्ण्य लीढं मधुनाऽचिरेण
कुम्भाह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति ॥१८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मण्डूर को लोहे की कड़ाही में रखकर चूल्हे पर चढ़ावें और बहेड़ा वृक्ष की सूखी लकड़ी की प्रचण्ड अग्नि में प्रतप्त करें। जब मण्डूर खूब गरम हो जाय तो बाल्टी में रखे गोमूत्र में निषेचन करें। ऐसा ही तपा-तपा कर आठ बार गोमूत्र में बुझावें। ततः उस शुद्ध मण्डूर को इमामदस्ते में कूटकर वस्त्रपूत सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रहीत करें। ४ से १० रत्ती (५०० मि.ग्रा. से १२५० मि.ग्रा.) तक मधु से प्रातः-सायं सेवन करने से कामला एवं कुम्भकामला रोग नष्ट हो जाते हैं।

हलीमकरोग-चिकित्साविधि

पाण्डुरोगक्रियां सर्वां योजयेच्च हलीमके।
कामलायाञ्च या दृष्टा साऽपि कार्या भिषग्वरैः ॥१९॥

पाण्डुरोग की सम्पूर्ण चिकित्सा हलीमक रोग में करनी चाहिए तथा कामला रोग के चिकित्सार्थ जो भी कहा गया है उन विधि-व्यवस्थाओं को भी हलीमक रोग में करना चाहिए।

१६. हलीमक में योगद्वय (भा.प्र.)

मारितं चायसं चूर्णं मुस्ताचूर्णेन संयुतम्।
खदिरस्य कषायेण पिबेद्धन्तुं हलीमकम् ॥२०॥
सितातिलबलायष्टित्रिफलारजनीयुगैः ।
लौहं लिह्यात् समध्वाज्यं हलीमकनिवृत्तये ॥२१॥

(१) लोहभस्म १०० ग्राम तथा मुस्ताचूर्ण १०० ग्राम—दोनों द्रव्यों को खरल में अच्छी तरह से पीसकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

सेवन विधि—दोनों मिश्रित द्रव्य १ ग्राम लें और मधु में मिलाकर खा जायें, ऊपर से खदिरक्वाथ ४० मि.ली. पियें। ऐसा १५ दिन के सेवनोपरान्त हलीमक रोग नष्ट हो जाता है।

(२) १. शर्करा, २. कालातिल, ३. बलामूल, ४. यष्टिमधु, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. हल्दी, ९. दारुहल्दी तथा १०. लोहभस्म—शर्करा से दारुहल्दी तक सभी ९ द्रव्यों (प्रत्येक १०-१० ग्राम) को लेकर चूर्ण करें और ९० ग्राम लोहभस्म मिलाकर खरल में मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित करें।

सेवन विधि—१ ग्राम उक्त औषध को मधु एवं घृत के साथ मिलाकर सेवन करें। एक महीना के सेवन से हलीमक रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१ ग्राम हलीमक, कामला एवं पाण्डु रोग में। **अनुपान**—मधु एवं घृत से।

१७. फलत्रिकादिक्वाथ (चक्रदत्त)

फलत्रिकामृतावासातिक्ताभूनिम्बनिम्बजैः ।
क्वाथः क्षौद्रयुतो हन्यात् पाण्डुरोगं सकामलम् ॥२२॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. गुडूची, ५. वासामूल, ६. कटुकी, ७. चिरायता तथा ८. निम्बत्वक्। उपर्युक्त सभी द्रव्य १००-१०० ग्राम लें और कूटकर यवकुट चूर्ण कर लें। इस क्वाथ द्रव्य को २० ग्राम लेकर १६ गुने जल में रात्रि पर्यन्त मिट्टी की हाँडी में भिगो दें और सुबह मृद्वग्नि पर क्वाथ कर २० मि.ली. जल शेष रहने पर छान लें एवं मधु मिलाकर पिलाने से पाण्डु-कामला आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

१८. वासादिक्वाथ

वासाऽमृतानिम्बकिरातकट्वी-
कषायकोऽयं समधुर्निपीतः ।
सकामलं पाण्डुमथास्रपित्तं
हलीमकं हन्ति कफादिरोगान् ॥२३॥

१. वासामूल, २. गुडूची, ३. निम्बत्वक्, ४. चिरायता तथा ५. कटुकी। इनमें से प्रत्येक द्रव्य समभाग में लेकर फलत्रिकादि क्वाथ की विधि से क्वाथ बना लें और मधु मिलाकर पिलाने से पाण्डु, कामला, हलीमक एवं रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२० मि.ली.।

१९. विशालादिचूर्ण (चक्रदत्त)

विशालाकटुकामुस्तकुष्ठदारुकलिङ्गकाः ।
कर्षांशा द्विपिचुर्मूर्वा कर्षार्द्धा च घुणप्रिया ॥२४॥
पीत्वा तच्चूर्णमम्भोभिः सुखं लिह्यात्ततो मधु।
पाण्डुरोगं ज्वरं दाहं कासं श्वासमरोचकम्।
गुल्मानाहामवातांश्च रक्तपित्तं च तज्जयेत् ॥२५॥

१. इन्द्रायणमूल, २. कटुकी, ३. नागरमोथा, ४. कूठ, ५. देवदारु, ६. इन्द्रयव, ७. मूर्वामूल तथा ८. अतीस—उपर्युक्त इन्द्रायण से इन्द्रयव तक की ६ औषधियाँ प्रत्येक २०-२० ग्राम लें तथा मूर्वामूल ४० ग्राम और अतीस १० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस चूर्ण को २-३ ग्राम तक सुखोष्ण जल से लेकर तत्पश्चात् १ चम्मच मधु चाट लें। इसके सेवन से पाण्डु, ज्वर, दाह, कास, श्वास, अरुचि, गुल्म, आनाह, आमवात और रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२ से ३ ग्राम। **अनुपान**—जल (ताजा जल या सुखोष्ण जल से)। **वर्ण**—कत्थई वर्ण का। **स्वाद**—तिक्त।

२०. दार्व्यादिलेह (चक्रदत्त)

दार्वी सत्रिफला व्योषविडङ्गान्ययसो रजः।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात् कामलापाण्डुरोगवान् ॥२६॥
तुल्याश्चायोरजःपथ्याहरिद्राः क्षौद्रसर्पिषा।
चूर्णिताः कामली लिह्याद् गुडक्षौद्रेण वाऽभयाम्॥

(१) १. दारुहरिद्रा, २. आमला, ३. हरीतकी, ४. बहेड़ा, ५. शुण्ठी, ६. पिप्पली, ७. मरिच, ८. वायविडङ्ग और ९. लोहभस्म—प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। लोहभस्म छोड़ सभी द्रव्यों

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

का सूक्ष्म चूर्ण कर लें और खरल में रखकर लोहभस्म को मिलाकर मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस चूर्ण को १ ग्राम लेकर मधु एवं घृत विषम मात्रा में मिलाकर खाने से कामला तथा पाण्डु रोग नष्ट हो जाते हैं।

(२) १. लोहभस्म, २. हरीतकी तथा ३. हल्दी—तीनों द्रव्य समभाग लें और पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें तथा लोहभस्म मिलाकर खरल में मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को मधु एवं घृत के साथ लेहन करें। कामला एवं पाण्डुरोग नष्ट हो जाते हैं।

(३) केवल ३ ग्राम हरीतकी चूर्ण को गुड़ एवं मधु के साथ सेवन करने से कामला एवं पाण्डु रोग नष्ट हो जाते हैं।

२१. नवायसलोह (चरक)

त्र्यूषणत्रिफलामुस्तविडङ्गचित्रकाः समाः।
नवायोरजसो भागास्तच्चूर्णं मधुसर्पिषा।
भक्षयेत् पाण्डुहृद्रोगकुष्ठार्शःकामलापहम् ॥२८॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. नागरमोथा, ८. विडङ्ग, ९. चित्रकमूल तथा १०. लोहभस्म—लोहभस्म को छोड़ सभी द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और एक खरल में लोहभस्म के साथ मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। १ ग्राम इस चूर्ण को मधु एवं घृत के साथ मिलाकर प्रातः-सायं सेवन करने से पाण्डु, हृद्रोग, कुष्ठ, अर्श एवं कामला रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—मधु एवं घृत (विषम मात्रा) से। **वर्ण**—कत्थई रंग। **स्वाद**—कटु-कषाय। **रोगघ्नता**—पाण्डु, कामला, हृद्रोग, अर्श, रक्ताल्पता आदि में।

२२. निशालौह (र.सा.सं.)

लौहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफलारोहिणीयुतम्।
प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां कामलापाण्डुशान्तये ॥२९॥

१. लौहभस्म, २. हल्दी, ३. दारुहल्दी, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा और ७. कटुकी—हल्दी से कटुकी पर्यन्त सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। अर्थात् समभाग लें और लौहभस्म ३०० ग्राम लें। एक बड़े खरल में सभी को एक साथ मिलाकर मर्दनकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस औषधि की २५० से ५०० मि.ग्रा. (२ से ४ रत्ती) तक विषम मात्रा में मधु एवं घृत के साथ मिलाकर खाने से कामला एवं पाण्डु रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा. (२ से ४ रत्ती)। **अनुपान**—विषम मात्रा में मधु एवं घृत से। **वर्ण**—कत्थई वर्ण (लोहभस्म का वर्ण)। **स्वाद**—तिक्त। **रोगघ्नता**—पाण्डुकामला।

२३. धात्रीलौह (चक्रदत्त)

धात्रीलौहरजोव्योषनिशाक्षौद्राज्यशर्कराः।
लेहो निवारयत्याशु कामलामुद्धतामपि ॥३०॥

१. आमलाचूर्ण, २. लौहभस्म, ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. मरिच और ६. हल्दी—सभी द्रव्य समभाग में लें। लौह के भस्म छोड़कर सभी काष्ठौषधियों का सूक्ष्म चूर्ण बना लें और एक लोह के खरल में रखकर लौहभस्म मिलाकर मर्दन करें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को २ से ४ रत्ती की मात्रा में मधु, घी एवं शर्करा मिलाकर सेवन करने से कामला तथा पाण्डु रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० से ५०० मि. ग्राम। **अनुपान**—मधु, घृत तथा शर्करा से। **वर्ण**—कत्थई वर्ण। **स्वाद**—कटु। **रोगघ्नता**—पाण्डु, कामला।

२४. विडङ्गादिलौह (र.सा.सं.)

विडङ्गत्रिफलाव्योषं शुद्धलौहन्तु तत्समम्।
पुरातनगुडेनैव लेहयेद्दिनसप्तकम्।
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥३१॥

१. वायविडङ्ग, २. आमला, ३. हरीतकी, ४. बहेड़ा, ५. शुण्ठी, ६. पिप्पली, ७. मरिच तथा, ८. लोहभस्म—सभी काष्ठौषधियाँ समभाग में अर्थात् प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें और लौहभस्म सात भाग अर्थात् ३५० ग्राम लें। सर्वप्रथम काष्ठौषधियों का सूक्ष्म चूर्ण करें तथा बड़े खरल में रखकर लौह भस्म मिलाकर मर्दन करें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित करें। इस औषधि को २ से ४ रत्ती (२५० से ५०० मि.ग्रा.) की मात्रा में ५ ग्राम गुड़ के साथ प्रातः-सायं ७ दिनों तक सेवन करने से शोथ, पाण्डु एवं हलीमक रोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५०-५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—गुड़ के साथ। **वर्ण**—कत्थई लोहभस्म वर्ण का। **स्वाद**—कटु-कषाय। **रोगघ्नता**—शोथ, पाण्डु एवं हलीमक में।

२५. विडङ्गादिलौह (द्वितीय) (चक्रदत्त)

विडङ्गमुस्तत्रिफलादेवदारुषडूषणैः।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥३२॥
तैरक्षमात्रां गुडिकां कृत्वा खादेद्दिने दिने।
कामलापाण्डुरोगार्त्तः सुखमापद्यतेऽचिरात् ॥३३॥

१. वायविडंग, २. नागरमोथा, ३. आमला, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. देवदारु, ७. पिप्पली, ८. पिप्पलीमूल, ९. चव्य, १०. चित्रकमूल, ११. शुण्ठी, १२. मरिच, और १३. लोह-भस्म—विडङ्ग से मरिच तक की सभी औषधियाँ समभाग में लें अर्थात् प्रत्येक १०-१० ग्राम लें और कूटकर सूक्ष्म चूर्ण बना लें। पुनः सभी चूर्णों के बराबर १२ भाग अर्थात् १२० ग्राम लौहभस्म

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लेकर खरल में एक साथ मर्दन करें। तदनन्तर ८ गुना अर्थात् २ लीटर गोमूत्र एक पात्र में रखकर लौहभस्म मिश्रित औषधि को मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गोमूत्र सूखकर गाढ़ा हो जाय तो औषधि को नीचे उतारकर ट्रे या थाली आदि में सुखाकर चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। २ से ४ रत्ती अर्थात् २५०-५०० मि.ग्रा. की मात्रा में जल के साथ लेने से पाण्डु एवं कामला रोग नष्ट हो जाते हैं और रोगी सुखी हो जाता है।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु।

२६. अष्टादशाङ्गलौह (भावप्रकाश)

किराततिक्तासुरदारुदार्वी-
मुस्तागुडूचीकटुकापटोलम् ।
दुरालभा पर्पटकं सनिम्बं-
कटुत्रिकं वह्निफलत्रिकञ्च ॥३४॥
फलं विडङ्गस्य समांशकानि
सर्वैः समं चूर्णमथायसञ्च ।
सर्पिर्मधुभ्यां वटिका विधेया
तक्रानुपानाद् भिषजा प्रयोज्या ॥३५॥
निहन्ति पाण्डुञ्च हलीमकञ्च
शोथं प्रमेहं ग्रहणीरुजञ्च ।
श्वासञ्च कासञ्च सरक्तपित्त-
मर्शांस्यथो वाग्ग्रहमामवातम् ।
व्रणांश्च गुल्मान् कफविद्रधींश्च
श्वित्रञ्च कुष्ठञ्च ततः प्रयोगाद् ॥३६॥

१. चिरायता, २. देवदारु, ३. दारुहल्दी, ४.नागरमोथा, ५. गुडूची, ६. कटुकी, ६. पटोलपत्र, ८. जवासा, ९. पित्तपापड़ा, १०. निम्बछाल, ११. शुण्ठी, १२. पिप्पली, १३. मरिच, १४. चित्रकमूल, १५. आमला, १६. हरीतकी, १६. बहेड़ा, १८. वायविडङ्ग और १९. लौहभस्म—चिरायता से वायविडङ्ग तक सभी द्रव्य समभाग अर्थात् प्रत्येक १०-१० ग्राम लें और कूटकर वस्त्रपूत चूर्ण कर लें। लौहभस्म सभी चूर्णों के बराबर अर्थात् १८० ग्राम लें। खरल में चूर्णों तथा लोहभस्म को विषम मात्रा में घी एवं मधु मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन कर २-२ रत्ती की वटी बनाकर सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। १ से २ वटी तक्रानुपान से लेने पर पाण्डु, कामला, हलीमक, शोथ, प्रमेह, ग्रहणी, श्वास, कास, रक्तपित्त, अर्श, वाग्ग्रह (बोलने में रुकावट), आमवात, व्रण, गुल्म, कफज विद्रधि, श्वित्र तथा कुष्ठ रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५०से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—तक्र के साथ। **वर्ण**— कत्थई वर्ण (लोहभस्म जैसा)। **स्वाद**—तिक्त-कटु।

२७. दार्व्यादिलौह (र.सा.सं.)

दार्वी सत्रिफला व्योषविडङ्गान्ययसो रजः ।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात् कामलापाण्डुरोगवान् ॥३७॥

१. दारुहल्दी, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. आमला, ५. शुण्ठी, ६. मरिच, ७. पिप्पली तथा ८. वायविडंग—इन्हें समान भाग में लेकर कूट-पीस कर महीन चूर्ण बना लें तथा उसमें इन सभी द्रव्यों के बराबर लौहभस्म को अच्छी तरह मिलाकर रख लें। इसे २ रत्ती की मात्रा में विषम मात्रा में मधु एवं घृत मिलाकर खाने से कामला तथा पाण्डुरोग नष्ट हो जाते हैं।

२८. त्रिकत्रयादिलौह (चक्रदत्त)

पलं लौहस्य किट्टस्य पलं गव्यस्य सर्पिषः ।
सितायाश्च पलञ्चैकं मधुनश्च पलं तथा ॥३८॥
तोलैकं कान्तलौहस्य त्रिकत्रयसमन्वितम् ।
ततः पात्रे विधातव्यं लौहे वा मृन्मये तथा ॥३९॥
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां रौद्रे शिशिर एव च ।
भोजनादौ तथा मध्ये चान्ते चैव प्रयोजयेत् ॥४०॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलं च परिणामजम् ।
कासं पञ्चविधं चैव प्लीहश्वासज्वरानपि ॥४१॥
अपस्मारं तथोन्मादमुदरं गुल्ममेव च ।
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च श्वयथुं च सुदारुणम् ॥४२॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हलीमकमथापि वा ।
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥४३॥

१. मण्डूर भस्म, २. गोघृत, ३. शर्करा, ४. मधु, ५. कान्तलोह भस्म, ६. आमला, ७. हरीतकीत्वक्, ८. बहेड़ा त्वक्, ९. शुण्ठी, १०. पिप्पली, ११. मरिच, १२. वायविडङ्ग, १३. चित्रकमूल तथा १४. नागरमोथा—मण्डूर भस्म से मधु तक के सभी द्रव्य ४०-४० ग्राम लें तथा कान्तलोह भस्म से नागरमोथा पर्यन्त सभी दसों द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सभी काष्ठौषधियों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा उसी चूर्ण में मण्डूर तथा कान्तलोह भस्म मिलाकर खरल में मर्दन करें। ततः मधु एवं घृत मिलाकर धूप में बैठकर तीन दिन तक मर्दन करें और रात्रि में खरल को चाँदनी में रखें। यदि घृत एवं मधु की कमी मालूम हो तो और भी थोड़ा मिलाया जा सकता है। जब सूख जाय तो काचपात्र में सुरक्षित रख लें या ४-४ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर सूखने पर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस औषधि को भोजन के पूर्व या भोजन के मध्य में तथा भोजन के अन्त में लेना चाहिए। इससे अम्लपित्तशूल, परिणामशूल, पाँच प्रकार के कास, प्लीहारोग, श्वास, ज्वर, अपस्मार, उन्माद, उदररोग, गुल्म, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, भयंकर शोथ, पाण्डु, कामला एवं हलीमक रोग निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं, जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विमर्श—त्रिकत्रय से त्रिफला, त्रिकटु एवं त्रिमद का ग्रहण करना चाहिए।

मात्रा—५०० से ७५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **वर्ण**—कत्थई। **स्वाद**—कटु-कषाय। **रोगघ्नता**—पाण्डु, कामला, हलीमक, शोथ, उदररोग, यकृत्प्लीहादि रोग में।

२९. कामलान्तकलौह

द्विपलं जारितं लौहं लौहार्द्धं जारिताभ्रकम्।
मण्डूरञ्च तदर्धञ्च तदर्धं मृतवङ्गकम् ॥४४॥
वङ्गार्द्धं मागधं शुण्ठी पिप्पली गजपिप्पली।
ग्रन्थिकं गन्धपत्रञ्च दार्वी चव्यं यमानिका ॥४५॥
चित्रकं कट्फलं रास्ना देवदारु फलत्रिकम्।
रसाञ्जनं चातिविषा समभागानि चूर्णयेत् ॥४६॥
केशराजस्य भृङ्गस्य सोमराजरसस्य च।
मण्डूकपर्ण्याः स्वरसैर्भावयेच्च दिनत्रयम् ॥४७॥
भक्षयेन्मधुना युक्तं सर्वमेहकुलान्तकम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च हलीमकमथारुचिम् ॥४८॥
कासं श्वासं शिरःशूलं प्लीहानमग्रमांसकम्।
जीर्णज्वरं तथा शोथमङ्गग्रहनिपीडितम् ॥४९॥
गुल्मशूलञ्च हृद्रोगं सङ्ग्रहग्रहणीहरम्।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति ॥
कामलान्तकनामेदं लौहं कामलारोगनुत् ॥५०॥

१. लोहभस्म, २. अभ्रकभस्म, ३. मण्डूरभस्म, ४. वङ्गभस्म, ५. जीरा, ६. शुण्ठी, ७. पिप्पली, ८.गजपिप्पली, ९. पिप्पलीमूल, १०. तेजपत्ता, ११. दारुहल्दी, १२. चव्यमूल, १३. अजवायन, १४. चित्रकमूल, १५. कट्फल, १६. रास्ना, १७. देवदारु, १८. आमला, १९. हरीतकी, २०. बहेड़ा, २१. रसाञ्जन और २२. अतीस—लौहभस्म ८० ग्राम, अभ्रक भस्म ४० ग्राम, मण्डूरभस्म २० ग्राम तथा वङ्गभस्म से अतीस पर्यन्त तक सभी १९ द्रव्य १०-१० ग्राम लें। काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा एक खरल में सभी भस्मों एवं चूर्णों को मिलाकर भृङ्गराजस्वरस एवं बाकुची क्वाथ तथा मण्डूकपर्णी स्वरस की तीन दिन तक ३-३ भावना देकर मर्दन करें। सूखने पर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को २ से ४ रत्ती की मात्रा में मधु के साथ खाने से सभी प्रकार के प्रमेह, कामला, पाण्डु, हलीमक, अरुचि, कास, श्वास, शिरःशूल, प्लीहा, अग्रमांस (हृदयप्रदेश में मांसवृद्धिजन्य रोग), जीर्णज्वर, शोथ, अङ्गग्रह (सम्पूर्ण शरीर में जकड़न), गुल्म, शूल, हृद्रोग, संग्रहणी एवं ज्वर रोगों का नाश करता है। यह औषध अग्नि-दीपक है। विशेषकर यह कामलान्तक लौह कामला रोग को नष्ट करता है।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **वर्ण**—हल्का कत्थई। **स्वाद**—कषाय-कटु। **उपयोगिता**—कामला एवं पाण्डु में।

३०. पञ्चामृतलोहमण्डूर (रसचण्डांशु)

लौहं ताम्रं गन्धमभ्रं पारदञ्च समांशिकम्।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा ॥५१॥
किरातं देवकाष्ठञ्च हरिद्राद्वयपुष्करम्।
यमानी जीरकं युग्मं शटीधान्यकचव्यकम् ॥५२॥
प्रत्येकं लौहभागञ्च श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत्।
सर्वचूर्णस्य चार्द्धार्शं सुशुद्धं लौहकिट्टकम् ॥५३॥
गोमूत्रे पाचयेद्वैद्यो लौहकिट्टं चतुर्गुणे।
पुनर्नवाऽष्टगुणिते क्वाथे तत्र प्रदापयेत् ॥५४॥
सिद्धेऽवतारिते चूर्णं मधुनः पलमात्रकम्।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षानुपानतः ॥५५॥
ग्रहणीं चिरजां हन्ति सशोथां पाण्डुकामलाम्।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति ॥५६॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममुदरञ्च विशेषतः।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं कान्तिपुष्टिविवर्द्धनम् ॥५७॥

१. लौहभस्म, २. ताम्रभस्म, ३. शुद्ध गन्धक, ४. अभ्रक-भस्म, ५. शुद्ध पारद, ६. शुण्ठी, ७. पिप्पली, ८. मरिच, ९. आमला, १०. हरीतकी, ११. बहेड़ा, १२. नागरमोथा १३. वायविडङ्ग, १४. चित्रकमूल, १५. चिरायता, १६. देवदारु, १७. हल्दी, १८. दारुहल्दी, १९. पुष्करमूल, २०. अजवायन, २१. सफेद जीरा, २२. स्याह जीरा, २३. कचूर, २४. धनियाँ, २५. चव्यमूल और २६. शुद्ध मण्डूर चूर्ण—लौहभस्म से चव्यमूल तक के सभी २५ द्रव्य १०-१० ग्राम लें और मण्डूर-चूर्ण या भस्म १२५ ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः सभी काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण कर उन भस्मों में मिला लें और एक कड़ाही में १ लीटर गोमूत्र तथा १ लीटर पुनर्नवामूल क्वाथ के साथ सभी द्रव्यों को मिलाकर पकावें। जब द्रव सूख जाय तो उसमें ५० ग्राम मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस औषधि को २ से ४ रत्ती की मात्रा में कोकिलाक्ष (तालमखाना) क्वाथ के अनुपान से प्रातः-सायं लेना चाहिए। इसके सेवन से शोथ युक्त पुराना संग्रहणी, पाण्डु, कामला, जीर्ण ज्वर, यकृद्रोग, प्लीहा-रोग, गुल्म, उदररोग, श्वास, कास एवं प्रतिश्याय रोग नष्ट हो जाते हैं। कान्तिप्रद, शरीर-पुष्टिदायक तथा अग्नि को प्रदीप्त करता है।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—कोकिलाक्ष क्वाथ से। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, ग्रहणी तथा शोथहर है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३१. वज्रवटकमण्डूर (चक्रदत्त)

पञ्चकोलं समरिचं देवदारु फलत्रिकम्।
विडङ्गमुस्तयुक्ताश्च भागास्त्रिपलसम्मिताः ॥५८॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं ततः।
पक्त्वा चाष्टगुणे मूत्रे घनीभूते तदुद्धरेत् ॥५९॥
ततो माशार्द्धप्रमितं पिबेत्तक्रेण तक्रभुक्।
पाण्डुरोगं जयत्येष मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥६०॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमूरुस्तम्भमथापि च।
कृमिं प्लीहानमुदरं गलरोगञ्च नाशयेत् ॥६१॥
मण्डूरो वज्रनामाऽयं रोगानीकविनाशनः।
निर्वाप्य बहुशो मूत्रे मण्डूरं ग्राह्यमिष्यते॥
ग्राहयन्त्यष्टगुणितं मूत्रं मण्डूरचूर्णतः ॥६२॥

१. पिप्पली, २. पिप्पलीमूल, ३. चव्य, ४. चित्रकमूल, ५. शुण्ठी, ६. मरिच, ७. देवदारु, ८. आमला, ९. हरीतकी, १०, बहेड़ा, ११. वायविडङ्ग, १२. नागरमोथा और १३. शुद्ध मण्डूर—पिप्पली से नागरमोथा तक के सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें और शुद्ध मण्डूर २४० ग्राम लें। सभी काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण कर उसे मण्डूरचूर्ण के साथ अच्छी तरह मिला लें। अब एक लोहे की कड़ाही में मण्डूर-मिश्रित औषधि को रखकर ३ लीटर (आठ गुना) गोमूत्र में आप्लुत कर मन्दाग्नि से पाक करें। जब द्रवांश सूख जाय तो कड़ाही चूल्हे से उतारकर धूप में सुखा लें और चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस 'वज्रवटक मण्डूर' को ४ से ८ रत्ती की मात्रा में तक्रानुपान से सेवन करने पर पाण्डुरोग, मन्दाग्नि, अरुचि, अर्श, संग्रहणी, ऊरुस्तम्भ, कृमिरोग, प्लीहारोग, उदररोग एवं गलरोग नष्ट हो जाते हैं। यह मण्डूरवज्र नामक औषधि रोग-समूह को नष्ट करता है। मण्डूर को तप्त कर पुनः-पुनः अष्टगुण गोमूत्र में बुझाना चाहिए और इमामदस्ते में कूटकर वस्त्रपूत चूर्ण करना चाहिए।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक। **अनुपान**—तक्रानुपान से। **वर्ण**—कृष्ण चूर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, संग्रहणी, शोथ तथा यकृत्प्लीह रोग में।

३२. पुनर्नवादिमण्डूर (चरक)

पुनर्नवा त्रिवृच्छुण्ठी पिप्पली मरिचानि च।
विडङ्गं देवकाष्ठञ्च चित्रकं पुष्कराह्वयम् ॥६३॥
त्रिफला द्वे हरिद्रे च दन्ती च चविका तथा।
कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥६४॥
एतानि समभागानि मण्डूरं द्विगुणं ततः।
गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा स्थापयेत् स्निग्धभाजने।
पाण्डुशोथोदरानाहशूलार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥६५॥

१. पुनर्नवामूल, २. निशोथ, ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. वायविडङ्ग, ७. देवदारु, ८. चित्रकमूल, ९. पुष्करमूल, १०. आमला, ११. हरीतकी, १२. बहेड़ा, १३. हल्दी, १४. दारुहल्दी, १५. दन्तीमूल, १६. चव्य, १७. इन्द्रयव, १८. कटुकी, १९. पिप्पलीमूल, २०. नागरमोथा और २१. शुद्ध मण्डूरचूर्ण—पुनर्नवामूल से नागरमोथा तक के सभी द्रव्य २५-२५ ग्राम लें और १ किलो शुद्ध मण्डूर चूर्ण लें। सभी काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें तथा सात बार प्रतप्त मण्डूर को गोमूत्र में निषेचन कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इस प्रकार शुद्ध मण्डूर चूर्ण एवं काष्ठौषधि चूर्ण मिलाकर १२ लीटर गोमूत्र में बड़ी कड़ाही में डालकर मन्दाग्नि से पकावें। जब गोमूत्र सूख जाय तो ट्रे में औषधि को निकालकर धूप में सुखा लें। पुनः इमामदस्ते में कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह औषधि १ माशा से ४ माशा की मात्रा में मधु से सेवन करने से पाण्डु, शोथ, उदर, आनाह, शूल, अर्श, कृमि एवं गुल्म रोगों का नाश करती है।

मात्रा—१ ग्राम से ४ ग्राम तक। **अनुपान**—मधु से। **वर्ण**—कृष्णाभचूर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, शोथादि में।

विमर्श—जामनगर के रिसर्च द्वारा इसकी मात्रा १ से १० ग्राम निश्चित की गयी है।

३३. त्र्यूषणादिमण्डूर (चक्रदत्त)

त्र्यूषणं त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकौ।
दार्वी त्वङ्माक्षिको धातुर्ग्रन्थिकं देवदारु च ॥६६॥
एषां द्विपलिकान् भागांश्चूर्णं कृत्वा पृथक् पृथक्।
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाच्छुद्धमञ्जनसन्निभम् ॥६७॥
मूत्रे चाष्टगुणे पक्त्वा तस्मिंस्तु प्रक्षिपेत्ततः।
उदुम्बरसमान् कृत्वा वटकांस्तान् यथाग्नि तु ॥६८॥
उपयुञ्जीत तक्रेण सात्म्यं जीर्णे च भोजनम्।
मण्डूरवटका ह्येते प्राणदाः पाण्डुरोगिणाम् ॥६९॥
कुष्ठान्यरोचकं शोथमूरुस्तम्भं कफामयान्।
अर्शांसि कामलां मेहान् प्लीहानं शमयन्ति च ॥७०॥
निर्वाप्य बहुशो मूत्रे मण्डूरं ग्राह्यमिष्यते।
ग्राहयन्त्यष्टगुणितं मूत्रं मण्डूरचूर्णतः ॥७१॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. नागरमोथा, ८. वायविडङ्ग, ९. चव्य, १०. चित्रकमूल, ११. दारुहल्दी, १२. त्वक्, १३. स्वर्णमाक्षिकभस्म, १४. पिप्पलीमूल, १५. देवदारु तथा १६. शुद्ध मण्डूरचूर्ण—स्वर्णमाक्षिकभस्म को छोड़कर सभी काष्ठौधियों को ८०-८० ग्राम लें और इन्हें कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। स्वर्णमाक्षिकभस्म भी ८० ग्राम लें। गोमूत्र-भावित

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अञ्जन सदृश सूक्ष्म शुद्ध मण्डूरचूर्ण २४०० ग्राम लें। इन सभी औषधों को मिलाकर एक बड़ी लोहे की कड़ाही में रखें और १९$\frac{१}{२}$ लीटर गोमूत्र (आठ गुना गोमूत्र) में पकावें। मन्दाग्नि पर पाक होते रहना चाहिए। जब गोमूत्र सूख जाय तो औषधि को १२-१२ ग्राम की गूलर जैसी वटियाँ बनाकर धूप में सुखा लें। पाक करते समय हमेशा दर्वी से चलाते रहना चाहिए। इस औषधि को २ से ४ ग्राम की मात्रा में सेवन करने से पाण्डुरोगी में प्राण डाल देता है तथा कुष्ठ, अरोचक, शोथ, ऊरुस्तम्भ, कफरोग, अर्श, कामला, प्रमेह एवं प्लीहारोग शान्त हो जाते हैं। शुद्ध मण्डूर चूर्ण से आठ गुना गोमूत्र में पाक करना चाहिए।

मात्रा—२ से ४ ग्राम तक। **अनुपान**—मधु से। **वर्ण**—कृष्णाभ वटी। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, शोथ तथा प्लीहारोगों में।

३४. चन्द्रसूर्यात्मकरस (र.सा.सं.)

सूतकं गन्धकं लौहमभ्रकञ्च पलं पलम्।
शङ्खटङ्कवराटञ्च प्रत्येकार्द्धपलं हरेत् ॥७२॥
गोक्षुरबीजचूर्णञ्च पलैकं तत्र दीयते।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं वाष्पयन्त्रे विभावयेत् ॥७३॥
पटोलं पर्पटं भार्गी विदारी शतपुष्पिका।
दन्ती वासा कुण्डली च काकमाचीन्द्रवारुणी ॥७४॥
वर्षाभूः केशराजश्च शालिञ्चो द्रोणपुष्पिका।
प्रत्येकार्द्धपलैर्दावैर्भावयित्वा वटीं कुरु ॥७५॥
चतुर्दश वटी खादेच्छागीदुग्धानुपानतः।
गहनानन्दनाथोक्तश्चन्द्रसूर्यात्मको रसः ॥७६॥
हलीमकं निहन्त्याशु पाण्डुरोगञ्च कामलाम्।
जीर्णज्वरं सविषमं रक्तपित्तमरोचकम् ॥७७॥
शूलं प्लीहोदरानाहमष्ठीलागुल्मविद्रधीन्।
शोथं मन्दानलं कासं श्वासं हिक्कां वमिं भ्रमिम् ॥७८॥
भगन्दरोपदंशौ च दद्रूकण्डूव्रणापचीः।
ऊरुस्तम्भं तृषां दाहमामवातं कटीग्रहम् ॥७९॥
युक्त्या मद्येन मण्डेन मुद्गयूषेण वारिणा।
गुडूचीत्रिफलारास्नाक्वाथनीरेण वा क्वचित् ॥८०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लोहभस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. शंखभस्म, ६. शुद्ध टंकण, ७. वराटिकाभस्म तथा ८. गोक्षुरबीज—पारद-गन्धक-लोहभस्म-अभ्रकभस्म तथा गोक्षुर बीजचूर्ण प्रत्येक ४०-४० ग्राम लें तथा शंखभस्म, शुद्ध टंकण और कौडीभस्म प्रत्येक २०-२० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। जब कज्जली अच्छी तरह से बन जाय तो अन्य सभी चूर्णों को उसी खरल में कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें तथा निम्नलिखित द्रव्यों के २५-२५ मि.ली. स्वरस एवं क्वाथ की भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

भावना द्रव्य—१. पटोलपत्र, २. पित्तपापड़ा, ३. भार्गी, ४. विदारीकन्द, ५. सौंफ, ६. दन्तीमूल, ७. वासापत्र, ८. गुडूची, ९. काकमाची, १०. इन्द्रवारुणी, ११. पुनर्नवामूल, १२. भृङ्गराज, १३. शालिञ्च शाक और १४. द्रोणपुष्पी (गूमा)—इन सभी द्रव्यों का स्वरस या क्वाथ २५-२५ मि.ली. लेना चाहिए। इस 'चन्द्रसूर्यात्मक रस' की २-२ वटी १४ दिनों तक खाने से या १-१ वटी १४ दिनों तक (१४ वटिका) बकरी के दूध से खाने पर हलीमक, पाण्डु, कामला, जीर्णज्वर, विषमज्वर, रक्तपित्त, अरुचि, शूल, प्लीहरोग, उदररोग, अष्ठीला, गुल्म, विद्रधी, शोथ, मन्दाग्नि, कास, श्वास, हिक्का, वमन, भ्रम, भगन्दर, उपदंश, दद्रु, कण्डू, व्रण, अपची, दाह, तृष्णा, ऊरुस्तम्भ, आमवात, कटिग्रह आदि रोग आचार्य श्रीगहनानन्द नाथ के अनुसार नष्ट हो जाते हैं। इस रस को युक्तिपूर्वक दोष-दूष्यों का विचार कर मद्य, मण्ड, मुद्गयूष, शीतजल या उष्णजल, गुडूचीस्वरस, त्रिफलाक्वाथ तथा रास्नाक्वाथ—किसी एक से या सम्मिलित द्रव्यों के अनुपान से सेवन करना चाहिए।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—गुडूचीस्वरस, त्रिफलाक्वाथ, मद्य, जलादि से। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **गन्ध**—सुगन्ध। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, हलीमक, जीर्णज्वर, शोथ, प्लीहारोग, उदररोग, मन्दाग्नि, अरुचि आदि में।

३५. प्राणवल्लभरस (र.सा.सं.)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धं कश्मीरसम्भवम्।
लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिङ्गु फलत्रिकम् ॥८१॥
स्नुहीक्षीरं यवक्षारं जैपालं टङ्कणं त्रिवृत्।
प्रत्येकन्तु समं भारं छागीदुग्धेन भावयेत् ॥८२॥
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुना सह।
प्राणवल्लभनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ॥८३॥
श्लेष्मदोषञ्च संवीत्य युक्त्या च त्रुटिवर्द्धनम्।
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदं तथा ॥८४॥
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम्।
ऊरुस्तम्भं तथा शोथं शूलं संग्रहणीं तथा ॥८५॥
वान्ति मूर्च्छां भ्रमिं दाहं कासं श्वासं गलग्रहम्।
असाध्यं सन्निपातञ्च जीर्णज्वरमरोचकम् ॥८६॥
वातरक्तं तथा शोषं कण्डूविस्फोटकापचीः।
नातः परतरं किञ्चित् कामलार्त्तिरुजापहम् ॥८७॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. हिंगुलोत्थ पारद, २, शुद्ध गन्धक, ३. केसर, ४. लोहभस्म, ५. ताम्रभस्म, ६. वराटिकाभस्म, ७. शुद्ध तुत्थ, ८. शुद्ध हींग, ९. आमला, १०. हरीतकी, ११. बहेड़ा निर्बीज, १२. स्नुहीक्षीर, १३. यवक्षार, १४. शुद्ध जयपाल, १५. शुद्ध टंकण तथा १६. निशोथचूर्ण—सभी द्रव्य ४०-४० ग्राम लें। काष्ठौषधियों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष १४ द्रव्यों को अच्छी तरह से मिलाकर बकरी के दूध की ३ भावना दें और ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। आचार्य गहनानन्द द्वारा कथित इस प्राणवल्लभ रस को मधु के साथ खाकर थोड़ा जल पीना चाहिए। कफदोष में इस औषधि को त्रुटि (छोटी इलायची के दाने) के बराबर प्रतिदिन बढ़ाकर सेवन करना चाहिए। अनुपान भेद से इस औषधि का सेवन करने से पाण्डु, कामला, हलीमक, आनाह, श्लीपद, गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, शोथ, ऊरुस्तम्भ, संग्रहणी, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, कास, श्वास, गलग्रह, शूल, सन्निपात ज्वर, जीर्ण ज्वर, अरुचि, वातरक्त, शोष, कण्डू, विस्फोटक एवं अपची रोग नष्ट हो जाते हैं। कामला रोग को नाश करने के लिए इस रोग से बढ़कर कोई दूसरी औषधि नहीं है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं जल से। **वर्ण**—कृष्ण। स्वाद—कषाय-तिक्त। गन्ध—केशरगन्धी। **उपयोग**—पाण्डु, कामला, हलीमक, शोथ, जीर्णज्वरादि में।

३६. पञ्चाननवटी (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं मृतताम्राभ्रगुग्गुलु।
जैपालबीजं तुल्यांशं घृतेन वटकीकृतम् ॥८८॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभं शोथपाण्डुप्रशान्तये।
पञ्चाननवटी ख्याता पाण्डुरोगकुलान्तिका ॥८९॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्रभस्म, ४. अभ्रक-भस्म, ५. शुद्ध गुग्गुलु, ६. शुद्ध जयपाल तथा ७. गोघृत—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष सभी द्रव्यों को उसमें मिलावें और मर्दन करें। शुद्ध गुग्गुलु को थोड़ा गरम पानी में घोलकर मिलावें। बराबर घी के साथ इन द्रव्यों का मर्दन करें और बेर की गुठली के बराबर ४ रत्ती की मात्रा में वटी बना लें। इसे जल के साथ खाने से पाण्डु, कामला एवं शोथ रोगों का नाश कर देता है। 'पञ्चानन वटी' के नाम से विख्यात यह औषधि पाण्डुरोग-कुल को नष्ट कर देता है।

विमर्श—जयपालयुक्त औषधि की बेर की गुठली बराबर वटी अधिक रेचक होगी। अतः ४ रत्ती की मात्रा इसकी उचित है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला एवं शोथ नाशक है।

३७. पाण्डुसूदनरस (र.सा.सं.)

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालञ्च गुग्गुलुम्।
समांशमाज्यसंयुक्तां गुडिकां कारयेद्भिषक् ॥९०॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं पाण्डुशोथप्रणुत्तये।
शीतलञ्च जलञ्चाम्लं वर्जयेत् पाण्डुसूदने ॥९१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्रभस्म, ४. शुद्ध जयपाल, ५. शुद्ध गुग्गुलु तथा ६. घृत—सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर क्रमशः ताम्रभस्म और जयपालचूर्ण देकर मर्दन करें। पुनः गुग्गुलु को गरम पानी में पिघलाकर कज्जली सहित सभी औषधियों को देकर मर्दन करें। ततः घी देकर मर्दन कर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस 'पाण्डुसूदनरस' को पाण्डु और शोथ रोग से पीड़ित रोगियों को देने से रोग नष्ट हो जाते हैं। इस औषधि के प्रयोग के समय शीतल जल का सेवन और अम्ल पदार्थ का सेवन नहीं करना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला एवं शोथ में।

३८. आनन्दोदयरस (रसमञ्जरी)

पारदं गन्धकं लौहमभ्रकं विषमेव च।
समांशं मरिचं चाष्टौ टङ्कणञ्च चतुर्गुणम् ॥९२॥
भृङ्गराजरसैः सप्त भावनाश्चाम्लदाडिमैः।
द्विगुणं पर्णखण्डेन खादेत्सायं निहन्ति च ॥९३॥
वातश्लेष्मभवान् रोगान् मन्दाग्निं ग्रहणीं ज्वरान्।
अरुचिं पाण्डुताञ्चैव जयेदचिरसेवनात् ॥९४॥
नष्टमग्निं करोत्येष कालभास्करतेजसम्।
पर्वतोऽपि हि जीर्येत प्राशनादस्य देहिनः॥
गुर्वन्नमम्लमाषञ्च भक्षणादेव जीर्यति ॥९५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. शुद्ध वत्सनाभ—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम, ६. मरिच १६० ग्राम एवं ७. शुद्ध टङ्कण ८० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः भस्मों एवं अन्य द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद भृङ्गराजस्वरस तथा अम्लदाड़िमस्वरस की ७-७ भावना दें। औषधि को खरल से खुरचकर काचपात्र में सुरक्षित रखें। ताम्बूलपत्र में इस औषधि की २ रत्ती मात्रा रखकर भक्षण

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

करें। इसके सेवन से वातश्लेष्मा से उत्पन्न प्राय: रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त मन्दाग्नि, ग्रहणी, ज्वर, अरुचि, पाण्डु आदि रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। यह औषधि व्यक्ति की नष्ट हुई अग्नि को प्रलयकालीन सूर्य के समान प्रदीप्त कर देती है। इसके सेवनोपरान्त पत्थर (पर्वत) भी जीर्ण हो जाता है। गुरु अन्न, अम्लपदार्थ, उड़द आदि भक्षण भी जीर्ण हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—ताम्बूल पत्र एवं रोगानुसार। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयो-गिता**—पाण्डु, अरुचि, मन्दाग्नि, ग्रहणी आदि में।

३९. पाण्डुपञ्चाननरस (रसचण्डांशु)

लौहमभ्रञ्च ताम्रञ्च पलिकानि पृथक् पृथक्।
त्रिकटु त्रिफला दन्ती चविका कृष्णजीरकम् ॥९६॥
चित्रकञ्च निशे द्वे च त्रिवृता-मानमूलकम्।
कुटजस्य फलं तिक्ता देवदारु वचा घनम् ॥९७॥
प्रत्येकमेषां कर्षन्तु निक्षिपेत्पाकविद् भिषक्।
सर्वस्य द्विगुणं देयं शुद्धमण्डूरचूर्णकम् ॥९८॥
गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा सिद्धशीते प्रदापयेत्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय चोष्णतोयानुपानतः ॥९९॥
हलीमकं शोथपाण्डुमूरुस्तम्भञ्च नाशयेत्।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं सर्वरोगहरः परः।
रसायनवरञ्चैष बलवर्णाग्निकारकः ॥१००॥

१. लोहभस्म ४० ग्राम, २. अभ्रकभस्म ४० ग्राम; ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. आमला, ७. हरीतकी, ८. बिभीतक, ९. दन्तीमूल, १०. चव्यमूल, ११ स्याह जीरा, १२. चित्रकमूल, १३. हल्दी, १४. दारुहल्दी, १५. त्रिवृत्मूल, १६. मानकन्द, १७. इन्द्रयव, १८. कटुकी, १९. देवदारु, २०. वचा और २१. नागरमोथा—ये १९ द्रव्य प्रत्येक १०-१० ग्राम लें तथा २२. शुद्ध मण्डूरचूर्ण ५४० ग्राम अर्थात् सभी द्रव्यों से दुगुना लें। सभी काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें और शुद्ध मण्डूर को लोहे की छोटी कड़ाही में ३ दिनों तक लोहे के मूशल से खूब घिसें। पुन: एक बड़ी लोहे की कड़ाही में सभी चूर्णों को रखकर आठ गुना गोमूत्र (६$\frac{१}{२}$ लीटर) मिलावें और मृदु अग्नि पर पाक करें। पाककला में निपुण वैद्य अच्छी तरह से पाककर थालियों में फैलाकर धूप में अच्छी तरह से सुखाकर खरल में मर्दन करें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

सेवन-विधि—प्रात:काल उष्ण जलानुपान से ८ से १२ रत्ती की मात्रा में सेवन करने पर हलीमक, शोथ, पाण्डु, ऊरुस्तम्भ, यकृत्प्लीहारोग एवं गुल्मादि सभी रोगों का नाश करता है। यह रसायन है, बल-वर्ण एवं अग्निवर्धक है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—उष्णजल से। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, हलीमक एवं शोथनाशक है।

४०. त्रैलोक्यसुन्दररस (र.सा.सं.)

मानञ्चैकं ततः सूतं षडभ्रं वसुलौहकम्।
गन्धकं त्रिफलाव्योषचूर्णं मोचरसस्य च ॥१०१॥
मुशली चामृतासत्त्वं प्रत्येकं पञ्चभागिकम्।
भावयेत्सर्वमेकत्र त्रिफलायाः कषायके ॥१०२॥
भावना विंशतिर्देया दशरात्रं सुभावना।
शिग्रुचित्रकमूलाभ्यामष्टधा च पृथक् पृथक् ॥१०३॥
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम रसो निष्कमितो हितः।
सितया च समं क्षौद्रैः शोथपाण्डुक्षयापहः ॥
ज्वरातीसारसंयुक्तसर्वोपद्रवनाशनः ॥१०४॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. अभ्रकभस्म ६० ग्राम, ३. लोहभस्म ८० ग्राम, ४. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम, ५. शुण्ठीचूर्ण ५० ग्राम, ६. पिप्पलीचूर्ण ५० ग्राम, ७. मरिचचूर्ण ५० ग्राम, ८. आमलाचूर्ण ५० ग्राम, ९. हरीतकीचूर्ण ५० ग्राम, १०. बहेड़ाचूर्ण ५० ग्राम, ११. मोचरसचूर्ण ५० ग्राम, १२. मुशलीचूर्ण ५० ग्राम और १३. गुडूचीसत्त्व ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को कज्जली के साथ मिलाकर त्रिफलाक्वाथ से १० दिनों तक २० भावना दें। पुन: शिग्रु (सहिजन) त्वक्स्वरस एवं चित्रकमूलक्वाथ से पृथक्-पृथक् ८-८ भावना दें। इसे त्रैलोक्यसुन्दर रस कहते हैं। इसकी मात्रा २४ रत्ती (१ निष्क) की मात्रा प्रयोग करें। किन्तु यह मात्रा अधुना अत्यधिक है। अत: इसे १ ग्राम की मात्रा में प्रयुक्त करना अधिक उचित है।

शर्करा एवं मधु के साथ सेवन करने से पाण्डु, शोथ एवं क्षय का नाश करता है। उपद्रव से युक्त ज्वरातिसार में भी इसका प्रयोग लाभप्रद है अर्थात् ज्वरातिसारनाशक है।

४१. योगराजरस (चरक)

त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिकटुकस्य च।
भागाश्चित्रकमूलस्य विडङ्गानां तथैव च ॥१०५॥
पञ्चाश्मजतुनो भागास्तथा रूपयमलस्य च।
माक्षिकस्य विशुद्धस्य लौहस्य रजसस्तथा ॥१०६॥
अष्टौ भागाः सितायाश्च तत्सर्वश्लक्ष्णचूर्णितम्।
माक्षिकेणाप्लुतं स्थाप्यमायसे भाजने शुभे ॥१०७॥
उदुम्बरसमां मात्रां ततः खादेद् यथाग्निना।
दिने दिने प्रयोगेण जीर्णे भोज्यं यथेप्सितम् ॥१०८॥
वर्जयित्वा कुलत्थांश्च काकमाचीं कपोतकान्।
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥१०९॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम्।
पाण्डुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं विषमज्वरम् ॥११०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कुष्ठान्यजरकं मेहं श्वासं हिक्कामरोचकम्।
विशेषाद्धन्त्यपस्मारं कामलां गुदजानि च ॥१११॥

१. आमलाचूर्ण १० ग्राम, २. हरीतकीचूर्ण १० ग्राम, ३. बहेड़ाचूर्ण १० ग्राम, ४. शुण्ठीचूर्ण १० ग्राम, ५. पिप्पलीचूर्ण १० ग्राम, ६. मरिचचूर्ण १० ग्राम, ७. चित्रकमूल ३० ग्राम, ८. विडङ्ग ३० ग्राम, ९. शुद्ध शिलाजीत ५० ग्राम, १०. रौप्यमाक्षिकभस्म ५० ग्राम, ११. स्वर्णमाक्षिकभस्म ५० ग्राम, १२. लोहभस्म ५० ग्राम तथा १३. शर्करा ८० ग्राम लें (कुल द्रव्य ४०० ग्राम है)। सभी काष्ठौषधों के सूक्ष्म चूर्णों को एक स्टेनलेस स्टील के पात्र में रखें, उसी में तीनों भस्मों को मिलावें तथा शुद्ध शिलाजीत को थोड़ा गरम जल में घोलकर शर्करा मिला दें एवं पात्र के चूर्णों के साथ मिलावें। पुनः मधु से आप्लावित कर हाथ से अच्छी तरह मिलावें और लोहे के पात्र में रखकर सुरक्षित करें। एक गूलर की मात्रा में अर्थात् १ तोला की मात्रा में इसे जल के साथ सेवन करें। अग्नि के अनुसार इसकी मात्रा निर्धारित करें। अधुना यह मात्रा अधिक है अतः इसे $\frac{१}{२}$ से १ ग्राम की मात्रा में सेवन कराना उचित है। औषध के जीर्ण होने पर यथेच्छ भोजन दें। इस औषधि के सेवनकाल में कुलथी, मकोय एवं कबूतर के मांस का सेवन नहीं करना चाहिए। यह 'योगराज रस' नाम से प्रसिद्ध योग अमृत के समान है। यह औषधि रसायनों में श्रेष्ठ है तथा सभी रोगों का नाश करने में श्रेष्ठ है। पाण्डुरोग, विषरोग, कास, यक्ष्मा, विषमज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, श्वास, हिक्का, अरुचि, विशेषकर अपस्मार, कामला एवं अर्श और भगन्दर नाशक है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक। **अनुपान**—जल से। **वर्ण**—मधु वर्ण (पिण्ड रूप में)। **स्वाद**—मधुर। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, अरुचि, अपस्मार, अर्श आदि में।

४२. आमलक्यवलेह (योगरत्नाकर)

रसमामलकानान्तु संशुद्धं यन्त्रपीडितम्।
द्रोणं पचेच्च मृद्वग्नौ तत्र चेमानि दापयेत् ॥११२॥
चूर्णितं पिप्पलीप्रस्थं मधुकं द्विपलं तथा।
प्रस्थं गोस्तनिकायाश्च द्राक्षायाः किल पेषितम् ॥११३॥
शृङ्गवेरपले द्वे तु तुगाक्षीर्याः पलद्वयम्।
तुलार्द्धं शर्करायाश्च घनीभूतं समुद्धरेत् ॥११४॥
मधुप्रस्थसमायुक्तं लेहयेत् पलसम्मितम्।
हलीमकं कामलाश्च पाण्डुत्वञ्चापकर्षति ॥११५॥

१. आमला १२ किलो तथा जल ९६ लीटर, २. पिप्पली ७५० ग्राम, ३. यष्टिमधु ९५ ग्राम, ४. गोस्तनी द्राक्षा ७५० ग्राम, ५. आर्द्रक ९५ ग्राम, ६. वंशलोचन ९५ ग्राम, ७. शर्करा २.५ किलो तथा ८. मधु ७५० ग्राम लें। आमलकस्वरस से औषधि-निर्माण करना सर्वोत्तम विधि है। स्वरस के अभाव में अष्टगुण जल में क्वाथ कर अष्टमांश द्रव ग्रहण कर औषधि का निर्माण करें। सर्वप्रथम अष्टगुण जल में क्वाथ करें और अष्ट-मांशावशेष रहने पर छान लें। १ द्रोण = १२ लीटर क्वाथ शेष रहने पर छान लें और स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में क्वाथ रखें तथा २.५ किलो शर्करा के साथ मन्दाग्नि पर पाक करें। पाक आसन्न होने पर उसमें पिसी हुई द्राक्षा एवं आर्द्रक मिला दें। पाक तैयार होने पर पात्र को नीचे उतारकर सभी चूर्णों को प्रक्षिप्त करें और अच्छी तरह से मिला दें। शीतल होने पर मधु मिलाकर बड़े काचपात्र में संग्रह करें। इस आमलक्यवलेह को प्रातः-सायं १-१ पल (४६ ग्राम) जल से सेवन करने से पाण्डु, कामला एवं हलीमक रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१०-१० ग्राम। **अनुपान**—शीतल जल से। **वर्ण**—रक्ताभ स्याह। **स्वाद**—मधुराम्ल। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला एवं हलीमक में।

४३. धात्र्यरिष्ट (चरक)

धात्रीफलसहस्रे द्वे पीडयित्वा रसं भिषक्।
क्षौद्राष्टभागं पिप्पल्याश्चूर्णार्द्धकुडवान्वितम् ॥११६॥
शर्करार्द्धं तुलोन्मिश्रं पक्वं स्निग्धघटे स्थितम्।
प्रपिबेत् पाण्डुरोगार्त्तो जीर्णं हितमिताशनः ॥११७॥
कामलापाण्डुहृद्रोगवातासृग्विषमज्वरान्।
कासहिक्काऽरुचिश्वासानेषोऽरिष्टः प्रणाशयेत् ॥११८॥

२००० सुपक्व आमला लें और ऊलूखल में कूटकर रस निकालें। २००० आमला २५ किलो होता है। उसका रस ५ लीटर होगा। यह पद्धति प्रपञ्चपूर्ण है। अतः सूखे आमला का क्वाथ बनाकर इस औषधि का निर्माण करें।

१. सूखा आमला ८ किलो, २. शर्करा २.५०० ग्राम, ३. मधु १ किलो, ४. पिप्पली १०० ग्राम तथा ५. धातकी पुष्प ५०० ग्राम लें। सर्वप्रथम ८ किलो सूखे आमले को ६४ लीटर जल में उबालें। ८ लीटर शेष रहने पर छान लें। उस क्वाथ में शर्करा मिलाकर स्टील के पात्र में रखकर अग्नि पर पकावें। शर्करा घुल जाने पर तथा थोड़ा गाढ़ा होने पर उसे उतारकर मिट्टी के नये घड़े में रखें। शीतल होने पर उसमें उस स्वरस का अष्टमांश मधु मिलावें तथा पिप्पलीचूर्ण का प्रक्षेप दें और सम्यक् सन्धानार्थ ५०० ग्राम धातकी पुष्प देकर सन्धिबन्धन करें। २१ दिनों के बाद उसे खोलकर कपड़े से छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे १ तोला की मात्रा में पीने से पाण्डु, कामला, हृद्रोग, वातरक्त, विषमज्वर, कास, हिक्का, अरुचि एवं श्वास रोगों को नष्ट करता है।

मात्रा—१ तोला (१२ मि.ली.)। **अनुपान**—जल से।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ण—रक्ताभ द्रव। **स्वाद**—मधुराम्ल। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, हृद्रोग, हिक्का, श्वास, अरुचि आदि में।

४४. पर्पटाद्यरिष्ट

पर्पटस्य तुलामेकां चतुर्द्रोणजले पचेत्।
पादावशेषे क्वाथेऽत्र शीते गुडतुलाद्वयम् ॥११९॥
प्रदद्याच्चापि धातक्याः पलषोडशकं तथा।
अमृता मुस्तकं दारुहरिद्रा दारु सत्तमम् ॥१२०॥
व्याघ्री दुरालभा चव्यं चित्रकं च विडङ्गकम्।
त्रिकट्वेतानि सर्वाणि सञ्चूर्ण्य च पृथक् पृथक् ॥१२१॥
पलमात्राणि संगृह्य यत्नतस्तत्र निक्षिपेत्।
संस्थाप्य च ततो भाण्डे मासादूर्ध्वं पिबेदमुम् ॥१२२॥
उदराष्ठीलिकापाण्डुगुल्मं चापि हलीमकम्।
कामलां च यकृद्वृद्धिं प्लीहवृद्धिं तथैव च ॥१२३॥
रक्तोद्भवान् विकारांश्च शोथं च विषमज्वरान्।
एषोऽरिष्टो निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥१२४॥

१. पित्तपापड़ा ५ किलो, २. गुड़ १० किलो, ३. धातकी पुष्प ७५० ग्राम, ४. गुडूची, ५. नागरमोथा, ६. दारुहल्दी, ७. देवदारु, ८. कण्टकारी, ९. जवासा, १०. चव्य, ११, चित्रकमूल, १२. वायविडङ्ग, १३. शुण्ठी, १४. पिप्पली और १५. मरिच—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। पित्तपापड़ा के टुकड़े कर यवकुट करें। एक बड़े पात्र में ४ द्रोण (५२ लीटर) जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिंगो दें और प्रातः चूल्हे पर पाक करें। जब चतुर्थांश शेष बचे तो छान कर मिट्टी के बड़े एवं नये घड़े में रखें तथा गुड़ डालकर अच्छी तरह मिला लें। ततः गुडूची से मरिच तक के सभी १२ द्रव्यों कों यवकुट कर घड़े में डालें तथा धातकीपुष्प को धूप में सुखाकर मिला दें और मिट्टी के शराव से घड़े का मुख ढककर कपड़मिट्टी करें। उस घड़े पर खड़िया से 'पर्पटाद्यरिष्ट' एवं तिथि लिखकर निर्वात गृह में रखकर छोड़ दें। घड़े की तली में पुआल आदि मृदु द्रव्य रखें। २१ दिनों बाद परीक्षोपरान्त सावधानी से छानकर बोतलों में रखकर कार्क एवं लेबल, तिथि लगाकर सुरक्षित स्थान पर रखें और वर्षोपरान्त प्रयोग करें। यह उदररोग, अष्ठीला, पाण्डु, गुल्म, हलीमक, कामला, यकृत्प्लीहवृद्धि, रक्तविकार, शोथ और सभी प्रकार के विषम ज्वरों को नष्ट कर देता है। जैसे इन्द्र का वज्र वृक्षों को नष्ट कर देता है।

मात्रा—१ से २ तोला (१२ से २५ मि. ली.)। **अनुपान**—जल के साथ। **वर्ण**—रक्ताभ द्रव। **स्वाद**—मधुराम्ल-तीक्ष्ण। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, हलीमक, शोथ, यकृत्प्लीहा एवं गुल्म विकार और उदर रोग में।

४५. लोहासव (शार्ङ्गधरसंहिता)

लौहचूर्णं त्रिकटुकं त्रिफलां च यवानिकाम्।
विडङ्गं मुस्तकं चित्रं चतुःसंख्यपलं पृथक् ॥१२५॥
धातकीकुसुमानां तु प्रक्षिपेत्पलविंशतिम्।
चूर्णीकृत्य ततः क्षौद्रं चतुःषष्टिपलं क्षिपेत् ॥१२६॥
दद्याद् गुडतुलां तत्र जलद्रोणद्वयं तथा।
घृतभाण्डे विनिक्षिप्य निदध्यान्मासमात्रकम् ॥१२७॥
लौहासवममुं मर्त्यः पिबेद्वह्निकरं परम्।
पाण्डुश्वयथुगुल्मानि जठराण्यर्शसां रुजम् ॥१२८॥
कुष्ठं प्लीहमयं कण्डूं कासं श्वासं भगन्दरम्॥
अरोचकं च ग्रहणीं हृद्रोगं च विनाशयेत् ॥१२९॥

१. लोहभस्म, २. शुण्ठी, ३. पिप्पली, ४. मरिच, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. अजवायन, ९. वायविडङ्ग, १०. नागरमोथा, ११. चित्रकमूल और १२. धातकी पुष्प तथा गुड़ ५ किलो, जल २६ लीटर एवं मधु ३ किलो लें। लोहभस्म से चित्रकमूल पर्यन्त सभी ११ द्रव्य प्रत्येक २००-२०० ग्राम लें और धातकी पुष्प १००० ग्राम लें। सर्वप्रथम मिट्टी के एक बड़े घड़े में २६ लीटर जल, लौहभस्म तथा गुड़ घोलें, उसी में मधु भी डालकर अच्छी तरह से मिला दें और शुण्ठी से चित्रकमूल तक के सभी १० द्रव्यों को यवकुट कर उसी घड़े में मिला दें। तदनन्तर धातकीपुष्प को धूप में सुखाकर उसी घड़े में डालकर हाथ से अच्छी तरह मिलाकर मिट्टी के ढक्कन से ढककर कपड़मिट्टी कर सुरक्षित एकान्त घर में रखें। घड़े की तली में पुआल रखें। खड़िया मिट्टी से उस घड़े पर 'लोहासव' तथा तिथि लिखें। २१ दिनों या १ महीना के बाद परीक्षोपरान्त ढक्कन खोलकर लोहासव को छानकर बोतल में भरकर कार्क, लेबल (नाम-तिथि-ग्रन्थादि) लगाकर सुरक्षित स्थान पर एक वर्ष के लिए छोड़ दें। एक वर्ष के बाद प्रयोग करें।

इसके प्रयोग से—पाण्डु, शोथ, गुल्म, उदररोग, अर्श, कुष्ठ, प्लीहारोग, कण्डू, कास, श्वास, भगन्दर, अरुचि, ग्रहणी एवं हृद्रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके पीने से अग्नि में वृद्धि होती है।

मात्रा—१ से २ तोला (१२ से २५ मि. ली.)। **अनुपान**—जल मिलाकर। **वर्ण**—रक्ताभ श्याव। **स्वाद**—मधुराम्ल। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, शोथ, ग्रहणी, उदररोग, यकृत्प्लीहावृद्धि, अर्श एवं हृद्रोग में लाभप्रद है।

४६. हरिद्राद्य घृत (चरक)

हरिद्रात्रिफलानिम्बबलामधुकसाधितम्।
सक्षीरं माहिषं सर्पिः कामलाहरमुत्तमम् ॥१३०॥

१. हल्दी, २. आमला, ३. हरीतकी, ४. बहेड़ा, ५. निम्बत्वक्, ६. बलामूल तथा ६. यष्टिमधु और भैंस का दूध ४

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लीटर, भैंस का घी १ किलो, सम्यक्पाकार्थ जल ४ लीटर एवं उपर्युक्त सभी ६ द्रव्य ३५-३५ ग्राम लें।

सर्वप्रथम भैंस के घी को मूर्च्छित कर लें तथा ७ काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण करें और सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित घी को गरम कर कल्क मिला दें। उसी घी में दूध मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। दूध सूखने पर ४ लीटर जल देकर सम्यक् पाक करें। जब जल सूख जाय तब पाक-परीक्षोपरान्त घी उतार लें और कपड़ा से छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह घी कामलारोग को नष्ट करने में उत्तम है।

मात्रा—१ तोला (१२ ग्राम)। **अनुपान**—गरम दूध के साथ। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोगिता**—कामलारोग में।

४७. द्राक्षाघृत (चरक)

पुराणसर्पिषः प्रस्थो द्राक्षाऽर्द्धप्रस्थसाधितः।
कामलागुल्मपाण्ड्वर्त्तिज्वरमेहोदरापहः ॥१३१॥

पुराना गाय का घी ७५० ग्राम एवं द्राक्षा ३७५ ग्राम लें। सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छित करें और द्राक्षा को सिल पर पीसकर कल्क बना लें और घी में मिलाकर घी से ४ गुना जल के साथ पाक करें। पूर्ण पाक समझकर घी को छान लें और काचपात्र में सुरक्षित करें। इस घृत को १ तोला (१२ मि.ली) की मात्रा में दूध के साथ सेवन करने से कामला, गुल्म, पाण्डु, ज्वर, प्रमेह और उदररोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ तोला (१२ ग्राम)। **अनुपान**—दूध के साथ। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोगिता**—पाण्डु, कामला, गुल्म, प्रमेह तथा उदर रोगों में।

४८. मूर्वाद्य घृत (चक्रदत्त)

मूर्वातिक्तानिशावासाकृष्णाचन्दनपर्पटैः ।
त्रायन्तीवत्सभूनिम्बपटोलाम्बुददारुभिः ॥१३२॥
अक्षमात्रैर्घृतप्रस्थं सिद्धं क्षीरचतुर्गुणम् ॥
पाण्डुताज्वरविस्फोटशोथार्शोरक्तपित्तनुत् ॥१३३॥

१. मूर्वामूल, २. कटुकी, ३. हल्दी, ४. वासामूल, ५. पिप्पली, ६. लाल चन्दन, ७. पित्तपापड़ा, ८. त्रायमाण, ९. कुटज छाल, १०. चिरायता, ११. पटोलपत्र, १२. नागरमोथा, १३. देवदारु, १४. गोघृत और १५. गोदुग्ध—मूर्वा से देवदारु पर्यन्त सभी १३ द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें तथा गाय का घी ७५० ग्राम एवं गाय का दूध ३ लीटर लें। मूर्वा से देवदारु पर्यन्त सभी द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। घी को मूर्च्छित कर उसी में कल्क एवं दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। पूर्ण पाक समझकर घी उतारकर छान लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। एक तोला की मात्रा में इसका प्रयोग करने पर पाण्डु, ज्वर, विस्फोट, शोथ, अर्श एवं रक्तपित्त रोगों को नष्ट कर देता है।

मात्रा—१ तोला (१२ ग्राम)। **अनुपान**—दूध के साथ। **वर्ण**—पीतवर्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोगिता**—पाण्डु, अर्श, शोथ एवं रक्तपित्त में।

४९. व्योषाद्य घृत (चक्रदत्त)

व्योषं बिल्वं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्भवम् ।
मुस्तान्ययोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥१३४॥
वृश्चिकाली च भार्गी च सक्षीरैस्तैः शृतं घृतम् ।
सर्वान् प्रशमयत्येतद् विकारान् मृत्तिकाकृतान् ॥१३५॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. बिल्वमूल, ५. हल्दी, ६. दारुहल्दी, ७. आमला, ८. हरीतकी, ९. बहेड़ा, १०. श्वेतपुनर्नवा, ११. रक्त पुनर्नवा, १२. नागरमोथा, १३. लोहभस्म, १४. पाठा, १५. वायविडङ्ग, १६. देवदारु, १७. वृश्चिकाली, १८. भारङ्गी, १९. गोघृत तथा २०. गोदुग्ध—शुण्ठी से भारङ्गी तक के सभी १८ द्रव्यों को १-१ तोला तथा घी १ किलो और गोदुग्ध ४ लीटर लें। सर्वप्रथम १८ काष्ठौषधों को कूट-पीसकर कल्क बनाकर, घृत को मूर्च्छित कर बड़े पात्र में कल्क एवं दूध मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। पूर्ण पाक समझ-कर परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़ा से छान लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। १ तोला की मात्रा में इस घृत को प्रयुक्त करने से मृत्तिकाभक्षण जन्य पाण्डुरोग नष्ट हो जाता हैं।

मात्रा—१ तोला (१२ ग्राम)। **अनुपान**— दूध से। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोगिता**—मृत्तिकाभक्षणजन्य पाण्डु रोग में।

५०. पुनर्नवादि तैल

पुनर्नवापलशतं जलद्रोणे विपाचयेद् ।
तेन पादावशेषेण तैलप्रस्थं पचेद्भिषक् ॥१३६॥
त्रिकटु त्रिफला शृङ्गी धान्यकं कट्फलं तथा ।
शटी दार्वी प्रियङ्गुश्च पद्मकाष्ठं हरेणुकम् ॥१३७॥
कुष्ठं पुनर्नवा चैव यमानी कारवी तथा ।
एला त्वचं सलोध्रं च पत्रकं नागकेशरम् ॥१३८॥
वचा ग्रन्थिकमूलं च चव्यं चित्रकमूलकम् ।
शतपुष्पाऽम्बु मञ्जिष्ठा रास्ना यासस्तथैव च ॥१३९॥
एतेषां कार्षिकैर्भागैः पेषयित्वा विनिक्षिपेत् ।
कामलां पाण्डुरोगं च हलीमकमथारुचिम् ॥१४०॥
रक्तपित्तं महाशोथं कासं श्वासं भगन्दरम् ।
प्लीहानमुदरं चैव जीर्णज्वरमपोहति ॥१४१॥
कुरुते परमा कान्तिं प्रदीप्तं जठरानलम् ।
तैलं पुनर्नवाख्यातं सर्वान् व्याधीन् व्यपोहति ॥१४२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. पुनर्नवामूल ५ किलो, २. तिलतैल ७५० ग्राम; ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. आमला, ७. हरीतकी, ८. बहेड़ा, ९. काकडासिंगी, १०. धनियाँ, ११. कायफल, १२. कचूर, १३. दारुहल्दी, १४. प्रियंगुफूल, १५. पद्मकाष्ठ, १६. रेणुका, १७. कूठ, १८. पुनर्नवामूल, १९. अजवायन, २०. मँगरैला, २१. छोटी इलायची, २२. दालशर्करा, २३. लोध्रछाल, २४. तेजपत्ता, २५. नागकेशर, २६. वच, २७. पिप्पलीमूल, २८. चव्यमूल, २९. चित्रकमूल, ३०. सौंफ, ३१. सुगन्धबाला, ३२. मंजीठ, ३३. रास्ना और ३४. धमासा—उपर्युक्त सभी द्रव्य प्रत्येक १-१ तोला (१२-१२ ग्राम) लेकर कूटें और सिल पर पीसकर कल्क बना लें। स्टील के पात्र में तिलतैल मूर्च्छित कर उसमें कल्क एवं ३ लीटर जल के साथ पाक करें। आसन्न पाक समझकर परीक्षोपरान्त तैल उतारकर कपड़ा से छानकर बोतलों में सुरक्षित रख लें तथा निम्नलिखित रोगों में बाह्याभ्यङ्ग करें। इसके मालिश करने से पाण्डु, कामला, हलीमक, अरुचि, रक्तपित्त, असाध्य शोथ, कास, श्वास, भगन्दर, प्लीहावृद्धि, उदररोग एवं जीर्ण ज्वर रोगों का नाश करता है। इसकी मालिश से शरीर की कान्ति बढ़ती है और पाचकाग्नि को बढ़ाता है। इसे पुनर्नवादि तैल कहते हैं। इसकी मालिश सभी बीमारियों का नाश करती है।

प्रयोग—बाह्य शरीर में अभ्यङ्ग मात्र। उपर्युक्त रोगों में केवल बाह्य प्रयोग (मर्दन मात्र)।

पाण्डुरोग में पथ्य एवं चिकित्सासूत्र

छर्द्दिर्विरेचनं जीर्णयवगोधूमशालयः।
मुद्गाढकीमसूराणां यूषा चाङ्गलजा रसाः ॥१४३॥
पटोलं वृद्धकूष्माण्डं तरुणं कदलीफलम्।
जीवन्तीक्षुरमत्स्याक्षीगुडूचीतण्डुलीयकम् ॥१४४॥
पुनर्नवा द्रोणपुष्पी वार्ताकुं लशुनद्वयम्।
पक्वाम्रमभया बिम्बी शृङ्गीमत्स्यो गवां जलम् ॥१४५॥
धात्री तक्रं घृतं तैलं सौवीरकतुषोदके।
नवनीतं गन्धसारो हरिद्रा नागकेशरम् ॥१४६॥
यवक्षारो लौहभस्म कषायाणि च कुङ्कुमम्।
दाहश्चरणयोः सन्धौ नाभेश्च द्व्यङ्गुलादधः ॥१४७॥
मस्तके हस्तयोर्मूले मध्ये च स्तनकक्षयोः।
यथादोषमिदं पथ्यं पाण्डुरोगवतां भवेत् ॥१४८॥

पाण्डुरोग के रोगी को चिकित्सा में सर्वप्रथम वमन, विरेचन तथा दग्ध कर्म कराना चाहिए। भोजन में—पुराना जौ, गेहूँ एवं शालि चावल देना चाहिए। इसके अतिरिक्त मूँग, अरहर, मसूर की दाल का यूष एवं जङ्गली पशुओं (मृगादि) का मांसरस, पटोलफल, पका हुआ कोहड़ा, कच्चा केला, जीवन्ती, ताल-मखाना, मत्स्याक्षी, गुडूची, चौराईशाक, पुनर्नवा, द्रोणपुष्पी, बैगन की सब्जी, दोनों लशुन, पका हुआ आम, हरीतकी, बिम्बीफल, काकड़ासिंगी, मछली, गोमूत्र, आमला, तक्र, गोघृत, तिलतैल, सौवीर, तुषोदक, मक्खन, श्वेत चन्दन, हल्दी, नागकेशर, यवक्षार, लौहभस्म, कषाय रस वाले द्रव्य एवं केशर लाभप्रद हैं। इसके अतिरिक्त दोनों पैरों की सन्धि में, नाभि के २ अंगुल नीचे, मस्तक, दोनों हाथों के मूल एवं मध्य में, स्तनों एवं कक्ष के बीच में दग्ध करना चाहिए।

पाण्डुरोग में अपथ्य

रक्तस्रुतिर्धूमपानं वमिवेगविधारणम्।
स्वेदनं मैथुनं शिम्बी पत्रशाकानि रामठम् ॥१४९॥
माषोऽम्बुपानं पिण्याकस्ताम्बूलं सर्षपाः सुरा।
मृद्भक्षणं दिवास्वप्नस्तीक्ष्णानि लवणानि च ॥१५०॥
सह्यविन्ध्याद्रिजातानां नदीनां सलिलानि च।
सर्वाण्यम्लानि दुष्टाम्बु विरुद्धान्यशनानि च ॥१५१॥
गुर्वन्नञ्च विदाहीनि पाण्डुरोगवतां विषम्।
वह्निमातपमायासमन्नपानञ्च पित्तलम्।
सर्वथा क्रोधमध्वानं पाण्डुरोगी सदा त्यजेत् ॥१५२॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां पाण्डुरोगाधिकारः।

रक्तस्राव, धूम्रपान, वमन के वेग को रोकना, स्वेदन, मैथुन, पत्रशाक[1], हींग, उड़द, अत्यम्बुपान, तिलादि खली, ताम्बूल, सरसों, सुरा, मिट्टी खाना, दिन में सोना, तीक्ष्ण पदार्थ, लवण, सह्याद्रि तथा विन्ध्य के झरनों एवं नदी का जल, सभी अम्ल पदार्थ, दूषित जल, विरुद्ध भोजन, गुरु एवं विदाही अन्न पाण्डु रोगी के लिए विषवत् त्याज्य है। आग, धूपसेवन, आयास, पित्तवर्धक अन्न एवं मद्यपान वर्जित हैं। क्रोध, अत्यन्त रास्ता चलना पाण्डुरोगी सर्वथा त्याग दें।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य पाण्डुरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

१. "काकमाचीकासमर्दपुनर्नवापूतिकापटोलपत्रमेघनादशालिञ्च हिलमोचिकामालिङ्गसुनिषण्णकमिति पत्रशाकानि"।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ रक्तपित्ताधिकारः (१३)

रक्तपित्त चिकित्सा से पूर्व रक्त रोकने का निषेध (चक्रदत्त)

नोद्रिक्तमादौ संग्राह्यं बलिनोऽप्यशनतश्च यत्।
हृत्पाण्डुग्रहणीरोगप्लीहकण्डूज्वरादिकृत् ॥१॥

बलवान् रक्तपित्ती[1] को अधिक सन्तर्पण के कारण उद्रिक्त रक्त पहले स्तम्भनादि औषधों के द्वारा रोकना नहीं चाहिए। क्योंकि स्तम्भनौषधों से शरीर में रुका हुआ यह अशुद्ध रक्त हृद्रोग, पाण्डु, ग्रहणीविकार, प्लीहावृद्धि, कण्डू और ज्वरादि अनेक रोग[2] उत्पन्न करता है।

अक्षीणबलादि ऊर्ध्वग रक्तपित्त में विशेष क्रम (चक्रदत्त)

ऊर्ध्वं प्रवृद्धदोषस्य पूर्वं लोहितपित्तिनः।
अक्षीणबलमांसाग्नेः कर्त्तव्यमपतर्पणम् ॥२॥

ऊर्ध्वग रक्तपित्त में (मुख, नाक, आँख, कान से रक्त निकलने पर) यदि रोगी के बल-मांस-अग्नि नष्ट नहीं हुए हों तो सर्वप्रथम अपतर्पण (लंघनादि) चिकित्सा करनी चाहिए।

क्षीणबलादि रक्तपित्तद्वय में चिकित्सा (चक्रदत्त)

ऊर्ध्वगे तर्पणं पूर्वं कर्त्तव्यञ्च विरेचनम्।
प्रागधोगमने पेया वमनञ्च यथाबलम् ॥३॥

क्षीण-बलादि ऊर्ध्वग रक्तपित्त में प्रथम तर्पण[3] चिकित्सा करनी चाहिए तथा बाद में विरेचन कराना चाहिए। क्षीणबल-मांस-अग्नि से युक्त अधोग रक्तपित्त में प्रथम शालपर्ण्यादि पेया के बाद वमन कराना चाहिए।

रक्तपित्त में पथ्य (चक्रदत्त)

शालिषष्टिकनीवारकोरदूषप्रसातिका।
श्यामाकञ्च प्रियङ्गुश्च भोजनं रक्तपित्तिनाम् ॥४॥

रक्तपित्त से पीड़ित व्यक्तियों के लिए शालिधान्य का भात, साठी चावल, नीवार (जंगली धान्य), कोदो (कोद्रव), प्रसातिका (लाल धान्य-विशेष), श्यामा एवं प्रियङ्गुफूल आदि हितकर हैं।

सूप-यूषादि विधान (चरक)

मसूरमुद्गचणकाः समुकुष्ठाढकीफलाः।
प्रशस्ताः सूपयूषार्थं कल्पिता रक्तपित्तिनाम् ॥५॥

रक्तपित्त के रोगी को मसूर, मूँग, चना, मोठ एवं अरहर का सूप तथा यूष की कल्पना करके देना चाहिए।

शाक एवं मांस का निर्देश (चरक)

शाकं पटोलवेत्राग्रतण्डुलीयादिकं हितम्।
मांसं लावकपोतादिशशैणहरिणादिकम् ॥६॥

रक्तपित्त से पीड़ित व्यक्ति को परवल, वेत्राग्रभाग, चौराई आदि का शाक तथा लावक एवं कपोतपक्षी, खरगोश, एणमृग एवं हरिण का मांस हितकर है।

स्तम्भनौषध (चक्रदत्त)

क्षीणमांसबलं वृद्धं बालं शोषानुबन्धिनम्।
अवाम्यमविरेच्यञ्च स्तम्भनैः समुपाचरेत् ॥७॥

जिस रक्तपित्ती का बल एवं मांस क्षीण हो गया हो तथा उसे अतिरक्तप्रवृत्ति हो रही हो तो उसे शीघ्र ही स्तम्भनौषधों से उसका रक्तस्राव रोकना चाहिए। इसी प्रकार वृद्ध, बालक तथा क्षयरोग-पीड़ित, वमन-विरेचन के अयोग्य रोगी को भी शीघ्र ही रक्तस्राव रोकना चाहिए।

१. वासापत्रस्वरस (चक्रदत्त)

वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम्।
पिबेत्तेन शमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥८॥

१. वासापत्रस्वरस, २. मधु तथा ३. शर्करा लें। वासापत्र को पानी से साफ कर सिल पर पीसकर कपड़ा में लुगदी रखकर हाथ से दबाकर रस निचोड़ लें। उस स्वरस में समभाग मधु एवं शर्करा मिलाकर ३ तोले की मात्रा में २ से ३ बार पीना चाहिए।

मात्रा—३ तोला (३६ मि.ली.)।

---

१. संयोगाद् दूषणात् तत्तु सामान्याद् गन्धवर्णयोः।
रक्तस्य पित्तमाख्यातं रक्तपित्तं मनीषिभिः।। (च.चि. ४:८)
निरुक्तिः—पित्तेन दुष्टं रक्तं रक्तपित्तं, रक्तं च पित्तं च दुष्टं रक्तपित्तं, रागपरिप्राप्तं पित्तं रक्तपित्तम्, रक्तं च तत्पित्तं च रक्तपित्तं निरुच्यते।

२. अक्षीणबलमांसस्य रक्तपित्तं यदश्नतः।
तद्दोषदुष्टमुत्क्लिष्टं नादौ स्तम्भनमर्हति।।
गलग्रहं पूतिनस्यं मूर्च्छायमरुचिं ज्वरम्।
गुल्मं प्लीहानमानाहं किलासं कृच्छ्रमूत्रताम्।।
कुष्ठान्यर्शांसि वीसर्पं वर्णनाशं भगन्दरम्।
बुद्धीन्द्रियोपरोधञ्च कुर्यात् स्तम्भनमादितः।। (च.चि. ४:२४-२६)

३. **शालपर्ण्यादि पेया**—शालपर्ण्यादिना सिद्धा पेया पूर्वमधोगते। (चक्रदत्त-रक्तपित्ते)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२. उदुम्बरफलस्वरस (चक्रदत्त)

समाक्षिकः फल्गुफलोद्भवो वा
पीतो रसः शोणितमाशु हन्ति ॥९॥

गूलर के हरे पत्ते एवं गूलर के कच्चे फल—दोनों समभाग में लेकर पानी से धो लें, सिल पर पीसकर कपड़े से रस निचोड़ १ तोला रस एवं समभाग मधु मिला लें और रक्तपित्त से ग्रस्त रोगी को दिन में दो बार पिलावें।

३. अभयाप्रयोग (चक्रदत्त)

अभया मधुसंयुक्ता पाचनी दीपनी मता।
श्लेष्माणं रक्तपित्तञ्च हन्ति शूलातिसारनुत् ॥१०॥

हरीतकीचूर्ण ३ ग्राम तथा मधु ६ ग्राम—दोनों को साथ मिलाकर सुबह-शाम चाटने से दीपन-पाचन है; कफ, रक्तपित्त, शूल एवं अतिसार नाशक है।

४. पथ्या एवं पिप्पली प्रयोग (चक्रदत्त)

वासकस्वरसे पथ्या सप्तधा परिभाविता।
कृष्णा वा मधुना लीढा रक्तपित्तं द्रुतं जयेत् ॥११॥

हरीतकीफलत्वक्चूर्ण को वासास्वरस की सात भावना देकर काचपात्र में सुरक्षित रखें। इस भावित चूर्ण को २ से ३ ग्राम की मात्रा में मधु के साथ सेवन करने से रक्तपित्त शीघ्र नष्ट हो जाता है। इसी तरह पिप्पलीचूर्ण को वासास्वरस की ७ भावना देकर काचपात्र में सुरक्षित रखें। रक्तपित्त-पीड़ित रोगी को मधु के साथ खिलाने से शीघ्र ही रक्तपित्त शान्त हो जाता है।

५. उदुम्बरादिचूर्ण (चक्रदत्त)

पक्वौदुम्बरकाश्मर्यपथ्याखर्जूरगोस्तनाः ।
मधुना घ्नन्ति संलीढा रक्तपित्तं पृथक् पृथक् ॥१२॥

१. पके हुए गूलर के फल, २. गम्भारी के फल, ३. हरीतकी फलत्वक्, ४. छुहाड़ा तथा ५. द्राक्षा (मुनक्का)—इनके सम्मिलित या पृथक्-पृथक् फलों के चूर्ण मधु के साथ १-१ तोला खाने से रक्तपित्त नष्ट हो जाता है।

६. खदिरादिपुष्पचूर्ण (चक्रदत्त)

खदिरस्य प्रियङ्गूनां कोविदारस्य शाल्मलेः।
पुष्पचूर्णन्तु मधुना लिहन्नारोग्यमश्नुते ॥१३॥

१. खैर के फूल, २. प्रियङ्गुफूल, ३. काँचनार के फूल एवं ४. सेमल के फूल—इन्हें समभाग लकेर कूट-पीसकर वस्त्रपूत चूर्ण बना लें और २ से ३ ग्राम मधु के साथ सेवन करने से रक्तपित्त के रोगी को लाभ होता है।

मात्रा—३ ग्राम तक। **अनुपान**—मधु से। **वर्ण**—लाल। **स्वाद**—कषाय। **उपयोग**—रक्तपित्त में।

७. लाक्षाचूर्ण प्रयोग

लाक्षाचूर्णं सुकृतं क्षौद्राज्यसमन्वितं सकृल्लीढम्।
शमयति सोद्धतवमनं सरक्तपित्तस्य सिद्धमिदम् ॥१४॥

लाक्षा—कच्ची लाख का सूक्ष्म चूर्ण करें। २ ग्राम की मात्रा में मधु-घृत मिलाकर लेहन करने से उग्रवेग से रक्त वमन करने वाले रक्तपित्त के रोगी को शीघ्र शान्ति मिलती है।

८. द्राक्षादिचूर्ण (सुश्रुत)

द्राक्षामधुककाश्मर्यसितायुक्तं विरेचनम्।
यष्टीमधुकयुक्तञ्च सक्षौद्रं वमनं हितम् ॥१५॥

१. द्राक्षा (मुनक्का), २. मुलेठी, ३. गम्भारीफल तथा ४. चीनी—ये चारों द्रव्य समभाग में लेकर कूट-पीसकर कपड़छन चूर्ण कर लें। इन विरेचक औषधों में पुनः मुलेठीचूर्ण और मधु मिलाकर खिलाना रक्तपित्त रोग में हितकर रहता है।

संसर्जन कर्म (सुश्रुत)

लङ्घितस्य ततः पेयां विदध्यात्स्वल्पतण्डुलाम्।
रसयूषौ प्रदातव्यौ सुरभिस्नेहसंस्कृतौ।
तर्पणं पाचनं लेहान् सर्पींषि विविधानि च ॥१६॥

रक्तपित्त के रोगी को लंघन कर्म कराने के बाद थोड़े चावलों से सिद्ध पेया पिलानी चाहिए। गाय के घी से छौंककर मांसरस तथा यूष देना चाहिए। उसके बाद तर्पण, पाचन, लेह और विविध प्रकार के साधित घृतों का प्रयोग करना चाहिए।

९. तर्पण-प्रयोग (चक्रदत्त)

तर्पणं सघृतक्षौद्रलाजचूर्णैः प्रदापयेत्।
ऊर्ध्वगं रक्तपित्तं तत् पीतकाले व्यपोहति ॥१७॥

धान के लावा का सत्तू बनाकर उसमें विषम मात्रा में घृत एवं मधु मिलाकर चाटने से ऊर्ध्वग रक्तपित्त नष्ट हो जाता है।

१०. तर्पणार्थ खर्जूरादि जल (चक्रदत्त)

जलं खर्जूरमृद्वीकामधूकैः सपरूषकैः।
शृतशीतं प्रयोक्तव्यं तर्पणार्थं सशर्करम् ॥१८॥

१. छोहाड़ा खर्जूर, २. मुनक्का, ३. महुआ के फूल तथा ४. फ़ालसाफल—इन्हें १०-१० ग्राम लेकर चौगुना जल में डालकर रात्रिपर्यन्त खुले आसमान के नीचे रखें और प्रातः हाथ से खूब मसलकर कपड़े से छान लें तथा उस शीत कषाय में १०-२० ग्राम चीनी मिलाकर तर्पणार्थ पिलावें।

११. त्रिवृतादि मोदक (चक्रदत्त)

त्रिविता त्रिफला श्यामा पिप्पली शर्करा मधु।
मोदकं सान्निपातोर्ध्वरक्तपित्तज्वरापहम् ॥१९॥

१. निशोथ, २. आमला, ३. हरीतकी, ४. बहेड़ा, ५.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पीपर, ६. अनन्तमूल तथा ७. चीनी—इन्हें सममात्रा में लेकर वस्त्रपूत चूर्ण कर लें। पुनः थोड़ा घृत में भर्जन करें और चीनी की चासनी कर मोदक बनाकर १०-१० ग्राम की मात्रा में सेवन करने से अथवा उपर्युक्त द्रव्यों को सूक्ष्म कर मधु के साथ मोदक बनाकर सेवन करने से ऊर्ध्वग रक्तपित्त, सन्निपातज रक्तपित्त एवं ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

१२. शालपर्ण्यादि पेया (चक्रदत्त)

शालिपर्ण्यादिना सिद्धा पेया पूर्वमधोगते।
वमनं मदनोन्मिश्रो मन्थः सक्षौद्रशर्करः ॥२०॥

अधोग रक्तपित्त में शालपर्ण्यादि (लघुपञ्चमूल) से सिद्ध पेया का उपयोग करना चाहिए। ततः मैनफल के बीजचूर्ण में मधु एवं चीनी तथा जल मिलाकर मथें और वमनार्थ प्रयोग करना चाहिए।

१३. शुण्ठी रहित षडङ्ग जल (चक्रदत्त)

विना शुण्ठीं षडङ्गेन सिद्धं तोयं च दापयेत् ॥२१॥

१. नागरमोथा, २. पित्तपापड़ा, ३. खश, ४. श्वेतचन्दन और ५. सुगन्धबाला—इन पाँच द्रव्यों से सिद्ध जल पिलाने से रक्तपित्त शान्त होता है। षडङ्ग में शुण्ठी भी है, किन्तु यहाँ शुण्ठी के बिना जल सिद्ध करना है।

१४. आटरूषक क्वाथ (चक्रदत्त)

आटरुषकनिर्यूहे प्रियङ्गुर्मृत्तिकाञ्जने।
विनीय लोध्रं सक्षौद्रं रक्तपित्तहरं पिबेत् ॥२२॥

१. वासामूलक्वाथ, २. प्रियङ्गुफूल, ३. बाँबीमिट्टी, ४. रसाञ्जन, ५. लोधछाल तथा ६. मधु—वासामूल क्वाथ ५० मि.ली. में प्रियङ्गुफूल, वल्मीकमृत्तिका, रसाञ्जन एवं लोध्रत्वक् प्रत्येक ५-५ ग्राम मिलाकर रक्तपित्त के रोगी को पिलाना चाहिए। इससे रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है।

१५. वासाकषाय (चक्रदत्त)

वासाकषायोत्पलमृत्प्रियङ्गु-
लोध्राञ्जनाम्भोरुहकेशराणि।
पीत्वा सिताक्षौद्रयुतानि हन्यात्
पित्तासृजो वेगमुदीर्णमाशु ॥२३॥

१. वासाक्वाथ, २. नीलकमल, ३. सौराष्ट्रमृत्तिका, ४. प्रियंगुफूल, ५. लोध्रत्वक्, ६. रसाञ्जन और ७. कमलकेशर—वासाक्वाथ ५० मि.ली. में नीलकमल आदि सभी द्रव्यों के चूर्ण ५-५ ग्राम तथा मधु और चीनी १०-१० ग्राम मिलाकर पीने से रक्तपित्त रोग शीघ्र शान्त हो जाता है।

१६. वासास्वरस-प्रयोग (चक्रदत्त)

तालीशचूर्णसहितः पेयः क्षौद्रेण वासकस्वरसः।
कफपित्ततमकश्वासं स्वरभेदरक्तपित्तहरः ॥२४॥

१. तालीशपत्रचूर्ण ५ ग्राम, २. वासास्वरस ५० मि.ली. तथा मधु ५० ग्राम लें। तीनों द्रव्यों को एक साथ मिलाकर पीने से रक्तपित्त, स्वरभेद, तमकश्वास और कफ-पित्त नाशक है।

वासा का महत्त्व (चक्रदत्त)

वासायां विद्यमानायामाशायां जीवितस्य च।
रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमवसीदति ॥२५॥

वासा उपलब्ध होने पर तथा जीवन की आशा विद्यमान रहने पर रक्तपित्त, क्षय एवं कास के रोगी क्यों दुःखी होते हैं। अर्थात् वासा (किसी कल्प में) सेवन करने से रक्तपित्त, क्षय एवं कासरोग नष्ट हो जाते हैं।

१७. रक्तपित्तहर योगद्वय (चक्रदत्त)

मदयन्त्यङ्घ्रिजः क्वाथस्तद्वत्समधुशर्करः।
अतसीकुसुमसमङ्गावटावरोहस्त्वगम्भसा पीता।
प्रशमयति रक्तपित्तं यदि भुङ्क्ते मुद्गयूषेण ॥२६॥

१. मदयन्ती (नेवार) का मूलक्वाथ चीनी और मधु मिलाकर पीने से रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है।

२. वटप्ररोहत्वक् स्वरस ५० मि.ली. में अतसी फूल ५ ग्रा. तथा मंजीठ ५ ग्राम चूर्ण और मधु एवं शर्करा मिलाकर पीने से रक्तपित्त रोग शान्त हो जाता है। इन औषधों के सेवन काल में मात्र मूँग का यूष ही भोजन में लें।

१८. नासारक्तस्रावहर क्रिया (सुश्रुत)

घ्राणप्रवृत्ते जलमाशु देयं
सशर्करं नासिकया पयो वा।
द्राक्षारसं क्षीरघृतं पिबेद्वा
सशर्करञ्चेक्षुरसं हितं वा ॥२७॥

नासा से रक्तप्रवृत्ति होने पर चीनी का शर्बत पिलाना चाहिए तथा उससे नाक में नस्य भी देना चाहिए। अथवा गाय के दूध में चीनी मिलाकर पिलाना और नस्य देना चाहिए। अथवा द्राक्षा (मुनक्का) स्वरस, गोदुग्ध तथा ताजा गाय का मक्खन शर्करा या इक्षुरस मिलाकर पिलाना और नस्य देना चाहिए।

१९. दाडिमपुष्परसादि नस्य (चक्रदत्त)

नस्यं दाडिमपुष्पोत्थो रसो दूर्वाभवोऽथवा।
आम्रास्थिजः पलाण्डोर्वा नासिकासृतरक्तजित् ॥२८॥

नासा से रक्तस्राव होने पर अनारपुष्प स्वरस या दूर्वास्वरस या आम की गुठली की मज्जा (कोइल) का स्वरस या पलाण्डु स्वरस ४-४ बूँद डालना चाहिए। इनमें से किसी एक का स्वरस नाक में डालें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२०. नासारक्तस्राव में

रसो दाडिमपुष्पस्य दूर्वारससमन्वितः ।
अलक्तकरसोपेतः पथ्यया वा समन्वितः ॥२९॥
नस्यः प्रयोजितः क्षिप्रं त्रिदोषमपि देहिनाम् ।
नासारक्तं प्रवृत्तन्तु हन्यादेव न संशयः ॥३०॥

अनार (दाड़िम) पुष्पस्वरस एवं दूर्वास्वरस अथवा लाक्षा स्वरस अथवा हरीतकीस्वरस (क्वाथ) मिलाकर नाक में ४-६ बूँद डालने से त्रिदोषजन्य रक्तपित्त या नासास्राव जन्य रक्तपित्त निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं।

२१. नासास्रावहर आमलक प्रलेप (चक्रदत्त)

नासाप्रवृत्तरुधिरं घृतभृष्टं श्लक्ष्णपिष्टमामलकम् ।
सेतुरिव तोयवेगं रुणद्धि मूर्ध्नि प्रलेपेन ॥३१॥

कच्चा ताजा आमला को घृत में भूनकर काञ्जी के साथ सिल पर श्लक्ष्ण पीस लें और उस कल्क को सिर (ललाट) पर लेप करें। जिस प्रकार नदी का बाँध (सेतु) प्रवृद्ध जलवेग को रोक देता है उसी प्रकार यह लेप नासारक्तस्राव को रोक देता है।

२२. मेढ्रप्रवृत्त रक्तस्राव में उत्तरबस्त्यादि (च.द्र.)

मेढ्रगेऽतिप्रवृत्ते तु बस्तिरुत्तरसंज्ञितः ।
शृतं क्षीरं पिबेद्वाऽपि पञ्चमूल्या तृणाह्वया ॥३२॥

पुरुषजननेन्द्रिय (शिश्न) मार्ग से रक्तप्रवृत्ति होने पर उत्तरबस्ति क्रिया करनी चाहिए। अथवा तृणपञ्चमूल से साधित दूध शर्करा मिलाकर पीना चाहिए।

२३. प्रियंग्वादिचूर्ण (योगरत्नाकर)

वासायाः स्वरसं कृत्वा द्रव्यैरेभिः प्रयोजयेत् ।
प्रियङ्गुर्मृत्तिका लोध्रमञ्जनं चेति चूर्णयेत् ॥३३॥
तच्चूर्णं योजयेत्तत्र नस्ये क्षौद्रसमन्वितम् ।
नासिकामुखपायुभ्यो योनिमेढ्राच्च वेगितम् ॥३४॥
रक्तपित्तं स्रवद्धन्ति सिद्ध एष प्रयोगराट् ।
यच्च शस्त्रक्षते नैव रक्तं तिष्ठति वेगितम् ॥३५॥
तदप्यनेन चूर्णेन तिष्ठत्येवावचूर्णितम् ॥३६॥

१. वासास्वरस, २. प्रियंगुफूल, ३. सौराष्ट्रमृत्तिका (फिटकरी), ४. लोध्रत्वक् तथा ५. रसाञ्जन—ये सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम तथा वासास्वरस ५० मि.ली. लें। प्रियङ्गु से रसाञ्जन तक के सभी चार द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर वासास्वरस की भावना दें। इस चूर्ण को ५ ग्राम की मात्रा में मधु के साथ सेवन करने से एवं नस्य लेने से नासा, मुख, गुदा, योनि एवं शिश्न से वेग से स्रवित रक्त (रक्तपित्त) को शीघ्र शान्त करता है। यह योगराज प्रयोग के द्वारा सिद्ध है। शस्त्र के द्वारा कटने के बाद रक्तस्राव नहीं रुकने पर उस स्थान पर भी इस प्रियंग्वादि चूर्ण को छिड़कने से शीघ्र ही रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

२४. वासकादि क्वाथ (भावप्रकाश)

वासापत्रसमुद्भूतो रसः समधुशर्करः ।
क्वाथो वा हरते पीतो रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥३७॥

वासापत्रस्वरस ५० मि.ली. में मधु तथा शर्करा २५-२५ ग्राम मिलाकर पिलाने से रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है।

२५. धान्यकादि हिम (भावप्रकाश)

धान्याकधात्रीवासानां द्राक्षापर्पटयोर्हिमः ।
रक्तपित्तं ज्वरं दाहं तृष्णां शोषञ्च नाशयेत् ॥३८॥

१. धनिया, २. आमला, ३. वासामूल, ४. द्राक्षा और ५. पित्तपापड़ा—ये सभी द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट करें और एक मिट्टी के पात्र में २५ ग्राम यवकुट रखें तथा १०० मि.ली. पानी के साथ रात्रिपर्यन्त भिगोकर खुले आसमान में रहने दें। प्रातः हाथ से मसल कर छान लें और २५ ग्राम मधु मिलाकर पिलावें। इसके पीने से रक्तपित्त, ज्वर, दाह, तृष्णा और शोष रोग नष्ट हो जाते हैं।

२६. आटरूषादि क्वाथ (चक्रदत्त)

आटरूषकमृद्वीकापथ्याक्वाथः सशर्करः ।
क्षौद्राढ्यः कसनश्वासरक्तपित्तनिबर्हणः ॥३९॥

१. वासामूल, २. मुनक्का तथा ३. बड़ी हरीतकी—इन तीनों द्रव्यों को समभाग में लेकर यवकुट कर चौगुने जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें और उसमें मधु एवं शक्कर डालकर पियें। इसके पीने से कास, श्वास एवं रक्तपित्त नष्ट हो जाते हैं।

२७. उशीरादिचूर्ण

उशीरं तगरं शुण्ठी कक्कोलं चन्दनद्वयम् ।
लवङ्गं पिप्पलीमूलं कृष्णैला नागकेशरम् ॥४०॥
मुस्तामधुककर्पूरं तुगाक्षीरी च पत्रकम् ।
कृष्णागुरुसमं चूर्णं सिता चाष्टगुणा तथा ।
रक्तवान्तिञ्च तापञ्च नाशयेन्नात्र संशयः ॥४१॥

१. खस, २. तगरमूल, ३. शुण्ठी, ४. शीतलचीनी, ५. श्वेतचन्दन, ६. लालचन्दन, ७. लौंग, ८. पिप्पलीमूल, ९. पिप्पली, १०. छोटी इलायची, ११. नागकेशर, १२. नागरमोथा, १३. मुलेठी, १४. कपूर, १५. वंशलोचन, १६. तेजपत्ता, १७. अगुरु—ये सभी १७ द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और चीनी सभी द्रव्यों से आठ गुना मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ ग्राम की मात्रा में वासास्वरस एवं मधु के साथ सेवन करने से भयंकर रक्तपित्त (रक्तवमन होने वाला) तथा ताप को निःसन्देह नष्ट करता है।

मात्रा—३ ग्राम। **अनुपान**—वासास्वरस एवं मधु से। **गन्ध**—एलागन्धी। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—रक्तपित्त।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२८. एलादि गुटिका (चक्रदत्त)

एलापत्रत्वचोऽर्द्धाक्षाः पिप्पल्यर्द्धपलं तथा।
सितामधुकखर्जूरमृद्वीकाश्च पलोन्मिताः ॥४२॥
सञ्चूर्ण्य मधुना युक्ता गुटिकाः कारयेद्भिषक्।
अक्षमात्रां ततश्चैकां भक्षयेच्च दिने दिने ॥४३॥
श्वासं कासं ज्वरं हिक्कां छर्दिं मूर्च्छां मदं भ्रमम्।
रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां पार्श्वशूलमरोचकम् ॥४४॥
शोषप्लीहामवातांश्च स्वरभेदं क्षतक्षयम्।
गुटिका तर्पणी वृष्या रक्तपित्तं विनाशयेत् ॥४५॥

१. छोटी इलायची ५ ग्राम, २. तेजपत्ता ५ ग्राम, ३. दालीचीनी ५ ग्राम, ४. पीपर २० ग्राम, ५. चीनी ४० ग्राम, ६. मुलेठी ४० ग्राम, ७. पिण्डखजूर ४० ग्राम और ८. मुनक्का ४० ग्राम लें। इन सभी आठ द्रव्यों को कूट-पीसकर एक साथ मिलाकर मधु के साथ मर्दन करें और १२-१२ ग्राम की वटी बनाकर छाया में रखकर सुखा लें। सुबह-शाम १-१ वटी चूसने से कास, श्वास, ज्वर, हिक्का, वमन, मूर्च्छा, मद, भ्रम, रक्तपित्त, तृष्णा, पार्श्वशूल, अरुचि, शोष, प्लीहा, आमवात, स्वरभेद, उरःक्षत तथा क्षयादि रोगों का नाश करती है। यह गुटिका तृप्तिकारक है, वृष्य है और रक्तपित्तनाशक है।

मात्रा—६ ग्राम। **वर्ण**—कत्थई। **स्वाद**—मधुर।

२९. अर्केश्वररस (र.सा.सं.)

मृतार्कं मृतवङ्गञ्च मृताभ्रञ्च समाक्षिकम्।
अमृतास्वरसैर्भाव्यं त्रिसप्तकपुटे पचेत् ॥४६॥
वासाक्षीरविदारीभ्यां चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः।
भक्षणाद्विनिहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥४७॥

१. ताम्रभस्म, २. वङ्गभस्म, ३. अभ्रकभस्म तथा ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म—ये चारों द्रव्य समभाग में लें। एक बड़े पत्थर के खरल में इन भस्मों को रखकर गुडूचीस्वरस की १ भावना देकर गजपुट में पाक करें। इसी प्रकार २१ भावना और २१ पुट दें। पुट से निकालकर मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। ५०० मि.ग्रा. की मात्रा में वासास्वरस और विदारीकन्द क्वाथ के साथ सेवन करने से भयंकर रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है।

विमर्श—आचार्यश्री ने इसकी मात्रा ४ रत्ती (५०० मि.ली.) कही है जो अधुना अत्यधिक है। अतः २ रत्ती की मात्रा उचित है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—वासास्वरस। **वर्ण**—श्याव। **उपयोग**—रक्तपित्त।

३०. रक्तपित्तान्तकरस (र.सा.सं.)

मृताभ्रं मुण्डतीक्ष्णञ्च माक्षिकं रसतालकम्।
गन्धकञ्च भवेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृताद्रवैः ॥४८॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्ले सिताक्षौद्रसमन्वितम्।
माषमात्रं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम्।
ज्वरं दाहं क्षतक्षीणं तृष्णां शोषमरोचकम् ॥४९॥

१. अभ्रकभस्म, २. मुण्डलोहभस्म, ३. तीक्ष्णलोहभस्म, ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ५. शुद्ध पारद, ६. शुद्ध हरताल तथा ७. शुद्ध गन्धक—सभी द्रव्य समान भाग में लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बना लें, ततः हरताल मिलाकर मर्दन करें। पुनः शेष सभी भस्मों को मिलाकर मुलेठी, द्राक्षा तथा गुडूची स्वरस की १-१ भावना देकर काँच-पात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'रक्तपित्तान्तक रस' को $\frac{१}{३}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की मात्रा में चीनी एवं मधु के साथ सेवन करने से भयंकर रक्तपित्त, ज्वर, दाह, क्षत, क्षीण, तृष्णा, शोष एवं अरुचि नाशक है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **वर्ण**—कृष्ण। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—रक्तपित्त में।

३१. रसामृतरस (र.सा.सं.)

रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकं च शिलाजतु।
गुडूचीं चन्दनं द्राक्षां मधुपुष्पञ्च धान्यकम् ॥५०॥
कुटजस्य त्वचं बीजं धातकीं निम्बपत्रकम्।
यष्टीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयाऽन्वितम् ॥५१॥
विधिना मर्दयित्वा तु कर्षमात्रन्तु भक्षयेत्।
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥५२॥
पित्तं तथाऽम्लपित्तं च रक्तपित्तं विशेषतः।
निहन्ति सर्वदोषं च ज्वरं सर्वं न संशयः ॥५३॥
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥५४॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक, ३. स्वर्णमाक्षिक भस्म, ४. शुद्ध शिलाजतु, ५. श्वेतचन्दन, ६. गुडूची, ७. द्राक्षा, ८. महुआफूल, ९. धनिया, १०. कुटज छाल, ११. इन्द्रयव, १२. धातकीफूल, १३. निम्बपत्र, १४. मुलेठी और १५. चीनी—शुद्ध गन्धक से मुलेठी तक के सभी १४ द्रव्य २०-२० ग्राम लें। सभी कष्ठोषधों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर कज्जली बनावें और उसमें माक्षिकभस्म तथा शिलाजतु एवं अन्य काष्ठौषधों के चूर्णों को मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। इसमें मधु २०० ग्राम मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित करें। इस 'रसामृत रस' को सिद्ध गहनानन्दजी ने प्राणियों पर दया कर लोक-कल्याणार्थ कहा है। इस औषधि को १२-१२ ग्राम की मात्रा में धारोष्ण गाय के दूध से प्रातः सेवन करने से पित्तज रोग, अम्लपित्त, रक्तपित्त एवं ज्वर नाशक है; साथ ही यह सर्वदोष-शामक है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—३-३ ग्राम। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—रक्तपित्त में।

३२. सुधानिधिरस (र.सा.सं.)

सूतं गन्धं माक्षिकं लौहचूर्णं
सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन।
मूषामध्ये भूधरे तत्पुटित्वा
दद्याद् गुञ्जां त्रैफलेनोदकेन॥
लौहे पात्रे गोपयः पाचयित्वा
रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै॥५५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. स्वर्णमाक्षिकभस्म तथा ४. लोहभस्म—सभी द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष दोनों द्रव्य कज्जली के साथ मिला लें और त्रिफला क्वाथ की भावना देकर टिकिया बना लें, सुखाकर शराव सम्पुट कर भूधरपुट में पाक करें। स्वांगशीत होने पर औषधि को मर्दन कर काचपात्र में रख लें। १-१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में मधु एवं त्रिफला क्वाथ के साथ सेवन करने पर रक्तपित्त नष्ट हो जाता है। गाय के दूध को लोहे की कड़ाही में पकाकर रात में रक्तपित्त की शान्ति के लिए पिलाना चाहिए।

मात्रा—१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मधु एवं त्रिफला क्वाथ से। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कषाय। **उपयोग**—रक्तपित्त।

३३. कपर्दकरस (र.सा.सं.)

मृतं वा मूर्च्छितं सूतं कार्पासकुसुमद्रवैः।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु तेन पूर्या वराटिका॥५६॥
निरुद्ध्य चान्धमूषायां भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत्।
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं मरिचैर्द्विगुणैः सह॥५७॥
गुञ्जामात्रं घृतेनैव भक्षयेत् प्रातरुत्थितः।
उदुम्बरं घृतं चैव अनुपानं प्रयोजयेत्॥५८॥
कपर्दको रसो नाम्ना रक्तपित्तविनाशनः॥५९॥

पारदभस्म (रससिन्दूर) या समगुण पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर एक खरल में रखकर कार्पासपुष्पस्वरस की ३ भावना देकर बड़ी-बड़ी कौड़ी (वराटिका) में भरें और वराटिका के मुख को खड़िया मिट्टी से बन्दकर शराव सम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट खोलकर खड़िया मिट्टी पृथक् कर कौड़ी एवं उनमें की औषधि के साथ खरल में पीस लें और औषधि से दुगुनी मात्रा में मरिचचूर्ण मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस 'कपर्दकरस' को १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में घी के साथ प्रातःकाल खाकर ऊपर १ तोला गूलर के रस या क्वाथ पियें। इससे रक्तपित्त शान्त हो जाता है।

मात्रा—१ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.)। **अनुपान**—घृत एवं गूलर स्वरस से। **वर्ण**—वन्योपल भस्म जैसा। **स्वाद**—क्षारीय-कटु। **उपयोग**—रक्तपित्त में।

३४. पित्तान्तकरस (र.सा.सं.)

जातीकोषफले मांसी कुष्ठं तालीशपत्रकम्।
माक्षिकं मृतलौहं च अभ्रं दिव्यं समांशिकम्॥६०॥
सर्वतुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा।
द्विगुञ्जाभा वटी कार्या पित्तरोगविनाशिनी॥६१॥
कोष्ठाश्रितं च यत् पित्तं शाखास्थितमथापि वा।
शूलं चैवाम्लपित्तं च पाण्डुरोगं हलीमकम्॥६२॥
दुर्नामभ्रान्तिवान्तीश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत्।
रसः पित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः॥६३॥

१. जावित्री, २. जायफल, ३. जटामांसी, ४. कूठ, ५. तालीशपत्र, ६. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ७. लोहभस्म, ८. अभ्रक भस्म और ९. रजतभस्म—जावित्री से अभ्रकभस्म तक सभी आठ द्रव्य ५०-५० ग्राम लें और रजतभस्म ४०० ग्राम (सभी द्रव्यों के बराबर) लें। इन सभी द्रव्यों को एक साथ खरल में मिलाकर जल के साथ मर्दन करें और २५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें। १-१ वटी सुबह-शाम जल के साथ सेवन करने से पित्तरोग नाशनी है। कोष्ठास्थि एवं शाखाश्रित पित्तशामक है। शूल, अम्लपित्त, पाण्डुरोग, हलीमक, अर्श, भ्रान्ति एवं वमन रोगों का शीघ्र नाश करती है। इस पित्तान्तक रस को काशीराज ने सर्वप्रथम कहा था।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—जल से। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कषाय। **उपयोग**—रक्तपित्त एवं पित्तरोग नाशक है।

३५. महापित्तान्तकरस

यद्यत्र माक्षिकपदे ननु हेमभस्म
संयोजयेत्सविधि भेषजसंविधाता।
पित्तान्तको रस इति प्रथितो महादिः
स्यादेष सर्वविधपित्तनिपातनेन्दुः॥६४॥

यदि उपर्युक्त पित्तान्तकरस में स्वर्णमाक्षिकभस्म के स्थान पर स्वर्णभस्म को दिया जाय तो वही पित्तान्तकरस 'महापित्तान्तक रस' के नाम से विद्वान् लोगों से कहा जाता है। जो कि सभी प्रकार के पित्तज रोगों को दूर करता है।

३६. तीक्ष्णादि वटिका

खर्पराभ्ररसास्तुल्यास्तीक्ष्णं च द्विगुणं मतम्।
तीक्ष्णपादसमं स्वर्णं जतुक्वाथेन सप्तधा॥६५॥
भावयित्वा ततः कार्या द्विगुञ्जाप्रमिता वटी।
पलङ्कषाकषायेण रसेनोदुम्बरस्य वा॥६६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्रयोज्या वटिका ह्येषा शुभा तीक्ष्णादिनामिका ।
रक्तपित्तं क्षयं कासं यक्ष्माणं श्वसनं ज्वरम् ।
निहन्यात् सकलान् रोगान् केशरी करिणं यथा ॥६७॥

१. खर्परभस्म २० ग्राम, २. अभ्रकभस्म २० ग्राम, ३. रससिन्दूर २० ग्राम, ४. तीक्ष्णलोहभस्म ४० ग्राम तथा ५. स्वर्णभस्म १० ग्राम लें। इन सभी औषधों को एक साथ खरल में मर्दन कर लाक्षास्वरस की ७ भावना दें और २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। रक्तपित्त रोग से पीड़ित व्यक्ति को १-१ वटी गुग्गुलुक्वाथ या गूलर की छाल के रस के साथ सेवन करें। यह औषधि रक्तपित्त, क्षय, कास, श्वास, ज्वर एवं यक्ष्मा रोगनाशक है। इस औषधि को तीक्ष्णादिवटी के नाम से जाना जाता है। जैसे सिंह हाथियों के समूह का नाश करता है उसी प्रकार यह सम्पूर्ण रोग-समूह का नाश करती है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—गुग्गुलुक्वाथ या गूलर-स्वरस से। **वर्ण**—गैरिकाभ।

३७. रक्तपित्तकुलकण्डनरस (यो.रत्ना.)

शुद्धपारदवलिप्रवालकं
हेममाक्षिकभुजङ्गरङ्गकम् ।
मारितं सकलमेतदुत्तमं
भावयेदथ पृथग् द्रवैस्त्रिशः ॥६८॥
चन्दनस्य कमलस्य मालती-
कोरकस्य वृषपल्लवस्य च ।
धान्यवारणकणाशतावरी-
शाल्मलीवटजटाऽमृतस्य च ॥६९॥
रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो
जायते रसवरोऽस्त्रपित्तिनाम् ।
प्राणदो मधुवृषद्रवैरयं
सेवितस्तु युगकृष्णलैर्मितः ॥७०॥
नास्त्यनेन सममत्र भूतले
भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥७१॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. प्रवालभस्म ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ५. नागभस्म और ६. वङ्गभस्म लें। निम्नलिखित द्रव्यों के स्वरस से ३-३ भावना दें—१. श्वेतचन्दन, २. कमलपुष्प, ३. चमेलीपुष्पकली, वासापत्र-स्वरस, ५. धनियाँ, ६. गजपीपर, ७. शतावरी, ८. सेमलत्वक्, ९. वटांकुरस्वरस तथा १०. गुडूचीस्वरस—इन १० द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ की ३-३ भावना दें और सूखने पर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे 'रक्तपित्तकुलकण्डनरस' नाम से जाना जाता है। मुलेठी क्वाथ एवं वासापत्रस्वरस तथा मधु के साथ २ मरिच (१-१ रत्ती) की मात्रा में सेवन करने से भयंकर रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है। रक्तपित्त रोग के लिए इससे अच्छी अन्य कोई रसौषधि नहीं है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती)। **अनुपान**—मधु-मुलेठी क्वाथ और वासापत्रस्वरस से। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोगिता**—रक्तपित्त।

३८. समशर्करलौह (र.सा.सं.)

लौहाच्चतुर्गुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम् ।
चूर्णं पादन्तु वैडङ्गं दद्यान्मधुसिते समे ॥७२॥
ताम्रपात्रे शुभे पक्त्वा स्थापयेद् घृतभाजने ।
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥७३॥
अनुपानं प्रयुञ्जीत नारिकेलजलादिकम् ।
रक्तपित्तं जयेत्तीव्रमम्लपित्तं क्षतक्षयम् ।
पुष्टिदं कान्तिजननमायुष्यं वृष्यमुत्तमम् ॥७४॥

१. लोहभस्म ४० ग्राम, २. गोदुग्ध १६० मि.ली., ३. गोघृत ८० ग्राम, ४. विडङ्गचूर्ण ४० ग्राम, ५. मधु ४० ग्राम तथा ६. चीनी ४० ग्राम लें। एक ताम्रपात्र में रखकर मन्दाग्नि में पाक करें। जब दूध सूख जाय तो उतारकर शीत होने पर मधु मिलाकर औषधि को काचपात्र में सुरक्षित रख लें। ६ रत्ती की मात्रा में इस औषधि को नारियल के पानी से सेवन करने से रक्तपित्त, अम्लपित्त, उरःक्षत एवं क्षय रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह पुष्टिकारक, कान्तिप्रद, आयुष्य और उत्तम वृष्य है।

मात्रा—७५० मि.ग्रा. (६ रत्ती)। **अनुपान**—नारियल के पानी से। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—रक्तपित्त एवं अम्लपित्त में।

३९. शतमूल्यादिलौह (र.सा.सं.)

शतमूलीसिताधान्यनागकेशरचन्दनैः ।
त्रिकत्रयतिलैर्युक्तं लौहं सर्वगदापहम् ॥७५॥
तृष्णादाहज्वरच्छर्दिरक्तपित्तहरं परम् ॥७६॥

१. शतावर, २. चीनी, ३. धनिया, ४. नागकेशर, ५. श्वेत चन्दन, ६. शुण्ठी, ७. पिप्पली, ८. मरिच, ९. आमला, १०. हरीतकी, ११. बहेड़ा, १२. वायविडङ्ग, १३. नागरमोथा, १४. चित्रकमूल, १५. कालातिल तथा १६. लौहभस्म लें। त्रिकत्रय = त्रिफला-त्रिकटु-त्रिमद है। शतावर से कालातिल तक सभी १५ द्रव्य प्रत्येक का चूर्ण २५-२५ ग्राम लें और लौहभस्म सभी भस्मों के बराबर अर्थात् ३७५ ग्राम लें। सभी द्रव्यों को एक खरल में अच्छी तरह से मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह 'शतमूल्यादि लौह' अनुपान भेद से सभी रोगों को नष्ट करता है। विशेषकर रक्तपित्त, तृष्णा, दाह, ज्वर एवं वमन रोग की विशेष औषधि है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—नारियल जल एवं मधु से। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—रक्तपित्त, दाह एवं तृष्णा में।

४०. शर्कराद्यलौह (र.सा.सं.)

शर्करातिलसंयुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु चाम्लपित्तहरं परम् ॥७७॥

१. शर्करा, २. कालातिल, ३. आमला, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. शुण्ठी, ७. पिप्पली, ८. मरिच, ९. वायविडङ्ग, १०. नागरमोथा, ११. चित्रकमूल और १२. लौहभस्म—चीनी से चित्रकमूल तक के सभी ११ द्रव्य प्रत्येक २५-२५ ग्राम तथा लौहभस्म सभी द्रव्यों के बराबर अर्थात् २७५ ग्राम लें। सभी द्रव्यों को एक खरल में अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसे ४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की मात्रा में मधु तथा नारियल के जल से लेने पर रक्तपित्त और अम्लपित्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मधु एवं नारियल जल से। **वर्ण**—कत्थई। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—रक्तपित्त एवं अम्लपित्त में।

४१. आमलाद्यलौह (र.सा.सं.)

आमलापिप्पलीचूर्णं तुल्यया सितया सह।
रक्तपित्तहरं लौहं योगराजमिदं स्मृतम् ॥७८॥
वृष्याग्निदीपनं बल्यमम्लपित्तविनाशनम्।
पित्तोत्थानपि वातोत्थान्निहन्ति विविधान् गदान् ॥

१. आमलाचूर्ण २५ ग्राम, २. पिप्पलीचूर्ण २५ ग्राम, ३. शर्करा २५ ग्राम तथा ४. लौहभस्म ७५ ग्राम लें। एक खरल में सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर अच्छी तरह मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। रक्तपित्तनाशक यह 'आमलाद्यलौह' योगों का राजा है। यह वृष्य है, अग्निदीपक है, बल्य है तथा अम्लपित्तनाशक है। इसके अतिरिक्त पित्त एवं वात से उत्पन्न अनेक रोगों का भी नाश करता है।

मात्रा—४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मधु एवं नारियल जल से। **वर्ण**—कत्थई। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—अम्लपित्त एवं रक्तपित्त में।

४२. खण्डकाद्यलौह (चक्रदत्त)

शतावरी च्छिन्नरुहा वृषो मुण्डितिका बला।
तालमूली च गायत्री त्रिफलायस्त्वचस्तथा ॥८०॥
भार्गी पुष्करमूलञ्च पृथक् पञ्च पलानि च।
जलद्रोणे विपक्तव्यमष्टभागावशेषितम् ॥८१॥
दिव्यौषधिहतस्यापि माक्षिकेण हतस्य वा।
पलद्वादशकं देयं रुक्मलौहस्य चूर्णितम् ॥८२॥
खण्डतुल्यं घृतं देयं पलं षोडशिकं बुधैः।
पचेत्ताम्रमये पात्रे गुडपाको मतो यथा ॥८३॥
प्रस्थार्द्धं मधुनो देयं शुभाश्मजतुकं त्वचम्।
शृङ्गी विडङ्गं कृष्णा च शुण्ठी जातीफलं पलम् ॥८४॥
त्रिफला धान्यकं पत्रं द्व्यक्षं मरिचकेशरम्।
चूर्णं दत्त्वा सुमथितं स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥८५॥
यथाकालं प्रयुञ्जीत विडालपदकं ततः।
गव्यक्षीरानुपानञ्च सेव्यं मांसरसं पयः ॥८६॥
गुरुवृष्यान्नपानानि स्निग्धमांसादिबृंहणम्।
रक्तपित्तं क्षयं कासं पक्तिशूलं विशेषतः ॥८७॥
वातरक्तं प्रमेहञ्च शीतपित्तं वमिं क्लमम्।
श्वयथुं पाण्डुरोगञ्च कुष्ठप्लीहोदरन्तथा ॥८८॥
आनाहं रक्तमाश्वेवमम्लपित्तं निहन्ति च।
चक्षुष्यं बृंहणं वृष्यं माङ्गल्यं प्रीतिवर्द्धनम् ॥८९॥
आरोग्यपुत्रदं श्रेष्ठं कायाग्निबलवर्द्धनम्।
श्रीकरं लाघवकरं खण्डकाद्यं प्रकीर्त्तितम् ॥९०॥

१. शतावरी, २. गुडूची, ३. वासा, ४. मुण्डी, ५. बलामूल, ६. श्वेतमुशली, ७. खदिरकाष्ठ, ८. आमला, ९. हरीतकी, १०. बहेड़ा, ११. भारङ्गी और १२. पुष्करमूल—ये प्रत्येक द्रव्य २४०-२४० ग्राम लें। इन्हें यवकुट करें और १३ लीटर पानी में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें। दिव्यौषधि योग से या स्वर्णमाक्षिक योग से भस्म बनाया गया तीक्ष्ण लौहभस्म ५९० ग्राम लें। तीक्ष्ण लौहभस्म ५९० ग्राम, मिश्री ७५० ग्राम तथा गोघृत ७५० ग्राम। ताम्रपात्र में उपर्युक्त अष्टमांशावशेष क्वाथ में लौहभस्म, मिश्री एवं गोघृत मिलाकर पाक करें। जब गाढ़ा हो जाय तो मधु ३७५ ग्राम मिलावें और प्रक्षेप रूप में निम्नलिखित द्रव्यों के चूर्ण डालकर अच्छी तरह मिला लें—१. वंशलोचनचूर्ण, २. शुद्ध शिलाजीत, ३. दालचीनीचूर्ण, ४. काकडासिंगीचूर्ण, ५. वायविडङ्गचूर्ण, ६. पिप्पलीचूर्ण, ७. शुण्ठीचूर्ण तथा ८. जायफलचूर्ण—प्रत्येक १२-१२ ग्राम और ९. आमलाचूर्ण, १०. हरीतकीचूर्ण, ११. बहेड़ाचूर्ण, १२. तेजपत्ताचूर्ण, १३. मरिचचूर्ण एवं १४. नागकेशरचूर्ण—प्रत्येक २५-२५ ग्राम लेकर उस लेह में मिला दें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस 'खण्डकाद्यलौह' को १ तोले की मात्रा में गोदुग्ध के साथ सेवन करें। भूख लगने पर मांस- रस, दुग्ध, गुरु एवं वृष्य अन्न-पान, स्निग्ध, मांसादि बृंहण पदार्थों का भोजन करना चाहिए।

यह रक्तपित्त, क्षय, कास, परिणामशूल, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन, क्लम, शोथ, पाण्डुरोग, कुष्ठ, प्लीहोदर, आनाह, रक्तस्राव तथा अम्लपित्त रोगों का नाश करता है। यह चक्षुष्य, बृंहण, वृष्य, मांगल्य, प्रीतिवर्धन, आरोग्यप्रद, पुत्रप्रद,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शरीर- पाचकाग्नि एवं बलवर्धक है। शरीर की शोभा बढ़ाने वाला, शरीर के लिए हलका (लाघवकर) है।

खण्डकाद्य लोह का पथ्य

छागं पारावतं मांसं तित्तिरिः क्रकरः शशः।
कुरङ्गः कृष्णसाराश्च तेषां मांसानि योजयेत् ॥९१॥
नारिकेलपयःपानं सुनिषण्णकवास्तुकम्।
शुष्कमूलकजीराख्यं पटोलं बृहतीफलम् ॥९२॥
फलं वार्त्ताकु पक्वाम्रं खर्जूरं स्वादुदाडिमम्।
ककारपूर्वकं यच्च मांसं चानूपसम्भवम् ॥९३॥
वर्जनीयं विशेषेण खण्डकाद्यं प्रकुर्वता।
लोहान्तरवदत्रापि पुटनादिक्रियेष्यते ॥९४॥

बकरे का मांस, कबूतर, तीतर, केकड़ा, खरगोश, हरिण तथा कृष्णमृग—इनका मांस खायें। नारिकेलजल, चाङ्गेरीशाक, बथुआ शाक, सूखी मूली, जीरा, परवल, बृहतीफल, बैंगन, पका आम, खजूर और मीठा अनार का सेवन करना चाहिए। ककारादि वर्ग एवं आनूप मांस का सेवन इस योग के सेवन काल में नहीं करना चाहिए। अन्य लोहों की तरह इसमें भी पुटनादि क्रिया करना उचित है।

४३. कूष्माण्डखण्ड (चक्रदत्त)

कूष्माण्डकात्पलशतं सुस्विन्नं निष्कुलीकृतम्।
पचेत्तप्ते घृतप्रस्थे शनैस्ताम्रमये दृढे ॥९५॥
यदा मधुनिभः पाकस्तदा खण्डशतं न्यसेत्।
पिप्पलीशृङ्गवेराभ्यां द्वे पले जीरकस्य च ॥९६॥
त्वगेलापत्रमरिचधान्यकानां पलार्द्धकम्।
न्यसेच्चूर्णीकृतं तत्तु दर्व्या सङ्घट्टयेत्पुनः ॥९७॥
तत्पक्वं स्थापयेद्भाण्डे दत्त्वा क्षौद्रं घृतार्द्धकम्।
तद्यथाग्निबलं खादेद्रक्तपित्ती क्षतक्षयी ॥९८॥
कासश्वासतमश्छर्दितृष्णाज्वरनिपीडितः।
वृष्यं पुनर्नवकरं बलवर्णप्रसादनम् ॥९९॥
उरःसन्धानकरणं बृंहणं स्वरशोधनम्।
अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं कूष्माण्डकरसायनम् ॥१००॥
खण्डामलकमानानुसारात् कूष्माण्डकद्रवात्।
पात्रं पाकाय दातव्यं यावान्वाऽत्र रसो भवेत्।
अत्रापि मुद्रया पाको निस्त्वचं निष्कुलीकृतम् ॥१०१॥

१. पेठा (सफेद कूष्माण्ड) ५ किलो, २. गोघृत ७५० ग्राम, ३. मिश्री ५ किलो, ४. पिप्पली १०० ग्राम, ५. आर्द्रक १०० ग्राम, ६. जीरा १०० ग्राम, ७. दालचीनी २५ ग्राम, ८. छोटी इलायची २५ ग्राम, ९. तेजपत्ता २५ ग्राम, १०. मरिच २५ ग्राम, ११. धनिया २५ ग्राम तथा १२. मधु ३७५ ग्राम लें। छिलका एवं बीज रहित पेठा ५ किलो लें। इसे हलका उबाल दें। पुनः इसे घिसकर हाथ से दबाकर पानी निचोड़ लें। पुनः महीन साफ कपड़े में बाँधकर रात्रिपर्यन्त तक लटका दें। प्रातः उस पोटली को हाथ से दबाकर शेष जल भी निकाल दें। पेठे से निकाले स्वरस को पृथक् एक पात्र में रख लें। इसके बाद स्टेनलेस स्टील के पात्र में गोघृत डालकर पेठे के टुकड़ों को मन्दाग्नि से पाक करें। जब मधु वर्ण का हो जाय तो पृथक् पात्र में पेठे के रस एवं मिश्री देकर दूसरे पात्र में चासनी करें। चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर उसमें भूना पेठा मिलावें तथा दालचीनी से धनिया तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर प्रक्षेप रूप में छिड़ककर मिला दें। ठण्डा होने पर घी के आधा मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

अग्नि एवं बलानुसार ५ से १० ग्राम की मात्रा में इसका प्रयोग करने से रक्तपित्त, उरःक्षत, क्षय, कास, श्वास, वमन, तृष्णा तथा ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह वृष्य है, शरीर को नया बनाने वाला है। शरीर के बल-वर्ण को बढ़ाता है। उरःक्षत को ठीक करता है, बृंहण है, स्वरशोधक है। अश्विनीकुमारों द्वारा निर्मित यह 'कूष्माण्डखण्ड' रसायन गुण वाला है।

४४. वासाकूष्माण्डखण्ड (चक्रदत्त)

पञ्चाशच्च पलं स्विन्नकूष्माण्डात्प्रस्थमाज्यतः।
ग्राह्यं पलशतं खण्डं वासाक्वाथाढके पचेत् ॥१०२॥
मुस्ता धात्री शुभा भार्गी त्रिसुगन्धैश्च कार्षिकैः।
ऐलेयविश्वधन्याकमरिचैश्च पलांशिकैः ॥१०३॥
पिप्पलीकुडवश्चैव मधुमाणिकां दापयेत्।
एतच्चूर्णीकृतं तत्र दर्व्या सङ्घट्टयेत् पुनः ॥१०४॥
तद् यथाग्निबलं खादेद् रक्तपित्ती क्षतक्षयी।
वृष्यं पुनर्नवकरं बलवर्णकरं च यत् ॥१०५॥
कासं श्वासं तथा हिक्कां रक्तपित्तं हलीमकम्।
हृद्रोगमम्लपित्तञ्च पीनसञ्च व्यपोहति ॥१०६॥

१. छिला हुआ पेठा २.५०० ग्राम, २. घी ७५० ग्राम, ३. मिश्री (या चीनी) ५ किलो, ४. वासा क्वाथ ३ लीटर, ५. नागरमोथा, ६. आमला, ७. वंशलोचन, ८. भारंगी, ९. तेजपत्ता, १०. दालचीनी, ११. छोटी इलायची, १२. एलुआ, १३. शुण्ठी, १४. धनिया, १५. मरिच, १६. पिप्पली १९० ग्राम तथा १७. मधु ३७५ ग्राम लें। नागरमोथा से छोटी इलायची तक के सभी द्रव्य १-१ कर्ष (१२-१२ ग्राम) लें तथा एलुआ से मरिच तक के सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम (१-१ पल) लें। सर्वप्रथम छिले हुए कूष्माण्ड को कद्दूकस पर घिसकर छोटे-छोटे टुकड़े कर लें, तत्पश्चात् वासा क्वाथ में उबाल लें। उबले कूष्माण्डखण्ड को हाथ से दबाकर उसका पानी निचोड़ लें। तत्पश्चात् उसे कपड़े में बाँधकर टाँग दें। १-२ घण्टे बाद उसे

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उक्त घृत में मधु सदृश भून लें। इसके बाद वासा क्वाथ में चीनी या मिश्री मिलाकर चासनी करें। कड़ी चासनी (मोदक की चासनी) होने पर उसी में घृतभर्जित कूष्माण्ड मिला दें और कड़ाही को चूल्हे से नीचे उतारकर नागरमोथा से पिप्पली तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण का प्रक्षेपण कर अच्छी तरह मिला लें और ठण्डा होने पर मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

इस 'वासाकूष्माण्डखण्ड' का रोगी के अग्निबलानुसार सेवन करने पर रक्तपित्त, उरःक्षत, क्षय, कास, श्वास, हिक्का, हृद्रोग, अम्लपित्त, हलीमक और पीनस रोगों को नाश करता है। यह वृष्य है, पुनर्युवा कर देता है तथा बल-वर्ण को बढ़ाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध, बकरी दूध या जल से। **वर्ण**—कत्थई वर्ण का। **स्वाद**—मधुर-तिक्त। **उपयोगिता**—रक्तपित्त, उरःक्षत, कास, श्वास एवं अम्लपित्त में।

४५. वासाखण्ड (चक्रदत्त)

तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले।
तेन पादावशेषेण पाचयेदाढकं भिषक् ॥१०७॥
चूर्णानामभयानाञ्च खण्डाच्छुद्धशतं न्यसेत्।
द्विपलं पिप्पलीचूर्णात् सिद्धशीते च माक्षिकात् ॥१०८॥
कुडवं पलमात्रन्तु चातुर्जातं सुचूर्णितम्।
क्षिप्त्वा विलोडितं खादेद्रक्तपित्ती क्षतक्षयी।
कासश्वासपरीतश्च यक्ष्मणा च प्रपीडितः ॥१०९॥

१. वासापञ्चाङ्ग ५ किलो, जल ४० लीटर (आठ गुना), २. मिश्री या चीनी ५ किलो, ३. हरीतकीफलत्वक्चूर्ण ३ कि.ग्रा., ४. पिप्पलीचूर्ण १०० ग्राम; ५. मधु १९० ग्राम, ६. तेजपत्ता, ७. छोटी इलायची, ८. दालचीनी तथा ९. नागकेशर (चातुर्जातक) —ये चारों द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। वासापञ्चाङ्ग को यवकुट कर आठ गुना पानी के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। अब उस क्वाथ में ५ किलो मिश्री देकर चासनी करें। जब मोदक की चासनी करीब तैयार हो जाय तो उसमें ३ किलो हरीतकीचूर्ण अच्छी तरह से मिला दें। तदनन्तर पिप्पली एवं चातुर्जातक चूर्णों का प्रक्षेप देकर अच्छी तरह मिला दें। शीतल होने पर मधु भी अच्छी तरह से मिला दें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'वासाखण्ड' के सेवन से रक्तपित्त, उरःक्षत, क्षय, श्वास, कास तथा यक्ष्मा रोग से मुक्ति मिल जाती है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गोदूध, बकरी दूध या जल से। **वर्ण**—मधु वर्ण। **स्वाद**—मधुर-तिक्त। **उपयोगिता**—रक्तपित्त, उरःक्षत, राजयक्ष्मा आदि में।

४६. कूष्माण्डावलेह बृहत् (भावप्रकाश)

पुराणं पीनमानीय कूष्माण्डस्य फलं दृढम्।
तद्बीजाधारबीजत्वक्शिराशून्यं समाचरेत् ॥११०॥
ततोऽतिसूक्ष्मखण्डानि कृत्वा तस्य तुलां पचेत्।
गोदुग्धस्य तुलामध्ये मन्देऽग्नौ वा पचेच्छनैः ॥१११॥
शर्करायास्तुलां सार्द्धां गोघृतं प्रस्थमात्रकम्।
प्रस्थार्द्धं माक्षिकं चापि कुडवं नारिकेलतः ॥११२॥
प्रियालफलमज्जानं द्विपलं तिखुरीपलम्।
क्षिपेदेकत्र विपचेल्लेहवत् साधु साधयेत् ॥११३॥
भिषक् सुपक्वमालोक्य ज्वलनादवतारयेत्।
कोष्णे तत्र क्षिपेदेषां चूर्णं तानि वदाम्यहम् ॥११४॥
एकोऽक्षः शतपुष्पाया अथ क्षीरा यमानिका।
गोक्षुरः क्षुरकः पथ्या कपिकच्छूफलानि च ॥११५॥
सप्तमी त्वक् च सर्वेषामक्षयुग्मं पृथक् पृथक्।
धन्याकं पिप्पली मुस्तमश्वगन्धा शतावरी ॥११६॥
तालमूली नागबला बालकं पत्रकं शटी।
जातीफलं लवङ्गं च सूक्ष्मैला बृहदेलिका ॥११७॥
शृङ्गाटकं पर्पटं सर्वं पलमितं पृथक्।
चन्दनं नागरं धात्रीफलं चापि कशेरुकम् ॥११८॥
प्रत्येकं पञ्चकर्षाणि चत्वार्येतानि निक्षिपेत्।
पलद्वयमुशीरस्य मसनस्योषणस्य च ॥११९॥
कूष्माण्डस्यावलेहोऽयं भक्षितः पलमात्रया।
किंवा यथावह्निबलं भुक्त्वा रोगं विनाशयेत् ॥१२०॥
रक्तपित्तं शीतपित्तमम्लपित्तमरोचकम्।
वह्निमान्द्यं सदाहं च तृष्णां प्रदरमेव च ॥१२१॥
रक्तार्शोऽपि तथा च्छर्दिं पाण्डुरोगं च कामलाम्।
उपदंशं विसर्पञ्च जीर्णं च विषमज्वरम् ॥१२२॥
लेहोऽयं परमो वृष्यो बृंहणो बलवर्द्धनः।
स्थापनीयः प्रयत्नेन भाजने मृन्मये नवे ॥१२३॥

१. छिला हुआ एवं निर्बीज कूष्माण्ड ५ कि., २. गोदुग्ध ५ लीटर, ३. चीनी ७.५०० ग्राम, ४. गाय का घी ७५० ग्राम, ५. मधु ३७५ ग्राम, ६. नारियलगिरी १९० ग्राम, ७. चिरौंजी १०० ग्राम और ८. तिखुर १०० ग्राम लें तथा १०. सौंफ १२ ग्राम, ११. वंशलोचन, १२. अजवायन, १३. गोक्षुर, १४. तालमखाना, १५. हरीतकी, १६. केवाँचबीज और १७. दालचीनी—ये सभी ७ द्रव्य प्रत्येक २३-२३ ग्राम (२-२ तोले) लें; १८. धनियाँ, १९. पिप्पली, २०. नागरमोथा, २१. असगन्ध, २२. शतावर, २३. सफेद मुशली, २४. नागबला, २५. सुगन्धबाला, २६. तेजपत्ता, २७. कचूर, २८. जायफल, २९. लौंग, ३०. छोटी इलायची, ३१. बड़ी इलायची, ३२. सिंघाड़ाफल तथा ३३. पित्तपापड़ा—ये १६ द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम (४-४ तोले) लें तथा ३४. सफेद चन्दन, ३५. शुण्ठी, ३६. आमला एवं ३७. कसेरू—ये चार द्रव्य प्रत्येक ६०-६० ग्राम (५-५ तोले) लें; ३८. खस १०० ग्राम, ३९.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बाकुची १०० ग्राम और ४०. मरिच १०० ग्राम लें। बड़े एवं सुपक्व कूष्माण्ड (पेठा) लेकर उसके छिलके, बीज एवं बीजों के रहने का स्थान भी निकाल दें। अब कूष्माण्ड को कद्दूकस पर घिसकर छोटे-छोटे टुकड़े कर लें। ऐसे ५ किलो टुकड़ों को ५ लीटर दूध में पकावें, जब दूध गाढ़ा होने लगे तो उसमें चीनी, घी, नारियल की गिरी, चिरौंजी एवं तिखुर मिलाकर पकावें। जब अवलेह जैसा सुपक्व हो जाय तब चूल्हे से नीचे पात्र को उतारकर उपर्युक्त सौंफ से मरिच तक की सभी ३१ औषधियाँ यथानिर्दिष्ट मात्रा में लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर प्रक्षेप रूप में छिड़के और अच्छी तरह मिला दें। ठण्डा होने पर मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस कूष्माण्डावलेह को अग्नि एवं बल के अनुसार ४ तोले तक खिलावें। इसके सेवन से रक्तपित्त, शीतपित्त, अम्लपित्त, अरुचि, अग्निमान्द्य, दाह, तृष्णा, प्रदर, रक्तार्श, वमन, पाण्डु, कामला, उपदंश, विसर्प, जीर्णज्वर तथा विषमज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह लेह परमवृष्य, बृंहण एवं बलवर्धक है। इस अवलेह को नवीन मिट्टी के पात्र में रखना चाहिए। आजकल काचपात्र में रखें।

मात्रा—१२ से ५० ग्राम तक (१-४ तोले तक)। **अनुपान**—गोदुग्ध, बकरीदूध या जल से। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—रक्तपित्त, अम्लपित्त, तृष्णा एवं दाह में।

४७. वासाघृत (चरक)

वासां सशाखां सपलाशमूलां
कृत्वा कषायं कुसुमानि चास्याः।
प्रदाय कल्कं विपचेद् घृतञ्च
क्षौद्रेण पानाद्विनिहन्ति रक्तम् ॥१२४॥

हरा ताजा वासापञ्चाङ्ग १.२५० ग्राम एवं गोघृत १ किलो लें। वासापञ्चाङ्ग को कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर २५० ग्राम पृथक् कर ले। शेष १ किलो यवकुट को अष्टगुण जल में भिगा दें तथा प्रातःकाल क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें। घृत को मूर्च्छन विधि से मूर्च्छित कर लें। मूर्च्छनविधि ज्वरप्रकरण में देखें। तदनन्तर मूर्च्छित घृत को मन्दाग्नि से गरमकर उस घृत में क्वाथ मिलावें। इसके बाद वासापञ्चाङ्ग चूर्ण को जल के साथ पिसकर कल्क बना लें। इस कल्क को भी उसी घृत में मिलाकर पाक करें। सभी द्रवांश के जल जाने पर परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर घृत को छान लें। अवशिष्ट कल्क में पुनः जल देकर उबालें और उसके ऊपरी सतह पर तैरते घृत को वस्त्रादि की सहायता से पृथक् कर लें। पुनः उसे जल रहित जानकर एक साथ काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस घृत को पीने से रक्तपित्त नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम तक ($\frac{१}{२}$ तोला से १ तोला तक)। **अनुपान**—१० से १५ ग्राम मधु मिलाकर गाय एवं बकरी के दूध के साथ। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोगिता**—रक्तपित्त में।

४८. दूर्वाद्य घृत (गदनिग्रह)

दूर्वा सोत्पलकिञ्जल्का मञ्जिष्ठा सैलवालुका।
सिता शीतमुशीरञ्च मुस्तं चन्दनपद्मके ॥१२५॥
विपचेत् कार्षिकैरेतैः सर्पिराजं सुखाग्निना।
तण्डुलाम्बु त्वजाक्षीरं दत्त्वा चैव चतुर्गुणम् ॥१२६॥
तत्पानं वमतो रक्तं नावनं नासिकागते।
कर्णाभ्यां यस्य गच्छेत्तु तस्य कर्णौ प्रपूरयेत् ॥१२७॥
चक्षुःस्राविणि रक्ते च पूरयेत्तेन चक्षुषी।
मेढ्रपायुप्रवृत्ते तु बस्तिकर्मसु तद्धितम् ॥१२८॥
रोमकूपप्रवृत्ते तु तदभ्यङ्गः प्रशस्यते ॥१२९॥

१. गोघृत १ किलो, २. दूर्वा (दूभ), ३. कमलकेशर, ४. मंजीठ, ५. एलबालुक, ६. चीनी, ७. श्वेतचन्दन, ८. खस, ९. नागरमोथा, १०. रक्तचन्दन तथा ११. पद्मकाष्ठ—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम; ११. तण्डुलाम्बु एवं १२. बकरी का दूध ४-४ लीटर लें। गोघृत को मूर्च्छन विधि से मूर्च्छित कर उस घृत को स्टेनलेस स्टील में रखकर मन्दाग्नि पर गरम करें। पुनः दूर्वा से पद्मकाष्ठ तक के सभी १० द्रव्यों को यथामात्रा में कूट-पीसकर कल्क बनाकर उसी घृत में मिला दें तथा रक्तशालि चावल १ किलो को कूटकर चतुर्गुण जल में रात्रिपर्यन्त भिगो दें। प्रातः हाथ से मसलकर छान लें और उक्त घृत में देकर पाक करें। इसी प्रकार बकरी का दूध ४ लीटर देकर पाक करें। जल के सूखने तथा आसन्न पाक समझकर परीक्षोपरान्त चूल्हे से घृत को उतारकर ठण्डा होने पर छान लें।

इसका १ तोला की मात्रा में पान करने से रक्तपित्ती का रक्तवमन होना रुक जाता है। नासारक्तस्राव में इस घृत का नावन, कर्णरक्तस्राव में कर्णपूरण, चक्षुरक्तस्राव में नेत्रपूरण करने से सद्यः लाभ होता है। शिश्न एवं गुदा से रक्तस्राव होने पर इस घृत की उत्तरबस्ति देने तथा सम्पूर्ण शरीर के रोमकूपों से रक्तस्राव होने पर सर्वाङ्ग में इस घृत के अभ्यङ्ग से सद्यः लाभ होता है। अर्थात् रोग शान्त हो जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम ($\frac{१}{२}$ से १ तोला तक)। **अनुपान**—बकरीदूध या गोदुग्ध से। **वर्ण**—पीत हरिद् वर्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोगिता**—सभी प्रकार के रक्तपित्त में।

४९. सप्तप्रस्थघृत (चक्रदत्त)

शतावरीपयोद्राक्षाविदारीक्ष्वामलै रसैः।
सर्पिषा सह संयुक्तैः सप्तप्रस्थं पचेद् घृतम् ॥१३०॥
शर्करापादसंयुक्तं रक्तपित्तहरं पिबेत्।
उरःक्षते पित्तशूले चोष्णवातेऽप्यसृग्दरे।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बल्यमोजस्करं वृष्यं क्षयहृद्रोगनाशनम् ॥१३१॥

१. शतावरीरस, २. सुगन्धबाला क्वाथ, ३. द्राक्षारस, ४. विदारीकन्दरस, ५. इक्षुरस, ६. आमलास्वरस तथा ७. गोघृत —प्रत्येक द्रव्य १-१ प्रस्थ (७५०-७५० ग्राम) लें। सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन कर लें और क्रमशः शतावरी स्वरस या क्वाथ तथा सुगन्धबाला क्वाथादि का रस देकर पाक करें। ६ स्वरसों या क्वाथों का पाक हो जाने के बाद घृत की जल रहित परीक्षा कर घृत पात्र को चूल्हे से उतारें और ठण्डा होने पर छानकर सुरक्षित काचपात्र में संग्रहीत करें। इस घृत को १ तोला (१२ ग्राम) की मात्रा में $\frac{१}{२}$ तोला चीनी मिलाकर पान करने से रक्तपित्त नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह उरःक्षत, पैत्तिक शूल, उष्णवात[१], रक्तप्रदर, क्षय एवं हृद्रोगों को भी नष्ट करता है। यह बल्य है, वृष्य है, ओजस्कर है।

मात्रा—५ से १० ग्राम ($\frac{१}{२}$ से १ तोला तक)। **अनुपान**—गाय एवं बकरी के दूध से। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोगिता**—रक्तपित्तादि रोग में।

५०. शतावरीघृत (चक्रदत्त)

शतावर्यास्तु मूलानां रसप्रस्थद्वयं मतम्।
तत्समं च भवेत् क्षीरं घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥१३२॥
जीवकर्षभकौ मेदा महाभेदा तथैव च।
काकोली क्षीरकाकोली मृद्वीका मधुकं तथा ॥१३३॥
मुद्गपर्णी माषपर्णी विदारी रक्तचन्दनम्।
शर्करामधुसंयुक्तं सिद्धं विस्रावयेद्भिषक् ॥१३४॥
रक्तपित्तविकारेषु वातरक्तगदेषु च।
क्षीणशुक्रेषु दातव्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥१३५॥
अङ्गदाहं शिरोदाहं ज्वरं पित्तसमुद्भवम्।
योनिशूलं च दाहं च मूत्रकृच्छ्रं च पैत्तिकम् ॥१३६॥
एतान् रोगान् निहन्त्याशु छिन्नाभ्राणीव मारुतः।
शतावरीसर्पिरिदं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥१३७॥
स्नेहपादः स्मृतः कल्कः कल्कवन्मधुशर्करे।
इति वाक्यबलात् स्नेहे प्रक्षेप्यं पादिकं भवेत् ॥१३८॥

१. शतावर १.५०० ग्राम, २. गोदूध १.५०० लीटर, ३. गोघृत ७५० ग्राम, ४. जीवक, ५. ऋषभक, ६. मेदा, ७. महामेदा, ८. काकोली, ९. क्षीरकाकोली, १०. मुनक्का, ११. मुलेठी, १२. मुद्गपर्णी, १३. माषपर्णी, १४. विदारीकन्द, १५. लालचन्दन—ये प्रत्येक द्रव्य १५-१५ ग्राम तथा १६. शर्करा एवं १७. मधु १८७-१८७ ग्राम लेकर कूट-पीसकर कल्क जैसा सिल पर पीस लें। घृत को मूर्च्छित कर एक पात्र में मूर्च्छित घृत डालकर चूल्हे पर रखें। उसमें शतावरी स्वरस/क्वाथ देकर मन्दाग्नि से पकावें। उसी समय उपर्युक्त कल्क भी मिला दें, क्वाथ सूखने पर दूध मिलाकर पकावें, ततः दूध का सम्यक् पाकार्थ ३ ली. जल देकर करें। परीक्षोपरान्त पक्व समझकर घृत उतारकर छान लें और शर्करा एवं मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस शतावरी घृत को १ तोले की मात्रा में प्रयुक्त करने से रक्तपित्त, वातरक्त, अङ्गदाह, शिरोदाह, ज्वर, योनिशूल, दाह, पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र रोग जिस तरह मेघ वायुवेग से छिन्न हो जाता है उसी तरह उपर्युक्त रोग नाशक है। क्षीण शुक्र वाले व्यक्ति को यह घृत खिलाने से परम वाजीकरण होता है। यह घृत बल, वर्ण एवं अग्नि को प्रदीप्त करता है। घृत का चौथाई कल्क तथा कल्क के समान मधु एवं शर्करा देने का नियम है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम ($\frac{१}{२}$ से १ तोला तक)। **अनुपान**—बकरी या गाय के दूध से। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोगिता**—रक्तपित्त एवं पित्तज रोगों में।

५१. शतावरीघृत (बृहत्) (चरक)

शतावरीमूलतुलाश्चतस्रः सम्प्रपीडयेत्।
रसेन क्षीरतुल्येन पचेत्तेन घृताढकम् ॥१३९॥
जीवनीयैः शतावर्या मृद्वीकाभिः परूषकैः।
पियालैश्चाक्षकैः पिष्टैर्द्वियष्टिमधुकैः पचेत् ॥१४०॥
सिद्धे शीते च मधुनः पिप्पल्याश्च पलाष्टकम्।
दत्त्वा दशपलञ्चात्र सितायास्तद्विमिश्रितम् ॥१४१॥
ब्राह्मणान् प्राशयेत्पूर्वं लिह्यात्पाणितलं ततः।
योन्यसृक्शुक्रदोषघ्नं वृष्यं पुंसवनं च तत् ॥१४२॥
क्षतक्षयं रक्तपित्तं कासं श्वासं हलीमकम्।
कामलां वातरक्तं च विसर्पं हृच्छिरोग्रहम् ॥१४३॥
उन्मादायामसंन्यासं वातपित्तात्मकं जयेत् ॥१४४॥

१. शतावर २० किलो, २. गोदूध २० लीटर, ३. गोघृत ३ किलो, ४. जीवक, ५. ऋषभक, ६. मेदा, ७. महामेदा, ८. काकोली, ९. क्षीरकाकोली, १०. ऋद्धि, ११. वृद्धि, १२. जीवन्ती, १३. मुद्गपर्णी, १४. माषपर्णी, १५. मुलेठी, १६. शतावर, १७. मुनक्का, १८. फालसाफल तथा १९. चिरौंजी, २०. मधु ४०० ग्राम, २१. पिप्पली ४०० ग्राम और २२. चीनी ५०० ग्राम लें। जीवक से चिरौंजी तक के १५ द्रव्य (मुलेठी को छोड़कर) १२-१२ ग्राम लें तथा मुलेठी २५ ग्राम लें। इन सभी को कूट-पीसकर कल्क बना लें। मधु-पिप्पली-चीनी रख छोड़ें। सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छित करें और बड़े पात्र में शतावर को यवकुट कर चौगुना जल देकर क्वाथ करें,

---

१. उष्णवातलक्षण—
व्यायामाध्वातपैः पित्तं बस्तिं प्राप्यानिलान्वितम्।
बस्तिं मेढ्रं गुदं चैव प्रदहेत् स्रावयेदधः ॥
मूत्रं हारिद्रमथवा सरक्तं रक्तमेव वा।
कृच्छ्रात् पुनः पुनर्जन्तोरुष्णवातं ब्रुवन्ति तम् ॥ (सु.उ. ५८)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें। इस क्वाथ को उसी घृत में मिलाकर पाक करें और कल्क भी इसी समय मिला दें। क्वाथ सूखने पर २० लीटर गोदुग्ध मिलाकर पाक करें। दूध सूखने पर ३ लीटर जल मिलाकर पकावें। परीक्षोपरान्त पक्व समझकर पात्र उतारकर शीतल होने पर छान लें। इसके बाद उसमें ३५० ग्राम पिप्पली का सूक्ष्म चूर्ण मिलावें, ततः मधु एवं घृत बारी-बारी से डालकर अच्छी तरह से मिला लें। मधु मिलाने के बाद घृत भी मिलावें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। सर्वप्रथम ब्राह्मणों को इस घृत को १ तोला पिलावें। ततः $\frac{१}{२}$ से १ तोला की मात्रा में पीने से रक्तपित्त, रक्तप्रदर, शुक्रदोष, क्षय, उरःक्षत, कास, श्वास, हलीमक, कामला, वातरक्त, विसर्प, हृद्रोग, शिरोग्रह, उन्माद, बहिरायाम एवं वात-पित्तात्मक संन्यास रोग नष्ट हो जाते हैं। यह वृष्य एवं बृंहण है तथा पुंसवनोपयोगी है।

मात्रा—५ से १० ग्राम ($\frac{१}{२}$ से १ तोला तक)। **अनुपान**—बकरी या गोदुग्ध से। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोगिता**—रक्तपित्त, रक्तप्रदर आदि रोगों में।

५२. कामदेवघृत (चक्रदत्त)

अश्वगन्धा पलशतं तदर्धं गोक्षुरस्य च।
शतावरी विदारी च शालपर्णी बला तथा ॥१४५॥
अश्वत्थस्य च शुङ्गानि पद्मबीजं पुनर्नवा।
काश्मरीफलमेतं तु माषबीजं तथैव च ॥१४६॥
पृथग् दशपलान् भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत्।
चतुर्भागावशेषन्तु कषायमवतारयेत् ॥१४७॥
मृद्वीका पद्मकं कुष्ठं पिप्पली रक्तचन्दनम्।
बालकं नागपुष्पञ्च आत्मगुप्ताफलं तथा ॥१४८॥
नीलोत्पलं शारिवे द्वे जीवनीयं विशेषतः।
पृथक् कर्षसमं चैव शर्करायाः पलद्वयम् ॥१४९॥
रसस्य पौण्ड्रकेक्षूणामाढकं तत्र दापयेत्।
चतुर्गुणेन पयसा घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥१५०॥
रक्तपित्तं क्षतक्षीणं कामलां वातशोणितम्।
हलीमकं तथा शोथं स्वरभेदं बलक्षयम् ॥१५१॥
अरोचकं मूत्रकृच्छ्रं पार्श्वशूलं च नाशयेत्।
एतद्राज्ञां प्रयोक्तव्यं बह्वन्तःपुरचारिणाम् ॥१५२॥
स्त्रीणाञ्चैवानपत्यानां दुर्बलानां च देहिनाम्।
क्लीबानामल्पशुक्राणां जीर्णानामल्परेतसाम् ॥१५३॥
श्रेष्ठं बलकरं हृद्यं वृष्यं पेयं रसायनम्।
ओजस्तेजस्करं चैव आयुःप्राणविवर्द्धनम् ॥१५४॥
संवर्द्धयति शुक्रं च पुरुषं दुर्बलेन्द्रियम्।
सर्वरोगविनिर्मुक्तस्तोयसिक्तो तथा द्रुमः।
कामदेव इति ख्यातः सर्वर्त्तुषु च शस्यते ॥१५५॥

क्वाथ-द्रव्य—१. अश्वगन्ध ५ कि.ग्रा. एवं २. गोक्षुर २.५०० कि.ग्रा. तथा ३. शतावर, ४. विदारीकन्द, ५. शालपर्णी, ६. बलामूल, ७. पिप्पली का पत्रशृंग, ८. कमलगट्टा, ९. पुनर्नवा, १०. गम्भारी फल तथा ११. उड़द—ये प्रत्येक द्रव्य ४७०-४७० ग्राम लेकर यवकुट कर ५१ लीटर जल में सम्मिलित क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें।

कल्क-द्रव्य—१. मुनक्का, २. पद्मकाठ, ३. कूठ, ४. पिप्पली, ५. रक्तचन्दन, ६. सुगन्धबाला, ७. नागकेशर, ८. केवाँचबीज, ९. नीलकमल, १०. श्वेत अनन्तमूल, ११. कृष्ण अनन्तमूल, १२. मेदा, १३. महामेदा, १४. काकोली, १५. क्षीरकाकोली, १६. जीवक, १७. ऋषभक, १८. ऋद्धि, १९. वृद्धि, २०. मुलेठी, २१. माषपर्णी, २२. मुद्गपर्णी तथा २३. जीवन्ती—इन २३ द्रव्यों को प्रत्येक १२-१२ ग्राम लेकर कूट-कर सिल पर पीस लें और कल्क बना लें। चीनी ९० ग्राम, गोघृत ७५० ग्राम, ईख (पौण्ड्रक) स्वरस ३ लीटर तथा गोदुग्ध ३ लीटर लें। सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छित कर लें, बड़े पात्र में रखकर अश्वगन्धादि क्वाथ तथा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। द्रवांश सूखने पर क्रमशः इक्षु स्वरस तथा दूध देकर पकावें। परीक्षोपरान्त पक्व समझकर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत कर लें। यह 'कामदेवघृत' के नाम से विख्यात घृत सभी ऋतुओं में सेवन योग्य है। यह $\frac{१}{२}$ से १ तोला की मात्रा में सेवन करने से रक्तपित्त, उरःक्षत, कृशता, कामला, वातरक्त, हलीमक, शोथ, बलक्षय, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र तथा पार्श्वशूल रोगों का नाश करता है। यह घृत बहुत-सी स्त्रियों वाले राजाओं, वन्ध्या स्त्रियों, दुर्बल व्यक्तियों, क्लीबों, अल्प शुक्र वाले व्यक्तियों, जीर्ण-शीर्ण एवं कमजोर वृद्धों के लिए श्रेष्ठ बलकारक है; हृद्य है, वृष्य है, रसायन है, ओजस्कर, तेजोवृद्धिकर, आयु एवं प्राण वर्धक है, वाजीकरण है, दुर्बलेन्द्रिय वाले पुरुष का वीर्य बढ़ाता है। जैसे जल से सींचने से वृक्ष वृद्धि को प्राप्त होता है उसी तरह सभी रोगों को यह घृत नष्ट करता है।

मात्रा—$\frac{१}{२}$ से १ तोला तक (५ से १० ग्राम)। **अनुपान**—बकरी या गाय के दूध से। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोगिता**—रक्तपित्त, पाण्डु, कामला, शुक्रल, रसायन, प्रजोत्पादक आदि।

५३. ह्रीबेराद्य तैल

ह्रीबेरं नलदं लोध्रं पद्मकेशरपत्रकम्।
नागपुष्पञ्च बिल्वञ्च भद्रमुस्ता तथा शटी ॥१५६॥
चन्दनञ्चैव पाठा च कुटजस्य फलत्वचम्।
त्रिफला शृङ्गवेरञ्च भूतावासत्वचस्तथा ॥१५७॥
आम्रास्थिजम्बुसारास्थि मूलं रक्तोत्पलस्य च।
एतेषां कार्षिकैर्भागैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥१५८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लाक्षारसाढकश्चैव क्षीरं स्नेहसमं भवेत्।
रक्तपित्तञ्च त्रिविधं नाशयेदविकल्पतः ॥१५९॥
कासं पञ्चविधं हन्ति तथा श्वासमुरःक्षतम्।
ह्रीबेराद्यमिदं तैलं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥१६०॥
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितं लोकमङ्गलम् ॥१६१॥

१. सुगन्धबाला, २. खस, ३. लोध, ४. कमलकेशर, ५. तेजपत्ता, ६. नागकेशर, ७. बिल्वफल, ८. नागरमोथा, ९. कचूर, १०. लालचन्दन, ११. पाठा, १२. कुटजछाल, १३. इन्द्रजौ, १४. आमला, १५. हरीतकी, १६. बहेड़ा, १७. आर्द्रक, १८. बहेड़ा वृक्षछाल, १९. आम की गुठली, २०. जामुन की गुठली तथा २१. लालकमलमूल—ये सभी द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। २२. तिल तैल ७५० मि.ली., २३. लाक्षारस ३ लीटर और २४. गोदुग्ध ७५० मि.ली. लें। सर्वप्रथम तिलतैल को मूर्च्छित कर लें। ततः सुगन्धबाला से कमलमूल तक के सभी २१ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में कल्क एवं लाक्षास्वरस मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। जलीयांश सूखने पर उक्त मात्रा में दूध देकर पाक करें। ततः ७५० मि.ली. जल देकर पकावें। आसन्न पाक समझकर परीक्षोपरान्त चूल्हे से पात्र नीचे उतार लें और छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। लोकमंगल कल्याणार्थ आचार्य श्रीमद् गहननाथ ने इस 'ह्रीबेरादितैल' का निर्माण किया है। इसके उपयोग से तीन प्रकार के रक्तपित्त, पाँच प्रकार के कास, श्वास, उरःक्षतादि रोग नष्ट हो जाते हैं तथा इसका उपयोग बल, वर्ण एवं अग्निवर्धक है।

मात्रा—सर्वाङ्ग शरीर में मालिश करना। **उपयोग**—रक्तपित्त शामक है। **वर्ण**—रक्ताभ। **गन्ध**—सुगन्ध।

५४. उशीरासव (शार्ङ्गधरसंहिता)

उशीरं बालकं पद्मं काश्मर्यं नीलमुत्पलम्।
प्रियङ्गुं पद्मकं लोध्रं मञ्जिष्ठां धन्वयासकम् ॥१६२॥
पाठां किराततिक्तञ्च न्यग्रोधोदुम्बरं शटीम्।
पर्पटं पुण्डरीकं च पटोलं काञ्चनारकम् ॥१६३॥
जम्बूशाल्मलिनिर्यासं प्रत्येकं पलसम्मितम्।
भागांस्तु चूर्णितान् कृत्वा द्राक्षायाः पलविंशतिम् ॥१६४॥
धातकीं षोडशपलां जलद्रोणद्वये क्षिपेत्।
शर्करायास्तुलां दत्त्वा क्षौद्रस्यार्द्धतुलां तथा ॥१६५॥
मासैकं स्थापयेद्भाण्डे मांसीमरिचधूपिते।
उशीरासव इत्येष रक्तपित्तविनाशनः।
पाण्डुकुष्ठप्रमेहार्शःकृमिशोथहरस्तथा ॥१६६॥

१. खस, २. सुगन्धबाला, ३. लालकमल, ४. गम्भारी-त्वक्, ५. नीलकमल, ६. प्रियङ्गुफूल, ७. पद्मकाठ, ८. लोध, ९. मंजीठ, १०. जवासा, ११. पाठा, १२. चिरायता, १३. गूलरत्वक्, १४. वटत्वक्, १५. कचूर, १६. पित्तपापड़ा, १७. श्वेतकमल, १८. परवल-लता, १९. काँचनारत्वक्, २०. जामुन की गुठली तथा २१. मोचरस—ये प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम और २२. मुनक्का १ कि.ग्रा., २३. धावाफूल ८०० ग्राम, २४. चीनी ५ किलो, २५. मधु २५०० ग्राम और जल २५ लीटर लें। सर्वप्रथम नये मिट्टी के घड़े में या पुराने घड़े को मरिच और जटामांसी से धूपित करें। उसी घड़े में २५ लीटर जल और चीनी घोल दें, उसी में मधु भी घोल दें। ततः खस से मोचरस तक के सभी २१ द्रव्यों को यवकुट कर जलयुक्त घड़े में मिला दें। धावाफूल को धूप में सुखाकर उसी घड़े में मिला दें। ततः मुनक्का को कूटकर उसी जल में हाथ से अच्छी तरह मिलाकर घड़े का मुख बन्द कर दें तथा निर्वात एकान्त घर में १ माह तक स्थिर छोड़ दें। घड़े की तली में पुआल या भूषी आदि रख दें, जिससे घड़ा फूटे नहीं। औषधि तैयार होने पर परीक्षोपरान्त कपड़े से छान लें और घड़े को जल से धोकर पोंछ लें। सूखने पर उसी घड़े में छने हुए 'उशीरासव' को पुनः १५ दिनों तक छोड़ दें। ऐसा करने से आसव की गाद घड़ा की तली में बैठ जायेगी। जिसे १६वें दिन निथारकर आसव पृथक् कर बोतलों में रखकर कार्क लगा दें, बोतल को पोंछकर लेबल लगाकर स्थिर से रख छोड़ें। इसे १ वर्ष बाद उपयोग में लावें।

मात्रा—१ से २ तोला (१२ से २५ मि.ली.)। **अनुपान**—जल मिलाकर। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तीक्ष्ण मद्ययुक्त। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **उपयोग**—रक्तपित्त, पाण्डु, कुष्ठ, प्रमेह, कृमि एवं शोथ नाशक है।

विमर्श—१० किलो चीनी देने से आसव अच्छा बनता है।

रक्तपित्त में पथ्य

अधोगते च्छर्दनमूर्ध्वनिर्गमे
विरेचनं स्यादुभयत्र लङ्घनम्।
पुरातनाः षष्टिकशालिकोद्रव-
प्रियङ्गुनीवारयवप्रशातिकाः ॥१६७॥
मुद्गा मसूराश्चणकास्तुवर्यो
मकुष्ठकाश्चिङ्गटबर्मिमत्स्याः।
शशः कपोतो हरिणैणलाव-
शरारिपारावतवर्त्तकाश्च ॥१६८॥
बका उरभ्राश्च सकालपुच्छाः
कपिञ्जलाश्चापि कषायवर्गः।
गवामजायाश्च पयो घृतं च
घृतं महिष्याः पनसं पियालम् ॥१६९॥
रम्भाफलं कञ्चटतण्डुलीय-
पटोलवेत्राग्रमहार्द्रकाणि।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पुराणकूष्माण्डफलं च पक्व-
तालानि तद्बीजजलानि वासा ॥१७०॥
स्वादूनि बिम्बानि च दाडिमानि
खर्जूरधात्रीमिशिनारिकेलम् ।
कशेरुशृङ्गाटमरुष्कराणि
कपित्थशालूकपरूषकाणि ॥१७१॥
भूनिम्बशाकं पिचुमर्दपत्रं
तुम्बी कलिङ्गानि च लाजशक्तुः ।
द्राक्षासिता माक्षिकमैक्षवञ्च
शीतोदकं चौद्भिदवारि चापि ॥१७२॥
सेकोऽवगाहः शतधौतसर्पि-
रभ्यङ्गयोगः शिशिरः प्रदेहः ।
हिमानिलश्चन्दनमिन्दुपादाः
कथा विचित्राश्च मनोऽनुकूलाः ॥१७३॥
धारागृहं भूमिगृहं सुशीतं
वैदूर्यमुक्तामणिधारणं च ।
रक्तोत्पलाम्भोरुहपत्रशय्या
क्षौमाम्बरं चोपवनं सुशीतम् ॥१७४॥
प्रियङ्गुयुक्चन्दनरूषिताना-
मालिङ्गनं चापि वराङ्गनानाम् ।
पद्माकराणां सरितां ह्रदानां
चन्द्रोदयानां हिमवद्दरीणाम् ॥१७५॥
सुशीतलानां गिरिनिर्झराणां
श्रुतिः प्रशस्तानि च कीर्तितानि ।
प्रकृष्टनीरं हिमबालुका च
मित्रं नृणां शोणितपित्तरोगे ॥१७६॥

अधोग रक्तपित्त में वमन करावें, ऊर्ध्वग रक्तपित्त में विरेचन करावें तथा उभयगत रक्तपित्त में रोगी को लंघन कराना हितकर है। पुराना साठी चावल, शालि चावल, कोदो, प्रियंगु, नीवार, यव, टेनी चावल, मूँग, मसूर, चना, अरहर, मोठ—ये सभी अन्न तथा चिंगट एवं वर्मि मछली, खरगोश, कबूतर, हिरण, एणमृग, लावक (वगेरी), शरारि पक्षी, कबूतर भेद जंगली, बत्तक, बगुला, मेढक, सकालपुच्छ, गौरैया आदि पक्षियों के मांस; कषाय रस वाली औषधियाँ, गाय एवं बकरी का दूध, गाय एवं भैंस का घी, कटहर का फल, चिरौंजी, केला, चौलाई काँटे वाली, चौलाई शाक, परवल फल, वेतस के अग्रभाग का शाक, आर्द्रक, पका हुआ सफेद कूष्माण्ड (पेठा), पके हुए तालफल, तालफल का जल, वासापत्र, मीठा बिम्बीफल, मीठा अनार, खजूर, आमला, सौंफ, नारियल, कशेरुक, सिघाड़ा, भिलावा के कच्चा फल, कैथ, कमलकन्द, फालसा, चिरायता, निम्बपत्र, कटुतुम्बी, तरबूज, धान के खील के सत्तू, मुनक्का, चीनी, मधु, ईख का रस, शीतल जल, कुँए के जल से अभिषेचन, शीतल जल से अवगाहन, शतधौतघृत का लेप, तैलादि का मर्दन, शीतल प्रलेप, ठण्डी हवा, चन्दन का लेप, चाँदनी रात का सेवन, चित्र-विचित्र कथा सुनना, भगवान् का कीर्तन, अच्छी पिक्चर देखना, मनोनुकूल कथा सुनना, धारागृह, एयरकूल मकान, अण्डरग्राउण्ड गृह, वैदूर्य एवं मोती की माला, लालकमल एवं केले के पत्ते पर शयन, रेशमी वस्त्र धारण, सघन छायादार वृक्षों की शीतल छाया में, प्रियङ्गु, श्वेतचन्दन का लेप, श्रेष्ठ एवं सुन्दरी स्त्रियों का आलिङ्गन, कमल से युक्त तालाब, नदी आदि में जल-विहार करना, चाँदनी रात में सोना, बर्फ की गुफाओं में निवास, शीतल पर्वतों के झरनों में निवास, वेद-पुराणों का श्रवण-कीर्तन, शीतल जल एवं शीतल बालू—ये सभी चीजें रक्तपित्त रोग में मित्र के जैसा लाभप्रद हैं।

रक्तपित्त में अपथ्य

व्यायामाध्वनिषेवणं रविकरस्तीक्ष्णानि कर्माणि च
क्षोभो वेगविधारणं चपलता हस्त्यश्वयानानि च ।
स्वेदास्रस्रुतिधूमपानसुरतक्रोधाः कुलत्थो गुडो
वार्त्ताकुस्तिलमाषसर्षपदधिक्षीराणि कौपं पयः ॥१७७॥
ताम्बूलं नलदाम्बु मद्यलशुनं शिम्बी विरुद्धाशनं
कट्वम्लं लवणं विदाहि च गणस्त्याज्योऽस्त्रपित्ते नृणाम् ॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां रक्तपित्ताधिकारः ।

व्यायाम तथा शारीरिक परिश्रम, पैदल रास्ता चलना, धूप सेवन, क्रूरकर्मों को करना, क्षोभ करना, मल-मूत्रादि वेगों को रोकना, चञ्चलता, हाथी एवं घोड़ों की सवारी करना, स्वेदन कर्म, रक्त निकालना, धूम्रपान, मैथुन, क्रोध, कुलथी, गुड़, बैगन, तिल, उड़द, सरसों, दही, क्षारीय पदार्थ, कुँआ का पानी, ताम्बूल चर्वण, खस का जल, मद्य, लशुन, सेम, विरुद्धान्न सेवन, कटु-अम्ल-लवण पदार्थों का सेवन तथा विदाही पदार्थों का सेवन रक्तपित्त रोग से पीड़ित व्यक्ति को नहीं करना चाहिए। अर्थात् उपर्युक्त सभी पदार्थों का आहार-विहार रक्तपित्त के रोगी के लिए अपथ्य हैं।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य रक्तपित्ताधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ राजयक्ष्माधिकारः (१४)

सर्वप्रथम राजयक्ष्मा का चिकित्सासूत्र

ज्वराणां शमनीयो यः पूर्वमुक्तः क्रियाविधिः ।
यक्ष्मिणां ज्वरदाहेषु स सर्वोऽपि प्रशस्यते ॥१॥

पूर्वोक्त ज्वराधिकार में दोषशामक जितनी भी विधियाँ कही गई हैं, वे सब ज्वर-दाहशमनार्थ राजयक्ष्मा रोगी में श्रेष्ठ मानी गई हैं।

उपद्रवा ज्वराद्यास्ते साध्याः स्वैः स्वैश्चिकित्सितैः ।
तेषु शान्तेषु रोगेषु पश्चाच्छोषमुपाचरेत् ॥२॥

यक्ष्मा में ज्वर आदि उपद्रवों की चिकित्सा (ज्वरोक्त क्वाथ) चूर्ण, अवलेह, आसवारिष्टादि योगों से चिकित्सा करनी चाहिए। उपद्रवों के शान्त होने पर यक्ष्मा की चिकित्सा करनी चाहिए।

राजयक्ष्मा में पथ्य (चक्रदत्त)

शालिषष्टिकगोधूमयवमुद्गादयः शुभाः ।
मद्यानि जाङ्गलाः पक्षिमृगाः शस्ता विशुष्यताम् ॥३॥
शुष्यतां क्षीणमांसानां कल्पितानि विधानवित् ।
दद्यात् क्रव्यादमांसानि बृंहणानि विशेषतः ॥४॥

शालि एवं साठी चावल, गेहूँ, यव, मूँग आदि अन्न शुभकारक हैं। मद्य, जाङ्गल (जंगली) पशु-पक्षियों का मांस प्रतिदिन सूखने वाले यक्ष्मारोगी के लिए श्रेष्ठ हैं। जिन रोगियों का मांस सूखकर क्षीण हो गया है तथा नित्यप्रति सूख रहा हो उनके लिए मांस खाने वाले पशु-पक्षियों के मांस अच्छी तरह पकाकर देना विशेष रूप से बृंहणकारक होता है तथा शोष (सूखना) समाप्त हो जाता है।

वमन-विरेचन व्यवस्था

दोषाधिकानां वमनं शस्यते सविरेचनम् ।
स्नेहस्वेदोपपन्नानां सस्नेहं यन्न कर्षणम् ॥५॥

राजयक्ष्मा में दोषों की अधिकता होने पर स्नेहन-स्वेदन कराने के बाद वमन-विरेचन कर्म कराना चाहिए।

पञ्चकर्म-व्यवस्था

बलिनो बहुदोषस्य पञ्च कर्माणि कारयेत् ।
यक्ष्मिणः क्षीणदेहस्य तत् कृतं स्याद्विषोपमम् ॥६॥

बहुत दोषों से युक्त बलवान् राजयक्ष्मा के रोगी को पञ्चकर्म कराना चाहिए। क्षीण देह वाले यक्ष्मा के रोगी को पञ्चकर्म कराना विष के जैसा घातक है। अतः इन्हें पञ्चकर्म नहीं कराना चाहिए।

यक्ष्मा में पुरीष एवं शुक्र की रक्षा (चक्रदत्त)

शुक्रायत्तं बलं पुंसां मलायत्तं हि जीवनम् ।
तस्माद्यत्नेन संरक्षेद्यक्ष्मिणो मलरेतसी ॥७॥

मनुष्य का बल शुक्र के अधीन है और जीवन पुरीष के अधीन है। इसीलिए वैद्य को चाहिए कि राजयक्ष्मा के रोगी के शुक्र और पुरीष की यत्नपूर्वक रक्षा करें।

विमर्श—आहार तथा सभी धातुओं का सारभूत पदार्थ शुक्र है तथा शरीर का समस्त बल शुक्र के अधीन है। अतः शुक्र की रक्षा करनी चाहिए। शुक्र का क्षय अनेक रोगों को जन्म देता है अथवा मृत्यु भी करा देता है। जैसा कि चरक में कहा गया है—

'आहारस्य परं धाम शुक्रं तद्रक्ष्यमात्मनः ।
क्षयो ह्यस्य बहून् रोगान्मरणं वा नियच्छति' ॥
(च.नि. ६।९)

आचार्य चरक ने यक्ष्मा में मलरक्षा के विधान का वर्णन भी बड़ी ही महत्त्वपूर्ण रीति से किया है। यथा—

'तस्मिन् काले पचत्यग्निर्यदन्नं कोष्ठसंश्रितम् ।
मलीभवति तत्प्रायः कल्पते किञ्चिदोजसे ॥
तस्मात् पुरीषं संरक्ष्यं विशेषाद्राजयक्ष्मिणः ।
सर्वधातुक्षयार्त्तस्य बलं तस्य हि विड्बलम् ॥
(च.चि. ८।४१-४२)

१. पारावतादि शुष्क मांस चूर्ण (चक्रदत्त)

पारावतकपिच्छागकुरङ्गाणां पृथक् पृथक् ।
मांसचूर्णमजाक्षीरैः पीतं क्षयहरं परम् ॥८॥

१. कबूतर का शुष्कमांसचूर्ण, २. वानर का शुष्कमांसचूर्ण, ३. बकरे का शुष्कमांसचूर्ण तथा ४. हिरण का शुष्कमांसचूर्ण —इनके मांसचूर्ण पृथक्-पृथक् ५-५ ग्राम बकरी के दूध से पियें। इसके सेवन से क्षयरोग नष्ट हो जाता है।

विमर्श—मांस मशीन से सुखाकर बाजार में उपलब्ध होता है।

२. नागबला-काकजङ्घा चूर्ण (चक्रदत्त)

सघृतकुसुमरसलीढं क्षयं नयति गजबलामूलम् ।
दुग्धेन केवलेन च वायसजङ्घा निपीतैव ॥९॥

(१) नागबलामूलचूर्ण ५ से १० ग्राम मधु में मिलाकर चाटें तथा २५० मि.ली. गरम गोदुग्ध शर्करा मिलाकर पियें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

(२) काकजंघापञ्चाङ्गचूर्ण ५ से १० ग्राम मधु (कुसुमरस) के साथ चाटकर बाद में २५० मि.ली. शर्करा मिश्रित गरम गोदूध पियें। ऐसा करने से क्षयरोग नष्ट हो जाता है।

३. नवनीतादि प्रयोग (चक्रदत्त)

शर्करामधुसंयुक्तं नवनीतं लिहन् क्षयी।
क्षीराशी लभते पुष्टिमतुल्ये चाज्यमाक्षिके ॥१०॥

मक्खन २० ग्राम, शर्करा १० ग्राम तथा मधु १० ग्राम—तीनों को अच्छी तरह मिलाकर क्षयरोगी सेवन करें और बाद में गाय का दूध पिलाना चाहिए। ऐसा करने से क्षयरोग से मुक्ति मिलती है। रोगी पुष्ट हो जाता है। यहाँ पर नवनीत और मधु विषम मात्रा में ही मिलाना चाहिए। उपर्युक्त मात्रा सही है।

४. अलक्तक (लाक्षा) रस (चक्रदत्त)

अलक्तकरसैः क्षौद्रं रक्तवान्तिहरं परम् ॥११॥

अलक्तक (लाक्षा) स्वरस १० मि.ली. में १० ग्राम मधु मिलाकर पीने से रक्तष्ठीवन या रक्त वमन करने वाला क्षयरोगी कुछ ही दिनों में रोगमुक्त हो जाता है।

५. ककुभादि क्षीर (चक्रदत्त)

ककुभत्वङ्नागबलां वानरिबीजानि चूर्णितं पयसि।
पक्वं घृतमधुयुक्तं ससितं यक्ष्मादिकासहरम् ॥१२॥

१. अर्जुनत्वक् १० ग्राम, २. नागबलामूल १० ग्राम, ३. कपिकच्छूबीज १० ग्राम, ४. दूध २५० ग्राम, ५. घृत २० ग्राम, ६. मधु १० ग्राम, ७. शर्करा ३० ग्राम तथा जल २५० मि.ली. लें। तीनों काष्ठौषधों का यवकुट चूर्ण करें। एक पात्र में दूध एवं पानी मिलाकर उक्त काष्ठौषधि का यवकुट डाल दें और मन्दाग्नि में पाक करें। जब केवल दूध ही शेष रहे तो छानकर मधु, घी एवं शर्करा मिला लें और पियें। ऐसा कुछ दिन पीने से यक्ष्मा आदि कासरोग नष्ट हो जाते हैं।

६. कृष्णादि लेह (चक्रदत्त)

कृष्णाद्राक्षासितालेहः क्षयहा क्षौद्रतैलवान्।
मधुसर्पिर्युतो वाऽश्वगन्धाकृष्णासितोद्भवः ॥१३॥

(१) १. पिप्पली, २. द्राक्षा, ३. शर्करा, ४. मधु तथा ५. तिलतैल; (२) १. अश्वगन्धा, २. पिप्पली, ३. शर्करा, ४. मधु तथा ५. घृत। इस पाठ में दो योग हैं जो क्षयनाशक हैं। इन योगों में मात्रा समभाग लेनी चाहिए, किन्तु जहाँ घृत एवं मधु दोनों द्रव्य हैं वहाँ विषम मात्रा में इन्हें ग्रहण करना चाहिए। जैसे पिप्पली, द्राक्षा, शर्करा, मधु प्रत्येक २-२ ग्राम एवं तैल ५ ग्राम लें। वैसे ही अश्वगन्धा, पिप्पली, शर्करा तथा मधु प्रत्येक २-२ ग्राम एवं घी ५ ग्राम लेकर मिला लें एवं चाटें।

७. यष्ट्यादि प्रयोग

यष्ट्याह्वं चन्दनोपेतं सम्यक् क्षीरप्रपेषितम्।
क्षीरेणालोड्य पातव्यं रुधिरच्छर्दिनाशनम् ॥१४॥

यष्टिमधुचूर्ण १० ग्राम एवं लाल चन्दनचूर्ण १० ग्राम को दूध के साथ सिल पर पीसकर २५० मि.ली. दूध में मिला दें तथा शर्करा इच्छानुसार देकर पीने से क्षयरोगी के रक्तवमन को शान्त करता है।

८. छागमांसादि सेवन

छागमांसं पयश्छागं छागं सर्पिः सशर्करम्।
छागोपसेवा शयनं छागमध्ये तु यक्ष्मनुत् ॥१५॥

सुपुष्ट बकरे का मांस विधिवत् सुपक्व कर खाना तथा उसका मांसरस पीना एवं बकरी के गरम दूध में शर्करा मिलाकर नियमित पीना और बकरी के घी में शर्करा मिलाकर पीना चाहिए। अथवा बकरी का दूध एवं घी एक साथ शर्करा मिलाकर पीना चाहिए। इसके लिए बकरी चराना, बकरियों के झुण्ड में रहना, बकरियों के बीच में सोना यक्ष्मारोगियों के लिए अत्यन्त हितकर है।

९. आजमांसरस-प्रयोग (चक्रदत्त)

सपिप्पलीकं सयवं सकुलत्थं सनागरम्।
दाडिमामलकोपेतं स्निग्धमाजरसं पिबेत् ॥१६॥
तेन षड् विनिवर्त्तन्ते विकाराः पीनसादयः।
रसे द्रव्याम्बु पेयावत् सूदशास्त्रवशादिह ॥१७॥

१. पिप्पली, २. यव, ३. कुलत्थ, ४. शुण्ठी, ५. खट्टा अनारदाना तथा ६. आमला—इनके द्वारा सिद्ध पेया के जैसा स्निग्ध मांसरस कुछ दिनों तक पीने से पीनस, कास, ज्वर, स्वरभेदादि ४ विकार नष्ट हो जाते हैं। इस मांसरस को सूदशास्त्र(पाकशास्त्र)विद् की देख-रेख में बनाना चाहिए।

विमर्श—यहाँ पर पिप्पली, शुण्ठी, अनारदाना एवं आमला थोड़ी-थोड़ी मात्रा में अम्ल एवं कटु स्वाद हेतु देना चाहिए। किन्तु इसमें जौ तथा कुलत्थ पेया के मुख्य द्रव्य हैं। अतः पेयानुसार १० ग्राम अन्न में ७५० मि.ली. जल देकर पेया सिद्ध करनी चाहिए। अर्धावशेष होने पर पेया छानकर पिलानी चाहिए।

यहाँ ४ तोला जौ तथा ४ तोला कुलत्थ को यवकुट कर ३ लीटर जल के साथ पाक करें। १.५०० लीटर शेष रहने पर छान लें और उसी जल में २५० ग्राम बकरे का सुकुट्टित मांस डालकर प्रेशर कूकर में डालकर पकावें। जब मांस सिद्ध हो जाय तो ठण्डा होने पर कपड़े से दबाकर मांसरस निचोड़ लें। यदि उससे $\frac{1}{2}$ लीटर मांसरस निकलता है तो घी, जीरा एवं हींग से छौंककर मांस डालें तथा उसमें अपनी रुचि के अनुसार नमक, हल्दी, पिप्पलीचूर्ण, शुण्ठीचूर्ण, अनारदानाचूर्ण तथा आमलाचूर्ण डालें और गोघृत से स्निग्ध कर 'सिद्ध मांसरस' का पान करावें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मांससाधन-विधि (चक्रदत्त)

पलानि द्वादश प्रस्थे घनेऽथ तनुके तु षट्।
मांसस्य वटकं कुर्यात् पलमच्छतरे रसे ॥१८॥

यूष को यदि गाढ़ा बनाना हो तो १ प्रस्थ (७५० मि.ली.) जल में १२ पल (५५८ ग्राम) मांस देना चाहिए। यदि पतला मांसरस बनाना हो तो ७५० मि.ली. जल में २८० ग्राम मांस लेना चाहिए। अच्छा मांसरस (बिलकुल पतला) बनाना हो तो ७५० मि.ली. जल में ५० ग्राम मांस लेना चाहिए। मांस को कूटकर निरस्थि कर उसमें नमक, हल्दी, मरिच, पिप्पली, शुण्ठी आदि मसाला देकर वटक जैसा बनाकर मांसरस सिद्ध करना चाहिए।

१०. दशमूलक्वाथ (चक्रदत्त)

दशमूलबलारास्नापुष्करसुरदारुनागरैः क्वथितम्।
पेयं पार्श्वांसशिरोरुक्क्षयकासादिशान्तये सलिलम् ॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. गम्भारीमूलत्वक्, ३. श्योनाकमूलत्वक्, ४. पाटलात्वक्, ५. अग्निमन्थमूलत्वक्, ६. गोक्षुरपंचाङ्ग, ७. कण्टकारीपंचाङ्ग, ८. बृहतीपंचाङ्ग, ९. शालपर्णीपंचाङ्ग, १०. पृश्निपर्णी पंचाङ्ग, ११. बलामूल, १२. रास्ना, १३. पुष्करमूल, १४. देवदारु और १५. शुण्ठी—इन्हें समभाग लेकर यवकुट करें। इनमें से २५ ग्राम यवकुट चूर्ण को अष्टगुण जल में क्वाथ विधि से क्वाथ कर प्रतिदिन २ बार पीने से पार्श्वशूल, अंसशूल, शिरःशूल, क्षय, कास आदि रोग शान्त हो जाते हैं।

११. अश्वगन्धादिक्वाथ (चक्रदत्त)

अश्वागन्धाऽमृताभीरुदशमूलीबलावृषाः ।
पुष्करातिविषे हन्ति क्षयं क्षीररसाशिनः ॥२०॥

१. अश्वगन्धा, २. गुडूची, ३. शतावरी, ४. दशमूल के दस द्रव्य, ५. बला, ६. वासा, ७. पुष्करमूल तथा ८. अतिविषा—इन १७ द्रव्यों को यवकुट कर सुरक्षित रख लें और इसमें से २५ ग्राम यवकुट को ८ गुना जल में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छानकर नित्य दो बार पीने से तथा दूध एवं मांसरस का पान करने से क्षयरोग नष्ट हो जाता है।

१२. त्रयोदशाङ्गक्वाथ (चक्रदत्त)

धन्याकपिप्पलीविश्वदशमूलीजलं पिबेत्।
पार्श्वशूलज्वरश्वासपीनसादिनिवृत्तये ॥२१॥

१. धनियाँ, २. पिप्पली, ३. शुण्ठी तथा ४. दशमूल के दशों द्रव्य—इनके समभाग द्रव्य को यवकुट कर पृथक् सुरक्षित रख लें और २५ ग्राम यवकुट को ८ गुना जल देकर क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छानकर सुबह-शाम पीने से पार्श्वशूल, ज्वर, श्वास, पीनस आदि नष्ट हो जाते हैं।

१३. बलादिचूर्ण (भा.प्र.)

बलाऽश्वगन्धा श्रीपर्णी बहुपुत्री पुनर्नवा।
पयसा नित्यमभ्यस्ताः शमयन्ति क्षतक्षयम् ॥२२॥

१. बलामूल, २. अश्वगन्धा, ३. गम्भारीफल, ४. शतावरीमूल और ५. पुनर्नवामूल—इन्हें समभाग लेकर कूट-पीसकर वस्त्रपूत करें तथा काचपात्र में सुरक्षित करें। इनका मिलित चूर्ण १०-१५ ग्राम दूध के साथ सिल पर पीसकर $\frac{१}{४}$ लीटर दूध में मिला लें और शर्करा मिलाकर सुबह-शाम पीने से क्षत-क्षय रोग नष्ट हो जाता है।

१४. लवङ्गादिचूर्ण (चक्रदत्त)

लवङ्गकङ्कोलमुशीरचन्दनं
नतं सनीलोत्पलजीरकं समम्।
त्रुटिः सकृष्णागुरुभृङ्गकेशरं
कणा सविश्वा नलदं सहाम्बुदम् ॥२३॥
अहीन्द्रजातीफलवंशलोचना-
सिताऽष्टभागं समसूक्ष्मचूर्णितम्।
सुरोचनं तर्पणमग्निदीपनं
बलप्रदं वृष्यतमं त्रिदोषनुत् ॥२४॥
उरोविबन्धं तमकं गलग्रहं
सकासहिक्काऽरुचियक्ष्मपीनसम्।
ग्रहण्यतीसारभगन्दरार्बुदं
प्रमेहगुल्मांश्च निहन्ति सत्वरम् ॥२५॥

१. लवङ्ग, २. शीतल शर्करा (कङ्कोल), ३. खस, ४. श्वेत चन्दन, ५. तगर, ६. नीलकमल, ७. जीरा, ८. छोटी इलायची, ९. कृष्ण अगर, १०. भृङ्गराज, ११. नागकेशर, १२. पिप्पली, १३. शुण्ठी, १४. जटामांसी, १५. नागरमोथा, १६. अनन्तमूल, १७. जायफल तथा १८. वंशलोचन—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें तथा शर्करा १६० ग्राम लें। सभी काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण करें और शर्करा का भी चूर्ण कर लें तथा सभी द्रव्यों को अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

यह लवङ्गादि चूर्ण अत्यन्त रुचिकर है, तृप्तिकारक है, अग्निदीपक है, बल्य है, वृष्यतम है, त्रिदोषघ्न है; उरःप्रदेश की जकड़न, तमक श्वास, गलग्रह, कास, हिक्का, अरुचि, यक्ष्मा, पीनस, ग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, अर्बुद, प्रमेह और गुल्म रोग का शीघ्र नाश करता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम तक। **अनुपान**—जल एवं दूध से। **उपयोगिता**—यक्ष्मा-पीनस-श्वास-कास-उरोग्रह-गलग्रह नाशक है। **स्वाद**—मधुर-प्रधान। **वर्ण**—श्वेताभ। **गन्ध**—सुगन्ध।

१५. शृङ्ग्यर्जुनादिचूर्ण (चक्रदत्त)

शृङ्ग्यर्जुनाश्वगन्धानागबलापुष्कराभयाच्छिन्नरुहाः ।
तालीसादि समेता मधुसर्पिर्भ्यां यक्ष्महराः ॥२६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. काकड़ासिंगी, २. अर्जुनत्वक्, ३. अश्वगन्धा, ४. नागबला, ५. पुष्करमूल, ६. हरीतकी, ७. गुडूची और ८. तालीसपत्र—ये सभी आठों द्रव्य प्रत्येक १०० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—मधु एवं घी से (दोनों विषम मात्रा में)। **स्वाद**—तिक्त-कटु। **वर्ण**—रक्ताभ। **गन्ध**—पुष्करमूल जैसा (अजगन्धा) सुगन्ध। **उपयोगिता**—यक्ष्मानाशक है।

१६. सितोपलादिचूर्ण (चरक)

सितोपला तुगाक्षीरी पिप्पलीबहुलात्वचः।
अन्त्यादूर्ध्वं द्विगुणितं लेहयेत् क्षौद्रसर्पिषा ॥२७॥
चूर्णं वा प्राशयेदेतच्छ्वासकासक्षयापहम्।
सुप्तजिह्वारोचकिनं मन्दाग्निं पार्श्वशूलिनम्॥
हस्तपादांसदाहेषु ज्वरे रक्ते तथोर्ध्वगे ॥२८॥

१. सिता १६ भाग, २. वंशलोचन ८ भाग, ३. पिप्पली ४ भाग, ५. छोटी इलायची २ भाग तथा ६. त्वक् १ भाग लें। अन्तिम से ऊपर तक दुगुना लेना चाहिए। इसे चूर्ण कर मधु एवं घी में मिलाकर लेहवत् चाटना चाहिए। यह औषधि कुछ दिनों तक सेवन करने से श्वास, कास एवं क्षय रोग नष्ट हो जाते हैं। यह सुप्त जिह्वा अर्थात् 'मधुरादिरसज्ञानहीनः', अरुचि, मन्दाग्नि, पार्श्वशूल, हस्त-पाद-अंसदाह, ज्वर तथा ऊर्ध्वग रक्त-पित्त नाशक है।

मात्रा—२ से ५ ग्राम तक। **अनुपान**—मधु एवं घृत से। **वर्ण**—श्वेत। **गन्ध**—सुगन्ध (इलायची जैसी)। **स्वाद**—मधुर एवं कटु। **उपयोग**—कास, श्वास, क्षय एवं रक्तपित्त में।

१७. तालीशादिचूर्ण (चरक)

तालीशपत्रं मरिचं नागरं पिप्पली शुभा।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या त्वगेले चार्द्धभागिके ॥२९॥
पिप्पल्यष्टगुणा चात्र प्रदेया सितशर्करा।
श्वासकासारुचिहरं तच्चूर्णं दीपनं परम् ॥३०॥
हृत्पाण्डुग्रहणीरोगप्लीहशोषज्वरापहम्।
छर्द्यतीसारशूलघ्नं मूढवातानुलोमनम् ॥३१॥
कल्पयेद् गुडिगाश्चैतच्चूर्णं पक्त्वा सितोपलाम्।
गुडिका ह्यग्निसंयोगाच्चूर्णाल्लघुतरा स्मृता ॥३२॥
पैत्तिके ग्राहयन्त्येके शुभया वंशलोचनम्॥
विशेषणं हि पिप्पल्या अन्यत्र पैत्तिकाच्छुभा ॥३३॥

१. तालीशपत्र १० ग्राम, २. मरिच २० ग्राम, ३. शुण्ठी ३० ग्राम, ४. पिप्पली ४० ग्राम, ५. वंशलोचन ५० ग्राम, ६. त्वक् ५ ग्राम, ७. छोटी इलायची ५ ग्राम तथा ८. सिता ३२० ग्राम लें। तालीशपत्र से मरिच आदि द्रव्य दुगुना लें तथा पिप्पली से आठ गुनी शर्करा लें। सभी द्रव्यों का पृथक्-पृथक् चूर्ण कर लें। वंशलोचन एवं शर्करा दोनों मिलाकर चक्की (हाथ की चक्की) में पीस लें। अकेले वंशलोचन पीसने से बहुत उड़ेगा। इसे भी मधु या घृत से मिलाकर लेहन करना चाहिए। कुछ लोग इस चूर्ण से मोदक या गुटिका बनाकर चूसने हेतु रोगी को देते हैं। उक्त सिता (शर्करा) की चासनी कर उसमें काष्ठौषधियों के चूर्णों का प्रक्षेप देकर अच्छी तरह मिलाकर २-२ या ४-४ ग्राम की वटी या गुटिका बनाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लेते हैं। इस चूर्ण या गुटिका का सेवन करने से श्वास, कास, अरुचि, हृद्रोग, पाण्डु, ग्रहणीरोग, प्लीहरोग, शोष, ज्वर, वमन, अतीसार, शूल एवं मूढवात आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। यह चूर्ण परम दीपन है। अग्नि-सम्पर्क में गुटिका बनाना चूर्ण की अपेक्षा लघु हो जाता है। पैत्तिक कास में यदि इसका प्रयोग करना हो तो शुभा शब्द से वंशलोचन का ग्रहण करना चाहिए। किन्तु यदि अन्य कास में प्रयोग करना हो तो शुभा शब्द से पिप्पली लेना चाहिए वंशलोचन नहीं।

मात्रा—२ से ५ ग्राम तक। **अनुपान**—मधु एवं घी से। **वर्ण**—श्वेत। **गन्ध**—सुगन्ध (इलाचयी जैसी)। **स्वाद**—मधुर एवं कटु। **उपयोग**—कास, श्वास, क्षय, ज्वर, अरुचि, हृद्रोग एवं वमन में उपयोगी है।

१८. एलादिचूर्ण (योगरत्ना.)

एला पत्रं नागपुष्पं लवङ्गं
भागस्त्वेषां द्वौ च खर्जूरकस्य।
द्राक्षायष्टीशर्करापिप्पलीनां
चत्वारस्तत् क्षौद्रयुक्तं क्षये स्यात् ॥३४॥

१. छोटी इलायची १० ग्राम, २. तेजपत्र १० ग्राम, ३. नागकेशर १० ग्राम, ४. लवङ्ग १० ग्राम, ५. खजूर २० ग्राम, ६. द्राक्षा ४० ग्राम, ७. यष्टिमधु ४० ग्राम, ८. शर्करा ४० ग्राम और ९. पिप्पली ४० ग्राम लेना चाहिए। सूखी काष्ठौषधों को कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। खजूर एवं द्राक्षा को सिल पर महीन पीसकर चूर्ण के साथ अच्छी तरह मिला दें। सूखने पर पुनः महीन चलनी से छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे मधु के साथ मिलाकर सुबह-शाम सेवन करने से क्षयरोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—२ से ५ ग्राम। **अनुपान**—मधु से। **वर्ण**—कत्थई वर्ण का। **स्वाद**—मधुर-कटु। **गन्ध**—सुगन्ध (इलायची जैसी)। **उपयोग**—क्षय एवं कास में।

१९. कर्पूरादिचूर्ण (योगरत्नाकर)

कर्पूरचोचकङ्कोलजातीफलदलाः समाः।
लवङ्गमांसीमरिचकृष्णाशुण्ठ्यो विवर्धिताः ॥३५॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चूर्णं सितासमं हृद्यं सदाहत्रयकासजित्।
वैस्वर्यपीनसश्वासच्छर्दिकण्ठामयापहम् ॥
प्रयुक्तं चान्नपानैर्वा भेषजद्वेषिणां हितम् ॥३६॥

१. कर्पूर १० ग्राम, २. त्वक् १० ग्राम, ३. कङ्कोल १० ग्राम, ४. जायफल १० ग्राम, ५. जातीपत्री १० ग्राम, ६. लवङ्ग २० ग्राम, ७. जटामांसी ३० ग्राम, ८. मरिच ४० ग्राम, ९. पिप्पली ५० ग्राम, १० शुण्ठी ६० ग्राम तथा ११. शर्करा २५० ग्राम लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह हृद्य है; दाह, क्षय एवं कास नाशक है। स्वरभङ्ग, पीनस, श्वास, वमन तथा कण्ठगत रोग नष्ट हो जाते हैं। भेषज से द्वेष करने वाले रोगी को इस औषध को अन्न-पान के साथ मिलाकर देना चाहिए।

मात्रा—२ से ५ ग्राम तक। **अनुपान**—भोजन अन्न-पान के साथ या मधु से। **वर्ण**—श्वेत। **गन्ध**—कर्पूरगन्धी। **स्वाद**—मधुर एवं कटु। **उपयोग**—कास, श्वास, क्षय, दाह तथा कण्ठ गत रोग में यह हृद्य है।

२०. वासावलेह (भावप्रकाश)

वासकस्य रसप्रस्थं माणिका सितशर्करा।
पिप्पल्या द्विपलं तावत्सर्पिषश्च शनैः पचेत् ॥३७॥
तस्मिल्लेहत्वमायाते शीते क्षौद्रपलाष्टकम्।
दत्त्वाऽवतारयेद्वैद्यो लीढो लेहोऽयमुत्तमः ॥३८॥
हन्त्येव राजयक्ष्माणं कासं श्वासं च दारुणम्।
पार्श्वशूलं च हृच्छूलं रक्तपित्तं ज्वरं तथा ॥३९॥

१. वासास्वरस ७५० मि.ली., २. सिता ३७५ ग्राम, ३. पिप्पली २५ ग्राम, ४. गोघृत २५ ग्राम और ५. मधु ३७२ ग्राम लें। एक बड़े पात्र में वासास्वरस एवं सिता मिलाकर पाक करें। जब चासनी गाढ़ी होकर २ तार की हो जाय तब चूल्हे से पात्र को नीचे उतारकर उसमें पिप्पली का चूर्ण एवं घृत मिलाकर अच्छी तरह चलावें। जब शीतल हो जाय तब मधु मिला लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस लेह को लेहन करने से राजयक्ष्मा, कास, भयंकर श्वास, पार्श्वशूल, हृच्छूल, रक्तपित्त एवं ज्वर रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **वर्ण**—कृष्णाभ अवलेह। **गन्ध**—सुगन्ध घृतगन्धी। **स्वाद**—तिक्त-मधुर। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, कास, रक्तपित्त तथा पार्श्वशूल में।

२१. बृहद् वासावलेह - १

शतं संगृह्य वासायास्तोयद्रोणे विपाचयेत्।
चतुर्भागावशेषेऽस्मिन् शर्करायाः पलं शतम् ॥४०॥
त्रिकटु त्रिसुगन्धिश्च कट्फलं मुस्तकं गदम्।
जीरकं पिप्पलीमूलं रोचनी चविका शुभा ॥४१॥
कटुका श्रेयसी चैव तालीशं सधनीयकम्।
कार्षिकं पृथगेतेषां क्षिपेन्मधुपलाष्टकम् ॥४२॥
तद्यथाग्निबलं लिह्याच्छृतशीताम्बुपानतः।
निहन्ति राजयक्ष्माणं रक्तपित्तं क्षतक्षयम् ॥४३॥
वातिकं पैत्तिकं कासं श्वासञ्चैव सुदारुणम्।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च वमिञ्चैवारुचिं ज्वरम् ॥४४॥
अश्विभ्यां निर्मितो ह्येष बृहद्वासावलेहकः ॥४५॥

वासापञ्चाङ्ग ५ किलो, जल १३ लीटर एवं शर्करा ५ किलो लें।

प्रक्षेप—१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. तेजपत्र, ५. छोटी इलायची, ६. त्वक्, ७. कट्फल, ८. नागरमोथा, ९. कुष्ठ, १०. श्वेत जीरा, ११. पिप्पलीमूल, १२. शुद्ध कम्पिल्लक, १३. चव्य, १४. वंशलोचन, १५. कटुकी, १६. गजपिप्पली, १७. तालीशपत्र और १८. धनियाँ—ये प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम तथा मधु ४०० ग्राम लें। वासापञ्चाङ्ग को यवकुट कर १३ लीटर मीठे जल में रात्रिपर्यन्त भिगो दें। प्रातः मध्यमाग्नि पर पाक कर चौथाई शेष रहने पर छान लें। पुनः स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में उक्त क्वाथद्रव को रखकर शर्करा के साथ चासनी करें। जब दो तार की चासनी हो जाय तो चूल्हे से पात्र को नीचे उतार कर शुण्ठी से धनियाँ तक के सभी १८ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर प्रक्षेप रूप में चासनी में छिड़ककर दर्वी से अच्छी तरह मिला दें। शीतल होने पर मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

उपयोग—अग्निबलानुसार वासाक्वाथ या गोदुग्ध या शीतल जल से प्रातः-सायं सेवन करावें। इसका सेवन रक्तपित्त, क्षत, क्षय, वातज-पित्तज कास, भयंकर श्वास, हृच्छूल, पार्श्वशूल, वमन, अरुचि तथा ज्वर में लाभदायक है। इस बृहद् वासावलेह को अश्विनीकुमारों ने बनाया था।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—रक्तपित्तहर क्वाथ, वासाक्वाथ, शीतल जल तथा गोदुग्ध से। **वर्ण**—कृष्णाभ। **गन्ध**—सुगन्ध। **स्वाद**—तिक्त-मधुर। **उपयोग**—रक्तपित्त, क्षय, कास एवं श्वास में।

२२. बृहद् वासावलेह - २

पञ्चविंशत्पलं ग्राह्यं बृहत्योर्वासकस्य च।
भार्ग्याश्च पञ्चविंशच्च जलद्रोणे विपाचयेत् ॥४६॥
पादशेषे रसे तस्मिन् खण्डप्रस्थं समावपेत्।
कुडवार्द्धञ्च हविषो मधुनः कुडवं तथा ॥४७॥
मृताभ्रकं पलञ्चैकं कणाचूर्णं चतुष्पलम्।
कुष्ठं तालीशपत्रञ्च मरिचं तेजपत्रकम् ॥४८॥
मुरामांसीमुशीरञ्च लवङ्गं नागकेशरम्।
त्वग्भार्गीं बालकं मुस्तं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥४९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं लेहीभूते विनिक्षिपेत्।
हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं कासं पञ्चविधं तथा ॥५०॥
रक्तपित्तं क्षयं श्वासं ज्वरं प्लीहानमेव च।
बालानामपि वृद्धानां तरुणानां विशेषतः ॥५१॥
पार्श्वशूलञ्च हृच्छूलमम्लपित्तं वमिं तथा।
बृहद्वासावलेहोऽयं महादेवेन निर्मितः ॥५२॥

१. बृहतीपञ्चाङ्ग १२५० ग्राम, २. वासापञ्चाङ्ग १२५० ग्राम, ३. भारङ्गीपञ्चाङ्ग १२५० ग्राम, ४. मीठा जल १३ लीटर, ५. शर्करा ७५० ग्राम, ६. गोघृत ९५ ग्राम तथा ७. मधु १९० ग्राम लें।

प्रक्षेप—१. अभ्रकभस्म ५० ग्राम, २ पिप्पलीचूर्ण २०० ग्राम, ३. कुष्ठ (मीठा), ४. तालीसपत्र, ५. मरिच, ६. तेजपत्र, ७. जटामांसी, ८. खस, ९. लवङ्ग, १०. नागकेशर, ११. त्वक्, १२. भारङ्गीपंचाङ्ग, १३. सुगन्धबाला तथा १४. नागरमोथा—प्रत्येक १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में तीनों द्रव्यों का यवकुट रखकर १३ लीटर जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिंगो दें। प्रातः मन्दाग्नि से क्वाथकर चौथाई शेष रहने पर छान लें। बर्तन साफ कर पुनः उक्त क्वाथ को उस पात्र में रखकर शर्करा के साथ चासनी करें। जब दो तार की चासनी हो जाय तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। पुनः पिप्पली से नागरमोथा तक के सभी १३ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। वासावलेह की चासनी पर छिड़ककर दर्वी से अच्छी तरह चलावें। पुनः अभ्रकभस्म भी उसमें मिला दें, तत्पश्चात् घी भी मिला दें। ठण्डा होने पर मधु मिलाकर काचपात्रों में २५०-२५० ग्राम भरकर सुरक्षित कर लें।

उपयोग—भयंकर यक्ष्मा, पञ्चविध कास, रक्तपित्त, क्षय, श्वास, ज्वर एवं प्लीहावृद्धि, पार्श्वशूल, हृच्छूल, अम्लपित्त एवं वमन रोग में इसका प्रयोग होता है। इस बृहद् वासावलेह को महादेव ने कहा है। इसका प्रयोग बालक, वृद्ध एवं युवाओं पर एक जैसा किया जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—सोष्ण दूध एवं शीतल जल से। **वर्ण**—कृष्णाभ। **गन्ध**—घृतगन्धी (सुगन्ध)। **स्वाद**—तिक्त-मधुर। **उपयोग**—यक्ष्मा, रक्तपित्त, कास एवं श्वास में।

२३. बृहद् वासावलेह-३

तुलामादाय वासाया जलद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषे रसे तस्मिन् खण्डं पलशतं न्यसेत् ॥५३॥
शनैर्मृद्वग्निना सम्यक् सिद्धे तत्र प्रदापयेत्।
त्रिकटु त्रिसुगन्धञ्च कट्फलं मुस्तमेव च ॥५४॥
कुष्ठं कम्पिल्लकं श्वेतजीरञ्च कृष्णजीरकम्।
त्रिवृता पिप्पलीमूलं चव्यं कटुकरोहिणी ॥५५॥
शिवा तालीशधन्याकं प्रत्येकञ्च द्विकार्षिकम्।
चूर्णयित्वा क्षिपेत्तत्र शीते मधु पलाष्टकम् ॥५६॥
अस्य मात्रां ततो लीढ्वा तोयमुष्णं पिबेदनु।
सर्वकासविकारेषु स्वरभङ्गे विशेषतः ॥५७॥
राजयक्ष्मणि दुःसाध्ये वातश्लेष्मामये तथा।
आनाहे वह्निमान्द्ये च हृद्रोगे च क्षतक्षये ॥
मूत्रकृच्छ्रे च कृच्छ्रे च शस्तोऽयं लेह उत्तमः ॥५८॥

१. वासापञ्चाङ्ग ५ किलो, २. मीठा जल १३ लीटर तथा ३. शर्करा ५ किलो लें।

प्रक्षेप—१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. त्वक्, ५. छोटी इलायची, ६. तेजपत्र, ७. कट्फल, ८. नागरमोथा, ९. मीठा कुष्ठ, १०. कम्पिल्लक, ११. श्वेतजीरा, १२. कृष्णजीरा, १३. निशोथ, १४. पिप्पलीमूल, १५. चव्य, १६. कटुकी, १७. हरीतकी, १८. तालीसपत्र और १९. धनियाँ—ये सभी १९ द्रव्य प्रत्येक २५-२५ ग्राम तथा मधु ४०० ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम वासापञ्चाङ्ग को यवकुट करें और स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में रखकर १३ लीटर मीठे जल में रात्रिपर्यन्त भिंगो लें। प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहे तो छान लें। इसके बाद पात्र साफकर उक्त क्वाथ को उसमें देकर शर्करा के साथ चासनी करें। जब चासनी हो जाय तो पात्र को नीचे उतार लें और शुण्ठी से धनियाँ तक के सभी १९ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण प्रक्षेप रूप में उस चासनी पर छिड़क दें तथा दर्वी से अच्छी तरह से चलावें। ठण्डा होने पर ४०० ग्राम मधु भी अच्छी तरह से मिला दें। इसके बाद २५०-२५० ग्राम की पैकिंग काचपात्र में करके सुरक्षित रख लें।

उपयोग—इस बृहद् वासावलेह को चाट(खाकर)कर बाद में गरम पानी पियें। सभी प्रकार के कासरोगों एवं स्वरभङ्ग में विशेष रूप से इसका प्रयोग करें। असाध्य यक्ष्मा, वातज-कफज रोगों में, आनाह, अग्नि-मान्द्य, हृद्रोग, क्षत, क्षय और कष्टसाध्य मूत्रकृच्छ्र रोगों में यह वासावलेह उत्तम लाभदायक है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—उष्ण जल से। **वर्ण**—कृष्णाभ। **गन्ध**—सुगन्ध। **स्वाद**—तिक्त-मधुर। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, सभी प्रकार के कास, स्वरभङ्ग एवं रक्तपित्त में।

२४. च्यवनप्राशावलेह (चरकसंहिता)

बिल्वाग्निमन्थश्योनाककाश्मर्यः पाटलिर्बला।
पर्ण्यश्चतस्रः पिप्पल्यः श्वदंष्ट्रा बृहतीद्वयम् ॥५९॥
शृङ्गी तामलकी द्राक्षा जीवन्ती पुष्करागुरु।
अभया चामृता ऋद्धिर्जीवकर्षभकौ शटी ॥६०॥
मुस्तं पुनर्नवा मेदा सूक्ष्मैलोत्पलचन्दने।
विदारी वृषमूलानि काकोली काकनासिका ॥६१॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एषां पलोन्मितान् भागाञ् शतान्यामलकस्य च ।
पञ्च दद्यात्तदैकध्यं जलद्रोणे विपाचयेत् ॥६२॥
ज्ञात्वा गतरसान्येतान्यौषधान्यथ तं रसम् ।
तच्चामलकमुद्धृत्य निष्कुलं तैलसर्पिषोः ॥६३॥
पलद्वादशके भृष्ट्वा दत्त्वा चार्द्धतुलां भिषक् ।
मत्स्यण्डिकायाः पूताया लेहवत्साधु साधयेत् ॥६४॥
षट्पलं मधुनश्चात्र सिद्धे शीते प्रदापयेत् ।
चतुष्पलं तुगाक्षीर्याः पिप्पेल्या द्विपलं तथा ॥६५॥
पलमेकं विदध्याच्च त्वगेलापत्रकेशरात् ।
इत्ययं च्यवनप्राशः परमुक्तो रसायने ॥६६॥
कासश्वासहरश्चैव विशेषेणोपदिश्यते ।
क्षीणक्षतानां वृद्धानां बालानाञ्चाङ्गवर्द्धनः ॥६७॥
स्वरक्षयमुरोरोगं हृद्रोगं वातशोणितम् ।
पिपासां मूत्रशुक्रस्थान् दोषांश्चैवापकर्षति ॥६८॥
अस्य मात्रां प्रयुञ्जीत योपरुन्ध्यान्न भोजनम् ।
अस्य प्रयोगाच्च्यवनः सवृद्धोऽभूत्पुनर्युवा ॥६९॥
मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्व-
मायुःप्रकर्षं बलमिन्द्रियाणाम् ।
स्त्रीषु प्रहर्षं परमग्निवृद्धि-
बलप्रसादं पवनानुलोम्यम् ॥७०॥
रसायनस्यास्य नरः प्रयोगा-
ल्लभेत जीर्णोऽपि कुटीप्रवेशात् ।
जराकृतं पूर्वमपास्य रूपं
बिभर्त्ति रूपं नवयौवनस्य ॥७१॥
सिता मत्स्यण्ड्यलाभे च धात्र्याश्च मृदुभर्जनम् ।
चतुर्भागजले प्रायो द्रव्यं गतरसं भवेत् ॥७२॥

क्वाथ-द्रव्य—१. बिल्वमूलत्वक्, २. अग्निमन्थमूलत्वक्, ३. श्योनाकमूलत्वक्, ४. गम्भारीमूलत्वक्, ५. पाटलामूलत्वक्, ६. बलामूल, ७. शालपर्णीमूल, ८. पृश्निपर्णीमूल, ९. माषपर्णीमूल, १०. मुद्गपर्णीमूल, ११. पिप्पली, १२. गोक्षुरमूल, १३. कण्टकारीमूल, १४. बृहती (बड़ी कटेरी), १५. काकडासिंगी, १६. भूंई आमला, १७. द्राक्षा (मुनक्का), १८. जीवन्ती, १९. पुष्करमूल, २०. अगरु, २१. हरीतकीफलदल, २२. गुडूची काण्ड, २३. जीवककन्द, २४. ऋषभककन्द, २५. ऋद्धि, २६. कचूर, २७. नागरमोथा, २८. पुनर्नवामूल, २९. मेदा, ३०. छोटी इलायची, ३१. नीलकमलफूल, ३२. लालचन्दन, ३३. विदारीकन्द, ३४. वासामूल, ३५. काकोली, ३६. काकनासा—प्रत्येक ५० ग्राम।

प्रक्षेप-द्रव्य—१. वंशलोचन २०० ग्राम, २. पिप्पली १०० ग्राम, ३. त्वक् ५० ग्राम, ४. छोटी इलायची ५० ग्राम, ५. तेजपत्र ५० ग्राम तथा ६. नागकेशर ५० ग्राम।

मुख्य द्रव्य—१. आमला (५०० नग) ६ कि., २. शर्करा २.३३५ ग्रा., ३. गोघृत ३०० ग्राम, ४. तिलतैल ३०० ग्राम और ५. मधु ३०० ग्राम।

नोट—क्वाथ द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम तथा जल १३ लीटर लें। क्वाथ द्रव्यों का कुल वजन १.९५० ग्राम है।

सर्वप्रथम १ से ३६ द्रव्यों को उल्लिखित मात्रा में लेकर यवकुट करें। पुनः ताम्र या पीतल के कलईदार बड़े पात्र में १३ लीटर जल के साथ रात्रिपर्यन्त भिगों दें, पुनः मन्दाग्नि पर क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर क्वाथ को वस्त्रपूत करें तथा उच्छिष्ट क्वाथ द्रव्य को फेंक दें। अब उक्त पात्र को साफकर उसी में छना हुआ क्वाथ तथा उपर्युक्त आमला एक साथ रखकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब आमला अच्छी तरह सुसिद्ध हो जाय तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और सिद्ध आमलकी को स्टेनलेस स्टील के पात्र में पृथक् कर लें। इसके बाद कुछ ठण्डा होने पर आमले को फोड़कर बीज बाहर निकाल लें। पुनः सिद्ध आमले को हाथ से मसल कर कल्क जैसा कर लें।

इसके बाद स्टेनलेस स्टील के पात्र के मुख पर पतला साफ एवं नया कपड़ा बाँधकर उस पर उक्त आमलकी कल्क थोड़ा-थोड़ा घिसें, आमले से रेशा बहुत निकलेगा, उसे फेंक दें। जब सब आमला घिस जाय, गुद्दी और रेशा अलग-अलग हो जाय तब उसी कपड़े में सम्पूर्ण आमलकी-गुद्दी बाँधकर लटकाकर रात्रिपर्यन्त छोड़ दें। उस कल्क में जो अधिक जलीयांश है उसे निकालना ही उद्देश्य है। अन्यथा भूनते समय जलीय भाग से छिटककर शरीर पर पड़ने की आशंका रहती है। भूनने में विलम्ब भी होता है। टपकते हुए आमले का पानी किसी अन्य पात्र में एकत्र करें। आमले का उबला हुआ जल किसी पात्र में संग्रहीत करें।

आमलकी कल्क भूनना—शास्त्र में घी और तिलतैल (यमक) दोनों में भूनने का उल्लेख है। आचार्य चरक से लेकर अद्यतन सभी आचार्यों ने यमक में ही आमलकी कल्क को भर्जन का निर्देश दिया है, किन्तु आजकल च्यवनप्राश को अधिकांश लोग स्वादिष्ट होने पर ही खाते हैं। अतः तैल के साथ भर्जन करने में च्यवनप्राशावलेह का स्वाद उतना स्वादिष्ट नहीं रहता है। इसीलिए केवल घी के साथ ही आमलकी कल्क भूनते हैं। जब भूनते-भूनते कल्क का वर्ण कत्थई वर्ण का हो जाय, अंगुली से मर्दन करने पर कल्क की वर्ति बन जाय और कल्क पर अँगुलियों की रेखाओं के निशान (मुद्रा) पड़ जाय तथा कल्क के ऊपर घी तैरने लगे तो समझना चाहिए कि कल्क ठीक से भुना गया है। इस तरह भुने हुए कल्क को किसी अन्य पात्र में ढक कर रखें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चासनी-निर्माण—(१) स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में पूर्वोक्त सुरक्षित क्वाथ छानकर रखें तथा उसमें निर्दिष्ट मात्रा में शर्करा मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। इसमें खट्टेपन के कारण चासनी में उफान अधिक आता है अतः सावधानी से चलाते रहें। जब दो तार की चासनी हो जाय तो परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। तर्जनी से दर्वी की चासनी स्पर्श कर अंगूठे से सटाकर अँगुलियों को फैलावें। ऐसा करने से अँगुलियों में जितने तार निकलें, उतने ही तार की चासनी समझनी चाहिए। दो-तीन बार अंगूठे और तर्जनी को बार-बार हटाने-सटाने से भ्रमपूर्ण कई तार हो जायेगा। अतः एक बार ही दोनों अँगुलियों को सटाकर हटावें तो वही सही तार गिना जायेगा। (२) दूसरी परीक्षा में जलपूर्ण छोटी कटोरी में १०-२० बूँद चासनी गिराने से चासनी फैलेगी नहीं, एकत्र स्थिर रहेगी। ठोस भी नहीं होनी चाहिए। (३) पानी बिना कटोरी में थोड़ी चासनी रखकर १०-२० मिनट तक रख छोड़ें। बाद में अंगुली से दबाने पर उसमें अँगुलियों के निशान (मुद्रा) पड़ते हों और चासनी अवलेह जैसी अर्धघन रहे तो चासनी (अवलेह की) पक्की है।

नोट—इतना करने में २० मिनट का समय लगेगा, अतः चासनी-पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर ही इतना समय लगाना चाहिए। अन्यथा चासनी कड़ी हो जायेगी। यदि अपक्व चासनी समझ में आवे तो पात्र को पुनः चूल्हे पर चढ़ाना चाहिए। चासनी तैयार होने पर भुना हुआ आमला उसमें डालकर दर्वी से या लकड़ी की दर्वी से अच्छी तरह से मिलाना चाहिए, जिससे आमले के छोटे-छोटे टुकड़े नहीं रहे। इसके बाद प्रक्षेप-द्रव्यों के चूर्ण को उसमें अच्छी तरह छिड़ककर मिला लें। ठण्डा होने पर उसमें मधु मिलाकर ५०० ग्राम एवं १-१ किलो का पैकिंग करें। च्यवनप्राश के डिब्बे में अवलेह के ऊपर विशुद्ध घृत ४-६ बूँद फैलाकर ही ढक्कन बन्द करें। इससे अवलेह वर्षों तक सुरक्षित रहेगा।

गुण एवं रोगघ्नता—यह कास एवं श्वास की विशेष औषधि है। जो व्यक्ति क्षत से क्षीण हो गया है, वृद्ध या बालक है, उनके अङ्गों की वृद्धि करता है। स्वररोग, क्षयरोग, फुप्फुस एवं हृदयप्रदेश के रोगों में, हृद्रोग, वातरक्त, तृष्णा, मूत्राशय एवं शुक्राशय गत वातादि दोषों को निकालता है। च्यवनप्राश की इतनी मात्रा लेनी चाहिए जिससे भोजन की मात्रा में न्यूनता नहीं हो। इसके प्रयोग से वृद्धतम च्यवन ऋषि फिर से युवा हो गये थे। यह अवलेह मेध्य है, स्मरणशक्तिवर्धक है, कान्तिप्रद (ओजस्कर) है, आरोग्यप्रद है, आयुष्य है, बल्य है, इन्द्रियों को बल देता है, स्त्रियों के प्रति प्रहर्ष अर्थात् मैथुनशक्तिवर्धक है, जाठराग्निवर्द्धक है, शरीर के वर्ण को बढ़ाता है तथा वायु का अनुलोमन करता है। यदि कुटीप्रावेशिक विधि से इस रसायन का सम्यक् सेवन किया जाय तो वृद्ध पुरुष भी पुनर्युवा हो जाता है।

मात्रा—१ तोला (१० ग्राम)। **अनुपान**—सोष्ण गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ अवलेह (लौहस्पर्श से कृष्ण)। **स्वाद**—मधुर-अम्ल-कषाय। **उपयोगिता**—क्षत, क्षीण, यक्ष्मा, कास, श्वास, हृद्रोग, दौर्बल्य आदि में। यह मेध्य, आयुष्य, बल्य, बृंहण, वृष्य, हृद्य, वर्ण्यकर, केश्य आदि है।

विमर्श—चरकसंहिता और शार्ङ्गधरसंहिता के मूल पाठ में थोड़ा अन्तर दिखाई देता है। सर्वप्रथम तो अष्टवर्ग ही इन दिनों सन्दिग्ध है। चरकसंहिता में अष्टवर्ग के पाँच ही द्रव्य इस अवलेह में है जबकि शार्ङ्गधरसंहिता में ७ द्रव्यों का उल्लेख है। अष्टवर्ग के आठों द्रव्य इन प्रामाणिक ग्रन्थों में नहीं मिलते हैं। जबकि अष्टवर्ग ही हर प्रान्त में पृथक् द्रव्य के रूप में मिलते हैं। मात्र जीवक-ऋषभक ही समान रूप से सर्वत्र एक जैसे मिलते हैं। अतः इनका अभाव मानकर इनके प्रतिनिधि द्रव्य—शतावरी, विदारीकन्द, अश्वगन्धा और वाराहीकन्द डाले जा सकते हैं, किन्तु गुण में न्यूनता होगी। आजकल बाजार में प्रायः च्यवनप्राश सही ढंग का नहीं मिलता है। इसके कई कारण हैं—

१. व्यापारिक भावना।
२. औषधों की दुर्लभता।
३. व्यापारिक प्रतिस्पर्धा।
४. आश्विन माह में अपक्व आमले से च्यवनप्राश का निर्माण।
५. औषधों की पहचान का अभाव।
६. काष्ठौषधि-विक्रेताओं द्वारा जैसी एवं जिस औषधि की पुड़िया बाँधकर देने के बाद अपनी अज्ञानतावश उसे स्वीकार कर लेना।
७. गोघृत एवं शुद्ध मधु की अनापूर्ति होना।
८. बड़े-बड़े औषधि-निर्माताओं द्वारा वर्षोपरान्त भी इसे बेचना आदि।

(१) आजकल सामान्यतया च्यवनप्राश खाने का लोगों में शौक जैसा हो गया है। ऐसी स्थिति में सामान्य जन स्वादहीन (खट्टा-कषैला) एवं अरुचिकर च्यवनप्राश नहीं खाना चाहता है। अतः औषधि-निर्माता मधुर एवं स्वादिष्ट ही च्यवनप्राश बनाता है। फलतः आमला से डेढ़ गुनी तथा दुगुनी शर्करा डालकर च्यवनप्राश बनाता है। च्यवनप्राश के पाठ में निर्दिष्ट गुडूची आदि तिक्त औषधों को नहीं डालते हैं। प्रायः निर्माता क्वाथ द्रव्यों का प्रयोग ही नहीं करते, अधिकतर लोग मात्र प्रक्षेप देकर ही च्यवनप्राश बना लेते हैं।

(२) ऐसे शास्त्रीय रीति से च्यवनप्राश बनाने पर स्वादिष्ट

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं बनता है, क्योंकि ६ किलो आमला में मात्र २.५०० कि.ग्रा. ही शर्करा देकर अवलेह सिद्ध किया जाता है, जो प्रमुखत: अम्ल-कषाय एवं तिक्त रसपरक होता है। मधुरता भी कम होती है। तिलतैल में भूनने से इसके स्वाद में तैलगन्धी एवं अरुचिकर स्वाद हो जाता है।

१३वीं शती में आचार्य शार्ङ्गधर मिश्र ने इस च्यवनप्राश में कुछ आवश्यक सुधार किया था—

(१) उन्होंने अष्टवर्ग के ५ द्रव्यों के स्थान पर ७ द्रव्यों का प्रयोग किया था।

(२) घी एवं तिलतैल (यमक) में भूनने की अपेक्षा केवल गोघृत में ही आमला को भूनना उचित बताया है।

(३) तीसरा परिवर्तन उन्होंने भी नहीं किया, किन्तु आज का वैद्य समाज अपने अनुभव एवं देश, काल तथा व्यक्तियों की इच्छा को आधार मानकर बिना सामूहिक राय के ही इच्छानुसार परिवर्तन कर लिया है। वह परिवर्तन आमला से शर्करा १$\frac{१}{२}$ (डेढ़) गुनी मात्रा में देना है। कुछ लोग दुगुनी मात्रा में भी शर्करा डालते हैं। लेकिन आचार्यों ने शर्करा आमला से आधी से भी कम देने का निर्देश दिया है।

अत: मेरी राय में चरकोक्त च्यवनप्राशावलेह में दो परिवर्तन युगानुरूप है। शौक से च्यवनप्राश खाने वालों को ऐसा ही खाना चाहिए। रोगियों के लिए शास्त्रीय च्यवनप्राश ही उचित है।

मैं तो क्वाथ के दो द्रव्य पिप्पली और छोटी इलायची को भी क्वाथ में न देकर इसे प्रक्षेप में ही डाल देता हूँ। इससे च्यवनप्राश के स्वाद एवं गन्ध में वृद्धि होकर अत्यधिक स्वादिष्ट हो जाता है। इसे सुपक्व आमला से माघ एवं फाल्गुन महीना में ही बनाना चाहिए।

श्वास, कास, क्षय, क्षीण, स्वरभङ्ग एवं हृद्रोग के रोगियों को शास्त्रीय विधि द्वारा निर्मित च्यवनप्राश सेवन कराना चाहिए।

कुटीप्रावेशिक विधि से च्यवनप्राश का सेवन अत्यधिक लाभप्रद है। सेवन से पूर्व वमन-विरेचन अवश्य कराना चाहिए।

च्यवनप्राशावलेह का इतिहास—यह च्यवनप्राशावलेह वृद्धतम-क्षीण-कृश-महर्षि च्यवन ऋषि के लिए देवताओं के वैद्यों भगवान् अश्विनीकुमारों ने बनाया था। क्योंकि तपस्या में समाधिस्थ महर्षि च्यवन के प्रज्वलित नेत्रों को कुतूहलवश मगधदेश के राजा शर्याति की पुत्री 'सुकन्या' ने बाँस की नुकीली शलाकाओं से विद्ध कर फोड़ डाला था। प्रज्वलित नेत्रों से ज्योति के स्थान से रक्तधारा बहते देख घबड़ाकर सुकन्या ने अपनी माँ से सारा वृत्तान्त कहा। तब तक राजा शर्याति की सेना में मुनि के क्रोध से उत्पात होने लगा। राजा शर्याति को जब इस अपराध का ज्ञान हुआ तो मुनि की सेवा में सपरिवार आये और पुत्रीकृत अपराध के लिए क्षमा याचना की तथा मुनि को प्रसन्न करने के लिए बड़ी प्रार्थना की। मुनि का अभिप्राय जानकर नेत्रहीन महर्षि के लिए नेत्रस्वरूपा अपनी उस पुत्री 'सुकन्या' का कन्यादान कर दिया, जिससे मुनि का क्रोध शान्त हो गया और राजा शर्याति अपने परिवार के साथ अपनी राजधानी लौट आये। इधर सुकन्या अपने वृद्धतम तथा तपस्या से जीर्ण-शीर्ण पति महर्षि च्यवन की सेवा में प्रवृत्त हो गई। इस तरह अभीष्ट दाता देवता की तरह वह पतिव्रता सुकन्या हर दृष्टि से पतिसेवा करती हुई १००० वर्ष आनन्द के साथ बीत गये। एक बार अचानक देवताओं के वैद्य अश्विनीकुमारों का आगमन महर्षि च्यवनाश्रम में हुआ। ऋषिपत्नी सुकन्या ने अर्घ्य-पाद्य आदि आतिथ्य सत्कार से देववैद्यों का सत्कार किया। सत्कार से प्रभावित अश्विनीकुमारों ने सुकन्या से वर माँगने को कहा तो सुकन्या ने कहा कि मेरे वृद्धतम पति महर्षि च्यवन मेरे कारण अपनी नेत्रज्योति खो चुके हैं। अत: उनकी नेत्रज्योति पुन: पूर्ववत् हो जाय। तब देववैद्यों ने कहा कि महर्षि च्यवन यदि हमें यज्ञों में सोमपान का अधिकारी बना दें तो मैं इन्हें पुनर्युवा बना दूँगा। इसी शर्त पर महर्षि ने भी अश्विनीकुमारों को स्वीकृति दी, फलत: अश्विनीकुमारों ने च्यवनप्राशावलेहादि औषधों के सेवन तथा दिव्य कुण्ड में स्नान कर दिव्य एवं युवा शरीर प्रदान किया। कालान्तर में राजा शर्याति द्वारा सोमयज्ञ का अनुष्ठान कराकर अश्विनीकुमारों को सोमपान कराया। तब से यह च्यवनप्राशावलेह वृद्धों एवं कृशों के लिए हमेशा सेवनीय हो गया।

महर्षि च्यवन उक्त अवलेह का सेवन कर पूर्णकाम एवं युवा और दिव्य शरीर से युक्त हो गये तथा बाद में सुकन्या रूपी अपनी पत्नी का पूर्णतया उपभोग किया।

नोट—महर्षि च्यवन का आश्रम आज भी बिहार प्रान्त के जहानाबाद जिला में देवकुण्ड (च्यवनाश्रम) सोन नदी के पूर्वी तट पर स्थित है। 'पद्मपुराण' के आधार पर उनका आश्रम नर्मदा नदी तट पर होना चाहिए। क्योंकि वहीं पर उन्होंने दस हजार वर्षों तक तपस्या की थी।

२५. द्राक्षारिष्ट (शार्ङ्गधरसंहिता)

द्राक्षातुलाऽर्द्धं द्विद्रोणं जलस्य विपचेत् सुधीः ।
पादशेषे कषाये च पूते शीते विनिक्षिपेत् ॥७३॥
गुडस्य द्वितुलां तत्र त्वगेलापत्रकेसरम् ।
प्रियङ्गुमरिचं कृष्णा विडङ्गञ्च विचूर्णयेत् ॥७४॥
पृथक् पलोन्मितैर्भागैर्घृतभाण्डे निधापयेत् ।
समन्ततो घट्टयित्वा पिबेज्जातरसं ततः ॥७५॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उरःक्षतं क्षयं हन्ति कासश्वासगलामयान्।
द्राक्षारिष्टाह्वयः प्रोक्तो बलकृन्मलशोधनः ॥७६॥

१. द्राक्षा (मुनक्का) २.५०० कि., २. मीठाजल २६ लीटर, ३. गुड़ १० किलो, ४. धातकीपुष्प ५० ग्राम, ५. त्वक् ५० ग्राम, ६. तेजपत्र ५० ग्राम, ७. छोटी इलायची ५० ग्राम, ८. नागकेशर ५० ग्राम, ९. प्रियंगुफूल ५० ग्राम, १०. मरिच ५० ग्राम, ११. पिप्पली ५० ग्राम तथा १२. वायविडङ्ग ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में मुनक्का डालकर उक्त जल से मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। जब चौथाई शेष रहे तो पात्र चूल्हे से उतारकर शीतल होने पर हाथ से द्राक्षा को मसलें और छान लें। अब मिट्टी के नये घड़े में रखकर गुड़ घोल दें। गुड़ अच्छी तरह घुलने के बाद धूप में सुखाया हुआ धातकीपुष्प डाल दें तथा त्वक् से विडङ्ग पर्यन्त सभी आठों द्रव्यों को मोटा यवकुट कर घड़े में डालकर हाथ से अच्छी तरह मिला दें। इसके बाद घड़े का मुख शराव से बन्दकर निर्वात गृह में रखें। घड़े की तली में पुआल या बोरे की गद्दी जैसा बनाकर रखें। घड़े के पृष्ठ भाग में औषधि का नाम तथा तारीख भी अवश्य लिखें। २० से ३० दिन बाद घड़े का मुख खोलकर परीक्षोपरान्त तैयार समझकर छान लें। यह औषध उरःक्षत, क्षय, कास, श्वास तथा गले के रोगों को नष्ट करता है। इसे द्राक्षारिष्ट कहते हैं। यह बलकारक एवं मलशोधक है।

परीक्षा—सर्वप्रथम घड़े के पृष्ठ भाग में कान लगाकर सुने, किसी प्रकार की सनसनाहट की आवाज नहीं होगी। घर में मद्य की गन्ध फैलेगी। दियासलाई की तिल्ली बाहर जलाकर घड़े के अन्दर ले जाने पर जलती रहनी चाहिए। यह परीक्षा औषधि तैयार की है। पहले जब औषधि आदि से पूर्णकर घड़ा कमरे में रखते हैं तो २-४ दिन बाद घड़े में कार्बनडाइआक्साइड की उत्पत्ति होगी। जैसे-जैसे उसमें मद्य (अलकोहल) का निर्माण होगा वैसे-वैसे घड़े में ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ेगी और कार्बनडाईऑक्साइड की मात्रा घटेगी। पूर्णरूप से ऑक्सीजन की मात्रा आ जाने पर ही औषधि (मद्य) तैयार हो जाती है।

मात्रा—१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—जल से। **वर्ण**—रक्ताभ। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **स्वाद**—मधुर-तीक्ष्ण। **उपयोग**—कास, श्वास, क्षय एवं गले के रोगों को नष्ट करता है। यह मलशोधक है।

२६. अस्रहरारिष्ट

मृतसञ्जीवनी मद्यं विशल्यकरणीरसम्।
पृथक् पृथक् पलं चैकं गृहीत्वा भिषजां वरः ॥७७॥
मृत्स्नया पिहितास्ये च भाण्डे सप्तदिनावधि।
निधापयेत्तद्द्वयं च ततः स्थूलाम्बरेण हि ॥७८॥
पूतं कृत्वा प्रयत्नेन सेव्योऽयं शीतलाम्बुना।
दशबिन्दुप्रमाणेन प्रतियामं रुजायुजा ॥७९॥
तेन तस्य विनश्यन्ति कासयक्ष्मक्षतक्षयाः।
अस्रपित्तास्रातिसारौ रक्तप्रदर एव च ॥८०॥

मृतसंजीवनी सुरा १ लीटर तथा विशल्यकरणीस्वरस १ लीटर लें। मिट्टी के नये पात्र, छोटी हाँडी या छोटे घड़े में दोनों द्रवों को रखकर हाथ से मिला लें और मिट्टी के एक शराव (ढक्कन) से ढककर कपडमिट्टी लगा दें और निर्वात स्थान पर सात दिनों तक स्थिर कर रख दें। ८वें दिन मोटे कपड़े से छानकर काच की बोतलों में रख दें तथा कार्क लगाकर सुरक्षित रख लें। इस औषध को प्रति ३ घण्टे पर १०-१० बूँद जल के साथ लेने से कास, राजयक्ष्मा, उरःक्षत, क्षय, रक्तपित्त, रक्तातिसार और रक्तप्रदर रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१०-१० बूँद प्रति ३ घण्टे पर। **अनुपान**—१-१ तोला जल के साथ। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—जल से कुछ गदला। **स्वाद**—तीक्ष्ण-मद्य वाला। **उपयोग**—रक्तपित्त, रक्त-प्रदर, रक्तातिसार, उरःक्षत, राजयक्ष्मा आदि रोगों में। जिस रोग में रक्त बाहर निकलता हो, सभी में यह उपयोगी है तथा रक्तरोधक है।

२७. विन्ध्यवासियोग (चक्रदत्त)

व्योषं शतावरी त्रीणि फलानि द्वे बले तथा।
सर्वामयहरो योगः सोऽयं लौहरजोऽन्वितः ॥८१॥
एष वक्षःक्षतं हन्ति कण्ठजांश्च गदांस्तथा।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं बाहुस्तम्भमथार्दितम् ॥८२॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. शतावरी, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. बला, ९. अतिबला और १०. लोहभस्म—शुण्ठी से अतिबला तक के सभी द्रव्य १-१ भाग लें और लोहभस्म सबके बराबर अर्थात् ९ भाग लें। उपर्युक्त काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण करके १-१ भाग लें और लौहभस्म ९ भाग लेकर एक साथ खरल में खूब मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। सर्वामयहर इस औषधियोग को २ से ४ रत्ती (२५० से ५०० मि.ग्रा.) तक की मात्रा मधु के साथ लेने पर उरःक्षत, कण्ठगत रोग, राजयक्ष्मा, बाहुस्तम्भ एवं अर्दित रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—तीक्ष्ण गन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ चूर्ण (लौहभस्म जैसा वर्ण)। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—उरःक्षत, राजयक्ष्मा, कण्ठगत रोग, बाहुस्तम्भ एवं अर्दित रोगों में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

२८. ताप्यादिलौह (चक्रदत्त)

मधुताप्यविडङ्गाश्मजतुलौहघृताभयाः ।
घ्नन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमाना हिताशिना ॥८३॥

१. स्वर्णमाक्षिकभस्म, २. विडङ्गचूर्ण, ३. शुद्ध शिलाजतु, ४. लोहभस्म, ५. हरीतकीचूर्ण तथा ६. मधु एवं घृत लें। माक्षिकभस्म, विडङ्गचूर्ण, शुद्ध शिलाजतु तथा हरीतकीचूर्ण प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम तथा लौहभस्म ४० ग्राम लेना चाहिए। सभी द्रव्यों को उक्त प्रमाण में लेकर खरल में अच्छी तरह मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि की २ रत्ती की विषम मात्रा में मधु-घृत के साथ प्रयोग करने पर राजयक्ष्मा नष्ट हो जाता है।

नोट—सर्वचूर्णसमं लौहचूर्णं = मधुघृताभ्यां लिहेदिति भानुदासः ।

नोट—ज्वरयुक्त यक्ष्मा में घृत का प्रयोग उचित नहीं है। तब केवल मधु के साथ ही औषधि दें। हितकर एवं पुष्टिकर लघु भोजन देना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—घृत एवं विषम मात्रा में मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ (लौह-भस्माभ)। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—राजयक्ष्मा में।

विमर्श—इस शास्त्र के प्राचीन ग्रन्थों में तथा अष्टाङ्गसंग्रह एवं ज्योतिष के 'बृहत्संहिता' में इसी तरह के एक सुन्दर योग का वर्णन मिलता है। उनमें सभी द्रव्य ऐसे ही हैं किन्तु पारद एक अधिक है। यथा—

'शिलाजतुक्षौद्रविडङ्गसर्पिलोहाभयापारदताप्यभक्षः ।
आपूर्यते दुर्बलदेहधातूंस्त्रिपञ्चरात्रेण यथा शशाङ्कः' ॥
(रसा.वि. १८।१४)

और भी—

माक्षीकधातुमधुपारदलोहचूर्ण-
पथ्याशिलाजतुघृतानि समानि योऽद्यात् ।
सैकानि विंशतिरहानि जरान्वितोऽपि
सोऽशीतिकोऽपि रमयत्यबलां युवेव ॥
(बृ.संहिता ७५।३)

और भी—

'माक्षिकशिलाजतुलौहचूर्णपथ्याविडङ्गघृतमधुभिः ।
संयुक्तं रसमादौ क्षेत्रीकराय युञ्जीत' ॥
(रसहृदयतन्त्र १९।१९)

२९. यक्ष्मान्तकलौह

रास्नातालीशकर्पूरभेकपर्णीशिलाह्वयैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैर्लौहो यक्ष्मान्तको मतः ॥८४॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम् ।
हन्ति कासं स्वराघातं क्षयकासं क्षतक्षयम् ।
बलवर्णाग्निपुष्टीनां साधनो दोषनाशनः ॥८५॥

१. रास्ना, २. तालीशपत्र, ३. कर्पूर, ४. मण्डूकपर्णी, ५. शुद्ध शिलाजतु, ६. शुण्ठी, ७. पिप्पली, ८. मरिच, ९. आमला, १०. हरीतकी, ११. बहेड़ा, १२. वायविडङ्ग, १३. नागरमोथा, १४. चित्रकमूल तथा १५. लोहभस्म—रास्ना से चित्रकमूल तक के सभी १४ द्रव्यों को १-१ भाग लें और लोहभस्म १४ भाग अर्थात् सभी चूर्णों के बराबर लें। सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण बनाकर १-१ भाग तौलें और लोहभस्म सभी द्रव्यों के बराबर लें। खरल में अच्छी तरह से मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

राजयक्ष्मा के सभी उपद्रवों से युक्त रोगी को या वैद्यों द्वारा असाध्य कहकर त्यागे हुए रोगी को ४-४ रत्ती की मात्रा में देने से कास, स्वरभङ्ग, उरःक्षत तथा क्षय का नाश करता है और बल, वर्ण एवं अग्नि की वृद्धि करता हुआ सभी दोषों को नष्ट करता है।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ (लौहभस्माभ)। **स्वाद**—शिलाजतु जैसा तथा (तिक्त-कषाय)। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, कास, स्वरभङ्ग, उरःक्षत एवं कास में।

३०. शिलाजत्वादिलौह (र.सा.सं.)

शिलाजतुमधुव्योषताप्यलौहरजांसि च।
क्षीरेण लोहितस्याशु[1] क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥८६॥

१. शुद्ध शिलाजीत, २. यष्टिमधु, ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. स्वर्णमाक्षिकभस्म और ७. लौहभस्म—शिलाजीत से माक्षिकभस्म पर्यन्त सभी ६ द्रव्य प्रत्येक १-१ भाग लें तथा लौहभस्म ६ भाग लेना चाहिए। सभी काष्ठौषधों के सूक्ष्म चूर्ण तौलकर १-१ भाग लें एवं लौहभस्म ६ भाग लें। शिलाजीत को थोड़ा गरम पानी में घोल दें तथा खरल में सभी द्रव्यों को एक साथ मर्दन करें। घुले शिलाजीत के कारण सभी द्रव्य गीले हो जायेंगें और भावना जैसा मर्दन करें। जब सूक्ष्म हो जाय तो ४-४ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। ५०० मि.ग्रा. इस औषध के प्रयोग के बाद सोष्ण गोदुग्ध पान करने से रक्तक्षरण वाला क्षयरोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५००मि.ग्रा. (४-४ रत्ती)। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—शिलाजीत जैसी (गोमूत्रगन्धी)। **वर्ण**—कत्थई वर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोगिता**—क्षयरोग में।

---

१. 'लेहितस्य' इति पाठः ।
'क्षीरभुग्लेढि' इति पाठः रसकामधेनौ चतुर्थचिकित्सापादे ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३१. रजतादिलौह (र.सा.सं.)

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं ।
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटु सवरं साय आज्येन युक्तम् ॥८७॥
लीढं प्रातः क्षपयतितरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः
श्वासं कासं च नयनरुजः पित्तरोगानशेषान् ॥८८॥

१. रजतभस्म १ भाग, २. अभ्रकभस्म १ भाग, ३. त्रिकटु चूर्ण २ भाग, ४. त्रिफलाचूर्ण २ भाग तथा ५. लोहभस्म ६ भाग लें। उपर्युक्त सभी १२ भाग द्रव्यों को एक खरल में अच्छी तरह मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रखें। इस औषध को गोघृत के साथ प्रातः प्रयोग करने से राजयक्ष्मा, पाण्डु, उदररोग, अर्श, श्वास, कास, सभी प्रकार के नेत्ररोग एवं सम्पूर्ण पित्तविकारों का नाश करता है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. (४ रत्ती)। **अनुपान**—गोघृत से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कत्थई लोहभस्म वर्णाभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोगिता**—राजयक्ष्मा, कास एवं श्वास में।

३२. क्षयकेशरीरस (र.सा.सं.)

त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफलवङ्गकैः ।
नवभागान्वितं लौहं समं सिन्दूरसन्निभम् ॥८९॥
छागीदुग्धेन सम्पिष्य वल्लमस्य प्रयोजयेत् ।
मधुना क्षयरोगांश्च हन्त्ययं क्षयकेशरी ॥९०॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. जायफल, ८. छोटी इलायची, ९. लौंग और १०. लौहभस्म—शुण्ठी से लौंग तक के सभी द्रव्य १-१ भाग लें और लौहभस्म ९ भाग लें।

सभी काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण करने के बाद तौलकर १-१ भाग लें और लौहभस्म ९ भाग लेकर एक बड़े खरल में रखकर अच्छी तरह से मर्दन कर बकरी के दूध के साथ एक दिन तक मर्दन करें और १ वल्ल ३-३ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और बाद में काचपात्र में सुरक्षित कर लें। मधु के साथ प्रातः-सायं क्षय रोगी को खिलाने से राजयक्ष्मा को नाश करता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती)। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—एलागन्धी (सुगन्धी)। **वर्ण**—रक्ताभ (सिन्दूर जैसा)। **स्वाद**—कटु (सुगन्धी)। **उपयोग**—राजयक्ष्मा में।

३३. क्षयकेशरीरस बृहद् (र.सा.सं.)

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहञ्च ताम्रकम् ।
मृतं नागञ्च कांस्यञ्च मण्डूरं विमलं तथा ॥९१॥
वङ्गं खर्परकं तालं शङ्खटङ्कणमाक्षिकम् ।
वैक्रान्तं कान्तलौहञ्च स्वर्णविद्रुममौक्तिकम् ॥९२॥
वराटं मणिरागञ्च राजपट्टञ्च गन्धकम् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्लमध्ये विनिक्षिपेत् ॥९३॥
मर्दयेत्त्वग्निभानुभ्यां प्रपुटेत्त्रिदिनं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभिर्वारांस्त्रींश्च पृथक् पृथक् ॥९४॥
मातुलुङ्गवरावह्निस्वम्लवेतसमार्कव-
हयमारार्द्रकरसैः पाचितो लघुवह्निना ॥९५॥
वातपित्तकफोत्क्लेशाज्ज्वरान् सम्मर्दितानपि ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ॥९६॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकार्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥९७॥
सेवितो हन्ति रोगान् हि व्याधिवारणकेशरी ।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं कृमिं जयेत् ॥९८॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम् ॥९९॥
सर्वव्याधिहरो बल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः ॥१००॥

१. अभ्रकभस्म, २. रससिन्दूर, ३. लौहभस्म, ४. ताम्रभस्म, ५. नागभस्म, ६. कांस्यभस्म, ७. मण्डूरभस्म, ८. विमलभस्म, ९. वङ्गभस्म, १०. यशदभस्म, ११. हरतालभस्म, १२. शंखभस्म, १३. शुद्ध टंकण, १४. स्वर्णमाक्षिकभस्म, १५. वैक्रान्तभस्म, १६. कान्तलौहभस्म, १७. स्वर्णभस्म, १८. प्रवालभस्म, १९. मोतीभस्म, २० कौडीभस्म, २१. शुद्ध हिंगुल, २२. कान्तपाषाणभस्म तथा २३. शुद्ध गन्धक—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम एक बड़े खरल में रससिन्दूर एवं हिंगुल को मर्दन करें। पुनः शेष द्रव्यों को उसमें मिलाकर चित्रकक्वाथ एवं अर्कमूलस्वरस की १-१ भावना देकर लघुपुट में पाक करें। इसी तरह इन दोनों द्रव्यों के स्वरस से ३-३ भावना एवं ३ बार लघु पुट में पाक करें। पुनः मातुलुङ्गनिम्बुस्वरस, त्रिफलाक्वाथ, चित्रक क्वाथ, अम्लवेतसक्वाथ, भृङ्गराजस्वरस, कनेरमूलक्वाथ तथा आर्द्रकस्वरसों की पृथक्-पृथक् १-१ भावना देकर एक बार लघु पुट में पाक करें। इसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य के स्वरस के साथ ३-३ भावना और ३-३ लघु पुट देकर पाक करें। इस तरह कुल ९ द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ से २७ बार भावना और २७ बार लघु पुट में पाक करना होगा। पुनः इन्हें मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

उपयोग—यह औषध वात, पित्त एवं कफ की वृद्धिजन्य सभी प्रकार के ज्वरों, सन्निपातिक ज्वर तथा सर्वाङ्ग एवं एकाङ्ग वात रोगों को शीघ्र नाश करता है। यदि इस औषधि को शर्करा-चूर्ण, पिप्पलीचूर्ण, यष्टिमधु एवं आर्द्रकस्वरस मिलाकर ततद् व्याधिहर औषधों के साथ सेवन किया जाय तो क्षयरोग, ११ प्रकार के यक्ष्मा, पाण्डु, कृमि, पञ्चविध कास, श्वास, प्रमेह, मेदोरोग, उदररोग, अश्मरी, शर्करा, शूलरोग, प्लीहारोग, गुल्म, हलीमक आदि सभी व्याधियों का नाश करता है। यह क्षयकेशरीरस सभी रोगों को नष्ट करता है तथा यह बल्य, वृष्य, मेध्य एवं रसायन गुण वाला है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—१ से २ रत्ती (१२५ से २५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मधु, पिप्पलीचूर्ण, शर्करा चूर्ण, आर्द्रक स्वरस के साथ। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—ज्वर, क्षय, वातरोग, कास, प्रमेह, श्वासादि में।

३४. शृङ्गाराभ्ररस (र.सा.सं.)

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं शाणमानं तदन्यत्।
कर्पूरं जातिकोषं सजलमिभकणा तेजपत्रं लवङ्गम्॥
मांसीतालीशचोचं गजकुसुमगदं धातकी चेति तुल्यम्।
पथ्याधात्रीबिभीतत्रिकटुरपि पृथक् त्वर्द्धशाणं द्विशाणे॥
एलाजातीफलाख्यं क्षितितलविधिना शुद्धगन्धाश्मकोलम्।
कोलार्द्धं पारदस्य प्रतिपदविहितं पिष्टमेकत्र योज्यम्॥
पानीयेनैव कार्याः परिणतमरिचस्विन्नतुल्याश्च वट्यः।
प्रातः खाद्या द्विवट्यस्तदनु च हि कियच्छृङ्गवेरं सपर्णम्॥
पानीयं पीतमन्ते ध्रुवमपहरति क्षिप्रमादौ विकारान्।
कोष्ठं दुष्टाग्निजाताञ्ज्वरमुदररुजो राजयक्ष्मक्षयञ्च॥
कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं मेहमेदोविकाराञ्।
छर्दिं शूलाम्लपित्तं तृषमपि महतीं गुल्मजालं विशालम्॥
पाण्डत्वं रक्तपित्तं गरगरलगदान् पीनसं प्लीहरोगं।
हन्यादामाशयोत्थान् कफपवनकृतान् पित्तरोगानशेषान्॥
बल्यो वृष्यश्च भोग्यस्तरुणतरकरः सर्वरोगेषु शस्तः।
पथ्यं मांसैश्च यूषैर्घृतपरिलुलितैर्गव्यदुग्धैश्च भूयः॥
भोज्यं मिष्टं यथेष्टं ललितललनया दीयमानं मुदा य-
च्छृङ्गाराभ्रेण कामी युवतिजनशताभोगयोगादतुष्टः॥
वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनकतिचिदथ स्वेच्छया भोज्यमन्यद्।
दीर्घायुः काममूर्त्तिर्गतगदपलितो मानवोऽस्य प्रसादात्॥

१. कृष्णाभ्रकभस्म १०० ग्राम; २. कपूर, ३. जातीपत्री, ४. सुगन्धबाला, ५. गजपिप्पली, ६. तेजपत्र, ७. लौंग, ८. जटामांसी, ९. तालीशपत्र, १०. त्वक्, ११. नागकेशर, १२. कुष्ठ और १३. धातकीपुष्प—ये १२ द्रव्य प्रत्येक ३-३ ग्राम लें; १४. हरीतकी, १५. आमला, १६. बहेड़ा, १७. शुण्ठी, १८. पिप्पली और १९. मरिच—ये प्रत्येक द्रव्य १$\frac{१}{२}$-१$\frac{१}{२}$ ग्राम लें; २०. छोटी इलायची तथा २१. जायफल—प्रत्येक द्रव्य ६-६ ग्राम लें। भूधरयन्त्र द्वारा शुद्ध गन्धक ६ ग्राम एवं शुद्ध पारद ३ ग्राम। सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को खरल में एक साथ मर्दन कर कज्जली बना लें। ततः अभ्रकभस्म को मिलाकर मर्दन करें। तत्पश्चात् अन्य सभी काष्ठौषधों के चूर्ण को उक्त प्रमाण में लेकर एक साथ मर्दन करें और ३ घण्टे तक जल के साथ मर्दन करें। पानी में उबाले हुए मरिच के बराबर वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

उपयोग—प्रातःकाल शृंगाराभ्ररस की २-२ वटी ताम्बूलपत्र में रखकर आर्द्रक के टुकड़े रखकर खाना चाहिए। प्यास लगने पर पानी पीना चाहिए। पाचकाग्नि के दूषित होने से कोष्ठ में उत्पन्न हुए अनेक विकारों—ज्वर, उदरशूल, राजयक्ष्मा, क्षय, कास, श्वास, शोथ, नेत्ररोग, प्रमेह, मेदोरोग, वमन, शूल, अम्लपित्त, अतिपिपासा, भयंकर गुल्म, पाण्डु, रक्तपित्त, विषोत्पन्न दोष, पीनस, प्लीहरोग तथा आमाशयोत्थ रोग एवं वात-पित्त और कफ जन्य सम्पूर्ण रोगों को यह औषध नष्ट करता है। इसके अतिरिक्त यह औषधि बल्य एवं वृष्य है तथा इसके सेवन से वृद्ध मनुष्य युवा हो जाता है। अनुपान भेद से सभी रोगों में प्रशस्त है। इस शृंगाराभ्ररस के सेवन काल में मांस, मांसरस, घृत मिला हुआ मूँग का यूष तथा गोदुग्ध का सेवन बार-बार करना चाहिए। शृंगार एवं हाव-भाव-कटाक्ष से युक्त रमणियों के हाथों द्वारा आनन्दपूर्वक दिया हुआ यथेष्ट मिष्टान्नादि का पूर्ण रूप से भोजन करना चाहिए। इस शृंगाराभ्ररस का सेवन करने से कामी मनुष्य सैकड़ों रमणियों के साथ सम्भोग करने पर भी सन्तुष्ट नहीं होता है। इसके सेवन काल में पत्रशाकों एवं अम्ल द्रव्य का कुछ दिनों तक सेवन नहीं करना चाहिए। औषधि सेवन काल के बाद सभी पदार्थों का स्वच्छन्दतापूर्वक सेवन करना चाहिए। इसके सेवन से मनुष्य दीर्घायु हो जाता है, कामदेव के जैसा सुन्दर हो जाता है और मनुष्य वली, पलित तथा खालित्य रोग से मुक्त हो जाता है।

मात्रा—२५०मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—ताम्बूलपत्र एवं आर्द्रक खण्ड के साथ। **गन्ध**—कर्पूर एवं एला के गन्ध जैसी सुगन्ध। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—कास, यक्ष्मा, प्रमेह, उदरविकार, बल्य, वृष्य, मेध्य, रसायन एवं वाजीकरण है।

३५. चन्द्रामृतरस (र.सा.सं.)

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात् पलार्द्धञ्च विचक्षणः॥१११॥
कर्पूरं शाणकं दद्यात् स्वर्णं तोलकसम्मितम्।
ताम्रञ्च तोलकं दद्याद् विशुद्धं मारितं भिषक्॥११२॥
लौहं कर्षं क्षिपेत्तत्र वृद्धदारकजीरकम्।
विदारी शतमूली च क्षुरकञ्च बला तथा॥११३॥
मर्कट्यतिबला चैव जातीकोषफले तथा।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतसर्जरसं तथा॥११४॥
शाणभागं समादाय चैकीकृत्य प्रयत्नतः।
मधुना मर्दयेत्तावद् यावदेकत्वमागतम्॥११५॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः।
भक्षयेद्वटिकामेकां पिप्पलीमधुना सह॥११६॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १० ग्राम, ३. अभ्रक भस्म २० ग्राम, ४. कर्पूर ३ ग्राम, ५. सुवर्णभस्म १० ग्राम, ६. ताम्रभस्म १० ग्राम, ७. लोहभस्म १० ग्राम तथा ८.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विधाराचूर्ण, ९. जीराचूर्ण, १०. विदारीकन्द, ११. शतावरी-चूर्ण, १२. तालमखानाचूर्ण, १३. बलामूलचूर्ण, १४. कौंचबीजचूर्ण, १५. अतिबलाचूर्ण, १६. जायफलचूर्ण, १७ जातीपत्रीचूर्ण, १८. लवंगचूर्ण, १९. विजयाबीजचूर्ण तथा २०. सर्जरस (राल)—प्रत्येक ३-३ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर अन्य भस्मों को उस कज्जली में मिला दें। तत्पश्चात् काष्ठौषधियों के चूर्णों को एक साथ मिलाकर पुनः चलनी से छान लें और कज्जली मिश्रित भस्मों के साथ मिलाकर भली प्रकार मधु की एक भावना दें और ४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे चन्द्रामृत रस कहते हैं। इसे पिप्पलीचूर्ण १ ग्राम और मधु से मिलाकर १-१ वटी प्रातः-सायं सेवन करने से कास रोग नष्ट हो जाता है।

विशेष—इसमें मधु की भावना देने के लिए आचार्य का मानना है, किन्तु मधु की भावना से वटी सूखती नहीं है। अतः जल की भावना देनी चाहिए।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं पिप्पलीचूर्ण। **गन्ध**—कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—श्याववर्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—राजयक्ष्मा एवं कास में।

३५. कुमुदेश्वररस (र.सा.सं.)

हेमभस्म रसभस्म गन्धकं
मौक्तिकन्तु रसटङ्कणं तथा ।
तारकं गरुडसर्वतुल्यकं
काञ्जिकेन परिमर्द्य गोलकम् ॥११७॥
मृत्स्नया च परिवेष्ट्य शोषितं
भाण्डके लवणगेऽथ पाचयेत् ॥
एकरात्रमृदुसम्पुटेन वा
सिद्धिमेति कुमुदेश्वरो रसः ।
वल्लमस्य मरिचैर्घृतप्लुतै
राजयक्ष्मपरिशान्तये पिबेत् ॥११८॥

१. स्वर्णभस्म, २. रससिन्दूर, ३. शुद्ध गन्धक, ४. मुक्तापिष्टी, ५. शुद्ध पारद, ६. शुद्ध टङ्कण, ७. रजत भस्म और ८. स्वर्णमाक्षिकभस्म। प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग (समभाग) लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। तत्पश्चात् उसी में रससिन्दूर को अच्छी तरह से मर्दन करें। पुनः अन्य सभी भस्मों को मिलाकर काञ्जी के साथ भावना देकर गोला बना लें। अब उस गोले को नये एवं मोटे वस्त्र में लपेटकर ऊपर से १ अंगुल मोटा मिट्टी का लेप करें। अच्छी तरह से सुखाकर २४ घण्टे तक लवण यन्त्र में पाक करें या लघु पुट में पाक करें। ऐसा करने से यह कुमुदेश्वर रस पूर्णरूप से तैयार (सिद्ध) हो जाता है। इस कुमुदेश्वर रस को १ वल्ल (३७५ मि.ग्रा.) की मात्रा में मरिचचूर्ण एवं गोघृत के साथ प्रयोग करने से राजयक्ष्मा रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा. (३ रत्ती)। **अनुपान**—मरिचचूर्ण एवं उष्ण गोघृत के साथ। **गन्ध**—अम्ल एवं चुक्र गन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—राजयक्ष्मा एवं कास में।

३७. रसेन्द्रगुटिका (चक्रदत्त)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य स्वरसेन जयार्द्रयोः।
शिलायां खल्लयेत्तावद्यावत्पिण्डं घनं भवेत् ॥११९॥
जलकर्णाकाकमाचीरसाभ्यां भावयेत् पुनः ।
सौगन्धिकपलं भृङ्गस्वरसेन सुभावितम् ॥१२०॥
चूर्णितं रससंयुक्तमजाक्षीरपलद्वये ।
खल्लितं घनपिण्डन्तु गुटीः स्विन्नकलायवत् ॥१२१॥
कृत्वादौ शिवमभ्यर्च्य द्विजातीन् परितोष्य च ।
जीर्णान्नो भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः॥१२२॥
सर्वरूपं क्षयं कासं रक्तपित्तमरोचकम् ।
अपि वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति ॥१२३॥

शुद्ध पारद १२ ग्राम तथा शुद्ध गन्धक ४८ ग्राम लें। एक पत्थर के खरल में शुद्ध पारद को रखकर जया (भाँग) व आर्द्रकस्वरस के साथ तब तक मर्दन करें जब तक पारद गुटिका स्वरूप न हो जाय। तदुपरान्त जलकर्णा (नामक लता-विशेष—जलकर्णा रहने पर जलपिप्पली का ग्रहण करना चाहिए था) एवं काकमाचीस्वरस के साथ भावना दें। गुटिका होने पर उसे खरल से निकालकर पृथक् कर लें। पुनः उस खरल में शुद्ध गन्धक को रखकर भृङ्गराजस्वरस की ७ भावना दें। पुनः शुद्ध गन्धक एवं उपर्युक्त पारद-गुटिका दोनों को एक साथ मर्दन कर कज्जली बना लें। पुनः उक्त कज्जली को ८ तोला बकरी के दूध की भावना देकर पिण्डस्वरूप बना लें। ततः उबले हुए कलाय (छोटी मटर) के बराबर वटी बनावें और छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसके बाद भगवान् शिव की पूजा एवं औषधि अर्पण कर ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर औषधि का प्रयोग करें। इसके बाद अन्न जीर्ण होने पर शौचादि से निवृत्त होकर १ वटी गोदुग्ध के साथ प्रातःकाल में प्रयोग करें। ऐसा नित्य प्रयोग करने से क्षय, कास, रक्तपित्त, अरुचि एवं सैकड़ों वैद्यों द्वारा त्याज्य असाध्य अम्लपित्त भी नष्ट हो जाता है। इस औषधि के सेवनोपरान्त दूध एवं मांसरस तथा पथ्य लघु भोजन देना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—बकरी के दूध के गन्ध से युक्त। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त एवं कटु। **उपयोग**—क्षय, कास, रक्तपित्त एवं अम्लपित्त में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३८. बृहत् रसेन्द्रगुटिका

कुमार्या त्रिफलाचूर्णैश्चित्रकस्य रसैः क्रमात् ।
शोधयित्वा पुना राजीगृहधूमहरिद्रया ॥१२४॥
पक्वेष्टकारजोभिश्च धूर्तपत्रसेन च ।
शृङ्गबेररसेनापि शोधयित्वा पुनः पुनः ॥१२५॥
प्रक्षालयेत्पुनः पश्चाच्छानयेद्वसने घने ।
कर्षद्वयं रसेन्द्रस्य भावयेद्विजयारसे ॥१२६॥
शिलायां खल्लयेच्चापि यावच्चूर्णत्वमागतम् ।
जलकर्णाकाकमाचीरसाभ्यां भावयेत् पुनः ॥१२७॥
सौगन्धिकपलं शुद्धमर्द्धं मरिचटङ्कणम् ।
माक्षिकञ्च शिखिग्रीवं तालकं चाभ्रकं तथा ॥१२८॥
एतांस्तु मिलितान् दत्त्वा भावयेदार्द्रकद्रवैः ।
रक्तिद्वयप्रमाणेन कारयेद् गुटिकां भिषक् ॥१२९॥
जीर्णान्ने भोजयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ।
हन्ति कासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तमरोचकम् ॥१३०॥
पाण्डुक्रिमिज्वरहरं कृशानां पुष्टिवर्द्धनम् ।
वाजीकरणमुद्दिष्टमम्लपित्तहरं परम् ॥१३१॥

१. शुद्ध पारद २५ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम; ३. मरिचचूर्ण, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ६. शुद्ध तुत्थ, ७. हरताल तथा ८. अभ्रकभस्म—प्रत्येक २५ ग्राम।

भावना एवं मर्दन—१. घृतकुमारी मज्जा, २. त्रिफलाचूर्ण, ३. चित्रकमूलस्वरस, ४ राजिका, ५. गृहधूम, ६. हरिद्राचूर्ण, ७. पक्व इष्टिकाचूर्ण और ८. धत्तूरपत्रस्वरस, ९. आर्द्रकस्वरस।

मुख्य घटक—शुद्ध गन्धक ४६ ग्राम तथा शेष पारदादि द्रव्य २३-२३ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद रखकर घृतकुमारीस्वरस, त्रिफलाचूर्ण, चित्रकमूलस्वरस, राजिका, गृहधूम, हरिद्राचूर्ण, ईंटे का चूर्ण, धत्तूरपत्रस्वरस एवं आर्द्रक रस के साथ पृथक्-पृथक् ३-३ घण्टे तक पारद को मर्दन करें। जब गाढ़ा पिण्ड हो जाय तो सोष्ण जल से उस पारद-पिण्ड को हाथ से मसलकर ७ बार प्रक्षालन करें। पुनः मोटे एवं गाढ़े नवीन वस्त्र में रखकर पारद को छान लें। पुनः उक्त पारद को खरल में रखकर भाँग के स्वरस या क्वाथ से तब तक मर्दन करें जब तक वह पारद चूर्ण न हो जाय। पुनः उस पारद में जलकर्णा एवं काकमाचीस्वरस की भावना दें। तदनन्तर उस पारद को वस्त्रपूत कर साफ खरल में रखें तथा द्विगुण शुद्ध गन्धक के साथ मर्दन कर सूक्ष्म कज्जली बना लें। तदनन्तर अभ्रकभस्म, शुद्ध हरिताल, शुद्ध तुत्थ मिलाकर मर्दन करें। पुनः माक्षिकभस्म आदि शेष सभी द्रव्यों को उस कज्जली में मिलाकर आर्द्रकस्वरस के साथ ६ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें।

नोट—कज्जली तथा अन्य भस्मों को मिलाकर एक से दो दिनों तक मर्दन करना चाहिए। इस श्रेष्ठ औषधि की पूजा-अर्चना के बाद शुभ तिथि-नक्षत्र में पवित्र होकर जीर्णाहार के बाद प्रातः काल सोष्ण गोदुग्धानुपान से १ वटी सेवन करना चाहिए।

पथ्य में गोदुग्ध एवं मांसरसादि का सेवन करना चाहिए। इस का सेवन कास, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, अरुचि, पाण्डु, कृमि, ज्वर एवं अम्लपित्तादि रोगों को नष्ट करता है। इस औषधि से दुर्बल शरीर पुष्ट हो जाता है। यह वाजीकरण के लिए उत्तमोत्तम औषधि है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—सिता मिला गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—कास, क्षय, शरीर, बृंहणार्थ एवं वाजीकरणार्थ।

३९. कल्याणसुन्दराभ्ररस

वज्राभ्रमेकपलिकं पुटनैः सुजीर्णं
धात्रीपयोदबृहतीशतमूलिकेक्षु ।
बिल्वाग्निमन्थजलवासककण्टकारी-
श्योनाकपाटलिबला च रसैरमीषाम् ॥१३२॥
सम्मर्दितं पलमितैः पृथगेकशश्च
गुञ्जासमं सुवलितं वटिकाकृतञ्च ।
यक्ष्मक्षयौ सकलशोषबलासपित्तं
श्वासं समीरमरुचिं कसनाङ्गसादम् ॥१३३॥
शोथं स्वरक्षयमजीर्णमुदर्दशूलं
मेहं ज्वरं विषमुरोग्रहपाण्डुहिक्काः ।
कार्श्यं क्रिमिं बलविनाशनमम्लपित्तं
प्लीहामयं सहलीमकमस्त्रगुल्मम् ॥१३४॥
तृष्णामवातनिचयं ग्रहणीं प्रदुष्टां
विस्फोटकुष्ठनयनास्यशिरोगदांश्च ।
मूर्च्छां वमिं विरसतां विनिहन्ति सद्यः
कल्याणसुन्दरमिदं बलदं सुवृष्यम् ॥१३५॥
मेध्यं रसायनवरं सकलामयानां
नाशाय यक्ष्मनिवहे कथितं हरेण ॥१३६॥

१. वज्राभ्रकभस्म ४६ ग्राम, २. आमलास्वरस, ३. नागरमोथाक्वाथ, ४. बड़ी कण्टकारीक्वाथ, ५. शतावरीस्वरस, ६. इक्षुरस, ७. बिल्वमूलत्वक्क्वाथ, ८. अरणीमूलत्वक्क्वाथ, ९. सुगन्धबालाक्वाथ, १०. वासापत्रस्वरस, ११. छोटी कण्टकारीक्वाथ, १२. सोनापाठामूलत्वक्क्वाथ, १३. पाढलमूलत्वक्क्वाथ तथा १४. बलामूलस्वरस या क्वाथ—इन १३ काष्ठौषिधयों के ४-४ तोला स्वरस या क्वाथ (४६ मि.ली.) लें।

सर्वप्रथम पत्थर के खरल में अभ्रकभस्म के बराबर आमला का स्वरस ४६ मि.ली. डालकर ३ घण्टे तक दृढ़ मर्दन करें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसा प्रत्येक १३ काष्ठौषधिस्वरसों के साथ पृथक्-पृथक् ३-३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस कल्याणसुन्दराभ्रक रस को महादेवजी ने सभी रोगों को दूर करने के लिए बनाया है। इस औषधि को १-१ वटी की मात्रा में रोगानुसार अनुपान से लेने पर निम्नलिखित रोग नष्ट हो जाते हैं।

उपयोग—राजयक्ष्मा, क्षय, सभी प्रकार के शोष, कफविकार, पित्तविकार, वातविकार, श्वास, अरुचि, कास, अङ्गसाद, शोथ, स्वरक्षय, अजीर्ण, उदर्दशीतपित्त, शूल, प्रमेह, ज्वर, विषविकार, उरोग्रह, पाण्डु, हिक्का, कृशता, कृमि, बलनाश, अम्लपित्त, प्लीहारोग, हलीमक, रक्तज गुल्म, तृष्णा, आमवात, ग्रहणीरोग, विस्फोट, कुष्ठ, नेत्ररोग, मुखरोग, शिरोरोग, मूर्च्छा, वमन और मुख की विरसता आदि अनेक रोगों को यह 'कल्याण- सुदराभ्र रस' नष्ट करता है। यह रसौषधि बलदायक है, श्रेष्ठ वृष्य है, मेध्य है, रसायन में श्रेष्ठ है। समस्त रोगों एवं यक्ष्मा के विभिन्न लक्षणों के दूरीकरणार्थ श्रीमहादेव जी ने इसे बनाया है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती)। **अनुपान**—मधु-घृत, दुग्ध आदि रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्यावाभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—राजयक्ष्मा-कासादि रोगों में।

४०. काञ्चनाभ्ररस-१ (र.सा.सं.)

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम् ।
विद्रुमञ्चाभया तारं कस्तूरी च मनःशिला ॥१३७॥
प्रत्येकं तिन्दुमात्रञ्च सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
वारिणा वटिका कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ॥१३८॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः ।
नानारोगप्रशमनं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥१३९॥
क्षयं हन्ति तथा कासं श्लेष्मपित्तसमुद्भवम् ।
प्रमेहं विविधञ्चैव दोषत्रयसमुत्थितम् ॥१४०॥
कफजान् वातजान् रोगान् नाशयेत्सद्य एव हि ।
बलवृद्धिं वीर्यवृद्धिं लिङ्गदार्ढ्यं करोति च ॥१४१॥
श्रीकरः पुष्टिजननो नानारोगनिषूदनः ।
गहनानन्दनाथोक्तो रसोऽयं काञ्चनाभ्रकः ॥१४२॥

१. स्वर्णभस्म, २. रससिन्दूर, ३. मोतीपिष्टी, ४. लौहभस्म, ५. अभ्रकभस्म, ६. प्रवालभस्म, ७. हरीतकीचूर्ण, ८. चाँदी-भस्म, ९. कस्तूरी तथा १०. शुद्ध मनःशिला—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें।

सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में रससिन्दूर को मर्दन करें। तत्पश्चात् अभ्रकभस्म, स्वर्णभस्म आदि क्रमशः मिलाकर मर्दन करें और जल की भावना देकर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। रोगानुसार अनुपान के साथ इसका प्रयोग करने निम्नलिखित रोग नष्ट हो जाते हैं।

उपयोग—यह औषधि सभी प्रकार के उपद्रवों से युक्त अनेक प्रकार के रोगों को नाश करती है। यथा—क्षय, कफ-पित्तोद्भव कास, त्रिदोषज प्रमेह, मधुमेह, सम्पूर्ण वातरोग और सम्पूर्ण कफज रोगों को नाश करता है। यह बलवर्धक है, वीर्यवर्धक है, लिङ्ग को दृढ़ (कठिन) करता है, शरीर की शोभा बढ़ाता है, शरीर पुष्टिकारक है। श्री आचार्य गहनानन्द नाथ ने इस काञ्चनाभ्र रस का लोकहित के लिए निर्माण किया है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती)। **अनुपान**—मधु-घी, दूध एवं रोगानुसार। **वर्ण**—कस्तूरी युक्त सुगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कषाय-कटु रसयुक्त। **उपयोग**—क्षय-कासादि में; बल्य, वृष्य एवं वाजीकर है।

४१. काञ्चनाभ्ररस-२ (र.सा.सं.)

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम् ।
विद्रुमं मृतवैक्रान्तं तारं ताम्रञ्च वङ्गकम् ॥१४३॥
कस्तूरिका लवङ्गञ्च जातीकोषैलवालुकम् ।
प्रत्येकं तिन्दुमात्रञ्च सर्वं मर्द्यं प्रयत्नतः ॥१४४॥
कन्यानीरेण संमर्द्यं केशराजरसेन च ।
अजाक्षीरेण सम्भाव्यं प्रत्येकं दिवसत्रयम् ॥१४५॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ।
अनुपानं प्रदातव्यं यथादोषानुसारतः ॥१४६॥
नानारोगप्रशमनं सर्वोपद्रवसंयुतम् ।
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ॥१४७॥
प्रमेहान् विंशतिञ्चैव दोषत्रयसमुत्थितान् ।
सर्वरोगं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥१४८॥

१. स्वर्णभस्म, २. रससिन्दूर, ३. मोतीपिष्टी, ४. लौहभस्म, ५. अभ्रकभस्म, ६. प्रवालभस्म, ७. वैक्रान्तभस्म, ८. रजत-भस्म, ९. ताम्रभस्म, १०. वङ्गभस्म, ११. कस्तूरी, १२. लवंग चूर्ण, १३. जातीपत्री और १४. एलबालुकचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ कर्ष लें।

भावना-द्रव्य—घृतकुमारीमज्जा, भृङ्गराजस्वरस तथा बकरी का दूध।

सर्वप्रथम एक साफ खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह से मर्दन करें तथा उसमें प्रथम अभ्रकभस्म एवं स्वर्णभस्म मिलाकर शेष अन्य द्रव्यों को मिलावें और घृतकुमारीस्वरस की ३ भावना देकर तीन दिनों तक मर्दन करें। इसी प्रकार भृङ्गराजस्वरस और बकरी के दूध की भी ३-३ भावना ३-३ दिनों तक दें। इसके बाद ४-४ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उपयोग—यह औषधि सभी द्रवों से युक्त अनेक प्रकार के रोगों को विविधानुपान से सेवन करने पर नाश करती है, विशेषकर क्षय, कास, श्वास, राजयक्ष्मा एवं त्रिदोषोत्पन्न बीस प्रकार के प्रमेह। जिस प्रकार सूर्य अन्धकार का नाश कर देता है उसी प्रकार यह औषधि सर्व रोगों का नाश करती है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. (४-४ रत्ती)। **अनुपान**—मधु-घृत-दूध तथा रोगानुसार अनुपान से। **गन्ध**—कस्तूरी जन्य सुगन्ध से युक्त। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु एवं तिक्त। **उपयोग**—कास, जयक्ष्मा, क्षयादि में।

४२. मृगाङ्करस (स्वल्प)-१ (र.सा.सं.)

रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं भजेत्।
दोषं बुद्ध्वाऽनुपानेन मृगाङ्कोऽयं क्षयापहः।
(रक्तिकाऽर्द्धप्रमाणेन तत्सेव्यं कणया सह ॥१४९॥
नाम्ना मृगाङ्कः स्वल्पोऽयं श्वासं कासं क्षयं ध्रुवम्।
सेवनान्नाशयत्याशु बलवर्णाग्निवर्द्धनः) ॥१५०॥

रससिन्दूर १ भाग तथा स्वर्णभस्म १ भाग लें। दोनों द्रव्यों को खरल में एक साथ मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। $\frac{१}{२}$ रत्ती की मात्रा में इस औषधि को २ रत्ती पिप्पलीचूर्ण और मधु से सेवन कराने से क्षयरोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—६५ मि.ग्रा. ($\frac{१}{२}$ रत्ती)। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—गन्धहीन। **स्वाद**—निःस्वादु। **वर्ण**—रक्त वर्ण। **उपयोग**—क्षय एवं कासादि में।

४३. मृगाङ्करस-२ (र.सा.सं.)

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं ततः।
गन्धकञ्च समं तेन रसपादन्तु टङ्कणम् ॥१५१॥
सर्वं तद्गोलकं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत्।
भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥१५२॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य देयं गुञ्जाप्रमाणतः।
मृगाङ्कसंज्ञः स ज्ञेयो रोगराजनिकृन्तनः ॥१५३॥
रसस्य भस्मना हेम भस्मीकृत्य प्रयोजयेत्।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य मरिचैः सह भक्षयेद् ॥१५४॥
पिप्पलीदशकैर्वाऽथ मधुना लेहयेद् बुधः।
पथ्यं सुलघु मांसेन प्रायशोऽस्य प्रयोजयेत् ॥१५५॥
दध्याजं गव्यतक्रं वा मांसमाजं प्रयोजयेत्।
एलाजाजीमरीचैस्तु संस्कृतैरविदाहिभिः ॥१५६॥
व्यञ्जनैर्घृतपक्वैश्च नातिक्षीरैश्च हिङ्गुभिः।
वृन्ताकं तैलबिल्वादि कारवेल्लञ्च वर्जयेत्।
स्त्रियं परिहरेद् दूरं कोपञ्चापि परित्यजेत् ॥१५७॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. स्वर्णभस्म १ भाग, ३. मोती-पिष्टि २ भाग, ३. शुद्ध गन्धक २ भाग तथा ४. शुद्ध टङ्कण $\frac{१}{४}$ भाग लें। पत्थर के खरल में शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक मिलाकर मर्दन करें। २ दिन तक दृढ़ मर्दन के बाद अच्छी निश्चन्द्र कज्जली बन जायेगी। ततः सुवर्णभस्म आदि अन्य द्रव्यों को मिलाकर एक दिन तक काञ्जी के साथ मर्दन कर उन औषधों का १ गोलक बना लें। ततः उसे वस्त्रबद्धकर लवणयन्त्र के मध्य रखकर १२ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर उक्त गोलक पोटली को निकालकर खरल में अच्छी तरह से पीसकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें व ४ रत्ती मात्रा में प्रयोग करें। इसे मृगाङ्करस कहते हैं। इसके प्रयोग से राजयक्ष्मा रोग नष्ट हो जाता है। इस भस्म मारित स्वर्णभस्म का प्रयोग करें। मरिचचूर्ण या १० पिप्पलीचूर्ण और मधु के साथ इस औषधि को ४ रत्ती की मात्रा में प्रयुक्त करें।

पथ्य—लघु भोजन, मांसरस, बकरी का दही, गाय का तक्र अथवा अजामांस आदि का प्रयोग करें।

अपथ्य—अत्यन्त घृत देकर पकाया हुआ शाक-सब्जी, अधिक क्षार, हींग, छोटी-बड़ी इलायची, मरिच, दाहोत्पादक मसालें नहीं दिये जायें। बैगन, बिल्वफल, करैला एवं तैल नहीं खाना चाहिए। क्रोध एवं स्त्रियों का सेवन दूर से ही त्याग देना चाहिए।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती)। **अनुपान**—मरिचचूर्ण या पिप्पलीचूर्ण तथा मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—राजयक्ष्मा में।

४४. राजमृगाङ्करस (र.र.समु.)

रसभस्मत्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम्।
मृतताम्रस्य भागैकं शिलातालकगन्धकम् ॥१५८॥
प्रतिभागद्वयं तत्राप्येकीकृत्य निधापयेत्।
वराटिका तेन पूर्या चाजाक्षीरेण टङ्कणम् ॥१५९॥
पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृदो भाण्डे निधापयेत्।
शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम् ॥१६०॥
रसो राजमृगाङ्कोऽयं चतुर्गुञ्जं क्षयापहम्।
दशपिप्पलिकैः क्षौद्रैर्मरिचैरेकविंशकैः।
सघृतैर्दापयेद्वातपित्तश्लेष्मोद्भवे क्षये ॥१६१॥

१. रससिन्दूर ३ भाग, २. स्वर्णभस्म १ भाग, ३. ताम्रभस्म १ भाग, ४. शुद्ध मैनसिल २ भाग, ५. शुद्ध हरताल २ भाग, ६. शुद्ध गन्धक २ भाग तथा औषधि की मात्रानुसार अनेक बड़ी-बड़ी वराटिका लें। आवश्यकतानुसार टङ्कण लेना चाहिए। खरल में पहले रससिन्दूर को सूक्ष्म मर्दन करें, ततः गन्धक मिलाकर मर्दन करें इसके बाद अन्य द्रव्यों को मिलाकर अच्छी तरह पीस लें। पुनः बकरी के दूध के साथ ३ घण्टे तक सभी द्रव्यों को मर्दन करें। औषधि कुछ गाढ़ी लप्सी जैसी हो जाय तो

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

साफ धुली हुई बड़ी वराटिका में औषधि रखें। पुनः टङ्कण को दूसरे खरल में थोड़े बकरी के दूध के साथ पीसकर पेस्ट जैसा बना लें और औषधि-पूरित वराटिका के मुख को इसी से बन्द कर दें। इस तरह औषधि-पूरित ५-६ वराटिका को एक छोटी हाँडी में रखकर हाँडी का मुख शराव से सम्पुटित करें और गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर हाँडी निकालकर सावधानी से उसके अन्दर की कौड़ी निकाल लें। कौड़ी के मुख में लेपित टङ्कण हटाकर वराटिका सहित औषधि को खरल में पीसकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को ४ रत्ती की मात्रा में १० पिप्पली और २१ मरिच के चूर्ण, घृत एवं मधु से प्रयोग करने पर राजयक्ष्मा रोग नष्ट हो जाता है। इसे राजमृगाङ्क रस कहते हैं। इसेक प्रयोग से वातज, पित्तज, कफज एवं त्रिदोषज यक्ष्मारोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—राजयक्ष्मा में।

४५. महामृगाङ्करस (र.सा.सं.)

निरुत्थं भस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्म सूतकम्।
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुकपुच्छं चतुर्गुणम् ॥१६२॥
मृतताप्यं च पञ्चांशं तारभस्म च षड्गुणम्।
सप्तभागं प्रवालं च रसतुल्यं च टङ्कणम् ॥१६३॥
सर्वमेकत्र संमर्द्य त्रिदिनं निम्बुवारिणा।
तं ततो गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे ॥१६४॥
लवणैः पात्रमापूर्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत्।
तन्मुखं च मृदा रुद्ध्वा पचेद् यामचतुष्टयम् ॥१६५॥
आकृष्य चूर्णयेच्छुद्धं चतुःषष्टिविभागतः।
वज्रं च तदभावे तु वैक्रान्तं षोडशांशकम् ॥१६६॥
महामृगाङ्कः खलु सिद्ध एष
श्रीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम्।
वल्लोऽस्य सेव्यो मरिचाज्ययुक्तः
सेव्योऽथवा पिप्पलिकासमेतः ॥१६७॥
अत्रोपचाराः कर्त्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः।
बल्यं घृतं भोक्तव्यंत्याज्यं सूतविरोधि यत् ॥१६८॥
यक्ष्माणं बहुरूपिणं ज्वरगणं गुल्मं तथा विद्रधिं
मन्दाग्निं स्वरभेदकासमरुचिं वान्तिं च मूर्च्छां भ्रमम्।
अष्टावेव महागदान् गदगणान् पाण्ड्वामयं कामलां
पित्तार्त्तिं समलग्रहान् बहुविधानन्यांस्तथा नाशयेत् ॥

१. निरुत्थसुवर्णभस्म १ भाग, २. रससिन्दूर २ भाग, ३. मोती पिष्टि ३ भाग, ४. शुद्ध गन्धक ४ भाग, ५. स्वर्णमाक्षिकभस्म ५ भाग, ६. चाँदीभस्म ६ भाग, ७. प्रवालभस्म ७ भाग, ८. शुद्ध टङ्कण २ भाग तथा ९. हीराभस्म $\frac{१}{२}$ भाग अथवा अभाव में २ भाग वैक्रान्त भस्म मिलावें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह सूक्ष्म मर्दन करें। ततः गन्धक एवं अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद निम्बु के स्वरस में ३ दिनों तक दृढ़ मर्दन करें। बाद में एक बड़ा-सा गोलक बनाकर पहले छाया में बाद में तेज धूप में अच्छी तरह सुखा लें। पुनः लवणयन्त्र के मध्य में इस गोलक को रखें और लवणयन्त्र का मुख एक वैसे ही पात्र से ढककर सावधानी से कपड़मिट्टी करें और चूल्हे पर चढ़ाकर १२ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर लवण यन्त्र खोलकर सावधानी से मध्य स्थित औषधि गोलक निकालकर खरल में मर्दन करें। अब इस सुपाचित औषधि को तौलें। यह प्रायः ३० भाग होगा। यदि उपलब्ध हो तो हीराभस्म सभी द्रव्यों का ६४वाँ भाग (प्रायः आधा भाग) अथवा अनुपलब्ध होने पर १६वाँ भाग (प्रायः २ भाग) वैक्रान्त भस्म इसमें मिलाकर मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

यह राजमृगाङ्क रसौषधि सिद्ध हो गयी। इसे आचार्य नन्दी-नाथ ने प्रकट किया था। इस औषधि को ३ रत्ती की मात्रा में मरिचचूर्ण १ माशा एवं घृत के साथ अथवा पिप्पलीचूर्ण १ माशा और मधु के साथ सेवन करने से राजयक्ष्मा नष्ट हो जाता है। इस औषधि के सेवनकाल में यक्ष्मा में वर्णित सभी पथ्य आहार-विहार का पालन करना चाहिए। बलकारक भोजन, दूध एवं घृत तथा मांसरसादि का भोजन करना चाहिए। पारद-विरोधि (ककाराष्टक आदि) का भोजन त्याग देना चाहिए।

उपयोग—त्रिविध, षड्विध, एकादशविध यक्ष्मा, अनेकों प्रकार के ज्वर, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद, कास, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, [१]आठ प्रकार के महारोगों (वात-व्याधि, अश्मरी, कुष्ठ, प्रमेह, उदररोग, भगन्दर, अर्श, ग्रहणी) का समूह, पाण्डु, कामला, पित्तजन्य तथा मलावरोधजन्य रोग एवं अन्य बहुत प्रकार के रोगों को यह औषध नाश करता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा. (३ रत्ती)। **अनुपान**—मरिचचूर्ण एवं घृत या पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ वर्ण। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, कास एवं ज्वरों में।

४६. मृगाङ्करसवटी

पारदो गन्धकः शुद्धो लौहमभ्रञ्च टङ्कणम्।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं तालीशं पिप्पली तथा ॥१७०॥
रक्तोत्पलं तथा लाक्षा सर्वमेकीकृतं शुभम्।
वासाक्वाथेन सम्भाव्य वल्लमात्रां वटीं चरेत् ॥१७१॥
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम्।
वासाक्वाथेन पिप्पल्या चोदुम्बररसेन वा ॥१७२॥

१. वातव्याध्यश्मरीकुष्ठमेहोदरभगन्दराः।
अर्शांसि ग्रहणी चेति महारोगाः प्रकीर्त्तिताः॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
वातश्लेष्मोद्भवं वापि पित्तश्लेष्मसमुद्भवम् ॥१७३॥
सर्वं कासं निहन्त्याशु ज्वरं श्वाससमन्वितम् ।
रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां दाहं मेहं वमिं भ्रमिम् ॥१७४॥
प्लीहागुल्मोदरानाहकृमिकण्डूविनाशिनी ।
मृगाङ्कवटिका ह्येषा बलवर्णाग्निकारिणी ॥१७५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रकभस्म, ५. शुद्ध टङ्कण, ६. शुण्ठीचुर्ण, ७. पिप्पलीचूर्ण, ८. मरिचचूर्ण, ९. आमलाचूर्ण, १०. हरीतकीचूर्ण, ११. बहेड़ा चूर्ण, १२. चव्यमूलचूर्ण, १३. तालीशपत्रचूर्ण, १४. पिप्पली-चूर्ण, १५. रक्तकमल पुष्प और १६. लाक्षाचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग अर्थात् समभाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर अन्य भस्मों एवं काष्ठौषधों के सभी चूर्णों को उचित मात्रा में मिला लें और खरल में वासापञ्चाङ्गक्वाथ की भावना देकर ३-३ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रखें। इस वटी को रक्तकमलपुष्परस या क्वाथ से, पिप्पलीचूर्ण और वासाक्वाथ से अथवा पिप्पलीचूर्ण और गूलरत्वक्क्वाथ से सेवन करने से वातिक, पैत्तिक, कफज, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, वातश्लेष्मज, पित्तश्लेष्मज तथा सभी प्रकार के कास शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। ज्वरयुक्त श्वास, रक्तष्ठीवन, तृष्णा, दाह, मेह, वमन, भ्रम, गुल्म, प्लीहरोग, उदररोग, आनाह, कृमि एवं सभी प्रकार के कण्डूरोग का यह मृगाङ्कवटिका नाश करती है। साथ ही यह वटिका बल, वर्ण और अग्नि को बढ़ाती है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा. (३ रत्ती)। **अनुपान**—रक्तकमलपुष्प रस, वासास्वरस, उदुम्बरक्वाथ एवं पिप्पलीचूर्ण से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ वटिका। **स्वाद**—तिक्त रस। **उपयोग**—क्षय, कास, ज्वरादि में।

४७. मृगाङ्कचूर्ण

प्रवालं मौक्तिकं शङ्खं वङ्गञ्चैव समांशकम् ।
निम्बक्वाथेन सम्मर्द्य ततो गजपुटे पचेत् ॥१७६॥
वांशी ग्राह्या सर्वतुल्या हिंगुलं तत्कलांशकम् ।
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥१७७॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं कृच्छ्ररोगोपशान्तये ।
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ॥१७८॥
स्वरभेदं ज्वरं मेदान् दोषत्रयसमुत्थितान् ।
मृगाङ्कचूर्णमेतद्धि कासरोगकुलान्तकृत् ॥१७९॥

१. प्रवालभस्म, २. मोतीपिष्टि, ३. शंखभस्म और ४. वङ्गभस्म—ये चारों द्रव्य समभाग अर्थात् प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। पत्थर के खरल में चारों द्रव्यों को रखकर मर्दन करें और निम्बमूलत्वक्क्वाथ से ३ घण्टे तक मर्दन करें। सूखने पर इसे १ गोलक रूप में बना लें तथा अच्छी तरह से सुखा लें। शराव सम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर शराव-सम्पुट से सावधानीपूर्वक औषधि निकालकर तौलें। इसी औषधि के बराबर असली वंशलोचन चूर्ण मिलावें और शुद्ध हिंगुलचूर्ण वंशलोचन के १६वाँ भाग मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। २ रत्ती की मात्रा में इस मृगाङ्कचूर्ण और १ माशा पिप्पलीचूर्ण मधु के साथ मिलाकर खाने से कष्टसाध्य क्षय, राजयक्ष्मा, कास, श्वास, स्वरभेद, ज्वर और त्रिदोषज सभी प्रमेहों को नाश करता है। विशेषकर यह मृगाङ्क चूर्ण कासरोग को समूल नष्ट कर देता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—किञ्चित् तिक्त। **उपयोग**—क्षय, राजयक्ष्मा तथा सभी प्रकार के कास में।

४८. रत्नगर्भपोटली (र.सा.सं.)

रसं वज्रं हेम तारं नागं लौहञ्च ताम्रकम् ।
तुल्यांशं मरिचं योज्यं मुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥१८०॥
शङ्खञ्च तुत्थं तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः ।
मर्दयित्वा विचूर्ण्याथ तेन पूर्या वराटिका ॥१८१॥
टङ्कणं रविदुग्धेन पिष्ट्वा तन्मुखमन्धयेत् ।
मृद्भाण्डे तं निरुद्ध्याथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥१८२॥
आदाय चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्ड्याः सप्त भावनाः ।
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः ॥१८३॥
द्रवैर्भाव्यं ततः शोष्यं देयं गुञ्जैकसम्मितम् ।
योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैस्तथा ॥१८४॥
यक्ष्मरोगं निहन्त्याशु साध्यासाध्यं न संशयः ।
महारोगाष्टके कासे ज्वरे श्वासेऽतिसारके ॥
पोट्टलीरत्नगर्भोऽयं योगवाही नियोजयेत् ॥१८५॥

१. रससिन्दूर, २. हीराभस्म, ३. स्वर्णभस्म, ४. चाँदीभस्म, ५. नागभस्म, ६. लौहभस्म, ७. ताम्रभस्म, ८. मरिचचूर्ण, ९. मोतीपिष्टि, १०. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ११. प्रवालभस्म, १२. शंखभस्म और १३. शुद्ध तुत्थ—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रससिन्दूर को पीसकर अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर चित्रकमूलक्वाथ से भावना दें। पुनः उस मर्दित सम्पूर्ण औषधि को आवश्यकतानुसार ८-१० बड़ी कौड़ी (वराटिका) में भरें और टंकण को अर्कदुग्ध से भावना देकर उस टंकण पेस्ट से कौड़ी का मुख बन्द कर दें। ततः एक आवश्यकतानुसार छोटी-बड़ी हाँडी में सभी औषधि-पूरित वराटिका को रखकर शराव से सन्धि बन्धकर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर हाँडी को सावधानीपूर्वक खोलकर कौड़ी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

निकाल लें। कौड़ी के मुख से टंकण का लेप हटा दें। इसके बाद जली हुई कौड़ी सहित पूरी दवा को खरल में पीस लें। तदनन्तर निर्गुण्डी (सम्भालू) पत्रस्वरस की ७ भावना दें। पुनः आर्द्रक स्वरस की ७ भावना दें और चित्रकमूलक्वाथ की २१ भावना दें। औषधि को धूप में अच्छी तरह सुखाने के बाद काचपात्र में सुरक्षित कर लें।

उपयोग—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती) की मात्रा में पिप्पलीचूर्ण एवं मधु अथवा मरिचचूर्ण एवं घृत के साथ प्रयोग करने से साध्य एवं असाध्य दोनों प्रकार के राजयक्ष्मा रोग नष्ट हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। इसके अतिरिक्त आठ प्रकार के महारोग (वातव्याधि-अश्मरी-कुष्ठ-प्रमेह-उदररोग-भगन्दर-अर्श एवं संग्रहणी), कास, ज्वर, श्वास एवं अतिसार रोग भी नष्ट हो जाते हैं। यह 'रत्नगर्भपोटली' योगवाही है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती)। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से या मरिचचूर्ण एवं घी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, कास, श्वास एवं ज्वर में।

४९. हेमगर्भपोटली (र.सा.सं.)

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम्।
मृतताम्रस्य भागैकं भागैकं गन्धकस्य च ॥१८६॥
मर्दयेच्चित्रकद्रावैर्द्वियामान्ते समुद्धरेत्।
पूर्या वराटिका तेन टङ्कणेन विलेपयेत् ॥१८७॥
वराटीं पूरयेद्भाण्डे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्।
विचूर्णयेत्स्वाङ्गशीते पोट्टलीं हेमगर्भिकाम् ॥
मृगाङ्कवच्च गुञ्जैकाभक्षणाद् राजयक्ष्मनुत् ॥१८८॥

१. रससिन्दूर ३ भाग, २. स्वर्णभस्म १ भाग, ३. ताम्रभस्म १ भाग तथा ४. गन्धक १ भाग लें। एक पत्थर के खरल में पहले रससिन्दूर को अच्छी तरह पीस लें, ततः शुद्ध गन्धक मिलावें। पुनः स्वर्ण एवं ताम्रभस्म मिलाकर चित्रकमूलक्वाथ के साथ ६ घण्टे तक अच्छी तरह मर्दन करें। पूर्व पोटली जैसा ही बड़ी-बड़ी कौड़ियों में औषधों को भरकर टङ्कण के पेस्ट से कौड़ी के मुख को बन्द करें। इसके बाद सभी औषधि-पूरित कौड़ियों को एक मिट्टी की हाँडी में डालकर शराव से हाँडी का मुख बन्द कर दें और कपड़मिट्टी करें। ततः गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सावधानी से हाँडी खोलकर औषधि-पूरित कौड़ियों को निकालें और उससे टंकण निकालकर कौड़ी सहित औषधि को खरल में अच्छी तरह पीस लें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'हेमगर्भपोटली' को मृगाङ्क रस जैसा १ रत्ती की मात्रा में राजयक्ष्मा-नाशनार्थ प्रयोग करें। इसकी मात्रा २ रत्ती से अधिक होनी चाहिए थी।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती)। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—राजयक्ष्मा एवं कास में।

५०. लोकेश्वरपोटली (र.सा.सं.)

भस्मसूताच्चतुर्थांशं मृतस्वर्णं प्रदापयेत्।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना ॥१८९॥
पूर्या वराटिका तेन टङ्कणेन निरुद्ध्य च।
भाण्डे चूर्णप्रलिप्तेऽथ क्षिप्त्वा रुद्ध्वा च मृन्मये ॥१९०॥
शोषयित्वा गजपुटे पुटेत्तं चापराह्णिके।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चूर्णयित्वा तु विन्यसेत् ॥१९१॥
एष लोकेश्वरो नाम वीर्यपुष्टिविवर्द्धनः।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥१९२॥
भक्षयेत् पयसा भक्त्या लोकेशः सर्वदर्शनः।
अङ्गकार्श्येऽग्निमान्द्ये च कासे पित्ते क्षयेऽपि च ॥१९३॥
मरिचैर्घृतयुक्तैश्च भक्षयेद्दिवसत्रयम्।
लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं दधि च योजयेत् ॥१९४॥
एकविंशदिनं यावत् सघृतं मरिचं पिबेत्।
पथ्यं मृगाङ्कवद्देयं शयीतोत्तानपादतः ॥१९५॥
ये शुष्का विषमाशनैः क्षयरुजा व्याप्ताश्च येऽष्ठीलया
ये पाण्डुत्वहताः कुवैद्यविधिना ये शोषिणो दुर्भगाः।
ये तप्ता विविधैर्ज्वरैः श्रममदोन्मादैः प्रमादं गता-
स्ते सर्वे विगतामया हतरुजा स्युः पोट्टलीसेवनात् ॥

१. रससिन्दूर ४ भाग, २. स्वर्णभस्म १ भाग तथा ३. शुद्ध गन्धक ८ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह से पीस लें। तदनन्तर उसमें शुद्ध गन्धक एवं स्वर्णभस्म मिलाकर चित्रकक्वाथ से ६ घण्टे तक मर्दन करें। बाद में मर्दित औषधि को पूर्ववत् बड़ी-बड़ी वराटिका में भरकर वराटिका के मुख को टंकण के लेप से बन्द करें। ऐसी अनेक औषधि पूरित वराटिकाओं को मिट्टी की हाँडी में बन्दकर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर हाँडी को बाहर निकालकर सावधानी से वराटिका निकाल लें और वराटिका के मुख से टंकण का लेप निकालकर बाहर फेंक दें। यह लेप काच जैसा हो जाता है। फिर वराटिका सहित औषधि को खरल में पीसकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

लोकेश्वर नाम से प्रसिद्ध यह औषधि ४ रत्ती की मात्रा मे पिप्पलीचूर्ण १ माशा और मधु से प्रयोग करने पर वीर्य को पुष्ट कर बढ़ाता है। इस औषधि को लेने के बाद सोष्ण सिता-मिश्रित गोदुग्ध अवश्य ही पीना चाहिए। अंगों की कृशता, अग्निमान्द्य, कास, पित्तरोग एवं क्षयरोगों में मरिचचूर्ण १ माशा एवं गोघृत के साथ ३ दिनों तक खिलाना चाहिए। औषधि सेवन काल में लवण रहित भोजन, दूध-दही एवं घृत का अधिक प्रयोग कराना

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चाहिए। २१ दिनों तक घी के साथ थोड़ा मरिचचूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिए। औषधि सेवन के बाद रोगी को उत्तानपाद (पैर ऊँचा कर) कर सुलाना चाहिए। महामृगाङ्करस में उल्लिखित पथ्य-व्यवस्था करावें। विषम भोजन करने के कारण जो मनुष्य सूख गये हों, क्षयरोग से पीड़ित हों, कुष्ठ एवं पाण्डु रोग से पीड़ित हों, वैद्यों की मूर्खता (गलती) के कारण शोषरोग से पीड़ित हों अथवा स्वभाव से कृश हो, अनेक प्रकार के ज्वरों, भ्रम, मद, उन्माद एवं अन्य रोगों से पीड़ित हों—वे सभी इस लोकेश्वर पोटली के सेवन से स्वस्थ हो जाते हैं।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. (४ रत्ती)। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण और मधु तथा मरिचचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—शोष, क्षय, कास तथा पाण्डुरोग में।

५१. कनकसुन्दररस (र.सा.सं.)

रसस्य तुर्यभागेन हेमभस्म प्रयोजयेत्।
मनःशिला गन्धकं च तुत्थं माक्षिकतालकम् ॥१९७॥
विषं टङ्गणकं सर्वं रसतुल्यं प्रदापयेत्।
मर्दयेत् सर्वमेकत्र खल्लपात्रे च निर्मले ॥१९८॥
जयन्तीभृङ्गराजोत्थैः पाठाया वासकस्य च।
अगस्तिलाङ्गलाग्नीनां स्वरसैश्च पृथक् पृथक् ॥१९९॥
भावयित्वा विशोष्याथ पुनश्चार्द्रकवारिणा।
सप्तधा भावयित्वा च रसः कनकसुन्दरः ॥२००॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वाऽस्य राजयक्ष्मप्रशान्तये।
मधुना पिप्पलीभिर्वा मरिचैर्वा घृतान्वितम् ॥२०१॥
सन्निपाते प्रदातव्यमार्द्रकस्य रसैन वै।
जयपालरजोभिर्वा गुल्मिने शूलरोगिणे ॥२०२॥
अम्लवर्जं चरेत् पथ्यं बल्यं हृद्यं रसायनम्।
वर्जयेल्लवणं हिङ्गु तक्रं दधि विदाहि यत् ॥२०३॥

१. रससिन्दूर ४ भाग, २. स्वर्णभस्म १ भाग, ३. शुद्ध मैनसिल ४ भाग, ५. शुद्ध गन्धक ४ भाग, ६. शुद्ध तुत्थ ४ भाग, ७. स्वर्णमाक्षिकभस्म ४ भाग, ८. शुद्ध हरताल ४ भाग, ९. शुद्ध वत्सनाभ विष ४ भाग और १०. शुद्ध टङ्कण ४ भाग लें।

भावना-द्रव्य—१. जयन्तीस्वरस, २. भृङ्गराजस्वरस, ३. पाठास्वरस (क्वाथ), ४. वासास्वरस, ५. अगस्तपत्रस्वरस, ६. लाङ्गलीस्वरस (क्वाथ), ७. चित्रकक्वाथ तथा ८. आर्द्रक स्वरस। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह पीसें। पुनः शुद्ध गन्धक, मैनसिल, हरताल आदि को मिलावें; बाद में स्वर्णभस्म एवं अन्य औषधों को मिलाकर मर्दन करें और जयन्तीस्वरस से चित्रकमूलक्वाथ तक के सभी द्रव्यों की १-१ भावना दें और आर्द्रकस्वरस की ७ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में अच्छी तरह सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

रोगानुसार विभिन्न अनुपानों से इसका प्रयोग करना चाहिए। राजयक्ष्मा में १ माशा पिप्पलीचूर्ण और मधु से अथवा—१ माशा मरिचचूर्ण और मधु से, सन्निपात ज्वर में आर्द्रकस्वरस से, गुल्म और शूल रोगियों को शुद्ध जयपालचूर्ण $\frac{१}{४}$ रत्ती के साथ देना चाहिए। यह औषध बल्य, हृद्य एवं रसायन गुण युक्त है। इसके सेवन काल में—अम्ल, लवण, हींग, तक्र, दही एवं विदाही द्रव्य (मिर्चा आदि) नहीं सेवन करना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—उपरिनिर्दिष्ट विभिन्न अनुपान से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—यक्ष्मा, कास, ज्वर, शूल एवं गुल्म में।

५२. सर्वाङ्गसुन्दररस (र.सा.सं.)

रसं गन्धञ्च तुल्यांशं द्वौ भागौ टङ्गणस्य च।
मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खभस्म देयं समांशिकम् ॥२०४॥
हेमभस्मार्द्धभागञ्च सर्वं खल्ले विमर्दयेत्।
निम्बूद्रवेण सम्पिष्य पिण्डिकां कारयेत्ततः ॥२०५॥
पश्चाल्लघुपुटं दत्त्वा सुशीतञ्च समुद्धरेत्।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्धं दरदं मतम् ॥२०६॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे ॥२०७॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मनिकृन्तनः।
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥२०८॥
अर्शसि ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे।
निहन्ति वातजान् रोगाञ् श्लैष्मिकांश्च विशेषतः॥२०९॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा।
भक्षयेत् पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा ॥२१०॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. शुद्ध टङ्कण २ भाग, ४. मोतीपिष्टी १ भाग, ५. प्रवालभस्म १ भाग, ६. शंखभस्म १ भाग, ७. स्वर्णभस्म $\frac{१}{२}$ भाग, ८. तीक्ष्ण लौह-भस्म $\frac{१}{२}$ भाग और ९. शुद्ध हिंगुल $\frac{१}{४}$ भाग लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बना लें। फिर उसमें स्वर्णभस्म तक की सभी ५ भस्मों को डालें और निम्बुस्वरस के साथ मर्दन कर एक बड़ा गोलक बना लें। गोलक अच्छी तरह धूप में सुखाकर शराव सम्पुट करें और लघु पुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर शराव खोलकर औषधि निकाल लें और खरल में मर्दन करें। ततः तीक्ष्ण लौहभस्म एवं शुद्ध हिंगुलचूर्ण डालकर पूरी औषधि को अच्छी तरह मर्दन करें और काचपात्र में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुरक्षित रख लें। इसके बाद शुभ दिन एवं शुभ नक्षत्र में इस औषधि एवं भगवान् शिव की पूजा करें। पुनः इस औषधि का रोगियों पर प्रयोग करें। यह 'सर्वाङ्गसुन्दररस' राजयक्ष्मा का नाश करता है, भयंकर वात-पित्तज ज्वर, दारुण सन्निपात ज्वर, अर्श, ग्रहणीदोष, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, सभी वातज और कफज रोगों का नाश करता है। इस औषधि को पिप्पलीचूर्ण एवं मधु के साथ या पिप्पलीचूर्ण एवं घृत के साथ रोगानुसार अनुपान से या ताम्बूलपत्र से या आर्द्रकस्वरस के साथ उपयोग किया जाना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—उपर्युक्त रोगानुसार अनुपानों से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—श्याववर्ण। **स्वाद**—किञ्चिदम्लीय। **उपयोग**—सन्निपात ज्वर एवं राजयक्ष्मा में।

५३. चूडामणिरस

द्विनिष्कं रससिन्दूरं तदर्धं हेम जारितम्।
निष्कद्वयं गन्धकञ्च मर्दयेच्चित्रकद्रवैः ॥२११॥
कुमारिकाद्रवैर्यामं छागदुग्धैस्त्रियामकम्।
मुक्ताविद्रुमवङ्गानां निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥२१२॥
गोलकं पूरयेद् भाण्डे रुद्ध्वा लघुपुटे पचेत्।
स्वाङ्गशीतं विचूर्ण्याथ भक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥२१३॥
मधुना क्षयरोगघ्नं वातपित्तसमुद्भवम्।
अजाघृतञ्चानुपिबेच्छर्करामधुसंयुतम् ॥२१४॥

१. रससिन्दूर २ भाग, २. जारित स्वर्णभस्म १ भाग, ३. शुद्ध गन्धक २ भाग, ४. मोतीपिष्टी १ भाग, ५. प्रवालभस्म १ भाग तथा ६. वङ्गभस्म १ भाग लें।

भावना—१. चित्रकक्वाथ, २. घृतकुमारीस्वरस तथा ३. बकरी का दूध। एक खरल में पहले रससिन्दूर को अच्छी तरह पीसें, ततः गन्धक एवं स्वर्णभस्म मिलाकर चित्रकमूलक्वाथ के साथ छः घण्टे तक मर्दन करें। इसके बाद शेष तीनों भस्मों को मिलाकर घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर तीन घण्टे तक मर्दन करें। पुनः नौ घण्टे तक बकरी के दूध के साथ मर्दन कर गोला बना लें। गोला जब अच्छी तरह सूख जाय तो शराव सम्पुट कर लघु पुट (कपोतपुट) में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर शराव सम्पुट खोलकर औषधि को पुनः अच्छी तरह पीसकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि को मधु के साथ २ रत्ती की मात्रा में लेने से वात-पित्तोद्भव क्षयरोग नष्ट हो जाता है। औषधि सेवन के बाद बकरी के उबाले हुए दूध में सिता और मधु मिलाकर पीना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—मधु एवं बकरी के दूध में शर्करा अथवा मधु मिलाकर। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वात-पित्तोद्भव क्षय में।

५४. लक्ष्मीविलासरस (यो.रत्ना.)

सुवर्णताराभ्रकताम्रवङ्ग-
त्रिलोहनागामृतमौक्तिकानि ।
एतत्समं योज्य रसस्य भस्म
खल्ले कृतं स्यात्कृतकज्जलीकम् ॥२१५॥
सुमर्दयेन्माक्षिकसम्प्रयुक्तं
तच्छोषयेद् द्वित्रिदिनं च घर्मे।
तत्कल्कमूषोदरमध्यगामि
यत्नात्कृतं तार्क्ष्यपुटेन पक्वम् ॥२१६॥
यामाष्टकं पावकमर्दितं च
लक्ष्मीविलासो रसराज एषः।
क्षये त्रिदोषप्रभवे च पाण्डौ
सकामले सर्वसमीरणेषु ॥२१७॥
शोफप्रतिश्यायप्रणष्टवीर्यं
मूलामयं चैव सशूलकुष्ठम्।
हत्वाऽग्निमान्द्यं क्षयसन्निपातं
श्वासं च कासं च हरेत्प्रयुक्तम्।
तारुण्यलक्ष्मीप्रतिबोधनाय
श्रीमद्विलासो रसराज एषः ॥२१८॥

१. सुवर्णभस्म, २. रजतभस्म, ३. अभ्रकभस्म, ४. ताम्रभस्म, ५. वङ्गभस्म, ६. कान्तलौहभस्म, ७. तीक्ष्णलौह भस्म, ८. मुण्डलौहभस्म, ९. नागभस्म, १०. शुद्ध वत्सनाभ विष, ११. मोतीपिष्टि तथा १२. रससिन्दूर—सुवर्णभस्म से मोतीपिष्टि तक के सभी ११ द्रव्य १-१ भाग लें और रससिन्दूर ११ भाग लें। सर्वप्रथम खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह मर्दन करें। ततः अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। इसके बाद मधु मिलाकर ३ दिनों तक धूप में बैठकर दृढ़ मर्दन करें। पुनः उसे गोला बनाकर मूषा या शराव सम्पुट कर कुक्कुटपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर सम्पुट से मूषा या शरावसम्पुट को निकालकर उसमें से सावधानीपूर्वक औषधि-गोलक निकाल लें। पुनः चित्रकमूलक्वाथ में २४ घण्टे तक दृढ़ मर्दन करें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसके सेवन से क्षय, त्रिदोषोत्पन्न पाण्डु, कामला, सभी प्रकार के वातविकार, शोथ, प्रतिश्याय, शुक्रक्षय, अर्श, शूल, कुष्ठ, अग्निमान्द्य, सन्निपात ज्वर, श्वास एवं कास—इन रोगों को नष्ट कर देता है। इसके प्रयोग से शरीर में तरुणाई एवं जवानी आ जाती है। इस प्रकार यह लक्ष्मी-विलासरस योगों के राजा रूप में प्रसिद्ध है। इसे १ से २ रत्ती तक विभिन्नानुपान से प्रयोग करें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा. (१ से २ रत्ती)। **अनुपान**—रोगानुसार। **गन्ध**—मधुराभ और रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्तवर्ण। **स्वाद**—मधुर-कटु। **उपयोग**—यक्ष्मा, वातव्याधि, दौर्बल्य, कास एवं श्वास में।

५५. मुक्तापञ्चामृतरस (योगरत्नाकर)

मुक्ताप्रवालखुरवङ्गककम्बुशुक्ति-
भूतिं वसूदधिदृगिन्दुसुधांशुभागाम्।
इक्षो रसेन सुरभेः पयसा विदारी-
कन्यावरीसुरसहंसपदीरसैश्च ॥२१९॥
संमर्द्य यामयुगलं च वनोपलाभि-
र्दद्यात्पुटानि मृदुलानि च पञ्च पञ्च।
पञ्चामृतं रसविभुं भिषजा प्रयुज्य
गुञ्जाचतुष्टयमितं चपलारजश्च ॥२२०॥
पात्रे निधाय चिरसूतपयस्विनीनां
दुग्धेन च प्रपिबतः खलु चाल्पभोक्तुः।
जीर्णज्वरः क्षयमियादथ सर्वरोगाः
स्वीयानुपानकलिताश्च शमं प्रयान्ति ॥२२१॥

१. मोतीपिष्टि ८ भाग, २. प्रवालभस्म ४ भाग, ३. वङ्ग भस्म २ भाग, ४. शंखभस्म १ भाग तथा ५. शुक्तिभस्म १ भाग लें।

भावना-द्रव्य—१. इक्षुरस, २. गोदुग्ध, ३. विदारीकन्द-स्वरस, ४. घृतकुमारीस्वरस, ५. शतावरीस्वरस, ६. तुलसीपत्र-रस तथा ६. हंसपदीस्वरस।

सभी द्रव्यों को एक खरल में मर्दन कर इक्षुरस से १ घण्टे तक मर्दन करें। इसी प्रकार प्रत्येक द्रव्यों के स्वरस से एक-एक घण्टे तक मर्दन करें। कुल ७ घण्टे तक मर्दन कर गोला बना लें और सुखाकर शराव सम्पुट करें, लघुपुट (कपोत) में पाक करें। ऐसा पाँच बार लघुपुट में पाक करना चाहिए। पुनः खरल में मर्दन कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

इस मुक्तापञ्चामृतरस को ४ रत्ती की मात्रा में पिप्पलीचूर्ण १ माशा और मधु से प्रयोग करें तथा बाद में बहुत दिन की ब्यायी हुई गाय का गरम दूध पिलाना चाहिए। रोगानुसार अनुपान के साथ इसके प्रयोग से जीर्णज्वर, क्षय आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. (४ रत्ती) **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण और मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—मधुरतिक्त। **उपयोग**—जीर्णज्वर एवं क्षयादि में।

५६. एलादिमन्थघृत (चक्रदत्त)

एलाऽजमोदामलकाभयाऽक्ष-
गायत्रिनिम्बासनशालसारान्।
विडङ्गभल्लातकचित्रकांश्च
कटुत्रिकाम्भोदसुराष्ट्रिकाश्च ॥२२२॥
पक्त्वा जले तेन पचेत्तु सर्पि-
स्तस्मिन् सुसिद्धे त्ववतारिते च।
त्रिंशत्पलान्यत्र सितोपलाया
दद्यात्तुगाक्षीरि पलानि षट् च ॥२२३॥
प्रस्थे घृतस्य द्विगुणं च दद्यात्
क्षौद्रं ततो मन्थहतं विदध्यात्।
पलं पलं प्रातरतो लिहेच्च
पश्चात् पिबेत् क्षीरमतन्द्रितश्च ॥२२४॥
एतद्धि मेध्यं परमं पवित्रं
चक्षुष्यमायुष्यतमं तथैव।
यक्ष्माणमाशु व्यपहन्ति शूलं
पाण्ड्वामयं चापि भगन्दरं च।
न चात्र किञ्चित् परिवर्जनीयं
रसायनं चैतदुपास्यमानः ॥२२५॥

क्वाथ-द्रव्य—१. छोटी इलायची, २. अजमोदा, ३. आमला, ४. हरीतकी, ५. विभीतक, ६. खदिरकाष्ठ, ७. निम्बत्वक्, ८. असनकाष्ठ, ९. [1]शालसारादि गण की सभी २३ औषधियाँ, १०. वायविङ्गग, ११. शुद्ध भल्लातक, १२. चित्रकमूल, १३. शुण्ठी, १४. पिप्पली, १५. मरिच, १६. नागरमोथा तथा १७. स्फटिका—प्रत्येक द्रव्य ४० ग्राम लें। इन्हें यवकुट करें। इसमें कुल ३९ औषधियाँ हैं। इनमें से २०० ग्राम का चूर्ण बना लें तथा शेष का क्वाथ करें। १८. गोघृत ७५० ग्राम, १९. सिता १५०० ग्राम, २०. वंशलोचन २८० ग्राम तथा २१. मधु १५०० ग्राम लें। सर्वप्रथम मूर्च्छन विधि से घी को मूर्च्छित कर लें। ततः सभी ३९ द्रव्यों को क्वाथ एवं कल्क विधि से तैयार करें। क्वाथ के लिए द्रव्यों को आठ गुना जल देकर क्वाथ करें। चौथाई अवशेष रहने पर छानकर मूर्च्छित घृत में डालकर मन्दाग्नि से पाक करें। कल्कचूर्ण को शिला पर जल के साथ पीसकर कल्क बनाकर घृत में डालें। घी से चार गुना क्वाथ और घी का चतुर्थांश कल्क होने का सर्वत्र स्नेहपाक का नियम है। जलीयांश सूखने पर घृतपाक की परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर गरम-गरम घृत को छान लें। कल्क में थोड़ा घृत का अंश रह जाता है उसे भी थोड़ा पानी देकर उबालें। पानी के ऊपरी भाग पर स्नेह तैरता मिलेगा, उसे कपड़ा या हाथ से निकालें। पुनः उस स्नेह का जलीयांश जलाकर सभी

१. **शालसारादिगणः**—शालसाराजकर्णखदिरकदरकालस्कन्धक्रमुकभूर्जमेषशृङ्गीति निशाचन्दनकुचन्दनशिंशपाशिरीषासनधवार्जुनतालशाकनक्तमालपूतीकाश्वकर्णागुरूणि कालीयकं चेति। (सु.सू. ३८) इस गण में कुल २३ द्रव्य हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पक्व घृत एक साथ मिलाकर एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र रखें और उसमें पिसी हुई सिता, मधु एवं वंशलोचनचूर्ण निर्धारित मात्रा में मिलाकर मथानी से करीब आधा घण्टे तक खूब मथें। पुनः इस 'एलादिमन्थघृत' को काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

उपयोग—इस मन्थघृत को प्रातःकाल ५० ग्राम (१ पल) की मात्रा में खाकर बाद में गाय का गरम दूध यथारुचि पिलावें। इस तरह रोज सेवन करने से श्रेष्ठ मेध्य, चक्षुष्य, आयुष्य एवं रसायन कार्य करता है। इसके सेवन से राजयक्ष्मा, कास, पाण्डु, शूल एवं भगन्दर रोग शान्त हो जाते हैं। इस घृत के सेवन काल में कोई पथ्य पालन का नियम नहीं है। अतः सब कुछ खाते हुए इस घृत का सेवन करें। इसमें कुछ खाने की मनाही नहीं है।

मात्रा—२० से ५० ग्राम तक। **अनुपान**—गरम गाय के दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभरक्त। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—रसायन, मेध्य, चक्षुष्य एवं आयुष्यकर है; राजयक्ष्मा एवं कासनाशक है।

५७. सर्पिर्गुड (चक्रदत्त)

बला विदारी ह्रस्वा च पञ्चमूली पुनर्नवा।
पञ्चानां क्षीरिवृक्षाणां शुङ्गा मुष्ट्यंशिकाः पृथक् ॥२२६॥
एषां कषाये द्विक्षीरे विदार्याजरसांशिके।
जीवनीयैः पचेत्कल्कैरक्षमात्रैर्घृताढकम् ॥२२७॥
सितोपलानि पूते च सिते द्वात्रिंशदावपेत्।
गोधूमपिप्पलीवांशीचूर्णं शृङ्गाटकस्य च ॥२२८॥
समाक्षिकं कौडविकं तत्सर्वं खजमूर्च्छितम्।
स्त्यानं सर्पिर्गुडान् कृत्वा भूर्जपत्रेण वेष्टयेत् ॥२२९॥
ताञ्जग्ध्वा पलिकान् क्षीरं मद्यं चानुपिबेत् कफे।
शोषे कासे क्षतक्षीणे श्रमस्त्रीभारकर्षिते ॥२३०॥
रक्तनिष्ठीवने तापे पीनसे चोरसि क्षते।
शस्ताः पार्श्वशिरःशूले भेदे च स्वरवर्णयोः ॥२३१॥
क्वाथ्ये त्रयोदशपले द्रव्याल्पत्वभयाज्जलनम्।
अष्टगुणं क्वाथसमौ विदार्याजरसौ पृथक्।
केचिद् यथोक्तक्वाथ्ये तु क्वाथं घृतसमं जगुः ॥२३२॥

क्वाथ-द्रव्य—१. बलामूल, २. विदारीकन्द, ३. शालपर्णीपञ्चाङ्ग, ४. पृश्निपर्णीपञ्चाङ्ग, ५. बृहतीपञ्चाङ्ग, ६. कण्टकारीपञ्चाङ्ग, ७. गोक्षुरपञ्चाङ्ग, ८. पुनर्नवामूल (पञ्चक्षीरी वृक्ष)[1], ९. उदुम्बरपत्रशुङ्ग, १०. वटवृक्षशुङ्ग, ११. पीपलवृक्षशुङ्ग, १२. प्लक्षशुङ्ग तथा १३. पारीषशुङ्ग—प्रत्येक द्रव्य ४६ या ५०-५० ग्राम लें।

कल्क—जीवनीय गण—१. मेदा १० ग्राम, २. महामेदा १० ग्राम, ३. काकोली १० ग्राम, ४. क्षीरकाकोली १० ग्राम, ५. जीवक १० ग्राम, ६. ऋषभक १० ग्राम, ७. ऋद्धि १० ग्राम, ८. वृद्धि १० ग्राम, ९. यष्टिमधु १० ग्राम, १०. माषपर्णी १० ग्राम, ११. मुद्गपर्णी १० ग्राम और १२. जीवन्ती १० ग्राम।

क्वाथ एवं द्रव्य—१. गोदुग्ध २ आढक (५.९७० ली.), २. विदारीकन्दक्वाथ १ आढक (२.९८० ली.), ३. बकरे का मांसरस १ आढक (२.९८० ली.) तथा ४. गोघृत १ आढक (२९८० ग्राम) लें।

प्रक्षेप—१. सिता ३२ पल = १ मानिका (३७५ ग्राम), २. घृतभृष्ट गोधूमचूर्ण १ कुडव (१८७ ग्राम), ३. पिप्पलीचूर्ण १ कुडव (१८७ ग्राम), ४. वंशलोचनचूर्ण १ कुडव (१८७ ग्राम), ५. शृङ्गाटक चूर्ण १ कुडव (१८७ ग्राम) तथा ६. मधु १ कुडव (१८७ ग्राम) लें।

विमर्श—यह घी परिभाषा से पृथक् रीति से बनेगा। उल्लिखित मान जहाँ हो वहाँ परिभाषा नहीं लागू होती है। यहाँ कुल १३ द्रव्यों की मात्रा ३५० ग्राम है। घृत-प्रमाण में तो क्वाथद्रव होना ही चाहिए। होना तो घृत से ४ गुना अधिक चाहिए था। किन्तु द्रव्य अल्प तथा मुष्टि मात्र (१ पल) मान प्रत्येक का उल्लिखित है। अतः १ द्रोण जल में क्वाथ करना चाहिए और चौथाई शेष रहने पर ३ लीटर के करीब रहेगा जो घृत मान के बराबर होगा। उसे ही मूर्च्छित घी में देकर पाक करें।

'अष्टवर्गश्च पर्णिन्यौ जीवन्ती मधुकं तथा।
जीवनीयगणः प्रोक्तो जीवनश्च पुनस्ततः'।।

सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। इसके बाद जीवनीय गणौषधों का कल्क बनाकर उक्त घृत में दें। पुनः गाय का दूध देकर पाक करें। ततः विदारीकन्द और मांसरस देकर पाक करें। घृत सिद्ध समझकर पाक की परीक्षा करें और छानकर एक स्टील के पात्र में रखें। ततः उस घी में सिताचूर्ण, वंशलोचनचूर्ण, गोधूमचूर्ण, पिप्पलीचूर्ण, शृङ्गाटकचूर्ण और मधु मिलाकर मथानी से खूब मथें। गाढ़ा हो जाय तो १२-१२ ग्राम की मात्रा में वटी जैसा बनाकर भोजपत्र में लपेटकर रख लें।

इस वटी को खाकर ५० ग्राम गरम दूध अवश्य पियें। कफज रोग में इसे लेना हो तो वटी खाकर ५० ग्राम मद्य पीना चाहिए।

उपयोग—शोष, कास, उरःक्षत, क्षीण, श्रम, स्त्रीसम्पर्क एवं भार ढोने से कृश व्यक्तियों में; मुख द्वारा रक्त निकलना, ज्वर, पीनस, उरःक्षत, पार्श्वशूल, शिरःशूल, स्वरभेद तथा वर्णविकार में यह 'सर्पिर्गुड़' का प्रयोग अधिक लाभप्रद है।

क्वाथ द्रव्य १३ पल अल्पमात्रा में ही है, अतः जल अष्टगुण देना चाहिए किन्तु १६ गुना से भी अधिक डाला गया है।

---

१. उदुम्बरो वटोऽश्वत्थो मधूकः प्लक्ष एव च।
गन्धकर्माणि सर्वत्र पत्राणि पञ्च वल्कलम्॥ (परिभाषाप्रदीप)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—१० से २० ग्राम तक। **अनुपान**—गोदुग्ध या मद्य से। **गन्ध**—सुगन्ध मिठाई जैसी (पाक जैसा)। **वर्ण**—रक्ताभ (पाक जैसा)। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—उर:क्षत, राजयक्ष्मा, कास, पार्श्वशूल एवं वाजीकरणार्थ।

५८. पिप्पलीघृत (चक्रदत्त)

पिप्पलीगुडसंसिद्धं छागक्षीरयुतं घृतम्।
एतदग्निप्रवृद्ध्यर्थं सर्पिश्च क्षयकासिनाम् ॥२३३॥

मूर्च्छित गोघृत १ कि.ग्रा. तथा बकरी का दूध ४ लीटर लें।

कल्क—पिप्पलीचूर्ण १२५ ग्राम, गुड़ १२५ ग्राम तथा सम्यक् पाकार्थ जल ४ लीटर लेना चाहिए। सर्वप्रथम मूर्च्छित घृत को एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में गरम करें। तत: उसमें दूध देकर मन्दाग्नि पर पकावें। पुन: पिप्पली और गुड़ को अच्छी तरह पीसकर कल्क बना लें। थोड़ा जल का छींटा देकर पीसें। उसे घृत व दूध के साथ मिलाकर पकावें। जब दूध सूख जाय तो सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर पुन: पकावें। जलरहित एवं सुपक्व समझकर परीक्षोपरान्त पात्र उतारकर छान लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह पिप्पली घृत क्षय एवं कास रोग के लिए बहुत उपयोगी है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्ध घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ द्रव। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—क्षय एवं कास रोग में।

५९. निर्गुण्डीघृत (चक्रदत्त)

समूलफलपत्राया निर्गुण्ड्याः स्वरसैर्घृतम्।
सिद्धं पीत्वा क्षतक्षीणो निर्व्याधिर्भाति देववत् ॥२३४॥

मूर्च्छित गोघृत १ किलो, निर्गुण्डी (सम्भालू) पत्रस्वरस ४ लीटर, निर्गुण्डीपत्रकल्क २५० ग्राम तथा सम्यक् पाकार्थ जल ४ लीटर लें। मूर्च्छित घृत को स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में मध्यमाग्नि पर गरम करें। तत: उसमें ४ लीटर निर्गुण्डीस्वरस या क्वाथ देकर पाक करें। पुन: निर्गुण्डीपत्र को शिला पर पीसकर कल्क बना लें और उसी घृत में मिलाकर पकावें। स्वरस सूख जाने पर सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर पुन: पकावें। जब घृत निष्फेन हो जाय तब घृतपाक परीक्षोपरान्त पात्र को उतार लें और छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसके सेवन से क्षत-क्षीण रोगी व्याधिरहित देवताओं जैसा हो जाता है।

मात्रा—१० ग्राम तक। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृत गन्धी। **वर्ण**—हरित् वर्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—क्षत, क्षीण रोग।

६०. बलाद्यघृत-१ (चक्रदत्त)

घृतं बलानागबलार्जुनाम्बु-
सिद्धं सयष्टीमधुकल्कपादम्।
हृद्रोगशूलक्षतरक्तपित्त-
कासानिलासृक् शमयत्युदीर्णम् ॥२३५॥

१. मूर्च्छित गोघृत १ किलो, २. यष्टिमधुकल्क २५० ग्राम, ३. बलापञ्चाङ्ग १३३५ ग्राम, ४. नागबला १३३५ ग्राम तथा ५. अर्जुनछाल १३३५ ग्राम लें। यष्टिमधु को कूट-पीसकर चूर्ण करें और जल के साथ शिला पर पीसकर कल्क बना लें। बला, नागबला एवं अर्जुन तीनों द्रव्यों को उक्त मात्रा में लेकर यवकुट (क्वाथ चूर्ण) करें और चार गुना जल में रात्रिपर्यन्त भिंगने दें। प्रात: मध्यमाग्नि पर पाक करें। चौथाई शेष रहने पर उतारकर छान लें। ४ लीटर इस क्वाथ को घी में देकर यष्टि-मधुकल्क के साथ घृतपाक करें। क्वाथ सूखने पर घृतपाक की परीक्षा कर पात्र चूल्हे से नीचे उतारकर कुछ ठण्डा होते ही घृत छान लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इसे ५ से १० ग्राम की मात्रा में दूध के साथ सेवन करें। इसके सेवन करने से प्रकुपित हृद्रोग, शूलरोग, उर:क्षत, रक्तपित्त, कास एवं वातरक्त रोग शान्त हो जाते हैं।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गाय के गरम दूध (शर्करा मिला) से। **गन्ध**—घृतगन्धी (सुगन्धी)। **वर्ण**—हरिताभ-पीत वर्ण। **स्वाद**—तिक्त-मधुर। **उपयोग**—हृद्रोग, क्षय, कास एवं रक्तपित्त में।

६१. बलाद्यघृत-२ (चरक)

बलां श्वदंष्ट्रा बृहतीं कलसीं धावनीं स्थिराम्।
निम्बं पर्पटकं मुस्तं त्रायमाणां दुरालभाम् ॥२३६॥
कृत्वा कषायं पेष्यार्थं दद्यात् तामलकीं शटीम्।
द्राक्षां पुष्करमूलं च मेदामामलकानि च ॥२३७॥
घृतं पयश्च तत्सिद्धं सर्पिर्ज्वरहरं परम्।
क्षयकासप्रशमनं शिरःपार्श्वरुजापहम् ॥२३८॥
चरकोदितवासाद्यघृतानन्तरमुक्तितः।
वदन्तीह घृतात्क्वाथं पयश्च द्विगुणं पृथक् ॥२३९॥

मूर्च्छित गोघृत १ किलो। १. बलापञ्चाङ्ग, २. गोखरु, ३. बृहती, ४. पृश्निपर्णी, ५. कण्टकारी, ६. शालपर्णी, ७. निम्बत्वक्, ८. पित्तपापड़ा, ९. नागरमोथा, १०. त्रायमाण तथा ११. जवासा—प्रत्येक १९०-१९० ग्राम लें। कुल ४ कि. के आस-पास होना चाहिए।

कल्क—१. भूमि आमला, २. कचूर, ३. द्राक्षा, ४. पुष्करमूल, ५. मेदा तथा ६. आमला—प्रत्येक द्रव्य ४०-४० ग्राम लें। मूर्च्छित गोघृत १ किलो और गोदुग्ध २ लीटर लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में उपर्युक्त क्वाथ द्रव्य को यवकुट कर चौगुना जल में रात्रिपर्यन्त भिंगो दें। प्रात: मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें तथा ६ कल्क

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

द्रव्यों को कूट-पीसकर चूर्ण कर लें और शिला पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। अब स्टेनलेस स्टील के पात्र में मूर्च्छित घृत रखकर चूल्हे पर मध्यमाग्नि द्वारा गरम करें। बाद में क्वाथ एवं कल्क उक्त गरम घी में देकर पाक करें। क्वाथ सूखने पर घी के बराबर गोदुग्ध मिलाकर पाक करें। आसन्न पाक समझकर पाक की परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कुछ ठण्डा होने दें और बाद में घृत को कपड़े से छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह बलाद्यघृत ज्वरनाशनार्थ परमौषधि है; क्षय, कास, शिरःशूल एवं पार्श्वशूल नाशक है। महर्षि चरक ने वासाद्यघृत के बाद इस घृत को कहा है, अतः वैसा ही घृत से दुगुना क्वाथ और दूध लेना चाहिए। परिभाषानुसार तो क्वाथ घृत से ४ गुना लेना चाहिए। अतः यहाँ स्पष्ट उल्लेख है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—उष्ण गोदुग्ध शर्करा मिला हुआ। **गन्ध**—घृत जैसी सुगन्ध। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त रस। **उपयोग**—ज्वर, कास एवं राजयक्ष्मा में।

नोट—जहाँ पर हरे द्रव्यों का प्रयोग (कल्क, स्वरस रूप में) घृत में होगा वहाँ हरिद्वर्ण हो जायेगा। जहाँ क्वाथ से घृत सिद्ध होगा वहाँ मूर्च्छित घृत का वर्ण हरिद्रा एवं मंजीठ जैसा पीताभ होगा।

६२. नागबलाद्यघृत (च.द.)

पादशेषे जलद्रोणे पचेन्नागबलातुलाम्।
तेन क्वाथेन तुल्यांशं घृतं क्षीरं च साधयेत् ॥२४०॥
पलार्द्धकैश्चातिबलाबलायष्टिपुनर्नवा ।
प्रपौण्डरीककाश्मर्यपियालकपिकच्छुभिः ॥२४१॥
अश्वगन्धासिताभीरुमेदायुग्मत्रिकण्टकैः ।
मृणालबिसशालूकशृङ्गाटककशेरुकैः ॥२४२॥
एतन्नागबलासर्पी रक्तपित्तक्षतक्षयम्।
हन्ति दाहं भ्रमं तृष्णां बलपुष्टिकरं परम् ॥२४३॥
बल्यमोजस्यमायुष्यं वलीपलितनाशनम्।
उपयुञ्जीत यक्ष्मायां वृद्धोऽपि तरुणायते ॥२४४॥

मूर्च्छित गोघृत ३ कि. तथा गोदुग्ध ३ किलो लें।

क्वाथ—नागबलापञ्चाङ्ग ५ किलो तथा जल १३ लीटर लें।

कल्क—१. अतिबला, २. बला, ३. यष्टिमधु, ४. पुनर्नवा, ५. श्वेतकमल, ६. गम्भारीमूल, ७. प्रियाल, ८. कपिकच्छूबीज, ९. अश्वगन्धा, १०. शतावर, ११. मेदा, १२. महामेदा, १३. गोक्षुर १४. कमलपुष्पदण्ड, १५. कमलतन्तु, १६. कमलकन्द, १७. सिंघाड़ा तथा १८. कशेरु—प्रत्येक १८ द्रव्य २०-२० ग्राम लें। सर्वप्रथम ५ किलो नागबलापञ्चाङ्ग को यवकुट कर १ द्रोण (१३ लीटर) पानी में बड़े पात्र में रात्रि-पर्यन्त भिंगो दें। प्रातः मध्यमाग्नि द्वारा उसका क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर पृथक् रखें और कल्क द्रव्य जो १८ हैं, उसे प्रत्येक को २०-२० ग्राम लें। इन्हे कूट-पीसकर चूर्ण कर लें और पुनः शिला पर उस चूर्ण को जल के साथ पीसकर कल्क तैयार करें। अब स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में मूर्च्छित घी को रखकर मध्यमाग्नि युक्त चूल्हे पर चढ़ाकर गरम करें। पुनः क्वाथ एवं कल्क को उस घी में अच्छी तरह मिला लें। जब क्वाथ का जलीयांश सूख जाय तो उसमें ३ लीटर गोदुग्ध मिलाकर पाक करें। जब दूध सूख जाय तो सम्यक् पाक के लिए ३ लीटर जल देकर पुनः पाक करें। जलीयांश सूखने पर पाक की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें।। कुछ ठण्डा होने पर छान-कर काचपात्र में सुरक्षित रखें। इस 'नागबलाघृत' को ५ से १० ग्राम की मात्रा में गरम गोदुग्धानुपान (शर्करा मिला हुआ) से रोज लेना चाहिए।

उपयोग—इस घृत को लेने से—रक्तपित्त, उरःक्षत, क्षय, दाह, भ्रम तथा तृष्णा नष्ट हो जाते हैं। यह घृत बलकारक, शरीरपुष्ट्यर्थ अत्युपयोगी है; बल्य है, ओजस्वी है, आयुष्य है तथा वली-पलित नाशक है। इस घृत के प्रयोग से वृद्ध राजयक्ष्मा रोगी भी युवा हो जाता है अर्थात् रोग मुक्त हो जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम तक। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—यक्ष्मा, उरःक्षतनाशक है एवं बल्य है।

६३. बलागर्भघृत (चक्रदत्त)

द्विपञ्चमूलस्य पचेत्कषाये
प्रस्थद्वये मांसरसस्य चैके।
कल्कं बलाया सुनियोज्य गर्भ-
सिद्धं पयःप्रस्थयुतं घृतं च ॥
सर्वाभिघातोत्थितयक्ष्मशूल-
क्षतक्षयं कासहरं प्रदिष्टम् ॥२४५॥

दोनों पञ्चमूल अर्थात् दशमूल लेना है। १. मूर्च्छित गोघृत ७५० ग्राम, २. दशमूल क्वाथ १.५०० ली., ३. बकरे का मांसरस ७५० मि.ली., ४. गोदुग्ध ७५० मि.ली., ५. बिल्व-मूल छाल, ६. गम्भारीमूल छाल, ७. अग्निमन्थमूल, ८. श्योनाक, ९. पाटलामूल, १०. बृहतीपञ्चाङ्ग, ११. कण्टकारी-पञ्चाङ्ग, १२. गोखरु, १३. शालपर्णी तथा १४. पृश्निपर्णी—प्रत्येक ७५-७५ ग्राम क्वाथार्थ।

कल्क—बलामूल २०० ग्राम तथा दशमूल के सभी द्रव्यों को कूट-पीस कर यवकुट करें और एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में ६ किलो जल में रात्रिपर्यन्त भिंगों दें। प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें। अर्थात् १.५०० लीटर क्वाथ मूर्च्छित घृत में देकर मन्दाग्नि पर पाक करें तथा

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बलामूल को कूट-पीसकर शिला पर कल्क बना लें और घृत में डालकर पकावें। जब क्वाथ का जलीयांश सूख जाय तो १ प्रस्थ गोदुग्ध और बकरे का मांस रखकर पकावें। पुनः सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पाक करें। जलीयांश सूख जाय तो सुपक्व हो गया है, की परीक्षा कर घृतपात्र तो नीचे उतारकर कुछ ठण्डा होने पर घृत को छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'बलागर्भ घृत' को ५ से १० ग्राम की मात्रा में गरम गोदुग्ध के साथ प्रयोग करने पर अभिघातज राजयक्ष्मा, शूल, उरःक्षत, क्षय एवं कास का नाश करता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम गाय के दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—यक्ष्मा, कास एवं उरःक्षत में।

६४. पाराशरघृत (चक्रदत्त)

यष्टीबलागुडूच्यल्पपञ्चमूलीतुलां पचेत्।
शूर्पेऽपामष्टभागस्थे तत्र पात्रं पचेद् घृतम्॥२४६॥
धात्रीविदारीक्षुरसे त्रिपात्रे पयसोऽर्मणे।
सुपिष्टैर्जीवनीयैश्च पाराशरमिदं घृतम्।
संसेव्यं राजयक्ष्माणमुन्मूलयति शीलितम्॥२४७॥

१. यष्टिमधु, २. बलामूल, ३. गुडूची, ४. शालपर्णी, ५. पृश्निपर्णी, ६. बृहती, ७. कण्टकारी तथा ८. गोखरु—प्रत्येक द्रव्य ६२५ ग्राम लें; २४ लीटर जल में क्वाथ करें, अष्टमांश रहने पर छान लें; ९. मूर्च्छित घृत ३ किलो, १०. आमला स्वरस या क्वाथ ३ लीटर, ११. विदारीकन्दक्वाथ ३ लीटर, १२. इक्षुरस ३ लीटर तथा १३. गोदुग्ध १२ लीटर लें।

कल्क—१ जीवक, २. ऋषभक, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. मेदा, ६. महामेदा, ७. ऋद्धि, ८. वृद्धि, ९. यष्टिमधु, १०. जीवन्ती, ११. मुद्गपर्णी तथा १२. माषपर्णी—प्रत्येक कल्क द्रव्य ६८-६८ ग्राम लें; कुल मिलाकर घृत का चतुर्थांश लेना चाहिए।

मूर्च्छित घृत को एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में रखकर चूल्हे पर चढ़ाकर गरम करें। ततः गोदुग्ध धीरे-धीरे देकर पकावें। पुनः जीवनीयगण की सभी औषधियों को कूट-पीसकर शिला पर जल के साथ पीस कर कल्क बना लें और घृतपात्र में डालकर अच्छी तरह से मिला लें। जब पूरा दूध घी में पक जाय तो उसमें इक्षुरस देकर पकावें। जब इक्षुरस सूख जाय तब क्रमशः आमला-स्वरस, विदारीकन्दस्वरस और यष्टिमधु तथा बलादि द्रव्यों के क्वाथ देकर पाक करें। जब सभी द्रव्य घृत में पककर जलीयांश सूख जाय तो पाक की परीक्षा करके चूल्हे से घृतपात्र उतारकर थोड़ा शीतल होने दें। कुछ देर के बाद कपड़े से घृत को छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'पाराशरघृत' को सेवन करने से राजयक्ष्मा नष्ट हो जाता है। इसे ५ से १० ग्राम की मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम गाय के दूध के साथ। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—हरिताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, कास एवं क्षय में।

६५. अजापञ्चकघृत (चक्रदत्त)

छागशकृद्रसमूत्रक्षीरैर्दध्ना च साधितं सर्पिः।
सक्षारं यक्ष्महरं कासश्वासोपशान्तये परमम्॥२४८॥

१. बकरी का घृत १ किलो, २. बकरी का दूध १ लीटर, ३. बकरी का दही १ किलो, ४. बकरी का मूत्र १ लीटर, ५. बकरी पुरीषरस १ लीटर और ६. यवक्षार लें। सर्वप्रथम बकरी के घी का मूर्च्छन कर लें। तत्पश्चात् उसमें १ किलो बकरीमूत्र डालकर मन्दाग्नि पर पाक करें। पाक सावधानी से करें क्योंकि मूत्र क्षार बहुल द्रव है अतः उसमें फेनोद्गम अधिक होगा, अतः थोड़ा-थोड़ा मूत्र डालकर पकावें। मूत्र पक जाने पर दही को अच्छी तरह से मथकर उक्त घृत में डालें और पकावें। पुनः बकरी की मींगियों में ४ गुना पानी डालकर हाथ से मसल लें अर्थात् २५० ग्राम बकरी-मींगी में १ लीटर पानी डालकर मथे या हाथ से मसलें। पुनः कपड़े से छानकर मींगी का रस प्राप्त करें। यही रस उक्त घृत में देकर पकावें। अन्त में बकरी का दूध देकर पका लें। घी से जलीयांश सूखने के बाद पाक की परीक्षा कर लें, बाद में घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें तथा थोड़ा ठण्डा होने पर कपड़े से घृत को छान लें। पुनः इस घृत में अष्टमांश (१०० ग्राम) यवक्षार अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'अजापञ्चक घृत' को ५ से १० ग्राम की मात्रा में दूध के साथ प्रयोग करने से राजयक्ष्मा, कास एवं श्वास रोग शान्त हो जाते हैं।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध में शर्करा मिलाकर। **गन्ध**—बकरी जैसी गन्ध। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—यक्ष्मा, कास एवं श्वास में।

६६. छागलाद्य घृत-१ (चक्रदत्त)

छागमांसतुलां गृह्य साधयेन्नल्वणेऽम्भसि।
पादशेषेण तेनैव सर्पिः प्रस्थं विपाचयेत्॥२४९॥
ऋद्धिवृद्धी च मेदे द्वे जीवकर्षभकौ तथा।
काकोली क्षीरकाकोली पृथक्कल्कैः पलोन्मितैः॥२५०॥
सम्यक् सिद्धेऽवतार्येत शीते तस्मिन् प्रदापयेत्।
शर्करायाः पलान्यष्टौ मधुनः कुडवं क्षिपेत्॥२५१॥
पलं पलं पिबेत्प्रातर्यक्ष्माणं हन्ति दुर्जयम्।
क्षतक्षयञ्च कासांश्च पार्श्वशूलमरोचकम्॥२५२॥
स्वरक्षयमुरोरोगं श्वासं हन्यात् सुदारुणम्।
बल्यं मांसकरं वृष्यमग्निसन्दीपनं परम्॥२५३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. छागमांस ५ किलो, २. जल १ द्रोण (१३ लीटर), ३. गोघृत ७५० ग्राम, ४. सिता पिसी हुई ३७५ ग्राम तथा ५. मधु १९० ग्राम लें।

कल्क—१. ऋद्धि, २. वृद्धि, ३. मेदा, ४. महामेदा, ५. काकोली, ६. क्षीरकाकोली, ७. जीवक तथा ८. ऋषभक—प्रत्येक कल्क द्रव्य ५०-५० ग्राम लेकर कूटकर शिला पर पीस लें और कल्क बना लें।

सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छित कर लें। तत्पश्चात् बकरे का ५ किलो मांस लेकर छोटे-छोटे टुकड़े करके बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में ५ किलो बकरे का मांस रखें और १३ लीटर मीठे जल के साथ मन्दाग्नि पर पकावें। जब सुपक्व हो जाय (मांस अधिकतर जल में घुल जाय और हड्डियों से अलग हो जाय) अर्थात् चौथाई शेष (३ किलो) बचे तो ठण्डा होने पर हड्डियों के टुकड़ों को पृथक् करके कपड़े से छान लें। अब मूर्च्छित घृत में इस मांसरस को डालकर पकावें। कल्क भी इसी में डालकर पकावें। जब जलीयांश सूख जाय तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर छान लें। पुनः उसमें पिसी हुई सिता और मधु डालकर मथानी से अच्छी तरह से मथकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'छागलाद्यघृत' को प्रातःकाल ५० ग्राम की मात्रा में गरम गाय के दूध के साथ पीने से यक्ष्मा, उरःक्षत, क्षय, पार्श्वशूल, अरुचि, स्वरभङ्ग, उरोविकार आदि दारुण एवं दुर्जेय रोग नष्ट हो जाते हैं। यह बल्य है, बृंहण है, वृष्य है एवं परम अग्निदीपक है।

मात्रा—५० ग्राम तक। **अनुपान**—गरम शर्करा मिला दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ रक्त। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—यक्ष्मा एवं उरःक्षत में।

६७. छागलाद्यघृत-२ (चक्रदत्त)

तोयद्रोणद्वितये छागलमांसस्य पलशतं पक्त्वा।
जलमष्टांशं सुकृतं तस्मिन् विपचेद् घृतं प्रस्थम् ॥२५४॥
कल्केन जीवनीयानां कुडवेन तु मांससर्पिरिदम्।
पित्तानिलं निहन्यात् तज्जानपि रसकयोजितं पीतम् ॥२५५॥
कासश्वासावग्र्यौ यक्ष्माणं पार्श्वहृद्रुजां घोराम्।
अध्वव्यवायशोषं शमयति चैवापरं किञ्चित् ॥२५६॥

मीठा जल २४ लीटर, बकरे का मांस ५ किलो तथा गोघृत ७५० ग्राम लें।

कल्क—१. ऋद्धि, २. वृद्धि, ३. मेदा, ४. महामेदा, ५. काकोली, ६. क्षीरकाकोली, ७. जीवक, ८. ऋषभक, ९. यष्टिमधु, १०. जीवन्ती, ११. मुद्गपर्णी तथा १२. माषपर्णी—प्रत्येक द्रव्य १७-१७ ग्राम लें। किन्तु तौलने में कठिनाई होने से १५ ग्राम या २० ग्राम लेना उचित है। इन्हें कूट-पीसकर कल्क बना लें। २४ लीटर पानी में मांस के छोटे-छोटे टुकड़े कर पकावें। मांस सम्यक् सिद्ध हो जाय और मांसरस अष्टमांश बचे तो कपड़े से छान लें। घृत को मूर्च्छित कर लें और स्टेनलेस स्टील के पात्र में मांसरस, मूर्च्छित घृत एवं जीवनीय वर्ग के कल्क के साथ मन्दाग्नि पर पकावें। सम्यक् पाक के लिए ३ लीटर मीठा पानी देकर पुनः पकावें। जलीयांश सूखने पर घृत-पात्र को चूल्हे से उतारकर कुछ ठण्डा होने दें। बाद में कपड़े से छान लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। ५०-५० ग्राम की मात्रा में इस 'छागलाद्यघृत' को मांसरस के साथ पीने से वात-पित्तजन्य रोग, कास, श्वास, यक्ष्मा, पार्श्वशूल, हृद्रोग नष्ट हो जाते हैं। अधिक मार्गगमनजन्य शोष, अधिक स्त्रीप्रसङ्गजन्य शोष का भी यह घृत नाश करता है अर्थात् बृंहण कार्य करता है।

मात्रा—५० ग्राम तक। **अनुपान**—मांसरस से। **गन्ध**—घृत एवं मांस गन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—यक्ष्मा, पार्श्वशूल एवं शोष नाशक है।

६८. जीवन्त्यादिघृत (चरक)

जीवन्तीं मधुकं द्राक्षां फलानि कुटजस्य च।
शटीपुष्करमूलञ्च व्याघ्रीं गोक्षुरकं बलाम् ॥२५७॥
नीलोत्पलं तामलकीं त्रायमाणां दुरालभाम्।
पिप्पलीञ्च समं पिष्ट्वा घृतं वैद्यो विपाचयेत् ॥२५८॥
एतद्व्याधिसमूहस्य रोगेशस्य समुत्थितम्।
रूपमेकादशविधं सर्पिरग्र्यं व्यपोहति ॥२५९॥

१. जीवन्ती, २. यष्टिमधु, ३. मुनक्का (द्राक्षा), ४. इन्द्रयव, ५. कचूर, ६. पुष्करमूल, ७. कण्टकारी, ८. गोक्षुर, ९. बलामूल, १०. नीलकमल, ११. भूमि आमला, १२. त्रायमाण, १३. यवासा और १४. पिप्पली—प्रत्येक द्रव्य समभाग अर्थात् १७-१७ ग्राम लें तथा गाय का घृत १ किलो लें। सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छन कर लें। पुनः उपर्युक्त जीवन्ती आदि सभी १४ द्रव्यों को उक्त मात्रा में लेकर कूट-पीसकर कल्क बना लें। उक्त सभी द्रव्य १७-१७ ग्राम लें। कुल मिलाकर २५० ग्राम अर्थात् घृत से चौथाई होना चाहिए। मूर्च्छित घृत में कल्क मिलाकर ४ लीटर जल भी अच्छी तरह मिला दें। स्टेनलेस स्टील के पात्र को चूल्हे पर चढ़ाकर मध्यमाग्नि से पाक करें। निःस्नेह होने पर परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से उतार लें और थोड़ा ठण्डा होने पर कपड़े से छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। १० से २० ग्राम की मात्रा में गोदुग्ध के साथ प्रयोग करने से अनेक लक्षणों (११ लक्षणों) से युक्त राजयक्ष्मा नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१० से २० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध एवं बकरी के दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—राजयक्ष्मा में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६९. अमृतप्राशघृत (चरक)

जीवकर्षभकौ वीरां जीवन्तीं नागरं शटीम्।
चतस्रः पर्णिनीर्मेदे काकोल्यौ द्वे निदिग्धिकाम् ॥२६०॥
पुनर्नवे द्वे मधुकमात्मगुप्तां शतावरीम्।
ऋद्धिं परूषकं भार्गीं मृद्वीकां बृहतीं तथा ॥२६१॥
शृङ्गाटकं तामलकीं पयस्यां पिप्पलीं बलाम्।
बदराक्षोट-खर्जूर-वातामाभिषुकाण्यपि ॥२६२॥
फलानि च तदादीनि कल्कान्कुर्वीत कार्षिकान्।
धात्रीरसविदारीक्षुच्छागमांसरसं पयः ॥२६३॥
दत्त्वा प्रस्थोन्मितान् भागान् घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
प्रस्थार्द्धं मधुनः शीते शर्कराऽर्द्धतुलां तथा ॥२६४॥
पलार्द्धकं च मरिचत्वगेलापत्रकेसरात्।
विनीयं चूर्णितं तस्माल्लिह्यान्मात्रां सदा नरः ॥२६५॥
अमृतप्राशमित्येतद् नराणाममृतं घृतम्।
सुरामृतरसप्रख्यं क्षीरमांसरसाशिनाम् ॥२६६॥
नष्टशुक्रक्षतक्षीणदुर्बलव्याधिकर्शितान्।
स्त्रीप्रसक्तान् कृशान् वर्णस्वरहीनांश्च बृंहयेत् ॥२६७॥
कासहिक्काज्वरश्वासदाहतृष्णाऽस्त्रपित्तनुत्।
पुत्रदं वमिमूर्च्छाहृद् योनिमूत्रामयापहम् ॥२६८॥

कल्क—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. जटामांसी, ४. जीवन्ती, ५. शुण्ठी, ६. कचूर, ७. शालपर्णी, ८. पृश्निपर्णी, ९. माषपर्णी, १०. मुद्गपर्णी, ११. मेदा, १२. महामेदा, १३. काकोली, १४. क्षीरकाकोली, १५. कण्टकारी, १६. बृहती, १७. रक्त पुनर्नवा, १८. श्वेत पुनर्नवा, १९. यष्टिमधु, २०. कपिकच्छूबीज, २१. शतावरी, २२. ऋद्धि, २३. वृद्धि, २४. फालसाफल, २५. भारङ्गी, २६. मुनक्का, २७. बृहती, २८. सिंघाड़ा, २९. भूमि आमला, ३०. विदारीकन्द, ३१. पिप्पली, ३२. बलामूल, ३३. बदर, ३४. अखरोट, ३५. खर्जूरफल, ३६. बादाम तथा ३७. पिस्ता—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम (१-१ तोला) लें। ऐसा शास्त्रकार का मत है।

द्रव—१. गाय का घी ७५० ग्राम (१ प्रस्थ), २. आमला का रस (या क्वाथ), ३. विदारीकन्दस्वरस (या क्वाथ), ४. इक्षु (गन्ना) रस, ५. बकरे का मांसरस तथा ६. गाय का दूध—प्रत्येक द्रव ७५० ग्राम अर्थात् १-१ प्रस्थ लें।

प्रक्षेप—१. मधु ३७५ ग्राम, २. शर्करा २५०० ग्राम, ३. मरिचचूर्ण, ४. त्वक्चूर्ण, ५. छोटीइलायचीचूर्ण, ६. तेजपत्रचूर्ण तथा ७. नागकेशरचूर्ण—ये प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम (२-२ तोला) लें।

सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में १ प्रस्थ गोघृत को मूर्च्छन करें। पुनः जीवक से अखरोट तक के सभी ३७ द्रव्यों को उपर्युक्त मात्रा में कूट-पीसकर तथा शिला पर पीसकर कल्क बना लें। पुनः उक्त कल्क को मूर्च्छित घृत के साथ मिलावें और उसमें क्रमशः आमला आदि का स्वरस १-१ प्रस्थ देकर पाक करें। एक द्रव सूखने के बाद दूसरा द्रव देकर पकाना चाहिए। जब घृत से जलीयांश सूख जाय, सुपक्व की परीक्षा निश्चित कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारें। कुछ ठण्डा होने पर घृत को कपड़े से छान लें। पुनः एक छोटे स्टेनलेस स्टील के पात्र में उक्त सुपक्व घृत को रखें और उसमें मधु, पिसी हुई शर्करा तथा मरिच आदि चूर्ण डालकर मथानी से अच्छी तरह मथें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह 'अमृतप्राशघृत' गोदुग्ध एवं मांसरस खाने वालों के लिए अधिक उपयोगी है। इसे ५० ग्राम की मात्रा में प्रातः गरम गोदुग्ध या मांसरस से सेवन करना चाहिए। इस औषधि के सेवन से नष्ट शुक्र, उरःक्षत एवं क्षीण शरीर वाले दुर्बल व्यक्ति तथा अनेक व्याधियों से कृश व्यक्ति को तत्काल लाभ होता है। अधिक स्त्रीप्रसङ्ग करने से क्षीण हुआ व्यक्ति, स्वर एवं वर्ण से हीन व्यक्ति शीघ्र ही बृंहित हो जाता है। इसके अतिरिक्त कास, श्वास, हिक्का, ज्वर, दाह, तृष्णा, रक्तपित्त, वमन, मूर्च्छा, हृद्रोग, योनिरोग तथा मूत्रविकार के रोगी को लाभ होता है। यह पुत्रप्रद भी है।

मात्रा—२० से ५० ग्राम तक। **अनुपान**—गोदुग्ध एवं मांस- रस से। **गन्ध**—मांसगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ पीत। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, कास एवं श्वास नाशक है; बल्य वृष्य, बृंहण तथा पुत्रप्रद है।

७०. अमृतप्राशघृत (भावप्रकाश)

क्षीरे च धात्रीमञ्जिष्ठाक्षीरिणां च तथा रसैः।
पचेत् समैर्घृतप्रस्थं जीवकर्षभकौ विना ॥२६९॥
जीवनीयैर्गणैर्युक्तैः प्रत्येकं कर्षसंमितैः।
द्राक्षाद्विचन्दनोशीरैः शर्करोत्पलपद्मकैः ॥२७०॥
मधूककुसुमानन्ताकाश्मरीतृणसंज्ञकैः।
प्रस्थार्द्धं मधुनः शीते शर्कराऽर्द्धतुलां तथा ॥२७१॥
पलार्द्धिकांश्च सञ्चूर्ण्य त्वगेलापत्रकेशरात्।
विनीय तत्र संलिह्यान्मात्रां नित्यं सुयन्त्रितः ॥२७२॥
अमृतप्राशमित्येतदश्विभ्यां परिकीर्त्तितम्।
क्षीरमांसाशिनां हन्ति रक्तपित्तं क्षतक्षयम् ॥२७३॥
तृष्णाऽरुचिश्वासकासच्छर्दिमूर्च्छाप्रमर्दनम्।
मूत्रकृच्छ्रज्वरघ्नं च बल्यं स्त्रीरतिवर्द्धनम् ॥२७४॥

१. गाय का घृत ७५० ग्राम, २. गाय का दूध ७५० मि.ली., ३. आमला का रस ७५० मि.ली., ४. मंजीठक्वाथ ७५० मि.ली., ५. पञ्चक्षीरी वृक्षों का त्वक् क्वाथ ७५० मि.ली.।

कल्क—जीवक-ऋषभक को छोड़कर [1]जीवनीय गण की औषधियों का कल्क बनावें। प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। १.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

काकोली, २. क्षीरकाकोली, ३. मेदा, ४. महामेदा, ५. ऋद्धि, ६. वृद्धि, ७. जीवन्ती, ८. मुद्गपर्णी, ९. माषपर्णी, १०. यष्टिमधु, ११. द्राक्षा १२. श्वेतचन्दन, १३. रक्तचन्दन, १४. खस, १५. शर्करा, १६. नीलकमल, १७. पद्मकाठ, १८. महुआ का फूल, १९. अनन्तमूल, २०. गम्भारी, २१. कुशमूल, २२. काशमूल, २३. शरमूल, २४. दर्भमूल तथा २५. इक्षुमूल।

प्रक्षेप—१. मधु ३७५ ग्राम, २. शर्करा २५०० ग्राम, ३. त्वक्, ४. छोटी इलाइची, ५. तेजपत्र तथा ६. नागकेशर—ये चारों द्रव्य २३-२३ ग्राम ले।

सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः कल्कार्थ निर्दिष्ट २५ द्रव्यों को १२-१२ ग्राम की मात्रा में लेकर कूट-पीसकर शिला पर कल्क बना लें और मूर्च्छित घी में मिलाकर गाय का दूध डाल दें तथा मध्यमाग्नि में पाक करें। दूध सूखने पर क्रमशः आमलास्वरस, मंजीठक्वाथ और पञ्चक्षीरी वृक्षों का क्वाथ डालकर पाक करें। पाक आसन्न होने पर परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से उतार लें और थोड़ा शीतल होने पर कपड़े से घृत को छान लें। इस छने हुए घृत को स्टील के एक छोटे पात्र में रखें तथा इस घृत में मधु एवं शर्करा और त्वक्, एलादि द्रव्यों को निर्दिष्ट मात्रा में मिलाकर मथानी से घृत को अच्छी तरह से मथकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। अश्विनीकुमारों द्वारा निर्मित इस घृत को ५० ग्राम की मात्रा तक दूध के साथ सेवन करने से रक्तपित्त, उरःक्षत, क्षय, तृष्णा, अरुचि, श्वास, कास, वमन, मूर्च्छा, मूत्रकृच्छ्र और ज्वरादि रोग नष्ट हो जाते हैं। इस घृत के सेवन काल में गोदुग्ध और मांस या मांसरस का सेवन करना आवश्यक है।

मात्रा—२० से ५० ग्राम तक। **अनुपान**—गरम गाय का दूध या मांसरस से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ पीत। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—क्षय,कास एवं उरःक्षत में। वृष्य एवं वाजीकरण है।

७१. कुङ्कुमादिघृत

क्षीरकाकोलिकायष्टीमधुकं च निदिग्धिका।
दशमूली तुलातुल्यं प्रत्येकं ग्राहमुत्तमम् ॥२७५॥
ततः सर्वाणि संक्षुद्य नीरद्रोणे पृथक् पचेत्।
पादावशिष्टैः क्वाथैस्तैर्घृतं कुङ्कुममूर्च्छितम् ॥२७६॥
घृताच्चतुर्गुणं छागक्षीरं दत्त्वा तु पाचयेत्।
क्षीरपाककृते चात्र नीरं देयं चतुर्गुणम् ॥२७७॥
लवङ्गं मुस्तकवचाकुङ्कुमं जीवनीयकम्।
बला व्योषं पृश्निपर्णी रेणुर्नीलोत्पलं तथा ॥२७८॥
छिन्ना प्रियङ्गुर्वाराहीकन्दकोऽथैलबालुकम्।
एलायुग्मं तुगाक्षीरी हवुषा चविका तथा ॥२७९॥
धात्री च मालतीपुष्पं पत्रकं नागकेशरम्।
तालीशपत्रं जरणो हयगन्धा यमानिका ॥२८०॥
कर्षोन्मितं तु प्रत्येकं क्षिप्त्वा मृद्वग्निना पचेत्।
कासश्वासौ क्षयं हन्ति यक्ष्माणमतिदारुणम् ॥
रक्तपित्तं प्रमेहं च कुङ्कुमाद्यं घृतं परम् ॥२८१॥

क्वाथ—१. क्षीरकाकोली, २. यष्टिमधु, ३. कण्टकारी, ४. बिल्वमूलछाल, ५. अरणीमूलछाल, ६. श्योनाकछाल, ७. पाटलाछाल, ८. गम्भारीछाल, ९. शालपर्णी, १०. पृश्निपर्णी, ११. कण्टकारी, १२. बृहती और १३. गोक्षुर—प्रत्येक (१३ द्रव्य) द्रव्य ४०००-४००० ग्राम लें। इन्हें यवकुट कर १२ लीटर (१ द्रोण जल) जल में रात्रिपर्यन्त भिगावें, प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें तथा चौथाई शेष रहने पर छान लें। गाय का घृत ३ किलो, केशर ५० ग्राम, बकरी का दूध १२ लीटर तथा जल १२ लीटर लें।

कल्क—१. लवंग, २. नागरमोथा, ३. वचा, ४. काश्मीरी केशर, ५. जीवक, ६. ऋषभक, ७. मेदा, ८. महामेदा, ९. काकोली, १०. क्षीरकाकोली, ११. ऋद्धि, १२. वृद्धि, १३. जीवन्ती, १४. यष्टिमधु, १५. मुद्गपर्णी, १६. माषपर्णी, १७. बलामूल, १८. शुण्ठी, १९. पिप्पली, २०. मरिच, २१. पृश्निपर्णी, २२. रेणुकाबीज, २३. नीलकमल, २४. गुडूची, प्रियङ्गु, २६. वाराहीकन्द, २७. एलवालुक, २८. छोटी इलायची, २९. बड़ी इलायची ३०. वंशलोचन, ३१. हाउबेर, ३२. चव्य, ३३. धातकीपुष्प, ३४. चमेलीफूल, ३५. तेजपात, ३६. नागकेशर, ३७. तालीशपत्र, ३८. श्वेत जीरा, ३९. अश्वगन्धा तथा ४०. अजवायन—ये ४० द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें और कूट-पीसकर चूर्ण करें तथा शिला पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें।

सर्वप्रथम एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में घृत को खूब तप्त कर चूल्हे से नीचे उतार लें और केशर को चूर्णकर उसमें थोड़ा जल का छींटा देकर हल्का भीगा लें। जब घृत की गर्मी कुछ कम हो तब उसमें उक्त केशरचूर्ण थोड़ा-थोड़ा डालें। घृत में उफान आयेगा, जब उफान शान्त हो जाय तब घृत के बराबर जल देकर पुनः आग पर पकावें। घृत का प्रायः जल सूख जाय तो उसमें दशमूलादिक्वाथ और कल्क अच्छी तरह हाथ से मिलाकर पुनः पाक करें। ज़ब क्वाथ सूख जाय तब उसमें चतुर्गुण बकरी का दूध देकर मध्यमाग्नि पर पकावें (क्षीरे द्विरात्रं), जब दूध सूख जाय तब सम्यक् पाकार्थ घृत से चतुर्गुण जल देकर पाक करें। जब घृत से जल सूख जाय तो पाक-परीक्षा कर घृतपात्र को अग्नि से नीचे उतार लें। थोड़ा ठण्डा होने पर कपड़े

१. 'अष्टवर्गः सयष्टिको जीवन्ती मुद्गपर्णिका।
माषपर्णी गणोऽयन्तु, जीवनीय इति स्मृतः' ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

से घी को छान लें। यह 'कुङ्कुमाद्यघृत' १० से २० ग्राम की मात्रा में प्रयोग करने पर कास, श्वास, क्षय, भयकर राजयक्ष्मा, रक्तपित्त और प्रमेह का नाश करता है।

मात्रा— १० से २० ग्राम, **अनुपान**—गरम गाय के दूध से (शर्करा मिला दूध)। **गन्ध**—केशरगन्धी (सुगन्धित), **वर्ण**—पीत। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, कास एवं श्वास में।

७२. स्वल्पचन्दनादितैल

चन्दनागुरुतालीशमञ्जिष्ठानखपद्मकाः ।
मुस्तकञ्च शटी लाक्षा हरिद्रे रक्तचन्दनम् ॥२८२॥
एषां प्रतिपलैश्चूर्णैस्तैलार्द्धपात्रकं पचेत् ।
भार्गीरसः कण्टकारी वाट्यालकगुडूचिका ॥२८३॥
एषां पलशतक्वाथे समभागे जडीकृते ।
पक्त्वा तैलं प्रदातव्यं राजयक्ष्मविनाशनम् ॥२८४॥
कासघ्नं गरदोषघ्नं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ।
पापालक्ष्मीप्रशमनं ग्रहदोषविनाशनम् ॥२८५॥

तिल तैल १.५०० लीटर लें।

कल्क—१. श्वेतचन्दन, २. अगरु, ३. तालीशपत्र, ४. मंजीठ, ५. नखी, ६. पद्मकाष्ठ, ७. नागरमोथा, ८. कचूर, ९. लाक्षा, १०. हरिद्रा, ११. दारुहरिद्रा तथा १२. लालचन्दन—प्रत्येक द्रव्य ४६-४६ ग्राम लें। इन्हें कूट-पीसकर चूर्ण कर लें और जल के साथ शिला पर पीसकर कल्क बना लें।

क्वाथ—१. भारङ्गी, २. कण्टकारी, ३. बलामूल तथा ४. गुडूची—ये चारों द्रव्य १२५० ग्राम प्रत्येक लें और इन्हें यवकुट कर चौगुने जल (२०लीटर) में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। अर्थात् क्वाथ ५ लीटर शेष रहना चाहिए।

सर्वप्रथम लोहे के पात्र में तिलतैल का मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् तेल में क्वाथ और कल्क देकर अच्छी तरह मिलाकर मध्यमाग्नि में पकावें। क्वाथ सूखने पर १२ लीटर और मीठा जल देकर (सम्यक् पाकार्थ) पकावें। जल सूखने के बाद तैलपाक की परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। थोड़ा ठण्डा होने पर कपड़े से छान लें तथा बोतल आदि में भर लें।

इसके अभ्यङ्ग से राजयक्ष्मा, कास, गरदोष नष्ट होते हैं। बल, वर्ण और अग्नि की वृद्धि होती है। पापज रोग (कुष्ठादि) नष्ट होते हैं। अलक्ष्मी (शारीरिक अशोभा) का नाशक है। ग्रहदोष-नाशक है।

मात्रा—सर्वाङ्ग शरीर में मर्दन योग्य १० से २० मि.ली.। **प्रयोग**—अभ्यङ्ग। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ एवं किञ्चिद् हरिद्वर्ण का। **उपयोग**—यक्ष्मा, कास, कुष्ठादि रोग में।

७३. चन्दनादितैल (चक्रदत्त)

चन्दनाम्बु नखं वाप्ययष्टीशैलेयपद्मकम् ।
मञ्जिष्ठा सरलं दारु शट्येला पूतिकेशरम् ॥२८६॥
पत्रं शैलं मुरामांसी कक्कोलं वनिताऽम्बुदम् ।
हरिद्रे शारिवे तिक्ता लवङ्गागुरुकुङ्कुमम् ॥२८७॥
त्वग्रेणुर्नालुका चैभिस्तैलं मस्तुचतुर्गुणम् ।
लाक्षारससमं सिद्धं ग्रहघ्नं बलवर्णकृत् ॥२८८॥
अपस्मारज्वरोन्मादकृत्यालक्ष्मीविनाशनम् ।
आयुःपुष्टिकरञ्चैव वशीकरणमुत्तमम् ॥२८९॥

कल्क— १. लालचन्दन, २. सुगन्धबाला, ३. नखी, ४. कुष्ठ, ५. यष्टिमधु, ६. शिलारस, ७. पद्मकाठ, ८. मंजीठ, ९.सरलकाष्ठ, १०. देवदारुकाष्ठ, ११. कचूर, १२. छोटी इलायची, १३. पूतिकरञ्ज, १४. नागकेशर, १५. तेजपत्र, १६. छरीला, १७. जटामांसी, १८. कङ्कोल, १९. प्रियंगु, २०. नागरमोथा, २१. हरिद्रा, २२. दारुहरिद्रा, २३. श्वेत अनन्तमूल, २४. कृष्ण अनन्तमूल, २५. कुटकी, २६. अगरु, २७. लवंग, २८. केशर, २९. त्वक्, ३०. रेणुकाबीज तथा ३१. नालुका— कल्क के ३१ द्रव्यों में प्रत्येक द्रव्य २५-२५ ग्राम लें। कुल मिलाकर ७७५ ग्राम द्रव्य लें। इन्हें कूटकर कल्क बना लें।

तिलतैल ३ लीटर, मस्तु (दही का पानी) १२ लीटर, लाक्षारस ३ लीटर तथा सम्यक् पाकार्थ जल १२ लीटर लें।

सर्वप्रथम पीतल या स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में तिल-तैल को मूर्च्छन करें। तत: मस्तु एवं कल्क मिलाकर पुन: पकावें। मस्तु का जलीयांश सूखने पर पुन: लाक्षारस मिलाकर पकावें। लाक्षारस सूखने पर सम्यक् पाक के लिए १२ लीटर जल मिलाकर पुन: पकावें। जब जलीयांश सूख जाय तो तैल-पाक-परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर थोड़ा ठण्डा होने दें। कुछ देर बाद कपड़े से छान लें और शीतल होने पर बोतलों में भरकर सुरक्षित कर लें। इस तैल के अभ्यङ्ग से बच्चों के ग्रहदोष दूर होते है। यह बलकारक है, वर्णकारक है; अपस्मार, उन्माद, ज्वर, कृत्या (मन्त्रादि रीति से मारणादि कर्म) नाशक है, अलक्ष्मीनाशक है, आयुष्य है, शरीरपुष्टिकर है। इसके गन्धप्रभाव से लोग वश में रहते हैं।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ १० से २० मि.ली.। **गन्ध**—सुगन्धी। **वर्ण**—लाल-पीताभ। **उपयोग**—राजयक्ष्मा, ज्वर, उन्माद एवं अपस्मार नाशक है; शरीर सुगन्ध्यर्थ है।

७४. महाचन्दनादितैल

चन्दनं शालपर्णी च पृश्निपर्णी निदिग्धिका ।
बृहती गोक्षुरञ्चैव मुद्गपर्णी विदारिका ॥२९०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अश्वगन्धा माषपर्णी तथाऽऽमलकमेव च।
शिरीषं पद्मकोशीरं सरलं नागकेशरम् ॥२९१॥
प्रसारणी तथा मूर्वाप्रियङ्गूत्पलबालकम्।
वाट्यालकं चातिबलामृणालं बिसशालूकम् ॥२९२॥
पञ्चाशत्पलमेतेषां श्वेतवाट्यालकं तथा।
जलद्रोणे विपक्तव्यं ग्राह्यं पादावशेषितम् ॥२९३॥
अजाक्षीरं तैलसमं शतमूलीरसाढके।
लाक्षारसं काञ्जिकञ्च दधिमस्तु तथैव च ॥२९४॥
हरिणच्छागशशकमांसानाञ्च पृथक् पृथक्।
चतुःप्रस्थं विनिःक्वाथ्य तैलाढकं विपाचयेत् ॥२९५॥
श्रीखण्डागुरुकक्कोलं नखं शैलेयकेशरम्।
पत्रं चोचं मृणालञ्च हरिद्रे शारिवाद्वयम् ॥२९६॥
रक्तोत्पलं नतं कुष्ठं त्रिफला च परूषकम्।
मूर्वा च ग्रन्थिपर्णी च नलिका देवदारु च ॥२९७॥
सरलं पद्मकोशीरं धातकी बिल्वपेशिका।
रसाञ्जनं मुस्तकञ्च सिह्लकं बालकं वचा ॥२९८॥
मञ्जिष्ठालोध्रामधुरी-जीवनीयं प्रियङ्गुकम्।
शट्येला कुङ्कुमञ्चैव खट्टाशी पद्मकेशरम् ॥२९९॥
जातीकोषञ्च रास्ना च विश्वकं सधनीयकम्।
पलार्धमेषां प्रत्येकं पेषयित्वा विनिक्षिपेत् ॥३००॥
महासुगन्धितैलस्य गन्धमत्र प्रदीयते।
काश्मीरमदचन्द्रांशु सिद्धे पूते विनिक्षिपेत् ॥३०१॥
यथालाभं शुभे पात्रे सङ्गोपेन निधापयेत्।
वातपित्तहरं वृष्यं धातुपुष्टिकरं परम्॥
हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं रक्तपित्तमुरःक्षतम् ॥३०२॥
येषां भूरिपरिश्रमादनुदिनं नश्यन्ति देहा नृणां
ये वा कामकलानुकूलतरुणीसङ्गाच्च निर्धातवः।
ये वा व्याधिविशीर्णतामुपगतास्तेषां परं भेषजं
बल्यं वृष्यतमं तनूपचयकृत् श्रीचन्दनाद्यं महत्॥

क्वाथ—१. लालचन्दन, २. शालपर्णी, ३. पृश्निपर्णी, ४. कण्टकारी, ५. बृहती, ६. गोक्षुर, ७. मुद्गपर्णी, ८. विदारीकन्द, ९. अश्वगन्धा, १०. माषपर्णी, ११. आमला, १२. शिरीषत्वक्, १३. पद्मकाठ, १४. खस, १५. सरलकाष्ठ, १६. नागकेशर, १७. गन्धप्रसारणी, १८. मूर्वा, १९. प्रियंगुफूल, २०. नीलकमल, २१. सुगन्धबाला, २२. बलामूल, २३. अतिबला, २४. कमलनाल और २५. कमलकन्द—ये सभी २५ द्रव्य प्रत्येक २-२ पल अर्थात् १००-१०० ग्राम लें। कुल मिलाकर ५० पल अर्थात् २५०० ग्राम लें। श्वेतपुष्प की बला ५० पल अर्थात् २५०० ग्राम लें। इन सभी द्रव्यों को यवकुट करें और २४ लीटर (२द्रोण) जल देकर रात्रिपर्यन्त भिगो दें। प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें।

१. तिलतैल ३ लीटर, २. बकरी का दूध ३ लीटर, ३. शतावरीमूल क्वाथ ३ लीटर, ४. लाक्षारस ३ लीटर, ५. काञ्जी ३ लीटर, ६. दधिमस्तु ३ लीटर, ७. हरिणमांसरस ३ लीटर, ८. बकरे का मांसरस ३ लीटर तथा ९. खरगोश का मांसरस ३ लीटर—प्रत्येक द्रव १-१ आढक लें।

कल्क—१. श्वेतचन्दन, २. अगरु, ३. कङ्कोल, ४. व्याघ्रनख, ५. शिलारस, ६. नागकेशर, ७. तेजपत्र, ८. त्वक्, ९. कमलदण्ड, १०. हरिद्रा, ११. दारुहरिद्रा, १२. श्वेत अनन्तमूल, १३. कृष्ण अनन्तमूल, १४. लालकमल, १५. तगर, १६. कुष्ठ, १७. आमला, १८. हरीतकी, १९. बहेड़ा, २०. फालसाफल, २१. मूर्वा, २२. ग्रन्थिपर्णी, २३. नलिका, २४. देवदारुकाष्ठ, २५. सरलकाष्ठ, २६. पद्मकाष्ठ, २७. खस, २८. धातकीपुष्प, २९. बिल्वमज्जा, ३०. रसाञ्जन, ३१. नागरमोथा, ३२. सिह्लक, ३३. सुगन्धबाला, ३४. वचा, ३५. मंजीठ, ३६. लोध्र, ३७. सौंफ, ३८. काकोली, ३९. क्षीरकाकोली, ४०. मेदा, ४१. महामेदा, ४२. जीवक, ४३. ऋषभक, ४४. ऋद्धि, ४५. वृद्धि, ४६. जीवन्ती, ४७. मुद्गपर्णी, ४८. माषपर्णी, ४९. यष्टिमधु, ५०. प्रियङ्गुफूल, ५१. कचूर, ५२. छोटी इलायची, ५३. केशर, ५४. खट्टाशी (गन्धमार्जाराण्ड), ५५. कमलकेशर, ५६. रास्ना, ५७. जातीपत्री, ५८. शुण्ठी और ५९. धान्यक— इस कल्क वर्ग के प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम (आधा पल) लेकर कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें, पुनः शिला पर पीसकर कल्क बना लें।

गन्ध द्रव्य—५ ग्राम केशर (काश्मीरी), कस्तूरी ५ ग्राम तथा कपूर १० ग्राम लें।

सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में मूर्च्छन विधि से तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क और बकरी का दूध तैल में देकर अच्छी तरह मिला लें और मध्यमाग्नि में पाक करें। दूध सूखने पर सभी द्रव्यों को क्रमशः एक सूखने के बाद दूसरे द्रव्य को पकावें। सभी आठों द्रव्यों को पका लें। सुपक्व की परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छान लें। शीतल होने पर तैल में निम्नलिखित मात्रा में तीन गन्ध द्रव्य केशर, कस्तूरी और कर्पूर अलग-अलग खरल में पीसकर तैल के साथ घोंटकर मिला लें। बाद में बोतलों में रखें, कार्क लगाकर सुरक्षित कर लें। इस तैल का अभ्यङ्ग वात-पित्त नाशक है, वृष्य है और धातुओं के लिए अत्यन्त पुष्टिकारक है। यह तैल भयंकर राजयक्ष्मा, रक्तपित्त, उरःक्षत नाशक है। जिस मनुष्य का शरीर अधिक काम करने से क्षीण हो गया है, जो पुरुष कामकला में प्रवीण रमणियों के साथ अत्यधिक सम्भोग कर निर्वीर्य हो गया हो तथा जो पुरुष अनेक व्याधियों से पीड़ित

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

होकर क्षीण शरीर वाला हो गया हो उनके लिए यह तैल परमौषध है। यह 'महाचन्दनादि तैल' बल्य है, वृष्यतम है एवं कृश-क्षीण शरीर वाले का बृंहण तथा उपचय (वृद्धि) करता है।

मात्रा— सर्वाङ्ग शरीर में मर्दनार्थ। **गन्ध**—सुगन्ध (कस्तूरी जैसी)। **वर्ण**—पीताभ। **उपयोग**—बल्य, बृंहण एवं वृष्य है। शरीरपुष्टिकर, वशीकरण एवं राजयक्ष्मानाशक है।

७५. चन्दनबलालाक्षादितैल (योगरत्नाकर)

चन्दनं च बलामूलं लाक्षा लामज्जकं तथा।
पृथक् पृथक् प्रस्थमितं जलद्रोणे विपाचयेत् ॥३०४॥
चतुर्भागावशेषेऽस्मिंस्तैलं प्रस्थद्वयं क्षिपेत्।
चन्दनोशीरमधुकं शताह्वा कटुरोहिणी ॥३०५॥
देवदारुनिशाकुष्ठं मञ्जिष्ठाऽगुरुबालकम्।
अश्वगन्धा बला दार्वी मूर्वा मुस्ता समूलिका ॥३०६॥
एला त्वङ्नागकुसुमं रास्ना लाक्षा सुगन्धिका।
चम्पकं पीतसारं च सारिवा रोचकद्वयम् ॥३०७॥
कल्कैरेतैः समायुक्तं क्षीराढकसमन्वितम्।
तैलमभ्यञ्जने श्रेष्ठं सप्तधातुविवर्द्धनम् ॥३०८॥
श्वासकासक्षयहरं सर्वच्छर्दिनिवारणम्।
असृग्दरं रक्तपित्तं हन्ति पित्तकफामयम् ॥३०९॥
कान्तिकृद्दाहशमनं कण्डूविस्फोटनाशनम्।
शिरोरोगं नेत्रदाहमङ्गदाहं च नाशयेत् ॥३१०॥
वातामयहतानां च क्षीणानां क्षीणरेतसाम्।
बालमध्यमवृद्धानां शस्यते शोफकामले॥
पाण्डुरोगे विशेषेण सर्वज्वरविनाशनम् ॥३११॥

क्वाथ—१. श्वेत चन्दन, २. बलामूल, ३. लाक्षा तथा ४. लामज्जक (खस)—ये चारों द्रव्य प्रत्येक १-१ प्रस्थ (७५०-७५० ग्राम) लें। अर्थात् चारों मिलाकर ३ किलो द्रव्य लें। इन्हें यवकुटकर बड़े पात्र में रखें और १२ लीटर जल में रात्रिपर्यन्त भींगने दें। प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। जब चौथाई (३ लीटर) शेष रहे तो छान लें।

कल्क—१. श्वेत चन्दन, २. खस, ३. यष्टिमधु, ४. सौंफ, ५. कटुकी, ६. देवदारुकाष्ठ, ७. हरिद्रा, ८. कुष्ठ, ९. मंजीठ, १०. अगुरु, ११. सुगन्धबाला, १२. अश्वगन्धा, १३. बलामूल, १४. दारुहरिद्रा, १५. मूर्वा, १६. नागरमोथा, १७. मूली, १८. छोटी इलायची, १९. त्वक्, २०. नागकेशर, २१. रास्ना, २२. लाक्षा, २३. कृष्णनिर्गुण्डी , २४. चम्पा का फूल, २५. अंकोलवृक्षत्वक्, २६. अनन्तमूल, २७. विड्लवण और २८. सैन्धवलवण—ये २८ कल्क द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण करें। पुनः शिला पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। तिलतैल १.५०० लीटर तथा गोदुग्ध ३ लीटर लें। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के बड़े पात्र में तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः उक्त मूर्च्छित तैल में उपर्युक्त श्वेतचन्दनादि का क्वाथ एवं श्वेतचन्दनादि का कल्क डालकर अच्छी तरह मिला लें और मध्यमाग्नि में पाक करें। जब वह क्वाथ सूख जाय तब ३ लीटर गोदुग्ध मिलाकर पकावें। सम्यक् पाक के लिए ६ लीटर जल देकर पुनः पकावें। तैल निःस्नेह होने पर परीक्षोपरान्त तैलपात्र चूल्हे से नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से तैल को छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

उपयोग—यह 'चन्दनबलालाक्षादितैल' अभ्यङ्ग करने से सातों धातुओं की वृद्धि करता है। अभ्यङ्ग से श्वास, कास, क्षय, वमन, रक्तप्रदर, रक्तपित्त एवं कफरोग, दाह, कण्डू, विस्फोट, शिरोरोग, नेत्रदाह तथा अङ्गदाहादि रोगों का नाश करता है। विशेषकर पाण्डु एवं सर्वज्वरनाशक है। शोफ एवं कामला नाशक है, कान्तिवर्धक है, वातरोगों से पीड़ित, दुर्बल व्यक्ति तथा शुक्र क्षीण व्यक्ति को लाभ पहुँचाता है। बालकों, युवकों एवं वृद्धों को सभी तरह की दुर्बलता में लाभदायक है।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ १० से २० ग्राम। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—पीताभ। **उपयोग**—ज्वर, दाह एवं कास नाशक है; बल-वर्णवर्धक है, कामला एवं सर्वज्वर हर है।

राजयक्ष्मा रोग में पथ्य-व्यवस्था

मद्यानि जाङ्गलं पक्षिमृगमांसं विशुष्यताम्।
मुद्गषष्टिकगोधूमयवशाल्यादयो हिताः ॥३१२॥
दोषाधिकस्य बलिनो मृदुशुद्धिरादौ
गोधूममुद्गचणकारुणशालयश्च।
छागादिमांसनवनीतपयोघृतानि
क्रव्यादमांसमपि जाङ्गलजा रसाश्च ॥३१३॥
मार्त्तण्डचण्डकिरणैः परिशोषितानि
लेह्यान्यपक्वपललानि सुचूर्णितानि।
रागाः सकाम्बलिकषाडववेशवारा
भक्ष्याः शशाङ्ककिरणा मधुरो रसश्च ॥३१४॥
पक्वानि मोचपनसाम्रफलानि धात्री
खर्जूरपौष्करपरूषकनारिकेलम्।
शोभाञ्जनं च कुलकं नवतालशस्यं
द्राक्षाफलानि मिशयोऽपि च माणिमन्थम् ॥३१५॥
सिंहास्यपत्रमपि गोमहिषीघृतं च
छागाश्रयश्च तदवस्करमूत्रलेपः।
मत्स्यण्डिका शिखरिणी मदिरा रसाला
कर्पूरकं मृगमदः सितचन्दनं च ॥३१६॥
अभ्यञ्जनानि सुरभीण्यनुलेपनानि
स्नानानि वेशरचनान्यवगाहनानि।
हर्म्यं स्रजः स्मरकथा मृदुगन्धवाहो
गीतानि नृत्यमपि चन्द्ररुचो विपञ्ची ॥३१७॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सन्दर्शनं मृगदृशामपि हेमचूर्णं
मुक्तामणिग्रचुरभूषणधारणं च।
होमः प्रदानममरद्विजपूजनानि
हृद्यान्नपानमपि पथ्यगणः क्षयेषु ॥३१८॥

राजयक्ष्मा में मद्य, जांगल पशु-पक्षियों का मांस, मूँग, साठी चावल, गेहूँ, यव, शालिधान्य का चावल हितकर है। यदि अधिक दोष वाला क्षयरोगी बलवान् हो तो पहले मृदु शोधन कराना चाहिए। गेहूँ, मूँग, चना, शालि चावल, छागमांस तथा मांसरस, मक्खन, गोदुग्ध एवं बकरी का दूध, गोघृत, मांसभक्षी पशु-पक्षियों के मांस, जांगल पशु-पक्षियों के पकाये हुए मांस का चूर्ण जिसे सूर्य की कड़ी धूप में सुखाया गया हो, राग (मुरब्बे), काम्बलिक, षाडव, वेशवार, उत्तम भोजन, चन्द्रमा की किरणों का सेवन, मधुर रस का सेवन, पका केला, पके कटहल का सेवन, पके आम, सुपक्व आमला, खजूर, कमलकन्द, फालसाफल, नारियल की गिरी, शिग्रुफल, परवल, ताड़ का सुपक्व फल, द्राक्ष (दाख-मुनक्का), अंगूर, सौंफ, सैन्धव-लवण, वासापत्र, गाय एवं भैंस का घी, बकरी जहाँ बँधी हो उसी स्थान पर खाट पर लेटना, बैठना, बकरी की मींग एवं मूत्र का मिश्रित शरीर पर लेप, शर्करा, शिखरणी (श्रीखण्ड = दही एवं शर्करा का विशेष भोज्य पदार्थ), मद्य, रसाला[1], कर्पूर, कस्तूरी, श्वेत चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्यों का शरीर पर लेप, सुगन्धित द्रव्यों का अभ्यङ्ग, सुगन्धित पदार्थों से स्नान, स्नान के बाद सुगन्धित इत्र, सेण्ट, तैलादि लेप, अच्छे वस्त्रों का धारण, सुगन्धित फूलों की माला का धारण, अच्छा हवादार सुगम्य भवन, कामकेलि कथाओं का श्रवण एवं उद्दीपन चित्र देखना, शीतल-मन्द-सुगन्ध वायु का सेवन, सुन्दरियों का नर्तन, गायन एवं अच्छे कलाकारों के द्वारा वाद्य संगीत श्रवण-दर्शन करना, चाँदनी रात में घूमना, मृगनयनी स्त्रियों का दर्शन, हास, केलिकला का दर्शन-श्रवण करना, सुवर्ण-मणि-मुक्तादि से युक्त आभूषणों का धारण, देव, गुरु, ब्राह्मणों की पूजा, दान, भोजन तथा हृदय के लिए हितकर एवं मनोनुकूल वस्तुओं का सेवन राजयक्ष्मा के लिए अत्यन्त लाभदायक है।

राजयक्ष्मा रोग में अपथ्य

विरेचनं वेगविधारणानि
श्रमं स्त्रियं स्वेदनमञ्जनं च।
प्रजागरं साहसकर्मसेवा
रूक्षान्नपानं विषमाशनं च ॥३१९॥
ताम्बूलकालिन्दकुलत्थमाष-
रसोनवंशाङ्कुररामठानि।
अम्लानि तिक्तानि कषायकाणि
कटूनि सर्वाणि च पत्रशाकम् ॥३२०॥
क्षारान् विरुद्धान्यशनानि शिम्बी
कर्कोटकं चापि विदाहि सर्वम्।
कठिल्लकं कृष्णमपि क्षयेषु
विवर्जयेत्सन्ततमप्रमत्तः ॥३२१॥
वृन्ताकं कारवेल्लं च तैलं बिल्वं च राजिकाम्।
व्यायामं च दिवानिद्रां क्षयी कोपं विवर्जयेत् ॥३२२॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां राजयक्ष्माधिकारः।

विरेचन कराना (पखाना कराना), मल-मूत्रादि का वेग रोकना, अधिक परिश्रम, अधिक स्त्रीसम्भोग, स्वेदन, अंजन लगाना, रात्रिजागरण, साहस कर्म, अधिक बलवान् से युद्ध करना, अधिक भार उठाना, अधिक परिश्रम करना, रूक्ष अन्नपान एवं विषमाशन अव्यवस्थित रूप से भोजन करना, ताम्बूल सेवन, तरबूज खाना, कुलत्थ, उड़द, लशुन, बाँस के अङ्कुर की सब्जी खाना, हींग, अम्ल, तिक्त, कषाय, कट्वधिक भोजन, सभी पत्रशाक, क्षार, विरुद्धान्न भोजन, शिम्बीफल, केकड़ा, सभी प्रकार के विदाही भोजन, करैला आदि सभी द्रव्य यक्ष्मा में त्याग दें। बैंगन, करैला, तैल, बिल्वफल, राजिका, मैथुन, दिन में सोना और क्रोध करना राजयक्ष्मा के रोगी को छोड़ देना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य राजयक्ष्माधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

१. 'रसाला' के लिए भैषज्यरत्नावली-अरोचकाधिकार पृ. ४८० देखें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ कासरोगाधिकारः (१५)

वातज कास में पथ्य

वास्तुकं वायसीशाकं मूलकं सुनिषण्णकम् ।
स्नेहास्तैलादयो भक्ष्याः क्षीरेक्षुरसगौडिकाः ॥१॥
दध्यारनालाम्लफलं प्रसन्नापानमेव च ।
शस्यते वातकासे तु स्वाद्वम्ललवणानि च ॥२॥
ग्राम्यानूपौदकैः शालियवगोधूमषष्टिकान् ।
रसैर्माषात्मगुप्तानां यूषैर्वा भोजयेद्धितान् ॥३॥

वास्तुक (बथुआ) शाक, मकोय, मूली, चौपतिया शाक, तैल, घृत, गोदुग्ध, इक्षुरस, गुड़ से निर्मित पदार्थ, दधि-आरनाल, खट्टे फल, प्रसन्ना (मद्य), मधुर, अम्ल तथा लवण—ये वातज कास में प्रशस्त पथ्य हैं । ग्राम्य और आनूप पशु-पक्षियों के मांस, जलीय प्राणियों के मांस, शालि चावल, यव, गोधूम, साठी चावल का भात, उड़द, कपिकच्छू बीज का यूष रस वातज कास में हितकर है ।

१. अपराजितलेह (चक्रदत्त)

शटीशृङ्गीकणाभार्गी गुडवारिदयासकैः ।
सतैलैर्वातकासघ्नो लेहोऽयमपराजितः ॥४॥

१. कचूर, २. काकडासिंगी, ३. पिप्पली, ४. भारङ्गीत्वक्, ५. गुड़, ६. नागरमोथा, ७. जवासा तथा ८. तिलतैल। तिलतैल के अतिरिक्त सभी द्रव्य समभाग में लें। गुड़ एवं तिलतैल छोड़कर सभी ६ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। पुनः उस चूर्ण को ५ ग्राम लेकर उसमें ५ ग्राम गुड़ और ५ मि.ली. तिलतैल मिलाकर सेवन करने से वातज कास नष्ट हो जाता है। यह वातज कास को जीत लेता है, अतः इसे 'अपराजित लेह' कहा जाता है।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—तिलतैल से। **गन्ध**—तिलतैल गन्धी। **वर्ण**—मटमैला। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातज कास में।

२. भार्ग्यादिलेह (चक्रदत्त)

भार्गीद्राक्षाशटीशृङ्गीपिप्पलीविश्वभेषजैः ।
गुडतैलयुतो लेहो हितो मारुतकासिनाम् ॥५॥

१. भार्गी, २. द्राक्षा (मुनक्का), ३. कचूर, ४. काकडा-सिंगी, ५. पिप्पली, ६. शुण्ठी, ७. गुड़ और ८. तिलतैल—प्रत्येक द्रव्य समभाग लें किन्तु तिलतैल आवश्यकतानुसार अधिक भी लेना पड़ सकता है। गुड़ एवं तैल छोड़कर शेष सभी ६ द्रव्यों को कूटकर सूक्ष्म चूर्ण करें। पुनः उसे काचपात्र में रख लें। आवश्यकतानुसार ५ ग्राम चूर्ण में ५ ग्राम गुड़ और ५ ग्राम तिलतैल मिलाकर वातज कास के रोगी को सुबह-शाम खिलाने से लाभ होता है।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—तिलतैल। **गन्ध**—तैलगन्धी। **वर्ण**—मटमैला। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातज कास में।

३. पञ्चमूलीक्वाथ (चक्रदत्त)

पञ्चमूलीकृतः क्वाथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ।
रसान्नमश्नतो नित्यं वातकासमुदस्यति ॥६॥

१. बिल्वमूलछाल, २. अरणीमूलछाल, ३. श्योनाकमूल-छाल, ४. पाटलामूलछाल, ५. गम्भारमूलछाल तथा ६. पिप्पली चूर्ण—बृहत्पञ्चमूल के सभी द्रव्य समभाग में २५० ग्राम प्रत्येक लें। इन्हें यवकुट करें। आवश्यकतानुसार यवकुट में चौगुना मीठा जल देकर क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ में १ ग्राम पिप्पलीचूर्ण डालकर पिलाने से वातज कास नष्ट हो जाता है। इस क्वाथ को पीते समय मांसरसयुक्त भोजन देना चाहिए।

मात्रा—५० मि.ली.। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण के साथ। **गन्ध**—कोई विशेष नहीं। **वर्ण**—जल से थोड़ा गदला। **स्वाद**—तिक्त-कटु। **उपयोग**—वातज कास में।

४. पित्तज कास में क्वाथ (चक्रदत्त)

पित्तकासे तनुकफे त्रिवृतां मधुरैर्युताम् ।
दद्याद्घनकफे तिक्तैर्विरेकार्थं युतां भिषक् ॥७॥

पतले (द्रव) कफ के पित्तज कास में मधुर रसों से युक्त द्रव्यों (मुलेठी-विदारीकन्द-द्राक्षा आदि) के क्वाथ में ५ ग्राम त्रिवृत्-चूर्ण मिलाकर पीने से विरेचन कराकर पित्तज कास के रोगी को बहुत लाभ होता है तथा गाढ़े कफ वाले पित्तज कास में तिक्तरस वाले द्रव्यों (गुडूची-निम्बत्वक्-कटुकी आदि) के क्वाथ में त्रिवृत्चूर्ण मिलाकर पीने से विरेचन कराकर बहुत लाभ होता है।

पित्तज कास में पथ्य (चक्रदत्त)

मधुरैर्जाङ्गलरसैः श्यामाकयवकोद्रवाः ।
मुद्गादियूषैः शाकैश्च तिक्तकैर्मात्रया हिता ॥८॥

पित्तज कास में जीवनीयगणोक्त मधुर द्रव्यों के स्वरस एवं अन्य मधुरादि (शर्करा-गुड़) से सुसंस्कृत जांगल पशु-पक्षियों के मांसरस के साथ या मुद्गादि यूष के साथ और तिक्त शाकों के

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

साथ मात्रापूर्वक श्यामा, जौ और कोदो (कुधान्यों) का मात्रापूर्वक सेवन करना हितकर है।

५. द्राक्षादिलेह (चक्रदत्त)

द्राक्षामधुकखर्जूरं पिप्पलीमरिचान्वितम्।
पित्तकासहरं ह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसर्पिषा ॥९॥

१. द्राक्षा (मुनक्का), २. यष्टिमधु, ३. खजूर, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. मधु तथा ७. गोघृत—मुनक्का से मरिच तक के सभी द्रव्य समभाग लें और इन्हें कूट-पीसकर एकत्र मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। पित्तज कास के रोगी को ५ से १० ग्राम तक इस चूर्ण में ५ ग्राम मधु और १० ग्राम गोघृत मिलाकर चटाने से अत्यधिक लाभ होता है।

६. बलादिक्वाथ (चक्रदत्त)

बलाद्विबृहतीवासाद्राक्षाभिः क्वथितं जलम्।
पित्तकासापहं पेयं शर्करामधुयोजितम् ॥१०॥

१. बलामूल, २. कण्टकारी, ३. बृहती, ४. वासा, ५. मुनक्का, ६. शर्करा तथा ७. मधु—समभाग लें। शर्करा-मधु छोड़कर यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम यवकुट को लेकर आठ गुना जल में रात्रिपर्यन्त भिगा दें और प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छानकर उसमें १० ग्राम शर्करा (चीनी) और १० ग्राम मधु मिलाकर पीने से पित्तज कास नष्ट हो जाता है।

७. खर्जूरादिलेह (चक्रदत्त)

खर्जूरपिप्पलीद्राक्षासितालाजाः समांशिकाः।
मधुसर्पिर्युतो लेहः पित्तकासहरः परः ॥११॥

१. खजूर, २. पिप्पली, ३. मुनक्का (द्राक्षा), ४. शर्करा, ५. धान के खील (लाजा), ६. मधु और ७. गोघृत—खजूर से मधु तक के सभी द्रव्य ५-५ ग्राम लें और घृत १० ग्राम लें। पिप्पली और धान के खील का चूर्ण कर लें तथा खजूर, शर्करा एवं मुनक्का को शिला पर पीस लें। इन्हें एक कटोरी में रखकर इसमें मधु और घृत मिलाकर चाटने से पित्तज कास नष्ट होता है।

कफज कासचिकित्सा क्रम (चक्रदत्त)

बलिनं वमनेनादौ शोधितं कफकासिनम्।
यवान्नैः कटुरूक्षोष्णैः कासघ्नैश्चाप्युपाचरेत् ॥१२॥

बलवान् कफज कास के रोगी को सर्वप्रथम वमन कराकर कफ का शोधन (निर्हरण) करना चाहिए। इसके बाद यव-बाजरा आदि रूक्ष अन्न एवं कटु द्रव्यों तथा कासघ्न द्रव्यों द्वारा इसकी चिकित्सा करनी चाहिए।

८. दशमूल क्वाथ (चक्रदत्त)

पार्श्वशूले ज्वरे श्वासे कासे श्लेष्मसमुद्भवे।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं दशमूलीरसं पिबेत् ॥१३॥

१. बिल्वछाल, २. अरणीछाल, ३. श्योनाकछाल, ४. पाटलाछाल, ५. गम्भारीछाल, ६. कण्टकारी, ७. बृहती, ८. शालपर्णी, ९. पृश्निपर्णी, १०. गोखरु तथा ११. पिप्पली-चूर्ण—सभी द्रव्य समभाग लें। इन्हें यवकुट कर लें। ५० ग्राम इस यवकुट चूर्ण को आठ गुना जल में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें। इस दशमूल क्वाथ में १ ग्राम पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पीने से कफज कास, ज्वर एवं पार्श्वशूल और श्वासरोग नष्ट हो जाते हैं।

९. पञ्चकोलक्षीर (चक्रदत्त)

पञ्चकोलैः शृतं क्षीरं कफघ्नं लघु शस्यते।
श्वासकासज्वरहरं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥१४॥

१. पिप्पली, २. पिप्पलीमूल, ३. चव्यमूल, ४. चित्रकमूल, ५. शुण्ठी, ६. गोदुग्ध तथा ७. सिता—प्रत्येक द्रव्य ५-५ ग्राम लेकर यवकुट करें। पुनः गाय के दूध $\frac{१}{२}$ लीटर में २५ ग्राम उक्त यवकुट और $\frac{१}{२}$ लीटर मीठा जल मिलाकर आग पर पकावें। जब मात्र दूध ही शेष रहे (अर्थात् पानी जल जाय) तो छानकर उसमें आवश्यकतानुसार सिता मिलाकर $\frac{१}{४}$ लीटर पञ्चकोल-साधित दूध पियें। ऐसे ही सुबह-शाम दो बार पिलावें। यह दूध कफघ्न है; कास, श्वास और ज्वर नाशक है। यह बल, वर्ण और अग्निवर्धक है।

१०. पौष्करादि क्वाथ (चक्रदत्त)

पौष्करं कट्फलं भार्गी पिप्पलीविश्वसाधितम्।
पिबेत्क्वाथः कफोद्रेके कासे श्वासे च हृद्ग्रहे ॥१५॥

१. पुष्करमूल, २. कट्फल, ३. भारङ्गी, ४. शुण्ठी तथा ५. पिप्पली—प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पाँचों द्रव्य ५-५ ग्राम लेकर यवकुट करें और आठ गुना जल में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें। जिस कफज कास में कफ अधिक मात्रा में निकलता हो उसमें गरम-गरम क्वाथ पिलावें तो अधिक लाभ मिलता है। इसके अतिरिक्त श्वास, कास एवं हृदयग्रह (जकड़ाहट) में भी लाभ करता है।

११. शृंगवेरस्वरस (चक्रदत्त)

स्वरसं शृङ्गवेरस्य माक्षिकेन समन्वितम्।
पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥१६॥

आर्द्रक (अदरख) का ५ से १० मि.ली. स्वरस मधु मिलाकर पिलाने से प्रतिश्याय, कास एवं श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं।

१२. कण्टकारीक्वाथ (चक्रदत्त)

कण्टकारीकृतः क्वाथः सकृष्णः सर्वकासहा ॥१७॥

२५ ग्राम कण्टकारी के यवकुट को ८ गुना जल में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष होने पर छान लें और उसमें पिप्पलीचूर्ण १

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम मिलाकर गरम ही पिलाना चाहिए। इसके पीने से सभी प्रकार के कास नष्ट हो जाते हैं।

१३. बिभीतक-प्रयोग (चक्रदत्त)

बिभीतकं घृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितम्।
स्विन्नमग्नौ हरेत्कासं ध्रुवमास्यविधारितम् ॥१८॥

बिभीतक फल (सम्पूर्ण) लें। बिभीतक के सम्पूर्ण फल को घृत में कुछ देर डुबाकर छोड़ दें, फिर उसे निकालकर गाय के गोबर (१ तोला गोबर को कैपसुल जैसा बना लें) के अन्दर बहेड़ा को रखकर आग में पका लें। जब गोबर का आवरण सूख जाय अर्थात् बहेड़ा स्विन्न हो जाय तो उसे निकालकर मुख में रखें और चूसें। ऐसा करने से तुरन्त ही कास नष्ट हो जाता है।

१४. कट्फलादिक्वाथ (चक्रदत्त)

कट्फलं कत्तृणं भार्ङ्गी मुस्तं धान्यं वचाऽभया।
शृङ्गी पर्पटकं शुण्ठी सुराह्वा च जले शृतम् ॥१९॥
मधुहिङ्गुयुतं पेयं कासे वातकफात्मके।
कण्ठरोगेषु मुख्येषु श्वासहिक्काज्वरेषु च ॥२०॥

१. कायफल, २. गन्धतृण ३. भारङ्गी, ४. नागरमोथा, ५. धनिया, ६. वचा, ७. हरीतकी, ८. काकड़ासिंगी, ९. पित्तपापड़ा, १०. शुण्ठी और ११. देवदारुकाष्ठ—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें। इन्हें यवकुट करें। इस यवकुट क्वाथ में से २५ ग्राम यवकुट लेकर ८ गुना मीठे जल के साथ क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें और इसमें १० ग्राम मधु और ५०० मि.ग्रा. घृतभर्जित हींग मिलाकर पिलाना चाहिए। इसे दो बार पीने से वातज कास, कण्ठरोग, श्वास, कास एवं हिक्का रोग शान्त हो जाते हैं।

१५. वासास्वरस (प्रथम) (चक्रदत्त)

वासकस्वरसः पेयो मधुयुक्तो हिताशिना।
पित्तश्लेष्मकृते कासे रक्तपित्ते विशेषतः ॥२१॥

वासापत्रस्वरस ३० से ५० मि.ली. लें और उसमें ३० से ५० ग्राम मधु मिलाकर पिलाने से पित्तज-कफज कास में लाभ होता है। विशेषकर रक्तपित्त में अधिक लाभ होता है।

१६. वासास्वरस (द्वितीय)

वासायाः स्वरसं पूतं कणामाक्षिकसंयुतम्।
अभ्यासान्मुच्यते पीत्वाऽप्यसाध्यात्कासरोगतः ॥२२॥

वासास्वरस ३० से ५० मि.ली. लें। उसमें समभाग मधु और ३ से ५ ग्राम पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पीने से असाध्य कासरोग नष्ट हो जाता है।

१७. चित्रमूलादिक्वाथ

समूलं चित्रकश्चैव पिप्पलीचूर्णकं हरेत्।
कासं श्वासञ्च हिक्काञ्च मधुयुक्तं न संशयः ॥२३॥

५० ग्राम चित्रकमूल को यवकुटकर आठ गुना जल में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें। उसमें २५ ग्राम मधु और ५ ग्राम पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पीने से कास, श्वास और हिक्का रोग निश्चित ही नष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

क्रव्याद-कुलिङ्ग का मांस-भक्षण

तद्वत् क्रव्यादजं मांसं कौलिङ्गं मांसमेव च।
असाध्यान्मुच्यते भुक्त्वा कासादभ्यासयोगतः ॥२४॥

मांसभक्षी पशु-पक्षियों के मांस एवं मांसरस अथवा चटक (गौरैया) पक्षी के मांस एवं मांसरस खाने से तथा कुछ दिनों तक सतत अभ्यास करने से असाध्य कासरोग नष्ट हो जाता है।

१८. मुस्तकादिलेह

मुस्तकं पिप्पली द्राक्षा सम्पक्वं बृहतीफलम्।
घृतक्षौद्रयुतो लेहः क्षयकासनिबर्हणः ॥२५॥

१. नागरमोथा, २. पिप्पली, ३. मुनक्का (द्राक्षा), ४. बृहती फल, ५. गोघृत तथा ६. मधु—नागरमोथा से बृहती तक के सभी चार द्रव्य प्रत्येक १००-१०० ग्राम लेकर सूक्ष्मचूर्ण कर लें। पुनः ५ ग्राम यह चूर्ण और गोघृत ५ ग्राम एवं मधु १० ग्राम मिलाकर चाटने से क्षय एवं कास रोग में बहुत लाभ हो जाता है।

१९. तिन्तिडीकपत्र क्वाथ

तिन्तिडीपत्रजः क्वाथो हिङ्गुसैन्धवसंयुतः।
दुष्टकासं जयत्याशु तृणवृन्दमिवानलः ॥२६॥

इमलीपत्र ५० ग्राम को चार गुना जल के साथ मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और उसमें १ से २ ग्राम सैन्धवलवण तथा २५० मि.ग्रा. शुद्ध हींगचूर्ण मिलाकर पिलाने से दुष्ट कासरोग नष्ट हो जाता है। जैसे तृण-समूह को आग तुरन्त जला देती है।

२०. पञ्चमूलीक्वाथ

निहन्ति कासं गुरुपञ्चमूली-
कृतः कषायश्च कणासहायः ॥२७॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. अग्निमान्द्यत्वक्, ३. सोनापाठा (स्योनाक), ४. पाटलमूलत्वक्, ५. गम्भारीमूलत्वक्—इन्हें समभाग में लेकर यवकुट करें और आवश्यकतानुसार चतुर्गुण जल में क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें और उस क्वाथ में आवश्यकतानुसार पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पिलाने से कास रोग नष्ट हो जाता है।

२१. कण्टकार्यादि क्वाथ (भा.प्र.)

कण्टकारीयुगद्राक्षावासाकर्चूरबालकैः।
नागरेण च पिप्पल्या क्वथितं सलिलं पिबेत्।
शर्करामधुसंयुक्तं पित्तकासापहं परम् ॥२८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. कण्टकारी, २. बृहती, ३. द्राक्षा, ४. वासा, ५. कर्चूर, ६. सुगन्धबाला, ७. शुण्ठी और ८. पिप्पली इन आठ द्रव्यों को समभाग लेकर यवकुट करें और आवश्यकतानुसार चतुर्गुण जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ततः शर्करा और मधु मिलाकर पिलाने से पित्तज कास नष्ट हो जाता है।

२२. पिप्पल्यादिक्वाथ (भा.प्र.)

पिप्पली कट्फलं शुण्ठी शृङ्गी भार्ङ्गी तथोषणम्।
कारवी कण्टकारी च सिन्दुवारो यमानिका ॥२९॥
चित्रको वासकश्चैषां कषायं विधिवत्कृतम्।
कफकासविनाशाय पिबेत् कृष्णारजोयुतम् ॥३०॥

१. पिप्पली, २. कट्फलत्वक्, ३. शुण्ठी, ४. काकड़ासिंगी, ५. भारङ्गी, ६. मरिच, ७. श्याहजीरा, ८. कण्टकारी, ९. निर्गुण्डी, १०. अजवायन, ११. चित्रकमूल तथा १२. वासापत्र—प्रत्येक द्रव्य १००-१०० ग्राम लेकर यवकुट करें। यह यवकुट क्वाथचूर्ण ५० ग्राम लेकर आठ गुना जल के साथ क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें और इस क्वाथ में २ ग्राम पिप्पलीचूर्ण डालकर प्रातः-सायं पीने से कफज कास नष्ट हो जाता है।

२३. मरिचाद्यचूर्ण (चक्रदत्त)

कर्षः कर्षार्द्धमथो पलं पलद्वयं तथाऽर्द्धकर्षश्च।
मरिचस्य पिप्पलीनां दाडिमगुडयावशूकानाम् ॥३१॥
सर्वौषधैरसाध्या ये कासाः सर्ववैद्यविनिर्मुक्ताः।
अपि पूयं छर्दयतां तेषामिदमौषधं पथ्यम् ॥३२॥

१. मरिचचूर्ण १२ ग्राम, २. पिप्पलीचूर्ण ६ ग्राम, ३. अनारबीजचूर्ण ४६ ग्राम, ४. गुड़ ९५ ग्राम तथा ५. यवक्षार ६ ग्राम लें। गुड़ की कड़ी चासनी बना लें और चूल्हे से नीचे उतार कर उसमें मरिचादि चूर्णों को डालकर अच्छी तरह मिलाकर भूरा जैसा कर चूर्ण कर लें और काचपात्र में रखकर सुरक्षित कर लें। अथवा सभी चूर्णों को गुड़ के साथ मिलाकर रख लें। किन्तु यह औषधि टिकाऊ नहीं होती है। सभी औषधों से असाध्य कास तथा सभी वैद्यों से त्याज्य कास के रोगी एवं खाँसने के बाद पूय (Pus) वमन करने वाले कासरोगी के लिए अत्यन्त हितकर है।

मात्रा—१-२ ग्राम तक। **अनुपान**—उष्णोदक से। **गन्ध**—गुडगन्धी। **वर्ण**—गुडाभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—असाध्य कास में।

२४. समशर्करचूर्ण (चक्रदत्त)

लवङ्गजातीफलपिप्पलीनां
भागान् प्रकल्प्याक्षसमानमेषाम्।
पलार्द्धमेकं मरिचस्य दद्यात्
पलानि चत्वारि महौषधस्य ॥३३॥
सितासमं चूर्णमिदं प्रसह्य
रोगानिमानाशु बलान्निहन्यात्।
कासज्वरारोचकमेहगुल्म-
श्वासाग्निमान्द्यग्रहणीप्रदोषान् ॥३४॥

१. लवंग १२ ग्राम, २. जातीफल १२ ग्राम, ३. पिप्पली १२ ग्राम, ४. मरिच २३ ग्राम, ५. शुण्ठी १८७ ग्राम तथा ६. शर्करा २५६ ग्राम लें। इन्हें कूट-पीसकर अच्छी तरह से मिला दें और छानकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'समशर्कराचूर्ण' का सेवन करने से कास, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, श्वास, अग्निमान्द्य एवं ग्रहणी प्रभृति रोगों में अत्यधिक लाभ होता है।

मात्रा—२ से ३ ग्राम। **अनुपान**—गरम घी से। **गन्ध**—शुण्ठी जैसी महक वाला। **वर्ण**—श्वेताभ (शर्करा के कारण)। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—कास, श्वास एवं अरुचि में।

२५. लवंगादिवटी (वैद्यजीवन)

तुल्या लवङ्गमरिचाक्षफलत्वचः स्युः
सर्वैः समो निगदितः खदिरस्य सारः।
बब्बूलवृक्षजकषाययुतं च चूर्णं
कासान्निहन्ति गुटिका घटिकाऽष्टाकान्ते ॥३५॥

१. लवंगचूर्ण ५० ग्राम, २. मरिचचूर्ण ५० ग्राम, ३. बहेड़ा चूर्ण ५० ग्राम तथा ४. खदिरसार १५० ग्राम लें। इन चारों चूर्णों को अच्छी तरह मिलाकर बब्बूलत्वक्क्वाथ की भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह लवङ्गादि वटी ८ घण्टे में कास को समाप्त कर देती है।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) चूसने हेतु। **अनुपान**—चूसना मात्र। **गन्ध**—लौंग की गन्ध। **वर्ण**—कत्थई वर्ण की वटी। **स्वाद**—कषाय रसयुक्त। **उपयोग**—कास में।

२६. तालीशादिचूर्ण

तालीशं त्र्यूषणं शृङ्गी क्षुद्रैलाऽक्षश्च वैणवी।
सर्वाणि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥३६॥
खादेदस्मात्प्रतिदिनं माषार्द्धं मधुना सह।
कासं श्वासं रक्तपित्तं हन्ति सर्वान् गलामयान् ॥३७॥

१. तालीसपत्रचूर्ण, २. शुण्ठीचूर्ण, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. मरिचचूर्ण, ५. काकड़ासिंगीचूर्ण, ६. छोटी इलायची, ७. बहेड़ात्वक्चूर्ण तथा ८. वंशलोचन—ये आठों द्रव्य समभाग लें। इन सभी चूर्णों को मिलाकर पुनः एक बार चलनी से छान लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस तालीशादि चूर्ण को २ ग्राम की मात्रा में मधु के साथ खिलाने से कास, श्वास, रक्तपित्त और गले के रोग नष्ट हो जाते हैं।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विमर्श—इस तालीशादिचूर्ण में शर्करा नहीं मिलायी गई है, अतः मधु से ही केवल इसका प्रयोग करें।

मात्रा—२ ग्राम। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—सुगन्ध, इलायची जैसी। **वर्ण**—खाकी वर्ण का। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—कास, श्वास एवं रक्तपित्त में।

२७. कासान्तकचूर्ण

त्रिफलाव्योषचूर्णं च समभागं प्रकल्पयेत् ।
मधुना सह पानात्तु दुष्टकासं नियच्छति ॥३८॥

१. आमलाचूर्ण, २. हरीतकीचूर्ण, ३. बहेड़ाचूर्ण, ४. शुण्ठीचूर्ण, ५. पिप्पलीचूर्ण तथा ६. मरिचचूर्ण—ये छः द्रव्य समभाग में अच्छी तरह से मिलाकर पुनः चलनी से छानकर काँच- पात्र में सुरक्षित रख लें। इस चूर्ण को २ ग्राम की मात्रा में मधु मिलाकर चाटने से दुःसाध्य कास नष्ट हो जाता है।

मात्रा—२ ग्राम। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—। **वर्ण**—हरिताभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—दुष्ट कास में।

२८. मनःशिलादिधूम (चक्रदत्त)

मनःशिलाऽऽलमरिचमांसीमुस्तेङ्गुदैः पिबेत् ।
धूमं त्र्यहञ्च तस्यानु सगुडञ्च पयः पिबेत् ॥३९॥
एष कासान् पृथग्द्वन्द्वसर्वदोषसमुद्भवान् ।
शतैरपि प्रयोगाणां साधयेदग्रसाधितान् ॥४०॥

१. मनःशिला २ ग्राम, २. हरताल २ ग्राम, ३. मरिच २ ग्राम, ४. जटामांसी २ ग्राम, ५. नागरमोथा २ ग्राम तथा ६. इंगुदी फल २ ग्राम लें। इन सभी द्रव्यों को अलग-अलग यवकुट कर मिला लें और तम्बाकू पीने वाली बड़ी चिलम में रखकर अग्नि प्रज्वलित करें तथा धूमपान करें। धूमपान के बाद $\frac{१}{२}$ लीटर गरम दूध में गुड़ मिलाकर पिलाना चाहिए। इस प्रकार तीन दिन तक यह धूमपान कराना है। एकदोषज, द्विदोषज एवं त्रिदोषज कास सैकड़ों औषधि प्रयोगों से भी यदि अच्छा नहीं हुआ हो तो इस 'मनःशिलादि धूम' के तीन दिन के प्रयोग से अवश्य ही नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५ ग्राम द्रव्य १ बार में धूमपान करें। **अनुपान**—गोदुग्ध एवं गुड़ से। **गन्ध**—जटामांसी की सुगन्ध। **वर्ण**—पीताभ। **उपयोग**—कास-श्वास में।

विमर्श—मनःशिला और हरताल कच्चा ही लेना है। इनमें शंखविष है, अतः अधिक मात्रा में इनका उपयोग हानिकर है। दूध और गुड़ के साथ १० ग्राम गोघृत मिलाकर पीना अधिक हितकर है।

२९. मनःशिलालिप्त बदरीपत्रधूम (च.द.)

मनःशिलालिप्तदलं बदर्या उपशोषितम् ।
सक्षीरं धूमपानञ्च महाकारानिबर्हणम् ॥४१॥

मनःशिला तथा बैर के पत्ते—दोनों समभाग में लें। मनःशिला को पानी के साथ खरल में पीसकर बैर के पत्ते पर लेप कर सुखा लें। इन्हीं पत्तों को बड़ी चिलम में भरकर प्रज्वलित अग्नि पत्तों पर रखकर धूमपान करें। धूमपान करने के बाद दूध में गोघृत एवं गुड मिलाकर पिलाना चाहिए। यह शंखविष अर्थात् आर्सेनिक (Arsenic) का योग है। अतः सावधानी से धूमपान करना चाहिए।

३०. अर्कादिधूम (च.द.)

अर्कच्छल्लशिले तुल्ये ततोऽर्द्धेन कटुत्रिकम् ।
चूर्णितं वह्निनिक्षिप्तं पिबेद् धूमं तु योगवित् ॥४२॥
भक्षयेदथ ताम्बूलं पिबेद् दुग्धमथाम्बु वा ।
कासाः पञ्चविधा यान्ति शान्तिमाशु न संशयः ॥४३॥

१. अर्क (आक) के सुपक्व पीत पत्र १ भाग, २. मनःशिला १ भाग तथा ३. त्रिकटु मिलित $\frac{१}{२}$ भाग लें। अर्क पत्र सूखा—मनःशिला और त्रिकटु मिश्रित तीनों द्रव्यों को एक साथ कूट-पीस कर बड़ी-सी टिकिया बना लें। इस का वजन ६ ग्राम होना चाहिए। सूखने पर चिलम पर इसे रखें और लकड़ी कोयले की आग ऊपर से रखकर धूमपान करें। इस धूमपान के बाद ताम्बूल चर्वण करना चाहिए। पुनः पूर्ववत् गोदुग्ध या शीतल जल पिलाना चाहिए।

इसकी दूसरी विधि ऐसी भी कर सकते हैं कि इन द्रव्यों को जो ऊपर टिकिया बना कर धूमपान कराया गया है, वैसा न करके इन यवकुटों को ही सीधे चिलम में भरकर धूमपान कर सकते हैं।

३१. मरिचादि धूम

मरिचशिलार्कक्षीरैरार्कीं त्वचमाशुभावितां शुष्काम् ।
कृत्वा विधिना धूमं पिबतः कासाः शमं यान्ति ॥४४॥

१. मरिचचूर्ण, २. आकमूलत्वक्चूर्ण तथा ३. आकक्षीर—तीनों द्रव्य समभाग में लें। एक शिला पर मरिचचूर्ण एवं अर्कमूलत्वक्चूर्ण समभाग रख कर अर्कक्षीर के साथ पीस कर ६-६ ग्राम की पतली टिकिया बनाकर छाया में सुखा लें। चिलम में इस टिकिया को रखें और प्रज्वलित लकड़ी के कोयले से ढ़क कर धूमपान करने से कासरोग शान्त हो जाता है। इस योग के बाद भी गोदुग्ध में गुड़ एवं घी मिला कर पिलाना चाहिए।

३२. कासान्तकरस (र.सा.सं.)

सूतं गन्धं विषञ्चैव शालपर्णी च धान्यकम् ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रं मरीचकम् ॥
गुञ्जाचतुष्टयं खादेन्मधुना कासशान्तये ॥४५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ, ४. शालपर्णी, ५. धनियाँ और ६. मरिच— पारद से धनियाँ तक

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

के पाँचों द्रव्य प्रत्येक २५-२५ ग्राम लें और मरिचचूर्ण १२५ ग्राम लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक को मर्दन कर कज्जली बनावें। तत्पश्चात् चारों काष्ठौषधि चूर्णों को अच्छी तरह से मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'कासान्तक-रस' को ४ रत्ती की मात्रा में मधु के साथ चाटने से कासरोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५००मि.ग्रा. (४ रत्ती)। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—कास में।

३३. कासकुठाररस (र.सा.सं.)

हिङ्गुलं मरिचं गन्धं सव्योषं टङ्गणं तथा।
द्विगुञ्जामार्द्रकद्रावैः सन्निपातं सुदारुणम्॥
कासं नानाविधं हन्ति शिरोरोगं सुदुःसहम्॥४६॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. मरिचचूर्ण, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुण्ठीचूर्ण, ५. पिप्पलीचूर्ण, ६. मरिचचूर्ण तथा ७. शुद्ध टंकण—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम एक खरल में हिंगुल और गन्धक का एक साथ खूब मर्दन करें, ततः सभी द्रव्यों के चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। जल की १ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसे आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन करने से दारुण सन्निपात ज्वर, अनेक प्रकार के कासरोग और दुःसह पीड़ायुक्त शिरोरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—रसायनगन्धी। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—कास, ज्वर एवं शिरःशूल में।

३४. पित्तकासान्तकरस (र.सा.स.)

भस्म ताम्राभ्रकान्तानां कासमर्दत्वचो रसैः।
मुनिजैर्वेतसाम्लैश्च दिनं मर्द्यं सुपिण्डितम्॥४७॥
निष्कार्द्धं पित्तकासार्त्तो भक्षयेच्च दिनत्रयम्।
कासश्वासाग्निमान्द्यञ्च क्षयञ्चापि निहन्त्यलम्॥४८॥

१. ताम्रभस्म, २. अभ्रकभस्म तथा ३. कान्तलौहभस्म लें। **भावना**—१. कासमर्दस्वरस, २. अगस्तत्वक्स्वरस एवं ३. अम्लवेतसक्वाथ। एक खरल में तीनों भस्मों को एक साथ मिलाकर मर्दन करें तथा बाद में कासमर्दस्वरस, अगस्तत्वक् स्वरस और अम्लवेतसक्वाथ के साथ १-१ भावना देकर एक दिन मर्दन करें और पिण्डी जैसा बना लें, पुनः इसकी $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसके सेवन से पित्तज कास, कास, श्वास, अग्निमान्द्य एवं क्षय रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—गोघृत से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—अम्ल एवं तिक्त। **उपयोग**—पित्तज कास, श्वास एवं क्षय में।

३५. पुरन्दरवटी (र.सा.सं.)

सूतकाद् द्विगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम्।
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसंमितम्॥४९॥
अजाक्षीरेण सम्भाव्य वटिकां कारयेत्ततः।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीतं तोयं पिबेदनु॥५०॥
कासश्वासप्रशमनी विशेषादग्निवर्द्धनी।
इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद्योगवाहिका॥
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषायते॥५१॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. शुण्ठीचूर्ण १ भाग, ४. पिप्पलीचूर्ण १ भाग, ५. मरिचचूर्ण १ भाग, ६. आमलाचूर्ण १ भाग, ७. हरीतकीचूर्ण १ भाग और ८. बडेड़ाचूर्ण १ भाग लें। **भावना द्रव**—बकरी का दूध। एक पत्थर के खरल में प्रथम पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनावें। ततः त्रिकटु एवं त्रिफलाचूर्ण मिलाकर मर्दन करें। पुनः बकरी के दूध की १ भावना देकर ४-४ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस पुरन्दरवटी को आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन करने से कास-श्वास नाशक तथा अग्निवर्धक है। काफी दिनों तक इस वटी का सेवन करने से वृद्धत्व समाप्त होकर मनुष्य युवा बन जाता है तथा सैकड़ों स्त्रियों के साथ सम्भोग करने में सक्षम हो जाता है।

मात्रा—५००मि.ग्रा. (४ रत्ती)। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—श्वास एवं कास में।

३६. पञ्चामृतरस

शुद्धसूतस्य भागैकं भागौ द्वौ गन्धकस्य च।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम्॥५२॥
मृताभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत्।
अम्लेन मर्दयेत्सर्वं माषैकं वातकासनुत्॥
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रैर्बिभीतकफलत्वचम्॥५३॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. ताम्रभस्म २० ग्राम, ४. मरिचचूर्ण १००ग्राम, ५. अभ्रकभस्म ४० ग्राम तथा ६. शुद्ध विष १० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः समस्त उपर्युक्त द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। निम्बुस्वरस की भावना देकर $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। मधु एवं बिभीतक फलत्वक्चूर्ण के साथ प्रयोग करने से वातज कास तुरन्त नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१२५-२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं बिभीतकचूर्ण से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—वातज कास में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३७. अमृतार्णवरस (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकं शुद्धं मृतलौहञ्च टङ्कणम्।
रास्ना विडङ्गं त्रिफला देवदारु कटुत्रिकम् ॥५४॥
अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषञ्चापि विचूर्णयेत्।
द्विगुञ्जं वातकासार्त्तः सेवयेदमृतार्णवम् ॥५५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लोहभस्म, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. रास्नाचूर्ण, ६. विडङ्गचूर्ण, ७. आमलाचूर्ण, ८. हरीतकीचूर्ण, ९. बहेड़ाचूर्ण, १०. देवदारूचूर्ण, ११. शुण्ठीचूर्ण, १२. मरिचचूर्ण, १३. पिप्पलीचूर्ण, १४. गुडूचीचूर्ण, १५. पद्मकाष्ठचूर्ण तथा १६. वत्सनाभचूर्ण—ये सभी १६ द्रव्य समभाग (प्रत्येक २०-२० ग्राम) लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें तथा शेष द्रव्यों को कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें और जल की भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित कर लें। वातज कास से पीड़ित रोगी को गरम घी के साथ १-१ वटी सेवन कराने से अत्यधिक लाभ होता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—गरम घी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—कषाय-कटुरस। **उपयोग**— वातज कास में।

३८. चन्द्रामृतरस

त्रिकटु त्रिफला चव्यं धान्यजीरकसैन्धवम्।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं छागीक्षीरेण गोलयेत् ॥५६॥
रसगन्धकलोहानां प्रत्येकं कार्षिकं शुभम्।
टङ्कणस्य पलं दत्त्वा मरिचस्य पलार्द्धकम् ॥५७॥
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्।
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम् ॥५८॥
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम्।
नीलोत्पलरसेनापि कुलत्थस्य रसेन वा ॥५९॥
पिप्पल्या मधुना वाऽपि शृङ्गवेररसेन वा।
हन्ति पञ्चविधं कासं वातपित्तसमुद्भवम् ॥६०॥
वातश्लेश्मोद्भवं दोषं पित्तश्लेष्मोद्भवं तथा।
वातिकं पैत्तिकञ्चापि नानादोषसमुद्भवम् ॥६१॥
रक्तनिष्ठीवनञ्चापि ज्वरं श्वाससमन्वितम्।
तृष्णां दाहं भ्रमं हन्ति जठराग्निप्रदीपनः ॥६२॥
बलवर्णकरो ह्येष प्लीहगुल्मोदरापहः।
आनाह-क्रिमिहृत् पाण्डु-जीर्णज्वर-विनाशनः ॥६३॥
अयं चन्द्रामृतो नाम चन्द्रनाथेन निर्मितः।
वासा गुडूची भार्गी च मुस्तकं कण्टकारिका।
सेवनान्ते प्रकर्त्तव्यो रसोऽयं वीर्यवर्धनः ॥६४॥

१. शुण्ठीचूर्ण, २. पिप्पलीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण, ४. आमलाचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण, ६. बहेड़ाचूर्ण, ७. चव्यचूर्ण, ८. धनियाचूर्ण, ९. श्वेत जीराचूर्ण, १०. सैन्धवचूर्ण, ११. शुद्ध पारद, १२. शुद्ध गन्धक, १३. लौहभस्म, १४. शुद्ध टंकण और १५. मरिचचूर्ण—शुण्ठीचूर्ण से लौहभस्म तक के सभी १३ द्रव्य १०-१० ग्राम लें, शुद्ध टंकण ४० ग्राम तथा मरिचचूर्ण २० ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष सभी चूर्णों को उसी कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें। ततः बकरी के दूध की एक भावना देकर ११२५ मि.ग्रा. (९-९ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। प्रातःकाल नीलोत्पलस्वरस या कुलत्थ क्वाथ या पिप्पलीचूर्ण १ ग्राम एवं मधु मिलाकर या आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन करने से पाँच प्रकार के कास, वातपित्तज कास, वाजकफज कास, पित्तज एवं वातज कास, अनेक दोषों से उत्पन्न कास, मुख से रक्त निकलने वाला क्षय, ज्वर एवं श्वास से युक्त कास, तृष्णारोग, दाहरोग और भ्रमरोगों का नाश करता है। यह जाठराग्निप्रदीपक है, बलकर एवं वर्णकर है। गुल्मरोग, उदररोग, प्लीहरोग, आनाह, कृमि, पाण्डु, जीर्ण-ज्वरादि रोगों को यह 'चन्द्रामृतरस' नाश करता है। इस औषधि को आचार्य श्री चन्द्रनाथ ने बनाया था। इस औषधि के सेवन के बाद वासा, गुडूची, भार्गी, नागरमोथा एवं कण्टकारी का मिला हुआ ६० मि.ली. रस पीने से इस औषधि की गुणवत्ता अधिक बढ़ती है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—नीलकमलस्वरस, कुलत्थ क्वाथ, पिप्पलीचूर्ण एवं मधु और आर्द्रकस्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—कटु-कषाय-लवणीय। **उपयोग**—सभी तरह के कास, क्षयादि में।

३९. बृहत् चन्द्रामृतरस (र.सा.सं.)

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणः ॥६५॥
कर्पूरं शाणकं दद्यात्सुवर्णं लोकसम्मितम्।
ताम्रञ्च तोलकं दद्याद्विशुद्धं मारितं भिषक् ॥६६॥
लौहं कर्षं क्षिपेत्तत्र वृद्धदारकजीरकम्।
विदारी शतमूली च क्षुरकञ्च बला तथा ॥६७॥
मर्कट्यतिबला चैव जातीकोषफले तथा।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतसर्जरसं तथा ॥६८॥
शाणभागं समादाय चैकीकृत्य प्रयत्नतः।
मधुना मर्दयेत्तावद्यावदेकत्वमागतम् ॥६९॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटीं कुर्यात्प्रयत्नतः।
भक्षयेद्वटिकामेकां पिप्पलीमधुना सह ॥७०॥

१. शुद्ध पारद १२ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १२ ग्राम, ३. अभ्रकभस्म २५ ग्राम, ४. कपूर ३ ग्राम, ५. स्वर्णभस्म १२

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम, ६. ताम्रभस्म १२ ग्राम, ७. लौहभस्म १२ ग्राम, ८. विधाराचूर्ण ३ ग्राम, ९. जीराचूर्ण ३ ग्राम, १०. विदारीकन्द-चूर्ण ३ ग्राम, ११. शतावरीचूर्ण ३ ग्राम, १२. गोक्षुरचूर्ण ३ ग्राम, १३. बलामूलचूर्ण ३ ग्राम, १४. कपिकच्छूबीजचूर्ण ३ ग्राम, १५. अतिबलाचूर्ण ३ ग्राम, १६. जातीफलचूर्ण ३ ग्राम, १७. जातिपत्री चूर्ण ३ ग्राम, १८. लवंगचूर्ण ३ ग्राम, १९. भांग का बीजचूर्ण ३ ग्राम, २०. सर्जरसचूर्ण ३ ग्राम तथा २१. मधु यथावश्यक लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष सभी भस्मों को पहले उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें। तत्पश्चात् अन्य चूर्णद्रव्यों को मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें। पुनः उसे मधु के साथ खरल में मर्दन करें और ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में अच्छी तरह से सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। प्रातः-सायं १-१ वटी पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से देने से कासक्षयादि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं पिप्पलीचूर्ण से। **गन्ध**—कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—कास-क्षयादि में।

४०. श्रीडामरानन्दाभ्ररस

अभ्रस्यामलमारितस्य तु पलं क्षुद्राटरूषस्थिरा-
बिल्वश्योणकपाटलाकलसिकाः सब्रह्मयष्ट्यार्द्रकाः।
चित्रग्रन्थिकगोक्षुरं सचविकमपामार्गात्मगुप्तान्वितम्
सत्त्वैर्मर्दितमेकशश्च पलिकैर्गुञ्जार्द्धकं भक्षितम् ॥७१॥
कासं पञ्चविधं स्वरामयमुरोघातं च हिक्कां ज्वरं
श्वासं पीनसमेहगुल्ममरुचिं यक्ष्माम्लपित्तक्षयम्।
दाहं मोहमशेषदोषजनितं शूलं बलासं कृमिं
छर्दिं पाण्डुहलीमकं गलगदं विस्फोटकं कामलाम् ॥७२॥
मन्दाग्निं ग्रहणीं क्षयञ्च यकृतं प्लीहानमर्शांसि षड्
हन्यादामकफोद्भवानपि गदाञ् श्रीडामराख्याभ्रकम्।
बल्यं वृष्यमशेषदोषहरणं धातुप्रदं कासिनां
मेध्यं हृद्यरसायनं हरमुखाज्ज्ञात्वा मया भाषितम् ॥७३॥

कृष्णवज्राभ्रकभस्म ५० ग्राम लें।

भावना द्रव्य— १. कण्टकारीक्वाथ, २. वासापत्रस्वरस, ३. शालपर्णीक्वाथ, ४. बिल्वछालक्वाथ, ५. श्योनाकक्वाथ, ६. पाटलाछालक्वाथ, ७. पृश्निपर्णीक्वाथ, ८. भार्गीछाल-क्वाथ, ९. आर्द्रकस्वरस, १०. चित्रकमूलक्वाथ, ११. पिप्पली-मूलक्वाथ, १२. गोक्षुरबीजक्वाथ, १३. चव्यमूलक्वाथ, १४. अपामार्ग पञ्चाङ्गक्वाथ तथा १५. कपिकच्छूबीजक्वाथ—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें तथा कच्चे द्रव्यों के स्वरस ५०-५० मि.ली. लेना चाहिए।

उपर्युक्त कष्ठौषधों के स्वरसों या क्वाथों से पृथक्-पृथक् १-१ भावना देकर अभ्रकभस्म को अच्छी तरह से सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे 'डामरानन्दाभ्ररस' कहते हैं। इस 'डामरानन्दाभ्ररस' की $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की मात्रा में मधु अथवा घी के साथ प्रयोग करने से पाँच प्रकार के कास, स्वरभङ्ग, उरःक्षत, हिक्का, ज्वर, श्वास, पीनस, प्रमेह, गुल्म, अरुचि, यक्ष्मा, अम्लपित्त, क्षय, दाह, सन्निपातज मूर्च्छा, शूल, कफज रोग, कृमि, वमन, पाण्डु, हलीमक, गले का रोग, विस्फोटक, कामला, मन्दाग्नि, ग्रहणी, क्षय, यकृद् रोग, प्लीहरोग, छः प्रकार के अर्शरोग, आमरोग एवं कफज रोग नष्ट हो जाते हैं।

यह 'डामरानन्दाभ्ररस' बल्य है, वृष्य है, सभी रोगो का नाश करने वाला है, कास एवं क्षय रोगियो के लिए धातुवर्धक है, मेध्य है, हृद्य है तथा रसायन है। श्रीडामरानन्द योगी कहते हैं कि भगवान् शंकर द्वारा बताये जाने के बाद ही मैंने इस रस को लोककल्याणार्थ बताया है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु या घृत से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण का। **स्वाद**—तिक्त-कटुरस। **उपयोग**—कास, क्षय, श्वासादि बहुत रोगों में।

४१. महाकालेश्वररस

मृतं लौहं मृतं वङ्गं मृतार्कं मृतमभ्रकम्।
शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च माक्षिकं हिङ्गुलं विषम् ॥७४॥
जातीफलं लवङ्गञ्च त्वगेलानागकेसरम्।
उन्मत्तस्य च बीजानि जयपालञ्च शोधितम् ॥७५॥
एतानि समभागानि मरिचं हरनेत्रकम्।
सर्वद्रव्यं क्षिपेत्खल्ले लौहदण्डेन मर्दयेत् ॥७६॥
शक्राशनस्य स्वरसैर्भावयेदेकविंशतिम्।
गुञ्जामात्रा प्रदातव्या आर्द्रकस्य रसैर्युता ॥७७॥
तदर्द्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं यथोचितम्।
पञ्च कासान् क्षयं श्वासं राजयक्ष्माणमेव च ॥७८॥
सन्निपातं कण्ठरोगमभिन्यासमचेतनम्।
महाकालेश्वरो हन्ति कालनाथेन भाषितः ॥७९॥

१. लौहभस्म, २. वङ्गभस्म, ३. ताम्रभस्म, ४.अभ्रकभस्म ५. शुद्ध पारद, ६. शुद्ध गन्धक, ७. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ८. शुद्ध हिंगुल, ९. शुद्ध विष, १०. जायफलचूर्ण, ११. लवंग चूर्ण, १२. त्वक्चूर्ण, १३. छोटी इलायचीचूर्ण, १४. नागकेशरचूर्ण, १५. शुद्ध धत्तूरबीज, १६. शुद्ध जयपालचूर्ण, १७. मरिचचूर्ण तथा १८. भांगपत्र—लौहभस्म से लेकर शुद्ध जयपालबीजचूर्ण तक के सभी १६ द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें और मरिचचूर्ण १०० ग्राम लें तथा भाँगपत्रक्वाथ की २१ भावना दें। प्रत्येक भावना में ४५० ग्राम भाँग लेना चाहिए, अतः

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भाँग की कुल मात्रा ९४५० ग्राम होगी। सर्वप्रथम पत्थर के एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः उस कज्जली में क्रमशः भस्मों को डालें । पुनः काष्ठौषधों के चूर्णों को डालकर एक साथ मर्दन करें। इसके बाद भाँगस्वरस की धीरे-धीरे २१ भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। १-१ वटी आर्द्रकस्वरस के साथ देने से पाँच प्रकार के कासरोग, क्षय, श्वास, राजयक्ष्मा, सन्निपातज कण्ठरोग, अभिन्यास ज्वर और मूर्च्छा रोग का नाश होता है। इस महाकालेश्वररस का निर्माण आचार्य श्रीकालनाथ ने किया था।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस और मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कषायरस युक्त। **उपयोग**—कास, क्षय, ज्वरादि में।

४२. विजयभैरवरस

सूतकं गन्धकं लौहं विषमभ्रकतालकम्।
विडङ्गं रेणुकं मुस्तमेलाग्रन्थिककेसरम् ॥८०॥
त्रिकटु त्रिफला चित्रं शुद्धं जैपालबीजकम्।
एतानि समभागानि गुडं द्विगुणमुच्यते ॥८१॥
तिन्तिडीबीजमानेन प्रातःकाले तु भक्षयेत्।
कासं श्वासं क्षयं गुल्मं प्रमेहं विषमज्वरम् ॥८२॥
अजीर्णं ग्रहणीदोषं हन्ति पाण्ड्वामयं तथा।
अपाने हृदये शूले वातरोगे गलग्रहे॥
ब्रह्मणा निर्मितो ह्येष रसो विजयभैरवः ॥८३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. शुद्ध विष, ५. अभ्रकभस्म, ६. शुद्ध हरताल, ७. विडङ्गचूर्ण, ८. रेणुकचूर्ण, ९. नागरमोथाचूर्ण, १०. छोटी इलायचीचूर्ण, ११. पिप्पलीमूलचूर्ण, १२. नागकेशरचूर्ण, १३. शुण्ठीचूर्ण, १४. पिप्पलीचूर्ण, १५. मरिचचूर्ण, १६. आमलाचूर्ण, १७. हरीतकीचूर्ण, १८. बहेड़ाचूर्ण, १९. चित्रकमूलचूर्ण, २०. शुद्ध जयपाल तथा २१. गुड़—शुद्ध पारद से जयपाल तक के सभी द्रव्य प्रत्येक २५-२५ ग्राम लें और गुड़ १ किलो लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः अन्य भस्मों एवं शुद्ध द्रव्यों को मिलाने के बाद काष्ठौषधियों के चूर्णों को अच्छी तरह मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद गुड़ की कड़ी चासनी (३-४ तार की) करें और उपर्युक्त मिश्रित चूर्णों को उस चासनी में मिलाकर १-१ ग्राम की वटी बनाकर काचपात्र में सुरक्षित रखें। प्रातःकाल १-१ वटी खाने से कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, अजीर्ण, ग्रहणीरोग, पाण्डुरोग, अपानवायुदोष, हृद्रोग, शूलरोग, वातरोग एवं गले की जकड़न वाले सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। इस 'विजयभैरवरस' का ब्रह्माजी ने निर्माण किया था।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—ताजे जल से। **गन्ध**—गुड़गन्धी। **वर्ण**—गुड़वर्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—कास, श्वास एवं यक्ष्मा में।

४३. काससंहारभैरवरस (र.सा.सं.)

रसगन्धकताम्रं च शङ्खटङ्गणलौहकम्।
मरिचं कुष्ठतालीशजातीफललवङ्गकम् ॥८४॥
कार्षिकं चूर्णमादाय दण्डेनामर्द्य भावयेत्।
भेकपर्णी केशराजो निर्गुण्डी काकमाचिका ॥८५॥
द्रोणपुष्पी शालपर्णी ग्रीष्मसुन्दर एव च।
भार्गी हरीतकी वासा कार्षिकैः पत्रजै रसैः ॥८६॥
वटिकां कारयेद्वैद्यो पञ्चगुञ्जाप्रमाणतः।
वातजं पित्तजं कासं द्वन्द्वजं चिरकालजम् ॥८७॥
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा।
श्रीमद्गहननाथेन काससंहारभैरवः ॥८८॥
रसोऽयं निर्मितो यत्नाल्लोकरक्षणहेतवे।
वासाशुण्ठीकण्टकारीक्वाथेन पाययेद् बुधः ॥८९॥
कासं नानाविधं हन्ति श्वासमुग्रमरोचकम्।
बलवर्णकरः श्रीदः पुष्टिदो वह्निदीपनः ॥९०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. ताम्रभस्म, ४. अभ्रकभस्म, ५. शंखभस्म, ६. शुद्ध टङ्कण, ७. लौहभस्म, ८. मरिच चूर्ण, ९. कुष्ठचूर्ण, १०. तालीशपत्रचूर्ण, ११. जायफलचूर्ण तथा १२. लवंगचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें।

भावना द्रव्य—१. मण्डूकपर्णी, २. भृङ्गराजस्वरस, ३. निर्गुण्डीस्वरस, ४. काकमाचीस्वरस, ५. द्रोणपुष्पी (गूमा), ६. शालपर्णीस्वरस, ७. आरग्वध, ८. भारङ्गी, ९. हरीतकीक्वाथ और १०. वासापत्रस्वरस। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें, ततः अभ्रकादि भस्मों एवं काष्ठौषधों के चूर्णों को उसी खरल में एक साथ रखकर ठीक से मर्दन करें। पुनः भावनार्थ १० द्रव्यों के स्वरस से क्रमशः १-१ भावना देकर मर्दन करें। इसके बाद ५-५ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'काससंहारभैरवरस' का निर्माण आचार्य श्रीगहननाथ ने लोकोपकार भावना से किया है। इसके प्रयोग से पञ्चविध कास निःसन्देह वैसे ही नष्ट हो जाते हैं जैसे सूर्य के प्रकाश से अन्धकार नष्ट हो जाता है। मधु के साथ इस वटी का सेवन करने के बाद वासा, शुण्ठी एवं कण्टकारी का मिश्रित क्वाथ ५० मि.ली. पीना चाहिए। इसके प्रयोग से सभी प्रकार के कास एवं उग्र श्वास नष्ट हो जाते हैं। यह औषधि बलकारक, वर्णकारक, पुष्टकारक एवं अग्निप्रदीपक और सुखदायक है।

मात्रा—६२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं वासा, शुण्ठी तथा कण्टकारीक्वाथ से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—पञ्चविध कास एवं श्वास में।

४४. बृहद् रसेन्द्रगुटिका (र.सा.सं.)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च।
ताम्रस्य हरितालस्य लौहस्य च विषस्य च ॥९१॥
मनःशिलायाः क्षाराणां बीजं धुस्तूरकस्य च।
मरिचस्य च सर्वेषां श्लक्ष्णचूर्णं पृथक्पृथक् ॥९२॥
जयन्ती चित्रकं मानघण्टाकर्णोल्लिमण्डुकी।
शक्राशनं भृङ्गराजं केशराजार्द्रकं तथा ॥९३॥
सिन्दुवारस्य च रसैः कर्षमात्रैर्विभावयेत्।
कलायपरिमाणान्तु गुडिकां कारयेद्भिषक् ॥९४॥
आर्द्रकस्य रसेनैव पञ्चकासान् व्यपोहति।
निहन्ति दारुणं श्वासं यक्ष्माणं सभगन्दरम् ॥९५॥
कफवातामयानुग्रानानाहं विड्विबन्धिताम्।
अग्निमान्द्यारुचिं शोथमुदरं पाण्डुकामलाम् ॥९६॥
रसायनी च वृष्या च बलवर्णप्रसादिनी।
मधुरं बृंहणं वृष्यं मत्स्यं मांसञ्च जाङ्गलम्।
घृतपक्वं सदा भक्ष्यं रूक्षं तीक्ष्णं विवर्जयेत् ॥९७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रकभस्म, ४. ताम्रभस्म, ५. शुद्ध हरताल, ६. लौहभस्म, ७. शुद्ध विष, ८. शुद्ध मनःशिला, ९. यवक्षार, १०. सर्जक्षार, ११. टंकणक्षार, १२. शुद्ध धत्तूरबीज और १३. मरिचचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें।

भावना-द्रव्य—जयन्तीरस, २. चित्रकमूलक्वाथ, ३. मानकन्दरस, ४. घण्टा पाटल, ५. सूरणकन्द (उल्ल), ६. मण्डूकपर्णी, ७. भाँगपत्र, ८. भाँगरारस, ९. भृङ्गराजरस, १०. आर्द्रकरस तथा ११. सिन्दुवारपत्ररस। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें और उसी के साथ पहले हरताल का मर्दन करें। तत्पश्चात् अन्य भस्मों और चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः उपर्युक्त भावना-द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ के साथ १-१ भावना दें और २५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। आर्द्रकस्वरस के साथ १-१ वटी खाने से पाँच प्रकार के कास, भयंकर श्वास, यक्ष्मा, भगन्दर, उग्र कफज एवं वातजरोग, आनाह, विबन्ध, अग्निमान्द्य, अरुचि, शोथ, उदररोग, पाण्डु एवं कामला रोग नाशक है। इसके अतिरिक्त यह गुटिका रसायन है, वृष्य है, बल एवं वर्ण को बढ़ाने वाली है, मधुर है, बृंहण है। इस वटी का सेवन करते समय मछली, जांगल मांस, घी में पका हुआ भोजन हमेशा करना चाहिए। रूक्ष एवं तीक्ष्ण पदार्थों का भोजन नहीं करना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं आर्द्रकस्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—कास, श्वास एवं क्षय में।

४५. महोदधिरस (र.सा.सं.)

सूतकं गन्धकं लौहं विषञ्चापि वराङ्गकम्।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकञ्च समांशिकम् ॥९८॥
पत्रं त्रिकटुकं मुस्तं विडङ्गं नागकेसरम्।
रेणुकाऽऽमलकं चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥९९॥
एषाञ्च द्विगुणं दत्त्वा मर्दयित्वा प्रयत्नतः।
भावना तत्र दातव्या गजपिप्पलिनिम्बुभिः ॥१००॥
मात्रा चणकतुल्या तु वटिकेयं प्रकीर्त्तिता।
हन्ति कासं तथा श्वासमर्शांसि च भगन्दरम् ॥१०१॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च कर्णरोगं कपालिकाम्।
हरेत् सङ्ग्रहणीं रोगानष्टौ च जठराणि च ॥
प्रमेहान् विंशतिं चैवाप्यश्मरीं च चतुर्विधाम् ॥१०२॥
न चान्नपाने परिहार्यमस्ति
न चातपे चाध्वनि मैथुने च।
यथेष्टचेष्टाभिरतः प्रयोगे
नरो भवेत्काञ्चनराशिगौरः ॥१०३॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. शुद्ध वत्सनाभ विष, ५. त्वक्चूर्ण, ६. ताम्रभस्म, ७. वङ्गभस्म, ८. अभ्रकभस्म, ९. तेजपत्रचूर्ण, १०. शुण्ठीचूर्ण, ११. मरिचचूर्ण, १२. पिप्पलीचूर्ण, १३. नागरमोथा, १४. विडङ्गचूर्ण, १५. नागकेशरचूर्ण, १६. रेणुकबीजचूर्ण, १७. आमलाचूर्ण तथा १८. पिप्पलीमूलचूर्ण—पारद से अभ्रकभस्म तक की सभी औषधियाँ २५-२५ ग्राम और तेजपत्र से पिप्पलीमूल तक की सभी औषधियाँ प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बना लें। तत्पश्चात् भस्मों को मिलावें और अन्त में काष्ठौषधों के चूर्णों को डालकर अच्छी तरह मर्दन कर मिलावें। तत्पश्चात् गजपिप्पली क्वाथ की १ भावना दें और अन्त में निम्बुस्वरस की १ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि की १-१ वटी मधु एवं आर्द्रक-स्वरस के साथ प्रयोग करने से सभी प्रकार के कास, श्वास, अर्श, भगन्दर, हृच्छूल, पार्श्वशूल, कर्णरोग, कपालिका रोग, संग्रहणी, ८ प्रकार के उदररोग, २० प्रकार के प्रमेह तथा ४ प्रकार के अश्मरी रोग नष्ट हो जाते हैं। इस रसौषधि के सेवन करते समय मनुष्य को किसी प्रकार के परहेज की आवश्यकता नहीं है। अन्न पान खाने का कोई नियम नहीं है। धूप में बैठना, चलना, स्त्री-संभोग आदि की भी कोई रुकावट नहीं है। अर्थात् स्वतन्त्रतापूर्वक सब कुछ खाते-पीते, सभी तरह के आहार-विहार करते हुए भी इस औषधि के प्रयोग से शरीर सोने की राशि जैसा देदीप्यमान हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं आर्द्रकस्वरस से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याववर्ण। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—कास, श्वास, हृद्रोग तथा अग्निमान्द्य में।

४६. तरुणानन्दरस (र.सा.सं.)

कर्षद्वयं रसेन्द्रस्य शुद्धस्य गन्धकस्य च।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शिलातलशुभे दृढे ॥१०४॥
बिल्वाग्निमन्थश्योणाकाः काश्मरी पाटला बला।
मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥१०५॥
विदारी शतमूली च कर्षैरेषां पृथग् रसैः।
मर्दयित्वा पुनर्वासास्वरसैर्दशतोलकैः ॥१०६॥
मर्दयेत्तत्र शुद्धाभ्रं रसस्य द्विगुणं क्षिपेत्।
रसस्यार्द्धं च कर्पूरं तत्रैव दापयेत् भिषक् ॥१०७॥
जातीकोषफले मांसी तालीशैलालवङ्गकम्।
चूर्णं कृत्वा प्रयत्नेन माषमात्रं क्षिपेत् पृथक् ॥१०८॥
विदारीस्वरसेनैव वटिकां कारयेद् भिषक्।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं क्षयं चोग्रमुरःक्षतम् ॥१०९॥
कासं पञ्चविधं श्वासं स्वराघातमरोचकम्।
कामलां पाण्डुरोगं च प्लीहानं सहलीमकम् ॥११०॥
जीर्णज्वरं तृषां गुल्मं ग्रहणीमामसम्भवाम्।
अतीसारं च शोथं च कुष्ठानि च भगन्दरम् ॥१११॥
नाशयेदेष विख्यातस्तरुणानन्दसंज्ञितः।
रसायनवरो वृष्यश्चक्षुष्यः पुष्टिवर्द्धनः ॥११२॥
सहस्रं याति नारीणां भक्षणादस्य मानवः।
क्षीणता न च शुक्रस्य न च बुद्धिबलक्षयः ॥११३॥
द्विमासमुपयोगेन निहन्ति सकलान् गदान्।
शुक्रसन्दीपनं कृत्वा ज्वरं हन्ति न संशयः ॥११४॥
नारिकेलजलेनैव भक्ष्योऽयं च रसायनः।
क्षीरानुपानाद् वृष्योऽयं न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥११५॥

शुद्ध पारद २३ ग्राम तथा शुद्ध गन्धक २३ ग्राम लें।

भावना-द्रव्य—१. बिल्वछालक्वाथ, २. अरणीछालक्वाथ, ३. श्योनाकक्वाथ, ४. गम्भारीछालक्वाथ, ५. पाटलाछालक्वाथ, ६. बलामूलक्वाथ, ७. नागरमोथाक्वाथ, ८. पुनर्नवास्वरस, ९. आमलास्वरस, १०. बृहतीपञ्चाङ्गक्वाथ, ११. वासापत्रस्वरस, १२. विदारीकन्दक्वाथ तथा १३. शतावरीमूलक्वाथ—बिल्वछाल से शतावरीमूल तक के सभी द्रव्यों के क्वाथ १२-१२ ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बना लें। पुनः इस कज्जली में बेलछाल से शतावरीमूल तक के सभी १३ द्रव्य प्रत्येक के १२-१२ मि.ली. क्वाथ लें और क्रमशः एक-एक क्वाथ की भावना देकर कज्जली का मर्दन करें। इसी तरह से १३ क्वाथों की भावना दें। पुनः ११५ मि.ली. वासापत्रस्वरस की भावना देकर मर्दन करें। पुनः उक्त भावित कज्जली में अभ्रक ४६ ग्राम, कर्पूर १२ ग्राम, जायफल, जातीपत्री, जटामांसी, तालीशपत्र, छोटी इलायची एवं लवंग प्रत्येक द्रव्य १-१ ग्राम डालकर मर्दन करें और विदारीकन्दक्वाथ की १ भावना देकर ४-४ रत्ती की वटी बना लें और छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'तरुणानन्दरस' की १-१ वटी को प्रातः-सायं मधु एवं पिप्पलीचूर्ण १ ग्राम के साथ प्रयोग करने से अत्यन्त उग्र राजयक्ष्मा, उग्र उरःक्षत, पाँच प्रकार के कास, श्वास, स्वरभङ्ग, अरुचि, कामला, पाण्डु, प्लीहा, हलीमक, जीर्णज्वर, तृषा, गुल्म, आमदोष से उत्पन्न ग्रहणीदोष, अतिसार, शोथ, कुष्ठ तथा भगन्दरादि रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह तरुणानन्द रस श्रेष्ठ रसायन है, वृष्य है, चक्षुष्य है, शरीरपुष्टिकर है। इस वटी के सेवन से मनुष्य हजारों औरतों के साथ सम्भोग करता है। शुक्र का क्षरण नहीं होता है, बुद्धि एवं बल का क्षय नहीं होता है। इस वटी का २ माह तक प्रयोग करने से मनुष्य के सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। शुक्र बढ़ने के कारण ज्वर नष्ट हो जाता है। रसायनार्थ इस वटी का प्रयोग नारियल के पानी से करना चाहिए। दूध के साथ सेवन करने से शुक्र को इतना बढ़ाता है कि वह स्त्रियों से हारता ही नहीं है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु, आर्द्रकस्वरस, नारियल जल एवं दूध से। **गन्ध**—कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त रस। **उपयोग**—क्षय, कास, श्वासादि में।

४७. समशर्करलौह

लवङ्गं कट्फलं कुष्ठं यमानी त्र्यूषणं तथा।
चित्रकं पिप्पलीमूलं वासकं कण्टकारिका ॥११६॥
चव्यं कर्कटशृङ्गी च चातुर्जातं हरीतकी।
शटी कक्कोलकं मुस्तं लौहमभ्रं यवाग्रजम् ॥११७॥
सर्वं प्रतिसमं चूर्णं तावच्छर्करयाऽन्वितम्।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं स्थापयेत्स्निग्धभाजने ॥११८॥
निहन्ति सर्वं कासं च वातश्लेष्मसमुद्भवम्।
क्षयकासं रक्तपित्तं श्वासमाशु विनाशयेत् ॥११९॥
क्षीरस्य पुष्टिजननं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥१२०॥

१. लवंग, २. कायफल, ३. कुष्ठ, ४. अजवायन, ५. शुण्ठी, ६. पिप्पली, ७. मरिच, ८. चित्रकमूल, ९. पिप्पलीमूल, १०. वासापत्र, ११. कण्टकारी, १२. चव्यमूल, १३. काकड़ासिंगी, १४. त्वक्, १५. छोटी इलायची, १६. तेजपत्र, १७. नागकेशर, १८. हरीतकी, १९. कचूर, २०. शीतलचीनी, २१. नागरमोथा, २२. लौहभस्म, २३. अभ्रकभस्म, २४. यवक्षार तथा २५. शर्करा—लवंग से यवक्षार पर्यन्त सभी २४ द्रव्य १-१ भाग लें और पीसी हुई चीनी (शर्करा) २४

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भाग लें। लवंग से नागरमोथा तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें और उसमें पीसी हुई शर्करा मिलाकर फिर से चलनी से छान लें तथा काचपात्र में सुरक्षित कर लें। १ से २ ग्राम तक इस चूर्ण को मधु के साथ प्रातः-सायं खाने से वातज-कफज कास, क्षयज कास, रक्तपित्त एवं श्वास रोग जल्दी नष्ट हो जाते हैं। यह क्षीण शरीर का पोषक (पुष्टिकारक) है, बल, वर्ण और अग्निवर्धक है।

मात्रा—१ से २ ग्राम। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—सुगन्ध तथा कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—कास-क्षय-श्वास नाशक है।

४८. चन्द्रामृतलौह (र.सा.सं.)

त्रिकटु त्रिफला धान्यं चव्यं जीरकसैन्धवम् ।
दिव्यौषधिहतस्यापि तत्तुल्यमयसो रजः ॥१२१॥
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ।
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम् ॥१२२॥
एकैकां वटिकां खादेद् रक्तोत्पलरसप्लुताम् ।
नीलोत्पलरसेनैव कुलत्थस्वरसेन च ॥१२३॥
निहन्ति विविधं कासं दोषत्रयसमुद्भवम् ।
वातिकं पैत्तिकं चैव गरदोषसमुद्भवम् ॥१२४॥
सरक्तमथ नीरक्तं ज्वरं श्वाससमन्वितम् ।
भ्रमतृड्दाहशूलघ्नं रुच्यं वह्निप्रदीपनम् ॥१२५॥
बलवर्णकरं वृष्यं जीर्णज्वरविनाशनम् ।
इदं चन्द्रामृतं लौहं चन्द्रनाथेन निर्मितम् ॥१२६॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. धनियाँ, ८. चव्यमूल, ९. जीरा, १०. सैन्धवलवण और ११. दिव्यौषधि-मारित लौहभस्म—शुण्ठी से लेकर सैन्धवलवण तक प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें तथा दिव्यौषधियों से मारित लौहभस्म १० भाग लें। शुण्ठी से सैन्धवलवण तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। पुनः खरल में लौहभस्म के साथ मर्दन कर चलनी से छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें अथवा जल के साथ मर्दन कर ९-९ रत्ती (११२५ ग्राम) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। अमृतेश्वरी भगवती का पवित्र होकर पूजा-ध्यान करें, ततः १ वटी रक्तोत्पलस्वरस या नीलकमल- स्वरस या कुलत्थक्वाथ ५० मि.ली. के साथ खायें। इसके सेवन से विविध दोषोत्पन्न एवं सन्निपातज कास, गरदोषोत्पन्न सरक्त कास या बिना रक्त के कास, ज्वर एवं श्वास के साथ कास नष्ट हो जाते हैं। यह भ्रम, तृषा, दाह एवं उदरशूल नाशक है; रुचिकर है, अग्निप्रदीपक है, बलवर्णकारक है, वृष्य है, जीर्णज्वरनाशक है। इस चन्द्रामृतलौह को आचार्य श्री चन्द्रनाथ ने लोकोपकार के लिए बनाया है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—मधु और लालकमल या नीलकमलस्वरस से या कुलत्थक्वाथ से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कत्थई वर्ण। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—सभी प्रकार के कास, यक्ष्मा एवं ज्वर में।

४९. भागोत्तरगुटिका

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो भवेत् ।
त्रिभागा पिप्पली पथ्या चतुर्भागा बिभीतकी ॥१२७॥
पञ्चभागा तथा वासा षड्गुणा सप्तभागिका ।
भार्गी सर्वमिदं चूर्णं भाव्यं बब्बूलजैर्द्रवैः ॥१२८॥
एकविंशतिवारांश्च मधुना गुडिका कृता ।
माषकैकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ॥
कासं श्वासं हरेत् क्षुद्रक्वाथस्तदनु कृष्णया ॥१२९॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. पिप्पलीचूर्ण ३ भाग, ४. हरीतकीचूर्ण ४ भाग, ५. बहेड़ाचूर्ण ५ भाग, ६. वासाचूर्ण ६ भाग, ७. भार्ङ्गी चूर्ण ७ भाग और ८. बब्बूलत्वक् लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर कज्जली बना लें। ततः सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण लेकर कज्जली से मिलाकर मर्दन करें। पुनः सभी चूर्णों के बराबर बबूलत्वक् लेकर क्वाथ करें और उसी क्वाथ से भावना दें। पुनः बबूलत्वक् की २१ भावना दें। इस प्रकार औषधि भाग से बबूलत्वक् २१ गुना अधिक होना चाहिए।

विमर्श—यदि शुद्ध पारद १०० ग्राम लें तो सभी द्रव्यों की मात्रा २८०० ग्राम होगी। अतः एक बार की भावना हेतु २८०० ग्राम बबूल लें। तदनुसार बबूलत्वक् कुल मिलाकर ५८८०० ग्राम लेना चाहिए। यदि कम मात्रा में पारद लेंगे तो बबूलत्वक् भी कम लेनी होगी।

बबूल की भावना के बाद भावित औषधि में थोड़ा मधु एवं जल मिलाकर पुनः मर्दन करें। अच्छी तरह से मर्दन होने पर १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पिप्पलीचूर्ण ५०० मि.ग्रा. तथा कण्टकारीक्वाथ ५०मि.ग्रा. के साथ लेने से कास-श्वास नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण एवं कण्टकारी-क्वाथ। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्याववर्ण। **स्वाद**—कषाय-मधुर। **उपयोग**—कास एवं श्वास में।

५०. लक्ष्मीविलासरस (र.सा.सं.)

शुद्धसूतं सतालञ्च तालाङ्कुरं सखर्परम् ।
वङ्गं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यकं च पलं पलम् ॥१३०॥
केशराजरसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम् ।
कुलत्थस्य रसेनापि भावयेच्च पुनः पुनः ॥१३१॥
एलाजातीफलाख्यञ्च तेजपत्रं लवङ्गकम् ।
यमानी जीरकञ्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥१३२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नतं भृङ्गं वंशगर्भं कर्षमात्रञ्च कारयेत्।
भावयेच्च रसेनाथ गोलयेत्सर्वमौषधम् ॥१३३॥
छायाशुष्का वटी कार्या चणकप्रमिता तथा।
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वकासनिवृत्तये ॥१३४॥
मत्स्यं मांसं तथा क्षीरं पथ्यं स्यात्स्निग्धभोजनम्।
क्षयं कासं तथा श्वासं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥१३५॥
हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम्।
अर्शोनाशं करोत्येष बलपुष्टिञ्च कारयेत् ॥१३६॥
कामदेवसमं वर्णं तृष्णाऽरोचकनाशनम्।
वर्ज्यं शाकाम्लमादौ च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं महादेवेन भाषितः ॥१३७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध हरताल, ३. शुद्ध मनःशिला, ४. खर्परभस्म, ५. वङ्गभस्म, ६. ताम्रभस्म, ७. अभ्रकभस्म, ८. कान्तलौहभस्म तथा ९. कांस्यभस्म—प्रत्येक द्रव्य १-१ पल अर्थात् ४६-४६ ग्राम लें।

भावना-द्रव—भृङ्गराजस्वरस और कुलत्थक्वाथ।

१. छोटी इलायचीचूर्ण, २. जायफलचूर्ण, ३. तेजपत्रचूर्ण, ४. लवंगचूर्ण, ५. अजवायनचूर्ण, ६. जीराचूर्ण, ७. शुण्ठीचूर्ण, ८. पिप्पलीचूर्ण, ९. मरिचचूर्ण, १०. आमलाचूर्ण, ११. हरीतकीचूर्ण, १२. बहेड़ाचूर्ण, १३. तगरचूर्ण, १४. भृङ्गराजचूर्ण तथा १५. वंशलोचनचूर्ण—ये १५ द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम चूर्ण लें।

सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं हरताल का एक साथ मर्दन कर कज्जली बना लें। ततः उसमें मनःशिला देकर १ दिन तक और दृढ़ मर्दन करें। इसके बाद उक्त कज्जली में उपर्युक्त सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें और भृङ्गराजस्वरस की ३ दिनों तक भावना दें। पुनः ३ दिनों तक कुलत्थक्वाथ की भावना दें। पुनः उपर्युक्त छोटी इलायची से वंशलोचन तक के सभी १५ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण उपर्युक्त भावित भस्मों में मिलाकर मर्दन करें और पूर्ववत् भृङ्गराजस्वरस एवं कुलत्थक्वाथ की ३-३ भावना देकर ६ दिनों तक मर्दन करें। इसके बाद २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें, पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

प्रयोग—१-१ वटी प्रातः-सायं शीतल जल से खाने पर सभी प्रकार के कास नष्ट हो जाते हैं। क्षय, कास, श्वास तथा ज्वर भी निःसन्देह इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं। यह हलीमक, पाण्डु, शोथ, शूल, प्रमेह और अर्श नाशक है; शरीर को बलवान् एवं पुष्ट करता है। तृष्णा एवं अरुचि को भी यह औषधि मिटाती है।

इस रसौषधि के प्रयोग काल में मछली, मांस, मांसरस तथा दूध और स्निग्ध भोजन विशेष पथ्य हैं। अम्लशाक पदार्थ इस काल में वर्जित रखना चाहिए। आग पर भुना हुआ पदार्थ एवं अग्निसेवन वर्जित है। इस औषधि के सेवन से शरीर कामदेव के समान सुन्दर हो जाता है। इस 'लक्ष्मीविलासरस' को श्री महादेवजी ने कहा है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—शीतल जल से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त-कटु। **उपयोग**—कास, श्वास एवं क्षय में।

५१. सार्वभौमरस

शृङ्गाराभ्ररसे स्वर्णं लौहं वा यद्यत्रैव प्रदीयते।
तदाऽयं सर्वरोगाणां सार्वभौमो न संशयः ॥१३८॥

राजयक्ष्मारोगाधिकार में कहे गये 'शृङ्गाराभ्ररस' में १-१ द्रव्य के बराबर और अधिक सुवर्णभस्म तथा लौहभस्म मिला दिया जाय तो इसे सार्वभौमरस कहते हैं। यह सार्वभौमरस अनुपान भेद से सभी कासों तथा अन्य सभी रोगों का नाश करता है।

५२. बृहद् शृङ्गाराभ्ररस (र.सा.सं.)

पारदं गन्धकं चैव टङ्कणं नागकेशरम्।
कर्पूरं जातिकोषञ्च लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥१३९॥
सुवर्णञ्चापि प्रत्येकं कर्षमात्रं प्रकल्पयेत्।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णन्तु चतुःकर्षं प्रयोजयेत् ॥१४०॥
तालीशघनकुष्ठानि मांसी त्वग् धात्रिपुष्पिका।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥१४१॥
कर्षद्वयञ्च चैतेषां पिप्पलीक्वाथमर्दितम्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमन्वितम् ॥१४२॥
अग्निमान्द्यादिकान् रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम्।
उदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥१४३॥
ग्रहणीं श्वासकासञ्च हन्याद्यक्ष्माणमेव च।
नानारोगप्रशमनं बलवर्णाग्निकारकम् ॥१४४॥
बृहच्छृङ्गाराभ्रं नाम विष्णुना परिकीर्त्तितम्।
एतस्याभ्यासमात्रेण निर्व्याधिर्जायते नरः ॥१४५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध टङ्कण, ४. नागकेशरचूर्ण, ५. कर्पूर, ६. जतीपत्रीचूर्ण, ७. लवंगचूर्ण, ८. तेजपत्रचूर्ण, ९. स्वर्णभस्म, १०. अभ्रकभस्म, ११. तालीशपत्रचूर्ण, १२. नागरमोथाचूर्ण, १३. कुष्ठचूर्ण, १४. जटामांसीचूर्ण, १५. त्वक्चूर्ण, १६. धवफूलचूर्ण, १७. छोटी इलायची बीजचूर्ण, १८. शुण्ठीचूर्ण, १९. पिप्पलीचूर्ण, २०. मरिचचूर्ण, २१. आमलाचूर्ण, २२. हरीतकीचूर्ण, २३. बहेड़ाचूर्ण तथा २४. गजपिप्पलीचूर्ण—पारद से स्वर्ण तक के सभी द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। अभ्रकभस्म ४६ ग्राम लें। तालीशपत्र से गजपिप्पली तक के सभी १४ द्रव्य प्रत्येक २३-२३ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उसमें अभ्रकभस्म और स्वर्णभस्म मिलाकर मर्दन करें। ततः सभी काष्ठौषधों के चूर्णों को मिलाकर पिप्पली क्वाथ की भावना दें तथा २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस औषधि की १ वटी ४ रत्ती त्वक्चूर्ण और मधु के साथ प्रयोग करने पर अग्निमान्द्य, अरुचि, उदररोग, शोथ, पाण्डु, कामला, ज्वर, ग्रहणी, श्वास, कास एवं यक्ष्मादि रोगों का नाश करता है तथा अन्य अनेक प्रकार के रोगों का नाश करता है। यह बल, वर्ण एवं अग्निवर्धक है। इस 'बृहच्छृङ्गाराभ्र रस' को भगवान् विष्णु ने बनाया है। कुछ दिनों तक इसके निरन्तर प्रयोग से मनुष्य निरोग हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—त्वक्चूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—सुगन्ध एवं कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—श्याववर्ण। **स्वाद**—कटुरस। उपयोग—श्वास-कास-यक्ष्मादि रोगों में।

५३. नित्योदयरस (र.सा.सं.)

सुशुद्धः पारदो गन्धः प्रत्येकं शुक्तिसंमितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मर्दयेच्च पृथक्पृथक् ॥१४६॥
बिल्वाग्निमन्थश्योणाकाः काश्मरी पाटला बला ।
मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥१४७॥
विदारी बहुपुत्री च एषां कर्षरसैर्भिषक् ।
सुवर्णं रजतं ताप्यं प्रत्येकं शाणमानकम् ॥१४८॥
पलमात्रं तु कृष्णाभ्रं तदर्द्धं च शिलाह्वयम् ।
जातीकोषफले मांसी तालीसैलालवङ्गकम् ॥१४९॥
प्रत्येकं कोलमानं तु वासानीरैर्विमर्दयेत् ।
शोषयित्वाऽऽतपे पश्चाद्विदारीरसभावितम् ॥१५०॥
द्विगुञ्जाभां वटीं खादेत् पिप्पलीमधुसंयुताम् ।
नाम्ना नित्योदयश्चायं रसो विष्णुविनिर्मितः ॥१५१॥
पञ्चकासान् निहन्त्याशु चिरकालोद्भवानपि ।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं जीर्णज्वरमरोचकम् ॥१५२॥
धातुस्थं विषमाख्यं च तृतीयकचतुर्थकम् ।
अर्शांसि कामलां पाण्डुमग्निमान्द्यं प्रमेहकम् ।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥१५३॥

१. शुद्ध पारद २३ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २३ ग्राम, ३. स्वर्णभस्म ३ ग्राम, ४. रजतभस्म ३ ग्राम, ५. स्वर्णमाक्षिक ३ ग्राम, ६. अभ्रकभस्म ४६ ग्राम, ७. शुद्ध मनःशिला २३ ग्राम, ८. जातीपत्री ६ ग्राम, ९. जायफल ६ ग्राम, १०. जटामांसी ६ ग्राम, ११. तालीशपत्र ६ ग्राम, १२. छोटी इलायची ६ ग्राम तथा १३. लवंग ६ ग्राम लें।

भावना—१. बिल्वछालक्वाथ, २. अरणीछालक्वाथ, ३. श्योनाकक्वाथ, ४. गम्भारीछालक्वाथ, ५. पाटलाछालक्वाथ, ६. बलामूलक्वाथ, ७.नागरमोथाक्वाथ ८. पुनर्नवामूलरस, ९. आमलारस, १०. बृहतीक्वाथ, ११. वासापत्रस्वरस, १२. विदारीकन्दस्वरस तथा १३. शतावरीक्वाथ—ये सभी १३ द्रव्यों के क्वाथ या स्वरस प्रत्येक १२-१२ मि.ली. लें।

सर्वप्रथम एक खरल मे पारद एवं गन्धक की कज्जली करे। पुनः उक्त कज्जली में क्रमशः १३ द्रव्यों की भावना दें। ततः स्वर्णमाक्षिक आदि सभी द्रव्यों को मिलावें। इसके बाद सभी काष्ठौषधों का जातीपत्री, लवंग आदि मिलाकर मर्दन करे और वासापत्रस्वरस की भावना देकर १ दिन मर्दन करे। सूखने पर पुनः विदारीकन्दरस या क्वाथ की १ भावना देकर पूरे दिन तक मर्दन करें और २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

इस 'नित्योदयरस' की १ वटी पिप्पलीचूर्ण और मधु के साथ प्रातः-सायं खाने से पाँच प्रकार के कास जो बहुत पुराने हों, नष्ट हो जाते हैं। यह उग्र राजयक्ष्मानाशक है, जीर्णज्वर, अरुचि, रसरक्तादि धातुगत विषमज्वर तथा तृतीयक एवं चतुर्थक ज्वर नष्ट हो जाते हैं। अर्श, कामला, पाण्डु, अग्निमान्द्य एवं प्रमेह रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके सेवन से मनुष्य कामदेव के समान स्वस्थ एवं सुन्दर हो जाता है। इस 'नित्योदयरस' को भगवान् विष्णु ने जनकल्याणार्थ बनाया है।

मात्रा—२५०मि.ग्रा.। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—सुगन्धी रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—कटु-तिक्त रस। **उपयोग**—कास, श्वास, यक्ष्मा एवं जीर्णज्वर में।

५४. वसन्ततिलक रस (र.सा.सं.)

हेम्नो भस्मकतोलकं द्विघनकं लौहात्त्रयः पारदा-
च्चत्वारो नियतन्तु वङ्गयुगलं चैकीकृतं मर्दयेत् ।
मुक्ताविद्रुमयो रसेन समता गोक्षूरवासेक्षुणा
सर्वं बालुकयन्त्रगं परिपचेद् यामं दृढं सप्तकम् ॥१५४॥
कस्तूरीघनसारमर्दितरसः पश्चात् सुसिद्धो भवेत्
कासश्वाससपित्तवातकफजित् पाण्डुक्षयादीन् हरेत् ।
शूलादिग्रहणीं विषादिहरणो मेहान् समानश्मरीं
हृद्रोगापहरो ज्वरादिशमनो वृष्यो वयोवर्द्धनः ॥१५५॥
श्रेष्ठः पुष्टिकरो वसन्ततिलको मृत्युञ्जयेनोदितः ॥१५६॥

१. सुवर्णभस्म १२ ग्राम, २. अभ्रकभस्म २३ ग्राम, ३. लौहभस्म ३५ ग्राम, ४. शुद्ध पारद ४६ ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक ४६ ग्राम, ६. वङ्गभस्म २३ ग्राम, ७. मुक्तापिष्टी ४६ ग्राम, ८. प्रवालभस्म ४६ ग्राम, ९. कस्तूरी १२ ग्राम और १०. कर्पूर १२ ग्राम लें।

भावना-द्रव—१. गोक्षुर क्वाथ, २. वासास्वरस तथा ३. इक्षुस्वरस। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बना लें। ततः कस्तूरी एवं कपूर छोड़ शेष

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भस्मों को कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें और क्रमशः तीनों द्रव्यों से भावना देकर १ बड़ा-सा पिण्ड बना लें तथा धूप में अच्छी तरह सुखाकर शराव सम्पुट करें। ततः अरण्यकण्डों की लघुपुट से पुनः-पुनः ७ बार पुट दें। प्रत्येक बार पुनः-पुनः तीनों द्रव्यों की भावना दें। पुनः स्वाङ्गशीत होने पर शरावसम्पुट खोलकर औषधि-गोलक निकाल लें और खरल में पीसें। अब उस पक्व औषधि में कस्तूरी एवं कपूर मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें। इसके बाद काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'वसन्ततिलकरस' को १ से २ रत्ती तक की मात्रा में मधु आदि विविधानुपान से सेवन करने पर कास एवं श्वास रोग, वातज रोग, पित्तज रोग एवं कफज रोग नष्ट हो जाते हैं। यह पाण्डु एवं क्षयरोग नाशक है तथा शूलरोग, ग्रहणी विकार, विषदोष, प्रमेह, अश्मरी, हृद्रोग, ज्वरादि रोगों को नष्ट करता है। यह वृष्य है, आयुवर्धक है, श्रेष्ठ पुष्टिकर है। इस 'वसन्ततिलकरस' को भगवान् मृत्युञ्जय महादेवजी ने कहा है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**— मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—सुगन्ध, कस्तूरी एवं कर्पूर मिश्रित गन्ध। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—किञ्चित् तिक्त-मधुर। **उपयोग**—कास, श्वास, यक्ष्मा एवं क्षय में।

५५. वासादिवटी

वासापत्ररसोद्भूतो मुद्रालेहः पलोन्मितः।
तोलकप्रमितं चूर्णमर्कमूलसमुद्भवम् ॥१५७॥
विशुद्धस्याहिफेनस्य मात्रा ग्राह्याऽपि तावती।
अर्द्धतोलकमानेनादेयं कर्पूरमुत्तमम् ॥१५८॥
सर्वमेकत्र संमर्द्य द्वित्रिरक्तिमिता वटी।
विधातव्या विधानेन वैद्येन ननु धीमता ॥१५९॥
वासादिवटिका नाम लेह्या क्षौद्रेण सर्वदा।
तेन श्वासोरःक्षतासृग्दरशोथगलामयाः ॥१६०॥
रक्तातिसारो यक्ष्मा च कासः पञ्चविधस्तथा।
ग्रहणीं रक्तपित्तं च क्षयो नश्यन्त्यसंशयम् ॥१६१॥

१. वासापत्ररसघन ४६ ग्राम, २. अर्कमूलत्वक्चूर्ण १२ ग्राम, ३. शुद्ध अफीम १२ ग्राम तथा ४. कर्पूर ६ ग्राम लें। वासापत्रस्वरस २५० मि.ली. लें, उसे स्टेनलेस स्टील के पात्र में मृदु अग्नि पर सुखाकर घन करें। ऐसा वासापत्ररसघन ४६ ग्राम लें, अर्कमूलत्वक् का सूक्ष्म चूर्ण १२ ग्राम, अहिफेन एवं कर्पूर अपनी निर्दिष्ट मात्रा में लें और एक खरल में चारों द्रव्यों का एक साथ थोड़ा जल देकर मर्दन करें और २ या ३ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे वासादिवटी कहते हैं। इस वटी को मधु के साथ सेवन करने से उरःक्षत, श्वास, रक्तपित्त, गले के रोग, रक्तातिसार, यक्ष्मा, रक्तप्रदर, पाँच प्रकार के कास, शोथ, ग्रहणी तथा क्षयरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० से ३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—काली। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—कास, श्वास, क्षय, यक्ष्मा एवं रक्तपित्त में।

५६. शशिप्रभावटी

भुजङ्गफेनं मधुकं घनं च
कालास्थिशस्यं समभागमेव।
आदाय तोयेन विमर्द्य खल्वे
द्विरक्तिमाना वटिका विरच्य ॥१६२॥
तमांसि नैशानि शशिप्रभेव
हन्याद्धि कासादिकमामवातम्।
उदग्रमप्युत्तमदाहशूलं
गलामयञ्चामययातनाञ्च ॥१६३॥
तथैव सुष्वापविधायिनीयं
यतो नराणां विविधार्तिभाजाम्।
अतो गुणज्ञैरुदिता भिषग्भिः
शशिप्रभा सार्थकनामिकैव ॥१६४॥

१. शुद्ध अफीम, २. यष्टिमधुचूर्ण, ३. नागरमोथाचूर्ण, ४. बैर की गुठली मज्जा—ये चारों द्रव्य एक साथ खरल में मर्दन करें। पुनः थोड़ा जल देकर मर्दन कर २-२ रत्ती की वटी बना लें एवं छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। जैसे चाँदनी से रात्रि का अन्धकार नष्ट हो जाता है उसी प्रकार यह औषध कास, आमवात, अतितीव्रदाह, शूल तथा गले के रोगों की यातना से मनुष्य को मुक्त कराता है। यह औषधि निद्राप्रद है। अतः गुणवान् वैद्यों ने इसका नाम 'शशिप्रभा वटिका' कहा है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु या जल से। **गन्ध**—अफीमगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—कास एवं अनिद्रा में।

५७. कासकर्त्तरीवटिका (र.का.धेनु.)

रङ्गं कृष्णाऽभया क्षारं रूषभार्गी क्रमोत्तरा।
तत्समं खादिरं सारं बब्बूलक्वाथभावितम् ॥१६५॥
एकविंशतिवाराँश्च मधुनाऽक्षमिता गुटी।
कासं श्वासं क्षयं हिक्कां हन्त्येषा कासकर्त्तरी ॥१६६॥

१. वङ्गभस्म १ भाग, २. पिप्पलीचूर्ण २ भाग, ३. हरीतकीचूर्ण ३ भाग, ४. यवक्षारचूर्ण ४ भाग, ५. वासापत्रचूर्ण ५ भाग, ६. भारङ्गीचूर्ण ६ भाग, ७. खदिरसारचूर्ण २१ भाग तथा ८. बब्बूलत्वक् लें। इन सभी औषधों का एक बड़े पत्थर के खरल में एक साथ मिलाकर मर्दन करें। ततः बबूलछाल के क्वाथ की धीरे-धीरे २१ भावना देकर अन्त में मधु के साथ मर्दन

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

करें और १२ ग्राम की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस कासकर्तरी वटी के सेवन से कास, श्वास, हिक्का, क्षयादि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६-१२ ग्राम। **अनुपान**—मुख द्वारा चूसने से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कत्थई वर्ण का। **स्वाद**—मधुर एवं कषाय रस युक्त। **उपयोग**—कास, श्वास, क्षय एवं हिक्का में।

५८. व्याघ्रीहरीतकी अवलेह (च.द.)

समूलपुष्पच्छदकण्टकार्या-
स्तुलां जलद्रोणपरिप्लुताञ्च।
हरीतकीनाञ्च शतं निदध्या-
द्विपच्य सम्यक् चरणावशेषम् ॥१६७॥
गुडस्य दत्त्वा शतमेतदग्नौ
विपक्वमुत्तार्य ततः सुशीते।
कटुत्रिकञ्च द्विपलप्रमाणं-
पलानि षट्पुष्परसस्य चात्र ॥१६८॥
क्षिपेच्चतुर्जातपलं यथाग्नि
प्रयुज्यमानो विधिनाऽवलेहः।
वातात्मकं पित्तकफोद्भवञ्च
द्विदोषकासानपि च त्रिदोषम् ॥१६९॥
क्षयोद्भवञ्च क्षतजञ्च हन्यात्
सपीनसश्वासस्वरक्षयञ्च।
यक्ष्माणमेकादशमुग्ररूपं
भृगूपदिष्टं हि रसायनं स्यात् ॥१७०॥

१. कण्टकारी पञ्चाङ्ग ५ किलो, जल १२ लीटर, २. हरीतकी १०० नग, ३. गुड़ ५ किलो, ४. शुण्ठीचूर्ण ३५ ग्राम, ५. पिप्पलीचूर्ण ३५ ग्राम, ६. मरिचचूर्ण ३५ ग्राम, ७. मधु २८० ग्राम, ८. त्वक्चूर्ण १२ ग्राम, ९. छोटी इलायची-चूर्ण १२ ग्राम, १०. तेजपत्रचूर्ण १२ ग्राम तथा ११. नाग-केशरचूर्ण १२ ग्राम लें। एक बड़े एवं गहरे पात्र में कण्टकारी पञ्चाङ्ग को यवकुट कर रखें। उसमें १२ लीटर जल डालें और १०० हरीतकी गिनकर एक कपड़े की पोटली में बाँधकर उसी पात्र में डालकर मध्यमाग्नि में पकावें। पकाते समय पात्र का मुख ढक दें। अष्टमांशावशेष क्वाथ रहने पर हरीतकी की पोटली पृथक् निकालकर कोई कील पर टाँग दें जिससे उसका पानी निकल जाय। क्वाथ छानकर पात्र को साफ कर लें। उसी पात्र में गुड़ और उक्त क्वाथ डालकर पकावें। जब गुड़ पिघल जाय तो पिघले गुड़ को कपड़े से छान लें। ऐसा करने से गुड़ के अन्दर रहने वाला अपद्रव्य निकल जाता है। जब २ तार की पक्की चासनी हो जाय तो उसी चासनी में पकी हुई हरीतकी डालकर उतार लें। नीचे उतारकर त्रिकटु एवं चातुर्जातक के सूक्ष्म चूर्णों का प्रक्षेप देकर अच्छी तरह से मिला लें। ठण्डा होने पर मधु को मिलाकर पुनः चला लें और काच के जार में सुरक्षित रख लें। इस 'व्याघ्रीहरीतकी' को महर्षि भृगु ने लोककल्याणार्थ उपदेश दिया है। इसे वातज, पित्तज, कफज, दोषज एवं त्रिदोषज कास (अर्थात् पाँच प्रकार के कास) में १-१ हरीतकी प्रातः-सायं खाने से बहुत लाभ होता है। इसके अतिरिक्त क्षय, उरःक्षत, पीनस, श्वास एवं स्वरभेद और ११ लक्षणों वाले राजयक्ष्मा में भी बहुत ही उपयोगी है। यह रसायन गुण से युक्त है।

मात्रा—१-१ हरीतकी। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्धी इलायची जैसी। **वर्ण**—गुड़वत्। **स्वाद**—मधुर-कषाय। **उपयोग**—कास, श्वास, यक्ष्मा, पीनस एवं उरःक्षत में।

विमर्श—यह व्याघ्रीहरीतकी एक दूसरी विधि से भी इन दिनों बनायी जाती है। तौल-मान में कोई अन्तर नहीं है। केवल बनाने की विधि में अन्तर होता है। यहाँ पर १०० हरीतकी के फलदल का चूर्ण कर लेते हैं। कण्टकारीक्वाथ में गुड़ की चासनी कर २-३ तार की चासनी होने पर उतारकर उसमें पहले हरीतकीचूर्ण का प्रक्षेप डाल देते हैं। ततः त्रिकटु और चातुर्जातकचूर्ण डालते हैं। शीतल होने पर मधु डालकर काचपात्र में (जार) सुरक्षित रख लेते हैं। इसकी मात्रा ६ से १२ ग्राम सुबह-शाम गोदुग्ध के साथ खिलाते हैं। शेष सब कुछ ऊपर जैसा ही है।

नोट—जब ५ सेर गुड़ की चासनी थोड़े ही क्वाथ $\frac{१}{२}$ लीटर में ही सम्भव हो जाय तो क्वाथ चौथाई शेष (३ लीटर) रहने का कोई औचित्य नहीं है। अतः मैंने संशोधन कर अष्टमांशावशेष रखने का आग्रह किया है।

५९. अगस्त्यहरीतकी (अ.हृ.) (च.द.)

दशमूलीं स्वयंगुप्तां शङ्खपुष्पीं शटीं बलाम्।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान् ॥१७१॥
भार्गीं पुष्करमूलञ्च द्विपलांशं यवाढकम्।
हरीतकीशतं चैव जले पञ्चाढके पचेत् ॥१७२॥
यवैः स्विन्नैः कषायं तं पूतं तच्चाभयाशतम्।
पचेद् गुडतुलां दत्त्वा कुडवञ्च पृथग् घृतात् ॥१७३॥
तैलात्सपिप्पलीचूर्णात्सिद्धे शीते च माक्षिकात्।
लिह्यादेकां शिवां नित्यमतः खादेद्रसायनात् ॥१७४॥
तद्वलीपलितं हन्याद्वर्णायुर्बलवर्धनम्।
पञ्चकासान् क्षयं श्वासं हिक्काञ्च विषमज्वरान् ॥१७५॥
हन्यात्तथा ग्रहण्यर्शोहृद्रोगारुचिपीनसान्।
अगस्त्यविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम् ॥१७६॥

१. बिल्वछाल, २. अरणीछाल, ३. श्योनाकछाल, ४. गम्भारीछाल, ५. पाटलाछाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. गोक्षुर, ९. कण्टकारी, १०. बृहतीपंचाग, ११. कपीकच्छू-बीज, १२. शंखपुष्पी, १३. कचूर, १४. बलामूल, १५.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गजपिप्पली, १६. अपामार्ग, १७. पिप्पलीमूल, १८. चित्रकमूल, १९. भारङ्गीत्वक्, २०. पुष्करमूल, २१. यव ३ किलो, २२. हरीतकी १०० नग, २३. जल १५ लीटर, २४. गुड़ ५ किलो, २५. गोघृत—१९० ग्राम, २६. तिलतैल १९० ग्राम, २७. मधु १९० ग्राम तथा २८. पिप्पलीचूर्ण १९० ग्राम लें। बिल्वछाल से पुष्करमूल तक के सभी २० द्रव्य प्रत्येक १००-१०० ग्राम लें। इन्हें यवकुट करें और जौ को भी कूट लें।

एक बड़े स्टेनलेस स्टील के पात्र में १५ लीटर जल देकर रात्रिपर्यन्त भीगने दें। प्रातः १०० नग हरीतकी छाँटकर एक कपड़े में बाँधें और उसी पात्र में डाल कर क्वाथ करें। पात्र का मुख ढक देना चाहिए। जब हरीतकी सिद्ध हो जाय और जल अष्टमांश बचे तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें तथा हरीतकी की पोटली निकाल लें। क्वाथ छानकर किसी अन्य पात्र में सुरक्षित रखें तथा पिप्पली का चूर्ण बना लें। अब पात्र को साफ कर लें और ५ किलो गुड़ और उक्त क्वाथ देकर गुड़ की चासनी करें। जब गुड़ पूर्णरूपेण घुल जाय तो उसे कपड़े से पुनः छान लें। सिद्ध हरीतकी को दबाकर या छिद्र करके पानी निकाल लें और चासनी करें। २-३ तार की चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर रखें। अब सिद्ध हरीतकी को उपर्युक्त घृत-तैल (यमक) में लाल होने पर्यन्त भूनें और भृष्ट हरीतकी को उक्त चासनी में मिलाकर अच्छी तरह चला लें। कुछ ठण्डा होने पर पिप्पलीचूर्ण का प्रक्षेप डालकर अच्छी तरह मिला लें। जब पूरा ठण्डा हो जाय तो उसमें अच्छी तरह से मधु मिलाकर काचपात्र (जार) में सुरक्षित कर लें। १-१ सिद्ध हरीतकी को रसायन कर्मार्थ लेह के साथ खाना चाहिए। इसके सेवन से वली-पलित नष्ट हो जाते हैं; बल, वर्ण एवं आयु को बढ़ाता है। पाँच प्रकार के कास, क्षय, श्वास, हिक्का, विषमज्वर, ग्रहणी, अर्श, हृद्रोग, अरुचि और पीनस रोग को नष्ट करता है। अगस्त्य मुनि द्वारा निर्मित यह अवलेह श्रेष्ठ रसायन है तथा धन्य है।

विमर्श—इस 'अगस्त्यहरीतकी' को भी 'व्याघ्रीहरीतकी' जैसा ही हरीतकी का चूर्ण कर तथा उस चूर्ण को यमक में भूनकर बनाया जा सकता है। यमक = घृत एवं तैल है।

मात्रा—१ हरीतकी या ५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—गुड़गन्धी। **वर्ण**—गुड़ जैसा। **स्वाद**—मधुर-कषाय। **उपयोग**—कास, श्वास, क्षय, हृदोग एवं अरुचि में।

६०. वासावलेह

वासकस्वरसप्रस्थे माणिका सितशर्करा।
पिप्पली द्विपलं दत्त्वा सर्पिषश्च पचेच्छनैः ॥१७७॥
लेहीभूते ततः पश्चाच्छीते क्षौद्रपलाष्टकम्।
दत्त्वाऽवतारयेद्वैद्यो मात्रया लेहमुत्तमम् ॥१७८॥
निहन्ति राजयक्ष्माणं कासं श्वासं सुदारुणम्।
पार्श्वशूलञ्च हृच्छूलं रक्तपित्तं ज्वरं तथा ॥१७९॥

१. वासास्वरस ७५० मि.ली., २. शर्करा ३७५ ग्राम, ३. पिप्पलीचूर्ण ९३ ग्राम, ४. गोघृत ९३ ग्राम तथा ५. मधु ३७५ ग्राम। सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील के पात्र में वासास्वरस और शर्करा मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। जब चासनी गाढ़ी होने लगे तो परीक्षोपरान्त पात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और पिप्पलीचूर्ण और गोघृत मिला लें। शीतल होने पर उसमें मधु मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत कर लें। इसे वासावलेह कहते हैं। इसे १०-१० ग्राम की मात्रा में गरम गोदुग्ध के साथ प्रातः-सायं सेवन करने से राजयक्ष्मा, भयंकर श्वास, कास, पार्श्वशूल, हृच्छूल, रक्तपित्त एवं ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **स्वाद**—मधुर-तिक्त। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण वर्ण। **उपयोग**—यक्ष्मा, रक्तपित्त, श्वास, कास एवं पार्श्वशूल में।

६१. कण्टकार्यावलेह (भावप्रकाश)

कण्टकारीतुलां नीरद्रोणे पक्त्वा कषायकम्।
पादशेषं गृहीत्वा च तत्र चूर्णानि दापयेत् ॥१८०॥
पृथक् पलांशान्येतानि गुडूची चव्यचित्रकौ।
मुस्तं कर्कटशृङ्गी च त्र्यूषणं धन्वयासकः ॥१८१॥
भार्गी रास्ना शटी चैव शर्करापलविंशतिः।
प्रत्येकं च पलान्यष्टौ प्रदद्याद् घृततैलयोः ॥१८२॥
पक्त्वा लेहत्वमानीय शीते मधु पलाष्टकम्।
चतुर्भागं तुगाक्षीर्याः पिप्पल्याश्च चतुष्पलम् ॥१८३॥
क्षिप्त्वा निदध्यात्सुदृढे मृन्मये भाजने शुभे।
लेहोऽयं हन्ति हिक्काऽऽर्त्तिकासश्वासानशेषतः ॥१८४॥

१. कण्टकारी ५ किलो, २. जल १२ लीटर, ३. गुडूची चूर्ण, ४. चव्यचूर्ण, ५. चित्रकमूलचूर्ण, ६.नागरमोथाचूर्ण, ७. काकडासिंगीचूर्ण, ८. शुण्ठीचूर्ण, ९. पिप्पलीचूर्ण, १०. मरिचचूर्ण, ११. यवासाचूर्ण, १२. भारंगीचूर्ण, १३. रास्नाचूर्ण तथा १४. कचूरचूर्ण—ये १२ द्रव्य प्रत्येक ४६-४६ ग्राम लें; १५. शर्करा १ किलो, १६. गोघृत ३७५ ग्राम, १७. तिलतैल ३७५ मि.ली. १८. मधु ३७५ ग्राम, १९. वंशलोचनचूर्ण १९० ग्राम तथा २०. पिप्पलीचूर्ण १९० ग्राम लें। सर्वप्रथम कण्टकारी को यवकुट करें और बड़े पात्र में उक्त जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर कपड़े से क्वाथ को अच्छी तरह २ बार छान लें। पुनः पात्र को साफ कर उक्त क्वाथ को उसी पात्र में रखकर मन्दाग्नि पर पुनः पकावें। इसी समय गुडूचीचूर्ण से कचूरचूर्ण तक के सभी १२ द्रव्यों के चूर्ण (१-१ पल चूर्ण सभी के) डाल दें। उसी में शर्करा, तैल एवं घृत भी डालकर पकावें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जब अवलेह जैसा गाढ़ा हो जाय तो (परीक्षा कर लें) चूल्हे से नीचे उतार लें। ततः उसमें वंशलोचनचूर्ण और पिप्पलीचूर्ण १९०-१९० ग्राम प्रक्षेप अच्छी तरह से मिलाकर ठण्डा होने के लिए छोड़ दें। जब शीतल हो जाय तो उक्त प्रमाण में मधु डालकर किसी काचपात्र (जार) में सुरक्षित रख लें। इस अवलेह को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में चाटने से हिक्का, श्वास एवं कास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—गुड़पाक जैसा। **वर्ण**—गुड़ जैसा। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—कास, श्वास एवं हिक्का में।

६२. कण्टकारीघृत (चक्रदत्त)

घृतं रास्नाबलाव्योषश्वदंष्ट्राकल्कपाचितम्।
कण्टकारीरसे पानात् पञ्चकासनिसूदनम् ॥१८५॥

गोघृत १ किलो तथा कण्टकारीक्वाथ ४ लीटर लें।

कल्क—१. रास्ना ४० ग्राम, २. बलामूल ४० ग्राम, ३. शुण्ठी ४० ग्राम, ४. पिप्पली ४० ग्राम, ५. मरिच ४० ग्राम तथा ६. गोक्षुर ४० ग्राम लें। सर्वप्रथम गोघृत को मूर्च्छित करें। ततः कल्क द्रव्य को कूट-पीसकर शिला पर कल्क बना लें। कण्टकारी क्वाथ ४ लीटर और कल्क मूर्च्छित घृत के साथ एक पात्र में मिलाकर मध्यमाग्नि से पाक करें। क्वाथ सूख जाने पर घृत पक्व की परीक्षा कर पात्र को आग से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें। ठण्डा होने पर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे ६ से १२ ग्राम प्रतिदिन सुबह-शाम गरम गाय के दूध से सेवन करने पर ५ प्रकार के कास नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गाय के दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—सभी प्रकार के कास में।

६३. दशमूलषट्पल घृत (च. द.)

दशमूलीचतुःप्रस्थे रसे प्रस्थोन्मितं हविः।
सक्षारैः पञ्चकोलैस्तु कल्कितं साधु साधितम् ॥१८६॥
कासहृत्पार्श्वशूलघ्नं हिक्काश्वासनिवारणम्।
कल्कं षट्पलमेवात्र ग्राहयन्ति भिषग्वराः ॥१८७॥

दशमूलक्वाथ ३ लीटर तथा गोघृत ७५० ग्राम लें।

कल्क—१. यवक्षार ४६ ग्राम, २. पिप्पलीचूर्ण ४६ ग्राम, ३. पिप्पलीमूलचूर्ण ४६ ग्राम, ४. चव्यमूलचूर्ण ४६ ग्राम, ५. चित्रकमूलचूर्ण ४६ ग्राम तथा ६. शुण्ठीचूर्ण ४६ ग्राम—अर्थात् प्रत्येक द्रव्य १-१ पल लें। कुल मिलाकर ६ द्रव्य हैं अतः छः पल लें। घृत को सर्वप्रथम मूर्च्छित कर लें। ततः उसी पात्र में घृत से चौगुना दशमूलक्वाथ और ६ पल (२८०ग्राम) कल्क के साथ मिलाकर पाक करें। जलांश सूखने पर घृतपाक की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर घृत को कपड़े से छानकर काचपात्र (जार) में संग्रहीत करें। इस घृत को ६ से १२ ग्राम गरम गाय के दूध के साथ सुबह-शाम सेवन करने से कास, हृद्रोग, पार्श्वशूल, हिक्का और श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपात**—गरम गाय के दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु एवं क्षारीय। **उपयोग**—कास, श्वास, हिक्का, पार्श्वशूल तथा हृद्रोग में।

६४. छागलाद्य घृत

आजमांसं तुलामानं वासकस्य पलं शतम्।
अश्वगन्धापलशतं कटाहे समधिक्षिपेत् ॥१८८॥
जलद्रोणे पृथक् पक्त्वा चतुर्भागावशेषितैः।
कषायैर्विपचेद् गव्यं प्रस्थद्वयमितं घृतम् ॥१८९॥
छागक्षीरं घृतसमं दद्यात् कल्कानि यानि च।
वक्ष्याम्यतः परं तानि सर्वाणि शृणु यत्नतः ॥१९०॥
अष्टवर्गं पञ्चमूली चातुर्जातं शतावरी।
त्रिकटु त्रिफला यष्टिर्विदारी शाल्मली वचा ॥१९१॥
शङ्खपुष्पी सुधामूली मुषली चविका तथा।
कपिकच्छुकबीजं च दीप्या खदिरजीरकौ ॥१९२॥
सूक्ष्मैला मेथिका भार्गी प्रत्येकं शुक्तिमानतः।
संगृह्य साधयेत् सर्पिः शनैर्मृद्वग्निना भिषक् ॥१९३॥
राजयक्ष्मणि दुःसाध्ये सर्वकासगदेषु च।
स्वरभेदे क्षये श्वासे ध्वजभङ्गे ज्वरे तथा ॥१९४॥
प्रमेहे मूत्रकृच्छ्रे च रक्तपित्ते त्वरोचके।
छागलाद्यं घृतं शस्तं सर्वरोगविनाशनम् ॥१९५॥

१. बकरे का मांस ५ किलो, २. वासापञ्चाङ्ग ५ किलो, ३. अश्वगन्धा ५ किलो, ४. गाय का घृत १.५०० किलो और ५. बकरी का दूध १.५०० लीटर लें।

कल्क—१. मेदा, २. महामेदा, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. जीवक, ६. ऋषभक, ७. ऋद्धि, ८. वृद्धि, ९. शालपर्णी, १०. पृश्निपर्णी, ११. कण्टकारी, १२. बृहती, १३. गोक्षुर, १४. त्वक्, १५. छोटी इलायची, १६. तेजपत्र, १७. नागकेशर, १८. शतावरी, १९. शुण्ठी, २०. पिप्पली २१. मरिच, २२. आमला, २३. हरीतकी, २४. बहेड़ा, २५. यष्टिमधु, २६. विदारीकन्द, २७. शाल्मलिमूल, २८. वच, २९. शंखपुष्पी, ३०. सालिवमिश्री, ३१. सफेद मुसली, ३२. चव्य, ३३. कपीकच्छूबीज, ३४. सौंफ, ३५. खदिर की लकड़ी, ३६. चित्रकमूल, ३७. छोटी इलायची, ३८. मेथी तथा ३९. भारंगी। ये ३९ द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें। इन्हें कूट-पीस कर शिला पर जल के साथ कल्क बना लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः ५ किलो अश्वगन्धा को यवकुट कर १२ लीटर पानी के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहे तो छान लें और ३ लीटर क्वाथ मूर्च्छित घृत में मिला दें तथा कल्क भी मिला दें। आग पर घृतपात्र को चढ़ाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूखने लगे तो १.५०० लीटर बकरी का दूध देकर पूर्ववत् पकावें। ततः वासापञ्चाङ्ग ५ किलो को १२ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर घी के साथ पकावें। इसके बाद ५ किलो बकरे के मांस को १२ लीटर पानी में पकावें। चौथाई पानी रहने पर छान लें और उपर्युक्त घृत के साथ पकावें। घृत से जलीयांश सूखने पर घृतपाक की परीक्षा कर चूल्हे से घृत को नीचे उतार लें। कुछ ठण्डा होने पर छानकर काचपात्र (जार) में सुरक्षित कर लें। इस 'छागलाद्य घृत' को १० से २० ग्राम की मात्रा में गरम गोदुग्ध के साथ सेवन करने से असाध्य राजयक्ष्मा, सभी पाँच प्रकार के कास, स्वरभेद, क्षय, श्वास, ध्वजभङ्ग, ज्वर, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त और अरुचि रोग नष्ट हो जाते हैं। यह छागलाद्य घृत सभी रोगों को नाश करने वाला है।

मात्रा—१० से २० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—मांसगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—यक्ष्मा, श्वास, कास, स्वरभेद, ध्वजभङ्ग आदि में।

६५. वासाचन्दनाद्य तैल (सिद्धयोग)

चन्दनं रेणुका पूतिर्हयगन्धा प्रसारणी।
त्रिसुगन्धि कणामूलं नागकेशरमेव च ॥१९६॥
मेदे द्वे च त्रिकटुकं रास्ना मधुकशैलजम्।
शटी कुष्ठं देवदारु वनिता च बिभीतकम् ॥१९७॥
एतेषां पलिकैर्भागैः पचेत्तैलाढकं भिषक्।
वासायाश्च पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ॥१९८॥
लाक्षारसाढकञ्चैव तथैव दधिमस्तुकम्।
चन्दनञ्चामृता भार्गी दशमूलं निदिग्धिका ॥१९९॥
एतेषां विंशतिपलं जलद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषे स्थिते क्वाथे तैलं तेनैव साधयेत् ॥२००॥
कालाज्ज्वरान् रक्तपित्तं पाण्डुरोगं हलीमकम्।
कामलाञ्च क्षतक्षीणं राजयक्ष्माणमेव च ॥२०१॥
श्वासान्पञ्चविधान्हन्ति बलवर्णाग्निपुष्टिकृत्।
तैलं वासाचन्दनादि कृष्णात्रेयेण भाषितम् ॥२०२॥

तिलतैल ३ लीटर लें।

कल्क—१. श्वेतचन्दन, २. रेणुकाबीज, ३. गन्धमार्जाराण्ड, ४. अश्वगन्ध, ५. गन्धप्रसारणी, ६. त्वक्, ७. छोटी इलायची, ८. तेजपत्र, ९. पिप्पलीमूल, १०. नागरकेशर, ११. मेदा, १२. महामेदा, १३. शुण्ठी, १४. पिप्पली, १५. मरिच, १६. रास्ना, १७. यष्टिमधु, १८. छरीला, १९. कचूर, २०. कूठ, २१. देवदारु, २२. प्रियङ्गु तथा २३. बहेड़ा—ये सभी २३ द्रव्य प्रत्येक १-१ पल (४६-४६ ग्राम) लेना चाहिए। इन्हें कूट-पीसकर कल्क बनाना चाहिए।

क्वाथ—१. वासापञ्चाङ्ग ५ किलो, २. लाक्षारस ३ लीटर, ३. दधिमस्तु ३ लीटर; ४. रक्तचन्दन १ किलो, ५. गुडूची १ किलो, ६. भारङ्गी १ किलो, ७. कण्टकारी तथा ८. दशमूल के सभी द्रव्य मिलाकर १ किलो लें। कुल मिलाकर द्रव्य ५ किलो लें।

इन ५ किलो द्रव्य को यवकुट कर १२ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। एक पात्र में तिलतैल, सभी कल्क और रक्तचन्दनादि क्वाथ मिलाकर पाक करें। पुनः वासापञ्चाङ्ग को यवकुट कर १२ लीटर जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। जब तैल का जलीयांश सूखने लगे तो इसमें वासाक्वाथ देकर पकावें। जलीयांश सूखने पर लाक्षारस देकर पकावें। ततः दधिमस्तु देकर पकावें। सम्यक् पाक के लिए १२ ली. जल देकर पाक करना चाहिए। जब जलीयांश सूख जाय तो तैलपाक की परीक्षा कर सुपक्व तैल को चूल्हे से नीचे उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर छान लें। इसके बाद काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसके अभ्यङ्ग से पाँच प्रकार के कास, सभी ज्वर, रक्तपित्त, पाण्डुरोग, हलीमक, कामला, उरःक्षत, धातुक्षीण, राजयक्ष्मा एवं पाँच प्रकार के श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं। इस तैल की मालिश बलवर्णकर और अग्निवर्धक है। इस 'वासाचन्दनादितैल' को आचार्य श्रीकृष्णात्रेयजी ने कहा था।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ १ से २ तोला (१० से २५ मि.ली.)। **अनुपान**—मर्दन। **गन्ध**—सुगन्ध युक्त। **वर्ण**—रक्ताभ पीत। **उपयोग**—कास, श्वास एवं यक्ष्मादि में।

६६. वासकारिष्ट

वासकस्वरसं तद्वद् मृतसञ्जीवनीं सुराम्।
संमिश्र्य समभागेन सन्मुहूर्त्ते भिषग्वरः ॥२०३॥
मृत्पात्रे काचपात्रे वा तत्संस्थाप्य च तन्मुखम्।
दृढं संरुद्ध्य यत्नेन स्थापयेत् सप्तवासरम् ॥२०४॥
वस्त्रपूतं ततः कृत्वा प्रत्यहं माषमात्रकम्।
वासकारिष्टमेतं तु पाययेद्रोगिणं ततः ॥२०५॥
सत्पथ्यभोजिनस्तस्य देवद्विजनिषेविणः।
रक्तपित्तश्वासकासगलरोगादयो गदाः ॥२०६॥
उरःक्षतश्च विविधा रोगा अन्येऽपि दारुणः।
विलयं सत्वरं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥२०७॥

वासास्वरस १ लीटर तथा मृतसंजीवनी सुरा १ लीटर लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

दोनों को एक काचपात्र (जार) में एक साथ मिलाकर मुख बन्द कर सात दिनों तक धूप में रख दें। आठवें दिन महीन कपड़े से छानकर साफ बोतलों में भरकर रख दें। इसे वासारिष्ट कहते हैं। इसे १-१ चम्मच की मात्रा में लेने से कास, श्वास, रक्तपित्त, गले के रोग तथा उरःक्षतादि दारुण रोग शान्त होते हैं। इस औषधि के सेवनकाल में पथ्य आहार-विहार, देव, विप्र, गो आदि की पूजा करनी चाहिए।

मात्रा—२० बूँद (१ चम्मच)। **अनुपान**—जल के साथ। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—श्वेत-हरित। **स्वाद**—तीक्ष्ण-तिक्त। **उपयोग**—कास, क्षय, श्वास एवं रक्तपित्तादि में।

कासरोग में पथ्य

स्वेदो विरेचनं छर्दिर्धूमपानं समाशिता।
शालिषष्टिकगोधूमश्यामाकयवकोद्रवाः ॥२०८॥
आत्मगुप्तामाषमुद्गकुलत्थानां रसाः पृथक्।
ग्राम्यौदकानूपधन्वमांसानि विविधानि च ॥२०९॥
सुरा पुरातनं सर्पिश्छागं चापि पयो घृतम्।
वास्तूकं वायसीशाकं वार्त्ताकुं बालमूलकम् ॥२१०॥
कण्टकारी कासमर्दो जीवन्ती सुनिषण्णकम्।
द्राक्षा बिम्बी मातुलुङ्गं पौष्करं वासकस्त्रुटिः ॥२११॥
गोमूत्रं लशुनं पथ्या व्योषमुष्णोदकं मधु।
लाजा दिवसनिद्रा च लघून्यन्नानि यानि च।
पथ्यमेतद् यथादोषमुक्तं कासगदातुरे ॥२१२॥

कासरोग में—स्वेदन, विरेचन, वमन, धूमपान, नियमित समय पर अल्प भोजन, शालि चावल, साठी चावल, गेहूँ, श्यामा, यव, कोदो, कपीकच्छूबीज, उड़द, मूँग एवं कुलत्थ का रस पृथक्-पृथक् बनाकर लेना चाहिए। ग्राम्य पशु-पक्षियों के मांस या मांसरस, जलीय (आनूप) पशु-पक्षियों के मांस या मांसरस, धन्व (मरु) भूमि में पाये जाने वाले जीवों के मांस या मांसरस खाना चाहिए। मद्य, पुराना घी, गाय एवं बकरी का दूध एवं घृत लेना चाहिए। बथुआ शाक, मकोय शाक, बैंगन, छोटी मूली, कण्टकारी फलशाक, कासमर्द पत्रशाक, जीवन्ती पत्रशाक, (चाङ्गेरी शाक), द्राक्षाफल, बिम्बीफल (वनकुन्दुरु), मातुलुङ्गनिम्बु, पुष्करमूल, वासा, छोटी इलायची, गोमूत्र, लशुन, हरीतकी, त्रिकटु, उष्णजल, मधु, धानलाजा (धानखील), दिन में सोना, हलका अन्न, जिस दोष से खाँसी हुई है उस दोष को दूर करने वाले पथ्य द्रव्यों को लेना चाहिए।

कासरोग में अपथ्य

बस्तिं नस्यमसृङ्मोक्षं व्यायामं दन्तघर्षणम्।
आतपं दुष्टपवनं रजोमार्गनिषेवणम् ॥२१३॥
विष्टम्भीनि विदाहीनि रूक्षाणि विविधानि च।
शकृन्मूत्रोद्गारकासवमिवेगविधारणम् ॥२१४॥
मत्स्यं कन्दं सर्षपं च तुम्बीफलमुपोदिकाम्।
दुष्टाम्बु चान्नपानं च विरुद्धान्यशनानि च॥
गुरु शीतं चान्नपानं कासरोगी परित्यजेत् ॥२१५॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां कासरोगाधिकारः।

बस्ति, नस्य, रक्तमोक्षण, व्यायाम, दाँतों को अधिक घिसना, धूप का सेवन, दूषित दातून तथा धूल भरे मार्ग पर गमन नहीं करना चाहिए। विष्टम्भी भोजन, विदाही भोजन, विविध प्रकार के रूक्ष भोजन नहीं करना चाहिए। मल-मूत्र, डकार (उद्गार), कास तथा वमन के वेगों को नहीं रोकना चाहिए। मछली, कन्दशाक, सरसों, तुम्बी (लौकी), पोईशाक, दूषित जल, दूषित अन्न-पान और विरुद्ध भोजन नहीं करना चाहिए। गुरु, शीत अन्न-पान, कास रोगियों को हमेशा त्याग देना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य कासरोगाधिकारम्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ हिक्का-श्वासरोगाधिकारः (१६)

हिक्का-श्वास रोगों की चिकित्सा (च.द.)

हिक्काश्वासातुरे पूर्वं तैलाक्ते स्वेद इष्यते।
स्निग्धैर्लवणयोगैश्च मृदु वातानुलोमनम्॥
ऊर्ध्वाधः शोधनं शक्ते दुर्बले शमनं मतम्॥१॥

हिक्कारोग से पीड़ित रोगी के उदर पर तथा श्वासरोग से पीड़ित व्यक्ति के वक्षःस्थल (छाती) पर पहले तैल का मर्दन करा कर बाद में स्वेदन कराना चाहिए। स्वेदनोत्तर स्नेह एवं लवण युक्त प्रयोगों से वायु का अनुलोमन करना चाहिए। यहाँ पर विशेष उल्लेखनीय है कि बलवान् रोगियों में वमन-विरेचन (संशोधन) तथा क्षीण रोगियों में संशमन कराना चाहिए।

१. हिक्कानाशक ६ लेह (च. द.)

कोलमज्जाऽञ्जनं लाक्षा तिक्ताकाञ्चनगैरिकम्।
कृष्णा धात्री सिता शुण्ठी काशीशं दधिनाम च॥२॥
पाटल्याः सफलं पुष्पं कृष्णा खर्जूरमुस्तकम्।
षडेते पादिका लेहा हिक्काघ्ना मधुसंयुताः॥३॥

(१) पके बेर की गुठली का मज्जाचूर्ण, सौवीराञ्जनचूर्ण तथा लाक्षाचूर्ण—तीनों द्रव्यों के चूर्ण १-१ भाग लें और इन्हें मधु में मिलाकर काचपात्र में रख लें। इस अवलेह को $\frac{१}{२}$ से १ ग्राम की मात्रा में सुबह-शाम चाटने से हिक्का नष्ट हो जाती है।

(२) कटुकीचूर्ण तथा शुद्ध स्वर्णगैरिक—दोनों समभाग लेकर मधु में मिला लें और काचपात्र में संचित कर लें। इसे १ ग्राम की मात्रा में लेने से हिक्का मिट जाती है।

(३) १. पिप्पली १ भाग, २. आमला १ भाग, ३. शुण्ठी १ भाग तथा ४. शर्करा ३ भाग लें। इन्हें चूर्ण कर मिलाकर शीशी में रख लें और सुबह-शाम १ ग्राम की मात्रा में मधु से लें। इससे हिक्का नष्ट हो जाती है।

(४) शुद्ध कासीसचूर्ण तथा कपित्थफल की मज्जा का चूर्ण—इन्हें समभाग में लेकर मिला लें और ५०० मि.ग्रा. चूर्ण एवं मधु मिला कर सेवन करने से हिक्का नष्ट हो जाती है।

(५) पाटलपुष्पचूर्ण १ ग्राम—इस चूर्ण को मधु के साथ लेहन करने से हिक्का नष्ट हो जाती है।

(६) पिप्पलीचूर्ण १ भाग, खर्जूरफलमज्जा १ भाग तथा नागरमोथाचूर्ण १ भाग—इन तीनों द्रव्यों को एक साथ मिलाकर मधु से १ ग्राम की मात्रा में लेहन करने से हिक्का नष्ट हो जाती है।

२. नावन-त्रय (च.द.)

मधुकं मधुसंयुक्तं पिप्पली शर्करान्विता।
नागरं गुडसंयुक्तं हिक्काघ्नं नावनत्रयम्॥४॥

(१) यष्टिमधु का सूक्ष्म चूर्ण और मधु दोनों को अच्छी तरह से मिलाकर नस्य देने से हिक्का मिट जाती है।

(२) पिप्पलीचूर्ण और शर्करा समभाग में लेकर अच्छी तरह मिला लें। उसे पानी में घोलकर नस्य लेने से हिक्का मिट जाती है।

(३) शुण्ठीचूर्ण और गुड़ समभाग में मिलाकर पानी में घोलकर नाक में डालने से हिक्का मिट जाती है।

३. नावन-त्रय (च.द.)

स्तन्येन मक्षिकाविष्ठा नस्यं वाऽलक्तकाम्बुना।
योज्यं हिक्काऽभिभूताय स्तन्यं वा चन्दनान्वितम्॥५॥

(१) गाय के दुग्ध में अष्टमांश मक्खी की विष्ठा डालकर अच्छी तरह मिला लें एवं कपड़े से छानकर नाक में डालने से हिक्का मिट जाती है।

(२) लाक्षारस का नस्य लेने से हिक्का मिट जाती है।

(३) दूध के साथ श्वेतचन्दन को घिसकर नस्य देने से हिक्का मिट जाती है।

४. मातुलुङ्गादि प्रयोग (च.द.)

मधु सौवर्चलोपेतं मातुलुङ्गरसं पिबेत्।
हिक्कार्त्तस्य पयश्छागं हितं नागरसाधितम्॥६॥

(१) मधु १० ग्राम, सौवर्चललवण ३ ग्राम तथा बिजौरा-निम्बुस्वरस १० मि.ली. लें। इन्हें मिलाकर पीने से हिक्का मिट जाती है।

(२) बकरी के दूध में क्षीरपाक विधि से शुण्ठीचूर्ण साधित कर पीने से हिक्कारोग नष्ट हो जाता है।

५. कासमूलादि प्रयोग

अप्यसाध्यां नयत्यन्तां हिक्कां क्षौद्रविलेहनम्।
सद्य एव महारोगं काश(शी)मूलभवं रजः॥७॥

(१) १ तोला शुद्ध मधु लेहन करने से हिक्का नष्ट हो जाती है।

(२) काशमूलचूर्ण ५ ग्राम मधु से चाटने से हिक्का नष्ट हो जाती है।

६. धूमादि योगद्वय

माषचूर्णभवो धूमो हिक्कां हन्ति न संशयः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

असाध्यां साधयेद्धिक्कां सितयैलाभवं रजः ॥८॥

(१) माष (उड़द) चूर्ण का धूम ग्रहण करने से हिक्का मिट जाती है।

(२) छोटी इलायचीचूर्ण एवं शर्कराचूर्ण समभाग में लेकर खाने से असाध्य हिक्का मिट जाती है।

७. मरिचचूर्ण-प्रयोग

शर्करा मरिचं चूर्णं लीढं मधुयुतं मुहुः।
निहन्ति प्रबलां हिक्कामसाध्यामपि देहिनाम् ॥९॥

मरिचचूर्ण १ ग्राम तथा शर्करा २ ग्राम मधु के साथ चाटने से मनुष्यों की असाध्य हिक्का मिट जाती है।

८. कदलीकन्दरस-प्रयोग

हिक्काघ्नः कदलीमूलरसः पेयः सशर्करः ॥१०॥

केले का मूल निकालकर उसे साफ कर लें और कूटकर रस निकाल लें। ऐसा कदलीमूलरस १० मि.ली. और शर्करा १० ग्राम मिलाकर पीने से हिक्का मिट जाती है।

९. कृष्णादिचूर्ण

कृष्णामलकशुण्ठीनां चूर्णं मधुसिताघृतैः।
मुहुर्मुहुः प्रयोक्तव्यं हिक्काश्वासनिबर्हणम् ॥११॥

१. पिप्पली, २. आमला, ३. शुण्ठी तथा ४. शर्करा—प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें। इन्हें चूर्ण कर अच्छी तरह मिला लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस कृष्णादिचूर्ण को ५ ग्राम लें तथा १० ग्राम घी एवं ५ ग्राम मधु मिलाकर दिन में कई बार लेने से हिक्का एवं श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—मधु। **गन्ध**—शुण्ठी जैसी गन्ध। **वर्ण**—पाण्डुवर्ण। **स्वाद**—मधुर-कटु। **उपयोग**—हिक्का-श्वास में।

१०. मयूरपिच्छभस्म-प्रयोग (च.द.)

हिक्कां हरति प्रबलां श्वासमतिप्रवृद्धं जयति।
शिखिपिच्छभस्म पिप्पलीचूर्णं मधुमिश्रितं लीढम् ॥

मोरपँख भस्म १२५ मि.ग्रा. तथा पिप्पलीचूर्ण २५० मि.ग्रा. मधु मिलाकर चाटने से प्रबल हिक्का एवं बढ़ा हुआ श्वास रोग मिट जाता है।

११. अभयादि प्रयोगद्वय

अभयानागरकल्कं पौष्करयावशूकमरिचकल्कं वा।
तोयेनोष्णेन पिबेच्छ्वासी हिक्की च तच्छान्त्यै ॥

(१) हरीतकीचूर्ण ३ ग्राम तथा शुण्ठीचूर्ण १ ग्राम—इन दोनों का कल्क बनाकर गरम पानी से खिलाने पर श्वास एवं हिक्का रोग शान्त हो जाते हैं अथवा—

(२) पुष्करमूलचूर्ण २ ग्राम, यवक्षार १ ग्राम तथा मरिचचूर्ण १ ग्राम—इन तीनों चूर्णों को मिलाकर गरम पानी से खिलाने से हिक्का-श्वास रोग मिट जाते हैं।

१२. बिभीतकचूर्ण-प्रयोग (च.द.)

कर्षं कलिफलचूर्णं लीढं चात्यन्तमिश्रितं मधुना।
अचिराद्धरति श्वासं प्रबलामूर्ध्वहिक्काञ्चैव ॥१४॥

बिभीतकी फल (बहेड़ा) चूर्ण १ तोला (११.५ ग्राम) मधु के साथ मिलाकर लेहन करने से शीघ्र ही श्वास एवं प्रबल हिक्का रोग नष्ट हो जाता है।

१३. गुड़ एवं सर्षपतैल-प्रयोग (च.द.)

गुडं कटुकतैलेन मिश्रयित्वा समं लिहेत्।
त्रिसप्ताहप्रयोगेण श्वासं निर्मूलतो जयेत् ॥१५॥

१० ग्राम गुड़ एवं १०मि.ली. सरसों तैल—दोनों को अच्छी तरह से मिलाकर १ सप्ताह तक खिलाने से श्वासरोग नष्ट हो जाता है।

१४. हरिद्रादिचूर्ण (च.द.)

हरिद्रां मरिचं द्राक्षां गुडं रास्नां कणां शटीम्।
जह्यात्तैलेन विलिहञ् श्वासान् प्राणहरानपि ॥१६॥

१. हल्दीचूर्ण, २. मरिचचूर्ण, ३. द्राक्षाकल्क, ४. गुड़, ५. रास्नाचूर्ण, ६. पिप्पलीचूर्ण, ७. कचूरचूर्ण तथा ८. सरसों तैल—हल्दी से कचूरचूर्ण तक के ७ द्रव्य प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें। इन चूर्णों को अच्छी तरह मिलाकर पुनः छान लें और काचपात्र में संग्रहीत कर लें। अब इस हरिद्रादिचूर्ण को ५ ग्राम की मात्रा में लेकर १० मि.ली. सरसों तैल में मिलावें और चाट जायें। ऐसे ४-५ दिन के प्रयोग से प्राणहर श्वासरोग मिट जाता हैं।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—सरसों तेल से। **गन्ध**—हरिद्रागन्धी। **वर्ण**—किञ्चित् पीताभ। **स्वाद**—मधुर एवं कटु। **उपयोग**—दारुण श्वास रोग में।

१५. शृंग्यादिचूर्ण (च.द.)

शृङ्गीमहौषधकणाघनपुष्कराणां
चूर्णं शटीमरिचशर्करया समेतम्।
क्वाथेन पीतममृतावृषपञ्चमूल्याः
श्वासं त्र्यहेण शमयेदतिदोषमुग्रम् ॥१७॥

१. काकडासिंगी, २. शुण्ठी, ३. पिप्पली, ४. नागरमोथा, ५. पुष्करमूल, ६. कचूर, ७. मरिच तथा ८. शर्करा—काकडासिंगी से मरिच तक सभी ७ द्रव्य २०-२० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इस चूर्ण के बराबर शर्करा १४० ग्राम लेकर पीसें और सभी चूर्णों को साथ में मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अनुपानार्थ क्वाथ—१. गुडूची, २. वासा तथा ३. पञ्चमूल (बृहत्पञ्चमूल लेना है—बिल्वछाल, अरणीछाल, गम्भारीछाल, श्योनाकछाल तथा पाटलाछाल)—इन्हें सम प्रमाण में लेकर यवकुट करें और सुखाकर सुरक्षित रख लें। उपर्युक्त चूर्ण ५ से ८ ग्राम लें और गुडूची आदि का क्वाथ ५० मि.ली. के साथ खा लें। ऐसा ३ दिन के प्रयोग से उग्र श्वास ३ दिन में ही ठीक हो जाता है।

मात्रा—५ से ८ ग्राम गुडूची आदि के क्वाथ से। **गन्ध**—पुष्करमूलगन्धी। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—अत्युग्र श्वास में।

१६. बिल्वादिपत्ररस

बिल्वाटरूषदलवारिसमूलशुक्ल-
दण्डोत्पलोत्पलजलं कटुतैलमिश्रम्।
भार्गींगुडो यदि च यत्र हतप्रभाव-
स्तं श्वासमाशु विनिहन्ति महाप्रभावः ॥१८॥

विशेष—बिल्ववासकयोः पत्रस्य शुक्लदण्डोत्पलापत्रस्य च स्वरसः कटुतैलेन पेयः।

१. बिल्वपत्रस्वरस, २. वासापत्रस्वरस, ३. सहदेवीपञ्चाङ्ग-क्वाथ, ४. कमलपत्रस्वरस तथा ५. सरसों तेल—सभी द्रव्य समभाग में लें। उपर्युक्त इन चारों स्वरसों और सरसों तैल को एक साथ अच्छी तरह से मिलाकर पीने से श्वासरोग नष्ट हो जाता है। पूर्वोक्त 'भार्गीगुड़' औषधि का प्रयोग यदि निष्फल हो जाता है, तब भी इस योग का प्रभाव बहुत ही अच्छा देखा जाता है।

१७. कूष्माण्डचूर्ण

कूष्माण्डकानां चूर्णन्तु पेयं कोष्णेन वारिणा।
शीघ्रं प्रशमयेच्छ्वासं कासं चैव सुदारुणम् ॥१९॥

सफेद कूष्माण्ड (पेठा) का चूर्ण ५ ग्राम उष्णोदक से सुबह-शाम दो बार पीने से भयंकर श्वास और कास रोग नष्ट हो जाते हैं।

१८. कृष्णादिचूर्ण

कृष्णासैन्धवचूर्णं स्वरसेन शृङ्गवेरस्य।
यो लेढि शयनकाले स जयति सप्ताहतः श्वासान् ॥२०॥

पिप्पलीचूर्ण १ भाग, सैन्धवलवणचूर्ण १ भाग तथा आर्द्रक-स्वरस यथावश्यक लें। पिप्पली एवं सैन्धवलवणचूर्ण दोनों समभाग मिलाकर रख लें। इसमें से ५ ग्राम चूर्ण एवं आर्द्रकस्वरस ५ मि.ली. मिलाकर रात्रि में सोते समय जो श्वास-रोगी चाट जाता है तो एक सप्ताह में ही उसको अधिक लाभ होता है।

१९. गन्धक-प्रयोगद्वय

गन्धकं मरिचं साज्यं श्वासकासक्षयापहम्।
गन्धकं घृतयोगेन श्वासकासक्षयापहम् ॥२१॥

(१) शुद्ध गन्धकचूर्ण १ ग्राम, मरिचचूर्ण २ ग्राम तथा गरम गोघृत १० ग्राम—तीनों को एक साथ मिलाकर पीने से श्वास-कास रोग मिट जाते हैं।

अथवा—(२) शुद्ध गन्धक १ ग्राम तथा गरम गोघृत १० ग्राम दोनों मिलाकर पिलाने से श्वास-कास के रोगी को बहुत लाभ मिलता है।

२०. दशमूलक्वाथ (च.द.)

दशमूलीकषायस्तु पुष्करेणावचूर्णितः।
कासश्वासप्रशमनः पार्श्वहृच्छूलनाशनः ॥२२॥

दशमूलक्वाथ ५० मि.ली. में पुष्करमूलचूर्ण ५०० मि.ग्रा. मिलाकर गरम-गरम पीने से कास, श्वास, पार्श्वशूल और हृच्छूल नष्ट हो जाते हैं।

२१. धत्तूरपञ्चाङ्ग

कनकस्य फलं शाखां पत्रं संकुट्य यत्नतः।
शोषयित्वा च तद्धूमपानाच्छ्वासो विनश्यति ॥२३॥

धत्तूरपञ्चाङ्ग को सुखाकर कूट लें और १० ग्राम इस यवकुट को निर्धूम अग्नि पर रखें तथा धूम नासा से ग्रहण करें। इससे श्वासरोग नष्ट हो जाता है।

२२. दशमूलीक्वाथ

पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं दशमूलीजलं पिबेत्।
पार्श्वशूलज्वरश्वासकासश्लेष्म विनाशयेत् ॥२४॥

दशमूल के ५० मि.ली. क्वाथ में ५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक पिप्पलीचूर्ण डालकर गरम-गरम पीने से पार्श्वशूल, ज्वर, श्वास, कास एवं कफ नष्ट हो जाते हैं।

२३. दशमूल्यादिक्वाथ (यो.रत्ना.)

दशमूलीशटीरास्नापिप्पलीविश्वपौष्करैः।
शृङ्गीतामलकीभार्गींगुडूचीनागराग्निभिः ॥२५॥
यवागूं मधुना सिद्धां कषायं वा पिबेन्नरः।
कासहृद्ग्रहपार्श्वार्त्तिहिक्काश्वासप्रशान्तये ॥२६॥

१. बिल्वछाल, २. अरणीछाल, ३. श्योनाकछाल, ४. गम्भारीछाल, ५. पाटलाछाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. गोक्षुर, ९. कण्टकारी, १०. बृहती, ११. कचूर, १२. रास्ना, १३. पिप्पली, १४. शुण्ठी, १५. पुष्करमूल, १६. काकडासिंगी, १७. भूमि आंमला, १८. भारङ्गी, १९. गुडूची, २०. शुण्ठी तथा २१. चित्रकमूल—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें यवकुट करें। इसमें शुण्ठी २ भाग लेना है, क्योंकि इसका २ बार प्रयोग हुआ है। पुनः आवश्यकतानुसार थोड़ा-थोड़ा यवकुट लेकर क्वाथ करें। उस क्वाथ से सिद्ध यवागू में मधु डालकर पिलाने से या क्वाथ पिलाने से मनुष्य के कास, हृद्रोग (हृदय की

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जकड़न), पार्श्वशूल, हिक्का एवं श्वासरोग नष्ट हो जाते हैं। इसका केवल क्वाथ भी पिलाया जा सकता है। इससे भी लाभ होता है।

२४. वासादिक्वाथ (यो. रत्ना.)

वासाहरिद्राधनिकागुडूची-
भार्गीकिणानागररिङ्गणीनाम् ।
क्वाथेन मारीचरजोऽन्वितेन
श्वासः शमं कस्य न याति पुंसः ॥२७॥

१. वासापत्र, २. हल्दी, ३. धनियाँ, ४. गुडूची, ५. भार्गी, ६. पिप्पली, ७. शुण्ठी तथा ८. कण्टकारी—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें यवकुट करें। इसमें से ५० ग्राम यवकुट लेकर अष्टगुण जल देकर क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष होने पर छान लें और इस क्वाथ में १ ग्राम मरिचचूर्ण का प्रक्षेप देकर पीने से किस पुरुष (रोगी) का श्वास शान्त नहीं हो जाता है?

२५. भार्गीनागर क्वाथ (वैद्यजीवन)

अयि प्राणप्रिये जातीफललोहितलोचने! ।
भार्गीनागरयोः क्वाथं श्वासत्राणाय पाययेत् ॥२८॥

हे जायफल के सदृश लाल आँख वाली प्राणप्रिये! श्वास से त्राण (मुक्ति) दिलाने के लिए भार्ङ्गीत्वक् और शुण्ठी (समभाग) का मिश्रित क्वाथ पिलाना चाहिए।

२६. शृंग्यादिचूर्ण (च.द.)

शृङ्गीकटुत्रिकफलत्रयकण्टकारी-
भार्गी सपुष्करजटा लवणानि पञ्च ।
चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्का-
श्वासोर्ध्ववातकसनारुचिपीनसेषु ॥२९॥

१. काकडासिंगी, २. शुण्ठी, ३. पिप्पली, ४. मरिच, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. कण्टकारी, ९. भारङ्गी, १०. पुष्करमूल, ११. सैन्धवलवण, १२. सामुद्रलवण, १३. विडलवण, १४. साम्भरलवण और १५. सौवर्चललवण—इन्हें समभाग में ग्रहण करें। इनका सूक्ष्म चूर्ण करें और सभी को एक साथ मिलाकर पुनः चूर्ण कर लें तथा काचपात्र में संग्रहीत कर लें। इस शृंग्यादिचूर्ण को २ से ३ ग्राम की मात्रा में गरम जल से लेने पर हिक्का, श्वास, ऊर्ध्ववात, कास, अरुचि और पीनस रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२ से ३ ग्राम। **अनुपान**—उष्ण जल से। **गन्ध**—पुष्करमूल जैसी सुगन्ध। **वर्ण**—लवणभास्कर जैसा। **स्वाद**—लवणीय (लवणभास्कर जैसा)। **उपयोग**—हिक्का, श्वास, कास, पीनसादि में।

२७. विजयवटी (र.सा.सं.)

सूतकं गन्धकं लौहं विषमभ्रकमेव च ।
विडङ्गं रेणुकं मुस्तमेलाग्रन्थिककेशरम् ॥३०॥
त्रिकटु त्रिफला ताम्रं शुद्धं जैपालचित्रकम् ।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥३१॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।
सूतायां ग्रहणीदोषे शूले पाण्ड्वामये तथा ॥
हस्तपादादिदाहेषु वटिकेयं प्रशस्यते ॥३२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. शुद्ध वत्सनाभ, ५. अभ्रकभस्म, ६. विडङ्गचूर्ण, ७. रेणुकाचूर्ण, ८. नागरमोथाचूर्ण, ९. छोटी इलायची, १०. पिप्पलीमूल, ११. नागकेशर, १२. मरिचचूर्ण, १३. शुण्ठीचूर्ण, १४. पिप्पली-चूर्ण, १५. आमलाचूर्ण, १६. बहेड़ाचूर्ण, १७. हरीतकीचूर्ण, १८. १८. ताम्रभस्म, १९. शुद्ध जयपाल, २०. चित्रकचूर्ण तथा २१. गुड़—शुद्ध पारद से चित्रकचूर्ण तक के २० द्रव्यों को प्रत्येक ५०-५० ग्राम लें और गुड़ २ किलो लेना चाहिए। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर कज्जली करें। ततः सभी काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण करें। इसके बाद स्टेनलेस स्टील के एक पात्र में २ किलो गुड़ और थोड़ा जल देकर चूल्हे पर गरम करें तथा दर्वी से चलाते रहें। जब सम्पूर्ण गुड़ घुल जाय तो महीन कपड़े से २ बार छान लें। पुनः चासनी (आग पर पकावें) करें। जब ३-४ तार की चासनी हो जाय अर्थात् मोदक की चासनी हो जाय तो आग से नीचे उतार लें। इसके बाद कुछ ठण्डा होने पर काष्ठौषधियों का चूर्ण उस गुड़ की चासनी में मिला दें। पुनः कज्जली के साथ सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें और उस चासनी में प्रक्षिप्त कर अच्छी तरह से मिला दें तथा २-२ रत्ती की वटी बना लें। ठण्डा होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस विजयवटी की १-१ वटी शीतल जल से लेने पर कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, सूतिकारोग, ग्रहणी दोष, शूल, पाण्डु एवं हाथ-पैरों में दाह वाले रोग में बहुत लाभ होता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—शीतल जल से। **गन्ध**—गुड़गन्धी। **वर्ण**—गुडाभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—श्वास, कास, क्षय, सूतिका रोग एवं पाददाह में।

२८. डामरेश्वराभ्र

मेचकं[1] पलमितं मृतमभ्रं
ब्रह्मयष्टिकनकामृतवासाः ।
कासमर्दवननिम्बकचव्यं
ग्रन्थिकं दहनमूलसमेतम् ॥३३॥
एकशश्च पलिकैरिह सत्त्वै-
र्मर्दितं सुवलितं गुरुहिक्काम् ।
श्वासकासमुदरं चिरमेहान्
पाण्डुरोगयकृतं गजरोगम् ॥३४॥

१. मेचकं = मयूरपिच्छचन्द्रिकाभागः ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शोथमोहनयनास्यजरोगं
यक्ष्मपीनसगरं बलसादम्।
गण्डमण्डलवमिभ्रमिदाहं
प्लीहशूलविषमज्वरकृच्छ्रम् ॥३५॥
हन्ति वातकफपित्तमशेषं
डामरेश्वरमिदं महदभ्रम् ॥३६॥

मयूरपिच्छचन्द्रिका भस्म ४६ ग्राम तथा अभ्रकभस्म १ पल (४६ ग्राम) लें।

भावना—भारङ्गीत्वक्क्वाथ, २. धत्तूरपत्रस्वरस, ३. गूडुचीस्वरस, ४. वासापत्रस्वरस, ५. कासमर्दस्वरस, ६. फरहद (वननिम्ब) क्वाथ, ७. चव्यमूलक्वाथ, ८. पिप्पलीमूलक्वाथ तथा ९. चित्रकमूलक्वाथ—प्रत्येक स्वरस एवं क्वाथ १-१ पल ५०-५० मि.ली. लें।

एक खरल में मयूरपिच्छचन्द्रिकाभस्म और अभ्रकभस्म लेकर भारङ्गी आदि ९ द्रव्यों के क्वाथ या स्वरस एक-एक पल लेकर भावना दें। इसके बाद अच्छी तरह सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस प्रकार भावित अभ्रकभस्म 'डामरेश्वराभ्र' नाम से विख्यात हो जाता है। १-१ रत्ती की मात्रा में प्रयुक्त करने पर निम्नलिखित रोगों—हिक्का, श्वास, कास, उदररोग, पुराना प्रमेह, पाण्डु, यकृद्रोग, गलरोग, शोथ, मूर्च्छा, नेत्ररोग, मुखरोग, यक्ष्मा, पीनस, गरदोष, बलहानि, गलगण्ड, मण्डलकुष्ठ, वमन, भ्रम, दाह, प्लीहरोग, शूलरोग, विषमज्वर, मूत्रकृच्छ्र तथा वात-पित्त-कफ के प्रभाव से उत्पन्न अन्य रोगों का भी नाश करता है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से या रोगानुसार अनुपान से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्याम। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—हिक्का, श्वास एवं कास में।

२९. महाश्वासारिलौह

कर्षद्वयं लौहचूर्णं कर्षार्द्धमभ्रमेव च।
सिता कर्षद्वयञ्चैव मधु कर्षद्वयं तथा ॥३७॥
त्रिफला मधुकं द्राक्षा कणा कोलास्थिवंशजा।
तालीशपत्रं वैडङ्गमेलापुष्करकेशरम् ॥३८॥
एतानि श्लक्ष्णचूर्णानि कर्षार्द्धञ्च समांशकम्।
लौहे च लौहदण्डेन मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥३९॥
ततो मात्रां लिहेत्क्षौद्रैर्बुद्ध्वा दोषबलाबलम्।
इदं श्वासारिलौहञ्च महाश्वासं विनाशयेत् ॥४०॥
कासं पञ्चविधञ्चैव रक्तपित्तं सुदारुणम्।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम्।
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥४१॥

१. लौहभस्म २३ ग्राम, २. अभ्रकभस्म ६ ग्राम, ३. शर्करा (चीनी) २३ ग्राम, ४. मधु २३ ग्राम, ५. आमलाचूर्ण ६ ग्राम, ६. हरीतकीचूर्ण ६ ग्राम, ७. बहेड़ाचूर्ण ६ ग्राम, ८. यष्टिमधुचूर्ण ६ ग्राम, ९. द्राक्षा ६ ग्राम, १०. पिप्पलीचूर्ण ६ ग्राम, ११. बेर की गुठलीमज्जा ६ ग्राम, १२. वंशलोचनचूर्ण ६ ग्राम, १३. तालीशपत्रचूर्ण ६ ग्राम, १४. वायविडङ्गचूर्ण ६ ग्राम, १५. छोटी इलायचीचूर्ण ६ ग्राम, १६. पुष्करमूलचूर्ण ६ ग्राम और १७. नागकेशरचूर्ण ६ ग्राम लें।

एक लोहे की कड़ाही में सभी काष्ठौषधों के चूर्ण और दोनों भस्मों को एक साथ मिलाकर लोहे की मुशल से ६ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत कर लें। १-१ ग्राम की मात्रा में दोषों के बलाबल को समझकर इस 'महाश्वासारिलौह' को मधु से खाने पर भयंकर श्वासरोग नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त पाँच प्रकार के कास, भयंकर रक्तपित्त, एकदोषज, द्विदोषज तथा सान्निपातिक रक्तपित्त रोग इसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे सूर्योदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है। इसमें सन्देह करने की आवश्यकता नहीं रहती है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कषाय-मधुर। **उपयोग**—श्वास, कास एवं रक्तपित्त में।

३०. पिप्पल्याद्यलौह (र.सा.सं.)

पिप्पल्यामलकी द्राक्षा कोलास्थिमधुशर्करा।
विडङ्गपुष्करैर्युक्तं लौहं हन्ति सुदुस्तरम् ॥४२॥
हिक्कां छर्दिं महाश्वासं त्रिरात्रेण न संशयः ॥४३॥

१. पिप्पलीचूर्ण, २. आमलाचूर्ण, ३. मुनक्काकल्क, ४. बदरीफल की गुठलीमज्जा, ५. शर्कराचूर्ण, ६. वायविडङ्गचूर्ण, ७. पुष्करमूलचूर्ण, ८. मधु तथा ९. लौहभस्म—पिप्पली से मधु तक के आठ द्रव्य १-१ भाग और लौहभस्म ८ भाग लें। सभी द्रव्यों को एक साथ खरल में अच्छी तरह से मिला लें और जल की भावना देकर ५००-५०० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत कर लें। इस वटी को प्रातः-सायं गरम पानी से लेने पर हिक्का, श्वास एवं वमन रोग निःसन्देह शान्त हो जाते हैं।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—गरम पानी से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—लौहभस्म वर्ण। **स्वाद**—मधु। **उपयोग**—हिक्का एवं श्वास में।

३१. श्वासकुठाररस-प्रथम (र.सा.सं.)

रसं गन्धं विषं टङ्कं शिलोषणकटुत्रिकम्।
सर्वं सम्मर्द्य कर्त्तव्यो रसः श्वासकुठारकः ॥४४॥
वातश्लेष्मसमुद्भूतं कासं श्वासं स्वरक्षयम्।
नाशयेन्नात्र सन्देहो वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥४५॥

विशेष—अत्र मरिचस्य भागद्वयं पुनरुक्तत्वाद्। मात्रा गुञ्जार्द्धमिता वृद्धवैद्योपदेशात्। आर्द्रकरसानुपानम्।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. शुद्ध मनःशिला, ६. मरिचचूर्ण, ७. शुण्ठी-चूर्ण, ८. पिप्पलीचूर्ण और ९. मरिचचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लेना चाहिए। यहाँ मरिच २ भाग लेना है। प्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी चूर्णों को उस कज्जली में मिलाकर २ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें। $\frac{१}{२}$ से १ रत्ती की मात्रा में मधु एवं आर्द्रकस्वरस से अथवा गरम घी एवं मरिचचूर्ण के साथ चटाना चाहिए। इसके सेवन से वात एवं कफ से उत्पन्न कास, श्वास, स्वरभङ्गादि रोग निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं; जैसे इन्द्र का वज्र वृक्षों को नष्ट कर देता है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस एवं मधु या घी एवं मरिचचूर्ण से। **गन्ध**—मरिचगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—श्वास, कास एवं स्वरभङ्ग में।

३२. श्वासकुठाररस-द्वितीय (र.सा.सं.)

रसं गन्धं विषं चैव टङ्कणं च मनःशिलाम्।
एतानि समभागानि मरिचञ्चाष्टटङ्कणात् ॥४६॥
टङ्कषट्कं द्विकटुकं खल्ले कृत्वा विचूर्णयेत्।
रसः श्वासकुठारोऽयं विषमश्वासकासजित् ॥४७॥
प्रतिश्यायक्षतक्षीणमेकादशविधं क्षयम्।
हृद्रोगं पार्श्वशूलञ्च स्वरभेदञ्च दारुणम् ॥४८॥
सन्निपातं तथा तन्द्रां प्रमेहांश्च विनाशयेत्।
गता संज्ञा यदा पुंसां तदा नस्यं प्रदापयेत् ॥४९॥
घ्रापयेन्नासिकारन्ध्रे संज्ञाकारकमुत्तमम्।
सूर्यावर्त्तार्द्धावभेदौ दुःसहाञ्च शिरोव्यथाम् ॥
अनुपानं पर्णरसमार्द्रकस्य रसं तथा ॥५०॥

विशेष—टङ्कयादशगुणमरिचम्। षड्गुणा पिप्पली शुण्ठी च।

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. शुद्ध मनःशिला, ६. मरिचचूर्ण, ७. पिप्पली-चूर्ण तथा ८. शुण्ठीचूर्ण—पारद से मैनसिल तक पाँच द्रव्य ५०-५० ग्राम, मरिच ४०० ग्राम, पिप्पली ३०० ग्राम तथा शुण्ठीचूर्ण ३०० ग्राम लें। एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली अच्छी तरह से बना लें, ततः अन्य सूक्ष्म चूर्णों को उस कज्जली के साथ मिलाकर २ घण्टे तक अच्छी तरह मर्दन करें। पुनः काचपात्र में सुरक्षित रख लें। २ से ४ रत्ती की मात्रा में ताम्बूलपत्ररस या आर्द्रकस्वरस और मधु के साथ इस 'श्वास-कुठाररस' का सेवन करने से विषमश्वास, कास, प्रतिश्याय, उरःक्षत, दुर्बल, एकादशरूप यक्ष्मा, हृद्रोग, पार्श्वशूल, स्वरभेद, भयंकर सन्निपात, तन्द्रा और प्रमेह रोगों को नष्ट करता है। तन्द्रा एवं मूर्च्छा आदि रोग से पीड़ित मनुष्य के नासा में इस चूर्ण को डालकर फूँकने से हर प्रकार की मूर्च्छा नष्ट हो जाती है और मनुष्य चेतनायुक्त हो जाता है। इसके सेवन से सूर्यावर्त, अर्धावभेदक तथा दुःसह शिरोरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० से ५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—ताम्बूलपत्र-स्वरस और आर्द्रकस्वरस से। **गन्ध**—मरिचगन्धी। **वर्ण**—कृष्णवर्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—श्वास, कास, यक्ष्मा, मूर्च्छा तथा शिरोरोग में।

३३. श्वासभैरवरस

रसं गन्धं विषं व्योषं मरिचं चव्यचित्रके।
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्य वटिकां चरेत् ॥५१॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन खादेत्तोयानुपानतः।
स्वभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुर्जयम् ॥५२॥

विशेष—अत्र व्योषस्थाने टङ्कणमिति कौमुद्याम्। अत्रापि मरिचस्य भागद्वयम्।

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ, ४. शुण्ठीचूर्ण, ५. पिप्पलीचूर्ण, ६. मरिचचूर्ण, ७. मरिचचूर्ण, ८. चव्यचूर्ण तथा ९. चित्रकमूलचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग तथा मरिचचूर्ण २ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें और कज्जली के साथ शुद्ध विष आदि अन्य द्रव्यों को मिलाकर २ घण्टे तक अच्छी तरह मर्दन करें। पुनः आर्द्रक-स्वरस की १ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस श्वासभैरव रस की १-१ वटी को गरम जल के साथ खाने से स्वरभेद, श्वास एवं दुर्जेय श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—उष्णोदक से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—स्वरभेद, कास एवं श्वास में।

३४. श्वासचिन्तामणि

द्विकर्ष लौहचूर्णस्य तदर्धं गन्धमभ्रकम्।
तदर्धं पारदं ताप्यं पारदार्धेन मौक्तिकम् ॥५३॥
शाणमानं हेमचूर्णं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः।
कण्टकारीरसैश्चापि शृङ्गबेररसैस्तथा ॥५४॥
छागीक्षीरेण मधुकैः क्रमेण मतिमान् भिषक्।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य बिभीतकसमन्वितम् ॥५५॥
भक्षयेत् श्वासकासार्त्तो राजयक्ष्मनिपीडितः ॥५६॥

१. लौहभस्म २३ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १२ ग्राम, ३. अभ्रकभस्म १२ ग्राम, ४. शुद्ध पारद ६ ग्राम, ५. स्वर्णमाक्षिक-भस्म ६ ग्राम, ६. मोतीभस्म ३ ग्राम और ७. स्वर्णभस्म ३ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली करें। ततः उसी खरल में अन्य सभी पाँचों भस्मों को मिलाकर १ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः कण्टकारीक्वाथ, आर्द्रकस्वरस, बकरी का

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

दूध तथा यष्टिमधुक्वाथ के साथ क्रमशः १-१ दिन तक मर्दन कर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'श्वासचिन्तामणि' को ४ रत्ती बहेड़ाचूर्ण और मधु के साथ सेवन करने से श्वास, कास एवं राजयक्ष्मा रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—बहेड़ाचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्यावर्वर्ण। **स्वाद**—मधुर-कटु। **उपयोग**—श्वास, कास एवं यक्ष्मा में।

३५. श्वास-कासचिन्तामणिरस (र.सा.सं.)

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत्।
पारदार्द्धं मौक्तिकं च सूताद् द्विगुणगन्धकम् ॥५७॥
अभ्रं चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहकम्।
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन च पृथक् ॥५८॥
यष्टीमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च।
भावयेत् सप्तवारं च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत् ॥५९॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम् ॥६०॥

१. शुद्ध पारद १२ ग्राम, २. स्वर्णमाक्षिक भस्म १२ ग्राम, ३. स्वर्णभस्म १२ ग्राम, ४. मोतीभस्म ६ ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक २३ ग्राम, ६. अभ्रकभस्म २३ ग्राम और ७. लौहभस्म ४६ ग्राम लें।

भावना-द्रव्य—१. कण्टकारीक्वाथ, २. बकरी का दूध, ३. यष्टिमधुक्वाथ तथा ४. ताम्बूलस्वरस—प्रत्येक द्रव्य के साथ ७-७ बार भावना दें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक का एक साथ मर्दन कर अच्छी तरह कज्जली बना लें। ततः अन्य सभी भस्मों को उसी कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें और क्रमशः कण्टकारीस्वरस या क्वाथ की ७ भावना दें। पुनः बकरी के दूध की ७ भावना दें। पुनः यष्टिमधुक्वाथ की ७ भावना दें और अन्त में ताम्बूलपत्रस्वरस की ७ भावना दें। अर्थात् कुल मिलाकर २८ भावना देनी चाहिए। इसके बाद २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'श्वासकास-चिन्तामणिरस' की १-१ वटी मधु एवं पिप्पलीचूर्ण के साथ सेवन करने से श्वास तथा कास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—पिप्पलीचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—किञ्चिन्मधुर एवं कटु। **उपयोग**—श्वास एवं कास में।

३६. मृगाङ्कवटी

हेमायस्कान्तसूताभ्रप्रवालमौक्तिकानि च।
बिभीतककषायेण सर्वं सम्भावयेत् त्रिधा ॥६१॥
एरण्डपत्रमध्यस्थं धान्यराशौ दिनत्रयम्।
स्थापयित्वा तदुद्धृत्य द्विगुञ्जां वटिकां चरेत् ॥६२॥
बिभीतकास्थिमज्जा च माषार्द्धा मधुसंयुता।
अनुपानमिह प्रोक्तं क्वाथो वाऽक्षसमुद्भवः ॥६३॥
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च।
स्वरभेदं ज्वरं मेहं सर्वामयविनाशकृत् ॥६४॥

१. स्वर्णभस्म, २. कान्तलौहभस्म, ३. रससिन्दूर, ४. अभ्रकभस्म, ५. प्रवालभस्म तथा ६. मोतीभस्म—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम रससिन्दूर को खरल में अच्छी तरह पीसकर अन्य पाँचों भस्मों को मिला लें और बिभीतकफलदल क्वाथ की ३ भावना दें। पुनः इस भावित सभी द्रव्यों का १ गोलक जैसा बना दें और एरण्डपत्र में लपेटकर कन्दुक जैसा बना लें तथा धान की राशि में ३ दिनों तक छुपा दें। चौथे दिन निकालकर इसे पुनः खरल में पीसें और बिभीतकफलदलक्वाथ की भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में अच्छी तरह से सुखा लें एवं काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'मृगाङ्कवटी' को बिभीतकमज्जाचूर्ण ५०० मि.ग्रा. के साथ मधु मिलाकर सेवन करने से या विविधानुपान के साथ सेवन करने से क्षय, कास, यक्ष्मा, श्वास, स्वरभेद, ज्वर तथा प्रमेहादि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—बिभीतकमज्जा एवं मधु से या रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—श्वास, कास, क्षय एवं यक्ष्मा में।

३७. नागार्जुनाभ्ररस (र.र.स.)

सहस्रपुटनैः शुद्धं वज्राभ्रमर्जुनत्वचः।
सत्त्वैर्विमर्दितं सप्तदिनं खल्वे विशोषितम् ॥६५॥
छायाशुष्का वटी कार्या नाम्ना नागार्जुनाभ्रकम्।
हृद्रोगं सर्वशूलार्शोहृल्लासच्छर्द्यरोचकान् ॥६६॥
अतीसारं चाग्निमान्द्यं रक्तपित्तं क्षतक्षयम्।
शोथोदराम्लपित्तं च विषमज्वरमेव च ॥६७॥
हन्त्यन्यानपि रोगान् हि बल्यं वृष्यं रसायनम् ॥६८॥

अभ्रकभस्म सहस्रपुट २५० ग्राम तथा अर्जुनत्वक् २ किलोग्राम लें। एक बड़े खरल में सहस्रपुटी अभ्रकभस्म लेकर २५० ग्राम अर्जुनत्वक् यवकुट क्वाथ से भावना दें। इसी क्वाथ से ७ बार भावना दें। पूरे ७ दिनों तक मर्दन करते रहें। रात्रि में क्वाथ में अभ्रकभस्म डुबाकर रख दें और प्रातः मर्दन करें। जब सूखने लगे तो इसकी १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत कर लें। इस 'नागार्जुनाभ्ररस' की मधु के साथ १-१ वटी सेवन करने से—हृद्रोग, सभी प्रकार के शूल, अर्श, हृल्लास, वमन, अरुचि, अतिसार, अग्निमान्द्य, रक्तपित्त, उरःक्षत, क्षय, शोथ, उदररोग, अम्लपित्त तथा विषमज्वर को नष्ट करता है। इसके अतिरिक्त अन्य रोगों का भी नाश करता है। यह 'नागार्जुनाभ्ररस' बल्य, वृष्य और रसायन है।

मात्रा—१२५-२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगा-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नुसार। **गन्ध**—निर्गन्धि। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कषाय। **उपयोग**—हृद्रोग, श्वास, कास एवं क्षयादि में।

३८. सूर्यावर्त्तरस (र.सा.सं.)

गन्धकं सूतकं मर्द्द्यामैकं कन्यकाद्रवैः।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं पूर्वकल्केन लेपयेत् ॥६९॥
दिनैकं हण्डिकायन्त्रे पचेच्छीतं समुद्धरेत्।
सूर्यावर्त्तरसो ह्येष द्विगुञ्जः श्वासकासनुत् ॥७०॥

१. शुद्ध गन्धक १ भाग, २. शुद्ध पारद १ भाग तथा ३. शुद्ध ताम्रपत्र २ भाग लें। घृतकुमारीस्वरस यथावश्यक लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बना लें। ततः घृतकुमारीस्वरस में उस कज्जली का ३ घण्टे तक खूब मर्दन करें। शुद्ध ताम्र का सूक्ष्म पत्र बना लें। अब इस ताम्रपत्र पर पारद एवं गन्धक की कज्जली के कल्क का लेप करें। इसके बाद हाँडीयन्त्र में लेपित ताम्रपत्र को रखकर अच्छी तरह से हाँडी का मुख बन्द करें और १२ घण्टे तक दृढाग्नि में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर हाँडी का मुख खोलकर लिप्त ताम्रपत्र निकालकर खरल में अच्छी तरह पीसकर काचपात्र में संग्रहीत कर लें। इसे 'सूर्यावर्त्तरस' कहते हैं। इसकी २ रत्ती की मात्रा में मधु के साथ प्रयोग करने से श्वास एवं कास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—निर्गन्धि। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—श्वास एवं कास में।

३९. इन्द्रवारुणिकादिचूर्ण (र.सा.सं.)

इन्द्रवारुणिकामूलं देवदारु कटुत्रयम्।
शर्करासहितं खादेदूर्ध्वश्वासनिवृत्तये ॥७१॥

१. इन्द्रायणमूलचूर्ण, २. देवदारुचूर्ण, ३. शुण्ठीचूर्ण, ४. पिप्पलीचूर्ण, ५. मरिचचूर्ण और ६. शर्करा पीसी हुई—पाँचों काष्ठौषधि १-१ भाग लें और शर्करा १० भाग लें। सभी द्रव्यों को कूटकर महीन चूर्ण कर लें। ततः शर्करा पीसकर सभी को एक साथ मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ५ ग्राम ताजे जल से लेने से ऊर्ध्वश्वास रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—निर्गन्धि। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—मधुर-कटु। **उपयोग**—ऊर्ध्व श्वास में।

४०. शृङ्गीगुड़घृत (र.सा.सं.)

कण्टकारीद्वयं वासाऽमृता पञ्चपलं पृथक्।
शतावर्य्याः पञ्चदश भार्गी दशपलानि च ॥७२॥
गोक्षुरं पिप्पलीमूलं पृथक् पलसमन्वितम्।
पाटलात्रिपलञ्चैव चतुर्गुणजले पचेत् ॥७३॥
चतुर्भागावशिष्टन्तु कषायमवतारयेत्।
पुरातनगुडस्यात्र पलानि दश दापयेत् ॥७४॥
घृतस्य पञ्च दत्त्वा च दत्त्वा दशपलं पयः।
सर्वमेकीकृतं पक्त्वा चूर्णमेषां विनिक्षिपेत् ॥७५॥
शृङ्गी द्वितोलकं जातीफलं पत्रं त्रितोलकम्।
चतुस्तोलं लवङ्गञ्च तुगाक्षीरी पृथक् पृथक् ॥७६॥
गुडत्वगेले च तथा तोलकद्वयमानके।
कुष्ठं तोलचतुष्कञ्च शुण्ठ्यास्तोलकसप्तकम् ॥७७॥
पिप्पल्याः पलमेकञ्च तालीशं तोलकत्रयम्।
जातीकोषं तोलकैकं शीते च मधुनः पलम् ॥७८॥
ततः खाद्यञ्च कर्षैकमनुपानविधिं शृणु।
काष्ठमार्जारिकाचूर्णं मरिचं तच्चतुर्गुणम् ॥७९॥
एकीकृत्य वटीं यत्नात् कुर्यान्माषमितां पृथक्।
तासामेकां चर्वयित्वा पिबेदनुजलं कियत् ॥८०॥
शृङ्गीगुडघृतं नाम सर्वरोगहरं परम्।
अपि वैद्यशतैस्त्यक्तं श्वासं हन्ति सुदारुणम् ॥८१॥
कासं पञ्चविधं हन्ति विविधोपद्रवान्वितम्।
रक्तपित्तं क्षयञ्चैव स्वरभङ्गमरोचकम्॥
विशेषाच्चिरकालोत्थं श्वासं हन्ति सुदुस्तरम् ॥८२॥

क्वाथ-द्रव्य—कण्टकारी २३५ ग्राम, २. बृहती २३५ ग्राम, ३. वासा २३५ ग्राम, ४. गुडूची २३५ ग्राम, ५. शतावरी ७०० ग्राम, ६. भारङ्गी ४७५ ग्राम, ७. गोक्षुर ४६ ग्राम, ८. पिप्पलीमूल ४६ ग्राम, ९. पाटला १४० ग्राम, १०. गुड़ ४७५ ग्राम, ११. घी २३५ ग्राम तथा १२. गोदुग्ध ४७५ मि.ली. लें।

प्रक्षेप-द्रव्य—१. काकडासिंगी २३ ग्राम, २. जायफल ३५ ग्राम, ३. तेजपत्र ३५ ग्राम, ४ लवंगचूर्ण ४६ ग्राम, ५. वंशलोचन २३ ग्राम, ६. त्वक् २३ ग्राम, ७. कुष्ठचूर्ण ४६ ग्राम, ८. शुण्ठीचूर्ण ८२ ग्राम, ९. पिप्पलीचूर्ण १२ ग्राम, १०. तालीशपत्रचूर्ण ३५ ग्राम, ११. जातीपत्रीचूर्ण १२ ग्राम तथा १२ मधु ४६ ग्राम लें।

ऊपर के सभी ९ क्वाथ-द्रव्यों को यवकुट कर इनसे ४ गुना जल अर्थात् १० लीटर जल में भिगाकर क्वाथ करें। जब चौथाई शेष रहे तो छानकर पृथक् करें। पुनः इस क्वाथ, घृत एवं दूध तीनों को मिलाकर पकावें। जब कुछ गाढ़ा हो जाय तो गुड़ मिलाकर चासनी करें। जब २ तार की चासनी हो जाय तो चूल्हे से पात्र को हटा लें और प्रक्षेप-द्रव्य (काकडासिंगी से जातीपत्री तक के सभी ११ द्रव्यों) का चूर्ण कर तैयार चासनी में प्रक्षिप्त कर अच्छी तरह से मिला दें। ठण्डा होने पर उसमें मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'शृंगीगुड़घृत' औषधि को १२ ग्राम की मात्रा में प्रातः-सायं जल से सेवन करें। ततः अनुपान रूप में काष्ठमार्जारिकाचूर्ण १ रत्ती एवं मरिचचूर्ण १ रत्ती की वटी बनाकर पहले रख लें। उक्त औषधि सेवन करने के बाद

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

काष्ठमार्जारिकाचूर्ण को चबाकर खा लें और बाद में जल पी लें। अनुपान भेद से यह औषधि सभी रोगों का नाश करती है। सौ वैद्यों द्वारा त्यक्त भयंकर श्वासरोगी, पाँच प्रकार के कास- रोगी, अनेक उपद्रवों से युक्त रक्तपित्त रोगी, क्षय, स्वरभंग एवं अरुचि रोग का यह नाश करता है; विशेषरूप से चिरकालोत्थ श्वासरोग इस औषधि से मिट जाता है।

मात्रा—१२ ग्राम। **अनुपान**—काष्ठमार्जारादिवटी एवं जल से। **गन्ध**—सुगन्धयुक्त अवलेह पाकादि जैसी गन्ध। **वर्ण**—गुड़ के अवलेह जैसा। **स्वाद**—मधुर-कटु। **उपयोग**—श्वास, कास एवं रक्तपित्त में।

४१. भार्गीशर्करा

भार्ग्याः शतार्द्धं वासायाः कण्टकार्याश्च पाचयेत्।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा प्रस्थञ्च दशमूलकम् ॥८३॥
जलाढके पचेत्तेन चतुर्थमवशेषयेत्।
वस्त्रपूतञ्च तत्सर्वं सिताप्रस्थं ततः क्षिपेत् ॥८४॥
उष्णेऽवतारिते तत्र चूर्णानीमानि दापयेत्।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं तालीशं नागकेशरम् ॥८५॥
भार्गीं वचा श्वदंष्ट्रा च त्वगेलापत्रजीरकम्।
यमानी चाजमोदा च वांशी कौलत्थजं रजः ॥८६॥
कट्फलं पौष्करं शृङ्गी कोलमात्रं क्षिपेत्ततः।
शीते क्षौद्रं प्रदातव्यं कुडवार्द्धं शुभे दिने ॥८७॥
लिहेत् पिचुमितं नित्यं प्रातर्वीक्ष्यानुपानतः।
हन्ति पञ्चविधं कासं श्वासमेव सुदारुणम् ॥८८॥
यक्ष्माणं हन्ति हिक्काञ्च ज्वरं जीर्णं व्यपोहति।
रोगानन्यान्निहन्त्याशु बलपुष्ट्यग्निवर्द्धनम् ॥८९॥

क्वाथ-द्रव्य—१. भारङ्गी २५०० ग्राम, २. वासापञ्चाङ्ग २५०० ग्राम, ३. कण्टकारी २५०० ग्राम, यवकुट कर ४. जल ३० लीटर—क्वाथ कर चौथाई शेष रखें, ५. दशमूल ७०० ग्राम—प्रत्येक द्रव्य ७०-७० ग्राम लें तथा क्वाथार्थ जल ३ लीटर लें, शर्करा ७५० ग्राम तथा मधु ९३ ग्राम लें।

प्रक्षेप-द्रव्य—१. शुण्ठीचूर्ण, २. पिप्पलीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण, ४. आमलाचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण, ६. बहेड़ाचूर्ण, ७. नागरमोथाचूर्ण, ८. तालीशपत्रचूर्ण, ९. नागकेशरचूर्ण, १०. भारङ्गीचूर्ण, ११. वचाचूर्ण, १२. गोक्षुरचूर्ण, १३. त्वक्चूर्ण, १४. छोटी इलायचीचूर्ण, १५. तेजपत्रचूर्ण, १६. जीरकचूर्ण, १७. अजवायनचूर्ण, १८. अजमोदाचूर्ण, १९. वंशलोचनचूर्ण, २०. कुलथीचूर्ण, २१. कायफलचूर्ण, २२. पुष्करमूलचूर्ण तथा २३. काकड़ासिंगी—प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण ६-६ ग्राम लें।

क्वाथ-द्रव्य को यवकुट कर ३० लीटर जल में रात्रिपर्यन्त भिगावें। प्रातः मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें। पुनः इस क्वाथ को एक छोटे पात्र में रखकर शर्करा (चीनी) डालें और पाक करें। जब २ तार की चासनी हो जाय तो चूल्हे से भगौने को नीचे उतारकर प्रक्षेप द्रव्यों के चूर्ण उस पाक पर छिड़क दें। शीतल होने पर मधु मिलाकर अच्छी तरह मिला दें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत करें। शुभ दिन एवं शुभ नक्षत्र में इस 'भार्गीशर्करा' को १२ ग्राम की मात्रा में रोगानुसार अनुपान से अथवा दूध, जलादि से लेने से पाँच प्रकार के कास, भयंकर श्वास, यक्ष्मा, हिक्का, जीर्ण ज्वरादि रोगों को शीघ्र नष्ट करता है। यह बलवर्धक है, शरीर को पुष्ट करता है तथा जाठराग्नि को बढ़ाता है।

मात्रा—१२ ग्राम। **अनुपान**—दुग्ध, जल या रोगानुसार। **गन्ध**—सुगन्ध अवलेह जैसी। **वर्ण**—रक्ताभ-श्याव। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—श्वास, कास, यक्ष्मा एवं हिक्का में।

४२. भार्गी गुड़ (च.द.)

शतं संगृह्य भार्ग्यास्तु दशमूल्यास्तथा शतम्।
शतं हरीतकीनाञ्च पचेत्तोये चतुर्गुणे ॥९०॥
पादावशेषे तस्मिंस्तु रसे वस्त्रपरिस्रुते।
आलोड्य च तुलां पूतां गुडस्य त्वभयां ततः ॥९१॥
पुनः पचेन्मृदावग्नौ यावल्लेहत्वमागतम्।
शीते च मधुनश्चात्र षट्पलानि पृथक् पृथक् ॥९२॥
त्रिकटु त्रिसुगन्धं च पलिकानि पृथक् पृथक्।
कर्षद्वयं यवक्षारं सञ्चूर्ण्य प्रक्षिपेत्ततः ॥९३॥
भक्षयेदभयामेकां लेहस्यार्द्धपलं लिहेत्।
श्वासं सुदारुणं हन्ति कासं पञ्चविधं तथा ॥९४॥
स्वरवर्णप्रदो ह्येष जठराग्नेश्च दीपनः।
पलोल्लेखागते माने न द्वैगुण्यमिहेष्यते ॥
हरीतकीशतस्यात्र प्रस्थत्वादाढकं जलम् ॥९५॥

१. भारंगी ४.६ किलो, २. दशमूल सम्मिलित ४.६ किलो, ३. बड़ी हरीतकी १०० नग तथा ४. गुड़ ४.६ किलो लें।

प्रक्षेप-द्रव्य—१. मधु २८० ग्राम, २. शुण्ठीचूर्ण, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. मरिचचूर्ण, ५. इलायचीचूर्ण, ६. त्वक् तथा ७. तेजपत्रचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य ४६-४६ ग्राम लें एवं ८. यवक्षार २३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम भारंगी और दशमूल के द्रव्यों को यवकुट करें एवं बड़े पात्र में रखकर ४० लीटर जल के साथ क्वाथ करें। क्वाथ करते समय १०० अच्छी हरीतकी छाँटकर कपड़े की एक थैली में ढीला बाँधकर उस क्वाथ में डाल दें। जब चौथाई शेष रहे तो हरीतकी की पोटली पहले निकाल लें और क्वाथ को वस्त्रपूत कर लें। अब उस छने हुए क्वाथ को पुनः साफ स्टेनलेस स्टील के पात्र में रखें और थैली से सुपक्व हरीतकी निकालकर पुनः पकावें। जब क्वाथ १-२ लीटर जितना शेष बचे तो हरीतकी निकालकर उस क्वाथ में ४.६ किलो गुड़ देकर पकावें। जब गुड़

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पूरी तरह से घुल जाय तो गुड़ घोलकर कपड़े से छान लें। पात्र को पुनः साफ कर गुड़घोल को फिर से पकावें। पकते समय क्वाथ पक्व हरीतकी उसी गुड़घोल में डाल दें। जब पकते-पकते १ से २ तार की चासनी हो जाय तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर मधु बिना शेष प्रक्षेप त्रिकटु-त्रिफला-यवक्षार चूर्ण को उस पाक में डालकर अच्छी तरह चलावें। ठण्डा होने पर उसमें मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। प्रतिदिन इस 'भार्गीगुड़' से १ हरीतकी २३ ग्राम गुड़ का अवलेह खाकर गाय का गरम दूध एवं जल पियें। इसके सेवन से भयंकर श्वास तथा पाँच प्रकार के कास नष्ट हो जाते हैं। यह स्वर एवं वर्णवर्धक है तथा पाचकाग्नि को बढ़ाता है। यहाँ मानार्थ पल का उल्लेख होने के कारण द्रव द्वैगुण्य की परिभाषा नहीं करनी चाहिए। १०० हरीतकी का मान एक प्रस्थ (७५० ग्राम) होता है। अतः जल ४ गुना ३ लीटर में पकाना चाहिए।

मात्रा—१ हरीतकी एवं १२ से २३ ग्राम अवलेह। **अनुपान**—गरम दूध या जल से। **गन्ध**—सुगन्ध अवलेह जैसी। **वर्ण**—श्याव या गुड़ाभ। **स्वाद**—मधुर-कषाय। **उपयोग**—श्वास एवं कास में।

४३. कुलत्थगुड़ (च.द.)

कुलत्थं दशमूलं च तथैव द्विजयष्टिका।
शतं शतं च संगृह्य जलद्रोणे विपाचयेत् ॥९६॥
पादावशेषे तस्मिंस्तु गुडस्यार्धतुलां क्षिपेत्।
शीतीभूते च पक्वे च मधुनोऽष्टौ पलानि च ॥९७॥
षट् पलानि तुगाक्षीर्याः पिप्पल्याश्च पलद्वयम्।
त्रिसुगन्धि सुगन्धं तत् खादेदग्निबलं प्रति ॥९८॥
श्वासं कासं ज्वरं हिक्कां नाशयेत् तमकं तथा।
प्रतिशतं द्रोणनियमाज्ज्ञेयं द्रोणत्रयं त्विह ॥९९॥

१. कुलत्थबीज ५ किलो, २. दशमूल ५ किलो, ३. भार्गी ५ किलो, क्वाथार्थ जल ३६ लीटर (तीन द्रोण) तथा ४. गुड़ २५०० ग्राम।

प्रक्षेप-द्रव्य—१. मधु ३७५ ग्राम, २. वंशलोचनचूर्ण ३७५ ग्राम, ३. पिप्पलीचूर्ण २८० ग्राम, ४. छोटी इलायची चूर्ण ९३ ग्राम, ५. त्वक्चूर्ण ९३ ग्राम तथा ६. तेजपत्रचूर्ण ९३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम कुलत्थ को कूटकर तथा दशमूल एवं भार्गी को यवकुट करें और बड़े पात्र में २४ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ को कपड़े से छानकर पात्र को धो लें। छने हुए क्वाथ उसी पात्र में रखें और गुड़ मिलाकर पकावें। जब पकते-पकते २ तार की चासनी हो जाय तो चूल्हे से पात्र को नीचे उतार लें तथा कुछ ठण्डा होने पर प्रक्षेप के चूर्णों को उस पर छिड़ककर अच्छी तरह मिला दें। शीतल होने पर मधु मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। अग्नि एवं बल के अनुसार इस लेह को १२ से २३ ग्राम की मात्रा में गरम दूध एवं जल से सेवन करने से श्वास, कास, ज्वर, हिक्का और तमक श्वास नष्ट हो जाते हैं। १०० पल (५ कि.) द्रव्य के पाकार्थ १ द्रोण १२ लीटर जल की आवश्यकता होती है। अतः यहाँ तीन द्रोण ३६ लीटर जल लेना चाहिए।

मात्रा—१२ ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्ध पाक जैसी। **वर्ण**—गुडाभ अवलेह। **स्वाद**—मधुर-कटु। **उपयोग**—श्वास, कास एवं हिक्का में।

४४. हिंस्राद्यघृत (सु.उ.)

हिंस्राविडङ्गपूतीकत्रिफलाव्योषचित्रकैः ।
द्विक्षारं सर्पिषः प्रस्थं चतुर्गुणजलान्वितम् ॥१००॥
कोलमात्रैः पचेत्तद्धि श्वासकासौ व्यपोहति।
अर्शांस्यरोचकं गुल्मं शकृद्भेदं क्षयं तथा ॥१०१॥

कल्क-द्रव्य—जटामांसी, २. वायविडङ्ग, ३. करञ्जबीज, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. शुण्ठी, ८. पिप्पली, ९. मरिच तथा १०. चित्रकमूल—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम; ११. गोघृत ७५० ग्राम और १२. गोदुग्ध १.५०० लीटर लें। सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। कल्क-द्रव्य के सभी द्रव्यों का चूर्ण कर शिला पर जल से पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित घृत में कल्क एवं गोदुग्ध मिलाकर पकावें। जब दूध सूख जाय तो घृत से ४ गुना जल (३ लीटर) देकर सम्यक् पाकार्थ पुनः पकावें। जब घृत निर्जल हो जाय तो स्नेहपाक परीक्षा कर उसे चूल्हे से उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। गरम गोदुग्ध में ६ से १२ ग्राम की मात्रा में पान करने से श्वास एवं कास रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अर्श, अरुचि, गुल्म एवं पतला पखाना और क्षय रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गाय के गरम दूध में। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कषाय-तिक्त। **उपयोग**—श्वास एवं कास में।

४५. तेजोवत्याद्य घृत (च.द.)

तेजोवत्यभया कुष्ठं पिप्पली कटुरोहिणी।
भूतीकं पौष्करं मूलं पलाशश्चित्रकं शटी ॥१०२॥
सौवर्चलं तामलकी सैन्धवं बिल्वपेशिका।
तालीशपत्रं जीवन्ती वचा तैरक्षसम्मितैः ॥१०३॥
हिङ्गुपादैर्घृतप्रस्थं पचेत्तोयचतुर्गुणे।
एतद्यथाबलं पीत्वा हिक्काश्वासौ जयेन्नरः ॥
शोथानिलार्शोग्रहणीहृत्पार्श्वरुज एव च ॥१०४॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कल्क-द्रव्य—१. ज्योतिष्मती, २. हरीतकी, ३. कुष्ठ, ४. पिप्पली, ५. कटुकी, ६. जटामांसी, ७. पुष्करमूल, ८. पलाश-बीज, ९. चित्रकमूल, १०. कचूर, ११. सौवर्चललवण, १२. भूमि आमला, १३. सैन्धवलवण, १४. बिल्वमज्जा, १५. तालीशपत्र, १६. जीवन्ती, १७. वचा और १८. हींग—ज्योतिष्मती से वचा तक सभी १७ द्रव्य १२-१२ ग्राम तथा हींग ३ ग्राम लें। घृत ७५० ग्राम तथा जल ३ लीटर लें।

ज्योतिष्मती से वचा तक सभी द्रव्यों को कूट-पीस कर कल्क बना लें। पीसते समय हींग भी डालकर पीस लें। सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। उसी घृत में इस कल्क को मिला दें और इस घी में ३ लीटर जल मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। घृत जब सुपक्व होकर जल रहित हो जाय तो परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से उतारकर कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छान लें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत करें। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में इस घृत को गाय के गरम दूध में डालकर पी जायें। इसके सेवन से हिक्का एवं श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त शोथ, वायुविकार, अर्श, ग्रहणी, हृच्छूल एवं पार्श्वशूल कष्ट नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—हिक्का एवं श्वास में।

४६. चन्दनाद्य तैल

द्रव्याणि चन्दनादेस्तु चन्दनं रक्तचन्दनम्।
पत्तङ्गमथ कालीयागुरुकृष्णागुरूणि च ॥१०५॥
देवद्रुसरलं पद्मं पञ्चकस्तृणकोऽपि च।
कर्पूरो मृगनाभिश्च लता कस्तूरिकाऽपि च ॥१०६॥
सिह्लकः कुङ्कुमं नव्यं जातीफलकमेव च।
जातीकोषं लवङ्गं च सूक्ष्मैला महती च सा॥१०७॥
कङ्कोलफलकं स्पृक्का पत्रकं नागकेशरम्।
बालकं च तथोशीरं मांसी दारुसिताऽपि च ॥१०८॥
कृतकर्पूरकश्चापि शैलेयं भद्रमुस्तकम्।
रेणुका च प्रियङ्गुश्च श्रीवासो गुग्गुलुस्तथा ॥१०९॥
लाक्षा नखञ्च रालश्च धातकीकुसुमं तथा।
ग्रन्थिपर्णञ्च मञ्जिष्ठा तगरं सिक्थकस्तथा ॥११०॥
एतानि शाणमानानि कल्कीकृत्य शनैः पचेत्।
अनेनाभ्यक्तगात्रस्तु वृद्धोऽशीतिसमोऽपि सः ॥१११॥
युवा भवति शुक्राढ्यः स्त्रीणामत्यन्तवल्लभः।
वन्ध्याऽपि लभते गर्भं वृद्धोऽपि तरुणायते ॥११२॥
अपुत्रः पुत्रमाप्नोति जीवेद्वर्षशतं सुखी।
चन्दनादिमहातैलं रक्तपित्तक्षयं ज्वरम् ॥११३॥
दाहप्रस्वेददौर्गन्ध्यकुष्ठकण्डूर्विनाशयेत् ॥११४॥

तिलतैल ७५० ग्राम लें।

कल्क-द्रव्य—१. श्वेत चन्दन, २. रक्त चन्दन, ३. पतङ्ग-चन्दन, ४. कालीयक, ५. अगरु, ६. काला अगरु, ७. देवदारु, ८. सरल, ९. पद्मकाष्ठ; पञ्चतृणमूल—१०. कुशमूल, ११. काशमूल, १२. शरमूल, १३. दर्भमूल, १४. इक्षुमूल, १५. कपूर, १६. कस्तूरी, १७. लताकस्तूरी, १८. शिलारस, १९. केशर, २०. जायफल, २१. जातीपत्री, २२. लवङ्ग, २३. छोटी इलायची, २४. बड़ी इलायची, २५. शीतलशर्करा, २६. स्पृक्का, २७. तेजपत्र, २८. नागकेशर, २९. सुगन्ध-बाला, ३०. खस, ३१. जटामांसी, ३२. त्वक्, ३३. कर्पूर-पत्ती, ३४. छरीला, ३५. नागरमोथा, ३६. रेणुकाबीज, ३७. प्रियङ्गु फूल, ३८. गन्धविरोजा, ३९. गुग्गुलु, ४०. लाक्षा, ४१. नरकी, ४२. राल, ४३. धावाफूल, ४४. ग्रन्थिपर्णी, ४५. मंजिष्ठा, ४६. तगर तथा ४७. मोम—प्रत्येक द्रव्य ३-३ ग्राम लें। केशर, कस्तूरी एवं कपूर के बिना इन द्रव्यों को पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद तिलतैल को मूर्च्छित कर लें तथा तैल में कल्क मिला दें। सम्यक् पाक के लिए तैल से चार गुना (३ लीटर जल) जल मिलाकर मन्दाग्नि से पकावें। जब पूरा जल सूख जाय तो पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कुछ ठण्डा होने के बाद छान लें और बाद में इस तैल में कस्तूरी एवं केशर तथा कर्पूर मिलाकर काचपात्र में सुरक्षित करें। इस 'चन्दानादितैल' की शरीर में मालिश करने से ८० वर्ष का वृद्ध व्यक्ति भी शुक्र से परिपूर्ण जवान के जैसा होकर स्त्रियों का अत्यन्त प्रिय हो जाता है। वृद्ध भी इसके मर्दन से युवा हो जाता है। वन्ध्या स्त्रियाँ भी इसके सेवन से पुत्रवती हो जाती हैं। जिस पुरुष को पुत्र नहीं होता है वह भी पुत्रवान् हो जाता है और सौ वर्ष तक सुखपूर्वक जीवित रहता है। यह चन्दनादितैल रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, दाह, कुष्ठ, कण्डू एवं पसीने की दुर्गन्ध जैसे रोगों को नष्ट करता है।

मात्रा—१० से २० मि.ली.। **गन्ध**—कस्तूरी-केशरादि के गन्ध से युक्त। **वर्ण**—रक्त-पीताभ। **उपयोग**—वाजीकरणार्थ प्रमुख रूप से तथा स्वेददुर्गन्ध, क्षय, ज्वर एवं रक्तपित्त में।

४७. कनकासव

संक्षुद्य कनकं शाखामूलपत्रफलैः सह।
ततश्चतुष्पलं ग्राह्यं वृषमूलत्वचन्तथा ॥११५॥
मधूकं माधवी व्याघ्री केशरं विश्वभेषजम्।
भार्गीं तालीशपत्रञ्च सञ्चूर्ण्यैषां पलद्वयम् ॥११६॥
संगृह्य धातकीप्रस्थं द्राक्षायाः पलविंशतिम्।
जलद्रोणद्वयं दत्त्वा शर्करायास्तुलां तथा ॥११७॥
क्षौद्रस्यार्धतुलाञ्चापि सर्वं सम्मिश्रय यत्नतः।
भाण्डे निक्षिप्य चावृत्य निदध्यान्मासमात्रकम् ॥११८॥
निहन्ति निखिलाञ् श्वासान् कासं यक्ष्माणमेव च।
क्षतक्षीणं ज्वरं जीर्णं रक्तपित्तमुरःक्षतम् ॥११९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. धत्तूरपञ्चाङ्ग ४ पल (१८७ ग्राम), २. वासामूलत्वचा १८७ ग्राम, ३. महुए का फूल ९३ ग्राम, ४. पिप्पली ९३ ग्राम, ५. कण्टकारी ९३ ग्राम, ६. नागकेशर ९३ ग्राम, ७. शुण्ठी ९३ ग्राम, ८. भारङ्गीत्वक् ९३ ग्राम, ९. तालीशपत्र ९३ ग्राम, १०. धातकीफूल ७५० ग्राम, ११. द्राक्षा ९६० ग्राम, जल २८ लीटर, १२. गुड़ १० किलो तथा १३. मधु २५०० ग्राम लें। सर्वप्रथम द्रव्यों के संग्रहार्थ धत्तूरा, वासा एवं कण्टकारी सूखा लें। इन्हें पृथक् यवकुट करें। धातकीफूल, महुआफूल और द्राक्षा छोड़ सभी द्रव्यों का यवकुट टुकड़ा करें। दो बड़े नये घड़े में पहले २४ घण्टे तक जल भर दें। पुनः निर्वात घर में एकान्त में घड़े के तल में भूसी, पुआल, नारियलजटा आदि की गद्दी रखकर स्थिर करें। पुनः उसमें १२-१२ लीटर जल भरें। इसके बाद ५-५ किलो गुड़ दोनों घड़ों में डालकर अच्छी तरह से मिला दें। पुनः उपर्युक्त सभी द्रव्य आधे-आधे भाग में दोनों घड़े में डालकर अच्छी तरह मिला लें और मुख मुद्रण कर तिथि उस घड़े पर लिख दें। २५ से ३० दिनों के बाद संधान की परीक्षा करें। घड़े के बाहरी भाग से Fermentation की सनसनाहट की आवाज नहीं आयेगी। घड़े के अन्दर दियासलाई की जलती तीली ले जाने में जलती ही रहनी चाहिए। उस घर के अन्दर चारों ओर मद्यगन्धी वातावरण हो जाय तो आसव तैयार हो गया ऐसा जानना चाहिए। ऐसी अवस्था होने पर हाथ से पुनः उक्त आसव को अच्छी तरह मिलाकर आसव को कपड़े से छान लेना चाहिए। उसी घड़े को धोकर साफ कर सुखा लें और पुनः छाना हुआ कनकासव उसी में रखकर मुख बन्द करें।

विमर्श—कनकासव बाजार में प्रायः खट्टा ही उपलब्ध होता है। इसका कारण मैं मानता हूँ कि धत्तूर-वासा-कण्टकारी आदि गीले द्रव्यों का प्रयोग और गुड़ की मात्रा में कमी। अतः मैंने गुड़ २ गुना कर बनाने का आग्रह किया है। ऐसे तो ग्रन्थ के मूलपाठ में ५ किलो ही गुड़ का विधान है। १ माह के बाद घड़े को सावधानी से टेढ़ा कर आसव को निथारकर पुनः छान लें और बोतलों में भरकर कार्क-लेबल लगाकर सुरक्षित रख लें। इसका १ वर्ष के बाद प्रयोग करें।

इसके प्रयोग से सभी तरह के श्वासरोग, कास, क्षय, उरःक्षत, क्षीण, जीर्णज्वर और रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१० से २० मि.ली.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—रक्त-पीताभ। **स्वाद**—मधुर-तीक्ष्ण। **उपयोग**—श्वास, कास, रक्तपित्त एवं क्षय में।

पञ्च रोगों में औषधियों का विवेचन

ये चागदाः कास उरःक्षते वा
श्वासे च यक्ष्मण्यथ रक्तपित्ते।
यथाधिकारं सुखबोधनार्थं
विभागशो वैद्यवरैरुदीरिताः ॥१२०॥
अमीषु पञ्चस्वथ ताँस्तु भेदो-
दितान् प्रयुञ्जीत मिथोऽप्यभिन्नः।
दोषान् गुणांश्चाप्यगदस्थितांस्तु
वीक्ष्यामये दोषबलाबलं च ॥१२१॥

आयुर्वेदीय शास्त्रों में कास, श्वास, उरःक्षत, राजयक्ष्मा एवं रक्तपित्त रोगाधिकार में वैद्यों के सुखपूर्वक ज्ञान के लिए जो पृथक्-पृथक् विभागशः औषधियाँ कही गयी हैं, उन सभी औषधियों के गुण-दोषों का तथा रोगों के वातादि दोषों के बलाबल की विवेचना कर एक औषधि को दूसरे रोगों में भी प्रयोग किया जा सकता है।

हिक्का रोग में पथ्य

स्वेदनं वमनं नस्यं धूमपानं विरेचनम्।
निद्रा स्निग्धानि चान्नानि मृदूनि लवणानि च ॥१२२॥
जीर्णाः कुलत्था गोधूमाः शालयः षष्टिका यवाः।
एणास्तित्तिरिलावाद्या जाङ्गला मृगपक्षिणः ॥१२३॥
पक्वं कपित्थं लशुनं पटोलं बालमूलकम्।
पौष्करं कृष्णतुलसी मदिरा नलदाम्बु च ॥१२४॥
उष्णोदकं मातुलुङ्गं माक्षिकं सुरभीजलम्।
अन्नपानानि सर्वाणि वातश्लेष्महराणि च ॥१२५॥
शीताम्बुसेकः सहसा त्रासो विस्मापनं भयम्।
क्रोधो हर्षः प्रियोद्वेगप्राणायामनिषेवणम् ॥१२६॥
दग्धसिक्तमृदाघ्राणं कूर्चैर्धाराजलार्पणम्।
नाभ्यूर्ध्वघातनं दाहो दीपदग्धहरिद्रया ॥१२७॥
पादयोर्द्व्यङ्गुलान्नाभेरूर्ध्वं चेष्टानि हिक्किनाम् ॥१२८॥

स्वेदन, वमन, नस्य, धूमपान, विरेचन, पुरानी कुलथी, पुराना गेहूँ, पुराना साठीचावल, पुराना शालिचावल तथा पुराने जौ का सेवन करना चाहिए। एण (हरिण विशेष), तित्तिर, लावक (बटेर पक्षी), जंगली पशु-पक्षियों का मांस, पका कैंथ फल, लशुन, परवल, छोटी मूली, पुष्करमूल, काली तुलसी, मद्य, खस का पानी, उष्णोदक, बिजौरानिम्बु, मधु, गोमूत्र, वात-कफनाशक सभी तरह के अन्न एवं पेय पदार्थ, शीतल जल का अभिषेक, अचानक भयोत्पादन, सहसा आश्चर्यकारक वात एवं दृश्य दिखाना, अचानक त्रास देना, क्रुद्ध करना, हर्षोत्पादन कराना, प्रियवस्तु को दिखाना, उद्वेग करना, प्राणायाम करना, दग्ध बालूमिट्टी पर जल छिड़क कर सुंघाना, जलधारा देना (साबर वाथ में), नाभि के ऊपर हलका प्रहार करना, हल्दी की डली को दीपक में गरम कर नाभि के ऊपर दाह करना, पाँव में दो अँगुली दग्ध करना अथवा नाभि के ऊपर दग्ध करना हिक्कारोग में लाभकर होता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

हिक्कारोग में अपथ्य

वातमूत्रोद्गारकासशकृद्वेगविधारणम् ।
रजोऽनिलातपायासाद् विरुद्धान्यशनानि च ॥१२९॥
विष्टम्भीनि विदाहीनि रूक्षाणि कफदानि च ।
निष्पावः पिष्टकं माषः पिण्याकानूपजामिषम् ॥१३०॥
अवीदुग्धं दन्तकाष्ठं बस्तिं मत्स्यांश्च सर्षपान् ।
अम्लं तुम्बीफलं कन्दं तैलभृष्टमुपोदिकाम् ॥
गुरु शीतं चान्नपानं हिक्कारोगी विवर्जयेत् ॥१३१॥

अपानवायु, मूत्र, डकार, पुरीष, कास के वेगों का धारण करना, धूल, वायु, धूप, परिश्रम कर्म, परस्पर विरोधी भोजन करना, विष्टम्भी, विदाही, सूखे एवं कफवर्धक पदार्थों का भोजन, उड़दपिष्टि, तिल की खली, आनूपदेशज पक्षियों के मांस, भेड़ी का दूध, दातून, बस्तिकर्म, मछली खाना, सरसों का शाक, खट्टा, कद्दू, आलू, सूरण, अरुई आदि कन्दशाक, सरसों तैल में भुना हुआ पोई का शाक, भारी एवं ठण्डा अन्न-पान हिक्का रोग में त्याग देना चाहिए।

श्वासरोग में पथ्य

विरेचनस्वेदनधूमपान-
प्रच्छर्दनानि स्वपनं दिवा च ।
पुरातनाः षष्टिकरक्तशालि-
कुलत्थगोधूमयवाः प्रशस्ताः ॥१३२॥
शशाहिभुक्तित्तिरिलावदक्ष-
शुकादयो धन्वमृगद्विजाश्च ।
पुरातनं सर्पिरजाप्रसूतं
पयो घृतं चापि सुरामधूनि ॥१३३॥
निदिग्धिकावस्तुकतण्डुलीयं
जीवन्तिकामूलकपोतिका च ।
पटोलवार्ताकुरसोनपथ्या
जम्बीरबिम्बीफलमातुलुङ्गम् ॥१३४॥
द्राक्षात्रुटिः पौष्करमुष्णवारि
कटुत्रयं गोजनितं च मूत्रम् ।
अन्नानि पानानि च भेषजानि
कफानिलघ्नानि चयानि यानि ॥१३५॥
वक्षःप्रदेशादपि पार्श्वयुग्मे
करस्थयोर्मध्यमयोर्द्वयोश्च ।
प्रदीप्तलौहेन च कण्ठकूपे
दाहोऽपि च श्वासिनि पथ्यवर्गः ॥१३६॥

विरेचन (पखाना कराना), स्वेदन, धूमपान, वमन कराना, दिन में सोना, पुराना साठीचावल, पुराना लाल शालिचावल, पुरानी कुलथी, पुराना गेहूँ तथा पुराना यव श्वासरोग में लेना चाहिए। शशक, मोर, तित्तिर, बटेर, मुर्गा, तोता आदि मरुभूमि के पशु-पक्षियों का मांस सेवन करना चाहिए। पुराना घी, बकरी का दूध, घी, मद्य, मधु, कण्टकारी, बथुआ, चौलाई, जीवन्ती, छोटी मूली, परवल, बैंगन, लशुन, हरीतकी, जम्बीरी निम्बु, बिम्बी फल, मातुलुङ्ग निम्बु, द्राक्षा, छोटी इलायची, पुष्करमूल, गरम पानी, त्रिकटु, गोमूत्र तथा कफ-वातघ्न अन्न-पान जो-जो है उसका सेवन करना चाहिए।

श्वासरोग में अपथ्य

मूत्रोद्गारच्छर्दितृट्कासरोधो
नस्यं बस्तिर्दन्तकाष्ठं श्रमश्च ।
अध्वा भारो रेणवः सूर्यपादा
विष्टम्भीनि ग्राम्यधर्मो विदाहि ॥१३७॥
आनूपानामामिषं तैलभृष्टं
निष्पावं च श्लेष्मकारीणि माषाः ।
रक्तस्रावः पूर्ववातानुपानं
मेषीसर्पिर्दुग्धमम्भोऽपि दुष्टम् ॥१३८॥
मत्स्यः कन्दाः सर्षपाश्चान्नपानं
रूक्षं शीतं गुर्वपि श्वास्यमित्रम् ॥१३९॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां हिक्काश्वासरोगाधिकारः ।

मूत्रवेग, ढकारवेग, वमनवेग, प्यासवेग एवं कासवेगों का रोकना, नस्य कर्म, बस्ति कर्म, दातुन, परिश्रण, रास्ता चलना, भार उठाना, धूलि, धूप, विष्टम्भी भोजन, मैथुन, विदाहि अन्न-पान का सेवन, आनूपदेशज पशु-पक्षियों के मांस का सेवन, तेल में तले हुए बड़े, निष्पाव, कफवर्धक पदार्थ, रक्तमोक्षण, पूर्वी हवा का सेवन, भेड़ी का दूध एवं घी, दूषित जल का सेवन, मछली, कन्दशाक (आलू, सूरण, अरुई), सरसों का साग, रूक्ष अन्न-पान, शीतल अन्न-पान एवं गुरु अन्न-पान श्वासरोग में नहीं सेवन करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य हिक्काश्वासाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ स्वरभेदरोगाधिकारः (१७)

कवलधारण (च.द.)

वाते सलवणं तैलं पित्ते सर्पिः समाक्षिकम्।
कफे सक्षारकटुकं क्षौद्रं कवड इष्यते ॥१॥

वातजन्य स्वरभेद रोग में सैन्धवलवणयुक्त तिलतैल का कवल धारण करना चाहिए। पित्तजन्य स्वरभेद में घी एवं मधु युक्त कवल धारण तथा कफजन्य स्वरभेद रोग में यवक्षार, त्रिकटु एवं मधु मिलाकर कवल धारण करना चाहिए।

कवलधारण के गुण (च.द.)

गले तालुनि जिह्वायां दन्तमूलेषु चाश्रितः।
तेन निष्कृष्यते श्लेष्मा स्वरश्चास्य प्रसीदति ॥२॥

उपर्युक्त विधि से कवल धारण करने से गला, तालु, जिह्वा और दन्तमूलादि स्थानों में आश्रित या चिपका हुआ कफ निकल जाता है और कफ निकलने से स्वर शुद्ध हो जाता है।

मेदोजादि स्वरभेद-चिकित्सा (च.द.)

स्वरोपघाते मेदोजे कफवद्विधिरिष्यते।
क्षयजे सर्वजे चापि प्रत्याख्यायाचरेत् क्रियाम् ॥३॥

मेदोदुष्टिजन्य स्वरभेद में कफज स्वरभेद की तरह चिकित्सा करनी चाहिए। क्षयज एवं त्रिदोषज स्वरभेद में असाध्य बताकर (प्रत्याख्याय कहकर) चिकित्सा करनी चाहिए।

वातपित्तज स्वरभेद-चिकित्सा (च.द.)

आद्ये कोष्णं जलं पेयं भुक्त्वा घृतरसौदनम्।
क्षीराम्बुपानं पित्तोत्थे पिबेत्सर्पिरतन्द्रितः ॥४॥

वातज स्वरभेद में पहले गरम जल पियें, पुनः भात के साथ मांसरस और घी मिलाकर खाना चाहिए। पित्तज स्वरभेद में गोदुग्ध में शीतल जल मिलाकर पियें, बाद में अधिक घृतपान कराना चाहिए।

१. पिप्पल्यादिचूर्ण (च.द.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम्।
पिबेन्मूत्रेण मतिमान् कफजे स्वरसंक्षये ॥५॥

१. पिप्पलीचूर्ण, २. पिप्पलीमूलचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण और ४. शुण्ठीचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लेकर मिला लें और काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस पिप्पल्यादिचूर्ण को ५ ग्राम की मात्रा में गोमूत्र ४६ मि.ली. के साथ पीने से कफज स्वरभेद नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—गोमूत्र से। **गन्ध**—तीक्ष्ण गन्धी शुण्ठी जैसी महक। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—स्वरभेद (कफज में)।

२. अजमोदादिचूर्ण (च.द.)

अजमोदां निशां धात्रीं क्षारं वह्निं विचूर्णयेत्।
मधुसर्पिर्युतं लीढ्वा स्वरभेदमपोहति ॥६॥

१. अजमोदाचूर्ण, २. हरिद्राचूर्ण, ३. आमलाचूर्ण, ४. यवक्षारचूर्ण और ५. चित्रकमूलचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें। इन सभी चूर्णों को एक साथ मिलाकर पुनः छननी से छान लें और काचपात्र में मिलाकर संग्रहीत करें। ५ ग्राम की मात्रा विषम भाग घृत एवं मधु के साथ लेने से स्वरभेद नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५ ग्राम। **अनुपान**—मधु एवं घृत से। **गन्ध**—हरिद्रा जैसी महक। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**—स्वरभेद में।

३. बदरीपत्रादिलेह (च.द.)

बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैन्धवम्।
स्वरोपघाते कासे च लेहमेतं प्रयोजयेत् ॥७॥

१. बदरीपत्र १० ग्राम, २. घृत ५ ग्राम तथा ३. सैन्धव लवण १ ग्राम लें। बदरीपत्र को सिल पर पीस लें और छोटी कड़ाही में घी डालकर भून लें। उसमें लवण मिलाकर मधु के साथ खाने से स्वरभेद एवं कास नष्ट हो जाते हैं।

४. चव्यादिचूर्ण (चक्रदत्त)

चव्याम्लवेतसकटुत्रिकतिन्तिडीक-
तालीशजीरकतुगादहनैः समांशैः।
चूर्णं गुडप्रमृदितं त्रिसुगन्धियुक्तं
वैस्वर्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम् ॥८॥

१. चव्य, २. अम्लवेतस, ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. इमली, ७. तालीशपत्र, ८. जीरक, ९. वंशलोचन, १०. चित्रकमूल, ११. छोटी इलायची, १२. तेजपत्र तथा १३. त्वक्—ये सभी द्रव्य समभाग में लें अर्थात् प्रत्येक १०-१० ग्राम लें। गुड़ १३० ग्राम (सभी के बराबर) लें। सभी १३ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और गुड़ के साथ मिलाकर ६-६ रत्ती की वटी बना लें और सुखाकर रख लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

स्वरभेद, पीनस, कफरोग एवं अरुचिरोग में बहुत ही लाभदायक है।

मात्रा—७५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—सुगन्धी। **वर्ण**—गुड़ाभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—स्वरभेद, पीनस, कफरोग एवं अरुचि में।

५. जीवनीय गण द्रव्यसिद्ध पय (च.द.)

शर्करामधुमिश्राणि शृतानि मधुरैः सह।
पिबेत्पयांसि यस्योच्चैर्वदतोऽभिहतः स्वरः ॥९॥

१. जीवक, २. ऋषभक, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. मेदा, ६. महामेदा, ७. ऋद्धि, ८. वृद्धि, ९. मुलेठी, १०. जीवन्ती, ११. माषपर्णी तथा १२. मुद्गपर्णी--ये सभी १२ द्रव्य समभाग में लें। उपर्युक्त सभी द्रव्यों को अलग-अलग यवकुट कर मिलाकर रखें। उस यवकुट में से २५ ग्राम लेकर २०० मि.ली. गोदुग्ध और ८०० मि.ली. जल के साथ एक पात्र में पाक करें। जब जल सूख जाय और केवल दूध ही शेष रहे तो दूध छानकर थोड़ी शर्करा एवं मधु मिलाकर पीने से अधिक जोर से बोलने के कारण हुआ स्वरभंग नष्ट हो जाता है।

६. त्र्यम्बकाभ्र (रसकामधेनु)

अभ्रं मेचकमारितं पलमितं व्याघ्री बला गोक्षुरं
कन्यापिप्पलिमूलभृङ्गवृषकाः पत्रं तथा बादरम्।
धात्रीरात्रिगुडूचिकाः पृथगतः सत्त्वैः पलांशैर्युतं
संमर्द्यातिमनोरमं सुवलितं कृत्वा यदा सेवितम् ॥१०॥
वातोत्थं कफपित्तजं स्वरगदं यच्च त्रिदोषात्मकं
यच्चोच्चैर्वदतो हतं बहुविधं पानीयदोषोद्भवम्।
कासं श्वासमुरोग्रहं सयकृतं हिक्कां तृषां कामला-
मर्शांसि ग्रहणीं ज्वरं बहुविधं शोषं क्षयञ्चार्बुदम् ॥११॥
हन्ति त्र्यम्बकमभ्रमद्भुततरं वृष्यातिवृष्यं परं
वह्नेर्वृद्धिकरं रसायनवरं सर्वामयध्वंसि तत् ॥१२॥

सम्यग् रीति से मृत एवं चन्द्रिकारहित अभ्रकभस्म ४ तोला (४६ ग्राम) लें और अच्छे खरल में रखकर निम्नलिखित द्रव्यों के द्वारा १-१ पल स्वरस एवं क्वाथ की भावना दें।

भावना-द्रव्य—१. कण्टकारीक्वाथ, २. बलामूलक्वाथ, ३. गोक्षुरक्वाथ, ४. घृतकुमारीस्वरस, ५. पिप्पलीमूलक्वाथ, ६. भृङ्गराजस्वरस, ७. वासापत्रस्वरस, ८. बदरीपत्रस्वरस, ९. आमलास्वरस, १०. हरिद्रास्वरस तथा ११. गुडूचीस्वरस—ये सभी द्रव्य पृथक्-पृथक् १-१ पल लेकर अभ्रकभस्म के साथ पृथक्-पृथक् मर्दन करें। पुनः अच्छी तरह से सुखाकर शीशी में संग्रहीत करें। इस 'त्र्यम्बकाभ्र' को १-२ रत्ती की मात्रा में सेवन करने से वातज, पित्तज एवं कफज स्वरभेद, कास, श्वास, अधिक देर तक जोर-जोर से बोलने के कारण उत्पन्न स्वरभेद, सन्निपातज स्वरभेद, उरोग्रह, यकृद्दोष, हिक्का, तृषा, कामला, अर्श, ग्रहणीदोष, ज्वर, अनेक प्रकार के शोष, क्षय, अर्बुद आदि रोगों का नाश होता है। यह अत्यन्त वृष्य है तथा अग्निवर्धक है। यह श्रेष्ठ रसायन है तथा सभी रोगों को नष्ट करने वाला है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—स्वरभेद में।

७. भैरवरस (र.सा.सं.)

रसं गन्धं विषं टङ्कं मरिचं चव्यचित्रकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्य वटिकां ततः ॥१३॥
रत्तिकैकप्रमाणेन खादेत्तोयानुपानतः।
स्वरभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुस्तरम् ॥१४॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध वत्सनाभ, ४. शुद्ध टङ्कण, ५. मरिचचूर्ण, ६. चव्यमूलचूर्ण तथा ७. चित्रक-मूलचूर्ण—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनाकर शेष सभी द्रव्यों को मिलाकर आर्द्रकस्वरस की भावना दें और १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। १-१ वटी जल के साथ सेवन करने से शीघ्र ही स्वरभेद एवं भयंकर कास और श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—स्वरभेद, कास एवं श्वास में।

८. किन्नरकण्ठरस (रसचण्डांशु)

रसं गन्धकमभ्रं च माक्षिकं लौहमेव च।
कर्षप्रमाणं संगृह्य वैक्रान्तं रसपादिकम् ॥१५॥
वैक्रान्तार्द्धं तथा हेम रौप्यं हेमचतुर्गुणम्।
वासायाश्च तथा भार्ग्या बृहत्या वाऽऽर्द्रकस्य च ॥१६॥
स्वरसेन सरस्वत्या भावयित्वा पृथक् पृथक्।
रक्तिद्वयमिता कुर्याद्वट्यश्छायाप्रशोषिताः ॥१७॥
स्वरभेदानशेषांश्च कासाञ् श्वासांश्च दारुणान्।
निखिलान् कफजान् व्याधीन् वातश्लेष्मसमुद्भवान् ॥
हन्यात्किन्नरकण्ठाख्यो रसोऽसौ रुद्रनिर्मितः।
किन्नरस्येव कण्ठस्य स्वरोऽस्य प्राशनाद् भवेत् ॥१९॥
योगवाहिरसं चापि योजयन्ति भिषग्वराः।
सशर्करं शुण्ठिचूर्णं क्षौद्रेण सह योजितम् ॥
कोकिलस्वर एवं स्याद् गुटिकाभुक्तमात्रतः ॥२०॥

१. शुद्ध पारद १२ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १२ ग्राम, ३. अभ्रकभस्म १२ ग्राम, ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म १२ ग्राम, ५.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लौहभस्म १२ ग्राम, ६. वैक्रान्तभस्म ३ ग्राम, ७. स्वर्णभस्म १.५०० मि.ग्रा. तथा ८. रजतभस्म ६ ग्राम लें।

भावना-द्रव्य—१. वासापत्रस्वरस, २. भार्गीत्विक् क्वाथ, ३. बृहतीक्वाथ, ४. आर्द्रकस्वरस तथा ५. ब्राह्मीस्वरस लें।

सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बना लें। ततः उस कज्जली में शेष सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद पाँचों द्रव्यों के स्वरस एवं क्वाथ की १-१ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसके सेवन से सभी तरह के स्वरभेद, भयंकर कास, श्वास, सभी तरह के कफज रोग, वातकफज व्याधि आदि रोगों को यह 'किन्नरकण्ठरस' नामक रसौषधि नष्ट करती है। इसका निर्माण भगवान् रुद्र ने किया है। इसे मधु के साथ सेवन करने पर किन्नर के जैसा स्वर (कण्ठ) हो जाता है। स्वरभेद में योगवाहिरस भी उचित अनुपान के साथ सेवन किया जाता है। इसके सेवन करने के बाद शुण्ठीचूर्ण १ ग्राम, शर्करा ४ ग्राम एवं मधु ६ ग्राम सेवन करने से कोयल जैसा मधुर स्वर हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु, शर्करा एवं शुण्ठी चूर्ण से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—तिक्त एवं कटु। **उपयोग**—स्वरभेद, कास एवं श्वास में।

९. रसेन्द्रगुटिका

लौहमभ्रं च प्रत्येकं कर्षमात्रं च जारितम् ॥२१॥
रसगन्धकयोर्ग्राह्यं पृथक् कर्षार्द्धमात्रकम्।
प्रवालं खर्परं शाण-मानं चापि पृथक् पृथक् ॥२२॥
ततो निदिग्धिकायाश्च ब्राह्म्याश्चापि रसेन हि।
वासकस्य रसेनापि तत्कषायैश्च वा पृथक् ॥२३॥
तत्सर्वं भेषजाभिज्ञो भावयेत्तु त्रिधा त्रिधा।
रक्तिकाद्वयमानेन विदध्याद्वटिकां ततः ॥२४॥
सप्तवासरपर्यन्तं सेवनेन नृणां ननु।
स्वरस्य शुद्धिः स्यात्तद्वद् मासमात्रप्रयोगतः ॥२५॥
किन्नरैः सह सादृश्यं गानेऽपि लभते नरः।
मेधया यशसा तुष्ट्या पुष्ट्या चापि युतो भवेत् ॥२६॥
कासश्वासप्रमेहेभ्यः शीघ्रमेव विमुच्यते।
रसेन्द्रगुडिका ह्येषा धन्वन्तरिविनिर्मिता ॥२७॥

१. लौहभस्म १२ ग्राम, २. अभ्रकभस्म १२ ग्राम, ३. शुद्ध पारद ६ ग्राम, ४. शुद्ध गन्धक ६ ग्राम, ५. प्रवालभस्म ३ ग्राम तथा ६. खर्परभस्म ३ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को खरल में पीसकर अच्छी तरह से कज्जली बनावें। ततः शेष द्रव्यों को इसी कज्जली में मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें। पुनः निम्नलिखित द्रव्यों के स्वरस एवं क्वाथ की ३-३ भावना दें। १. कण्टकारीक्वाथ, २. ब्राह्मीस्वरस तथा ३. वासापत्र-स्वरस। इनकी ३-३ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसकी १-१ वटी मधु के साथ सेवन करने से ७ दिनों में ही स्वर की शुद्धि हो जाती है। १ माह तक प्रयोग करने से किन्नर के जैसा स्वर हो जाता है। यह मेधाशक्तिवर्धक है तथा इसके सेवन से मनुष्य यशस्वी हो जाता है, तुष्टि एवं पुष्टि से युक्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त कास, श्वास एवं प्रमेह को यह रसेन्द्र-गुटिका शीघ्र नष्ट करती है। इसका प्रथम निर्माण भगवान् धन्वन्तरि ने किया था।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं आम्रमंजरी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—स्वरभेद, कास एवं श्वास में।

१०. निदिग्धिकावलेह (भा.प्र.)

निदिग्धिका तुला ग्राह्या तदर्द्धं ग्रन्थिकस्य तु।
तदर्द्धं चित्रकस्यापि दशमूलं च तत्समम् ॥२८॥
जले द्रोणद्वये क्वाथ्यं गृह्णीयादाढकं ततः।
पूते क्षिपेत्तदर्द्धं तु पुराणस्य गुडस्य च ॥२९॥
सर्वमेकत्र कृत्वा तु लेहवत् साधु साधयेत्।
अष्टौ पलानि पिप्पल्यास्त्रिजातकपलं तथा ॥३०॥
मरिचस्य पलं चैकं सर्वमेकत्र चूर्णितम्।
मधुनः कुडवं दत्त्वा तदश्नीयाद् यथाऽनलम् ॥३१॥
निदिग्धिकाऽवलेहोऽयं भिषग्भिर्मुनिभिर्मतः।
स्वरभेदहरो मुख्यः प्रतिश्यायहरस्तथा ॥३२॥
कासश्वासाग्निमान्द्यादीन् गुल्ममेहगलामयान्।
आनाहमूत्रकृच्छ्राणि हन्याद् ग्रन्थ्यर्बुदानि च ॥३३॥

क्वाथ-द्रव्य—१. कण्टकारी ५ किलो, २. पिप्पलीमूल २.५०० ग्राम, ३. चित्रकमूल १.२५० ग्राम, ४. दशमूल १.२५० ग्राम, ५. पुराना गुड़ १.५०० ग्राम तथा जल २४ लीटर लें।

प्रक्षेप-द्रव्य—१. पिप्पलीचूर्ण ३७५ ग्राम, २. छोटी इलायची ४६ ग्राम, ३. तेजपत्र ४६ ग्राम, ४. त्वक् ४६ ग्राम, ५. मरिच ४६ ग्राम तथा ६. मधु १९० ग्राम।

कण्टकारी, पिप्पलीमूल, चित्रकमूल एवं दशमूल इन सभी द्रव्यों को यथाप्रमाण में लें और यवकुट करें। एक बड़े पात्र में इन्हें रखकर २४ लीटर जल के साथ मध्यमाग्नि से क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें और १.५०० किलो पुराना गुड़ देकर चासनी करें। गुड़ घुल जाने पर वस्त्र से पुनः उस घोल को छान लें। पुनः चासनी करें। जब २ तार की चासनी हो जाय तो पात्र को कड़ाही से नीचे उतारकर रखें और पिप्पली आदि द्रव्यों के चूर्णों का प्रक्षेप देकर अच्छी तरह मिला लें। शीतल होने

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पर मधु मिला दें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत करें। अवलेह की मात्रा १ तोला (१२ ग्राम) है। किन्तु रोगी अपनी जाठराग्नि के अनुसार ६-१२ ग्राम की मात्रा जल या गरम दूध से ले। यह निदिग्धिका अवलेह मुनियों द्वारा निर्मित है। इसके प्रयोग से स्वरभेद, प्रतिश्याय, कास, श्वास, अग्निमान्द्य, गुल्म, प्रमेह, गले के रोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, ग्रन्थि एवं अर्बुद रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध या जल से। **गन्ध**—अवलेह जैसी सुगन्ध। **वर्ण**—श्याव, गुडाभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—स्वरभेद, कास एवं श्वास में।

११. कल्याणावलेह (च.द.)

सहरिद्रा वचा कुष्ठं पिप्पली विश्वभेषजम्।
अजाजी चाजमोदा च यष्टीमधुकसैन्धवम् ॥३४॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
तच्चूर्णं सर्पिषाऽऽलोड्य प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥३५॥
एकविंशतिरात्रेण भवेच्छ्रुतिधरो नरः।
मेघदुन्दुभिनिर्घोषो मत्तकोकिलनिस्वनः॥
जडगद्गदमूकत्वं लेहः कल्याणको जयेत् ॥३६॥

१. हल्दी, २. वच, ३. कूठ, ४. पिप्पली, ५. शुण्ठी, ६. जीरा, ७. अजमोदा, ८. मुलेठी, ९. सैन्धव तथा १०. गोघृत—हल्दी से सैन्धवलवण तक के सभी द्रव्य १०-१० ग्राम तथा घी २०० ग्राम लें। सभी ९ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें और घी के साथ अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत कर लें। इस लेह को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में सेवन करने से २१ दिनों में ही मनुष्य श्रुतिधर हो जाता है। मेघ जैसा गम्भीर तथा मत्त कोयल जैसा स्वर हो जाता है। यह कल्याणलेह मनुष्य की जड़ता, वाणी की गद्गदता एवं मूकता को नाश करता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम पानी से। **गन्ध**—कूठ जैसी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु एवं लवणीय। **उपयोग**—स्वरभेद में।

१२. व्याघ्रीघृत (कण्टकारीघृत) (वङ्गसेन)

व्याघ्रीस्वरसविपक्वं रास्नावाट्यालगोक्षुरव्योषैः।
सर्पिः स्वरोपघातं हन्यात् कासञ्च पञ्चविधम् ॥३७॥

गोघृत १ किलो।

क्वाथ-द्रव्य—कण्टकारी ४ किलो तथा जल १६ लीटर लें।

कल्क-द्रव्य—१. रास्ना ४० ग्राम, २. बलामूल ४० ग्राम, ३. गोक्षुर ४० ग्राम, ४. शुण्ठी ४० ग्राम, ५. पिप्पली ४० ग्राम तथा ६. मरिच ४० ग्राम लें।

सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छित कर लें। ततः कण्टकारी को यवकुट कर १६ लीटर जल में क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें। कल्क की सभी ६ औषधियों को कूट-पीसकर चूर्ण कर लें। ततः सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बनावें। कल्क एवं क्वाथ दोनों मूर्च्छित घृत के साथ पात्र में मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर भी पकावें। जल सूख जाय तब घृत पक्व की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस 'व्याघ्रीघृत' को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम दूध से लेने पर स्वरभेद एवं पाँच प्रकार के कास नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटुरसयुक्त। **उपयोग**—स्वरभेद एवं पाँच प्रकार के कास में।

स्नेहसाधनार्थ क्वाथविधि (वङ्गसेन)

शुष्कद्रव्यमुपादाय स्वरसानामसम्भवे।
वारिण्यष्टगुणे साध्यं ग्राह्यं पादावशेषितम् ॥३८॥

जिस स्नेह साधन में स्वरस से औषधि सिद्ध करना बतलाया गया है वहाँ ताजे द्रव्य के अभाव या अनुपलब्धता के कारण सूखे द्रव्यों को यवकुट कर अष्टगुण जल में क्वाथ करना चाहिए तथा चतुर्थांशावशेष रहने पर इस क्वाथ को स्वरस के स्थान पर प्रयुक्त करना चाहिए।

१३. सारस्वतघृत

समूलपत्रमादाय ब्राह्मीं प्रक्षाल्य वारिणा।
उदूखले क्षोदयित्वा रसं वस्त्रेण गालयेत् ॥३९॥
रसे चतुर्गुणे तस्मिन् घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
औषधानि तु पेष्याणि तानीमानि प्रदापयेत् ॥४०॥
हरिद्राऽऽमलकी कुष्ठं त्रिवृता सहरीतकी।
एतेषां पलिकान्भागाञ्शेषाणि कार्षिकाणि च ॥४१॥
पिप्पल्योऽथ विडङ्गानि सैन्धवं शर्करा वचा।
सर्वमेतत्समालोड्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥४२॥
एतत्प्राशितमात्रेण वाग्विशुद्धिः प्रजायते।
सप्तरात्रप्रयोगेण किन्नरैः सह गीयते ॥४३॥
अर्द्धमासप्रयोगेण सोमराजीवपुर्भवेत्।
मासमात्रप्रयोगेण श्रुतमात्रन्तु धारयेत् ॥४४॥
हन्त्यष्टादशकुष्ठानि ह्यर्शांसि विविधानि च।
पञ्चगुल्मान् प्रमेहांश्च कासं पञ्चविधं तथा ॥४५॥
वन्ध्यानामपि नारीणां नराणामल्परेतसाम्।
घृतं सारस्वतं नाम बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥४६॥

ब्राह्मीस्वरस ३ लीटर तथा घृत ७५० ग्राम लें।

कल्क-द्रव्य—हल्दी ४६ ग्राम, २. आमला ४६ ग्राम, ३. कूठ ४६ ग्राम, ४. निशोथ ४६ ग्राम, ५. हरीतकी ४६ ग्राम,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६. पिप्पली १२ ग्राम, ७. विडङ्ग १२ ग्राम, ८. सैन्धव १२ ग्राम, ९. शर्करा १२ ग्राम तथा १०. वचा १२ ग्राम लें। सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छित करें। हल्दी से वचा तक के सभी १० द्रव्यों को कूटकर चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित घृतपात्र में ही ब्राह्मीस्वरस ३ लीटर और कल्क मिलाकर मध्यमाग्नि पर पुनः पाक करें। जब ब्राह्मीस्वरस सूख जाय तो सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पुनः पकावें। जल जब सूखने लगे तो घृतपाक की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर छान लें। ठण्डा होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'सारस्वतघृत' को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में सेवन करने से तुरन्त ही स्वरभेद नष्ट हो जाता है। १ सप्ताह के प्रयोग से रोगी किन्नरों के साथ गा सकता है। अर्थात् किन्नरों के समकक्ष गान करता है। १५ दिन तक इस घी का प्रयोग करने से चन्द्रमा के समान कान्तियुक्त शरीर वाला हो जाता है। १ माह तक प्रयोग से मनुष्य श्रुतिधर हो जाता है। इसके अतिरिक्त इस घृत के प्रयोग से १८ कुष्ठ, सभी अर्श, ५ गुल्म, २० प्रमेह तथा ५ कास रोग नष्ट हो जाते हैं। इसके प्रयोग से वन्ध्या स्त्रियाँ पुत्रवती हो जाती हैं, अल्प शुक्र वाला व्यक्ति पूर्ण रेतस हो जाता है। इस घृत के प्रयोग से बल, वर्ण एवं अग्नि की वृद्धि हो जाती है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—उष्ण जल या गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीत-हरिताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—स्वरभेद तथा कासहर एवं स्मरणशक्तिवर्धक।

१४. भृङ्गराजाद्य घृत (च.द.)

भृङ्गराजामृतवल्लिवासकदशमूलकासमर्दरसैः ।
सर्पिः सपिप्पलीकं सिद्धं स्वरभेदकासजिन्मधुना ॥४७॥

१. भृङ्गराजस्वरस, २. गुडूचीक्वाथ, ३. वासास्वरस, ४. दशमूलक्वाथ और ५. कासमर्दक्वाथ—प्रत्येक द्रव्य १-१ लीटर लें; ६. गोघृत १ किलो तथा ७. पिप्पलीचूर्ण २५० ग्राम लें। सर्वप्रथम बड़े पात्र में घृत को मूर्च्छित करें। ततः पिप्पलीचूर्ण को जल के साथ मिलाकर कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित घृत में मिलावें और भृङ्गराजस्वरस देकर चूल्हे पर पाक करें। एक द्रव्य सूखने पर दूसरा द्रव्य (गुडूचीक्वाथ) देकर पकावें। इसी तरह वासारस, दशमूलक्वाथ और कासमर्दस्वरस मिलाकर पाक करें। पाक की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से छानकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस घृत को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम दूध के साथ सेवन करने से स्वरभेद एवं पाँच प्रकार के कास रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—हरिताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—स्वभेद एवं कास में।

कफज स्वरभेद-चिकित्सा

श्लेष्मणानेकशो रोगपीडितानां नृणां ननु ।
यक्ष्मिणां कासिनां नित्यमशुद्धरससेवनात् ॥४८॥
ये तूपद्रवरूपेण कण्ठे जायन्त आमयाः ।
शोथक्षतप्रभृतयस्ते चिकित्स्याः पृथक् नहि ॥४९॥
अतश्चिकित्स्यो भिषजामादौ मुख्यामयः परम् ।
किंवा मुख्यस्य रोगस्य गौणस्यापि भिषग्वरैः ॥५०॥
तुल्या चिकित्सा कर्त्तव्या वृद्धसंमतमित्यलम् ।
यस्माद्गौणाः कण्ठशोथादयस्तु विविधा गदाः ॥५१॥
अतिवृद्धाः कुपथ्येनानन्यकारणकं गदम् ।
स्वरभेदं सुघोरं द्राग् रोगिणां जनयन्ति हि ॥५२॥
अथ मुख्या एव रोगाश्चिकित्स्या भिषजां सदा ।
मुख्यरोगे प्रशान्ते हि च्छिन्नमूला द्रुमा इव ॥५३॥
आप्नुवन्त्यात्मना नाशं गौणा रोगा अपि द्रुतम् ।
अतः प्राक् सावधानेन हेतुसम्प्राप्तिलक्षणैः ॥५४॥
परीक्षणीया वैद्येन मुख्यो गौणः पृथक् पृथक् ।
ततो दोषानुसारेण चिकित्स्यः स्याद् गदः सदा ॥५५॥

अनेक रोगों से पीड़ित व्यक्ति को कफवृद्धि से, अशुद्ध रसों (पारदादि रसों) के नित्य सेवन से, यक्ष्मा एवं कास रोग से पीड़ित व्यक्तियों के उपद्रवस्वरूप कण्ठ में कुछ कष्ट हो जाता है जिससे शोथ, क्षत प्रभृति रोग हो जाते हैं। उनकी पृथक् चिकित्सा नहीं करनी चाहिए। परन्तु चिकित्सक को प्रधान रोग की ही चिकित्सा करनी चाहिए अथवा मुख्य के साथ-साथ गौण (उपद्रव रूप) रोग की भी चिकित्सा करनी चाहिए। प्रधान रोग की चिकित्सा से उपद्रव रूप (गौण) रोग स्वयं नष्ट हो जाते हैं—ऐसा वृद्ध वैद्यों का मत है। जब कण्ठशोथादि विविध उपद्रव कुपथ्य से या अन्य कारण से अत्यन्त बढ़कर स्वरभेद जैसा भयंकर रोग पैदा करता है तब भी चिकित्सक को मुख्य रोग की ही चिकित्सा करनी चाहिए। मुख्य रोग के नष्ट होने से उपद्रवस्वरूप रोग भी स्वयं नष्ट हो जाते हैं जैसे वृक्षों के मूलोच्छेदन से उसके पत्ते, फूल, फल स्वयं नष्ट होते हैं। अतः वैद्य को चाहिए कि सावधान मन से लक्षण, हेतु एवं सम्प्राप्ति के द्वारा रोग की विधिवत् परीक्षा करके मुख्य और गौण (उपद्रव) रोगों का विभाजन कर लें। उसके बाद दोषानुसार रोगों की चिकित्सा करनी चाहिए।

१५. बब्बूलादि कवलग्रह

बब्बूलस्थूलसुदलजम्बूतिन्दुकसम्भवाम् ।
त्वचं तुल्यांशभावेन गृहीत्वा सम्पचेद्भिषक् ॥५६॥
तत् षोडशगुणे नीरे क्वाथरीत्याऽत्यतन्द्रितः ।
क्वाथस्यार्द्धावशिष्टस्य सद्यः कवलधारणात् ॥५७॥
स्वरभङ्गार्तिरुधिरस्त्रावक्षतमुखा गदाः ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्रायशो विलयं यान्ति दृष्टमेतन्न संशयः ॥५८॥
स्फटिकाया रजोऽप्यत्र प्रक्षिपन्ति भिषग्जनाः ॥५९॥

१. बब्बूलछाल, २. जामुनवृक्षछाल तथा ३. तिन्दुकवृक्ष-छाल लें। उपर्युक्त तीनों छालों को यवकुट करें। इस यवकुट को ५० ग्राम लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें। इस क्वाथ में थोड़ी ५०० मि.ग्रा. फिटकरी मिलाकर कदुष्ण कवलग्रह धारण करना चाहिए। इसके धारण से स्वरभङ्ग, कण्ठ से रुधिरस्राव, क्षत तथा अन्य मुखरोग (मुखपाकादि) शान्त हो जाते हैं—ऐसा देखा गया है; इसमें सन्देह नहीं है। वैद्य लोग अधिक लाभ हेतु इसमें स्फटिकाचूर्ण भी डालते हैं।

१६. स्वरभङ्ग में रक्तस्रावहर योग

तथा क्वाथोऽपि पथ्यायाः स्फटिकाचूर्णमिश्रितः ।
रक्तस्रुत्यादिकान् रोगान् निहन्त्यास्यविधारितः ॥६०॥
पिधापयेद् गलं नित्यमूर्णानिर्मितवाससा ।
शान्तिमीप्सुर्जनो नूनं स्वरभङ्गरुजाऽर्दितः ॥६१॥

स्वरभेद रोग में रक्तस्रावादि उपद्रव होने पर हरीतकीक्वाथ (गरम) में थोड़ा फिटकरीचूर्ण मिलाकर कवल धारण करने से गले से रक्तस्रावादि उपद्रव नष्ट हो जाते हैं। उपद्रवयुक्त ऐसे स्वरभेद में गरम कपड़े (ऊनी वस्त्र-मफलर आदि) से गले को लपेटे रखना चाहिए।

स्वरभेद में पथ्य

स्वेदो बस्तिर्धूमपानं विरेकः कवलग्रहः ।
नस्यं भाले शिरावेधो यवा लोहितशालयः ॥६२॥
हंसाटवीताम्रचूडकेकिमांसरसाः सुरा ।
गोकण्टकः काकमाची जीवन्ती बालमूलकम् ॥६३॥
द्राक्षा पथ्या मातुलुङ्गं लशुनं लवणार्द्रकम् ।
ताम्बूलं मरिचं सर्पिः पथ्यानि स्वरभेदिनाम् ॥६४॥
बलपुष्टिप्रदं हृद्यं कफघ्नं स्वरशुद्धिकृत् ।
अन्नं पानं च निखिलं स्वरभेदे हितं मतम् ॥६५॥

स्वेदनकर्म, बस्तिकर्म, धूमपान, विरेचनकर्म, कवलग्रह, नस्यकर्म, ललाट में सिरावेधकर्म उपयोगी है। यव, लाल शालि-चावल, हंस, जंगली सूअर, मुर्गा तथा मोर के मांसरस एवं मद्य सेवन से लाभ होता है। गोखरु, मकोय, जीवन्ती, बालमूली, मुनक्का, हरीतकी, बिजौरानिम्बु, लशुन, लवणयुक्त आर्द्रक, ताम्बूल, मरिच तथा घी स्वरभेद में पथ्य हैं। इसके अतिरिक्त बलकारक, पुष्टिकारक, हृद्य, कफघ्न और स्वरशोधक सभी अन्न-पान स्वर भेद में हितकर है। यह शरीर के बल और पुष्टि की वृद्धि करने वाला, कफनाशक तथा स्वरशोधक है तथा सभी प्रकार के अन्न-पान (खाद्य एवं पेय पदार्थ) स्वरभेद रोग में हितकर हैं।

स्वरभेद में अपथ्य

आमं कपित्थं बकुलं शालूकं जाम्बवानि च ।
तिन्दुकानि कषायाणि वमिं स्वप्नं प्रजल्पनम् ॥६६॥
अम्लं दधि च यत्नेन स्वरभेदी विवर्जयेत् ।
नात्राभिष्यन्दि संसेव्यं न च शीतक्रिया हिता ।
दिवास्वापो न कर्त्तव्यो न च वेगविधारणम् ॥६७॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां स्वरभेदरोगाधिकारः ।

कपित्थ (कैंत) का कच्चा फल, मौलसरी कच्चाब्रह्म, कमलकन्द, जामुनफल, तिन्दुकफल, कषायरसयुक्त द्रव्य, वमनकर्म, दिवास्वप्न और अधिक बोलना स्वरभेद में अम्ल पदार्थ तथा दही वर्जित है। अभिष्यन्दि अन्नपान का सेवन, शीतल जल में स्नान, पान तथा अधिक शीतल घर में निवास और वेगविधारण कर्म स्वरभेद में अहितकर है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य स्वरभेदरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथारोचकरोगाधिकारः (१८)

अरोचक में सामान्य कर्म (च.द.)

वस्तिं समीरणे पित्ते विरेकं वमनं कफे।
कुर्याद्धृद्यानुकूलानि हर्षणञ्च मनोघ्नजे ॥१॥

वातज अरुचि में बस्तिकर्म, पित्तज अरुचि में विरेचनकर्म और कफज अरुचि में वमनकर्म करना चाहिए। मनोभिघातज अरुचि में हृद्य, रुचिकारक और मनोऽनुकूल एवं मन को प्रसन्न करने वाले द्रव्यों का सेवन कराना चाहिए।

१. वातज अरुचि की चिकित्सा (च.द.)

वान्तो वचाऽद्भिरनिले विधिवत् पिबेत्तु
स्नेहोष्णतोयमदिराऽन्यतमेन चूर्णम्।
कृष्णाविडङ्गयवभस्महरेणुभार्गी-
रास्नैलहिङ्गुलवणोत्तमनागराणाम् ॥२॥

वातज अरुचि में सर्वप्रथम वचा का क्वाथ (सुखोष्ण) पिलाकर विधिवत् वमन कराना चाहिए। तत्पश्चात्—

१. पिप्पली, २. वायविडङ्ग, ३. यवक्षार, ४. रेणुकाबीज, ५. भार्गी, ६. रास्ना, ६. छोटी इलायची, ८. शुद्ध हींग, ९. सैन्धवलवण और १०. शुण्ठी—ये सभी १० द्रव्यों को समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इस चूर्ण को २-२ ग्राम की मात्रा में गरम जल या गरम घृत या मद्य के साथ लेने से अरुचि नष्ट हो जाती है।

२. पित्तज अरुचि की चिकित्सा (च.द.)

पैत्ते गुडाम्बुमधुरैर्वमनं प्रशस्तं
लेहः ससैन्धवसितामधुसर्पिरिष्टः ॥३॥

पित्तज अरुचि में मदनफलपिप्पलीचूर्ण (मैनफलबीजचूर्ण) को गुड़ के शर्बत के साथ या चीनी के शर्बत के साथ या गन्ने के रस के साथ पिलाना चाहिए। तदनन्तर सैन्धवलवण २ ग्राम, मधु ६ ग्राम, चीनी २ ग्राम और घृत १२ ग्राम को मिलाकर लेह जैसा चाटना चाहिए। इससे बहुत लाभ होता है।

३. कफज अरुचि की चिकित्सा (च.द.)

निम्बाम्बुछर्दितवतः कफजेऽनु पानं
राजद्रुमाम्बुमधुना सह दीप्यकाढ्यम्।
चूर्णं यदुक्तमथवाऽनिलजे तदेव
सर्वैश्च सर्वकृतमेवमुपक्रमेच्च ॥४॥

कफज अरुचि में नीम की छाल का सुखोष्ण क्वाथ पिलाकर वमन कराना चाहिए। तदनन्तर अमलतास के क्वाथ में मधु और सौंफ अथवा अजवायनचूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिए। अथवा वातज अरुचि के लिए कही गई चिकित्सा के अनुसार चिकित्सा करनी चाहिए। सन्निपातज अरुचि में मिश्रित चिकित्सा करनी चाहिए।

४. चार प्रकार का कवलग्रह (च.द.)

कुष्ठसौवर्चलाजाजीशर्करामरिचं विडम्।
धात्र्येलापद्मकोशीरपिप्पल्यश्चन्दनोत्पलम् ॥५॥
लोध्रं तेजोवती पथ्या त्र्यूषणं सयवाग्रजम्।
आर्द्रदाडिमनिर्यासश्चाजाजीशर्करायुतः ॥६॥
सतैलमाक्षिकास्त्वेते चत्वारः कवलग्रहाः।
चतुरोऽरोचकान् हन्युर्वाताद्येकजसर्वजान् ॥७॥

प्रथम कवलग्रह—१. कूठ, २. सौवर्चललवण, ३. जीरा, ४. शर्करा, ५. मरिच तथा ६. विडलवण—ये सभी द्रव्य १-१ भाग लेकर कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। सभी द्रव्यों का मिलित चूर्ण २ ग्राम, मधु १२ ग्राम एवं तिलतैल २० मि.ली. सभी को अच्छी तरह मिलाकर 'कवलग्रह' रूप में धारण करने से वातिक अरुचि को नष्ट करता है।

द्वितीय कवलग्रह—१. आमला, २. छोटी इलायची, ३. पद्मकाष्ठ, ४. खस, ५. पिप्पली, ६. श्वेतचन्दन तथा नील-कमल—ये सभी द्रव्य समभाग में लेकर चूर्ण करें। १-२ ग्राम चूर्ण को मधु १२ ग्राम एवं तिलतैल १२ मि.ली. मिलाकर पित्तज अरुचि में कवलग्रह धारण करने से बहुत लाभ होता है।

तृतीय कवलग्रह—१. लोध्र, २. तेजोवती, ३. हरीतकी, ४. शुण्ठी, ५. पिप्पली, ६. मरिच और ७. यवक्षार—ये सभी द्रव्य समभाग में लेकर चूर्ण करें। १ ग्राम चूर्ण को १२ ग्राम मधु तथा १२ मि.ली. तिलतैल मिलाकर कवलग्रह धारण करने से कफज अरुचि नष्ट हो जाती है।

चतुर्थ कवलग्रह—१. अनार का रस १२ मि.ली., २. जीरा चूर्ण, ३. चीनी, ४. मधु १२ ग्राम तथा ५. तिलतैल १२ मि.ली. साथ में मिलाकर कवलग्रह धारण करने से सन्निपातज अरुचि नष्ट हो जाती है।

५. अरुचिनाशक पाँच योग (च.द.)

त्वङ्मुस्तमेलाधान्यानि मुस्तमामलकं त्वचः।
त्वक् च दार्वी यमान्यश्च पिप्पल्यस्तेजोवत्यपि ॥८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यमानी तिन्तिडीकञ्च पञ्चैते मुखशोधनाः।
श्लोकपादैरभिहिताः सर्वारोचकनाशकाः ॥९॥

प्रथम योग—१. त्वक्, २. नागरमोथा, ३. छोटी इलायची और ४. धनियाँ—समभाग में इन चारों द्रव्यों को लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। १ से २ ग्राम तक इस चूर्ण को मधु के साथ सेवन करने से वातज अरुचि नष्ट हो जाती है।

द्वितीय योग—१. नागरमोथा, २. आमला तथा ३. त्वक्—ये तीनों द्रव्य समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और घृत के साथ सेवन करने से पित्तज अरुचि नष्ट हो जाती है।

तृतीय योग—१. त्वक्, २. दारुहरिद्रा और ३. अजवायन—समभाग तीनों द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाकर १ से २ ग्राम की मात्रा में मधु के साथ सेवन करने से कफज अरुचि नष्ट हो जाती है।

चतुर्थ योग—पिप्पली तथा तेजोवती—समभाग इनके १ से २ ग्राम सूक्ष्म चूर्ण को मधु में सेवन करने से आगन्तुज अरुचि शान्त हो जाती है।

पञ्चम योग—अजवायन तथा इमलीफल—समभाग इन दोनों के सूक्ष्म चूर्ण को १ से २ ग्राम की मात्रा में मधु के साथ सेवन करने से सान्निपातिक अरुचि नष्ट हो जाती है।

६. अम्लिकादि कवल धारण (च.द.)

अम्लिका गुडतोयञ्च त्वगेलामरिचान्वितम्।
अभक्तच्छन्दरोगेषु शस्तं कवलधारणम् ॥१०॥

१. गुड़ २५ ग्राम, २. इमली २५ ग्राम, ३. त्वक् १ ग्राम, ४. छोटी इलायची १ ग्राम, ५. मरिच १ ग्राम तथा जल ७५ मि.ली. लें। इन्हें अच्छी तरह से मिलाकर मुख में कवल धारण करने से अरुचि नष्ट हो जाती है।

७. कारव्यादिवटी (च.द.)

कारव्यजाजीमरिचं द्राक्षावृक्षाम्लदाडिमम्।
सौवर्चलं गुडक्षौद्रं सर्वारोचकनाशनम् ॥११॥

१. कलौंजीजीरा (मँगरैला), २. श्वेतजीरा, ३. मरिच, ४. मुनक्का (द्राक्षा), ५. कोकम (वृक्षाम्ल), ६. खट्टा दाडिम, ७. सौवर्चललवण तथा ८. गुड़—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। गुड़ एवं मधु के बिना सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। ततः गुड़ एवं मधु मिलाकर ६-६ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें।

मात्रा—८५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—गुड़ जैसा। **स्वाद**—मधुराम्ललवण। **उपयोग**—अरुचि में।

८. दाडिमस्वरस (च.द.)

विट्चूर्णमधुसंयुक्तो रसो दाडिमसम्भवः।
असाध्यमपि संहन्यादरुचिं वक्त्रधारितः ॥१२॥

विड्लवणचूर्ण १ ग्राम, दाडिमस्वरस १२ मि.ली. तथा मधु—तीनों को मिलाकर मुख में धारण (कवलग्रह) करने से अरुचि नष्ट हो जाती है।

९. त्र्यूषणादिचूर्ण (च.द.)

त्रीण्यूषणानि त्रिफला रजनीद्वयञ्च
चूर्णीकृतानि यवशूकविमिश्रितानि।
क्षौद्रान्वितानि वितरेन्मुखधारणार्थ-
मन्यानि तिक्तकटुकानि च भेषजानि ॥१३॥

१. शुण्ठी, २. पिप्पली, ३. मरिच, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. हल्दी, ८. दारुहल्दी, ९. यवक्षार तथा १०. मधु—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। मधु को छोड़कर इनका चूर्ण करें और शीशी में सुरक्षित रख लें। २ ग्राम यह चूर्ण और मधु २३ ग्राम मिलाकर मुख में धारण (कवलग्रह) करने से अरुचि नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार अन्य कटु-तिक्त औषधों के चूर्णों को मधु के साथ मुख में धारण करने से अरुचि नष्ट हो जाती है।

१०. लवणार्द्रक-प्रयोग (भा.प्र.)

भोजनाग्रे सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम्।
रोचनं दीपनं वह्नेर्जिह्वाकण्ठविशोधनम् ॥१४॥

भोजन से पहले सैन्धवलवण और आर्द्रक (आदी) ५ ग्राम खाने से रुचि बढ़ती है। यह दीपन है। जिह्वा एवं कण्ठ का शोधन करता है।

११. तक्र-प्रयोग रुचिकर

राजिकाजीरकौ भृष्टौ भृष्टं हिङ्गु सनागरम्।
सैन्धवं दधि गोः सर्वं वस्त्रपूतं प्रकल्पयेत् ॥१५॥
तावन्मात्रं क्षिपेत्तक्रं यथा स्याद्रुचिरुत्तमा।
तक्रमेतद्भवेत्सद्यो रोचनं वह्निवर्द्धनम् ॥१६॥

१. भूनी राईचूर्ण, २. भूना जीराचूर्ण, ३. घृतभृष्ट हींग, ४. शुण्ठीचूर्ण और ५. सैन्धवलवण—प्रत्येक द्रव्य ५-५ ग्राम लें और गाय का दही ५० ग्राम तथा गाय का तक्र ५० मि.ली.—सभी द्रव्यों को पुनः मथानी से मथकर पीना रुचिवर्धक होता है। यह पेय तत्काल सद्यः रुचिवर्धक तथा अग्निवर्धक है। आचार्यश्री इसे वस्त्रपूत करने का निर्देश देते हैं। किन्तु छानने से राई आदि का भाग कपड़े पर ही छन जायेगा।

१२. शिखरिणी (श्रीखण्ड) (भावप्रकाश)

सम्यगावर्त्तितं दुग्धं निबद्धं दधि माहिषम्।
एकीकृत्य पटे घृष्टं शुभ्रशर्करया समम् ॥१७॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एलालवङ्गकर्पूरमरिचैश्च समन्वितम्।
नाम्ना शिखरिणी कुर्याद्रुचिं सकलवल्लभाम् ॥१८॥

खूब गाढ़ा औटाया हुआ भैंस का दूध (रबड़ी जैसा) १ भाग, गाढ़ा (सूखा) भैंस का दही १ भाग तथा सफेद चीनी १ भाग लेकर अच्छी तरह से मिलाकर एक पतले कपड़े में बाँधकर लटका दें। जब उसका जलीयांश निकल जाय तो दूसरे मोटे गाढ़े कपड़े में उस मिश्रण को पुनः बाँधकर किसी बड़े पत्थर आदि से दबा दें जिससे उसका सारा पानी निकल जाय। ततः खोलकर हाथ से रगड़कर अच्छी तरह मिलावें। पुनः महीन छननी पर घिस लें। इसके बाद उसमें आवश्यकतानुसार छोटी इलायची बीज, लौंग, कपूर और मरिच का सूक्ष्म चूर्ण कर अच्छी तरह मिला दें। इसके बाद फ्रीज में रखे। ठण्डा होने पर थोड़ा-थोड़ा खिलावें। यह बहुत ही रुचिकर है।

गुजरात में यह 'श्रीखण्ड' कल्पना बहुत प्रचलित है। इधर के लोग इसमें चन्दन का तैल देकर अधिक सुगन्धित एवं रुचिकर बनाते हैं।

१३. दाडिमादिचूर्ण (भा.प्र.)

द्वे पले दाडिमाम्लस्य खण्डं दद्यात् पलत्रयम्।
त्रिसुगन्धिपलञ्चैकं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥१९॥
तच्चूर्णं मात्रया भुक्तमरोचकहरं परम्।
दीपनं पाचनं च स्यात् पीनसज्वरकासजित् ॥२०॥

१. खट्टा अनारदाना ९३ ग्राम, २. शर्करा १४० ग्राम, ३. त्वक् ४६ ग्राम, ४. छोटी इलायची ४६ ग्राम तथा ५. तेजपत्र ४६ ग्राम लें। इन सभी ५ द्रव्यों का चूर्ण कर लें और काचपात्र से संग्रहीत करें। इस चूर्ण को १ से ३ ग्राम की मात्रा में सेवन करने से यह उत्तम अरुचिनाशक है, दीपन है, पाचन है, पीनस, ज्वर एवं कास को नष्ट करता है।

१४. यमानीषाडव (चरक)

यमानी तिन्तिडीकञ्च नागरञ्चाम्लवेतसम्।
दाडिमं बदरञ्चाम्लं कार्षिकाण्युपकल्पयेत् ॥२१॥
धान्यसौवर्चलाजाजीवराङ्गञ्चार्द्धकार्षिकम्।
पिप्पलीनां शतञ्चैकं द्वे शते मरिचस्य च ॥२२॥
शर्करायाश्च चत्वारि पलान्येकत्र चूर्णयेत्।
जिह्वाविशोधनं हृद्यं तच्चूर्णं भक्तरोचनम् ॥२३॥
हृत्पीडापार्श्वशूलघ्नं विबन्धानाहनाशनम्।
कासश्वासहरं ग्राही ग्रहण्यर्शोविकारनुत् ॥२४॥

१. अजवायन, २. इमलीफलनिर्बीज, ३. शुण्ठी, ४. अम्लवेतस, ५. खट्टा दाडिम तथा ६. खट्टा जंगली बैर—प्रत्येक १२-१२ ग्राम. लें; ७. धनियाँ, ८. सौवर्चललवण, ९. जीरा और १०. त्वक्—प्रत्येक ६-६ ग्राम लें; ११. पिप्पली १०० नग, १२. मरिच २०० नग तथा १३. चीनी १९० ग्राम ले। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह 'यमानीषाडवचूर्ण' जीभ को विशोधित करता है, भोजन की रुचि को बढ़ाता है, हृदय की पीड़ा एवं पार्श्वशूल का नाश करता है। यह विबन्ध और आनाह नाशक है, श्वास एवं कास नाशक है तथा संग्रहणी एवं अर्श नाशक है; साथ ही ग्राही भी है।

मात्रा—२ से ४ ग्राम। **अनुपान**—पानी से। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—लवणभास्करचूर्ण जैसा। **स्वाद**—मधुर-कटु-अम्ल के मिश्रित रूप में। **उपयोग**—अरुचि, ग्रहणी, श्वास एवं हृद्रोग में।

१५. नागरादिचूर्ण/वटी

नागरं जीरकं श्वेतं पथ्या श्वेतवचा त्वचा।
अग्निरामठसूक्ष्मैलालवङ्गं च यमानिका ॥२५॥
शताह्वामधुराम्भोदमरिचं विडसैन्धवे।
टङ्कणं सद्गुणैः पूर्णं कणाऽपि समभागतः ॥२६॥
एतत्सर्वं समादाय चूर्णयेत् खल्लतल्लजे।
ततोऽदः श्लक्ष्णचूर्णं तु माषमात्रमतन्द्रितः ॥२७॥
प्रत्यहं यो नरोऽश्नीयान्नागराद्यभिधं शुभम्।
तस्यातिसाराम्लपित्तानलमान्द्यविसूचिकाः ॥२८॥
सूतिकाग्रहणीगुल्मशूलप्लीहयकृज्ज्वराः।
विलम्बिकाऽरोचकाद्या गदा यान्ति लयं लघु ॥२९॥
चतुर्गुणैस्तु जम्बीरवारिभिर्यदि भावनाः।
सप्तात्रैव प्रदीयेरँस्तर्हि सद्भिश्चिकित्सकैः ॥३०॥
परिज्ञायेतेदमेव प्रशस्तैरुत्तमा गुणैः।
नागरादिवटी नाम्ना रुचिसंवर्द्धिनी परा ॥३१॥

१. शुण्ठी, २. श्वेत जीरा, ३. हरीतकी, ४. श्वेत वचा, ५. त्वक्, ६. चित्रकमूल, ७. घृतभृष्ट हींग, ८. छोटी इलायची, ९. लौंग, १०. अजवायन, ११. सौंफ, १२. सोयाबीज, १३. नागरमोथा, १४. मरिच, १५. विडलवण, १६. सैन्धवलवण, १७. शुद्ध टङ्कण तथा १८. पिप्पली— प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें। सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण कर मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। अथवा जम्बीरीनिम्बुस्वरस की ४ भावना देकर २-२ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस नागरादिचूर्ण या वटी का सेवन करने से अतिसार, अम्लपित्त, अग्निमान्द्य, विसूचिका, सूतिकारोग, संग्रहणी, गुल्म, शूल, प्लीहरोग, यकृद्रोग, ज्वर, विलम्बिका एवं अरुचि रोग शीघ्र ही शान्त हो जाते है। यह वटी अधिक रुचिकर है।

मात्रा—२ ग्राम। **अनुपान**—गरम पानी से। **गन्ध**—हिंगु-गन्धी। **वर्ण**—भूरे रंग का। **स्वाद**—लवणीय। **उपयोग**—अरुचि, ग्रहणी, अतिसार एवं विसूचिका में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१६. कलहंसकाञ्जिक (च द.)

शिग्रुफलान्यष्टादश दिङ्मरिचानि विंशतिः पिप्पल्यः ।
आर्द्रकपलं गुडपलं प्रस्थत्रयमारनालस्य ॥३२॥
एतद्विडपलसहितं खजाहतं सुरभिगन्धाढ्यम् ।
व्यञ्जनसहस्रघाति ज्ञेयं कलहंसकं नाम ॥३३॥

१. सहिजनबीज १८ नग, २. कालीमरिच २० नग, ३. पिप्पली २० नग, ४. आर्द्रक पिसा हुआ ४६ ग्राम, ५. गुड़ ४६ ग्राम, ६. काञ्जी १५०० मि.ली., ७, विडलवण ४६ ग्राम ८. छोटी इलायची १२ ग्राम, ९. त्वक् १२ ग्राम, १०. तेजपत्र १२ ग्राम और ११. नागकेशर १२ ग्राम लें। सभी सूखे द्रव्यों को कूट-पीसकर चूर्ण कर लें और काञ्जी में मिलाकर मथानी से अच्छी तरह मथकर धूपित पात्र में रखें और आवश्यकतानुसार पान करें। इसके सेवन से अरुचि नष्ट होती है, कण्ठ का स्वर हंस के समान मधुर हो जाता है। इसके सेवन से हजारों तरह के व्यञ्जन (शाक-भाजी) आदि गरिष्ट भोजन शीघ्र ही पच जाते हैं।

१७. चिञ्चापानक

भागास्तु पञ्च चिञ्चायाः खण्डस्यापि चतुर्गुणाः ।
धान्यकार्द्रकयोर्भागौ चातुर्जातार्द्धभागिकम् ॥३४॥
त्रिगुणं जलमेतेषामेकपात्रे विलोडितम् ।
पिहितं तप्तदुग्धेन ततो वस्त्रपरिप्लुतम् ॥३५॥
विधिना धूपिते पात्रे कृत्वा कर्पूरवासितम् ।
नृपयोग्यमिदं पानं भवेद्युक्त्या सुयोजितम् ॥३६॥

१. सुपक्व निर्बीज इमलीफल ६०ग्राम, २. चीनी २४० ग्राम, ३. भृष्ट धनियाँ एवं ४. आर्द्रक (आदी) २३-२३ ग्राम, ५. तेजपत्र १२ ग्राम, ६. त्वक् १२ ग्राम, ७. छोटी इलायची १२ ग्राम, ८. नागकेशर १२ ग्राम और जल १.२०० लीटर लें। सर्वप्रथम इमली को पानी में डालकर २-३ घण्टे तक छोड़ दें। पुनः इमली को हाथ से खूब अच्छी तरह से मसलकर उसका अधिक भाग जल में घोल लें। धनियाँ को थोड़ा भूनकर चूर्ण करें। शेष सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण उपर्युक्त इमली के घोल में मिलाकर मथानी से अच्छी तरह मथें। तदनन्तर उसमें थोड़ा गरम गाय का दूध मिलाकर कपड़े से छान लें। पुनः सुगन्धित द्रव्यों से धूपित एवं कर्पूरवासित मिट्टी के पात्र में रखें। राजाओं के पीने योग्य यह पानक रुचिवर्धक एवं अरुचिनाशक है।

१८. रसाला

अर्द्धाढकं सुचिरपर्युषितस्य दध्नः
खण्डस्य षोडशपलानि शशिप्रभस्य ।
सर्पिष्पलं मधुपलं मरिचं द्विकर्षं
शुण्ठ्याः पलार्द्धमपि चार्द्धपलं चतुर्णाम् ॥३७॥
शुक्लोपले ललनया मृदुपाणिघृष्टा
कर्पूरचूर्णसुरभीकृतभाण्डसंस्था ।
एषा वृकोदरकृता सुरसा रसाला
या स्वादिता भगवता मधुसूदनेन ॥३८॥
रसाला बृंहणी वृष्या स्निग्धा बल्या रुचिप्रदा ॥३९॥

१. खट्टा दही १५०० ग्राम, २. चीनी ७५० ग्राम, ३. गोघृत ४६ ग्राम, ४. मधु ४६ ग्राम, ५. मरिचचूर्ण २३ ग्राम, ६. शुण्ठी २३ ग्राम, ७. छोटी इलायची २३ ग्राम, ८. त्वक् २३ ग्राम, ९. तेजपत्र २३ ग्राम तथा १०. नागकेशर २३ ग्राम, लें। सर्वप्रथम दही को १ पतले कपड़े में बाँधकर लटका दें जिससे उसका पानी निकल जाय। तदनन्तर ४ घण्टे बाद उसमें पिसी हुई चीनी दही में मिलाकर पुनः कपड़े में बाँधकर लटका दें। सूखे दही में चीनी मिलाने से पुनः उसमें जल आ जाता है। अतः पुनः बाँधकर उसका जल निकालना चाहिए। जब दुबारा उसका जल निकल जाय तब उसमें मधु, घृत तथा मरिचादिचूर्ण मिला दें और एक पात्र में कपड़ा बाँधकर दही-मिश्रण को घिसकर छान लें। पुनः कर्पूर एवं गुलाब आदि का एसेंस मिलाकर फ्रीज में रखें। पहले इस 'रसाला' को कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से धूपित मिट्टी के पात्र में रखा जाता था। इस योग को महाबली भीमसेन ने भगवान् श्रीकृष्ण को खिलाया था। यह रसाला बृंहण है, वृष्य है, स्निग्ध है, बल्य है तथा रुचिकर है और अरुचिनाशक है।

नोट—पर्युषितः = विकृतः, बासी, बिगड़ा हुआ। दही मधुर होता है; बासी होने पर खट्टा एवं गन्धयुक्त हो जाता है।

मात्रा—५० से १०० ग्राम। **अनुपान**—। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—मधुराम्ल। **उपयोग**—अरुचिनाशक है।

१९. रसकेशरी रस

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्वाथेन मर्दयेत् ।
देवपुष्पं बाणमितं रसपादं तथाऽमृतम् ॥४०॥
माषमात्रञ्च तत्सेव्यं नागरेण गुडेन वा ।
सर्वारोचकशूलार्त्तिमामवातं विनाशयेत् ॥४१॥
विसूचीमग्निमान्द्यञ्च भक्तद्वेषं सुदारुणम् ।
रसो निवारयत्येष केशरी करिणं यथा ॥४२॥

१. शुद्ध पारद १भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. लौंग ५ भाग, तथा ४. शुद्ध विष $\frac{१}{४}$ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः लवङ्गचूर्ण और शुद्ध वत्सनाभचूर्ण मिलाकर उस कज्जली में मर्दन करें। उसमें जल की भावना देकर आधी-आधी रत्ती (उड़द के बराबर) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काच की शीशी में सुरक्षित रख लें। यह 'रसकेशरी' रस शुण्ठीचूर्ण या गुड़ के साथ १-१ वटी

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सेवन करने से अरुचि, शूलरोग, आमवात, विसूचिका, अग्निमान्द्य, भयंकर अनन्नाभिलाष (भक्तद्वेष) रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—शुण्ठीचूर्ण या गुड़ से। **गन्ध**—रसायनगन्धी (लवङ्गयुक्त)। **वर्ण**—कृष्णवर्ण। **स्वाद**—कटु (लवंग जैसा)। **उपयोग**—अरुचि, अग्निमान्द्य, भक्तद्वेष एवं आमवात में।

२०. सुधानिधिरस (र.सा.सं.)

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्वाथेन भावयेत्।
जम्बीरस्वरसेनैव आर्द्रकस्य रसेन च ॥४३॥
मातुलुङ्गस्य तोयेन तस्य मज्जरसेन च।
पश्चाद्विशोष्य सर्वांशं टङ्कणं चावतारयेत् ॥४४॥
देवपुष्पं बाणमितं रसपादं तथाऽमृतम्।
माषमात्रं च तत्सेव्यं नागरेण गुडेन वा ॥४५॥
सर्वारोचकशूलार्त्तिमामवातं सुदारुणम्।
विसूचीं चाग्निमान्द्यं च भक्तद्वेषं च दारुणम् ॥
रसोऽयं वारयत्याशु केसरी करिणं यथा ॥४६॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक १ भाग, ३. शुद्ध सुहागा २ भाग, ४. लवङ्गचूर्ण ५ भाग और ५. शुद्ध वत्सनाभ $\frac{१}{२}$ भाग लें।

भावना—१. दन्तीक्वाथ ४६ मि.ली., जम्बीरीनिम्बुरस ४६ मि.ली., ३. आर्द्रकस्वरस ४६ मि.ली. तथा ४. मातुलुङ्गरस ४६ मि.ली. लें। सर्वप्रथम एक प्रस्तर के खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर अच्छी कज्जली बना लें। तदनन्तर दन्तीक्वाथ की १ भावना दें। पुनः जम्बीरीस्वरस, आर्द्रकस्वरस और मातुलुङ्गस्वरस की १-१ भावना दें। अन्त में मातुलुङ्ग निम्बु की मज्जास्वरस की १ भावना दें। सूखने पर उसमें शुद्ध टंकण, लौंग का चूर्ण और शुद्ध वत्सनाभविषचूर्ण मिलाकर जल की पुनः १ भावना दें तथा $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें एवं काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'सुधानिधिरस' की १-१ वटी शुण्ठीचूर्ण या गुड़ के साथ सेवन करने से अरुचि, शूल, आमवात, विसूचिका, अग्निमान्द्य तथा भयंकर अनन्ना-भिलाष (भक्तद्वेष) का नाश होता है। यह रस उपर्युक्त सभी रोगों का उसी तरह से नाश करता है जैसे सिंह हाथी का नाश करता है।

मात्रा—६५ मिली ग्राम। **अनुपान**—शुण्ठीचूर्ण एवं गुड़ से। **गन्ध**—लवङ्ग की गन्ध। **वर्ण**—काला वटी। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—अरुचि, अग्निमान्द्य एवं भक्तद्वेष में।

२१. सुलोचनाभ्ररस (र.सा.सं.)

पलं सुजीर्णं गगनं तु वज्रकं
तेजोवतीकोलमुशीरदाडिमम्।
धात्र्यम्लरोलारुचकं पृथग्दश-
पलोन्मितं मर्दितमेव सेवितम् ॥४७॥
अरोचकं वातकफत्रिदोषजं
पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम्।
कासं स्वराघातमुरोग्रहं रुजं
श्वासं बलासं च यकृद्भगन्दरम् ॥४८॥
प्लीहाग्निमान्द्यं श्वयथुं समीरणं
मेहं कृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमिम्।
शूलाम्लपित्तक्षयरोगमुद्धतं
सरक्तपित्तं वमिदाहमश्मरीम् ॥४९॥
निहन्ति चार्शांसि सुलोचनाभ्रकं
बलप्रदं वृष्यतमं रसायनम् ॥५०॥

१. अभ्रकभस्म ४६ ग्राम, २. चव्यचूर्ण, ३. बैर का चूर्ण, ४. खसचूर्ण, ५. खट्टा दाडिमबीजचूर्ण, ६. आमलाचूर्ण, ७. चाङ्गेरीस्वरस तथा ८. बिजौरानिम्बुरस—चव्य से बिजौरानिम्बुस्वरस तक के सभी द्रव्य १०-१० पल (प्रत्येक ४६६ ग्राम या ४६६ मि.ली.) लें। अभ्रकभस्म से आमलाचूर्ण तक के सभी ६ द्रव्य मात्रानुसार लेकर एक खरल में मर्दन करें और चाङ्गेरीस्वरस तथा बिजौरानिम्बुस्वरस के रसों के साथ मर्दन कर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इस सुलोचनाभ्र रस की १-१ वटी गरम पानी से सेवन करने से वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज और गन्ध से उत्पन्न अरुचि, कास, स्वरभङ्ग, उरोग्रह, श्वास एवं कफज रोग, यकृद्रोग, भगन्दर, प्लीहरोग, अग्निमान्द्य, शोथ, वातज रोग, प्रमेह, कुष्ठ, रक्तप्रदर, कृमि, कृशता, अम्लपित्त, शूल, प्रवृद्ध क्षयरोग, रक्तपित्त, दाह, अश्मरी और अर्श रोग नष्ट हो जाते हैं। यह 'सुलोचनाभ्ररस' बल्य, प्रबल वृष्य और श्रेष्ठ रसायन है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—गरम पानी से। **गन्ध**—अम्लगन्धी। **वर्ण**—श्यामवर्ण। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—अरुचि, कफज रोग, अग्निमान्द्य एवं अर्श में।

अरोचक रोग में पथ्य

गोधूममुद्गारुणशालिषष्टिका
मांसं वराहाजशशैणसम्भवम्।
चेङ्गो झषाण्डं मधुरालिकेल्लिशः
प्रोष्ठी खलीशः कवयी च रोहितः ॥५१॥
कर्कारुवेत्राग्रनवीनमूलकं
वार्ताकुशोभाञ्जनमोचदाडिमम्।
भव्यं पटोलं रुचकं घृतं पयो-
बालानि तालानि रसोनशूरणम् ॥५२॥
द्राक्षा रसालं नलदम्बु काञ्जिकं
मद्यं रसाला दधि तक्रमार्द्रकम्।
कक्कोलखर्जूरप्रियालतिन्दुकं

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पक्वं कपित्थं बदरं विकङ्कतम् ॥५३॥
तालास्थिमज्जा हिमबालुका सिता
पथ्या यवानी मरिचानि रामठम्।
स्वाद्वम्लतिक्तानि च देहमार्जना
वर्गोऽयमुक्तोऽरुचिरोगिणे हितः ॥५४॥

गेहूँ, मूँगदाल, लाल शालिचावल, साठीचावल, सूअर का माँस, खरहा, बकरा, हरिण का मांस, चेङ्ग मछली, मगरमच्छ के अण्डे, क्षुद्र मछली, इल्लिश, पोठीमछली, कवयी मछली, रोहू मछली, तरबूज, वेत के अग्रांश, छोटी मूली, बैंगन, सहिजनफली, केला, मीठा दाडिम, कमरख, परवल, काला-नमक, गाय का घृत, गाय का दूध, कच्चा तालफल, लशुन, सूरणकन्द, द्राक्षा, आम का फल, निम्बपत्रशाक, काञ्जी, मद्य, रसाला, दही, तक्र, आर्द्रक, शीतलचीनी, खजूरफल, चिरौंजी, तिन्दुक, पका कपित्थ, बैर, विकंकत फल, तालफल की गुठली की मज्जा, कपूर, चीनी, हरीतकी, अजवायन, मरिच, हींग, मधुर, अम्ल एवं तिक्त द्रव्य, उबटन तथा स्नान आदि पदार्थ अरुचि रोग के लिए हितकर हैं।

अरुचि में अपथ्य

कासोद्गारक्षुधानेत्रवारिवेगविधारणम् ।
अहृद्यान्नमसृङ्मोक्षं क्रोधं लोभं भयं शुचम् ॥५५॥
दुर्गन्धारूपसेवाश्च न कुर्यादरुचौ नरः ॥५६॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामरोचाधिकारः ।

कास, उद्गार, भूख, आँसू गिरने के वेग को रोकना, अहृद्य-कर अन्न का सेवन, रक्तमोक्षण, क्रोध, लोभ, भय, शोक, दुर्गन्ध पदार्थों का सेवन तथा कुरूप वस्तुओं को देखना अरुचि के रोगी को नहीं करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य अरोचकाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ छर्दिरोगाधिकारः (१९)

लंघन की प्रशस्ति (च.द.)

आमाशयोत्क्लेशभवा हि सर्वा-
श्छर्द्यो मता लङ्घनमेव तस्मात्।
प्राक्कारयेन्मारुतजां विमुच्य
संशोधनं वा कफपित्तहारि ॥१॥

आमाशयस्थ दोषों के विक्षुब्ध होने के कारण ही सभी प्रकार के वमन रोग होते हैं। अतः वातज छर्दि को छोड़कर कफज एवं पित्तज छर्दि में लंघन की व्यवस्था करनी चाहिए अथवा कफ एवं पित्त को नष्ट करने वाले संशोधन अर्थात् वमन और विरेचन कराना चाहिए।

१. वातज छर्दि में दुग्ध एवं घृत प्रयोग (च.द.)

हन्यात् क्षीरोदकं पीतं छर्दिं पवनसम्भवाम्।
ससैन्धवं पिबेत् सर्पिर्वातच्छर्दिनिवारणम् ॥२॥

गाय का गरम दूध और पानी समभाग में मिलाकर पीने से वातज छर्दि नष्ट हो जाती है तथा गाय के गरम घृत में थोड़ा सैन्धवलवण मिलाकर पीने से वातज छर्दि नष्ट हो जाती है।

२. वातज छर्दि में यूष और यवागू (च.द.)

मुद्गामलकयूषं वा ससर्पिष्कं ससैन्धवम्।
यवागूं मधुमिश्रां वा पञ्चमूलीकृतां पिबेत् ॥३॥

मूँग एवं आमला के यूष में सैन्धवलवण तथा घृत मिलाकर पीने से अथवा लघुपञ्चमूल (शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बृहती, कण्टकारी, गोक्षुर) के क्वाथ में सिद्ध यवागू में मधु मिलाकर पीने से वातज छर्दि नष्ट हो जाती है।

३. पित्तज छर्दि में विरेचनादि कर्म (च.द.)

पित्तात्मिकायां त्वनुलोमनार्थं
द्राक्षाविदारीक्षुरसैस्त्रिवृत् स्यात्।
कफाशयस्थं त्वतिमात्रवृद्धं
पित्तं जयेत् स्वादुभिरूर्ध्वमेव ॥४॥

पित्तज वमन में दोषों के अनुलोमनार्थ द्राक्षा, विदारीकन्द चूर्ण, त्रिवृत्चूर्ण एवं इक्षुरस मिलाकर पिलाना चाहिए। आमाशय के ऊर्ध्वभाग से अतिमात्रा में पित्त को निकालने के लिए मधुर रसों से युक्त वामक द्रव्य खिला-पिलाकर वमन कराना चाहिए।

४. पित्तज छर्दि में विरेचनान्त क्रिया (च.द.)

शुद्धस्य काले मधुशर्कराभ्यां
लाजैश्च मन्थं यदि वाऽपि पेयाम्।
प्रदापयेन्मुद्गरसेन वाऽपि
शाल्योदनं जाङ्गलजै रसैर्वा ॥५॥

कोष्ठ की शुद्धि होने पर धान का लाजचूर्ण, मधु, चीनी समभाग में और सभी के बराबर जल के साथ मन्थ बनाकर (मथानी से मथकर) पिलाना चाहिए। अथवा पेया या मूँग की यूष या जङ्गली पशु-पक्षियों के मांसरस के साथ शालिचावल का भात खिलाना चाहिए।

५. वमन में चन्दन प्रयोग (च.द.)

चन्दनेनाक्षमात्रेण संयोज्यामलकीरसम्।
पिबेन्माक्षिकसंयुक्तं छर्दिस्तेन निवर्त्तते ॥६॥

श्वेतचन्दन १२ ग्राम, आमलकीरस/क्वाथ ४६ मि.ली. तथा मधु २३ ग्राम मिलाकर पीने से वमन शान्त हो जाता है।

६. चन्दनादिकल्क (च.द.)

चन्दनं चामृणालञ्च बालकं नागरं वृषम्।
सतण्डुलोदकक्षौद्रः पीतः कल्को वमिं जयेत् ॥७॥

१. श्वेत चन्दन, २. खस, ३. सुगन्धबाला, ४. शुण्ठी और ५. वासामूल—सभी द्रव्य समभाग में अर्थात् २-२ ग्राम लें। इन्हें पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क का सेवन कर ५० मि.ली. तण्डुलोदक और २३ ग्राम मधु मिलाकर पीने से वमन शान्त हो जाता है।

७. पर्पटक्वाथ (च.द.)

क्वाथः पर्पटजः पीतः सक्षौद्रश्छर्दिनाशनः ॥८॥

पित्तपापड़ा का क्वाथ २५ मि.ली. में मधु १० ग्राम मिलाकर पीने से वमन शान्त हो जाता है।

८. हरीतकीचूर्ण (च.द.)

हरीतकीनां चूर्णन्तु लिह्यान्माक्षिकसंयुतम्।
अधोभागे कृते दोषे क्षिप्रं वान्तिर्निवर्त्तते ॥९॥

हरीतकीचूर्ण ६ ग्राम मधु के साथ मिलाकर सेवन करने से अधोभागीय (पक्वाशयस्थित) दोष विरेचन के द्वारा निकल जाता है जिससे वमन शान्त हो जाता है।

९. भृष्ट मुद्गकषाय (च.द.)

कषायो भृष्टमुद्गस्य सलाजमधुशर्करः।
छर्द्यतीसारतृड्दाहज्वरघ्नः सम्प्रकाशितः ॥१०॥

भूने हुए मूँग के क्वाथ में धान का लाजा, शक्कर एवं मधु

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मिलाकर पीने से वमन, अतिसार, प्यास, दाह और ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

१०. धात्र्यादिलेह (च.द.)

धात्र्या रसः कपित्थस्य पिप्पलीमरिचान्वितः ।
क्षौद्रेण युक्तः शमयेल्लेहोऽयं छर्दिमुल्बणाम् ॥११॥

आमलारस ६ मि.ली., कैंत के फल का रस ६ मि.ली., पिप्पलीचूर्ण ५०० मि.ग्रा., मरिचचूर्ण ५०० मि.ग्रा. तथा मधु १२ ग्राम मिलाकर चाटने से भयंकर वमनरोग भी नष्ट हो जाता है।

११. कफज छर्दि में वमन (च. द.)

कफात्मिकायां वमनं प्रशस्तं
सपिप्पलीसर्षपनिम्बतोयैः ।
पिण्डीतकैः सैन्धवसम्प्रयुक्तै-
श्छर्द्यां कफामाशयशोधनार्थम् ॥१२॥

१. पिप्पलीचूर्ण, २. सरसोचूर्ण, ३. निम्बत्वक्, ४. मदनफलबीज तथा ५. सैन्धवलवण—मदनफल एवं सैन्धव छोड़कर तीनों द्रव्य ६-६ ग्राम लें। इन्हें यवकुट कर १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। इसमें सैन्धव-लवण और मदनफलबीजचूर्ण ६-६ ग्राम मिलाकर पिलाने से कफज वमन में कफ और आमाशय का शोधन होता है अर्थात् वमन से कफ निर्हरण होकर वमन शान्त हो जाता है।

१२. विडङ्गादि चूर्णद्वय (च.द.)

विडङ्गत्रिफलाविश्वचूर्णं मधुयुतं जयेत् ।
विडङ्गप्लवशुण्ठीनामथवा श्लेष्मजां वमिम् ॥१३॥

१. विडङ्गचूर्ण, २. बिभीतकचूर्ण, ३. हरीतकीचूर्ण, ४. आमलाचूर्ण और ५. शुण्ठीचूर्ण—प्रत्येक चूर्ण १-१ ग्राम लें और इन्हें मिलाकर मधु के साथ सेवन करने से कफज वमन नष्ट हो जाता है।

विडङ्गचूर्ण २ ग्राम, नागरमोथाचूर्ण २ ग्राम, शुण्ठीचूर्ण २ ग्राम मधु के साथ मिलाकर लेहन करने से कफज छर्दि नष्ट हो जाती है।

१३. जाम्बवादि योगत्रय (च.द.)

सजाम्बवं वा बदरस्य चूर्णं
मुस्तायुतां कर्कटकस्य शृङ्गीम् ।
दुरालभां वा मधुसम्प्रयुक्तां
लिह्यात्कफच्छर्दिविनाशनार्थम् ॥१४॥

(१) जामुनबीजमज्जाचूर्ण और जंगली छोटे बेर का चूर्ण मधु के साथ लेने से कफज वमन का नाश हो जाता है।

(२) नागरमोथाचूर्ण और काकडासिंगीचूर्ण ३-३ ग्राम मधु से लेने पर कफज छर्दि नष्ट हो जाती है।

(३) केवल जवासाचूर्ण ३ ग्राम मधु के साथ लेने पर कफज छर्दि नष्ट हो जाती है।

१४. त्रिदोषज छर्दि में तर्पण-प्रयोग (च.द.)

तर्पणं वा मधुयुतं तिसृणामपि भेषजम् ॥१५॥

त्रिदोषज वमन में जौ के सत्तू के घोल में मधु मिलाकर पीने से वमन शान्त हो जाता है और तर्पण भी करता है।

१५. गुडूची शीतकषाय (च.द.)

कृतं गुडूच्या विधिवत् कषायं हिमसंज्ञितम् ।
तिसृष्वपि भवेत्पथ्यं माक्षिकेण समायुतम् ॥१६॥

गुडूची का विधिवत् हिमकषाय बनाकर उसमें मधु मिलाकर पीने से तीनों प्रकार के वमन नष्ट हो जाते हैं।

१६. श्रीफल-गुडूची-मूर्वा क़षाय (च.द.)

श्रीफलस्य गुडूच्या वा कषायो मधुसंयुतः ।
पेयश्छर्दित्रये शीतो मूर्वा वा तण्डुलाम्बुना ॥१७॥

बिल्वमूल की छाल का क्वाथ ४६ मि.ली. या गुडूचीस्वरस २३ मि.ली. मधु मिलाकर पीने से अथवा मूर्वाचूर्ण ५ ग्राम मधु मिलाकर चाट कर बाद में तण्डुलोदक ४६ मि.ली. पीने से त्रिदोषज छर्दि नष्ट हो जाती है।

१७. धात्रीपानक (च.द.)

पिष्ट्वा धात्रीफलं द्राक्षां शर्करां च पलोन्मिताम् ।
दत्त्वा मधुपलं चात्र कुडवं सलिलस्य च ॥
वाससा गालितं पीतं हन्तिच्छर्दिं त्रिदोषजाम् ॥१८॥

१. आमलाकल्क ४६ ग्राम, २. मुनक्काकल्क ४६ ग्राम, ३. चीनी ४६ ग्राम, ४. मधु ४६ ग्राम तथा जल १९० मि.ली. लें। इन सबों को मिलाकर मथानी से मथ कर कपड़े से छान लें। इसे पीने से त्रिदोषज वमन शान्त हो जाता है।

१८. लाजादि योगत्रय (च.द.)

लाजाकपित्थमधुमागधिकोषणानां
क्षौद्राभयात्रिकटुधान्यकजीरकाणाम् ।
पथ्याऽमृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां
लेहास्त्रयः सकलवम्यरुचिप्रशान्त्यै ॥१९॥

(१) १. धान का लाजा, २. कच्चे कैंथफलमज्जा, ३. मधु, ४. पिप्पलीचूर्ण तथा ५. मरिचचूर्ण—प्रत्येक समभाग में ५-५ ग्राम लें। इन्हें कूट-पीस कर मधु के साथ मिलाकर सेवन करने से त्रिदोषज वमन शान्त हो जाता है।

(२) १. हरीतकीचूर्ण, २. शुण्ठीचूर्ण, ३. पिप्पलीचूर्ण, ४. मरिचचूर्ण, ५. धनियाँचूर्ण तथा ६. जीराचूर्ण समभाग लें। इन्हें कूट-पीस कर सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में रखें। इन्हें २

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम की मात्रा में मधु से सेवन करने से त्रिदोषज वमन शान्त हो जाता है।

(३) १. हरीतकीचूर्ण, २. गुडूचीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण और ४. पिप्पलीचूर्ण मिलाकर काचपात्र में संगृहीत करें। इस चूर्ण को २ ग्राम की मात्रा में मधु से सेवन करने से त्रिदोषज वमन शान्त हो जाता है। ये तीनों योग सभी प्रकार के वमन और अरुचि को नष्ट करता है।

१९. अश्वत्थक्षार जल (च.द.)

अश्वत्थवल्कलं शुष्कं दग्ध्वा निर्वापितं जले।
तज्जलं पानमात्रेण छर्दिमाशु व्यपोहति ॥२०॥

पिप्पली की सूखी छाल को आग में जला कर निर्धूम होने पर थोड़े पानी में बुझा दें। इसी जल को पुनः-पुनः पिलाने से वमन रुक जाता है।

२०. एलादि चूर्ण (च.द.)

एलालवङ्गगजकेशरकोलमज्ज-
लाजप्रियङ्गुघनचन्दनपिप्पलीनाम् ।
चूर्णानि माक्षिकसितासहितानि लीढ्वा
छर्दिं निहन्ति कफमारुतपित्तजाञ्च ॥२१॥

१. छोटी इलायची, २. लौंग, ३. नागकेशर, ४. बेर की गुठली की मज्जा, ५. धान के लाजा, ६. प्रियंगु, ७. नागरमोथा, ८. श्वेतचन्दन, ९. पिप्पली, १०. चीनी तथा ११. मधु—मधु छोड़कर सभी द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रहीत करें। २ ग्राम की मात्रा में इस चूर्ण को मधु के साथ मिलाकर सेवन करने से वातज, पित्तज एवं कफज छर्दि नष्ट हो जाती है।

२१. रुधिरछर्दिहर योग (च.द.)

यष्ट्याह्वं चन्दनोपेतं सम्यक् क्षीरप्रपेषितम्।
तेनैवालोड्य पातव्यं रुधिरच्छर्दिनाशनम् ॥२२॥

मुलेठीचूर्ण तथा लालचन्दनचूर्ण २-२ ग्राम लें। इन चूर्णों को गाय के दूध के साथ अच्छी तरह पीस कर उबले हुए गाय के शीतल दूध में मिलाकर पीने से रक्त का वमन शान्त हो जाता है।

२२. छर्दिसंहाररस (रसेन्द्रयोगे) (च.द.)

अजाजीधान्यपथ्याभिः सक्षौद्राभिः[1] कटुत्रिकैः।
एभिः सार्द्धं भस्मसूतः सेव्यो वान्तिप्रशान्तये ॥२३॥

१. श्वेतजीरा, २. धनियाँ, ३. हरीतकी, ४. शुण्ठी, ५. पिप्पली, ६. मरिच, ७. रससिन्दूर और ८. मधु—जीरा से रससिन्दूर तक सभी ७ द्रव्य समभाग में लें। सर्वप्रथम एक खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह पीस लें। ततः सभी छः काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण करें और इन चूर्णों के साथ रससिन्दूर का मर्दन कर अच्छी तरह मिला लें तथा काचपात्र में सुरक्षित रख लें। १ ग्राम की मात्रा में इस 'छर्दिसंहाररस' को मधु के साथ वमन नाशनार्थ लेना चाहिए।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—शुण्ठी एवं धनियाँ के जैसी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—वमन में।

२३. वृषभध्वजरस

शुद्धं रसं गन्धकञ्च लौहमेव समांशिकम्।
मधुकं चन्दनं धात्री सूक्ष्मैला सलवङ्गकम् ॥२४॥
टङ्गणं पिप्पली मांसी तुल्यं पारदसम्मितम्।
विदारीक्षुरसाभ्याञ्च भावयेद्दिनसप्तकम् ॥२५॥
संशोष्य मर्दयेद्यामं छागीदुग्धेन यत्नतः।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं विदारीरससंयुतम् ॥२६॥
वातात्मिकां पित्तयुतां छर्दिं हन्ति सशोणिताम्।
वृषध्वजरसो नाम वृषध्वजेन निर्मितः ॥२७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. यष्टिमधु, ५. श्वेतचन्दन, ६. आमला, ७. छोटी इलायची, ८. लवंग, ९. शुद्ध टङ्कण, १०. पिप्पली और ११. जटामांसी—सभी ११ द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उस कज्जली के साथ लौहभस्म एवं शुद्ध टंकण मिलावें। पुनः सभी ७ काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण इसी कज्जली-मिश्रण के साथ मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। इसके बाद विदारीकन्दस्वरस या क्वाथ और इक्षुरस की ७-७ भावना दें। पुनः बकरी के दूध की १ भावना देकर ३ घण्टे तक मर्दन करें और २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। १-१ वटी इस 'वृषभध्वजरस' को विदारीकन्दस्वरस या क्वाथ से सेवन करने पर वातज और रक्तज वमन नष्ट हो जाता है। इस 'वृषभध्वजरस' को भगवान् शंकर ने निर्मित किया था।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—विदारीकन्दस्वरस से। **गन्ध**—सुगन्ध चन्दन एवं लवंग जैसी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—वातज, पित्तज एवं रक्तज वमन में।

२४. पद्मकाद्यघृत (च.द.)

पद्मकामृतनिम्बानां धान्यचन्दनयोः पचेत्।
कल्के क्वाथे च हविषः प्रस्थं छर्दिनिवारणम् ॥
तृष्णाऽरुचिप्रशमनं दाहज्वरहरं परम् ॥२८॥

गोघृत १ प्रस्थ (७५० ग्राम) लें।

कल्क-द्रव्य—१. पद्मकाष्ठ, २. गुडूची, ३. निम्बत्वक्, ४. धनियाँ तथा ५. लालचन्दन—प्रत्येक द्रव्य ६३८ ग्राम लें।

---

१. सक्षौद्राभिः = कण्टकारीति पाठभेदः – यह प्रमाद जन्य पाठ है। यही योग 'योगरत्नावली' में भी है जहाँ 'सक्षौद्राभिः' पाठ ठीक है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः उपर्युक्त पाँचों कल्क द्रव्यों को प्रत्येक ३८ ग्राम लेकर कूट-पीस कर कल्क बना लें और शेष ६००-६०० ग्राम को यवकुट कर क्वाथ बना लें तथा पाक करें। ततः मूर्च्छित घृत में कल्क और क्वाथ मिलाकर ३ लीटर जल मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। घृत निःस्नेह होने पर परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें तथा कपड़े से छान कर शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम जल या गरम दूध से पान करने से छर्दि नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह तृष्णा, अरुचि, दाह एवं ज्वरनाशनार्थ भी अत्यन्त उपयोगी है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध या गरम जल से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—छर्दि, अरुचि एवं तृष्णा में।

छर्दिरोग में पथ्य

विरेचनच्छर्दनलङ्घनानि
स्नानं मृजा लाजकृतश्च मण्डः।
पुरातनाः षष्टिकशालिमुद्ग-
कलायगोधूमयवा मधूनि ॥२९॥
शशाहिभुक्तित्तिरिलावकाद्या
मृगद्विजा जाङ्गलसंज्ञिताश्च।
मनोज्ञनानारसगन्धरूपा
रसाश्च यूषा अपि षाडवाश्च ॥३०॥
हरीतकीदाडिमबीजपूरं
जातीफलं बालकनिम्बवासाः।
सिताशताह्वाकरिकेशराणि
भक्ष्या मनःप्रीतिकरा हिताश्च ॥३१॥
रागाः खडाः काम्बलिकाः सुरा च
वेताग्रकुस्तुम्बुरुनारिकेलम्।
जम्बीरधात्रीसहकारकोल-
द्राक्षाकपित्थानि पचेलिमानि ॥३२॥
भुक्तस्य वक्त्रे शिशिराम्बुसेकः
कस्तूरिकाचन्दनमिन्दुपादाः।
मनोज्ञगन्धान्यनुलेपनानि
पुष्पाणि पत्राणि फलानि चापि ॥३३॥
रूपाणि शब्दाश्च रसाश्च गन्धाः
स्पर्शाश्च ये यस्य मनोऽनुकूलाः।
दाहश्च नाभेस्त्रियवोपरिष्टा-
दिदं हि पथ्यं वमनातुरेषु ॥३४॥

विरेचन, वमन, लंघन, स्नान, शरीरशुद्धि, लाजमण्ड, पुराना साठी एवं शालि चावल, मूँग, मटर, गेहूँ, जौ, मधु, खरगोश, मोर, तित्तिर, लावक, मृगादि जंगली पशुओं के मांस, मनोहर अनेक प्रकार के रस, गन्ध, रूप, मांसरस, यूष, षाडव, हरीतकी, अनार, बिजौरानिम्बु, जायफल, सुगन्धबाला, निम्ब, वासा, चीनी, सौंफ, नागकेशर, अन्य स्वादु मनोऽनुकूल भक्ष्य पदार्थ, राग, खड़, काम्बलिक, सुरा, वेत्राग्र, धनियाँ, नारियल, जम्बीरी निम्बु, आमला, आम, बेर, अंगूर, पका कैंथ—ये सारे फल पके हुए होने चाहिए; भोजनोत्तर मुख पर शीतल जल का परिषेक, कस्तूरी और चन्दन का प्रलेप, रात्रि-चाँदनी में बैठना, मनोऽनुकूल सुगन्ध, मनोऽनुकूल सुगन्धित द्रव्यों का लेप, मनोऽनुकूल फूल, फल, पत्र, रूप, शब्द, रस, गन्ध और स्पर्श पथ्य हैं। नाभि से तीन यव ऊपर दग्ध कर्म करना छर्दिरोग में हितकर है।

छर्दिरोग में अपथ्य

नस्यं वस्तिं स्वेदनं स्नेहपानं
रक्तस्रावं दन्तकाष्ठं द्रवान्नम्।
बीभत्सेक्षां भीतिमुद्वेगमुष्णं
स्निग्धासात्म्याहृद्यवैरोधिकान्नम् ॥३५॥
शिम्बीबिम्बीकोषवत्यो मधूकं
चित्रामेलां सर्षपान् देवदालीम्।
व्यायामञ्चच्छत्रिकामञ्जनञ्च
च्छर्द्यां सत्यां वर्जयेदप्रमत्तः ॥३६॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां छर्दिरोगाधिकारः।

नस्य, बस्ति, स्वेदन, स्नेहपान, रक्तस्राव, दन्तधावन, द्रवान्न (खिचड़ी, अन्नपेया, यवागू, विलेपी) बीभत्स रूपों का दर्शन, भय, उद्वेग, गर्मी, अत्यन्त स्निग्ध, असात्म्य, अहृद्य एवं विरोधी अन्नों का सेवन, सेम, बिम्बीफल (कुन्दुरु फल), नेनुआ (तरोई), महुआ के फूल, चित्रकमूल, बड़ी एला, सरसों, देवदाली, व्यायाम, छाता लगाना तथा अञ्जन लगाना—ये सब छर्दिरोग से पीड़ित व्यक्ति के लिए अहितकर हैं। इसे नहीं करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य छर्दिरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ तृष्णारोगाधिकारः (२०)

वातज तृष्णाक्रम (च.द.)

तृष्णायां[1] पवनोत्थायां सगुडं दधि शस्यते।
रसाश्च बृंहणाः शीता गुडूच्या रस एव वा ॥१॥

वातज तृष्णा में गाय के दही में गुड़ मिलाकर खाना अधिक उपयोगी है। बृंहणार्थ एवं शैत्यार्थ जांगल प्राणियों का मांसरस एवं गुडूचीस्वरस का सेवन करना चाहिए।

पित्तज तृष्णा में चिकित्सा (च.द.)

पित्तजायान्तु तृष्णायां पक्वोदुम्बरजो रसः।
तत्क्वाथो वा हिमस्तद्वच्छारिवादिगणाम्बु[2] वा ॥२॥

पित्तज तृष्णा में पके गूलर फल के रस या उसका क्वाथ या हिम लेना चाहिए अथवा सारिवादिगणक्वाथ (अनन्तमूल, खस, गम्भारीफल, महुए का फूल, लाल चन्दन, श्वेत चन्दन, मुलेठी एवं फालसा फल) लेना अधिक उपयोगी है। ठण्डा होने पर पिलावें। फ्रीज में ठण्डा करें।

१. काश्मर्यादि शीतकषाय (च.द.)

काश्मर्यशर्करायुक्तं चन्दनोशीरपद्मकम्।
द्राक्षामधुकसंयुक्तं पित्ततर्षे जलं पिबेत् ॥३॥

१. गम्भारी फल या त्वक्, २. श्वेतचन्दन, ३. खस, ४. पद्मकाष्ठ, ५. द्राक्षा (मुनक्का) तथा ६. मुलेठी—समभाग में लें। इन्हें यवकुट करें। आठ गुना जल में इस यवकुट को ५० ग्राम डालकर रात्रिपर्यन्त चाँदनी में रखें। सुबह इसे हाथ से मसलकर कपड़े से छान लें। इसमें मीठा होने लायक थोड़ी चीनी मिलाकर पित्तज तृष्णा में पिलाने से बहुत लाभ होता है। इसे फ्रीज में रखें। ठण्डा होने पर पिलावें।

लाजोदक (च.द.)

लाजोदकं मधुयुतं शीतं गुडविमर्दितम्।
काश्मर्यशर्करायुक्तं पिबेत्तृष्णार्दितो नरः ॥४॥

१. धान का लाजाचूर्ण २५ ग्राम, २. मधु २५ ग्राम, ३. गुड़ २५ ग्राम, ४. गम्भारीफल २५ ग्राम, ५. चीनी २५ ग्राम लें। इन्हें २०० मि.ली. जल में अच्छी तरह घोलकर छननी से छानकर फ्रीज में रखें। ठण्डा होने पर पित्तज तृष्णा के रोगी को पिलाने से तृष्णा नष्ट हो जाती है।'

२. बिल्वादि क्वाथ/निम्बप्रसव रस (चक्रदत्त)

बिल्वाढकीधातकिपञ्चकोल-
दर्भेषु सिद्धं कफजां निहन्ति।
हितं भवेच्छर्दनमेव चात्र
तप्तेन निम्बप्रसवोदकेन ॥५॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. अरहर का मूल, ३. धातकीफूल, ४. पिप्पली, ५. पिप्पलीमूल, ६. चव्यमूल, ७. चित्रकमूल, ८. शुण्ठी तथा ९. दर्भमूल—ये सभी द्रव्य १-१ भाग लें। इन नौ द्रव्यों को यवकुट विधि से चूर्ण बना लें। इसमें से ५० ग्राम यवकुट और २०० मि.ली. उष्ण जल में डालकर थोड़ी देर बाद छानकर (षडङ्गपानीय जैसा बनाकर) पीने से या क्वाथविधि से सिद्ध क्वाथ पीने से कफज तृष्णा नष्ट हो जाती है।

विमर्श—कभी-कभी किसी-किसी निम्बवृक्ष की जड़ से प्रभूत मात्रा में निम्बजल स्रवित होता है। मैंने १-२ स्थान पर ऐसा प्रसृत निम्ब जल देखा है। जैसा श्वेत वर्ण का जलस्राव खजूर या ताड़वृक्ष से 'ताड़ी' या 'नीरा' निकलता है। यह प्रसृत जल अत्यधिक शीतल होता है। आचार्य को यही जल लेना अभीष्ट है। यही जल थोड़ा गरम कर पिलाना चाहिए। यह जल वामक है। वमन कराकर तृष्णा को मिटायेगा। ऐसे तो निम्ब का सर्वाङ्ग वामक है।

क्षतजादि तृषा-चिकित्सा (चक्रदत्त)

क्षतोत्थितां रुग्विनिवारणेन
जयेद्रसानामसृजश्च पानैः।
क्षयोत्थितां क्षीरजलं निहन्याद्
मांसोदकं वाऽथ मधूदकं वा।
गुर्वन्नजामुल्लिखनैर्जयेत्तु
क्षयादृते सर्वकृताञ्च तृष्णाम् ॥६॥

क्षतज तृष्णा में क्षत की चिकित्सा करनी चाहिए। सद्यो हत मृग के रक्त का पान तथा उसी के मांस से निर्मित मांसरस का पान भी कराना चाहिए। इसी तरह क्षयजन्य तृषा में गोदुग्ध में समान मात्रा में जल मिलाकर उबालें और फ्रीज में ठण्डा होने के बाद पिलाना चाहिए तथा मांसरस और मधु-मिश्रित जल पिलाना चाहिए। गरिष्ठ अन्न-सेवनजन्य तृष्णा में वमन करावें। क्षयज तृष्णा के अतिरिक्त सभी प्रकार की तृष्णा वमन कराने से शान्त हो जाती है।

---

१. सारिवोशीरकाश्मर्यमधूकशिशिरद्वयम्। यष्टी परूषकं हन्ति दाह····।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तृष्णाहर बकरी का दूध (चक्रदत्त)

अतिरूक्षदुर्बलानां तर्षं शमयेन्नृणामिहाशु पयः ।
छागो वा घृतभृष्टः शीतो मधुरो रसो हृद्यः ॥७॥

अत्यन्त रूक्ष एवं दुर्बल मनुष्यों की तृष्णा सद्योद्धृत बकरी का दूध या उबालने के बाद फ्रीज में ठण्डा किया बकरी का दूध पिलाने से मिटती है। अथवा बकरे के मांस को घृत में भूनकर मसाला एवं जल से सिद्ध मांसरस में जीवनीय मधुरगण की औषधों के रस मिलाकर पिलाने से तृष्णा मिटती है।

गोस्तनादिनस्य (चक्रदत्त)

गोस्तनेक्षुरसक्षीरयष्टीमधुमधूत्पलैः ।
नियतं नस्यतः पानैस्तृष्णा शाम्यति दारुणा ॥८॥

१. द्राक्षा (मुनक्का), २. इक्षुरस, ३. दूध, ४. यष्टिमधु, ५. मधु और ६. नीलकमल—सभी द्रव्य समभाग लें। मधु एवं गोदुग्ध छोड़कर शेष सभी द्रव्यों के मिलित क्वाथ में मधु एवं दूध मिलाकर नस्य देने से या अकेले १-१ द्रव्यों के रस का नस्य देने से या पीने से भयंकर तृष्णा शान्त होती है।

तालुशोष-चिकित्सा (चक्रदत्त)

क्षीरेक्षुरसमाध्वीकक्षौद्रसीधुगुडोदकैः ।
वृक्षाम्लाम्लैश्च गण्डूषास्तालुशोषनिवारणाः ॥९॥

१. गाय का दूध, २. इक्षुरस, ३. माध्वीक (महुए का मद्य), ४. मधु, ५. सीधु, ६. गुड़ का शर्बत, ६. इमली के फल तथा चाङ्गेरी (बिजौरानीबू, काञ्जी आदि अन्य अम्ल)—इनमें से किसी एक का गण्डूष धारण करने से 'तालुशोष' रोग नष्ट होता है।

३. आम्रादिकषाय (चक्रदत्त)

आम्रजम्बूकषायं वा पिबेन्माक्षिकसंयुतम् ।
छर्दिं सर्वां प्रणुदति तृष्णाञ्चैवापकर्षति ॥१०॥

आम और जामुन त्वक् के स्वरस या क्वाथ में मधु मिलाकर पीने से यह सभी प्रकार की छर्दि और तृष्णा को मिटाता है।

४. वटशुङ्गादिचूर्ण (चक्रदत्त)

वटशुङ्गसितालोध्रदाडिमं मधुकं मधु ।
पिबेत्तण्डुलतोयेन छर्दितृष्णानिवारणम् ॥११॥

१. वटवृक्ष का शुङ्ग, २. चीनी, ३. लोध्र, ४. दाडिम, ५. मुलेठी और ६. मधु—समभाग लें। इन्हें पीसकर तण्डुलोदक के साथ मिलाकर पीने से छर्दि और तृष्णा रोग मिटते हैं।

कवल-गण्डूष प्रयोग (वङ्गसेन)

केशरं मातुलुङ्गस्य सक्षौद्रं दाडिमीयुतम् ।
क्षणमात्रेण दुर्वारां तृष्णां कवलतो जयेत् ॥१२॥
दाहतृष्णाप्रशमनं मधुगण्डूषधारणम् ॥१३॥

मातुलुङ्ग निम्बु के फूल के केशर, मधु तथा दाडिमबीज चूर्ण—इन्हें एक साथ पीसकर कवल धारण करने से क्षणमात्र में कष्टप्रद तृष्णा नष्ट हो जाती है। तीनों द्रव्य १२-१२ ग्राम लें अथवा केवल मधु का गण्डूष मुख में धारण करने से तृष्णा मिटती है।

गण्डूष एवं कवल में भेद

असञ्चार्या तु या मात्रा गण्डूषे सा प्रकीर्तिता ।
सुखं सञ्चार्यते या तु सा मात्रा कवले हिता ॥१४॥

मुख में पिसी हुई औषधि कल्क इतनी मात्रा में डाली जाय जिससे मुख की वस्तु हिलायी न जा सके तो उसे विद्वान् लोग 'गण्डूष' कहते हैं तथा मुख में पिसी हुई औषधि कल्क द्रवादि इतनी मात्रा में डाली जाय कि उसे आसानी से मुख के अन्दर जीभ से हिलायी जा सके तो उसे 'कवल' कहते हैं।

५. वटशुङ्गादिवटी (चक्रदत्त)

वटशुङ्गामयक्षौद्रलाजनीलोत्पलैर्दृढा ।
गुटिका वदनन्यस्ता क्षिप्रं तृष्णामुदस्यति ॥१५॥

१. वटशुङ्गकल्क, २. कूठचूर्ण, ३. धान के लाजा का चूर्ण और ४. नीलकमलचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सभी द्रव्यों को एक साथ पीसें और मधु मिलाकर ४-४ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस वटी को मुख में रखकर चूसने से शीघ्र ही तृष्णा शान्त हो जाती है।

ओदन-प्रयोग (चक्रदत्त)

ओदनं रक्तशालीनां शीतमाक्षिकसंयुतम् ।
भोजयेत्तेन शाम्येत छर्दिस्तृष्णा चिरोत्थिता ॥१६॥

लाल शालिचावल के ठण्डे भात को मधु मिलाकर खाने से पुराना वमन और तृष्णा रोग नष्ट हो जाते हैं।

मधूदक-प्रयोग (चक्रदत्त)

वारिशीतं मधुयुतमाकण्ठाद्वा पिपासितम् ।
पाययेद्वामयेच्चापि तेन तृष्णा प्रशाम्यति॥१७॥

तृषारोग से पीड़ित व्यक्ति को शीतल जल में मधु घोलकर आकण्ठ पिलाकर वमन कराने से तृषा मिट जाती है।

शीतल जल-प्रयोग (चक्रदत्त)

मूर्च्छाच्छर्दितृषादाहस्त्रीमद्यभृशकर्षिताः ।
पिबेयुः शीतलं तोयं रक्तपित्ते मदात्यये ॥१८॥

मूर्च्छा, वमन, तृषा, हस्तपादादि दाह, स्त्रीसम्भोग और मद्य से कृश एवं ग्रस्त व्यक्ति को तथा रक्तपित्त एवं मदात्यय रोग से पीड़ित व्यक्ति को शीतल जल का पान लाभप्रद होता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

जलाभाव में मूर्च्छन (चक्रदत्त)

पूर्वामयातुरः सन् दीनस्तृष्णार्दितो जलं याचन्।
लभते न चेत्तदाऽयं मरणं प्राप्नोति दीर्घरोगं वा ॥१९॥

उपर्युक्त मूर्च्छा, छर्दि, तृषादि रोग से ग्रस्त एवं दीन-हीन होकर जल माँगते हुए रोगी को जल नहीं पिलाने से निश्चित ही मृत्यु हो जाती है अथवा किसी भयंकर रोग से वह व्यक्ति ग्रसित हो जाता है।

तृषानिरोध से दोष (चक्रदत्त)

तृषितो मोहमायाति मोहात्प्राणान् विमुञ्चति।
तस्मात्सर्वास्ववस्थासु न क्वचिद्वारि वार्यते ॥२०॥

अधिक पिपासित व्यक्ति द्वारा जल नहीं पीने से वह व्यक्ति मूर्च्छित हो जाता है। मूर्च्छा बढ़ने से व्यक्ति मर भी जाता है। अतः जलोदर रोग छोड़कर किसी भी अवस्था में जल पीने से किसी को रोकना नहीं चाहिए।

जल का महत्त्व

अन्नेनापि विना जन्तुः प्राणान् धारयते चिरम्।
तोयाभावे पिपासार्त्तः क्षणात्प्राणैर्विमुच्यते ॥२१॥

अन्न के बिना मनुष्य बहुत दिनों तक जीवित रह सकता है, किन्तु जल के बिना प्यासा व्यक्ति क्षणभर में प्राण त्याग देता है।

जलपान-विधि (भा.प्र.)

[1]अत्यम्बुपानात्प्रभवन्ति रोगा
निरम्बुपानाच्च स एव दोषः।
तस्माद्बुधः प्राणविवर्द्धनार्थं
मुहुर्मुहुर्वारि पिबेदभूरि ॥२२॥

अत्यन्त जल पीने से रोग होते हैं, जल नहीं पीने से भी रोग होते हैं। इसीलिए विद्वान् मनुष्य को चाहिए प्राणधारण के लिए बार-बार थोड़ा-थोड़ा जल पियें। इस तरह से शक्ति का क्षय नहीं होता है।

६. रसादिचूर्ण (यो.र.)

रसगन्धककर्पूरैः शैलोशीरमरीचकैः।
ससितैः क्रमवृद्धैश्च सूक्ष्मं चूर्णमहर्मुखे ॥२३॥
त्रिगुञ्जाप्रमितं खादेत् पिबेत्पर्युषिताम्बु च।
भृशं तृषं निहन्त्येवमश्विभ्यां सम्प्रकाशितम् ॥२४॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. कर्पूर ३ भाग, ४. छरीलाचूर्ण ४ भाग, ५. खसचूर्ण ५ भाग, ६. मरिच ६ भाग तथा ७. शर्करा ७ भाग लें। सर्वप्रथम १ खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। पुनः सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर कज्जली के साथ मर्दन करें। इसे काचपात्र में संग्रहीत करें। ३७५ मिली ग्राम इस 'रसादिचूर्ण' को शीतल जल से प्रातःकाल बिना कुछ खाये लेना चाहिए। इससे बढ़ी हुई तृषा मिट जाती है। इसे अश्विनीकुमारों ने बनाया था।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—शीतल जल से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—श्वेताभ चूर्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—तृषा रोग में।

७. कुमुदेश्वररस (र.सा.सं.)

मृतताम्रस्य भागौ द्वौ भागैकं वङ्गभस्मकम्।
यष्टीमधुरसैर्भाव्यं शुष्कं माषार्द्धकं शुभम् ॥२५॥
सेवयेच्चानुपानेन वक्ष्यमाणेन धीमता।
चन्दनं शारिवा मुस्तं क्षुद्रैलानागकेशरम् ॥२६॥
सर्वतुल्यां तथा लाजां पचेत् षोडशिकैर्जलैः।
अर्धशेषं हरेत् क्वाथं सिताक्षौद्रयुतन्तु तत् ॥२७॥
छर्दिं तृष्णां निहन्त्याशु रसोऽयं कुमुदेश्वरः ॥२८॥

ताम्रभस्म २ भाग तथा वङ्गभस्म १ भाग लें।

भावना—मुलेठीक्वाथ की १ भावना देकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें।

क्वाथ अनुपान रूप में—१. श्वेतचन्दन, २. अनन्तमूल, ३. नागरमोथा, ४. छोटी इलाइची, ५. नागकेशर और ६. धान लाजा—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। ३७५ मि.ली. पानी के साथ क्वाथ करें। जब अर्धावशेष हो तो छान लें। कुमुदेश्वर रस $\frac{१}{२}$ रत्ती (६० मि.ग्रा. खाकर) उपर्युक्त क्वाथ में मधु एवं शर्करा मिलाकर पियें। इस औषध से छर्दि एवं तृष्णा शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—उपर्युक्त क्वाथ से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—छर्दि एवं तृष्णा में।

८. महोदधिरस (र.सा.सं.)

ताम्रञ्चक्रिकया वङ्गं सूतं तालं सतुत्थकम्।
वटाङ्कुररसैर्भाव्यं तृष्णाहृद्वल्लमात्रतः ॥२९॥

१. ताम्रभस्म, २. वङ्गभस्म, ३. रससिन्दूर, ४. शुद्ध ताल तथा ५. शुद्ध मैनसिल—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम रससिन्दूर को अच्छी तरह पीस लें। उसी के साथ अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर वटाङ्कुरस्वरस की भावना देकर ३-३ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसका मक्खन और मिश्री के साथ सेवन करने से तृष्णारोग नष्ट हो जाती है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मक्खन-मिश्री से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—पीताभ रक्त। **स्वाद**—निःस्वाद। **उपयोग**—तृष्णारोग में।

---

१. अत्यम्बुपानान्न विपच्यतेऽन्नं निरम्बुपानाच्च स एव दोषः।
तस्मान्नरो वह्निविवर्धनाय मुहुर्मुहुर्वारि पिबेदभूरि ॥ (क्षेमकुतूहलम्)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

९. आम्रादिक्वाथ (र.सा.सं.)

सक्षौद्रमाम्रजम्बूत्थं पिबेत्क्वाथं पलोन्मितम्।
सकृष्णा मधुना कुर्याद्गण्डूषं शीतले स्थितः ॥३०॥

आम्रत्वक् ४६ ग्राम, जामुनत्वक् ४६ ग्राम को यवकुट कर चतुर्गुण जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मिलाकर पीने से तृष्णा शान्त हो जाती है। इसी क्वाथ में पिप्पलीचूर्ण २ ग्राम एवं मधु २० ग्राम मिलाकर शीतल स्थान पर रहते हुए गण्डूष करने से तृष्णा शान्त हो जाती है।

तृष्णारोग में पथ्य

शोधनं शमनं निद्रां स्नानं कवलधारणम्।
जिह्वाऽधःशिरयोर्दाहो दीपदग्धहरिद्रया ॥३१॥
कोद्रवाः शालयः पेया विलेपी लाजसक्तवः।
अन्नमण्डो धन्वरसाः शर्करा रागषाडवौ ॥३२॥
भृष्टैर्मुद्गैर्मसूरैर्वा चणकैर्वा कृतो रसः।
रम्भापुष्पं तक्रकूर्चं द्राक्षापर्पटपल्लवाः ॥३३॥
कपित्थं कोलमम्लीका कूष्माण्डकमुपोदिका।
खर्जूरं दाडिमं धात्री कर्कटी नलदाम्बु च ॥३४॥
जम्बीरं करमर्दं च बीजपूरं गवां पयः।
मधूकपुष्पं ह्रीबेरं तिक्तानि मधुराणि च ॥३५॥
बालतालाम्बु शीताम्बु पयःपेटी प्रपानकम्।
माक्षिकं सरसीतोयं शताह्वा नागकेशरम् ॥३६॥
एला जातीफलं पथ्या कुस्तुम्बुरु च टङ्कणम्।
घनसारो गन्धसारः कौमुदी शिशिरानिलः ॥३७॥
चन्दनार्द्रप्रियाश्लेषो रत्नाभरणधारणम्।
हिमानुलेपनञ्च स्यात् पथ्यमेतत्तृषातुरे ॥३८॥

संशोधन, संशमन, निद्रा, स्नान, कवल, दीपक की ज्वाला में हल्दी की गाँठ को दग्ध कर जिह्वातलीय सिराओं तथा शिरा का दाह, कोदोचावल, लाल शालिचावल, पेया, विलेपी, लाजसत्तू, चावल का माँड, जांगल पशु-पक्षियों के मांसरस, चीनी, राग, षाडव, भृष्ट मूँगयूष, भृष्ट मसूरयूष, भृष्ट चनायूष, केलाफूल, तक्र, कूर्च, मुनक्का, पित्तपापडापत्र, कैंथ, बेर, इमली, पेठा (कूष्माण्ड), पुदीना, खजूर, अनार, आमला, ककड़ी, खस का पानी, जम्बीरीनिम्बु, कमरख, बिजौरानिम्बु, गाय का दूध, महुआ का फूल, सुगन्धबाला, तिक्तरस, मधुररस, तुरन्त का ताडरस (नीरा), शीतल जल, नारियल, पानक (पन्ना), मधु, तालाब का जल, छोटी इलायची, जायफल, हरीतकी, धनियाँ, सुहागा, कर्पूर, श्वेतचन्दन, चाँदनी रात, शीतल हवा, चन्दनलिप्त प्रिया का आलिङ्गन, आभूषणों में रत्नों का धारण तथा चन्दनादि शीतल द्रव्यों का शरीर में लेप करना तृषार्त रोगियों के लिए हितकर होता है।

तृष्णारोग में अपथ्य

स्नेहाञ्जनस्वेदनधूमपान-
व्यायामनस्यातपदन्तकाष्ठम्।
गुर्वन्नमम्लं लवणं कषायं
कटु स्त्रियं दुष्टजलानि तीक्ष्णम्।
एतानि सर्वाणि हिताभिलाषी
तृष्णातुरो नैव भजेत् कदाचित् ॥३९॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां तृष्णारोगाधिकारः।

स्नेह, अंजन, स्वेदन, धूमपान, व्यायाम, नस्य, धूप, दातून, गुरुअन्न, लवण, कषायरस, कटुरस, मैथुन, दूषित जल तथा तीक्ष्ण द्रव्य— अपना हित चाहने वाला तृष्णा का रोगी उपर्युक्त सभी द्रव्यों का कभी भी सेवन न करें।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य तृष्णारोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ मूर्च्छारोगाधिकारः (२१)

मूर्च्छा रोग में चिकित्सा क्रम (च.द.)

सेकावगाहौ मणयः सहाराः
शीताः प्रदेहा व्यजनानिलाश्च ।
शीतानि पानानि च गन्धवन्ति
सर्वासु मूर्च्छास्वनिवारितानि ॥१॥

सामान्यतया मूर्च्छा रोग में शिर पर शीतल जल की धारा, शीतल जल से भरा बड़ा टब (बाथ टब) में अवगाहन, मणियों एवं रत्नों का हार, चन्दनादि शीतल प्रदेह, पंखे (खस के पंखे) की हवा, शीतल एवं सुगन्धित जल या शीतल सुगन्धित शर्बत का पान सभी मूर्च्छा रोगियों में हितकर है।

रक्त-मद्य-विषजन्य मूर्च्छा का चिकित्साक्रम

रक्तजायान्तु मूर्च्छायां हितः शीतक्रियाविधिः ।
मद्यजायां पिबेन्मद्यं निद्रां सेवेद्यथःसुखम् ॥
विषजायां विषघ्नानि भेषजानि प्रयोजयेत् ॥२॥

रक्त दोष से उत्पन्न या रक्त देखने से उत्पन्न मूर्च्छा रोग में शीतक्रिया द्वारा उपचार हितकर है। मद्यपान जन्य मूर्च्छा में वमन कराकर सुखपूर्वक रोगी के सोने की व्यवस्था करनी चाहिए। विषपानजन्य मूर्च्छा में वमनादि के बाद विषघ्न औषधों द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए।

१. कोलमज्जादि चूर्ण (च.द.)

कोलमज्जोषणोशीरकेशरं शीतवारिणा ।
पीतं मूर्च्छां जयेल्लीढा कृष्णा वा मधुसंयुता ॥३॥

१. बेर गुठली की मज्जा, २. मरिचचूर्ण, ३. खस तथा ४. नागकेशर—इन्हें समभाग लेकर चूर्ण कर काँच की शीशी में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ ग्राम जल के साथ लेने से मूर्च्छा शान्त होती है। अथवा—इस चूर्ण के साथ पिप्पलीचूर्ण ५०० मि.ग्रा. और मधु मिलाकर चाटने से मूर्च्छा नष्ट हो जाती है।

२. दुरालभा क्वाथ (च.द.)

पिबेद् दुरालभाक्वाथं सघृतं भ्रमशान्तये ॥४॥

मूर्च्छा रोग से पीड़ित व्यक्ति के भ्रम शान्त्यर्थ दुरालभाक्वाथ ५० मि.ली. घृत मिलाकर पीना चाहिए।

३. त्रिफला प्रयोग (च.द.)

त्रिफलायाः प्रयोगो वा प्रयोगः पयसोऽपि वा ॥५॥

त्रिफलाक्वाथ ५० मि.ली. पीने अथवा त्रिफलाचूर्ण मधु के साथ चाटकर गोदुग्ध पीने से मूर्च्छा में बहुत लाभ होता है।

४. कौम्भघृत प्रयोग (च.द.)

रसायनानां कौम्भस्य सर्पिषो वा प्रशस्यते ॥६॥

रसायन औषधियों का प्रयोग ६ ग्राम कौम्भ घृत[1] को गरम दूध एवं शर्करा के साथ प्रयोग करें। (मिट्टी के घड़े में १०० वर्ष तक रखा गोघृत कौम्भघृत कहलाता है।)

५. त्रिफलायोग (च.द.)

मधुना हन्त्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः ।
सप्ताहात्पथ्यभुजो मदमूर्च्छाकामलोन्मादान् ॥७॥

रात में ५ ग्राम त्रिफलाचूर्ण को मधु के साथ मिलाकर सेवन करें तथा दूसरे दिन प्रातः गुड़ के साथ आदी के टुकड़ों को खाना चाहिए। पथ्यपूर्वक १ सप्ताह तक इस औषधि का सेवन करने से मद, मूर्च्छा, उन्माद एवं कामला रोग नष्ट होता है।

६. अवबोधकरी प्रक्रिया (च.द.)

अञ्जनान्यवपीडाश्च धूमः प्रधमनानि च ।
सूचीभिस्तोदनं शस्तं दाहः पीडा नखान्तरे ॥८॥
लुञ्चनं केशलोम्नाञ्च दन्तैर्दशनमेव च ।
आत्मगुप्तावघर्षश्च हितस्तस्यावबोधने ॥९॥

मूर्च्छा से पीड़ित व्यक्ति के अवबोधनार्थ (जगाने के लिए) मरिचचूर्ण का अञ्जन, लहसुन, आदी के तीक्ष्ण रसों का नासा में अवपीड़न (नाकों में ३-३ बूँद डालना), मिर्चाचूर्ण उसकी नाक के आगे जलाकर धूम देना, प्रधमन नस्य देना, अंगुलियों के नखों के पार्श्व में सुई चुभोना शस्त्र से काटना शलाका से दाह करना, केश एवं लोभ समूहों को नोचना, दाँतों से उसके शरीर पर कहीं भी काटना अथवा आत्मगुताफली के ऊपर के रोमों को शरीर में लगाकर खुजली उत्पन्न करना इस क्रियाओं से रोगी में चेतना आती है। इसे अवश्य करना चाहिए।

७. निद्राकर चूर्ण

गुडं पिप्पलिमूलस्य चूर्णेनातिचिरं लिहन् ।
चिरादपि च सन्नष्टां निद्रामाप्नोत्यसंशयम् ॥१०॥

पिप्पलीमूलचूर्ण २ ग्राम गुड़ के साथ मिला कर चाटने से

---

१. स्थितं वर्षशतं श्रेष्ठं कौम्भं सर्पिस्तदुच्यते ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बहुत दिनों से नष्ट हुई निद्रा निःसन्देह आती है अर्थात् रोगी खूब सोता है।

निद्राकर द्रव्य

इक्षवः पोतकी माषाः सुरा मांसं घृतं पयः।
गोधूमगुडमत्स्याश्च निद्रां कुर्वन्ति देहिनाम् ॥११॥

ईख का रस, पोई का शाक, उड़द, मद्य, घृत, भैंस का दूध, गेहूँ, गुड़ तथा मछली—इन सभी द्रव्यों के सेवन से निद्रा आती है।

निद्राकारक भाँग लेप

शक्राशनमजाक्षीरं पादलेपात्तदर्थकृत् ॥१२॥

भाँग को बकरी के दूध में पीसकर पैर पर लेप करने से निद्रा आ जाती है।

८. मूर्च्छान्तक रस (र.चं.)

सिन्दूरं माक्षिकं हेम शिलाजत्वयसी तथा।
शतमूल्या विदार्याश्च स्वरसेन विभावयेत् ॥१३॥
श्लक्ष्णं पिष्ट्वा ततः कुर्याद् वटिका वल्लसम्मिताः।
रसो मूर्च्छान्तको हन्यादसौ मूर्च्छाः शिवोदितः ॥१४॥

१. रससिन्दूर, २. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ३. स्वर्णभस्म, ४. शुद्ध शिलाजतु तथा ५. लौहभस्म—सभी समभाग में लें। सर्वप्रथम खरल में रससिन्दूर को पीसें, ततः उसमें स्वर्णादि सभी द्रव्यों को मिला लें। पुनः शिलाजीत को थोड़ा गरम पानी में घोलकर रससिन्दूरादि सभी द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। सूखने पर शतावरीस्वरस एवं विदारीकन्दस्वरस की ३-३ भावना देकर ३-३ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'मूर्च्छान्तक रस' को भगवान् शंकर ने निर्मित किया था। यह मूर्च्छा को नष्ट करता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी (शिलाजतु जैसा)। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—मूर्च्छा।

९. सुधानिधि रस (र.सा.सं.)

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत्।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा शीतलं भजेत् ॥
सुधानिधिरसो नाम मदमूर्च्छाविनाशनः ॥१४॥

रससिन्दूर तथा पिप्पलीमूलचूर्ण समभाग लें। एक खरल में रससिन्दूर पीसकर उसमें समभाग पिप्पलीमूलचूर्ण मिलाकर मर्दन करें। पुनः जल की भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बना लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'सुधानिधि रस' को मधु के साथ लेने से मद-मूर्च्छा रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—रक्त। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—मद एवं मूर्च्छा में।

१०. अश्वगन्धारिष्ट

तुलार्द्धं चाश्वगन्धाया मुशल्याः पलविंशतिः।
मञ्जिष्ठाया हरीतक्या रजन्योर्मधुकस्य च ॥१६॥
रास्नाविदारीपार्थानां मुस्तकत्रिवृतोरपि।
भागान् दशपलान् दद्यादनन्ताश्यामयोस्तथा ॥१७॥
चन्दनद्वितयस्यापि वचायाश्चित्रकस्य च।
भागानष्टपलान् क्षुण्णानष्टद्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥१८॥
द्रोणशेषे कषायेऽस्मिन् पूते शीते प्रदापयेत्।
धातक्याः षोडशपलं माक्षिकस्य तुलात्रयम् ॥१९॥
व्योषस्य द्विपलञ्चापि त्रिजातकचतुष्पलम्।
चतुष्पलं प्रियङ्गोश्च द्विपलं नागकेशरम् ॥२०॥
मासादूर्ध्वं पिबेदेनं पलार्द्धपरिमाणतः।
मूर्च्छामपस्मृतिं शोषमुन्मादमपि दारुणम् ॥२१॥
कार्श्यमर्शांसि मन्दत्वमग्नेर्वातभवान् गदान्।
अश्वगन्धाद्यरिष्टोऽयं पीतो हन्यादसंशयम् ॥२२॥

क्वाथ द्रव्य—१. अश्वगन्धा २.३३५ किलो, २. मुशली श्वेत १ किलो; ३. मंजीठ, ४. हरड़ बड़ी, ५. हल्दी, ६. दारुहल्दी, ७. मुलेठी, ८. रास्ना, ९. विदारीकन्द, १०. अर्जुनछाल, ११. नागरमोथा, १२. निशोथ—प्रत्येक ५००-५०० ग्राम, १३. अनन्तमूल श्याम, १४. अनन्तमूल श्वेत, १५. श्वेतचन्दन, १६. लालचन्दन, १७. वच, १८. चित्रकमूल—प्रत्येक ३७५ ग्राम; १९. जल ९६ लीटर (आठ द्रोण), २०. धातकीपुष्प १९० ग्राम तथा २१. मधु १५ किलो लें।

प्रक्षेप द्रव्य—१. शुण्ठी ३० ग्राम, २. पिप्पली ३० ग्राम, ३. मरिच ३० ग्राम, ४. छोटी इलाइची ६० ग्राम, ५. दालचीनी ६० ग्राम, ६. तेजपत्र ६० ग्राम, ७. नागकेशर ९० ग्राम तथा ८. प्रियंगु फूल १९० ग्राम।

क्वाथ द्रव्य के अश्वगन्धा से चित्रकमूल तक के सभी १८ द्रव्यों को यवकुट करें। १९० लीटर जल में रात्रिपर्यन्त फूलने दें। प्रातः मध्यमाग्नि में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष होने पर छान लें। इस अवशिष्ट १२ लीटर क्वाथ को एक नये घड़े में रखें। इसमें १५ किलो मधु मिलावें। तत्पश्चात् धूप में सुखाया हुआ धाय का फूल डालें और शुण्ठी से प्रियंगुफूल तक के सभी आठ द्रव्यों का मोटा यवकुट कर उस घड़े में डालें तथा अच्छी तरह से हाथ से मिलाकर शराव से घड़े का मुख बन्द करें। २० से २५ दिनों के बाद घड़े का मुख खोलकर परीक्षा करें। औषधि पूर्णरूपेण तैयार समझकर कपड़े से छान लें और उसी घड़े में

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

साफकर पुनः रख दें। १५ दिनों के बाद औषधि का तलछट बैठ गया है, ऐसा समझकर घड़े को टेढ़ा कर स्वच्छ 'अश्वगन्धारिष्ट' पृथक् छानकर बोतल में भरकर उस पर लेबल और कार्क लगाकर सुरक्षित रखें। कम-से-कम १ महीना के बाद १२ से २३ मि.ली. की मात्रा बराबर जल मिलाकर पीने से मूर्च्छा, अपस्मार, शोष, भयंकर उन्माद, कृशता, अर्श, मन्दाग्नि एवं वातज विकारों को यह अश्वगन्धारिष्ट निश्चित ही दूर करता है।

मात्रा—१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—जल मिलाकर। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ द्रव। **स्वाद**—मधुर तीक्ष्ण मद्यवत्। **उपयोग**—मूर्च्छा, अपस्मार, शोष, उन्माद, कृशता एवं वात विकार में।

मूर्च्छारोग में पथ्य

धूमोऽञ्जनं नावनमस्त्रमोक्षो
दाहश्च सूचीपरितोदनानि।
रोम्णां कचानामपि कर्षणानि
नखान्तपीडा दशनोपदंशः ॥२३॥
नासामुखद्वारमरुन्निरोधो
विरेचनच्छर्दनलङ्घनानि।
क्रोधो भयदुःखकरी च शय्या
कथा विचित्रा च मनोहराणि ॥२४॥
छाया नभोऽम्भः शतधौतसर्पि-
र्मृदूनि तिक्तानि च लाजमण्डः।
जीर्णा यवालोहितशालयश्च
कौम्भं हविर्मुद्गसतीनयूषाः ॥२५॥
धन्वोद्भवामांसरसाश्च रागाः
सषाडवागव्यपयःसिता च।
पुराणकूष्माण्डपटोलमोच-
हरीतकीदाडिमनारिकेलम् ॥२६॥
मधूकपुष्पाणि च तण्डुलीय-
मुपोदिकाऽन्नानि लघूनि चापि।
प्रतीरनीरं सितचन्दनानि
कर्पूरनीरं हिमबालुका च ॥२७॥
अत्युच्चशब्दोऽद्भुतदर्शनञ्च
गीतानि वाद्यान्यपि चोत्कटानि।
श्रमःस्मृतिश्चिन्तनमात्मबोधो
धैर्यञ्च मूर्च्छावतिपथ्यवर्गः ॥२८॥

धूमपान, अंजन, नस्य, रक्तमोक्षण, अङ्गदाह, सूई चुभाना, बाल खींचना, दाँतों से काटना, नख के भीतर पीड़ा करना, नाक-मुख को बन्द करना, विरेचन, वमन, लंघन, क्रोध, भयोत्पादन, असुखकर शय्या पर सोना, आनन्ददायक कथा सुनना, शीतल छाया, वर्षा का पानी, शतधौत घृत, मदु द्रव्य, तिक्त द्रव्य , लाजमण्ड, पुराना जौ, शालिचावल, कौम्भघृत, मुद्गयूष, मटरयूष, जांगल मांसरस, राग-षाडव, गाय का दूध, शर्करा, पुराना पेठा, परवल, केला, हरड़, अनारदाना, नारियल फल, मधुर फूल, चौलाई शाक, पोई शाक, लघु अन्न, नदी किनारे के कुएँ का जल, श्वेत चन्दन, कर्पूरजल, सुगन्धबाला, अतितीव्र ध्वनि, अद्भुत् दर्शन, जोर से गाना, जोर से बाजा बजाना, परिश्रम करना, पूर्व की बातों का स्मरण दिलाना, बिछुड़े मित्रो की याद दिलाना, आत्मज्ञान एवं धैर्य धारण कराना मूर्च्छा रोगियों के लिए हितकर है।

मूर्च्छा रोग में अपथ्य

ताम्बूलं पत्रशाकञ्च दन्तघर्षणमातपम्।
विरुद्धान्यन्नपानानि व्यवायं स्वेदनं कटु।
तृण्निद्रयोर्वेगरोधं तक्रं मूर्च्छामयी त्यजेत् ॥२९॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां मूर्च्छारोगाधिकारः।

पान (ताम्बूल) खाना, पत्रशाक, दतुअन करना, धूप-सेवन, विरोधी अन्न-पान, मैथुन, स्वेदन कर्म, कटु द्रव्य, प्यास और निद्रा के वेग को रोकना एवं तक्र मूर्च्छा के रोगी को त्याग कर देना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य मूर्च्छारोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ मदात्ययरोगाधिकारः (२२)

मन्थ प्रयोग (च.द.)

मन्थः खर्जूरमृद्वीकावृक्षाम्लाम्लकदाडिमैः ।
परूषकैः सामलकैर्युक्तो मद्यविकारनुत् ॥१॥

१. पिण्डखजूर, २. द्राक्षा (मुनक्का), ३. कोकम फल, ४. इमली फल, ५. अनारदाना, ६. फालसा फल तथा ७. आमला— प्रत्येक द्रव्य निर्बीज १२-१२ ग्राम लें। इन्हें १९० मि.ली. जल में २-३ घण्टे तक भिंगो दें और हाथ से मसलें। तदनन्तर ५० ग्राम शक्कर डालकर मथानी से अच्छी तरह मथकर मदात्यय के रोगी को पिलावें। इसके पीने से मद्यविकार नष्ट हो जाता है।

तर्पणार्थ यूष कल्पना (च.द.)

जले चतुष्पले शीते क्षुण्णं द्रव्यपलं क्षिपेत् ।
मृत्पात्रे मर्दयेत् सम्यक् तस्माच्च द्विपलं पिबेत् ॥२॥
सतीनमुद्गमिश्रान् वा दाडिमामलकान्वितान् ।
द्राक्षाऽऽमलकखर्जूरपरूषकरसेन वा ॥
कल्पयेत्तर्पणान् यूषान् रसाँश्च विविधात्मकान् ॥३॥

यवकुट किया हुआ औषध द्रव्य ४६ ग्राम और ४ गुना शीतल जल मृत्पात्र में डालकर हाथ से अच्छी तरह मसलकर ९२ मि.ली. पिलाना चाहिए। मटर, मूंग, दाडिम तथा आँवला अथवा मुनक्का, आँवला, खजूर तथा फ़ालसा को चार गुना जल मिलाकर हाथ से खूब मसलकर यूष लेकर तर्पणार्थ पिलाना चाहिए।

वातज मदात्यय की चिकित्सा (च.द.)

मद्यं सौवर्चलव्योषयुक्तं किञ्चिज्जलान्वितम् ।
जीर्णमद्याय दातव्यं मदपानात्ययापहम् ॥४॥

वातज मदात्यय की शान्ति के लिए मद्य में कालानमक, शुण्ठी, पिप्पली, मरिच और आधा जल मिलाकर पिलाना चाहिए।

पित्तज मदात्यय की चिकित्सा (च.द.)

मुद्गयूषः सितायुक्तः स्वादुर्वा पैशितो रसः ।
पित्तपानात्यये योज्याः सर्वतश्च क्रिया हिमाः ॥५॥

पित्तज पानात्यय में मूँग के यूष में शर्करा मिलाकर पिलाना चाहिए अथवा मांस को मधुर रस की (जीवनीयगणादि) औषधों से युक्त अच्छी तरह से पकाकर मांसरस लेकर उसे स्वादिष्ट बनाकर पिलाना चाहिए। इसके अतिरिक्त चन्दनादि का लेप, शीतलजलाभिषेक, शीतल धारागृह तथा सभी प्रकार का शीतोपचार करना चाहिए।

कफज मदात्यय की चिकित्सा (च.द.)

पानात्यये कफोद्भूते लङ्घनञ्च यथाबलम् ।
दीपनीयौषधोपेतं पिबेन्मद्यं समाहितः ॥६॥

कफज मदात्यय में यथाबल (बलानुसार) लंघन कराकर दीपनीय औषध पञ्चकोल-षड्षण मिलाया हुआ मद्य पिलाना अधिक हितकर है।

त्रिदोषज मदात्यय की चिकित्सा (च.द.)

सर्वजे सर्वमेवेदं प्रयोक्तव्यं चिकित्सितम् ।
आभिः क्रियाभिः सिद्धाभिः शान्तिं याति मदात्ययः ॥७

त्रिदोषज मदात्यय रोग में त्रिदोषनाशक उपर्युक्त मिश्रित चिकित्सा करनी चाहिए अथवा अधिक प्रवृद्ध दोष की पहले चिकित्सा करनी चाहिए। इस सिद्धक्रिया के प्रयोग से मदात्यय रोग नष्ट हो जाता है।

मद्य को हीन वीर्य करने का उपाय (च.द.)

मद्यं पीत्वा यदि ना तत्क्षणमवलेढि शर्करां सघृताम् ।
जातु न मदयति मद्यं मनागपि प्रथितवीर्यमपि ॥८॥

अधिक मद्यपान करके भी यदि व्यक्ति तुरन्त शर्करायुक्त घृत-पान कर लेता है तो उग्रवीर्ययुक्त मद्य भी उसे मदयुक्त नहीं करता है।

पूगीफलजन्य मद चिकित्सा (च.द.)

सच्छर्दिमूर्च्छातीसारं मदं पूगफलोद्भवम् ।
सद्यः प्रशमयेत्पीतमातृप्तैर्वारि शीतलम् ॥९॥

कभी-कभी सुपारी खाने से मद्य जैसे लक्षण हो जाते हैं अथवा पूगीफलोद्भव मद्य (मृतसंजीवनी सुरा) पीने से मद्य के लक्षण उपस्थित होने पर आकण्ठ शीतल जल पिलाने से मद्य शान्त हो जाता है।

अन्यच्च (च.द.)

वन्यकरीषघ्राणाज्जलपानाल्लवणभक्षणाद्वाऽपि ।
शाम्यति पूगफलमदश्चूर्णरुजा शर्कराकवलात् ॥१०

जंगली कण्डों को जलाकर सूंघने से या शीतल जल पीने से या नमक खाने से पूगीफलजन्य विष उतर जाता है। इसी प्रकार

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चूना खाने से उत्पन्न मुखपाक दोष शर्करा जल (चीनी के शर्बत) का कवल धारण करने से नष्ट हो जाता है।

मदन-कोद्रव-धत्तूरज मद नाशनोपाय (च.द.)

सगुडः कूष्माण्डकरसः शमयति मदमाशुमदनकोद्रवजम्।
धस्तूरजञ्च दुग्धं सशर्करं पानयोगेन ॥११॥

कूष्माण्ड (पेठे) के स्वरस में गुड़ घोलकर पीने से मदनफल तथा कोद्रव अन्नयुक्त मद शान्त हो जाता है। इसी तरह दूध में शर्करा मिलाकर पीने से धत्तूरजन्य मद (विष) शान्त हो जाता है।

दुग्ध प्रयोग (च. द.)

न चेन्मद्यक्रमं मुक्त्वा क्षीरमस्य प्रयोजयेत् ॥१२॥
लङ्घनाद्यैः कफे क्षीणे जातदौर्बल्यलाघवे।
ओजस्तुल्यगुणं क्षीरं विपरीतं च मद्यतः ॥१३॥
पयसा च हृते रोगे बले जाते निवर्त्तयेत्।
क्षीरप्रयोगं मद्यं वा क्रमेणाल्पाल्पमाचरेत् ॥१४॥

पूर्व में कही गयी चिकित्सा से मदात्यय रोग दूर न हो तो मद्य को छोड़कर गोदुग्ध के प्रयोग से चिकित्सा करनी चाहिए। लंघनादि कर्म से कफ के क्षीण हो जाने पर तथा दुर्बलता एवं लघुता बढ़ जाने पर दुग्धपान कराना चाहिए क्योंकि दुग्ध ओज के समान गुण वाला है और मद्य के विपरीत गुण वाला है। दुग्ध प्रयोग से मदात्यय रोग नष्ट होने तथा बल बढ़ने के बाद दूध का प्रयोग बन्द कर पुनः मद्य का धीरे-धीरे अल्पमात्रा में प्रयोग करें। इस तरह मदात्यय रोग को नष्ट करना चाहिए।

विमर्श—मद्यपान के आदी व्यक्ति की ऐसी मानसिक दशा हो जाती है कि वह मद्य सर्वथा के लिए नहीं छोड़ सकता है जो उसकी दुर्बलता है। आचार्य चक्रपाणि ने मद्य के विपरीत ओजोवर्धक पदार्थ दुग्ध का प्रयोग कर मदात्यय जीतने की चिकित्सा बतायी है।

महर्षि चरक ने ओज के दश गुण बताये हैं। यथा—

गुरु शीतं मृदु श्लक्ष्णं बहलं मधुरं स्थिरम्।
प्रसन्नं पिच्छिलं स्निग्धमोजो दशगुणं स्मृतम्॥
(च.चि.२४)

मद्य के भी दश गुण बताये हैं—

लघूष्णतीक्ष्णसूक्ष्माम्लव्यवाय्याशुगमेव च।
रूक्षं विकासी विशदं मद्यं दशगुणं स्मृतम्॥
(च.चि. २४)

विष के दश गुण—

लघु रूक्षमाशु विशदं व्यवायि तीक्ष्णं विकासि सूक्ष्मं च।
उष्णमनिर्देश्यरसं दशगुणमुक्तं विषं तज्ज्ञैः॥
(च.चि.२३/२३)

ओज के गुण	विष के गुण	मद्य के गुण[1]
१. गुरु	लघु	लघु
२. शीत	रूक्ष	उष्ण
३. मृदु	आशुग	तीक्ष्ण
४. श्लक्ष्ण	विशद	सूक्ष्म
५. बहल	व्यवायी	अम्ल
६. मधुर	तीक्ष्ण	व्यवायी
७. स्थिर	विकासी	आशुग
८. प्रसन्न	सूक्ष्म	रूक्ष
९. पिच्छिल	उष्ण	विकासी
१०. स्निग्ध	अव्यक्तरस	विशद

मदात्यय की परिभाषा आचार्य माधव ने निम्न प्रकार कही है—

ये विषस्य गुणाः प्रोक्तास्तेऽपि मद्ये प्रतिष्ठिताः।
तेन मिथ्योपयोगेन भवत्युग्रो मदात्ययः॥ (मा.नि.)

अपि च—मद एव अत्ययकारक इति मदात्ययः। किंवा—मदशब्देनेह मद्यमुच्यते तेन कृतोऽत्ययो मदात्ययः।

१. फलत्रिकाद्यचूर्ण

फलत्रिकं त्रिवृच्छ्यामा देवदारु महौषधम्।
अजमोदा यमानी च दार्वी लवणपञ्चकम् ॥१५॥
शतपुष्पा वचा कुष्ठं त्रिसुगन्ध्येलबालुकम्।
सर्वाण्येतानि संचूर्ण्य पिबेच्छीतेन वारिणा ॥१६॥
पानात्ययादिरोगाणां हरणेऽग्नेश्च दीपने।
संग्रहग्रहणीध्वंसेऽप्येतदेवौषधं क्षमम् ॥१७॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. निशोथ, ५. कृष्ण अनन्तमूल, ६. देवदारु, ७. सोंठ, ८. अजमोदा, ९. अजवायन, १०. दारुहल्दी, ११. सैन्धवलवण, १२. सामुद्रलवण, १३. विडलवण, १४. औद्भिल्लवण, १५. सौवर्चललवण, १६. सौंफ, १७. वच, १८. कूठ, १९. छोटी इलाइची, २०. दालचीनी, २१. तेजपात तथा २२. एलुआ—सभी द्रव्य समभाग लें। इन सभी द्रव्यों को सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसके सेवन से पानात्यय रोग नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त संग्रहणी का नाश करने में यह औषध समर्थ है। यह अग्निवर्धक है। इसकी ३ से ४ ग्राम तक की मात्रा ताजे जल से दें।

मात्रा—३ से ४ ग्राम। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—

१. गुरुत्वं लाघवाच्छैत्यमौष्ण्यादम्लस्वभावतः।
माधुर्यं मार्दवं तैक्ष्ण्यात् प्रसादं चाशुभावनात् ॥३२॥
रौक्ष्यात् स्नेहं व्यवायित्वात् स्थिरत्वं श्लक्ष्णतामपि।
विकासिभावात् पैच्छिल्यं वैशद्यात् सान्द्रतां तथा॥३३॥
सौक्ष्म्यान्मद्यं निहन्त्येवमोजसः स्वगुणैर्गुणान्॥ (च.चि.२४)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुगन्धित। **वर्ण**—आमलाचूर्ण जैसा काला। **स्वाद**—तिक्त लवणीय। **उपयोग**—मदात्यय एवं संग्रहणी मे।

२. अष्टाङ्गलवण (च.द.)

सौवर्चलमजाजी च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम्।
त्वगेलामरिचार्द्धांशं शर्कराभागयोजितम् ॥१८॥
हितं लवणमष्टाङ्गमग्निसन्दीपनं परम्।
मदात्यये कफप्राये दद्यात्स्रोतोविशोधनम् ॥१९॥
एतदेव पुनर्युक्त्या मधुराम्लैर्द्रवीकृतम्।
गोधूमान्नयवान्नानां मांसानां चातिरोचनम् ॥२०॥

१. सौवर्चललवण १ भाग, २. श्वेतजीरा १ भाग, ३. वृक्षाम्ल (कोकम) १ भाग, ४. अम्लवेत १ भाग, ५. दालचीनी १/२ भाग, ६. छोटी इलाइची १/२ भाग, ७. मरिच १/२ भाग तथा ८. चीनी १ भाग—इन आठ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में रख लें। इस चूर्ण को ३ से ४ ग्राम की मात्रा में कफ प्रधान मदात्ययरोग में स्रोतस विशोधनार्थ जल से लेना चाहिए।

इस अष्टाङ्गलवणचूर्ण को अम्लद्रव (निम्बुस्वरस) एवं मधुरादि द्रव्यों को मिलाकर चटनी जैसा अर्द्ध द्रव बना लें। यह गेहूँ, जौ एवं मांसादि को अत्यन्त रुचिकर बनाता है।

३. एलादि मोदक

एलां मधूकमग्निञ्च रजन्यौ द्वे फलत्रयम्।
रक्तशालिं कणां द्राक्षां खर्जूरञ्च तिलं यवान् ॥२१॥
विदारीं गोक्षुरं बीजं त्रिवृताञ्च शतावरीम्।
सञ्चूर्ण्य मोदकं कुर्यात् सितया द्विप्रमाणया ॥२२॥
धारोष्णेनापि पयसा मुद्गयूषेण वा समम्।
पिबेदक्षप्रमाणन्तु प्रातर्नत्वाऽम्बिकां गदी ॥२३॥
मद्यपानसमुत्थाना विकारा निखिला अपि।
सेवनादस्य नश्यन्ति व्याधयोऽन्ये च दारुणः ॥२४॥

१. छोटी इलायची, २. महुए का फूल, ३. चित्रकमूल, ४. हल्दी, ५. दारुहल्दी, ६. आमला, ७. हरीतकी, ८. बहेड़ा, ९. लाल शालिचावल, १०.पीपर, ११. द्राक्षा (मुनक्का), १२. खजूर १३. तिल, १४. जौ, १५. विदारीकन्द, १६. गोक्षुरबीज, १७. निशोथ, १८. शतावरी तथा १९. चीनी—इलायची से शतावरीपर्यन्त सभी १८ द्रव्य १०-१० ग्राम और चीनी सभी से दुगुनी अर्थात् ३६० ग्राम लें। इन सभी १८ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और चीनी को १ स्टेनलेस स्टील पात्र में रखकर उसमें थोड़ा जल देकर चूल्हे पर पकावें। मोदक हेतु ३-४ तार की चासनी होने पर पात्र को चूल्हे से नीचे उतारें और उपर्युक्त चूर्ण को उसमें डालकर अच्छी तरह मिला लें तथा १०-१० ग्राम के मोदक (लड्डू) बनाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। भगवती अम्बिका देवी को प्रातः नमस्कार कर १ मोदक गोदुग्ध से या मूँग के यूष से सेवन करने से मद्यपानजन्य सभी विकार नष्ट हो जाते हैं। इसके सेवन से अन्य समस्त व्याधियाँ भी नष्ट हो जाती हैं।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध या मूँग यूष से। **गन्ध**—सुगन्धित पाक जैसा। **वर्ण**—गुड़ाभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—मदात्यय एवं तज्जन्य विकार शमनार्थ।

४. महाकल्याणवटी

हेमाभ्रञ्च रसं गन्धमयो मौक्तिकमेव च।
धात्रीरसेन सम्मर्द्य गुञ्जामात्रां वटीं चरेत् ॥२५॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय तिलक्षोदमधुप्लुताम्।
सिताक्षौद्रयुतां वाऽपि नवनीतेन वा सह ॥२६॥
अयथापानजा रोगा वातजाः कफपित्तजाः।
गदाः सर्वे विनश्यन्ति ध्रुवमस्य निषेवणात् ॥२७॥

१. स्वर्णभस्म, २. अभ्रकभस्म, ३. शुद्ध पारद, ४. शुद्ध गन्धक, ५. लौहभस्म तथा ६. मोतीभस्म—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः अन्य सभी भस्मों को उसमें मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। पुनः आमलास्वरस की भावना देकर मर्दन करें। १ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रह करें। चीनी एवं मधु से या मक्खन के साथ सेवन करने से पानात्यय जन्य रोग, वातज, पित्तज एवं कफज समस्त रोग निश्चित ही नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—चीनी, मधु या मक्खन से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—मदात्यय तथा अन्य सभी विकार में।

५. पुनर्नवादिघृत (च.द.)

पयःपुनर्नवाक्वाथयष्टिकल्कप्रसाधितम्।
घृतं पुष्टिकरं पानान्मद्यपानहतौजसः ॥२८॥

१. गोघृत ७५० ग्राम, २. गोदुग्ध ३ लीटर, ३. पुनर्नवा क्वाथ ३ लीटर तथा ४. यष्टिमधुकल्क १८८ ग्राम लें। सर्वप्रथम घी को मूर्च्छित करें। तत्पश्चात् यष्टिमधु को कूट-पीसकर कल्क बना लें और मूर्च्छित घृत में डालकर चूल्हे पर चढ़ावें तथा दूध देकर पाक करें। उसके बाद पुनर्नवाक्वाथ डालकर पकावें। क्वाथ का जल सूखने लगे तो सम्यक् पाक के लिए ३ लीटर जल देकर पुनः पकावें। जब जलीयांश सूखने लगे तो पाक परीक्षा कर घृतपात्र को उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। ५ से १० ग्राम की मात्रा में गोदुग्ध के साथ पीने से मदात्यय रोग नष्ट हो जाता है। यह पुनर्नवादिघृत शरीर- पुष्टिकर एवं ओजस्कर है।

मात्रा—५-१० ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**— मदात्यय नाशक है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६ श्रीखण्डासव

श्रीखण्डं मरिचं मांसी रजन्यौ चित्रकं घनम्।
उशीरं तगरं द्राक्षां चन्दनं नागकेशरम् ॥२९॥
पाठां धात्रीं कणां चव्यं लवङ्गञ्चैलबालुकम्।
लोध्रञ्चार्द्धपलोन्मानं जलद्रोणद्वये क्षिपेत् ॥३०॥
द्राक्षां षष्टिपलां तत्र गुडस्य च तुलात्रयम्।
धातकीं द्वादशपलाञ्चैकत्र परियोजयेत् ॥३१॥
मासं संस्थाप्य मृद्भाण्डे वस्त्रपूतं रसं नयेत्।
पाययेन्मात्रया वैद्यो वयोवह्न्याद्यपेक्षया ॥३२॥
पानात्ययं परमदं पानाजीर्णञ्च नाशयेत्।
पानविभ्रममत्युग्रं श्रीखण्डासव आशु च ॥३३॥

१. श्वेतचन्दन, २. मरिच, ३. जटामांसी, ४. हल्दी, ५. दारुहरिद्रा, ६. चित्रकमूल, ७. नागरमोथा, ८. खस, ९. तगर, १०. द्राक्षा (मुनक्का), ११. रक्तचन्दन, १२. नागकेशर, १३. पाठा, १४. आमला, १५. पीपर, १६. चव्यमूल, १७. लौंग १८. एलवालुक तथा १९. लोध्र—ये प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें। जल २४ लीटर, गुड़ १५ किलो, धातकीपुष्प ५६५ ग्राम और द्राक्षा (मुनक्का) २८०० ग्राम लें। दो मिट्टी के बड़े घड़े में पानी भरकर रात्रिपर्यन्त रखें। प्रातः पानी निकालकर घड़ा खाली करें। अब इस घड़े में १२-१२ लीटर पानी डालें। घड़े की तली में पुआल अथवा धान की भूसी आदि रखकर किसी एकान्त गृह में रखें। पुनः श्वेतचन्दन से लोध्र तक के सभी १९ द्रव्यों को यथाप्रमाण लेकर यवकुट करें और आधा-आधा दोनों घड़ों में डालें। ततः दोनों घड़ों में ७.५००-७.५०० किलो गुड़ देकर हाथ से अच्छी तरह घोल दें। वैसे ही आधा-आधा धातकीपुष्प भी दोनों घड़े में रखें। तदनन्तर द्राक्षा को पीसकर आधा-आधा दोनों घड़े में डालकर पुनः हाथ से मसलकर गुड़ घोल दें। इसके बाद शराव से मुख बन्दकर खड़िया से उस पर 'श्रीखण्डासव' नाम तथा निर्माण तिथि लिख दें। २० से २५ दिनों के बाद परीक्षा कर आसव छान लें। कपड़े से छानकर उन घड़ों को अच्छी तरह से साफ कर पुनः उसी घड़े में गाद जमने के लिए उस आसव को रखें। १ माह बाद घड़े को टेढ़ा कर स्वच्छ श्रीखण्डासव को पृथक् कर बोतलों में भरें और लेबल लगाकर सुरक्षित रख लें। कम से कम ६ महीने बाद इसका सेवन करना चाहिए। १२ से २३ मि.ली. की मात्रा में जल के साथ पीने से पानात्यय, परमद और पाना-जीर्ण एवं भयंकर पानविभ्रम रोगों को शीघ्र ही नष्ट करता है।

मात्रा—१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभद्रव। **स्वाद**—मधुर-तीक्ष्ण। **उपयोग**—मदात्यय एवं मदविकार नाशनार्थ।

मदात्यय में पथ्य

संशोधनं संशमनं स्वपनं लङ्घनं श्रमः।
संवत्सरसमुत्पन्नाः शालयः षष्टिकैः सह ॥३४॥
मुद्गा माषाश्च गोधूमाः सतीना रागषाडवौ।
एणतित्तिरिलावाजदक्षबर्हिशशामिषम् ॥३५॥
वेशवारो विचित्रान्नं हृद्यं मद्यं पयः सिता।
तण्डुलीयं पटोलञ्च मातुलुङ्गं परूषकम् ॥३६॥
खर्जूरं दाडिमं धात्री नारिकेलं च गोस्तनी।
सर्पिः पुराणं कर्पूरं प्रतीरं शिशिरानिलः ॥३७॥
धारागृहं चन्द्रपादा मणयो मित्रसङ्गमः।
क्षौमाम्बरं प्रियाश्लेषो गीतं वादित्रमुद्धतम् ॥
शीताम्बु चन्दनं स्नानं सेव्यमेतन्मदात्यये ॥३८॥

मदात्यय से पीड़ित रोगी में वमन, विरेचन, संशमन, निद्रा, उपवास, परिश्रम, १ वर्ष के पुराने शालिचावल, साठीचावल, मूँग, उड़द, गेहूँ, मटर आदि अन्नों का प्रयोग करना चाहिए। राग, षाडव, मृग, तित्तिर, बगेरी (लावा) पक्षी, बकरा, मुर्गा, मोर तथा खरहे के मांस का सेवन; मांसरस, वेसवार, अनेक प्रकार के रुचिकर अन्न-पान, व्यञ्जन, मद्य, दूध, चीनी, चौलाई शाक, पटोलशाक, मातुलुंग, फालसा फल, खजूर, अनारदाना, आमला, नारियल, द्राक्षा, पुराना घी, कपूर, नदी का किनारा, शीतल हवा, धारागृह में स्नान, चन्द्रकिरण का सेवन, मणिधारण, मित्रमण्डली, रेशमी वस्त्र, प्रिया का आलिङ्गन, मनोऽनुकुल गाना-बजाना, शीतल जल पीना, चन्दन लेप, शीतल जल से स्नान करना हितकर है।

मदात्यय रोग में अपथ्य

स्वेदोऽञ्जनं धूमपानं नावनं दन्तघर्षणम्।
ताम्बूलञ्चेत्यपथ्यं स्यान्मदात्ययविकारिणाम् ॥३९॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां मदात्ययरोगाधिकारः।

स्वेदन, अञ्जन, धूमपान, नस्य, दतुअन से दाँत घिसना, और पान खाना मदात्यय रोग में अपथ्यकर है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य मदात्ययाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ दाहरोगाधिकारः (२३)

सामान्य क्रम (च.द.)

यत्पित्तज्वरदाहोक्तं दाहे तत्सर्वमिष्यते ॥१॥

पित्तज्वर में दाह की जो चिकित्सा कही गई है वही चिकित्सा दाहरोग में करनी चाहिए।

आचार्य चक्रदत्त ने दाह-शमनार्थ कहा भी है—

उत्तानसुप्तस्य गभीरताम्रकांस्यादिपात्रं प्रणिधाय नाभौ।
तत्राम्बुधारा बहुला पतन्ती निहन्ति दाहं त्वरितं सुशीता ।।
(चक्र.ज्वर.)

शतधौतघृत-यवसक्त्वादि लेप (च.द.)

शतधौतघृताभ्यक्तं दिह्याद्वा यवशक्तुभिः ।
कोलामलकयुक्तैर्वा धान्याम्लैरपि बुद्धिमान् ॥२॥

दाहपीड़ित व्यक्ति के शरीर में शतधौतघृत की मालिश करें। ततः यवसक्तु का अथवा बेर की गुठली की मज्जा और आमले को काञ्जी के साथ पीसकर सर्वाङ्ग में लेप करें।

क्षीरी क्वाथादि प्रयोग (च.द.)

क्षीरैः क्षीरिकषायैश्च सुशीतैश्चन्दनान्वितैः ।
अन्तर्दाहं प्रशमयेदेतैरन्यैश्च शीतलैः ॥३॥

शीतल दूध एवं क्षीरीवृक्ष के क्वाथ में श्वेतचन्दन मिलाकर पिलाने से तथा अन्य शीतल उपचार (चन्दन का प्रलेप या शीतल जलाभिषेकादि) करने से अन्तर्दाह नष्ट हो जाता है।

कदली दल शय्या (च.द.)

चन्दनाम्बुकणास्यन्दितालवृन्तोपवीजितः ।
सुप्याद्दाहार्दितोऽम्भोजकदलीदलसंस्तरे ॥४॥

दाह से पीड़ित व्यक्ति को ताजा एवं हरे केले के पत्ते को बिछाकर उस पर कमल-फूल की पँखुड़ियों को खूब फैला दें और चन्दनादि से सर्वाङ्ग में लेप कर सुलावें तथा ताड़ के पंखे को चन्दन के शीतल जल में डुबोकर टपकते जल वाले पंखे से हवा करने से दाह मिट जाता है।

शीतल जल प्रयोग (च.द.)

परिषेकावगाहेषु व्यजनानाञ्च सेवने ।
शस्यते शिशिरं तोयं तृष्णादाहोपशान्तये ॥५॥

तृषा एवं दाह से पीड़ित व्यक्ति को शान्ति के लिए शीतल जल परिषेक, अवगाह, स्नान, पंखे की हवा और शीतल जल का सेवन करना चाहिए। शीतल जल की बस्ति भी दाह-शान्ति के लिए उपयोगी है।

१. फलिन्यादि प्रलेप (च.द.)

फलिनी लोध्रसेव्याम्बु हेम पत्रं कुटन्नटम् ।
कालीयकरसोपेतं दाहे शस्तं प्रलेपनम् ॥६॥

१. प्रियंगुफूल, २. लोध्र, ३. खस, ४. सुगन्धबाला, ५. नागकेशर, ६. तेजपात, ७. नागरमोथा तथा ८. पीतचन्दन—प्रियंगु से मोथा तक के सभी सातों द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और पीतचन्दनक्वाथ द्रव में पीसकर लेप करने से दाह शान्त होता है।

२. द्रोणिकाऽवगाहन (च.द.)

ह्रीबेरपद्मकोशीरचन्दनक्षोदवारिणा ।
सम्पूर्णामवगाहेत द्रोणीं दाहार्दितो नरः ॥७॥

१. सुगन्धबाला, २. पद्मकाष्ठ, ३. खस तथा ४. श्वेत चन्दन—इन चारों द्रव्यों के चूर्ण को पत्थर से बने स्नानार्थ द्रोणी या टब में डालकर शीतल जल या बर्फ मिलाया हुआ जल भरे और दाह से पीड़ित व्यक्ति को उसी द्रोणी में डुबकी लगाकर स्नान करावें।

३. दाहशमनार्थ प्रयोग (च.द.)

छादयेत्तस्य सर्वाङ्गमारनालार्द्रवाससा ।
लामज्जकेन शुक्तेन चन्दनेनानुलेपयेत् ॥
सर्पिषा शतधौतेन लेपाद्दाहः प्रशाम्यति ॥८॥

दाह से पीड़ित व्यक्ति के सम्पूर्ण शरीर में काञ्जी में डुबोयी हुई धोती लपेटें। खसचूर्ण एवं श्वेत चन्दनचूर्ण को सिरके में मिलाकर सर्वाङ्ग शरीर में लेप करावें। इसी तरह शतधौतघृत का सम्पूर्ण शरीर में लेप करने से दाह नष्ट हो जाता है।

४. पर्पटादिक्वाथ (ग.नि.)

पर्पटः सघनोशीरः क्वथितः शर्कराऽन्वितः ।
शीतपानं निहन्यात्तु दाहं पित्तज्वरं नृणाम् ॥९॥

१. पित्तपापड़ा, २. नागरमोथा, ३. खस तथा ४. शर्करा—तीनों द्रव्यों को यवकुट कर चतुर्गुण जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें तथा शर्करा मिलाकर पिलाने से दाह के साथ पित्त ज्वर भी मिट जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५. चन्दनादिक्वाथ (भा.प्र.)

पाटीरपर्पटोशीरनीरनीरदनीरजैः ।
मृणालमिसिधान्याकपद्मकामलकैः कृतः ॥१०॥
अर्धशिष्टः शृतः शीतः पीतः क्षौद्रसमन्वितः ।
क्वाथो व्यपोहयेद्दाहं नृणाञ्च परमोल्बणम् ॥११॥

१. श्वेतचन्दन, २. पित्तपापड़ा, ३. खस, ४. सुगन्धबाला, ५. नागरमोथा, ६. कमलफूल, ७. कमलदण्ड, ८. सौंफ, ९. धनियाँ, १०. पद्मकाष्ठ और ११. आमला—ये सभी द्रव्य समभाग लें। इसे यवकुट कर संग्रहीत करें। इस क्वाथ को ४६ ग्राम की मात्रा में लेकर ३७५ मि.ली. जल में क्वाथ करें। अर्धावशेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ में २३ ग्राम मधु मिलाकर ४-४ घण्टे पर पिलाने से दाह नष्ट हो जाता है।

६. दाहान्तकरस (र.सा.सं.)

सूतात्पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिण्डं सुशोभनम् ।
जम्बीरस्वरसैर्मर्द्यं सूततुल्यञ्च गन्धकम् ॥१२॥
नागवल्लीदलैः पिष्ट्वा ताम्रपत्रं प्रलेपयेत् ।
प्रपुटेद् भूधरे यन्त्रे यावद् भस्मत्वमाप्नुयात् ॥१३॥
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैस्त्र्यूषणेन च योजयेत् ।
निहन्ति दाहसन्तापं मूर्च्छां पित्तसमुद्भवाम् ॥१४॥

१. शुद्ध पारद ५० ग्राम, २. शुद्ध ताम्रपत्र १० ग्राम तथा ३. शुद्ध गन्धक ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक खरल में मर्दन कर कज्जली बनावें। ततः उसमें जम्बीरी निम्बुस्वरस के साथ पूरा १ दिन मर्दन करें। पुनः ताम्बूलपत्र-स्वरस की १ भावना देकर मर्दन करें। पुनः भावित कज्जली का ताम्रपत्र के दोनों ओर लेप कर सुखा लें। पुनः इस लेपित पत्र को शराव सम्पुट कर कपड़मिट्टी करें तथा सूखने पर भूधर यन्त्र में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर शराव खोलकर औषधि निकालकर खरल में मर्दन करें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस 'दाहान्तकरस' को २ रत्ती की मात्रा में त्रिकटुचूर्ण १ ग्राम और आर्द्रकस्वरस तथा मधु के साथ सेवन करने से दाह-सन्ताप-मूर्च्छा तथा पित्तोद्भव रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस, त्रिकटुचूर्ण एवं मधु से। **गन्ध**—निर्गन्धि। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—मूर्च्छा, दाह एवं सन्ताप नाशक है।

७. सुधाकररस (रसकामधेनु)

सिन्दूराभ्रकहेमानि मौक्तिकं त्रिफलाम्भसा ।
शतपुत्रीरसेनापि मर्दयेत् सप्तसप्तधा ॥१५॥
ततो रक्तिमितां कुर्याद् वटीं छायाप्रशोषिताम् ।
एकैकां योजयेत्तान्तु यथादोषानुपानतः ॥१६॥
रसः सुधाकरः सोऽयं हन्ति दाहं महाबलम् ।
प्रमेहानपि वातास्त्रं बलशुक्रकरः परः ॥१७॥

१. रससिन्दूर, २. अभ्रकभस्म, ३. स्वर्णभस्म तथा ४. मोती भस्म—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल मे रससिन्दूर का अच्छी तरह मर्दन करें, ततः अन्य सभी भस्मों को रससिन्दूर के साथ मर्दन करें। पुनः त्रिफलाक्वाथ की ७ भावना दें। इसके बाद शतावरीक्वाथ की ७ भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काच की शीशी में संग्रहीत करें। इस 'सुधाकररस' की १-१ वटी दोषानुपान से लेने पर यह भयंकर दाह, बीसों प्रकार के प्रमेह और वातरक्त को नष्ट करता है तथा बल और शुक्र की वृद्धि करता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु तथा दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त-कषायाम्ल। **उपयोग**—दाह, प्रमेह एवं वातरक्त में।

८. कुशाद्यतैल एवं घृत (च.द.)

कुशादिशालपर्णीभिर्जीवकाद्येन साधितम् ।
तैलं घृतं वा दाहघ्नं वातपित्तविनाशनम् ॥१८॥

तिलतैल १ लीटर अथवा गोघृत १ किलो लें। इस पाठ से तैलपाक भी अथवा घृतपाक भी किया जा सकता है। यह चिकित्सक की इच्छा पर निर्भर है। कुशादि पञ्चतृणमूल, शालपर्णी और जीवनीयगण की औषधें—कुल मिलाकर १८ द्रव्यों का कल्क २५० ग्राम लें (प्रत्येक द्रव्य १४ से १५ ग्राम लेकर इन्हें कूट-पीसकर कल्क बना लें) सर्वप्रथम तैल अथवा घृत का मूर्च्छन करें। इसके बाद मूर्च्छिततैल या घृत में कल्क और ४ लीटर जल मिलाकर स्टेनलेस स्टील पात्र में पकावे। जब जलीयांश सूख जाय तो पाक की परीक्षा कर पात्र को चूल्हे से उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र मे संग्रहीत करें। यदि तैल हो तो सर्वाङ्ग मालिश करने से दाहनाशक तथा वात-पित्त दोष नाशक है। यदि घृत है तो ५ से १० ग्राम की मात्रा गरम गोदुग्ध के साथ प्रातः-सायं सेवन करने से दाह, वात और पित्त विकार नष्ट हो जाते हैं।

दाहरोग में पथ्य (यो.रत्ना.)

शालयः षष्टिका मुद्गा मसूराश्चणका यवाः ।
धन्वमांसरसा लाजमण्डस्तत्सक्तवः सिता ॥१९॥
शतधौतं घृतं दुग्धं नवनीतं पयोभवम् ।
कूष्माण्डं कर्कटीं मोचं पनसं स्वादु दाडिमम् ॥२०॥
पटोलं पर्पटं द्राक्षा धात्रीफलपरूषकम् ।
बिम्बी तुम्बी पयःपेटी खर्जूरं धान्यकं मिशिः ॥२१॥
बालतालं प्रियालं च शृङ्गाटककशेरुकम् ।
मधूकपुष्पं ह्रीबेरं पथ्या तिक्तानि सर्वशः ॥२२॥
शीताः प्रदेहा भूवेश्म सेकोऽभ्यङ्गोऽवगाहनम् ।
पद्मोत्पलदलक्षौमशय्या शीतलकाननम् ॥२३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कथा विचित्रा गीतानि शिशिरो मञ्जुभाषणम् ।
उशीरचन्दनालेपः शीताम्बु शिशिरानिलः ॥२४॥
धारागृहं प्रियास्पर्शः प्रनीरं हिमबालुका ।
सुधांशुरश्मयः स्नानं मणयो मधुरो रसः ॥२५॥
पुरा यानि विधेयानि पित्तहारीणि तानि च ।
इति दाहवतां नृणां पथ्यवर्ग उदाहृतः ॥२६॥
धारावेश्म तथा सुशीतलशशिज्योत्स्ना तु पानानि च ।
वातः शीतलचन्दनं च कमलं प्रेमानुबन्धस्तथा ॥२७॥
रामागूहनमर्द्दनं स्तनयुगे शुक्लार्द्रवस्त्राणि च ।
क्षीरं शर्करशङ्खलौहरजतं दाहप्रशान्त्यै हितम् ॥२८॥

लाल शालिचावल, साठीचावल, मूँग, मसूर, चना, जौ, जंगली पशु-पक्षिओं का मांस, मांसरस, लाजमण्ड, लाजसक्तु, चीनी, दूध, शतधौतघृत, घृत, मक्खन, कूष्माण्ड, ककड़ी, केला, कटहल, मीठा अनार, परवल, पित्तपापड़ा, मुनक्का, आमला, फालसा, कुन्दुरु, कद्दू, नारियल, खजूर, धनियाँ, सौंफ, कच्चा तालफल, चिरौंजी, सिंघाड़ा, कशेरु, महुआ, सुगन्धबाला, हरड़, सभी तिक्तरस, शीतप्रदेह, तहखाना (भूवेश्म) में सोना, शीतल जल का परिषेक, अभ्यङ्ग, टबबाथ, कमल-पुष्पदल पर शयन, रेशमी वस्त्र की शय्या, शीतल उपवन, चित्र-विचित्र कर्ण तृप्तिकर कथाएँ, तरह-तरह के मनोहर गीत-वाद्य का श्रवण, शीतलता, मधुर भाषण, खस और चन्दन का लेप, शीतल जल, शीतल हवा, फव्वारायुक्त गृह, प्रिया का आलिङ्गन, शीतल जल, बर्फ की बालू, चन्द्रकिरणें, शीतल जल से स्नान, मणियों का धारण, मधुररस का सेवन—पूर्वोक्त जितने भी पित्तनाशनोपाय कहे गये हैं, वे सभी दाह रोगियों के लिए हितकर हैं।

दाहरोग में अपथ्य

विरुद्धान्यन्नपानानि क्रोधं वेगविधारणम् ।
गजाश्वयानमध्वानं क्षारं पित्तकराणि च ॥२९॥
व्यायाममातपं तक्रं ताम्बूलं मधु रामठम् ।
व्यवायं कटुतीक्ष्णोष्णं दाहवान् परिवर्जयेत् ॥३०॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां दाहरोगाधिकारः ।

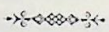

विरुद्ध अन्न-पान का सेवन, क्रोध, वेगों का रोकना, हाथी एवं घोड़ों की सवारी, पैदल अधिक चलना, क्षारीय पदार्थों का सेवन, पित्तवर्धक पदार्थों का सेवन, व्यायाम, धूप का सेवन, तक्र, ताम्बुल, मधु, हींग, मैथुन, कटु-तीक्ष्ण एवं उष्ण पदार्थों का सेवन दाहरोग से पीड़ित रोगी को त्याग देना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य दाहरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता ।

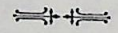

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथोन्मादरोगाधिकारः (२४)

उन्माद में सामान्य क्रम (चक्रदत्त)

उन्मादे वातिके पूर्वं स्नेहपानं विरेचनम्।
पित्तजे कफजे वान्तिः परो बस्त्यादिकः क्रमः ॥१॥

वातज उन्माद में पहले स्नेहपान, पित्तज उन्माद में विरेचन, कफज उन्माद में वमन कराना चाहिए। इसके बाद अनुवासन, आस्थापन और शिरोविरेचन कर्म कराना चाहिए।

उन्माद में बस्ति क्रम (च.चि.)

स्निग्धस्विन्नस्य कर्त्तव्यं शुद्धे संसर्जनक्रमः।
निरूहं स्नेहवस्तिं च शिरसश्च विरेचनम्॥
ततः कुर्याद् यथादोषं ततो भूयस्वतमाचयेत् ॥२॥

उन्माद में वमन-विरेचन के बाद जब शरीर शुद्ध हो जाय तो संसर्जन क्रम कराना चाहिए। यहाँ क्रम से पित्तज में विरेचन और कफज में वमन पहले देना चाहिए। इसके बाद पेया-विलेपी आदि संसर्जन क्रम का पालन कराते हुए रोगी को प्रकृतिस्थ करें। ततः रोगी में अग्नि एवं बल का आधान होने के बाद दोषानुसार निरूहबस्ति, अनुवासनबस्ति और शिरोविरेचन बार-बार कराना चाहिए।

उन्माद में पञ्चकर्म से लाभ (च.चि.)

हृदिन्द्रियशिरःकोष्ठे संशुद्धे वमनादिभिः।
मनः प्रसादमाप्नोति स्मृतिं संज्ञा च विन्दति ॥३॥

वमनादि पञ्चकर्म का विधिपूर्वक सेवन करने से हृदय, इन्द्रियाँ, शिर और कोष्ठ के शुद्ध हो जाने पर मन में प्रसन्नता आ जाती है। इससे स्मरणशक्ति और संज्ञा की प्राप्ति होती है, अर्थात् उन्माद में अत्यधिक लाभ हो जाता है।

अपस्मारवत् चिकित्सोपदेश (च.द.)

यच्चोपदेक्ष्यते किञ्चिदपस्मारचिकित्सिते।
उन्मादे तच्च कर्त्तव्यं सामान्याद् दोषदूष्ययोः ॥४॥

अपस्मार प्रकरण में जो विधि या चिकित्सा बतायी गयी है उसे यहाँ भी प्रयोग में लाना चाहिए क्योंकि दोनों रोगों का दोष एवं दूष्य सामान्य होने के कारण चिकित्सा भी एक जैसी कही गई है।

१. ब्राह्म्यादि उन्मादहर योग (च.द.)

ब्राह्मीकूष्माण्डीफलषड्ग्रन्थाशङ्खपुष्पिकास्वरसाः।
दृष्टा उन्मादहृतः पृथगेते कुष्ठमधुभिश्राः ॥५॥

यहाँ चार योग बताये गये हैं। उन चारों में कूठ और मधु मिलाना है। (१) ब्राह्मीस्वरस ५० मि.ली. तथा कूठचूर्ण १ ग्राम, मधु १० ग्राम; (२) कूष्माण्डफलस्वरस ५० मि.ली. तथा कूठ-चूर्ण १ ग्राम, मधु १० ग्राम; (३) वच (उग्रगन्धा) क्वाथ ५० मि.ली. तथा कूठचूर्ण १ ग्राम, मधु १० ग्राम; (४) शंखपुष्पी-स्वरस ५० मि.ली. तथा कूठचूर्ण १ ग्राम, मधु १० ग्राम—ये चारों योग उन्मादहर बताये गये हैं।

२. पिकमांस प्रयोग

सम्भोज्य पिकमांसं वा निर्वाते स्थापयेत्सुखम्।
त्यक्त्वा स्मृतिमतिभ्रंशं संज्ञां लब्ध्वा प्रबुध्यते ॥६॥

कोयल के मांस को यथाविधि सुपक्व कर उन्माद के रोगी को खिलावें और निर्वात स्थान पर शयन कराने से रोगी स्मृतिभ्रंश आदि मनोविकारों से रहित हो जाता है तथा चैतन्यता प्राप्त कर प्रबुद्ध हो जाता है।

चटकमांस प्रयोग (च.द.)

अपक्वचटकीक्षीरपानमुन्मादनाशनम् ॥७॥

चटक (गोरैया) के बच्चे के कच्चे मांस को दुग्ध के साथ सिल पर पीसकर चीनी मिलाकर पीने से उन्माद रोग नष्ट हो जाता है।

४. कूष्माण्डबीज प्रयोग

कूष्माण्डकबीजकल्कः पीतो विनाशयत्यपि।
उन्मादरोगमत्युग्रं मधुना दिवसत्रयम् ॥८॥

कूष्माण्डबीज मज्जा (पेठे के बीज की मींगी) १० ग्राम पत्थर के सिल पर पीसें और १० ग्राम मधु मिलाकर पिलाने से अत्यन्त भयंकर उन्माद रोग ३ दिन के अन्दर नष्ट हो जाते हैं।

५. उन्मादहर योग (च.द.)

उन्मादे समधुः पेयः शुद्धो वा तालशाखजः।
रसो नस्येऽभ्यञ्जने च सार्षपं तैलमिष्यते॥
बद्धं सार्षपतैलाक्तमुत्तानञ्चातपे न्यसेत् ॥९॥

तालपत्र के डण्ठल (जिसमें पत्ते रहते हैं) का स्वरस २३ से ४६ मि.ली. तथा मधु २० ग्राम मिलाकर पीने से उन्माद नष्ट हो जाता है। ताल के डण्डे के रस का अञ्जन या नस्य लेने से भी उन्माद में बहुत लाभ होता है। यह तीव्र नस्य एवं अञ्जन होता

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

है। अथवा सरसोंतैल का नस्य तथा अञ्जन भी कराना चाहिए। सरसोंतैल का समूचे शरीर में मर्दनकर हाथ-पैर बाँध दें और धूप मे चित्त लिटा दें।

विमर्श—तालस्वरस के लिए ताड़ के मृदु तथा छोटे वृक्ष के डण्ठल लेना अधिक उपयोगी होता है। उसे आग में थोड़ा पका कर मरोड़ने से गरम-गरम रस निकलता है। यह बहुत तीक्ष्ण होता है। इसे उन्माद या प्रलापक सन्निपातज्वर में भी बिहार प्रान्त में वृद्ध वैद्य लोग अनुपान में उपयोग करते हैं। काफी लाभ मिलता है। मैंने स्वयं भी इसका प्रयोग किया है जिसकी सन्तोष-प्रद उपलब्धि है। तालशाखज से तालडण्ठल को ही ग्रहण करना चाहिए। तालरस या ताड़ी लेना भयंकर भूल होगी।

६. पुराणघृत प्रयोग (च.द.)

पुराणमथवा सर्पिः पिबेत्प्रातरतन्द्रितः ॥१०॥

उन्माद के रोगी को पुराना (१० वर्ष पुराना) गोघृत भैंस के गरम दूध में १२ से २५ ग्राम तक की मात्रा में चीनी मिलाकर आलस्यरहित (सचेष्ट) होकर पिलाने से बहुत लाभ होता है।

उन्मादी को ताडनादि से लाभ (च.द.)

शुद्धस्याचारविध्वंसे तीक्ष्णं नावनमञ्जनम्।
ताडनञ्च मनोबुद्धिस्मृतिसंवेदनं हितम् ॥११॥

अपने आचार-विचार से भ्रष्ट हुए उन्मादी को पहले वमनादि से संशोधन करने के बाद तीक्ष्ण नस्य, अञ्जन और ताडनादि क्रियाओं से मन, बुद्धि, स्मृति जागरित होती है। अतः उन्माद रोगियों के लिए यह क्रिया हितकर है।

मन को प्रकृतिस्थ करने के उपाय (च.द.)

तर्जनं त्रासनं दानं सान्त्वनं हर्षणं भयम्।
विस्मयो विस्मृतेर्हेतोर्नयन्ति प्रकृतिं मनः ॥१२॥

उन्माद के रोगी को डाँटना, डराना, दान देना, सान्त्वना देना, प्रसन्न करना, भय देना एवं आश्चर्योत्पादक क्रियाएँ रोगी की स्मृति को जाग्रत कर मन को प्रकृतिस्थ करती हैं।

कामादिजन्य उन्माद में प्रतिकार (च.द.)

कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालोभसम्भवान्।
परस्परप्रतिद्वन्द्वैरेभिरेव शमं नयेत् ॥१३॥

काम, शोक, भय, क्रोध, हर्ष, ईर्ष्या और लोभ से उत्पन्न उन्माद रोग में परस्पर विपरीत क्रिया द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए। यथा—कामजन्य उन्माद में शोक पैदा करना, शोकजन्य उन्माद में कामभाव उत्पन्न कराना, भयजन्य उन्माद में क्रोध उत्पन्न कराना, क्रोधजन्य उन्माद में हर्ष उत्पन्न कराना तथा लोभजन्य उन्माद में ईर्ष्या उत्पन्न कराने से मानसिक भाव बदलते हैं और उन्माद शान्त होता है।

इष्टद्रव्य जन्य उन्माद में चिकित्सा (च.द.)

इष्टद्रव्यविनाशात्तु मनो यस्योपहन्यते।
तस्य तत्सदृशप्राप्त्या सान्त्वाश्वासैश्च तं जयेत् ॥१४॥

प्रियवस्तु के विनाश से उत्पन्न मनोघातजन्य उन्माद में नष्ट हुई वस्तु जैसी ही वस्तु की प्राप्ति होने से तथा सान्त्वना और आश्वासन दिलाने से उन्माद नष्ट हो जाता है।

आगन्तुकोन्माद चिकित्सा (च.द.)

सर्पिःपानादिनाऽऽगन्तौ मन्त्रादिश्चेष्यते विधिः।
पूजाबल्युपहारेष्टिहोममन्त्राञ्जनादिभिः ॥
जयेदागन्तुमुन्मादं यथाविधि शुचिर्भिषक् ॥१५॥

आगन्तुक उन्माद में घृतपान, मन्त्र-तन्त्र का प्रयोग, देवादि पूजन, बलि, उपहार (भेंट), यज्ञ, मन्त्रजाप, हवन और अञ्जन-नस्यादि विधि वैद्य को पवित्र होकर करनी चाहिए। इन उपायों से आगन्तुक उन्माद नष्ट हो जाते हैं।

उन्माद में तीक्ष्ण-अञ्जनादि कर्म वर्जित (च.द.)

देवर्षिपितृगन्धर्वैरुन्मत्तस्य च बुद्धिमान्।
वर्जयेदञ्जनादीनि तीक्ष्णादि क्रूरमेव च ॥१६॥

देवता, ऋषि, पितृगण तथा गन्धर्वादि के द्वारा उत्पन्न उन्माद रोग में बुद्धिमान् वैद्य तीक्ष्ण अञ्जन एवं क्रूर कर्मादि (ताडनादि क्रूर कर्म) नहीं करावें।

७. सिद्धार्थकोऽगदं घृतं वा (च.द.)

सिद्धार्थको हिङ्गु वचा करञ्जी देवदारु च।
मञ्जिष्ठा त्रिफला श्वेता कटभी त्वक् कटुत्रिकम् ॥१७॥
समांशानि प्रियङ्गुश्च शिरीषो रजनीद्वयम्।
बस्तमूत्रेण पिष्टोऽयमगदः पानमञ्जनम् ॥१८॥
नस्यमालेपनं चैव स्नानमुद्वर्त्तनं तथा।
अपस्मारविषोन्मादकृत्याऽलक्ष्मीज्वरापहः ॥१९॥
भूतेभ्यश्च भयं हन्ति राजद्वारे च शस्यते।
सर्पिरेतेन सिद्धं वा सगोमूत्रं तदर्थकृत् ॥२०॥

१. श्वेतसरसों, २. हींग, ३. वच, ४. करञ्जबीज, ५. देवदारु, ६. मंजीठ, ७ आमला, ८. हरीतकी, ९. बहेड़ा, १०. श्वेतापराजिता, ११. मालकाँगनी, १२. दालचीनी, १३. शुण्ठी, १४. पिप्पली, १५. मरिच, १६. प्रियंगुफूल, १७. शिरीषबीज, १८. हल्दी तथा १९. दारुहल्दी—ये सभी १९ द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें। ततः सिल पर इस चूर्ण को बकरे के मूत्र में पीसकर १-१ ग्राम की गुटिका बनाकर छाया में सुखा लें और काँचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस सिद्धार्थक अगद को पीने, अञ्जन करने, नस्य देने, लेप करने, स्नान करने तथा उद्वर्त्तन करने से अपस्मार, विष, उन्माद,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कृत्या (अभिचार), दरिद्रता, ज्वर, भूतबाधा से उत्पन्न भय दूर हो जाते हैं। इस अगद के प्रभाव से राजभवन में सम्मान होता है। इस अगद द्रव्य से साधित घृत भी उन्माद एवं अपस्मार में लाभ करता है।

८. कृष्णाद्यञ्जन (च.द.)

कृष्णामरिचसिन्धूत्थमधुगोपित्तनिर्मितम् ।
अञ्जनं सर्वभूतोत्थमहोन्मादविनाशनम् ॥२१॥

१. पिप्पली, २. मरिच, ३. सैन्धवलवण, ४. मधु तथा ५. गोरोचन—मधु छोड़कर चारों द्रव्यों को पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें। मधु मिलाकर छोटी-छोटी वर्ति बनाकर धूप में सुखा लें। इस अञ्जन को प्रतिदिन आँखों में लगाने से भूतादि उन्माद नष्ट हो जाता है।

९. दार्व्यादि गुडिकाञ्जन (च.द.)

दार्वीमधुभ्यां पुष्यायां कृतं च गुडिकाऽञ्जनम् ।
नेत्रयोरञ्जनान्नृणामुन्मादं नाशयेद् द्रुतम् ॥२२॥

पुष्यनक्षत्र में दारुहल्दी का सूक्ष्म चूर्ण करें और उसे मधु में मिलाकर नेत्र में अञ्जन करने से शीघ्र ही उन्माद दूर हो जाता है।

१०. मरिचाञ्जन (च.द.)

मरिचं वाऽऽतपे मासं सपित्तं हितमञ्जनम् ।
वैकृतं पश्यतः कार्यं दोषभूतहतस्मृतेः ॥२३॥

मरिचचूर्ण और गोपित्त (गोरोचन) समभाग को एकत्र महीन पीसकर एक महीने तक धूप में रखें, पुनः काँचपात्र में संग्रहीत करें। इसे शलाका से नेत्रों में अञ्जन करने से भूतोन्माद तथा विकृत दृष्टि रोग नष्ट हो जाता है।

११. निम्बपत्रादि धूप (च.द.)

निम्बपत्रवचाहिङ्गुसर्पनिर्मोकसर्षपैः ।
डाकिन्यादिहरो धूपो भूतोन्मादविनाशनः ॥२४॥

१. निम्बपत्र, २. वच, ३. हींग, ४. साँप का केचुल तथा ५. सरसों—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें कूटकर अग्नि में धूप देने से डाकिनी आदि दोष तथा भूतोन्माद नष्ट हो जाते हैं।

१२. महाधूप (च.द.)

कार्पासास्थिमयूरपिच्छबृहतीनिर्माल्यपिण्डीतकै-
स्त्वग्वांशीवृषदंशविट्तुषवचाकेशाहिनिर्मोककैः ।
गोशृङ्गद्विपदन्तहिङ्गुमरिचैस्तुल्यैस्तु धूपः कृतः-
स्कन्दोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशज्वरघ्नः स्मृतः ॥२५॥

१. कपास के बीज, २. मोर का पंख, ३. बृहती पञ्चाङ्ग, ४. शिवनिर्माल्य, ५. मदनफल, ६. त्वक् (खस), ६. वंशलोचन, ८. विडाल-बिष्ठा, ९. धान की भूसी, १०. वच, ११. जटामांसी, १२. साँप का केचुल, १३. गाय का सींग, १४. हाथी का दाँत, १५. हींग और १६. मरिच—सभी १६ द्रव्य बराबर मात्रा में लें। इन्हें यवकुट करें और निर्धूम अग्नि पर थोड़ा-थोड़ा देकर निर्वात घर में जलाने से यह स्कन्दापस्मार, पिशाचोन्माद, राक्षसोन्माद, देवावेश उन्माद और ज्वर को नाश करता है।

१३. सारस्वत चूर्ण (भा.प्र.)

कुष्ठाश्वगन्धे लवणाजमोदे
द्वे जीरके त्रीणि कटूनि पाठा ।
माङ्गल्यपुष्पी च समान्यमूनि
सर्वैः समानाञ्च वचां विचूर्ण्य ॥२६॥
ब्राह्मीरसेनाखिलमेवभाव्यं
वारत्रयं शुष्कमिदं हि चूर्णम् ।
अक्षप्रमाणं मधुना घृतेन
लिह्यान्नरः सप्तदिनानि चूर्णम् ॥२७॥
सारस्वतमिदं चूर्णं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।
हिताय सर्वलोकानां दुर्मेधसां विचेतसाम् ॥२८॥
एतस्याभ्यासतः पुंसां बुद्धिर्मेधा धृतिः स्मृतिः ।
सम्पत्तिः कविताशक्तिः प्रवर्धेतोत्तरोत्तरम् ॥२९॥

१. कूठ, २. अश्वगन्ध, ३. सैन्धवलवण, ४. अजमोदा, ५. श्वेतजीरा, ६. कृष्णजीरा, ७. शुण्ठी, ८. पिप्पली, ९. मरिच, १०. पाठा, ११. शंखपुष्पी तथा १२. वच (उग्रगन्ध)—कूठ से शंखपुष्पी तक सभी ११ द्रव्य २५-२५ ग्राम लें और वच २७५ ग्राम लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और ब्राह्मीस्वरस से ३ भावना देकर इसे धूप में अच्छी तरह सुखाकर पुनः कूट-छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस सारस्वतचूर्ण को मधु और विषम मात्रा में घृत के साथ १० ग्राम लेने से सात दिनों में उन्माद आदि रोग में अत्यधिक लाभ होता है। इस 'सारस्वत चूर्ण' को भगवान् ब्रह्मा ने मन्द तथा दुर्बल बुद्धि वाले और दूषित चित्त वाले प्राणियों के हित के लिए पूर्वकाल में निर्मित किया था। इस चूर्ण को प्रतिदिन ७ दिन तक सेवन करने मात्र से बुद्धि, धारणाशक्ति, धैर्य एवं स्मृति तथा कवित्वशक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—विषम मात्रा में मधु एवं घृत से। **गन्ध**—वच जैसा उग्रगन्धी। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—बुद्धि-स्मृति-धृतिवर्धक है तथा उन्माद, अपस्मार आदि मनोविकृति नाशक है।

१४. उन्मादपर्पटीरस (रसे.सा.सं.)

कृष्णधुस्तूरजैर्बीजैः पञ्चभिः पर्पटीरसः ।
सम्प्रयोज्यः प्रशमयेदुन्मादं भूतसम्भवम् ॥३०॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

काला धत्तूरबीज ५ नग तथा रस पर्पटी ५०० मि.ग्रा. लें। सर्वप्रथम कृष्ण धत्तूरबीज का चूर्ण करें और खरल में रसपर्पटी के साथ अच्छी तरह पीसकर २ पुड़िया बनाकर प्रातः-सायं खिलाने से भूतोन्माद शान्त हो जाता है।

१५. उन्मादभञ्जनीवटिका (र.सा.सं.)

शुद्धं मनःशिलाचूर्णं सैन्धवं कटुरोहिणी।
वचा शिरीषबीजं च हिङ्गु च श्वेतसर्षपः ॥३१॥
करञ्जबीजं त्रिकटु मलं पारावतस्य च।
एतानि समभागानि गोमूत्रैर्वटिकां कुरु ॥३२॥
गिरिमल्लीबीजसमां छायाशुष्कां च कारयेत्।
प्रातः सन्ध्यानिशाकाले चक्षुषोरञ्जनं हितम् ॥३३॥
मधुरादिरसेनाङ्ग्यं रात्रावपि जलेन च।
वटिकैका समाख्याता नाम्ना चोन्मादभञ्जिनी।
चातुर्थकमपस्मारमथोन्मादं विनाशयेत् ॥३४॥

१. शुद्ध मैनसिल, २. सैन्धवलवण, ३. कुटकी, ४. वच, ५. शिरीषबीज, ६. हींग, ७. श्वेत सरसों, ८. करञ्जबीज, ९. शुण्ठी, १०. पिप्पली, ११. मरिच और १२. कबूतर का बीट—ये सभी द्रव्य समभाग में लें। इन्हें कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें। पुनः खरल में गोमूत्र के साथ मर्दन करें और इन्द्रयव जितनी बड़ी वर्ति बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस वर्ति का प्रातः, सायं और रात्रि में अञ्जन लगाने से उन्माद में लाभ होता है। रात में जल में घिसकर और दिन में जीवनीयगण के क्वाथ से घिसकर अञ्जन करना चाहिए। एक बार के अञ्जन प्रयोग में १ वर्ति घिसकर आँख में लगा लेनी चाहिए। इसे 'उन्मादभञ्जनी' अञ्जन कहा जाता है। इसके प्रयोग से चातुर्थकज्वर, उन्माद और अपस्मार रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (इन्द्रयव जैसी वर्ती)। **गन्ध**—गोमूत्र-गन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **उपयोग**—चातुर्थकज्वर, उन्माद एवं अपस्मारनाशक है।

१६. उन्मादगजकेशरीरस

सूतं गन्धं शिलातुल्यं स्वर्णबीजं विचूर्णयेत्।
भावयेदुग्रगन्धायाः क्वाथेन मुनिशः पृथक् ॥३५॥
ब्राह्मीरसेन सप्तैव भावयित्वा विचूर्णयेत्।
रसः सञ्जायते नूनमुन्मादगजकेशरी ॥३६॥
अस्य माषः ससर्पिष्को लीढो हन्ति हठाद्गदम्।
उन्मादाख्यमपस्मारं भूतोन्मादमपि ज्वरम् ॥३७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध मनःशिला तथा ४. शुद्ध धत्तूरबीज—सभी द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः कज्जली में मनः-शिला मिलाकर मर्दन करें। पुनः शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण उसमें मिलावें और वचाक्वाथ की ७ बार भावना दें। इसके बाद ब्राह्मी-स्वरस की ७ बार भावना देकर अच्छी तरह चूर्ण कर धूप में सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इसे 'उन्मादगजकेशरी' कहते हैं। इस चूर्ण को $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती का मात्रा में गरम घी के साथ चाटने से उन्माद, अपस्मार, भूतोन्माद एवं ज्वर बलपूर्वक नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—गरम घी से। **गन्ध**—वच जैसी गन्ध। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—उन्माद, अपस्मार एवं भूतोन्माद में।

१७. उन्मादगजाङ्कुशरस (र.सा.सं.)

त्रिदिनं कनकद्रावैर्महाराष्ट्रीरसैः पुनः।
विषमुष्टिद्रवैः सूतं समुत्थाप्यार्कचक्रिकाम् ॥३८॥
कृत्वा तप्तां सगन्धां तां युक्त्या बन्धनमाचरेत्।
तत्समं कानकं बीजमभ्रकं गन्धकं विषम् ॥३९॥
मर्दनात्त्रिदिनं सर्वं वल्लमात्रं प्रयोजयेत्।
दोषोन्मादं द्रुतं हन्ति भूतोन्मादं विशेषतः ॥४०॥

१. शुद्ध पारद ७५ ग्राम, २. शुद्ध ताम्रचूर्ण २५ ग्राम, ३. शुद्ध धत्तूरबीज २५ ग्राम, ४. अभ्रकभस्म २५ ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक ३२५ ग्राम तथा ६. शुद्ध वत्सनाभविष २५ ग्राम।

भावनाद्रव्य—धत्तूरपत्रस्वरस, जलपिप्पलीस्वरस एवं कुपीलु-क्वाथ।

शुद्ध पारद ७५ ग्राम लें। इस पारद को खरल में रखकर ३ दिनों तक धत्तूरपञ्चांगस्वरस से मर्दन करें। पुनः जलपिप्पली-स्वरस तथा कुपीलुक्वाथ के साथ ३-३ दिन तक मर्दन करें। पुनः इस पारद को वस्त्रपूत करें और शुद्ध ताम्रचूर्ण के साथ अच्छी तरह खरल कर पिष्टी बना लें। एक शराव में ५० ग्राम शुद्ध गन्धक रखें और उसके ऊपर पारद एवं ताम्र पिष्टि रखें। पुनः पिष्टी के ऊपर शुद्ध गन्धक डालकर शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर शराव खोलकर ताम्र-भस्म प्राप्त करें। किन्तु इसी प्रकार २ बार और पुट दें। तदनन्तर उक्त ताम्रभस्म, शुद्ध धत्तूरबीजचूर्ण, अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध वत्सनाभचूर्ण—इन सभी द्रव्यों को ताम्रभस्म के साथ मिलाकर ३ दिनों तक जल से मर्दन करें और ३-३ रत्ती की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह 'उन्मादगजांकुशरस' त्रिदोषजन्य या पृथक्-पृथक् दोषजन्य उन्माद और भूतोन्माद का नाश करता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—गरम घी से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—उन्माद एव भूतोन्माद में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विमर्श—तीन बार कुल गन्धक एवं पारद एवं चार गुना शुद्ध गन्धक देकर पुट देना चाहिए। प्रतिवार २५ ग्राम शुद्ध पारद और १०० ग्राम शुद्ध गन्धक देना चाहिए अतः पारद ७५ ग्राम तथा गन्धक ३७५ ग्राम लेना चाहिए। तीनों बार २५-२५ ग्राम पारद देना चाहिए।

१८. उन्मादभञ्जनरस (र.सा.सं.)

त्रिकटु त्रिफला चैव गजपिप्पलिका तथा।
देवदारु विडङ्गञ्च किरातं कटुकी तथा ॥४१॥
कण्टकारी च यष्टीन्द्रयवं चित्रकमेव च।
बला च पिप्पलीमूलं मूलञ्च वीरणस्य च ॥४२॥
शोभाञ्जनस्य बीजानि त्रिवृता चेन्द्रवारुणी।
वङ्गं रूप्यमभ्रकञ्च प्रवालं समभागिकम् ॥४३॥
सर्वचूर्णसमं लौहं सलिलेन विमर्दयेत्।
उन्मादमपि भूतोत्थमुन्मादं वातजं तथा ॥४४॥
अपस्मारं तथा कार्श्यं रक्तपित्तं सुदारुणम्।
नाशयेदविकल्पेन रसश्चोन्मादभञ्जनः ॥४५॥

१. शुण्ठीचूर्ण, २. पिप्पलीचूर्ण, ३. मरिचचूर्ण, ४. आमलाचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण, ६. बहेड़ाचूर्ण, ७. गजपिप्पली-चूर्ण, ८. देवदारु, ९. वायविडङ्ग, १०. चिरायताचूर्ण, ११. कटुकीचूर्ण, १२. कण्टकारीचूर्ण, १३. यष्टिमधुचूर्ण, १४. इन्द्रयवचूर्ण, १५. चित्रकमूलचूर्ण, १६. बलामूलचूर्ण, १७. पिप्पलीमूलचूर्ण, १८. खसचूर्ण, १९. शिग्रुबीजचूर्ण, २०. त्रिवृतचूर्ण, २१. इन्द्रायण-मूलचूर्ण, २२. वङ्गभस्म, २३. रजतभस्म, २४. अभ्रकभस्म, २५. प्रवालभस्म—सभी द्रव्य २०-२० ग्राम लें तथा २६. लौहभस्म ४४० ग्राम अर्थात् सभी द्रव्यों के बराबर लेना चाहिए। सर्वप्रथम एक पत्थर के बड़े खरल में सभी भस्मों को आपस में अच्छी तरह मर्दन करें, ततः सभी चूर्णों को उसी के साथ मिलाकर १ घण्टे तक मर्दन करें। ततः जल की भावना देकर १ दिन तक अच्छी तरह मर्दन करें और ४-४ रत्ती की वटी बनाकर छाया में अच्छी तरह सुखा लें एवं काचपात्र में संग्रहीत करें। इसकी १-१ वटी घी के साथ खिलाने से उन्माद, भूतोन्माद, वातजोन्माद, अपस्मार, कृशता, भयंकर रक्तपित्त को यह 'उन्मादभञ्जन रस' निःसन्देह नष्ट करता है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—गरम घी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—लौहभस्माभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—उन्माद एवं भूतोन्माद में।

१९. भूताङ्कुश रस (र.सा.सं.)

सूतायस्तारताम्रञ्च मुक्ता चापि समं समम्।
सूतपादं तथा वज्रं तालं गन्धं मनःशिला ॥४६॥
तुत्थं शिलाञ्जनं शुद्धमब्धिफेनं रसाञ्जनम्।
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम् ॥४७॥
भृङ्गराजचित्रवज्रीदुग्धेनापि विमर्दयेत्।
दिनान्ते पिण्डितं कृत्वा रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥४८॥
भूताङ्कुशो रसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वयं लिहेत्।
आर्द्रकस्य रसेनापि चोन्मादे भूतजिद्रसः ॥४९॥
पिप्पल्याक्तं पिबेच्चानु दशमूलकषायकम्।
स्वेदयेत् कटुतुम्ब्या च तीक्ष्णं रूक्षं च वर्जयेत् ॥५०॥
माहिषञ्च घृतं क्षीरं गुर्वन्नमपि भोजयेत्।
अभ्यङ्गः कटुतैलेन हितो भूताङ्कुशे रसे ॥५१॥

१. शुद्ध पारद, २. लौहभस्म, ३. रजतभस्म, ४. ताम्रभस्म, ५. अभ्रकभस्म, ६. मोतीभस्म, ७. हीराभस्म, ८. शुद्ध हरताल, ९. शुद्ध गन्धक, १०. शुद्ध मैनसिल, ११. शुद्ध तूतिया, १२. शुद्ध शिलाजीत, १३. समुद्रफेन, १४. रसाञ्जन, १५. शुद्ध सौवीराञ्जन, १६. सैन्धवलवण, १७. सामुद्रलवण, १८. विड-लवण, १९. सौवर्चललवण, और २०. औद्भिद्लवण—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें और हीराभस्म ५ ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः हरताल-मैनसिल-तूतिया आदि द्रव्यों को मिलाकर एक साथ मर्दन करें। पुनः निम्नलिखित द्रव्यों की १-१ भावना दें।

भावना-द्रव्य—भृङ्गराज, चित्रकमूल एवं स्नुहीदुग्ध। भावना के बाद सभी द्रव्यों को मिलाकर पिण्ड जैसा बना लें और सुखाकर शरावसम्पुट कर गजपुट में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने सम्पुट खोलें और मर्दन कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'भूताङ्कुशरस' कहते हैं। इसे २५० मि. ग्रा. (२ रत्ती) की मात्रा में आर्द्रकस्वरस और मधु मिलाकर चटाने तथा बाद में दशमूल-क्वाथ ५० मि.ली. में पिप्पलीचूर्ण १ ग्राम मिलाकर पिलाने से भूतोन्माद एवं उन्माद रोग नष्ट हो जाता है। कटुतुम्बीक्वाथ से उन्माद में स्वेदन (वाष्पस्वेद) कराना चाहिए तथा रूक्ष और तीक्ष्ण भोजन वर्जित करना चाहिए। भूख लगने पर भैंस का गाढ़ा दूध, घी, दही और भारी अन्नपान का सेवन कराना चाहिए। सरसों तैल का सर्वाङ्ग अभ्यङ्ग 'भूतांकुश रस' के सेवन की अवधि में हितकर है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रकरस और मधु से। **गन्ध**—शिलाजीत जैसी। **वर्ण**—श्याव वर्ण। **स्वाद**—लवणीय एवं तिक्त। **उपयोग**—उन्माद एवं भूतोन्माद में।

२०. चतुर्भुजरस (र.सा.सं.)

मृतसूतस्य भागौ द्वौ भागैकं हेमभस्मकम्।
शिला कस्तूरिका तालं प्रत्येकं हेमतुल्यकम् ॥५२॥
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्याया मर्दयेद्रसैः।
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ दिनत्रयम् ॥५३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

संस्थाप्य च तदुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत्।
एतद्रसायनं श्रेष्ठं त्रिफलामधुमर्दितम् ॥५४॥
तद्यथाऽग्निबलं खादेद् वलीपलितनाशनम्।
अपस्मारे ज्वरे कासे शोषे मन्दानले क्षये ॥५५॥
हस्तकम्पे शिरःकम्पे गात्रकम्पे विशेषतः।
वातपित्तसमुत्थांश्च कफजान्नाशयेद् ध्रुवम् ॥५६॥
सर्वांस्तान् नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
चतुर्भुजरसो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥५७॥

१. रससिन्दूर २० ग्राम, २. स्वर्णभस्म १० ग्राम, ३. शुद्ध मैनसिल १० ग्राम, ४. कस्तूरी १० ग्राम तथा ५. हरताल १० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में रससिन्दूर को मर्दन करें। ततः रससिन्दूर के साथ स्वर्णभस्मादि अन्य द्रव्यों को मिलाकर एक साथ मर्दन करें। पुनः घृतकुमारीस्वरस की भावना दें और एक बड़ा-सा गोला बना लें। इस गोले को एरण्डपत्र में लपेटकर (४-६ एरण्डपत्र से लपेटकर) धागे से बाँधे और धान की ढेर में तीन दिनों तक रख दें। फिर चौथे दिन उक्त पिण्ड को निकालकर खरल में पीसकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। पुनः सभी रोगों में इसका प्रयोग करें। इस श्रेष्ठ रसौषधि की १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा १ ग्राम त्रिफलाचूर्ण और मधु के साथ मिलाकर चाटने से यह वली-पालित रोग का नाश करता है। अपस्मार, ज्वर, कास, शोष, मन्दाग्नि, क्षय, हस्तकम्प, शिरःकम्प, गात्रकम्प (सर्वाङ्ग कम्प) में विशेष हितकर है। वातज, पित्तज एवं कफज रोगों को मिश्रित रूप से नष्ट करता है। जैसे इन्द्र का वज्र सभी वृक्षों को नष्ट कर देता है उसी तरह यह सभी मनोरोगों को शीघ्र नष्ट कर देता है। इस 'चतुर्भुजरस' को भगवान् शंकर ने लोककल्याणार्थ निर्मित किया था।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रक स्वरस एवं मधु से। **गन्ध**—कस्तूरी जैसी महक। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—उन्माद, अपस्मार, क्षय, कम्पवातादि में।

२१. हिंग्वाद्यघृत (च.द.)

हिङ्गुसौवर्चलव्योषैर्द्विपलांशैर्घृताढकम्।
चतुर्गुणे गवां मूत्रे सिद्धमुन्मादनाशनम् ॥५८॥

१. गोघृत ३ किलो, २. हींग ९३ ग्राम, ३. सौवर्चललवण ९३ ग्राम, ४. शुण्ठी ९३ ग्राम, ५. पिप्पली ९३ ग्राम, ६. मरिच ९३ ग्राम और ७. गोमूत्र १२ लीटर लें। सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। ततः हींग से मरिचपर्यन्त पाँच द्रव्यों को सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित घृत में कल्क और १२ लीटर धीरे-धीरे गोमूत्र डालकर मन्दाग्नि पर पाक करें। गोमूत्र के कारण घृत में उफान होता है, अतः मन्दाग्नि पर ही पाक करना चाहिए। पूर्ण पाक की परीक्षा कर घृतपात्र को उतारकर छान लेना चाहिए। इस घृत को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में भैंस के गरम दूध के साथ पिलाने से उन्माद रोग नष्ट होता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—भैंस का गरम दूध। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु, तीक्ष्ण। **उपयोग**—उन्माद में।

२२. लशुनाद्यघृत (च.द.)

लशुनस्याविनष्टस्य तुलाऽर्द्धं निस्तुषीकृतम्।
तदर्द्धं दशमूल्यास्तु द्व्याढकेऽपां विपाचयेत् ॥५९॥
पादशेषे घृतप्रस्थं लशुनस्य रसं तथा।
कोलमूलकवृक्षाम्लमातुलुङ्गार्द्रकैः रसैः ॥६०॥
दाडिमाम्बुसुरामस्तुकाञ्जिकाम्लैस्तदर्द्धिकैः।
साधयेत् त्रिफलादारुलवणव्योषदीप्यकैः ॥६१॥
यमानीचव्यहिङ्ग्वम्लवेतसैश्च पलार्द्धिकैः।
सिद्धमेतत् पिबेच्छूलगुल्मार्शोजठरापहम् ॥६२॥
ब्रध्नपाण्ड्वामयप्लीहयोनिदोषक्रिमिज्वरान्।
वातश्लेष्मामयांश्चान्यानुन्मादांश्चापकर्षति ॥६३॥

गोघृत ७५० ग्राम तथा लशुनस्वरस ७५० मि.ली. लें।

क्वाथ-द्रव्य—१. छिलका रहित लशुन २५०० ग्राम, २. दशमूल १२५० ग्राम तथा पाकार्थ जल ६ लीटर; ३. जंगली बेर क्वाथ, ४. मूलीस्वरस, ५. कोकमक्वाथ, ६. मातुलुङ्ग-निम्बुरस ७. आर्द्रकस्वरस, ८. अनार का रस, ९. मद्य, १०. दही का पानी तथा ११. काञ्जी—प्रत्येक द्रव ३७५ मि.ली. लेना चाहिए।

कल्क-द्रव्य—१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. देवदारु, ५. सैन्धव, ६. शुण्ठी, ७. पिप्पली, ८. मरिच, ९. सौंफ, १०. अजवायन, ११. चव्य, १२. हींग और १३. अम्लवेतस—प्रत्येक द्रव्य २३ ग्राम लें। सर्वप्रथम घी को मूर्च्छित करें। तदनन्तर कल्क दव्य को कूट-पीसकर सिल पर जल के साथ पीसें और कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित घृत में डालें और प्रत्येक स्वरस दे-देकर पृथक्-पृथक् क्रमशः लशुनस्वरस, दशमूलक्वाथ, बेरक्वाथ, मूलीस्वरस, कोकम-क्वाथ, निम्बुस्वरस, आर्द्रकस्वरस, अनारस्वरस, मद्य, दही का मस्तु और काञ्जी देकर मन्दाग्नि में पकावें। सर्वान्ते सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पकावें। आसन्न पाक होने पर परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। ६ से १२ ग्राम तक की मात्रा में इस 'लशुनादिघृत' का सेवन करने से शूल, गुल्म, अर्श, उदररोग, ब्रध्न, पाण्डु, प्लीह, योनिरोग, कृमि, ज्वर, वातज, कफज एवं उन्माद रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

घृत एवं लशुनगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त, कट्वम्ल तथा लशुन जैसा। **उपयोग**—उन्माद, उदररोग एवं वातविकार में।

२३. कल्याणकघृत (च.सं.)

विशाला त्रिफला कौन्ती देवदार्वैलवालुकम्।
स्थिरा नतं हरिद्रे द्वे शारिवे द्वे प्रियङ्गुकम् ॥६४॥
नीलोत्पलैलामञ्जिष्ठादन्तीदाडिमकेशरम्।
तालीशपत्रं बृहती मालत्याः कुसुमं नवम् ॥६५॥
विडङ्गं पृश्निपर्णी च कुष्ठं चन्दनपद्मकौ।
अष्टाविंशतिभिः कल्कैरेतैरक्षसमन्वितैः ॥६६॥
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
अपस्मारे ज्वरे कासे शोषे मन्दानले क्षये ॥६७॥
वातरक्ते प्रतिश्याये तृतीयकचतुर्थके।
वम्यर्शोमूत्रकृच्छ्रे च विसर्पोपहतेषु च ॥६८॥
दोषोपहतचित्तानां गदानामल्परेतसाम्।
शस्तं स्त्रीणाञ्च बन्ध्यानां वर्णायुर्बलवर्द्धनम् ॥६९॥
अलक्ष्मीपापरक्षोघ्नं सर्वग्रहनिवारणम्।
कल्याणकमिदं सर्पिः श्रेष्ठं पुंसवनेषु च ॥७०॥

१. गोघृत ७५० ग्राम; २. इन्द्रायणमूल, ३. आमला, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा, ६. रेणुका, ७. देवदारु, ८. एलुआ, ९. शालपर्णी, १०. तगर, ११. हल्दी, १२. दारुहल्दी, १३. श्वेत अनन्तमूल, १४. कृष्ण अनन्तमूल, १५. प्रियंगुफूल, १६. नीलकमल, १७. छोटी इलाइची, १८. मंजीठ, १९. दन्तीमूल, २०. अनारदाना, २१. नागकेशर, २२. तालीशपत्र, २३. बृहतीमूल, २४. चमेली की कली, २५. वायविडङ्ग, २६. पृश्निपर्णी, २७. कूठ, २८. श्वेतचन्दन, २९. पद्मकाठ—इन्द्रायण से पद्मकाष्ठ तक के सभी २८ द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें और इन्हें कूटकर चूर्ण करें तथा जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। तदनन्तर घृत का मूर्च्छन करें। मूर्च्छित घृत में कल्क मिलावें तथा घी से ४ गुना (३ लीटर) जल मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। घृत पक्व की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से घी को छान लें तथा काचपात्र से संग्रहीत करें। इस 'कल्याणकघृत' को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम दूध के साथ पीने से अपस्मार, ज्वर, कास, शोष, मन्दाग्नि, क्षय, वातरक्त, प्रतिश्याय, तृतीयक ज्वर, चातुर्थक ज्वर, वमन, अर्श, मूत्रकृच्छ्र तथा विसर्प रोग नष्ट हो जाते हं। दोषों से उपहत व्यक्ति तथा अल्पवीर्य वाले व्यक्ति एवं बन्ध्या स्त्रियों के लिए यह घृत लाभदायक है। इस घृत के सेवन से बल, वर्ण, आयु की वृद्धि होती है। दरिद्रता, पापरोग (चर्मादिरोग),. रक्षा बाधा एवं ग्रह बाधा दूर होता है। पुंसवन कार्य में भी यह 'कल्याणकघृत' बहुत उपयोगी है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—उन्माद, अपस्मार एवं बन्ध्या में।

२४. क्षीरकल्याणक घृत (च.द.)

द्विजलन्तु चतुःक्षीरं क्षीरकल्याणकन्त्विदम् ॥७१॥

कल्याण घृत में जितनी औषधियाँ कल्क-क्वाथार्थ कही गयी हैं, उन सभी औषधों से ही घृत का निर्माण करे। इस घृत में केवल दो ही अन्तर कहा गया है—१. सम्यक् पाकार्थ अन्त में जो चतुर्गुण जल कल्याण घृत में बताया गया है, इस घृत में द्विगुण जल लेना चाहिए तथा २. गोदुग्ध घृत से ४ गुना लेकर घृत पाक करें। शेष गुण-धर्म-प्रयोगादि सब कल्याण घृत जैसा ही समझें।

२५. महाकल्याणक घृत (च.द.)

एभ्य एव स्थिराऽऽदीनि जले पक्त्वैकविंशतिम्।
रसे तस्मिन् पचेत् सर्पिर्घृष्टिक्षीरं चतुर्गुणम् ॥७२॥
वीराद्विमाषकाकोलीस्वयंगुप्तर्षभर्द्धिभिः।
मेदया च समैः कल्कैस्तत्तु कल्याणकं महत् ॥
बृंहणीयं विशेषेण संनिपातहरं परम् ॥७३॥

पूर्वोक्त कल्याणकघृत में से प्रथम ७ औषधियों यथा—इन्द्रायणमूल, आमला, हरीतकी, बहेड़ा, रेणुका, देवदारु तथा एलुआ को हटाकर शेष बची इक्कीस औषधो; यथा—१. शालपर्णी, २. तगर, ३. हल्दी, ४. दारुहल्दी, ५. श्वेतसारिवा, ६. कृष्णसारिवा, ७. प्रियंगु, ८. नीलकमल, ९. छोली इलायची, १०. मंजीठ, ११. दन्तीमूल, १२. अनारदाना, १३. नागकेशर, १४. तालीशपत्र, १५. बृहतीमूल, १६. चमेलीफूल, १७. वायविडङ्ग, १८. पृश्निपर्णी, १९. कूठ, २०. श्वेतचन्दन और २१. पद्मकाष्ठ—प्रत्येक द्रव्य १५० ग्राम लें; २२. गोघृत ७५० ग्राम तथा २३. पहली बार ब्यायी हुई गाय का दूध ३ लीटर लें।

विशेष—कल्क-द्रव्य—१. शतावर, २. उड़द, ३. राजमाष, ४. काकोली, ५. केवाँचबीज, ६. ऋषभक, ७. ऋद्धि और ८. मेदा—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लेना चाहिए।

सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्य के कुल ८ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। अब इस कल्क को मूर्च्छित घृत में डालें और गोदुग्ध मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। पुनः शालपर्णी से पद्मकाष्ठपर्यन्त कुल २१ द्रव्यों को यवकुट करें और चौगुना जल मिलाकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और इस घृत में ३ लीटर क्वाथ डालकर पाक करें। कल्क के सम्यक्पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पाक करें। जल सूखने पर आसन्न पाक समझकर परीक्षोपरान्त घृतपात्र उतार लें और कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस घृत को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

'महाकल्याणक घृत' कहते हैं। कल्याणक घृत के सभी गुण इसमें हैं। यह विशेषकर बृंहण है और सन्निपातज्वरनाशक है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—उन्माद, अपस्मार तथा सन्निपात में बृंहणार्थ।

२६. स्वल्पचैतसघृत (च.द.)

पञ्चमूल्यावकाश्मर्यौ रास्नैरण्डत्रिवृद्बला।
मूर्वा शतावरी चेति क्वाथ्यैर्द्विपलिकैरिमैः ॥७४॥
कल्याणकस्य चाङ्केन तद् घृतं चैतसं स्मृतम्।
सर्वचेतोविकाराणां शमनं परमं मतम् ॥७५॥
घृतप्रस्थोऽत्र पक्तव्यः क्वाथो द्रोणाम्भसा घृतात्।
चतुर्गुणोऽत्र सम्पाद्यः कल्कः कल्याणकेरितः ॥७६॥

क्वाथ-द्रव्य—१. बेलछाल, २. अरणीछाल, ३. सोनापाठाछाल, ४. पाढलछाल, ५. गम्भीरछाल, ६. बृहतीपञ्चांग, ७. कण्टकारीमूल, ८. शालपर्णी, ९. पृश्निपर्णी, १०. गोक्षुर, ११. रास्ना, १२. एण्डमूल, १३. निशोथ, १४. बलामूल, १५. मूर्वा तथा १६. शतावरी—प्रत्येक द्रव्य २ पल (९३) ग्राम लें।

कल्क-द्रव्य—कल्याणघृत का कल्क (वहाँ के कल्क की सभी औषधियाँ) १. इन्द्रायणमूल, २. आँवला, ३. हरड़, ४. बहेड़ा, ५. रेणुका, ६. देवदारु, ७. एलुआ, ८. शालपर्णी, ९. तगर, १०. हल्दी, ११. दारुहल्दी, १२. श्वेत अनन्तमूल, १३. कृष्ण अनन्तमूल, १४. प्रियङ्गुफूल, १५. नीलकमल, १६. छोटी इलायची, १७. मंजीठ, १८. दन्तीबीज, १९. अनारदाना, २०. नागकेशर, २१. तालीशपत्र, २२. बृहती, २३. चमेली फूल या कली, २४. विडङ्ग, २५. पृश्निपर्णी, २६. कूठ, २७. श्वेतचन्दन, २८. पद्मकाठ—प्रत्येक १२-१२ ग्राम तथा गोघृत ७५० ग्राम लें।

सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। बेलछाल से शतावरी तक के १६ द्रव्यों को कूट-पीसकर यवकुट करें। ततः १२ लीटर (१ द्रोण) जल में क्वाथ करें। अर्थात् १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर (अर्थात् ३ लीटर क्वाथ शेष बचने पर) छान लें और घृतपात्र में डालकर मन्दाग्नि पर पकावें। पुनः कल्क के २८ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और उसे भी घृतपात्र में डाल दें और पाक करें। जब जलीयांश सूखने लगे तब उस घृतपात्र में घृत से ४ गुना अर्थात् ३ लीटर सम्यक् पाकार्थ जल देकर पकावें। जब जल सूख जाय तो परीक्षोपरान्त घृतपात्र को उतारकर घृत को वस्त्र से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—उन्माद, अपस्मार।

२७. महापैशाचिकघृत (च.द.)

जटिला पूतना केशी चारटी मर्कटी वचा।
त्रायमाणा जया वीरा चोरकं कटुरोहिणी ॥७७॥
कायस्था शूकरी छत्रा सातिच्छत्रा पलङ्कषा।
महापुरुषदन्ता च वयस्था नाकुलीद्वयम् ॥७८॥
कटम्भरा वृश्चिकाली स्थिरा चैव शृतं घृतम्।
चतुर्थकज्वरोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥७९॥
महापैशाचिकं नाम घृतमेतद्यथाऽमृतम्।
मेधाबुद्धिस्मृतिकरं बालानाञ्चाङ्गवर्धनम् ॥८०॥

क्वाथ एवं कल्कार्थ—१. जटामांसी, २. हरीतकी, ३. भूतकेशी, ४. नीलीवृक्ष, ५. केवाँचबीज, ६. वच, ७. त्रायमाणा, ८. अरणीछाल, ९. क्षीरकाकोली, १०. चोरपुष्पी, ११. कटुकी, १२. ब्राह्मी, १३. वाराहीकन्द, १४. सौंफ, १५. सोआ, १६. गुग्गुलु, १७. शतावरी, १८. गुडूची, १९. रास्ना, २०. गन्धरास्ना, २१. मालकाँगनी, २२. बिच्छूबूटी और २३. शालपर्णी—प्रत्येक द्रव्य १८५ ग्राम अर्थात् कुल द्रव्य ४ किलो २५५ ग्राम तथा गोघृत १ लीटर लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः जटामांसी से शालपर्णी तक के सभी २३ द्रव्यों को यथाप्रमाण लेकर यवकुट करें और चतुर्गुण जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ छानकर घृतपाक करें। इस घृत में क्वाथ द्रव्य से ही २५० ग्राम चूर्ण पीसकर कल्क बनावें। क्वाथ और कल्क साथ-साथ पकावें। क्वाथ सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल लेकर पुनः पाक करें। पाक के परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करे। इस 'महापैशाचिकघृत' को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम दूध से लेने पर चातुर्थक ज्वर, उन्माद, ग्रहबाधा, अपस्मार का नाश होता है। यह घृत अमृत जैसा है। यह मेधा-बुद्धि-स्मृतिवर्धक है तथा बच्चों के शरीर को बढ़ाता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**— गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अपस्मार एवं उन्मादनाशक तथा बुद्धिवर्धक।

२८. शिवाघृत

शिवायास्तु सूपूतायाः पञ्चाशत्पलात्पलम्।
पञ्च पञ्च समादाय पञ्चमूलीयुगात्पृथक् ॥८१॥
कुट्टयित्वा चतुःषष्टिशरावैरम्भसः पचेत्।
ज्ञात्वा पादावशेषेण तेन क्वाथोदकेन च ॥८२॥
क्षीरस्याष्टाभिराज्यस्य शरावाणां चतुष्टयम्।
यष्टीमधुकमञ्जिष्ठाकुष्ठचन्दनपद्मकैः ॥८३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

बिभीतकशिवाधात्रीबृहतीतगरपादिकैः ।
विडङ्गदाडिमीदेवदारुदन्तीहरेणुभिः ॥८४॥
तालीशकेशरश्यामाविशालाशालपर्णिभिः ।
प्रियङ्गुमालतीपुष्पकाकोलीयुगलोत्पलैः ॥८५॥
हरिद्रायुगलानन्तामेदैलाहरिवालुकैः ।
सपृश्निपर्णिकैरेभिः कल्कैरक्षसमन्वितैः ॥८६॥
सिद्धमेतद् घृतं यच्च तन्मे निगदतः शृणु ।
देवासुरग्रहग्रस्ते मानसे राक्षसक्षते ॥८७॥
गन्धर्वधर्षिते चैव पितृग्रहनिपीडिते ।
भूतैरप्यभिभूते च पिशाचैश्च परिप्लुते ॥८८॥
भुजङ्गमगृहीते च तथा जाङ्गलभक्षिते ।
यक्षैरपि परिक्षिप्ते भयैरप्यर्दिते भृशम् ॥८९॥
शस्यते सर्ववाते च सर्वापस्मार एव च ।
शोषे सोरःक्षते कासे पीनसे च मदात्यये ॥९०॥
मेहे मूत्रग्रहे चैव ज्वरे जीर्णे च शस्यते ।
वृष्यं बलकरं हृद्यं बन्ध्यानामपि पुत्रदम् ॥९१॥
श्रीविन्ध्यवासिपादेन सिद्धिदं समुदीरितम् ।
शिवाघृतमिदं नाम्ना शिवायोन्मादिनां सदा ॥९२॥

सियार (शृगाल) का मांस २५००ग्राम, दशमूल के प्रत्येक द्रव्य २५० ग्राम अर्थात् दशमूल २३५० लें। जल २८ लीटर, दूध ३ लीटर तथा गोघृत १५०० ग्राम लें।

कल्कार्थ—१. मुलेठी, २. मंजीठ, ३. कूठ, ४. श्वेतचन्दन, ५. पद्मकाठ, ६. बहेड़ा, ७. हरीतकी, ८. आमला, ९. बृहती, १०. तगर, ११. वायविडङ्ग, १२. अनारदाना, १३. देवदारु, १४. रुदन्ती, १५. रेणुकाबीज, १६. तालीशपत्र, १७. नागकेशर, १८. कृष्ण अनन्तमूल, १९. इन्द्रायणमूल, २०. शालपर्णी, २१. प्रियंगुफूल, २२. चमेली फूल, २३. काकोली, २४. क्षीरकाकोली, २५. नीलकमल, २६. हल्दी, २७. दारुहल्दी, २८. श्वेत अनन्तमूल, २९. मेदा, ३०. महामेदा, ३१. छोटी इलायची, ३२. एलवालुक और ३३. पृश्निपर्णी—ये सभी ३३ द्रव्य प्रत्येक १२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम गोघृत को मूर्च्छित कर लें। ततः कल्क द्रव्य को कूटकर चूर्ण करें और सिल पर जल से उस चूर्ण को पीसकर कल्क बनावें और घृतपात्र में मिलावें। दूध भी इसी घृत के साथ मिलाकर पाक करें। दूसरे चूल्हे पर शृगाल मांस और दशमूल यवकुट को २८ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर घृतपात्र में देकर पाक करें। जब यह क्वाथ सूख जाय तो सम्यक् पाक के लिए ६ लीटर जल देकर और पाक करें। जल सूखने पर घृतपाक की परीक्षा करके घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर छान लें। छने घृत को काचपात्र में संग्रह करें। इस 'शिवाघृत' का देवग्रह, असुर, राक्षस, गन्धर्व, पितृग्रह, भूत-पिचाश, सर्पादि जांगम प्राणियों, यक्ष, भयादि ग्रहों से पीड़ित मस्तिष्क वाले व्यक्तियों के लिए बहुत ही लाभदायक है। इसके अतिरिक्त सभी प्रकार के वातरोग, अपस्मार, शोष, उरःक्षत, कास, पीनस, मदात्यय, प्रमेह, मूत्रबाधा तथा जीर्णज्वर के लिए यह श्रेष्ठौषधि है। यह घृत बल्य है, वृष्य है, हृद्य है, बन्ध्या स्त्रियों के लिए पुत्रप्रद है। इस 'शिवाघृत' को विन्ध्याचल देवी के धाम (उत्तर-प्रदेश के मिर्जापुर नामक जिला में श्री विन्ध्याचल पर्वत पर प्रखर विन्ध्यवासिनी देवी हैं) में निवास करने वाले किसी महात्मा ने लोककल्याणार्थ निर्मित किया था।

मात्रा—६-१२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—घृत गन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—उन्माद, अपस्मार एवं वातव्याधि में।

२९. शिवातैल

प्रस्थं शृगालमांसस्य त्यक्त्वा मुखनखादिकम् ।
दशमूलतुलार्द्धञ्च जलद्रोणे विपाचयेत् ॥९३॥
पादशेषे रसे तस्मिन् क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् ।
प्रस्थं च तिलतैलस्य कल्कं दत्त्वा प्रयत्नतः ॥९४॥
पञ्चमूली वचा कुष्ठं शैलेयं शारिवाद्वयम् ।
धुस्तूरवरुणामूलं भण्टाकी बृहतीद्वयम् ॥९५॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं मधुकं सैन्धवं बला ।
शतपुष्पा देवदारु रास्ना वारणपिप्पली ॥९६॥
मुस्ता तथा शटी लाक्षा चन्दनं च प्रसारणी ।
एषां च कार्षिकं भागं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥९७॥
वातिकं पैत्तिकं चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
उन्मादं सकलं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥९८॥
सर्ववातविकारघ्नमेकाङ्गं सर्वसग्रहम् ।
अपस्मारे ज्वरे कासे हनुस्तम्भार्दितेऽशुभे ॥९९॥
भूतोन्मादे क्रोधोन्मादे ऊर्ध्वजत्रुगदेऽपि च ।
तैलमेततप्रयोक्तव्यं शिवया निर्मितं शुभम् ॥१००॥

क्वाथ-द्रव्य—१. शृगाल[1] (सियार) का मांस ७५० ग्राम, २. दशमूल मिलित २५०० ग्राम, ३. क्वाथार्थ जल १२ लीटर चौथाई शेष क्वाथ ३ लीटर तथा ४. तिलतैल ७५० मि.ली. लें।

कल्क-द्रव्य—१. बेलछाल, २. गम्भारछाल, ३. सोना पाठाछाल, ४. अरणीछाल, ५. पाढलछाल, ६. वच, ७. कूठ, ८. छरीला, ९. श्वेत अनन्तमूल, १०. कृष्ण अनन्तमूल, ११.धत्तूरमूल, १२. वरुणमूलत्वक्, १३. बैंगन, १४. कण्टकारी, १५. बृहती, १६. चित्रकमूल, १७. पिप्पलीमूल,

१. शृगालबर्हिणो पाकं पुमांसं तत्र दापयेत् ।
मयूरी जम्बुकी छागी वीर्यहीना स्वभावतः ॥ (परिभाषा प्रदीप)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१८. मुलेठी, १९. सैन्धवलवण, २०. बलामूल, २१. सौंफ, २२. देवदारुकाष्ठ, २३. रास्ना, २४. गजपीपर, २५. नागरमोथा, २६. कचूर, २७. लाक्षा, २८. गन्धप्रसारणी तथा २९. रक्तचन्दन—कुल २९ द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्कार्थ २९ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और सिल पर पुनः जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। सियार का मांस और दशमूल यवकुट एक बड़े स्टेनलेस स्टील पात्र में रखें और १२ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और मूर्च्छित तैल में मिलाकर पाक करें। पाक करते समय कल्क भी तैल-पात्र में अच्छी तरह मिला दें और मध्यमाग्नि पर पाक करें। द्रवांश सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल मिलाकर भी पाक करें। जब जलीयांश सूख जाय तो पाक-परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार-कर तैल को कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। माता पार्वती द्वारा निर्मित यह 'शिवातैल' वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक उन्माद को उसी तरह नाश करता है जिस तरह इन्द्र का व्रज वृक्षों का नाश करता है। यह सभी प्रकार के वात- विकारों को नाश करता है। एकाङ्गवात, सर्वाङ्गवात, अपस्मार, ज्वर, कास, हनुस्तम्भ, अर्दित, भूतोन्माद, क्रोधोन्माद, ऊर्ध्व-जत्रुगत रोग में इस तैल का प्रयोग (मर्दन एवं पान) बहुत ही लाभदायक है। इस तैल का निर्माण भगवती पार्वती ने पहले किया था।

विमर्श— मांस कठिन द्रव्य है। अतः मांस-पाकार्थ अष्ट गुण जल अवश्य लेना चाहिए। इसीलिए यहाँ भी २४ लीटर जल में पाक करना अत्युपयोगी है।

मात्रा—१० से २० ग्राम। **गन्ध**—मांसगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **उपयोग**—उन्माद, अपस्मार एवं वातविकार में।

तैलं नारायणं वाऽपि महानारायणं तथा।
हितमत्र प्रयोक्तव्यमिति चक्रेण भाषितम् ॥१०१॥

आचार्य चक्रपाणि ने उन्मादादि मानसरोग में नारायणतैल एवं महानारायणतैल की मालिश का उपदेश किया है।

उन्माद रोग में पथ्य

स्नेहो विरेको वमनं च पूर्वं
क्रमान्मरुत्पित्तकफोद्भवेषु ।
ततः परं बस्तिविधिश्च नस्यं
सन्तर्जनं ताडनमञ्जनं च ॥१०२॥
आश्वासनत्रासनबन्धनानि
भयानि दानानि च हर्षणानि।
धूपो दमो विस्मरणं प्रदेहः
शिराव्यधः संशमनं च सेकः ॥१०३॥
आश्चर्यकर्माणि च धूमपानं
धीधैर्यसत्त्वात्मनिवेदनानि ।
अभ्यञ्जनं स्नापनमासनं च
निद्रा सुशीतान्यनुलेपनानि ॥१०४॥
गोधूममुद्गारुणशालयश्च
धारोष्णदुग्धं शतधौतसर्पिः ।
घृतं नवीनञ्च पुरातनञ्च
कूर्मामिषं ध्वन्वरसा रसालम् ॥१०५॥
पुराणकूष्माण्डफलं पटोल-
ब्राह्मीदलं वास्तुकतण्डुलीयम् ।
खराश्वमूत्रं गगनाम्बु पथ्या
सुवर्णचूर्णानि च नारिकेलम् ।
द्राक्षा कपित्थं पनसं च वैद्यै-
र्विधेयमुन्मादगदेषु पथ्यम् ॥१०६॥

वातज उन्माद में स्नेहन, पित्तज में विरेचन, कफज में वमन करावें। तत्पश्चात् बस्तिकर्म, नस्यकर्म करावें। पुनः डराना, मारना, अञ्जन, आश्वासन, त्रासन (घबरा देना), बाँधना, भयोत्पादन, हर्षोत्पादन, धूप, वश में करना, विस्मरण (भुलावा देना), प्रदेह (लेप), शिराव्यध, सिराओं से रक्तमोक्षण, शमन-चिकित्सा, शीतल जल की धारा देना, आश्चर्य उत्पन्न करने वाले कर्मों को करके दिखाना, शास्त्रीय धूमपान कराना, धी, धृति, सत्त्व एवं आत्मा का निवेदन करना, तैल मालिश कराना, स्नान कराना, अच्छे बिछावन पर बैठाना, सुखकर शय्या पर सुलाना आदि उन्माद रोगी के लिए हितकर है।

आहार—भोजन में गेहूँ, मूँग, लाल शालिचावल, धारोष्ण दूध, शतधौतघृत, नवीनघृत, पुराणघृत, कछुए का मांस, जंगली पशु-पक्षिओं का मांसरस, आम्रफल, पुराना पेठा (कूष्माण्ड), परवल, ब्राह्मी, शाक, बथुआ शाक, चौलाई शाक, गदहे एवं घोड़े का मूत्र, वर्षा का जल, हरीतकी, सुवर्णभस्म, नारियल-जल, मुनक्का, कैंथ का फल और कटहल का फल उन्माद रोगी के लिए हितकर है।

कामज, शोकज उन्माद रोग में पथ्य

कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालोभसम्भवान् ।
परस्परप्रतिद्वन्द्वैरेभिरेव शमं नयेत् ॥१०७॥
इष्टद्रव्यविनाशात्तु मनो यस्योपहन्यते।
तस्य तत्सदृशप्राप्त्या सान्त्वाश्वासैश्च तं जयेत् ॥१०८॥

जो उन्माद काम-शोक-भय-क्रोध-हर्ष-ईर्ष्या एवं लोभजन्य उत्पन्न हुआ हो, तो उसे परस्पर विपरीत कर्मों से दूर करें। यथा—हर्षोन्माद में शोक समाचार सुनाना आदि क्रियाओं द्वारा उनका शमन करें। अभीष्ट द्रव्य के नष्ट होने से यदि उन्माद

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

हुआ हो तो उसे तत्प्रतिरूप द्रव्य या दूसरी वस्तु देनी चाहिए। अथवा सांत्वना, आश्वासन से उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

देवादिकृत उन्माद में पथ्य

देवर्षिपितृगन्धर्वैरुन्मत्तेषु च बुद्धिमान्।
त्यजेन्नस्याञ्जनादीनि तीक्ष्णानि क्रूरकर्म च ॥१०९॥
पूजाबल्युपहारशान्तिविधयो होमेष्टमन्त्रक्रिया-
दानं स्वस्त्ययनं व्रतानि नियमः सत्यं जपो मङ्गलम्।
प्रायश्चित्तविधानमज्जनविधी रत्नौषधीधारणं
भूतानामनुरूपमिष्टचरणं गौरीपतेरर्चनम् ॥११०॥
ये च स्युर्भुवि गुह्यकाश्च प्रमथास्तेषां समाराधनं।
देवब्राह्मणपूजनं च शमयेदुन्मादमागन्तुकम् ॥१११॥

देववर्ग, ऋषिवर्ग, पितृवर्ग, गन्धर्ववर्ग के प्रकोप से यदि उन्माद हो तो बुद्धिमान् चिकित्सक को चाहिए कि तीक्ष्ण अञ्जन, तीक्ष्ण नस्य और क्रूर कर्म (भय देना, मारना, बन्धनादि कर्म) त्याग देना चाहिए। यहाँ पूजा, बलि, उपहारादि शान्तिप्रद विधानों को करना चाहिए। हवन, गायत्री आदि इष्ट मन्त्रों का जाप करना चाहिए। दान देना, स्वस्तिवाचन, व्रत रखना, नियम से रहना, सत्यभाषण, जप, मंगलकर्म, प्रायश्चित विधि करना (पापनिराकरणोपाय), रत्न एवं औषधियों का धारण करना, प्राणि के अनुरूप कर्म करना, भगवान् गौरीपति शिव का पूजन, स्मरण, जाप करना, पृथ्वी पर विचरने वाले गुह्यक और प्रमथगण की विधिवत् पूजा-अर्चना करना, देवताओं एवं ब्राह्मणों का विधिवत् पूजन करना आदि क्रियाएँ आगन्तुज उन्माद में हितकर हैं।

उन्माद में अपथ्य

मद्यं विरुद्धाशनमुष्णभोजनं
निद्राक्षुधातृट्कृतवेगधारणम्।
व्यवायमाषाढफलं कठिल्लकं
शाकानि पत्रप्रभवाणि सर्वशः ॥११२॥
तिक्तानि बिम्बीं च भिषक् सदा दिशे-
दुन्मादरोगोपहतेषु गर्हितम् ॥११३॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामुन्मादाधिकारः।

मद्यपान, विरुद्ध भोजन (द्रव्यविरुद्ध, गुणविरुद्ध, कर्मविरुद्ध, वीर्यविरुद्ध, संयोगविरुद्ध, कालविरुद्ध), उष्ण भोजन, निद्रा-भूख-प्यास-छींक आदि के वेगों को रोकना, मैथुन, आषाढ़ माह के फल, करेला, कड़वा (तिक्त) पदार्थ, कुन्दरु शाकादि पदार्थ उन्माद रोग में अपथ्यकर हैं।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य उन्मादरोगाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथापस्माररोगाधिकारः (२५)

अपस्मार की सामान्य चिकित्सा (च.द.)

वातिकं बस्तिभिः प्रायः पैत्तं प्रायो विरेचनैः ।
श्लैष्मिकं वमनप्रायैरपस्मारमुपाचरेत् ॥१॥

वातज अपस्मार में बस्तिकर्म, पित्तज अपस्मार में विरेचन कर्म और कफज अपस्मार में वमनकर्म कराना चाहिए।

संशमन कर्म (च.द.)

सर्वतः सुविशुद्धस्य सम्यगाश्वासितस्य च ।
अपस्मारविमोक्षार्थं योगान् संशमनाञ्छृणु ॥२॥

उपर्युक्त बस्त्यादि कर्म द्वारा अच्छी तरह शरीर शुद्ध हो जाने के बाद अच्छी तरह से रोगी को आश्वासन देना (कि रोगी अब स्वस्थ हो जायेगा) तदनन्तर इस प्रकरण में कहे गये संशमन द्रव्यों (औषधों) द्वारा औषधि प्रयोग करना चाहिए।

१. श्वपित्तस्याञ्जन प्रयोग (च.द.)

पुष्योद्धृतं शुनः पित्तमपस्मारघ्नमञ्जनम् ।
तदेव सर्पिषा युक्तं धूपनं परमं स्मृतम् ॥३॥

पुष्य नक्षत्र में कुत्ते का पित्त निकालकर शीशी में संग्रह करें। इसका अपस्मार रोगी की आँखों में अञ्जन लगाने से अपस्मार नष्ट हो जाता है। इसी पित्त को घृत में मिलाकर रात्रि में रोगी की शय्या के नीच धूपन करने से भी अपस्मार रोग नष्ट हो जाता है।

२. नकुलादि के मुखों का धूपन (च.द.)

नकुलोलूकमार्जारगृध्रकीटाहिकाकजैः ।
तुण्डैः पक्षैः पुरीषैश्च धूपनं कारयेद्भिषक् ॥४॥

नेवला, उल्लू, बिल्ली, गिद्ध, कीट,[1] सर्प एवं कौआ—इनके यथोपलब्ध मुख, पंख एवं मल का धूपन देने से अपस्मार रोग नष्ट हो जाता है।

३. मनोह्वाद्यञ्जन (च.द.)

मनोह्वा तार्क्ष्यजश्चैव शकृत्पारावतस्य च ।
अञ्जनं हन्त्यपस्मारमुन्मादञ्च विशेषतः ॥५॥

मैनसिल, रसाञ्जन और कबूतर की बिष्ठा—इन्हें समभाग लेकर खरल में पीसें और जल की भावना देकर वर्ति बना लें। इसे जल से घिसकर आँजने से अपस्मार और उन्माद रोग नष्ट हो जाते हैं।

४. यष्ट्याद्य नस्याञ्जन (च.द.)

यष्टिहिङ्गुवचावक्रशिरीषलशुनामयैः ।
साजामूत्रैरपस्मारे सोन्मादे नावनाञ्जने ॥६॥

१. मुलेठीचूर्ण, २. हींग, ३. वचाचूर्ण, ४. तगरचूर्ण, ५. शिरीषबीजचूर्ण, ६. लशुन और ७. कूठचूर्ण—समभाग में लें। इन्हें कूट-पीसकर बकरी के मूत्र में मर्दन करें। इसे नेत्रों में अञ्जन करें तथा नाक में नस्य देने से उन्माद और अपस्मार रोग नष्ट हो जाते हैं।

५. कायस्थाद्यऽञ्जन वर्ति (च.द.)

कायस्थान् शारदान्मुद्गान् मुस्तोशीरयवाँस्तथा ।
सव्योषान् बस्तमूत्रेण पिष्ट्वा वर्त्तीः प्रकल्पयेत् ॥७॥
अपस्मारे तथोन्मादे सर्पदष्टे गरार्दिते ।
विषपीते जलमृते चैताः स्युरमृतोपमाः ॥८॥

१. हरीतकी, २. शीतकाल का मूंग, ३. नागरमोथा, ४. खस, ५. जौ, ६. शुण्ठी, ७. पिप्पली तथा ८. मरिच—सभी द्रव्य समभाग लें। सभी द्रव्यों को कूट-पीसकर बकरी के मूत्र से मर्दन कर यवाकृति वर्ति बना लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। अपस्मार, उन्माद, सर्पदंष्ट, गरविष पीड़ित, विष पिये हुए या जल में डूबे हुए व्यक्ति के नेत्रों में अञ्जन करने से यह अञ्जन अमृत की तरह लाभ करता है और रोगी रोगमुक्त हो जाता है।

६. अपेतराक्षस्यादि उद्वर्तन (च.द.)

अपेतराक्षसीकुष्ठपूतनाकेशिचोरकैः ।
उत्सादनं मूत्रपिष्टैर्मूत्रैरेवावसेचनम् ॥९॥

१. काली तुलसी, २. कूठ, ३. छोटी हरीतकी, ४. जटामांसी और ५. चोरक (ग्रन्थिपर्ण)—समभाग लेकर इन्हें चूर्ण कर लें। पुनः सिल पर गोमूत्र के साथ पीसें और सर्वांग शरीर में लेप करें। सूखने के बाद गोमूत्र से ही स्नान करना चाहिए। इससे अपस्मार रोग में बहुत लाभ मिलता है।

७. अपस्मारहरलेप (च.द.)

जतुका-शकृता तद्वद् दग्ध्वा वा बस्तलोमभिः ।
अपस्मारहरो लेपो मूत्रसिद्धार्थशिग्रुभिः ॥१०॥

(१) चिमगादड़ की बिष्ठा १ भाग तथा जला हुआ बकरे का केश १ भाग—इन्हें एक साथ खरल में गोमूत्र के साथ पीसकर सर्वाङ्ग शरीर में लेप करने से अपस्मार नष्ट हो जाता है।

---

१. कीटः = पश्चिमदेशजो वृश्चिकविशेषः। इति शिवदाससेनः ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

(२) श्वेत सरसों १ भाग और सहिजन की छाल १ भाग—इन्हें गोमूत्र से पीसकर लेप लगाने से अपस्मार रोग नष्ट हो जाता है।

८. वचाचूर्ण (च.द.)

यः खादेत् क्षीरभक्ताशी माक्षिकेण वचारजः।
अपस्मारं महाघोरं सुचिरोत्थं जयेद् ध्रुवम् ॥११॥

जो अपस्मार रोगी घोड़वच (गन्धयुक्त वचा) चूर्ण २ ग्राम का मधु से साथ नित्य सेवन करता है और भूख लगने पर दूध-भात एवं मिश्री मिलाकर खाता है, उसका बहुत दिनों का भयंकर अपस्मार रोग दूर हो जाता है।

९. पाशरज्जुमसी प्रयोग (च.द.)

उल्लम्बितनरग्रीवापाशं दग्ध्वा कृता मसी।
शीताम्बुना समं पीता हन्त्यपस्मारमुद्धतम् ॥१२॥

जिस रस्सी से फाँसी लगायी गयी हो, उस रस्सी को शराव-सम्पुट कर गजपुट में जलाकर काली भस्म बना लें। खरल में मर्दन कर काचपात्र में संग्रह करें। इस रस्सी की काली भस्म १ से ३ ग्राम तक शीतल जल से सेवन करने से भयंकर अपस्मार रोग नष्ट हो जाता है।

१०. अपस्मारहर तीन योग (च.द.)

प्रयोज्यं तैललुशुनं पयसा वा शतावरी।
ब्राह्मीरसश्च मधुना सर्वापस्मारभेषजम् ॥१३॥

(१) तिलतैल १० मि.ली. और लशुनस्वरस १० मि.ली.—इन दोनों को मिलाकर पीना चाहिए।

(२) गोदुग्ध २५० मि.ली. में शतावरीचूर्ण ५ से १० ग्राम मिलाकर पीना चाहिए।

(३) ब्राह्मीस्वरस १० मि.ली. में मधु १० ग्राम मिलाकर पीना चाहिए। ये तीनों योग अपस्मार को नाश करने की उत्तम औषधि हैं।

११. अमरनालिका प्रयोग (च.द.)

निर्दुह्य निर्द्रवां कृत्वा छागिकाऽमरनाडिकाम्।
तामम्लसाधितां खादेदपस्मारमुदस्यति ॥१४॥

सद्यःप्रसूत बकरी के बच्चों की नाभिनाल लेकर उसे हाथ से खूब दबा-दबाकर उसका जलांश निकाल दें। पुनः उसे काञ्जी आदि अम्ल में सिद्ध कर खाने से अपस्मार रोग नष्ट हो जाते हैं।

१२. कल्याणकचूर्ण (भा.प्र)

पञ्चकोलं समरिचं त्रिफला बिडसैन्धवम्।
कृष्णाविडङ्गपूतीकयमानीधान्यजीरकम् ॥१५॥
पीतमुष्णाम्बुना चूर्णं वातश्लेष्मामयापहम्।
अपस्मारे तथोन्मादेऽप्यर्शसां ग्रहणीगदे ॥
एतत्कल्याणकं चूर्णं नष्टमग्नेश्च दीपनम् ॥१६॥

१. पिप्पली, २. पिप्पलीमूल, ३. चव्यमूल, ४. चित्रकमूल, ५. शुण्ठी, ६. मरिच. ७. आमला, ८. हरीतकी, ९. बहेड़ा, १०. विडलवण, ११. सैन्धवलवण, १२. पिप्पली, १३. वायविडङ्ग, १४. पूतिकरञ्जबीज, १५. अजवायन, १६. धनियाँ और १७. श्वेतजीरा—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे कल्याणकचूर्ण कहते हैं। इस चूर्ण को १-२ ग्राम की मात्रा में उष्णोदक से प्रातः-सायं सेवन करने से वातज एवं कफज अपस्मार नष्ट हो जाता है। यह चूर्ण अपस्मार, उन्माद, अर्श और संग्रहणी को नष्ट करता है तथा प्रनष्ट अग्नि को पुनः प्रदीप्त करता है।

मात्रा—१ से २ ग्राम। **अनुपान**—उष्णोदक। **स्वाद**—कटु एवं लवण। **वर्ण**—खाखी (हिंग्वष्टक जैसा)। **गन्ध**—काष्ठौषधि गन्ध।

१३. सूतभस्म प्रयोग (र.सा.सं.)

शङ्खपुष्पीवचाब्राह्मीकुष्ठमेलारसैः सह ॥१७॥
सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानतः।
सर्वापस्मारनाशाय महादेवेन भाषितः ॥१८॥

पारदभस्म या रससिन्दूर २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) मधु के साथ चाटकर शंखपुष्पी, वचा, ब्राह्मी, कूठ और छोटी इलायची—इन सबके मिलित यवकुट १० ग्राम को १५० मि.ली. जल के साथ क्वाथ करें; चतुर्थांशावशेष रहने पर छानकर पीने से अपस्मार नष्ट हो जाता है। इस योग को महादेव नामक किसी आचार्य ने कहा है।

१४. इन्द्रब्रह्मवटी (र.सा.सं.)

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं तारं ताप्यं विषं समम्।
पद्मकेशरसंयुक्तं दिनैकं मर्दयेद् द्रवैः ॥१९॥
स्नुह्यग्निविजयैरण्डवचानिष्पावशूरणैः।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवैर्मर्द्यं तद्गोलं पाचयेत् पुनः ॥२०॥
कङ्गुनीसर्षपोत्थेन तैलेन गन्धसंयुतम्।
ततः पक्त्वा समुद्धृत्य चणमात्रा वटी कृता ॥२१॥
इन्द्रब्रह्मवटी नाम भक्षयेदार्द्रकद्रवैः।
दशमूलकषायं च कणायुक्तं पिबेदनु ॥
अपस्मारं जयत्याशु यथा सूर्योदयस्तमः ॥२२॥

१. पारदभस्म (रससिन्दूर), २. अभ्रकभस्म, ३. तीक्ष्ण लौहभस्म, ४. रजतभस्म, ५. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ६. शुद्ध वत्सनाभविषचूर्ण, ७. नागकेशरचूर्ण तथा ८. शुद्ध गन्धक—इन्हें समभाग लें।

भावना द्रव्य—१. स्नुहीक्षीर (थूहर का दूध), २. चित्रक-मूलक्वाथ, ३. भाँग का रस, ४. एरण्डपत्ररस, ५. वचाक्वाथ,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

६. सेमबीजक्वाथ, ७. सूरणकन्दरस, ८. निर्गुण्डीपत्ररस, ९. सरसोंतैल तथा १०. मालकाँगनीतैल लें।

एक खरल में रससिन्दूर का पहले मर्दन करें। ततः नागकेशरचूर्ण तक के सात द्रव्यो को मिलाकर मर्दन करें। पुनः स्नुहीक्षीर से निर्गुण्डी स्वरस तक के ८ द्रव्यों के साथ १-१ दिन तक मर्दन करें। इसे १ बड़ा गोला बनाकर छाया में सुखा लें और शरावसम्पुट करें तथा लघु पुट में पकावें ततः शराव सम्पुट खोलकर गोलक के बराबर शुद्ध गन्धक मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। अब सरसों तैल एवं मालकांगनी तैल थोड़ा-थोड़ा देकर इस औषधि का मर्दन करें और लघु पुट में पूर्ववत् पाक करें। इसके बाद उसे खरल में मर्दन करें और वचाक्वाथ की पुनः भावना देकर २-२ रत्ती की (चना के बराबर) वटी बना लें। इस 'इन्द्रब्रह्म वटी' नामक औषधि को आर्द्रकस्वरस और मधु के साथ चाटकरं बाद में दशमूलक्वाथ ५० मि.ली. में १ ग्राम पिप्पलीचूर्ण मिलाकर पीने से अपस्मार रोग उसी तरह नष्ट हो जाता है जिस तरह भगवान् सूर्य के उदय होने से अन्धकार नष्ट हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. (२ रत्ती)। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस एवं मधु से, ततः दशमूलक्वाथ एवं पिप्पलीचूर्ण बाद में पीयें। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—अपस्मार में।

१५. भूतभैरवरस (र.सा.सं.)

मृतसूतार्कलौहञ्च शिलागन्धकतालकम्।
रसाञ्जनञ्च तुल्यांशं नरमूत्रेण मर्द्दयेत् ॥२३॥
तद्गोलं द्विगुणं गन्धं लौहपात्रे क्षणं पचेत्।
पञ्चगुञ्जामितं भक्ष्यमपस्मारहरं परम् ॥२४॥
हिङ्गु सौवर्चलं व्योषं नरमूत्रेण सर्पिषा।
कर्षमात्रं पिबेच्चानु रसोऽयं भूतभैरवः ॥२५॥

१. रससिन्दूर, २. ताम्रभस्म, ३. लौहभस्म, ४. शुद्ध मैनसिल, ५. शुद्ध गन्धक, ६. शुद्ध हरताल, ७. रसाञ्जन—प्रत्येक द्रव्य २५-२५ ग्राम लें और ८. शुद्ध गन्धक ३५० ग्राम लें। एक खरल में रससिन्दूर का मर्दन करें। ततः अन्य द्रव्यों को रससिन्दूर के साथ मर्दन करें। इसके बाद नरमूत्र के साथ ३ घण्टे तक मर्दन करें। तदुपरान्त मर्दित द्रव्य का १ गोला बनाकर सुखा लें। लोहे की एक छोटी कड़ाही में इस गोले के वजन (१७५ग्राम) से द्विगुण शुद्ध गन्धक का चूर्ण ३५० ग्राम मिलाकर मन्दाग्नि पर थोड़ी देर (१५-२० मिनट) तक पका लें। पुनः कड़ाही को चूल्हे से नीचे उतारकर ठण्डा होने पर गन्धक को खुरचकर निकालें और गोलक के साथ पीसकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'भूतभैरवरस' को ५ रत्ती (६२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में मधु के साथ मिलाकर चाटें और बाद में नरमूत्र ५० मि.ली. में हींग १ ग्राम, सौवर्चललवण २ ग्राम, त्रिकटु २ ग्राम और घृत १० ग्राम मिलाकर पीयें। इसके पीने से अपस्माररोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—६२५ मि.ग्रा. (५ रत्ती)। **अनुपान**—मधु से; बाद में नरमूत्र १२ मि.ली., घृत १० ग्राम, हींग, त्रिकटु २ ग्राम सौवर्चल २ ग्राम मिलाकर पीयें। **गन्ध**—मूत्रगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अपस्मार में।

१६. वातकुलान्तकरस (रसे.सा.सं.)

मृगनाभिः शिला नागकेशरं कलिवृक्षजम्।
पारदं गन्धकं जातीफलमेलालवङ्गकम् ॥२६॥
प्रत्येकं कार्षिकञ्चैव श्लक्ष्णचूर्णञ्च कारयेत्।
जलेन मर्दयित्वा तु वटीं कुर्याद् द्विरक्तिकाम् ॥२७॥
यथाव्याध्यनुपानेन योजयेच्च चिकित्सकः।
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छारोगे च शस्यते ॥२८॥
वातजान् सर्वरोगांश्च हन्यादचिरसेवनात्।
नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्तते ॥
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥२९॥

१. कस्तूरी, २. शुद्ध मैनसिल, ३. नागकेशरचूर्ण, ४. बहेड़ाचूर्ण, ५. शुद्ध पारद, ६. शुद्ध गन्धक, ७. जायफलचूर्ण, ८. छोटी इलायचीचूर्ण तथा ९. लौंगचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह कज्जली बना लें। ततः इस कज्जली के अन्य सभी द्रव्यों को मिलाकर जल के साथ ३ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में सुरक्षित रख लें। चिकित्सक इस वातकुलान्तकरस को रोगानुसार विभिन्न अनुपानों के साथ प्रयोग करावें। यह भयंकर अपस्मार और मूर्च्छारोग की विशेष औषधि है। यह सभी प्रकार की वातव्याधि को शीघ्र ही नष्ट करती है। इससे बढ़कर अपस्मार की कोई विशेष औषधि नहीं है। पूर्वकाल में ब्रह्मा ने वातव्याधि समूह का नाश करने के लिए 'वातकुलान्तकरस' नाम से इस औषधि को कहा था।

मात्रा—२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.)। **अनुपान**—मधु से, चिकित्सक के परामर्श से एवं दोषानुसार। **गन्ध**—कस्तूरी की अच्छी महक। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—अपस्मार, मूर्च्छा एवं वातव्याधि समूह में।

१७. कूष्माण्डघृत (च.द.)

कूष्माण्डस्वरसे सर्पिरष्टादशगुणे पचेत्।
यष्ट्याह्वकल्कं तत्पानमपस्मारविनाशनम् ॥३०॥

१. गोघृत १ किलो, २. कूष्माण्डस्वरस १८ लीटर तथा ३.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मुलेठी कल्क २५० ग्राम लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् उसी पात्र में कल्क और ४ लीटर कूष्माण्डस्वरस मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। शनैः-शनैः १८ लीटर सभी कूष्माण्डस्वरस इस घृत में पका लें। पक्व घृत की परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से घृत को छान लें और काचपात्र में संग्रह करें। इस कूष्माण्डघृत को ६ से १२ ग्राम तक गरम दूध के साथ प्रतिदिन सायं-प्रातः पीने से अपस्मार रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**--गरमगोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। वर्ण—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—अपस्मार में।

१८. ब्राह्मीघृत (भा.प्र.)

ब्राह्मीरसवचाकुष्ठशङ्खपुष्पीशृतं घृतम्।
पुराणं स्यादपस्मारोन्मादग्रहहरं परम् ॥३१॥

पुराना गोघृत १ किलो तथा ब्राह्मीस्वरस ४ लीटर लें। **कल्क**—१. वचा ८५ ग्राम, २. कूठ ८५ ग्राम और ३. शंखपुष्पी ८५ ग्राम लें। सर्वप्रथम घृत को मूर्च्छित करें। ततः वचादि तीनों कल्क द्रव्यों का चूर्ण करें और सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित पुराने घृत में डालें और ब्राह्मीस्वरस मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब ब्राह्मीस्वरस सूख जाय तब सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल मिलाकर पाक करें। जल सूखने पर पाक-परीक्षा करके घृतपात्र को चूल्हे से उतार लें और कुछ ठण्डा होने पर कपड़े से छानकर काचपात्र में इस 'ब्राह्मीघृत' को संग्रहीत करें। इस ब्राह्मीघृत को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम गोदुग्ध के साथ सेवन करने से अपस्मार, उन्माद एवं ग्रहबाधा दूर हो जाती है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अपस्मार, उन्माद एवं ग्रहबाधा में।

१९.पञ्चगव्य घृत (स्वल्प) (च.द.)

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैः समैर्घृतम्।
सिद्धं चातुर्थकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥३२॥

१. गोघृत १ किलो, २. गोदुग्ध १ लीटर, ३. गोदधि १ किलो, ४. गोबररस १ किलो, ५. गोमूत्र १ लीटर लें। सर्वप्रथम एक बड़े भगौने में गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः चारों द्रव्यों को मिलाकर क्रमशः उक्त मूर्च्छित घृत में मिलाकर पकावें। जलांश सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल मिलाकर पुनः पाक करें। जब जलीयांश सूख जाय तब घृतपाक-परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारें और कुछ शीतल होने पर कपड़े से छानकर काचपात्र में इस घृत को संग्रहीत करें। इस 'पञ्चगव्यघृत' को ५ से १० ग्राम की मात्रा में गोदुग्ध के साथ पीने से चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रहबाधा और अपस्माररोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—गोमूत्र गन्धी। **वर्ण**—किञ्चिद् हरिताभ। **स्वाद**—तीक्ष्ण गोमूत्र जैसा। **उपयोग**—अपस्मार, उन्माद एवं ग्रहबाधा नाशक है।

२०. पञ्चगव्य घृत (बृहत्) (च.द.)

द्वे पञ्चमूले त्रिफलां रजन्यौ कुटजं वचाम्।
सप्तपर्णमपामार्गं नीलिनीं कटुरोहिणीम् ॥३३॥
शम्पाकं फल्गुमूलञ्च पौष्करं सदुरालभम्।
द्विपलानि जलद्रोणे पक्त्वा पादावशेषिते ॥३४॥
भार्गीं पाठां त्रिकटुकं त्रिवृतां निचुलानि च।
श्रेयसीमाढकीं मूर्वां दन्तीं भूनिम्बचित्रकौ ॥३५॥
द्वे शारिवे रोहितकं भूतीकं मदयन्तिकाम्।
क्षिपेत् पिष्ट्वाऽक्षमात्राणि तैः प्रस्थं सर्पिषः पचेत् ॥
गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैश्च तत्समैः।
पञ्चगव्यमिदं ख्यातं महत्तदमृतोपमम् ॥३६॥
अपस्मारे ज्वरे कासे श्वयथावुदरे तथा।
गुल्मार्शःपाण्डुरोगेषु कामलायां हलीमके ॥
अलक्ष्मीग्रहरक्षोघ्नं चातुर्थकविनाशनम् ॥३७॥

क्वाथ-द्रव्य—१. बेलछाल, २. गम्भारछाल, ३. अरणी छाल, ४. सोनापाठा, ५. पाढल, ६. बृहती, ७. कण्टकारी, ८. शालपर्णी, ९. पृश्निपर्णी, १०. गोक्षुरबीज, ११. आमला, १२. हरीतकी, १३. बहेड़ा, १४. हल्दी, १५. दारुहल्दी, १६. कुटजछाल, १७. वच, १८. सप्तपर्णी, १९. अपामार्ग, २०. नीलीवृक्षमूल, २१. कुटकी, २२. अमलतासफल, २३. उदुम्बरमूलत्वक्, २४. पुष्करमूल और २५. यवासक—इन सभी २५ द्रव्यों को प्रत्येक ९३-९३ ग्राम लें।

कल्क द्रव्य—१. भार्गी, २. पाठा, ३. शुण्ठी, ४. पिप्पली, ५. मरिच, ६. निशोथ, ७. समुद्रफल, ८. गजपिप्पली, ९. अरहर की मूल, १०. मूर्वा, ११. दन्तीमूल, १२. चिरायता, १३. चित्रकमूल, १४. कृष्ण अनन्तमूल, १५. श्वेत अनन्तमूल, १६. रोहितकछाल, १७. जटामांसी और १८. मेंहदीपत्र—ये प्रत्येक १८ द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। १९. गोघृत ७५० ग्राम, २०. गोदुग्ध ७५० मि.ली., २१. गोदधि ७५० ग्राम, २२. गोमूत्र ७५० मि.ली. तथा २३. गोबररस ७५० मि.ली. लें।

सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः क्वाथ द्रव्यों को यवकुट कर १२ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और मूर्च्छित घृत के साथ मिलाकर मन्दाग्नि में पकावें। ततः कल्क द्रव्यों का चूर्ण बनाकर जल के साथ पुनः सिल पर

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पीसें और कल्क बना लें। इस कल्क को भी मूर्च्छित घृत के साथ मिला दें। तदनन्तर गाय का दही मथकर, गोमूत्र एवं गोबररस क्रमशः मिलाकर पाक करें। जब द्रवांश सूख जाय तो ३ लीटर जल देकर सम्यक् पाक करें। जलांश सूखने पर पाकविद् वैद्य घृतपाक की परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारें और कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करे। यह 'बृहत् पञ्चगव्य घृत' अमृत के समान है। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम दूध के साथ प्रयोग करने पर अपस्मार, ज्वर, कास, शोथ, उदररोग, गुल्म, अर्श, पार्श्वशूल, कामला और हलीमकरोग नष्ट हो जाता है। यह घृत शरीर की शोभा बढ़ाता है, ग्रहबाधा, रक्षाबाधा तथा चातुर्थिकज्वर का नाश करता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अपस्मार एवं उन्माद रोग में।

२१. महाचैतसघृत (च.द.)

शणस्त्रिवृत्तरथैरण्डो दशमूली शतावरी।
रास्ना मागधिका शिग्रुः क्वाथ्यं द्विपलिकं भवेत्॥
विदारी मधुकं मेदे द्वे काकोल्यौ सिता तथा।
एभिः खर्जूरमृद्वीकाभीरुयुञ्जातगोक्षुरैः॥३९॥
चैतसस्य घृतस्याङ्गैः पक्तव्यं सर्पिरुत्तमम्।
महाचैतससंज्ञं तु सर्वापस्मारनाशनम्॥४०॥
गरोन्मादप्रतिश्यायतृतीयकचतुर्थकान्।
पापालक्ष्मीं जयेदेतत्सर्वग्रहनिवारकम्॥४१॥
श्वासकासहरश्चैव शुक्रार्त्तवविशोधनम्।
घृतमानं क्वाथविधिरिह चैतसवन्मतः॥४२॥
कल्कश्चैतसकल्कोक्तद्रव्यैः सार्धञ्च पादिकः।
नित्यं युञ्जातकाप्राप्तौ तालमस्तकमिष्यते॥४३॥

क्वाथ-द्रव्य—१. शणबीज, २. निशोथ, ३. एरण्डमूल-त्वक्, ४. बिल्वत्वक्, ५. अरणीछाल, ६. सोनापाठाछाल, ७. गम्भारछाल, ८. पाढलछाल, ९. शालपर्णी, १०. पृश्निपर्णी, ११. कण्टकारी, १२. बृहती, १३. गोक्षुर, १४. शतावरी, १५. रास्ना, १६. पिप्पली और १७. सहिजनछाल—ये सभी १७ द्रव्य प्रत्येक ९३-९३ ग्राम लें।

कल्क-द्रव्य—१. विदारीकन्द, २. मुलेठी, ३. मेदा, ४. महामेदा, ५. काकोली, ६. क्षीरकाकोली, ७. चीना, ८. पिण्ड-खजूर (छोहाड़ा), ९. मुनक्का, १०. शतावरी, ११. युञ्जातक, १२. गोक्षुर तथा चैतसघृत में पठित कल्क द्रव्य—१३. बेल-छाल, १४. अरणीछाल, १५. सोनापाठा, १६. पाढल, १७. शालपर्णी, १८. पृश्निपर्णी, १९. बृहती, २०. कण्टकारी, २१. रास्ना, २२. एरण्डमूल, २३. निशोथ २४. बलामूल और २५. मूर्वा—ये कुल २५ द्रव्य प्रत्येक १०-१० ग्राम लें। गोघृत ७५० ग्राम लें। चैतसघृत में १५ द्रव्य क्वाथ के हैं उसमें से दो यहाँ पहले से हैं। अतः शेष १३ द्रव्य लिये गये हैं।

सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। ततः शणबीजादि १७ द्रव्यों को यवकुट करें और १२ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित घृत के साथ पकावें। पुनः विदारीकन्दादि कल्क द्रव्यों को पीसकर कल्क बनावें और घृत में मिलाकर पकावें। जब द्रवांश सूखने लगे तो सम्यक् पाक के लिए घृत से ४ गुना जल अर्थात् ३ लीटर जल मिलाकर पुनः पकावें। जब घृत का जलीयांश सूखने लगे तो परीक्षा कर घृत पात्र को चूल्हे से नीचे उतारें और वस्त्र से छानकर काचपात्र में संग्रह करें। इसे 'महाचैतस घृत' कहते हैं। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गोदुग्ध के साथ इस घृत का प्रयोग करने से सभी प्रकार के अपस्मार रोग नष्ट हो जाते हैं। यह गरविष, उन्माद, प्रतिश्याय, तृतीयक एवं चातुर्थक ज्वर, पापज रोग (कुष्ठ, चर्मरोग, रतिज रोगादि) नाशक है; शरीर की शोभा बढ़ाता है; सभी (भूत-प्रेत-यक्ष-गन्धर्व-पिशाच-देव-ऋषि-राक्षसादि) ग्रह-बाधा नाशक है। श्वास-कास नाशक है, शुक्र एवं आर्तव विशोधक है। घृत का वजन, क्वाथविधि, कल्कविधि और निर्माणविधि उन्मादाधिकारोक्त चैतस घृत के समान ही समझना चाहिए। युञ्जात् के अभाव में तालमस्तक लेना चाहिए।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अपस्मार एवं उन्माद में।

दशमूलीक्वाथ-कल्याणघृत प्रयोग

हृत्कम्पोऽक्षिरुजा यस्य स्वेदो हस्तादिशीतता।
दशमूलीजलं तस्य कल्याणाज्यं च योजयेत्॥४४॥

जिस अपस्मार के रोगी में हृत्कम्प, नेत्रपीड़ा, शरीर में पसीना और हाथ-पैरों में शीतलता आ गयी हो, उसे दशमूलक्वाथ के साथ कल्याणघृत का प्रयोग करना चाहिए।

२२. बस्तमूत्राद्यतैल (च.द.)

अभ्यङ्गं सार्षपं तैलं बस्तमूत्रे चतुर्गुणे।
सिद्धं स्याद् गोशकृन्मूत्रैः स्नानोत्सादनमेव च॥४५॥

सरसों तैल १ ली. तथा बकरी मूत्र ४ ली. लें। सरसों तैल को मूर्च्छित करें। ततः उसमें बकरी का थोड़ा-थोड़ा मूत्र मिलाकर पकावें। जब ४ लीटर गोमूत्र पक जाय तो तैलपाकविद् वैद्य परीक्षोपरान्त तैलपात्र को उतारकर तैल छान लें और काचपात्र में संग्रह करें। सर्वप्रथम अपस्मार के रोगी के शरीर पर गोबर का लेप एवं मर्दन करें। सूखने पर गोमूत्र से स्नान करें। तत्पश्चात्

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उक्त 'बस्तमूत्राद्यतैल' का अभ्यङ्ग करें। कुछ दिनों तक ऐसा करने से अपस्मार रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ १२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—गोमूत्र से स्नान के बाद अभ्यङ्ग। **गन्ध**—बकरीमूत्र जैसी। **उपयोग**—अपस्मार में।

२३. पलङ्कषाद्यतैल (च.द.)

पलङ्कषावचापथ्यावृश्चिकाल्यर्कसर्षपैः ।
जटिलापूतनाकेशीनाकुलीहिङ्गुचोरकैः ॥४६॥
लशुनातिरसाचित्राकुष्ठैर्विड्भिश्च पक्षिणाम् ।
मांसाशिनां यथालाभं बस्तमूत्रे चतुर्गुणे ॥
सिद्धमभ्यञ्जनात्तैलमपस्मारविनाशनम् ॥४७॥

कल्क-द्रव्य—१. गुग्गुलु, २. वच, ३. हरीतकी, ४. वृश्चिकाली (बिच्छू बूटी), ५. अर्कमूल, ६. सरसों, ७. जटामांसी, ८. हरीतकी, ९. भूतकेशी, १०. गन्धनाकुली, ११. हींग, १२. चोरक, १३. लशुन, १४. अतीश, १५. दन्तीमूल, १६. कूठ, १७. मांसभक्षी पक्षियों (गिद्ध, कौआ, मयूर, मुर्गा) का विट्, १८. तिलतैल १ लीटर तथा १९. बकरी का मूत्र ४ लीटर। उपर्युक्त कल्क-द्रव्य प्रत्येक १५-१५ ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् कल्क द्रव्यों को कूट-पीस-कर कल्क बना लें और मूर्च्छित तैल के साथ मिला लें। पुनः बकरी का मूत्र १ लीटर देकर पकावें। एक बार में पूरा ४ लीटर बकरी का मूत्र देने से बहुत उफान आयेगा जिससे तैलपात्र से गिर जाने की प्रबल सम्भावना रहती है। अतः थोड़ा-थोड़ा मूत्र डालना अच्छा रहता है। सम्पूर्ण बकरी का मूत्र सूख जाने के बाद तैल से ४ गुना जल देकर सम्यक् पाक करें। जलीयांश के सूखने पर परीक्षोपरान्त चूल्हे से तैलपात्र को नीचे उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रह करें।

मात्रा—१० से २० ग्राम अभ्यंगार्थ। **गन्ध**—मूत्रगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ पीत। **स्वाद**—। **उपयोग**—अपस्मार में।

अपस्मार रोग में पथ्य

उन्मादेषु यदुद्दिष्टं पथ्यं नस्याञ्जनौषधम् ।
अपस्मारेऽपि तत्सर्वं प्रयोक्तव्यं भिषग्वरैः ॥४८॥

उन्माद रोग में जो नस्य, अंजन एवं औषधि हितकर हैं, उन सभी का अपस्मार रोग में भी प्रयोग करना चाहिए।

नस्यं सिराव्यधो दानं त्रासनं बन्धनं भयम् ।
तर्ज्जनं ताडनं हर्षो धूमपानञ्च विस्मयः ॥४९॥
धीधैर्यात्मादिविज्ञानं स्नानमभ्यञ्जनानि च ।
लौहिताः शालयो मुद्गा गोधूमाः प्रतनं हविः ॥५०॥
कूर्मामिषं धन्वरसा दुग्धं ब्राह्मीदलं वचा ।
पटोलं वृद्धकूष्माण्डं वास्तूकं स्वादुदाडिमम् ॥५१॥
शोभाञ्जनं पयःपेटी द्राक्षा धात्री परूषकम् ।
तैलं खराश्वमूत्रञ्च गगनाम्बु हरीतकी ॥
अपस्मारगदे नृणां पथ्यमेतदुदीरितम् ॥५२॥

अपस्मार के रोगी को नस्य देना, सिरावेधन (रक्तमोक्षण) दान, डराना, बाँधना, भय दिखाना, डाँटना, मारना, हर्ष उत्पन्न करना, धूमपान कराना, आश्चर्य उत्पन्न कराना (टेलीविजन में आजकल ऐसे अनेक विस्मयोत्पादक दृश्य देखने को मिलते हैं), बुद्धि, धैर्य एवं आत्मा आदि का ज्ञान, स्नान, तैलमर्दन, लाल शालि चावल का सेवन, मूँग, गेहूँ, पुराना घी, कछुए का मांस, जाङ्गल पशु-पक्षियों का मांसरस, गोदुग्ध, ब्राह्मीपत्र, वच, परवल फल, सुपक्व कूष्माण्ड (पेठा), बथुआ, मीठा अनारफल, सहिजन फल, नारियल, द्राक्षा, आमला, फालसा, तिलतैल, गदहे और घोड़े का मूत्र, वर्षा का जल और हरीतकी पथ्य है।

अपस्मार रोग में अपथ्य

चिन्तां शोकं भयं क्रोधमशुचीन्यशनानि च ।
मद्यं मत्स्यं विरुद्धान्नं तीक्ष्णोष्णगुरुभोजनम् ॥५३॥
अतिव्यवायमायासं पूज्यपूजाव्यतिक्रमम् ।
पत्रशाकानि सर्वाणि बिम्बीमाषाढकं फलम् ॥५४॥
तृषानिद्राक्षुधावेगमपस्मारी परित्यजेत् ।
तोयावगाहनं शैलद्रुमाध्यारोहणं तथा ।
इत्यादीनि स्मृतिध्वंसे वर्जनीयानि यत्नतः ॥५५॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामपस्माराधिकारः ।

चिन्ता, शोक, भय, क्रोध, अपवित्र भोजन, मद्य, मछली, विरुद्ध अन्न, तीक्ष्ण-उष्ण-गुरु भोजन, अतिमैथुन, परिश्रम, पूज्यों की एवं देवताओं की पूजा न करना या इसमें व्यतिक्रम होना, सभी पत्र शाक, कुन्दरुफल, आषाढफल, तृषा, निद्रा, भूख के वेगों को रोकना—ये सब अपस्मार रोगी में अपथ्यकर हैं। अतः इनका परित्याग कर देना चाहिए। पानी में गोता (डुबकी) लगाना, पर्वतों एवं वृक्षों पर चढ़ना आदि अपस्मार में वर्जित है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्यापस्माराधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ वातव्याधिरोगाधिकारः (२६)

वातरोग में सामान्य क्रम (च.द.)

स्वाद्वम्ललवणैः स्निग्धैराहारैर्वातरोगिणः ।
अभ्यङ्गस्नेहबस्त्याद्यैः सर्वानेवोपपादयेत् ॥१॥

वातव्याधि रोग से पीड़ित व्यक्ति की सामान्यतः वातहर, स्वादु, अम्ल, लवण एवं स्निग्ध द्रव्यों से तथा अभ्यङ्ग (तैल मालिश), स्नेहबस्ति आदि क्रियाओं द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए।

१. वातहर प्रदेह (च.द.)

कोलं कुलत्थाः सुरदारुरास्ना-
माषातसीतैलफलानि कुष्ठम् ।
वचा शताह्वायवचूर्णमम्ल-
मुष्णानि वातामयिनां प्रदेहः ॥२॥

१. बेरफलचूर्ण, २. कुलथीचूर्ण, ३. देवदारुचूर्ण, ४. रास्नाचूर्ण, ५. उड़दचूर्ण, ६. अतसीचूर्ण, ७. तैलीयबीज (तिलादि), ८. आमलाचूर्ण, ९. हरीतकीचूर्ण, १०. बहेड़ा-चूर्ण, ११. कूठचूर्ण, १२. वचचूर्ण, १३. सौंफचूर्ण और १४. जौ चूर्ण—सभी समभाग लें। इन द्रव्यों को आवश्यकतानुसार १५-२० ग्राम या और अधिक मिलित चूर्ण लें और इसे काञ्जी से पीसकर गरम करें तथा गरम-गरम ही वातपीड़ित स्थान पर प्रदेह-लेप करें। इस कर्म से वेदनाएँ शान्त हो जाती हैं।

तैल-कांजी पूरित द्रोणी में अवगाहन

पक्षाघातं कटिहनुशिरः कर्णनासाऽक्षितालु-
ग्रीवाग्रन्थिप्रबलमनिलं सार्दितं सापतानम् ।
मूत्राघातं ग्रहणिगलरुक् श्वाससर्वाङ्गकम्पं
तैलद्रोणी हरति न चिरात् काञ्जिकद्रोणिका च ॥३॥

पक्षाघात के रोगी को द्रोणी (Tub bath) में तैल और कांजी भरकर बैठाना चाहिए। यह तैल-कांजी पूरित द्रोणी के प्रयोग से पक्षाघात, कटि, हनु, शिर, कर्ण, नासा, नेत्र, तालु, ग्रीवा एवं ग्रन्थियों में प्रकुपित हुए वातरोग तथा अर्दितरोग, अपतानक-रोग, मूत्राघात, ग्रहणीरोग, गले के रोग, श्वास और सर्वांगकम्प-रोग नष्ट होते हैं।

तैल-घृत-आर्द्रकस्वरस-निम्बुस्वरस प्रयोग

तैलं घृतं चार्द्रकमातुलुङ्ग्या
रसं च चुक्रं सगुडं पिबेद्वा ।
कट्यूरुपृष्ठत्रिकगुल्मशूल-
गृध्रस्युदावर्त्तहरः प्रयोगः ॥४॥

तैल, घृत, आर्द्रकस्वरस, मातुलुङ्गनिम्बस्वरस, चुक्र और गुड़ मिलाकर एक साथ पीने से कटिपीड़ा, ऊरुपीड़ा, त्रिकपीड़ा, गुल्म, शूल, गृध्रसी तथा उदावर्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

२. पञ्चमूलीबला क्षीर

पञ्चमूलीबलासिद्धं क्षीरं वातामये हितम् ॥५॥

वातव्याधि में पञ्चमूल (बृहत्पञ्चमूल) एवं बलामूल से सिद्ध क्षीरपान लाभदायक होता है।

कोष्ठादिगत वातचिकित्सा (च.द.)

विशेषतस्तु कोष्ठस्थे वाते क्षारं पिबेन्नरः ।
आमाशयस्थे शुद्धस्य यथारोगहरी क्रिया ॥६॥

वायु के कोष्ठगत रहने पर विशेषकर क्षारयुक्त योगों का प्रयोग करना चाहिए और आमाशयगत होने पर वमन कराकर वातनाशक क्रिया करनी चाहिए।

आमाशयस्थ वातचिकित्सा

आमाशयगते वाते छर्दिताय यथाक्रमम् ।
रूक्षः स्वेदो लङ्घनञ्च कर्त्तव्यं वह्निदीपनम् ॥७॥

आमाशयगत वायु-विकृति में पहले रोगी को वमन करायें; पुनः रूक्ष, स्वेद, लंघनादि अग्निदीपन चिकित्सा करनी चाहिए।

आमाशयगत वातचिकित्सा (सुश्रुत)

आमाशयगते वाते छर्दिताय यथाक्रमम् ।
देयः षड्धरणो योगः सप्तरात्रं सुखाम्बुना ॥८॥

आमाशयगत वात-विकार में पहले वमन कराकर यथाक्रमोक्त सात दिन तक षट्धरणयोग सुषुम जल से सेवन करायें।

३. षट्धरण योग (चक्रदत्त)

चित्रकेन्द्रयवाः पाठाकटुकाऽतिविषाऽभयाः ।
महाव्याधिप्रशमनो योगः षड्धरणः स्मृतः ॥९॥
पलदशमांशो धरणं योगोऽयं सौश्रुतस्ततस्तस्य ।
माषेण पञ्चगुञ्जकमानेन प्रत्यहं देयः ॥१०॥

१. चित्रकमूल, २. इन्द्रयव, ३. पाठा, ४. कटुकी, ५. अतीस और ६. हरीतकीफलदल—ये छः द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य १ धरण[1]

१. माषैश्चतुर्भिः शाणः स्यादधरणं तत्त्रिगद्यते। (परि.प्रदीप)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् १ शाण (बराबर ३ ग्राम) होता है। अतः प्रत्येक ३-३ ग्राम की मात्रा में लें। वातव्याधि विनाशार्थ यह योग कुल ५ रत्ती की मात्रा में सुषुम जल से लेना चाहिए।

पक्वाशयगत वातचिकित्सा (च.द.)

पक्वाशयगते वाते हितं स्नेहविरेचनम्।
बस्तयः शोधनीया याः प्राशाश्च लवणोत्तराः ॥११॥

पक्वाशय में वायु स्थित होने पर स्नेहयुक्त (एरण्डतैल, नारायणतैलादि) विरेचन देना चाहिए। शोधन बस्ति का प्रयोग करना चाहिए। लवण मिश्रित अवलेहों को लेना चाहिए।

४. स्नेहलवण (च.द.)

स्नुहीलवणवार्त्ताकुस्नेहाँश्छन्ने घटे दहेत्।
गोमयैः स्नेहलवणं तत्परं वातनाशनम् ॥१२॥

१. स्नुहीक्षीर, २. पाँचों नमक, ३. बैंगन तथा ४. घृत-तैल-वसा-मज्जा चारों स्नेह—चारों द्रव्य १००-१०० ग्राम लें। इन्हें मिलाकर एक हाँडी में बन्द करें और वाराहपुट में पाक करें। १-१ ग्राम उष्ण जल से सेवन करने से वात-विकार नष्ट हो जाते हैं।

बस्त्यादिगत वातचिकित्सा (च.द.)

कार्यो बस्तिगते चाऽपि विधिर्बस्तिविशोधनः।
त्वङ्मांसासृक्शिराप्राप्ते कुर्याच्चासृग्विमोक्षणम् ॥

बस्ति[1] में स्थित वात-विकृति में बस्तिशोधक चिकित्सा करनी चाहिए। त्वचागत वातविकृति में, मांसगत वातविकृति में, रक्तगत वात में तथा शिरागत वात में रक्तमोक्षण करना चाहिए।

स्नाय्वादिगत वातचिकित्सा (च.द.)

स्नेहोपनाहाग्निकर्मबन्धनोन्मर्दनानि च।
स्नायुसन्ध्यस्थिसम्प्राप्ते कुर्याद्वाते विचक्षणः ॥१४॥

स्नायुगत वातविकृति, सन्धिगत वातविकृति, अस्थिगत वात-विकृति में क्रमशः स्नेहन, उपनाह (पुल्टिश बाँधना) और अग्निकर्म करना चाहिए। बन्धन और मर्दन कर्म सभी में पूर्वकर्म जैसा करना चाहिए।

त्वग्-रक्ताश्रित वात की चिकित्सा (च.द.)

स्वेदाभ्यङ्गावगाहांश्च हृद्यं चान्नं त्वगाश्रिते।
शीताः प्रदेहा रक्तस्थे विरेको रक्तमोक्षणम् ॥१५॥

त्वचा में आश्रित रसगत वातरोग में स्वेदन, अभ्यङ्ग और अवगाहन कर्म करना चाहिए और हृदय के लिए बलवर्धक भोजन करना चाहिए। रक्तगत वात में चन्दनादि शीतल द्रव्यों का प्रदेह, प्रलेप, विरेचन और रक्तमोक्षण कर्म कराना चाहिए।

१. इसके लिए माधवनिदान वातव्याधि प्रकरण देखें।

मांस-मेदो-ऽस्थि-मज्जगत वातचिकित्सा (च.द.)

विरेको मांसमेदःस्थे निरूहाः शमनानि च।
बाह्याभ्यन्तरतः स्नेहैरस्थिमज्जगतं जयेत् ॥१६॥

मांस-मेदोगत वातविकार में विरेचन, निरूहबस्ति तथा संशमन चिकित्सा करनी चाहिए। अस्थि एवं मज्जगत वातविकार में बाह्य एवं आभ्यन्तर स्नेह का उपयोग करना चाहिए।

शुक्रगत वातचिकित्सा (च.द.)

हर्षोऽन्नपानं शुक्रस्थे बलशुक्रकरं हितम्।
विबद्धमार्गं शुक्रन्तु दृष्ट्वा दद्याद्विरेचनम् ॥१७॥

शुक्रगत वातविकार में सुन्दर स्त्रियों के साथ वार्त्तालाप तथा रमण करना चाहिए। शारीरिक बल और शुक्र बढ़ाने वाला हितकर अन्न-पान का प्रयोग करना चाहिए। शुक्रमार्ग अवरुद्ध हो गया हो तो शुक्र विरेचन देना चाहिए।

५. गर्भगत वातचिकित्सा (च.द.)

गर्भे शुष्के तु वातेन बालानाञ्चापि शुष्यताम्।
सितामधुककाश्मर्यैर्हितमुत्थापने पयः ॥१८॥

वातप्रकोप के कारण गर्भ और बालक के सूखने पर मुलेठी एवं गम्भारीछाल द्वारा सिद्ध दूध-मिश्री मिलाकर प्रातः-सायं पिलाना चाहिए।

शिरोगत वातचिकित्सा (च.द.)

शिरोगतेऽनिले वातशिरोरोगहरी क्रिया ॥१९॥

शिर में वात प्रकुपित होने पर वातज शिरोरोग की चिकित्सा करनी चाहिए।

व्यादितास्य (विकृतास्य) चिकित्सा (च.द.)

व्यादितास्ये हनुं स्विन्नामङ्गुष्ठाभ्यां प्रपीड्य च।
प्रदेशिनीभ्याञ्चोन्नम्य चिबुकोन्नमनं हितम् ॥२०॥

व्यादितास्य अर्थात् जिस मनुष्य की हन्वस्थि की सन्धियाँ विश्लेष के कारण खुली ही रह जाती हो, तो उसके दोनों हनु-सन्धियों को स्वेदित कर अंगूठों से दबाकर दोनों तर्जनी अँगुलियों से ऊपर उठाना चाहिए। इस क्रिया से हन्वस्थि स्वतः अपने स्थान पर बैठ जाती है।

६. अर्दित-चिकित्सा (भा.प्र.)

रसोनकल्कं नवनीतमिश्रं
खादेन्नरो योऽर्दितरोगयुक्तः।
तस्यार्दितं नाशयतीह शीघ्रं
वृन्दं घनानामिव मातरिश्वा ॥२१॥

अर्दित रोग से पीड़ित मनुष्य को सिल पर पिसे हुए ३ ग्राम लशुन कल्क में १२ ग्राम मक्खन मिलाकर खिलाने से कुछ दिनों में ही अर्दित रोग नष्ट हो जाता है। जैसे वायु से मेघसमूह नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

७. माषेण्डरी प्रयोग (च.द.)

अर्दिते नवनीतेन खादेन्माषेण्डरीं नरः ।
क्षीरमांसरसैर्भुक्त्वा दशमूलीरसं पिबेत् ॥२२॥

अर्दित रोगी उड़द के बड़े को मक्खन के साथ खाकर बाद में दूध-रोटी या मांसरस के साथ रोटी खायें और बाद में दशमूल-क्वाथ में घी मिलाकर पीना चाहिए।

अर्दित में स्नेहाभ्यङ्गादि विधान (च.द.)

स्वेदाभ्यङ्गशिरोबस्तिपाननस्यपरायणः ।
अर्दितं स जयेत्सर्पिः पिबेदौत्तरभक्तिकम् ॥२३॥

स्वेदनकर्म, नारायणादि तैलों का अभ्यङ्ग, इन्हीं तैलों से शिरोबस्ति, इसी तैल का पान तथा नारायण तैल से नस्य और भोजन के बाद घृतपान करने से अर्दित रोग का नाश हो जाता है।

८. मन्यास्तम्भ-चिकित्सा (च.द.)

पञ्चमूलीकृतः क्वाथो दशमूलीकृतोऽथवा ।
रूक्षः स्वेदस्तथा नस्यं मन्यास्तम्भे प्रशस्यते ॥२४॥

मन्यास्तम्भ रोग में पञ्चमूलक्वाथ अथवा दशमूलक्वाथ से रूक्ष स्वेद एवं नस्य देना हितकर होता है। गरम क्वाथ में अवगाहन (स्नान/टबबाथ) रूक्ष स्वेद के अन्तर्गत है जो बहुत लाभप्रद है।

९. ग्रीवास्तम्भ-चिकित्सा

कटुतैलेनाभ्यक्ते लिप्ते कल्केन वाजिगन्धायाः ।
शाम्येद् ग्रीवास्तम्भः शूलं महदप्यनायासम् ॥२५॥

ग्रीवास्तम्भ रोग में ग्रीवाप्रदेश में कटुतैल की मालिश करें। ततः अश्वगन्धाचूर्ण को जल में पीसकर ग्रीवाप्रदेश में लेप करें। इस विधि से ग्रीवास्तम्भ एवं तीव्र ग्रीवाशूल अनायास ही दूर हो जाता है।

(जिह्वास्तम्भ) वातदुष्ट वाग्धमनी-चिकित्सा (च.द.)

वाताद् वाग्धमनीदुष्टौ स्नेहगण्डूषधारणम् ॥२६॥

प्रकुपित वात के द्वारा वाग्धमनी शिरा के दूषित हो जाने पर अर्थात् 'जिह्वास्तम्भ' रोग में वातहर तैल का गण्डूष धारण करना हितकर है।

वक्षस्त्रिकादिगत वातचिकित्सा (च.द.)

वक्षस्त्रिकस्कन्धगतं वायुं मन्यागतं तथा ।
वमनं हन्ति नस्यं च कुशलेन प्रयोजितः ॥२७॥

वक्ष, त्रिक, स्कन्ध और मन्या में प्रकुपित वायु को कुशल वैद्य द्वारा प्रयुक्त वमन एवं नस्य नाश कर देता है।

१०. विश्वाची-अवबाहुक में दशमूल्यादिक्वाथ (च.द.)

दशमूलीबलामाषक्वाथं तैलाज्यमिश्रितम् ।
सायं भुक्त्वा पिबेन्नस्यं विश्वाच्यामवबाहुके ॥२८॥

दशमूल यवकुट, बलामूल तथा उड़द—इन्हें समभाग लेकर यवकुट करें। इस यवकुट से २५ ग्राम लेकर ४०० मि.ली. जल में रात्रिपर्यन्त भीगने दें तथा प्रातः क्वाथ करें। जब चौथाई (१०० मि.ली.) शेष रहे तो छानकर १२ ग्राम घृत और १२ मि.ली. तैल मिलाकर नाक या मुख द्वारा पीने से विश्वाची और अवबाहुक नामक वातव्याधि रोग नष्ट हो जाते हैं।

११. उक्त रोगों में बलादिक्वाथ (चक्रदत्त)

मूलं बलायास्त्वथ पारिभद्रात्
तथाऽऽत्मगुप्तास्वरसं पिबेद्वा ।
नस्यं तु यो मांसरसेन कुर्यान्
मासादसौ वज्रसमानबाहुः ॥२९॥

बलामूलक्वाथ, निम्बत्वक्क्वाथ तथा केवाँचबीजक्वाथ—इन्हें समभाग १२-१२ मि.ली. मिलाकर पीने से तथा १ मास तक मांसरस का नस्य लेने से वज्र के सदृश बाहु हो जाता है।

१२. माषात्मगुप्तादि क्वाथ (पक्षाघाते) (च.द.)

माषात्मगुप्तकैरण्डवाट्यालकशृतं पिबेत् ।
हिङ्गुसैन्धवसंयुक्तं पक्षाघातनिवारणम् ॥३०॥

१. उड़द, २. केवाँचबीज, ३. एरण्डत्वक् तथा ४. बलामूल—इन्हें समभाग लेकर यवकुट करें। इस यवकुट से २५ ग्राम क्वाथ लेकर ४०० मि.ली. जल में रात्रिपर्यन्त भीगने दें। प्रातः मन्दाग्नि पर क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें और १ ग्राम शुद्ध हींग और २ ग्राम सैन्धवलवण मिलाकर पीने से पक्षाघात नष्ट हो जाता है।

१३. बाहुशोष-हृद्गत वातचिकित्सा (च.द.)

बाहुशोषे पिबेत् सर्पिर्भुक्त्वा कल्याणकं महत् ।
हृदि प्रकुपिते वाते चांशुमत्याः पयो हितम् ॥३१॥

बाहुशोष रोग में भोजन के बाद उन्मादरोगोक्त महाकल्याण घृत पियें। हृदयगत वात प्रकुपित होने पर शालपर्णी का क्षीरपाक करके पीना चाहिए।

१४. अपतानक की चिकित्सा (च.द.)

हरीतकी वचा रास्ना सैन्धवं चाम्लवेतसम् ।
घृतमात्रसमायुक्तमपतानकनाशनम् ॥३२॥
हन्ति प्राग्भोजनात्पीतं दध्यम्लंसवचोषणम् ।
अपतानकमन्योऽपि वातव्याधिक्रमो हितः ॥३३॥

१. हरीतकी, २. वचा, ३. रास्ना, ४. सैन्धवलवण और ५. अम्लवेतस—प्रत्येक समभाग लें। इनके सूक्ष्म चूर्ण को ५ ग्राम घी के साथ सेवन करने से अपतानक रोग नष्ट हो जाता है। इस योग को दूसरी विधि से भी ले सकते हैं। इनके क्वाथ में सैन्धवलवण एवं घी मिलाकर भोजन पूर्व लेने से भी अपतानक

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नष्ट हो जाता है। भोजन से पूर्व खट्टे दही में थोड़ा वचाचूर्ण १ ग्राम कालीमरिच चूर्ण २ ग्राम मिलाकर खाने से अपतानक रोग नष्ट हो जाता है। इस योग के साथ वातव्याधिनाशक अन्य प्रयोग भी करते रहना चाहिए।

१५. कुब्जचिकित्सा (च.द.)

वातघ्नैर्दशमूल्या च नवं कुब्जमुपाचरेत्।
स्नेहैर्मांसरसैर्वाऽपि प्रवृद्धं तं विवर्जयेत् ॥३४॥

नये कुब्ज रोग में वातनाशक तैलों का अभ्यङ्ग करना चाहिए तथा दशमूलक्वाथ में अन्य वातनाशक स्नेह (महाकल्याण घृत) और मांसरस मिलाकर पिलाना चाहिए। पुराने एवं बढ़े हुए कुब्ज रोग को त्याग देना चाहिए।

१६. तूनी-प्रतितूनी चिकित्सा (च.द.)

पिप्पल्यादिरजस्तूनीप्रतितून्योः सुखाम्बुना।
पिबेद्वा स्नेहलवणं सघृतं क्षारहिङ्गु वा ॥३५॥

तूनी और प्रतितूनी रोग में सुश्रुतोक्त पिप्पल्यादि गण[1] चूर्ण अथवा पूर्वोक्त स्नेह-लवण सुखोष्ण जल से लेना चाहिए। १ तोला घृत में $\frac{१}{२}$ ग्राम हींग तथा यवक्षार १ ग्राम मिलाकर पीना चाहिए।

आध्मान चिकित्सा (च.द.)

आध्माने लङ्घनं पाणितापश्च फलवर्त्तयः।
दीपनं पाचनञ्चैव बस्तिश्चाप्यत्र शोधनः ॥३६॥

आध्मानरोग होने पर लंघन कराना चाहिए। आग पर हाथ गरम करके रोगी के पेट पर सेंकना चाहिए। पखाना कराने के लिए फलवर्त्ति का प्रयोग (गुदा में) करना चाहिए। इसमें दीपन-पाचन औषध का प्रयोग एवं शोधन बस्ति लाभप्रद है।

प्रत्याध्मान-प्रत्यष्ठीला-अष्ठीला चिकित्सा (च.द.)

प्रत्याध्माने तु वमनं लङ्घनं दीपनं तथा।
प्रत्यष्ठीलाऽष्ठीलिकयोरन्तर्विद्रधिगुल्मवत् ॥३७॥

प्रत्याध्मान रोग में वमन, लंघन एवं दीपन औषधों का प्रयोग करें। प्रत्यष्ठीला में अन्तर्विद्रधि जैसा तथा अष्ठीला में गुल्म के जैसी चिकित्सा से लाभ होता है।

१७. गृध्रस्यादि चिकित्सा (च.द.)

दशमूलीबलारास्नागुडूचीविश्वभेषजम्।
पिबेदेरण्डतैलेन गृध्रसीखञ्जपङ्गुषु ॥३८॥

दशमूल १० भाग, बलामूल १ भाग, रास्ना १ भाग, गुडूची तथा सोंठ १ भाग—इन सभी द्रव्यों के यवकुट २५ ग्राम को ४०० मि.ली. जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान ले। इस १०० मि.ली. क्वाथ के २ भाग करें—५०-५० मि.ली.। इसमें १२ मि.ली. एरण्डतैल मिलाकर सुबह-शाम गरम-गरम पीने से गृध्रसी, खञ्ज एवं पङ्गु रोग नष्ट हो जाते हैं।

१८. पञ्चमूलीक्वाथ (च.द.)

पञ्चमूलीकषायन्तु रुबुतैलं त्रिवृद् घृतम्।
त्रिवृतैर्वाथवा युक्तं गृध्रसीगुल्मशूलनुत् ॥३९॥

बृहत्पञ्चमूल के द्रव्यों का यवकुट चूर्ण २५ ग्राम लें। इसे ४०० मि.ली. जल में रात्रिपर्यन्त भिंगो दें। सुबह क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें। उसमें १२ ग्राम एरण्डतैल अथवा ३ ग्राम त्रिवृत्चूर्ण मिलाकर पीने से गृध्रसी, गुल्म रोग एवं शूल रोग नष्ट हो जाते हैं।

१९. गृध्रस्यादि रोग में घृत-तैल प्रयोग (च.द.)

तैलं घृतं वाऽऽर्द्रकमातुलुङ्ग्या
रसं सचुक्रं सगुडं पिबेद्वा।
कट्यूरुपृष्ठत्रिकशूलगुल्म-
गृध्रस्युदावर्त्तहरः प्रदिष्ट ॥४०॥

नारायणतैल, महाकल्याणघृत, दशमूलाद्यघृत या तिलतैल अथवा शुद्ध घृत २३ ग्राम में आर्द्रकस्वरस, बिजौरानिम्बुरस, चूक्र और पुराना गुड़ ३-३ ग्राम देकर पिलाने से कटिशूल, ऊरुशूल, पृष्ठशूल, त्रिकशूल, गुल्मरोग, शूलरोग, गृध्रसी एवं उदावर्त्तरोग नष्ट हो जाते हैं।

२०. कृष्णाचूर्ण (च.द.)

गोमूत्रैरण्डतैलाभ्यां कृष्णा पीता सुचूर्णिता।
दीर्घकालोत्थितां हन्ति गृध्रसीं कफवातजाम् ॥४१॥

१ ग्राम पीपरचूर्ण, गोमूत्र १२ मि.ली. तथा ६ ग्राम एरण्ड तैल १२ मि.ली. तीनों मिलाकर पीने से बहुकालजन्य कफ-वातज गृध्रसीरोग नष्ट हो जाता है।

२१. वार्त्ताकु प्रयोग (च.द.)

अश्नाति यो नरः सिद्धामेरण्डतैलसाधिताम्।
वार्त्ताकुं गृध्रसीक्षीणः पूर्वामाप्नोत्यसौ गतिम् ॥४२॥

एरण्डतैल में पकाये गये बैंगन के पकौड़े (भजिया) खाने से व्यक्ति गृध्रसी रोग से मुक्त हो जाता है।

२२. एरण्डफल पायस (च.द.)

पिष्ट्वैरण्डफलं क्षीरे सविश्वं वा फलं रुबोः।
पायसो भक्षितः सिद्धो गृध्रसीकटिशूलनुत् ॥४३॥

---

१. पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृङ्गवेरमरिचहस्तिपिप्पलीहरेणुकैलाजमोदेन्द्रयवपाठाजीरकसर्षपमहानिम्बफलहिङ्गुभार्गीमधुरसातिविषावचाविडङ्गानि कटुरोहिणी चेति।
पिप्पल्यादिः कफहरः प्रतिश्यायानिलारुचीः।
निहन्याद्दीपनो गुल्मशूलघ्नश्चामपाचनः॥ (सु.सू. ३८।२२-२३)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एरण्डबीज गिरी (मज्जा) २५ ग्राम को दूध के साथ सिल पर पीस लें और इसे २५० मि.ली. गोदुग्ध में पकावें। जब दूध गाढ़ा पायस जैसा हो जाय तो उसमें चीनी मिलाकर खाने से गृध्रसी एवं कटिशूल नष्ट हो जाते हैं। अथवा एरण्डबीज-मज्जा को गोदुग्ध में पीसकर दूध में पायस जैसा पूर्व मान में पकावें। जब पायस जैसा हो जाय तो उसमें शुण्ठीचूर्ण एवं मिश्री मिलाकर खाने से गृध्रसी एवं कटिशूल नष्ट हो जाते हैं।

२३. रास्ना-गुग्गुलु वटी (च.द.)

रास्नायास्तु पलं चैकं कर्षान् पञ्च च गुग्गुलोः।
सर्पिषा गुडिकां कृत्वा खादेद्वा गृध्रसीहराम् ॥४४॥

रास्नाचूर्ण ४६ ग्राम, शुद्ध गुग्गुलु ६० ग्राम तथा घृत १२ ग्राम लें। सर्वप्रथम शुद्ध गुग्गुलु को थोड़ा गरम पानी के साथ पिघलावें। उसमें रास्नाचूर्ण और घृत मिलाकर खूब कूटें और ५-५ रत्ती की वटी बनाकर सुखा लें। इस रास्ना-गुग्गुलु वटी की २-२ वटी गरम पानी से सेवन करने से गृध्रसी दूर हो जाती है।

गृध्रसी में बस्ति-प्रयोग काल (च.द.)

गृध्रस्यार्त्तं नरं सम्यक् पाचनाद्यैर्विशोधितम्।
ज्ञात्वा नरं प्रदीप्ताग्निं बस्तिभिः समुपाचरेत् ॥४५॥
नादौ बस्तिविधिं कुर्याद् यावदूर्ध्वं न शुद्ध्यति।
स्नेहो निरर्थकस्तस्य भस्मन्येवाहुतिर्यथा ॥४६॥

गृध्रसी रोग से पीड़ित व्यक्ति को पाचन आदि उपायों से शुद्ध करना चाहिए। बाद में अग्नि प्रदीप्त होने पर बस्ति द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए। ऊर्ध्व भाग की शुद्धि हुए बिना बस्ति नहीं देनी चाहिए। क्योंकि ऊर्ध्व भाग के अशुद्ध अवस्था में बस्ति वैसी ही व्यर्थ होगी जैसे कि राख पर की आहुति।

२४. एरण्डतैल प्रयोग (च.द.)

तैलमेरण्डजं वाऽपि गोमूत्रेण पिबेन्नरः।
मासमेकं प्रयोगोऽयं गृध्रस्यूरुग्रहापहः ॥४७॥

१ महीने तक ६ ग्राम एरण्डतैल और २५ मि.ली. गोमूत्र मिलाकर पीने से गृध्रसी और ऊरुग्रह दोनों रोग नष्ट हो जाते हैं।

२५. शेफालीपत्र क्वाथ (च.द.)

शेफालिकादलक्वाथो मृद्वग्निपरिसाधितः।
दुर्वारं गृध्रसीरोगं पीतमात्रं समुद्धरेत् ॥४८॥

सिन्दुवारपत्र २५ ग्राम का यवकुट करें और चतुर्गुण जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर पीने से दुर्निवार गृध्रसी रोग से मुक्ति मिल जाती है।

२६. (पाद) वातकण्टक-चिकित्सा (च.द.)

रक्तावसेचनं कार्यमभीक्ष्णं वातकण्टके।
पिबेदेरण्डतैलं वा दहेत्सूचीभिरेव वा ॥४९॥

वात (पाद) कण्टक में पुनः-पुनः सिरावेध कर रक्तमोक्षण करना चाहिए। उस स्थान को प्रतप्त सूची से दग्ध कर्म करना चाहिए तथा कुछ समय तक एरण्डतैल पीना चाहिए।

२७. पाददाह-चिकित्सा (च.द.)

शिराव्यधः पाददाहे वातकण्टकवत् क्रिया।
शतधौतघृतोन्मिश्रैर्नागकेशरकण्टकैः ॥५०॥
पिष्टैः प्रलेपः सेकश्च दशमूल्यम्बुनेष्यते।
आलिप्य नवनीतेन स्वेदो हस्तादिदाहहा ॥५१॥

पाददाह में सिरावेध करना चाहिए तथा वातकण्टक की तरह चिकित्सा करें। शतधौतघृत में नागकेशरचूर्ण मिलाकर हस्तपाद पर लेप करें तथा सोष्ण दशमूलक्वाथ में सेक करने से पाददाह शान्त हो जाता है। मक्खन को हाथ-पैर में लेप कर अग्नि में सेंकने से भी पाददाह रोग नष्ट हो जाता है।

२८. पादहर्ष चिकित्सा (च.द.)

अग्नितप्तेष्टकाखण्डं काञ्जिकैः परिषिच्य तु।
तद्वाष्पस्वेदनं कार्यं पादहर्षविनाशनम् ॥५२॥

एक ईंट के दो टुकड़े करें और उन्हें आग पर रखकर खूब गरम करें। अब १ टुकड़े को जमीन पर रखें और उस पर थोड़ी काञ्जी गिरावें। उस गरम ईंट से खूब वाष्प निकलेगी, उसी वाष्प के ऊपर पैर रखें। वाष्प पादतल में लगेगी, इससे पादहर्ष रोग नष्ट हो जाता है। ऐसा १ घण्टे तक रोज करें।

२९. झिञ्झिनी वात चिकित्सा (च.द.)

दशमूलस्य निर्यूहो हिङ्गुपुष्करसंयुतः।
शमयेत् परिपीतस्तु वातं झिञ्झिनिसंज्ञितम् ॥५३॥

५० मि.ली. दशमूल के क्वाथ में शुद्ध हींग $\frac{१}{२}$ ग्राम तथा पुष्करमूलचूर्ण १ ग्राम मिलाकर पीने से झिञ्झिनिवात नष्ट हो जाता है।

३०. खल्ली-चिकित्सा (च.द.)

कुष्ठसैन्धवयोः कल्कश्चुक्रतैलसमन्वितः।
सुखोष्णो मर्दने योज्यः खल्लीशूलनिवारणः ॥५४॥

कूठ और सैन्धवलवण जल से पिसे हुए कल्क में थोड़ा सिरका और तिलतैल मिलाकर गर्म करें और सुखोष्ण इस कल्क को शरीर में मर्दन करने से खल्ली रोग और शूल रोग नष्ट हो जाते हैं।

खल्ली में स्वेदन-मर्दन कर्म (च.द.)

खल्ल्यां स्निग्धाम्ललवणैः स्वेदोन्मर्दोपनाहनम् ॥५५॥

खल्ली रोग में स्नेह-अम्ल-लवण मिश्रित द्रव्यों के कल्क से गरम-गरम स्वेदन, मर्दन एवं उपनाह करना चाहिए।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३१. शिरोग्रह-चिकित्सा (भा.प्र)

शिरोग्रहे तु कर्त्तव्या शिरोगतमरुत्क्रिया।
दशमूलीकषायेण मातुलुङ्गरसेन च॥
शृतेन तैलेनाभ्यङ्गः शिरोबस्तिश्च युज्यते॥५६॥

शिरोग्रह में सिराओं में रहने वाले वायु की चिकित्सा करनी चाहिए। दशमूल के क्वाथ और बिजौरा निम्बु के स्वरस के साथ पक्व तैल से अभ्यङ्ग करना चाहिए तथा शिरोबस्ति देनी चाहिए।

अपतानक-चिकित्सा (भा.प्र.)

अथापतानकेनार्त्तमस्रुताक्ष्मवेपनम्।
अखट्वापातिनं चैव त्वरया समुपाचरेत्॥५७॥

जब तक अपतानक के रोगी के नेत्रों से जलस्राव एवं कम्पन न प्रारम्भ हुआ हो तथा खाट पर न पड़ गया हो उसके पहले ही उसकी चिकित्सा करनी चाहिए।

अपतन्त्रक-चिकित्सा (भा.प्र.)

अथापतन्त्रकेणार्त्तमातुरं नापतर्पयेत्।
निरूहबस्तिं वमनं सेवयेन्न कदाचन॥५८॥
श्वसनाः कफवाताभ्यां रुद्धास्तस्य विमोक्षयेत्।
तीक्ष्णैः प्रधमनैः संज्ञां तासु मुक्तासु विन्दति॥५९॥

अपतन्त्रकरोग से ग्रस्त व्यक्ति का अपतर्पण कभी भी नहीं करें तथा कभी भी निरूह बस्ति एवं वमन नहीं कराना चाहिए। किन्तु कफ-वात से अवरुद्ध श्वासवह स्रोत को तीक्ष्ण प्रधमन से खोल दें। ऐसा करने से रोगी चैतन्य हो जाता है।

पक्षाघात-चिकित्सा (भा.प्र.)

पक्षाघातसमाक्रान्तं सुतीक्ष्णैश्च विरेचनैः।
शोधयेद्बस्तिभिश्चापि व्याधिरेवं प्रशाम्यति॥६०॥

पक्षाघात पीड़ित रोगी को अत्यन्त तीक्ष्ण विरेचन और शोधन बस्ति देने से रोग शान्त होता है।

खञ्ज-पङ्गु चिकित्सा (भा.प्र.)

उपाचरेदभिनवं खञ्जं पङ्गुमथापि वा।
विरेकास्थापनस्वेदगुग्गुलुस्नेहबस्तिभिः॥६१॥

विरेचन-आस्थापन बस्ति, स्वेदन एवं गुग्गुलु प्रयोग से नवीन खञ्ज एवं पङ्गु रोग से पीड़ित व्यक्ति की चिकित्सा करें।

कलायखञ्ज की चिकित्सा (भा.प्र.)

क्रमः कलायखञ्जस्य खञ्जपङ्ग्वोरिव स्मृतः।
विशेषात्स्नेहनं कर्म कार्यमत्र विचक्षणैः॥६२॥

बुद्धिमान् वैद्य कलायखञ्ज की चिकित्सा खञ्ज और पङ्गु की तरह ही करें। इसमें विशेष रूप से स्नेहन क्रिया करनी चाहिए।

बाह्यायाम-अन्तरायाम चिकित्सा (भा.प्र.)

बाह्यायामेऽन्तरायामे विधेयाऽर्दितवत् क्रिया॥६३॥

बाह्यायाम और अन्तरायाम में अर्दित जैसी चिकित्सा करनी चाहिए।

३२. त्रिकशूल-चिकित्सा (भा.प्र.)

कारयेद्वालुकास्वेदं त्रिकशूले प्रयत्नतः।
यद्वाऽधस्तात्करीषाग्निं धारयेत्सततं नरः॥६४॥

त्रिकशूल में यत्नपूर्वक बालुका स्वेद करें अथवा चारपाई के नीचे (खाट के नीचे) जंगली कण्डों की अग्नि से बराबर सदा सेंक करें। आजकल मिट्टी की बनी बोड़सी इसी कार्य के लिए लोगों द्वारा प्रयोग में लायी जाती है।

३३. क्रोष्टुशीर्ष-चिकित्सा (भा.प्र.)

गुग्गुलुं क्रोष्टुशीर्षे तु गुडूचीत्रिफलाऽम्भसा।
क्षीरेणैरण्डतैलं वा पिबेद्वा वृद्धदारकम्॥६५॥

क्रोष्टुशीर्ष रोग में गुडूची एवं त्रिफला के क्वाथ से शुद्ध गुग्गुलुचूर्ण का प्रयोग करना चाहिए। अथवा गरम गोदुग्ध के साथ १२ ग्राम एरण्ड तैल मिलाकर पीना चाहिए या विधाराचूर्ण को गोदुग्ध के साथ पीना चाहिए।

३४. क्रोष्टुशीर्ष-चिकित्सा (भा.प्र.)

रसैस्तित्तिरमांसस्य पीतैर्गुग्गुलुसंयुतैः।
वातरक्तक्रियाभिश्च जयेज्जम्बूकमस्तकम्॥६६॥

क्रोष्टुशीर्ष रोगी द्वारा तित्तिर के मांसरस से गुग्गुलु का सेवन करने पर तथा वातरक्त जैसी चिकित्सा करने पर क्रोष्टुशीर्ष नष्ट हो जाता है।

३५. बलादिक्वाथ (भा.प्र.)

बलामूलशृतं तोयं सैन्धवेन समन्वितम्।
बाहुशोषकरे वाते मन्यास्तम्भे च शस्यते॥६७॥

बलामूलक्वाथ ५० मि.ली. में १ ग्राम सैन्धवलवण मिलाकर पीने से बाहुशोष दूर हो जाता है।

३६. एरण्डादिक्वाथ (भा.प्र.)

एरण्डमूलं बिल्वं च बृहती कण्टकारिका।
कषायो रुचकोपेतः पीतो वङ्क्षणबस्तिजम्।
गृध्रसीजं हरेच्छूलं चिरकालानुबन्धि च॥६८॥

१. एरण्डमूलत्वक्, २. बिल्वत्वक्, ३. बृहती तथा ४. कण्टकारी—इनके क्वाथ में थोड़ा सौवर्चललवण मिलाकर पीने से वंक्षणशूल, बस्तिशूल और पुराना गृध्रसीशूल नष्ट हो जाता है।

३७. सिंहास्यादि क्वाथ (भा.प्र)

सिंहास्यदन्तीकृतमालकानां
पिबेत्कषायं रुबुतैलमिश्रम्।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

यो गृध्रसीनष्टगतिः प्रसुप्तः
स शीघ्रगः स्याद्धि किमत्र चित्रम् ॥६९॥

गृध्रसी से जिसकी गति नष्ट हो गई हो, जो जड़ीभूत हो गया हो ऐसा गृध्रसी रोगी वासामूल, दन्तीमूल तथा अमलतास (समभाग) तीनों का मिश्रित क्वाथ १० ग्राम एरण्डतैल मिलाकर पीने से नष्ट गति वाला गृध्रसी रोग यदि शीघ्रगामी हो जाय तो इसमें क्या विचित्रता है?

३८. रास्नासप्तकक्वाथ (भा.प्र.)

रास्नाऽमृताऽऽरग्वधदेवदारु-
त्रिकण्टकैरण्डपुनर्नवानाम् ।
क्वाथं पिबेन्नागरचूर्णमिश्रं
जङ्घोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशूली ॥७०॥

१. रास्ना, २. गुडूची, ३. अमलतास, ४. देवदारु, ५. गोक्षुर, ६. एरण्डमूलत्वक् और ७. पुनर्नवामूल—समभाग लें। इन्हें यवकुट कर संग्रहीत करें। यदि औषधि गीली हो तो धूप में सुखा लें। अन्यथा फफूंद लगकर दवा खराब हो जायेगी। २५ ग्राम यवकुटक्वाथ को १६ गुना जल में (अर्थात् ४०० मि.ली. जल में) क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। १०० मि.ली. को २ बार (प्रातः-सायं) ५० मि.ली. में गरमागरम १ ग्राम सोंठचूर्ण डालकर पिलावें। इससे जाँघ, ऊरु, पृष्ठ, त्रिकसन्धि और पार्श्वशूल नष्ट हो जाता है।

३९. गोक्षुरादिक्वाथ

गोक्षुरं रुबुमूलं च वचा रास्ना पुनर्नवा ।
कषायोऽसौ प्रशस्तः स्यात् सर्वाङ्गगतमारुते ॥७१॥

१. गोक्षुर, २. एरण्डमूलत्वक्, ३. वचा, ४. रास्ना तथा ५. पुनर्नवामूल—समभाग लें। इन्हें यवकुट कर संग्रहीत करें। २५ ग्राम यवकुट किसी मिट्टी की छोटी हाँडी में १६ गुना जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर गरम-गरम प्रातः-सायं ४६-४६ मि.ली. पियें। इससे सर्वांगगत वात नष्ट हो जाता है।

४०. माषबलादिक्वाथ (च.द.)

माषबलाशूकशिम्बीकत्तृणरास्नाऽश्वगन्धोरुवूकाणाम् ।
क्वाथो नस्यनिपीतो रामठलवणान्वितः कोष्णः ॥७२॥
अपहरति पक्षघातं मन्यास्तम्भं सकर्णनादरुजम् ।
दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति चावश्यम् ॥७३॥

१. उड़द, २. बलामूल, ३. केवाँचबीज, ४. रोहिषघास, ५. रास्ना, ६. अश्वगन्धा तथा ७. एरण्डमूलत्वक्—समभाग लें। इन्हें यवकुट कर संग्रहीत करें। इसमें से प्रतिदिन २५ ग्राम यवकुट लें और मिट्टी की छोटी हाँडी में १६ गुना जल के साथ रात्रि में भिंगो दें। सुबह मन्दाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ छान लें। १०० मि.ली. होगा। ५० मि.ली. को तुरन्त गरम क्वाथ में ५०० मि.ग्रा. शुद्ध हींग तथा १ ग्राम सैन्धव मिलाकर पियें। शाम को भी इस बचे हुए क्वाथ को पुनः गरम कर पियें। इस तरह १ सप्ताह तक इस क्वाथ को पीने से पक्षाघात, मन्यास्तम्भ, कर्णनाद और दुर्जय अर्दितरोग नष्ट हो जाते हैं।

४१. वंक्षणसन्धिशूलहर योग (च.द.)

तगरस्य शिफां सार्द्रां पिष्ट्वा तक्रेण यः पिबेत् ।
वङ्क्षणानिलरोगार्त्तः स क्षणादेव मुच्यते ॥७४॥

तगर के हरे मूल को तक्र के साथ पीसकर पीने से वंक्षणसन्धिगत वात तुरन्त नष्ट हो जाता है।

अन्नावृत वात-चिकित्सा (च.द.)

जित्वाऽऽवरकमग्रे तु वाते वातहरं हितम् ।
अन्नावृते तदुल्लेखो दीपनं पाचनं लघु ॥७५॥

वातजनित रोगों में आवरणकर्ता उदानादि वायु, पित्तकफादि दोष पहले जीतकर वायुनाशक चिकित्सा करनी चाहिए। अन्न द्वारा आवृत वायु में आवरणकर्ता अन्न को प्रथम वमन कराकर दीपन एवं पाचन औषधों और लघु आहार का प्रयोग करना चाहिए।

४२. सुप्तिवात-चिकित्सा (च.द.)

सुप्तिवाते त्वसृङ्मोक्षं कारयेद्बहुशो बुधः ।
दिह्याच्च लवणागारधूमैस्तैलविमर्दितैः ॥७६॥

सुप्तिवात अर्थात् स्पर्शज्ञान का अभाव (शून्यता) हो जाने पर पुनः पुनः रक्तमोक्षण करना चाहिए। इसके बाद शून्य स्थान पर सैन्धवलवण और गृहधूम तथा तिलतैल मिलाकर मर्दन करना चाहिए।

वातरोग में क्रियासूत्र (च.द.)

सर्पिस्तैलवसामज्जपानाभ्यञ्जनबस्तयः ।
स्वेदाः स्निग्धा निवातं च स्थानं प्रावरणानि च ॥७७॥
रसाः पयांसि भोज्यानि स्वाद्वम्ललवणानि च ।
बृहणं यत्तु तत्सर्वं कर्त्तव्यं वातरोगिणाम् ॥७८॥

घृत, तैल, वसा और मज्जा का पान; अभ्यङ्ग, बस्ति, स्निग्ध स्वेदन, निर्वात स्थान में निवास, गरम एवं मोटे वस्त्रों को पहनना और ओढ़ना, मांसरस, दूध, मीठे एवं खट्टे और नमकीन पदार्थों का भोजन और शरीर को बृंहण करने वाले पदार्थों का सेवन करना वातरोगियों के लिए हितकर है।

४३. वातहर यूष (च.द.)

पटोलफलकैर्यूषो वृष्यो वातहरो लघुः ।
वाट्यालककृतो यूषः परं वातविनाशनः ॥७९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

परवलफल का यूष वृष्य, वातहर एवं लघु होता है। इसी तरह बलामूल का यूष अत्यन्त वातनाशक है।

४४. वातनाशक गण (च.द.)

वाजिगन्धा बलास्तिस्रो दशमूली महौषधम्।
द्वे गृध्रनख्यौ रास्ना च गणो मारुतनाशनः ॥८०॥

अश्वगन्ध, बलामूल, अतिबला, महाबला, दशमूल, सोंठ, नख, नखी और रास्ना—ये सब वातनाशक गण की औषधियाँ कही जाती हैं।

वातरोगियों के लिए भोजन (च.द.)

बलायाः पञ्चमूलस्य दशमूलस्य वा रसे।
अजाशीर्षाम्बुजानूप-क्रव्यादपिशितैः पृथक् ॥८१॥
साधयित्वा रसान् स्निग्धान् दध्यम्लव्योषसंस्कृतान्।
भोजयेद्वातरोगार्त्तं तैर्व्यक्तलक्षणैर्नरम् ॥८२॥

बलामूलक्वाथ, बृहत् पञ्चमूलक्वाथ, दशमूलक्वाथ, बकरे के शिर का मांसरस, जलीय एवं आनूप देश के पशु-पक्षियों के मांस या मांसरस, मांस खाने वाले पशु-पक्षियों के मांस या मांस-रस पृथक्-पृथक् पकाकर तथा मांसरस को छौंककर उसमें दही काञ्जी, सोंठ, मरिच एवं पिप्पली का थोड़ा चूर्ण और लवण मिलाकर स्वादिष्ट रस वातरोगियों को खिलाना चाहिए।

४५ पञ्चमूल्यादिसिद्ध दुग्ध (च.द.)

पञ्चमूलीबलासिद्धं क्षीरं वातामये हितम् ॥८३॥

बृहत्पञ्चमूल तथा बलामूल (समभाग) लें। इन्हें २५० मि.ली. गोदुग्ध में सिद्ध कर (क्षीरपाक विधि से) पिलाने से वातरोग में हितकर होता है।

४६. रास्नादशमूलादि क्वाथ (वं.से.)

रास्नाविश्वविडङ्गानि रुबूकस्त्रिफला तथा।
दशमूलं पृथक् श्यामाक्वाथो वातमयापहः ॥८४॥
अर्धावभेदके चाढ्ये चार्दिते वातखञ्जके।
नेत्ररोगे शिरःशूले ज्वरापस्मारयोस्तथा ॥
मनोभ्रंशे च विविधे कथितञ्च सुखप्रदम् ॥८६॥

१. रास्ना, २. सोंठ, ३. वायविडङ्ग, ४. एरण्डमूलत्वक्, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. बेलछाल, ९. अरणीछाल, १०. सोनापाठाछाल, ११. पाढलछाल, १२. गम्भारछाल, १३. शालपर्णी, १४. पृश्निपर्णी, १५. बृहती, १६. कण्टकारी, १७. गोक्षुर और १८. निशोथ—ये १८ द्रव्य प्रत्येक १०० ग्राम लें। इन्हें यवकुट कर संग्रहीत करें। इसमें से प्रतिदिन २५ ग्राम यवकुट लेकर १६ गुना (४०० मि.ली.) जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और आधा ४६ मि.ली. या १०० मि.ली. क्वाथ रोज पीने से सम्पूर्ण वातरोगों को नष्ट करता है। विशेषकर अर्धावभेदक, आढ्यवात (वातरक्त), अर्दित, वातखञ्ज, नेत्ररोग, शिरःशूल, ज्वर, अपस्मार और अनेक प्रकार के मनोविकार में यह क्वाथ अत्युपयोगी है।

४७. शाल्वणस्वेद (च.द.)

काकोल्यादिः सवातघ्नः सर्वाम्लद्रव्यसंयुतः।
सानूपमांसः सुस्विन्नः सर्वस्नेहसमन्वितः ॥८६॥
सुखोष्णः स्पष्टलवणः शाल्वणः परिकीर्त्तितः।
तेनोपनाहं कुर्वीत सर्वदा वातरोगिणाम् ॥८७॥
वातघ्नो भद्रदार्वादिः काकोल्यादिस्तु सौश्रुतः।
मांसेन चौषधं तुल्यं यावताऽम्लेन चाम्लता ॥८८॥
पट्वी स्यात् स्वेदनार्थञ्च काञ्जिकाद्यम्लमिष्यते।
चतुःस्नेहोऽत्र तावान् स्यात्सुस्निग्धत्वं यतो भवेत् ॥
समस्तं वर्गमर्धं वा यथालाभमथापि वा।
प्रयुञ्जीतेति वचनं सर्वत्र गणकर्मणि ॥९०॥

[1]**काकोल्यादि गण**—१. काकोली, २. क्षीरकाकोली, ३. जीवक, ४. ऋषभक, ५. मुद्गपर्णी, ६. माषपर्णी, ७. मेदा, ८. महामेदा, ९. गुडूची, १०. काकडासिंगी, ११. वंशलोचन, १२. पद्मकाठ, १३. कमलपुष्प, १४. ऋद्धि १५. वृद्धि, १६. मुनक्का, १७. जीवन्ती और १८. मुलेठी—इन १८ औषधों के गण को काकोल्यादि गण कहते हैं। इन्हें समभाग लें।

[2]**भद्रदार्वादि गण**—१. देवदारु, २. हल्दी, ३. दारुहल्दी, ४. भारङ्गी, ५. वरुणछाल, ६. मेषशृंगी, ७. पीतसहचर पुष्प, ८. नीलसहचर पुष्प, ९. बलामूल, १०. गोक्षुरतण्डुल, ११. श्वेतअर्कपुष्प, १२. रक्त अर्कपुष्प, १३. गोक्षुर, १४. जूही का फूल, १५. धत्तूरमूल, १६. पाषाणभेद, १७. शतावर, १८. शालपर्णी, १९. पाटलात्वक्, २०. कूठ, २१. पुनर्नवामूल, २२. वसुक और २३. जौ— ये सब २३ द्रव्यों का समूह भद्र दार्वादि गण कहा जाता है।

---

१. काकोलीक्षीरकाकोलीजीवकर्षभकमुद्गपर्णीमाषपर्णीमेदामहामेदाछिन्नरुहाकर्कटशृङ्गीतुगाक्षीरीपद्मकप्रपौण्डरीकर्द्धिवृद्धिमृद्वीकाजीवन्त्यो मधुकं चेति॥३५॥
काकोल्यादिरयं पित्तशोणितानिलनाशनः।
जीवनो बृंहणो वृष्यः स्तन्यश्लेष्मकरः तथा ॥
(सु.सू. ३८।३६)

२. भद्रदारु निशे भार्गी वरुणो मेषशृङ्गिका।
जटा झिण्टी चार्त्तगलो बलागोक्षुरतण्डुला ॥
अर्कौ श्वदंष्ट्रा राजिका धुस्तूरश्चाश्मभेदकः।
वरी स्थिरा पाटला रुग् वर्षाभूर्वसुको यवः ॥
भद्रदार्व्यादिरित्येष गणो वातविकारनुत् ॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

[1]**वातनाशक गण**—१. देवदारु, २. तगर, ३. कूठ, ४. बेलछाल, ५. अरणिछाल, ६. सोनापाठाछाल, ७. पाटलछाल, ८. गम्भारछाल, ९. शालपर्णी, १०. पृश्निपर्णी, ११. बृहती, १२. कण्टकारी, १३. गोक्षुर, १४. बलामूल तथा १५. अतिबलामूल—इन १५ द्रव्यों के समूह को वातनाशक गण कहते हैं। काकोल्यादि गण, भद्रदार्वादि गण तथा वातनाशक गण की यथोपलब्ध औषधियों, सभी तरह के अम्लद्रव्य, जलीय प्रदेश के मांस, मछली, सभी स्नेह तथा लवण—सभी द्रव्य १-१ भाग लें, मांस २ भाग लें। सभी द्रव्यों को एक साथ पकाकर सुस्विन्न होने पर उसमें थोड़ा-थोड़ा अम्ल एवं लवण मिलावें और कपड़े में बाँधकर पोटली बनाकर सेंक करें। इसे ही शाल्वण स्वेद कहते हैं अथवा इसका लेप कर कपड़े से बाँधते हैं। पकाने के लिए काञ्जीद्रव का प्रयोग करना चाहिए। स्नेह, अम्ल, लवण थोड़ा-थोड़ा डालना चाहिए। अधिक स्नेह देने से पोटली से बाहर निकलता रहेगा। काकोल्यादि गण, भद्रदार्वादि गण तथा वातनाशक गण की औषधों का चूर्ण लें। तीनों वर्ग की औषधियाँ मिलाकर १ भाग और मांस-मछली मिलित २ भाग, अम्ल $\frac{१}{४}$ लवण $\frac{१}{८}$ भाग, स्नेह $\frac{१}{४}$ भाग लेकर काञ्जी में पका देने के बाद गरम-गरम बाँधना या सेंकना चाहिए।

४८. कल्याणक लेह (च.द.)

सहरिद्रा वचा कुष्ठं पिप्पली विश्वभेषजम्।
अजाजी चाजमोदा च यष्टीमधुकसैन्धवम् ॥९१॥
एतानि श्लक्ष्णचूर्णादि समभागानि कारयेत्।
तच्चूर्णं सर्पिषाऽऽलोड्य प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥९२॥
एकविंशतिरात्रेण नरः श्रुतिधरो भवेत्।
मेघदुन्दुभिनिर्घोषो मत्तकोकिलनिस्वनः ॥
जडगद्गदमूकत्वं लेहः कल्याणको जयेत् ॥९३॥

१. हल्दी, २. वच, ३. कूठ, ४. पीपर, ५. सोंठ, ६. जीरा, ७. अजमोदा, ८. मुलेठी और ९. सैन्धवलवण—प्रत्येक द्रव्य १००-१०० ग्राम लें। इन्हें कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसमें से ३ ग्राम चूर्ण गोघृत के साथ प्रातः-सायं सेवन करने से व्यक्ति २१ रात में श्रुतिधर हो जाता है। मेघगर्जन एवं दुन्दुभि के जैसी तथा मत्त कोयल जैसी आवाज हो जाती है। हकलाकर गद्-गद् बोलने वाला व्यक्ति भी अच्छी तरह भाषण करता है।

४९. रसोनपिण्ड (च.द.)

पलमर्धपलञ्चैव रसोनस्य सुकुट्टितम्।
हिङ्गुजीरकसिन्धूत्थैः सौवर्चलकटुत्रिकैः ॥९४॥
चूर्णितैर्माषकोन्मानैरवचूर्ण्य विलोडितम्।
यथाग्नि भक्षितं प्रातः रुबुक्वाथानुपातनः ॥९५॥
दिने दिने प्रयोक्तव्यं मासमेकं निरन्तरम्।
वातरोगं निहन्त्याशु चार्दितं सापतन्त्रकम् ॥९६॥
एकाङ्गरोगिणे चैव तथा सर्वाङ्गरोगिणे।
ऊरुस्तम्भे च गृध्रस्यां कृमिदोषे विशेषतः ॥
कटिपृष्ठामयं हन्यादुदरञ्च विशेषतः ॥९७॥

१. छिलके रहित लशुन ७० ग्राम, २. शुद्ध हींग, ३. श्वेत जीरा, ४.सैन्धवलवण, ५. सौवर्चललवण, ६. सोंठ, ७. पीपर तथा ८. मरिच—प्रत्येक द्रव्य २-२ ग्राम लें। इन्हें सिल पर पीसकर काचपात्र में एकत्र कर रख लें। इनकी ३ ग्राम की मात्रा खाकर एरण्डक्वाथ ५० मि.ली. पीने से १ मास में वात रोग, अर्दित, अपतन्त्रक, एकाङ्गवात, सर्वाङ्गवात, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसी, कटि-पृष्ठ शूल, कृमिरोग तथा उदररोग नष्ट हो जाते हैं। सुबह-शाम ३-३ ग्राम की मात्रा में इसे खाना चाहिए।

मात्रा—३ ग्राम। **अनुपान**—एरण्डमूल क्वाथ से। **गन्ध**—लशुनगन्धी। **वर्ण**—झरे रंग के। **स्वाद**—लशुन। **उपयोग**—वातरोग में।

५०. त्रयोदशाङ्गगुग्गुलु (च.द.)

आभाश्वगन्धाहबुषा गुडूची
शतावरी गोक्षुरवृद्धदारम्।
रास्नाशताह्वासशटी यमानी
सनागरा चेति समैश्च चूर्णम् ॥९८॥
तुल्यं भवेत्कौशिकमत्र मध्ये
देयं तथा सर्पिरथार्धभागम्।
सार्द्धाक्षमात्रन्तु ततः प्रयोगात्
कृत्वाऽनुपानं सुरयाऽथ यूषैः ॥९९॥
मद्येन वा कोष्णजलेन वाऽथ
क्षीरेण वा मांसरसेन वाऽपि।
कटिग्रहे गृध्रसिबाहुपृष्ठे
हनुग्रहे जानुनि पादयुग्मे ॥१००॥
सन्धिस्थिते चास्थिगते च वाते
मज्जाश्रिते स्नायुगते च कोष्ठे।
रोगाञ्जयेद्वातकफानुविद्धान्
वातेरितान् हृद्ग्रहयोनिदोषान्।
भग्नास्थिविद्धेषु च खञ्जवाते
त्रयोदशाङ्गं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥१०१॥

१. बबूल की छालचूर्ण, २. अश्वगन्धाचूर्ण, ३. हाउबेर-चूर्ण, ४. गुडूचीचूर्ण, ५. शतावरीचूर्ण, ६. गोक्षुरचूर्ण, ७. विधाराचूर्ण, ८. रास्नाचूर्ण, ९. सौंफचूर्ण, १०. कचूरचूर्ण, ११. अजवायनचूर्ण, १२. सोंठचूर्ण, १३. शुद्ध गुग्गुलु ३

---

१. वातनाशक गण—
भद्रदारु नतं कुष्ठं दशमूलं बलाद्वयम्।
वायुं वीरतरादिश्च विदार्यादिश्च नाशयेत् ॥ (अ.हृ.सू. १५।५)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

किलो तथा १४. गोघृत १५०० ग्राम लें। बबूल छाल से सोंठ चूर्ण तक के सभी १२ द्रव्य २५०-२५० ग्राम ले। अर्थात् कुल मिलाकर ३ किलो और शुद्ध गुग्गुलु ३ किलो और घी १५०० ग्राम लें। सर्वप्रथम थोड़ा गरम जल में गुग्गुलु को पिघलावें। जब गुग्गुलु पिघल जाय तो उसमें घी डालकर पकावें। जब सब जल सूख जाय तो उसमें उपर्युक्त सभी चूर्णों को मिलाकर इमामदस्ते में कूटें और १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। बाद में काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे विद्वान् लोग 'त्रयोदशाङ्ग गुग्गुलु' कहते हैं। इस गुग्गुलु को १८ ग्राम की मात्रा में सुरा, यूष, मद्य, उष्णजल, गोदुग्ध या मांसरस में से किसी एक के साथ प्रतिदिन सेवन करने से—कटिग्रह, गृध्रसी, बाहुस्तम्भ, पृष्ठशूल, हनुग्रह, जानु (जंघा) ग्रह, पादशूल, सन्धिशूल, अस्थिगतवात, मज्जागतवात, स्नायुगतवात, कोष्ठगतवात रोग नष्ट हो जाते हैं। यह गुग्गुलु ऊपर के रोगों के अतिरिक्त अन्य वातविकार, कफविकार, हृदय की जकड़ाहट, योनिदोष, अस्थिभग्न तथा खञ्जवात में भी बहुत उपयोगी है।

मात्रा—१ से ३ ग्राम। **अनुपान**—मद्य, क्वाथ, यूष, मांस-रस, उष्णोदक या गरम दूध से। **गन्ध**—घृत एवं गुग्गुलु गन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वात-कफ विकार में।

५१. योगराजगुग्गुलु वटी (शा.सं.)

नागरं पिप्पलीमूलं पिप्पली चव्यचित्रकौ।
भृष्टं हिङ्ग्वजमोदा च सर्षपो जीरकद्वयम् ॥१०२॥
रेणुकेन्द्रयवाः पाठा विडङ्गं गजपिप्पली।
कटुकाऽतिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वेति भागतः ॥१०३॥
प्रत्येकं शाणिकानि स्युर्द्रव्याणीमानि विंशतिः।
द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत्।
एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयश्च गुग्गुलुः ॥१०४॥
(वङ्गं रौप्यं च नागं च लौहसारस्तथाऽभ्रकम्।
मण्डूरं रससिन्दूरं प्रत्येकं पलसम्मितम्॥)
गुडपाकसमं कृत्वा दद्यादेतं यथोचितम्।
एकं पिण्डं ततः कृत्वा धारयेद् घृतभाजने ॥१०५॥
गुडिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः।
गुग्गुलुर्योगराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनः ॥१०६॥
मैथुनाहारपानानां त्यागो नैवात्र विद्यते।
सर्वान् वातामयान् कुष्ठानर्शांसि ग्रहणीगदम् ॥१०७॥
प्रमेहं वातरक्तं च नाभिशूलं भगन्दरम्।
उदावर्त्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ॥१०८॥
मन्दाग्निं श्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा।
रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाः ॥१०९॥
पुंसामपत्यजनको वन्ध्यानां गर्भदस्तथा।
रास्नादिक्वाथसंयुक्तो विविधं हन्ति मारुतम् ॥११०॥
काकोल्यादिशृतात्पित्तं कफमारग्वधादिना।
दार्वीशृतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पाण्डुताम् ॥१११॥
मेदोवृद्धिं च मधुना कुष्ठं निम्बशृतेन वा।
छिन्नाक्वाथेन वातास्रं शोथं शूलं कणाशृतात् ॥११२॥
पाटलाक्वाथसहितो विषं मूषकजं जयेत्।
त्रिफलाक्वाथसहितो नेत्रार्तिं हन्ति दारुणम्।
पुनर्नवादिक्वाथेन हन्ति सर्वोदराण्यपि ॥११३॥

१. सोंठचूर्ण, २. पिपरामूलचूर्ण, ३. पीपरचूर्ण, ४. चव्यमूलचूर्ण, ५. चित्रकमूलचूर्ण, ६. घृतभृष्ट हींगचूर्ण, ७. अजमोदाचूर्ण, ८. सरसोंचूर्ण, ९. श्वेतजीराचूर्ण, १०. कृष्ण जीराचूर्ण, ११. रेणुकाचूर्ण, १२. इन्द्रयवचूर्ण, १३. पाठाचूर्ण, १४. वायविडङ्गचूर्ण, १५. गजपीपरचूर्ण, १६. कटुकीचूर्ण, १६७. अतीसचूर्ण, १८. भारङ्गीचूर्ण, १९. वचचूर्ण, २०. मूर्वाचूर्ण; २१. त्रिफलाचूर्ण ४ किलो तथा २२. शुद्ध गुग्गुलु ६ किलो लें। सोंठ से मूर्वा तक के २० द्रव्य हैं—प्रत्येक द्रव्य १००-१०० ग्राम लें। २३. वङ्गभस्म, २४. रौप्यभस्म, २५. नागभस्म, २६. लौहभस्म, २७. अभ्रकभस्म, २८. मण्डूरभस्म तथा २९. रससिन्दूर—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। सभी चूर्णों को एक साथ मिलाकर पुनः छननी से छान लें। ततः थोड़ा जल में गुग्गुलु को गरम कर पिघलावें। जब पूरा गुग्गुलु जल में घुल जाय तो उसी में उपर्युक्त चूर्ण अच्छी तरह से मिला दें। इसके बाद रससिन्दूर को अच्छी तरह से पीसकर सभी भस्मों में मिला लें और गुग्गुलु मिश्रित द्रव्य में मिलावें। थोड़ा घृत मिलाकर इमामदस्ते में खूब कूटें और ३-३ ग्राम तक की वटी बना लें और सूखने के बाद काचपात्र में संग्रहीत करें। यह 'योगराजगुग्गुलु वटी' औषधि त्रिदोषघ्न एवं रसायन में श्रेष्ठ है। इसके सेवन काल में मैथुन, आहार, पान का प्रतिबन्ध नहीं है। सभी वातरोगों में, कुष्ठ, अर्श, ग्रहणी में, प्रमेह, वातरक्त, नाभिशूल, भगन्दर, उदावर्त्त, क्षय, गुल्म, अपस्मार, उरोग्रह, मन्दाग्नि, श्वास, कास तथा अरुचि का नाश करता है। स्त्रियों के आर्त्तव दोष एवं पुरुषों के शुक्रदोष को दूर कर पुरुषों को सन्तानोत्पन्न करने योग्य बना देता है तथा वन्ध्याएँ गर्भ धारण करती हैं। इसे रास्नादिक्वाथ के साथ सेवन करने से सभी प्रकार के वातरोगों को नष्ट करता है। काकोल्यादि गण द्रव्यों के क्वाथ से पित्तरोगों में, आरग्वधादिक्वाथ से कफ रोगों में, दारुहरिद्राक्वाथ से प्रमेह में, गोमूत्र से पाण्डु में, मधु से मेदोवृद्धि में, निम्बक्वाथ से कुष्ठ में, गुडूचीक्वाथ से वातरक्त में, पिप्पली-क्वाथ से शोथ एवं शूल में, पाटलाक्वाथ से मूषकविषनाशनार्थ, त्रिफलाक्वाथ से नेत्ररोगों में और पुनर्नवाक्वाथ से उदररोगों में प्रयोग करना चाहिए जो अत्यन्त लाभकर है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विमर्श—श्लोक संख्या १०४ के बाद की दोनों पंक्तियाँ शार्ङ्गधर की आढमल टीका में ब्राइकेट में है तथा उस पर आढमल की व्याख्या भी नहीं है। अतः यह प्रक्षिप्त है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक। **अनुपान**—गरम जल, गरम दूध एवं विविध क्वाथों से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—सभी वातविकारों में।

५२. वातगजांकुश रस (र.सा.सं.)

मृतं सूतं मृतं लौहं ताप्यं गन्धकतालकम्।
पथ्या शृङ्गी विषं व्योषमग्निमन्थञ्च टङ्गणम् ॥११४॥
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवैः।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत् सर्ववातप्रशान्तये ॥११५॥
कणाचूर्णयुतं चैव जिङ्गीक्वाथं पिबेदनु।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु रसो वातगजाङ्कुशः ॥११६॥
सप्ताहाद् गृध्रसीं हन्ति दारुणं सान्निपातिकम्।
कोष्टुशीर्षकवातञ्चाप्यवबाहुकसंज्ञकम् ॥११७॥
ऊरुस्तम्भं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं विनाशयेत्।
पक्षाघातादिरोगेषु कथितः परमोत्तमः ॥११८॥

१. रससिन्दूर, २. लौहभस्म, ३. स्वर्णमाक्षिकभस्म, ४. शुद्ध गन्धक, ५. शुद्ध हरताल, ६. हरीतकीचूर्ण, ७. काकड़ासिंगीचूर्ण, ८. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण, ९. सोंठचूर्ण, १०. पीपरचूर्ण, ११. मरिचचूर्ण, १२. अरणीचूर्ण और १३. शुद्ध टंकण—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम रससिन्दूर को एक खरल में मर्दन करें। बाद में सभी भस्मों एवं शुद्ध द्रव्यों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद सभी काष्ठौषधचूर्णों को इसमें मिलाकर मुण्डीस्वरस एवं निर्गुण्डीपत्रस्वरस की १-१ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। सभी तरह के वायुविकार शमन के लिए इस वटी का सेवन करना चाहिए। पिप्पलीचूर्ण एवं मधु के साथ इस वटी को खाकर बाद में मंजीठक्वाथ ५० मि.ली. पीना चाहिए। यह 'वातगजांकुश रस' सभी प्रकार के साध्यासाध्य सभी वातरोगों को शीघ्र नष्ट कर देता है। एक सप्ताह तक इस औषधि का सेवन करने से गृध्रसी एवं भयंकर सन्निपात रोग को नष्ट कर देता है। क्रोष्टुशीर्षक, अवबाहुक, ऊरुस्तम्भ, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, पक्षाघातादि वातरोगों को नाश करने के लिए यह परमोत्तम औषधि कही जाती है। रससिन्दूर के साथ पहले हरताल अच्छी तरह पीसना चाहिए।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु-पीपरचूर्ण और मञ्जिष्ठाक्वाथ से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कत्थई रंग का। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—वातविकारों में।

५३. वातगजांकुशरस (बृहत्) (र.सा.सं.)

सूताभ्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम्।
स्वर्णं शुण्ठीं बलां धान्यं कट्फलञ्चाभयां विषम् ॥
पथ्यां शृङ्गीं पिप्पलीं च मरिचं टङ्गणं तथा।
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिजैर्द्रवैः ॥१२०॥
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु बृहद्वातगजाङ्कुशः ॥१२१॥

१. शुद्ध पारद, २. अभ्रकभस्म, ३. तीक्ष्णलोहभस्म, ४. कान्तलोहभस्म, ५. ताम्रभस्म, ६. शुद्ध हरताल, ७. शुद्ध गन्धक, ८. सुवर्णभस्म, ९. सोंठचूर्ण, १०. बलामूलचूर्ण, ११. धनियाचूर्ण, १२. कट्फलचूर्ण, १३. हरीतकीचूर्ण, १४. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण, १५. हरीतकीचूर्ण, १६. काकड़ासिंगीचूर्ण, १७. पीपरचूर्ण, १८. मरिचचूर्ण और १९. शुद्ध सुहागा—सभी औषधियाँ १-१ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक का मर्दन कर कज्जली बना लें। ततः सर्वप्रथम इस कज्जली के साथ हरताल मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर क्रमशः सभी भस्मों, शुद्ध द्रव्यों एवं काष्ठोषधियों को मिलाकर मुण्डी (गोरखमुण्डी) स्वरस तथा निर्गुण्डीस्वरस के साथ १-१ भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रह करें। १-१ वटी पीपरचूर्ण एवं मधु के साथ खाकर बाद में मञ्जिष्ठाक्वाथ ४६ मि.ली. पिलावें। इससे सभी प्रकार के साध्यासाध्य वातरोग नष्ट हो जाते हैं। इसे 'बृहद्वातगजांकुश रस' कहते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—पीपरचूर्ण, मधु एवं मंजीठक्वाथ से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—समस्त साध्यासाध्य वातविकार में।

५४. महावातगजांकुशरस (र.सा.सं.)

मृताम्रतीक्ष्णताप्रञ्च सूततालकगन्धकम्।
भार्गी शुण्ठी बला धान्यं कट्फलञ्चाभया विषम् ॥१२२॥
सम्पिष्य चपलाद्रावैर्निष्कैकां भक्षयेद्वटीम्।
वातश्लेष्महरो ह्येष गुरुवातगजाङ्कुशः ॥१२३॥

१. अभ्रकभस्म, २. तीक्ष्णलौहभस्म, ३. ताम्रभस्म, ४. शुद्ध पारद, ५. शुद्ध हरताल, ६. शुद्ध गन्धक, ७. भारङ्गीचूर्ण, ८. सोंठचूर्ण ९. बलामूलचूर्ण १०. धनियाँचूर्ण, ११. कायफलचूर्ण, १२. हरीतकीचूर्ण तथा १३. शुद्ध वत्सनाभविष—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं हरताल और गन्धक तीनों को एक साथ खरल में रखकर मर्दन करें। अच्छी तरह चन्द्रिकाविहीन कज्जली बनने के बाद उसमें अन्य भस्मों एवं शुद्ध द्रव्यों और काष्ठौषधि चूर्णों को मिलाकर अच्छी तरह मर्दन

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

करें और पीपरक्वाथ की १ भावना देकर ३-३ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। यह 'महावातगजांकुश रस' सभी वात-श्लेष्म विकार का नाश करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—रसायन। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—वात-कफज रोगहर है।

५५. लघ्वानन्दरस (र.सा.सं.)

पारदो गन्धको लौहमभ्रकं विषमेव च।
समांशं मरिचस्याष्टौ टङ्गणन्तु चतुर्गुणम् ॥१२४॥
भृङ्गराजरसेनैव दातव्याः सप्त भावनाः।
तथा दाडिमतोयेन वटीं कुर्यात् समाहितः ॥
निहन्ति वातजान् रोगान् भ्रमदाहपुरःसरान् ॥१२५॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. शुद्ध वत्सनाभ—प्रत्येक १-१ भाग लें; ६. मरिच चूर्ण ८ भाग तथा ७. शुद्ध सुहागा ४ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः सभी भस्मों को उस कज्जली में मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। पुनः मरिच चूर्ण और टंकण मिलाकर भृङ्गराजस्वरस की ७ भावना दें और अन्त में खट्टा अनारस्वरस की भावना देकर २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रह करें। यह 'लघ्वानन्दरस' भ्रम एवं दाहपूर्वक वातविकार को नष्ट करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त-अम्ल। **उपयोग**—भ्रम-दाह युक्तवातरोगों में।

५६. गगनादिवटी (र.सा.सं.)

मृतगगनरसार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यं
सवलिसममिदं स्याद् यष्टितोयप्रपिष्टम्।
तदनु सलिलजातैर्वासकैर्गोस्तनीभि-
र्मृदितमनु विदारीवारिणा घस्रमेकम् ॥१२६॥
घृतमधुसहितेयं निष्कमात्रा वटीति
क्षपयति गुरुवातं पित्तरोगं क्षयं च।
भ्रममदकफशोषान् दाहतृष्णासमुत्थान्
मलयजमिह पेयं चानुपेयं सचन्द्रम् ॥१२७॥

१. अभ्रकभस्म, २. शुद्ध पारद, ३. ताम्रभस्म, ४. मुण्ड-लौहभस्म, ५. तीक्ष्णलौहभस्म, ६. स्वर्णमाक्षिकभस्म तथा ७. शुद्ध गन्धक लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली अच्छी तरह से बना लें। ततः सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः मुलेठीक्वाथ से १ दिन मर्दन करें। तदनन्तर वासास्वरस, मुनक्काक्वाथ या अंगूरस्वरस और विदारीकन्दस्वरस या क्वाथ से एक दिन मर्दन करें और ३ ग्राम की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रह करें। इस 'गगनादि वटी' को विषम मात्रा में घी एवं मधु से लेने पर भयंकर वातविकार, पित्तविकार, क्षयरोग, भ्रम, मद, कफरोग, दाह, तृष्णा आदि रोगों को दूर करता है। इस औषधि के सेवन के बाद घिसा हुआ श्वेत चन्दन और कर्पूर जल में घोलकर पिलाना चाहिए। यह मात्रा अत्यधिक है अधुना २ रत्ती की मात्रा दें।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं विषम मात्रा में घी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातविकार में।

५७. कुब्जविनोदरस (र.सा.सं.)

रसगन्धौ समौ शुद्धौ चाभया तालकं तथा।
विषं च कटुकी व्योषं बोलजैपालकौ समौ ॥१२८॥
भृङ्गराजरसैर्मर्द्यं स्नुह्यर्कस्वरसैस्तथा।
गुञ्जाद्वयं भक्षयेच्च हृच्छूलं पार्श्वशूलकम् ॥१२९॥
आमवाताढ्यवातादीन् कटिशूलं च नाशयेत्।
अग्निं च कुरुते दीप्तं स्थौल्यं चाप्यपकर्षति ॥
रसः कुब्जविनोदोऽयं गहनानन्दभाषितः ॥१३०॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. हरीतकीचूर्ण, ४. शुद्ध हरताल, ५. शुद्ध वत्सनाभ, ६. कटुकीचूर्ण, ७. सोंठचूर्ण, ८. पीपरचूर्ण, ९. मरिचचूर्ण, १०. बोलचूर्ण और ११. शुद्ध जयपाल—सभी द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को मर्दन कर अच्छी कज्जली बना लें। ततः शुद्ध हरताल मिलाकर खूब मर्दन करें। इसके बाद सभी द्रव्यों को मिला दें और भृङ्गराजस्वरस से १ दिन मर्दन करें। इसी तरह स्नुहीक्षीर और अर्कस्वरस के साथ १-१ दिन मर्दन करें और २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'कुब्जविनोद रस' को गहनानन्द योगी ने कहा था। इसके प्रयोग से हृच्छूल, पार्श्वशूल, आमवात, ऊरुस्तम्भ और कटिशूल रोग नष्ट हो जाते हैं। यह अग्नि प्रदीप्त करता है तथा मोटापा कम करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—वातविकार, आमवात, कटिशूल एवं ऊरुस्तम्भ में।

५८. सर्वाङ्गकम्परस (रसरत्नाकर)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मर्दयेत्त्रिकटुद्रवैः।
एकविंशतिवारं च शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः ॥
चणमात्रा वटी भक्ष्या [illegible]ः सर्वाङ्गकम्पजित् ॥१३१॥

रससिन्दूर ५० ग्राम तथा ताम्रभस्म ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

एक खरल में रससिन्दूर का मर्दन कर उसके साथ ताम्रभस्म मिलाकर मर्दन करें और त्रिकटुक्वाथ की पुनः-पुनः २१ बार भावना दें तथा २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। यह 'सर्वांगकम्प रस' यथा नामस्तथा गुण वाला है। अर्थात् सर्वाङ्गकम्प रोगनाशक है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—श्याव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—वातविकार (सर्वाङ्गकल्प) में।

५९. चिन्तामणिरस (र.सा.सं.)

कर्षैकं रससिन्दूरं तत्समं मृतमभ्रकम्।
तदर्धं मृतलौहञ्च स्वर्णं शाणं क्षिपेद् बुधः ॥१३२॥
कन्यारसेन सम्मर्द्य गुञ्जामानां वटीं चरेत्।
अनुपानादिकं दद्याद् बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ॥१३३॥
हन्ति श्लेष्मान्वितं वातं केवलं पित्तसंयुतम्।
हृल्लासमरुचिं दाहं वान्तिं श्रान्तिं शिरोग्रहम् ॥१३४॥
प्रमेहं कर्णनादञ्च ज्वरगद्गदमूकताम्।
बाधिर्यं गर्भिणीरोगमश्मरीं सूतिकामयम् ॥१३५॥
प्रदरं सोमरोगञ्च यक्ष्माणं ज्वरमेव च।
बलवर्णाग्निदः सम्यक् कान्तिपुष्टिप्रसाधकृत् ॥
चिन्तामणिरसश्चायं चिन्तामणिरिवापरः ॥१३६॥

१. रससिन्दूर १२ ग्राम, २. अभ्रकभस्म १२ ग्राम, ३. लौहभस्म ६ ग्राम तथा ४. स्वर्णभस्म ३ ग्राम लें। सर्वप्रथम रस सिन्दूर को एक खरल में अच्छी तरह पीस लें। ततः अन्य सभी भस्मों को उसी के साथ मिलाकर घृतकुमारी रस की १ भावना देकर १२ घण्टे तक मर्दन करें और १२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में रख लें। रोगबल एवं दोषबल को देखकर अनुपान का चुनाव करें। ऐसे सामान्यतया मधु के साथ दें। इस औषधि के सेवन से कफयुक्त वात, केवलवात, पित्तयुक्त वात, हृल्लास, अरुचि, दाह, वमन, भ्रम, शिर में जकड़न, प्रमेह, कर्णनाद, ज्वर, मूक-गद्गद (हकलाकर बोलना), बाधिर्य, गर्भिणीरोग, अश्मरी, सूतिकारोग, प्रदर, सोमरोग और यक्ष्मारोगों को नष्ट करता है। शरीर के बल, वर्ण, अग्नि को बढ़ाता है; शरीर-कान्ति और शरीर-पुष्टिवर्धक है। यह 'चिन्तामणिरस' दूसरी चिन्तामणि जैसा है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु या रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरोग में।

६०. चतुर्मुख चिन्तामणिरस

विशुद्धं रससिन्दूरं तदर्धं लौहमभ्रकम्।
तदर्धं कनकं खल्ले कन्यास्वरसमर्दितम् ॥१३७॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ निधापयेत्।
त्रिदिनान्ते समुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत् ॥१३८॥
एतद्रसायनवरं त्रिफलामधुसंयुतम्।
तद्यथाग्निबलं खादेद्वलीपलितनाशनम् ॥१३९॥
अपस्मारं महोन्मादं रोगान् वातसमुद्भवान्।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृत्रमिन्द्राशनिर्यथा ॥१४०॥

१. रससिन्दूर १२ ग्राम, २. लौहभस्म ६ ग्राम, ३. अभ्रक भस्म ६ ग्राम तथा ४. स्वर्णभस्म ३ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह खरल करें। तत्पश्चात् अन्य भस्मों को उसमें मिलाकर कुमारीस्वरस की भावना दें और एक गोला बनाकर एरण्डपत्र में लपेटकर धान की ढेर में छुपा दें। तीन दिन के बाद उसे निकालकर खरल में मर्दन करें और पुनः कन्यास्वरस में मर्दित कर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस श्रेष्ठ रसायन औषधि को त्रिफलाचूर्ण एवं मधु के साथ १-१ रत्ती की मात्रा में अग्निबलानुसार सेवन करने से यह वली, पलित, अपस्मार, उन्माद और वातजन्य रोग में अत्यधिक उपयोगी है। जैसे इन्द्र के वज्र ने वृत्रासुर को मार दिया था उसी प्रकार उपर्युक्त रोगों को यह औषधि नष्ट कर देती है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं त्रिफलाचूर्ण से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वली-पलित, उन्माद, अपस्मार एवं वातरोग में।

६१. बृहद् वातचिन्तामणिरस

भागत्रयं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्यमभ्रकम्।
लौहात् पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकं त्रयसम्मितम् ॥१४१॥
भस्मसूतं सप्तकञ्च कन्यारसविमर्दितम्।
वल्लमात्रा वटी कार्या भिषग्भिः परियत्नतः ॥१४२॥
यथाव्याध्यनुपानेन नाशयेद्रोगसङ्कुलम्।
वातरोगं पित्तकृतं निहन्ति नात्र चिन्तनम् ॥१४३॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी कन्दर्पसमविक्रमः।
दृष्टः सिद्धफलश्चायं वातचिन्तामणिस्त्विह ॥१४४॥

१. सुवर्णभस्म ३५ ग्राम, २. रजतभस्म २३ ग्राम, ३. अभ्रकभस्म २३ ग्राम, ४. लौहभस्म ५८ ग्राम, ५. प्रवालभस्म ३५ ग्राम, ६. मोतीभस्म ३५ ग्राम और ७. रससिन्दूर ८१ ग्राम लें। सर्वप्रथम रससिन्दूर को खरल में अच्छी तरह मर्दन करें और शेष भस्मों को उसमें मिलाकर घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर २-२ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रह करें। ३ रत्ती की मात्रा अधिक होती है। यह 'बृहद् वात-चिन्तामणि रस' यथाव्याधि के अनुपान से सेवन करने पर समस्त रोग समुदाय को नष्ट करता है। विशेषकर यह वात रोग एवं पित्तरोगों को तो निःसन्देह दूर करती है। इसके सेवन से वृद्ध

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

व्यक्ति भी जवानों से स्पर्धा करने लगता है। कामदेव के समान पराक्रम मैथुनशक्ति सम्पन्न हो जाता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्त वर्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातविकारघ्न, रसायन एवं वाजीकर गुणयुक्त है।

६२. कृष्णचतुर्मुखरस (र.सा.सं.)

रसगन्धकलौहाभ्रं समं सूताङ्घ्रिहेम च।
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यास्वरसमर्दितम् ॥१४५॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ दिनत्रयम्।
संस्थाप्य च तदुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत् ॥१४६॥
एतद्रसायनवरं त्रिफलामधुयोजितम्।
तद्यथाग्निबलं खादेद्वलीपलितनाशनम् ॥१४७॥
क्षयमेकादशविधं पाण्डुरोगं प्रमेहकम्।
श्वासं शूलञ्च मन्दाग्निं हिक्काञ्चैवाम्लपित्तकम् ॥१४८॥
व्रणान् सर्वानाढ्यवातं विसर्पं विद्रधिं तथा।
अपस्मारं महोन्मादं सर्वार्शांसि त्वगामयान् ॥१४९॥
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
पौष्टिकं बल्यमायुष्यं स्त्रीणां प्रसवकारणम् ॥१५०॥
चतुर्मुखेन देवेन कृष्णात्रेयस्य सूचितम्।
जगतां च हितार्थाय चतुर्मुखमुखोदितः।
रसश्चतुर्मुखो नाम चतुर्मुख इवापरः ॥१५१॥

१. शुद्ध पारद १२ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १२ ग्राम, ३. लौहभस्म १२ ग्राम, ४. अभ्रकभस्म १२ ग्राम और ५. स्वर्णभस्म ३ ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें, ततः उसमें अन्य भस्मों को मिलाकर घृतकुमारीस्वरस की भावना देकर एक दिन तक मर्दन करें और उनका एक गोलक बनाकर एरण्डपत्र में लपेटें और धान की ढेर में तीन दिन तक छुपाकर रख लें। चौथे दिन निकालकर पुनः खरल में मर्दन करें। पुनः कुमारीस्वरस की भावना देकर १-१ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे चतुर्मुख ब्रह्मा ने कृष्णात्रेय को बताया था। लोककल्याण की भावना से ब्रह्मा के मुख से निकला हुआ यह योग आरोग्य सृष्टिकर्ता द्वितीय ब्रह्मा (चतुर्मुख) जैसा श्रेष्ठ रसायन है। यह श्रेष्ठ रसायन त्रिफलाचूर्ण एवं मधु के साथ अग्निबलानुसार सेवन करने से वली-पलित रोगनाशक है। एकादश लक्षण वाला क्षय, पाण्डु, प्रमेह, श्वास, शूल, मन्दाग्नि, हिक्का, अम्लपित्त, सभी तरह के व्रण, ऊरुस्तम्भ, विसर्प, विद्रधि, अपस्मार, उन्माद, सभी अर्श एवं त्वग् रोगों को यह उसी प्रकार नाश करता है जिस तरह इन्द्र के वज्र से वृक्ष नष्ट हो जाते हैं। यह शरीर को पुष्ट करता है, बल्य है, आयुष्य है और बन्ध्या स्त्रियों को प्रसव करता है।

मात्रा—१२५ से २५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—त्रिफलाचूर्ण एवं मधु से तथा दोषानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त रोग, विशेषकर वातनाशक है।

६३. लक्ष्मीविलासरस (र.सा.सं.)

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्धौ रसगन्धकौ।
बलानागबलाभीरुविदारीकन्दमेव च ॥१५२॥
कृष्णधुस्तूरनिचुलं गोक्षुरवृद्धदारयोः।
बीजं शक्राशनस्यापि जातीकोषफले तथा ॥१५३॥
कर्पूरञ्चैव कर्षांशं श्लक्ष्णचूर्णं पृथक् पृथक्।
गृहीत्वा चाष्टमांशेन स्वर्णं पर्णरसेन च ॥१५४॥
वटिकां स्विन्नचणकप्रमाणां कारयेद्भिषक्।
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं पूर्ववद् गुणकारकः ॥१५५॥

१. अभ्रकभस्म ४६ ग्राम, २. शुद्ध पारद २३ ग्राम, ३. शुद्ध गन्धक २३ ग्राम, ४. बलामूलचूर्ण १२ ग्राम, ५. नागबलाचूर्ण १२ ग्राम, ६. शतावरीचूर्ण १२ ग्राम, ७. विदारीकन्द चूर्ण, ८. शुद्ध कालाधत्तूरबीजचूर्ण, ९. समुद्रशोष बीजचूर्ण, १०. गोक्षुरचूर्ण, ११. विधाराचूर्ण, १२. भाँग का बीजचूर्ण, १३. जायफलचूर्ण, १४. जावित्रीचूर्ण, १५. कपूर तथा १६. स्वर्णभस्म १५०० मि.ग्रा. (डेढ ग्राम)—बलामूल से कर्पूर तक के सभी १२ द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक रखकर मर्दन करें। अच्छी तरह कज्जली बन जाने पर उसमें अभ्रक एवं स्वर्णभस्म मिला लें, ततः सभी काष्ठौषधादि चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद ताम्बूलपत्रस्वरस की भावना देकर उबले हुए चने के बराबर अर्थात् २५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें, बाद में काचपात्र में संग्रहीत करें। यह 'लक्ष्मीविलासरस' 'चतुर्मुखरस' जैसा ही गुणकारक है। अर्थात् सभी प्रकार के वातविकारों (वातज रोगों) का नाश करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—कर्पूरगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु। उपयोग—वातविकारों में।

६४. योगेन्द्ररस

विशुद्धं रससिन्दूरं तदर्द्धं शुद्धहाटकम्।
तत्समं कान्तलौहञ्च तत्समं चाभ्रमेव च ॥१५६॥
विशुद्धं मौक्तिकं चैव वङ्गञ्च तत्समं मतम्।
कुमारिकारसैर्भाव्यं धान्यराशौ दिनत्रयम् ॥१५७॥
ततो रक्तिद्वयमितां वटीं कुर्याद्विचक्षणः।
योगवाही रसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकृत् ॥१५८॥
वातपित्तभवान् रोगान् प्रमेहान् बहुमूत्रताम्।
मूत्राघातमपस्मारं भगन्दरगुदामयान् ॥१५९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मूर्च्छोन्मादश्च यक्ष्माणं पक्षाघातं हतेन्द्रियम्।
शूलाम्लपित्तकं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥१६०॥
त्रिफलारसयोगेन शुभया सितयाऽपि वा।
भक्षयित्वा भवेद्रोगी कामरूपी सुदर्शनः ॥१६१॥
रात्रौ सेव्यं गवां क्षीरं कृशानाञ्च विशेषतः।
योगेन्द्राख्यो रसो नाम्ना कृष्णात्रेयेण भाषितः ॥१६२॥

१. रससिन्दूर ४० ग्राम, २. स्वर्णभस्म २० ग्राम, ३. कान्तलौहभस्म २० ग्राम, ४. अभ्रकभस्म २० ग्राम, ५. मुक्ता-भस्म २० ग्राम तथा ६. वङ्गभस्म २० ग्राम लें। सर्वप्रथम रससिन्दूर को एक खरल में खूब अच्छी तरह से मर्दन करें। उसमें धीरे-धीरे सभी भस्मों को मिलाकर मर्दन करें। पुनः कुमारीस्वरस की भावना देकर एक पिण्ड बना लें और एरण्डपत्र में लपेटकर धान की डेर में तीन दिनों के लिए छुपा दें। चौथे दिन निकालकर पुनः कुमारीस्वरस की भावना दें और २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रह करें। यह 'योगेन्द्ररस' योगवाही है। यह सर्वरोगसमूह को नष्ट करता है। वात-पित्त से होने वाले रोग, प्रमेह, बहुमूत्रता, मूत्राघात, अपस्मार, भगन्दर, अर्शादि गुदज रोग, मूर्च्छा, उन्माद, यक्ष्मा, पक्षाघात, इन्द्रियज्ञान का नाश, शूल, अम्लपित्त आदि रोगों को उसी प्रकार नष्ट करता है जैसे सूर्योदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है। इस रस की १-१ वटी वंशलोचनचूर्ण, चीनी और त्रिफलाक्वाथ से मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। इसके सेवन से रोगी कामदेव जैसा स्वस्थ एवं सुन्दर हो जाता है। कृश व्यक्ति इसका सेवन रात्रि में दूध के साथ करें। इस योगेन्द्ररस को आचार्य कृष्णात्रेय ने पहले कहा था।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—त्रिफलाक्वाथ, चीनी एवं वंशलोचन से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार, दौर्बल्य, यक्ष्मा, योगवाही, प्रमेहादि में।

६५. वातारिरस (र.सा.सं.)

रसभागो भवेदेको द्विगुणो गन्धको मतः।
त्रिगुणा त्रिफला ग्राह्या चतुर्भागं तु चित्रकम् ॥१६३॥
गुग्गुलुः पञ्चभागः स्याद्बुवुतैलेन मर्दयेत्।
क्षिप्त्वाऽत्र पूर्वकं चूर्णं पुनस्तेनैव मर्दयेत् ॥१६४॥
गुडिकां कर्षमात्रां तु भक्षयेत्प्रातरुत्थितः।
नागरैरण्डमूलानां क्वाथं तदनुपाययेत् ॥१६५॥
अभ्यज्यैरण्डतैलेन स्वेदयेत् पृष्ठदेशतः।
विरेके तेन सञ्जाते स्निग्धमुष्णं च भोजयेत् ॥१६६॥
वातारिसंज्ञको ह्येष रसो निर्वातसेवितः।
मासेन मरुतो रोगान् हरेत् सुरतवर्जितः ॥१६७॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग, ३. त्रिफलाचूर्ण ३ भाग, ४. चित्रकचूर्ण ४ भाग, ५. शुद्ध गुग्गुलु ५ भाग तथा ६. एरण्डतैल यथावश्यक लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बना लें। तदनन्तर एक छोटे स्टेनलेस पात्र में थोड़ा पानी उबालें, उसी में शुद्ध गुग्गुलु डालकर मन्दाग्नि पर पिघलावें। जब गुग्गुलु अच्छी तरह से पिघलकर लप्सी जैसा हो जाय तो कज्जली, त्रिफलाचूर्ण, चित्रकमूलचूर्ण को आपस में अच्छी तरह मिला लें और पिघले गूगल में अच्छी तरह मिलाकर थोड़ा एरण्ड तैल दे-देकर कूटे या सिल पर पीसें। इसका जितना मर्दन होगा दवा उतनी ही गुणयुक्त होगी। पुनः २-२ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। २ से ४ ग्राम की मात्रा में इस वटी को लेकर सोंठ एवं एरण्ड क्वाथ पियें। पीठ में तथा शरीर में जहाँ भी दर्द हो तो वहाँ पर एरण्ड तैल मालिश करें और सेक करना चाहिए। ऐसा करने से पखाना होगा। विरेचन हो जाने के बाद स्निग्ध-गरम भोजन करना चाहिए। इस 'वातारि रस' सेवन के बाद निर्वात स्थान पर रहना चाहिए।

मात्रा—२ से ४ ग्राम तक। **अनुपान**—सोंठ-एरण्ड क्वाथ, गरम पानी, चाय या दूध से। **गन्ध**—एरण्डतैल जैसा। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरोग, आमवात एवं अण्डवृद्धि में।

६६. अनिलारिरस (र.सा.सं.)

रसेन गन्धं द्विगुणं विमर्द्य
वातारिनिर्गुण्डिरसैर्दिनैकम्।
निवेशयेत्ताम्रमये पुटे तत्
सर्वं मृदावेष्ट्य च बालुकाख्ये ॥१६८॥
यन्त्रे पुटेद्गोमयचूर्णवह्नौ
स्वभावशीते तु समुद्धरेत्तत्।
निर्गुण्डिकावातहराग्नितोयैः
सञ्चूर्ण्य यत्नेन विभावयेत्तत् ॥१६९॥
रसोऽनिलारिः कथितोऽस्य वल्ल-
मेरण्डतैलेन ससैन्धवेन।
मरीचचूर्णेन ससर्पिषा वा
निर्गुण्डिचित्रैश्च कटुत्रिकैर्वा ॥१७०॥

शुद्ध पारद १ भाग तथा शुद्ध गन्धक २ भाग लें। एक खरल में दोनों की अच्छी कज्जली बनावें। उसमें एरण्डमूलक्वाथ और निर्गुण्डीपत्रस्वरस की भावना देकर १-१ दिन तक मर्दन करें। अब उस मर्दित कज्जली का एक गोलक बनाकर ताम्र के शराव में रखें तथा दूसरे ताम्र शराव से सम्पुट कर मिट्टी से सन्धिबन्धन करें। सूखने पर बालुका यन्त्र में रखें और चूल्हे के नीचे से गोबर चूर्ण की आग से पाक करें। अर्थात् मृदु अग्नि ही देनी है। ऐसा दिन भर पकावें। दूसरे दिन स्वाङ्गशीत होने पर ताम्र शराव

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सम्पुट निकालकर औषधि निकाल लें और खरल में मर्दन करें। पुनः निर्गुण्डीपत्रस्वरस, एरण्डत्वक्क्वाथ एवं चित्रकमूलक्वाथ की भावना देकर १-१ दिन तक मर्दन करें। सूखने पर चूर्ण कर काचपात्र मे संग्रह करें। इसे अनिलारिरस कहते हैं। इसका प्रयोग ३ रत्ती की मात्रा में करें। किन्तु आधुनिक मात्रा २-२ रत्ती की देनी चाहिए। इस अनिलारिरस को मरिचचूर्ण और गरम घी के साथ सेवन करना चाहिए। अथवा निर्गुण्डीस्वरस, चित्रकमूल-स्वरस और त्रिकटुचूर्ण के साथ सेवन करें। इसके सेवन से सभी प्रकार के वातरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मरिचचूर्ण और घी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरोग में।

६७. सर्वाङ्गसुन्दर रस (र.सा.सं.)

शुद्धसूताभ्रताम्रायो हिङ्गुलं कार्षिकं समम्।
गन्धकश्चैकभागः स्यात् सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥१७१॥
सप्तपर्णार्कस्नुक्क्षीरवासावातारित्रारिणा ।
विषमुष्टिसमं सर्वं पेष्यं तद्गोलकीकृतम् ॥१७२॥
विपचेद्वालुकायन्त्रे द्वियामान्ते समुद्धरेत्।
पिप्पलीविषसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः।
सर्ववातविकारघ्नः सर्वशूलनिषूदनः ॥१७३॥

१. शुद्ध पारद, २. अभ्रकभस्म, ३. ताम्रभस्म, ४. लौह भस्म, ५. शुद्ध हिङ्गुल, ६. शुद्ध गन्धक, ७. शुद्ध कुपीलुचूर्ण, ८. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण और ९. पीपरचूर्ण—कुपीलु ६ भाग लें तथा अन्य शेष द्रव्य १-१ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उसी खरल में अभ्रकभस्म, ताम्र-भस्म, लौहभस्म, शुद्ध हिङ्गुल और कुपीलुचूर्ण मिलाकर सप्तपर्ण, अर्क, स्नुहीक्षीर, वासापत्रस्वरस, एरण्डपत्रस्वरस की १-१ भावना दें। पुनः इन्हें एक बड़ा-सा गोलक बना लें। गोलक सूखने पर कपड़े में उस गोलक को बाँधकर बालुकायन्त्र में ६ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर बालुकायन्त्र से उक्त गोलक को निकालकर खरल में पीसें तथा उसमें पिप्पलीचूर्ण और शुद्ध वत्सनाभविष मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'सर्वाङ्गसुन्दररस' कहते हैं। यह सभी प्रकार के वातविकारों और शूलरोग को शमन करता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—गरम जल, दूध एवं मधु से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार एवं शूलरोग में।

६८. शीतारिरस (र.सा.सं.)

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य
पुनर्नवाऽग्निस्वरसैर्विभाव्य ।
पक्वार्कपत्रस्य रसेन पश्चाद्
विपाचयेदष्टगुणेन यत्नाद् ॥१७४॥
रसार्द्धभागं च विषं च दत्त्वा
विपाचयेदग्निजले क्षणं तत्।
शीतारिसंज्ञस्य रसायनस्य
वल्लं च सार्द्धं मरिचार्द्रकेण ॥
मरीचचूर्णेन घृताप्लुतेन
सेवेत मांसं च घृतं च पथ्यम् ॥१७५॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध गन्धक २ भाग तथा शुद्ध वत्सनाभविष $\frac{1}{2}$ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उस कज्जली में एरण्डपत्र स्वरस और निर्गुण्डीस्वरस की १-१ भावना दें। इसके बाद एक मूषा में उक्त कज्जली चूर्ण को रखें और पके हुए पीले अर्कपत्र रस कज्जली से आठ गुना लें और मूषा (Crusible) मे थोड़ा-थोड़ा डालकर बालुकायन्त्र में रखकर पका लें। जब अर्कपत्र सूख जाय तो इसमें शुद्ध वत्सनाभचूर्ण मिलाकर चित्रकस्वरस (क्वाथ) डालें और किसी चम्मच से अच्छी तरह मिलाकर आग पर सुखा लें। पुनः ठण्डा होने पर खरल में मर्दन कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'शीतारिरस' की ३ रत्ती की मात्रा में मधु, मरिचचूर्ण एवं आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन करें। अथवा मरिच-चूर्ण एवं घृत के साथ सेवन करने से शीतवात नष्ट हो जाता है। इसके पथ्य में मांस और घी लें।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मरिचचूर्ण, मधु, आर्द्रक स्वरस या मरिचचूर्ण, घी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—शीत वात।

६९. तालकेश्वर रस (र.सा.सं.)

एकभागो रसस्य स्याच्छुद्धं तालं च तत्समम्।
अष्टौ स्युर्विजयायाश्च गुडिका गुडतश्चरेत् ॥१७६॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातश्छायायामुपवेशयेत्।
तालकेश्वरनामाऽयं रोगश्चास्पर्शनाशनः ॥१७७॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. शुद्ध हरताल १ भाग, ३. शुद्ध भांगचूर्ण ८ भाग तथा ४. गुड़ २० भाग लें। एक खरल में सर्वप्रथम शुद्ध पारद एवं शुद्ध हरताल को डालकर मर्दन कर कज्जली बना लें। पुनः उस कज्जली के साथ भाँगचूर्ण मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। एक कड़ाही में गुड़ की चासनी करें। जब लड्डू की चासनी हो जाय तो उसे कुछ ठण्डा होने पर उपर्युक्त चूर्ण मिलाकर २-२ ग्राम की छोटी-छोटी गुटिका बनाकर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। यह स्पर्शज्ञान का नाश करने वाले रोगों (वातरक्त या सुप्तवात) में लाभदायक होता है।

मात्रा—२ ग्राम। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—गुड़गन्धी।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ण—गुड़ जैसा। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—स्पर्शज्ञान हानि या सुप्तवात में।

७०. वातविध्वंसनरस (र.सा.सं.)

सूतमभ्रकसत्त्वं च कांस्यं शुद्धं च माक्षिकम्।
गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तरविवर्द्धितम् ॥१७८॥
कज्जलीकृत्य तत्सर्वं वातारिस्नेहसंयुतम्।
सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीकृत्य यत्नतः ॥१७९॥
निम्बुद्रवेण सम्पीड्य तिलकल्केन लेपयेत्।
अर्द्धाङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥१८०॥
प्रपचेद्वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरं ततः।
जठरस्य रुजः सर्वास्तथा च मलविग्रहम् ॥१८१॥
आध्मानकं तथाऽऽनाहं विसूचीं वह्निमान्द्यकम्।
आमदोषमशेषं च गुल्मं छर्दिं च दुर्जयाम् ॥१८२॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च कृमिरोगं विशेषतः।
हन्यात्सर्वाङ्गशूलं च मन्यास्तम्भं तथैव च ॥१८३॥
ज्वरे चैवातिसारे च शूलरोगे त्रिदोषजे।
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन् भिषग्वरैः ॥
कथितो नन्दिनाथेन वातविध्वंसनो रसः ॥१८४॥

१. शुद्ध पारद १ भाग, २. अभ्रकसत्त्वभस्म २ भाग, ३. कांस्यभस्म ३ भाग, ४. स्वर्णमाक्षिकभस्म ४ भाग, ५. शुद्ध गन्धक ५ भाग तथा ६. शुद्ध हरताल ६ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी कज्जली बनावें। ततः हरताल डालकर उस कज्जली को और पीसें। पुनः अन्य भस्मों को मिलाकर एक साथ मर्दन करें और एरण्ड तैल के साथ ७ दिनों तक मर्दन करें। पुनः निम्बुस्वरस के साथ मर्दन कर गोलक बनाकर छाया में सुखा लें। ततः उस गोलक पर तिलकल्क का आधा अंगुल लेप कर सुखा लें और लिप्त गोलक को बालुकायन्त्र में रखकर ३६ घण्टे तक आग में पकावें। स्वाङ्गशीत होने पर उस गोलक को निकाल लें। कल्क हटाकर खरल में मर्दन करें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'वातविध्वंसन रस' को आचार्य नन्दीनाथ ने सर्वलोकहितार्थ कहा था। इस औषधि को २-२ रत्ती की मात्रा में मधु एवं रोगानुसार अनुपान के साथ देने पर सभी उदररोग, विबन्ध, आध्मान, आनाह, विसूचिका, अग्निमांद्य, सम्पूर्ण आमदोष, गुल्म, वमन, असाध्य ग्रहणी रोग, श्वास, कास, कृमिरोग, सर्वाङ्गशूल, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार और त्रिदोषज शूल रोगों को नष्ट करता है। रोगानुसार वैद्य इसमें पथ्य व्यवस्था करें।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं रोगानुसार। **गन्ध**—एरण्ड तैल गन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—वातरोग, उदररोग, आमदोषादि में।

७१. वातनाशन रस (र.सा.सं.)

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लौहं च माक्षिकम्।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थं सिन्धुफेनं समांशिकम् ॥१८५॥
पञ्चानां लवणानां च भागैकं सुविमर्दयेत्।
वज्रीक्षीरैर्दिनैकं तु रुद्ध्वा तं भूधरे पचेत् ॥१८६॥
माषैकमार्द्रकद्रावैर्लिह्याद् वातविनाशनम्।
पिप्पलीमूलकक्वाथं सकृष्णमनुपाययेत्।
सर्वान् वातविकारांश्च निहन्त्याक्षेपकादिकान् ॥१८७॥

१. शुद्ध पारद, २. हीराभस्म, ३. स्वर्णभस्म, ४. ताम्रभस्म, ५. लौहभस्म, ६. स्वर्णमाक्षिक भस्म, ७. शुद्ध ताल, ९. शुद्ध नीलाञ्जन, ९. शुद्ध तुत्थ, १०. समुद्रफेन तथा ११. पाँचों लवण—सभी ११ द्रव्य १-१ भाग लें। पाँचों लवण मिलाकर १ भाग लेना चाहिए। सर्वप्रथम एक खरल में पारद और हरताल मिलाकर अच्छी तरह कज्जली बना लें। ततः तुत्थ और नीलांजन मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद सभी द्रव्यों को एक साथ मर्दन कर स्नुहीक्षीर से १ दिन तक मर्दन करें। पुनः गोलक बनाकर भूधर यन्त्र में पाक करें। स्वाङ्ग शीतल होने पर मर्दन कर काँच-पात्र में सुरक्षित रख लें। इसकी $\frac{१}{२}$ से १ रत्ती की मात्रा में आर्द्रक स्वरस के साथ प्रयोग करने के बाद पिपरामूलक्वाथ ५० मि.ली. तथा १ ग्राम पीपरचूर्ण मिलाकर पीना चाहिए। इस प्रकार इस औषधि का सेवन करने से सभी प्रकार के वातरोग और आक्षेपवात नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६० से १२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं आर्द्रक स्वरस से लेने के बाद पिपरामूलक्वाथ में पीपरचूर्ण लेना चाहिए। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—लवणीय। **उपयोग**—सभी वातविकारों में।

७२. वातकण्टकरस (र.सा.सं.)

वज्रं मृताभ्रहेमार्कतीक्ष्णमुण्डं क्रमोत्तरम्।
मरिचं मर्दयेदम्ल-वर्गेण दिवसत्रयम् ॥१८८॥
द्विक्षारं पञ्चलवणं मर्दितं स्यात्समं समम्।
ततो निर्गुण्डिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥१८९॥
शुष्कमेतद्विचूर्ण्याथ विषं चास्याष्टमांशतः।
टङ्कणं विषतुल्यांशं दत्त्वा जम्बीरजैर्द्रवैः ॥१९०॥
भावयेद्दिनमेकं तु रसोऽयं वातकण्टकः।
दातव्यो वातरोगेषु सन्निपाते विशेषतः॥
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्घृतैर्वा वातरोगिणे ॥१९१॥

१. हीरकभस्म १ भाग, २. अभ्रकभस्म २ भाग, ३. स्वर्णभस्म ३ भाग, ४. ताम्रभस्म ४ भाग, ५. तीक्ष्णलौहभस्म ५ भाग, ६. मुण्डलौहभस्म ६ भाग, ७. मरिचचूर्ण ७ भाग, ८. यवक्षार १ भाग, ९. सर्जिक्षार १ भाग, १०. सैन्धवलवण १

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भाग, ११. सामुद्रलवण १ भाग, १२. सौवर्चल १ भाग, १३. विडलवण १ भाग, १४. औद्भिद्लवण १ भाग, १५. शुद्ध वत्सनाभ ४ भाग तथा १६. शुद्ध टंकण ४ भाग लें। सर्वप्रथम एक खरल में हीरकभस्म से मरिचचूर्ण तक के सभी ७ द्रव्य एक साथ लेकर मर्दन करें और अम्लवर्ग के द्रव्यों अथवा निम्बु-स्वरस के साथ ३ दिनों तक मर्दन करें। ततः उपर्युक्त मात्रा में दोनों क्षार और पाँचों लवण प्रत्येक १-१ भाग लेकर उपर्युक्त मर्दित द्रव्यों के साथ मिलाकर निर्गुण्डीपत्रस्वरस के साथ ३ दिनों तक मर्दन करें। सूखने के बाद औषधि को खुरचकर तौलें और पूरी तौल से आठवाँ भाग शुद्ध वत्सनाभविषचूर्ण और शुद्ध टंकण मिलाकर मर्दन करें। पुनः जम्बीरीनिम्बु के स्वरस से भावना देकर १ दिन तक मर्दन करें और २-२ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में अच्छी तरह सुखाकर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस 'वातकण्टकरस' को २ रत्ती की मात्रा में वातरोगों में, विशेषकर सन्निपात ज्वर में आर्द्रकस्वरस तथा वातरोगियों को घृत से देने से अत्यधिक लाभ होता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस या घी से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—किञ्चिद्रक्ताभ। **स्वाद**—लवणीय। **उपयोग**—वातरोग एवं सन्निपात ज्वर में।

७३. त्रैलोक्यचिन्तामणिरस (र.सा.सं.)

हीरं सुवर्णं सुमृतं च तार-
मेषां समं तीक्ष्णरजश्चतुर्णाम्।
समं मृताभ्रं रससिन्दुरं च
निष्पिष्य तीक्ष्णस्य तथाश्मनो वा ॥१९२॥
खल्ले द्रवेणैव कुमारिकाया
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां प्रकुर्यात्।
त्रैलोक्यचिन्तामणिरेष नाम्ना
सम्पूज्य सम्यग्गिरिजां दिनेशम् ॥१९३॥
हन्त्यामयान् योगशतैर्विवर्ज्या-
नथ प्रणाशाय मुनिप्रणीतः।
अस्य प्रसादेन गदानशेषाञ्
जरां विनिर्जित्य सुखं विभाति ॥१९४॥
स्निग्धे श्लेष्मण्यार्द्रकस्य रसेन पाययेत् सुधीः।
शुष्के च माक्षिकेणैव पित्ते घृतसितायुतम् ॥१९५॥
श्लेष्मणि मारुते सम्यग् दुष्टे च समतां गते।
कणाचूर्णं क्षौद्रयुतं प्रमेहे दुग्धसंयुतम् ॥१९६॥
बलवर्णाग्निजननः कासघ्नः कफवातजित्।
आयुःपुष्टिकरो वृष्यः सर्वरोगनिषूदनः ॥१९७॥

१. हीराभस्म १ भाग, २. सुवर्णभस्म १ भाग, ३. रजत भस्म १ भाग, ४. तीक्ष्णलौहभस्म १ भाग, ५. अभ्रकभस्म ४ भाग तथा ६. रससिन्दूर ४ भाग लें। सर्वप्रथम पत्थर के खरल में रससिन्दूर को अच्छी तरह पीसें। ततः उसमें हीरा और अन्य भस्मों को मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें। पुनः घृतकुमारी स्वरस की भावना देकर ३ घण्टे तक खूब मर्दन कर १२५ मि.ग्रा. (१ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में अच्छी तरह सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'त्रैलोक्यचिन्तामणिरस' को माता पार्वती और भगवान् सूर्य की पूजा कर सेवन करना चाहिए।

सैंकड़ों योगों से भी नष्ट नहीं होने वाले रोग को नष्ट करने के लिए ऋषि द्वारा यह योग निर्मित किया गया है। इसके प्रयोग से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं तथा अकाल वृद्धावस्था नष्ट हो जाती है। रोगी सुखी एवं कान्तिवान् हो जाता है। कफ ढीला हो तो आर्द्रकस्वरस से, सूखा हो तो मधु से, पित्तरोग में घृत एवं मिश्री से, कफ-वात रोग में पीपरचूर्ण एवं मधु से तथा प्रमेह में दूध से लेना चाहिए। यह औषधि बल, वर्ण एवं अग्निवर्धक है तथा कासनाशक और कफ-वात नाशक है। यह आयुर्वर्धक, शरीर-पुष्टिकारक एवं वृष्य है तथा सभी रोगों को नष्ट करने वाला है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु, घी, आर्द्रकस्वरस, पीपरचूर्ण, दूध आदि से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्त। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—सभी रोगों में सफल प्रयोग तथा वायु नाशक है।

७४. रसराजरस

पलैकं शुद्धसूतस्य व्योमसत्त्वं च कार्षिकम्।
तदर्धं काञ्चनं देयं कन्यारसविमर्दितम् ॥१९८॥
लौहं रूप्यं मृतं वङ्गं वाजिगन्धां लवङ्गकम्।
जातीकोषं तथा क्षीरकाकोलीं च तदर्धतः ॥१९९॥
काकमाचीरसैः पिष्ट्वा पञ्चगुञ्जामिता वटी।
क्षीरं च शर्करातोयमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥२००॥
पक्षाघातार्दिते वाते हनुस्तम्भेऽपतन्त्रके।
धनुःस्तम्भेऽपताने च बाधिर्ये मस्तकभ्रमे ॥२०१॥
सर्ववातविकारेषु रसराजः प्रकीर्त्तितः।
बल्यो वृष्यश्च भोग्यश्च वाजीकरण उत्तमः ॥२०२॥

१. रससिन्दूर ४६ ग्राम, २. अभ्रकसत्त्वभस्म १२ ग्राम, ३. स्वर्णभस्म ६ ग्राम, ४. लौहभस्म, ५. रजतभस्म, ६. वङ्गभस्म, ७. अश्वगन्धचूर्ण, ८. लवंगचूर्ण, ९. जावित्रीचूर्ण और १०. क्षीरकाकोलीचूर्ण लें। सर्वप्रथम एक खरल में रससिन्दूर को खरल करें। तदनन्तर उसमें शेष द्रव्यों को मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें और काकमाचीरस में ३ घण्टे तक मर्दन कर २-२ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में अच्छी तरह सुखाने के बाद काचपात्र में संग्रह करें। शास्त्रकार ५ रत्ती की वटी बनाने का निर्देश देते हैं जो अत्यधिक मालूम पड़ती है। चीनी के शर्बत

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

और दूध से प्रातः-सायं १-१ वटी लेने से पक्षाघात, अर्दित, वातविकार, हनुस्तम्भ, अपतन्त्रक, धनुस्तम्भ, अपतानक, बाधिर्य, शिरोभ्रम और सभी प्रकार के वातविकार नष्ट हो जाते हैं। यह 'रसराज' बल्य है, वृष्य है, भोग्य है और वाजीकरण में उत्तमोत्तम है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—दूध एवं चीनी के शर्बत से। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्त वर्ण। **स्वाद**—नीरस। **उपयोग**—समस्त वातविकार में।

७५. नवग्रहरस

गौरीशिलाहिङ्गुलगन्धकं च
रसश्च दुग्धाश्ममयूरतुत्थम्।
तालं शिलाखर्परसंयुतं च
कृत्वा समांशं नवखल्वमध्ये ॥२०३॥
सकारवेल्लीरसनिम्बतोयै-
र्यामद्वयेनापि विमर्द्य गाढम्।
कूप्याश्च मध्ये विनिवेशयेच्च
सवालुकाग्निं च दिनं ददीत ॥२०४॥
सुस्वाङ्गशीतं च समुद्धरेत्तं
व्रीहिप्रमाणं नवनीतयुक्तम्।
समस्तवातादिसपायुजं च
सग्रन्थिकोटिं बहुमार्गजालम् ॥२०५॥
निवारयेच्चापि विचित्रमेत-
न्नीरोगदेही सुखमाप्नुयाच्च।
नवग्रहो नाम रसोत्तमो हि
समस्तगुल्मोदरशूलनाशी ॥२०६॥

१. शुद्ध शंखियाविष, २. शुद्ध हिङ्गुल, ३. शुद्ध गन्धक, ४. शुद्ध पारद, ५. शंखजराहट (दुग्धपाषाण), ६. शुद्ध तुत्थ, ७. शुद्ध हरताल, ८. शुद्ध मैनसिल तथा ९. खर्परभस्म—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। इसमें नौ द्रव्य हैं। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें तथा संखिया भी इसी कज्जली में पीसें। ततः शेष सभी द्रव्यों को इसी में मिला दें। इसके बाद करैलाफलस्वरस और निम्बपत्रस्वरस के साथ ३-३ घण्टे तक दृढ़ मर्दन करें। सूखने पर कपड़मिट्टी की हुई काचकूपी में भरकर बालुकायन्त्र के माध्यम से पाक करें। १२ घण्टे तक मृदु-मध्य-तीक्ष्ण अग्नि से पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर कूपी निकालकर सावधानी से कपड़मिट्टी हटाकर नवग्रहरस को निकाल लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे $\frac{१}{४}$ रत्ती से $\frac{१}{२}$ रत्ती तक (३२ मि.ग्रा. से ६५ मि.ग्रा.) मक्खन के साथ प्रयोग करने से सभी प्रकार के वातविकार, अर्श तथा भगन्दर, ग्रन्थि का नाश करता है तथा सभी प्रकार के गुल्म, उदररोग, शूल आदि नष्ट करता हुआ शरीर को नीरोग करता है। यह 'नवग्रह' नामक उत्तम रस है।

मात्रा—३२ मि.ग्रा. से ६५ मि.ग्रा तक। **अनुपान**—मक्खन से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ-पीताभ। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—समस्त वातविकार, अर्श एवं भगन्दर में।

विमर्श—यह नवग्रह औषधि कूपी के दो भाग में प्राप्त होता है। कण्ठ में लगने वाला ऊर्ध्वभाग का नवग्रह रससिन्दूर जैसा यह पीसने पर लाल होता है। कूपी की तली में प्राप्त होने वाला (तलस्थ) नवग्रह रसमाणिक्य जैसा चमकदार टुकड़े रूप में मिलता है जिसे पीसने पर पीताभ औषध प्राप्त होती है। ऊर्ध्वस्थ अधिक गुणयुक्त है। अतः प्रयोग करते समय दोनों को एक साथ पीसकर मिला देते हैं। समीरपन्नगरस में भी ऐसी ही औषधि प्राप्त होती है।

७६. नवरत्नराजमृगाङ्क रस (योगरत्ना.)

सूतं गन्धकहेमताररसकं वैक्रान्तकान्तायसं
वङ्गं नागपविप्रवालविमलामाणिक्यगारुत्मतम्।
ताप्यं मौक्तिकपुष्परागजलजं वैडूर्यकं शुल्बकं
शुक्तिस्तालकमभ्रहिङ्गुलशिलागोमेदनीलं समम् ॥२०७॥
गोक्षूरैः फणिवल्लिसिंहवदनामुण्डीकणाचित्रकै-
रिक्षुच्छिन्नरुहाहरप्रियजयाद्राक्षावरीजद्रवैः।
शोफघ्नीशतपत्रिकामधुजलैः सच्छाल्मलीधातकी-
जातीसस्यबलाचतुष्टयजलत्वग्देवपुष्पद्रवैः ॥२०८॥
कक्कोलैर्मदनागकेशरजलैर्भाव्यं पृथक् सप्तधा
भाण्डे सिन्धुभृते मृगाङ्कवदयं पाच्यः क्रमाग्नौ दिनम्।
भूयः प्राक् समुदाहृतैर्द्रवचयैस्तं भावयेत्पूर्ववत्
पश्चात्तुल्यविभागशीतलरजः कस्तूरिकाभावना ॥२०९॥
गोप्याद्गोप्यतरं रसायनमिदं श्रीशङ्करेणोदितं
गुञ्जासिन्धुयुतं कणामधुयुतं शोफे सपाण्ड्वामये।
वातव्याधिमुपद्रवैश्च सहितं मेहांस्तथा विंशतिं
संयोज्यं च हरीतकीगुडयुतं वातास्रके दुर्जये ॥२१०॥
गम्भीरे च गुडूचिसत्त्वचपलाक्षौद्रैस्तु संयोजित-
स्त्वाध्मानारुचिशूलमान्द्यकसनापस्मारवातोदरान्।
श्वासान् संग्रहणीं हलीमकमथो सर्वज्वरान्नाशये-
द्धातून् पोषयति क्षयं क्षपयति श्यामाशतं यौवनम् ॥२११॥
प्रौढाटोपयुतं करोति सहसा तारुण्यगर्वोज्झितं
सिद्धो राजमृगाङ्क एष जयति स्वस्वानुपानैर्गदान् ॥२१२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. स्वर्णभस्म, ४. रजतभस्म, ५. खर्परभस्म, ६. वैक्रान्तभस्म, ७. कान्तलौहभस्म, ८. वङ्गभस्म, ९. नागभस्म, १०. हीरकभस्म, ११. प्रवालभस्म, १२. विमलभस्म, १३. माणिक्यभस्म, १४. पन्नाभस्म, १५. स्वर्णमाक्षिकभस्म, १६. मोतीभस्म, १७. पोखराजभस्म, १८. शंखभस्म, १९. वैदूर्यभस्म, २०. ताम्रभस्म, २१. शुक्तिभस्म, २२. हरतालभस्म, २३. अभ्रकभस्म, २४. शुद्ध हिंगुल, २५.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गोमेदभस्म और २६. नीलमभस्म—सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें।

भावना द्रव्य—१. गोक्षुरक्वाथ, २. ताम्बूलपत्ररस, ३. वासास्वरस, ४. मुण्डीस्वरस, ५. पिप्पलीक्वाथ, ६. चित्रकमूलक्वाथ, ७. ईक्षुरस, ८. गुडूचीरस, ९. धतूरपत्ररस, १०. भाँगस्वरस, ११. मुनक्काक्वाथ, १२. शतावरीक्वाथ, १३. पुनर्नवामूलरस, १४. गुलाबअर्क, १५. मुलेठीक्वाथ, १६. सेमलक्वाथ, १७. धातकीपुष्पक्वाथ, १८. चमेलीपत्ररस, १९. बलाक्वाथ, २०. अतिबलाक्वाथ, २१. नागबलाक्वाथ, २२. महाबलाक्वाथ, २३. दालचीनीक्वाथ, २४. लवङ्गक्वाथ, २५. शीतलचीनीक्वाथ, २६. कस्तूरी द्रव तथा २७. नागकेशरक्वाथ।

सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को अच्छे खरल मे दृढ़ मर्दन कर कज्जली बना लें। ततः अन्य सभी भस्मों एवं शुद्ध हिंगुल को एक साथ उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद उपर्युक्त भावना द्रव्य के २७ द्रवों सें प्रत्येक द्रव से पृथक्-पृथक् ७-७ भावना देकर मर्दन करें। पहले स्वरस से भावना देने का प्रयास करना चाहिए। स्वरस की अनुपलब्धि होने पर क्वाथ की भावना देनी चाहिए। पुनः इस मर्दित औषधि का १ गोलक बनाकर सुखा लें। इसे कपड़े में बाँधकर लवणयन्त्र में रखें और क्रमशः मृदु, मध्य, तीक्ष्णाग्नि क्रम से १२ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर वस्त्रबद्ध औषधि निकालें तथा कपड़ा हटाकर खरल में मर्दन करें। अब इसके बाद कस्तूरी को ठण्डे जल में घोलकर इस औषधि में भावना दें, अच्छी तरह सुखाकर काँचपात्र में संग्रहीत करें। इस अतिगोपनीय श्रेष्ठ रसायन को भगवान् शंकर ने कहा था। इस 'नवरत्नराजमृगाङ्करस' को १ रत्ती (१२५ मि.ग्रा.) की मात्रा में सैन्धव १/२ रत्ती, पीपरचूर्ण २ रत्ती और मधु से मिलाकर देने से शोथ, पाण्डुरोग और उपद्रवों से युक्त सभी प्रकार के वातव्याधि तथा २० प्रकार के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं। इसे हरीतकीचूर्ण २ रत्ती और गुड़ के साथ देने से असाध्य वातरक्त नष्ट हो जाता है। गुडूचीसत्त्व, पीपरचूर्ण और मधु के साथ इस औषधि को देने से आध्मान, अरुचि, शूल, अग्निमान्द्य, अपस्मार, वातोदर, कास, श्वास, ग्रहणी, हलीमक, सर्वज्वर और क्षय को नष्ट करता है। शरीरस्थ धातुओं को पुष्ट करता है। इसके सेवन से मनुष्य में इतनी शक्ति आ जाती है कि यौवनोन्मत्त सैंकड़ों कामिनी स्त्रियों को मैथुन से तृप्त करता है।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु-पीपर-गुडूचीसत्त्व-हरीतकीचूर्ण, सैन्धवादि। **गन्ध**—सुगन्ध, कस्तूरीवाली। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरोग, वातरक्त, अपस्मार, कास, श्वास तथा अग्निमान्द्य में।

७७. दशमूलाद्यघृत (च.द.)

दशमूलस्य निर्यूहे जीवनीयैः पलोन्मितैः।
क्षीरेण च घृतं पक्वं तर्पणं पवनार्तिजित्॥
क्वाथोऽत्र त्रिगुणः सर्पिः प्रस्थः साध्यः पयः समम्॥

१. दशमूल का मिश्रित क्वाथ द्रव्य यवकुट २२५० ग्राम (त्रिगुण), २. घृत ७५० ग्राम, ३. गोदुग्ध ७५० मि.ली. तथा ४. जीवनीयगण के १२ द्रव्य यथा—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. मेदा, ६. महामेदा, ७. ऋद्धि, ८. वृद्धि, ९. जीवन्ती, १०. मुलेठी, ११. माषपर्णी और १२. मुद्गपर्णी—प्रत्येक द्रव्य ४६ ग्राम लेना चाहिए। घृत-निर्माण की परिभाषानुसार घृत से चौथाई कल्क अर्थात् १८५ ग्राम कल्क लेना चाहिए, किन्तु घृत के बराबर लेने का निर्देश आचार्यश्री कर रहे हैं। सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्यों को पीसकर मूर्च्छित घृत में डालकर पकावें। उसी समय गोदुग्ध डालें। गोदुग्ध सूखने पर दशमूलक्वाथ चौगुना डालकर पकावें तथा चौथाई शेष रहने पर छान लें। इस क्वाथ को भी घृत में मिलाकर पकावें। सम्यक् पाक के लिए ३ लीटर जल देकर पकावें। जल सूखने पर घृतपाक की परीक्षा करके चूल्हे से घृतपात्र को उतारकर छान लें और काचपात्र में संग्रह करें। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम दूध के साथ प्रयोग करें। यह 'दशमूलाद्यघृत' तर्पक एवं वातरोग नाशक है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**— गरम दूध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातरोग नाशक है।

७८. अश्वगन्धाद्यघृत (च.द.)

अश्वगन्धाकषाये च कल्के क्षीरं चतुर्गुणम्।
घृतं पक्वन्तु वातघ्नं वृष्यं मांसविवर्द्धनम्॥२१४॥

१. अश्वगन्ध क्वाथार्थ ४ किलो, २. घृत १ किलो, ३. गोदुग्ध ४ लीटर तथा ५. अश्वगन्ध कल्कार्थ २५० ग्राम लें। गोघृत का मूर्च्छन करें। २५० ग्राम अश्वगन्ध को चूर्ण कर सिल पर जल से और पीसें मूर्च्छित घृत में इसे और दूध मिलाकर मन्दाग्नि में पकावें। इसी बीच अश्वगन्ध का यवकुट करें और ४ गुना जल में पकावें तथा चौथाई शेष रहने पर छान लें एवं घृत में ४ लीटर क्वाथ मिलाकर पकावें। पुनः दुग्ध एवं कल्क और सम्यक् पाकार्थ ४ ली. जल देकर पाक करें। जब जलीयांश शेष नहीं रहे तो घृतपात्र को उतारकर छान लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम गोदुग्ध से प्रयोग करें। यह वृष्य और बृंहण (मांसवर्धक) है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गन्ध—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातविकारनाशक है, वृष्य एवं बृंहण है।

७९. नकुलाद्यघृत

नकुलस्य च मांसस्य पचेत्प्रस्थं जलाढके।
तत्समं दशमूलञ्च पक्वं माषबलान्वितम् ॥२१५॥
घृतप्रस्थं पचेत्तत्र चतुर्भागावशेषिते।
शतावरीरसप्रस्थं गव्यदुग्धञ्च तत्समम् ॥२१६॥
अष्टौ वर्गाश्च काकोल्यौ जीवन्ती मधुयष्टिका।
एला त्वचञ्च पत्रञ्च त्रिकटु त्रिफला तथा ॥२१७॥
मुस्तकं नागजिह्वा च कर्षं कर्षं प्रदापयेत्।
सर्ववातविकारेषु अपस्मारे विशेषतः ॥२१८॥
महोन्मादे पक्षघाते चाध्माने कोष्ठनिग्रहे।
हस्तकम्पे शिरःकम्पे बाधिर्ये मूकमिन्मिने ॥२१९॥
ऊर्ध्वजत्रुगते वाते जङ्घापार्श्वादिसंश्रिते।
नकुलाद्यमिदं नाम्ना ऊर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥२२०॥

गोघृत ७५० ग्राम लें। **क्वाथ द्रव्य**—१. नकुल (नेवला) मांस १ प्रस्थ तथा क्वाथार्थ जल ३ लीटर, २. दशमूल (मिलित) ७५० ग्राम तथा क्वाथार्थ जल ३ लीटर, ३. उड़द ७५० ग्राम, ४. बलामूल ७५० ग्राम एवं जल ६ लीटर, ५. शतावरीक्वाथ ७५० मि.ली. तथा ६. गोदुग्ध ७५० मि.ली. लें।

कल्क द्रव्य—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. ऋद्धि, ६. वृद्धि, ७. मेदा, ८. महामेदा, ९. जीवन्ती, १०. मुलेठी, ११. छोटी इलायची, १२. दालचीनी, १३. तेजपत्ता, १४. सोंठ, १५. पीपर, १६. मरिच, १७. आमला, १८. हरीतकी, १९. बहेड़ा, २०. नागरमोथा और २१. अनन्तमूल—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित घृत में मिला दें और नकुलमांस स्वरस मिलाकर मध्यमाग्नि से पाक करें। मांसरस सूखने पर क्रमशः दशमूलक्वाथ देकर पकावें। ततः माषक्वाथ, बलाक्वाथ, शतावरीक्वाथ और गोदुग्ध देकर पाक करें। कल्क एवं दुग्ध के कल्क का सम्यक् पाक हेतु ३ ली. जल देकर पुनः पाक करें। जलांश सूखने पर पाक-परीक्षा कर घृतपात्र चूल्हे से नीचे उतार लें। कपड़े से घृत छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'नकुलाद्यघृत' को ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम गोदुग्ध के साथ मिलाकर पिलाने से सभी प्रकार के वातविकार, विशेषकर अपस्मार, भयंकर उन्माद, पक्षाघात, आध्मान, कोष्ठबद्धता, हस्तकम्प, शिरःकम्प, बाधिर्य, मूक, मिन्मिन, ऊर्ध्वजत्रुगत वात-विकार, जंघा एवं पार्श्वगत वातविकार और ऊर्ध्वजत्रुगत विकार नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—मांस एवं घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त एवं कषाय रस युक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार, अपस्मार-उन्मादादि में।

८०. छागलाद्यघृत (च.द.)

आजं चर्मविनिर्मुक्तं त्यक्तशृङ्गखुरादिकम्।
पञ्चमूलीद्वयञ्चैव जलद्रोणे विपाचयेत् ॥२२१॥
तेन पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
जीवनीयैः सयष्ट्याह्वैः क्षीरञ्चैव शतावरी ॥२२२॥
छागलाद्यमिदं नाम्ना सर्ववातविकारनुत्।
अर्दिते कर्णशूले च बाधिर्यं मूकमिन्मिने ॥२२३॥
जडगद्गदपङ्गूनां खञ्जे गृध्रसिकुब्जयोः।
अपतानेऽपतन्त्रे च सर्पिरेतत्प्रशस्यते ॥२२४॥
द्रोणे द्रव्यतुलाश्रुत्या स्याच्छागदशमूलयोः।
पृथक् तुलार्द्धं यष्ट्याह्वद्वयं देयं द्विधोक्तितः ॥२२५॥

क्वाथ—१. बकरे का मांस (चर्म, नख, शृंग छोड़कर) १५०० ग्राम, २. दशमूल १५०० ग्राम, जल २४ लीटर तथा ३. शतावरीक्वाथ १५०० मि.ली.।

कल्क—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. ऋद्धि, ६. वृद्धि, ७. मेदा, ८. महामेदा, ९. मुलेठी, १०. जीवन्ती, ११. मुद्गपर्णी, १२. माषपर्णी तथा १३. मुलेठी—प्रत्येक १३ द्रव्य १५ ग्राम लें; १४. गोघृत ७५० ग्राम और १५. गोदुग्ध १.५०० लीटर लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः सभी १३ कल्क द्रव्यों को सिल पर पीसकर कल्क बना लें और घृत में घोल दें। पुनः बकरे का मांसखण्ड और दशमूल यवकुट मिलाकर २४ लीटर जल में पाक करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छानकर मूर्च्छित घृत में मिलाकर मध्यमाग्नि पर पकावें। जलांश सूखने पर उसमें दूध देकर पाक करें। ततः शतावरी स्वरस देकर पाक करें। अन्त में पाक-परीक्षा कर घृतपात्र को चूल्हे से उतार लें तथा वस्त्रपूत कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'छागलाद्य घृत' कहते हैं। यह सभी वातविकारों को नष्ट करता है। यह घृत अर्दित, कर्णमूल, बाधिर्य, मूक-मिन्मिन, जिह्वाजड़ता, गद्गद (हकलाना), पङ्गु, खञ्ज, गृध्रसी, कुब्ज, अपतानक, अपतन्त्रादि रोगों में बहुत उपयोगी है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—मांस एवं घृत गन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—सभी प्रकार के वातरोगों में।

८१. बृहत् छागलादिघृत (हरीतकी)

छागमांसतुलां गृह्य दशमूल्याः पलं शतम्।
अश्वगन्धापलशतं वाट्यालकशतं तथा ॥२२६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

घृताढकं पचेत्तोयैश्चतुर्भागावशेषितैः।
क्षीरं स्नेहसमं दद्याच्छतावर्या रसं तथा ॥२२७॥
ताम्रपात्रे दृढे चैव शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
अस्यौषधस्य कल्कस्य प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ॥२२८॥
जीवन्ती मधुकं द्राक्षा काकोल्यौ नीलमुत्पलम्।
मुस्तं सचन्दनं रास्ना पर्णिनीद्वयशारिवे ॥२२९॥
मेदे द्वे च तथा कुष्ठं जीवकर्षभकौ शटी।
दार्वी प्रियङ्गुस्त्रिफला नतं तालीशपद्मकौ ॥२३०॥
एला पत्रं वरी नागं जातीकुसुमधान्यकम्।
मञ्जिष्ठा दाडिमं दारु रेणुकं सैलबालुकम् ॥२३१॥
विडङ्गं जीरकञ्चैव पेषयित्वा विनिक्षिपेत्।
वस्त्रपूते च शीते च शर्कराप्रस्थसंयुतम् ॥२३२॥
निधापयेत्स्निग्धभाण्डे मृन्मये भाजने शुभे।
अस्यौषधस्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम् ॥२३३॥
देवदेवं नमस्कृत्य सम्पूज्य गणनायकम्।
पिबेत्पाणितलं तस्य व्याधिं वीक्ष्यानुपानतः ॥२३४॥
सर्ववातविकारेषु चापस्मारे विशेषतः।
उन्मादे पक्षघाते च ह्याध्माने कोष्ठनिग्रहे ॥२३५॥
कर्णरोगे शिरोरोगे बाधिर्ये चापतन्त्रके।
भूतोन्मादे च गृध्रस्यां सोद्गारे चाक्षिपातजे ॥२३६॥
पार्श्वशूले च हृच्छूले बाह्यायामे तथाऽर्दिते।
वातकण्टकहृद्रोगे मूत्रकृच्छ्रं सपङ्गुते ॥२३७॥
क्रोष्टुशीर्षे तथा खञ्जे कुब्जे चाध्वनि मिन्मिने।
अपतानेऽन्तरायामे रक्तपित्ते तथोर्ध्वगे ॥२३८॥
आनाहेऽर्शोविकारेषु चातुर्थकज्वरेऽपि च।
हनुग्रहे तथा शोषे क्षीणे चैवावबाहुके ॥२३९॥
दण्डापतानके भग्ने दाहे चाक्षेपके तथा।
जीर्णज्वरे विषे कुष्ठे शेफःस्तम्भे मदात्यये ॥२४०॥
आढ्यवातेऽग्निमान्द्ये च वातरक्तगदेषु च।
एकाङ्गरोगिणे चैव तथा सर्वाङ्गरोगिणे ॥२४१॥
हस्तकम्पे शिरःकम्पे जिह्वास्तम्भे जडे भ्रमे।
क्षीणेन्द्रिये नष्टशुक्रे शुक्रनिःसरणे तथा ॥२४२॥
स्त्रीणां वातास्त्रपाते च पटले चाक्षिस्पन्दने।
एकाङ्गस्पन्दने चैव सर्वाङ्गस्पन्दने तथा ॥२४३॥
नगादिपतिते वाते स्त्रीणामप्राप्तिहेतुके।
आभिचारिकदोषे च धनसन्तापसम्भवे ॥२४४॥
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः।
शिरोमध्यगता ये च जङ्घापार्श्वादिसंस्थिताः ॥२४५॥
मातृग्रहाभिभूतश्च शिशुर्यश्च विशुष्यति।
प्रक्षीणबलमांसश्च न वर्त्मगमनक्षमः ॥२४६॥
घृतेनानेन सिद्ध्यन्ति वज्रमुक्तिरिवासुरान्।
निहन्ति सकलान् रोगान् घृतं परमदुर्लभम् ॥२४७॥
रसायनं वह्निबलप्रदञ्च
वपुःप्रकर्षं विदधाति रूपम्।
दन्ताबलेन्द्रेण समानतेजा
दीर्घायुषं पुत्रशतं करोति ॥२४८॥
स्त्रीणां शतं गच्छति वातिरेकं
न याति तृप्तिं सरसः समाङ्गः।
अपुत्रिणी पुत्रशतं करोति
शतायुषं कामसमं बलिष्ठम् ॥२४९॥
महद्घृतं नाम तु छागलाद्यं
विनिर्मितं वातनिषूदनञ्च।
शिवं शुभं रोगभयापहञ्च
चकार हारीतमुनिर्विशिष्टः ॥२५०॥

क्वाथ—१. बकरे का मांस ५ किलो, २. दशमूलयवकुट ५ किलो, ३. अश्वगन्धायवकुट ५ किलो, ४. बलामूलयवकुट ५ किलो, ५. गोघृत ३ किलो, ६. शतावरीक्वाथ ३ लीटर तथा ७. गोदुग्ध ३ लीटर लें।

कल्क—१. जीवन्ती, २. मुलेठी, ३. मुनक्का, ४. काकोली, ५. क्षीरकाकोली, ६. नीलकमल, ७. नागरमोथा, ८. लालचन्दन, ९. रास्ना, १०. शालपर्णी, ११. पृश्निपर्णी, १२. कृष्णसारिवा, १३. श्वेतसारिवा, १४. मेदा, १५. महामेदा, १६. कूठ, १७. जीवक, १८. ऋषभक, १९. कचूर, २०. दारुहरिद्रा, २१. प्रियंगुफूल, २२. आमला, २३. हरीतकी, २४. बहेड़ा, २५. तगर, २६. तालीशपत्र, २७. पद्मकाठ, २८. छोटीइलायची, २९. तेजपत्ता, ३०. शतावरी, ३१. नागकेशर, ३२. चमेली के फूल, ३३. धनियाँ, ३४. मंजीठ, ३५. अनारदाना, ३६. देवदारु, ३७. रेणुकबीज, ३८. एलबालुक, ३९. वायविडङ्ग और ४०. श्वेतजीरा—ये ४० द्रव्य प्रत्येक २३-२३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। जीवन्ती से जीरा तक के सभी ४० द्रव्यों को कूटें और सिल पर पीसकर कल्क बना लें। कल्क को मूर्च्छित घृत में घोल लें। अब ५ किलो बकरे के मांसखण्ड को २० लीटर जल में पकावें। चौथाई शेष रहने (५ ली.) पर छानकर घृत में मिलाकर घृतपाक करें। इसी तरह ५ किलो दशमूल यवकुट को २० लीटर जल में पकावें, चौथाई शेष रहने पर घृत में मिलाकर पकावें। इसी प्रकार अश्वगन्धा यवकुट का भी क्वाथ करें और शतावरीक्वाथ ३ लीटर घृत में मिलाकर पकावें। अन्त में गोदुग्ध देकर घृतपाक करें। कल्क एवं दुग्ध-कल्क का सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पुनः पाक करें। ततः घृतपाकनिष्णात वैद्य पाक-परीक्षा कर घृत के जल रहित होने पर घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़ा से छान लें और काचपात्र में सुरक्षित करें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सभी देवताओं में पूज्य श्रीगणेशजी की पूजा कर इस 'बृहच्छागलाद्यघृत' को १ तोला (१२ ग्राम) की मात्रा में गाय के गरम दूध के साथ मिलाकर पान करें। रोगानुसार भी अनुपान दिया जा सकता है। सभी वातविकारों में—विशेषकर इसे अपस्मार, उन्माद, पक्षाघात, आध्मान, कोष्ठबद्धता, कर्णरोग, शिरोरोग, बाधिर्य, अपतन्त्रक, भूतोन्माद, गृध्रसी, अक्षिपात, पार्श्वशूल, हृच्छूल, बाह्यायाम, अर्दित, वातकण्टक, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, पङ्गुरोग, क्रोष्टुशीर्ष, खञ्ज, कुब्ज, गूंगापन, हकलाना, अपतानक, अन्तरायाम, ऊर्ध्वग रक्तपित्त, आनाह, सभी अर्श, चातुर्थिकज्वर, हनुग्रह, शोष, क्षीण, अवबाहुक, दण्डापतानक, भग्न, दाह, आक्षेप, जीर्णज्वर, विषदोष, कुष्ठ, शेफ:स्तम्भ, मदात्यय, वातरक्त, अग्निमान्द्य, आढ्यवात, एकाङ्गवात, सर्वाङ्गवात, हस्तकम्प, शिर:कम्प, जिह्वास्तम्भ, जड़ता, भ्रम, क्षीणेन्द्रियरोग, नष्टशुक्र, स्वप्नदोष, मूत्र के साथ शुक्र निकलना, स्त्रियों में वातज रक्तस्राव, अक्षिस्पन्दन, एकाङ्गस्पन्दन, सर्वाङ्गस्पन्दन (फड़कना), पर्वत से गिरने के कारण प्रकुपित वात में, बन्ध्या स्त्रियों में आभिचारिक क्रिया से उत्पादित रोगों में, धन एवं इष्ट जनों के विनष्ट से उत्पन्न मन:स्थिति में, वात-पित्तोत्पन्न रोगों में, शिरोमध्य, जङ्घागत, पार्श्वस्थित वातविकारों में इस 'छागलाद्य घृत' का सेवन अत्यन्त लाभप्रद होता है। जो बालक मातृग्रह के कारण सूख जाता है, जिसका बल-मांस क्षीण हो गया हो, रास्ता चलने में असमर्थ हो ऐसे बच्चों को इस घृत के प्रयोग से बहुत लाभ होता है। जिस तरह से इन्द्र का आयुध वज्र राक्षसों को नष्ट कर देता है, उसी तरह यह छागलादिघृत समस्त रोगों को नष्ट करता है। यह घृत परम दुर्लभ है। यह घृत रसायन है, अग्निदीपक है, शरीर-वृद्धि कारक है, शरीर को सुदृढ़, सुडौल, रूपवान् और सन्तान युक्त करता है। यह घृत बलवान् पुत्रों को उत्पन्न कराने में समर्थ है। रतिशक्तिवर्धक है। कामदेव के समान सुन्दर और बलिष्ठ पुत्रों को जन्म देता है। सैंकड़ों स्त्रियों को सम्भोग में तृप्त करता है। इस 'महाछागलाद्यघृत' को महामुनि हारीत ने वातशमनार्थ बनाया है। यह घृत कल्याणकारक एवं शुभदायक है तथा सभी वातरोगों को नष्ट करता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध, मांसरस या रोगानुसार। **गन्ध**—मांस एवं घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—सभी वातरोगों में।

छागादीनां प्राशस्त्यम्

श्रृगालबर्हिणोः पाके पुमांसं तत्र दापयेत्।
मयूरी जम्बुकी छागी वीर्यहीना स्वभावतः।
भाषितं काशिराजेन छाग एव नपुंसकः ॥२५१॥

सियार एवं मोर जाति के मांस से स्नेह साधित करने का उल्लेख हो, वहाँ पर पुरुष जाति का मांस ही लेना चाहिए। मयूरी, सियारिन, बकरी स्वभाव से ही वीर्यहीन होती हैं। काशिराज का मत है कि जहाँ छागमांस से स्नेह सिद्ध करने का विधान हो वहाँ पर नपुंसक (बधिआ) बकरे का मांस लेना अधिक उपयोगी है। क्योंकि बधिया बकरे के मांस में वसा (Fat) अधिक होने से स्नेह की वृद्धि भी होती है। वसा घृत-तैल से अधिक गुणकारी भी होता है। अत: बधिया बकरा का अण्डकोष निकालकर उपयोग करें।

८२. हंसादि घृत

हंसमांसं तुलां नीत्वा जलद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषे रसे तस्मिन् प्रस्थं प्रतनसर्पिषः ॥२५२॥
सैन्धवं कुडवार्द्धञ्च दत्त्वा तैलमेरण्डजम्।
कुडवं घृततुल्यं च क्षीरं भूलतासम्भवम् ॥२५३॥
प्रक्षिप्य विपचेत्सर्पिः कुशलो मतिमान् भिषक्।
पक्षाघातादिवातेषु घृतं स्यादमृतोपमम् ॥२५४॥

१. पुराना गोघृत ७५० ग्राम, २. हंसमांस ४.६७० ग्राम, ३. सैन्धवलवण ९३ ग्राम, ४. एरण्डतैल १९० ग्राम, ५. गोदुग्ध ७५० मि.ली., ६. भू-लता (केंचुआ) की मिट्टी ४६ ग्राम। पुराना घी एवं एरण्डतैल का पृथक्-पृथक् मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् दोनों को मिलाकर उसमें सैन्धव एवं भू-लता मिट्टी दोनों को कल्क जैसा बनाकर उसे घृत मिश्रण में मिला दें। तदनन्तर हंसमांस में १३ लीटर जल मिलाकर पकावें। चौथाई जल शेष रहने पर छान लें। अर्थात् ३ लीटर मांसरस शेष रहे। इस मांसरस को घृत-तैल में मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। मांसरस सूखने पर ७५० मि.ली. गोदुग्ध मिलाकर पुन: पकावें। दूध सूखने पर दूध के सम्यक् पाकार्थ ७५० मि.ली. जल मिलाकर पुन: पाक करें। सम्यक् पाक की परीक्षा के बाद घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर गरम घृत को छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'हंसाद्यघृत' कहते हैं। पक्षाघात एवं वातविकार में इसका प्रयोग अमृत जैसा फलदायी है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध या गरम जल से। **गन्ध**—मांस एवं घृतगन्धी। **वर्ण**—पीत-रक्ताभ। **स्वाद**—किञ्चिल्लवण। **उपयोग**—पक्षाघात एवं समस्त वातविकार में।

८३. रसोनतैल (च.द.)

रसोनकल्कस्वरसेन पक्वं
तैलं पिबेद् यस्त्वनिलामयार्त्तः।
तस्याशु नश्यन्ति च वातरोगा
ग्रन्था विशाला इव दुर्गृहीताः ॥२५५॥

तिलतैल १ लीटर, क्वाथार्थ लशुन ४ किलो, कल्कार्थ लशुन २५० ग्राम तथा जल १६ लीटर लें। सर्वप्रथम तिलतैल

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

का मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् लशुन कूटकर १६ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहे तो छानकर मूर्च्छित तैल में मिलाकर मध्यमाग्नि पर पकावें। २५० ग्राम लशुन को छिलकर सिल पर पीस लें, कल्क जैसा हो जाय तो तैल में डालकर पकावें। जब लशुन क्वाथ सूख जाय तो सम्यक् पाक हेतु ४ लीटर जल मिलाकर पुनः तैल को पकावें। जब जलीयांश सूख जाय तो पाकविद् वैद्य तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रह करें। इस तैल को पीने से समस्त वातविकार नष्ट हो जाते हैं। जिस प्रकार दुष्ट एवं मूर्ख के हाथ में पड़ने से विशाल ग्रन्थ नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—लशुनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—लशुन जैसी तीक्ष्णगन्ध। **उपयोग**—समस्त वातरोगों में।

८४. मूलकाद्यतैल (च.द.)

मूलकस्वरसं तैलं क्षीरं दध्यम्लकाञ्जिकम्।
तुल्यं विपाचयेत्कल्कैर्बलाचित्रकसैन्धवैः ॥२५६॥
पिप्पल्यतिविषारास्नाचविकाऽगुरुचित्रकैः ।
भल्लातकवचाकुष्ठश्वदंष्ट्राविश्वभेषजैः ॥२५७॥
पुष्कराह्वशटीबिल्वशताह्वानतदारुभिः ।
तत्सिद्धं पीतमत्युग्रान्हन्ति वातात्मकान् गदान् ॥२५८॥

१. तिलतैल १ लीटर, २. मूलीस्वरस १ लीटर, ३. गोदुग्ध १ लीटर, ४. दही १ किलो तथा ५. काञ्जि (खट्टी) १ लीटर लें।

कल्क—१. बलामूल, २. चित्रकमूल, ३. सैन्धवलवण, ४. पीपर, ५. अतीस, ६. रास्ना, ७. चव्यमूल, ८. अगुरु, ९. चित्रकमूल, १०. भल्लातक, ११. वच, १२. कुष्ठ, १३. गोखरु, १४. सोंठ, १५. पुष्करमूल, १६. कचूर, १७. बिल्वफलमज्जा, १८. सौंफ, १९. तगर और २०. देवदारु—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें, ततः बला से देवदारु तक सभी २० द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और मूर्च्छित तैल में मिला दें। पुनः मूली कूटकर १ लीटर रस निकालकर उक्त तैल में मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। मूली का स्वरस सूखने पर गोदुग्ध मिलाकर पकावें। दूध सूखने पर दही मथकर मिला लें और पकावें, इसी तरह काञ्जी मिलाकर भी पाक करें। अन्त में कल्क के सम्यक् पाक हेतु तैल से चार गुना जल देकर पुनः पकाना चाहिए। जब तैल निर्जल हो जाय तो पाकविद् वैद्य तैलपात्र को उतारकर तैल छान लें और काचपात्र में संग्रह करें। इस तैल को ६ से १२ मि.ली. की मात्रा में दूध के साथ पीने से सभी प्रकार के वातरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६ से १२ मि.ली.। **अनुपान**—अम्लगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु-अम्ल। **उपयोग**—पीने से वातरोग नष्ट हो जाते हैं।

८५. वायुच्छायासुरेन्द्रतैल

वाट्यालकं पलशतं तत्समं दशमूलकम्।
जलषोडशिके पक्त्वा पादशेषं समुद्धरेत् ॥२५९॥
एतत्क्वाथे पचेत्तैलं द्वात्रिंशत्पलमेव च।
कल्कार्थं दीयते तत्र मञ्जिष्ठा रक्तचन्दनम् ॥२६०॥
कुष्ठमेला देवदारु शैलजं सैन्धवं वचा।
कक्कोलं पद्मकाष्ठञ्च शृङ्गी तगरपादिका ॥२६१॥
गुडूची मुद्गपर्णी च माषपर्णी शतावरी।
नागजिह्वा श्यामलता शतपुष्पा पुनर्नवा ॥२६२॥
एषां तोलद्वयं भागं दत्त्वा तैलन्तु पाचयेत्।
एतत्तैलवरं नाम्ना वायुच्छायासुरेन्द्रकम् ॥२६३॥
सर्ववातविकारेषु हितं पुंसाञ्च योषिताम्।
क्षीणशुक्रार्त्तवानाञ्च नारीणाञ्च विशेषतः ॥२६४॥
रेतोविकारं हन्त्याशु वायुमाक्षेपसम्भवम्।
मर्मवातं श्रमकृतं गात्रकम्पादिकं तथा ॥२६५॥
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च वातपित्तसमुद्भवम्।
अपस्मारे महोन्मादे हितं लेपे च भक्षणे ॥
श्रीमद्गहननाथेन रचितं विश्वमङ्गलम् ॥२६६॥

क्वाथ—१. बलामूल ५ किलो, २. दशमूल ५ किलो, ३. तिलतैल १.५०० ली. तथा जल १६० लीटर (१६ गुना) लें।

कल्क—१. मंजीठ, २. रक्तचन्दन, ३. कूठ, ४. छोटी इलायची, ५. देवदारु, ६. छरीला, ७. सैन्धवलवण, ८. वच, ९. शीतलचीनी, १०. पद्मकाष्ठ, ११. काकडासिंगी, १२. तगर, १३. गुडूची, १४. मुद्गपर्णी, १५. माषपर्णी, १६. शतावरी, १७. अनन्तमूल, १८. कृष्णसारिवा, १९. सौंफ और २०. पुनर्नवा—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। पुनः मिलित दशमूल और बलामूल का यवकुट कर १६० लीटर जल अर्थात् १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। मूर्च्छित तैलपात्र में क्वाथ मिलाकर मध्यमाग्नि पर पकावें। ततः मंजीठ से पुनर्नवा तक की सभी औषधियों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और तैलपात्र में डालकर अच्छी तरह मिलावें और पाक करें। ४० लीटर क्वाथ पकने पर पाक-परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें। कुछ शीतल होने पर तैल को कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस श्रेष्ठ तैल को 'वायुच्छायासुरेन्द्रतैल' कहते हैं।

यह तैल स्त्री एवं पुरुषों के सभी वातविकारों में, क्षीण शुक्रवाले पुरुष को तथा विशेषकर क्षीण आर्त्तव वाली स्त्री को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लाभ करता है। क्षीण शुक्रविकार को नष्ट करता है, आक्षेप वात-नाशक है; मर्मवात, श्रमवात, शरीरकम्प, हिक्का, श्वास, कास, वात-पित्तज अपस्मार तथा उन्माद में लगाने एवं पीने से हितकर है। विश्व कल्याणार्थ श्रीमान् गहननाथजी ने इसे कहा था।

मात्रा—पानार्थ ६ से १२ मि.ली., मर्दनार्थ १२ मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—लाल। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—सभी वातरोगों, अपस्मार एवं उन्माद में।

८६. बलातैल महत् (चक्रदत्त)

बलामूलकषायस्य दशमूलीकृतस्य च।
यवकोलकुलत्थानां क्वाथस्य पयसस्तथा ॥२६७॥
अष्टावष्टौ शुभा भागास्तैलादेकस्तदेकतः।
पचेदावाप्य मधुरं गणं सैन्धवसंयुतम् ॥२६८॥
तथाऽगुरु सर्जरसं सरलं देवदारु च।
मञ्जिष्ठां चन्दनं कुष्ठमेलां कालानुशारिवाम् ॥२६९॥
मांसीं शैलेयकं पत्रं तगरं शारिवां वचाम्।
शतावरीमश्वगन्धां शतपुष्पां पुनर्नवाम् ॥२७०॥
तत् साधुसिद्धं सौवर्णे राजते मृन्मयेऽपि वा।
प्रक्षिप्य कलसे सम्यक् सुनिगुप्ते निधापयेत् ॥२७१॥
बलातैलमिदं नाम्ना सर्ववातविकारनुत्।
यथाबलं भिषङ् मात्रां सूतिकायै प्रदापयेत् ॥२७२॥
या च गर्भार्थिनी नारी क्षीणशुक्रश्च यः पुमान्।
क्षीणवाते मर्महतेऽभिहते मर्द्दितेऽपि वा ॥२७३॥
भग्ने श्रमाभिपन्ने च सर्वथैवोपयोजयेत्।
सर्वानाक्षेपकादींश्च वातव्याधीन् व्यपोहति ॥२७४॥
हिक्काकासमधीमन्थं गुल्मं श्वासं सुदारुणम्।
षण्मासानुपयुज्यैतदन्त्रवृद्धिमपोहति ॥२७५॥
प्रत्यग्रधातुः पुरुषो भवेच्च स्थिरयौवनः।
एतद्धि राज्ञा कर्त्तव्यं राजमात्राश्च ये नराः॥
सुखिनः सुकुमाराश्च धनिनश्चैव ये नराः ॥२७६॥

क्वाथ—१. बलामूल ४ किलो, २. दशमूल (मिलित) यवकुट ४ किलो, ३. यव (जौ) १३०० ग्राम, ४. बदरी-फलमज्जा १३०० ग्राम, ४. कुलत्थ यवकुट १३०० ग्राम—तीनों मिलाकर ४ किलो लें; ६. तिलतैल १ लीटर तथा ७. गोदुग्ध ८ लीटर लें।

कल्क—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. वृद्धि, ६. ऋद्धि, ७. मेदा, ८. महामेदा, ९. जीवन्ती, १०. मुलेठी, ११. माषपर्णी, १२. मुद्गपर्णी, १३. सैन्धवलवण, १४. अगरु, १५. सर्जरस (राल), १६. सरल काष्ठ, १७. देवदारु, १८. मंजीठ, १९. लालचन्दन, २०. कूठ, २१. छोटी इलायची, २२. कृष्णसारिवा, २३. जटामांसी, २४. छरीला, २५. तेजपात, २६. तगर, २७. श्वेतसारिवा, २८. वच, २९. शतावरी, ३०. अश्वगन्ध, ३१. सौंफ और ३२. पुनर्नवामूल—ये प्रत्येक ३२ द्रव्य ८-८ ग्राम लें (कुल २५६ ग्राम लें)।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः सभी कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और मूर्च्छित तिलतैल में मिला दें। बलामूल को यवकुट करें और आठ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित तिलतैल में मिलावें और पकावें। इसी प्रकार दशमूल यवकुट का भी आठ गुना जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छानकर तैल में पकावें। इसी प्रकार जौ, बदरीफलमज्जा और कुलत्थ को यवकुट कर आठ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर तैल में पकावें। तदनन्तर ८ लीटर दूध देकर पकावें। सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर भी पाक करें। पाकविद् वैद्य स्नेह को जलरहित समझकर चूल्हे से स्नेहपात्र नीचे उतारकर छान लें और ठण्डा होने पर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। आजकल सोना-चाँदी के पात्र सभी के लिए उपलब्ध नहीं हैं। अतः काचपात्र अत्युत्तम है। यह बलातैल सभी प्रकार के वातरोगों का नाश करता है। अतः रोगी के बलाबल का विचार कर प्रसूता स्त्रियों को भी इसका प्रयोग करना चाहिए। जो स्त्री गर्भवती होना चाहती हो, शुक्र क्षीण वाला पुरुष शुक्र वृद्धि चाहता हो तो उसके लिए यह तैल बहुत हितकारक है। क्षीणवात, मर्मस्थान में चोट लगा व्यक्ति, भग्न अस्थि वाले, थके हुए व्यक्ति को मालिश करना बहुत लाभान्वित करता है। यह बलातैल सभी तरह की आक्षेप आदि वातव्याधियों का नाश करता है। हिक्का, कास, अधिमन्थ, गुल्म, भयंकर श्वास का नाश करता है। ६ माह तक इस तैल का निरन्तर अभ्यङ्ग एवं पान करते रहने से अन्त्रवृद्धि रोग नष्ट हो जाता है। इस तैल के प्रयोग से शरीर की धातुएँ नवीन हो जाती हैं और मनुष्य की जवानी फिर स्थायी हो जाती है। इसका प्रयोग राजाओं एवं राजा के समान धनिकों, सुखी और सुकुमार लोगों को करना चाहिए।

मात्रा—पानार्थ १२ से २३ मि.ली., अभ्यंगार्थ १२ मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्धित तैल। **वर्ण**—रक्त। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातविकार, पुत्रप्रद, रसायन कर्म।

८७. अश्वगन्धा तैल (च.द.)

शतं पक्त्वाऽश्वगन्धाया जलद्रोणेंऽशशेषितम्।
विस्राव्य विपचेत्तैलं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥२७७॥
कल्कैर्मृणालशालूकबिसकिञ्जल्कमालती-
पुष्पैर्ह्रीबेरमधुकशारिवापद्मकेशरैः ॥२७८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मेदापुनर्नवाद्राक्षामञ्जिष्ठाबृहतीद्वयैः ।
एलैलवालुत्रिफलामुस्तचन्दनपद्मकैः ॥२७९॥
पक्वं रक्ताश्रयं वातं रक्तपित्तमसृग्दरम् ।
हन्यात्पुष्टिबलं कुर्यात् कृशानां मांसवर्द्धनम् ॥२८०॥
रेतोयोनिविकारघ्नं व्रणदोषापकर्षणम् ।
षण्ढानपि वृषान् कुर्यात् पानाभ्यङ्गानुवासनैः ॥२८१॥

क्वाथ—अश्वगन्ध ५ किलो, तिलतैल ७५० मि.ली. और गोदुग्ध ३ लीटर लें।

कल्क—१. कमलडण्ठल, २. कमल की जड़, ३. कमल-तन्तु, ४. कमलकेशर, ५. चमेलीफूल, ६. सुगन्धबाला, ७. मुलेठी, ८. अनन्तमूल, ९. कमलफूल, १०. नागकेशर, ११. मेदा, १२. पुनर्नवामूल, १३. मुनक्का (द्राक्षा), १४. मंजीठ, १५. बृहती, १६. कण्टकारी, १७. छोटीइलायची, १८. एलबालुक, १९. आमला, २०. बहेड़ा, २१. हरीतकी, २२. नागरमोथा, २३. लालचन्दन और २४. पद्मकाष्ठ—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः अश्वगन्धा को यवकुट कर १२ लीटर जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित तैल में मिलावें। पुनः मृणाल से पद्मकाष्ठ तक के सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें, कूटें और सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को क्वाथ मिश्रित मूर्च्छित तैल में मिलाकर मध्यमाग्नि में पाक करें। क्वाथ सूखने पर उस तैल में ३ लीटर दूध देकर पाक करें। दूध सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पाक करें। जल सूखने पर पाकविद् वैद्य स्नेह के निर्जल होने पर स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारें और कुछ शीतल होने पर वस्त्रपूत करें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। यह 'अश्वगन्धातैल' रक्तस्थित वात, रक्तपित्त, रक्तप्रदर को नष्ट करता है। शरीर को पुष्ट एवं बलवान् करता है, दुर्बल रोगियों में मांसवृद्धि करता है; शुक्रविकार, योनिविकार को नष्ट करता है, व्रणदोष को हटाता है तथा पीने से, अभ्यङ्ग से एवं अनुवासन बस्ति से नपुंसक व्यक्तियों की वृषवत्ता (रतिशक्ति) बढ़ाकर सामान्य मनुष्य जैसा कर देता है।

मात्रा—पानार्थ ६ से १२ मि.ली., अभ्यङ्गार्थ १२ मि.ली.। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्धित दूधपाक जैसी गन्ध युक्त। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—रक्तस्थित वात, रक्तप्रदर, रक्तपित्त, बृंहण, शुक्रल एवं योनिविकार नाशक है।

८८. श्रीगोपालतैल

रसाढकं शतावर्याः कूष्माण्डामलयोस्तथा ।
वाजिगन्धासहचरबलानां च शतं पृथक् ॥२८२॥
परिपच्याम्भसां द्रोणे पादशेषेऽवतारयेत् ।
पञ्चमूलं महद् व्याघ्री मूर्वाकेतकपूतिकाः ॥२८३॥
पारिभद्रश्च सर्वेषां ग्राह्यं दशपलं शुभम् ।
क्वाथयित्वा जलद्रोणे तत्पादमवशेषयेत् ॥२८४॥
आढकं तिलतैलस्य कल्कैरेतैश्च सम्पचेत् ।
अश्वगन्धा चोरपुष्पी पद्मकं कण्टकारिका ॥२८५॥
बलाऽगुरु घनं पूतिसिह्लकागुरु चन्दनम् ।
चन्दनं त्रिफला मूर्वाजीवनीयकटुत्रयम् ॥२८६॥
पूतिकुङ्कुमकस्तूर्यश्चातुर्जातं च शैलजम् ।
नखमुस्तमृणालानि नीलोत्पलमुशीरकम् ॥२८७॥
मांसी मुरा सुरतरुर्वचादाडिमतुम्बुरु ।
ऋद्धिर्वृद्धिर्दमनकं क्षुद्रैलाऽर्द्धपलं पृथक् ॥२८८॥
एतत्तैलवरं हन्ति वातपित्तकफोद्भवान् ।
व्याधीनशेषाञ्जनयेत् स्मृतिं मेधां धृतिं धियम् ॥२८९॥
वातरोगान् विशेषेण प्रमेहान् हन्ति विंशतिम् ।
गर्भं संस्थापयेत् स्त्रीणां सर्वशूलं व्यपोहति ॥२९०॥
मूत्रकृच्छ्रमपस्मारमुन्मादान् निखिलानपि ।
स्थविरोऽपि जराजीर्णस्तैलस्यास्य निषेवणात् ॥२९१॥
लीलया प्रमदानां च उन्मदानां शतं जयेत् ।
तिष्ठेद् यस्य गृहे तैलं श्रीगोपालाभिधं शुभम् ॥२९२॥
न तत्र भूताः सर्पन्ति न पिशाचा न राक्षसाः ।
न दारिद्र्यं भवेत्तस्य विघ्नः कश्चिन्न जायते ।
अश्विभ्यां निर्मितं ह्येतद् विश्वकल्याणहेतवे ॥२९३॥

क्वाथ—१. शतावरीक्वाथ ३ ली., २. कूष्माण्डस्वरस ३ ली., ३. आमलास्वरस ३ ली., ४. अश्वगन्ध ४.६०० कि.ग्रा., ५. सहचर ४.६०० कि.ग्रा., ६. बलामूल ४.६०० कि.ग्रा., ७. बृहत्पञ्चमूल ५०० ग्राम, ८. कण्टकारी ५०० ग्राम, ९. मूर्वा ५०० ग्राम, १०. केवडापुष्प ५०० ग्राम, ११. पूतिकरञ्ज ५०० ग्राम, १२. पारिभद्र (फरहद) ५०० ग्राम और १३. तिलतैल ३ लीटर लें।

कल्क—१. अश्वगन्धा, २. चोरपुष्पी, ३. पद्मकाठ, ४.कण्टकारी, ५. बलामूल, ६. अगरु, ७. नागरमोथा, ८. गन्धमार्जाराण्ड, ९. शिलारस, १०. अगरु, ११. रक्तचन्दन, १२. श्वेतचन्दन, १३. आमला, १४. हरीतकी, १५. बहेड़ा, १६. मूर्वामूल, १७. जीवक, १८. ऋषभक, १९. काकोली, २०. क्षीरकाकोली, २१. ऋद्धि, २२. वृद्धि, २३. मेदा, २४. महामेदा, २५. जीवन्ती, २६. मुलेठी, २७. माषपर्णी, २८. मुद्गपर्णी, २९. सोंठ, ३०. पीपर, ३१. मरिच, ३२. गन्धमार्जाराण्ड, ३३. केशर, ३४. कस्तूरी, ३५. छोटी इलायची, ३६. तेजपात, ३७. दालचीनी, ३८. नागकेशर, ३९. छरीला, ४०. नखी, ४१. नागरमोथा, ४२. कमल-

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पुष्पदण्ड, ४३. नीलकमल, ४४. खस, ४५. जटामांसी, ४६. देवदारु, ४७. वचा, ४८. अनारदाना, ४९. धनियाँ, ५०. ऋद्धि, ५१. वृद्धि, ५२. छोटी इलायची और ५३. दमनक (सुगन्धित पुष्प वाला क्षुप)—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें।

नोट—इन ५३ कल्क द्रव्यों में से गन्धमार्जार, केशर एवं कस्तूरी तीन द्रव्य पृथक् कर लें। इन्हें तैलपाक के बाद जब तैल वस्त्रपूत कर लें तब इनको खरल में पीसकर मिलाना चाहिए।

सर्वप्रथम तिल-तैल का मूर्च्छन करें। ततः अश्वगन्ध से छोटी इलायची तक के सभी ५१ द्रव्यों को चूर्ण करें। फिर सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित तैल में मिला लें। अब शतावरीस्वरस या क्वाथ ३ ली. मिलाकर उक्त तैल को मन्दाग्नि से पाक करें। इस प्रकार एक स्वरस सूखने के बाद क्रमशः कूष्माण्डस्वरस, आमलकीस्वरस मिलाकर पृथक्-पृथक् पाक करें। ततः अश्वगन्ध से फरहद छाल तक के छः द्रव्यों को यवकुट कर २५ लीटर (२ द्रोण) जल में पाक करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और इस क्वाथ को भी उसी तैल में मिलाकर पकावें। स्नेहपाक-निष्णात वैद्य क्वाथ सूख जाने पर तैल के चौगुना जल सम्यक् पाकार्थ देकर पुनः पकावें। जलीयांश सूखने पर परीक्षा कर चूल्हे से तैलपात्र उतारकर कुछ शीतल होने पर वस्त्र से छान लें और गन्धमार्जार, केशर-कस्तूरी मिलाकर काचपात्र में तैल को संग्रहीत करें। यह श्रेष्ठ श्रीगोपाल- तैल वात-पित्त और कफ से उत्पन्न होने वाली सम्पूर्ण व्याधियों का नाश करता है। स्मरणशक्ति, बुद्धि और धारणाशक्ति को बढ़ाता है। सम्पूर्ण वात विकारों को, बीस प्रकार के प्रमेहों को, स्त्रियों के लिए गर्भस्थापक, मूत्रकृच्छ्र, अपस्मार, उन्माद तथा सभी प्रकार के शूलरोगों को नष्ट करने वाला है। इस तैल का निरन्तर अभ्यङ्गादि रूप में सेवन करने से वृद्धतम एवं जराजीर्ण व्यक्ति भी मदोन्मत्त सैकड़ों प्रमदाओं को अपनी मैथुन शक्ति के द्वारा जीत लेता है। श्रीगोपाल तैल जिस घर में मौजूद है उस घर में भूत, पिशाच, राक्षस आदि नहीं जाते हैं तथा उस घर में दरिद्रता आदि कोई अन्य विघ्न नहीं होता है। इस 'श्रीगोपाल तैल' को विश्वकल्याणार्थ आचार्य अश्विनीकुमारों ने निर्माण किया है।

मात्रा—अभ्यंगार्थ १० ग्राम। **गन्ध**—सुगन्ध-केशर-कस्तूरी जैसी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—सभी वात-विकारनाशक, वाजीकरण एवं मांगल्यप्रद है।

वातहर तैलों में प्रयोज्य पञ्चपल्लव

आम्रजम्बूकपित्थानां बीजपूरकबिल्वयोः।
गन्धकर्मणि सर्वत्र पत्राणि पञ्चपल्लवम्॥
पञ्चपल्लवतोयेन गन्धानां क्षालनं मतम्॥२९४॥

१. आम्रपत्र, २. जामुनपत्र, ३. कपित्थपत्र, ४. बिल्वपत्र, ५. बिजौरानीबूपत्र—इन पाँच वृक्षों के पत्रों को पञ्चपल्लव के नाम से जाना जाता है। सुगन्ध कर्म के लिए सर्वत्र पञ्चपल्लव का उपयोग करना चाहिए। पञ्चपल्लवक्वाथ से सुगन्ध द्रव्यों का प्रक्षालन करना चाहिए।

गन्धद्रव्याणि

एलाकुङ्कुमचन्दनागुरुमुराकक्कोलमांसीशटी-
श्रीवासच्छदग्रन्थिपर्णशशभृत्[1]क्षोणीघ्न[2]जोशीरकम्।
कस्तूरीनखपूति[3]शैलजलभुङ्[4]मेथीलवङ्गादिकं
गन्धद्रव्यमिदं प्रदेयमखिलं श्रीविष्णुतैलादिषु॥२९५॥

१. छोटी इलायची, २. केशर, ३. श्वेतचन्दन, ४. अगर, ५. मुरामांसी, ६. शीतलचीनी, ७. जटामांसी, ८. गन्धशटी, ९. सरलनिर्यास, १०. तेजपात, ११. गठिवन, १२. कर्पूर, १३. छरीला, १४. खस, १५. कस्तूरी, १६. नखी, १७. गन्धमार्जाराण्ड, १८. शिलारस, १९. नागरमोथा, २०. मेथी और २१. लौंग— ये गन्ध द्रव्य हैं। इन सभी २१ द्रव्यों का विष्णु आदि तैल में उपयोग करना चाहिए।

मतान्तर में गन्धद्रव्य

कुष्ठञ्च नलिका पूतिरुशीरं श्वेतचन्दनम्।
जटामांसी तेजपत्रं नखी मृगमदः फलम्॥२९६॥
कक्कोलं कुङ्कुमं चोचं लताकस्तूरिका वचा।
सिह्लको मिषिका[5] मेथी भद्रमुस्तं तथा शटी॥२९७॥
सूक्ष्मैलाऽगुरुमुस्तञ्च कर्पूरं ग्रन्थिपर्णकम्।
श्रीवासः कुन्दुरुर्देवकुसुमं गन्धमातृका॥२९८॥
जातीकोषं शैलजञ्च देवदारु सजीरकम्।
एतानि गन्धद्रव्याणि तैलपाकेषु योजयेत्॥२९९॥

१. कूठ, २. नालुका, ३. गन्धमार्जाराण्ड, ४. खस, ५. श्वेतचन्दन, ६. जटामांसी, ७. तेजपात, ८. नखी, ९. कस्तूरी, १०. जायफल, ११. शीतलचीनी, १२. केशर, १३. दालचीनी, १४. लताकस्तूरी, १५. वच, १६. शिलारस, १७. सौंफ, १८. मेथी, १९. नागरमोथा, २०. कचूर, २१. छोटी इलायची, २२. अगरु, २३. मोथा, २४. कर्पूर, २५. गठिवन (ग्रन्थिपर्णी), २६. सरलनिर्यास, २७. कुन्दुरु, २८. लौंग, २९. गन्धमातृका, ३०. जावित्री, ३१. छरीला, ३२. देवदारु और ३३. जीरा—ये सभी गन्धद्रव्य हैं। इन्हें तैलपाक कर्म में प्रयोग करना चाहिए।

---

१. शशभृत्=कर्पूर, २. क्षौणीघ्न=छरीला, ३. पूति=गन्धमार्जाराण्डः खट्टाशीति। ४. जलभुक्=मेघ, नागरमोथा, ५. मिषिका=सौंफ।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

८९. विष्णुतैल (स्वल्प) (च.द.)

शालपर्णी पृश्निपर्णी बला च बहुपुत्रिका।
एरण्डस्य च मूलानि बृहत्योः पूतिकस्य च ॥३००॥
गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च।
एतेषां पलिकैर्भागैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥३०१॥
आजं वा यदि वा गव्यं क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम्।
अस्य तैलस्य पक्वस्य शृणु वीर्यमतः परम् ॥३०२॥
अश्वानां वातभग्नानां कुञ्जराणां तथैव च।
अपुमांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन पुमान् भवेत् ॥३०३॥
हृच्छूले पार्श्वशूले च तथैवार्द्धावभेदके।
कामलापाण्डुरोगेषु शर्करास्वश्मरीषु च ॥३०४॥
क्षीणेन्द्रिया नरा ये च जरया जर्जरीकृताः।
येषाञ्चैव क्षयो व्याधिरन्त्रवृद्धिश्च दारुणा ॥३०५॥
अर्दितं गलगण्डश्च वातशोणितमेव च।
स्त्रियो या न प्रसूयन्ते तासाञ्चैव प्रदापयेत् ॥३०६॥
गर्भमश्वतरी विन्द्यान्न च मृत्युवशं व्रजेत्।
एतत्तैलवरं चैव विष्णुना परिकीर्त्तितम् ॥३०७॥

तिलतैल ७५० मि.ली. (१प्रस्थ) तथा गोदुग्ध या बकरी दूध ३ लीटर लें।

क्वाथ—१. शालपर्णी, २. पृश्निपर्णी, ३. बलामूल, ४. शतावरी, ५. एरण्डमूल, ६. बृहती, ७. कण्टकारी, ८. करञ्जमूलत्वक्, ९. नागबलामूल और १०. सहचरमूल—ये १० द्रव्य ४६-४६ ग्राम लें।

कल्क—गन्ध द्रव्यों का कल्क—१. छोटी इलाइची, २. केशर, ३. श्वेतचन्दन, ४. अगुरु, ५. मुरामांसी, ६. शीतल चीनी, ७. जटामांसी, ८. गन्धकचूर, ९. सरल निर्यास, १०. तेजपात, ११. गठिवन, १२. कर्पूर, १३. छरीला, १४. खस, १५. कस्तूरी, १६. नखी, १७. गन्धमार्जाराण्ड, १८. शिलारस, १९. नागरमोथा, २०. मेथी और २१. लौंग—सभी द्रव्य ८-८ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः शालपर्णी से सहचर-मूल तक के सभी क्वाथ द्रव्यों को यवकुट कर १ द्रोण (१२ लीटर) जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित तैल में मिला दें और छोटी इलायची से लौंग तक सभी द्रव्यों में से गन्धमार्जार-केशर-कस्तूरी-कर्पूर ये ४ द्रव्य पृथक् कर शेष १७ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और मूर्च्छित तैल में मिला-कर मध्यमाग्नि पर पाक करें। क्वाथ सूखने पर उसमें बकरी या गाय का दूध ३ लीटर मिलाकर पकावें। दूध सूख जाने पर सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल मिलाकर पुनः पाक करें। जल सूखने पर पाक विशेषज्ञ वैद्य परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर गरम-गरम ही वस्त्रपूत कर तैल को छान लें। जब तैल शीतल हो जाय तो एक खरल में केशर पीसकर थोड़ा तैल मे मर्दन कर सुपक्व तैल में मिला दें। इसी प्रकार गन्धमार्जार, कस्तूरी और कर्पूर को पृथक्-पृथक् मर्दन कर तैल मे अच्छी तरह से मिलाकर बोतलों में तैल को भर लें और संग्रह करें। इस तैल का पान एवं अभ्यङ्ग करने से नपुंसक व्यक्ति भी पुरुषत्व अर्थात् वृषत्व को प्राप्त कर लेता है। यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, अर्धावभेदक, कामला, पाण्डु, मूत्रशर्करा तथा अश्मरी में भी लाभदायक है। जिसकी इन्द्रियाँ क्षीण हो गई हों और वृद्धावस्थाजन्य शरीर जीर्ण-शीर्ण हो गया हो; साथ ही क्षय, भयानक अन्त्रवृद्धि, अर्दित, गलगण्ड, वातरक्त एवं बन्ध्या स्त्रियों में इस तैल के प्रयोग से अत्यधिक लाभ होता है। इस तैल प्रयोग से खच्चरी (अश्वतरी) भी गर्भवती हो जाती है। घोड़े एवं हाथियों के वातरोगों में भी इसका प्रयोग करना चाहिए। इस श्रेष्ठ तैल को श्रीविष्णु भगवान् ने बनाया है।

विमर्श—इस तैल में कल्क एवं क्वाथ का पृथक्-पृथक् विधान नहीं है। मैंने जिसे क्वाथ किया है तथा पृथक् से एक गन्धद्रव्य वर्ग की गणना की है, उसे मैंने कल्क के रूप में प्रयोग किया है। यह महंगा है तथा तैल बहुत उपयोगी हो जाता है। बुद्धिमान् वैद्य यदि न चाहे तो गन्धद्रव्य न देकर केवल शालपर्णी आदि दश द्रव्यों को कल्क रूप में प्रयोग कर तैल सुपक्व कर सकते हैं। इसके पीछे पृष्ठ पर आचार्यश्री ने गन्धवर्ग की कल्पना की है, जिसमें २१ द्रव्य हैं। आचार्यश्री ने कहा है कि इस गन्ध द्रव्य से विष्णुतैल साधित करें।

मात्रा—पानार्थ १२ से १२ मि.ली. तक। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्धित केशर-कस्तूरी जैसी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त, **उपयोग**—वातरोगविनाशक, पुत्रप्रद एवं बृंहण है।

९०. विष्णुतैल (मध्यम)

शतावरी चांशुमती पृश्निपर्णी शटी बला।
एरण्डस्य च मूलानि बृहत्योः पूतिकस्य च ॥३०८॥
गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च।
एषां द्विपलिकान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ॥३०९॥
पादशेषे च पूते च गर्भ्भञ्चैनं समावपेत्।
पुनर्नवा वचा दारु शताह्वाऽगुरु चन्दनम् ॥३१०॥
शैलेयं तगरं कुष्ठमेला मांसी स्थिरा बला।
अश्वाह्वा सैन्धवं रास्ना पलार्द्धानि च पेषयेत् ॥३११॥
गव्याजपयसोः प्रस्थौ द्वौ द्वावत्र प्रदापयेत्।
शतावरीरसप्रस्थं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥३१२॥
अस्य तैलस्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम्।
अश्वानां वातभग्नानां कुञ्जराणां यथा नृणाम् ॥३१३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत्।
अपुमांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन पुमान् भवेत् ॥३१४॥
गर्भमश्वतरी विन्द्यात्किं पुनर्मानुषी तथा।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च तथैवार्द्धावभेदकम् ॥३१५॥
अपचीं गण्डमालाञ्च वातरक्तं गलग्रहम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च अश्मरीञ्चैव नाशयेत् ॥३१६॥
तैलमेतद्भगवता विष्णुना परिकीर्त्तितम्।
विष्णुतैलमिदं ख्यातं वातान्तकरणं परम् ॥३१७॥

१. तिलतैल ७५० मि.ली., २. गोदुग्ध ७५० मि.ली., ३. बकरी का दूध ७५० मि.ली. तथा ४. शतावरीक्वाथ ७५० मि.ली. लें।

क्वाथ द्रव्य—१. शतावरी, २. शालपर्णी, ३. पृश्निपर्णी, ४. कचूर, ५. बलामूल, ६. एरण्डमूल, ७. बृहती, ८. कण्टकारी, ९. करञ्जत्वक्, १०. नागबला और ११. कटसरैया—ये प्रत्येक द्रव्य ९३-९३ ग्राम लें।

कल्क द्रव्य—१. पुनर्नवामूल, २. वच, ३. देवदारु, ४. सोयाबीज, ५. अगुरु, ६. रक्तचन्दन, ७. छरीला, ८. तगर, ९. कूठ, १०. छोटी इलायची, ११. जटामांसी, १२. शालपर्णी, १३. बलामूल, १४. अश्वगन्ध, १५. सैन्धव और १६. रास्ना—ये प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्यों को कूटकर सिल पर पीसें और कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित तैल में मिला दें तथा गोदुग्ध मिलाकर मन्दाग्नि से पकावें। गोदुग्ध सूखने पर बकरी का दूध देकर पाक करें तत्पश्चात् शतावरीक्वाथ देकर पाक करें। ततः सभी ११ द्रव्यों का यवकुट कर १ द्रोण (१२ लीटर) जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें और तैल में मिलाकर पाक करें। सम्यक् पाक के लिए ३ लीटर जल देकर अन्त में पाक करें। जलीयांश सूखने पर सुपक्व तैल-परीक्षा कर चूल्हे से तैलपात्र को उतारकर छान लें और ठण्डा होने पर काचपात्र में संग्रह करें। यह तैल घोड़े और हाथियों के वातरोग एवं अस्थिभग्न में भी बहुत उपयोगी है। इसी प्रकार मनुष्यों के वातरोग एवं अस्थिभग्न में यह तैल अत्युपयोगी है। इस तैल को सभी वातरोगों में प्रयोग करना चाहिए। इस तैल का नियमित पान करने से नपुंसक व्यक्ति भी पुरुष तथा पूर्ण वृषत्व प्राप्त कर लेता है। जब इसे पिलाने से अश्वतरी (खच्चरी) भी गर्भवती हो जाती है तो स्त्रियों की तो बात ही क्या। बन्ध्या स्त्रियाँ भी गर्भवती होकर पुत्रवती हो जाती है। हृदयशूल, पार्श्वशूल, अर्धावभेदक, अपची, गण्डमाला, वातरक्त, गलग्रह, कामला, पाण्डु एवं अश्मरी रोगों को यह तैल नाश करता है। इस तैल को भगवान् विष्णु ने समस्त वातविकारों को नष्ट करने के लिए कहा था। यह तैल पान एवं मर्दन दोनों रूपों में उपयोगी है।

मात्रा—पानार्थ १२ से २३ मि.ली.। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकारनाशक एवं गर्भस्थापक है।

९१. विष्णुतैल (बृहत्)

अश्वगन्धाजलधरौ जीवकर्षभकौ शटी।
काकोली क्षीरकाकोली जीवन्ती मधुयष्टिका ॥३१८॥
मधुरिका देवदारु पद्मकाष्ठञ्च शैलजम्।
मांसी चैला त्वचं कुष्ठं वचाचन्दनकुङ्कुमम् ॥३१९॥
मञ्जिष्ठा मृगनाभिश्च श्वेतचन्दनरेणुकम्।
पर्णिन्यौ कुन्दखोटिश्च ग्रन्थिकञ्च नखी तथा ॥३२०
एतेषां पलिकैर्भागैस्तैलस्यापि तथाऽऽढकम्।
शतावरीरससमं दुग्धञ्चापि समं पचेत् ॥३२१॥
विष्णुतैलमिदं श्रेष्ठं सर्ववातविकारनुत्।
ऊर्ध्ववातं तथा वातमङ्गुलिग्रहमेव च ॥३२२॥
शिरोमध्यगतं वातं मन्यास्तम्भगलग्रहम्।
हन्ति नानाविधं वातं सन्धिमज्जगतं तथा ॥३२३॥
यस्य शुष्यति चैकाङ्गं गतिर्यस्य च विह्वला।
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः ॥
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः ॥३२४॥

तिलतैल ३ लीटर, शतावरीक्वाथ ३ लीटर तथा गोदुग्ध ३ लीटर लें।

कल्क द्रव्य—१. अश्वगन्ध, २. नागरमोथा, ३. जीवक, ४. ऋषभक, ५. कचूर, ६. काकोली, ७. क्षीरकाकोली, ८. जीवन्ती, ९. मुलेठी, १०. सौंफ, ११. देवदारु, १२. पद्मकाष्ठ, १३. छरीला, १४. जटामांसी, १५. छोटी इलायची, १६. दालचीनी, १७. कूठ, १८. वच, १९. रक्तचन्दन, २०. केशर, २१. मंजीठ, २२. कस्तूरी, २३. श्वेतचन्दन, २४. रेणुकाबीज, २५. मुद्गपर्णी, २६. माषपर्णी, २७. कुन्दुरु (गन्ध द्रव्य), २८. गठिवन और २९. नखी— प्रत्येक द्रव्य ४६-४६ ग्राम लें।

नोट—इसमें से केशर-कस्तूरी को पहले निकाल लें और तैल सुपक्व होने पर अन्तिम समय में खरल में पीसकर मिलाना चाहिए।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः शतावरी को यवकुट कर ४ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित तैल में मिलावें। ततः असगन्ध से नखी पर्यन्त द्रव्यों में केशर-कस्तूरी हटाकर सभी द्रव्यों को सिलपर पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित तैल एवं शतावरीक्वाथ के मिश्रण में मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जलीयांश सूखने पर इसमें गाय का दूध मिलाकर पुनः पाक करें। जब दूध सूख जाय तो सम्यक् पाक हेतु ३ लीटर जल देकर पाक करें। जलीयांश

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सूखने पर पाक की परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और छान लें। इसके बाद शीतल होने पर खरल में केशर पीसकर तैल में मिला दें। इसी तरह कस्तूरी भी तैल से मर्दन कर तैल में अच्छी तरह से मिला लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। यह बृहद् विष्णुतैल पान-अभ्यङ्ग करने से सभी प्रकार के वातरोगों को नष्ट करता है। यह ऊर्ध्ववात, वात, अंगुलीग्रह, शिरोमध्यगत वात, मन्यास्तम्भ, गलग्रह, सन्धिगत वात और मज्जागत वात नाशक है। यह तैल अनेक प्रकार के वातरोगों का नाश करता है। जिसका एक अङ्ग सूख रहा हो तथा चलने में पादकम्पन होता हो, उसके लिए यह तैल अत्युपयोगी है। यह तैल समस्त वातसम्भव रोगों तथा पित्तोद्भव रोगों का उसी प्रकार नाश करता है, जैसे सूर्य से अन्धकार नष्ट होता है।

मात्रा—पानार्थ मात्रा १२ से २५ मि.ली., अभ्यङ्गार्थ। **अनुपान**—गरम दूध से । **गन्ध**—केशर-कस्तूरी जैसी सुगन्ध। **वर्ण**—रक्त-पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वात एवं पित्तनाशक है।

९२. नारायणतैल (महत्)

बिल्वाश्वगन्धाबृहतीश्वदंष्ट्रा-
श्योनाकवाट्यालकपारिभद्रम् ।
क्षुद्राकठिल्लातिबलाऽग्निमन्थं
मूलानि चैषां सरणीयुतानाम् ॥३२५॥
मूलं विदध्यादथ पाटलानां
प्रस्थं स पादं विधिनोद्धृतानाम् ।
द्रोणैरपामष्टभिरेव पक्त्वा
पादावशेषेण रसेन तेन ॥३२६॥
तैलाढकाभ्यां सममेव दुग्ध-
माजं निदध्यादथवाऽपि गव्यम् ।
एकत्र सम्यग्विपचेत्सुबुद्धि-
र्दद्याद्रसञ्चैव शतावरीणाम् ॥३२७॥
तैलेन तुल्यं पुनरेव तत्र
रास्नाऽश्वगन्धामिषिदारुकुष्ठम् ।
पर्णीचतुष्कागुरुकेशराणि
सिन्धूत्थमांसीरजनीद्वयञ्च ॥३२८॥
शैलेयकं चन्दनपुष्कराणि
एलाऽस्त्रयष्टीतगराब्दपत्रम् ।
भृङ्गाष्टवर्गाम्बुवचा पलाशं
स्थौणेयवृश्चीरकचोरकाख्यम् ॥३२९॥
एतैः समस्तैर्द्विपलप्रमाणै-
रालोड्य सर्वं विधिना विपक्वम् ।
कर्पूरकाश्मीरमृगाण्डजानां
चूर्णीकृतानां त्रिपलप्रमाणम् ॥३३०॥
प्रस्वेददौर्गन्ध्यनिवारणाय
दद्यात् सुगन्धाय वदन्ति केचित् ।
नारायणं नाम महच्च तैलं
सर्वप्रकारैर्विधिवत्प्रयोज्यम् ॥३३१॥
आश्वेव पुंसां पवनार्दिताना-
मेकाङ्गहीनार्दितवेपनानाम् ।
ये पङ्गवः पीठविसर्पिणश्च
बाधिर्यशुक्रक्षयपीडिताश्च ॥३३२॥
मन्याहनुस्तम्भशिरोरुजार्ता
मुक्तामयास्ते बलवर्णयुक्ताः ।
संसेव्य तैलं सहसा भवन्ति
वन्ध्या च नारी लभते च पुत्रम् ॥३३३॥
वीरोपमं सर्वगुणोपपन्नं
सुमेधसं श्रीविनयान्वितञ्च ।
शाखाश्रिते कोष्ठगते च वाते
वृद्धौ विधेयं पवनार्दितानाम् ॥३३४॥
जिह्वानिले दन्तगते च शूले
उन्माद कौब्ज्यज्वरकर्षितानाम् ।
प्राप्नोति लक्ष्मीं प्रमदाप्रियत्वं
वपुःप्रकर्षं विजयञ्च नित्यम् ॥३३५॥
तैलोपसेवी जरयाऽभिमुक्तो
जीवेच्चिरं चापि भवेद् युवैव ।
देवासुरे युद्धपरे समीक्ष्य
स्नाय्वस्थिभग्नानसुरैः सुरांश्च ।
नारायणेनापि सुबृंहणार्थं
स्वनामतैलं विहितं च तेषाम् ॥३३६॥

१. बिल्वमूलत्वक्, २. अश्वगन्ध, ३. बृहतीमूल, ४. गोखरु, ५. सोनापाठा, ६. बलामूल, ७. पारिभद्र, ८. कण्टकारी, ९. पुनर्नवामूल, १०. अतिबला, ११. अरणीत्वक्, १२. गन्धप्रसारणी और १३. पाटलामूलत्वक्—प्रत्येक १३ द्रव्य सवा प्रस्थ अर्थात् ९४० ग्राम लें। जल ८ द्रोण (९६ लीटर), तिलतैल ६ लीटर, शतावरीक्वाथ ६ लीटर तथा बकरीदूध या गोदुग्ध—प्रत्येक ६ लीटर लें।

कल्क—१. रास्ना, २. अश्वगन्ध, ३. सौंफ, ४. देवदारु, ५. कूठ, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. माषपर्णी, ९. मुद्गपर्णी, १०. अगुरु, ११. नागकेशर, १२. सैन्धवलवण, १३. जटामांसी, १४. हल्दी, १५. दारुहल्दी, १६. छरीला, १७. रक्तचन्दन, १८. पुष्करमूल, १९. छोटी इलायची, २०. मंजीठ, २१. तगर, २२. नागरमोथा, २३. तेजपात, २४. भृङ्गराज, २५. जीवक, २६. ऋषभक, २७. काकोली, २८. क्षीरकाकोली, २९. ऋद्धि, ३०. वृद्धि, ३१. मेदा, ३२.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

महाभेदा, ३३. सुगन्धबाला, ३४. वच, ३५. पलाश, ३६. गठिवन, ३७. पुनर्नवामूल तथा ३८. चोरक—ये ३८ द्रव्य हैं। इसे प्रत्येक को ९३-९३ ग्राम लेना चाहिए। ३९. कर्पूर ४६ ग्राम, ४०. केशर ४६ ग्राम तथा ४१. कस्तूरी ४६-४६ ग्राम लें।

सर्वप्रथम बड़ी कड़ाही में तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः रास्ना से चोरक तक के सभी ३८ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद बिल्वमूल से पाटलात्वक् तक के सभी १३ द्रव्यों को यवकुट कर ९६ लीटर जल के साथ बड़ी कड़ाही में क्वाथ करें। जब चौथाई क्वाथ शेष रहे (२४ ली. बचे) तो छान ले। अब यह क्वाथ और कल्क दोनों को बड़ी कड़ाही में मूर्च्छन तैल के साथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब यह क्वाथ सूख जाय तो बकरी या गाय का दूध ६ लीटर मिलाकर पुनः तैल को पकावें। जब दूध सूख जाय तो पूर्व विधि से साधित शतावरीक्वाथ ६ लीटर इस तैल में डालकर मन्दाग्नि से पकावें। क्वाथ सूखने पर परीक्षोपरान्त चूल्हे से तैलपात्र को उतारकर कपड़े से तैल छान लें। तैल शीतल होने पर सुगन्धि द्रव्य कर्पूर-केशर-कस्तूरी को पृथक्-पृथक् खरल में मर्दन कर तैल में अच्छी तरह से मिलाकर काचपात्र में संग्रह करें।

यह 'महानारायणतैल' सभी प्रकार से—पान, अभ्यङ्ग और बस्ति द्वारा वातव्याधि पीड़ित मनुष्यों के लिए प्रयोज्य है। यह समस्त वातव्याधि यथा—सर्वाङ्गवात, एकाङ्गवात, कम्पवात; पङ्गु, पीठ के बल से चलने वाला व्यक्ति, बाधिर्य, शुक्रक्षय से पीड़ित व्यक्ति, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, शिरोरोगी इस तैल के सेवन से शीघ्र ही रोगमुक्त होकर बल-वर्ण से युक्त हो जाते हैं। इस तैल के सेवन से बन्ध्या स्त्री सभी प्रकार के योनिरोगों से मुक्त होकर शीघ्र ही वीर, सर्वगुणसम्पन्न, मेधाशक्ति युक्त, विनयी पुत्रों को जन्म देती है। कोष्ठाश्रित (हृदय, फुफ्फुस, यकृत्, बस्ति), शाखाश्रित (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, त्वचाएँ) वात की वृद्धि में, वायुरोग पीड़ित मनुष्यों में, जिह्वास्तम्भ, दन्तशूल, उन्माद, कुब्जता, ज्वरकृश व्यक्तियों में प्रयोग करना चाहिए। इसके प्रयोग से मनुष्य का शारीरिक सौष्ठव, स्त्रीप्रियता, सुन्दर शरीर और नित्य विजयी होता है। इस तैल के नित्य मर्दन एवं पान-बस्ति द्वारा सेवन करने से मनुष्य को वार्धक्य नहीं आता है तथा युवावस्था जैसी शक्ति से सम्पन्न होकर बहुत दिनों तक जीवित रहता है। देवासुर संग्राम में असुरों द्वारा देवताओं की शारीरिक क्षति एवं कुरूपता (अंग-भङ्ग) को देखकर भगवान् विष्णु ने उनकी शारीरिक पुष्ट्यर्थ अपने नाम से इस तैल का निर्माण किया था। इसका प्रयोग पान, नस्य, बस्ति, अभ्यङ्ग द्वारा करें।

मात्रा—पानार्थ १२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्धित कस्तूरी जैसी। **वर्ण**—रक्ताभ-पीत। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकारनाशक, गर्भ-स्थापक, वाजीकर एवं रसायन कर्मोपयोगी है।

९३. नारायणतैल (च.द.)

बिल्वाग्निमन्थश्योणाकपाटलापारिभद्रकम् ।
प्रसारण्यश्वगन्धा च बृहती कण्टकारिका ॥३३७॥
बला चातिबला चैव श्वदंष्ट्रा सपुनर्नवा ।
एषां दशपलान् भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥३३८॥
पादशेषं परिस्राव्य तैलपात्रं प्रदापयेत् ।
शतपुष्पा देवदारु मांसी शैलेयकं वचा ॥३३९॥
चन्दनं तगरं कुष्ठमेला पर्णीचतुष्टयम् ।
रास्ना तुरगगन्धा च सैन्धवं सपुनर्नवम् ॥३४०॥
एषां द्विपलिकान् भागान् पेषयित्वा विनिःक्षिपेत् ।
शतावरीरसञ्चैव तैलतुल्यं प्रदापयेत् ॥३४१॥
आजं वा यदि वा गव्यं क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ।
पाने बस्तौ तथाऽभ्यङ्गे भोज्ये चैव प्रशस्यते ॥३४२॥
अश्वो वा वातभग्नो वा गजो वा यदि वा नरः ।
पङ्गुलः पीठसर्पी च तैलेनानेन सिद्ध्यति ॥३४३॥
अधोभागे ये च वाताः शिरोमध्यगताश्च ये ।
मन्यास्तम्भे हनुस्तम्भे दन्तरोगे गलग्रहे ॥३४४॥
यस्य शुष्यति चैकाङ्गं गतिर्यस्य च विह्वला ।
क्षीणेन्द्रियाः नष्टशुक्रा ज्वरक्षीणाश्च ये नराः ॥३४५॥
बधिरा लल्लजिह्वाश्च मन्दमेधस एव च ।
अल्पप्रजा च या नारी या च गर्भं न विन्दति ॥३४६॥
वातार्त्तौ वृषणौ येषामन्त्रवृद्धिश्च दारुणा ।
एतत्तैलवरं तेषां शस्तं नारायणाभिधम् ॥३४७॥

क्वाथ-द्रव्य—१. बिल्वमूलत्वक्, २. अरणीमूलत्वक्, ३. सोनापाठा, ४. पाटलत्वक्, ५. फरहदमूलत्वक्, ६. प्रसारणीलता, ७. अश्वगन्धा, ८. बृहती, ९. कण्टकारी, १०. बलामूल, ११. अतिबला, १२. गोखरु तथा १३. पुनर्नवा-मूल—प्रत्येक द्रव्य ५००-५०० ग्राम लें। क्वाथार्थ जल ४८ लीटर (४ द्रोण), तिलतैल ३ लीटर, शतावरीक्वाथ ३ लीटर तथा बकरी या गाय का दूध १२ लीटर लें।

कल्क-द्रव्य—१. सौंफ, २. देवदारु, ३. जटामांसी, ४. छरीला, ५. वच, ६. रक्तचन्दन, ७. तगर, ८. कूठ, ९. छोटी इलायची, १०. शालपर्णी, ११. पृश्निपर्णी, १२. माषपर्णी, १३. मुद्गपर्णी, १४. रास्ना, १५. अश्वगन्धा, १६. सैन्धवलवण और १७. पुनर्नवामूल—ये प्रत्येक द्रव्य ९३-९३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बनावें। मूर्च्छित तैल में कल्क को मिला लें

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

और गोदुग्ध देकर पाक करें। बेलछाल से पुनर्नवा तक के सभी द्रव्यों को यवकुट कर ४८ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर उक्त तैल में मिलाकर पकावें। क्वाथ सूखने पर उक्त तैल में शतावरीक्वाथ डालकर पकावें। कल्क के सम्यक् पाकार्थ तैल के बराबर जल देकर पुनः पकावें। स्नेहपाक- विद् वैद्य तैल को जल रहित समझकर स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़ा से तैल को छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में तैल को संग्रहीत कर लें।

यह तैल पीने में, बस्ति देने में, अभ्यङ्ग और भोजन में सदा उपयोगी है। वातरोग से पीड़ित घोड़ा, हाथी या मनुष्य सभी इस तैल के प्रयोग से अच्छे हो जाते हैं; पङ्गु, पीठ के बल से चलने वाला रोगी इस तैल के प्रयोग से ठीक हो जाते हैं। अधोभाग स्थित प्रकुपित वायु, शिरोभाग स्थित वायु, मध्यभाग स्थित प्रकुपित वायु, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, दन्तरोग और गलग्रह में विशेष लाभ करता है। जिसका एक अंग सूख जाता है, चलने में शरीर काँपता है, जो क्षीण ज्ञानेन्द्रिय वाला, नष्ट शुक्रवाला, ज्वर से क्षीण व्यक्ति, बधिर, हकलाकर बोलना और मन्दबुद्धि-वाला, अल्पपुत्रवाली स्त्री या बन्ध्या स्त्री, जिसके वृषण वायुरोग से पीड़ित होकर सूखते हों और भयंकर अन्त्रवृद्धि हो ऐसे रोगी इस नारायणतैल से विशेष रूप से लाभान्वित होते हैं।

मात्रा—पीने के लिए १२ से २५ मि.ली., अभ्यङ्गार्थ १२ मि.ली.। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्ध, दूध के खोआ जैसी महक। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातरोग में उपयोगी है।

९४. पुष्पराजप्रसारणीतैल

प्रसारणीपलशतं मूलं चैवाश्वगन्धजम्।
पञ्चाशत्पलमानं तु जलद्रोणे विपाचयेत् ॥३४८॥
पादशेषे हरेत्क्वाथं क्वाथांशं तिलतैलकम्।
तैलाच्चतुर्गुणं क्षीरं गव्यं वा माहिषं तथा ॥३४९॥
पुण्डरीकरसस्तत्र शतावर्या रसस्तथा।
तैलसमः प्रदातव्यः पाचयेन्मृदुवह्निना ॥३५०॥
शतपुष्पा कणा चैला कुष्ठं च कण्टकारिका।
शुण्ठी यष्टी देवदारु शालपर्णी पुनर्नवा ॥३५१॥
मञ्जिष्ठा पत्रकं रास्ना वचा पुष्करमूलकम्।
यवानी भूतिकं मांसी निर्गुण्डी च तथा बला ॥३५२॥
वह्निर्गोक्षुरकं चैव मृणालं बहुपुत्रिका।
प्रतिकर्षमितं भोज्यं सर्वमेकत्र पाचयेत् ॥३५३॥
तैलशेषं समुद्धृत्य पुष्पराजप्रसारणीम्।
अभ्यङ्गे योजयेत्पाने नस्यकर्मणि सर्वदा ॥३५४॥
भग्नानां खञ्जपङ्गूनां शिरोरोगे हनुग्रहे।
समस्तान् वातजान् रोगांस्तूर्णं नाशयति ध्रुवम् ॥३५५॥

१. गन्धप्रसारणी पञ्चाङ्ग ३५० कि.ग्रा., २. अश्वगन्ध ७५० ग्राम, ३. तिलतैल ७५० मि.ली., ४. गोदुग्ध ३ लीटर, ५. कमलपुष्प स्वरस या क्वाथ ७५० मि.ली. तथा ६. शतावरी क्वाथ ७५० मि.ली. लें।

कल्क-द्रव्य—१. सौंफ, २. पीपर, ३. छोटी इलायची, ४. कूठ, ५. कण्टकारी, ६. सोंठ, ७. मुलेठी, ८. देवदारु, ९. शालपर्णी, १०. पुनर्नवा, ११. मंजीठ, १२. तेजपत्ता, १३. रास्ना, १४. वचा, १५. पुष्करमूल, १६. अजवायन, १७. भूतृण (गन्धतृण), १८. जटामांसी, १९. निर्गुण्डी, २०. बलामूल, २१. चित्रकमूल, २२. गोक्षुर, २३. कमलनाल तथा २४. शतावर—ये सभी द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः गन्धप्रसारणी और अश्वगन्ध को यवकुट कर १२ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रखकर अर्थात् ३ लीटर क्वाथ रखने का निर्देश है। इसी अवशिष्ट क्वाथ का चौथाई लेना आचार्य का अभिमत है। अतः ७५० लीटर तिलतैल लेना उचित है।

इसके बाद सौंफ से शतावरी तक के सभी २४ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। कल्क और क्वाथ को मूर्च्छित तैल में मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। इस क्वाथ को सूखने पर शतावरीक्वाथ मिलावें। शतावरीक्वाथ सूखने पर गोदुग्ध या भैंस का दूध मिलाकर पाक करें। अन्त में सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पुनः पाक करें। स्नेह से जलीयांश सूख जाने पर स्नेहपाकविद् परीक्षोपरान्त स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को कपड़े से छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस तैल को पुष्पराजप्रसारणीतैल कहते हैं। इस तैल का प्रयोग अभ्यङ्ग-पान-नस्य-बस्ति द्वारा करना चाहिए। शिरोग्रह एवं हनुग्रह में नस्य द्वारा, अस्थिभग्न में अभ्यङ्ग द्वारा; खञ्ज, पङ्गु, शिरोरोग, हनुग्रह आदि समस्त वातविकारों में इस तैल से शीघ्र लाभ होता है और रोग निश्चित रूप से नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—पानार्थ १२ से २५ मि.ली., अभ्यङ्गार्थ १२ मि.ली.। **अनुपान**—गरम गाय के दूध से। **गन्ध**—दुग्ध एवं खोआ जैसी महक। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार में।

९५. कुब्जप्रसारणी तैल (च.द.)

प्रसारणीशतं क्षुण्णं पचेत्तोयार्मणे शुभे।
पादशेषे समं तैलं दधि दद्यात् सकाञ्जिकम् ॥३५६॥
द्विगुणञ्च पयो दत्त्वा कल्कान् द्विपलिकांस्तथा।
चित्रकं पिप्पलीमूलं मधुकं सैन्धवं बलाम् ॥३५७॥
शतपुष्पां देवदारु रास्नां वारणपिप्पलीम्।
प्रसारण्याश्च मूलानि मांसीं भल्लातकानि च ॥३५८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पचेन्मृद्वग्निना तैलं वातश्लेष्मामयाञ् जयेत्।
अशीतिं नरनारीस्थान् वातरोगान् व्यपोहति ॥३५९॥
कुब्जस्तिमितपङ्गुत्वं गृध्रसीखुडकार्दितम्।
हनुपृष्ठशिरोग्रीवास्तम्भं चाशु नियच्छति ॥३६०॥

१. गन्धप्रसारणी लता ५ किलो, क्वाथार्थ जल १२ लीटर (१ द्रोण = अर्मण), २. तिलतैल ३ लीटर, ३. दही ३ किलो, ४. काञ्जी ३ लीटर तथा ५. गोदुग्ध ६ लीटर लें।

कल्क-द्रव्य—१. चित्रकमूल, २. पिपरामूल, ३. मुलेठी, ४. सैन्धवलवण, ५. बलामूल, ६. सौंफ, ७. देवदारु, ८. रास्ना, ९. गजपीपर, १०. प्रसारणीमूल, ११. जटामांसी और १२. शुद्ध भल्लातक—प्रत्येक द्रव्य ९३-९३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः गन्धप्रसारणी लता को यवकुट कर १२ लीटर जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर क्वाथ छान लें। इस ३ लीटर क्वाथ के बराबर तिलतैल लें। क्वाथ के बराबर ही दही और काञ्जी तथा दुगुनी मात्रा में गोदुग्ध लेने का आचार्यश्री ने निर्देश दिया है। इसके बाद चित्रकमूल से शुद्ध भल्लातक तक की सभी औषधों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद मूर्च्छित तैल में कल्क और ३ लीटर क्वाथ अच्छी तरह मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। क्वाथ सूखने पर ६ लीटर दूध डालकर पकावें। ततः दही को मथकर चौथाई जल मिलाकर तक्रवत् बनाकर उस तैल में डालकर पकावें। इसके बाद पूर्व क्रम से काञ्जी डालकर पाक करें। जब तैल पककर जल रहित हो जाय तो परीक्षोपरान्त चूल्हे से स्नेहपात्र नीचे उतार लें और कुछ देर बाद कपड़े से छानकर ठण्डा होने दें। पुनः काचपात्र में संग्रह कर लें। यह 'कुब्जप्रसारणी तैल' सभी वातज, कफज रोगों का नाश करता है। पुरुषों और स्त्रियों में होने वाले अस्सी प्रकार के वातरोग, कुब्ज, निश्चलता, पङ्गु, गृध्रसी, खुड्डक (ग्रन्थिवात), अर्दित, हनुस्तम्भ, पृष्ठ-शिर एवं ग्रीवास्तम्भ को शीघ्र नष्ट करता है।

मात्रा—पानार्थ मात्रा १२ से २५ मि.ली., अभ्यङ्गार्थ १२ मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त-अम्ल। **उपयोग**—सभी प्रकार के वात विकार में, कुब्जता में।

९६. त्रिशतीप्रसारणीतैल (च.द.)

समूलपत्रशाखाञ्च जातसारां प्रसारणीम्।
कुट्टयित्वा पलशतं दशमूलशतं तथा ॥३६१॥
अश्वगन्धापलशतं कटाहे समधिक्षिपेत्।
वारिद्रोणे पृथक् पक्त्वा पादशेषेऽवतारितम् ॥३६२॥
कषायाः सममात्रास्तु तैलपात्रं प्रदापयेत्।
दध्नस्तथाढकं दत्त्वा द्विगुणञ्चापि काञ्जिकम् ॥३६३॥
चतुर्गुणेन पयसा जीवनीयैः पलोन्मितैः।
शृङ्गबेरपलान् पञ्च त्रिंशद्धल्लातकानि च ॥३६४॥
द्वे पले पिप्पलीमूलाच्चित्रकस्य पलद्वयम्।
यवक्षारपले द्वे च मधुकस्य पलद्वयम् ॥३६५॥
प्रसारणीपले द्वे च सैन्धवस्य पलद्वयम्।
सौवर्चलपले द्वे च मञ्जिष्ठायाः पलद्वयम् ॥३६६॥
सर्वाण्येतानि संस्कृत्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
एतदभ्यञ्जने श्रेष्ठं बस्तिकर्मनिरूहणे ॥३६७॥
पाने नस्ये च दातव्यं न क्वचित् प्रतिहन्यते।
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥३६८॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव सर्वानेतान् व्यपोहति।
गृध्रसीमस्थिभङ्गञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥३६९॥
अपस्मारमथोन्मादं विभ्रमं मन्दगामिताम्।
त्वग्गताश्चापि ये वाताः शिरासन्धिगताश्च ये ॥३७०॥
जानुसन्धिगताश्चैवं पादपृष्ठगतास्तथा।
अश्वो वाताच्च सम्भग्नो गजो वा यदि वा नरः ॥३७१॥
प्रसारयति यस्मात्तु तस्मादेषा प्रसारणी।
इन्द्रियाणां प्रजननी वृद्धानाञ्च रसायनी ॥३७२॥
एतेनान्धकवृष्णीनां कृतं पुंसवनं महत्।
प्रसारणीतैलमिदं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥३७३॥

क्वाथ-द्रव्य—१. प्रसारणीलता ५ किलो, २. दशमूल ५ किलो, ३. अश्वगन्ध ५ किलो, क्वाथार्थ जल पृथक्-पृथक् १२-१२ लीटर (चौथाई शेष), ४. तिलतैल ३ ली., ५. दही ३ किलो, ६. काञ्जी ६ ली. तथा ७. गोदुग्ध १२ ली. (तैल से चार गुना) लें।

कल्क-द्रव्य—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. ऋद्धि, ६. वृद्धि, ७. मेदा, ८. महामेदा, ९. जीवन्ती, १०. मुलेठी, ११. माषपर्णी, १२. मुद्गपर्णी (प्रत्येक ४६ ग्राम लें), १३. आर्द्रक २३५ ग्राम, १४. शुद्ध भल्लातक ३० नग, १५. पिपरामूल ९३ ग्राम, १६. चित्रकमूल ९३ ग्राम, १७. यवक्षार ९३ ग्राम, १८. मुलेठी ९३ ग्राम, १९. प्रसारणी ९३ ग्राम, २०. सैन्धव ९३ ग्राम, २१. सौवर्चललवण ९३ ग्राम तथा २२. मंजीठ ९३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः जीवक से मंजीठ पर्यन्त सभी द्रव्यों को कूट-पीसकर सिल पर कल्क बना लें और मूर्च्छित तैल में मिला दें। अब क्रमशः पृथक्-पृथक् प्रसारणी को यवकुट कर १२ लीटर जल में मध्यमाग्नि पर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहे तो उतारकर क्वाथ छान लें और मूर्च्छित तैल में मिलाकर तैलपाक करें। इसी तरह दशमूलक्वाथ एवं अश्वगन्धक्वाथ बनाकर क्रमशः तैल में पकावें। पुनः तैल से चार गुना गोदुग्ध डालकर उस तैल का पाक करें। इसके बाद दही को

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मथकर तक्र जैसा बनाकर तैल में डालकर पकावें। पुनः काञ्जी देकर तैलपाक करें। सम्यक् पाकार्थ अन्त में तैल के बराबर जल डालकर तैलपाक करें। तैल में जल न रहे, ऐसा समझकर पाक-परीक्षा करें और तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर गरम-गरम तैल को कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रह करें। इस तैल का प्रयोग—अभ्यङ्ग-नस्य-पान-बस्ति कर्म में करना चाहिए। इसमें कोई आपत्ति नहीं होती है। इस तैल के सेवन से ८० प्रकार के वातरोग, ४० प्रकार के पित्तरोग, २० प्रकार के कफरोग (सभी रोग) नष्ट हो जाते हैं। यह तैल गृध्रसी, अस्थिभङ्ग, मन्दाग्नि, अरुचि, अपस्मार, उन्माद, चित्तविभ्रम, मन्दगामिता, त्वग्गत वात, शिरोवात, सन्धिवात, जानुसन्धिवात, पादगतवात, पृष्ठगतवात तथा वात से प्रनष्ट गति वाले घोड़े, हाथियों और मनुष्यों के संकुचित अङ्ग को प्रसारित करता है; इसीलिए इसे प्रसारणी तैल कहते हैं। यह तैल इन्द्रियों में शक्ति उत्पन्न करता है एवं वृद्ध पुरुष-स्त्रियों को सन्तानोत्पादक क्षमता प्रदान करता है। इस तैल के द्वारा अन्धक और वृष्णियों में पुंसवन संस्कार किया गया था। यह प्रसारणी तैल बल-वर्ण-अग्निवर्धक है। रसायन हैं।

विमर्श—त्रिशती प्रसारणी नाम में कारण यह है कि पृथक्-पृथक् १०० पल की तीन औषधियों का प्रयोग यहाँ हुआ है। इसीलिए त्रिशती नाम पड़ा है। आगे भी सप्तशती, एकादशशती एवं अष्टादशशतीप्रसारणीतैल का नामकरण आचार्यश्री चक्रपाणि दत्त ने किया है।

मात्रा—पानार्थ १२ से २५ मि.ली., नस्यार्थ ५-६ बूँद, बस्ति हेतु १०० से २५० मि.ली. तक। **अनुपान**—गरम गोदूध से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त-अम्ल। **उपयोग**—मुख्यतया समस्तवात विकार में।

९७. सप्तशतिकप्रसारणीतैल (च.द.)

समूलपत्रामुत्पाट्य शरत्काले प्रसारणीम्।
शतं ग्राह्यं सहचराच्छतावर्य्याः शतं यथा ॥३७४॥
बलाऽऽत्मगुप्ताश्वगन्धाकेतकीनां शतं शतम्।
पचेच्चतुर्गुणे तोये द्रवैस्तैलाढकं भिषक् ॥३७५॥
मस्तु मांसरसं चुक्रं पयश्चाढकमाढकम्।
दध्याढकसमायुक्तं पाचयेन्मृदुनाऽग्निना ॥३७६॥
द्रव्याणान्तु प्रदातव्या मात्रा चार्द्धपलोन्मिता।
तगरं मदनं कुष्ठं केशरं मुस्तकं त्वचम् ॥३७७॥
रास्ना सैन्धवपिप्पल्यौ मांसीमञ्जिष्ठयष्टिकाः।
तथा मेदा महामेदा जीवकर्षभकौ पुनः ॥३७८॥
शतपुष्पा व्याघ्रनखं शुण्ठी देवाह्वमेव च।
काकोली क्षीरकाकोली वचा भल्लातकं तथा ॥३७९॥
पेषयित्वा समानेतान् साधनीया प्रसारणी।
नातिपक्वं न हीनञ्च सिद्धं पूतं निधापयेत् ॥३८०॥
यत्र यत्र प्रदातव्यं तन्मे निगदतः शृणु।
कुब्जानामथ पङ्गूनां वामनानां तथैव च ॥३८१॥
यस्य शुष्यति चैकाङ्गं ये च भग्नास्थिसन्धयः।
वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम् ॥३८२॥
स्त्रीमद्यक्षीणशुक्राणां वाजीकरणमुत्तमम्।
बस्तौ पाने तथाऽभ्यङ्गे नस्ये चैव प्रयोजयेत् ॥
प्रयुक्तं शमयत्याशु वातजान् विविधान् गदान् ॥३८३॥

१. प्रसारणीपञ्चाङ्ग ५ कि., २. सहचरपञ्चाङ्ग ५ कि., ३. शतावरीमूल ५ कि., ४. बलापञ्चाङ्ग ५ कि., ५. केवाँचबीज ५ कि., ६. अश्वगन्ध ५ कि., ७. केतकीपञ्चाङ्ग ५ कि., ८. तिलतैल ३ लीटर, ९. मस्तु (दधिजल) ३ ली., १०. दही ३ कि., ११. मांसरस ३ ली., १३. चुक्र (सिरका) ३ ली. तथा १३. गोदूध ३ ली. लें।

कल्क-द्रव्य—१. तगर, २. मदनफल, ३. कूठ, ४. नागकेशर, ५. नागरमोथा, ६. दालचीनी, ७. रास्ना, ८. सैन्धवलवण, ९. पीपर, १०. जटामांसी, ११. मंजीठ, १२. मुलेठी, १३. मेदा, १४. महामेदा, १५. जीवक, १६. ऋषभक, १७. सौंफ, १८. व्याघ्रनख, १९. सोंठ, २०. देवदारु, २१. काकोली, २२. क्षीरकाकोली, २३. वच और २४. शुद्ध भल्लातक—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। पुनः सभी २४ कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। ततः प्रसारणी आदि ७ द्रव्यों को क्रमशः पृथक्-पृथक् ४ गुना जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छानकर अलग एक क्वाथ और कल्क मूर्च्छित तैल मिलाकर मध्याग्नि से पाक करें। इसी तरह १. प्रसारणीक्वाथ, २. सहचरक्वाथ, ३. शतावरक्वाथ, ४. बला-क्वाथ, ५. केवाँचबीजक्वाथ, ६. अश्वगन्धक्वाथ तथा ७. केतकीपञ्चाङ्गक्वाथ का पाक करें। तदनन्तर उक्त तैल में क्रमशः गाय का दूध, मस्तु (दही का पानी) डालकर एवं बकरे का मांसरस, ईख का सिरका (चुक्र) तथा मथित दही (तक्ररूप में) डालकर पाक करें। पाक विधान यह है कि १ द्रव के सूखने पर दूसरा द्रव या क्वाथ डालना चाहिए। इसी तरह दूध, दही, चुक्र, मांसरस, दही का पानी आदि में भी यही विधान है। अन्त में पाकविद् वैद्य स्नेहपाक की परीक्षा कर पाक पूर्ण होने पर स्नेह-पात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को कपड़े से छान लें। सावधानी से इस तैल का पाक करना चाहिए। न खर पाक हो, न हीन पाक और अपक्व पाक हो अर्थात् मध्य पाक करना चाहिए। शीतल होने पर इस तैल का प्रयोग कुब्जरोग, पङ्गुरोग, वामन (बौने व्यक्ति में), एकाङ्गशोष में, अस्थिभग्न, सन्धिभग्न,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

वातदोष में, रक्तदोष में, वातव्याधिपीड़ित व्यक्ति में, मैथुनाशक्त व्यक्ति में, मद्यपी व्यक्ति में, शुक्रक्षीण व्यक्ति में अधिक उपयोगी है। यह वाजीकरण में श्रेष्ठ है। इस तैल का प्रयोग पीने, नस्य, बस्ति और अभ्यङ्ग द्वारा किया जाता है। यह सभी प्रकार के वातरोगों का शीघ्र नाश करता है।

मात्रा—पानार्थ १२ से २५ मि.ली., नस्यार्थ ६ बूँद, बस्ति में २५० मि.ली. तक। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार में।

९८. एकादशशतिक प्रसारणी तैल (च.द.)

शाखामूलदलैः प्रसारणितुलास्तिस्रः कुरुण्टात्तुले
छिन्नायाश्च तुले तुले रुबुकतो रास्नाशिरीषात्तुलाम्।
देवाह्वाच्च सकेतकाद् घटशते निःक्वाथ्य कुम्भांशिके
तोये तैलघटं तुषाम्बुकलसौ दत्त्वाऽऽढकं मस्तुनः॥
शुक्ताच्छागरसादथेक्षुरसतः क्षीराच्च दत्त्वाऽऽढकं
स्पृक्काकर्कटजीवकाद्यविकसाकाकोलिकाकच्छुरा।
सूक्ष्मैलाघनसारकुन्दुसरलाकाश्मीरमांसीनखैः
कालीयोत्पलपद्माकाह्वयनिशाकक्कोलकग्रन्थिकैः॥
चाम्पेयाभयचोचपूगकटुकाजातीफलाभीरुभिः
श्रीवासामरदारुचन्दनवचाशैलेयसिन्दूद्भवैः।
तैलाम्भोदकटम्भराङ्घ्रिनलिकावृश्चीरकच्चोरकैः
कस्तूरीदशमूलकेतकनतध्यामाश्वगन्धाऽम्बुभिः॥
कौन्तीताक्ष्यजशल्लकीफललघुश्यामाशताह्वामयै-
र्भल्लातत्रिफलाऽब्जकेशरमहाश्यामालवङ्गान्वितैः।
सव्योषैस्त्रिपलैर्महीयसि पचेन्मन्देन पात्रेऽग्निना
पानाभ्यञ्जनबस्तिनस्यविधिना तन्मारुतं नाशयेत्॥
सर्वाङ्गाङ्गगतं तथाऽवयवगं सन्ध्यस्थिमज्जाश्रितं
श्लेष्मोत्थानथ पैत्तिकांश्च शमयेन्नानाविधानामयान्।
धातून् बृंहयति स्थिरञ्च कुरुते पुंसां नवं यौवनं
वृद्धस्यापि बलं करोति सुमहद् वन्ध्यासु गर्भप्रदम्॥
पीत्वा तैलमिदं जरत्यपि सुतं सूतेऽमुना भूरुहाः
सिक्ताः शोषमुपागताश्च फलिनः स्निग्धा भवन्ति स्थिराः
भग्नाङ्गाः सुदृढीभवन्ति मनुजा गावो हयाः कुञ्जराः॥

क्वाथ-द्रव्य—प्रसारणीपञ्चाङ्ग १५ कि., २. सहचरपञ्चाङ्ग १० कि., ३. गुडूचीकाण्ड १० कि., ४. एरण्डमूलत्वक् १० कि., ५. रास्ना और ६. शिरीषत्वक् मिलाकर ५ कि., ७. देवदारुकाष्ठ और ८. केवड़ापञ्चाङ्ग मिलाकर ५ किलो कुल मिलाकर ११ सौ पल औषधि हुई। इसमें प्रसारणी प्रधान है, इसीलिए इसका नाम 'एकादशशतिक प्रसारणीतैल' है। ९. तिलतैल १२ ली., १० काञ्जी २८ लीटर, ११. मस्तु (दही का पानी) ३ ली., १२. सिरका (चुक्र) ३ लीटर, १३. बकरे का मांस रस ३ ली., १४. इक्षुरस ३ लीटर और १५. गोदुग्ध ३ ली. लें।

कल्क-द्रव्य—१. पृक्का (असवरग), २. काकड़ासिंगी, ३. जीवक, ४. ऋषभक, ५. काकोली, ६. क्षीरकाकोली, ७. मेदा, ८. महामेदा, ९. ऋद्धि, १०. वृद्धि, ११. जीवन्ती, १२. मुलेठी, १३. माषपर्णी, १४. मुद्गपर्णी, १५. मंजीठ, १६. काकोली, १७. केवाँचबीज, १८. छोटी इलायची, १९. कपूर, २०. कुन्दुरु (सुगन्धी द्रव्य), २१. सरलकाष्ठ, २२. केशर, २३. जटामांसी, २४. नखी, २५. अगुरु, २६. नीलकमल, २७. पद्मकाठ, २८. हल्दी, २९. शीतलचीनी, ३०. ग्रन्थिपर्णी, ३१. चम्पकफूल, ३२. खस, ३३. दालचीनी, ३४. सुपारीफल, ३५. लताकस्तूरी (कटुका), ३६. जायफल, ३७. शतावरी (भीरु), ३८. गन्धविरोजा, ३९. देवदारु, ४०. श्वेतचन्दन, ४१. वच, ४२. छरीला, ४३. सैन्धवलवण, ४४. नागरमोथा (अम्भोद), ४५. प्रसारणीमूल, ४६. नालुका, ४७. पुनर्नवा, ४८. गन्धशटी, ४९. कस्तूरी, ५०. बेलछाल, ५१. अरणीमूलत्वक्, ५२. गम्भारछाल, ५३. सोनापाठा छाल, ५४. पाटलछाल, ५५. बृहतीमूल, ५६. कण्टकारी मूल, ५७. शालपर्णी, ५८. पृश्निपर्णी, ५९. गोक्षुर, ६०. केतकीपुष्प-त्वक्, ६१. तगर (नत), ६२. गन्धतृण (ध्याम), ६३. अश्वगन्ध, ६४. सुगन्धबाला, ६५. रेणुका (कौन्ती), ६६. रसाञ्जन (तार्क्ष्य), ६७. शल्लकी, ६८. मैनफल या कट्फल, ६९. गुडूची (श्यामा), ७०. सौंफ, ७१. कूठ (आमय), ७२. शुद्ध भल्लातक, ७३. आमला, ७४. हरीतकी, ७५. बहेड़ा, ७६. कमलकेशर, ७७. श्यामालता, ७८. लौंग, ७९. सोंठ, ८०. पीपर और ८१. मरिच—प्रत्येक द्रव्य १४०-१४० ग्राम की मात्रा में लें।

सर्वप्रथम बड़ी कड़ाही में १२ ली. तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः क्रमशः प्रसारणी द्रव्य को यवकुट कर ४ गुना जल के साथ क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छानकर १५ ली. क्वाथ मूर्च्छित तैल में मिलावें। इसके बाद कल्क वर्ग के ८१ द्रव्यों में केशर-कस्तूरी और कर्पूर पृथक् कर शेष ७८ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और उपर्युक्त मूर्च्छित तैल में मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। प्रसारणीक्वाथ जब सूख जाय तो उसी प्रकार सहचर पञ्चाङ्ग को यवकुट करें और चौगुना जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छानकर उपर्युक्त तैल में मिलाकर पाक करें। इसी प्रकार गुडूचीक्वाथ, एरण्डमूलक्वाथ, रास्ना और शिरीषक्वाथ तथा देवदारु एवं केवड़ा का क्वाथ करके उपर्युक्त तैल में पाक करते रहें। इस तरह ५५ लीटर क्वाथ उक्त मूर्च्छित

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तैल में पकावें। पुनः गाय का दूध ३ ली. पकावें। ततः २४ लीटर काञ्जी उक्त तैल में पकावें और क्रमशः मस्तु (दहीजल) ३ ली., सिरका ३ ली., बकरे का मांसरस ३ ली. और इक्षुरस ३ ली. एक के सूखने के बाद दूसरा द्रव देकर पकावें। स्नेहपाक में निष्णात वैद्य तैलपाक की परीक्षा कर अर्थात् जलीयांश सूख जाने पर चूल्हे से स्नेहपात्र उतारकर कपड़े से तैल छान लें। इसके बाद एक खरल में पृथक्-पृथक् केशर, कस्तूरी और कपूर को खरल कर थोड़ा तैल में मर्दन कर सम्पूर्ण सुपक्व तैल में मिला लें और काचपात्र (बोतलों) में भरकर सुरक्षित रख लें। मध्यमपाकीतैल श्रेष्ठ होता है। इसे पान-नस्य-अभ्यङ्ग-बस्ति रूप में प्रयोग में लेना चाहिए। इसके प्रयोग से सर्वाङ्गवात, अर्धाङ्गवात, शरीर के प्रत्येक अवयवों में प्रकुपित वात, सन्धिगतवात, मज्जागतवात, कफजन्यरोग, पित्तजन्यरोग तथा अनेक प्रकार के रोगों को नाश करता है। शरीरस्थ रस-रक्तादि सप्त धातुओं को बढ़ाता है, मनुष्यों की आयु को स्थिर करता है, पुरुषों को युवावस्था जैसा नई जवानी देता है। वृद्धों को भी बलवान् बनाता है, बन्ध्या स्त्रियों के योनि एवं गर्भ विकार को नष्ट कर गर्भवती कर सुपुत्र पैदा करता है। सूखे वृक्षों की जड़ों में इस तैल को सींचने से वृक्ष जीवित होकर पत्ते, पुष्प एवं फल से युक्त होकर बहुत दिनों तक स्थिर रहते हैं। इस तैल के प्रभाव से टूटी हड्डी वाला मनुष्य, गाय, घोड़े एवं हाथी आदि प्राणी भी स्वस्थ तथा सुदृढ़ हड्डी से युक्त हो जाता है।

मात्रा—पानार्थ १२ से २५ मि.ली., नस्य ६ बूँद, बस्ति २५० मि.ली. तक। **अनुपान**—गाय के गरम दूध में। **गन्ध**—सुगन्धी कस्तूरी वाली। **वर्ण**—रक्त-पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार एवं गर्भस्थापक में।

९९. अष्टादशशतिक प्रसारणी तैल (च.द.)

समूलदलशाखायाः प्रसारण्याः शतत्रयम्।
शतमेकं शतावर्य्या अश्वगन्धाशतं तथा ॥३९०॥
केतकीनां शतञ्चैकं दशमूलाच्छतं शतम्।
शतं वाट्यालकस्यापि शतं सहचरस्य च ॥३९१॥
जलद्रोणशतं दत्त्वा शतभागावशेषितम्।
ततस्तेन कषायेण कषायद्विगुणेन च ॥३९२॥
सुव्यक्तेनारनालेन दधिमण्डाढकेन च।
क्षीरशुक्तेक्षुनिर्यासच्छागमांसरसाढकैः ॥३९३॥
तैलद्रोणं समायुक्तं दृढे पात्रे निधापयेत्।
द्रव्याणि यानि पेष्याणि तानि वक्ष्याम्यतः परम् ॥३९४॥
भल्लातकं नतं शुण्ठी पिप्पली चित्रकं शटी।
वचा स्पृक्का प्रसारण्याः पिप्पल्या मूलमेव च ॥३९५॥
देवदारु शताह्वा च सूक्ष्मैला त्वक् च बालकम्।
कुङ्कुमं मदमञ्जिष्ठातुरुष्कं नखिकाऽगुरु ॥३९६॥
कर्पूरकुन्दुरुनिशालवङ्गं ध्यामचन्दनम्।
कक्कोलं नलिका मुस्तं कालीयोत्पलपत्रकम् ॥३९७॥
शटीहरेणुशैलेयश्रीवासञ्च सकेतकम्।
त्रिफला कच्छुराभीरुसरलं पद्मकेशरम् ॥३९८॥
प्रियङ्गूशीरनलदं जीवकाद्यं पुनर्नवा।
दशमूल्यश्वगन्धे च नागपुष्पं रसाञ्जनम् ॥३९९॥
कटुकाजातिपूगानां फलानि शल्लकीरसम्।
भागांस्त्रिपलिकान् दत्त्वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥४००॥
विस्तीर्णे सुदृढे पात्रे पाच्यैषा तु प्रसारिणी।
प्रयोगः षड्विधश्चात्र रोगार्त्तानां विधीयते ॥४०१॥
अभ्यङ्गात्त्वग्गतं हन्ति पानात् कोष्ठगतं तथा।
भोजनात् सूक्ष्मनाडीस्थान्नस्यादूर्ध्वगतं तथा ॥४०२॥
पक्वाशयगते बस्तिनिरूहः सार्वकायिके।
एतद्धि वडवाऽश्वानां किशोराणां यथाऽमृतम् ॥४०३॥
एतदेव मनुष्याणां कुञ्जराणां गवामपि।
अनेनैव च तैलेन शुष्यमाणा महाद्रुमाः ॥४०४॥
सिक्ताः पुनः प्ररोहन्ति भवन्ति फलशालिनः।
वृद्धोऽप्यनेन तैलेन पुनश्च तरुणायते ॥४०५॥
न प्रसूते च या नारी साऽपि पीत्वा प्रसूयते।
अग्रजः पुरुषो यस्तु सोऽपि पीत्वा लभेत्सुतम् ॥४०६॥
अशीतिं वातजान् रोगान् पैत्तिकाञ् श्लैष्मिकानपि।
सन्निपातसमुत्थांश्च नाशयेत् क्षिप्रमेव हि ॥४०७॥
एतेनान्धकवृष्णीनां कृतं पुंसवनं महत्।
कृत्वा विष्णोर्बलिञ्चापि तैलमेतत् प्रयोजयेत् ॥४०८॥

क्वाथ-द्रव्य—१. गन्धप्रसारणी १५ कि., २. शतावरी ५ कि., ३. अश्वगन्धा ५ कि., ४. केतकीपुष्पत्वक् ५ कि., ५. बिल्वत्वक् ५ कि., ६. अरणीत्वक् ५ कि., ७. सोनापाठात्वक् ५ कि., ८. पाटलात्वक् ५ कि., ९. गम्भारीत्वक् ५ कि., १०. शालपर्णीमूल ५ कि., ११. पृश्निपर्णी ५ कि., १२. बृहतीमूल ५ कि., १३. कण्टकारीमूल ५ कि., १४. गोक्षुरमूल ५ कि., १५. सहचरपञ्चाङ्ग ५ कि. तथा १६. बलामूल ५ कि. लें। कुल मिलाकर १८०० पल द्रव्य होते हैं। अतः इसका नाम इसी १८०० पल के अनुसार 'अष्टादशशतिक प्रसारणीतैल' रखा गया है। क्वाथार्थ १२०० ली. जल (१०० द्रोण जल) लें तथा अवशेष क्वाथ; **अन्य द्रव्य**—१७. आरनाल २४ ली., १८. दही ३ कि., १९. दधिमस्तु ३ ली., २०. गोदूध ३ ली., २१. सिरका (चुक्र) ३ ली., २२. इक्षुरस ३ ली., २३. छागमांसरस ३ ली. तथा २४. तिलतैल १२ ली. लें।

कल्क-द्रव्य—शुद्ध भिलावा, २. तगर, ३. सोंठ, ४. पीपर, ५. चित्रकमूल, ६. कचूर, ७. वच, ८. स्पृक्का

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

(असनरग), ९. गन्धप्रसारिणी, १०. पिपरामूल, ११. देवदारु, १२. सौंफ, १३. छोटी इलायची, १४. दालचीनी, १५. सुगन्धबाला, १६. केशर, १७. कस्तूरी, १८. मंजीठ, १९. शिलारस, २०. नखी, २१. अगुरु, २२. कर्पूर, २३. कुन्दुरु, २४. हल्दी, २५. लौंग, २६. गन्धतृण, २७. श्वेतचन्दन, २८. शीतलचीनी, २९. नालुका, ३०. नागरमोथा, ३१. पीला चन्दन, ३२. नीलकमल, ३३. तेजपत्ता, ३४. गन्धशटी, ३५. रेणुका, ३६. छरीला, ३७. गन्धविरोजा, ३८. केवड़ामूल त्वक्, ३९. आमला, ४०. हरीतकी, ४१. बहेड़ा, ४२. केवाँच बीज, ४३. शतावरी, ४४. सरलकाष्ठ, ४५. कमलकेशर, ४६. प्रियङ्गु, ४७. खश, ४८. जीवक, ४९. ऋषभक, ५०. काकोली, ५१. क्षीरकाकोली, ५२. मेदा, ५३. महामेदा, ५४. ऋद्धि, ५५. वृद्धि, ५६. जीवन्ती, ५७. मुलेठी, ५८. माषपर्णी, ५९. मुद्गपर्णी, ६०. पुनर्नवा, ६१. बिल्वत्वक्, ६२. अरणीछाल, ६३. गम्भार, ६४. सोनापाठा, ६५. पाटल, ६६. शालपर्णी, ६७. पृश्निपर्णी, ६८. बृहती, ६९. कण्टकारी, ७०. गोखरु, ७१. अश्वगन्ध, ७२. नागकेशर, ७३. रसाञ्जन, ७४. लताकस्तूरीबीज, ७५. जायफल, ७६. सुपारीफल और ७७. शल्लकीरस—ये प्रत्येक द्रव्य १४० ग्राम लें।

बड़ी कड़ाही में सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तत: शुद्ध भल्लातक से शल्लकीरस पर्यन्त सभी द्रव्यों में से केशर, कस्तूरी एवं कर्पूर तीन द्रव्य छोड़कर शेष ७३ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद १५ किलो प्रसारणी को यवकुट कर १६ गुना जल अर्थात् १४० लीटर जल में क्वाथ करें। षोडशांश शेष रहने पर छान लें और मूर्च्छित तिलतैल में यह क्वाथ और कल्क मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। क्वाथ सूखने पर दूसरे शतावरीयवकुट में १६ गुना (८० ली.) जल देकर क्वाथ करें और षोडशांशवशेष रहने पर छान लें तथा उक्त तैल में पाक करें। इसी तरह क्रमश: अश्वगन्धायवकुट, केतकी-यवकुट, दशमूलयवकुट, सहचरयवकुट और बलायवकुट को १६ गुना जल में क्वाथ करें और षोडशांशावशेष रहने पर छान-कर तैल में पकावें। सभी द्रव्यों के क्वाथ पृथक्-पृथक् करें। दशमूल का क्वाथ तो एक साथ करना चाहिए था, किन्तु ८०० ली. जल तथा ५० किलो क्वाथ द्रव्य सब एक बर्तन में नहीं आ सकता, अत: प्रत्येक दशों द्रव्यों का पृथक्-पृथक् १६ गुना जल में क्वाथ करना उचित है। इस तरह जब सम्पूर्ण क्वाथ तैल में पक जाय तब गोदुग्ध देकर पाक करें। तत: काञ्जी देकर पाक करें। इसके बाद दही को मथे और उसमें थोड़ा जल मिलाकर तैल में पाक करें। दही सूखने पर क्रमश: दधिमस्तु, सिरका, इक्षुरस और मांसरस मिलाकर पाक करें। जलीयांश के सूखने पर तैलपाक की परीक्षा करके एवं सुपक्व समझकर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़ा से तैल छान लें। जब तैल शीतल हो जाय तो एक खरल में केशर का मर्दन कर थोड़ा उपर्युक्त तैल में मर्दन करें और सम्पूर्ण छने हुए तैल में अच्छी तरह से मिला दें। इसी तरह कस्तूरी और कपूर भी पृथक्-पृथक् खरल कर मिला लें। पुन: बोतलों में रखकर कार्क, लेबल लगाकर संग्रहीत करें।

अम्लरस पकाने के पूर्व ही दूधपाक करना चाहिए अन्यथा दूध फट जाता है।

इस तैल का ६ प्रकार से रोगियों पर प्रयोग किया जाता है—

१. अभ्यङ्ग करने से रोगी के त्वग्गत विकार नाश करता है।

२. पान करने से रोगी के कोष्ठगतवात एवं कोष्ठबद्धता नाश करता है।

३. भोजन के साथ खाने से रोगी के सूक्ष्मनाड़ी संस्थान को बल देता है तथा ऊर्ध्वगतवात विकार नष्ट करता है।

४. नस्य रूप में सेवन करने से जत्रु के उपरिस्थ प्रकुपित वात को नष्ट करता है।

५. बस्ति के रूप में उपयोग करने से पक्वाशय स्थित वात विकार को दूर करता है।

६. निरूह के रूप में प्रयोग करने से सर्वशरीरगत प्रकुपित वात को नाश करता है।

यह तैल घोड़ी, घोड़े, बालकों, मनुष्यों, हाथियों एवं गायों को भी अमृत के समान लाभदायक है। इस तैल को सूखे हुए वृक्ष में सिञ्चन करने से वे पल्लवित, पुष्पित एवं फलित हो जाते हैं। इस तैल का प्रयोग वृद्धों पर करने से वह पुनर्युवा हो जाता है। जो स्त्री आयु की अधिकता के कारण गर्भाधान नहीं कर सकती है अथवा बन्ध्या स्त्री भी इस तैल के प्रयोग से गर्भवती होकर पुत्र-प्रसव करती है। पुत्रहीन पुरुष भी इस तैल को पीने से पुत्रों का पिता हो जाता है। ८० प्रकार के वात रोग, ४० प्रकार के पित्त रोग और २० प्रकार के कफ रोग तथा सन्निपातज सभी प्रकार के रोग इस तैल के प्रयोग से शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। इस तैल के द्वारा अन्धक और वृष्णियों का पुंसवन किया गया था। तैल-निर्मण होने से पूर्व और तैल-निर्मित होने के बाद भगवान् विष्णु की पूजा और तैल की (औषधि) पूजा करके बलि आदि देने के पश्चात् इसका प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा—पानार्थ १२ से २५ मि.ली, नस्य ६ से ८० बूँद तक, बस्ति २५० मि.ली., निरूहबस्ति अभ्यङ्ग में १२ मि.ग्रा.। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्धी-कस्तूरी जैसी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—प्रजोत्पादक एवं समस्त वात विकार नाशक।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१००. महाराजप्रसारणी तैल (च.द.)

शतत्रयं प्रसारण्या द्वे च पीतसहाचरात्।
अश्वगन्धैरण्डबला वरी रास्ना पुनर्नवा ॥४०९॥
केतकी दशमूलञ्च पृथक्त्वक्पारिभद्रतः।
प्रत्येकमेषान्तु तुला तुलार्द्धं किलिमात्तथा ॥४१०॥
तुलार्द्धं स्याच्छिरीषाच्च लाक्षायाः पञ्चविंशतिः।
पलानि लोध्राच्च तथा सर्वमेकत्र साधयेत् ॥४११॥
जलं पञ्चाढकशते सपादे तत्र शेषयेत्।
द्रोणद्वयं काञ्जिकञ्च षड्विंशत्याढकोन्मितम् ॥४१२॥
क्षीरदध्नोः पृथक् प्रस्थान् दश मस्त्वाढकं तथा।
इक्षुरसाढकौ चैव छागमांसतुलात्रये ॥४१३॥
जलपञ्चचत्वारिंशत् प्रस्थान् पक्वे तु शेषयेत्।
सप्तदशरसप्रस्थान् मञ्जिष्ठाक्वाथ एव च ॥४१४॥
कुडवोनाढकोन्मानो द्रवैरेतैस्तु साधयेत्।
सुशुद्धतिलतैलस्य द्रोणं प्रस्थेन संयुतम् ॥४१५॥
काञ्जिकं मानतो द्रोणं शुक्तेनात्र विधीयते।
आद्य एभिर्द्रवैः पाकः कल्को भल्लातकं कणा ॥४१६॥
नागरं मरिचञ्चैव प्रत्येकं षट्पलोन्मितम्।
पथ्याऽक्षधात्र्यः सरलं शताह्वा कर्कटी वचा ॥४१७॥
चोरपुष्पी शटी मुस्ताद्वयं पद्मञ्च सोत्पलम्।
पिप्पलीमूलमञ्जिष्ठा साश्वगन्धा पुनर्नवा ॥४१८॥
दशमूलं समुदितं चक्रमर्दो रसाञ्जनम्।
गन्धतृणं हरिद्रा च जीवनीयगणस्तथा।
एषां त्रिपलिकैर्भागैराद्यः पाको विधीयते ॥४१९॥

१. गन्धप्रसारणी १५ कि., २. पीतपुष्पसहचर १० कि., ३. अश्वगन्धा ५. कि., ४. एरण्डमूलत्वक् ५. कि., ५. बलापञ्चाङ्ग ५. कि., ६. शतावरमूल ५ कि., ७. रास्ना ५ कि., ८. पुनर्नवामूल ५ कि., ९. केवड़ाफूल-त्वक् ५ कि., १०. बिल्वत्वक् ५ कि., ११. गम्भारछाल ५ कि., १२. अरणीछाल ५ कि., १३. सोनापाठा ५ कि., १४. पाढलछाल ५ कि., १५. बृहती ५ कि., १६. कण्टकारी ५ कि., १७. शालपर्णी ५ कि., १८. पृश्निपर्णी ५ कि., १९. गोक्षुर ५ कि., २०. महा-निम्बत्वक् ५ कि., २१. देवदारुकाष्ठ २.५०० कि., २२. शिरीषत्वक् २.५०० कि., २३. लाक्षा १.२५० कि., २४. लोध्रत्वक् १.२५० कि., क्वाथार्थ जल—५२५ आढक (१५७५ ली.), तथा अवशेष जल—२४ ली. (दो द्रोण); २५. तिलतैल १२.७५० ली. (१ द्रोण १ प्रस्थ), २६. काञ्जी १२ लीटर, २७. गोदुग्ध ७.५०० ली., २८. गाय का दही ७.५०० कि.ग्रा., २९. दही का पानी (मस्तु) ७.५०० ली. ३०. इक्षुरस ६ लीटर और ३१. छागमांस १५ कि. लें। ३५ ली. (४५ प्रस्थ) जल में क्वाथ करें। १३.६५० ली. (१७ प्रस्थ) मांसरस शेष रहने पर छान लें। ३२. मंजीठ क्वाथ ६ ली. लें।

कल्क-द्रव्य—१. शुद्ध भल्लातक, २. पीपर, ३. सोंठ, ४. मरिच, ५. हरीतकी, ६. बिभीतक, ७. आमलकी, ८. सरलकाष्ठ, ९. सौंफ, १०. काकडासिंगी, ११. वच, १२. चोरपुष्पी, १३. कचूर, १४. नागरमोथा, १५. छोटी मोथा, १६. पद्मकाष्ठ, १७. कमलफूल, १८. पिपरामूल, १९. मंजीठ, २०. अश्वगन्धा, २१. पुनर्नवामूल, २२. बिल्वत्वक्, २३. अग्निमन्थछाल, २४. सोनापाठाछाल, २५. पाढल छाल, २६. गम्भारछाल, २७. कण्टकारी, २८. बृहती, २९. शालपर्णी, ३०. पृश्निपर्णी, ३१. गोक्षुर, ३२. चक्रमर्द, ३३. रसाञ्जन, ३४. गन्धतृण, ३५. हल्दी, ३६. जीवक, ३७. ऋषभक, ३८. काकोली, ३९. क्षीरकाकोली, ४०. मेदा, ४१. महामेदा, ४२. ऋद्धि, ४३. वृद्धि, ४४. जीवन्ती, ४५. मुलेठी, ४६. माषपर्णी और ४७. मुद्गपर्णी—शुद्ध भिलावा से मरिच तक ४ द्रव्य प्रत्येक २८० ग्राम (छः पल) लें। हरीतकी से मुद्गपर्णी तक के सभी ४३ द्रव्य प्रत्येक १४० ग्राम लें। जिस व्यक्ति को भिलावा प्रतिकूल हो उसे भिलावा के स्थान पर रक्तचन्दन देना चाहिए।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्यों को कूट पीसकर कल्क बना लें। अब इसके बाद सम्पूर्ण क्वाथ द्रव्य १२१ कि. २५० ग्रा. है और १३ गुना जल अर्थात् १५७५ ली. है। इतने द्रव्यों को एक साथ क्वाथ करने के लिए बड़े पात्र की आवश्यकता है जो सम्भव नहीं है। अतः ३ बार में इसका क्वाथ करें। ४० किलो क्वाथ सम्मिलित यवकुट को १३ गुना अर्थात् ५२१ ली. जल में क्वाथ करें और जब ८ ली. अर्थात् ६५ वाँ अंश शेष रहे तो छान लें। अब यह ८ लीटर क्वाथ और कल्क दोनों को मूर्च्छित तैल में मिलाकर पाक करें। क्वाथ सूखने पर पुनः-पुनः २ बार इसी तरह से क्वाथ बनाकर ८-८ लीटर उक्त तैल में क्वाथ का पाक करें। इस तैल में क्रमशः गोदुग्ध, काञ्जी, गाय का दही मथा हुआ, मस्तु, इक्षुरस, मांसरस और मंजीठ क्वाथ दे-दे कर मध्यमाग्नि से पाक करते रहें। जलीयांश सूख जाने पर तैलपात्र को चूल्हे से उतारकर कपड़े से तैल को छान लें और तैल को पात्र में ही रहने दें। यह प्रथम पाक हुआ।

द्वितीय कल्कपाक (च.द.)

देवपुष्पीबोलपत्रं शल्लकीरसशैलजे।
प्रियङ्गूशीरमधुरीमांसीदारुबलाचलम् ॥४२०॥
श्रीवासो नलिका खोटिः सूक्ष्मैला कुन्दुरुर्मुरा।
नखी त्रयञ्च त्वक्पत्रीपरमापूतिचम्पकम् ॥४२१॥
मदनं रेणुका पृक्का मरुवञ्च पलत्रयम्।
प्रत्येकं गन्धतोयेन द्वितीयः पाक इष्यते ॥४२२॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. लौंग, २. बोल, ३. तेजपात, ४. शल्लकीरस, ५. छरीला, ६. प्रियंगु, ७. खस, ८. सौंफ, ९. जटामांसी, १०. देवदारु, ११. बला, १२. शिलारस, १३. गन्धाविरोजा, १४. नालुका, १५. खोटी, १६. छोटी इलायची, १७. कुन्दुरु, १८. मुरामांसी, १९. नखीत्रय, २०. दालचीनी, २१. तेजपत्ता, २२. कचूरकचरी (गन्धशटी), २३. खट्टाशी, २४. चम्पा-पुष्पकली, २५. मदनफल, २६. रेणुका बीज, २७. असवरग तथा २८. मरुआ दाना—प्रत्येक द्रव्य ३-३ पल अर्थात् १४० ग्राम लें। इन ३० द्रव्यों को सूक्ष्म पीसकर सिल पर पुनः जल के साथ पीसकर कल्क बनाकर उपर्युक्त सुपक्व एवं छने हुए द्रव्य में मिलाकर गन्धोदक के साथ पाक करें।

गन्धोदक निर्माण-विधि (च.द.)

गन्धोदकन्तु त्वक्पत्री पत्रकोशीरमुस्तकम्।
प्रत्येकं सबलामूलं पलानि पञ्चविंशतिः ॥४२३॥
कुष्ठार्द्धभागोऽत्र जलप्रस्थास्तु पञ्चविंशतिः।
अर्द्धावशिष्टाः कर्त्तव्याः पाके गन्धाम्बुकर्मणि ॥४२४॥

जल २५ प्रस्थ अर्थात् १८ ली. ७५० मि.ली. तथा अधावशेष ९.३७५ मि.ली. लें।

१. तेजपात, २. तेजपात भेद, ३. खस, ४. नागरमोथा और ५. बलामूल—ये पाँचों द्रव्य प्रत्येक १२५० ग्राम लें तथा ६. कूठ ६१२ ग्राम लें। इन सभी द्रव्यों को यवकुट कर १८.७५० ली. जल में क्वाथ करें। आधा शेष रहने पर तेज अग्नि में द्वितीय कल्क पाक करें। यही गन्धोदक है। इसी द्रव के साथ द्वितीय कल्क का पाक करना चाहिए।

तृतीय कल्क पाक (च.द.)

गन्धाम्बुचन्दनाम्बुभ्यां तृतीयः पाक इष्यते।
कल्कोऽत्र केशरं कुष्ठं त्वक्कालीयककुङ्कुमम्।
भद्रश्रियं ग्रन्थिपर्णं लताकस्तूरिका तथा ॥४२५॥
लवङ्गागुरुकक्कोलजातीकोषफलानि च।
एला लवङ्गच्छल्ली च प्रत्येकं त्रिपलोन्मितम् ॥४२६॥
कस्तूरी षट्पला चन्द्रात्पलं सार्द्धञ्च गृह्यते।
वेधनार्थं पुनश्चन्द्रमदौ देयौ तथोन्मितौ ॥४२७॥
महाप्रसारणी सेयं राजभोग्या प्रकीर्त्तिता।
गुणान् प्रसारणीनान्तु वहत्येषा बलोत्तमान् ॥४२८॥

गन्धाम्बु[1] और चन्दनाम्बु को द्वितीय पाक करने के पश्चात् छाने हुए तैल को उपर्युक्त कल्क से तृतीय कल्क पाक किया जाता है। तृतीय कल्क पाक हेतु कल्क-द्रव्य इस प्रकार है—

१. नागकेशर, २. कूठ, ३. दालचीनी, ४. तगर, ५. केशर, ६. पीतचन्दन, ७. ग्रन्थिपर्णी, ८. लताकस्तूरी, ९. लौंग, १०. अगर, ११. शीतलचीनी, १२. जावित्री, १३. जायफल, १४. छोटीइलायची १५. लवङ्गलता त्वक्—प्रत्येक द्रव्य १४० ग्राम लें; १६. कस्तूरी २८० ग्राम (६ पल) और १७. कर्पूर ७० ग्राम लें। कस्तूरी और कपूर तैल छानने के बाद मिलाना चाहिए।

सर्वप्रथम नागकेशर से लवङ्गलता की छाल तक के सभी १५ द्रव्यों को सिल पर पीसकर कल्क बना लें और द्वितीय पाक द्वारा सुपक्वतैल में उक्त कल्क को मिलाकर पुनः तैलपाक करना चाहिए। इसमें जल या क्वाथ नहीं देना है। इसमें कल्क गन्धाम्बु एवं चन्दनाम्बु मिलाकर थोड़ी देर तक तैल पका लें जिससे कि कल्क स्थित जलीयांश जल जाय। इसमें सभी सुगन्धित द्रव्य हैं। तैल खौलने लगे, बस इतनी ही देर तक पकावें। पुनः गरम-गरम छान लें।

बेधन-कर्म[2]—तैल कुछ शीतल होने पर एक खरल में कस्तूरी के साथ थोड़ा सा तैल मिलाकर खूब अच्छी तरह मर्दन कर सम्पूर्ण तैल में मिला लें। इसी तरह से कर्पूर भी मर्दन करें और काचपात्र में रखकर कार्क बन्द कर संग्रहीत करें। इस तरह से कस्तूरी एवं कर्पूर मिलाकर तैल को सुगन्धित करने की क्रिया को वेधन कर्म कहते हैं। यह महाराज प्रसारणी तैल राजाओं के द्वारा सेवन करने योग्य है। इस तैल में अन्य प्रसारणी तैलों के अपेक्षा बहुत अच्छे एवं अधिक गुण हैं।

मात्रा—पीने के लिए ५ से १० ग्राम, नस्यार्थ २-२ बून्द, बस्ति ५० मि.ली.। **अनुपान**—गरम गाय का दूध एवं मिश्री से। **गन्ध**—बहुत सुगन्धित-कस्तूरी, केशर, कर्पूरादि का। **वर्ण**—रक्ताभ गाढ़ा। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—समस्त वात विकार नाशक, गर्भस्थापक, वाजीकरण, रसायन, वयःस्थापक, आयुष्य, मेध्य, वर्ण्यकर।

काञ्जी (शुक्त) निर्माण विधि (च.द.)

काञ्जिकं मानतो द्रोणः शुक्तेनात्र विधीयते।
अत्र शुक्तविधिर्मण्डः प्रस्थः पञ्चाढकोन्मितम् ॥४२९॥

---

१. गन्धाम्बुत्वक्पत्री पत्रकोशीरमुस्तबलानां प्रत्येकं पञ्चविंशति पलमितम् कुष्ठं च द्वितोलाधिकद्वादशपलमितं शत शरावपरमितेन वारिणा पक्त्वाऽर्द्धावशेषं कुर्यात्। इति द्वितीयः पाकः।

तृतीयपाके—केशरादीनि कल्कद्रव्याणि प्रत्येकं त्रिपलमितानि, गन्धाम्बुचन्दनजलं च द्रवार्थं प्रदाय तृतीयपाकं कुर्यात्। चन्दनाम्बु-साधनं यथा—कुट्टितचन्दनं पञ्चाशतपलमितं पञ्चाशत शरावपरिमितेन पकत्वाऽर्द्धावशेषं कुर्यात् घृष्टचन्दनं जलेन सह संमिश्र्य वा दातव्यम्। (शिवदास सेन)

२. सिद्धे तैले कर्पूरादिपिष्ट्वा तच्चूर्णमल्पतैलञ्च भाजने कृत्वा मिश्रणीय, तदनु सिद्धोष्णसकलतैलेन सम्यग् मिश्रयित्वा शरावेण पिधाय स्थापनीयमिति वेधनविधिः। इति शिवदाससेनः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

काञ्जिकं कुडवौ दध्नो गुडप्रस्थोऽम्लमूलकात् ।
पलान्यष्टौ शोधितार्द्रात्पलषोडशकं तथा ॥४३०॥
कणाजीरकसिन्धूत्थहरिद्रामरिचं पृथक् ।
द्विपलं भाविते भाण्डे घृतेनाष्टदिनस्थितम् ॥४३१॥
सिद्धं भवति तच्छुक्तं यदाऽवतार्य गृह्यते ।
तदा देयं चतुर्जातं पृथक् कर्षत्रयोन्मितम् ॥४३२॥

शुक्त निर्माण-विधि—शुक्त १ द्रोण (१३ लीटर) देने का निर्देश आचार्य शिवदासजी सेन का है। 'काञ्जिकं मानतो द्रोणं शुक्तेनात्र विधीयते' इस पंक्ति के आधार पर काञ्जी के स्थान पर शुक्त लेने का विधान है। शुक्त बनाने की विधि आचार्य चक्रपाणि दत्त ने इस प्रकार बतायी है—

१. चावल (भात) का मण्ड १ प्रस्थ (७५० मि.ली.), २. काञ्जी ५ आढक (१५ लीटर), ३. दही २ कुडव (३७५ ग्राम) ४. गुड़ १ प्रस्थ (७५० ग्राम), ५. काञ्जी के तल स्थित खट्टी मूली ३७५ ग्राम, ६. छिली हुई आर्द्रक ७५० ग्राम (१ प्रस्थ), ७. पीपर ९३ ग्राम, ८. जीराश्वेत ९३ ग्राम, ९. सैन्धव ९३ ग्राम, १०. हल्दी ९३ ग्राम, ११. मरिच ९३ ग्राम, १२. तेजपात ३५ ग्राम, १३. दालचीनी ३५ ग्राम, १४. छोटी इलायची ३५ ग्राम तथा १५. नागकेशर ३५ ग्राम लें।

एक स्निग्ध लिप्त मिट्टी के घड़े में सर्वप्रथम १५ लीटर काञ्जी, मण्ड, दही मथा हुआ, गुड़, खट्टी मूली, आर्द्रक कल्क, पीपर, जीरा, सैन्धवलवण, हल्दी, मरिच—इन सबको यथा मात्रा कूटकर काञ्जी पात्र में मिलाकर ८ दिनों तक मुख बन्द कर स्थिर छोड़ दें। इसके बाद उसे छान लें तथा चातुर्जातक चूर्ण मिलाकर तैल में पाक करें।

श्रेष्ठ कस्तूरी के लक्षण (कैयदेव निघण्टु)

या गन्धं केतकीनां वहति परिमलं वर्णतः पिञ्जराभा
स्वादे तिक्ता कटूष्णा लघुपरितुलिता मर्दिता चिक्कणा स्यात् ।
दग्धा नो याति भस्म चिमिचिमि कुरुते चर्मगन्धा हुताशे
सा शुद्धा शोभनीया वरमृगतनुजा राजयोग्या प्रदिष्टा ॥

जिस कस्तूरी से केवड़ा पुष्प जैसी सुगन्ध आती हो, जिसका वर्ण पीताभ हो अर्थात् जल के साथ हाथ पर पीताभ पंक जैसा हो तथा जिसका स्वाद तिक्त या कटु हो, तुला पर तौलते समय हल्की (लघु) हो, अंगुलियों से मर्दित करने पर चिकनी हो, आग में जलाने पर भस्म नहीं होती हो, जो चिमि-चिमि (चिट्-चिट्) आवाज करती हुई सिकुड़ जाय और उसमें से अन्त में चमड़े की गन्ध निकलती हो, तो उसे श्रेष्ठ कस्तूरी समझना चाहिए। यह राजाओं के लिए उपयोगी मानी जाती है।

शोभनीया = सुन्दर या शोभायमान, वरमृगतनुजा = कस्तूरी, परिमलं = सुगन्धं।

श्रेष्ठ कस्तूरी के अन्य लक्षण (कैयदेव)

पीतः किञ्चिल्लघुरतिशयं केतकीतुल्यगन्धः
स्निग्धो दग्धो मिषिमिषिकरो भस्मभावं न याति ।
ईषत्तिक्तः कटुरपि मनाक् क्षारगन्धानुविद्धः
सम्यक् शुद्धो मत इति महीपालयोग्यो मनोज्ञः॥४३४॥

पीतवर्ण की, हल्की, केवड़े के पुष्पों जैसी अत्यन्त गन्धवाली, स्निग्ध अर्थात् अंगुलियों से हाथ पर मसलने से चिकनी, जो आग पर डालने से मिष-मिष कर धुँआ देकर सिकुड़ती है किन्तु जलकर पूर्ण रूप से राख नहीं होती। जो कुछ तिक्त, कुछ कटु तथा कुछ क्षार की महक वाली हो; इस तरह की कस्तूरी राजाओं-महाराजाओं के सेवन योग्य है, अर्थात् ऐसी कस्तूरी को श्रेष्ठ समझना चाहिए।

श्रेष्ठ कर्पूर

पक्वात्कर्पूरतः प्राहुरपक्वं गुणवत्तरम् ।
तत्रापि स्याद् यदक्षुण्णं स्फटिकाभं तदुत्तमम् ॥४३५॥
पक्वञ्च सदलं स्निग्धं हरितद्युति चोत्तरम् ।
भङ्गे मनागपि न चेन्निपतन्ति ततः कणाः ॥४३६॥
हस्ते निघृष्य कर्पूरं रेखां हस्तस्य लक्षयेत् ।
यदि सा दृश्यते विद्धि कर्पूरमतिभद्रकम् ॥४३७॥

पक्व और अपक्व दो प्रकार के कर्पूर होते हैं। पक्व से अपक्व कर्पूर अधिक गुणवान् होता है। अपक्व कर्पूर जो चूर्ण रूप नहीं हो अर्थात् डली (स्फटिकाभ) हो तथा स्वच्छ हो वह श्रेष्ठ होता है। पक्व कर्पूर दलयुक्त, चिकना, हरिद्वर्ण, तोड़ने पर जिससे छोटे-छोटे कण नहीं निकलते हों, किन्तु पत्ररूप में टूटता हो, उसे श्रेष्ठ कर्पूर समझना चाहिए। तलहथी पर घिसने से हाथ की रेखाओं में जो कर्पूर घुस जाय तथा कर्पूर पर भी हस्त रेखाएँ उभर जायें तो उसे श्रेष्ठ कर्पूर समझना चाहिए।

श्रेष्ठ कुष्ठ

मृगशृङ्गाकृति कुष्ठं कीटदोषविवर्जितम् ॥४३८॥

मृगशृंग जैसी आकृति वाला तथा कीटविद्धादि दोष से रहित कुष्ठ (कूठ) श्रेष्ठ माना जाता है।

श्रेष्ठ चन्दन

श्वेतचन्दनमत्यन्तस्निग्धं गुरु सुगन्धि च ।
भवेद्यच्चन्दनं रक्तपीतसारं तदुत्तमम् ।
यत्पाण्डुरमसारञ्च न भद्रं प्रवदन्ति तत् ॥४३९॥

जो श्वेत चन्दन अत्यन्त चिकना, भारी, बहुत सुगन्धित हो तथा बीच में से तोड़ने पर उसका मध्य भाग रक्त-पीताभ सा दिखाई देता हो, उसे श्रेष्ठ चन्दन समझना चाहिए। जो श्वेत चन्दन पाण्डु वर्ण का हो, अन्तसार शून्य हो वह चन्दन अग्राह्य है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

श्रेष्ठ और त्याज्य अगुरु

काकतुण्डाकृतिः स्निग्धो गुरुश्चैवोत्तमोऽगुरुः ।
असारं पाण्डुरं रूक्षं लघुञ्चाधममादिशेत् ॥४४०॥
नादेयं नाप्युपादेयं तित्तिरिपक्षकागुरु ।
शाल्मलीकाष्ठसङ्काशं नैव ग्राह्यं कदाचन ॥४४१॥

कौआ की चोंच जैसी आकृति वाला, स्निग्ध तथा भारी अगुरु उत्तम होता है तथा साररहित, हल्का, रूक्ष अगरु अधम होता है। नदी के किनारे उत्पन्न हुआ तथा तित्तिर पक्षाकृति वर्ण वाला, सेमल की सूखी लकड़ी जैसे हल्के अगरु को कभी भी औषध कार्य के उपयोग में नहीं लाना चाहिए।

श्रेष्ठ केशर

पाण्डुरैः केशरैस्त्यक्तं रक्तं कुङ्कुममुत्तमम् ।
हीनं द्विरागि काश्मीरं खरपाण्डुरकेशरम् ॥४४२॥

पाण्डु वर्ण का केशर त्याज्य है, रक्तवर्ण का केशर उत्तम होता है। दो रंगों से युक्त, रूक्ष और पाण्डुवर्ण का केशर श्रेष्ठ नहीं होता है।

खट्टासी (गन्धमार्जार)

खट्टासोऽनूपजः श्रेष्ठो वर्त्तुलो मांसलश्च यः ।
सम्मतो मध्यदेशीयो मध्यमो मरुजोऽधमः ॥४४३॥

आनूपदेशोत्पन्न खट्टाश (मार्जार) जो गोल एवं मोटा हो, श्रेष्ठ होता है। मध्यदेशीय खट्टाश मध्यम तथा मरुस्थलोत्पन्न खट्टाश अधम होता है।

मुरामांसी-जटामांसी

किञ्चित्पीता मुरा शस्ता मांसी पिङ्गजटाकृतिः ॥४४४॥

जो मुरामांसी कुछ पीत वर्ण की हो वह उत्तम होती है तथा जटामांसी जो कुछ पीत वर्ण की एवं जटाओं जैसी हो तो श्रेष्ठ मानी जाती है।

रेणुका

रेणुको मुद्गतुल्यो यो भद्रः स सम्मतः सताम् ॥
स्थूलो मरिचसङ्काशो गन्धकर्मणि गर्हितः ॥४४५॥

मूँग जितनी बड़ी रेणुका श्रेष्ठ मानी जाती है। मूँग से अधिक बड़ी रेणुका गन्ध कर्म में त्याज्य मानी जाती है।

मुस्तक

आनूपदेशसम्भूतो मुस्तः स्यादतिशोभनः ।
मिश्रिते मध्यमः प्रोक्तो जाङ्गलस्त्वधमो मतः ॥४४६॥

आनूप देश में उत्पन्न नागरमोथा श्रेष्ठ होता है। मिश्रित देश (आनूप-जांगम) में उत्पन्न मोथा मध्यम होता है और जांगमदेशोत्पन्न नागरमोथा अधम होता है।

जातीफल

जातीफलं सशब्दञ्च स्निग्धं गुरु च शस्यते ।
लघुकं शब्दहीनं च रूक्षाङ्गमतिनिन्दितम् ॥४५७॥

शब्द से युक्त, चिकना, भारी जायफल श्रेष्ठ होता है। जायफल के ऊपर एक कठिन आवरण होता है उसे फोड़ने के बाद जायफल निकलता है। अत: छिलका सहित जायफल को हिलाने से आवाज होती है। इसीलिए 'सशब्दं' कहा गया है। हल्का, शब्द रहित एवं रूक्ष जायफल अत्यन्त निन्दित है। इसे औषध-निर्माणार्थ नहीं लेना चाहिए।

एला-छोटी इलायची

एला कक्कोलबीजाभा सा ग्राह्या कोद्रवाकृतिः ।
या कक्कोलसमाकारा कर्पूररेणुसंयुता ॥
सरला सा त्रुटिः श्रेष्ठा विपरीता तु नेष्यते ॥४४८॥

कंकोलबीज के सदृश बीज वाली तथा कोदो जैसी बीज से युक्त इलायची श्रेष्ठ होती है। जो कंकोलबीज के समान तथा कर्पूर रेणु से युक्त तथा सरल (मृदु) हो वह श्रेष्ठ होती है। इसके विपरीत इलायची त्याज्य है।

प्रियङ्गु

या किञ्चित् पाण्डुरा श्यामा कीटदोषविवर्जिता ।
सा प्रियङ्गुर्मता भद्रा विपरीता तु निन्दिता ॥४४९॥

जो प्रियंगु पाण्डु और श्याववर्ण का हो, जिसमें कीड़े नहीं लगे हों, वह प्रियंगु श्रेष्ठ है इसके विपरीत त्याज्य है।

नखी

नखी पञ्चविधा ज्ञेया गन्धार्थं गन्धतत्परैः ।
काकोदुम्बरपत्राभा तथोत्पलदलायता ॥४५०॥
काचिदश्वखुराकारा गजकर्णसमापरा ।
वराहकर्णसङ्काशा गन्धकर्मणि गर्हिता ॥४५१॥

गन्ध कर्म में उपयोगी नखी ५ प्रकार की होती है—१. गूलरपत्राकृति, २. कमलपत्राकृति, ३. अश्वखुराकृति, ४. हस्ति-कर्णाकृति, ५. सूकरकर्णाकृति—इनमें से पाँचवी (सूकर कर्णाकृति) त्याज्य है। शेष ४ प्रकार की नखी उपयोगी है।

ग्रन्थिक

ग्रन्थिकः पाण्डुरः किञ्चित् कनिष्ठः सर्वसम्मतः ।
उत्तमः कृष्णवर्णो यः स्थूलोऽतीव च निन्दितः ॥४५२॥

पाण्डुवर्ण का एवं कुछ छोटा गठिवन औषधार्थ श्रेष्ठ है। कृष्ण एवं मोटा गठिवन निन्दित है।

उशीर

दीर्घमूलं दृढं सूक्ष्ममुत्तमं गन्धसंयुतम् ।
देशे साधारणे जातं लामज्जं भद्रकं भवेत् ॥४५३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

लम्बी मूलवाला, जो दृढ़, पतला तथा सुगन्धित हो और साधारण देश में उत्पन्न हुआ हो, ऐसा खस श्रेष्ठ होता है।

नलिका

मध्ये सारविहीना या सरसा कीटवर्जिता।
नलिका सा भवेद्भद्रा विपरीता तु निन्दिता ॥४५४॥

जिसके बीच में सार भाग (काष्ठभाग) नहीं हो, सरस और कीटरहित हो, वही नलिका श्रेष्ठ है। इसके विपरीत नलिका त्याज्य है।

शिलारस

निर्मलः कपिलः स्वच्छः सिह्लकोऽतितरां नवः।
मध्वाभो मलयुक्तश्च वर्जितो गन्धकर्मणि ॥४५५॥

निर्मल, कपिवर्णवाला, स्वच्छ और नया शिलारस श्रेष्ठ होता है। मधु जैसा एवं मैलयुक्त सिह्लक गन्धकर्म के लिए उपयुक्त नहीं है।

श्रीवास (गन्धविरोजा)

श्रीवासो भद्रकः प्रोक्तो मलकाष्ठविवर्जितः ॥४५६॥

मैल (मल) और लकड़ी रहित श्रीवास श्रेष्ठ है। यह सरल स्राव है।

लाक्षा

लाक्षा च नूतना ग्राह्या मृत्तिकादिविवर्जिता ॥४५७॥

लाख नई हो तथा लकड़ी और मिट्टी से रहित होना चाहिए।

पद्मकाष्ठ-त्वक्-पत्र

पद्मकं सरलं भद्रं कीटदोषविवर्जितम्।
जलदोषविहीनञ्च त्वक्पत्रञ्च तथैव च ॥४५८॥

जो सीधा हो, सुगन्धित हो, कीड़े आदि से भक्षित नहीं हो ऐसा पद्मकाष्ठ अच्छा होता है। जल दोष से रहित अर्थात् जो भींगे नहीं हों ऐसे दालचीनी और तेजपत्ता श्रेष्ठ होते हैं।

बालक (सुगन्धबाला)

सूक्ष्ममूलो वरः केशोऽनूतनः सरलस्तथा।
नूतनः स्थूलमूलश्च वर्जनीयः प्रयत्नतः ॥४५९॥

जिस सुगन्धबाला की मूल पतली हो, जो पुरानी हो, सीधे-सीधे टुकड़े रूप में हो वह बालक श्रेष्ठ है। नया एवं मोटा बालक त्याज्य है।

कंकोल

कक्कोलकं शुभं विद्धि वेष्टितं सूक्ष्मया त्वचा।
स्निग्धं गुरुकमत्यन्तमन्यथाऽतीवनिन्दितम् ॥४६०॥

श्रेष्ठ कंकोल उसे समझना चाहिए जो पतली एवं काली त्वचाओं से वेष्टित हो, स्निग्ध हो और चिकनी हो। इसके विपरीत लक्षणों वाली शीतलचीनी निन्दित है।

वचा

अत्युग्राऽपि सरागाऽपि ग्रन्थिला वाऽपि सम्मता।
अन्तःशुचित्वमात्रेण वचा कर्मणि गर्हिता ॥४६१॥

अत्यन्त तीव्र गन्ध से युक्त, लाल वर्ण वाली, गाँठदार वचा औषध कर्म में श्रेष्ठ मानी जाती है। इसके अतिरिक्त उपर्युक्त लक्षणों वाली वचा तोड़ने पर यदि श्वेत वर्ण की दिखाई देती हो तो उसे त्याज्य समझें।

द्वि-मुस्तं चोरपुष्पी च

द्विमुस्तं नूतनं पुष्टं गन्धाढ्यं परमं विदुः।
चोरपुष्पी नवां श्यामामामनन्ति मनीषिणः ॥४६२॥

दोनों नागरमोथा जो मोटी (पुष्ट) हो एवं गन्ध से युक्त हो, वह श्रेष्ठ मानी जाती है। जो चोर पुष्पी नयी हो, श्याव वर्ण की हो वह श्रेष्ठ मानी जाती है।

चम्पकलिका-नागकेशर

ग्राह्या प्रशोष्य सम्यक् चम्पककलिका प्रदीपकलिकेव।
कीटादिकेन रहितमभिनवमिह केशरं ग्राह्यम् ॥४६३॥

दीपक की शिखा जैसी पीतवर्ण की चम्पककलिका को सुखाकर औषधार्थ ग्रहण करें तथा कीटादि से अभक्षित नागकेशर ग्रहण करें।

मांसी-देवदारु च

ससूक्ष्मकेशरा स्निग्धा मांसी पिङ्गजटाकृतिः।
सुगन्धि लघु रूक्षञ्च सुरदारु प्रकीर्तितम् ॥४६४॥

पतले केशरों से युक्त, स्निग्ध एवं पीली जटाओं वाली जटामांसी श्रेष्ठ होती है। सुगन्धित, हल्की और रूक्ष देवदारु अच्छी मानी जाती है।

रक्तचन्दन

आकृष्णमुत्तमं नूनं रक्तञ्चेदञ्च मध्यमम्।
आरक्तमधमं विद्धि रक्तचन्दनकं त्रिधा ॥४६५॥

कृष्ण रक्त मिश्रित लालचन्दन श्रेष्ठ है, रक्तवर्ण का लाल चन्दन मध्यम है और किञ्चित् लालवर्ण का रक्तचन्दन अधम होता है। इस प्रकार लाल चन्दन ३ प्रकार का होता है।

हरिद्रा

हरिद्रा शस्यते स्थूला छेदे या कुङ्कुमच्छविः ॥४६६॥

जो हल्दी मोटी गाँठवाली हो और काटने या तोड़ने पर केशर जैसी पीत वर्ण की शोभा से युक्त हो, वह श्रेष्ठ है।

अधिवासन पुष्पाणि

केतकी यूथिका जाती चम्पकं चातिमुक्तकः।
कदम्बो मल्लिका नागपुष्पञ्च कुटजस्तथा ॥४६७॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पाटलावरुणौ सौरी पुष्पैरेभिः समाचरेत्।
वासनं कुसुमैरन्यैस्तथाऽन्यैरतिशोभनैः ॥४६८॥

केवड़ापुष्प, जूहीपुष्प, चमेलीपुष्प, चम्पा, माधवीलता, कदम्बपुष्प, मल्लिका, नागकेशर, कौरैया, गुलाबपुष्प, वरुण पुष्प तथा सूर्यमुखीपुष्प—इन पुष्पों तथा अन्य सुगन्धित पुष्पों से गन्ध द्रव्यों का अधिवासन (सुगन्धित) करना चाहिए।

श्रेष्ठ सौवर्चलादि

सौवर्चलं तु केशाभं सैन्धवं स्फटिकप्रभम् ॥४६९॥

केशों जैसा कालावर्ण का सौवर्चललवण श्रेष्ठ होता है। स्फटिक जैसा श्वेत प्रभावाला सैन्धवलवण श्रेष्ठ होता है।

मनःशिला

जवाकुसुमसङ्काशा मनोह्वा चोत्तमा मता ॥४७०॥

जपापुष्प जैसी लाल वर्ण की मनःशिला उत्तम मानी जाती है।

स्वर्णमाक्षिक

सुवर्णवच्च विज्ञेयं स्वर्णमाक्षिकमुत्तमम् ॥४७१॥

स्वर्ण जैसा पीतवर्ण का स्वर्णमाक्षिक उत्तम माना जाता है।

शिलाजीत

श्रेष्ठं शिलाजतु ज्ञेयं यत्तु क्षिप्तं न शीर्यते।
तोयपूर्णे यदा पात्रेऽप्रतान्येव विरुध्यते ॥४७२॥

शिलाजतु के टुकड़े को जल पूर्ण पात्र में डालने के बाद अपने-आप जल में फैलकर विलीन नहीं होवे, अपितु प्रतानी भूत अर्थात् तन्तु-तन्तु रूप में अर्थात् केशाकृति रूप में फैल जाय, ऐसा शिलाजीत श्रेष्ठ होता है।

शेष द्रव्यों का विपरीत लक्षण

भाद्रक्यं कीर्त्तितं येषां विरुद्धत्वं न कीर्त्तितम्।
तेषां तद्विपरीतत्वाद्विरुद्धत्वञ्च लक्षयेत् ॥४७३॥

जिन-जिन द्रव्यों की श्रेष्ठता कही गई हो किन्तु उनकी विपरीतता नहीं बतायी गई हो, तो ऐसी स्थिति में वैद्य अपनी बुद्धि से उनकी विपरीतता को समझें।

द्रव्यों की श्रेष्ठता में सामान्य हेतु

एतेषामपरेषाञ्च नवता प्रवरो गुणः ॥४७४॥

उपर्युक्त सभी द्रव्यों की श्रेष्ठता में प्रायः नवीनता प्रधान गुण है।

१०१. महासुगन्धितैल (च.द.)

प्रथमपाककल्कः

जिङ्गीचोरकदेवदारुसरलव्याघ्रीवचाचेलक-
त्वक्पत्रैः सह गन्धपत्रकशटीपथ्याऽक्षधात्रीघनैः।
एतैः शोधितसंस्कृतैः पलयुगेत्याख्यातया संख्यया
तैलप्रस्थमवस्थितैः स्थिरमतिः कल्कैः पचेद्गान्धिकैः।

द्वितीयपाककल्कः

मांसीमुरा दमनचम्पकसुन्दरीत्वग्-
ग्रन्थ्यम्बुरुङ्मरुवकैर्द्विपलैः सपृक्कैः।
श्रीवासकुन्दुरुनखीनलिकामिसीनां
प्रत्येकतः पलमुपार्ज्य पुनः पचेत्तु ॥४७६॥

तृतीयपाककल्कः

एलालवङ्गचलचन्दनजातिपूति-
कक्कोलकागुरुलताघुसृणैः पलार्द्धैः।
कस्तूरिकाऽक्षसहितामलदीप्तियुक्तैः
पक्त्वा तु मन्दशिखिनैव महासुगन्धम् ॥४७७॥
पञ्चद्विकेन वाऽर्द्धेन मदात् कर्पूरमिष्यते।
कर्पूरमदयोरर्धं पत्रकल्कादिहेष्यते ॥४७८॥

प्रथम पाक

तिलतैल २ प्रस्थ (१.५०० ली.) लें। "एतैः शोधितसंस्कृतैः पलयुगेत्याख्यातया संख्यया"—यहाँ पर पल के साथ युग् (दो) शब्द संख्या वाचक है। अतः २ पल प्रत्येक कल्क द्रव्य लेना है। वही २ संख्या प्रस्थ के लिए लगाने का उद्देश्य आचार्य का है।

कल्क-द्रव्य—१. मंजीठ, २. चोरपुष्पी, ३. देरदारु, ४. सरलकाष्ठ, ५. कण्टकारी, ६. वचा, ७. सुपारीपुष्पत्वक्, ८. दालचीनी, ९. तेजपत्र, १०. गन्धतृण, ११. गन्धशटी, १२. हरीतकी, १३. बिभीतक, १४. आमला और १५. नागरमोथा—प्रत्येक द्रव्य ९३-९३ ग्राम (२-२ फल) लें।

क्वाथ—[1]पञ्चपल्लव क्वाथ ६ लीटर और आमपत्र, जामुनपत्र, कैंथपत्र, बिजौरानिम्बुपत्र, बिल्वपत्र—प्रत्येक १५००-१५०० ग्राम लें। इन्हें यवकुट कर चौगुना जल ३० लीटर में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर तैलपाक करें।

विधि—सर्वप्रथम तिल तैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क के सभी १५ द्रव्यों का शोधन एवं साफ-सफाई कर सिल पर पीसे और कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में कल्क और पञ्चपल्लव क्वाथ मिलाकर पाक करें। क्वाथ सूख जाने पर तैलपात्र को उतारकर कपड़े से गरम-गरम छान लें। यह इस तैल का **प्रथम पाक** हुआ।

द्वितीय पाक

प्रथम पाक से प्राप्त तैल तथा —

---

१. आम्रजम्बुकपित्थानां बीजपूरकबिल्वयोः।
गन्धकर्मणि सर्वत्र पत्राणि पञ्चपल्लवम्॥ (च.द.)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कल्क-द्रव्य—१. जटामांसी, २. मुरामांसी, ३. मदनफल-पुष्प, ४. चम्पाफूल, ५. प्रियंगु, ६. दालचीनी, ७. गठिवन, ८. सुगन्धबाला, ९. कूठ, १०. मरुआदाना तथा ११. असवरग—प्रत्येक २-२ पल लें; १२. गन्धविरोजा, १३. कुन्दुरु, १४. नखी, १५. नलिका और १६. सौंफ—प्रत्येक द्रव्य ४६-४६ ग्राम (१-१ पल) लें।

पञ्चपल्लव क्वाथ ६ लीटर लें। सम्पूर्ण कल्क को सिल पर पीस कर कल्क बना लें। प्रथम पाक से प्राप्त तैल में कल्क और क्वाथ मिलाकर पाक करें। जब क्वाथ सूख जाय तो परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से उतार कर छान लें और इसे ही तृतीय पाक हेतु प्रयोग में लें।

तृतीय पाक

कल्क-द्रव्य—१. छोटी इलायची, २. लौंग, ३. शिलारस, ४. श्वेतचन्दन, ५. चमेलीफूल, ६. खट्टाशी, ७. शीतलचीनी, ८. अगुरु, ९. लताकस्तूरी—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम, (२ तोल) लें; १०. कस्तूरी (१ तोला) १२ ग्राम तथा ११. कर्पूर ६ ग्राम लें। कस्तूरी और कर्पूर को छोड़कर छोटी इलायची से लताकस्तूरी तक के सभी ९ कल्क द्रव्यों को २३-२३ ग्राम लेकर सिल पर पीसें और द्वितीय पाक से प्राप्त तैल के साथ कल्क मिला दें और पूर्वोक्त महाराजप्रसारणी तैलोक्त गन्धाम्बु ६ लीटर देकर मन्दाग्नि से पाक करें। जब गन्धोदक का जल सूख जाय तो परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और गरम-गरम कपड़े से छान लें।

कल्क में शेष तैल को जल देकर उबाल लें और उसके ऊपरी सतह पर फैले हुए तैल को कपड़े से संग्रहीत करें। जब सब तैल निकल जाय तो छोटे पात्र में उस तैल और जल के मिश्रण को आग पर पका कर जल में सुखा लें। इस तरह से कल्क स्थित तैल प्राप्त हो जाता है। हर समय कल्कों से तैल इसी तरह प्राप्त करना चाहिए। जब तैल थोड़ा गरम रहे तभी एक खरल में कस्तूरी और थोड़ा गरम तैल मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करें और सम्पूर्ण तैल में मिला दें। इसी तरह कर्पूर भी तैल में मिलावें। इस क्रिया को पत्रकल्क कहते हैं[1]। इसके बाद इस 'महासुगन्धि तैल' को साफ काच की बोतलों में रखकर कार्क एवं लेबल लगाकर संग्रहीत करें।

पत्रकल्कस्वरूप

पक्वपूतेऽप्युष्ण एव सम्यक् पेषणवर्त्तितम्।
दीयते गन्धवृद्ध्यर्थं पत्रकल्कं तदुच्यते ॥४७९॥

तैलपाक हो जाने के बाद जब तैल गरम रहता है, उसी समय उसे वस्त्र से छान लें और गरम अवस्था में ही उस तैल में कस्तूरी आदि सुगन्ध द्रव्य को पीसकर मिला देना चाहिए। उस क्रिया को पत्रकल्क कहते हैं।

१०२. लक्ष्मीविलास तैल (च.द.)

प्रागुक्तौ शुद्धिसंस्कारौ गन्धानामिह तैः पुनः।
द्विगुणैर्लक्ष्मीविलासः स्यादयं तु तैलसत्तमः ॥४८०॥
पञ्चपत्राम्बुना चाद्यो द्वितीयो गन्धवारिणा।
तृतीयोऽपि च तेनैव पाको वा धूपिताम्बुना ॥४८१॥

पहले कहे गये (उपर्युक्त) महासुगन्धितैलोक्त गन्धद्रव्यों के कल्क को शोधन एवं संस्कार के बाद ग्रहण करना चाहिए। यदि महासुगन्धितैलोक्त कल्क को शुद्धि एवं संस्कार के बाद इस (लक्ष्मीविलास तैल) में उन्हीं कल्कों को द्विगुण मात्रा में लेकर पाक किया जाय तब इस तैल को 'लक्ष्मीविलास' तैल कहते हैं। इस लक्ष्मीविलास तैल का प्रथम कल्कपाक पञ्चपल्लव क्वाथ से करें। द्वितीय कल्कपाक गन्धाम्बु (महाराजप्रासरणी में कथित) से तथा तृतीय कल्कपाक भी उसी गन्धाम्बु या अगुरु आदि गन्ध-द्रव्यों से धूपित जल के द्वारा करना चाहिए। पाकान्त में तैल को गरम-गरम छानें और 'पत्रकल्क' कस्तूरी और कर्पूर को गरम तैल में पृथक्-पृथक् मर्दन कर मिलाना चाहिए। तदुपरान्त काचपात्र में संग्रहीत करना चाहिए।

महासुगन्धि और लक्ष्मीविलास तैल के गुण

तैलयुग्ममिदं तूर्णं विकारान् वातसम्भवान्।
क्षपयेज्जनयेत् तुष्टिं कान्तिं मेधां धृतिं धियम् ॥४८२॥

ये दोनों प्रकार के महासुगन्धी तैल और लक्ष्मीविलास तैल प्रकुपित वात विकारों को शीघ्र ही नाश करते हैं तथा शरीर की पुष्टि, कान्ति, धारणाशक्ति, धैर्य और बुद्धि को बढ़ाते हैं।

मात्रा—पानार्थ ५ से १० ग्राम, नस्यार्थ २-२ बूँद। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—अत्यन्त सुगन्धित। **वर्ण**—रक्ताभ श्याव। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—वातविकार एवं शरीरपुष्टि, कान्ति, घी, धृति-स्मृतिवर्धक तथा गर्भस्थापक।

१०३. हिमसागर तैल

शतावरीरसप्रस्थे विदार्याः स्वरसे तथा।
कूष्माण्डकरसप्रस्थे धात्र्याश्च स्वरसे तथा ॥४८३॥
शाल्मल्याः स्वरसप्रस्थे तथा गोक्षुरकस्य च।
नारिकेलरसप्रस्थे तिलतैलस्य प्रस्थतः ॥४८४॥
कदल्याः स्वरसप्रस्थे क्षीरप्रस्थचतुष्टये।
अस्यौषधस्य कल्कस्य प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥४८५॥
चन्दनं तगरं वाप्यं मञ्जिष्ठा सरलागुरु।
मांसी मुरा च शैलेयं यष्टी दारु नखी शिवा ॥४८६॥

---

१. पक्वपूतेऽप्यूष्ण एव सम्यक् पेषणवर्तितम्।
दीयते गन्धवृध्यर्थं पत्रकल्कं तजुच्यते ॥ (चक्रपाणि)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पूतिका पीतिकापत्रं कुन्दुरुर्नलिका तथा।
वरी लोध्रं तथा मुस्तं त्वगेलापत्रकेशरम् ॥४८७॥
लवङ्गं जातिकोषञ्च तथा मधुरिका शटी।
चन्दनं ग्रन्थिपर्णञ्च कर्पूरं लाभतः क्षिपेत् ॥४८८॥
अस्य तैलस्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम्।
उच्चैः प्रपततो वायोर्गजतो वाजितस्तथा ॥४८९॥
उष्ट्रतो लोष्ट्रपाताच्च पङ्गूनां पीठसर्पिणाम्।
एकाङ्गशोषिणाञ्चैव तथा सर्वाङ्गशोषिणाम् ॥४९०॥
क्षतानां क्षीणशुक्राणामत्यन्तक्षयरोगिणाम्।
हनुमन्याहतानाञ्च दुर्बलानान्तथैव च ॥४९१॥
शोषिणां लल्लजिह्वानां तथा मिन्मिनभाषिणाम्।
अत्यन्तदाहयुक्तानां क्षीणानां वातरोगिणाम् ॥४९२॥
एतत्तैलं परं श्रेष्ठं विष्णुना परिकीर्त्तितम्।
हिमसागरमाख्यातं सर्ववातविकारनुत् ॥४९३॥
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः।
शिरोमध्यगता ये च शाखामाश्रित्य ये स्थिताः ॥
ते सर्वे प्रशमं यान्ति तैलस्यास्य प्रसादतः ॥४९४॥

१. तिलतैल ७५० मि.ली., २. शतावरीक्वाथ ७५० मि.ली., ३. विदारीकन्द ७५० मि.ली., ४. कूष्माण्डस्वरस ७५० मि.ली., ५. आमलास्वरस ७५० मि.ली., ६. सेमल मुशलीक्वाथ ७५० मि.ली., ७. गोक्षुरक्वाथ ७५० मि.ली., ८. नारियल का पानी ७५० मि.ली.। ९. कदलीकन्दस्वरस ७५० मि.ली. और १०. गोदुग्ध ४ प्रस्थ (३ लीटर) लें।

कल्क-द्रव्य—१. श्वेतचन्दन, २. तगर, ३. कूठ, ४. मंजीठ, ५. सरलकाष्ठ, ६. अगुरु, ७. जटामांसी, ८. मुरामांसी, ९. छरीला, १०. मुलेठी, ११. देवदारु, १२. नखी, १३. हरीतकी, १४. खट्टाशी, १५. हल्दी, १६. तेंजपत्ता, १७. कुन्दुरु, १८. नलिका, १९. शतावरी, २०. लोध, २१. नागरमोथा, २२. दालचीनी, २३. छोटी इलायची, २४. तेजपत्ता, २५. नागकेशर, २६. लौंग, २७. जावित्री, २८. सौंफ, २९. गन्धशटी, ३०. रक्तचन्दन, ३१. गठिवन तथा ३२. कर्पूर—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तत्पश्चात् सभी कल्क द्रव्यों को (कर्पूर छोड़कर ३१ द्रव्यों को) चूर्ण करें और सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में कल्क मिला दें और शतावरीस्वरस मिलाकर मृदु अग्नि पर पाक करें। शतावरी स्वरस सूखने पर गोदुग्ध देकर पाक करें। गोदुग्ध सूखने पर क्रमशः विदारीकन्दस्वरस, कूष्माण्डस्वरस, सेमलमुशलीक्वाथ, गोक्षुर-क्वाथ, नारियलजल और कदलीकन्दस्वरस दे-देकर पाक करें। एक द्रव के सूखने पर दूसरा द्रव देना चाहिए। द्रवांश सूखने की परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को छान लेना चाहिए। एक खरल में कपूर और थोड़ा गरम तैल मिलाकर मर्दन करें। ततः सम्पूर्ण छने हुए तैल में कपूर मिलाकर काचपात्र में संग्रह करें। बोतल में कार्क एवं लेबल लगा देना चाहिए।

गुण—ऊँची जगह से गिरने, हाथी, घोड़े, ऊँट से गिरने तथा ढेला-ईंटे फेंकने से चोट खाये व्यक्ति के वात विकार में, पङ्गुरोग में, पीठ के बल से धसकने वाले, एकाङ्गशोष, सर्वाङ्गशोष, क्षत एवं क्षीण शुक्र वाले व्यक्ति में, क्षयरोगी में, हनुस्तम्भ एवं मन्यास्तम्भ में, दुर्बल व्यक्तियों में, शोष रोग में, तुतलाकर (हकलाकर) बोलने वालों में, अत्यन्त दाह से पीड़ित रोगी में, क्षीण तथा वात रोगियों में यह 'हिमसागरतैल' अत्यन्त श्रेष्ठ है। इसे भगवान् विष्णु ने कहा था। यह सभी प्रकार के वात विकारों को नाश करता है। जो वात से उत्पन्न रोग हैं, पित्त से उत्पन्न रोग हैं, शिर एव मध्यशरीर में उत्पन्न होने वाले रोग तथा शाखा (रस-रक्तादि) में उत्पन्न होने वाले रोग हैं, वे सभी इस तैल के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद, बस्त्यर्थ २५ मि.ली., अभ्यङ्गार्थ १२ मि.ली.। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—सुगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—समस्त वात-पित्तजन्य विकार में।

१०४. सिद्धार्थकतैल

शतावरीस्तु निष्पीड्य रसं प्रस्थद्वयं हरेत्।
तिलतैलं पचेत् प्रस्थं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥४९५॥
शतपुष्पा देवदारु मांसी शैलेयकं बला।
चन्दनं तगरं कुष्ठमेला चांशुमती तथा ॥४९६॥
रास्ना तुरगगन्धा च समङ्गा शारिवाद्वयम्।
पृश्निपर्णी वचा चैव तथा गन्धर्वहस्तकम् ॥४९७॥
सिन्धूद्भवं समं दद्याद्विश्वभेषजमेव च।
एभिस्तैलं पचेद्धीमान् दत्त्वाऽऽर्द्रकरसं समम् ॥४९८॥
कुब्जाश्च वामना ये च पङ्गुपादाश्च ये नराः।
महावातेन ये रुग्णा अङ्गसंकुचिताश्च ये ॥४९९॥
तेषां हितमिदं तैलं सन्धिवाते च शस्यते।
येषां शुष्यति चैकाङ्गं गतिर्येषाञ्च विह्वला ॥५००॥
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा जरया जर्जरीकृताः।
अमेधसश्च बधिरास्तेषामपि परं हितम् ॥५०१॥
मासमेकं पिबेद्यस्तु यौवनस्थः पुनर्भवेत्।
सिद्धार्थकमिति ख्यातं नरनारीहिताय वै ॥५०२॥

१. तिलतैल ७५० मि.ली., २. शतावरीक्वाथ १५०० मि.ली., ३. गोदुग्ध ३ लीटर, ४. आर्द्रकस्वरस ७५० मि.ली. तथा सम्यक् पाकार्थ जल ३ लीटर।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

कल्क-द्रव्य—१. सौंफ, २. देवदारु, ३. जटामांसी, ४. छरीला, ५. बलामूल, ६. रक्तचन्दन, ७. तगर, ८. कूठ, ९. छोटी इलायची, १०. शालपर्णी, ११. रास्ना, १२. अश्वगन्धा, १३. मंजीठ, १४. कृष्णसारिवा, १५. श्वेतसारिवा, १६. पृश्निपर्णी, १७. वचा, १८. एरण्डमूलत्वक्, १९. सैन्धव लवण तथा २०. सोंठ—प्रत्येक १०-१० ग्राम लें।

सर्वप्रथम तैल का मूर्च्छन करें। ततः सौंफ से सोंठ तक के सभी २० द्रव्यों को प्रत्येक १०-१० ग्राम लेकर चूर्ण करें फिर सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में कल्क और शतावरीक्वाथ मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। शतावरीस्वरस सूखने पर उसमें गोदुग्ध देकर पाक करें। गोदुग्ध सूखने पर आर्द्रकस्वरस देकर पाक करें। अन्त में सम्यक् पाक हेतु ३ लीटर जल देकर पाक करें। जब सम्पूर्ण जलीयांश सूख जाय तो सुपक्व पाक की परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से उतारकर कपड़े से छान लें और शीतल होने पर बोतलों में भरकर कार्क और लेबल लगा दें।

गुण-धर्म—कुब्ज, वामन, पङ्गु, महावात से पीड़ित तथा जिसके अङ्ग संकुचित हो गये हैं—इनके लिए यह सिद्धार्थक तैल बहुत उपयोगी है। सन्धिवात के लिए भी यह तैल उपयोगी है। जिसके एकाङ्ग सूख रहे हों, चलने में जिसकी चाल विह्वल (लड़खड़ा कर) गति से होती है, जिसकी इन्द्रियाँ क्षीण हैं, जिनके शुक्र नष्ट हो गये हैं, बुढ़ापे के कारण जिसका शरीर जर्जर हो गया हो, नष्ट मेधा वाले व्यक्ति तथा बधिर व्यक्ति के लिए यह तैल अत्युपयोगी है। १ मास तक इस तैल को पीने से मनुष्य फिर से युवा हो जाता है। पुरुषों एवं स्त्रियों के कल्याणार्थ इस 'सिद्धार्थक तैल' का निर्माण किया गया है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद बस्ति में २५ से ५० मि.ली., अभ्यङ्गार्थ १० मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध एवं चीनी से। **गन्ध**—सुगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार एवं रसायनकर्मोपयोगी।

१०५. नकुलतैल (हारीत सं.)

मधुकं जीरकं रास्ना सैन्धवं शतपुष्पिका।
यवानी मरिचं कुष्ठं विडङ्गं गजपिप्पली ॥५०३॥
सौवर्चलञ्चाजमोदा बला षड्ग्रन्थिका तथा।
ग्रन्थिकं शैलजं मांसी कर्षमेषां पृथक् पृथक् ॥५०४॥
विनीय पाचयेत्तैलं प्रस्थं रुबुकसम्भवम्।
प्रस्थे नकुलमांसस्य क्वाथे च दशमूलजे ॥५०५॥
प्रस्थे च काञ्जिकस्यापि मस्तुप्रस्थे तथैव च।
सिद्धं तैलमिदं हन्ति कम्पवातं सुदारुणम् ॥५०६॥
हस्तकम्पं शिरःकम्पं बाहुकम्पञ्च नाशयेत्।
आमवातं सशूलञ्च सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥५०७॥
पानाभ्यञ्जनबस्तीभिर्नाशयेन्नात्र संशयः।
आढ्यवातं कटीपृष्ठजानुजङ्घाश्रितं तथा ॥५०८॥
सन्धिस्थं वातमाश्वेव जयेन्नकुलसंज्ञकम्।
हारीतभाषितमिदं तैलं हितचिकीर्षया ॥५०९॥
वैद्यानां सारभूतानां शतेनापि समुज्झितम्।
वातव्याधिं निहन्त्याशु कम्पवातं विशेषतः ॥
अशीतिं वातजान् रोगान्नाशयेदाशु देहिनाम् ॥५१०॥

१. एरण्डतैल ७५० मि.ली. (१ प्रस्थ), २. एरण्डमूल क्वाथ ७५० मि.ली., ३. नकुल (नेवले) का मांसरस ७५० मि.ली., ४. दशमूलक्वाथ ७५० मि.ली., ५. काञ्जी ७५० मि.ली. और ६. मस्तु (दही का पानी) ७५० मि.ली. लें।

कल्क-द्रव्य—१. मुलेठी, २. श्वेतजीरा, ३. रास्ना, ४. सैन्धवलवण, ५. सौंफ, ६. अजवायन, ७. मरिच, ८. कूठ, ९. विडङ्ग, १०. गजपीपर, ११. सौवर्चललवण, १२. अजमोदा, १३. बलामूल, १४. वचा, १५. गठिवन, १६. छरीला और १७. जटामांसी—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम एरण्डतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्यों के सभी १७ द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित एरण्डतैल में कल्क और एरण्डमूलत्वक् क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। एरण्डक्वाथ सूखने पर नकुलमांस रस देकर पाक करें। इसी तरह मांसरस सूखने पर क्रमशः दशमूलक्वाथ, काञ्जी, मस्तु (दही का पानी) देकर पाक करें। एक क्वाथ सूखने पर दूसरा क्वाथ डालें। जब सभी क्वाथ एवं अन्य द्रव तैल में पक्व हो जाय तो पाकपरीक्षोपरान्त स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर छान लें तथा काचपात्र में कार्क एवं लेबल लगाकर सुरक्षित रखें।

गुण धर्म—इस सिद्ध तैल के प्रयोग से भयंकर कम्पवात, हस्तकम्प, शिरःकम्प, बाहुकम्प, आमवात तथा सभी उपद्रवों से युक्त उदरशूल को यह निःसन्देह नष्ट करता है। इस तैल को पीने से, अभ्यङ्ग और बस्ति-प्रयोग से सम्पूर्ण वातविकारों का नाश होता है। आढ्यवात (वातरक्त), कटिशूल, जानुवात, जंघावात, सन्धिवात को नष्ट करता है। वैद्य और रोगियों के हितार्थ आचार्य हारीत द्वारा कथित यह नकुल तैल शीघ्र ही रोगों को नष्ट करता है। वातव्याधि विशेषकर कम्पवात को शीघ्र नष्ट करता है। मनुष्यों के ८० प्रकार के वातरोगों को यह तैल शीघ्र नष्ट करता है।

मात्रा—पानार्थ १०-२५ मि.ली., बस्ति में २५ से ५० मि.ली. तथा अभ्यङ्गार्थ १० मि.ली.। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

गन्ध—सुगन्ध एवं मांसगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार।

१०६. महाकुक्कुटमांस तैल ( )

माषस्यार्द्धाढकं देयं दशमूल्यास्तुलाऽर्द्धकम्।
बलामूलञ्च तस्यार्द्धं केतकीनां तथैव च ॥५११॥
दक्षमांसपलं त्रिंशज् झिण्टिकापञ्चविंशतिः।
जलद्रोणद्वये पक्त्वा पादशेषेऽवतारिते ॥५१२॥
तिलतैलस्य च प्रस्थं पयो दत्त्वा चतुर्गुणम्।
जीवनीयानि यान्यष्टौ मञ्जिष्ठाचव्यकट्फलम् ॥५१३॥
व्योषं रास्ना कणामूलं मधुकं पुष्करं तथा।
माषात्मगुप्ते सैरण्डा शताह्वा लवणत्रयम् ॥५१४॥
कृष्णाऽश्वगन्धा ह्यमृता यमानीन्द्रवरी शटी।
नागरं मागधी मुस्तं वर्षाभू रजनीद्वयम् ॥५१५॥
शतावरी बृहत्यौ च एतैरक्षसमन्वितैः।
पक्षाघातेषु सर्वेषु ह्यर्दिते च हनुग्रहे ॥५१६॥
मन्दश्रुतौ चाश्रवणे तिमिरे च त्रिदोषजे।
हस्तकम्पे शिरःकम्पे गात्रकम्पे शिरोग्रहे ॥५१७॥
शस्तं कलायखञ्जे च गृध्रस्यामवबाहुके।
बाधिर्ये कर्णनादे च सर्ववातविकारनुत् ॥५१८॥
दण्डापतानके चैव मन्यास्तम्भे विशेषतः।
हनुस्तम्भे प्रशस्तं स्यात्सूतिकाऽऽतङ्कनाशनम् ॥५१९॥
त्वच्यं मांसप्रदं चैव शुक्राग्निबलवर्द्धनम्।
अण्डवृद्ध्यन्त्रवृद्धी वा वातरक्तं च नाशयेत् ॥५२०॥

तिलतैल ७५० मि.ली., उड़द १५०० ग्राम तथा दशमूल यवकुट २५०० ग्राम लें।

क्वाथ-द्रव्य—१. बलामूल १२५० ग्राम, २. केवड़ा फूल का मूल १२५० ग्राम, ३. मुर्गा का मांस १५०० ग्राम, ४. सहचर १२५० ग्राम, ५. गोदुग्ध ६ ली. तथा जल २४ लीटर लें।

कल्क-द्रव्य—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. मेदा, ४. महामेदा, ५. ऋद्धि, ६. वृद्धि, ७. काकोली, ८. क्षीरकाकोली, ९. मंजीठ, १०. चव्य, ११. कट्फल, १२. सोंठ, १३. पीपर, १४. मरिच, १५. रास्ना, १६. पिपरामूल, १७. मुलेठी, १८. पुष्करमूल, १९. उड़द, २०. कपिकच्छूबीज, २१. एरण्डमूलत्वक्, २२. सौंफ, २३. सैन्धव, २४. सामुद्रलवण, २५. सौवर्चललवण, २६. पीपर, २७. अश्वगन्धा, २८. गुडूची, २९. अजवायन, ३०. इन्द्रयव, ३१. शतावरी, ३२. कचूर, ३३. सोंठ, ३४. पीपर, ३५. नागरमोथा, ३६. पुनर्नवा, ३७. हल्दी, ३८. दारुहल्दी, ३९. शतावरी, ४०. बृहती और ४१. कण्टकारी—ये प्रत्येक द्रव्य १२-१२ एवं ग्राम द्विरुक्त द्रव्यों को दो गुना लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः सभी कल्क द्रव्यों को कूटकर चूर्ण करें और इन्हें जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। उड़द, दशमूल, बला, केवड़ामूलत्वक्, बलामूल तथा सहचर—इन सभी ६ द्रव्यों को पृथक्-पृथक् यवकुट कर एक साथ मिला दें। मुर्गे के मांस के भी छोटे-छोटे टुकड़े कर लें। इन्हें एक साथ मिलाकर २६ ली. जल में क्वाथ करें। क्वाथपात्र के मुख को ढककर रखें। जब चौथाई शेष रहे और मांस सिद्ध हो जाय तो उतारकर कपड़े से छान लें। मूर्च्छित तिलतैल में उक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। जब यह क्वाथ सूख जाय तो इस तैल में चौगुना गोदुग्ध देकर पाक करें। दूध सूखने पर कल्क के सम्यक् पाक हेतु चौगुना जल देकर पाक करें। जब जल सूख जाय तो परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें।

गुण-धर्म—सभी पक्षाघात, अर्दित, हनुग्रह, कम सुनना, बाधिर्य, त्रिदोषज तिमिर, हस्तकम्प, शिरःकम्प, गात्रकम्प, शिरोग्रह, कलायखञ्ज, गृध्रसी, अवबाहुक, कर्णनाद, सभी प्रकार के वात विकार, मन्यास्तम्भ, दण्डापतानक, हनुस्तम्भ, सूतिका रोगों और वातरक्त रोग नाशक है। यह तैल त्वचा के लिए हितकर है, मांस और शुक्रवर्धक है, अग्नि और बलवर्धक है। अण्डवृद्धि तथा आन्त्रवृद्धि नाशक है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद, बस्त्यर्थ ५० मि.ली.। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्ध तथा मांसगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकारों में उपयोगी।

१०७. माषतैल-१ (च.द.)

तैलं सङ्कुचितेऽभ्यङ्गो माषसैन्धवसाधितम्।
बाहुशीर्षगते नस्यं पानं चौत्तरभक्तिकम् ॥
क्वाथोऽत्र माषनिष्पाद्यः सैन्धवं कल्कमेव च ॥५२१॥

तिलतैल १ ली., उड़द ४ कि. तथा सैन्धवलवण २५० ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः माष (उड़द) को यवकुट कर चौगुने जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छानकर उक्त मूर्च्छित तैल में मिला दें। इसके बाद सैन्धवलवण-चूर्ण तैल में मिला दें और मन्दाग्नि पर पाक करें। जब माष-क्वाथ सूख जाय तो पुनः उक्त तैल में ४ ली. जल मिलाकर पाक करें। जल सूखने पर तैल को कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस साधित तैल के प्रयोग से वायु के कारण संकुचित गात्र वाले रोगी को अभ्यङ्ग कराने से बहुत लाभ होता है। बाहु और शिर में स्थित वायु के विनाश के लिए इस तैल का नस्य और भोजन के बाद पान लाभदायक है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

मात्रा—पानार्थ—१० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद, बस्त्यर्थ ५० मि.ली.। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—भूने हुए उड़द जैसी (सोंधी गन्ध)। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—लवणीय। **उपयोग**—वातविकार, अङ्गशोष, बाहु एवं शिरस्थ वात में।

१०८. माषतैल-२ (चक्रदत्त)

माषात्मगुप्ताऽतिविषोरुबूक-
रास्नाशताह्वालवणैः प्रपिष्टैः।
चतुर्गुणे माषबलाकषाये
तैलं कृतं हन्ति च पक्षवातम् ॥५२२॥

तिलतैल ४ लीटर, माष (उड़द) १६ कि. तथा बलामूल १६ किलो लें।

कल्क-द्रव्य—१. उड़द, २. केवाँचबीज, ३. अतीस, ४. एरण्डमूलत्वक्, ५. रास्ना, ६. सौंफ तथा ७. सैन्धवलवण—प्रत्येक द्रव्य १४० ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क के ७ द्रव्यों का चूर्ण करें और पुनः सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। तदनन्तर बलामूल और उड़द को पृथक्-पृथक् यवकुट करें तथा चतुर्गुण जल में पृथक्-पृथक् क्वाथ करें, चौथाई अवशेष रहने पर छान लें। अब मूर्च्छित तैल-पात्र में कल्क और माषक्वाथ मिलाकर पाक करें, क्वाथ सूखने पर माष क्वाथ जैसा बलामूल में यवकुट बनाकर क्वाथ करें और इस क्वाथ को भी उपर्युक्त तैल में शनैः-शनैः पाक करें। इस क्वाथ के सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ४ गुना जल देकर कल्क का पाक करें। जब जल सूख जाय तो परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें।

गुण-धर्म—पक्षाघात में यह तैल अत्युपयोगी है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्य ३-३ बूँद, बस्त्यर्थ ५० मि.ली., **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—भुने हुए उड़द जैसा (सोंधा)। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—लवणीय तिक्त। **उपयोग**—पक्षाघात में।

१०९. माषतैल-३ (चक्रदत्त)

माषप्रस्थं समावाप्य पचेत् सम्यग् जलाढके।
पादशेषे रसे तस्मिन् क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ॥५२३॥
प्रस्थञ्च तिलतैलस्य कल्कं दत्त्वाऽक्षसम्मितम्।
जीवनीयानि यान्यष्टौ शतपुष्पां ससैन्धवाम् ॥५२४॥
रास्नाऽऽत्मगुप्ता मधुकं बलाव्योषत्रिकण्टकम्।
पक्षाघातार्दिते वाते कर्णशूले च दारुणे ॥५२५॥
मन्दश्रुतौ चाश्रवणे तिमिरे च त्रिदोषजे।
हस्तकम्पे शिरःकम्पे विश्वाच्यामवबाहुके ॥५२६॥
शस्तं कलायखञ्जे च पानाभ्यञ्जनबस्तिभिः।
माषतैलमिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥५२७॥

तिलतैल ७५० मि.ली. लें। **क्वाथ**—उड़द ७५० ग्राम तथा गोदुग्ध ३ लीटर लें। **कल्क**—१. जीवक, २. ऋषभक, ३. ऋद्धि, ४. वृद्धि, ५. मेदा, ६. महामेदा, ७. काकोली, ८. क्षीरकाकोली, ९. सौंफ, १०. सैन्धवलवण, ११. रास्ना, १२. केवाँचबीज, १३. मुलेठी, १४. बलामूल, १५. सोंठ, १६. पीपर, १७. मरिच और १८. गोक्षुर—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तदनन्तर उड़द को यवकुट कर चौगुना जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर सभी कल्क द्रव्यों का चूर्ण कर पुनः जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब उक्त मूर्च्छित तैल में कल्क और माष क्वाथ देकर मन्दाग्नि से पाक करें। क्वाथ सूखने पर चार गुना गोदुग्ध देकर पाक करें। दूध सूखने पर कल्क के सम्यक् पाक हेतु तैल का चार गुना जल देकर पाक करें। जल सूखने पर परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। लेबल, कार्क लगा दें।

गुण-धर्म—पक्षाघात, अर्दितवात, भयंकर कर्णशूल, कम सुनने में, बधिरता, त्रिदोषज तिमिर, हस्तकम्प, शिरःकम्प, विश्वाची, अवबाहुक, कलायखञ्ज और ऊर्ध्वजत्रुगत रोग में बहुत लाभ होता है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., बस्त्यर्थ ५० मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद, अभ्यंगार्थ १० मि.ली.। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—भुने उड़द जैसा (सोंधा)। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—पक्षाघात, अर्दित आदि वातविकारों में।

११०. माषतैल-४ (चक्रदत्त)

माषातसीयवकुरण्टककण्टकारी-
गोक्षुण्टटुण्टुकजटाकपिकच्छुतोयैः।
कार्पासकास्थिशणबीजकुलत्थकोल-
क्वाथेन बस्तपिशितस्य रसेन चापि ॥५२८॥
शुण्ठ्या समागधिकया शतपुष्पया च
सैरण्डमूलसपुनर्नवया सरण्या।
रास्नाबलाऽमृतलताकटुकैर्विपक्वं
माषाख्यमेतदवबाहुहरञ्च तैलम् ॥५२९॥
अर्द्धाङ्गशोषमपतानकमाढ्यवात
माक्षेपकं सभुजकम्पशिरःप्रकम्पम्।
नस्येन बस्तिविधिना परिषेचनेन
हन्यात्कटीजघनजानुरुजश्च सर्वाः ॥५३०॥

तिलतैल ४ लीटर लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

क्वाथ—१. उड़द, २. अतसीबीज, ३. यव, ४. सहचर, ५. कण्टकारी, ६. गोक्षुर, ७. सोनापाठामूलत्वक्, ८. केवाँचबीज, ९. कपासबीज, १०. शणबीज, ११. कुलत्थ तथा १२. बदरीवृक्षत्वक्—प्रत्येक द्रव्य ३३५ ग्राम लें। बकरे का मांस ४ किलो तथा क्वाथार्थ जल १६ लीटर (चौथाई शेष)।

कल्क—१. सोंठ, २. पीपर, ३. सौंफ, ४. एरण्डमूलत्वक्, ५. पुनर्नवामूल, ६. प्रसारणी, ७. रास्ना, ८. बलामूल, ९. गुडूची और १०. कटुकी—प्रत्येक द्रव्य १०० ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण करें और पुनः जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। तदनन्तर क्वाथ के सभी द्रव्यों को पृथक्-पृथक् यवकुट कर एक साथ मिलाकर कुल ४ किलो लें और आठ गुना जल देकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित तैल में मिला लें तथा इस तैल में कल्क मिलाकर चूल्हे पर चढ़ाकर मध्यमाग्नि से पाक करें। जब तैल में क्वाथ सूख जाय तो इस तैल में मांसरस ४ लीटर डालकर पकावें। जब मांसरस भी सूख जाय तो कल्क के सम्यक् पाकार्थ ४ गुना जल देकर पुनः पाक करना चाहिए। जल सूखने पर स्नेहपाक परीक्षोपरान्त सुपक्व होने पर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को कपड़े से छान लेना चाहिए और शीतल होने पर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। लेबल और कार्क लगाकर रखना उचित है।

गुण-धर्म—इस माष तैल को नस्य, पान, बस्ति एवं अभ्यङ्ग विधि से अवबाहुक, अर्धाङ्गशोष, अपतानक, वातरक्त, आक्षेपवात, बाहुकम्प, शिरःकम्प, कटी, जघन एवं जानुरुजा नाशार्थ प्रयोग करें।

मात्रा—१० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद, बस्त्यर्थ ५० मि.ली.। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—मांसगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार नाशक है।

१११. माषतैल-५ (षट्प्रस्थीय) (च.द.)

माषक्वाथे बलाक्वाथे रास्नाया दशमूलजे।
यवकोलकुलत्थानां छागमांसरसे पृथक् ॥५३१॥
प्रस्थे तैलस्य च प्रस्थं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम्।
रास्नाऽऽत्मगुप्तासिन्धूत्थशताह्वैरण्डमुस्तकैः ॥५३२॥
जीवनीयबलाव्योषैः पचेदक्षसमैर्भिषक्।
हस्तकम्पे शिरःकम्पे बाहुशोषेऽवबाहुके ॥५३३॥
बाधिर्ये कर्णशूले च कर्णनादे च दारुणे।
विश्वाच्यामर्दिते कुब्जे गृध्रस्यामपतानके ॥५३४॥
बस्त्यभ्यञ्जनपानेषु नावने च प्रयोजयेत्।
माषतैलमिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥
क्वाथप्रस्थाः षडेवात्र विभक्त्यन्तेन दर्शिताः ॥५३५॥

१. तिलतैल १ प्रस्थ (७५०मि.ली. तथा बकरे का मांस ७५०) ग्राम लें।

क्वाथ—१. उड़द ७५० ग्राम, २. बलामूल ७५० ग्राम, ३. रास्ना ७५० ग्राम, ४. दशमूल ७५० ग्राम; ५. यव, ६. कोल तथा ७. कुलत्थ—तीनों द्रव्य प्रत्येक २५०-२५० ग्राम लें। तीनों को एक साथ यवकुट कर क्वाथ करें। मांस १ प्रस्थ लेकर मांसरस बना लें। गोदुग्ध ३ लीटर (१ आढक) लें।

कल्क—१. रास्ना, २. केवाँचबीज, ३. सैन्धवलवण, ४. सौंफ, ५. एरण्डमूलत्वक्, ६. नागरमोथा, ७. जीवक, ८. ऋषभक, ९. मेदा, १०. महामेदा, ११. काकोली, १२. क्षीरकाकोली, १३. ऋद्धि, १४. वृद्धि, १५. जीवन्ती, १६. मुलेठी, १७. मुद्गपर्णी, १८. माषपर्णी, १९. बलामूल, २०. सोंठ, २१. पीपर और २२. मरिच—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम तैल का मूर्च्छन करें। ततः सभी कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बनाकर मूर्च्छिततैल में मिला दें। तदनन्तर प्रत्येक क्वाथ द्रव्यों को पृथक्-पृथक् यवकुट कर चौगुने जल में अलग-अलग क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान कर तैल में मिलाकर मृद्वग्नि पर पाक करें। इसी तरह क्रमशः ५ द्रव्यों का क्वाथ कर तैल में पाक करें। इसके बाद मांसरस बनाकर तैल में पाक करें। मांस चौगुना जल में पकावें तथा चौथाई शेष रहने पर छानकर तैल में पकावें। इसके बाद गोदुग्ध देकर तैलपाक करें। सर्वान्ते तैल से ४ गुना जल देकर कल्क का सम्यक् पाक करें। पाक परीक्षोपरान्त चूल्हे से तैलपात्र को नीचे उतारकर कपड़े से छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में रखकर लेबल और कार्क लगा दें।

गुण-धर्म—हस्तकम्प, शिरःकम्प, बाहुशोष, अवबाहुक, बधिरता, कर्णशूल, दारुणकर्णनाद, विश्वाची, अर्दित, कुब्ज, गृध्रसी, अपतानक तथा ऊर्ध्वजत्रुगत विकारों को यह सप्त-प्रस्थीय माष तैल नष्ट करता है। इस तैल का प्रयोग बस्ति, अभ्यंग, पान और नस्य द्वारा करना चाहिए।

इस तैल में ६ प्रस्थ क्वाथ का प्रयोग किया गया है।

११२. महामाषतैल-६ (सामिष) (चक्रदत्त)

माषस्यार्द्धाढकं दत्त्वा तुलाऽर्द्धं दशमूलतः।
पलानिच्छागमांसस्य त्रिंशद् द्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥५३६॥
पूतशीते कषाये च चतुर्थांशावशेषिते च।
प्रस्थञ्च तिलतैलस्य पयो दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥५३७॥
आत्मगुप्तोरुबूकश्च शताह्वा लवणत्रयम्।
जीवनीयानि मञ्जिष्ठा चव्यचित्रककट्फलम् ॥५३८॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सव्योषं पिप्पलीमूलं रास्नामधुकसैन्धवम्।
देवदार्वमृताकुष्ठं वाजिगन्धा वचा शटी ॥५३९॥
एतैरक्षसमैर्भागैः साधयेन्मृदुनाऽग्निना।
पक्षाघातेऽर्दिते वाते बाधिर्ये हनुसंग्रहे ॥५४०॥
कर्णनादे शिरःशूले तिमिरे च त्रिदोषजे।
पाणिपादशिरोग्रीवाभ्रमणे मन्दचङ्क्रमे ॥५४१॥
कलायखञ्जे पाङ्गुल्ये गृध्रस्यामवबाहुके।
पाने बस्तौ तथाऽभ्यङ्गे नस्यकर्णाक्षिपूरणे ॥
तैलमेतत्प्रशंसन्ति सर्ववातरुजापहम् ॥५४२॥

तिलतैल १ प्रस्थ (७५० ली.) तथा गोदुग्ध ३ लीटर लें।

क्वाथ—उड़द १५०० ग्राम, दशमूल यवकुट २५०० ग्राम, बकरे का मांस २९०० ग्राम और पाकार्थ जल १ द्रोण (१२ ली.) लें।

कल्क—१. केवाँचबीज, २. एरण्डमूलत्वक्, ३. सौंफ, ४. सैन्धवलवण, ५. सामुद्रलवण, ६. सौवर्चललवण, ७. जीवक, ८. ऋषभक, ९. मेदा, १०. महामेदा, ११. काकोली, १२. क्षीरकाकोली, १३. ऋद्धि, १४. वृद्धि, १५. जीवन्ती, १६. मुलेठी, १७. माषपर्णी, १८. मुद्गपर्णी, १९. मंजीठ, २०. चव्यमूल, २१. चित्रकमूल, २२. कट्फल, २३. सोंठ, २४. पीपर, २५. मरिच, २६. पिपरामूल, २७. रास्ना, २८. मुलेठी, २९. सैन्धवलवण, ३०. देवदारु, ३१. गुडूची, ३२. कूठ, ३३. अश्वगन्धा, ३४. वचा और ३५ कपूर—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तदनन्तर सभी कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर चूर्ण करें, पुनः सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। इसके बाद उड़द एवं दशमूल दोनों को अलग-अलग यवकुट करें और दोनों को मिला दें, उसी में मांस टुकड़े भी मिला दें और १२ ली. जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। उपर्युक्त मूर्च्छित तैल में कल्क और क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूख जाय तो उसमें ३ लीटर दूध मिलाकर पाक करें। जब दूध सूख जाय तो ३ लीटर जल देकर पुनः पाक करें। जब जल सूख जाय तो तैलपाक परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में सुरक्षित कर लेबल एवं कार्क लगा दें।

गुण-धर्म—पक्षाघात, अर्दित, बाधिर्य, हनुग्रह, कर्णनाद, शिरःशूल, त्रिदोषज तिमिर, हस्तकम्प, पादकम्प, शिरःकम्प, ग्रीवाकम्प, चलने-फिरने में कष्ट, कलायखञ्ज, पङ्गुता, गृध्रसी, अवबाहुक और सभी वातविकारों का यह तैल नाश करता है। इसका प्रयोग पान, बस्ति, अभ्यङ्ग और नस्य के द्वारा करना चाहिए।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्य ३-३ बूँद, बस्ति ५० मि.ली.। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—मांस गन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ, श्याव। **स्वाद**—तिक्त-लवणीय। **उपयोग**—समस्त वातविकार में।

११३. महामाषतैल-७ (निरामिष) (च.द.)

द्विपञ्चमूलीं निःक्वाथ्य तैलात्षोडशभिर्गुणैः।
माषाढकं साधयित्वा तन्निर्यूहं चतुर्गुणम् ॥५४३॥
ग्राहयित्वा तु विपचेत्तैलप्रस्थं पयः समम्।
कल्कार्थं च समावाप्य भिषग्द्रव्याणि बुद्धिमान् ॥५४४
अश्वगन्धां शटीं दारु बलां रास्नां प्रसारणीम्।
कुष्ठं परूषकं भार्गी द्वे विदार्यौ पुनर्नवाम् ॥५४५॥
मातुलुङ्गफलाजाज्यौ रामठं शतपुष्पिकाम्।
शतावरीं गोक्षुरकं पिप्पलीमूलचित्रकौ ॥५४६॥
जीवनीयगणं सर्वं संहृत्यैव ससैन्धवम्।
तत्साधुसिद्धं विज्ञाय माषतैलमिदं महत् ॥५४७॥
बस्त्यभ्यञ्जनपानेषु नावनेषु प्रशस्यते।
पक्षाघाते हनुस्तम्भे अर्दिते सापतन्त्रके ॥५४८॥
अवबाहुकविश्वाच्योः खञ्जपाङ्गुल्ययोरपि।
शिरोमन्याग्रहे चैव अधिमन्थे च वातिके ॥५४९॥
शुक्रक्षये कर्णनादे कर्णक्ष्वेडे च दारुणे।
कलायखञ्जशमने भैषज्यमिदमादिशेत् ॥५५०॥

दशमूलयवकुट ३ कि. तथा उड़द ३ कि. को पृथक्-पृथक् १-१ द्रोण (१३-१३ ली.) जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। तिल तैल १ प्रस्थ (७५० मि.ली.) तथा दूध ७५० मि.ली. (१ प्रस्थ) लें।

कल्क—१. अश्वगन्धा, २. कचूर, ३. देवदारु, ४. बलामूल, ५. रास्ना, ६. गन्धप्रसारणी, ७. कूठ, ८. फालसा फल, ९. भारङ्गी, १०. क्षीरविदारी, ११. विदारीकन्द, १२. पुनर्नवा मूल, १३. बिजौरानीबूबीज, १४. श्वेतजीरा, १५. हींग, १६. सौंफ, १७. शतावरी, १८. गोक्षुर, १९. पिपरामूल, २०. चित्रकमूल, २१. जीवक, २२. ऋषभक, २३. मेदा, २४. महामेदा, २५. ऋद्धि, २६. वृद्धि, २७. काकोली, २८. क्षीरकालोली, २९. जीवन्ती, ३०. मुलेठी, ३१. माषपर्णी, ३२. मुद्गपर्णी और ३३. सैन्धवलवण—ये ३३ द्रव्य प्रत्येक ६-६ ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्य के सभी द्रव्य यथा प्रमाण में लेकर कूट-पीस लें और पुनः जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में कल्क तथा उपर्युक्त क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। क्वाथ सूखने पर इस तैल में १ प्रस्थ दूध देकर पाक करें। जब दूध सूख जाय तो ३ लीटर जल देकर कल्क का सम्यक् पाक करें। जल सूखने पर पाकपरीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

उतारकर कपड़ा से छान लें। शीतल होने पर बोतलों में तैल रखकर लेबल और कार्क लगाकर सुरक्षित कर लें। वातरोगों में पान, नस्य, बस्ति तथा अभ्यङ्ग विधि से प्रयोग करें।

गुण-धर्म—इस तैल के प्रयोग से पक्षाघात, हनुस्तम्भ, अर्दित, अपतन्त्रक, अवबाहुक, विश्वाची, खञ्ज, पङ्गुता, शिरोग्रह, मन्याग्रह, अधिमन्थ, शुक्रक्षय, कर्णनाद, भयंकर कर्णक्ष्वेड तथा कलायखञ्ज आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद, बस्ति ५० मि.ली.। **अनुपान**—गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—तैल पक्व उड़द जैसा (सोंधा)। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकार में।

११४. माषबलादि तैल-८

माषक्वाथे बलाक्वाथे रास्नाया दशमूलजे।
प्रसारण्याः शताह्वायाः प्रस्थं दद्याद्भिषग्वरः ॥५५१॥
तत्क्वाथस्तैलसमो दधि क्षीरं समं समम्।
लाक्षारसं काञ्जिकं च तिलतैलं प्रदापयेत् ॥५५२॥
शतावरीविदार्योश्च रसं तैलार्द्धमेव च।
शताह्वा मधुरी मेथी रास्ना वारणपिप्पली ॥५५३॥
मुस्तकं चाश्वगन्धा च उशीरं मधुयष्टिका।
शालपर्णी पृश्निपर्णी बला च बहुपुत्रिका ॥५५४॥
पलद्वयं गृहीत्वा च तैलपात्रे प्रदापयेत्।
वातरोगं निहन्त्याशु मन्यास्तम्भं नियच्छति ॥५५५॥
हनुस्तम्भविकारं च जिह्वादन्तगलग्रहान्।
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति गात्रकम्पादिकं जयेत् ॥
एतान् हरति रोगांश्च तैलं माषबलादिकम् ॥५५६॥

तिलतैल ४.५०० ली. लें।

क्वाथ—१. माष ७५० ग्राम, २. बलामूल ७५० ग्राम, ३. रास्ना ७५० ग्राम, ४. दशमूल, ७५० ग्राम, ५. प्रसारणी ७५० ग्राम, ६. सौंफ ७५० ग्राम, ७. लाक्षारस ७५० मि.ली., ८. काञ्जी ७५० मि.ली., ९. शतावरीरस ३७५ मि.ली., १०. विदारीकन्दरस ३७५ मि.ली., ११. गोदुग्ध ७५० मि.ली. और गोदधि ७५० किलो लें।

कल्क—१. सोआ, २. सौंफ, ३. मेथी, ४. रास्ना, ५. गजपीपर, ६. नागरमोथा, ७. अश्वगन्धा, ८. खस, ९. मुलेठी, १०. शालपर्णी, ११. पृश्निपर्णी, १२. बलामूल तथा १३. बहुपुत्रिका—प्रत्येक द्रव्य ९३-९३ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः माष-बला आदि यवकुट कर द्रव्यों को पृथक्-पृथक् ३-३ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर मूर्च्छित तैल में मिलावें। ६ द्रव्यों का क्वाथ भी प्रत्येक द्रव्य का ७५० मि.ली. ही शेष रहे। क्वाथ के बराबर ही तिलतैल लेना चाहिए। विदारीकन्द और शतावरीस्वरसतैल का आधा लेना चाहिए। सभी कल्क द्रव्यों को कूटकर चूर्ण करें ततः जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में कल्क और क्रमशः १-१ क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब सब क्वाथ तैल में जीर्ण हो जाय तो दूध का पाक करें। ततः लाक्षापाक करें। लाक्षारस जीर्ण होने पर मथित दधि का पाक करें। ततः तदनन्तर काञ्जी का पाक करना चाहिए। सर्वान्ते कल्क के सम्यक् पाक हेतु तैल से चौगुना जल देकर पाक करें। जब जल भी तैल में जीर्ण हो जाय तो पाकविद् वैद्य पाकपरीक्षोपरान्त चूल्हे से तैलपात्र को नीचे उतारकर कपड़े से तैल को छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में तैल संग्रह कर लेबल और कार्क लगाकर सुरक्षित कर लें।

गुण-धर्म—यह 'माषबलादितैल' वातरोगों का नाश करता है। मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, जिह्वाग्रह, दन्तग्रह, गलग्रह, बीस प्रकार के प्रमेहों और गात्रकम्पादि रोगों को नष्ट करता है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., बस्ति ५० मि.ली., नस्य ३-३ बूँद। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—उड़द की सोंधी गन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—समस्त वात विकार में।

११५. शतावरी तैल (योगरत्ना.)

रुग्दारुद्रविडिप्रियङ्गुतगरं त्वक्पत्रकौन्तीनखै-
र्मांसीसर्जरसाम्बुचन्दनवचाशैलेयलामज्जकैः।
मञ्जिष्ठासरलागुरुद्विपबलारास्नाऽश्वगन्धावरी-
वर्षाभूमिसिसैन्धवैश्च सकलैरेभिः पचेत्कल्कितैः ॥
तुल्यं गोपयसा वरी रससमं तैलं विपक्वं मृदु
स्याद्वातघ्नमिदं नृणामिति वरीतैलं भिषक् पूजितम् ॥

१. कूठ, २. देवदारु, ३. छोटी इलायची, ४. प्रियंगु, ५. तगर, ६. दालचीनी, ७. तेजपात, ८. रेणुका, ९. नखी, १०. जटामांसी, ११. राल, १२. सुगन्धबाला, १३. रक्तचन्दन, १४. वचा, १५. छरीला, १६. खस, १७. मंजीठ, १८. सरलकाष्ठ, १९. अगुरु, २०. नागबला, २१. रास्ना, २२. अश्वगन्धा, २३. शतावरी, २४. पुनर्नवामूल, २५. सौंफ और २६. सैन्धवलवण—प्रत्येक द्रव्य ४०-४० ग्राम लें; २७. तिलतैल ४ ली., २८. शतावरीक्वाथ ४ ली. तथा २९. गोदुग्ध ४ ली. लें।

सर्वप्रथम तैल का मूर्च्छन करें। ततः सभी कल्क द्रव्यों का चूर्ण कर पुनः जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। शतावरीयवकुट में ४ गुना जल देकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर क्वाथ-कल्क दोनों को एक साथ मूर्च्छित तैल में मिलाकर पाक करें। जब क्वाथ सूख जाय तो इसी तरह दूध

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

देकर पाक करें। दूध सूखने पर कल्क के सम्यक् पाकार्थ तैल से ४ गुना जल देकर पुनः पाक करें। जब जल सूखने लगे तो पाकविद् वैद्य स्नेहपाक के परीक्षोपरान्त स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़ा से तैल को छान लें। शीतल होने पर तैल को बोतलों में रखकर कार्क एवं लेबल लगाकर संग्रहीत करें। यह तैल सभी प्रकार के वात रोगों को नष्ट करने में समर्थ है। इसका प्रयोग पान, नस्य, बस्ति और अभ्यङ्ग द्वारा करना चाहिए।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद, बस्त्यर्थ ५० मि.ली.। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—समस्त वातविकारनाशक है।

११६. विषगर्भतैल (योगरत्नाकर)

धत्तूरस्य रसस्य पञ्चकुडवं तैलं तथा काञ्जिकं
प्रस्थानां च चतुष्टयं गदवचा त्रिंशत्परं शाणकाः।
हृद्धात्रीमरिचात् पृथङ्नवविषात् षट्स्वर्णबीजात् पटोः
स्युः सप्ताधिकविंशतिः परिमितं तीव्रानिलध्वंसनम्॥
पक्षाघातं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं कटीग्रहम्।
पृष्ठत्रिकशिरःकम्पं सर्वाङ्गग्रहणं तथा॥५६०॥

धत्तूरपत्रस्वरस १ ली., तिलतैल १ ली. तथा काञ्जी ३ ली. लें।

कल्क—१. कूठ ९० ग्राम, २. वचा ९० ग्राम, ३. हियावली २७ ग्राम, ४. मरिच २७ ग्राम, ५. वत्सनाभ १८ ग्राम तथा ६. धत्तूरबीज १८ ग्राम की मात्रा में लें।

विधि—सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः ६ कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर चूर्ण करके पुनः जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में धत्तूरस्वरस और कल्क मिलाकर पाक करें। धत्तूरस्वरस जीर्ण होने पर तैल में काञ्जी मिलाकर पाक करें। काञ्जी सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ४ ली. जल देकर तैल को पुनः पकावें। जल सूखने पर पाकविद् वैद्य सुपक्व तैल की परीक्षोपरान्त चूल्हे से तैलपात्र को नीचे उतारकर कपड़े से छान लें और शीतल होने पर काच की बोतलों में रखकर लेबल और कार्क लगाकर तैल संग्रहीत करें।

विमर्श—इस तैल का केवल बाह्य प्रयोग ही करें क्योंकि इसमें धत्तूरबीज और वत्सनाभविष जैसे जहरीले द्रव्य पड़े हैं।

गुण-धर्म—यह 'विषगर्भतैल' भयंकर वायुनाशक है। पक्षाघात, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, कटिग्रह, पृष्ठग्रह, त्रिकग्रह, शिरःकम्प और सर्वाङ्गग्रह जैसे भयंकर वातविकार को नष्ट करता है।

मात्रा—केवल बाह्य प्रयोगार्थ। **गन्ध**—तिक्तगन्धी (उत्कट गन्धी)। **वर्ण**—हरित् एवं रक्तमिश्रित। **स्वाद**—विषैला। **उपयोग**—भयंकर वातवेदनाहर।

११७. महाविषगर्भतैल (यो.र.)

कनकस्य च निर्गुण्डी तुम्बिनी च पुनर्नवा।
वातारिश्चाश्वगन्धा च प्रपुन्नाटं सचित्रकम्॥५६१॥
शोभाञ्जनं काकमाची कलिकारी च निम्बकम्।
महानिम्बेश्वरी चैव दशमूलं शतावरी॥५६२॥
कारवेल्ली सारिवा च श्रावणी च विदारिका।
वज्रार्कौ मेषशृङ्गी च करवीरद्वयं वचा॥५६३॥
काकजङ्घा त्वपामार्गो बला चातिबलाद्वयम्।
व्याघ्री महाबला वासा सोमवल्ली प्रसारणी॥५६४॥
पलोन्मितानि चैतानि द्रोणेऽम्भसि विनिक्षिपेत्।
पचेच्चादावशेषेऽस्मिन् कल्कस्य कुडवं क्षिपेत्॥५६५॥
त्रिकटु विषतिन्दुञ्च रास्नां कुष्ठं विषं घनम्।
देवदारु वत्सनाभं द्वौ क्षारौ लवणानि च॥५६६॥
तुत्थकं कट्फलं पाठां भार्ङ्गीं च नवसागरम्।
त्रायन्तीं धन्वयासञ्च जीरकञ्चेन्द्रवारुणीम्॥५६७॥
तैलप्रस्थं समादाय पाचयेन्मृदुनाऽग्निना।
विषगर्भमिदं नाम्ना सर्वान् वातान् व्यपोहति॥५६८॥
वक्षोरुकटिजङ्घानां सन्धानं श्रेष्ठमेव च।
गृध्रसीञ्च महावातान् सर्वाङ्गग्रहणं तथा॥५६९॥
दण्डापतानकं चैव कर्णनादञ्च शून्यताम्।
वनमध्ये तथा सिंहात्पलायन्ते महामृगाः॥५७०॥
तथाऽश्वगजभग्नानां नरायणाञ्च चतुष्पदाम्।
नाशयेन्नात्र सन्देहो विषगर्भं हि लेपनात्॥५७१॥

क्वाथ—१. धत्तूरपञ्चाङ्ग, २. निर्गुण्डीपत्र, ३. कटुतुम्बिनी, ४. पुनर्नवामूल, ५. एरण्डमूलत्वक् ६. अश्वगन्धा, ७. चक्रमर्दबीज, ८. चित्रकमूल, ९. शिग्रुमूलत्वक्, १०. काकमाची, ११. कलिहारी, १२. निम्बत्वक्, १३. महानिम्ब (बकायन) १४. शिवलिङ्गी, १५. दशमूल, १६. शतावरी, १७. करैला, १८. सारिवा, १९. मुण्डी, २०. विदारीकन्द, २१. स्नुहीमूलत्वक्, २२. अर्कमूलत्वक्, २३. मेढासिंगी, २४. लालकनेरमूल, २५. पीतकनेरमूल, २६. वचा, २७. काकजंघा, २८. अपामार्गपञ्चाङ्ग, २९. बलामूल, ३०. अतिबला, ३१. नागबला, ३२. कण्टकारी, ३३. महाबला, ३४. वासामूल, ३५. सोमलता और ३६. गन्धप्रसारणी—ये सभी ३६ द्रव्य प्रत्येक १-१ पल (४६-४६ ग्राम) लें। क्वाथार्थ जल १२ ली. अवशेषक्वाथ ३ ली.।

कल्क—१. सोंठ, २. पीपर, ३. मरिच, ४. कुपीलु ५.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रास्ना, ६. कूठ, ७. शृङ्गीविष, ८. नागरमोथा, ९. देवदारु, १०. वत्सनाभविष, ११. यवक्षार, १२. सर्जिक्षार, १३. सैन्धव-लवण, १४. सामुद्रलवण, १५. सौर्वर्चललवण, १६. विड-लवण, १७. औद्भिद्लवण, १८. तूतिया, १९. कट्फल, २०. पाठा, २१. भारंगी, २२. नवसादर, २३, त्रायमाण, २४. जवासा, २५. श्वेतजीरा तथा २६. इन्द्रवारुणी—प्रत्येक द्रव्य ७-७ ग्राम लें। तिलतैल ७५० मि.ली. (१ प्रस्थ) लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तदनन्तर क्वाथ द्रव्यों को यवकुट कर १२ ली. जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर मूर्च्छित तैल में मिला दें। इसके बाद कल्क द्रव्यों को चूर्ण कर पुनः सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें और कल्क को तैल में मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूख जाये तब कल्क के सम्यक् पाक हेतु ३ लीटर जल मिलाकर पुनः तैल का पाक करें। जल सूख जाने पर पाकविद् वैद्य स्नेह के परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में रखकर कार्क एवं लेबल लगाकर संग्रहीत करें। इस तैल को विषगर्भतैल कहते हैं। यह सभी वातविकारों का नाश करता है।

गुण-धर्म—वक्ष (छाती), ऊरु (जाँघ), कटि और जंघा की पीड़ा को शान्त करने में यह तैल श्रेष्ठ है। गृध्रसी, महावात, सर्वाङ्गग्रह, दण्डापतानक, कर्णनाद, शून्यता (स्पर्श-हानि) आदि विकार नाशक है। जिस तरह जंगल में सिंहों को देखकर मृगादि अनेक पशु-पक्षी भाग जाते हैं, उसी तरह इस तैल का अभ्यङ्ग करने के बाद भग्न हुए हाथी, घोड़े और मनुष्य की पीड़ाएँ निःसन्देह दूर हो जाती हैं।

मात्रा—मात्र अभ्यङ्गार्थ। विषयुक्त है अतः इसका आभ्यन्तर प्रयोग नहीं करना चाहिए। **गन्ध**—उत्कट गन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **उपयोग**—समस्त वातविकारों में।

११८. बलारिष्ट

बलाऽश्वगन्धयोर्ग्राह्यं पृथक् पलशतं शुभम्।
चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा द्रोणमेवावशेषयेत् ॥५७२॥
शीते तस्मिन् रसे पूते क्षिपेद् गुडतुलात्रयम्।
धातकीं षोडशपलां पयस्यां द्विपलांशिकाम् ॥५७३॥
पञ्चाङ्गुलपलद्वन्द्वं रास्नामेलां प्रसारणीम्।
देवपुष्पीमुशीरञ्च श्वदंष्ट्राञ्च पलांशिकाम् ॥५७४॥
मासं भाण्डे स्थितस्त्वेष बलारिष्टो महाफलः।
हन्त्युग्रान् वातजान् रोगान् बलपुष्ट्यग्निवर्द्धनः ॥५७५॥

१. बलामूल ५ कि., २. अश्वगन्धा ५ कि. पाकार्थ जल ४ द्रोण (५० ली.) अवशेष १३ ली., ३. गुड़ १५ कि., ४. धातकीपुष्प ७५० ग्राम, ५. क्षीरकाकोली ९३ ग्राम, ६. एरण्डमूलत्वक् ९३ ग्राम; ७. रास्ना, ८. छोटी इलायची, ९. गन्धप्रसारणी, १०. लौंग ११. खस और १२. गोक्षुर—ये छः द्रव्य प्रत्येक ४६ ग्राम लें। सर्वप्रथम बला और अश्वगन्धा को यवकुट कर ५० लीटर जल में रात्रिपर्यन्त भिगावें और प्रातः क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर नवीन मिट्टी के घड़े में रखें तथा उसी गरम क्वाथ में १५ कि. गुड़ डालकर हाथ से मर्दनकर गुड़ घोल दें। धूप में सुखाया हुआ साबुत धातकीपुष्प उस गुड़ मिश्रित क्वाथ में मिला दें। ततः प्रक्षेप द्रव्यों को पृथक्-पृथक् यवकुट कर उस घड़े में मिलाकर पुनः हाथ से गुड़ आदि यदि शेष बचे हो तो घोल दें। फिर शराव से मुख ढककर सन्धि-बन्धन कर निर्वात स्थान में रखें। घड़े की तली में पुआल या भूसी रखें जिससे फूटने की सम्भावना नहीं रहे। घड़े के पृष्ठ पर खड़िया से औषध का नाम, निर्माण तिथि अवश्य लिखें। शरद् ऋतु में २१ से ३० दिन के अन्दर अरिष्ट तैयार हो जाता है। जिस घर में यह औषधि रखी होगी उस घर में मद्य की खुशबू फैल जायेगी। अतः दूर से ही औषधि तैयारी का पता लग जाता है। तथापि घड़े का मुख खोलकर देखें और जलती हुई दिया-सलाई की तिल्ली अन्दर ले जायें; यदि तिल्ली जलती रहती है तो औषधि तैयार है और यदि तिल्ली बुझ जाती है तो पाक प्रक्रिया चालू है, ऐसा समझना चाहिए। पुनः औषधि को छान लें और घड़े को पानी से धोकर सुखा लें और छनी हुई औषधि पुनः उसी घड़े में रखकर १५ से २० दिनों तक छोड़ दें। इससे अरिष्ट की गाद घड़े की तली में बैठ जायेगी। पुनः घड़ा टेढ़ा कर निर्मल आसवारिष्ट को निथारकर गाद छोड़ दें। बोतलों में आसवारिष्ट को भरकर कार्क और लेबल लगाकर सुरक्षित रख लें। इस अरिष्ट को १ वर्ष बाद प्रयोग करें।

गुण-धर्म—महाफलदायक बलारिष्ट उग्र वातरोगों को नष्ट करता है। शारीरिक बल, शारीरिक पुष्टि एवं जाठराग्नि वर्धक है।

मात्रा—१२ से २५ मि.ली.। **अनुपान**—जल से। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तीक्ष्ण, मधुर मद्ययुक्त। **उपयोग**—वातविकार में।

विमर्श—१३ लीटर क्वाथ में १५ किलो गुड़ घोलने से घोल बहुत गाढ़ा बनता है तथा फर्मण्टेशन कार्य बहुत दिनों तक चलता रहता है। यहाँ तक कि बोतलों के बन्द रहने पर भी फर्मण्टेशन होता रहता है और बोतल का कार्क ऊपर उड़ जाता है और आसवारिष्ट फेन के साथ गिरता रहता है। अतः यहाँ पर द्रव द्वैगुण्य की परिभाषा लागू करना चाहिए। अतः ४ द्रोण जल के स्थान पर ८ द्रोण जल में पाक करना चाहिए और चौथाई अवशेष रखना चाहिए। गुड़ ३ तुला के स्थान पर ४ तुला अर्थात् २६ ली. क्वाथ शेष रहे और गुड़ २० कि. मिलाना

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

चाहिए। इसी विधि से इस बलारिष्ट का निर्माण करना अत्युपयोगी है।

वातव्याधि में पथ्य

अभ्यङ्गो मर्दनं बस्तिः स्नेहः स्वेदोऽवगाहनम्।
संवाहनं संशमनं प्रावृतिर्वातवर्जनम् ॥५७६॥
अग्निकर्मोपनाहश्च भूशय्या स्नानमासनम्।
तैलद्रोणी शिरोबस्तिः शयनं नस्यमातपः ॥५७७॥
सन्तर्पणं बृंहणं च किलाटो दधिकूर्चिका।
सर्पिस्तैलं वसा मज्जा स्वाद्वम्ललवणा रसाः ॥५७८॥
नवीनास्तिल-गोधूमा माषाः संवत्सरोत्थिताः।
शालयः षष्टिकाश्चापि कुलत्थानां रसः सुरा ॥५७९॥
ग्राम्यगोऽश्वतरोष्ट्राश्वरासभच्छागलादयः।
आनूपाः कोलमहिषन्यङ्कुखड्गिगजादयः ॥५८०॥
औदका हंसकादम्बचक्रमद्गुरकादयः।
बिलेशया भेकगोधानकुलश्चाविदादयः ॥५८१॥
चटकः कुक्कुटो बर्ही तित्तिरिश्चेति जाङ्गलाः।
शिलीन्ध्रः पर्वदो नक्रो गर्गरः कवयील्लिशः ॥५८२॥
एरङ्गश्चुल्लकी कूर्मः शिशुमारस्तिमिङ्गिलः।
रोहितो मद्गुरुः शृङ्गी वर्मी च कुलिशो झषाः ॥५८३॥
पटोलं शिग्रुवार्त्ताकुलशुनं दाडिमद्वयम्।
पक्वतालं रसालं च नलदाम्बु परूषकम् ॥५८४॥
जम्बीरं बदरं द्राक्षा नागरङ्गं मधूकजम्।
प्रसारणी गोक्षुरकः शुक्लाङ्गी पारिभद्रकः ॥५८५॥
पयांसि च पयःपेटी रुबुतैलं गवां जलम्।
मत्स्यण्डिका च ताम्बूलं धान्याम्लं तिन्तिडीफलम् ॥
स्निग्धोष्णानि च भोज्यानि स्निग्धोष्णं चानुलेपनम्।
विशेषाद्वमनं कार्यमामाशयमुपागते ॥५८७॥
पक्वाशयस्थे मांसस्थे तथा स्निग्धविरेचनम्।
प्रत्याध्मानाध्मानसंज्ञे वर्त्तिर्लङ्घनदीपनम् ॥५८८॥
अष्ठीलिकाख्ये गुल्मविधिः शुक्रस्य क्षयजित् क्रिया।
त्वङ्मांसासृक्सिराप्राप्ते हितं शोणितमोक्षणम् ॥
यथाश्रयं यथावस्थं यथावरणमेव हि।
वातव्याधौ समुत्पन्ने पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥५९०॥

अभ्यङ्ग (शरीर में तैल-मर्दन), मर्दन (शरीर दबाना), बस्ति, स्नेहकर्म, स्वेदनकर्म, गरम क्वाथ पूर्ण टब में डुबाना, शरीर मर्दन, संशमन चिकित्सा, वर्षाति हवा का वर्जन, अग्निकर्म (दागना, सेंकना आदि), उपनाह (पोटली सेंक), जमीन में सोना (या कठिन वस्तु तख्त आदि पर सोना), गरम पानी से स्नान करना, आसन, तैल द्रोणी में लेटना, शिरोबस्ति, सोना, नस्य, धूपसेवन, संतर्पण, बृंहण चिकित्सा करना, किलाट (खोआ), दधिकूर्चिका (गरम-दूध एवं खट्टा दही मिलाकर बनायी गई वस्तु) घी, तैल, वसा, मज्जा, मधुर, अम्ल, लवण रसों का सेवन नया तिल, नया गेहूँ, नया उड़द, १ वर्ष के बाद का अर्थात् पुराना शालिचावल, साठीचावल तथा कुल्थीरस (दालयूष), ग्रामीण पशुओं खच्चर, ऊँट, घोड़ा, गदहा, बकरा आदि के मांस, आनूप मांसों में सूअर, भैंसा, गेंडा, हाथी के मांस, औदक प्राणियों में हंस, सारस, चकवा, बगुला, बिल में रहने वाले मेढक, गोह, नेवला, सेह (साहिल), पक्षियों में गौरैया, मुर्गा, मोर, तित्तिर, एक प्रकार की मछली, नक्र (घड़ियाल), गर्गर मछली, कवयी, इल्लिस मछली, चुल्लकी मछली, कछुआ, सूँस (घड़ियाल प्रजाति), तिमिङ्गल, रोहू मछली, मांगुर मछली, सिंगी मछली, वर्मी (वामी मछली), झष कोई बड़ी मछली (झषाणां मकरश्चास्मि-—गीता)। **शाक**—पटोल, सहिजन, बैंगन, लशुन, खट्टा-मीठा अनार, पका हुआ ताल फल, आम, खस का पानी, फालसा, जम्बीरीनिम्बु, बेर, द्राक्षा, नारङ्गी, महुआ का फूल, प्रसारणी, गोक्षुर, क्षीरकाकोली, नीम, गाय-भैंस का दूध, नारियल, एरण्ड तैल, गोमूत्र, शक्कर, ताम्बूल, धान्याम्ल, इमली फल, स्निग्ध-उष्ण भोजन, स्निग्ध-उष्ण लेप, विशेष रूप से वमन कराना चाहिए। जब दोष आमाशय में हो, पक्वाशय स्थित दोष और मांस स्थित दोष होने पर स्निग्ध विरेचन कराना चाहिए। आध्मान और प्रत्याध्मान नामक वातरोग में वर्ति, लंघन और दीपन औषधों का प्रयोग हितकर होता है। अष्ठीलिका वात में गुल्मोक्त विधियों प्रयोग करना चाहिए। शुक्रस्थित वात होने पर क्षयनाशक औषधों का प्रयोग करना चाहिए। त्वचा, मांस, रक्त तथा सिरागत वात में रक्तमोक्षण करना हितावह है। वात-व्याधि होने पर वायु जिस स्थान पर आश्रय लिये हो तथा जैसा उसका आवरण हो वैसी ही चिकित्सा करनी चाहिए।

वातव्याधि में अपथ्य

चिन्ताप्रजागरणवेगविधारणानि
छर्दिः श्रमोऽनशनता चणकाः कलायाः।
नीवारकङ्गुशरवैणवकोरदूष-
श्यामाकचूर्णकुरुबिन्दमुखानि यानि ॥५९१॥
धान्यानि तानि तृणजानि च राजमाषा
मुद्गास्तडागसरिदम्बुयवाः करीरम्।
जम्बूः कशेरुतृणकं क्रमुकं मृणालं
निष्पावबीजमपि तालफलास्थिमज्जा ॥५९२॥
शालूकतिन्दुककठिल्लकबालतालं
शिम्बी च पत्रभवशाकमुदुम्बरं च।
शीताम्बु रासभपयोऽपि विरुद्धमन्नं
क्षारोऽपि शुष्कपललं क्षतजस्रुतिश्च ॥५९३॥
क्षौद्रं कषायकटुतिक्तरसा व्यवायो
हस्त्यश्वयानमपि चङ्क्रमणं च खट्वा।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आध्मानिनोऽर्दितवतोऽपि पुनर्विशेषात्
स्नानं प्रदुष्टसलिलं द्विजघर्षणं च ॥५९४॥
निःशेषतन्त्रपरिकीर्तित एष वर्गो
नृणां समीरणगदेषु मुदं न धत्ते ॥५९५॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां वातव्याध्यधिकारः ।

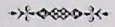

चिन्ता, रात्रिजागरण, वेगों का धारण, वमन, परिश्रम, भूखे रहना, चना, कलाय (मटर), नीवारधान्य, कंगुनीधान्य, बाँस की फल (यव), कोदो, साँवाँ, कुरुविन्द, मूँग, तालाब का जल, नदी का जल, करीर, जामुन, कशेरुक, तृणक, सुपारी, कमल-नाल, सेम, तालफलास्थि मज्जा, शालूक, तिन्दुक, करैला, ताल का कच्चाफल, पत्रशाक, गूलरफल, शीतलजल, गदही का दूध, विरुद्ध अन्न, क्षार, सूखा मांस और रक्तमोक्षण। मधु, कषाय, कटु, तिक्तरस, मैथुन, हाथी, घोड़े की सवारी, अधिक चलना, खाट पर सोये रहना वातव्याधि में अपथ्य है। आध्मान और अर्दित रोगी को स्नान करना, दूषित जल सेवन, दाँतों को रगड़ना आदि वात रोगों से पीड़ित व्यक्ति के लिए हितकर नहीं है।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य वातव्याध्यधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता ।

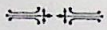

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ वातरक्ताधिकारः (२७)

वातरक्त रोग रक्तावृत वायु के कारण से होता है। यह रोग हाथ-पैर की अंगुलियों का अधिष्ठान बनाकर हो जाता है। पहले तो हाथ-पैर की अंगुलियों की सन्धि का आश्रय से प्रारम्भ होता है। किन्तु धीरे-धीरे सर्वाङ्ग शरीर में व्याप्त होकर फैलता है और अन्त में कुष्ठ जैसे लक्षणों से युक्त होकर भयानक हो जाता है।

वातरक्त का निदान एवं सम्प्राप्ति (चरक)

वायुः प्रवृद्धो वृद्धेन रक्तेनावारितः पथि।
क्रुद्धः सन्दूषयेद्रक्तं तज्ज्ञेयं वातशोणितम् ॥१॥

कटु, तिक्त, कषाय एवं लवण रसों एवं रूक्षादि आहार के अधिक सेवन से प्रकुपित वायु तथा विरुद्ध भोजन के कारण और अत्यधिक मार्ग-गमन के कारण प्रकुपित वायु रक्त को दूषित करके रक्त के मार्ग को आवृत कर देता है और वातरक्त उत्पन्न कर देता है।

वातरक्त के दो भेद (चरक)

उत्तानमथ गम्भीरं द्विविधं वातशोणितम्।
त्वङ्मांसाश्रयमुत्तानं गम्भीरन्त्वन्तराश्रयम् ॥२॥

१. उत्तान और २. गम्भीर भेद से वातरक्त दो प्रकार का होता है। उत्तान वातरक्त त्वचा और मांस का आश्रय लेकर होता है तथा गम्भीर अन्तर्धातुओं का आश्रय लेकर होता है।

वातरक्त चिकित्सा विधि (च.द.)

बाह्यं लेपाभ्यङ्गसेकोपनाहैर्वातशोणितम्।
विरेकास्थापनस्नेहपानैर्गम्भीरमाचरेत् ॥३॥

बाह्य (उत्तान) वातरक्त में लेप-अभ्यङ्ग-सेंक एवं उपनाह द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए तथा गम्भीर (आभ्यन्तर) वातरक्त में विरेचन, आस्थापनबस्ति, विभिन्न औषध साधित घृतपान के द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए।

रक्तमोक्षण (च.द.)

द्वयोर्मुञ्चेदसृक् शृङ्गसूच्यलाबुजलौकसा।
देशाद् देशं व्रजेत् स्राव्यंशिराभिः प्रच्छनेन वा ॥
अङ्गग्लानौ च न स्राव्यं रूक्षे वातोत्तरे च यत् ॥४॥

दोनों तरह (उत्तान-गम्भीर) के वातरक्त में सींग, सूची, तुम्बी और जोंक के द्वारा रक्तमोक्षण करा देना चाहिए। एक स्थान से दूसरे स्थान में जाने वाले रक्त को शिरावेध या प्रच्छन (पाछ) द्वारा निकाल लेना चाहिए। यदि शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग शिथिल हों या वाताधिक्य से रूक्षता अधिक हो तो रक्तस्राव नहीं कराना चाहिए।

वातरक्त में हितकर (चरक)

आढक्यश्चणका मुद्गा मसूराः समुकुष्ठकाः।
यूषार्थे बहुसर्पिष्काः प्रशस्ता वातशोणिते ॥५॥
पुराणा यवगोधूमनीवाराः शालिषष्टिकाः।
भोजनार्थे हिता गव्या महिषाजपयो हितम् ॥६॥

अरहर, चना, मूँग, मसूर, मोठ द्वारा निर्मित यूष में अधिक घृत मिलाकर पान कराना वातरक्त में हितकर है। पुराना जौ, गेहूँ, नीवार (कुधान्य), शालिचावल, साठिचावल तथा गाय का दूध, भैंस का दूध तथा बकरी का दूध प्रयोग करना हितावह है।

वातरक्त में त्याज्य (चरक)

दिवास्वप्नाग्निसन्तापं व्यायामं मैथुनं तथा।
कटूष्णगुर्वभिष्यन्दिलवणाम्लानि वर्जयेत् ॥७॥

वातरक्त के रोगी को दिन में सोना, आग तापना, व्यायाम, मैथुन, कटु एवं उष्ण भोजन, गुरु एवं अभिष्यन्दि पदार्थ, लवण एवं अम्ल पदार्थ का भोजन बन्द करना चाहिए।

१. हरीतकी प्रयोग

हरीतकीं प्राश्य समं गुडेन
एकाऽथवा द्वे च ततो गुडूच्याः।
क्वाथोऽनुपीतः शमयत्यवश्यं
प्रभिन्नमाजानुजवातरक्तम् ॥८॥

एक या दो हरीतकी का चूर्ण समभाग गुड़ के साथ लेकर बाद में २ तोले गुडूचीस्वरस पीने से जानुगत उत्पन्न वातरक्त अवश्य शान्त हो जाता है।

२. शम्पाकादि क्वाथ

शम्पाकामृतवासानामेरण्डस्नेहसंयुतम्।
पीत्वा क्वाथमसृग्वातं क्रमात् सर्वाङ्गगं जयेत् ॥९॥

अमलतास, गुडूची और वसा तीनों के समभाग क्वाथ में (प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। इसमें से २३ ग्राम यवकुट क्वाथ को १६ गुना जल में क्वाथ करें। अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें) १२ ग्राम एरण्डतैल मिलाकर पिलावें। इस प्रकार कुछ दिन पिलाने से वातरक्त नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३. गुडूची प्रयोग (च.द.)

गुडूच्याः स्वरसं कल्कं चूर्णं वा क्वाथमेव वा ।
प्रभूतकालमासेव्य मुच्यते वातशोणितात् ॥१०॥

गुडूची का स्वरस या चूर्ण या कल्क या गुडूची का क्वाथ अत्यधिक दिनों तक सेवन करने से वातरक्त रोग से छुटकारा मिल जाता है।

४. पटोलादिक्वाथ (च.द.)

पटोलकटुकाभीरुत्रिफलाऽमृतसाधितम् ।
क्वाथं पीत्वा जयेज्जन्तुः सदाहं वातशोणितम् ॥११॥

१. परवलपञ्चाङ्ग, २. कटुकी, ३. शतावरी आमला, ४. हरीतकी, ५. बहेड़ा और ६. गुडूची—समभाग लें। इन सभी द्रव्यों को यवकुट करें। इस यवकुट में से २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छानकर पिलाने से दाहादि उपद्रवों से युक्त वातरक्त रोग नष्ट हो जाता है।

५. एरण्डादिक्वाथ (भा.प्र.)

गन्धर्वहस्तवृषगोक्षुरकामृताभि-
र्मूलैर्बलेक्षुरकयोश्च पचेत्कषायम् ।
वातासृगाशु विनिहन्ति चिरप्ररूढ-
माजानुगं स्फुटितमूर्ध्वगतन्तु पीतम् ॥१२॥

१. एरण्डमूलत्वक्, २. वासामूल, ३. गोक्षुर, ४. गुडूची, ५. बलामूल तथा ६. इक्षुरकमूल (तालमखाना)—समभाग लें। इन्हें यवकुट कर सुखाकर सुरक्षित करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट लें और १६ गुना पानी में रात भर भिंगावें। प्रातः क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छानकर रोगी को पिलाने से चिरकालिक तथा जानु तक फैला हुआ वातरक्त नष्ट हो जाता है।

६. कोकिलाक्षादिक्वाथ (यो. रत्ना.)

कोकिलाक्षामृताक्वाथे पिबेत् कृष्णां यथाबलम् ।
पथ्यभोजी त्रिसप्ताहान्मुच्यते वातशोणितात् ॥१३॥

तालमखाना और गुडूची के समभागीय क्वाथ में पीपरचूर्ण का प्रक्षेप देकर पीने से एवं पथ्य भोजन करने से २१ दिनों में ही वातरक्त रोग नष्ट हो जाता है।

७. नवकार्षिकक्वाथ (च.द.)

त्रिफलानिम्बमञ्जिष्ठा वचा कटुकरोहिणी ।
वत्सादनी दारुनिशा कषायो नवकार्षिकः ॥१४॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं पामानं रक्तमण्डलम् ।
कुष्ठं कापालिकं कुष्ठं पानादेवापकर्षति ॥१५॥
पञ्चरक्तिकमाषेण कार्योऽयं नवकार्षिकः ।
किन्त्वेवं साधिते क्वाथे योग्या मात्राऽत्र दीयते ॥१६॥

१. आमला, २. हरीतकी, ३. बहेड़ा, ४. निम्बत्वक्, ५. मंजीठ, ६. वचा, ७. कटुकी, ८. गुडूची और ९. दारुहल्दी—ये ९ द्रव्य प्रत्येक द्रव्य १-१ कर्ष अर्थात् १२-१२ ग्राम लें। इन्हें यवकुट कर ८ गुना जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छानकर दिन में २ बार पीने से कुछ दिनों में वातरक्त, कुष्ठ, पामा, रक्तमण्डल कुष्ठ, कापालिक कुष्ठ नष्ट हो जाते हैं। ग्रन्थकार ने ५ रत्ती की मात्रा कही है, किन्तु वहीं पर आचार्यश्री ने योग्य मात्रा देने को कहा है। मात्रा मानकर इस क्वाथ का निर्माण किया है।

८. सिंहास्यादि क्वाथ (भा.प्र.)

सिंहास्यपञ्चमूलीच्छिन्नरुहैरण्डगोक्षुरक्वाथ ।
एरण्डतैलरामठसैन्धवचूर्णान्वितः पीतः ॥१७॥
प्रशमयति वातरक्तं तथाऽऽमवातं कटीशूलम् ।
मूत्रपुरीषविबन्धं ब्रध्नविकारं सुदुर्वारम् ॥१८॥

१. वासा, २. शालपर्णी, ३. पृश्निपर्णी, ४. बृहती, ५. कण्टकारी, ६. गोक्षुर, ७. गुडूची, ८. एरण्डमूलत्वक् तथा ९. गोक्षुर—समभाग लें। यवकुट कर इन्हें रख लें। इस चूर्ण में से २५ ग्राम लेकर १६ गुने जल में क्वाथ करें और अष्टमांशावशेष रहने पर छान लें। इस ४ तोले में १ तोला एरण्डतैल तथा २५० मि.ग्रा. शुद्ध हींग और ५०० मि.ग्रा. सैन्धवलवण देकर पिलाने से वातरक्त, आमवात, कटिशूल, मूत्रबन्ध, पुरीषबन्ध, असाध्य ब्रध्नरोग नष्ट हो जाते हैं।

९. अश्वस्थ कषाय (च.सं.)

बोधिवृक्षकषायं तु पाययेन्मधुना सह ।
वातरक्तं जयत्याशु त्रिदोषमपि दारुणम् ॥१९॥

अश्वत्थत्वक् क्वाथ में मधु मिलाकर पीने से त्रिदोषज भयंकर वातरक्त नष्ट हो जाते हैं।

१०. त्रिवृतादि क्वाथ (भा.प्र.)

त्रिवृद्विदारीगोक्षुरक्वाथो वातास्रनाशनः ॥२०॥

त्रिवृत्, विदारीकन्द और गोक्षुर समभाग का क्वाथ पिलाने से वातरक्त नष्ट हो जाता है।

११. गुडूची के छः प्रयोग (च.द.)

घृतेन वातं सगुडा विबन्धं
पित्तं सिताढ्या मधुना कफञ्च ।
वातासृगुग्रं रुबुतैलमिश्रा
शुण्ठ्यामवातं शमयेद् गुडूची ॥२१॥

(१) गुडूचीक्वाथ में घी मिलाकर पीने से वात विकार नष्ट होते है। (२) गुडूचीक्वाथ में गुड़ मिलाकर पीने से विबन्ध नष्ट होता है। (३) गुडूचीक्वाथ में चीनी मिलाकर पीने से पित्त विकार

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

नष्ट हो जाता है। (४) गुडूचीक्वाथ में मधु मिलाकर पीने से कफ विकार नष्ट होते हैं। (५) गुडूचीक्वाथ में एरण्डतैल मिलाकर पीने से भयंकर वातरक्त नष्ट हो जाता है। (६) गुडूचीक्वाथ में सोंठचूर्ण मिलाकर पीने से आमवात नष्ट होता है।

१२. वासादिक्वाथ (च.द.)

वासागुडूचीचतुरङ्गुलाना-
मेरण्डतैलेन पिबेत्कषायम्।
क्रमेण सर्वाङ्गजमप्यशेषं
जयेदसृग्वातभवं विकारम् ॥२२॥

वासा, गुडूची और अमलतासफलमज्जा के समभाग यवकुट क्वाथ में से २५ ग्राम लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें। चतुर्थांशावशेष रहने पर छान लें और उस क्वाथ में १ तोला (१२ मि.ग्रा.) एरण्डतैल मिलाकर पिलाने से सर्वाङ्ग में फैला वातरक्तरोग नष्ट हो जाता है।

१३. अमृतादिकल्क (भा.प्र.)

अमृताकटुकायष्टीशुण्ठीकल्कं समाक्षिकम्।
गोमूत्रपीतं जयति सकफं वातशोणितम् ॥२३॥

१. गुडूची २. कुटकी, ३. मुलेठी तथा ४. सोंठ—इन्हें समभाग लेकर चूर्ण करें और इसमें से १२ ग्राम चूर्ण को जल के साथ सिल पर पीस कर कल्क बना लें। इस कल्क में ६ ग्राम मधु मिलाकर चाटें और बाद में १ पल (५० मि.ली.) गोमूत्र पीयें। इससे कफज वातरक्त नष्ट हो जाता है।

१४ धात्र्यादिक्वाथ (भा.प्र.)

धात्रीहरिद्रामुस्तानां कषायं वा समाक्षिकम् ॥२४॥

अथवा आमला, हल्दी एवं नागरमोथा का समभागीय ५० मि.ली. क्वाथ में १५ ग्राम मधु मिलाकर पीने से वातरक्त नष्ट हो जाता है।

१५. अमृतादिक्वाथ (भा.प्र.)

अमृतानागरधान्यककर्षत्रितयेन पाचनं सिद्धम्।
जयति सरक्तं वातं सामं कुष्ठान्यशेषेण ॥२५॥

गुडूची, सोंठ तथा धनियाँ—तीनों द्रव्य १-१ कर्ष अर्थात् १२-१२ ग्राम लेकर यवकुट करें और १६ गुने जल में क्वाथ करें। इस क्वाथ को पीने से आमदोष, वातरक्त और सभी तरह के कुष्ठ नष्ट हो जाते हैं।

१६. वत्सादनीक्वाथ (भा.प्र.)

वत्सादन्युद्भवः क्वाथः पीतो गुग्गुलुमिश्रितः।
समीरणसमायुक्तं शोणितं सम्प्रसाधयेत् ॥२६॥

गुडूचीक्वाथ में शुद्ध गुग्गुलु १ ग्राम मिलाकर पीने से वातरक्त नष्ट हो जाता है।

१७. निम्बादिचूर्ण

निम्बामृताभया धात्री प्रत्येकञ्च पलोन्मितम्।
सोमराजीपलं शुण्ठीविडङ्गैडगजाः कणा ॥२७॥
यमानी चोग्रगन्धा च जीरकं कटुकं तथा।
खदिरं सैन्धव क्षारं द्वे हरिद्रे च मुस्तकम् ॥२८॥
देवदारु तथा कुष्ठं कर्षं कर्षं प्रदापयेत्।
सर्वं सञ्चूर्णितं कृत्वा श्लथवस्त्रेण गालयेत् ॥२९॥
शाणमात्रन्तु भोक्तव्यं छिन्नाक्वाथं पिबेदनु।
मासमात्रप्रयोगेण भवेत्काञ्चनसन्निभः ॥३०॥
वातशोणितमत्युग्रं श्वित्रमौदुम्बरं तथा।
कोठं चर्मदलाख्यञ्च सिध्म पामा च विप्लुता ॥३१॥
कण्डू विचर्चिका कारुदद्रुमण्डलकिट्टिमम्।
सर्वाण्येव निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥३२॥
आमवातकृतं शोथमुदरं सर्वरूपिणम्।
प्लीहानं गुल्मरोगञ्च पाण्डुरोगं सकामलम् ॥३३॥
सर्वान् कण्डूव्रणांश्चैव हरते नात्र संशयः।
एतन्निम्बादिकं चूर्णं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥३४॥

१. निम्बछाल, २. गुडूची, ३. हरीतकी, ४. आमला, ५. बाकुचीबीज, ६. सोंठ, ७. वायविडङ्ग, ८. चक्रमर्दबीज, ९. पीपर, १०. अजवायन, ११. वच (गन्धयुक्ता), १२. जीरा, १३. कुटकी, १४. खैर की लकड़ी, १५. सैन्धवलवण, १६. यवक्षार, १७. हल्दी, १८. दारुहल्दी, १९. नागरमोथा, २०. देवदारु और २१. कूठ—निम्ब छाल से बाकुचीबीज तक के ५ द्रव्यों को प्रत्येक ४६-४६ ग्राम तथा सोंठ से कूठ तक के सभी १६ द्रव्यों को प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें। इन्हें चूर्ण कर महीन छननी से छान कर काचपात्र में संग्रहीत करें। ३ ग्राम इस चूर्ण को खाकर ५० मि.ली. गुडूची क्वाथ पीने से एक महीना के अन्दर शरीर सोना जैसा निर्दोष हो जाता है। अर्थात् भंयकर वातरक्त, श्वित्र, उदुम्बरकुष्ठ, कोठ, चर्मदल, सिध्म, पामा, विप्लुता, कण्डू, विचर्चिका, दद्रुमण्डल, किटिम, आमवात, आमजन्य शोथ, उदररोग, प्लीहा, गुल्म, पाण्डु, कामला, सभी प्रकार के कण्डूव्रण निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं। जैसे वज्रपात से वृक्ष नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार इस चूर्ण के सेवन से उपर्युक्त सभी रोग नष्ट हो जाते है। इस निम्बादि चूर्ण को नागार्जुनमुनि ने कहा था।

१८. मुण्डीतिका चूर्ण (च.द.)

लीढ्वा मुण्डीतिकाचूर्णं मधुसर्पिःसमायुतम्।
छिन्नाक्वाथं पिबन् हन्ति वातरक्तं सुदुस्तरम् ॥३५॥

गोरखमुण्डी का चूर्ण ३ग्राम, घी ५ग्राम तथा मधु १०ग्राम मिलाकर सुबह-शाम चाटने से बाद गुडूचीक्वाथ ५० मि.ली. अनुपान रूप में पीने से भंयकर वातरक्त नष्ट हो जाता है।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१९. गुडघृत प्रयोग (भा.प्र.)

कफपित्तप्रशमनं कच्छुवीसर्पनाशनम्।
वातरक्तप्रशमनं हृद्यं गुडघृतं स्मृतम् ॥३६॥

५ ग्राम गुड़ को १० ग्राम गरम घी में मिलाकर सुबह-शाम रोज सेवन करने से कच्छू-विसर्प एवं वातरक्त का शमन करता है। साथ ही यह गुड़घृत हृद्य भी है।

२०. तिलप्रलेप (भा. प्र.)

लेपस्तद्वत्तिला भृष्टाः पिष्टाः पयसि निर्वृताः ॥३७॥

१०० ग्राम तिल (कृष्ण या श्वेत) बीज बिना स्नेहयुक्त कडाही में भूनें और २५० मि.ली. गोदुग्ध में निर्वाचित करें। इसके बाद उस तिल को सिल पर पीसकर वातरक्त से पीड़ित स्थान पर लेप करने से, दाह एवं वेदना युक्त वातरक्त शान्त हो जाता है।

२१. वातरक्त में प्रलेप और सेक (च.द.)

गोधूमचूर्णाजपयोघृतञ्च
सच्छागदुग्धो रुबुबीजकल्कः।
लेपो विधेयः शतधौतसर्पिः
सेके पयश्चाविकमेव शस्तम् ॥३८॥

(१) गेहूँ का आटा १०० ग्राम, बकरी का घृत ५० ग्राम, बकरी का दूध २५० मि.ली. मिलाकर लेप करने से वातरक्त नष्ट हो जाता है। अथवा—(२) एरण्डबीज को पीसकर कल्क बना लें और उसमें बकरी का दूध मिलाकर लेप लगाने से वातरक्त नष्ट हो जाता है। अथवा—(३) शतधौतघृत का लेप करने से वातरक्त नष्ट हो जाता है। अथवा—(४) भेड़ी के दूध का लेप लगाने से वातरक्त नष्ट हो जाता है।

२२. गृहधूमादिप्रलेप (यो.र.)

गृहधूमवचाकुष्ठशताह्वारजनीद्वयम्।
प्रलेप शूलनुद् वातरक्ते वातकफोत्तरे ॥३९॥

१. गृहधूम, २. वचा, ३. कूठ, ४. सौंफ, ५. हल्दी तथा ६. दारुहल्दी—समभाग लेकर इन्हें सूक्ष्म कर लें। इसमें से आवश्यकतानुसार चूर्ण लेकर बकरी का दूध मिलाकर लेप करने से शूलयुक्त वातज एवं कफज वातरक्त नष्ट हो जाते हैं।

२३. बलादिप्रलेप (अ.हृ.)

बलोरुवूकबीजं चाजाजी वत्सादनी मिसिः।
एषामाजपयः पिष्ट कल्कं शश्वत् प्रलेपयेत्॥
यावन्न वातरक्तार्त्तिप्रशान्तिर्दृश्यते ननु ॥४०॥

१. बलामूल, २. एरण्डबीज, ३. श्वेतजीरा, ४. गुडूची और ५. सौंफ—इन्हें समभाग लेकर चूर्ण कर रख लें, आवश्यकतानुसार इस चूर्ण को बकरी के दूध में मिलाकर शीतल लेप करें। वातरक्त से प्रस्फुटित स्थान पर लेप करने से शान्ति मिलती है। जब तक शान्ति नहीं मिले तब तक लेप करना चाहिए।

२४. रास्नादिलेप (भा.प्र.)

रास्ना गूडूची मधुकं बले द्वे
सजीवकं सर्षभकं पयश्च।
घृतं च सिद्धं मधुशेषयुक्तं
रक्तानिलार्त्तिं प्रणुदेत् प्रदेहः ॥४१॥

१. रास्ना, २. गुडूची, ३. मुलेठी, ४. बलामूल, ५. अतिबलामूल, ६. जीवक, ७. ऋषभक, ८. गोदुग्ध, ९. गोघृत तथा १०. मधुशेष (मोम)—प्रत्येक काष्ठौषधि ५०-५० ग्राम लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। ततः एक छोटी लोहे की कड़ाही में ५० ग्राम चूर्ण और २५० मि.ली. दूध में ५० ग्राम घी देकर एक साथ पकावें। जब दूध सूखने लगे तो ५० ग्राम मोम मिलाकर पकावें। जब दूध सूख जाय तो शीतल होने पर उसका लेप वातरक्त से पीड़ित व्यक्ति के शरीर पर करें। इसके लेप से वातरक्त की वेदना शान्त होती है।

२५. वातरक्तान्तकरस (र.सा.सं.)

गन्धकं पारदं लौहं घनं तालं मनःशिला।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत् ॥४२॥
विडङ्गं त्रिफलाव्योषमब्धिफेनं पुनर्नवा।
देवदारु चित्रकञ्च दार्वी श्वेतापराजिता ॥४३॥
चूर्णमेषां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र भावयेत्।
त्रिफलाभृङ्गराजस्य रसेनैव त्रिधा त्रिधा ॥४४॥
सम्भाव्य भक्षयेत्पश्चान्माषमात्रं दिने दिने।
कृत्वाऽनुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ॥४५॥
शाणमात्रं घृतैः कुर्यात् सर्ववातविकारनुत्।
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजं जयेत्॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्यासाध्यं निहन्त्ययम् ॥४६॥

१. शुद्ध गन्धक, २. शुद्ध पारद, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रक भस्म, ५. शुद्ध हरताल, ६. शुद्ध मैनसिल, ७. शुद्ध शिलाजतु, ८. शुद्ध गुग्गुलु, ९. विडङ्गचूर्ण, १०. आमलाचूर्ण, ११. हरीतकीचूर्ण, १२. बहेड़ाचूर्ण, १३. सोंठचूर्ण, १४. पीपरचूर्ण, १५. मरिचचूर्ण, १६. समुद्रफेनचूर्ण, १७. पुनर्नवाचूर्ण, १८. देवदारुचूर्ण, १९. चित्रकमूलचूर्ण, २०. दारुहल्दीचूर्ण एवं २१. श्वेत अपराजिताचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें।

सर्वप्रथम पारद एवं शुद्ध गन्धक की अच्छी कज्जली बना लें। ततः उसी कज्जली के साथ हरताल मर्दन करें, ततः मनःशिला मर्दन करें। पुनः अभ्रक एवं लौहभस्म मिला लें। इसके बाद एक छोटे भगौने में २०० मि.ली. पानी उबालें और उसी में गुग्गुलु और शिलाजतु पिघलावें। जब गुग्गुलु और शिलाजतु

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पिघल जाय तब सभी चूर्ण और कज्जली आदि का मिश्रण एक साथ मिलाकर पिघले गुग्गुलु में मिला दें। शीतल होने पर हाथ से मसलकर अच्छी तरह से मिलावें। पुनः एक बड़े खरल में रखकर गरम त्रिफलाक्वाथ की ३ भावना दें। पुनः भृङ्गराजस्वरस की ३ भावना देकर चना बराबर ६० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः निम्बवृक्ष का पत्र, पुष्प और त्वचा का समभाग में चूर्ण बना लें। ३ ग्राम इस चूर्ण के साथ १-१ वटी और ३ ग्राम घी तीनों एक साथ दिन में २ बार प्रातः-सायं खाने से भयंकर तथा सभी प्रकार के उपद्रवों से युक्त साध्यासाध्य वातरक्त रोग नष्ट हो जाता है।

विमर्श—गरम त्रिफलाक्वाथ की भावना देने से गुग्गुलु और शिलाजतु जो जमे हुए होंगे वे सब आपस में मिल जायेंगे।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—निम्बत्वक्पत्रपुष्पचूर्ण और घृत से। **गन्ध**—शिलाजतुगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—भयंकर वातरक्त में।

२६. विश्वेश्वररस (र.सा.सं.)

रसाद्दश विषात्पञ्च गन्धकाद्दश शोधितात्।
तुत्थाद्दश पलाशस्य बीजेभ्यः पञ्च कारयेत् ॥४७॥
क्षुद्राऽश्वमारधुस्तूरनीलीतः करहाटकात्।
दशकं दशकं कुर्याच्छोषयित्वा जटात्वचः ॥४८॥
दशकं दशकं दत्त्वा कुचिलाद्दश नूतनात्।
भल्लातकाच्च दशकं चूर्णयित्वा भिषक्ततः ॥४९॥
सुदिने च बलिं दत्त्वा वैद्यः पूजापरायणः।
रक्तिकाद्वितयं दद्यात् सहते यदि वा त्रयम् ॥५०॥
वातरक्तं ज्वरं कुष्ठं खरस्पर्शमसौख्यदम्।
आजानुस्फुटितं हन्ति विषजं वाऽस्थिनिःसृतम् ॥५१॥
कुष्ठमष्टादशविधमग्निमान्द्यमरोचकम्।
विश्वेश्वरो रसो नाम विश्वनाथेन भाषितः ॥५२॥

१. शुद्ध पारद १० भाग, २. शुद्ध विष ५ भाग, ३. शुद्ध गन्धक १० भाग, ४. शुद्ध तुत्थ १० भाग, ५. पलाशबीजचूर्ण ५ भाग; ६. कण्टकारी, ७. कनेरमूलत्वक्, ८. शुद्ध धत्तूर मूलत्वक्, ९. नीलीवृक्षत्वक्, १०. मदनफलमूलत्वक्, ११. शुद्ध कुपीलु, तथा १२. शुद्ध भिलावा—कण्टकारी से शुद्ध भिलावा तक के प्रत्येक द्रव्य १०-१० भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उसमें शुद्ध तुत्थ मिला दें। इसके बाद शेष काष्ठौषधों का सूक्ष्म चूर्ण उस कज्जली में अच्छी तरह मिला दें। ततः सुविधा के लिए जल की १ भावना देकर २५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखाकर संग्रहीत करें। शुभ दिन एवं शुभ नक्षत्र में बलि देकर पूजापरायण वैद्य २ रत्ती की मात्रा में सेवन करें। यदि यह औषधि सह्य हो तो ३ रत्ती भी दे सकते हैं। कुपिलु एवं भल्लातक १०-१० नग देना चाहिए।

गुण-धर्म—वातरक्त, ज्वर, कुष्ठ, खरस्पर्शी कुष्ठ या त्वग्रोग, कष्टप्रद त्वग्रोग, घुटने तक त्वचा का स्फोटन, विष से उत्पन्न त्वग्रोग, ऐसा वातरक्त जिसमें सड़कर हड्डियाँ तक निकल गई हों, १८ प्रकार के कुष्ठ, अग्निमान्द्य तथा अरुचि आदि रोग इसके सेवन से नष्ट हो जाते हैं। इस 'विश्वेश्वर रस' को भगवान् विश्वनाथ या आचार्य विश्वनाथ ने कहा है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा. या बर्दास्त हो तो ३७५ मि.ग्रा. देना चाहिए। **अनुपान**—गुडूचीस्वरस एवं मधु से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—सभी तरह से वातरक्त एवं कुष्ट में।

२७. द्वादशायस

गरुत्मान् दरदस्तीक्ष्णं शर्वाख्यो वङ्गशक्तिके।
शुल्वञ्च गगनं फेनं रुधिरञ्च त्रिनेत्रकम् ॥५३॥
पातालनृपतिश्चैव वह्निमूलं सरामठम्।
त्रिकटु त्रिफला शिग्रु चाजमोदा यमानिका ॥५४॥
भार्गी च पिप्पलीमूलं लशुनं जीरकद्वयम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥५५॥
वातरक्तं महाकुष्ठं गलिताङ्गं त्रिदोषजम्।
शोथं कण्डूञ्च रुधिरं सर्वमेतद् व्यपोहति ॥५६॥
मन्दानलामवातञ्च श्लेष्माणञ्च जलोदरम्।
घ्राणाक्षिकर्णजिह्वानां सर्वरोगं विनाशयेत् ॥५७॥

१. स्वर्णमाक्षिकभस्म, २. शुद्ध हिंगुल, ३. तीक्ष्णलौह, ४. शुद्ध पारद, ५, वङ्गभस्म, ६, शुद्ध गन्धक, ७. ताम्रभस्म, ८. अभ्रकभस्म, ९. समुद्रफेन, १०. सुवर्णगैरिक, ११. सुवर्ण-भस्म, १२. नागभस्म, १३. चित्रकमूलचूर्ण, १४. शुद्ध हींग, १५. सोंठचूर्ण, १६. पीपरचूर्ण १७. मरिचचूर्ण, १८. आमला-चूर्ण, १९. हरीतकीचूर्ण, २०. बहेड़ाचूर्ण, २१. सहिजनमूल-त्वक्चूर्ण, २२. अजमोदाचूर्ण २३. अजवायनचूर्ण, २४. भारंगीचूर्ण, २५. पिपरामूलचूर्ण, २६. लशुन, २७. श्वेतजीरा तथा २८. स्याहजीरा—सभी द्रव्य १०-१० ग्राम लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। ततः उस कज्जली में शुद्ध हिंगुल तथा स्वर्णमाक्षिकादि भस्मों को मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन करें। पुनः सभी काष्ठौषधि के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर आर्द्रकस्वरस की १ भावना देकर ६ घण्टे तक दृढ़ मर्दन करें और २५०-२५० मि.ग्रा. की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें।

गुणा-धर्म—१-१ वटी मधु एवं गुडूचीस्वरस के साथ खाने से वातरक्त, महाकुष्ठ, गलिताङ्ग कुष्ठ, त्रिदोषजशोथ, कण्डू, अन्य

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

रक्तविकार, मन्दाग्नि, आमवात, कफज विकार, जलोदर, नाक-आँख-कान एवं जिह्वा आदि के सभी रोगों को नाश करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं गुडूचीस्वरस रोगानुसार। **गन्ध**—हिंगुगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण रक्ताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—वातरक्त एवं कुष्ठ विशेष में।

२८. सर्वेश्वररस (शाङ्ग. सं.)

शुद्धं सूतं चतुर्गन्धं पलं यामं विचूर्णयेत्।
शुद्धताम्राभ्रलोहानां दरदस्य पलं पलम्॥५८॥
सुवर्णं रजतं चैव प्रत्येकं दशनिष्ककम्।
माषैकं मृतवज्रं च तालं शुद्धं पलद्वयम्॥५९॥
जम्बीरोन्मत्तवासाभिः स्नुह्यर्कविषमुष्टिभिः।
मर्द्यं हयारिजैर्द्रावैः प्रत्येकेन दिनं दिनम्॥६०॥
एवं सप्तदिनं मर्द्यं तद्गोलं वस्त्रवेष्टितम्।
बालुकायन्त्रगं स्वेद्यं त्रिदिनं लघुवह्निना॥६१॥
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं पलैकं योजयेद्विषम्।
द्विपलं पिप्पलीचूर्णं मिश्रं सर्वेश्वरो रसः॥६२॥
द्विगुञ्जो लिह्यते क्षौद्रैः सुप्तिमण्डलकुष्ठनुत्।
वाकुचीदेवकाष्ठं च कर्षमात्रं सुचूर्णयेत्।
लिहेदेरण्डतैलाक्तमनुपानं सुखावहम्॥६३॥

१. शुद्ध पारद ४६ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक १८७ ग्राम, ३. ताम्रभस्म ४६ ग्राम, ४, अभ्रकभस्म ४६ ग्राम, ५. लौहभस्म ४६ ग्राम, ६. शुद्ध हिंगुल ४६ ग्राम, ७. सुवर्णभस्म ३० ग्राम, ८. रजतभस्म ३० ग्राम, ९. हीरकभस्म ८ ग्राम, १०. शुद्ध हरताल ९३ ग्राम, ११. शुद्ध वत्सनाभविष ४६ ग्राम और १२. पीपरचूर्ण ९३ ग्राम लें।

भावना—१. जम्बीरीनिम्बुस्वरस, २. धत्तूरपत्रस्वरस, ३. वासापत्रस्वरस, ४. स्नुहीस्वरस, ५. अर्कपत्रस्वरस, ६. कुचिला क्वाथ तथा ७. कनेरमूलत्वक्क्वाथ। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक को एक साथ मिलाकर अच्छी कज्जली बनावें। तत: उस कज्जली के साथ शुद्ध हरताल मिलाकर ६ घण्टे तक मर्दन करें। इसके बाद हिंगुल एवं हीरक आदि सभी भस्मों को कज्जली के साथ मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद एक द्रव्य के स्वरस या क्वाथ से १-१ दिन तक दृढ़ मर्दन करें। इस तरह ७ द्रव्यों से ७ दिनों तक मर्दन करें। पुन: इस औषधि का १ बड़ा सा गोलक बना लें। गोलक को रेशमी वस्त्र में बाँधकर सुखा लें। तत: उस गोलक को बालुकायन्त्र में (बालू के बीच) रखकर मन्दाग्नि से ३ दिनों तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर चौथे दिन उस गोलक को बालुकायन्त्र से निकालकर बालू आदि साफकर खरल में मर्दन करें और शुद्ध वत्सनाभविष ४६ ग्राम तथा पीपरचूर्ण ९३ ग्राम अच्छी तरह मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'सर्वेश्वररस' कहते है। इस सर्वेश्वररस को २ रत्ती (२५० मि.ग्रा.) की मात्रा में मधु के साथ सेवन करें।

गुण-धर्म—सुप्तिकुष्ठ, मण्डलकुष्ठ और वातरक्त रोगों को नाश करता है। बाकुचीचूर्ण ५ ग्राम, देवदारु ५ ग्राम और एरण्डतैल १० ग्राम—तीनों मिलाकर इस औषधि का अनुमान करना लाभप्रद है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु तथा बाकुचीचूर्ण ५ ग्राम, देवदारुचूर्ण ५ ग्राम एवं एरण्डतैल १० मि.ली. से। **गन्ध**—रसायन गन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—कुष्ठ एवं वातरक्त में।

२९. पित्तान्तकलौह

रसं गन्धकमभ्रञ्च गुडूचीमभयां तथा।
उशीरं बालकं ताम्रसारं सर्वं समं समम्॥६४॥
गृहीत्वाऽयः सर्वसमं खल्ल्वे संस्थाप्य मर्द्दयेत्।
रक्तिद्वयमितां खादेद्वटिकामतियत्नतः॥६५॥
पटोलपत्रधन्याकक्वाथेनैवानुपानतः।
पाण्डुं पित्तोद्भवान् रोगानशेषान् यकृतं तथा॥६६॥
उपदंशं तथा हन्याद्विकृतिं पारदोद्भवाम्।
लौहः पित्तान्तको नाम वातरक्तं सुदारुणम्॥
दाहञ्च हस्तपदयोर्हन्ति सूर्यो यथा तमः॥६७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. अभ्रकभस्म, ४, गुडूचीचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण, ६. खसचूर्ण, ७. सुगन्धबाला-चूर्ण और ८. ताम्रभस्म—प्रत्येक १-१ भाग तथा ९. लौहभस्म ८ भाग लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनावें। तत: शेष सभी द्रव्यों के चूर्णों एवं भस्मों को मिलाकर गूडूची स्वरस या क्वाथ की १ भावना देकर २५० मि.ग्रा. (२-२ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखाकर संग्रह करें। पटोलपत्र एवं धनिया के मिश्रित क्वाथानुपान से प्रयोग करें।

गुण-धर्म—पाण्डु, पित्तप्रकोपज रोग, यकृत् सम्बन्धी रोग, उपदंश, पारद की विकृति, भयंकर वातरक्त; यह हस्त-पाद में दाह रोगों का उसी प्रकार नाश करता है जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—पटोलपत्र एवं धनिया बीज क्वाथ तथा मधु से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कत्थई वर्ण का। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्तादि में।

३०. लाङ्गल्यादिलौह (र.सा.सं.)

विशुद्धलाङ्गलीमूलत्रिकटुत्रिफलैस्तथा।
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यं लौहचूर्णं नियोजयेत्॥६८॥
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च।
विमृद्य यत्नतः पश्चाद् गुडिकां वल्लसम्मिताम्॥६९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भक्षयेन्मधुना सार्द्धं शृणु कुर्वन्ति यान् गुणान्।
आजानुस्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा।
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्यासाध्यञ्च शोणितम् ॥७०॥

१. शुद्ध कलिहारीमूलचूर्ण, २. सोंठचूर्ण, ३. पीपरचूर्ण, ४. मरिचचूर्ण, ५. आमलाचूर्ण, ६. हरीतकीचूर्ण, ७. बहेड़ाचूर्ण, ८. द्राक्षाकल्क, ९. शुद्ध गुग्गुलु और १०. लौहभस्म— कलिहारी से गुग्गुलु पर्यन्त प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें और लौहभस्म ४५० ग्राम लेना चाहिए। सभी द्रव्यों का चूर्ण लें। द्राक्षा को पीसकर कल्क बना लें। गुग्गुलु को २०० मि.ली. गरम पानी में डालकर पिघलावें। जब गुग्गुलु पिघल जाय तो उसमें थोड़ा चूर्ण डालकर हाथों से रगड़कर चूर्ण बना लें। अब उसमें लौहभस्म मिला दें। ततः एक बड़े खरल में सभी द्रव्यों को रखकर मातुलुङ्गस्वरस की भावना दें। सूखने पर त्रिफलाक्वाथ की भावना दें और (३-३ रत्ती) ३७५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में अच्छी तरह सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें।

गुण-धर्म—वातरक्त से पीड़ित असाध्य अवस्था में पहुँचा हुआ रोगी जिसके घुटने तक स्फोटन (फट्-फट् कर रक्तस्राव) तथा सर्वाङ्गस्फोटन से रक्तस्राव हो रहा है ऐसे रोगी तथा अन्य वातरक्त से पीड़ित साध्यासाध्य रोग इसके प्रयोग से अच्छे हो जाते हैं।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं गुडूचीस्वरस से तथा अवस्थानुसार। **गन्ध**—रसायनगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ कत्थई रंग। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—वातरक्त की सभी अवस्थाओं में।

३१. गुडूच्यादिलौह (रसकामधेनु)

गुडूचीसारसंयुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः।
वातरक्तं निहन्त्याशु सर्वरोगहरं परम् ॥७१॥

१. गुडूचीसत्त्व, २. आमलाचूर्ण, ३. हरीतकीचूर्ण, ४. बहेड़ाचूर्ण, ५. सोंठचूर्ण, ६. पीपरचूर्ण, ७. मरिचचूर्ण, ८. वायविडङ्गचूर्ण, ९. नागरमोथाचूर्ण तथा १०. चित्रकमूलचूर्ण— सभी १० द्रव्य ५०-५० ग्राम तथा लौहभस्म ५०० ग्राम लें। सभी द्रव्यों को एक खरल तथा ऐजरनर मशीन में देकर अच्छी तरह से मर्दन करना चाहिए। अथवा जल की भावना देकर २-३ दिनों तक मर्दन करें और फिर ३७५ मि.ग्रा. (३-३ रत्ती) की मात्रा में वटी बनाकर अच्छी तरह सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। १-१ वटी प्रातः-सायं मधु एवं गुडूचीस्वरस के साथ लेने से वातरक्त नष्ट हो जाता है। यह सभी रोगों में लाभ करता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं गुडूचीस्वरस से। **गन्ध**—निर्गन्धि। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—वातरक्त में।

३२. शिलाजतुप्रयोग (रसकामधेनु)

छिन्नोद्भवाकषायेण सेव्यं शुद्धं शिलाजतु।
पञ्चकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशान्तये ॥७२॥

पञ्चकर्म[१] (पाचन-स्नेहन-स्वेदन-वमन-विरेचन—रसशास्त्र के पञ्चकर्म यही हैं। अन्यथा वमन-विवेचन-बस्ति-नस्य एवं रक्त मोक्षण भी कर सकते हैं) के द्वारा शरीर-शोधन करने के पश्चात् शुद्ध शिलाजतु १ से ३ ग्राम तथा गुडूचीक्वाथ ५० मि.ली. का प्रयोग करने से वातरक्त रोग नष्ट हो जाता है।

३३. ताम्र-तालभस्म का प्रयोग

तालेन निहितं ताम्रं रसगन्धकसंयुतम्।
बहुधा पुटितं तालं वातरक्ते महौषधम् ॥७३॥

शुद्ध हरताल से मारित ताम्रभस्म, शुद्ध पारद तथा शुद्ध गन्धक लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनावें तथा उस कज्जली में ताम्रभस्म मिलाकर अच्छी तरह मिश्रित कर मर्दन करें। अथवा—अनेक लघु पुटों द्वारा मारित हरतालभस्म का उपयोग भी वातरक्त रोग शमनार्थ महौषध रूप में किया जाता है।

ताम्रभस्म एवं कज्जली प्रयोग—

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु तथा गुडूचीस्वरस से। **गन्ध**—निर्गन्धि। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—वातरक्त शमनार्थ।

हरतालभस्म-प्रयोग—

मात्रा—३० से ६५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं गुडूचीस्वरस से। **गन्ध**—निर्गन्धि। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—वातरक्त एवं कुष्ठ में।

३४. तालभस्म (र.सा.सं.)

हरितालं पलं शुद्धं तथा कर्षं विषस्य च।
श्वेताङ्कोठरसेनैव द्वयमेकत्र खल्लयेत् ॥७४॥
पलाशभस्म द्विपलं निधाय स्थालिकोपरि।
तद्भस्मोपरि तालस्य गोलकं स्थापयेत् सुधीः ॥७५॥
तस्योपरि ह्यपामार्गभस्म दद्यात् पलत्रयम्।
स्थालीमुखे शरावं च दद्याद्यत्नेन लेपयेत् ॥७६॥
लेपयित्वा ततश्चुल्ल्यामहोरात्रं पचेद्भिषक्।
ततस्तु जायते भस्म शुद्धकर्पूरसन्निभम् ॥७७॥
गुञ्जात्रयं ततो भक्ष्यमनुपानविशेषतः।
वातरक्तं च कुष्ठं च दद्रुविस्फोटकापचीः ॥७८॥

---

१. पाचनं स्नेहनं स्वेदो वमनं रेचनं तथा।
एतानि पञ्चकर्माणि ज्ञातव्यानि भिषग्वरैः ॥
(रसरत्नाकर/आयुर्वेदप्रकाशे च)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विचर्चिकां चर्मदलं वातदुष्टं च शोणितम्।
रक्तपित्तं तथा शोथं गलत्कुष्ठं विनाशयेत्॥
हलीमकं तथा शूलमग्निमान्द्यमरोचकम्॥७९॥

१. शुद्ध हरताल ५० ग्राम, २. शुद्ध वत्सनाभचूर्ण १२ ग्राम, ३. श्वेत अंकोलवृक्षत्वक्रस ५० मि.ली., ४. पलाशवृक्ष त्वग्भस्म—९३ ग्राम तथा ५. अपामार्गपञ्चाङ्गभस्म १४० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में हरताल और वत्सनाभविषचूर्ण को एक साथ मर्दन करें तथा अंकोलस्वरस की भावना देकर ६ घण्टे तक मर्दन करें। पुनः चक्रिका बना लें। एक बड़े मिट्टी के शराव में ९३ ग्राम पलाशभस्म रखकर हाथ से अच्छी तरह दबावें और उसी पर हरतालचक्रिका रखें। चक्रिका के ऊपर अपामार्गभस्म रखकर हाथ से हल्का दबावें। दूसरे शराव से ढककर मिट्टी से सन्धिबन्धन करें। पुनः चूल्हे पर उक्त सम्पुटित शराव को रख कर मन्दाग्नि से २४ घण्टे तक पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर शराव को सावधानीपूर्वक खोलकर कर्पूर जैसा हरतालभस्म प्राप्त करें। इसे ३ रत्ती की मात्रा में प्रयोग करें। किन्तु आजकल ६० मि.ग्रा. की मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। धीरे-धीरे बढ़ाकर १२५ मि.ग्रा. की मात्रा तक दिया जा सकता है। अनुपान मधु एवं गुडूचीस्वरस या घृत एवं गुडूचीस्वरस या रोगानुसार देना चाहिए।

गुण-धर्म—वातरक्त, कुष्ठ, दद्रु, विस्फोट, अपची, विचर्चिका, चर्मदल, वातदुष्टरक्त, रक्तपित्त, शोथ, गलित कुष्ठ, हलीमक, शूल, अरुचि, एवं अग्निमांद्य रोग इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं गुडूचीस्वरस या घृत एवं गुडूचीस्वरस से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—श्वेत। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—वातरक्त एवं सभी प्रकार के कुष्ठ तथा अग्निमान्द्य में।

३५. महातालेश्वररस (र.सा.सं.)

तथा सिद्धेन तालेन गन्धतुल्येन मेलयेत्।
द्वयोस्तुल्यं जीर्णताम्रं बालुकायन्त्रगं पचेत्॥८०॥
अयं तालेश्वरो नामः रसः परमदुर्लभः।
हन्यात् कुष्ठानि सर्वाणि वातरक्तमथापि च॥
शूलमष्टविधं श्वित्रं रसस्तालेश्वरो महान्॥८१॥

१. पूर्वोक्त विधि द्वारा निर्मित तालभस्म १० ग्राम, शुद्ध गन्धक १० ग्राम तथा ताम्रभस्म २० ग्राम लें। तीनों को एक साथ खरल में मर्दन कर गुडूचीस्वरस की भावना देकर १ बड़ा सा गोलक बना लें। सूखने के बाद गोलक को रेशमी वस्त्र में बांधकर ६ घण्टे तक बालुकायन्त्र में पाक करें। स्वाङ्गशीत होने पर गोलक निकालकर कपड़ा पृथक् कर औषधि को खरल में मर्दन कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस परम दुर्लभ महातालेश्वर रस को ६५ मि.ग्रा. की मात्रा में प्रयोग करने से १८ प्रकार के कुष्ठरोग, वातरक्त, श्वित्र एवं अष्टविध शूलरोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—६५-१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं गुडूची स्वरस या घृत एवं गुडूचीस्वरस से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—धूसर। **स्वाद**—निःस्वादु। **उपयोग**—कुष्ठ, वातरक्त, श्वित्र में।

३६. रसाभ्रगुग्गुलु

कर्षद्वयं पारदस्य लौहं गन्धञ्च तत्समम्।
लौहगन्धसमं चाभ्रं गुग्गुलुं कुडवद्वयम्॥८२॥
अमृताया रसप्रस्थे रसप्रस्थे फलत्रिके।
सान्द्रीभूते रसे तस्मिन् गर्भं दत्त्वा विचक्षणः॥८३॥
त्रिकटु त्रिफला दन्ती गुडूची चेन्द्रवारुणी।
विडङ्गं नागपुष्पञ्च त्रिवृता च सुचूर्णितम्॥८४॥
प्रत्येकं कर्षमादाय सर्वमेकत्र कारयेत्।
भक्षयेत् कोलमात्रन्तु छिन्नाक्वाथानुपानतः॥८५॥
वातरक्तं महाघोरं स्फुटितं गलितं जयेत्।
अष्टादशविधं कुष्ठं कृमिरोगं तथाऽश्मरीम्॥८६॥
भगन्दरं गुदभ्रंशं श्वेतकुष्ठं सकामलम्।
अपचीं गण्डमालाञ्च पामाकण्डूविचर्चिकाः॥८७॥
चर्मकीलं महादद्रुं नाशयेन्नात्र संशयः।
वातरक्तविनाशाय धन्वन्तरिकृतः पुरा।
रसाभ्रगुग्गुलुः ख्यातो वातरक्तेऽमृतोपमः॥८८॥

१. शुद्ध पारद २३ ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २३ ग्राम, ३. लौहभस्म २३ ग्राम, ४. अभ्रकभस्म २३ ग्राम, ५. गुडूचीक्वाथ ७५० मि.ली., ६. त्रिफलाक्वाथ ७५० मि.ली., ७. शुद्ध गुग्गुलु ३७५ ग्राम; ८. सोंठचूर्ण, ९. पीपरचूर्ण, १०. मरिच-चूर्ण, ११. आमलाचूर्ण, १२. हरीतकीचूर्ण, १३. बहेड़ाचूर्ण, १४. दन्तीमूलचूर्ण, १५. गुडूचीचूर्ण, १६. इन्द्रवारुणीमूल-चूर्ण, १७. वायविडङ्गचूर्ण, १८. नागकेशरचूर्ण तथा १९. निशोथचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः दोनों भस्मों को मिलावें। पुनः गुडूचीक्वाथ एवं त्रिफलाक्वाथ दोनों को एक भगौने में गरम करें, उसी में शुद्ध गुग्गुलु डालकर पाक करें। जब गुग्गुलु उसमें अच्छी तरह घुल जाय तो उसे और भी पकाते रहें। जब गुग्गुलु सान्द्र हलवा जैसा हो जाय तो उसमें कज्जली, भस्मों का मिश्रण और शेष सभी चूर्णों को एक साथ अच्छी तरह मिलाकर गुग्गुलु में छिड़कर अच्छी तरह मिला दें। थोड़ा घी देकर सिल पर अच्छी तरह पीसें, जिसमें कि सभी द्रव्य गुग्गुलु के साथ अच्छी तरह मिल जाय। तदनन्तर १ कोल=६ ग्राम की मात्रा में गुडूचीस्वरस के साथ सेवन करें। किन्तु यह मात्रा अधुना

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अत्यधिक है अतः १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। पुनः काचपात्र में संग्रहीत कर लें।

गुण-धर्म—इस 'रसाभ्रगुग्गुलु' को रोगानुसार या चिकित्सकानुसार ४-६ वटी गुडूचीक्वाथ से लेने पर स्फुटित या गलित हो गया हो ऐसे भयंकर वातरक्त, १८ प्रकार के कुष्ठ, कृमिरोग, भगन्दर, गुदभ्रंश, श्वेतकुष्ठ, कामला, अपची, गण्डमाला, पामा, कण्डू, विचर्चिका, चर्मकील, महादद्रु आदि रोग निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं। वातरक्त विनाशार्थ भगवान् धन्वन्तरि ने इस 'रसाभ्रगुग्गुलु' औषधि को बनाया था। यह औषधि वातरक्त के लिए अमृत जैसी है।

मात्रा—१ से ५ ग्राम तक। **अनुपान**—गुडूचीक्वाथ से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त, कुष्ठ में।

३७. अमृतागुग्गुलु-१ (भा. प्र.)

त्रिप्रस्थममृतायाश्च प्रस्थमेकन्तु गुग्गुलोः।
प्रत्येकं त्रिफलाप्रस्थं वर्षाभूप्रस्थमेव च ॥८९॥
सर्वमेकत्र सङ्कुट्य साधयेन्नल्वणेऽम्भसि।
पुनः पचेत् पादशेषं यावत्सान्द्रत्वमागतम् ॥९०॥
दन्तीचित्रकमूलानां कणाविश्वफलत्रिकम्।
गुडूचीत्वग्विडङ्गानां प्रत्येकार्द्धपलं मतम् ॥९१॥
त्रिवृताकर्षमेकन्तु सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
सिद्धे चोष्णे क्षिपेत्तत्र अमृतागुग्गुलुं परम् ॥९२॥
अतो यथाबलं खादेदम्लपित्ती विशेषतः।
वातरक्तं तथा कुष्ठं गुदजान्यग्निसादनम् ॥९३॥
दुष्टव्रणं प्रमेहांश्च आमवातं भगन्दरम्।
नाड्याढ्यवातं श्वयथुं हन्यात्सर्वामयांस्तथा ॥९४॥
अश्विभ्यां निर्मितश्चायममृताख्यो हि गुग्गुलुः।
गुडरामठशुण्ठीनां मांसकूष्माण्डयोरपि ॥
गुडूच्या गुग्गुलोश्चैव प्रस्थः षोडशभिः पलैः ॥९५॥

१. गुडूची ३ प्रस्थ (२२५० ग्राम), २. शुद्ध गुग्गुलु ७५० ग्राम, ३. आमला ७५० ग्राम, ४. हरीतकी ७५० ग्राम, ५. बहेड़ात्वक् ७५० ग्राम, ६. पुनर्नवामूल ७५० ग्राम, जल १३ ली.; ७. दन्तीमूलचूर्ण, ८. चित्रकमूलचूर्ण, ९. पीपरचूर्ण, १०. सोंठचूर्ण, ११. आमलाचूर्ण, १२. हरीतकीचूर्ण, १३. बहेड़ा-चूर्ण, १४. गुडूचीचूर्ण, १५. दालचीनीचूर्ण, १६. वायविडङ्ग-चूर्ण और निशोथचूर्ण—दन्ती से विडङ्ग तक सभी १० द्रव्य प्रत्येक २३-२३ ग्राम लें तथा निशोथचूर्ण १२ ग्राम लेना चाहिए। सर्वप्रथम गुडूची, आमला, हरीतकी, बहेड़ा तथा पुनर्नवा—इन्हें यवकुट कर १२ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। छने हुए गरम क्वाथ में—गुग्गुलु डालकर पुनः पाक करें। जब गुग्गुलु घुल जाय तो उसे और पकाकर सान्द्र (हलवा जैसा) बना लें। इसे बार-बार चलाते रहना चाहिए। पुनः दन्तीमूल से निशोथ तक के सभी ११ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाकर उस सान्द्र गुग्गुलु में मिला दें और सिल पर गरम-गरम पीसें, थोड़ा घी भी मिलाना चाहिए। इसके बाद १-१ ग्राम की वटिका बनाकर छाया में सुखा लें। सूखने के बाद काचपात्र में संग्रहीत करना चाहिए। इसे 'अमृतागुग्गुलु' कहते है।

गुण-धर्म—रोगी के शारीरिक बलानुसार इसकी मात्रा निर्धारित करें। इसका १ ग्राम से ५ ग्राम की मात्रा में प्रयोग करें। अम्लपित्तरोग के लिए यह गुग्गुलु विशेष उपयोगी है तथा वातरक्त, सभी कुष्ठ, अर्श, अग्निमांद्य, दुष्टव्रण, प्रमेह, आमवात, भगन्दर, नाडीवात, आढ्यवात एवं शोथरोग और सभी रोगों को नष्ट करता है। इस 'अमृतागुग्गुलु' का निर्माण अश्विनीकुमारों ने किया था।

गुड़, हींग, शुण्ठी, मांस, कूष्माण्ड, गुडूची एवं गुग्गुलु तौलने के लिए १६ पल का प्रस्थ होता है।

मात्रा—१ से ५ ग्राम तक। **अनुमान**—गुडूचीक्वाथ एवं रोगानुसार। **गन्ध**—गुग्गुल जैसी सुगन्ध। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अम्लपित्त, वातरक्त एवं कुष्ठ में।

३८. अमृतागुग्गुलु-२ (च.द.)

प्रस्थमेकं गुडूच्यास्तु ह्यर्द्धप्रस्थं च गुग्गुलोः।
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च तत्प्रमाणं विनिर्दिशेत् ॥९६॥
सर्वमेकत्र संक्षुद्य साधयेत्त्वर्मणेऽम्भसि।
पादशेषं परिस्राव्य पुनरग्नावधिश्रयेत् ॥९७॥
पुनः पचेत्कषायं तं यावत्सान्द्रत्वमागतम्।
दन्तीव्योषविडङ्गानि गुडूची त्रिफलात्वचः ॥९८॥
ततश्चार्द्धपलं पूतं गृह्णीयाच्च प्रति प्रति।
कर्षं तु त्रिवृतायास्तु सर्वमेकत्र कारयेत् ॥९९॥
तस्मिन् सुसिद्धं विज्ञाय कवोष्णे प्रक्षिपेद् बुधः।
ततश्चाग्निबलं ज्ञात्वा तस्य मात्रां प्रदापयेत् ॥१००॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं गुदजान्यग्निसादनम्।
दुष्टव्रणं प्रमेहांश्च सामवातं भगन्दरम् ॥१०१॥
नाड्याढ्यवातश्वयथून् सर्वानेतान् व्यपोहति।
अश्विभ्यां निर्मितः पूर्वममृताख्यो हि गुग्गुलुः ॥
अर्द्धप्रस्थं त्रिफलायाः प्रत्येकमिह गृह्यते ॥१०२॥

१. गुडूची ७५० ग्राम, २. शुद्ध गुग्गुलु ३७५ ग्राम, ३. हरीतकी ३७५ ग्राम, ४. बहेड़ा ३७५ ग्राम, ५. आमला ३७५ ग्राम तथा जल १३ ली. लें।

प्रक्षेप—१. दन्तीमूल, २. सोंठ, ३. पीपर, ४. मरिच, ५. वायविडङ्ग, ६. गुडूची, ७. आमला, ८. बहेड़ा और ९.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

हरीतकीफलत्वक्—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें तथा १०. निशोथ १२ ग्राम लें। इन दशों द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। सर्वप्रथम गुडूची एवं त्रिफला का यवकुट करें और १ द्रोण जल में क्वाथ करें। जब चौथाई क्वाथ शेष बचे तो क्वाथ छान लें। अब एक दूसरे स्टेनलेस स्टील के पात्र में गरम क्वाथ और गुग्गुलु दोनों एक साथ मिलाकर आग पर पकावें। जब गुग्गुलु क्वाथ में घुल जाय तो छननी से छान लें। यदि थोड़ा भी गुग्गुलु घुलने से बचा हो तो उसे पुनः पकावें। ततः उस छने हुए गुग्गुलु द्रव को पाककर गाढ़ा करें और उसे बराबर चलाते रहें। पात्र की तली में जले नहीं यह ध्यान रखना चाहिए। जब गुग्गुलु सान्द्र गाढ़ा हो जाय तो उसे उतार लें और उसमें थोड़ा घी ५० ग्राम देकर अच्छी तरह से मिला लें। पुनः दन्तीमूल से निशोथ तक के सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर उस गुग्गुलु में मिला दें। सिल पर पुनः उस गुग्गुलु और चूर्णों को साथ मिलाकर पीसें या इमामदस्ते में थोड़ा ५० ग्राम घी देकर चूर्णों और गुग्गुलु को मिलाकर कूटें। पुनः १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। सूखने पर इस गुग्गुलु को काचपात्र में संग्रहीत करें। रोगी का अग्निबल एवं रोग की प्रबलता आदि देखकर बुद्धिमान् चिकित्सक इसकी मात्रा निर्धारित करें।

गुण-धर्म—वातरक्त, कुष्ठ, अर्श, अग्निमान्द्य, दुष्टव्रण (कैंसर), प्रमेह, आमवात, भगन्दर, नाडीव्रण, आढ्यवात, शोथ आदि इन सभी रोगों का यह 'अमृतागुग्गुलु' नाश करता है। इस औषधि का अश्विनीकुमारों ने निर्माण किया था।

मात्रा—१ से ५ ग्राम। **अनुपान**—गुडूचीक्वाथ। **गन्ध**—गुग्गुलुगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त, कुष्ठ, अर्श, भगन्दर एवं दुष्टव्रण में।

३९. कैशोरगुग्गुलु (च.द.)

वरमहिषलोचनोदरसन्निभवर्णस्य गग्गुलोः प्रस्थम्।
प्रक्षिप्य तोयराशौ त्रिफलाञ्च यथोक्तपरिमाणाम्॥
द्वात्रिंशच्छिन्नरुहापलानि देयानि यत्नेन।
विपचेदप्यप्रमत्तो दर्व्या सङ्घट्टयन् मुहुर्यावत्॥१०४॥
अर्द्धक्षयितं तोयं जातं ज्वलनस्य सम्पर्कात्।
अवतार्य वस्त्रपूतं पुनरपि संसाधयेत् पात्रे॥१०५॥
सान्द्रीभूते तस्मिन्नवतार्य हिमोपलप्रख्ये।
त्रिफलाचूर्णार्द्धपलं त्रिकटोश्चूर्णं षडक्षपरिमाणम्॥
कृमिरिपुचूर्णार्द्धपलं कर्षं कर्षं त्रिवृद्दन्त्योः।
अमृतायाः पलमेकं सर्पिषश्च पलाष्टकं क्षिपेदमलम्॥
उपयुज्य चानुपानं यूषं क्षीरं सुगन्धिसलिलञ्च।
इच्छाहारविहारी भेषजमुपयुज्य सर्वकालमिदम्॥
तनुरोधि वातशोणितमेकजमथ द्वन्द्वजं चिरोत्थञ्च।
जयति स्रुतं परिशुष्कं स्फुटितं चाजानुजञ्चापि॥
व्रणकासकुष्ठगुल्मश्वयथूदरपाण्डुरोगमेहांश्च।
मन्दाग्निञ्च विबन्धं प्रमेहपिडकाञ्च नाशयत्याशु॥
सततं निषेव्यमाणः कालवशाद्धन्ति सर्वगदान्।
अभिभूय जरादोषं करोति कैशोरकं रूपम्॥१११॥
प्रत्येकं त्रिफलाप्रस्थो जलमत्र षडाढकम्।
गुडवद् गुग्गुलोः पाकः सबन्धस्तु विशेषतः॥११२॥
पाकायत्तं फलं पाके क्वाथे पाकप्रधानता।
तस्मात्क्वाथविधौ नित्यं यतितव्यं चिकित्सकैः॥११३॥

१. शुद्ध गुग्गुलु (महिषाक्ष) ७५० ग्राम, २. त्रिफला के तीनों द्रव्य प्रत्येक ७५० ग्राम, ३. गुडूची ३७५ ग्राम तथा पाकार्थ जल १८ ली. (६ आढक); ४. आमलाचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण, ६. बहेड़ाचूर्ण—प्रत्येक २३-२३ ग्राम; ७. पीपरचूर्ण, ८. मरिचचूर्ण, ९ सोंठचूर्ण—प्रत्येक २३ २३ ग्राम; १०. वायविडङ्ग २३ ग्राम, ११. निशोथचूर्ण १२ ग्राम, १२. दन्तीमूलचूर्ण १२ ग्राम, १३. गुडूची ४६ ग्राम तथा १४. घृत ३७५ ग्राम लें। सर्वप्रथम त्रिफला एवं गुडूची का यवकुट करें और १२ ली. जल में क्वाथ करें, चौथाई क्वाथ शेष रहे तो क्वाथ छान लें। अब छने हुए ३००० मि.ली. क्वाथ में गुग्गुलु डालकर पुनः आग पर पकावें। जब गुग्गुलु पूरी तरह घुल जाय तो गुग्गुलु द्रव को छननी से छान लें। फिर भी यदि गुग्गुलु बचे तो उसे पुनः उबाल कर छान लें और अपद्रव्य को फेंक दें। अब उस छने हुए गुग्गुलु द्राव को आग पर पकाकर घन करें। जब गुग्गुलु सान्द्र (हलवा जैसा) हो जाय तो पात्र चूल्हे से नीचे उतार लें और त्रिफला, त्रिकटु आदि द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करके उस गुग्गुलु में डाल दें। घी भी उसी गुग्गुलु में मिलाकर इमामदस्ते में कूटकर अच्छी तरह मिला लें। इसे १ से ५ ग्राम तक की मात्रा में गुडूचीक्वाथ या यूष, गोदुग्ध, सुगन्धित जल से प्रतिदिन प्रातः-सायं लेना चाहिए।

गुण-धर्म—वातरक्त जो एकदोषज, द्विदोषज अथवा त्रिदोषज हो, बहुत पुराना वातरक्त हो, शुष्क या रक्तस्रावयुक्त हो या आजानुस्फुटित वातरक्त हो, सभी प्रकार के वातरक्त को शीघ्र नष्ट करता है। व्रण, कास, कुष्ठ, गुल्म, शोथ, उदररोग, पाण्डुरोग, प्रमेह, मन्दाग्नि, विबन्ध, प्रमेहपिडिका आदि रोगों को नष्ट करता है। हमेशा सेवन करने से समयानुसार सभी प्रकार के रोगों को नाश करता है। जरादोष को नाश कर यह किशोरावस्था जैसा स्वरूप प्रदान करता है। इसीलिए इसे कैशोर गुग्गुलु कहते हैं।

विशेष—त्रिफला के प्रत्येक द्रव्य १-१ प्रस्थ लें। जल १८ ली. (६ आढक) लेना चाहिए। गुड़ के जैसा गुग्गुलु का पाक करना चाहिए, किन्तु गुड़ पाकान्त में द्रव ही रहता है और गुग्गुलु पाकान्त में गाढ़ा हो जाता है। गुड़ एवं गुग्गुलु के गुण पाकाधीन रहते हैं। अतः क्वाथ में ही पाक की प्रधानता

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

है। इसीलिए चिकित्सक को क्वाथ और पाक में प्रयत्नशील रहना चाहिए।

मात्रा—१ से ५ ग्राम तक। **अनुपान**—गुडूची क्वाथ। **गन्ध**—गुग्गुलु गन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त, कुष्ठ, आमवात आदि में।

४०. पुनर्नवागुग्गुलु (भा. प्र.)

पुनर्नवामूलशतं विशुद्धं
रुबूकमूलञ्च तथा प्रयोज्य।
दत्त्वा पलं षोडशकञ्च शुण्ठ्याः
सङ्कुट्य सम्यग्विपचेद् घटेऽपाम् ॥१'१४॥
पलानि चाष्टावथ कौशिकस्य
तेनाष्टशेषेण पुनः पचेत्तु।
एरण्डतैलं कुडवञ्च दद्याद्
दत्त्वा त्रिवृच्चूर्णपलानि पञ्च ॥११५॥
निकुम्भचूर्णस्य पलं गुडूच्याः
पलद्वयं चार्द्धफलं पलं वा
फलत्रयत्र्यूषणचित्रकाणि
सिन्धूत्थभल्लातविडङ्गकानि ॥११६॥
कर्षं तथा माक्षिकधातुचूर्णं
पुनर्नवायाः पलमेव चूर्णम्।
चूर्णानि दत्त्वा ह्यवतार्य शीतं
खादेन्नरः कर्षसमप्रमाणम् ॥११७॥
वातासृजं वृद्धिगदञ्च सप्त
जयत्यवश्यं त्वथ गृध्रसीञ्च।
जङ्घोरुपृष्ठत्रिकवस्तिजञ्च
तथामवातं प्रबलञ्च हन्ति ॥११८॥

१. पुनर्नवामूल ५ किलो, २. एरण्डमूल ५ किलो, ३. सोंठ ७५० ग्राम, ४. शुद्ध गुग्गुलु ३७५ ग्राम, जल १ घट (१२ ली.), ५. एरण्डतैल १८७ मि.ली., ६. त्रिवृच्चूर्ण २३० ग्राम, ७. दन्तीमूलचूर्ण ४६ ग्राम, ८. गुडूचीचूर्ण ९३ ग्राम, ९. आमलाचूर्ण २३ ग्राम, १०. हरीतकीचूर्ण २३ ग्राम, ११. बहेड़ाचूर्ण २३ ग्राम, १२. सोंठचूर्ण २३ ग्राम, १३. पीपरचूर्ण २३ ग्राम, १४. मरिचचूर्ण २३ ग्राम, १५. चित्रकचूर्ण २३ ग्राम, १६. सैन्धवचूर्ण ४६ ग्राम, १७. शुद्ध भल्लातक ४६ ग्राम, १८. वायविडङ्गचूर्ण ४६ ग्राम, १९. स्वर्णमाक्षिकभस्म १२ ग्राम तथा २०. पुनर्नवाचूर्ण ४६ ग्राम लें! पुनर्नवा, एरण्डमूल तथा सोंठ तीनों को यथाप्रमाण में लेकर यवकुट करें और २४ लीटर जल में क्वाथ करें। अष्टमांशवशेष रहने पर क्वाथ छान लें। उस छने हुए गरम क्वाथ में शुद्ध गुग्गुलु डालें और पुनः आग पर पकावें। जब गाढा होने लगे तो उसमें एरण्डतैल डालें। जब हलवा जैसा गाढा हो जाय तो आग से नीचे उतार कर त्रिवृच्चूर्ण से पुनर्नवाचूर्ण तक के सभी औषधों के चूर्णों को मिलाकर पुनः छान लें और गुग्गुलु में डालकर अच्छी तरह मिला दें। ततः चूर्ण मिश्रित गुग्गुलु को सिल पर अच्छी तरह से पीस लें और १ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। सूखने के बाद इस 'पुनर्नवागुग्गुलु' को काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १२ ग्राम की मात्रा में सेवन करें।

गुण-धर्म—वातरक्त, ७ प्रकार के वृद्धिरोग, गृध्रसी, जंघा, ऊरु, पृष्ठ, त्रिक एवं बस्ति में उत्पन्न हुए शूल तथा आमवात नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ से ३ ग्राम तक। **अनुपान**—गुडूचीक्वाथ से। **गन्ध**—गुग्गुलुगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त, आमवात एवं गृध्रसी में।

४१. योगसारामृतलेह (च.द.)

शतावरी नागबला वृद्धदारकमुच्चटा।
पुनर्नवाऽमृताकृष्णावाजिगन्धात्रिकण्टकम् ॥११९॥
पृथग्दशपलान्येषां श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
तदर्द्धशर्करायुक्तं चूर्णं सम्मर्दयेद् बुधः ॥१२०॥
स्थापयेत् सुदृढे भाण्डे मध्वर्द्धाढकसंयुतम्।
घृतप्रस्थेन चालोड्य त्रिसुगन्धिपलेन तु ॥१२१॥
तं खादेदिष्टचेष्टात्मा यथावह्निबलं नरः।
वातरक्तं क्षयं कुष्ठं कार्श्यं पित्तास्रसम्भवम् ॥१२२॥
वातपित्तकफोत्थांश्च रोगानन्यांश्च तद्विधान्।
हत्वा करोति पुरुषं वलीपलिवर्जितम् ॥
योगसारामृतं नाम लक्ष्मीकान्तिविवर्द्धनम् ॥१२३॥

१. शतावरी, २. नागबला, ३. विधारा, ४. नागरमोथा, ५. पुनर्नवा, ६. गुडूची, ७. पीपर, ८. अश्वगन्धा तथा ९. गोक्षुर—प्रत्येक द्रव्य ५०० ग्राम; १०. चीनी ४५०० ग्राम, ११. मधु १५०० ग्राम, १२. गोघृत ७५० ग्राम, १३. छोटी इलायची ४६ ग्राम, १४. दालचीनी ४६ ग्राम तथा तेजपात ४६ ग्राम लें। शतावरी से गोक्षुर तक के सभी ९ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। चीनी भी महीन पीस लें। ततः त्रिजातक (इलायची आदि) का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। अब इन सभी द्रव्यों को एक साथ अच्छी तरह से मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। शरीर के बल एवं अग्नि के अनुसार १० से २० ग्राम तक इसे खाना चाहिए। इसके सेवन काल में इच्छानुसार आहार-विहार करना चाहिए।

गुण-धर्म—यह वातरक्त, क्षय, कुष्ठ, दौर्बल्य, रक्तपित्त एवं वात-पित्त-कफ से होने वाले अन्य विकारों को नष्ट करता है। यह वली-पलित नाशक है। यह 'योगसारामृतलेह' लक्ष्मी-कान्तिवर्धक है।

मात्रा—१० से २० ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

घृत गन्धी। **वर्ण**—पाण्डुवर्ण। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातरक्त, कुष्ठ, क्षय एवं दौर्बल्यनाशक है।

४२. गुडूचीघृत (च.द.)

गुडूचीक्वाथकल्काभ्यां सपयस्कं शृतं घृतम्।
हन्ति वातं तथा रक्तं कुष्ठं जयति दुस्तरम् ॥१२४॥

१. गोघृत १ किलो, २. गुडूचीकल्क २५० ग्राम, ३. गुडूचीक्वाथ ४ ली., ४. गोदुग्ध ४ ली. तथा सम्यक् पाकार्थ जल ४ ली. लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। तत: २५० ग्राम गुडूची का चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित घृत में डालें। इसके बाद ४ किलो गुडूची का यवकुट करें और १६ लीटर जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें तथा मूर्च्छित घृत में मिलाकर मन्दाग्नि पर घृत का पाक करें। जब गुडूचीक्वाथ सूखने लगे तब उस घृत में गोदुग्ध देकर पाक करें। जब दूध भी सूखने लगे तब सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर पुन: पाक करें। जब जल सूख जाय तो स्नेहपाकविद् वैद्य परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से उतारकर कपड़े से छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में घृत को संग्रहीत करें। इसे गुडूचीघृत कहते हैं। ५ से १० ग्राम की मात्रा चीनी मिले गरम गोदुग्ध के साथ पीने से भयंकर वातरक्त और कुष्ठरोग को नष्ट होता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—चीनी मिले गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त एवं कुष्ठ में।

४३. शतावरी घृत (च.द.)

शतावरीकल्कगर्भं रसे तस्याश्चतुर्गुणे।
क्षीरतुल्यं घृतं पक्वं वातशोणितनाशनम् ॥१२५॥

१. गोघृत १ किलो, २. शतावरीकल्क २५० ग्राम, ३. शतावरीक्वाथ ४ ली., ४. गोदुग्ध ४ ली. तथा सम्यक् पाकार्थ जल ४ ली. लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। तत: २५० ग्राम शतावरीचूर्ण को जल से सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क को मूर्च्छित घृत में मिला दें और दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। तत: ४ किलो शतावरी को यवकुट कर १६ लीटर जल में भिंगाकर क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर क्वाथ छान लें और पकते घृत में मिलाकर पाक करें। जब यह क्वाथ सूखने लगे तो सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर पुन: पाक करें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेह की परीक्षा कर घृतपात्र को नीचे उतार लें और कपड़े से घृत को छान लें तथा शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह घृत ५ से १० ग्राम की मात्रा में चीनी मिले हुए गरम गोदुग्ध में मिलाकर पिलाने से वातरक्त रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम। **अनुपान**—चीनी मिला गाय का गरम दूध से। **गन्ध**—घृत जैसा। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त में।

४४. अमृताद्यघृत (च.द.)

अमृता मधुकं द्राक्षा त्रिफला नागरं बला।
वासाऽऽरग्वधवृश्चीरदेवदारुत्रिकण्टकम् ॥१२६॥
कटुका सवरी कृष्णा काश्मर्यस्य फलानि च।
रास्नाक्षुरकगन्धर्ववृद्धदारघनोत्पलैः ॥१२७॥
कल्कैरेभिः समैः कृत्वा सर्पिःप्रस्थं विपाचयेत्।
धात्रीरसं समं दत्त्वा वारि त्रिगुणसंयुतम् ॥१२८॥
सम्यक् सिद्धन्तु विज्ञाय भोज्ये पाने प्रशस्यते।
बहुदोषान्वितं वातं रक्तेन सह मूर्च्छितम् ॥१२९॥
उत्तानञ्चापि गम्भीरं त्रिकजङ्घोरुजानुजम्।
क्रोष्टुशीर्षे महाशूले चामवाते सुदारुणे ॥१३०॥
वातरोगोपसृष्टस्य वेदनाञ्चापि दुस्तराम्।
मूत्रकृच्छ्रमुदावर्त्तं प्रमेहं विषमज्वरम् ॥१३१॥
एतान् सर्वान्निहन्त्याशु वातपित्तकफोद्भवान्।
सर्वकालोपयोगेन वर्णायुर्बलवर्धनम्।
अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं घृतमेतदनुत्तमम् ॥१३२॥

गाय का घी ७५० ग्राम लें। १. गुडूची, २. मुलेठी, ३. मुनक्का, ४. त्रिफला, ५. सोंठ, ६. बला, ७. वासा, ८. अमलतासफलमज्जा, ९. पुनर्नवा, १०. देवदारु, ११. गोक्षुर, १२. कुटकी, १३. शतावरी, १४. पीपर, १५. गम्भारीफल, १६. रास्ना, १७. तालमखाना, १८. एरण्डमूलत्वक्, १९. विधारा, २०. नागरमोथा और २१. नीलकमल—प्रत्येक ९-९ ग्राम लें तथा २२. आमलास्वरस या क्वाथ ७५० मि.ली. एवं सम्यक् पाक हेतु घी से ३ गुना जल लें। सर्वप्रथम घृत का मूर्च्छन करें। तदनन्तर गुडूची से नीलकमल तक के सभी ३१ द्रव्यों को यथा मात्रा लेकर चूर्ण करें। पुन: जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ताजा आमला को कूटकर ७५० मि.ली. रस निकाल लें या क्वाथ विधि से उतना क्वाथ बना लें। अब मूर्च्छित घृत में कल्क एवं क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूख जाय तो कल्क के सम्यक् पाक हेतु स्नेह से ३ गुना जल देकर पाक करें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेह के परीक्षोपरान्त घृतपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से घृत की छान लें और शीतल होने पर घृत को काचपात्र में संग्रहीत करें। इस अमृताद्यघृत को ५ से १० ग्राम की मात्रा में चीनी मिश्रित गरम गोदुग्ध में देकर पिलाना चाहिए।

गुण-धर्म—प्रवृद्ध वातरक्त, गम्भीर वातरक्त, उत्तान वात रक्त, त्रिक, जंघा, ऊरु एवं जानु तक फैले वातरक्त को नष्ट करता है। इसके अतिरिक्त क्रोष्टुशीर्ष, महाशूल, दारुण

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आमवात, वातजन्य भयंकर वेदना, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, प्रमेह, विषमज्वर एवं वात, पित्त तथा कफ से उत्पन्न सभी रोगों को नष्ट करता है। इस घृत का हमेशा प्रयोग करने से वर्ण, आयु और बल बढ़ता है। अश्विनीकुमारों ने उत्तमोत्तम इस 'अमृताद्य घृत' को बनाया था।

मात्रा—चीनी युक्त गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—घतृगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त में।

४५. गुडूचीतैल (स्वल्प)-१

गुडूचीक्वाथकल्काभ्यां तैलं सिद्धं पयः समम्।
वातरक्तं निहन्त्याशु नात्र कार्या विचारणा ॥१३३॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम्।
नाशयेत्तिमिरं घोरं गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥१३४॥

१. तिलतैल १ लीटर, २. गुडूची २५० ग्राम, ३. गुडूची ४ किलो, ४. गोदुग्ध १ लीटर तथा सम्यक् पाकार्थ जल ४ ली. लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः २५० ग्राम गुडूची का चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ततः ४ किलो गुडूची का यवकुट करें और ४ गुना जल (१६ लीटर) में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। अब गुडूचीक्वाथ एवं कल्क को मूर्च्छित तिलतैल में मिलाकर पाक करें। जब क्वाथ सूखने लगे तो १ लीटर दूध उस तैल में देकर पाक करें। जब दूध सूखने लगे तो ४ लीटर जल देकर कल्क का सम्यक् पाक करें। जब जल सूख जाय तो स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेहपाक की परीक्षा करके स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल छान लें। शीतल होने पर इस गुडूची तैल को काचपात्र में संग्रह करें। यह तैल मालिश मात्र से वातरक्त को नाश करता है। इसमें विचारने-सोचने की आवश्यकता नहीं है। एकदोषज, द्विदोषज एवं त्रिदोषज वातरक्त को यह तैल निःसन्देह नाश करता है। यह तैल भयंकर तिमिररोग का भी नाश करता है।

मात्रा—अभ्यङ्ग से। **गन्ध**—तैल गन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त में।

४६. गुडूचीतैल (मध्य)-२

शतं छिन्नरुहायाश्च जलद्रोणे विपाचयेत्।
तेन पादावशेषेण तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥१३५॥
क्षीरं चतुर्गुणं दद्यात् कल्कानेतान् प्रयत्नतः।
अश्वगन्धा विदारी च काकोल्यौ हरिचन्दनम् ॥१३६॥
शतावरी चातिबला श्वदंष्ट्रा बृहतीद्वयम्।
कृमिघ्नं त्रिफला रास्ना त्रायमाणा च शारिवा ॥१३७॥
जीवन्ती ग्रन्थिकं व्योषं वागुजी भेकपर्णिका।
विशाला ग्रन्थिपर्णञ्च मञ्जिष्ठा चन्दनं निशा ॥१३८॥
शताह्वा सप्तपर्णी च कार्षिकाण्यथ कल्पयेत्।
पानाभ्यञ्जननस्येषु वातरक्त प्रयोजयेत् ॥१३९॥
वातरक्तमुदावर्तं कुष्ठान्यष्टादशैव च।
हनुस्तम्भं प्रमेहञ्च कामलां पाण्डुतां जयेत् ॥१४०॥
विस्फोटञ्च विसर्पञ्च नाडीव्रणभगन्दरम्।
विचर्चिकां गात्रकण्डूं पाददाहं विशेषतः ॥१४१॥
एतत्तैलवरं श्रेष्ठं वलीपलितनाशनम्।
आत्रेयनिर्मितं चैव बलवर्णकरं स्मृतम् ॥१४२॥

गुडूची ५ किलो, जल १३ लीटर, तिल तैल ७५० मि.ली. और गोदुग्ध ३ लीटर लें।

कल्क—१. अश्वगन्धा, २. विदारीकन्द, ३. काकोली, ४. क्षीरकाकोली, ५. श्वेतचन्दन, ६. शतावरी, ७. अतिबला, ८. गोखरु, ९. बृहती, १०. कण्टकारी, ११. वायविडङ्ग, १२. आमला, १३. हरीतकी, १४. बहेड़ा, १५. रास्ना, १६. त्रायमाणा, १७. सारिवा, १८. जीवन्ती, १९. पिपरामूल, २०. सोंठ, २१. पीपर, २२. मरिच, २३. बाकुचीबीज, २४. मण्डूकपर्णी, २५. इन्द्रायण, २६. गठिवन, २७. मंजीठ, २८. लालचन्दन, २९. हल्दी, ३०. सौंफ और ३१. सप्तपर्ण—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तदनन्तर गुडूची का यवकुट करें और १२ लीटर जल में क्वाथ करें। जब चौथाई शेष रहे तो छान लें। अब अश्वगन्ध से सप्तपर्ण तक सभी ३१ द्रव्यों का चूर्ण करें और सिल पर जल से पीसकर कल्क बना लें। ततः कल्क और क्वाथ मूर्च्छित तैल में मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूख जाय तब गोदुग्ध देकर पकावें। जब दूध सूख जाय तो सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल देकर पाक करें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को कपड़े से छान लें और शीतल होने पर इस 'अमृताद्यतैल' को काचपात्र में सुरक्षित कर लें। इस तैल का पान, अभ्यङ्ग और नस्य के रूप में वातरक्त रोगी में प्रयोग करें। इसके प्रयोग से वातरक्त, उदावर्त, १८ प्रकार के कुष्ठ, हनुस्तम्भ, प्रमेह, कामला, पाण्डु, विस्फोट, विसर्प, नाडीव्रण, भगन्दर, विचर्चिका, गात्रकण्डू, पाददाह में विशेष रूप से उपयोगी है। यह श्रेष्ठ गुडूची तैल वली-पलित नाशक है। इसका प्रयोग वर्णकर एवं बल्य है। महर्षि आत्रेय ने इसका निर्माण किया था।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्यार्थ ३-३ बूँद एवं अभ्यंगार्थ। **अनुपान**—चीनी मिश्रित गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—तैल गन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**— वातरक्त, कुष्ठ एवं कण्डू में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

४७. गुडूचीतैल (बृहद्) ३ (च.द.)

तुलां पचेज्जलद्रोणे गुडूच्याः पादशेषितम्।
क्षीरद्रोणं च ताभ्यां तु पचेत्तैलाढकं शनैः ॥१४३॥
कल्कैर्मधुकमञ्जिष्ठाजीवनीयगणास्तथा ।
कुष्ठैलागुरुमृद्वीका मांसी व्याघ्रनखं नखी ॥१४४॥
हरेणुः स्राविणी व्योषं शताह्वा भृङ्गशारिवे।
त्वक्पत्रे वचविक्रान्ता स्थिरा चामलकी तथा ॥१४५॥
नतं केशरह्रीबेरपद्मकोत्पलचन्दनैः।
सिद्धं कर्षसमैर्भागैः पानाभ्यङ्गानुवासनैः ॥१४६॥
परं वातास्रजान् हन्ति सर्वजानन्तरस्थितान्।
घन्यं पुंसवनं स्त्रीणां गर्भदं वातपित्तनुद् ॥१४७॥
स्वेदकण्डूरुजापामाशिरःकम्पार्दितामयान् ।
हन्याद् व्रणकृतान् दोषान् गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥१४८॥

क्वाथ—गुडूची ५ किलो, जल १२ लीटर, गोदुग्ध १२ लीटर तथा तिलतैल ३ लीटर लें।

कल्क—१. मुलेठी, २. मंजीठ, ३. जीवक, ४. ऋषभक, ५. मेदा, ६. महामेदा ७. काकोली, ८. क्षीरकाकोली, ९. ऋद्धि, १०. वृद्धि, ११. मुलेठी, १२. जीवन्ती, १३. माषपर्णी, १४. मुद्गपर्णी, १५. कूठ, १६. छोटीइलायची, १७. अगुरु, १८. द्राक्षा, १९. जटामांसी, २०. व्याघ्रनखी, २१. नखी, २२. रेणुका, २३. गोरखमुण्डी, २४. सोंठ, २५. पीपर, २६. मरिच. २७. सौंफ, २८. भृंगराज, २९. श्वेत सारिवा ३०. कृष्णसारिवा, ३१. दालचीनी, ३२. तेजपात, ३३. वचा, ३४. वाराहीकन्द, ३५. शालपर्णी, ३६. आमला, ३७. तगर, ३८. नागकेशर, ३९. सुगन्धबाला, ४०. पद्मकाष्ठ, ४१. नीलकमल और ४२. रक्तचन्दन—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः गुडूची का यवकुट करें और १२ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। मुलेठी से रक्तचन्दन तक के सभी कल्क द्रव्यों का चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब कल्क और क्वाथ दोनों को मूर्च्छित तैल में मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। जब क्वाथ सूखने लगे तब उसमें १२ लीटर दूध देकर पाक करें। जब दूध सूख जाय तो उसमें कल्क के सम्यक् पाकार्थ १२ लीटर जल देकर पुनः पाक करें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेहपाक की परीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़ा से तैल को छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में तैल को संग्रह करें। इस गुडूचीतैल का पान, अभ्यंग, बस्ति के रूप में उपयोग करने से सभी प्रकार के वातरक्त एवं गम्भीर (धातुगत) वातरक्त को नाश करता है। इस तैल का उपयोग पुंसवन कर्म में करने से पुत्र पैदा करता है। गर्भधारण करने में सहायता करता है। वात-पित्त नाशक है। यह स्वेद, कण्डू, पीड़ा, पामा, शिरःकम्प एवं अर्दित और व्रण दोष का नाश करता है। यह 'गुडूची तैल' उत्तमोत्तम है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली.। बस्ति ५० मि.ली. नस्यार्थ ३-३ बूँद। **अनुपान**—चीनी मिश्रित गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त, कुष्ठ, गर्भप्रद, पुंसवनार्थ।

४८. महारुद्रगुडूचीतैल

अमृतायास्तुलां सम्यग् जलद्रोणे विपाचयेत्।
पिचुमर्दत्वचं क्षुण्णां भाजनप्रमितां तथा ॥१४९॥
जलद्रोणे विनिष्क्वाथ्य ग्राह्यं पादावशेषितम्।
प्रस्थञ्च कटुतैलस्य गोमूत्रञ्चापि तत्समम् ॥१५०॥
अमृता वाकुची कुम्भी करवीरं फलत्रिकम्।
दाडिमं निम्बबीजञ्च रजन्यौ बृहतीद्वयम् ॥१५१॥
नागबला त्रिकटुकं पत्रं मांसी पुनर्नवा।
ग्रन्थिकं विकसाऽश्वाह्वा शतपुष्पा च चन्दनम् ॥१५२॥
शारिवे द्वे सप्तपर्णो गोमयस्य रसस्तथा।
एषां कर्षमितैर्भागैः साधयेन्मृदुनाऽग्निना ॥१५३॥
वातरक्तं निहन्त्याशु सर्वोपद्रवसंयुतम्।
कुष्ठञ्चाष्टादशविधं विसर्पञ्च व्रणमयम् ॥
महारुद्रगुडूच्याज्यं तैलं भुवनदुर्लभम् ॥१५४॥

क्वाथ—गुडूची ५ किलो को १२ लीटर जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष; निम्बत्वक् ३ किलो को १२ ली. जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष; सरसोंतैल ७५० मि.ली. और गोमूत्र ७५० मि.ली. लें।

कल्क—१. गुडूची, २. बाकुची, ३. दन्तीमूल, ४. कनेर मूलत्वक्, ५. आमला, ६. हरीतकी, ७. बहेड़ा, ८. अनारदाना, ९. निम्बबीज, १०. हल्दी, ११. दारुहल्दी, १२. बृहती, १३. कण्टकारी, १४. नागबला, १५. सोंठ, १६. पीपर १७. मरिच, १८. तेजपात, १९. जटामांसी, २०. पुनर्नवामूल, २१. पिपरामूल, २२. मंजीठ, २३. अश्वगन्धा, २४. सौंफ, २५. रक्तचन्दन, २६. कृष्णसारिवा, २७. श्वेतसारिवा, २८. सप्तपर्ण (छतवन) तथा २९. गोबर का रस—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम (१-१ तोला) लें।

सर्वप्रथम कटुतैल का मूर्च्छन करें। ततः गुडूची का यवकुट करें और १२ ली. जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। इसी प्रकार निम्बत्वक् का यवकुट करें और १२ लीटर जल में क्वाथ करें, चौथाई शेष रहने पर छान लें। ततः गुडूची से सप्तपर्ण तक के २८ द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण करें और जल के साथ

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सिल पर पीसकर कल्क बना लें। इस कल्क में गोबर रस भी मिला दें। अब यह कल्क और गुडूचीक्वाथ दोनों मूर्च्छित तैल में मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब गुडूचीक्वाथ सूखने लगे तो बाद में निम्ब क्वाथ मिलाकर पाक करें। जब निम्बक्वाथ सूखने लगे तो गोमूत्र देकर पाक करें। गोमूत्र डालने से तैल में बहुत फेन होने लगता है। अतः धीरे-धीरे थोड़ा-थोड़ा गोमूत्र डालना चाहिए। ततः कल्क के सम्यक् पाक हेतु ३ लीटर जल देकर पाक करें। जब यह जल सूखने लगे तब स्नेहपाकविद् वैद्य परीक्षा करके तैलपात्र को नीचे उतारकर तैल को कपड़े से छान लें। जब शीतल हो जाय तो तैल को काचपात्र में संग्रहीत करें। इस तैल के अभ्यंग करने से सभी उपद्रवों से युक्त वातरक्त नष्ट हो जाता है। १८ प्रकार के कुष्ठ, विसर्प एवं व्रण भी नष्ट हो जाते हैं। विश्व में यह महारुद्र गुडूचीतैल दुर्लभ है।

मात्रा— अभ्यङ्ग। **गन्ध**—गोमूत्रगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त एवं कुष्ठ में।

४९. महारुद्रतैल

पुनर्नवा निशा निम्बं वार्ताकुदाडिमीफलम्।
बृहत्यौ पूतिकामूलं वासकं सिन्दुवारकम् ॥१५५॥
पटोलपत्रं धुस्तूरमपामार्गं जयन्तिका।
दन्ती वरा पृथक् सर्वं कर्षद्वयमितं पुनः ॥१५६॥
विषस्य द्विपलं देयं पृथग् व्योषं पलत्रयम्।
प्रस्थञ्च सार्षपं तैलं प्रस्थाम्बु वृषपत्रजम् ॥१५७॥
गुडूच्यास्तु चतुःषष्टिपलक्वाथरसेन च।
वारिप्रस्थेन वक्तव्यं महारुद्रमिदं शुभम् ॥१५८॥
वातरक्तं निहन्त्याशु नानादोषसमुत्थितम्।
अष्टादशविधं कुष्ठं हन्ति वर्णाग्निवर्द्धनम् ॥१५९॥
कृमिं दुष्टव्रणञ्चैव दाहं कण्डूं निहन्ति च।
अस्वेदनं महास्वेदमभ्यङ्गादेव नश्यति ॥१६०॥

१. पुनर्नवा २. हल्दी, ३. निम्बत्वक्, ४. बैगनमूल, ५. अनारदाना, ६. बृहती, ७. कण्टकारी, ८. करञ्जमूलत्वक्, ९. वासामूल, १०. निर्गुण्डीपत्र, ११. पटोलपत्र, १२. धत्तूरपत्र, १३. अपामार्ग, १४. जयन्तीपत्र, १५. दन्तीमूल, १६. आमला, १७. हरीतकी तथा १८. बहेड़ा—प्रत्येक द्रव्य २३ ग्राम लें; १९. वत्सनाभविष ९३ ग्राम, २०. सोंठ १४० ग्राम, २१. पीपर १४० ग्राम, २२. मरिच १४० ग्राम, २३. सरसों-तैल ७५० मि.ली., २४. वासापत्रस्वरस ७५० मि. ली., २५. गुडूचीस्वरस या क्वाथ ३ लीटर और सम्यक् पाकार्थ जल ७५० मि.ली. लें। सर्वप्रथम सरसों तैल का मूर्च्छन करें। ततः पुनर्नवा से मरिच तक के सभी २३ द्रव्यों का चूर्ण करें और उस चूर्ण को जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ततः वासास्वरस और कल्क दोनों को मूर्च्छित तैल में मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। जब वासास्वरस सूख जाय तब गुडूची-स्वरस या क्वाथ मिलाकर पाक करें। जब गुडूचीक्वाथ सूख जाय तब तैल के बराबर जल देकर कल्क का सम्यक् पाक करें। जब यह जल सूख जाय तो स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेहपाक की परीक्षा कर स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से तैल को छान लें और शीतल होने पर इस 'महारुद्रतैल' को काचपात्र में संग्रहीत करें।

यह तैल अनेक दोषों से उत्पन्न सभी प्रकार के वातरक्त को नाश करता है। १८ प्रकार के कुष्ठ, कृमि, दुष्टव्रण (कैंसर), दाह, कण्डू आदि रोग इसके अभ्यंग से नष्ट हो जाते हैं। इसकी मालिश से वर्ण एवं अग्नि की वृद्धि होती है। अस्वेद और अत्यधिक स्वेद (महास्वेद) आदि इसके अभ्यङ्ग से नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—अभ्यङ्ग। **गन्ध**—कटुतैलगन्धी। **वर्ण**—पीत। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त, १८ प्रकार के कुष्ठ एवं दुष्ट व्रण नाशक है।

५०. रुद्रतैल

पुनर्नवा निशा निम्बं वार्ताकुर्बृहतीत्वचम्।
कण्टकारी करञ्जश्च निर्गुण्डी वृषमूलकम् ॥१६१॥
अपामार्गं पटोलञ्च धुस्तूरं दाडिमीफलम्।
जयन्तीमूलकं दन्ती प्रत्येकं कार्षिकद्वयम् ॥१६२॥
त्रिफलायाः प्रदातव्यं द्विकर्षञ्च पृथक्-पृथक्।
दत्त्वा छिन्नरुहायाश्च द्वात्रिंशच्च पलानि च ॥१६३॥
पाचयेद् भाजनं तोयं चतुर्भागावशेषितम्।
कटुतैलस्य च प्रस्थं दुग्धं च तत्समं भवेत् ॥१६४॥
वासकस्वरसप्रस्थं मन्दमन्देन वह्निना।
गन्धं शटी च कक्कोलं चन्दनं ग्रन्थिकं नखी ॥१६५॥
पूतीकं केशरं कुष्ठं सरलं नालुकं वचा।
ह्रीबेरं रेणुका चैला शैलजं च शिलारसम् ॥१६६॥
मधुकं कुन्दुरु जटामांसी च कार्षिकं क्षिपेत्।
रुद्रतैलमिदं सिद्धं वातरक्तं व्यपोहति ॥१६७॥
अष्टादशविधं कुष्ठं हन्त्यस्थिमज्जगं पुनः।
हस्तपादाङ्गुलीसन्धिगलितं स्फुटितं तथा ॥१६८॥
कृष्णश्वेतं तथा रक्तं नानावर्णं सदाहकम्।
पामां विचर्चिकां कण्डूं छायां त्वचञ्च कालिनीम् ॥
मसूरिकां मण्डलञ्च ज्वलनञ्च विसर्पकम्।
नाडीव्रणं मर्महीनं गात्रवैवर्ण्यदद्रुकम् ॥
निहन्ति रक्तदोषञ्च भास्करस्तिमिरं यथा ॥१७०॥

सरसोंतैल ७५० मि.ली., गोदुग्ध ७५० मि.ली. तथा वासास्वरस ७५० मि.ली. लें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

क्वाथ—१. पुनर्नवा, २. हल्दी, ३. निम्बत्वक्, ४. बैंगन मूलत्वक्, ५. बृहतीमूलत्वक्, ६. कण्टकारी, ७. करञ्ज-मूलत्वक्, ८. निर्गुण्डीपत्र, ९. वासामूल, १०. अपामार्ग, ११. पटोलपत्र, १२. धत्तूरपत्र, १३. अनारदाना, १४. जयन्तीमूल, १५. दन्तीमूल, १६. आमला, १७. हरीतकी, १८. बहेड़ा—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें; और १९. गुडूची १.५०० किलो तथा क्वाथार्थ जल १ भाजन अर्थात् ३ लीटर लें।

कल्क—१. अगर, २. कचूर, ३. शीतलचीनी, ४. रक्तचन्दन, ५. पिपरामूल, ६. नखी, ७. खट्टाशी, ८. नागकेशर, ९. कूठ, १०. सरल काष्ठ, ११. नालुका, १२. वचा, १३. सुगन्धबाला, १४. रेणुका, १५. छोटी इलायची, १६. छरीला, १७. शिलारस, १८. मुलेठी, १९. कुन्दुरु और २०. जटामांसी—प्रत्येक द्रव्य १२-१२ ग्राम लें।

सर्वप्रथम कटुतैल का मूर्च्छन करें। ततः अगुरु से जटामांसी तक के सभी कल्क द्रव्यों का चूर्ण करें और उसे जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ततः पुनर्नवा से गुडूची तक के सभी क्वाथ द्रव्यों को यवकुट करें और ३ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। इस क्वाथ और कल्क को मूर्च्छित तैल में डालकर मृदु अग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूखने लगे तो इस तैल में गोदुग्ध मिलाकर पाक करें। जब दूध सूख जाय तो वासास्वरस मिलाकर पकावें। जब वासास्वरस सूख जाय तो कल्क के सम्यक् पाक हेतु ३ लीटर जल देकर पाक करें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य परीक्षोपरान्त स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से तैल छानकर शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'रुद्रतैल' कहते हैं।

गुण-धर्म—इसके प्रयोग (आभ्यन्तर-बाह्य) से वातरक्त और १८ प्रकार के कुष्ठ नष्ट हो जाते हैं। अस्थि एवं मज्जा तक फैला वातरक्त नष्ट हो जाता है। हाथ एवं पैर की अंगुलियाँ एवं इनके सन्धि स्थल यदि गलकर या फटकर नष्ट हो रहे हों तो उस कुष्ठ को भी शान्त करता है। काले, श्वेत एवं लाल तथा अनेक प्रकार के चकत्तों से युक्त कुष्ठ, दाह से युक्त पामा, विचर्चिका, कण्डू, त्वचा पर काली छाया पड़ जाना, मसूरिका, मण्डलकुष्ठ, दाहयुक्त विसर्प, मर्महीन नाडीव्रण, गात्रवैवर्ण्य, दद्रु और अनेक प्रकार के रक्तदोष को यह तैल (रुद्र तैल) उसी प्रकार नष्ट करता है जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., नस्य ३-३ बूँद, बस्ति ५० मि.ली., अभ्यङ्ग। **अनुपान**—मिश्रीयुक्त गाय के गरम दूध से। **गन्ध**—सरसोंतैल जैसी। **वर्ण**—पीत। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त एवं सभी प्रकार के कुष्ठ में।

५१. पिण्ड तैल (चरक)

समधूच्छिष्टमञ्जिष्ठं ससर्जरसशारिवम्।
पिण्डतैलं तदभ्यङ्गाद् वातरक्तरुजापहम् ॥१७१॥

१. तिलतैल १ लीटर, २. मोम ५०० ग्राम, ३. सर्जरस (राल) ७५ ग्राम, ४. अनन्तमूल ७५ ग्राम तथा ५. मंजीठ ७५ ग्राम और जल ४ लीटर लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। तीनों काष्ठौषधों का सूक्ष्मचूर्ण बना लें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब पहले मूर्च्छित तैल को गरम कर उसमें मोम मिला दें। पुनः सब कल्क द्रव्य मिलावें और ४ लीटर जल देकर पाक करें। जब जल सूखने लगे तो परीक्षा करके तैलपात्र को चूल्हे से उतारकर तुरन्त कपड़े से छान लें। शीतल होने पर चौड़े मुख वाले काचपात्र में संग्रहीत करें। इस 'पिण्डतैल' के बाह्य लेप से वातरक्त की पीड़ा शान्त हो जाती है। यह तैल पिण्ड जैसा जमा रहता है।

मात्रा—केवल बाहरी लेप। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **उपयोग**—वातरक्त में लेप मात्र।

५२. महापिण्डतैल

अमृतायाः पलशतं सोमराजीतुलां तथा।
प्रसारण्याः पलशतं जलद्रोणे पृथक् पचेत् ॥१७२॥
पादशेषं गृहीत्वा च तैलप्रस्थं पचेद्भिषक्।
क्षीरं चतुर्गुणं दत्त्वा मन्दमन्देन वह्निना ॥१७३॥
पिण्डशालजनिर्यासिसिन्धुवारफलत्रयम्।
विजयाबृहतीदन्तीकक्कोलकपुनर्नवाः ॥१७४॥
वह्निग्रन्थिककुष्ठानि निशे द्वे चन्दनद्वयम्।
पूतिपूतीकसिद्धार्थवाकुचीचक्रमर्दकम् ॥१७५॥
वासानिम्बपटोलानि वानरीबीजमेव च।
अश्वाह्वा सरलं सर्वं प्रतिकर्षमितं पचेत् ॥१७६॥
एतत्तैलवरं हन्ति वातरक्तमसंशयम्।
कुष्ठमष्टादशविधं ग्रन्थिवातं सुदारुणम् ॥१७७॥
कायग्रहञ्चामवातं भगन्दरगुदामयम्।
ज्वरमष्टविधं हन्ति मर्दनान्नात्र संशयः ॥१७८॥

क्वाथ—गुडूची ५ किलो, बाकुची ५ किलो, गन्धप्रसारणी ५ किलो—इनका पृथक्-पृथक् १२ ली. जल में पाक करें और चौथाई शेष रखें। तिलतैल—७५० मि.ली. और गोदुग्ध ३ लीटर लें।

कल्क—१. पिण्ड (सिल्हक), २. शालनिर्यास, ३. निर्गुण्डी, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. भाँग, ८. बृहतीमूल, ९. दन्तीमूल, १०. शीतलचीनी, ११. पुनर्नवा, १२. चित्रकमूल, १३. पिपरामूल, १४. कूठ, १५. हल्दी, १६. दारुहल्दी, १७. श्वेतचन्दन, १८. लालचन्दन, १९.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

खट्टाशी, २०. करञ्जछाल, २१. सरसों, २२. बाकुची, २३. चकवड़बीज, २४. वासामूल, २५. निम्बछाल, २६. पटोलपत्र, २७. केवाँचबीज, २८. अश्वगन्धा और २९. सरलकाष्ठ—ये सभी द्रव्य १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करे। ततः पिण्ड से लेकर सरल काष्ठ तक के सभी द्रव्यों का चूर्ण करें और जल के साथ इस चूर्ण को सिल पर पीसकर कल्क बना लें। गुडूची, बाकुची एवं प्रसारणी को पृथक्-पृथक् यवकुट करें और अलग-अलग पात्र में तीनों को १२-१२ लीटर जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। अब मूर्च्छित तैल में कोई एक क्वाथ और पूरा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। एक क्वाथ के सूखने पर दूसरा क्वाथ देकर पाक करें। ततः तीसरा क्वाथ देकर पाक करें। तीसरा क्वाथ सूखने पर गोदुग्ध देकर पाक करें। दूध सूखने पर कल्क के सम्यक् पाक हेतु ३ लीटर जल देकर पकावें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को कपड़े से छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह महापिण्डतैल के नाम से जाना जाता है। यह श्रेष्ठ तैल निःसन्देह वातरक्त का नाश करता है। १८ प्रकार के कुष्ठ, भयंकर ग्रन्थिवात, शरीर की जकड़ाहड़, आमवात, भगन्दर, अर्श और आठों प्रकार के ज्वर निःसन्देह इसके मर्दन करने से नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—मर्दन-अभ्यङ्ग मात्र। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—रक्त। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त तथा १८ प्रकार के कुष्ठों में।

५३. विषतिन्दुकतैल

विषतरुफलमज्जप्रस्थयुग्मञ्च शिग्रु-
स्वरसलकुचवारिप्रस्थमेकैकशश्च ।
कनकवरुणचित्रापत्रनिर्गुण्डिकास्नुक्-
स्वरसतुरगगन्धावैजयन्तीरसश्च ॥१७९॥
पृथगिति परिकल्प्य प्रस्थयुग्मेन युग्मं
विषतरुफलमज्जातुल्यतैलं विपक्कम् ।
लशुनसरलयष्टीकुष्ठसिन्धूत्थयुग्मं
दहनतिमिरकृष्णाकल्कयुक्तं सुसिद्धम् ॥
हरति सकलवातं घोररूपं ह्यसाध्यं
प्रतिदिनमुपलेपात् सुप्तवातस्य जन्तोः ॥१८०॥
कुष्ठमष्टादशविधं द्विविधं वातशोणितम् ।
वैवर्ण्यं त्वग्गतान् दोषान् नाशयत्याशु मर्दनात् ॥१८१॥

१. तिलतैल १.५०० लीटर (२ प्रस्थ), २. कुचलाबीज (२ प्रस्थ) १.५०० किलो, ३. सहिजनत्वक् स्वरस ७५० मि.ली., ४. बड़हर(लकुच)त्वक्रस ७५० मि.ली., ५. धत्तूरस्वरस १५०० मि.ली., ६. वरुणत्वक्क्वाथ १५०० मि.ली., ७. चित्रकमूलस्वरस १५०० मि.ली., ८. निर्गुण्डीपत्रस्वरस १५०० मि.ली., ९. स्नुहीपत्रस्वरस १५०० मि.ली., १०. अश्वगन्धा-क्वाथ १५०० मि.ली., ११. अग्निमन्थत्वक्क्वाथ १५०० मि.ली. ले।

कल्क—१. लशुननिस्तुष, २. सरलकाष्ठ, ३. मुलेठी, ४. कूठ, ५. सैन्धवलवण, ६. सामुद्रलवण, ७. चित्रकमूल, ८. हल्दी और ९. पीपर—प्रत्येक द्रव्य ४३ ग्राम लें। सर्वप्रथम तिल तैल का मूर्च्छन करें। ततः कुपीलु १.५०० किलो को १६ गुना जल लेकर क्वाथ करें तथा षोडशांश शेष रहने पर छान लें। कुपीलु कठिनतम वनस्पति है, अतः १६ गुना जल में क्वाथ करें और षोडशांश शेष रखें। कल्क के सभी द्रव्यों को कूटकर चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब कुपीलुक्वाथ और कल्क मूर्च्छित तैल में देकर मृदु अग्नि पर पाक करें। इसके बाद अन्य द्रव्यों का स्वरस या क्वाथ बनाकर एक द्रव सूखने पर दूसरा द्रव देकर पाक करें। इस तरह इस तैल में पूरे १० द्रव्यों का क्वाथ या स्वरस दे-देकर तैल पाक करें। तैल का पूरा जलीयांश सूखने के बाद स्नेहपाक की परीक्षा कर स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में सुरक्षित करें।

गुण-धर्म—यह विषतिन्दुकतैल भयंकर एवं असाध्य वात रोगों का नाश करता है। प्रतिदिन इस तैल का लेप करने से सुप्तवात (त्वक् शून्यता), १८ प्रकार के कुष्ठ, उत्तान एवं गम्भीर दोनों वातरक्त, वैवर्ण्यता, त्वग्गत दोष आदि का मालिश करने मात्र से नाश करता है।

मात्रा—अभ्यङ्ग एवं लेप मात्र। **वर्ण**—रक्तवर्ण का। **गन्ध**—निर्गन्ध। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—कुष्ठ, वातरक्त, शून्यता एवं अन्य त्वग् दोष में।

५४. शताह्वादितैल (भा.प्र.)

क्वाथेन शतपुष्पायाः कुष्ठस्य मधुकस्य च ।
एकैकं साधयेत्तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥१८२॥

शताह्वादि तैल—तिलतैल २५० मि.ली., सौंफक्वाथ १ ली., सौंफकल्क ६० ग्राम; **कुष्ठ तैल**—तिलतैल २५० मि.ली., कूठक्वाथ १ लीटर, कूठकल्क ६० ग्राम; **मधुक तैल** तिलतैल २५० मि.ली., मुलेठीक्वाथ १ लीटर तथा मुलेठी कल्क ६० ग्राम लें। इस श्लोक में तीन द्रव्यों के क्वाथ एवं कल्क से पृथक्-पृथक् तैल पाक करने का निर्देश दिया है। यथा—'एकैकं साधयेत्तैलम्' इस उक्ति के अनुसार एक-एक द्रव्य से तैल पकाना चाहिए। इसमें आवश्यकतानुसार मात्रा बढ़ायी भी जा सकती है। तैल का मूर्च्छन क्वाथ एवं कल्क निर्माण की

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

प्रक्रिया तथा तैलपाक विधान पूर्व निर्मित तैल जैसा समझना चाहिए। इन तीनों तैलों के प्रयोग से वातरक्त रोग नष्ट होते हैं।

५५. दशपाकबलातैल (च.द.)

बलाकषायकल्काभ्यां तैलं क्षीरचतुर्गुणम्।
दशपाकं भवेदेतद् वातासृग्वातपित्तजित् ॥१८३॥
धन्यं पुंसवनञ्चैव नराणां शुक्रवर्द्धनम्।
रेतोयोनिविकारघ्नमेतद्वातविकारनुत् ॥१८४॥

तिलतैल ४ लीटर, गोदुग्ध १६ लीटर, बलामूल ४ किलो, बलाकल्क १ ग्राम और क्वाथार्थ जल १६ लीटर; अवशेष ४ लीटर। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः बलापञ्चाङ्ग को यवकुट कर ८ गुने जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। बला १ ग्राम को चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। कल्क और क्वाथ दोनों को मूर्च्छित तैल में मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। क्वाथ सूखने पर दूध देकर पुनः पाक करें। दूध सूखने पर ४ लीटर जल देकर सम्यक् पाक करें। जल सूखने पर स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेहपाक की परीक्षाकर स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छान लें। इस तैल को इसी मात्रा में कल्क-क्वाथ तथा दूध और जल देकर ९ बार और पाक करें। अर्थात् कुल मिलाकर १० बार पाक करें तो यह 'दशपाकबला तैल' होगा।

गुण-धर्म—यह तैल बहुत उपयोगी एवं धन्य है। यह वातरक्त एव पित्तविकार नाशक है। पुंसवनकारक है, पुरुषों में शुक्रवर्धक है। पुरुषों की शुक्र-दुर्बलता तथा स्त्रियों के योनिरोग का नाश करता है। यह तैल वातविकारनाशक है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., बस्ति ५० मि.ली., नस्य ३-३ बूँद, अभ्यङ्ग। **अनुपान**—चीनी मिला गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—दुग्ध गन्धी। **वर्ण**—हरिताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातरक्त, पुंसवनार्थ, शुक्रल, शुक्रदोष एव योनि दोष नाशक है।

५६. खुड्डाकपद्मक तैल (चरक)

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वरजनीक्वाथसाधितम् ।
स्यात्पिष्टै सर्जमञ्जिष्ठावीराकाकोलिचन्दनैः।
खुड्डाकपद्मकमिदं तैलं वातास्त्रदोषनुत् ॥१८५॥

तिलतैल १ लीटर; **क्वाथ**—पद्मकाष्ठ ५०० ग्राम, खस ५०० ग्राम, मुलेठी ५०० ग्राम, हल्दी ५०० ग्राम लें। **कल्क**—१. राल ५० ग्राम, २. मंजीठ ५० ग्राम, ३. क्षीरकाकोली ५० ग्राम, ४. काकोली ५० ग्राम और ५. रक्त-चन्दन ५० ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः क्वाथ के सभी द्रव्यों को यवकुट कर आठ गुने जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। कल्क द्रव्यों का चूर्ण करें और जल के साथ सिलकर पीसकर कल्क बना लें। अब मूर्च्छित तैल में कल्क और क्वाथ मिलाकर मध्यमाग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूख जाय तब कल्क के सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल देकर पुनः पाक करें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेह की परीक्षा कर चूल्हे से स्नेहपात्र को उतारकर कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में सुरक्षित कर लें। यह 'खुड्डाकपद्मक तैल' वातरक्त को नष्ट करता है। खुड्डाक शब्द का अर्थ छोटा है। स्वल्प भी कह सकते हैं।

मात्रा—अभ्यङ्ग। **गन्ध**—सुगन्धित। **वर्ण**—रक्त। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—वातरक्त में।

५७. नागबला तैल (च.द.)

शुद्धां पचेन्नागबलातुलान्तु
विस्राव्य तैलाढकमत्र दद्यात्।
अजापयस्तुल्यविमिश्रितन्तु
नतस्य यष्टीमधुकस्य कल्कम् ॥१८६॥
पृथक् पचेत्पञ्चपलं विपक्वं
तद्वातरक्तं शमयत्युदीर्णम् ।
बस्तिप्रदानादिह सप्तरात्रात्
पीतं दशाहात्प्रकरोत्यरोगम् ॥१८७॥

१. तिलतैल ३ लीटर, २. नागबला (गंगेरन) ५ किलो, ३. बकरी का दूध ३ लीटर, ४. तगर ३७५ ग्राम तथा ५. मुलेठी ३७५ ग्राम लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः नागबला को यवकुट कर २ द्रोण (१२ लीटर) जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। ततः तगर और मुलेठीचूर्ण को जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब कल्क और क्वाथ दोनों मूर्च्छित तैल में मिलाकर मृदु अग्नि पर पाक करें। जब क्वाथ सूखने लगे, तब बकरीदूध देकर तैल पाक करें। जब बकरीदूध सूखने लगे तो कल्क के सम्यक् पाक हेतु तैल से चार गुना जल देकर पाक करें। जब जल सूखने लगे तो स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेहपरीक्षा कर तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से तैल को छान लें और शीतल होने पर काचपात्र में तैल संग्रहीत करें। यह तैल प्रकुपित वातरक्त को शान्त करता है। इस तैल की बस्ति देने ७ दिन में और पीने से १० दिन में वातरक्त को शान्त कर देता है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली., बस्ति में ५० मि.ली., नस्य में ३-३ बूँद। **अनुपान**—चीनी मिला गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—वातरक्त।

तुलाद्रव्ये जलद्रोणो द्रोणे द्रव्यतुला मता ॥१८८॥

जहाँ पर क्वाथ द्रव्य १ तुला (५ सेर हो) यदि वहाँ पर जल

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

की मात्रा नहीं लिखी है तो वहाँ पर जल १ द्रोण (१२ लीटर) लेना चाहिए। जहाँ पर जल १ द्रोण (१२ लीटर) हो और वहाँ पर क्वाथ द्रव्य का उल्लेख न हो तो १ तुला (५ सेर) क्वाथ द्रव्य लेना चाहिए। यह सामान्य नियम है।

वातरक्त रोग में रक्तमोक्षण

वातरक्तेऽस्त्ररोगेषु तथा कुष्ठेऽल्पके भिषक्।
रक्ते प्रवृद्धे वै कुर्याद् यत्नतो रक्तमोक्षणम्।
रोगिणां पादयोर्बाह्वोर्ललाटे तु यथाविधि ॥१८९॥

वातरक्त में या रक्त विकृति में, कुष्ठ में या अल्पकुष्ठ में बढ़े हुए रक्त विकृति के रोगी में पैरों, दोनों बाहुओं तथा ललाट की शिराओं का वेधन कर रक्तमोक्षण करना चाहिए।

रक्तस्राव का प्रमाण (अ.हृ.)

अशुद्धौ बलिनोऽप्यस्त्रं न प्रस्थात्स्रावयेत् परम्।
अतिस्रुतौ हि मृत्युः स्याद्दारुणा वातजामयाः ॥१९०॥

बलवान् मनुष्य को रक्तदुष्टि होने पर उसके शरीर से अधिकाधिक १ प्रसृत (९३ मि.ली.) रक्त निकालना चाहिए। क्योंकि अधिक रक्तस्राव होने पर मृत्यु या भयंकर वातरोग हो सकता है।

वातरक्त में पथ्य

उत्तानेऽभ्यञ्जनं सेकः सोपनाहः प्रलेपनम्।
गम्भीरे स्नेहपानं च स्थापनं च विरेचनम् ॥१९१॥
द्वयोरस्त्रस्रुतिः सूचीजलौकः शृङ्ग्यलाबुभिः।
शतधौतघृताभ्यङ्गो मेषीदुग्धावसेचनम् ॥१९२॥
यवषष्टिकनीवारकलमारुणशालयः।
गोधूमाश्चणका मुद्गास्तुवर्योऽपि मकुष्ठकाः ॥१९३॥
अजानां महिषीणां च गवामपि पयांसि च।
लावतित्तिरसर्पद्विट्रताम्रचूडादिविष्किराः ॥१९४॥
प्रतुदाः शुकदात्यूहकपोतचटकादयः।
उपोदिका काकमाची वेत्राग्रं सुनिषण्णकम् ॥१९५॥
वास्तूकं कारवेल्लं च तण्डुलीयः प्रसारणी।
पत्तूरो वृद्धकूष्माण्डं सर्पिः शम्पाकपल्लवम् ॥१९६॥
पटोलं रुबुतैलं च मृद्वीका श्वेतशर्करा।
नवनीतं सोमवल्ली कस्तूरी सितचन्दनम् ॥१९७॥
शिंशपाऽगुरुदेवाह्वसरलस्नेहमर्दनम्।
तिक्तं च पथ्यमुद्दिष्टं वातरक्तगदे नृणाम् ॥१९८॥

१. उत्तान वातरक्त में—अभ्यङ्ग, परिषेक, उपनाह (पुल्टिस), लेप आदि करना चाहिए।

२. गम्भीर वातरक्त में—स्नेहपान, आस्थापनबस्ति और विरेचन कराना चाहिए।

दोनों वातरक्त में रक्तस्राव सूई से, जौंक से, सींग से, तुम्बी से कराना चाहिए। शतधौतघृत का लेप, अभ्यङ्ग तथा भेड़ी के दूध का परिषेचन करना चाहिए। भोजन एवं पथ्य—जौ, साठी चावल, नीवार, कलम, क्षुद्रधान्य, शालिचावल (लालचावल), गेहूँ, चना, मूँग, अरहर, मोठ, बकरी, भैंस और गाय का दूध, लावक, तित्तिर, मोर, मुर्गा, विष्किर प्राणी (जो बिखेर कर खाते हैं), तोता, कबूतर, गौरैया के मांस; पोई का साग, काकमाची, वेत्राग्र, सुनिषण्णक (चौपतिया), बथुआ, करेला, चौराई, गन्धप्रसारणी, शालिञ्च शाक, सुपक्व कूष्माण्ड (पेठा), घी, अमलतास के कोमल पत्ते, परवल, एरण्डतैल, मुनक्का, मिश्री, मक्खन, ताम्बूल, कस्तूरी, श्वेतचन्दन, शीशम, अगुरु, देवदारु, सरलकाष्ठ, स्नेहमर्दन, सभी तिक्त रस युक्त द्रव्य वातरक्त से पीड़ित मनुष्य के लिए हितकर हैं।

वातरक्त में अपथ्य

दिवास्वप्नाग्निसन्तापव्यायामातपमैथुनम्।
माषाः कुलत्था निष्पावाः कलायाः क्षारसेवनम् ॥१९९॥
अम्बुजानूपमांसानि विरुद्धानि दधीनि च।
इक्षवो मूलकं मद्यं पिण्याकोऽम्लानि काञ्जिकम् ॥२००॥
कटूष्णं गुर्वभिष्यन्दि लवणानि च सक्तवः।
इत्यपथ्यं निगदितं वातरक्तगदे नृणाम् ॥२०१॥

इति भैषज्यरत्नावल्यां वातरक्ताधिकारः।

वातरक्त से पीड़ित व्यक्ति को दिन में सोना, आग तापना, व्यायाम करना, धूप-सेवन करना, मैथुन करना आदि छोड़ देना चाहिए। माष (उड़द), कुलत्थ, सेमबीज, मटर और क्षारों का सेवन त्याग देना चाहिए। जलीय प्राणियों एवं आनूपदेशीय प्राणियों के मांस, विरुद्ध अन्न, दही, दूध, गन्ने एवं गुड़, मूली, मद्य, तेल की खली, अम्ल, काञ्जी, कटु-उष्ण-गुरु-अभिष्यन्दी पदार्थ, लवण, सत्तू—ये सभी पदार्थ वातरक्त के मनुष्यों के लिए अपथ्य हैं। अतः इनका सेवन नहीं करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य वातरक्ताधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथोरुस्तम्भरोगाधिकारः (२८)

सामान्य क्रम (च.द.)

श्लेष्मणः क्षपणं यत्स्यान्न च मारुतकोपनम् ।
तत्सर्वं सर्वदा कार्यमूरुस्तम्भस्य भेषजम् ॥१॥

जो औषधि कफ का विनाश करती है और वायु को प्रकुपित नहीं करती है, उस तरह की औषधि का प्रयोग ऊरुस्तम्भ में करना चाहिए। आहार द्रव्य भी इसी तरह का चयन करना चाहिए।

ऊरुस्तम्भ में कृत-अकृत कार्य (च.द.)

तस्य न स्नेहनं कार्यं न बस्तिर्न विरेचनम् ।
सर्वो रूक्षक्रमः कार्यस्तत्रादौ कफनाशनः ॥
पश्चाद्वातविनाशाय कृत्स्नः कार्यः क्रियाक्रमः ॥२॥

ऊरुस्तम्भ के रोगी को न तो स्नेहन कराना चाहिए और न ही बस्ति एवं विवेचन कर्म करावें। इस रोग से ग्रस्त रोगी को सभी रूक्ष उपचार तथा कफनाशक उपाय करना चाहिए। इसके बाद वायु विनाशनार्थ सभी क्रियाक्रम करना चाहिए।

अधिक रूक्षणोपद्रव (चरक)

रूक्षणाद्वातकोपश्चेन्निद्रानाशार्तिपूर्वकः ।
स्नेहस्वेदक्रमस्तत्र कार्यो वातामयापहः ॥३॥

कफनाशनार्थ प्रयुक्त उष्ण-रूक्षादि क्रम द्वारा वात के प्रकुपित होने पर निद्रानाश, वेदना आदि उपद्रव होने से स्नेह-स्वेद आदि वातशामक उपाय करने चाहिए।

कफक्षयकारि विधि (चरक)

कफक्षयार्थं शक्येषु व्यायामेष्वनुयोजयेत् ।
स्थलान्याक्रामयेत् कल्यं शर्कराः सिकतास्तथा ॥४॥

कफ को नाश करने के लिए ऊरुस्तम्भ के रोगी से होने योग्य व्यायाम को कराना चाहिए। उसे प्रातःकाल ऊँचे बालू और कंकड़ से युक्त स्थल पर घूमने का व्यायाम करना चाहिए।

जलतरण प्रयोग (चरक)

प्रतारयेत् प्रतिस्त्रोतो नदीं शीतजलां शिवाम् ।
सरश्च विमलं शीतं स्थिरतोयं पुनः पुनः ॥
तया विशुष्केऽस्य कफे शान्तिमूरुग्रहो व्रजेत् ॥५॥

शीतल एवं स्वच्छ जलप्रवाह वाली नदी में प्रवाह के विरुद्ध ऊरुस्तम्भ के रोगी को तैराना चाहिए। इसी प्रकार नदी के अभाव में तालाब आदि जलागार में तैराना चाहिए। इसी प्रकार बार-बार रोगी को जल में तैराने से रोगी का कफ नष्ट हो जाता है और ऊरुस्तम्भ रोग शान्त हो जाता है।

१. ऊरुस्तम्भहर चार योग (च.द.)

शिलाजतु गुग्गुलुं वा पिप्पलीमथ नागरम् ।
ऊरुस्तम्भे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलीरसेन वा ॥६॥

(१) शुद्ध शिलाजतु १ ग्राम २५ मि.ली. गोमूत्र या ५० मि.ली. दशमूलीक्वाथ से लेना चाहिए। (२) शुद्ध गुग्गुलु १ ग्राम २५ मि.ली. गोमूत्र या ५० मि.ली. दशमूलीक्वाथ से लेना चाहिए। (३) पीपरचूर्ण १ ग्राम २३ मि.ली. गोमूत्र या ५० मि.ली. दशमूलीक्वाथ से लेना चाहिए। (४) सोंठचूर्ण १ ग्राम २३ मि.ली. गोमूत्र या ५० मि.ली. दशमूलीक्वाथ से लेना चाहिए। इन चार योगों में से किसी एक का प्रयोग ऊरुस्तम्भ के नाशनार्थ करना चाहिए।

२. ऊरुस्तम्भहर त्रिफलादि योग-१ (च.द.)

त्रिफलाचव्यकटुकं ग्रन्थिकं मधुना लिहेत् ।
ऊरुस्तम्भविनाशाय पुरं मूत्रेण वा पिबेत् ॥७॥

१. ऊरुस्तम्भ के नाशनार्थ त्रिफलाचूर्ण, चव्यचूर्ण, कुटकी-चूर्ण तथा पिपरामूलचूर्ण—प्रत्येक १ ग्राम की मात्रा में मधु से मिलाकर चाटना चाहिए।

२. अथवा शुद्ध गुग्गुलु १ ग्राम २५ मि.ली. गोमूत्र के साथ सेवन करना चाहिए।

३. ऊरुस्तम्भहर त्रिफलादि योग-२ (च.द.)

लिह्याद् वा त्रिफलाचूर्णं क्षौद्रेण कटुकायुतम् ।
सुखाम्बुना पिबेद्वाऽपि चूर्णं षड्धरणं नरः ॥८॥

ऊरुस्तम्भ नाशनार्थ त्रिफलाचूर्ण ३ ग्राम तथा कुटकीचूर्ण १ ग्राम मधु से मिलाकर चाटें।

२. अथवा ऊरुस्तम्भहरणार्थ षड्धरणयोगचूर्ण ४ ग्राम गरम पानी से लेना चाहिए।

४. षड्धरण चूर्ण (च.द.)

चित्रकेन्द्रयवाः पाठा कटुकातिविषाऽभयाः ।
महाव्याधिप्रशमनो योगः षड्धरणः स्मृतः ॥९॥

१. चित्रकमूल, २. इन्द्रयव, ३. पाठा, ४. कुटकी, ५. अतीस और ६. हरीतकी—प्रत्येक द्रव्य ५०-५० ग्राम लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण कर छान लें और काचपात्र में संग्रह करें।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५. पिप्पलीवर्धमानादि योग (च.द.)

पिप्पलीवर्धमानं वा माक्षिकेण गुडेन वा।
स्नेहवर्जी पिबेदत्र नरश्चूर्णं षडूषणम् ॥१०॥

१. वर्धमानपिप्पली योग—इसमें १ पिप्पली का चूर्ण या यवकुट अथवा साबूत पिप्पली से प्रारम्भ करते हैं। रोज १ पिप्पली बढ़ाते हैं। इस तरह १०वें दिन १० तक पिप्पली का प्रयोग करते हैं। फिर इसी तरह क्रम से १-१ पिप्पली कम करते हैं। अर्थात् ११ वें दिन ९ पीपर, १२ वें दिन ८ पीपर और २० वें दिन १ पीपर का प्रयोग करते हैं। इसे दूध में पकाकर या चूर्ण रूप में प्रयोग करते हैं। इसे मधु या गुड़ के साथ प्रयोग करते हैं।

२. षडूषण चूर्ण (पीपर-पिपरामूल-चव्य-चित्रकमूल-सोंठ और मरिच (समभाग) का प्रयोग ऊरुस्तम्भी के लिए हितकर है।

६. पिप्पल्यादि गण प्रयोग

हितमुष्णाम्बुना तद्वत् पिप्पल्यादिगणैः कृतम् ॥११॥

पिप्पल्यादिगणचूर्ण का प्रयोग गरम पानी के साथ ऊरुस्तम्भ में हितकर है।

१. **पिप्पल्यादि गण**[1]—१. पिप्पली, २. पिपरामूल, ३. चव्य, ४. चित्रक, ५. आर्द्रक, ६. मरिच, ७. गजपीपर, ८. रेणुका, ९. छोटी इलायची, १०. अजमोदा, ११. इन्द्रयव, १२. पाठा, १३. जीरक, १४. सर्षप, १५. महानिम्बफल १६. हींग, १७. भारङ्गी, १८. सौंफ, १९. अतीस, २०. वचा, २१. विडङ्ग और २२. कुटकी— प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें।

७. गण्डीरारिष्ट प्रयोग[2] (च.द.)

ऊरुस्तम्भे प्रशंसन्ति गण्डीरारिष्टमेव वा ॥१२॥

ऊरुस्तम्भ के रोगी के लिए गण्डीरारिष्ट श्रेष्ठ औषधि है।

८. क्षौद्रादि प्रलेप (च.द.)

क्षौद्रसर्षपवल्मीकमृत्तिकासंयुतं भिषक्।
गाढमुत्सादनं कुर्यादूरुस्तम्भे प्रलेपनम् ॥१३॥

मधु, सरसों और बाम्बी मिट्टी (दीमकघर) इन तीनों को एक साथ पीसकर गाढ़ा लेप करना ऊरुस्तम्भ के लिए हितकर है।

९. रास्नादि क्वाथ (भा.प्र.)

रास्नाश्यामाकपथ्यामरिचमिसिशिवावेल्लशट्यश्वगन्धा
यासच्छिन्नाजमोदासुमुखमतिविषावृद्धदारो बृहत्यौ।
शुण्ठी तिक्ता यमानी सहचरचविकैरण्डदाव्याजकर्णा-
ऊरुस्तम्भामवातौ कफपवनरुजं दण्डकं चाशु हन्यात् ॥

१. रास्ना, २. श्यामालता, ३. हरीतकी, ४. मरिच, ५. सौंफ, ६. हल्दी, ७. विडङ्ग, ८. अश्वगन्धा, ९. जवासा, १०. गुडूची, ११. अजमोदा, १२. तुलसीपत्र, १३. अतीस, १४. विधारा, १५. बृहती, १६. कण्टकारी, १७. सोंठ, १८. कुटकी, १९. अजवायन, २०. सहचर, २१. चव्य, २२. एरण्डमूलत्वक्, २३. दारुहल्दी, और २४. अजकर्ण—ये सभी ३२ द्रव्य १००-१०० ग्राम लें। इन्हें यवकुट करें और सुखाकर सुरक्षित रखें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट क्वाथ द्रव्य लें और १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर ऊरुस्तम्भ से पीड़ित रोगी को पिलावें। इससे कफ-वातरोग और दण्डकरोग नष्ट हो जाता है।

१०. भल्लातकादि क्वाथ (च.द.)

भल्लातकामृताशुण्ठीदारुपथ्यापुनर्नवाः।
पञ्चमूलीद्वयोन्मिश्रा ऊरुस्तम्भनिबर्हणाः ॥१५॥

१. शुद्ध भल्लातक, २. गुडूची, ३. सोंठ, ४. देवदारु, ५. हरीतकी, ६. पुनर्नवा, ७. बिल्वछाल, ८. अरणीत्वक्, ९. सोनापाठाछाल, १०. पाटलछाल, ११. गम्भारछाल, १२. शालपर्णी, १३. पृश्निपर्णी, १४. बृहती, १५. कण्टकारी तथा १६. गोक्षुर—सभी द्रव्य १००-१०० ग्राम लें। इन्हें यवकुट कर सुखा लें और संग्रह करें। इसमें से प्रतिदिन २५ ग्राम यवकुट लेकर १६ गुने जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर ऊरुस्तम्भ के रोगी को पिलाने से ऊरुस्तम्भ नष्ट हो जाता है।

११. पिप्पल्यादि क्वाथ (च.द.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलभल्लातक्वाथ एव वा।
कल्कं मधुयुतं पीत्वा ऊरुस्तम्भाद्विमुच्यते ॥१७॥

पीपर, पिपरामूल तथा शुद्ध भल्लातक—इन्हें समभाग लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें और चतुर्थांशावशेष कर छान लें तथा मधु मिलाकर ऊरुस्तम्भ के रोगी को पिलावें।

१२. रसोनादि प्रलेप

रसोनं जीरकः शिग्रोर्बीजं वा त्वचमूषणम्।
सर्षपाश्च जयन्ती च कृष्णधत्तूरमूलकम् ॥१७॥

---

१. पिप्पल्यादिगणो यथा— "पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृंग्वेर-मरिचहस्तिपिप्पलीहरेणुकैलाजमोदेन्द्रयवपाठाजीरकसर्षपमहानिम्ब-हिङ्गुभार्गीमधुरसाऽतिविषावचाविडङ्गानि कटुरोहिणी चेति।
पिप्पल्यादि कफहरः प्रतिश्यायानिलारुची।
निहन्याद्दीपनो गुल्मशूलध्नश्चामपाचनः ॥सु.सू.३८॥

२. गण्डीरारिष्टमिति—गण्डीर=रामठः, स तु स्थलजो ग्राह्यस्तीक्ष्णत्वात् तस्यारिष्टं सन्धानं तच्च गण्डीरशतपलं जलद्रोणे पक्त्वा पादावशेषे तस्मिन् गुडतुलामापाप्य धातकीलोध्रलिप्ते कुम्भे सन्धानार्थम्, ईषदम्लं यदा भवति तदोपयोज्यम्। किं वाऽरिष्टो=निम्बः, रामठनिम्बयोः कल्कं चूर्णं वाऽनन्तकोक्तेन मधुना गुडेन वा सहोपयोज्यम्। इति शिवदासः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अहिफेनफलं सर्वं समं गोमूत्रयोगतः।
पिष्टमुष्णं तथा गाढं प्रलेपनमुदीरितम्॥
ऊरुस्तम्भार्त्तिनाशार्थं भिषग्वन्द्यैरनुत्तम्॥१८॥

१. निस्तुषलशुन, २. श्वेतजीरा, ३. सहिजन बीज या छाल, ४. मरिच, ५. सरसों बीज, ६. जयन्तीपत्र, ७. कृष्ण-धत्तूरमूल और ८. अफीमफल—सभी द्रव्य समभाग लें। इन्हें सिल पर गोमूत्र के साथ पिसें और आग पर गरम करें तथा ऊरुस्तम्भ के रोगी के प्रभावित ऊरु पर गरम-गरम गाढ़ा लेप करने से ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट हो जाता है।

१३. गुञ्जाभद्ररस (र.सा.सं.)

निष्कत्रयं शुद्धसूतं निष्कद्वादश गन्धकम्।
गुञ्जाबीजन्तु षण्निष्कं जयन्ती निम्बबीजकम्॥१९॥
प्रत्येकं निष्कमात्रं तु निष्कं जैपालबीजकम्।
जयाजम्बीरधुस्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥२०॥
भावयित्वा वटीं कुर्याच्चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः।
गुञ्जाभद्ररसो नाम हिङ्गुसैन्धवसंयुतः।
शमयत्युल्बणं दुःखमूरुस्तम्भं सुदुर्जयम्॥२१॥

१. शुद्ध पारद ३ भाग, २. शुद्ध गन्धक १२ भाग, ३. गुञ्जाबीज ६ भाग, ४. जयन्तीत्वक्चूर्ण १ भाग, ५. निम्बबीज मज्जा १ भाग तथा ६. शुद्ध जयपाल १ भाग लें।

भावना—१. भाँगस्वरस, २. जम्बीरीनिम्बुरस, ३. धत्तूर-स्वरस और ४. काकमाचीरस। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मर्दन कर अच्छी तरह कज्जली बनावें। ततः शेष द्रव्यों के चूर्णों को उसी कज्जली के साथ मिलावें और क्रमशः भाँगस्वरस, निम्बुस्वरस, धत्तूररस तथा काकमाचीस्वरस के साथ १-१ दिन तक मर्दन कर ४-४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। इसके बाद काचपात्र में सुरक्षित रख लें। आचार्यश्री ने ४ रत्ती (५०० मि.ग्रा.) की वटी बनाने का आदेश दिया है। किन्तु इसमें जयपाल है अतः अधिक विरेचन होने की आशंका रहती है इसलिए आज के सन्दर्भ में २-२ रत्ती की मात्रा में देना उचित है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—शुद्ध हींगचूर्ण २५० मि.ग्रा. तथा सैन्धवचूर्ण २५० मि.ग्रा.। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कृष्ण। **उपयोग**—ऊरुस्तम्भ में।

१४. अष्टकट्वर तैल (चरक)

पलाभ्यां पिप्पलीमूलनागरादष्टकट्वरः।
तैलप्रस्थः समो दध्ना गृध्रस्यूरुग्रहापहः॥
अष्टकट्वरतैलेऽस्मिन् तैलं सार्षपमिष्यते॥२२॥

सरसोतैल ७५० मि.ली., कट्वर (तक्र) ६ लीटर और दही ७५० ग्राम लें।

कल्क—पिपरामूल ९३ ग्राम और सोंठ ९३ ग्राम लें। सर्वप्रथम सरसोतैल का मूर्च्छन करें। ततः कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर सिल पर पीसें और कल्क बना लें। इसके बाद दधि को मथकर चौथाई जल मिलावें और ससार तक्र बना लें। ऐसा तक्र जिसे कट्वर[1] कहते हैं ८ प्रस्थ (६लीटर) लें और मूर्च्छित तैल में कल्क और कट्वर मिलाकर मृदु अग्नि में पाक करें। जब कट्वर सूख जाय तब उसमें दही मथकर मिलावें और पाक करें। जब दही सूख जाय तो कल्क के सम्यक् पाक हेतु तैल से ४ गुना (३ लीटर) पानी देकर पाक करें। जब जल सूख जाय तो स्नेहपाक विशेषज्ञ वैद्य परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह तैल गृध्रसी और ऊरुस्तम्भ का नाश करता है।

मात्रा—पानार्थ १० से २५ मि.ली.। **अनुपान**—गरम दूध से। **गन्ध**—किञ्चिदम्ल गन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—किञ्चिदम्ल। **उपयोग**—गृध्रसी एवं ऊरुस्तम्भ में।

१५. कुष्ठाद्यतैल (च.द.)

कुष्ठश्रीवेष्टकोदीच्यं सरलं दारुकेशरम्।
अजगन्धाऽश्वगन्धा च तैलं वै सार्षपं पचेत्॥
सक्षौद्रं मात्रया तस्मादूरुस्तम्भार्दितः पिबेत्॥२३॥

१. सरसोतैल १ लीटर, २. कूठ, ३. श्रीवेष्टक (गन्ध-विरोजा), ४. सुगन्धबाला, ५. सरलकाष्ठ, ६. देवदारु, ७. नागकेशर, ८. अजमोदा, ९. अश्वगन्धा—ये प्रत्येक द्रव्य ३०-३० ग्राम लें और इन्हें चूर्ण करें तथा जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ततः सरसोतैल का मूर्च्छन करें और कल्क तथा ४ लीटर जल तैल में मिलाकर मृद्वग्नि पर पाक करें। जल सूखने पर स्नेहपाकविद् वैद्य स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतारकर तैल को कपड़े से छान लें तथा शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस तैल में मधु मिलाकर ऊरुस्तम्भ के रोगी को पिलाने से बहुत लाभ होता है।

मात्रा—१० से २५ मि.ली. पानार्थ। **अनुपान**—मधु मिलाकर पीना है। **गन्ध**—सरसों तैल जैसा। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—ऊरुस्तम्भ में।

१६. सैन्धवाद्यतैल (च.सं.)

द्वे पले सैन्धवात् पञ्च शुण्ठ्या ग्रन्थिकचित्रकात्।
द्वे द्वे भल्लातकास्थीनि विंशतिर्द्वे तथाऽऽढके॥२४॥
आरनालात् पचेत् प्रस्थं तैलस्यैतैरपत्यदम्।
गृध्रस्यूरुग्रहार्शोऽर्त्तिसर्ववातविकारनुत् ॥२५॥

१. दध्नः ससारकस्यात्र तक्रं कट्वरमिष्यते। (परिभाषाप्रदीप)

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

१. सैन्धवलवण ९३ ग्राम, २. सोंठ २३५ ग्राम, ३. पिपरामूल ९३ ग्राम, ४. चित्रकमूल ९३ ग्राम, ५. शुद्ध भिलावा २० नग, ६. तिलतैल ७५० मि.ली. और काञ्जी ६ लीटर लें। सर्वप्रथम तिलतैल का मूर्च्छन करें। ततः ५ कल्क द्रव्यों को चूर्ण कर सिल पर जल के साथ पीसकर कल्क बना लें। मूर्च्छित तैल में कल्क और काञ्जी मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब काञ्जी सूख जाय तब कल्क के सम्यक् पाक हेतु ३ लीटर जल देकर तैल का पुनः पाक करें। जल सूखने पर पाकविद् वैद्य परीक्षा कर तैलपात्र को नीचे उतारें और कपड़े से छान लें। शीतल होने पर काचपात्र में संग्रहीत करें।

गुण-धर्म—यह तैल बन्ध्या स्त्रियों के पीने पर सन्तानप्रद है। यह सैन्धवादि तैल गृध्रसी, ऊरुस्तम्भ एवं अर्श रोग और समस्त वात विकार को नष्ट करता है।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ। **गन्ध**—अम्ल एवं काञ्जीगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—गृध्रसी, ऊरुस्तम्भ, अर्श एवं वातविकार में।

ऊरुस्तम्भ रोग में पथ्य

रूक्षः सर्वविधिः स्वेदः कोद्रवा रक्तशालयः।
यवाः कुलत्थाः श्यामाका उद्दालाश्च पुरातनाः ॥२६॥
शोभाञ्जनं कारवेल्लं पटोलं लशुनानि च।
सुनिषण्णः काकमाची वेत्राग्रं निम्बपल्लवम् ॥२७॥
पत्तूरो वास्तुकं पथ्या वार्ताकुस्तप्तवारि च।
शम्पाकशाकं पिण्याकस्तक्रारिष्टमधूनि च ॥२८॥
कटुतिक्तकषायाणि क्षारसेवा गवाञ्जलम्।
व्यायामश्च यथाशक्ति स्थलस्याक्रमणानि च ॥२९॥
स्वच्छे ह्रदे सन्तरणं प्रतिस्रोतो नदीषु च।
श्लेष्मापहरणं यच्च न च मारुतकोपनम्।
एतत् पथ्यं नरैः सेव्यमूरुस्तम्भविकारिभिः ॥३०॥

आहार-विहार में सभी प्रकार के रूक्ष कार्य करना चाहिए। स्वेदन लाभप्रद है। कोदोधान, लालचावल, यव, कुलत्थ, श्यामाक क्षुद्रधान्य, उद्दालकधान्य, सहिजनफली, करैला, परवल, लशुन, चौपतियाशाक, काकमाचीशाक, वेताग्रशाक, नीम की कोमलपत्ती, शालिञ्चशाक, बथुआशाक, हरीतकी, बैंगन, गरम पानी, अमलतासशाक, अमलतासफूलपकौड़ी, तिलतैलखली, तक्रारिष्ट, मधु, कटु-तिक्त, कषायरस का भोजन, क्षारसेवन, गोमूत्र, यथाशक्ति व्यायाम, यथाशक्ति सामान्य मैदान में चलना, स्वच्छ जल वाले नदी एवं तालाब में तैरना, नदी की प्रतिकूल धारा में तैरना, कफ नाशक आहार-विहार करना किन्तु वातप्रकोपक नहीं हो, ऐसा आहार-विहार करना चाहिए। ऐसा पथ्य ऊरुस्तम्भ के रोगी को करना चाहिए।

ऊरुस्तम्भ में अपथ्य

गुरुशीतद्रवस्निग्धविरुद्धासात्म्यभोजनम्।
विरेचनं स्नेहनञ्च वमनं रक्तमोक्षणम् ॥
वस्तिश्च न हितं प्राहुरूरुस्तम्भविकारिणाम् ॥३१॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामूरुस्तम्भाधिकारः।

गुरु, शीत, द्रव, स्निग्ध एवं विरुद्ध तथा असात्म्य भोजन, विवेचन, स्नेहन, वमन, रक्तमोक्षण और बस्ति कर्म ऊरुस्तम्भिओं के लिए हितकर नहीं है। अर्थात् उपर्युक्त भोजन और चिकित्सा कर्म ऊरुस्तम्भ रोग में नहीं करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य ऊरुस्तम्भाधिकारस्य
जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन
प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अथामवातरोगाधिकारः (२९)

आमवात में क्रियाक्रम (च.द.)

लङ्घनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनि च।
विरेचनं स्नेहपानं बस्तयश्चाममारुते ॥
सैन्धवाद्येनानुवास्य क्षारवस्तिः प्रशस्यते ॥१॥

आमवात के रोगी को लंघन, स्वेदन, तिक्त रस का भोजन, दीपन एवं कटु द्रव्यों का सेवन, विरेचन, स्नेहपान, बस्तिकर्म देना चाहिए तथा सैन्धवादि तैल द्वारा अनुवासनबस्ति और क्षारबस्ति देना हितकर होता है।

आमवात में पथ्य

आमवाताभिभूताय पीडिताय पिपासया।
पञ्चकोलेन संसिद्धं पानीयं हितमुच्यते ॥२॥
सौवीरस्विन्नवार्त्ताकुं तथा तिक्तफलानि च।
वास्तूकशाकं सारिष्टशाकं पौनर्नवं हितम् ॥३॥
पटोलं गोक्षुरं चैव वरुणं कारवेल्लकम्।
यवान्नं कोरदूषान्नं पुराणं शालिषष्टिकम् ॥४॥
लावकानां तथा मांसं हितं तक्रेण संस्कृतम्।
हितञ्च यूषं कौलत्थं कलायञ्चणकस्य च ॥५॥
रुच्यं दद्याद् यथासात्म्यमामवातहितं च यत्।
रूक्षस्वेदो विधातव्यो बालुकापुटकैस्तथा ॥६॥

आमवात से पीड़ित व्यक्ति को यदि प्यास लगे तो उसे पञ्चकोल (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक एवं शुण्ठी) का फाण्ट पिलाना हितकर है। सौवीरट नामक कांजी में पकाया हुआ बैंगन एवं बथुआशाक, गोक्षुरपत्र, वरुण, करैला, निम्बपत्र शाक, पुनर्नवापत्र शाक हितकर है। अन्न में यव, कोदों (कोद्रव), पुराना शालि एवं साठी का चावल तथा लावक पक्षी के मांस को तक्र से साधित कर खाना हितकर है। कुर्थी (कुलत्थ), कलाय (मटर) तथा चना का स्वादिष्ट यूष देना चाहिए। रोगी की प्रकृति के अनुसार रुचिकर एवं आमवात में हितकर आहार देना चाहिए। रूक्ष स्वेद एवं बालुका स्वेद करना आमवात में हितकर है।

१. शंकर स्वेद

कार्पासास्थिकुलत्थिकातिलयवैरेरण्डमूलातसी-
वर्षाभूशणबीजकाञ्जिकयुतैरेकीकृतैर्वा पृथक्।
स्वेदः स्यादितिकूर्परोदरशिरःस्फिक्पाणिपादाङ्गुली-
गुल्फस्कन्धकटीरुजो विजयते सामाः समीरानुगाः ॥७॥

१. कपासबीज, २. कुलत्थबीज, ३. तिल, ४. जौ, ५. एरण्डमूल, ६. अतसीबीज, ७. पुनर्नवा तथा ८. शणबीज—प्रत्येक समभाग और ९. काञ्जी ४ किलो लें। उपर्युक्त सभी द्रव्यों का चूर्ण कर उसे काञ्जी छिड़ककर गीला करें। ततः दो वस्त्र के टुकड़ों में आधा-आधा कल्क डालकर पोटली बनावें। एक हाँडी में काञ्जी को रखें और सगड़ी (चूल्हे) पर काँजी उबालें। हाँडी के मुख पर लोहे की छननी रखें और छननी में दोनों पोटली रखें। काञ्जी की वाष्प से पोटली गरम हो जायगी। उसी गरम पोटली से क्रमशः कूर्परसन्धि, उदर, स्फिक्, पाणि, पाद, गुल्फ, स्कन्ध, कटि और उदर आदि आक्रान्त स्थलों को सेंकना चाहिए।

२. हिंस्रादि लेप

गोजलपिष्टं हिंस्राकेवुकशिग्रूद्भवं मूलम्।
नाकुयुतं परिलेपात् सामः समीरणः कुत्र ॥८॥

१. कण्टकारी, २. केबुक, ३. सहिजनछाल तथा ४. बल्मीक मिट्टी—चारों द्रव्य समभाग लें। इन्हें कूट-पीसकर चूर्ण करें और इसमें से आवश्यकतानुसार (२५ से ५० ग्राम) चूर्ण लेकर गोमूत्र में घोलें और आग पर पकावें, जब गाढ़ा होने लगे तो गरम-गरम लेप करें। इसके लेप से आमवात और उससे उत्पन्न शूल नष्ट हो जाता है। नाकु=वल्मीकमृत्तिका इति।

३. शतपुष्पादि लेप

शतपुष्पा वचा शिग्रुश्चदंष्ट्रावरुणत्वचः।
सहदेवी च वर्षाभूः शटी च सप्रसारणी ॥९॥
सतर्कारीफलं हिङ्गु शुक्तकाञ्जिकपेषितम्।
आमवातहरं श्रेष्ठं सुखोष्णं लेपनं हितम् ॥१०॥

१. सौंफ, २. वचा, ३. सहिजनछाल, ४. गोखरु, ५. वरुणछाल, ६. सहदेवी, ७. पुनर्नवामूल, ८. कचूर, ९. प्रसारणी, १०. जयन्ती फल, ११. हींग, १२. काञ्जी तथा १३. सिरका—सौंफ से हींग तक सभी द्रव्य समभाग लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इस चूर्ण को यथावश्यक मात्रा में लेकर सिरका और कांजी में घोलें और आग पर पकाकर सुखोष्ण लेप करें। इस लेप से आमवात में बहुत लाभ होता है।

४. एरण्डतैल पान (भा.प्र.)

आमवातगजेन्द्रस्य शरीरवनचारिणः।
निहन्त्यसावेक एव एरण्डस्नेहकेशरी ॥११॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शरीर रूपी वन में विचरने वाले आमवात रूपी हाथी को नष्ट करने वाला सिंह रूपी एरण्ड स्नेह ही अकेला पर्याप्त है।

५. हरीतकी प्रयोग (च.द.)

एरण्डतैलसंयुक्तां हरीतकीं भक्षयेन्नरो विधिवत्।
आमानिलार्तियुक्तो गृध्रसीवृद्ध्यर्दितो नित्यम् ॥१२॥

आमवात, गृध्रसी, वृद्धि एव अर्दित रोग से ग्रस्त रोगी को हरीतकीचूर्ण ४ ग्राम को एरण्ड तैल १२ मि.ली. मिलाकर नित्य खिलाने से ये रोग नष्ट हो जाते हैं।

६. आरग्वधपत्र प्रयोग

भृष्ट्वाऽद्यात् कटुतैलेऽन्नैः सहारग्वधपल्लवम्।
किंवाऽम्लकाञ्जिके पक्त्वा खादेदामानिलापहम् ॥१३॥

अमलतास के कोमल पत्तों को सरसों के तैल में भूनकर खाने से अथवा आरग्वध के कोमल पत्तों को अम्ल काञ्जी के साथ पकाकर खिलाने से आमवात नष्ट हो जाता है।

७. नागर चूर्ण

माषं नागरचूर्णस्य काञ्जिकेन पिबेत्सदा।
आमवातप्रशमनं कफवातहरं परम् ॥१४॥

सोंठचूर्ण १ ग्राम को १२ मि.ली. काञ्जी के साथ पीने से आमवात एवं कफ-वातजन्य रोग नष्ट हो जाते हैं।

८. त्रिवृतादि चूर्ण

त्रिवृत्सैन्धवशुण्ठीनामारनालेन चूर्णितम्।
पीत्वा विरिच्यते जन्तुरामवातहरं परम् ॥१५॥

निशोथचूर्ण, सैन्धवचूर्ण, सोंठचूर्ण—तीनों मिलाकर ६ ग्राम को २५ मि.ली. काञ्जी के साथ पीने से विरेचन होता है। रोज ऐसा करने के बाद आमवात नष्ट हो जाता है।

९. त्रिवृच्चूर्ण प्रयोग

सप्ताहं त्रिवृतश्चूर्णं त्रिवृत्क्वाथेन भावितम्।
काञ्जिकेन तु तत्पीतं रेचयेदामवातिनम् ॥१६॥

त्रिवृत् का सूक्ष्मचूर्ण करें और उस चूर्ण को त्रिवृत्क्वाथ की तीन भावना देकर सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे ३ से ५ ग्राम की मात्रा में गरम जल से लेने के बाद विरेचन होता है। जिससे आमवात रोग ठीक हो जाता है।

१०. रास्नादि क्वाथ एरण्डतैल

रास्नादिक्वाथसंयुक्तं तैलं वातारिसंज्ञकम्।
प्रपिबन् वातरोगार्तः सद्यः शूलाद्विमुच्यते ॥१७॥

रास्नादिक्वाथ ५० मि.ली. (गरम) के साथ १२ से २५ मि.ली. एरण्डतैल मिलाकर पीने से शूल युक्त आमवात का रोगी स्वस्थ हो जाता है।

११. एरण्डतैल प्रयोग (च.द.)

दशमूलकषायेण पिबेद्वा नागराम्भसा।
कुक्षिबस्तिकटीशूले तैलमेरण्डसम्भवम् ॥१८॥

दशमूलक्वाथ में एरण्डतैल मिलाकर पीने से या शुण्ठीक्वाथ में एरण्डतैल मिलाकर पीने से आमवात के रोगी के कुक्षिशूल, बस्तिशूल एवं कटीशूल नष्ट हो जाते हैं। क्वाथ मात्रा ५० मि.ली. एवं एरण्डस्नेह मात्रा १० से २५ मि.ली. है।

१२. एरण्डादिक्वाथ

एरण्डं गोक्षुरं रास्ना शतपुष्पा पुनर्नवा।
पानं पाचनके शस्तं सामे वाते सुनिश्चितम् ॥१९॥

१. एरण्डमूलत्वक्, २. गोक्षुर, ३. रास्ना, ४. सौंफ तथा ५. पुनर्नवामूल—प्रत्येक समभाग लें। इसका यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल के साथ क्वाथ करें और अष्टमांश या चतुर्थांश शेष रहने पर छानकर पीयें। यह क्वाथ आमपाचन में श्रेष्ठ है।

१३. शट्यादि क्वाथ (च.द.)

शटी शुण्ठ्यभया चोग्रा देवाह्वातिविषाऽमृताः।
कषायमामवातस्य पाचनं रूक्षभोजनम् ॥२०॥

१. कचूर, २. सोंठ, ३. हरीतकी, ४. वचा, ५. देवदारु, ६. अतीस और ७.गुडूची—सभी द्रव्य समभाग में लेकर यवकुट करें। इस यवकुट में से २५ ग्राम लेकर १६ गुना जल के साथ क्वाथ करें तथा चौथाई शेष रहने पर छानकर आमवात से पीड़ित रोगी को पिलाने से आम का पाचन होता है तथा इसके साथ रूक्ष भोजन कराना चाहिए।

१४. रसोनादि क्वाथ (भा.प्र.)

रसोनविश्वनिर्गुण्डीक्वाथमामार्दितः पिबेत्।
नातः परतरं किञ्चिदामवातस्य भेषजम् ॥२१॥

रसोन, सोंठ तथा निर्गुण्डी समभाग में लेकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम चूर्ण लेकर १६ गुना जल के साथ क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर आमवात रोगी को पिलायें। इससे बढ़कर आमवात की कोई अच्छी दवा नहीं है।

१५. रास्नापञ्चक क्वाथ (च.द.)

रास्नां गुडूचीमेरण्डं देवदारु महौषधम्।
पिबेत्सर्वाङ्गिके वाते सामे सन्ध्यस्थिमज्जगे ॥२२॥

१. रास्ना, २. गुडूचीकाण्ड, ३. एरण्डमूलत्वक्, ४. देवदारुकाष्ठ और ५. सोंठ—समभाग में लें। इनका यवकुट कर इसमें से २५ ग्राम लेकर १६ गुने जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर सर्वाङ्ग प्रकुपित वात, आमवात,

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सन्धि, अस्थि एवं मज्जा गत वात के रोगी को पिलाने से अच्छा लाभ मिलता है।

१६. रास्नासप्तक क्वाथ (च.द.)

रास्नाऽमृताऽऽरग्वधदेवदारु-
त्रिकण्टकैरण्डपुनर्नवानाम् ।
क्वाथं पिबेन्नागरचूर्णमिश्रं
जङ्घोरुपार्श्वत्रिकपृष्ठशूली ॥२३॥

१. रास्ना, २. गुडूची, ३. अमलतासफलमज्जा, ४. देवदारुकाष्ठ, ५. गोक्षुर, ६. एरण्डमूलत्वक् तथा ७. पुनर्नवामूल—सभी द्रव्य समभाग लेकर कूटकर यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम यवकुट लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छानकर गरम-गरम क्वाथ में सोंठचूर्ण का प्रक्षेप देकर पिलाने से आमवात के रोगी का जंघा, ऊरु, पार्श्व, त्रिक एवं पृष्ठशूल नष्ट हो जाता है।

१७. दशमूलरास्नादि क्वाथ (च.द.)

दशमूलामृतैरण्डरास्नानागरदारुभिः ।
क्वाथो रुबुकतैलैन सामं हन्त्यनिलं गुरुम् ॥२४॥

१. बेलछाल, २. अरणीछाल, ३. सोनापाठाछाल, ४. पाढलछाल, ५. गम्भारछाल, ६. शालपर्णी, ७. पृश्निपर्णी, ८. कण्टकारी, ९. बृहती, १०. गोक्षुर, ११. गुडूची, १२. एरण्डमूलछाल, १३. रास्ना, १४. सोंठ तथा १५. देवदारु—सभी द्रव्य समभाग लेकर यवकुट करें। इसमें २५ ग्राम यवकुट लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें। चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ में १२ से २५ मि.ली. एरण्डतैल मिलाकर पीने से आमवातरोग नष्ट हो जाता है।

१८. मध्यम रास्नादि क्वाथ (भा.प्र.)

रास्नैरण्डशतावरीसहचरा दुस्पर्शवासाऽमृता-
देवाह्वातिविषाऽभयाघनशटीशुण्ठीकषायः कृतः।
पीतः सोरुबुतैलयुक् सुविहितः सामे सशूलेऽनिले
कट्यूरुत्रिकपार्श्वपृष्ठजठरक्रोडेषु वातार्त्तिजित् ॥२५॥

१. रास्ना, २. एरण्डमूलत्वक्, ३. शतावरी, ४. सहचर, ५. कण्टकारी, ६. वासामूल, ७. गुडूची, ८. देवदारु, ९. अतिविषा, १०. हरीतकी, ११. नागरमोथा, १२. कचूर और १३. सोंठ—सभी द्रव्यों को यवकुट कर रख लें। इस यवकुट में से २५ ग्राम लेकर १६ गुना जल में क्वाथ करें और चौथाई शेष रहने पर छान लें। ५० मि.ली. क्वाथ में १२ से २५ मि.ली. एरण्डतैल मिलाकर सुखोष्ण पीने से आमवात, शूलयुक्त आमवात, कटिशूल, ऊरुस्तम्भ-शूल, पृष्ठशूल, त्रिकशूल, पार्श्वशूल, उदरशूल, कुक्षिशूल आदि वातिक वेदना नष्ट हो जाती है।

१९. महारास्नादि क्वाथ (भा.प्र.)

रास्ना वातारिमूलञ्च वासकञ्च दुरालभम् ।
शटीदारुबलामुस्तानागरातिविषाऽभयाः ॥२६॥
श्वदंष्ट्रा व्याधिघातञ्च मिसिधान्यपुनर्नवाः ।
अश्वगन्धाऽमृता कृष्णा वृद्धदारः शतावरी ॥२७॥
वचा सहचरश्चैव चविका बृहतीद्वयम् ।
समभागान्वितैरेतै रास्नाद्विगुणभागिकैः ॥२८॥
कषायं पाययेत्सिद्धमष्टभागावशेषितम् ।
शुण्ठीचूर्णसमायुक्तामाभाद्येन युतं तथा ॥२९॥
अलम्बुषादिसंयुक्तमजमोदादिसंयुतम् ।
यथादोषं यथाव्याधिं प्रक्षेपं कारयेद्भिषक् ॥३०॥
सर्वेषु वातरोगेषु सन्धिमज्जगतेषु च ।
आनाहेषु च सर्वेषु सर्वागात्रानुकम्पिने ॥३१॥
कुब्जके वामने चैव पक्षाघाते तथाऽर्दिते ।
जानुजङ्घास्थिपीडासु गृध्रस्यां च हनुग्रहे ॥३२॥
सर्वेषां पाचनानान्तु श्रेष्ठमेतद्धि पाचनम् ।
महारास्नादिकं नाम प्रजापतिविनिर्मितम् ॥३३॥

१. रास्ना, २. एरण्डमूलत्वक्, ३. वासामूल, ४. जवासा, ५. कचूर, ६. देवदारु, ७. बलामूल, ८. नागरमोथा, ९. सोंठ, १०. अतीस, ११. हरीतकी, १२. गोखरू, १३. अमलतासफलमज्जा, १४. सौंफ, १५. धनियाँ, १६. पुनर्नवा, १७. अश्वगन्धा, १८. गुडूची, १९. पीपर, २०. विधारा, २१. शतावरी, २२. वच, २३. सहचर, २४. चव्य, २५. बृहती और २६. कण्टकारी—सभी द्रव्य १-१ भाग तथा रास्ना २ भाग लें। इन्हें यवकुट चूर्ण करें। इस यवकुट में से २५ ग्राम लेकर १६ गुना जल देकर क्वाथ करें। जब अष्टमांश शेष रहे तो छान लें और उस क्वाथ में शुण्ठी १ ग्राम या यथा दोष (दोषानुसार) आभाद्यचूर्ण, अलम्बुषादिचूर्ण, अजमोदादिचूर्ण मिलाकर सुखोष्ण पान करने से सभी वातरोग, सन्धिगतवात, मज्जागतवात, आनाह, सभी तरह के शरीरकम्प, कुब्ज, वामन, पक्षाघात, अर्दित, जानु एवं जङ्घागत पीड़ा, गृध्रसी, हनुग्रह रोग नष्ट होते हैं। प्रजापति ब्रह्मा द्वारा निर्मित यह महारास्नादिक्वाथ सभी आमपाचकों में श्रेष्ठतम है।

२०. शुण्ठ्यादि क्वाथ (भा.प्र.)

शुण्ठीगोक्षुरकक्वाथः प्रातः प्रातर्निषेवितः।
सामे वाते कटीशूले पाचनो रुक्प्रणाशनः ।
यवक्षारसमायुक्तो मूत्रकृच्छ्रविनाशनः ॥३४॥

सोंठ एवं गोक्षुर समभाग का यवकुट करें। इसमें से २५ ग्राम लें और १६ गुने जल में क्वाथ करें। चौथाई सूखने पर छान लें। इसे आमवात और कटिशूल में प्रातः-सायं सेवन करें। मूत्रकृच्छ्र

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

होने पर इस क्वाथ में यवकुट मिलाकर पिलावें। मात्रा सुखोष्ण क्वाथ ५० मि.ली.।

२१. शट्यादि क्वाथ (च.द.)

शटीविश्वौषधीकल्कं वर्षाभूक्वाथसंयुतम्।
सप्तरात्रं पिबेज्जन्तुरामवातविनाशनम् ॥३५॥

पुनर्नवाक्वाथ में कचूर एवं सोंठ का कल्क ४ ग्राम मिलाकर पीने से सात दिनों में आमवात रोग नष्ट हो जाता है।

२२. दशमूलक्वाथ/हरीतक्यादि चूर्ण (च.द.)

आमवाते कणायुक्तं दशमूलीजलं पिबेत्।
खादेद्वाऽप्यभयाविश्वं गुडूचीं नागरेण वा ॥३६॥

आमवात रोग में दशमूलक्वाथ ५० मि.ली. में २ ग्राम पीपर-चूर्ण डालकर सुखोष्ण पियें अथवा हरीतकीचूर्ण एवं सोंठचूर्ण मिलाकर खायें या गुडूची तथा सोंठचूर्ण मिलाकर खायें।

२३. शतपुष्पाद्य चूर्ण (च.द.)

शतपुष्पा विडङ्गश्च सैन्धवं मरिचं समम्।
चूर्णमुष्णाम्बुना पीतमग्निसन्दीपनं परम् ॥३७॥

सौंफ, वायविडङ्ग, सैन्धवलवण तथा मरिच—इन चारों द्रव्यों को समभाग लेकर चूर्ण करें। इस चूर्ण को ३ से ५ ग्राम की मात्रा में गरम पानी से सेवन करने पर अत्यन्त दीपन कार्य करता है।

२४. हिंग्वाद्य चूर्ण

हिङ्गु चव्यं विडं शुण्ठी कृष्णाजाजी सपौष्करम्।
भागोत्तरमिदं चूर्णं पीतं वातामजिद् भवेत् ॥३८॥

१. शुद्ध हींग १ भाग, २. चव्यमूल २ भाग, ३. विडलवण ३ भाग, ४. सोंठ ४ भाग; ५. पीपर ५ भाग, ६. श्वेतजीरा ६ भाग तथा ७. पुष्करमूल ७ भाग लें। इन सभी द्रव्यों का महीन चूर्ण बनाकर काचपात्र में संग्रह करें। ३ से ५ ग्राम चूर्ण को उष्णोदक के साथ पीने से आमवात नष्ट हो जाता है।

२५. अलम्बुषादि चूर्ण-१ (च.द.)

अलम्बुषा गोक्षुरकं त्रिफलानागरामृताः।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या श्यामा[1] चूर्णं च तत्समम् ॥३९॥
पिबेन्मस्तुसुरातक्रकाञ्जिकोष्णोदकेन वा।
पीतं जयत्यामवातं सशोफं वातशोणितम् ॥४०॥
त्रिकजानूरुसन्धिस्थं ज्वरारोचकनाशनम्।
हरीतक्यक्षधात्रीभिः प्रसिद्धा त्रिफला क्रमात् ॥
प्रत्येकं तेन वा युञ्ज्याद् भागवृद्धिं यथोत्तरम् ॥४१॥

१. गोरखमुण्डी १ भाग, २. गोक्षुर २ भाग, ३. आमला ३ भाग, ४. हरीतकी ४ भाग, ५. बहेड़ा ५ भाग, ६. सोंठ ६ भाग, ७. गुडूची ७ भाग और ८. श्यामा (विधारा) २८ भाग लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रह करें। इसे ३ से ५ ग्राम तक की मात्रा में मस्तु (दही का पानी), सुरा, तक्र, काञ्जी, या उष्णोदक के साथ पीने से शोथयुक्त आमवात, वातरक्त, त्रिकशूल, जानुशूल, सन्धिशूल, ज्वर एवं अरुचि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—३ से ५ ग्राम। **अनुपान**—मस्तु-सुरा-काञ्जी-तक्र-उष्णोदक से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—हरिताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवातादि में।

२६. अलम्बुषादि चूर्ण-२ (च.द.)

अलम्बुषां गोक्षुरकं गुडूचीं वृद्धदारकम्।
पिप्पलीं त्रिवृतां मुस्तं वरुणं सपुनर्नवम् ॥४२॥
त्रिफलां नागरञ्चैव श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
मस्त्वारनालतक्रेण पयोमांसरसेन वा ॥४३॥
आमवातं निहन्त्याशु श्वयथुं सन्धिसंस्थितम्।
प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत् ॥४४॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं तेजोवृद्धिं बलं तथा।
वातरोगाञ्जयत्येष सन्धिमज्जगतानपि ॥४५॥

१. गोरखमुण्डी, २. गोक्षुर, ३. गुडूची, ४. विधारा, ५. पीपर ६. निशोथ, ७. नागरमोथा, ८. वरुणछाल, ९. पुनर्नवामूल, १०. आमला, ११. हरीतकी, १२. बहेड़ा और १३. सोंठ—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। इन्हें सूक्ष्म चूर्ण कर काचपात्र में संग्रह करें। इसको ३ से ५ ग्राम तक की मात्रा में मस्तु (दही का पानी), काञ्जी, तक्र, दूध या मांसरस अथवा गरम पानी से सेवन करने पर आमवात, शोथ, सन्धिशोथ, शूल, प्लीहरोग, गुल्म, उदररोग, आनाह एवं अर्शरोग नष्ट करता है। जाठराग्नि प्रदीप्त करता है। शारीरिक तेज एवं बल बढ़ाता है। सम्पूर्ण वातरोग तथा सन्धिगत वात और मज्जागत वात को नष्ट करता है।

मात्रा—३ से ५ ग्राम। **अनुपान**—मस्तु, तक्र, गोदुग्ध, काञ्जी, मांसरस अथवा उष्णोदक से। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—हरिताभ। **स्वाद**—तिक्त-कटु। **उपयोग**—आमवात में।

२७. वैश्वानर चूर्ण (च.द.)

माणिमन्थस्य भागौ द्वौ यमान्यास्यतद्वदेव हि।
भागास्त्रयोऽजमोदाया नागराद् भागपञ्चकम् ॥४६॥
दश द्वौ च हरीतक्याः श्लक्ष्णचूर्णीकृताः शुभाः।
मस्त्वारनालतक्रेण सर्पिषोष्णोदकेन वा ॥४७॥
पीतं जयत्यामवातं गुल्मं हृद्वस्तिजान् गदान्।
प्लीहानं ग्रन्थिशूलादीनर्शांस्यानाहमेव च ॥४८॥

१. श्यामा=वृद्धदारक इति (शिवदासः)।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

विबन्धं वातजान् रोगांस्तथैव हस्तपादजान्।
वातानुलोमनमिदं चूर्णं वैश्वानरं स्मृतम् ॥४९॥

१. सैन्धवलवण २ भाग, २. अजवायन २ भाग, ३. अजमोदा ३ भाग, ४. सोंठ ५ भाग और ५. हरीतकी १२ भाग लें। सभी द्रव्यों का एक साथ सूक्ष्म चूर्ण कर लें और काचपात्र संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ से ५ ग्राम की मात्रा में मस्तु (दही का पानी), काञ्जी, तक्र, घी या उष्णोदक से लेने पर आमवात, गुल्म, हृद्रोग, बस्ति (मूत्राशय) विकार, प्लीहारोग, ग्रन्थि (कैंसर), शूलादि रोग तथा अर्श, आनाह, विबन्ध एवं वातज विकार और हाथ-पैर की शून्यता आदि रोग नष्ट हो जाते है। यह वायु का अनुलोमन करता है। इसे वैश्वानरचूर्ण कहते हैं।

२८. अमृतादिचूर्ण (च.द.)

अमृतानागरगोक्षुरमुण्डितिकावरुणकैः कृतं चूर्णम्।
मस्त्वारनालपीतमामानिलनाशनं ख्यातम् ॥५०॥

१. गुडूची, २ सोंठ, ३. गोक्षुर, ४. गोरखमुण्डी तथा ५. वरुणछाल—इन्हें समभाग में लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ से ५ ग्राम की मात्रा में मस्तु या काञ्जी के साथ पीने से आमवात नष्ट हो जाता है।

२९. देवदार्वादिचूर्ण (भा.प्र.)

देवदारुवचामुस्तनागरातिविषाऽभयाः।
पिबेदुष्णाम्बुना नित्यमामवातस्य भेषजम् ॥५१॥

१. देवदारु, २. वच, ३. नागरमोथा, ४. सोंठ, ५. अतीस और ६. हरीतकी—समभाग लें। इन द्रव्यों को एक साथ मिलाकर सूक्ष्मचूर्ण कर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ से ५ ग्राम की मात्रा में उष्णोदक से रोज सेवन करने पर आमवात नष्ट हो जाता है। यह आमवात रोग की उत्तम औषध है।

३०. चित्रकादिचूर्ण (भा. प्र.)

चित्रकेन्द्रयवौ पाठा कटुकातिविषाऽभयाः।
आमाशयोत्थवातघ्नं चूर्णं पेयं सुखाम्बुना ॥५२॥

१. चित्रकमूल, २. इन्द्रजौ, ३. पाठा, ४. कटुकी, ५. अतीस और ६. हरीतकी—समभाग लें। इन सभी द्रव्यों को एक साथ मिलाकर सूक्ष्म चूर्ण करें। इन्हें काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ से ५ ग्राम की मात्रा में उष्णोदक से पीने पर आमवात रोग नष्ट हो जाता है।

३१. पुनर्नवादिचूर्ण (भा.प्र)

पुनर्नवाऽमृताशुण्ठीशताह्वावृद्धदारकम्।
शटीमुण्डितिकाचूर्णमारनालेन पाययेत् ॥५३॥
आमाशयोत्थवातघ्नं चूर्णं पेयं सुखाम्बुना।
आमवातं निहन्त्याशु गृध्रसीमुद्धतामपि ॥५४॥

१. पुनर्नवा, २. गुडूची, ३. सोंठ, ४. सौंफ, ५. विधारा, ६. कचूर तथा ७. मुण्डी—सभी द्रव्य समभाग में लेकर सूक्ष्मचूर्ण कर छननी से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को ३ ग्राम की मात्रा में काञ्जी के साथ दिन में २ बार सेवन करने से आमाशयोत्थ वात (आध्मानादि) नष्ट हो जाते हैं या गरम पानी से इस चूर्ण का सेवन करने पर आमवात और प्रवृद्ध गृध्रसी रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—३ ग्राम। **अनुपान**—काञ्जी तथा गरम पानी से। **गन्ध**—सोंठ एवं सौंफ की गन्ध। **वर्ण**—सामान्य लवणभास्कर जैसा। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमाशयोत्थ वात (आध्मान), आमवात एवं गृध्रसीवात में।

३२. आभाद्यचूर्ण (योगरत्नाकर)

आभा रास्ना गुडूची च शतमूली महौषधम्।
शतपुष्पाऽश्वगन्धा च हवुषा वृद्धदारकः ॥५५॥
यमानी चाजमोदा च समभागानि कारयेत्।
सूक्ष्मचूर्णमिदं कृत्वा बिडालपदकं पिबेत् ॥५६॥
मद्यैर्मांसरसैर्यूषैस्तक्रैरुष्णोदकेन वा।
सर्पिषा वाऽपि लेह्यन्तु दधिमण्डेन वा पुनः ॥५७॥
अस्थिसन्धिगतं वायुं स्नायुमज्जाश्रितञ्च यत्।
कटिग्रहं गृध्रसीञ्च मन्यास्तम्भं हनुग्रहम् ॥५८॥
ये च कोष्ठगता रोगास्तांश्च सर्वान् प्रणाशयेत्।
आभाद्यो नाम चूर्णोऽयं सर्वव्याधिनिबर्हणः ॥५९॥

१. बबूल की छाल, २. रास्ना, ३. गुडूची, ४. शतावर, ५. सोंठ, ६. सौंफ, ७. अश्वगन्धा, ८. हाउबेर, ९. विधारा, १०. अजवायन और ११. अजमोदा—प्रत्येक द्रव्य समभाग में लें। सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण कर छननी से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इस चूर्ण को १ तोला (१२ ग्राम) की मात्रा में मद्य, मांसरस, यूष, तक्र या उष्णोदक से लेना चाहिए। अथवा घी के साथ लेहन कर दधिमण्ड (मस्तु) पीना चाहिए। ऐसा करने से अस्थि-सन्धिगत वातविकार तथा स्नायु एवं मज्जागत वात विकार, कटिग्रह, गृध्रसी, मन्यास्तम्भ, हनुग्रह एवं कोष्ठगत रोगों का नाश होता है। आभाद्यचूर्ण नाम की यह औषधि सभी प्रकार के रोगों को नाश करती है।

आधुनिक मात्रा—३ से ५ ग्राम। **अनुपान**—मद्य, मांसरस, मुद्गयूष, तक्र या उष्णोदक अथवा घी के साथ चाटकर दधिमण्ड पीना चाहिए। **गन्ध**—सौंफ एवं शुण्ठी की गन्ध से युक्त। **वर्ण**—किञ्चिद् हरिताभ, धूसरवर्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—अस्थिसन्धिगत वातविकार, स्नायु एवं मज्जागत वातविकार, गृध्रसी आदि वातविकार में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

३३. पथ्याद्य चूर्ण (च.द.)

पथ्याविश्वयमानीभिस्तुल्याभिश्चूर्णितं पिबेत्।
तक्रेणोष्णोदकेनापि काञ्जिकेनाथवा पुनः ॥६०॥
आमवातं निहन्त्याशु शोथं मन्दाग्नितामपि।
पीनसं कासहृद्रोगौ स्वरभेदमरोचकम् ॥६१॥

१. हरीतकी, २. सोंठ तथा ३. अजवायन—तीनों समभाग लें। इन्हें चूर्ण कर काचपात्र में सुरक्षित रख लें। इस चूर्ण को ३ से ५ ग्राम की मात्रा में तक्र, उष्णोदक अथवा काञ्जी के अनुपान से लेना चाहिए। इसके सेवन से आमवात शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। शोथ, मन्दाग्नि, पीनस, श्वास, हृद्रोग, स्वरभेद एवं अरुचि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—३ से ५ ग्राम। **अनुपान**—तक्र, उष्णोदक या काञ्जी से। **गन्ध**—अजवायनगन्धी। **वर्ण**—पीताभ हरित। **स्वाद**—कटु-कषाय। **उपयोग**—आमवात, शोथ एवं मन्दाग्नि में।

३४. प्रसारणी सन्धान (च.द.)

प्रसारण्याढकक्वाथे प्रस्थो गुडरसोनयोः।
पञ्चकोलरजः पादः पक्वः स्यादामवातहा ॥६२॥

१. गन्धप्रसारणीक्वाथ ३ लीटर, २. गुड़ ७५० ग्राम, ३. लशुन ७५० ग्राम; ४. पीपर, ५. पिपरामूल, ६. चव्यमूल, ७. चित्रकमूल और ८. सोंठ—पीपर से सोंठ तक के पाँचों द्रव्यों के मिश्रित यवकुट कर १९० ग्राम लेना चाहिए। एक मिट्टी के घड़े में ३ लीटर प्रसारणीक्वाथ डालें तथा उस क्वाथ में ७०० ग्राम गुड़ घोल दें, ततः उसमें निस्तुष लशुन को पीसकर उस घड़े में डालें। तदनन्तर पञ्चकोल यवकुट १९० ग्राम डालकर अच्छी तरह मिलाकर ढक्कन से मुँह बन्द कर १५ दिनों तक सन्धानार्थ निर्वात स्थान में छोड़ दें। सन्धान के बाद छानकर बोतल में संग्रह करें। इसका आमवातनाशनार्थ प्रयोग करें।

विमर्श—इस सन्धान में गुड़ की मात्रा कम है। अतः २ किलों की मात्रा में गुड़ देकर सन्धान करने से अधिक अच्छी गुणयुक्त औषधि बनेगी।

मात्रा—१० मि.ली.। **अनुपान**—जल मिलाकर। **गन्ध**—लशुनयुक्त मद्यगन्धी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—तीक्ष्ण। **उपयोग**—आमवात में।

३५. आमवातारि वटिका (र.सा.सं.)

रसगन्धकलौहाभ्रं तुत्थं टङ्कणसैन्धवम्।
समभागं विचूर्ण्याथ चूर्णाद् द्विगुणगुग्गुलुः ॥६३॥
गुग्गुलोः पादिकं देयं त्रिवृताचूर्णमुत्तमम्।
तत्समं चित्रकस्याथ घृतेन वटिकां कुरु ॥६४॥
खादन्माषद्वयञ्चास्य त्रिफलाजलयोगतः।
आमवातारिवटिका पाचिका भेदिका मता ॥६५॥
आमवातं निहन्त्याशु गुल्मशूलोदराणि च।
यकृत्प्लीहोदराष्ठीलां कामलां पाण्डुरोगकम् ॥६६॥
हलीमकं चाम्लपित्तं श्वयथुं श्लीपदार्बुदौ।
ग्रन्थिशूलं शिरःशूलं वातरोगञ्च गृध्रसीम् ॥६७॥
गलगण्डं गण्डमालां कृमिकुष्ठभगन्दरान्।
विद्रधिं गर्दभानाहावन्त्रवृद्धिञ्च नाशयेत् ॥६८॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रकभस्म, ५. शुद्ध तुत्थ, ६. शुद्ध सुहागा, ७. सैन्धवलवण—प्रत्येक द्रव्य १०-१० ग्राम लें। ८. शुद्ध गुग्गुलु १४० ग्राम, ९. चित्रकचूर्ण १४० ग्राम और १०. गोघृत ५० ग्राम लें।

सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः एक खरल में कज्जली तथा अन्य भस्मों तथा चूर्णों को एक साथ अच्छी तरह मिला दें। ततः गरम जल में गुग्गुलु को पिघलाकर सभी चूर्णों को मिलाकर घी देकर कूटें और १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इस औषधि की २-२ वटी त्रिफलाक्वाथ से लेना चाहिए। इसे आमवातारिवटी कहते हैं। यह आम को पचाती है। भेदन के द्वारा आम को बाहर निकालती है। इसके सेवन से आमवात, गुल्म, शूल, उदररोग, यकृत्, प्लीहारोग, अष्ठीला, कामला, पाण्डु-रोग, हलीमक, अम्लपित्त, शोथ, श्लीपद, अर्बुद, ग्रन्थिशूल, शिरःशूल, वातरोग, गृध्रसी, गलगण्ड, गण्डमाला, कृमि, कुष्ठ, भगन्दर, विद्रधि, पाषाणगर्दभ और आनाह तथा अन्त्रवृद्धि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—त्रिफलाक्वाथ से। **गन्ध**—गुग्गुलुगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात, शोथ, श्लीपद, उदररोग, कामला, अर्बुद, ग्रन्थि आदि में।

३६. आमवातारि रस (र.सा.सं.)

रसगन्धौ वरावह्नी गुग्गुलुः क्रमवर्द्धिताः।
एतदेरण्डतैलेन श्लक्ष्णचूर्णं प्रपेषयेत् ॥६९॥
कर्षोऽस्यैरण्डतैलेन हन्त्युष्णजलपायिनाम्।
आमवातमतीवोग्रं दुग्धमुद्गादि वर्जयेत् ॥७०॥

१. शुद्ध पारद १० ग्राम, २. शुद्ध गन्धक २० ग्राम, ३. त्रिफला ३० ग्राम, ४. चित्रकमूल ४० ग्राम, ५. शुद्ध गुग्गुलु ५० ग्राम और एरण्ड तैल ५० मि.ली. लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बनावें। ततः त्रिफला एवं चित्रकमूल चूर्ण को उस कज्जली में मिलाकर मर्दन करें। तदनन्तर शुद्ध गुग्गुलु में थोड़ा पानी डालकर गरम करें। जब गुग्गुलु घुल जाय तो कज्जली मिश्रित चूर्ण को मिलाकर मर्दन करें। इसके बाद १ तोला एरण्ड तैल के साथ मर्दन कर काचपात्र में संग्रह करें। इसे १ से २ ग्राम

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

की मात्रा में उष्णोदक के अनुपान से प्रातः-सायं सेवन करने से अत्युग्र आमवात रोग नष्ट हो जाता है। इस आमवातारि रस के सेवन काल में गोदुग्ध एवं मूँग आदि आमकारक पदार्थ नहीं सेवन करना चाहिए। यद्यपि इसकी मात्रा १ तोला बतायी गई है किन्तु आज की परिस्थिति में इतनी मात्रा उचित नहीं हैं।

मात्रा—१-२ ग्राम। **अनुपान**—उष्णोदक से। **गन्ध**—गुग्गुलु। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—कषाय-तिक्त। **उपयोग**—आमवात में।

३७. आमवातेश्वर रस (र.सा.सं.)

शुद्धगन्धः पलार्द्धञ्च मृतताम्रञ्च तत्समम्।
ताम्रार्द्धः पारदः शुद्धो रसतुल्यं मृतायसम् ॥७१॥
सर्वं पञ्चाङ्गुलेनैव भावयेच्च पुनः पुनः।
सञ्चूर्ण्य पञ्चकोलस्य क्वाथे सर्वं विमर्दयेत् ॥७२॥
रौद्रे विंशतिवारांश्च गुडूचीनां रसैर्दश।
भृष्टटङ्कणचूर्णेन तुल्येन सह मेलयेत् ॥७३॥
टङ्कणार्द्धं विडं देयं मरिचं विडतुल्यकम्।
तिन्तिडीक्षारतुल्यं च सूततुल्यञ्च दन्तिकम् ॥७४॥
त्रिकटु त्रिफलां चैव लवङ्गं चार्द्धभागिकम्।
आमवातेश्वरो नाम विष्णुना परिकीर्तितः ॥७५॥
महाग्निकारको ह्येष आमवातकुलान्तकः।
स्थूलानां कुरुते कार्श्यं कृशानां स्थौल्यकारकम् ॥७६॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगकुलान्तकः।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु आमवातं सुदारुणम् ॥७७॥
गुरुवृष्यान्नपानानि पयो मांसरसा हिताः।
भोजयेत्कण्ठपर्यन्तं चतुर्गुञ्जामितं रसम् ॥७८॥
कट्वम्लतिक्तरहितं पिबेत्तदनुपानकम्।
शीघ्रं जीर्यति तत्सर्वं जायते दीपनः परः ॥७९॥
अनेन सदृशो नास्ति वह्निसन्दीपनो रसः।
गुल्मार्शोग्रहणीरोगशोथपाण्डूदरापहः ॥८०॥

१. शुद्ध गन्धक २३ ग्राम, २. ताम्रभस्म २३ ग्राम, ३. शुद्ध पारद १२ ग्राम, ४. लौह भस्म १२ ग्राम, ५. शुद्ध टंकण ७० ग्राम, ६. विड्लवण ३५ ग्राम, ७. मरिचचूर्ण ३५ ग्राम, ८. इमलीत्वक्क्षार ३५ ग्राम, ९. शुद्ध जयपाल १२ ग्राम, १०. सोंठ ६ ग्राम, ११. पीपर ६ ग्राम, १२. मरिच ६ ग्राम, १३. आमला ६ ग्राम, १४. हरीतकीचूर्ण ६ ग्राम, १५. बहेड़ाचूर्ण ६ ग्राम और १६. लौंग ६ ग्राम लें।

भावना—एरण्डपत्रस्वरस की ७ भावना। पञ्चकोलफाण्ट की २० भावना तथा गुडूचीस्वरस की १० भावना।

सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बनावें। ततः उसी खरल में ताम्रभस्म एवं लौहभस्म मिलाकर एरण्डपत्रस्वरस की ७ भावना दें एवं पञ्चकोलफाण्ट की २० भावना धूप में बैठकर दें और गुडूचीस्वरस की १० भावना दें। पुनः टंकण आदि अन्य द्रव्यों को उसी खरल में मिलाकर मर्दन करें। इस मर्दित औषधि को काचपात्र में संग्रह करें। इसे आमवातेश्वर रस कहते है। इसे भगवान् विष्णु ने बनाया है। यह आमवातेश्वर रस अग्निवर्धक है और आमवातकुलान्तक है। मोटे को स्थूल करता है और कृश को स्थूल करता है। अनुपान भेद से यह सभी रोगों के मूल को नष्ट करता है। भयंकर तथा असाध्य आमवात को यह औषधि नष्ट करती है। पथ्य में गुरु, वृष्य अन्नपान, दूध, मांसरस हितकर है। आकण्ठ भोजन के बाद इस औषधि को ४ गुञ्जा (५०० मि.ग्रा.) की मात्रा में मधु से लेकर कटु, अम्ल एवं तिक्त रस का अनुपान देना चाहिए। इस रस के सेवन से खाये हुए सभी पदार्थ शीघ्र ही जीर्ण हो जाते हैं। यह अत्यन्त दीपन है। इसके सदृश अग्निदीपक अन्य औ[illegible] नहीं है। इसके सेवन से गुल्म, अर्श, ग्रहणीरोग, शोथ, पाण्डु और उदररोग नष्ट हो जाते है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु, निर्गुण्डीपत्र रस। **गन्ध**—तिक्त गन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—आमवात में।

३८. वातगजेन्द्र सिंह

अभ्रं लौहं रसं गन्धं ताम्रं नागं सटङ्कणम्।
विषं सिन्धुं लवङ्गञ्च हिङ्गु जातीफलं समम् ॥८१॥
तदर्द्धं त्रिसुगन्धञ्च त्रैफलं जीरकं तथा।
कन्यारसेन सम्पिष्य वटी कार्या त्रिरक्तिका ॥८२॥
सेव्या पयोऽनुपानेन सदा प्रातः सुखान्वितैः।
अशीतिं वातजान् रोगाँश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥८३॥
विंशतिं श्लैष्मिकान् रोगान् सेवनादेव नाशयेत्।
अभिघातेन ये क्षीणाः क्षीणार्द्धावयवाश्च ये ॥८४॥
व्याधिक्षीणा वयःक्षीणाः स्त्रीक्षीणाश्चापि ये नराः।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा वह्निहीनाश्च मानवाः ॥८५॥
तेषां वृष्यश्च बल्यश्च वयःस्थापन एव च।
खञ्जानां पङ्गुकुब्जानां क्षीणानां मांसवर्द्धनः ॥८६॥
अरोगी सुखमाप्नोति रोगी रोगाद्विमुच्यते।
रसस्यास्य प्रसादेन नास्ति रोगाद् भयं क्वचित् ॥
द्वातगजेन्द्रसिंहोऽयं रसो रोगविनाशकः ॥८७॥

१. अभ्रकभस्म, २. लौहभस्म, ३. शुद्ध पारद, ४. शुद्ध गन्धक, ५. ताम्रभस्म, ६. नागभस्म, ६. शुद्ध टङ्कण, ८. शुद्ध वत्सनाभविष, ९. सैन्धवलवण, १०. लौंगचूर्ण, ११. शुद्ध हींग, १२. जायफलचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें; १३. तेजपत्ता, १४. दालचीनी, १५. छोटीइलायची, १६.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

आमला, १७. हरीतकी, १८. बहेड़ा और १९. श्वेतजीरा—प्रत्येक ७ द्रव्य १०-१० ग्राम लें।

सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी तरह से कज्जली बनावें। ततः उसी खरल में शेष सभी भस्मों एवं काष्ठौषधि चूर्णों को मिलाकर घृतकुमारीस्वरस की ३ भावना देकर ३-३ रत्ती (३७५ मि.ग्रा.) की वटी बनाकर छाया में सुखा लें। सुखोष्ण दुग्धानुपान से प्रातः-सायं १-१ वटी सेवन करने से ८० प्रकार के वातरोग, ४० प्रकार के पित्तरोग और २० प्रकार के कफरोग नष्ट हो जाते हैं। चोट लगने के कारण जो व्यक्ति क्षीण हो गया हो, अर्धक्षीण व्यक्ति, व्याधिक्षीण, वयः-क्षीण, स्त्री-सम्भोगजन्य क्षीणव्यक्ति, क्षीणेन्द्रियव्यक्ति, शुक्रक्षीणव्यक्ति, अग्निक्षीण (मन्दाग्नि) वाले मनुष्य को यह वातगजेन्द्र सिंह औषधि वृष्य, बल्य एवं वयःस्थापन गुणोत्पादक है। खञ्ज, पङ्गु, कुब्ज और क्षीणों का मांस बढ़ाता है। रोग रहित मनुष्य एवं रोगी मनुष्य इसके सेवन से सुख प्राप्त करते हैं तथा रोग नष्ट हो जाता है। इस वातगजेन्द्रसिंह रस के प्रभाव से रोग का भय नष्ट हो जाता है।

मात्रा—३७५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—मधु एवं दुग्धानुपान। **गन्ध**—हिंगुगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात एवं क्षीणों में उपयोगी है।

३९. आमप्रमाथिनीवटी

सोरकं रविमूलञ्च गन्धकं लौहमभ्रमकम्।
पिष्ट्वाऽऽरग्वधतोयेन कुर्यान्माषमितां वटीम् ॥८८॥
त्रिवृत्क्वाथे च सा सेव्या कफामयनिषूदनी।
आमवातप्रशमनी वटिकाऽऽमप्रमाथिनी ॥८९॥

१. कलमीसोरा, २. अर्कमूलत्वक्, ३. शुद्ध गन्धक, ४. लौहभस्म और ५. अभ्रकभस्म—प्रत्येक द्रव्य १-१ भाग लें। एक खरल में सभी द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्णों को मिलाकर मर्दन करें। ततः आरग्वधफलमज्जास्वरस की १ भावना देकर २५० मि.ग्रा. (२ रत्ती) की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रह करें। कफज एवं आमवात रोग के शमनार्थ १-१ वटी त्रिवृत् क्वाथ के साथ सेवन करना चाहिए। आमप्रमाथिनी नामक यह वटिका विशेष रूप से आमवात को नष्ट करती है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—त्रिवृत् क्वाथ। **गन्ध**—आरग्वधमज्जा की गन्धवाला। **वर्ण**—किञ्चिद् रक्तवर्ण किन्तु उस पर गन्धक के छोटे-छोटे कण दिखाई देते हैं। **स्वाद**—क्षारीय। **उपयोग**--आमवात एवं कफरोग में।

४०. आमवाताद्रिवज्ररस

रसगन्धकलोहाभ्रफणिफेनं समं समम्।
सप्तधा यावशूकस्य मर्दयेद्विजयाऽम्भसा ॥९०॥
ततो माषार्द्धमानञ्च विदध्याद्वटिकां भिषक्।
यथादोषानुपानेन प्रदद्यादामवातिने ॥९१॥
आमवातं महाघोरं प्रमेहानपि विंशतिम्।
आमवाताद्रिवज्राख्यो रसो हन्ति न संशयः ॥९२॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. लौहभस्म, ४. अभ्रक भस्म तथा ५. शुद्ध अफीम—प्रत्येक द्रव्य २०-२० ग्राम लें और ६. यवक्षार १४० ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बनावें। ततः शेष द्रव्यों को उसमें मिलाकर भाँगपत्रस्वरस की भावना देकर १ दिन मर्दन करें और $\frac{१}{२}$-$\frac{१}{२}$ रत्ती की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस आमवाताद्रिवज्र नामक रस की १ से २ वटी निर्गुण्डीपत्रस्वरस के साथ प्रातः-सायं खिलाने से आमवात एवं सभी प्रमेह रोग नष्ट हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं हैं।

मात्रा—१२५ मि.ग्रा.। **अनुपान**—निर्गुण्डीपत्रस्वरस। **गन्ध**—निर्गन्ध। **वर्ण**—कृष्णाभ एवं श्वेताभ (क्षारीय कण दीखता है)। **स्वाद**—क्षारीय । **उपयोग**—आमवात में।

४१. अमृतमञ्जरी (र.सा.सं.)

हिङ्गुलं च विषं चैव कणामरिचटङ्कणम्।
जातीकोषं समं सर्वं जम्बीररसमर्दितम् ॥९३॥
रक्तिमानां वटीं कुर्यादार्द्रकद्रवसंयुताम्।
वटीद्वयं त्रयं खादेत् सन्निपातं सुदारुणम् ॥९४॥
अग्निमान्द्यमजीर्णं च समवातं सुदारुणम्।
उष्णतोयानुपानेन सर्वं व्याधिं नियच्छति ॥९५॥
कासं पञ्चविधं श्वासं सर्वाङ्गग्रहमेव च।
जीर्णज्वरं क्षयं कासं हन्यादमृतमञ्जरी ॥९६॥

१. शुद्ध हिङ्गुल, २. शुद्ध वत्सनाभविष, ३. पीपर, ४. मरिच, ५. शुद्ध टंकण और ६. जावित्रीचूर्ण लें। सर्वप्रथम हिंगुल एवं टंकण को एक साथ मिलाकर शेष सभी द्रव्यों के चूर्ण को उसी में मिला दें तथा जम्बीरीनिम्बुस्वरस की भावना देकर १२५ मि.ग्रा. की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। १-१ वटी आर्द्रकस्वरस के साथ सेवन करने पर भयंकर सन्निपात रोग नष्ट हो जाता है। अग्निमांद्य, अजीर्ण या भयंकर आमवात में भी आर्द्रकस्वरस से लेना चाहिए। पाँच प्रकार के कास, श्वास, सर्वाङ्गग्रह, जीर्णज्वर, क्षय एवं कास रोग में उष्णोदकानुपान से लेने पर यह अमृतमञ्जरी रस अत्यन्त लाभ करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—आर्द्रकस्वरस या उष्णोदक। **गन्ध**—सुगन्ध जावित्री जैसी। **वर्ण**—रक्ताभ। **स्वाद**—अम्ल। **उपयोग**—आमवात सन्निपातज्वर एवं अजीर्ण में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

४२. त्रिफलादि लौह ( )

त्रिफला मुस्तकं व्योषं विडङ्गं पुष्करं वचा।
चित्रकं मधुकं चैव पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥९७॥
अयश्चूर्णपलान्यष्टौ गुग्गुलोस्तावदेव हि।
आलोड्य मधुनोपेतं पलद्वादशकेन च ॥९८॥
प्रातर्विलिह्य भुञ्जानो जीर्णे तस्मिञ्जयेद्ध्वजः।
दुःसाध्यमामवातञ्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥
जीर्णान्नसम्भवं शूलं श्वयथुं विषमज्वरम् ॥९९॥

१. त्रिफलाचूर्ण, २. नागरमोथाचूर्ण, ३. त्रिकटुचूर्ण, ४. विडङ्गचूर्ण, ५. पुष्करमूलचूर्ण, ६. वचचूर्ण, ७. चित्रकमूलचूर्ण, ८. मुलेठीचूर्ण—प्रत्येक चूर्ण ४६-४६ ग्राम लें; ९. लौहभस्म ३७५ ग्राम, १०. शुद्ध गुग्गुलु ३७५ ग्राम और ११. मधु ५२० ग्राम (१२ पल) लें। शुद्ध गुग्गुलु को थोड़ा गरम पानी में पिघलावें। पिघलने के बाद सभी द्रव्यों के चूर्णों एवं लौहभस्म को मिलाकर सिल पर मधु देकर पीसें। जब अच्छी तरह सभी द्रव्य एक साथ मिल जायँ तो शेष मधु को उसी के साथ मिला कर काचपात्र में संग्रहीत करें। प्रातः-सायं इस त्रिफलादिलौह को १-१ ग्राम की मात्रा में सेवन करने से दुःसाध्य आमवात, पाण्डुरोग, हलीमक अजीर्णोत्पन्नशूल, श्वयथु और विषम-ज्वरादि रोग नष्ट हो जाते हैं।

मात्रा—१-१ ग्राम। **अनुपान**—उष्णोदक से। **गन्ध**—मधु गन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—मधुर। **उपयोग**—आमवात, पाण्डु-कामलादि में।

४३. विडङ्गादि लौह

वज्रपाण्ड्यादिलौहानां ग्राह्यं पञ्चपलं शुभम्।
चूर्णं मृताभ्रकस्यापि लौहार्द्धं पारदं तथा ॥१००॥
त्रिगुणा त्रिफला ग्राह्या लौहाभ्रं षोडशैर्जलैः।
पक्त्वाऽष्टभागशेषन्तु ग्राह्यं क्वाथजलं ततः ॥१०१॥
तेन लौहाभ्रचूर्णञ्च पुनः पाच्यं समं घृतम् ॥
शतावर्य्या रसञ्चैव क्षीरञ्च द्विगुणं रसात् ॥१०२॥
लौहमय्या पचेद्दर्व्या पात्रे चायसि ताम्रके।
पचेत्पाकविधिज्ञस्तु वह्निना मृदुना शनैः ॥१०३॥
सिद्धे च प्रक्षिपेदेतान् विडङ्गादियथोदितान्।
विडङ्गं नागरं धान्यं गुडूचीसत्त्वजीरकम् ॥१०४॥
पलाशबीजं मरिचं पिप्पली हस्तिपिप्पली।
त्रिवृता त्रिफला दन्ती एला चैरण्डकं यथा ॥१०५॥
चविका ग्रन्थिकं चित्रं मुस्तकं वृद्धदारकम्।
सर्वेषां चूर्णमेतेषां लौहाभ्रकसमं भवेत् ॥१०६॥
आमवातगजेन्द्रस्य केशरी विधिनिर्मितः।
आमवातञ्च शोथञ्चाप्यग्निमान्द्यं हलीमकम् ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हन्याद् द्रव्यं रसायनम् ॥१०७॥

१. वज्रलौह या पाण्ड्यलौह भस्म २३० ग्राम, २. अभ्रक भस्म २३० ग्राम, ३. रससिन्दूर ११५ ग्राम, ४. त्रिफला १७२५ ग्राम, ५. क्वाथार्थजल २७६०० मि.ली., ५. अवशेष क्वाथ अष्टमांश—३४५० मि.ली., ६. शतावरीक्वाथ ३४५ मि.ली., ७. गोदुग्ध और ८. गोघृत ४६० ग्राम लें।

प्रक्षेप—१. वायविडङ्गचूर्ण, २. सोंठचूर्ण, ३. धनियाँचूर्ण, ४. गुडूचीसत्त्व, ५. जीराचूर्ण, ६. पलाशबीजचूर्ण, ७. मरिच चूर्ण, ८. पीपरचूर्ण, ९. गजपीपरचूर्ण, १०. त्रिवृत्चूर्ण, ११. आमलाचूर्ण, १२. हरीतकीचूर्ण, १३. बहेड़ाचूर्ण, १४. दन्ती-मूलचूर्ण, १५. छोटीइलायचीचूर्ण, १६. एरण्डमूलत्वक्चूर्ण, १७. चव्यचूर्ण, १८. पिपरामूलचूर्ण, १९. चित्रकमूलचूर्ण, २०. नागरमोथाचूर्ण और २१. विधाराचूर्ण—प्रत्येक २३-२३ ग्राम लें। अर्थात् कुल चूर्ण मिलाकर लौहभस्म एवं अभ्रकभस्म दोनों के बराबर लेना चाहिए। सर्वप्रथम रससिन्दूर को खरल में पीसें। अब एक लोहे की कड़ाही में त्रिफलाक्वाथ, शतावरीक्वाथ, गोदुग्ध एवं गोघृत मिलाकर पकावें। जब क्वाथादि द्रव उबल जाय तो उसमें निम्नलिखित द्रव्य—लौहभस्म, अभ्रकभस्म, रससिन्दूर एवं २१ काष्ठौषधियों के चूर्णों को मिलाकर उन्हें क्वाथ युक्त कड़ाही में मिलाकर खूब पकाते हुए घर्षण करें। जब अच्छी तरह से द्रवांश सूख जाय तो पुनः धूप में सुखाकर महीन छननी से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह विडङ्गादिलौह आमवात रूपी मत्त हाथी को सिंह जैसा नष्ट करने वाला है। अनुपान भेद से यह लौह आमवात, शोथ, अग्निमान्द्य, हलीमक, कामला, पाण्डु आदि रोगों को नष्ट करता है। यह रसायन गुण युक्त है।

मात्रा—१-२ ग्राम। **अनुपान**—रास्नासप्तकक्वाथ या उष्णोदक से। **गन्ध**—काष्ठौषधिगन्धी। **वर्ण**—हल्का रक्ताभ-चूर्ण। **स्वाद**—तिक्त-कषाय। **उपयोग**—आमवात एवं शोथ में।

४४. पञ्चाननलौह रस

जारितं पुटितं लौहचूर्णं पञ्चपलं शुभम्।
गुग्गुलोश्च पलं पञ्च लौहार्द्धं मृतमभ्रकम् ॥१०८॥
शुद्धसूतमभ्रसमं गन्धकं तत्समं भवेत्।
त्रिगुणामयसश्चूर्णात् कृत्वा तां त्रिफलां पचेत् ॥१०९॥
द्विरष्टभागं पानीयमष्टभागावशेषितम्।
तेन चाष्टावशेषेण पचेल्लौहाभ्रगुग्गुलुम् ॥११०॥
घृततुल्यं शतावर्या रसं दत्त्वा तथा शुभम्।
प्रस्थं प्रस्थञ्च दुग्धस्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥१११॥
लौहमय्या पचेद्दर्व्या पात्रे चायसि मृन्मये।
ततः पाकविधिज्ञस्तं पाकसिद्धौ विनिक्षिपेत् ॥११२॥
विडङ्गं नागरं धान्यं गुडूचीसत्त्वजीरकम्।
पञ्चकोलं त्रिवृद्दन्ती त्रिफलैला च मुस्तकम् ॥११३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सुचूर्णितञ्च प्रत्येकमेषामार्द्धपलं क्षिपेत्।
रसस्य कज्जलीं कृत्वा ईषदुष्णे विमर्दयेत् ॥११४॥
सुरां सौवीरकं सीधुं क्षीरञ्चानु पिबेन्नरः।
उत्तार्य स्थापयेद्भाण्डे स्निग्धे चापि सुरक्षितम् ॥११५॥
घृतेन मधुना पश्चाद् मर्दयित्वाऽनुपानतः।
गुडूचीनागरैरण्डं क्वाथयित्वा जलं पिबेत् ॥११६॥
भक्षयेच्छुद्धदेहस्तु शुभेऽहनि सुरार्चकः।
आमवातमहाव्याधिविनाशायेष्टदेवता ॥११७॥
सन्धिवातं कटीशूलं कुक्षिशूलं सुदारुणम्।
जङ्घापदाङ्गुलीशूलं गृध्रसीं हन्ति पङ्गुताम् ॥११८॥
गुल्मशोथं पाण्डुरोगं सन्धिवातञ्च दुःसहम्।
आमवातगजेन्द्रस्य केशरी विधिनिर्मितः ॥११९॥

१. लौहभस्म २३० ग्राम, २. शुद्ध गुग्गुलु २३० ग्राम, ३. अभ्रकभस्म ११५ ग्राम, ४. शुद्ध पारद ११५ ग्राम, शुद्ध गन्धक ११५ ग्राम, ६. त्रिफलायवकुट ७०० ग्राम, ७. क्वाथार्थ जल ११.२८० लीटर, अवशेष १.४१० लीटर, गोदुग्ध ७५० मि.ली., शतावरीक्वाथ ७५० मि.ली., गोघृत ७५० ग्राम लें।

प्रक्षेप—१. विडङ्गचूर्ण, २. सोंठचूर्ण, ३. धनियाचूर्ण, ४. गुडूचीसत्त्व, ५. श्वेतजीराचूर्ण, ६. पीपरचूर्ण, ७. पिपरामूलचूर्ण, ८. चव्यचूर्ण, ९. चित्रकमूलचूर्ण, १०. सोंठचूर्ण, ११. त्रिवृतचूर्ण, १२. दन्तीमूलचूर्ण, १३. आमलाचूर्ण, १४. हरीतकीचूर्ण, १५. बहेड़ाचूर्ण, १६. छोटीइलायचीचूर्ण और १७. नागरमोथाचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को एक साथ मिलाकर अच्छी तरह से मर्दन कर कज्जली बनावें। पुनः एक छोटी कड़ाही में त्रिफला क्वाथ और गुग्गुलु डालकर मृदु अग्नि पर गुग्गुलु को द्रवित करें। ततः उसमें गोघृत, गोदुग्ध, शतावरीक्वाथ, अभ्रकभस्म एवं लोहभस्म डालकर मन्दाग्नि पर पाक करें तथा बड़ी चम्मच से मर्दन करते रहें। जब गाढ़ा होने लगे तब उसमें विडङ्गादि १७ द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर खूब देर तक तक मर्दन करें और जब कोष्ण रहे तो कज्जली मिला दें पुनः सिल पर पीसें और १-१ ग्राम की मात्रा में वटी बनाकर धूप में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। सामान्यतया वमन-विवेचन से शरीर-शोधन के बाद एवं उपास्य देवताओं को स्मरण कर औषधि का प्रयोग करें। प्रयोग करते समय इस पञ्चानन लौह को विषम मात्रा में मधु-घृत मिलाकर गुडूची, सोंठ एवं एरण्डमूलत्वक्क्वाथ से अथवा गरम पानी से प्रातः-सायं लें। यह 'पञ्चाननलौह' प्रयोग करने से आमवात रूपी भयंकर रोग को नष्ट करता है। अनुपान भेद से यह लौह अनेक रोगों—सन्धिवात, कटीशूल, भयानक कुक्षिशूल, जंघाशूल, पादशूल, अंगुलीशूल, गृध्रसी, पङ्गु, गुल्म, शोथ, पाण्डुरोग एवं असाध्य सन्धिवात रोगों का नाश करता है। यह आमवात रूपी गजेन्द्र के लिए सिंह समान है।

विमर्श—इसे चूर्ण रूप में भी रखा जाना चाहिए।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—गुडूची, सोंठ, एरण्डक्वाथ, रास्नासप्तक क्वाथ, उष्णजल से। **गन्ध**—सुगन्ध। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त-कटु। **उपयोग**—आमवात, सन्धिवात, सन्धिशूलादि में। इसका प्रयोग शरीर-शोधन के बाद करने से सद्यः लाभ करता है।

४५. अजमोदादि वटक (च.द.)

अजमोदमरिचपिप्पलिविडङ्गसुरदारुचित्रकशताह्वाः।
सैन्धवपिप्पलिमूलं भागा नवकस्य पलिकाः स्युः ॥
शुण्ठी दशपलिका स्यात् पलानि तावन्ति वृद्धदारस्य।
पथ्या पञ्चपलानि च सर्वाण्येकत्र सञ्चूर्ण्य ॥१२१॥
समगुडवटकानदतश्चूर्णं वाऽप्युष्णवारिणा पिबतः।
नश्यन्त्यामानिलजाः सर्वे रोगाः सुकष्टाश्च ॥१२२॥
विसूचिका प्रतितूनी हृद्रोगा गृध्रसी चोग्रा।
कटिवस्तिगुदस्फुटनं चैवास्थिजङ्घयो शीघ्रम् ॥१२३॥
श्वयथुस्तथाऽङ्गसन्धिषु ये चान्येऽप्यामवातसंभूताः।
सर्वे प्रयान्ति नाशं तम इव सूर्यांशुविध्वस्तम् ॥१२४॥

१. अजमोदाचूर्ण, २. मरिचचूर्ण, ३. पीपरचूर्ण, ४. विडङ्गचूर्ण, ५. देवदारुचूर्ण, ६. चित्रकमूलचूर्ण, ७. सौंफचूर्ण, ८. सैन्धवचूर्ण, ९. पिपलीमूलचूर्ण—प्रत्येक द्रव्य (१-१ पल) ४६ ग्राम लें; १०. सोंठचूर्ण (१० पल) ४६० ग्राम, ११. विधारामूलचूर्ण (१० पल) ४६० ग्राम, १२. हरीतकीचूर्ण (५ पल) २३० ग्राम और गुड़ सभी चूर्णों के बराबर—१५७० ग्राम लें। गुड़ की कड़ी चासनी कर उसमें उपर्युक्त द्रव्यों को मिलाकर १०-१० ग्राम की मोदक=वटी बना लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। गरम जल के अनुपान से सेवन करने पर सभी प्रकार के वातरोग, कुष्ठरोग, विसूचिका, प्रतितूनी, हृद्रोग, उग्र गृध्रसी, कटिपीड़ा, बस्तिपीड़ा, गुदपीड़ा, अस्थिपीड़ा, जंघा-पीड़ा, शोथ, सन्धिशोथ और आमवात रोग उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं जिस प्रकार सूर्योदय होने पर अन्धकार नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गरम पानी से। **गन्ध**—शुण्ठी जैसी गन्ध। **वर्ण**—गुड़ जैसा। **स्वाद**—मधुर एवं कटु। **उपयोग**—आमवात, सन्धिवात तथा अन्य वातविकारों में।

४६. आमगजसिंह (र.सा.सं.)

शुण्ठीचूर्णस्य प्रस्थैकं यमान्याश्च पलाष्टकम्।
जीरकस्य पलद्वन्दं धन्याकस्य पलद्वयम् ॥१२५॥
पलैकं शतपुष्पाया लवङ्गस्य पलं यथा।
टङ्कणस्य पलं ग्राह्यं मरिचस्य पलं भवेत् ॥१२६॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

त्रिवृतात्रिफलाक्षारपिप्पलीनां पलं पलम्।
एतेषां सर्वचूर्णानां खण्डं दद्याद् गुणत्रयम् ॥१२७॥
घृतेन गुडकीकृत्य मोदको मधुना कृताः।
शट्येलातेजपत्राणां कर्षं दद्याद् गुडत्वचः ॥१२८॥
चतुर्भिरधिवासोऽस्य तोलैकं खादयेद् बुधः।
शरीरं वीक्ष्य मात्राऽस्य युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥१२९॥
आमवातप्रशमनः कटीग्रहविनाशनः।
शूलघ्नो रक्तपित्तघ्नश्चाम्लपित्तविनाशनः ॥१३०॥
श्रीमता चन्द्रनाथेन गुरुणा भाषितं मयि।
श्रीमद्गहननाथोऽयं कृतवान् मोदकं शुभम् ॥१३१॥
गर्जत्वामगजेन्द्रोऽयमजीर्णवनमागतः।
यथा सिंहो वने हन्ति दन्तिनं बलिनं शुभम् ॥
तथाऽऽमवातकरिणं निहन्त्येव न संशयः ॥१३२॥

१. सोंठचूर्ण ७५० ग्राम; २. अजवायन ३७५ ग्राम; ३. जीराचूर्ण ९३ ग्राम, ४. धनियाँचूर्ण ९३ ग्राम, ५. सौंफचूर्ण ४६ ग्राम, ६. लवङ्गचूर्ण ४६ ग्राम, ७. शुद्ध सोहागा ४६ ग्राम, ८. मरिचचूर्ण ४६ ग्राम, ९. त्रिवृत् चूर्ण ४६ ग्राम, १०. आमलाचूर्ण १५ ग्राम, ११. हरीतकीचूर्ण १५ ग्राम, १२. बहेड़ाचूर्ण १५ ग्राम, १३. यवक्षार ४६ ग्राम, १४. पीपर ४६ ग्राम, १५. सभी चूर्णों से ३ गुना मिश्री ५०३७ ग्राम, १६. घृत यथावश्यक, १७. गन्धशटी १२ ग्राम, १८. छोटीइलायची १२ ग्राम, १९. तेजपत्ताचूर्ण १२ ग्राम, २०. दालचीनी १२ ग्राम, २१. मधु ४६ ग्राम (मधु एवं घृत विषम मात्रा में) लें। सर्वप्रथम मिश्री (शाकर) का चूर्ण करें और सभी चूर्णों को इन्हीं चूर्णों के साथ मिला दें। थोड़ा-थोड़ा घृत और ४६ ग्राम मधु डालकर हाथ से अच्छी तरह मर्दन करें। घृत उतना ही डालें जितने में यह मोदक जैसा बन सके। पुनः १०-१० ग्राम की गुटिका बनाकर काचपात्र में संग्रह करें। शरीर अथवा उम्र को देखकर थोड़ी-थोड़ी मात्रा बढ़ानी चाहिए। गरम पानी के साथ प्रातः-सायं १-१ वटक सेवन करने से आमवात, कटिग्रह, शूल, रक्तपित्त एवं अम्लपित्त रोगों का नाश करता है। श्रीमान् चन्द्रनाथ नामक गुरु ने श्रीमान् गहननाथ नामक शिष्य के प्रति इस लाभकारी आमगजेन्द्र मोदक को सर्वप्रथम कहा है तथा आचार्य श्री गहननाथ जी ने इसे सर्वप्रथम निर्माण किया है। अजीर्ण रूपी वन में आये हुए इस आमदोष रूपी गरजते हुए हाथी को सिंह रूपी यह आमगजेन्द्र सिंह मोदक नाश कर देता है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—उष्णजल या रास्नासप्तक क्वाथादि से। **गन्ध**—छोटीइलायची आदि जैसी। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—मधुर एवं कटु रस। **उपयोग**—आमवात एवं कटिग्रह में।

४७. रसोनपिण्ड (च.द.)

रसोनस्य पलशतं तिलस्य कुडवं यथा।
हिङ्गु त्रिकटुकं क्षारौ द्वौ पञ्चलवणानि च ॥१३३॥
शतपुष्पा तथा कुष्ठं पिप्पलीमूलचित्रकौ।
अजमोदा यमानी च धान्यकञ्चापि बुद्धिमान् ॥१३४॥
प्रत्येकन्तु पलञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
घृतभाण्डे दृढे चैतत्स्थापयेद् दिनषोडश ॥१३५॥
प्रक्षिप्य तैलमानीञ्च प्रस्थार्द्धं काञ्जिकस्य च।
खादेत्कर्षप्रमाणन्तु तोयं मद्यं पिबेदनु ॥१३६॥
आमवाते तथा वाते सर्वाङ्गैकाङ्गसंश्रये।
अपस्मारेऽनले मन्दे कासश्वासगरेषु च।
उन्मादे वातभग्ने च शूले जन्तोः प्रशस्यते ॥१३७॥

१. निस्तुष लशुन ४६७० ग्राम, २. निस्तुष तिल १८७ ग्राम, ३. शुद्ध हींग ४६ ग्राम, ४. सोंठचूर्ण ४६ ग्राम, ५. पीपरचूर्ण ४६ ग्राम, ६. मरिचचूर्ण ४६ ग्राम, ७. यवक्षार ४६ ग्राम, ८. सज्जीक्षार ४६ ग्राम, ९. सैन्धवलवण ४६ ग्राम, १०. सौवर्चललवण ४६ ग्राम, ११. सामुद्रलवण ४६ ग्राम, १२. विड्लवण ४६ ग्राम, १३. औद्भिद्लवण ४६ ग्राम, १४. सौंफ ४६ ग्राम, १५. कूठ ४६ ग्राम, १६. पिप्पलीमूल ४६ ग्राम, १७. चित्रकमूल ४६ ग्राम, १८. अजमोदाचूर्ण ४६ ग्राम, १९. अजवायनचूर्ण ४६ ग्राम, २०. धनियाँचूर्ण ४६ ग्राम, २१. तिलतैल ३७५ मि.ली. और २२. काञ्जी ३७५ मि.ली.। सर्वप्रथम लशुन को सिल पर पीस लें तथा तिल को कूटकर चूर्ण करें। अब एक पात्र में पिसे हुए लशुन, तिल, हींग चूर्ण (घृतभर्जित हींग चूर्ण) तथा सोंठ आदि चूर्णों को अच्छी तरह हाथ से मसलकर मिलावें। पुनः तिलतैल एवं काञ्जी मिलाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे १२ ग्राम की मात्रा में गरम पानी से खाकर ऊपर से थोड़ा मद्यपान करें। इसके सेवन से आमवात, वातरोग, सर्वाङ्ग या एकाङ्गवात, अपस्मार, मन्दाग्नि, कास, श्वास, उन्माद, वातभग्न और शूल रोगों का नाश होता है। अर्थात् इन रोगों में इस औषधि की प्रशंसा की जाती है।

मात्रा—१० ग्राम। **अनुपान**—गरम पानी एवं मद्य से। **गन्ध**—तीव्ररसोनगन्धी। **वर्ण**—पाण्डुवर्ण। **स्वाद**—कटु-तीक्ष्ण लशुन जैसा। **उपयोग**—आमवात, मन्दाग्नि एवं सर्वाङ्ग-वात में।

४८. महारसोनपिण्ड

रसोनस्य पलशतं तदर्धं निस्तुषात्तिलात्।
पात्रं गव्यस्य तक्रस्य पिष्ट्वा चैतानि संक्षिपेत् ॥१३८॥
त्रिकटु धान्यकं चव्यं चित्रकं गजपिप्पली।
अजमोदा त्वगेला च ग्रन्थिकञ्च पलांशिकम् ॥१३९॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

शर्करायाः पलान्यष्टौ पलांशं मरिचस्य च।
कुष्ठाजाज्योश्च चत्वारि मधुनः कुडवं तथा ॥१४०॥
आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्पिषोऽष्टौ पलानि च।
तिलतैलस्य चत्वारि शुक्तकस्यापि विंशतिः ॥१४१॥
सिद्धार्थकस्य चत्वारि राजिकायास्तथैव च।
कर्षप्रमाणं दातव्यं हिङ्गु लवणपञ्चकम् ॥१४२॥
एकीकृत्य दृढे कुम्भे धान्यराशौ निधापयेत्।
द्वादशाहात्समुद्धृत्य प्रातः खाद्यं यथाबलम् ॥१४३॥
जीर्णे यथेप्सितं भोज्यं दधिपिष्टान्नवर्जितम्।
एकमासप्रयोगेण सर्वान् व्याधीन् व्यपोहति ॥१४४॥
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्।
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव प्रमेहानपि विंशतिम् ॥१४५॥
अर्शांसि षट्प्रकाराणि गुल्मं पञ्चविधं तथा।
अष्टादशविधं कुष्ठमेकादशविधं क्षयम् ॥१४६॥
श्वयथुं योनिशूलञ्च सर्वमाशु विनाशयेत्।
क्षतसन्ध्यस्थिभग्नानां सन्धानकरणः परः ॥१४७॥
दृष्टेर्बलकरो हृद्य आयुष्यो बलवर्द्धनः।
महारसोनपिण्डोऽयमामवातकुलान्तकः ॥१४८॥

१. निस्तुष लशुन ४६७० ग्राम, २. निस्तुष तिल २३३५ ग्राम, ३. गाय का तक्र ३ लीटर; ४. सोंठचूर्ण, ५. मरिचचूर्ण, ६. पीपरचूर्ण, ७. धनियाँचूर्ण, ८. चव्यचूर्ण, ९. चित्रकमूलचूर्ण, १०. गजपीपरचूर्ण, ११. अजमोदाचूर्ण, १२. दालचीनी चूर्ण, १३. छोटीइलायचीचूर्ण, १४. पिपरामूलचूर्ण —ये ११ द्रव्य प्रत्येक ४६-४६ ग्राम लें। १५. चीनी ३७५ ग्राम, १६. मरिचचूर्ण ४६ ग्राम, १७. कूठचूर्ण १८७ ग्राम, १८. जीराचूर्ण १८७ ग्राम, १९. मधु १८७ ग्राम, २०. आर्द्रक १८७ ग्राम, २१. गोघृत ३७५ ग्राम, २२. तिलतैल १८७ मि.ली., २३. काञ्जी ९२५ मि.ली., २४. सरसोंतैल १८७ मि.ली., २५. राईतैल १८७ मि.ली., २६. घृत भर्जित हींग १२ ग्राम, २७. सैन्धवलवण १२ ग्राम, २८. सौवर्चललवण १२ ग्राम, २९. सामुद्रलवण १२ ग्राम, ३०. विडलवण १२ ग्राम तथा ३१. औद्भिद्लवण १२ ग्राम लें। सर्वप्रथम इमामदस्ते में लशुन को कूटें तथा अलग से आर्द्रक एवं धोई हुई तिल को भी कूटें। पुनः एक बड़ी मिट्टी की हाँडी में सभी द्रव्यों तक्र, काञ्जी, तैल आदि को अच्छी तरह से मिलाकर रखें और उस हाँडी का मुख ढक्कन से बन्द करें तथा उस औषधि पूरित एवं मुख मुद्रित हाँडी को धान के ढेर में ११ दिनों तक रख दें। १२वें दिन हाँडी को निकालकर धूप में २-४ दिन रखें और ६-१२ ग्राम की मात्रा में बलानुसार सेवन करें। पहले का खाया हुआ अन्न तथा औषध के जीर्ण हो जाने पर दही एवं पिसे हुए अन्न से निर्मित रोटी, पूड़ी, बड़ा आदि के बिना भोजन करें। अर्थात् इसके सेवनकाल में दही एवं पिष्टान्न वर्जित है। इस औषधि का १ महीने तक प्रयोग करने के बाद सभी तरह के रोग नष्ट हो जाते हैं। ८० प्रकार के वात रोग, ४० प्रकार के पित्त रोग, २० प्रकार के कफ रोग, २० प्रकार के प्रमेह रोग, ६ प्रकार के अर्श, ५ प्रकार के गुल्म, १८ प्रकार के कुष्ठ, ११ प्रकार के राजयक्ष्मा तथा शोथ, योनिशूल आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। क्षत रोग, सन्धिभग्न, अस्थिभग्न का सन्धान करती है। दृष्टि को बढ़ाती है। हृद्य है, आयुष्य है, बल्य है। यह 'महा-रसोनपिण्ड' आमवात रोग के कुल को समूल नष्ट कर देता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम तक। **अनुपान**—गरम पानी से। **गन्ध**—रसोन की तीव्र गन्धयुक्त। **वर्ण**—किञ्चित् पीताभ। **स्वाद**—तीव्र रसोन जैसा अम्ल-लवणीय। **उपयोग**—आमवात तथा वात एवं कफ रोग में।

४९. वातारि गुग्गुलु

वातारितैलसंयुक्तं गन्धकं पुरसंयुतम्।
फलत्रययुतं कृत्वा पिट्टयित्वा चिरं रुजि ॥१४९॥
भक्षयेत्प्रत्यहं प्रातरुष्णतोयानुपानतः।
दिने दिने प्रयोक्तव्यं मासमेकं निरन्तरम् ॥१५०॥
सामवातं कटीशूलं गृधसीं खञ्जपङ्गुताम्।
वातरक्तं सशोथञ्च सदाहं क्रोष्टुशीर्षकम् ॥
शमयेद्बहुशो दृष्टमपि वैद्यविवर्जितम् ॥१५१॥

१. एरण्डतैल, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध गुग्गुलु, ४. आमलाचूर्ण, ५. हरीतकीचूर्ण और ६. बहेड़ाचूर्ण—समभाग लें। एक इमामदस्ते में पहले गुग्गुलु को कूटें। चूर्ण होने पर उसमें अन्य ५ द्रव्य मिलाकर पुनः कूटें। जब सभी द्रव्य आपस में अच्छी तरह से मिलकर एक जैसे हो जायें तो १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखा लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। १-२ ग्राम की मात्रा में प्रातःकाल गरम पानी से १ महीना तक सेवन करने पर आमवात, कटीशूल, गृध्रसी, खञ्ज, पङ्गु, वातरक्त, शोथ तथा दाहयुक्त क्रोष्टुशीर्ष आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। यह 'वातारिगुग्गुलु' वैद्यों द्वारा असाध्य कहकर त्यागे हुए रोगियों को भी रोगमुक्त करता है।

मात्रा—१ से २ ग्राम। **अनुपान**—गरम पानी। **गन्ध**—गुग्गुलु एवं गन्धकगन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त-कषाय। **उपयोग**—आमवात एवं वात रोगों में।

५०. योगराजगुग्गुलु (च.द.)

चित्रकं पिप्पलीमूलं यमानी कारवी तथा।
विडङ्गान्यजमोदा च जीरकं सुरदारु च ॥१५२॥
चव्येला सैन्धवं कुष्ठं रास्नागोक्षुरधान्यकम्।
त्रिफला मुस्तकं व्योषं त्वगुशीरं यवाग्रजम् ॥१५३॥

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

तालीशपत्रं पत्रञ्च श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रन्तु गुग्गुलुम् ॥१५४॥
सम्मर्द्य सर्पिषा गाढं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
अतो मात्रां प्रयुञ्जीत यथेष्टाहारवानपि ॥१५५॥
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः।
आमवाताढ्यवातादीन् कृमिदुष्टव्रणानि च ॥१५६॥
प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत्।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं तेजोवृद्धिं बलं तथा ॥
वातरोगाञ् जयत्येष सन्धिमज्जागतानपि ॥१५७॥

१. चित्रकमूल, २. पिप्पलीमूल, ३. अजवायन, ४. कालाजीरा (कारवी), ५. वायविडङ्ग, ६. अजमोदा, ७. श्वेतजीरा, ८. देवदारु, ९. चव्य, १०. छोटी इलायची, ११. सैन्धव, १२. कूठ, १३. रास्ना, १४. गोक्षुरबीज, १५. धनियाँ, १६. आमला, १७. हरीतकी, १८. बहेड़ा, १९. नागरमोथा, २०. सोंठ, २१. पीपर, २२. मरिच, २३. दालचीनी, २४. खस, २५. यवक्षार, २६. तालीशपत्र तथा २७. तेजपत्ता—ये काष्ठौषधियाँ प्रत्येक १००-१०० ग्राम लें और सभी के बराबर (२७०० ग्राम) शुद्ध गुग्गुलु लें। उपर्युक्त सभी २७ द्रव्यों को कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। तत्पश्चात् एक लोहे की कड़ाही में गुग्गुलु एवं थोड़ा जल मिलाकर आग पर गरम करें और चम्मच से चलाते रहें, जब गुग्गुलु पिघल जाय तो कड़ाही को चूल्हे से नीचे उतार लें और उपर्युक्त २७ द्रव्यों के चूर्ण मिलावें और थोड़ा घी देकर कूटें और १-१ ग्राम की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे 'योगराजगुगुग्लु' कहते हैं। यह योग वातविकार के लिए अमृत-तुल्य है। इसके सेवन से आमवात, आढ्यवात, कृमि, दुष्टव्रण, गुल्म, प्लीहारोग, उदररोग, आनाह एवं अर्शरोग का नाश करता है। इससे अग्नि प्रदीप्त होती है, शारीरिक तेज और बल को बढ़ाता है, सन्धि एवं मज्जागत वात का नाश करता है।

विमर्श—आजकल गुग्गुलु बनाते समय घी डालकर कूटने की परिपाटी नहीं है। सर्वत्र पिघले गुग्गुलु में चूर्ण डालकर बड़ी चम्मच से खूब मिलाते हैं और हाथ में थोड़ा तैल या घृत लगाकर छोटा-छोटा पिण्ड (२५०-२५० ग्राम) बना लेते हैं और उसे अण्डाकार लम्बा बनाकर स्टिक मेकिंग मशीन में डालकर हाथ से घुमाकर वर्त्ति बनाते हैं और उस वर्त्ति को कटिंग मशीन में डालकर वटी जैसा कटिंग करा लेते हैं। पुनः पिल पालिशिंग मशीन में घुमाकर गोल एवं चमकदार वटी बना लेते हैं। इसमें थोड़ा तैल छिड़कना पड़ता है। फिर सुखाकर संग्रह कर लेते हैं। बाजार में मिलने वाली ऐसी गुग्गुलु की गोलियाँ २-३ रत्ती की ही मिलती हैं। किन्तु प्रयोग में इसकी मात्रा ३ वटी १ बार में देना चाहिए। **मात्रा**—$\frac{१}{२}$ से १ ग्राम तक। **अनुपान**—रास्नासप्तक क्वाथ या गरम जल से। **गन्ध**—मिश्रित औषधि गुग्गुलुगन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात, सन्धिवात तथा वातविकार।

५१. बृहत् योगराजगुग्गुलु

त्रिकटु त्रिफला पाठा शताह्वा रजनीद्वयम्।
अजमोदा वचा हिङ्गु हबुषा हस्तिपिप्पली ॥१५८॥
उपकुञ्ची शटी धान्यं विडं सौवर्चलं तथा।
सैन्धवं पिप्पलीमूलं त्वगेलापत्रकेशरम् ॥१५९॥
फणिज्झकञ्च लौहञ्च सर्जकञ्च त्रिकण्टकम्।
रास्ना चातिविषाशुण्ठी यवक्षाराम्लवेतसम् ॥१६०॥
चित्रकं पुष्करं चव्यं वृक्षाम्लं दाडिमं रुबु।
अश्वगन्धा त्रिवृद्दन्ती बदरं देवदारु च ॥१६१॥
हरिद्रा कटुका मूर्वा त्रायमाणा दुरालभा।
विडङ्गं मृतवङ्गञ्च यमानी वासकाभ्रकम् ॥१६२॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
शोधितं गुग्गुलुञ्चैव सर्वचूर्णसमं नयेत् ॥१६३॥
घृतेन पिष्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः ॥१६४॥
एकाङ्गं शुष्यते येषां कुष्ठं वाऽपि क्षतोदरम्।
पादौ विस्तारितौ येषां येषां वा गृध्रसीग्रहः ॥१६५॥
सन्धिवातं क्रोष्टुशीर्षं वातं सर्वशरीरगम्।
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥१६६॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव हन्त्यवश्यं न संशयः।
अयं बृहद्योगराजगुग्गुलुः सर्ववातहा ॥१६७॥

१. सोंठ, २. पीपर, ३. मरिच, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. पाठा, ८. सौंफ, ९. हल्दी, १०. दारुहल्दी, ११. अजमोदा, १२. वच, १३. हींग, १४. हाऊबेर, १५. गजपीपर, १६. कालाजीरा, १७. कचूर, १८. धनियाँ, १९. विडलवण, २०. सौवर्चललवण, २१. सैन्धवलवण, २२. पिपरामूल, २३. छोटीइलायची, २४. दालचीनी, २५. तेजपत्ता, २६. नागकेशर, २७. मरुआदाना (तुलसी-भेद) २८. लौहभस्म, २९. सर्जरस, ३०. गोक्षुरबीज, ३१. रास्ना, ३२. असीस, ३३. सोंठ, ३४. यवक्षार, ३५. अम्लवेतस, ३६. चित्रकमूल, ३७. पुष्करमूल, ३८. चव्य ३९. वृक्षाम्ल (कोकम) ४०. अनारदाना, ४१. एरण्डमूलत्वक्, ४२. अश्वगन्धा, ४३. निशोथ, ४४. दन्तीमूल, ४५. बेर, ४६. देवदारु, ४७. हल्दी, ४८. कुटकी, ४९. मूर्वा, ५०. त्रायमाण, ५१. यवासा, ५२. विडङ्ग, ५३. वङ्गभस्म, ५४. अजवायन, ५५. वासामूलत्वक् और ५६. अभ्रकभस्म—ये ५६ द्रव्य प्रत्येक १००-१०० ग्राम लें तथा ५७. शुद्ध गुग्गुलु ५६०० ग्राम लेना चाहिए अर्थात्

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सभी द्रव्यों के बराबर गुग्गुलु लें। इसमें से भस्मों को पृथक् करें और काष्ठौषधों तथा लवणों को कूट-पीसकर सूक्ष्म चूर्ण कर लें। इसके बाद एक छोटी कड़ाही में शुद्ध गुग्गुलु और थोड़ा जल (२ ली.) मिलाकर आग पर पकावें और बड़ी चम्मच से चलाते रहें। धीरे-धीरे गुग्गुलु द्रवित होने लगेगा। जब सब गुग्गुलु पिघल जाय तो कड़ाही को चूल्हे से नीचे उतारकर सर्वप्रथम उस गुग्गुलु में भस्मों को प्रक्षिप्त कर मिलावें। ततः काष्ठौषधिचूर्णों को प्रक्षिप्त कर खूब देर तक अच्छी तरह मिलावें। पुनः हाथ में थोड़ा घी लगाकर अण्डाकृति लम्बा पिण्ड २५०-२५० ग्राम का बना लें। उस पिण्ड को मशीन में डालकर वर्ति बनावें। उन वर्तियों को काटकर वटी जैसा बनावें। पुनः उन वटियों को पालिशिंग मशीन में रखकर गोल एवं चमकदार पालिश कर लें। जहाँ मशीन नहीं हो वहाँ हाथ से ८-८ रत्ती की वटी बना लें तथा छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें।

इसे ४ से ८ रत्ती की मात्रा में उष्णोदक के साथ प्रयोग करें। इसका प्रयोग—आमवात से भग्न (लाचार) हुए रोगियों में, कटिभग्न, एकाङ्गशोष, कुष्ठ, क्षतकुष्ठ, वात के कारण पाद विस्तार (दोनों पैरों का मुड़ना बन्द होना), गृध्रसी, सन्धिवात, क्रोष्टुशीर्ष, सम्पूर्ण शरीरगत वात, ८० प्रकार के वातरोग, ४० प्रकार के पित्तरोग, २० प्रकार के कफ रोगों का नाश करता है। इसमें सन्देह नहीं है। यह 'बृहद्योगराजगुग्गुलु' सभी वात विकारों का नाश करता है।

मात्रा—५०० मि.ग्रा. से १ ग्राम तक। **अनुपान**—रास्ना-सप्तक क्वाथ या गरम पानी से। **गन्ध**—मिश्रित औषधि गन्धी। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात, सन्धिवात, सर्वाङ्ग वात, क्रोष्टुशीर्ष तथा कुष्ठ आदि में।

५२. व्याधिशार्दूलगुग्गुलु

त्रिफलायाः पलान्यष्टौ प्रत्येकं बीजवर्जितम्।
कटुतैलं द्विपलं च गुग्गुलुं दोलाशोधितम् ॥१६८॥
सार्द्धाढकजले पक्त्वा पादशेषं पुनः पचेत्।
चूर्णीकृत्य क्षिपेत्सिद्धे पृथक्कर्षार्द्धसम्मितम् ॥१६९॥
त्रिकटुत्रिफलामुस्तं विडङ्गामलकानि च।
गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्ती चवीशूरणमाणकम् ॥१७०॥
सार्द्धशतद्वयं दद्याच्चूर्णितं कानकं फलम्।
रसगन्धकलौहाभ्रं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥१७१॥
ततो माषद्वयं जग्ध्वा प्रातरुष्णोदकं पिबेत्।
अग्निं च कुरुते दीप्तं वयोबलविवर्द्धनम् ॥१७२॥
अर्शोऽश्मरीमूत्रकृच्छ्रं शिरोवाताम्लपित्तनुत्।
कासं पञ्चविधं श्वासं दाहोदरभगन्दरम् ॥१७३॥
शोथान्त्रवृद्धितिमिरं श्लीपदं प्लीहकामलम्।
शूलगुल्मक्षयं कुष्ठं सपाण्डुं विषमज्वरम् ॥१७४॥
जानुजङ्घासुप्तपादगतं वातं कटीग्रहम्।
हन्ति चान्यान्कफोत्थांश्च आमवातं विशेषतः ॥
व्याधिशार्दूलको नाम्ना गुग्गुलु परिकीर्त्तितः ॥१७५॥

१. आमला १२५ ग्राम, २. हरीतकी १२५ ग्राम, ३. बहेड़ा १२५ ग्राम (गुठली बिना), ४. सरसों तैल ९३ मि.ली., ५. शुद्ध गुग्गुलु ९३ ग्राम, क्वाथार्थ जल ४५०० मि.ली., अवशेष क्वाथ—११२५ मि.ली., ६. सोंठचूर्ण, ७. पीपरचूर्ण, ८. मरिचचूर्ण, ९. आमलाचूर्ण, १०. हरीतकीचूर्ण, ११. बहेड़ा-चूर्ण, १२. नागरमोथाचूर्ण, १३. वायविडङ्गचूर्ण, १४. आमलाचूर्ण, १५. गुडूचीचूर्ण, १६. चित्रकचूर्ण, १७. निशोथचूर्ण, १८. दन्तीमूलचूर्ण, १९. चव्यचूर्ण, २०. सूरणकन्दचूर्ण तथा २१. मानकन्दचूर्ण—सोंठचूर्ण से मानकन्द चूर्ण तक के सभी १६ द्रव्य प्रक्षेप के हैं, इन्हें प्रत्येक ६-६ ग्राम लें। २२. शुद्ध जयपालबीज २५० नग (गिनकर लेना है), २३. शुद्ध पारद, २४. शुद्ध गन्धक, २४. लौहभस्म और २६. अभ्रकभस्म—ये चारों द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें। सर्वप्रथम एक खरल में पारद एवं गन्धक को खरल कर अच्छी कज्जली बना लें। ततः एक हाँडी में त्रिफला यवकुट ३७५ ग्राम और जल ४५०० मि.ली. डालकर क्वाथ करें। जब चौथाई क्वाथ शेष रहे तो उतारकर छान लें। अब लोहे की एक छोटी कड़ाही में उपर्युक्त त्रिफलाक्वाथ एवं गुग्गुलु और सरसों तैल मिलाकर आग पर गरम करें। जब शुद्ध गुग्गुलु उसमें घुल जाय और क्वाथ भी थोड़ा शेष रहे अर्थात् लप्सी जैसा हो जाय तो चूल्हे से नीचे उतारकर त्रिकटु से मानकन्द तक के सभी चूर्णों को उस द्रवित गुग्गुलु की कड़ाही में छिड़ककर अच्छी तरह से चला दें। ततः शुद्ध जयपालबीजचूर्ण भी उसी में छिड़क दें। ततः कज्जली एवं भस्मादि भी मिलाकर उस गुग्गलु में मिला दें और बड़ी चम्मच से अच्छी तरह से मिलाने के बाद २५० मि.ग्रा. की वटी बना लें और छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रहीत करें। अग्निबल एवं शारीरिक बलानुसार ४ से८ रत्ती की मात्रा में उष्णोदक से सेवन करें।

इसके सेवन से अग्नि प्रदीप्त होती है, बल की वृद्धि होती है। अर्श, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, शिरोवात, अम्लपित्त, ५ प्रकार के कास, दाह, उदररोग, भगन्दर, शोथ, अन्त्रवृद्धि, तिमिर, श्लीपद, प्लीहा, कामला, गुल्म, शूल, क्षय, कुष्ठ, पाण्डु, विषम ज्वर, जानु-जंघा-हस्त-पादगत वातरोग, कटीग्रह और कफज रोगों को यह 'व्याधिशार्दूलगुग्गुलु' नाश करता है। विशेषकर आमवात को यह गुग्गुलु नष्ट करता है।

मात्रा—आधे से १ ग्राम। **अनुपान**—गरम पानी से। **गन्ध**—काष्ठौषधियों के मिश्रित गन्ध। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—विशेष रूप से आमवात में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५३. सिंहनादगुग्गुलु-१ (च.द.)

कुट्टितां गुग्गुलोर्माणीं कटुतैलपलाष्टकम्।
प्रत्येकं त्रिफलाप्रस्थौ सार्द्धद्रोणे जले पचेत् ॥१७६॥
पादशेषञ्च पूतञ्च पुनरेतद्विमिश्रयेत्।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडङ्गामरदारुकम् ॥१७७॥
गुडूच्यग्निवृद्दन्तीचवीशूरणमाणकम्।
पारदं गन्धकञ्चैव प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ॥१७८॥
सहस्रं कानकफलं सिद्धे सञ्चूर्ण्य निक्षिपेत्।
ततो रक्तिद्वयं जग्ध्वा पिबेत्तप्तजलादिकम् ॥१७९॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं वडवानलसन्निभम्।
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलं सुविपुलं तथा ॥१८०॥
आमवातं शिरोवातं सन्धिवातं सुदारुणम्।
जानुजङ्घाश्रितं वातं सकटीग्रहमेव च ॥१८१॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च भग्नञ्च तिमिरोदरे।
अम्लपित्तं तथा कुष्ठं प्रमेहं गुदनिर्गमम् ॥१८२॥
कासं पञ्चविधं श्वासं क्षयञ्च विषमज्वरम्।
प्लीहानं श्लीपदं गुल्मं पाण्डुरोगं सकामलम्॥१८३॥
शोथान्त्रवृद्धिं शूलानि गुदजानि विनाशयेत्।
मेदःकफामसङ्घातं व्याधिवारणदर्पहा॥
सिंहनाद इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥१८४॥

१. शुद्ध गुग्गुलु ३७५ ग्राम, २. सरसोंतैल ३७५ मि.ली., ३. आमला ७५० ग्राम, ४. हरीतकी ७५० ग्राम, ५. बहेड़ा ७५० ग्राम तथा क्वाथार्थ जल १८ ली. लें। इन्हें एक साथ बड़े स्टेनलेसस्टील के पात्र में रखकर चूल्हे पर मन्दाग्नि से पकावें। जब चौथाई शेष रहे तो इन्हें कपड़े से छान लें और पुनः आग पर पकावें तथा निम्नलिखित द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलावें—१. सोंठ, २. पीपर, ३. मरिच, ४. आमला, ५. हरीतकी, ६. बहेड़ा, ७. नागरमोथा, ८. वायविडङ्ग, ९. देवदारु, १०. गुडूची, ११. चित्रकमूल, १२. निशोथ, १३. दन्तीमूल, १४. चव्य, १५. सूरणकन्द, १६. मानकन्द, १६. शुद्ध पारद और १८. शुद्ध गन्धक—प्रत्येक द्रव्य २३-२३ ग्राम लें तथा शुद्ध जयपालबीज १००० नग गिनकर शुद्ध कर लें। सर्वप्रथम पारद एवं गन्धक की कज्जली बना लें। उपर्युक्त त्रिकटु-त्रिफलादि सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण तथा शुद्धजयपालबीज चूर्ण कर (उपर्युक्त) गुग्गुलु-त्रिफला क्वाथ द्रव में मिलाकर आग पर थोड़ी देर तक और पकावें। गाढ़ा होने पर २-२ रत्ती (२५०मि.ग्रा.) की मात्रा में वटी बनाकर छाया में सुखा लें। अथवा यदि वटी नहीं बन सके तो काचपात्र में पिण्डरूप में ही रहने दें। इसे १-१ वटी गरम जल से सेवन करने पर वड़वानल जैसी अग्नि प्रदीप्त करता है। यह धातु एवं वय की वृद्धि करता है और बल कारक है। यह औषध आमवात, शिरोवात, भयंकर सन्धिवात, जानु एवं जंघाश्रित वात, कटीग्रह, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, अस्थिभग्न, तिमिर, उदररोग, अम्लपित्त, कुष्ठ, प्रमेह, गुदनिर्गम, ५ प्रकार के कास, श्वास, क्षय, विषमज्वर, प्लीहारोग, श्लीपद, गुल्म, पाण्डु, कामला, शोथ, अन्त्रवृद्धि, शूल और अर्श रोगों का नाश करता है। यह 'सिंहनाद गुग्गुलु' अमृत जैसा गुणकारी है तथा मेद, कफ और आम के संघात रूपी व्याधियों का नाश करता है।

मात्रा—२५० मि.ग्रा.। **अनुपान**—उष्ण जल से। **गन्ध**—काष्ठौषधियों के मिश्रित गन्धयुक्त, सरसों तल की गन्ध। **वर्ण**—कृष्ण। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात, सन्धिवात एवं वातविकार।

५४. सिंहनादगुग्गुलु-२ (च.द.)

पलत्रयं कषायस्य त्रिफलायाः सुचूर्णितम्।
सौगन्धिकपलञ्चैकं कौशिकस्य पलन्तथा ॥१८५॥
कुडवं चित्रतैलस्य सर्वमादाय यत्नतः।
पाचयेत् पाकविद्वैद्यः पात्रे लोहमये दृढे ॥१८६॥
हन्ति वातं तथा पित्तं श्लेष्माणं खञ्चपङ्गुताम्।
श्वासं सुदुर्जयं हन्ति कासं पञ्चविधन्तथा ॥१८७॥
कुष्ठानि वातरक्तानि गुल्मशूलोदराणि च।
आमवातं जयेदेतदपि वैद्यविवर्जितम्॥१८८॥
एतदभ्यासयोगेन जरापलितनाशनम्।
सर्पिस्तैलवसोपेतमश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ॥१८९॥
सिंहनाद इति ख्यातो रोगवारणदर्पहा।
वह्निवृद्धिकरः पुंसां भाषितो दण्डपाणिना ॥१९०॥

त्रिफलाक्वाथ १४० मि.ली.। शुद्ध गन्धक ४६ ग्राम, शुद्ध गुग्गुलु ४६ ग्राम और एरण्डतैल १८७ ग्राम लें। इन चारों औषधों को एक साथ लोहे की छोटी कड़ाही में मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब गाढ़ा हो जाय तो काचपात्र में रखकर संग्रह करें। इसे १ ग्राम की मात्रा में गरम पानी से प्रयोग करने पर वातज-पित्तज-कफज रोग, खञ्ज, पङ्गु, दुर्जय श्वास, ५ प्रकार के कास, कुष्ठ, वातरक्त, गुल्म, शूल, उदररोग, वैद्यों द्वारा त्यक्त आमवातरोग नष्ट हो जाते हैं। इस औषधि के अभ्यास से जरा एवं पलित रोग नष्ट हो जाते हैं। इस गुग्गुलु के अभ्यास काल में घृत, तैल, वसा को शालिचावल के भात में मिलाकर खाना चाहिए। इस 'सिंहनादगुग्गुल' नामक औषधि का प्रयोग आचार्य भैरव (दण्डपाणि) द्वारा किया गया है। यह मनुष्यों के लिए अग्निवर्धन का कार्य करता है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—उष्णजल से। **गन्ध**—एरण्डतैल गन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात, सन्धिवात एवं अर्श में।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

५५. शिवागुग्गुलु (र.सा.सं.)

शिवाबिभीतामलकीफलानां
प्रत्येकशो मुष्टिचतुष्टयञ्च ।
तोयाढके तत्क्वथितं विधाय
पादावशेषे त्ववतारणीयम् ॥१९१॥
एरण्डतैलं द्विपलं निधाय
पिचुत्रयं गन्धकनामकस्य ।
पचेत् पुरस्यात्र पलद्वयञ्च
पाकावशेषे च विचूर्ण्य दद्यात् ॥१९२॥
रास्ना विडङ्गं मरिचं कणा च
दन्तीजटानागरदेवदारु ।
प्रत्येकशः कोलमितं तथैषां
विचूर्ण्य निक्षिप्य नियोजयेच्च ॥१९३॥
आमवाते कटीशूले गृध्रसीक्रोष्टुशीर्षके ।
न चान्यदस्ति भैषज्यं यथाऽयं गुग्गुलुः स्मृतः ॥१९४॥

१. हरीतकी १८७ ग्राम, २. बहेड़ा १८७ ग्राम, ३. आमला १८७ ग्राम, जल ३ लीटर—अवशेष क्वाथ चौथाई ७५० मि.ली.; ४. एरण्डतैल ९३ ग्राम, ५. शुद्ध गन्धक ३५ ग्राम, ६. शुद्ध गुग्गुलु ९३ ग्राम, ७. रास्ना ६ ग्राम, ८. वायविडङ्ग ६ ग्राम, ९. मरिच ६ ग्राम, १०. पीपर ६ ग्राम, ११. दन्तीमूल ६ ग्राम, १२. जटामांसी ६ ग्राम, १३. सोंठ ६ ग्राम और देवदारु ६ ग्राम लेना चाहिए। उपर्युक्त ७५० मि.ली. त्रिफलाक्वाथ में एरण्ड तैल, शुद्ध गन्धक एवं शुद्ध गुग्गुल मिलाकर लोहे की एक छोटी कड़ाही में मन्दाग्नि पर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें रास्ना आदि ८ द्रव्यों का चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह मिलाकर १-१ ग्राम की वटी बनाकर छाया में सुखाकर काचपात्र में संग्रह करें। १-१ ग्राम की मात्रा में उष्णजल से प्रयोग करने पर आमवात, कटीशूल, गृध्रसी, क्रोष्टुशीर्ष आदि रोगों का नाश करने के लिए इस 'शिवा गुग्गुलु' से अच्छी कोई दूसरी औषधि नहीं है।

मात्रा—१ ग्राम। **अनुपान**—उष्णजल। **गन्ध**—एरण्डतैल गन्धी। **वर्ण**—कृष्णाभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात, कटीशूल एवं सन्धिवात में।

५६. नागरघृत (च.द.)

नागरक्वाथकल्काभ्यां घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
चतुर्गुणेन तेनाथ केवलेनोदकेन वा ॥१९५॥
वातश्लेष्मप्रशमनमग्निसन्दीपनं परम् ।
नागरं घृतमित्युक्तं कट्यामशूलनाशनम् ॥१९६॥

गोघृत ७५० ग्राम, सोंठक्वाथ ३ लीटर तथा सोंठकल्क १८७ ग्राम लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः उस घृत में सोंठकल्क और सोंठक्वाथ उपर्युक्त मात्रा में डालकर मृदु अग्नि में पाक करें। सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल मिलाकर पुनः पाक करें। जलीयांश सूखने पर स्नेहपाक की परीक्षा कर घृत को चूल्हे से उतार लें और कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में इस घृत को गरम गोदुग्ध के साथ पान करें तो वात एवं कफ का शमन करता है। यह परम अग्निदीपन है। कटी एवं आमशूल नाशक है। इसे नागरघृत या शुण्ठीघृत कहते हैं।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृतगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—अग्निदीपक एवं आमपाचक है।

५७. शृङ्गबेरादि घृत

शृङ्गबेरयवक्षारपिप्पलीमूलपिप्पलीः ।
पिष्ट्वा विपाचयेत् सर्पिरारनालं चतुर्गुणम् ॥१९७॥
शूलं विबन्धमानाहमामवातं कटीग्रहम् ।
नाशयेद् ग्रहणीदोषमग्निसन्दीपनं परम् ॥१९८॥

१. आर्द्रक ६२ ग्राम, २. यवक्षार ६२ ग्राम, ३. पिपरामूल ६२ ग्राम, ४. पीपर ६२ ग्राम, ५. गोघृत १ किलो तथा काञ्जी ४ लीटर लें। आर्द्रक आदि चारों द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन कर लें। ततः उसमें कल्क और काञ्जी मिलाकर मन्दाग्नि में पाक करें। काञ्जी थोड़ा- थोड़ा करके डालना चाहिए। क्योंकि ४ किलो काञ्जी एक साथ डालने से अधिक उफान होगा। अतः १-१ लीटर धीरे-धीरे काञ्जी डालें। काञ्जी सूखने पर ४ लीटर जल देकर सम्यक् पाक करें। स्नेहपाक के सम्यक् परीक्षोपरान्त चूल्हे से उतार लें और गरम-गरम घृत को कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रह करें। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में इस 'शृङ्गवेरादिघृत' को गरम गोदुग्ध से सेवन करने से शूल, विबन्ध, आनाह, आमवात, कटीग्रह एवं ग्रहणी विकार का नाश करता है। इस घृत से अग्नि प्रदीप्त होती है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—शुद्ध घृत जैसी महक। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु-अम्ल। **उपयोग**—आमवात, आनाह, कटीग्रह, ग्रहणीदोष नाशक एवं अग्निवर्धक है।

५८. काञ्जीषट्पल घृत (च.द.)

हिङ्गु त्रिकटुकं चव्यं मणिमन्थं तथैव च ।
कल्कान्कृत्वा च पलिकान् घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥१९९॥
आरनालाढकं दत्त्वा तत्सर्पिर्जठरापहम् ।
शूलं विबन्धमानाहमामवातं कटीग्रहम् ॥२००॥
नाशयेद् ग्रहणीदोषं मन्दाग्नेर्दीपनं परम् ।
पुष्ट्यर्थं पयसा साध्यं दध्ना विण्मूत्रसंग्रहे ॥
दीपनार्थं मतिमता मस्तुना च प्रकीर्त्तितम् ॥२०१॥

१. हींग, २. सोंठ, ३. पीपर, ४. मरिच, ५. चव्य, ६.

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

सैन्धवलवण—प्रत्येक द्रव्य ४६-४६ ग्राम; किन्तु त्रिकटु तीनों मिलाकर ४६ ग्राम लें; ७. गोघृत ७५० ग्राम और ८. काञ्जी ३ लीटर लें। सर्वप्रथम गोघृत का मूर्च्छन करें। ततः ४ कल्क द्रव्यों को कूट-पीसकर कल्क बना लें और मूर्च्छित घृत में कल्क एवं काञ्जी मिलाकर पाक करें। काञ्जी धीरे-धीरे घृत में मिलावें। काञ्जी सूखने पर सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल डालकर पाक करें। स्नेहपाक के परीक्षोपरान्त स्नेहपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से घृत को छान लें तथा काचपात्र में संग्रहीत करें। इस घृत को ६ से१२ ग्राम की मात्रा में गोदुग्ध के साथ सेवन करने से उदररोग, शूल, विबन्ध, आनाह, आमवात, कटीग्रह तथा ग्रहणी विकार का नाश करता है। काञ्जी के कारण इसका कार्य कर्षण है। यदि इस घृत को पुष्टिकरणार्थ उपयोग में लेना हो तो काञ्जी के स्थान पर गोदुग्ध डालकर घृतपाक करें। विड्-मूत्र की रुकावट दूर करने के लिए काञ्जी के स्थान पर दधि देकर पाक करें। दीपनार्थ उपयोग करना हो तो काञ्जी के स्थान पर मस्तु देकर स्नेहपाक करना चाहिए। यह घृत परमदीपन है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गोदुग्ध से। **गन्ध**—घृत गन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कट्वम्ल। **उपयोग**—आमवात, कटी शूल एवं ग्रहणी विकार में।

५९. प्रसारणीतैल

प्रसारण्या रसैः सिद्धं तैलमेरण्डजं पिबेत्।
सर्वदोषहरञ्चैव कफरोगहरं परम् ॥२०२॥

एरण्डतैल १ लीटर तथा गन्धप्रसारणीपत्रस्वरस ४ लीटर लें। एरण्डतैल का सबसे पहले मूर्च्छन करें। ततः उसी पात्र में प्रसारणीस्वरस मिलाकर तैल पकावें। इस तैल को छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। ६ से १२ ग्राम की मात्रा में गरम दूध के साथ पीने से यह सभी दोषों को नाश करता है। विशेषकर कफज रोगों को नष्ट करता है।

मात्रा—६ से १२ ग्राम। **अनुपान**—गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—दुर्गन्ध। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—लवणीय। **उपयोग**—कफज रोगों में।

६०. सूततैल (विजयभैरवतैल)

रसगन्धशिलातालं सर्वं कुर्यात् समांशकम्।
चूर्णयित्वा ततः सूक्ष्ममारनालेन पेषयेत् ॥२०३॥
तैलकल्केन संलिप्य सूक्ष्मवस्त्रं ततः परम्।
तैलाक्तां कारयेद्वर्तिमूर्ध्वभागे च दीपयेत् ॥२०४॥
वर्त्यधः स्थापिते पात्रे तैलं पतति शोभनम्।
लेपयेत्तेन गात्राणि भक्षणाय च दापयेत् ॥२०५॥
तत्तैललेपितं पत्रं नागवल्ल्याश्च भक्षयेत्।
नाशयेत् सूततैलं तद्वातरोगानशेषतः ॥२०६॥
बाहुकम्पं शिरःकम्पं जङ्घाकम्पं ततः परम्।
एकाङ्गञ्च तथा वातं हन्ति लेपान्न संशयः ॥२०७॥

१. शुद्ध पारद, २. शुद्ध गन्धक, ३. शुद्ध मैनसिल, ४. शुद्ध हरताल—इन्हें समभाग लें; ५. तिलतैल तथा ६. काञ्जी यथावश्यक लें। एक पत्थर के खरल में पारद एवं गन्धक की अच्छी कज्जली बना लें, ततः उसमें मैनसिल और हरताल मिलाकर मर्दन करें। पुनः उस कज्जली में काञ्जी की भावना देकर कल्क जैसा बना लें। इसके बाद डेढ़ फीट लम्बा, चौड़ा एवं मोटा कपड़ा फैलाकर उस कपड़े पर इस कल्क का लेप कर दें। सूखने पर बत्ती जैसा कपड़े को लपेटकर धागे से बाँध दें। पुनः इस वर्त्ति को तिलतैल में डुबाकर रात भर छोड़ दें। प्रातः वर्त्ति के एक छोर को चिमटी से पकड़ें और निचले छोर में आग लगा दें जिससे बत्ती जलेगी और उससे टपककर कज्जली मिश्रित तैल नीचे गिरेगा, जिसे कटोरी में संग्रह करें। पुनः काच की शीशी में सुरक्षित रखें। इस तैल से मालिश भी की जाती है। इसे २-२ बूँद ताम्बूलपत्र पर डालकर चबाकर खाया भी जाता है। इसके सेवन से विशेषकर वातरोगों का नाश होता है। बाहुकम्प, शिरःकम्प, जङ्घाकम्प तथा एकाङ्गवात और वायु का नाश करता है।

मात्रा—मालिश करना तथा भक्षणार्थ २ बूँद। **अनुपान**—ताम्बूलपत्र से। **गन्ध**—गन्धक की गन्ध। **वर्ण**—कृष्णाभ द्रव। **स्वाद**—कटु। **उपयोग**—वातरोग एवं कम्पादि में।

६१. विजयभैरवतैल (महत्)

फणिफेनयुतञ्चैतन्महद्विजभैरवम् ॥२०८॥

उपर्युक्त सूत तैल में पारद जितनी मात्रा में अफीम मिलाकर पूर्व विधि से तैलपातन करने पर यह विजयभैरवतैल (महत्) कहलाता है।

६२. सैन्धवादितैल-१

सैन्धवं देवकाष्ठञ्च वचा शुण्ठी च कट्फलम्।
शताह्वा मुस्तकं चव्यं मेदे मलहरं त्रिवृत् ॥२०९॥
हिज्जलस्य त्वचं बालं चित्रकं ब्रह्मयष्टिका।
शटीविडङ्गमधुकं रेणुकाऽतिविषा रुवु ॥२१०॥
अम्बष्ठा नीलिनी दन्तीमूलं मरिचमेव च।
अजमोदा पिप्पली च कुष्ठं रास्ना च ग्रन्थिकम् ॥२११॥
एषां कर्षमितैः कल्कैः शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
प्रस्थञ्च कटुतैलस्य मूर्च्छितस्य यथाविधि ॥२१२॥
एतत्तैलवरं श्रेष्ठमभ्यङ्गात् सर्ववातनुत्।
विशेषेणामवातेषु कटीजानूरुसन्धिषु ॥२१३॥
हृत्पार्श्वसर्वगात्रेषु शूलञ्चैव विनाशयेत्।
वातश्लेष्मणि बाह्यायामान्त्रवृद्धिभगन्दरे ॥२१४॥
शस्तं नाडीव्रणान् सर्वान् नाशयत्यथ देहिनाम्।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

अन्यांश्च विविधान् रोगान् वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
सैन्धवाद्यमिदं तैलं सर्वामयनिषूदनम् ॥२१५॥

१. सैन्धवलवण, २. देवदारु, ३. वच, ४. सोंठ, ५. कट्फल, ६. सौंफ, ७. नागरमोथा, ८. चव्य, ९. मेदा, १०. महामेदा, ११. जयपालबीज, १२. निशोथ, १३. हिज्जलछाल, १४. सुगन्धबाला, १५. चित्रकमूल, १६. भारङ्गी, १७. कचूर, १८. वायविडङ्ग, १९. मुलेठी, २०. रेणुकाबीज, २१. अतीस, २२. एरण्डमूलत्वक् २३. पाठा, २४. नीलीवृक्षमूल, २५. दन्तीमूल, २६. मरिच, २७. अजमोदा, २८. पीपर, २९. कूठ, ३०. रास्ना और ३१. पिपरामूल—ये ३१ द्रव्य प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें तथा सरसों तैल ७५० मि.ली. लें। सर्वप्रथम सरसोंतैल का मूर्च्छन करें। तत उपर्युक्त सभी ३१ द्रव्यों का चूर्ण करें और जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। अब मूर्च्छित कटुतैल में कल्क और ३ लीटर जल मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। जब पूरा जल सूख जाय तो परीक्षोपरान्त चूल्हे से तैलपात्र को उतारकर कपड़े से छान लें और काचपात्र में संग्रहीत करें। इसे सम्पूर्ण शरीर में अभ्यङ्ग करने से सभी प्रकार के वात विकार नष्ट हो जाते हैं। विशेषकर आमवात, कटीवात, जानुवात, ऊरुवात, सन्धिवात, हृदयगतवात, पार्श्वगतवात, सर्वशरीरगतवात, शूलरोग, वात-कफज व्याधि, बाह्यायाम, अन्त्रवृद्धि, भगन्दर और नाडीव्रण रोगों का नाश करता है। इसके अतिरिक्त जिस तरह इन्द्र का वज्र सभी वृक्षों का नाश करता है उसी प्रकार यह 'सैन्धवादितैल' अन्य विविध रोग या सभी रोगों का नाश करता है।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ १० से २० मि.ली.। **अनुपान**—गरमकर लगाना चाहिए। **गन्ध**—सरसोंतैल की महक। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—कटु-तिक्त। **उपयोग**—आमवात एवं सन्धिवात में।

६३. सैन्धवादितैल-२

सैन्धवं श्रेयसी रास्ना शतपुष्पा यमानिका ।
सर्जिका मरिचं कुष्ठं शुण्ठी सौवर्चलं विडम् ॥२१६॥
वचाऽजमोदा मधुकं जीरकं पौष्करं कणा ।
एतान्यर्द्धपलांशानि श्लक्ष्णपिष्टानि कारयेत् ॥२१७॥
प्रस्थमेरण्डतैलस्य प्रस्थाम्बु शतपुष्पजम् ।
काञ्जिकं द्विगुणं दत्त्वा तथा मस्तु शनैः पचेत् ॥२१८॥
सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यमामवातहरं परम् ।
पानाभ्यञ्जनबस्तौ च कुरुतेऽग्निबलं शुभम् ॥२१९॥
वातार्त्तरक्षणे शस्तं कटीजानूरुसन्धिजे ।
शूले हृत्पार्श्वपृष्ठेषु कृच्छ्रेऽश्मरिनिपीडिते ॥२२०॥
बाह्यायामार्दितानाहे अन्त्रवृद्धिनिपीडिते ।
अन्यांश्चानिलजान् रोगान् नाशयत्याशु देहिनाम् ॥२२१॥

१. सैन्धवलवण, २. गजपीपर, ३. रास्ना, ४. सौंफ, ५. अजवायन, ६. सज्जीक्षार, ७. मरिच, ८. कूठ, ९. सोंठ, १०. सौवर्चललवण, ११. विड्लवण, १२. वच, १३. अजमोदा, १४. मुलेठी, १५. श्वेत जीरा, १६. पुष्करमूल और १७. पीपर—ये १७ द्रव्य प्रत्येक २३-२३ ग्राम लें; १९. एरण्डतैल ७५० मि.ली., २०. सौंफ का क्वाथ ७५० मि.ली., २१. काञ्जी १५०० मि.ली. तथा २२. मस्तु १५०० मि.ली. लें। सर्वप्रथम एरण्डतैल का मूर्च्छन करें। उपयुर्क्त सभी १७ द्रव्यों को कूट पीसकर छान लें तथा जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें। ततः ७५० ग्राम सौंफ को यवकुट कर ३ लीटर जल साथ क्वाथ करें। जब ७५० मि.ली. जल शेष रहे तो उतारकर छान लें। अब मूर्च्छित एरण्डतैल को लोहे की कड़ाही में रखकर चूल्हा पर गरम करें। पुनः उसमें सौंफ क्वाथ और उपर्युक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें, क्वाथ सूखने पर थोड़ी-थोड़ी मात्रा में २ बार करके काञ्जी डालकर पकावें। ततः मस्तु डालकर पाक करें। सम्यक् पाकार्थ ३ लीटर जल मिलाकर पाक करें। सम्पूर्ण जलीयांश सूख जाने पर परीक्षोपरान्त तैलपात्र को चूल्हे से नीचे उतार लें और कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। यह सिद्ध सैन्धवादितैल परम आमवातनाशक है। इस तैल का पान, अभ्यंग एवं बस्ति लेने से अग्नि को बढ़ाता है। वातपीड़ितों की रक्षा के लिए अत्युपयोगी है। कटीशूल, जानुशूल, ऊरुशूल एवं सन्धिशूल, हृदयशूल, पार्श्वशूल, पृष्ठशूल, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, बाह्यायाम, अर्दित, आनाह, अन्त्रवृद्धि एवं अन्य वातिक विकार तथा वातिक रोगों का नाश करता है।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ २० मि.ली., पानार्थ २५ से ५० मि.ली., बस्त्यर्थ ५० मि.ली.। **अनुपान**—पानार्थ गरम गोदुग्ध से। **गन्ध**—काञ्जीगन्धी। **वर्ण**—पीताभ। **स्वाद**—लवणाम्ल। **उपयोग**—वातवात, सन्धिवात एवं कटीशूलादि में।

६४. द्विपञ्चमूलाद्य तैल (भा. प्र.)

द्विपञ्चमूलीनिर्यासकल्कदध्यम्लकाञ्जिकैः ।
तैलं कट्यूरुपार्श्वार्तिं कफवातामयान् ग्रहान् ॥
हन्ति बस्तिप्रदानेन करोत्यग्निबलं महत् ॥२२२॥

दशमूल १२५० ग्राम, तिलतैल १ लीटर, दही १ किलो, और काञ्जी १ लीटर लें। दशमूल का यवकुट करें और उसको महीन छननी से छानकर २५० ग्राम कल्क के लिए पृथक् करें। तदनन्तर तिलतैल का मूर्च्छन करें। १ किलो दशमूलक्वाथ में ४ ली. जल देकर क्वाथ करें। जब १ लीटर शेष रहे तो छानकर मूर्च्छित तैल में मिला दें। २५० ग्राम दशमूलचूर्ण को जल के साथ सिल पर पीसकर कल्क बना लें और तैल में मिलाकर मध्यमाग्नि में पाक करें। जब क्वाथ सूख जाय तो मथानी से मथकर (पानी बिना) दधि को उक्त तैल में मिलाकर पाक करें

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

पुनः काञ्जी मिलाकर पाक करें। सम्यक् पाकार्थ ४ लीटर जल मिलाकर पकावें। जलीयांश सूखने पर परीक्षोपरान्त चूल्हे से तैल पात्र को नीचे उतार लें और कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। इस तैल की बस्ति देने से कटीशूल, ऊरुशूल, पार्श्वशूल, कफ रोग, वातरोग और अंगग्रहरोग नष्ट हो जाते हैं। यह अग्नि को प्रदीप्त करता है।

मात्रा—अभ्यङ्गार्थ २० मि.ली. तक, बस्त्यर्थ ५० मि.ली.। **गन्ध**—अम्लगन्ध। **वर्ण**—किञ्चिद्रक्ताभ। **स्वाद**—तिक्त। **उपयोग**—आमवात, सन्धिवातादि में।

६५. रसोन सुरा (च.द.)

वल्कलाया सुरायास्तु सुपक्वाया शतं घटे।
ततोऽर्द्धेन रसोनं तु संशुद्धं कुट्टितं क्षिपेत् ॥२२३॥
पिप्पलीं पिप्पलीमूलमजाजीकुष्ठचित्रकम्।
नागरं मरिचं चव्यं चूर्णितं चाक्षसम्मितम् ॥२२४॥
सप्ताहात्परतः पेया वातरोगामनाशिनी।
कृमिकुष्ठक्षयानाहगुल्मार्शः प्लीहमेहनुत्॥
अग्निसन्दीपनी चैव पाण्डुरोगविनाशिनी ॥२२५॥

१. ५ लीटर वल्कला (वक्कल) नाम की सुरा, २. निस्तुष लशुन २५०० ग्राम, ३. पीपर, ४. पिपरामूल, ५. जीरा, ६. कूठ, ७. चित्रक, ८. सोंठ, ९. मरिच तथा १०. चव्य—प्रत्येक १२-१२ ग्राम लें। एक काचपात्र या पार्सेलिन के बड़े घड़े में ५ लीटर सुरा (मद्य) रखें, उसमें निस्तुष किन्तु कूटा हुआ रसोन मिला दें। ततः पीपर आदि ८ द्रव्यों का यवकुट चूर्ण मिलाकर हाथ से अच्छी तरह मिला दें। उस पात्र का मुख अच्छी तरह कार्क या ढक्कन से बन्द कर दें। १ सप्ताह के बाद खोलकर कपड़े से छानकर काचपात्र में संग्रहीत करें। कुछ खाने के बाद सुबह-शाम १०-१० मि.ली. रोज पीने से वातरोग, आमवात, कृमि, कुष्ठ, क्षय, आनाह, गुल्म, अर्श, प्लीहरोग, प्रमेह और पाण्डुरोग रोग नाशक है। अग्निवर्धक है।

मात्रा—१०-१० मि.ली.। **अनुपान**—जल के साथ। **गन्ध**—मद्यगन्धी। **वर्ण**—श्वेताभ। **स्वाद**—तीक्ष्ण। **उपयोग**—आमवात एवं समस्त वातरोग।

आमवात रोग में पथ्य

रूक्षः स्वेदो लङ्घनं स्नेहपानं
बस्तिर्लेपो रेचनं पायुवर्त्तिः।
अब्दोत्पन्नाः शालयो ये कुलत्था
जीर्णं मद्यं जाङ्गलानां रसाश्च ॥२२६॥
वातश्लेष्मघ्नानि सर्वाणि तक्रं
वर्षाभूश्चैरण्डतैलं रसोनम्।
पटोलपत्तूरककारवेल्लं
वार्ताकुशिग्रूणि च तप्तनीरम् ॥२२७॥
मन्दारगोकण्टकवृद्धदारं
भल्लातकं गोजलमार्द्रकञ्च।
कटूनि तिक्तानि च दीपनानि
स्युरामवातामयिने हितानि ॥२२८॥

रूक्ष स्वेद, लंघन, स्नेहपान, बस्ति, लेप, विरेचन, गुदवर्ति, पुराना शालि चावल, कुलथी, पुराना मद्य, जंगली पशुओं के मांसरस, वायु तथा कफनाशक सभी पदार्थ, तक्र, पुनर्नवा, एरण्डतैल, लशुन, परवलफल, शालिञ्च शाक, करैला, बैंगन, सहिजन फली, गरमपानी, अर्कपत्र, गोक्षुर, विधारा, शुद्ध भिलावा, गोमूत्र, आर्द्रक, कटु एवं तिक्त रस प्रधान द्रव्यों का सेवन और अग्निदीपन पदार्थ आमवात के लिए हितकर है।

आमवात में अपथ्य

दधिमत्स्यगुडक्षीरोपोदिकामाषपिष्टकान्।
दुष्टनीरं पूर्ववातं विरुद्धान्यशनानि च ॥२२९॥
असात्म्यं वेगरोधञ्च जागरं विषमाशनम्।
वर्जयेदामवातार्त्तो मांसञ्चानूपसम्भवम् ॥२३०॥

दही, मछली, गुड़, भैंस का दूध, पोई शाक, उड़द पिसा हुआ, दूषित जल, पूर्वा हवा, विरुद्ध भोजन, असात्म्य भोजन, मल-मूत्रादि के वेगों को रोकना, रात्रिजागरण, विषमाशन और आनूपदेशीय (जलीय) मांस का सेवन आमवात के रोगी के लिए वर्जित है।

अन्यच्च

अभिष्यन्दकरा ये च ये चान्ये गुरुपिच्छिलाः।
वर्जनीयाः प्रयत्नेन आमवातार्दितैर्नरैः ॥२३१॥

इति भैषज्यरत्नावल्यामामवाताधिकारः।

अभिष्यन्दी पदार्थ (केला-दही-मछली), जो गुरु एवं पिच्छिल (मछली, दूध, दही, केला) पदार्थ है। उसे आमवात से पीड़ित व्यक्ति को नहीं सेवन करना चाहिए।

इति श्रीगोविन्ददाससेनसङ्कलितस्य भैषज्यरत्नावलीनामकभेषजग्रन्थस्य आमवाताधिकारस्य जामनगरस्थ-गुजरात-आयुर्वेद-विश्वविद्यालयस्य औषधनिर्माणशालाया निदेशकेन प्रोफेसर-सिद्धिनन्दनमिश्रेण कृता 'सिद्धिप्रदा' हिन्दीव्याख्या समाप्ता।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA

भैषज्यरत्नावली आयुर्वेदीय औषध निर्माण-हेतु सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसे इतना बड़ा सम्मान सम्पूर्ण भारत में प्राप्त हुआ है । रसशास्त्र एवं भैषज्यकल्पना क्षेत्र में 50 वर्षों से अधिक अनुभवी विद्वान प्रोफेसर सिद्धिनन्द मिश्र कृत 'सिद्धिप्रदा' हिन्दी व्याख्या द्वारा 'भैषज्य-रत्नावली' की उपयोगिता और भी अधिक हो गई है । प्रोफेसर मिश्र ने इसमें वर्णित प्रायः सभी योगों का मूल स्रोत ढूँढ निकाला है तथा तत्तद् योगों को किन-किन आचार्यों ने पहली बार उद्धत किया है-इसका उल्लेख भी मिश्र जी ने अपनी व्याख्या में किया है । इस व्याख्या में औषधि-निर्माण की सरल प्रक्रिया का वर्णन तथा आदेशात्मक भाषा का प्रयोग किया गया है, जिससे औषधि-निर्माता उस प्रकिया को आसानी से समझ सके । इसके अतिरिक्त सभी स्तरों पर सर्वत्र नये मानों (Metric Method Measurement जैसे-किलाग्राम, मिलीलीटर, मिलीमीटर आदि) का प्रयोग किया गया है तथा औषधि-सेवन की मात्रा, अनुपान, औषधि-ग्रन्थ, औषधि-स्वाद महत्वपूर्ण रोगों में उपयोग आदि का भी उल्लेख सभी योगों के साथ दिया गया है ।

अन्य महत्त्वपूर्ण संहिता-ग्रन्थ

- **अष्टाङ्गहृदयम्** । अरुणदत्त कृत 'सर्वाङ्गसुन्दरी' तथा हेमाद्रिकृत 'आयुर्वेदरसायन' व्याख्या सहित। **(Golden Binding)**
- **अष्टाङ्गहृदयम्** । हिन्दीव्याख्या,विशेष वक्तव्यादि संवलित। व्याख्याकार-ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **अष्टाङ्गहृदयम्** । (सूत्रस्थान)। हिन्दीव्याख्या,विशेष वक्तव्यादि सहित। अनन्त राम शर्मा
- **चक्रदत्तः**। 'पदार्थबोधिनी' हिन्दी व्याख्या सहित। रविदत्त शास्त्री
- **चरकसंहिता**। 'चरक-चन्दिका' हिन्दी व्याख्या, विशेष वक्तव्यादि संवलित। ब्रह्मानन्द त्रिपाठी (1-2 भाग सम्पूर्ण)
- **चरकसंहिता**। श्रीचक्रपाणिदत्तविरचित 'आयुर्वेददीपिका' व्याख्या। सम्पादक-वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य **(Golden Binding)**
- **धन्वन्तरी-निघण्टुः**। हिन्दी टीका सहित। डॉ. झारखण्डे ओझा एवं उमापति मिश्र
- **भेलसंहिता**। महर्षिभेलप्रणीता। विमर्शोपबृंहित'विनोदिनी'हिन्दीव्याख्यापरिशिष्टसहित। श्री अभयकात्यायन
- **माधवनिदानम्** । 'मधुकोष'व्याख्या। 'विमला''मधुधारा' हिन्दीव्याख्या। व्याख्याकार-डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी (1-2 भाग सम्पूर्ण)
- **योगतंरगिणी**। त्रिमल्लभट्ट। हिन्दी टीका सहित। टीकाकार-वैद्य दत्तराम चौबे। भूमिका लेखक-डॉ. चन्द्रभूषण झा
- **रसेन्द्रसारसंग्रह**। हिन्दी टीका सहित। श्रीरामतेज पाण्डेय
- **रसामृतम्** । यादवजी त्रिक्रमजीप्रणीतं। भाषाटीकासहित। सम्पादक एवं विमर्श-देवनाथ सिंह गौतम। भूमिका-डॉ. चन्द्रभूषण झा
- **वैद्यचिन्तामणिः**। श्रीबल्लभाचार्य विरचित। हिन्दीव्यख्याकार-डॉ. रामनिवास शर्मा एवं डॉ. सुरेन्द्र शर्मा
- **वैद्यजीवनम्** । रुद्रभट्टकृत 'दीपिका' व्याख्या एवं हिन्दीटीका सहित। प्रियव्रत शर्मा
- **शार्ङ्गधरसहिता**। 'दीपिका' हिन्दीटीका विशेषवक्तव्यादि संवलिता। डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **शार्ङ्गधरसहिता**। आढमल्लविरचित 'दीपिका' तथा काशीरामवैद्य विरचित 'गूढार्थदीपिका' सहित। भूमिका चन्द्रभूषण झा
- **सहस्त्रयोगम्** । मूल संस्कृत एवं मलयात्मम तथा हिन्दी अनुवाद सहित। लेखक डॉ. रामनिवास शर्मा एव डॉ. सुरेन्द्र शर्मा
- **सुश्रुतसंहिता**। श्रीडल्हणाचार्य विरचित निबन्धसंग्रह व्याख्या सहित। सम्पादक-यादवजी त्रिकमजी आचार्य **(Golden Binding)**
- **सुश्रुतसंहिता**। 'सुश्रतविमर्शिनी' हिन्दी व्याख्या, विशेषवक्तव्यादिसंवलित। डॉ. अनन्तराम शर्मा (1-3 भाग सम्पूर्ण)

चरकसंहिता

श्रीचक्रपाणिदत्तविरचितया आयुर्वेददीपिकाव्याख्यया

(तथा चिकित्सास्थानतः सिद्धिस्थानं यावत्)

श्रींवाग्भट्टशिष्य-आचार्यवरजज्जटविरचितया निरन्तरपदव्याख्यया च संवलिता

1850 Pages | **Rare Commentary - Reprinted After - 70 Year** | In 2 Vols.

सभी प्रकार की आयुर्वेद से सम्बन्धित पुस्तकों का स्थान

चौखम्बा पब्लिशिंग हाऊस
4697/2, 21-ए, अंसारी रोड़,
दरियागंज नई दिल्ली - 110002
फोन न. 011-23286537, 32996391

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
के - 37/117 गोपाल मंदिर लेन
वाराणसी-221001
फोन न. 0542-2335263, 2335264

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammmu. Digitized by S3 Foundation USA